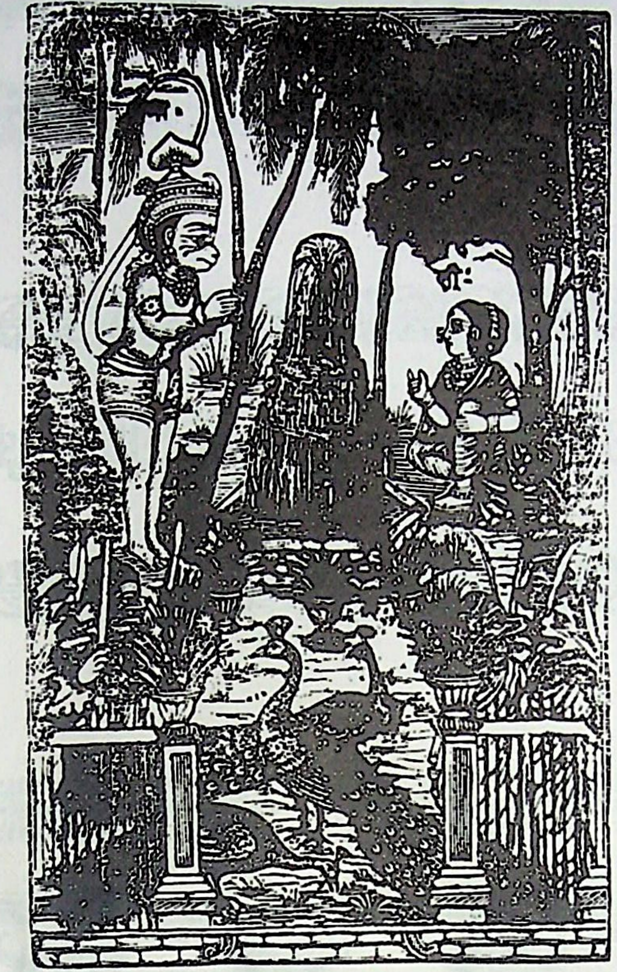
श्रीवाल्मीकीय
रामायण
हिन्दी टीका सहित
भाग : २

अथ श्रीवाल्मीकीयरामायणेसुन्दरकाण्डं भा. टी. समेतं प्रारभ्यते

सुन्दरकाण्डम्—५



दोहा—कनक वरण अरु शैल सम, धारे रूप विशाल । गर्जि घोर रामहि सुमिर, चल्यौ अंजनी लाल ॥ १ ॥

उसके पीछे शत्रुओंके दमन करनेवाले हनुमान्‌जी रावणसे हरी सीताजीके ढूँढनेको जिस मार्गमें सिद्ध चारण गण जाया करते हैं, उसी आकाश मार्गमें होकर जानेकी इच्छा करने लगे ॥१॥ जो दूसरेसे न करा जावे ऐसा दुष्कर कर्म करनेके अभिलाषी होकर विघ्नरहित गर्दन और मस्तक उठाये बडे वृषभके समान महावीर शोभायमान होने लगे ॥२॥ तहाँ वह धीर महाबली हनुमान् वैदूर्यमणिके वर्णके समान और जलप्राय हरी २ घासोंके समूहमें यथासुख विचरने लगे ॥३॥ वह हनुमान्‌जी वहांके रहने वाले पक्षियोंको त्रासित करते, अपनी छातीकी रगडसे वृक्षोंको गिराते, अति बढे हुए बहुतसे मृगोंको हनन करते हुए सिंहके

श्रीरामचंद्रायनमः ॥ ॥ ततोरावणनीतायाःसीतायाःशत्रुकर्षणः ॥ इयेषपदमन्वेष्टुंचारणाचरितेपथि ॥ १ ॥ दुष्करंनिष्प्रतिद्वंद्वंचिकीर्षन्कर्मवानरः ॥ समुदग्रशिरोग्रीवोगवांपतिरिवाबभौ ॥ २ ॥ अथवैदूर्यवर्णेषुशाद्वलेषुमहाबलः ॥ धीरःसलिलकल्पेषुविचचारयथासुखम् ॥ ३ ॥ द्विजान्वित्रासयन्धीमानुरसापादपान्हरन् ॥ मृगांश्चसुबहून्निघ्नन्प्रवृद्धाइवकेसरी ॥ ४ ॥ नीललोहितमांजिष्ठपद्मवर्णैःसितासितैः ॥ स्वभावसिद्धैर्विमलैर्धातुभिःसमलंकृतम् ॥५॥ कामरूपिभिराविष्टमभीक्ष्णंसपरिच्छदैः ॥ यक्षकिन्नरगंधर्वैर्देवकल्पैःसपन्नगैः ॥ ६ ॥ सतस्यागिरिवर्यस्यतलेनागवरायुते ॥ तिष्ठन्कपिवरस्तत्रह्रदेनागइवाबभौ ॥ ७ ॥ ससूर्यायमहेंद्रायपवनायस्वयंभुवे ॥ भूतेभ्यश्चांजलिंकृत्वाचकारगमनेमतिम् ॥ ८ ॥ अंजलिंप्राङ्मुखं कुर्वन्पवनायात्मयोनये ॥ ततोहिववृधेगंतुदक्षिणोदक्षिणांदिशम् ॥ ९ ॥ प्लवगप्रवरैर्दृष्टःप्लवनेकृतनिश्चयः ॥ ववृधेरामवृद्ध्यर्थंसमुद्रइवपर्वसु ॥ १० ॥

समान शोभित होते हुए ॥४॥ पर्वतके स्वभावसिद्ध श्वेत, कृष्ण, कनेरी, मजीठी रंगकी पद्मराग मणियोंसे और पर्वतोंपर आप उत्पन्न हुई विमल धातुओंसे अलंकृत ॥५॥ अनेक भाँतिके भूषण वस्त्र धारण किये अपने २ परिवारों सहित, देवताओंके समान कामरूपी यक्ष, गन्धर्व, किन्नर, और सर्पोंसे सेवित ॥६॥ और श्रेष्ठ हाथियोंसे व्याप्त उस महेन्द्र पर्वतकी तलैटीमें इस प्रकार रहनेसे वानरश्रेष्ठ हनुमान् सरोवरमें स्थित हाथीके समान शोभित हुए ॥ ७ ॥ तब हनुमानजी सूर्य महेंद्र, पवन और दूसरे प्राणियोंको हाथ जोडकर आकाशमें जानेकी मति करते हुए ॥८॥ वह चतुर अपनी उत्पत्तिके हेतु पवनदेवताको पूर्वमुख हो प्रणाम करके दक्षिण दिशाको गमन करनेके लिये बढ़ने लगे ॥९॥ वानरश्रेष्ठोंने देखा कि, श्रीरामचन्द्रजीके हितार्थ समुद्र लांघनेके लिये निश्चय करे हुए हनुमान्‌जीका शरीर

ऐसे बढने लगा, जैसे पूर्णमासीके पूर्ण चन्द्रमाको देख समुद्रकी लहरें बढ़ती हैं ॥ १० ॥ हनुमानूजी प्रमाणरहित देहधारण करतेहुए समुद्रको लांघनेके अभिलाषी हो भुजा और चरणोंसेपर्वतको पीडित करने लगे ॥ ११ ॥ जब हनुमानूजीने उसको पीडित किया तब मुहूर्त्तभरतक वह पर्वत चलायमान रहा, जिसके कि फूले फले वृक्षोंके समस्त पुष्प गिरगये ॥ १२ ॥ जब उन समस्त सुगंधित पुष्पोंने वृक्षोंपरसे गिरकर उस पर्वतको ढक लिया तब ऐसा ज्ञात हुआ मानो समस्त पर्वतही फूलोंका बना हुआ है ॥ १३ ॥ वह महेन्द्र पर्वत, बलवान् वीर्यवान् कपिश्रेष्ठ हनुमानूजीसे पीडित होकर मतवाले हाथीके मद चुआनेके समान जल वहाने लगा ॥ १४ ॥ हनुमानूजीसे पीडित हो इस पर्वतके चारों ओरसे कांचनके और चांदीके वर्णवाले अनेक भांतिके सोते बहने लगे ॥ १५ ॥ और वह पर्वत मनशिलयुक्त बडी २

निष्प्रमाणशरीरः सँलिलंघयिषुरर्णवम् ॥ बाहुभ्यांपीडयामासचरणाभ्यांचपर्वतम् ॥ ११ ॥ सचचालाचलश्चाशुमुहूर्तंकपिपीडितः ॥ तरूणांपुष्पिताग्राणांसर्वंपुष्पमशातयत् ॥ १२ ॥ तेनपादपमुक्तेनपुष्पोघेणसुगंधिना ॥ सर्वतःसंवृतःशैलोबभोपुष्पमयोयथा ॥ १३ ॥ तेनचोत्तमवीर्येणपीडचमानःसपर्वतः ॥ सलिलंसंप्रसुस्रावमदमत्तइवद्विपः ॥ १४ ॥ पीडचमानस्तुबलिना महेंद्रस्तेनपर्वतः ॥ रीतीर्निर्वर्तयामासकांचनांजनराजतीः ॥ १५ ॥ मुमोचचशिलाःशैलोविशालाःसमनःशिलाः ॥ मध्यमेनार्चिषाजुष्टोधूमराजिरिवानलः ॥ १६ ॥ हरिणापीडचमानेनपीडचमानानिसर्वतः ॥ गुहाविष्टानिसत्त्वानिविनेदुर्विकृतैःस्वरैः ॥ १७ ॥ समहान्सत्त्वसन्नादःशैलपीडानिमित्तजः ॥ पृथिवींपूरयामासदिशश्चोपवनानिच ॥ १८ ॥ शिरोभिःपृथुभिर्नागव्यक्तस्वस्तिकलक्षणैः ॥ वमंतःपावकंघोरंददंशुर्दशनैःशिलाः ॥ १९ ॥ तास्तदासविषैर्दष्टाःकुपितैस्तैर्महाशिलाः ॥ जज्वलुःपावकोद्दीप्ताबिभिदुश्चसहस्रधा ॥ २० ॥ यानित्वौषधजालानितस्मिञ्जातानिपर्वते ॥ विषघ्नान्यपिनागानांनशेकुःशमितुंविषम् ॥ २१ ॥

शिलायें छोडने लगा, तो उससे ऐसी शोभा हुई कि, मानो अग्निका मध्यस्थान जलता है और वह चारों ओरसे धुएकी राशि छोडता है ॥ १६ ॥ हनुमानूजीसे पीडित होनेके कारण इस पर्वतकी गुहाओंमें रहनेवाले प्राणी सब भाँतिसे सताये जाकर विकट शब्दसे चिल्लाने लगे ॥ १७ ॥ पर्वतकी पीडाके निमित्त उन प्राणियोंके उस चिल्लाहटकी ध्वनिसे पृथ्वी व दशों दिशा और सब उपवन पूरित होगये ॥ १८ ॥ फनेवाले सर्प नीले रेखाओंसे युक्त अपने बडे मस्तकसे भयंकर अग्नि उगलते हुए दांतोंसे शिलाओंको काटने लगे ॥ १९ ॥ तब बडे २ पत्थर उन विषयुक्त क्रोधित सर्पोंसे काटे जाकर अग्निसे प्रदीप्त वस्तुके समान चलकर हजार २ टुकडे होगये ॥ २० ॥ उस पर्वतमें विषकी नाश करनेवाली जो दवाइयें थीं वह सब दवाइयें भी इन सर्पोंके विषको निवारण नहीं कर सकतीं ॥ २१ ॥

उस पर्वतको ब्रह्मराक्षसादि भूतोंसे फटका हुआ जानकर तपस्वीलोग और अपनी २ स्त्रियोंके सहित विद्याधर लोग उसपरसे चले गये॥२२॥ मदपानकरनेके सुवर्णमय पात्र, मद पीनेके स्थानमेंही छोड दिये; इनके अतिरिक्त सुवर्ण चांदीके भोजनादि करनेके, बडे मूल्यवान पात्र और सुवर्णके कमंडलु सब वहींपर छोडदिये॥२३॥ चाटनेकी चटनी आदि विविध पादार्थ और भोजनकरनेके अनेक प्रकारके मांस और बैलोंके चमडेसे बँधे, मृगादिकोंके चर्मसे मढे सुवर्णकी मूठें लगे हुये खड्ग॥२४॥ आदि पदार्थोंको छोडकर मतवाले माला पहरे चन्दनादि लगाये अरुण और कमल नेत्र युक्त विद्याधरगण मानो उच्चस्वरसे गान करते आकाशको चले गये ॥२५॥ श्रेष्ठ हार धारण करे नूपुर और बाजू पहरे विद्याधरों की स्त्रियें विस्मित हो कुछेक हास्य करती हुई अपने २ स्वामियोंके साथ आकाशमें खड़ी रहीं

भिद्यतेऽयंगिरिर्भूतैरितिमत्वातपस्विनः ॥ त्रस्ताविद्याधरास्तस्मादुत्पेतुःस्त्रीगणैःसह ॥ २२ ॥ पानभूमिगतंहित्वाहैममासनभाजनम् ॥ पात्राणिचमहार्हाणिकरकांश्चहिरण्मयान् ॥२३॥ लेह्यानुच्चावचान्भक्ष्यान्मांसानिविविधानिच ॥ आर्षभाणिचचर्माणिखड्गांश्चकनकत्सरून्॥२४॥ कृतकंठगुणाःक्षीबारक्तमाल्यानुलेपनाः॥ रक्ताक्षाःपुष्कराक्षाश्चगगनंप्रतिपेदिरे ॥२५॥ हारनूपुरकेयूरपारिहार्यधराःस्त्रियः ॥ विस्मिताःसस्मितास्तस्थुराकाशेरमणैःसह ॥२६॥ "दर्शयंतोमहाविद्यांविद्याधरमहर्षयः ॥ सहितास्तस्थुराकाशेवीक्षांचक्रुश्चपर्वतम् ॥२७॥ शुश्रुवुश्चतदाशब्दमृषीणांभावितात्मनाम् ॥ चारणानांचसिद्धानांस्थितानांविमलेंबरे॥२८॥" एषपर्वतसंकाशोहनुमान्मारुतात्मजः॥तितीर्षतिमहावेगःसमुद्रंवरुणालयम्॥२९॥ रामार्थंवानरार्थंचचिकीर्षन्कर्मदुष्करम् ॥ समुद्रस्यपरंपारंदुष्प्रापंप्राप्तुमिच्छति ॥३०॥ इतिविद्याधरावासःश्रुत्वातेषांतपस्विनाम्॥ तमप्रमेयंददृशुःपर्वतेवानरर्षभम् ॥ ३१ ॥ दुधुवेचसरोमाणिचकंपेचानलोपमः ॥ ननादचमहानादंसुमहानिवतोयदः ॥ ३२ ॥ आनुपूर्व्याचवृत्तंतल्लांगूलंलोमभिश्चितम् ॥ उत्पतिष्यन्विचिक्षेपपक्षिराजइवोरगम् ॥ ३३ ॥

॥२६॥ तब महर्षि और विद्याधर लोग परस्पर मिल वह महाविद्या दिखाते आकाशमें टिके उस महेन्द्र पर्वतको देखने लगे॥२७॥ तब निर्मल आकाशमें टिके हुए विशुद्धचित्त ऋषि सिद्ध और चारणोंका यह वचन श्रवण करते हुए॥ २८॥ यह महा वेगवान् पर्वताकार पवन कुमार हनुमान्जी वरुणालय समुद्रके पार जानेका अभिलाष करते हैं ॥२९॥ यह हनुमान्जी श्रीरामचन्द्रजी और वानरोंके निमित्त दुष्करकार्य करने के अभिलाषी हो समुद्रके उतरनेकी इच्छा करते हैं॥ ३०॥ तपस्वी लोगोंके यह वचन सुन कर विद्याधरोंने उस पर्वतपर टिके हुए अप्रमाण प्रभाववाले कपिश्रेष्ठ हनुमान्जीको देखा ॥३१॥ इस ओर पावक के समान पवन कुमार हनुमान्जी स्वयं कम्पायमानहो अपने रुओंको फुलाते महा मेघकेसमान महानादसे शब्द करते हुये॥३२॥ और कूदने की वासना कर

क्रमसे गोलाकार रुओंसे छाई हुई अपनी पूंछ हिलाई, जैसे गरुड़जी सर्पको पकडकर हिलाते हैं ॥३३॥ पीछेसे हिलती हुई इनकी पूंछ गरुड़जीसे पकडे हुए अजगर सर्पके समान हिलती हुई दृष्टि आती थी॥३४॥ कूदनेके समय उन्होंने अपनी परिघ आकारवाले महाबाहु दृढ किये, और कमरके धोरसे बहुतही सुकड गये और चरणोंको भी सकोड लिया ॥ ३५ ॥ हाथ शिर व ओष्ठ भी इस भांति सकोड लिये, और तेज, सत्य, वीर्यमें भी महावीर्यवान् हनुमान्जी प्रविष्ट होगये ॥३६॥ और ऊपरको दृष्टिकर दूरसे आकाश मार्गको देखते हुये हृदयमें प्राणवायुको रोक ॥३७॥ वह कपिकुंजर महा बलवान् श्रेष्ठ हनुमान्जी दोनों कानोंको सकोड दोनों चरणोंको जमाय कूदनेके समय ॥३८॥ वानर श्रेष्ठोंसे कहने लगे कि जिस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीके छोडे हुए बाण वायुके समान गमनकरते हैं ॥३९॥ वैसेही हम रावणसे पाली हुई लंकानगरीमें चले जायँगे । यदि जनककुमारी सीताजीको हम वहां न देख पावेंगे ॥४०॥ तो यही वेग धारण किये

तस्यलांगूलमाविद्धमतिवेगस्यपृष्ठतः ॥ ददृशेगरुडैनेवह्रियमाणोमहोरगः॥३४॥बाहूसंस्तंभयामासमहापरिघसन्निभौ॥आससादकपिःकट्यां चरणौसंचुकोचच ॥३५॥ संहृत्यचभुजौ श्रीमांस्तथैवचशिरोधरान्॥तेजःसत्त्वंतथावीर्यमाविवेशसवीर्यवान् ॥३६॥ मार्गमालोकयन्दूरादूर्ध्वं प्रणिहितेक्षणः॥ रुरोधहृदये प्राणानाकाशंमवलोकयन्॥३७॥पद्भ्यांदृढमवस्थानंकृत्वासकपिकुंजरः॥ निकुच्यकर्णौहनुमानुत्पतिष्यन्महाबलः ॥३८॥वानरान्वानरश्रेष्ठइदंवचनमब्रवीत् ॥ यथाराघवनिर्मुक्तःशरः श्वसनविक्रमः ॥३९॥ गच्छेत्तद्वद्गमिष्यामिलंकांरावणपालिताम् ॥ नहि द्रक्ष्यामियदितांलंकायांजनकात्मजाम्॥४०॥ अनेनैववहिवेगेनगमिष्यामिसुरालयम् ॥ यदिवात्रिदिवेसीतांनद्रक्ष्यामिकृतश्रमः॥ ॥४१॥ बद्ध्वा राक्षसराजानमानयिष्यामिरावणम् ॥ सर्वथाकृतकार्योहमेष्यामिसहसीतया ॥४२॥ आनयिष्यामिवालंकांसमुत्पाट्यसरावणाम्॥एवमुक्त्वा तुहनुमान्वानरान्वानरोत्तमः॥४३॥उत्पपाताथवेगेनवेगवानविचारयन्॥ सुपर्णमिवचात्मानंमेनेसकपिकुंजरः॥४४॥ समुत्पततिवेगात्तुवेगात्तेन गरोहिणः॥संहृत्यविटपान्सर्वान्समुत्पेतुः समंततः॥४५॥ समत्तकोयष्टिभकान्पादपान्पुष्पशालिनः॥उद्वहन्नुरुवेगेनजगामविमलेंबरे ॥४६॥

हुए स्वर्गको चले जायँगे । यदि वहां भी सीताजीको न देख पाकर हम विफल यत्नहो ॥४१॥ तो राक्षस राजरावणको बांधकर ले आवेंगे या तो हम सब प्रकारसेसफल मनोरथ हो सीताजीके साथही लौटेंगे ॥४२॥ अथवा रावण सहित समस्त लंकानगरीको उखाड कर यहां ले आवेंगे । वानर श्रेष्ठ हनुमान्जी वानरों से इस प्रकार कह ॥४३॥ समुद्र लांघनेके क्लेशको न विचार कर वह वेगवान् अति वेगसे कूदेऔर उस समय अपने आपको गरुड़के समान कपियोंमें श्रेष्ठ हनुमान्जी मानते हुए ॥४४॥ अब महावीरजी कूदे तब उस पर्वत करके उत्पन्न हुये समस्त वृक्ष उनके वेगकी झोंकसे अपनी शाखाओंको संकुचित कर चारों ओरसे ऊपरको उछलने लगे ॥ ४५ ॥ हनुमान्जी अपने वेगसे मतवाले कोकिलादि पक्षियोंसे सेवित पुष्पोंसे अलंकृत वृक्ष अपनी जंघाओंके वेगसे उखाडते

निर्मल आकाशमें गमन करने लगे ॥४६॥ बंधुलोग जिस प्रकार दूर देश जाते हुए बंधुके साथ थोडी दूर चलते हैं, वैसेही उन कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जी की जंघाओंके वेगसे हुए वृक्ष एक मुहूर्त तक उनके पीछे २ चले गये ॥४७॥ सेनाके सिपाही जिस प्रकार राजाके पीछे २ चलते हैं, वैसेही शाल व और दूसरे उत्तम वृक्ष हनुमान्‌जी की जंघोंके वेगसे उखडे हुए उनके पीछे २ चले ॥४८॥ तब वानर श्रेष्ठ हनुमान्‌जी अनेक पुष्पित वृक्षोंसे युक्त होकर अद्भुत आकारवाले पर्वतके समान शोभित हुए ॥४९॥ फिर जिस प्रकार समस्त पर्वत इंद्रजीके भयसे वरुणालय समुद्रमें डूबे थे वैसेही भारी २ वृक्ष थोडी दूर हनुमान्‌जी के साथ चलकर लवण समुद्रमें गिरने लगे ॥५०॥ जिस प्रकार पर्वत बहुत सारे पट बीजनोंसे युक्त होकर शोभायमान होता है, वैसेही मेघाकार वानर श्रेष्ठ हनुमान्‌जी अंकुरित पुष्पित और कलीदार अनेक प्रकारके पुष्पोंसे युक्त होकर शोभित हुए ॥५१॥ हनुमान्‌जी के वेगसे छूटे हुए समस्त वृक्ष पुष्प छोडकर समुद्रके जलमें ऐसे गिरे जिस

ऊरुवेगोत्थितावृक्षामुहूर्तंकपिमन्वयुः ॥ प्रस्थितंदीर्घमध्वानंस्वबंधुमिवबांधवाः ॥४७॥ तमूरुवेगोन्मथिताःसालाश्चान्येनगोत्तमाः ॥ अनुजग्मुर्हनूमंतंसैन्याइवमहापतिम् ॥ ४८ ॥ सुपुष्पिताग्रैर्बहुभिःपादपैरन्वितःकपिः ॥ हनुमान्पर्वताकारोबभूवाद्भुतदर्शनः ॥४९॥ सारवंतोऽथयेवृक्षान्यमज्जँल्लवणांभसि ॥ भयादिवमहेंद्रस्यपर्वतावरुणालये ॥५०॥ सनानाकुसुमैःकीर्णःकपिःसांकुरकोरकैः॥शुशुभेमेघसंकाशःखद्योतैरिवपर्वतः॥५१॥विमुक्तास्तस्यवेगेनमुक्त्वापुष्पाणितेद्रुमाः॥व्यवशीर्यंतसलिलेनिवृत्ताःसुहृदोयथा ॥५२॥ लघुत्वेनोपपन्नंतद्विचित्रंसागरेऽपतत् ॥ द्रुमाणांविविधंपुष्पंकपिवायुसमीरितम् ॥५३॥ पुष्पौघेणसुगंधेननानावर्णेनवानरः ॥ बभौमेघइवोद्यन्वैविद्युद्गणविभूषितः ॥५४॥ तस्यवेगसमुद्धूतैःपुष्पस्तोयमदृश्यत ॥ ताराभिरभिरामाभिरुदिताभिरिवांबरम् ॥ ५५ ॥ तस्यांबरगतौबाहूददृशातेप्रसारितौ ॥ पर्वताग्राद्विनिष्क्रांतौ पंचास्याविवपन्नगौ ॥ ५६ ॥ पिबन्निवबभौचापिसोर्मिजालंमहार्णवम् ॥ पिपासुरिवचाकाशंददृशेसमहाकपिः ॥ ५७ ॥

प्रकार दूर देशको जानेवाले पथिक के भाई बंधु उसको थोडी दूर पहुंचाकरहम जाते हैं॥५२॥वृक्षोंके जो अनेक प्रकारके पुष्प जो कि हनुमान्‌जीके उछलनेको पवनके प्रेरित और उनके शीघ्रगमनसे थोडी दूरतक चले आये थे वह सब समुद्रमें गिरपडे॥५३॥उस कालमें रंग बिरंगे सुगंधियुक्त समूहसे भूषित उदित हो कपि श्रेष्ठ पवन कुमार हनुमानजी बिजली की रेखाओंसे विभूषित उदित मेघके समानशोभायमान हुए॥५४॥जिस प्रकार आकाश मंडल उदय हुए रमणीय तारागणोंसे गुच्छोंसे सज जाता है,वैसेही समुद्रका जल हनुमान्‌जीके वेगसे उड आये हुए पुष्पोंके समूहसे शोभित होने लगा॥५५॥उस काल हनुमान्‌जीके फैलाये हुये दोनोंहाथ आकाशमें ऐसे दृष्टि आये मानो पर्वतके शिखरसे पांच शिरवाले दोसर्पनिकल रहे हैं॥५६॥वह वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जी तरंगमाला शोभित महासागरको

मानो पिये लेते हैं अथवा मानो समस्त आकाशके पीनेको उद्यत हुए हों इस प्रकारसे दृश्यमान और शोभायमान होने लगे ॥ ५७॥ जब कि वह वायुमार्गके अनुसार चलनेलगे तब उनके बिजलीके समान प्रभायुक्त दोनोंनेत्र पर्वतके शिखर परकी दो अग्नियोंके समान प्रकाशित हुए॥५८॥ उन कपिश्रेष्ठके गोलाकार पीछे मण्डलवालेबडे २ दोनोंनेत्र आकाशमें स्थित हुए सूर्य चन्द्रमाके समान प्रकाशित होने लगे॥५९॥उनकी लाल नासिका व लालही वदन संध्यासमयके सूर्यनारायणके मण्डलके समान शोभित हुआ ॥ ६० ॥ आकाशमें चलते हुए पवन कुमार हनुमानूजीकी हिलती हुई पूँछ इन्द्रध्वजके समान शोभा धारण करती हुई ॥ ६१ ॥ महाप्राज्ञश्वेत दांतवाले कपिश्रेष्ठ हनुमानूजी पूंछके चक्रसे युक्त होकर मण्डलयुक्त सूर्य भगवानूके समान शोभित हुए ॥६२॥ उनकी कम

तस्यविद्युत्प्रभाकारेवायुमार्गानुसारिणः ॥ नयनेविप्रकाशेतेपर्वतस्थाविवानलौ ॥५८॥ पिंगेपिंगाक्षमुख्यस्यबृहतीमरिमंडले ॥ चक्षुषीसंप्रकाशेतेचंद्रसूर्याविवस्थितौ ॥ ५९ ॥ मुखंनासिकयातस्यताम्रयाताम्रमाबभौ ॥ संध्ययासमभिस्पृष्टंयथास्यात्सूर्यमंडलम् ॥६०॥ लांगूलंचसमाविद्धंप्लवमानस्यशोभते॥अंबरेवायुपुत्रस्यशक्रध्वजइवोच्छ्रितम् ॥६१॥ लांगूलचक्रोहनुमाञ्छुक्लदंष्ट्रोऽनिलात्मजः॥व्यरोचतमहाप्राज्ञःपरिवेषीवभास्करः॥६२॥स्फिग्देशेनातिताम्रेणरराजसमहाकपिः॥महतादारितेनेवगिरिर्गैरिकधातुना ॥ ६३ ॥ तस्यवानरसिंहस्यप्लवमानस्यसागरम् ॥ कक्षांतरगतोवायुर्जीमूतइवगर्जति ॥ ६४ ॥ खेयथानिपतत्युल्काउत्तरांताद्विनिःसृता॥दृश्यतेसानुबंधाचतथासकपिकुंजरः ॥६५॥ पतत्पतंगसंकाशोव्यायतःशुशुभेकपिः ॥ प्रवृद्धइवमातंगःकक्ष्ययाबध्यमानया ॥ ६६ ॥ उपरिष्टाच्छरीरेणच्छाययाचावगाढया ॥सागरेमारुताविष्टानौरिवासीत्तदाकपिः ॥ ६७ ॥ यंयंदेशंसमुद्रस्यजगामससमहाकपिः ॥ सतुतस्यांगवेगेनसोन्मादइवलक्ष्यते ॥ ६८ ॥

रका स्थान अधिक लाल होनेसे वह बहतेहुए श्रेष्ठ गेरूकी धातुसे ढके पर्वतके समान शोभित हुए ॥ ६३ ॥ समुद्रको लांघनेके समय कपिश्रेष्ठ हनुमानजीकी बगलोंमें जाता हुआ पवन मेघके समान गर्जने लगा ॥६४॥ वह कपिकुञ्जर हनुमानूजी ऊर्ध्व भागसे निकली हुई दूसरी उल्काके सहितगमन करनेको तैयार दूसरी उल्काके समान दृष्टि आने लगे ॥ ६५ ॥ तब गमनकरते हुए सूर्यके समान बडे आकारवाले कपिश्रेष्ठ हनुमानजी, कमरमें रस्सा बँधे हुए महागजके समान शोभायमानहोने लगे॥६६॥उन हनुमानूजीकी आकाशमें लम्बायमान शरीरकी परछाई समुद्रमें पडनेसे वह पाललगी हुई नौकाके समान शोभाको प्राप्त हुए॥६७॥वह वानरश्रेष्ठ हनुमानूजी समुद्रके जिस जिस स्थानमेंजाते थे,उस उस स्थानमें समुद्र उनके शरीरके वेगसे क्षुभितहो उन्मत्तके समान दृष्टि आताथा

॥ ६८ ॥ हनुमान्जी पर्वतके समान अपनी चौडी व कडी छातीसे समुद्रकी तरंगोंको हत करते हुए महावेगसे समुद्रके पार होने लगे॥६९॥उस कालमेंहनुमा नूजीके वेगसे चलनेके पवनसे और आकाशमण्डलकी पवनके घातसे भयंकर गर्जनवाला समुद्र कम्पायमान होनेलगा॥७०॥वह कपिश्रेष्ठ हनुमान्जी क्षारसमुद्रके बडी लहरियोंको इधर उधरसे खैंचते मानो स्वर्ग और पृथ्वीको पृथक् करते२ समुद्रके पार होने लगे ॥ ७१ ॥ ऐसेही मेरु और मन्दराचल पर्वतके समान ऊंची समुद्रसे उत्पन्न हुई सब तरंगोंको मानों गिनते २ महा वेगसे हनुमानजी उन सबको उल्लंघन करते हुए॥७२॥उस समय समुद्रका जल उन हनुमानजीके वेगसे उछला हुआ और मेघमंडलके छूजानेसे शरद्कालके बडे मेघके समान विराजमान हुआ ॥ ७३ ॥ और प्राणियोंके शरीरके वस्त्र उतार डालनेसे जिस

सागरस्योर्मिजालानामुरसाशैलवर्ष्मणा॥अभिघ्नंस्तुमहावेगःपुप्लुवेसमहाकपिः॥६९॥कपिवातश्चबलवान्मेघवातश्चनिर्गतः॥सागरंभीमनिर्ह्रा दंकंपयामासतुर्भृशम् ॥ ७० ॥ विकर्षन्नूर्मिजालानिबृहंतिलवणांभसि ॥ पुप्लुवेकपिशार्दूलोविकिरन्निवरोदसी ॥ ७१ ॥ मेरुमंदरसंकाशानु द्गतान्सुमहार्णवे ॥ अत्यक्रामन्महावेगस्तरंगान्गणयन्निव ॥७२॥ तस्यवेगसमुद्घुष्टंजलंसजलदंतदा ॥ अंबरस्थंविबभ्राजेशरदभ्रमिवाततम्॥ ॥ ७३ ॥ तिमिनक्रझषाःकूर्मादृश्यंतेविवृतास्तदा ॥ वस्त्रापकर्षणेनेवशरीराणिशरीरिणाम् ॥ ७४ ॥ क्रममाणंसमीक्ष्याथभुजगाः सागरंगमाः व्योम्नितंकपिशार्दूलंसुपर्णमिवमेनिरे ॥ ७५ ॥ दशयोजनविस्तीर्णात्रिंशद्योजनमायता ॥ छायावानरसिंहस्यजवेचारुतराऽभवत् ॥ ७६ ॥ श्वेताभ्रघनराजीववायुपुत्रानुगामिनी ॥ तस्यसाशुशुभेछायापतितालवणांभसि ॥ ७७ ॥ शुशुभेसमहातेजामहाकायोमहाकपिः ॥ वायुमार्गे निरालंबेपक्षवानिवपर्वतः ॥७८॥ येनासौयातिबलवान्वेगेनकपिकुंजरः ॥ तेनमार्गेणसहसाद्रोणीकृतइवार्णवः ॥ ७९ ॥

प्रकार दिखाई देते हैं; वैसेही तिमि; नाके, कछुए और बडे मच्छ जलके ऊपर आय २ दिखलाई देने लगे ॥ ७४ ॥ कपिशार्दूल हनुमानजी आकाशमार्गमें समुद्रके पार होते हैं,यह देखकर समुद्रके रहनेवाले सांप उनको गरुड समझने लगे॥७५॥बडे वेगसे गमन करते हुये हनुमानजीकी परछाई चालीसकोसकी मोटी और एक सौ वीस कोसकी लम्बी मनोहर थी॥७६॥पवनकुमार हनुमानजीके पीछे पीछे चलनेसे उनकीपरछाई क्षार समुद्रमें पडनेसे श्वेत, श्रेष्ठ बादर पंक्तिके समान शोभा धारण करती थी ॥७७॥ वह महातेज सम्पन्न महाकाय वानरश्रेष्ठ अवलंब रहित आकाश मार्गमें टिके हुये,पंख लगे पर्वतके समान शोभायमान होने लगे ॥ ७८ ॥वानरश्रेष्ठ बलवान् हनुमानजी जिस २ मार्गमें वेग सहित गमन करने लगे,उसीउसी मार्गमें,नदियोंका पति समुद्र मानों जलधारा निकलते

हुए पतनालोंके समान चलता था॥७९॥इस प्रकारसे हनुमानजी आकाशमार्गमें गरुडजीके समान गमन करते हुये, पवनके समान मेघजालको छिन्न भिन्न करने लगे॥८०॥ श्वेत,नील, अरुण व मंजीठ रङ्गके बादर वानरश्रेष्ठ हनुमानजीसे खैंचे जाकर पवनसे चलायमान किये हुये मेघोंके समान शोभा धारण करते हुये ॥८१॥ हनुमानजी वारंबार मेघमंडलमें प्रवेश करके छिप जाते, कभी उनमेंसे निकलकर प्रकाशित होजाते, इससे वह बादरोंमें छिपते,प्रकाशित होते चंद्रमाके समान दृष्टि आने लगे ॥ ८२ ॥ तब देव, दानव और गन्धर्व लोग उन कपिश्रेष्ठ हनुमानजीको वेगसहित समुद्र लांघते देख वहां पर फूलोंकीवर्षा करने लगे ॥८३॥सूर्य भगवान्ने समुद्र लांघते हुए उन वानरराजको अपनीकिरणोंसे संतापित नहीं किया; और पवनजीभी श्रीरामचन्द्रजीके कार्यकी सिद्धिके लिये हनु

आपातेपक्षिसंघानांपक्षिराजइवव्रजन् ॥ हनुमान्मेघजालानिप्रकर्षन्मारुतोयथा ॥८०॥ पांडुरारुणवर्णानिनीलमंजिष्ठकानिच ॥ कपिनाकृष्यमाणानिमहाभ्राणिचकाशिरे ॥८१॥ प्रविशन्नभ्रजलानिनिष्पतंश्चपुनःपुनः ॥ प्रच्छन्नश्चप्रकाशश्चचंद्रमाइवदृश्यते ॥ ८२ ॥ प्लवमानंतुतंदृष्ट्वाप्लवगंत्वरितंतदा ॥ ववृषुस्तत्रपुष्पाणिदेवगंधर्वदानवाः ॥ ८३ ॥ ततापनहितंसूर्यःप्लवंतंवानरेश्वरम् ॥ सिषेवेचतदावायूरामकार्यार्थसिद्धये ॥८४॥ ऋषयस्तुष्टुवुश्चैनंप्लवमानंविहायसा ॥ जगुश्चदेवगंधर्वाःप्रशंसंतोवनौकसम् ॥ ८५ ॥ नागाश्चतुष्टुवुर्यक्षारक्षांसिविविधानिच ॥ प्रेक्ष्यसर्वेकपिवरंसहसाविगतक्लमम् ॥८६॥ तस्मिन्प्लवगशार्दूलेप्लवमानेहनूमति ॥ इक्ष्वाकुकुलमानार्थीचिंतयामाससागरः ॥८७॥ साहाय्यंवानरेंद्रस्ययदिनाहंहनूमतः ॥ करिष्यामिभविष्यामिसर्ववाच्योविवक्षताम् ॥ ८८ ॥ अहमिक्ष्वाकुनाथेनसागरेणविवर्धितः ॥ इक्ष्वाकुसचिवश्चायंतन्नार्हत्यवसादितुम् ॥८९॥ तथामयाविधातव्यंविश्रमेतयथाकपिः ॥ शेषंचमयिविश्रांतःसुखीसोऽतितरिष्यति ॥ ९० ॥

मानजीका श्रम हरनेकी वासनासे धीरे धीरे चलने लगे॥८४॥ऋषिलोग उन आकाश मार्गमें चलते हुये कपिश्रेष्ठ हनुमानजीकी स्तुति करते हुये और देवता व गन्धर्वगण उनकी बडाई गाने लगे, ॥८५॥ यक्ष, रक्ष, नागगण, विगत क्लेश कपिश्रेष्ठ हनुमानजीका साहस देखकर "धन्य है २" ऐसा कहने लगे ॥८६॥ जब वानरश्रेष्ठ हनुमानजी समुद्रके पार जाने लगे,तब समुद्र इक्ष्वाकुकुलके सन्मान करनेका अभिलाषी होकर चिन्ता करने लगा॥८७॥यदि हम इस समय वानरराज हनुमानजीकी सहायता न करेंगे,तो सर्व लोकोंके समीप निंदनीय होंगे॥८८॥हम इक्ष्वाकुनाथ सगरजी करके बढाये गये हैं, और यह कपिश्रेष्ठभी इक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न हुये श्रीरामचन्द्रजी का दूत है,इस लिये इनका श्रम न हरना हमको उचित नहीं है॥८९॥अब जिससे यह कपिश्रेष्ठ सावधानहोजायँ ऐसा अनुष्ठान

हमको अवश्य करना चाहिये, और हमारे ऊपर टिक कर, श्रमको बहाय, वह सुखपूर्वक बाकी रहा अंश कूद जायँ ऐसा विधान करना हमको उचित है॥९०॥ नदियोंका पति समुद्र इस प्रकार साधुसंकल्प मनमें विचार अपने जलके मध्यटिके हुये सुवर्ण मय पर्वत श्रेष्ठ मैनाकसे बोला॥९१॥ कि, महात्मा देवराजइन्द्रजीने पातालनिवासी असुरोंके द्वारकामार्ग रोकनेके लिये परिघ रूप तुमको यहाँ रक्खा है॥९२॥ पातालसे फिर निकलआनेकी इच्छा किये महापराक्रमी उन सबअसुरोंका अप्रमाणवाला पातालका द्वार तुमहीं रोके हुये टिके हो॥९३॥ हे पर्वत श्रेष्ठ! ऊंचे नीचे और टेढे बढने की सब प्रकार सामर्थ्य तुम रखते हो, इस लिये हे गिरि श्रेष्ठ! हमारे कहनेसे तुम ऊपरको बढो॥९४॥ इस समय देखो कि, रामचन्द्रजीका कार्य साधन करनेको भयंकर कर्मकारी, गगन विदारी, वीर्यवान् कपिश्रेष्ठ हनुमान्

इतिकृत्वामतिंसाध्वीसमुद्रश्छन्नमंभसि ॥ हिरण्यनाभंमैनाकमुवाचगिरिसत्तमम् ॥९१॥ त्वमिहासुरसंघानांदेवराज्ञामहात्मना ॥ पातालनिलयानांहिपरिघःसन्निवेशितः ॥९२॥ त्वमेषांज्ञातवीर्याणांपुनरेवोत्पतिष्यताम् ॥ पातालस्यप्रमेयस्यद्वारमावृत्यतिष्ठसि ॥ ९३ ॥ तिर्यगूर्ध्वमधश्चैवशक्तिस्तेशैलवर्धितुम् ॥ तस्मात्संचोदयामित्वामुतिष्ठगिरिसत्तम ॥ ९४ ॥ सएषकपिशार्दूलस्त्वामुपर्येतिवीर्यवान् ॥ हनूमान्रामकार्यार्थीभीमकर्माखमाप्लुतः ॥ श्रमंचप्लवगेन्द्रस्यसमीक्ष्योत्थातुमर्हसि ॥ ९५ ॥ हिरण्यगर्भोमैनाकोनिशम्यलवणांभसः ॥ उत्पपातजलात्तूर्णमहाद्रुमलतावृतः ॥ ९६ ॥ ससागरजलंभित्त्वाबभूवात्युच्छ्रितस्तदा ॥ यथाजलधरंभित्त्वादीप्तरश्मिर्दिवाकरः ॥९७॥ समहात्मामुहूर्तेन पर्वतःसलिलावृतः ॥ दर्शयामासशृंगाणिसागरेणनियोजितः ॥ ९८ ॥ शातकुंभमयैःशृंगैःसकिन्नरमहोरगैः ॥ आदित्योदयसंकाशैरुल्लिखद्भिरिवांबरम् ॥९९॥ तस्यजांबूनदैःशृंगैःपर्वतस्यसमुत्थितैः ॥ आकाशंशस्त्रसंकाशमभवत्कांचनप्रभम् ॥ १०० ॥

तुम्हारे ऊपरीभागमें आयाही चाहते हैं और इससमय यह परिश्रमके मारे थकेसे जान पडते हैं, सो ऐसाकरो कि, यह तुम्हारे ऊपर कुछ देर टिककर आराम लेलें इसलिये इन कपिवरका श्रम देखकर तुमको भी अवश्य उठना कर्त्तव्य है॥९५॥ बडे२ वृक्ष और लता पत्रादिकोंसे युक्त मैनाक पर्वत लवण समुद्रकेवचन सुनकर तत्क्षण जलसे ऊपरको उठा॥९६॥ तेज किरणोंवाले सूर्य भगवान् जिस प्रकार बादलोंको भेदकर निकल आते हैं, वैसेही मैनाक पर्वत समुद्रके जलको भेदकर अत्यन्त ऊंचा बढा॥९७॥ इस प्रकार समुद्रसे ढके हुये उन महात्मा मैनाक पर्वतने समुद्रके कहनेसे एक मुहूर्तमें अपने श्रृङ्गऊपर प्रकाशित किये॥९८॥ सुवर्णमय प्रभात कालीन सूर्य के समान प्रभावाले, किन्नर और बडे २ सर्पोंसे सेवित उस मैनाक पर्वतके श्रृंग मानो आकाश स्पर्श करतेहीसे उठे॥९९॥ मैनाक पर्वतके

हिरण्मय शृङ्गोंसेसुवर्णके समान प्रकाशित होनेसे आकाश मंडलशस्त्रोंके समान शोभायमान हुआ॥१००॥और अतिशय प्रभा और शोभा सम्पन्न इन सबसुवर्ण मय शृंगोंसे युक्त होनेके कारण गिरिराज मैनाक अनेक सूर्योंके समान शोभायमान हुआ॥१०१॥हनुमान्‌जीने लवण समुद्रमेंसे सहसा उठेहुये उस पर्वतको देख कर यह निश्चय कियाकि,हमें रोकनेके लिये समुद्रमेंसे कोई विघ्न उठ खडा हुआ है ॥ १०२ ॥ पवन जिस प्रकार मेघको टक्कर देता है वैसेही हनुमान्‌जीने मैनाक पर्वतके अति ऊंचे शृंगोंको अपनी छातीके धक्केसे अति वेग सहित नीचेको बैठा दिया ॥ १०३ ॥ गिरिश्रेष्ठहनुमान्‌जी की रगडसे नीचेको बैठ उनके बलका वेगदेख आनंदके मारे शब्द करनेलगा॥१०४॥फिर मैनाक पर्वत प्रसन्न और हर्षयुक्त हृदयसेआकाशको उठकरवहांपर प्राप्त हुये हनुमान्‌जीसेबोला ॥१०५॥वहमनुष्यका रूप धारण करके अपने एकशिखरपर खडे हो हनुमान्‌जीसेबोला कि,हे वानर श्रेष्ठ!तुम अतिकठिन कार्य करनेको तैयार हुएहो॥१०६॥

जातरूपमयैःशृंगैर्भ्राजमानैर्महाप्रभैः ॥ आदित्यशतसंकाशःसोऽभवद्गिरिसत्तमः ॥१०१॥ समुत्थितमसंगेनहनूमानग्रतःस्थितम् ॥ मध्येलवणतोयस्यविघ्नोऽयमितिनिश्चितः ॥१०२॥ सतमुच्छ्रितमत्यर्थंमहावेगोमहाकपिः ॥ उरसापातयामासजीमूतमिवमारुतः ॥ १०३ ॥ सतदासादितस्तेनकपिनापर्वतोत्तमः ॥ बुद्ध्वातस्यहरेर्वेगंजहर्षचननादच ॥१०४॥ तमाकाशगतंवीरमाकाशेसमुपस्थितः ॥ प्रीतोहृष्टमनावाक्यमब्रवीत्पर्वतःकपिम् ॥१०५॥ मानुषंधारयन्रूपमात्मनःशिखरेस्थितः ॥ दुष्करंकृतवान्कर्मत्वमिदंवानरोत्तम ॥१०६॥ निपत्यममशृंगेषुसुखंविश्रम्यगम्यताम् ॥ राघवस्यकुलेजातैरुदधिःपरिवर्धितः ॥१०७॥ सत्वांरामहितेयुक्तंप्रत्यर्चयतिसागरः ॥ कृतेचप्रतिकर्तव्यमेषधर्मःसनातनः ॥१०८॥ सोऽयंतत्प्रतिकारार्थीत्वत्तःसंमानमर्हति ॥ त्वन्निमित्तमनेनाहंबहुमानात्प्रचोदितः॥१०९॥योजनानांशतंचापिकपिरेषखमाप्लुतः॥ तवसानुषुविश्रान्तःशेषंप्रक्रमतामिति ॥११०॥ तिष्ठत्वंहरिशार्दूलमयिविश्रम्यगम्यताम् ॥ तदिदंगंधवत्स्वादुकंदमूलफलंबहु ॥ १११ ॥

इसलिये हमारे शृङ्गोंपरबैठ कुछदेरतक विश्राम लेकर यथासुखसे चले जाओ । रघुकुलमें उत्पन्न हुए पुरुषोंने समुद्रको बढाया है॥१०७॥और तुम भी उन्हींरघुकुलमें जन्म लिये श्रीरामचन्द्रजीकाकार्य साधन करनेमें नियुक्त हो इस लिये स्वयं नदियोंके पति समुद्र तुम्हारी पूजाकरते हैं,क्योंकि जो अपने साथमेंउपकारकरे उसके साथमें प्रत्युपकार करनाहीसनातन धर्म है॥१०८॥यह समुद्र रघुवंशका प्रत्युपकार किया चाहता है सो तुमसेसमुद्रके संमानकी रक्षा होनी अवश्य योग्य है, इससमुद्रने तुम्हारा सत्कार करनेकेलिये हमको अनेक मान दे इस प्रकारसे यहाँ भेजा है॥१०९॥उन्होंने कहा कि,यह हनुमान्‌जी शतयोजन समुद्रके पारजानेके निमित्त आकाशमार्गमें गमन करतेहैं,इसलिये तुम्हारे शृंगोंपर कुछदेर तकटिकंकरयह शेष मार्गकोलांघ जायँ॥११०॥इसलियेहे वानर श्रेष्ठ!तुम हमारे शृंगोंपरटिक

कर थोडीदेर विश्राम पाय फिरचले जाओ हे हरिश्रेष्ठ! हमारे शृंगोंपर स्वादवाले और सुगन्धिवाले जो कंदमूल फलदृष्टि आते हैं॥११॥उन सबको भोजनकर विश्राम पाय फिर तुम चले जाना,हे कपिश्रेष्ठ ! तुम्हारे सहित हमारा भी त्रिलोक विख्यात महागुण युक्त सम्बन्ध है॥११२॥हे पवनकुमार! इसलोकमें जितने कूदने फांदनेवाले वेगवान् वानर हैं,हे कपिकुंजर ! उन सबमें हम तुमको मुख्यसमझते हैं॥११३॥विशेष करके जो पुरुष धर्म जिज्ञासु हैं उनको प्राकृत अतिथि को भीपूजा करना कर्त्तव्य है,फिर तुम्हारे समान गुणवान् अतिथिकी पूजा करना तोहमको भली भाँति से उचित है॥११४॥ तुम देवताओंमें श्रेष्ठ महात्मा पवन जीके पुत्रहो,और वेगमेंभी तुम हे कपिकुंजर ! उनकेही समान हो॥११५॥हे धर्मज्ञ ! तुम्हारी पूजा करनेसे मानो पवनजीहीकी पूजा होगई,इसी कारणसे तुम

तदास्वाद्यहरिश्रेष्ठविश्रांतोऽथगमिष्यसि ॥ अस्माकमपिसंबंधः कपिमुख्यत्वयाऽस्तिवै ॥ प्रख्यातस्त्रिषुलोकेषुमहागुणपरिग्रहः ॥ ११२ ॥ वेगवंतः प्लवंतोयेप्लवगामारुतात्मज ॥ तेषांमुख्यतमंमन्येत्वामहंकपिकुंजर ॥११३॥ अतिथिः किलपूजार्हः प्राकृतोपिविजानता ॥ धर्मंजिज्ञासमानेनकिंपुनर्यादृशोभवान् ॥११४॥ त्वंहिदेववरिष्ठस्यमारुतस्यमहात्मनः ॥ पुत्रस्तस्यैववेगेनसदृशः कपिकुंजर ॥११५॥ पूजितेत्वयिधर्मज्ञेपूजांप्राप्नोतिमारुतः ॥ तस्मात्त्वंपूजनीयोमेशृणुचाप्यत्रकारणम् ॥११६॥ पूर्वंकृतयुगेतातपर्वताः पक्षिणोभवन् ॥ तेपिजग्मुर्दिशः सर्वागरुडाइववेगिनः ॥११७॥ ततस्तेषुप्रयातेषुदेवसंघाः सहर्षिभिः ॥ भूतानिचभयंजग्मुस्तेषांपतनशंकया ॥ ११८ ॥ ततः क्रुद्धः सहस्राक्षः पर्वतानां शतक्रतुः ॥ पक्षांश्चिच्छेदवज्रेणततः शतसहस्रशः ॥ ११९ ॥ समामुपगतः क्रुद्धोवज्रमुद्यम्यदेवराट् ॥ ततोऽहंसहसाक्षिप्तः श्वसनेनमहात्मना ॥१२०॥ अस्मिँल्लवणतोयेचप्रक्षिप्तः प्लवगोत्तमः ॥ गुप्तपक्षः समग्रश्चतवपित्राभिरक्षितः ॥ १२१ ॥

हमारे पूजनीय हो।इस विषयमें एक और भी कारण है वह भी तुमसुनो॥११६॥हे तात ! पहले सत्ययुगमें सर्वपर्वतोंके पंख होनेकेकारणवह गरुडजीके समान वेगसहित सब दिशाओंमें गमन करने लगे॥११७॥पर्वतोंको उडता देखकर देवगणऋषिगणऔर सबही प्राणीगण उनके गिरनेकी शंकासे भीत होगयेकि यह कहीं किसीके ऊपर न गिरे ॥११८॥ तब हजार नेत्रवाले इन्द्रजीने क्रोधित होकर अपने वज्रसे सैकडों हजारों पर्वतोंके पंख काट डाले ॥ ११९ ॥ फिर वह बडा क्रोधकर बलसे वज्र उठाये,हमारे निकट भी हमारे पंख काटनेको आये । हे वानरश्रेष्ठ तब महात्मा पवनजीने यह देख उसी क्षण हमको वहांसे उठाय ॥ १२० ॥ इस क्षारसमुद्रमें फेंक दिया, उन्होंने हमारे पंखभी बचाये और किसी प्रकारका घावभी देहमें न होने दिया व सबही प्रकारसे रक्षा की ॥१२१॥

हेपवनसुत! इसहीकारणसे तुम हमारे मान्य हो वइससे हम औरभी तुमसे संभाषण करते हैं हेकपिश्रेष्ठ ! तुम्हारे सहित यह संबन्ध है और यह सबन्धमहागुणयुक्तहै ॥१२२॥हे महामते ! प्रत्युपकार करनेका यह अवसर उपस्थित है इसलिये तुमको प्रसन्न होकर वह करना जिससे हमारी और समुद्रकी प्रसन्नता हो॥ १२३॥हेकपिश्रेष्ठ हम तुम्हारे मान्यभी हैं क्योंकि तुम्हारे पिताजीसे हमारा सम्बन्ध भी है इसलिये श्रमको दूरकर पूजा पाय तुम हमको प्रसन्न करो इस समय तुमको देखकर हमें बडी प्रीति उपजी है ॥१२४॥जब पर्वतराज मैनाकने इस प्रकारसे कहा तबकपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जी उससे बोलेकि आपनेहमारी पहुनाई भी भलीभांतिकी और हमभी बहुत प्रसन्न हुए परन्तुहम जो आपकीदी हुई पूजा ग्रहण न करसके उसके लिये आपको क्षोभन करना चाहिये॥ १२५॥एक तो कार्यका समयतुमकोशीघ्र

ततोऽहंमानयामित्वांमान्योसिममारुते ॥ त्वयाममैषसंबंधःकपिमुख्यमहागुणः ॥१२२॥ अस्मिन्नेवंगतेकार्यैसागरस्यममैवच ॥ प्रीतिंप्रीतमनाःकर्तुंत्वमर्हसिमहामते ॥१२३॥ श्रमंमोक्षयपूजांचगृहाणहरिसत्तम ॥ प्रीतिंचमममान्यस्यप्रीतोऽस्मितवदर्शनात् ॥ १२४ ॥ एवमुक्तःकपिश्रेष्ठस्तंनगोत्तममब्रवीत् ॥ प्रीतोस्मिकृतमातिथ्यंमन्युरेषोपनीयताम् ॥ १२५ ॥ त्वरतेकार्यकालोमेअहश्चाप्यतिवर्तते ॥ प्रतिज्ञाचमयादत्तानस्थातव्यमिहांतरा ॥१२६॥ इत्युक्त्वापाणिनाशैलमालभ्यहरिपुंगवः ॥ जगामाकाशमाविश्यवीर्यवान्प्रहसन्निव ॥१२७॥ सपर्वतसमुद्राभ्यांबहुमानादवेक्षितः ॥ पूजितश्चोपपन्नाभिराशीर्भिरभिनंदितः ॥ १२८ ॥ अथोर्ध्वंदूरमाप्लुत्यहित्वाशैलमहार्णवौ ॥ पितुःपंथानमासाद्यजगामविमलेंबरे ॥१२९॥ भूयश्चोर्ध्वगतिंप्राप्यगिरिंतमवलोकयन् ॥ वायुसूनुर्निरालंबोजगामकपिकुंजरः ॥१३०॥ तद्द्वितीयंहनुमतोदृष्ट्वाकर्मसुदुष्करम् ॥ प्रशशंसुःसुराःसर्वेसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ १३१ ॥

ता करता है,दूसरे दिनभी बीता चाहता है,और तीसरे हमने सर्व वानरोंके सामने यह प्रतिज्ञा भी की हम बीचमें कहीं न ठहरेंगे बराबर चले जायँगे॥ १२६ ॥ वीर्यवान् कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जी यह कह अपने हाथसे पर्वतराज मैनाकको स्पर्श कर आकाशका आश्रय ले हँसते२चलेगये॥ १२७॥पर्वत और समुद्र दोनोंनेबार२ उन हनुमान्‌जीको निहार तत्कालोचित आशीर्वादसे उनका आदर मान कियाऔर चलते समय पूजा करके आशीर्वाद भी दिया॥ १२८॥फिर हनुमान्‌जी पर्वत और समुद्र दोनोंको त्यागकर पहलेसे और भी अधिक ऊंचे उठ वायुमार्गकाआश्रय ले निर्मल आकाशमंडलमें गमन करने लगे॥ १२९॥इस प्रकार कपिकुंजर हनुमान्‌जी बहुत ऊंचे उड कर गिरिश्रेष्ठ मैनाकको देखते२अवलंबन विहीन आकाशमार्गमें चले गये ॥१३०॥देव सिद्ध और परमर्षिगण सबही उनका यह और

किसीसे न होने योग्य अति कठिन कार्य देखकर प्रशंसा करने लगे॥१३१॥मैनाकपर्वतपर खडे हुए और आकाशमें टिके हुए इन्द्रादि देवगणभी अच्छी नाभी वाले सुवर्णमय मैनाकपर्वतके इस कार्यसे बडे प्रसन्नहुये॥१३२॥फिर शचीके पतिसहस्र नेत्रवाले बुद्धिमान् इन्द्रजी प्रसन्न हो गद्गद बचनोंसे सुशोभित मेखलायुक्त पर्वत श्रेष्ठ मैनाकसे कहने लगे॥१३३॥हे हिरण्यनाभ सौम्य पर्वतराज! हम तुम्हारे ऊपर बहुतही प्रसन्न हुए हैं हम तुमको अभय देते हैं कि,जब तुम्हारीजहां इच्छा हो वहां फिरा करो हम तुम्हारे पंख न काटेंगे॥१३४॥हनुमान्जीको भयरहित विश्राम लिये विना शत योजनके समुद्र पार होते देख कदाचित् पीछे यह किसीसंकटमें न पडें यह विचारकर तुमने उनकी विशेष सहायताकी है॥१३५॥दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजीकाही हित करनेकेलिये यह कपिश्रेष्ठ हनुमानजी जाते

देवताश्चाभवन्हृष्टास्तत्रस्थास्तस्यकर्मणा ॥ कांचनस्यसुनाभस्यसहस्राक्षश्चवासवः ॥१३२॥ उवाचवचनंधीमान्परितोषात्सगद्गदम् ॥ सुनाभंपर्वतश्रेष्ठंस्वयमेवशचीपतिः ॥१३३॥ हिरण्यनाभशैलेंद्रपरितुष्टोऽस्मितेभृशम् ॥ अभयंतेप्रयच्छामिगच्छसौम्ययथासुखम् ॥१३४॥ साह्यंकृतंतेसुमहद्विक्रांतस्यहनूमतः ॥ क्रमतोयोजनशतंनिर्भयस्यभयेसति ॥ १३५ ॥ रामस्यैषहितायैवयातिदाशरथेः कपिः ॥ सत्क्रियांकुर्वताशक्त्यातोषितोऽस्मिदृढंत्वया ॥ १३६ ॥ सततप्रहर्षमलभद्विपुलंपर्वतोत्तमः ॥ देवतानांपतिंदृष्ट्वापरितुष्टंशतक्रतुम् ॥१३७॥ सवैदत्तवरःशैलोबभूवावस्थितस्तदा ॥ हनुमांश्चमुहूर्तेनव्यतिचक्रामसागरम् ॥ १३८ ॥ ततोदेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ अब्रुवन्सूर्यसंकाशांसुरसांनागमातरम्॥१३९॥अयंवातात्मजःश्रीमान्प्लवतेसागरोपरि॥हनूमान्नामतस्यत्वंमुहूर्तंविघ्नमाचर॥ १४०॥राक्षसंरूपमास्थायसुघोरंपर्वतोपमम्॥ दंष्ट्राकरालंपिंगाक्षंवक्त्रंकृत्वानभःस्पृशम् ॥ १४१ ॥

हैं सो तुमने यथाशक्ति उनका आदर करके हमको अति संतुष्ट किया॥१३६॥समस्त देवताओंके राजा इन्द्रजीको प्रसन्न देखकर पर्वतश्रेष्ठ मैनाक अति हर्ष प्राप्त करता हुआ॥१३७॥और इन्द्रजीसे ऐसा अभय वर पाय यथास्थानमें टिकगया इधर हनुमान्जीभी मैनाकके अधिकारवाला समुद्रका भाग एक मुहूर्तमें उतर गये ॥१३८॥ हनुमानजी समुद्रके पार चलेही जाते थे कि;इतनेमें देव; गन्धर्व,सिद्ध और महर्षिगण सबही हनुमान्जीके बुद्धिबलकी परीक्षाके निमित्त सूर्यके समान प्रकाशवाली,नागमाता सुरसासे बोले ॥१३९॥ कि, वायुनन्दन श्रीमान् हनुमानजी समुद्रके पार होनेको आकाशमार्गसे चले जारहे हैं, सो तुमको एक मुहूर्ततक उनके गमन करनेमें विघ्न डालना पडेगा ॥ १४० ॥ इसलिये तुम अतिभयंकर पर्वताकार राक्षरूप धारणकरके पीले वर्णवाले नेत्रोंसहित भयंकर

दाँतयुक्त वदन इतनी ऊंची हो कि (आकाशको छूलो) ॥१४१॥ तब पवन कुमार उपाय करके तुमको जीत लेते, या विषादित होते हैं, बस उनका यह बल बुद्धि और पराक्रम हम लोग जानना चाहते हैं॥ १४२॥ जब देवतालोगोंने अति आदर सन्मानसे इस प्रकार कहा, तब देवी सुरसा समुद्रके मध्यमें राक्षसरूप धारण करती हुई ॥ १४३ ॥ उसका यह रूप बिकट विरूप और सर्वका भय उपजाने वाला था तब सुरसा समुद्रके पार जाते हुए हनुमानजीका मार्ग रोककर बोली ॥१४४॥ हे वानरश्रेष्ठ! देवतालोगोंने तुमको हमारा भोजन बताया है इस लियेहम तुमको खा जायँगी, सो तुम हमारे इस मुखमें प्रवेश करो ॥ १४५ ॥ और ब्रह्माजीने पहलेसे हमको यह वरदानभी दे रक्खा है यह कहकर सुरसाने अति मुखफैलाया, और हनुमानजीके आगे खडी होगई ॥१४६॥ जब सुरसाने इस प्रकार कहा तब हनुमानजी हँसकर बोले, कि दशरथजीके राम नामक पुत्र अपने भाई लक्ष्मण और अपनी स्त्री वैदेहीजीके सहित दंडकारण्यमें आये ॥१४७॥

बलमिच्छामहेज्ञातुंभूयश्चास्यपराक्रमम् ॥ त्वांविजेष्यत्युपायेनविषादंवागमिष्यति ॥१४२॥ एवमुक्तातुसादेवीदैवतैरभिसत्कृता ॥ समुद्रमध्ये सुरसाबिभ्रतीराक्षसंवपुः॥१४३॥विकृतंचविरूपंचसर्वस्यचभयावहम्॥प्लवमानंहनूमंतमावृत्येदमुवाचह॥१४४॥ममभक्ष्यःप्रदिष्टस्त्वमीश्वरैर्वा नरर्षभः॥अहंत्वांभक्षयिष्यामिप्रविशेदंममाननम्॥१४५॥वरएषपुरादत्तोममधात्रेतिसत्वरा ॥ व्यादायवक्त्रंविपुलंस्थितासामारुतेःपुरः ॥१४६॥ एवमुक्तःसुरसयाप्रहृष्टवदनोऽब्रवीत् ॥ रामोदाशरथिर्नामप्रविष्टोदंडकावनम् ॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्रावैदेह्याचापिभार्यया ॥ १४७ ॥ अस्यकार्यविषक्तस्यबद्धवैरस्यराक्षसैः ॥ तस्यसीताहृताभार्यारावणेनयशस्विनी ॥ १४८॥ तस्याःसकाशंदूतोऽहंगमिष्येरामशासनात् ॥ कर्तुमर्हसि रामस्यसाह्यंविषयवासिनि ॥१४९॥ अथवामैथिलींदृष्ट्वारामंचाक्लिष्टकारिणम् ॥ आगमिष्यामितेवक्त्रंसत्यंप्रतिशृणोमिते ॥१५०॥ एवमुक्ताहनुमतासुरसाकामरूपिणी ॥ अब्रवीन्नातिवर्तेन्मांकश्चिदेषवरोमम ॥१५१॥

सो किसीकार्यसे उनमें और राक्षसोंमें परस्पर वैर बँधगया, और उनकी यशस्विनी भार्या जानकीजीको रावणने हरण कर लिया ॥१४८॥ हम उन्हींके दूत हैं और उन्हीश्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञासे जानकीजीके निकटजाते हैं, और तुमभी रामचंद्रजीकेराज्यमें बसती हो, इस लिये इसकार्यमें तो तुमको भी हमारी सहायता करनी चाहिये उलटा विघ्न करना तुमको नहीं सोहता॥१४९॥और जो तुम हमें भोजन करनाही चाहती हो.तो हम सीताजीके दर्शन करके क्लेशरहितश्रीरामचंद्रजीको उनका समाचारदे फिर यहां आय तुम्हारे वदनमें प्रवेश करेंगे।बस तुम्हारे निकट यह प्रतिज्ञा हमनेसत्यही सत्यकी है सीताका वृत्तान्त इस कारण कहा कि, यहभी स्त्री है स्त्रीका पक्ष करेंगी॥१५०॥हनुमानजीके यह वचनसुनकर कामरूपिणी सुरसा उनसे बोली कि, हमको ब्रह्माजीने यह वर दिया है कि, तुम्हारे आगेसे कोई

भी जीवित न जा सकेगा॥१५१॥हनुमानजीकोगमन करते हुये देखकरनागमाता सुरसा उनकी शक्तिकी परीक्षा लेनेके लिये उनसे बोली ॥१५२॥ हे वानर श्रेष्ठ! विधाताने हमको यही वरदान दियाहै कि,जो तुम्हारे आगे आवेगा वह तुम्हारे वदनमेंही होकरजाय सकेगा सो यदि तुममें शक्तिहो तो आज हमारेमुखमें प्रवेश करके चले जाओ॥१५३॥यह कहकर नागमाता सुरसा;बडाभारीमुख फैलाय शीघ्रतासे पवनकुमार हनुमानजीके आगे खडीहोगई तब सुरसाके ऐसे वचन सुनकर वानरश्रेष्ठ हनुमानजीको भी क्रोध उत्पन्न हुआ॥१५४॥हनुमानजीने उससे कहा कि,जिसमें हम लंबे चौडे समासके उतना बड़ा मुख तू फैला, इतना कहने पर सुरसाने दशयोजन मुख फैलाया॥१५५॥सुरसापर क्रोधित हो पवनकुमार भी उसी समय दशयोजनके होगये । यह देखकर सुरसाने भी अपने मुखको बीस

संप्रयांतंसमुद्वीक्ष्यसुरसावाक्यमब्रवीत् ॥ बलंजिज्ञासमानासानागमाताहनूमतः ॥१५२॥ निविश्यवदनंमेद्यगंतव्यंवानरोत्तमे ॥ वरएषपुराद त्तोममधात्रेतिसत्वरा ॥१५३॥ व्यादायविपुलंवक्त्रंस्थितासामारुतेःपुरः ॥ एवमुक्तःसुरसयाक्रुद्धोवानरपुंगवः ॥१५४॥ अब्रवीत्कुरुवैवक्त्रंयेन मांविषहिष्यसि ॥ इत्युक्त्वासुरसांक्रुद्धोदशयोजनमायताम्॥१५५॥ दशयोजनविस्तारोहनूमानभवत्तदा ॥ चकारसुरसाप्यास्यंविंशद्योजनमा यतम् ॥ १५६ ॥ तद्दृष्ट्वाव्यादितंत्वास्यवायुपुत्रःसबुद्धिमान् ॥ दीर्घजिह्वंसुरसयासुभीमंनरकोपमम् ॥१५७॥ "तद्दृष्ट्वामेघसंकाशंविंशद्योजन मायतम् ॥ हनुमांस्तुततःक्रुद्धस्त्रिंशद्योजनमायतः॥चकारसुरसावक्त्रंचत्वारिंशत्तथोच्छ्रितम्॥ बभूवहनूमान्वीरःपंचाशद्योजनोच्छ्रितः॥चकार सुरसावक्त्रंषष्टियोजनमुच्छ्रितम्॥तदैवहनुमान्वीरःसप्ततियोजनोच्छ्रितः॥चकारसुरसावक्त्रमशीतियोजनोच्छ्रितम्॥ हनूमाननलप्रख्योनवतियो जनोच्छ्रितः ॥ चकारसुरसावक्त्रंशतयोजनमायतम्॥" ससंक्षिप्यात्मनःकायंजीवमूतइवमारुतिः॥तस्मिन्मुहूर्तेहनुमान्बभूवांगुष्ठमात्रकः॥१५८॥

योजन फैलाया ॥ १५६ ॥ परम बुद्धिमान पवनकुमार सुरसाके मुखको बीसयोजन विस्तारित देख जो बड़ी जिह्वासे युक्त अतिशय भयंकर साक्षात नरकके समान थी ॥ १५७ ॥ (क्षेपक) "उस मेघके समान वदन मंडलको बीस योजनक विस्तारवाला देखकर हनुमानजी क्रोधित होकर तीस योजनके लंबे चौडे होगये फिर सुरसाने चालीसयोजन चौडा मुख फैलाया तब महावीर्यवान् हनुमानजी पचास योजनके बडे होगये॥यह देखकर सुरसाने अपने मुखका विस्तार साठ योजनका किया तब हनुमानजीने अपने शरीरको सत्तर योजन विस्तारा, तब सुरसा अपने मुखको अस्सी योजन विस्तार करती हुई,यह देखकर साक्षात् कालके समान पवनकुमार हनुमानजी नब्बे योजनके होगये, फिर सुरसाका मुख शत योजनका बडा हुआ" (इति क्षेपक) तब हनुमानजी मेघके

समान अपनी देहको सकोडकर उसी मुहूर्तेमें अंगूठेके समान शरीर बना लेते हुए॥ १५८॥ और सुरसाके मुखमें बडी शीघ्रताके साथ प्रवेश कर और तत्क्षण ही उसमेंसे निकल आकाशमे निकलकर उससे बोले ॥ १५९ ॥ हे दाक्षायणि ! तुमको नमस्कार है हम तुम्हारे मुखमें प्रवेशकरके निकल आये, तुमने वर जो पाया था वह भी सत्य होगया; इसलिये अब हम जानकीजीके निकट गमन करेंगे॥ १६०॥ राहुके मुखसे चन्द्रमाके समान हनुमानजीको अपने मुखसे छूटा हुआ देख, देवी सुरसा अपना रूपधारण कर उनसे बोली॥ १६१॥ हे कपिश्रेष्ठ ! तुम अपने कार्यकी सिद्धिके लिये सुखपूर्वक चले जाओ, और जानकीजीको लायकर श्रीरामचन्द्रजीसे मिलादो ॥ १६२ ॥ इससमय देवतालोग हनुमानजीका यह तीसरीबार अति कठिन कर्म देख वारंवार "धन्य है धन्य है" कह कर बडाई

सोऽभिपद्याथतद्वक्त्रंनिष्पत्यचमहाबलः ॥ अंतरिक्षेस्थितः श्रीमानिदंवचनमब्रवीत् ॥ १५९ ॥ प्रविष्टोऽस्मिहितेवक्त्रंदाक्षायणिनमोस्तुते ॥ गमिष्येयत्रवैदेहीसत्यश्चासीद्वरस्तव ॥१६०॥ तंदृष्ट्वावदनान्मुक्तंचंद्रराहुमुखादिव॥ अब्रवीत्सुरसादेवीस्वेनरूपेणवानरम्॥ १६१॥ अर्थसिद्ध्यैहरिश्रेष्ठगच्छसौम्ययथासुखम् ॥ समानयचवैदेहींराघवेणमहात्मना॥ १६२॥ तत्तृतीयंहनुमतोदृष्ट्वाकर्मसुदुष्करम् ॥ साधुसाध्वितिभूतानिप्रशशंसुस्तदाहरिम् ॥ १६३ ॥ ससागरमनाधृष्यमभ्येत्यवरुणालयम् ॥ जगामाकाशमाविश्यवेगेनगरुडोपमः ॥१६४॥ सेवितेवारिधाराभिः पतगैश्चनिशेविते॥ चरितेकैशिकाचार्यैरैरावतनिषेविते॥ १६५॥ सिंहकुंजरशार्दूलपतगोरगवाहनैः॥ विमानैःसंपतद्भिश्चविमलैःसमलंकृते ॥१६६॥ वज्राशनिसमस्पर्शैःपावकैरिवशोभिते ॥ कृतपुण्यैर्महाभागैःस्वर्गजिद्भिरधिष्ठिते ॥ १६७ ॥ वहताहव्यमत्यंतसेवितेचित्रभानुना ॥ ग्रहनक्षत्रचंद्रार्कतारागणविभूषिते ॥ १६८ ॥

करने लगे ॥ १६३ ॥ इस ओर पवनकुमार हनुमानजी वरुणालय समुद्रके ऊपर आकाश मार्गका आश्रय ले गरुडजीके वेगके समान गमनकरने लगे ॥ १६४॥ वह वायुमार्ग, जलधारा, विहङ्गम समूह, गाने बजानेमें पंडित तुम्बरु, इत्यादिका स्थान, ऐरावतगजसे सेवित ॥ १६५ ॥ आकाशचारी, सिंह, व्याघ्र, हस्ती, पक्षी और सर्पसमूह आदिके चलने और विमल विमानोंके आवागमनसे सज्जित ॥ १६६ ॥ वज्र और अशनिके समान स्पर्शवाले, पावक सदृश पुण्यकर्मकारी महाभाग स्वर्गके जीतनेवाले पुरुषोंसे शोभित ॥ १६७ ॥ सदाही हव्य लिये अग्नि, ग्रह, नक्षत्र, चन्द्र, सूर्य और तारागणोंसे सेवित ॥ १६८ ॥

महर्षि, गन्धर्व, नागऔर यक्ष समूहसे समाकुल एकान्त विमलविशाल और विश्वावसुसे सेवित ॥ १६९ ॥ देवराजके वाहन ऐरावत हाथीसे रौंदा हुआ चन्द्रमा और सूर्यभगवानका कल्याणरूप पंथ जीवलोकका आश्रयस्वरूप इस विमल मार्गको ब्रह्माजीने बनाया है ॥ १७० ॥ ऐसे बहुतसारे वीर विद्याधर लोगोंसे सेवित वायुमार्गमें पवनकुमार हनुमानूजी, गरुडजीके वेगके समान वेगसे गये ॥ १७१ ॥ हनुमानूजी चलते समय बादलोंके समूहको खैंचे हुए चले जाते थे,उस समय सब मेघ काले, अगर श्वेत और लाल पीले वर्णहोगये ॥१७२॥ वानरवर हनुमानूजीके खैंचनेसे सब बादलोंके झुंड शोभा यमान हुये,और हनुमानूजी कभी मेघोंमें छिप जाते कभी उनमेंसे निकल आते थे॥१३७॥उनके वारंवार मेघोंमें प्रवेश करने और निकलनेसे वह वर्षाकालीन

महर्षिगणगंधर्वनागयक्षसमाकुले ॥ विविक्तेविमलेश्वेविश्वावसुनिषेविते ॥ १६९ ॥ देवराजगजाक्रांतेचंद्रसूर्यपथेशिवे॥वितानेजीवलोकस्यवि मलेब्रह्मनिर्मिते॥१७०॥बहुशःसेवितेवीरैर्विद्याधरगणैर्वृते ॥ जगामवायुमार्गेचगरुत्मानिवमारुतिः ॥ १७१ ॥ हनुमान्मेघजालानिप्राकर्षन्मा रुतोयथा ॥ कालागुरुसवर्णानिरक्तपीतसितानिच ॥१७२॥ कपिनाकृष्यमाणानिमहाभ्राणिचकाशिरे॥प्रविशन्नभ्रजालानिनिष्पतंश्चपुनःपुनः ॥ १७३ ॥ प्रावृषींदुरिवाभातिनिष्पतन्प्रविशंस्तथा ॥ प्रदृश्यमानःसर्वत्रहनूमान्मारुतात्मजः ॥१७४॥ भेजेंऽबरंनिरालंबंपक्षयुक्तइवाद्रिराट्॥ प्लवमानंतुतंदृष्ट्वासिंहिकानामराक्षसी॥१७५॥मनसाचिंतयामासप्रवृद्धाकामरूपिणी॥अद्यदीर्घस्यकालस्यभविष्याम्यहमाशिता ॥ १७६ ॥ इदंममहासत्त्वंचिरस्यवशमागतम्॥इतिसंचित्यमनसाछायामस्यसमाक्षिपत् ॥१७७॥ छायायांगृह्यमाणायांचिंतयामासवानरः ॥ समाक्षि प्तोऽस्मिसहसापंगूकृतपराक्रमः ॥ १७८ ॥ प्रतिलोमेनवातेनमहानौरिवसागरे ॥ तिर्यगूर्ध्वमधश्चैववीक्षमाणस्तदाकपिः ॥ १७९ ॥

चन्द्रमाके समान विराजमान हो सबको भली भाँतिसे दृष्टि आते थे॥१७४॥ हनुमानजी पंख धारणकिये पर्वतश्रेष्ठके समान अवलंब रहित आकाशमार्गमें चले इनकोदेख सिंहिका नाम राक्षसी॥१७५॥मनही मनमें विचार करने लगी कि;आजपेट भर जायगा यह अति बूढी और कामरूपिणी थी और बहुत दिनोंसे भूखी थी ॥१७६॥ बहुत दिनोंके पीछे यह बडा प्राणी मेरे वशमें आया है मनही मन इसप्रकारसे चिन्ताकर राक्षसीने हनुमानजीकी परछांई को पकडकर खैंचा ॥१७७॥जब सिंहिका राक्षसीने हनुमानजीकी परछांई पकड़कर खींची, तब पवनकुमार हनुमानजी चिन्ता करने लगे कि,अचानक खैंचे जानेसे हमारा पराक्रम शिथिल होगया,मानो किसीने खैंचकर हमको पंगुही कर दिया॥१७८॥और यह समुद्रके मध्यमें प्रतिकूल चलनेवाले पवन करके रोकी हुई महा नौकाके

वा.रा.भा.
॥१०॥

समान हीनतेज होगये । इस प्रकार चिन्ताकर उसी क्षण हनुमानजीने, तिरछे,ऊंचे, सब ओरकोदृष्टि फैलाय कर देखा ॥१७९॥ तो लवणसमुद्रके मध्यमें कोई एक बडा भारी जीव उतरता हुआ देखपडा हनुमानजी उस विकटबदन बडे प्राणीको देख चिन्ता करने लगे॥१८०॥कि कपिराज सुग्रीवजीने जो अति अद्भुत, महावीर्यवान् परछांई पकडनेवाले जीवकावृत्तान्त कहा था बस निःसन्देह यह वही जन्तु छायाका पकडनेवाला है ॥१८१॥ तब हनुमानजीने अर्थ और ज्ञानके अनुसार इस प्राणीको सिंहिका नाम राक्षसी स्थिर करके,वर्षाकालके बादलके समान अपने शरीरको बहुत ही बढाया॥१८२॥सिंहिकाराक्षसीने हनुमानजीका शरीर बढता हुआ देखकर उनसे अपना एक अधर पतालमें और एक अधर आकाशमें लगा दिया, इतना अपने मुखको बढाया ॥१८३॥और मेघके समान गर्जती २ अतिवेगसे हनुमानजीके सन्मुख धाई,तब हनुमानजी उसका महा विकटाकार वाला मुख देखकर॥१८४॥वह बुद्धिमान् समझे कि इसमे हमारा समस्त

ददर्शसमहासत्त्वमुत्थितंलवणांभसि ॥ तद्दृष्ट्वाचिंतयामासमारुतिर्विकृताननाम् ॥१८०॥ कपिराज्ञायथाख्यातसत्त्वमद्भुतदर्शनम् ॥ छायाग्राहिमहावीर्यंतदिदंनात्रसंशयः ॥१८१॥ सतांबुद्ध्वार्थतत्त्वेनसिंहिकांमतिमान्कपिः ॥ व्यवर्धतमहाकायः प्रावृषीवबलाहकः ॥१८२॥ तस्यसाकायमुद्वीक्ष्यवर्धमानंमहाकपेः ॥ वक्त्रंप्रसारयामासपातालांबरसन्निभम् ॥ १८३ ॥ घनराजीवगर्जतीवानरंसमभिद्रवत् ॥ सददर्शततस्तस्याविकृतंसुमहन्मुखम् ॥ १८४ ॥ कायमात्रंचमेधावीमर्माणिचमहाकपिः ॥ सतस्याविकृतेवक्त्रेवज्रसंहननःकपिः ॥ १८५ ॥ संक्षिप्यमुहुरात्मानंनिपपातमहाकपिः ॥ आस्येतस्यानिमज्जंतंददृशुःसिद्धचारणाः॥१८६॥ग्रस्यमानंयथाचंद्रंपूर्णंपर्वणिराहुणा ॥ ततस्तस्यानखैस्तीक्ष्णैर्मर्माण्युत्कृत्यवानरः ॥ १८७॥ उत्पपाताथवेगेनमनःसंपातविक्रमः ॥ तांतुदिष्ट्याचधृत्याचदाक्षिण्येननिपात्यसः ॥ १८८ ॥ कपिप्रवीरोवेगेनववृधेपुनरात्मवान् ॥ हृतहृत्साहनुमतापपातविधुरांभसि ॥ स्वयंभुवैवहनुमान्सृष्टस्तस्यानिपातने॥ १८९ ॥

सुं० कां०
स० १

शरीर प्रवेश कर जायगा,और इसीसेहम इसके मर्मस्थानभी चीर फाड डालेंगे । यह शोचकर वज्रके समान दृढ शरीरवाले पवनकुमारजी तत्क्षण उसके अति बडे मुखमें ॥ १८५ ॥ अपने शरीरको सकोडकर उसके वदनमें घुसगये,उस राक्षसीके मुखमें पैठतेहुये सिद्ध चारणोंने हनुमानजी को देखा ॥ १८६ ॥ पूर्णमासीके दिनपूर्णचन्द्र जिस प्रकार राहुसे ग्रस लिया जाता है,हनुमानजीभी वैसेही सिंहिकाके मुखमें पडे।इधर हनुमानजीने उसके मुखमें जाय अपने तेज नखोंसे उस राक्षसीके मर्मस्थानको॥१८७॥अतिशीघ्रतासे चीर फाडकर मनके समान वेगविक्रमसे ऊपरको उछले,उस राक्षसीको बडे भाग्य धीरता और चतुरतासे मारकर॥१८८॥ कपिश्रेष्ठ हनुमानजी फिर अति वेगसेबढने लगे,राक्षसीभी हनुमानजीसे मारखाय भिन्न हृदय और पीडित होकर,समुद्रके बीचमें गिरपडी ब्रह्माजीने इस राक्षसीका

संहार करनेके लिये हनुमानजीको उत्पन्न किया, नहीं तो इस राक्षसीको कौन मार सकता॥ १८९॥हनुमानजीके द्वारा शीघ्र प्राण त्यागकर समुद्रमें गिरती हुई सिंहिकाको देखकर आकाशचारीप्राणीगण उन वानरश्रेष्ठसे कहने लगे॥ १९०॥हे कपिवर ! इससमय तुमने अति बडे प्राणीको वधकरके अतिकठिनकार्य किया है, अब तुम विघ्नरहित होकर अपना कार्यसाधन करो ॥ १९१॥ हे वानरेन्द्र ! तुम्हारे समान जिस पुरुषमें धीरता, दृष्टि बुद्धि और चतुरता यह चार गुण हैं; वह कभी कार्य पडने पर व्याकुलनहीं होते ॥ १९२॥ पूजनीय हनुमान्जी उन प्राणियोंसे पूजित और कार्य सिद्धहोनेके विषयमें प्रसन्न होकर गरुडजीके वेगके समान आकाशमें उडने लगे ॥ १९३॥ और समुद्रकी दूसरी पारके प्रायः निकट पहुँच कर चारोंओर दृष्टि डाली तब शत योजनके पीछे एक बडीभारी वनकी श्रेणी उन्होंने देखी ॥ १९४ ॥ फिर वानरश्रेष्ठ पवनकुमार हनुमानजी चलते विविध द्रुमभूषित द्वीप और मलयपर्वतपर लगे हुये उपवनोंको देखते हुये

तांहतांवानरेणाशुपतितांवीक्ष्यसिंहिकाम् ॥ भूतान्याकाशचारीणितमूचुःप्लवगोत्तमम्॥ १९०॥भीममद्यकृतंकर्ममहत्सत्त्वंत्वयाहतम् ॥ साधयार्थमभिप्रेतमरिष्टंप्लवतांवर ॥ १९१॥ यस्यत्वेतानिचत्वारिवानरेंद्रयथातव ॥ धृतिर्दृष्टिर्मतिर्दाक्ष्यंसकर्मसुनसीदति॥ १९२॥सतैःसंपूजितः पूज्यःप्रतिपन्नप्रयोजनैः ॥ जगामाकाशमाविश्यपन्नगाशनवत्कपिः ॥ १९३॥ प्राप्तभूयिष्ठपारस्तुसर्वतः परिलोकयन्॥योजनानांशतस्यांतेवनराजींददर्शसः ॥ १९४ ॥ ददर्शचपतन्नेवविविधद्रुमभूषितम् ॥ द्वीपंशाखामृगश्रेष्ठोमलयोपवनानिच ॥ १९५॥ सागरंसागरानूपान्सागरानूपजान्द्रुमान् ॥ सागरस्यचपत्नीनांमुखान्यपिविलोकयत् ॥ १९६॥ समहामेघसंकाशंसपक्ष्यात्मानमात्मवान् ॥ निरुंधंतमिवाकाशंचकारमतिमान्मतिम् ॥ १९७ ॥ कायवृद्धिंप्रवेगंचममदृष्ट्वैवराक्षसाः ॥ मयिकौतूहलंकुर्युरितिमेनेमहामतिः ॥ १९८॥ ततःशरीरंसंक्षिप्यतन्महीधरसन्निभम् ॥ पुनःप्रकृतिमापेदेवीतमोहइवात्मवान् ॥ १९९ ॥ तद्रूपमतिसंक्षिप्यहनूमान्प्रकृतौस्थितः ॥ त्रीन्क्रमानिवविक्रम्यबलिवीर्यहरोहरिः ॥ २००॥

॥ १९५ ॥ सागर तथा समुद्रकी वेलाभूमि; और वहां पर लगे हुये सब वृक्षोंको देखते और समुद्रकी नारी सब नदियोंके संयोग स्थानोंको देखकर॥ १९६॥ महामतिमान् आत्मवान् पवनकुमार हनुमानजीने मेघाकार आकाशको रोकनेवाली अपनी देहको देखा और विचारा ॥ १९७ ॥ उन महामतिने समझा कि, राक्षस लोग हमारा अतिलंबा चौडा शरीर और महावेग देख कर हमको एक खेल समझेंगे ॥ १९८ ॥ यह विचार उन्होंने पर्वताकार अपने शरीरको उसी समय छोटा कर कामादि मोह विहीन जीवन्मुक्त योगीके समान फिर अपना लघुरूप जोसदा रहता था धारण करलिया॥ १९९॥और वामनजीने जिस प्रकार तीन चरणसे तीनों लोक नाप राजा बलिका वीर्य हरण कर फिर अपना रूप धारण करलिया था, वैसेही हनुमान्जीने अपने रूपको बहुत

छोटाकर फिर अपना पहला रूप धारण कर लिया ॥ २०० ॥ इस प्रकारसे विविध मनोहर रूप धारण करनेवाले हनुमानजी समुद्रके पार जाय इसका भली भाँति विचारकर कि,अब क्या करना होगा, अपना कार्य सिद्ध करनेके लिये बहुतही छोटा शरीर धारण करते हुये ॥ २०१ ॥ फिर वह महामेघसम समूहाकार महात्मा हनुमानजी लंबनामक पर्वतकेशिखरपर कूदे वह पर्वत विचित्र शृङ्ग समूहसे अलंकृत और परमसमृद्धि सम्पन्न था, व इसपर केतक,उद्दालक और नारियलके बहुतही वृक्ष लग रहे थे ॥ २०२ ॥ इस प्रकारसे हनुमानजी समुद्रके तीरको प्राप्त होकर त्रिकूट पर्वतके शिखर पर बसीहुई लंका नगरीको देख बडे आकारसे अपनारूप छोटा बनाय मृग और पक्षियोंको त्रासित करते हुये इस त्रिकूट पर्वत पर कूदे॥२०३॥उस कालमें दानव और सर्पगणोंसे व्याप्त महा तरंगशाली महासागर अपने बल और पराक्रमसे नांघकर और उसके किनारेपर पदार्पण करके अमरावतीके समान लंका नगरी हनुमानजीने देखी ॥ २०४ ॥

सचारुनानाविधरूपधारीपरंसमासाद्यसमुद्रतीरम् ॥ परैरशक्यंप्रतिपन्नरूपःसमीक्षितात्मासमवेक्षितार्थः ॥२०१॥ ततःसलंबस्यगिरेःसमृद्धे विचित्रकूटेनिपपातकूटे॥सकेतकोद्दालकनारिकेलेमहाभ्रकूटप्रतिमोमहात्मा॥२०२॥ततस्तु संप्राप्यसमुद्रतीरंसमीक्ष्यलंकांगिरिवर्यमूर्ध्नि॥कपिस्तुतस्मिन्निपपातपर्वतेविधूयरूपंव्यथयन्मृगद्विजान्॥२०३॥ससागरंदानवपन्नगायुतंबलेनविक्रम्यमहोर्मिमालिनम् ॥ निपत्यतीरेचमहोदधेस्तदाददर्शलंकाममरावतीमिव॥२०४॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये चतुर्विंशतिसाहस्र्यां संहितायांसुंदरकांडेप्रथमःसर्गः॥१॥ ससागरमनाधृष्यमतिक्रम्यमहाबलः ॥ त्रिकूटस्यतटेलंकांस्थितःस्वस्थोददर्शह ॥१॥ ततःपादपमुक्तेनपुष्पवर्षेणवीर्यवान् ॥ अभिवृष्टस्ततस्तत्र बभौपुष्पमयोहरिः॥२॥ योजनानांशतंश्रीमांस्तीर्त्वाप्युत्तमविक्रमः॥ अनिःश्वसन्कपिस्तत्रनग्लानिमधिगच्छति॥३॥शतान्यहयोजनानांक्रमेयंसुबहून्यपि॥किंपुनःसागरस्यांतंसंख्यातंशतयोजनम्॥४॥सतुवीर्यवतांश्रेष्ठःप्लवतामपिचोत्तमः॥जगामवेगवाँल्लंकांलंघयित्वामहोदधिम्॥५॥

इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥ महाबलवान् हनुमानजीने अपार समुद्रको अपने बलसे नांघकर त्रिकूटपर्वतके तटपर जाय सावधान होकर लंकापुरी देखी ❋ ॥१॥ महावीर्यवान् हनुमानजी उस पर्वतके लगे हुये वृक्षोंकी पुष्पवर्षासे युक्त होनेके कारण पुष्पमयवानरोंके समानशोभित होने लगे ॥ २ ॥ अतिश्रेष्ठ विक्रमवाले श्रीपवनकुमार शतयोजनका समुद्र नांघकर न तो कुछ हांफे और न उनको कुछ थकावट प्राप्त हुई ॥ ३ ॥ फिर हनुमानजी विचारने लगे कि, इस समुद्रके लांघनेको तो केवल शतयोजनकी मर्यादा है । और हम तो हजार लाखों शत योजन सरलतासे लांघ सकते हैं ॥ ४ ॥ यह विचार कर वह श्रेष्ठ वीर्यवान् वानरगणोंमें अग्रणीय महावेगवान् हनुमानजी समुद्रको लांघ लंकापुरीको गये ॥ ५ ॥

❋ रागनी—गये मारुत सागरतीर ॥ टेक ॥ चढे पहाड चितैं इस उत कपि लंकाको विस्तीर ॥१॥ देखे गज रथ अश्व अनेकन पैदल दलकी भीर ॥ २ ॥ यह निहारि हनुमंत निडर ह्वै चले सुमिरि रघुबीर ॥ ३ ॥ द्वार निहार लंकनी के इक मुष्टि के हन्यो, गंभीर ॥ ४ ॥ 'नारद' उछल कोट लंकापै चढचो पवनसुत वीर ॥ ५ ॥

जानेके समय अनेक२श्याम वर्णवाले दूबोंके खेतनीलरंगके मधुसहित सुगन्धित पर्वत सहित बनोंके बीचवाले मार्गमें होकर गये॥६॥वृक्षोंसे युक्त बहुत सारे पर्वत और फूली हुई काननश्रेणी इन सबके बीचमेंहोकर महातेजस्वी वानरश्रेष्ठ हनुमानजी विचरने लगे ॥ ७ ॥ पवनकुमार हनुमानजी लंबपर्वतपर ही टिके रहकर गिरि त्रिकूटपर बसी हुई लंकानगरी और वहांके वन उपवन समस्त देखे॥८॥सरलकार्णिकार, फूला हुआ खजूर, चिरौंजी, खिन्नी; महुआ,कैयकी ॥ ९ ॥ गन्धपूर्ण प्रियंगु, कदम्ब, शतावरी, असन, कोविदार, पुष्पितकरवीर ॥ १० ॥ यह व और भी बहुत फूलोंके भारसे झुके और शोभित, पक्षियोंसे युक्त, पवनसे कम्पायमान वृक्षसमूह ॥ ११ ॥ और कमलके पुष्पोंसे शोभित हंस व कारण्डवोंसे व्याप्त वापियें विविध रमणीक क्रीडापर्वत जलाशय ॥ १२ ॥ और सब

शाद्वलानिचनिलानिगंधवंतिवनानिच ॥ मधुमंतिचमध्येनजगामनगवंतिच॥६॥शैलांश्चतरुसंछन्नान्वनराजीश्चपुष्पिताः॥अभिचक्रामतेजस्वी हनुमन्प्लवगर्षभः ॥ ७ ॥ सतस्मिन्नचलेतिष्ठन्वनान्युपवनानिच ॥ सनगाग्रेस्थितांलंकांददर्शपवनात्मजः ॥ ८ ॥ सरलान्कर्णिकारांश्च खर्जूरांश्चसुपुष्पितान् प्रियालान्मुचुलिंदांश्चकुटजान्केतकानपि॥९॥प्रियंगून्गंधपूर्णांश्चनीपान्सप्तच्छदांस्तथा॥असनान्कोविदारांश्चकरवीरांश्चपुष्पितान्॥१०॥ पुष्पभारनिबद्धांश्चतथामुकुलितानपि॥ पादपान्विहगाकीर्णान्पवनाधूतमस्तकान्॥११॥ हंसकारंडवाकीर्णावापीःपद्मोत्पलावृताः॥आक्रीडान्विविधान्रम्यान्विधांश्चजलाशयान् ॥१२॥ सततान्विविधैर्वृक्षैःसर्वर्तुफलपुष्पितैः ॥ उद्यानानिचरम्याणिददर्शकपिकुंजरः ॥१३॥समासाद्यचलक्ष्मीवाँल्लंकांरावणपालिताम् ॥ परिखाभिःसपद्माभिःसोत्पलाभिरलंकृताम् ॥ १४ ॥ सीतापहरणात्तेनरावणेनसुरक्षिताम् समंताद्विचरद्भिश्चराक्षसैरुग्रधन्वभिः ॥ १५ ॥ कांचनेनावृतांरम्यांप्राकारेणमहापुरीम् ॥ गृहैश्चगिरिसंकाशैःशारदांबुदसन्निभैः ॥ १६ ॥ पांडुराभिः प्रतोलीभिरुच्चाभिरभिसंवृताम् ॥ अट्टालकशताकीर्णांपताकाध्वजशोभिताम् ॥ १७ ॥

ऋतुओंमें फल पुष्प देनेवाले अनेक प्रकारके वृक्षोंसे युक्त मनोहर फुलवाडियेंउन कपिकुंजर हनुमानजीने देखीं ॥१३॥ इस प्रकार देखते भालते श्रीमान् पवन कुमार हनुमानजी रावणसे पाली जाती हुई लंकापुरीके निकट आयकर देखते हुये कि,कमलपुष्पोंसे युक्त खाई जो लंकाके चारों ओर हैं,उनसे वह पुरी और भी शोभित होरही है॥१४॥सीताजीको जो रावण हरणकरले आया था,इससे वह पुरी और भी अधिक रक्षित हो रही थी,और राक्षसगण धनुष् उठाये उसके चारोंओर घूमते थे॥१५॥चारों ओर सुवर्णकी अति रमणीक चहारदिवारी थीऔर शरद्कालके मेघकेसमान उज्ज्वल और पर्वताकार गृहसमूह बने थे॥१६॥ पांडुवर्णकी अति ऊंची सुहावन मनभावन खिडकियोंकी कतार, गलियें, ध्वजा और पताका युक्त सैकडों हजारों अटारियें शोभित होरही थीं ॥ १७ ॥

औरसुवर्णमयनगरके दिव्यफाटकोंपर लतापत्रादिककी वन्दनवारें लगीथीं इनसबसेयह नगरीमनोहरी लंका चारोंओरसे पूर्ण देवताओंकीपुरीकेसमान शोभायमान हनुमानने देखी॥ १८॥श्रीमान् देव पवनकुमारजी ने पर्वतके शिखर पर वसी हुई सैकडों हजारों श्वेतवर्णके परम सुन्दर मंदिरोंसे युक्त देखी कि; यह पुरी मानो आकाशको छुए ही लेती है ॥१९॥ यह नगरी राक्षस राजरावणसे पाली जाती थी और विश्वकर्माजीने इसको बनाया था कपिकेसरी हनुमान्जीने देखा कि चारों ओर बडी २ अटारियोंके होनेसे लंका पुरी मानो आकाशको उडी जाती है ॥२०॥ खाइयें और चहारदीवारी तो मानो उस पुरीकी मोटी जांघें सागर और वनराजि उसके वस्त्र शतघ्नी और शूल आदि अस्त्र शस्त्र उसके केश; और अटा अटारियें मानो उसके कर्णफूल थे ॥२१॥ विश्वकर्माने बहुतही मन लगायकर मानो उस पुरी

तोरणैःकांचनैर्दिव्यैर्लतापंक्तिविराजितैः॥ ददर्शहनुमाल्लँकांदेवोदेवपुरीमिव॥१८॥गिरिमूर्ध्निस्थितांलकांपांडुरैर्भवनैःशुभैः॥ ददर्शसकपिःश्रीमान्पुरीमाकाशगामिव ॥ १९ ॥ पालितांराक्षसेंद्रेणनिर्मितांविश्वकर्मणा॥ प्लवमानामिवाकाशेददर्शहनुमान्कपिः॥२०॥वप्रप्राकारजघनांविपुलांबुवनांबराम्॥शतघ्नीशूलकेशांतामट्टालकावतंसकाम्॥२१॥मनसेवकृतांलंकांनिर्मितांविश्वकर्मणा॥द्वारमुत्तरमासाद्यचिंतयामासवानरः॥ ॥२२॥कैलासनिलयप्रख्यमालिखंतमिवांबरम्॥ध्रियमाणमिवाकाशमुच्छ्रितैर्भवनोत्तमैः ॥२३॥ संपूर्णांराक्षसैर्घोरैर्गुहामाशीविषैरिव ॥ तस्याश्चमहतींगुप्तिंसागरंचनिरीक्ष्यसः ॥ रावणंचरिपुंघोरंचिंतयामासवानरः ॥२४॥आगत्यापीहहरयो भविष्यंतिनिरर्थकाः ॥ नहियुद्धेनवैलंकाशक्याजेतुंसुरैरपि ॥२५॥ इमांत्वविषमांलंकांदुर्गांरावणपालिताम् ॥ प्राप्यापिसुमहाबाहुःकिंकरिष्यतिराघवः ॥ २६ ॥

को बनाया है। ऐसी लंकापुरी के उत्तर द्वारपर क्रमसे हनुमान्जी पहुंच कर चिंता करने लगे॥२२॥कैलास पर्वत के समान उस पुरी का यह उत्तर द्वार ऊंचा; और श्रेष्ठभवनों के समूहसे मानो आकाश मंडल धारण करके उसको रेखाकर बना रहा है ॥२३॥ हनुमान्जी वहां पहुंचकर; महाविषधर सर्पोंसे परिपूर्ण पर्वतकी गुफाके समान राक्षसोंसे भरी हुई सुरक्षित लंकानगरीके चारों ओर अपार समुद्र देखकर रावणको भयंकर शत्रु समझ इस प्रकारसे चिन्ता करने लगे ॥ २४ ॥ जो वानर गण किसी प्रकारसे यहां आय भी जावें, तोभी वह यहां पर सफल काम नहीं हो सकेंगे। क्योंकि देवता लोग भी युद्ध करके लंकाको जीतनेकी सामर्थ्य नहीं रखते ॥ २५ महाबाहु श्रीरामचद्रजी भी अति विषम रावणसे पाली जाती हुई इस दुर्गम लंकापुरीमें आकर क्या करेंगे? ॥ २६ ॥

ऐसा समझमें आता है कि राक्षस लोग साम, दाम और युद्धसे भी वश होनेवाले नहीं, न इनके निकट भेद ही डालने का अवकाश है ॥ २७ ॥ वेगवान् वालिकुमार वानर राज अंगद, नील, सुग्रीव और हम यह चार जन बलवान् वानरोंमें ही यहां आनेकी सामर्थ्य है और किसीमें नहीं ॥ २८ ॥ अच्छा जोहो सो हो, अब पहले तो यह जानना ठीक है, कि जानकीजी जीवित हैं या नहीं इसलिये प्रथम उनको जीवित देखना चाहिये, फिर इन बातोंकी चिन्ताकी जायगी॥२९॥उसके पीछे वानरोंमें कुंजर हनुमानजी पर्वत के शृंग पर बैठे २ मुहूर्त भरतक श्रीरामचंद्रजी के इष्टकार्य साधनमें रत हुए मनही मन चिंता करने लगे॥३०॥इस प्रकार चिन्ता करते २ मनमें यह बात समाई कि बलवान् और क्रूर स्वभाववाले राक्षसोंसे रक्षा की जाती लंकापुरीमें इसप्रकारसे हमारा प्रवेश करना उचित नहीं है॥३१॥ क्योंकि हमको उचित है कि जानकीजी के खोजनेके लिये, इन सब महावीर्य सम्पन्न महाबलवान् व महातेजस्वी राक्षसोंको धोखा

अवकाशोनसाम्नस्तुराक्षसेष्वभिगम्यते ॥ नदानस्यनभेदस्यनैवयुद्धस्यदृश्यते ॥२७॥ चतुर्णामेवहिगतिर्वानराणांतरस्विनाम् ॥ वालिपुत्रस्य नीलस्यममराज्ञश्चधीमतः ॥ २८ ॥ यावज्जानामिवैदेहींयदिजीवतिवानवा ॥ तत्रैवचिंतयिष्यामिदृष्ट्वातांजनकात्मजाम् ॥ २९ ॥ ततःसचिं तयामासमुहूर्तंकपिकुंजरः ॥ गिरेःशृंगेस्थितस्तस्मिन्रामस्याभ्युदयंततः ॥३०॥ अनेनरूपेणमयानशक्यारक्षसांपुरी॥प्रवेष्टुंराक्षसैर्गुप्ताक्रूरैर्बल समन्वितैः॥३१॥महोजसोमहावीर्यावलवंतश्चराक्षसाः ॥ वंचनीयामयासर्वेजानकींपरिमार्गता ॥ ३२ ॥ लक्ष्यालक्ष्येणरूपेणरात्रौलंकापुरी मया॥प्राप्तकालंप्रवेष्टुंमेकृत्यंसाधयितुमहत् ॥ ३३ ॥ तांपुरींतादृशींदृष्ट्वादुराधर्षांसुरासुरैः ॥ हनुमांश्चिंतयामासविनिःश्वस्यमुहुर्मुहुः ॥३४॥ केनोपायेनपश्येयंमैथिलींजनकात्मजाम् ॥ अदृष्टोराक्षसेंद्रेणरावणेनदुरात्मना ॥३५॥ नविनश्येत्कथंकार्यंरामस्यविदितात्मनः॥ एकामेकस्तु पश्येयंरहितेजनकात्मजाम् ॥३६॥ भूताश्चार्थाविनश्यंतिदेशकालविरोधिताः ॥ विक्लवंदूतमासाद्यतमःसूर्योदयेतथा ॥ ३७॥

दें ॥३२॥ इसलिये ऐसा अलक्ष्यरूप धारण करें कि जिससे कोई हमको देख न सके रात्रिमें लंकापुरीको देखें, इस बड़े भारी कार्य को पूरा करनेके लिये ऐसे ही रूप बनाकर लंकापुरी में पैठना ठीक है ॥३३॥ इस प्रकारसे हनुमानजी सुर असुरों को प्राप्त होनेके योग्य उस लंकापुरीको देखकर वारम्वार लम्बे २ श्वास ले चिंता करने लगे ॥३४॥ हम किस उपायसे दुरात्मा राक्षस राज रावण की दृष्टि से न देखे जाकर जनककुमारी सीताजीके देखनेको समर्थ होवें ॥३५॥ त्रिभुवन विदित श्रीरामचन्द्रजी का कार्य किसप्रकारसे सिद्ध होगा? और किस उपायसे हम इकले एकान्तमें बैठी हुई विजनवासिनी जानकीजी को देखेंगे? ॥३६॥ देशकाल के ज्ञानको न रखनेवाला दूत सिद्ध होनेवाले समस्त कार्योंको भी देश कालके विरुद्ध करके नाशकर देता है; जैसे सूर्य भगवान्के उदय होनेसे अन्धकारका विनाश

हो जाता है॥३७॥और स्वयं स्वामी अपने मंत्रियोंके सहित परामर्श करके और अकर्तव्य के विषयमें जो निश्चितार्थ जाननेवाली बुद्धि करता है, वह भी उस दूतके दोषसे सिद्ध नहीं होती क्योंकि मूढ अपने आपको पंडित माननेवाले दूतकार्योंका नाश कर देते हैं ॥३८॥ इस लिये किस उपायका आश्रय करनेसे कार्य भी नष्ट नहीं हो और हमको व्याकुलता भी न हो; और कैसे ही इस समुद्र का लांघना भी व्यर्थ न जाय॥३९॥विदितात्मा श्रीरामचन्द्रजी रावणका वध करनेको तैयार हुए हैं, इसलिये जो हमको राक्षसोंने कहीं देखा, तो उनका यह कार्य नष्ट हो जायगा ॥ ४० ॥ राक्षसोंका शरीर धारण करने वा और कोई रूप धारण करनेसे भी निशाचर लोगोंके अजाने रहना असंभव है। ऐसा करनेसे तो वह अवश्य हमको पहचान जायँगे॥४१॥हमको साफ मालूम पडता है कि पवन भी यहां पर गुप्तरूपसे विचरण करनेको समर्थ नहीं हैं, क्योंकि भयंकर कर्म करनेवाले राक्षस लोगोंको कुछ भी अविदित नहीं रहता यह सब ही कुछ जानते हैं॥४२॥यदि हम अपना भयं-

अर्थानर्थांतरेबुद्धिर्निश्चितापिनशोभते॥घातयंतीहकार्याणिदूताःपंडितमानिनः॥३८॥नविनश्येत्कथंकार्यंवैक्लव्यंनकथंभवेत् ॥ लंघनंचसमुद्रस्यकथंनुनभवेद्वृथा॥३९॥ मयिदृष्टेतुरक्षोभीरामस्यविदितात्मनः॥भवेद्व्यर्थमिदंकार्यंरावणानर्थमिच्छतः ॥ ४० ॥ नहिशक्यंक्वचित्स्थातुमविज्ञातेनराक्षसैः॥अपिराक्षसरूपेणकिमुतान्येनकेनचित्॥४१॥वायुरप्यत्रनाज्ञातश्चरेदितिमतिर्मम।।नह्यत्राविदितंकिंचिद्रक्षसांभीमकर्मणाम् ॥४२॥इहाहंयदितिष्ठामिस्वेनरूपेणसंवृतः ॥ विनाशमुपयास्यामिभर्तुरर्थश्चहास्यति ॥ ४३ ॥ तदहंस्वेनरूपेणरजन्यांह्रस्वतांगतः ॥ लंकामभिपतिष्यामिराघवस्यार्थसिद्धये ॥४४॥ रावणस्यपुरींरात्रौप्रविश्यसुदुरासदाम् ॥ प्रविश्यचवनंसर्वंद्रक्ष्यामिजनकात्मजाम्॥४५॥ इतिनिश्चित्यहनुमान्सूर्यस्यास्तमयंकपिः॥आचकांक्षेतदावीरोवैदेह्यादर्शनोत्सुकः ॥४६॥ सूर्येचास्तंगतेरात्रौदेहंसंक्षिप्यमारुतिः ॥ वृषदंशकमात्रोऽथबभूवाद्भुतदर्शनः ॥४७॥ प्रदोषकालेहनुमांस्तूर्णमुत्पत्यवीर्यवान् ॥ प्रविवेशपुरींरम्यांप्रविभक्तमहापथाम् ॥ ४८ ॥

कर रूपधारण करके इस स्थानमें टिके रहे, तो हमारा नाश होगा और प्रभुका कार्य भी नष्ट हो जायगा॥४३॥इसलिये हम अपने शरीरको बहुत छोटा बनाय श्रीरामचन्द्रके कार्यकी सिद्धिके निमित्त रात्रिके समय लंकापुरीमें प्रवेश करेंगे ॥४४॥ इस दुरासद रावणकी लंकानगरीमें रात्रिको प्रवेशकर प्रतिमंदिरमें जानकीजीको खोजकर देखेंगे ॥४५॥ इस प्रकारसे अपने चित्तमें विचार महाकपि हनुमानजी जानकीजीके दर्शन का अभिलाष कर सूर्य भगवान्के अस्त होनेकी राह परखते रहे ॥४६॥इस प्रकार जब सूर्य भगवान् अस्त होगये, तब हनुमानजीने अपने शरीरको सकोडकर बिल्लीके समान छोटा और देखनेमें अति अद्भुत बनाया॥४७॥ और प्रदोष कालमें वह वीर्यवान् पवन कुमार हनुमानजी उसी क्षण कूदकर, सर्व भाँतिसे बडी सडकोंवाली रमणीय लंकापुरीमें प्रवेश करते हुये ॥ ४८ ॥

वहां पर हनुमानजीने देखाकि, शत २ राजमंदिरोंकी श्रेणीसे अनेक सुवर्ण मय खंभोंसे; व सुवर्णमय झरोखोंसे यह लंका गन्धर्वनगरी के समान जान पडती है ॥४९॥ उन्होंने उस पुरीके सत मंजिले आठ महले स्थान देखे, किसी स्थानमें स्फटिक औररत्नजडे हुए और कहीं सम्पूर्ण सोनेकेही थे इस प्रकारकी रचनाओंसे राक्षसोंके घर शोभित थे ॥५०॥ राक्षसोंके मंदिरमें स्फटिक मणि व सुवर्णके जो स्थल बने थे उनसे अधिक शोभायमान हो रहेथे, उनमें सुवर्ण की बंदनवारें बंधरहीथीं, वेही गृह सब ओरसे सजे सजाये, लंकाको प्रकाशित कर रहेथे ॥५१॥ बैदेहीजीके दर्शनकी इच्छा किये महाकपि हनुमानजी इस प्रकारकी अचिन्त्य और अद्भुत आकार वाली लंकापुरीको देख कर प्रथम अति हर्षित हो, फिर उदासीन होगये॥५२॥ हनुमानजीने देखा कि रावण रक्षित, यशस्विनी लंकानगरी, परस्पर श्रेणीबद्ध श्वेत

प्रासादमालावितताांस्तंभैः कांचनसन्निभैः ॥ शातकुंभनिभैर्जालैर्गंधर्वनगरोपमाम् ॥४९॥ सप्तभौमाष्टभौमैश्चसददर्शमहापुरीम् ॥ स्थलैःस्फटिकसंकीर्णैःकार्तस्वरविभूषितैः ॥ तैस्तैःशुशुभिरेतानिभवनान्यत्ररक्षसाम् ॥५०॥ कांचनानिविचित्राणितोरणानिचरक्षसाम् ॥ लंकामुद्द्योतयामासुः सर्वतःसमलंकृताम् ॥ ५१ ॥ अचिंत्यामद्भुतकारांदृष्ट्वालंकांमहाकपिः ॥ आसीद्विषण्णोहृष्टश्चवैदेह्यादर्शनोत्सुकः ॥ ५२ ॥ सपांडुराविद्धविमानमालिनींमहार्हजांबूनदजालतोरणाम् ॥ यशस्विनीरावणबाहुपालितांक्षपाचरैर्भीमबलैःसुपालिताम् ॥५३॥ चन्द्रोपिसाचिव्यमिवास्य कुर्वंस्तारागणैर्मध्यगतोविराजन् ॥ ज्योत्स्नावितानेनवितत्यलोकानुत्तिष्ठतेनैकसहस्ररश्मिः ॥ ५४ ॥ शंखप्रभंक्षीरमृणालवर्णमुद्गच्छमानंव्यवभासमानम् ॥ ददर्शचंद्रंसकपिप्रवीरःपोप्लूयमानंसरसीवहंसम् ॥५५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥ छ ॥ सलंबशिखरेलंबेलंबतोयदसन्निभे ॥ सत्वमास्थायमेधावीहनुमान्मारुतात्मजः ॥ १ ॥

बडे धवरहरोंसे महा मूल्यवान स्वर्ण मय जाल और फाटकोंसे अलंकृत है और भयंकर बलवान् राक्षसोंकी सेनाका बल चारोंओरसे उसकी रक्षा कर रहा है ॥५३॥ इस समयमें चन्द्रमा अनेक सहस्र किरणोंको फैलाय और उनकी चांदनी छिटकाय उससे समस्तलोकोंको ढक तारागणोंके मध्यमें विराजमान हो मानो हनुमानजी की सहायता करनेकी वासनासे ही उदय होने लगा॥५४॥ पवन कुमार हनुमानजीने देखा कि सरोवरमें हंस जिस प्रकार अतिशय उछला करते हैं, वैसेही क्षीर और मृणाल वर्ण, शंखके समान शशांक भी अतिशय विराजमान होकर उदय हो रहा है॥५५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥ देशकालके जाननेवाले महाबलवान् वानरोंमें श्रेष्ठ अति ऊंचे शिखरवाले और लम्बायमान मेघके समान लम्बमान पर्वत पर टिके हुए महावीरजी सत्वका आश्रय

करके ॥ १ ॥ रात्रिकालके समयमें महाबली कपिकुंजर लंकापुरीमें पैठे । वह लंका रमणीक वन जलसे युक्त, व रावणसे पालित ॥ २ ॥ शरद् कालीन बादलोंके समान श्वेतराक्षसों के मंदिरोंसे शोभायमान, समुद्र समान गंभीर गर्जनासे परिपूर्ण, सागर स्पर्शकारी पवनसे सेवित ॥३॥ परम हृष्ट पुष्ट राक्षसोंकी सेनासे चारोंओरसे रक्षित अलकापुरी के समान, बाहरके द्वारोंपर परम सुन्दर मदमत्त हाथियोंसे शोभित, सुधा संस्कार होनेके कारण श्वेतवर्णके, बाहर भीतर वाले द्वारोंसे युक्त ॥ ४ ॥ भोगवती सर्पोंकी पुरीके समान सब ओर सर्पोंसे शोभायमान, और राक्षसोंकी सीमासे रचित दामिनी युक्त बादलोंसे घिरी; तारागणोंसे शोभित ॥५॥ इन्द्रकी अमरावती पुरीके समान प्रचंड पवनके शब्दसे शब्दायमान सुवर्णकी बडी चहार दिवारीसे घिरी थी ॥६॥ और किंकिणीजालके समूहके प्रतिध्व

निशिलंकांमहासत्त्वोविवेशकपिकुंजरः॥रम्यकाननतोयाढ्यांपुरींरावणपालिताम् ॥२॥ शारदांबुधरप्रख्यैर्भवनैरुपशोभिताम् ॥ सागरोपमनिर्घोषांसागरानिलसेविताम्॥३॥सुपुष्टबलसंपुष्टांयथैवविटपावतीम् ॥ चारुतोरणनिर्यूहांपांडुरद्वारतोरणाम्॥४॥भुजगाचरितांगुप्तांशुभांभोगवतीमिव ॥ तांसविद्युद्घनाकीर्णांज्योतिर्गणनिषेविताम् ॥५ ॥ चंडमारुतनिर्ह्रादांयथाचाप्यमरावतीम् ॥ शातकुम्भेनमहताप्रकारेणाभिसंवृताम् ॥६॥ किंकिणीजालघोषाभिःपताकाभिरलंकृताम् ॥ आसाद्यसहसाहृष्टःप्राकारमभिपेदिवान्॥७॥विस्मयाविष्टहृदयःपुरीमालोक्यसर्वतः ॥ जांबूनदमयैर्द्वारैर्वैदूर्यकृतवेदिकैः ॥८॥ मणिस्फटिकमुक्ताभिर्मणिकुट्टिमभूषितैः ॥ तप्तहाटकनिर्यूहैराजतामलपांडुरैः ॥९॥ वैदूर्यकृतसोपानैः स्फाटिकांतरपांसुभिः ॥ चारुसंजवनोपेतैःखमिवोत्पतितैः शुभैः ॥ १० ॥ क्रौंचबर्हिणसंघुष्टैराजहंसनिषेवितैः ॥ तूर्याभरणनिर्घोषैः सर्वतःपरिनादिताम् ॥ ११ ॥

निसे गुंजायमान पताकाओंसे सजी धजी लंकापुरीके किलेकी भीत पर हनुमानजी उछलकर चढगये ॥७॥ उस भीत परसे उस पुरीको सब ओरसे निहार पवनकुमार बडेही विस्मित हुयेकारण कि उस पुरीके सम्पूर्ण द्वार सुवर्णमय थे और उनमें चौखटेंभी सुवर्णही की लगी थीं॥८॥उस पुरीमें द्वारोंके निकटवाली भीतोंकी चिनाई, मणि, स्फटिकमणि और मोतियोंसे हुई थी इसलिये वहद्वार अतिशय शोभायमान हो रहे थे जिनके ऊपरका भाग सुवर्ण और चांदीसे बनाया गया था, ऐसे तप्त सुवर्ण के बने मतवालेसे हाथी भी उन द्वारोंपर धरे थे॥९॥द्वारों में गमन करने के अर्थ वैदूर्य मणि की सीढियाँ बनी थीं और उन द्वारोंका सम्पूर्ण भीतरीदेश भी वैदूर्यमणियोंसे बनाया था, उन द्वारोंके ऊपर अत्युत्तम सभा मंदिर बने मानो आकाशसे बातें कर रहे थे ॥ १० ॥ उन द्वारों पर क्रौंच मयूरादि पक्षी

सुहावनी मनभावनी बोली बोलरहे थे, राज हंसभी विभूषित हो रहे थे नगाडे और आभूषणों के शब्द की गुंजार वझनकारसे वह सब ओरसे शब्दायमान हो रही थी ॥११॥ कुबेर की अलका नाम पुरीके समान आकाश मंडल को भेदती हुई लंकापुरी को देख हनुमानजी अत्यन्त हर्षको प्राप्त हुये ॥१२॥ उस राक्षस नाथ रावणकी श्रेष्ठ ऋद्धिमती लंका नगरीको देखकर वीर्यवान् हनुमानूजी चिंताकरने लगे॥१३॥रावणकी नियत कीहुई सेना आयुध हाथमें लिये सर्वदा जिस प्रकार इसकी रक्षाकरती है जिससे और कोई भी बलपूर्वक इस पूरीमें चढाई करके नहीं आ सकता ॥१४॥ कुमुद, अंगद, महाकपि सुषेण, अथवा मैन्द और द्विविद येही कई एक जन इस प्रसिद्ध लंकापुरीमें आ सकते हैं ॥१५॥ और सूर्यपुत्र सुग्रीवजी, कुशपर्व सदृश रोमवाले ऋक्ष वानरोंमें श्रेष्ठ व जाम्बवानजी हम सब, यही लोग यहां आ सकते हैं और किसीमे यहां पहुँचनेकी गति नहीं ॥१६॥ यह सब बातें विचारते २ हनुमानूजीको अकस्मात् महाबाहु श्रीरामचन्द्रजीके

वस्वोकसारप्रतिमांसमीक्ष्यनगरींततः ॥ खमिवोत्पतितांलंकांजहर्षहनुमान्कपिः॥१२॥तांसमीक्ष्यपुरींलंकांराक्षसाधिपतेःशुभाम् ॥ अनुत्त मामृद्धिमतींचिंतयामासवीर्यवान् ॥१३॥ नेयमन्येननगरीशक्याधर्षयितुंबलात् ॥ रक्षितारावणबलैरुद्यतायुधपाणिभिः ॥ १४ ॥ कुमुदां गदयोर्वापिसुषेणस्यमहाकपेः ॥ प्रसिद्धेयंभवेद्भूमिर्मैन्दद्विविदयोरपि ॥१५॥विवस्वतस्तनूजस्यहरेश्वकुशपर्वणः ॥ ऋक्षस्यकपिमुख्यस्यमम चैवगतिर्भवेत् ॥ १६ ॥ समीक्ष्यचमहाबाहोराघवस्यपराक्रमम् ॥ लक्ष्मणस्यचविक्रांतमभवत्प्रीतिमान्कपिः ॥१७॥ तांरत्नवसनोपेतांगो ष्ठागारावतंसिकाम् ॥ यंत्रागारस्तनीमृद्धांप्रमदामिवभूषिताम् ॥ १८ ॥ तांनष्टतिमिरांदीपैर्भास्वरैश्चमहाग्रहैः ॥ नगरींराक्षसेंद्रस्यसददर्शमहा कपिः ॥ १९ ॥ अथसाहरिशार्दूलंप्रविशंतमहाकपिम् ॥ नगरीस्तेनरूपेणददर्शपवनात्मजम् ॥ २० ॥ सातंहरिवरंदृष्ट्वालंकारावणपालिता ॥ स्वयमेवोत्थितातत्रविकृताननदर्शना ॥ २१ ॥

पराक्रमकी और उनके छोटे भाई लक्ष्मणजीके विक्रमकी याद आ गई, बस इसबातके याद आतेही, हनुमानूजीका विषाद दूर होकर प्रसन्न होगये॥१७॥रत्नमय गृह जो बन रहे थे वही मानो लंकाकेवसन हैं उनको पहरे गोष्ठ और बडे२गृहोंको कर्णभूषण बनाये धवरहरे आदिकोंके ऊपरवाले मुख्यद्वारोंको स्तनकिये इसप्रकार सर्व भाँतिसे भूषित सब भूषण धारण किये लंका नवीन स्त्रीहीके समानथी॥१८॥अनेक प्रकारकेरत्नोंसे प्रकाशमान भवनोंमें जो दीपक जल रहे थे इससे वहां पर अंध कारका लेशमात्रभी नहीं दिखाई देता था, इस भाँति रावणकी नगरी लंका महाकपि हनुमानूजीने देखी ॥१९॥ उसके पीछे वानरश्रेष्ठ महाकपि हनुमान् जी प्रवेश करतेही हैं कि, इतनेमें स्वयं लंका अपनी अधिष्ठात्री देवताकी मूर्तिसे हनुमानूजीको देखनेको आई ॥२०॥ इन वानरवरको देख रावणपालित महा

विकरालमुखी लंका अपने आपही उठधाई ॥ २१ ॥ और उन महावीर पवनकुमारका आगा घेर कर स्थिर हुई फिर घोर शब्दकर पवननंदनसे बोली ॥२२॥ हे वनवासी ! जब तक तुम्हारी देहमें प्राण रहें तबतक सत्यही सत्य बता दो कि, तुम कौन हो और किस कारणसे यहांपर आये हो? ॥२३॥ हे वानर ! तुम इस लंकामें किसी प्रकारसे भी प्रवेश नहीं कर सकोगे क्योंकि रावणकी सेना सब प्रकार चारों ओरसे इस पुरीकी रक्षा कर रही है॥२४॥तब वीर्यवान् हनुमान्जी सामने खड़ी हुई लंकानगरीसे कहने लगे कि, जो तुम हमसे पूछती हो हम तुम्हारे प्रश्नका ठीक उत्तर पीछेसे देंगे ॥ २५ ॥ परन्तु हे तीक्ष्णनेत्रवाली ! तुम क्यों पुरके द्वारपर खडी हुई हो ? और किस कारणसे क्रोधयुक्त होकर हमें डरा रही हो पहले यह कहो ? ॥ २६ ॥ पवनकुमार हनुमान्जीके वचन सुनकर

पुरस्तात्तस्यवीरस्यवायुसूनोरतिष्ठत ॥ मुंचमानामहानादमब्रवीत्पवनात्मजम् ॥ २२ ॥ कस्त्वंकेनचकार्येणइहप्राप्तोवनालय ॥ कथयस्वेहयत्तत्त्वंयावत्प्राणाधरंतिते ॥२३॥ नशक्यंखल्वियंलंकाप्रवेष्टुंवानरत्वया॥रक्षितारावणबलैरभिगुप्तासमंततः॥२४॥ अथतामब्रवीद्वीरोहनुमानग्रतःस्थिताम् ॥ कथयिष्यामितत्तत्त्वंयन्मांत्वंपरिपृच्छसे ॥२५॥ कात्वंविरूपनयनापुरद्वारेऽवतिष्ठसे ॥ किमर्थंचापिमांक्रोधान्निर्भर्त्सयसिदारुणे॥ ॥२६॥ हनुमद्वचनंश्रुत्वालंकासाकामरूपिणी॥ उवाचवचनंक्रुद्धापरुषंपवनात्मजम्॥२७॥ अहंराक्षसराजस्यरावणस्यमहात्मनः ॥ आज्ञाप्रतीक्षादुर्धर्षारक्षामिनगरीमिमाम् ॥ २८ ॥ नशक्यंमामवज्ञायप्रवेष्टुंनगरीमिमाम् ॥ अद्यप्राणैःपरित्यक्तःस्वप्स्यसेनिहतोमया ॥२९॥ अहंहिनगरीलंकास्वयमेवप्लवंगम ॥ सर्वतःपरिरक्षामिअतस्तेकथितंमया ॥ ३० ॥ लंकायावचनंश्रुत्वाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ यत्नवान्सहरिश्रेष्ठःस्थितःशैलइवापरः ॥ ३१ ॥ सतांस्त्रीरूपविकृतांदृष्ट्वावानरपुंगवः ॥ आबभाषेऽथमेधावीसत्त्ववान्प्लवगर्षभः ॥ ३२ ॥

कामरूपिणी लंका क्रोधातुर होकर उनसे कठोर वचन बोली ॥ २७ ॥ हम राक्षसराज रावणकी आज्ञाके वशमें रहकर इस लंकानगरीकी रक्षा किया करती हैं ऐसा सामर्थ्य किसीमें नहीं है कि, जो हमको जीत सके ॥२८॥ तुम हमारा निरादर करके इस नगरके मध्य प्रवेश करनेकी सामर्थ्य नहीं रखते हो, तुम हमसे आज निहत हो प्राणोंको छोड़ महानिद्राको प्राप्त होगे ॥ २९ ॥ हे कपिवर! हमहीं साक्षात्लंकाकी अधिष्ठात्री हैं और सर्वभावसे सदा इसकी रक्षा किया करती हैं इसी लिये हमने तुमको भय दिखलाया और यह बात कही ॥ ३० ॥ वानरश्रेष्ठ पवननंदन हनुमान्जी लंकाके यह वचन सुन उसको पराजित करनेकी कामनासे यत्न कर दूसरे पर्वतके समान उसके आगे खड़े होगये ॥ ३१ ॥ फिर वीर्यवान् बुद्धिमान् वानरश्रेष्ठ पवनकुमार हनुमान्जी

उस विकटाकार स्त्रीरूप धारिणी लंकाकी ओर देखकर कहने लगे ॥३२॥ अति कौतूहल होनेके कारण धवरहरे, तोरण और अटारियोंसे परिपूर्ण लंकानगरीके देखनेकी इच्छा किये हम यहांपर आये हैं ॥ ३३ ॥ इस नगरीके वन उपवन कानन और अच्छे २ भवन देखनेकी वासनासे हमारा आना यहांपर हुआ है ॥ ३४ ॥ कामरूपिणी लंका हनुमानूजीके यह वचन सुनकर फिर उनसे अतिघोर कठोर वचन बोली ॥ ३५ ॥ रे अनसमझ वानर नीच ! यह पुरी राक्षसराज रावणसे पाली जाती है सो तू हमको बिना जीते इसका दर्शन न कर सकेगा॥३६॥तब कपिश्रेष्ठ हनुमानूजी उस राक्षसी रूप धारिणी लंका अधिष्ठात्रीसे बोले कि,हे भद्रे ! इस नगरीका दर्शनकर हम फिर अपने स्थानको चले जायँगे ॥ ३७ ॥ यह सुन लंकाने भयंकर नादकर अतिवेगसे हनुमानूजीको चरणका

द्रक्ष्यामिनगरींलंकांसाट्टप्राकारतोरणाम् ॥ इत्यर्थमिहसंप्राप्तःपरंकौतूहलंहिमे ॥ ३३ ॥ वनान्युपवनानीहलंकायाःकाननानिच ॥ सर्वतोगृहमुख्यानि द्रष्टुमागमनंहिमे ॥ ३४ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वालंकासाकामरूपिणी ॥ भूयएवपुनर्वाक्यंबभाषेपरुषाक्षरम् ॥ ३५ ॥ मामनिर्जित्य दुर्बुद्धेराक्षसेश्वरपालिताम् ॥ नशक्यंह्यद्यतेद्रष्टुंपुरीयंवानराधम ॥३६॥ ततःसहरिशार्दूलस्तामुवाचनिशाचरीम् ॥ दृष्ट्वापुरीमिमांभद्रेपुनर्यास्येयथागतम् ॥ ३७ ॥ ततःकृत्वामहानादंसावैलंकाभयंकरम् ॥ तलेनवानरश्रेष्ठंताडयामासवेगिता ॥ ३८ ॥ ततःसहरिशार्दूलोलंकयाताडितोभृशम् ॥ ननादसुमहानादंवीर्यवान्मारुतात्मजः ॥ ३९ ॥ ततःसंवर्तयामासवामहस्तस्यसोऽङ्गुलीः ॥ मुष्टिनाऽभिजघानैनांहनूमान्क्रोधमूर्च्छितः ॥४०॥ स्त्रीचेतिमन्यमानेननातिक्रोधःस्वयंकृतः ॥ सातुतेनप्रहारेणविह्वलांगीनिशाचरी ॥ पपातसहसाभूमौविकृताननदर्शना ॥४१॥ ततस्तुहनुमान्वीरस्तांदृष्ट्वाविनिपातिताम् ॥ कृपांचकारतेजस्वीमन्यमानःस्त्रियंचताम् ॥४२॥ ततोवैभृशमुद्विग्नालंकासागद्गदाक्षरम् ॥ उवाचागर्वितंवाक्यंहनूमंतंप्लवंगमम् ॥ ४३ ॥ प्रसीदसुमहाबाहोत्रायस्वहरिसत्तम ॥ समयेसौम्यतिष्ठंतिसत्त्ववंतोमहाबलाः ॥ ४४ ॥

प्रहार किया ॥ ३८ ॥ वीर्यवान् वानरशार्दूल पवननंदन हनुमानूजीने लंकासे अतिशय ताडित होकर घोरगर्जना करते हुये ॥ ३९ ॥ और बायें हाथकी उंगलियोंको सकोड बुक्का बांध क्रोधमे मूर्च्छितहो लंकाकेऊपर मुष्टिकाप्रहार किया ॥४०॥ उसको स्त्री समझकर हनुमानूजीने बहुत क्रोध नहीं किया औरबायें हाथसे एक साधारणसाही प्रहार किया परन्तु विकट मुखवाली और विकट दर्शन वाली राक्षसीरूपधारिणी लंका उस साधारणसे ही आघातके लगतेही कांपकर उसी समय पृथ्वीपर गिर गई ॥ ४१ ॥ उसको पृथ्वीपर गिरी हुई देख तेजस्वी और वीर्यवान् पवनकुमार हनुमानूजीने स्त्री समझ उसके ऊपर अनुग्रह प्रकाश किया॥४२॥ तब लंकादेवी अत्यन्त व्याकुल होकर गर्वरहित वाक्य और गद्गद कंठसे हनुमानजी को पुकार कर बोली ॥४३॥ हे प्रियदर्शन ! महा बलवान्

कपिश्रेष्ठ ! प्रसन्न होकर हमारा उद्धार करो स्त्री हत्या न करो ! हे सौम्य ! वीर्यसम्पन्न महाबलवान् पुरुष लोग स्त्री हत्या करनेके लिये कभी तैयार नहीं होते ॥४४॥ हे महाबलवान् वीर्यसम्पन्न कपिवर ! हमहीं स्वयं लंकाकी अधिष्ठात्री हैं तुमने अपने वीर्यके प्रभावसे सब प्रकार हमको पराजित किया है ॥४५॥ हे कपिश्रेष्ठ! स्वयं स्वयंभू ब्रह्माजीने हमको जो वरदान दिया था हम उसको वर्णन करती हैं, आप श्रवण कर उन्होंने यह कहा कि ॥४६॥ जब कि कोई वानर विक्रम प्रकाश करके तुमको अपने वशमें कर लेगा तबही तुम जान लेना कि, राक्षसोंको भय आय पहुँचा है॥४७॥हे प्रियदर्शन ! आज तुम्हारे दर्शन करनेसे वह ब्रह्माजीका नियत किया हुआ समय आय पहुँचा, यह इस अवश्य होनहार समयके टलनेकी किसी प्रकारसे संभावना नहीं है ॥४८॥ सीताके निमित्त दुरात्मा

अहंतुनगरीलंकास्वयमेवप्लवंगम ॥ निर्जिताहंत्वयावीरविक्रमेणमहाबल ॥ ४५ ॥ इदंचतथ्यंशृणुमेब्रुवंत्यावैहरीश्वर ॥ स्वयंस्वयंभुवादत्तंवरदानयथामम ॥४६॥ यदात्वांवानरःकश्चिद्विक्रमाद्वशमानयेत् ॥ तदात्वयाहिविज्ञेयंरक्षसांभयमागतम् ॥ ४७ ॥ सहिमेसमयःसौम्यप्राप्तोऽद्यतवदर्शनात् ॥ स्वयंभूविहितःसत्योनतस्यास्तिव्यतिक्रमः ॥ ४८ ॥ सीतानिमित्तंराज्ञस्तुरावणस्यदुरात्मनः ॥ रक्षसांचैवसर्वेषांविनाशःसमुपागतः ॥४९॥ तत्प्रविश्यहरिश्रेष्ठपुरींरावणपालिताम् ॥ विधत्स्वसर्वकार्याणियानियानीहवांछसि ॥५०॥ प्रविश्यशापोपहतांहरीश्वरःपुरींशुभांराक्षसमुख्यपालिताम् ॥ यदृच्छयात्वंजनकात्मजांसतींविमार्गसर्वत्रगतोयथासुखम् ॥५१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० च० सा० सुं० तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ सनिर्जित्यपुरींलंकांश्रेष्ठांतांकामरूपिणीम् ॥ विक्रमेणमहातेजाहनूमान्कपिसत्तमः ॥ १ ॥ अद्वारेणमहावीर्यःप्राकारमवपुप्लुवे ॥ निशिलंकां महासत्त्वो विवेशकपिकुंजरः ॥ २ ॥

राक्षस राज रावण और समस्त राक्षसोंके विनाशक काल आय पहुँचा है ॥ ४९ ॥ इसलिये हे कपिश्रेष्ठ ! तुम इस रावणकी पालित लंकापुरीमें प्रवेश कर अपनी इच्छानुसार सब कार्योंको पूरा करो जिस जिसकी तुमने इच्छा की है ॥५०॥ क्या कहें; राजा रावणसे पाली जाती हुई यह मनोहर लंकानगरी शाप ❀ ग्रस्त हुई है, तुम इसमें प्रवेश करके अपनी इच्छानुसार सब जगह यथा सुखसे गमन करके पतिव्रता जनक कुमारी सीताजी को ढूँढो ॥ ५१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ महाबलवान्, महातेजस्वी कपि श्रेष्ठ हनुमानजी अपने विक्रमसे कामरूपिणी पुरियोंमें श्रेष्ठ लंकाको भली भांतिसे जीतकर ॥१॥ वह महावीर्यवान् कपिकुंजर द्वार को छोड कूद कर प्राकार पर चढ रात्रिके समय लंकानगरीमें प्रवेश करते हुये॥२॥

❀ नंदीश्वरने शाप दिया था कि, जब इस पुरी में वानरराज प्रवेश करेंगे तबहीं इसका नाश हो जायगा ।

और कपिराज सुग्रीवजीके हितकारी हनुमानजीने इस लंकानगरीमें प्रवेश करके प्रथमही शत्रुगणोंके मस्तक पर अपना बायां चरण धर क्योंकि पंडित लोगोंने इसको शत्रुओंके पराजय करनेका मुख्य कारण बताया है ॥३॥ इस प्रकारसे महापराक्रमी पवन कुमार हनुमान्‌जी रात्रिके समय पुरीमें प्रवेश कर खिले हुए पुष्पोंके समूहसे सुशोभित राजमार्गमें गमन करने लगे ॥४॥ हनुमान्‌जीने देखा कि, हास्यसे उत्पन्न हुए मनोहर शब्दसे विनादित विविध भाँतिके बाजोंकी ध्वनि; हीरकखचित झरोखोंसे युक्त ॥५॥ और हीरे मोती मणियोंसे बने हुए झरोखोंवाले गृहोंसे भूषित और उनको सघनतासे मेघमाला विराजित आकाश मंडलके समान लंका शोभापाय रही है ॥६॥ पद्म स्वस्तिक आदि श्वेत बादलके समान राक्षसोंके मन्दिरोंसे लंकापुरी शोभित होकर चमक दमक रही थी ॥७॥ और सब ओरसे सर्वतोभद्र वर्ध मान नन्द्यावर्त स्वस्तिक आदिगृहोंसे शोभायमान थी, जिसमें चार द्वार भीतर व चारों ओरको द्वार लगे हों उसे सर्वतोभद्र कहते हैं; जो इसमें

प्रविश्यनगरींलंकांकपिराजहितंकरः ॥ चक्रेऽथपादंसव्यंचशत्रूणांस्तुमूर्धनि ॥ ३ ॥ प्रविष्टः सत्त्वसंपन्नोनिशायांमारुतात्मजः ॥ समहापथमास्थायमु क्तपुष्पविराजितम् ॥ ४ ॥ ततस्तुतांपुरींलंकांरम्यामभिययौकपिः ॥ हसितोत्कृष्टनिनदैस्तूर्यघोषपुरस्कृतैः ॥५॥ वज्रांकुशनिकाशैश्चवज्रजा लविभूषितैः ॥ गृहमेघैः पुरीरम्याबभासेद्यौरिवांबुदैः ॥६॥ प्रजज्वालतदालंकारक्षोगणगृहैःशुभैः ॥ सिताभ्रसदृशैश्चित्रैः पद्मस्वस्तिकसंस्थितैः ॥७॥ वर्धमानगृहैश्चापिसर्वतःसुविभूषितैः ॥ तांचित्रमाल्याभरणांकपिराजहितंकरः ॥८॥ राघवार्थेचरञ्श्रीमान्ददर्शचननंदच ॥ भवनाद्भवनंगच्छन्ददर्श कपिकुंजरः ॥९॥ विविधाकृतिरूपाणिभवनानिततस्ततः ॥ शुश्रावरुचिरंगीतंत्रिस्थानेस्वरभूषितम् ॥१०॥ स्त्रीणांमदनविद्धानांदिविचाप्सरसामि व ॥ शुश्रावकांचीनिनदंनूपुराणांचनिःस्वनम् ॥ ११ ॥ सोपाननिनदांश्चापिभवनेषुमहात्मनाम् ॥ आस्फोटितनिनादांश्चक्ष्वेडितांश्चततस्ततः ॥१२॥

पश्चिमकी ओर का द्वार न लगा हो तो इसेही नन्द्यावर्त कहते हैं; इससे हीदक्षिण द्वार न होनेसे वर्धमान, और पूर्वके द्वार न होनेसे स्वस्तिक कहते हैं, इन सब शुभदायक भवनोंको जिनमें अनेक प्रकारके चित्र विचित्र माला आदि भूषण धरे थे देखते भालते सुग्रीवजी के हितकारी हनुमानजी चले जाते थे ॥८॥ श्रीरामचन्द्रजीके कार्यको सिद्ध करनेके मानससे जाते हुए हनुमानजी लंकापुरीको देख २ बडेही आनन्दित होते थे, इस मंदिरसे उसपर कूद वह उसपरसे दूसरे परको कूद भली भाँति जानकीजीको खोजते थे ॥९॥ जब एक भवनसे दूसरे भवनमें जाते हुये विविधाकार और विविधरूप भवनोंको हनुमानजी देखने लगे तब हृदय कण्ठ और शिर इन स्थानोंमें उत्पन्न हुवा मन्द; मध्य और तारस्वर अलंकृत मनोहर गीत उन्होंने सुना ॥ १० ॥ स्वर्गमें रहने वाली अप्सरागणोंके रागके समान मदन मिश्रित स्त्रियोंके शब्द उनकी क्षुद्रघंटिका, व नूपुर आदिका शब्द श्रवण करते ॥ ११ ॥ उन महात्माओंके भवन समूहोंमें स्त्रियोंके सीढियोंपर चढने का शब्द भी सुनते कहीं

प्रसन्नतासे ताली बजाने का शब्द और कहीं कहीं सिंहनाद सुनते २ हनुमानजी चले ॥ १२ ॥ राक्षसोंके भवनोंमें मंत्रोंकाजप सुनते और बहुत स्थानोंपर राक्षसोंको वेदाध्ययन करते भी हनुमानजीने देखा ॥१३॥और कहीं २ राक्षसलोग रावणकी स्तुति करनेमें लग रहे हैं, और अनेक राक्षसगण राजमार्गको सर्व प्रकारसे घेरेहुए थे ऐसा हनुमानजीने देखा ॥ १४ ॥ अनन्तर जाते २ हनुमानजी मध्य छावनीपै आये जहां उन्होंने बहुतसे निशाचरोंको अवलोकन किया । उनमें कोई मुंडित मुंड, कोई दीक्षित, कोई जटाजूट धारी, कोई मृगचर्म इत्यादिके वस्त्र धारण किये थे यह भेदलेते फिरते थे ॥ १५ ॥ इनमें कुशोंकी मुट्ठीही किसी २ के हथियार थे, और किसी २ के अग्निकुण्ड अस्त्रशस्त्र थे, और उनमें कोई २ कूट मुद्गर और दंडको ही आयुध बनाये हुये थे ॥१६॥

शुश्रावजपतांतत्रमंत्रान्रक्षोगृहेषुवै ॥ स्वाध्यायनिरतांश्चैवयातुधानान्ददर्शसः ॥१३॥ रावणस्तवसंयुक्तान्गर्जतोराक्षसानपि ॥ राजमार्गसमावृत्यस्थितंरक्षोगणंमहत् ॥१४॥ ददर्शमध्यमेगुल्मेराक्षसस्यचरान्बहून् ॥ दीक्षिताञ्जटिलान्मुंडान्गोजिनांबरवाससः ॥१५॥ दर्भमुष्टिप्रहरणानग्निकुंडायुधांस्तथा ॥ कूटमुद्गरपाणींश्चदंडायुधधरानपि॥१६॥एकाक्षानेककर्णांश्चचलदेकपयोधरान् ॥ करालान्भुग्नवक्त्रांश्चविकटान्वामनांस्तथा ॥१७॥ धन्विनःखड्गिनश्चैवशतघ्नीमुसलायुधान् ॥ परघोत्तमहस्तांश्चविचित्रकवचोज्ज्वलान् ॥ १८ ॥ नातिस्थूलान्नातिकृशान्नातिदीर्घातिह्रस्वकान् ॥ नातिगौरान्नातिकृष्णान्नातिकुब्जान्नवामनान् ॥१९॥ विरूपान्बहुरूपांश्चसुरूपांश्चसुवर्चसः ॥ ध्वजिनः पताकिनश्चैवददर्शविविधायुधान् ॥ २० ॥ शक्तिवृक्षायुधांश्चैवपट्टिशाशनिधारिणः ॥ क्षेपणीपाशहस्तांश्चददर्शसमहाकपिः ॥ २१ ॥

और उन समस्त निशाचरगणोंकेमध्यमें किसी २ की एकही आंख थी, किसीके एकही कानथा, किसी २ की छातीपर एकही पयोधर झूल रहा था, उनके वदन विकराल थे. अंग अत्यन्त विषम थे आकार अतिविकट और अंग अतिछोटे थे ॥१७॥ सबहीके हाथमें धनुष, खड्ग, शीतघ्नी, मुसल और अतिश्रेष्ठ परिघ थे, और सबकेही शरीरोंपर विचित्र कवच चमक रहे थे ॥ १८ ॥ सबही न बहुत मोटे, न अति दुबले, न अति लम्बे, न अति छोटे, न अति गोरे, न अति काले; न अति कुबडे, न अति बौने ॥ १९ ॥ सबही विरूप, बहुरूप, बहुत तेजस्वी, और सबही ध्वजा पताका और विविध आयुध धारण किये हुये हनुमानजीने देखे ॥ २० ॥ उन राक्षसोंमें सबही शक्ति, वृक्ष, पटा, वज्र, धनवासी और फांसी धारण किये हुए थे ॥ २१ ॥

और सबही माला पहरे, चंदन लगाये, और श्रेष्ठ २ वस्त्राभूषण पहरे, अनेक प्रकारके वेष धारण करनेवाले इच्छानुसार चलनेवाले हनुमानजीने देखे ॥ २२ ॥ बहुत सारे तीक्ष्ण शूल और वज्र लिये महाबलवान् सावधानीसे एक लक्ष राक्षस मध्यम कक्षामें स्थित हुये ॥ २३ ॥ रावणकी आज्ञासे रनवासकी रक्षा करते हुए हनुमानजीने देखे, फिर सुवर्णमय रावणका बड़ी ध्वजायुक्त मंदिर देखा ॥ २४ ॥ वह राक्षसराजका विख्यात मंदिर पर्वतके बीच शिखर पर बना था, इसके चारों ओर परिखा बनी थी जिसमें अनेक प्रकारके श्वेत पद्म खिल रहे थे ॥ २५ ॥ चारों ओरसे यह भवन अति ऊंची भीतोंसे घिरा हुआ था; और साक्षात् स्वर्गसमान दिव्य भावसे सजरहा था मनोहर शब्द उसमेंसे उठ रहा था ॥२६॥ इसके द्वारपर घोडोंका शब्द प्रतिध्वनित होरहा था, वअति अद्भुत २ घोड बँधे थे, रथवान् विमानोंमें हाथी, व अश्व जुते हुए थे॥२७॥और सब भाँतिसे सजे सजाये हाथी घोडे द्वारपर

स्रग्विणस्त्वनुलिप्तांश्चवराभरणभूषितान् ॥ नानावेषसमायुक्तान्यथास्वैरचरान्बहून् ॥२२॥ तीक्ष्णशूलधरांश्चैववज्रिणश्चमहाबलान् ॥ शतसाहस्रमव्यग्रमारक्षंमध्यमंकपिः ॥२३॥ रक्षोधिपतिनिर्दिष्टंददर्शांतःपुराग्रतः ॥ सतदातद्गृहंदृष्ट्वामहाहाटकतोरणम् ॥२४॥ राक्षसेंद्रस्यविख्यातमद्रिमूर्ध्निप्रतिष्ठितम् ॥ पुंडरीकावतंसाभिःपरिखाभिःसमावृतम् ॥ २५॥ प्राकारावृतमत्यंतंददर्शसमहाकपिः ॥ त्रिविष्टपनिभंदिव्यंदिव्यनादविनादितम्॥२६॥वाजिह्रेषितसंघुष्टमद्भुतैश्चहयैस्तथा॥रथैर्यानैर्विमानैश्चतथाहयगजैःशुभैः॥२७॥वारणैश्चचतुर्दंतैःश्वताभ्रनिचयोपमैः॥भूषितैरुचिरद्वारंमत्तैश्चमृगपक्षिभिः॥२८॥रक्षितंसुमहावीर्यैर्यातुधानैःसहस्रशः॥राक्षसाधिपतेर्गुप्तमाविवेशगृहंकपिः॥२९॥सहेमजांबूनदचक्रवालंमहार्हमुक्तामणिभूषितांतम्॥परार्ध्यकालागुरुचंदनार्हंसरावणांतःपुरमाविवेश॥३०॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०सुन्दरकांडेचतुर्थःसर्गः॥४॥ "चंद्रोपिसाचिव्यामिवास्यकुर्वंस्तारागणैर्मध्यगतोविराजन्॥ ज्योत्स्नावितानेननिपत्यलोकानुत्तिष्ठतैकेनससूरश्मिः॥१॥

टिकाये जाते थे, उनमें बहुत हाथी चौदन्ते व श्वेत बादरके समान बडे २ उज्ज्वल थे और अनेक प्रकारके सुन्दर पक्षी वहां द्वारपर बैठे शब्द कर रहे थे ॥२८॥ वीर्यवान् हजारों लाखों राक्षसोंसे यह भवन रखाया जाता था, परंतु महाकपि हनुमानजी ऐसे सुरक्षित रावणके गृहमें भी गुप्तभावसे प्रवेश करही गये ॥२९॥ इस प्रकारसे हनुमानजीने रावणके रनवासमें प्रवेश करके देखा कि उसके धवरहरे तप्त वर्णके सुवर्णसे बने हैं, और उन सबके ऊपरभाग महा मूल्यवान् मुक्तामणियोंके समूहोंसे सुशोभित और अति श्रेष्ठ कालेवर्णके अगर व चन्दनकी गन्धसे सुवासित होरहे हैं॥३०॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि०सुन्दरकांडे भाषायां चतुर्थः सर्गः॥४॥

" चंद्रमा भी महावीरजीको मंत्रीकी नाईं सहाय देता हुआ तारोंके बीचमें शोभित होने लगा और अपनी चांदनी संसारमें फैलाता हुआ सहस्रकिरणोंसे

युक्त उदय हुआ ॥ १ ॥ महावीरजी उस समय चंद्रमाको शंखकी कान्ति, दुग्ध, मृणालके समान कान्तिमान् देखकर सरोवरमें हंसके समान प्रकाशमान देखने लगे ॥ २ ॥ " अनन्तर बुद्धिमान् पवननंदन हनुमानजीने देखा कि रात्रिके प्रथम अधपहरेमें सूर्यके समान अधिक प्रकाशमान किरणों सहित चंद्रमा गोठमें भ्रमण करते हुये मतवाले वृषभके समान तारागणोंके मध्यमें प्राप्त होकर वारंवार चंद्रिका राशि छिरकाते हुए विहार कर रहे हैं ॥ १ ॥ चंद्रमाके उदय दर्शन करनेसे लोकोंके समस्त पाप नाशको प्राप्त हुए; समुद्र बढा, और सब ही प्राणी शोभायमान हुए ॥ २ ॥ जो लक्ष्मी पृथ्वीपर मन्दराचल पर्वतमें प्रदोषकालके समय समुद्र और दिनको जलकेमध्य कमल फूलोंके समूहोंमें मिली रहती है, वहीलक्ष्मी इस समय चंद्रमामें टिककर विराजमान होरही है ॥ ३ ॥ चांदीके पींजरोंमें हंस, मन्दराचल पर्वतकी कन्दराओंमें सिंह और गर्वित हाथियोंपर चढे हुए वीर इन सबके समान आकाशमें उदय हुए चन्द्रमाकी कला

शंखप्रभंक्षीरमृणालवर्णंह्युद्गम्यमानंह्यवभासमानम्॥ददर्शचंद्रंसकपिप्रवीरःपोप्लूयमानंलरसीवहंसम्२" ततःसमध्यंगतमंशुमंतंज्योत्स्नावितानंमुहुरुद्वमंतम्॥ददर्शधीमान्भुविभानुमंतंगोष्ठेवृषंमत्तमिवभ्रमंतम्॥१॥लोकस्यपापानिविनाशयंतंमहोदधिंचापिसमेधयंतम्॥भूतानिसर्वाणिविराजयंतंददर्शशीतांशुमथाभियांतम्॥२॥याभातिलक्ष्मीर्भुविमंदरस्थायथाप्रदोषेषुचसागरस्था॥ तथैवतोयेषुचपुष्करस्थाररराजसाचारुनिशाकरस्था॥३॥ हंसोयथाराजतपंजरस्थःसिंहोयथामंदरकंदरस्थः ॥ वीरोयथागर्वितकुंजरस्थश्चंद्रोऽपिबभ्राजतथांबरस्थः ॥४॥ स्थितःककुद्मानिवतीक्ष्णशृंगोमहाचलःश्वेतइवोर्ध्वशृंगः ॥ हस्तीवजांबूनदबद्धशृंगोविभातिचंद्रःपरिपूर्णशृंगः॥५॥विनष्टशीतांबुतुषारपंकोमहाग्रहग्राहविनष्टपंकः ॥ प्रकाशलक्ष्म्याश्रयनिर्मलांकोरराजचंद्रोभगवाञ्छशांकः॥६॥शिलातलंप्राप्ययथामृगेंद्रोमहारणंप्राप्ययथागजेंद्रः ॥ राज्यंसमासाद्ययथानरेंद्रस्तथाप्रकाशेविरराजचंद्रः॥७॥प्रकाशचंद्रोदयनष्टदोषःप्रवृद्धरक्षःपिशिताशदोषः॥रामाभिरामेरितचित्तदोषःस्वर्गप्रकाशोभगवान्प्रदोषः॥८॥

शोभित हो रहीथी॥४॥चन्द्रमाके कलंक रूप हरिण शृङ्गके स्पष्ट प्रकाशित होनेसे ऐसा बोध हुआ मानो तेज सींगवाला बैल, ऊंचे शिखावाला श्वेत वर्णका महापर्वत अथवा जाम्बूनद सुवर्णके बंधनसे जिसके दांत बँधेहों ऐसा हाथी शोभायमान हो रहा है॥५॥वर्षा बीत जानेसे उसका शीतल जल बिन्दुरूप कीचड दूर होगया है महा ग्रह सूर्यकी किरणके संबंधसे, चन्द्रमाकी प्रभा अति बढगई व प्रकाश लक्ष्मीके आश्रय वश उसका कलंकभी अति स्पष्ट होगया है इस प्रकार चन्द्रमा शोभित होरहा है ॥ ६ ॥ शिलातल पर बैठे हुए मृगराज सिंहके समान, रणके बीचमें खडे महागजके समान, और राज्यपर स्थापित हुए राजाके समान चन्द्रमा अतिशय शोभायमान हो रहा है ॥७॥ प्रकाशमान चन्द्रमाके उदयसे समस्त अंधकारका नाश होने, राक्षसोंके मांस भक्षण दोषकी अधिकता होने,

स्त्रियोंके प्रतिपद प्रेमकलहके न होने और स्वर्गका सुख प्रकाशित होनेसे प्रदोषकाल गौरवयुक्त और शोभायमान हो रहा है॥८॥ कानोंको सुख देनेवाली मनोहर झंकार इधर उधर सुनाई आ रही है । पतिव्रता स्त्रियें अपने २ स्वामीके साथ शयनकर रही हैं; और अतिशय अद्भुत घोरसर्म करनेवाले भयंकर वृत्ति निशाचर राक्षस लोग इधर उधर घूमते हुए विहार करनेमें लगरहे हैं ॥९॥ उसी समयमें परमबुद्धिमान हनुमान्‌जीने फिर देखा कि राक्षस गणोंके समस्त गृह, रथ अश्व और स्वर्णमय आसनोंसे पूरित होरहे हैं, वीर श्रीयुत और ऐश्वर्यमत्त व मदमत्त निशाचरगणोंसे भररहेहैं ॥१०॥ उनके मध्यमें प्रमत्त राक्षसोंका परस्पर अधिक उत्तर प्रत्युत्तर करते कोई दृढ हाथवाले उलझनयुक्त मतवालेप्रलापवचन परस्पर कहकर निन्दा कर रहे हैं ॥ ११ ॥ और कभी २ और कोई अपनी छातीको बजाय रहे हैं; कोई २ अपनी प्राणप्यारीको चिपटाय रहे हैं, कोई विचित्र विविध वेश धारण कर रहे हैं और अनेक धनुषको ही खैंच रहे हैं॥१२॥ अनन्तर

तंत्रीस्वराः कर्णसुखाःप्रवृत्ताःस्वपंतिनार्यःपतिभिःसुपृक्ताः ॥ नक्तंचराश्चापितथाप्रवृत्ताविहर्तुमत्यद्भुतरौद्रवृत्ताः ॥९॥ मत्तप्रमत्तानिसमाकुलानिरथाश्वभद्रासनसंकुलानि॥ वीरश्रियाचापिसमाकुलानिददर्शधीमान्सकपिःकुलानि॥१०॥ परस्परंचाधिकमाक्षिपंतिभुजांश्चपीनानधिविक्षिपंति ॥ मत्तप्रलापानधिविक्षिपंतिमत्तानिचान्योन्यमधिक्षिपंति॥११॥ रक्षांसिवक्षांसिचविक्षिपंतिगात्राणिकांतासुचविक्षिपंति ॥ रूपाणिचित्राणिचविक्षिपंतिदृढानिचापानिचविक्षिपंति ॥१२॥ ददर्शकांताश्चसमालभंत्यस्तथापरास्तत्रपुनःस्वपंत्यः ॥ सुरूपवक्त्राश्चतथाहसंत्यःक्रुद्धाःपराश्चापिविनिःश्वसंत्यः ॥१३॥ महागजैश्चापितथानदद्भिःसुपूजितैश्चापितथासुसद्भिः॥ रराजवीरैश्वविनिःश्वसद्भिर्ह्रदोभुजंगैरिवनिश्वसद्भिः ॥ १४ ॥ बुद्धिप्रधानान्रुचिराभिधानान्संश्रद्दधानाञ्जगतःप्रधानान् ॥ नानाविधानान्रुचिराभिधानान्ददर्शतस्यांपुरियातुधानान् ॥ १५ ॥ ननंदहृष्टासचतान्सुरूपान्नानागुणानात्मगुणानुरूपान् ॥ विद्योतमानान्सचतान्सुरूपान्ददर्शकांश्चिच्चपुनर्विरूपान् ॥ १६ ॥

हनुमान्‌जीने देखा कि, स्त्रियें कोई अपने शरीरको चन्दनादि लगा रही हैं, कोई शयन करती हैं, कोई प्रफुल्लित वदनसे हँस रही हैं, कोई २ क्रोधयुक्त होकर लम्बे २ श्वास ले रही हैं॥१३॥ उस समय उस रनवासमें सजे सजाये मतवाले हाथियोंके समूहका गर्जन होनेसे और विभीषणादि महामान्य साधुचरित्र वीरोंके विश्वाससे श्वास लेते हुये सर्प समूहसे परिपूर्ण हृदयके समान लंकापुरीकी शोभा होरही थी॥१४॥ अनन्तर हनुमान्‌जीने उस लंकापुरीमें आस्तिक, मधुर वचन बोलनेवाले, विविध वेषधारी जगत्‌के मध्यमें प्रधान और सुन्दर रुचिके नाम धारी, मुखिया २ राक्षसोंको देखा ॥१५॥ अधिक बुद्धिमान्, विविध गुणधारी अपने समान गुणवाले और स्वरूपवान राक्षसोंको देखकर हनुमान्‌जी बडे आनंदित हुए, उन राक्षसोंमें कोई २ अधिक विरूप होनेपर भी प्रभायुक्त होनेके

कारण स्वरूपवानके समान दृष्टि आने लगे ॥ १६ ॥ उसके पीछे हनुमान्‌जी ने देखा कि, उन स्थानोंमें अति उत्तम गहनोंसे सजधजकर तारागणोंके समान प्रियदर्शनवाली महानुभाव सुस्वभावयुक्त निशाचरियें मद्यपानादि प्रिय कार्योंमें आसक्त होकर हावभाव और कटाक्ष कर रही हैं ॥ १७ ॥ फिर हनुमान्‌जीने रात्रिके समय चलते २ देखा कि, विहंगी जिस प्रकार अपने स्वामीसे भेंटी जाती है, वैसेही अपने २ स्वामियोंसे चिपटाई जाकर कोई २ कामिनी महा लज्जा और हर्षके वशहो अपने रूपकी अधिकाईसे मानो प्रज्वलित हो रही हैं ॥ १८ ॥ बुद्धिमान् हनुमान्‌जीने फिर देखा कि, कोई २ मनमानी विवाहिता पतिव्रता स्त्रियें अटारियोंके नीचे और कोई २ अपने स्वामियोंकी गोदीमें मदनयुक्त चित्तसे बैठी हैं॥१९॥फिर हनुमान्‌जीने देखा कि, तपाये हुए सुवर्णके समान वर्णवाली व चन्द्रसदृश उजले वर्णयुक्त किसी २ स्त्रीकी ओढनी नहीं है और वह नंगी है. और कोई २ मानिनी होनेके कारण स्वामीके विनाही बैठी हैं॥२०॥ कोई २

ततोवराहाःसविशुद्धभावास्तेषांस्त्रियस्तत्रमहानुभावाः ॥ प्रियेषुपानेषुचसक्तभावाददर्शताराइवसुस्वभावाः ॥ १७ ॥ स्त्रियोज्वलंतीस्त्रपयोप
गूढानिशीथकालेरमणोपगूढाः ॥ ददर्शकाश्चित्प्रमदोपगूढायथाविहंगाविहगोपगूढाः ॥१८॥ अन्याःपुनर्हर्म्यतलोपविष्टास्तत्रप्रियांकेषुसुखोप
विष्टाः ॥ भर्तुःपराधर्मपरानिविष्टाददर्शधीमान्मदनोपविष्टाः ॥१९॥ अप्रावृताःकांचनराजिवर्णाःकाश्चित्परार्ध्यांस्तपनीयवर्णाः ॥ पुनश्चका
श्चिच्छशलक्ष्मवर्णाःकांतप्रहीणारुचिरांगवर्णाः ॥२०॥ ततःप्रियान्प्राप्यमनोभिरामान्सुप्रीतियुक्ताःसुमनोभिरामाः ॥ गृहेषुहृष्टाःपरमाभिरामा
हरिप्रवीरःसददर्शरामाः ॥ २१ ॥ चंद्रप्रकाशाश्चहिवक्त्रमालावक्राःसुपक्ष्माश्चसुनेत्रमालाः ॥ विभूषणानांचददर्शमालाःशतह्रदानामिवचारु
मालाः ॥२२॥ नत्वेवसीतांपरमाभिजातांपथिस्थितेराजकुलेप्रजाताम् ॥ लतांप्रफुल्लामिवसाधुजातांददर्शतन्वींमनसाभिजाताम् ॥२३॥ सना
तनेवर्त्मनिसंनिविष्टारामेक्षणांतांमदनाभिविष्टाम् ॥ भर्तुर्मनःश्रीमदनुप्रविष्टांस्त्रीभ्यःपराभ्यश्चसदाविशिष्टाम् ॥ २४ ॥

मन भावते स्वामीके संगसे अतिशय प्रसन्न होरही हैं, और कोई २ फूलोंके गुच्छोंको धारणकर अतिशय मनोहारिणी और हर्षयुक्त होरही हैं; और कोई २ स्वभावसेही चित्तको खैंचे लेती हैं ऐसी स्त्री महावीरजीने देखी ॥ २१ ॥ शशिधरसदृश सुन्दरवदनोंके समूह, तिर्छी चितवन, सुकुमार भृकुटी और उत्तम नेत्रोंकी राशि, व दामिनी मंडलके समान प्रभावान् गहने हनुमान्‌जीकी दृष्टि पडे॥२२॥परन्तु जो अतिशयकुलीनश्रेष्ठवंशमें उत्पन्न, जिनको विधाताने अपने मनकी कल्पनासे बनाया श्रेष्ठ प्रफुल्लिता लताके समान महा सुन्दरता व सुकुमारकी खानि हैं॥२३॥जो सदाही पतिव्रत मार्गमें सर्व भांतिसे टिकी हुई, श्रीरामचन्द्रमेंही जिनकी केवल एक दृष्टि और श्रीरामचन्द्रही जिनके एकमात्र कामलालसा, जिन्होंने स्वामीके निर्मल मनमें प्रवेशकिया है, जो समस्त श्रेष्ठ स्त्रीकुलके ललाम स्वरूप हैं ॥ २४॥

जो स्वामीके विरहमें दुःखित होकर सदाही रोती रहती हैं, पहले श्रीरामचन्द्रजीके सहवास समयमें अत्युत्तम गहनोंमें प्रथम गिनेजानेके योग्य पदिक जिनके कंठको शोभायमान करता, जिनकी भ्रुकुगुटियें सुकुमार हैं; व स्वरअति मधुर, जोकि, वनके मध्यमें नृत्य करती हुई मोरनीके समान देखनेमें अति मनोहर हैं ॥२५॥ जो स्वामीके विरहमें भली भांति न प्रकाशती हुई चन्द्ररेखाके समान, धूरियुक्त सुवर्णके समान, व्रणयुक्त वर्णरेखाके समान अथवा पवनमथित मेघमालाके समान अति शोचनीय मूर्ति धारण किये हुए हैं ॥२६॥ उन नरेश्वर बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी की भार्या सीताजीको बहुत देरतक ढूँढनेसे भी न पायकर, कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जी कुछ क्षणके लिये अत्यन्त दुःखित और शिथिलयत्न हो गये ॥ २७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥

उष्णार्दितांसानुसृतास्रकंठींपुरावराहेत्तमनिष्ककंठीम् ॥ सुजातपक्ष्मामभिरक्तकंठींवनेप्रवृत्तमिवनीलकंठीम् ॥२५॥ अव्यक्तरेखामिवचंद्रलेखांपांसुप्रदिग्धामिवहेमरेखाम् ॥क्षतप्ररूढामिववर्णरेखांवायुप्रभुग्नामिवहेमरेखाम् ॥२६॥सीतामपश्यन्मनुजेश्वरस्यरामस्यपत्नींवदतांवरस्य॥बभूवदुःखोपहतश्चिरस्यप्लवंगमोमंदइवाचिरस्य॥२७॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०सुन्दरकांडेपंचमःसर्गः॥५॥सनिकामंविमानेषुविचरन्कामरूपधृक् ॥ विचचारकपिर्लंकांलाघवेनसमन्वितः ॥१॥ आससादचलक्ष्मीवान्राक्षसेंद्रनिवेशनम् ॥ प्राकारेणार्कवर्णेनभास्वरेणाभिसंवृतम् ॥२॥ रक्षितंराक्षसैर्भीमैःसिंहैरिवमहद्वनम् ॥ समीक्षमाणोभवनंचकाशेकपिकुंजरः ॥३॥ रूप्यकोपहितैश्चित्रैस्तोरणैर्हेमभूषणैः ॥ विचित्राभिश्चकक्ष्याभिर्द्वारैश्चरुचिरावृतम् ॥ ४ ॥ गजास्थितैर्महामात्रैःशूरैश्चविगतश्रमैः ॥ उपस्थितमसंहार्यैर्हयैःस्यंदनयायिभिः ॥ ५ ॥

इच्छानुसार रूप धारण किये कपिश्रेष्ठ श्रीमान् हनुमानजी सतखंड अठखंडे धवरहरोंपर, इच्छानुसार शीघ्रतासे भ्रमण करते हुए लंकापुरीमें घूमने लगे ॥ १ ॥ और बडी शीघ्रताके साथ राक्षसराज रावणके गृहके निकट पहुंचे। यह गृह सूर्य सम प्रकाशित और बाहर दिवारीसे घिरा हुआ था॥२॥ सिंहके समान महा बलवान् भयंकर राक्षसोंसे उस गृहको रक्षित देखकर कपि कुंजर हनुमान्‌जीने उसको जरा २ खोजनेका विचार किया ॥३॥ हनुमानजीने देखा कि यह भवन बहुत सारे उपगृहोंसे परिपूर्ण और विचित्र शोभासे शोभायमान हो रहा है, इसके विचित्र दरवाजे चांदीके बने हैं, और इन पर सुवर्णके काम हो रहे हैं, सबही द्वार मनोहर प्रकारसे स्थापित किये हुये थे इसलिये वह गृह अतिशय शोभायमान हो रहा था ॥४॥ शूरतायुक्त परिश्रमविहीन हाथियोंपर चढे महावत् गणोंसे, व

अति वेगवान् रथके खैंचने वाले घोडोंसे॥५॥सिंह और व्याघ्र चर्मको धारण किये, सुवर्ण, चांदी, व हाथीदांतकी प्रतिमा ओंसे सुसज्जित और गंभीर गर्जनशाली
विचित्र रथ उसके किनारे २ घूम रहे थे॥६॥अनेक प्रकारके रत्न अति श्रेष्ठ आसन और बडे २ रथ व महारथोंके समूहसे शोभित॥७॥और परम सुन्दर सुहावने
अनेक प्रकारके सहस्रों मृग और पक्षी इन सब वस्तुओंसे रावणका गृह भूषित और पूरित था॥८॥सीमारक्षक विनीत स्वभाव परम शिक्षित राक्षसगण बडी सावधानीसे
उस गृहकी रक्षा कर रहे थे, और वह सुन्दर २ स्त्रियोंसे व्याप्त था॥९॥अनेक बडी स्त्रियों और प्रमोद युक्त प्रमदाओंसे वह स्थान चारों ओर भररहा है और अति श्रेष्ठ
गहनेकी झनकार ध्वनिसे वह स्थान सागर तुल्य गंभीर भावसे शब्दयमान हो रहा था॥१०॥अधिक करके यह गृह सब राज चिह्नोंसे परिपूर्ण था, और अतिश्रेष्ठ महा

सिंहव्याघ्रतनुत्राणैर्दांतकांचनराजतीः ॥ घोषवद्भिर्विचित्रैश्चसदाविचरितैरथैः ॥६॥ बहुरत्नसमाकीर्णपरार्ध्यासनभूषितम् ॥ महारथसमावापं
महारथमहासनम ॥ ७ ॥ दृश्यैश्चपरमोदारैस्तैस्तैश्चमृगपक्षिभिः ॥ विविधैर्बहुसाहस्रैःपरिपूर्णसमंततः ॥ ८ ॥ विनीतैरंतपालैश्चरक्षोभिश्चसु
रक्षितम् ॥ मुख्याभिश्चवरस्त्रीभिःपरिपूर्णसमंततः ॥ ९ ॥ मुदितप्रमदारत्नंराक्षसेंद्रनिवेशनम् ॥ वराभरणसंह्रादैःसमुद्रस्वननिस्वनम् ॥१०॥
तद्राजगुणसंपन्नंमुख्यैश्चवरचंदनैः ॥ महाजनसमाकीर्णंसिंहैरिवमहद्वनम् ॥ ११ ॥ भेरीमृदंगाभिरुतंशंखघोषविनादितम्॥ नित्यार्चितंपर्वसुतं
पूजितंराक्षसैःसदा ॥१२॥ समुद्रमिवगंभीरंसमुद्रसमनिस्वनम्॥महात्मनोमहद्वेश्ममहारत्नपरिच्छदम् ॥१३॥ महारत्नसमाकीर्णंददर्शसमहा
कपिः ॥ विराजमानंवपुषागजाश्वरथसंकुलम् ॥१४॥ लंकाभरणमित्येवसोऽमन्यतमहाकपिः ॥ चचारहनुमांस्तत्ररावणस्यसमीपतः ॥१५॥
गृहाद्गृहंराक्षसानामुद्यानानिचसर्वशः ॥ वीक्षमाणोप्यसंत्रस्तःप्रासादांश्चचचारसः ॥ १६ ॥

मोलके चन्दनके सुगंधसे और मुख्य २ राक्षसगणोंसे व्याप्त था जैसे सिंहोंसे बडा बन॥११॥भेरी, मृदंग और शंखके शब्दसे शब्दायमान हो रहा था, और राक्षसगण
निरन्तर इस गृहमें अपने २ इष्ट देवताकी पूजा करते थे ॥१२॥ महात्मा राक्षसराज रावण का समुद्र तुल्य गंभीर और समुद्रके ही समान शब्दकारी इस प्रकार
रत्नसामग्रीसे परिपूर्ण भवन था ॥१३॥ महाकपि हनुमानजीने अनेक रत्नोंसे युक्त उस गृहको देखा, उस गृहमें जहां तहां गज, अश्व और रथ व्याप्त थे॥१४॥
उस सुदृश्य भवनको देख कर महा कपि हनुमानजीने विचारा कि, यह गृह सब लंकाका भूषण रूप है, यह मानकर वह जहां रावण शयन कर रहा था वहां गये
॥ १५ ॥ इस प्रकार एक गृहसे दूसरे गृहमें गमन करते हुये मुखिया २ निशाचरों के गृह और फूलवाड़ियें देखते भालते उस मंदिरमें घूमने लगे ॥ १६ ॥

उसके पीछे महावीर्यवान् हनुमानजी महावेगसे छलांग मारकर प्रथम प्रहस्तके घरमें फिर वहांसे महापार्श्वके भवनमें प्रवेश करते हुये॥ १७॥फिर वहांसे कुंभकर्णके मेघाकार गृहमें फिर वहांसे कूदकर विभीषणके घर पर महाकपि आये॥ १८॥वहांसे महोदरके घरपर कूदे, उसके पीछे विरूपाक्षके स्थान पर आये फिर विद्युज्जिह्वका घर खोजा, फिर विद्युन्मालीके भवनको आन लिया॥ १९॥वहांसे वज्रदंष्ट्रके गृह पर गये, फिर महाकपि हनुमानजी शुकके यहां पधारे, फिर बुद्धिमान् सारणके स्थानपर ॥ २० ॥ फिर वानर श्रेष्ठ हनुमानजी इन्द्रजीतके स्थान पर कूदे, वहांसे जम्बुमाली और सुमालीके भवनपर वानर श्रेष्ठ हो रहे ॥ २१ ॥ वहांसे रश्मिकेतुके भवन पर, रश्मिकेतुके भवनसे सूर्य शत्रुके यहां फिर वहांसे यह महाकपि वज्रकायके मंदिर पर पहुँचे॥ २२॥ फिर पवन कुमार धूम्राक्ष, व सम्पाति

अवप्लुत्यमहावेगःप्रहस्तस्यनिवेशनम् ॥ ततोऽन्यत्पुप्लुवेवेश्ममहापार्श्वस्यवीर्यवान् ॥ १७॥ अथमेघप्रतीकाशंकुंभकर्णनिवेशनम् ॥ विभीषणस्यचतथापुप्लुवेसमहाकपिः॥ १८॥महोदरस्यचतथाविरूपाक्षस्यचैवहि ॥ विद्युज्जिह्वस्यभवनंविद्युन्मालेस्तथैवच॥ १९॥बहुदंष्ट्रस्यचतथापुप्लुवेसमहाकपिः ॥ शुकस्यचमहावेगःसारणस्यचधीमतः॥ २०॥तथाचेंद्रजितोवेश्मजगामहरियूथपः॥ जंबुमालेःसुमालेश्चजगामहरिसत्तमः॥ २१॥ रश्मिकेतोश्चभवनंसूर्यशत्रोस्तथैवच ॥ वज्रकायस्यचतथापुप्लुवेसमहाकपिः ॥ २२॥ धूम्राक्षस्याथसंपातेर्भवनंमारुतात्मजः ॥ विद्युद्रूपस्यभीमस्यघनस्यविघनस्यच ॥ २३ ॥ शुकनाभस्यचक्रस्यशठस्यकपटस्यच ॥ ह्रस्वकर्णस्यदंष्ट्रस्यलोमशस्यचरक्षसः ॥ २४ ॥ युद्धोन्मत्तस्यमत्तस्यध्वजग्रीवस्यसादिनः॥ विद्युज्जिह्वद्विजिह्वानांतथाहस्तिमुखस्यच॥ २५॥करालस्यविशालस्यशोणिताक्षस्यचैवहि॥प्लवमानःक्रमेणैवहनूमान्मारुतात्मजः ॥२६॥ तेषुतेषुमहार्हेषुभवनेषुमहायशाः॥ तेषामृद्धिमतामृद्धिंददर्शसमहाकपिः ॥२७॥ सर्वेषांसमतिक्रम्यभवनानिसमंततः॥ आससादाथलक्ष्मीवान्राक्षसेंद्रनिवेशनम् ॥ २८ ॥ रावणस्योपशायिन्योददर्शहरिसत्तमः ॥ विचरन्हरिशार्दूलोराक्षसीर्विकृतेक्षणाः ॥ २९ ॥

के घर पर, वहांसे विद्युद्रूप, भीम, घन, विघनके स्थानपर ॥ २३ ॥ इसके पीछे शुकनाभ, चक्र, शठ, कपट, ह्रस्वकर्ण, दंष्ट्र, लोमश राक्षसोंके गृहोंपर॥ २४ ॥ युद्धोन्मत्त, मत्त, ध्वजग्रीव, सादी विद्युज्जिह्वके, द्विजिह्वके और फिर हस्तिमुखके स्थान पर॥ २५॥वहांसे कराल, विशाल, शोणिताक्ष, इन सब राक्षसोंके भवनों पर पवन कुमार हनुमानजी बारीबारीसे घूमे कूदे ॥२६॥ और उन सब बडे भवनोंमें इन समस्त ऋद्धिशाली राक्षसोंकी परम समृद्धि महायशस्वी हनुमानजीने देखी ॥२७॥ इसप्रकारसे श्रीमान महाकपि हनुमानजी क्रमसे इन समस्त भवनोंपर घूम राक्षस रावणके गृहपर आये ॥ २८ ॥ वहांपर महावीरजीने देखा कि

विकराल नेत्रवाली राक्षसियें अलग २ अपने पहरेपर रावणके शयनगृहकी रक्षा करती हैं ॥ २९ ॥ इनके अतिरिक्त रावणके गृहमें इधर उधर विचरण करती हुई, शूल, मुद्गर, शक्ति, और तोमर धारण किये हुए असंख्य राक्षसियोंके झुण्ड हनुमानजीने देखे ॥ ३०॥ शस्त्र धारण किये हुए बडी २ देहवाले राक्षसोंके भवन समूहोंमें लाल, श्वेत, घोडे बँधे देखे जो कि अतिशीघ्र चलनेवाले थे॥३१॥और बडे २ श्रेष्ठरूपवाले वनके गजोंके मर्दन करनेवाले, भली भाँतिसे शिक्षित, युद्धमें ऐरावत हाथीके समान गज भी बँधे देखे॥३२॥वह हाथी देखते ही शत्रुओंकी सेनाका संहार करनेवाले थे व और पर्वतोंके समान जिनमेंसे मदका झर नासा झरता था॥३३॥समरमें शत्रुलोगोंसे जीतनेके अयोग्य, मेघोंके समान गर्जना करनेवाले हाथी, और बहुतसी सेना, सुवर्णकी सब सामग्रीसे सम्पन्न उस भवनमें

शूलमुद्गरहस्ताश्चशक्तितोमरधारिणीः ॥ ददर्शविविधान्गुल्मांस्तस्यरक्षःपतेर्गृहे ॥३०॥ राक्षसांश्चमहाकायान्नानाप्रहरणोद्यतान् ॥ रक्तान्श्वे तान्सितांश्चापिहरींश्चापिमहाजवान् ॥३१॥ कुलीनान्रूपसपन्नान्गजान्परगजारुजान् ॥ शिक्षितान्गजशिक्षायामैरावतसमान्युधि ॥३२॥ निहंतॄन्परसैन्यानांगृहेतस्मिन्ददर्शसः ॥ क्षरतश्चयथामेघान्स्रवतश्चयथागिरीन् ॥३३॥ मेघस्तनितनिर्घोषान्दुर्धर्षान्समरेपरैः ॥ सहस्रंवाहिनी स्तत्रजांबूनदपरिष्कृताः ॥ ३४ ॥ हेमजालैरविच्छिन्नास्तरुणादित्यसन्निभाः ॥ ददर्शराक्षसेंद्रस्यरावणस्यनिवेशने ॥३५॥ शिबिकाविविधा काराःसकपिर्मारुतात्मजः ॥ लतागृहाणिचित्राणिचित्रशालागृहाणिच ॥ ३६ ॥ क्रीडागृहाणिचान्यानिदारुपर्वतकानिच ॥ कामस्यगृहकंर म्यंदिवागृहकमेवच ॥ ३७ ॥ ददर्शराक्षसेंद्रस्यरावणस्यनिवेशने ॥ समंदरसमप्रख्यंमयूरस्थानसंकुलम् ॥ ३८ ॥ ध्वजयष्टिभिराकीर्णंददर्श भवनोत्तमम् ॥ अनंतरत्ननिचयंनिधिजालंसमंततः ॥ धीरनिष्ठितकर्मांगंगृहंभूतपतेरिव ॥ ३९ ॥

जहाँ तहाँ छाई हुई देखी ॥ ३४ ॥ वह सेना सुवर्णकी कडियोंके जालका बख्तर पहने, प्रातःकालीन सूर्यके समान चमकती दमकती, राक्षसनाथ रावणके स्थानमें हनुमानजीने देखी ॥ ३५ ॥ अनेक प्रकारकी पालकियें चित्र विचित्र लतायुक्त गृह, और चित्रपट शोभित गृह हनुमानजीने देखे ॥ ३६ ॥ विहार गृह, और काठके बने हुये (नकली) क्रीडा पर्वत रमणीक रति करनेके समान और दिनको विहार करनेके गृह हनुमानजीने देखे॥३७॥और हनुमानजीने देखा कि रावणका गृह अतिश्रेष्ठ है, वह मन्दराचल पर्वतकी तलैटीके समान मनोहर मोरोंके स्थानोंसे व्याप्त है ॥ ३८॥ ध्वजा पताकाओंसे भूषित, असंख्य रत्न और ऋद्धि सिद्धिके समूहसे परिपूर्ण और वहांपर भय रहित स्थिर चित्त राक्षस लोग उन निधियोंकी रक्षामें नियुक्त थे, देखनेसे बोध होता था कि

मानो यक्षनाथ कुबेरजीका गृह विराजमान हो रहा है॥३९॥सब रत्नोंकी ज्योति और रावणके तेजके प्रभावसे हजार किरणोंसहित सूर्यके समान यह गृह प्रकाश मान हो रहा था ॥ ४० ॥ सुवर्णके बने हुए पलंग, आसन और सब बर्तन जोकि भोजनादि करनेके चांदीके बने थे, वह सब हनुमानजीने देखे॥४१॥ जब हनुमानजी इस मंदिरमें घुसे तो उन्होंने देखा कि यह गृह मधु व आसव (मदिराका रस) से गील होरहा है, मणिमय पात्रोंसे व्याप्त है, और कुबेरके भवनके समान रमणीक है ॥४२॥ और सर्वथा विघ्नरहित, नूपुर, काञ्ची, मृदंग, ताल इत्यादि बाजोंके शब्दसे शब्दायमान, गायकोंके शब्दसे पूर्ण ॥ ४३ ॥ अनेक २ अनुप धवरहरे और सैकडों हजारों स्त्रीरत्नोंसे घिरा हुवा बडी २ कक्षावाला जिसकी रक्षा भली भाँति होरही थी, ऐसे भवनमें हनुमानजीने प्रवेश किया ॥ ४४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥ महाबलवान् हनुमानजीने देखा कि इस गृहकी सब खिड़कियां सुवर्णकी

अर्चिर्भिश्चापिरत्नानांतेजसारावणस्यच ॥ विरराजचतद्वेश्मरश्मिवानिवरश्मिभिः॥४०॥जांबूनदमयान्येवशयनान्यासनानिच॥भाजनानिच शुभ्राणिददर्शहरियूथपः ॥ ४१ ॥ मध्वासवकृतक्लेदंमणिभाजनसंकुलम् ॥ मनोरममसंबाधंकुबेरभवनंयथा ॥ ४२ ॥ नूपुराणांचघोषेणकांची नांनिस्वनेनच ॥ मृदंगतलनिर्घोषैर्घोषवद्भिर्विनादितम् ॥४३॥ प्रासासंघादतयुतंस्त्रीरत्नशतसंकुलम्॥ सुव्यूढकक्ष्यंहनुमान्प्रविवेशमहागृहम् ॥ ४४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥ सवेश्मजालंबलवान्ददर्शव्यासक्तवैदूर्य सुवर्णजालम् ॥ यथामहत्प्रावृषिमेघजालंविद्युत्पिनद्धंसविहंगजालम् ॥ १ ॥ निवेशनानांविविधाश्चशालाः प्रधानशंखायुधचापशालाः ॥ मनो हराश्चापिपुनर्विशालाददर्शवेश्माद्रिषुचंद्रशालाः ॥ २॥ गृहाणिनानावसुराजितानिदेवासुरैश्चापिसुपूजितानि ॥ सर्वैश्चदोषैःपरिवर्जितानिकपि र्ददर्शस्वबलार्जितानि ॥ ३ ॥ तानिप्रयत्नाभिसमाहितानिमयेनसाक्षादिवनिर्मितानि ॥ महीतलेसर्वगुणोत्तराणिददर्शलंकाधिपतेर्गृहाणि ॥४॥

बनी हैं; और वैदूर्यमणिसे खचित हैं, उनमें पक्षियोंके विराजमान रहनेसे विद्युज्जडित विहंगोंकी श्रेणीसे शोभित वर्षाकालके मेघके समान उस गृहकी शोभा होरही है ॥ १ ॥ उस अतिभारी मन्दिरके अन्दर विविध रहने बैठने इत्यादिके दर दालान बने ठने थे। उनमें शंख, व अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र और धनुषबाण सजे धजे थे और पर्वताकार भवनसमूहोंके ऊपर बनी हुई विशाल गृहावली अति मनोहर भावसे विराज रहीथीं, जिनपर सदा चन्द्रकिरण पडकर मन हरण किया करती थीं ॥ २ ॥ यह समस्त गृह विविध रत्नोंसे परिपूर्ण देवासुर गणोंसे भी पूजित, सर्व दोषोंसे रहित थे और इसमें सब वस्तुयें रावणकी बाहुबलसे इकट्ठी की हुई थीं ॥३॥ साक्षात् मयदानवके द्वारा अतियत्न पूर्वक बनाये जानेसे गुणग्राममें लंकापतिरावणके यह गृहसमूह सबपृथ्वीमें श्रेष्ठ थे सो देखे ॥४॥

ऊंचे मेघके समान सुवर्णके बने राक्षसराजके यह समस्त घर उसके बाहुवीर्यके समान मनोहर और उपमारहित थे ॥ ५ ॥ उसके देखनेसे ऐसा जान पड ताथा मानो पृथ्वीमें गिरे हुए स्वर्गके समान शोभासे यह भवन उजला होरहा है वह अनेक रत्नों करके पूर्ण रहनेके कारण ऐसा शोभायमान होरहा था मानो इधर उधर छितराये हुए पुष्पोंके परागसे ढके अनेक जातिके वृक्ष पुष्पाकीर्ण पर्वतके अग्रभागमें चमक दमक रहे हैं ॥६॥ रूपवान स्त्रियोंके विराजमान रहनेसे मानो वह गृह दामिनीयुक्त मेघमालाके समान शोभित हो रहा है अथवा दिव्य हंसोंकी कतारसे उठाया हुवा पुण्यवान् उनका आकाशचारी सुन्दर विमान शोभायमान होता है, इसी भाँतिसे उस भवनकी शोभा थी ॥ ७ ॥ जिस प्रकारसे पर्वतका अग्रभाग अनेक धातुओंसे चित्रित होता है जैसे ग्रह और चंद्रमासे आकाशमंडल चित्रित होता है और जैसे मेघ अनेक रंगोंसे चित्रित होते हैं इसी प्रकार अनेक रत्नोंके जडे रहनेसे विचित्र रावणका पुष्पक नामक विमान

ततोददर्शोच्छ्रितमेघरूपंमनोहरंकांचनचारुरूपम् ॥ रक्षोधिपस्यात्मबलानुरूपंगृहोत्तमंह्यप्रतिरूपरूपम् ॥५॥ महीतलेस्वर्गमिवप्रकीर्णंश्रिया ज्वलन्तंबहुरत्नकीर्णम् ॥ नानातरूणांकुसुमावकीर्णंगिरेरिवाग्रंरजसावकीर्णम् ॥६॥ नारीप्रवेकैरिवदीप्यमानंतडिद्भिरंभोधरमर्च्यमानम् ॥ हंस प्रवेकैरिववाह्यमानंश्रियायुतंखेसुकृतंविमानम् ॥७॥ यथानगाग्रंबहुधातुचित्रंयथानभश्चग्रहचंद्रचित्रम् ॥ ददर्शयुक्तीकृतचारुमेघचित्रंविमानंबहु रत्नचित्रम् ॥८॥ महीकृतापर्वतराजिपूर्णाशैलाः कृता वृक्षवितानपूर्णाः ॥ वृक्षाःकृताःपुष्पवितानपूर्णाःपुष्पंकृतंकेसरपत्रपूर्णम् ॥ ९ ॥ कृतानि वेश्मानिचपांडुराणितथासुपुष्पाअपिसुष्करिण्यः ॥ पुनश्चपद्मानिसकेसराणिवनानिचित्राणिसरोवराणि ॥ १० ॥ पुष्पाह्वयंनामविराजमानंरत्न प्रभाभिश्चविघुर्णमानम् ॥ वेश्मोत्तमानामपिचोच्चमानमहाकपिस्तत्रमहाविमानम् ॥ ११ ॥ कृताश्चवैदूर्यमयाविहंगारूप्यप्रवालैश्चतथाविहंगाः ॥ चित्राश्चनानावसुभिर्भुजंगाजात्यानुरूपास्तुरगाःशुभांगाः ॥ १२ ॥

हनुमानजीने देखा ॥ ८ ॥ इस विमानमें बहुत जनोंके बैठनेके जो स्थानथे वह सुवर्णादिसे बने हुए नकली पर्वतोंके समूहसे परिपूर्ण थे, उन पर्वतोंपर बने हुए वृक्ष लगे हुये थे, और उन वृक्षोंपर फूल खिल रहे थे और अत्यन्त कारीगरीकी बात यह थी कि, उन फूलोंसे पराग झरता था ॥ ९ ॥ उस विमानमें श्वेत वर्णके अनेक भवन थे और अच्छे २ फूलोंसे शोभित अनेक तलैयां थीं उन तलैयोंमें परागसहित कमल फूले थे व उस घरमें विचित्रवन और सरोवर भी बने हुये थे ॥ १० ॥ महाकपि हनुमानूजीने वहांपर ऐसा पुष्पक नामक महाविमान देखा, यह विमान रत्नोंकी प्रभासे उज्ज्वल था और इधर उधर घूम रहा था, और अत्युत्तम विमानोंकेसमूहसे भी अधिक ऊँचा यह श्रेष्ठ विमान था ॥ ११ ॥ इस विमानमें वैदूर्यमणि मूंगा औरचांदीके पक्षी

बने थे, व सुवर्ण गठित विचित्र भुजंगम और जातिके अनुरूप सुन्दर शरीर तुरंगमसमूह भी हनुमानजीने देखे ॥ १२ ॥ जिनके पंखमें सुवर्ण और मूंगेके फूल सजाये गये थे जो संकुचित और कुटिल साक्षात् कामदेवके पक्षके समान शोभायमान थे, ऐसे सुन्दर मुखवाले और श्रेष्ठ पंखधारी पक्षी भी वहां बनाये गये थे ॥१३॥ इसके सिवाय वहां पर कमलवाली पुष्करणियोंमें सुशोभित कमलका फूल हाथमें लिये लक्ष्मीजी और उनका अभिषेक करनेमें नियुक्त सुन्दर शुण्ड सुशोभित कमल परागसे अलंकृत हाथी भी बने हुए थे ॥ १४ ॥ इस भाँति विस्मय युक्त हो सुन्दर कन्दरावाली अति शोभायमान जिसके स्थान उस लंकापुरीमें प्रवेश कर फिर वसन्तऋतु होनेसे सुन्दर सुगन्धित खोडलयुक्त शोभायमानवृक्षके समान उस गृहमें प्रवेश करते हुये ॥१५॥ इस प्रकारसे हनुमान्‌जी

प्रवालजांबूनदपुष्पपक्षाःसलीलमावर्जितजिह्मपक्षाः ॥ कामस्यसाक्षादिवभांतिपक्षाःकृताविहंगाःसुमुखाःसुपक्षाः ॥१३॥ नियुज्यमानाश्चग जासुहस्ताःसकेसराश्चोत्पलपत्रहस्ताः॥बभूवदेवीचकृतासुहस्तालक्ष्मीस्तथापद्मिनिपद्महस्ता॥१४॥इतीवतद्गृहमभिगम्यशोभमानंसविस्मयो नगमिवचारुकंदरम् ॥ पुनश्चतत्परमसुगंधिसुंदरंहिमात्ययेनगमिवचारुकंदरम् ॥१५॥ ततःसतांकपिरभिपत्यपूजितांचरन्पुरींदशमुखबाहुपा लिताम्॥अदृश्यतांजनकसुतांसुपूजितांसुदुःखितांपतिगुणवेगनिर्जिताम्॥१६॥ततस्तदाबहुविधभावितात्मनःकृतात्मनोजनकसुतांसुवर्त्मनः॥ अपश्यतोभवदतिदुःखितंमनःसचक्षुषःप्रविचरतोमहात्मनः ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च० सा० सुं० सप्तमः सर्गः ॥७॥ सतस्यमध्येभवनस्यसंस्थितोमहद्विमानंमणिरत्नचित्रितम् ॥ प्रतप्तजांबूनदजालकृत्रिमंददर्शधीमान्पवनात्मजःकपिः ॥ १ ॥

उस दशमुख रावणकी भुजाओंसे रक्षित परम प्रशंसित लंकापुरीमें इधर उधर छलांगे मार २ कर घूमने लगे परतु अतिशय दुःखित सुपूजिता व पतिके गुणोंके वेगसे जीवित सीताजीको वहां न देख पाकर उनका मन अतिशय दुःखित हुआ ॥ १६ ॥ तब हनुमानजी जिनका चारित्र समस्त जगत्का आदर्श रूप अतिआदर पानेके योग्य व हृदय अति शिक्षित था वह शास्त्ररूपी नेत्रोंसे युक्त वे महात्मा जनकसुताको ढूंढने परभी न पाकर दुःखित हुए ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि सुन्दरकाडे भाषायां सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥ बुद्धिमान् पवनकुमार हनुमानजीने रावणके गृहमें टिककर अनेक प्रकारकी श्रेष्ठ मणि योंसे खचित, इस प्रकारका अति बडा पुष्पक नामक महाविमान देखा, यह विमान तपाये हुए सुवर्णके झरोखोंसे सजा हुआ था ॥ १ ॥

और अनुपम सुन्दरतायुक्त प्रतिमाइत्यादिकोंके सहितहोनेसे यह विमान विचित्रसुषमायुक्तथा, स्वयं विश्वकर्माने भली भाँति मनलगाकर इसको बनाया था और आकाशमार्गमें टिके वायुमार्गमें सूर्यके मार्गका चिह्नस्वरूप यह विमान विराजमान हो रहा था ॥२॥ उस विमानमें ऐसा कुछ नहीं था जो महामूल्यवान् रत्नोंसे न बनाया हो देवतालोगोंके विमानोंमेंभी वैसी कारीगरी दृष्टि नहीं आती इस प्रकारकी उसमें सब ही रचनायें विशेष थीं उसमेंके सबही पदार्थ सब गुण सम्पन्न थे ॥३॥ रावणने तपस्या और समाधिसे प्राप्त किये पराक्रमकी सहायसे उसको प्राप्त किया था, यह विमान मनके संकल्पानुसार सबही जगह जासकता था अनेक प्रकार की भली २ रचना और अनेक स्थानोंसे एकत्रकिये दिव्यविमानके बनानेके लायक विशेष २ बडे २ मौलके रत्नोंसे यह बनाया गया था ॥४॥ वह विमान महाधनशाली

तदप्रमेयप्रतिकारकृत्रिमंकृतंस्वयंसाध्विति विश्वकर्मणा ॥ दिवंगतेवायुपथैप्रतिष्ठितंव्यराजतादित्यपथस्थलक्ष्मतत् ॥२॥ नतत्रकिंचिन्नकृतंप्रयत्नतोनतत्रकिंचिन्नमहार्घरत्नवत् ॥ नतेविशेषानियताःसुरेष्वपिनतत्रकिंचिन्नमहाविशेषवत् ॥३॥ तपःसमाधानपराक्रमार्जितंमनःसमाधानविचारचारिणम् ॥ अनेकसंस्थानविशेषनिर्मितंततस्ततस्तुल्यविशेषनिर्मितम् ॥४॥ मनःसमाधायतुशीघ्रगामिनंदुरासदंमारुततुल्यगामिनम्॥ महात्मनांपुण्यकृतांमहर्द्धिनांयशस्विनामग्र्यमुदामिवालयम् ॥५॥ विशेषमालंब्य विशेषसंस्थितंविचित्रकूटंबहुकूटमंडितम् ॥ मनोभिरामंशरदिंदुनिर्मलंविचित्रकूटंशिखरंगिरेर्यथा ॥ ६ ॥ वहंतियत्कुंडलशोभिताननामहाशनाव्योमचरानिशाचराः ॥ विवृत्तविध्वस्तविशाललोचनामहाजवाभूतगणाः सहस्रशः ॥ ७ ॥

यशस्वी पुण्यशील महात्मा लोगोंको अतिआनंदका देनेवाला था, जो महापरिश्रमसे न बनाया हो इसमें ऐसा कोई भी स्थान न था और यह अपने स्वामीके मनकी गतिको जानपवनके समान अतिवेगसे गमन करता इस लिये कोई भी इसका अनादर नहीं करसकता था ॥ ५ ॥ अधिक करके यह विमान विशेष २ गतिके अनुसार शून्यमार्गमें घूमता और वह समस्त अद्भुत पदार्थोंके खानिरूप बहुतसे गृहोंसे विभूषित, अतिशयमनोरम, शरद ऋतुके चन्द्रमाके समान निर्मल और विचित्र शिखर समूहसे अलंकृत, सघन शिखरसे शोभित पर्वतके समान विराजमान था ॥ ६ ॥ जिनके नेत्र सदा घूमते रहनेवाले, निमेषरहित और विशाल थे, ऐसे आकाशमें चलनेवाले निशाचर और महावेगवान्, कुंडल धारण किये सहस्र२भूत गण अतिगंभीर शब्द करके इस विमानको लेकर चलते थे॥७॥

इस प्रकारसे वानरश्रेष्ठ वीरवर हनुमानजीने वसंत समयमें उत्पन्न हुये पुष्पोंके ढेरसे युक्त वसंत माससे भी अधिक परमसुन्दर देखनेके योग्य, यह श्रेष्ठपुष्पकविमान देखा ॥ ८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि सुन्दरकांडे भाषायामष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥ पवनकुमार हनुमानजीने उन सर्वश्रेष्ठ सुन्दर भवनोंके बीचमें अति सुन्दर विशाल वह निर्मल गृह देखा कि, जिसमें विमान धरा था॥ १॥यह रावणका गृह बहुतही बडा था, इसका विस्तार दो कोश और लंबाई चार कोशकी थी और बहुत धवरहरे इत्यादिकसे यह घिरा हुआ था॥ २॥शत्रुओंके मारनेवाले हनुमानजी वहांपर बडे २ नेत्रवाली विदेहनन्दिनी देवी सीताजीको ढूंढते हुये सब जगह विचरण करने लगे॥ ३॥और राक्षस लोगोंके साधारण गृह देखते हुये हनुमानजी रावणके मुख्य लक्ष्मीवान् उत्तम गृहमें प्रवेश करते हुये॥ ४॥यह गृह बहुतही बडा था,

वसंतपुष्पोत्करचारुदर्शनंवसंतमासादपिचारुदर्शनम् ॥ सपुष्पकंतत्रविमानमुत्तमंददर्शतद्वानरवीरसत्तमः ॥८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०सुंदरकांडे अष्टमः सर्गः ॥८॥ तस्यालयवरिष्ठस्यमध्येविमलमायतम् ॥ ददर्शभवनश्रेष्ठंहनूमान्मारुतात्मजः॥१॥ अर्धयोजनविस्तीर्णमायतंयोजनंमहत् ॥ भवनंराक्षसेंद्रस्यबहुप्रासादसंकुलम् ॥२॥ मार्गमाणस्तुवैदेहींसीतामायतलोचनाम् ॥ सर्वतःपरिचक्रामहनूमानरिसूदनः ॥ ३ ॥ उत्तमंराक्षसावासंहनूमानवलोकयन् ॥ आससादाथलक्ष्मीवान्राक्षसेंद्रनिवेशनम् ॥४॥ चतुर्विषाणैर्द्विरदैस्त्रिविषाणैस्तथैवच ॥ परिक्षिप्तमसंबाधंरक्ष्यमाणमुदायुधैः ॥५॥ राक्षसीभिश्चपत्नीभीरावणस्यनिवेशनम् ॥ आहृताभिश्चविक्रम्यराजकन्याभिरावृतम् ॥ ६ ॥ तन्नक्रमकराकीर्णंतिमिंगिलझषाकुलम् ॥ वायुवेगसमाधूतंपन्नगैरिवसागरम् ॥ ७ ॥ यहिवैश्रवणेलक्ष्मीर्याचंद्रेहीरवाहने ॥ सारावणगृहेरम्यानित्यमेवानपायिनी ॥ ८ ॥ याचराज्ञः कुबेरस्ययमस्यवरुणस्यच ॥ तादृशीतद्विशिष्टावाऋद्धीरक्षोगृहेष्विह ॥ ९ ॥

चौदन्ते और तिदंते हाथियोंके समूहसे व्याप्त था, हथियार उठाये हुये निशाचरगण सर्वदा इसकी रक्षा करते थे॥ ५॥रावणकी राक्षस जातिकी निशाचर पत्नी, और बल सहित दूसरे राजाओंसे छीन लाई हुई राजकन्यागणोंसे पूर्ण होनेपर॥ ६॥ मानो नाके मकर, तिमिंगिल मछलियोंके समूह और सर्पोंसे परिपूर्ण व वायुके वेगसे चलायमान समुद्रके समान यह गृह हनुमानजीने देखा॥ ७॥कुबेर चन्द्रमा व इन्द्रजीके भवनमें जो लक्ष्मी विराजमान हो रहती थी, रावणके इस भवनमें भी वही सर्व भुवन मनोहारिणी अनपायिनी लक्ष्मी नित्य विराजमान रहती थी॥ ८॥और राजा कुबेरके, यम और वरुणके गृहमें जितना धन रहता व ऋद्धि सिद्धि विराजती,

रावणके इस गृहमें भी वैसेही वरन् इनके गृहसे भी अधिक ऋद्धि सिद्धि विराजमान रहती थी॥९॥पवन कुमार हनुमानजीने उस अति बडे भवनके भीतर शयन गृह और बहुत उत्तम बना, बहुत सारे मतवाले हाथियोंसे पूर्ण एक गृह देखा॥१०॥विश्वकर्माजीने स्वर्गमें रहकर अनेक प्रकारके रत्नोंसे सजायकर पुष्पक नामक जो दिव्य विमान ब्रह्माजीके निमित्त बनाया था ॥११॥ यक्षपति कुबेरजीने कठोर तपस्याके फलसे ब्रह्माजीसे उसको पाया, फिर राक्षसपति रावण अनेक बल वीर्य व तेजके प्रभावसे कुबेरजीको जीतकर वह विमान ले आया ॥१२॥वह सुवर्ण चांदीसे चित्रित मृग युक्त सुडोल खंभोंसे और अपनी श्रीसे मानो प्रज्वलित हो रहा था॥१३॥सुमेरु और मन्दराचल पर्वतके समान, सूर्याग्निकी नाईं आकाशको छूते हुये से शिखर गृह और विहार भवनोंसे सब कहीं शोभित हो रहा था ॥ १४ ॥ विश्वकर्माजीने बडी चतुराईसे जिसको बनाया था, जो सुवर्णकी सीढियें और अति उत्तम वेदियोंसे अलंकृत था॥१५॥जो कांचनमय और स्फटि

तस्यहर्म्यस्यमध्यस्थंवेश्मचान्यत्सुनिर्मितम् ॥ बहुनिर्यूहसंयुक्तंददर्शपवनात्मजः ॥१०॥ ब्रह्मणोऽर्थेकृतंदिव्यंदिवियद्विश्वकर्मणा ॥ विमानं पुष्पकंनामसर्वरत्नविभूषितम् ॥११॥ परेणतपसालेभेकत्कुबेरःपितामहात् ॥ कुबेरमोजसाजित्वालेभेतद्राक्षसेश्वरः ॥१२॥ ईहामृगसमायुक्तैः कार्तस्वरहिरण्मयैः ॥ सुकृतैराजितंस्तंभैःप्रदीप्तमिवचश्रिया ॥ १३ ॥ मेरुमंदरसंकाशैरुल्लिखद्भिरिवांबरम् ॥ कूटागारैःशुभागारैःसर्वतःसमलंकृतम् ॥१४॥ ज्वलनार्कप्रतीकाशैःसुकृतंविश्वकर्मणा ॥ हेमसोपानयुक्तंचचारुप्रवरवेदिकम् ॥ १५ ॥ जालवातायनैर्युक्तंकांचनैःस्फाटिकैरपि ॥ इंद्रनीलमहानीलमणिप्रवरवेदिकम् ॥ १६ ॥ विद्रुमेणविचित्रेणमणिभिश्चमहाधनैः ॥ निस्तुलाभिश्चमुक्ताभिस्तलेनाभिविराजितम् ॥ ॥ १७ ॥ चंदनेनचरक्तेनतपनीयनिभेनच ॥ सुपुण्यगंधिनायुक्तमादित्यतरुणोपमम् ॥१८॥ विमानंपुष्पकंदिव्यमारुरोहमहाकपिः ॥ तत्रस्थः सर्वतोगंधंपानभक्ष्यान्नसंभवम् ॥१९॥ दिव्यंसंमूर्छितंजिघ्रन्रूपवंतमिवानिलम् ॥ सगंधस्तंमहासत्त्वंबंधुर्बन्धुमिवोत्तमम् ॥ २० ॥

कमय झरोखे और खिडकियोंके समूहसे विराजमान जिसमें इन्द्रनील महानील व दूसरी श्रेष्ठ मणियोंकी वेदियां शोभायमान होरहीं थी ॥१६॥ विचित्र मूंगे, बडे २ मोलकी मणियें गोल २ आकारवाले मोती जिसकी सहनमें लग रहे थे, इसकारण जो बहुतही शोभायमान था ॥१७॥ जो सुवर्ण समानसुगंधित और सूर्यभगवानकी नांईं लालचन्दन जिसमें लेप किया हुआ था । उस तरुण सूर्यके समान प्रकाशित ॥१८॥ पुष्पक नामदिव्य विमानमें महाकपि हनुमानजी चढ गये, और उस विमानमें टिक कर धूमधाम सब ओरसे खाने पीनेके पदार्थोंकी सुगंधको॥१९॥सूंघने लगे, यह सुगंध बडी दिव्यथी इससर्वत्र व्याप्त वायुने मानो साक्षात् गंध स्वरूप धारण किया था । बंधु जिस प्रकार अपने निष्कपट मित्रको जैसे उपदेश देता है ऐसेही वह गंधमय वायु महावीर्यवान् हनुमानजीसे

मानों यह वार्त्ता कहने लगा ॥ २० ॥ 'जिस स्थानमें रावण हैं हमारे साथ उसही स्थानमें चलो' इसलिये हनुमानजीने वहां चलकर रावणका बडा भारी शयनमंदिर देखा ॥२१॥ यह गृह रावणको उत्तम स्त्रीके समान प्यारा था; उसमें सुवर्णके झरोखे मणियोंकी सीढियां थीं ॥२२॥ स्फटिक मणियोंसे नीचेकी सहनई, और उसके बिचले भागमें हाथी दांत, मोती, हीरा, मूँगा सुवर्ण और चांदीकी बनी हुई विविध भाँतिकी मूँर्तियां शोभायमान होरही थी ॥ २३ ॥ मणियों करके निर्मित हुए अनेक खंभोंसे विभूषित समस्त खंभ; सीधे, सरल और समान थे इन सबसे शोभित ॥ २४ ॥ उन पक्षसमान अति ऊँचे खंभोंसे मानो वह भवन आकाशको उडा जाता था, पृथ्वीके समान चौकोना विचित्रफर्श जिसमें हीरा आदि मणिये जड रही थीं बिछा हुआ था ॥२५॥ अधिक

इतएहीत्युवाचेवतत्रयत्रसरावणः ॥ ततस्तांप्रस्थितःशालांददर्शमहर्तीशिवाम्॥२१॥रावणस्यमहाकांतांकांतामिववरस्त्रियम् ॥ मणिसोपानविकृतांहेमजालविराजिताम् ॥२२॥ स्फाटिकैरावृततलांदंतांतरितरूपिकाम् ॥ मुक्तावज्रप्रवालैश्चरूप्यचामीकरैरपि॥२३॥ विभूषितांमणिस्तंभैः सुबहुस्तंभभूषिताम् ॥ समैर्ऋजुभिरत्युच्चैःसमंतात्सुविभूषितैः ॥२४॥ स्तंभैःपक्षैरिवात्युच्चैर्दिवंसंप्रस्थितामिव ॥ महत्याकुथयास्तीर्णापृथिवीलक्षणांकया ॥२५॥ पृथिवीमिवविस्तीर्णांसराष्ट्रगृहशालिनीम् ॥ नादितांमत्तविहगैर्दिव्यगंधाधिवासिताम् ॥२६॥ परार्ध्यास्तरणोपेतांरक्षोऽधिपनिषेविताम्॥ धूम्रामगुरुधूपेनविमलांहंसपांडुराम्॥२७॥पत्रपुष्पोपहारेणकल्माषीमिवसुप्रभाम्॥मनसोमोदजननींवर्णस्यापिप्रसाधिनीम् ॥२८॥ तांशोकनाशिनींदिव्यांश्रितःसंजननीमिव ॥ इंद्रियाणींद्रियार्थैस्तुपंचपंचभिरुत्तमैः ॥२९॥

करके यह शयनशाला गांव, पुर, राज्य, गृह शोभित दूसरी पृथ्वीहीके समान विस्तारित थी, यह मदमत्त विहंगमोंके शब्दसे शब्दायमान, मनोहर; गंधसे सुगंधित की हुई थी ॥ २६ ॥ यहांपर बडे मोलके बिछौनेपर लेटा हुआ रावण शयन कर रहा था, यह शाला अगरके धूपसे धौले वर्ण हंसके समान श्वेत वर्णवाली थी ॥ २७ ॥ पुष्प रचनाके निकट रहनेसे विचित्र वर्ण वसिष्ठजीके धेनुके समान सुंदर प्रभा युक्त हृदयके आनंदको बढानेवाली ॥ २८ ॥ देहकी कांतिको उसकानेवाली, समस्त शोकोंको विनाश करनेवाली और साक्षात मानो दिव्य शोभाको उत्पन्न करनेवाली शालाने इंद्रियोंके पांच शब्द, स्पर्श, रूप रस व गंध इस पंच इंद्रियोंकी भोग्य वस्तु द्वारा हनुमानजीके चक्षुकर्णादि, पंच इंद्रियोंकी तृप्ति माताके समान देखतेही करदी ॥ २९ ॥

जब उस रावणपालित शालाने माताके समान उन्हें संतुष्ट कर दिया तब हनुमानजीने मनमें समझा कि, यह साक्षात् स्वर्ग देवलोक अथवा अमरावती या कोई श्रेष्ठ सिद्धि होगी ॥ ३० ॥ अथवा यह कोई उत्कृष्ट गन्धर्वी सिद्धि है यह विचार महावीरजी देखने लगे ॥ ३१ ॥ उसके कांचन मय खम्भोंमें जलते हुए समस्त दीपक रावणके तेजके प्रभावसे अतिक्षीण हो जुआ खेलने में महाधूर्त्त करके हारे हुए जुवारी लोगोंके समान मानो बडीभारी चिंतामें लगे हुए थे॥३२॥दीपावलीकी प्रभा; रावणका तेज और गहनोंके समूहकी दीप्ति इन सबसे उस शालामें मानो अग्निकी शिखा बन रही है ऐसा हनुमानजीने माना ॥३३॥ फिर हनुमानजीने देखा कि, रात्रिके हो आनेसे सहस्र २ स्त्रियें अनेक प्रकारके शृङ्गार कर विभूषित हो विचित्र आसनों पर कोई २ बैठी हैं और कोई २ लेटी हैं ॥३४॥ वह सब स्त्रियां अर्द्धरात्रि हो जानेसे मदिरा पान करनेके कारण नींदके वशहो विहार करनेसे विरत होगई हैं॥३५॥इस प्रकारसे सबके

तर्पयामासमातेवतदारावणपालिता॥स्वर्गोऽयंदेवलोकोऽयमिंद्रस्यापिपुरीभवेत्॥३०॥सिद्धिर्वेयंपराहिस्यादित्यमन्यतमारुतिः ॥३१॥ प्रध्या यतइवापश्यत्प्रदीपांस्तत्रकांचनान्॥धूर्तानिवमहाधूतदवनेनपराजितान्॥३२॥दीपानांचप्रकाशेनतेजसारावणस्यच॥अर्चिर्भिर्भूषणानांचप्रदीप्ते त्यभ्यमन्यत ॥३३॥ ततोऽपश्यत्कुथासीनंनानावर्णांबरस्रजम् ॥ सहस्रंवरनारीणांनानावेषविभूषितम् ॥३४॥ परिवृत्तेऽर्धरात्रेतुपाननिद्रावशं गतम् ॥ क्रीडित्वोपरतंरात्रौप्रसुप्तबलवत्तदा ॥ ३५ ॥ तत्प्रसुप्तंविरुरुचेनिःशब्दांतरभूषितम् ॥ निःशब्दहंसभ्रमरंयथापद्मवनंमहत् ॥ ३६ ॥ तासांवृत्तदांतानिमीलिताक्षीणिमारुतिः ॥ अपश्यत्पद्मगंधीनिवदानानिसुयोषिताम् ॥३७॥ प्रबुद्धानीवपद्मानितासांभूत्वाक्षपाक्षये॥पुनःसंवृ तपत्राणिरात्राविवबभुस्तदा॥३८॥इमानिसुखपद्मानिनियतंमत्तषट्पदाः ॥ अंबुजानीवफुल्लानिप्रार्थयंतिपुनःपुनः ॥ ३९ ॥ इतिवाऽमन्यत श्रीमानुपपत्त्यामहाकपिः ॥ मेनेहिगुणतस्तानिसमानिसलिलोद्भवैः ॥ ४० ॥

सोयेजाने और नूपुर इत्यादिकी झनकारका शब्द बंद होजानेसे रावणका यह गृह भ्रमर और हंसध्वनि रहित बडे भारी कमलवनके समान शोभा धारण कर रहा था ॥ ३६ ॥ उसके पीछे पवनकुमार हनुमानजीने परम सुन्दरी ललनाओंके नेत्र मुँदे और कमलकी सुगंधिसे युक्त वदनमंडल देखे ॥३७॥ निद्राके समागमसे उनके नेत्रयुगल मुँद गये और बत्तीसी बन्द हो गई थी उनके ऐसे मुखमण्डल रात्रिके अवसानमें कमलफूलोंके समान प्रफुल्लित होकर; फिर रात्रिके आगमनसे मुकुलित पत्र सरोज (कमल) की नाईं परम शोभा धारण कर रहे थे ॥३८॥ यह देखकर श्रीमान् महाकपि हनुमानजीने युक्तिके अनुसार इसप्रकारसे विचारा कि, मत्त भ्रमर कुलप्रफुल्लित कमलके समय इन समस्त मुखकमलोंका सदा अभिलाष करतेहैं ॥३९॥ इस प्रकारका विचार करके

उन्होंने इन सब मुखपद्मोंकी गुणमें जलमें उत्पन्न हुए पद्मके सहित समानताकी ॥ ४० ॥ जो कुछ हो रावणका शयनगृह इन सब वरांगनाओंके झुण्डसे शरद कालके ताराओंसे भूषित निर्मल आकाशके समान शोभायमान हो रहा था ॥४१॥ और आपरूप रावण भी वैसेही स्त्रियोंके पास रहनेसे तारागणोंसे युक्त चन्द्रमाके समान उज्ज्वलतासे प्रकाश पाय रहाथा ॥ ४२ ॥ जो तारे कि, पुण्यक्षीण होनेके उपरान्त आकाशसे गिरते हैं, वही समस्त मानो स्त्रियोंके रूपसे यहांपर आ कर मिल गये हैं; ऐसा विचार हनुमानजीके मनमें उदय हुआ ॥ ४३ ॥ क्योंकि निर्मल तेजयुक्त बहुत श्रेष्ठ तारागणोंके समान वहां पर की स्त्रियोंकी चमकीली कान्ति और कमल वर्णकी प्रसन्नता इनमें शोभित हो रही है ॥ ४४ ॥ जो कि, वह स्त्रियें मदिरा पीकर अत्यन्तही श्रमके वश हो नींदमें अचेत होगई थीं; इसलिये उनके केश, कोमल मालायें, व श्रेष्ठ श्रेष्ठ गहने इधर उधर चलायमान हो रहे थे ॥४५॥ किसी २ का तिलक विझन गया

सातस्यशुशुभेशालाताभिःस्त्रीभिर्विराजिता ॥शरदीवप्रसन्नाद्यौस्ताराभिरभिशोभिता॥ ४१॥सचताभिःपरिवृतः शुशुभेराक्षसाधिपः ॥ यथा ह्युडुपतिःश्रीमांस्ताराभिरभिसंवृतः॥४२ ॥याश्च्यवंतेंबरात्ताराःपुण्यशेषसमावृताः॥ इमास्ताःसंगताःकृत्स्नाइतिमेनेहरिस्तदा ॥४३॥ ताराणामिवसुव्यक्तंमहतीनांशुभार्चिषाम् ॥ प्रभावर्णप्रसादाश्चविरेजुस्तत्रयोषिताम्॥४४॥व्यावृत्तकचपीनस्रक्प्रकीर्णवरभूषणाः॥पानव्यायामकालेषुनिद्रोपहतचेतसः ॥ ४५ ॥ व्यावृत्ततिलकाःकाश्चित्काश्चिदुद्भ्रांतनूपुराः॥ पार्श्वेगलितहाराश्चकाश्चित्परमयोषितः ॥ ४६ ॥मुक्ताहारवृताश्चान्याःकाश्चित्प्रस्रस्तवाससः॥ व्याविद्धरशनादामाःकिशोर्यइववाहिताः॥४७॥अकुंडलधराश्चान्याविच्छिन्नमृदितस्रजः॥गजेन्द्रमृदिताःफुल्लालताइवमहावने॥४८ ॥चंद्रांशुकिरणाभाश्चहाराःकासांचिदुद्गताः॥ हसाइवबभुः सुप्ताः स्तनमध्येषुयोषिताम् ॥४९॥ अपरासांचवैदूर्याःकादंबाइवपक्षिणः ॥ हेमसूत्राणिचान्यासांचक्रवाकाइवाभवन् ॥ ५० ॥

था; किसी २ की पायजेब पांयसे निकल गई थी; किसी २ के हार टूटकर उनकी बगलोंमें पडे थे; इस प्रकारसे वह स्त्रियें सो रही थीं ॥ ४६ ॥ किसीका मोतियोंका हार टूट गया था, किसीके कपडे उसके अंगोंसे खसक गये थे किसी २ की तगडियें नितम्बोंपरसे निकली पडती थीं स्त्रियें थक कर इस प्रकार सब गहनोंको इधर उधर डाल बोझ लादनेके पीछे बोझ उतारी हुई घोडियोंके समान शयन कर रही थीं॥४७॥किसीके कुण्डल निकल पडे थे किसी २ की मालायें टूट गई थीं कोई २ स्त्रियें महाभवनमें गजेंद्रने मर्दित की हुई लताके समान घबडाई सी पडी थीं ॥ ४८ ॥ किसी २ स्त्रीका चन्द्रमाकी किरणोंके समान श्वेत वर्णका मुक्ताहार छाती पर सिमट जानेसे एकत्र हो, सोते हुए हंसके समान स्त्रियोंके स्तनोंमें विराजमानहो रहा था॥४९॥किसी २ की वैदूर्यमणिसे

बनी हुई मणिमाला कल हंसके समान किसीके स्तनोंमें बीच सोनेके हारकी श्रेणियां चक्रवाकोंके समान शोभा विस्तार कर रहीथीं ॥५०॥ इसमें वे स्त्रियां हंस कारण्डव सहित और चक्रवाकोंसे शोभित नदियोंकी भांति किनारेरूपी जंघाओंसे शोभायमान होती थीं ॥५१॥ किंकिणीके जालको मुकुल बनाये स्वर्णके गहनोंको बडे २ सरोज समझे; भाव श्रृङ्गार और चेष्टाओंको ग्राह बनाये पतिके अनुकूल चलनेसे उत्पन्न हुए यशको किनारा किये सोई हुई वे स्त्रियें नदियोंके समान शोभित होती थीं॥५२॥ किसी २ स्त्रीके सुकोमल अंगोंमें और किसी २ स्त्रीके कुचाग्रमें मर्दन करनेसे जो रेखायें पड गई हैं, वह समस्त रेखायें सुन्दर गहनोंका कार्य कर रही हैं।५३॥ किसी २ स्त्रीके वस्त्रोंके अञ्चल उसके मुखके श्वांसकी लहरसे वारम्वार कंपित मुखमंडलके ऊपर वारम्वार फहरा रहे थे॥५४॥

हंसकारंडवोपेताश्चक्रवाकोपशोभिताः ॥ आपगाइवतारेजुर्जघनैः पुलिनैरिव ॥५१॥ किंकिणीजालसंकाशास्ताहेमविपुलांबुजाः ॥ भावग्राहाय शस्तीराःसुप्तानद्यइवाबभुः ॥ ५२ ॥ मृदुष्वंगेषुकासांचित्कुचाग्रेषुचसंस्थिताः ॥ बभूवुर्भूषणानीवशुभाभूषणराजयः ॥५३॥ अंशुकांताश्च कासांचिन्मुखमारुतकंपिताः ॥ उपर्युपरिवक्त्राणांव्याधूयतेपुनःपुनः ॥ ५४ ॥ ताःताकाइपवोद्धूताः पत्नीनांरुचिरप्रभाः ॥ नानावर्णसुवर्णानां वक्त्रमूलेषुरेजिरे ॥५५॥ ववल्गुश्चात्रकासांचित्कुंडलानिशुभार्चिषाम् ॥ मुखमारुतसंकंपैर्मंदंमंदंचयोषिताम् ॥५६॥ शर्करासवगंधःसप्रकृत्या सुरभिः सुखः ॥ तासांवदननिःश्वासःसिषेवेरावणंतदा ॥ ५७ ॥ रावणाननशंकाश्चकाश्चिद्रावणयोषितः ॥ मुखानिस्वसपत्नीनामुपाजिघ्रन्पुनः पुनः ॥५८ ॥ अत्यर्थं सक्तमनसोरावणेतावरस्त्रियः ॥ अस्वतंत्राः सपत्नीनांप्रियमेवाचरंस्तदा ॥५९ ॥ बाहूउपनिधायान्याःपारिहार्यविभूषिताः ॥ अंशुकानिचरम्याणिप्रमदास्तत्रशिश्यिरे॥ ६० ॥

उनसे ऐसी शोभा होरही थी; मानो अनेक वर्णके रँगीली सुवर्णके तारोंसे बनी हुई श्रेष्ठ पताकायें फहराय रही हैं ॥५५॥ किन्हीं २ कांतिवाही स्त्रियोंके दोनों कुण्डल उनके मुखकी पवनसे मन्द २ शब्द करके हिल रहेथे ॥ ५६ ॥ उन स्त्रियोंका स्वाभाविक सुगंधिवाला बदनसे निकला हुआ; छूनेसे सुख देनेवाला श्वापवन मदिराकी गंधसे अधिकतर सुगंधित हो रावणकी सुख उपजातयकन रहा था ॥ ५७ ॥ कोई २ रावणकी स्त्री मदके मारे विह्वल हो रावणके मुखके धोखेमें वारंवार अपनी सौतोंका मुख सूंघ रहीं थीं॥५८॥ उन सब श्रेष्ठ स्त्रियोंका मन एक रावणमें ही बहुत लगनेसे राजपत्नियों करके चुम्बित होनेपर भी विरक्त नहीं होता था॥५९॥ बाजु धारण किये कुछेक स्त्रियें सुन्दर २ वस्त्र धारण किये हुये दोनों बाहोंको तकिया बनाये उनपर मस्तक धर शयन कर रहीं हैं॥६०॥

कोई किसीकी छातीके ऊपर, कोई किसीकी भुजाके ऊपर कोई किसीकी गोदीमें, और कोई २ किसी२के कुचोंहीको पकडे शयन कर रही थीं ॥ ६१ ॥ इस प्रकारसे मादकता, और पतिके प्रेमके वशहो समस्त स्त्रियां परस्पर जांघ, कमर, बगल और पीठका आश्रयकर परस्पर अंग मिलाये शयन किये हुई थीं ॥ ६२ ॥ वह सुमध्यमा स्त्रियें परस्पर एक दूसरीका अंग स्पर्श करके सुख प्राप्त करती हुई परस्पर बाँहें मिलाये गाढो नींदके वश हो रहीथीं॥६३॥एक दूसरे की भुजाके डोरेमें बँधी हुई वह स्त्रियोंकी माला एक डोरामें गुँथी हुई भ्रमरगणोंसे सेवित मनोहर पुष्पमालाके समान शोभायमान हो रही थी ॥ ६४ ॥ पवनके लगनेके कारण खिली हुई लताओंके परस्पर ग्रसित होने और स्त्रियोंके बालोंमें गुँथे फूलोंकेगुच्छोंसे॥६५॥व उसके परस्पर लिपट जानेसे स्कंध रूप शोभायमान होने,

अन्यावक्षसि चान्यस्यास्तस्याः काचित्पुनर्भुजम्॥ अपरात्वंकमन्यस्यास्तस्याश्चाप्यपराकुचौ॥६१॥ऊरुपार्श्वकटीपृष्ठमन्योन्यस्यसमाश्रिताः ॥परस्परनिविष्टांग्योमदस्नेहवशानुगाः॥ ६२॥ अन्योन्यस्यांगसंस्पर्शात्प्रीयमाणाःसुमध्यमाः॥एकीकृतभुजाःसर्वाःसुषुपुस्तत्रयोषितः॥६३॥ अन्योन्यभुजसूत्रेणस्त्रीमालाग्रथिताहिसा॥ मालेवग्रथितासूत्रेशुशुभेमत्तषट्पदा॥ ६४ ॥लतानांमाधवेमासिफुल्लानांवायुसेवनात् ॥ अन्योन्य मालाग्रथितंसंसक्तकुसुमोच्चयम्॥६५॥प्रतिवेष्टितसुस्कंधमन्योन्यभ्रमराकुलम् ॥ आसीद्वनमिवोद्धूतंस्त्रीवनंरावणस्यतत् ॥६६॥उचितेष्वपिसु व्यक्तंनतासांयोषितांतदा ॥ विवेकंशक्यमाधातुंभूषणांगांबरस्रजाम्॥ ६७ ॥रावणेसुखसंविष्टेताःस्त्रियोविविधप्रभाः ॥ ज्वलंतःकांचनादीपाः प्रेक्षंतोनिमिषाइव ॥६८ ॥ राजर्षिविप्रदैत्यानांगंधर्वाणांचयोषितः ॥ रक्षसांचाभवन्कन्यास्तस्यकामवशंगताः ॥६९ ॥ युद्धकामेनताःसर्वारा वणेनहृताःस्त्रियः ॥ समदामदनेनैवमोहिताःकाश्चिदागताः ॥ ७० ॥

और भ्रमररूपी बालोंके वर्त्तमान होनेसे रावणकी स्त्रियोंका मानो यह एकवन था ॥६६॥ स्त्रियोंके समस्त गहने उचित रीतिसे यथास्थानमें पहरे हुए हैं परन्तु एक दूसरीसे इसप्रकार सटकर सोय रही थी कि जिससे यह स्थिर करना कठिन था कि कौन गहना है? कौन माला है और उनका कौनसा अंग है? ॥६७॥ रावणको इस समय सोताही हुआ देखकर मानो विविध प्रभावाले सुवर्णमय उज्ज्वल दीपकविना पलक मारे नेत्रोंसे रावणकी स्त्रियोंको देख रहे थे जब रावण जागता था तब तो देवलोग भी उसकी स्त्रियोंको नहीं देख सकते थे ॥६८॥ राजर्षि, ब्राह्मण, दैत्य; गन्धर्व और राक्षसोंकी कन्या इन सबकोही रावणने अपनी प्रणयिनी बनाया था; अर्थात् उनको व्याहा था॥६९॥ उनमेंसे किसी २ को रावण युद्ध करके उनके पिताओंको जीत हरकर लाया था और कोई मदमाती युवास्त्री काम

बाणसे मोहितहो स्वयंही रावणके साथ आई थी॥ ७०॥ वीर्यवान् रावण बलपूर्वक किसी स्त्रीको उसकी इच्छाके विना लंकामें नहीं लाया था दूसरेकी इच्छा करनेवाली और ब्याही स्त्रीकोभी नहीं लाया था; पूजा करनेके योग्य जानकीके सिवाय सबही स्त्रियां रावणके सौन्दर्यादि गुणोंमें बंधकर स्वयंही चली आई थीं॥ ७१॥ उन स्त्रियोंमें रावणको छोड दूसरेके प्रति किसीका अभिलाष नहीं था और नकोई पहले किसीसे भोगी गई थीं; सबही सत्कुलमें उत्पन्न, सबही सुन्दरी; सबही चतुर और सबही श्रेष्ठ वस्त्राभूषण धारण किये, सबही चिन्ताशील और सबही रावणको प्यारी थीं॥ ७२॥ उन सब स्त्रियोंको देखकर बुद्धिमान हनुमानजीने विचारा कि यह सब राक्षसराज रावणकी स्त्रियां हैं; और यह जिस प्रकार रावणका स्मरणादि करनेमें लगी हैं; जो इसी भांति श्रीरामचंद्रजीकी धर्मभार्या जानकीजी श्रीरामचंद्रजीका ध्यान करती हैं व रावणने उनमें कुछ विघ्न न डाला हो; तो बडे आनंदकी बात है ॥ ७३॥ फिर हनुमानजीने विचारा कि सीताजीमें पातिव्रत्यादि गुण अति

नतत्रकाश्चित्प्रमदाःप्रसह्यवीर्योपपन्नेनगुणेनलब्धाः ॥ नचान्यकामापिनचान्यपूर्वाविनावराहांजनकात्मजांतु॥ ७१ ॥ नचाकुलीनानचहीनरूपा नादक्षिणानानुपचारयुक्ता॥ भार्याऽभवत्तस्यनहीनसत्त्वानचापिकांतस्यनकामनीया॥ ७२ ॥ बभूवबुद्धिस्तुहरीश्वरस्ययदीदृशीराघवधर्मपत्नी ॥ इमामहाराक्षसराजभार्याःसुजातमस्येतिहिसाधुबुद्धेः ॥ ७३ ॥ पुनश्चसोचिंतयदात्तरूपोध्रुवंविशिष्टागुणतोहिसीता ॥ अथायमस्यांकृतवान्महा त्मालंकेश्वरःकष्टमनार्यकर्म ॥ ७४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे नवमः सर्गः ॥ ९ ॥ तत्रदिव्योप मंमुख्यंस्फाटिकंरत्नभूषितम् ॥ अवेक्षमाणोहनुमान्ददर्शशयनासनम् ॥ १ ॥ दांतकांचनचित्रांगैर्वैदूर्यैश्चवरासनः ॥ महार्हास्तरणोपेतैरुपपन्नंमहा धनैः ॥ २ ॥ तस्यचैकतमेदेशेदिव्यमालोपशोभितम् ॥ ददर्शपांडुरंछत्रंताराधिपतिसन्निभम् ॥ ३ ॥

प्रबल हैं; कारण कि; हमने देखा है कि जब महाबलवान् क्रूरकर्मकारी रावण अनार्य कर्म कर उनको हरे हुए लिये जाता था; तब वह बडे शब्दसे रोय २ अपना दुःख प्रगट करती हुई गई थीं ॥ ७४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां नवमः सर्गः ॥ ९ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

इसके पीछे हनुमानजीने इस स्थानके चारो ओर देखते २ विविध रत्न विभूषित; स्फटिक मणियोंसे बना हुआ दिव्य सर्वश्रेष्ठ पलंगके स्थापन करनेका आसन देखा ॥ १ ॥ यह आसन चित्रपादकादि युक्त, महामूल्यवान् रत्नखचित बडे २ बिछौनोंसे ढका हुआ था । इसपर महामूल्यवान् हाथीदांतके और सुवर्णके बने हुए पलंग रक्खे थे ॥ २ ॥ इन सब पर्यकोंके एक स्थानमें चन्द्रमाके समान उज्ज्वलमालाओंसे शोभित एक २ श्वेत छत्र रक्खा था ॥ ३ ॥

औरं सुवर्णमंडित, सूर्यसम प्रभायुक्त अशोक फूलोंकी मालासे युक्त विचित्र एक पलँग अलग रक्खा हुआ देखा ॥४॥ इस पलंगके चारों ओर स्त्रियोंकी मूर्त्तियां चमर हाथमें लेकर पवन कर रही थीं ॥ अनेक प्रकारकी सुगंधि निकल रही थी और श्रेष्ठ धूपकी सुगंधि वहां आय रही थी ॥५॥ वह बडे कोमल पश्मीनेसे मढा गया था, मनोहर बिछौना उसपर बिछा हुआ था, और मनोहर फूलोंके चारों ओर शोभा विस्तार कर रहे थे ॥६॥ उस आसनपर काले मेघके समान वर्ण वाला कानोंमें उज्ज्वल प्रकाशमान कुण्डल धारण किये लालनेत्रवाला आजानु लम्बित बाहु, सुवर्णके तारोंसे बने हुए वस्त्र पहरे ॥ ७ ॥ सर्वांगमें सुगंधियुक्त लाल चन्दन लगाये दामिनीयुक्त अरुण सन्ध्याकालीनबादरके समान शोभा धारण किये ॥ ८ ॥ अति मनोहर मूर्ति धारण किये; विविध भाँतिके श्रेष्ठ गहने

जातरूपपरिक्षिप्तंचित्रभानोःसमप्रभम्॥अशोकमालाविततंददर्शपरमासनम्॥४॥वालव्यजनहस्ताभिर्वीज्यमानंसमंततः ॥ गंधैश्वविविधैर्जुष्टं वरधूपेनधूपितम् ॥५॥परमास्तरणास्तीर्णमाविकाजिनसंवृतम् ॥ दामभिर्वरमाल्यानांसमंतादुपशोभितम् ॥ ६ ॥ तस्मिञ्जीमूतसंकाशंप्रदीप्तोज्ज्वलकुंडलम्॥लोहिताक्षंमहाबाहुंमहाराजतवाससम्॥७॥लोहितेनानुलिप्तांगंचंदनेनसुगंधिना॥संध्यारक्तमिवाकाशेतोयदंसतडिद्गणम् ॥ ८॥ वृतमाभरणैर्दिव्यैःसुरूपंकामरूपिणम्॥सवृक्षवनगुल्माढ्यंप्रसुप्तमिवमंदरम् ॥९॥ क्रीडित्वोपरतंरात्रौवराभरणभूषितम् ॥ प्रियंराक्षसकन्यानां राक्षसानांसुखावहम् ॥१० ॥पीत्वाप्युपरतंचापिददर्शसमहाकपिः ॥ भास्वरेशयनेवीरंप्रसुप्तंराक्षसाधिपम् ॥ ११ ॥ निःश्वसंतंयथानागंरावणं वानरोत्तमः ॥ आसाद्यपरमोद्विग्नःसोपासर्पत्सुभीतवत् ॥ १२ ॥ अथारोहणमासाद्यवेदिकांतरमाश्रितः ॥ क्षीबंराक्षसशार्दूलंप्रेक्षतेस्ममहाकपिः ॥ १३ ॥ शुशुभेराक्षसेन्द्रस्यस्वपतःशयनंशुभम् ॥ गंधहस्तिनिसंविष्टंयथाप्रस्रवणंमहत् ॥१४॥

पहने ऐसा जानपडता था मानो अनेक लता झाडियों करिके परिपूर्ण मन्दराचलपर्वत शयन कररहाहै ॥ ९ ॥ रात्रिके विहार करनेसे निवृत्त श्रेष्ठ आभूषण धारणकिये राक्षस कुमारियोंकेऔर निशाचरोंके सुख पहुँचानेवाले ॥ १० ॥ मदिरा व स्त्रियोंका अधरामृत पीनेसेतृप्त सुवर्णसे बने हुये प्रकाशित पलंगपर शयनकिये हुए राक्षसोंके स्वामी रावणको हनुमानजीने देखा ॥ ११ ॥रावण उस पलंग पर लेटा हुआ हाथीके समान श्वास लेरहा था, हनुमानजीने ऐसे रावणको देखतेही कुछेक डरकर दूर २ अलग जायखडे होगये ॥ १२ ॥ फिर सीढियोंके विचले भागमें खडे रहकर उसके आसनकाआश्रय करके मदमत्तराक्षसशार्दूल रावणको महाकपि हनुमानजी देखने लगे ॥ १३ ॥राक्षसराज रावणके शयन करने पर उसका यह मनोहर शयनस्थान मदचुआतेहाथियों करके सहित बडेभारी प्रस्रवण

पर्वतके समान शोभायमान हो रहा था ॥१४॥ हनुमानूजीने देखा कि; महात्मा राक्षसराज रावणके कांचन बाजुधारण कियेदोनोंहाथइन्द्रध्वजाके समान शय्या पर पडेहुये थे ॥१५॥ ऐरावत हाथीकेदांतोंके आघातसे दोनोंबाँहोंमें घाव होगयेहैं; कंधोंमें वज्रकी चोटके निशान होरहे हैं और विष्णुजीके चक्रने भीदोनों बाँहोंकी भली भांति परीक्षा ली थी ॥ १६ ॥ दोनों अति बडी बाँहें, बराबर गोल, सम कंधोंसे मिली, बलिष्ठ सुलक्षणयुक्त नख और उँगुली औरअँगूठोंसे भूषितथी ॥१७॥ सुगोलपरिघके समान लम्बी हाथीकी शुण्डके समान चढाव उतारवाली दोनों बाँहें दो पंचमुँहे सर्पोंके समान श्वेतवर्णकी शय्यापर पडी थीं ॥ १८ ॥ खरगोशके खूनके समान लाल, सुगंधितशीतल श्रेष्ठ चन्दन व और भी श्रेष्ठ २ सुगंधियोंसे युक्त शोभायमान गहनोंसे शोभित ॥ १९ ॥ उत्तमस्त्रियोंके आलिंग

कांचनांगदसन्नद्धौददर्शसमहात्मनः ॥ विक्षिप्तौराक्षसेंद्रस्यभुजाविंद्रध्वजोपमौ ॥ १५ ॥ ऐरावतविषाणाग्रैरापीडनकृतव्रणौ ॥ वज्रोल्लिखितपीनांसोविष्णुचक्रपरिक्षतौ ॥१६॥ पीनौसमसुजातांसौसंगतौ बलसंयुतौ ॥ सुलक्षणनखांगुष्ठौस्वंगुलीयकलक्षितौ ॥१७॥ संवृत्तौपरिघाकारौ वृत्तौकरिकरोपमौ ॥ विक्षिप्तौशयनेशुभ्रेपंचशीर्षाविवोरगौ ॥ १८ ॥ शशक्षतजकल्पेनसुशीतेनसुगंधिना ॥ चन्दनेनपरार्घ्येनस्वनुलिप्तौस्वलंकृतौ ॥ १९ ॥ उत्तमस्त्रीविमृदितौगंधोत्तमनिषेवितौ ॥ यक्षपन्नगगंधर्वदेवदानवराविणौ ॥२०॥ददर्शसकपिस्तस्यबाहूशयनसंस्थितौ ॥ मंदरस्यांतरेसुप्तौमहाहीरुषिताविव॥ २१ ॥ताभ्यांसपरिपूर्णाभ्यामुभाभ्यांराक्षसेश्वरः ॥ शुशुभेऽचलसंकाशः शृंगाभ्यामिवमंदरः ॥२२॥ चूतपुन्नागसुरभिर्बकुलोत्तमसंयुतः ॥ मृष्टान्नरससंयुक्तःपानगंधपुरःसरः ॥२३ ॥ तस्यराक्षसराजस्यनिश्चक्राममहामुखात्॥शयानस्यविनिश्वासःपूरयन्निवतद्गृहम् ॥ २४॥ मुक्तामणिविचित्रेणकांचनेनविराजता॥मुकुटेनापवृत्तेनकुंडलोज्ज्वलिताननम् ॥ २५ ॥ रक्तचन्दनदिग्धेनतथाहारेणशोभिना ॥ पीनायतविशालेनवक्षसाभिविराजता ॥२६॥

नसे मर्दित अत्युत्तम गन्धपदार्थोंसे सेवित यक्ष, नाग, गन्धर्व देव दानवोंकेरुआनेवाली ॥२०॥ ऐसी उसकी दोनों बाँहें विस्तर पर पडी हुई महाकपि हनुमानजीने देखीं मानो मन्दराचलपर्वतकी तलेटीमें क्रोधित हुये दो भयंकर सर्प शयन कर रहे हैं ॥ २१ ॥ वह अचलके समान राक्षसगणरावण सर्व लक्षणयुक्त अपनी दोनों भुजाओंसे मानो दो श्रृङ्गधारी मन्दराचलपर्वतके समान शोभायमान हो रहा था ॥ २२ ॥ आम, पुन्नाग, बकुल, छःरस युक्त मिष्टान्न और मदकीसुगंधिसे सनी॥ २३॥ श्वासपवन जो रावणके महामुखसे निकलती थी, वह श्वासोंसे रावणके गृहको पूर्ण करतीहुई बाहरकोनिकलती थी ॥२४॥ मुक्तामणि विराजित कांचन मयमुकुट निद्राके वश होनेसे खसक रहाथा, तब उसका मुखमंडल दोनों कुण्डलोंसे उज्ज्वल होरहाथा॥ २५ ॥और उसकी पुष्ट लंबी चौडी छाती

रक्तचंदन लिप्तमनोहर हारसे शोभायमान हो रही थी ॥ २६ ॥ उसकेदोनों नेत्र लाल हो रहे थे, वह उजले रेशमी वस्त्रपहर रहा था, और पीताम्बरीदुप ट्टेमें वह लिपटा हुआ पडा था ॥ २७ ॥ पापके ढेरके समान वह दीप्तिमान् राक्षसपति रावण मानो भुजंगकी नाईं श्वासले रहा था, वह गंगाजीके अगाध जलमें शयन कियेहुए मतवाले हाथीके समान बिछौने परसोय रहा था॥२८ ॥चार सुवर्णमय दीपक चारों ओर जलरहेथे, उनदीपकोंसे बिजलीके द्वारा मेघोंकीनाईं उसके सब अंग प्रकाशमान होरहे थे ॥२९॥ पवनकुमार हनुमान्‌जीने देखा कि, गृहके मध्यमें उस पत्नीप्रिय दुरात्मा राक्षसनाथके चरणोंमें उसकी समस्तस्त्रियां शयन कर रही हैं ॥३०॥ हनुमान्‌जीने देखा कि, उन स्त्रियोंके वदन चंद्रमंडलकी नाईं प्रकाशमान होरहेथे, कानोंमें श्रेष्ठ कुण्डल आभूषण और उनके कंठमें खिले हुए फूलोंकी माला पडी थी ॥ ३१ ॥सबही नाचने गानेमें चतुरथीं कोई २ रावणकी भुजाओंके मध्यमें और कोई२ उसकीगोदीमें लेटी हुईथीं इस प्रकारकी

पांडुरेणापविद्धेनक्षौमेणक्षतजेक्षणम् ॥ महार्हेणसुसंवीतंपीतेनोत्तरवाससा॥२७॥माषराशिप्रतीकाशंनिःश्वसंतंभुजंगवत्॥गांगेमहतितोयांतेप्रसुप्तमिवकुंजरम् ॥२८॥ चतुर्भिःकांचनैर्दीपैर्दीप्यमानंचतुर्दिशम् ॥ प्रकाशीकृतसर्वांगंमेघंविद्युद्गणैरिव ॥ २९ ॥ पादमूलगताश्चापिददर्शसुमहात्मनः ॥ पत्नीःसप्रियभार्यस्यतस्यरक्षःपतेर्गृहे ॥३०॥ शशिप्रकाशवदनावरकुंडलभूषणाः ॥ अम्लानमाल्याभरणाददर्शहरियूथपः॥३१॥ नृत्यवादित्रकुशलाराक्षसेंद्रभुजांकगाः॥ वराभरणधारिण्योनिषण्णाददृशेकपिः॥३२॥वज्रवैदूर्यगर्भाणिश्रवणांतेषुयोषिताम्॥ ददर्शतापनीयानिकुंडलान्यंगदानिच ॥३३॥ तासांचंद्रोपमैर्वक्त्रैःशुभैर्ललितकुण्डलैः॥ विराजतविमानंतन्नभस्तारागणैरिव ॥ ३४ ॥ मदव्यायामखिन्नास्ताराक्षसेंद्रस्ययोषितः ॥ तेषुतेष्ववकाशेषुप्रसुप्तास्तनुमध्यमाः ॥३५॥ अंगहारैस्तथैवान्याकोमलैर्नृत्यशालिनी ॥ विन्यस्तशुभसर्वांगीप्रसुप्तावरवर्णिनी ॥ ३६ ॥ काचिद्वीणांपरिष्वज्यप्रसुप्तासंप्रकाशते ॥ महानदीप्रकीर्णेवनलिनीपोतमाश्रिता ॥ ३७ ॥

श्रेष्ठ वस्त्राभूषण धारण करनेवाली कामिनियोंको वहां शयन करते हुए हनुमान्‌जीने देखा ॥ ३२ ॥ उन स्त्रियोंके कानोंमें हीरे औरवैडूर्य मणिके बने हुए सुवर्णमय कुण्डल शोभायमान हो रहे थे। बाँहोंका तकिया लगानेसे बाजूबंदभी कानके धोरे शोभित हुए हनुमान्‌जीने देखे ॥ ३३ ॥ उन स्त्रियोंके मनोहर कुण्डल भूषित सुंदर २ मुखोंसे विराजमान वह विमान तारागण विभूषित आकाशके समान शोभा धारण किये हुए था ॥ ३४ ॥ रति करानेके कारण उसके श्रमसे थककर राक्षसराज रावणकी सूक्ष्मकटिवाली स्त्रियां जो जहांपर जैसे थीं वह वैसेही सोय गई थीं ॥ ३५ ॥ कोई मनोहर अंगवाली कामिनी नींदकी अवस्थामेंही अपने कोमल अंगोंको चलायमानकरके मानो हावभावसहित नाच रही थीं ॥३६॥ कोई वाणीको पकडेही हुए सो जानेसे ऐसी शोभितहोती थीमानो महानदीके

प्रवाहमें डूबती हुई कमलिनी भाग्यसे किसी नौकामें लग गई हैं ॥ ३७॥ कमल के समान नेत्रवाली कोई स्त्री डमरूही बगलमें दबाये सो गई थी मानो कोई पुत्रकी अतिप्यार करनेवाली कामिनी अपने छोटे बच्चेको गोदमें लिये शयन कर रही है ॥ ३८ ॥ और कोई सर्वांग सुन्दरी स्त्री सुस्तनी पटह बाजेकोही दबाये शयन किये हुई थी, मानो बहुत कालके पीछे अपने प्यारे पतिको पाय भली भांति लिपटा चिपटाकर कोई स्त्री सोती हो ॥ ३९॥ कोई कमल लोचनी वीणाकोही पकड कर सो गईथी मानो काममें आतुर हुई कोई कामिनी प्यारे पतिको चिपटाय सो रहीहै॥४०॥सदाही नृत्य करनेवाली कोई स्त्री विपञ्ची बाजेको गोदमें लिये मानो अपने स्वामीके साथ शयन कर रही है ॥४१॥ कोई २ मदमाते नयनवाली अपने सुवर्ण सदृश कोमल और अपने बडे २ अंगोंमें मृंदगको चिपटाय नयनबंदकिये शयन कररहीथीं॥४२॥और एक कृशोदरी रतिकरानेके श्रमसे थककर अपनी भुजाओंमें पणव शंखको

अन्याकक्षगतेनैवमड्डुकेनसितेक्षणा ॥ प्रसुप्ताभामिनीभातिबालपुत्रेववत्सला॥३८॥पटकहंचारुसर्वांगीन्यस्यस्यशेतेशुभस्तनी॥ चिरस्यरमणंलब्ध्वापरिष्वज्येवकामिनी ॥३९॥ काचिद्वीणांपरिष्वज्यसुप्ताकमललोचना॥ वरंप्रियतमंगृह्यसकामेवहिकामिनी ॥४०॥ विपंचींपरिगृह्यान्यानियतानृत्यशालिनी ॥ निद्रावशमनुप्राप्तासहकांतेवभामिनी ॥४१॥ अन्याकनकसंकाशैर्मृदुपीनैर्मनोरमैः॥मृदंगंपरिविध्यांगैःप्रसुप्तामत्तलोचना ॥४२॥ भुजपाशांतरस्थेनकक्षगेनकृशोदरी ॥ षणवेनसहानिंद्यासुप्तामदकृतश्रमा ॥४३॥ डिंडिमं परिगृह्यान्यातथैवासक्तडिंडिमा॥ प्रसुप्तातरुणंवत्समुपगुह्येवभामिनी ॥४४॥ काचिदाडंबरंनारीभुजसंभोगपीडितम् ॥ कृत्वाकमलपत्राक्षीप्रसुप्तमदमोहिता ॥ ४५ ॥ कलशीमपविध्यान्याप्रसुप्ताभातिभामिनी ॥ वसंतेपुष्पशबलामालेवपरिमार्जिता ॥ ४६ ॥ पाणिभ्यांचकुचौकाचित्सुवर्णकलशोपमौ ॥ उपगुह्याबलासुप्तानिद्राबलमुपागता ॥४७॥ अन्याकमलपत्राक्षीपूर्णेन्दुसदृशानना ॥ अन्यामालिंग्यसुश्रोणींनिद्रावशमुपागता ॥ ४८ ॥ आतोद्यानि विचित्राणि परिष्वज्यवरस्त्रियः ॥ निपीडचचकुचैःसुप्ताःकामिन्यःकामुकानिव ॥४९॥

दबाये हुए सोगईथी ॥४३॥डमरू प्रिया कोईस्त्री डमरूकोही चिपटाये बच्चेकोगोदमें लियेहुए बालवत्सा कामिनीके समान नींदके वश होगई थी ॥४४॥कोई कमलनयनी मदसे मोहितहो अपनी बाँहोंमें आडम्बर नामबाजा धारण करके शयनकर रहीथी ॥४५॥ और एक भामिनी जलकलशकोही लिपटायकर सो गईथी, कलशके जलसे इसका सब अंगगीला हो रहाथा, उससे ऐसी शोभा होतीथी मानो वसंत समयमें शीतल करनेके लिये फूल मालाओं पर जल छिड़का जाता है ॥ ४६ ॥ कोई अबला अपने हाथसे सुवर्णके समान आकारवाले दोनों कुचोंको ढककर सो गई थी ॥ ४७ ॥ एक पूर्ण चन्द्रमाकेसमान वदनवाली कमल नयनीसुन्दर नितम्बवाली और एकस्त्रीको चिपटाये हुएनींदके वशमें पडीथी ॥ ४८ ॥कोई २ सुन्दरी कंतोंके समान अपनी वीणाको लिपटाये उसको

अपने कुचोंसे मर्द्दनकर शयनकर रही थी मानो कामी पुरुषोंसे वहकुच मर्दित कराय सो रही थी ॥ ४९॥ देखते २ इन सबके पीछे हनुमान्जीनेदेखा कि, अगल और एक मनोहर सेजपर अपूर्व रूपयौवन वाली एक स्त्री शयन कर रहीथी ॥५०॥ उस मुक्तामणिसे युक्त विविध भाँतिके भूषणोंसे युक्तयह स्त्री अपने रूपसे मानो इस श्रेष्ठ भवनको शोभायमान कर रही थी ॥५१॥ उसका वर्ण गौर व सुवर्णके समान कान्तिवाली थी वह सब रनवासकी स्वामिनी रावणकी प्यारी स्त्री सुन्दर रूपवाली मन्दोदरी थी ॥५२॥ वानरयूथपति महाबाहु पवन नंदन हनुमान्जी उस सर्वाभरण भूषित मन्दोदरीकी रूप यौवन सम्पत्ति देख उसको ही सीता समझ अति आनंदित हुए ॥ ५३ ॥ और वानरोंका स्वभाव दिखलाते हुएएक ओर जाय अपनी बाँहें पटकनेलगे, पूंछको उठाय चूमनेलगे आनन्दसे नृत्य करने लगे और विविध भांतिकी भावभंगी दिखाते हुए छलांग मारकर खंभोंपर चढ २ कर फिर २ भूमिमें गिरने लगे ॥ ५४ ॥

तासामेकांतविन्यस्तेशयानांशयनेशुभे ॥ ददर्शरूपसंपन्नामथतांसकपिःस्त्रियम् ॥ ५० ॥ मुक्तामणिसमायुक्तैर्भूषणैःसुविभूषिताम् ॥ विभूषयंतीमिवचस्वश्रिया भवनोत्तमम्॥५१॥गौरींकनकवर्णाभामिष्टामंतःपुरेश्वरीम्॥कपिर्मंदोदरींतत्रशयानांचारुरूपिणीम्॥५२॥सतांदृष्ट्वामहाबाहुर्भूषितांमारुतात्मजः॥तर्कयामाससीतेतिरूपयौवनसंपदा॥हर्षेणमहतायुक्तोननंदहरियूथपः॥५३॥आस्फोटयामासचुचुंबपुच्छंननंदचिक्रीडजगौजगाम॥स्तंभानरोहन्निपपातभूमौनिदर्शयन्स्वांप्रकृतिंकपीनाम्॥५४॥इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च०सा० सुन्दरकांडे दशमःसर्गः ॥१०॥अवधूयचतांबुद्धिंबभूवावस्थितस्तदा॥ जगामचापरांचिंतांसीतांप्रतिमहाकपिः॥१॥नरामेणवियुक्तासास्वप्तुमर्हतिभामिनी ॥ नभोक्तुंनाप्यलंकर्तुंनपानमुपसेवितुम्॥२॥नान्यंनरमुपस्थातुंसुराणामपिचेश्वरम्॥नहिरामसमःकश्चिद्विद्यतेत्रिदशेष्वपि॥३॥अन्येयमितिनिश्चित्यभूयस्तत्रचचारसः॥पानभूमौहरिश्रेष्ठःसीतासंदर्शनोत्सुकः॥४॥क्रीडितेनापराःक्लांतागीतेनचतथापराः॥नृत्येनचापराःक्लांताःपानविप्रहतास्तथा॥५॥

इत्यार्षे श्रीम० वा० आदिकाव्ये सुन्दरकांडे भाषायां दशमः सर्गः ॥ १० ॥ इसके पीछे महाकपि हनुमान्जी पहली चिंताको त्याग करके स्थिर भावसे बैठ गये, और सीताजीके विषयमें और एक प्रकारकी चिंताकरने लगे॥१॥हनुमान्जीने विचारा कि,सीतादेवी श्रीरामचन्द्रजीके विरहमें कभी शयन, भोजन,पान न करेंगी और न कभी वह कुछ अलंकारही धारण कर सकती हैं ॥२॥ चाहे कोई साक्षात् देवता भी हो परन्तु सीताजी कभी परपुरुषको सेवन न करेंगी, क्योंकि देवताओंके बीचमें भी श्रीरामचन्द्रजीके समान कोई वर्त्तमान नहींहै॥ ३ ॥बस इसलिये यहकोई कामिनीहै, इसप्रकारसे निश्चयकरके वानर श्रेष्ठ हनुमानजी सीताजीके दर्शनकी इच्छाकिये फिर रावणकी मदादिपीनेकी भूमिमें घूमनेलगे ॥४॥ वहांपर देखाकि, कुछ कामिनियें पाशे इत्यादि खेलकरके कुछ

संगीत करके और कुछेक नाचकरके थकगईहैं और कुछ मदपान करनेसे विह्वलहो वहींपर शयन कररही हैं॥ ५ ॥और कुछ स्त्रियें कोई मुरज, कोई मृदंग, कोई चेलिका बाजाही लियेहुए सोय रहीहैं, और कुछ स्त्रियें रमणीक गहनोंसे सजी धजीसेज पर सोय रहीहैं ॥ ६ ॥ वहांपर हजारों स्त्रियें सुन्दर भूषणोंसे भूषित, रूपवती वार्तालापकरनेमें शीलयुक्त, गतिके समान अर्थसहित बोलनेवाली ॥७॥ देशकालकी ज्ञाता; उचितवचनबोलने वाली अधिक रतिकरने वाली हनुमानूजी ने वहांपर देखीं॥८॥इनके अतिरिक्त और भी बहुत उत्तम रूप यौवन सम्पन्न हजारोंस्त्रियोंको सोती हुई हनुमानूजी ने देखा॥९॥यह सब कामिनियें रतिकरानेसे विरत और गाढी नींदमें मग्न होकर स्वप्नमेंदेश कालके योग्य वचन कह रही थीं ऐसा वानरयूथपति हनुमानजीने देखा॥१०॥उनस्त्रियोंके बीचमें

मुरजेषुमृदंगेषुचेलिकासुचसंस्थिताः ॥ तथास्तरणमुख्येषुसंविष्टाश्चापराःस्त्रियः॥६॥अंगनानांसहस्त्रेणभूषितेनविभूषणैः ॥ रूपसंलापशीलेन युक्तगीतार्थभाषिणा ॥ ७ ॥ देशकालाभियुक्तेनयुक्तवाक्याभिधायिना॥रताधिकेनसंयुक्तांददर्शहरियूथपः ॥ ८ ॥ अन्यत्रापिवरस्त्रीणांरूपसंलापशायिनाम् ॥ सहस्त्रंयुवतीनांतुप्रसुप्तंसददर्शह ॥९॥ देशकालाभियुक्तंतुयुक्तवाक्याभिधायितत् ॥ रताविरतसंसुप्तंददर्शहरियूथपः ॥१०॥ तासांमध्येमहाबाहुःशुशुभेराक्षसेश्वरः ॥ गोष्ठेमहतिमुख्यानांगवांमध्येयथावृषः॥ ११ ॥सराक्षसेंद्रःशुशुभेताभिःपरिवृतःस्वयम् ॥ करेणुभिर्यथाऽरण्येपरिकीर्णोमहाद्विपः ॥ १२ ॥ सर्वकामैरुपेतांचपानभूमिंमहात्मनः॥ददर्शकपिशार्दूलस्तस्यरक्षःपतेर्गृहे ॥१३॥ मृगाणांचवराहाणांमहिषाणांचभागशः ॥ तत्रन्यस्तानिमांसानिपानभूमौददर्शसः ॥१४॥ रौक्मेषुचविशालेषुभाजनेष्वप्यभक्षितान् ॥ ददर्शकपिशार्दूलोमयूरान्कुक्कुटांस्तथा ॥१५॥ वराहवाध्रींणसकान्दधिसौवर्चलायुतान् ॥ शल्यान्मृगमयूरांश्चहनुमानन्ववैक्षत ॥१६॥

महाबाहु राक्षसराज रावण,बडे भारी गोंठमें गायोंके बीचमें महावृषभके समान शोभायमान होरहा था॥११॥स्वयं राक्षसपति रावण स्त्रियोंसे घिरा हुआ वनके मध्यमें हथिनियोंसे घेरे हुए महागजके समान शोभित होरहा था॥१२॥कपिशार्दूल हनुमानूजीने उस महात्मा राक्षसपति रावणके गृहमें अभिलषितभोग्यवस्तुओंके समूहसे सुशोभित सुरापानकी सभाको देखा॥१३॥हनुमानूजीने देखा कि,उस पानभूमिके स्थान २ में मृग,महिष; और शूकर गणोंका मांस अलग २ सजाहुआ धरा है ॥ १४ ॥ वानरश्रेष्ठ हनुमानूजीने विशाल सुवर्णमय पात्रोंमें खानेके लिये मुरगे और मोरोंका मांस धरा हुआ देखा ॥ १५ ॥ यह सब

वराह और *वाघ्रीणस नामक पक्षी मृग छागलका मांस सौवर्च्चललवण मिला यथाविधिसे बनाया हुआ, साही और मयूरका मांस हनुमानूजीने देखा ॥१६॥ करांकुल, नानाविधछाग खरगोश महिष एकशल्य और मछली आदिका मांस अर्द्ध भक्षण किया हुआ हनुमानूजीने देखा॥१७॥और खट्टे व लवण रसके द्वारा जीभकी जडताके निवारण करनेवाले विविध शर्करा मिश्रित दाख और दाडिमके सहित अनेक प्रकारके छोटे बडे चाटने खाने पीनेके पदार्थ हनुमानूजीने देखे ॥१८॥ इन सबको हनुमानजीने देखा और बडे २ घुंघरू बाजे अन्न बहुत साधन खाने पीनेके पात्रोंसे विविधभांतिके फूल पुष्पोंसे भूमिको पूर्ण यह पान भूमि अधिक शोभाको विस्तार कर रही थी ॥१९॥ स्थान २ पर खाने पीनेके सोनेकी वस्तुओंसे और पुष्पोपहारको प्राप्त होकर भूमिकी अधिक शोभा हो रही थी इस प्रकार

कृकलान्विविधांश्छागान्छशकानर्धभक्षितान् ॥ महिषानेकशल्यांश्चछेदांश्चकृतनिष्ठितान् ॥ १७ ॥ लेह्यानुच्चावचान्पेयान्भोज्यान्युच्चावचानिच ॥ तथाम्ललवणोत्तंसैर्विविधैरागखांडवैः ॥ १८ ॥ हारनूपुरकेयूरैरपविद्धैर्महाधनैः ॥ पानभाजनविक्षिप्तैःफलैश्चविविधैरपि ॥ १९ ॥ कृतपुष्पोपहाराभूरधिकांपुष्यतिश्रियम् ॥ तत्रतत्रविन्यस्तैःसुश्लिष्टशयनासनैः ॥ २० ॥ पानभूमिर्विनावह्निंप्रदीप्तेवोपलक्ष्यते ॥ बहुप्रकारैर्विविधैर्वरसंस्कारसंस्कृतैः ॥ २१ ॥ मांसैःकुशलसंयुक्तैःपानभूमिगतैः पृथक् ॥ दिव्याः प्रसन्नाविविधाःसुराःकृतसुराअपि ॥ २२ ॥ शर्करासवमाध्वीकाःपुष्पासवफलासवाः ॥ वासचूर्णैश्चविविधैर्मृष्टास्तैःपृथक् पृथक् ॥ २३ ॥ संततांशुशुभेभूमिर्माल्यैश्चबहुसंस्थितैः ॥ हिरण्मयैश्चकलशैर्भाजनैःस्फाटिकैरपि ॥ २४ ॥ जांबूनदमयैश्चान्यैःकरकैरभिसंवृता ॥ राजतेषुचकुंभेषुजांबूनदमयेषुच ॥ २५ ॥ पानश्रेष्ठांतथाभूमिंकपिस्तत्रददर्शह ॥ सोऽपश्यच्छातकुंभानिसीधोर्मणिमयानिच ॥ २६ ॥

॥२०॥ वह पानभूमि विना अग्निकेही मानो अग्निसम प्रकाशित हो रही थी अनेक भांतिके विविध श्रेष्ठ संस्कारोंसे संस्कारित ॥२१॥ मांस निपुण लोगोंके बनाये हुए पान भूमिमें अलग २ रक्खे थे बहुत श्रेष्ठ अनेक प्रकारके मदिरायें भी धरी थीं ॥२२॥ और अनेक प्रकारके सुगंधितद्रव्योंके चूर्णोंसे मिली हुई विविध २ *शौण्डिक, शर्करासव और फलासव सबही पृथ्वीके मध्य स्थान २ पर अलग सजे धरे थे॥२३॥ बहुत फूल मालाओंसे होनेयुक्त और सुवर्ण व स्फटिकमणिकके वर्तनों सहित होनेसे यह भूमि सर्वदा शोभायमान रहती थी ॥२४॥ वहां पर चांदी सोनेके घडोंमें श्रेष्ठ २पीनेकी चीजें भरी रक्खी थीं, और वहांपर तपाये हुए सुवर्णके भी बहुत करुवे रक्खे थे ॥२५॥ महाकपि हनुमानूजीने और भी देखा कि सुवर्णमय और मणिमय पात्रोंमें स्थान२ पर पानभूमिमें मदभरा हुआ रक्खा था

* काली गर्दन लालशिर श्वेत पंखवाले पक्षी का नाम वाध्रीणस है कोई सङ्ग मृगका नाम कहते है। जो वृक्षोंसे स्वयं निकलती है वह दिव्यसुरा शौण्डिक आदि कृत सुरा कहलाती है ॥

॥२६॥ कहीं २ किसी बर्तनकी सुराआधी पी गई थी और वह आधा खाली था और कहीं २ केवल पीनेके बर्तनकी कुछ थोडीसी बची थी कोई भरे धरे थे ॥२७॥ किसी स्थानका पीने लायक मद कुछ भी नहीं पिया गया है किसी स्थानमें अनेक प्रकारकी भोजन करनेकी सामग्री और पानकरनेके योग्य मदपान भूमिके स्थान २ में विभाग करके सजा सजाया रक्खा था ॥२८॥ किसी २ स्थानमें पान भोजन करनेके पात्र पडे थे कि, जिनमेंकी सामग्री आधीही खाई पीगई थी हनुमान्जी एक २ करके इन सब वस्तुओंको देखते हुए घूमने लगे कुछेक सुंदरियें परस्पर एक दूसरेको चिपटाये हुए सोय रही थीं इसलिये बहुत सारे पलंग खाली पडे थे ॥२९॥ कोई अबलानिद्राके वशमें हो दूसरी स्त्रीकी सेजपर जायकर उसके वस्त्र छीन अपनी देहको ढक उसके शयन स्थानपर शयन कर रही थी ॥३०॥

तानितानिचपूर्णानिभाजनानिमहाकपिः ॥ क्वचिदर्धावशेषाणिक्वचित्पीतान्यशेषतः ॥ २७ ॥ क्वचिन्नैवप्रपीतानिपानानिसददर्शह ॥ क्वचिद्भ-
क्ष्यांश्चविविधान्क्वचित्पानविभागतः ॥ २८ ॥ क्वचिदर्धावशेषाणिपश्यन्वैविचचारह ॥ शयनान्यत्रनारीणांशून्यानिबहुधापुनः ॥ परस्प-
रंसमाश्लिष्यकाश्चित्सुप्तावरांगनाः ॥ २९ ॥ काचिच्चवस्त्रमन्यस्याअपहृत्योपगुह्यच ॥ उपगम्याबलासुप्तानिद्राबलपराजिता ॥ ३० ॥
तासामुच्छ्वासवातेनवस्त्रंमाल्यंचगात्रजम् ॥ नात्यर्थंस्पंदतेचित्रंप्राप्यमंदमिवानिलम् ॥ ३१ ॥ चंदनस्यचशीतस्यसीधोर्मधुरसस्यच ॥
विविधस्यचमाल्यस्यपुष्पस्यविविधस्यच ॥३२॥ बहुधामारुतस्तस्यगंधंविविधमुद्वहन् ॥ स्नानानांचंदनानांचधूपानांचैवमूर्च्छितः ॥३३॥
प्रववौसुरभिर्गंधोविमानेपुष्पकेतदा ॥ श्यामावदातास्तत्रान्याःकाश्चित्कृष्णावरांगनाः ॥ ३४ ॥ काश्चित्कांचनवर्णांग्यःप्रमदाराक्षसालये
तासांनिद्रावशत्वाच्चमदनेनमूर्च्छितम् ॥ ३५ ॥

श्वासकी पवनसे चलायमान होकर उन स्त्रियोंके शरीरमेंके विचित्र वसन और मालायें मंद २ वायुसे कुछेक हिलाने वर जैसी शोभा पाते उसी प्रकारकी शोभा पाय रहे हैं ॥३१॥ शीतल, चन्दन, मद्य, मधुररस, विविध माल्य, विविध पुष्प ॥३२॥ चन्दनसे स्नान किये हुए कामिनीगण और धूप इत्यादि सुगंधित द्रव्योंकी नाना प्रकारकी सुगंधि वहन करके पवन चल रहा था ॥३३॥ उस समय उस सुगंधिसे रावणका पुष्पकविमान परिपूर्ण हो गया था ॥ हनुमानजी उस राक्षसके रनवासमें कुछेक उज्ज्वल श्याम वर्ण और कुछेक श्यामवर्णकीस्त्रियें ॥३४॥ और कुछेक कांचन वर्णसदृश प्रमदायें राक्षसके स्थानमें हनुमानजीने देखीं । रतिके

खेदसे थकित होकर यह सब कामिनियें शयन कर रही थीं॥ ३५॥ उस समयमें उन स्त्रियोंका रूप रात्रिकालमें मुरझाई हुई कमलिनीके समान हो रहा था, इस प्रकार से रावणके रनवासमें महाकपि हनुमानजीने सब कुछ देखा ॥ ३६॥ परन्तु उन महातेजवानको केवल एक जानकीही दृष्टि न आई ॥ ३७॥ उसके पीछे कपिश्रेष्ठ हनुमानजी इन सब स्त्रियोंको देखते २ पीछेकर यह महाकपि धर्मके लोप होनेकी शंकासे महा भयभीत हुए॥ ३८॥ और मनही मनमें विचार करने लगे कि हमने जो इन निद्रामें पडी हुई, वसन रहित पराई स्त्रियोंको देखा है इससे निश्चयही हमारे धर्मकी बडी भारी हानि होगी ॥ ३९॥ परंतु हमारी दृष्टि कभी पराई स्त्रीकी ओर नहीं गिरती है; इससे चाहे पाप नहीं हो, परन्तु उसपर पराई स्त्रीके भोगनेवाले रावणको भी हमने यहां देखा है इससे अवश्य पाप होगा ॥ ४०॥

पद्मिनीनांप्रसुप्तानांरूपमासीद्यथैवहि ॥ एवंसर्वमशेषेणरावणांतःपुरंकपिः ॥ ३६ ॥ ददर्शसमहातेजानददर्शचजानकीम् ॥ ३७॥ निरीक्षमाणश्चततस्ताःस्त्रियःसमहाकपिः ॥ जगाममहतींशंकांधर्मसाध्वसशंकितः ॥ ३८॥ परदारावरोधस्यप्रसुप्तस्यनिरीक्षणम् ॥ इदंखलुममात्यर्थंधर्मलोपंकरिष्यति ॥ ३९॥ नहिमेपरदाराणांदृष्टिर्विषयवर्तिनी ॥ अयंचात्रमयादृष्टःपरदारपरिग्रहः ॥ ४०॥ तस्यप्रादुरभूच्चिंतापुनरन्यामनस्विनः ॥ निश्चितैकांतचित्तस्यकार्यनिश्चयदर्शिनी ॥ ४१॥ कामंदृष्टामयासर्वाविश्वस्तारावणस्त्रियः ॥ नतुमेमनसाकिंचिद्वैकृत्यमुपपद्यते ॥ ४२॥ मनोहिहेतुःसर्वेषामिंद्रियाणांप्रवर्तने॥ शुभाशुभास्ववस्थासुतच्चमेसुव्यवस्थितम्॥ ४३॥ नान्यत्रहिमयाशक्यावैदेहीपरिमार्गितुम्॥ स्त्रियोहिस्त्रीषुदृश्यंतेसदासंपरिमार्गणे ॥ ४४ ॥ यस्यसत्त्वस्ययायोनिस्तस्यांतत्परिमार्ग्यते ॥ नशक्यप्रमदानष्टामृगीषुपरिमार्गितुम् ॥ ४५॥ तदिदंमार्गितंतावच्छुद्धेनमनसामया॥ रावणांतःपुरंसर्वंदृश्यतेनचजानकी॥ ४६॥ देवगंधर्वकन्याश्चनागकन्याश्चवीर्यवान्॥ अवेक्षमाणोहनुमान्नैवापश्यतजानकीम्॥ ४७॥

चिंताशील हनुमानजी प्रमाण सिद्ध सिद्धांतके विषयमें मन लगायकर इस प्रकारसे चिंता करने लगे कि, इतनेहीमें उनके मनमें कार्य अकार्यका विचार करने वाली दूसरी चिंता आई ॥ ४१॥ उन्होंने विचारा कि चलविचल होकर सोई हुई रावणकी स्त्रीयोंको हमने भलीभांति देखा, परन्तु हमारा मन तो कुछ भी चल विचल नहीं हुआ ॥ ४२॥ क्योंकि एक मनही इंद्रियोंको भले बुरे कार्यमें लगा देता है सो वह मनही जब हमारे वशमें है, तब किस प्रकारसे हमें पाप लगेगा ?॥ ४३ ॥ उसपर हम और कहीं तो जानकीजीको ढूंढ भी नहीं सकते क्योंकि यह देखा जाता है कि, स्त्रियोंका खोज स्त्रियोंमेंही लग सकता है ॥ ४४॥ जिस प्राणीकी जो जाति है उसको उस जातिके मध्यमेंही खोजना चाहिये । स्त्री खोय जाने पर हरिणीके झुण्डके बीच ढूंढने से वह प्राप्त नहीं की जा सकती ॥ ४५॥ इसलिये ही हमने शुद्ध अंतःकरणसे रावणके रनवासमें यह सब स्थान भली भाँति उलट पलट कर देख, परंतु कहीं जानकीजीको न देख पाया ॥ ४६ ॥ जब कि, वीर्यवान्

हनुमान्‌जीने अनेकानेक देवकन्या, गन्धर्वकन्या, नागकन्याओंमें ढूंढनेपर भी जानकीजीको न देखा ॥४७॥ केवल और दूसरी कामिनियोंको देखा तब वह कपि-श्रेष्ठ वहांसे बाहर आये और कहीं चलनेका विचार करते हुये ॥४८॥ श्रीमान् पवन कुमार हनुमानजी पान भूमिको छोडकर, फिर यत्नसहित, सब स्थानमें जानकीजीके खोज करनेमें लगे ॥४९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदिकाव्ये सुन्दरकांडे भाषायामेकादशः सर्गः ॥ ११ ॥ ॥ ॥ ॥
वह पवनकुमार हनुमान्‌जी रावणकी लंकापुरीके मध्यमें टिककर सीताजीके दर्शनकी लालसासे समस्त लता गृह चित्र गृह और रात्रिकालके शयन गृहोंमें गये परंतु उन श्रेष्ठ दर्शनवाली सीताजीको इन्होंने कहीं भी न पाया ॥१॥ तब वह महाकपि हनुमान्‌जी रघुनंदन श्रीरामचंद्रजीकी उन प्रियपत्नी सीताजीके दर्शन न पानेसे अत्यन्त चिंताकुल चित्तसे विचार करने लगे कि, निश्चय जानकीजी जीवित नहीं हैं, क्योंकि हमने उनको इतना ढूँढा भाला, तथापि वह हमको

तामपश्यन्कपिस्तत्रपश्यंश्चान्यावरस्त्रियः॥अपक्रम्यतदावीरःप्रस्थातुमुपचक्रमे॥४८॥सभूयःसर्वतःश्रीमान्मारुतिर्यत्नमाश्रितः॥अपानभूमिमुत्सृज्यतांविचेतुंप्रचक्रमे ॥ ४९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे एकादशः सर्गः ॥ ११ ॥ सतस्यमध्येभवनस्यसंस्थितोलतागृहांश्चित्रगृहान्निशागृहान् ॥ जगामसीतांप्रतिदर्शनोत्सुकोनचैवतांपश्यतचारुदर्शनाम् ॥ १ ॥ सचिंतयामासततोमहाकपिःप्रियामपश्यन्रघुनंदनस्यताम् ॥ ध्रुवंनसीताम्रियतेयथानमेविचिन्वतोदर्शनमेतिमैथिली ॥२॥ साराक्षसानांप्रवरेणबालास्वशीलसंरक्षणतत्परासती ॥ अनेननूनंप्रतिदुष्टकर्मणाहताभवेदार्यपथेपरेस्थिता ॥ ३ ॥ विरूपरूपाविकृताविवर्चसोमहाननादीर्घविरूपदर्शनाः ॥ समीक्ष्यताराक्षसराजयोषितोभयाद्विनष्टाजनकेश्वरात्मजा ॥ ४ ॥ सीतामदृष्ट्वाह्यनवाप्यपौरुषंविहृत्यकालंसहवानरैश्चिरम् ॥ नमेऽस्तिसुग्रीवसमीपगागतिःसुतीक्ष्णदंडोबलवांश्चवानरः ॥ ५ ॥

दिखलायी नहीं देतीं ॥२॥ बाला जानकीजी पतिव्रता हैं; इसलिये पतिव्रता धर्मकी रक्षा करनेमें वह सदाही टिकी हुई होंगी, पतिव्रताके आचरण करनेके योग्य परम पवित्रमार्गमें टिकनेसे साधुलोगोंके अनिष्ट कर्म करने वाले इस प्रसिद्ध दुष्कर्मकारी राक्षस राजने उनको अवश्य मार डाला होगा ॥३॥ अथवा रावणकी कदर्यरूपवाली, विकटाकार, विकृत वर्ण युक्त, बडे २ मुखवाली, दीर्घ और भयंकर नयन युक्त चेटियोंको देखतेही जनक राज कुमारी सीताजीने भयके मारेही प्राण छोड दिये होंगी ॥४॥ हा ! हमने सीताजीको न देखा न समुद्र लांघनेके पौरुषका फल हमको मिला, वानर लोगोंके साथ सुग्रीवजीका नियत किया हुआ समय भी बिता दिया, इसलिये अब हम उन सुग्रीवजीके निकट भी नहीं जा सकते, क्योंकि वह बलवान् वानरपति सुग्रीवजी पहुँचतेही हमारे लिये बडा

भारी दंड नियत करेंगे ॥५॥ समस्त रनवासकी एक २ कक्षाको भली भाँति देख भाल करके केवल राक्षसकी स्त्रियोंको देखा, परन्तु पतिव्रता सीताजी हमारी दृष्टि न आई, इसलिये हमारा सबही परिश्रम वृथा गया ॥६॥ जब हम लौट जायंगे, और सब वानर गण इकट्ठे होकर जब हमसे पूछेंगे कि, हे वीर ! तुम वहां जाकर क्या २ कार्य कर आये हो सो हमको बताओ ॥ ७ ॥ तब हम बिना सीताजीको देखे हुए उन्हें क्या उत्तर देंगे ? इसलिये प्रायोपवेशन व्रतधारण करके हमें प्राण त्याग करनाही अच्छा है, क्योंकि वानरनाथ सुग्रीवजीका नियत किया हुवा समयभी बीत चुका है ॥८॥ जब हम समुद्रके उस पार जाँयगे तब वृद्ध जाम्बवान् क्या कहेंगे ? और अगंदजी क्या कहेंगे ? और भी सब वानर इकट्ठे होकर क्या कहेंगे ? ॥९॥ अथवा उत्साहही उन्नति प्राप्त करनेका मूल है, उत्साहही परम मूलका दाता है, इस कारण हमको उत्साही होकर वहां भी ढूंढना चाहिये कि, जिस २ स्थानको अबतक हमने नहीं खोजा है; इसलिये उन स्थानोंको अब फिर

दृष्टमंतःपुरंसर्वंदृष्टाराक्षसयोषितः ॥ नसीताहश्यतेसाध्वीवृथाजातोममश्रमः ॥६॥ किंनुमांवानराःसर्वेगतंवक्ष्यंतिसंगताः ॥ गत्वातत्रत्वयावीरकिंकृतंतद्वदस्वनः ॥ ७ ॥ अदृष्ट्वाकिंप्रवक्ष्यामितामहंजनकात्मजाम् ॥ ध्रुवंप्रायमुपासिष्येकालस्यव्यतिवर्तने ॥८॥ किंवावक्ष्यतिवृद्धश्चजांबवानंगदश्चसः ॥ गतंपारंसमुद्रस्यवानराश्चसमागताः ॥ ९ ॥ अनिर्वेदःश्रियोमूलमनिर्वेदःपरंसुखम् ॥ भूयस्तत्रविचेष्यामिनयत्रविचयःकृतः ॥ १० ॥ अनिर्वेदोहिसततंसर्वार्थेषुप्रवर्तकः ॥ करोतिसफलंजंतोःकर्मयच्चकरोतिसः ॥११॥ तस्मादनिर्वेदकरंयत्नंचेष्टेऽहमुत्तमम् ॥ अदृष्टांश्च विचेष्यामिदेशान्रावणपालितान् ॥ १२ ॥ आपानशालाविचितास्तथापुष्पगृहाणिच ॥ चित्रशालाश्चविचिताभूयःक्रीडागृहाणिच ॥१३॥ निष्कुटांतररथ्याश्चविमानानिचसर्वशः ॥ इतिसंचिंत्यभूयोपिविचेतुमुपचक्रमे ॥१४॥ भूमीगृहांश्चैत्यगृहान्गृहादिगृहकानपि ॥ उत्पतन्निपतंश्चापितिष्ठन्गच्छन्पुनःक्वचित् ॥ १५ ॥ अपवृण्वंश्चद्वाराणिकपाटान्यवघट्टयन् ॥ प्रविसन्निष्पतंश्चापिप्रपतन्नुत्पतन्निव ॥ १६ ॥

देखना चाहिये ॥१०॥ उत्साहही मनुष्यको सब समयमें सब कामोंमें लगाता है, जीव उत्साह युक्त होकर जो कर्म करता है, उसका वह कार्य अवश्य सिद्ध होता है ॥११॥ इस लिये उत्साहके मूल दृढ बलका आश्रय ग्रहण करके रावण रक्षित जो जो देश हमने नहीं देखे हैं उन सबको अब हम खोजें ॥ १२ ॥ समस्त पान गृह और अनूप गृह हमने पहले ही खोजडाले, जिनमें चित्रालय और क्रीडागृह हैं वह भी वारंवार ढूंढही लिये हैं ॥१३॥ गृह और आराम करनेकी कुंजें व विमान राजि समस्तकोही भलीभाँति अनुसन्धान कर चुके हैं, इस प्रकार एक मुहूर्त्त भरतक चिंता करके ॥१४॥ वानरोंमें मुख्य हनुमानजी समस्त तयखाने, देवालय और अटा अटारियोंके खोजनेको फिर तैयार व उसी स्थानमें नीचेको जाँय कहीं क्षणभर टिककर कहीं चलकर ॥१५॥ कहीं किवाड खोलकर कहीं किवाड

लगाकर, कहीं घरमें प्रवेश कर कहीं घरसे बाहर आकर, कहीं लेटकर कहीं बैठकर, कहीं करवटके बल होकर ॥१६॥ वह महाकपि हनुमानजी इस प्रकारसे सब स्थानोंमें घूमने लगे, और रावणका समस्त रनिवास हनुतानजीने इस प्रकार ढूंढा कि वहांका चार अंगुनका स्थान भी उनके खोजनेकेसे बाकी नहीं रहा॥१७॥ चहार दिवारी और उसके भीतरकी गलियें, गृहों और देवालयोंकी वेदियाँ आले, दिवाले झरोखे छोटी २ तलैयें बार २ हनुमानजीने देखी ॥ १८ ॥ इन सब स्थानोंमें नाना भांतिकी, कुरूप, सुरूपवाली राक्षसियाँ हनुमानजीने देखीं परन्तु कहीं जानकीजी दिखाई नहीं दीं ॥ १९ ॥ फिर हनुमानजीने रूप लावण्य सम्पन्न बडी २ विद्याधरोंकी स्त्रियोंमें खोज किया, परन्तु वहां पर भी श्रीरामकी प्यारीका दर्शन न पाया ॥ २० ॥ और हनुमानजीने पूर्णचन्द्र

सर्वमप्यवकाशंसविचचारमहाकपिः ॥ चतुरंगुलमात्रोपिनावकाशःसविद्यते ॥ रावणांतःपुरेतस्मिन्यंकपिर्निजगामसः ॥ १७॥ प्रकारांतरवीथ्यश्चवेदिकाश्चैत्यसंश्रयाः ॥ श्वभ्राश्चपुष्करिण्यश्चसर्वंतेनावलोकितम् ॥ १८ ॥ राक्षस्योविविधाकाराविरूपाविकृतास्तथा ॥ दृष्टाहनुमता तत्रनतुसाजनकात्मजा ॥ १९ ॥ रूपेणाप्रतिमालोकेपराविद्याधरस्त्रियः ॥ दृष्टाहनुमतातत्रनतुराघवनंदिनी ॥ २० ॥ नागकन्यावरारोहाः पूर्णचंद्रनिभाननाः ॥ दृष्टाहनुमतातत्रनतुसाजनकात्मजा ॥ २१ ॥ प्रमथ्यराक्षसेंद्रेणनागकन्याबलाद्धृताः ॥ दृष्टाहनुमतातत्रनसाजनकनंदिनी॥२२॥ सोऽपश्यंस्तांमहाबाहुःपश्यंश्चान्यावरस्त्रियः॥ विषसादमहाबाहुर्हनूमान्मारुतात्मजः॥२३॥ उद्योगंवानरेंद्राणांप्लवनेसागरस्यच॥ व्यर्थंवीक्ष्यानिलसुतश्चितांपुनरुपागतः ॥ २४ ॥ अवतीर्यविमानाच्चहनूमान्मारुतात्मजः ॥ चिंतामुपजगामाथशोकोपहतचेतनः ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥

समान वदनवाली रावणकी विवाहिता सुन्दरियोंमें श्रेष्ठ सर्पोंकी कन्याओंको देखा परन्तु जनकलडैती जानकीजीको नहीं देख पाया ॥ २१ ॥ और नागोंको जीतकर रावण बलपूर्वक नागोंकी कन्याओंको लाया था, उनकोभी श्रीहनुमानजीने देखा परन्तु मिथिलेश कुमारी दृष्टि न आई ॥२२॥ महाबलवान्पवनकुमार हनुमानजीने जब और भी मुख्य २ स्त्रियोंमें खोजनेपर भी जानकीजीको न देखा, तब वह अति शोकाकुल हुए॥ २३ ॥ हनुमानजी बडे२ वानरोंका उद्योग और अपना भी समुद्रका लांघना व्यर्थ देख कर फिर बडी चिन्ताको प्राप्त हुए ॥२४॥ उसके पीछे विमानसे उतरकर पवननंदन हनुमानजी शोकसे व्याकुलचित्त होकर बडी चिन्ताको पहुँचे ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥

वानर यूथपति वेगवान् हनुमानजी विमानसे उतरकर प्राकारपर कूद गये और मेघके भीतर दामिनीके समान अधिक सुन्दरता प्राप्त करते हुए ॥ १॥ सीताजीको न पायकर रावणके भवनसे बाहर आय हनुमानजी दुःखित चित्त हो कहने लगे ॥ २॥ हाय! श्रीरामचन्द्रजीका प्रियकार्य सिद्ध करनेके लिये हम बराबर लंकापुरीमें घूमे तथापि उन शोभित अंगवाली विदेहकुमारी सीताजीको हमने न देखा ॥ ३॥ छोटी २ तलैयां, तडाग, सरोवर, तरंगिणी, नदियें, काछा, समुद्रकी तलैटी, वन, दुर्ग, पहाड वरन् समस्त पृथ्वी हम लोगोंने खोजी परन्तु कहीं भी जानकीजी हमको न देख पडी ॥ ४ ॥ गृध्रराज सम्पातिने हमको बताया कि सीताजी इस रावणकेही स्थानमें वास करती हैं; फिर हमने इतना ढूंढने परभी उनको क्यों नहीं पाया ॥ ५॥ रावणके बलपूर्वक हरलानेसे जनकनंदिनी सीता-

विमानात्तुससंक्रम्यप्राकारंहरियूथपः ॥ हनुमान्वेगवानासीद्यथाविद्युद्घनांतरे ॥ १ ॥ संपरिक्रम्यहनुमानात्रावणस्यनिवेशनात् ॥ अदृष्ट्वाजानकींसीतामब्रवीद्वचनंकपिः ॥ २ ॥ भूयिष्ठंलोलितालंकारामस्यचरताप्रियम् ॥ नहिपश्यामिवैदेहीसीतांसर्वांगशोभनाम् ॥ ३ ॥ पल्वलानितटाकानिसरांसिसरितस्तथा ॥ नद्योऽनूपवनांताश्चदुर्गाश्चधरणीधराः ॥ लोलितावसुधासर्वानचपश्यामिजानकीम् ॥४॥ इहसंपातिनासीतारावणस्यनिवेशने ॥ आख्यातागृध्रराजेननचसादृश्यतेतुकिम् ॥ ५ ॥ किंतुसीताथवैदेहीमैथिलीजनकात्मजा ॥ उपतिष्ठेतविवशारावणेनहृताबलात् ॥६॥ क्षिप्रमुत्पततोमन्येसीतामादायरक्षसः ॥ बिभ्यतोरामबाणानामंतरापतिताभवेत् ॥७॥ अथवाह्रियमाणायाःपथिसिद्धनिषेविते मन्येपतितमार्यायाहृदयंप्रेक्ष्यसागरम् ॥ ८ ॥ रावणस्योरुवेगेनभुजाभ्यांपीडितेनच ॥ तयामन्येविशालाक्ष्यात्यक्तंजीवितमार्यया ॥ ९ ॥ उपर्युपरिसानूनंसागरंक्रमतस्तदा ॥ विचेष्टमानापतितासमुद्रेजनकात्मजा ॥ १० ॥

जीने डरकर विवश हो कहीं उसकी भजना तो नहीं की ? ॥६॥ ऐसा जान पड़ता है कि राक्षसपति रावण सीताजीको हरण करके अतिवेग चला आता था और जब कि श्रीरामचन्द्रजीके बाणका प्रभाव स्मरण करके भीत हो वह आकाशमार्गमें उडा जाता था उसी समय सीताजी मार्गमें उसके हाथसे कहीं छूटकर गिर पडी होंगी ॥ ७॥ या सिद्धगणोंसे सेवित शून्यमार्गमें जब रावण उनको हरण करके लिये जाता था तब भयंकर समुद्रको देखकर उन आर्याका प्राण निकल गया होगा ॥ ८ ॥ अथवा उन बडे २ नेत्रवाली जानकीजीने रावणके महावेगसे चलने और उसकी भुजाओंके दबानेसे व्याकुल हो प्राण त्याग दिया होगा ॥ ९ ॥ अथवा समुद्र पार होनेके समय जब कि रावण महावेगसे ऊपरको उठा रहा था तब निश्चयही जनक कुमारी सीताजी भयसे व्याकुल होकर समुद्रमें गिर पडी होगी

॥१०॥ हा ! अपने पतिव्रता धर्मकी रक्षाका यत्न करते हुये उन अनाथा तस्विनी जानकीजीको यह ओछे स्वाभाववाला रावण भक्षण कर गया होगा ॥ ११ ॥ अथवा राक्षसराज रावणकी दुष्टस्त्रियोंने सब सवतियाँ डाहसे ईर्षा करके उन कमलदल नेत्रवाली जानकीको मिलकर खाय लिया होगा ॥ १२ ॥ "अथवा श्रीरामचन्द्रजीका पौर्णमासीके चन्द्रमाके समान कमलदल नेत्रयुक्त मुखमण्डल याद करके शोकसे व्याकुल हो सीताजीने शरीर त्याग कर दिया होगा या "हा राम ! हा लक्ष्मण हा अयोध्या !" यह कह और बार २ विलाप कर भामिनी विदेहकुमारी जानकीजीने शरीर त्याग कर दिया होगा ॥ २ ॥" या ऐसा भी हो सकता है कि, रावणके घरमें किसी गुप्त स्थानमें रक्खी जाकर जानकीजी पिंजरमें बंदकी हुई सारिकाके समान अतिशय विलाप करती होंगी॥१३॥

अहोक्षुद्रेणचानेनरक्षंतीशीलमात्मनः ॥ अबंधुर्भक्षितासीतारावणेनतपस्विनी ॥ ११ ॥ अथवाराक्षसेंद्रस्यपत्नीभिरसितेक्षणा ॥ अदुष्टादुष्टभावाभिर्भक्षितासाभविष्यति ॥ १२ ॥ संपूर्णचंद्रप्रतिमंपद्मपत्रनिभेक्षणम् ॥ रामस्यध्यायतीवक्त्रंपंचत्वंकृपणागता ॥ १ ॥ हारामलक्ष्मणेत्येवहाऽयोध्येतिचभामिनी ॥ विलप्यबहुवैदेहीन्यस्तदेहाभविष्यति ॥२॥" अथवानिहितामन्येरावणस्यनवेशने ॥ भृशंलालप्यतेबालापंजरस्थैवसारिका ॥ १३ ॥ जनकस्यकुलेजातारामपत्नीसुमध्यमा ॥ कथमुत्पलपत्राक्षीरावणस्यवशंव्रजेत् ॥१४॥ विनष्टावाप्रनष्टावामृतावाजनकात्मजा ॥ रामस्यप्रियभार्यस्यननिवेदयितुंक्षमम् ॥ १५ ॥ निवेद्यमानेदोषःस्याद्दोषःस्यादनिवेदने ॥ कथंनुखलुकर्त्तव्यंविषमंप्रतिभातिमे ॥ १६ ॥ अस्मिन्नेवंगतेकार्येप्राप्तकालंक्षमंचकिम् ॥ भवेदितिमतिंभूयोहनुमान्प्रविचारयन् ॥ १७ ॥

कमलदलके समान नेत्रवाली सुमध्यमा श्रीरामचन्द्रजीकी स्त्री सीताजीने जनकजीके वंशमें जन्म ग्रहण किया है, वह राक्षसराज रावणके वंशमें किसी प्रकारसे नहीं होगी ॥१४॥ जो कुछ भी हो; यदि जानकीजीको न देख पावें, या वह ऐसी जगह होंकि, जहां देखना बहुत ही असम्भव हो, अथवा यदि उन्होंने प्राणही त्याग कर दिया हो, तथापि इन तीनों बातोंमेंसे हम श्रीरामचन्द्रजीसे एकबात भी निवेदन नहीं कर सकते, क्योंकि श्रीरामचन्द्रजीको जानकीजी बहुत प्यारी हैं ॥१५॥ क्या कहें ऐसी वार्ताके निवेदन करनेसे भी दोष है, और जो न कहें तो भी दोष है अब क्या करना उचित है ? हमको तो इन दोनों बातोंमेंही बडी कठिनता मालूम होती है ॥ १६ ॥ कार्यकी तो इस समय ऐसी अवस्था वर्तमान है अब समयानुसार क्या करना कर्तव्य है? इस प्रकारका विचार करते २ हनुमानजीको बडी

चिन्ता हुई॥ १७॥ विचारने लगे कि, यदि विना जानकीजीके देखे हम इस स्थानसे वानरराज सुग्रीवजीकी नगरी किष्किन्धामें चले जाँय तो हमारा कौनसा पुरुषार्थ सिद्ध होगा?॥ १८॥ हमारा यह समुद्रका लांघना, लंकामें प्रवेश करना और राक्षसोंका देखना भालना सबही वृथा हो जायगा ॥ १९॥ जब हम किष्किंधामें चले जाँयगे तब वानरराज सुग्रीवजी क्या कहेंगे ? और वानरगण निकट आयकर क्या कहेंगे? और जो है सो तो है ही परन्तु वह दशरथजीके पुत्र श्रीरामलक्ष्मणजी क्या कहेंगे ? ॥ २०॥ हम जाकर यदि काकुत्स्थकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजीको यह दारुण संवाद दें कि, सीताजीका दर्शन हमको नहीं मिला, तो वह उसी समय प्राण त्याग कर देंगे ॥ २१॥ यह संवाद तो अलग रहा यदि दारुण भयंकर सब इंद्रियोंको संतापदेनेवाला सीताजीके विषयका कोई भी अशुभ समाचार सुनेंगे कि

यदिसीतामदृष्ट्वाऽहंवानरेन्द्रपुरीमितः ॥ गमिष्याम्ततः कोमेपुरुषार्थोभविष्यति ॥ १८॥ ममेदंलंघनव्यर्थंसागरस्यभविष्यति॥ प्रवेशश्चैवलंकायां राक्षसानांचदर्शनम् ॥ १९ ॥ किंवावक्ष्यतिसुग्रीवोहरयोवापिसंगताः ॥ किष्किंधामनुसंप्राप्तंतौवादशरथात्मजौ ॥ २० ॥ गत्वातुयदिकाकुत्स्थवक्ष्यामिपरुषंवचः ॥ नदृष्टेतिमयासीताततस्त्यक्ष्यतिजीवितम् ॥२१॥ पुरुषंदारुणंतीक्ष्णंक्रूरमिंद्रियतापनम् ॥ सीतानिमित्तंदुर्वाक्यं श्रुत्वासनभविष्यति ॥२२॥ तन्तुकृच्छ्रगतंदृष्ट्वापंचत्वगतमानसम् ॥ भृशानुरक्तोमेधावीनभविष्यतिलक्ष्मणः ॥ २३ ॥ विनिष्टौभ्रातरौश्रुत्वा भरतोऽपिमरिष्यति ॥ भरतंचमृतंदृष्ट्वाशत्रुघ्नोनभविष्यति ॥२४॥ पुत्रान्मृतान्समीक्ष्याथनभविष्यंतिमातरः ॥ कौशल्याचसुमित्राचकैकेयीचनसंशयः ॥२५॥ कृतज्ञः सत्यसंधश्चसुग्रीवः प्लवगाधिपः ॥ रामंतथागतंदृष्ट्वाततस्त्यक्ष्यतिजीवितम् ॥२६॥ दुर्मनाव्यथितादीनानिरानंदातपस्विनी॥ पीडिताभर्तृशोकेनरुमात्यक्ष्यतिजीवितम् ॥२७॥ वालिजेनतुदुःखेनपीडिताशोककर्शिता ॥ पंचत्वमागताराज्ञीताराऽपिनभविष्यति ॥२८॥

वैसेही प्राण खोदेंगे॥ २२॥ उनको शोकके मारे व्याकुल होकर प्राण त्यागते देख उनके अतिशय अनुरागी लक्ष्मणजी जीवित न रहेंगे॥ २३॥ राम लक्ष्मण दोनों भाइयोंने प्राण त्याग दिये ऐसा सुनकर भरतजी भी प्राण छोडेंगे और भरतजीको मृतकसुनशत्रुघ्न पहले शरीर छोडेंगे॥ २४॥ फिर इसमें भी संदेह नहीं है कि, पुत्रोंकी मृत्युका समाचार सुनकर राजमाता कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयी भी प्राणोंका त्याग करदेंगी॥ २५॥ वानरराज सत्यप्रतिज्ञ और कृतज्ञ सुग्रीवजी जैसेही श्रीरामचन्द्रजीकी ऐसी दशा देखेंगे वह भी निश्चयही मर जायँगे ॥ २६ ॥ जब सुग्रीवजी मर जायँगे तो स्वामीके शोकसे पीडित, मनमारे व्यथित, दीनभाव युक्त और आनंदरहित होकर तपस्विनी रुमा भी प्राण त्यागन करेगी॥ २७॥ शोक से पीडित हुई तारा अपने स्वामीके मरणसे उत्पन्न शोकसे दुःखित हो इसी समय मरनेको तैयार हुई थी

परन्तु सुग्रीवजीको देखकर वह जीवित रह गई थी, परन्तु अब सुग्रीवजीको मरा हुवा देख वह भी न जियेंगी ॥ २८ ॥ माता पिता और चचा सुग्रीवजीके मरनेका समाचार पाय कुमार अंगदजीभी शरीरको त्याग करेंगे ॥ २९ ॥ वनवासी वानरादि अपने पालनेवाले स्वामीके वियोगसे अतिशय व्याकुल हो लात मुक्कोंसे अपने शिरको धुन २ कर रोवेंगे ॥३०॥ वानरराज सुग्रीवजी मीठे वचनदान व मानद्वारा वानरोंका लालन पालन किये आते हैं सो इस समय ऐसे शुभका वंशनाश होते देखकर वह कृतज्ञवानरगण निश्चयही प्राण त्याग करेंगे ॥३१॥ सुग्रीवजीके मरनेपर क्या वन क्या पर्वत क्या ढके हुए गुहादि स्थान किसी स्थानमें वानर-श्रेष्ठ गण इकठे होकर सुखसे विहार न कर सकेंगे ॥३२॥ अपने स्वामीके शोकसे तापित होकर स्त्री पुत्र और अपने २ सेवकोंको साथ लेकर वानरगणपर्वतों परसे खडेही सम विषम भूमिमें गिर पडेंगे ॥३३॥ जो ऐसे न तो विष खाय, फांसी लगाय अग्निमें प्रवेशकर उपवास कर अपनी देहहीमें शस्त्र प्रहार करके प्राण

मातापित्रोर्विनाशेनसुग्रीवव्यसनेनच ॥ कुमारोऽप्यंगदस्तस्माद्विजहिष्यतिजीवितम् ॥२९॥ भर्तृजेनतुदुःखेनअभिभूतावनौकसः ॥ शिरांस्यभिहनिष्यंतितलैर्मुष्टिभिरेवच ॥ ३० ॥ सांत्वेनानुप्रदानेनमनेनचयशस्विना ॥ लालिताःकपिनाथेनप्राणांस्त्यक्ष्यंतिवानराः ॥ ३१ ॥ नवनषुनशैलेषुननिरोधेषुवापुनः ॥ क्रीडामनुभविष्यतिसमेत्यकपिकुंजराः ॥ ३२ ॥ सपुत्रदाराःसमात्याभर्तुर्व्यसनपीडिताः ॥ शैलाग्रेभ्यःपतिष्यंतिसमेषुविषमेषुच ॥ ३३ ॥ विषमुद्बंधनंवापिप्रवेशंज्वलनस्यवा ॥ उपवासमथोशस्त्रंप्रचरिष्यंतिवानराः ॥३४॥ घोरमारोदनंमन्येगतेमयिभविष्यति ॥ इक्ष्वाकुकुलनाशश्चनाशश्चैववनौकसाम् ॥ ३५ ॥ सोऽहंनैवगमिष्यामिकिष्किंधांनगरीमितः ॥ नहिशक्ष्याम्यहंद्रष्टुंसुग्रीवंमैथिलीविना ॥३६॥ मय्यगच्छतिचेहस्थेधर्मात्मानौमहारथौ ॥ आशयातौधरिष्येतेवानराश्चतरस्विनः ॥३७॥ हस्तादानोमुखादानोनियतोबृक्षमूलिकः ॥ वानप्रस्थोभविष्यामिअदृष्ट्वाजनकात्मजाम् ॥३८॥ सागरानूपजेदेशेबहुमूलफलोदके ॥ चितिंकृत्वाप्रवेक्ष्यामिसमिद्धमरणीसुतम् ॥ ३९ ॥ उपविष्टस्यवासम्यङ्लिगिनंसाधयिष्यतः ॥ शरीरंभक्षयिष्यंतिवायसाःश्वापदानिच ॥ ४० ॥

त्याग करेंगे ॥३४॥ हम जानते हैं कि, हमारे लौट जानेसे रोनेका घोरशोर मचेगा इक्ष्वाकुवंशका और समस्त वनवासी वानरोंका विनाश होजायगा ॥३५॥ इसलिये हम यहांसेही किष्किंधा नगरीको न जायंगे विना श्रीजानकीजीकी सुध पाये हम सुग्रीवजीके दर्शन न करेंगे ॥३६॥ हम वहां न जायकर यदि यहांही टिके रहे तो वह धर्मात्मा दोनों महारथी और बलवान् वानरगण आशासे जीवन को तो धारण किये रहेंगे ॥३७॥ वारंवार ढूंढनेपर भी यदि हम जानकीजीको न देख पावेंगे तो हम वानप्रस्थ होकर हाथसे व मुखके बलसे अपने तोडे हुए फल खायकर सदा पेडकी मूलमें वास करेंगे ॥ ३८ ॥ अथवा हम समुद्रके अनेक प्रकार फलमूल और जलसे पूर्ण किनारेपर चिता बनाय प्रज्वलित अग्निमें प्रवेशकर जायँगे ॥३९॥ प्राण निकलजानेपर जो शरीर न भी जलेगा तो कौवा और कुत्ते

आदि उसे खाय लेगें बस इससे भी हम निश्चयही स्वर्ग को चले जायँगे ॥४०॥ ऋषि लोगोंने और भी एक मुक्तिका उपाय उपदेश किया है; यदि हम जानकीजीको न देख पावेंगे तो निश्चयही जलमें डूबकर मर जाँयगे ॥ ४१ ॥ विशेष करके हमने सीताजीके देखनेके लिये समुद्रके लांघनेका श्रेष्ठ कार्य करके जो कीर्ति पाई है; अब सीताजीके दर्शन न पानेसे हमारी वह विख्यात कीर्ति सदाके लिये लोप होती है॥४२॥जनक कुमारीको न देख पाकर हम नियमधारी यती होकर हम वृक्षकी मूलमें वास करेंगे तथापि इस स्थानसे हम विना जानकीजीके देखे न जायँगे।४३॥सीताजीकी सुधि विनापाये यदि हम इस स्थानसे चले जाँयगे तो अंगदजी सब वानरोंके सहित उसी समय मर जायँगे ॥४४॥ अथवा हम क्यों मरें ? मरनेमें अनेक दोष हैं, बरन जीवित रहनेसे अनेक शुभ काम निकलते हैं; इसलिये प्राण धारण कर जीवित रहनेसे कभी न कभी भला अवसर अवश्यही आजायगा ॥ ४५ ॥ वानरोंमें मुख्य हनुमान्जी मनही मन इस प्रकारकी

इदमप्यृषिभिर्दृष्टंनिर्याणमितिमेमतिः ॥ सम्यगापःप्रवेक्ष्यामिनचेत्पश्यामिजानकीम् ॥ ४१ ॥ सुजातमूलासुभगाकीर्तिमालायशस्विनी ॥ प्रभग्नाचिररात्रायममसीतामपश्यतः ॥ ४२ ॥ तापसोवाभविष्यामिनियतोवृक्षमूलिकः ॥ नेतःप्रतिगमिष्यामितामदृष्ट्वासितेक्षणाम् ॥४३॥ यदितुप्रतिगच्छामिसीतामनधिगम्यताम् ॥ अंगदःसहितःसर्वैर्वानरैर्नभविष्यति ॥४४॥ विनाशेबहवोदोषाजीवन्प्राप्नोतिभद्रकम् ॥ तस्मात्प्राणान्धरिष्यामिध्रुवोजीवतिसंगमः ॥ ४५ ॥ एवंबहुविधंदुःखंमनसाधारयन्बहु ॥ नाध्यगच्छत्तदापारंशोकस्यकपिकुंजरः ॥ ४६ ॥ ततोविक्रममासाद्यधैर्यवान्कपिकुंजरः ॥ रावणंवावधिष्यामिदशग्रीवंमहाबलम् ॥ ४७ ॥ काममस्तुहृतासीताप्रत्याचीर्णंभविष्यति ॥४८॥ अथवैनंसमुत्क्षिप्यउपर्युपरिसागरम् ॥ रामायोपहरिष्यामिपशुंपशुपतेरिव ॥४९॥ इतिचिंतांसमापन्नःसीतामनधिगम्यताम् ॥ ध्यानशोकपरीतात्माचिंतयामासवानरः ॥ ५० ॥ यावत्सीतांनपश्यामिरामपत्नींयशस्विनीम् ॥ तावदेतांपुरींलंकांविचिनोमिपुनःपुनः ॥ ५१ ॥ संपातिवचनाच्चापिराममंयद्यानयाम्यहम् ॥ अपश्यन्राघवोभार्यांनिर्दहेत्सर्ववानरान् ॥ ५२ ॥

अनेक चिन्ता करते, उस कालमें दुःखके पार न पहुँचे ॥ ४६ ॥ इसके उपरांत महाधीरजवान् कपियोंमें कुंजररूप हनुमान्जी अपने विक्रम का अवलंबन कर चिंता करने लगे कि लाओ महाबली दशग्रीव रावणकाही संहार करते चलें ॥ ४७ ॥ क्योंकि इसका संहार करनेसे; सीताजीके हरण करनेके वैरका बदला तो हो जयगा ॥ ४८ ॥ अथवा इस रावणको बारंबार समुद्रके ऊपर उछालते हुए श्रीरामचन्द्रजीको जायकर समर्पण करदें; जैसे पशुपतिके पशु सौंपा जाता है ॥४९॥ सीताको प्राप्त न होकर इस प्रकारकी चिन्तासे व्याकुल और शोकसे चित्तको डूबाये हुए हनुमान्जी फिर चिंता करने लगे ॥५०॥ हनुमान्जीनेविचाराकि; जबतक यशस्विनी जानकीजी न मिलें; तबतक इस लंकापुरीको हमें बारंबार खोजना चाहिये॥५१॥ अथवा सम्पातिके वचनोंकाविश्वास कर श्रीरामचन्द्रजीको ही

यहां पर ले आवें, परन्तु श्रीरामचन्द्रजी जो यहांपर आकर जानकीजीको न देखेंगे तो वह समस्त वानरोंकोही भस्म कर देंगे ॥५२॥ अथवा नियताहारी; औ२
जितेन्द्रिय होकर हम इसी स्थानपर बसते रहेंगे क्योंकि एक हमारे लिये सब नर वानरोंका मरना नहीं होवे ॥ ५३ ॥ और यह जो बडे २ वृक्षोंसे परिपूर्ण
बडा भारी अशोक वन दृष्टि आता है; इसको तो अभी खोजा ही नहीं; इसलिये अब हम इसी वनमें जायँगे ॥ ५४ ॥ आठ वसु; ग्यारह रुद्र आदित्य; दोनों
अश्विनीकुमार व उनचास पवनोंको नमस्कार करके राक्षसलोगोंके शोक बढानेवाले होकर हम सब वनमें जाँयगे ॥५५॥ राक्षसोंको जीतकर तपस्वीको सिद्धि
प्राप्त होनेके समान हम देवी इक्ष्वाकुकुलनंदिनी सीताजीको श्रीरामचन्द्रजीके समर्पण कर देंगे ॥ ५६ ॥ चिन्तासे व्याकुलेन्द्रिय होकर महाबाहु पवनकुमार

इहैवनियताहारोवत्स्यामिनियतेंद्रियः ॥ नमत्कृतेविनश्येयुःसर्वेतेनरवानराः ॥५३॥ अशोकवनिकाचापिमहतीयंमहाद्रुमा ॥ इमामधिगमिष्या-
मिनहीयंविचितामया॥५४॥वसूनुद्रांस्तथादित्यानश्विनौमरुतोऽपिच॥नमस्कृत्वागमिष्यामिरक्षसांशोकवर्धनः ॥५५॥ जित्वातुराक्षसान्देवी-
मिक्ष्वाकुकुलनंदिनीम् ॥ संप्रदास्यामिरामायसिद्धीमिवतपस्विने ॥ ५६ ॥ समुहूर्तमिवध्यात्वाचिंताविग्रथितेंद्रियः ॥ उदतिष्ठन्महाबाहुर्हनू-
मान्मारुतात्मजः ॥५७॥ नमोऽस्तुरामायसलक्ष्मणायदेव्यैचतस्यैजनकात्मजायै ॥ नमोऽस्तुरुद्रेंद्रयमानिलेभ्योनमोऽस्तुचंद्राग्निमरुद्गणेभ्यः
॥ ५८ ॥ सतेभ्यस्तुनमस्कृत्वासुग्रीवायचमारुतिः ॥ दिशःसर्वाःसमालोक्यसोऽशोकवनिकांप्रति ॥ ५९ ॥ सगत्वामनसापूर्वमशोकवनिकां
शुभाम् ॥उत्त रंचिंतयामासवानरोमारुतात्मजः ॥६०॥ ध्रुवंतुरक्षोबहुलाभविष्यतिवनाकुला ॥ अशोकवनिकापुण्यासर्वसंस्कारसंस्कृता ॥६१॥

हनुमानूजी एक मुहूर्त भरतके इस प्रकारका विचार करके उठ खडे हुए॥५७॥ और मनही मनमें बोले कि, श्रीराम, लक्ष्मणको नमस्कार । उन देवी जनककुमारी
जानकीजीको नमस्कार । रुद्र, यम. वायु, चन्द्र अग्नि और मरुद्गणको नमस्कार है ॥ ५८ ॥ इन सबको और सुग्रीवजीको नमस्कार करके पवनकुमार
हनुमानूजी दशोंदिशाओंको भली भाँति निहार कर अशोकवनकी ओर यात्रा करते हुए ॥५९॥ पवनकुमार हनुमानूजी मनसे तो इससे पहलेही शोभायमान
अशोक वनमें पहुँच गये थे, इस समय शरीर सहित वहां पहुँचकर विचारने लगे कि अब क्या करना चाहिये? ॥६०॥ हनुमानूजीने विचाराकि बहुत बड़े बनसे
युक्त और खाई चहारदिवारी आदि अनेक प्रकारके संस्कारोंसे संस्कारित इस पुण्यवान अशोकवनकी निश्चयही बहुतसारे राक्षस रखवाली करते होंगे ॥६१॥

अवश्यही बहुत सारेरखवाले इस वनमें रक्खे जाकर इन सब वृक्षोंकी रक्षाकरते हैं; इससे भगवान् विश्वात्मा पवनदेवजी यहां प्रबल वेगसेही नहीं चलते ॥६२॥ इस कारण श्रीरामचंद्रजीका कार्य सिद्ध करनेके लिये और रावण देख न पावे इसलिये हमने अपने शरीरको सकोड़ लिया; ऋषिगण और देवता गण हमकोइस कार्यमें सिद्धि दान करें॥ ६३ ॥ स्वयं भगवान् स्वयंभु ब्रह्माजी; देवतागण, तपस्वीगण, भगवान् अग्नि; वायुभगवान् विष्णुजी और वज्रधारी इन्द्रजी यह सब हमको सिद्धि दें ॥ ६४ ॥ पाशहाथमें लिये वरुणजी; और सूर्य; चन्द्र, महात्मा दोनों अश्विनीकुमार और उनचासों पवन ॥ ६५ ॥ प्राणिगण और प्राणियोंकेपति श्रीनारायण; और जो देवतालोगकि अदृश्य भावसे रहकर घूमतेहैं; वह सबही हमको सिद्धि दें ॥६६॥ हा! नजानेहमकब उनआर्या सीताजीका वह ऊंची नासिकासे युक्त श्वेत दन्त शोभित; मंद मुसकान युक्त; व्रणरहित, पद्मपलाश नयन, प्रसन्न चन्द्रवदन दर्शन करेंगे? ॥६७॥ ओछे स्वभाववाले नीच जाति

रक्षिणश्चात्रविहितानूनंरक्षंतिपादपान् ॥ भगवानपिविश्वात्मानातिक्षोभंप्रवायति ॥ ६२ संक्षिप्तोऽयंमयात्माचरामार्थेरावणस्यच ॥ सिद्धिंदिशंतुमेसर्वेदेवाःसर्षिगणास्त्विह ॥६३॥ ब्रह्मास्वयंभूर्भगवान्देवाश्चैवतपस्विनः ॥ सिद्धिमग्निश्चवायुश्चपुरुहूतश्चवज्रभृत्॥६४॥ वरुणःपाशहस्तश्च सोमादित्यौतथैवच॥अश्विनौचमहात्मानौमरुतःसर्वएवच॥६५॥सिद्धिंसर्वाणिभूतानिभूतानांचैवयःप्रभुः॥दास्यंतिममयेचान्येप्यदृष्टाःपथिगोचराः ॥६६॥ तदुन्नसंपांडुरदंतमव्रणंसुचिस्मितंपद्मपलाशलोचनम्॥द्रक्ष्येतदार्यावदनंकदान्वहंप्रसन्नताराधिपतुल्यवर्चसम्॥६७॥क्षुद्रेणहीनेननृशंसमूर्तिनासुदारुणालंकृतवेषधारिणा॥बलाभिभूताह्यबलातपस्विनीकथंनुमेदृष्टिपथेऽद्यसाभवेत्६८इत्यार्षेश्रीमद्रा.वा.आ०च०सा०सुंदरकाण्डे त्रयोदशःसर्गः १३सुमुहूर्तमिवध्यात्वामनसाचाधिगम्यताम्॥अवप्लुतोमहातेजाःप्राकारंतस्यवेश्मनः १॥सतुसंहृष्टसर्वांगःप्राकारस्थोमहाकपिः॥ पुष्पिताग्रान्वसंतादौददर्शविविधान्द्रुमान् ॥२॥ सालानशोकान्भव्यांश्चचंपकांश्चसुपुष्पितान्॥ उद्दालकान्नागवृक्षांश्चूतान्कपिमुखानपि॥३॥

निर्लज्जमूर्ती रावणने दारुण कपट वेष धारण करके प्रबल बल चलाय उनअबला तपस्विनीको बँधुआकर रक्खा है। हाय! आज क्या कार्य हम करें जो उनपतिव्रता सीता देवीजीके हमको दर्शन मिलजाँय ॥ ६८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥ महातेजवान हनुमानूजी मुहूर्त्तभरतक चिंता करते हुए मनमें सीताजीका ध्यानकररावणके गृहसे छलांगभर नीचेकी प्राचीरपर उतर आये ॥१॥ उस चहारदिवारीकीभीतपर बैठकरवसन्त इत्यादि समस्त ऋतुओंमें जिन२वृक्षोंके फूलखिलाकरते हैं,उनप्रसूनयुक्त अनेकजातिके वृक्षोंके समूहोंकोदेखकर महाकपि हनुमानजीके सब अंगमारे आनंदके पुलकायमान होनेलगे ॥२॥ उनवृक्षोंमें पुष्पित शाल, अशोक,गज, पीपल, चम्पक, उद्दालक; नागवृक्ष, आम औरकपि मुखाकृतिआम ॥३॥

सफरी, और साधारण आमोंके वनोंसे घिरी वृक्षोंकी सैकडों वाडी देख हनुमान्‌जी धनुषसे छूटे बाणके समान यहांसे सीधे उछलकर चले ॥ ४ ॥ प्रवेशकरके
महाबलवान् हनुमान्‌जीने देखा कि, यह वाटिका अति विचित्र है, अनेक जातिके पक्षी उसमें बोल रहे हैं, चांदी और सुवर्णमय वृक्ष उसको छाये हुए हैं॥५॥
नाना प्रकारके मृग और पक्षिगणोंसे सेवित होनेके कारण वाटिकाने अनेक रूपकी शोभा धारणकी है, वह विचित्र वृक्षोंसे चित्रित होरही थी, वहांके वृक्ष सूर्यके समान
ज्योतिविस्तार कर रहे थे ऐसा महावीरजीने देखा ॥६॥ वह वाटिका अनेक प्रकारके फल फूलवाले वृक्षोंसे छाय रही है मतवाली कोकिला और भौंरोंके शब्द
समूहसे वह शब्दायमान होरही है ॥७॥ वहांपर पुरुष सबही समय हर्षित चित्त और मृगपक्षी मतवाले होकर फिरा करते मोरभी मतवाले होकर अपनी झंकार

सप्रविश्यविचित्रांतांविहगैरभिनादिताम् ॥ राजतैः
तथाग्रवर्णसंपन्नाँल्लताशतसमन्वितान् ॥ ज्यामुक्तइवनाराचःपुप्लुवेवृक्षवाटिकाम् ॥ ४ ॥ उदितादित्यसंकाशांददर्शहनुमान्बली ॥ ६ ॥ वृतैर्नानाविधैः
कांचनैश्चैवपादपैःसर्वतोवृताम् ॥५॥ विहंगैर्मृगसंघैश्चविचित्रांचित्रकाननाम् ॥ मत्तबर्हिणसंघुष्टांनाना
वृक्षैःपुष्पोपगफलोपगैः ॥ कोकिलैर्भृंगराजैश्चमत्तैर्नित्यनिषेविताम् ॥ ७ ॥ प्रहृष्टमनुजांकालेमृगपक्षिमदाकुलाम् ॥ उत्पतद्भिर्द्विजगणैः पक्षैर्वातैः
द्विजगणायुताम् ॥ ८ ॥ मार्गमाणोवरारोहांराजपुत्रीमनिंदिताम् ॥ सुखप्रसुप्तान्विहगान्बोधयामासवानरः ॥९॥ अशोकवनिकामध्येयथापुष्पमयो
समाहताः ॥ अनेकवर्णाविविधामुमुचुःपुष्पवृष्टयः ॥ १० ॥ पुष्पावकीर्णःशुशुभेहनूमान्मारुतात्मजः ॥ वृक्षेभ्यःपतितैःपुष्पैरवकीर्णापृथग्विधैः ॥
गिरिः ॥ ११ ॥ दिशःसर्वाभिधावंतंवृक्षखंडगतंकपिम् ॥ दृष्ट्वासर्वाणिभूतानिवसंतइतिमेनिरे ॥१२॥ कुसुमानिविचित्राणिससृजुःकपिनातदा ॥ १४ ॥
रराजवसुधातत्रप्रमदेवविभूषिता ॥ १३ ॥ तरस्विनातेतरवस्तरसाबहुकंपिताः ॥

हनुमान्‌जीने वरारोहा अनिन्दिता राजकुमारी जानकीजीको खोजते हुए सुखसे सोये हुए पक्षियोंको जगा
करते और अनेक भाँतिके पक्षी वास करते हैं ॥८॥ विविध भाँतिके वृक्ष अनेकवर्णके फूलोंकी वर्षा करने लगे॥१०॥
दिया ॥९॥ जब सब पक्षी पंखोंको फैलाय कर उडे तब उनके पंखोंकी पवन चलनेकेकारण ॥ जब हनुमान्‌जी वृक्षोंपरचढकर सब
वायुनंदन हनुमानजी फूलोंकी राशिसे ढककर अशोकवनमें फूलोंके पहाडके समान शोभायमान होने लगे ॥ ११ ॥ वृक्षोंके गिरे हुए फूलोंसे ढककर वहांकी पृथ्वी
दिशाओंमें घूमतेथे, तब उनको देखकर सबही प्राणियोंने जाना कि, यह वसंत रूप धारण किये घूमता है ॥१२॥ बलवान् हनुमानजीके बडे वेगसे कंपित करनेपर वृक्षकंपायमान होकर फूलोंके ढेरोंकी वर्षा
सोलहो शृंगार किये स्त्रीके समान शोभायमान होने लगी ॥१३॥

करने लगे॥१४॥और हनुमानजीके वेगसे हिलनेके कारण वृक्षोंके पत्ते, फल, फूल और फुलचियें टूटकर गिरानेसे जुआ खेलनेवाले जिस प्रकार जुएमें हारमन मार वस्त्राभूषण भी गँवाय जैसे कोरेहो बैठते हैं, वैसेही वह वृक्ष ठूंठसे होगये॥१५॥वेगवान् हनुमानजीके कंपित करनेसे फलवाले सबश्रेष्ठ वृक्ष झर २ करके बहुतसारे फल और पत्ते गिराने लगे॥१६॥पवनकुमार हनुमानजीके चलायमान करनेसे उनसबवृक्षोंके केवल गुद्दे बचे ऐसी अवस्थामें वह सब वृक्ष और किसी प्राणीके सेवन योग्य नहीं रहे और पक्षियोंसे हीन होगये॥१७॥हनुमानजी पूँछ, हस्त, और दोनों चरण मर्दित होनेके कारण अशोक वनके सब वृक्ष छिन्न भिन्न होगये इससे ऐसी शोभा हुई मानो स्त्रीके बाल बिखरे, अंगराग छुटा, श्वेत दांत व अधर चुम्बित और अंग नख दांतोंसे क्षतविक्षत होगये ॥१८॥१९ ॥ वर्षाकालमें

निर्धूतपत्रशिखराःशीर्णपुष्पफलद्रुमाः ॥ निक्षिप्तवस्त्राभरणाधूर्ताइवपराजिताः ॥ १५ ॥ हनूमतावेगवताकंपितास्तेनगोत्तमाः ॥ पुष्पपत्रफलान्याशुमुमुचुःफलशालिनः ॥ १६ ॥ विहंगसंघैर्हीनास्तेस्कंधमात्राश्रयाद्रुमाः ॥ बभूवुरगमाःसर्वेमारुतेनविनिर्धुताः ॥१७ ॥ विधूतकेशीयुवतिर्यथामृदितवर्णका ॥ निपीतशुभदंतोष्ठीनखैर्दंतैश्चविक्षता ॥ १८ ॥ तथालांगूलहस्तैस्तुचरणाभ्यांचमर्दिता ॥ तथैवाशोकवनिकाप्रभग्नवनपादपा ॥ १९ ॥ महालतानांदामानिव्यधमत्तरसाकपिः ॥ यथाप्रावृषिवेगेनमेघजालानिमारुतः ॥ २० ॥ सतत्रमणिभूमीश्चराजतीश्चमनोरमाः ॥ तथाकांचनभूमीश्चविचरन्ददृशेकपिः ॥ २१ ॥ वापीश्चविविधाकाराःपूर्णाःपरमवारिणा ॥ महार्हैर्मणिसोपानैरुपपन्नास्ततस्ततः ॥२२॥ मुक्ताप्रवालसिकताःस्फाटिकांतरकुट्टिमाः ॥कांचनैस्तरुभिश्चित्रैस्तीरजैरुपशोभिताः ॥२३॥ बुद्धपद्मोत्पलवनाश्चक्रवाकोपशोभिताः ॥ नत्यूहरुतसंघुष्टाहंससारसनादिताः ॥ २४ ॥

प्रचंड पवन जिसप्रकार मेघ जालके टुकडे २ कर देता है; वैसेही महाकपि हनुमानजीने बडे वेगसे बडी २ लताओंको तोड डाला ॥ २० ॥ वहांपर विचरण करते २ हनुमानजीने मणिमय, रजतमय और सुवर्णमय मनोहर पृथ्वी देखी ॥ २१ ॥ और श्रेष्ठजलसे पूर्ण विविधाकार बावलियां भी वहां देखीं, इन सब वापियोंके स्थान २ में बडे मोलकी विविध मणियोंसे बनी हुई सीढियें शोभायमान होरही थीं ॥ २२ ॥ उन वापियोंमें मोती मूंगोंकी सिटकियां, जलके भीतरकी भीत स्फटिकमणिकी बनी थीं। उनके किनारे २ विचित्र सुवर्णमय वृक्षोंके झुण्ड शोभित होरहे थे॥२३॥इनसमस्तवापियोंमें कमलफूलोंका कमलवन खिल

रहाथा, चक्रवाक अलगहीशोभा बढा रहे थे और कालकंठ हंससारस इत्यादि पक्षी नादकर रहेथे ॥ २४ ॥ उनके ओरे धोरे बडी २ नदियां, उन नदियोंके किनारे वृक्षोंकीलंगार विराजमान उन नदियोंका जल अमृतके समानस्वादयुक्त और स्वच्छ था ॥ २५ ॥ सैकडों बेलें उनके जलमें आकर गिरी थीं, उनके तीरवाले वनोंमें सन्तान (कल्पवृक्षके फूल) विराजमान, और बीच २ में करवीरके फूल और गुल्मादि शोभायमान थीं ॥२६॥ फिर मेघकेसमान ऊंचे शिखरयुक्त. विचित्रशृंग विचित्रकंगूरोंसे चारोंओरसे शोभित ॥ २७ ॥ शिलागृह सुसज्जित अनेक प्रकारकेवृक्षोंसे घिरा सब जगत्में रमणीक एक पर्वत वानरोंमें श्रेष्ठ हनुमान्जीने देखा ॥२८॥ इस पर्वतपरसे एक नदी बहरही थी, वह ऐसी शोभायमान होरही थी, मानों प्यारी क्रोधमें भरकर अपने प्रीतमकी गोदको त्यागकर पृथ्वीपर शयन कर रही है ॥२९॥ मानिनी कामिनी क्रोधयुक्त होकर अपने स्वामीके निकटसे दूसरे स्थानपर जानेकी इच्छा प्रकाश करनेपर जैसे प्रियसखियें उसको रोकती

दीर्घाभिर्द्रुमयुक्ताभिःसरिद्भिश्चसमंततः ॥ अमृतोपमतोयाभिःशिवाभिरुपसंस्कृताः॥२५॥लताशतैरवतताःसंतानकुसुमावृताः ॥ नानागुल्मावृतवनाःकरवीरकृतान्तराः ॥२६॥ ततोऽम्बुधरसंकाशंप्रवृद्धशिखरंगिरिम् ॥ विचित्रकूटंकूटैश्चसर्वतःपरिवारितम्॥२७॥ शिलागृहैरवततंनानावृक्षसमावृतम् ॥ ददर्शकपिशार्दूलोरम्यंजगतिपर्वतम् ॥ २८ ॥ ददर्शचनगात्तस्मान्नदींनिपतितांकपिः ॥ अंकादिवसमुत्पत्यप्रियस्यपतितांप्रियाम्॥२९॥जलेनपतिताग्रैश्चपादपैरुपशोभिताम् ॥ वार्यमाणामिवक्रुद्धांप्रमदांप्रियबंधुभिः ॥३०॥ पुनरावृत्ततोयांचददर्शसमहाकपिः ॥ प्रसन्नामिवकांतस्यकांतांपुनरुपस्थिताम् ॥ ३१ ॥ तस्यादूरात्सपद्मिन्योनानाद्विजगणायुताः ॥ ददर्शकपिशार्दूलोहनूमान्मारुतात्मजः॥३२॥ कृत्रिमांदीर्घिकांचापिपूर्णांशीतेनवारिणा ॥ मणिप्रवरसोपानांमुक्तासिकतशोभिताम् ॥ ३३ ॥ विविधैर्मृगसंघैश्चविचित्रांचित्रकाननाम् ॥ प्रासादैःसुमहद्भिश्चनिर्मितैर्विश्वकर्मणा ॥ ३४ ॥

हैं वैसेही उस नदीके तीरवाली वृक्षोंकी शाखा तलमें गिरनेसे उसही भावको प्रकाश कररहीं थीं ॥ ३० ॥ महाकपि हनुमान्जीने देखा कि, कुछ दूर गमन करके जलफिर किसी स्थानसे लौटकर आ रहा है, मानो कामिनी प्रसन्न होकर फिर लौटकर प्रियपतिके पास आय रही है ॥३१॥ कपिशार्दूल पवनकुमार हनुमान्जीने देखा कि, इस नदीके कुछेक दूर अनेक प्रकारके पक्षियोंसे युक्त कमल खिले हुए सरोवर विराजमान हैं ॥ ३२ ॥ हनुमान्जीने शीतलजलसे परिपूर्ण एक कृत्रिम बावडीभी देखी । उस बावडीकी सीढियें मणिमय बनी हुई थीं, और मुक्तामय किनारा बना हुआ उसकी शोभाको बढा रहा था॥३३॥ विविध भांतिके विविध मृगगणभी उसकी अनेकशोभा कर रहे थे और विचित्र वृक्षोंने उसको चित्रित किया था॥ चारोंओर विश्वकर्माकी बनाई अति बडी २

अटा अटारियें ॥ ३४ ॥ व नकली वनोंसे सब ओरसे उसकी अति मनोहर शोभा होरही थी उसके किनारेवाले सब वृक्ष फल फूलसे युक्त थे ॥ ३५ ॥ और सब वृक्षोंका आकार छत्रके समान मनोहर व सबहीकी जडमें सुवर्णके थांबले बने थे, और नीचेकी भूमि चांदीसे मढी थी, उनके आसपासवाली बहुतसी लताओंके पत्तोंसे वह घिरी हुई थी ॥३६॥ फिर महाकपि हनुमान्‌जीने सुवर्णके वर्ण समान एक बडा भारी शिंशपाका वृक्ष देखा, उसका थांबला सुवर्णमय बना हुआ था॥३७॥इन सबके अतिरिक्त महाकपि हनुमान्‌जीने विविध भूमिभाग पर्वतोंके झरने व और दूसरे अग्निके समान कान्तिमान् सुवर्ण वृक्षभी देखे॥३८॥ सुमेरु पर्वतके स्पर्शसे सूर्य भगवान् जिस प्रकार उज्ज्वल होजाते हैं, वैसेही इन समस्त वृक्षोंकी प्रभासे व्याप्त होकर वीर हनुमान्‌जीभी सुवर्णरूप होगये थे इससे

काननैःकृत्रिमैश्चापिसर्वतःसमलंकृताम् ॥ येकेचित्पादपास्तत्रपुष्पोपगफलोपगाः ॥ ३५ ॥ सच्छत्राःसवितर्दीकाःसर्वेसौवर्णवेदिकाः ॥ लताप्रतानैर्बहुभिःपर्णैश्चबहुभिर्वृताम् ॥ ३६ ॥ कांचनींशिंशपामेकांददर्शसमहाकपिः ॥ वृतांहेममयीभिस्तुवेदिकाभिःसमंततः ॥३७॥ सोऽपश्यद्भूमिभागांश्चनगप्रस्रवणानिच ॥ सुवर्णवृक्षानपरान्ददर्शशिखिसन्निभान् ॥ ३८ ॥ तेषांद्रुमाणांप्रभयामेरोरिवमहाकपिः ॥ अमन्यततदावीरः कांचनोऽस्मीतिसर्वतः ॥ ३९ ॥ तान्कांचनान्वृक्षगणान्मारुतेनप्रकंपितान् ॥ किंकिणीशतनिर्घोषान्दृष्ट्वाविस्मयमागमत् ॥ ४० ॥ सुपुष्पिताग्रान्रुचिरांस्तरुणांकुरपल्लवान् ॥ तामारुह्यमहावेगः शिंशपांपर्णसंवृताम् ॥ ४१ ॥ इतोद्रक्ष्यामिवैदेहींरामदर्शनलालसाम् ॥ इतश्चेतश्चदुःखार्तांसंतपंतींयदृच्छया ॥ ४२ ॥ अशोकवनिकाचेयंदृढंरम्यादुरात्मनः ॥ चंदनैश्चंपकैश्चापिबकुलैश्चविभूषिता ॥ ४३ ॥ इयंचनलिनीरम्याद्विजसंघनिषेविता ॥ इमांसाराजमहिषीनूनमेष्यतिजानकी ॥ ४४ ॥

अपनेको सोनेका मानने लगे ॥३९॥ हनुमान्‌जी, शत २ किंकिणियोंके शब्दसे निनादित समस्त रमणीक स्वर्णवृक्षोंको वायुसे कंपित देख अतिविस्मयको प्राप्त हुए ॥ ४० ॥ सुन्दर पुष्पवाले नवीन अंकुर, व नये पत्रोंसे युक्त दीप्तिमान् उन सब वृक्षोंमेंसे उस शिंशपापर चढकर पत्तोंमें बैठे विचारने लगे ॥४१॥ वैदेही जानकीजी गाढे दुःखसे व्याकुल होकर श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनकी लालसा लगाये इधर उधर घूमती घामती अपनी इच्छाके अनुसार यहांपर आवेगी तबही हम उनके दर्शन पावेंगे ॥ ४२ ॥ चन्दन चम्पा और बकुलके वृक्षोंसे सुशोभित दुरात्मा रावणका यही अशोक बन होगा ॥ ४३ ॥ पक्षीकुल विराजित, यह पद्मसरोवर भी

यहांपर विराजता है, राजरानी जानकीजीभी निश्चयही इस सरोवरपर आवेंगी ॥४४॥ जानकीजी श्रीरामचन्द्रजी की प्यारी भार्या हैं, इसलिये वह सदाही वन विचरण करनेमें कुशल हैं; इस कारणसे वह अवश्यही यहां पर आवेंगी॥४५॥अथवा वनविचरणप्रिया मृगशावकनयनी जानकीजी अशोकवनके आशयको भली भाँति जानती हैं वह श्रीरामचन्द्रजीकी चिन्तासे व्याकुल होकर अवश्यही इस समय उद्यानमें आवेंगी॥४६॥या वामलोचना सीताजी सदाही वनमें घूमनेको प्रिय समझती हैं, इसलिये ज्ञात होता है कि, श्रीरामचन्द्रजीके शोकसे सन्तापित होनेपर भीवह अभी इस वनमें आवेंगी॥४७॥श्रीरामचन्द्रजीकी प्यारी भार्या पतिव्रता जनककुमारी सीताजी पहले वनचर मृग पक्षियोंको बहुत प्रिय समझती थीं ॥ ४८ ॥ इस समय सवेरा होनाही चाहता है श्यामांगी जानकीजीकी निष्ठा

सारामाराजमहिषीराघवस्यप्रियासदा ॥ वनसंचारकुशलाध्रुवमेष्यतिजानकी ॥४५॥ अथवामृगशावक्षीवनस्यास्यविचक्षणा॥वनमेष्यतिसा ऽद्येहरामचिंतासुकर्शिता ॥४६॥ रामशोकाभिसंतप्तासादेवीवामलोचना॥वनवासरतानित्यमेष्यतेवनचारिणी॥४७॥वनेचराणांसततंनूनंस्पृ हयतेपुरा॥रामस्यदयिताभार्याजनकस्यसुतासती॥४८॥ संध्याकालमनाःश्यामाध्रुवमेष्यतिजानकी ॥ नदींचेमांशुभजलांसंध्यार्थेवरवर्णिनी ॥४९॥ तस्याश्चाप्यनुरूपेयमशोकवनिकाशुभा ॥ शुभायाःपार्थिवेंद्रस्यपत्नीरामस्यसंमता ॥५०॥ यदिजीवतिसादेवीताराधिपनिभानना ॥ आगमिष्यतिसाऽवश्यमिमांशीतजलांनदीम् ॥५१॥ एवंतुगत्वाहनुमान्महात्माप्रतीक्षमाणोमनुजेंद्रपत्नीम्॥ अवेक्षमाणश्चददर्शसर्वंसुपुष्पिते पर्णघनेनिलीनः ॥५२॥ इ० श्रीमद्रा० वा० आदि० सा० सुन्दरकांडेचतुर्दशःसर्गः ॥१४॥ सवीक्षमाणस्तत्रस्थोमार्गमाणश्चमैथिलीम् ॥ अवेक्षमाणश्चमहींसर्वांतामन्ववेक्षत ॥ १ ॥

प्रातःकालके कर्त्तव्य स्नानादिमें है, इसलिये वह वरवर्णिनी प्रातःकालकी सन्ध्या (भजनस्मरण) करनेके लिये इस निर्मल नीरवाली नदीपर आवेंगी ॥४९॥वह राजकन्या हैं और राजेन्द्र श्रीरामचन्द्रजीकी अनुरूप भार्या हैं, इस लिये यह पवित्र अशोकवन भी सब प्रकारसे उनके अनुरूप है॥५०॥चन्द्रमुखी वह देवी जान कीजी यदि जीवित हैं, तो वह शीतल जलवाली इस नदीपर अवश्यही आगमन करेंगी ॥५१॥ महात्मा हनुमान्जी इस अशोकवनमें गमन करके इस प्रकार सीताजीकी बाट जोहते हुए उस सघन पत्तेवाले सुन्दर पुष्पसम्पन्न शिंशपाके वृक्षमें छिपे रहकर सब कुछ देखने भालने लगे ॥ ५२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥ हनुमान्जीने इस वृक्षपर टिके हुए चारों ओर निहार, सीताजीका खोज करनेके लिये

वहांकी सब पृथ्वी और समस्त अशोक वन देखा ॥ १ ॥ वह वन कल्पवृक्षकी लताओं और वृक्षोंसे शोभायमान; सुगन्धित दिव्य रसोंसे सम्पन्न, सब ओरसे सुभूषित ॥ २ ॥ वह वन नन्दनवनके समान प्रकाशमान मृगपक्षियोंसे परिपूर्ण अटा अटारी राजमंदिरोंसे सघन कोकिलाओंके शब्दसे शब्दायमान था ॥३॥ वापियें सुवर्णमय उत्पल और कमलफूलोंको धारण कियेशोभा विस्तार कररहीहैं बहुत सारे किनारे पर मंदिर बनें हैं वेऊनी वस्त्रोंके आसनोंसे शोभित हैं ॥ ४ ॥ वन्य भूमि गृह और ऋतुओंके फूल व फलयुक्त वृक्ष वहां शोभायमान हो रहे थे, फूले हुए अशोक वृक्षोंकी कान्तिसे मानो सूर्योदयकी प्रभा फैल रही है॥५॥हनुमान्‌जीने वहां टिककर देखा कि, बारबार कूदते हुए पक्षी गिर २ करऔर पुष्पोंके गहनोंसे भूषित होकर वृक्षोंके पत्ते ढकरहे हैं इससे ऐसा ज्ञात

संतानकलताभिश्चपादपैरुपशोभिताम् ॥ दिव्यगंधरसोपेतांसर्वतःसमलंकृताम् ॥ २ ॥ तांसनंदनसंकाशांमृगपक्षिभिरावृताम् ॥ हर्म्यप्रासादसं बाधांकोकिलाकुलनिःस्वनाम् ॥३॥ कांचनोत्पलपद्माभिर्वापीभिरुपशोभिताम् ॥ बह्वासनकुथोपेतांबहुभूमिगृहायुताम् ॥ ४ ॥ सर्वर्तुकुसुमै रम्यैःफलवद्भिश्चपादपैः ॥ पुष्पितानामशोकानांश्रियासूर्योदयप्रभाम्॥५॥प्रदीप्तामिवतत्रस्थोमारुतिःसमुदैक्षत॥ निष्पत्रशाखांविहगैःक्रिय माणामिवासकृत् ॥६॥ विनिष्पतद्भिःशतशश्चित्रैःपुष्पावतंसकैः ॥ समूलपुष्परचितैरशोकैःशोकनाशनैः ॥७॥ पुष्पभारातिभारैश्चस्पृशद्भि रिवमेदिनीम्॥ कर्णिकारैःकुसुमितैःकिंशुकैश्चसुपुष्पितैः ॥८॥ सदेशप्रभयातेषांप्रदीप्तइवसर्वतः॥पुन्नागाःसप्तपर्णाश्चचंपकोद्दालकास्तथा॥९॥ विवृद्धमूलाबहवःशोभंतेस्मसुपुष्पिताः ॥ शातकुंभनिभाःकेचित्केचिदग्निशिखाप्रभाः॥१०॥नीलांजननिभाःकेचित्तत्राशोकाःसहस्रशः॥नंदनं विबुधोद्यानंचित्रंचैत्ररथंयथा ॥ ११ ॥ अतिवृत्तमिवाचित्यंदिव्यंरम्यश्रियायुतम् ॥ द्वितीयमिवचाकाशंपुष्पज्योतिगणायुतम् ॥ १२ ॥

होता था कि, मानो वृक्ष पत्तोंसे रहित होगये हैं ॥६॥ चित्र विचित्र पुष्पोंको कर्णभूषण बनाये शोक नाशकारी सैकडों अशोकोंके वृक्षोंसे शोभित॥७॥ जो अशोक कि, फूलोंके भारसे झुककर मानो पृथ्वीको छुएही लेते थे, ऐसे अशोक, व फले हुए कर्णिकार औरटेटूके वृक्षोंकी॥८॥कान्तिसेवह स्थान मानो सब ओरसे प्रदीप्त हो रहाथा, शत २ पुन्नाग, शतवारी, चम्पा, उद्दालक आदि वृक्ष ॥९॥ और बहुत फूले फले बडे २ वृक्षोंके समूह वहां शोभायमान हो रहेथे इनमें कोई वृक्ष सुवर्णके रंगके कोई अग्नि सम वर्णके॥१०॥कोई नील अंजनकी नाई वर्णवाले इन वृक्षोंमें अशोकके वृक्ष तो वहां हजारोंही थे बहुत सारे अशोकवृ क्षोंके रहनेकेकारणसेही इस वाटिकाका नाम अशोकवाटिका या अशोकवन पडाथा यह वन नन्दनवनके समान आनंदजनक और कुबेरजीके चैत्ररथवनकेसमान विचित्र था॥११॥और नन्दन कानन और चैत्ररथ वन दोनों वनको नांघ गया था । अचिन्त्य रमणीय श्रीमान् यह दिव्य अशोक वन पुष्परूप तारागणोंसे

॥१२॥ सैकडों सैकडों हजारों पुष्प रत्नोंके रहनेसे जान पडता मानो यह पंचम सागर है सर्वऋतु
व्याप्त होकर दूसरे आकाशके समान शोभायमान हो रहा था ॥१२॥ सैकडों सैकडों हजारों पुष्प रत्नोंके रहनेसे जान पडता मानो यह पंचम सागर है सर्वऋतु
व्याप्त होकर दूसरे आकाशके समान शोभायमान हो रहा था ॥१२॥ और विविध भाँतिके मृगपक्षियोंने अपने शब्दसे उसको परम रमणीय कर रक्खा था अनेक
ओंके कुसुम युक्त वृक्ष इस वाटिकाकी शोभाको बढा रहे थे॥१३॥और विविध भाँतिके मृगपक्षियोंने अपने शब्दसे उसको परम रमणीय कर रक्खा था अनेक
ओंके कुसुम युक्त वृक्ष इस वाटिकाकी शोभाको बढा रहे थे॥१४॥इस अशोकवाटिकामें वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीने बहुत
प्रकारकी सुगंधि इस वाटिकामें आय रही थी इसलिये पुण्य गन्धिवाला यह वन मनोहर हो रहा था॥१४॥इस अशोकवाटिकामें वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीने बहुत
प्रकारकी सुगंधि इस वाटिकामें आय रही थी इसलिये पुण्य गन्धिवाला यह वन मनोहर हो रहा था । जो कैलासके समान श्वेत और इस
दूरपर दूसरे गन्धमादनके समान गन्ध सम्पन्न ॥ १५ ॥ हिमाचलके समान ऊंचा गोल आकारवाला एक मंदिर देखा । जो कैलासके समान श्वेत और इस
मंदिरमें सहस्रों खंभेलगे हुए थे॥१६॥उसकी सब सीढियाँ मूँगोंकी बनी हुई थीं और वेदियां यहांपर तपाये हुए सुवर्णकी बनी थीं यह मंदिर ऐसा प्रकाशमान

॥ अनेकगंधप्रवहंपु
पुष्परत्नशतैश्चित्रंपंचमंसागरंयथा ॥ सर्वर्तुपुष्पैर्निचितंपादपैर्मधुगंधिभिः ॥ १२ ॥ नानानिनदैरुद्यानंरम्यंमृगगणैर्द्विजैः ॥ अनेकगंधप्रवहंपु
ण्यगंधंमनोहरम् ॥१४॥ शैलेंद्रमिवगंधाढ्यंद्वितीयंगंधमादनम् ॥ अशोकवनिकायांतुतस्यांवानरपुंगवः ॥१५॥ सददर्शाविदूरस्थंचैत्यप्रासा
दमूर्जितम् ॥ मध्येस्तंभसहस्रेणस्थितंकैलासपांडुरम् ॥१६॥ प्रवालकृतसोपानंतप्तकांचनवेदिकम् ॥ मुष्णंतमिवचक्षूंषिद्योतमानमिवश्रिया
॥ १७ ॥ निर्मलंप्रांशुभावत्वादुल्लिखंतमिवांबरम् ॥ ततोमलिनसंवीतांराक्षसीभिःसमावृताम्॥१८॥ उपवासकृशांदीनांनिःश्वसंतींपुनःपुनः ॥
ददर्शशुक्लपक्षादौचंद्ररेखामिवामलाम्॥१९॥मंदप्रख्यायमानेनरूपेणरुचिरप्रभाम् ॥ पिनद्धांधूमजालेनशिखामिवविभावसोः ॥ २०॥ पीते
नैकेनसंवीतांक्लिष्टेनोत्तमवाससा ॥ सपंकामनलंकारांविपद्मामिवपद्मिनीम् ॥ २१ ॥ पीडितांदुःखसंतप्तांपरिक्षीणांतपस्विनीम् ॥ ग्रहेणांगार
केणेवपीडितामिवरोहिणीम् ॥ २२ ॥ अश्रुपूर्णमुखींदीनांकृशामनशनेनच ॥ शोकध्यानपरांदीनांनित्यदुःखपरायणाम् ॥ २३ ॥

हो रहाथा मानों नेत्रोंकी ज्योतिको हरण किये लेता था॥१७॥श्वेतवस्त्रोंकी अधिकाईसे यह मानों आकाशको छुये लेता था ऐसे उस मंदिरमें बैठी हुई मलिनवस्त्रधा
रणकिये राक्षसियोंसे घिरी हुई ॥१८॥ उपवास करनेसे दुर्बलवदन, दीनवदन, बारबारश्वासोंलेती शुक्लपक्षवाली प्रतिपदाकी चन्द्ररेखाके समान सूक्ष्ममूर्ति सीता
जीको पवनतनय हनुमान्जीने देखा ॥१९॥ रुचिर कान्तियुक्त सीताजीका रूप देखकर जोधुवेंसे ढकी हुई अग्निकी शिखाके समान अति कष्टसे अनुमान कर
नेकेयोग्य था॥ २०॥ वहएक पुराना पीले वर्णका उत्तमवस्त्र पहरनेऔर गहने रहित होनेसे कमलके विनामलीन हुईकमलिनीके समान श्रीहीनहोंगईथी॥२१॥
वहपतिव्रता जानकीजी दुःखसे संतापित पीडित और अतिशयदुर्बल होकर केतुग्रहसे सताई हुई रोहिणीके समानमन्द प्रकाशित होरही थी॥२२॥ शोक और

चिंताकेवशहोनेसे सदादुःखभोगव उपवासकरनेके कारण अतिव्याकुल होनेसे नेत्रोंसे आंसुओंकी धारा बहरहीथी औरवहबहुत दुबली होगई थीं॥२३॥उनकी दृष्टिकेवल राक्षसियोंपर पडती थी परन्तु वह अपने प्रियजन श्रीरामलक्ष्मणको न देखकर,अपने झुंडसे बिछुड कुत्तोंके झुंडसेघिरी हरिणीके समान त्रासितऔर व्याकुल होरहीथीं ॥२४॥ कालेसर्पकेसमान लबीचोटी पीठपरपडीऐसीशोभितहोरही थींमानो वर्षाकेबीतजानेपर पृथ्वीनीलवर्णकी वनराजिसेपूरितहोकरशोभाय मानहोरहीथी ॥ २५ ॥ वह केवल सुखहीभोग करनेके योग्य, जो कभी किसी दुःखकानामतक न जानतीथी; वहइससमय दुःखसे बहुतही सताई गई हैं।हनुमानूजीनेउन दुर्बल अंगवालीमलिन सीताजीको देख ॥ २६ ॥ विचार करके अनेककारण स्थिर कियेकि, यही सीताहैं, क्योंकी कामरूपी राक्षसराज सीताजीकोहरण किये आताथा ॥२७॥ उससमय जैसाहमने सीताजीका रूपदेखा थाउनकेही समान इसस्त्रीकारूप हम देखतेहैं क्योंकि पूर्णचन्द्रवदनी गोलपयोधर

प्रियंजनमपश्यंतींपश्यंतींराक्षसीगणम् ॥ स्वगणेनमृगींहीनांश्वगणेनावृतामिव ॥२४॥ नीलनागाभयावेण्याजघनंगतयैकया॥ नीलयानीरदापायेवनराज्यामहीमिव ॥२५॥ सुखार्हांदुःखसंतप्तांव्यसनानामकोविदाम् ॥ तांविलोक्यविशालाक्षीमधिकंमलिनांकृशाम् ॥२६॥ तर्कयामाससीतेतिकरणैरुपपादिभिः ॥ ह्रियमाणातदातेनरक्षसाकामरूपिणा ॥२७॥ यथारूपाहिदृष्टासातथारूपेयमंगना॥ पूर्णचन्द्राननांसुभ्रूंचारुवृत्तपयोधराम् ॥२८॥ कुर्वतींप्रभयादेवींसर्वावितिमिरादिशः ॥ तांनीलकंठींबिंबोष्ठींसुमध्यांप्रतिष्ठिताम् ॥ २९ ॥ सीतांपद्मपलाशाक्षींमन्मथस्यरतिंयथा ॥ इष्टांसर्वस्यजगतःपूर्णचंद्रप्रभामिव ॥ ३० ॥ भूमौसुतनुमासीनांनियतामिवतापसीम् ॥ निःश्वासबहुलांभीरुभुजगेंद्रवधूमिव ॥३१॥ शोकजालेनमहतावितत्तेननराजतीम् ॥ संसक्तांधूमजालेनशिखामिवविभावसोः ॥ ३२ ॥ तांस्मृतीमिवसंदिग्धामृद्धिंनिपतितामिव ॥ विहतामिवचश्रद्धामाशांप्रतिहतामिव ॥ ३३ ॥

युक्त सुंदर भ्रुकुटिवाली यह अबलाहै ॥२८॥ अपनी देहकी कान्तिसेमानो इसनेसब दिशाओंका अंधकार नाशकर दिया है । इसकाकण्ठ इन्द्रनील मणिकी प्रभाकेसमान नील वर्ण है, अधर बिंबाफलके समान लाल हैं; मध्य देशसुशोभित और सबही अंग सुडौल हैं ॥२९॥ कमलदललोचनी सीतामानो साक्षात् मदनकी रतिऔर पूर्णचन्द्रकी चांदनीके समान मानों सब जगतकी इष्ट हैं ॥ ३० ॥ वह श्रेष्ठस्तनवाली नियमवाली तपस्विनीके समान पृथ्वीपर बैठी हुई हैं, और डरी हुईसर्पराज वधूके समान बहुत सांसें लेरहीहैं ॥३१॥ बडेभारी शोकके जालमें पडनेसेअब इनकीवह शोभानहींहै, मानों अग्निकीशिखा धुयेंके समूहमें छिपरही है॥३२॥ इनकीअवस्था स्पष्टार्थ स्मृतिकी नांई, अन्यायसे हरणकीहुई सम्पत्तिकीनांई. नास्तिकबुद्धिसे हरी हुईश्रद्धाकी नांई, टूटगई हुई आशाकी

नाईं ॥ ३३ ॥विघ्नोंके समूहसे पूरी सिद्धिकी नाईं, कलंकित बुद्धिके समान, और मिथ्या कलंकसेग्रसी कीर्तिकी नाईं अतिशय प्रभाहीन और शोचनीय है ॥ ३४ ॥श्रीरामचन्द्रजीकी सेवामें बाधा पडनेसे यह अवला दुःखित हुई हैं, उसके ऊपरफिर राक्षसियोंकेपीडन करनेसेमृगशावक नयनी चंचलतासे इधरउधर देख रही हैं ॥ ३५ ॥ सीताजीके काले और सुकडे आखोंके बालसे शोभित आँसुओंके जलसे परिपूर्ण अप्रसन्नवदनसे क्षण २ में लम्बे २ श्वास निकल रहे हैं ॥ ३६ ॥ यह गहने पहरनेके योग्यहैं, परन्तु इस समय कोई भूषण नहीं पहर रही हैं, इस समय इन्होंने मैलकी कीचड शरीरमें लपटाय दीनभाव धारण किया है, मानों तारानाथ चन्द्रमाकी प्रभा कालेमेघमें छिप रही हैं ॥ ३७ ॥ अभ्यासके न करनेसे शिथिल हुई विद्याके समानसीताजीकी अवस्था

सोपसर्गांयथासिद्धिंबुद्धिंसकलुषामिव ॥ अभूतेनापवादेनकीर्तिंनिपतितामिव ॥३४॥ रामोपरोधव्यथितांरक्षोगणनिपीडिताम् ॥ अवलांमृग शावाक्षींवीक्षमाणांततस्ततः॥३५॥बाष्पांबुपरिपूर्णेनकृष्णवक्राक्षिपक्ष्मणा॥ वदनेनाप्रसन्नेनानिःश्वसंतींपुनःपुनः॥३६॥मलपंकधरादीनांमंडना र्हाममंडिताम् ॥ प्रभांनक्षत्रराजस्यकालमेघैरिवावृताम् ॥३७॥ तस्यसंदिदिहेबुद्धिस्तथासीतांनिरीक्ष्यच ॥ आम्नायानामयोगेनविद्यांप्रशिथि लामिव ॥ ३८ ॥ दुःखेनबुबुधेसीतांहनुमाननलंकृताम् ॥ संस्कारेणयथाहीनांवाचमर्थांतरंगताम् ॥ ३९ ॥ तांसमीक्ष्यविशालाक्षींराजपुत्री मनिंदिताम् ॥ तर्कयामाससीतेतिकारणैरुपपादयन् ॥४०॥ वैदेह्यायानिचांगेषुतदारामोऽन्वकीर्तयत् ॥ तान्याभरणजालानिगात्रशोभीन्यलक्ष यत् ॥ ४१ ॥ सुकृतौकर्णवेष्टौचश्वदंष्ट्रौचसुसंस्थितौ ॥ मणिविद्रुमचित्राणिहस्तेष्वाभरणानिच ॥ ४२ ॥ श्यामानिचिरयुक्तत्वात्तथासंस्था नवंतिच ॥ तान्येवैतानिमन्येऽहंयानिरामोऽन्वकीर्तयत् ॥ ४३ ॥

देखकर हनुमानजीके मनमें संदेह उत्पन्न हुआ ॥३८॥ हनुमानजीने सीताजीको अलंकारहीन देखकर व्याकरण संस्कारहीन अर्थान्तर प्रतिपादकवाक्यके समान बडी कठिनाईसे जाना ॥३९ ॥ अनिन्दित रूपवाली विशालनयनराजकुमारी सीताजीको देखकर हनुमानजी अनेक हेतु निश्चय करके तर्क वितर्क करने लगे उन्होंने विचाराकि, क्यायही सीताजी हैं ॥४०॥ हनुमानजीके आनेकेसमय श्रीरामचन्द्रजीने वैदेहीजीके गात्रमें शोभित जिस२गहनेका वर्णन कियाथा,सीता जीके अंगमें उन सब गहनोंको हनुमानजी देखने लगे कि, वह गहने इनके अंगोंमेंहैं अथवा नहीं ? ॥ ४१ ॥ उन्होंने मनमें विचारा कि, श्रेष्ठ बने हुए यह कुण्डलसुन्दर रूपसे टिकी हुई यह दोनों त्रिकर्णिकार और मूँगे मणियोंसे बने यह हाथकेगहने॥४२॥ यद्यपि बहुत दिनोंके धारणकरने और न मांजनेसे और

न धोनेसेमलीन होगयेहैं; परन्तुजैसे श्रीरामचन्द्रजीने बतायेहैं, वैसेही हैं, इससे अवश्यजानकीजी यही हैं॥४३॥ इन गहनोंमें हम केवल उन्हीं गहनोंको नहीं देख पातेकि जो ऋष्यमूक पर्वतपर गिरेथे, परन्तु जोनहीं गिरेवह समस्त निःसन्देह यही हैं॥४४॥ इनमेंका जोसुवर्णमय तारोंसे बनाहुआ पीत वर्णकादुपट्टा खसक करपर्वत पर गिराथा, उस कालमें सबही वानरोंने उसको देखाथा ॥ ४५ ॥ उन सबवानरोंने यहभी देखा था कि, बडे २ मोलके श्रेष्ठ गहने शब्द करते हुये पृथ्वीपरगिरे थे ॥४६॥ बहुत दिनोंसे धारणकिये रहनेके कारण इनके पहरनेका वस्त्रपुराना होगया है तथापि वह दुपट्टाजो गिराथा उससे अधिक इसके वर्णमें अभीकसरनहीं आई है ॥४७॥ जोसन्मुख न होनेपर भीश्रीरामचन्द्रजीके मनसेकहीं औरनहीं जाती, यह सुवर्णकी कान्तिवाली श्रीरामचन्द्रजीके वही प्यारी रानी हैं॥४८॥स्नेह, दया, शोकऔर मदन जिनकेलिये श्रीरामचन्द्रजी इन चारोंसेबहुतही सन्तापित होरहे हैं, निश्चय यहवही हैं ॥४९ ॥ स्त्री

तत्रयान्यवहीनानितान्यहंनोपलक्षये॥यान्यस्यानावहीनानितानीमानिनसंशयः॥४४॥पीतंकनकपट्टाभंस्रस्तंतद्वसनंशुभम्॥उत्तरीयंनगासक्तंदाहष्टंप्लवंगमैः॥४५॥भूषणानिचमुख्यानिदृष्टानिधरणीतले॥अनयैवापविद्धानिस्वनवंतिमहांतिच॥४६॥इदंचिरगृहीतत्वाद्वसनंक्लिष्टंवत्तरम्॥तथाप्युनूनंतद्वर्णंतथाश्रीमद्यथेतरत्॥४७॥इयंकनकवर्णांगीरामस्यमहिषीप्रिया॥प्रनष्टापिसतीयस्यमनसोनप्रणश्यति॥४८॥इयंसायत्कृतेरामश्चतुर्भिरिहतप्यते॥कारुण्येनानृशंस्येनशोकेनमदनेनच॥४९॥स्त्रीप्रनष्टेतिकारुण्यादाश्रितेत्यानृशंस्यतः॥पत्नीनष्टेतिशोकेनप्रियेतिमदनेनच ॥॥५०॥ तस्यादेव्यायथारूपमंगप्रत्यंगसौष्ठवम्॥ रामस्यचयथारूपंतस्येयमसितेक्षणा॥५१॥अस्यादेव्यामनस्तस्मिंस्तस्यचास्यांप्रतिष्ठितम्॥तेनेयंसचधर्मात्मामुहूर्तमपिजीवति॥५२॥दुष्करंकृतवान्रामोहीनोयदनयाप्रभुः॥धारयत्यात्मनोदेहंनशोकेनावसीदति॥५३॥एवंसीतांतथादृष्ट्वाहृष्टःपवनसंभवः॥जगाममनसारामंप्रशशंसचतंप्रभुम्॥५४॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आ०च०सा०सुन्दरकांडे पंचदशःसर्गः॥१५॥

हरण होगई इसकारणस्नेह, आश्रित जनकीरक्षा न करपाई, इसलिये दया. भार्याका पतानहीं लगता, इसलिये शोक, और प्रियाके अलग होनेसे कामदेवका सताना यहचार उनको जलाये डालते हैं ॥५०॥ इन देवीका जिस प्रकारका रूप लावण्य और अंग प्रत्यंगकी सुन्दरत है, औरा श्रीरामचन्द्रजीके रूपसे जिस प्रकार इनकी कान्तिमिलतीहै; इससे तोयह राजकुमारी श्रीरामचन्द्रजीकी ही रानी जान पडती हैं ॥५१ ॥इन देवीका मन उनमें और उनका मन इन देवीमें टिका हुआहै इसीलिये यह और वे धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी अबतक जीवित हैं ॥५२॥इनकेविरहमें प्रभु श्रीरामचन्द्रजीजो शोकसे व्याकुल न होकर प्राणोंको धारण कर रहे हैं; यह बडा कठिनकार्य है इसमें कोई सन्देह नहीं ॥५३॥ गुणवती सीताजीको हनुमानजी वहाँ देखकर हर्षित चित्त हो मनहीसे श्रीरामचंद्रजीके निकट पहुँच गये और इनप्रभुकीस्तुति करने लगे ॥ ५४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां पंचदशः सर्गः ॥ १५ ॥

वानर श्रेष्ठ हनुमान्जी प्रशंसाभाजन सीताजीके और गुणाभिराम श्रीरामचन्द्रजीकेगुण कीर्तन करके फिर चिंता करने लगे ॥ १ ॥ एक क्षण भर चिंता कर तेजस्वी हनुमानूजी नेत्रोंमें जल भरकर सीताजीके आश्रित हो विलाप करने लगे ॥२॥हनुमानूजी बोले कि: माननीया सुशिक्षित और विनीत लक्ष्मणकी गुरु पत्नी होकर भी जब सीताजीको दुःखसेव्याकुल होनापडा है, तब अवश्यही कहाजा सकताहै कि, कालको उल्लंघन करना दुःसाध्य है॥३॥ यह देवी श्रीराम चन्द्रजी व लक्ष्मणके पराक्रमको भलीभांति जानतीहैं; इसीकारण वर्षाकालीन गंगाजीकेसमान यहबहुत अधीर नहीं होतीं ॥४॥ स्वभाव, यश, चरित्र, कुल और अच्छे लक्षणोंसे जानकीजी श्रीरामचन्द्रजीहीके योग्यहैं, और वे इनके, इसलिये परस्पर एक दूसरे का मन भलीभांति लगाहुआ है॥५॥फिरसुवर्णके समान

प्रशस्यतुप्रशस्तव्यांसीतांतांहरिपुंगवः ॥ गुणाभिरामंरामंचपुनश्चितापरोऽभवत् ॥१॥ समुहूर्तमिवध्यात्वाबाष्पपर्याकुलेक्षणः ॥ सीतामाश्रित्यतेजस्वीहनूमान्विललापह ॥ २ ॥ मान्यागुरुविनीतस्यलक्ष्मणस्यगुरुप्रिया ॥ यदिसीताहिदुःखार्ताकालोहिदुरतिक्रमः ॥ ३ ॥ रामस्यव्यवसायज्ञालक्ष्मणस्यचधीमतः ॥ नात्यर्थंक्षुभ्यतेदेवीगंगेवजलदागमे ॥४॥ तुल्यशीलवयोवृत्तांतुल्याभिजनलक्षणाम् ॥ राघवोऽर्हतिवैदेहींतंचेयमसितेक्षणा ॥ ५ ॥ तांदृष्ट्वानवहेमाभांलोककांतामिवश्रियम् ॥ जगाममनसारामंवचनंचेदमब्रवीत् ॥६॥ अस्याहेतोर्विशालाक्ष्याहतोवालीमहाबलः ॥ रावणप्रतिमोवीर्यैकबंधश्चनिपातितः ॥ ७ ॥ विराधश्चहतःसंख्येराक्षसोभीमविक्रमः ॥ वनेरामेणविक्रम्यमहेंद्रेणेवशंबरः ॥ ८ ॥ चतुर्दशसहस्राणिरक्षसांभीमकर्मणाम् ॥ निहतानिजनस्थानेशरैरग्निशिखोपमैः ॥ ९ ॥ खरश्चनिहतःसंख्येत्रिशिराश्चनिपातितः ॥ दूषणश्चमहातेजारामेणविदितात्मना ॥ १० ॥ ऐश्वर्यंवानराणांचदुर्लभंवालिपालितम् ॥ अस्यानिमित्तेसुग्रीवःप्राप्तवाँल्लोकविश्रुतः ॥ ११ ॥ सागरश्चमयाक्रांतःश्रीमान्नदनदीपतिः ॥ अस्याहेतोर्विशालाक्ष्याःपुरीचेयंनिरीक्षिता ॥ १२ ॥

वर्णवाली लक्ष्मीके समान लोकानन्ददायिनी, उन सीताजीका दर्शन करके हनुमानूजी मनही मनमें श्रीरामचन्द्रजी को स्मरण करते हुए बोले ॥६॥ इन विशालाक्षी सीताजीके लिये ही महाबलवान् वाली और रावण के समान वीर्यवान् कबंध मारा गया ॥ ७ ॥जिस प्रकार इन्द्रजीने शम्बर असुर का नाश कियाथा, वैसेही वनमें विक्रम प्रकाश करके श्रीरामचन्द्रजी इन जानकीजीके लिये भयंकर विक्रमवान् विराध राक्षसको मारडाला ॥८॥ जनस्थान में भयंकर कर्मकारी चौदह हजार राक्षस अग्निकी शिखाके तुल्य बाणोंके समूहसे इनके निमित्तही मार डाले गये ॥९॥ महात्मा श्रीरामचन्द्रजी नेइनकेही लियेरणमें खर, त्रिशिरा और महातेजस्वी दूषणका संहारकिया ॥१०॥लोकविख्यात सुग्रीवजीने इन्हींके लिये वानर गणोंके ऊपर वालिपालित दुर्लभ प्रभुतापाई है॥११॥हमने भी इन

विशालाक्षी जानकीजीके हीं लिये ढूँढनेके, अर्थ,नदनदीपति श्रीमान् समुद्रको उल्लंघन किया, और लंकापुरी देखी ॥ १२ ॥ औरइनके लिये श्रीरामचन्द्रजी सागर सहितयह पृथ्वीऔर समस्तजगत् भी ढूँढडाले, तो मेरेविचारमें यहभी ठीकही होगा ॥१३॥ त्रिलोकीका राज्य, और जनकनन्दिनी सीताजी इन दोनोंकीयदि समानताकी जाय, तो त्रिलोकी का राज्यसीताजीके शत अंशकाभी तोएकभाग न हो ॥१४॥ क्योंकि मिथिलेश्वर, धर्मशील,महात्माजनकजीकी पुत्री यहदृढ पतिव्रता सीताजी ॥१५॥ पद्मरेणुके समान खेतकी धूरिसे ढकी हुई हलकी अनीद्वारा जुतेहुए खेतसे पृथ्वीको भेदकर निकलआईथीं ॥१६॥ फिर यह श्रेष्ठ स्वभाववाली महा विक्रम शाली जो कभी संग्राममेंसे नहीं निवृत्तहोते उन राजा दशरथजीकी यशस्विनी बडी पुत्रवधू हुई ॥१७॥ यहवही धर्मज्ञ,

यदिरामःसमुद्रांतांमेदिनींपरिवर्तयेत्॥अस्याःकृतेजगच्चापियुक्तमित्येवमेमतिः। १३॥राज्यंवात्रिषुलोकेषुसीतावाजनकात्मजा॥त्रैलोक्यराज्यं सकलंसीतायानाप्नुयात्कलाम् ॥ १४ ॥ इयंसाधर्मशीलस्यजनकस्यमहात्मनः ॥ सुतामैथिलराजस्यसीताभर्तृदृढव्रता ॥ १५ ॥ उत्थितामेदिनींभित्त्वाक्षेत्रे हलमुखक्षते ॥ पद्मरेणुनिभैःकीर्णाशुभैःकेदारपांसुभिः ॥ १६ ॥ विक्रांतस्यार्यशीलस्यसंयुगेष्वनिवर्तिनः ॥ स्नुषादशरथस्यैषाज्येष्ठाराज्ञोयशस्विनी ॥ १७ ॥ धर्मज्ञस्यकृतज्ञस्यरामस्यविदितात्मनः ॥ इयंसादयिताभार्याराक्षसीवशमागता ॥ १८ ॥ सर्वान्भोगान्परित्यज्यभर्तृस्नेहबलात्कृता ॥ अचिंतयित्वाकष्टानिप्रविष्टानिर्जनंवनम् ॥१९॥ संतुष्टाफलमूलेनभर्तृशुश्रूषणापरा ॥ यापरांभजतेप्रीतिंवनेऽपिभवनेयथा ॥ २० ॥ सेयंकनकवर्णांगीनित्यंसुस्मितभाषिणी ॥ सहतेयातनामेतामनर्थानामभागिनी ॥ २१ ॥ इमांतुशीलसंपन्नांद्रष्टुमिच्छतिराघवः॥रावणेनप्रमथितांप्रपामिवपिपासितः२२॥अस्यानूनंपुनर्लाभाद्राघवःप्रीतिमेष्यति॥राजाराज्यपरिभ्रष्टःपुनःप्राप्येवमेदिनीम् २३॥

कृतज्ञ, आत्मज्ञ, श्रीरामचन्द्रजीकी प्यारीभार्या अब राक्षसियोंके वशमें पडीहैं ॥१८॥ यह अपनेस्वामीके स्नेहमें बँधकर सर्व भोगोंको त्याग, किसीकष्टेक ऊपर दृष्टि न देकर निर्जनवनमें चली आई ॥ १९ ॥ औरअपने स्वामीकी सेवाकरती हुईकंद मूल फलकेही भोजनसे सन्तुष्ट रहगृहके समान वनमेंभी अतुल प्रीति प्राप्त करती हुई ॥ २० ॥ जो कभी किसी आपदामें नहीं पडी, जो सदा हँसमुखसेकथा वार्त्ता कहती, यह वही सुवर्णवाली अब अति कठिन पीडा भोग कर रही हैं ॥२१॥ यद्यपि सुशीला सीताजी रावणकरके अतिशय पीडितहो, प्यासेआदमि योंसेमर्दितकी हुई पौशालाके समान श्रीहीन होगईहैंतथापि श्रीरामचन्द्रजी इनको देखनेके लिये बहुतही अभिलाषा किये हुए हैं॥२२॥ नष्ट राज्यको प्राप्त करकेराजाजिस प्रकारसेआनंदित होताहै, उसहीप्रकार इनको फिरपाय करके

श्रीरामचन्द्रजी निश्चय अतिशय प्रसन्नहोंगे ॥२३॥ यह भी सब प्रकारके भोगोंसेऔर बन्धुबान्धवोंसे रहित होकर, श्रीरामचन्द्रजीके मिलनेकी वासनासे अपनी देहको धारण किये हुए हैं ॥२४॥ इन राक्षसियोंको औरइनसमस्त फलवृक्षों कोनिश्चयही जानकी कुछ भी नहीं देखती, यहतोएकमनसे केवलश्रीरामचन्द्रजी काहीध्यान करती है॥२५॥स्त्रियोंके लिये स्वामीही गहनेसे बढ़करसुन्दरताका उपजानेवालाहै, इसीकारणसे श्रीरामचन्द्रजीके विरहमें सीताजी रूपवती होकरभी शोभायमाननहीं होती ॥२६॥ प्रभुश्रीरामचन्द्रजी जोइनके विरह में शोकसे व्याकुल न होकर प्राण धारण करते हैं, इससे तो वह निश्चयही अति कठिनकार्य कररहे हैं॥२७॥ यह वही कृष्णकेशवाली कमल दल नेत्रा सुख भोगनेकेयोग्य होकर भी जो भोग कर रही हैं, इससे हमारे मनको भी बहुत दुःख हो रहाहै

कामभोगैः परित्यक्ताहीनाबंधुजनेनच ॥ धारयत्यात्मनोदेहंतत्समागमकांक्षिणी ॥२४॥ नैषापश्यतिराक्षस्योनेमान्पुष्पफलद्रुमान्॥ एकस्थहृदयानूनंराममेवानुपश्यति ॥ २५ ॥ भर्तानामपरंनार्याःशोभनंभूषणादपि ॥ एषाहिरहितातेनशोभनार्हानशोभते ॥२६॥ दुष्करंकुरुतेरामोहिनोयदनयाप्रभुः ॥ धारयत्यात्मनोदेहनदुःखेनावसीदति ॥ २७ ॥ इमामसितकेशांतांशतपत्रनिभेक्षणाम् ॥ सुखार्हांदुःखितांज्ञात्वाममापिव्यथितंमनः ॥२८॥ क्षितिक्षमापुष्करसन्निभेक्षणायारक्षिताराघवलक्ष्मणाभ्याम् ॥ साराक्षसीभिर्विकृतेक्षणाभिःसंरक्षतेसंप्रतिवृक्षमूले ॥२९॥ हिमहतनलिनीवनष्टशोभाव्यसनपरंपरयानिपीडचमाना ॥ सहचररहितेवचक्रवाकीजनकसुताकृपणांदशांप्रपन्ना॥३०॥अस्याहिपुष्पावनताग्रशाखाःशोकंदृढंवैजनयंत्यशोकाः ॥ हिमव्यपायेनचशीतरश्मिरभ्युत्थितोनैकसहस्ररश्मिः ॥ ३१ ॥ इत्येवमर्थंकपिरन्ववेक्ष्यसीतेयमित्येवतुजातबुद्धिः ॥ संश्रित्यतस्मिन्निषसादवृक्षेबलीहरीणामृषभस्तरस्वी ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥ ततःकुमुदखंडाभोनिर्मलंनिर्मलोदयः ॥ प्रजगामनभश्चंद्रोहंसोनीलमिवोदकम् ॥ १ ॥

॥ २८ ॥ पृथ्वी के समान धीरज युक्त सीताजीकी रक्षा जो रामलक्ष्मण करतेथे आजउनकी रक्षा विकटाकारवाली राक्षसियें वृक्षके नीचे बैठी हुई कररहीहैं ॥२९॥ बार २ दुःखोंसे पीडित होनेपर पालेकीमारी हुईकमिलनीकेसमान सीताजीकी सुन्दरताई नष्टहोगईहै । जनककुमारी सीताजी प्यारे चक्रवाकसे अलग हुई चक्रवाकीके समान शोचनीय दशाकोप्राप्त हुईहैं ॥३०॥ फूलोंके भारसेझुकीहुई अशोकके आगेकी शाखायें जानकीजीका शोक और भी बढा रही हैं; यह वसन्तकालके समान हजारों किरणोंको फैलायेपाला न पडनेसे अति प्रकाशितही चन्द्रमाभी इनके शोकको बढायही रहाहै॥ ३१॥ बलशालीवानर श्रेष्ठवेगवान् हनुमानूजी इन सब बातोंका शोच विचार करते हुए, यह सीताजी हैं ऐसा निश्चय कर इसी वृक्षके ऊपर संभल सँभलाय कर बैठ गये ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० सुन्दरकांडे भाषायां षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥ इसके पीछे प्रकाशित; कुमुदशोभित; शशांक (चन्द्रमा) हंस जिस प्रकार जलके

ऊपर प्रकाशित होताहै वैसेही निर्मलआकाशमें और ऊंचे चढकर प्रकाशित हुआ॥१॥ विशदप्रभाशाली निशापति (चन्द्रमा) सीताजीके दर्शनमेंमानों सहाय ताका कार्यकरतेही हुएसे हनुमानजीके ऊपर शीतल किरणे छोडने लगा॥२॥ उस समय हनुमानजीने देखाकिबडे बोझसे लदीहुई नाव जैसे जलमें डूबजातीहै; पूर्णचन्द्रवदना सीताजी भी; वैसेही शोकभारसे पीडित हो मानो जलमें डूब रही हैं ॥३॥ जानकीजीको देखते२पवनकुमार हनुमानजीने दूरबैठी हुई घोर दशन वाली राक्षसियोंको देखा ॥ ४ ॥ उनमें किसी२के एकही कान था किसीके एकही आँख थी; किसीके कान बहुतही बडेथे; किसीके कान बिलकुल थेहीनहीं; किसीके कान खडेथे; किसीकी नाक माथेमें लगी हुईथी ॥५॥ किसीकी देहमेंऊपरका भागअति बडा और मोटाथा किसीकी गर्दनअति पतली और लंबीथी किसीके केश मुंडे हुए थे; किसीके केशथे हीनहीं; और किसीके शरीरमें इतने रुवेंथेकि देखनेसे कम्बलसा लिपटा हुआ जान पडताथा ॥६॥ किसीके कान

साचिव्यमिवकुर्वन्सप्रभयानिर्मलप्रभः ॥ चन्द्रमारश्मिभिःशीतैःसिषेवेपवनात्मजम् ॥२॥सददर्शततःसीतांपूर्णचंद्रनिभाननाम् ॥शोकभारैरिव न्यस्तांभारैर्नावमिवांभसि ॥ ३ ॥ दिदृक्षमाणोवैदेहींहनूमान्मारुतात्मजः ॥ सददर्शाविदूरस्थाराक्षसीर्घोरदर्शनाः ॥ ४ ॥ एकाक्षीमेककर्णां चकर्णप्रावरणांतथा ॥ अकर्णांशंकुकर्णांचमस्तकोच्छ्वासनासिकाम् ॥५॥ अतिकायोत्तमांगींचतनुदीर्घशिरोधराम् ॥ ध्वस्तकेशींतथाकेशींके शकंबालधारिणी ॥ ६ ॥ लंबकर्णललाटांचलंबोदरपयोधराम् ॥ लंबोष्ठींचिबुकोष्ठींचलंबास्यांलंबजानुकाम् ॥ ७ ॥ ह्रस्वांदीर्घांचकुब्जां चविकटांवामनांतथा ॥ करालांभग्नवक्त्रांचपिंगाक्षींविकृताननाम् ॥ ८ ॥ विकृताः पिंगलाः कालीःक्रोधनाःकलहप्रियाः ॥ कालायसमहा शूलकूटमुद्गरधारिणीः ॥ ९ ॥वराहमृगशार्दूलमहिषाजशिवामुखीः ॥ गजोष्ट्रहयपादाश्चनिखातशिरसोऽपराः ॥ १० ॥

लम्बेथे; किसीकामाथा लम्बाथा, किसीका उदरलंबाथा, किसीकी छातियें लंबी थीं;किसीके अधर लम्बेथेऔर किसीकी ठोडीलम्बीथी किसी२का मुखलम्बा और किसी२की जांघें अति बडी थीं ॥७॥ कोई बहुत छोटी, कोई बहुत बडी कोईकुबडी; और कोईविकट; कोई बौनी; किसीकारंग अति भयंकर काला, किसीका मुख टूटा; किसीकीपीली आंखें; किसीका मुख बिकराल ॥८॥ कोई विरूपाकारवाली, कोई पीले वर्णवाली; कोई काले वर्णवाली; क्रोधितस्वभाव; कोई क्लेशप्रिया;व कोई लोहके महशूल;कूट और मुद्गरधारण किये हुए थीं॥९॥किसीका मुखसुअर, किसीका मृग; किसीका शार्दूल; किसीका महिष(भैंसा) किसीका अजगरऔर किसीकास्यारके समान मुख था।किसीके पांव ऊंटके समान किसीके गजके और किसी२के घोडेके समानथे औरकिसी२का शिर माथेमें

घुसा हुआ था॥१०॥ कोईएक हाथवाली और कोई एकही चरणवालीथी; किसीकेकान गधेके;किसीके घोडेके, किसीकेगायके किसीके हाथीकेऔर किसीके कानसिंहके कानके समानथे ॥११॥ किसीकी नाक बहुतबडी; किसीकी नाक टेढीऔर किसी २कीनाकथीही नहीं किसीकी नाकहाथीके शुण्डकेसमान और किसीके माथेमें दो दो नाकें थीं ॥१२॥ किसी२के पैर हाथीके पैरके समानथे; किसीके पाँव बहुतही बडेथे; किसीके गोपदकेतुल्यथे; किसीके चरणोंमें चूडेके समान बालोंके गुच्छेथे, किसीकी गर्दनबडी; और किसीका मस्तक बहुतहीबडा था; किसीके कुचकिसीकाउदर॥१३॥किसीका वदन और किसीके नेत्र स्वभावसे अलग बहुतहीबडेथे; किसीकी जीभऔर किसीकाबदन बहुतही बडाथा कोई अजामुखी, कोईगजमुखी; कोई गोमुखी; कोई शूकरमुखी;॥१४॥ कोई घुडमुखी और कोईखरमुखी,थी.कोई राक्षसीका आकार देखनेमें अतिभयंकरथाकोई क्रोधित स्वभाव वाली और कलहप्रिया थी किसी राक्षसीकेहाथमें शूलथाऔर

एकहस्तैकपादाश्चखरकर्ण्यश्वकर्णिकाः ॥ गोकर्णीहस्तिकर्णीश्चहरिकर्णीस्तथापराः ॥११॥अतिनासाश्चकाश्चित्तिर्यक्च्छ्वासाअनासिकाः गजसन्निभनासाश्चललाटोच्छ्वासनासिकाः ॥ १२ ॥ हस्तिपादामहापादागोपादाःपादचूलिकाः ॥ अतिमात्रशिरोग्रीवाअतिमात्रकुचोदरीः ॥१३॥ अतिमात्रास्यनेत्राश्चदीर्घजिह्वाननास्तथा ॥ अजामुखीहस्तिमुखीगोमुखीःसूकरीमुखीः ॥१४॥ हयोष्ट्रखरवक्त्राश्चराक्षसीर्घोरदर्शनाः ॥ शूलमुद्गरहस्ताश्चक्रोधनाःकलहप्रिया ः॥ १५ ॥ करालाधूम्रकेशिन्योराक्षसीर्विकृताननाः ॥ पिबंतिसततंपानंसुरामांससदाप्रियाः ॥ १६ ॥ मांसशोणितदिग्धांगीर्मांसशोणितभोजनाः ॥ तादर्दशकपिश्रेष्ठोरोमहर्षणदर्शनाः ॥ १७ ॥ स्कंधवंतमुपासीनाःपरिवार्यवनस्पतिम् ॥ तस्याधस्ताच्चतांदेवींराजपुत्रीमनिंदिताम् ॥ १८ ॥ लक्षयामासलक्ष्मीवान्हनूमाञ्जनकात्मजाम् ॥ निष्प्रभांशोकसंतप्तांमलसंकुलमूर्धजाम्॥१९॥ क्षीणपुण्यांच्युतांभूमौतारांनिपतितामिव ॥ चारित्रव्यपदेशाढ्यांभर्तृदर्शनदुर्गताम् ॥ २० ॥

कोई मुद्गर धारण कियेहुए थी ॥१५॥ किसी बिकट मुखवाली और भयंकर राक्षसीके बालधूमिलवर्णकेथे । वहसबही बराबर मदिरा पिया करती, औरसुरा व मांसको सदाही बहुत अच्छा समझती थीं॥१६॥ सबकेहीशरीरोंमें मांस और रुधिरलगा हुआथा क्योंकिवह बराबरमांस और रुधिरकाही आहारकरतीथीं। वानरश्रेष्ठ हनुमानजीनेइस प्रकारकी घोरदर्शनवाली राक्षसियें देखीं जिनके दर्शनसे रुयेंखडे होजातेथे ॥१७॥ यह सबउस वृक्षको सब ओरसे घेरेखडीं थींकि, जिसके ऊपर हनुमानजीविराज रहेथे, और उसी वृक्षके नीचे आनिंदिता जानकी जी बैठीथीं कि जिनकी रखवाली यहसब राक्षसियें करतीथीं॥१८॥ श्रीमानहनुमानजीने यहां पर सर्वांगसुन्दरी देवी जानकीजीको देखलिया, वह प्रभाहीनशोकसे दुर्बल थीं और उनके केशोंमें मैल छाय रहा था ॥ १९॥ मानों पुण्यक्षय

होनेसे तारा भूमिपर गिरा है वहपतिव्रता कहकर विख्यात हैं, परन्तुइस समय इनको स्वामीका दर्शन दुर्लभ हुआ है॥२०॥वह श्रेष्ठगहने कुछभीनहीं पहररही थीं, इस समयतोकेवल पतिका प्रेमही इनका इकला गहना था, राक्षसपतिरावणने उनकोरोक रक्खाथा बंधुजनभी कोई पास नहीं॥२१॥मानों अपने झुण्डसे बँधी हुई हथिनीके ऊपर सिंहने झपाटा मारा है। अथवा मानोवर्षाकेअन्तमें चन्द्रमाकी रेखा शरदृऋतुकेबादरसे ढक रही है॥२२॥स्वामीके विना स्पर्श किये उनकी सुन्दरताई वहुतदिनोंसे जिसमें बजानेवालेका हाथ न लगे उस विना बजाई हुई वीणाके समानहीन होगई हैं। वहसदाही स्वामीकाहित चाहनेवाली राक्षसियोंके वशमें पडनेके अयोग्य परन्तु उन्हींके वशमें पडीहैं ॥२३॥ अशोकवनमें वह जानकीजी शोकके समुद्रमें डूबकर मंगल ग्रहसे ग्रसी हुई रोहिणीके समान इनराक्षसियोंसे घेरी हुई हैं ॥ २४ ॥ हनुमानजी इस अशोकवनमें उनको पुष्पहीन वेलके समान देखते हुए; सब अंगोंमें मैल लगा हुआ, और अंगोंमें भूषण न पहरनेसे

भूषणैरुत्तमैर्हीनांभर्तृवात्सल्यभूषिताम् ॥ राक्षसाधिपसंरुद्धांबंधुभिश्चविनाकृताम् ॥ २१ ॥ वियूथांसिंहसंरुद्धांबद्धांगजवधूमिव ॥ चंद्ररेखांपयोदांतेशारदाभ्रैरिवावृताम् ॥२२॥ क्लिष्टरूपामसंस्पर्शादयुक्तामिववल्लकीम् ॥ सतांभर्तृहितेयुक्तामयुक्तांरक्षसांवशे ॥ २३ ॥ अशोकवनिकामध्येशोकसागरमाप्लुताम् ॥ ताभिःपरिवृतांतत्रसग्रहामिवरोहिणीम् ॥ २४ ॥ ददर्शहनुमांस्तत्रलतामकुसुमामिव ॥ सामलेनचदिग्धांगीवपुषाचाप्यलंकृता ॥ मृणालीपंकदिग्धेवविभातिचनभातिच ॥ २५ ॥ मलिनेनतुवस्त्रेणपरिक्लिष्टेनभामिनीम् ॥ संवृतांमृगसावाक्षींददर्शहनुमान्कपिः ॥२६॥ तांदेवींदीनवदनामदीनाभर्तृतेजसा ॥ रक्षितांस्वेनशालेनसीतामसितलोचनाम् ॥ २७ ॥ तांदृष्ट्वाहनुमान्सीतांमृगशावनिभेक्षणाम् ॥ मृगकन्यामिवत्रस्तांवीक्षमाणांसमंततः ॥२८॥ दहंतीमिवनिःश्वासैर्वृक्षान्पल्लवधारिणः ॥ संघातमिवशोकानांदुःखस्योर्मिमिवोत्थिताम् ॥ २९ ॥ तांक्षामांसुविभक्तांगींविनाभरणशोभिनीम् ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेमारुतःप्रेक्ष्यमैथिलीम् ॥ ३० ॥

वह कीचडमें सनी सुई नलिनीके समान प्रकाशित होकर भी नहीं प्रकाशती ॥२५॥ हनुमानजीने देखाकि, वह मृगनयनी जान कीजी एक जीर्ण और मलिन वस्त्रसेही अपने सब अंगोंको ढांपे हुएहैं ॥२६ ॥ इनदेवीजीका वदन तेजसे हीन होगया। परन्तु अपने पतिके पराक्रमको विचारकर उनकेहृदयका तेज नष्टनहीं हुआ मृगके बच्चेके समान नेत्रोंवालीजानकीजी केवल अपनेभलेस्वभावकेगुणसे अपनी रक्षाकर रहीहैं ॥२७॥ तिन जानकीजीको हनुमानजीने मृगछौनाकेनेत्रोंके समान नेत्रोंवाली देखा, जोकि त्रासित हुई हरिणीके समान चारोंओरको देख रही थीं ॥ २८ ॥ वह मानो अपने गरम श्वासोंसे फले फूले वृक्षोंको भस्मही किये देती थी, मानो वह साक्षात् शोककी राशियों, मानों वह दुःखकी तरंगोंसे शोकके समुद्रमें बहरही थीं ॥ २९ ॥ उन क्षीण अंगवाली जानकीजीके

सब अंग ठीक प्रमाणके अनुसार गठनवालेथे;वह विना अलंकारोंके भी शोभायमान होरही हैं,हनुमानजी ऐसी जानकीजीको देखकर अतुलानंद प्राप्त करते हुए ॥ ३० ॥ उन श्रेष्ठ नेत्रवाली जानकीजीको देखकर हनुमान्जीके दोनों नेत्रोंसे टपटप आनंदके आँसू गिरनेलगे, वह उसीस्थानसे श्रीरामचन्द्रजीकेलिये उनके चरणोंमें नमस्कार करते हुए ॥ ३१ ॥ श्रीरामचन्द्रजकिो औरलक्ष्मणजीको भीनमस्कारकरके वीर्यवान हनुमानजी सीताजीके दर्शनसे उत्पन्न आनंद में मग्न होकर उसी वृक्षके पत्तोंमें छिपकर बैठे रहे ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां सप्तदशः सर्गः ॥ १७ ॥ उसके पीछे फूले हुए वृक्षोंके श्रेणीसे शोभायमान वह वन देख सीताजीका भलीभाँति दर्शन करनेकी अभिलाषासे अवसर खोजते २ हनुमान्जीने लगभग वह रात्रि बिताही दी ॥ १ ॥ तब हनुमानजी दो मुहूर्त रात्रि रहे; षडंगसहितवेदके जाननेवालेश्रेष्ठ अग्निहोत्र करनेवाले ब्रह्मराक्षसोंकी वेदध्वनि श्रवण करने लगे

हर्षजानिचसोऽश्रूणितांदृष्ट्वामदिरेक्षणाम् ॥ मुमोचहनुमांस्तत्रनमश्चक्रेचराघवम् ॥३१॥ नमस्कृत्वाथरामायलक्ष्मणायचवीर्यवान् ॥सीतादर्शनसंहृष्टोहनुमान्संवृतोऽभवत्॥३२॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०सुंदरकांडेसप्तदशः सर्गः॥१७॥तथाविप्रेक्षमाणस्य वनंपुष्पितपादपम् ॥ विचिन्वतश्चवैदेहींकिंचिच्छेषानिशाभवत् ॥ १ ॥ षडंगवेदविदुषांक्रतुप्रवरयाजिनाम् ॥ शुश्रावब्रह्मघोषान्सविरात्रेब्रह्मरक्षसाम् ॥२॥ अथमंगलवादित्रैःशब्दैःश्रोत्रमनोहरैः ॥ प्राबोध्यतमहाबाहुर्दशग्रीवोमहाबलः ॥३॥ विबुध्यतुमहाभागोराक्षसेंद्रःप्रतापवान् ॥ स्त्रस्तमाल्यांबरधरोवैदेहीमन्वचिंतयत् ॥ ४ ॥ भृशंनियुक्तस्तस्यांचमदनेनमदोत्कटः ॥ नतुतंराक्षसःकामंशशाकात्मनिगूहितुम् ॥ ५ ॥ ससर्वाभरणैर्युक्तोबिभ्रच्छ्रियमनुत्तमाम् ॥ तांनगैर्विविधैर्जुष्टांसर्वपुष्पफलोपगैः ॥६॥ वृतांपुष्करिणीभिश्चनानापुष्पोपशोभिताम् ॥ सदामत्तैश्चविहगैर्विचित्रांपरमाद्भुतैः ॥ ७ ॥ ईहामृगैश्चविविधैर्वृतांदृष्टिमनोहरैः ॥ वीथीःसंप्रेक्षमाणश्चमणिकांचनतोरणाम् ॥ ८ ॥

॥ २ ॥ मंगलके बाजे बजने लगे । कानोंको सुख देनेवाले इन बाजोंके मनोहर शब्दसे महाबलवान् महाबाहु दशानन रावण जागा ॥ ३ ॥ वह महाप्रतापवान् महाभाग रावण जागतेहीनई माला व नये वस्त्र धारणकर जानकीजीका ध्यानकरने लगा ॥ ४ ॥ इस मतवाले राक्षसराज रावणने कामवेगके वश हो अपना चित्त सीताजीमें ही लगाय रक्खा था । इस लिये इस समयवह कामकेवेग रोकनेकोसमर्थ नहीं हुआ ॥५॥ इससेवह रावण सबवस्त्र भूषणप्रहर अपूर्णश्री धारणकरके सब ऋतुओंके पुष्प, फलसमन्वित॥६॥अनेक जातिकी शाखाओंसे शोभायमान और छोटी२पुष्करणियोंसेशोभित अनेक भाँतिके पुष्पोंसे शोभायुक्त सदा मदवाले पक्षिगणोंसे विचित्र॥७॥ देखनेमेंअति मनोहर सुवर्ण चांदीआदिके खेलवाले मृगोंसे शोभायमान अशोक वाटिकाकीवीथियें(गलियें)देखकर दशा

नन, मणि और सुवर्णके तोरणोंसे शोभित ॥ ८ ॥ अनेक प्रकारके मृगोंसे युक्त, गिले हुए फलोंसे व्याप्त घने वृक्षोंसे पूर्ण, उस अशोक काननमें प्रवेश करता हुआ ॥ ९ ॥ जैसे देवता गन्धर्वोंकी स्त्री इन्द्रके पीछे चलती हैं इस प्रकार सैकडों स्त्रीरावणके साथ२पीछे २ चलीं ॥१०॥ किसी२कामिनीके हाथमें सुवर्ण मय दीपक, किसी२के हाथमें चामर व्यजनऔर किसी २ के हाथमें ताल आदिके पंखे थे ॥११॥ कोई २ जलसेभरी हुई सुवर्णकी पिचकारियेंग्रहण कर आगे २ छिडकाव करती चलीं, कोई २ उत्तम बिछौने बिछा हुआ सोनेकसिंहासन ले पीछे चलीं ॥१२॥ कोई २ चतुर स्त्री दहने हाथमें मदिरासे पूर्ण उज्ज्वल रत्नमय कलशी लिये जाती थीं ॥१३॥ कोई राज हंसकेसमान पूर्णचन्द्रमाके तुल्य प्रभाववाला श्वेतवर्ण सुवर्ण दण्डयुक्त क्षत्रग्रहण करके पीछे २

नानामृगगणाकीर्णांफलैःप्रपतितेर्वृताम्॥अशोकवनिकामेवप्राविशत्संततद्रुमाम् ॥९॥अंगनाःशतमात्रंतुतंव्रजंतमनुव्रजन्॥ महेंद्रमिवपौलस्त्यं देवगंधर्वयोषितः ॥ १० ॥ दीपिकाःकांचनीःकाश्चिज्जगृहुस्तत्रयोषितः ॥ वालव्यजनहस्ताश्चतालवृंतानिचापराः ॥ ११ ॥ कांचनैश्चैवभृंगारैर्जह्रुःसलिलमग्रतः॥मंडलाग्राबृसीश्चैवगृह्यान्याःपृष्ठतोययुः ॥१२॥ काचिद्रत्नमयींपात्रींपूर्णांपानस्यभ्राजतीम्॥ दक्षिणादक्षिणेनैवतदांजग्राह पाणिना ॥१३॥ राजहंसप्रतीकाशंछत्रंपूर्णशशिप्रभम् ॥ सौवर्णदंडमपरागृहीत्वापृष्ठतोययौ॥१४॥निद्रामदपरीताक्ष्योरावणस्योत्तमस्त्रियः ॥ अनुजग्मुःपतिंवीरंघनंविद्युल्लताइव ॥१५॥ व्याविद्धहारकेयूराःसमामृदितवर्णकाः ॥ समागलितकेशांताःसस्वेदवदनास्तथा ॥ १६ ॥ घूर्णत्योमदशेषेणनिद्रयाचशुभाननाः ॥ स्वेदक्लिष्टांगकुसुमाःसमाल्याकुलमूर्धजाः॥१७॥प्रयांतंनैर्ऋतपतिंनार्योमदिरलोचनाः॥बहुमानाच्चकामाच्च प्रियभार्यास्तमन्वयुः ॥ १८ ॥ सचकामपराधीनः पतिस्तासांमहाबलः ॥ सीतासक्तमनामंदोमदांचितगतिर्बभौ ॥ १९ ॥

गमन करने लगीं॥ १४ ॥ इस प्रकार रावण की उत्तम२स्त्रियें निद्रासे औरमादकतासे अलसाते नेत्रवालीहो, अपने पति वीरवर रावणके पीछे २ चलीं; जैसे मेघोंके पीछे बिजली की श्रेणी चमकती जाती है ॥ १५ ॥ उन स्त्रियोंके हारऔर बाजू अपने २ स्थानसे कुछ२खसकसे गये थे, और शरीरके लेपनसे भीजेथे,इन स्त्रियोंकेबाल छूटेऔर मुखोंपर पसीनोंकी बूँदेंझलक रहीथीं ॥१६॥नसेकेउतरनेऔर निद्राके हेतुइनसब सुन्दरमुखवालीस्त्रियोंके शरीर घूमते, और फूलमालाओंके साथउनके बालकुछ गुथेसे गयेथे, शरीरमें पसीनाथा ॥१७॥ इसप्रकारसे मदमाते नैनवाली सुवदनी सबरावणकी प्रियपत्नियें मानकेमारे तथा अपने२ कामके मारे गमन करते हुए अपने राक्षसपतिके पीछे २ चलीं आई थीं ॥१८॥ उनसब स्त्रियोंका वह स्वामी महाबलवान् पापमति निशाचर रावण

कामपराधीनहुआ सीताजीके प्रति आसक्त चित्तहो मन्द२डगमगी चालसे गमन करने लगा॥१९॥ इसके पीछेपवनकुमार हनुमानजीनेउन मनोरमा स्त्रियोंकी क्षुद्रघंटिकाऔर नूपुरोंकाशब्द सुना॥२०॥महाकपि हनुमानूजीने यहभी देखाकिवह अपूर्व अचिन्तनीय असाधारण कर्मकारी रावणद्वारपर आया॥२१॥सामने राक्षसियोंके गन्धतैलपूर्ण दीपक धारण करकेआगे २ चलनेसे रावणका सब शरीसाफ२ दिखलाई देता था ॥ २२ ॥ काम, गर्व और मत्तता रावणमें विराज रहीथी, उसके बडे२विशाल नेत्र आलसी और लालहोरहेथे; इससमय रावण ऐसाज्ञातहोता थामानो साक्षात् कामदेव धनुषका त्याग किये हुए सामनेको चला आताहै ॥२३॥ रावण मनोहर मुक्तासमूह समन्वित; मथे हुयेदूधके झागोंके समानअति उजले निर्मल धुएहुए श्रेष्ठ वसन और पुष्पोंकी माला अंगोंसे खैंचकर यथास्थानमें पहर रहाथा ॥२४॥ रावण जितना २ निकट आने लगा उतनाही हनुमानूजी उसविटपके मध्यमें शत२पुष्प और पत्तोंके बीचमें छिपकर इस बा

ततःकांचीनिनादंचनूपुराणांचनिःस्वनम् ॥ शुश्रावपरमस्त्रीणांकपिर्मारुतनंदनः ॥२०॥ तंचाप्रतिमकर्माणंचित्यबलपौरुषम्॥ द्वारदेशमनुप्राप्तंददर्शहनुमान्कपिः ॥ २१ ॥ दीपिकाभिरनेकाभिःसमंतादवभासितम् ॥ गंधतैलावसिक्ताभिर्ध्रियमाणाभिरग्रतः ॥२२॥ कामदर्पमदैर्युक्तं जिह्मताम्रायतेक्षणम्॥समक्षमिवकंदर्पमपविद्धशरासनम् ॥२३॥ मथितामृतफेनाभमरजोवस्त्रमुत्तमम्॥सपुष्पमवकर्षंतंविमुक्तंसक्तमंगद॥२४॥ तंपत्रविटपेलीनःपत्रपुष्पशतावृतः ॥ समीपमुपसंक्रांतंविज्ञातुमुपचक्रमे ॥ २५॥ अवेक्षमाणस्तुतदाददर्शकपिकुंजरः ॥ रूपयौवनसंपन्नारावणस्यवरस्त्रियः ॥ २६ ॥ ताभिःपरिवृतोराजासुरूपाभिर्महायशाः ॥ तान्मृगद्विजसंघुष्टंप्रविष्टःप्रमदावनम् ॥२७॥ क्षीबोविचित्राभरणःशंकुकर्णोमहाबलः॥ तेनविश्रवसःपुत्रःसदृष्टोराक्षसाधिपः॥२८॥ वृतःपरमनारीभिस्ताराभिरिवचंद्रमाः॥ तंददर्शमहातेजास्तेजोवंतमहाकपिः॥२९॥ रावणोऽयंमहाबाहुरितिसंचिंत्यवानरः ॥ सोऽयमेवपुराशेतेपुरमध्येगृहोत्तमे ॥ अवप्लुतोमहातेजाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ ३० ॥

तकोभलीभाँति जाननेकी इच्छा करने लगे कि, यह निकट आयाहुआ कौनहै ?॥ २५ ॥ देखते २ वानरश्रेष्ठ हनुमानूजीने देखाकिराजा रावणकीजोमुख्य २ रूपयौवनसम्पन्न पटरानियें थीं ॥ २६॥ महायशस्वी राक्षसराज उन रूपवाली स्त्रियोंके घेरमें घिरकर मृगपक्षियोंके शब्दसे शब्दायमान उस अशोक वनमें पैठा ॥ २७ ॥मदमाता विचित्र वस्त्राभूषणधारी, महाबलवान् शंकुकर्ण नाम जो एक राक्षस वनकारखवाला था, केवल उसनेही प्रवेश करते हुए उस विश्रवाके पुत्र राक्षसराज रावणकोदेखा, और किसी पुरुषने नहीं ॥ २८ ॥ परमरूपवती स्त्रियोंसे घेरे हुए उस महातेजस्वी राक्षसराज रावणको तारागणोंसे युक्त चन्द्रमाके समान शोभित देखकर महाकपि हनुमानूजी ॥ २९ ॥ विचार करने लगे कि, हमने पहले श्रेष्ठ गृहकेमध्यमेंजिसको शयन करतेदेखाहै; यहवहीहै बस रावण

यही है । ऐसा स्थिर करकेमहातेजवान् पवनकुमार हनुमानूजी छलांग मारकर उस पेडकी अतिऊंची शखापरचढगये ॥ ३० ॥ यद्यपि बुद्धिमान् और सामर्थ्य युक्त हनुमानूजी अतितेजस्वी थेतथापि वह उस रावणकी तेजप्रभाको न सहनकर बहुत पत्तोंवाली पेडकी शाखामेंटिक कर छिप रहे ॥३१॥ रावण, श्यामके शवाली चारुनितम्बिनी, श्रेष्ठस्तनवाली, मृगनयनी जानकीका दर्शन करनेकी अभिलाषासे उनके सामनेको चला ❀ ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामष्टादशः सर्गः ॥१८ ॥ इसके पीछे निन्दारहित रूपवाली सर्वाङ्गसुन्दरी, राजकुमारी जानकीजी रूप यौवनसम्पन्न उत्तम भूषणोंसे विभूषित॥१॥राक्षसनाथ रावणको देखतेही वहसुन्दर मुखवाली कम्पायमानहोनेलगी, जैसे पवनके लगनेसे केला कांपताहै ॥ २॥

सतथाऽप्युग्रतेजास्सनिर्धूतस्तस्यतेजसा ॥ पत्रेगुह्यांतरेसक्तोमतिमान्संवृतोऽभवत् ॥३१॥ सतामसितकेशांतांसुश्रोणींसंहतस्तनीम्॥ दिदृक्षुर सितापांगीमुपावर्ततरावणः ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे अष्टादशः सर्गः ॥ १८ ॥ तस्मिन्नेवततःकालेराजपुत्रीत्वनिंदिता ॥ रूपयौवनसंपन्नंभूषणोत्तमभूषितम् ॥ १ ॥ ततोदृष्ट्वैववैदेहीरावणंराक्षसाधिपम्॥ प्रावेपतवरारोहाप्र वातेकदलीयथा ॥ २ ॥ ऊरुभ्यामुदरंछाद्यबाहुभ्यांचपयोधरौ॥ उपविष्टाविशालाक्षीरुदतीवरवर्णिनी ॥ ३ ॥ दशग्रीवस्तुवैदेहींरक्षितांराक्ष सीगणैः ॥ ददर्शदीनांदुःखार्तानावंसन्नामिवर्णवे ॥ ४ ॥ असंवृतायामासीनांधरण्यांसंशितव्रताम् ॥ छिन्नाप्रपतितांभूमौशाखामिववनस्पतेः ॥ ५ ॥ मलमंडनदिग्धांगींमंडनार्हाममंडनाम् ॥ मृणालीपंकदिग्धेवविभातिनविभातिच ॥ ६ ॥

बडे २ नेत्रवाली जानकीजी दोनों जांघोंसे पेट ढक, और करकमलसे पयोधरोंकोछिपाय बैठकर रोदन करने लगीं ॥ ३ ॥ रावणने वहां पहुँच कर देखा कि, राक्षसियोंसेरक्षित वैदेहीजी दुःखसे व्याकुल होकर समुद्रमें नौकाके समान दुःखसागरमें डूब रही हैं॥ ४ ॥ कठिन नियमोंको धारण करनेवाली जानकीजी बिना बिछी भूमिपर बैठी रहनेसे ऐसी लगती थीं मानों वृक्षकी शाखा टूटकर पृथिवीपर गिर पडी है ॥ ५ ॥ जानकीजीके अंगोंमें जो गहना पहरनेके स्थान थे वहसब मैलसे छाय रहे थे,वह सजनेके योग्य थीं;परन्तु इस समय कोई भी सजाव उनपर नहींथा इसलिये पंकमें सनीहुई मृणालके समान वह भली भाँति प्रकाशित नहीं

❀ अध्यात्मरामायणमेंयहांपर ऐसा लिखा है कि–जबरावण सोया था तब उसनेरामचन्द्रके पाससे सीताजीको खोजनेके लियेकोई वानर आया है, यह स्वप्नदेखाऔर वह जाग उठा और विचारनेलगा कि; यदि अब सीताजीकोछेडूंगा तो वह वानरजायकेरामचन्द्रको यहां लानेकी शीघ्रताकरेगा और रामचन्द्र यहां आयकर मुझकूं सपरिवार मारके राक्षसतासे मुक्त करेंगे, यह इच्छाकरके सीताके पास जायकर सताने लगा ॥

होती थीं ॥ ६ ॥मानो मनोरथके संकल्परूप अश्वोंको जोडकर विदितात्मा राजसिंह श्रीरामचन्द्रजीके समीप उन जानकीजीने यात्रा कीहै ॥ ७ ॥ श्रीरामचन्द्रजीमें प्राण लगायेहुए बहुत सूख गईहैं, अत्यंतरोदन करतीहैं, अपने प्रियजनोंके बिछुडनेसेएक मात्र ध्यानऔर शोकको आश्रय कियेहुएहैं शोकका पार नहीं देखती हैं ॥८॥ मंत्रादिकोंसे गतिछेके सर्पराज वधूके समानव्याकुल होरहीहैं मानो रोहिणी धूमकेतुके तापके संतापिता हुईहैं ॥९॥ श्रेष्ठ आचारऔर सत्स्वभाव सम्पन्न धर्मकुलमेंउत्पन्न होउस कुलके योग्यही विवाहके संस्कारसे संस्कारित हुईहैं परन्तु इस समय ऐसाबोध होताहै कि, मानो राक्षसादि दुष्टकुलमें उत्पन्न होउसके अनुरूप ही विवाहे जानेसेमलिन हो रही हैं ॥ १० ॥ जानकीजीके देखनेसेऐसा जानपडता मानो कोई बडीकीर्ति दुर्ज्जनोंसे दूषित हुई, श्रद्धा अपमानित हुई,

समीपंराजसिंहस्यरामस्यविदितात्मनः ॥ संकल्पहयसंयुक्तैर्यांतीमिवमनोरथैः ॥७॥ शुष्यंतींरुदतीमेकांध्यानशोकपरायणाम् ॥ दुःखस्यांतमपश्यंतींरामांराममनुव्रताम् ॥ ८ ॥ चेष्टमानायथाविष्टांपन्नगेंद्रवधूमिव ॥ धूप्यमानांग्रहेणेवरोहिणींधूमकेतुना ॥ ९ ॥ वृत्तशीलेकुलेजाता माचारवतिधार्मिके ॥ पुनःसंस्कारमापन्नांजातामिवचदुष्कुले ॥१०॥ (अभूतेनापवादेनकीर्तिंनिपतितामिव ॥ आम्नायानामयोगेनविद्यांप्रशिथिलामिव ॥ १ ॥) सन्नामिवमहाकीर्तिंश्रद्धामिवविमानिताम् ॥ प्रज्ञामिवपरिक्षीणामाशांप्रतिहतामिव ॥ ११ ॥ आयतीमिवविध्वस्तामाज्ञांप्रतिहतामिव ॥ दीप्तामिवदिशंकालेपूजामपहतामिव ॥१२॥ पौर्णमासीमिवनिशांतमोग्रस्तेंदुमंडलाम् ॥ पद्मिनीमिवविध्वस्तांहतशूरांचमूमिव॥१३॥प्रभामिवतमोध्वस्तामुपक्षीणामिवापगाम्॥वेदीमिवपरामृष्टांशांतामग्निशिखामिव॥१४॥उत्कृष्टपर्णकमलांवित्रासितविहंगमाम्॥ हस्तिहस्तपरामृष्टमाकुलामिवपद्मिनीम् ॥१५॥ पतिशोकातुरांशुष्कांनदींविस्रावितामिव ॥ परयामृजयाहीनांकृष्णपक्षेनिशामिव ॥ १६ ॥

बुद्धि क्षीणहुई, और आशामानो हत होगई है ॥११॥मानो देवताका स्थानविध्वंस होगया, मानोराजाकी आज्ञाहतहोगई, मानो उल्कादि उत्पातकालमें दिशायें प्रज्वलितहो गयींऔर पूजा मानो नष्ट हो गईहै॥१२॥मानो पूर्णमासीकाचंद्रमा राहुसेग्रसा गया, कमलिनी मलडालीगई, मानोसेनाका सरदारमारा गयाहै॥१३॥ मानो सूर्यभगवान्‌की प्रभा राहुसे अंधकार की गई, मानो नदीकी धाराकम हुई, मानो यज्ञवेदी चंडालादि नीचोंसे छुई गई, मानो अग्निकी शिखा बुझने पर हुई है ॥ १४ ॥ मानो हाथीने शुण्डके आघातसे पुष्करिणीको व्याकुल करकेजल पक्षियोंको त्रासित और कमल फूलोंकी पँखुडियोंको तोड डाला है ॥ १५ ॥जानकीजी पतिके शोकसे आतुर हो सूख गयी हैं । जैसे सोत बंद होनेपर नदी सूखजातीहै अंगोंके न धुलनेसे कृष्णपक्षकी रात्रिके समान मलिन

हो रही हैं ॥ १६ ॥सुन्दरांगी सुकुमारी और रत्नमय गृहमें बैठनेके योग्य सीताजी इस समय शोकसेसंतापित हो रही हैं मानो ताजी उखाडी हुई कमलकी डंडी धूपसे सूख रही है ॥१७॥मानो गजराजवधू पकडी और थंभमें बँधी हुई अपने यूथपतिके विरहसे शोकमेंव्याकुल होकर लंबे २ श्वासले रही है ॥ १८ ॥ अयत्नसे एक बडीवेणी पीठपरपडी हुईहै, वर्षाके आगममें नीलवर्णकी वनराजिसे जिसप्रकार पृथ्वीकीशोभा होतीहै;वैसेही जानकीजीकी शोभा इस वेणीसे हो रही है ॥१९॥ उपवास, शोक, संताप,चिंता और भयकेमारे महाक्षीण और दीन होरही हैं, जलमात्र आहार अर्थात्खानापीना छोड दिया है, तपही जिनके केवल एक अवलंबन है ॥ २० ॥ दुःखसेव्याकुल हो इष्ट देवताके समान हाथ जोडकर मानो रघुकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजीके निकट रावणके हार जानेकी प्रार्थना कर रही हैं ॥ २१ ॥ निद्रारहित सीताजीरोते२श्रेष्ठ पलकोंसे शोभित, अरुण प्रान्तयुक्त बडे श्वेत नेत्रोंसे इधर उधर दृष्टि डाल

सुकुमारींसुजातांगींरत्नगर्भगृहोचिताम् ॥ तप्यमानामिवोष्णेनमृणालीमचिरोद्धृताम् ॥ १७ ॥ गृहीतांलाडितांस्तंभेयूथपेनविनाकृताम् ॥ निःश्वसंतींसुदुःखार्तांगजराजवधूमिव ॥१८॥ एकयादीर्घयावेण्याशोभमानामयत्नतः॥नीलयानीरदापायेवनराज्यामहीमिव॥१९॥उपवासेन शोकेनध्यानेनचभयेनच ॥ परिक्षीणांकृशांदीनामल्पहारांतपोधनाम् ॥ २० ॥ आयाचमानांदुःखार्तांप्रांजलिंदेवतामिव ॥ भावेनरघुमुख्यस्यदशग्रीवपराभवम् ॥ २१ ॥ समीक्षमाणांरुदतीमनिंदितांसुपक्ष्मताम्रायतशुक्ललोचनाम्॥अनुव्रतांराममतीवमैथिलींप्रलोभयामासवधाय रावणः ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा० सुंदरकांडेएकोनविंशःसर्गः॥१९॥सतांपरिवृतांदीनांनिरानंदांतपस्विनीम्॥साकारैर्मधुरैर्वाक्यैन्यदर्शयतरावणः ॥१॥ मांदृष्ट्वानागनासोरुगूहमानास्तनोदरम् ॥ अदर्शनमिवात्मानंभयान्नेतुंत्वमिच्छसि॥२॥ कामयेत्वांविशालाक्षिबहुमन्यस्वमांप्रिये ॥ सर्वांगगुणसंपन्नेसर्वलोकमनोहरे ॥ ३ ॥

रही हैं, रावण ऐसी श्रीरामचन्द्रजीकी अनुव्रता जानकीजीको देखकर अपना वधकरानेके निमित्तही उनको लालच दिखाने लगा ॥ २२ ॥इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि सुन्दरकांडे भाषायामेकोनविंशः सर्गः ॥ १९ ॥ रावण इशारोंसे और मधुर वचनोंसे राक्षसियोंसे घेरी हुरी दीनभावापन्ना निरानंदा तपस्विनी सीताजीको अपना अर्थ समझाने लगा ॥ १ ॥ हे हाथीकी शुण्डकेसमान चढाव उतार जांघवाली ! जबकि, तुमने हमको देखते ही पयोधर और उदर दोनोंअंग छिपा लिये, तब इससे जाना जाता है कि, तुम डरके मारेही अपनेकोदिखानेकी चेष्टा नहीं करती हो॥२॥हे विशालाक्षि!हम तुम्हारी कामनाकरते हैं हे सर्वाङ्गगुणसम्पन्ने ! हे सर्वलोकमनोहरे ! हे प्रिये ! तुम हमको बहुत मानसेमानो ॥ ३ ॥

हे सीते ! इस स्थानमें कोई मनुष्य या कामरूपी राक्षस नहीं है,इसलिये हमसे जो तुमको भय हुआ है वह त्याग करो ॥४॥ हे भीरु ! निश्चय जान लेना राक्षसोंका धर्म ही यहहै कि, वहसदा परस्त्री गमनया बलसे मथकरपराई स्त्रीका हरण कियाकरते हैं ॥५॥ तथापि हे मैथिलि ! तुम्हारेअकाम होनेसे हम तुमको स्पर्श नहीं करसकते परन्तु काम यथाकाम हमारेशरीरमें फैलरहा है अर्थात् हमारी इच्छाभली भाँतितुम्हें देखनेकी है ॥६॥हे देवि !तुमहमसे भय मत करो।हे प्रिये ! हमारा विश्वास करो और यथार्थप्रेम हमसे करोइस प्रकारके शोकाकुल न होवो ॥७॥ एक वेणी धारणकिये बिना बिछायेपृथ्वीपर सोना, चिन्ता करना, मलिन वस्त्र पहरना, वृथा उपवास करनायह सबबातें तुमको उचित नहीं हैं ॥८॥ यह विचित्र माल्य, चन्दन और अगर विविधभाँतिके वसन

नेहकिंचन्मनुष्यावाराक्षसाः कामरूपिणः॥ व्यपसर्पतुतेसीतेभयंमत्तःसमुत्थितम् ॥४॥ स्वधर्मोरक्षसांभीरुसर्वदैवनसंशयः ॥ गमनंवापरस्त्रीणांहरणंसंप्रमथ्यवा ॥ ५ ॥ एवंचैवमकामांत्वांनचस्प्रक्ष्यामिमैथिलि॥कामंकामःशरीरेमेयथाकामंप्रवर्तताम् ॥ ६ ॥ देविनेहभयंकार्यंमयि विश्वसिहिप्रिये ॥ प्रणयस्वचतत्त्वेनमैवंभूःशोकलालसा ॥७ ॥ एकवेणीअधःशय्याध्यानमलिनमम्बरम् ॥ अस्थानेप्युपवासश्चनैतान्यौपयिकानिते ॥८॥ विचित्राणिचमाल्यानिचंदनान्यगुरूणिच ॥ विविधानिचवासांसिदिव्यान्याभरणानिच ॥९॥ महार्हाणिचपानानिशयनान्यासनानिच ॥गीतंनृत्यंचवाद्यंचलभमांप्राप्यमैथिलि॥१०॥स्त्रीरत्नमसिमैवंभूःकुरुगात्रेषुभूषणम् ॥ मांप्राप्यहिकथंवास्यास्त्वमनर्हासुविग्रहे॥११॥ इदंतेचारुसंजातयौवनंह्यतिवर्तते ॥ यदतीतंपुनर्नैतिस्रोतःस्रोतस्विनामिव ॥१२॥ त्वांकृत्वोपरतोमन्येरूपकर्तासविश्वकृत् ॥ नहिरूपोपमाह्यन्यातवास्तिशुभदर्शने ॥१३॥ त्वांसमासाद्यवैदेहिरूपयौवनशालिनीम् ॥ कःपुनर्नातिवर्तेतसाक्षादपिपितामहः ॥ १४ ॥

अनेक प्रकारके दिव्य आभरण बडे२मोलकी अनेक सवारियें ॥९॥पान करनेके योग्य बडे मोलकी चीजें, बहुतप्रकारके सोने उठने बैठनेके लिये आसनगाना नाच, बाजा यहांपर सब विद्यमान हैं हमको प्राप्त हो सबको तुम ग्रहणकरो ॥१०॥ तुम स्त्रियोंमें रत्न हो; इस लिये ऐसी अवस्थामें तुम मत रहो; अंगोंमें गहने पहनो, क्योंकि हमकोप्राप्त करकेतुम किस प्रकार बिना गहने पहनेहुए रहोगी ?॥११॥ तुम्हारी यह सुन्दर उमँगी हुई युवा अवस्था बीती जाती है,यह तरुणाई नदीके सोतेकेजलके समान है,कि जोएक बारजल बहगया वह फिर लौटकर नहीं आता॥१२॥ हेशुभदर्शने ! ऐसासमझ पडता है कि रूप रचनेवाले विधाताने तुमको बनायकर फिर अपने कार्यको छोड दिया है. क्योंकि और किसी स्त्रीमें भीतुम्हारे रूपकी उपमानहीं देखी जाती ॥ १३ ॥ हे वैदेही ! इस प्रकारकाकौन

मनुष्य है जोरूपयौवन शालिनी तुम्हें प्राप्त करे औरफिर उसकामन कुमार्ग मेंनजाय?औरकी क्या चलाई;ब्रह्माजी भी विपथगामी होजायँ॥१४॥हे चन्द्रानने ! निबिड नितम्बे!हम तुम्हारे जो जो अंग देखतेहैं वह हमारीआंखें उसी२ अंगमें बंध जाती हैं ॥१५॥हे मैथिली ! तुम हमारी भार्याबनो; हमारे अनेक२उत्तम स्त्रियें है; तुम उन सबमें मुख्य पटरानी बनो इस मोहको त्यागो ॥ १६ ॥हेभीरु ! हमने तीनों लोकोंको मथन करके जो रत्न हरण किये हैं, वह सब भी तुम्हारे और समस्त राज्यभी हम तुमको दान करतेहैं ॥ १७॥हे विलासिनी ! हम तुम्हारी प्रसन्नताके लिये अनेक नगर मालासे विभूषित यह समस्त भूमंडल जीतकर तुम्हारे पिता जनकजी को दे देंगे ॥१८॥ इस लोकमेंऐसा हमकिसीको नहींदेखते जो संग्राममें हमारेसन्मुख लडे. देखो!हमारा बल वीर्य युद्धसे उपमा

यद्यत्पश्यामितेगात्रंशीतांशुसदृशानने।।तस्मिंस्तस्मिन्पृथुश्रोणिचक्षुर्ममनिबध्यते।।१५।।भवमैथिलिभार्यामेमोहमेतंविसर्जय ॥ बह्वीनामुत्तम स्त्रीणामाहृतानामितस्ततः ॥ सर्वासामेवभद्रंतेममाग्रमहिषीभव ॥१६॥ लोकेभ्योयानिरत्नानिसंप्रमथ्याहृतानिमे ॥ तानितेभीरुसर्वाणिरा ज्यंचैवददामिते ॥ १७ ॥ विजित्यपृथिवींसर्वांनानानगरमालिनीम् ॥ जनकायप्रदास्यामितवहेतोर्विलासिनि ॥ १८ ॥ नेहपश्यामिलोके ऽन्यंयोमेप्रतिबलोभवेत् ॥ पश्यमेसुमहद्वीर्यमप्रतिद्वंद्वमाहवे।।१९।।असकृत्संयुगेभग्नामयाविमृदितध्वजाः।।अशक्ताःप्रत्यनीकेषुस्थातुंममसुरा सुराः ॥२०॥ इच्छमांक्रियतामद्यप्रतिकर्मतवोत्तमम् ॥ सुप्रभाण्यवसज्जंतांतवांगेभूषणानिहि ॥२१॥ साधुपश्यामितेरूपंसुयुक्तंप्रतिकर्मणा ॥ प्रतिकर्माभिसंयुक्तादाक्षिण्येनवरानने॥२२॥भुंक्ष्वभोगान्यथाकामंपिबभीरुरमस्वच ॥ यथेष्टंचप्रयच्छत्वंपृथिवींवाधनानिच ॥ २३ ॥ ललस्व मयिविस्रब्धाधृष्टमाज्ञापयस्वच ॥ मत्प्रसादाल्ललंत्याश्चललतांबांधवास्तव ॥ २४ ॥

रहितहो गयाहै ॥१९॥ रणमेंहमनेसुर असुरोंको वारम्वार पराजय कियाऔर उनकी ध्वजायें तोड डालीहैं; ऐसी अवस्थाको प्राप्त होकर उन लोगोंमें हमारेसामने युद्धमेंखडे रहनेकी सामर्थ्य नहींहै ॥ २० ॥ तुम हमारी अभिलाषा पूर्ण करो जिससेतुम्हारा शृङ्गार कराया जाय और सुन्दर चमकीले गहनोंसे तुम्हारे अंग सजाये जांय॥२१॥शृङ्गार करनेसे जो तुम्हारा रूपहोगा उसको हम प्रत्यक्षदेख रहे हैं हेसुन्दर वदने!हमारे ऊपर कृपा करके तुम शृङ्गार करके सजो ॥ २२॥ हे भीरु !इच्छानुसार विविध भांतिकीभोग करनेकी वस्तुयें तुम भोग करती रहकर बिहार करोपानकरो जितनी इच्छाहो उतनाधनयाभूमि किसीको दानकर दो ॥ २३॥हमारा विश्वास करके जो जोवस्तु चाहिये उनको हमसे माँगो, और ढिठाईके साथहमें आज्ञा करतीरहो । जो तुम अनुग्रह करकेहमसे अपनी वांछित

वस्तुयें चाहतीरहोगी तो तुम्हारे बन्धु वान्धवोंकी वांछाभी पूर्ण होगी ॥ २४ ॥ हे भद्रे ! यशस्विनी !तुम हमारी ऋद्धि और सम्पदाका दर्शन करो. हे शुभगे !
अब तुम चीर वल्कलधारी श्रीरामचन्द्रजीको लेकर क्या करोगी?॥२५॥ और इस प्रकार तो कोई उपाय नहीं कि,रामचन्द्रहमको जीतलें वह श्रीभ्रष्ट वनवासी
व्रताचारी और पृथ्वीपर शयनकरताहै और इसमेंभी सन्देह है कि, वह अबतक जीवितहै वा नहीं ॥२६॥हे जानकी ! बगलों की पांतिको आगे किये नील
मेघसे ढकी चन्द्रमाकी प्रभाकेसमान रामअब तुमको नहीं देख पावेगा॥२७॥ हिरण्यकशिपु जिस प्रकार इन्द्रके हाथमें गई हुई कीर्तिकोफिर प्राप्तकरनेमें समर्थ
नहीं हुआ, रामचन्द्र वैसेही हमारे हाथसे तुम्हारे उद्धार करनेमें समर्थ नहीं होगा ॥ २८ ॥ हे सुन्दरदांतवाली ! हेचारुहासिनी ! (सुन्दर हँसनेवाली) हे

ऋद्धिंममानुपश्यत्वंश्रियंभद्रेयशस्विनि ॥ किंकरिष्यसिरामेणसुभगेचीरवासिना॥२५॥निक्षिप्तविजयोरामोगतश्रीर्वनगोचरः॥व्रतीस्थंडिलशा
यीचशंकेजीवतिवानवा ॥२६॥ नहिवैदेहिरामत्वांद्रष्टुंवाप्युपलभ्यते॥ पुरोबलाकैरसितैर्मेघैर्ज्योत्स्नामिवावृताम्॥२७॥नचापिममहस्तात्त्वांप्रा
प्तुमर्हतिराघवः॥हिरण्यकशिपुःकीर्तिमिंद्रहस्तगतामिव ॥ २८ ॥ चारुस्मितेचारुदतिचारुनेत्रेविलासिनि॥मनोहरसिमेभीरुसुपर्णःपन्नगंयथा
॥२९॥क्लिष्टकौशेयवसनांतन्वीमप्यनलंकृताम् ॥ त्वांदृष्ट्वास्वेषुदारेषुरतिंनोपलभाम्यहम्॥३०॥अन्तःपुरनिवासिन्यःस्त्रियःसर्वगुणान्विताः॥
यावत्योममसर्वासामैश्वर्यंकुरुजानकि ॥ ३१ ॥ ममह्यासितकेशांतेत्रैलोक्यप्रवराःस्त्रियः ॥ तास्त्वांपरिचरिष्यंतिश्रियमप्सरसोयथा ॥३२॥
यानिवैश्रवणेसुभ्रुरत्नानिचधनानिच ॥ तानिलोकांश्चसुश्रोणिमयाभुंक्ष्वयथासुखम्॥ ३३ ॥

चारुलोचने ! (सुन्दर नेत्रवाली) हे विलासिनी!विनताके पुत्र गरुडजीजिस प्रकार सर्पोंके समूहको हरण कर लेते हैं,वैसेही तुमभी हमारेमनको हरण करतीहो
॥ २९ ॥ तुम केवल एक पुराना रेशमीन वस्त्रपहर रही हो दुर्बलभी होऔर तुम्हारे अंगोंमेंकोई गहनाभी नहींहै तथापि तुमको देखकर अपनी सुन्दर स्त्रियोंमें
प्रीति करनेको अब हमारी इच्छा नहींहोतीहै॥ ३० ॥ हमारे रनवासमें सर्व गुणकी खान जो स्त्रियेंहैं हे जानकी ! तुम उन सबके ऊपर अपनी प्रभुताई करो
॥ ३१ ॥ हे कृष्णकेशवाली!त्रिलोकी की सब सुन्दरस्त्रियां हमारे यहांहैं अप्सरायें जिसप्रकार लक्ष्मीजीकी सेवाकरती हैं वैसेही वहसबहमारी स्त्रियां तुम्हारी
सेवा करेंगी॥ ३२ ॥ हे सुभगे ! हे सुश्रोणि ! कुबेरका जोकुछधनरत्न है तुम हमारे साथमिलकर उन सबको औरसमस्त लोकोंका सुखसेभोग करो॥ ३३॥

हे देवि ! तपस्या, बल, विक्रम, धन,तेज और यशरामचन्द्रइन किसीमेंभी हमारीबराबर नहींहै ॥३४॥तुम पान,विहार और विविधभोगोंको भोगो, ढेरके ढेर धन चाहे जिसको दानकरो, जितनीचाहो उतनी पृथ्वीचाहे जिसको देडालो हे ललने ! हम तुम्हारी सब मनोकामना पूर्णकरेंगे और जितनेतुम्हारे बंधुबान्धव और कुटुम्बी हैं; तुम उन सबकी वांछा पूर्ण करो ॥३५॥ हेविमल सुवर्ण हार भूषिताङ्गी ! उज्ज्वल सुवर्ण के हारसेशोभित शरीरवालीहे भीरु !तुमहमारे साथ फूलखिले हुएवृक्षोंसे व्याप्त भौरोंसेपूर्ण समुद्रकेतीर उत्पन्नहुएवनोंमें विहारकरो ॥३६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां विंशः सर्गः॥२०॥ व्याकुल और करुणावती हुई वैदेही जानकीजी उस भयानक राक्षस रावणके यहवचन सुनकर धीरे २ दुःखित होकर उससे कहने लगीं ॥ १ ॥ तपस्विनी

नरामस्तपसादेविनबलेननविक्रमैः ॥ नधनेनमयातुल्यस्तेजसायशसापिवा ॥ ३४ ॥ पिबविहररमस्वभुंक्ष्वभोगान्धननिचयंप्रदिशाभिमेदिनीच॥मयिलललनेयथासुखंत्वंत्वयिचसमेत्यललंतुबांधवास्ते॥३५॥कुसुमिततरुजालसंततानिभ्रमरयुतानिसमुद्रतीरजानि॥कनकविमलहारभूषितांगीविहरमयासहभीरुकाननानि॥३६॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि० च० सा० सुं० विंशः सर्गः ॥ २० ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वासीतारौद्रस्यरक्षसः ॥ आर्तादीनस्वरादीनंप्रत्युवाचततःशनैः ॥१॥ दुःखार्तारुदतीसीतावेपमानातपस्विनी ॥ चिंतयंतीवरारोहापतिमेवपतिव्रता ॥ २ ॥ तृणमंतरतःकृत्वाप्रत्युवाचशुचिस्मिता ॥ निवर्तयमनोमत्तःस्वजनेप्रीयतांमनः ॥ ३ ॥ नमांप्रार्थयितुंयुक्तस्त्वंसिद्धिमिवपापकृत् ॥ अकार्यंनमयाकार्यमेकपत्न्याविगर्हितम् ॥ ४ ॥ कुलंसंप्राप्तयापुण्यंकुलेमहतिजातया ॥ एवमुक्तातुवैदेहीरावणंतंयशस्विनी॥५॥ रावणंपृष्ठतःकृत्वाभूयोवचनमब्रवीत् ॥ नाहमौपयिकीभार्यापरभार्यासतीतव ॥ ६ ॥

जानकीजीदुःखसे पीडितहो रुदनकरने लगीं । वह पतिव्रताअपने मनमें अपने पतिकीही चिन्ताकरने लगीं, उनका शरीर मारे घबडाहटसे काँपने लगा॥ २॥ सामनेहीएक तृणकी ओटकर शोकाकुल सीताजीउस रावणसे बोलींकिहे रावण ! हममेंसेअपने मनको फिराओ;और अपनी स्त्रियोंमेंमनको लगाओ ॥ ३ ॥ पापकाकरनेवाला जिस प्रकार अणिमा लघिमा आदि सिद्धियोंको नहींपाय सकता, वैसेही तुमभी हमको प्रार्थना करनेके योग्य नहींहो हम एक पतिव्रता हैं, किसी प्रकारसेयह निन्दित अकार्य न करसकेंगी ॥४॥ हमऊंचे कुलमें जन्मग्रहण करके फिर पवित्रकुलमेंही ब्याहीगईहैं, सो कुलीनस्त्रियोंसेयह कार्यकैसेहो ? यशस्विनी वैदेहीजी रावणसे इस प्रकार कह ॥५॥ उसकी ओरको पीठ करके फिर बोलीं हमतुम्हारे भोग करनेकेयोग्य नहीं हैं,क्योंकि हम पराई स्त्री और

साध्वी हैं ॥६ ॥तुम साधुधर्मकी ओर दृष्टि रक्खो, साधु व्रतका आचरण करो, तुम्हारा मंगल होवे,निशाचर ! जिस प्रकारतुम अपनी स्त्रियोंकीरक्षा करते हो वैसेही पराई भार्या भीतुम्हें रखनी कर्त्तव्य है ॥७॥ तुमअपनेको उपमाकरके अपनी स्त्रियोंमें रमणकरो, जोअपनी स्त्रीको भोगकर उससेअसंतुष्ट रहता है, उस चंचलमति औरचपल इंद्रिय मन्दबुद्धिवाले पुरुषकोपराई स्त्रीउमरक्षय करनेवाले बहुत सारे रोगलगा देती हैं; और उसका बडाभारी अनादर होताहै औरवह नरकमें पहुँचताहै॥ ८॥तुम्हारी आचाररहित जिस प्रकारकी विपरीत बुद्धि देखतीहैं, तो इससेयही जानपडताहै कि, लंकामें कोई साधुपुरुष नहीं हैं और जो हैं भीतो तुमउनका चलन नहीं चलते ॥९॥अथवा परिणामके देखनेवाले साधु पुरुष तुमसेहितकारी वचन कहते होंगे परन्तु तुम राक्षसोंका कुल नाश कर नेके लिये उनकोमिथ्या समझअश्रद्धाकर वहवचन ग्रहणनहीं करतेहो ॥१०॥ खोटी नीतिकेवशहुये और अविवेकी राजाको पायकरअति धनसंपदायुक्त राज्य

साधुधर्ममवेक्षस्वसाधुसाधुव्रतंचर ॥ यथातवतथान्येषांरक्ष्यादारानिशाचर ॥७॥ आत्मानमुपमांकृत्वास्वेषुदारेषुरम्यताम् ॥ अतुष्टंस्वेषुदारेषु चपलंचपलेंद्रियम् ॥ नयंतिनिकृतिप्रज्ञंपरदाराःपराभवम् ॥८॥ इहसंतोनवासंतिसतोवानानुवर्तसे॥यथाहिविपरीतातेबुद्धिराचारवर्जिता ॥९॥ वचोमिथ्याप्रणीतात्मापथ्यमुक्तंविचक्षणैः ॥ राक्षसानामभावायत्वंवानप्रतिपद्यसे ॥१०॥ अकृतात्मानमासाद्यराजानमनयेरतम् ॥ समृद्धानि विनश्यंतिराष्ट्राणिनगराणिच ॥ ११ ॥ तथैवत्वांसमासाद्यलंकारत्नौघसंकुला ॥ अपराधात्तवैकस्यनचिराद्विनशिष्यति ॥ १२ ॥ स्वकृतैर्हन्य मानस्यरावणादीर्घदर्शिनः ॥ अभिनंदतिभूतानिविनाशेपापकर्मणः ॥ १३ ॥ एवंत्वांपापकर्माणंवक्ष्यंतिनिकृताजनाः ॥ दिष्टयैतद्व्यसनंप्राप्तोरौ द्रइत्येवहर्षिताः ॥ १४ ॥ शक्यालोभयितुंनाहमैश्वर्येणधनेनवा ॥ अनन्याराघवेणाहंभास्करेणयथाप्रभा ॥ १५ ॥ उपधायभुजंतस्यलोकनाथ स्यसत्कृतम् ॥ कथंनामोपधास्यामिभुजमन्यस्यकस्यचित् ॥ १६ ॥

और नगर नष्टहो जाते हैं ॥११॥ इसी प्रकारसे तुमको पायकर रत्नोंसे पूर्ण लंका एक तुम्हारेही अपराधसेही शीघ्रही नष्ट होगी ॥ १२ ॥ जो अज्ञानी अप ने कर्मोंके दोषसे मृत्युकेनिकट पहुँचता है, उस पापकर्म करनेवालेका विनाश होनेसे सब प्राणी आनंदितहोते हैं ॥ १३ ॥इसी प्रकारसे जिसको तुमने क्लेश दिया है, सो वह तुमपापकर्मकारीके मरनेपर, सब हर्षित हो कहेंगे कि, हमारा परमभाग्यहै, जो यह दुरात्मारावण मृत्युको प्राप्त हुवा ॥१४॥ ऐश्वर्य दिखा कर याअपने धनसे तुमहमकोलुभाय नहीं सकोगे, सूर्यकी किरणजिस प्रकार सूर्यको छोड और किसीके पीछे नहीं जायसकतीं वैसेही हमभी एक श्रीरामचन्द्र जीके शिवाय और किसीकी नहीं होसकतीं ॥ १५ ॥ उन लोकनाथ श्रीरामचन्द्रजीके शोभन बाहु सिरके नीचेधर अबहम कैसे किसी दूसरेके भुज अपने

शिरके नीचे धरशयन करेंगी ॥ १६ ॥ ब्राह्मणकीब्रह्मविद्याके समान हम उन ब्रह्मज्ञानी व्रत करनेवाले महीपाल श्रीरामचन्द्रजीकेही योग्यभार्या हैं ॥ १७॥ हे रावण ! तुम्हारा मंगलहो वनमें अपनेयूथसे बिछुडीहुई हथिनीकोजिस प्रकार हाथी लेजाताहै, वैसेही श्रीरामचन्द्रजीकेसाथ दुःखसे कातर हुईहमकोतुममिलादो ॥ १८ ॥ यदि तुम अपने अधिकारको रक्षा करनेकी इच्छाकरतेहो और अपनाविनाश होनानहीं चाहतेहो, तो पुरुषश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीसे मित्रता करना तुम को कर्तव्य है ॥१९॥ सबही जानतेहैं कि, श्रीरामचन्द्रजी सर्वधर्मोंके पालनेवाले औरशरण आयेकी रक्षाकरनेवालेहैं, यदि तुम अपने जीवित रहनेकी इच्छा करतेहो तो उन श्रीरामचन्द्रजीसे मित्रता करो ॥ २० ॥ तुमउन शरणागतवत्सल श्रीरामचन्द्रजीको प्रसन्न करो भक्तिभावसे हमकोवहां लेजाकर रामचन्द्रजी

अहमौपयिकीभार्यातस्यैवचधरापतेः ॥ व्रतस्नातस्यविद्येवविप्रस्यविदितात्मनः ॥ १७ ॥ साधुंरावणरामेणमांसमानयदुःखिताम् ॥ वनेवासितयासार्धकरेण्वेवगजाधिपम् ॥ १८ ॥ मित्रमौपयिकंकर्तुरामःस्थानंपरीप्सता ॥ वधंचानिच्छताघोरंत्वयासौपुरुषर्षभः ॥ १९ ॥ विदितःसर्वधर्मज्ञःशरणागतवत्सलः ॥ तेनमैत्रीभवतुतेयदिजीवितुमिच्छसि ॥ २० ॥ प्रसादयस्वत्वंचैनंशरणागतवत्सलम् ॥ मांचास्मैप्रयतोभूत्वा निर्यातयितुमर्हसि ॥ २१ ॥ एवंहितेभवेत्स्वस्तिसंप्रदायरघूत्तमे ॥ अन्यथात्वंहिकुर्वाणःपरांप्राप्स्यसिचापदम् ॥ २२ ॥ वर्जयेद्वज्रमुत्सृष्टंवर्जयेदंतकश्चिरम् ॥ त्वद्विधंनतुसंक्रुद्धोलोकनाथःसराघवः ॥२३॥ रामस्यधनुषःशब्दंदश्रोष्यसित्वंमहास्वनम् ॥ शतक्रतुविसृष्टस्यनिर्घोषमशनेरिव ॥ २४ ॥ इहशीघ्रंसुपर्वाणोज्वलितास्याइवोरगाः ॥ इषवोनिपतिष्यंतिरामलक्ष्मणलक्षिताः ॥ २५ ॥ रक्षांसिनिहनिष्यंतःपुर्यामस्यांनसंशयः ॥असंपातंकरिष्यंतिपतन्तःकंकवाससः ॥२६॥ राक्षसेंद्रमहासर्पान्सरामगरुडोमहान् उद्धरिष्यतिवेगेनवैनतेयइवोरगान् ॥२७॥

को सौंपदेना तुम्हारा परम कर्तव्यहै॥२१॥ जोइस प्रकारसेहमें लेजाकर श्रीरामचन्द्रजीको सौंपदोगे तभीतुम्हारा कल्याणहै, और जो इससे विरुद्धकरोगे तो महाविपद्में पडोगे॥ २२ ॥ इन्द्रजीका श्रेष्ठवज्रचाहे तुम्हेछोडदे और यमभी चाहैंबहुत दिनोंतक जीवित रक्खें, परन्तु लोकोंके नाथ श्रीरामचन्द्रजी जब क्रोधितहोंगेतब तुमसेदुष्टकाकिसीप्रकार निस्तारनहीं ॥२३॥ इन्द्रकेछोडेहुएवज्रकेशब्दके समान श्रीरामचन्द्रजी धनुषसे छुटेहुएबडे२बाणोंका महाशब्दतुम सुनोगे२४ श्रीरामलक्ष्मणजीकेनामसे अंकितबडी फोंकलगे हुएप्रकशितवाण ज्वलितमुख सर्पगणोंके समान शीघ्रही इस लंकामें गिर कर॥२५॥इस नगरीके राक्षसोंका संहार करेंगे कंकपत्र लगे,तीखेअनीवालेइतने बाणयहांपर गिरेंगेकि, लंकामेंतिल धरनेकीभी जगहन मिलेगी,इसमेंकुछभी संशयनहींहै॥२६॥जिसप्रकार गरुडजी वेगसे महा

सर्पोंकोउडाकर लेजातेहैं, रामरूपी गरुडजीभी वैसेही राक्षसरूपी सर्पोंको उडाकरलेजायँगे ॥२७॥ विष्णुजीने तीनवार चरण उठाकर जिस प्रकार असुरलोगोंके हाथसे उज्ज्वल लक्ष्मीका उद्धार किया था, शत्रुओंके मारनेवाले हमारे स्वामी भीवैसैही तुम्हारे हाथसेहमारा उद्धार करेंगे और लेजाँयगे ॥ २८ ॥ हतस्थान जनस्थानमें जब चौदह हजार राक्षस मारे गये तब हे राक्षस ! तुम शक्तिरहित युद्ध न करके श्रीरामचन्द्रजीके न रहनेपर आश्रमसे चोरीकरके हमको लाये ॥२९ ॥ हे अधम ! वह मनुष्योंमें सिंहरूप दोनों भ्राता जब माया मृगके पीछे गये उस समयतुमने सूने आश्रममेंप्रवेश करहमारा हरण कियाहै॥ ३०॥ कुत्ता जिसप्रकार सिंहकी गन्ध पाकर उसके सन्मुखखडा नहीं हो सकता, वैसेहीतुम श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजीके दर्शन पायकर उनके सामने नहीं टिक सकोगे ॥ ३१ ॥ तुम ऐसे दुर्बलहो कि, यदि उन श्रीरामचन्द्रजीके साथ तुम्हारा समर होवेतो हम तुम्हारीसहाय और सम्पत्तिकीभीथिरता नहीं देखती; इस कारण वृत्रासुरकी एक बाहु

अपनेष्यतिगांभर्तात्वत्तःशीघ्रमरिंदमः॥ असुरेभ्यःश्रियंदीप्तांविष्णुस्त्रिभिरिवक्रमैः॥२८॥ जनस्थानेहतस्थानेनिहतेरक्षसांबले॥अशक्तेनत्वयार क्षःकृतमेतदसाधुवै ॥ २९ ॥ आश्रमंतत्तयोःशून्यंप्रविश्यनरसिंहयोः ॥ गोचरंगतयोर्भ्रात्रोरपनीतात्वयाऽधम ॥ ३० ॥ नहिगंधमुपाघ्रायरा मलक्ष्मणयोस्त्वया ॥ शक्यंसंदर्शनेस्थातुंशुनाशार्दूलयोरिव ॥३१॥ तस्यतेविग्रहेताभ्यांयुगग्रहणमस्थिरम् ॥ वृत्रस्येवेंद्रबाहुभ्यांबाहोरेकस्य विग्रहे ॥ ३२ ॥ क्षिप्रंतवसनाथोमेरामःसौमित्रिणासह ॥ तोयमल्पमिवादित्यःप्राणानादास्यतेशरैः ॥ ३३ ॥ गिरिंकुबेरस्यगतोथवाल यंसभांगतोवावरुणस्यराज्ञः ॥ असंशयदाशरथेर्विमोक्ष्यसेमहाद्रुमःकालहतोऽशनेरिव ॥३४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० च० सा० सुन्दरकांडे एकविंशः सर्गः ॥२१॥ सीतायावचनं श्रुत्वापरुषंराक्षसेश्वरः ॥ प्रत्युवाचततःसीतांविप्रियंप्रियदर्शनाम् ॥१॥ यथायथासांत्वयि तावश्यःस्त्रीणांतथातथा ॥ यथायथाप्रियंवक्तापरिभूतस्तथातथा ॥२॥

जैसे इन्द्रजीके दोनों बाहोंसेपराजित हुईथीं. वैसेही तुमको श्रीराम लक्ष्मणजीसे पराजित होना पडेगा ॥३२॥ सूर्य जिसप्रकार थोडेसे जलको सुखाय लेते हैं, वैसेही हमारे प्राणनाथ श्रीरामचन्द्रजीलक्ष्मणजीकी सहायतासे तुम्हारे प्राणोंको तुम्हारे शरीरसे खैंच लेंगे॥ ३३ ॥ तुमकुबेरके स्थान कैलास पर्वत पर चले जाओ, अथवा भयके मारे राजा वरुणकी सभामेंजाओ; परंतु कालसे हत हुआबडा भारी वृक्ष जिस प्रकार इंद्रजीके वज्र लगनेसे गिरजाता है, वैसेही निश्चय तुमभी, दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजीके हाथसे अपने प्राण गँवाओगे ॥ ३४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि सुंदरकांडे भाषायामेकविंशः सर्गः ॥ २१ ॥ वैदेहीजीके यह कठोर वचन सुनकर राक्षसनाथ रावण उन प्रिय दर्शनवाली सीताजीसे कुप्यारे वचन कहने लगा ॥ १ ॥ लोकमें देखा जाताहै कि, पुरुषस्त्रीको

जितना समझाता है, स्त्री उतनाही उस पुरुषकेवशमें होजातीहै; परंतु हमने जितनेप्रिय वचनतुमसेकहे तुमने उतनाही हमारा अनादर किया॥ २॥ तुम्हारे ऊपर हमको क्रोधहोताहै, परन्तुअच्छा सारथी कुमार्गमेंजाते हुएघोडोंको जिस प्रकारसेअपने वशमेंरखता है,वैसेही तुम्हारेप्रति उत्पन्न हुएकामने इस क्रोधको रोक रक्खा है ॥ ३ ॥ मनुष्योंके लिये कामही बडा दारुण है, क्योंकि जो कामके वश हुआ, वह चाहे क्रोधका भी पात्र हो परन्तु कामके मारे उसमें दया, स्नेह, उत्पन्न होही जायगा ॥ ४ ॥ हे सुंदरवदनवाली ! इस कारणसेही हमतुमको नहीं मार डालते हैं,परंतु तुममारडालने और निरादर करनेके योग्यही हो: तुमने वृथाहीयह तापसव्रत धारण किया है और मिथ्या तपस्वीमेंतुम प्रीति करनेवाली हो ॥५॥ हे मैथिली ! तुमने जोयह कठोर वचन हमको कहे,उन एक २ वच

सन्नियच्छतिमेक्रोधंत्वयिकामःसमुत्थितः॥द्रवतोमार्गमासाद्यहयानिवसुसारथिः॥३॥वामःकामोमनुष्याणांयस्मिन्किलनिबध्यते॥जनेतस्मि स्त्वनुक्रोशःस्नेहश्चकिलजायते ॥ ४ ॥ एतस्मात्कारणान्नत्वांघातयामिवरानने ॥ वधार्हामवमानार्हांमिथ्याप्रव्रजनेरताम् ॥ ५ ॥ परुषाणि हिवाक्यानियानियानिब्रवीषिमाम् ॥ तेषुतेषुवधोयुक्तस्तवमैथिलिदारुणः ॥ ६ ॥ एवमुक्त्वातुवैदेहींरावणोराक्षसाधिपः ॥ क्रोधसंरंभसंयुक्तः सीतामुत्तरमब्रवीत् ॥ ७ ॥ द्वौमासौरक्षितव्यौमेयोऽवधिस्तेमयाकृतः ॥ ततःशयनमारोहममत्वंवरवर्णिनि ॥ ८॥ द्वाभ्यामूर्ध्वंतुमासाभ्यांभ र्तारंमामनिच्छतीम् ॥ ममत्वांप्रातराशार्थेसूदाश्छेत्स्यंतिखंडशः ॥ ९ ॥ तांभर्त्स्यमानांसंप्रेक्ष्यराक्षसेंद्रेणजानकीम्॥ देवगंधर्वकन्यास्ताविषेदु र्विकृतेक्षणाः ॥ १० ॥ ओष्ठप्रकारैरपरानेत्रैर्वक्रैस्तथापराः ॥ सीतामाश्वसयामासुस्तर्जितांतेनरक्षसा ॥ ११ ॥

नके लियेबडे निष्ठुरपनसे तुमको मारना उचितहै ॥६॥ राक्षस रावण विदेहकुमारी सीताजीको क्रोधसे भरे हुये यह वचन कह फिर उनके बचनोंका उत्तर देने लगा ॥७॥ हमनेजो अवधि दी है, उस बारह मासमेंदो मास शेष हैं सो दो महीनेतक और देखेंगे।सुन्दरी ! उस अवधिके पीछे फिर तुमको हमारी सेजपर आना पडेगा ॥८॥दो मासके वीतजानेपरयदि तुमहमें स्वामीभावसे भजनेकीइच्छा न करोगी तोरसोइयेलोग हमारेप्रातःकालके भोजनके लिये तुम्हें टुकडे २ करके काट डालेंगे ॥ ९ ॥ जब इस प्रकार राक्षस रावणने जानकीजीको धमकाया, तब उसके संगजो देवता और गन्धर्वोंकी कन्या आई थीं वह सब कातरनेत्र और शोकित हुई ॥१०॥ और कोई अधर, कोई नेत्र, और कोइ मुखचलाय २ शोक करके राक्षसराजसे पीडित जानकीजीको समझाने बुझाने

लगी * ॥ ११ ॥ उनके समझानेसे धीरज बांध, सीताजी सदाचार और श्रीरामचन्द्रजी अपनेस्वामीके वीर्यका विश्वास करके गर्वित वचन राक्षसपति रावणसे बोलीं ॥ १२ ॥ हमजानतीहैं कि, इस लंकानगरीमें ऐसा कोई जन नहींहै; कि जो तुम्हारे हितकी कामनाकरताहो. कारणकि, जो कोई होता तो वह अवश्यही तुमको इस निन्दनीय कर्मसे रोकता ॥ १३ ॥ जिसप्रकार इंद्रजीकी शची वैसेही धर्मात्मा श्रीरामचंद्रजीकीहम धर्मपत्नी हैं,त्रिलोकमें तुम्हारे सिवाय ऐसा कौन दुरात्मा है ? जो मनसे भी हमारी प्रार्थना करता हो ॥१४॥ हे राक्षसोंमेंनीच ! तुमने अमिततेजस्वी श्रीरामचंद्रजीकी भार्यासे जो पाप कथाकही, इससे कहीं जानेपर भी तुम्हारा निस्तार नहीं ॥ १५ ॥ रे नीच ! वनमें दर्पित हाथी खरगोश भी एक साथ हो रहते हैं, उनमें हाथीके समान श्रीरामचंद्रजी और

ताभिराश्वासितासीतारावणंराक्षसाधिपम् ॥उवाचात्महितंवाक्यंवृत्तशौंडीर्यगर्वितम् ॥१२॥ नूनंनतेजनःकश्चिदस्मिन्निःश्रेयसिस्थितः॥निवारयतियोनत्वांकर्मणोऽस्माद्विगर्हितात् ॥१३॥मांहिधर्मात्मनःपत्नींशचीमिवशचीपतेः॥त्वदन्यस्त्रिषुलोकेषुप्रार्थयेन्मनसापिकः॥१४॥ राक्षसाधमरामस्यभार्याममिततेजसः ॥ उक्तवानसियत्पापंक्वगतस्तस्यमोक्ष्यसे ॥१५॥ यथादृप्तश्चमातंगःशशश्चसहितौवने ॥ तथाद्विरदवद्रामस्त्वंनीचशशवत्स्मृतः॥१६॥सत्वमिक्ष्वाकुनाथंवैक्षिपन्निहनलज्जसे॥ चक्षुषोविषयंतस्यनयावदुपगच्छसि ॥१७॥ इमेतेनयनेक्रूरेविकृतेकृष्णपिंगले॥ क्षितौनपतितेकस्मान्मामनार्यनिरीक्षतः ॥ १८ ॥ तस्यधर्मात्मनःपत्नींस्नुषांदशरथस्यच ॥ कथंव्याहरतोमांतेनजिह्वापापशीर्यति ॥ १९ ॥ असंदेशात्तुरामस्यतपसश्चानुपालनात् ॥ नत्वांकुर्मिदशग्रीवभस्मभस्मार्हतेजसा ॥ २० ॥ नापहर्तुमहंशक्यातस्यरामस्यधीमतः ॥विधिस्तववधार्थायविहितोनात्रसंशयः ॥२१॥

खरगोशके तुल्य तुम हो ॥ १६ ॥ सो खरगोशके समान तुमजबतक इक्ष्वाकुनाथ श्रीरामचन्द्रजीकी दृष्टि नहीं पडते, तबतकही तुम रघुनाथ रामचंद्रजीकी निन्दा करकेनहीं लजाते हो ॥ १७ ॥ जो तुम बुरीदृष्टिसे हमारी ओर नेत्र डालते हो तो तुम्हारे कृष्णपिंगल वर्णवाले क्रूर और विकराल दोनों नेत्र क्यों नहीं निकलकर पृथ्वीपरगिर पडते ॥१८॥ पापात्मन् हम उन धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजीकी स्त्रीऔर राजादशरथजीकी पुत्रवधूहैं, सोहमारे लियेखोटे वचन कहते हुए तुम्हारी जीभ कटकर क्यों नहीं गिर पडती ? ॥ १९ ॥ हे दशग्रीव ! हमारा ऐसा तेज है कि, हम तुमकोभस्म कर सकती हैं; परन्तु एक तो श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा नहीं, और दूसरे हमतापसव्रत पालन करती हैं इससे तुमको भस्म नहीं किया ॥ २० ॥ तुम किसी प्रकारसे भी उन

* समझाना बुझाना सतानसेही हुआ था कि यह रावणबलसे कुछ नहीं कर सक्ता क्योंकि शापित है ।

बुद्धिमान् श्रीरामचन्द्रके निकटसे हमको हरण नहीं कर सकते, निश्चय जान रक्खो कि, हमारे हरण होनेका संयोग विधाताने तुम्हारे संहार करनेके लिये बनाया है ॥ २१ ॥ तुम वीर हो, कुबेरके भ्राता हो, उसपर तुममें बलभी बहुत है,फिर तुमने किस प्रकार लज्जा छोड श्रीरामचंद्रजीको माया द्वारा आश्रमसे दूरकर चोरीसे हमाराहरण किया ? ॥२२॥ सीताजीके यह कठोर वचनसुनकर राक्षसपति रावण अपने दोनों क्रूर नेत्र घुमाय जानकीजीकी ओर निहारने लगा ॥२३॥रावण देखनेमें नील वर्णवाले मेघके समान, उसकी भुजाय और गर्दन बडी थी, गमनसिंहके समान वेगवान् जीभ औरदीप्त नेत्र उसके बडे तेजयुक्त थे ॥ २४ ॥ मुकुटके आगेका भाग शिरसे कुछेक खसक रहा था उसका आकार अतिबडा कण्ठमें विचित्र माला और अंगोंमें भाँति २ के उबटनेलगे वहश्रीमान् लालहीमाला, लालही वस्त्र और उजले बाजू हाथमें पहरे था ॥२५॥ बडी भारी तगडी नितम्बोंमें पहरनेसे वहऐसा

शूरेणधनदभ्रात्राबलैःसमुदितेनच॥ अपोह्यरामंकस्माच्चिदार चौर्यंत्वयाकृतम् ॥२२॥ सीतायावचनंश्रुत्वारावणोराक्षसाधिपः ॥ विवृत्यनयने क्रूरेजानकीमन्ववैक्षत ॥ २३ ॥ नीलजीमूतसंकाशोमहाभुजशिरोधरः ॥ सिंहसत्त्वगतिःश्रीमान्दीप्तजिह्वोग्रलोचनः ॥२४॥ चलाग्रमुकुटप्रांशुश्चित्रमाल्यानुलेपनः॥रक्तमाल्यांबरधरस्तप्तांगदविभूषणः॥२५॥श्रोणीसूत्रेणमहतामेचकेनसुसंवृतः॥अमृतोत्पादनेनद्धोभुजंगेनेवमंदरः॥२६॥ ताभ्यांसपरिपूर्णाभ्यांभुजाभ्यांराक्षसेश्वरः॥ शुशुभेऽचलसंकाशःशृंगाभ्यामिवमंदरः ॥ २७ ॥ तरुणादित्यवर्णाभ्यांकुंडलाभ्यांविभूषितः ॥ रक्तपल्लवपुष्पाभ्यामशोकाभ्यामिवाचलः॥ २८ ॥ सकल्पवृक्षप्रतिमोवसंतइवमूर्तिमान् ॥ श्मशानचैत्यप्रतिमोभूषितोऽपिभयंकरः ॥ २९ ॥ अवेक्षमाणोवैदेहींकोपसंरक्तलोचनः ॥ उवाचरावणःसीतांभुजंगइवनिःश्वसन् ॥ ३० ॥ अनयेनाभिसंपन्नमर्थहीनमनुव्रत ॥ नाशयाम्यहमद्य त्वांसूर्यःसंध्यामिवौजसा ॥ ३१ ॥

शोभित होरहा था मानो अमृतको मथन करनेकेसमय मन्दराचल पर्वत सर्पसेबँध रहा है ॥२६॥ वहरावण अपनी परिपूर्ण भुजाओंसे श्रृंगोंसे शोभित मन्दराचल पर्वतके समान शोभा पाय रहा था ॥२७॥ तरुण सूर्यके समान प्रभाववाले कुण्डल उसके कानोंमें पडे हुए शोभित होते थे, मानो कोई पर्वत लाल पत्ते और लाल पुष्पधारी अशोक वृक्षोंसे शोभायमान होरहा है ॥२८॥ रावण कल्पवृक्षकेसमान और मूर्ति धारण किये हुए वसंत के समान भूषित हो रहा था, परन्तु इसभाँतिसे भूषित होनेपर भी श्मशान भूमिमें बने मन्दारके वृक्षोंके समान उसको देखकरडरही लगता था ॥ २९ ॥ ऐसा रावण क्रोधकेमारे लाल २ नेत्रकर सीताजीकीओर निहार सर्पके समान श्वासछोडतासीताजीसे बोला ॥३०॥ तुमनेजो यह व्रतपालन किया है,यह अर्थहीन और नीतिके बाहर है, इसलिये सूर्य

जिस प्रकारप्रातःकालके अन्धकारका नाश करते हैं, वैसेही आज हमतुमको मार डालेंगे ॥३१॥ शत्रुओंको रुलानेहारा रावण जानकीजीसे इस प्रकार कह फिर घोरदर्शनवाली राक्षसियोंकी ओरदेखताहुआ ॥३२॥ इनसब राक्षसियोंमें किसी२के कानबडे थे,किसीके कानगाय बैलकेकानके समानथे, और किसी२ के लम्बे कान; और किसी २ के कान बिलकुल थेही नहीं ॥३३॥ कोई हस्तिपदी, कोई अश्वपदी, कोईगोपदी, वा किसी २ के चरणोंमें अत्यंत बालथे, कोई एकाक्षी;कोई एकचरणी, किसीकेदोनों चरण बहुतबडे बडेथे, किसीकेथे ही नहीं ॥३४॥ किसीका मस्तक और गर्दन बहुत बडी थी,किसीके स्तन और उदरका प्रमाण एक अपूर्वही ढंगका था, किसीकी जीभ बडी किसीके नख विशाल थे ॥ ३५ ॥ किसीके नाक नहीं किसीका मुख सिंहके मुहके समान किसीका मुख गोमुखके समानऔर किसी२ का मुख सूकरके मुखके समानथा, उनसे रावणबोलाकि, जिससे यह जानकीजी शीघ्र हमारे वशमें आजायँ ॥ ३६ ॥

इत्युक्त्वामैथिलींराजारावणःशत्रुरावणः ॥ संदिदेशततःसर्वाराक्षसीर्घोरदर्शनाः ॥ ३२ ॥ एकाक्षीमेककर्णांचकर्णप्रावरणांतथा ॥ गोकर्णींहस्तिकर्णींचलंबकर्णीमकर्णिकाम् ॥ ३३ ॥ हस्तिपद्यश्वपद्यौचगोपदींपादचूलिकाम् ॥ एकाक्षीमेकपादींचपृथुपादीमपादिकाम् ॥ ३४ ॥ अतिमात्रशिरोग्रीवामतिमात्रकुचोदरीम् ॥ अतिमात्रास्यनेत्रांचदीर्घजिह्वानखामपि ॥३५॥ अनासिकांसिंहमुखींगोमुखींसूकरीमुखीम् ॥ यथामद्वशगासीताक्षिप्रंभवतिजानकी ॥३६॥ तथाकुरुतराक्षस्यःसर्वाःक्षिप्रंसमेत्यवा ॥ प्रतिलोमानुलोमैश्चसामदानादिभेदनैः ॥३७॥ आवर्जयतवैदेहींदंडस्योद्यमनेनच ॥इतिप्रतिसमादिश्यराक्षसेंद्रःपुनःपुनः ॥३८॥ काममन्युपरीतात्माजानकींप्रतिगर्जति ॥ उपगम्यततःक्षिप्रंराक्षसीधान्यमालिनी ॥३९॥ परिष्वज्यदशग्रीवमिदंवचनमब्रवीत् ॥ मयाक्रीडमहाराजसीतयाकिंतवानया॥४०॥ विवर्णयाकृपणयामानुष्याराक्षसेश्वर॥ नूनमस्यांमहाराजनदेवाभोगसत्तमान् ॥४१॥

सोहे राक्षसियो ! मिलकर शीघ्रता सेऐसा करना चाहिये; प्रतिकूल व्यवहारहोया अनुकूल व्यवहारहो, समझाने बुझानेसेकामचले, याभेदसे कार्य होता हो॥३७॥ अथवा दण्डका उद्योग करके हो,तुम लोग सीताको उसका मद छुडाय हमारे वशमेंकरो, राक्षसराज रावण बार२इस प्रकारकी आज्ञा दे ॥ ३८ ॥ काम और क्रोधके वश होकर जानकीजीके प्रति गर्जनकरने लगा, उसी समय जानकीजीके ऊपर दया करके धान्यमालिनी नामक राक्षसी शीघ्रतासे रावणके निकट आ ॥ ३९ ॥ उससे लिपट कर बोली कि, हे महाराज ! आप हमारे साथ विहार करें, इस सीतासे आपका क्या प्रयोजन है ? ॥ ४० ॥हे राक्षसेश्वर ! सीता विवर्ण; दीना, मानुषी, कृपणरूप और आपका अप्रिय करने वाली है इसके माथेमें विधाताने दुर्लभ सुखका भोग करना लिखाही नहीं ॥ ४१ ॥

कारण कि, आपके बाहुबलसे एकत्र की हुई संपदाकाभोग करनाअतिदुर्लभहै इसके अतिरिक्त कामरहित स्त्रीकोजो पुरुष भोगताहै उसका शरीर संतापसे दग्ध होता रहता है ॥४२॥ कामकी अभिलाषा करनेवाली स्त्रीको जोपुरुष चाहताहैतो उसके संगरति करनेसे अत्यन्त प्रसन्नताहोतीहै । यह कहकरवह राक्षसी बलवान् रावणको और स्थानपर लेगई; मेघके समान वर्णवाला राक्षस रावण भी हँसते २ वहां सीताजीके मारनेसे निवृत्त हुआ ॥४३॥ दशानन रावण पृथ्वीको कम्पायमानकरता; प्रदीप्तमान मध्याह्नकालके सूर्यकेसमान अपने मंदिरमें प्रवेश करता हुआ ॥४४॥ उसके संगवाली देवगन्धर्व कन्यावनाग कन्या गण सब रावणको घेरे हुएउसके श्रेष्ठभवनमें चली गई ॥४५॥ रावण धर्मपरायण स्थिरतायुक्त कम्पायमानशरीर, सीताजीको डराता हुआ और फिर उनको छोड़ कामदेवसे मोहित हो

विधत्स्यमर श्रेष्ठास्तवबाहुबलार्जितान् ॥ अकामांकामयानस्यशरीरमुपतप्यते ॥४२॥ इच्छन्तींकामयानस्यप्रीतिर्भवतिशोभना ॥एवमुक्तस्तु राक्षस्यासमुत्क्षिप्तस्ततोबली ॥ प्रहसन्मेघसंकाशोराक्षसःसन्यवर्तत ॥ ४३ ॥ प्रस्थितःसदशग्रीवःकंपयन्निवमेदिनीम् ॥ ज्वलद्भास्करसंकाशंप्रविवेशनिवेशनम् ॥४४॥देवगंधर्वकन्याश्चनागकन्याश्चतास्ततः ॥ परिवार्यदशग्रीवंप्रविशुस्तागृहोत्तमम् ॥४५॥समैथिलींधर्मपरामवस्थितांप्रवेपमानांपरिभर्त्स्यरावणः॥ विहायसीतांमदनेनमोहितःस्वमेववेश्मप्रविवेशरावणः ॥४६॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥ इत्युक्त्वामैथिलींराजारावणःशत्रुरावणः॥ संदिश्यचततःसर्वाराक्षसीर्निर्जगामह ॥ १ ॥ निष्क्रांतेराक्षसेंद्रेतुपुनरंतःपुरंगते ॥ राक्षस्योभीमरूपास्ताःसीतांसमभिदुद्रुवुः ॥२॥ ततःसीतामुपागम्यराक्षस्यःक्रोधमूर्च्छिताः ॥ परंपरुषयावाचावैदेहीमिदमब्रुवन् ॥३॥पौलस्त्यस्यवरिष्ठस्यरावणस्यमहात्मनः ॥ दशग्रीवस्यभार्यात्वंसीतेनबहुमन्यसे॥४॥ततस्त्वेकजटानामराक्षसीवाक्यमब्रवीत्॥ आमंत्र्यक्रोधताम्राक्षीसीतांकरतलोदरीम् ॥५॥

अपने मन्दिरकोही चला गया ॥ ४६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुंदरकांडे भाषायां द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥ शत्रुओंको भय उपजानेवाला राजा रावण सीताजीसे ऐसा कह और सब राक्ष सियोंको यह आज्ञा देकर चला गया ॥ १ ॥ जब राक्षस चलकर अपने रनवासमें पहुँचा, तब वे अशोक वनमें सीताजीकी रक्षा करती हुई भयंकर रूपवाली राक्षसियें सीताजीके ओरको दौडीं ॥२॥ फिर वह राक्षसियें क्रोधसे मूर्च्छित हो सीताजीकेनिकट पहुँच कर उन जनककुमारीसे बडे कठोर वचन बोलीं ॥३॥ हे सीते !पुलस्त्यनंदन लोकोंमें श्रेष्ठ महात्मा रावणकी स्त्री होना तुम क्यों नहीं अपना बडा भाग्य समझती हो ? ॥४॥ इसकेपीछे एक जटा नामराक्षसी क्रोधसे लाल २ नेत्रकरती हुई सूक्ष्म उदरवाली सीताजीसेजो कि हाथनीचे कियेबैठी

हुई थी पुकारकर बोली ॥५॥ ब्रह्माजीके मानसपुत्र छैःप्रजापतियोंके मध्यमेंजो चतुर्थ प्रजापति लोकोंके विख्यात हैंउनका पुलस्त्य नाम है ॥ ६ ॥ पुलस्त्यके मानस पुत्र जो तेजस्वी महर्षिहुए उनका नामविश्रवा हुआ; उनकी प्रभाभी प्रजापति लोगोंके तुल्य हुई ॥७॥हे बडे २ नेत्रोंवाली ! यह शत्रु लोगोंको भय उप जानेवाला रावण विश्रवा काही पुत्रहै । उन राक्षसनाथकी भार्या होना तुमको अवश्य उचितहै ॥८॥हे सर्वश्रेष्ठाङ्गि ! हमारे कहे वचनोंको क्योंनहीं मानतीहो जब यह कह चुकी तबहरिजटा नामक राक्षसीबोली ॥९॥ यह बिलावकेसे नेत्रवाली अपने नेत्रोंको घुमातीहुई बोलीकि,जिसने तेतीस कोटी देवता और देव राजइन्द्रको सबभाँति जीतलिया है ॥१०॥ उस राक्षसेन्द्रकी भार्या होना तुमको उचितहै; क्योंकिवह बडाभारी वीर्यवान् हैः वहशूर सग्राममें शत्रुओंको विनाजीते

प्रजापतीनांषण्णांतुचतुर्थोऽयंप्रजापतिः ॥ मानसोब्रह्मणःपुत्रःपुलस्त्यइतिविश्रुतः ॥ ६ ॥ पुलस्त्यस्यतुतेजस्वीमहर्षिर्मानसःसुतः ॥नाम्नास विश्रवानामप्रजापतिसमप्रभः ॥ ७ ॥ तस्यपुत्रोविशालाक्षिरावणःशत्रुरावणः ॥ तस्यत्वंराक्षसेन्द्रस्यभार्याभवितुमर्हसि ॥८॥ मयोक्तंचारुसर्वाङ्गिवाक्यंकिंनानुमन्यसे॥ततोहरिजटानामराक्षसीवाक्यमब्रवीत्॥९॥विवृत्यनयनेकोपान्मार्जारसदृशेक्षणा ॥ येनदेवास्त्रयस्त्रिंशद्देवराजश्चनिर्जितः ॥ १० ॥ तस्यत्वंराक्षसेंद्रस्यभार्याभवितुमर्हसि ॥ वीर्योत्सिक्तस्यशूरस्यसंग्रामेष्वनिवर्तिनः ॥ बलिनोवीर्ययुक्तस्यभार्यात्वंकिंनलिप्ससे॥ ॥११॥ प्रियांबहुमतांभार्यांत्यक्त्वाराजामहाबलः॥ सर्वासांचमहाभागांत्वामुपैष्यतिरावणः ॥१२॥ समृद्धंस्त्रीसहस्रेणनानारत्नोपशोभितम् ॥ अंतःपुरंतदुत्सृज्यत्वामुपेष्यतिरावणः ॥ १३ ॥ अन्यातुविकटानामराक्षसीवाक्यमब्रवीत् ॥ असकृद्भीमवीर्येण नागागंधर्वदानवाः॥ निर्जिताः समरेयेनसतेपार्श्वमुपागतः ॥ १४ ॥ तस्यसर्वसमृद्धस्यरावणस्यमहात्मनः ॥ किमर्थंराक्षसेंद्रस्यभार्यात्वंनेच्छसेऽधमे ॥ १५ ॥

नहीं लौटताउस बलवान् वीर्य शालीकी स्त्री होनातुम क्योंनहीं अंगीकार करती हो ? ॥११॥ महाबलवान् राजा रावण सब स्त्रियोंसे अधिक भाग्यवती और परमआदर पाईहुई मंदोदरीकोभी छोड कर तुम्हारेही निकट रहाकरेंगे ॥१२॥ रावणके रनवासमें हजारोंस्त्रियेंअति ऋद्धियुक्त व अपने रत्नोंसे सुशोभितहैं, वह उन ऐसी स्त्रियोंको रनवासमेंही छोडकर तुम्हारेही वशहोंगे ॥१३॥ विकटा नामऔर एकराक्षसी बोलीकि जिनसे भयंकर विक्रम करके समरमें बार २ अनेक देव गन्धर्वऔर दानवोंको अमित वार पराजय किया है,वह राक्षसराज रावण अपने आप तुम्हारे निकट आया ॥ १४ ॥ तथापिहे अधमे!उन सर्वधन सम्पन्न

राक्षसोंके नाथ रावणकी भार्या होजानेमें तुम्हारी वासना क्योंनहीं होती ॥१५॥फिर दुर्मुखीनामक राक्षसी सीताजीसे बोलीकि, जिससे भयसे भीतहोकर सूर्य अधिकाईसे नहींतपते और वायु जोरसे नहीं चलती हे आकर्णलोचने (बडे २ नेत्रवाली !)तुम उसरावणके समीप क्यों नहीं जातीहो ? ॥ १६ ॥ जिसकी इच्छा होतेही वृक्षगण भयकेमारे फूलोंकी वर्षा, और पर्वत व मेघगण जलदिया करतेहैं ॥ १७॥हे भामिनि!उन राजराजेश्वर रावणकीभार्या होनेका तुम्हारा मन क्यों नहीं चाहता ? ॥१८॥हे भामिनि!देखो हमतो तुमसे तुम्हारे हितकीहीबात कहतीहैंहेशुचिस्मिते ! (मंदमुसकानवाली) तुमहमारी बातकोमानो नहीं तो तुम अपने जीवनकी रक्षान कर सकोगी ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां त्रयोविंशः सर्गः ॥ २३ ॥

ततस्तांदुर्मुखीनामराक्षसीवाक्यमब्रवीत् ॥ यस्यसूर्योनतपतिभीतोयस्यसमारुतः ॥ नवातिस्मायतापांगिकिंत्वंतस्यनतिष्ठसे ॥ १६ ॥ पुष्पवृष्टिंचतरवोमुमुचुर्यस्यवैभयात् ॥ पानीयं सुस्रुवुःशैलाजलदाश्चयदेच्छति॥१७॥तस्यनैर्ऋतराजस्यराजराजस्य भामिनि॥किंत्वंनकुरुषेबुद्धिंभार्यार्थेरावणस्यहि॥१८॥साधुतेतत्त्वतोदेविकथितंसाधु भामिनि॥गृहाणसुस्मितेवाक्यमन्यथानभविष्यसि॥१९॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०सुन्दरकांडे त्रयोविंशःसर्गः॥२३॥ततःसीतांसमस्तास्ताराक्षस्योविकृताननाः॥परुषंपरुषानर्हामूचुस्तद्वाक्यमप्रियम्॥१॥ किंत्वमंतःपुरेसीतेसर्वभूतमनोरमम्॥महार्हशयनोपेतेनवासमनुमन्यसे॥२॥ मानुषेमानुषस्यैवभार्यांत्वंबहुमन्यसे॥ प्रत्याहरमनोरामान्नैवंजातु भविष्यति॥३॥ त्रैलोक्यवसुभोक्तारंरावणंराक्षसेश्वरम्॥ भर्तारमुपसंगम्यविहरस्वयथासुखम् ॥ ४॥ मानुषीमानुषंतंतुराममिच्छसिशोभने ॥ राज्याद्भ्रष्टमसिद्धार्थंविप्लवंतमनिंदिते ॥ ५॥ राक्षसीनांवचःश्रुत्वासीतापद्मनिभेक्षणा ॥ नेत्राभ्यामश्रुपूर्णाभ्यामिदंवचनमब्रवीत् ॥ ६ ॥

इसके पीछेयह समस्त विकरालमुखी राक्षसियां सब एक साथ मिलकर कठोरवचन कहनेके अयोग्य जानकीजीसे कठोर व अप्रियवचन कहने लगीं ॥ १ ॥ हे सीते ! सर्व प्राणियोंका मन हरणकारी बडे २ मोलकी सेजोंसे युक्त अन्तःपुरमेंवास करनेकी तुम्हारी इच्छा क्योंनहीं होती ? ॥२॥ हे मानुषी ! मनुष्यकी भार्या होनेको तुम बहुत बडा समझतीहो, परन्तु अब तुम रामसे अपने मनको हटाओ, जोतुमने मनमें विचाराहै; वह कभी सिद्ध नहीं होगा हम तुमको मार डालेंगी ॥ ३ ॥ राक्षसोंके नाथ रावण त्रिलोकीका सुख भोग करतेहैं, सो तुम उसऐसे स्वामीके साथ यथासुखसे विहार करो ॥ ४ ॥ हे अनिन्दिते ! (निन्दारहित) तुम जोमानुषीहो, इसलियेही राज्यभ्रष्ट, लक्ष्मीरहितऔर विह्वल मनुष्य रामचन्द्रजीकीही कामना करतीहो ॥५॥ कमलदलसमान नेत्रवालीसीताजी

राक्षसियोंके यह वचन सुनकर नेत्रोंमें जलभरकर बोलीं ॥६॥ तुम लोग सब मिलकर जो यहवचन कहती हो यह लोकोंको विरुद्ध और पापहोनेके कारण हमारे मनमें स्थान नहीं पाते ॥७॥ मानुषी कभी राक्षसकी स्त्री नहीं होसकती चाहे सब मिलकरहमें खाडालो, परंतु तुम जो कहतीहो वह हम कभीन करेंगी ॥८॥ दीनहो चाहे राज्यहीन होंजो हमारे स्वामीहैं, वही हमारेगुरु हैं;सूर्यकीस्त्री सुवर्च्चलाजैसे सूर्यकी,वैसेही हमनित्यअपने स्वामीकी अनुरागनीहैं ॥९॥जिस प्रकार यशस्विनी शचीइंद्रजीमें प्रीतिरखतीं,जैसे अरुंधती वसिष्ठजीमें, रोहिणी जिसप्रकार चन्द्रमाजीमें ॥१०॥ लोपामुद्रा जैसे अगस्त्यजीमें, सुकन्या जिसप्रकार च्यवनजीमें सावित्रीजिस प्रकार सत्यवानमें, श्रीमती जैसे कपिलदेवजीमें ॥११॥ दमयंती जिसप्रकार सौदासमें,केशिनी जैसे सगरमें,और भी मकुमारी दमयंती

यदिदंलोकविद्विष्टमुदाहरतसंगताः ॥ नैतन्मनसिवाक्यंमेकिल्बिषंप्रतितिष्ठति ॥७॥ नमानुषीराक्षसस्यभार्याभवितुमर्हति ॥ कामंखादतमां सर्वानकरिष्यामिवोवचः ॥ ८ ॥ दीनोवाराज्यहीनोवायोमेभर्तासमेगुरुः ॥ तंनित्यमनुरक्तास्मियथासूर्यंसुवर्चला ॥ ९ ॥ यथाशचीमहाभागा शक्रंसमुपतिष्ठति ॥ अरुंधतीवसिष्ठंचरोहिणीशशिनंयथा ॥ १० ॥ लोपामुद्रायथागस्त्यंसुकन्याच्यवनंयथा ॥ सावित्रीसत्यवंतंचकपिलंश्री मतीयथा ॥ ११ ॥ सौदासंमदयंतीवकेशिनीसगरंयथा ॥ नैषधंदमयंतीवभैमीपतिमनुव्रता ॥१२॥ तथाहमिक्ष्वाकुवरंरामंपतिमनुव्रता ॥ सीता यावचनंश्रुत्वाराक्षस्यःक्रोधमूर्च्छिताः ॥ भर्त्सयंतिस्मपरुषैर्वाक्यैरावणचोदिताः ॥१३॥ अवलीनः सनिर्वाक्योहनूमाञ्छिंशपाद्रुमे ॥ सीतां संतर्जयंतीस्ताराक्षसीरशृणोत्कपिः ॥ १४ ॥ तामभिक्रम्यसंरब्धावेपमानांसमंततः ॥ भृशंसंलिलिहुर्दीप्तान्प्रलंबान्दशनच्छदान् ॥ १५ ॥ ऊचुश्चपरमक्रुद्धाःप्रगृह्याशुपरश्वधान्॥नेयमर्हतिभर्तारंरावणंराक्षसाधिपम्॥१६॥साभर्त्स्यमानाभीमाभीराक्षसीभिर्वरांगना ॥ साबाष्पमपमा र्जतीशिंशपांतामुपागमत् ॥ १७ ॥

जिसप्रकार अपने स्वामी नलमें प्रीति रखतीथी ॥१२॥ वैसेहीहम इक्ष्वाकुनाथ अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीकी अनुव्रता हैं, सीताजीके ऐसे वचन सुनकर राक्षसियां क्रोधसे मूर्च्छित हो गईं और रावणकी आज्ञासे कठोर वचन कह २ करजानकीजीका अपकार करने लगीं॥१३॥ हनुमान्जी चुपचाप रह कर शिंशपावृक्षके पत्रोंमेंछिपे हुए बैठे थे, सीता जीको जो राक्षसियोंने डराया धमकाया वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीने वहसबसुना ॥१४॥वह सब क्रोधसे भरी हुई राक्षसियें, कम्पित शरीरवाली जानकीजीके निकटआय उनकोचारों ओरसे घेरअपने लंबे२अधर वारंवार जीभसे चाटनेलगीं ॥ १५ ॥औरमहाक्रोधकर अपने २ हाथोंमें फरशा ग्रहण कर बोलीं, कि, यह सीता राक्षस राज रावणको अपना स्वामी बनानेके योग्य नहीं है ॥ १६ ॥ जब भयंकररूप वाली राक्ष

सियें इस प्रकारसे अपमान करने लगीं; तब सीताजी आँसू पोंछती २ उसशिंशपा वृक्षके निकट आने लगीं, जहाँ महावीरजीथे ॥१७॥ इसके पीछे राक्षसियोंके वशमें पड़ी विशाल नेत्रवाली सीताजी इसी शिंशपावृक्षके निकट आयकरशोकमें मग्न हो बैठ गई ॥१८॥ और वह सब राक्षसियें चारों ओरसे उन दुर्बल,मलीन वदन; वा मलीनही वस्त्र धारण किये जानकीजी की भर्त्सना करने लगीं ॥१९॥ जब जानकीजी बैठ गई तब भयंकर दांत युक्त क्रोधाय मान मूर्ति अतिगम्भीर पेटवाली विनता नाम राक्षसी क्रोधसे बोली ॥२०॥ हे सीता! तुमनेअबतक जोइतना स्नेह अपने स्वामीपरदिखाया, सो बहुत हो चुका परन्तु हेभद्रे! सबकार्योंमें ही अति मात्र अचरण करना केवलदुखःकेही निमित्त होता है॥ २१ ॥ हे भद्रेहम तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हुईहैं तुम्हारा मंगल होवे मनुष्यको जिस प्रकारका आचरण करना कर्त्तव्य है वह तो किया परन्तु हे मैथिलि ! अब जो हम तुमको हितकारी वचन कहतीहैं, उनको तुम पालन

ततस्तांशिंशपांसीताराक्षसीभिःसमावृता ॥ अभिगम्यविशालाक्षीतस्थौशोकपरिप्लुता ॥ १८ ॥ तांकृशांदीनवदनांमलिनांबरवासिनीम् ॥ भर्त्सयांचक्रिरेभीमाराक्षस्यस्ताःसमंततः ॥ १९ ॥ ततस्तुविनतानामराक्षसीभीमदर्शना ॥ अब्रवीत्कुपिताकाराकरालानिर्णतोदरी ॥ २० ॥ सीतेपर्याप्तमेतावद्भर्तुःस्नेहःप्रदर्शितः ॥ सर्वत्रातिकृतंभद्रेव्यसनायोपकल्पते ॥२१॥ परितुष्टास्मिभद्रंतेमानुषस्तेकृतोविधिः ॥ ममापितुवचः पथ्यंश्रुवंत्याःकुरुमैथिलि ॥२२॥ रावणंभजभर्तारंभर्तारंसर्वरक्षसाम् ॥ विक्रांतमापतंतंचसुरेशमिववासवम् ॥२३॥ दक्षिणंत्यागशीलंचसर्वस्य प्रियवादिनम् ॥ मानुषंकृपणंरामंत्यक्त्वारावणमाश्रय॥ २४ ॥ दिव्यांगरागावैदेहिदिव्याभरणभूषिता ॥ अद्यप्रभृतिलोकानांसर्वेषामीश्वरीभव ॥ २५ ॥ अग्नेःस्वाहायथादेवीशचीवेंद्रस्यशोभने॥ किंतेरामेणवैदेहिकृपणेनगतायुषा ॥२६॥ एतदुक्तंचमेवाक्यंयदित्वंनकरिष्यसि॥अस्मि न्मुहूर्तेसर्वास्त्वांभक्षयिष्यामहेवयम् ॥२७॥

करो ॥ २२॥ वह यह वचनहैं, कि तुमसब राक्षसोंके पति रावणको पतिभावसे भजो।वह सुरेश्वर इंद्रजीकी नाईं महापराक्रमके सहित रणमें शत्रुओंके सामने हुआ करते हैं ॥ २३ ॥ वह रावण सबके प्रति अनुकूल दाता, और सबसे प्रिय बोलने वाले हैं राम तो मनुष्य हैं तिसपर महाबुरी अवस्थासे वह घिर रहे हैं, सो तुम उनको त्याग करके रावणका आश्रय करो ॥ २४ ॥ हे विदेह नन्दिनि ! तुम अपने शरीरमें दिव्य अंगराग लगाओ,और दिव्य वस्त्राभूषणोंसे भूषित होकर, सब लोकोंकी ईश्वरी (स्वामिनी) होवो॥ २५ ॥ जैसे कि अग्निकी स्त्री स्वाहा, और इन्द्रजीकी स्त्री शची उसके साथसेशोभित होती हैं ऐसे तुम रावणके साथ शोभित होगी । हे वैदेही!रामथोडी आयुवाले और बडीबुरी अवस्थामें पडेहैं, इसलिये रामसे तुम्हारा क्या प्रयोजन है?॥२६॥ हमारे

कहे हुए इन वचनोंका जो तुम प्रतिपालन न करोगी, तो इसी समय हम सब मिलकर तुमको भक्षणकर जाँयगी ॥ २७ ॥ इसके पीछे विकटा नामक बडेलम्बे स्तनवाली और एकराक्षसी क्रोधितहोय मुक्का उठाय तर्जनाकरतीहुई जानकीजीसे बोली ॥ २८॥ मूढे मैथिलि! तुमने अनेक अयोग्य अनर्थके वचन कहे, परन्तु तुमको अतिक्षुद्र समझ और केवल दयाकरके वह सब वचन सहनकर लिये गयेहैं॥ २९॥परन्तु हम लोगोंके समयानुसारकहे हुये वचन अनसुने करतीहो, यह तुम्हारे लिये अच्छानहीं होताहै, हे मैथिलि ! तुम समुद्रके पार लाई गईहोयहांपर और कोई नहीं आसकता ॥ ३० ॥ और तिसपर तुम रावणकेघोर रनवासमें प्रवेश किये हुई हो, यहां पर तुम रावणके गृहमें बन्दीहो और हम सब तुमको रखाती हैं॥ ३१ ॥और की तो क्या चलाई साक्षात् इन्द्रजीभी तुमको यहांसे नहीं छुटाय सकते।

अन्यातुविकटानामलंबमानपयोधरा॥अब्रवीत्कुपितासीतांमुष्टिमुद्यम्यतर्जती॥२८॥बहून्यप्रतिरूपाणिवचनानिसुदुर्मते॥अनुक्रोशान्मृदुत्वाच्च सोढानितवमैथिलि ॥ २९ ॥ नचनःकुरुषेवाक्यंहितंकालपुरस्कृतम् ॥ आनीतासिसमुद्रस्यपारमन्यैर्दुरासदम् ॥ ३० ॥ रावणांतःपुरेघोरेप्रविष्टाचासिमैथिलि ॥रावणस्यगृहेरुद्धाअस्माभिस्त्वभिरक्षिता ॥३१॥ नत्वांशक्तःपरित्रातुमपिसाक्षात्पुरंदरः ॥ कुरुष्वहितवादिन्यावचनंममसैथिलिः ॥ ३२ ॥ अलमश्रुनिपातेनत्यजशोकमनर्थकम् ॥ भजप्रीतिंप्रहर्षंचत्यजंतीनित्यदैन्यताम् ॥ ३३ ॥ सीतेराक्षसराजेनपरिक्रीडयथासुखम् ॥ जानीमहेयथाभीरुस्त्रीणांयौवनमध्रुवम् ॥ ३४ ॥यावन्नतेव्यतिक्रामेत्तावत्सुखमवाप्नुहि॥उद्यानानिचरम्याणिपर्वतोपवनानिच ॥३५॥ सहराक्षसराजेनचरत्वंमदिरेक्षणे ॥ स्त्रीसहस्राणितेदेविवशेस्थास्यंतिसुंदरि ॥३६॥ रावणंभजभर्तारंभर्तारंसर्वरक्षसाम्॥उत्पाटचवातेहृदयंभक्षयिष्यामिमैथिलि ॥ ३७ ॥ यदिमेव्याहृतंवाक्यंनयथावत्करिष्यसि ॥ ततश्चंडोदरीनामराक्षसीक्रूरदर्शना ॥ ३८ ॥

हे मैथिली! हम जोतुमको हितके उपदेशदेतीहैं उनउपदेशोंको तुममानो ॥३२॥आंसू गिरानेसेक्या काम चलेगा?वृथा शोकको छोडदो, प्रसन्न होकर आनंदमनाओ और इस नित्यके दीनभावका त्याग करदो ॥ ३३ ॥ हेसीते! तुमराक्षसराजकेसाथ सुख व आनंदसे विहार करो । हे भीरु ! हम जानती हैं कि, स्त्रियोंका यौवन बहुत जल्दी बीत जाताहै॥३४॥ इस लिये ही कहती हैं कि, यौवनके न बीतते २तुम सुखकोप्राप्त करो । तुम रमणीक उद्यान, उपवन और पर्वतोंमें ॥ ॥ ३५ ॥मतवाले नयनवालीहो राक्षसराज रावणकेसाथविहार करो ।हेजानकी ! हेदेवि!तब सहस्रों स्त्रियाँ तुम्हारे वशमेंरहा करेंगी ॥ ३६ ॥इसलिये तुम सर्व राक्षसोंकेमालिक रावणको अपनास्वामी बनाओ । नहीं तोहे मैथिली!हम तुम्हारा कलेजानिकालकर भक्षण कर जायँगी ॥ ३७ ॥ यह तब करेंगी कि, जब

तुम हमारा कहान मानोगी । फिर उसके पीछेक्रूर दर्शनवाली चण्डोदरी नामक राक्षसी ॥३८॥ बडेभारी शूलको घुमातीहुई सीताजीसे यह बोली कि, इन मृग शावकनयनी और भयसे कम्पायमान स्तनवाली सीताजीको ॥ ३९ ॥ रावणसे डरी हुई देख हमारे मनमें अतिबुरी इच्छा हुईहै कि, इनके उदरके दहने बायें दोनों भाग छाती, गला हृदयकंधे नसे ॥ ४० ॥ दूसरेअंग और मस्तकभी हम भक्षणकर जांय ऐसी मति हमारी हुईहै । और प्रघसा नाम राक्षसी बोली॥४१॥ कि,हम इस नृशंसाका गला दबालें सो तुमअब बैठीहुई क्या करतीहो ? फिर तुम जायकर राजा रावणको खबर करोकि; वह मानुषी मरगई इसमें संदेह नहीं कि, फिर राजायही कहेंगेकि, तुमसब मिलकर उसको खाडालोफिर अजामुखी नामक राक्षसी बोलीकि, तुम्हारा यह झगडातो मुझे अच्छा नहीं लगता तुम इसको कतरकर बराबर २ मांसके पिंड बनाओ, फिर हमसब बराबर हिस्सेकर लेंगी ॥४२॥ इसलिये पहले मदिरा पीनेको और बहुतसारे हार पह

भ्रामयंतीमहच्छूलमिदंवचनमब्रवीत् ॥ इमांहरिणशावाक्षींत्रासोत्कंपपयोधराम् ॥३९॥ रावणेनहृतांदृष्ट्वादौर्हृदोमेमहानयम् ॥यकृत्प्लीहंमह त्क्रोडंहृदयंचसबंधनम्॥४०॥ गात्राण्यपितथाशीर्षंखादेयमितिमेमतिः॥ततस्तुप्रघसानामराक्षसीवाक्यमब्रवीत् ॥४१॥“ कंठमस्यानृशंसायाः पीडयामःकिमास्यते ॥ निवेद्यतांततोराज्ञेमानुषीसामृतेतिच॥१॥नात्रकश्चिच्चसंदेहःखादतेतिसवक्ष्यति॥ ततस्त्वजामुखीनामराक्षसीवाक्यमब्र वीत् ॥२॥ ” विशस्येमांततःसर्वान्समान्कुरुततपिंडकान् ॥ विभजामततःसर्वाविवादोमेनरोचते॥४२॥पेयमानीयतांक्षिप्रंमाल्यंचविविधंबहु ॥ ततःशूर्पणखानामराक्षसी वाक्यमब्रवीत् ॥४३॥ अजामुख्यायदुक्तंवैतदेवममरोचते ॥ सुराचानीयतांक्षिप्रंसर्वशोकविनाशिनी॥४४॥मानुषंमां समासाद्यनृत्यामोऽथनिकुंभिलाम्॥एवंनिर्भर्त्स्यमानासासीतासुरसुतोपमा ॥ राक्षसीभिर्विरूपाभिर्धैर्यमुत्सृज्यरोदिति ॥४६॥ इत्यार्षे श्रीम द्रामायणे वाल्मीकिये आदिकाव्ये च० सा०सुन्दरकांडे चतुर्विंशः सर्गः ॥२४॥ अथतासांवदंतीनांपरुषंदारुणंबहु ॥ राक्षसीनामसौम्यानां रुरोदजनकात्मजा ॥ १ ॥ एवमुक्तातुवैदेहीराक्षसीभिर्मनस्विनी ॥ उवाचपरमत्रस्ताबाष्पगद्गदयागिरा ॥ २ ॥

नेको लाओ । फिर इसके पीछे शूर्पणखा नाम राक्षसी बोली ॥ ४३ ॥ कि, आजा मुखीकी यह बात तो हमको भी अच्छी लगतीहै, इस लिये सर्व शोक नाश करनेवाली सुरा शीघ्रही तुम लेआवो ॥ ४४ ॥ हम मनुष्यके मांसकोचख उसका स्वादले देवी निकुंभिलाके मंदिरमें जाय नाचेंगी । जबकुरूपवाली राक्ष सियोंने इस प्रकार के वचन कह २ कर जानकीजी को धमकाया तब देवताओंके समान सुन्दरी सीताजी धीरज छोडकर रोने लगीं ॥ ४५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० सुन्दरकांडे भाषायां चतुर्विंशः सर्गः ॥ २४ ॥ जब यह सब भयंकर रूपवाली राक्षसियें विविध भाँतिके कठोर वचन कहने लगीं तब श्रीजानकीजी रोदन करने लगीं ॥ १ ॥ उन राक्षसियोंके इस प्रकार कहने पर मनस्विनी जानकीजी त्रासित होकर गद्गद वाणीसे बोलीं ॥ २ ॥

कि मानुषी कभी राक्षसकी स्त्री नहीं हो सकती। चाहो तुम सबमिलकर हमकोखाजाओ परंतु हम म्हारे वचनोंका पालन किसी प्रकारसे न कर सकेगी॥३॥ रावण करकेतिरस्कार पायऔर राक्षसियोंके बीचमेंबैठनेसेदेव कन्याओंके समानसीताजी शोकसे कातरहोकर किसीप्रकार शांतिप्राप्त करनेको समर्थ न हुई॥४॥ वनमें भेडियोंसे घिरीहुई अपने झुण्डसे बिछुडी हरिणीके समान मानो आप अपने शरीरमें सिकुडकर पैठीजातीहुई जानकी अधिक कंपायमानहोने लगीं॥५॥ जानकीजी अशोक वृक्षकी बडीभारी फूली हुई डालका आश्रय करके शोकमें मनको डुबाये अपने स्वामीकी चिंता करने लगीं ॥ ६ ॥ आंसुओंकी धारसे बडे २ दोनों पयोधर गीले हो गये थे, तथापिइतनी चिंता करके भी जानकीजी किसी प्रकार शोकके पार न जाय सकीं ॥ ७ ॥जानकीजी प्रबल पवनके

नमानुषीराक्षसस्यभार्याभवितुमर्हति ॥ कामंखादातमांसर्वानकरिष्यामिवोवचः ॥३॥ साराक्षसीमध्यगतासीतासुरसुतोपमा ॥ नशर्मलेभेशोकार्तारावणेनचभर्त्सिता ॥ ४ ॥ वेपतेस्माधिकंसीताविशंतीवांगमात्मनः ॥ वनेयूथपरिभ्रष्टामृगीकोकैरिवार्दिता ॥५॥ सात्वशोकस्यविपुलां शाखामालंब्यपुष्पिताम् ॥ चिंतयामासशोकेनभर्तारंभग्नमानसा ॥६॥ सास्नापयंतीविपुलौस्तनौनेत्रजलस्रवैः ॥ चिंतयंतीनशोकस्यतदन्तम धिगच्छति॥७॥सावेपमानापतिताप्रवातेकदलीयथा ॥राक्षसीनांभयत्रस्ताविवर्णवदनाऽभवत॥८॥तस्याःसादीर्घबहुलावेपंत्याःसीतयातदा॥ ददृशेकंपितावेणीव्यालीवपरिसर्पती ॥ ९ ॥ सानिःश्वसतीशोकार्ताशोकोपहतचेतना ॥ आर्ताव्यसृजदश्रूणिमैथिलीविललापच ॥ १० ॥ हारामेतिचदुःखार्ताहापुनर्लक्ष्मणेतिच ॥ हाश्वश्रुर्ममकौसल्येहासुमित्रेतिभामिनी ॥ ११ ॥ लोकप्रवादःसत्योयंपंडितैःसमुदाहृतः ॥ अकालेदुर्लभोमृत्युःस्त्रियावापुरुषस्यवा ॥ १२ ॥ यत्राहमाभिःक्रूराभीराक्षसीभिरिहार्दिता ॥ जीवामिहीनारामेणमुहूर्तमपिदुःखिता ॥ १३ ॥

वेगसे गिरे हुए केलेके सामान गिर कर काँपने लगीं,राक्षसियोंके भयसे भीत होनेके कारण उनका चन्द्रमासा मुख मलिन हो गया ॥ ८ ॥ शरीरके काँपनेसे जानकीजीकी बडी लंबीवेणीभी कम्पायमानहोने लगी,उस समयऐसाबोध हुवा मानो सर्पिणी इधर उधरघूम रहीहै ॥९॥ मिथिलेशराजकुमारी जानकीजी शोकसे चेतनारहित और दुःखमें भरनेके कारण कातरहो फूट२कर आंसू गिराय रुदनकर विलाप करने लगीं ॥१०॥ वहबोलीं हा राम हा!लक्ष्मण! हा हमारी प्यारी सासु कौसल्याजी!हा सुमित्रे ! तुम कहां हो॥११॥पंडितोंकी नियतकी हुईयह कहावत सत्यहैकि,स्त्रीहो या पुरुषहो,अकालमें सबकोही मृत्यु दुर्लभ है ॥१२॥ जो ऐसा न होता तो क्या हम श्रीरामचन्द्रजी के विना इन सब राक्षसियोंसे सताई जाकर एक निमेष जीवन धारण कर सकतीं ॥ १३ ॥

हमारा पुण्यब हुत थोडा है, समुद्रके मध्य वायुके वेगसेटकराकर बोझसेभरी नावजिस प्रकारडूब जाती वैसेही है हमको दीनाहीना और अनाथाकी समानअपना जीवन गँवानापडामध्यमें ॥ १४॥ एकतो हमअपने प्राणकेप्यारे पतिकोनहीं देखती और दूसरेराक्षसियोंकेवशमें पडी हैं।इस लियेहमको जलकेवेगसे टूटतेहुए नदीके किनारेकी समान शोक सन्तापसे टकराना पडा है ॥ १५ ॥ वह हमारे कमलदलनेत्र सत्यवादीकृतज्ञ प्राणनाथ;सिंहके समान विक्रमसे गमन करते हैंजो उनकेदर्शनकरते होंगे वही धन्य हैं ॥ १६ ॥तेज विष खायकर जीवित रहनाजिस प्रकार असंभवहै, वैसेहीउन यशस्वी आत्माके जाननेवाले श्रीरामचन्द्रजीके बिहरमें हमारा जानाभी नहीं हो सकता ॥ १७ ॥ नजाने पहले जन्ममें हमने कौन महापाप किये थे किजिनका घोर महादुःख अब हम भोग रही हैं ॥ १८ ॥ इस लिये

एषाल्पपुण्याकृपणाविनशिष्याम्यनाथवत् ॥ समुद्रमध्येनौःपूर्णावायुवेगैरिवाहता॥१४॥भर्तारंतमपश्यंतीराक्षसीवशमागता॥सीदामिखलुशोकेनकूलंतोयहितंयथा ॥१५॥ तंपद्मदलपत्राक्षंसिंहविक्रांतगामिनम् ॥ धन्याःपश्यंतिमेनाथंकृतज्ञंप्रियवादिनम् ॥१६॥ सर्वथातेनहीनायारामेणविदितात्मना ॥ तीक्ष्णंविषमिवास्वाद्यदुर्लभंममजीवनम् ॥ १७ ॥ कीदृशंतुमहापापंमयादेहांतरेकृतम् ॥ येनेदंप्राप्यतेघोरंमहादुःखंसुदारुणम्॥१८॥जीवितंत्यक्तुमिच्छामिशोकेनमहतावृता॥राक्षसीभिश्चरंक्षत्यारामोनासाद्यतेमया॥१९॥धिगस्तुखलुमानुष्यंधिगस्तुपरवश्यताम्॥नशक्यंयत्परित्यक्तुमात्मच्छंदनजीवितम्॥२०॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे पंचविंशःसर्गः॥२५॥
प्रसक्ताश्रुमुखीत्येवंब्रुवतीजनकात्मजा॥अधोगतमुखीबालाविलप्तुमुपचक्रमे ॥१॥ उन्मत्तेवप्रमत्तेवभ्रांतचित्तेवशोचती ॥ उपावृत्ताकिशोरीव विचेष्टंतीमहीतले ॥ २ ॥

बडे भारीशोकमेंपड हम अपने जीवनकोत्याग करना चाहतीहैं परंतु किस तरह शरीर छोडें ?क्योंकियह राक्षसियें चारों ओरसे हमको रखाती हैं जीवनभी नहीं छूटता, और प्राणप्यारे रामचन्द्रजी भीनहीं मिलते ॥१९॥ पराये वशमेंपडेहुए मनुष्यजन्मको धिक्कारहै, क्योंकि अपनी इच्छा होनेपरभी पराधीनताके बशहो मनुष्य अपने जीवनको त्याग नहीं कर सकता ❋ ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां पंचविंशः सर्गः ॥ २५ ॥
यह वचन कहते २ जानकीजीका वदनमण्डल आंसुओंके जलसे गीला हो गया वह बाला नीचेको मुखकर फिर विलाप करने लगीं ॥१॥ जानकीजी बोझ उतारनेसे पृथ्वीपर लोटतीहुई घोडीके समान, भूमिमें गिर और लोट२कर विलापकरनेलगी; उस समय भूत लगेकी समान,उन्मत्तके समान, औरपित्तके उभड

❋ श्री रघुनन्दन लेहु उबारी ।। महा विपत संकटमें रोवै यहदासी मनवचन तुम्हारी ।।१।। प्राणाधार न क्यों सुधलेते पतितउधारन बिरद बिचारी ।। २ ।। जिमि खर दूषणको संहारो जंसेगौतम नारि उधारी ।। ३ ।। जंसे कठिन महा धनु तोरयो सकलजगत कीरति विस्तारी ।। ४ ।। मिश्र ताहि विधि आन छुडाओ कृपासिंधु गुणधाम खरारी ।। ५ ।।

आनेसेप्रमत्त और भ्रान्त चित्तकेसमान, जानकीजी जान पडने लगीं ॥ २ ॥ जानकीजी विलाप करती हुई बोलीं कि, हम श्रीरामचन्द्रजीकी स्त्रीहैं कामरूपी राक्षस मारीचश्रीरामचन्द्रजीको मायासे मोहितकरजब आश्रमसे दूरले गयाथा; तब उसअवसरमें रावणसूने आश्रममें प्रवेश कर बलसहित हरण करके हमको यहां ले आयाहै, उस समय हमबडे शब्दसे कितनी रोई ॥३॥ इस समयहम राक्षसियोंके वशमें पडी हैं यहसब हमारा महाकठोर अपमान करतीहैं । हम बडेही दुःखको पाय व्याकुलहो शोकमें डूब गई हैं; इस कारण अब जीवित रहनेकी हमारी कामना नहीं ॥ ४ ॥ जब कि हम महारथी श्रीरामचन्द्रजीके बिना राक्षसियोंके बीचमें बसतीहैं; तब धन, भूषण और जीवनसे हमको क्या प्रयोजन है ? ॥ ५ ॥ निश्चय जान पडता है कि हमारा हृदय पत्थरके समान कठिन या अजर अमर है इसी कारणसे इतनादुःख पायकरभीनहीं फटजाता ॥६॥ जबकि, हमउन श्रीरामचन्द्रजीके बिना एकमूहूर्त्तभी जीवनधारण करनेको समर्थ हुईहैं तब हमाराजीवन पापसे पूर्णहै व अनार्या और सत्यरहित हमको धिक्कारहै ॥७॥ निशाचर रावणकी कामना करनीतो एक ओररही हमतो उसको अपने

राघवस्यप्रमत्तस्यरक्षसाकामरूपिणा ॥ रावणेनप्रमथ्याहमानीताक्रोशतीबलात्॥ ३ ॥ राक्षसीवशमापन्नाभर्त्स्यमानाचदारुणम् ॥ चितयंती सुदुःखार्तानाहंजीवितुमुत्सहे ॥४॥ नहिमेजीवितेनार्थोनैवार्थैर्नचभूषणैः ॥ वसंत्याराक्षसीमध्येविनारामंमहारथम्॥५॥ अश्मसारमिदंनूनमथवाप्यजरामरम्॥हृदयंममयेनेदनदुःखेनविशीर्यते॥६॥धिङ्मामनार्यामसतींयाहंतेनविनाकृता॥मुहूर्तमपिजीवामिजीवितंपापजीविका ॥७॥ (काचमेजीवितेश्रद्धासुखेवातंप्रियंविना ॥ भर्तारंसागरान्तायावसुधायाःप्रियंवदम् ॥१॥ भिद्यतांभक्ष्यतांवापिशरीरंविसृजाम्यहम्॥ नचाप्यहंचिरंदुःखंसहेयंप्रियवर्जिता ॥ २ ॥) चरणेनापिसव्येननस्पृशेयंनिशाचरम् ॥ रावणंकिंपुनरहंकामयेयंनिशाचरम् ॥ ८ ॥ प्रत्याख्यानंनजानातिनात्मानंनात्मनःकुलम् ॥ योनृशंसस्वभावेनमांप्रार्थयितुमिच्छति ॥ ९ ॥ छिन्नाभिन्नाप्रभिन्नावादीप्तावाग्नौप्रदीपिता ॥ रावणंनोपतिष्ठेयंकिंप्रलापेनवश्चिरम् ॥१०॥ ख्यातःप्राज्ञःकृतज्ञश्चसानुक्रोशश्चराघवः ॥ सद्वृत्तोनिरनुक्रोशःशंकेमद्भाग्यसंक्षयात् ॥ ११ ॥

बांयेचरणसेभी न छुयेंगी ॥८॥वह दुरात्मा निशाचर काममोहसे मोहितहोनेके कारण नहीं जानता कि,हमने बारम्बार उसका निरादरकियाहै। जोअपने कुल और अपने स्वरूपको नहीं जानता वह अपने कुटिलस्वभावके वशहो हमारे प्राप्त होनेकी इच्छाकरताहै॥९॥ तुम लोगोंके निकटअधिक वृथा कहनेका प्रयोजन नहीं है, तुमसब हमको टुकडे२कर डालो, विदीर्ण कर डालो अथवा अग्निके तापसे तपाओ, या अग्निमें भस्मकरदो, तथापि हम रावणका भजन नहीं करेंगी ॥ १० ॥ श्रीरामचन्द्रजीविज्ञ, कृतज्ञ,दयालु और सत्स्वभावीविख्यात हैं तथापि वहजो निर्दयी हुयेहैंसो यहकेवल हमारेही भाग्यका दोषजान पडता है॥११॥

जिन्होंने अकेलेही जनस्थानमें चौदह हजार राक्षसोंका बिनाश कर दिया है वह क्या यहांसे हमारा उद्धार नहीं करेंगे ? ॥ १२ ॥ "अल्पवीर्य रावणने हमको रोक तो रक्खाहै परन्तु हमारे स्वामी निश्चयही उस रावणको संग्राममें संहार करडालेंगे, जिन्होंने दंडकारण्यमें राक्षस प्रधान विराधको मारडाला है, वह श्रीरामचन्द्रजी क्या हमको प्राप्त करनेमें समर्थ नहोंगे" यद्यपि लंका समुद्रके मध्यमेंहोनेसे और लोगों करके जीतनेके अयोग्य है परंतु इस स्थानमें श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंकी गति नहीं रुक सकेगी ॥ १३ ॥ श्रीरामचन्द्रजी दृढ पराक्रमवान्हैं और हम भी उनके अनुकूल भार्याहैं, तथापि वहश्रीरामचन्द्रजी अबतक हमारा उद्धार नहींकरते, इसका कारण क्याहै ? ॥१४॥ हम जानतीहैंकि, हमाराइस स्थानमें रहना अभीतक लक्ष्मणजीकेबडे भाईने नहीं जानाहै, जो उन्होंने जान लिया होता तो क्या वह तेजस्वी हमारी दुर्दशा और अपमान क्यों सहते कभी नहीं ॥ १५ ॥ उसगृध्रराज जटायुको भी रावणने संग्राममें मार डाला, कि

राक्षसानांजनस्थानेसहस्राणिचतुर्दश ॥ एकेनैवनिरस्तानिसमांकिंनाभिपद्यते ॥१२॥ " निरुद्धारावणेनाहमल्पवीर्येणरक्षसा ॥ समर्थःखलुमे भर्तारावणंहंतुमाहवे ॥ विराधोदंडकारण्येयेनराक्षसपुंगवः ॥ रणेरामेणनिहतःसमांनाभ्यवपद्यते ॥"॥ काममध्येसमुद्रस्यलंकेयंदुष्प्रधर्षणा ॥ नतुराघवबाणानांगतिरोधोभविष्यति ॥१३॥ किंनुतत्कारणंयेनरामोदृढपराक्रमः ॥ रक्षसापहृतांभार्यामिष्टांयोनाभिपद्यते ॥१४॥ इहस्थांमां नजानीतेशंकेलक्ष्मणपूर्वजः॥जानन्नपिसतेजस्वीधर्षणांमर्षयिष्यति॥१५॥हृतेतिमांयोऽधिगत्यराघवायनिवेदयेत् ॥गृध्रराजोऽपिसरणेरावणेन निपातितः ॥ १६ ॥ कृतंकर्ममहत्तेनमांतदाभ्यवपद्यता ॥ तिष्ठतारावणवधेवृद्धेनापिजटायुषा ॥ १७ ॥ यदिमामिहजानीयाद्वर्तमानांहिराघवः ॥ अद्यबाणैरभिक्रुद्धःकुर्याल्लोकमराक्षसम् ॥१८॥निर्दहेच्चपुरींलंकांनिर्दहेच्चमहोदधिम् ॥ रावणस्यचनीचस्यकीर्तिं नामचनाशयेत् ॥१९॥ ततोनिहतनाथानांराक्षसीनांगृहेगृहे ॥ यथाहमेवंरुदतीतथाभूयोनसंशयः ॥ २० ॥ अन्विष्यरक्षसांलंकांकुर्याद्रामःसलक्ष्मणः ॥ नहिताभ्यां रिपुर्दृष्टोमुहूर्तमपिजीवति ॥२१॥

जो हमारे हरण करनेका समाचार श्रीरामचन्द्रजीको दे सकते ॥ १६ ॥ जटायुनेबडा भारी कार्य कियाथा, वह वृद्ध होनेपरभी हमारे प्रति अनुग्रह करकेरावणका वध करनेके लिये तैयार हुएथे ॥ १७ ॥ यदि श्रीरामचन्द्रजी यह जान लें कि हम इस स्थानमें रोंकीहुई हैं, तो वह उमी समय बाणसे पृथ्वीको राक्षसरहित करदेते ॥ १८ ॥ लंकापुरीको भस्म कर डालते, महा समुद्रकोभी सुखायदेते, वरन् नीचाशय रावणकानाम उसकी कीर्तिके साथ नाश करते ॥ १९ ॥ इसमें कुछ सन्देहनहीं कि, जब श्रीरामचंद्रजी ऐसा करते तो नाथहीन राक्षसियोंके घर २ में रोनेका ऐसा शब्द होता कि जिस प्रकार हम रोया करती हैं ॥२०॥ श्रीरामचन्द्रजी ढूँढतेभालते लक्ष्मणजीके साथ लंकाको अवश्यइस प्रकारका करेंगेजब वहदोनोंजनदेख लेंगेतब उनकाशत्रु एक मुहूर्त्तकभी जीता न बचेगा २१

बहुत जल्दी श्मशानभूमिके समान लंका श्मशान हो जायगी; लंकाके सब मार्गोंमें चिता धूम उडेगा, औरगृध्रोंके झुण्डके झुण्ड लंकापर गिरेंगे ॥ २२ ॥
हमारा यह मनोरथ बहुत शीघ्र सफल होगा, हमारे यह वचन इस समय तुम लोगोंको विपरीतसे लगतेही होंगे;परंतु याद रक्खो कि यही तुम्हारे अशुभ
चिह्न हैं ॥ २३ ॥ विशेष करकेदेखा जाताहै कि लंकामें जिस प्रकारके अशुभ चिह्न दृष्टि आतेहैं, इससे स्पष्ट जान पडताहै कि लंका शीघ्रही श्रीहीन होगी
॥ २४ ॥निश्चयही पापपरायण राक्षसराज रावणके मरनेपर आक्रमण करनेके अयोग्ययह लंका विधवा स्त्रीके समान शुष्क और श्रीहीनहो जायगी॥ २५ ॥
आज जो लंकानगरी विविध भाँतिके पुण्योत्सवोंसे परिपूर्णहो रहीहै, यही लंका रावण और राक्षसोंके मरनेपर पतिहीन स्त्रीके समान नष्ट हो जायगी ॥२६ ॥
निश्चयही हम बहुत जल्दी राक्षस कन्यागणोंके दुःखसे आर्त होकर रोदन करना घर घरमें सुनेंगी ॥ २७ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके सायकोंसेराक्षस श्रेष्ठोंके मारेजाने

चिताधूमाकुलपथागृध्रमंडलमंडिता ॥अचिरेणैवकालेनश्मशानसदृशीभवेत् ॥२२॥ अचिरेणैवकालेनप्राप्स्याम्येनंमनोरथम् ॥ दुष्प्रस्थानोय
माभातिसर्वेषांवोविपर्ययः ॥२३॥ यादृशानितुदृश्यंतेलंकायामशुभानितु ॥ अचिरेणैवकालेनभविष्यतिहतप्रभा॥२४॥नूनंलंकाहतेपापेरावणे
राक्षसाधिपे॥शोषमेष्यतिदुर्धर्षाप्रमदाविधवायथा ॥२५॥पुण्योत्सवसमृद्धाचनष्टभर्त्रीसराक्षसा॥भविष्यतिपुरीलंकानष्टभर्त्रीयथांगना॥२६॥
नूनंराक्षसकन्यानांरुदतीनांगृहेगृहे ॥ श्रोष्यामिनचिरादेवदुःखार्तानामिहांध्वनिम् ॥२७॥सांधकाराहतद्योताहतराक्षसपुंगवा ॥ भविष्यतिपुरी
लंकानिर्दग्धारामसायकैः ॥२८॥ यदिनामसशूरोमांरामोरक्तांतलोचनः ॥ जानीयाद्वर्तमानांमांराक्षसस्यनिवेशने ॥ २९ ॥ अनेनतुनृशंसेन
रावणेनाधमेनमे॥समयोयस्तुनिर्दिष्टस्तस्यकालोऽयमागतः ॥३०॥सचमेविहितोमृत्युरस्मिन्दुष्टेनवर्तते॥अकार्यंयेनजानंतिनैर्ऋताःपापकारिणः
॥ ३१ ॥ अधर्मात्तुमहोत्पातोभविष्यतिहिसांप्रतम् ॥ नैतेधर्मंविजानंतिराक्षसाःपिशिताशनाः ॥ ३२ ॥ ध्रुवंमांप्रातराशार्थेराक्षसःकल्पयि
ष्यति ॥ साहंकथंकरिष्यामितंविनाप्रियदर्शनम् ॥ ३३ ॥

पर यह लंका प्रकाशरहित व अन्धकारमय होकर भस्महो जायगी ॥ २८ ॥ अरुणलोचन भक्तभयमोचन श्रीरामचन्द्रजी जिस दिन जानेंगे कि हम राक्षसके
गृहमें पडीहैं, उसी दिन लंकानगरीकी यह दशा होजायगी ॥२९॥ निर्लज्ज निशाचर रावणने जो द्वादशमासका समय नियत कियाथा, वह नियतसमय अब
आ पहुँचा है; हम जानती हैं कि इस समयमें हमारी दुर्दशा नही बरन् लंकाकी दुर्दशा होगी ॥३०॥ दुष्टमति रावणनेहमारे संहार करनेका यह समय स्थिर
कियाहै, पापचारी राक्षसोंका अकार्यका कुछ ज्ञान नहीं ॥ ३१ ॥ अधर्मके हेतु इस समय महाउत्पात उपस्थितहोगा, मांस खानेवाले राक्षस नहीं जानते कि,
धर्म किसको कहतेहैं ॥३२॥राक्षस रावण निश्चयही हमको खण्ड२करायकर अपने प्रातःकालीन भोजनकेलिये पाक करावेगा.हाय ! प्रियदर्शन श्रीरामचन्द्र

जी हमारे निकट नहीं हैं अब हम कौन उपाय करें ? ॥ ३३ ॥ आज यदि इस स्थानमें कोईविष देसके तो हम अपने अरुण नयन पतिके अदर्शनसे उसको खाय यमराजके निकट चलीजायँ ॥ ३४ ॥ बिना श्रीरामचन्द्रजीके देखेहुए हम बहुतही दुःखितहो रहीहैं, इस अवस्थाको भोगती हुई हम जी रही हैं, यह बात भरतजीके बडेभाई श्रीरामन्द्रजीकी जानीहुई नहीं है जो वह जानते किहम अभीतक जीती हैं तो रामलक्ष्मण अवश्यही पृथ्वीपर हमाराखोज करते॥ ३५॥ अथवा वह लक्ष्मणजीके बडे भ्राता श्रीरामचन्द्रजी हमारेही शोकसे व्याकुल हो पृथ्वीपर देह छोड इस लोकसेदेवलोकमें चले गये होंगे ॥ ३६ ॥ देव गन्धर्व सिद्ध और महर्षिगणही धन्य हैं कि,जो हमारे प्यारे वीर राजीवलोचन श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन देवलोकमें करते होंगे ॥ ३७ ॥ अथवा श्रीरामचन्द्रजी ब्रह्म

रामंरक्तांतनयनमपश्यंतीसुदुःखिता ॥ (यदिकश्चित्प्रदातामेविषस्याद्यभवेदिह ॥) क्षिप्रंवैवस्वतंदेवंपश्येयंपतिनाविना ॥ ३४ ॥ नाजाना ज्जीवतींरामःसमांभरतपूर्वजः ॥ जानंतौतुनकुर्यातांनोर्व्यांहिपरिमार्गणम् ॥३५॥ नूनंममैवशोकेनसवीरोलक्ष्मणाग्रजः ॥ देवलोकमितोयात स्त्यक्त्वादेहंमहीतले ॥ ३६ ॥ धन्यादेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ ममपश्यंतियेवीरंरामंराजीवलोचनम् ॥ ३७ ॥ अथवानहितस्या र्थोधर्मकामस्यधीमतः॥ मयारामस्यराजर्षेर्भार्ययापरमात्मनः ॥३८॥ दृश्यमानेनभवेत्प्रीतिःसौहृदंनास्त्यदृश्यतः ॥ नाशयंतिकृतघ्नास्तुनरा मोनाशयिष्यति ॥ ३९ ॥ किंवामय्यगुणाःकेचित्किंवाभाग्यक्षयोहिमे ॥ याहिसीतावरार्हेणहीनारामेणभामिनी ॥ ४० ॥ श्रेयोमेजीविता न्मर्तुंविहीनायामहात्मना॥रामादक्लिष्टचारित्राच्छूराच्छत्रुनिबर्हणात् ॥४१॥ अथवान्यस्तशस्त्रौतौवनेमूलफलाशनौ ॥भ्रातरौहिनरश्रेष्ठौच रंतौवनगोचरौ ॥ ४२ ॥

ज्ञानी और जीवन्मुक्त हैं, राजर्षि व निवृत्ति धर्ममें निरत हैं इस लिये भार्यासे उनका क्या प्रयोजन है ? कुछ भी नहीं ॥३८॥क्योंकि जो कोई आँखोंके सामने रहता है उसमेंही प्रीति उत्पन्न होती है,और फिरजब वह पदार्थ दृष्टिसे बाहरहो जाता है फिर प्रीति और सुहृदता कहां ? नहीं नहीं ? कृतघ्न लोगही प्रेमको छोड सकते हैं, हमारे प्राणनाथतो प्रेमको कभी नहीं भुलाय सकेंगे ॥ ३९ ॥ अथवा हममेंही कोई दोष होगा, या हमारे सौभाग्यका अंत होगा, बस इसी लिये नारी सीतासे श्रेष्ठपदार्थोंके ग्रहणकरने वालेश्रीरामचन्द्र जीका वियोगहुआ ॥ ४० ॥ श्रेष्ठचरित्र वरन्, महावीर शत्रुओंके मारनेवाले महात्मा श्रीरा मचन्द्रजीसे जब कि हमारा वियोग हुआ तब तो इस जीवनसे हमारा मरनाही अच्छा है ॥ ४१ ॥ अथवा कौनजाने कि पुरुष श्रेष्ठ राम लक्ष्मण दोनों भ्राता

अस्त्र शस्त्र त्याग फूलमूलाहारी हो; मुनियोंकी सी वृत्ति ले वनोंमें घूमतेहों ॥ ४२ ॥ अथवा दुरात्मा राक्षसराज रावणने छल करके शूरवीर श्रीराम लक्ष्मणदोनों भाइयों को मार डाला हो ॥ ४३ ॥ इस कष्टके समयमें हम अपने पूरे अंतः करणसे मरनेकी इच्छा करती हैं परन्तु इस न सहने योग्य दुःखके समय विधाता भी हमारे लिये मृत्यु नहीं देते ॥४४॥ परन्तु वहब्रह्म ध्यानपरायण सत्य सम्मत मुनिलोगभी धन्य हैं! किजो लोग आत्माको जीत लेतेहैं, वे महाभाग्य हैं, और न जिनका कोई प्यारा न कुप्याराहै ॥ ४५ ॥ जिनको अपने प्यारेका दुःख कभी होताहीनहीं, और न कुप्यारेसे उत्पन्न हुए महादुःखका संताप होता है बरन्जो प्रिय अप्रियसे एक बारही छुटे हुयेहैं, उन महात्मा लोगोंकोहम नमस्कार करतीहैं ॥ ४६ ॥ जो कुछभी हो आत्मज्ञ और प्यारे श्रीरामचन्द्रजीनेही जब हमको

अथवाराक्षसेंद्रेणरावणेनदुरात्मना ॥ छद्मनाघातितौशूरौभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥४३॥ साहमेवंविधेकालेमर्तुमिच्छामिसर्वतः ॥नचमेविहितोमृत्युरस्मिन्दुःखेतिवर्तति ॥४४॥ धन्याःखलुमहात्मानोमुनयःसत्यसंमताः ॥ जितात्मानोमहाभागायेषांनस्तःप्रियाप्रिये ॥४५॥ प्रियान्नसंभवेद्दुःखमप्रियादधिकंभवेत्॥ताभ्यांहितेवियुज्यंतेनमस्तेषांमहात्मनाम्॥४६॥साहंत्यक्ताप्रियेणैवरामेणविदितात्मना ॥प्राणांस्त्यक्ष्यामिपापस्यरावणस्यगतावशम् ॥ ४७ ॥ इत्यार्षे श्रीम० वा० आ० सा० सुं० षड्विंशः सर्गः ॥२६॥ इत्युक्ताःसीतयाघोरंराक्षस्यःक्रोधमूर्च्छिताः ॥ काश्चिज्जग्मुस्तदाख्यातुंरावणस्यदुरात्मनः ॥१॥ ततःसीतामुपागम्यराक्षस्योभीमदर्शनाः ॥ पुनःपुरुषमेकार्थमनर्थार्थमथाब्रुवन्॥२॥अद्येदानींतवानार्येसीतेपापविनिश्चये ॥राक्षस्योभक्षयिष्यंतिमांसमेतद्यथासुखम् ॥ ३ ॥ सीतांताभिरनार्याभिर्दृष्ट्वासंतर्जितांतदा ॥ राक्षसीत्रिजटावृद्धाप्रबुद्धावाक्यमब्रवीत् ॥४॥ आत्मानंखादतानार्यानसीतांभक्षयिष्यथ ॥ जनकस्यसुतामिष्टांस्नुषांदशरथस्यच ॥ ५ ॥

त्यागकर दिया तबपापी रावणके वशमें पडी हुईहम संतोष करके मरही जाँयगी ॥४७॥इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षड्विंशः सर्गः॥२६॥ जब क्रोधमें भरी हुई सीताजीने इस प्रकारके भयंकर वचन कहे तब कईएकभयंकर राक्षसियां क्रोधसे मूर्च्छितहो दुरात्मा रावणकोयह समाचार सुनानेके लिये गई ॥ १ ॥और बहुत सारी भयंकर रूपवाली राक्षसियें सीताजीके निकट आकर फिर अनर्थकारी कठोर वचन उनसे कहने लगीं ॥ २ ॥ उन्होंने कहा रे अनार्ये पापनिश्चये सीते ! आज इसी समय यह सब राक्षसियें तुम्हारा मांस सुखसे खाय कर तृप्त होंगी ॥ ३ ॥ इन सब दयारहित राक्षसियोंको सीताजीके प्रति तर्जन गर्जन करते देख कर त्रिजटानामक एकवृद्ध निशाचरी सोतेसे जागी और उन निशाचरियोंसे बोली ॥४॥ हे दुष्टो ! तुम अपने आप अपनेको खाओ। तुम लोग

जनकजीकी कन्या और दशरथजीकी प्यारी पुत्रवधू सीताजीको नहीं खाने पाओगी॥ ५॥ आजहमने अतिदारुण रोमहर्षणकारी बडा बुरा स्वप्न देखा है कि, जिसमें राक्षसकुलके नाश और उनके स्वामीकी वीजय सूचना होती है ॥ ६॥ मारे क्रोधकेमूर्च्छित हो सब राक्षसियें त्रिजटाकी यह बात सुन डरके मारे थरथराय सबकी सब त्रिजटासे बोलीं कि तुमने क्या स्वप्ना देखा है? ॥ ७॥ इन सब राक्षसियोंके मुखसे निकले हुए यह वचन सुनकर त्रिजटा इस प्रभातकालीन स्वप्नका वृत्तान्त कहने लगी ॥ ८ ॥ त्रिजटाने स्वप्नमें जो वृत्तान्त देखाथा वह कहने लगी कि, मानो हाथी दांतसे बनी आकाशमण्डलमें उडती दिव्य शिबिका ॥ ९ ॥ जिसमें हजार घोडे जुतरहे उसपर श्वेतपुष्पोंकी माला और श्वेतही वस्त्र धारण किये श्रीरामचंद्रजी आरोहणकर अपनेभाई लक्ष्मणजीकेसाथ वहां आये हैं ॥ १०॥ और हमने स्वप्नमें यहभी देखा कि, श्वेत वस्त्र धारण किये क्षीरसागरसे घेरेहुए श्वेत पर्वत पै श्रीजानकीजी बैठी हुई हैं॥ ११॥ श्रीरामचन्द्रजीके संग

स्वप्नोह्यद्यमयादृष्टोदारुणोरोमहर्षणः ॥ राक्षसानामभावायभर्तुरस्याभवायच॥६॥एवमुक्तास्त्रिजटयाराक्षस्यःक्रोधमूर्च्छिताः॥ सर्वाएवब्रुवन्भीतास्त्रिजटांतामिदंवचः ॥७॥ कथयस्वत्वयादृष्टःस्वप्नोऽयंकीदृशोनिशि॥तासांश्रुत्वातुवचनंराक्षसीनांमुखोद्गतम् ॥८॥ उवाचवचनंकालेत्रिजटास्वप्नसंश्रितम् ॥ गजदंतमयींदिव्यांशिबिकामंतरिक्षगाम् ॥९॥युक्तांवाजिसहस्रेणस्वयमास्थायराघवः ॥ शुक्लमाल्यांबरधरोलक्ष्मणेनसमागतः ॥१०॥ स्वप्नेचाद्यमयादृष्टासीताशुक्लांबरावृता ॥सागरेणपरिक्षिप्तंश्वेतपर्वतमास्थिता॥ ११॥रामेणसंगतासीताभास्करेणप्रभायथा॥राघवश्चपुनर्दृष्टश्चतुर्दंतंमहागजम् ॥ १२ ॥ आरूढःशैलसंकाशंचकाससहलक्ष्मणः ॥ ततस्तुसूर्यसंकाशौदीप्यमानौस्वतेजसा ॥१३॥ शुक्लमाल्यांबरधरौजानकींपर्युपस्थितौ ॥ ततस्तस्यनगस्याग्रेह्याकाशस्थस्यदंतिनः ॥ १४ ॥ भर्त्रापरिगृहीतस्यजानकीस्कंधमाश्रिता ॥ भर्तुरंकात्समुत्पत्यततःकमललोचना ॥ १५ ॥ चंद्रसूर्यौमयादृष्टौपाणिभ्यांपरिमार्जती ॥ १६ ॥

मिलकर सीता सूर्यकी प्रभाके समान शोभित हुई । फिर श्रीरामचंद्रजीको मानो चौदंते बडे भारी हाथीपर चढे हुये देखा है ॥१२॥ उस पर्वताकार हाथीपर चढेश्रीरामचंद्रजी लक्ष्मणजीके सहित शोभायमानहो रहेहैं फिर सूर्यके समान प्रकाशित और अपने तेजसे दीप्ति मान ॥ १३ ॥ श्वेतमाला और श्वेतही वस्त्र धारण कियेहुए श्रीरामलक्ष्मण दोनों जने मानों सीताके निकट आये फिर उस आकाशमें अवस्थित कियेपर्वताकार हाथीके ॥ १४ ॥ कन्धे पर श्रीसीताजीने आरोहण किया है और उस गजको इनकेपति श्रीरामचंद्रजी पकडेहुएहैं तदनन्तर अपने स्वामी श्रीरामचंद्रजीकी गोदीसे उछलीहुई कमलदल नेत्रवाली जानकीजीको हमने निहारा तो ॥ १५ ॥ सूर्य और चन्द्रमाको अपने दोनों हाथोंसे परिष्कार (स्वच्छ) कर रही हैं ॥ १६ ॥

उसके पीछेउन दोनों कुमारोंको यह श्रेष्ठ गज विशाल नेत्रवाली सीताजीके साथ अपनी पीठपर चढाकर लंकाके ऊपर भागमें
आय पहुँचा । फिर श्रेष्ठ आठ बैल जुडे हुएरथपर सवार हो ॥१७॥ शुक्क माला और श्वेत वस्त्र पहरे लक्ष्मणजीके साथ सत्यपराक्रमी श्रीरामचंद्रजीको हमने
स्थानपर आये हुए देखा ॥ १८ ॥वीर्यवान् श्रीरामचंद्रजी भ्राता लक्ष्मण और जानकीजीके सहित सूर्यसमान दिव्य पुष्पक विमान पर चढे हुए॥ १९ ॥ वह
पुरुषोत्तम उत्तर दिशाकी ओर चले गये और स्वप्नमें हमने रावणको भी देखाकि, वह केश मुडाये, तेल शरीरमें लगाये ॥ २० ॥ लाल कपडे पहरे, मदिरा
पान करके मतवालाहो गया है॥ और करवीरके पुष्पोंकी माला पहरे हुए पुष्पकविमानसे मानोनीचे गिरपडा है॥२१॥ फिर हमने देखाहै कि, मानो मुण्डित

ततस्ताभ्यांकुमाराभ्यामास्थितःसगजोत्तमः ॥ सीतयाचविशालाक्ष्यालंकायाउपरिस्थितः ॥ पांडुरर्षभयुक्तेनरथेनाष्टयुजास्वयम् ॥ १७ ॥
(इहोपयातःकाकुत्स्थःसीतयासहभार्यया ॥) शुक्कमाल्यांबरधरोलक्ष्मणेनसहागतः ॥ ततोन्यत्रमयादृष्टोरामःसत्यपराक्रमः ॥ १८ ॥ लक्ष्म
णेनसहभ्रात्रासीतयासहवीर्यवान् ॥ आरुह्यपुष्पकंदिव्यंविमानंसूर्यसन्निभम् ॥ १९ ॥ उत्तरांदिशमालोच्यप्रस्थितःपुरुषोत्तमः ॥ (एवंस्वप्ने
मयादृष्टोरामोविष्णुपराक्रमः॥नहिरामोमहातेजाःशक्योजेतुंसुरासुरैः॥राक्षसैर्वापिचान्यैर्वास्वर्गःपापजनैरिव ॥१॥) रावणश्चमयादृष्टोमुंडस्तै
लसमुक्षितः ॥२०॥ रक्तवासाःपिबन्मत्तःकरवीरकृतस्रजः ॥ विमानात्पुष्पकादद्यरावणःपतितःक्षितौ॥२१॥कृष्यमाणःस्त्रियामुंडोदृष्टःकृष्णां
बरःपुनः॥ रथेनखरयुक्तेनरक्तमाल्यानुलेपनः ॥२२॥ पिबंस्तैलंहसन्नृत्यन्भ्रांतचित्ताकुलेंद्रियः ॥ गर्दभेनययौशीघ्रंदक्षिणांदिशमाश्रितः॥२३॥
पुनरेवमयादृष्टोरावणोराक्षसेश्वरः ॥ पतितोविशिराभूमौगर्दभाद्भयमोहितः॥२४॥सहसोत्थायसंभ्रांतोभयार्तोमदविह्वलः ॥ उन्मत्तरूपोदिग्वा
सादुर्वाक्यंप्रलपन्बहु ॥ २५ ॥ दुर्गंधंदुःसहंघोरंतिमिरंनरकोपमम् ॥ मलपंकंप्रविश्याशुमग्नस्तत्रसरावणः ॥ २६ ॥प्रस्थितोदक्षिणामाशांप्र
विष्टोऽकर्दमंह्रदम् ॥ कंठेबद्ध्वादशग्रीवंप्रमदारक्तवासिनी ॥ २७ ॥

केश रावण अतिकाले वस्त्र धारण किये गधे जुतेहुए रथपर चढा लाल चंदन लगाये स्त्रीसे खैंचा जाताहै ॥२२॥ इस प्रकार हमारेराजा तेलपान करतेहँसते २
भ्रान्त चित्त होनेसे व्याकुलेन्द्रियहो गधोंपर चढे दक्षिण दिशाको जातेहैं ॥ २३ ॥ फिर हमने राक्षसोंके स्वामी रावणको देखा कि, मानो वह उन गधोंसे
नीचे मुखकर भयके मारे मूर्च्छितहो भूमिपर गिर पडे हैं॥२४॥इसके पीछे मानोंवह रावणबडी शीघ्रतासे उठकर चलायमान, भयसे चकित और नंगे होकर मत
वालेके समान मुखसे अनेक दुर्वचन निकालते ॥ २५ ॥ अतिशीघ्र दुर्गन्धमय सहनेके अयोग्य घोर अन्धकारसे ढके नरकके समान विष्ठाके कीचडमें
गिर कर डूब गये ॥ २६ ॥ और फिर दक्षिणदिशाकी ओर गमन करके जल कीचडसे रहित एक कुंडमें रावण गिर पडे, लाल कपडेपहरे हुए एक स्त्रीने उस

कुंडमें गर्दन पकड कर रावणको गिराया है ॥ २७ ॥ फिर उसमेंसे भी कीचड अंगोंमें लगायेएक काली स्त्रीको दक्षिणदिशाकी ओर रावणको खैंचतेहुए देखा; और यही दशा हमने महा बलवान् कुंभकर्णकी भी देखी॥२८॥और हमने रावणके पुत्रोंको शिर मुँडाये,सब शरीरमेंतेल लगायेहुए देखा है । रावण सुअरपर, इंद्रजीत शिशुमारपर ॥ २९ ॥ और कुंभकर्ण ऊँटपर चढा यह सब दक्षिण दिशाको चले जाते हैं । केवल इकले बिभीषणको श्वेत छत्र शोभित होकर चार मंत्रियोंके साथ आकाशमार्गमें घूमते हुएदेखा ॥३०॥ और उनकी बडी भारी सभामें गीत और बाजेका शब्दहोरहाहै, सबही राक्षसमानो लंकामें लाल माला धारण किये और लालही वस्त्रपहरे, लालमदको पीरहेथे ॥३१॥ इसीसमयमें लंकाकी चहार दिवारियें और फाटक ध्वजाआदि टूटकर भहरायपडे. मनोहारिणी

कालीकर्दमलिप्तांगीदिशंयाम्यांप्रकर्षति ॥ एवंतत्रमयादृष्टःकुंभकर्णोमहाबलः ॥ २८ ॥ रावणस्यसुताःसर्वेमुंडास्तैलसमुक्षिताः॥ वराहेणदश ग्रीवः शिशुमारेणचेंद्रजित् ॥२९॥ उष्ट्रेणकुंभकर्णश्चप्रयातोदक्षिणांदिशम् ॥ एकस्तत्रमयादृष्टःश्वेतच्छत्रोविभीषणः ॥ चतुर्भिःसचिवैःसार्धवैहा यससमुपस्थितः ॥ ३० ॥ समाजश्चमहान्वृत्तोगीतवादित्रनिःस्वनः ॥ पिबतांरक्तमाल्यानांरक्षसांरक्तवाससाम् ॥३१॥ लंकाचेयंपुरीरम्यासवा जिरथकुंजरा ॥ सागरेपतितादृष्टाभग्नगोपुरतोरणा ॥ ३२ ॥ पीत्वातैलंप्रमत्ताश्चप्रहसंत्योमहास्वनाः ॥ लंकायांभस्मरूक्षायांसर्वाराक्षसयो षितः ॥ ३३ ॥ कुंभकर्णादयश्चेमेसर्वेराक्षसपुंगवाः ॥ रक्तंनिवसनंगृह्यप्रविष्टागोमयहृदम् ॥३४॥ अपगच्छतपश्यध्वंसीतामाप्नोतिराघवः ॥ घातयेत्परमामर्षीयुष्मान्सार्धंहिराक्षसैः ॥ ३५ ॥ प्रियांबहुमतांभार्यांवनवासमनुव्रताम् ॥ भर्त्सितांतर्जितांवापिनानुमंस्यतिराघवः ॥ ३६ ॥ तदलंक्रूरवाक्यैश्चसांत्वमेवाभिधीयताम् ॥ अभियाचामवैदेहीमेतद्धिममरोचते ॥ ३७ ॥

लंकानगरी अश्व,रथ और गजगणोंके सहित मानो समुद्रमें डूब गई ॥३२॥ औरभी देखाहै कि, लंकानगरी धूल उडनेकेकारण सखी होगई है,और राक्षसोंकी सब स्त्रियें तेलपी प्रमत्तहो,महा चिल्लाहट और हँसी कर रहीहैं ॥३३॥ कुम्भकर्णादि वीरराक्षसोंकी सब स्त्रियें लालवर्णके निन्दनीय कपडे पहरे गोबरके कुंडमें प्रवेश करती हैं ॥३४॥ इसलिये दूर भाग जाओ देखोगीकि, अब श्रीरामचन्द्रजी शीघ्रही सीताजीको प्राप्तकरेंगे वह महाक्रोधितहो राक्षसगणोंके साथ तुम सब को भी मार डालेंगे ॥ ३५ ॥ भवनवासकी सहेली सीताजी उनकी परमप्यारी और आदरमानकी रानीहैं, उनको पीडा देना,या तुम्हारा सतानाश्रीरामचन्द्रजी कभी नहीं सहेंगे ॥३६॥ इसलिये निष्ठुर वचन कहनेसे कुछ प्रयोजन नहीं, प्रेम सहित समझाओ, आओ सब मिलविदेहकुमारी श्रीजानकीजीसे अनुग्रहकी प्रार्थना

करें, हमारी तो यही इच्छाहै ॥३७॥ जिन जानकीजीकी ऐसी अवस्था है और हमने दुःखिताइनके विषयमें ऐसा स्वप्न देखाहै, तब यह शीघ्रहीसर्व दुःखसे छूटकर अपने स्वामी श्रेष्ठको प्राप्त करेंगी॥३८॥हे राक्षसीगण ! तुमने जानकीजीको वचनोंसे बहुत पीडा दीहैसो अबभी तुमइनके अनुग्रहकी प्रार्थना करो, अब कठोर वचन कहनेका कुछ प्रयोजन नहीं है,निश्चयही श्रीरामचन्द्रजीसे राक्षसगणोंको महाभयआय पहुँचा है ॥३९॥ जनककुमारी सीताजीयदि प्रणाम करनेसे प्रसन्न होजायँ तो अवश्यही तुमसबको यह महाभयसे उद्धार करेंगी ॥४०॥ इस विशालनयनी जानकीजीके शरीरमें हम जराभी कोई अलक्षण तथा अंगोंमें विरूपतानहीं देखतीं ॥४१॥ केवल इनकी कांति मलीन होनेसेभी जानाजाता हैकि, यह दुःखमें पतितहुई हैं।यहदेवीजी दुःखपानेके अयोग्य हैं,हमने स्वप्नमें भी

यस्याह्येवंविधःस्वप्नोदुःखितायाःप्रदृश्यते ॥ सादुःखैर्बहुभिर्मुक्ताप्रियंप्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥३८॥ भर्त्सितामपियाचध्वंराक्षस्यःकिंविवक्षया ॥ राघवाद्धिभयंघोरंराक्षसानामुपस्थितम् ॥ ३९ ॥ प्रणिपातप्रसन्नाहिमैथिलीजनकात्मजा ॥ अलमेषापरित्रातुंराक्षस्योमहतोभयात् ॥ ४० ॥ अपिचास्याविशालाक्ष्यानकिंचिदुपलक्षये ॥ विरूपमपिचांगेषुनसूक्ष्ममपिलक्षणम् ॥ ४१ ॥ छायावैगुण्यमात्रंतुशंकेदुःखमुपस्थितम् ॥ अदुःखार्हामिमांदेवींवैहायसमुपस्थिताम् ॥ ४२ ॥ अर्थसिद्धिंतुवैदेह्याःपश्याम्यहमुपस्थिताम् ॥ राक्षसेंद्रविनाशंचविजयंराघवस्यच ॥ ४३ ॥ निमित्तभूतमेतत्तुश्रोतुमस्यामहत्प्रियम् ॥ दृश्यतेचस्फुरच्चक्षुःपद्मपत्रमिवायतम् ॥ ४४ ॥ ईषच्चहृषितोवास्यादक्षिणायाह्यदक्षिणः ॥ अकस्मादेववैदेह्याबाहुरेकःप्रकंपते ॥ ४५ ॥ करेणुहस्तप्रतिमःसव्यश्चोरुरनुत्तमः ॥ वेपन्कथयतीवास्याराघवंपुरतःस्थितम् ॥ ४६ ॥ पक्षीचशाखानिलयंप्रविष्टःपुनःपुनश्चोत्तमसांत्ववादी ॥ सुस्वागतांवाचमुदीरयाणःपुनःपुनश्चोदयतीवहृष्टः ॥ ४७ ॥

देखा है कि, यहआकाशमें टिकी हुईहैं ॥४२॥हम विदेह कुमारी सीताजीके कार्यकी सिद्धि, राक्षसराज रावणका विनाश औरश्रीरामचन्द्रजीकी विजयसामनेही आई देखती हैं ॥४३॥ यह देखोबडे भारी कार्य सिद्धिकी सूचना करनेके लिये जानकीजीके कमलदलके समान बडे२नेत्र फडकते हैं ॥४४॥ इन परम चतुर श्रीजानकीजीकी पुलकायमान वामभुजा भी अकस्मात् हर्षित होकर कम्पायमान हो रही है ॥ ४५ ॥ और हाथीकी शुण्डके समान अतिश्रेष्ठ वामजांघभी इनकी कंपायमान होकर मानोयह कह रहीहैकि, श्रीरामचन्द्रजी इनके सामने आय गये ॥४६॥ और काकादि पक्षीगण शाखामें बनेहुएघोसलोंके मध्यमें बार२प्रवेशित होकर हर्षितभावसे सुन्दर मधुर शोर करके बार२सुख प्राप्तिकी सूचना करते हैं ॥ ४७ ॥

इसके पीछे वह लज्जाशीला बाला जानकीजी अपने स्वामीकी विजय जान हर्षित होकर बोलीं कि, यदि यह वचन सत्य हुआ तो हम तुम लोगोंकीरक्षाकरेंगी ॥ ४८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां सप्तविंशः सर्गः ॥२७॥ त्रिजटाके ऐसे वचन सुनकरभी जभीशोकसे संतापित सीताजीको रावणके अप्रिय वचनोंकी याद आईकि, वह वनमें सिंहसे घिरीहुई गजराजकन्याके समान डरीं ॥१॥ एकतो रावणके कहेहुए दुर्वचनोंसे अपमानित तिसपर राक्षसियोंके मध्यमें गिर कर भीरु जानकीजी; विजन वनमें छोडी हुई कन्याके समान विलाप करने लगीं ॥२॥ पंडितलोग जो कहा करते हैं कि संसारमें अकालमृत्यु नहीं होती यहबात सत्य है यदि ऐसा न होतातो इसप्रकारसे महाधिक्कारी जाकरभी क्याहम पापिनी एकक्षणभी जीवित रहसकतीं ?॥३॥ निश्चयजान पडता है कि,

ततःसाह्रीमतीबालाभर्तुर्विजयहर्षिता ॥ अवोचद्यदितत्तथ्यंभवेयंशरणंहिवः ॥४८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा० सुंदरकांडे सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥ साराक्षसेंद्रस्यवचोनिशम्यतद्रावणस्याप्रियमप्रियार्ता ॥ सीतावितत्रासयथावनांतेसिंहाद्दिपन्नागजराजकन्या ॥ १ ॥ साराक्षसीमध्यगताचभीरुर्वाग्भिर्भृशंरावणतर्जिताच ॥ कांतारमध्येविजनेविसृष्टाबालेवकन्याविललापसीता ॥ २ ॥ सत्यंबतेदंप्रवदंतिलोकेनाकालमृत्युर्भवतीतिसंतः ॥ यत्राहमेवंपरिभर्त्स्यमानाजीवामियस्मात्क्षणमप्यपुण्या ॥ ३ ॥ सुखाद्विहीनंबहुदुःखपूर्णमिदंतुनूनंहृदयंस्थिरंमे ॥ विदीर्यतेयत्रसहस्रधाद्यवज्राहतंशृंगमिवाचलस्य ॥ ४ ॥ नैवास्तिनूनंममदोषमत्रवध्याहमस्याप्रियदर्शनस्य ॥ भावंनचास्याहमनुप्रदातुमलंद्विजोमंत्रमिवाद्विजाय ॥५॥ तस्मिन्ननागच्छतिलोकनाथेगर्भस्यजंतोरिवशल्यकृंतः ॥ नूनंममांगान्यचिरादनार्यःशरैःशितैश्छेत्स्यतिराक्षसेंद्रः ॥६॥ दुःखंबतेदंननुदुःखितायामासौचिरायाभिगमिष्यतोद्वौ ॥ बद्धस्यवध्यस्ययथानिशांतेराजोपरोधादिवतस्करस्य ॥७॥

सुख विहीन और बहुदुःखपूर्ण हमारा हृदय अजर अमर है जो ऐसा न होता तोवज्रसे चोट खाये हुए पर्वतके शृङ्गके समान यह हजार टुकडे क्यों नहीं होजाता ॥४॥ प्राण त्याग करनेके विषयमेंतो हमारा कोई दोष नहींहै, क्योंकि हमइस अप्रियदर्शन रावणकरके रोकी हुईहैं, ब्राह्मणजिस प्रकार शूद्रको वेदमंत्रका दान नहीं कर सकता वैसेही हमभी रावणकोमन प्राणदान करनेमें असमर्थहैं ॥५॥ वह जगन्नाथ श्रीरामचन्द्रजी यदि रावणके नियतकिये हुए समयके मध्य अर्थात् दो महीनेसे न आजायँगे तोजैसे शस्त्रचिकित्सक गर्भकेबालकको गर्भकी दशामेंहीकाटडालताहै, अनार्यरावण वैसेही थोडेही दिनोंमें तीक्ष्णबाणोंसेहमारे समस्त अंगोंको काट डालेगा॥६॥एक तो हम स्वामीके बिना दुःखसे व्याकुलहैं, उसपर वधकी पीडा निश्चयही हमको भोगनी पडेगी, क्योंकि दो महीनेतोबडी

जलदीबीत जांयगे,दो महीने बीतनेके पीछे, जिसप्रकार राजाकी आज्ञासे कारागारमेंपडे तस्करको रात्रि बीतनेपर प्राणदंड मिलताहै, वैसेहीहमें प्राणदंड होगा ॥ ७ ॥ हा राम ! हा लक्ष्मण ! हा सुमित्रे ! हा रामजननीगण ! हा हमारीजननी गण देखो, हम मंदभाग्यवाली, महासमुद्रके मध्यमें पवनवेगसे भारी नौकाके समान इस विपदमें पडी हैं ॥ ८ ॥ निश्चयही वज्रसदृश तेजवाले राक्षसने मृगरूप धारण करके हमारे लिये सिंहसम पराक्रमी दो बलवान् राजपुत्रोंको मार डाला ॥९॥ मृगरूपधारी उसकालने तत्काल अवश्यही हमारेज्ञानको लोपकर दिया था;इसी लियेहम मूढबुद्धिवालीने आर्यपुत्र श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी दोनों को मृगके पीछे भेज दिया ॥१०॥हा राम ! सत्यव्रत ! हा दीर्घबाहो ! हा पूर्णचन्द्रकेसमान मुखवाले! हा जीवलोकके हित और प्रिय साधनकारी! तुमनहीं जानते कि, हम राक्षसोंकेवध योग्य हुईहैं ॥११॥ हमजो पतिके सिवाय और देवताको नहीं जानती, शापदान करनेमें समर्थहोने परभीहमजोक्षमा है; भूमिमें

हारामहालक्ष्मणहासुमित्रेहाराममातःसहमेजनन्यः ॥ एषाविपद्याम्यहमल्पभाग्यामहार्णवेनौरिवमूढवाता॥८॥तरस्विनौधारयतामृगस्यसत्त्वेनरूपंमनुजेंद्रपुत्रौ ॥ नूनंविशस्तौममकारणात्तौसिंहर्षभौद्वाविववैद्युतेन ॥९॥ नूनंसकालोमृगरूपधारीमामल्पभाग्यांलुलुभेतदानीम् ॥ यत्रार्यपुत्रंविससर्जमूढारामानुजंलक्ष्मणपूर्वजंच ॥१०॥ हारामसत्यव्रतदीर्घबाहोहापूर्णचंद्रप्रतिमानवक्त्र ॥ हाजीवलोकस्यहितःप्रियश्चवध्यांनमांवेत्सिहिराक्षसानाम् ॥११॥ अनन्यदेवत्वमियंक्षमाचभूमौचशय्यानियमश्चधर्मे ॥ पतिव्रतात्वंविफलंममेदंकृतंकृतघ्नेष्विवमानुषाणाम् ॥१२॥ मोघंहिधर्मश्चरितोममायंतथैकपत्नीत्वमिदंनिरर्थकम् ॥ यात्वांनपश्यामिकृशाविवर्णाहीनात्वयासंगमनेनिराशा ॥ १३ ॥ पितुर्निदेशंनियमेनकृत्वावनान्निवृत्तश्चरितव्रतश्च ॥ स्त्रीभिस्तुमन्येविपुलेक्षणाभिःसंरंस्यसेवीतभयःकृतार्थः ॥ १४ ॥ अहंतुरामत्वयिजातकामाचिरंविनाशायनिबद्धभावा ॥ मोघंचरित्वाथतपोव्रतंचत्यक्ष्यामिधिग्जीवितमल्पभाग्याम् ॥ १५ ॥

जो हम शयन करतीहैं;धर्म नियमका प्रतिपालन करती हैं और हमारा पातिव्रत्य धर्म इत्यादि,क्या सबहीकृतघ्न पुरुषका उपकार करनेके समान निष्फल होगये ॥१२॥ हम तुम्हारे वियोगके वश मिलनेसे हताश हो अतिकृशतनु और विवर्ण होगईहैं; तथापि अबतकभी जो हमने तुम्हारे दर्शननहीं पाये, तब हमारे यह धर्मके आचरण और पातिव्रत्य सबहीधर्म वृथा होगये ॥१३॥ प्यारे ! हमको जान पडताहै कि;तुम नियमानुसार पिताजीकी आज्ञाके पालनेका व्रत समाप्तकर वनसे लौट,निर्भय और कृतकार्य होकर बडी२नेत्रवाली स्त्रियोंकेसाथ आनंदसे विहार करते होंगे॥ १४॥परन्तु श्रीरामचन्द्रजी!हमने अपना विनाश करनेहीके लिये तुम्हारा अभिलाष किया, और तुमसे प्रेम लगाया, हमारा व्रत तप दोनों विफल होगये इस लिये हम अल्प भाग्यवालीके जीवनको धिक्कार है; इस

जीवनसे अब क्या प्रयोजन है ? ॥१५॥ विष या तीखे शस्त्रकी सहायतासे हमशीघ्रही प्राणत्याग करनेकी इच्छाकरतीहैं, परन्तु राक्षसके गृहमेंऐसा कोई नहीं है जो हमको विष या शस्त्र दान करे॥१६॥इस प्रकार अपनेपूर्ण अंतःकरणसे श्रीरामचन्द्रकाही स्मरण करतीं सीता देवीजी अनेकप्रकारके विलाप करके शुष्क वदनसे कंपित होती फूलेहुए वृक्षश्रेष्ठके निकट पहुंची । शोकसे तापित हुई सीताजीनेअनेक प्रकारकी चिंता करके अपनी बँधीहुई वेणी हाथमें ली और यह विचार कियाकि इस वेणीकेगुथे हुएडोरोंको गलेमें बांध फांसी लगाय यमराजजीके घरको चली जायंगी ॥१७॥ यह विचार कर कोमलांगी सीताजी उस वृक्षकी जडकेनिकट उपस्थित होकर, व इसपेडकीएक डालको फांसी लगानेके लियेपकडवह सुन्दर अंगवाली अपनेऔर श्रीराम चन्द्रजीके वंशकी मर्यादाका

संजीवितंक्षिप्रमहंत्यजेयंविषेणशस्त्रेणशितेनवापि॥विषस्यदातानतुमेऽस्तिकश्चिच्छस्त्रस्यवावेश्मनिराक्षसस्य ॥१६॥"इतीवदेवीबहुधाविलप्य सर्वात्मनाराममनुस्मरंती ॥ प्रवेपमानापरिशुष्कवक्त्रानगोत्तमंपुष्पितमाससाद ॥" शोकाभितप्ताबहुधाविचिंत्यसीताथवेणीग्रथनंगृहीत्वा ॥ उद्बध्यवेण्युद्ग्रथनेनशीघ्रमहंगमिष्यामियमस्यमूलम् ॥ १७ ॥ उपस्थितासामृदुसर्वगात्रीशाखांगृहीत्वाचनगस्यतस्य ॥ तस्यास्तुरामंपरिचिंतयंत्यारामानुजंस्वंचकुलं शुभांग्याः ॥ १८ ॥ तस्यापिशोकानिसदाबहूनिधैर्यार्जितानिप्रवराणिलोके ॥ प्रादुर्निमित्तानितदाबभूवुःपुरापिसिद्धान्युपलक्षितानि ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० च० सा० सुन्दरकांडे अष्टाविंशः सर्गः ॥२८॥ तथागतांतांव्यथितामनिन्दितांव्यतीतहर्षांपरिदीनमानसाम् ॥ शुभांनिमित्तानिशुभानिभेजिरेनरंश्रियाजुष्टमिवोपसेविनः ॥ १ ॥ तस्याःशुभंवाममरालपक्ष्मराज्यावृतंकृष्णविशालशुक्लम् ॥ प्रास्पंदतैकंनयनंसुकेश्यामीनाहतंपद्ममिवाभिताम्रम् ॥ २ ॥

विचार करने लगी ॥ १८ ॥ उस समय लावण्यतायुक्त सीताजीके अङ्गोंमें, शोक नाशकारी धीरज धारण करानेवाले होनहार समाचारकीसूचना देनेवाले विविध भांतिके लोकप्रसिद्ध शुभ चिह्न उत्पन्न होने लगे ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामष्टाविंशः सर्गः ॥ २८ ॥ दुःखित अंतःकरणवाली, हर्षहीन, संतापसे पीडित निंदारहित सीताजी मरनेको तैयारहो रही थीं, कि इतनेमेंसब शुभ लक्षणोंने आय सीताजी की सेवा की जैसे सेवक लोग धनवान्‌पुरुषकीसेवा किया करते हैं॥१॥ उन अच्छे केशवाली सीताजीका चंचल पलकोंके सहितकाले तारेसे शोभित विशालशुक्लवर्ण, लाल कोयेवाला बायां नेत्र मीनसे हिलाये हुए कमलके समान फडकने लगा ॥ २ ॥

उनकी जो मनोहर गोल, सुडौल, मांसल, बांईभुजा बडे मोलके अगर चन्दनसे चर्चित होकर बहुतकालसे अपने श्रेष्ठ प्रीतमकासहारा होती थी, वह बांई भुजा आज अनेक दिनके पीछे जलदी२फडकने लगी ॥३॥ एक दूसरेमें मिली हुईसी दोनो जांघोंमें गजराजकी शुण्डकेसमान चढाव उतार और गोल सुडौल, बांई जांघने फडक कर सूचनादी कि मानो श्रीरामचंद्रजी सन्मुख आहीगये ॥४॥ उपमारहित नयनवाली दाडिमके दानेके समान दांतवाली, सुंदरांगी जानकीजीका कुछेक मलीन वर्णका वस्त्र शिरसे खसक कर नीचे गिर पडा ॥५॥ पवन और तापके लगनेसे नष्ट हुआ बीज जिस प्रकार वर्षाका जल गिरनेसे फिर जीजाता है, वैसेही सीताजी पहले कहे हुए निमित्त व और दूसरे होनहार लक्षणोंको जानकर हर्ष प्राप्त करती हुई ॥६॥ बिंबाफलके समान लाल अधरोंसे युक्त सुंदर नेत्र

भुजश्चचार्वंचितवृत्तपीनःपरार्ध्यकालागुरुचंदनार्हः॥अनुत्तमेनाध्युषितःप्रियेणचिरेणवामःसमवेपताशु ॥३॥ गजेंद्रहस्तप्रतिमश्चपीनस्तयोर्द्वयोः संहतयोस्तुजातः ॥ प्रस्पंदमानःपुनरूरुरस्यारामंपुरस्तात्स्थितमाचचक्षे ॥४॥ शुभंपुनर्हेमसमानवर्णमीषद्रजोध्वस्तमिवातुलाक्ष्याः ॥ वासः स्थितायाः शिखराग्रदंत्याःकिंचित्परिस्रंसतचारुगात्र्याः ॥५॥ एतैर्निमित्तैरपरैश्चसुभ्रूःसंचोदिताप्रागपिसाधुसिद्धैः ॥ वातातपक्लांतमिवप्रनष्टंवर्षेणबीजंप्रतिसंजहर्ष ॥६॥ तस्याः पुनर्बिंबफलोपमोष्ठंस्वक्षिभ्रुकेशांतमरालपक्ष्म ॥ वक्त्रंबभासेसितशुक्लदंष्ट्रंराहोर्मुखाच्चंद्रइवप्रमुक्तः ॥७॥ सावीतशोकाव्यपनीततंद्राशांतज्वराहर्षविबुद्धसत्त्वा॥अशोभताऽऽर्यावदनेनशुक्लेशीतांशुनारात्रिरिवोदितेन ॥ ८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे एकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥ हनुमानपिविक्रांतःसर्वंशुश्रावतत्त्वतः ॥ सीतायास्त्रिजटायाश्चराक्षसीनांचगर्जितम् ॥ १ ॥ अवेक्षमाणस्तांदेवींदेवतामिवनंदने ॥ ततोबहुविधांचिंतांचिंतयामासवानरः ॥ २ ॥

सुन्दर भ्रुकुटि व केशोंके अन्तसहित, चंचल, शोभित, श्वेत मोतीके समान चमकीले दाँतोंसे विराजमान सीताजीका वदनमंडल फिर राहुके ग्राससे छूटे हुए पूर्णचंद्रमाकेसमान शोभायमान होने लगा ॥७॥ सीताजीका शोक दूर हुआ, आलस्य जाता रहा, संतापकी शान्ति होगई और चित्त मारे हर्षके खिल गया । उससमय उनके मुखकी शोभा ऐसी हुई कि, जैसे शुक्लपक्षवाले चंद्रमाके उदय होनेसे रात्रि शोभायमान होती है ॥८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि०सुन्दरकांडे भाषायामेकोनत्रिंशः सर्गः ॥२९॥ सीताजीका विलाप और त्रिजटाके स्वप्नका वृत्तान्त और राक्षस राक्षसियोंका गर्जना; धमकाना, डराना विक्रमशाली हनुमान्‌जीने समस्तही आदिसे अंततक सुन॥१॥ नन्दनकाननवासिनी सुरसुन्दरीके समान अशोकवनमें बसती हुईइन देवी श्रीजानकीजीको देखकर वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जी अनेक चिंता करने लगे॥२॥

हजार२लाख२करोड२वानर चारों ओर जिनकी खोजमें फिरते हैं,सो यहां उनको हमने पाया है ॥३॥ अबतक तो दूतका कार्य हमने भली भाँतिसेही पूरा किया है । शत्रुकी शक्ति जाननेकेलिये गुप्तभावसे घूमघाम कर समस्तवृत्तान्त हमने जाना है ॥४॥ मनुष्यकी अपेक्षा राक्षसोंकी धनसम्पत्तिकी लघुताई व बढोतरी देखी औरइस लंकापुरीको भी भली भाँतिसे उलट पुलट कर देख डाला और राक्षसरावणका प्रभाव भी देखा ॥५॥इस समय हमें उन अप्रमेय सर्व प्राणियोंके प्रति दयालु; रामचंद्रजीकेदर्शनकी अभिलाषाकिये उनकी भार्या सीताजीको समझाना बुझाना उचित है ॥६॥ जिन्होंनेइससे पहले कभी दुःख नहीं देखा; और उसकी भी कोई आशा नहीं है कि,शीघ्रही इसके दुःखके पार होजायँ,इसलिये प्रथम हम इन पूर्णचंद्रमाके समान मुखवाली जानकीजीको समझावें बुझावेंगे॥७॥शोकके मारे इन

यांकपीनांसहस्राणिसुबहून्ययुतानिच ॥ दिक्षुसर्वासुमार्गेतेसेयमासादितामया ॥३॥ चारेणतुसुयुक्तेनशत्रोःशक्तिमवेक्षता ॥ गूढेनचरताताव दवेक्षितमिदंमया ॥ ४ ॥ राक्षसानांविशेषश्चपुरीचेयंनिरीक्षिता ॥ राक्षसाधिपतेरस्यप्रभावोरावणस्यच ॥ ५ ॥ यथातस्यप्रमेयस्यसर्वसत्त्व दयावतः ॥ समाश्वासयितुंभार्यांपतिदर्शनकांक्षिणीम्॥६॥अहमाश्वासयाम्येनांपूर्णचंद्रनिभाननाम् ॥ अदृष्टदुःखांदुःखस्यनह्यंतमधिगच्छतीम् ॥ ७ ॥ यद्दिह्यहंसतीमेनांशोकोपहतचेतनाम् ॥ अनाश्वास्यगमिष्यामिदोषवद्गमनंभवेत् ॥ ८ ॥ गतेहिमयितत्रेयंराजपुत्रीयशश्विनी ॥ परित्राणमपश्यंतीजानकीजीवितंत्यजेत् ॥ ९ ॥ यथाचसमहाबाहुःपूर्णचन्द्रनिभाननः ॥ समाश्वासयितुंन्याय्यःसीतादर्शनलालसः ॥१०॥ निशाचरीणांप्रत्यक्षमक्षमंचाभिभाषितुम् ॥कथंनुखलुकर्तव्यमिदंकृच्छ्रगतोह्यहम् ॥११॥ अनेनरात्रिशेषेणयदिनाश्वास्यतेमया ॥सर्वथानास्ति संदेहः परित्यक्ष्यतिजीवितम् ॥ १२ ॥ रामस्तुयदिपृच्छेन्मांकिंमांसीताब्रवीद्वचः ॥ किमहंतंप्रतिब्रूयामसंभाष्यसुमध्यमाम् ॥ १३ ॥

सती सीताजीकी चैतन्यता जाती रही है जो हमइनको बिनासमझाये बुझाये चले जांयगे, तो हमारे जानेमें दोष हो जायगा ॥ ८ ॥ जो हमयहांसे इनको बिना समझाये बुझाये चले जायँगे, तो यशस्विनी राजकुमारी जानकीजी अपने उद्धारका उपाय न देखकर निश्चयही प्राण त्यागकरेंगी ॥ ९ ॥ सीताजीके दर्शनकी लालसा लगाये चन्द्रानन, इन महाबाहु श्रीरामचन्द्रजीने जिस प्रकार इन्हें समझानेको कह दिया है,उसी प्रकारसे हमें उचित है कि, जानकीजीको समझावें ॥१०॥ परन्तु क्या इनराक्षसियोंके सामनेही बातें करें सो तो हो नहीं सकता अब हम इस बडे भारी संकटमें पडे हैं; कि अब क्या करनाचाहिये ? ॥११॥ जो रात्रि बीतनेके पहलेही हम इनको नहीं समझावेंगे तो यह निःसंदेह अपने जीवनको फांसी लगाकर त्याग कर देंगी॥१२॥ जब कि श्रीरामचंद्रजी हमसे

पूछेंगे कि, जानकीजीने हमको क्या कहा है;तब सुमध्यमा सीताजीसे संभाषण न किये हुये हम उनको क्या उत्तर देंगे ? ॥१३॥ जो सीताजीसे बिनावार्त्ता किये और बिना समाचार लिये हम शीघ्रता पूर्वक यहां से चले जायँ तो काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजी क्रोधदृष्टिसे हमको भस्म कर डालेंगे ॥ १४ ॥ और जो सीताजीसे बिना संभाषण किये आज हम राजासुग्रीवके पास जाकर श्रीरामचन्द्रजीके लिये उत्साहित कर उनको यहांपर लावें तो उनका,सेनासहितयहांपर आना भी वृथा हो जायगा, क्यों कि जानकीजी तो पहलेही प्राण त्याग कर देंगी ॥१५॥ हम जरा इनराक्षसियोंकी ओटकारी अवसरचाहते हैं,जैसेही कि अवसर मिलेगा; वैसेही शोकसे संतापित हुई सीताजीको हम धीरे २ समझाबुझादेंगे ॥ १६ ॥ यद्यपि हम इस समय बहुत छोटे और वानरदेह धारण किये हुये हैं,तथापि वानर होकर भी मनुष्यके समान बोली बनाय व्याकरणादिसे शुद्ध वचन कहेंगे ॥ १७ ॥ यदि ब्राह्मणोंके समान हम संस्कृत बोलेंगे तो सीताजी हमको रावण

सीतासंदेशरहितंमामितस्त्वरयागतम् ॥ निर्दहेदपिकाकुत्स्थःक्रोधतीव्रेणचक्षुषा ॥१४॥ यदिवोद्योजयिष्यामिभर्तारंरामकारणात् ॥ व्यर्थमागमनंतस्यससैन्यस्यभविष्यति ॥ १५ ॥ अंतरंत्वहमासाद्यराक्षसीनामवस्थितः ॥ शनैराश्वासयाम्यद्यसंतापबहुलामिमाम् ॥ १६ ॥ अहंह्यतितनुश्चैववानरश्चविशेषतः ॥ वाचंचोदाहरिष्यामिमानुषीमिहसंस्कृताम् ॥ १७ ॥ यदिवाचंप्रदास्यामिद्विजातिरिवसंस्कृताम् ॥ रावणंमन्यमानामांसीताभीताभविष्यति ॥ १८ ॥ अवश्यमेववक्तव्यंमानुषंवाक्यमर्थवत् ॥ मयासांत्वयितुंशक्यानान्यथेयमनिंदिता ॥ १९ ॥ सेयमालोक्यमेरूपंजानकीभाषितंतथा ॥ रक्षोभिस्त्रासितापूर्वंभूयस्त्रासमुपैष्यति ॥ २० ॥ ततोजातपरित्रासाशब्दंकुर्यान्मनस्विनी ॥ जानानामांविशालाक्षीरावणंकामरूपिणम् ॥ २१ ॥ सीतयाचकृतेशब्देसहसाराक्षसीगणः ॥ नानाप्रहरणोघोरःसमेयादंतकोपमः ॥ २२ ॥ ततोमांसंपरिक्षिप्यसर्वतोविकृताननाः ॥ वधेचग्रहणेचैवकुर्युर्यत्नंमहाबलाः ॥ २३ ॥

समझ कर डर जायँगी ॥ १८ ॥ इसलिये हमको अवश्यही अर्थयुक्त मनुष्य बोली (प्राकृत) बोलनी पडेगी, नहीं तो हम किसीप्रकारसे इन निन्दारहित जानकीजीको न समझा सकेंगे ॥१९ ॥ पहले राक्षसोंने जानकीजीको त्रासित किया है इसलिये हमें वानर देह धारण किये मनुष्यके समान बात करते सुन कदाचित् जानकीजी और भी डर जायँगी ॥ २० ॥ हमको दुरात्मा पापरूपी रावण जानकर, मनस्विनी और बडे २ नेत्रवाली जानकीजी अपना बचाव करनेके लिये आर्त शब्द न कर उठें ॥२१॥ जब वह एकाएक आर्त्त नादकर उठेंगी तब अनेक अस्त्रशस्त्र धारण किये हुए यमराजकेसमान भयंकर राक्षसियें कोप किये आजायँगी ॥२२॥ उसके पीछे यह सब महाबलवान् विकट वदनवाली राक्षसियें चारों और देख, सब वृत्तान्त जान हमको वध करने या पकड़

लेनेके लिये यत्न करेंगी ॥२३॥ तब हमको बडे २ वृक्षोंकी छोटी २ और बडी२डालियों, और स्कंधोंपर दौडता हुआ देखकर यह सब राक्षसियें बहुतही डरजायँगी ॥ २४ ॥ वनमें घूमनेके समय हमारी भयानक मूर्तिका दर्शन करके सब राक्षसियें भयके मारे व्याकुलहो अतिविकट शब्द करेंगी ॥ २५ ॥ और पीछेसे वह राक्षसियें उन राक्षसोंको भी पुकारेंगी । जो कि, इस अशोकवाटिकाकी रक्षा रावणकी आज्ञासे अतियत्नसहित किया करते हैं ॥ २६ ॥ तब वे राक्षसलोग उद्विग्न हो शूल,शर,भाला,विविध भाँतिके अस्त्र शस्त्र लेकर अतिवेगसे यहां पर आवेंगे ॥२७॥ उस राक्षसबलसे घेरे जाकर जो हम उन समस्तका संहार भी कर डालें,तब भी फिर थकावटके मारे समुद्रके पार न जाय सकेंगे ॥२८॥ अथवा कार्य करनेमें कुशल राक्षस लोग यदि हमकोही बन्दी करलेंगे; तो एक हम बँधुए हुए, और दूसरी जानकीजी हमारे आनेका प्रयोजन भी न जान सकेंगी ॥२९॥ अथवा राक्षस लोग अत्यन्त हिंसाके करनेवाले

तमांशाखाःप्रशाखाश्चस्कंधांश्चोत्तमशाखिनाम् ॥ दृष्ट्वाचपरिधावंतंभवेयुःपरिशंकिताः ॥ २४ ॥ ममरूपंचसम्प्रेक्ष्यवनेविचरतोमहत् ॥ राक्षस्योभयवित्रस्ताभवेयुर्विकृतस्वराः ॥ २५ ॥ ततःकुर्युस्समाह्वानं राक्षसोरक्षसामपि ॥ राक्षसेन्द्रनियुक्तानांराक्षसेंद्रनिवेशने ॥२६॥ तेशूलशरनिस्त्रिंशविविधायुधपाणयः ॥ आपतेयुर्विमर्देऽस्मिन्वेगेनोद्वेगकारणात् ॥२७॥ संरुद्धस्तैस्तुपरितोविधमेराक्षसंबलम् ॥ शक्नुयांनतुसंप्राप्तुंपरंपारंमहोदधेः ॥ २८ ॥ मांवागृह्णीयुराप्लुत्यबहवःशीघ्रकारिणः ॥ स्यादियंचागृहीतार्थाममचग्रहणं भवेत् ॥२९॥ हिंसाभिरुचयोहिंस्युरिमांवाजनकात्मजाम् ॥ विपन्नंस्यात्ततःकार्यंरामसुग्रीवयोरिदम् ॥३०॥ उद्देशेनष्टमार्गेऽस्मिन्राक्षसैःपरिवारिते ॥ सागरेणपरिक्षिप्तेगुप्तेवसतिजानकी ॥ ॥ ३१ ॥ विशस्तेवागृहीतेवारक्षोभिर्मयिसंयुगे ॥ नाशंपश्यामिरामस्यसहायंकार्यसाधने ॥ ३२ ॥ विमृशंश्चनपश्यामियोहतेमयिवानरः ॥ शतयोजनविस्तीर्णंलंघयेतमहोदधिम् ॥३३॥ कामंहंतुंसमर्थोऽस्मिसहस्राण्यपिरक्षसाम् ॥ नतुशक्ष्याम्यहंप्राप्तुंपरंपारंमहोदधेः ॥ ३४ ॥

होते हैं सो यदि वह राक्षस जनकसुता जानकीजीकोही मारडालें तो श्रीरामचन्द्रजी और सुग्रीव दोनोंका कार्य नष्ट हो जायगा ॥३०॥ हम बँधुए होजायँ तो हो जायँ परंतु एक बातका सोच है कि,हमारे पीछे सीतादेवीजी राक्षसोंसे घिरे हुए सागरसे व्याप्त, मार्गहीन,लांघनेके अयोग्य, इस गुप्त स्थानमें वसती हैं, सो इनके पास इनकी खोज खबर लेनेको भी फिर कोई नहीं आ सकेगा ॥३१॥ युद्धमें राक्षस लोग हमको मारही डाल परंतु हम और किसीको ऐसा नहीं देखते कि, हमारे मरनेके पीछे श्रीरामचंद्रजीके कार्यकी सहायता करे ॥३२॥ क्योंकि हम ठीक२अपने मनमें विचार करते हैं कि, हमारे मरजाने पर कोई वानर ऐसा नहीं है जो शतयोजनका विस्तावाला समुद्र लांघे॥३३॥ हम तो अकेले सरलतासे सहस्र२लक्ष२राक्षसोंके मारनेमें समर्थ हैं, परंतु इसके पीछे समुद्रके उस पार को नहीं

जाय सकेंगे, क्योंकि युद्धसे थकावट बहुत चढ जायगी॥३४॥ युद्धमें जय पराजय होनेका कुछ ठीक नहीं इस लिये संदिग्ध कार्यमें प्रवृत्त होनेके लिये हमारी रुचि नहीं होती, हां जो संशयरहित कार्य हो तो उसको कर भी डालें, कारण कि संशयविहीन कार्यको कौन पुरुष संदेहवाला बतलावेगा॥३५॥ इस समय सीताजीके साथ वार्त्तालाप करनेसे भी दोषहै और विना वार्त्ता किये भी वैदेहीजीका प्राण जाता है ॥३६॥ सिद्ध होनेके निकट पहुँचा कार्य यदि असावधान दूतके पास आजाय, तो वह देशकालके विरुद्ध होकर सूर्यके उदयहोनेपर अंधकारके समान नष्ट हो जाता है॥३७॥कार्य और अकार्य दोनोंमेंसे स्थिर करके जो कर्तव्य विचाराजाय, तो अपने आपको पंडित माननेवाले दूतोंके हाथमें पडकर वह कार्यभी बिगड जाता है ॥ ३८ ॥ क्या करनेसे कार्यकी हानि न हो, और हमारे वचन जानकीजी भी सुनलें और उकसावें भी नहीं और हमारा समुद्रका लांघना भी वृथा न जाय ॥३९॥ क्या करनेसे सीताजी डर न पायकर हमारे

असत्यानिचयुद्धानिसंशयोमेनरोचते ॥ कश्चनिःसंशयंकार्यकुर्यात्प्राज्ञःससंशयम् ॥३५॥एषदोषोमहान्हिस्यान्ममसीताभिभाषणे॥प्राणत्यागश्चवैदेह्याभवेदनभिभाषणे ॥३६॥ भूताश्चार्थाविरुध्यंतिदेशकालविरोधिताः ॥ विक्लवंदूतमासाद्यतमःसूर्योदयेयथा ॥ ३७॥ अर्थानर्थांतरेबुद्धिर्निश्चितापिनशोभते ॥घातयंतिहिकार्याणिदूताःपंडितमानिनः॥३८॥ नविनश्येत्कथंकार्य्यंवैक्लव्यंनकथंमम॥लंघनंचसमुद्रस्यकथंनुनवृथाभवेत् ॥३९॥ कथंनुखलुवाक्यंमेशृणुयान्नोद्विजेतच ॥इतिसंचिंत्यहनुमांश्चकारमतिमान्मतिम् ॥४०॥राममक्लिष्टकर्माणंसुबंधुमनुकीर्तयन् ॥ नैनामुद्वेजयिष्यामितद्बंधुगतचेतनाम् ॥४१॥ इक्ष्वाकूणांवरिष्ठस्यरामस्यविदितात्मनः॥शुभानिधर्मयुक्तानिवचनानिसमर्पयन् ॥४२॥ श्रावयिष्यामिसर्वाणिमधुरांप्रब्रुवन्गिरम् ॥ श्रद्धास्यतियथासीतातथासर्वंसमादधे॥४३॥इतिसबहुविधंमहाप्रभावोजगतिपतेःप्रमदामवेक्षमाणः॥मधुरमवितथंजगादवाक्यंद्रुमविटपांतरमास्थितोहनूमान्॥४४॥ इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०सुंदरकांडेत्रिंशःसर्गः॥३०॥

वचन श्रवण करें, बुद्धिमान् हनुमान्जीने इन सब बातोंको भलीभांतिसे विचार कर स्थिर किया कि ॥४०॥ क्लेशरहित होकर कार्य करनेमें श्रीरामचंद्रजीही इनके प्यारे हैं, और उन प्रिय जनोंमेंही इनका चित्त लग रहा है इससे एकाएक श्रीरामचंद्रजीका समाचार देकर;इनको घबडावें नहीं॥४१॥इक्ष्वाकुवंशियोंमें श्रेष्ठ जितेन्द्रिय श्रीरामचन्द्रजीके धर्मयुक्त शुभ वचन आपही आप कह कर ॥ ४२ ॥ मीठी वाणीसे सब वृत्तांत सुनावेंगे जिस प्रकारसे सीताजीको विश्वास आवे, अब हम उसेही सर्वप्रकारसे करते हैं ॥ ४३ ॥ महानुभाव हनुमान्जी जगन्नाथ श्रीरामचंद्रजीकी भार्याको निहार इस प्रकारकी अनेक चिंतायें कर वृक्ष शाखाके मध्यमें लुककर मधुर वाणीसे सत्य वचन कहने लगे ॥४४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० सुंदरकांडे भाषायां त्रिंशः सर्गः ॥ ३० ॥

महामतिवाले हनुमान्‌जी ऐसी अनेक प्रकारकी चिंतायें कर दूरसे इस प्रकारसे मधुर वचन बोले कि, जिससे केवल सीताजीही सुनपावें और कोई नहीं ॥१॥ हनुमान्‌जी कहने लगे कि,दशरथजी नामक एक राजा थे. उनके बहुत सारे रथ,हाथी और घोडे थे । और वह पुण्यशील, महाकीर्ति और इक्ष्वाकु लोगोंके मध्यमें बडे विख्यात थे ॥२॥ वह हिंसासे अलग, ऊंचे मनवाले, दयालु; सत्य विक्रम, इक्ष्वाकुराजवंशमें प्रधान और लक्ष्मीके बढानेवाले थे ॥३॥ राजलक्षणोंसे युक्त,विपुल श्रीमान्,राजाओंमें श्रेष्ठ, ससागरा पृथ्वीमें विख्यात,बंधुजनोंके सुखदाता और सुखी थे ॥४॥ श्रीरामचन्द्रजी नामक उनके एक प्यारे दुलारे बडे पुत्र थे, पूर्ण चन्द्रमाके समान मुखवाले श्रीरामचन्द्रजी ज्ञानी और सब धनुष धारण करनेवालोंमें श्रेष्ठ हुए ॥५॥ वह श्रीरामचन्द्रजी अपने चरित्रकी रक्षा

एवंबहुविधांचिंतांचिंतयित्वामहामतिः ॥ संश्रवेमधुरंवाक्यंवैदेह्याव्याजहारह ॥ १ ॥ राजादशरथोनामरथकुंजरवाजिमान् ॥पुण्यशीलोमहाकीर्तिरिक्ष्वाकूणांमहायशाः॥२॥अहिंसारतिरक्षुद्रोघृणीसत्यपराक्रमः ॥ मुख्यस्येक्ष्वाकुवंशस्यलक्ष्मीवाँल्लक्ष्मिवर्धनः॥३॥पार्थिवव्यंजनैर्युक्तः पृथुश्रीःपार्थिवर्षभः ॥ पृथिव्यांचतुरंतायांविश्रुतःसुखदःसुखी ॥४॥ तस्यपुत्रःप्रियोज्येष्ठस्ताराधिपनिभाननः ॥ रामोनामविशेषज्ञःश्रेष्ठःसर्वधनुष्मताम् ॥ ५ ॥ रक्षितास्वस्यवृत्तस्यस्वजनस्यापिरक्षिता ॥ रक्षिताजीवलोकस्यधर्मस्यचपरंतपः ॥६॥ तस्यसत्याभिसंधस्यवृद्धस्यवचनात्पितुः ॥ सभार्यःसहचभ्रात्रावीरःप्रव्रजितोवनम् ॥७॥ तेनतत्रमहारण्येमृगयांपरिधावता ॥ राक्षसानिहताःशूराबहवःकामरूपिणः ॥ ८ ॥ जनस्थानवधंश्रुत्वानिहतौखरदूषणौ ॥ ततस्त्वमर्षापहृताजानकीरावणेनतु ॥ ९ ॥ वंचयित्वावनेरामंमृगरूपेणमायया ॥ समार्गमाणस्तांदेवींरामःसीतामनिंदिताम् ॥ १० ॥ आससादवनेमित्रंसुग्रीवंनामवानरम् ॥ ततःसवालिनंहत्वारामःपरपुरंजयः ॥ ११ ॥

करनेवाले निज जनोंकी रक्षाकरनेवाले, समस्तजीवोंकी रक्षाकरनेवाले, धर्मकी रक्षाकरनेवाले और शत्रुगणोंके तपानेवाले थे ॥ ६ ॥ वीर श्रीरामचन्द्रजी सत्यप्रतिज्ञ वृद्ध अपने पिताजीकी आज्ञा पाय भार्या और भ्राताके सहित वनकोपठाये गये ॥७॥ अतिघोर भयंकर वनमें शिकार खेलते २ उन्होंने कामरूपी अनेक बलवान् राक्षसोंके प्राण हरण किये ॥८॥ जनस्थानके (१४०००) चौदह हजार राक्षस और खर व दूषणके मरनेकी वार्ता श्रवण कर रावणने क्रोधके वश हो इस बातको न सहा और उनकी स्त्रीकोहरण किया ॥९॥मायामृगके रूपसे वनमें श्रीरामचन्द्रजीके साथ छल करा कर उनकी स्त्री जानकीजीका हरण कर लिया सो निंदारहित जानकीजी को ढूँढते॥१०॥श्रीरामचन्द्रजीने वनमें सुग्रीव वानरके साथ मित्रता की,तब परपुरविजयी श्रीरामचन्द्रजीने वालीका संहार कर ॥११॥

महात्मा सुग्रीवजीको वानरोंका राज्य दे दिया। उन सुग्रीवजीकी आज्ञासे कामरूपधारी वानर॥१२॥ हजार२करोड २ मिल कर सब दिशाओंमें खोज करते हैं, हम सम्पातीके वचनानुसार शत योजनके विस्तारवाला॥१३॥समुद्र उन्ही विशालाक्षीके हेतु अतिवेगसे नांघ कर आये हैं,कि जैसे रूपरंगकी, व जिस प्रकारके चिह्नोंसे युक्त उनसीताजीको॥१४॥हमने श्रीरामचन्द्रजीके मुखसे सुना था वैसीही पाया, वानरश्रेष्ठ हनुमान्जी इतना कह कह कर चुप हो रहे॥१५॥जानकीजीभी यह सबवचन सुन कर अतिशय विस्मित हुई, फिर टेढेवा लोवाली सुकेशी जानकीजी भयकेमारे बालोंसे ढका हुआ वदन ऊंचा करके शिंशपावृक्षकेझांझरोंमेंसे देखने लगीं ॥१६॥ सीताजी हनुमानजीकी कथा श्रवण करतीं,समस्त दिशाविदिशाको देखतीं एकमनसे श्रीरामचन्द्रजीकी ही चिन्ता करती हुई अतिहर्षितहुई ॥१७॥

आयच्छत्कपिराज्यंतुसुग्रीवायमहात्मने ॥ सुग्रीवेणाभिसंदिष्टाहरयःकामरूपिणः ॥१२॥ दिक्षुसर्वासुतांदेवीं विचिन्वंतःसहस्रशः ॥ अहंसंपातिवचनाच्छतयोजनमायतम् ॥ १३ ॥ तस्याहेतोर्विशालाक्ष्याःसमुद्रंवेगवान्प्लुतः ॥ यथारूपांयथावर्णांयथालक्ष्मवतींचताम् ॥१४॥ अश्रौषंराघवस्याहंसेयमासादितामया ॥ विररामैवमुक्त्वासवाचंवानरपुंगवः ॥ १५ ॥ जानकीचापितच्छ्रुत्वाविस्मयंपरमंगता ॥ ततःसावक्रकेशांतासुकेशीकेशसंवृतम्॥उन्नम्यवदनंभीरुःशिंशपामन्ववैक्षत॥१६॥निशम्यसीतावचनं कपेश्चदिशश्चसर्वाःप्रदिशश्चवीक्ष्य ॥ स्वयंप्रहर्षंपरमंजगामसर्वात्मनाराममनुस्मरंती ॥१७॥ सातिर्यगूर्ध्वंचतथाह्यधस्तान्निरीक्षमाणातमचिंत्यबुद्धिम् ॥ ददर्शपिंगाधिपतेरमात्यंवातात्मजंसूर्यमिवोदयस्थम् ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च० सा० सुन्दर० एकत्रिंशः सर्गः ॥३१॥ ततःशाखांतरेलीनंदृष्ट्वाचलितमानसा॥ वेष्टितार्जुनवस्त्रंतंविद्युत्संघातपिंगलम् ॥१॥ सादद‍र्शकपिंतत्रप्रश्रितंप्रियवादिनम्॥ फुल्लाशोकोत्कराभासंतप्तचामीकरेक्षणम्॥२॥साथदृष्ट्वाहरिश्रेष्ठंविनीतवदवस्थितम्॥मैथिलीचिंतयामासविस्मयंपरमंगता॥३॥अहोभीममिदंसत्त्ववानरस्यदुरासदम्॥दुर्निरीक्ष्यमिदंमत्वापुनरेवमुमोहसा॥४॥

उन्होंने अगल बगल ऊंचे नीचे सब ओरको देखते २उदय होतेहुए सूर्यके समान वानरपति सुग्रीवजीके मंत्री असाधारणबुद्धियुक्त पवनपुत्र हनुमानजीको देखा॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा ० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामेकत्रिंशः सर्गः ॥ ३१ ॥ बिजलीके समान तडित् वर्ण हरे वसन पहरेहुए हनुमान्जी शाखामें छिपे हुए बैठे थे, इसलिये उनको स्पष्ट न देखपानेसे सीताजीका मन कुछेक चंचल हो गया ॥१॥ उन जानकीजीने अशोकको राशिके समान प्रभायुक्त तपाये हुए सुवर्णके समान नेत्रवाले प्रियवादी वानर हनुमान्जीको देखा ॥२॥ विनीत वदनसे बैठे हुए वानरश्रेष्ठको देखकर सीताजी परमविस्मययुक्त होकर चिन्ता करने लगीं ॥ ३ ॥ अहो ! वानरजातिके मध्यमें यह वानर बडे भयंकर शरीरवाला और बडे दुःखसे देखनेके योग्य है ऐसा विचार श्रीजानकीजी फिर मोहित हो

गई ॥४॥ भयसे मोहित और दुःखसे कातरहो भामिनी जानकीजी हा राम ! हा लक्ष्मण ! कह२कर करुणस्वरसे विलाप करने लगीं ॥५॥ कहीं राक्षस न जानपावें इस लिये वह धीरे२रोने लगीं इनके पीछे जानकीजी वानर श्रेष्ठहनुमान्‌जीको विनीत भावसे निकट आते देखकर विचारने लगीं कि, यह स्वप्न तो नहीं है ॥६॥ सीताजीने शाखामृगोंके समान मुखवाले पहला कहा हुआ वेष धारण किये बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ महत्‌गुण सम्पन्न वानरोंमें मुख्य पवनकुमारको फिर दूसरी बार देखा ॥७॥ हनुमान्‌जीको देखकर सीताजी बहुतही डरीं और मृतकतुल्य हो गईं, फिर कुछ क्षणेक पीछे चैतन्यता प्राप्त करके विशाललोचनवालीजानकीजीने चिंता की ॥८॥ कि, स्वप्नमें वानर देखनेसे आज हमने बडा बुरा स्वप्न देखा वानरका देखना शास्त्रमें खोटे स्वप्नमें गिना जाता है कि यह निषिद्ध है,

विललापभृशंसीताकरुणंभयमोहिता ॥ रामरामेतिदुःखार्तालक्ष्मणेतिचभामिनी ॥५॥ रुरोदसहसासीतामंदमंदस्वरासती॥ साथदृष्ट्वाहरिवरं विनीतवदुपागतम् ॥ मैथिलीचिंतयामासस्वप्नोऽयमितिभामिनी॥६॥सावीक्षमाणापृथुभग्नवक्त्रंशाखामृगेन्द्रस्ययथोक्तकारम्॥ ददर्शपिंगप्रवरंमहार्हंवातात्मजंबुद्धिमतांवरिष्ठम् ॥७॥ सातंसमीक्ष्यैवभृशंविपन्नागतासुकल्पेवबभूवसीता॥चिरेणसंज्ञांप्रतिलभ्यचैवंविचिंतयामासविशालनेत्रा ॥८॥ स्वप्नोमयायंविकृतोद्यदृष्टः शाखामृगःशास्त्रगणैर्निषिद्धः॥ स्वस्त्यस्तुरामायसलक्ष्मणायतथापितुर्मेजनकस्यराज्ञः ॥९॥ स्वप्नोहिनायंनहिमेस्तिनिद्राशोकेनदुःखेनचपीडितायाः॥सुखंहिमेनास्तियतोविहीनातेनेंदुपूर्णप्रतिमाननेन ॥१०॥ रामेतिरामेतिसदैवबुद्ध्याविचिंत्यवाचाब्रुवतीतमेव॥तस्यानुरूपांचकथांतदर्थामेवंप्रपश्यामितथाशृणोमि ॥ ११ ॥ अहंहितस्याद्यमनोभवेनसंपीडितातद्गतसर्वभावा ॥ विचिंतयंतीसततंतमेवतथैवपश्यामितथाशृणोमि ॥ १२ ॥

हम प्रार्थना करती हैं कि,श्रीरामचन्द्रजीका लक्ष्मणका और हमारे पिताजनकजीका मंगल होवे॥९॥उन पूर्ण चन्द्रमाकेसमान वदनवाले श्रीरामचन्द्रजीके विरहमें हम शोक दुःखसे पीडित हो रही हैं,हमारे मनको कुछ भी सुख नहीं,निद्रातो कभी आतीही नहीं फिर भला स्वप्न कैसे दीखेगा इसलिये यह स्वप्न नहीं है ॥ १० ॥ हम बराबर अपने मनमें राम २ जपती रहती हैं और वचनसे सर्वदा रामही राम निकालती हैं और निरन्तर ध्यानके वशमें मनमें जो विचारती हैं वही श्रवण करती हैं और श्रवण करनेके अनुसार देखभी लेती हैं ॥ ११ ॥ एक मनमें सदा जो उनकी चिन्ताकरती रहती हैं, इस कारणसे उनकारूप हमारे मनमें उदित होकर हमको पीडा पहुँचाता है, इसलिये हमनित्य उनकी कथाको सुनती हैं और उनकीही कथावार्ता श्रवण करती व उनकोही देखती हैं ॥१२॥

फिर ऐसा समझ पडता है कि यह वानर मनकल्पित है और फिर जोभली भांति विचार कर देखती हैं तो यह जाना जाता है कि, मनोरथसे कल्पित हुई वस्तुका तो कोई रूपही नहीं है, क्योंकि यह तो स्पष्टरूपधारण करके हमसे वार्त्ता करता है ॥१३॥ बृहस्पतिजीको नमस्कार, शस्त्रधारी इन्द्रजीको नमस्कार, ब्रह्मजीको नमस्कार, और अग्निजीको हमारा नमस्कार, हम प्रणाम करके प्रार्थना करती हैं कि, हमारे सन्मुख जो इस बानरने यह कथा कही, यह सत्यही सत्यहो मिथ्या न हो ॥१४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां द्वात्रिंशः सर्गः ॥३२॥ मूँगेके समानलाल मुखवाले पवनकुमार हनुमानजी ऊपरकी शाखासे नीचेकीशाखापर उतरकर सीताके दुःखसे दुःखित और विनीतभावयुक्तहो दूरहीसे प्रणाम कर ॥१॥ शिरपरसेनोंदो हाथ जोड अतिमधुर वाणीसे

मनोरथःस्यादितिचिंतयामितथापिबुद्ध्यापिवितर्कयामि॥ किंकारणंतस्यहिनास्तिरूपंसुव्यक्तरूपश्चवदत्ययंमाम् ॥१३॥ नमोस्तुवाचस्पतये सवज्रिणेस्वयंभुवेचैवहुताशनाय ॥ अनेनचोक्तंयदिदंममाग्रतोवनौकसातच्चतथास्तुनान्यथा ॥ १४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे द्वात्रिंशः सर्गः॥३२॥सोवतीर्यद्रुमात्तस्माद्विद्रुमप्रतिमाननः॥विनीतवेषःकृपणःप्रणिपत्योपसृत्यच॥ १ ॥ तमब्रवीन्महातेजाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ शिरस्यंजलिमाधायसीतांमधुरयागिरा ॥ २ ॥ कानुपद्मपलाशाक्षिक्लिष्टकौशेयवासिनि ॥ द्रुमस्यशाखामालंब्यतिष्ठसित्वमनिंदिता ॥ ३ ॥ किमर्थंतवनेत्राभ्यांवारिस्रवतिशोकजम् ॥ पुंडरीकपलाशाभ्यांविप्रकीर्णमिवोदकम् ॥ ४ ॥ सुराणामसुराणांचनागगंधर्वरक्षसाम् ॥ यक्षाणांकिन्नराणांचकात्वंभवसिशोभने ॥ ५ ॥ कात्वंभवसिरुद्राणांमरुतांवावरानने॥ वसूनांवावरारोहेदेवताप्रतिभासिमे ॥६॥ किंनुचन्द्रमसाहीनापतिताविबुधालयात्॥रोहिणीज्योतिषांश्रेष्ठाश्रेष्ठासर्वगुणाधिका ॥७॥ "कात्वंभवसिकल्याणि त्वमनिंदितलोचने "कोपाद्वायदिवामोहाद्भर्तारमसितेक्षणे ॥ वसिष्ठंकोपयित्वात्वंवाऽसिकल्याण्यरुंधती ॥ ८ ॥

महातेजस्वी पवनकुमार हनुमानजी श्रीरामचन्द्रजीसे बोले ॥२॥ हे कमलनयने ! तुम कौन हो ? तुम सर्वाङ्गसुन्दरी, मलीन रेशमी वस्त्र पहरे वृक्षकी शाखा पकडे हुये क्यों खडी हो ? ॥३॥ कमलपत्रसे जलके गिरनेके समान तुम्हारे दोनों नेत्रोंसे शोकजनित आंसुओंकी बूँदे क्यों गिर रही हैं ॥४॥ हे शोभने ! सुर, असुर, नाग, गन्धर्व, राक्षस, यक्ष, और किन्नर इन सबमें तुम कौन हो ? ॥ ५ ॥ हे चारुवदने ! हे सर्वांगसुन्दरि! तुम रुद्रगण; मरुद्गण या वसुगणोंमेंसे कोई हो; हमतो जानते हैं कि तुम देवताहो ॥ ६ ॥ क्या तुम ज्योतिर्मय नक्षत्रगणोंमें मुख्य सर्वश्रेष्ठ गणोंमें पहले गिरनेके योग्य रोहिणीहो ? जो चन्द्रमाके वियोगमें ग्रसितहो स्वर्गसे यहांपर गिरीहो ॥७॥ "हे कल्याणि ! हे निन्दारहित लोचनवाली ! तुम कौन हो ?" हे काले वर्णके नेत्रोंवाली ! क्या तुम

कल्याणी अरुन्धती हो जो कोप और मोहके वश अपने स्वामी वसिष्ठजीको क्रोधित कराय यहां पर चली आई हो ? ॥८॥ हे सुमध्यमे ! तुम्हारे पुत्र; पिता, स्वामी या भ्राताका क्या नाम है ? याइन लोगोंका कुछ अनभल होनेसे ही या इस लोकसे दूसरे लोकमें उनके जानेसे तो तुम शोक नहीं कर रहीहो ?॥९॥ तुम रोय रोय कर लम्बे लम्बे श्वास लेरही हो; भूमिका स्पर्श किये हो और नरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीका नाम वारम्बार मुखसे उच्चारण कर रही हो इस लिये हम तुमको देवी भी नहीं मान सकते हैं ॥१०॥ परन्तु जिस प्रकारसे तुम्हारे शुभलक्षण हम देख रहे हैं;इससे तो हमको यही जान पडता है कि तुम राजाकीरानी अथवा कोई राजकन्या होगी ॥११॥ रावणने बलात्कार करके जिन जानकीजीको जनस्थानसे हरण किया है तुम यदि वही सीता हो तो बताओ हम तुमसे इस बातको जानना चाहते हैं तुम्हारा मंगल होवे ॥१२॥ जिस प्रकारकी तुम्हारी दीन अवस्था और जिस प्रकारका अलौकिक रूप और जिसप्रकारका तपस्वियोंके

कोनुपुत्रःपिताभ्राताभर्तावातेसुमध्यमे ॥ अस्माल्लोकादमुंलोकंगतंत्वमनुशोचसि॥९॥रोदनादतिनिःश्वासाद्भूमिसंस्पर्शनादपि॥ नत्वांदेवीमहं मन्येराज्ञःसंज्ञावधारणात् ॥ १० ॥ व्यंजनानिहितेयानिलक्षणानिचलक्षये ॥ महिषीभूमिपालस्यराजकन्याचमेमता ॥११॥ रावणेनजन स्थानाद्बलात्प्रमथितायदि ॥ सीतात्वमसिभद्रंतेतन्ममाचक्ष्वपृच्छतः॥१२॥यथाहितववैदैन्यंरूपंचाप्रतिमानुषम् ॥ तपसाचान्वितोवेषस्त्वं राममहिषीध्रुवम् ॥१३॥सातस्यवचनंश्रुत्वारामकीर्तनहर्षिता॥उवाचवाक्यंवैदेहीहनूमंतंद्रुमाश्रितम्॥१४॥पृथिव्यांराजसिंहानांमुख्यस्यविदि तात्मनः॥स्नुषादशरथस्याहंशत्रुसैन्यप्रणाशिनः॥१५॥दुहिताजनकस्याहंवैदेहस्यमहात्मनः॥सीतेतिनाम्नाचोक्ताहंभार्यारामस्यधीमतः॥१६॥ समाद्वादशतत्राहंराघवस्यनिवेशने॥भुंजानमानुषान्भोगान्सर्वकामसमृद्धिनी॥१७॥ततस्त्रयोदशेवर्षेराज्येचेक्ष्वाकुनंदनम् ॥ अभिषेचयितुंराजा सोपाध्यायःप्रचक्रमे ॥ १८ ॥

योग्य वेष देखते हैं इससे तो निश्चयही जान पडता है कि,तुम श्रीरामचन्द्रजीकीरानी हो ॥१३॥ विदेहकुमारी सीताजी हनुमानूजीके वचन और रामनामको सुनकर आनंद सहित वृक्षकी शाखाका आश्रय किये हुये हनुमानूजीसे बोलीं ॥१४॥ इससारी पृथ्वीमें राजसिंह गणोंमें जो प्रथम गिने जानेके योग्य हैं हम उन जितेन्द्रिय शत्रुसेनाके मथनेवाले महाराज दशरथजीकी पुत्र वधू हैं ॥१५॥ और विदेहराज महात्मा जनकजीकी हम कन्या हैं हमारा सीता नाम है और बुद्धिमान् महान् श्रीरामचन्द्रजीकी हम स्त्री हैं ॥१६॥ हमने श्रीरामचन्द्रजीके साथ गृहमें बारह वर्षतक रहसब अभिलाषा पूर्ण कर मनुष्य लोकके भोगोंका भोगकिया ॥१७॥ इसके पीछे जब तेरहवां वर्ष आया तब राजा दशरथजी अपने पुरोहितकी सम्मति लेकर इक्ष्वाकुकुमार श्रीरामचंद्रजीको राज्याभिषेकमें

अभिषेकित करनेके लिये तैयार हुए ॥ १८ ॥ जब श्रीरामचंद्रजीके अभिषेककी सब सामग्री आने लगीं कि, इतनेमें कैकेयी नामक रानीने अपने स्वामीसे कहा ॥ १९ ॥ कि जो श्रीरामचन्द्रजीका अभिषेक कराया जायगा, तो हम प्रतिदिन भोजन न करेंगी न जल पियेंगी तुम जान रक्खो कि, रामचंद्रजीका अभिषेक होनाही हमारे जीवनका अन्त है ॥२०॥ हे राजश्रेष्ठ ! आप जो उस देवासुरसंग्राममें प्रसन्न होकर हमको दो वर देना चाहते थे; उन दोनों वरोंको मिथ्या करनेकी यदि आपकी इच्छा न होवे; तो हम प्रार्थना करती हैं कि रामचंद्र वनको चले जांय ॥२१॥ सत्यवादी राजा दशरथजी रानीको जो वचन दे चुकेथे उनको यादकर; और कैकेयीके निठुर अप्रियवचनसुन मूर्च्छित होगये ॥२२॥ उसके पीछे वृद्धराजा दशरथजीने सत्यधर्ममें स्थिर रहकर रोदन करके

तस्मिन्संभ्रियमाणेतुराघवस्याभिषेचने ॥ कैकेयीनामभर्तारमिदंवचनमब्रवीत्॥१९॥नपिबेयंनखादेयंप्रत्यहंमम भोजनम् ॥ एषमेजीवितस्यांतोरामोयद्यभिषिच्यते॥२०॥यत्तदुक्तंत्वयावाक्यंप्रीत्यानृपतिसत्तम॥तच्चेन्नवितथंकार्यंवनंगच्छतुराघवः॥२१॥सराजासत्यवाग्देव्यावरदानमनुस्मरन्॥मुमोहवचनंश्रुत्वाकैकेय्याःक्रूरमप्रियम्॥२२॥ततस्तंस्थविरोराजासत्यधर्मेव्यवस्थितः॥ज्येष्ठंयशस्विनंपुत्रंरुदन्राज्यमयाचत॥२३॥ सपितुर्वचनंश्रीमानभिषेकात्परंप्रियम् ॥ मनसापूर्वमासाद्यवाचाप्रतिगृहीतवान् ॥२४॥ दद्यान्नप्रतिगृह्णीयात्सत्यंब्रूयान्नचानृतम् ॥ अपिजीवितहेतोर्हिरामःसत्यपराक्रमः ॥ २५ ॥ सविहायोत्तरीयाणिमहार्हाणिमहायशाः ॥ विसृज्यमनसाराज्यंजनन्यैमांसमादिशत ॥२६॥ साहंतस्याग्रतस्तूर्णंप्रस्थितावनचारिणी ॥ नहिमेतेनहीनायावासःस्वर्गेऽपिरोचते॥२७॥प्रागेवतुमहाभागःसौमित्रिर्मित्रनंदनः ॥ पूर्वजस्यानुयात्रार्थेकुशचीरैरलंकृतः ॥ २८ ॥

यशस्वी अपने बडे पुत्र रामचंद्रजीसे राज्य मांगलिया ॥ २३ ॥ पिताजीका वचन राज्याभिषेकसे भी श्रीरामचंद्रजीको अधिक प्यारा हुआ, प्रथम उसको वह मनमें अंगीकार कर फिर प्रगटमें स्वीकार करते हुए॥२४॥क्योंकि,श्रीरामचंद्रजी जिस वस्तुका दान कर चुके हैं फिर चाहै उनके प्राणभी जाते रहें,तो भी उस वस्तुका ग्रहण नहीं करते, उनका स्वभावही ऐसा कि,सदा सत्य कहेंगे मिथ्या कभी नहीं कहते ॥२५॥ वह महायशस्वी श्रीरामचन्द्रजी बड़े २ मोलके वस्त्रोंको त्यागकर अपने पूरे अंतःकरणसे राज्यको छोड़ वन जानेके समय हमको अपनी माताके निकट सौंपने लगे ॥२६॥ परंतु हम बहुत शीघ्र वनचारिणीका वेश धारण करके उनके आगेही साथ वन चलनेको तैयार हुई, क्योंकि उनकेबिना स्वर्गमेंवास करनेसे भी हमको प्रसन्नता नहीं ॥२७॥ मित्रोंके आनंद बढानेवाले

महाभाग सुमित्रानन्दन लक्ष्मणजी भी अपने बडे भ्राताके साथ वन चलनेके लिये पहलेही कुश चीरपहर कर तैयार हो गये ॥२८॥ इस प्रकारसे हम तीनों जने अपने बडे राजा दशरथजीकी आज्ञा अति आदर मानसे अंगीकार करके कठोर व्रत धर ऐसे गम्भीर दर्शन वनमें प्रवेश करते हुए जो पहले कभी नही देखा था ॥ २९ ॥ वह अमित तेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी दण्डकारण्यमें वस रहे थे कि, उसी समय दुरात्मा राक्षस रावणने उनकी भार्या हमको हरण किया ॥ ३० ॥ उसने अनुग्रह करके हमारी जीवन रक्षाके लिये दो मासकी अवधि दी है दो मासके बीत जाने पर हमको जीव त्याग करना पडेगा ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकाण्डे भाषायां त्रयस्त्रिंशः सर्गः॥३३॥शोक संतापसे संतापित हुई श्रीजानकीजीके यह वचन सुन वानर श्रेष्ठ हनुमानूजी

तेवयंभर्तुरादेशंबहुमान्यदृढव्रताः ॥ प्रविष्टाःस्मपुरादृष्टंवनंगंभीरदर्शनम् ॥२९॥ वसतोदंडकारण्येतस्याहममितौजसः ॥ रक्षसापहृताभार्या रावणेनदुरात्मना ॥ ३० ॥ द्वौमासौतेनमेकालोजीवितानुग्रहःकृतः ॥ ऊर्ध्वंद्वाभ्यांतुमासाभ्यांततस्त्यक्ष्यामिजीवितम् ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा०सुंदरकांडे त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३३ ॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाहनुमान्हरिपुंगवः ॥ दुःखाद्दुःखाभिभूतायाःसांत्वमुत्तरमब्रवीत् ॥ १ ॥ अहंरामस्यसंदेशाद्देविदूतस्तवागतः ॥ वैदेहिकुशलीरामःसत्वांकौशलमब्रवीत् ॥ २ ॥ योब्राह्ममस्त्रं वेदांश्चवेदवेदविदांवरः ॥सत्वांदाशरथीरामोदेविकौशलमब्रवीत् ॥३॥ लक्ष्मणश्चमहातेजाभर्तुस्तेऽनुचरःप्रियः ॥ कृतवाञ्छोकसंतप्तःशिरसा तेऽभिवादनम् ॥ ४ ॥ सातयोःकुशलंदेवीनिशम्यनरसिंहयोः ॥ प्रतिसंहृष्टसर्वांगीहनूमंतमथाब्रवीत् ॥ ५ ॥कल्याणीबतगाथेयंलौकिकीप्रति भातिमाम् ॥एतिजीवंतमानंदोनरंवर्षशतादपि ॥ ६ ॥

उनको समझाते बुझाते हुए उत्तर देने लगे ॥१॥ हे देवि ! श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञानुसार हम आपके निकट दूत होकर आये हैं, हे विदेहनंदिनि ! श्रीरामचंद्रजीकुशल हैं, उन्होंने आपकी कुशल पूंछी है॥२॥ जो वेदवित् श्रेष्ठ ब्रह्मास्त्र और चार वेदोंको जानते हैं । देवि ! उन दशरथकुमार श्रीरामचंद्रजीने आपके कुशल मंगलका प्रश्नकियाहै॥ ३ ॥तुम्हारे स्वामीके प्रिय अनुचरमहातेजस्वी लक्ष्मणजीने शोकसे संतापित हो मस्तक झुकाय आपको प्रणाम किया है॥४॥उनदोनरसिंहों की कुशलवार्त्ता श्रवणकर देवीजानकीके सब अंगोंमें रोमाञ्च हो आया तबउन्होंने हनुमानूजीसे कहा॥५॥मनुष्य जीवित रहनेपर सौ वर्षके पीछे भी आनंद पाता है(अर्थात् जो मनुष्य जीवित रहे तो कभी न कभी उसे आनंद मिलता ही है)यह जो कहावतलोग कहा करते हैं,सो अब हम उसको सत्यही सत्य देखती हैं॥६॥

श्रीराम लक्ष्मणजीके मिलने पर जैसा आनंद सीताजीको होता,इस समय भी सीताजीको वैसाही आश्चर्यका आनंद उपजा तब सीताजी और हनुमानजीमें विश्वस्तभावसे परस्पर वार्ता होने लगी॥७॥शोकसे संतापित हुए जानकीजीके यह वचन सुनकर पवनकुमार हनुमानूजी धीरे २ उनके समीप चले गये॥८॥ धीरे २ हनुमानूजी ज्यों२निकट आते थे,त्यों२सीताजीके मनमेंइनको रावण जानकर शंका होती थी॥९॥वह मनहीमनमें कहने लगीं हाय!धिक्कार है!हमने कैसा बुरा कार्य किया ? इससे अपना वृत्तांत कहा । यह तो वही रावण दूसरा रूप धारण कर यहां आया है॥१०॥यह विचार सुंदर अंगवाली जानकीजी शिंशपाकी डालीको छोड शोकसे आकर्शित हो उस धरती परही बैठ गईं॥११॥इसी अवसरमें महाबाहु हनुमानूजीने जानकीजीको प्रणाम किया,परंतु भयके

तयोःसमागमेतस्मिन्प्रीतिरुत्पादिताऽद्भुता॥ परस्परेणचालापंविश्वस्तौतौप्रचक्रतुः॥७॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ सीतायाःशोकतप्तायाःसमीपमुपचक्रमे ॥ ८ ॥ यथायथासमीपंसहनूमानुपसर्पति ॥ तथातथारावणंसातंसीतापरिशंकते ॥ ९ ॥ अहोधिक्धिक्कृतमिदंकथितंहियदस्यमे ॥ रूपांतरमुपागम्यसएवायंहिरावणः ॥१०॥ तामशोकस्यशाखांतुविमुक्त्वाशोककर्शिता ॥ तस्यामेवानवद्यांगीधरण्यांसमुपाविशत्॥ ११ ॥ अवंदतमहाबाहुस्ततस्तांजनकात्मजाम् ॥ साचैनंभयसंत्रस्ताभूयोनैनमुदैक्षत ॥ १२ ॥ तंदृष्ट्वावंदमानंचसीताशशिनिभानना ॥ अब्रवीद्दीर्घमुच्छ्वस्यवानरंमधुरस्वरा ॥ १३ ॥ मायांप्रविष्टोमायावीयदित्वंरावणःस्वयम्॥ उत्पादयसिमेभूयःसंतापंतन्नशोभनम् ॥ १४ ॥ स्वंपरित्यज्यरूपंयःपरिव्राजकरूपवान् ॥ जनस्थानेमयादृष्टस्त्वंसएवहिरावणः ॥ १५ ॥ उपवासकृशांदीनांकामरूपनिशाचर ॥ संतापयसिमांभूयःसंतापंतन्नशोभनम् ॥१६॥ अथवानैतदेवंहियन्मयापरिशंकितम् ॥ मनसोहिममप्रीतिरुत्पन्नातवदर्शनात् ॥१७॥

मारे त्रासित जानकीजीने फिर उनको न निहारा॥१२॥हनुमानूजीको वंदना करते हुयेदेख कर चंद्रमुखी सीताजी लंबे२श्वास लेकर उन वानरश्रेष्ठसे मधुरवचन बोलीं॥१३॥यदि तुम सत्य२ही मायावी रावण,माया अवलंबन कर फिर हमको संताप देने आये हो तो हम तुमसे कहती हैं कि,हमें इस प्रकारका दुःखदेना तुमको उचित नहीं है॥१४॥जनस्थानमें जिसको हमने अपना प्राकृतरूपछोड़ कर भिक्षुकका रूप धारण किये देखा था,निश्चय तुम वही रावणहो ॥ १५ ॥ हे कामरूपी निशाचर!हम उपवास करनेसेक्षीणहो दीनभावसे समय बिताती हैं सो हमको पुनर्बार सताना तुम्हारा उचित कर्म नहीं है॥१६॥अथवा हमारीशंका

झूठीहै,क्यों कि तुम्हारे दर्शनसे हमारे मनमें आनंद उपजताहै,इससे तुमरावण नहीं हो॥ १७॥ यदि तुम श्रीरामचंद्रजीके दूत होकर यहां आये होतो तुम्हारा मंगलहोवे हे वानरश्रेष्ठ! हम तुमसे श्रीरामचंद्रजीकी कथा पूछती हैं क्यों कि श्रीरामचंद्रजीकी कथाही हमको अधिक प्यारीहै॥ १८॥ हे वानर! तुमहमारे प्यारे श्रीरामचंद्रजीके गुणोंका कीर्त्तन करो। हे सौम्य! जिस प्रकार जलकावेग नदीके किनारेको होता है वैसेही तुम हमारे मनको हरण करते हो॥ १९॥ अहो! स्वप्नने हमकोक्यामहासुख दिया है? बहुत दिनसे हरी हुई हमने आज श्रीरामचंद्रजीकेभेजे हुए दूतको देखा ॥ २० ॥ वीर श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीको यदि हम स्वप्नमें भी देख पावें तो हमें व्याकुलता न होवे, परंतु स्वप्न भी हमारा विरोधी है अर्थात् नींदही नहीं आती स्वप्न कहांसे हो ॥ २१ ॥ इसको हम स्वप्न नहीं समझ सकतीं, क्योंकि स्वप्नमें वानर देखनेसे अभ्युदय नहीं प्राप्त होता, परन्तु हमने तो संतोषरूप अभ्युदय प्राप्त किया ॥२२॥ तो फिर क्या यह बुद्धिका भ्रम; पवनका या उन्मादसे उत्पन्न

यदिरामस्यदूतस्त्वमागतोभद्रमस्तुते ॥ पृच्छामित्वांहरिश्रेष्ठप्रियारामकथाहिमे ॥ १८ ॥ गुणान्रामस्यकथयप्रियस्यममवानर ॥ चित्तंहर सिमेसौम्यनदीकूलयथारयः ॥१९॥ अहोस्वप्नस्यसुखतायाहमेवंचिराहृता॥ प्रेषितंनामपश्यामिराघवेणवनौकसम् ॥२०॥ स्वप्नेऽपियद्यहंवी रंराघवंसहलक्ष्मणम् ॥ पश्येयंनावसीदेयंस्वप्नोऽपिममसत्सरी॥२१॥ नाहंस्वप्नमिमंमन्येस्वप्नेदृष्ट्वाहिवानरम्॥ नशक्योभ्युदयःप्राप्तुंप्राप्तश्चा भ्युदयोमम॥२२॥ किंनुस्याच्चित्तमोहोऽयंभवेद्वातगतिस्त्वियम्॥ उन्मादजोविकारोवास्यादियंमृगतृष्णिका॥२३॥ अथवानायमुन्मादोमो होप्युन्मादलक्षणः॥संबुध्येचाहमात्मानमिमंचापिवनौकसम्॥२४॥ इत्येवंबहुधासीतासंप्रधार्यबलाबलम् ॥ रक्षसांकामरूपत्वान्मेनेतंराक्षसा धिपम्॥२५॥ एतांबुद्धिंतदाकृत्वासीतासातनुमध्यमा॥नप्रतिव्याजहाराथवानरंजनकात्मजा॥२६॥ सीतायानिश्चितंबुद्ध्वाहनूमान्मारुतात्मजः॥ श्रोत्रानुकूलैर्वचनैस्तदातांसंप्रहर्षयन् ॥ २७ ॥ आदित्यइवतेजस्वीलोककांतःशशीयथा ॥ राजासर्वस्यलोकस्यदेवोवैश्रवणोयथा ॥ २८ ॥

हुआ विकार अथवा मृगतृष्णा है॥ २३॥ यह उन्माद भी नहीं है क्योंकि उन्मादका लक्षण ज्ञानकी हानि है, परंतु हमको ज्ञान भली भाँति है, हम अपनेको भीजानती हैं, और इन वानरको भी प्रत्यक्ष देख रही हैं॥ २४॥ सीताजी इस प्रकारकी अनेक चिंताओंसे कामरूपी राक्षस और वानर दोनों पक्षके बलाबलको निर्णय करजान कीजी हनुमान्‌जीको रावणही मानती हुई॥ २५॥ क्योंकि वह जानतीथीं कि, राक्षसलोग अपनी इच्छानुसार दूसरेरूप धारणकरसकते हैं। जनकनंदिनी सुमध्यमा सीताजी उस कालमें यह स्थिर करके फिर हनुमान्‌जीसे कुछ न बोलीं॥ २६॥ पवनकुमार हनुमानजी सीताजीके अभिप्रायको जान; उस समय श्रवणसुखकारी वचन कह उनके आनंदको बढाने लगे॥ २७॥ कि; श्रीरामचंद्रजी सूर्यके समान तेजस्वी और चंद्रमाके समान लोकोंके आनंद बढाया करते हैं और वह कुबेरजीके

मधुरभाषी हैं ॥२९॥
समान सब लोकोंके राजा हैं ॥२८॥ और विक्रम करनेमें महायशस्वी विष्णुजीके समान और बृहस्पतिजीकी भाँति सत्यवादी और
वह रूपवान् स्त्रीजातिके वांछनीय साक्षात् मूर्तिमान् कंदर्पके समान श्रीमान् हैं जिस स्थानमें क्रोध करना उचित होता है वह उसी स्थानमें क्रोध किया करते हैं।
और लोकोमें वह सर्वश्रेष्ठ तथा महारथी हैं॥३०॥सब लोक उन महात्माकी भुजच्छायाका आश्रय लेकर टिके हुये हैं। जिसने मायामय मृगके द्वारा रघुनंदन
श्रीरामचंद्रजीको दूर कर॥३१॥सूने आश्रमसे आपको दूर किया है,सो आपशीघ्रही उसका फल देखेंगी,वीर्यवान् श्रीरामचंद्रजी शीघ्रही उसरावणको मारडालेंगे
॥३२॥वह श्रीरामचंद्रजी क्रोधकर अग्निके समानप्रकाशित बाणोंके समूहोंको छोड उस रावणका संहार करेंगे।सो उनकेही भेजेहुए दूत होकर हमतुम्हारे पास

विक्रमेणोपपन्नश्चयथाविष्णुर्महायशाः॥सत्यवादीमधुरवाग्देवोवाचस्पतिर्यथा॥२९॥रूपवान्सुभगःश्रीमान्कंदर्पइवमूर्तिमान्॥स्थानक्रोधेप्रहर्ता
चश्रेष्ठोलोकेमहारथः॥३०॥ बाहुच्छायामवष्टब्धोयस्यलोकोमहात्मनः ॥ अपक्रम्याश्रमपदान्मृगरूपेणराघवम् ॥३१॥ शून्येयेनापनीतासित
स्यद्रक्ष्यसितत्फलम् ॥ अचिराद्रावणंसंख्येयोवधिष्यतिवीर्यवान् ॥३२॥ क्रोधप्रमुक्तैरिषुभिर्ज्वलद्भिरिवपावकैः ॥ तेनाहंप्रेषितोदूतस्त्वत्सका
शमिहागतः ॥३३॥ त्वद्वियोगेनदुःखार्तःसत्वांकौशलमब्रवीत् ॥ लक्ष्मणश्चमहातेजाःसुमित्रानंदवर्धनः ॥ ३४ ॥ अभिवाद्यमहाबाहुःसत्वां
कौशलमब्रवीत् ॥ रामस्यचसखादेविसुग्रीवोनामवानरः ॥३५॥ राजावानरमुख्यानांसत्वांकौशलमब्रवीत् ॥नित्यंस्मरतितेरामःससुग्रीवःसल
क्ष्मणः॥३६॥ दिष्ट्यावजीसिवैदेहिराक्षसीवशमागता॥नचिराद्द्रक्ष्यसेरामंलक्ष्मणंचमहारथम्॥३७॥ मध्येवानरकोटीनांसुग्रीवंचामितौजसम्॥
अहंसुग्रीवसचिवोहनूमान्नामवानरः ॥ ३८ ॥ प्रविष्टोनगरींलंकांलंघयित्वामहोदधिम् ॥ कृत्वामूर्ध्निनतदान्यासंरावणस्यदुरात्मनः ॥ ३९ ॥

आये हैं ॥३३॥ आपके विरहसे कातर होकर उन्होंने आपकी कुशल वार्त्ता पूछी है,सुमित्राके आनंद बढानेवाले तेजस्वी महाबाहु लक्ष्मणजीने भी ॥३४॥
प्रणामकर आपकी कुशल वार्ता पूछी है। हे देवि! श्रीरामचंद्रजीके सखा सुग्रीव नाम वानरने भी॥३५॥जो कि, वानरोंके राजा हैं उन्होंने भीआपसे कुशल
प्रश्न किया है। श्रीरामचंद्रजी सुग्रीव व लक्ष्मणजीके साथ नित्यही तुम्हारी याद किया करते हैं ॥३६॥ यह बडे भाग्यकी बात है कि,आप निशाचरियोंके
वशमें पडकर भी अब तक जीवित हैं। अब बहुतही शीघ्र महारथ श्रीरामचंद्रजी व लक्ष्मणजीके सहित ॥ ३७ ॥ करोड २ वानरोंके बीचमें अमित तेजस्वी
सुग्रीवजीको देखोगी, हम हनुमान् नामक वानर सुग्रीवजीके मंत्री ॥ ३८ ॥ महासमुद्रको लांघकर लंका नगरीमें आये हैं। दुरात्मा रावणके मस्तकपर चरण

धर ॥३९॥ पराक्रमका अवलम्बनकर तुम्हारे दर्शनकी लालसासे यहां आये हैं । हे देवि ! आप जो हमको रावण समझती हैं सो हम रावण नहीं हैं, अब आप इस उपस्थित शंकाको छोड हमारे कहनेका विश्वास कीजिये ॥ ४० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुंदरकांडे भाषायां चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३४ ॥ वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीके मुखसे यह कथा श्रवणकर सीताजी मधुर वाणी और विनीतभावसे उनसे बोलीं ॥ १ ॥ कि, श्रीरामचन्द्रजीके साथ तुम्हारा कहां मिलना हुआ ? लक्ष्मणजीको तुमने किसप्रकारसे जाना ? और वानर मनुष्योंका समागम परस्पर कैसे हुआ ? ॥ २॥ हे वानर ! श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके जो चिह्न हैं तुम फिर भली भाँति उनको कहो; जिसके सुननेसे हमारे मनका शोक जाता रहेगा ॥३॥ और श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीके शरीरका गठन, दोनों

त्वांद्रष्टुमुपयातोऽहंसमाश्रित्यपराक्रमम् ॥ नाहमस्मितथादेवियथामामवगच्छसि ॥ विशंकात्यज्यतामेषाश्रद्धस्ववदतोमम ॥४०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥३४॥ तांतु रामकथां श्रुत्वावैदेहीवानरर्षभात् ॥ उवाचव चनंसांत्वमिदंमधुरयागिरा ॥ १ ॥ क्वतेरामेणसंसर्गःकथंजानासिलक्ष्मणम् ॥ वानराणांनराणांचकथमासीत्समागमः ॥ २ ॥ यानिरामस्य चिह्नानिलक्ष्मणस्यचवानर ॥ तानिभूयःसमाचक्ष्वनमांशोकःसमाविशेत् ॥ ३ ॥ कीदृशंतस्यसंस्थानंरूपंतस्यचकीदृम् ॥ कथमूरूकथंबाहू लक्ष्मणस्यचशंसमे ॥ ४ ॥ एवमुक्तस्तुवैदेह्याहनूमान्मारुतात्मजः ॥ ततोरामयथातत्त्वमाख्यातुमुपचक्रमे ॥ ५ ॥ जानंतीबतदिष्टचा मांवैदेहिपरिपृच्छसि ॥ भर्तुःकमलपत्राक्षिसंस्थानंलक्ष्मणस्यच ॥ ६ ॥ यानिरामस्यचिह्नानिलक्ष्मणस्यचयानिवै ॥ लक्षितानिविशालाक्षि वदतःशृणुतानिमे ॥७॥ रामःकमलपत्राक्षःपूर्णचंद्रनिभाननः ॥ रूपदाक्षिण्यसंपन्नःप्रसूतोजनकात्मजे ॥ ८ ॥

बाँहें, दोनों जांघें, और वर्ण कैसा है, सो तुम सबही हमको बताओ ॥४॥ विदेहराजकुमारी जानकीजीके यह वचन सुनकर पवनकुमार हनुमान्जी श्रीरामच न्द्रजीका रूप यथावत् वर्णन करने लगे ॥५॥ हे कमलनेत्रवाली वैदेही जानकीजी ! तुम अपने स्वामी और लक्ष्मणजीके भी सब अंग चिह्न जानकरभी हमसे पूछती हो यह बडे भाग्यकी बात है (अथवा भाग्यसे यदि आप हमको श्रीरामचन्द्रजीका दूत जानकर स्वामी और अपने देवरके अंग चिह्न पूछती हैं) ॥ ६ ॥ तो हमने श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके अंगोंमें जो चिह्न देखे हैं हम उन समस्तको कहते हैं, हे विशालनेत्रवाली ! आप श्रवण करें ॥७॥ श्रीरामचन्द्रजीके नेत्र कमलदलके समान, और वदनमंडल पूर्णमासीके चंद्रमाके समान हैं। हे जनकनंदिनि ! वह रूप और चातुर्यताको साथही लिये पृथ्वीपर उत्पन्न हुये हैं ॥८॥

वह तेजमें सूर्य, क्षमामें पृथ्वी, बुद्धिमें बृहस्पति और यशमें इन्द्रजीके समान हैं ॥ ९ ॥ सब प्राणियोंकी, निज जनोंकी, अपने चरित्रकी और धर्मकी वह रक्षा करनेवाले और शत्रुओंके तपानेवाले हैं॥१०॥हे भामिनी ! श्रीरामचन्द्रजी सब लोकोंके रक्षाकर्त्ता और चारों वर्णकी रक्षा करनेवालेहैं; और लोकोंकी मर्यादाके अधिष्ठाता अर्थात् करने करानेवाले हैं ॥११॥ इस लियेवह सूर्य समान हैं औरसूर्यके समान विराजित हैं; वह गृहस्थधर्ममें टिके हुये भी ब्रह्मचर्य व्रताचारी हैं वहइस बातको भली भाँतिसे जानते हैं कि, किस समय साधु लोगोंका उपकार करना होगा ! कार्यके स्वरूप और अनुष्ठानके विषयको भी वह भली भाँति जानते हैं ॥ १२ ॥ राजनीति भली भाँतिसे सीखे हुये और ब्राह्मणोंकी आज्ञाके पालन करनेवाले हैं, और शत्रुओंके तपानेवाले श्रीरामचन्द्रजी ज्ञानवान् सुशील और विनीत हैं ॥ १३ ॥ यजुर्वेद भली भाँति सीखे व वेदवित् पंडितगणोंसे अत्यन्त पूजनीय; धनुर्वेद; चारों वेद और वेदाङ्ग इन सबमें

तेजसादित्यसंकाशःक्षमयापृथिवीसमः ॥ बृहस्पतिसमोबुद्ध्यायशसावासवोपमः ॥९॥ रक्षिताजीवलोकस्यस्वजनस्यचरक्षिता ॥ रक्षितास्व स्यवृत्तस्यधर्मस्यचपरंतपः ॥ १० ॥ रामोभामिनिलोकस्यचातुर्वर्ण्यस्यरक्षिता ॥ मर्यादानांचलोकस्यकर्ताकारयिताचसः ॥११॥अर्चिष्मा नर्चितोत्यर्थंब्रह्मचर्यव्रतेस्थितः॥साधूनामुपकारज्ञःप्रचारज्ञश्चकर्मणाम् ॥१२॥राजनीत्यांविनीतश्चब्राह्मणानामुपासकः ॥ ज्ञानवाञ्शीलसंपन्नो विनीतश्चपरंतपः॥१३॥यजुर्वेदविनीतश्चवेदविद्भिःसुपूजितः॥ धनुर्वेदेचवेदेचवेदांगेषुचनिष्ठितः॥१४॥विपुलांसोमहाबाहुःकंबुग्रीवःशुभाननः॥ गूढजत्रुःसुताम्राक्षोरामोनामजनैःश्रुतः ॥ १५ ॥ दुंदुभिस्वननिर्घोषःस्निग्धवर्णःप्रतापवान् ॥ समश्चसुविभक्तांगोवर्णंश्यामंसमाश्रितः ॥१६॥ त्रिस्थिरस्त्रिप्रलंबश्चत्रिसमस्त्रिषुचोन्नतः॥ त्रिताम्रस्त्रिषुचस्निग्धोगंभीरस्त्रिषुनित्यशः ॥१७॥

भी अतिनिपुण हैं ॥ १४ ॥ जिनके कंधे बडे हैं बाँहें लंबी हैं, गर्दन शंखके समान और वदन मनोहर है, हँसलियोंकी अस्थिमें मांससे ढकीं और नेत्रयुगल अरुणवर्ण हैं और लोकमें वह श्रीरामचन्द्रजीके नामसे विदित हैं ॥१५॥ उनका स्वर नगाडेके शब्दके समान गंभीर है वर्ण चिकना सुंदर; वह प्रतापवान् हैं उनके सब अंग प्रत्यंग परस्पर सुविभक्त हैं; अर्थात् जो जितना चाहिये उतनाही चौडा लंबा और मोटा है औरशरीर भी जैसा बडा है वैसाही उसका प्रमाण भी है, उनकी देहका वर्ण नील अर्थात् श्यामरंगी है ॥१६॥ उनकी ऊरु, मणिबंध और मुष्टि यह तीन अंग अति कठिन हैं. भौंह, अंडकोश, बाहु यह तीन अंग लंबे हैं. केशाग्र वृषण और जानु यह तीनों अंग समान हैं, नाभिका अभ्यन्तरभाग, कुक्षि और छाती यह अंग ऊंचे हैं आंखोंके कोये; नख, चरणका तालुआ और हाथ यह अंग लाल हैं, पांवकीरेखा, केश, शिश्नका अग्रभाग, यह तीन अंग चिकने, स्वर, नाभि और गति यह गंभीर हैं ॥ १७ ॥

पेट और कंठमें त्रिवली पडी हुई, चरणोंके तलुओंका मध्यभाग, चरण रेखा और छातियें (स्तन) यह तीन अंग बराबर गहिरे, ग्रीवा, नेत्र और पृष्ठभाग, यह तीन अङ्ग छोटे, मस्तकमें तीन घेर, अँगूठेके मूलमें चार रेखा बनी जिससे चारों वेदोंका पढना विदित होता है. देह चार हाथका बडा, बाहु, ऊरु, और गंडस्थल यह चारों अंग सुगोल हैं ॥१८॥ भौंहें, नासिकाके छेद, नयन कर्ण, अधर, स्तन, कूर्पर माथेकीखली, मणिबंध, जानु, वृषण, कटि, हस्त, चरण, दोनों नितम्ब यह सब जोडे परस्पर समान यह नहीं कि एक अंग छोटा; और एक अंग बडा दोनों दांतोंकी पंक्तियोंकी दोनों ओर शास्त्रोक्त लक्षण युक्त चार दांत हैं, उनकी गति सिंह शार्दूल गज और वृषभके समान है अधर, मांसल ठोडी परिपूर्ण और उन्नत हैं नासा दीर्घ, वाक्य मुख नख लोम और चर्म यह पांचअंग चिकने हैं; दोनों बांहें, कनिष्ठा अंगुल, दो ऊरु, दो जंघा यह आठ अंग सुदीर्घ हैं ॥१९॥ मुख १ नेत्र २ जीभ ३ ओष्ठ ४ तालू ५ स्तन ६ नख ७ मुखका भीतर ८ हाथ ९ और चरण १० यह दश अंग कमलसदृश और वक्षस्थल, मस्तक, ललाट, ग्रीवा, बाहु, कंधा, नाभि, चरण, पीठ और कर्ण, यह दश अंग विशाल हैं।

त्रिवलीमांस्त्र्यवनतश्चतुर्व्यंगस्त्रिशीर्षवान् चतुष्कलश्चतुर्लेखश्चतुष्किष्कुश्चतुःसमः ॥१८॥ चतुर्दशसमद्वन्द्वश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्गतिः ॥ महोष्ठहनुनासश्चपंचस्निग्धोऽष्टवंशवान् ॥१९॥ दशपद्मोदशबृहत्त्रिभिर्व्याप्तोद्विशुक्लवान् ॥ षडुन्नतोनवतनुस्त्रिभिर्व्याप्नोतिराघवः ॥२०॥ सत्यधर्मरतः श्रीमानसंग्रहानुग्रहेरतः ॥ देशकालविभागज्ञः सर्वलोकप्रियंवदः ॥२१॥ भ्राताचास्यचद्वैमात्रः सौमित्रिरमितप्रभः ॥ अनुरागेणरूपेणगुणैश्चापि तथाविधः ॥२२॥ ससुवर्णच्छविःश्रीमान्रामःश्यामोमहायशाः ॥ तावुभौनरशार्दूलौत्वद्दर्शनकृतोत्सवौ ॥ २३ ॥

श्री (लक्ष्मी) यश, और तेज उनमें वर्त्तमान है उनके पिता माताका कुल पवित्र है। कक्ष, कुक्षि, छाती, नासिका, कंधे और ललाट यह छः अंग ऊंचे हैं और उंगलियोंके पोरुए, केश, रोम, नख, त्वचा, शिश्न, श्मश्रु, दृष्टि और बुद्धि यह नव पदार्थ अति सूक्ष्म हैं ॥२०॥ श्रीरामचन्द्रजी समयका यथोचित विभाग करके धर्म अर्थ काम मोक्ष इनचारों वर्गोंकी सेवा सदा किया करते हैं वह सत्यरत श्रीमान् धन इकट्ठा करने और उस धनसे प्रजापालन करनेके कार्यमें तैयार देशकालका भेद जाननेवाले और सब जनोंसे प्रिय बोलनेवाले हैं॥२१॥ उनके सौतेले भाई प्रमाणरहित प्रभाववाले सुमित्रानंदन लक्ष्मणजी भ्रातृस्नेहरूप और गुणोंमें श्रीरामचन्द्रजीके समान हैं ॥ २२ ॥ परन्तु उन श्रीमान् लक्ष्मणजीके अंग सुवर्णके समान गौर हैं और महायशस्वी श्रीरामचन्द्रजी श्यामवर्ण हैं; बस केवल इतनाही अन्तर है जिस समय हम चले थे उस समय आपके दर्शन प्राप्त करनेके सिवाय उन दोनों नर शार्दूलोंको और कोई भी चिन्ता नहीं थी और

वह छटपटातेथे कि, कब आपके दर्शन हों ॥२३॥ इस प्रकारसे समस्त पृथ्वीमें आपकोही ढूंढते भालते अनेक स्थानोंमें घूमते घामते ॥ २४ ॥ वह दोनों भाई अनेक सघन वृक्षोंसे युक्त ऋष्यमूक पर्वतके नीचे बैठे अपने ज्येष्ठभाई वालिसे निकाले ॥ २५ ॥ और उसकेही भयसे दुःखित वानरोंके सहित बैठे वानरोंके महाराज प्रियदर्शन सुग्रीवजीसे मिले, हम सत्यप्रतिज्ञ वानरनाथ सुग्रीवजीकी ॥ २६ ॥ परिचर्या प्रथमहीसे करते थे, राज्य छूटनेके पहले भी हम बराबर उनकी सेवा करतेही रहे सो जब कि सुग्रीवजी राज्यसे निकाले जाकर वनमें वसते थे कि चीर वल्कल धारण किये श्रेष्ठ धनुष ग्रहण किये ॥ २७ ॥ राम लक्ष्मण वहां आये वानरोंमें श्रेष्ठ सुग्रीवजी उन धनुर्द्धर दोनों नरव्याघ्रोंको देखते हुए ॥ २८ ॥ और देखतेही भयके कारण मोहको प्राप्त हो एक छलांग मार पर्वत के शिखर पर चढ़ गये, और उस शिखरपर भली भाँती टिककर सुग्रीवजीने ॥ २९ ॥ बहुतही शीघ्र उन दोनों जनोंके निकट हमको

विचिन्वंतौमहींकृत्स्नामस्माभिःसहसंगतौ ॥ त्वामेवमार्गमाणौतौविचरंतौवसुंधराम् ॥ २४ ॥ददर्शतुर्मृगपतिंपूर्वजेनावरोपितम्॥ऋष्यमूकस्य मूलेतुबहुपादपसंकुले ॥२५॥भ्रातुर्भयार्तमानसीनंसुग्रीवंप्रियदर्शनम् ॥ वयंचहरिराजंतंसुग्रीवंसत्यसंगरम्॥२६॥ परिचर्यामहेराज्यात्पूर्वजेनावरोपितम्॥ततस्तौचीरवसनौधनुःप्रवरपाणिनौ॥२७॥सतौदृष्ट्वानरव्याघ्रौधन्विनौवानरर्षभः॥२८॥अभिप्लुतोगिरेस्तस्यशिखरंभयमोहितः ॥ ततःसशिखरेतस्मिन्वानरेंद्रोव्यवस्थितः ॥ २९ ॥ तयोःसमीपंमामेवप्रेषयामाससत्वरम् ॥ तावहंपुरुषव्याघ्रौसुग्रीववचनात्प्रभू॥३०॥रूपलक्षणसंपन्नौकृतांजलिरुपस्थितः ॥ तौपरिज्ञाततत्त्वार्थौमयाप्रीतिसमन्वितौ॥३१॥पृष्ठमारोप्यतंदेशंप्रापितौपुरुषर्षभौ ॥ निवेदितौचतत्त्वेनसुग्रीवायमहात्मने ॥ ३२ ॥ तयोरन्योन्यसंभाषाद्भृशंप्रीतिरजायत ॥ तत्रतौकीर्तिसंपन्नौहरीश्वरनरेश्वरौ ॥३३॥ परस्परकृताश्वासौकथयापूर्ववृत्तया॥तंततःसांत्वयामाससुग्रीवंलक्ष्मणाग्रजः॥३४॥स्त्रीहेतोर्वालिनाभ्रात्रानिरस्तंपुरुतेजसा॥ततस्त्वन्नाशजंशोकंरामस्याक्लिष्टकर्मणः॥३५॥

भेजा, सुग्रीवजीकी आज्ञानुसार हम वहां जाय उन पुरुष सिंह सब कार्योंके करनेमें समर्थ ॥ ३० ॥ रूप लक्षण सम्पन्न दोनों वीरोंके सन्मुख हाथ जोडकर खडे हुये और तब एक दूसरेके वृत्तान्तसे ठीक २ अवगत हो गये और वह भी समाचार जान बडे प्रसन्न हुये ॥ ३१ ॥ तब हम उन दोनों पुरुष श्रेष्ठोंको अपनीपीठपर चढाकर ऋष्यमूक पर्वतके शिखर पर लाये, और वहां पहुँच महात्मा सुग्रीवजीसे समस्त वृत्तान्त निवेदन किया ॥ ३२ ॥ यशस्वी नर श्रेष्ठ और वानर श्रेष्ठ दोनोंही परस्पर वार्तालाप करके अतिशय प्रसन्न हुए ॥ श्रीरामचन्द्रजी व सुग्रीवजी दोनोंने ॥ ३३ ॥ एक दूसरेसे अपना पूर्ववृत्तान्त कहा और परस्परमें परस्परको आगत स्वागत किया लक्ष्मणजीके बडे भाई श्रीरामचंद्रजीने प्रथम सुग्रीवको धीरज दिया ॥ ३४ ॥ कारण कि, स्त्री हरण करनेकी

इच्छा किये उनके बडे भ्राता तेजस्वी वालिने उन्हें घरसे निकाल दिया था। जब श्रीरामचंद्रजी समझा चुके; तब तुम्हारे हरणहो जानेसे जो शोक विशेष कर्मकारी श्रीरामचंद्रजी को था॥ ३५॥ उसका समस्त वृत्तान्त लक्ष्मणजीने वानर पति सुग्रीवजीसे कहा, वानरराज सुग्रीवजी लक्ष्मणजीके वचन सुन कर॥ ३६॥ राहुसे ग्रसे हुये सूर्यके समान मलीनहो गये तत्पश्चात् तुम्हारे अंगोंमें स्पर्श करनेके कारण शोभायमान होनेवाले गहने॥ ३७॥ राक्षससे हरी जानेके समय जो आकाशसे पृथ्वी पर तुमने छोडेथे वानर यूथपतिगणवही सब गहने श्रीरामचंद्रजीके पास लाये॥ ३८॥ और हर्षित हो उनको दिखाये, परंतु उसकाल वे वानर आपकी गतिको नहीं जानते थेकि, आप कहां हैं जो समस्त गहने श्रीरामचंद्रजी को दिखाये गयेथे ॥ ३९॥ वह समस्त जबकि शब्द करते २ गिरे थे, तब हमनेही इकट्ठा करके उनको उठा लिया था

लक्ष्मणोवानरेंद्रायसुग्रीवायन्यवेदयत्॥ सश्रुत्वावानरेंद्रस्तुलक्ष्मणेनेरितंवचः॥ ३६॥ तदासीन्निष्प्रभोत्यर्थंग्रहग्रस्तइवांशुमान्॥ ततस्त्वद्गात्रशोभीनिरक्षसाह्रियमाणया ॥ ३७॥ यान्याभरणजालानिपातितानिमहीतले ॥ तानिसर्वाणिरामायआनीयहरियूथपाः ॥ ३८॥ संहृष्टादर्शयामासुर्गतिंतुनविदुस्तव ॥ तानिरामायदत्तानिमयैवोपहृतानिच॥ ३९॥ स्वनवंत्यवकीर्णानितस्मिन्विहतचेतसि॥ तान्यंकेदर्शनीयानिकृत्वाबहुविधं तदा ॥ ४०॥ तेनदेवप्रकाशेनदेवेनपरिदेवितम् ॥ प्रादीपयद्दाशरथेस्तदाशोकहुताशनम् ॥ ४१॥ शायितंचचिरंतेनदुःखार्तेनमहात्मना॥ मयापि विविधैर्वाक्यैःकृच्छ्रादुत्थापितःपुनः ॥ ४२ ॥ तानिदृष्ट्वामहार्हाणिदर्शयित्वामुहुर्मुहुः ॥ राघवःसहसौमित्रिःसुग्रीवेसन्यवेशयत् ॥ ४३ ॥ सतवादर्शनादार्येराघवःपरितप्यते ॥ महताज्वलतानित्यमग्निनेवाग्निपर्वतः ॥ ४४॥ त्वत्कृतेतमनिद्राचशोकश्चिताचराघवम् ॥ तापयंति महात्मानमग्न्यगारमिवाग्नयः ॥ ४५ ॥

श्रीरामचंद्रजी उन सबको देखतेही मूर्च्छितसे होगये थे फिर इन सुंदर गहनोंको वारंवार हृदयसे लगाये ॥ ४०॥ उन देवताओंके समान श्रीरामचंद्रजीनेअनेक भाँतिके विलाप रोय २ कर किये। उन समस्त गहनोंसे दशरथ कुमार श्रीरामचंद्रजीके शोकानल को और भी प्रज्वलित किया ॥ ४१॥ वह महात्मा श्रीरामचंद्रजी शोकसे व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिरपडे; हमनेअनेक भाँतिके मीठे २ वचनोंसे समझा कर अतिकठिनाईसे फिर उनको उठा कर बैठाया॥ ४२॥ श्रीरामचंद्रजीने वारंवार वहसब गहने देखे और लक्ष्मणजीको दिखाये और फिर देखदाखकर सुग्रीवजीको सौंप दिये॥ ४३॥ हे आर्ये! नित्य जलती हुई बडी भारी अग्निके द्वारा पर्वत जैसे संतापित होता है वैसेही रघुनन्दन श्रीरामचंद्रजी आपके दर्शन न पानेसे संतापित हो रहेहैं ॥ ४४॥ तीन अग्नियोंसे युक्त अग्नि गृहके समान अनि

द्रा. शोक और चिंतासे महात्मा श्रीरामचन्द्रजी संतापित होते हैं॥४५॥जैसे बडे भारी भूकम्पसे पर्वत हिलता है, वैसेही आपके अदर्शनसे उत्पन्न हुये शोकके कारण श्रीरामचन्द्रजी कंपायमान रहते हैं॥४६॥हे राजनंदिनी! श्रीरामचन्द्रजी विविध मनोहर कानन नदी और झरनोंके समीप घूमते हुये फिरा करतेहैं, परंतु आपके दर्शन न मिलनेसे उनको यह कुछ भी अच्छे नहीं लगते॥४७॥हे राजनंदिनी! वह नर सिंह रघुनंदनजी शीघ्रही रावणको बंधु मित्र बाँधवों सहित मार कर आपको प्राप्त करेंगे॥ ४८ ॥ अनंतर श्रीरामचन्द्रजी और सुग्रीव दोनों एक वालिका संहार, और एक तुम्हारे खोजनेके निमित्त परस्पर प्रतिज्ञा करते हुये ॥४९॥ इसके पीछे वह वानर राज सुग्रीवजी उन दो कुमारों के साथ किष्किन्धामें आये और समरमें वालिको मार डाला॥५०॥श्रीरामचन्द्रजीने अपने बलसे

तवादर्शनशोकेनराघवःपरिचाल्यते॥महताभूमिकंपेनमहानिवशिलोच्चयः ॥४६॥ काननानिसुरम्याणिनदीप्रस्रवणानिच ॥ चरन्नरतिमाप्नोति त्वामपश्यन्नृपात्मजे ॥४७॥ सत्वांमनुशार्दूलःक्षिप्रंप्राप्स्यतिराघवः॥समित्रबांधवंहत्वारावणंजनकात्मजे ॥ ४८ ॥ सहितौरामसुग्रीवावुभावकुरुतांतदा ॥ समयंवालिनंहंतुंतवचान्वेषणंप्रति ॥४९॥ ततस्ताभ्यांकुमाराभ्यांवीराभ्यांसहरीश्वरः ॥ किष्किंधांसमुपागम्यवालीयुद्धेनिपातितः ॥५०॥ ततोनिहत्यतरसारामोवालिनमाहवे॥सर्वर्क्षहरिसंघानांसुग्रीवमकरोत्पतिम्॥५१॥रामसुग्रीवयोरैक्यंदेव्येवंसमजायत॥हनूमंतंचमांविद्धितयोर्दूतमुपागतम् ॥ ५२ ॥ स्वंराज्यंप्राप्यसुग्रीवः स्वानानीयमहाकपीन्॥त्वदर्थंप्रेषयामासदिशोदशमहाबलान् ॥५३॥ आदिष्टावानरेंद्रेणसुग्रीवेणमहौजसः॥ अद्रिराजप्रतीकाशाःसर्वतःप्रस्थितामहीम् ॥५४॥ ततस्तेमार्गमाणावैसुग्रीववचनातुराः॥चरंतिवसुधांकृत्स्नांवयमन्येचवानराः॥ ५५ ॥ अंगदोनामलक्ष्मीवान्वालिसूनुर्महाबलः ॥ प्रस्थितःकपिशार्दूलस्त्रिभागबलसंवृतः ॥ ५६ ॥

मार कर सुग्रीवजी को समस्त ऋक्ष और वानरोंका राजा बनाया॥५१॥हे देवि ! इस प्रकारसे श्रीरामचन्द्र और सुग्रीवजीमें मित्रता उत्पन्न हुई, यह आप जानें हम उन लोगोंकेही दूत हनुमानूजी आपके निकट आये हैं ॥५२॥ सुग्रीव जीने अपने राज्यको पाया, अपने अधीनवाले महा बलवान्न बडे २ वानरोंको बुला कर आपके खोजनेके लिये उनको दशों दिशाओं में भेजा है ॥ ५३ ॥ वानरराज सुग्रीवजी की आज्ञा पाय कर पर्वतराजके समान बडे २ शरीर वाले महा तेजस्वी वानरगण पृथ्वी के चारों ओर को गये हैं ॥५४॥ सुग्रीवजी की आज्ञा से भीत हो वह वानर लोग तथा हम तबसे ही आपका पता लगाने के लिये समस्त पृथिवी पर घूमते हैं॥५५॥हमारा भी उनमें से एक दल है। जितनी सेना भेजनेसे बाकी रह गई थी उसका एक भाग किष्किन्धा में छोड़ वालि पुत्र अंगदना

मक सौंदर्य सम्पन्न, महा बलवान् वानर श्रेष्ठ तीन भाग सेना संग लेकर इधर कोआये हैं ॥५६॥ अंगदजीके अनुचर हम लोग पर्वत श्रेष्ठ विन्ध्याचल पर मार्ग भूलकर अत्यन्त शोकको प्राप्त हुए थे; वहां पर हम लोगोंको बहुत दिन रात बीत गये थे॥५७॥इसके पीछे हम लोगोंने कार्य सिद्ध होनेकी आशा छोडदी, और सुग्रीवजीनेजो अवधि नियत करदी थी वही भी बीत गई इसलिये कपिराजके भयसे भीत होकर प्राणत्याग करनेके लिये हम सब जने तैयार हुये ॥५८॥ विविध गिरि, दुर्ग, नदी, झरने, इन सबको ढूँढनेपर भी आपका सन्धान न पानेसे हमलोगोंने प्राण त्याग करनेका निश्चय किया ॥५९॥ इसके पीछे हमने उसी पर्वतके ऊपर चढ प्रायोपवेशन[1] व्रत धारण किया । हे जनकनन्दिनी ! सबही वानरगण प्रायोपवेशन व्रतले मरनेपर उतारू हुये ॥६०॥ यह देख अंगदजी शोकसागरमें

एषांनोविप्रनष्टानांविंध्येपर्वतसत्तमे ॥ भृशंशोकपरीतानामहोरात्रगणागताः ॥ ५७ ॥ तेवयंकार्यनैराश्यात्कालस्यातिक्रमेणच ॥ भयाच्चकपिराजस्यप्राणांस्त्यक्तुमुपस्थिताः ॥ ५८ ॥ विचित्यगिरिदुर्गाणिनदीप्रस्रवणानिच ॥ अनासाद्यपदंदेव्याःप्राणांस्त्यक्तुंव्यवस्थिताः ॥ ५९ ॥ ततस्तस्यगिरेर्मूर्ध्निवयंप्रायमुपास्महे॥दृष्ट्वाप्रायोपविष्टांश्चसर्वान्वानरपुंगवान् ॥६०॥ भृशंशोकार्णवे मग्नः पर्यदेवदंगदः ॥ तवनाशंचवैदेहिवालिनश्चतथावधम् ॥ ६१ ॥ प्रायोपवेशस्मकंमरणंचजटायुषः ॥ तेषांनःस्वामिसंदेशान्निराशानांमुमूर्षताम् ॥ ६२ ॥ कार्यहेतोरिहायातःशकुनिर्वीर्यवान्महान् ॥ गृध्रराजस्यसोदर्यःसंपातिर्नामगृध्रराट् ॥६३॥ श्रुत्वाभ्रातृवधंकोपादिदंवचनमब्रवीत् ॥ यवीयान्केनमेभ्राताहतःक्वच निपातितः॥६४॥ एतदाख्यातुमिच्छामिभवद्भिर्वानरोत्तमाः ॥ अंगदोऽकथयत्तस्यजनस्थानेमहद्वधम् ॥६५॥ रक्षसाभीमरूपेणत्वामुद्दिश्ययथार्थतः॥ जटायोस्तुवधंश्रुत्वादुःखितःसोरुणात्मजः ॥ ६६ ॥

डूब आपका न मिलना, और वालिका मरना कहकर वारंवार रोदन करने लगे ॥६१॥ वह हम सबका मरनेको तैयार होना, जटायुका मरना यह कहकर बडे दुःखी हुये, सुग्रीवजीकी आज्ञा अतिकठिन थी इसलिये हम सब निराश हो मरनेके लिये इसप्रकारसे बैठे हैं ॥ ६२ ॥ कि, इतनेही में मानो हम लोगोंकी सिद्धिके निमित्तही गृध्रराज जटायुके भाई सम्पाति नामक महाकाय वीर्यवान् गृध्रराज पक्षी हमारे समीप आये ॥ ६३ ॥ और भाईका मरण वृत्तान्त सुन क्रोधमें भर कर यह बोले "कि, हमारे छोटे भाईको किसने कौनसे स्थानपर मारा है ?॥६४॥हे वानरश्रेष्ठगण ! तुम लोग हमको बताओ, हमारी इच्छा यह सब सुननेकी है" जब इस भाँतिसे उस पक्षीने कहा तो अंगदजीने सम्पातिसे जनस्थानमें बडा भारी वध ॥६५॥ जो तुम्हारे लिये भीमरूपी राक्षस रावणने महात्मा

[1] कुश बिछाकर मरनेके लिये निराहार बैठना 'प्रायोपवेशन' व्रत कहाता है ॥

जटायुका किया था, सब कह सुनाया जटायुका वध सुन कर अति दुखितहो अरुणके पुत्र सम्पातिने ॥६६॥ बताया कि, तुम निंदारहित अंगवाली रावणके गृहमें बसती हो सम्पातिके यह प्रीति देनेवाले वचन सुनकर ॥ ६७ ॥ अंगद इत्यादि हम सबही वहांपरसे चले। विन्ध्याचलसे उतरकर हम सब समुद्रके रमणीक किनारेपर आये ॥ ६८ ॥ आपके दर्शनाभिलाषसे उत्साहित और प्रसन्न होकर अंगदादि सब वानरगण प्रायः समुद्रके तटपर ही पहुँच गये ॥६९॥ आपका दर्शन करनेके लिये उद्यत वानरगणोंको फिर एक विषम भावना आय पहुँची जब वानरोंकी सेना समुद्र देख उत्साह रहित और शोकाकुल हुई तब हम ॥ ७० ॥ उन सब वानरोंका महाभय छुड़ाय शतयोजनके फांटवाले समुद्रको नांघ रात्रिकालमें राक्षसोंसे परिपूर्ण लंका नगरीमें प्रवेश करते हुए ॥७१॥

त्वामाहसवरारोहेवसंतींरावणालये ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वासंपातेःप्रीतिवर्धनम् ॥६७॥ अंगदप्रमुखाःसर्वेततःप्रस्थापितावयम् ॥ विंध्यादुत्थायसंप्राप्ताःसागरस्यांतमुत्तमम् ॥ ६८ ॥ त्वद्दर्शनेकृतोत्साहाहृष्टाःपुष्टाःप्लवंगमाः ॥ अंगदप्रमुखाःसर्वेवेलोपांतमुपागताः ॥६९॥ चिंतांजग्मुःपुनर्भीमांत्वद्दर्शनसमुत्सुकाः ॥ अथाहंहरिसैन्यस्यसागरंदृश्यसीदतः ॥७०॥ व्यवधूयभयंतीव्रंयोजनानांशतंप्लुतः ॥ लंकाचापिमयारात्रौप्रविष्टाराक्षसाकुला ॥७१॥ रावणश्चमयादृष्टस्त्वंचशोकनिपीडिता ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंयथावृत्तमनिंदिते ॥७२॥ अभिभाषस्वमांदेविदूतोदाशरथेरहम् ॥ तन्मांरामकृतोद्योगंत्वन्निमित्तमिहागतम् ॥ ७३ ॥ सुग्रीवसचिवंदेविबुध्यस्वपवनात्मजम् ॥ कुशलीतवकाकुत्स्थःसर्वशस्त्रभृतांवरः ॥ ७४ ॥ गुरोराराधनेयुक्तोलक्ष्मणःशुभलक्षणः॥ तस्यवीर्यवतोदेविभर्तुस्तवहितेरतः ॥७५॥ अहमेकस्तुसंप्राप्तःसुग्रीववचनादिह ॥ मयेयमसहायेनचरताकामरूपिणा ॥ ७६ ॥

रावणको भी और शोकसे पीडित आपको भी हमने देखा, हे अनिन्दिते ! आदिसे अंततक जो बातें हुई हैं, वह आपके निकट हमने समस्त वर्णन की ॥ ७२ ॥ हे देवि ! आप हमारे साथ संभाषण कीजिये; हम दशरथनंदन श्रीरामचन्द्रजीके दूत हैं हम आपकेही देखनेको श्रीरामचन्द्रजीके भेजे यहां आये हैं ॥ ७३ ॥ हम सुग्रीव जीके मंत्री और पवनके पुत्र हैं हे देवि ! आपके वह सर्व शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजी कुशल मंगलयुक्त हैं ॥ ७४ ॥ और शुभलक्षण सम्पन्न लक्ष्मणजी भी सकुशल हैं, आपके उन वीर्यवान् स्वामी श्रीरामचंद्रजीके हित साधनमें सदा लगे रह कर व हम अपने गुरुकी आराधना किया करते हैं ॥ ७५ ॥ हम अकेलेही सुग्रीवजीकी आज्ञासे यहांपर आये हैं, और सहायरहित कामरूपी घूमते हुए ॥ ७६ ॥

तुम्हारा मार्ग ढूँढते २ हमने इस समस्त दक्षिण दिशाको छाना बडे भाग्यकी बात है कि, हम तुम्हारे अदर्शन जनित शोकसे व्याकुल और आपको मृतक समझती वानरोंकी सेनासे ॥७७॥ आपका दर्शन संवाद देकर उन सबका संताप दूरकर सकेंगे, बडे शुभ भाग्यसे समुद्र लांघकर हमारा यहां आना व्यर्थ न हुआ॥७८॥ हे देवि! भाग्यसेही हम आपका दर्शन पानेसे उस स्थानमें यश प्राप्त करेंगे और महावीर्यवान् रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी भी शीघ्र ॥७९॥ राक्षसपतिरावणको पुत्र और बन्धु बान्धवोंसहित संहार करके आपको प्राप्त होंगे । हे देवि ! सब पर्वतोंमें मनोहर माल्यवान् नामक एक पर्वत है ॥ ८० ॥ हमारे पिता महाकपि केसरी वहां पर रहते थे । उन्होंने एक समय देवर्षियोंकी आज्ञापाय वहांसे गोकर्ण पर्वतपर जाय उस पवित्र नदीपतिके पुण्यतीर्थमें शम्बरसादन नामक असुरको

दक्षिणादिगनुक्रांतात्वन्मार्गविचयैषिणा॥दिष्ट्याहंहरिसैन्यानांत्वन्नाशमनुशोचताम्॥७७॥अपनेष्यामिसंतापंतवाधिगमशासनात्॥दिष्ट्या हिनममव्यर्थंसागरस्येहलंघनम् ॥ ७८ ॥ प्राप्स्याम्यहमिदंदेवित्वद्दर्शनकृतंयशः ॥ राघवश्चमहावीर्यःक्षिप्रंत्वामभिपत्स्यते ॥७९॥ सपुत्रबांधवंहत्वारावणंराक्षसाधिपम् ॥ माल्यवान्नामवैदेहिगिरीणामुत्तमोगिरिः ॥८०॥ ततोगच्छतिगोकर्णंपर्वतंकेसरीहरिः॥ सचदेवर्षिभिर्दिष्टःपिता ममममहाकपिः॥ तीर्थेनदीपतेःपुण्येशंबसादनमुद्धरन् ॥ ८१ ॥ यस्याहंहरिणःक्षेत्रेजातोवातेनमैथिलि॥हनूमानितिविख्यातोलोकेस्वेनैवकर्मणा ॥ ८२ ॥ विश्वासार्थंतुवैदेहिभर्तुरुक्तामयागुणाः॥अचिरात्त्वामितोदेविराघवोनयिताध्रुवम् ॥८३॥ एवंविश्वासितासीताहेतुभिःशोककर्शिता उपपन्नैरभिज्ञानैर्दूतंतमधिगच्छति ॥८४॥ अतुलंचगताहर्षंप्रहर्षेणतुजानकी ॥ नेत्राभ्यांवक्रपक्ष्माभ्यांमुमोचानन्दजंजलम् ॥ ८५ ॥ चारुतद्वदनंतस्यास्ताम्रशुक्लायतेक्षणम् ॥ अशोभतविशालाक्ष्याराहुमुक्तइवोडुराट् ॥ ८६ ॥

मारडाला ॥८१॥ हे मैथिलि ! इन्हीं केशरीजीकी अंजनी नामक स्त्रीमें क्षेत्रजरूप पवनसे हमारी उत्पत्ति हुई है। अपने पराक्रमके बलसे हम इस लोकमें हनुमान् नामसे विख्यात हैं ॥८२॥ हे विदेहनंदिनि ! आपको विश्वास देनेके लिये आपके स्वामी श्रीरामचंद्रजीके समस्त गुण विस्तारसे वर्णन किये हे देवि ! रघुनंदन श्रीरामचंद्रजी आपको शीघ्रही इस स्थानपरसे ले जायँगे ॥ ८३ ॥ शोकसे पीड़ित हुई सीताजीने अनेक हेतु और राम लक्ष्मणजीके यथार्थ चिह्न पाय विश्वासकर हनुमान्जीको श्रीरामचन्द्रजीका दूत जाना॥८४॥और अतुल हर्ष प्राप्त करती हुई जानकीजी मारे आनंदके टेढी पलकवाले दोनों नेत्रोंसे आनंदके आँसू गिराने लगीं ॥८५॥ बड़े २ नेत्रवाली जानकीजीका वह रक्तप्रान्तसुदीर्घ शुभ लोचन शोभित (ताम्रवत् अरुण बड़े २ नेत्रोंसे युक्त) मनोहर मुखमंडल

राहुसे छुटे हुए चंद्रमाके समान शोभायमान होने लगा ॥ ८६ ॥ तब उन्होंने हनुमान्जीकोप्राकृत वानरही जान सब भांति छोड़दी इसकेपीछे हनुमान्जीने उन प्रियदर्शनवाली जानकीजीसे फिर कहा ॥ ८७ ॥ हे विदेहनंदिनि ! हमने आपसे यह समस्त वृत्तान्त कहा अब इस समय आप प्रसन्न होजायँ इस समय हमको क्या करना होगा और आपकी क्या इच्छा है सो प्रगट कीजिये । क्योंकि अब हम शीघ्रही श्रीरामचन्द्रजीके निकट जायँगे ॥ ८८ ॥ हे मिथलेश कुमारी ! महर्षिगणोंकी आज्ञासे वानरश्रेष्ठ केशरीने जब शम्बरसाद असुरको युद्धमें मारा था, तब उन महर्षियोंके प्रसादसे हमने पवनजीके औरससे अपनी मातामें जन्मग्रहण किया, परन्तु प्रभावमें हम पवनहीकी तुल्य हैं ॥ ८९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां पंचत्रिंशः सर्गः ॥ ३५ ॥

हनूमंतकपिंव्यक्तंमन्यतेनान्यथेतिसा॥ अथोवाचहनूमांस्तामुत्तरंप्रियदर्शनाम्॥८७॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंसमाश्वसिहिमैथिलि॥ किंकरोमिकथं वातेरोचतेप्रतियाम्यहम्॥८८॥ हतेसुरेसंयतिशंबसादनेकपिप्रवीरेणमहर्षिचोदनात्॥ततोस्मिवायुप्रभवोहिमैथिलिप्रभावतस्तत्प्रतिमश्चवानरः ॥८९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे पंचत्रिंशः सर्गः ॥३५॥ भूयएवमहातेजाहनूमान्पवनात्मजः ॥ अब्रवीत्प्रश्रितंवाक्यंसीताप्रत्ययकारणात्॥ १ ॥ वानरोहंमहाभागेदूतोरामस्यधीमतः ॥ रामनामांकितंचेदंपश्यदेव्यंगुलीयकम् ॥२ ॥ प्रत्यया र्थंतवानीतंतेनदत्तंमहात्मना ॥ समाश्वसिहिभद्रंतेक्षीणदुःखफलाह्यसि ॥३ ॥ गृहीत्वाप्रेक्षमाणासाभर्तुःकरविभूषितम्॥ भर्तारमिवसंप्राप्तंजान कीमुदिताभवत् ॥४॥ चारुतद्वदनंतस्यास्ताम्रशुक्लायतेक्षणम्॥बभूवहर्षोदग्रंचराहुमुक्ताइवोडुराट् ॥५॥ ततःसाह्रीमतीबालाभर्तःसंदेशहर्षिता॥ परितुष्टाप्रियंकृत्वाप्रशशंसमहाकपिम् ॥ ६ ॥

पवनकुमार महातेजस्वी हनुमान्जी सीताजीको विश्वास देनेके लिये फिर विनीत वचनसे बोले ॥ १ ॥ हे महाभागे ! हम वानर हैं; बुद्धि शक्तिसम्पन्न श्रीरामचन्द्रजीके दूत हैं । हे देवि ! रामनामांकित यह अँगूठी देखिये॥२॥आपके विश्वासके लिये हम इसको लाये हैं उन्हीं महात्मा श्रीरामचन्द्रजीनेहमको यहदी है स्वस्थचित्त हूजिये, अब निश्चयही आपके दुःखका अंत हो आया है ॥३॥ जानकीजी अपने स्वामीकी उँगलीका गहना उस अँगूठीको ग्रहण कर और देख ऐसी हर्षित हुई मानों श्रीरामचन्द्रजीही मिल गये ॥४॥ उनका वह अरुणकोयेवाले बडे २ शुभनेत्रोंसे विराजमान मनोहर बदनमंडल राहुसे छुटे हुए चन्द्रमाके समान शोभायमान हुआ॥ ५॥उस समय वह लज्जिता बाला सीताजी अपनेस्वामीका संवाद पानेसे हर्षित और प्रसन्न होकर आदर करके कपिश्रेष्ठ हनुमान्जीकी प्रशंसा

करने लगीं॥६॥हे वानरश्रेष्ठ ! तुमने अकेलेही राक्षसोंका स्थान मथडाला इससेही हमने जान लिया कि; तुम बडे विक्रमवान् समर्थ और बडे पंडित हो ॥७॥ तुम्हारा विक्रम अत्यंत बड़ाई करनेके योग्य है कि, शतयोजन विस्तारवाला मकरादिकोंका स्थान समुद्र तुम गोपदकी तुल्य समझकर सरलतासे लांघ आये॥८॥ हे वानरश्रेष्ठ ! जब कि, रावणसे भी भय और सम्भ्रम नहीं है तब हम तुमको साधारण वानर नहीं समझ सकतीं ॥९॥ उन परमविज्ञानी श्रीरामचन्द्रजीने जब कि, तुमको यहां भेजा है तब तुम निःसन्देह हमसे संभाषण करनेके योग्य हो ॥१०॥ दुर्द्धर्ष श्रीरामचन्द्रजीने विना जाने परीक्षा किये तुमको कभी न भेजा होगा विशेष करके पराक्रमके विना जाने हमारे निकट तुमको कभी नहीं भेजते ॥ ११ ॥ यह बडे भाग्यकी बात है कि सत्यप्रतिज्ञ महात्मा श्रीरामचन्द्रजी और

विक्रांतस्त्वंसमर्थस्त्वंप्राज्ञस्त्वंवानरोत्तम॥येनेदंराक्षसपदंत्वयैकेनप्रधर्षितम् ॥७॥ शतयोजनविस्तीर्णः सागरोमकरालयः ॥ विक्रमश्लाघनीयेन क्रमतागोष्पदीकृतः ॥८॥ नहित्वांप्राकृतंमन्येवानरंवानरर्षभ॥ यस्यतेनास्तिसंत्रासोरावणादपिसंभ्रमः ॥९॥ अर्हसेचकपिश्रेष्ठमया समभिभाषितुम ॥ यद्यसिप्रेषितस्तेनरामेणविदितात्मना ॥१०॥ प्रेषयिष्यतिदुर्धर्षोरामोनह्यपरीक्षितम् ॥ पराक्रममविज्ञायमत्सकाशंविशेषतः ॥११॥ दिष्ट्याचकुशलीरामोधर्मात्मासत्यसंगरः ॥ लक्ष्मणश्चमहातेजाःसुमित्रानंदवर्धनः ॥ १२ ॥ कुशलीयदिकाकुत्स्थः किंनसागरमेखलाम् ॥ महींदहतिकोपेनयुगांताग्निरिवोत्थितः ॥ १३ ॥ अथवाशक्तिमंतौतौसुराणामपिनिग्रहे ॥ ममैवतुनदुःखानामस्तिमन्येविपर्ययः ॥ १४ ॥ कच्चिन्नव्यथतेरामःकच्चिन्नपरितप्यते ॥ उत्तराणिचकार्याणिकुरुतेपुरुषोत्तमः ॥१५॥ कच्चिन्नदीनःसंभ्रांतःकार्येषुचनमुह्यति ॥ कच्चित्पुरुषकार्याणिकुरुतेनृपतेःसुतः॥ १६ ॥द्विविधंत्रिविधोपायमुपायमपिसेवते ॥ विजिगीषुःसुहृत्कच्चिन्मित्रेषुचपरंतपः ॥१७॥ कच्चिन्मित्राणिलभते मित्रैश्चाप्यभिगम्यते ॥ कच्चित्कल्याणमित्रश्चमित्रैश्चापि पुरस्कृतः ॥ १८ ॥

सुमित्राके आनंद बढानेवाले महातेजस्वी श्रीलक्ष्मणजी कुशलसे रहें ॥ १२ ॥ यदि काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजी कुशल सहित हैं तो क्रोधसे प्रलयकालके उठे हुये अग्निके समान समुद्रपर्यन्त इस पृथ्वीको भस्म क्यों नहीं कर डालते ॥१३॥ अथवा वह तो देवता लोगोंको भी दंड दे सकते हैं, परन्तु अभी केवल हमारे ही दुःखोंका अन्त नहीं हुआ है ॥ १४ ॥ श्रीरामचंद्रजी व्यथित तो नहीं होते ? परिताप तो नहीं करते ? वह पुरुषोत्तम हमारा उद्धार करनेके लिये चेष्टा तो कर रहे हैं ? ॥१५॥ वह दीन और व्याकुल चित्त होकर पुरुषोचित कर्त्तव्य कार्योंका करना तो नहीं भूल जाते हैं ? ॥१६॥ शत्रुओंके तपानेवाले श्रीरामचन्द्रजी विजयकी अभिलाषा कर मित्रोंके प्रति साम; दान, और शत्रुके प्रति, भेद व दंडका उपाय तो प्रयोग किये जाते हैं ?॥१७॥व श्रीरामचन्द्रजी औरोंके साथ

मित्रता करते हैं, औ दूसरे भी उनके साथ मित्रता करते हैं? मित्रलोग उनका सत्कार करते हैं? और वह भी मित्रोंका आदर मान तो करते हैं !॥१८॥वह नृपनंदन श्रीरामचन्द्रजी; देवतालोगोंके अनुग्रहकी प्रार्थना तो किया करते हैं उन्होंने पौरुष और दैव बल दोनोंका आश्रय तो ले रक्खा है ?॥१९॥बहुत दूर रहनेसे उनका स्नेह जो हमारे प्रति था वह तो नहीं जाता रहा ? वह श्रीरामचन्द्रजी हमारा उद्धार तो इस विपदसे करेंगे?॥२०॥वह प्यारे नित्यही सुख पाय कर इतने बडे हुये हैं कभी दुःख नहीं पाया सो इस महादुःख भोग करनेसे वह व्याकुल तो नहीं होते ? ॥२१॥ भला कौशल्या सुमित्रा भरतजीका कुशलसंवाद[1] तो बारंबार मिलता रहता है॥२२॥सदा मानपानेके योग्य श्रीरामचन्द्रजी हमारे वियोगके शोकसे संतापित विमन तो नहीं होते! भला वह हमारी रक्षा इस विपदसे करेंगे तो सही ? ॥२३॥

कच्चिदशास्तिदेवानांप्रसादंपार्थिवात्मजः ॥ कच्चित्पुरुषकारंचदैवंचप्रतिपद्यते॥१९॥ कच्चिन्नविगतस्नेहोविवासान्मयिराघवः॥ कच्चिन्मांव्य सनादस्मान्मोक्षयिष्यतिराघवः ॥ २० ॥ सुखानामुचितोनित्यमसुखानामनूचितः ॥ दुःखमुत्तरमासाद्यकच्चिद्रामोनसीदति ॥ २१ ॥ कौस ल्यायास्तथाकच्चित्सुमित्रायास्तथैवच॥ अभीक्ष्णंश्रूयतेकच्चित्कुशलंभरतस्यच ॥ २२ ॥ मन्निमित्तेनमानार्हःकच्चिच्छोकेनराघवः ॥ कच्चिन्ना न्यमनारामःकच्चिन्मांतारयिष्यति ॥२३॥ कच्चिदक्षौहिणींभीमांभरतोभ्रातृवत्सलः ॥ ध्वजिनींमंत्रिभिर्गुप्तांप्रेषयिष्यतिमत्कृते ॥ २४ वान राधिपतिःश्रीमान्सुग्रीवःकच्चिदेष्यति॥मत्कृतेहरिभिर्वीरैर्वृतोदंतनखायुधैः॥२५॥ कच्चिच्चलक्ष्मणःशूरःसुमित्रानंदवर्धनः॥अस्त्रविच्छरजा लेनराक्षसान्विधमिष्यति ॥२६ ॥ रौद्रेणकच्चिदस्त्रेणरामेणनिहतंरणे ॥ द्रक्ष्याम्यल्पेनकालेनरावणंससुहृज्जनम् ॥ २७॥ कच्चिन्नतद्धेमस मानवर्णंतस्याननंपद्मसमानगंधि ॥ मयाविनाशुष्यतिशोकदीनंजलक्षयेपद्ममिवातपेन ॥ २८॥

भइयासे स्नेह करनेवाले भरतजीने क्या हमारा उद्धार करनेके लिये मंत्रियोंसेरक्षित भयंकर अक्षौहणी सेना भेजी है ? ॥ २४ ॥ क्या हमको यहांसे छुटानेके लिये वानर श्रेष्ठ श्रीमान् सुग्रीवजी, दांत और नखोंकेही आयुध बनाये हुये वानरवीरगणोंकेसाथ यहां आवेंगे ? ॥ २५ ॥ क्या वह अस्त्रविशारद वीर सुमित्रा कुमार लक्ष्मणजी अस्त्रजाल वर्षाय राक्षसोंको भस्म कर डालेंगे ? ॥२६॥ क्या हम अल्पकालमें यह देखपावेंगी कि, श्रीरामचन्द्रजीने संग्रामभूमिमें अमोघ अस्त्र शस्त्र चलाय बन्धुबान्धवोंके सहित रावणका संहार किया ? ॥ २७ ॥ कहीं जलविहीन कमलके समान हमारे विरहमें श्रीरामचन्द्रजीका कमलफूलके समान

१ इससे विदित होता है कि, रघुनाथजीके पास समाचार आते रहते थे

सुगन्धियुक्त स्वर्णवर्ण मुखमंडल शोकसे मलीनहो सूख तो नहीं गया ? ॥२८॥ धर्मके लिये जो अपना राज्य त्यागकर हमको साथ ले पैदलही वनमें आनेसे जिनके मनमें पीडा, भय या शोक नहीं हुआ! भला वह श्रीरामचन्द्रजी धैर्यको तो धारण किये हैं ? ॥ २९ ॥ हे दूत ! क्या माता क्या पिता क्या कोई और दूसरा पुरुष, किसीके प्रति उनका हमसे अधिक या समान स्नेह नहीं है, सो हम जब तक परमप्रिय श्रीरामचन्द्रकी कथा सुनती हैं, तबही तक जीती हैं ॥ ३० ॥ मनोरमा मैथिली जानकीजी वानरवीर हनुमानूजीसे इस प्रकार युक्तियुक्त मधुर वचन कह उनके मुखसे फिर श्रीरामचन्द्रजी की कथा सुननेकी इच्छासे मौन होरहीं ॥ ३१ ॥ सीताजीके वचन श्रवण कर भयंकर विक्रमकारी पवननंदन हनुमानूजी शिरसे हाथ जोड उत्तर देते हुये ॥ ३२ ॥ इस

धर्मापदेशात्त्यजतःस्वराज्यंमांचाप्यरण्यंनयतःपदातेः ॥ नासीद्व्यथायस्यनभीर्नशोकःकच्चित्सधैर्यंहृदयेकरोति ॥२९॥ नचास्यमातानपितानचान्यःस्नेहाद्विशिष्टोऽस्तिमयासमोवा ॥ तावद्ध्यहंदूतजिजीविषेयंयावत्प्रवृत्तिंशृणुयांप्रियस्य ॥३०॥ इतीवदेवीवचनंमहार्थंतंवानरेन्द्रंमधुरार्थमुक्त्वा ॥ श्रोतुंपुनस्तस्यवचोभिरामंरामार्थयुक्तंविरराममरामा ॥ ३१ ॥ सीतायावचनंश्रुत्वामारुतिर्भीमविक्रमः ॥ शिरस्यंजलिमाधायवाक्यमुत्तरमब्रवीत् ॥ ३२ ॥ नत्वामिहस्थांजानीतेरामःकमललोचनः ॥ तेनत्वांनानयत्याशुशचीमिवपुरंदरः ॥ ३३ ॥ श्रुत्वैवचवचोमह्यंक्षिप्रमेष्यतिराघवः ॥ चमूंप्रकर्षन्महतींहर्यृक्षगणसंयुताम् ॥३४॥ विष्टंभयित्वाबाणौघैरक्षोभ्यंवरुणालयम् ॥ करिष्यतिपुरींलंकांकाकुत्स्थःशांतराक्षसाम् ॥३५॥ तत्रयद्यंतरामृत्युर्यदिदेवामहासुराः ॥ स्थास्यंतिपथिरामस्यसतानपिवधिष्यति ॥ ३६ ॥ तवादर्शनजेनार्यशोकेनपरिपूरितः ॥ नशर्मलभतेरामःसिंहार्दितइवद्विपः ॥३७॥ मंदरेणतेदेविशपेमूलफलेनच ॥ मलयेनचविंध्येनमेरुणादर्दुरेणच ॥ ३८ ॥

स्थानमें आपका रहना कमलदलसमान नेत्रवाले श्रीरामचन्द्रजी नहीं जानते हैं देवराज जिस प्रकार बिनाजाने अनुह्राद दैत्यसे हरीहुई शचीको नहीं लाय सके इसी प्रकारसे वह अबतक आपका उद्धार करनेमें समर्थ नहीं हुये ॥३३॥ हमसे आपका समाचार पातेही रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी बडी भारी ऋक्ष और वानरोंकी सेना साथ लेकर आवेंगे ॥ ३४ ॥ अक्षोभ्य समुद्रको अपने बाणोंसे पाट सेतुबांध वह काकुत्स्थ रघुवंशवाले श्रीरामचन्द्रजी लंकाके संपूर्ण राक्षसोंका संहार कर डालेंगे ॥ ३५॥ लंकापर चढाई करनेसे यदि साक्षात् यम या देवासुरगण भी बीचमें पडेंगे तब श्रीरामचन्द्रजी उनको भी मार डालेंगे ॥ ३६॥ आपको न देख पानेसे उत्पन्न हुए शोक में डूबे होनेके कारण श्रीरामचन्द्रजी सिंह द्वारा पीडित गजके समान शांति नहीं प्राप्त कर पा रहे हैं ॥ ३७॥ हे देवि ! हम मंदर, मलय, विन्ध्य और दर्दुम

पर्वतोंके और फल फूलोंके नाम करके शपथ करते हैं॥ ३८॥कि, आप देखेंगी कि, श्रीरामचन्द्रजीका सुन्दर नयन शोभित, मनोहर बिम्बाफलके समान अधरोंमें विराजमान सुन्दर कुंडल भूषित मुखमंडल पूर्णचन्द्र समान उदित होगा॥ ३९॥हे विदेहनन्दिनी ! शीघ्रही ऐरावतकी पीठपर इन्द्रजीके समान श्रीरामचन्द्रजीको प्रस्रवण पर्वतपर बैठे हुये देखोगी ॥४०॥ श्रीरामचन्द्रजी मांसभोजन मधुपानको त्याग करके वनके नियमानुसार नित्य संध्याके समय अन्न आहार किया करते हैं वह दोदिन छोड़ तीसरे दिन भोजन करते हैं ॥४१॥ उनका अन्तरात्मा आपमें इस प्रकार लगा हुआ है कि, शरीरपर मच्छरके बैठने, या कीड़े मकोड़े काटनेवाले जीवोंके आजानेसे उनको नहीं अलग करते ॥४२॥ सर्वदाही ध्यान लगाये रहते, सदाही शोकसे विह्वल हो और कुछभी चिंता नहीं करते, बस उनको

यथासुनयनंवल्गुबिंबोष्ठंचारुकुंडलम् ॥ मुखंद्रक्ष्यसिरामस्यपूर्णचंद्रमिवोदितम् ॥३९॥ क्षिप्रंद्रक्ष्यसिवैदेहिरामंप्रस्रवणेगिरौ ॥ शतक्रतुमिवासीनंनागपृष्ठस्यमूर्धनि ॥ ४० ॥ नमांसंराघवोभुंक्तेनचैवमधुसेवते ॥ वन्यंसुविहितंनित्यंभक्तमश्नातिपंचमम् ॥४१॥ नैवदंशान्नमशकान्नकीटान्नसरीसृपान् ॥ राघवोऽपनयेद्गात्रात्त्वद्गतेनांतरात्मना ॥ ४२ ॥ नित्यंध्यानपरोरामोनित्यंशोकपरायणः ॥ नान्यच्चिंतयतेकिंचित्सतुकामवशंगतः ॥४३॥ अनिद्रःसततंरामःसुप्तोऽपिचनरोत्तमः ॥ सीतेतिमधुरांवाणींव्याहरन्प्रतिबुध्यते ॥४४॥ दृष्ट्वाफलंवापुष्पंवायच्चान्यत्स्त्रीमनोहरम् ॥ बहुशोहाप्रियेत्येवंश्वसंस्त्वामभिभाषते ॥४५॥ सदेविनित्यंपरितप्यमानस्त्वामेवसीतेत्यभिभाषमाणः ॥ धृतव्रतोराजसुतोमहात्मातवैवलाभायकृतप्रयत्नः ॥ ४६ ॥ सारामसंकीर्तनवीतशोकारामस्यशोकेनसमानशोका ॥ शरन्मुखेनांबुदशेषचंद्रानिशेववैदेहसुताबभूव ॥ ४७ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०सुन्दरकांडेषट्त्रिंशःसर्गः ॥ ३६ ॥

केवल यही वासना है कि, आपके दर्शन करें॥४३॥श्रीरामचन्द्रजी बहुधा सोते नहीं जोकुछ सोतेभी हैंतोउसी अवस्थामें "सीते" यहमधुरवाणी कहकर वैसेही जाग उठते हैं ॥४४॥ फलपुष्प या और कोई स्त्रियोंकी आनंद देनेवाली चीज देखतेही लंबे श्वास लेते हा प्रिये ! कहकर आपको पुकारते हैं॥४५॥हे देवि ! महात्मा श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकारसे हा सीते! हा सीते ! कहकर सदाही परिताप करते हैं। और वह महात्मा राजकुमार श्रीरामचन्द्रजी आपहीका उद्धार करनेके लिये यत्न कर रहेहैं॥४६॥श्रीरामचन्द्रजीकी यह कथा सुनकर सीताजीको जिसप्रकारका आनंद हुआ था, वैसेही उनको शोकाकुल सुन सीताजी समान शोकग्रस्त हुईं। मानोशारदीय रात्रिमें चंद्रमा निकल कर फिर मेघसे थक गया * ॥४७॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षट्त्रिंशः सर्गः॥३६॥

* चौ०–प्रभु संदेश सुनत वैदेही । मगन प्रेम तनु सुधि नहिं तेही ॥

पूर्णचंद्रमाके समान विमल वदनवाली सीताजी हनुमान्‌जीके वचन श्रवण करके धर्म और युक्तिसिद्ध वचनोंसे उत्तर देती हुई ॥ १ ॥ हे वानर ! तुमने जो कहाकि और किसी वस्तुमें श्रीरामचन्द्रजीका मन नहीं लगता और वह शोकपरायण हैं यह बात तुम्हारी विषमिले हुए अमृतके तुल्य है ॥ २ ॥ मनुष्य महाऐश्वर्यही भोग करें या दुःसह दुःखही पायकर काल बितावे, परन्तु काल रस्सीसे बांध करके उसको खैंचा करता है ॥३॥ हे कपिश्रेष्ठ ! निश्चय है कि होनहारका निवारण नहीं हो सकता देखोना कि, श्रीराम लक्ष्मण और हम किस दुःखमें पडे हैं ॥४॥ न जाने नौका टूटजानेसे उस परसे गिर समुद्र में तैरते हुए पुरुषके समान श्रीरामचंद्रजी पराक्रमका प्रकाश करके भी कितने दिनोंमें शोकका पार पावेंगे ॥५॥ अब कितने दिनोंमें हमारे स्वामी राक्षस कुलका ध्वंस रावणका विनाश

सासीतावचनंश्रुत्वापूर्णचंद्रनिभानना॥हनूमंतमुवाचेदंधर्मार्थसहितंवचः ॥ १ ॥ अमृतंविषसंपृक्तंत्वयावानरभाषितम् ॥ यच्चनान्यमनारामो यच्चशोकपरायणः ॥ २ ॥ऐश्वर्येवासुविस्तीर्णेव्यसनेवासुदारुणे ॥ रज्ज्वेवपुरुषंबद्ध्वाकृतांतःपरिकर्षति ॥३॥ विधिर्नूनमसंहार्यःप्राणिनांप्लवगोत्तम ॥ सौमित्रिंमांचरामंचव्यसनैःपश्यमोहितान् ॥४॥ शोकस्यास्यकथंपारंराघवोधिगमिष्यति ॥ प्लवमानःपरिक्रांतोहतनौःसागरेयथा ॥ ५ ॥ राक्षसानांवधंकृत्वासूदयित्वाचरावणम् ॥ लंकामुन्मथितांकृत्वाकदाद्रक्ष्यतिमांपतिः ॥ ६ ॥ सवाच्यःसंत्वरस्वेतियावदेवनपूर्यते ॥ अयंसंवत्सरःकालस्तावद्धिममजीवितम् ॥ ७ ॥ वर्ततेदशमोमासोद्वौतुशेषौप्लवंगम ॥ रावणेननृशंसेनसमयोयःकृतोमम ॥ ८ ॥ विभीषणेनचभ्रात्राममनिर्यातनंप्रति ॥ अनुनीतःप्रयत्नेननचतत्कुरुतेमतिम् ॥ ९ ॥ ममप्रतिप्रदानंहिरावणस्यनरोचते ॥ रावणंमार्गतेसंख्येमृत्युःकालवशंगतम् ॥ १० ॥ ज्येष्ठाकन्याकलानामविभीषणसुताकपे ॥ तयाममैतदाख्यातंमात्राप्रहितयास्वयम् ॥ ११ ॥

और लंकापुरीको मर्दित करकेहमको दर्शन देवेंगे ॥६॥ इस वर्षके पूर्ण न होते होते श्रीरामचन्द्रजीको शीघ्रही यहां आना चाहिये कारण कि जब तक वर्षपूर्ण नहीं होता, तब ही तक हमारा जीवन है, यह उनसेकहदेना॥७॥अब यह दशमां महीना चलता है, वर्ष पूर्णहोनेमें केवल दो मास रहे हैं। क्रूर रावणने इन्हीं दो महीनोंको हमारे जीवन कालकी अवधि नियत कियाहै॥८॥जिससे कि रावण हमको बहुत पीडित न करे सो रावणके भ्राता विभीषणने इस लिये उसकी बहुत अनुनय विनय यत्न सहित की थी, और यह भी कहा था, जानकी रामको दे दे। परंतु उस दुरात्माने उसकी एकबात न मानी॥९॥उसकी इच्छा हमें श्रीरामचंद्रजीके सौंप देनेकी नहीं है, क्योंकि उसका काल निकट आगया है मृत्यु उसकेसमय कोढूंढ रही है॥१०॥हे वानर ! विभीषणकी कला नामक एक बडी कन्याने अपनी

माताके कहनेसे हमसे यह वृत्तान्त कहा है ॥ ११ ॥ अविन्ध्या नामक एक मेधावी विद्वान् वीर्य सुशील रावणका मन्त्री वृद्ध राक्षस है, रावण भी उसका बहुत मान करता है॥१२॥उसने भी रावणसे कहा था कि, श्रीरामचन्द्रजीसे रावण का क्षय होगा, परंतु दुरात्मा रावणने उस राक्षसका एक भी हितकारी वचन नहीं सुना ॥१३॥ हे वानर श्रेष्ठ! आशा होती है, कि शीघ्रही हमारे स्वामी हमको प्राप्त होंगे, क्योंकि हमारा अन्तरात्मा अति पवित्र है, श्रीरामचन्द्रजी में अनेक गुण हैं ॥१४॥ हे महावीर! उत्साह, पौरुष, बल, दया, कृतज्ञता, विक्रम, प्रभाव यह समस्त ही श्रीरामचन्द्रजी में वर्तमान हैं॥१५॥उन्होंने बिनाही भ्राताकी सहायतासे अकेले जनस्थानमें चौदह हजार राक्षसोंको मार डाला, फिर भला कौन शत्रु उनसे न डरेगा ॥१६॥ श्रीरामचंद्रजी के साथ इन समस्त दुःखदाता राक्षसोंकी

अविंध्योनाममेधावीविद्वान्राक्षसपुंगवः॥ धृतिमाच्छीलवान्वृद्धोरावणस्यसुसंमतः ॥ १२ ॥ रामक्षयमनुप्राप्तंरक्षसांप्रत्यचोदयत् ॥ नचतस्य सदुष्टात्माशृणोतिवचनंहितम् ॥ १३ ॥ आशंसेयंहरिश्रेष्ठक्षिप्रंमांप्राप्स्यतेपतिः॥ अन्तरात्माहितेशुद्धस्तस्मिंश्चबहवोगुणाः ॥१४॥ उत्साहः पौरुषंसत्त्वमानृशंस्यंकृतज्ञता॥ विक्रमश्चप्रभावश्चसंतिवानरराघवे ॥१५॥ चतुर्दशसहस्राणिराक्षसानांजघानयः ॥ जनस्थानेविनाभ्रात्राशत्रुः कस्तस्यनोद्विजेत् ॥ १६ ॥ नशक्यस्तुलयितुंव्यसनैःपुरुषर्षभः ॥ अहंतस्यानुभावज्ञाशक्रस्येवपुलोमजा ॥ १७ ॥ शरजालांशुमाञ्छूरःकपे रामदिवाकरः॥ शत्रुरक्षोमयंतोयमुपशोषंनयिष्यति ॥१८॥ इतिसंजल्पमानांतांरामार्थेशोककर्शिताम् ॥ अश्रुसंपूर्णवदनामुवाचहनुमान्कपिः ॥१९॥ श्रुत्वैवचवचोमह्यंक्षिप्रमेष्यतिराघवः ॥ चमूंप्रकर्षन्महतींहर्यृक्षगणसंकुलाम् ॥ २० ॥ अथवामोचयिष्यामित्वामद्यैवसराक्षसात् ॥ स्माद्दुःखादुपारोहममपृष्ठमनिंदिते ॥ २१ ॥ त्वांतुपृष्ठगतांकृत्वासंतरिष्यामिसागरम् ॥ शक्तिरस्तिहिमेवोढुंलंकामपिसरावणाम् ॥ २२ ॥ अहंप्रस्रवणस्थायराघवायाद्यमैथिलि ॥ प्रापयिष्यामिशक्रायहव्यंहुतमिवानलः ॥ २३ ॥

समानता नहीं हो सकती। शची जिस प्रकार इन्द्रजीका वैसेही हम श्रीरामचन्द्रजी का प्रभाव जानती हैं॥१७॥हे वानर! रामरूपी सूर्य शरजालरूप किरणजालसे हमारे शत्रु जल रूपी राक्षसोंको सुखाय डालेंगे ॥१८॥ यह सब वार्त्ता कहते २ सीताजी श्रीरामचंद्रजी के लिये शोक करने लगीं, आंसुओंके जलसे उनका पूर्णचंद्रानन पूर्ण होगया तब हनुमानजीने उनसे कहा॥१९॥हमारे मुखसे संवाद सुनतेही श्रीरामचंद्रजी ऋक्ष और वानरोंसे पूर्ण बडी भारी सेनाले शीघ्रही यहां पर आवेंगे॥२०॥ अथवा हे अनिन्दिते! हम अभी आपको इस राक्षसके उत्पन्न हुये दुःख छुटावेंगे आप हमारी पीठपर चढलें ॥२१॥ आपको पीठपर चढाकर हम समुद्रके पार होंगे हममें इतनी शक्ति है कि हम रावणके सहित इस लंकापुरीको पीठपर धर समुद्रके पार हो जाँय॥२२॥हे जनकनन्दिनि! अग्नि जिस प्रकार होममें हवन की हुई सामग्री

इन्द्रजीके पास पहुँचाय देते हैं; हम भी वैसेही आज आपको लेकर प्रस्रवण पर्वत पर बैठे हुये श्रीरामचंद्रजीके निकट समर्पण करेंगे॥२३॥हे ! वैदेही आजही आप देखेंगी कि, दैत्योंका वध करनेके लिये विष्णुजीके समान श्रीरामचंद्रजी लक्ष्मणजी के सहित शत्रु का वध करनेके लिये तैयारी कर रहे हैं ॥२४॥ हे देवि ! वह महा बलवान् श्रीरामचंद्रजी आपके दर्शनकी लालसासे उत्साही हो पर्वत राज प्रस्रवणके शिखरका आश्रय लिये इंद्रजीके समान बैठे हुये हैं ॥ २५ ॥ हे शोभने ! अब कुछ न सोचों विचारो झटपट हमारी पीठपर चढलो, चंद्रमाके सहित रोहिणीके समान तुम श्रीरामचंद्रजीसे मिलो ॥ २६ ॥ इस बातके कह नेमें कि हम श्रीरामचंद्रजीके निकट जायँगे जितना समय लगता है बस इतनेहीसमय में आप हमारे सहित चंद्रमाके साथ रोहिणीके समान श्रीरामचंद्रजीके साथ मिल जायँगी, आप हमारी पीठपर चढिये, हम आकाशमार्गसे समुद्रके पार होंगे॥२७॥ हे अङ्गने ! जब हम आपको इस स्थानसे ले जायँगे तो लंकामें कोई

द्रक्ष्यस्यद्यैववैदेहिराघवंसहलक्ष्मणम् ॥ व्यवसायसमायुक्तंविष्णुंदैत्यवधेयथा ॥२४॥ त्वद्दर्शनकृतोत्साहमाश्रमस्थंमहाबलम् ॥ पुरंदरमिवासीनंनगराजस्यमूर्धनि ॥२५॥ पृष्ठमारोहमेदेविमाविकांक्षस्वशोभने ॥ योगमन्विच्छरामेणशशांकेनेवरोहिणी ॥२६॥ कथयंतीवशशिनासंगमिष्यसिरोहिणी ॥ मत्पृष्ठमधिरोहत्वंतराकाशंमहार्णवम् ॥२७॥ नहिमेसंप्रयातस्यत्वामितोनयतोंगने ॥ अनुगंतुंगतिंशक्ताःसर्वेलंकानिवासिनः ॥ २८ ॥ यथैवाहमिहप्राप्तस्तथैवाहमसंशयम् ॥ यास्यामिपश्यवैदेहित्वामुद्यम्यविहायसम् ॥ २९ ॥ मैथिलीतुहरिश्रेष्ठाच्छ्रुत्वावचनमद्भुतम् ॥ हर्षविस्मितसर्वांगीहनूमंतमथाब्रवीत् ॥३०॥ हनूमन्दूरमध्वानंकथंमांनेतुमिच्छसि ॥ तदेवखलुतेमन्येकपित्वंहरियूथप ॥ ३१ ॥ कथंचाल्पशरीरस्त्वंमांमितोनेतुमिच्छसि ॥ सकाशंमानवेंद्रस्यभर्तुर्मेप्लवगर्षभ ॥३२॥ सीतायास्तद्वचःश्रुत्वाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ चिंतयामासलक्ष्मीवान्नवंपरिभवंकृतम् ॥ ३३ ॥

ऐसा राक्षस नहीं है कि जो हमारा पीछा कर सके ॥२८॥ हे विदेहनंदिनि! आप देखेंगी कि हम जिस प्रकारसे यहांपर आये हैं वैसेही आपको पीठपर चढाय आकाशमार्गसे चले जायँगे इसमें कुछभी संशय नहीं है ॥२९॥ वानर श्रेष्ठ हनुमानजीके मुखसे निकले हुये यह अद्भुत वचन सुनकर आनंद के और विस्मयके मारे जानकीजीके सब अंगोंमें रोमाञ्च हो आया और वह हनुमान्‌जीसे बोलीं॥३०॥ हे हनुमन् !इस बडे भारी दूरकेमार्गमें तुम किसप्रकारसे हमको ले जाना चाहते हो ? बस इसीबातसे तुम्हारा वानरी भाव प्रगट होताहै भला वानरोंमें इतना बल कहांसे आया॥३१॥हेवानर श्रेष्ठ! ऐसे छोटे शरीरवाले होकर तुम किस साहससे हमको यहांसे हमारे स्वामी श्रीरामचंद्रजीके निकट ले जाया चाहते हो? ॥३२॥ सीताजीके वचन सुनकर लक्ष्मीवान् पवनकुमार हनुमानजीने मनमें विचारा कि यही

हमारा प्रथम अनादर हुआ॥ ३३ ॥यह इन्दीवरनयनी सीताजी हमारी शक्तिके प्रभावको नहीं जानती इस लिये इच्छानुसार जो रूप धारण कर सकते हैं उसको वैदेहीजी देखें ॥ ३४ ॥ इसप्रकारसे चिन्ताकरके शत्रुओंके दमन करनेवाले हनुमानजीने सीताजीको अपना रूप दिखाया ॥ ३५ ॥ कपिश्रेष्ठ हनुमानजी छलांगमार वृक्षपरसे उतर सीताजीको विश्वास उपजानेके लिये वर्धित होने लगे॥ ३६ ॥उस समय उनका शरीर मेरु पर्वतकेसमान हो प्रदीप्त अग्निकी भाँति प्रकाशित हो शोभायमान होने लगा और वह जानकीजीके आगे खडे होगये ॥ ३७ ॥ पर्वताकार लालमुख महाबलवान् वज्रवत् दांत नख इस प्रकारका महाभयंकर रूप धारण कर हनुमानजी श्रीजानकीजीसे बोले ॥ ३८ ॥ हे देवि ! हममें इस प्रकारकी शक्ति है कि हम पर्वत वन भूमि देश प्राकार

नमेजानातिसत्त्वंवाप्रभावंवासितेक्षणा ॥ तस्मात्पश्यतुवैदेहीयद्रूपंममकामतः ॥३४॥ इतिसंचिंत्यहनुमांस्तदाप्लवगसत्तमः ॥ दर्शयामाससीतायाःस्वरूपमरिमर्दनः॥३५॥ सतस्मात्पादपाद्धीमानाप्लुत्यप्लवगर्षभः॥ ततोवर्धितुमारेभेसीताप्रत्ययकारणात् ॥३६॥ मेरुमंदरसंकाशोबभौदीप्तानलप्रभः ॥ अग्रतोव्यवतस्थेचसीतायावानरर्षभः ॥ ३७ ॥ हरिःपर्वतसंकाशस्ताम्रवक्त्रोमहाबलः ॥ वज्रदंष्ट्रनखोभीमोवैदेहीमिदमब्रवीत् ॥ ३८ ॥सपर्वतवनोद्देशांसाट्टप्राकारतोरणाम् ॥ लंकामिमांसनाथांवानयितुंशक्तिरस्तिमे ॥३९॥ तदवस्थाप्यतांबुद्धिरलंदेविकांक्षया॥ विशोकंकुरुवैदेहिराघवंसहलक्ष्मणम् ॥ ४० ॥ तंदृष्ट्वाचलसंकाशमुवाचजनकात्मजा ॥ पद्मपत्रविशालाक्षीमारुतस्यौरसंसुतम् ॥ ४१ ॥ तव सत्त्वंबलंचैवविजानामिमहाकपे॥वायोरिवगतिश्चापितेजश्चाग्नेरिवाद्भुतम् ॥४२॥ प्राकृतोन्यःकथंचेमांभूमिमागंतुमर्हति ॥ उदधेरप्रमेयस्यपारंवनरयूथप ॥ ४३ ॥ जानामिगमनेशक्तिंनयनेचापितेमम ॥ अवश्यंसंप्रधार्याशुकार्यसिद्धिरिवात्मनः ॥ ४४ ॥ अयुक्तंतुकपिश्रेष्ठमयागंतुंत्वयासह ॥ वायुवेगसवेगस्यवेगोमांमोहयेत्तव ॥ ४५ ॥

अटारीव तोरणादि औरराबणके सहित इस लंकापुरीको उठाय कर लेजा सकते हैं ॥३९॥ इस लिये हमारे ऊपर विश्वास रखिये अविश्वास न कीजिये । हे विदेह दुहिते! लक्ष्मणजीके सहित श्रीरामचन्द्रजीका भी शोक दूर कीजिये॥४०॥कमलदलसम नेत्रवाली सीताजी पवनके औरस पुत्र हनुमानजीको पर्वतके समान बढा हुआ देख कर कहने लगीं ॥ ४१ ॥ हे कपिवर ! हमने तुहारा साहस बल और पवनके समान गति अग्निके समान अद्भुत तेजका परिचय पाया ॥ ४२ ॥ हे वानरश्रेष्ठ ! भला तुम्हारे विना कौनहै जो इस लांघनेकेअयोग्य समुद्रको पार हो इस देशमें आनेको समर्थ होगा ? ॥४३॥ हम जान गईं कि तुम लौट भी जासकते और हमको भी साथ ले जासकते हो परन्तु जल्दी कार्यसिद्ध होनेके विषयमें हमें स्वयंभी विचार करना उचित है ॥४४॥हमारा तुम्हारे

साथ जाना युक्ति युक्त नहीं है, क्योंकि तुम्हारा वेग पवनके समान प्रबल है, सो जब तुम वेगसे लेकर चलोगे तो हम मूर्च्छित होजायँगी ॥४५॥ तुम भयंकर वेगसे गमन करते२ जबकि समुद्रके ऊपर हो आकाशमार्गमें उडोगे तब हम निरालम्ब होकर गिर जायँगी ॥४६॥ तिमि, नाके और महामत्स्यसमाकुल समुद्रमें गिरकर शीघ्रही हम विवश हो कुम्भीरादिजलजन्तुओंका उत्तम भोजन बन जायँगी ॥ ४७ ॥ हे अरिदमन ! तुम्हारे साथ हम नहीं जासकेंगी, क्योंकि एक जन स्त्रीको लिये जारहा है ऐसा देखकर निश्चयही राक्षस लोग तुम्हारे पर संदेह करेंगे ॥ ४८ ॥ हमको लिये जाते हुए देखकर दुरात्मा रावणकी आज्ञा पाय भयंकर विक्रमकारी राक्षसगण तुम्हारे पीछे २ धावमान होंगे ॥ ४९ ॥ एक तो स्त्रीके साथमें तिसपर फिर इनसब शूल और मुद्गरधारी वीरराक्षसोंसे घेरे जाकर

अहमाकाशमासक्ताऽप्यर्युपरिसागरम्॥ प्रपतेयंहितेपृष्ठाद्भयोवेगेनगच्छतः ॥४६॥ पतितासगरेचाहंतिमिनक्रझषकुले॥ भवेयमाशुविवशायाद सामन्नमुत्तमम् ॥ ४७ ॥ नचशक्ष्येत्येयासार्द्धंगंतुंशत्रुविनाशन ॥ कलत्रवतिसंदेहस्त्वयिस्यादप्यसंशयम् ॥४८॥ ह्रियमाणांतुमांदृष्ट्वाराक्षसा भीमविक्रमाः॥ अनुगच्छेयुरादिष्टारावणेनदुरात्मना ॥४९॥ तैस्त्वंपरिवृत्तःशूरैःशूलमुद्गरपाणिभिः ॥ भवेस्त्वंसंशयंप्राप्तोमयावीरकलत्रवान् ॥ ५० ॥ सायुधावहवोव्योम्निराक्षसास्त्वंनिरायुधः ॥ कथंशक्ष्यसिसंयातुंमांचैवपरिरक्षितुम् ॥ ५१ ॥ युध्यमानस्यरक्षोभिस्ततस्तैःक्रूरक र्मभिः ॥ प्रपतेयंहितेपृष्ठाद्भयार्ताकपिसत्तम ॥ ५२ ॥ अथरक्षांसिभीमानिमहांतिबलवंतिच ॥ कथंचित्सांपरायेत्वांजयेयुःकपिसत्तम ॥५३॥ अथवायुध्यमानस्यपतेयंविमुखस्यते॥ पतितांचगृहीत्वामांनयेयुःपापराक्षसाः ॥५४॥ मांवाहरेयुस्त्वद्धस्ताद्विशसेयुरथापिवा ॥ अनवस्थौ हिदृश्येतेयुद्धेजयपराजयौ ॥ ५५ ॥ अहंवापिविपद्येयंरक्षोभिरभितर्जिता ॥ त्वत्प्रयत्नोहरिश्रेष्ठभवेन्निष्फलएवतु ॥ ५६ ॥

तुम्हारे जीवनमें संशय होगा ॥ ५० ॥ आकाशमार्गमें राक्षसगण अस्त्रशस्त्र लिये होंगे और तुम अस्त्ररहित, इस अवस्थामें भला तुम किस प्रकारसे जाओगे और कौनसा उपायहै कि, जिससे हमारी रक्षा कर सकोगे?॥५१॥क्रूरकर्म करनेवाले भयंकरराक्षसोंसे जब तुम्हारा युद्ध होगा तब भयसे भयभीतहो अवश्य हम तुम्हारी पीठसे नीचे गिर पडेंगी ॥५२॥ हे कपिश्रेष्ठ ! बडे भयंकर और बडे बलवान् राक्षस लोगोंने जो संग्राममें तुमको किसीप्रकारसे जीतही लिया ॥५३॥ अथवा संग्राम करते२ तुम्हारी दृष्टि हमारे ऊपर न रही और हम गिर पडीं तो गिरतेही राक्षस लोग फिर हमको पकड करले आवेंगे ॥ ५४ ॥ अथवा वह राक्षस लोग हमको तुम्हारे हाथसे छीन लेंगे, या मार डालेंगे क्योंकि युद्धमें जय पराजयका कोईभी निश्चय नहींहै ॥ ५५ ॥ जो राक्षसोंने युद्धमें हमको मार डाला

या यहां को लाये तो हमको भी विपद होगी और तुम्हाराभी समुद्रके पार होकरयहां आना व्यर्थ हो जायगा ॥५६॥ यद्यपि तुम सत्यही अकेले समस्त राक्षसोंका संहार करसकते हो, परन्तु जो तुमने राक्षसोंका नाश कर दिया तो श्रीरामचन्द्रजीके यशका नाश होजायगा ॥५७॥ और एक दोष यह है कि जो राक्षस लोग फिर हमको यहां पकडकर ले आये, तो ऐसे स्थानमें छिपाकर रक्खेंगे कि जहां वानरगण या कोई भी हमको फिर न देख पावेंगे ॥५८॥ इस लिये हमारे अर्थ तुम्हारा जो इतना उद्योग है वह समस्त विफल हो जायगा इस लिये तुम्हारे साथ श्रीरामचन्द्रजीके आनेपरही सब कार्य सिद्ध होंगे ॥ ५९ ॥ हे महाबाहो ! अतितेजस्वी श्रीरामचन्द्रका उनके भ्राताओंका और तुमलोगोंके राजवंशका जीवन सब हमारेही अधीन है ॥ ६० ॥ क्योंकि हमारे मरजानेपर

कामंत्वमपिपर्याप्तोनिहंतुंसर्वराक्षसान्॥राघवस्ययशोहीयेत्त्वयाशस्तैस्तुराक्षसैः ॥५७॥ अथवादायरक्षांसिन्यसेयुःसंवृतेहिमाम् ॥ यत्रतेनाभिजानीयुर्हरयोनापिराघवः ॥५८॥ आरंभस्तुमदर्थोऽयंततस्तवनिरर्थकः ॥ त्वयाहिसरामस्यमहानागमनेगुणः ॥ ५९ ॥ मयिजीवितमायत्तं राघवस्यामितौजसः ॥ भ्रातॄणांचमहाबाहोतवराजकुलस्यच ॥ ६० ॥ तौनिराशौमदर्थेचशोकसंतापकर्शितौ ॥ सहसर्वर्क्षहरिभिस्त्यक्ष्यतः प्राणसंग्रहम् ॥ ६१ ॥ भर्तुर्भक्तिंपुरस्कृत्यरामादन्यस्यवानर ॥ नाहंस्प्रष्टुंस्वतोगात्रमिच्छेयंवानरोत्तम ॥ ६२ ॥ यदहंगात्रसंस्पर्शंरावणस्यगताबलात् ॥ अनीशाकिंकरिष्यामिविनाथाविवशासती ॥ ६३ ॥ यदिरामोदशग्रीवमिहहत्वासराक्षसम् ॥ मामितोगृह्यगच्छेतततस्यसदृशंभवेत् ॥६४॥ श्रुताश्चदृष्टाहिमयापराक्रमामहात्मनस्तस्यरणावमर्दिनः ॥ नदेवगंधर्वभुजंगराक्षसाभवंतिरामेणसमाहिसंयुगे ॥६५॥ समीक्ष्य तंसंयतिचित्रकार्मुकंमहाबलंवासवतुल्यविक्रमम् ॥ सलक्ष्मणंकोविषहेतराघवंहुताशनदीप्तमिवानिलेरितम् ॥ ६६ ॥

श्रीरामचन्द्रजी और सुग्रीवजी हमारे लिये शोकसे व्याकुलहो समस्त वानर और ऋक्षगणोंके साथ प्राण त्याग करेंगे॥६१॥ व एक बात और भी है कि जब स्वामीमें हमारी भक्ति है, तब उनके सिवाय और दूसरे पुरुष का शरीर इच्छा करके हम छू नहीं सकती हैं॥६२॥ रावणने बलात्कारसे हमारे शरीरको छुआ था, इसमें क्या करें? उस समय हमारा अपना तो कोई वश नहीं था और पराये वशमें थीं॥६३॥ श्रीरामचंद्रजी इस स्थानमें रावणको मार कर हमको यहांसे ले जायँ, तभी तो उनके योग्य कार्य होगा ❋॥६४॥ हमने युद्धमें शत्रुओंके मारनेवाले श्रीरामचन्द्रजीके अनेक पराक्रम श्रवण किये और प्रत्यक्षभी देखती हैं, क्या देवता, क्या गंधर्व, क्या नाग, क्या राक्षस कोई भी युद्धमें श्रीरामचन्द्रजीके समान नहीं है॥६५॥ संग्रामभूमिमें अद्भुत धनुर्धारी; इन्द्रजीके समान विक्रमकारी, लक्ष्मण संग भिड्याहारी (लक्ष्मणजीके

❋ इससे यह गूढभाव निकलता है कि मैं रावणके वध निमित्तही यहां आई हूं ॥

साथ) महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजीको देख कर चलते हुये प्रदीप्त अग्निके समान उनका प्रभाव कौन जन सहन कर सकेगा ? ॥६६॥ युद्धमें मर्दन करनेवाले मत वाले दिग्गजके समान टिके हुये युगान्तकालीन सूर्यके समान बाणरूपी किरण वर्षानेवाले लक्ष्मणजीके साथ श्रीरामचन्द्रजीको समरमें कौन सहन कर लेगा? ॥६७॥ हे वानरश्रेष्ठ तुम लक्ष्मण और सुग्रीवके साथ प्रियतम श्रीरामचन्द्रजीको शीघ्रही इस स्थानमें ले आओ हे वीर ! हम श्रीरामचन्द्रजीके शोकमें बहुत दिनोंसे कातर हैं, सो हमको हर्षित कराओ॥६८॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि०सुन्दरकांडे भाषायां सप्तत्रिंशः सर्गः॥३७॥जनककुमारी सीताजीके यह वचन सुनकर संतुष्ट हो वाक्य विशारद कपिश्रेष्ठ हनुमान्जीसीताजीसे बोले॥१॥हे देवि! आपने स्त्रीस्वभावसुलभ और पतिव्रता स्त्रियोंके आचरण करने योग्य युक्तिसंगत जो वचन कहे हैं वे ठीक हैं॥२॥

सलक्ष्मणंराघवमाजिमर्दनंदिशागजंमत्तमिवव्यवस्थितम् ॥ सहेतकोवानरमुख्यसंयुगेयुगांतसूर्यप्रतिमंशरार्चिषम् ॥ ६७ ॥ समेकपिश्रेष्ठस लक्ष्मणंप्रियंसयूथपंक्षिप्रमिहोपपादय ॥ चिरायरामंप्रतिशोककर्षितांकुरुष्वमांवानरवीरहर्षिताम् ॥ ६८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७ ॥ ततः सकपिशार्दूलस्तेनवाक्येनतोषितः॥ सीतामुवाचतच्छ्रुत्वावाक्यंवाक्य विशारदः ॥ १ ॥ युक्तरूपंत्वयादेविभाषितंशुभदर्शने ॥ सदृशंस्त्रीस्वभावस्यसाध्वीनांविनयस्यच ॥ २ ॥ स्त्रीत्वान्नत्वंसमर्थासिसागरंव्यति वर्तितुम् ॥ मामधिष्ठायविस्तीर्णंशतयोजनमायतम् ॥३॥ द्वितीयंकारणंयच्चब्रवीषिविनयान्विते ॥ रामादन्यस्यनार्हामिसंसर्गमितिजानकि ॥४॥ एतत्तेदेविसदृशंपत्न्यास्तस्यमहात्मनः॥काह्यन्यात्वामृतेदेविब्रूयाद्वचनमीदृशम् ॥५॥ श्रोष्यतेचैवकाकुत्स्थःसर्वंनिरवशेषतः ॥ चेष्टितं यत्त्वयादेविभाषितंचममाग्रतः ॥ ६ ॥ कारणैर्बहुभिर्देविरामप्रियचिकीर्षया ॥ स्नेहप्रस्कन्नमनसामयैतत्समुदीरितम् ॥ ७ ॥

यह बात सत्य है कि, स्त्री होनेके कारण आप हमारी पीठपर चढकर शत योजन विस्तारवाले अपार समुद्रके पार न हो सकेंगी॥३॥हे विनयसे युक्ते ! आपने श्रीरामचंद्र जीके सिवाय दूसरे पुरुषकी देहको स्पर्श करनेकी हमें अभिलाषा नहीं है; यह दूसरा कारण जो तुमने बताया ॥४॥ हे देवि ! सो यह भी आपके योग्यही है, क्योंकि आप महात्मा श्रीरामचन्द्रजीकी सहधर्मिणी हैं। आपके सिवाय और कौन स्त्री ऐसे वचन कह सकती है ॥५॥ देवि! आपने हमसे जिस प्रकारका आचरण किया, और जो वार्ता की श्रीरामचन्द्र हमारे मुखसे वह समस्त आदिसे अन्ततक यथार्थ २ सुनेंगे॥६॥हे देवि! स्नेहसे हमारा हृदय गीला हो गया है, और श्रीरामचन्द्र

जीका हित साधनही हमारा एक मात्र आशय है, इसी लिये अनेक कारणोंसे हमने यह वार्ता कही थी ॥७॥ लंकानगरीमें औरका प्रवेश करना दुःसाध्य महासागरका पार उतरना भी कठिन है सो हममें यह सामर्थ्य है; सो इन्हीं समस्त कारणोंसे यह कहा था कि, हमारे संग चली चलो॥८॥महान् स्नेहके वश होनेसे हमारा अभिलाषा हुआ कि, आजही आपको श्रीरामचन्द्रजीके निकट ले चलें, इसी कारण हमने यह वार्ता कही कुछ गर्वसे नहीं कही है॥९॥हे अनिन्दिते! यदि आप हमारे साथ नहीं जाना चाहतीं तो हमें अपनी कुछ निशानी दीजिये कि, जिससे श्रीरामचन्द्रजीको विश्वासहो कि यह जानकीजीके पास हो आये ॥१०॥ जब हनुमान्जीने ऐसा कहा तो देवकन्याके समान सीताजी रुदन करते २ धीरे धीरे बोलीं॥११॥कि, हमारी यही सबसे श्रेष्ठ निशानी और यही पता है कि चित्रकूट

लंकायांदुष्प्रवेशत्वाद्दुस्तरत्वान्महोदधेः ॥ सामर्थ्यादात्मनश्चैवमयैतत्समुदीरितम् ॥ ८ ॥इच्छामित्वांसमानेतुमद्यैवरघुनंदिना ॥ गुरुस्नेहेनभक्त्याचनान्यथातदुदाहृतम् ॥ ९ ॥यदिनोत्सहसेयातुंमयासाधमनिंदिते ॥ अभिज्ञानंप्रयच्छत्वंजानीयाद्राघवोहियत् ॥ १० ॥ एवमुक्ताहनुमतासीतासुरसुतोपमा ॥ उवाचवचनंमंदंबाष्पप्रग्रथिताक्षरम् ॥११॥ इदंश्रेष्ठमभिज्ञानंब्रूयास्त्वंतुममप्रियम् ॥ शैलस्यचित्रकूटस्यापादेपूर्वोत्तरेपदे ॥ १२ ॥ तापसाश्रमवासिन्याःप्राज्यमूलफलोदके ॥ तस्मिन्सिद्धाश्रितेदेशेमंदाकिन्याविदूरतः॥ १३ ॥ तस्योपवनखंडेषुनानापुष्पसुगंधिषु ॥ विहृत्यसलिलेक्लिन्नोममांकेसमुपाविशः ॥ १४ ॥ ततोमांससमायुक्तोवायसः पर्यतुंडयत् ॥ तमहंलोष्ठमुद्यम्यवारयामिस्मवायसम् ॥ १५ ॥ दारयन्सचमांकाकस्तत्रैवपरिलीयते ॥ नचाप्युपारमन्मांसाद्भक्षार्थीबलिभोजनः ॥१६॥ उत्कर्षंत्यांचरशनांक्रुद्धायांमयिपक्षिणे ॥ स्रंसमानेचवसनेततोदृष्टात्वयाह्यहम् ॥ १७ ॥

पर्वतके ईशान कोणवाले वृक्षके नीचे॥१२॥मन्दाकिनीके धोरे वह सिद्धजनोंसे सेवित फल फूल और जल सम्पन्न देशके तपस्वियोंके आश्रममें वसनेके समय हमारे ऊपर क्या घटना हुई थी ॥१३॥ वह घटना यह है कि, एक दिन अनेक विधिफूलोंके समूह सुगंधिसे आमोदित उस उपवन भूमिमें विहार कर जलमें क्रीडा करनेसे थकित हो तुम हमारे अंगमें सो गये॥१४॥कि, उसी समयमें एक कौएने आकर मांसके लालचसे हमारी छातीमें चोंच मारी कि, जिसको हमने ढेलेसे निवारण किया॥१५॥परन्तु वह कौवा न हटकर उसी स्थानपर बैठ हमको विदारण करने लगा। वह कहीं उठ कर न गया मानो मांस भोजनके निमित्त बैठाही रहा ॥१६॥ तब उस समय हमने उसके प्रति क्रोधकर दृढ भाँतिसे वस्त्र पहरनेके लिये जैसेही अपनी रशना–कौंधनी पकडी कि वैसेही हमारा वस्त्र खसक गया, उसीसमय

तुम उठकर हमारी ओर दृष्टि करके हसने लगे ॥ १७ ॥ आपको हँसता हुआ देख कर हम लज्जित व क्रोधित हुई और भोजनके लिये ललचाये काक करिके विदारित हो हमने तुम्हारी शरण ली ॥ १८ ॥ काकके निवारण करनेसे हमको श्रम हुआ इसलिये हम तुम्हारे अंकमें बैठीं, हमारी ऐसी अवस्था देख तुमने कुछ न कहकर और हमारी हँसी की सो हमको इससे क्रोध हुआ था सो क्रोध देखकर आपने हमको बहुत समझाया बुझाया ॥ १९ ॥ उस समय हम आँसूपूर्ण मुखसे धीरे धीरे आँसुओंको पोंछने लगीं । हे नाथ ? काकके क्रोध उपजानेसे तुमने इस अवस्थामें हमारा अनादर किया ॥ २० ॥ इसके पीछे हम मारे परिश्रमके शांत होकर तुम्हारी गोदीमें गई अनेक क्षणतक सोई रहीं, जब हम जागीं तब तुम हमारे अंकमें सोगये ॥ २१ ॥ कि; इस अवसरमेंही अचा

त्वयाविहसिताचाहंकुद्धासंलज्जितातदा॥ भक्ष्यगृद्ध्नेनकाकेनदारितात्वामुपागता ॥१८॥ ततःश्रांताहमुत्संगमासीनस्यतवाविशम् ॥ क्रुध्यं तीवप्रहृष्टेनत्वयाहंपरिसांत्विता ॥१९॥ बाष्पपूर्णमुखीमंदंचक्षुषीपरिमार्जिती॥ लक्षिताहंत्वयानाथवायसेनप्रकोपिता ॥ २० ॥ परिश्रमाच्च सुप्ताहेराघवांकेस्म्यहंचिरम्॥ पर्यायेणप्रसुप्तश्चममांकेभरताग्रजः ॥ २१ ॥ सतत्रपुनरेवाथवायसः समुपागमत् ॥ ततःसुप्तप्रबुद्धामांराघवांका त्समुत्थिताम्॥ वायसःसहसागम्यविददारस्तनांतरे ॥ २२ ॥ पुनःपुनरथोत्पत्यविददारसमांभृशम् ॥ ततःसमुत्थितोरामोमुक्तैःशोणितबिंदु भिः ॥ २३ ॥ समांदृष्ट्वामहाबाहुर्वितुन्नांस्तनयोस्तदा॥ आशीविषइवक्रुद्धःश्वसन्वाक्यमभाषत॥ २४ ॥ केनतेनागनासोरुविक्षतंवैस्तनांतरम् ॥ कःक्रीडतिसरोषेणपंचवक्त्रेणभोगिना ॥ २५ ॥ वीक्षमाणस्ततस्तंवैवायसंसमवैक्षत ॥ नखैःसरुधिरैस्तीक्ष्णैर्मामेवाभिमुखंस्थितम् ॥ २६ ॥

नक इस काकने फिर तुम्हारे अंकसे जागरित हमारे निकट आयकर हमारी छातीमें पंजे मारकर विदीर्ण कर डाला ॥ २२ ॥ बार बार उडकर और फिर आय २ कर उसने हमारे शरीरको क्षत विक्षत करदिया, जब छातीमेंसे रुधिरकी बूँदें गिरने लगीं तब श्रीरामचन्द्रजी जागे ॥ २३ ॥ स्तनोंके बीचमें घाव हुआ देखकर महाबाहु श्रीरामचंद्रजी क्रोधित सर्पके समान गर्जना करते २ हमसे बोले कि, ॥ २४ ॥ हे करिकरोरु ! (गजके समान गोल व चढा उतार जांघोंवाली) तुम्हारे स्तनोंके बीचमें किसने घाव किया ? क्रोधित पंचमुहे सर्पके साथ किसको खेलनेकी इच्छा हुई है ? ॥ २५ ॥ फिर उन श्रीरामचन्द्र जीने इधर उधर दृष्टि चलायकर देखा कि, काक रुधिरसे भीगा तीक्ष्ण नखयुक्त हमारेही ओरको मुखकिये खडा था ॥ २६ ॥

हे हनुमन् ! यह काक कपटवेषधारी जयन्त इन्द्रका पुत्र था, यह पवनके समान वेगवान् बडी शीघ्रतासे वनमें आया था पृथ्वीमें प्रवेश कर सकता था ॥२७॥ इस काकको देखकर क्रोधके मारे महाबाहु श्रीरामचन्द्रजीके नेत्र घूमने लगे उन्होंने इस काकके विनाशकी वासना की॥२८॥ उन्होंने बिछे हुए कुशों मेंसे एक कुश निकाल उसे मंत्रसे अभिमंत्रितकर ब्रह्मास्त्र योजित किया, वह कुश उस काकके सामने जलती हुई कालाग्निके समान उसे जलाता हुआ॥२९॥श्रीराम चन्द्रजीने वह प्रज्वलित कुश उस काकके प्रति छोडा, वह आकाशमार्गमें उस काकके पीछे २ धाया ॥३०॥ काक उस अस्त्रसे छुटकारा पानेकी अभिलाषासे विचित्र गतिसे एक २ करके ब्रह्मांडके सब लोकोंमें घूमा परंतु किसीने भी उसको आश्रय नहीं दिया ॥३१॥समस्त ब्रह्मर्षि देवर्षियोंने बरन् उसके पिता इन्द्र तकने उसको

पुत्रः किल स शक्रस्य वायसः पततांवरः ॥ धरांतरगतः शीघ्रं पवनस्य गतौ समः ॥ २७ ॥ ततस्तस्मिन्महाबाहुः कोपसंवर्तितेक्षणः ॥ वायसे कृतवा न्क्रूरां मतिं मतिमतांवरः ॥ २८ ॥ स दर्भं संस्तराद्गृह्य ब्रह्मणोस्त्रेण योजयत् ॥ स दीप्त इव कालाग्निर्जज्वालाभिमुखो द्विजम् ॥२९ ॥ स तं प्रदीप्तं चिक्षे प दर्भं तं वायसं प्रति ॥ ततस्तु वायसं दर्भः सोंऽबरेनुजगाम ह ॥ ३० ॥ अनुसृष्टस्तदा काको जगाम विविधां गतिम् ॥ त्राणकाम इमं लोकं सर्वं वै वि चचार ह ॥३१॥ स पित्रा च परित्यक्तः सर्वैश्च परमर्षिभिः ॥ त्रीँल्लोकान्संपरिक्रम्य तमेव शरणं गतः ॥३२॥ स तं निपतितं भूमौ शरण्यः शरणागतम् ॥ वधार्हमपि काकुत्स्थः कृपया पर्यपालयत् ॥३३॥ परिद्यूनं विवर्णं च पतमानं तमब्रवीत ॥ मोघमस्त्रं न शक्यं तु ब्राह्मं कर्तुं तदुच्यताम् ॥३४॥ ततस्तस्या क्षि काकस्य हिनस्ति स्म स दक्षिणम् ॥ दत्त्वा तु दक्षिणं नेत्रं प्राणेभ्यः परिरक्षितः ॥ ३५ ॥ स रामाय नमस्कृत्वा राज्ञे दशरथाय च ॥ विसृष्टस्तेन वीरेण प्र तिपेदे स्वमालयम् ॥ ३६ ॥

त्याग कर बात तक नहीं पूछी, इस प्रकारसे वह त्रिलोकीमें घूमघाम कर फिर श्रीरामचन्द्रजीकीही शरणमें आया ॥३२॥ जबकि, वह शरणागत हो पृथ्वीपर आय कर गिर गया, तब आश्रयदाता श्रीरामचन्द्रजीने वधके योग्य होनेपर भी इसका वध नहीं किया और कृपा करके उसके प्राणोंकी रक्षा की ॥३३॥ जब काक क्षीण और विवर्णभावसे आकर गिर गया तब श्रीरामचन्द्रजीने उससे कहा कि, ब्रह्मास्त्र कभी निष्फल नहीं होता, इस लिये बताओ कि, तुम्हारा कौनसा अंग नष्ट करें ॥३४॥ तब काकने कहाकि हमारा एक नेत्र इस बाणकी भेंटहै, तब श्रीरामचन्द्रजीके उस अस्त्रने काकका दहना नेत्र फोड डाला, काकने भी दहना नेत्र देकर अपने प्राणोंको बचाया ॥३५॥ तब वह काक श्रीरामचन्द्रजीको और दशरथजीको प्रणाम कर, व श्रीरामचन्द्रजीसे बिदाहो अपने स्थानको चला गया

॥३६॥हे महीपते! जबकि, तुमने एक काकपर जिसने कि, हमसे थोडाही अन्याय किया था ब्रह्मास्त्र चलाया; तब उसको आप क्यों क्षमा कर रहे हैं कि, जो आपके निकटसे हमको हरण करके ले आया है॥३७॥हे नरश्रेष्ठ! अतिप्रबल उत्साहका आश्रय लेकर तुम हमपर कृपा करो। हे नाथ! तुम्हारे साथ रहते हुए भी हम अनाथके समान जान पडती हैं ॥ ३८ ॥ हमने आपसेही सुना है कि, दयाही परम धर्म है फिर आप क्यों नहीं हमारे ऊपर दया प्रगट करते हैं ? हम जानती हैं कि, आप महाबलवान् महावीर्यशाली और महोत्साहसम्पन्न हैं ॥३९॥ अपार महिमावाले, स्थिर प्रकृति, गंभीरतामें समुद्रके समान और इन्द्रजीके समान इस वन सागर सहित पृथ्वीके तुम एक ही राजा हो ॥४०॥ परन्तु हे राम ! इस प्रकारसे अस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ बलवान् और साहसी होकर भी राक्षसोंके

मत्कृते काकमात्रेऽपि ब्रह्मास्त्रं समुदीरितम् ॥ कस्माद्यो माहरत्त्वत्तः क्षमसे तं महीपते ॥ ३७ ॥ स कुरुष्व महोत्साहां कृपां मयि नरर्षभ ॥ त्वया नाथवती नाथ अनाथा इव दृश्यते॥३८ आनृशंस्यं परो धर्मस्त्वत्त एव मया श्रुतः॥ जानामि त्वां महावीर्यं महोत्साहं महाबलम्॥३९ अपारवारमक्षोभ्यं गांभीर्यात्सागरोपमम्॥ भर्तारं ससमुद्राया धरण्या वासवोपमम् ॥४०॥ एवमस्त्रविदां श्रेष्ठो बलवान्सत्त्ववानपि॥ किमर्थमस्त्रं रक्षस्सु न योजयसि राघव॥४१॥ न नागा नापि गंधर्वा नासुरा न मरुद्गणाः॥ रामस्य समरे वेगं शक्ताः प्रतिसमीहितुम्॥४२ तस्य वीर्यवतः कच्चिद्यद्यस्ति मयि संभ्रमः॥ किमर्थं न शरैस्तीक्ष्णैः क्षयं नयति राक्षसान् ॥ ४३ ॥ भ्रातुरादेशमादाय लक्ष्मणो वा परंतपः ॥ कस्य हेतोर्न मां वीरः परित्राति महाबलः ॥ ४४ ॥ यदि तौ पुरुषव्याघ्रौ वाय्विन्द्रसमतेजसौ॥ सुराणामपि दुर्धर्षौ किमर्थं मामुपेक्षतः ॥४५॥ ममैव दुष्कृतं किंचिन्महदस्ति न संशयः॥ समर्थावपि तौ यन्मां नावेक्षेते परंतपौ॥४६॥

ऊपर आप अस्त्र क्यों नहीं चलाते हैं ? ॥ ४१ ॥ हे हनुमन् ! क्या नाग; क्या गन्धर्व; क्या असुर; क्या मरुद्गण ! कोई भी युद्धमें श्रीरामचन्द्रजीका वेग निवारण करनेमें समर्थ नहीं हैं॥४२॥वह महावीर श्रीरामचन्द्रजी हमारा कुछ भी आदर करते हों तो फिर तीक्ष्ण बाणोंको वर्षाय कर राक्षसकुलका क्षय क्यों नहीं करते हैं ? ॥ ४३ ॥ महाबलवान् शत्रुओंके तपानेवाले वीर लक्ष्मणजी भी किस कारणसे अपने भाईका अनुमति लेकर हमारा उद्धार नहीं करते हैं ? ॥४४॥ यदि वह दोनों पुरुषश्रेष्ठ सत्यही सत्य पवन और इन्द्रजीके समान तेजस्वी और देवता लोगोंसे भी जीतने योग्य नहीं हैं तो फिर किस कारणसे हमारी उपेक्षा करते हैं ?॥४५॥ निश्चय हमाराही कोई ऐसा घोर पाप है कि, वह श्रीरामचन्द्रजी सामर्थ्यवान् और शत्रुओंके दमन करनेमें समर्थ होकर भी हमारे प्रति दया नहीं

करते हैं ? ॥ ४६ ॥ सीताजीके इस प्रकारसे अश्रुपूर्ण और करुणासे भरे वचन सुनकर वानरयूथपति महातेजवान् हनुमान्जी उनसे बोले ॥४७॥ हे देवि हम सत्यकी सौगन्ध करते हैं कि, आपके दर्शन न होनेके शोकसे श्रीरामचन्द्रजी सबही कार्योंसे विमुख हो रहे हैं और उनका शोक देखकर लक्ष्मणजी भी संतापित होते हैं ॥४८॥ हे शोभने! बडे भाग्यकी बात है कि, इस समय हमने आपका दर्शन पाया; अब शोक करनेका कुछ प्रयोजन नहीं है; अब बहुतही शीघ्र आपके दुःखका अंत आवेगा॥४९॥वह दो महाबलवान् पुरुष शार्दूल आपका दर्शन करनेके लिये उत्साहित होकर अवरोधकारक त्रिलोकीको भी भस्म कर देंगे॥५०॥ हे विशालनयने! श्रीरामचन्द्रजी संग्राममें क्रूर रावण राक्षसको उसके वंश सहित संहार करके तुमको नगरमें ले जायँगे॥५१॥महाबलवान् श्रीमान् राम.लक्ष्मण तेजस्वी

वैदेह्यावचनंश्रुत्वाकरुणंसाश्रुभाषितम् ॥ अथाब्रवीन्महातेजाहनूमान्हरियूथपः॥ ४७ ॥ त्वच्छोकविमुखोरामोदेविसत्येनतेशपे ॥ रामेदुःखाभिपन्नेतुलक्ष्मणःपरितप्यते ॥४८॥ कथंचिद्भवतीदृष्टानकालःपरिशोचितुम् ॥ इमंमुहूर्तंदुःखानामंतंद्रक्ष्यसिशोभने ॥४९॥ तावुभौपुरुषव्याघ्रोराजपुत्रौमहाबलौ ॥त्वद्दर्शनकृतोत्साहौलोकान्भस्मीकरिष्यतः ॥ ५० ॥ हत्वाचसमरेक्रूरंरावणंसहबांधवम् ॥ राघवस्त्वांविशालाक्षिस्वपुरींप्रतिनेष्यति ॥ ५१ ॥ ब्रूहियद्राघवोवाच्योलक्ष्मणश्चमहाबलः ॥ सुग्रीवोवापितेजस्वीहरयोवासमागताः ॥ ५२ ॥ इत्युक्तवतितस्मिंश्चसीतापुनरथाब्रवीत् ॥ कौसल्यालोकभर्तारंसुषुवेयंमनस्विनी ॥ ५३ ॥ तंममार्थेसुखंपृच्छशिरसाचाभिवादय॥स्रजश्चसर्वरत्नानिप्रियायाश्चवरांगनाः॥५४॥ऐश्वर्य्यंचविशालायांपृथिव्यामपिदुर्लभम् ॥ पितरंमातरंचैवसंमान्याभिप्रसाद्यच ॥ ५५ ॥ अनुप्रव्रजितोरामंसुमित्रायेनसुप्रजाः ॥ आनुकूल्येनधर्मात्मात्यक्त्वासुखमनुत्तमम् ॥ ५६ ॥

सुग्रीव और एकत्र हुये वानरोंसे जो हम सन्देशा कहें सो आप बतलादीजिये ॥ ५२ ॥ जब हनुमान्जीने ऐसा कहा तब सीताजी फिर बोलीं कि, मनस्विनी कौशल्या देवीने निज लोकप्रतिपालक पुत्रको उत्पन्न किया है॥५३॥तुम हमारी ओरसे उनसे कुशल पूछकर प्रणाम करना जो विविधप्रकारके पुष्पोंकी माला, सर्व प्रकारके रत्न व उत्तम२स्त्रियां ॥५४॥ और इस विशाल पृथ्वी के दुर्लभ ऐश्वर्यको छोड पिता माता का वचन मानकर उनकी प्रसन्नता ले ॥५५॥ श्रीरामचन्द्रजी के साथ वनमें आये हैं और जिनको उत्पन्न करके सुमित्रा सुसंतानवती हुई हैं, जो सब भाँतिके सुखको त्याग धर्मके अनुकूल महात्मा ॥५६॥

यहां बनमें आये श्रीरामचन्द्रजीकी रक्षा करते जो सिंह स्कन्ध, महाबाहु बुद्धिमान् प्रिय दर्शन॥ ५७॥ जो श्रीरामचन्द्रजीमें पिताके समान और हममें जननीके समान आचरण करते हैं, हम हरण करी जायंगी ऐसा उन वीरने नहीं जाना था॥ ५८॥ जो वृद्धजनोंकी सेवा किया करते हैं, जो लक्ष्मीवान् समर्थ और अल्पभाषी हैं जिनसे श्रीरामचन्द्रजीको और कुछ अधिक प्रिय नहीं है वे सब बातोंमें हमारे श्वशुर अनुरूप॥ ५९॥ जो हमसे भी अधिक आपसे भ्राता, श्रीरामचन्द्रजी के प्यारे हैं, जो किसी कार्य में नियुक्त होकर अति चतुरताके साथ पूरा करते हैं॥ ६०॥ जिनको देखकर श्रीरामचन्द्रजी, अपने मृतक पिताका व्यवहार भूल गये हैं, जो मृदुलस्वभाव सदा पवित्र कार्य करनेमें चतुर और श्रीरामचन्द्रजी के प्यारे हैं सो तुम हमारी ओरसे उन लक्ष्मणजीका सन्मान करके क्षमाकी प्रार्थना करना; क्योंकि हरण होनेसे

अनुगच्छतिकाकुत्स्थंभ्रातरंपालयन्वने ॥ सिंहस्कंधोमहाबाहुर्मनस्वीप्रियदर्शनः ॥ ५७ ॥ पितृवद्वर्ततेरामेमातृवन्मांसमाचरत् ॥ ह्रियमाणांतदावीरोनतुमांवेदलक्ष्मणः ॥५८॥ वृद्धोपसेवीलक्ष्मीवाञ्छक्तोनबहुभाषिता ॥ राजपुत्रप्रियश्रेष्ठःसदृशःश्वशुरस्यमे ॥ ५९ ॥ मत्तःप्रियतरोनित्यंभ्राताराम स्यलक्ष्मणः॥नियुक्तोधुरियस्यांतुतामुद्वहतिवीर्यवान् ॥६०॥ यंदृष्ट्वाराघवोनैववृत्तमार्यमनुस्मरत ॥ समामार्थायकुशलंवक्तव्योवचनान्मम ॥ ६१ ॥ मृदुर्नित्यंशुचिर्दक्षःप्रियोरामस्यलक्ष्मणः ॥ यथाहिवानरश्रेष्ठदुःखक्षयकरोभवेत् ॥ ६२ ॥ त्वमस्मिन्कार्यनिर्वाहे प्रमाणंहरियूथप॥राघवस्त्वत्समारंभान्मयियत्नपरोभवेत् ॥६३॥ इदंब्रूयाश्चमेनाथंशूरंरामंपुनःपुनः॥ जीवितंधारयिष्यामिमासंदशरथात्मज ॥६४॥ ऊर्ध्वंमासान्नजीवेयंसत्येनाहंब्रवीमिते॥ रावणेनोपरुद्धांमांनिकृत्यापापकर्मणा॥ त्रातुमर्हसिवीरत्वंपातालादिवकौशिकीम् ॥६५॥ ततो वस्त्रगतंमुक्त्वादिव्यंचूडामणिंशुभम् ॥ प्रदेयोराघवायेतिसीताहनुमतेददौ ॥ ६६ ॥

॥६१॥ हे वानर श्रेष्ठ ! कुछ देर पहले हमने उन्हें बडे २ वचन कहे थे, फिर कुशल पूँछकर कहना कि, आप हमारा दुःखनाश करनेके लिये शीघ्र यत्नवान् हों॥ ६२॥ हे हनुमन्! अधिक क्या कहें, इस कार्यकी सिद्धिके तुमही मूल हो सो ऐसा करना कि जिससे इस कार्यका निर्वाह होजाय वह श्रीरामचन्द्रजी तुम्हारा कार्य देखकर हमारे प्रति यत्नपरायण होंगे॥ ६३॥ हमारे प्यारे स्वामी पुरुषोंमें श्रेष्ठ श्रीरामचंद्रजीसे बारंबार कहना कि, हे दशरथकुमार हम और एक मासतक जीवन धारण करेंगी॥ ६४॥ हम सत्य ही कहती हैं कि, एक मासके पीछे हम अवश्य प्राण छोड देंगी । हे वीर ! भगवान्‌जीने पातालसे जिसप्रकार पृथ्वी का उद्धार किया था, वैसेही क्रूरकारी रावण राक्षसके बंधनमें पडी हमारा रघुनाथ जी उद्धार करें ॥ ६५ ॥ यह कहकर सीताजीने वस्त्रमें बँधा हुआ, मुक्ताखचित चूणामणि ग्रहण करके "यह

श्रीरामचन्द्रजीको देना'' यह कहकर हनुमान्‌जीके हाथमें वह चूणामणि देदी॥६६॥ हनुमान्‌जीको वह उत्तम रत्न ग्रहण करके बांधना ठीक न विचार उसे अपनी उँगलीमेंबांधलिया ॥६७॥ और सीताजीकी परिक्रमा करके फिर प्रणाम कियाउस रत्नोंको ग्रहण करके माथा नवाय एकओर खडे होगये॥६८॥सीताजीके दर्शनका लाभ पाय हनुमान्‌जी अतिशय हर्षित हो मनहीमनमें शुभलक्षण श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके निकट पहुँच गये॥६९॥जनकनंदिनी सीताजी अतिउत्तम प्रभावके वश जिसको इतनेदिन अतिगुप्तभावसे धारण करती थीं हनुमान्‌जी वह महामोलकी मणिरत्न पाय कर पर्वतकेशिखर पर झंझावायुके कम्पसे छुटकारापायेहुये पुरुषके समान मनमें सुखी हुए,इसके पीछे लंकाके दुर्गद्वारके सन्मुख हनुमान्‌जीने जाना चाहा॥७०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा० आदि० सुन्दरकांडे भा०टी० अष्टात्रिंशः सर्गः ॥३८॥ चूडामणि देकर सीताजी हनुमान्‌जीसे बोलीं कि श्रीरामचन्द्रजी इस चिह्नको भलीभाँति जानतेहैं ॥१॥ इस मणिके देखतेही श्रीरामचन्द्रको तीनजने

प्रतिगृह्यततोवीरोमणिरत्नमनुत्तमम् ॥ अंगुल्यायोजयामासनह्यस्यप्राभवद्भुजः ॥६७॥ मणिरत्नंकपिवरःप्रतिगृह्याभिवाद्यच ॥सीतांप्रदक्षिणंकृत्वाप्रणतःपार्श्वतःस्थितः ॥६८॥ हर्षेणमहतायुक्तःसीतादर्शनजेनसः॥ हृदयेनगतोरामंलक्ष्मणंचसलक्षणम् ॥६९॥ मणिवरमुपगृह्यतंमहार्हंजनकनृपात्मजयाधृतंप्रभावात्॥गिरिवरपवनावधूतमुक्तःसुखितमनाःप्रतिसंक्रमंप्रपेदे ॥७०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च०सा०सुंदरकांडे अष्टात्रिंशःसर्गः ॥३८॥ मणिंदत्वाततःसीताहनूमंतमथाब्रवीत्॥अभिज्ञानमभिज्ञातमेतद्रामस्यतत्त्वतः ॥ १ ॥ मणिंदृष्ट्वातुरामोवैत्रयाणांसंस्मरिष्यति॥वीरोजनन्याममचराज्ञोदशरथस्यच ॥२॥ सभूयस्त्वंसमुत्साहचोदितोहरिसत्तम ॥ अस्मिन्कार्यसमुत्साहेप्रचिंतययदुत्तरम् ॥ ३ ॥ त्वस्मिन्कार्यनिर्योगेप्रमाणंहरिसत्तम ॥ तस्यचिंतयतोयत्नोदुःखक्षयकरोभवेत् ॥ ४ ॥ हनूमन्यत्नमास्थायदुःखक्षयकरोभव॥सतथेतिप्रतिज्ञायमारुतिर्भीमविक्रमः ॥५॥ शिरसावंद्यवैदेहींगमनायोपचक्रमे ॥ज्ञात्वासंप्रस्थितंदेवीवानरपवनात्मजम् ॥ ६ ॥

याद आवेंगे हमें हमारी माता और राजा दशरथजी क्योंकि,विवाहके समय हमारी मातासे यह मणि लेकर हमारे पिताने हमारे देनेको दशरथजीको दीथी ॥२॥ हे वानरश्रेष्ठ ! तुमइस कार्यमें विशेष करके उद्योग करना,क्योंकि जब श्रीरामचन्द्रजी को तुम यह चूणामणि दोगे,तब वहमणिपाय युद्ध करनेके विषयमें तुमकोप्रेरित करेंगे।इसकारण इस कार्यमें उत्साह बढाने के लिये तुम अभीसे भलाउत्तर विचार रक्खो ॥३॥ हेवानरश्रेष्ठ ! तुमही इस कार्यको पूरा करनेको सामर्थ्य रखतेहो, इसलिये जिसप्रकार कार्य करनेसे दुःखकाअन्त हो; वही विचार करना तुमको उचित है हे हनुमन् ! तुम यत्नवान् होकर हमारे दुःखको भी दूर करो ॥४॥ हे हनुमन्! तुम यत्नमें स्थिर हुए हमारे दुःखका नाशकरनेवाले हो,यह सुन भयंकर कर्म करनेवाले पवनकुमार हनुमान्‌जी जो आज्ञा कह प्रतिज्ञाकर॥५॥मस्तकनवाय

सीताजीको प्रणामकर चलनेके लिये तैयार हुये । पवनकुमार हनुमान् जीका जाना जान देवी जानकीजी ॥ ६ ॥ वाक्यसे गद्गद हुए वाणीके द्वारा हनुमानूजीसे बोलीं कि, हे हनुमन् ! हमारी कुशलता श्रीरामचन्द्रजीसे लक्ष्मणजीके सहित कहना ॥ ७ ॥ हे वानरश्रेष्ठ ! मंत्रियोंके सहित सुग्रीवजीसे और वृद्ध वानरोंसे समस्तसेही तुम हमारी धर्मयुक्त कुशलता कहना ॥ ८ ॥ तुम उस बातमें यत्न करना कि जिससे महाबाहु श्रीरामचन्द्रजी हमको इस दुःखसागरसे उबार लें ॥ ९ ॥ हे हनुमन् ! तुम इसप्रकार उनसे कहना कि, जिससे यशस्वी श्रीरामचन्द्रजी हमारे जीवित रहते २ हमसे मिल जाँय ऐसे वचन कहनेसे तुमको धर्म लाभ होगा ॥१०॥ श्रीरामचन्द्रजी सदाही उत्साहसे पूर्ण रहते हैं; वह तुम्हारे मुखसे हमारे इन वचनोंको सुनते ही अवश्यहीहमारी प्राप्तिके लिये अपने पौरुषको

बाष्पगद्गदयावाचामैथिलीवाक्यमब्रवीत्॥हनुमन्कुशलंब्रूयाःसहितौरामलक्ष्मणौ ॥७॥ सुग्रीवंचमहामात्यंसर्वान्वृद्धांश्चवानरान् ॥ ब्रूयास्त्वं वानरश्रेष्ठकुशलंधर्मसंहितम् ॥८॥ यथासचमहाबाहुर्मांतारयतिराघवः ॥अस्माद्दुःखांबुसंरोधात्त्वंसमाधातुमर्हसि ॥९॥ जीवंतींमांयथारामः संभावयतिकीर्तिमान्॥तत्त्वयाहनुमन्वाच्यंवाचाधर्ममवाप्नुहि ॥१०॥ नित्यमुत्साहयुक्तस्यवाचःश्रुत्वामयेरिताः॥वर्धिष्यतेदाशरथेःपौरुषंमदवाप्तये॥११॥ मत्संदेशयुतःवाचस्त्वत्तःश्रुत्वैवराघवः॥पराक्रमेमतिंवीरोविधिवत्संविधास्यति ॥१२॥ सीतायाःतद्वचःश्रुत्वाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ शिरस्यंजलिमाधायवाक्यमुत्तरमब्रवीत् ॥१३॥ क्षिप्रमेष्यतिकाकुत्स्थोहर्यृक्षप्रवरैर्वृतः॥ यस्तेयुधिविजित्यारीञ्शोकंव्यपनयिष्यति ॥१४॥ नहिपश्यामिमर्त्येषुनासुरेषुसुरेषुवा॥यस्तस्यवमतोबाणान्स्थातुमुत्सहतेग्रतः ॥ १५ ॥ अप्यर्कमपिपरजन्यमपिवैवस्वतंयमम् ॥ सहिसोढुंरणेशक्तस्तवहेतोर्विशेषतः ॥ १६ ॥ सहिसागरपर्यंतांमहींसाधितुमर्हति ॥ त्वन्निमित्तोहिरामस्यजयोजनकनंदिनि ॥ १७ ॥

बढायेंगे ॥११॥ तुम्हारे मुखसे हमारे संवादसे मिश्रित वचन सुन कर वह वीरश्रीरामचन्द्रजी यथाविधानसे पराक्रम प्रकाश करनेमें अपना मन लगावेंगे ॥१२॥ सीताजीके वचन सुनकर पवननंदन हनुमानूजीने शिरसे हाथ जोड़कर सीताजीको उत्तरदिया ॥१३॥ हे देवि! काकुत्स्थनंदन श्रीरामचन्द्रजी बहुतही शीघ्र महावीर वानर और रीछोंकी सेनाके साथ यहां आय, शत्रुपर विजय पाय आपको दुःखसेछुडाय लेंगे॥१४॥हम मनुष्य देवया सब असुरोंको बीचमें ऐसा किसीको नहीं देखते जो कि बाण वर्षणकरते हुए श्रीरामचन्द्रजीके सन्मुख टिका रहे॥१५॥इतनाही नहीं वरन् वह आपके लिये युद्धमें सूर्यको, इन्द्रको व यमको भी सहसकते औरपराजित कर सकतेहैं ॥१६॥ हे जनकनंदिनि! वह आपके लिये सागर सहित इसपृथ्वीको जीत लेनेके लिये तैयार हुयेहैंहेदेवि! श्रीरामचन्द्रजीकी ही जय होगी॥१७॥

हनुमान्‌जीके वह युक्तियुक्त और भलीभाँतिसे कहे हुये सत्य वचन सुनकर जानकीजीने इन वचनोंका बहुत मान किया और ॥१८॥ इसके पीछे जानेके लिये तैयार हनुमान्‌जीपर वारंवार दृष्टि डालकर अपने पतिके स्नेहवाक्योंको भलीभाँति बिचार कर बोलीं ॥१९॥ हे शत्रुओंके दमन करनेवाले वीर ! यदि अच्छा समझो तो एक दिन, इसी स्थानमें कहीं छिपकर टिके रहो फिर श्रम दूर करके कल चले जाना॥२०॥ हे अरिदमन ! तुम्हारे निकट रहनेसे इसमंदभागिनीका भी अपार शोकमुहूर्त्तके लिये विध्वंस हो जायगा ॥२१॥ परंतु एक दिन यहां रहे यहांसे जानेपर फिर जानें तुम यहांपर आओगे या नहीं इसमें भी संदेह है क्योंकि जो तुम न आये तो निश्चयही हमारे जीवित रहनेमें संशय होगा ॥ २२ ॥ क्योंकि तुम्हारे न देखनेसे उत्पन्न हुआ शोक हमको और अधिक बढ

तस्यतद्वचनंश्रुत्वासम्यक्सत्यंसुभाषितम् ॥ जानकीबहुमेनेतंवचनंचेदमब्रवीत् ॥ १८ ॥ ततस्तंप्रस्थितंसीतावीक्षमाणापुनःपुनः ॥ भर्तृस्नेहान्वितंवाक्यंसौहार्दादनुमानयत् ॥१९॥ यदिवामन्यसेवीरवसैकाहमरिंदम ॥ कस्मिंश्चित्संवृतेदेशेविश्रांतःश्वोगमिष्यसि ॥२०॥ ममचैवाल्पभाग्यायाःसान्निध्यात्तववानर ॥ अस्यशोकस्यमहतोमुहूर्तंमोक्षणंभवेत् ॥२१॥ ततोहिहरिशार्दूलपुनरागमनायतु ॥ प्राणानामपिसंदेहोममस्यान्नात्रसंशयः ॥२२॥ तवादर्शनजःशोकोभूयोमांपरितापयेत् ॥ दुःखाद्दुःखपरामृष्टांदीपयन्निववानर ॥२३॥ अयंचवीरसंदेहस्तिष्ठतीवममाग्रतः ॥ सुमहांस्त्वत्सहायेषुहर्यृक्षेषुहरीश्वरः ॥ २४ ॥ कथंनुखलुदुष्पारंतरिष्यतिमहोदधिम् ॥ तानिहर्यृक्षसैन्यानितौवानरवरात्मजौ ॥ २५ ॥ त्रयाणामेवभूतानांसागरस्येहलंघने ॥ शक्तिःस्याद्वैनतेयस्यतववामारुतस्यवा ॥ २६ ॥ तदस्मिन्कार्यनियोगेवीरैवंदुरतिक्रमे ॥ किंपश्यसेसमाधानंत्वंहिकार्यविदांवरः ॥ २७ ॥

कर भस्म करडालेगा कारण कि तुमको अब तो देखा और फिर न देखेंगी तो यह शोक मानो हमको दुःखसे निकालकर दुःखहीमें डाल देगा ॥२३॥ हे वीर ! तुम्हारी सहायता करनेवाले वानरों और ऋक्षोंके विषयमेंभी हमारे मनमें संदेह हुआ है; उस सेनाके बीचमें बडे भारी सुग्रीवजी ॥ २४ ॥ और ऋक्ष वानरोंकी सेना किस उपायसे समुद्रके पार होगी और श्रीराम लक्ष्मणजी यहां किसप्रकारसे आय सकेंगे ॥२५॥ महा समुद्रके लांघनेकी शक्ति तीनप्राणियोंकी है विनताके पुत्र गरुडजीकी, पवनजीकी और तुम्हारी ॥२६॥ इसलिये हे वीर ! इस दूर विक्रम कार्यकी सिद्धिके अर्थ तुमने कौनसा उपाय स्थिर किया है ? क्योंकि तुम कार्यके जाननेवाले पुरुषोंमें श्रेष्ठ हो ॥ २७ ॥

अथवा हे परवीरविनाशन ! तुम तो इकलेही सरलतासे सब कार्य कर सकते हो और ऐसा करनेसे तुम्हारा यशभी बडा भारी होगा ॥ २८ ॥ परन्तु यदि श्रीरामचन्द्रजी चतुरंग सेनाके साथ रावणको जीतकर मुझे ले विजयी हो अपनी नगरीमें चले जांय तोही यह कार्य उनके उपयुक्त हो ॥ २९ ॥ इसलिये शत्रुकी सेनाके संहारकारी श्रीरामचन्द्रजी लंका नगरीको सेनासे घेरकर जो हमको यहांसे ले जांय तो ही यह कार्य उनके सदृश हो ॥ ३० ॥ इसलिये हे वीर ! जिससे उन महात्मा रणवीर श्रीरामचन्द्रजीके विक्रम प्रकाश पावें वैसाही उपाय तुमको करना चाहिये ॥ ३१ ॥ श्रीजानकीजीके अर्थ सहित और युक्तियुक्त वचन श्रवण करके हनुमान्जी उनको सब उत्तर देते हुये ॥३२॥ हे देवि ! रीछ वानरोंकी सेनाके अधिपति वानरश्रेष्ठ बलवान सुग्रीवजी आपके उद्धार

कामममस्यत्वमेवैकःकार्यस्यपरिसाधने ॥ पर्याप्तःपरवीरघ्नयशस्यस्तेफलोदयः ॥२८॥ बलैःसमग्रैर्युधिमांरावणंजित्यसंयुगे ॥ विजयीस्वपुरंयायात्तत्तस्यसदृशंभवेत् ॥२९॥ बलैस्तुसंकुलांकृत्वालंकांपरबलार्दनः ॥ मांनयेद्यदिकाकुत्स्थस्तत्तस्यसदृशंभवेत् ॥३०॥ तद्यथातस्यविक्रांतमनुरूपंमहात्मनः ॥ भवेदाहवशूरस्यतथात्वमुपपादय॥३१॥ तदर्थोपहितंवाक्यंप्रश्रितंहेतुसंहितम् ॥ निशम्यहनुमाञ्शेषंवाक्यमुत्तरमब्रवीत् ॥ ३२ ॥ देविहर्यृक्षसैन्यानामीश्वरःप्लवतांवरः॥ सुग्रीवःसत्यसंपन्नस्तवार्थेकृतनिश्चयः ॥३३॥ सवानरसहस्राणांकोटीभिरभिसंवृतः ॥ क्षिप्रमेष्यतिवैदेहिराक्षसानांनिबर्हणः ॥३४॥ तस्यविक्रमसंपन्नाःसत्त्ववंतोमहाबलाः ॥ मनःसंकल्पसंपातानिदेशेहरयःस्थिताः ॥ ३५ ॥ येषांनोपरिनाधस्तान्नतिर्यक्सज्जतेगतिः ॥ नचकर्मसुसीदंतिमहत्स्वमिततेजसः ॥३६॥ असकृत्तैर्महोत्साहैःससागरधराधरा ॥ प्रदक्षिणीकृताभूमिर्वायुमार्गानुसारिभिः ॥३७॥ मद्विशिष्टाश्चतुल्याश्चसंतितत्रवनौकसः ॥ मत्तःप्रत्यवरःकश्चिन्नास्तिसुग्रीवसन्निधौ ॥ ३८ ॥

करनेकी प्रतिज्ञा कर चुके हैं ॥३३॥ हे देवि ! राक्षस गणोंके संहारकारी वह सुग्रीवजी कोटि २ वानरोंकी सेना लिये शीघ्रही यहांपर आगमन करेंगे ॥३४॥ बडे विक्रमवान् साहसी महाबलवान् मनोरथके समान अतिदूर गमनकारी असंख्यों वानरगण उसकी आज्ञाके अधीनमें हैं ॥३५॥ क्या ऊपर क्या नीचे क्या तिरछे किसी ओरको जानेको भी उसकी गति नहीं रुकती,वह अतुल प्रभाववाले अतिदुष्कर कार्य करनेमें भी कष्टित नहीं होते ॥ ३६ ॥ उनका उत्साह अति बडा है वह पवनके मार्गका अवलंबन करके अति उत्साह सहित अनेक बार सागरऔर पर्वतोंके सहित इस पृथ्वी मण्डलकी परिक्रमा कर चुके हैं॥३७॥सुग्रीवजीके निकट हमसे अधिक बलवान् और हमारे समान बलवाले अनेक वनवासी वानरहैं,हमसे हीन तो एक भी वानर सुग्रीवजीके निकट नहीं हैं ॥ ३८ ॥

जब कि हम हीनबल होकर भी इस स्थानमें आय सकतेहैं तब उन महाबलवान् वानरोंकी तो बातही क्याहै ? और भी देखिये साधारण व छोटेही पुरुष ऐसे कार्योंमें भेजे जाते हैं परन्तु प्रधानोंको कहीं कोई भी भेजताहै ? ॥३९॥ इसकारण हे देवि ! परिताप करनेका कुछ प्रयोजन नहीं है;शोक दूर कीजिये वह समस्त वानरयूथपति एकही छलांग मार कर लंकामें आजायँगे ॥ ४० ॥ और वह बलवान् सहाययुक्त नरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी हमारी पीठपर चढकर चन्द्रमा सूर्यके समान उदित हो आपके निकट उपस्थित होंगे॥४१॥वह दो नरश्रेष्ठ वीरवर श्रीराम लक्ष्मणजी एक साथ यहां आय कर लंका नगरीके धुरें अपने बाणींके समूहसे उडाय देंगे॥४२॥हे श्रेष्ठवर्णवाली!रघुकुलके हर्ष बढानेवालेश्रीरामचन्द्रजी रावणको सपरिवार संहार करके आपको ले अपनी नगरी अयो

अहंतावदिहप्राप्तः किंपुनस्तेमहाबलाः॥ नहिप्रकृष्टाःप्रेष्यंतेप्रेष्यंतेहीतरेजनाः ॥३९॥ तदलंपरितापेनदेविशोकोव्यपैतुते ॥ एकोत्पातेनतेलंकामेष्यंतिहरियूथपाः ॥४०॥ ममपृष्ठगतौतौचचंद्रसूर्याविवोदितौ ॥ त्वत्सकाशंमहासङ्घौनृसिंहावागमिष्यतः ॥४१॥ तौहिवीरौनरवरौसहितौरामलक्ष्मणौ॥आगम्यनगरींलंकांसायकैर्विधमिष्यतः ॥४२॥ सगणंरावणंहत्वाराघवोरघुनंदनः ॥ त्वामादायवरारोहेस्वपुरींप्रतियास्यति ॥ ४३ ॥ तदाश्वसिहिभद्रंतेभवत्वंकालकांक्षिणी ॥ नचिराद्द्रक्ष्यसेरामंप्रज्वलंतमिवानलम् ॥ ४४ ॥ निहतेराक्षसेंद्रेचसपुत्रामात्यबांधवे ॥ त्वंसमेष्यसिरामेणशशांकेनेवरोहिणी ॥४५॥ क्षिप्रंत्वंदेविशोकस्यपारंद्रक्ष्यसिमैथिलि ॥ रावणंचैवरामेणद्रक्ष्यसेनिहतंबलात् ॥४६॥ एवमाश्वास्यवैदेहींहनूमान्मारुतात्मजः॥ गमनायमतिंकृत्वावैदेहींपुनरब्रवीत् ॥४७॥ तमरिघ्नंकृतात्मानंक्षिप्रंद्रक्ष्यसिराघवम् ॥ लक्ष्मणंचधनुष्पाणिंलंकाद्वारमुपागतम् ॥४८॥ नखदंष्ट्रायुधान्वीरान्सिंहशार्दूलविक्रमान् ॥ वानरान्वरणेंद्राभान्क्षिप्रंद्रक्ष्यसिसंगतान् ॥ ४९ ॥

ध्याको चले जायँगे ॥४३॥ इससे धीरज धरिये आपका मंगल हो कुछ कालतक और ठहरिये अब बहुतही शीघ्र आप प्रदीप्त अनलके समान श्रीरामचन्द्रजीका दर्शन करेंगी.॥४४॥ तब पुत्र मंत्री और बन्धुबान्धवोंके सहित रावणके मरनेपर चन्द्रमासे रोहिणीके समान आप मिलेंगी ॥४५॥ हे देवी जनकनंदिनि! आप शीघ्रही शोकका पार देखेंगी. आप देखेंगी कि,श्रीरामचन्द्रजीनेबल प्रकाश करके रावणको संहार कियाहै ॥४६॥ वायुसुवन हनुमान्जी इसप्रकार जानकीजी को समझा बुझाकर चलनेके लिये तैयार हो फिर बोले ॥ ४७ ॥ हे आर्ये ! आप बहुतही शीघ्र देखेंगी कि, वह शत्रुओंके नाश करनेवाले विजयी श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी धनुष हाथमें लिये लंकाके द्वारपर आय गये हैं ॥४८॥ नख,डाढों को आयुध बनाये सिंह शार्दूलके समान विक्रमवाले हाथि

योंके समान एकत्र हुए वानरोंको भी शीघ्र देखोगी ॥ ४९ ॥ इस लंका नगरीमें पर्वतोंके शिखरपर मेघोंके समान आकारवाले अनेक २ प्रधान २ वानर यूथ पोंको गर्जता हुआ देखोगी ॥५०॥ श्रीरामचन्द्रजी आपके विना देखे कामदेवके बाणोंसे मर्दित होकर सिंहसे घायल हुए हाथीके समान एकक्षण भरको भी शांति नहीं पाय सकतेहैं ॥५१॥ हे देवि ! अब शोक या रुदन कुछ न कीजिये आपअपने मनसे भयको दूर करें । हे शोभने ! इन्द्रजीके साथ शचीकी नाईं आप भी अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीसे मिलेंगी ॥५२॥ श्रीरामचन्द्रजीसे और कौन श्रेष्ठ है ? और लक्ष्मणजीकी समानता भी कौन पाय सकता है ? सो वही अग्नि और वायुके तुल्य दोनों भ्राताओंके आश्रयमें आये हैं ॥ ५३ ॥ हे देवि ! आपको इस राक्षसके घोरस्थानमें और अधिक दिन वास नहीं करना पडेगा अब

शैलांबुदनिकाशानांलंकामलयसानुषु॥नर्दतांकपिमुख्यानामार्यैयूथान्यनेकशः ॥५०॥ सतुमर्मणिघोरेणताडितोमन्मथेषुणा ॥ नशर्मलभते रामःसिंहार्दितइवद्विपः ॥ ५१ ॥ रुदमादेविशोकेन्माभूत्तेमनशोभयम् ॥ शचीवभर्त्राशक्रेणसंगमेष्यसिशोभने ॥ ५२ ॥ रामाद्विशिष्टः कोन्योस्तिकश्चित्सौमित्रिणासमः ॥ अग्निमारुतकल्पौतौभ्रातरौतवसंश्रयौ ॥५३॥ नास्मिंश्चिरंवत्स्यसिदेविदेशेरक्षोगणैरध्युषितेऽतिरौद्रे॥नते चिरादागमनंप्रियस्यक्षमस्वमत्संगमकालमात्रम् ॥५४॥ इत्यार्षे श्री० वा० आ०च० सा० सुं० एकोनचत्वारिंशः सर्गः ॥३९॥ श्रुत्वातुव चनंतस्यवायुसूनोर्महात्मनः ॥ उवाचात्महितंवाक्यंसीतासुरसुतोपमा ॥१॥ त्वांदृष्ट्वाप्रियवक्तारंसंप्रहृष्यामिवानर ॥ अर्धसंजातसस्येववृष्टिं प्राप्यवसुंधरा॥ २ ॥ यथातंपुरुषव्याघ्रंगात्रैःशोकाभिकर्शितैः॥ संस्पृशेयंसकामाहंतथाकुरुदयांमयि ॥३॥ अभिज्ञानंचरामस्यदद्याहरिगणो त्तम ॥ क्षिप्तामिषीकांकाकस्यकोपादेकाक्षिशातनीम् ॥ ४ ॥

बहुतही शीघ्र आपके स्वामी यहां आवेंगे;हम जबतक वहां जाय कर उनके दर्शन नहीं करते हैं आप तबही तक समयको परखती रहियेगा ॥ ५४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामेकोनचत्वारिंशःसर्गः ॥ ३९ ॥ महात्मा पवन तनय हनुमानजीके वचन सुन कर देवकन्याके समान सीताजी अपने हितकी बात कहती हुई ॥१॥ हे हनुमन् ! अन्नके आधे पकजानेपर अनावृष्टिके पीछे जो वृष्टि होती है और फिर अन्न उससे दूना उत्पन्न होता है हम भी मरणमें निश्चय बुद्धि किये,प्रियवक्ता तुमको पाय वैसेही प्रसन्न हुई हैं ॥२॥ तुम हमारे ऊपर दया करके ऐसा उपाय करोकि हम इन शोक क्षीण अंगोंसे उन पुरुषव्याघ्र श्रीरामचन्द्रजीको स्पर्श करसकें ॥३॥ हेवानरकुलतिलक ! श्रीरामचन्द्रजीको चिह्नस्वरूप यहमणि दे देना और चिह्नरूप यह बातें भी उनसे कहना

कि आपने काकके प्रति एकाक्षिनाशिनी शक्ति चलायकर उसके प्राणोंकी रक्षाकीथी ॥४॥ औरभी कहना; फिर एकसमय जब हमारा तिलकविनस गयाथा, सो आपने हमारे गालोंपर मैनसिलका तिलक बना दियाथा सो इस बातकाभी स्मरण करना आपको उचितहै ॥५॥ वीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजी इन्द्र और वरुण जीके समान पराक्रमीहैं, तो भी हमको राक्षस हरकरले आया और इन राक्षसोंहीके बीचमें हमको वास करना पडताहै ॥६॥ सो वह किस प्रकारसे इसबातको सह रहे हैं; उनसे इतना भी कहना कि हमने यह दिव्य चूडामणि अति यत्नसे रखछोडाथा । दुःखके समय हम इस मणिको देख मानो तुमकोही पाय आनन्दित हुआ करती थीं ॥७॥ इससमय यह जलसे उत्पन्न हुआ रत्न हमने तुम्हारे निकट चिह्न स्वरूपमें भेजा, अब शोकमें डूब कर हम और अधिक जीवन धारण कर न सकेंगी ॥८॥ विविध भाँतिके न सहने योग्य दुःख मर्मभेदी वचन और राक्षसोंकेसाथ एक जगह वास; यह सब हम तुम्हारे ही कारण सह रही हैं ॥९॥ हे

मनःशिलायास्तिलकोगंडपार्श्वेनिवेशितः॥त्वयाप्रनष्टेतिलकेतंकिलस्मर्तुमर्हसि ॥५॥ सवीर्यवान्कथंसीतांहृतांसमनुमन्यसे ॥ वसंतींरक्षसां मध्येमहेंद्रवरुणोपम ॥६॥ एषचूडामणिर्दिव्योमयासुपरिरक्षितः॥एतंदृष्ट्वाप्रहृष्यामिव्यसनेत्वामिवानघ ॥७॥ एषनिर्यातितःश्रीमान्मयातेवारि संभवः ॥ अतःपरंनशक्ष्यामिजीवितुंशोकलालसा ॥८॥ असह्यानिचदुःखानिवाचश्चहृदयच्छिदः॥ राक्षसैःसहसंवासंत्वत्कृतेमर्षयाम्यहम् ॥९॥ धारयिष्यामिमासंतुजीवितं शत्रुसूदन॥मासादूर्ध्वंनजीविष्येत्वयाहीनानृपात्मज॥१०॥घोरोराक्षसराजोयंदृष्टिश्चनसुखामयि॥त्वांचश्रुत्वावि षज्जंतंनजीवेयमपिक्षणम्॥११॥वैदेह्यावचनंश्रुत्वाकरुणंसाश्रुभाषितम्॥अथाब्रवीन्महातेजाहनूमान्मारुतात्मजः॥१२॥त्वच्छोकविमुखोरामोदेवि सत्येनतेशपे॥रामेशोकाभिभूतेतुलक्ष्मणःपरितप्यते॥१३॥दृष्टाकथंचिद्भवतीनकालःपरिदेवितुम्॥इमंमुहूर्तंदुःखानामंतंद्रक्ष्यसिभामिनि॥१४॥

शत्रुदमन ! और एक मासतक जीती हैं, हे राजकुमार ! एक मास पीछे फिर तुम्हारे बिना इस जीवनको हम नहीं रक्खेंगी ॥१०॥ राक्षसोंका राजा रावण अतिनिर्दयी है, उसपर हमारी ओर उसकी दृष्टि भी अच्छी नहीं है । सो इसपर यदि हम सुनेंगी कि, तुम आनेमें विलम्ब करते हो तो एक क्षणभरको भी हम न जियेंगी ॥११॥ वैदेहीके आंसु गिरनेके साथ करुणासे कहे वचन श्रवण कर महातेजस्वी पवनकुमार हनुमान्जी बोले ॥१२॥ हे देवि! हम सत्यकी सौगन्ध करके कहते हैं कि, आपके शोकमें श्रीरामचन्द्रजी समस्त ही कार्योंसे विमुखहो रहेहैं और उन श्रीरामचन्द्रजीके शोकाकुल होनेसे लक्ष्मणजी भी संताप करते हैं ॥१३॥ हे देवि ! इस समय बडे भाग्य व अनेक कष्टोंसे हमने आपको पाया है अब संताप करनेका कुछ प्रयोजन नहीं; अब इसी मुहूर्त्तमें आप अपने शोकका

अन्त देखोगी ॥१४॥ वह निंदारहित दो पुरुषव्याघ्र राजकुमार आपके देखनेका उत्साही हो लंकापुरीको भस्म कर डालेंगे ॥१५॥ हे बडेनेत्रोंवाली ! वह दोनों रघुवीर राक्षस रावणका बन्धुबान्धवोंके सहित व जितने राक्षस हैं, उन सबका संहार करके आपको अपनी पुरी राजधानी अयोध्याजीमें लेजायँगे ॥१६॥ हेनिन्दारहिते ! जिससे श्रीरामचन्द्र निश्चय इसको आपही चिह्न समझे और जिससे उनकी प्रसन्नता हो, सो इस समय आप ऐसा कुछ और चिह्न हमको दीजिये॥१७॥ तब सीताजी विस्मययुक्त होकर बोलीं कि, हे हनुमन् ! हमने तो पहलेही तुमको श्रेष्ठ अभिज्ञान (निशानीचिह्न) प्रदान किया है इसी हमारे केशभूषण रत्नको देखतेही श्रीरामचन्द्रजी ॥१८ ॥ हेवीर ! तुम्हारे वचनका विश्वास करेंगे । तब वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीने वह श्रेष्ठमणि ग्रहण कर॥ १९ ॥ शिर नवाय देवी जानकी

तावुभौपुरुषव्याघ्रौराजपुत्रावनिंदितौ ॥ त्वद्दर्शनकृतोत्साहौलंकांभस्मीकरिष्यतः ॥ १५ ॥ हत्वातुसमरेरक्षोरावणंसहबांधवैः ॥ राघवौत्वां विशालाक्षिस्वांपुरींप्रतिनेष्यतः ॥१६॥ यत्तुरामोविजानीयादभिज्ञानमनिंदिते ॥ प्रीतिसंजननंभूयस्तस्यत्वंदातुमर्हसि ॥ १७ ॥ साब्रवीद्दत्तमेवाहोमयाभिज्ञानमुत्तमम् ॥ एतदेवहिरामस्यदृष्ट्वायत्नेनभूषणम्॥ १८ ॥श्रद्धेयंहनुमन्वाक्यंतववीरभविष्यति ॥ सतंमणिवरंगृह्यश्रीमान्प्लवगसत्तमः ॥१९॥ प्रणम्यशिरसादेवींगमनायोपचक्रमे ॥ तमुत्पातकृतोत्साहमवेक्ष्यहरियूथपम् ॥ २० ॥ वर्धमानंमहावेगमुवाचजनकात्मजा ॥ अश्रुपूर्णमुखीदीनावाष्पगद्गदयागिरा ॥२१॥ हनूमन्सिंहसंकाशौभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ सुग्रीवंचसहामात्यंसर्वान्ब्रूयाअनामयम् ॥२२॥ यथाचसमहाबाहुर्मांतारयतिराघवः ॥ अस्माद्दुःखांबुसंरोधात्त्वंसमाधातुमर्हसि ॥ २३ ॥ इदंचतीव्रंममशोकवेगंरक्षोभिरेभिःपरिभर्त्सनंच ॥ ब्रूयास्तुरामस्यगतःसमीपंशिवश्चध्वास्तुहरिप्रवीर ॥ २४ ॥

जीको प्रणामकर चलनेके लिये विचार करते हुये उन वानरश्रेष्ठको उत्साह सहित छलांग मारनेका मन किये ॥२०॥ व अतिवेगसे देख कर जनकनंदिनी सीताजी नयनोंके नीरसे मुखगीलाकर दीन हो गद्गद वाणीसे बोलीं ॥२१॥ हे हनुमन् ! सिंहके समान पराक्रमी दोनों भाई श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी व सुग्रीवजी और उनके मंत्रियोंसे सबहीसे हमारी (अनामय) कुशल कहना ॥२२॥ महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजी जिससे हमको इस शोकसागरसे उद्धार करलें सो तुमको ऐसा ही करना चाहिये ॥२३॥ और श्रीरामचन्द्रजीके समीप जायकर हमारे इस असह्य शोकको वराक्षसोंसे जो हमारा अपमान होताहै उसको उनसे भलीभाँति कहना हे वानरवीर ! मार्गमें तुम्हारा मंगल हो ॥ २४ ॥

सब भाँतिसे कृतार्थ हो हनुमानजी संतुष्ट हो राजकुमारी सीताजीका संवादले और यह जानकर कि, यह कार्य अब थोडा ही बाकी रह गया है, ऐसा जान उत्तर दिशाकी ओर जानेका मन करते हुये ॥ २५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४० ॥ इसके पीछे वह वानरश्रेष्ठ सीताजीकी मधुर वचनवाणी द्वारा आदरमान पाकर गमननकरनेके अभिलाषसे वहांसे चल कर चिन्ता करने लगे ॥१॥ इन कृष्णनेत्रोंवाली जानकीजीका तो दर्शन किया,परन्तु शत्रुका बल दर्शनरूप एक थोडासा कार्य बाकी रहाजाता है सो इसके विषयमें साम,दान, भेद, दंड इन चार उपायोंमेंसे एक दंडहीके द्वारा इस कार्यका साधन होना हम देखते हैं ॥२॥ क्योंकि राक्षस लोगोंको समझाना कुछ फल न करेगा, और फिर इन धनधान्यसे भरे पुरे राक्षसोंको

सराजपुत्र्याप्रतिवेदितार्थःकपिःकृतार्थःपरिहृष्टचेताः ॥ तदल्पशेषंप्रसमीक्ष्यकार्यंदिशंह्युदीचींमनसाजगाम ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे चत्वारिंशः सर्गः ॥४०॥सचवाग्भिःप्रशस्ताभिर्गमिष्यन्पूजितस्तया ॥ तस्माद्देशादपाक्रम्यचिंतयामासवानरः ॥१॥अल्पशेषमिदंकार्यंदृष्टेयमसितेक्षणा ॥ त्रीनुपायानतिक्रम्यचतुर्थइहदृश्यते ॥२॥ नसामरक्षस्सुगुणायकल्पतेनदानमर्थोपचितेषुयुज्यते ॥ नभेदसाध्याबलदर्पिताजनाःपराक्रमस्त्वेषममेहरोचते ॥ ३ ॥ नचास्यकार्यस्यपराक्रमादृतेविनिश्चयःकश्चिदिहोपपद्यते ॥ हतप्रवीराश्चरणेतुराक्षसाःकथंचिदीयुर्यदिहाद्यमार्दवम् ॥ ४ ॥ कार्येकर्मणिनिर्वृत्तेयोबहून्यपिसाधयेत् ॥ पूर्वकार्याविरोधेनसकार्यंकर्तुमर्हति ॥ ५ ॥ नह्येकःसाधकोहेतुःस्वल्पस्यापीहकर्मणः ॥ योह्यर्थंबहुधावेदससमर्थोर्थसाधने ॥ ६ ॥

दान करनेसे भी कुछ फल न निकलेगा, और बलसे गर्वित पुरुषोंमें भेद डालना भी कठिन है इस लिये इस समय बचेहुए कार्यको पूराकरनेमें पराक्रम ही प्रकाश करनेकी हमारी अभिलाषा है ॥ ३ ॥ और पराक्रम प्रकाशकरनेके सिवाय पराये बलको जाननेके लिये किसी दूसरे उपायसेहम कार्यकी सिद्धि नहीं देखते; हां जो कुछेक वीर मारे जांय तब यदि आगेको संग्राम करनेके लिये राक्षसलोग कदाचित् कुछ नरम पडें ॥ ४ ॥ पहले बडे कार्यको पूराकरके जो दूत इस पहले किये हुए कार्यके अविरोधमें और भी कई एक कार्य पूरे करदें वही पुरुष यथार्थमें कार्य करनेके योग्य हैं ॥५॥ जो पुरुष बहुत सारा यत्न करके थोडेसे कार्यकी साधना करे उस कार्यका मुख्य साधन करनेवाला नहीं कहा जा सकता जो साधारण प्रकारसे अपना कार्य अनेक प्रकारसे साधन कर सकते हैं, वहीं प्रधान कार्यके साधक हैं ॥ ६ ॥

यद्यपि प्रधान कार्य तो हमारा सीताजीका ही ढूँढना था, वह तो करही चुके, तथापि राक्षसोंका बल और अनेक बलके अंतरको भली भाँतिसे जानकर वानरराज सुग्रीवजीके पास चले जाँय तो ऐसा करनेसे ही यथार्थ स्वामीका सर्व भाँतिके प्रतिपालन करना हो जायगा ॥ ७ ॥ अब इस समय किस उपायका आश्रय करनेसे हमारे आगमनका शुभ फल फलेगा किस उपायसे हम अनिष्टकारी राक्षसोंके साथ संग्राम करनेमें लगें ? और किस प्रकारसे रावण हमको संग्राम स्थलमें खडा देख अपनी सेनाके और हमारे बलकी निचाई ऊँचाई को जाने ? ॥ ८ ॥ अपने आश्रित सेनापति और मंत्रीगणोंके सहित रावणके संग्राममें आते ही हम उसके हृदयका अभिप्राय बलसरलतासे जान इस स्थानसे चले जायँगे ॥ ९ ॥ सो इसके लिये हमारे मनमें यह बात आती है कि यह जो क्रूर रावण

इहैवतावत्कृतनिश्चयोह्यहंत्रजेयमद्यप्लवगेश्वरालयम्॥परात्मसंमर्दविशेषतत्त्ववित्ततःकृतंस्यान्ममभर्तृशासनम् ॥७॥ कथंनुखल्वद्यभवेत्सुखागतंप्रसह्ययुद्धंममराक्षसैःसह ॥ तथैवखल्वात्मबलंचसारवत्समानयेन्मांचरणेदशाननः ॥ ८ ॥ ततःसमासाद्यरणेदशाननंसमंत्रिवर्गंसबलंसयायिनम् ॥ हृदिस्थितंतस्यमतंबलंचसुखेनमत्वाहमितःपुनर्व्रजे ॥९॥ इदमस्यनृशंसस्यनंदनोपममुत्तमम् ॥ वनंनेत्रमनःकांतंनानाद्रुमलतायुतम् ॥ १० ॥ इदंविध्वंसयिष्यामिशुष्कंवनमिवानलः ॥ अस्मिन्भग्नेततःकोपंकरिष्यतिसरावणः ॥११॥ ततोमहत्साश्वमहारथद्विपंबलंसमानेष्यतिराक्षसाधिपः॥त्रिशूलकालायसपट्टिशायुधंततोमहद्युद्धमिदंभविष्यति ॥ १२ ॥ अहंचतैःसंयतिचंडविक्रमैःसमेत्यरक्षोभिरभंगविक्रमः॥ निहत्यतद्रावणचोदितंबलंसुखंगमिष्यामिहरीश्वरालयम् ॥ १३ ॥ ततोमारुतवत्क्रुद्धोमारुतिर्भीमविक्रमः ॥ ऊरुवेगेनमहताद्रुमान्क्षेप्तुमथारभत् ॥ १४ ॥ ततस्तद्धनुमान्वीरोबभंजप्रमदावनम् ॥ मत्तद्विजसमाघुष्टंनानाद्रुमलतायुतम् ॥ १५ ॥

का अनेक जातिकी तरुलताओंसे पूर्ण नन्दनवनके समान नयन और मनको प्रसन्न करनेवाला उपवन है ॥ १० ॥ सोआग जिस प्रकार सूखे हुये वनको भस्म करडालती है, वैसेही हम भी इस वनका नाश कर डालें । इस वनके उजाड होनेसे पीछे राक्षस पति रावण क्रोधित हो ॥ ११ ॥ हाथी, घोडे रथोंसे व्याप्त, त्रिशूल, खड्ग और पटा धारण करनेवाली बडी सेना हमारे सामने युद्धमें भेजेगा तब महाभयंकर युद्ध होगा ॥१२॥ हम भी भयंकर पराक्रमसे प्रचंड पराक्रम सम्पन्न राक्षसोंके साथ युद्ध करते हुये समस्त सेनाको संहार करके सुखसे वानर राज सुग्रीवजीके भवनमें गमन करेंगे ॥ १३ ॥ इस प्रकार निश्चय करके भयंकर विक्रमशाली पवन कुमार हनुमानूजी क्रोधित होकर महा वेगसे वृक्षोंको उखाडने तोडने लगे ॥ १४ ॥ थोडेही समयमें वीर्यवान हनुमानूजीने अनेक

वा.रा.भा.
॥९०॥

भाँतिकी लता व वृक्षोंसे पूर्ण, मतवाले पक्षीकुलके शब्दसे शब्दायमान वह सब प्रमदावन उजाड डाला ॥१५॥ उस समय वनके वृक्ष सब टूट गये, जलाशयोंके किनारे खसक गये और विविध भाँति के प्रिय दर्शन पर्वतके सब शृङ्ग चूर्ण होगये ॥१६॥ अनेक प्रकारके जलचर पक्षियोंके शब्दसे शब्दायमान जलाशयोंका जल उछलने और लाल वर्ण कमल फूलोंके वा द्रुम लताओंके मलीन होजानेसे ॥१७॥ दावानलसे भस्म हुये वनकी नाईं वह शोभा विहीन होगया, ढकनोंके टूट जानेसे सब लता विध्वंसित होकर ओढनी इत्यादि वसनोंको खसकाये स्त्रीके समान विह्वल होगई॥१८॥लता गृह, चित्रगृह, सबका विध्वंस हो गया, शार्दूलादि मृग और पक्षी गण दुःखित शब्दसे चिल्लाने लगे और शिलागृह व सामान्य गृहके गिर जानेसे इस महावनका स्वरूप भ्रष्ट होगया ॥१९॥ रावणकी स्त्रियोंके रति

तद्वनंमथितैर्वृक्षैर्भिन्नैश्चसलिलाशयैः ॥चूर्णितैःपर्वताग्रैश्चबहुधाप्रियदर्शनैः॥ १६ ॥नानाशकुंतविरुतैःप्रभिन्नसलिलाशयैः ॥ताम्रैःकिसलयैः क्लांतैःक्लांतद्रुमलतायुतैः ॥ १७ ॥नबभौतद्वनंतत्रदावानलहतंयथा॥व्याकुलावरणारेजुर्विह्वलाइवतालतः ॥ १८ ॥लतागृहैश्चित्रगृहैश्चसादितैर्व्यालैर्मृगैरार्तैश्चपक्षिभिः ॥ शिलागृहैरुन्मथितैस्तथागृहैःप्रनष्टरूपंतदभून्महद्वनम् ॥ १९ ॥ साविह्वलाशोकलताप्रतानावनस्थलीशोकलताप्रताना॥जातादशास्यप्रमदावनस्यकपेर्बलाद्धिप्रमदावनस्य॥ २० ॥ततःसकृत्वाजगतीपतेर्महान्महद्व्यलीकंमनसोमहात्मनः॥ युयुत्सुरेको बहुभिर्महाबलैःश्रियाज्वलंस्तोरणमाश्रितःकपिः ॥२१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येच० सा० सुंदरकांडे एकचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४१ ॥ ततः पक्षिनिनादेनवृक्षभंगस्वनेनच॥ बभूवुस्त्राससंभ्रांताःसर्वेलंकानिवासिनः॥ १ ॥ विद्रुताश्चभयत्रस्तानिषेदुर्मृगपक्षिणः ॥ रक्षसांचनिमित्तानिक्रूराणिप्रतिपेदिरे ॥ २ ॥ ततोगतायांनिद्रायांराक्षस्योविकृताननाः ॥तद्वनंददृशुर्भग्नंतंचवीरंमहाकपिम् ॥ ३ ॥

सुं० कां०
स० ४२

बढानेवाले तथा चलायमान अशोक लता प्रतानवाले सब अशोकवनकेलता समूह रक्षाहीन होनेके कारण वानर श्रेष्ठ हनुमानूजीके बलसे अतिशोचनीय दशाको प्राप्त हुए ॥ २० ॥ वह सौंदर्य सम्पन्न महाकपि हनुमानूजी महात्मा रावणका महा अप्रिय कार्य साधन करके इकलेही महाबलवान् बहुत सारे राक्षसोंके साथ युद्ध करनेकीइच्छाकर बलकीसम्पत्तिसे प्रज्वलित हो इन वनकेबाहरी द्वारपरचढगये ॥२१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा०आदि०सुन्दरकांडे भाषायामेकचत्वारिंशः सर्गः॥४१॥तत्पश्चात् पक्षियोंकी चिल्लाहटसे, और वृक्ष टूटनेके खड२मड२शब्दोंसे त्रासित होकर लंकाके सबही निवासी चलायमान हो भीत होगये ॥१॥पशुपक्षी सबही भयके मारे उसस्थानसे उडकर दूसरे स्थानोंमें छिपने लगे, और राक्षसोंके निकट विविध भांतिके अमंगल लक्षण होने लगे ॥२॥ इस ओर विकराल वदन

वाली सबराक्षसियोंने निद्रात्याग कर उस टूटे फूटे वन और महावीर वानर श्रेष्ठ हनुमानूजीको देखा॥ ३॥ वह महाबलवान् दीर्घबाहू हनुमानूजी राक्षसियोंको देख उनको डरानेकेलिये भयंकर रूप धारण करते हुए ॥ ४ ॥ तब सब राक्षसियोंने पर्वतके समान बडे आकारवाले महाबलवान् वानर श्रेष्ठ हनुमानूजीको देखकर जानकीसे बूझा ॥ ५ ॥ यह कौन है ? किसका दूत है ? कहांसे और किस कारणसे इस स्थानमें आया है ! और तुमसे इसने किस कारण बाते कीं ? अथवा क्या तुमसे वार्त्ता की ? ॥६॥ हे विशालाक्षी ! यह सब तुम हमसे कहो ? हे सुभगे ! तुमको कोई भय नहीं है। हे असितापांगि ! इस वानरने तुम्हारे साथ क्या २ कथा वार्त्ता कही ❀ ॥ ७॥ तब जनक कुमारी सर्वाङ्गसुन्दरी पतिव्रता सीताजी उन राक्षसियोंको उत्तर देने लगीं कि, कामरूपी राक्षसलोग

ततोदृष्ट्वामहाबाहुर्महासत्त्वोमहाबलः ॥ चकारसुमहद्रूपंराक्षसीनांभयावहम् ॥ ४ ॥ ततस्तुगिरिसंकाशमतिकायंमहाबलम् ॥ राक्षस्योवानरं दृष्ट्वापप्रच्छुर्जनकात्मजाम्॥ ५ ॥ कोयंकस्यकुतोवायंकिंनिमित्तमिहागतः ॥ कथंत्वयासहानेनसंवादःकृतइत्युत ॥ ६ ॥ आचक्ष्वनोविशालाक्षिमाभूत्तेसुभगेभयम् ॥ संवादमसितापांगित्वयाकिंकृतवानयम् ॥७॥ अथाब्रवीत्तदासाध्वीसीतासर्वांगशोभना ॥ रक्षसांकामरूपाणांविज्ञानेकागतिर्मम ॥ ८ ॥ यूयमेवास्यजानीतयोयंयद्वाकरिष्यति॥अहिरेवह्यहेःपादान्विजानातिनसंशयः ॥९॥ अहमप्यतिभीतास्मिनैवजानामिकोह्ययम्॥वेद्मिराक्षसमेवैनंकामरूपिणमागतम्॥१०॥ वैदेह्यावचनंश्रुत्वाराक्षस्योविद्रुताद्रुतम् ॥ स्थिताःकाश्चिद्गताःकाश्चिद्रावणायनिवेदितुम् ॥ ११ ॥ रावणस्यसमीपेतुराक्षस्योविकृताननाः ॥ विरूपंवानरंभीमंरावणायन्यवेदिषुः ॥ १२ ॥ अशोकवनिकामध्येराजन्भीमवपुःकपिः ॥ सीतयाकृतसंवादस्तिष्ठत्यमितविक्रमः ॥ १३ ॥

अपनी इच्छानुसार रूप धारणकर सकतेहैं सो भला हम उनको किस प्रकारसे जानें ॥८॥ इसलिये यह कौन है और किस कार्यको पूरा करेगा ? यह सब बातें तुमही जान सकती हो कारण कि सर्पही सर्पके पाँव जानता है ॥९॥ हमभी बहुत डरगई हैं,नहीं जानतीं कि कौन है? हम समझती हैं कि यह कामरूपी राक्षस मायारूप बनाकर यहां आया है ॥१०॥ श्रीजानकीजीके वचन सुनकर राक्षसियें भयके मारे दौडीं,उनमेंसे कोई २ तो वनमेंही टिकरहीं, और कोई २ रावणको यह समाचार देनेकेलिये बडी शीघ्रतासे गई ॥११॥ उन समस्तविकराल वदनवाली राक्षसियोंने रावणके निकट पहुँचकर,विकराल वदनवाले वानरके आनेका समाचार निवेदन किया ॥ १२ ॥ वह राक्षसी बोलीं कि, हे राजन् ! अशोक वनके बीच एक भयंकर शरीरधारी अतुल पराक्रमसम्पन्न वानरआय

* राक्षसियें जाग कर भी देवमायासे मोहित हो सोगईं इससे उनको संवादका भान सो रहा ।

हैं और न जाने उसने सीताजीके साथ क्या कुछ वार्त्ता की है ?॥१३॥हमने उस मृगनयनी सीताजीसे बार२पूछाकि,उस वानरसे और तुमसे क्या बातचीत हुई परंतु सीताजीने हमलोगोंसे किसी प्रकार उस वानरकी कही बात कहनेकीइच्छा न की ॥१४॥ वह वानर इन्द्रका दूत होगा वा कुबेरका दूत होगा, अथवा रामचन्द्रने ही सीताके ढूँढनेकी अभिलाषा करके इस वानरको भेजा होगा ॥१५॥ किसीका भी दूत हो सो उसही अद्भुत वानरने आपका अनेक प्रकारके मृगगणोंके सेवित मनोहर प्रमदावन तोड फोडकर उजाड कर दिया ॥१६॥ उस वनमें ऐसा कोई स्थान नहीं कि,जिसको उस वानरने नहीं विध्वंस कर डाला; हां केवलजिसस्थानमेंदेवी जानकीजी रहती हैं;उसही स्थानको उस वानरने नष्ट नहीं किया॥१७॥ यातो जानकीजी रक्षाके लिये, या मारे थकावटके उस स्थानको उस वानरने छोड दिया है,यह बात जानी नहींजाती अथवा जब उसने इस महावनकोही तोडफोड डालाहै,तब इसको इस जरासे स्थानको तोडनेमें क्यापरिश्रम था,

नचतंजानकीसीताहरिंहरिणलोचना॥अस्माभिर्बहुधापृष्टानिवेदयितुमिच्छति ॥१४॥ वासवस्यभवेद्दूतोदूतोवैश्रवणस्यवा॥प्रेषितोवापिरामेणसीतान्वेषणकांक्षया ॥ १५ ॥ तेनैवाद्भुतरूपेणयत्तत्तवमनोहरम् ॥ नानामृगगणाकीर्णंप्रमृष्टंप्रमदावनम् ॥ १६ ॥ नतत्रकश्चिदुद्देशोयस्तेननविनाशितः ॥ यत्रसाजानकीदेवीसतेननविनाशितः ॥ १७ ॥ जानकीरक्षणार्थंवाश्रमाद्वानोपलक्ष्यते ॥ अथवाकःश्रमस्तस्यसैवतेनाभिरक्षिता ॥ १८ ॥चारुपल्लवपत्राढ्यंयंसतीस्वयमास्थिता ॥ प्रवृद्धःशिंशपावृक्षःसचतेनाभिरक्षितः ॥ १९ ॥ तस्योग्ररूपस्योग्रंत्वंदंडमाज्ञातुमर्हसि ॥ सीतासंभाषितायेनवनंतेनविनाशितम् ॥ २० ॥ मनःपरिगृहीतांतांतवरक्षोगणेश्वर ॥ कःसीतामभिभाषेतयोनस्यात्त्यक्तजीवितः ॥२१॥ राक्षसीनांवचःश्रुत्वारावणोराक्षसेश्वरः ॥ चिताग्निरिवजज्वालकोपसंवर्तितेक्षणः ॥ २२ ॥ तस्यक्रुद्धस्यनेत्राभ्यांप्रापतन्नश्रुबिंदवः ॥ दीप्ताभ्यामिवदीपाभ्यांसार्चिषस्नेहबिंदवः ॥ २३ ॥

वास्तवमें और बात नहीं; केवल उस वानरने जानकीजीकी रक्षा की है ॥१८॥ स्वयं सीतादेवी जिस मनोहर पल्लव पत्रयुक्त शोभायमान बडेभारी शिंशपावृक्षके नीचे बैठी हैं,बस उस वानरने केवल उसीवृक्षको छोड दिया है ॥१९॥ जिससे कि,उस उग्रमूर्ति वानरने सीताजीके सहित वार्तालाप किया और वनको तोडताड डाला, इसलिये आप उस वानरको उचित दंड देनेकी आज्ञा दीजिये ॥ २० ॥ हे राक्षसनाथ ! आपने अपने मनसे जिस सीताको ग्रहण कर लिया है, सो उस सीतासे बिना अपने जीवनकी आशा त्याग किये कौन बातचीत कर सकताहै ? ॥२१॥ समस्त राक्षसियोंके यह वचन सुनकर रावण इस प्रकार जल बल गया कि जिस प्रकार चिताकी आग एकबारही धूधू करके जल उठती है,क्रोधसे नेत्र लाल होगये ॥२२॥ क्रोधके मारे रावणके दोनों नेत्र चलायमान होने लगे और

दीपक अग्निकी शिखाके सहित तेल बून्दोंके समान उसके दोनों नेत्रोंसे आंसुओंकी बून्दें गिरने लगीं ॥२३॥ उसके पीछे प्रबल प्रतापशाली रावणने महाते जस्वी हनुमान्‌जीको पकडनेके लिये अपने समान पराक्रमवाले अपने किंकरराक्षसोंको आज्ञादी ॥२४॥ उन राक्षसोंमें अस्सी हजार ८०००० वेगवान् किंकर कूट मुद्गर इत्यादि शस्त्र हाथोंमें लेकर स्थानसे निकले ॥२५॥ सबकेही पेट बडे२ डाढेंभी मोटी और बडी सबही बडे भयंकर मूर्तिमान् और प्रमाणरहित बलवाले थे सबही हनुमान्‌जीको पकडनेके लिये युद्ध करनेको तैयार हो ॥२६॥ बाहरके द्वारपर खडे उस वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जीके निकट पहुंच; अग्निके सम्मुख पंतगके समान उनके ऊपर वे राक्षस दौडे ॥२७॥ और सबही चारों ओरसे घेरकर विविध भांतिकी गदा सुवर्णके बंध बँधे हुए परिघोंसे और सूर्यके समान प्रकाशित उन वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जीके बाणोंसे ॥ २८ ॥ मुद्गर, पटा, शूल, फांसी और भालोंसे ऊपर वह राक्षसलोग चोट चलाने लगे ॥ २९ ॥ पर्वत समान आकारवाले

आत्मनःसदृशान्वीरान्किंकरान्नामराक्षसान् ॥ व्यादिदेशमहातेजानिग्रहार्थंहनूमतः ॥२४॥ तेषामशीतिसाहस्रंकिंकराणांतरस्विनाम् ॥ निर्ययुर्भ वनात्तस्मात्कूटमुद्गरपाणयः ॥२५॥ महोदरामहादंष्ट्राघोररूपामहाबलाः ॥ युद्धाभिमनसःसर्वेहनूमद्ग्रहणोन्मुखाः ॥२६॥ तेकपिंतंसमासाद्यतो रणस्थमवस्थितम् ॥ अभिपेतुर्महाभागाःपतंगाइवपावकम् ॥२७॥ तेगदाभिर्विचित्राभिःपरिघैःकांचनांगदैः ॥ आजघ्नुर्वानरश्रेष्ठंशरैश्चादित्य सन्निभैः ॥ २८ ॥ मुद्गरैःपट्टिशैःशूलैःप्रासतोमरपाणयः ॥ परिवार्यहनूमंतंसहसातस्थुरग्रतः ॥२९॥ हनूमानपितेजस्वीश्रीमान्पर्वतसन्निभः ॥ क्षितावाविध्यलांगूलंननादचमहाध्वनिम् ॥३०॥ सभूत्वातुमहाकायोहनूमान्मारुतात्मजः ॥ पुच्छमास्फोटयामासलंकांशब्देनपूरयन् ॥३१॥ तस्यास्फोटितशब्देनमहताचानुनादिना ॥ पेतुर्विहंगागगनादुच्चैश्चेदमघोषयत् ॥३२॥ जयत्यतिबलोरामोलक्ष्मणश्चमहाबलः ॥ राजाजयतिसुग्री वोराघवेणाभिपालितः ॥ ३३ ॥ दासोहंकोशलेंद्रस्यरामस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ हनूमाञ्शत्रुसैन्यानांनिहंतामारुतात्मजः ॥ ३४ ॥ नरावणसह स्रंमेयुद्धेप्रतिबलंभवेत् ॥ शिलाभिश्चप्रहरतःपादपैश्चसहस्रशः ॥ ३५ ॥

तेजस्वी पवनकुमार हनुमान्‌जी भी पृथ्वीपर अपनी पूंछ पकड बडे भारी शब्दसे गर्जन करने लगे ॥३०॥ पवनकुमार हनुमान्‌जी बडी भारी देह धारण करते हुए भयंकर नादसे लंकाको पूर्ण करते अपनी पूंछको बार २ पृथ्वीपर पटकने लगे ॥३१॥ उनके उस भयंकर चिल्लाने और पूंछ पटकनेके शब्दसे उडते हुए पक्षी आकाशसे पृथ्वीपर गिरने लगे; फिर हनुमान्‌जी बडे शब्दसे पुकारतेहुएकि ॥३२॥ अतिबलवान् श्रीरामचन्द्रजीकी जय ! महाबलवान् लक्ष्मणजीकी जय !! राघव पालित सुग्रीवजीकी जय !!! ॥ ३३ ॥ हम अमित कर्म करनेवाले कोसलपति श्रीरामचन्द्रजीके दास हैं, हमारा नाम हनुमान् है, हम पवनके पुत्र समरमें शत्रुकी सेनाको संहार किया करते हैं ॥ ३४ ॥ इस समय हम संग्राममें सहस्र शिला और वृक्षोंका प्रहार करेंगे, तब एक रावणकी क्या चलाई, हजार रावणभी हमारी

समानता नहीं कर सकेंगे ॥ ३५ ॥ हम समस्त राक्षसोंके सामनेही लंकापुरीको पीस पासकर जानकीजीको प्रणाम कर अपने कार्यको साध यहांसे चले जायँगे ॥३६॥ कपिश्रेष्ठ हनुमानजीका यह सिंहनाद सुन कर राक्षस लोग भयके मारे त्रासित होगये, और उन हनुमानूजीको सन्ध्याकालके मेघके समान उन राक्षसोंने ऊंचा देखा ॥३७॥ परन्तु अपने स्वामीकी आज्ञासे निःशंक होकर वे राक्षस अनेक प्रकारके भयंकर अस्त्र शस्त्र धारण करके चारों ओरसे हनुमान् जीपर धाये ॥ ३८ ॥ जब महावीरजीको राक्षसोंने चारों ओरसे घेर लिया, तब हनुमानूजीने उस फाटकके समीप रक्खा हुआ लोहेका एका भयंकर परिघ ग्रहण कर लिया ॥ ३९ ॥ विनतानंदन गरुडजी फडफडाते हुए सर्पको पकड जिस प्रकार आकाशमें उडकर घूमते हैं वैसेही पवनकुमार हनुमानजी इस परिघको ग्रहण करके निशाचरोंका संहार करतेकूदने फांदने लगे ॥४०॥ हजार नेत्रवाले इन्द्रजी वज्रसे जिसप्रकार दैत्योंका संहार करतेहैं; वीर पवनकुमार भी वैसेही आकाशमार्गमें

अर्दयित्वापुरीलंकामभिवाद्यचमैथिलीम् ॥ समृद्धार्थोगमिष्यामिमिषतांसर्वरक्षसाम् ॥३६॥ तस्यसन्नादशब्देनतेऽभवन्भयशंकिताः ॥ददृशुश्चह नूमंतसंध्यामेघमिवोन्नतम् ॥३७स्वामिसंदेशनिःशंकास्ततस्तेराक्षसाःकपिम् ॥ चित्रैःप्रहरणैर्भीमैरभिपेतुस्ततस्ततः ॥३८॥सतैःपरिवृतःशूरैःसर्वतः समहाबलः ॥आससादायसंभीमंपरिघंतोरणाश्रितम् ॥ ३९ ॥सतंपरिघमादायजघानरजनीचरान् ॥ सपन्नगमिवादायस्फुरंतंविनतासुतः ॥४०॥ विचचारांबरेवीरःपरिगृह्यचमारुतिः ॥सूदयामासवज्रेणदैत्यानिवसहस्रदृक् ॥४१॥ सहत्वाराक्षसान्वीरःकिंकरान्मारुतात्मजः ॥ युद्धाकांक्षीमहा वीरस्तोरणंसमवस्थितः ॥४२॥ ततस्तस्माद्भयान्मुक्ताःकतिचित्तत्रराक्षसाः ॥ निहतान्किंकरान्सर्वान्रावणायन्यवेदयन् ॥ ४३ ॥ सराक्षसा नांनिहतंमहाबलंनिशम्यराजापरिवृत्तलोचनः ॥समादिदेशाप्रतिमंपराक्रमेप्रहस्तपुत्रंसमरेसुदुर्जयम् ॥४४॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मी० आदि० च० सा० सुन्दरकांडे द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥४२॥ ततःसकिंकरान्हत्वाहनूमान्ध्यानमास्थितः ॥ वनंभग्नंमयाचैत्यप्रासादोनविनाशितः ॥ १ ॥

घूम घामकर इस परिघसे रावणके किंकर नाम राक्षसोंका नाश करने लगे ॥४१॥इसप्रकार उन अस्सी हजार किंकर नाम राक्षसोंको संहार महाबली पवन कुमार, युद्ध करनेकी इच्छासे फिर उसी तोरणपर चढकर बैठे ॥ ४२ ॥ उसके पीछे किसी प्रकारसे बचे बचाये अधमरे राक्षसोंने भयके मारे संग्रामभूमिसे भागकर रावणको यह संवाददिया, कि महाबलवान् राक्षस मारे गये॥४३॥बडी भारी राक्षसीसेनाका संहार सुनकर राक्षसराजरावणके दोनों नेत्र घूमने लगे।और उसनेसंग्राममें जानेकेलिये अजीतप्रहस्तके बेटे जम्बुमालीनामराक्षसको आज्ञा दी॥४४॥इत्यार्षेश्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० सुन्दरकांडेभाषायांद्विचत्वारिंशःसर्गः॥४२॥ उसके पीछे हनुमानूजी उन अस्सी हजार किंकरोंका संहार करके यहविचार करने लगे कि, हमने वन तो तोड ताड डाला परन्तु राक्षसकुलके अधिष्ठाता देवता

लोगोंके मंदिर नहीं तोडे ॥१॥ इसलिये अभी बलको प्रगटकर इस मंदिरको भी तोडें। वानरयूथपति हनुमान्‌जी मनही मन यह संकल्प कर बल दिखाया॥२॥ छलांग मार मेरु पर्वतके शिखरके समान ऊंचे उस राक्षस अधिष्ठाता देवताकेमंदिरपर पवनकुमार हनुमान्‌जी चढे ॥३॥ वानर केसरी पवनकुमार हनुमान्‌जी इस पर्वतके समान देवमंदिरपर चढ अतिशय तेज युक्त हुए दूसरे सूर्यके समान प्रकाशित हुए ॥४॥ इसके पीछे दुर्द्धर्ष हनुमान्‌जी उस मनोहर देवप्रसादको एकबार ही तोडकर, अपनी स्वाभाविक लक्ष्मीसे प्रज्वलित पारियात्रपर्वतके समान शोभायमान हुए ॥५॥ फिर हनुमान्‌जी निज प्रभावसे अपना शरीर बहुत ही बढाय निर्भयशब्दसे लंकाको पूर्ण करते हुए अपनी भुजाओंसे शब्द करने लगे ॥६॥ यहांतक कि, उनके उस श्रवणकठोर बडे भारी बाँहोंके शब्दसे मोहित होकर आका

तस्मात्प्रासादमद्यैवमिमंविध्वंसयाम्यहम्॥इतिसंचिन्त्यहनुमान्मनसादर्शयन्बलम् ॥२॥ चैत्यप्रासादमुत्प्लुत्यमेरुशृंगमिवोन्नतम् ॥ आरुरोहहरिश्रेष्ठोहनूमान्मारुतात्मजः ॥३॥ आरुह्यगिरिसंकाशंप्रासादंहरियूथपः॥बभौससुमहातेजाःप्रतिसूर्यइवोदितः ॥४॥ संप्रधृष्यतुदुर्धर्षश्चैत्त्यप्रासादमुन्नतम्॥ हनूमान्प्रज्वलँल्लक्ष्म्यापारियात्रोपमोभवत्॥ ५ ॥ सभूत्वासुमहाकायःप्रभावान्मारुतात्मजः॥ धृष्टमास्फोटयामासलंकांशब्देनपूरयन् ॥ ६ ॥ तस्यास्फोटितशब्देनमहताश्रोत्रघातिना॥ पेतुर्विहंगमास्तत्रचैत्यपालाश्चमोहिताः॥ ७ ॥ अस्त्रविज्जयतांरामोलक्ष्मणश्चमहाबलः॥राजाजयतिसुग्रीवोराघवेणाभिपालितः॥८॥ दासोहंकोशलेंद्रस्यरामस्याक्लिष्टकर्मणः॥ हनूमाञ्छत्रुसैन्यानांनिहंतामारुतात्मजः ॥ ९ ॥ नरावणसहस्रंमेयुद्धेप्रतिबलंभवेत्॥शिलाभिश्चप्रहरतःपादपैश्चसहस्रशः ॥१०॥ धर्षयित्वापुरींलंकामभिवाद्यचमैथिलीम् ॥ समृद्धार्थोगमिष्यामिमिषतांसर्वरक्षसाम् ॥११॥ एवमुक्त्वामहाकायश्चैत्यस्थोहरियूथपः ॥ ननादभीमनिर्ह्रादोरक्षसांजनयन्भयम् ॥ १२ ॥

शमें उडते हुए पक्षी और उस देवमंदिरके रक्षक सबही गिर पडे ॥७॥ अस्त्र जाननेवाले श्रीरामचन्द्रजीकी जय हो! महाबलवान् लक्ष्मणजीकी जय हो!! वश्रीरामचन्द्रजीके प्रतिपालित राजा सुग्रीवकी जय हो !!! ॥८॥ हम श्रेष्ठकर्म करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीके दास पवनके पुत्र, शत्रुकी सेनाके संहार करनेवाले, हनुमान् नाम वानर हैं॥९॥ हजार २ वृक्ष और शिलाओंका प्रहार करके जब हम संग्राम करेंगे तब एक रावणकी क्या चले हजार रावण भी हमारी समानता नहीं कर सकेंगे ॥१०॥ हम सब राक्षसोंके सम्मुख; समस्त लंकापुरीको मसल मसलाय जानकीजीको प्रणाम कर कार्यसाध अपने स्थानको चले जायँगे ॥११॥ यह कहकर देवमंदिरके

वा.रा.भा ॥९३॥

शिखरपर बैठे हुए बडे आकारवाले हनुमानूजी राक्षसोंके अन्तःकरणमें भय उपजाय घोर शब्दसे गर्जन करने लगे ॥१२॥ उस भयंकर शब्दको सुनकर सैकडों हजारों मंदिररक्षक विविध भाँतिके अस्त्र; शस्त्र, फांस, खड्ग और फरशे ग्रहण करके ॥१३॥ वहां आय हनुमानूजीको देख उनके ऊपर वह अस्त्र शस्त्र चलाने लगे, और विचित्र गदा सुवर्णके बंदोंसे बँधा हुआ शूल ॥ १४ ॥ और सूर्यके समान प्रभाववाले बाण चलायकर उनके ऊपर प्रहार करना आरंभ कर दिया। उस कालमें वह महाकाय राक्षस बल गंगाजीके बडे भारी कुण्डके समान ॥१५॥ हनुमानूजीको घेरकर परमशोभा धारण करता हुआ यह देखकर पवनसुत हनुमानूजी क्रोधित हो भयंकर रूप धर ॥ १६ ॥ बडे वेगसे प्रासादका स्वर्णसे बना एक खंभ उखाडकर मारुतसुवन ॥ १७ ॥ बडे वेगसे घुमाने लगे तब उस

तेननादेनमहताचैत्यपालाःशतंययुः ॥ गृहीत्वाविविधानस्त्रान्प्रासान्खड्गान्परश्वधान् ॥ १३ ॥ विसृजंतोमहाकायामारुतिंपर्यवारयन् तेगदा भिर्विचित्राभिः परिघैःकांचनांगदैः ॥ १४ ॥ आजग्मुर्वानरश्रेष्ठंबाणैश्चादित्यसन्निभैः ॥ आवर्तइवगंगायास्तोयस्यविपुलोमहान् ॥ १५ ॥ परि क्षिप्यहरिश्रेष्ठंसबभौरक्षसांगणः ॥ ततोवातात्मजः क्रुद्धोभीमरूपंसमास्थितः ॥ १६ ॥ प्रासादस्यमहांस्तस्यस्तंभंहेमपरिष्कृतम् ॥ उत्पाट यित्वावेगेनहनूमान्मारुतात्मजः ॥ १७ ॥ ततस्तंभ्रामयामासशतधारंमहाबलः ॥ तत्रचाग्निःसमभवत्प्रासादश्चाप्यदह्यत ॥१८॥ दह्यमानंत तोदृष्ट्वाप्रासादंहरियूथपः ॥ सराक्षसशतंहत्वावज्रेणेन्द्रइवासुरान् ॥१९॥ अंतरिक्षस्थितःश्रीमानिदंवचनमब्रवीत् ॥ मादृशानांसहस्राणिविसृष्टानि महात्मनाम् ॥२०॥ बलिनांवानरेंद्राणांसुग्रीववशवर्तिनाम् ॥ अटंतिवसुधांकृत्स्नांवयमन्येचवानराः ॥२१॥ दशनागबलाः केचित्केचिद्दशगुणो त्तराः ॥ केचिन्नागसहस्रस्यबभूवुस्तुल्यविक्रमाः ॥२२॥ संतितौघबलाःकेचित्संतिवायुबलोपमाः ॥ अप्रमेयबलाःकेचित्तत्रासन्हरियूथपाः ॥२३॥

शत धारवाले खंभमेंसे अग्निकी चिनगारियोंने निकल कर उस समस्त मंदिरको भस्म कर दिया ॥१८॥ उस प्रासादको भस्म होता हुआ देखकर हनुमानूजीने सैकडों हजारों राक्षसोंको मारडाला कि, जिस प्रकार इन्द्रजी वज्र चलाय असुरोंको मार डालतेहैं ॥ १९ ॥ फिर हनुमानूजी आकाशमें टिककर यह कहने लगे कि, हमारे समान बलवान् महात्मा सैकडों हजारों वानर उत्पन्न हुए हैं ॥ २० ॥ वह सबही वानर सुग्रीवजीके वशमें हैं सो हम और दूसरे वह समस्त वानर गण समस्त पृथ्वीमंडलपर घूमते फिरते हैं ॥ २१ ॥ इस सब वानरोंमेंसे किसी २ का बल दश हाथीके समान किसीका शत हाथीके समान और किसीका हजार हाथीके समान, है ॥ २२ ॥ किसी २ का हाथियोंके समूहका बल है, कोई २ वायुके समान बलवाले हैं और किसी २ के बलका तो

सुं० कां० स० ४३

कुछ अंतही नहीं है ॥ २३ ॥ इस प्रकारके नख और दांतोंको आयुध बनाये शत,हजार, दश हजार व लाख,करोडों; अरबों वानरोंके साथ ॥ २४ ॥ सुग्रीवजी यहां आयकर तुम सबको मार डालेंगे । महात्मा इक्ष्वाकुकुलमें उत्पन्न हुए महावीर श्रीरामचन्द्रजीके साथ जब कि, तुम्हारा वैरभाव हो गया है, तब इस लंकापुरीकी, तुम्हारी सबकी व रावणकी शीघ्रही समाप्ति होजायगी ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा०आदि०सुन्दरकांडे भाषायां त्रिचत्वारिंशः सर्गः॥४३॥

प्रहस्तका पुत्र महाबलवान् बडे२दांतवाला जम्बुमाली नाम राक्षस राक्षसपति रावण की आज्ञासे धनुष धारण कर नगरसे बाहर निकला ॥ १ ॥ उसके पहरे कपडे भी लाल थे;व लालही माला वह पहरे था कुण्डल युगल परम सुन्दर दोनों नेत्र बडे २ थे बडे भारी डील डौलवाला बडा कोपी अति अजीत ॥ २ ॥

ईदृग्विधैस्तुहरिभिर्वृतोदंतनखायुधैः ॥ शतैःशतसहस्रैश्चकोटिभिश्चायुतैरपि ॥२४॥ आगमिष्यतिसुग्रीवःसर्वेषांवोनिषूदनः ॥ नेयमस्तिपुरी लंकानयूयंनचरावणः ॥ यस्यत्विक्ष्वाकुवीरेणबद्धंवैरंमहात्मना ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा०सुंदरकांडे त्रिचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४३ ॥ संदिष्टोराक्षसेंद्रेणप्रहस्तस्यसुतोबली ॥ जंबुमालीमहादंष्ट्रोनिर्जगामधनुर्धरः ॥ १ ॥ रक्तमाल्यांबरधरःस्रग्वी रुचिरकुंडलः ॥ महान्विवृत्तनयनश्चंडःसमरदुर्जयः ॥२॥ धनुःशक्रधनुःप्रख्यंमहद्रुचिरसायकम् ॥ विस्फारयाणोवेगेनवज्राशनिसमस्वनम् ॥ ३॥ तस्यविस्फारघोषेणधनुषोमहतादिशः ॥ प्रदिशश्चनभश्चैवसहसासमपूर्यंत ॥ ४ ॥ रथेनखरयुक्तेनतमागतमुदीक्ष्यसः॥ हनूमान्वेग संपन्नोजहर्षचननादच॥५॥ तंतोरणविटंकस्थंहनूमंतं महाकपिम् ॥ जंबुमालीमहातेजाविव्याधनिशितैःशरैः ॥ ६ ॥ अर्धचंद्रेणवदनेशिरस्येकेनकर्णिना ॥ बाह्वोर्विव्याधनाराचैर्दशभिस्तुकपीश्वरम् ॥ ७ ॥

धनुष इन्द्रधनुष के समान बडा जिसके देहमें वज्रके समान शब्द निकलता हुआ व उस धनुष पर सुन्दर बाण भी चढा हुआ ॥ ३ ॥ रणदुर्जय प्रचंड स्वभाव जम्बुमाली ऐसे बडे भारी धनुष को अतिवेगसे टंकार देता हुआ, धनुष की टंकारका वह घोर शब्द दिशा विदिशा और आकाश मंडलको सहसा पूर्ण कर देता हुआ ॥ ४ ॥ वेगवान् हनुमान्जी जम्बु मालीको गधेजुते रथपर सवार हो आया देखकर हर्षके मारे गर्जन करने लगे ॥ ५ ॥ हनुमान्जी उस समय तोरण खंभके ऊपर पक्षी के समान स्थापित की हुई कपोतपालिका पर बैठे थे । परमतेजस्वी जम्बुमालीने उनको बडे तीखे बाणोंसे वींध डाला ॥ ६ ॥ जम्बुमालीने अर्द्धचन्द्र बाणसे उनका वदन मंडल, अंकुशाका बाणसे मस्तक और दश बाणोंसे उनकी दोनों भुजाओंको भेदा ॥ ७ ॥

वा.रा.भा.
॥९४॥

हनुमानजीकार अरुणमुखमण्डल बाणोंसे विद्ध होकर सूर्यकी किरण लगनेसे; शरद ऋतुके फूले कमलके समान शोभा धारण करता हुआ॥८॥ आकाशमें दिखलाई देता हुआ महाकमल सुवर्णबिन्दुओंसे सींचे जानेपर जिस प्रकार शोभित होताहै हनुमान्‌जीका अरुणवर्ण मुखमण्डलभी रुधिर लग कर वैसाही शोभायमान हुआ ॥९॥ तबहनुमान्‌जीने राक्षसोंके बाणोंसे घायलहोकरमहा कोपकर बगलमेंही रक्खी हुई एक बडी भारी शिलादेख॥१०॥अतिशीघ्रतासे उठायअति वेगसे उसको जम्बुमालीके ऊपर चलाया, बलवान् राक्षसने क्रोध करके दशबाण चलायउस शिलाको काटडाला॥११॥तबमहाबलवान् हनुमान्‌जीने अपनी चलाई शिलाको विफल देखकर बडा भारी शालका वृक्ष उखाड उसको बडे वीर्यसे घुमाया ॥१२॥ हनुमान्‌जीको शालका वृक्षघुमाते देखकरमहाबलवान् जम्बुमाली अनेक बाण चलाने लगा

तस्यतच्छुशुभेताम्रंशरेणाभिहतंमुखम् ॥ शरदीवांबुजंफुल्लंविद्धंभास्कररश्मिना ॥८॥ तत्तस्याक्तंरक्तेनरंजितंशुशुभेसुखम् ॥ यथाकाशेमहापद्मंसिक्तंकांचनबिंदुभिः ॥९॥ चुकोपबाणाभिहतोराक्षसस्यमहाकपिः ॥ततःपार्श्वेतिविपुलांददर्शमहतींशिलाम् ॥१०॥ तरसातांसमुत्पाट्य चिक्षेपजववद्बली ॥ तांशरैर्दशभिःक्रुद्धस्ताडयामासराक्षसः ॥११॥ विपन्नंकर्मतद्दृष्ट्वाहनूमांश्चंडविक्रमः॥ सालंविपुलमुत्पाट्यभ्रामयामासवीर्यवान् ॥१२॥ भ्रामयंतंकपिंदृष्ट्वासालवृक्षंमहाबलम् ॥ चिक्षेपसुबहून्बाणाञ्जंबुमालीमहाबलः ॥१३॥ सालंचतुर्भिश्चिच्छेदवानरंपंचभिर्भुजे उरस्येकेनबाणेनदशभिस्तुस्तनांतरे ॥ १४ ॥ सशरैःपूरिततनुःक्रोधेनमहतावृतः ॥ तमेवपरिघंगृह्यभ्रामयामासवेगितः ॥ १५ ॥ अतिवेगोतिवेगेनभ्रामयित्वामहोत्कटः ॥ परिघंपातयामासजंबुमालेर्महोरसि ॥१६॥ तस्यचैवशिरोनास्तिनबाहूजानुनीनच ॥ नधनुर्नरथोनाश्वास्तत्रादृश्यंतनेषव ॥ १७ ॥ सहतस्तरसातेनजंबुमालीमहारथः ॥ पपातनिहतोभूमौचूर्णितांगइवद्रुमः ॥ १८॥ जंबुमालिंसुनिहतंकिंकरांश्चमहाबलान् ॥ चुक्रोधरावणःश्रुत्वाक्रोधसंरक्तलोचनः ॥ १९॥

सुं० कां०
स० ४४

॥१३॥ उसने चार बाणोंसे शालका वृक्ष काटकर, पांच बाणोंसे भुजाए बाणसे हृदय और दश बाणोंसे हनुमान्‌जीकी छातीको विद्ध किया ॥ १४ ॥ हनुमान्‌जी बाणजालसे सर्वांगमें विद्धहो अतिशय रोषके वशहो वही परिघ घुमाने लगे ॥ १५ ॥ इसके पीछे मदोन्मत्त अतिशय वेगशाली पवनकुमार हनुमान्‌जीने अतिवेगसे घुमाय कर वह परिघ जम्बुमालीकी विशाल छातीमें मारा ॥१६॥ उस परिघके लगतेही जम्बुमालीका मस्तक, बाहु, जानु धनु, रथ और अश्वगण व उसके बाण फिर यह कुछभी वहांपर न पायेगये ॥ १७ ॥महाबलवान् जम्बुमाली वानर हनुमान्‌जीसे शीघ्र मृतक और चूर्णित होकर टूटे हुयेवृक्षके समान पृथ्वीपर गिर पड़ा॥१८॥जम्बुमाली और महाबलवान्, अस्सी हजार किंकर नामक राक्षसोंके मरनेका वृत्तान्त सुनकर कोपके मारे रावणके दोनों नेत्र अतिशय अरुण

होकर घूमने लगे ॥ १९ ॥ इस प्रकारसे प्रहस्तके पुत्र महाबलवान् जम्बुमालीके मरजानेपर निशाचरपति रावणने अतिशय वीर्यवान् पराक्रम सम्पन्न अपने मन्त्रीके पुत्रोंको उसी समय युद्धमें जानेके लिये आज्ञा दी ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४४ ॥ तब येसूर्यके समान कांतिवाले सात मंत्रिपुत्र रावण कीप्रेरणासे अपने स्थानसे निकले ॥ १ ॥ वे सब महाबलवान् अस्त्रकुशल अस्त्र जाननेवालोंमें श्रेष्ठ,परस्पर जयके अभिलाषी, अतुल विक्रम सम्पन्न, धनुषधारी व तेजस्वी थे ॥२॥ सुवर्णके जालसे बने;ध्वजापताका युक्त,मेघके समान शब्द करते घोडे जुतेहुए बडे २ रथोंमें चढकर ॥३॥ विचित्र कांचनसे बने धनुषोंपर टंकारदेते हुए बड़ी भारी सेनाके साथ दामिनीयुक्त मेघ माला के समान अपने स्थानसे युद्ध करने के लिये

सरोषसंवर्तिततामलोचनःप्रहस्तपुत्रेनिहतेमहाबले॥अमात्यपुत्रानतिवीर्यविक्रमान्समादिदेशाशुनिशाचरेश्वरः ॥२०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० च०सा०सुन्दरकाण्डे चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥४४॥ततस्तेराक्षसेंद्रेणचोदितामंत्रिणःसुताः॥निर्ययुर्भवनात्तस्मात्सप्तसप्तार्चिवर्चसः ॥१॥ महद्बलपरीवाराधनुष्मंतोमहाबलाः ॥ कृतास्त्रास्त्रविदांश्रेष्ठाःपरस्परजयैषिणः ॥ २ ॥ हेमजालपरिक्षिप्तैर्ध्वजवद्भिःपताकिभिः॥तोयदस्वननिर्घोषैर्वाजियुक्तैर्महारथैः ॥३॥ तप्तकांचनचित्राणिचापान्यमितविक्रमाः ॥ विस्फारयंतःसंहृष्टास्तडिद्वंतइवांबुदाः ॥४॥ जनन्यस्तास्ततस्तेषांविदित्वाकिंकरान्हतान् ॥ बभूवुःशोकसंभ्रांताःसबांधवसुहृज्जनाः ॥ ५ ॥ तेपरस्परसंघर्षास्तप्तकांचनभूषणाः ॥ अभिपेतुर्हनूमंतंतोरणस्थमवस्थितम् ॥ ६ ॥ सृजंतोबाणवृष्टिंतेरथगर्जितनिःस्वनाः ॥ प्रावृट्कालइवांभोदाविचेरुर्नैर्ऋतांबुदाः ॥७॥ अवकीर्णस्ततस्ताभिर्हनूमाञ्शरवृष्टिभिः ॥ अभवत्संवृताकारःशैलराडिववृष्टिभिः ॥ ८ ॥ सशरान्वंचयामासतेषामाशुचरःकपिः ॥रथवेगांश्चवीराणांविचरन्विमलेंबरे ॥ ९ ॥ सतैःक्रीडन्धनुष्मद्भिर्व्योम्निवीरःप्रकाशते ॥ धनुष्मद्भिर्यथामेघैर्मारुतःप्रभुरंबरे ॥१०॥

बाहर निकले ॥ ४ ॥ उनकी मातायें अस्सी हजार किंकरों की मृत्युका वृत्तान्त जानकरसुहृद और बन्धु बान्धवों के सहित शोकसे व्याकुलहुई ॥५॥ सुवर्णके गहनोंसे भूषित यह सात मंत्रि पुत्र परस्पर आगे लडनेके लिये बढे जाते;फाटकके ऊपर अचल भावसे बैठे हुए हनुमान्‌जीकेसम्मुख हो॥६॥ रथ गर्जन शब्दसे युक्त बाणोंकी वर्षा करने लगे और वर्षाकालके मेघपुंजोंकेसमान इधर उधर घूमने लगे ॥७॥ वेगवान हनुमानजी उनके चलाये नाराचोंसे ढककर वर्षाके जलसे व्याप्त पर्वतराजके समान न देख पडे ॥८॥ उसके पीछे हनुमानजी अति शीघ्रगतिसे विमल आकाशमें गमन करके,राक्षसलोगोंके बाणसमूह और रथके वेग दोनोंको निष्फल कर देते हुए, ॥९ ॥हनुमानजी उन धनुषधारी राक्षसोंके साथ आकाशमार्गमें खेल करते हुए,इन्द्रचापयुक्त मेघवृन्दके साथ विहार करते स्वामी पवनके

समान शोभायमान होनेलगे ॥१०॥ उसके पीछे शत्रुओंके तपानेवाले वीर्यवान् हनुमानजी घोर नाद करते हुए उस बडी भारी सेनाको त्रास उपजाय कर राक्षसोंकी ओरको बडे वेगसे दौडे ॥११॥ किसीके चपेट लगाई, किसीके लात जमाई और किसीके घूसा जडा, किसीको नखोंसे चीर फाड डाला ॥ १२ ॥ किसीको छातीकी चोटसे मसल डाला और किसीको दोनों जांघोंसे पीस दिया, और कोई२तो उनका गर्जनही सुन उसी स्थानमें पृथ्वीपर गिर पडे ॥१३॥ उसके पीछे मंत्रीके पुत्र जब इसप्रकारसे मृतक होकर गिर पडे, तब उनकी सब सेना भयसे पीडित होकर दशों दिशाओंको भाग खडी हुई ॥१४॥ हाथी विकट शब्द कर२के चिंघाडने लगे. घोडे उछल२पृथ्वी पर गिर गये; रथियोंके बैठनेकी टूटी बैठको व ध्वज और छत्रयुक्त रथसमूहोंसे पृथ्वी ढक गई ॥१५॥ रणभूमिके

सकृत्वानिनदंघोरंत्रासयंस्तांमहाचमूम् ॥ चकारहनुमान्वेगंतेषुरक्षस्सुवीर्यवान् ॥११॥ तलेनाभिहनत्कांश्चित्पादैःकांश्चित्परंतपः ॥ मुष्टिभिश्चाहनत्कांश्चिन्नखैःकांश्चिद्व्यदारयत् ॥ १२ ॥ प्रममाथोरसाकांश्चिदूरुभ्यामपरानपि ॥ केचित्तस्यैवनादेनतत्रैवपतिताभुवि ॥ १३ ॥ ततस्तेष्ववपन्नेषुभूमौनिपतितेषुच ॥ तत्सैन्यमगमत्सर्वंदिशोदशभयार्दितम् ॥१४॥ विनेदुर्विस्वरंनागानिपेतुर्भुविवाजिनः ॥ भग्ननीडध्वजच्छत्रैर्भूश्चकीर्णाभवद्रथैः ॥ १५ ॥ स्रवतारुधिरेणाथस्रवंत्यो दर्शिताःपथि ॥ विविधैश्चस्वनैर्लंकाननादविकृतंतदा ॥ १६ ॥ सतान्प्रवृद्धान्विनिहत्यराक्षसान्महाबलश्चंडपराक्रमःकपिः ॥ युयुत्सुरन्यैःपुनरेवराक्षसैस्तदेववीरोभिजगामतोरणम् ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे पंचचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४५ ॥ ॥ छ ॥ हतान्मंत्रिसुतान्बुद्ध्वावानरेणमहात्मना ॥ रावणः संवृताकारश्चकारमतिमुत्तमाम् ॥ १ ॥ सविरूपाक्षयूपाक्षौदुर्धर्षंचैवराक्षसम् ॥ प्रघसंभासकर्णंचपंचसेनाग्रनायकान् ॥ २ ॥ संदिदेशदशग्रीवोवीरान्नयविशारदान् ॥ हनूमद्ग्रहणेऽव्यग्रान्वायुवेगसमान्युधि ॥ ३ ॥

मार्गमें रुधिरकी नदियें बहतीहुई दृष्टि आनेलगीं और समस्त लंका विविधभाँतिके विकट स्वरोंसे नादकरउठी ॥१६॥ प्रबल प्रतापशाली प्रचंडपराक्रमी वीर हनुमानजी प्रधान २ राक्षसोंका संहार करके फिर और राक्षसोंके साथ युद्ध करनेका अभिलाष करके कूदकर फिर उसी फाटक पर चढ गये ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० सुन्दरकांडे भाषायां पंचचत्वारिंश सर्गः ॥ ४५ ॥ महावीर पवनकुमार हनुमानजीसे मंत्रीके सातों पुत्रोंका माराजाना सुन कर रावण अपने मनके भयको छिपाय धैर्य धारण करता हुआ ॥ १ ॥ फिर वह रावण विरूपाक्ष, यूपाक्ष, दुर्द्धर्ष, प्रघस और भासकर्णइनपांचवीर्यवान सेनापतियोंको ॥ २ ॥ जो कि सबही नीतिविशारद सब कार्योंको शीघ्रतासे करनेवाले और युद्धमें पवनके वेगके तुल्य थे इन पांचों राक्षसोंको रावणने हनुमानजीके बांधनेके लिये

युद्धमें जानेकी आज्ञा दी और कहा ॥३॥ कि तुम सबही महाबलवान् सेनापति हो घोडे रथ व हाथियोंसे युक्त बडी भारी सेनाके साथ जाकर सिखावनदो ॥४॥ तुम सब लोग बडे यत्नसे उस वनवासी वानरके निकट जायकर अति सावधानीसे देशकालके अनुसार कार्य पूरा करना ॥५॥ उसके कर्मसे तर्क करते वह वानरही होगा ऐसा मैं नहीं मानताहूं सब तरहसे विचार होताहै कि, यह कोई एक महाबलवान प्राणी है॥६॥हमारा मन उसको वानर मानकर शुद्धनहींहोता है जिस प्रकारकी वार्ता आयकर उपस्थित हुई है इस बातसे तो हमारे मनमेंनहीं समाता कि वह वानर है ॥ ७ ॥ हमें तो यह जान पडताहै कि इस समय इन्द्रने हमलोगोंका संहार करनेके लिये अपने तपके प्रभावसे इस वानरको उत्पन्न किया होगा॥८॥नाग,यक्ष गन्धर्व,देव,असुर,महर्षि इन सबको हमारे पठाये हुए तुमलोगोंने एकही कालमें पराजित कियाहै॥९॥सो वह लोगभी हमारा किसी प्रकारसे अवश्य उपकार करेंगे ॥१०॥ निःसन्देह यह बात कुछ उनही लोगोंकी

यातसेनाग्रगाःसर्वेंमहाबलपरिग्रहाः ॥ सवाजिरथमातंगाःसकपिःशास्यतामिति ॥४॥ यत्तैश्चखलुभाव्यंस्यात्तमासाद्यवनालयम् ॥ कर्मचापि समाधेयंदेशकालाविरोधितम् ॥५॥ नह्यहंतंकपिंमन्येकर्मणाप्रतितर्कयन् ॥ सर्वथातन्महद्भूतंमहाबलपरिग्रहम् ॥ ६ ॥वानरोयमितिज्ञात्वा नहिशुध्यतिमेमनः ॥७॥ नैवाहंतंकपिंमन्येयथेयंप्रस्तुताकथा ॥ ८ ॥ भवेदिंद्रेणवासृष्टमस्मदर्थंतपोबलात् ॥ सनागयक्षगंधर्वदेवासुरमहर्षयः ॥ ९ ॥ युष्माभिःप्रहितैःसर्वैर्मयासहविनिर्जिताः ॥ तैरवश्यंविधातव्यंव्यलीकंकिंचिदेवनः॥१०॥तदेवनात्रसंदेहःप्रसह्यपरिगृह्यताम् ॥ यातसेनाग्रगाःसर्वेमहाबलपरिगृहाः ॥११॥ सवाजिरथमातंगाःसकपिःशास्यतामिति ॥ नावमन्योभवद्भिश्चकपिर्धीरपराक्रमः ॥१२॥ दृष्टाहिहरयः शीघ्रंमयाविपुलविक्रमाः ॥ बालीचसहसुग्रीवोजांबवांश्चमहाबलः ॥१३॥ नीलःसेनापतिश्चैवयेचान्येद्विविदादयः ॥ नैवतेषांगतिर्भीमानतेजो नपराक्रमः ॥ १४ ॥ नमतिर्नबलोत्साहोनरूपपरिकल्पनम् ॥ महत्सत्त्वमिदंज्ञेयंकपिरूपंव्यवस्थितम् ॥ १५ ॥ प्रयत्नंमहदास्थायक्रियताम स्यनिग्रहः॥ कामंलोकास्त्रयःसेंद्राःससुरासुरमानवाः॥ १६ ॥

कराईसी ज्ञात होतीहै इस लियेबलपूर्वक हनुमानको तुम बांधकर लेजाओ,तुम सबही महाबलवान् सेनाकेसेनापति हो ॥११॥हाथी,घोडे,रथ और बडी भारी सेनाके संग जायकर तुम उस वानरको शासन करो वह वानर यथार्थ वीरके समानपराक्रमवालाहै तुम लोगवानर जानके ही किसी प्रकारसे उनका कोई अपमान न करना ॥१२॥ प्रबलप्रतापशाली वाली तेजस्वी सुग्रीव और महाबलवान जाम्बुवान व और भी अनेक वेगवान् वानर हमने देखे हैं ॥१३॥ सेनापति नील और द्विविद इत्यादि उन वानरोंमें इनकीसी भयंकर गति न इनका सा तेजविक्रम॥१४॥ न मति,नबल उत्साह इसकेतुल्य वह वानररूप धारण करनेवाले हैं, इससे विदित होताहै कि यह वानररूप कोई बडा भारी जीव यहां आकर प्राप्त हुआहै ॥१५॥ तो तुम लोग अतिशय यत्न करके इस वानरको पकडना, अधिकसे

क्या कहें ? सुर, असुर, मनुष्यऔर इन्द्रके सहित तीनों लोक भी ॥१६॥ संग्राम भूमिमें तुम्हारे सामने खड़ा होनेकी सामर्थ्य नहीं रखते, तथापि युद्धमें जीतनेकी
अभिलाषा किये नीतिका जाननेवाला पुरुष ॥१७॥ यत्नसहित अपने आत्माकी रक्षा करे क्योंकि, संग्राममें यह निश्चय नहीं हो सकता कि जीतही होगी क्योंकि यह
चंचल विजयलक्ष्मीनजाने किसकी अंकशायिनी हो वह सब अपने स्वामी का वचन अंगीकार करके ॥१८॥ अग्निके समान तेजस्वी बलवान राक्षस महावेगसे चले
रथ हाथी व अतिवेगवान् अनेक घोड़ेभी उनके साथ चले ॥१९॥ अनेक प्रकारकेतीखे अस्त्र शस्त्र धारण किये बडीभारी सेना भी उन लोगोंके साथ चली वहां जाय
उन महावीरोंने अतिदीप्तियुक्त महा कपि हनुमान्जीको देखा ॥२०॥ उससमयवह अपने तेजके प्रभावसे प्रकाशित हो उदयाचलपर चढेहुए सूर्य भगवान्के समान

भवतामग्रतःस्थातुंनपर्याप्तारणाजिरे ॥ तथापितुनयज्ञेनजयमाकांक्षतारणे ॥१७॥ आत्मारक्ष्यःप्रयत्नेनयुद्धसिद्धिर्हिचंचला ॥ तेस्वामिवच
नंसर्वेप्रतिगृह्यमहौजसः ॥ १८ ॥समुत्पेतुर्महावेगाहुताशसमतेजसः ॥ रथैश्चमत्तैर्नागैश्चवाजिभिश्चमहाजवैः ॥ १९ ॥ शस्त्रैश्चनिशितैस्ती
क्ष्णैः सर्वैश्चोपहिताबलैः ॥ ततस्तुदद्दशुर्वीरादीप्यमानंमहाकपिम् ॥२०॥ रश्मिमंतमिवोद्यंतंस्वतेजोरश्मिमालिनम् ॥ तोरणस्थंमहावेगंमहा
सत्त्वंमहाबलम् ॥ २१ ॥ महामतिंमहोत्साहंमहाकायंमहाभुजम् ॥ तंसमीक्ष्यैवतेसर्वेदिक्षुसर्वास्ववस्थिताः ॥२२॥ तैस्तैःप्रहरणैर्भीमैरभिपे
तुस्ततस्ततः ॥ तस्यपंचायसास्तीक्ष्णाःसिताः पीतमुखाःशराः ॥ शिरस्युत्पलपत्राभादुर्धरेणनिपातिताः ॥ २३ ॥ सतैःपंचभिराविद्धःशरैःशिर
सिवानरः ॥उत्पपातनदन्व्योम्निदिशोदशविनादयन् ॥२४॥ ततस्तुदुर्धरोवीरःसरथःसज्जकार्मुकः ॥ किरञ्छरशतैर्नैकैरभिपेदेमहाबलः ॥२५॥

फाटकके ऊपरचढे हुए बैठे थे ॥२१॥ महासत्व, महाबलवान्, महामति, महोत्साह महाकार्य और महा भुजावाले हनुमान्जीका भयंकर रूप देखकर राक्षस लोग डरके
मारे दूरहीसे खडे होकर ॥२२॥ चारोंओरसे भयानक अस्त्र शस्त्र चलाने लगे दुर्द्धरनामक राक्षसने लोहेके बने हुए पांच बाण हनुमान्जीके मस्तकमें मारे यह सब
बाण तीक्ष्ण धारवाले मर्मविदारी सुवर्णलगे कमल पत्रके समान प्रभावाले थे ॥२३॥ जब हनुमान्जीके मस्तकमें वे पांचों बाण लगे तो वह नादकरके दशों दिशाओंको
उसकेशब्दसे पूर्ण करते हुए आकाशमार्ग को कूद गये ॥२४॥ यह देख करवीर दुर्द्धर रथ पर खडा होकर धनुषमें रोदा चढाय शत २ बाण छोडता हुआ महा

बलवान् हनुमान्जीके निकट पहुँचा ॥२५॥ वर्षाकालके बीत जानेपर पवन जिसप्रकार जल बर्षानेवाले मेघोंको उडाय देता है,वैसेही पवनकुमार हनुमान्जीने बाण वर्षाते हुएदुर्द्धरके बाणोंको आकाशमार्गमेंही रहकर निवारण कर दिया;अर्थात् उसके बाण इनके न लगे बचाय गये ॥२६॥ उसके पीछे वीर्यवान् पवन कुमार हनुमान्जी दुर्द्धरके बहुत बाणोंसे पीडित हो फिर नाद करते हुए शरीरको बढाने लगे॥२७॥और सहसा अति दूर ऊपर को उछल पर्वतपर वज्र गिरनेके समान उस दुर्द्धरके रथपर महावेगसे गिरे ॥२८॥ हनुमान्जीके गिरनेसे उसकेरथका चक्र व कूबर नष्ट होगया,आठ घोडेभी मसल गये,और दुर्द्धर भी उस टूटे चूर्ण हुए रथकेसाथ प्राण त्यागकर पृथ्वीपर गिरा ॥२९॥ शत्रु करके जीतनेकेअ योग्य अरिदमनकारी विरूपाक्ष और यूपाक्ष यह दोनों राक्षस दुर्द्धरको पृथ्वीपर पडा देख महाक्रोध करते हुए उछले ॥ ३० ॥ उस समय महाबाहु पवनकुमार हनुमान्जी विमल आकाशमंडलमें टिके हुए थे,जो इन दोनों राक्षसोंने सहसा

सकपिर्वारयामासतंव्योम्निशरवर्षिणम् ॥ वृष्टिमंतंपयोदांतेपयोदमिवमारुतः ॥२६॥अर्द्यमानस्ततस्तेनदुर्धरेणानिलात्मजः॥चकारनिनदंभूयो व्यवर्धतचवीर्यवान् ॥ २७ ॥ सदूरंसहसोत्पत्यदुर्धरस्यरथेहरिः ॥ निपपातमहावेगोविद्युद्राशिर्गिराविव ॥२८॥ ततःसमथिताष्टाश्वंरथंभग्ना क्षकूबरम्॥ विहायन्यपतद्भूमौदुर्धरस्त्यक्तजीवितः ॥२९॥ तंविरूपाक्षयूपाक्षौदृष्ट्वानिपतितंभुवि ॥ तौजातरोषौदुर्धर्षावुत्पेततुररिंदमौ ॥३०॥ सताभ्यांसहसोत्प्लुत्यविष्ठितोविमलेऽम्बरे ॥ मुद्गराभ्यांमहाबाहुर्वक्षस्यभिहतःकपिः॥ ३१ ॥ तयोर्वेगवतोर्वेगंनिहत्यसमहाबलः ॥ निपपात पुनर्भूमौसुपर्णइववेगितः ॥ ३२ ॥ ससालवृक्षमासाद्यसमुत्पाटचवानरः ॥ तावुभौराक्षसौवीरौजघानपवनात्मजः ॥३३॥ ततस्तांस्त्रीन्हता ञ्ज्ञात्वावानरेणतरस्विना ॥ अभिगम्यमहावेगःप्रहस्यप्रघसोबली ॥ ३४ ॥ भासकर्णश्चसंक्रुद्धःशूलमादायवीर्यवान् ॥ एकतःकपिशार्दूल यशस्विनमवस्थितौ ॥ ३५ ॥ पट्टिशेनशिताग्रेणप्रघसःप्रत्यपोथयत् ॥ भासकर्णश्चशूलेनराक्षसः कपिकुंजरम् ॥ ३६ ॥

उछल कर उनकी छातीमें दो मुद्गर मारे ॥३१॥ महाबलवान् वानर श्रेष्ठ हनुमान्जी उन वेगवान् दो राक्षसोंके अस्त्र व्यर्थ करते हुये फिर गरुड़जीके समान अति वेगसे पृथ्वी पर कूद आये ॥३२॥ और एक शाल वृक्ष के निकट जाय उसको उखाड़ उसीसे उन दो महावीर राक्षसोंको मार डाला ॥३३॥ उन तीन सेनापतियोंको मरा हुआ जानकर महा वेगवान् प्रघस नामक सेनापति हँसता हुआ हनुमान्जीके निकट पहुँचा ॥ ३४ और वीर्यवान् भासकर्ण भी शूल ग्रहण कर महाक्रोधित हो उनके निकट गया । अनन्तर एक दूसरेका सहाय होना विचार कर दोनों उन वानर श्रेष्ठ यशस्वी हनुमान्जीकोएक साथ ही घेरते हुए ॥३५॥ इन दोनोंमें प्रघसने तो तीक्ष्ण पट्टिशसे और भासकर्णने शूल ग्रहण करके कपिकुंजर हनुमान्जीको मारा ॥ ३६ ॥ शूल और पट्टिशके लग

नेसे हनुमान्जीके सर्वांगमें घाव हो गये और रुधिर बहने लगा तब बालसूर्यके समान द्युतिवाले हनुमान्जीने कोप किया ॥३७॥ मृग व्याल और वृक्षोंसे व्याप्त एक पर्वत का शिखर उखाड कर वानरोंमें कुंजर वीर हनुमान्जीने उन दोनों राक्षसोंको मारा; उस गिरिशिखरके लगनेसे वे दोनों तिल २ होकर चूर्ण होगये ॥ ३८ ॥ इस प्रकारसे जब पांचों सेनापति मारे गये,तब कपिकेशरी हनुमान्जीने बची बचाई सब सेनाको मार डाला ॥३९॥ और असुरोंके संहार कारी सहस्राक्ष इन्द्रजीके समान हनुमान्जीने घोडोंको उठाय घोडों पर देमारा जिससे वह घोडे मरे। हाथियोंको उठाय हाथियोंपर देमारा,योद्धालोगोंको उठाय योद्धाओंपर चलाया और रथोंको उठाय रथोंपर देमारा इस भाँतिसे सब सेनाकाविनाश किया ॥४०॥ मृतकपडे हुये घोडे, हाथी,राक्षसोंके व समूह टूटेहुए चक्र

सताभ्यांविक्षतैर्गात्रैरसृग्दिग्धतनूरुहः॥अभवद्वानरःक्रुद्धोबालसूर्यसमप्रभः ॥३७॥ समुत्पाट्यगिरेःशृंगंसमृगव्यालपादपम्॥जघानहनुमान्वीरोराक्षसौकपिकुंजरः ॥ गिरिशृंगसुनिष्पिष्टौतिलशस्तौबभूवतुः ॥ ३८ ॥ ततस्तेष्ववसन्नेषुसेनापतिषुपंचसु ॥ बलंतदवशेषंतुनाशयामासवानरः ॥ ३९ ॥ अश्वैरश्वान्गजैर्नागान्योधैर्योधान्रथैरथान् ॥ सकपिर्नाशयामाससहस्राक्षइवासुरान् ॥ ४० ॥ हतैर्नागैस्तुरङ्गैश्चभग्नाक्षैश्चमहारथैः ॥ हतैश्चराक्षसैर्भूमीरुद्धमार्गासमंततः ॥४१॥ ततः कपिस्तान्ध्वजीनीपतीन्रणेनिहत्यवीरान्सबलान्सवाहनान् ॥ तथैववीरःपरिगृह्यतोरणंकृतक्षणःकालइवप्रजाक्षये ॥४२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आ० च० सा० सुं० षट्चत्वारिंशःसर्गः ॥ ४६ ॥ सेनापतीन्पंचसतुप्रमापितान्हनूमतासानुचरान्सवाहनान्॥निशम्यराजासमरोद्धतोन्मुखंकुमारमक्षंप्रसमैक्षताक्षमम् ॥१॥ सतस्यदृष्ट्यर्पणसंप्रचोदितःप्रतापवान्कांचनचित्रकार्मुकः॥समुत्पपाताथसदस्युदीरितोद्विजातिमुख्यैर्हविषेवपावकः ॥२॥ ततोमहान्बालदिवाकरप्रभंप्रतप्तजांबूनदजालसंततम् रथंसमास्थाययथौसवीर्यवान्महाहरिंतंप्रतिनैर्ऋतर्षभः ॥ ३ ॥

और महारथोंसे ढकजानेके कारण चारों ओरसे मार्ग बंद होगया ॥४१॥ इसप्रकार पांच सेनापतिवीरोंका बल और वाहनोंके सहित संहार करके वीर कपि प्रलयके कालके समान अवसर पायकर फिर उसी फाटक पर चढ बैठे ॥४२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षट्चत्वारिंशः सर्गः॥४६॥ राक्षसश्रेष्ठ रावणहनुमान्जीसे उक्त पांच सेनापतियोंको वाहन और अनुचर वर्गके सहित मारेहुए श्रवण कर सन्मुख बैठेहुए युद्धमें जानेके लिये तैयार कुमार अक्षको युद्धमें जानेकीआज्ञा देता हुआ॥१॥यज्ञशालामें प्रधान२ब्राह्मणों कर के घृतकी सहायसे प्रेरित अनलके समान रावणके देखतेहीविशेष भाँतिसे प्रेरित होकर प्रतापशालीअक्ष सुवर्णका धनुष धारण करउसी समयखडा होगया ॥ २ ॥उसके पीछे महावीर्यवान् राक्षसश्रेष्ठ सूर्यके समान चमकते हुये रथपर सवार होकर

हनुमान्‌जीसे लडनेको चला, उसका यह रथ तपाये हुये सुवर्णसे बना और विचित्र था ॥३॥ यह रथ विपुल तपस्याके प्रभावसे प्राप्त हुआ था; यह रथ रत्न खचित ध्वजापताकाओंसे सब प्रकार सजा हुआ था पवनकेसे वेगवान् आठ घोडे इसमें जुत रहे थे ॥ ४ ॥ देवासुरसे जीतनेके अयोग्य पर्वतादिकोंपर भी जिसकी गति न रुके, बिजलीके समान प्रभासम्पन्न आकाशमार्गमें भी घूमनेको समर्थ सुसज्जित तूण (तरकश) सहित आठ अङ्गोंसे युक्त यथाक्रमसे सुडौल बना हुआ शक्तितोमरादि अस्त्रोंसे परिपूर्ण ॥५॥ युद्धकी वस्तुओंसे भरा हुआ, सूर्यचन्द्रमाके समान द्युतिवाला, सुवर्णजालविभूषित और सूर्यके समान प्रभा सम्पन्न यह रथ था ॥६॥ देवताओंके समान विक्रम करनेवाला कुमार अक्ष ऐसे रथपर चढकर तुरंग,मातंग और महारथके शब्दसे पर्वतसहित भूमंडल और

ततस्तपःसंग्रहसंचयार्जितंप्रतप्तजांबूनदजालचित्रितम् ॥ पताकिनंरत्नविभूषितध्वजंमनोजवाष्टाश्ववरैःसुयोजितम् ॥४॥सुरासुराधृष्यमसंगचारिणंतडित्प्रभंव्योमचरंसमाहितम् ॥सतूणमष्टासिनिबद्धबन्धुरंयथाक्रमावेशितशक्तितोमरम् ॥ ५ ॥ विराजमानंप्रतिपूर्णवस्तुनासहेमदाम्नाशशिसूर्यवर्चसा ॥दिवाकराभंरथमास्थितस्ततःसनिर्जगामामरतुल्यविक्रमः ॥ ६ ॥ सपूरयन्खंचमहींचसाचलांतुरंगमातंगमहारथस्वनैः ॥ बलैः समेतैःसहतोरणस्थितंसमर्थमासीनमुपागमत्कपिम् ॥७॥ सतंसमासाद्यहरिंहरीक्षणोयुगांतकालाग्निमिवप्रजाक्षये ॥ अवस्थितंविस्मितजातसंभ्रमसमैक्षताक्षोबहुमानचक्षुषा ॥ ८ ॥ सतस्यवेगंचकपेर्महात्मनःपराक्रमंचारिषुरावणात्मजः विचारयन्स्वंचबलंमहाबलोयुगक्षयेसूर्यइवाभिवर्धत ॥ ९ ॥ सजातमन्युःप्रसमीक्ष्यविक्रमंस्थितःस्थिरःसंयतिदुर्निवारणम् ॥ समाहितात्माहनुमंतमाहवेप्रचोदयामासशितैःशरैस्त्रिभिः ॥१०॥ ततःकपिंतंप्रसमीक्ष्यगर्वितंजितश्रमंशत्रुपराजयोचितम् ॥ अवैक्षताक्षःसमुदीर्णमानसःसबाणपाणिःप्रगृहीतकार्मुकः ॥ ११॥

दशों दिशाओंको शब्दायमान करता हुआ एकत्र हुई सेनाकेसाथ अति समर्थ तोरण पर बैठे हुए हनुमान्‌जीके समीप आय पहुँचा ॥७॥ वहां प्रजागणोंके नाश कालमें प्रलयकी अग्निके समान रूप धारण किये मुसकाते चतुर हनुमान्‌जीको प्राप्त होकर सिंहके समान क्रूर दृष्टिवाले अक्षने अपनी बडी आंखे फैलाय उनको बहुत देखा पवनकुमार हनुमान्‌जी अक्षको देखकर विस्मय और सम्भ्रमके वश हुये॥८॥ महाबलवान् अक्ष,महात्मा हनुमान्‌जीका बल और शत्रुके प्रति पराक्रम और अपना बलाबल विचार करके युगक्षय कालके सूर्यके समान अपने तेजसे बढने लगा ॥९॥ और स्थिर भावसे टिककर कोपके वश हो रणसे विमुख न होनेवाले पराक्रमसम्पन्न हनुमान्‌जीपर स्वस्थ चित्तसे पैनी धारवाले बाणोंका प्रहार कर उनको युद्ध करनेके लिये ललकारता हुआ ॥१०॥ अक्षने धनुषबाण हाथमें

लिया सो पवनकुमार हनुमान्‌जी शत्रुओंको हरानेके योग्यही पात्र थे इससे कुछ भी न थके थे,व अतिशय अहंकारवान् थे और उनका मन भी बडे उत्साहसे युक्त था॥११॥उनको उत्साहित देखकर सुवर्णका बना हुआ हृदयमें भूषणधारेबाजू मनोहर कुंडल,प्रचण्ड पराक्रम इन सबसे सजे अक्षने हनुमान्‌जीपर चढाई की, उसी समय दोनोंमें महाघोर युद्ध आरंभ हुआ,यह युद्ध देव और दानव गणोंको भी भयका देनेवाला हुआ ॥१२॥ वह दोनोंजने अपने२वीर्यको दिखलाते हुए युद्ध करने लगे,उस समय पृथ्वीके सबही प्राणी चिल्लाने लगे,सूर्यभगवान्‌का तेज नष्ट हो गया,पवनकी गति बंद होगई,पर्वत काँपने लगे,आकाशमंडल शब्दसे पूर्ण होगया और समुद्र खलबलाय उठा ॥१३॥ फिर निशाना ताकने,बाण चढाने और बाण छोडनेमें चतुर अक्षने,सुवर्णमय पुंख सुन्दरमुख आर पंखयुक्त विषैले सर्पोंके समान तीनबाण कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जीके मस्तकमें मारे ॥१४॥ एकसाथ तीनों बाणोंके मस्तकमें लगनेसे हनुमान्‌जीके अंगसे रुधिर धारा बहने लगी

सहेमनिष्कांगदचारुकुंडलःसमाससादाशुपराक्रमःकपिम्॥ तयोर्बभूवाप्रतिमःसमागमःसुरासुराणामपिसंभ्रमप्रदः ॥१२॥ ररासभूमिर्नततापभानुमान्ववौनवायुःप्रचचालचाचलः ॥ कपेःकुमारस्यचवीर्यसंयुगंननादचद्योरुदधिश्चचुक्षुभे ॥१३॥ सतस्यवीरःसुमुखान्पतत्रिणःसुवर्णपुंखान्सविषानिवोरगान्॥समाधिसंयोगविमोक्षतत्त्वविक्षरानथत्रीन्कपिमूर्ध्न्यताडयत्॥१४॥ सतैःशरैर्मूर्ध्निसमंनिपातैःक्षरन्नसृग्दिग्धविवृत्तनेत्रः॥ नवोदितादित्यनिभःशरांशुमान्व्यराजतादित्यइवांशुमालिकः॥१५॥ततःप्लवंगाधिपमंत्रिसत्तमःसमीक्ष्यतंराजवरात्मजंरणे॥उदग्रचित्रायुधचित्रकार्मुकंजहर्षचापूर्यतचाहवोन्मुखः॥१६॥समंदराग्रस्थइवांशुमालीविवृद्धकोपोबलवीर्यसंवृतः॥कुमाररक्षःसबलंसवाहनंददाहनेत्राग्निमरीचिभिस्तदा ॥ १७ ॥ ततःसबाणासनशक्रकार्मुकःशरप्रवर्षोयुधिराक्षसांबुदः ॥ शरान्मुमोचाशुहरीश्वराचलेबलाहकोवृष्टिमिवाचलोत्तमे॥१८॥

उनके नेत्र घूमने लगे और सर्व शरीर लोहूलुहान होगया उस कालमें प्रभातकालके बाल सूर्यके समान अरुणवर्ण पवनकुमार हनुमान्‌जी शररूपी किरणमालासे ढककर रश्मिमाली सूर्यभगवानके समान शोभायमान होने लगे ॥१५॥उसके पीछे वानरराज सुग्रीवजीके प्रधान मंत्री हनुमानजी;राक्षसश्रेष्ठ रावणके पुत्र विचित्र धनुष और विचित्र तीक्ष्ण शस्त्र धारण किये अक्षको संग्रामभूमिमें अवलोकन करके हर्षित हुये और तत्काल युद्धके लिये तैयार होकर अपना रूप बढाते हुये ॥१६॥ हनुमानजीका बल, वीर्य, कोप यह समस्त ही बढने लगा। वह मन्दराचलपर टिके हुए सूर्यके समान नेत्रोंके द्वाराउठी हुई अग्निकी किरणोंसे अक्षकुमारको बल और बाहनोंके सहित भस्म करने लगे ॥ १७ ॥ मेघोंके समूह पर्वतश्रेष्ठ जिस प्रकार जलकी धारा वर्षाते हैं वैसेही शररूप वृष्टियुक्त निशाचर स्वरूप

विचित्र शरासनरूप इन्द्रधनुषसे शोभायमान होकर वानरश्रेष्ठ हनुमानरूप पर्वतपर बाण वर्षा करने लगे ॥१८॥ राक्षस अक्षका बल,वीर्य,सायक और तेज समस्तही बढा हुआ और संग्राममें विक्रम भी अतिप्रचंड था,उस अक्षकुमारको युद्धमें देख कपिश्रेष्ठ हनुमानूजी हर्षित हो मेघके समान गंभीर गर्जन कर उठे ॥१९॥ युद्धमें वीर्यसे गर्वित लाल नेत्रवाला अक्ष बलस्वभावके मारे अतिशय क्रोधित हो गज जिस प्रकार तृणसे ढके महाकूपमें चला जाता है,वैसेही योद्धाओंमें प्रधान हनुमानूजीको प्राप्त हुआ ॥२०॥ जब वह अक्ष अतिबलसे बाणोंको छोडने लगे तब पवनकुमार हनुमानूजी भुजा और जांघे चलाय भयंकर रूप धारण कर परम उत्साह सहित तत्काल आकाशमंडलको छूते हुए मेघके समान शब्द कर उठे ॥ २१ ॥ उन्होंने जब इस प्रकारसे ऊपरको छलांग मारी; तो राक्षसश्रेष्ठ, रथिप्रधान, प्रतापशाली बलवान् रथी अक्षकुमार बाणोंकी वर्षा करता हुआ हनुमानजीको उनसे छाय अतिवेगसे उनके सामने हुआ उसने ऐसे बाण वर्षाये

कपिस्ततस्तंरणचंडविक्रमंप्रवृद्धतेजोबलवीर्यसायकम् ।। कुमारमक्षंप्रसमीक्ष्यसंयुगेननादहर्षाद्धनतुल्यनिःस्वनः ॥१९॥ सबालभावाद्युधिवीर्यदर्पितःप्रवृद्धमन्युःक्षतजोपमेक्षणः ।। समाससादाप्रतिमंरणेकपिंगजोमहाकूपमिवावृतंतृणैः ॥ २० ॥ सतेनबाणैःप्रसभंनिपातितैश्चकारनादंघननादनिःस्वनः ॥ समुत्सहेनाशुनभःसमारुजन्भुजोरुविक्षेपणघोरदर्शनः ॥ २१ ॥ तमुत्पततंसमभिद्रवद्बलीसराक्षसानांप्रवरःप्रतापवान् ॥ रथीरथिश्रेष्ठतरःकिरञ्छरैःपयोधरःशैलमिवाश्मवृष्टिभिः ॥२२॥ सताञ्छरांस्तस्यहरिर्विमोक्षयंश्चचारवीरःपथिवायुसेविते ॥ शरांतरेमारुतवद्विनिष्पतन्मनोजवःसंयतिभीमविक्रमः ॥२३॥ तमात्तबाणासनमाहवोन्मुखंखमास्तृणंतंविविधैःशरोत्तमैः ॥ अवैक्षताक्षंबहुमानचक्षुषाजगामचिंतांसचमारुतात्मजः ॥ २४ ॥ ततःशरैर्भिन्नभुजांतरःकपिःकुमारवर्येणमहात्मनानदन् ॥ महाभुजःकर्मविशेषतत्त्वविद्विचिंतयामासरणेपराक्रमम् ॥२५॥ अबालवद्बालदिवाकरप्रभःकरोत्ययंकर्ममहन्महाबलः ॥ नचास्यसर्वाहवकर्मशालिनःप्रमापणेमेमतिरत्रजायते ॥२६॥

कि; जैसे बादल ओले वर्षाकर पर्वतको जलसे गीला करता है ॥ २२ ॥ युद्धमें भयंकर विक्रमकारी और मनसे भी अधिक वेगगामी वीर कपि पवनकुमार हनुमानूजी पवनके समान बाणसमूहके बिचले मार्गमें प्राप्त होकर उसके समस्त शर व्यर्थ कर रणक्षेत्रमें घूमने लगे ॥ २३ ॥ युद्धमें तैयार अक्ष शरासन ग्रहण करके अनेक प्रकारके श्रेष्ठ शरसमूहोंसे आकाशको छाय देता हुआ । पवनकुमार हनुमानूजी यह बात देखकर अक्षके ऊपर आदर सहित दृष्टि डाल मनही मनमें चिन्ता करने लगे ॥ २४ ॥ कि इतनेहीमें महात्मा कुमारश्रेष्ठ अक्षने बाणोंसे इनकी भुजाका मध्यभाग घायल किया; कार्य करनेमें कुशल महाबाहु हनुमानूजी अक्षके युद्धविक्रमकी चिन्ता करके कहने लगे ॥२५॥ कि इस महाबलवान्‌महात्मा बालसूर्यके समान अक्षकुमारने वीर पुरुषके समान कार्य किया है; सब

भांतिके युद्ध'कार्योंमें इसकी चतुरता है सो इस लिये हमारी इच्छा इस समय इसको वध करनेकी नहीं होती ॥ २६ ॥ यह अक्ष महात्मा, महावीर्यवान् युद्ध करनेको तत्पर, अतिशय क्लेशका सहनेवाला और भली भांतिसे कार्य करनेमें चतुर; कर्म कुशल और गुणवान् होनेसे नाग, यक्ष और ऋषिगण निःसन्देह इसकी पूजा किया करते हैं ॥ २७ ॥ पराक्रम और उत्साह युक्त भय व आकारादिके एक कालमेंही तिरोहित होनेसे यह वीरश्रेष्ठ सामने होकर हमारी ओर दृष्टि डाल रहा है। उस लघुहस्त निशाचरका पराक्रम देखकर देवदानवोंके मनभी कंपित हो जातेहैं ॥२८॥ परन्तु बात यह है कि जो हम इसको छोड देते हैं तो यह निशाचर निश्चय ही हमारा अनादर करेगा, क्योंकि युद्धमें इसका बीरत्व धीरे २ बढता ही जाता है आगेके बढजानेमें किसी प्रकारसे अब उदासीनता न करना चाहिये। अर्थात् यह न समझे कि आगको जरासी चिनगारी क्या कर सकती है ? इसलिये इसको हम अभी मार डालते हैं ॥२९॥ महाबलवान्

अयंमहात्मांचमहांश्चवीर्यतःसमाहितश्चातिसहश्चसंयुगे ॥ असंशयंकर्मगुणोदयादयंसनागयक्षैर्मुनिभिश्चपूजितः ॥ २७ ॥ पराक्रमोत्साविवृद्धमानसःसमीक्षतेमांप्रमुखोग्रतःस्थितः ॥ पराक्रमोह्यस्यमनांसिकंपयेत्सुरासुराणामपिशीघ्रकारिणः ॥२८॥ नखल्वयंनाभिभवेदुपेक्षितःपराक्रमोह्यस्यरणेविवर्धते ॥ प्रमापणंह्यस्यममाद्यरोचतेनवर्धमानोग्निरुपेक्षितुंक्षमः ॥२९॥ इतिप्रवेगंतुपरस्यतर्कयन्स्वकर्मयोगंचविधायवीर्यवान् ॥ चकारवेगंतुमहाबलस्तदामतिंचचक्रेस्यवधेतदानीम् ॥३०॥ सतस्यतानष्टवरान्महाहयान्समाहितान्भारसहान्विवर्तने ॥ जघानवीरःपथिवायुसेवितेतलप्रहारैःपवनात्मजःकपिः ॥३१॥ ततस्तलेनाहतोमहारथःसतस्यपिंगाधिपमंत्रिनिर्जितः ॥ सभग्ननीडःपरिवृत्तकूबरःपपातभूमौहतवाजिरंबरात् ॥३२॥ सतंपरित्यज्यमहारथोरथंसकार्मुकःखड्गधरःखमुत्पतन् ॥ तपोभियोगादृषिरुग्रवीर्यवान्विहायदेहंमरुतामिवालयम् ॥३३॥

और महावीर्यवान् हनुमानजी इसप्रकारसे शत्रुके पराक्रमकी चिन्ताकरके और अपने कर्तव्यका निश्चय कर अतिवेगसहित अक्षकुमारके संहारका विचार करते हुए ॥ ३० ॥ यह विचार कर पवनकुमार वीर्यवान् हनुमानजीने आकाशमार्गमेंही टिके २ बडाभार सहनेवाले व अनेक भांतिके चक्र देनेमें कुशल अक्षके रथके आठ घोडे अपनी लातके प्रहारसे मारडाले ॥ ३१ ॥ सुग्रीवजीके मंत्री हनुमानजी करके लातके प्रहारसे घायल और पराजित होनेसे अक्षकुमारका बडा भारी रथ बैठ कर और कूबर टूट जानेसे और घोडे मरनेसे शून्यहो पृथ्वीपर गिरपडा ॥३२॥ घोडे नष्ट होगये उग्रवीर्यवाले ऋषि जिस प्रकार तपके बलसे देह त्यागकर आकाश मार्गमें सुरलोकको चले जातेहैं; वैसेही महारथी अक्षकुमार टूटा रथ छोड़ धनुष बाण खड्ग धारण कर आकाशको कूद गया ॥३३॥ इस प्रकारसे

वह अक्षकुमार पक्षिराज गरुड और सिद्धगणोंसे सेवित आकाश मार्गमें विचरण करने लगा तब पवनसमान वेग और विक्रम सम्पन्न हनुमानजीने निकट पहुँ चकर अतिदृढताईसे उसका चरण पकड लिया ॥ ३४ ॥ अण्डजेश्वर (पक्षियोंके राजा) गरुडजी जिस प्रकार महासर्पोंको पकड लेते हैं; ऐसेही अपने पिता पव नके समान वेगवान् वीर्यवान् महाकपि हनुमानजीने अक्षकुमारको पकड और हजारबार घुमाय पृथ्वीपर संग्रामभूमिमें फेंक दिया ॥ ३५ ॥ उसकी बाहैं; जांघैं, कमर, स्तन, टूट गये हड्डी और आंखोंका चूरा हो गया सब जोड अलग२होगये और जोडोंके बन्धन भी इधरउधर टूटकर गिर पडे इस प्रकारसे पवनकुमार हनु मानजीने उस राक्षसको मारडाला ॥ ३६ ॥ वह अक्ष इस अवस्थामें रुधिर वमन करता हुवा पृथ्वीपर गिर पडा मह। कपि हनुमानने पृथ्वीपर पटक फिर उसके ऊपर कूद कर राक्षसपति रावणको महाभय उपजाया, कुमार अक्षके मरजानेपर महर्षि गण ज्योतिषचक्रके ग्रहगण, यक्ष, और पन्नगगण इन्द्रसहित देवताओंके वृन्द

कपिस्ततस्तंविचरंतमंबरेपतत्रिराजानिलसिद्धसेविते॥ समेत्यतंमारुतवेगविक्रमःक्रमेणजग्राहचपादयोर्दृढम्॥३४॥सतंसमाविध्यसहस्रशःकपि र्महोरगंगृह्यइवांडजेश्वरः ॥ मुमोचवेगात्पितृतुल्यविक्रमोमहीतलेसंयतिवानरोत्तमः ॥३५॥ सभग्नबाहूरुकटीपयोधरःक्षरन्नसृङ्निर्मथितास्थि लोचनः ॥ संभिन्नसंधिःप्रविकीर्णबंधनोहतःक्षितौवायुसुतेनराक्षसः॥३६॥महाकपिर्भूमितलेनिपीडयतंचकाररक्षोधिपतेर्महद्भयम् ॥ महर्षिभि श्चक्रचरैःसमागतैःसमेत्यभूतैश्चसयक्षपन्नगैः ॥ सुरैश्चसेंद्रैर्भृशजातविस्मयैर्हतेकुमारेसकपिर्निरीक्षितः॥३७॥निहत्यतंवज्रिसुतोपमंरणेकुमारमक्षं क्षतजोपमेक्षणम् ॥ तदेववीरोभिजगामतोरणंकृतक्षणःकालइवप्रजाक्षये ॥ ३८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥४७॥ ततस्तुरक्षोधिपतिर्महात्माहनूमताक्षेनिहतेकुमारे ॥ मनःसमाधायसदेवकल्पंसमादिदेशेंद्रजितंसरोषः ॥१॥ त्वमस्त्रविच्छस्त्रभृतांवरिष्ठःसुरासुराणामपिशोकदाता ॥ सुरेषुसेंद्रेषुचदृष्टकर्मापितामहाराधनसंचितास्त्रः॥२॥

आयकर अतिशय विस्मय युक्त हो हनुमानजीको देखने लगे ॥३७॥ उस काल इन्द्रके पुत्र जयन्तके समान पराक्रम करनेवाले लालनेत्रयुक्त अक्षको महावीर हनुमानजी समरमें संहार करके प्रलयकालके समान समयकी बाट जोहनेके लिये फिर उस तोरण पर बैठ गये ॥ ३८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥४७॥ जब हनुमानजीने रणमें कुमार अक्षको मारडाला, तब राक्षसोंके पति महात्मा रावणने अपने मनके शोक वेगको रोक देवताओंके समान अपनेपुत्र इन्द्रजीतको क्रोधके वशहो युद्धमें जानेको आज्ञा दी ॥ १ ॥ रावणने मेघनादसे कहा कि; पुत्र तुम सब अस्त्रोंके जाननेवाले और सब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ सुर असुरलोगोंको भी कँपानेवाले; इंद्रादि समस्तही देवताओंने तुम्हारे पराक्रमको समरमें देखा है और ब्रह्माजीकी

आराधना करके तुमने ब्रह्मास्त्र भी प्राप्त कर लिया है ॥ २ ॥ तुम्हारे अस्त्रके बलको प्राप्त हो देवराज इन्द्रजीके आश्रित उनचास पवनोंके साथ देवतालोग भी युद्धमें टिकनेको समर्थ नहीं हैं ॥ ३ ॥ तुम्हारे सिवाय त्रिलोकमें ऐसा कोई भी नहीं है,जो युद्धमें न थकै तुम अपनी बाँहोंके वीर और तपोबलसे सब भाँति रक्षित हो असाधारण बुद्धि शक्ति सम्पन्न और देशकालकेजानने वालोंमें प्रधान हो ॥४॥ युद्धमें ऐसा कोई कार्य नहीं है कि जिसको तुम न कर सकते हो। बुद्धिके साथ विचार करके समस्त राजकार्यके निर्वाह करनेको तुममें शक्ति है, त्रिभुवनमे ऐसा कोई नहीं है कि जो पुरुष तुम्हारे बाहुबल और अस्त्रबलको न जानता हो ॥ ५ ॥ तुम्हारा तप, बल पराक्रम और युद्धमें अस्त्र बल यह सबही हमारे समान हैं, रणक्षेत्रमें जानेसे निश्चयही जय होना विचार कर हमारा मन कुछ भी नहीं ऊबता ॥६॥ अस्सी हजार किंकर गण, जम्बुमाली, पांच सेनापति और मंत्रियोंके पुत्रगण यह सब ही मारे गये॥७॥हाथी,घोडे और रथ

त्वदस्त्रबलमासाद्यससुराःसमरुद्गणः॥नशेकुःसमरेस्थातुंसुरेश्वरसमाश्रिताः॥३॥नकश्चित्त्रिषुलोकेषुसंयुगेनगतश्रमः॥भुजवीर्याभिगुप्तश्चतपसाचाभिरक्षितः॥ देशकालप्रधानश्चत्वमेवमतिसत्तमः ॥४॥ नतेस्त्यशक्यंसमरेषुकर्मणांनतेस्त्यकार्यंमतिपूर्वमंत्रणे ॥ नसोस्तिकश्चित्त्रिषुसंग्रहेषुनवेदयस्तेस्त्रबलंबलंच॥५॥ममानुरूपंतपसोबलंचतेपराक्रमश्चास्त्रबलंचसंयुगे ॥ नत्वांसमासाद्यरणावमर्देमनःश्रमंगच्छतिनिश्चितार्थम् ॥ ६ ॥ निहताःकिंकराःसर्वेजंबुमालीचराक्षसाः ॥ अमात्यपुत्रावीराश्चपंचसेनाग्रगामिनः॥७॥बलानिसुसमृद्धानिशाश्वनागरथानिच॥महोदरश्चशयितःकुमारोऽक्षश्चसूदितः ॥ नतुतेष्वेवमेसारोयस्त्वय्यरिनिसूदन ॥८॥ इदंचदृष्ट्वानिहतंमहद्बलंकपेःप्रभावंचपराक्रमंच ॥ त्वमात्मनश्चापिनिरीक्ष्यसारंकुरुष्ववेगंस्वबलानुरूपम् ॥९॥ बलावमर्दैस्त्वयिसन्निकृष्टेयथागतेशाम्यतिशांतशत्रुः ॥ तथासमीक्ष्यात्मबलंपरंचसमारभस्वास्त्रभृतां वरिष्ठ ॥ १० ॥ नवीरसेनागणशांच्यवंतिनवज्रमादायविशालसारम् ॥ नमारुतस्यास्तिगतिप्रमाणंनचाग्निकल्पः करणेनहंतुम् ॥ ११ ॥

सहित परम समृद्धिसम्पन्न सेना औरमहोदर वतुम्हारा सहोदर अक्षकुमार यह सबही मारे गये. परन्तु हे शत्रुओंके मारनेवाले ! उन लोगोंमें तुम्हारे समान बलका होना हमनहीं मानते,तुम उनसबसे बली हो ॥८॥ इस समय उस वानरका प्रभाव व पराक्रम और तुम अपनी अति श्रेष्ठ बडी भारी सेनाका मारा जाना इत्यादि देख भाल सोच विचार कर सामर्थ्यके अनुसार बल दिखाओ॥९॥हे अस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ ! तुम्हारे युद्धके लिये तैयार हो वह पहुंचनेपर बहुत सारी सेना भी न मारी जाय और बलका क्षय होनेमें शत्रुभी क्षीण होजाय,इसही प्रकारसे अपनेबल और पराया बल देखकर तुम कार्य प्रारंभ करो ॥ १० ॥ हे वीर ! साथमें सेना ले जानेका कुछ प्रयोजन नहीं हैं, क्योंकि सेना भागती हैं तो झुण्डके झुण्ड होकर भाग निकलती है और सारवान अस्त्र शस्त्रोंके संगले जानेकी कुछ आवश्यकता नहीं क्योंकि, वह अस्त्र शस्त्र भी टूट टाट जातेहैं,और हनुमानके बलका भी कुछ ठिकाना नहीं। अधिक क्या कहें उस अग्निसमान वानरको शस्त्रादिकोंसे

संहार करना कठिन है ॥११॥ अब हमनेजो कुछ कहा उसको स्थिर चित्त से विचार करके तुमको अपना कार्य सिद्ध करना पडेगा, यह विचार कर मन लगाय इस धनुषका दिव्य वीर्य स्मरण कर युद्धमें जान निर्विघ्न अपना कार्य पूरा करो ॥१२॥ तुमको युद्धमें भेजना किसी प्रकारसे हमको उचित नहीं है, परन्तु क्या कियाजाय यही राज धर्मकी विधि और क्षत्रियोंके लिये शास्त्रसम्मत वार्त्ता है॥१३॥ हे शत्रुओंके नाश करनेवाले ! विविध शास्त्रोंमें और युद्धके विषयमें भलीभाँति चतुरता प्राप्त कर लेनी चाहिये जो पुरुष संग्राममें विजय प्राप्त होनेकी इच्छा करता है उसको इन सब बातोंमे ज्ञान प्राप्त कर लेना कर्त्तव्य है ॥ १४ ॥ देवताओंके समान प्रभाववाले इन्द्रजीतने पिता का वचन श्रवण कर युद्धमें कृतनिश्चय हो विना क्षण भरका विलम्ब किये रावणकी परिक्रमा की ॥ १५ ॥

तमेवमर्थंप्रसमीक्ष्यसम्यक्स्वकर्मसाम्याद्धिसमाहितात्मा ॥ स्मरंश्चदिव्यंधनुषोस्ववीर्यंव्रजाक्षतंकर्मसमारभस्व ॥१२॥ नखल्वियंमतिश्रेष्ठाय त्वांसंप्रेषयाम्यहम् ॥ इयंचराजधर्माणांक्षत्रस्यचमतिर्मता॥१३॥ नानाशस्त्रेषुसंग्रामेवैशारद्यमरिंदम ॥ अवश्यमेवबोद्धव्यंकाम्यश्चविजयोरणे ॥ १४ ॥ ततःपितुस्तद्वचनंनिशम्यप्रदक्षिणंदक्षसुतप्रभावः ॥ चकारभर्तारमतित्वरेणरणायवीरः प्रतिपन्नबुद्धिः ॥१५॥ ततस्तैः स्वगणैरिष्टै रिंद्रजित्प्रतिपूजितः ॥ युद्धोद्धतकृतोत्साहःसंग्रामंसंप्रपद्यत ॥१६॥ श्रीमान्पद्मविशालाक्षोराक्षसाधिपतेःसुतः ॥ निर्जगाममहातेजाः समुद्रइव पर्वणि ॥१७॥ सपक्षिराजोपमतुल्यवेगैर्व्यालैश्चतुर्भिःसतुतीक्ष्णदंष्ट्रैः ॥ रथंसमायुक्तमसह्यवेगःसमारुरोहेंद्रजिदिंद्रकल्पः ॥ १८ ॥ सरथीध न्विनांश्रेष्ठःशस्त्रज्ञोऽस्त्रविदांवरः ॥ रथेनाभिययौक्षिप्रंहनूमान्यत्रसोऽभवत् ॥ १९ ॥

इन्द्रजीत जैसा युद्धमें बढा हुआ था वैसा ही उत्साहवाला था वह अपने बलवाले राक्षसगणों करके सम्मानित होकर युद्धमें जाता हुआ ॥ १६ ॥ पर्वके समय समुद्र जिस प्रकारसे बढता है कमलदलके समान बडे २ नेत्रवाला परमतेजस्वी श्रीमान् राक्षसराजनंदन मेघनाद भी वैसाही रण उत्साहसे परिपूर्ण होकर युद्धके लिये निकला ॥ १७ ॥ अनन्तर इन्द्रके समान असह्य वेगवाला इन्द्रजीत पक्षिराज गरुडके समान वेगशाली तेज डाढवाले चार सर्प जिसमें जुते हुए ऐसे रथपर सवार हुआ ॥ १८ ॥ समस्त धनुषधारी और सम्पूर्ण अस्त्र जाननेवालोंमें श्रेष्ठ, शस्त्रज्ञान सम्पन्न और युद्ध विशारद इन्द्रजीत रथपर चढ शीघ्रतासे गमन कर जहाँ हनुमान्जी बैठे थे उस स्थानमें पहुँचा ॥ १९ ॥

वानरवीर हनुमानूजी उसके रथका शब्द श्रवण और धनुषकी टंकारका शब्द करके अतिशय हर्षित हुए ॥ २० ॥ रणपंडित मेघघनाद धनुष बाण और तेज फलके लगे हुए शर ग्रहण करके हनुमानूजी के सामने चला ॥ २१ ॥ जिस समय वह मेघनाद हर्ष सहित बाण लेकर निकला, उस समय दशों दिशा मलीन होगई, शृगाल इत्यादि पशुगण वारंवार चिल्लायकर भयंकर शब्द करने लगे ॥ २२ ॥ नागगण, पशुगण, महर्षिगण, ग्रहगण और सिद्धगण वहां युद्ध देखनेके लिये आये और आकाशम पक्षिगण उडते २ संग्राम होगा इस हर्षके मारे ऊंचे शब्दसे शब्द करने लगे ॥ २३ ॥ इस ओर इन्द्रजीतका रथ बड़ी शीघ्रताके साथ आता हुआ देखकर अति वेगसे गंभीर गर्जन करते हुये महावीरजी बढने लगे ॥ २४ ॥ विचित्र धनुषध.री इन्द्रजीत दिव्य रथपर सवार होकर,

सतस्यरथनिर्घोषंज्यास्वनंकार्मुकस्यच ॥ निशम्यहरिवीरोसौसंप्रहृष्टतरोऽभवत् ॥२०॥ इंद्रजिच्चापमादायशितशल्यांश्चसायकान् ॥ हनूमंतमभिप्रेत्यजगामरणपंडितः ॥२१॥ तस्मिंस्ततःसंयतिजातहर्षेरणायनिर्गच्छतिबाणपाणौ ॥ दिशश्चसर्वाःकलुषाबभूवुर्मृगाश्चरौद्राबहुधाविनेदुः ॥२२॥ समागतास्तत्रतुनागयक्षामहर्षयश्चक्रचराश्चसिद्धाः ॥ नभःसमावृत्यचपक्षिसंघाविनेदुरुच्चैःपरमप्रहृष्टाः ॥२३॥आयांतंसरथंदृष्ट्वातूर्णमिंद्रध्वजंकपिः ॥ ननादचमहानादंव्यवर्धतचवेगवान् ॥२४॥ इंद्रजित्सरथंदिव्यमाश्रितश्चित्रकार्मुकः ॥धनुर्विस्फारयामासतडिदूर्जितनिःस्वनम् ॥२५ ॥ ततःसमेतावतितीक्ष्णवेगौमहाबलौतौरणनिर्विशंकौ ॥ कपिश्चरक्षोधिपतेस्तनूजः सुरासुरेंद्राविवबद्धवैरौ ॥२६॥ सतस्यवीरस्यमहारथस्यधनुष्मतःसंयतिसंमतस्य॥शरप्रवेगंव्यहनत्प्रवृद्धश्चचारमार्गेपितुरप्रमेयः ॥२७॥ततःशरानायततीक्ष्णशल्यान्सुपत्रिणःकांचनचित्रपुंखान्॥मुमोचवीरःपरवीरहंतासुसंततान्वज्रसमानवेगान् ॥२८॥ ततःसतत्स्यंदननिःस्वनंचमृदंगभेरीपटहस्वनंच ॥ विकृष्यमाणस्यचकार्मुकस्यनिशम्यघोषंपुनरुत्पपात ॥ २९ ॥

वज्रके समान गंभीर शब्द युक्त सुन्दर धनुष पर टंकारको देता हुआ ॥ २५ ॥ उसके पीछे वैर बांधे हुए दैत्यराज और इन्द्र के समान दोनोंजने युद्ध करने लगे । वह दोनों जनेही तीक्ष्ण वेग युद्ध महाबलवान् और युद्ध में निडर चित्त वाले थे ॥२६॥ अद्वितीय वीर महाकपि हनुमानूजी बहुत लंबे चौडे हो कर संग्राम करने में चतुर, वीर धनुष धारी महारथी इन्द्रजीत के बाणोंका वेग विफल करके पवनके मार्ग में विचरण करने लगे ॥२७॥ यह देखकर परवीरघाती इन्द्रजीतने बहुतसे बाण छोडे यह समस्त बाण बडे लम्बे चौडे तेज फलके लगे सुन्दर पंखयुक्त सुवर्णसे चित्रित और वज्रके समान वेगवान् थे ॥ २८ ॥ हनुमानजी उसके रथ, मृदंग भेरी, नगाडे खिंचते हुए धनुषका घोर शब्द श्रवण करके फिर उछल गये ॥ २९ ॥

इन्द्रजीत निशानेकी ओर स्थिर हो रहा था, तथापि हनुमानजी उसके बाणोंको व्यर्थकर शीघ्रतासे उन बाणोंके दूरही दूर घूमने लगे ॥३०॥ और फिर उन समस्त बाणोंके सन्मुखहोकर बाण छोडनेके समय दोनों हाथोंको फैलाय उनको पकडकर मेघनादकेसब बाणोंको विफल कर देते हुए कूदे ॥३१॥ वह दोनोंही बलवान् और युद्ध विशारदवीर थेवह दोनोंही वीर सब प्राणियोंके मनको हरनेवाला अति श्रेष्ठ युद्ध करने लगे ॥३२॥ राक्षसने तो यह भेद न पाया कि, वह हनुमान कैसे हमारे बाणोंको बचा जाते हैं, और हनुमानजीने यह न जाना कि, वह किस भाँति इतनी शीघ्रतासे बाण चलायेही जाता है । दोनों जनेही देवताओंके समान पराक्रम सम्पन्न थे, युद्ध करते हुए दोनोंही एक दूसरेके लिये सहनेके अयोग्य हो गये ॥३३॥ उसके पीछे महात्मा राक्षसराजका पुत्र मेघनाद बहुतेरे अमोघ बाण (विफल न होनेवाले) चलानेपर भी हनुमानूजीको न बिंधा हुआ देखकर इनका रूप जाननेके लिये ध्यान योगका आश्रय ले एकाग्र चित्तसे चिन्ता करने

शरणामंतरेष्वाशुव्यावर्ततमहाकपिः॥हरिस्तस्याभिलक्ष्यस्यमोक्षयल्लँक्ष्यसंग्रहम् ॥३०॥ शराणामग्रतस्तस्यपुनःसमभिवर्तत॥ प्रसार्यहस्तौ हनुमानुत्पपातानिलात्मजः ॥ ३१ ॥ तावुभौवेगसंपन्नौरणकर्मविशारदौ ॥सर्वभूतमनोग्राहिचक्रतुर्युद्धमुत्तमम् ॥ ३२ ॥हनूमतोवेदनराक्षसों तरंनमारुतिस्तस्यमहात्मनोऽतरम् ॥परस्परंनिर्विषहौबभूवतुःसमेत्यतौदेवसमानविक्रमौ ॥३३॥ ततस्तुलक्ष्येसाविहन्यमानेशरेष्वमोघेषुचसंप तत्सु॥जगामचिंतांमहतींमहात्मासमाधिसंयोगसमाहितात्मा ॥३४॥ततोमतिंराक्षसराजसूनुश्चकारतस्मिन्हरिवीरमुख्ये ॥ अवध्यतांतस्यक पेःसमीक्ष्यकथंनिगच्छेदितिनिग्रहार्थम् ॥३५॥ ततःपैतामहंवीरःसोऽस्त्रमस्त्रविदांवरः ॥ संदधेसुमहातेजास्तंहरिप्रवरंप्रति ॥ ३६ ॥अवध्यो यमितिज्ञात्वातमस्त्रेणास्त्रतत्त्ववित् ॥निजग्राहमहाबाहुंमारुतात्मजमिंद्रजित् ॥३७॥ तेनबद्धस्ततोस्त्रेणराक्षसेनसवानरः ॥ अभवन्निर्विचेष्टश्च पपातचमहीतले ॥ ३८ ॥ ततोथबुद्ध्वासतदस्त्रबंधंप्रभोःप्रभावाद्विगताल्पवेगः ॥ पितामहानुग्रहमात्मनश्चविचिंतयामासहरिप्रवीरः ॥ ३९ ॥

लगा ॥३४॥ फिर ध्यानयोगसे हनुमानजीको अवध्य जानकर इनके पकडनेको क्या उपाय करना चाहिये इस विषयका विचार मेघनादकरने लगा ॥३५॥ इस प्रकारसे विचार करके अस्त्र जाननेवालोंमें श्रेष्ठ मेघनादने पितामह ब्रह्माजीके दिये हुये ब्रह्मास्त्रको हनुमानजीके ऊपर चढाया ॥३६॥ पवनकुमार हनुमान जीको ब्रह्मास्त्रसे भी अवध्य जान अस्त्रका मर्म जाननेवाले महाबाहु रावणके पुत्र मेघनादने ब्रह्मास्त्रसे हनुमानजीको बांध लिया ॥३७॥ राक्षस मेघनाद करके जब ब्रह्मास्त्रसे वानरश्रेष्ठ हनुमानजी बांधे जाकर एक बारही चेष्टा रहित होकर पृथ्वीपर गिर पडे॥३८॥ और फिर सँभलकर अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके प्रभावसे इस अस्त्रको अजमाया तो अपना वेग कुछ भी कम न पाया परन्तु ब्रह्माजीका वरदानी अस्त्र जान अपनेपर उनका बडा अनुग्रह माना; वानर श्रेष्ठ हनुमानजी

ब्रह्मास्त्रसे बँधकर ब्रह्माजीके वरदेनेके प्रभावसे कुछ भी क्लेश नहीं पाते हुए ॥ ३९ ॥ और हनुमान्‌जीने अपने मनमें भली भाँति विचार किया तो उस अस्त्र को सब मंत्रोंसे अभिमंत्रित और ब्रह्माजीका वरदानी पाया ॥ ४० ॥ हनुमानजीने विचारा कि, त्रिलोकगुरु ब्रह्माजीके प्रभावसे इस अस्त्रके बंधको छुडानेकी शक्ति हममें नहीं है, इस कारण हम मुहूर्त्त भरतक इसको सहन करते हैं ॥४१॥ पवनकुमार हनुमानजी इस प्रकारसे अस्त्रका वीर्य, ब्रह्माजीका वरदान अपनी इस अस्त्र से छूटनेकी सामर्थ्यको भली भाँतिसे शोच विचार कर मुहूर्त्त भरतक ब्रह्माजीकी, आज्ञाका पालन करते रहे । हनुमानजीको वरदान भी था कि, दो वड़ीसे अधिक तुमको अस्त्र पीडा न देगा ॥४२॥ हनुमानजीने विचारा कि, ब्रह्मा, इन्द्र, पवन यह सदाही हमारी रक्षा किया करते हैं, इस लियेब्रह्मास्त्रसे बँध जानेपर भी हमको क्या भय है ? ॥ ४३ ॥ वरन् जो बँधे रहेंगे तो राक्षसगण हमको राक्षसराज रावणके पास ले जायँगे और उस रावणसे वार्त्तालाप

ततःस्वायंभुवैर्मंत्रैर्ब्रह्मास्त्रंचाभिमंत्रितम् ॥हनूमांश्चिंतयामासवरदानंपितामहात् ॥ ४० ॥ नमेस्यबंधस्यचशक्तिरस्तिविमोक्षणेलोकगुरोःप्रभावात् ॥ इत्येवमेवंविहितोऽस्त्रबंधोमयात्मयोनेरनुवर्तितव्यः ॥४१॥ सवीर्यमस्त्रस्यकपिर्विचार्यपितामहानुग्रहमात्मनश्च ॥ विमोक्षशक्तिंपरिचिंतयित्वापितामहाज्ञामनुवर्ततेस्म ॥ ४२ ॥ अस्त्रेणापिहिबद्धस्यभयंममनजायते ॥ पितामहमहेंद्राभ्यांरक्षितस्तानिलेनच ॥ ४३ ॥ ग्रहणेचापिरक्षोभिर्महन्मेगुणदर्शनम् ॥ राक्षसेंद्रेणसंवादस्तस्माद्गृह्णन्तुमांपरे ॥ ४४ ॥ सनिश्चितार्थःपरवीरहंतासमीक्ष्यकारीविनिवृत्तचेष्टः ॥ परैःप्रसह्याभिगतैर्निगृह्यननादतैस्तैःपरिभर्त्स्यमानः ॥४५॥ ततस्तेराक्षसादृष्ट्वाविनिश्चेष्टमरिंदमम् ॥ बबंधुःशणवल्कैश्चद्रुमचीरैश्चसंहतैः ॥४६॥ सरोचयामासपरैश्चबंधंप्रसह्यवीरैरभिगर्हणंच ॥ कौतूहलान्मांयदिराक्षसेंद्रोद्रष्टुंव्यवस्येदितिनिश्चितार्थः ॥ ४७ ॥

करनेमें बडा फल निकलेगा कि, हम उसके मनकी बातको जानलेंगे इस लिये शत्रुलोग हमको पकडलें ॥४४॥ कार्य करनेमें चतुर परवीरघाती हनुमानजी इस प्रकारका कर्त्तव्य निश्चय करके चेष्टारहितभावसे पडे रहे । और जब राक्षसलोग निकट आय बलात्कारसे पकडकर इनको अनेक प्रकारसे पकडने व धमकाने लगे तब हनुमानजी घोर नाद करते हुए ॥ ४५ ॥ इसके पीछे निशाचर लोग शत्रुओंके दमन करनेवाले हनुमानजीको चेष्टारहित देख उनको सूतसन और वृक्षोंके छालके रसोंसे खूब जकड़कर बांधते हुये ॥ ४६ ॥ राक्षस रावण कौतूहलके वश हो यदि हमको देखनेकी इच्छा करे तो उसके साथ बात चीत भी हो जायगी, यह बात विचारकर हनुमानजीने शत्रुओंका बल सहित पकडना, घुडकना, धमकाना सह लिया ॥ ४७ ॥

जैसेही कि रस्सियोंसे बांधे गये, वैसेही वीर्यवान् कपि हनुमानजी ब्रह्मास्त्रके, बंधनसे छूटगये क्योंकि जहां किसी और रस्सी इत्यादिसे बांध दिया जाता है, वैसेही ब्रह्मास्त्रका बंधन छूट जाता है ॥४८॥ वीर मेघनाद भी कपिकेसरी हनुमानजीको सन वल्कलादिसे बँधे और ब्रह्मास्त्रसे छूटे हुये देखकर चिन्ता करने लगा कि, और बंधनोंके बाँधनेसे ब्रह्मास्त्रके बंधन विफल हो जाते हैं ॥ ४९ ॥ हां राक्षसलोगोंके शस्त्रकी शक्ति कितनी है; इसका विचार न करके हमारा किया हुआ यह बडा कार्य निरर्थक कर दिया, अधिक क्या कहें ब्रह्मास्त्रके व्यर्थ होनेसे अन्न और किसी अस्त्रका प्रयोग भी नहीं किया जा सकता है; और एक बार वह राक्षसपुत्र जाननेलगा कि, इनको इस बातकी सुध नहीं है व्यर्थ होकर दुबारा यह शस्त्र चल भी नहीं सकता इस लिये हम संशयको प्राप्त हुए हैं॥५०॥ हनुमानजीने ब्रह्मास्त्रसे छूटकर कुछ बल नहीं दिखाया इसलिये राक्षस लोग विविध भाँतिके बन्धनोंसे बांध और पकटकर खेंचने लगे ॥ ५१ ॥ उसके पीछे

सबद्धस्तेनवल्केनविमुक्तोऽस्त्रेणवीर्यवान् ॥ अस्त्रबंधःसचान्यंहिनबंधमनुवर्तते ॥४८॥ अथेंद्रजित्तंद्रुमचीरबद्धंविचार्यवीरःकपिसत्तमंतम् ॥ विमुक्तमस्त्रेणजगाममचिंतामन्येनबद्धोप्यनुवर्ततेऽस्त्रम् ॥४९॥ अहोमहत्कर्मकृतंनिरर्थंनराक्षसैर्मंत्रगतिर्विमृष्टा ॥ पुनश्चनास्त्रेविहतेऽस्त्रमन्यत्प्रवर्ततेसंशयिताःस्मसर्वे ॥५०॥ अस्त्रेणहनुमान्मुक्तोनात्मानमवबुध्यते ॥ कृष्यमाणस्तुरक्षोभिस्तैश्चबंधैर्निपीडितः ॥५१॥ हन्यमानस्ततःक्रूरैराक्षसैःकालमुष्टिभिः ॥ समीपंराक्षसेंद्रस्यप्राकृष्यतसवानरः ॥५२॥ अथेंद्रजित्तंप्रसमीक्ष्यमुक्तमस्त्रेणबद्धंद्रुमचीरसूत्रैः ॥ व्यदर्शयत्तत्रमहाबलंतंहरिप्रवीरंसगणायराज्ञे ॥५३॥ तंमत्तमिवमातंगंबद्धंकपिवरोत्तमम् ॥ राक्षसाराक्षसेंद्रायरावणायन्यवेदन् ॥ ५४ ॥ कोयंकस्यकुतोवापिकिंकार्यंकोभ्युपाश्रयः ॥ इतिराक्षसवीराणां दृष्ट्वासंजज्ञिरेकथाः ॥ ५५ ॥ हन्यतांदह्यतांवापिभक्ष्यतामितिचापरे ॥ राक्षसास्तत्रसंक्रुद्धाःपरस्परमथाब्रुवन् ॥ ५६ ॥ अतीत्यमार्गंसहसामहात्मासतत्ररक्षोधिपपादमूले ॥ ददर्शराज्ञःपरिचारवृद्धान्गृहंमहारत्नविभूषितंच ॥ ५७ ॥

वह क्रूर स्वभाव राक्षसलोग हनुमानजीको खेंचते और काल समान मुष्टियोंके प्रहारसे मारते २ राक्षसराज रावणके निकट लेगये ॥ ५२ ॥ मेघनाद उनको ब्रह्मास्त्रसे छूटा व दूसरे वल्कलादि रस्सोंके बन्धनोंसे बँधा देखकर, सब मंत्रियोंको व रावणको दिखाता हुआ ॥ ५३ ॥ व और दूसरे मेघनादके साथी लोगोंने मत्त मातंगके समान बंधन अवस्थामें पडे हुए हनुमानजीको और उनका सब वृत्तान्त रावणसे निवेदन किया ॥ ५४ ॥ उस समय यह कौन है ? किसका पुत्र है ? कहांसे और किसलिये आया है ? और इसका सहायकारी कौन है ? इस प्रकारकी कल्पना परस्पर सब राक्षसवीर करने लगे ॥ ५५ ॥ और इसको मारो इसको भस्म कर दो और इसको भक्षण कर डालो ऐसा और दूसरे राक्षसलोग कहने लगे ॥५६॥ महात्मा हनुमानजीने थोडीहीसी दूर चल

कर सहसा महामूल्यरत्न भूषित राजमंदिर और राक्षसराज रावणके चरणोंके समीप बहुत सारे वृद्ध नौकर चाकर बैठे हुए देखे ॥५७॥ फिर प्रबल प्रतापवाले राव
णने देखा कि, विकट आकारवाले राक्षसलोग हनुमानजीको इधर उधरसे खैंचे हुए लिये आय रहे हैं॥५८॥ कपिश्रेष्ठ हनुमानजीने ये भी देखा कि, राक्षसपति
रावण तेज और बलसे युक्त होकर घामदेते हुये सूर्यके समान दीप्ति पाय रहा है॥५९॥हनुमानजी को देखतेही रावणकी दृष्टि क्रोधके मारे लाल होकर घूमने लगी
तब रावणने वहां बैठेहुए कुल शील सम्पन्न वृद्ध प्रधानमंत्रियोंको हनुमानजीका सब वृत्तांत जान लेनेको कहा॥६०॥रावणकी आज्ञा पाय उन मंत्रियोंने हनुमान
जीसे पूँछा कि,तुम किसकी खोज और किस कार्यके लिये यहांपर आये हो ? तब हनुमानजीने कहाकि हम कपिराज सुग्रीव निकटसे दूरहोकर यहांपर आये हैं॥६१॥

सददर्शमहातेजारावणःकपिसत्तमम्॥रक्षोभिर्विकृताकारैःकृष्यमाणमितस्ततः ॥५८॥राक्षसाधिपतिंचापिददर्शकपिसत्तमः ॥ तेजोबलसमायुक्तंतपंतमिवभास्करम् ॥५९॥ सरोषसंवर्तितताम्रदृष्टिर्दशाननस्तंकपिमन्ववेक्ष्य॥अथोपविष्टान्कुलशीलवृद्धान्समादिशत्तंप्रतिमुख्यमंत्रीन्॥ ॥ ६० ॥ यथाक्रमंतैःसकपिश्चपृष्टःकार्यार्थमर्थस्यचमूलमादौ ॥ निवेदयामासहरीश्वरस्यदूतःसकाशादहमागतोस्मि ॥६१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे अष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४८ ॥ ततःसकर्मणातस्यविस्मितोभीमविक्रमः ॥ हनुमान्क्रोधताम्राक्षोरक्षोधिपमवैक्षत ॥१॥ भ्राजमानंमहार्हेणकांचनेनविराजता॥मुक्ताजालवृतेनाथमुकुटेनमहाद्युतिम् ॥२॥ वज्रसंयोगसंयुक्तैर्महार्हमणिविग्रहैः॥ हैमैराभरणैश्चित्रैर्मनसेवप्रकल्पितैः ॥ ३ ॥ महार्हक्षौमसंवीतंरक्तचंदनरूषितम् ॥ स्वनुलिप्तंविचित्राभिर्विविधाभिश्चभक्तिभिः ॥४॥ विचित्रदर्शनीयैश्चरक्ताक्षैर्भीमदर्शनैः ॥ दीप्ततीक्ष्णमहादंष्ट्रप्रलंबदशनच्छदैः ॥ ५ ॥ शिरोभिर्दशभिर्वीरोभ्राजमानंमहौजसम् ॥ नानाव्यालसमाकीर्णैःशिखरैरिवमंदरम् ॥ ६ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा०अ०सुन्दरकांडे भाषायामष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥४८॥ भयंकर विक्रम करनेवाले हनुमानजीने इन्द्रजीतके कार्यको देख विस्मित होकर
लाल २ नेत्रकर रावणकी ओर दृष्टि करके देखा ॥१॥ कि महातेजवान रावण बडे मोलका कांचनमय मुक्तजाल लगा हुआ महादीप्तिमान मुकुट ओंढे उज्ज्वल
रूपसे शोभायमान हो रहा है ॥२॥ उनके द्रव्य गहने समस्त हीरक खचित और बडे मोलकी मणियोंसे प्रधानता चित्रित मानों मनकेही द्वाराबनाये गये हैं
॥ ३ ॥ रावणका शरीर लाल चन्दनसे चर्चित और बडे मोलके रेशमी वस्त्रोंसे ढका और विविध भाँतिकी रचनाओंसेसजा हुआ था ॥४॥ उसके वीस नेत्र
भयंकर दर्शनवाले, अरुण, वर्ण और आश्चर्य जनक थे, उसके दांत बडे तीक्ष्ण व दीप्तिमान और अधरसमूह बडे लंबे थे ॥ ५ ॥ वह नीले अंजनके

समान परमतेजस्वी राक्षसराज रावण दशमस्कोंसे सर्पसेयुक्त शोभित शिखरमन्दरकेसमान गलेमें हार पहरेहुए और उसका वदनमंडल पूर्णचंद्रमाके तुल्य है इस लिये नवीन,सूर्य युक्त मेघके समान रावणकी शोभा होरही है ॥६॥७॥ रावणके वीसौंहाथ पंचमुहे सर्पोंके समान भयंकर श्रेष्ठचंदनसे चर्चित और उज्ज्वल बाजू व केयूर उन बाँहोंमें पडे हुए थे॥८॥वह रावणरत्नोंके लगनेसे चित्रित उत्तम बिछौनेसे शोभित, स्फटिकमणि जटितसुविशालविचित्र श्रेष्ठ आसनपर बैठा है॥९॥अनेक प्रकारके आभूषणोंसे सजा हुआ है शृंगारा किये हुए स्त्रियें चमर व्यजन हाथमें लिये हुये निकटही चारों ओर रावणकी सेवाकर रही हैं॥१०॥दुर्द्धर्ष प्रहस्त महापार्श्व व निकुम्भ बलदर्पित इन चार मंत्रजाननेवाले मंत्रियोंसे॥११॥शोभित होनेके कारणचारों समुद्रोंमें शोभित पृथ्वीके समान शोभायमान रावणथा

नीलांजनचयप्रख्यंहारेणोरसिराजिता॥पूर्णचंद्राभवक्त्रेणसबालार्कमिवांबुदम् ॥७॥ बाहुभिर्बद्धकेयूरैश्चन्दनोत्तमरूषितैः॥ भ्राजमानांगदैर्भीमैः पंचशीर्षैरिवोरगैः ॥ ८ ॥ महतिस्फाटिकेचित्रेरत्नसंयोगचित्रिते ॥ उत्तमास्तरणास्तीर्णेसूपविष्टंवरासने ॥९॥ अलंकृताभिरत्यर्थंप्रमदाभिः समंततः॥ वालव्यजनहस्ताभिरारात्समुपसेवितम् ॥१०॥ दुर्धरेणप्रहस्तेनमहापार्श्वेनरक्षसा ॥ मंत्रिभिर्मंत्रतत्त्वज्ञैर्निकुंभेनचमंत्रिणा ॥११॥ उपोपविष्टंरक्षोभिश्चतुर्भिर्बलदर्पितम् ॥ कृत्स्नंपरिवृतंलोकंचतुर्भिरिवसागरैः ॥ १२ ॥ मंत्रिभिर्मंत्रतत्त्वज्ञैरन्यैश्चशुभदर्शिभिः ॥ आश्वास्य मानंसचिवैः सुरैरिवसुरेश्वरम् ॥ १३ ॥ अपश्यद्राक्षसपतिंहनूमानतितेजसम् ॥ वेष्टितंमेरुशिखरेसतोयमिवतोयदम् ॥ १४ ॥ सतैःसंपीड्य मानोपिरक्षोभिर्भीमविक्रमैः ॥ विस्मयंपरमंगत्वारक्षोधिपमवैक्षत ॥ १५ ॥ भ्राजमानंततोदृष्ट्वाहनूमान्राक्षसेश्वरम् ॥ मनसाचिंतयामासतेज सातस्यमोहितः ॥ १६ ॥ अहोरूपमहोधैर्यमहोसत्त्वमहोद्युतिः ॥ अहोराक्षसराजस्यसर्वलक्षणयुक्तता ॥ १७ ॥ यद्यधर्मोनबलवान्स्यादयं राक्षसेश्वरः ॥ स्यादयंसुरलोकस्यसशक्रस्यापिरक्षिता ॥ १८ ॥

॥१२॥देवमंत्रीलोग जिसप्रकारइन्द्रजीकोसिखलातेहैंवैसेहीमंत्रके जाननेवाले शुभ दर्शी मंत्री लोगभी सिखाते हैं॥१३॥हनुमानजीने देखाकि,महातेजस्वी राक्षसराज रावण मेरुपर्वतके शिखरपर जलवाले बादलके समान टिका हुआ है ॥१४॥ भयंकर विक्रमकारी राक्षसलोगोंके बहुत पीडादेनेपर भी हनुमानजी अतिविस्मय युक्त हो रावणको देखनेलगे ॥१५॥ उसकेपीछे राक्षसपति रावणका इस भाँतिका प्रभाव देख उसके तेजसे मोहित हो हनुमानजी मनही मनमें चिंता करने लगे ॥ १६ ॥ अहो राक्षसराज रावणका क्या रूप है, क्या धैर्य है, क्या पराक्रम क्या देहकी कांति,क्या सर्व लक्षण सम्पन्न है ॥१७॥ इस राक्ष-सराजका अधर्म

यदि इतना बलवान् न होता तो यह इन्द्रसहित समस्त देवलोककी रक्षाकरनेमें समर्थ होता ॥१८॥ इस पापीने जो सकल लोकोंमें निन्दनीय बुरा करनेवाले नीचकार्योंके अनुष्ठान कियेहैं इससे सुरासुरसमेत तीनों लोक इससेडरतेहैं॥१९॥रावण क्रोधकर चाहे तो समस्त संसारको समुद्र कर डाले मतिमान् हनुमान्‌जी अति पराक्रम रावणका प्रभाव देखकर इसप्रकारकी विविध चिन्तायें करते हुए ॥२०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामेकोनपंचाशः सर्गः॥४९॥ पीली आंखोंवाले हनुमान्‌जीको सामने खडा हुआ देखकर महाबलवान् लोकोंको रुवानेवाला रावण महा क्रोधित हुआ ॥ १ ॥ परन्तु हनुमान्‌जी का तेजः पुंज शरीर देख शंकित हो चिन्ता करने लगा कि,यह वानर रूपी साक्षात् भगवान् नंदी तो यहां पर नहीं चले आये हैं? ॥२॥ पूर्वकालमें कैलासपर्वत पर हम

अस्यक्रूरैर्नृशंसैश्चकर्मभिर्लोककुत्सितैः ॥ सर्वेबिभ्यतिखल्वस्माल्लोकाःसामरदानवाः॥१९॥अयंह्युत्सहतेक्रुद्धःकर्तुमेकार्णवंजगत् ॥ इतिचिंतां बहुविधामकरोन्मतिमान्कपिः ॥ दृष्ट्वाराक्षसराजस्यप्रभावममितौजसः॥ २० ॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे एकोनपंचाशःसर्गः ॥ ४९ ॥ तमुद्वीक्ष्यमहाबाहुःपिंगाक्षंपुरतःस्थितम् ॥ रोषेणमहताविष्टोरावणोलोकरावणः ॥१॥ शंकाहतात्मादध्यौसकपीन्द्रंतेजसावृतम् ॥ किमेषभगवान्नंदीभवेत्साक्षादिहागतः ॥२॥ येनशप्तोस्मिकैलासेमयाप्रहसितेपुरा ॥ सोयंवानरमूर्तिःस्यात्किंस्विद्बाणोपिवाऽसुरः ॥ ३ ॥ सराजारोषताम्राक्षः प्रहस्तंमंत्रिसत्तमम् ॥ कालयुक्तमुवाचेदंवचोविपुलमर्थवत् ॥ ४ ॥ दुरात्मपृच्छ्यतामेषकुतःकिंवास्यकारणम् ॥ वनभंगेचकोस्यार्थोराक्षसानांचतर्जने ॥ ५ ॥ मत्पुरीमप्रधृष्यांवैगमनेकिंप्रयोजनम् ॥ आयोधनेवाकिंकार्यंपृच्छ्यतामेषदुर्मतिः ॥ ६ ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वाप्रहस्तोवाक्यमब्रवीत् ॥ समाश्वसिहिभद्रंतेनभीःकार्यात्वयाकपे ॥ ७ ॥

इनका वानर मुख देखकर हँसे थे सो तब इन नंदीने हमको शाप दिया था कि,मेरे मुख सरीखे वानर सेही तेरा नाश होगा,अथवा यह वानर राजा बलिका पुत्र बाण ! तो नहीं है? ॥३॥ इसप्रकारकी चिन्ता करता हुआ राक्षसोंका राजा रावण क्रोधके मारे लाल २ नेत्र कर समयानुसार अर्थयुक्त वचन प्रधान मंत्री प्रहस्तसे कहने लगा ॥४॥ कि,इस दुरात्मासे पूँछो कि,कहांसे किस कारण यह यहां पर आया है,और किस वास्ते अशोक वन उजाडकर इसने राक्षसोंको भय पहुँचाया ॥ ५ ॥ तुम फिर इस खोटी मतिवालेसे पूँछो कि,हमारी इस अगम्य नगरीमें आनेका इसका क्या प्रयोजन है, और हमारे नौकर राक्षसोंसे इसने क्यों युद्ध किया ? ॥६॥ रावणकी यह वार्त्ता सुनकर प्रहस्त हनुमान्‌जीसे कहने लगा कि,हे वानर! तुम सावधान होवो,हम लोगोंसे भय करने की तुमको कुछ आवश्यकत।

नहींहै ॥७॥ तुम्हारा मंगल होगा, सत्य २ कहो कि, क्या देवराज इन्द्रने तुमको इस लंकापुरीमें भेजा है ? तुमको कुछ भय नहीं सत्य कहो, तुम अवश्यही छुटजाओगे ॥८॥ अथवा तुम कुबेर, यम, वरुण हो, जो यह सुन्दररूप बनाय इस पुरीमें आये ॥९॥ अथवा विजयाभिलाषी विष्णुजीके दूत होकर तुम यहां आये हो ? क्योंकि तुम रूपमें तो वानर हो परन्तु तुम्हारा विक्रम वानरके समान नहीं है ॥१०॥ हे वानर ! सत्य २ कहनेसे तुम अभी छूट जाओगे ! और जो मिथ्या कहोगे तो तुम्हारे जीते रहनेमें भी संशय है ॥११॥ जो कुछ भी हो तुम जिस कारणसे भी इस राक्षसराज रावणके स्थान पर आये हो सब कहो जब प्रहस्तने इसप्रकारसे कहा तो हनुमानजी राक्षसपति रावणसे बोले ॥१२॥ हम इन्द्र यम व वरुणके दूत नहीं हैं, न कुबेरके साथ हमारी मित्रता है अथवा

यदितावत्त्वमिंद्रेणप्रेषितोरावणालयम् ॥ तत्त्वमाख्याहिमांतेभूद्भयंवानरमोक्ष्यसे ॥ ८ ॥ यदिवैश्रवणस्यत्वंयमस्यवरुणस्यच ॥ चारुरूपमिदंकृत्वाप्रविष्टोनःपुरीमिमाम् ॥ ९ ॥ विष्णुनाप्रेषितोवापिदूतोविजयकांक्षिणा ॥ नहितेवानरंतेजोरूपमात्रंतुवानरम् ॥ १० ॥तत्त्वतःकथयस्वाद्यततोवानरमोक्ष्यसे ॥ अनृतंवदतश्चापिदुर्लभंतवजीवितम् ॥ ११ ॥ अथवायन्निमित्तस्तेप्रवेशोरावणालये ॥ एवमुक्तोहरिवरस्तदारक्षोगणेश्वरम् ॥ १२ ॥ अब्रवीन्नास्मिशक्रस्ययमस्यवरुणस्यच॥धनदेननमेसख्यंविष्णुनानास्मिचोदितः॥ १३ ॥ जातिरेवममत्वेषावानरोहमिहागतः ॥ दर्शनेराक्षसेंद्रस्यतदिदंदुर्लभंमया ॥१४॥ वनंराक्षसराजस्यदर्शनार्थेविनाशितम्॥ ततस्तेराक्षसाःप्राप्ताबलिनोयुद्धकांक्षिणः ॥१५॥ रक्षणार्थंचदेहस्यप्रतियुद्धामयारणे ॥ अस्त्रपाशैर्नशक्योहंबद्धुंदेवासुरैरपि ॥ १६ ॥ पितामहादेवषरोममापिहिसमागतः ॥ राजानंद्रष्टुकामेनमयास्त्रमनुवर्तितम् ॥ १७ ॥

विष्णुजीने भी हमको नहीं भेजाहै॥१३॥ हमारा रूप स्वभावसे ऐसा है हीवास्तवमें हमारी जाति ही वानर है, हमें तुम लोगोंके दर्शन होने दुर्लभहै इसी कारणसे हम तुम्हारे देखनेको यहां आयेहैं ॥१४॥ और राक्षस नाथके दर्शन करनेको ही हमने इस दुर्लभ वनको उखाड डालाहै और उस समयमें जो बलवान् निशाचर युद्धकी अभिलाषा करके आयेथे॥१५॥ शरीररक्षाके निमित्त हमने उनसे युद्धकिया और देवता व असुर कोई भी हमको अस्त्र या फांसीसे नहीं बाँधसकते॥१६॥ स्वयं पितामह ब्रह्माजीने भी हमको यह बर दिया है कि; दो घडीसे अधिक हमारा अस्त्र भी तुमको नहीं बांध सकेगा। सो हमने तो केवल राजाका दर्शन हीपानेके अर्थ इस अस्त्रके बंधनको माना ॥ १७ ॥

इस वार्त्ता को तुम्हारे सब राक्षस जानतेहैं कि,अस्त्रसे तो हम वहीं छूटगये थे;परंतु यथार्थ बात तो यह है कि,हम श्रीरामचन्द्रजी का कोई कार्य सिद्ध करनेको तुम्हारे पासआये हैं ॥१८॥ हे प्रभो ! हम अमित तेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी के दूत हैं;यह भलीभाँति जानकर जो हितकारी वचन हम कहते हैं, वह तुम सुनो ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां पंचाशः सर्गः ॥ ५० ॥ सत्त्वसम्पन्न वानर श्रेष्ठ हनुमान्‌जी बलवान् रावणको देखकर विना बबडाहटके युक्तयुक्त वचन कहने लगे ॥ १ ॥ हे राजन् ! हम सुग्रीवजीकी आज्ञासे आपके निकट आये हैं। वानरराज सुग्रीवजीने भायपनसे तुम्हारी कुशल पूँछी है॥ २॥ तुम उन महात्मा अपने भ्राता सुग्रीवजीके दोनों लोकोंमें हितके करनेवाले धर्मअर्थ युक्त कहेहुए वचन श्रवण करो ॥ ३ ॥ उन सुग्रीवने कहा है कि,

विमुक्तोप्यहमस्त्रेणराक्षसैस्त्वभिवेदितः ॥ केनचिद्रामकार्येणआगतोस्मितवांतिकम् ॥ १८ ॥ दूतोहमितिविज्ञायराघवस्यामितौजसः ॥ श्रूयतामेववचनंममपथ्यमिदंप्रभो ॥१९॥ इत्यार्षेश्रीम०वा०आ०च०सा०सुं०पंचाशःसर्गः ॥ ५० ॥ तंसमीक्ष्यमहासत्त्वंसत्त्ववान्हरिसत्तमः॥ वाक्यमर्थवदव्यग्रस्तमुवाचदशाननम् ॥ १ ॥ अहंसुग्रीवसंदेशादिहप्राप्तस्तवांतिके ॥ राक्षसेशहरीशस्त्वांभ्राताकुशलमब्रवीत् ॥ २ ॥ भ्रातुः शृणुसमादेशंसुग्रीवस्यमहात्मनः ॥ धर्मार्थसहितंवाक्यमिहचामुत्रचक्षमम् ॥ ३ ॥ राजादशरथोनामरथकुंजरवाजिमान् ॥ पितेवबंधुर्लोकस्य सुरेश्वरसमद्युतिः ॥ ४ ॥ ज्येष्ठस्तस्यमहाबाहुःपुत्रःप्रियतरःप्रभुः ॥ पितुर्निदेशान्निष्क्रांतःप्रविष्टोदंडकावनम् ॥ ५ ॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्रासीतयासहभार्यया ॥ रामोनाममहातेजाधर्म्यंपंथानमाश्रितः ॥ ६ ॥ तस्यभार्याजनस्थानेभ्रष्टासीतेतिविश्रुता ॥ वैदेहस्यसुताराज्ञोजनकस्यमहात्मनः ॥ ७ ॥ मार्गमाणस्तुतादेवींराजपुत्रःसहानुजः ॥ ऋष्यमूकमनुप्राप्तःसुग्रीवेणचसंगतः ॥८॥ तस्यतेनप्रतिज्ञातंसीतायाःपरिमार्गणम् ॥ सुग्रीवस्यापिरामेणहरिराज्यंनिवेदितुम् ॥ ९ ॥

बहुत सारे हाथी, घोडे, रथोंके अधिपति और इन्द्रजीके समान द्युतिमान् दशरथनामक राजा अपनी प्रजाकी व सब लोककी इसभाँति रक्षा करतेथे कि, जैसे पिता पुत्रकीरक्षा करता है ॥४॥ उनके परमप्यारे बडे पुत्र महाबाहु सब कार्य्योंके करनेमें समर्थ अपने पिताकी आज्ञानुसार दंडक वनमें आये॥५॥वहधर्मके मार्गमें टिकेहुए अमित तेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी भ्राता लक्ष्मण और अपनी भार्या सीताजीके सहित वनमें आये ॥ ६ ॥ इस प्रकारसे सुना जाता है कि, महात्मा राजर्षि जनकजीकी कन्या सीतानामक उनकी भार्या जनस्थानमें आकर हरी गई हैं ॥७॥ राजकुमार श्रीरामचन्द्रजी अपने छोटेभाई लक्ष्मणजीके साथ श्रीसीताजीको ढूँढते २ ऋष्यमूक पर्वतपर पहुँचकर सुग्रीवजीके साथ मिले ॥ ८ ॥ सुग्रीवजीने प्रतिज्ञा की कि,सीताजीको ढूँढदेंगे और श्रीरामचन्द्रजीने भी अंगीकार किया

कि, सुग्रीवजीको वानरोंका राज्य देदेंगे॥९॥उसके पीछे राजकुमार श्रीरामचन्द्रजीने समरमें वालीको मारकर सुग्रीवजीको वानरोंका राजा बनादिया ॥१०॥ सो वानरराज वालीको तो तुम प्रथमहीसे जानते हो कि, उसमें कितना बलथा सो महात्मा श्रीरामचन्द्रजीने सग्रामस्थलमें केवल एकही बाण चलाय वानरश्रेष्ठ वालीको मारडाला ॥ ११ ॥जबवाली मारागया तब सत्यप्रतिज्ञ सुग्रीवजीने सीताजीको ढूँढनेके लिये उसकाय कर सब वानर यूथोंको चारों ओर भेजदिया ॥ १२॥ उन सुग्रीवजीके भेजेहुए सहस्र २ लक्ष २ करोड २ वानर समस्त दिशामंडल आकाशमंडल बरन् पातालतक सीताजीकी खोज करने लगे ॥१३॥ उन वानर यूथपोंमेंसे कोई गरुडजीके समान कोई पवनतुल्य शीघ्रगामी हैं, सबही महाबलवान् जिनकी गति कहीं जानेमें न रुके और शीघ्र गमनकरनेमें समर्थ हैं ॥१४॥ उन्हीं वानरोंमेंसे हम पवनके औरसपुत्र हनुमान् नामक वानर सीताजीको ढूँढनेके लिये शतयोजन फांटवाले ॥ १५ ॥ महासमुद्रके पार

ततस्तेनमृधेहत्वाराजपुत्रेणवालिनम्॥सुग्रीवःस्थापितोराज्येहर्यृक्षाणांगणेश्वरः ॥ १० ॥ त्वयाविज्ञातपूर्वश्चवालीवानरपुंगवः ॥ सतेननिहतः संख्येशरेणैकेनवानरः ॥ ११ ॥ ससीतामार्गणेव्यग्रःसुग्रीवःसत्यसंगरः॥हरीन्संप्रेषयामासदिशःसर्वाहरीश्वरः ॥ १२ ॥ तांहरीणांसहस्राणि शतानिनियुतानिच ॥ दिक्षुसर्वासुमार्गंतेह्यधश्चोपरिचांबरे ॥ १३ ॥ वैनतेयसमाःकेचित्केचित्तत्रानिलोपमाः ॥ असंगगतयःशीघ्राहरिवीरा महाबलाः ॥ १४ ॥ अहंतुहनुमान्नाममारुतस्यौरसःसुतः ॥ सीतायास्तुकृतेतूर्णंशतयोजनमायतम् ॥ १५ ॥ समुद्रंलंघयित्वैवत्वांदिदृक्षुरिहागतः ॥ भ्रमताचमयादृष्टागृहेतेजनकात्मजा ॥१६॥ तद्भवान्दृष्टधर्मार्थस्तपःकृतपरिग्रहः ॥ परदारान्महाप्राज्ञनोपरोद्धुंत्वमर्हसि ॥ १७॥ नहिधर्मविरुद्धेषुबह्वपायेषुकर्मसु ॥ मूलघातिषुसज्जंतेबुद्धिमंतोभवद्विधाः ॥ १८ ॥ कश्चलक्ष्मणमुक्तानांरामकोपानुवर्तिनाम् ॥ शरणामग्रतःस्थातुंशक्तोदेवासुरेष्वपि ॥ १९ ॥ नचापित्रिषुलोकेषुराजन्विद्येतकश्चन॥ राघवस्यव्यलीकंयःकृत्वासुखमवाप्नुयात् ॥ २० ॥ तत्त्रिकालहितंवाक्यंधर्म्यमर्थानुयायिच ॥ मन्यस्वनरशार्दूलजानकीप्रतिदीयताम् ॥ २१ ॥

होकर तुम्हारे दर्शन करनेकी अभिलाषासे यहांपर आये हैं हमने घूमते २ तुम्हारे गृहमें जनकनंदिनी सीताजीको देखा है ॥ १६ ॥ हे महापंडित ! तुमने धर्मके मर्मको न जानकर अपने तपबलसे विविध भांतिके अपूर्व सौभाग्य इकट्ठे कर रक्खे हैं इसलिये पराई स्त्रीका रोकना तुमको उचित नहीं है ॥ १७ ॥ जो कि,बहुत अनर्थोंका हेतु और जो कि,मूलसहित नष्टकर देताहै,ऐसे धर्मविरुद्धकार्यको तुम सरीखे बुद्धिमान् पुरुष कभी नहीं करते हैं ॥१८॥ विशेषकरके देवतागण और असुरोंके मध्यमेंभी ऐसा कोईभी है कि,जो श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीके क्रोधसे चलाये बाणोंके सम्मुख टिकनेमें समर्थ हो ? ॥१९॥हे राजन्! त्रिलोकीमें ऐसा कोई नहींहैं कि;जो श्रीरामचन्द्रजीका अप्रिय कार्य करके आप सुखमें रहनेको समर्थ हो ॥२०॥ इसलिये हेरावण ! राजशार्दूल पुरुषश्रेष्ठ श्रीरामच

न्द्रजीकी जानकीजी लौटाय दो; हमने जो कुछ कहा वह वह तीनों कालमें हित करनेवाला धर्मयुक्त और शास्त्रसम्मत वचन है॥ २१॥ इसकारण यह वचन मानलो, हमने उन सीता देवीको तुम्हारे स्थानमें देखा है. सो इनके देखनेसे हमको वह यश मिला कि, जो दूतोंके लिये दुर्लभ है; इसके पीछे जो कार्य शेष रहा अर्थात् जानकीजीका लेजाना वह श्रीरामचंद्रजी अपने आपही सिद्ध कर लेंगे ॥२२॥ हमने सीताजीको बहुत शोकयुक्त देखा है । तुम नहीं जानते कि, यह सीताजी पांच फणोंवाली सर्पिणीकी समान तुम्हारे स्थानमें टिकी हुई हैं ॥२३॥ असुरोंके सहित समस्त देवतागणभी उन सीताजीको नहीं पचाय सकेंगे, जैसे भोजनको शक्तिके बलसे विष मिला हुआ अन्न खानेपर कोई नहीं पचा सकता ॥२४॥ तुमने तपोबलसे यह धर्मसे साधन किया ऐश्वर्य और बड़ी भारी उमर प्राप्त कीहै सो इस प्रकारके धन ऐश्वर्य व अपनेको पराई स्त्रीके हरण करनेके अधर्मसे नाश नहीं करना चाहिये ॥२५॥ और तुमने जो अपनेको देवदानवोंसे अवध्य जाना है, सो

दृष्टाहीयंमयादेवीलब्धंयदिहदुर्लभम् ॥ उत्तरंकर्मयच्छेषंनिमित्तंतत्रराघवः ॥ २२ ॥ लक्षितेयंमयासीतातथाशोकपरायणा ॥ गृहेयांनाभिजानासिपंचास्यामिवपन्नगीम् ॥ २३ ॥ नेयंजरयितुंशक्यासासुरैरमरैरपि ॥ विषसंस्पृष्टमत्यर्थंभुक्तमन्नमिवौजसा ॥ २४ ॥ तपःसंतापलब्धस्तेसोयंधर्मपरिग्रहः ॥ नसनाशयितुंन्याय्यआत्मप्राणपरिग्रहः ॥२५॥ अवध्यतांतपोभिर्यांभवान्समनुपश्यति ॥ आत्मनःसासुरैर्देवैर्हेतुस्तत्राप्ययंमहान् ॥ २६ ॥ सुग्रीवोनचदेवोयंनयक्षोनचराक्षसः ॥ मानुषोराघवोराजन्सुग्रीवश्चहरीश्वरः ॥ तस्मात्प्राणपरित्राणंकथंराजन्करिष्यसि ॥२७॥ नतुधर्मोपसंहारमधर्मफलसंहितम् ॥ तदेवफलमन्वेतिधर्मश्चाधर्मनाशनः ॥२८॥ प्राप्तंधर्मफलंतावद्भवतानात्रसंशयः॥ फलमस्याप्यधर्मस्यक्षिप्रमेवप्रपत्स्यसे ॥ २९ ॥ जनस्थानवधंबुद्ध्वावालिनश्चवधंतथा ॥ रामसुग्रीवसख्यंचबुध्यस्वहितमात्मनः ॥ ३० ॥

इसमें भी तपका बलही प्रधान कारण है; सो इस तपबलका नष्ट करना तुमको उचित नहीं है ॥२६॥ कपिवीर सुग्रीवजी, देव राक्षस वा यक्ष नहीं हैं वे वानरोंके राजा हैं और श्रीरामचन्द्रजी मनुष्य हैं; इसलिये हे राक्षसनाथ ! तुम इनसे किस प्रकार बचकर जीवन धारण कर सकोगे ? क्योंकि ब्रह्माजीसे तुमने यह वर नहीं पाया कि, मनुष्य और वानरोंसे भी न मारे जाओ॥२७॥ यह सत्यही सत्य है कि, धर्म करनेसे अधर्मका नाश होजाता है परन्तु जिसके अधर्मका फल फलाही चाहता है वह कभी धर्मफलको नहीं पाय सकता बरन् अधर्मकेही फलको प्राप्त होता है॥ २८॥ पहले जो तुमने धर्म किया है उसका फल तो यह ऐश्वर्य निःसन्देह तुमने प्राप्त किया और इससमय पराई स्त्रीका जो हरण तुमने किया है इसका फलभी शीघ्र पाओगे अर्थात् तुम्हरा नाश होजायगा ॥२९.॥ जनस्थानमें चौदह हजार राक्षसोंका

विध्वंस,वालीका मरण श्रीरामचन्द्रजी व सुग्रीवजीकी मित्रता स्मरणकरके तुम अपनेहितकी चिन्ता करो॥३०॥यद्यपि निश्चयही हम अकेलेहैं परन्तु अश्व,रथ और गजोंके सहित समस्त लंकापुरीका नाश सरलतासे कर सकतेहैं,परन्तुश्रीरामचन्द्रजीने हमसे लंकाका विध्वंस करना निश्चय नहीं किया॥३१॥श्रीरामचन्द्रजीने रीछ वानरोंके निकट प्रतिज्ञाकीहै कि,जिनशत्रुओंने सीताजीका अपमान या तिरस्कारकियाहै हम उन सब शत्रुलोगोंका संहार अपनेहाथसे करेंगे॥३२॥अधिक क्या कहें साक्षात् इन्द्रभी श्रीरामचन्द्रजीका अपकार करके सुख नहीं पा सकते फिर तुम्हारे समान दूसरे लोगोंकी तो बातही क्या है ॥ ३३ ॥ जिनको तुम सीताजी जानते हो और जो तुम्हारी स्थानपर रहती हैं उन सीताजीको तुम काल रात्रिके समान जानो बस यही कालरात्रि समस्त लंकाका नाश करदेगी ॥ ३४ ॥

कामंखल्वहमप्यकःसवाजिरथकुंजराम् ॥ लंकांनाशयितुंसक्तस्तस्यैषतुननिश्चयः ॥ ३१ ॥ रामेणहिप्रतिज्ञातंहर्यक्षगणसन्निधौ ॥ उत्सादनममित्राणांसीतायैस्तुप्रधर्षिता ॥ ३२ ॥ अपकुर्वन्हिरामस्यसाक्षादपिपुरंदरः ॥ नसुखंप्राप्नुयादन्यःकिंपुनस्त्वद्विधोजनः ॥ ३३ ॥ यांसीतेत्यभिजानासियेयंतिष्ठतितेगृहे ॥ कालरात्रीतितांविद्धिसर्वलंकाविनाशिनीम् ॥ ३४ ॥ तदलंकालपाशेनसीतांविग्रहरूपिणा ॥ स्वयंस्कंधावसक्तेनक्षेममात्मनिचिंत्यताम् ॥ ३५ ॥ सीतायास्तेजसादग्धांरामकोपप्रदीपिताम् ॥ दह्यमानामिमांपश्यपुरींसाट्टप्रतोलिकाम् ॥ ३६ ॥ स्वानिमित्राणिमंत्रींश्चज्ञातीन्भ्रातॄन्सुतान्हितान् ॥ भोगान्दारांश्चलंकांचमाविनाशमुपानय ॥ ३७ ॥ सत्यंराक्षसराजेंद्रशृणुष्ववचनंमम ॥ रामदासस्यदूतस्यवानरस्यविशेषतः ॥ ३८ ॥ सर्वाँल्लोकान्सुसंहृत्यसभूतान्सचराचरान् ॥ पुनरेवतथास्रष्टुंशक्तोरामोमहायशाः ॥ ३९ ॥ देवासुरनरेंद्रेषुयक्षरक्षोरगेषुच ॥ विद्याधरेषुनागेषुगंधर्वेषुमृगेषुच ॥ ४० ॥

इसलिये सीतारूप कालकी फाँसीको तुम्हें अपने गलेमें बांधनेकी कुछ आवश्यकता नहीं सो इसकारण तुम अपने उद्धारका उपाय सोचो ॥३५॥ तुम बडी शीघ्रतासे देखोगे कि समस्त अटाअटारियें और राजमार्गोंके सहित यह लंकानगरी सीताजीके क्रोधसे दग्ध और श्रीरामचन्द्रजीके कोपसे भस्म हो जायगी॥३६॥ हे राक्षसनाथ ! अपने मित्र, मंत्री, जातीके लोग, भाई हित पुत्रस्त्रियाँ और लंकापुरी इन सबका विनाश तुम न करो स्वस्थ हो ॥ ३७ ॥ हे राक्षसेंद्र !हम श्रीरामचन्द्रजीके दास दूत और बानर हैं हम बहुतही सोच विचार कर जो सत्य वचन तुमसे कहतेहैं,वह सुनो ॥ ३८ ॥ महायशस्वी श्रीरामचन्द्रजी स्थावर, जंगम (चर व अचर) औरसब जातिवाले प्राणिपुञ्जोंकेसमस्त लोगोंका संहार करके,फिर भी वैसेही सृष्टि उत्पन्नकर सकतेहैं ॥३९॥ देवता,असुर,नरपति,

यक्ष,रक्ष,उरग,विद्याधर; नाग,गन्धर्व, मृग ॥४०॥ सिद्ध किन्नरेन्द्र और पक्षी इत्यादि सब देशोंमें व सब कालमें ऐसा कोई भी नहींहै ॥४१॥ जो उन विष्णुके समान पराक्रमवाले श्रीरामचन्द्रजीसे संग्रामकर सके जब कि तुमने नरनाथ सब संसारके पति राजाश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीका पहले अनिष्ट कार्य कियाहै तब तो तुम्हारा जीनाही बहुत दुर्लभ होजायगा ॥४२॥ हे राक्षसपति! देवता दैत्य गन्धर्व विद्याधर नाग यक्ष कोई भी युद्धमें त्रिलोकीके नाथ श्रीरामचन्द्रजीके आगे नहीं ठहर सकता ॥४३॥ यही नहीं वरन् स्वयंभू चतुरानन ब्रह्मा त्रिपुरको दग्ध करनेवाले त्रिनेत्र रुद्र अथवा सुरनायक महेन्द्र इन्द्रभी श्रीरामचन्द्रजीके सम्मुख युद्ध करनेको समर्थ नहीं हैं ॥४४॥ महाकपि हनुमानजीने बिना घबडाये यह सुन्दर अनुपम और प्यारे वचन कहे तब रावण यह अप्रिय पूर्वकालमें न सुने हुये वचन सुन

सिद्धेषुकिन्नरेंद्रेषुपतत्रिषुचसर्वतः ॥ सर्वत्रसर्वभूतेषुसर्वकालेषुनास्तिसः ॥४१॥ योरामंप्रतियुध्येतविष्णुतुल्यपराक्रमम् ॥ सर्वलोकेश्वरस्येहकृत्वाविप्रियमीदृशम् ॥ रामस्यराजसिंहस्यदुर्लभंतवजीवितम् ॥४२॥ देवाश्चदैत्याश्चनिशाचरेंद्रगंधर्वविद्याधरनागयक्षाः ॥ रामस्यलोकत्रयनायकस्यस्थातुंनशक्ताःसमरेषुसर्वे ॥४३॥ ब्रह्मास्वयंभूश्चतुराननोवारुद्रस्त्रिनेत्रस्त्रिपुरांतकोवा ॥ इंद्रोमहेंद्रःसुरनायकोवास्थातुंनशक्तायुधिराघवस्य ॥४४॥ ससौष्ठवोपेतमदीनवादिनःकपेर्निशम्याप्रतिमोऽप्रियंवचः ॥ दशाननःकोपविवृत्तलोचनःसमादिशत्तस्यवधंमहाकपेः ॥४५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०सुंदरकांडेएकपंचाशःसर्गः ॥५१॥ सतस्यवचनंश्रुत्वावानरस्यमहात्मनः ॥ आज्ञापयद्वधंतस्यरावणःक्रोधमूर्च्छितः ॥१॥ वधेतस्यसमाज्ञप्तेरावणेनदुरात्मना ॥ निवेदितवतोदौत्यंनानुमेनेविभीषणः ॥२॥ तंरक्षोधिपतिंक्रुद्धंतच्चकार्यमुपस्थितम् ॥ विदित्वाचिंतयामासकार्यंकार्यविधौस्थितः ॥ ३ ॥ निश्चितार्थस्ततःसाम्नापूज्यंशत्रुजिदग्रजम् ॥ उवाचहितमत्यर्थंवाक्यंवाक्यविशारदः ॥४॥

क्रोधके मारे दोनों नेत्र घुमाय हनुमानजीके वधकी आज्ञा देता हुआ ॥ ४५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकाण्डे भाषायामेकपंचाशः सर्गः ॥५१॥ राक्षसश्रेष्ठ रावण महात्मा हनुमानजीके यह वचन सुनकर क्रोधके मारे मूर्च्छित हो उनके विनाश करनेकी आज्ञा देता हुआ ॥ १ ॥ जब दुरात्मा रावण करके हनुमानजीके मार डालनेकी आज्ञा हुई तो बिभीषणजीने यह विचारकर उस बातको नहीं माना कि,हनुमानजीने अपनेको दूत बताया और वास्तवमें यह दूत ही हैं,सो दूत कभी नहीं मार डाला जा सकता ॥२॥ उसके पीछे बिभीषणजी रावणको क्रोधित और हनुमानजीका वध आया जान अपने कर्त्तव्य कार्यके विषय चिन्ता करने लगे ॥३॥ कुछ देरतक चिन्ता करनेके पीछे कर्त्तव्य कार्य स्थिर हो जानेपर वचन बोलनेवालोंमें चतुर विभीषणजी समझाने बुझानेके वचनोंसे

शत्रुओंके जीतनेवाले पूजनीय अपने बड़ेभाई रावणकी पूजा करके अत्यन्त हितकारी वचन बोले ॥४॥ हे राक्षसेन्द्र ! कोपको त्यागकर और क्षमाको ग्रहण करके प्रसन्न चित्तसे आप हमारी यह वार्त्ता श्रवण करें।जो लोग कि पूर्वापरकी बातोंको जानतेहैं; वह साधु स्वभाववाले राजालोग भी दूतको नहीं मारा करते ॥ ५ ॥ हे राजन्, ! हे वीर ! इस वानरका वध करना,धर्मविरुद्ध लोकाचारमें निन्दनीय, अयशका करनेवाला और आपकेयोग्य तो किसी प्रकारसे नहीं है ॥ ६ ॥आप धर्मज्ञ,कृतज्ञ,राजधर्मविशारद, पूर्वापर सब बातोंके जाननेवाले और परमार्थतत्त्वके जाननेमें बहुतही चतुर हो ॥७॥ सो आपसरीखे पुरुष लोग भी यदि क्रोधायमान हो जावें और ऐसा करें तो शास्त्रका पढ़ना केवल श्रमही समझाजाय॥८॥ इस कारण हे शत्रुदमनकारी! दुःखसे प्राप्त होनेके योग्य राक्षसपते ! प्रसन्न हो युक्तायुक्तका विचार कर दूतको दंडही दीजिये ॥९॥ विभीषणजीकेऐसेवचन सुनकर राक्षस पति रावणने महाक्रोधके वश होकर उत्तर दिया ॥१०॥

क्षमस्वरोषंत्यजराक्षसेंद्रप्रसीदमेवाक्यमिदंशृणुष्व ॥ वधंनकुर्वंतिपरावरज्ञादूतस्यसंतोवसुधाधिपेंद्राः ॥ ५ ॥ राजन्धर्मविरुद्धंचलोकवृत्तंश्चगर्हितम् ॥ तवचासदृशंवीरकपेरस्यप्रमापणम् ॥६॥ धर्मज्ञश्चकृतज्ञश्चराजधर्मविशारदः ॥ परावरज्ञोभूतानांत्वमेवपरमार्थवित् ॥ ७ ॥ गृह्यंतेयदिरोषेणत्वादृशोपिविचक्षणाः ॥ ततःशास्त्रविपश्चित्त्वंश्रमएवहिकेवलम् ॥ ८ ॥ तस्मात्प्रसीदशत्रुघ्नराक्षसेंद्रदुरासद ॥ युक्तायुक्तंविनिश्चित्यदूतदंडोविधीयताम् ॥ ९ ॥ विभीषणवचःश्रुत्वारावणोराक्षसेश्वरः ॥ कोपेनमहताविष्टोवाक्यमुत्तरमब्रवीत् ॥ १० ॥ नपापानांवधेपापंविद्यतेशत्रुसूदन ॥ तस्मादिमंवधिष्यामिवानरंपापकारिणम् ॥ ११ ॥ अधर्ममूलंबहुदोषयुक्तमनार्यजुष्टंवचनंनिशम्य ॥ उवाचवाक्यंपरमार्थतत्त्वंविभीषणोबुद्धिमतांवरिष्ठः ॥ १२ ॥ प्रसीदलंकेश्वरराक्षसेंद्रधर्मार्थतत्त्वंवचनंशृणुष्व ॥ दूतानवध्याःसमयेषुराजन्सर्वेषुसर्वत्रवदंतिसंतः ॥ १३ ॥ असंशयंशत्रुरयंप्रवृद्धःकृतंह्यनेनाप्रियमप्रमेयम् ॥ नदूतवध्यांप्रवदंतिसंतोदूतस्यदृष्टाबहवोहिदंडाः ॥ १४ ॥

हे शत्रुओंके नाश करनेवाले ! पापी लोगोंके मारनेसे किसी प्रकारका पाप नहीं लगता इसकारण हम इस पापकारी वानरको अवश्यही मरवाडालेंगे ॥ ११ ॥ बुद्धिवान् लोगोंमें प्रथम गिने जानेके योग्य विभीषणजी रावणकी यह नीचजनोंके योग्य अधर्मकी मूल बहुत दोषोंसे युक्त वार्त्ता श्रवण करके परमार्थ तत्त्वसे सने वचन कहने लगे ॥१२॥ हे राक्षसेन्द्र हे लंकेश्वर ! प्रसन्न होकर धर्मका गूढ मर्म श्रवण कीजिये, अपने स्वामीका कार्य सिद्ध करनेके समय दूतको नहीं मारना चाहिये सदाही साधुगण इस प्रकारसे कहा करते हैं ॥ १३ ॥ इसमें सन्देह नहीं कि यह वानर आपका अति बलवान् शत्रु है; क्योंकि इसने आपके अप्रिय कार्यको कियाहै परन्तु साधुलोगोंके कहनेके अनुसार दूत कभी मार डालनेके योग्य नहीं है हां ! परन्तु शास्त्रमें उनके लिये और अनेक प्रकारके दंड

कहेहैं ॥१४॥ कोई अंग विरूप कर देना, अथवा नाक कानादि कटवा डालना, शरीरमें फोडे लगवाना, शिख मुँडवा देना, इन सब दंडोंको एक २ करके दे, या इन सब दन्डोंका एकबारही प्रयोग करना उचित है, बस दूतोंके लिये यह सब दंड कहेहैं. परंतु दूतोंके मार डालनेका दंड हमने कभीनहीं सुना॥१५॥ और आप समान जिन पुरुषोंकी धर्मार्थमें विनीत बुद्धि है, और उत्तम अधमका विचार करके जो कार्यको निश्चय करतेहैं; भला वह किसप्रकारसे कोपके वश होसकते हैं, देखिये! सत्य गुणका आश्रय लेनेवाले लोग कभी क्रोध नहीं करते ॥१६॥ हे वीर! धर्मवादमें क्या लोकाचारमें, क्या बुद्धिसे शास्त्र का मर्म ग्रहण करनेमें सबही बातोंमें आपके तुल्य दूसरा कोई भी नहीं है, आप समस्त सुर व असुरोंके मध्यमें श्रेष्ठ पदपर आरूढ हैं ॥१७॥ "अधिक क्या कहा जाय! आप पराक्रमी,

वैरूप्यमंगेषुकशाभिघातोमौंडचंतथालक्षणसन्निपातः ॥ एतान्हिदूतेप्रवदंतिदंडान्वधस्तुदूतस्यनन‌ः श्रुतोस्ति ॥ १५ ॥ कथंचधर्मार्थविनीतबुद्धिःपरावरप्रत्ययनिश्चितार्थः ॥ भवद्विधःकोपवशेहितिष्ठेत्कोपंनगच्छंतिहिसत्त्ववंतः ॥ १६ ॥ नधर्मवादेनचलोकवृत्तेनशास्त्रबुद्धिग्रहणेषु वापि ॥ विद्येतकश्चित्तववीरतुल्यस्त्वंह्युत्तमःसर्वसुरासुराणाम् ॥ ॥ १७ ॥ " पराक्रमोत्साहमनस्विनांचसुरासुराणामपिदुर्जयेन ॥ त्वया प्रमेयेणसुरेंद्रसंघाजिताश्चयुद्धेष्वसकृन्नरेंद्राः ॥ १ ॥ इत्थंविधस्यामरदैत्यशत्रोःशूरस्यवीरस्यतवाजितस्य ॥ कुर्वंतिवीरामनसाप्यलीकंप्राणैर्विमुक्तानतुभोःपुराते ॥ २ ॥ " नचाप्यस्यकपेर्घातेकंचित्पश्याम्यहंगुणम् ॥ तेष्वयंपात्यतांदंडोयैरयंप्रेषितःकपिः ॥ १८ ॥ साधुर्वायदि वाऽसाधुःपरैरेषसमर्पितः ॥ ब्रुवन्परार्थंपरवान्नदूतोवधमर्हति ॥ १९ ॥ अपिचास्मिन्हतेनान्यंराजन्पश्यामिखेचरम् ॥ तस्मान्नास्यवधेयत्नः कार्यःपरपुरंजय ॥ भवान्सेंद्रेषुदेवेषुयत्नमास्थातुमर्हति ॥ २० ॥

उत्साहशील, चिंताशीलहैं, इसलिये देवता और दैत्यगणभी आपको नहीं जीत सकतेकहीं भी आपकी तुल्यता नहींहै । आपने वारंवार असंख्य देवताओंके समूहव राजा लोगोंकोयुद्धमें जीताहै ॥१॥ जो कि वीर पुरुष मनमें भी ऐसे शूर वीर, अजीत, और देव दानवगणोंमें शत्रु आपका कुछ अनिष्ट करते हैं तो उनका भी प्राण लेलियाजाताहै, सो हे प्रभो! पहले आप देखही चुके हैं ॥२॥" और इस वानरका नाश करनेमें हम किसी प्रकारका भी गुण वा उपकार नहीं देखते इसलिये जिन्होंने इसको यहांपर भेजाहै उन्हीं लोगोंको वधका दंड देना उचितहै॥१८॥ यह वानर साधु हो या असाधु हो परन्तु इसको शत्रुलोगोंने यहांपर पठाया है। और दूत पराधीन है, पराये अर्थ व वचन कहनेसे वह किसीप्रकार वधके योग्य नहीं हो सकता ॥१९॥ हे राजन्! इस वानरके मार डालनेपर फिर यहां पर कोईआका

शचारी आताहुआ दिखलाई न देगा। इसकारण हे पराये पुरके जीतनेवाले! इसवानरके विनाश करनेकी वासनाका कुछ प्रयोजन नहीं। हां, यह यत्न तौ इन्द्रादि देव गणोंके प्रति आपको करना चाहिये ॥२०॥ हे युद्धप्रिय? इस दूतके मारे जाने पर हम और ऐसा किसीको नहीं देखते जोकि आपके विरोधी, दुर्जयी सुशिक्षित राम लक्ष्मणको युद्ध करनेका उत्साह दिलादे ॥२१॥ हे राक्षसगणोंके मनोंको आनंद देनेवाले! पराक्रम और उत्साहमें चित्त लगाये देवता और दानव गण भी आपको नहीं जीत सकते । इस कारण राक्षस लोगोंकी युद्धकी अभिलाषाका नाश करना आपको उचित नहींहै ॥२२॥ आपके अधीनमें करोडों योद्धा हैं, वह सबही आपके हितकारी शूर एकाग्रचित्त अच्छे कुलमें उत्पन्न हुए अति शय ऊंचे मतवाले, शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ और आप करके उत्तम रूपसे पाले जाते हुये हैं ॥ २३ ॥ सो इस सेनाके कुछ अशको इससमय आज्ञा दे दीजिये कि; वह आपकी आज्ञासे मूढ स्वभाव राम लक्ष्मणको पकड़ बाँध यहां ले आवें, क्योंकि

अस्मिन्विनष्टेनहिभूतमन्यंपश्यामियस्तौनरराजपुत्रौ ॥ युद्धाययुद्धप्रियदुर्विनीतावुद्योजयेद्वैभवताविरुद्धौ ॥२१॥ पराक्रमोत्साहमनस्विनांच सुरासुराणामपिदुर्जयेन ॥ त्वयामनोनंदननैर्ऋतानांयुद्धायनिर्नाशयितुंनयुक्तम् ॥ २२ ॥ हिताश्चशूराश्चसमाहिताश्चकुलेषुजाताश्चमहा गुणेषु ॥ मनस्विनःशस्त्रभृतांवरिष्ठाःकोपप्रशस्ताःसुभृताश्चयोधाः ॥ २३ ॥ तदेकदेशेनबलस्यतावत्केचित्तवादेशकृतोद्ययांतु ॥ तौराजपुत्रा वुपगृह्यमूढोपरेषुतेभावयितुंप्रभावम् ॥२४॥ निशाचराणामधिपोनुजस्यविभीषणस्योत्तमवाक्यनिष्ठम् ॥ जग्राहबुद्ध्यासुरलोकशत्रुर्महाबलो राक्षसराजमुख्यः ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुन्दरकांडे द्विपंचाशः सर्गः ॥ ५२ ॥ तस्य तद्वचनं श्रुत्वादशग्रीवोमहात्मनः ॥ देशकालहितंवाक्यंभ्रातुरुत्तरमब्रवीत् ॥ १ ॥ सम्यगुक्तंहिभवतादूतवध्याविगर्हिता ॥ अवश्यंतुवधायान्यःक्रि यतामस्यनिग्रहः ॥ २ ॥ कपीनांकिललांगूलमिष्टंभवतीभूषणम् ॥ तदस्यदीप्यतांशीघ्रंतेनदग्धेनगच्छतु ॥ ३ ॥ ततःपश्यंत्वमुंदीनमंगवै रूप्यकर्शितम् ॥ सुमित्रज्ञातयःसर्वेबांधवाःससुहृज्जनाः ॥ ४ ॥

शत्रुलोगोंके निकट अपना प्रभाव प्रगट करना उचित है ॥ २४ ॥ देवतागणोंके शत्रु राक्षसराज श्रेष्ठ निशाचर पति महा बलवान् रावणने भली भाँतिसे सोच विचार कर अपने प्रयोजनके और श्रेष्ठ समझ छोटे भाई बिभीषणके यह हितकारी वचन ग्रहण किये ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां द्विपंचाशः सर्गः ॥ ५२ ॥ महाबली रावण, महात्मा बिभीषणके देशकालोचित वचन सुनकर अपने भाईसे बोला ॥ १ ॥ हे बिभीषण ! तुमने यथार्थ कहा, दूतका मार डालना अति निन्दाका कार्य है, परंतु मार डालनेके अतिरिक्त और किसी प्रकार का दंड तो इसको अवश्य ही दिया जायगा ॥ २ ॥ पूंछ वानरोंका अति प्यारा गहना है इसलिये शीघ्र इसकी पूंछको भस्म कर दो । तब यह वानर भस्म पूंछके साथ अपने स्वामी के पास जाये ॥ ३ ॥ जब इसकी पूंछ जल जायगी, तब इसके जातिवाले लोग, बान्धव सुहृद और मित्रगण सबही इसको देखेंगे कि अंगविरूप होनेसे यह कपि दुर्बल;

और व्याकुल होगयाहै ॥४॥ यह कह फिर राक्षसराज रावणने आज्ञा दी कीराक्षसलोग इसकी पूंछमें आग लगाय इस वानरको चौराहे व छोटे मार्गोंके साथ सारे नगर कीपरिक्रमा कराय लावें ॥५॥ क्रोधित स्वभाव राक्षसगण रावणकी यह आज्ञा पाय ढेरके ढेर पुराने रुईके वस्त्रोंसे हनुमान्‌जी की पूंछको लपेटने लगे ॥६॥ बनके बीच सूखा काठ पायकर अग्नि जिसप्रकार बढती है,वैसेही पूंछमें कपडे लपेट जानेसे महा कपि हनुमानजी बढ गये ॥७॥ कपडा लपेटनेके पीछे उसको तेलसे गीलाकर राक्षसोंने पूँछमेंअग्नि लगादी,तब हनुमान्‌जी उस जलतीहुईपूँछसे राक्षसोंको मारने लगे॥८॥रोष व क्रोधके मारे हनुमान्‌जीकी आत्मा छायगई और वदन मंडल प्रातःकालके सूर्यके समान लाल हो कर दीपने लगा,तब क्रूरस्वभाववाले राक्षस लोगोंने मिलकर ॥ ९ ॥ फिर कपि श्रेष्ठ हनुमान्‌जीको बडी मजबूतीसे बांधा और हनुमान्‌जीको देखकर स्त्री बालक वृद्ध सब हर्षित होने लगेतब बीत हनुमान्‌जीनेबंधनमें पडकर उसकालके अनुसार यह मतिकी॥१०॥

आज्ञापयद्राक्षसेंद्रःपुरंसर्वंससत्वरम् ॥ लांगूलेनप्रदीप्तेनरक्षोभिः परिणीयताम् ॥५॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराक्षसाःकोपकर्कशाः ॥ वेष्टंतेतस्यलांगूलंजीर्णैःकार्पासिकैःपटैः ॥ ६ ॥ संवेष्ट्यमानेलांगूलेव्यवर्धतमहाकपिः शुष्कमिंधनमासाद्यवनेष्विवहुताशनः ॥ ७ ॥ तैलेनपरिषिच्याथतेग्निंतत्रोपपादयन् ॥ लांगूलेनप्रदीप्तेनराक्षसांस्तानताडयत् ॥८॥ रोषामर्षपरीतात्माबालसूर्यसमाननः॥सभूयःसैगतैःक्रूरैराक्षसैर्हरिपुंगवः॥९॥ सहस्त्रीबालवृद्धाश्चजग्मुःप्रीतिंनिशाचराः॥निबद्धःकृतवान्वीरस्तत्कालसदृशींमतिम् ॥१०॥ कामंखलुनमेशक्तानिबद्धस्यापिराक्षसाः॥ छित्त्वापाशान्समुत्पत्यहन्यामहमिमान्पुनः ॥ ११ ॥यदिभर्तृहितार्थायचरंतंभर्तृशासनात् ॥ निबध्नंतेदुरात्मानोनतुमेनिष्कृतिःकृता ॥१२॥ सर्वेषामेवपर्याप्तोराक्षसानामहंयुधि ॥ किंतुरामस्यप्रीत्यर्थंविषहिष्येहमीदृशम्॥ १३ ॥लंकाचारयितव्यामेपुनरेवभवेदिति ॥ रात्रौनहिसुदृष्टामेदुर्गंकर्मविधानतः॥ १४ ॥ अवश्यमेवद्रष्टव्यामयालंकानिशाक्षये ॥ कामंबध्नंतुमेभूयःपुच्छस्योद्दीपनेनच ॥ १५ ॥

कि,हमारे बंधनकी अवस्थामें चेष्टारहित होजाने परभी निशाचर लोग कभी हमारेनिकट,अपना पराक्रम प्रगट करनेको समर्थ नहीं होंगे,हम अभी इन समस्त बंधनोंको तोड ताड कूदकर इन सब राक्षसोंका संहार कर सकते हैं ॥११॥ इससमय हम श्रीरामचन्द्रजीके हितके लिये घूमतेहैं । इससमय यदि इन दुरात्मा राक्षसोंने रावणकी आज्ञासे हमको बाँधभी लियाहै;परन्तु जितनी हानि हम प्रथम इनकीकर चुके हैं,उसका यथार्थ बदला यह अबतक हमसे कुछ नहीं ले सकेहैं॥१२॥ यद्यपि हम इकलेही संग्राममेंसमस्त राक्षसोंका संहार कर सकतेहैं,तथापि श्रीरामचन्द्रजीकी प्रसन्नताके लिये हमइनबन्धनादिकोंकोभी सहन करलेंगे ॥ १३ ॥ विशेषकरके रात्रिमें घूमनेके समयहमने लंकाके सारे किले भलीभाँति नहीं देखेहैं सो इस भले अवसरको पाय लंकाके समस्तस्थान घूम २ कर देखेंगे ॥१४॥ हमको

एकबार दिनके समय लंकाका देखना भालना अवश्य उचित है, इसलिये बहुत अच्छा यह हमें बांधे और पूंछमें अग्नि लगायकर ॥१५॥ यह राक्षसलोगहमको पीड़ा दे तोरहेहैं, परन्तु हमारा मन कुछभी खिन्न नहीं हुआ महासत्त्ववान् हनुमानूजी घेरेजाकर इसप्रकारसे चिन्ता कर रहेथेकि, इन कपिकुंजरको॥१६॥राक्षस लोग पकड़कर हर्षित चित्तसे पुरीमें फिरनेको ले चले और शंख भेरी बजाय २ इस राजदंडकी घोषणा करते हुए ॥ १७ ॥ हनुमानूजीको समस्त लंकापुरीमें घुमाने लगे, शत्रुओंके दमन करनेवाले हनुमानूजी क्रूरकर्म करनेवाले राक्षसोंके चलानेसे सुख सहित चले जाते थे ॥ १८ ॥ और घूम घामकर राक्षसों द्वारा समस्त लंका हनुमानूजीने देखी चित्र विचित्रविमानमहाकपि हनुमानूजीने देखे ॥१९॥ भाँति२के रचेरचाये भूमिभाग देखे, उनके द्वारोंपर बडे२चबूतरेमणियोंसे

क्रीडांकुर्वंतिरक्षांसिनमेस्तिमनसःश्रमः॥ ततस्तेसंवृताकारंसत्त्ववंतंमहाकपिम् ॥१६॥ परिगृह्ययुर्हृष्टाराक्षसाःकपिकुंजरम् ॥ शंखभेरीनिनादैश्चघोषयंतःस्वकर्मभिः ॥१७॥ राक्षसाःक्रूरकर्माणश्चारयंतिस्मतांपुरीम् ॥ अन्वीयमानोरक्षोभिर्ययौसुखमरिंदमः ॥१८॥ हनूमांश्चारयामासराक्षसानांमहापुरीम् ॥ अथापश्यद्विमानानिविचित्राणिमहाकपिः ॥ १९ ॥ संवृतान्भूमिभागांश्चसुविभक्तांश्चचत्वरान् ॥ रथ्याश्चगृहसंबाधाःकपिःशृंगाटकानिच॥२०॥ तथारथ्योपरथ्याश्चतथैवचगृहांतरान्॥चत्वरेषुचतुष्केषुराजमार्गेतथैवच ॥२१॥ घोषयंतिकपिंसर्वेचारइत्येवराक्षसाः ॥ दीप्यमाने ततस्तस्यलांगूलाग्रेहनूमतः ॥ २२ ॥ राक्षस्यस्ताविरूपाक्ष्यःशंसुर्देव्यास्तदप्रियम् ॥ यस्त्वयाकृतसंवादःसीतेताम्रमुखःकपिः ॥ २३ ॥ लांगूलेनप्रदीप्तेनसएषपरिणीयते ॥ श्रुत्वातद्वचनंक्रूरमात्मापहरणोपमम् ॥ २४ ॥ वैदेहीशोकसंतप्ताहुताशनमुपागमत् ॥ मंगलाभिमुखीतस्यसातदासीन्महाकपेः ॥ २५ ॥

जडे हुये देखे, बहुत चौराहे घने बसेहुए बहुतसे घर और अनेक चौक ॥२०॥ राजमार्गकी बडे२सडकें, व छोटी२गलियें और दो घरोंके बीचकी भूमियें देखीं. इसप्रकार उन सब स्थानोंमें हनुमानूजी विचरण करते हुए ॥२१॥ जहां कहीं हनुमानूजी निकलतेथे उस समय वहीं सब राक्षस लोग इनको चार२ (गूढचारी) कहकर पुकारतेथे । इसप्रकार जब हनुमानूजीकी पूंछका अग्रभाग जलने लगा ॥२२॥ तब विरूप नेत्रोंवाली राक्षसियें सीताजीसे यह बुरा समाचार कहती हुई कि, हे सीते ! तुमने जिस लाल मुखवाले वानरसे कथा वार्त्ता कही थी॥२३॥राक्षस लोग उसकी पूंछमें आग लगायकरसब जगह उसको घुमाय रहेहैं। प्राणोंका नाश करनेवाले यह क्रूर वचन सुन ॥२४॥ शोकसे अतिसंतापित हो जानकीजी मनसे अग्निकी विनय करने लगीं । और हनुमानजीकी मंगलकामनासे ॥२५॥

पवित्र हो बार२अग्निका ध्यान करती हुई यह बोलीं कि;यदि हमने पतिकी सेवाकी है और जो कुछ तप कियाहै ॥२६॥ और जो हमने श्रीरामचन्द्रजीको ही अपना पति समझा है;तो हे हुताशन ! तुम हनुमानजीके लिये शीतल होजाओ इस विनय प्रार्थनाके पश्चात् तीक्ष्ण ज्वालायुक्त दक्षिणावर्त शिखा घुमाता अग्नि जानकीके सन्मुख॥२७॥हनुमान्जीके शुभसंवाद देनेकेही लिये मानों प्रज्वलित होने लगा । व उस समय हनुमानजीका पिता पवन भी हिमालय पर्वतके निकट बहनेवाले बर्फकण मिले पवनके समान देवी जानकीजीके सन्मुख शीतल और स्वास्थ्यकर होकर चलने लगा॥२८॥उधर पूंछको जलती हुई देखकर हनुमानजी चिन्ता करने लगे कि, अग्नि चारों ओरसे प्रदीप्त होकर भी हमको क्यों नहीं जलाती ?॥२९॥ यह महाज्वाला महालपटयुक्त होकर भी किस कारणसे हमको क्लेश नहीं देती है, बरन् हमारी पूंछके आगे तो यही जान पडता है कि, मानो हिमका पिंड पूछके अग्रभागमें धरा है॥३०॥अथवा यह वह दिव्य बात हो कि, समुद्रपार होनेके

उपतस्थेविशालाक्षीप्रयताहव्यवाहनम् ॥ यद्यस्तिपतिशुश्रूषायद्यस्तिचरितंतपः ॥२६॥ यदिवात्वेकपत्नीत्वंशीतोभवहनूमतः॥ ततस्तीक्ष्णार्चिरव्यग्रःप्रदक्षिणशिखोनलः ॥२७॥ जज्वालमृगशावाक्ष्याःशंसन्निवशुभंकपेः ॥ हनूमज्जनकश्चैवपुच्छानलयुतोनिलः ॥ ववौस्वास्थ्यकरो देव्याःप्रालेयानिलशीतलः ॥ २८ ॥ दह्यमानेचलांगूलेचिंतयामासवानरः ॥ प्रदीप्तोग्निरयंकस्मान्नमांदहतिसर्वतः ॥२९॥ दृश्यतेचमहाज्वालः करोतिचनमेरुजम्॥ शिशिरस्येवसंपातोलांगूलाग्रेप्रतिष्ठितः ॥३०॥ अथवातदिदंव्यक्तंयद्दृष्टंप्लवतामया ॥ रामप्रभावादाश्चर्यंपर्वतःसरितां पतौ ॥ ३१ ॥ यदितावत्समुद्रस्यमैनाकस्यचधीमतः ॥ रामार्थंसंभ्रमस्तादृक्किमग्निर्नकरिष्यति ॥ ३२ ॥ सीतायाश्चानृशंस्येनराघवस्यचतेजसा॥ पितुश्चममसख्येननमांदहतिपावकः ॥३३॥ भूयःसचिंतयामासमुहूर्तंकपिकुंजरः ॥ कथमस्मद्विधस्येहबंधनंराक्षसाधमैः ॥३४॥ प्रतिक्रियास्ययुक्तास्यात्सतिमह्यंपराक्रमे ॥ ततश्छित्त्वाचतान्पाशान्वेगवान्वैमहाकपिः ॥ ३५ ॥

समय श्रीरामचंद्रजीके प्रभावसे जब हमने समुद्रके मध्यमें पर्वतरूप आश्चर्य देखा था॥३१॥इसमें कोई संदेह नही कि,उस समय श्रीरामचंद्रजीके ही प्रभावसे हमने यह बात देखी थी । समुद्र और बुद्धिमान् मैनाक यदि श्रीरामचन्द्रजीको मान्य करते हैं फिर भला श्रीरामचन्द्रजीका हित करनेके लिये अग्नि हमारे लिये क्यों न शीतल होजायँगे ॥३२॥ या सीताजीके सौम्य स्वभावसे श्रीरामचन्द्रके तेज प्रभावसे और पिता पवनजीसे मित्रताई होनेके कारण इन तीन कारणोंसे यह अग्नि हमको नहीं जलाती है ॥३३॥ उसके पीछे वानर केसरी बलवान् हनुमान्जी फिर क्षणभरतका चिंता करते रहे कि; पराक्रम रहते नीच राक्षस लोग हम सरीखे पुरुषको किस प्रकारसे बाँध सकते हैं॥३४॥इसलिये इन बन्धनोंको छोडकर इन राक्षसोंसे इस बांधनेका बदला लेना चाहिये.इस प्रकार विचार वेगवान् हनुमान्जी उस सब

बन्धनोंको तोड ताड ॥३५॥ गर्जकर बडे वेगसे उछल गये उसके पीछे श्रीमान् कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जी पहाडके शिखरके समान ऊंचे नगरके द्वारपर ॥३६॥ अति वेगसे चढ गये कि; जहां बहुतसे राक्षस खड़े थे उसीपर आप चढकर क्षणमात्रमें पर्वताकार होगये॥३७॥ और फिर क्षणमात्रमें छोटा शरीर धारण कर लिया कि, जिससे सब बंधन ढीले होकर शरीरमेंसे निकल पड़े उसके पीछे वह श्रीमान हनुमान्‌जी बन्धनोंसे छूटकर फिर पर्वतके समान आकार धारण करलेते हुए ॥३८॥तत्पश्चात् इधर उधर देख उस फाटकके ऊपर रक्खी काले लोहेसे बनी एक गदा देखकर उसको उठा लिया व उससे ही उन सब राक्षसों को मारडाला कि, जो रावणके भेजे इनको घेर रहे थे ॥३९॥ संग्राममें प्रचंड विक्रमकारी हनुमानजी रखवालोंको मार चारों ओरसे देखने लगे उस कालमें पूँछमें लगी हुई

उत्पपाताथवेगेननना दचमहाकपिः ॥ पुरद्वारंततःश्रीमाञ्च्छैलशृंगमिवोन्नतम् ॥ ३६ ॥ विभक्तरक्षःसंबाधमाससादानिलात्मजः ॥ सभूत्वाशैलसंकाश क्षणेनपुनरात्मवान्॥३७॥ ह्रस्वतांपरमांप्राप्तोबंधनान्यवशातयत् ॥ विमुक्तश्चाभवच्छ्रीमान्पुनःपर्वतसन्निभः ॥३८॥ वीक्षमाणश्च ददृशेपरिघंतोरणाश्रितम् ॥ सतंगृह्यमहाबाहुःकालायसपरिष्कृतम् ॥ रक्षिणस्तान्पुनःसर्वान्सूदयामासमारुतिः ॥३९॥ सतान्निहत्वारणचंड विक्रमःसमीक्षमाणःपुनरेवलंकाम् ॥ प्रदीप्तलांगूलकृतार्चिमालीप्रकाशितादित्यइवार्चिमाली ॥ ४० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येच० सा० सुंदरकांडे त्रिपंचाशः सर्गः ॥५३॥ वीक्षमाणस्ततोलंकांकपिःकृतमनोरथः ॥ वर्धमानसमुत्साहःकार्यशेषमचिंतयत् ॥१॥ किंनुखल्ववशिष्टंमेकर्तव्यमिहसांप्रतम् ॥ यदेषांरक्षसांभूयःसंतापजननंभवेत् ॥ २ ॥ वनंतावत्प्रमथितंप्रकृष्टाराक्षसाहताः ॥ बलैकदेशःक्षपितःशेषंदुर्गविनाशनम् ॥ ३ ॥ दुर्गेविनाशितेकर्मभवेत्सुखपरिश्रमम् ॥ अल्पयत्नेनकार्येस्मिन्ममस्यात्सफलःश्रमः ॥ ४ ॥

आगकी लपटके प्रज्वलित होनेसे हनुमान्‌जी किरणजालसे युक्त दुपहरियाके सूर्यके समान प्रकाशित होने लगे ॥ ४० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि० सुं० भाषायां त्रिपंचाशः सर्गः ॥५३॥ मनोरथ सिद्ध होजानेके कारण हनुमान्‌जी उत्साहसे परिपूर्ण होगये वह लंकाकी ओर देख बचे बचाये कार्यके विषयमें चिन्ता करने लगे ॥१॥ इस समय हमको यहां पर कौनसा कार्य करना उचित है कि,जिससे इन समस्त राक्षसोंको बडी भारी संतापना प्राप्त हो ॥२॥ अशोक वनको पहले ही उजाड चुके हैं मुखिया २राक्षसोंको मारकर सेनाका कुछ अंश भी संहार कर चुके हैं; बस इस समय इस किलेका ही विनाश करना हमें शेष रहा है ॥३॥ इस किलेके विध्वंस होजानेपर हमारा कार्य भली भाँतिसे सिद्ध हो जायगा, अधिक क्या कहे कि, हमारा समुद्र पार होना, और

सीताजीको खोजनेके लिये परिश्रम करना यह सब सरलतासे सफल हो जायगा ॥ ४ ॥ हमारी पूँछमें जो यह अग्नि प्रज्वलित हो रहे हैं, सो उत्तम२गृहोंको भस्म करके इनको भी भली भाँति तृप्त करना हमको उचित हैं ॥५॥इस प्रकारसे कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जीने जलती हुई पूंछ लेकर बिजलीके सहितमेघके समान लंका नगरीके घरोंपर घूमना आरंभ किया ॥ ६ ॥ और इधर उधर राक्षस लोगोंके एक२गृहसे दूसरे घरपर फुलवाडी व मंदिरोंपर निडर हृदयसे घूमने लगे ॥७॥ उसके पीछे पवनके समान बलवान् महाकपि हनुमान्‌जीने छलांग मारकर सबसे प्रथम प्रहस्तके भवनमें आय उसमें अग्नि लगाई ॥८॥ फिर वीर्यवान् महाकपि हनुमान्‌जीने महापार्श्वके गृहपर कूद वहां भी कालाग्निके समानअग्नि लगाय दी ॥९॥ वहांसे वज्रदंष्ट्रके घरपर कूदे और आगलगाय फिर शुकनाम

योह्ययंममलांगूलेदीप्यतेहव्यवाहनः॥ अस्यसंतर्पणंन्याय्यंकर्तुमेभिर्गृहोत्तमैः ॥५॥ ततःप्रदीप्तलांगूलःसविद्युदिवतोयदः ॥ भवनाग्रेषुलंकायाविचचारमहाकपिः ॥ ६ ॥ गृहाद्गृहंराक्षसानामुद्यानानिचवानरः ॥ वीक्षमाणोह्यसंत्रस्तःप्रासादांश्चचारसः ॥७॥ अवप्लुत्यमहावेगःप्रहस्तस्यनिवेशनम्॥ अग्निंतत्रविनिक्षिप्यश्वसनेनसमोबली ॥८॥ ततोन्यत्पुप्लुवेवेश्ममहापार्श्वस्यवीर्यवान्॥ मुमोचहनुमानग्निंकालानलशिखोपमम् ॥९॥ वज्रदंष्ट्रस्यचतथापुप्लुवेसमहाकपिः ॥ शुकस्यचमहातेजाःसारणस्यचधीमतः ॥१०॥ तथाचेंद्रजितोवेश्मददाहहरियूथपः ॥ जंबुमालेःसुमालेश्चददाहभवनंततः ॥ ११ ॥ रश्मिकेतोश्चभवनंसूर्यशत्रोस्तथैवच ॥ ह्रस्वकर्णस्यदंष्ट्रस्यरोमशस्यचरक्षसः ॥ १२ ॥ युद्धोन्मत्तस्यमत्तस्यध्वजग्रीवस्यरक्षसः॥ विद्युज्जिह्वस्यघोरस्यतथाहस्तिमुखस्यच ॥१३॥ करालस्यविशालस्यशोणिताक्षस्यचैवहि ॥ कुंभकर्णस्यभवनंमकराक्षस्यचैवहि ॥ १४ ॥ नरांतकस्यकुंभस्यनिकुंभस्यमहात्मनः ॥ यज्ञशत्रोश्चभवनंब्रह्मशत्रोस्तथैवच ॥ १५ ॥ वर्जयित्वामहातेजाविभीषणगृहंप्रति ॥ क्रममाणःक्रमेणैवददाहहरिपुंगवः ॥ १६ ॥

तेजवान् राक्षसके गृहको भस्मकर फिर बुद्धिमान् सारणके घरको फूँक देते हुए ॥१०॥ इसी प्रकारसे वानरयूथप हनुमान्‌जीने इन्द्रजीका भवन जलाया। फिर जम्बुमाली सुमालीके गृहोंको दाह किया॥११॥फिर रश्मिके घर; फिर सूर्यशत्रुका तत्पश्चात् ह्रस्वकर्ण, ह्रस्वदंष्ट्र और रोमश निशाचरका घर जलाया ॥१२॥ फिर युद्धोन्मत्त, मत्त ध्वजग्रीव; विद्युज्जिह्व, घोरहस्तिमुखका घर जलाया ॥१३॥ फिर कराल विशाल, शोणिताक्ष, मकराक्ष और कुंभकर्णके घर भस्म किये ॥१४॥ फिर नरांतक, कुम्भ, निकुंभके घर महात्मा हनुमान्‌जीने दग्ध किये, उसके पीछे यज्ञशत्रुका घर जलायकर फिर ब्रह्मशत्रुके गृहको दाह किया ॥१५॥ केवल महातेजस्वी

हनुमान्‌जीने युक्तिपूर्वक कूदकर विभीषणका गृह छोड दिया और कूद२कर सब घरोंको जलाया ॥१६॥ धनवानोंके भवनोंमें जो जो महामूल्यवान् धनसम्पत्ति थी कपिश्रेष्ठ हनुमान्‌जीने उस सबको जलादिया ॥१७॥ इस सब बडे२मंदिरोंको जलाय श्रीमान पवनंदन हनुमान्‌जी राक्षसपति रावणके भवनपर पहुँचे॥१८॥ यह सर्वश्रेष्ठगृह विविधरत्न और मंगलमयद्रव्योंसे शोभित, देखनेमें मेरु व मन्दराचलके समान था ॥१९॥ वीर हनुमान्‌जी अपनी पूँछकी जलतीहुई आग इस रावणके स्थानमें लगाय युगक्षय होनेके समय गर्जनेवाले बादलके समान गंभीर शब्दसे गरजे ॥ २० ॥ उस समय वायुका वेग अतिप्रबल होनेके कारण यह अग्निकालाग्निके समान प्रज्वलित हो उठी ॥२१॥ उस प्रज्वलित अग्निको पवन अति प्रचंड करके एक गृहसे दूसरे गृहपर पहुँचाता था कांचन निर्मित झरोखोंसे युक्त

तेषुतेषुमहार्हेषुभवनेषुमहायशाः ॥ गृहेष्वृद्धिमतामृद्धिंददाहकपिकुंजरः ॥१७॥ सर्वेषांसमतिक्रम्यराक्षसेंद्रस्यवीर्यवान् ॥आससादाथलक्ष्मीवान्रावणस्यनिवेशनम् ॥ १८ ॥ ततस्तस्मिन्गृहेमुख्येनानारत्नविभूषिते ॥ मेरुमंदरसंकाशेनानामंगलशोभिते ॥ १९ ॥ प्रदीप्तमग्निमुत्सृज्य लांगूलाग्रेप्रतिष्ठितम्॥ननादहनुमान्वीरोयुगांतजलदोयथा ॥२०॥ श्वसनेनचसंयोगादतिवेगोमहाबलः ॥ कालाग्निरिवजज्वालप्रावर्धतहुतासनः ॥ २१ ॥ प्रदीप्तमग्निंपवनस्तेषुवेश्मसुचारयन्॥तानिकांचनजालानिमुक्तामणिमयानिच ॥२२॥ भवनान्यवशीर्यंतरत्नवंतिमहांतिच ॥ तानिभग्नविमानानिनिपेतुर्वसुधातले ॥ २३ ॥ भवनानीवसिद्धानामंबरात्पुण्यसंक्षये ॥ संजज्ञेतुमुलःशब्दोराक्षसानांप्रधावताम् ॥ २४ ॥ स्वेस्वेगृहपरित्राणेभग्नोत्साहोज्झितश्रियाम्॥नूनमेषोग्निरायातःकपिरूपेणहाइति ॥ २५ ॥ क्रंदंत्यःसहसापेतुःस्तनंधयधराःस्त्रियः ॥ काश्चिदग्निपरीतांग्योहर्म्येभ्योमुक्तमूर्धजाः ॥ २६ ॥ पतंत्योरेजिरेऽभ्रेभ्यःसौदामन्यइवांबरात् ॥ वज्रविद्रुमवैदूर्यमुक्तारजतसंहतान् ॥ २७ ॥

रत्नोंकी राशिसे विभूषित मुक्तामणि लगे हुए ॥२२॥ बडे २भवन फट२कर भस्म होगये और बडे२भारी धवरहरे भी भस्म होकर पृथ्वीपर भहरायपडे ॥२३॥ पुण्य क्षय होजानेपर सिद्ध लोंगोंके स्थान जिस प्रकार आकाशसे छूटकर पृथ्वीपर गिर पडते हैं, इसी प्रकार सब गृहभी टूट फूट कर गिरपडे उस समय इधर उधर भागते हुयेराक्षसोंका बडा भारी शब्द हुआ ॥२४॥कारण कि, निज२भवनोंकी रक्षा करनेमें सबका उत्साह टूट गया था; वह सब ही अपनी २ सम्पत्ति छोड कर कहनेलगे कि, अरे! यह अग्निही निश्चय वानरका रूप धारणकर यहां आया है ऐसा कह२कर रोने लगे॥२५॥राक्षसियें दूध पीते हुए अपने२बच्चोंको गोदमें लिये रोते २ सहसा पृथ्वीपर गिर पडीं. कोई सर्वांगमें आग लगानेसे बाल छोडे बडे२मंदिरोंके ऊपरसे ॥२६॥ गिरनेके समय आकाशसे गिरी हुई बिजलीके

समान शोभायमान होने लगीं । हीरा, मूंगा, वैदूर्यमणि, मोती, चांदी सहित॥२७॥मन्दिरोंसे गल२कर बहते अनेक प्रकारके धातु समूह हनुमानजीने देखे। अग्नि जिस प्रकार ढेरके ढेर सूखे काठ और तिनकोंके भस्म करनेसे तृप्त नहीं होता वैसेही॥ २८॥राक्षसोंका वध करके हनुमानजी कुछ भी तृप्त न हुए बरन् इनकी यही इच्छा थी कि सबही इतिश्री करदें । हनुमानजीसे इतने राक्षस मारे गये थे कि लंकाकी मरकर भूमिमें गिरे हुए राक्षसों को जगह नहीं मिलती थी एकके ऊपर एक गिरपडे थे ॥२९॥ जिस प्रकार महादेवजी ने त्रिपुरको भस्म किया था, वैसेही वेगवान् महात्मा वानर श्रेष्ठ हनुमानजीने लंकापुरीको भस्म कर डाला॥३०॥ उसके पीछे वह अग्नि भयंकर वेगवान हनुमानजी करके छोडा जा कर लंकापुरीके पर्वत शिखर पर लपटों को फैलाय प्रज्वलित हो गया॥३१॥ और पवन की सहायतासे प्रलय के समय की अग्निसा शरीर धारण कर आकाश मंडल को स्पर्श करता हुवा बढने लगा निशाचर लोगोंके शरीरोंको घृतरूपमें पाय उस अग्निकी निर्धूम

विचित्रान्भवनाद्धातून्स्यंदमानान्ददर्शसः॥नाग्निस्तृप्यतिकाष्ठानांतृणानांचयथातथा ॥२८॥ हनूमान्राक्षसेंद्राणांवधेकिंचिन्नतृप्यति ॥ नहनूमद्विशस्तानांराक्षसानांवसुंधरा ॥ २९ ॥ हनूमतावेगवतावानरेणमहात्मना ॥ लंकापुरंप्रदग्धंतद्रुद्रेणत्रिपुरंयथा ॥ ३० ॥ ततः स लंकापुरपर्वताग्रेसमुस्थितोभीमपराक्रमोग्निः ॥ प्रसार्यचूडावलयंप्रदीप्तोहनूमतावेगवतोपसृष्टः ॥३१॥ युगांतकालानलतुल्यरूपःसमारुतोग्निर्ववृधेदिवःस्पृक् ॥ विधूमरश्मिर्भवनेषुसक्तोरक्षःशरीराज्यसमर्पितार्चिः॥३२॥ आदित्यकोटीसदृशःसुतेजालंकांसमस्तांपरिवार्यतिष्ठन् ॥ शब्दैरनेकैरशनिप्ररूढैर्भिंदन्निवांडंप्रबभौमहाग्निः ॥३३॥ तत्रांबरादग्निरतिप्रवृद्धोरूक्षप्रभःकिंशुकपुष्पचूडः ॥ निर्वाणधूमाकुलराजयश्चनीलोत्पलाभाःप्रचकाशिरेऽभ्रा ॥ ३४ ॥ वज्रीमहेंद्रस्त्रिदशेश्वरोवासाक्षाद्यमोवावरुणोऽनिलोवा ॥ रौद्रोग्निरर्कोधनदश्चसोमोनवानरोयंस्वयमेवकालः ॥३५॥ किंब्रह्मणःसर्वपितामहस्यलोकस्यधातुश्चतुराननस्य ॥ इहागतोवानररूपधारीरक्षोपसंहारकरःप्रकोपः ॥ ३६ ॥

लपटैं निकलीं॥३२॥उस बढती हुई अवस्थामें वह अग्नि भवन समूहोंको घेर धूम रहित किरणोंका विस्तार करने लगा इस प्रकारसे कोटि सूर्य के समान परमतेजस्वी प्रलय कलाका अग्नि वज्रतुल्य घोर नादसे ब्रह्माण्डको भेदकर समस्त लंकापुरीको घेर लेता हुआ॥३३॥ टेसूके फूलके समान शिखावाला क्रूर कांति युक्त अग्नि इस भांतिसे आकाशतक में फैलकर बहुत ही बढ़ा, नीचेके भागमें सबही रूखे धूम राशिकी अनेक श्रेणियें नीलकमलकी पखुरियोंके समान आकाशको प्रकाशित करने लगीं॥३४॥ गृह, वृक्ष और प्राणी समूहोंके सहित लंका नगरीको भस्म होते हुए देखकर बहुत सारे बचे हुए राक्षस वहां इकठे हो परस्पर कहने लगे कि, यह वानर नहीं साक्षात् काल है, यह देववाओंका स्वामी इन्द्र, यम, वरुण, पवन, रुद्र, अग्नि, सूर्य, कुबेर व चंद्रमा नहीं है, यह साक्षात् कालही है॥३५॥ क्या सबके पितामह लोकोंके धारण करनेवाले चार मुखके ब्रह्माजीका साक्षात् कोप तो राक्षस कुल संहारकरी वानर रूप धारण करके यहां नहीं आया ?॥३६॥

किंवा अचिन्त्य समस्त का कारण रूप विष्णुजीका तेज राक्षस कुलका विनाश करनेके लिये इस समय अपनी मायाकी साहायतासे कपिका सुन्दर रूप धारण कर यहां आया है ॥ ३७ ॥ इस भाँतिकी बात परस्पर एकत्र हो होकर लंकापुरी को सब प्राणी और छोटे बडे मन्दिरों तथा वृक्षों समेत भस्म और क्षार खार निहार कर कहते थे ॥३८॥ उसके पीछे लंका नगरी, राक्षस; अश्व; रथ, हस्ती, पक्षी, मृग और वृक्षगणों के सहित सहसा महा भस्म होकर अति व्याकुल हो बडे शब्दसे रुदन करने लगे अर्थात् रोनेका हाहा कार शब्द मचगया ॥ ३९ ॥ राक्षस लोग भी हातात ! हापुत्र ! हाकान्त ! हामित्र ! हाजीवितेश ! हाय हमारे अति क्लेशसे बटोरे हुएसब पुण्य क्षीण हो गये । इस भाँति अनेक प्रकार के विलाप करते अतिशय भयंकर घोर शब्द करने लगे॥ ४० ॥उस कालमें अग्निकी लप

किंवैष्णवंवाकपिरूपमेत्यरक्षोविनाशायपरंसुतेजः ॥ अचिंत्यमव्यक्तमनंतमेकंस्वमाययासांप्रतमागतंवा ॥ ३७ ॥ इत्येवमूचुर्बहवोविशिष्टारक्षोगणास्तत्रसमेत्यसर्वे ॥ सप्राणिसंघांसगृहांसवृक्षांदग्धांपुरींतांसहसासमीक्ष्य ॥ ३८ ॥ ततस्तुलंकासहसाप्रदग्धासराक्षसासाश्वरथासनागा ॥ सपक्षिसंघासमृगासवृक्षारुरोददीनातुमुलंसशब्दम् ॥३९॥ हातातहापुत्रककांतमित्रहाजीवितेशांगहतंसुपुण्यम्॥रक्षोभिरेवंबहुधाब्रुवद्भिःशब्दःकृतोघोरतरःसुभीतः ॥४०॥ हुताशनज्वालसमावृतासाहतप्रवीरपरिवृत्तयोधा॥हनूमतःक्रोधबलाभिभूताबभूवशापोपहतेवलंका ॥ ४१ ॥ ससंभ्रमंत्रस्तविषण्णराक्षसांसमुज्ज्वलज्ज्वालहुताशनांकिताम्॥ददर्शलंकांहनुमान्महामनाः स्वयंभुरोषोपहतामिवावनिम् ॥४२॥ भंक्त्वावनंपादपरत्नसंकुलंहत्वातुरक्षांसिमहांतिसंयुगे ॥ दग्ध्वापुरींतांगृहरत्नमालिनींतस्थौहनूमान्पवनात्मजःकपिः ॥ ४३ ॥ सराक्षसांस्तान्सुबहूंश्चहत्वावनंचभंक्त्वाबहुपादपंतत् ॥ विसृज्यरक्षोभवनेषुचाग्निंजगाममरामंमनसामहात्मा ॥४४॥ ततस्तुतंवानरवीरमुख्यंमहाबलंमारुततुल्यवेगम् ॥ महामतिंवायुसुतंवरिष्ठंप्रतुष्टुवुर्देवगणाश्चसर्वे ॥ ४५ ॥

टसे चारों ओर व्याप्त औरमुखिया२वीर व योधा लोगोंके मरजाने व हनुमानजीके क्रोधसे अनादर की हुई लंकानगरी शापसे हत हुईके समान जान पडने लगी ॥४१॥ महामनस्वी हनुमानजीने देखा कि, सब राक्षस घबडाये भीत शोकाकुल हैं और प्रदीप्त हुये अति लपटवाले अग्नि करके चारों ओर घिर जानेसे महादेवजी के क्रोधसे भस्म पृथ्वी के समान लंका नगरीकी शोचनीय दशा उपस्थित हुई है ॥ ४२ ॥ पवन कुमार हनुमानजी अतिश्रेष्ठ वृक्षोंसे युक्त अशोक वनको उजाड बडे २ राक्षसोंको युद्धमें संहार अत्युत्तम रत्न समूहोंसे बनी लंकापुरीको भस्म कर स्थित हुये॥४३॥ और बहुत राक्षसोंको मार उनके सहित वन उजाड राक्षसोंके भवनोंमें अग्नि लगाय वे महातमा मनही मनमें श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण करने लगे ॥ ४४ ॥ उस समयमें समस्त ही देवता धन्य २ करके पवनके

समान वेगवान् महाबलवान् समस्त वीरोंमें श्रेष्ठ और बली, महामति पवनकुमार हनुमानजी की स्तुति करने लगे ॥४५॥समस्त देवगण, महर्षिगण, गन्धर्वगण, विद्याधरगण, पन्नग गण और समस्त प्रधान २ वीर गण अति अनुपम परमप्रीति प्राप्त करते हुए ॥ ४६ ॥ इस समयमें महातेजस्वी कपिश्रेष्ठ हनुमानजी वन उजाड राक्षस कुल विनाश कर भयंकर लंकापुरीको भस्म कर शोभायमान हुए ॥ ४७ ॥ और जलती हुई पूंछसे निकलती हुई अग्नि के किरणोंसे युक्त हो बडा भारी धवरहर मंडल के विचित्र भूमिके अग्र भाग पर बैठे किरण सहित सूर्य भगवान्के समान शोभा धारण करते हुए ॥४८॥ उसके पीछे वानरराज सिंह महाकपि हनुमान्जी समस्त लंका पुरीको पीडित करके समुद्रके जलमें, अपने पूंछमें लगी हुई आग बुझाते हुए ॥४९॥ समस्त लंकाको भस्म होते देखकर

देवाश्चसर्वेमुनिपुंगवाश्चगंधर्वविद्याधरपन्नगाश्च॥भूतानिसर्वाणिमहांतितत्रजग्मुःपरांप्रीतिमतुल्यरूपाम्॥४६॥ भंक्त्वावनंमहातेजाहत्वारक्षांसिसंयुगे॥दग्ध्वालंकापुरींभीमांरराजसमहाकपिः॥४७॥ गृहाग्र्यशृंगाग्रतलेविचित्रेप्रतिष्ठितोवानरराजसिंहः॥प्रदीप्तलांगूलकृतार्चिमालीव्यराजतादित्यइवार्चिमाली ॥ ४८ ॥ लंकांसमस्तांसंपीड्यलांगूलाग्निंमहाकपिः ॥ निर्वापयामासतदासमुद्रेहरिपुंगवः ॥४९॥ ततोदेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ दृष्ट्वालंकांप्रदग्धांतांविस्मयंपरमंगताः ॥ ५० ॥ इत्यार्षेश्रीमद्रा० वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे चतुष्पंचाशः सर्गः ॥५४॥ संदीप्यमानांवित्रस्तांत्रस्तरक्षोगणांपुरीम्॥अवेक्ष्यहनुमाँल्लंकांचिंतयामासवानरः ॥ १ ॥ तस्याभूत्सुमहांस्त्रासःकुत्साचात्मन्यजायत ॥ लंकांप्रदहताकामंकिंस्वित्कृतमिदंमया ॥ २ ॥ धन्याःखलुमहात्मानोयेबुद्ध्याकोपमुत्थितम् ॥ निरुंधंतिमहात्मानोदीप्तमग्निमिवांभसा ॥३॥ क्रुद्धःपापंनकुर्यात्कःक्रुद्धोहन्याद्गुरूनपि ॥ क्रुद्धःपरुषयावाचानरःसाधूनधिक्षिपेत् ॥४॥ वाच्यावाच्यंप्रकुपितोनविजानातिकर्हिचित् ॥ नाकार्यमस्तिक्रुद्धस्यनावाच्यंविद्यतेक्वचित् ॥ ५ ॥

देवगण, गन्धर्वगण और परमर्षिगण सबही अति विस्मित हुए ॥ ५० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां चतुष्पंचाशः सर्गः ॥ ५४ ॥ लंका नगरीको भस्म विध्वंस और वहां के राक्षसोंको त्रासित हुआ देखकर वानर श्रेष्ठ हनुमानजी चिन्ता करने लगे ॥ १ ॥ चिन्ता करते २ हनुमान्जीको बडा भारी त्रास हुआ आप ही अपनी निन्दा करने लगे, हनुमान्जी बोले कि, हमने इच्छानुसार लंकाको जला कर कैसा बुरा कार्य किया ॥२॥ वह महात्मा लोग धन्य हैं, जो जलसे प्रज्वलित अग्नि के समान उपस्थित हुए क्रोधको अपनी बुद्धिसे रोकते हैं ॥३॥ मनुष्य क्रोधित होकर कौनसा पाप नहीं करता? मनुष्य क्रोधसे अन्धा होकर गुरुजन आदि बडे पुरुषोंको भी मार डालता है और कठोर वचन कहकर साधु लोगोंका भी निरादर करता है॥४॥क्रोधके वश हुए पुरुषको

कदापि ज्ञान नहीं रहता वह नहीं जानता कि,यह करने योग्य व यह करने अयोग्य है; ऐसा कोई अकार्य नहीं है कि जिसको क्रोधी पुरुष न कर सके ॥५॥ सर्प जिस प्रकार पुरानी केंचुलीको छोड देता है; वैसेही क्रोध आनेके कालमें जो पुरुष अपनी क्षमाके बलसे उसको त्याग देता है; वही यथार्थ पुरुष कहलाता है ॥६॥ हम पाप कारियोंके अगुए हैं और महा मूर्ख व निर्लज्ज हैं इसीसे तो सीताजी के लिये कुछ विचार न कर लंकामें अग्नि लगाय हमने स्वमीकी हत्या की ॥७॥ हमको धिक्कार है ! जब कि समस्त लंका भस्म होगई; तब तो आर्या जानकीजी भी निश्चय ही भस्म होगई होंगी, हाय ! हमने अज्ञानता के मारे अपने स्वामी का कार्य नष्ट कर दिया ॥८॥ जिसके लिये हमने यह सब कुछ किया था वही कार्य हमने अपने आप नष्ट कर दिया; हमने लंकाका दाह करनेके समय सर्व प्रकारसे सीताजीकी रक्षा नहीं की॥९॥इसलिये जिसके कारण हमने यह लंका जलाई उन्हीं श्रीरामचन्द्रजी के कार्यका नाश होगया हमने सीताजीके दर्शन

यःसमुत्पतितंक्रोधंक्षमयैवनिरस्यति ॥ यथोरगस्त्वचंजीर्णांसवैपुरुषउच्यते ॥६॥ धिगस्तुमांसुदुर्बुद्धिंनिर्लज्जंपापकृत्तमम् ॥ अचिंतयित्वातां सीतामग्निदंस्वामिघातकम् ॥७॥ यदिदग्धात्वियंसर्वानूनमार्यापिजानकी ॥दग्धातेनमयाभर्तुर्हतंकार्यमजानता ॥८॥ यदर्थमयमारंभस्तत्कार्यमवसादितम् ॥ मयाहिदहतालंकांनसीतापरिरक्षिता ॥ ९ ॥ ईषत्कार्यमिदंकार्यंकृतमासीन्नसंशयः ॥ तस्यक्रोधाभिभूतेनमयामूलक्षयः कृतः ॥१०॥ विनष्टाजानकीव्यक्तंनह्यदग्धःप्रदृश्यते॥ लंकायाःकश्चिदुद्देशःसर्वाभस्मीकृतापुरी॥११॥ यदितद्विहतंकार्यंमयाप्रज्ञाविपर्ययात् ॥ इहैवप्राणसंन्यासोममापिह्यद्यरोचते ॥ १२ ॥ किमग्नौनिपताम्यद्यआहोस्विद्बडवामुखे ॥ शरीरमिहसत्त्वानांदद्मिसागरवासिनाम् ॥ १३ ॥ कथंनुजीवताशक्योमयाद्रष्टुंहरीश्वरः॥तौवापुरुषशार्दूलौकार्यसर्वस्वघातिना ॥१४॥ मयाखलुतदेवेदंरोषदोषात्प्रदर्शितम् ॥ प्रथितंत्रिषुलोकेषुकपित्वमनवस्थितम् ॥ १५ ॥

तो पाये; परन्तु क्रोधसे ज्ञान रहित हो उस सीता दर्शन रूप कार्यकी जडही काट डाली ॥१०॥जानकीजी निश्चयही भस्म हो गईं कारण कि सबही पुरी जब जली तो वह काहेको बची होंगी; लंकापुरी में हम ऐसा स्थान नहीं देखते कि जो भस्म होनेसे बचा हो॥११॥जब की; हमने बुद्धिकी विपरीततासे ऐसा कार्य कर डाला तब यहीं पर आजही प्राण त्यागना हमको उचित जान पडता है ॥१२॥ आज हम बडे बडवानलमें गिरेंगे या अग्निमें गिर जलकर मरेंगे; नहीं तो समुद्रमें रहनेवाले जीवोंको अपना शरीर सौंप देंगे,अर्थात् समुद्र में गिर पडेंगे ॥१३॥ कारण कि जीवित रहनेसे सुग्रीवजीके साथ साक्षात् करना कभी हमसे नहीं होसकता; अथवा समस्त कार्यका विनाश करके पुरुष सिंह श्रीराम लक्ष्मणजीको भी हम किस प्रकारसे देख सकते हैं ॥१४॥ यह तीनों लोकोंमें विदित है

कि; वानरजातिके स्वभावका क्या ठिकाना; सो हमने क्रोधसे अन्धे बन निश्चय ही अपनी वानरता दिखाई ॥१५॥ जो कार्यको असमर्थ और अव्यवस्थ कर डालता है उस राजसिक भावको धिक्कार है;हमने समर्थ होकर भी रजोगुण मूलक क्रोधके वश हो कर सीताजीकी रक्षा नहीं की,॥१६॥ कारण कि; सीताजीकी मृत्यु होनेसे श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मण की मृत्यु हो जायगी, और श्रीराम व लक्ष्मणजी के मर जानेसे सुग्रीवजी भी बन्धु बान्धवों सहित मृतक हो जाँयगे॥१७॥ धर्मात्मा भ्रातृवत्सल भरत और शत्रुघ्नजी भी यह समाचार श्रवणकर किस प्रकारसे जीवन धारण कर सकेंगे॥१८॥ जब इस प्रकारसे धर्ममें रहता हुआ इक्ष्वाकुवंश नष्ट हो जायगा;तब इसमें कुछ संदेह नहीं कि;सब पृथ्वीपरकी प्रजा शोक संतापसे व्याकुल हो जायगी॥१९॥इस लिये हतभागी हमने रोषके दोषसे ढक निश्चय ही सब लोगोंका विनाश किया ! हमारा बटोरा हुआ धर्म भी लोप हो गया ॥२०॥ इस प्रकारसे चिंता करते २ पूर्व समय के शुभ सूचक समस्त कारण हनुमान्

धिगस्तुराजसंभावमनीशमनवस्थितम् ॥ ईश्वरेणापियद्रागान्मयासीतानरक्षिता ॥१६॥ विनष्टायांतुसीतायांतावुभौविनशिष्यतः॥तयोर्विना शेसुग्रीवःसबंधुर्विनशिष्यति॥१७॥एतदेववचःश्रुत्वाभरतोभ्रातृवत्सलः॥धर्मात्मासहशत्रुघ्नःकथंशक्ष्यतिजीवितुम्॥१८॥इक्ष्वाकुवंशेधर्मिष्ठेगते नाशमसंशयः॥ भविष्यंतिप्रजास्सर्वाःशोकसंतापपीडिताः ॥१९ ॥ तदहंभाग्यरहितोलुप्तधर्मार्थसंग्रहः ॥ रोषदोषपरीतात्माव्यक्तंलोकविना शनः॥२०॥ इतिचिंतयतस्तस्यनिमित्तान्युपपेदिरे॥पूर्वमप्युपलब्धानिसाक्षात्पुनरचिंतयत्॥२१॥अथवाचारुसर्वांगीरक्षितास्वेनतेजसा॥ नन शिष्यतिकल्याणीनाग्निरग्नौप्रवर्तते ॥ २२ ॥ नहिधर्मात्मनस्तस्यभार्याममिततेजसः॥स्वचरित्राभिगुप्तांतां स्प्रष्टुमर्हतिपावकः ॥ २३ ॥ नूनं रामप्रभावेणवैदेह्याःसुकृतेनच ॥ यन्मांदहनकर्मायंनादहद्धव्यवाहनः ॥ २४ ॥त्रयाणांभरतादीनांभ्रातॄणांदेवताचया॥ रामस्यचमनःकांतासा कथंविनशिष्यति ॥ २५ ॥

जीको प्राप्त होने लगे। इन शुभ कारणोंको विचार कर हनुमान्जी फिर चिंताकरने लगे॥२१॥अथवा सर्वाङ्ग शोभायमान कल्याणी वह जानकीजी अपने तेज प्रभावसे सदाही रक्षित रहती हैं वह कभी विनाशको प्राप्त न हुई होंगी,कारणकि अग्नि अग्निको कभी नहीं जला सकता ॥२२॥ उसपर विशेषता यह कि जानकीजी अमित तेजस्वी धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी की भार्या हैं वह अपने साधु चारित्रोंके गुणोंसे सदाही रक्षित रहती हैं; इस कारण अग्नि किस प्रकारसे उनको छू सकता है ॥२३॥ फिर एकबात यह भी तोप्रणामकी है कि दाहक स्वभाववाले इस अग्निने निश्चय ही श्रीरामचन्द्रजी के प्रभाव और सीताजी के पुण्य बलसे हमको दग्ध नहीं किया ॥२४॥श्रीरामचन्द्रजी को श्रीसीताजी प्राणोंसे भी अधिक प्यारी हैं और भरत,शत्रुघ्न;लक्ष्मणजीकी भी देवता हैं, इसलिये वह किस प्रकारसे विनष्ट होंगी॥२५॥

अथवा सब वस्तुओंको जलानेकी सामर्थ्य रखनेवाले अग्निने जब हमारी पूंछको नहीं जलाया, तब उन आर्या जानकीजीको वह किस प्रकारसे भस्म करेंगे ? ॥ २६ ॥ यह विचार फिर हनुमान्जी विस्मित हो देवी जानकीजीके प्रभावसे समुद्रके जलसे हिरण्यनाभ मैनाक पर्वतके दर्शनकी सुधिकर प्रसन्न चित्तसे कहने लगे ॥ २७ ॥ अधिक क्या कहे, जानकीजी तपस्या सत्यवाक्य और अपने पतिव्रत धर्मसे आपही अग्निको भस्म कर सकती हैं, इस कारण अग्नि उनको जलानेमें कभी समर्थ न होगा ॥ २८ ॥ जब इस प्रकार हनुमानजी देवी जानकीजीके धर्मनिष्ठाकी चिन्ता कर रहे थे कि, इतनेंहीमें महात्मा चारणलोगोंके वचनउन्होंने सुने ॥२९॥ वह चारण गण यह कह रहे थे कि अहो हनुमानजीने जो कार्य किया, निश्चयही और कोई दूसरा उसको नहीं कर सकता जोकि

यद्वादहनकर्मायंसर्वत्रप्रभुरव्ययः ॥ नमेदहतिलांगूलंकथमार्याप्रधक्ष्यति ॥२६॥ पुनश्चाचिंतयत्तत्रहनूमान्विस्मितस्तदा ॥ हिरण्यनाभस्यगिरेर्जलमध्येप्रदर्शनम् ॥ २७ ॥तपसासत्यवाक्येनअनन्यत्वाच्चभर्तरि ॥ असौविनिर्दहेदग्निनतामग्निःप्रधक्ष्यति ॥ २८ ॥ सतथाचिंतयंस्तत्रदेव्याधर्मपरिग्रहम् ॥शुश्रावहनुमांस्तत्रचारणानांमहात्मनाम् ॥२९॥ अहोखलुकृतंकर्मदुर्विगाहंहनूमता ॥ अग्निविसृजतातीक्ष्णंभीमंराक्षससद्मनि ॥ ३० ॥ प्रपलायितरक्षःस्त्रीबालवृद्धसमाकुला ॥ जनकोलाहलाध्मातांक्रंदर्तीवाद्रिकंदरैः ॥ ३१ ॥ दग्धेयंनगरीलंकासाट्टप्राकारतोरणा ॥जानकीनचदग्धेतिविस्मयोद्भुतएवनः॥३२॥ इतिशुश्रावहनुमान्वाचंताममृतोपमाम् ॥ बभूवचास्यमनसोहर्षस्तत्कालसंभवः ॥ ३३ ॥ सनिमित्तैश्चदृष्टार्थैःकारणैश्चमहागुणैः ॥ ऋषिवाक्यैश्चहनुमानभवत्प्रीतमानसः ॥ ३४ ॥

इन्होंने भयंकर लंकापुरीको जलाकर रावणका भवनभी भस्म किया ॥३०॥ बाल वृद्धोंकी राशियोंसे युक्त जनोंके शब्दसे पूर्णशब्द समन्वित पर्वतकीगुफाके समान शब्दायमान ॥ ३१ ॥ निशाचर लोगोंके गृहोंमें भयंकर तीक्ष्ण अग्नि लगाय अटारियें फाटक और धवरहरोंके साथ समस्त लंकापुरीको जलादिया, परन्तु जानकीजीको बचालिया, सो हमको बडे आश्चर्य और अद्भुतकी वार्ता यह जान पडती है ॥ ३२ ॥ चारलोगोंके मुखसे इस प्रकारके अमृततुल्य वचन सुनकर उस कालमें आनन्दसे अंजनीकुमार हनुमानजीका अन्तःकरण परिपूर्ण होगया॥३३॥ जिनसे निश्चय होजाय ऐसे शुभ निमित्तोंको देख, जिनसे परम फलकी प्राप्ति होजाय ऐसे कारण समूह और ऋषिलोगोंके वचन इन सबसे हनुमानजीके मनमें प्रसन्नता उपजी ॥ ३४ ॥

उसके पीछे चारण लोगोंके वचनोंसे सीताजीके शरीरकी कुशल अवस्था जान हनुमानजीका मनोरथ सफल हुआ। परन्तु उन्होंने मनमें यह विचारा कि सीताजीके दर्शन करफिर चलना चाहिये ॥३५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० सुन्दरकांडे भाषायां पंचपंचाशः सर्गः ॥ ५५ ॥ उसके पीछे शिंशपाके वृक्षके नीचे सीताजी निर्विघ्न कुशल शरीरसे बैठी थीं कि, इतनेमें हनुमानजीने वहां पहुंचकर सीताजीको प्रणाम करके कहाकि, हे देवि ! बडे भाग्यकी बात है कि हमने आपको यहां कुशल सहित बैठे हुए देखा इस स्थानमें आप पर कोई विपद तो नहीं आई ? ॥१॥ तब श्रीजानकीजीने जानेके लिये तैयार हनुमान्जीको बार २ निहार अपने पतिको स्नेहयुक्त वचन उनसे कहे * ॥ २ ॥ हे वत्स ! यदि तुम्हारेभी मनभावे तो यहांसे किसी एकांत स्थानमें आजका दिन

ततःकपिःप्राप्तमनोरथार्थस्तामक्षतांराजसुतांविदित्वा॥प्रत्यक्षतस्तांपुनरेवदृष्ट्वाप्रतिप्रयाणायमतिंचकार॥३५॥इ०श्री०वा०आ०च०सा०सुं०पंचपंचाशःसर्गः ॥५५॥ ततस्तुशिंशपामूलेजानकींपर्यवस्थिताम्॥ अभिवाद्याब्रवीद्दिष्ट्याचापश्यामित्वामिहाक्षताम् ॥१॥ ततस्तंप्रस्थितंसीतावीक्षमाणापुनःपुनः॥भर्तुःस्नेहान्वितावाक्यहनूमंतमभाषत ॥२॥ यदित्वंमन्यसेतातवसैकाहमिहानघ॥कच्चित्सुसंवृतेदेशेविश्रांतःश्वोगमिष्यसि ॥३॥ ममचैवाल्पभाग्यायाःसान्निध्यात्तववानर ॥ शोकस्यास्याप्रमेयस्यमुहूर्तंस्यादपिक्षयः ॥४॥ गतेहिहरिशार्दूलपुनःसंप्राप्तयेत्वयि ॥ प्राणेष्वपिनविश्वासोममवानरपुंगव॥५॥ अदर्शनंचतेवीरभूयोमांदारयिष्यति ॥ दुःखाद्दुःखतरंप्राप्तांदुर्मनःशोककर्शिताम् ॥ ६ ॥ अयंचवीरसंदेहस्तिष्ठतीवममाग्रतः॥सुमहत्सुसहायेषुहर्यृक्षेषुमहाबलः॥७॥कथंनुखलुदुष्पारंसंतरिष्यंतिसागरम्॥तानिहर्यृक्षसैन्यानितौवानरवरात्मजौ ॥८॥

बिताकर चले जाना ॥ ३ ॥ हे पापरहित ! तुम्हारे निकट रहनेसे एक मुहूर्त्तके लिये इस मन्द भाग्यवालीका महाशोक कुछेक हलका हो जायगा ॥ ४ ॥ परन्तु हे कपिशार्दूल ! तुम इस समय जाओगे तो सही परन्तु फिर जबतक लौटोगे तबतक न जाने हमारा जीवन रहे या न रहे ॥ ५ ॥ हे वानरश्रेष्ठ हम मनके शोकसे महाव्याकुल होकर अतिशय दुःख पाय रही हैं, इस समय तुम्हारे अदर्शनसे हमको और भी अधिक दुःख विदारित करेगा ॥ ६ ॥ हे वीरश्रेष्ठ ! हमारे मनमें यह बडाभारी सन्देह होता है कि, यह बडेभारी सहायक ऋक्ष वानर ॥ ७ ॥ इस पार आनेके अयोग्य समुद्रके पार किस प्रकारसे होंगे ? यह वानर ऋक्षोंकी सेना व दोनों महाराजकुमार किस प्रकारसे इसके पार आवेंगे ॥ ८ ॥

* गुजरी ॥ पुंछ बुझाइ गँबाइ सो तनु श्रम सिय पहँ ठाढि भये कर जोरे॥चीन्ह कछुक मोंहिं देहि यथा प्रभु शोक करहिं जननी जनि भोरे ॥ पहुचेइ जानि कृपालु खरारिहिं धीरजऔर धरहिदिन थोरे ॥ हरषि उतार दयउचूडामणि दारुण दुसह विपति सब बोरे ॥ तात विलोकि जात निजनयनन करुणानिधि पहँ कहबनिहोरे ॥ धरि पद शीश चल्यो धुनि गर्जत रिपुमद भुजबल वारिधि बोरे ॥ आइ मिल्यो एहि पार कपिनसों को कह सूरज मोद जितोरे ॥

समुद्रके लांघनेकी इस लोकमें केवल गरुड, वायु और तुम बस इन तीन जनोंको सामर्थ्य है ॥ ९ ॥ इस कारण इस बडे कठिन कार्य संकटमें किस उपायको तुमने स्थिर किया है ? क्योंकि तुम कार्य करनेमें चतुर हो ॥ १० ॥ तुम कर्म करनेमें बडे प्रवीण हो ! हे शत्रुघातिन् ! तुम तो इस कार्यको अकेलेही कर सकते हो, तुम्हारे यशकी वृद्धि इस कार्यसे होगी ॥ ११ ॥ शत्रुओंकी सेनाको मर्दन करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी यदि सेना साथ लेकर लंकामें चढाईकर हमको लेजायँगे तब ही यह कार्य उनके योग्य होगा ॥ १२ ॥ इसलिये उन रणवीर महात्माका जिससे योग्य विक्रम प्रगटे, सो तुमको ऐसाही उपाय करना चाहिये ॥१३॥ सीताजीके वह अर्थयुक्त और हेतु सहित स्नेहसे सनेवचन श्रवणकर वीर हनुमान उनको उत्तर देते हुये ॥ १४ ॥ आर्ये ! वानर और रीछोंकी

त्रयाणामेवभूतानांसागरस्यातिलंघने ॥ शक्तिःस्याद्वैनतेयस्यतववामारुतस्यवा ॥९॥ तदत्रकार्यनिर्बन्धेसमुत्पन्नेदुरासदे ॥ किंपश्यसिसमाधानंत्वंहिकार्यविशारदः ॥१०॥ काममस्यत्वमेवैकःकार्यस्यपरिसाधने ॥ पर्याप्तःपरवीरघ्नयशस्यस्तेबलोदयः ॥ ११ ॥ बलैस्तुसंकुलांकृत्वा लंकांपरबलार्दनः ॥ मांनयेद्यदिकाकुत्स्थस्तत्तस्यसदृशंभवेत् ॥ १२ ॥ तद्यथातस्यविक्रांतमनुरूपंमहात्मनः ॥ भवत्याहवशूरस्यतथात्वमुपपादय॥ १३ ॥तदर्थोपहितंवाक्यंप्रश्रितंहेतुसंहितम् ॥ निशम्यहनुमान्वीरोवाक्यमुत्तरमब्रवीत्॥ १४ ॥ देविहर्यृक्षसैन्यानामीश्वरःप्लवतांवरः ॥ सुग्रीवःसत्त्वसंपन्नस्तवार्थेकृतनिश्चयः ॥ १५ ॥ सवानरसहस्राणांकोटीभिरभिसंवृतः ॥ क्षिप्रमेष्यतिवैदेहिसुग्रीवःप्लवतांवरः ॥ १६ ॥ तौचवीरौनरवरौसहितौरामलक्ष्मणौ ॥ आगम्यनगरींलंकांसायकैर्विधमिष्यतः ॥ १७ ॥ सगणंराक्षसंहत्वानचिराद्रघुनंदनः ॥ त्वमादाय वरारोहेस्वांपुरींप्रतियास्यति ॥ १८ ॥

सेनाके अधिपति सत्यवान् वानर श्रेष्ठ सुग्रीवजी आपका उद्धार करनेको कृत निश्चय हुए हैं ॥ १५ ॥ हे विदेहकुमारी सीते ! वानरराज वह सुग्रीवजी, हजारों लाखों, करोडों वानरोंको साथ लेकर बडी शीघ्रतासे यहां आवेंगे ॥ १६ ॥ नर श्रेष्ठ वह दोनों बीर श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी भी एकत्र हो यहां आयकर लंका नगरीको बाण जालसे छायदेगें ॥ १७॥ हे श्रेष्ठ मुखवाली ! वीर रघुनंदन रामचन्द्रजी बहुत शीघ्र रावण को बन्धु बान्धवों सहित मार तुमको अपनी अयोध्यापुरीमें ले जायँगे ॥ १८ ॥

यह मणि प्रभुको दीजो जाई ॥ चरणकमल वंदन कर उनके तुम ऐसे कहियो समुझाई ॥ १ ॥ मन क्रम वचन चरणकी दासी प्रभुताको कैसे बिसराई ॥ २ ॥ नेक दियो बुखनाय काकने ताको नहिं कोउ रहेउ सहाई ॥ ३ ॥ अधम निशाचरने अब घेरी अब क्यों नहीं छुडावत आई ॥ ४ ॥ मिश्रसद शरणागत पालक रक्षा करहु राम रघुराई ॥ ५ ॥

सावधान होकर धीरज धारण करो, कुछ समय परखो हे भद्रे ! तुम बहुतही शीघ्रतासे देखोगी कि, श्रीरामचन्द्रजीने रणमें रावणको मार डाला ॥ १९ ॥ युद्धमें राक्षस राजरावणके मंत्री बन्धु बान्धवोंके सहित मारे जानेपर चन्द्रमाजीके साथ रोहिणीजी के समान आपका मिलना श्रीरामचन्द्रजीसेहोगा ॥ २० ॥ युद्धमें राक्षसोंको जीतकर आपका शोक दूर करेंगे, वह काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजी शीघ्र ही रीछ वानरोंकी सेनाके साथ यहा पर आवेंगे ॥ २१ ॥ इस प्रकारसे पवन कुमार हनुमानूजी जानकीजीको समझाय बुझाय चलनेमें स्थिर बुद्धिकर जानकीजीको प्रणाम करते हुए ॥ २२ ॥ आश्चर्यका अपना बल दिखाय प्रधान २राक्षसोंको संहार अपना नाम सबको सुनाय सीताजी को समझाय बुझाय ॥ २३ ॥ लंका पुरीको व्याकुल कर रावणको धोखा दे भयंकर बल दिखाय और जानकीजी को प्रणाम कर॥ २४॥हनुमानूजी समुद्रके ऊपर हो चलनेके लिये तैयार हुए उसके पीछे शत्रुओंके मारनेवाले कपिश्रेष्ठ हनुमानूजी

समाश्वसिहि भद्रं ते भव त्वं कालकांक्षिणी ॥ क्षिप्रं द्रक्ष्यसि रामेण निहतं रावणं रणे ॥१९॥ निहते राक्षसेंद्रे च सपुत्रामात्यबांधवे ॥ त्वं समेष्यसि रामेण शशांकेनेव रोहिणी ॥२०॥ क्षिप्रमेष्यति काकुत्स्थो हर्यृक्षप्रवरैर्युतः ॥ यस्ते युधि विनिर्जित्य शोकं व्यपनयिष्यति ॥ २१ ॥एवमाश्वास्य वैदेहीं हनूमान्मारुतात्मजः ॥ गमनाय मतिं कृत्वा वैदेहीमभ्यवादयत् ॥२२॥ राक्षसान्प्रवरान्हत्वा नाम विश्राव्य चात्मनः समाश्वास्य च वैदेहीं दर्शयित्वा परं बलम् ॥२३॥ नगरीमाकुलां कृत्वा वंचयित्वा च रावणम् ॥ दर्शयित्वा बलं घोरं वैदेहीमभिवाद्य च ॥ २४ ॥ प्रतिगंतुं मनश्चक्रे पुनर्मध्येन सागरम् ॥ ततः स कपिशार्दूलः स्वामिसंदर्शनोत्सुकः ॥२५॥ आरुरोह गिरिश्रेष्ठमरिष्टमरिमर्दनः ॥ तुंगपद्मकजुष्टाभिर्नीलाभिर्वनराजिभिः ॥२६॥ सोत्तरीयमिवांभोदैः शृंगांतरबिलंबिभिः ॥ बोध्यमानमिव प्रीत्या दिवाकरकरैः शुभैः ॥ २७ ॥ उन्मिषंतमिवोद्धूतैर्लोचनैरिव धातुभिः ॥ तोयौघनिःस्वनैर्मंद्रैः प्राधीतमिव सर्वतः ॥ २८ ॥ प्रगीतमिव विष्पष्टं नानाप्रस्रवणस्वनैः ॥देवदारुभिरुद्धूतैरूर्ध्वबाहुमिव स्थितम् ॥ २९ ॥

अपने स्वामीके दर्शन की अतिइच्छा कर ॥ २५ ॥ अरिष्टनामक बडे ऊंचे पर्वत पर चढ गये । यह पर्वत विशाल भूर्ज्जतरुओंसे शोभित नीलवर्ण वनराजिरूप ॥२६॥ बड़े पहर करके शिखरसे लगे हुए जल धर स्वरूप अपना दुपट्टा बनाये, प्रीतिसे दिवाकर रूप शुभकारी किरणोंके स्पर्शसे मानो वहांकी सब वस्तुओंको जगाय रहा था ॥२७॥ विविध भाँतिकी धातुओं से मानो वह सहस्र २ लोचन खोल रहा और मूँद रहाथा; चारों ओरही जलके गिरनेका शब्द होता हुवा ऐसा जान पडता था मानों पर्वत कुछ पढ रहा है ॥ २८ ॥ अनेक प्रकारके झरनोंका स्पष्ट शब्द ऐसा हो रहाथा कि; जिससे अनुमान होता था कि, मानों पर्वत श्रेष्ठ संगीत कर रहा है । बडे २ देवदारु वृक्षोंके ऊपर शोभित होनेसे ऐसा ज्ञात होता था मानों पर्वतराज हाथ उठाये खडा है ॥ २९ ॥

सब जगह जल गिरनेका शब्द ऐसा हो रहा था, मानों पर्वतराज आर्त नाद कर रहा है । वासन्तिक वृक्षोंके कंपायमान होनेसे ऐसा जान पडता था कि, मानों गिरिराज स्वयंही कंपायमान हो रहा था ॥ ३० ॥ पवनके आघातसे शब्द करते हुए छेदवाले बाँसोंसे शोभितहो मानों पर्वतराज वंशी बजाय रहा था भयंकर विषैले सर्पोंके गर्जनेसे मानों पर्वत राज क्रोधके मारे लंबे २श्वास ले रहाथा ॥३१॥ अंधकारसे ढककर कंदराओंने गम्भीर भाव धारण किया है, जिससे बोध होता है कि, मानों पर्वत श्रेष्ठ ध्यानमें मग्न हो रहा है । मेघ खंडके समान, किनारे २वाले पर्वतोंसे मानों यह पर्वत सब जगह विचरणकर रहा था ॥ ३२ ॥ बादलोंके छूनेवाले शिखर आकाशमें ऊंचे चले गये थे, मानों पर्वत अपने शरीरको ऐंठकर जँभाई लेता था, सब ओर अनेक श्रृङ्ग शोभित थे असंख्य गुफायें पर्वतकी शोभायमान होरही थीं ॥ ३३ ॥ अनेकानेक शाल ताल अश्वकर्ण व अनेक प्रकारसे बाँसोंने पर्वको छाय लिया था. फूली फली फैली हुई लता

प्रपातजलनिर्घोषैःप्राकुष्टमिवसर्वतः ॥ वेपमानमिवश्यामःकंपमानैःशरद्घनैः ॥ ३० ॥वेणुभिर्मारुतोद्धूतःकूजंतमिवकीचकैः ॥ निःश्वसंतमिवामर्षाद्घोरैराशीविषोत्तमैः ॥ ३१ ॥ नीहारकृतगंभीरैर्ध्यायंतमिवगह्वरैः ॥ मेघपादनिभैःपादैःप्रक्रांतमिवसर्वतः ॥ ३२ ॥ जृंभमाणमिवाकाशेशिखरैरभ्रमालिभिः ॥ कूटैश्चबहुधाकीर्णंशोभितंबहुकंदरैः ॥ ३३ ॥सालतालैश्चकर्णैश्चवंशैश्चबहुभिर्वृतम् ॥ लतावितानैर्विततैःपुष्पवद्भिरलंकृतम् ॥३४॥ नानामृगगणैःकीर्णंधातुनिष्पंदभूषितम् ॥बहुप्रस्रवणोपेतंशिलाशंचयसंकटम् ॥ ३५ ॥ महर्षियक्षगंधर्वकिन्नरोरगसेवितम् ॥ लतापादपसंबाधंसिंहाधिष्ठितकंदरम् ॥ ३६ ॥ व्याघ्रादिभिःसमाकीर्णंस्वादुमूलफलद्रुमम् ॥ आरुरोहानिलसुतःपर्वतंप्लवगोत्तमः ॥ ३७॥ रामदर्शनशीघ्रेणप्रहर्षेणाभिचोदितः ॥तेनपादतलक्रांतारम्येषुगिरिसानुषु ॥३८॥ सघोषाःसमशीर्यंतशिलाश्चूर्णीकृतास्ततः ॥ सतमारुह्यशैलेंद्रंव्यवर्धतमहाकपिः ॥ ३९ ॥

ओंकी कुंज पर्वतके स्थान २ में शोभायमान हो रहीथीं; ॥ ३४ ॥ विविध भाँतिके मृगोंके झुण्डके झुण्ड फिर रहे थे, और बहुत सारी धातुयें जगह २ से निकल कर पर्वत भूषित कर रही थीं; बहुत सारे झरने झर रहे थे; शिलाओंकी बहुत चट्टाने पडी थी ॥ ३५ ॥ महर्षि, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर और उरग गण उस पर्वत पर बसते थे, लता वृक्ष प्राणियोंके आने जाने में बाधा डालते थे, गुफाओंमें सिंह विराज रहे थे ॥ ३६ ॥ उस पर्वत पर रहनेवाले व्याघ्रादि जन्तुओंकी गिनती करना कठिन था सब वृक्षों के मूल फल अति स्वाद युक्त थे, वानर श्रेष्ठ हनुमानजी इस पर्वत पर चढकर ॥ ३७ ॥ श्रीरामचन्द्रजी के दर्शन की इच्छासे शीघ्रता किये आनंदसे प्रेरित हो उस पर्वतके रमणीक शिखर पर पाँव धरते हुए ॥३८॥ इसप्रकार अति बलसे और धमकेसे उस पर्वतपर

पाँव धराकि, उस पर्वतकी शिला चूर्णहो गई, इसप्रकारपर्वत राजपर चढकर महाकपि हनुमानूजी बढ़े॥ ३९॥ कारण कि, क्षार समुद्रकेदक्षिण तीरसे उनको उत्तर किनारेपर आना था, इसकारण उसपर्वत परचढ पवनकुमार हनुमानूजी॥ ४०॥ भयंकर सर्प आदिकोंसे युक्त समुद्रको देखते हुये, वायु जिसप्रकार आकाश मार्गमें गमन करतीहै पवन कुमार वेगवान् हनुमान्जीभी ॥ ४१॥ मनके द्वारा वैसेही उसी समय दक्षिणसे उत्तर समुद्रके पार पहुँच गये, छलांग मारनेके समयउस पर्वतोत्तम को हनुमानूजीने चरणसे पीडित किया॥ ४२॥ ऐसे धमकके साथ उस पर्वतपर चरण रक्खा कि, वह पर्वत पृथ्वीमें प्रवेश करने लगा, उसके शिखर काँपने लगे और पेड गिरने लगे ॥ ४३॥ हनुमानजीके वेगसे मर्दित हो फूलवाले पेड टूट २ कर पृथ्वीपर ऐसे गिर पडे मानों इन्द्रके वज्रसे मारेगये ॥ ४४॥ गुफाओंके मध्यमें टिके हुए महाविक्रम वाले

दक्षिणादुत्तरंपारंप्रार्थयँल्लवणांभसः॥ अधिरुह्यततोवीरः पर्वतंपवनात्मजः ॥ ४०॥ ददर्शसागरंभीमंभीमोरगनिषेवितम् ॥ समारुतइवाकाशंमारुतस्यात्मसंभवः ॥ ४१॥ प्रपेदेहरिशार्दूलोदक्षिणादुत्तरांदिशम् ॥ सतदापीडितस्तेनकपिनापर्वतोत्तमः ॥ ४२॥ ररासविविधैर्भूतैःप्राविशद्वसुधातलम् ॥ कंपमानैश्चशिखरैःपतद्भिरपिचद्रुमैः ॥ ४३ ॥ तस्योरुवेगोन्मथिताःपादपाःपुष्पशालिनः ॥ निपेतुर्भूतलेभग्नाःशक्रायुधहताइव ॥ ४४॥ कदरोदरसंस्थानांपीडितानांमहौजसाम् ॥ सिंहानांनिनदोभीमोनभोभिंदन्हिशुश्रुवे ॥ ४५॥ त्रस्तव्याविद्धवसनाव्याकुलीकृतभूषणाः॥ विद्याधर्यःसमुत्पेतुःसहसाधरणीधरात् ॥ ४६ ॥ अतिप्रमाणाबलिनोदीप्तजिह्वामहाविषाः ॥ निपीडितशिरोग्रीवाव्यवेष्टंतमहाहयः ॥ ४७॥ किन्नरोरगगंधर्वयक्षविद्याधरास्तथा ॥ पीडितंतंनगवरंत्यक्त्वागगनमास्थिताः ॥ ४८॥ सचभूमिधरःश्रीमान्बलिनातेनपीडितः ॥ सवृक्षशिखरोदग्रःप्रविवेशरसातलम् ॥ ४९॥ दशयोजनविस्तारस्त्रिंशद्योजनमुच्छ्रितः ॥ धरण्यांसमतांयातःसबभूवधराधरः ॥ ५० ॥

सिंहगणोंके भयंकर शब्द आकाशको भेदकर लोकोंके कानोंमें सुनाई आये ॥ ४५ ॥ डरके मारे सब विद्याधरोंकी स्त्रियां अपने २ वस्त्र उठाय भूषणोंको चिपटाय अचानक पर्वतको छोडकर आकाशमार्गमें उडीं ॥ ४६॥ अति बडे २ बलवानू, बडी २ जीभवाले महाविषधर सर्पगण गर्दन और मस्तकके टूटनेसे पर्वतपर कुंडलाकारसे प्रगट होने लगे ॥ ४७ ॥ किन्नर, उरग, गन्धर्व; यक्ष और विद्याधरगण पीडित हुए उस पर्वतश्रेष्ठको छोड़कर आकाशका आश्रय लेते हुए ॥ ४८॥ श्रीमान् वह अरिष्टपर्वत उन बलवानू करके पीडित हो ऊंचे २ वृक्ष और शृङ्गगणोंके सहित पातालमें बैठ गया ॥ ४९॥ उस पर्वतका विस्तार दश

योजन और ऊँचाई भी तीस योजनकी थी सो उससमय हनुमानजीकी धमकसे पृथ्वीमें पैठ वह पृथ्वीके साथ बराबर मिलगया ॥५०॥ हनुमानजी बडी २ लहरें आते हुए महासमुद्रको लीलापूर्वक लांघनेके लिये आकाशमार्गको उछलते हुए॥५१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षट्पंचाशः सर्गः॥५६॥

बलवान् हनुमानजी उछलकर लीलापूर्वक आकाशरूप समुद्रको उतरने लगे भुजग,यक्ष और गन्धर्वगण यह इस समुद्रके खिले हुए कमल व उत्पल हैं ॥ १ ॥ चन्द्रमा जिसमें कुमुद,सूर्य उस समुद्रका मुखर कारण्डव(जलमुर्ग) पुष्प और श्रवण नक्षत्र जिसके हंस समस्त मेघ उसके नीलवर्ण शैवाल (शिवार) ॥ २ ॥ पुनर्वसु नक्षत्र जिसका महामत्स्य,महाग्रह मंगल उसका विशाल ऐरावत महाहस्ती स्वाती नक्षत्र जिसका हंस जिस करके शोभायमान ॥३॥ पवन ही जिसकीतरंगें

सलिलंघयिषुर्भीमंशलीलंलवणार्णवम् ॥ कल्लोलास्फालवेलांतमुत्पपातनभोहरिः ॥५१॥ इत्यार्षे श्रीम० वा० आदि० च० सा० सुं० षट्पंचाशःसर्गः ॥५६॥ आप्लुत्यचमहावेगःपक्षवानिवपर्वतः ॥ भुजंगयक्षगंधर्वप्रबुद्धकमलोत्पलम् ॥१॥ सचंद्रकुमुदंरम्यंसार्ककारंडवंशुभम् ॥ तिष्यश्रवणकादंबमभ्रशैवलशाद्वलम् ॥ २ ॥पुनर्वसुमहामीनंलोहितांगमहाग्रहम् ॥ ऐरावतमहाद्वीपंस्वातीहंसविलासितम् ॥३॥ वातसंघातजालोर्मिचंद्रांशुशिशिरांबुमत् ॥ हनुमानपरिश्रांतःपुप्लुवेगगनार्णवम् ॥ ४ ॥ ग्रसमानइवाकाशंताराधिपमिवोल्लिखन् ॥ हरन्निवसनक्षत्रंगगनंसार्कमंडलम् ॥ ५ ॥ अपारमपरिश्रांतश्चांबुधिंसमगाहत ॥ हनुमान्मेघजालानिविकर्षन्निवगच्छति ॥ ६ ॥ पांडुरारुणपर्णानिनीलमांजिष्ठकानिच ॥ हरितारुणवर्णानिमहाभ्राणिचकाशिरे॥ ७ ॥प्रविशन्नभ्रजालानिनिष्क्रमंश्चपुनःपुनः ॥ प्रकाशश्चाप्रकाशश्चचंद्रमाइवदृश्यते॥ ८ ॥ विविधाभ्रवनापन्नगोचरोधवलांबरः ॥ दृश्यादृश्यतनुर्वीरस्तथाचंद्रायतेंबरे ॥ ९ ॥

जिसमें चंद्रमा सूर्यकी शीतल किरणेंही शिशिर कालका शीतलनीर,ऐसे समुद्ररूप आकाशमें विना परिश्रमके हनुमानजी तैरने लगे॥४॥जानेके समय हनुमानजी मानों आकाशको ग्रसेही लेते थे,चन्द्रमाको मानों विलेख नहीं करते और नक्षत्रगण वा दिवाकर सहित आकाश मंडलको मानों हरणही किये लेते थे ॥५॥ और बादलोंके समूहोंको खैंचते हुए थकावट रहित हो श्रीहनुमानजी अपार आकाशसमुद्र पार होने लगे ॥६॥ उस समय; श्वेत, अरुण, नील मँजीठ और हरितरंगके बडे २ वारिद (मेघ) समूह खैंच जाकर शोभायमान होने लगे॥७॥ पवनकुमार हनुमानजी बार२मेघोंमें प्रवेशकर और प्रकाशित होकर चन्द्रमाके समान कभी निकल आते कभी छिप जातेथे ॥८॥ वह श्वेत वस्त्र धारण किये हुयेवीर हनुमानजी नाना प्रकारके बादलोंके बीचका मार्ग अवलंबन कर कभी

प्रकाशित कभी अप्रकाशित होकर आकाशमें चंद्रमाकेसमान जान पडने लगे ॥९॥ आकाशमें गरुडजीके समान मेघोंके चीरते फाडते व उनमेंसे निकलते पैठते हनुमानजी गमन करनेलगे ॥१०॥ और हनुमानजी चलते २ मेघके समान भयंकर स्वरसे नाद करने लगे महातेजस्वी हनुमानजी मुख्य २ राक्षसोंका संहार कर अपना नाम सबको सुनाय॥११॥लंकानगरीको व्याकुल और रावणको अत्यन्तव्यथित कर महावीर निशाचरोंको पीडित और जानकीजीको प्रणाम कर॥१२॥ महातेजस्वी वीर्यवान् हनुमानजी फिर समुद्रके बीचमें आय पहुँचे और क्रमसे पर्वतराज सुनाभ पर्वतको स्पर्श कर ॥१३॥ प्रत्यंचोंसे छोडे हुए बाणके समान अतिवेगसे गमन करने लगे और थोडेही दूरपर रहे हुए महापर्वतको देखते हुए ॥ १४ ॥ उस महेन्द्र पर्वतको देख महाकोप हनुमानजीने बडा नाद करके दशों

ताक्ष्यीयमाणोगगनेसबभौवायुनंदनः ॥ दारयन्मेघवृन्दानिनिष्पतंश्चपुनःपुनः ॥ १० ॥ नदन्नादेनमहतामेघस्वनमहास्वनः ॥ प्रवरान्राक्षसान्हत्वानामविश्राव्यचात्मनः ॥ ११ ॥ आकुलांनगरींकृत्वाव्यथयित्वाचरावणम् ॥ अर्दयित्वामहावीरान्वैदेहीमभिवाद्यच ॥१२॥ आजगाममहातेजाःपुनर्मध्येनसागरम् ॥ पर्वतेंद्रंसुनाभंचसमुपस्पृश्यवीर्यवान् ॥१३॥ ज्यामुक्तइवनाराचोमहावेगोभ्युपागमत ॥ सकिंचिदारात्संप्राप्तःसमालोक्यमहागिरिम्॥ १४॥महेंद्रमेघसंकाशोननादसमहाकपिः ॥ सपूरयामासकपिर्दिशोदशसमंततः ॥ १५ ॥ नदन्नादेनमहतामेघस्वनमहास्वनः संतदेशमनुप्राप्तःसुहृद्दर्शनलालसः ॥ १६ ॥ ननादसुमहानादंलांगूलंचाप्यकंपयत् ॥ तस्यनानद्यमानस्यसुपर्णाचरितेपथि ॥ १७ ॥ फलतींवास्यघोषेणगगनंसार्कमंडलम् ॥ येतुतत्रोत्तरेकूलेसमुद्रस्यमहाबलाः ॥ १८ ॥ पूर्वंसंविष्ठिताःशूरावायुपुत्रदिदृक्षवः ॥ महतोवायुनुन्नस्यतोयदस्येवनिःस्वनम्॥शुश्रुवुस्तेतदाघोषमूरुवेगंहनूमतः ॥१९॥ तेदीनमनसःसर्वेशुश्रुवुःकाननौकसः॥वानरेंद्रस्यनिर्घोषंपर्जन्यनिनदोपमम्॥२०॥

दिशाओंको पूर्ण कर दिया ॥१५॥ अपने सुहृद् लोगोंके दर्शनकी लालसा कर (कि जिनको हनुमानजी सीताजीकी सुध लेनेको जाते समय महेन्द्राचल पर बैठा गये थे) महाकपि हनुमानजी इस प्रकारसे महामेघके समान शब्द करते २ उस पर्वत महेन्द्रके निकट पहुँचने लगे ॥ १६ ॥ उस समय हनुमानजी बारं बार गर्जकर पूँछको कंपायमान करने लगे,आकाशमें गरुडजीके मार्गका आश्रय लिये हनुमानजीके घोर गर्जनसे ॥ १७ ॥ आकाशमंडल सूर्यमंडलके सहित मानों विदीर्ण होगया समुद्रके उत्तर किनारे जो महाबलवान् ॥ १८ ॥ रीछ वानरगण पहलेहीसे पवनकुमार हनुमानजीके देखनेकी आशा किये बैठे थे वह सब महामेघ के समान हनुमानजीके गर्जनेका घोर शब्द और उनके वेगका बडा भारी शब्द सुनते हुए ॥ १९ ॥ वह सब रीछ वानरगण उदास मन किये शोक

करते हुए बैठे थे, उस समय मेघके गर्जनेके समान इन सबोंने वानर श्रेष्ठ हनुमानजीका नाद सुना ॥ २० ॥ नाद करते हुए हनुमानजीका यह शब्द सुनकर अपने बन्धुका दर्शन करनेकी इच्छासे सबही वानर लोग चपटाये ॥ २१ ॥ तब वानरवर जाम्बवानजी प्रीतिके वश हर्षित चित्त हो सब वानरोंको पुकारकर बोले ॥२२॥ लो यह देखो ! हनुमानूजी सबप्रकारसे कार्य सिद्धकर आये । इसमें कोई सन्देह नहीं है; जो कार्य सिद्ध न होता तो यह कभी इसप्रकारका नाद न करते ॥ २३ ॥ हनुमानूजीकी बाँहोंका भयंकर वेगजनित शब्द सुनकर सब वानर लोगहर्षित होकर इधर उधर एक साथ खडे होगये ॥ २४ ॥ वह सब हनुमानूजीका दर्शन करनेके लिये एक पर्वतसे दूसरे पर्वतपर और एक शिखरसे दूसरे शिखरपर कूद २ कर जाने लगे ॥२५॥ वानरगण प्रसन्न चित्तसे वृक्षोंकी

निशम्यनदतोनादंवानरास्तेसमंततः॥ बभूवुरुत्सुकाःसर्वेसुहृद्दर्शनकांक्षिणः ॥२१॥ जांबवान्सहरिश्रेष्ठःप्रीतिसंहृष्टमानसः॥उपामंत्र्यहरीन्सर्वानिदंवचनमब्रवीत् ॥२२॥ सर्वथाकृतकार्योसौहनूमान्नात्रसंशयः ॥ नह्यस्याकृतकार्यस्यनादएवंविधोभवेत् ॥ २३ ॥ तस्यबाहूरुवेगंचनिनादंचमहात्मनः ॥ निशम्यहरयोहृष्टाःसमुत्पेतुर्यतस्ततः ॥२४॥ तेनगाग्रान्नगाग्राणिशिखराच्छिखराणिच ॥ प्रहृष्टाःसमपद्यंतहनूमंतंदिदृक्षवः ॥२५॥ तेप्रीताःपादपाग्रेषुगृह्यशाखामवस्थिताः ॥ वासांसिचप्रकाशानिसमाविध्यंतवानराः ॥२६॥ गिरिगह्वरसँल्लीनोयथागर्जतिमारुतः ॥ एवंजगर्जबलवान्हनूमान्मारुतात्मजः ॥ २७ ॥ तमभ्रघनसंकाशमापतंतंमहाकपिम् ॥ दृष्ट्वातेवानराःसर्वेतस्थुःप्रांजलयस्तदा ॥ २८ ॥ ततस्तुवेगवान्वीरोगिरेर्गिरिनिभःकपिः ॥ निपपातगिरेस्तस्यशिखरेपादपाकुले ॥ २९ ॥ हर्षेणापूर्यमाणोसौरम्येपर्वतनिर्झरे ॥ छिन्नपक्षइवाकाशात्पपातधरणीधरः ॥ ३० ॥ ततस्तेप्रीतमनसस्सर्वेवानरपुंगवाः ॥ हनूमंतंमहात्मानंपरिवार्योपतस्थिरे ॥ ३१ ॥

डालें पकडकर सम्मुख खडे होगये। औ उनके श्वेत वसनोंसे कंपायमान होनेपर॥२६॥पवन जिस प्रकार पर्वतकी गुफामें प्रवेश कर गर्जता है,पवनकुमार बलवान् हनुमानूजी भी वैसे ही भयंकर गर्जना वहां आयकर करने लगे ॥ २७ ॥ हनुमानूजीको आकाशगामी मेघके समान वहां आतेहुए देखकर सब वानरगण हाथ जोडकर खडे होगये ॥२८॥ इसी अवसरमें पर्वताकार,वेगवान् महावीर पवनकुमार हनुमान् अरिष्टनाम पर्वतसे छलांग मारेहुए महेन्द्रपर्वतके वृक्षयुक्त शिखरपर कूदे ॥२९॥ हनुमानूजी हर्षसे पूरित अन्तकरण युक्त हो आकाशसे पंखकटे पर्वतके समान रमणीकपर्वतके झरना झरनेके स्थानमें गिरे ॥३०॥ समस्त वानरश्रेष्ठोंने प्रीतिपूर्ण हृदयसे महात्मा हनुमानूजीके समीप आय उनको चारोंओरसे घेरलिया ॥ ३१ ॥

हनुमानूजीको घेर वानरगण परमप्रसन्न हुए और उन सबका वदनमंडल खिलगया ॥ ३२ ॥ उसके पीछे वानरोंने कंद मूल फल और दूसरी भेंटकी वस्तुयें लायकर वानरसिंह पवनसुत हनुमानूजीकी पूजा की ॥३३॥ यह सब वानर आनंदमें मग्नहो कोई ऊंचे शब्दसे गर्जने और कोई २ किलकारियें मारने लगे। बडे २ वानर अतिहर्षित होकर हनुमानूजीके बैठनेको वृक्षके गुद्दे तोड लाये ॥ ३४ ॥ फिर महाकपि हनुमानूजी पूजा करनेके योग्य जाम्बवान् इत्यादि वृद्ध वानरोंको और कुमार अंगदजीको प्रणाम करते हुए ॥३५॥ और अगद व जाम्बवानूजीने भी इनकी पूजा की और दूसरे वानरोंने हनुमानूजीको प्रसन्न किया, उन पूजनीय विक्रमवान् महाकपि हनुमानूजीने संक्षेपमें सबसे कहा कि हमसीताजीको देखआये ॥ ३६ ॥ उसके पीछे हनुमानूजी वालिके पुत्र अंगद जीका हाथ पकड महेन्द्र पर्वतके रमणीक वनमें बैठे ॥ ३७ ॥ और पूँछेजानेपर हनुमानूजी वानरश्रेष्ठोंसे बोले कि, जानकीजी अशोक वनमें हैं; हम उनको

परिवार्यचतेसर्वेपरांप्रीतिमुपागताः ॥ प्रहृष्टवदनाःसर्वेतमागतमुपागमन् ॥३२॥उपायनानिचादायमूलानिचफलानिच ॥ प्रत्यर्चयन्हरिश्रेष्ठं हरयोमारुतात्मजम्॥३३॥विनेदुर्मुदिताःकेचित्केचित्किलकिलांतथा ॥ हृष्टाःपादपशाखाश्चआनीन्युर्वानरर्षभाः॥३४॥ हनूमांस्तुगुरून्वृद्धा ञ्जांबवत्प्रमुखांस्तदा ॥ कुमारमंगदंचैवसोवंदतमहाकपिः ॥३५॥ सताभ्यांपूजितःपूज्यःकपिभिश्चप्रसादितः ॥ दृष्टादेवीतिविक्रांतःसंक्षेपेण न्यवेदयत्॥३६॥ निषसादचहस्तेनगृहीत्वावालिनःसुतम् ॥ रमणीयेवनोद्देशेमहेंद्रस्यागिरेस्तदा॥३७॥ हनूमानब्रवीत्पृष्टस्तदातान्वानरर्षभान् अशोकवनिकासंस्थादृष्टासाजनकात्मजा ॥३८॥ रक्ष्यमाणासुघोराभीराक्षसीभिरनिंदिता ॥ एकवेणीधराबालारामदर्शनलालसा ॥ ३९ ॥ उपवासपरिश्रांतामलिनाजटिलाकृशा ॥ ततोदृष्टेतिवचनंमहार्थममृतोपमम् ॥४०॥ निशम्यमारुतेःसर्वेमुदितावानराभवन् ॥क्ष्वेडंत्यन्येनदं त्यन्येगर्जंत्यन्येमहाबलाः ॥४१॥ चक्रुःकिलकिलामन्येप्रतिगर्जंतिचापरे॥ केचिदुच्छ्रितलांगूलाःप्रहृष्टाःकपिकुंजराः॥४२॥आयतांचितदी र्घाणिलांगूलानिप्रविव्यधुः ॥ अपरेतुहनूमंतंश्रीमंतवानरोत्तमम् ॥ ४३ ॥

देखआये हैं ॥३८॥ घोर रूपवाली राक्षसियें उन निन्दारहित सीताजीकी रक्षा करती हैं वहएक वेणी धारण किये हुए श्रीरामचन्द्रजीके देखनेको बहुतही चट पटाय रही हैं ॥३९॥ उपवासोंके करनेसे थकित,दुर्बल,मलीन जटा धारण कियेहैं हनुमानूजीको देख औरउनके महाअर्थयुक्त अमृतके समान वचन ॥४०॥ सुनकर सर्ववानरगण बहुतही हर्षित हुए। उनवानरोंमेंसे कोई २ सिंहनाद करने लगे कोई २ साधारण गर्जने लगे और और कोई कोई शब्द करते हुए ॥ ४१ ॥ कोई २ किलकारी मारने लगे और कोई वानरश्रेष्ठ आनंदित होकर अपनी पूंछ उठाय २ नाचने लगे ॥ ४२ ॥ कोई २ अपनी तिरछी और बडी पूंछको फटकारने लगे व और दूसरे श्रीमान् वानरश्रेष्ठ हनुमानूजीको ॥ ४३ ॥

पर्वतके श्रृंगोंपर हर्षित चित्तसे कूदकर छूने लगे। जब हनुमानूजी सीताके देखनेका समाचार सुनाचुके तब अंगदजी उनसे बोले॥४४॥ अगदजी सब वानरोंके मध्यमें उत्तम वचन हनुमानूजीसे बोले, बलवीर्यमें कोई भीवानर तुम्हारे समान नहींहै ॥४५॥ देखो ! तुम बिना किसीकी सहायताके बडे विस्तारवाला समुद्र लांघकर फिर यहांपर लौट आये,हे वानरश्रेष्ठ!बस एक मात्र तुमहीने हम लोगोंको जीवदान दियाहै॥४६॥तुम्हारे अनुग्रहसे हम लोगोंका मनोरथ सफल हुआ, अब हम फिर श्रीरामचन्द्रजीसे मिलेंगे; तुम्हारी प्रभुशक्ति,धीरता,वीरता सबही अतुलनीय हैं ॥४७॥ भाग्यसेही तुम यशस्विनी देवी रामप्यारी श्रीजानकीजीको देख आये हो अब सीताजीके वियोगसे उत्पन्न हुआ श्रीरामचन्द्रजीका दुःख छूट जायगा यह बडे भाग्यकी बातहै ॥ ४८ ॥ उसके पीछे वानरगण,अंगद,हनुमान् और

आप्लुत्यगिरिश्रृंगेषुसंस्पृशंतिस्महर्षिताः॥ उक्तवाक्यंहनूमंतमंगदस्तुतदाब्रवीत्॥४४॥ सर्वेषांहरिवीराणांमध्येवाचमनुत्तमाम्॥ सत्त्वेवीर्येनते कश्चित्समोवानरविद्यते ॥४५॥यदवप्लुत्यविस्तीर्णसागरंपुनरागतः ॥ जीवितस्यप्रदातानस्त्वमेकोवानरोत्तम ॥४६॥ त्वत्प्रसादात्समेष्यामः सिद्धार्थाराघवेणह ॥अहोस्वामिनितेभक्तिरहोवीर्यमहोधृतिः॥४७॥ दिष्टयादृष्टात्वयादेवीरामपत्नीयशस्विनी ॥ दिष्टयात्यक्ष्यतिकाकुत्स्थः शोकंसीतावियोगजम् ॥४८॥ततोंगदंहनूमंतंजांबवंतंचवानराः॥ परिवार्यप्रमुदिताभेजिरेविपुलाःशिलाः ॥४९॥ उपविष्टागिरेस्तस्यशिला सुविपुलासुते ॥ श्रोतुकामाःसमुद्रस्यलंघनंवानरोत्तमाः ॥ ५० ॥ दर्शनंचापिलंकायाःसीतायारावणस्यच ॥ तस्थुःप्रांजलयःसर्वेहमद्वदनोन्मुखाः ॥ ५१ ॥ तस्थौतत्रांगदःश्रीमान्वानरैर्बहुभिर्वृतः ॥ उपास्यमानोविविधैर्दिविदेवपतिर्यथा ॥ ५२ ॥ हनूमताकीर्तिमतायशस्विनातथांगदेनांगदनद्धबाहुना ॥ मुदातदाध्यासितमुन्नतंमहन्महीधराग्रंज्वलितंश्रियाभवत् ॥५३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे सप्तपंचाशःसर्गः ॥ ५७ ॥ ततस्तस्यगिरेःश्रृंगंमहेंद्रस्यमहाबलाः ॥ हनूमत्प्रमुखाःप्रीतिंहरयोजग्मुरुत्तमाम् ॥ १ ॥

जाम्बवानूजीको चारों ओरसे घेर हर्षमें भर उनके बैठनेको विविध भाँतिके शिखंड लाये ॥४९॥ और पर्वतकी उन बडी २ शिलाओंपर समुद्र लांघनेका संवाद श्रवण करनेके लिये समस्त वानर इस तीन वानरोंको घेरकर बैठे ॥५०॥ लंका और रावणको भी देखाहै इन समस्त बातोंके श्रवण करनेकी इच्छासे सबही हनुमानूजीके मुखकी ओर मुख कर बैठे ॥५१॥ सुरराज इन्द्रजी जिस प्रकार देवता लोगों करके पूजे जातेहैं वैसेही श्रीमान् अंगदजी बहुतसारे वानरोंसे घेरे जाकर वहांपर बैठे ॥ ५२ ॥ कीर्तिमान् हनुमानूजी और यशस्वी अंगदजी, दो बाजुओंसे बाँहें सजाये इस प्रकारके हर्षमें भरेहुए बैठे उनके बैठनेसे वह बहुत ऊंचा पर्वतका शिखर उनकी शोभासे अति शोभायमान हुआ ॥५३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि० सुंदरकांडे भाषायां सप्तपंचाशः सर्गः॥५७॥ उसके पीछे हनुमान्

इत्यादि महाबलवान् वानरगण महेन्द्राचल पर्वतके शिखरपरबैठकर परम प्रसन्न हुए॥१॥ जब प्रसन्न होकर यह सब महात्मा वानर भली भाँति बैठे तब प्रसन्नचित्त हो प्रीतिसे बैठे हुए कपिराजासे॥२॥जाम्बवानने उन पवनकुमार महाकपि हनुमानजीसे पूछा किसप्रकार देवीको आपने वहाँ रहते देखा है॥३॥दुरात्मा रावण उनके प्रति किस प्रकारका व्यवहार किया करता है?महाकपे! यह सब वृत्तान्त ठीक२हमसे तुम वर्णन करो ॥४॥ हे हनुमन्! तुमने किस प्रकारसे देवी जानकीजीको पाया और उन्होंने तुमसे क्या कहा इन सब बातोंका श्रवण कर फिर हम कर्तव्य स्थिर करेंगे ॥ ५ ॥ आत्माके जाननेवाले श्रीरामचन्द्रजीके निकट जायकर जिस वार्ताको कहना होगा, या जिस वार्ताको छिपाना होगा, सो तुम यह सब वार्ता ठीक२कहो॥६॥ जबजाम्बवानजीने ऐसा कहा तो हनुमानजीके सर्वशरीरमेंरोमाञ्च

प्रीतिमत्सूपविष्टेषुवानरेषुमहात्मसु॥तंततःप्रतिसंहृष्टःप्रीतियुक्तंमहाकपिम् ॥२॥ जांबवान्कार्यवृत्तांतमपृच्छदनिलात्मजम्॥ कथंदृष्टात्वया देवीकथंवातत्रवर्तते ॥३॥ तस्यांचापिकथंवृत्तःक्रूरकर्मादशाननः॥ तत्त्वतःसर्वमेतन्नःप्रब्रूहित्वंमहाकपे ॥ ४ ॥ संमार्गिताकथंदेवीकिंचसाप्र त्यभाषत ॥ श्रुतार्थाश्चिंतयिष्यामोभूयःकार्यविनिश्चयम् ॥ ५ ॥ यश्चार्थस्तत्रवक्तव्योगतैरस्माभिरात्मवान् ॥ रक्षितव्यंचयत्तत्रतद्भवान्व्या करोतुनः ॥६॥ सनियुक्तस्ततस्तेनसंप्रहृष्टतनूरुहः॥ नमस्यञ्छिरसादेव्यैसीतायैप्रत्यभाषत ॥७॥ प्रत्यक्षमेवभवतांमहेंद्राग्रात्खमाप्लुतः॥ उदधेर्दक्षिणंपारंकांक्षमाणःसमाहितः ॥८॥ गच्छतश्चहिमेघोरंविघ्नरूपमिवाभवत्॥कांचनंशिखरंदिव्यंपश्यामिसुमनोहरम् ॥९॥ स्थितंपंथा नमावृत्यमेनेविघ्नंचतंनगम्॥ उपसंगम्यतंदिव्यंकांचनंनगमुत्तमम् ॥ १०॥ कृतामेमनसाबुद्धिर्भेत्तव्योयंमयेतिच ॥ प्रहतस्यमयातस्यलांगूले नमहागिरेः॥ ११ ॥ शिखरंसूर्यसंकाशंव्यशीर्यतसहस्रधा ॥ व्यवसायंचतंबुद्ध्वासहोवाचमहागिरिः ॥ १२ ॥ पुत्रेतिमधुरांवाणींमनःप्रह्लादय न्निव ॥ पितृव्यंचापिमांविद्धिसखायंमातरिश्वनः ॥ १३ ॥

हो आया, वह शिर झुकाय देवी जानकीको प्रणाम कर कहने लगे ॥ ७ ॥ समुद्रके दक्षिणपार जानेकी इच्छासे सावधान होकर हम आप लोगोंके सामने ही महेंद्रपर्वतसे आकाशमें कूदे थे॥८॥थोडी दूर समुद्रके उसपार जाते दूसरे विघ्न रूप दिखलाई देता मनोहर काञ्चनमय एक दिव्य शिखर हमने देखा ॥९॥ उसको देख उस पर्वतको साक्षात् हमने अपना विघ्न माना। उसके पीछे उस सुवर्णमय पर्वतके निकटजाय ॥१०॥ मनही मनमें हमने कहा कि, इस पर्वतको भय दिखलाना चाहिये यह विचारकर अति जोरसे उस पर्वतके शृङ्गपर हमने अपनी पूंछ दे मारी ॥११॥ तब सूर्यके समान कांतियुक्त उस पर्वतका शिखर फटकरहजार टुकडे होगया, वह महापर्वत अपनी ऐसी अवस्था जानकर मनुष्यरूप हो हमसे बोला ॥ १२ ॥ 'पुत्र' यह सुन मधुर वचन कहकर हमारे हृदयमें अत्यानंद

संचार करता हुआ कहने लगा कि, हम पवनके सखा हैं, इसलिये तुम हमको पितृव्य (चचा) समझो॥ १३॥हमारा विख्यात नाम मैनाक है, हम इस समुद्रमें वास करते हैं, समुद्रमें रहनेका यह कारण है कि, पहले सब पर्वतश्रेष्ठोंके पंख थे॥ १४॥इस कारणसे यह पर्वत अनेक भाँतिके उत्पात आरंभ करके इच्छानुसार पृथ्वीपर विचरण किया करते थे भगवान् पाकशासन इन्द्रजीने पर्वतगणों का ऐसा चरित्र श्रवण कर॥ १५॥वज्रसे मारकर सब पर्वतोंके पंख काट डाले। परन्तु तुम्हारे पिता पवनजीने उसकाल हमको इस विपदसे छुडालिया था॥ १६॥ हे वत्स ! उस काल पवनजीने हमको उडायकर इस समुद्रमें ढकेल दिया। हे शत्रुओंके दमन करनेवाले ! इससे हम श्रीरामचन्द्रजीकी सहायता करना चाहते हैं॥ १७॥श्रीरामचन्द्रजी धर्मधारियोंमें प्रथम गिने जानेके योग्य हैं और उनका विक्रम इन्द्रजीके समान है उन महात्मा मैनाकका यह वचन सुन॥ १८॥हमने उनसे अपने सब कर्तव्य कार्यको निवेदन किया और यह भी कहा कि; विना इस कार्यको किये हम रुक नहीं सकते

मैनाकमितिविख्यातंनिवसंतंमहोदधौ ॥ पक्षवंतःपुरातत्रबभूवुःपर्वतोत्तमाः ॥१४॥ छंदतःपृथिवींचेरुर्बाधमानाःसमंततः॥ श्रुत्वानगानांचरितं महेंद्रःपाकशासनः ॥ १५ ॥ वज्रेणभगवान्पक्षौचिच्छेदैषांसहस्रशः ॥ अहं तु मोचितस्तस्मात्तवपित्रामहात्मना ॥१६॥ मारुतेनतदावत्सप्रक्षिप्तोवरुणालये ॥ राघवस्यमयासाह्येवर्तितव्यमरिंदम ॥१७॥ रामोधर्मभृतांश्रेष्ठोमहेंद्रसमविक्रमः॥एतच्छ्रुत्वामयातस्यमैनाकस्यमहात्मनः ॥१८॥ कार्यमावेद्यचगिरेरुद्धतंवैमनोमम॥ तेनचाहमनुज्ञातोमैनाकेनमहात्मना ॥ १९ ॥ सचाप्यंतर्हितःशैलोमानुषेणवपुष्मता ॥ शरीरेण महाशैलःशैलेनचमहोदधौ ॥ २० ॥ उत्तमंजवमास्थायशेषमध्वानमास्थितः ॥ ततोहंसुचिरंकालंजवेनाभ्यगमंपथि ॥ २१ ॥ तपःपश्याम्यहंदेवींसुरसांनागमातरम् ॥ समुद्रमध्येसादेवीवचनंचेदमब्रवीत् ॥२२॥ ममभक्ष्यःप्रदिष्टस्त्वममरैर्हरिसत्तम ॥ ततस्त्वांभक्षयिष्यामिविहितस्त्वंहिमेसुरैः ॥ २३ ॥ एवमुक्तःसुरसयाप्रांजलिःप्रणतःस्थितः ॥ विवर्णवदनोभूत्वावाक्यंचेदमुदीरयन् ॥ २४ ॥ रामोदाशरथिःश्रीमान्प्रविष्टोदंडकावनम् ॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्रासीतयाचपरंतपः ॥ २५ ॥

और हमारा मन भी जानेके लिये चंचल हुआ, तब महात्मा मैनाकनेभी हमको आज्ञा दी॥ १९॥मनुष्यका रूप धारण किये वह पर्वत अपने शिखरपर खडा हो अन्तर्हित होगया और शरीरके शहित समुद्रमें प्रवेश कर गया॥२०॥ तब हम उत्तम रूपसे वेगवान् होकर बचेहुए मार्गको लांघनेलगे और बहुत दूरतक ऐसेही वेगमें भरे चले ॥ २१ ॥ फिर हमने चलते २ सुरसा नाम नागमाताको देखा, वह देवी सुरसा बीच सागरमें हमारा मार्ग रोककर बोली ॥ २२ ॥ वानर श्रेष्ठ देवता लोगोंने तुमको हमारा भोजनरूप बताय कर हमको यहां भेजा है। इसलिये देवतालोगों करके बताये हुये भोजन तुमको हम भक्षण कर जायँगी॥ २३॥ जब सुरसाने इस प्रकारसे कहा तब हमने हाथजोड खडे रहकर प्रणाम करके उदासमुख हो उससे कहा ॥ २४ ॥ शत्रुओंके दमन करनेवाले दशरथकुमार

श्रीरामचन्द्रजी भ्राता लक्ष्मण और सीताजीके सहित दंडकारण्यमें आये ॥ २५ ॥ तब वनकेवास करनेके समय दुरात्मा रावण उनकी भार्या जानकीजीको हरण करके ले आया इसलिये हम श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञासे दूत हो सीताजी के खोजनेको जा रहे हैं॥२६॥तुम श्रीरामचन्द्रजीके अधिकारमेंवास करतीहो, सो सीता जी के ढूँढनेमें तुमको भी श्रीरामचन्द्रजीकी सहायता करनी उचित है; अथवा श्रीजानकी जीको देख और उनका वृत्तान्त अक्लिष्ट कर्मकारी श्रीरामचन्द्रजीसे निवेदनकर ॥ २७ ॥ हम तुम्हारे मुखमें प्रवेश करेंगे, यह प्रतिज्ञा हम तुमसे सत्यही सत्य करते हैं. इस प्रकारसे हमने कहा परंतु कामरूपिणी सुरसा ॥२८॥ हमको उत्तर देती हुई कि, कोई भी पुरुष हमको लंघन करके नहीं जाय सकता कारणकि, हमको वरदान ही ऐसा दिया है जब सुरसाने ऐसा कहा तो हम दश योजनके बडे होगये॥२९॥और फिर क्षणभरके ही मध्यमें हमने अपने शरीरको और भी पांच योजन बढाया। परंतु सुरसाने हमारी देहके प्रमाणसे अपना मुख और भी अधिक

तस्यसीताहृताभार्यारावणेनदुरात्मना ॥ तस्याःसकाशंदूतोहंगमिष्येरामशासनात् ॥ २६ ॥ कर्तुमर्हसिरामस्यसाहाय्यंविषयेसति अथवा मैथिलींदृष्ट्वारामंचाक्लिष्टकारिणम् ॥२७॥ आगमिष्यामितेवक्त्रंसत्यंप्रतिशृणोमिते ॥एवमुक्तामयासातुसुरसाकामरूपिणी ॥ २८ ॥ अब्रवी न्नातिवर्तेतकश्चिदेषवरोमम ॥एवमुक्तःसुरसयादशयोजनमायतः ॥ २९ ॥ ततोर्धगुणविस्तारोबभूवाहंक्षणेनतु ॥ मत्प्रमाणाधिकंचैवव्यादितंतु मुखंतया ॥ ३० ॥ तद्दृष्ट्वाव्यादितंत्वास्यंह्रस्वंह्यकरवंपुनः ॥ तस्मिन्मुहूर्तेचपुनर्बभूवांगुष्ठसंमितः ॥ ३१ ॥ अभिपत्याशुतद्वक्त्रंनिर्गतोहंततः क्षणात् ॥अब्रवीत्सुरसादेवीस्वेनरूपेणमापुनः॥३२॥ अर्थसिद्ध्यैहरिश्रेष्ठगच्छसौम्ययथासुखम् ॥ समानयचवैदेहींराघवेणमहात्मना ॥३३॥ सुखीभवमहाबाहोप्रीतास्मितववानर ॥ ततोहंसाधुसाध्वीतिसर्वभूतैःप्रसंसितः ॥ ३४ ॥ ततोंतरिक्षंविपुलंप्लुतोहंगरुडोयथा ॥ छायामेनिगृ हीताचनपश्यामिकिंचन ॥ ३५ ॥

फैलाया ॥ ३० ॥ उसको बडा भारी मुख फैलाये देख हमने अपने शरीरको बहुतही संकुचित किया हम उसी समय अंगूठेके समान छोटा रूप बनाया ॥ ॥३१॥ उसके बदनमें बडी शीघ्रतासे प्रवेश कर और फिर तत्क्षण ही बाहर आ गये यह देख देवी सुरसा फिर अपना रूप धारण करके फिर हमको पुकारकर बोली॥३२॥हे सौम्य ! तुम सुख पूर्वक चले जाओ और महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके सहित सीताजीको मिलाओ। और अर्थ सिद्ध करनेके लिये निर्द्वन्द्व होकर जाओ॥३३॥ हे वानर ! तुम सुखी हो ! हम तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हैं जब सुरसाने ऐसा कहा तो सबही प्राणी "धन्य२" कह कर हमारी प्रशंसा करने लगे ॥३४॥उसके पीछे हम गरुडजीके समान बडे भारी आकाश मंडल में प्रवेश करने लगे पर हमारी छाया खिंचने लगी; तब हमने इधर उधर देखा परंतु हमको

कोई भी देखनेमें न आया॥३५॥ इसप्रकार हमारी गति रुकजाने से हम दशों दिशाओंकी ओर देखने लगे तथापि हमने कुछ भी न देखपायाकि किसने हमारी गतिको रोकाहै ॥३६॥ तब हम विचारने लगेकि किसकारणसे हमारी गति रोकनेको यह विघ्न उपस्थित हुआ और कोई रूप दिखाई नहीं देता ॥३७॥ उसके पीछे शोक करते २ हमने नीचेको दृष्टि डाली तो हमने देखाकि;एक घोर रूपवाली राक्षसी समुद्रके जलमें पडी हुईहै ॥३८॥ हमारी गति यद्यपि रुक गईथी परंतु हमारे मनमेंइससे कुछ भी भय उत्पन्न नहीं हुआ यह देख कर वह भयंकर राक्षसी विकट शब्दसे हँसकर घोर शोर करती हुई अशुभ वचन हमसे बोली ॥३९॥ उसने कहा कि,हे महाकाय!हम बहुत कालसे भोजन न पायकर अतिशय क्षुधित हो तुमको भोजन करनेकी अभिलाषा करतीहैं तुम कहां जाओगे! इस लिये तुम हमारे इस शरीरकी तृप्ति कराओ ॥४०॥ हमने " बहुत अच्छा " कह कर उसके वचनोंको अंगीकार किया उसके पीछे उसके मुखके प्रमाणसे

सोहंविगतवेगस्तुदिशोदशविलोकयन् ॥ नकिंचित्तत्रपश्यामियेनमेविंहतागतिः ॥ ३६ ॥ अथमेबुद्धिरुत्पन्नाकिन्नामगमनेमम ॥ ईदृशोविघ्न उत्पन्नोरूपमत्रनदृश्यते ॥ ३७॥ अधोभागेतुमेदृष्टिःशोचतःपतितातदा ॥ तत्राद्राक्षमहंभीमांराक्षसींसलिलेशयाम् ॥३८॥ प्रहस्यचमहनादमुक्तोहंभीमयातया ॥ अवस्थितमसंभ्रांतमिदंवाक्यमशोभनम् ॥३९॥ क्वासिगंतामहाकायक्षुधितायाममेप्सितः ॥भक्षःप्रीणय मेदेहंचिरमाहारवर्जितम् ॥ ४० ॥ बाढमित्येवतांवाणींप्रत्यगृह्णाम्यहंततः ॥ आस्यप्रमाणादधिकंतस्याःकायमपूरयम्॥४१॥ तस्याश्चास्यंमहद्भीमंवर्धतेमम भक्षणे ॥ नतुमांसातुबुबुधेममवाविकृतंकृतम् ॥४२॥ ततोहंविपुलंरूपंसंक्षिप्यनिमिषांतरात् ॥ तस्याहृदयमादायप्रपतामिनभस्थलम् ॥४३॥ साविसृष्टभुजाभीमापपातलवणांभसि ॥ मायापर्वतसंकाशानिकृत्तहृदयासती ॥४४ ॥ शृणोमिखगतानांचवाचःसौम्यामहात्मनाम् ॥ राक्षसीसिंहिकाभीमाक्षिप्रंहनुमताहता ॥ ४५ ॥ तांहत्वापुनरेवाहंकृत्यमात्ययिकंस्मरन् ॥गत्वाचमहदध्वानंपश्यामिनगमंडितम् ॥ ४६ ॥

बहुत बडा हमने अपने शरीरको किया ॥४१॥ उस राक्षसीने हमको भोजन करनेके लिये बडा भारी भयंकर मुख फैलाया उसने उस बात को नहीं जाना कि हम काम रूप धारीने दूसराही रूप धारण किया है ॥४२॥परन्तु फिर हम पलकमारते ही अपने बडे शरीरको छोटा बनाय उसके मुखमें प्रवेशकर उसके कलेजेको ग्रहण कर आकाशको उछल गये ॥४३॥ हम करके हृदय कट जानेपर वह भयंकर पर्वता कार राक्षसी दोनों बाँहोंको फैलाय लवण समुद्रमें गिर पडी॥४४॥ उसी समय महात्मा आकाशचरियोंका मधुर वचन हमने सुन पाया कि "हनुमानूजीने भयंकरराक्षसीको बडी शीघ्रतासे मार डाला" ॥४५॥ इसप्रकार उस राक्षसीको संहार कर हमने फिर चिन्ताकी कि;सीताजीके देखनेमें कुछ विलम्बहुआ ऐसे चिन्ता करते २ अपने कार्यको याद करते चले और बहुत दूरचल पर्वतयुक्त ॥४६॥

समुद्रका दक्षिणतीरदेखा जहां लंका नामक पुरीहै सूर्यभगवान्‌के छिपनेकेसमय हम राक्षसोंके रहनेकी पुरीमें ॥४७॥ प्रवेश करते हुए परन्तु भयंकर विक्रमकारी राक्षसलोग हमको नहीं जानते थे परन्तु वहां भी प्रवेश करते हुएहमारे सम्मुख प्रलयकालीन मेघके समान ॥४८॥ रूप धारण किये अट्टहास करती हुई कोई राक्षसी उठ खडी हुई और हमको मारनेकी इच्छा करती हुई, तब हम अग्निके समान लाल केशवाली उसके ऊपर ॥४९॥ अपने बांये हाथका मूका मारके उसभयंकर राक्षसीको पराजित करके सन्ध्याके समय पुरीमें प्रवेश करते हुए,तबउसने डरकर हमसेकहा कि ॥५०॥ हे वीर ! हमही साक्षात् इस लंकापुरीकी अधिष्ठात्री हैं, जब कि तुमने पराक्रम प्रगट करके हमको पराजित किया इससे तुम सबही राक्षसोंको निःसन्देह जीत लोगे ॥ ५१ ॥ उसके पीछे हम जानकीजीका खोज करनेके लिये समस्त रात्रिमें लंकापुरीमें घूमते घामते रावणके रनवासमें बैठे; परन्तु वहां भी हमने सुमध्यमा जानकीजीको न देख पाया

दक्षिणंतीरमुदधेर्लंकायत्रगतापुरी ॥ अस्तंदिनकरेयातेरक्षसांनिलयंपुरीम् ॥४७॥प्रविष्टोहमविज्ञातोरक्षोभिर्भीमविक्रमैः ॥ तत्रप्रविशतश्चापि कल्पांतघनसप्रभा ॥ ४८ ॥ अट्टहासंविमुंचंतीनारीकाप्युत्थितापुरः ॥जिघांसंतींततस्तांतुज्वलदग्निशिरोरुहाम् ॥४९॥सव्यमुष्टिप्रहारेणपराजित्यसुभैरवाम् ॥ प्रदोषकालेप्रविशंभीतयाहंतयोदितः ॥५०॥अहंलंकापुरीवीरनिर्जिताविक्रमेणते॥ यस्मात्तस्माद्विजेतासिसर्वरक्षांस्यशेषतः ॥ ५१ ॥ तत्राहंसर्वरात्रंतुविचरञ्जनकात्मजाम् ॥ रावणांतःपुरगतोनचापश्यंसुमध्यमाम् ॥५२॥ ततः सीतामपश्यंस्तुरावणस्यनिवेशने ॥ शोकसागरमासाद्यनपारमुपलक्षये ॥ ५३ ॥ शोचताचमयादृष्टंप्राकारेणाभिसंवृतम् ॥ कांचनेनविकृष्टेनगृहोपवनमुत्तमम् ॥ ५४ ॥ सप्राकारमवप्लुत्यपश्यामिबहुपादपम् ॥ अशोकवनिकामध्येशिंशपापादपोमहान् ॥५५॥ तमारुह्यचपश्यामिकांचनंकदलीवनम् ॥अदूराच्छिंशपावृक्षात्पश्यामिवरवर्णिनीम् ॥५६॥ श्यामांकमलपत्राक्षीमुपवासकृशाननाम् ॥ तदेकवासःसंवीतांरजोध्वस्तशिरोरुहाम् ॥ ५७ ॥

॥ ५२ ॥ रावणके स्थानमें सीताजीको न देख पायकर हम शोकसागरमें डूब गये;कि जिसका पार हम न पासके ॥ ५३ ॥ जब कि हम इस प्रकारसे शोक कर रहे थे तब रावणके स्थानसे अति निकट अति मनोहर उपवन हमने देखा यह उपवन अति ऊंची सुवर्णमय प्राकारोंसे घिरा था ॥ ५४ ॥ हमइस छहर दीवारीकी भीतपर चढकर उस बागके लगे हुए अनेक भाँतिके वृक्षोंकी शोभा देखते२उस अशोकवनके मध्य एक बडा भारी शिंशपाका वृक्षदेखते हुए ॥ ५५ ॥ उस वृक्षपर चढतेही बहुतही निकट कांचनवर्ण कदलीवन और वरवर्णिनी जानकीजीको हमने देखा ॥ ५६ ॥ उपवास करनेसे उन श्यामा और कमलदलनेत्रवाली रामकी प्यारी श्रीजानकीजीका चन्द्रमुख शोकसंतापसेअति मलीन हो गया है,केवल एक मलीन साडी पहरे हैं,केशोंमें धूरि छायरही है॥५७॥

और अंगका गठन भी शोक संतापसे क्षीण होगया है वह सदाही अपने स्वामीके हितमें लगी हुई हैं क्रूर स्वभाववाली विकटाकार राक्षसियें जानकीजीको घेरे हुए हैं ॥५८॥ कि जैसे मांस रुधिरकी खानेपीनेवाली शेरनियें हरिणीको घेर लेती हैं. इस प्रकारसे वे राक्षसियें वारंवार उनको धमकाकर डरा रही हैं ॥५९॥ शीतकालके आजानेसे कमलिनी जिस प्रकार सूख जाती है; वैसेही उन जानकीजीका शरीर श्रीरामचन्द्रजीकी चिन्तासे मलिन होगया है; वह एक वेणी धारण किये अत्यन्त दीनभाव युक्त और श्रीरामचन्द्रजीकी चिन्तामें मग्न हो राक्षसियोंके बीचमें पृथ्वीपर पडी हैं ॥ ६० ॥ अधिक क्या कहें वह रावणकी ओरसे संपूर्णतः निवृत्त हो मरनेका निश्चय किये हुए हैं। क्योंकि रावण उनको छलसे हर लाया है, सो हम किसी प्रकारसे उन मृगछौनाकेसे नेत्रवाली रामप्रिया श्रीजानकी

शोकसंतापदीनांगींसीतांभर्तृहितेस्थिताम् ॥ राक्षसीभिर्विरूपाभिःक्रूराभिरभिसंवृताम् ॥ ५८ ॥ मांसशोणितभक्ष्याभिर्व्याघ्रीभिर्हरिणींयथा॥ सामयाराक्षसीमध्येतर्ज्यमानामुहुर्मुहुः ॥ ५९ ॥ एकवेणीधरादीनाभर्तृचिंतापरायणा ॥ भूमिशय्याविवर्णांगीपद्मिनीवहिमागमे ॥ ६० ॥ रावणाद्विनिवृत्तार्थामर्तव्येकृतनिश्चया ॥ कथंचिन्मृगशावाक्षीतूर्णमासादितामया ॥ ६१ ॥ तांदृष्ट्वातादृशींनारींरामपत्नींयशस्विनीम् ॥ तत्रैवशिंशपावृक्षेपश्यन्नहमवस्थितः ॥ ६२ ॥ ततोहलहलाशब्दंकांचीनूपुरमिश्रितम् ॥ शृणोम्यधिकगंभीरंरावणस्यानिवेशने ॥ ६३ ॥ ततोहंपरमोद्विग्नःस्वरूपप्रत्यसंहरम् ॥ अहंचशिंशपावृक्षेपक्षीवगहनेस्थितः ॥ ६४ ॥ ततोरावणदाराश्चरावणश्चमहाबलः ॥ तंदेशमनुसंप्राप्तोयत्रसीताऽभवत्स्थिता ॥ ६५ ॥ तंदृष्ट्वाथवरारोहासीतारक्षोगणेश्वरम् ॥ संकुच्योरूस्तनौपीनौबाहुभ्यांपरिरभ्यच ॥ ६६ ॥ वित्रस्तांपरमोद्विग्नांवीक्षमाणामितस्ततः ॥ त्राणंकंचिदपश्यंतींवेपमानांतपस्विनीम् ॥ ६७ ॥

जीके निकट अति शीघ्रतासे पहुँचे ॥६१॥ और उन श्रीरामचन्द्रजीकी परम यशस्विनी श्रीजानकीजीकी यह अवस्था देख हम उसी शिंशपाके वृक्षपर चढगये ॥ ६२ ॥ उसके पीछे रावणके स्थानके निकटही क्षुद्रघंटिका और नूपुरादिका अतिगंभीर शब्द हमने सुना ॥ ६३ ॥ तब हमने बहुत अकुलाय अपना बडा वह रूप भी त्याग दिया, और छोटा रूप बनाय पक्षीके समान शिंशपावृक्षके सघन पत्तोंमें बैठे ॥ ६४ ॥ इसी अवसरमें महाबलवान् रावण और उसकी स्त्रियें जहां सीताजी थीं वहांपर आय पहुँचीं ॥६५॥ उस समय श्रेष्ठ मुखवाली श्रीजानकीजी राक्षसपति रावणको देखते ही बहुत त्रासित हो गईं और अपने अंगोंको संकुचित कर अपनी बाँहोंसे स्तनोंको ढांपकर थरथराने लगीं॥६६॥ और इधर उधर निहार किसीको भी अपना रक्षा करनेवाला न देखकर कंपायमान होने

लगीं ॥६७॥ तब रावण महादुःखित श्रीरामचन्द्रजीका परमप्यारी श्रीजानकीजीसे कहनेलगा कि, हम शिर झुकाय कर तुम्हारे चरणोंमें गिरे, सो तुम हमारा आदर करो ॥६८॥ हे गर्वकरनेवाली जानकी ! यदि तुम घमंड करके हमको प्रसन्न न करोगी तो हे जानकी ! दो मासके बीतने पर हम तुम्हारा रुधिर पी जायँगे ॥ ६९ ॥ दुराचारी रावणके यह वचन सुन सीताजी अत्यन्त क्रोधित हो रावणसे उत्तम वचन बोलीं ॥७०॥ रे राक्षस नीच ! हम अतुलप्रभाववाले श्रीरामचन्द्रजीकी स्त्री हैं और इक्ष्वाकुकुल तिलक महाराज दशरथजीकी पुत्रवधू हैं॥७१॥हमारे लिये अनुचित वचन कहकर तुम्हारी जीभ क्यों नहींगिर जाती ? रे अनार्य ! रे पापी तुम्हारे वीर्यको धिक्कार है, कि तुमश्रीरामचन्द्रजीके निकट रहते हमको नहीं लाय सके ॥७२॥बरन् जब वह आश्रममें नहीं थे उस समय तू

तामुवाचदशग्रीवःसीतांपरमदुःखिताम् ॥ अवाक्शिराःप्रपतितोबहुमन्यस्वभामिनि ॥६८॥ यदिचेत्त्वंतुमांदर्पान्नाभिनंदसिगर्विते ॥ द्विमासानंतरंसीतेपास्यामिरुधिरंतव ॥६९॥ एतच्छ्रुत्वावचस्तस्यरावणस्यदुरात्मनः ॥ उवाचपरमक्रुद्धासीतावचनमुत्तमम् ॥ ७० ॥ राक्षसाधमरामस्यभार्याममिततेजसः ॥ इक्ष्वाकुवंशनाथस्यस्नुषांदशरथस्थच ॥ ७१ ॥ अवाच्यंवदतोजिह्वाकथंनपतितातव किंस्विद्वीर्यंतवानार्ययोमांभर्तुरसन्निधौ ॥७२॥ अपहृत्यागतःपापतेनादृष्टोमहात्मना॥नत्वंरामस्यसदृशोदास्येप्यस्यनयुज्यसे ॥ ७३॥ अजेयःसत्यवाक्शूरोरणश्लाघीचराघवः॥ जानक्यापरुषंवाक्यमेवमुक्तोदशाननः॥ ७४ ॥ जज्वालसहसाकोपाच्चितास्थइवपावकः॥ विवृत्यनयनेक्रूरेमुष्टिमुद्यम्यदक्षिणम् ॥७५ ॥ मैथिलींहंतुमारब्धःस्त्रीभिर्हाहाकृतंतदा ॥ स्त्रीणांमध्यात्समुत्पत्यतस्यभार्यादुरात्मनः ॥७६॥ वरामंदोदरीनामतयासप्रतिषेधितः ॥उक्तश्चमधुरांवाणींतयासमदनार्दितः ॥ ७७ ॥ सीतयातवकिंकार्यंमहेंद्रसमविक्रम ॥ मयासहरमस्वाद्यमद्विशिष्टानजानकी ॥ ७८ ॥

हमको हरण करके लाया; तू श्रीरामचन्द्रजीके बराबर नहीं है, अथवा तू तो उनका दास होनेके योग्य भी नहीं है ॥७३॥ कारण कि, श्रीरामचन्द्रजी सत्य बोलनेवाले शूर, रणमें प्रशंसा करनेके योग्य और अजेय हैं। श्रीजानकीजीके ऐसे कठोर वचन श्रवण करके ॥७४॥ रावण उसी समय क्रोधके वश होकर चिताकी अग्निके समान जलबल गया, औरदोनों क्रूर नेत्रोंको घुमाय दाहिना मुष्टिक उठाय॥७५॥श्रीजानकीजीका संहार करनेको तैयार हुआ । उस समय रावणकी सब स्त्रियें हाहाकार कर उठीं, तब उस दुष्टात्माकी स्त्रियोंके मध्यसे उठकर उसकी भार्या ॥७६॥ पटरानी मन्दोदरी नामकने उस कामातुर रावणको मीठे वचनोंसे रोक कर कहा कि॥७७॥तुम्हारा विक्रम इन्द्रके समान है, और जानकीजी भी किसी बातमें कुछ भी हमसे अधिक सुन्दरी नहीं हैं, इस लिये सीतासे तुम्हारा क्या

प्रयोजन है ? आप अब हमारे साथ विहार कीजिये ॥७८॥ अथवा हे प्रभो ! देव गन्धर्व और यक्षोंकी कन्याओंके साथ आप विहार करें, इस सीताको लेकर आप क्या करेंगे ? ॥७९॥ जब मन्दोदरीने ऐसा कहा तब वह समस्त स्त्रियें इकट्ठीहो मिलकर महाबल रावणको उसीकाल वहांसे अपने गृहको लेगई॥८०॥ रावण जब चला गया तब विकट मुखवाली राक्षसी सीताजीको अति दारुण निठुर वचन कह२कर बहुतही धमकाने लगीं ॥८१॥ परन्तु श्रीजानकीने उन राक्षसियोंके वचनोंको तृणके समान समझा। इसलिये जानकीजीके निकट उन राक्षसियोंका तर्जना गर्जना सबही विफल हो गया ॥८२॥ मांस भोजन करनेवाली राक्षसियें वृथा गर्जन और वृथा चेष्टा करके फिर रावणके निकट जाय सीताजीका यह बडा विचार कहती हुईं ॥८३॥ इसप्रकार राक्षसपतिकी अनुकूलताका

देवगंधर्वकन्याभिर्यक्षकन्याभिरेवच॥सार्धंप्रभोरमस्वेतिसीतयाकिंकरिष्यसि॥७९॥ततस्ताभिःसमेताभिर्नारीभिःसमहाबलः॥उत्थाप्यसहसा नीतोभवनंस्वंनिशाचरः॥८०॥यातेतस्मिन्दशग्रीवेराक्षस्योविकृताननाः॥सीतांनिर्भर्त्सयामासुर्वाक्यैःक्रूरैःसुदारुणैः॥८१॥ तृणवद्भाषितंतासां गणयामासजानकी॥ गर्जितंचतथातासांसीतांप्राप्यनिरर्थकम् ॥८२॥ वृथागर्जितनिश्चेष्टाराक्षस्यःपिशिताशनाः ॥ रावणायशशंसुस्ताःसीता व्यवसितंमहत् ॥ ८३ ॥ ततस्ताःसहिताःसर्वाविहताशानिरुद्यमाः ॥ परिक्लिश्यसमस्तास्तानिद्रावशमुपागताः ॥ ८४ ॥ तासुचैवप्रसुप्तासु सीताभर्तृहितेरता ॥ विलप्यकरुणंदीनाप्रशुशोचसुदुःखिता ॥८५॥ तासांमध्यात्समुत्थायत्रिजटावाक्यमब्रवीत् ॥ आत्मानंखादतक्षिप्रंनसीता मलितेक्षणाम् ॥ ८६ ॥ जनकस्यात्मजांसाध्वींस्नुषांदशरथस्यच ॥स्वप्नोह्यद्यमयादृष्टोदारुणोरोमहर्षणः ॥८७॥ रक्षसांचविनाशायभर्तुरस्या जयायच॥अलमस्मान्परित्रातुंराघवाद्राक्षसीगणम्॥८८॥ अभियाचामवैदेहीमेतद्धिममरोचते॥यदिह्येवंविधःस्वप्नोदुःखितायाःप्रदृश्यते॥८९॥

कार्यसिद्ध करने और राक्षसोंकी आशा व उद्यम विफल होनेपर वह राक्षसियें अतिशय थककर सोयगईं ॥८४॥ जब राक्षसियें नींदके वश हुईं, तब पतिका हित चाहनेवाली जनकलडैती जानकीजी अतिशय दुःखित और दीनभावयुक्त हो करुणा सहित विलाप और शोक करने लगी ॥८५॥ कि इसी अवसरमें त्रिजटानामक राक्षसी उन सब निशाचरियोंके बीचमेंसे उठकर बोली, तुम सब सीताजीको न खाय सकोगी बरन् अपनेहीआप अपना २ मांस खालो॥८६॥राजा जनकजीकी कन्या दशरथजीकीपुत्रबधू पतिव्रता कृष्णनेत्रवाली सीताजीको तुम न खानेपाओगी आज हमने रोमाञ्चकारी दारुण स्वप्न देखाहै ॥८७॥ जिससे कि, राक्षस लोगोंका विनाश और हमारे राजाका पराजय होता हमने देखा है; उस कालमें यह जानकीजीही श्रीरामचन्द्रजीसे हम लोगोंका उद्धार करनेमें समर्थ होंगी ॥८८॥ इस

कारण हमारी बडी अभिलाषा है कि,इससीताजीसे हम अपनी रक्षाके लिये प्रार्थना करें;क्योंकि जानकीजी दुःखित हुई हैं ॥८९॥ यदि इस स्वप्नका वृत्तांत हम इनसे कहदें तब सब दुःख दूर होकर उनको अतिशय सुख उत्पन्न होगा, इसलिये जनकनंदिनी सीताजीको प्रणाम करके हमलोग प्रसन्न करें ॥९०॥ तब यह हम सबकी महाविपदसे रक्षा कर लेंगी. लजीली बाला श्रीजानकीजी इस बातसे स्वामीकी विजयसूचक जान प्रसन्न हो ॥ ९१ ॥ बोलीं कि, यदि त्रिजटाका कहना सत्य होया तब हम तुम सबकी रक्षा करेंगी । हे वानरगण ! सीताजीकी ऐसी दारुण अवस्था देखकर कुछ समय तक हम चिन्ता करते रहे ॥ ९२ ॥ परन्तु किसी प्रकारसे भी हमारा मन सुख प्राप्त करनेको समर्थ न हुआ । तो फिर हम यह उपाय खोजने लगे कि, शान्ति न पाई हुई जानकीजीसे हम किसप्रकार वार्त्ता करें ॥९३॥ विचारते २ उपाय स्थिरकर फिर हम उनके सन्मुख इक्ष्वाकुवंशकी स्तुति करने लगे । राजर्षिगुणकीर्त्तनयुक्त हमारे वचन सुनकर ॥९४॥

सादुःखैर्विविधैर्मुक्तासुखमाप्नोत्यनुत्तमम् ॥ प्रणिपातप्रसन्नाहिमैथिलीजनकात्मजा॥९०॥अलमेषापरित्रातुंराक्षस्योमहतोभयात्॥ ततःसाह्रीमतीबालाभर्तुर्विजयहर्षिता ॥९१॥अवोचद्यदितत्तथ्यंभवेयंशरणंहिवः॥ तांचाहंतादृशींदृष्ट्वासीतायादारुणांदशाम् ॥ ९२ ॥ चिंतयामासविश्रांतोनचमेनिर्वृतंमनः ॥संभाषणार्थंचमयाजानक्याचिंतितोविधिः ॥ ९३ ॥ इक्ष्वाकुकुलवंशस्तुस्तुतोममपुरस्कृतः ॥ श्रुत्वातुगदितांवाचंराजर्षिगणभूषिताम् ॥९४॥प्रत्यभाषतमांदेवीबाष्पैःपिहितलोचना ॥ कस्त्वंकेनकथंचेहप्राप्तोवानरपुंगव ॥९५॥ काचरामेणतेप्रीतिस्तन्मेशंसितुमर्हसि ॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाअहमप्यब्रुवंवचः ॥९६॥ देविरामस्यभर्तुस्तेसहायोभीमविक्रमः ॥ सुग्रीवोनामविक्रांतोवानरेंद्रोमहाबलः॥ ॥९७॥ तस्यमाविद्धिभृत्यंत्वंहनूमंतमिहागतम् ॥ भर्त्रासंप्रहितस्तुभ्यंरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥९८॥ इदंतुपुरुषव्याघ्रःश्रीमान्दाशरथिःस्वयम् ॥ अंगुलीयमभिज्ञानमदात्तुभ्यंयशस्विनि॥९९॥ तदिच्छामित्वयाज्ञप्तंदेविकिंकरवाण्यहम्॥रामलक्ष्मणयोःपार्श्वेनयामित्वांकिमुत्तरम् ॥१००॥

देवी जानकीजी आंसू भरकर नेत्र डबडबाये हमसे बोलीं कि हे वानरश्रेष्ठ ! तुम कौनहो ? और किसके पठाये यहांपर आये हो ? ॥९५॥ और श्रीरामचन्द्रजीके साथ किसप्रकारसे तुम्हारी मित्रता हुई यह सब वार्त्ता तुम हमसे कहो हमने उनके यहवचन सुनकर कहा ॥९६॥ हे देवि ! भीमविक्रम प्रबल प्रतापयुक्त वानरोंके नाथ सुग्रीव नाम वानर तुम्हारे स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके सहायक हुए हैं ॥९७॥ हम हनुमान् नाम वानर उन्हीं सुग्रीवजीके दास हैं । अक्लिष्ट कर्म करनेवाले तुम्हारे स्वामी श्रीरामचन्द्रजीने हमको आपके पास भेजा है, इसी कारणसे हम यहांपर आये हैं ॥९८॥ हे यशस्विनी ! पुरुषसिंह श्रीरामचन्द्रजीने चिह्नस्वरूप आपको यह अंगूठी दी है ॥९९॥ इससमय हमको आपकी कौनसी आज्ञाका पालन करना होगा सो हम जानना चाहते हैं । अथवा क्या हमआपको श्रीरामचन्द्रजी

व लक्ष्मणजीके निकट समुद्रके उत्तर किनारे पर लेजायँ ? ॥१००॥ जनकलडैती सीताजी यह वार्त्ता सुनकर हमें उत्तर देती हुई कि हमारी यह कामना है कि, श्रीरामचन्द्रजी स्वयंरावणको वंशसहित ध्वंस करके हमको अपने स्थानपर ले जाँय॥१०१॥तब हमने निन्दारहित आर्या देवी जानकीजीको शिर नवाय प्रणाम कर एक ऐसा चिह्न मांगा कि जिसे देखकर श्रीरामचन्द्रजीको आनंद होवे ॥१०२॥फिर वह श्रेष्ठ मुखवाली सीताजी हमसे बोलीं कि, तुम यह श्रेष्ठ चूडामणि ग्रहण करो महाबाहु श्रीरामचन्द्रजी इसको पायकर तुमको अधिक सन्मानित करेंगे ॥१०३॥ श्रीजानकीने यह कहकर हमको वह श्रेष्ठ चूडामणि दे दी और महाव्याकुल होकर श्रीरामचन्द्रजीके निकट कहनेके लिये हमसे काक इत्यादिका इतिहास वर्णन करती हुई ॥१०४॥ उसके पीछे हमने यहकहकर कि "हम फिर यहां पर आवेंगे" कृतचित्त और सावधान होकर राजपुत्री जानकीजीकी प्रदक्षिणा करके उनको प्रणाम किया ॥ १०५ ॥ तब वह गद्गद वाणीसे फिर

एतच्छ्रुत्वाविदित्वाचसीताजनकनंदिनी ॥ आहरावणमुत्पाट्यराघवोमानयत्विति ॥ १ ॥ प्रणम्यशिरसादेवीमहमार्यामनिंदिताम् ॥ राघवस्यमनोह्लादमभिज्ञानमयाचिषम् ॥ २ ॥ अथमामब्रवीत्सीतागृह्यतामयमुत्तमः ॥ मणिर्येनमहाबाहूरामत्वांबहुमन्यते ॥ ३ ॥ इत्युक्त्वातु वरारोहामणिप्रवरमुत्तमम् ॥ प्रायच्छत्परमोद्विग्नावाचामांसंदिदेशह ॥ ४ ॥ ततस्तस्यैप्रणम्याहंराजपुत्र्यैसमाहितः ॥ प्रदक्षिणंपरिक्रामममिहाभ्युद्गतमानसः॥५॥उत्तरंपुनरेवाहनिश्चित्यमनसातदा ॥हनूमन्ममयवृत्तांतंवक्तुमर्हसिराघवे॥६॥ यथाश्रुत्वैवनचिरात्तावुभौरामलक्ष्मणौ ॥ सुग्रीवसहितौवीरावुपेयातांतथाकुरु ॥७॥ यदन्यथाभवेदेतद्द्वौमासौजीवितंमम ॥ नमांद्रक्ष्यतिकाकुत्स्थोम्रियेसाहमनाथवत्॥८॥तच्छ्रुत्वाकरुणंवाक्यंक्रोधोमामभ्यवर्तत॥ उत्तरं चमयादृष्टंकार्यशेषमनंतरम् ॥ ९ ॥ ततोऽवर्धतमेकायस्तदापर्वतसन्निभः ॥ युद्धाकांक्षीवनंतस्यविनाशयितुमारभे ॥ ११० ॥

हमें कहती हुई कि हे हनुमन् ! हमारा वृत्तांत तुम श्रीरामचन्द्रजीसे इस प्रकार निवेदन करना ॥ १०६॥ कि जिससे वह वीर श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मण उस वृत्तांतको सुनकर सुग्रीवजीके साथ बहुतही शीघ्र यहांपर आवें सो करना ॥१०७॥रावणने हमारे जीनेकी दो मासकी अवधि नियत की है सो हमारा जीवन दोहीमास है, इस कारण जो दो मासके मध्यमें श्रीरामचंद्रजी यहांपर न आय पहुँचेंगे तो हमको नाथ हीनके समान जीवन त्यागना पडेगा फिर श्रीरामचन्द्रजी हमको न देख पावेंगे॥१०८॥ उनके करुणा भरे वचन सुनतेही हमको क्रोध उत्पन्न हुआ और अब क्या करना. कर्त्तव्य है इस प्रकारकी चिन्ता हम कार्यके अन्तमें करने लगे ॥ १०९ ॥ उस समय मारे क्रोधके हमारा शरीर पर्वतके समान बढगया, तब हमने युद्ध करनेकी आशासे अशोक वनका उजाडना

आरम्भ किया ॥११०॥ जब वन उजाडकर नष्ट हो गया और वहांके समस्त मृग पक्षी त्रासित होकर इधर उधर घूमने लगे तब विकटमुखवाली राक्षसियें जागकर वनकी इस अवस्थाको देखने लगीं ॥ १११ ॥ और हमको वनमें खडे देखकर सबने एकत्र हो शीघ्रतासे रावणके निकट जाय उससे यह सब वृत्तान्त निवेदन किया कि ॥ ११२ ॥ हे राजन् ! एक दुरात्मा वानरने आपका महाबल और वीर्य न जानकर आपका परमप्यारा किसीके न जाने योग्य अशोकवन उजाड डाला ॥ ११३ ॥ उसमें अति कुबुद्धि आई है; इसीसे तो उसने आपका कुप्यारा आचरण किया है इस कारण कि, जिससे वह यहांसे फिर लौटकर न जाय सके आप उससे प्राणवधकी आज्ञा दीजिये ॥ ११४ ॥ राक्षसपति रावणने यह सुनकर अपने मनमाने किंकर नाम अतिअजीत अस्सीहजार राक्षसोंको भेजा ॥११५॥ उन अस्सीहजार राक्षसोंके शूल और मुद्गर धारण करके अशोकवनमें आतेही गदाप्रहारसे हमने उन सबका संहार किया ॥११६॥ उन राक्षसोंमेंसे जो किसीप्रकारसे बचे बचाये उन लोगोंने बडी शीघ्रताके साथ रावणके निकट जायकर उस अस्सीहजार सेनाके नाशहोनेका वृत्तान्त निवेदन किया ॥११७॥ फिर हमने अत्युत्तम लंकाके अधिष्ठाता देवताके मन्दिरके विनाश करनेका संकल्प करके एक थंभके आघातसे उस मंदिरके रखवाले राक्षसोंको मार डाला ॥ ११८ ॥ और महाक्रोध करके लंकाके अलंकाररूप उस मंदिरको सम्पूर्ण तोड फोड डाला । तब रावणने प्रहस्तके बेटे जम्बुमालीको लडनेके लिये भेजा ॥११९॥ हमने विकटाकार भयानक निशाचरगणोंसे वेष्टित बलसम्पन्न समरविशारद उस राक्षसको ॥ १२० ॥ लोहेके परिघसे उसके साथियों समेत

तद्भग्नंवनखंडंतुभ्रांतत्रस्तमृगद्विजम् ॥ प्रतिबुध्यनिरीक्षंतेराक्षस्योविकृताननाः ॥ ११ ॥ मांचदृष्ट्वावनेतस्मिन्समागम्यततस्ततः॥ताःसमभ्ययागताःक्षिप्रंरावणायाचचक्षिरे ॥१२॥ राजन्वनमिदंदुर्गंतवभग्नंदुरात्मना ॥ वानरेणह्यविज्ञायतववीर्यंमहाबलः ॥१३॥ तस्यदुर्बुद्धिताराजंस्तवविप्रियकारिणः ॥ वधमाज्ञापयक्षिप्रंयथासौनपुनर्व्रजेत् ॥ १४ ॥ तच्छ्रुत्वाराक्षसेंद्रेणविसृष्टाबहुदुर्जयाः ॥ राक्षसाःकिंकरानामरावणस्यमनोनुगाः ॥ १५ ॥ तेषामशीतिसाहस्रंशूलमुद्गरपाणिनाम् ॥ मयातस्मिन्वनोद्देशेपरिघेणनिषूदितम् ॥ १६ ॥ तेषांतुहतशिष्टायेतेगतालघुविक्रमाः ॥ निहतंचमयासैन्यंरावणयाचचक्षिरे ॥१७॥ततोमेबुद्धिरुत्पन्नाचैत्यप्रासादमुत्तमम् ॥ तत्रस्थान्राक्षसान्हत्वाशतंस्तंभेनवैपुनः ॥१८॥ ललामभूतोलंकायामयाविध्वंसितोरुषा ॥ ततःप्रहस्तस्यसुतंजंबुमालिनमादिशत ॥ १९ ॥ राक्षसैर्बहुभिःसार्धंघोररूपैर्भयानकैः ॥ तमहंबलसम्पन्नंराक्षसंरणकोविदम् ॥ १२० ॥ परिघेणातिघोरेणसूदयामिसहानुगम् ॥ तच्छ्रुत्वाराक्षसेंद्रस्तुमंत्रिपुत्रान्महाबलान् ॥ २१ ॥

मारडाला। राक्षस रावणने॥ यह वृत्तान्त श्रवण कर महाबली मन्त्रीके पुत्रोंको हम ॥१२१॥ पैदलोंकी बडी भारीसेनाके सहित युद्ध करनेको भेजा हमने उनसब को भी परिघके प्रहारसे यमपुरको भेज दिया ॥१२२॥ लंकापति रावणने संग्राममें लघु विक्रम प्रगट करनेवाले मंत्रिपुत्रोंको हतहुआ श्रवणकरके पांच महाशूर सेनापतियोंको भेजा ॥१२३॥ हमने सेनासहित उन पांचोंको मार डाला उसके पीछे रावणने फिर अपने महाबली पुत्र अक्षको ॥ १२४ ॥ बहुत सारे राक्षसोंके साथ युद्ध करनेके लिये भेजा। मन्दोदरीनंदन रणपंडित महावीर वह कुमार ॥ १२५ ॥ असि चर्म धारण करके आकाशमार्गमें कूदता हुआ, तब हमने उसके दोनों चरण पकड शतवार घुमाय कर फेंक दिया ॥१२६॥ अपने पुत्र अक्षको मरा हुआ सुन रावणने अपने दूसरे पुत्र इन्द्रजीत (मेघनाद) को रणकरनेके

पदातिबलसंपन्नान्प्रेषयामासरावणः ॥ परिघेणैवतान्सर्वान्नयामियमसादनम् ॥ २२ ॥ मंत्रिपुत्रान्हताञ्छ्रुत्वासमरेलघुविक्रमान् ॥ पंचसेनाग्रगाञ्छूरान्प्रेषयामासरावणः ॥ २३ ॥ तानहंसहसैन्यावैसर्वानेवाम्यसूदयम् ॥ ततःपुनर्दशग्रीवःपुत्रमक्षंमहाबलम् ॥ २४ ॥ बहुभीराक्षसैःसार्धंप्रेषयामाससंयुगे ॥ तंतुमंदोदरीपुत्रंकुमारंरणपंडितम् ॥२५॥ सहसाखंसमुद्यंतंपादयोश्चगृहीतवान् ॥ तमासीनंशतगुणंभ्रामयित्वाव्यपेषयम् ॥ २६ ॥ तमक्षमागतंभग्नंनिशम्यसदशाननः ॥ ततश्चेंद्रजितंनामद्वितीयंरावणःसुतम् ॥ २७ ॥ व्यादिदेशसुसंक्रुद्धोबलिनंयुद्धदुर्मदम् तच्चाप्यहंबलंसर्वंतंचराक्षसपुंगवम् ॥ २८ ॥ नष्टौजसंरणेकृत्वापरंहर्षमुपागतः ॥ महतापिमहाबाहुःप्रत्ययेनमहाबलः ॥ २९ ॥ प्रहितो रावणेनैषसहवीरैर्मदोद्धतैः ॥ सोऽविषह्यंहिमांबुद्ध्वास्वसैन्यंचावमर्दितम् ॥ १३० ॥ ब्रह्मणोस्त्रेणसतुमांप्रबद्ध्वाचातिवेगिनः ॥ रज्जुभिश्चापिबध्नंतिततोमांतत्रराक्षसाः ॥३१॥ रावणस्यसमीपंचगृहीत्वामामुपागमन् ॥ दृष्ट्वासंभाषितश्चाहंरावणेनदुरात्मना ॥ ३२ ॥ पृष्टश्चलंकागमनंराक्षसानांचतंवधम् ॥ तत्सर्वंचरणेतत्रसीतार्थमुपजल्पितम् ॥ ३३ ॥

लिये भेजा ॥ १२७ ॥ यह मेघनाद रणदुर्मद और बडा भारी बलवान् है परन्तु उसके संग आई हुई समस्त सेनाका हमने ॥१२८॥ संहार कर डाला और संग्राममें उसका भी पराक्रम नष्ट कर दिया। यह कार्य कर हम अपने मनमें अत्यन्त प्रसन्न हुए कारण कि, महाबलवान् महाबाहु मेघनादको रावणने अति विश्वाससे युद्धमें भेजा था॥१२९॥परन्तु मदोद्धतवीरोंके साथ इन्द्रजीत हमारे सहनेके आयोग्य पराक्रमको जानकरकि, हम इनको नहीं जीत सके। और अपनी सेनाको विध्वंसित देख ॥ १३० ॥ हमको ब्रह्मास्त्रसे बांधकर अतिवेगसे चला गया उसके पीछे वहां फिर राक्षसोंने हमको रस्सियोंसे बांधा ॥ १३१ ॥ और रावणके निकट वह लोग हमको पकड कर लेगये दुरात्मा रावणने हमको देखकर पूँछा कि ॥ १३२ ॥ तू किस कारणसे लंकामें आया है और राक्षसोंके मार

नेका तेरा क्या प्रयोजन ? तब हमने कहा कि. हमने यह समस्तकार्य श्रीजानकीजीके लिये किये हैं ॥ १३३ ॥ हे रावण ! हम सीताजीके दर्शन करनेकी अभिलाषासे ही आपकेस्थानपर आये हैं हम पवनजीके औरस पुत्र हनुमान् नाम वानर हैं॥१३४॥हम श्रीरामचन्द्रजीके दूत और वानरराज सुग्रीवजीके मंत्री हैं । और हम श्रीरामचन्द्रजीके दूत होकर तुम्हारे पास आये हैं॥१३५॥उस समय सुग्रीवजीने आपके निकट जो कुछ हमें कहनेकी आज्ञा दी है, सो कहते हैं तुम सुनो॥१३६॥हे राक्षसराज ! वानरपति महाभाग सुग्रीवजीने अपनी कुशल कहकर फिर आपकी कुशल पूँछी है और धर्मार्थकामयुक्त परममंगलमय हितकारी वचन कहे हैं॥१३७॥उन्होंने कहा है कि, जब हम विशालवृक्ष राजिशोभित ऋष्यमूकपर्वतपर वास करते थे उससमय रणमें असह्य श्रीरामचन्द्रजीके साथ हमारी

तस्यास्तुदर्शनाकांक्षीप्राप्तस्त्वद्भवनंविभो ॥ मारुतस्यौरसःपुत्रोवानरोहनुमानहम् ॥३४॥ रामदूतंचमांविद्धिसुग्रीवसचिवंकपिम् ॥ सोहंदोत्ये नराभस्यत्वत्सकाशमिहागतः ॥ ३५ ॥ शृणुचापिसमादेशंयदहंप्रब्रवीमिते ॥ राक्षसेशहरीशस्त्वांवाक्यमाहसमाहितम् ॥३६॥ सुग्रीवश्चमहा भागसत्वांकौशलमब्रवीत् ॥ धर्मार्थकामसहितंहितंपथ्यमुवाचह ॥३७॥ वसतोऋष्यमूकेमेपर्वतेविपुलद्रुमे ॥ राघवोरणविक्रांतोमित्रत्वंसमु पागतः ॥३८॥ तेनमेकथितंराजन्भार्यामेरक्षसाहृता ॥ तत्रसाहाय्यहेतोर्मेसमयंकर्तुमर्हसि ॥३९॥ वालिनाहृतराज्येनसुग्रीवेणसहप्रभुः ॥ चक्रे ग्निसाक्षिकंसख्यंराघवःसहलक्ष्मणः ॥ १४० ॥ तेनवालिनमाहत्यशरेणैकेनसंयुगे ॥ वानराणांमहाराजःकृतःसंप्लवतांप्रभुः ॥४१॥ तस्यसाहा य्यमस्माभिःकार्यंसर्वात्मनात्विह॥ तेनप्रस्थापितस्तुभ्यंसमीपमिहधर्मतः ॥४२॥ क्षिप्रमानीयतांसीतादीयतांराघवस्यच ॥ यावन्नहरयोवीरा विधमंतिबलंतव ॥४३॥ वानराणांप्रभावोयंनकेनविदितःपुरा ॥ देवतानांसकाशंचयेगच्छंतिनिमंत्रिताः ॥ ४४ ॥

मित्रता होगई है ॥१३८॥ हे राजन् ! तब श्रीरामचन्द्रजीने हमसे कहा कि, "राक्षस हमारी भार्याको हरण करके लेगया है । सो उसके ढूँढनेमें सहायता देनेके लिये तुमको प्रतिज्ञा करनी पडेगी"॥१३९॥ यह कह कर उन्होंने लक्ष्मणजीके साथ अग्निको साक्षीकरके हमसे मित्रताकी (क्योंकिबालिनेभी उनका राज्य व स्त्री हरण करली थी)॥१४०॥और उन्होंने केवल एकही बाणसे युद्धमें वालिको मारकर हमको वानरगणोंके महाराजपद पर प्रतिष्ठित किया॥१४१॥इस कारण समस्त अन्तःकरणसे उनकी सहायता करना हमारा अवश्यकर्त्तव्य है । इसलिये उन हनुमानको दूतस्वरूप हमने धर्मानुसार तुम्हारे निकट भेजा है ॥ १४२ ॥ अब वानरवीर लोगोंसे लंकाका विनाश न होते २ तुम बडी शीघ्रताके साथ सीताजीको श्रीरामचन्द्रजीको सौंप दो ॥१४३॥ वानरवीरोंके वीर्यप्रभावको कौन नहीं

जानता है ? इन वानरोंको देवतालोग अपने शत्रुओंको मारनेके लिये स्वर्गमें बुलायकर ले जाते हैं ॥१४४॥ वानरराज सुग्रीवने यही सब बातेंकहला भेजी थीं, सो हमने तुमसे कहीं। यह सुन नेत्रोंसे भस्म करते हुए हमको रावणने देखा ॥ १४५ ॥ उस भयंकर कर्मकारी राक्षस रावणने हमारा बल प्रभाव न जानकर आज्ञा दी कि, इस वानरको मारडालो ॥१४६॥ उसके पीछे बिभीषण नामक उनके महामतिवाले छोटे भाईने हमारे अर्थ राक्षसराज रावणके निकट प्रार्थना करके कहा ॥ १४७ हे राक्षस शार्दूल ! इसका वध करना उचित नहीं है, इस संकल्पको आप छोड दीजिये ! आपने जो स्थिर किया है, वह मार्ग राज शास्त्रसे बाहर है ॥१४८॥ हे राक्षस ! राजनीतिमें कहीं भी दूतका वध नहीं कहा गया है; विशेषतः दूत जो जैसा अपने स्वामी के निकट सुनकर आता है वैसा ही कहता है इसमें दूत का क्या दोष ? ॥१४९॥हे अतुलविक्रम ! चाहे बडा भारी अपराधही क्यों न किया हो, परन्तु शास्त्रमें कहीं भी दूतकेवधकी व्यवस्था

इतिवानरराजस्त्वामाहेत्यभिहितोमया॥मामैक्षतततोरुष्टश्चक्षुषाप्रदहन्निव॥४५॥तेनवध्योहमाज्ञप्तोरक्षसारौद्रकर्मणा॥मत्प्रभावमविज्ञायरावणेन दुरात्मना॥४६॥ततोविभीषणोनामभ्रातातस्यमहामतिः॥तेनराक्षसराजश्चयाचितोममकारणात्॥४७॥ नैवंराक्षसशार्दूलत्यज्यतामेषनिश्चयः॥ राजशास्त्रव्यपेतोहिमार्गःसंसेव्यतेत्वया॥४८॥दूतवध्यानदृष्टाहिराजशास्त्रेषुराक्षस॥दूतेनवेदितव्यंचयथाभिहितवादिना॥४९॥सुमहत्यपराधे पिदूतस्यातुलविक्रम॥विरूपकरणंदृष्टंनवधोस्तिहिशास्त्रतः॥१५०॥विभीषणेनैवमुक्तोरावणःसंदिदेशतान्॥राक्षसानेतदेवाद्यलांगूलंदह्यतामिति ॥५१॥ततस्तस्यवचःश्रुत्वाममपुच्छंसमंततः॥वेष्टितंशणवल्कैश्चपट्टैःकार्पासकैस्तथा॥५२॥राक्षसाःसिद्धसंनाहास्ततस्तेचंडविक्रमाः॥तदादीप्यं तमेपुच्छंहनंतःकाष्ठमुष्टिभिः॥५३॥बद्धस्यबहुभिःपाशैर्यंत्रितस्यचराक्षसैः॥नमेपीडाभवेत्काचिद्दिदृक्षोर्नगरींदिवा॥५४॥ ततस्तेराक्षसाःशूराबद्धं मामग्निसंवृतम्॥अघोषयन्राजमार्गेनगरद्वारमागताः॥५५॥ततोहंसुमहद्रूपंसंक्षिप्यपुनरात्मनः॥विमोचयित्वातंबंधंप्रकृतिस्थःस्थितःपुनः॥५६॥

नहीं; हां केवल नाक, कान आदि काटकर विरूप करना लिखा है॥१५०॥ जब विभीषणजीने इस प्रकारसे कहा, तब रावणने राक्षस लोगोंको आज्ञादी कि, इसकी पूँछको भस्म कर दो ॥१५१॥रावणकी यह आज्ञा पाय राक्षस लोगोंने हमारी पूँछमें सन, वृक्षोंकी छाल और वस्त्र इत्यादि लपेटे ॥१५२॥कवच शस्त्र आदि धारण किये प्रचण्ड विक्रमकारी राक्षसोंने हमको काठकेडंडों और मूकोंसे मारकर हमारी पूँछमें आग लगा दी॥ १५३ ॥ हमने राक्षसों करके विविध भाँतिसे बांधे और यंत्रित किये जाकर भी कुछ पीडा न पाई; क्योंकि हमको तो लंका देखनेकी इच्छा थी ॥१५४॥तब उन शूर बलीराक्षसों ने हमको बांध और पूंछमें अग्नि लगाय सारी नगरीमें पुकारा कि, देखो इस वानर दूतकी पूँछ जलाई जाती है ॥१५५॥ तब हमने उस अपने बडे भारी शरीरको छोटासा

करके सब बन्धनोंको तोड डाला, हमारा रूप छोटा होते ही वह सब ढीले पड गये थे, उनको दूर बहाय अपना स्वाभाविक रूप धारण किया ॥१५६॥ और तब
हम लोहेका एक बडा भारी परिघ उठाय उससे राक्षसोंका संहार करने लगे; उन समस्तको मार फिर हम नगरके द्वारपर उछलकर चढ गये ॥१५७॥ उस प्रदीप्त
पूंछकी अग्निसे प्रजाको जलाते हुए प्रलयकालके अग्निके समान राजभवनसे लेकर नगरके फाटकतक हमने समस्त लंकापुरीको भस्म कर दिया; सब पुरीको जला कर भी
हमें कुछ भ्रम नहीं प्राप्त हुआ॥१५८॥ जब सब पुरी भस्म होगई तो हम विचार करने लगे कि, लंकामें ऐसा स्थान नहीं जो भस्म न हुआ हो; इस कारणसमस्तपुरीके
जलजानेपर जानकीजी भी इसके संगही भस्महो गई इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ॥१५९॥ लंकाको जलाते हुए हमने जानकीजीको भस्म कर डाला इसकारण
हमने श्रीरामचन्द्रजी का बडा भारी कार्य नष्ट कर डाला॥१६०॥ इसप्रकार शोकसे व्याकुल होकर चिन्ता कर रहे थे कि, इतनेमेंही चारण लोगोंका यह मधुर

आयसंपरिघंगृह्यतानिरक्षांस्यसूदयम् ॥ ततस्तन्नगरद्वारंवेगेनप्लुतवानहम् ॥ ५७॥ पुच्छेनचप्रदीप्तेनतांपुरींसाट्टगोपुराम् ॥ दहाम्यहमसंभ्रांतो
युगांताग्निरिवप्रजाः ॥५८॥ विनष्टाजानकीव्यक्तंनह्यदग्धः प्रदृश्यते ॥ लंकायाःकश्चिदुद्देशःसर्वाभस्मीकृतापुरी ॥५९॥ दहताचमयालंकांदग्धा
सीतानसंशयः॥ रामस्यचमहत्कार्यंमयेदंविफलीकृतम् ॥१६०॥ इतिशोकसमाविष्टश्चिंतामहमुपागतः ॥ ततोहंवाचमश्रौषंचारणानांशुभाक्षराम्
॥६१॥ जानकीनचदग्धेतिविस्मयोदंतभाषिणाम् ॥ ततोमेबुद्धिरुत्पन्ना श्रुत्वातामद्भुतांगिरम् ॥६२॥ अदग्धाजानकीत्येवनिमित्तैश्चोपलक्षि
तम् ॥ दीप्यमानेतुलांगूलेनमांदहतिपावकः ॥६३॥ हृदयंचप्रहृष्टंमेवाताःसुरभिगंधिनः ॥ तैर्निमित्तैश्चदृष्टार्थैःकारणैश्चमहागुणैः ॥६४॥ ऋषिवा
क्यैश्चदृष्टार्थैरभवंहृष्टमानसः ॥ पुनर्दृष्टाचवैदेहीविसृष्टश्चतयापुनः ॥६५॥ ततःपर्वतमासाद्यतत्रारिष्टमहंपुनः ॥ प्रतिप्लवनमारेभेयुष्मद्दर्शनकां
क्षया ॥ ६६ ॥ ततःश्वसनचंद्रार्कसिद्धगंधर्वसेवितम् ॥ पंथानमहमाक्रम्यभवतोदृष्टवानिह ॥ ६७ ॥

वचन हमने सुना ॥१६१॥ कि इस वानर श्रेष्ठने बडा अद्भुत कार्य किया कि; समस्त लंकापुरी को जलाय जानकीको बचा लिया, तब हमने उनकी वाणी सुन
व और भी ॥१६२॥ शुभ निमित्तोंके होनेसे जाना कि, जानकीजी भस्म नहीं हुई, कारणकि पूंछके ऊपर का वस्त्र तो सब जलगया, परन्तु अग्निने हमको नहीं
जलाया ॥१६३॥ हमारा हृदय भी प्रफुल्ल हो गया है और सुगंधियुक्त पवन भी चलरही है इन शुभ लक्षण और महा गुणकारक समूहोंसे॥१६४॥ और ऋषि
लोगोंके वचनों का मर्म जानकर उसकाल हमारे हृदयमें हर्ष उत्पन्न हुआ, तब हमने फिर जानकीजी का दर्शन कर उनके निकटसे बिदा पाय॥१६५॥ अरिष्टपर्व
तपर आरोहण (चढ) कर आप सब लोगोंका दर्शन पानेकी अभिलाषासे फिर समुद्रको उतरनेलगे ॥१६६॥ और वायु, सूर्य, चन्द्र, गन्धर्व व सिद्धगण सेवित

मार्गका आश्रय ले गमन करते २ हमने आप लोगोंका दर्शन किया॥ १६७॥ श्रीरामचन्द्रजी के प्रसाद और आप सबके तेज प्रभावसे सुग्रीवजीके समस्तही कार्य हमने सिद्ध किये॥ १६८॥ हमने लंकामें जो कुछ किया है वह सबही आप सबसे कहा, इस समय जो कार्य नहीं किया गया और बाकी हो उसको आपलोग पूरा कीजिये ॥१६९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामष्टपंचाशः सर्गः॥ ५८॥ पवनकुमार हनुमान्‌जी समस्त वृत्तांत इस प्रकार वर्णन करके फिर और कहने लगे॥ १॥ जनकनंदिनी सीताजी का स्वभाव देखकर हमारा मन अत्यन्त प्रसन्न हुआ और इससे श्रीरामचन्द्रजी का उद्योग और सुग्रीवजी का उत्साह भी सफल हो गया॥ ॥२॥ हे वानर गण ! पतिव्रता साध्वी स्त्रियोंका चरित्र जिस प्रकार का होना चाहिये, आर्या सीताजी सर्व प्रकारसे वैसेही श्रेष्ठ चरित्र की रक्षा करती हैं, वह अपने तपके प्रभावसे सब लोकोंको धारण और क्रोधमें भर कर समस्त लोकोंको भस्म कर सकती है ॥३॥ राक्षस पति रावण भी सर्वथा अतिशय तप करके

राघवस्यप्रसादेनभवतांचैवतेजसा॥सुग्रीवस्यचकार्यार्थंमयासर्वमनुष्ठितम् ॥६८॥ एतत्सर्वंमयातत्रयथावदुपपादितम्॥ तत्रयन्नकृतंशेषंतत्सर्वं क्रियतामिति ॥१६९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी०आदि० च० सा० सुंदरकांडेऽष्टपंचाशः सर्गः ॥५८॥ एतदाख्यायतत्सर्वंहनूमान्मा रुतात्मजः ॥ भूयःसमुपचक्रामवचनंवक्तुमुत्तरम् ॥१॥ सफलोराघवोद्योगःसुग्रीवस्यचसंभ्रमः ॥ शीलमासाद्यसीतायाममचप्रीणितंमनः ॥२॥ आर्यायाःसदृशंशीलंसीतायाःप्लवगर्षभाः ॥ तपसाधारयेल्लोकान्क्रुद्धावानिर्दहेदपि ॥३॥सर्वथातिप्रकृष्टोसौरावणोराक्षसेश्वरः॥यस्यतांस्पृश तोगात्रंतपसानविनाशितम् ॥४॥ नतदग्निशिखाकुर्यात्संस्पृष्टापाणिनासती ॥ जनकस्यसुताकुर्याद्यत्क्रोधकलुषीकृता ॥ ५ ॥ जांबवत्प्रमुखा न्सर्वाननुज्ञाप्यमहाकपीन् ॥ अस्मिन्नेवंगतेकार्येभवतांचनिवेदिते ॥ न्याय्यंस्मसहवैदेह्याद्रष्टुंतौपार्थिवात्मजौ ॥६॥ अहमेकोपिपर्याप्तः सराक्ष सगणांपुरीम् ॥ तांलंकांतरसाहंतुंरावणंचसराक्षसम् ॥ ७ ॥

युक्त है, बस इसी लिये हरण समयमें सीताजी का अंग छूनेपर भी वह नहीं भस्म होगया, वह तपका ही प्रभाव है कि इसका शरीर भस्म नहीं हुआ ॥४॥ पतिव्रता जनकलडैती जानकीजी क्रोधके वश होकर जो कुछ कर सकती हैं, वह हाथसे छूने पर भी अग्निकी शिखा नहीं कर सकती। जो हो जिस प्रकारका कार्य हुआ, वह तो सबही हमने आप लोगोंसे कहा ॥ ५ ॥ अब हम चाहते हैं कि जाम्बवान् इत्यादि मुख्य २ वानर लोगोंकी आज्ञा लेकर राजकुमार श्रीरामचन्द्रजीसे जानकीजीको लंकासे लायकर मिलाय देना हमें उचित ज्ञात होता है ॥६॥ जो तुम यह शंका करो कि, बिना श्रीरामचन्द्र, लक्ष्मण, सुग्री वके लंकामें गये यह कार्य कैसे हो सकता है तो सुनो कि, हम इकलेही समस्त राक्षसोंके सहित लंकापुरी व रावणको नष्ट कर सकते हैं, इसमें किसी दूसरेसे

सहायता लेनेकी क्या आवश्यकता है ? ॥७॥ उसपर आप सरीखे परम ज्ञानी, सब अस्त्र शस्त्रके जाननेवाले, बलवान्, विजयकी अभिलाषा किये और समर्थ वीरगण संग २ लंकाको चलें तब तो फिर कहना ही क्या ? ॥ ८ ॥ हम रावणको उसके भ्राता, पुत्र; नौकर, चाकर, मंत्री आदि व सेनाके सहित युद्धमें मार डालेंगे॥९॥ ब्रह्मास्त्र; रौद्रास्त्र, वायवास्त्र और वरुणास्त्र भी इत्यादि॥१०॥संग्राममें बडे दुर्निरीक्ष्य अस्त्र शस्त्र भी इन्द्रजीत चलावेगा, तथापि हम उन सबका नाशकर राक्षसोंका मूलसहित विनाशकर डालेंगे ॥११॥ आप लोगोंकी आज्ञाके बिना हमारा विक्रम रुक रहा है। पर्वतोंकी समस्त वर्षा हमारी बाँहोंके बलसे निरन्तर चलाये जाकर॥१२॥निशाचरोंकी तो चलाई क्या हम देवतालोगोंको भी युद्धमें नष्टकर सकते हैं। आप लोगोंकी आज्ञा न पानेसे हमारी राक्षस राव

किंपुनःसहितोवीरैर्बलवद्भिःकृतात्मभिः ॥कृतास्त्रैःप्लवगैःशक्तैर्भवद्भिर्विजयैषिभिः॥८॥अहंतुरावणंयुद्धेससैन्यंसपुरःसरम् ॥ सहपुत्रंवधिष्यामिसहोदरयुतंयुधि ॥ ९ ॥ ब्राह्ममस्त्रंचरौद्रंचवायव्यंवारुणंतथा ॥१०॥ यदिशक्रजितोस्त्राणिदुर्निरीक्ष्याणिसंयुगे ॥तान्यहंनिहनिष्यामिविधमिष्यामिराक्षसान् ॥ ११ ॥ भवतामभ्यनुज्ञातोविक्रमोमेरुणद्धितम् ॥ मयाऽतुलाविसृष्टाहिशैलवृष्टिर्निरंतरा ॥१२॥ देवानपिरणेहन्यात्किंपुनस्तान्निशाचरान् ॥ भवतामननुज्ञातोविक्रमोमेरुणद्धिमाम्॥ १३ ॥ सागरोप्यतियाद्वेलांमंदरःप्रचलेदपि॥ नजांबवंतंसमरेकंपयेदरिवाहिनी ॥ १४ ॥ सर्वराक्षससंघानांराक्षसायेचपूर्वजाः ॥अलमेकोपिनाशायवीरोवालिसुतःकपिः ॥१५॥ प्लवगस्योरुवेगेननीलस्यचमहात्मनः ॥ मंदरोप्यवशीर्येतकिंपुनर्युधिराक्षसाः॥१६॥सदेवासुरयक्षेषुगंधर्वोरगपक्षिषु ॥ मैंदस्यप्रतियोद्धारंशंसतद्विविदस्यवा ॥१७॥ अश्विपुत्रौमहावेगावेतौप्लवगसत्तमौ॥एतयोःप्रतियोद्धारंनपश्यामिरणाजिरे॥१८मयैवनिहतालंकादग्धाभस्मीकृतापुरी॥राजमार्गेषुसर्वेषुनामविश्रावितंमया १९॥

णके मार डालनेकी प्रवृत्ति निवृत्त होगई है ॥१३॥ समुद्र चाहे वेला भूमिको लांघ जाय, और मन्दराचल भी चाहे अपने स्थानसे चलायमान होजाय तथापि शत्रुकी सेना संग्राममें जाम्बवान्को नहीं कंपायमान कर सकती ॥ १४ ॥ और विशेषतः बालिकुमार वीर अंगदजीही इकले राक्षसोंमें प्रधान २ राक्षसोंके मारनेको समर्थ हैं॥१५॥ महात्मा नीलके बडे भारी ऊरुवेगसे आहत होकर मन्दराचल पर्वत भी विदीर्ण हो सकता है, फिर विचित्रता क्या है कि; जो राक्षसलोग समरमें उनको पाय कर व्याकुल हो जायँगे॥१६॥समस्त सुर, असुर, गन्धर्व, उरग, विहग इनके बीचमें मयन्द या द्विविदके समान कौन बीर है ? सो आप बतावें॥१७॥वानरश्रेष्ठ जो कि, अश्विनीकुमारके यह तो पुत्र हैं; और अति बलवान् हैं, इनके विरुद्ध युद्ध करनेवाला हम किसीको भी नहीं देखते ॥१८॥और हमने

भी अकेलेही लंकापुरीको विध्वंस और भस्म करके समस्त राजमार्गोंमें इस प्रकार पुकार २ कर सबको अपना नाम सुनाया ॥ १९ ॥ अतिबलवान् श्रीरामचन्द्रजीकी जय ! महाबलवान् श्रीलक्ष्मणजीकी जय ! राघवपालित सुग्रीवजीकी जय ! ॥ २० ॥ हम कोशलराज श्रीरामचन्द्रजीके दास पवनके पुत्र हमारा नाम हनुमान् है इसप्रकारसे सब कहीं हमने सबके नामका कीर्त्तन कियाहै ॥२१॥ उसके पीछे हमने दुराचारी रावणकी अशोकवाटिकामें प्रवेश करके देखा कि, पतिव्रता जानकीजी शिंशपाके वृक्षके नीचे दीनभावसे बैठी हैं ॥ २२ ॥ शोक संतापसे पीडित और राक्षसियोंके घेरे रहनेसे जानकीजीके देहकी कांति मेघरेखासे ढकी हुई चंद्ररेखाके समान प्रभाहीन हो गई है ॥ २३ ॥श्रेष्ठ मुखवाली जनककुमारी सीताजी पतिव्रता हैं;इस कारण रावणको तो वह कुछ गिनतीही

जयत्यतिबलोरामोलक्ष्मणश्चमहाबलः ॥ राजाजयतिसुग्रीवोराघवेणाभिपालितः ॥ २० ॥ अहंकोसलराजस्यदासःपवनसंभवः ॥ हनूमानितिसर्वत्रनामविश्रावितंमया ॥ २१ ॥ अशोकवनिकामध्येरावणस्यदुरात्मनः ॥ अधस्ताच्छिंशपामूलेसाध्वीकरुणमास्थिता ॥ २२ ॥ राक्षसीभिःपरिवृताशोकसंतापकर्शिता ॥ मेघरेखापरिवृताचंद्ररेखेवनिष्प्रभा ॥ २३ ॥ अचिंतयंतीवैदेहीरावणंबलदर्पितम् ॥ पतिव्रताचसुश्रोणी अवष्टब्धाचजानकी ॥ २४ ॥ अनुरक्ताहिवैदेहीरामेसर्वात्मनाशुभा ॥ अनन्यचिंतारामेणपौलोमीवपुरंदरे ॥ २५ ॥ तदेकवासःसंवीतारजोध्वस्तातथैवच ॥ सामयाराक्षसीमध्येतर्ज्यमानामुहुर्मुहुः ॥ २६ ॥ राक्षसीभिर्विरूपाभिर्दृष्टाहिप्रमदावने ॥ एकवेणीधरादीनाभर्तृचिंतापरायणा ॥२७॥ अधःशय्याविवर्णांगीपद्मिनीवहिमोदये ॥ रावणाद्विनिवृत्तार्थामर्तव्येकृतनिश्चया ॥२८॥ कथंचिन्मृगशावाक्षीविश्वासमुपपादिता ॥ ततःसंभाषिताचैवसर्वमर्थंप्रकाशिता ॥ २९ ॥

नहीं,उस दुरात्मा रावणने केवल बलसे गर्वित होकर उनको रोक रक्खाहै॥२४॥ वह शोभायमान,जनककुमारी सीताजी जिसप्रकार इन्द्राणी इन्द्रसे व्यवहारकरती हैं ऐसे और चिंताओंका त्याग करके केवल एक श्रीरामचन्द्रजीकी ही चिंतामें मग्न रहतीहै ॥ २५ ॥ सीताजी बदनमें धूरि लगाये केवल एक सारी धारण किये राक्षसियोंके बीचमें बैठी हैं और वह विकट रूपवाली राक्षसियें वारंवार उनको धमका रहीहैं ॥२६॥ जानकीजी दीनभावसे उन राक्षसियोंके मध्यकेवल एक अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीकी चिंता करती हुई केवल एक बेणी धारण किये ॥२७॥ खुली भूमिमें शयन करती हुई हिमके आगमनसे कमलिनीके समान विवर्ण होगई हैं, मरणका उन्होंने निश्चय कर लिया है, रावणमेंउनकी कुछ भी प्रवृत्ति या अभिलाषा नहीं ॥२८॥ हमने किसी प्रकारसे उन मृग छौनाकेसे

नेत्रवाली श्रीरामचन्द्रकी प्यारी जानकीजीको अपना विश्वास उत्पन्न कराय संभाषण कर उनसे सब वृत्तान्त प्रगट किया ॥२९॥ वह श्रीरामचन्द्रजीके साथ सुग्रीवजीकी मित्रता सुनकर अत्यन्त सन्तुष्ट हुई श्रीरामचन्द्रजीमें अत्यन्त अनुरागिणी और पतिव्रता गुणकी आधार हैं;उन्होंने जो अब तक रावणको नहीं मार डाला, सो इसमें एक रावणके तपका बलही हेतु है ॥ ३० ॥ तथापि सीताजीको रोककरके रावण मृतकसा होगया है, श्रीरामचन्द्रजीका उसको मारना तो केवल निमित्त मात्र होगा ॥ ३१ ॥ पडवा तिथिको पढनेसे जिस प्रकार विद्याका क्षय होजाता है वैसेही स्वभावसे कृश सीता और कृश होगई हैं ॥ ३२ ॥ जनककुमारी सीताजी शोकपरायण हो इसप्रकारसे समयको बिताय रहीहैं सो इस समय जो कुछ करना उचितहै उसकासर्वप्रकारसे आपलोगविचार कीजिये ॥३३॥

रामसुग्रीवसख्यंचश्रुत्वाप्रीतिमुपागता ॥ नियतःसमुदाचारोभक्तिर्भर्तरिचोत्तमा ॥ ३० ॥ यन्नहंतिदशग्रीवंसमहात्मादशाननः ॥ निमित्तमात्रं रामस्तुवधेतस्यभविष्यति ॥ ३१ ॥ साप्रकृत्यैवतन्वंगीतद्वियोगाच्चकर्शिता ॥ प्रतिपत्पाठशीलस्यविद्येवतनुतांगता ॥ ३२ ॥ एवमास्तेमहाभागासीताशोकपरायणा ॥ यदत्रप्रतिकर्तव्यंतत्सर्वमुपकल्प्यताम् ॥३३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा०सुंदरकांडे एकोनषष्टितमः सर्गः ॥५९॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वावालिसूनुरभाषत ॥ अश्विपुत्रौमहावेगौबलवंतौप्लवंगमौ॥१॥पितामहवरोत्सेकात्परमंदर्पमास्थितौ॥ अश्विनोर्माननार्थंहिसर्वलोकपितामहः ॥ २ ॥ सर्वावध्यत्वमतुलमनयोर्दत्तवान्पुरा ॥ वरोत्सेकेनमत्तौचप्रमथ्यमहतींचमूम् ॥ ३ ॥ सुराणाममृतंवीरौपीतवंतौमहाबलौ ॥ एतावेवहिसंक्रुद्धौसवाजिरथकुंजराम् ॥ ४ ॥ लंकांनाशयितुंशक्तौसर्वेतिष्ठतुवानराः ॥ अहमेकोपिपर्याप्तःसराक्षसगणांपुरीम् ॥ ५ ॥ तांलंकांतरसाहंतुरावणं चमहाबलम् ॥ किंपुनःसहितोवीरैर्बलवद्भिःकृतात्मभिः ॥ ६ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रामा० वा० आ० सुंदरकांडे भाषायामेकोनषष्टितमः सर्गः ॥५९॥ वालिके पुत्र अंगदजी हनुमान्‌जीके यह वचन सुनकर बोले कि, हे वानरश्रेष्ठ ! अश्विनीकुमारके यह दोनों पुत्र महाबलवान हैं ॥१॥ विशेष करके ब्रह्माजीके वरदानदेनेसे वह अत्यन्त वीर्ययुक्त हैं । प्राचीनकालमें सर्व लोकके पितामह कमलयोनि ब्रह्माजीने अश्विनीकुमारका सन्मान करनेके लिये ॥२॥ इन दोनों वानरोंको वरदान दिया कि,तुमको कोई नहीं मार सकेगा इस प्रकार वरदानपानेसे उन्मत्त हो इन महाबलवान् दोनों वीरोंने देवताओंकी बडी भारी सेनाको मथकर ॥३॥ अमृत पान किया था,इसकारण यह दोनों क्रोध करके अश्व,रथ और हस्ती समस्त लंकापुरीका नाश करनेको अवश्य समर्थहैं ॥४॥ इसकारण और सब वानरोंकी बात तो दूर रहे हम अकेले ही घोर पराक्रमसे महाबलवान् राक्षसोंके सहित समस्त लंका और दुरात्मा रावणका संहार कर सकतेहैं ॥५॥ तुम सरीखे बलवान् और वानर वीरगणोंके साथ मिलकर जो हम इस कार्यको पूरा

करें तो इसमें विचित्रता ही क्या है ? ॥६॥ तुम लोग तो सबही विजयकी इच्छा किये और शक्तियुक्त हो, तुम करके तो लंका जीतही लीजायगी परन्तु हमने तो यह सुना है कि केवल एक पवनकुमार हनुमानजीके ही बलसे लंका भस्म होगई ॥ ७ ॥ जो कुछ हो तुम सबही विख्यात बल पौरुषवाले हो इस कारणहीं सीताजीको देखा है परन्तु साथ नहीं लेते आये ऐसा श्रीरामचंद्रजीके निकट निवेदन करना तुम्हारे लिये हम युक्तियुक्त नहीं विचारते ॥८॥ हे वानर श्रेष्ठगण ! क्या तडकनेमें क्या पराक्रममें बरन किसी बातमें भी सुरासुर सहित समस्त लोकोंमें कोई पुरुष तुम्हारे समान नहीं है ॥ ९ ॥ इसलिये समस्त राक्षसोंके साथ लंकाको जीत रावणको संहार और सीताजीको ले कार्य सिद्ध कर हर्षितचित्तसे फिरश्रीरामचंद्रजीके पास चलें ॥१०॥ हनुमानजीने बहुत राक्षसोंको मारही डाला अब बचे बचायोंको मारकर एक जानकीजीको यहांपर ले आनेके सिवाय और कौनसा कार्य हमको शेष रहा है ? ॥११॥ हे वानरश्रेष्ठ गण !

कृतास्त्रैः प्लवगैः शक्तैर्भवद्भिर्विजयैषिभिः ॥ वायुसूनोर्बलेनैवदग्धालंकेतिनः श्रुतम् ॥ ७ ॥ दृष्टादेवीनचानीताइतितत्रनिवेदितुम् ॥ नयुक्तमिव पश्यामिभवद्भिःख्यातपौरुषैः ॥८॥ नहिवः प्लवनेकश्चिन्नापिकश्चित्पराक्रमे ॥ तुल्यः सामरदैत्येषुलोकेषुहरिसत्तमाः ॥९॥ जित्वालंकांसरक्षौघां हत्वातंरावणंरणे ॥ सीतामादायगच्छामः सिद्धार्थाहृष्टमानसाः ॥ १० ॥ तेष्वेवंहतशेषेषुराक्षसेषुहनूमता ॥ किमन्यदत्रकर्तव्यंगृहीत्वायाम जानकीम् ॥ ११ ॥ रामलक्ष्मणयोर्मध्येन्यस्यामजनकात्मजाम् किंव्यलीकैस्तुतान्सर्वान्वानरान्वानरर्षभान् ॥ १२ ॥ वयमेवहिगत्वाता न्हत्वाराक्षसपुंगवान् ॥ राघवंद्रष्टुमर्हामः सुग्रीवंसहलक्ष्मणम् ॥ १३ ॥ तमेवंकृतसंकल्पंजांबवान्हरिसत्तमः ॥ उवाचपरमप्रीतोवाक्यमर्थवद र्थवित् ॥ १४ ॥ नैषाबुद्धिर्महाबुद्धेयद्ब्रवीषिमहाकपे ॥ विचेतुंवयमाज्ञप्तादक्षिणांदिशमुत्तमाम् ॥ १५ ॥ नानेतुंकपिराजेननैवरामेणधीमता ॥ कथं चिन्निर्जितांसीतामस्माभिर्नाभिरोचयेत् ॥ १६ ॥

इसलिये हमलोग जानकीजीको ले श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके पास पहुँचाय देंगे। अब उन किष्किन्धाके रहने वाले समस्त वानरोंको दुःखभागी करनेकी क्या आवश्यकता है ? ॥ १२ ॥ इस कारणसे हमही लंकामें जायँ प्रधान २ राक्षसोंका संहार करके फिर राम लक्ष्मण और सुग्रीवजीके दर्शन करेंगे ॥१३॥ जब अंगदजीने ऐसा विचार किया तो कार्यके जाननेवाले वानरश्रेष्ठ जाम्बवानजी परमप्रसन्न होकर अर्थयुक्त वचन कहने लगे ॥१४॥ हे महाबुद्धे ! इस प्रकारकी बुद्धि युक्तिसिद्ध नहीं है; क्योंकि हम तो दक्षिण दिशामें जानकीके खोजनेहीको केवल भेजे गये हैं ॥१५॥ कुछ सीताजीको संग ले आनेके लिये न कपिराज सुग्रीवजीने न बुद्धिमान् श्रीरामचन्द्रजीने हमको आज्ञा दी है । सो यदि हम जानकीजीका उद्धार करकेले भी गये तो यह कार्य किसी प्रकार श्रीरामचन्द्रजीको

न रुचेगा ॥१६॥कारण कि उन राजशार्दूल श्रीरामचन्द्रजीने अपनी कुलमर्यादाके अनुसार यह प्रतिज्ञा की है कि हम स्वयंही सीताका उद्धार करेंगे ॥१७॥ सो वह किस प्रकारसे उन मुख्यवानरोंके आगे की हुई उस प्रतिज्ञाको मिथ्या करेंगे ? इस कारण सीताजीके लेजानेपर जब कि वह प्रसन्न न होंगे फिर भला वह निष्फल कार्यके करने की क्या आवश्यकता है ॥१८॥हे वानरश्रेष्ठो ! बल बीर्यका दिखलाना सब वृथा जायगा इस कारण हम सबको वहां चलना चाहिये जहां कि श्रीरामचन्द्रजी हैं; और वहां चलकर महातेजस्वी सुग्रीवजीसे इस कार्यको निवेदन करें ॥१९॥वह जैसा कुछ कहेंगे वैसाही किया जायगा । हे राजपुत्र ! आपने जो विचार किया इसको हम भी भलीभाँति मानते हैंतथापि श्रीरामचन्द्रजीने जो संकल्प किया है उसके अनुसार उनके कार्यकी सिद्धि तो देखना चाहिये ॥२०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षष्टितमः सर्गः ॥६०॥ अंगदादि वीर वानर लोगोंने और महाकपि हनुमानजीने जाम्बवानजीके इन

राघवोनृपशार्दूलःकुलंव्यपदिशन्स्वकम् ॥ प्रतिज्ञायस्वयंराजासीताविजयमग्रतः ॥१७॥ सर्वेषांकपिमुख्यानांकथंमिथ्याकरिष्यति ॥ विफलं कर्मचकृतंभवेत्तुष्टिर्नतस्यच ॥१८॥ वृथाचदर्शितंवीर्यंभवेद्वानरपुंगवाः ॥ तस्माद्गच्छामवैसर्वेयत्ररामःसलक्ष्मणः ॥ सुग्रीवश्चमहातेजाःकार्यस्या स्यनिवेदने ॥१९॥ नतावदेषामतिरक्षमानोयथाभवान्पश्यतिराजपुत्र ॥ यथातुरामस्यमतिर्निविष्टातथाभवान्पश्यतुकार्यसिद्धिम् ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडेषष्टितमःसर्गः ॥ ६० ॥ ततोजांबवतोवाक्यमगृह्णन्तवनौकसः ॥ अंगदप्र मुखावीराहनूमांश्चमहाकपिः ॥ १ ॥ प्रीतिमंतस्ततःसर्वेवायुपुत्रपुरःसराः ॥ महेन्द्राग्रात्समुत्पत्यपुप्लुवुःप्लवगर्षभाः ॥२॥ मेरुमंदरसंकाशाम त्ताइवमहागजाः ॥ छादयंतइवाकाशंमहाकायामहाबलाः ॥ ३ ॥ सभाज्यमानंभूतैस्तमात्मवंतंमहाबलम् ॥ हनूमंतंमहावेगंवहंतइवदृष्टिभिः ॥४॥ राघवेचार्थनिर्वृत्तिंकर्तुंचपरमंयशः ॥ समाधायसमृद्धार्थाःकर्मसिद्धिभिरुन्नताः ॥ ५ ॥ प्रियाख्यानोन्मुखाःसर्वेसर्वेयुद्धाभिनंदिनः ॥ सर्वेरामप्रतीकारेनिश्चितार्थामनस्विनः ॥ ६ ॥

वचनोंको ग्रहण किया ॥१॥ उसके पीछे वह वानरश्रेष्ठगण हनुमानजीको आगे करके प्रसन्न होकर महेन्द्राचलसे उछल छलांग भर २ कर चलने लगे ॥ २ ॥ मेरु मन्दरके समान वह बडे आकारवाले समस्त वानरगण महामतवाले हाथीके समान मानो आकाश मंडलको व्याप्त करते चले ॥३॥और सिद्ध इत्यादि प्राणियोंसे सम्मानित होकर आत्मज्ञान सम्पन्न महाबली अति वेगवान् हनुमानजी को मानों दृष्टिसे निहारते हुएसे चले जाते थे ॥४॥ वह सबही वानर गण श्रीरामचन्द्रजी के कार्यकी सिद्धि और हनुमानजीके अपने यशलाभ करनेको संकल्प किये हुए थे, सीताजीके देखने और लंकाके भस्म होनेसे सबकेही मनोरथ पूर्ण और मन उत्साह युक्त हो रहे थे॥५॥सबही प्रियसंवाद देनेके लिये तैयार थे सबही संग्राम करनेके लिये उत्साही और सबही हर्षित अंतःकरण युक्त हो रावणसे श्रीरा

मचन्द्रजी का वैर लेनेको संकल्प ठाने हुए थे ॥६॥ इस प्रकारसे वह मनस्वी वानर वृन्द आकाशमें उछलते कूदते गमन करते हुए नंदन वनके समान सैकड़ों हजारों वृक्षोंसे शोभित ॥ ७ ॥ मधुवन नामक सुग्रीवजीसे रखाये जाते हुए वनमें पहुँचे, इस वनमें कोई जीव नहीं जाने पाते, यह सबका मन मोहन कारी था ॥ ८ ॥ अधिक करके महात्मा वानरराज सुग्रीवजी के मामा दधिमुख नामक महावीर वानर सदा इस वनकी रक्षा करते थे ॥९॥ वानरेन्द्र सुग्रीवजीके प्यारे उस महावनमें पहुँच कर सबही वानर गण बहुत हर्षित हुए ॥ १० ॥ मधु युक्त उस अति रमणीक वनको देख सब वानर गणोंने अत्यन्त प्रसन्न हो उसके मधुर फल खाने और वहांका मधुपान करनेके लिये अंगदजीसे पूँछा ॥ ११ ॥ उसके पीछे जाम्बवान् आदि वानर श्रेष्ठोंके वचन मान उसका आदर कर कुमार अंग

प्लवमानाःखमाप्लुत्यततस्तेकाननौकसः ॥ नंदनोपममासेदुर्वनंद्रुमशतायुतम् ॥ ७ ॥ यत्तन्मधुवनंनामसुग्रीवस्याभिरक्षितम् ॥ अधृष्यंसर्वभूतानांसर्वभूतमनोहरम् ॥ ८ ॥ यद्रक्ष्यतिमहावीरःसदादधिमुखःकपिः ॥ मातुलःकपिमुख्यस्यसुग्रीवस्यमहात्मनः ॥ ९ ॥ तेतद्वनमुपागम्य बभूवुःपरमोत्कटाः ॥ वानरावानरेंद्रस्यमनःकांतंमहावनम् ॥ १० ॥ ततस्तेवानराहृष्टादृष्ट्वामधुवनंमहत् ॥ कुमारमभ्ययाचंतमधूनिमधुपिंगलाः ॥ ११ ॥ ततःकुमारस्तान्वृद्धाञ्जांबवत्प्रमुखान्कपीन् ॥ अनुमान्यददौतेषांनिसर्गंमधुभक्षणे ॥ १२ ॥ तेनिसृष्टाःकुमारेणधीमतावालिसूनुना ॥ हरयःसमपद्यंतद्रुमान्मधुकराकुलान् ॥१३॥ भक्षयंतःसुगंधीनिमूलानिचफलानिच जग्मुःप्रहर्षंतेसर्वेबभूवुश्चमदोत्कटाः ॥ १४ ॥ ततश्चानुमताःसर्वेसुसंहृष्टावनौकसः ॥ मुदिताश्चततस्तेचप्रनृत्यंतिततस्ततः ॥ १५ ॥ गायंतिकेचित्प्रहसंतिकेचिन्नृत्यंतिकेचित्प्रणमंतिकेचित् ॥ पठंतिकेचित्प्रचरंतिकेचित्प्लवंतिकेचित्प्रलपंतिकेचित् ॥ १६ ॥ परस्परंकेचिदुपाश्रयंतिपरस्परंकेचिदतिब्रुवंति ॥ द्रुमाद्द्रुमंकेचिदभिद्रवंतिक्षितौनगाग्रान्निपतंतिकेचित् ॥ १७ ॥

दजीने वहां के फल खाने और मधुपान करनेके लिये वानरोंको आज्ञा दी ॥ १२ ॥ बुद्धिमान् वालिकुमार अंगदजी की आज्ञा पाय समस्त वानर गण ऐसे वृक्षोंपर चढ गये कि; जिनपर भ्रमर गुंजार कर रहे थे ॥ १३ ॥ उनपर चढ सुगन्धियुक्त फल मूल खाय सबही अत्यन्त हर्षित हो मधु पी पीकर मतवाले होगये ॥ १४ ॥ कुमार की आज्ञासे मधुपान करके सबही वानरगण सम्मतकर मुदित मनसे नांचने लगे ॥ १५ ॥ उसके पीछे कोई नांचने लगे प्रणाम करने लगे, कोई कुछ पढनेलगे, कोई इधर उधर घूमने लगे, कोई ऊपर को उछलने लगे, व कोई २ योंही निरर्थक वचन कहने लगे ॥ १६ ॥ कोई एक दूसरेको चिपटाने लगे; और किसी २ ने परस्पर लडाई झगडा आरंभ किया कोई २ एक वृक्षसे दूसरे, पर कूदने और कोई २ वृपराक्षोंपरसे पृथ्वीपर कूदने लगे ॥ १७ ॥

और कोई २ पृथ्वीसे उछल कर अतिवेगके साथ बडे भारी २ वृक्षोंकी फुलंचियोंपर चढनेलगे कोई गानेलगे, कोई हँसीठहाकरके किसीके पास जाने लगे कोई रोदन करनेलगे, कोई किसीके रोनेकी नकल करते हुए ॥१८॥ उसकी ओरको दौडे कोई २ किसीको पीडादेनेलगे और कोई २ किसीको अतिशय व्यथित करते हुए उसके निकट जाने लगे, इस प्रकारसे समस्त वानरगण समाकुल हो गये उस सेनामें ऐसा कोई वानर नहीं था जो मत्त या अतिशय प्रमत्त न हुआ हो ॥१९॥ उसके पीछे समस्त मधुवनके फल खाये हुए और वृक्षोंकेपत्तेतक नष्ट हुए देखकर दधिमुख क्रोधित उन वानरोंको रोकने लगा परंतु मदमत्त वानरोंने शान्त न होकर ॥२०॥ उस वनके रखवालेको बुरा भला कहना आरंभ किया यह देख कर अतितेजस्वी वनरक्षक प्रधान वानरवीर दधिमुख फिर वानर

महीतलात्केचिदुदीर्णवेगामहाद्रुमाग्राण्यभिसंपतंति ॥ गायंतमन्यःप्रहसन्नुपैतिरुदंतमन्यःप्ररुदन्नुपैति ॥१८॥ तुदंतमन्यःप्रणुदन्नुपैतिसमाकुलंतत्कपिसैन्यमासीत् ॥ नचात्रकश्चिन्नबभूवमत्तोनचात्रकश्चिन्नबभूवदृप्तः ॥१९॥ ततोवनंतत्परिभक्ष्यमाणंद्रुमांश्चविध्वंसितपत्रपुष्पान् ॥ समीक्ष्यकोपाद्दधिवक्त्रनामानिवारयामासकपिःकपींस्तान् ॥२०॥ सतैःप्रवृद्धैःपरिभर्त्स्यमानोवनस्यगोप्ताहरिवृद्धवीरः ॥ चकारभूयोमतिमुग्रतेजावनस्यरक्षांप्रतिवानरेभ्यः ॥ २१ ॥ उवाचकांश्चित्परुषाण्यभीतमसक्तमन्यांश्चतलैर्जघान ॥ समेत्यकैश्चित्कलहंचकारतथैवसाम्नोपजगामकांश्चित् ॥ २२ ॥ सतैर्मदादप्रतिवार्यवेगैर्बलाच्चतेनप्रतिवार्यमाणैः ॥ प्रधर्षणेत्यक्तभयैःसमेत्यप्रकृष्यतेचाप्यनवेक्ष्यदोषम् ॥ २३ ॥ नखैस्तुदंतोदशनैर्दशंतस्तलैश्चपादैश्चसमापयंतः ॥ मदात्कपिंतेकपयःसमंतान्महावनंनिर्विषयंचचक्रुः ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा० सुंदरकांडेएकषष्टितमः सर्गः ॥ ६१ ॥

लोगोंके उपद्रवसे वनकी रक्षा करनेकी मति कर ॥२१॥ किसी २ वानरको भयरहित हो कठोर वचन कहे; किसी २ को बराबरलातोंकी मार दी किसीके साथ क्लेश किया और किसी २ को मीठे वचनोंसे समझाने बुझाने लगा ॥२२॥ परन्तु मदसे मतवाले होनेके कारण वानरोंका वेग रोकनेको वह असमर्थ होगया। तब दधिमुखनेबलपूर्वक निवारण किया तब वानर लोगोंने (इसके पीडन करनेसे कुछ राजदंडभी न होगा, क्योंकि हम संवादही ऐसा लाये हैं, यह विचार) मिलकर निःशंकचित्तसे दधिमुखको इधर उधरसे पकडकर घसीटने लगे ॥ २३ ॥ नखोंसे नोंचनांच दांतोंसे काट कूट;लातें लगाय पृथ्वीमें गिराय दधिमुखको मृतप्राय करके मधुवनको एकबारही नष्ट कर डाला ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायामेकषष्टितमः सर्गः ॥ ६१ ॥

यह देखकर वानरश्रेष्ठ हनुमानजी उनसब वानरोंसे बोले कि, हे वानरगण तुम लोग निःशंकचित्त होकर मधुपान करो ॥१॥ जो कोई, इस मधुपान करने या फल खानेमें तुम्हारा विरोधकरेंगे हम स्वयं उनको रोकेंगे, वानरश्रेष्ठ अंगदजी हनुमानूजीके यह वचन सुन ॥२॥ प्रसन्न चित्तसे उत्तर देते हुए कि, हे वानरगणो! तुमप्रसन्नतासे मधुपान करो क्योंकि हनुमानजी कार्यकी सिद्धि करके आये हैं ॥ ३ ॥ अकृतकार्य होनेपर भी जब कि इनकेवचनोंका पालन करना अवश्य कर्तव्य है तब इस प्रकारके न्याययुक्त वचनोंको पालन करनेमें कुछ अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं॥४॥बडे२वानरगण कुमार अंगदजीके मुखसे यह वचन सुन अति प्रफुल्लित होकर वारंवार धन्य२कहकर उनकी पूजा करते हुए और महावीरजीकी बडाई करने लगे॥५॥ उसके पीछे नदी वेगसे जिसप्रकार वृक्षोंमें प्रवेश करती है

तानुवाचहरिश्रेष्ठोहनूमान्वानरर्षभः ॥ अव्यग्रमनसोयूयंमधुसेवतवानराः ॥ १ ॥ अहमावर्जयिष्यामियुष्माकंपरिपंथिनः ॥ श्रुत्वाहनुमतो वाक्यंहरीणांप्रवरोंगदः ॥२॥ प्रत्युवाचप्रसन्नात्मापिबंतुहरयोमधु ॥ अवश्यंकृतकार्यस्यवाक्यंहनुमतोमया ॥३॥ अकार्यमपिकर्तव्यंकिमंगपुनरीदृशम् ॥ अंगदस्यमुखाच्छ्रुत्वावचनंवानरर्षभाः ॥४॥ साधुसाध्वितिसंहृष्टावानराःप्रत्यपूजयन् ॥ पूजयित्वांगदंसर्वेवानरावानरर्षभम् ॥५॥ जग्मुर्मधुवनंयत्रनदीवेगइवद्रुमम् ॥ तेंप्रविष्टामधुवनंपालानाक्रम्यशक्तितः ॥६॥ अतिसर्गाच्चपटवोदृष्ट्वाश्रुत्वाचमैथिलीम् ॥ पपुःसर्वेमधु तदारसवत्फलमाददुः ॥७॥ उत्पत्यचततःसर्वेवनपालान्समागतान् ॥ तेताडयंतःशतशःसक्तामधुवनेतदा ॥८॥ मधूनिद्रोणमात्राणिबाहुभिः परिगृह्यते ॥ पिबंतिकपयःकेचित्संघशस्तत्रहृष्टवत् ॥ ९ ॥ घ्नंतिस्मसहिताःसर्वेभक्षयंतितथापरे ॥ केचित्पीत्वापविध्यंतिमधूनिमधुपिंगलाः ॥१०॥ मधूच्छिष्टेनकेचिच्चजघ्नुरन्योन्यमुत्कटाः॥अपरेवृक्षमूलेषुशाखांगृह्यव्यवस्थिताः ॥११॥ अत्यर्थंचमदग्लानाःपर्णान्यास्तीर्यशेरते ॥ उन्मत्तवेगःप्लवगामधुमत्ताश्चहृष्टवत् ॥ १२ ॥

वैसेही उन वानरोंने मधुवनमें प्रवेश करकेबलात्कारसे बनके रखवालेको पकड॥६॥जानकीजीको देखने और उनकावृत्तान्त श्रवण करनेसे और अंगदजीकी आज्ञा पानेसे वानरलोग भयरहित हो मधु पीपीकर सुरस फल भोजन करनेलगे॥७॥इसप्रकारसे सबही मधु पीकर मत्तहो जो रक्षक निवारण करने आये थे उन सबको भलीभाँति मार लगाय धमकाने डराने लगे ॥८॥ वे वानर हाथोंकी अंजलियोंमें भर२कर मधुपान करने लगे । कोई२हर्षित चित्तसे झुण्डके झुण्ड मिलकर॥९॥ ढेर२मधु नष्ट करने लगे कोई भक्षण करने लगे, कोई पीने लगे, कोई२ इधर उधर फेंकने लगे ॥१०॥ कोई२मधु पीनेसे अत्यन्त उन्मत्त होकर मधुके छत्तोंसे एक दूसरेको मारने लगे और अनेक वृक्षोंके डुग्गोंका पकडे हुए झूलते थे ॥११॥ कोई२मधुपान करनेसे अति शय ग्लानिके मारे पत्तोंको बिछाय कर उसपर शयन

करने लगे, कोई२मधुपान करके मत्त और हर्षित होकर ॥१२॥ उन्मत्तके समान परस्पर लिपट झपट करने लगे; कोई २ खसकते कोई २ इधर उधर मत वालापन करते कोई हर्षित हो पक्षियोंके समान शब्द करते ॥१३॥ कोई२मधुपान करनेसे मत्त हो पृथ्वीपर शयन कर रहे हैं. कोई२ढिठाईसे किसी दूसरेको देखकर हँसी करनेलगे और कोई कुछ औरही रोदनादि करतेथे॥१४॥कोई२रोने लगे,कोई२ऐसा कार्य करने लगे जो दूसरेकी समझमें न आवे. कोई२वाक्य कायथार्थ अर्थ परित्याग करके अपरार्थ ग्रहणकर लेते वहांपर जो कि रखवालेऔर दधिमुखके नौकर चाकरथे॥ १५॥उनको इन मतवाले भयंकराकार वीरवानर लोगोंने चरण पकड२कर फेंक दिया,किसीको उलटा कर ऊपरको उछाल दिया इसकारण वह रखवाले और नौकर चाकर भीत होकर दशों दिशाओंको भागगये

क्षिपंत्यपितथान्योन्यंस्खलंतिचतथापरे ॥ केचित्क्ष्वेडान्प्रकुर्वंतिकेचित्कूजंतिहृष्टवत् ॥१३॥ हरयोमधुनामत्ताःकेचित्सुप्तामहीतले ॥ धृष्टाः केचिद्धसंत्यन्येकेचित्कुर्वंतिचेतरत् ॥१४॥ कृत्वाकेचिद्वदंत्यन्येकेचिद्बुध्यंतिचेतरत् ॥ येप्यत्रमधुपालाःस्युःप्रेष्यादधिमुखस्यतु ॥ १५ ॥ तेपितैर्वानरैर्भीमैःप्रतिषिद्धादिशोगताः॥ जानुभिश्चप्रघृष्टाश्चदेवमार्गंचदर्शिताः ॥ १६ ॥ अब्रुवन्परमोद्विग्नागत्वादधिमुखंवचः ॥ हनूमतादत्तवरैर्हतंमधुवनंबलात् ॥ १७ ॥ वयंचजानुभिर्घृष्टादेवमार्गंचदर्शिताः ॥ १८ ॥ तदादधिमुखःक्रुद्धोवनपस्तत्रवानरः ॥ हतंमधुवनंदृष्ट्वासांत्वयामासतान्हरीन् ॥ १९ ॥ एतागच्छतगच्छामोवानरानतिदर्पितान् ॥ बलेनावारयिष्यामिप्रभुंजानान्मधूत्तमम् ॥२०॥ श्रुत्वादधिमुखस्येदंवचनंवानरर्षभाः ॥ पुनर्वीरामधुवनंतेनैवसहिताययुः ॥२१॥ मध्येचैषांदधिमुखःसुप्रगृह्यमहातरुम् ॥ समभ्यधावन्वेगेनसर्वेतेचप्लवंगमाः ॥ २२ ॥ तेशिलाःपादपांश्चैवपाषाणानपिवानराः ॥ गृहीत्वाभ्यागमन्क्रुद्धायत्रतेकपिकुंजराः ॥ २३ ॥

॥१६॥उन सबने अतिशय उत्कंठित मनसे दधिमुखके पास गमन करके कहा कि हनुमान्जीकी सम्मतिसे वानरलोगोंने बलपूर्वकमधुवनका नाश करदिया॥१७॥ और हम लोगोंके पाँव पकड२कर उठाय२आकाशमें फेंक दिया ॥१८॥ दधिमुख वानरोंके वचन सुन और मधुवनको नष्ट हुआ देख क्रोध कर उन रखवालोंको समझाने बुझाने लगा ॥१९॥ कि तुम लोग आगे २ चलो और हम भी तुम्हारेपीछेहीपीछे आयकर बलसहित उन वानरोंको रोकेंगे;फिर देखेंगे कि वह किस प्रकार मधुपान करते और फलोंको खाते हैं ॥ २० ॥ वानरश्रेष्ठ गण दधिमुखके यह वचन सुनकर फिर उसके सहित मधुवनकी ओर चले ॥२१॥ इन वानरों मेंसे दधिमुख एक बडे भारी वृक्षको उठाय कर अतिवेगसे अपनेसाथियोंके सहित मधुवनवाले वानरों पर धाया ॥२२॥ उसके पीछे शिला,पाषाण और वृक्षोंको

ग्रहण करके रोषमें भर सबही वहां जाय पहुँचे जहां हनुमान्‌जी इत्यादि वानरगण टिके हुए थे ॥२३॥वहां गमन करके वह लोग क्रोधके मारे दाँतोंसे होठोंको चबाय२वारंवार तिरस्कार करके बल सहित उन फल खाते मधुपीते वानरोंको रोकने लगे ॥ २४ ॥ उसके पीछे हनुमान् इत्यादि कपिकुंजरगण दधिमुखको क्रोधित देख कर अतिवेगसे उसके सन्मुखदौडे ॥२५॥ और महाबलवान् महाबाहु दधिमुख वृक्ष हाथमें लिये अतिवेगसे जैसेही आया कि वैसेही अंगदजीने क्रोध कर उसके दोनों हाथ पकड लिये ॥२६॥ वह मधुपीनेसे ज्ञानरहित हो रहे थे; इस कारण दधिमुखको श्रेष्ठ विचार कर अपना बडा जानकर भी अंगदजीने उसके ऊपर कृपा की, वरन् उसको पकड कर बलपूर्वक पृथ्वीपर पटक दिया ॥ २७ ॥ पटकतेही दधिमुखके हाथ, जांघ, मुख आदि सब अंगटूट गये। महावीर दधिमुख लोहूलुहान हो एक मुहूर्ततक विह्वल और मूर्च्छित हो गया ॥२८॥उसके पीछे वानरवीर दधिमुख कुछ एक सावधान हो उन वानरोंसे किसी प्रकार

बलान्निवारयंतश्चआसेदुर्हरयोहरीन् ॥ संदष्टोष्ठपुटाःक्रुद्धाभर्त्सयंतोमुहुर्मुहुः ॥२४॥ अथदृष्ट्वादधिमुखंक्रुद्धंवानरपुंगवाः ॥ अभ्यधावंतवेगेन हनुमत्प्रमुखास्तदा ॥ २५ ॥ सवृक्षंतमहाबाहुमापतंतंमहाबलम् ॥ वेगवंतंनिजग्राहबाहुभ्यांकुपितोंगदः ॥२६॥ मदांधोनकृपांचक्रेआर्यकोयं ममेतिसः ॥ अथैनंनिष्पिपेषाशुवेगेनवसुधातले ॥२७॥ सभग्नबाहूरुमुखोविह्वलःशोणितोक्षितः ॥ प्रमुमोहमहावीरोमुहूर्तंकपिकुंजरः ॥२८॥ सकथंचिद्विमुक्तस्तैर्वानरैर्वानरर्षभः ॥ उवाचैकांतमागत्यस्वान्भृत्यान्समुपागतान् ॥२९॥ एतागच्छतगच्छामोभर्तानोयत्रवानरः ॥ सुग्रीवो विपुलग्रीवःसहरामेणतिष्ठति ॥ ३० ॥ सर्वंचैवांगदेदोषंश्रावयिष्यामिपार्थिवे ॥ अमर्षीवचनंश्रुत्वाघातयिष्यतिवानरान् ॥ ३१ ॥ इष्टंमधुव नंह्येतत्सुग्रीवस्यमहात्मनः ॥ पितृपैतामहंदिव्यंदेवैरपिदुरासदम् ॥३२॥ सवानरानिमान्सर्वान्मधुलुब्धान्गतायुषः ॥ घातयिष्यतिदंडेनसु ग्रीवःससुहृज्जनान् ॥३३॥ बध्द्याह्येतेदुरात्मानोनृपाज्ञापरिपंथिनः ॥ अमर्षप्रभवोरोषःसफलोमेभविष्यति ॥ ३४ ॥

अपनी जान बचाकर चुपकेसे एकान्तमें आय निकट आये हुए अपने नौकरों चाकरोंसे बोले ॥ २९ ॥ कि भाई जहांपर हमारे राजा विपुलग्रीव सुग्रीवजी श्रीरामचन्द्रजीके सहित विराजमान हैं आओ हम सबजने उसी स्थानपर चलें ॥३०॥ फिर उन राजाके निकट पहुँचकर अंगदजीके समस्त दोष हम उनसे निवेदन करेंगे वह क्रोधपरायण राजा यह वृत्तान्त श्रवण करतेही समस्त वानरोंका नाश कर देंगे ॥३१॥क्योंकि मनोहर मधुवचन महात्मा सुग्रीवजीको अत्यन्त प्यारा है अधिक करके इस वनको उनके बाप दादे, परदादेतक भोग कर गये हैं देवता लोग भी तो इस वनकी सीमा पर नहीं आसकते, फिर दूसरेकी तो बातही क्या है ? ॥ ३२ ॥ राजा सुग्रीवजी इन मधुके लालची मरणके निकट पहुँचे वानर लोगोंको दंड देकर बन्धु बान्धवोंके सहित मार डालेंगे ॥३३॥ विशेष करके

राजाके न माननेवाले यह दुरात्मा वानर अवश्यही मार डालनेके योग्य हैं, जब यह मारडाले जायँगे, तब हमारा यह सबेरेसे उत्पन्न हुआ क्रोध सार्थक हो जायगा॥ ३४॥ महाबलवान् दधिमुख मधुवनके रखवालोंसे ऐसा कह कर तत्क्षण उन नौकरचाकरोंके सहित आकाशमें कूद झटपट सुग्रीवजीके पास चला ॥ ३५ ॥ और सूर्यके पुत्र बुद्धिमान् सुग्रीवजी जहांपर विराजमान हो रहे थे एक पलक मारतेही वहां पर पहुँचे॥ ३६॥ श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी, व सुग्रीवजीके दर्शन कर एकसार भूमिको निहार दधिमुख आकाशसे पृथ्वीमें उतरा॥ ३७॥ मधुवनके रखवालोंका जमादार महावीर दधिमुख इस प्रकारसे उन सब वानरोंके साथ नीचे उतर कर॥ ३८॥ शिरसे हाथ जोडे दीनवदन किये उसी समय सुग्रीवजीके दोनों चरणोंपर गिरा॥ ३९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां द्विषष्टितमः सर्गः ॥६२॥

एवमुक्त्वादधिमुखोवनपालान्महाबलः॥ जगामसहसोत्पत्यवनपालैःसमन्वितः ॥३५॥ निमेषांतरमात्रेणसहिप्राप्तोवनालयः ॥ सहस्रांशुसुतोधीमान्सुग्रीवोयत्रवानरः ॥३६॥ रामंचलक्ष्मणंचैवदृष्ट्वासुग्रीवमेवच॥ समप्रतिष्ठांजगतीमाकाशान्निपपातह ॥३७॥ सनिपत्यमहावीरःसर्वैस्तैःपरिवारितः ॥ हरिर्दधिमुखःपालैःपालानांपरमेश्वरः ॥३८॥ सदीनवदनोभूत्वाकृत्वाशिरसिचांजलिम् ॥ सुग्रीवस्याशुतौमूर्ध्नाचरणौप्रत्यपीडयत् ॥ ३९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे द्विषष्टितमः सर्गः ॥६२॥ ततोमूर्ध्नानिपतितंवानरंवानरर्षभः ॥ दृष्ट्वैवोद्विग्नहृदयोवाक्यमेतदुवाचह ॥ १ ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठकस्मात्त्वंपादयोःपतितोमम ॥ अभयंतेप्रदास्यामिसत्यमेवाभिधीयताम् ॥२॥ किंसंभ्रमाद्धितंकृत्स्नंब्रूहियद्वक्तुमर्हसि॥ कच्चिन्मधुवनेस्वस्तिश्रोतुमिच्छामिवानर ॥३॥ ससमाश्वासितस्तेनसुग्रीवेणमहात्मना॥ उत्थायसमहाप्राज्ञोवाक्यंदधिमुखोब्रवीत् ॥४॥ नैवर्क्षजरसाराजन्नत्वयानचवालिना ॥ वनंनिसृष्टपूर्वंतेनाशितंतत्तुवानरैः ॥ ५ ॥

दधिमुखको शिर झुकाये चरणोंपर पडे हुये देखकर वानरराज सुग्रीवजी उत्कंठितचित्त होकर कहने लगे ॥ १ ॥ उठो ! उठो ! आप किस कारणसे हमारे चरणोंमें गिरे ? सत्य २ कहिये हम आपको अभय देते हैं ॥२॥ आप किसके भयसे भीत होकर यहां पर आये हैं ? जिसका अनुष्ठान करनेसे सब प्रकारसे मंगल होनेकी सम्भावना है; आप उसकाही वर्णन कीजिये। हे वानरप्रधान ! मधुवनपर तो किसी प्रकारकी विपद नहीं आई ? सो सब वृत्तान्त सुननेकी हमारी इच्छा होती है ॥३॥ महात्मा सुग्रीवजीने जब इस प्रकारसे धीरज बँधाया तब महाप्राज्ञ दधिमुख उनके चरणोंपरसे उठ कर बोला ॥ ४ ॥ हे राजन् ! आपने या वालीने या ऋक्षराजने पहले जिस वनको कभी किसीको इच्छानुसार भोग करने नहीं दिया हनुमान् इत्यादि वानरोंने उसही मधुवनको एक बारही नष्ट कर डाला ॥५॥

हमने इन समस्त वनचारियोंके साथ उनको निवारण किया, परन्तु उन वानरोंने हमारा निरादर करके इच्छानुसार फल खाये और मधुपान किये ॥ ६ ॥ हे देव ! जब वह उस मधुवनका नाश करने लगे तब इन समस्त वनपालोंने इनको रोका था परन्तु उन्होंने कुछ कहा न मानकर अपनी इच्छानुसार सब कुछ खाया पिया ॥७॥ उन लोगोंने हम सबका निरादर कर मनमाने फल खाये, मधु पिये; बचे बचाये फल और मधुको फेंका, फिर निवारण करनेपर भ्रुकुटी टेढी कर दिखाई ॥ ८ ॥ जब इस प्रकारसे अपमान हुआ तो यह सब अत्यन्त क्रोधित हुए और उन वानरश्रेष्ठोंने भी क्रोध करके इन्हें रोकामारा, पीटा व यथोचित अपमान किया ॥ ९ ॥ तदनन्तर महाक्रोध कर झकझोर उन वानरवीरोंने इन दीनोंको उपवनसे निकाल कर पीछेसे लाल नेत्र दिखाय धमकाया ॥ १० ॥ और किसीको चनपटे लगाये, किसी २ को जांघोंसे मारा व अनेकोंको उठाय आकाशमें फेंक दिया ॥ ११ ॥ आप सबके स्वामीके रहते हुए भी

न्यवारय महसर्वान्सहैभिर्वनचारिभिः ॥ अचिंतयित्वामांहृष्टाभक्षयंतिपिबंतिच ॥ ६ ॥ एभिःप्रधर्षणायांचवारितंवनपालकैः ॥ मामप्यचिंतयन्देवभक्षयंतिवनौकसः ॥ ७ ॥ शिष्टमत्रापविध्यंतिभक्षयंतितथापरे ॥ निवार्यमाणास्तेसर्वेभ्रुकुटिंदर्शयंतिहि ॥ ८ ॥ इमेहिसंरब्धतरास्तदातैःसंप्रधर्षिताः ॥ निवार्यंतेवनात्तस्मात्क्रुद्धैर्वानरपुंगवैः ॥ ९ ॥ ततस्तैर्बहुभिर्वीरैर्वानरैर्वानरर्षभाः ॥ संरक्तनयनैःक्रोधाद्धरयःसंप्रधर्षिताः ॥ १० ॥ पाणिभिर्निहताःकेचित्केचिज्जानुभिराहताः ॥ प्रकृष्टाश्चतदाकामंदेवमार्गंचदर्शिताः ॥११॥ एवमेतेहताःशूरास्त्वयितिष्ठतिभर्तरि ॥ कृत्स्नंमधुवनंचैवप्रकामंतैश्चभक्ष्यते ॥ १२ ॥ एवंविज्ञाप्यमानंतंसुग्रीवंवानरर्षभम् ॥ अपृच्छत्तंमहाप्राज्ञोलक्ष्मणःपरवीरहा ॥ १३ ॥ किमयंवानरोराजन्वनपःप्रत्युपस्थितः ॥ किंचार्थमभिनिर्दिश्यदुःखितोवाक्यमब्रवीत् ॥ १४ ॥ एवमुक्तस्तुसुग्रीवोलक्ष्मणेनमहात्मना ॥ लक्ष्मणंप्रत्युवाचेदंवाक्यंवाक्यविशारदः ॥ १५ ॥ आर्यलक्ष्मणसंप्राहवीरोदधिमुखःकपिः ॥ अंगदप्रमुखैर्वीरैर्भक्षितंमधुवानरैः ॥ १६ ॥ नैषामकृतकार्याणामीदृशःस्याद्व्यतिक्रमः ॥ वनंयदभिपन्नास्तेसाधितंकर्मतद्ध्रुवम् ॥ १७ ॥

यह सब वीर इसप्रकारसे मारे पीटे गये हैं और वह समस्त वानर भी मधुवनमें मनमाना खाय पी रहे हैं॥ १२ ॥ दधिमुख वानर सुग्रीवजीके निकट इस प्रकारसे समस्त वृत्तान्त वर्णन कर रहे थे कि इतनेमें परवीरघाती प्राज्ञ लक्ष्मणजी सुग्रीवजीसे बूझते हुए ॥ १३ ॥ हे राजन् ! यह वनपाल वानर किस कारणसे तुम्हारे निकट आया है और किस प्रयोजनको दुःखित भावसे यह निवेदन कर रहा है॥१४॥ जब महात्मा लक्ष्मणजीने इस प्रकारसे वचन कह कर सुग्रीवजीसे बूझा तो वाक्यविशारद सुग्रीवजी उनको उत्तर देते हुए ॥१५॥ हे आर्य !वानरवीर दधिमुखने हमसे यह कहाकि अंगदादि महाबलवान् वानरलोगोंने मधुवनके फल खाय २ वहांका मधु पी डाला॥१६॥सो ऐसा करनेसे जान पडता है कि वह लोग कार्य कर आये, कार्य सिद्ध न होनेपर कदापि वह ऐसा व्यतिक्रम न करते जब

कि, वह लोग वनके फल मूल खाय मधु पी रहे हैं तब निश्चयही उन्होंने कार्य सिद्ध कर लिया ॥१७॥ और इसीलिये इस बलशाली दधिमुखका निरादर करके उन लोगोंने रक्षकोंके ऊपर जांघोंका प्रहार किया. जब कि, लोग उन्हें रोकते थे ॥ १८ ॥ यह बलवान् दधिमुख नाम वानर मधुवनके व हमारे स्वामी हैं, हमने स्वयं इनको वहां स्थापित किया है. और किसीने नहीं बरन् हनुमानूजीने ही देवी जानकीजीको देखा है॥१९॥इस बातमें कोईभी संदेह नहीं है । कारण कि हनुमानूजीके सिवाय और कोईभी इस कार्यमें कारण नहीं हो सकता, क्योंकि कार्यकी सिद्धि और बुद्धि हनुमानूजीमेंही है॥२०॥व्यवसाय, वीर्य और पंडिताई यह सबही गुण एक वानरश्रेष्ठ हनुमानूजीमेंही हैं. उसपर जिस समाजके प्रेरक जाम्बवान् व अंगदजी हैं ॥ २१ ॥ और अधिष्ठाता हनुमानूजी वहां पर किसी कार्यका विपरीत आचरण नहीं हो सकता, इसी कारण अंगदादि वीरोंने हर्षित होकर मधुवनका विध्वंस किया ॥२२॥ हम जानते हैं कि, दक्षिण दिशाको

वारयंतोभृशंप्राप्ताःपालाजानुभिराहताः ॥ तथानगणितश्चायंकपिर्दधिमुखोबली ॥१८॥ पतिर्ममवनस्यायमस्माभिःस्थापितःस्वयम्॥ दृष्टा देवीनसंदेहोनचान्येनहनूमता॥१९॥ नह्यन्यःसाधनेहेतुःकर्मणोस्यहनूमतः ॥ कार्यसिद्धिर्हनुमतिमतिश्चहरिपुंगवे ॥ २० ॥ व्यवसायश्चवीर्यं चश्रुतंचापिप्रतिष्ठितम् ॥ जांबवान्यत्रनेतास्यादंगदश्चमहाबलः ॥ २१ ॥ हनूमांश्चाप्यधिष्ठातानतत्रगतिरन्यथा ॥ अङ्गदप्रमुखैर्वीरैर्हतंमधु वनंकिल ॥ २२ ॥ विचित्यदक्षिणामाशामागतैर्हरिपुंगवैः ॥ आगतैश्चप्रहृष्टंतद्यथामधुवनंहितैः ॥२३॥ धर्षितंवचनंकृत्स्नमुपयुक्तंतुवानरैः ॥ पातितावनपालास्तेतदाजानुभिराहताः ॥ २४ ॥ एतदर्थमयंप्राप्तोवक्तुंमधुरवागिहः ॥ नाम्नादधिमुखोनामहरिःप्रख्यातविक्रमः ॥ २५ ॥ दृष्टासीतामहाबाहोसौमित्रेपश्यतत्त्वतः ॥ अभिगम्ययथासर्वेपिबंतिमधुवानराः ॥ २६ ॥ नचाप्यदृष्ट्वावैदेहींविश्रुताःपुरुषर्षभ ॥ वनंदत्तवरं दिव्यंधर्षयेयुर्वनौकसः ॥ २७ ॥ ततःप्रहृष्टोधर्मात्मालक्ष्मणःसहराघवः ॥ श्रुत्वाकर्णसुखांवाणींसुग्रीववदनाच्च्युताम् ॥ २८ ॥

जो वानरश्रेष्ठ गये थे उन्होंने ही उस दिशाको खोज जानकीजीका खोज लगाय प्रसन्नतामें उस वनके फलादि खाय उसको विध्वंस किया ॥२३॥ उन वानरोंने समस्त वनका विनाश किया, फल मधु खा पीकर वनके रखवालोंको लातोंके आघातोंसे मारडाला ॥ २४ ॥ दधिमुखनामक प्रख्यात पराक्रम मधुरभाषी यह वानर यही वृत्तान्त कहनेके अर्थ हमारे पास आया है॥२५॥हे महाबाहु सुमित्रा-नंदन! जब कि उन लोगोंने आतेही मधुपान करना आरंभ किया है तब निश्च यही यह वानर सीताजीका पता लगा आये, सो वह अतिशय यशके भागी हैं ॥ ॥ २६ ॥ इस लिये बिना सीताजीके देखे वह लोग देवतासे प्राप्त हमारा, यह दिव्य मधुवन कभी नहीं उजाडते ॥ २७ ॥ परम्यशस्वी धर्मात्मा राम; लक्ष्मणजी सुग्रीवजीके मुखसे निकले हुए यह शुभकारी वचन सुन बहुत प्रसन्न

और ॥ २८ ॥ हर्षित हुए और वारंवार प्रसन्नचित्त हुए, दधिमुखके वचन सुन हर्षित हो सुग्रीवजी ॥२९॥ दधिमुख बनपालसे फिर बोले कि, हम सन्तुष्ट हैं जो इतना बडा कार्य करके उन्होंने मधुवनको उजाडकर उसके फल खाये व मधु पिये ॥३०॥ इससे उन कार्य किये हुए वानरलोगोंका किया हुआ बनका डजाडना. मारना पीटना भक्षण पान और अपमान भी क्षमा करना पडेगा । इस लिये आप शीघ्र वहां जायकर मधुवनकी रक्षा करो और हनुमानादि समस्तही वानर लोगोंको अति शीघ्र हमारे पास भेज दो ॥३१॥ हम श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीके साथ मिलकर उनसे यह वृत्तान्त स्वयंही बूझेंगे कि उन लोगोंने जानकीजीके देखनेका यत्न किया, इन सब बातोंके सुननेकी हमें बहुत इच्छा हुई है ॥३२॥ श्रीरामचंद्रजी व लक्ष्मणजी यह वार्त्ता सुन कर अतिशय पुलकित हुए

प्राहृष्यतभृशंरामोलक्ष्मणश्चमहायशाः ॥ श्रुत्वादधिमुखस्यैवंसुग्रीवस्तुप्रहृष्यच ॥२९॥ वनपालंपुनर्वाक्यंसुग्रीवःप्रत्यभाषत ॥ प्रीतोस्मिसोहंवद्युक्तंवनंतैःकृतकर्मभिः ॥३०॥ धर्षितंमर्षणीयंचचेष्टितंकृतकर्मणाम् ॥ गच्छशीघ्रंमधुवनंसंरक्षस्वत्वमेवहि ॥ शीघ्रंप्रेषयसर्वांस्तान्हनूमत्प्रमुखान्कपीन् ॥३१॥ इच्छामिशीघ्रंहनुमत्प्रधानाञ्छाखामृगांस्तान्मृगराजदर्पान् ॥ प्रष्टुंकृतार्थान्सहराघवाभ्यांश्रोतुंचसीताधिगमेप्रयत्नम् ॥३२॥ प्रीतिस्फीताक्षौसंप्रहृष्टौकुमारौदृष्ट्वासिद्धार्थौवानराणांचराजा ॥ अंगैःप्रहृष्टैःकार्यसिद्धिंविदित्वाबाह्वोरासन्नामतिमात्रंननन्द ॥ ३३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा० सुंदरकांडे त्रिषष्टितमः सर्गः ॥६३॥ ग्रीवेणैसुवमुक्तस्तुहृष्टोदधिमुखःकपिः ॥ राघवंलक्ष्मणंचैवसुग्रीवंचाभ्यवादयत् ॥१॥ सप्रणम्यचसुग्रीवंराघवौचमहाबलौ ॥ वानरैःसहितःशूरैर्दिवमेवोत्पपातह ॥२॥ सतथैवागतःपूर्वंतथैवत्वरितंगतः ॥ निपत्यगगनाद्भूमौतद्वनंप्रविवेशह ॥ ३ ॥ सप्रविष्टोमधुवनंददर्शहरियूथपान् ॥ विमदानुद्धतान्सर्वान्मेहमानान्मधूदकम् ॥ ४ ॥

और प्रीतिके मारे उनके दोनों नेत्र फडकने लगे और इसी समय वानरराज सुग्रीवजीकेभी सर्वाङ्गमें रोमाञ्च हो आया, इन शुभ लक्षणोंको देख कार्यकी सिद्धि विचार सुग्रीवजी अति पुलकित हुए ❋ ॥ ३३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां त्रिषष्टितमः ॥ ६३ ॥ सुग्रीवजीके वचन सुन दधिमुखने हर्षितहो श्रीरामचंद्रजी और सुग्रीवजीको प्रणाम किया ॥ १ ॥ इस प्रकार सुग्रीवजी तथा रामलक्ष्मणजीको प्रणाम कर उन समस्त शूरतासम्पन्न वानरोंके साथ आकाशमार्गको उछला ॥ २ ॥ वह जिस मार्गसे होकर आया था, उसी मार्गमें शीघ्रतासे गमन करके आकाश मार्गसे पृथ्वी पर कूदकर मधुवनमें प्रवेश करता हुआ ॥ ३ ॥ वहां प्रवेश करके उसने देखा कि वह उद्धत समस्त वानर यूथपति मधुका परिणाम भूत मलमूत्र करते हुए हर्षित

❋ दोहा ॥ सुनत आगमन कपिनको, रघुपति करुणा ऐन ॥ मन प्रसन्न तनु पुलक हो, भरि आये जल नैन ॥

चित्तसे समय बिताय रहेथे ॥ ४ ॥ वीर दधिमुख उन वानरोंके निकट जाय शिरसे हाथ जोडकर हर्षित चित्तसे यह मधुर वचन अंगदजीसे बोला ॥५॥ हे सौम्य ! इन वनपाल वानरलोगोंने न जानकर रोषमें भर आप लोगोंको रोका है,सो इस रोकनेसे आप क्रोध न कीजिये ॥६॥ आप बहुत दूरसे आयकर इस समय थक गये होंगे; विशेष करके आप हमारे युवराज हैं ओर इस वनके स्वामी हैं, इसलिये आनंद सहित अपना मधु पियो व फल खाओ ॥ ७ ॥ हे महाबलवान् ! हमारा,यह अज्ञानसे किया हुआ रोष आपको क्षमा करना पडेगा । आपके पिता वाली जिस प्रकार पहले वानरोंके राजा थे ॥८॥ इस समय वैसेही सुग्रीवजी व आप वानरोंके स्वामी हैं । हे वानरश्रेष्ठ ! और कोई वानरोंका राजा नहीं है,हमने आपके चचा सुग्रीवजीके निकट गमन करके ॥ ९ ॥ आप

सतानुपागमद्वीरोबद्धाकरपुटांजलिम् ॥ उवाचवचनंश्लक्ष्णमिदंहृष्टवदङ्गदम् ॥ ५ ॥ सौम्यरोषोनकर्तव्योयदेभिःपरिवारणम् ॥ अज्ञानाद्रक्षिभिःक्रोधाद्भवंतःप्रतिषेधिताः ॥ ६ ॥ श्रांतोदूरादनुप्राप्तोभक्षयस्वस्वकंमधु ॥ युवराजस्त्वमीशश्चवनस्यास्यमहाबल ॥ ७ ॥ मौर्ख्यात्पूर्वंकृतोरोषस्तद्भवान्क्षंतुमर्हति ॥ यथैवहिपितातेभूत्पूर्वंहरिगणेश्वरः ॥ ८॥ तथात्वमपिसुग्रीवोनान्यस्तुहरिसत्तम ॥ आख्यातंहिमयागत्वापितृव्यस्यतवानघ ॥ ९ ॥ इहोपयानंसर्वेषामेतेषांवनचारिणाम् ॥ भवदागमनंश्रुत्वासहैभिर्वनचारिभिः ॥ १० ॥ प्रहृष्टोनतुरुष्टोसौवनंश्रुत्वाप्रधर्षितम् ॥ प्रहृष्टोमांपितृव्यस्तेसुग्रीवोवानरेश्वरः ॥ ११ ॥ शीघ्रंप्रेषयसर्वांस्तानितिहोवाचपार्थिवः ॥ श्रुत्वादधिमुखस्यैतद्वचनंश्लक्ष्णमंगदः ॥ १२ ॥ अब्रवीत्तान्हरिश्रेष्ठोवाक्यंवाक्यविशारदः ॥ शंकेश्रुतोयंवृत्तांतोरामेणहरियूथपाः ॥१३॥ अयंचहर्षादाख्यातितेनजानामिहेतुना ॥ तत्क्षमंनेहनःस्थातुंकृतेकार्येपरंतपाः ॥ १४ ॥

सबके आनेका संवाद निवेदन किया कि मधुवनमें सब अंगदादि आगये सो इन सब वानरोंके साथ आपका आना श्रवण कर ॥ १० ॥ मधुवनके उजाड होनेके सुनकर कुछ कोप न करते हुए; और बहुत प्रसन्न हो हर्षित चित्तसे तुम्हारे चचा बानरराज सुग्रीवजीने हमसे कहा ॥ ११ ॥ कि, बडी शीघ्रतासे उन सब वानरोंको यहांपर भेज दो । अंगदजी दधिमुखके यह मधुर वचन सुनकर ॥१२॥ सब वीर वानरोंको पुकार कर यह वचन बोले कारण कि वचन बोलनेमें बडे चतुरथे अंगदजी बोले हे वानरयूथपगण ! हमको शंका होती है कि; यह वृत्तान्त श्रीरामचन्द्रजीने सुन लिया है ॥ १३ ॥ जब कि; दधिमुख बडे हर्षसे यह वचन कह रहा है; तब हमने जानाकि; यह वृत्तान्त श्रीरामचन्द्रजीने सुन लिया है इसकारण अब हमारा यहां पर अधिक देर रहना उचित नहीं है॥ १४ ॥

देखो ! आप सबने जितना चाहा उतना मधु भी पान कर लिया है सो अब तो कुछ बचाभी नहीं है, इस कारण इस समय सुग्रीवजीके निकट जाना ही कर्त्तव्य है अब यहां रहना ठीक नहीं ॥ १५ ॥ आप सब वानर श्रेष्ठ मिल कर जैसा हमसे कहेंगे वैसाही करेंगे ।कारण कि, कार्य करनेके विषयमें हम आप लोगोंके आधीन हैं ॥ १६ ॥ यद्यपि हम युवराज हैं तथापि हममें इतनी सामर्थ्य नहीं है कि आपलोगोंको आज्ञादेसकें कारण कि; आप सब कार्य किये हुए हैं सो आपलोगोंको बलसे पीडा पहुँचाना उचित नहीं है ॥१७॥ वनवासी वानर गण युवराज अंगदजीके यह वचन सुन कर हर्षितचित्तसे उत्तर देते हुए ॥१८॥ हेराजन् ! प्रभु होकर कौन पुरुष ऐसे दीन वचन कह सकता है। बरन् प्रभुतो ऐश्व र्यके मदसे मत्त होकर यह कहा करता है कि, जो कुछ हैं सो हम हैं ॥१९॥

पीत्वामधुयथाकामंविक्रांतावनचारिणः ॥ किंशेषंगमनंतत्रसुग्रीवोयत्रवानरः ॥१५॥ सर्वेंयथामांवक्ष्यंतिसमेत्यहरिपुंगवाः ॥ तथास्मिकर्ता कर्तव्येभवद्भिःपरवानहम् ॥१६॥ नाज्ञापयितुमीशोहंयुवराजोस्मियद्यपि ॥ अयुक्तंकृतकर्माणोयूयंधर्षयितुंबलात् ॥१७॥ ब्रुवतश्चांगदस्यैवं श्रुत्वावचनमुत्तमम् ॥ प्रहृष्टमनसोवाक्यमिदमूचुर्वनौकसः ॥ १८ ॥ एवंवक्ष्यतिकोराजन्प्रभुःसन्वानरर्षभः ॥ ऐश्वर्यमदमत्तोहिसर्वोहमिति मन्यते ॥ १९ ॥ तवचेदंसुसदृशंवाक्यंनान्यस्यकस्यचित् ॥ सन्नतिर्हितवाख्यातिभविष्यच्छुभयोग्यताम् ॥ २० ॥ सर्वेवयमपिप्राप्तास्तत्र गंतुंकृतक्षणाः ॥ सयत्रहरिवीराणांसुग्रीवःपतिरव्ययः ॥ २१ ॥ त्वयाह्यनुक्तैर्हरिभिर्नैवशक्यंपदात्पदम् ॥ क्वचिद्गंतुंहरिश्रेष्ठब्रूमःसत्यमिदंतुते ॥ २२ ॥ एवंतुवदतांतेषामंगदःप्रत्यभाषत ॥ साधुगच्छामइत्युक्त्वाखमुत्पेतुर्महाबलाः ॥ २३ ॥ उत्पतन्तमनूत्पेतुःसर्वेतेहरियूथपाः ॥ कृत्वाकाशंनिराकाशंयंत्रोत्क्षिप्ताइवोपलाः ॥ २४ ॥

आपकेही मुखसे निकलकर ऐसे वचन शोभा पाते हैं और कोई ऐसे वचन कहनेके योग्य नहीं आप जिस प्रकारके अतिनम्र औ विनयी हैं सो जिससे आगेको आप अवश्यही अपने भाग्य की उन्नति देखेंगे इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥२०॥ इस समय वानरवीरोंके राजा महात्मा सुग्रीवजी जहां विराजमान हैं वहां जानेके लिये हम सबही अत्यन्त उत्कंठित हो रहे हैं ॥२१॥परन्तु आपके निकट हम सत्य हीसत्य कहते हैं कि, बिना आपकी आज्ञाके वानर लोग कहींको एकपग चलनेको भी सामर्थ्य नहीं रखते ॥ २२ ॥ जब उन वानरोंने ऐसा कहा तो अंगदजी उनको उत्तर देते हुए कि, बहुत अच्छा चलो हम सबही लोग यहांसे चलें यह कह महाबलवान् सब वानर आकाश को उछले ॥२३॥ अंगदादिवानरों को आकाशमें कूदते देख और दूसरे भी सब वानर कलसे फेंके हुए पत्थर के समान

आकाशमंडलको ढक करउनके पीछे२चले ॥ २४॥ इस प्रकार सब वानर अंगद व हनुमानजीको आगे कर अतिवेगसे सहसा आकाशमार्गमें चले ॥ २५ ॥ पवनसे चलायमान बादलोंके झुण्डके समान अतिघोर गर्जन करते २ वह सब वानर किष्कन्धाके निकट पहुँचे अंगदजीको आते देखकर वानरोंके राजा सुग्री वजी ॥ २६ ॥ शोकसे संतप्तचित्त कमललोचन श्रीरामचद्रजीसे बोले कि, आपका मंगल हो आप सावधान हूजिये निःसंदेह देवी जानकीजीका पता लग गया ॥२७॥हे शुभदर्शन ! कारण कि,हमारा नियत किया समयबीत गया है,सो बिना देवी जामकीजीको देखे यह लोग कभी यहांपर नहीं आय सकते थे और अंगदजीके हर्षसहित शब्द करनेसे भली भाँतिज्ञातहोता है॥२८॥ कि जो कार्य सिद्ध म होता तोवानरश्रेष्ठ युवराज महाबाहु अंगद कभी हमारे निकट नहीं आय सकते थे॥२९॥जो वानर लोगबिनाकार्य सिद्ध किये ऐसे कार्यको करते तो अंगदजीका मन मलीन,भ्रान्त और उदास होता, इसमें कुछभी संदेह

अंगदंपुरतःकृत्वाहनूमंतंचवानरम् ॥ तेऽम्बरंसहसोत्पत्यवेगवंतःप्लवंगमाः ॥२५॥ विनदंतोमहानादंघनावातेरितायथा ॥ अंगदेसमनुप्राप्तेसु ग्रीवोवानरेश्वरः ॥ २६ ॥ उवाचशोकसंतप्तंरामंकमललोचनम् ॥ समाश्वसिहिभद्रंतेदृष्टादेवीनसंशयः ॥ २७ ॥ नागंतुमिहशक्यंतैरतीतस मयैरिह ॥ अंगदस्यप्रहर्षाच्चजानामिशुभदर्शन ॥२८॥ नमत्सकाशमागच्छेत्कृत्येहिविनिपातिते ॥ युवराजोमहाबाहुःप्लवतामंगदोवरः ॥२९॥ यद्यप्यकृतकृत्यानामीदृशःस्यादुपक्रमः ॥ भवेत्तुदीनवदनोभ्रांतोविप्लुतमानसः ॥ ३० ॥ पितृपैतामहंचैतत्पूर्वकैरभिरक्षितम् ॥ नमेमधुवनंह न्याद्दृष्ट्वाजनकात्मजाम् ॥ ३१ ॥ कौशल्यासुप्रजारामसमाश्वसिहिसुव्रत ॥ दृष्टादेवीनसंदेहोनचान्येनहनूमता ॥ ३२ ॥ नह्यस्यकर्मणोहेतुः साधनतद्विधोभवेत् ॥ हनूमतीहसिद्धिश्चमतिश्चमतिसत्तम ॥३३॥ व्यवसायश्चशौर्यंचश्रुतंचापिप्रतिष्ठितम् ॥ जांबवान्यत्रनेतास्यादंगदश्च हरीश्वरः ॥ ३४ ॥ हनूमांश्चाप्यधिष्ठातानतत्रगतिरन्यथा ॥ माभूश्चिंतासमायुक्तःसंप्रत्यमितविक्रम ॥ ३५ ॥

नहीं ॥ ३० ॥ और अधिक करके जानकीजीको बिना देखे हमारे पुरुषाओंकरके रक्षित पिता .पितामहादिकोंका प्राप्त यह मधुवन वह लोग कभी न उजाडते ॥३१॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! कौशल्याजी आपको उत्पन्न करके सत्पुत्रवती हुई हैं आप सावधान हूजिये,इसमें कोई संदेह नहीं हनुमानजी जानकीजीको देख आये ॥३२॥हनुमानजीनेही जानकीजीको देखा है और किसीने नहीं,हनुमानजीके समान दूसरा कोई ऐसा कार्य साधन करनेका हेतु नहीं हो सकता कारणकि,हनु मानजीमें ही बुद्धि व इस विषयकी सिद्धि है॥३३॥व्यवसाय शूरता और पंडिताई यह समस्त गुण हनुमानजीमें ही विराजमान हैं; उसपर भी जहाँ जाम्बवान् अंगद कार्यकी प्रेरणा करनेवाले॥३४॥और स्वयं हनुमानजी अधिष्ठाता उस कार्यके अन्यथा होनेकी किसी प्रकारकी संभावना नहीं है । हे अमितविक्रम ! इस

समय कुछ चिन्ता न कीजिये॥ ३५॥ देखिये वानर लोग गर्वित और उद्धत होकर यहां पर आये हैं, जो कार्य सिद्धि करके न आये होते तो यह लोग कभी इतना आडम्बर न करते ॥ ३६ ॥ मधुके पान करने और मधुवनके उजाड डालनेसे हमने जान लिया कि, यह लोग कार्यसिद्धि कर आये उसके पीछे राजासुग्रीवजीको आकाशमें आते हुए वानरगणोंका किलकिला शब्द सुनाई दिया ॥ ३७ ॥ वह वानरगण हनुमानूजीके कार्यसिद्धि कर आनेसे गर्वितहोकर चिल्लाहट कर रहे थे उससे ऐसा जान पडा कि, वह मानों कार्यकी सिद्धिका समाचार दे रहे हैं ॥ ३८॥उन वानरोंका यह शब्द श्रवण करके वानरश्रेष्ठ सुग्रीवजीने हर्षितचित्त होकर अपनी पूँछ उठाकर घुमाई ॥ ३९ ॥ इस ओर वह सब वानर अंगद हनुमानजीको आगेकरके श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनकी अभिलाषासे आगमन करने लगे ॥ ४० ॥ उसके पश्चात् अंगदादि वीर वानरगण अत्यन्त हर्षित और गर्वित होकर सुग्रीव और श्रीरामचन्द्रजीके समीप आकाशसे उतरते

यदाहिहर्षितोदग्राःसंगताःकाननौकसः ॥ नैषामकृतकार्याणामीदृशःस्यादुपक्रमः ॥३६॥ वनभंगेनजानामिमधूनांभक्षणेनच ॥ ततःकिलकिलाशब्दंशुश्रावासन्नमंबरे ॥ ३७ ॥ हनूमत्कर्मदृप्तानांनदतांकाननौकसाम् ॥ किष्किंधामुपयातानांसिद्धिंकथयतामिव ३८ ॥ ततःश्रुत्वानिनादंतंकपीनांकपिसत्तमः ॥ आयतांचितलांगूलःसोभवद्धृष्टमानसः ॥३९॥ आजग्मुस्तेपिहरयोरामदर्शनकांक्षिणः ॥ अंगदंपुरतःकृत्वाहनूमंतंचवानरम् ॥ ४० ॥ तेऽङ्गदप्रमुखावीराःप्रहृष्टाश्चमदान्विताः ॥ निपेतुर्हरिराजस्यसमीपेराघवस्यच ॥ ४१ ॥ हनूमांश्चमहाबाहुःप्रणम्यशिरसाततः ॥ नियतामक्षतांदेवींराघवान्यवेदयत् ॥ ४२ ॥ दृष्टादेवीतिहनुमद्वदनादमृतोपमम् ॥ आकर्ण्यवचनंरामोहर्षमापसलक्ष्मणः ॥४३॥ निश्चितार्थंततस्तस्मिन्सुग्रीवंपवनात्मजे ॥ लक्ष्मणः प्रीतिमान्प्रीतोबहुमानादवैक्षत ॥ ४४ ॥ प्रीत्याचपरमोपेतोराघवःपरवीरहा॥ बहुमानेनमहताहनूमंतमवैक्षत ॥ ४५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० सुंदरकांडे चतुःषष्टितमः सर्गः ॥६४॥
ततः प्रस्रवणंशैलं तेगत्वाचित्रकाननम् ॥ प्रणम्यशिरसारामंलक्ष्मणंचमहाबलम् ॥ १ ॥

हुए ॥ ४१ ॥ उन वानरोंमें महाबाहु हनुमानजीने सबसे प्रथम शिर झुकाय प्रणाम कर श्रीरामचन्द्रजीसे निवेदन किया कि जानकीजी अपने स्वभावकी रक्षा करती कुशल सहित हैं ॥ ४२ ॥ हनुमानूजीके मुखसे "जानकीजीको हमने देखा" यह मधुर अमृतोपम वचन सुन कर श्रीरामलक्ष्मण दोनोंही राजकुमार परमहर्षित हुए ॥ ४३ ॥ तब पवनकुमार हनुमानूजीको निश्चितार्थ जान परमप्रसन्न होकरअधिक सम्मानके साथ सुग्रीवजीको लक्ष्मणजी देखने लगे ॥ ४४ ॥ परवीरघाती श्रीरामचन्द्रकी भी परमप्रीति व अतिआदर मानसे कपिश्रेष्ठ हनुमानूजीको देखने लगे ॥ ४५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां चतुःषष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥ उसकेपीछे हनुमानादि वानरगण सबही विचित्र काननयुक्त प्रस्रवण पर्वतपर

आय महाबली श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीको प्रणाम ॥१॥ व सुग्रीवजीको प्रणाम कर युवराज अंगदजीको आगेकर सीताजीका वृत्तांत कहने लगे ॥२॥ यथा क्रमसे रावणके अंतःपुरमें सीताजीका रुद्ध होना, राक्षसियोंका उनको डराना धमकाना और श्रीरामचंद्रजीके प्रति सीताजीका अचल अनुराग और रावणने सीताजीके मारनेके लिये जो दो मासकी अवधि नियत की है ॥३॥ यह सब वृत्तांत उन वानरोंने श्रीरामचन्द्रजी के निकट निवेदन किया, वैदेहीजीकी कुशल सुनकर श्रीरामचंद्रजीने उत्तर दिया ॥४॥ हे वानरगण! देवी जानकीजी कहाँ हैं और वह देवी हमारे प्रति किस प्रकारका व्यवहार करती हैं? सो तुम समस्त विस्तारसहित हमसे वर्णन करो ॥ ५ ॥ वानर लोगोंने श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर सीताजीके वृत्तांत जनानेमें पडित हनुमानजीकोइसविषयका ठीक २

युवराजंपुरस्कृत्यसुग्रीवमभिवाद्यच ॥ प्रवृत्तिमथसीतायाःप्रवक्तुमुपचक्रमे ॥ २ ॥ रावणांतःपुरेरोधंराक्षसीभिश्चतर्जनम् ॥ रामेसमनुरागंच यथाचनियमःकृतः ॥३॥ एतदाख्यायतेसर्वंहरयोरामसन्निधौ ॥ वैदेहीमक्षतांश्रुत्वारामस्तूत्तरमब्रवीत् ॥ ४ ॥ क्वसीतावर्ततेदेवीकथंचमयिव र्तते ॥ एतन्मेसर्वमाख्यातवैदेहींप्रतिवानराः ॥५॥ रामस्यगदितंश्रुत्वाहरयोरामसन्निधौ॥ चोदयंतिहनूमंतंसीतावृत्तांतकोविदम् ॥६॥ श्रुत्वा तुवचनंतेषांहनूमान्मारुतात्मजः ॥ प्रणम्यशिरसादेव्यैसीतायैतांदिशंप्रति ॥ ७ ॥ उवाचवाक्यंवाक्यज्ञःसीतायादर्शनंयथा ॥ तंमणिंकांचनंदि व्यंदीप्यमानंस्वतेजसा ॥८॥ दत्त्वारामायहनुमांस्ततःप्रांजलिरब्रवीत्॥ समुद्रंलंघयित्वाहंशतयोजनमायतम् ॥९॥ अगच्छंनजाकींसीतांमार्ग माणोदिदृक्षया ॥ तत्रलंकेतिनगरीरावणस्यदुरात्मनः ॥ १० ॥ दक्षिणस्यसमुद्रस्यतीरेवसतिदक्षिणे ॥ तत्रसीतामयादृष्टारावणांतःपुरेसती ॥११॥ त्वयिसंन्यस्यजीवंतीरामारामममनोरथम्॥ दृष्टामेराक्षसीमध्येतर्ज्यमानामुहुर्मुहुः ॥ १२ ॥

समाचार कहनेकेलिये कहा ॥६॥ वचन बोलनेमें चतुर पवनकुमार हनुमानूजी शिरझुकाय सीतादेवी और उनकी अधिष्ठित दक्षिण दिशा दोनोंको प्रणाम करके ॥७॥ जिस प्रकार जानकीजीका दर्शन किया था उसको वर्णन करने लगे । उसके पीछे स्वयंही अपने तेजकी प्रभासे दीप्तिमान कांचनमंडित दिव्यमणि॥८॥ श्रीरामचंद्रजीके हाथमें समर्पण कर हाथ जोड कर कहने लगे । कि, हम शत-योजन विस्तारवाला समुद्र नाँघकर ॥ ९ ॥ जानकीजीको खोजते २ गमन करने लगे, वहांपर दुष्टात्मा रावणकी लंका नाम नगरी ॥ १० ॥ दक्षिणसमुद्रके किनारे पर बसती है वहाँ जायकर हमने उस रावणके अन्तःपुरमें देवी जान कीजीको देखा ॥ ११ ॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! वह जानकी आपमें ही चित्त लगाये प्राण धारे हुए हैं, राक्षसियें चारों ओरसे घेरकर उनको वारम्वार डरा

धमका रही हैं ॥ १२ ॥ हे श्रीराम ! प्रमदा बनके बीच कुरूपिणी राक्षसियेंही उनकी रक्षा करती हैं । उन जानकीजीने सदासे सुख भोग किया है, परन्तु इस समय वह आपके विरहमें दारुण दुःख पाय रही हैं ॥ १३ ॥ रावणके अन्तःपुरमें रोकी जाकर निशाचरियोंसे रक्षित हो एक वेणी धारे व्याकुल हो सदाही आपका ध्यान किया करती हैं ॥ १४ ॥ खुली पृथ्वीमें शयन करनेसे विवर्णांगी हो शरदऋतुके आगमनसे कमलिनीके समान जानकीजी होगई हैं, रावणकी ओर उनकी कुछ भी प्रवृत्ति या मन नहीं लगा है, वह आपमेंही चित्त लगाये मरणमें बनाय निश्चय किये हुए हैं ॥ १५ ॥ हे पापरहित महाराज श्रीरामचन्द्रजी ! इस प्रकार किसी भांति जानकीजीको हमने खोज पाया, तत्पश्चात् हमने शनैः इक्ष्वाकुवंशियोंका वर्णन किय ॥ १६ ॥ हे नरशार्दूल ! तब किसी प्रकारसे हमने उनको विश्वास दिलाया, उसके पीछे देवी जानकीजीसे वार्त्तालाप होनेपर यहांका समाचार उनसे कहा गया ॥१७॥ इसी समय हमारे

राक्षसीभिर्विरूपाभीरक्षिताप्रमदावने ॥ दुःखमापद्यतेदेवीत्वयावीरसुखोचिता ॥ १३ ॥ रावणांतःपुरेरूद्धाराक्षसीभिःसुरक्षिता ॥ एकवेणीधरादीनात्वयिचिंतापरायणा ॥ १४ ॥ अधःशय्याविवर्णांगीपद्मिनीवहिमागमे ॥ रावणाद्विनिवृत्तार्थामर्तव्यकृतनिश्चया ॥ १५ ॥ देवीकथंचित्काकुत्स्थत्वन्मनामार्गितामया ॥ इक्ष्वाकुवंशविख्यातिंशनैःकीर्तयतानघ ॥ १६ ॥ सामयानरशार्दूलशनैर्विश्वासिताततदा ॥ ततःसंभाषितादेवीसर्वमर्थंचदर्शिता ॥ १७ ॥ रामसुग्रीवसख्यंचश्रुत्वाहर्षमुपागता ॥ नियतःसमुदाचारोभक्तिश्चास्याःसदात्वयि ॥ १८ ॥ एवंमयामहाभागदृष्टाजनकनंदिनी ॥ उग्रेणतपसायुक्तात्वद्भक्त्यापुरुषर्षभ ॥ १९ ॥ अभिज्ञानंचमेदत्तंयथावृत्तंतवांतिके ॥ चित्रकूटेमहाप्राज्ञवायसंप्रतिराघव ॥ २० ॥ विज्ञाप्यःपुनरप्येषरामोवायुसुतत्वया ॥ अखिलेनयथादृष्टमितिमामाहजानकी ॥ २१ ॥ अयंचास्मैप्रदातव्योयत्नात्सुपरिरक्षितः ॥ ब्रुवतावचनान्येवसुग्रीवस्योपशृण्वतः ॥ २२ ॥

मुखसे आपकी व सुग्रीवजीकी परस्पर मित्रता होना सुन जानकीजी अत्यन्त प्रसन्न हुई आपमें सदा उनकी एकान्तिक भक्ति है, व उनका पतिव्रत भी अचल है ॥१८॥ हे महाभाग ! इस प्रकारकी अवस्थामें हमने जानकीजीको देखा है; वह जिस प्रकार कठोर तप करनेवाली हैं तैसेही आपके प्रति अतिशय भक्तिमती हैं ॥१९॥ उन्होंने हमको चिह्नरूप यह मणि देकर कहा कि, तुम चित्रकूटमें हुई उस काककी घटना ॥२०॥ कह कर व हे पवनकुमार! यहां पर भी जो कुछ तुमने देखा है वह समस्तही श्रीरामचन्द्रजीसे कहना व जिस प्रकार हमको देखा है वह भी उन प्राणनाथसे कहना, ऐसा श्रीजानकीजीने हमसे कहा ॥ २१ ॥ और यह भी कहाकि, इस मणिकी रक्षा हम बडे यत्नसे करती रहीं इस प्रकारसे वचन सुग्रीवजीके आगे हनुमानजीने श्रीरामचन्द्रजीसे कहे ॥२२॥

जानकीजीने यह भी कहा है कि श्रीरामचन्द्रजीको यह कांचनमणि देकर उनसे कहना कि हमने इसकीरक्षा बडे यत्नसे की और आपने हमारे माथेपर जो मैनशिलका तिलक कर दिया था उसकी भी याद करनेको आपसे कहा है ॥ २३ ॥ उन्होंने यह भी कहा है कि, यह जो मणि हनुमान्‌के हाथ भेजतीहैं तो जब हम बहुतही कष्ट पाती थीं तब इस मणिकाही आपका स्वरूप जानकर अतुल आनंद पाती थीं. हे अनघ ! उस जानकीजीने फिर भी आपसे यह कहाहै ॥२४॥ कि,हे दशरथ कुमार ! हम राक्षसोंके वशमें पडी हैं हम केवल एक मासतक और जियेंगी,परन्तु एक मासके बीत जाने पर हम किसी प्रकार न जीसकेंगी॥२५॥ मृगीके समान प्रफुल्ल नेत्रवाली रावणके अःतपुरमें रुकी हुई उन धर्मचारिणी दुर्बल गात्रवाली जानकीजीने हमसे यह कहाहै ॥२६॥ हे राघव ! जो हामारा जाना

एषचूडामणिःश्रीमान्मयातेयत्नरक्षितः ॥ मनःशिलायास्तिलकंतत्स्मरस्वेतिचाब्रवीत् ॥ २३ ॥ एषनिर्यातितःश्रीमान्मयातेवारिसंभवः ॥ एनंदृष्ट्वाप्रमोदिष्येव्यसनेत्वामिवानघ ॥ २४ ॥ जीवितंधारयिष्यामिमासंदशरथात्मज ॥ ऊर्ध्वंमासान्नजीवेयंरक्षसांवशमागता ॥ २५ ॥ इतिमामब्रवीत्सीताकृशांगीधर्मचारिणी॥ रावणांतःपुरेरुद्धामृगीवोत्फुल्ललोचना ॥ २६ ॥ एतदेवमयाख्यातंसर्वंराघवयद्यथा ॥ सर्वथासागरजलेसंतारःप्रविधीयताम् ॥ २७ ॥ तौजाताश्वासौराजपुत्रौविदित्वातच्चाभिज्ञानंघवायप्रदाय ॥ देव्याचाख्यातंसर्वमेवानुपूर्व्याद्वाचासंपूर्णवायुपुत्रःशशंसः ॥ २८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येच० सा० सुंदरकांडे पंचषष्टितमः सर्गः ॥६५॥ एवमुक्तोहनुमताऽऽमोदशरथात्मजः ॥ तंमणिंहृदयेकृत्वारुरोदसहलक्ष्मणः ॥ १ ॥ तुदृष्ट्वामणिश्रेष्ठंराघवः शोककर्शितः ॥ नेत्राभ्यामश्रुपूर्णाभ्यांसुग्रीवमिदमब्रवीत् ॥ २ ॥ यथैवधेनुःस्रवतिस्नेहाद्वत्सस्यवत्सला ॥ तथाममापिहृदयंमणिश्रेष्ठस्यदर्शनात् ॥ ३ ॥

हुआ था वह समस्तही हमने आपसे कहा,इस समय सब प्रकारसे आपको समुद्र उतरनेका उपाय करना चाहिये * ॥ २७ ॥ राजकुमार श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी दोनोंको प्रसन्न हुआ जान पवनकुमार हनुमान्‌जी इसप्रकार चिह्न चूडामणि श्रीरामचन्द्रजीके हाथमें देकर आदिसे अंततक जानकीजी का सब समाचार वर्णन करते हुए ॥२८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आ०सुन्दरकांडे भाषायां पंचषष्टितमः सर्गः॥६५॥ जब हनुमान्‌जीने इस प्रकारसे कहा तब दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजी उस मणिको हृदयसे लगाय कर लक्ष्मणजीके सहित रोदन करने लगे ॥१॥ उस अत्यन्त श्रेष्ठ मणिको देखकर श्रीरामचन्द्रजी शोकसे व्याकुल हो नेत्रोंमें आँसू भर सुग्रीवजीसे बोले ॥ २ ॥ बछडोंको देख कर स्नेहके मारे पुत्रवत्सला गऊके थनोंमेंसे जैसे दूध चूने लगता है, वैसेही इस श्रेष्ठ मणिको देख कर हमारा मन

* चौ० ॥ सीताकी अति बिपति विशाला ॥ बिनहिं कहे भल दीन दयाला ॥ दोहा ॥ निमिष २ करुणायतन, जाहि कल्प सम बीति ॥ वेगि चलिय प्रभु आनिये, भुजबल खल दल जीति ॥ १ ॥

इस समय पिघल गया है हमारे॥३॥ श्वशुर राजा जनकजीने विवाहके समय सीताजीकी माता केहाथसे लेकर दशरथजीके हाथमें देकर सीताजीको यह मणि रत्न दान किया था, और इस समय जिससे कि यह मणि अति शोभायमान हो वैसेही सीताजीने इसको अपने चूडेपर बांध लिया था ॥ ४ ॥ बुद्धिमान् इन्द्रजी ने यज्ञमें प्रसन्न होकर समुद्रसे निकली हुई देव पूजित यह मणि जनकजीको दी थी ॥५॥ हे सौम्य इस समय इस मणिको देख कर हमारे पिता का और प्रभु जनकजी का वह रूप हमको याद आता है ॥ ६ ॥ यह मणि हमारी उन प्रियतमाजीके मस्तकही पर शोभायमान होता था, आज इस मणिको देख कर हमको ऐसा मालूम पडताहै कि, मानो हमें प्यारी ही मिल गई ॥ ७ ॥ हे सौम्य ! उन विदेह कुमारी सीताजीने हमारे लिये क्या कहा है ? वह वृत्तान्त तुम बार २ वर्णन करो उन जानकीजीने मूर्च्छित पुरुषके ऊपर जल छिडकनेसे जीवदान करनेके समान वचन रूप वारिसे हमको जिलाया है

मणिरत्नमिदंदत्तंवैदेह्याःश्वशुरेणमे ॥ वधूकालेयथाबद्धमधिकंमूर्ध्निशोभते ॥४॥ अयंहिजलसंभूतोमणिःप्रवरपूजितः ॥ यज्ञेपरमतुष्टेनदत्तः शक्रेणधीमता ॥५॥ इमंदृष्ट्वामणिश्रेष्ठंतथातस्यदर्शनम् ॥ अद्यास्म्यवगतःसौम्यवैदेहस्यतथाविभोः ॥६॥ अयंहिशोभतेतस्याःप्रियायामूर्ध्नि मेमणिः ॥ अद्यास्यदर्शनेनाहंप्राप्तांतामिवचिंतये ॥ ७ ॥ किमाहसीतावैदेहीब्रूहिसौम्यपुनःपुनः ॥ परासुमिवतोयेनसिंचंतीवाक्यवारिणा ॥ ८ ॥ इतस्तुकिंदुःखतरंयमिमंवारिसंभवम् ॥ मणिंपश्यमिसौमित्रेवैदेहीमागतांविना ॥ ९ ॥ चिरंजीवतिवैदेहीयदिमासंधरिष्यति ॥ क्षणंवीरनजीवेयंविनातामसितेक्षणाम् ॥१०॥ नयममपितंदेशंयत्रदृष्टाममप्रिया ॥ नतिष्ठेयंक्षणमपिप्रवृत्तिमुपलभ्यच ॥११॥ कथंसाममसु श्रोणीभीरुभीरुःसतीतदा ॥ भयावहानांघोराणांमध्येतिष्ठतिरक्षसाम् ॥ १२ ॥ शारदस्तिमिरोन्मुक्तोनूनंचंद्रइवांबुदैः ॥ आवृतोवदनंतस्या नविराजतिसांप्रतम् ॥ १३ ॥

॥ ८ ॥ हे लक्ष्मण ! जब कि, विना जानकीजीके केवल हमकोही समुद्रसे उत्पन्न हुई मणि देखनी पडी, तब इससे अधिक और क्या दुःख हो सकता है ? ॥ ९ ॥ हे वीर ! जानकीजी यदि और एक मासतक जियेगी तो समझेंगे कि, उन्होंने बहुत समय तक प्राण धारण किया । हे वीर ! परन्तु हम अब उन इन्दीवर नयना जानकीजीके विरहमें क्षण भर भी प्राण धारण करनेको समर्थ नहीं हैं ॥१०॥ हे हनुमान् ! हमारी प्राण प्रिया सीताजीको जिस स्थानमें तुमने देखा है, हमको भी उसी स्थानमें लेचलो जब कि, समाचार मिल गया तब तो क्षणभर भी टिकनेको अब हमें सामर्थ्य नहीं है ॥ ११ ॥ हमारी वह सती श्रेष्ठ नितम्बोंवाली जानकीजी अत्यन्त भीत होकर भयंकर राक्षसियोंमें सदा किस प्रकारसे रहती हैं ?॥१२॥अंधकारसे छूटा हुआ शरद् ऋतुका चन्द्रमा मेघसे

ढककर जिस प्रकार प्रकाशित नहीं होता; इसी प्रकार निश्चयही जानकीजी का वदन मंडल शोभायमान न होता होगा ॥१३॥ हे हनुमन् ! जानकीजीने क्या कहा है ? तुम हमारे निकट उसको यथार्थ वर्णन करो. पीडित पुरुष जिस प्रकार औषधिको प्राप्त करके जीवनको पाता है, हम भी वैसेही उनके कथन को सुनकर जीवन लाभ करेंगे ॥१४॥ हे हनुमन् ! सौम्य मूर्त्ति मधुर वचन बोलनेवाली हमारी उन सर्वाङ्गसुन्दरी श्रेष्ठ नितम्बवाली भामिनी जानकीजीने हमारे विरहमें दुःखित होकर हमसे क्या कहा है? सो तुम वर्णन करो; और यह भी कहो कि, सहनेके अयोग्य दुख सहकर श्रीरामचन्द्रजी किस प्रकारसे प्राण धारण कर रही हैं॥१५॥इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा०आदि० सुन्दरकांडे भाषायां षट्षष्टितमः सर्गः॥६६॥रघुवंशावतंस श्रीजानकीजीके ऐसे वचन सुन कर हनुमानजी उनसे सीताजी का समस्त वृत्तान्त वर्णन करने लगे ॥१॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! पहले चित्र कूट पर्वतपर जो वृत्तान्त हो गया था, देवी जानकीजी ने उसको ही चिह्न स्वरूप

किमाहसीताहनुमंस्तत्त्वतःकथयस्वमे ॥ एतेनखलुजीविष्येभेषजेनातुरोयथा ॥ १४ ॥ मधुरामधुरालापाकिमाहममभामिनी ॥ मद्विहीनाव रारोहाहनुमन्कथयस्वमे ॥ दुःखाद्दुःखतरंप्राप्यकथंजीवतिजानकी ॥१५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०सुंदरकांडे षट्षष्टितमःसर्गः ॥६६॥ एवमुक्तस्तुहनुमान्राघवेणमहात्मना ॥ सीतायाभाषितंसर्वंन्यवेदयतराघवे ॥ १ ॥ इदमुक्तवतीदेवीजानकीपुरुष र्षभ ॥ पूर्ववृत्तमभिज्ञानंचित्रकूटेयथातथम् ॥२॥ सुखसुप्तात्वयासार्धंजानकीपूर्वमुत्थिता ॥ वायसःसहसोत्पत्यविददारस्तनांतरम् ॥ ३ ॥ पर्यायेणचसुप्तस्त्वंदेव्यंकेभरताग्रज ॥ पुनश्चकिलपक्षीसदेव्याजनयतिव्यथाम् ॥ ४ ॥ ततःपुनरुपागम्यविददारभृशंकिल ॥ ततस्त्वंबोधितस्त स्याःशोणितेनसमुक्षितः ॥ ५ ॥ वायसेनचतेनैवंसततंबाध्यमानया ॥ बोधितःकिलदेव्यात्वंसुखसुप्तःपरंतप ॥ ६ ॥ तांदृष्ट्वामहाबाहोदारि तांचस्तनांतरे ॥ आशीविषइवक्रुद्धस्ततोवाक्यंत्वमूचिवान् ॥ ७ ॥

आदिसे अंततक वर्णन किया है॥२॥हे राम ! आपकेसहित एक दिन जानकीजी सुखसे सोयकर आपसे पहलेही उठ बैठी थीं की, इतनेमेंही अचानक एक काकने उडकर उनके स्तनोंके बीचमें घाव कर दिया ॥३॥ हे भरतजीके बडे भ्राता श्रीरामचन्द्रजी ! आप फिर जानकीजीके गोदमें शिर धर सोय गये थे परन्तु उस काकने फिर उनकी छातीमें चोंच मारी व पंजे चलाये कि, जिससे उनकी छाती विदीर्ण होकर अत्यन्त पीडा देने लगी ॥४॥ जब उसने फिर घाव किया तब जानकीजीके शरीरमेंसे रुधिर निकलनेके कारण आपके सब अंग भीग गये और आपभी जाग पडे ॥ ५ ॥ हे परवीरघातिन् ! आप सुखसे सोये हुए थे, उस समय काकके बार २ सताने सेही देवी जानकीजीने आपकी नींद छुटाई ॥ ६ ॥ हे महाबाहो ! उन श्रेष्ठ वर्णवाली जानकीजीके स्तनोंमें घाव देखक

आप विषधर सर्पके समान श्वास लेकर क्रोधसे बोले ॥७॥ हे भीरु ! पंजोंसे तुम्हारे दोनों स्तनोंके बीचमें किसने घाव कर दिया है ? क्रोधमें भरेहुए पंचमुहे सर्पके साथ कौन खेल करताहै ? ॥८॥ कि, इतनेमें ही आपने इधर उधर देखकरहठात् रुधिर लगेहुए तीखे तीखे पंजोंसे युक्त एक काकको देखा, वह श्रीजानकीजीकी ओर मुख किये खडा था ॥९॥ वह काक और कोई नहीं था केवल इन्द्रका पुत्र जयन्त था वह पवनके समान अतिवेगसे एक पलक मारते पातालके मध्यको भागा ॥१०॥ हे बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ ! हे महाबाहो ! उस समय आपके नेत्र मारे क्रोधके घूमने लगे, उस काकके प्रति आपकी क्रोधवासना उपस्थित हुई ॥११॥ आपने आसनके बिछे हुए कुशोंमेंसे एक कुश लेकर उसको ब्रह्मास्त्रसे अभिमंत्रित किया यह कुश प्रलयकी अग्निके समान उस काकके सन्मुख चला ॥ १२ ॥

नखाग्रैःकेनतेभिरुरादितंवै स्तनांतरम् ॥ कःक्रीडतिसरोषेणपंचवक्त्रेणभोगिना ॥८॥ निरीक्षमाणःसहसावायसंसमुदैक्षथाः ॥ नखैःसरुधिरैस्तीक्ष्णै स्तामेवाभिमुखंस्थितम् ॥ ९ ॥ सुतःकिलसशक्रस्यवायसःपततांवरः ॥ धरांतरगतःशीघ्रंपवनस्यगतौसमः ॥१०॥ ततस्तस्मिन्महाबाहोको संवर्तितेक्षणे ॥ वायसेत्वंव्याधाःक्रूरांमतिंमतिमतांवर ॥ ११ ॥ सदर्भसंस्तराद्गृह्यब्रह्मास्त्रेणन्ययोजयः ॥ सदीप्तइवकालाग्निर्जज्वालाभिमुखंख गम् ॥ १२ ॥ सतंप्रदीप्तंचिक्षेपदर्भंतंवायसंप्रति ॥ ततस्तुवासंदीप्तःसदर्भोनुजगामह ॥ १३ ॥ भीतैश्चसपरित्यक्तःसुरैःसर्वैश्चवायसः ॥ त्रींल्लो कान्संपरिक्रम्यत्रातारंनाधिगच्छति ॥१४ ॥ पुनरप्यगतस्तत्रत्वत्सकाशमरिंदम ॥ त्वंतंनिपातितंभूमौधरण्यांशरणागतम् ॥ १५ ॥ वधार्हम पिकाकुत्स्थकृपयापरिपालयः ॥ मोघमस्त्रंनशक्यंतुकर्तुमित्येवराघव ॥१६॥ ततस्तस्याक्षिकाकस्यहिनस्तिस्मसदक्षिणम् ॥ वायसस्त्वांनम स्कृत्यराज्ञोदशरथस्यच ॥ १७ ॥ विसृष्टस्तुतदाकाकःप्रतिपेदेस्वमालयम् ॥ एवमस्त्रविदांश्रेष्ठःसत्त्ववाञ्छीलवानपि ॥ १८ ॥

उसके पीछे आपने उसको काकके सन्मुख चलाया । तब वह प्रकाशमान कुश उस काकके पीछे २ दौडा ॥१३॥ सब लोगोंने भीत होकर किसी नेभी उसको अपने यहां आश्रय न दिया. वह त्रिलोकीमें घूमा परन्तु कहीं भी उसने अपने उद्धार करनेवालेको न देखा ॥ १४ ॥ हे शत्रुओंके दमन करनेवाले ! तब वह कहीं ठिकाना न पायकर आपहीकी शरणमें आया हे काकुत्स्थ ! वह शरणागत होकर पृथ्वीमें गिर पडा ॥१५॥ उसको शरणमें आये जान वधके योग्य होनेपर भी आपने कृपा करके उसके जीवनकी रक्षा की, परन्तु केवल अस्त्र व्यर्थ करना उचित नहीं है ॥१६॥ यह कह कर हे श्रीरामचन्द्रजी! आपने उस काककी दाहिनी आंख फोड दी थी । उस कालमें वह काक राजा दशरथजी और आपको प्रणाम करके ॥ १७ ॥ बिदा ले अपने स्थानको चला गया, आप इस प्रकारके अस्त्र

शस्त्र जानने वालोंमें श्रेष्ठ महाबलवान् और मर्यादा पुरुषोत्तम हैं ॥ १८ ॥ तथापि हे श्रीरामचन्द्रजी ! आप किस कारणसे राक्षसोंके ऊपर अस्त्र नहीं चलाते हैं ? क्या दानव; क्या गन्धर्व क्या देव, क्या पवनगण ॥१९॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! कोईभी तुम्हारे सामने संग्राममें नहीं हो सकता है; आप अतिशय वीर्यवान् हैं हमारे प्रति आपका यदि कुछभी आदर हो ॥२०॥ तो शीघ्रही व्यर्थ न होनेवाले बाणोंके समूह चलाय कर युद्धमें रावणका विनाश कीजिये अपने बडेभाईकी आज्ञा ले वह शत्रुओंके तपानेवाले नरश्रेष्ठ लक्ष्मणजी ही ॥ २१ ॥ किस कारणसे हमारा उद्धार नहीं करते हैं । वह दोनों पुरुषश्रेष्ठ अग्नि और पवनके समान तेजस्वी ॥२२॥ देवता लोगोंकोभी अजेय हैं फिर वह किस कारणसे हमारा यहाँ रोका रहना सह रहे हैं ? निःसंदेह ऐसा ज्ञान होता है कि हमाराही कोई महा पाप है ॥ २३ ॥ जो समर्थ होकर भी शत्रुओंके तपानेवाले श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी हमारी रक्षा नहीं करते हैं । श्रेष्ठ जानकीजीके यह करुणा भरे विला

किमर्थमस्त्रंरक्षस्सुनयोजयसिराघव ॥ नदानवानगंधर्वानासुरानमरुद्गणाः ॥ १९ ॥ तवरामरणेशक्तास्तथाप्रतिसमासितुम् ॥ तववीर्यवतःकच्चि न्मयियद्यस्तिसंभ्रमः ॥ २० ॥ क्षिप्रंसुनियतैर्बाणैर्हन्यतांयुधिरावणः ॥ भ्रातुरादेशमाज्ञायलक्ष्मणोवापरंतपः ॥ २१ ॥ सकिमर्थंनरवरोनमां रक्षतिराघवः ॥ सक्तौतौपुरुषव्याघ्रौवाय्वग्निसमतेजसौ ॥ २२ ॥ सुराणामपिदुर्धर्षौकिमर्थंमामुपेक्षतः ॥ ममैवदुष्कृतंकिंचिन्महदस्तिनसं शयः ॥ २३ ॥ समर्थौसहितौयन्मांनरक्षेते परंतपौ ॥ वैदेह्यावचनंश्रुत्वाकरुणंसाधुभाषितम् ॥ २४ ॥ पुनरप्यहमार्यांतामिदंवचनमब्रुवम् ॥ त्वच्छोकविमुखोरामोदेविसत्येनतेशपे ॥२५॥ रामेदुःखाभिभूतेचलक्ष्मणःपरितप्यते ॥ कथंचिद्भवतीदृष्टानकालःपरिशोचितुम् ॥२६॥ इदं मुहूर्तंदुःखानामंतंद्रक्ष्यसिभामिनि ॥ तावुभौनरशार्दूलौराजपुत्रौपरंतपौ ॥ २७ ॥ त्वद्दर्शनकृतोत्साहौलंकांभस्मीकरिष्यतः ॥ हत्वासमरेरौद्रं रावणंसहबांधवम् ॥ २८ ॥ राघवस्त्वांवरारोहेस्वपुरींनयिताध्रुवम् ॥ यत्तुरामोविजानीयादभिज्ञानमनिंदिते ॥ २९ ॥

पके वचन सुन ॥२४॥ हमने उनसे फिर कहा कि, हम आपके निकट सत्यकी शपथ करके कहते हैं कि, आपके दर्शन न पानेके शोकसे श्रीरामचन्द्रजीका मन किसी कार्यमें नहीं लगता ॥२५॥ और श्रीरामचन्द्रजीके दुःखसे कातर होनेसे लक्ष्मणजी महासंतापित होरहे हैं; जब कि, हमने अनेक कष्टोंसे आपका दर्शन पाया है तो अब शोक करनेका कुछ प्रयोजन नहीं है ॥ २६ ॥ हे भामिनी ! आप इसी समयसे अपने दुःखका अन्त आया जानिये, वह दोनों नरसिंह शत्रु ओंके तपानेवाल राजकुमार ॥ २७ ॥ आपका दर्शन पानेके लिये उत्साहित होकर लंकानगरीको भस्म कर डालेंगे. हे श्रेष्ठवर्णवाली ! क्रूरकर्म करने वाले रावणको बन्धु बान्धवोंके सहित मारकर॥२८॥ आपको ले निश्चय अपने स्थानको लौट जाँयगे, इसमें कुछ भी संदेह नहीं है श्रेष्ठवर्णवाली ! हे निन्दा

रहित ! और कोई ऐसी निशानी दीजिये कि, जिसके देखनेसे श्रीरामचन्द्रजी हमारा विश्वास मानें कि यह जानकीजीको देख आये ॥ २९ ॥ और उसको देखकर रामचन्द्रको प्रीति उपजे सो दीजिये तब जानकीजी यह सुन और प्रसन्नहो सब ओर दृष्टि कर वेणीमें गूंथनेके योग्य यह उत्तम मणि ॥३०॥ अपने दुपट्टेके अंचलसे खोलकर हमको देदी; हे रघुकुलप्रिय! हे महाबलवान् ! हमने आपके लिये दोनों हाथ फैलाय यह मणि ग्रहण की ॥ ३१ ॥ और शिर झुकाय हम गमन करनेकी शीघ्रता करते हुए, सीताजी हमको चलनेके लिये तैयार देख और समुद्रपार होनेके उत्साही देख श्रेष्ठ वाणी बोलीं ॥३२॥ जानकीजी हमको समुद्र पार होनेको बढ़ते हुए देखकर आंसूभरदीन गद्गद वाणीसे बोलीं ॥ ३३ ॥ हमको उछलनेके लिये तैयार देख सीताजी व्याकुल और शोकसे व्याप्त होकर हमसे बोलीं कि; हे महाकपे ! तुम्हीं भाग्यवान् हो ॥ ३४ ॥ क्योंकि, तुम उन कमललोचन महाबाहु श्रीरामचन्द्रजी और हमारे उन महाबाहु यशस्वी देवर

प्रीतिसंजननतस्यप्रदातुतत्त्वमर्हसि॥साभिवीक्ष्यदिशःसर्वावेण्युद्ग्रथनमुत्तमम्॥३०॥मुक्त्वावस्त्राद्ददौमह्यंमणिमेतंमहाबल॥ प्रतिगृह्यमणिंदोर्भ्यां तवहेतोरघुप्रिय॥३१॥शिरसासप्रणम्यैनामहमागमनेत्वरे॥गमनेचकृतोत्साहमवेक्ष्यवरवर्णिनी॥३२॥ विवर्धमानंचहिमामुवाचजनकात्मजा ॥ अश्रुपूर्णमुखीदीनाबाष्पगद्गदभाषिणी॥३३॥ममोत्पतनसंभ्रांताशोकवेगसमाहता॥मामुवाचततःसीतासभाग्योसिमहाकपे॥३४॥ यद्द्रक्ष्यसिमहाबाहुंरामंकमललोचनम्॥लक्ष्मणंचमहाबाहुंदेवरंमेयशस्विनम् ॥३५॥ सीतयाप्येवमुक्तोहमब्रुवंमैथिलींतथा॥पृष्ठमारोहमेदेविक्षिप्रंजनकनंदिनि ॥३६॥यावत्तेदर्शयाम्यद्यससुग्रीवंसलक्ष्मणम्॥राघवंचमहाभागेभर्तारमसितेक्षणे॥३७॥साब्रवीन्मांततोदेवीनैषधर्मोमहाकपे॥ यतेपृष्ठंसिषेवेहं स्ववशाहरिपुंगव॥३८॥पुराचयदहंवीरस्पृष्टागात्रेषुरक्षसा॥तत्राहंकिंकरिष्यामिकालेनोपनिपीडिता३९॥गच्छत्वंकपिशार्दूलयत्रतौनृपतेःसुतौ॥ इत्येवंसासमाभाष्यभूयःसंदेष्टुमास्थिता ॥४०॥ हनूमन्सिंहसंकाशौतावुभौरामलक्ष्मणौ ॥ सुग्रीवंचसहामात्यंसर्वान्ब्रूयाअनामयम् ॥४१॥

लक्ष्मणजीका दर्शन करोगे॥३५॥जानकीजीके यह वचन सुनकर हमने कहा कि हे देवि जनकनंदिनी! आप शीघ्रहमारी पीठपर चढिये॥३६॥हे श्यामनेत्रोंवाली महाभागे ! जो तुम हमारी पीठपर चढ़ बैठोगी तो अभी तुम लक्ष्मणजी, सुग्रीव और अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन कर सकोगी॥३७॥तब देवी जानकीजीने कहा कि हे कपिश्रेष्ठ! पतिव्रतधर्म ऐसा नहीं है कि हम तुम्हारी पीठपर अपनी इच्छानुसार चढें॥३८॥हे वीर ! इससे पहले जो राक्षस रावणने हरणके समय हमारे अंगोंको छुआ सो हमारा इसमें क्या वश ? कालकरके पीडित होनेसेही ऐसा हुआ है॥३९॥हे कपिशार्दूल ! वह दोनोंराजकुमार जिस स्थानमें विराजमान हैं तुम इकलेही वहांपर जाओ, इस प्रकारका उपदेश करके वह फिर हमसे संदेशा कहती हुई बोलीं॥४०॥हे हनुमन् ! सिंहकेसमान पराक्रमवान् श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्म

णजीसे और मंत्रियोंके सहित सुग्रीवजीसे हमारी कुशलवार्त्ता कहना ॥४१॥ और तुम इस प्रकारसे यहांका समस्त वृत्तान्त कहनाकि जिससे महाबाहु श्रीरामचन्द्रजी हमको इस दुःख समुद्रमेंसे उबारलें ॥४२॥ उनके निकट पहुँचकर तुम हमारे इस अतिशय शोकवेगकी और इन राक्षसियोंसे हमारे पीडित होनेकी समस्त वार्त्ता कहना, हे वानरप्रवीर ! मार्गमें तुम्हारा मंगल हो ॥४३॥ हे राजन् ! श्रेष्ठसीताजीने अतिबिनतीसे व शोक युक्त होकर यह बातें आपसे कही हैं, हमने जिस प्रकारसे जो वार्त्ता आपसे निवेदन की हैं उनको जानकर आप विश्वास कीजिये कि सीताजी कुशलसे हैं * ॥ ४४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० सुन्दरकांडे भाषायां सप्तषष्टितमः सर्गः ॥ ६७ ॥ हे पुरुषशार्दूल ! जब हम चलने के लिये तैयार ही होगये, तब जानकीजीने यह

यथाचसमहाबाहुर्मांतारयतिराघवः॥ अस्माद्दुःखांबुसंरोधात्तत्त्वमाख्यातुमर्हसि॥४२॥इदंचतीव्रंममशोकवेगंरक्षोभिरेभिःपरिभर्त्सनंच॥ ब्रूयास्तुरामस्यगतःसमीपंशिवश्चतेऽध्वास्तुहरिप्रवीर॥४३॥ एतत्तवार्यानृपसंयतासासीतावचः प्रहविषादपूर्वम् ॥ एतच्चबुद्ध्वागदितोयथात्वंश्रद्धस्वसीतांकुशलांसमग्राम् ॥ ४४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सुन्दरकांडे सप्तषष्टितमः सर्गः ॥ ६७ ॥ अथाहमुत्तरंदेव्यापुनरुक्तःससंभ्रमम्॥तवस्नेहान्नरव्याघ्रसौहार्दादनुमान्यच ॥१॥ एवंबहुविधंवाच्योरामोदाशरथिस्त्वया॥ यथामांप्राप्नुयाच्छीघ्रंहत्वारावणमाहवे ॥२॥ यदिवामन्यसेवीरवसैकाहमरिंदम॥कस्मिंश्चित्संवृतेदेशेविश्रांतःश्वोगमिष्यसि ॥३॥ ममचाप्यल्पभाग्यायाःसान्निध्यात्तववानर ॥ अस्यशोकविपाकस्यमुहूर्तंस्याद्विमोक्षणम्॥४॥गतेहित्वयिविक्रांतपुनरागमनायवै ॥ प्राणानामपिसंदेहोममस्यान्नात्रसंशयः ॥५॥

जानकर कि आपका स्नेह हमपर है, आदर सहित बचे बचाये कार्यके करनेको हमसे कहा ॥ १ ॥ उन्होंने कहा कि तुम इस प्रकारके विविध कथा दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजीसे कहना कि जिससे वह शीघ्र समरमें रावणको मारकर हमारा उद्धार कर लें ॥२॥ हे शत्रुओंके मारनेवाले वीर ! यदि तुम्हें भावे तो किसी गुप्तस्थानमें आजदिन टिक कल प्रातःकाल श्रम मिटाय कर चले जाना ॥ ३ ॥ हे वानर ! तुम्हारे यहांपर रहनेसे अत्यन्त मंदभागिनी हमारे इस शोकका वेग एक मुहूर्त्तभरके लिये छूट जायगा ॥ ४ ॥ हे विक्रमवान् ! तुम्हारे चले जानेपर, फिर लौटकर जबतक तुम यहां न आओगे तबतक हम

* सीताकी कहा विपति सुनाऊं । निजपद नैन दिये रघुनायक निशिदिन जपत रहत तवनाऊं १ इक पल युगसम तिनकहँ बीतत कहां तलक सब कहि समुझाऊं २ आज्ञा दीजै विलम न कीजै लंका सागर मध्य डुबाऊं ३ मिश्रहिये ऐसी आवत है लाय जानकी अबहिं मिलाऊं ॥ ४ ॥

तुम्हारी बाट देखती रहेंगी, परन्तु इस बातमें सन्देह है कि तबतक हमारा जीवन रहे या न रहे ॥ ५ ॥ हम दुरवस्थासे युक्त और दुर्भागिनी हैं सो इस समय यह विचार कर कि, तुम्हारा दर्शन फिर होगा या नहीं ? हमारा समय बडे कष्टसे कटेगा इस कारण इस समय और भी दुःख हमको संतापित करेगा ॥ ६ ॥ और हे वीर ! हमको यह भी बडा भारी संदेह होता है, कि तुम्हारे बडे भारी सहायक ऋक्ष और वानर ॥ ७ ॥ इस पार होनेके अयोग्य समुद्रके पार सब वानर रीक्ष किस प्रकारके होंगे, और वह दोनों राजकुमारही किसप्रकार समुद्रके पार होंगे ? ॥८॥ हे पापरहित ! समुद्रको लांघनेकी गति विनतानंदन गरुड; पवन और तुम केवल इन तीन प्राणियोंमें हैं ॥ ९ ॥ इस कारणसे वाक्य जाननेवालोंमें श्रेष्ठ हे वीर ! तुमने इस कठिन कार्यके करनेका क्या उपाय स्थिर किया है ? सो बताओ ॥ १० ॥ हे शत्रुओंके मारनेवाले ! यद्यपि तुम अकेले ही सरलतासे इस कार्यको पूरा कर सकते हो, परंतु ऐसा

तवादर्शनजंचापिभयंमांपरितापयेत् दुःखाद्दुःखपराभूतांदुर्गतांदुःखभागिनीम् ॥६॥ अयंचवीरसंदेहस्तिष्ठतीवममाग्रतः ॥ सुमहांस्त्वत्सहाये नहर्यृक्षेषुनसंशयः ॥ ७ ॥ कथंनुखलुदुष्पारंतरिष्यंतिमहोदधिम् ॥ तानिहर्यृक्षसैन्यानितौवानरवरात्मजौ ॥८॥ त्रयाणामेवभूतानांसागरस्येह लंघने ॥ शक्तिःस्याद्वैनतेयस्यवायोर्वातवचानघ ॥९॥ तदस्मिन्कार्यनिर्योगेवीरैवंदुरतिक्रमे॥ किंपश्यसिसमाधानंब्रूहिवाक्यविदांवर ॥१०॥ काममस्यत्वमेवैकःकार्यस्यपरिसाधने॥पर्याप्तःपरवीरघ्नयशस्यस्तेबलोदयः॥११॥बलैःसमग्रैर्यदिमांहत्वारावणमाहवे ॥ विजयीस्वपुरींरामोन येत्तत्स्याद्यशस्करम् ॥१२॥ यथाहंतस्यवीरस्यवनादुपधिनाहृता ॥ रक्षसातद्भयादेवतथानार्हतिराघवः॥१३॥ बलैस्तुसंकुलांकृत्वालंकांपरब लार्दनः ॥ मांनयेद्यदिकाकुत्स्थस्तत्तस्यसदृशंभवेत् ॥१४॥ तद्यथातस्यविक्रांतमनुरूपंमहात्मनः॥ भवत्याहवशूरस्यतथात्वमुपपादय॥१५॥

करनेसे केवल तुम्हारा ही यश बढेगा ॥ ११ ॥ परन्तु जो श्रीरामचन्द्रजी रावणको उसकी सब सेनाके साथ संहार करके विजयी हो अयोध्याजीको हमारे साथ जायँगे तो उनका यश भी होगा ॥ १२ ॥ राक्षस रावणने उनकी भार्या हमको जिस प्रकार छल करके हरण किया है, सो रघुवंशमें उत्पन्न हुए श्रीरामचन्द्रजीके योग्य यह कार्य नहीं है कि हम यहांसे लुक छिप कर जायँ ॥ १३ ॥ शत्रुकी सेनाके संहार करनेवाले काकुत्स्थकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजी यदि सेनासे लंकाको व्याकुल कर हमको साथ ले अपनी नगरी अयोध्याको लौटें तो यही कार्य उनके योग्य होगा ॥ १४ ॥ इस कारण जिस कार्यमें उन युद्धशूर महात्माका योग्य कार्य प्रगट हो और जिससे उनके विक्रमका भी प्रकाश हो जाय तुमको वैसा ही उपाय करना चाहिये ॥ १५ ॥

हमने उन जानकीजीके युक्तियुक्त अर्थ सम्पन्न स्नेह साने सब वचन सुन कर पीछेसे उत्तर दिया ॥ १६ ॥ कि हे देवि ! रीछ और वानरोंके अधिपति सत्यनिष्ठ वानरश्रेष्ठ सुग्रीवजीने आपका उद्धार करनेकी प्रतिज्ञा की है ॥ १७ ॥ उन सुग्रीवजीकी आज्ञाके वशमें महाविक्रमी सत्य सम्पन्न इच्छानुसार शीघ्रचलनेवाले महाबली अगणित वानर हैं ॥ १८ ॥ क्या ऊपर क्या नीचे, टेढे न बरन् किसी ओर जानेमें भी उनकी गति नहीं रुकती; वह वानर किसी कार्यके करनेमें व्याकुल नहीं होते और उन लोगोंके बलका भी कुछ पार नहीं ॥ १९ ॥ उन महाभाग वानरोंने पवनके मार्गसेप्रबलबलसे परिपुष्ट होकर वारंवार इस पृथ्वीकी परिक्रमा की है ॥ २० ॥सुग्रीवजीके निकट हमसे अधिक और हमारे तुल्य बलवाले बहुतसे वानर हैं, परन्तु

तथार्थोपहितंवाक्यंप्रश्रितंहेतुसंहितम् निशम्याहंततःशेषंवाक्यमुत्तरमब्रुवम् ॥ १६ ॥ देविहर्यृक्षसैन्यानामीश्वरःप्लवतांवरः ॥ सुग्रीवःसत्त्व संपन्नस्त्वदर्थंकृतनियश्चः ॥ १७ ॥ तस्यविक्रमसंपन्नाःसत्त्ववंतोमहाबलाः ॥ मनःसंकल्पसदृशानिदेशेहरयःस्थिताः ॥ १८ ॥ येषांनोपरिना धस्तान्नतिर्यक्सज्जतेगतिः ॥ नचकर्मसुसीदंतिमहत्स्वमिततेजसः ॥ १९ ॥ असकृत्तैर्महाभागैर्वानरैर्बलसंयुतैः ॥ प्रदक्षिणीकृताभूमिर्वायुमा र्गानुसारिभिः॥२०॥ मद्विशिष्टाश्चतुल्याश्चसंतितत्रवनौकसः॥मत्तःप्रत्यवरःकश्चिन्नास्तिसुग्रीवसन्निधौ॥२१॥ अहंतावदिहप्राप्तःकिंपुनस्तेमहा बलाः ॥ नहिप्रकृष्टाःप्रेष्यंतेप्रेष्यंतेहीनरेजनाः ॥ २२ ॥ तदलंपरितापेनदेविमन्युरपैतुते ॥ एकोत्पातेनतेलंकामेष्यंतिहरियूथपाः ॥ २३ ॥ ममपृष्ठगतौतौचचंद्रसूर्याविवोदितौ ॥ त्वत्सकाशंमहाभागेनृसिंहावागमिष्यतः ॥ २४ ॥

हमसे छोटा तो और कोई वानर है ही नहीं ॥ २१ ॥ जब कि हमही इसपारहोनेके अयोग्य समुद्रके पार आगये तब फिर उन महाबलवान् वानरोंके विषयमें अधिक क्या कहें और देखिये कि बडे पुरुषको कोई कभी किसी कार्यके लिये नहीं भेजता केवल छोटे ही लोग सब कार्योंके लिये भेजेजाते हैं ॥ २२ ॥ हे देवि ! अब विलाप करनेका कुछ प्रयोजन नहीं है आपका शोक दूर हो वह समस्त वानरयूथ पति एक छलांग ही भरकर लंकामें आजायँगे ॥ २३ ॥ और हे महाबाहो ! वह दो नरश्रेष्ठ श्रीराम, लक्ष्मणजीभी हमारी पीठपर सवार होकर उदय हुए सूर्य और चन्द्रमाके सामान आपके

पास आ जायंगे ॥ २४ ॥ आप बहुत ही शीघ्र देखेंगी कि सिंहतुल्य शत्रुओंके मारनेवाले श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी धनुष धारण करके लंकाके द्वार आय पहुँचेंगे ॥ २५ ॥ आप शीघ्र और देखेंगी कि नख और दांतोंको आयुध बनाये सिंहशार्दूलके समान पराक्रम करनेवाले गजराज तुल्य वानरगण शीघ्रही लंकामें इकठे हो आये हैं ॥ २६ ॥ आप बहुत ही शीघ्र श्रवण करेंगी कि पर्वताकार वानर वीरगण लंकाके मेघसामान ऊंचे मलयके कंगूरोंपरगर्जन कररहे हैं ॥ २७ ॥ और आप शीघ्रही देखेंगी कि वनवाससे लौटकर शत्रुओंके दमनकरनेवाले श्रीरामचन्द्रजी अयोध्याके

अरिघ्नंसिंहसंकाशंक्षिप्रंद्रक्ष्यसिराघवम् ॥ लक्ष्मणंचधनुष्मंतंलंकाद्वारमुपागतम् ॥ २५ ॥ नखदंष्ट्रायुधान्वीरान्सिंहशार्दूलविक्रमान् ॥ वानरान्वारणेंद्राभान्क्षिप्रंद्रक्ष्यसिसंगतान् ॥ २६ ॥ शैलांबुदनिकाशानांलंकामलयसानुषु ॥ नर्दतांकपिमुख्यानांनचिराच्छ्रोष्यसेस्वनम् ॥ २७ ॥ निवृत्तवनवासंचत्वयासार्धमरिंदमम् ॥ अभिषिक्तमयोध्यायांक्षिप्रंद्रक्ष्यसिराघवम् ॥ २८ ॥ ततोमयावाग्भिरदीनभाषिणीशिवाभिरिष्टाभिरभिप्रसादिता ॥ उवाहशांतिंममैथिलात्मजातवातिशोकेनतथातिपीडिता ॥२९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्ये चतुर्विंशतिसाहस्र्यां संहितायां सुंदरकांडे अष्टषष्टितमः सर्गः ॥ ६८ ॥ इतिसुंदरकांडसंपूर्णम् ॥ अतःपरंयुद्धकांडंभविष्यति ॥ तस्यायमाद्यः श्लोकः ॥ श्रुत्वाहनूमतोवाक्यंयथावदभिभाषितम् ॥ रामःप्रीतिसमायुक्तोवाक्यमुत्तरमब्रवीत् ॥ १ ॥

राज्यसिंहासन पर आपके सहित बैठे हैं ॥ २८ ॥ चौपाई—यद्यपि तब दुखसों रघुनाथा । विलपत सीय धुनत निज माथा ॥ तद्यपि मम मुखसों हितकारी । सुनत वचन शुभधरणिकुमारी ॥ तुरत हि दीनभावको त्यागी । भइ तव चरण कमल अनुरागी ॥ हौं प्रियवचनन सों समुझायो । त्यागि शोक, सिय हर्ष बढायो ❀ ॥ २९ ॥ इति श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आ० सु ०पं० ज्वालाप्रसादमिश्रकृत भाषायां चतुर्विंशत्साहस्रिकायां संहितायामष्टषष्टितमः सर्गः ॥ ६८ ॥

❀ इसके आगे युद्धकाण्डहै जिसके आदिमें यह श्लोक है । रामचंद्रजी हनमानजीके यथावत् कहे हुए सम्पूर्ण वचन सुनकर अतिशय प्रसन्न हो इस प्रकारसे उत्तर देते हुए ॥ १ ॥

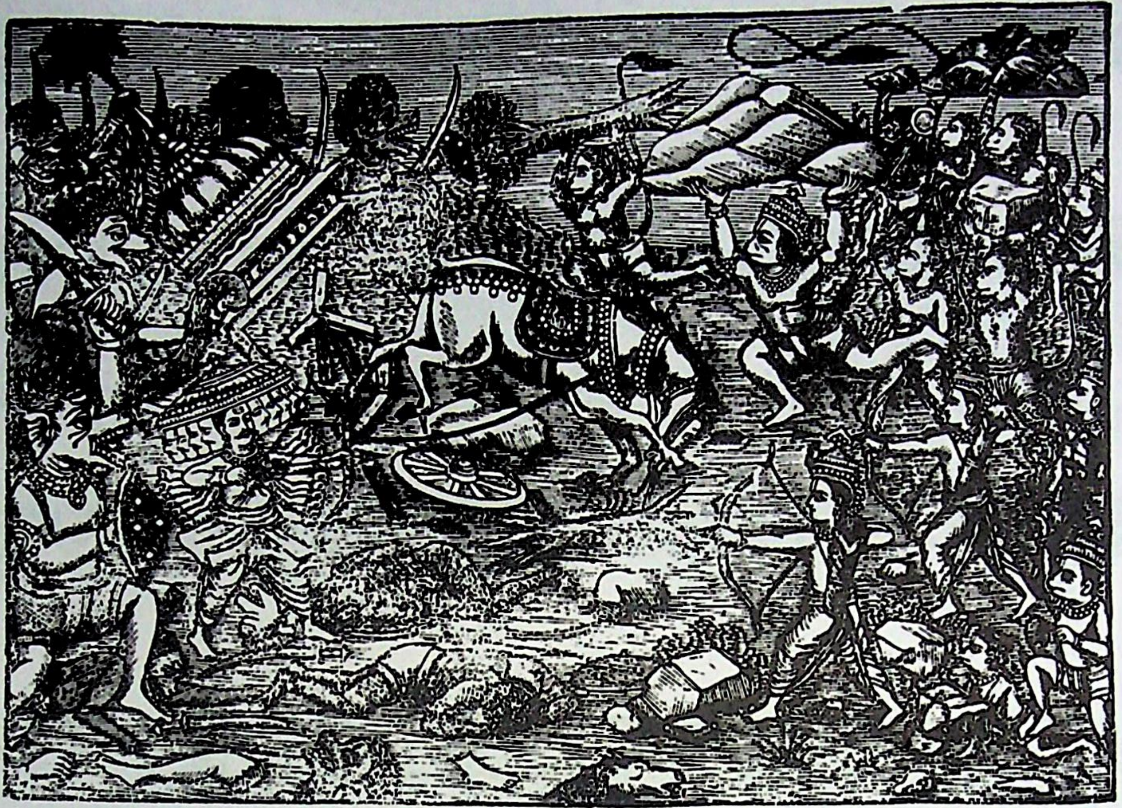
दोहा—जगजीवन जानकिरमण, जनमन आनँदकंद ॥ चरण शरण दै चकसों, काटहु कलुषनि फन्द ॥
निराधार नद मध्यमें, नैया डूबी जाय ॥ तुम बिन हे करुणायतन, कौन उबारे आय ॥
शान्ति करो मो चित्त धरो, बल देवहु श्रीराम ॥ जासों कुछ औरहु कहों, तब गुण चरित ललाम ॥
जनकलडैती जानकी, जग माता यशखानि ॥ अब ज्वालापरसादपै, होहु प्रसन्न भवानि ॥
दुष्टनिकंदन वीर वर, हे श्रीपवनकुमार ॥ प्रभु ज्वालापरसादके, संकट दीजे टार ॥

इति श्रीसुन्दरकांड समाप्त ॥ शुभमस्तु.

इदं वाल्मीकीयरामायणेसुन्दरकाण्डं भाषाटीकासमेतं मुम्बय्यां
क्षेमराज-श्रीकृष्णदास श्रेष्ठिना स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर"-
(स्टीम्) मुद्रणालये मुद्रयित्वा प्रकाशितम् ।

इति श्रीवाल्मीकीयरामायणे सुन्दरकाण्डं भाषाटीकासमेतं समाप्तम्

अथ श्रीवाल्मीकीयरामायणे युद्धकाण्डं भा. टी. समेतं प्रारभ्यते



श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ वाल्मीकीयरामायणे युद्धकांडं भाषाटीकासमेतं प्रारभ्यते

दोहा—भक्तन मन आनँद करन, दुष्टन मारनहार ॥ तपन वंश अवतंस प्रभु; सुख शोभा आगार ॥ १ ॥
जनकसुताके टारि दुःख, रावण करि संहार ॥ सब कीशन सँग पुष्पकहिं, चढि श्रीराजकुमार ॥ २ ॥
अवधपुरीमें आयकर, ग्रहण कियो जिमि राज ॥ सो सब भाषामें कहब, वंदि राम रघुराज ॥ ३ ॥
सेठ शिरोमणि गुणसदन, सज्जन जन आनन्द ॥ खेमराज गृह श्री सदा, वास करै निर्द्वन्द ॥ ४ ॥
शिव भक्ती सुर शेष शशि, सहित वाणी गणराज ॥ जन ज्वालाप्रसाद मन, वास करहु सब आज ॥ ५ ॥

श्रीरघुवीरायनमोनमः ॥ श्रुत्वाहनूमतोवाक्ययथावदभिभाषितम् ॥ रामःप्रीतिसमायुक्तोवाक्यमुत्तरमब्रवीत् ॥१॥ कृतंहनूमताकार्यंसुमहद्भुविदुर्लभम् ॥ मनसापियदन्येननशक्यंधरणीतले ॥ २ ॥ नहितंपरिपश्यामियस्तरेतमहोदधिम्॥ अन्यत्रगरुडाद्वायोरन्यत्रचहनूमतः ॥३॥ देवदानवयक्षाणांगंधर्वोरगरक्षसाम् ॥ अप्रधृष्यांपुरींलंकांरावणेनसुरक्षिताम् ॥४॥ प्रविष्टःसत्त्वमाश्रित्यजीवन्कोनामनिष्क्रमेत् ॥ कोविशेत्सुदुराधर्षाराक्षसैश्चसुरक्षिताम् ॥ ५ ॥ योवीर्यबलसंपन्नोनसमःस्याद्धनूमतः ॥ भृत्यकार्यंहनुमतासुग्रीवस्यकृतंमहत् ॥ एवंविधायस्वबलंसदृशंविक्रमस्यच ॥६॥ योहिभृत्योनियुक्तःसन्भर्त्राकर्मणिदुष्करे ॥ कुर्यात्तदनुरागेणतमाहुःपुरुषोत्तमम् ॥ ७ ॥

श्रीरामचन्द्रजी हनुमानजीके यथावत् कहे हुए इन वचनोंको श्रवण कर अतिशय प्रसन्न हो इसप्रकारसे उत्तर देते हुए ॥१॥ हनुमानजीके समस्त लोगोंसे न होनेके योग्य जो बडा भारी कार्य किया है, ऐसा कार्य पृथ्वी पर दूसरेसे होना तो दूर रहे, कोई मनसे भी नहीं कर सकता॥२॥गरुड, वायु और हनुमान्, इन तीन जनोंके सिवाय और किसी दूसरेकी गति हम वैसी नहीं देखते जो महासागरको लांघ जाय ॥३॥ दे॰, दानव, यक्ष, गन्धर्व, उरग व राक्षस लोगोंसे भी अजेय उस रावणसे पाली जाती हुई लंकापुरीमें ॥ ४ ॥ बलसहित प्रवेश करके कौन जीवित रहकर वहांसे चला आसकता है ? लंकापुरी राक्षसलोगोंसे रक्षित होनेके कारण जैसी कि, प्रवेश करनेके अयोग्य होगई है॥५॥सो वीर्यवान हनुमान जीके अतिरिक्त और किसमें सामर्थ्य है कि, जो वहां प्रवेश करसके ? इस प्रकारसे अपने विक्रमके योग्य बलप्रकाश कर हनुमानजीने सुग्रीवजीका बडा भारी भृत्य कार्य पूरा किया है ॥६॥ जो सेवक स्वामी करके अति कठिन कार्यमें लगाये

जानेपरभी उसे मन लगायकर अनुरागसहित सिद्ध करता है; पंडित लोग उसको पुरुषोत्तम कहते हैं ॥७॥ जो सेवक एक कार्यमें नियुक्त होकर प्रभुके हितकारी और दूसरे कार्योंके आजाने पर उन्हें समर्थ होकर भी नहीं करता वह मध्यम पुरुष है ॥८॥ जो सेवक समर्थ होकर बतलाया हुआ कार्य अतियत्नसे पूरा नहीं करता वह अधम पुरुष कहा जाता है ॥ ९ ॥ परन्तु हनुमानजीके राजाज्ञामें नियुक्त होकर अपना कर्तव्य कार्य यथावत् पूरा किया है और अधिक करके इन्होंने अपनी लघुताई न दिखाकर सुग्रीवजीको अत्यन्त सन्तुष्ट किया है॥१०॥हनुमान्‌जी जानकीजीको देखआये इससे हम और महाबलवान् लक्ष्मण व दूसरे रघुवंशियोंने आत्मघात रूप घोर अधर्मसे रक्षा पाई है, क्योंकि जानकीजीका समाचार न पानेसे हम निश्चय ही प्राणत्याग करते; फिर हमारे बिना लक्ष्मण इत्यादि कोई भी प्राण धारण करनेमें समर्थ नहीं होते ॥ ११ ॥ किन्तु दीन अवस्थामें ऐसे प्यारे संवाद देनेवाले हनुमानजीका इस कार्यके योग्य हम कुछ

योनियुक्तःपरंकार्यंनकुर्यान्नृपतेःप्रियम् ॥ भृत्योयुक्तःसमर्थश्चतमाहुर्मध्यमंनरम् ॥८॥ नियुक्तोनृपतेःकार्यंनकुर्याद्यःसमाहितः ॥ भृत्योयुक्तः समर्थश्चतमाहुःपुरुषाधमम् ॥ ९ ॥ तन्नियोगेनियुक्तेनकृतकृत्यंहनूमता ॥ नचात्मालघुतांनीतःसुग्रीवश्चापितोषितः ॥१०॥ अहंचरघुवंशश्च लक्ष्मणश्चमहाबलः ॥ वैदेह्यादर्शनेनाद्यधर्मतःपरिरक्षिताः ॥ ११ ॥ इदंतुममदीनस्यमनोभूयःप्रकर्षति ॥ यदिहास्यप्रियाख्यातुर्नकुर्मिसदृशं प्रियम् ॥ १२ ॥ एषसर्वस्वभूतस्तुपरिष्वंगोहनूमतः ॥ मयाकालमिमंप्राप्यदत्तस्तस्यमहात्मनः ॥ १३ ॥ इत्युक्त्वाप्रीतिहृष्टांगोरामस्तंपरिषस्वजे ॥ हनूमंतंकृतात्मानंकृतवाक्यमुपागतम् ॥१४॥ ध्यात्वापुनरुवाचेदंवचनंरघुसत्तमः ॥ हरीणामीश्वरस्यापिसुग्रीवस्योपशृण्वतः॥१५॥ सर्वथासुकृतंतावत्सीतायाःपरिमार्गणम् ॥ सागरंतुसमासाद्यपुनर्नष्टंमनोमम ॥ १६ ॥ कथंनामसमुद्रस्यदुष्पारस्यमहांभसः ॥ हरयोदक्षिणं पारंगमिष्यंतिसमागताः ॥ १७ ॥

भी प्रिय नहीं करसकते, यही बात हमारे अंतःकरणको अत्यन्त खेद करा रही है ॥१२॥ जो हो, इस समय हमारा यह लिपटाय कर मिलनाही सर्वस्वदान स्वरूप महात्मा हनुमानजीका कार्यके योग्य पुरस्कार होवे ॥१३॥ सर्व कार्योंके करनेमें समर्थ हनुमान्‌जी श्रीसीताजीकी सुधिलेकर जो लंकासे आये, तब रघुसत्तम श्रीरामचन्द्रजीसे पहले कहे हुए वचन कह करप्रीतिपुलकित शरीरसे उनको भेंटते हुए ॥१४॥ रघुवंशियोंमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी फिर क्षण भर तक चिन्ता करके कपिराज सुग्रीवजीके सम्मुख ही फिर यह वचन बोले ॥१५॥ कि, हम सर्व प्रकारसे सीताजीके ढूँढनेमें यत्न करके यद्यपि कार्य सिद्ध कर चुके हैं परन्तु इस समुद्रको देख कर फिर हमारे मनका उत्साह टूटा जाता है॥१६॥यह आये हुए वानरगण किस प्रकारसे दुष्पार अतिजलवाले समुद्रके दक्षिणपारपहुँचेंगे ॥१७॥

यद्यपि सीताजी लंकापुरीमें हैं, ऐसा वृत्तांत हमारे निकट कहा गया हैं परन्तु वानर लोगोंके समुद्र पार जानेका क्या उपाय है, इस पूँछनेका क्या उत्तर होगा ? ॥१८॥ शत्रुओंके मारनेवाले, शोकसे संतापित, महाबाहु, श्रीरामचंद्रजी महात्मा हनुमानजीसे ऐसा कह फिर कुछ चिन्ता करने लगे ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥ उसके पीछे सुग्रीवजी शोकसे संतापित हुए दशरथजी के पुत्र श्रीरामचन्द्रजी से इस प्रकारके शोक नाश करनेवाले वचन कहने लगे ॥१॥ हे वीर ! आप किस कारण साधारण मनुष्योंके समान ऐंसा संताप करते हैं ? अब आप ऐसा संताप न कीजिये, जिस प्रकार उपकार न माननेवाले पुरुष दूसरेके साथ सौहृद छोडदेता है वैसे ही आप इस वृथा संतापको त्याग कीजिये ॥२॥ हे रघुनन्दन ! जबकि, शत्रुका समस्त वृत्तान्त और वासस्थान जाना गया है, तब तो फिर हम आपके संतापका कोई भी कारण नहीं देखते हैं ॥३॥ आप मतिमान्, शास्त्रोंके जाननेवाले,

यद्यपेषतुवृत्तांतोवैदेह्यागदितोमम ॥ समुद्रपारगमनेहरीणांकिमिवोत्तरम् ॥ १८ ॥ इत्युक्त्वाशोकसंभ्रांतोरामःशत्रुनिबर्हणः ॥ हनूमंतंमहाबाहुस्ततोध्यानमुपागमत् ॥१९॥ इत्यार्षे श्रीम०वा०आदि०च० सा० युद्धकांडेप्रथमःसर्गः ॥१॥ तंतुशोकपरिद्यूनंरामंदशरथात्मजम् ॥ उवाच वचनंश्रीमान्सुग्रीवःशोकनाशनम् ॥ १ ॥ किंत्वयातप्यतेवीरयथान्यः प्राकृतस्तथा ॥ मैवंभूस्त्यजसंतापंकृतघ्नइवसौहृदम् ॥ २ ॥ संतापस्यचतेस्थानंनहिपश्यामिराघव ॥ प्रवृत्तावुपलब्धायांज्ञातेचनिलयेरिपोः ॥ ३ ॥ मतिमाञ्छास्त्रवित्प्राज्ञःपंडितश्चासिराघव ॥ त्यजेमांप्रकृतांबुद्धिंकृतात्मेवार्थदूषिणीम् ॥४॥ समुद्रंलंघयित्वातुमहानक्रसमाकुलम् ॥ लंकामारोहयिष्यामोहनिष्यामश्चतेरिपुम् ॥५॥ निरुत्साहस्यदीनस्य शोकपर्याकुलात्मनः ॥सर्वार्थाव्यवसीदंतिव्यसनचाधिगच्छति॥६॥इमेशूराःसमर्थाश्चसमतोहरियूथपाः॥ त्वत्प्रियार्थंकृतोत्साहाःप्रवेष्टुमपिपावकम् ॥७॥ एषांहर्षेणजानामितर्कश्चापिदृढोमम ॥ ८ ॥ विक्रमेणसमानेष्येसीतांहत्वायथारिपुम् ॥ रावणंपापकर्माणंतथात्वंकर्तुमर्हसि॥९॥

दीर्घदर्शी और पंडित हैं, इस लिये योगी पुरुष जिस प्रकार अपने को दूषण लगानेवाली बुद्धिका त्याग कर देते हैं वैसेही आप भी इस प्रयोजन नाश करनेवाली अशुभदायिनी बुद्धिको छोड दीजिये ॥ ४ ॥ हम लोग सबही मछली व नाके आदि जीवोंसे पूर्ण इस महासमुद्रको लांघ कर लंका पर चढ आपके शत्रुका नाश करेंगे ॥५॥ हे वीर ! उत्साहरहित, दीन स्वभाव और शोकाकुल पुरुषके सबही प्रयोजन नष्ट होजाते हैं और ऐसा ही पुरुष विपदोंमें पडा करता है ॥ ६ ॥ यह रणकरनेमें चतुर समस्त वानर यूथपति गण आपका प्रिय कार्य सिद्ध करनेकी वासनासे अग्निमें भी प्रवेश करने का उत्साह करते हैं, फिर समुद्रको पार जाना क्या बडी बात है॥७॥हमनेइन लोगोंके हर्षित वदनका भाव देख कर इस प्रकार का दृढनिश्चय किया है॥८॥इस समय जिस प्रकारसे हम विक्रम प्रकाश करके आपके शत्रु उस

पाप कर्म करनेवाले रावणका विनाश करके और जानकीजी को ला सकें ऐसा उपाय आप कीजिये ॥ ९ ॥ हे राघव ! इस समुद्रके ऊपर जिस प्रकार सेतु बँध जाय और हम सब जिस प्रकारसे उस राक्षस राजकी लंकापुरीको देख सकें इस समय आप वैसा ही उपाय कीजिये ॥ १० ॥ आपने त्रिकूट पर्वतके शिखर पर बसी हुई लंकापुरीको जैसेही देखा कि वैसेही आप मनमें निश्चय समझ लीजिये कि रावणका विनाश हो गया ॥ ११ ॥ मकरालय समुद्रके ऊपर बिना सेतु बांधे इन्द्रादि देवगण अथवा असुर गण कोई भी उस लंकापुरीके रुंधनेको समर्थ नहीं हो सकते ॥१२॥ आप यह निश्चय ही जान लीजिये कि, लंका तक समुद्रके ऊपर पुल बँधजाते ही उस परसे होकर समस्त सेना पार उतर जायगी; और फिर विजयकी प्राप्ति होनेमें भी कुछ संदेह नहीं, कारण कि यह समस्त कामरूपी वानर संग्राम करनेमें बडे चतुर हैं ॥१३॥ हे महाराज ! आप इस सर्व अर्थ विनाशिनी विकल बुद्धिको छोडदीजिये, कारण कि, पृथ्वी पर शोकही

सेतुरत्रयथाबध्येद्यथापश्येमतांपुरीम् ॥ तस्यराक्षसराजस्यतथात्वंकुरुराघव॥१०॥दृष्ट्वातांहिपुरींलंकांत्रिकूटशिखरेस्थिताम् ॥ हतंरावणंयुद्धे ददर्शनादवधारय ॥ ११ ॥ अबद्ध्वासागरेसेतुंघोरेचवरुणालये ॥ लंकानमर्दितुंशक्यासेंद्रैरपिसुरासुरैः ॥१२॥ सेतुबंधःसमुद्रेचयावल्लंकासमीपतः ॥ सर्वंतीर्णंचमेसैन्यंजितमित्युपधारय ॥ तथाहिसमरेवीराहरयःकामरूपिणः॥१३॥तदलंविक्लवांबुद्धिंराजन्सर्वार्थनाशिनीम् ॥ पुरुषस्यहिलोकेस्मिञ्छोकःशौर्यापकर्षणः ॥१४॥ यत्तुकार्यंमनुष्येणशौंडीर्यमवलंब्यताम् ॥ तदलंकारणायैवकर्तुर्भवतिसत्वरम् ॥१५॥ अस्मिनकाले महाप्राज्ञसत्त्वमातिष्ठतेजसा ॥ शूराणांहिमनुष्याणांत्वद्विधानांमहात्मनाम् ॥ विनष्टेवाप्रनष्टेवाशोकःसर्वार्थनाशनः॥१६॥तत्त्वंबुद्धिमतांश्रेष्ठः सर्वशास्त्रार्थकोविदः॥मद्विधैःसचिवैःसार्धमरिंजेतुंसमर्हसि१७॥नहिपश्याम्यहंकंचित्त्रिषुलोकेषुराघव॥गृहीतधनुषोयस्तेतिष्ठेदभिमुखोरणे१८॥

है जो मनुष्य के वीर्यको नष्ट किया करता है ॥ १४ ॥ जो कार्य शूरता का अवलम्बन करके किया जाता है वह तुरन्त शूरताका किया कार्य करने वाले को भूषण हो जाता है ॥१५॥ कारण कि, नष्ट होने या खोय जानेपर आप सरीखे महात्मा शूर पुरुष गणोंका भी नाश करनेको शोकही कारण है। इस कारण हे महाप्राज्ञ ! ऐसे समय आप महात्मा अपने तेज बलसे शूरता और धीरताका ग्रहण करके वही कीजिये कि, जो ऐसे समयमें मनुष्य किया करते हैं ॥ १६ ॥ आप बुद्धिमान् लोगोंमें श्रेष्ठ हैं और सब शास्त्रोंके अर्थ भी भली भाँतिसे जानते हैं फिर हमें और अधिक कहनेकी क्या आवश्यकता है; हम समान मंत्री लोगोंके साथ रहने पर आप अवश्यही शत्रुको जीत लेंगे ॥ १७ ॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! हम तीनों लोकोंके मध्यमें ऐसा किसीको नहीं देखते कि, जो आपके

धनुष धारण कर संग्राममें खडे होनेपर आपके सामने खडा होसके॥१८॥आप वानरगणोंको जिस कार्यका भार देंगे, उस कार्यका भार किसी प्रकार नाश नहीं होगा; हम समस्तही इस अक्षय समुद्रके पार होकर देवी जानकीजीको ले आवेंगे ॥१९॥ इस प्रकारसे आप शोकको छोड कर क्रोधको ग्रहण कीजिये, क्योंकि उद्यम रहित होकर क्षत्रिय सौभाग्यवान् नहीं हो सकता, जो क्षत्रिय अत्यन्त क्रोधी होता है तो सब उससे भय माना करते हैं॥२०॥हम तो सबही कुछ यत्न किये तैयार बैठे हैं, इस कारण आप इस समय इस भयंकर नदीपति समुद्रके पार होनेका कोई सूक्ष्म (बारीक) उपाय विचारिये॥२१॥हमारी इस सेनाके समुद्र पार होते ही निश्चय आप विजयको प्राप्त करेंगे और मनमें आप समुद्रका लांघा जाना और विजयका होना भी समझ ही लीजिये ॥२२॥ यह रणवीर कामरूपी

वानरेषुसमासक्तंनतेकार्यंविपत्स्यते ॥ अचिराद्द्रक्ष्यसेसीतांतीर्त्वासागरमक्षयम् ॥ १९ ॥ तदलंशोकमालंब्यक्रोधमालंबभूपते ॥ निश्चेष्टाः क्षत्रियामंदाःसर्वेचंडस्यबिभ्यति ॥ २० ॥ लंघनार्थंचघोरस्यसमुद्रस्यनदीपतेः ॥ सहास्माभिरिहोपेतःसूक्ष्मबुद्धिर्विचारय ॥२१॥ लंघितेतत्रतैःसैन्यैर्जितमित्येवनिश्चिनु ॥ सर्वंतीर्णंचमेसैन्यंजितमित्यवधार्यताम् ॥२२॥ इमेहिहरयःशूराःसमरेकामरूपिणः ॥ तानरीन्विधमिष्यंति शिलापादपवृष्टिभिः ॥ २३ ॥ कथंचित्परिपश्यामिलंघितंवरुणालयम् ॥ हतमित्येवतंमन्येयुद्धेशत्रुनिबर्हण ॥२४॥ किमुक्त्वाबहुधाचापि सर्वथाविजयीभवान् ॥ निमित्तानिचपश्यामिमनोमेसंप्रहृष्यति ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥ सुग्रीवस्यवचःश्रुत्वाहेतुमत्परमार्थवत् ॥ प्रतिजग्राहकाकुत्स्थोहनूमंतमथाब्रवीत् ॥ १ ॥ तपसासेतुबंधेनसागरोच्छोषणेनच ॥ सर्वथापिसमर्थोस्मिसागरस्यास्यलंघने ॥ २ ॥

वानर गण शिला और वृक्षोंकी वर्षा करके समरमें उन शत्रुगणोंको मार डालेंगे॥२३॥हे रणप्रिय ! हे शत्रुनाशन! हमारे मनमें तो यह आता है कि, किसी प्रकार समुद्रके पार हुए और रावणका युद्धमें नाश हुआ॥२४॥हे राजन्! अधिक कहनेकी क्या आवश्यता है, आप सबही प्रकारसे विजयको प्राप्त करेंगे कारण इधर उधर शुभनिमित्तों को हम देखते हैं और हमारे मनमें हर्ष भी अत्यन्त हो रहा है ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०युद्धकांडे भाषायां द्वितीयः सर्गः॥२॥ उसके पीछे परमार्थके जाननेवाले काकुत्स्थ श्रीरामचंद्रजी सुग्रीवके यह युक्तियुक्त वचन सुनकर उन सबको अंगीकार करते हनुमानजीसे बोले ॥१॥ हे हनुमन् ! तपस्याके बलसे इस समुद्रका पुल बांध देना, इसका समस्त जल शोष देना अथवा जिस प्रकारसे कहो हम सबही भांति इस समुद्रके पार जायसकते हैं ❀॥२॥

❀ यहां तपका अर्थ कार्यसिद्धि का संकल्प है और अपनी सब प्रजाका ब्रह्मलोक लेजाना इससे सूचित है तथा सेतुबन्धन सब उपायसे विद्यमान है ॥

जबसे तुमको वहांसे आये हमने देखा है तबसे कई एक बातोंको जाननेके लिये हमारी इच्छा हुई है सो तुम हमारे निकट वह सब वर्णन करो कि, उस गमन करनेके अयोग्य लंकापुरीमें कितने किले हैं? ॥३॥ राक्षस रावणके यहां सेना कितनी है? द्वारोंपरके दुर्ग किस प्रकारके हैं? वहां पर खुदी हुई परिखा परिख और पृथ्वीके भीतर अटारियें हैं या नहीं ? राक्षस लोगोंके रहनेके स्थान कैसे हैं ? ॥४॥ तुम दर्शन करने, वर्णन करने दोनों बातोंमें ही अत्यन्त चतुर हो, इस कारण लंकामें जोकुछ तुमनेदेखाहो वह निःशंकचित्तसे हमारे निकट यथार्थ वर्णन करो ॥५॥ तब वचनबोलनेमें चतुर पवनकुमार हनुमान्जी श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर फिर उनसे बोले ॥६॥ हे राजन्! वह लंकापुरी गुप्तभावसे राक्षसोंकरके जिस प्रकार से रक्षितहोती है वह हम सब कहते हैं आप श्रवण करें ॥७॥ राक्षस लोग रावणके तेजसे सावधान हो परम समृद्धि पायकर स्नेहसहित जिस प्रकार लंकाके मध्यमें वास करतेहैं वह समुद्रकी भयानकता ॥८॥ सेनास

कतिदुर्गाणिदुर्गायालंकायास्तद्ब्रवीष्वमे ॥ ज्ञातुमिच्छामितत्सर्वंदर्शनादिववानर ॥३॥ बलस्यपरिमाणंचद्वारदुर्गक्रियामपि॥ गुप्तिकर्मचलंकायारक्षसांसदनानिच ॥ ४ ॥ यथासुखंयथावच्चलंकायामसिदृष्टवान् ॥ सर्वमाचक्ष्वतत्त्वेनसर्वथाकुशलोह्यसि ॥५॥ श्रुत्वारामस्यवचनंहनुमान्मारुतात्मजः ॥ वाक्यंवाक्यविदांश्रेष्ठोरामंपुनरथाब्रवीत् ॥ ६ ॥ श्रूयतांसर्वमाख्यास्येदुर्गकर्मविधानतः ॥ गुप्तापुरीयथालंकारक्षिताचयथाबलैः ॥ ७ ॥ राक्षसाश्चयथास्निग्धारावणस्यचतेजसा ॥ परांसमृद्धिंलंकायाःसागरस्यचभीमताम् ॥ ८ ॥ विभागंचबलौघस्यनिर्देशंवाहनस्यच॥ एवमुक्त्वाकपिश्रेष्ठःकथयामासतत्त्ववित् ॥९॥ हृष्टप्रमुदितालंकामत्तद्विपसमाकुला ॥ महतीरथसंपूर्णारक्षोगणनिषेविता ॥१०॥ दृढबद्धकपाटानिमहापरिघवंतिच ॥ चत्वारिविपुलान्यस्याद्वाराणिसुमहांतिच ॥ ११ ॥ तत्रेषूपलयंत्राणिबलवंतिमहांतिच ॥ आगतंप्रतिसैन्यंतैस्तत्रप्रतिनिवार्यते ॥ १२ ॥ द्वारेषुसंस्कृताभीमाःकालायसमयाःशिताः ॥ शतशोरचितावीरैःशतघ्न्योरक्षसांगणैः ॥ १३ ॥

मूहका विभाग उनके वाहनोंकी गिनती और कर्मादिका यथावत् वर्णन करते हैं आप श्रवण करें। वानर श्रेष्ठ हनुमानजी यह कहकर वहांके रत्ती २ जाने समाचारोंको कहने लगे ॥९॥ लंकापुरी सदाही हर्षसे परिपूर्ण, मतवाले हाथियोंसेविराजमान अनेकस्थानोंमें रथोंसे सुशोभित राक्षसलोग सदा इस पुरीकी रक्षा किया करते हैं, यहपुरी मतवाले हाथी, रथ, राक्षस और घोडोंसे भरी हुईहै और धर्षण करनेके अयोग्य है॥१०॥उस पुरीके महा अर्गला (मूसला) युक्त बडे दृढ किंवाड़ लगे हुए बडे भारी चार द्वार हैं ॥११॥ उन चारद्वारोंमें भीतरसे बाण और शिलादि फेंकनेके लिये दृढ बडे भारी इषु उपलयंत्र (कल) लगे हुये हैं कि; जिससे आती हुई शत्रुकी सेना बाहरहीसे रोक दीजाती है॥१२॥राक्षस रावणने वहां पर लोहेके सारसे बनी हुई शिला और सैकडों हजारों पैनी शतघ्नियें * सजाय रक्खी

* शतघ्नी नाम तोपका है ॥

हैं जोकि; स्वच्छ की हुई रक्खी और महाभयंकर जान पडती हैं, लाखों शत्रु जिनके द्वारा दूरसेही मारडाले जायँ॥ १३॥ मूंगा, मणि, वैदूर्य और मुक्तदिसे जडित उसकी वह सुवर्णसे बनीहुई छहरदिवारी पर बडे दुःखसेभी कोई नहीं जायसकता ॥ १४॥ उस छहरदिवारीके चारोंओर परिखायुक्त, मीनसेवित, भयंकर नाकोंसे व्याप्त और बहुत सारे शीतल जलसे परिपूर्ण अगाध जलाशय हैं ॥ १५॥ उस पुरीके चारों द्वारोंपर खांवेंके पार होनेके लिये चार संक्रमहैं और उनके निकटमें बहुतसे शतघ्नी इत्यादियंत्र रक्खे और बहुतसे संग्राम करनेके स्थानभी बने हुए हैं॥ १६॥ शत्रुकी सेनाके आजाने पर वह चारों संक्रमही उनकी चढाईसे पुरीकी रक्षा करते हैं और वहांपर जो यंत्र लगे हुए हैं उनको घुमातेही खांवेंका जल चारों ओरको उफन उठता है कि, जिसमें शत्रुकी सेना डूब जाती है ॥ १७॥ इन चार संक्रममें एकसंक्रम सबसे अधिक दृढ बलवान् कम्परहित और अति बडे २ कंचनके अनेक खंभों और वेदिकाओंसे शोभायमान है॥ १८॥ हे श्रीरामचन्द्रजी !

सौवर्णस्तुमहांस्तस्याः प्राकारोदुष्प्रधर्षणः ॥ मणिविद्रुमवैदूर्यमुक्ताविरचितांतरः॥ १४॥ सर्वतश्चमहाभीमाःशीततोयामहाशुभाः ॥ अगाधाग्राहवत्यश्चपरिखामीनसेविताः ॥ १५॥ द्वारेषुतासांचत्वारःसंक्रमाःपरमायताः॥ यंत्रैरुपेताबहुभिर्महद्भिर्गृहपंक्तिभिः ॥ १६॥ त्रायंतेसंक्रमास्तत्र परसैन्यागतेसति ॥ यंत्रैस्तै रवकीर्यंतेपरिखाःसुसमंततः ॥ १७॥ एकस्त्वकंप्योबलवान्संक्रमःसुमहादृढः ॥ कांचनैर्बहुभिःस्तंभैर्वेदिकाभिश्च शोभितः ॥ १८॥ स्वयंप्रकृतिमापन्नोयुयुत्सूरामरावणः ॥ उत्थितश्चाप्रमत्तश्चबलानामनुदर्शने ॥ १९॥ लंकापुनर्निरालंबादेवदुर्गाभयावहा ॥ नादेयंपार्वतंचान्यंकृत्रिमंचचतुर्विधम् ॥ २० ॥ स्थितापारेसमुद्रस्यदूरपारस्यराघव ॥ नौपथश्चापिनास्त्यत्रनिरुद्देशश्चसर्वशः ॥ २१॥ शैलाग्रेरचितादुर्गाःसापूर्देवपुरोपमा ॥ वाजिवारणसंपूर्णालंकापरमदुर्जया ॥ २२ ॥

रावण युद्धा भिलाषी होकर बल देखनेके लिये प्रमादरहित और सावधान व अक्षुभित होकर इस संक्रमके निकट शत्रुसे लडनेको तैयार होजाता हे ॥ १९॥ राक्षसराज रावणकी राजधानी लंकापुरी पर्वतके शिखर पर बसी हुई है विनाकिसीका अवलम्बन किये उसपर चढना नहीं होता है। वह देवता लोगोंके दुर्गकेसमान अतिशय दुर्गभ है उसमें नदीदुर्ग, गिरिदुर्ग और कृत्रिम प्रकारके दुर्ग बिराजमान हैं वहांपर देवता लोगभी जानेका साहस नहीं करते ॥ २० ॥ हे राघव ! यह लंकापुरी पार जानेके लिये अयोग्य समुद्रके उसपार बसीहुई है जलका दुर्गरहनेसे वहांपर नावमें आनेजानेको भी मार्ग नहीं है इस कारण आजतक उस पुरीकी कोईभी विशेष वार्ता नहीं जानता ॥ २१ ॥ पर्वतके शिखर अनेक दुर्गोंके बने रहनेसे अश्व गजसे परिपूर्ण अमरावतीकेसमान यह लंका नगरी शत्रुओंकरके

बडे दुःखसे जीतने के योग्य है ॥ २२ ॥ हेमहाराज ! परिखा शतघ्नी (तोप) व और बहुतसारे यंत्र उस दुरात्मा रावणकी लंकापुरीको शोभायमान किये हुये हैं ॥ २३ ॥ उस पुरीके पूर्ववाले फाटक पर शूल हाथमें लिये बडे दुर्जय दश हजार राक्षस रात्रि दिन युद्ध करनेके लिये तैयार रहते हैं, वह खड्गयुद्ध करनेमें बडे चतुर हैं॥२४॥दक्षिणके द्वारपर लाख राक्षस रहते हैं, और वहां पर चतुरंगिणी सेनाके सहित और भी अनेक श्रेष्ठ वीर रहते हैं ॥२५॥ पश्चिमके फाटकपर ढाल तलवार लिये सब अस्त्रशस्त्रोंके चलानेमें कुशल दशलाख राक्षस रहते हैं ॥२६॥ रथी और अश्वारोही दश करोड श्रेष्ठकुलमें उत्पन्न हुए राक्षस रावणकरके अत्यन्त पूजित हो उत्तरके द्वारपर टिके रहते हैं ॥२७॥ और लंकापुरीके मध्य स्कन्धावारमें बीचवाले पडाव पर एक करोड पचीस लाख राक्षस

परिखाश्चशतघ्न्यश्चयंत्राणिविविधानिच ॥ शोभयंतिपुरींलंकांरावणस्यदुरात्मनः ॥२३॥ अयुतंरक्षसामत्रपूर्वद्वारंसमाश्रितम् ॥ शूलहस्ता दुराधर्षाःसर्वेंखड्गाग्रयोधिनः ॥ २४ ॥ नियुतंरक्षसामत्रदक्षिणद्वारमाश्रितम् ॥ चतुरंगेणसैन्येनयोधास्तत्राप्यनुत्तमाः ॥ २५ ॥ प्रयुतंरक्ष सामत्रपश्चिमद्वारमाश्रितम् ॥ चर्मखड्गधराःसर्वेंतथासर्वास्त्रकोविदाः ॥ २६ ॥ न्यर्बुदंरक्षसामत्रउत्तरद्वारमाश्रितम् ॥ रथिनश्चाश्ववाहाश्च कुलपुत्राःसुपूजिताः ॥ २७ ॥ शतशोथसहस्राणिमध्यमंस्कंधमाश्रिताः ॥ यातुधानादुराधर्षाःसाग्रकोटिश्चरक्षसाम् ॥ २८ ॥ तेमयासंक्रमा भग्नाःपरिखाश्चावपूरिताः ॥ दग्धाचनगरीलंकाप्राकाराश्चावसादिताः ॥ २९ ॥ येनकेनतुमार्गेणतरामवरुणालयम् ॥ हतेतिनगरीलंकावान रैरुपधार्यताम् ॥ ३० ॥ अंगदोद्विविदोमैंदोजांबवान्पनसोनलः ॥ नीलःसेनापतिश्चैवबलशेषेणकिंतव ॥ ३१ ॥ प्लवमानाहिगत्वातांरावण स्यमहापुरीम् ॥ सपर्वतवनांभित्त्वासखातांचसतोरणाम् ॥ ३२ ॥

रहते हैं जो कि, युद्ध करनेमें बडे कुशल हैं व आर भी इतने राक्षस वहां रहते हैं कि, उनकी गिनती करनेमें ही नहीं हो सकती॥२८॥हम उस महाबलराक्षसोंकी सेनाका चौथाई भाग नष्ट कर आये, पुरीमें आने जानेके लिये जो चारसंक्रम बने थे उनको तोड़ फोड़ डाला और लंकाको जलानेमें हमने छहर दिवारीको तोड २ उससे खाँवेको पाट दिया॥२९॥आप यह निश्चय जानलें कि, हम किसी न किसी प्रकारसे समुद्रके पार जायँगे और लंका नगरी भी वानरोंसे नाशको प्राप्त होगी ॥३०॥ आपको अधिक सेनाका प्रयोजन क्या है ? हे राघव ! केवल अंगद, द्विविद, मैन्द, जाम्बवान्, पनस, नल और सेनापति नील इन कई एक जनोंसे ही कार्य सिद्ध हो जायगा ॥३१॥ बस हम इतने वानर समुद्रके पार होकर रावणकी महापुरीमें जायकर पर्वत वन परिखा तोरण सहित ॥३२॥

धवरहरे व प्राकारोंके सहित लंकापुरीका नाश कर सीतादेवीको आपके निकट ले आवेंगे ॥३३॥ हे महाराज! इस समय आप बडे२सेनापतियोंको ऐसी आज्ञा देकर शीघ्र ही शुभ मुहूर्तमें युद्ध यात्रा करनेके लिये तैयारी कीजिये ॥ ३४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी॰आदि॰ युद्धकांडे भाषायां तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ सत्यपराक्रम महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी हनुमानूजी करके यथावत् कहे इन समस्त वाक्योंको आदिसे अंततक सुनकर इस प्रकारसे बोले ॥ १ ॥ हे हनुमन्! हम उस भयंकर स्वरूप राक्षसकी लंकापुरी शीघ्र ही विध्वंस कर डालेंगे यह जो तुमने कहा, यह समस्त ही हमको सत्य जान पडता है ॥ २ ॥ हे सुग्रीव! तुम इसी मुहूर्तमें युद्धकी यात्रा करनेके लिये तैयार हो जाओ, कारण कि, सूर्य भगवान् इस समय, मध्य आकाशमें टिके हैं और ऐसे विजय देनेवाले अभिजित मुहूर्तमें यात्रा करना बहुत ही ठीक है ॥३॥ हम इस विजय मुहूर्तमें यात्रा करेंगे तो रावण किसी प्रकारसे भी अपने जीवनकी रक्षा करनेमें समर्थ न होगा।

सप्राकारांसभवनामानयिष्यंतिराघव ॥ ३३ ॥ एवमाज्ञापयक्षिप्रंबलानांसर्वसंग्रहम् ॥ मुहूर्तेनतुयुक्तेनप्रस्थानमभिरोचय ॥ ३४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च॰ सा॰ युद्धकांडे तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ श्रुत्वाहनूमतोवाक्यंयथावदनुपूर्वशः ॥ ततोऽब्रवीन्महातेजारामःसत्यपराक्रमः ॥ १ ॥ यन्निवेदयसेलंकांपुरींभीमस्यरक्षसः ॥ क्षिप्रमेनांवधिष्यामिसत्यमेतद्ब्रवीमिते ॥ २ ॥ अस्मिन्मुहूर्तेसुग्रीवप्रयाणमभिरोचय ॥ युक्तोमुहूर्तेविजयेप्राप्तोमध्यंदिवाकरः ॥ ३ ॥ सीतांहृत्वातुतद्यातुक्वासौयास्यतिजीवितः ॥ सीताश्रुत्वाभियानंमेआशामेष्यतिजीविते ॥ जीवतांतेऽमृतंस्पृष्ट्वापीत्वाभृतमिवातुरः ॥ ४ ॥ उत्तराफाल्गुनीह्यद्यश्वस्तुहस्तेनयोक्ष्यते ॥ अभिप्रयामसुग्रीवसर्वानीकसमा॥वृताः ॥ ५ ॥ निमित्तानिचपश्यामियानिप्रादुर्भवंतिवै ॥ निहत्यरावणंसीतामानयिष्यामिजानकीम् ॥ ६ ॥

वह जानकी हरण कर जीता कहां जायगा? जिस प्रकार विष पान करके आतुर मनुष्य, मृत्युके समयमें अमृतके समान औषधिके स्पर्श करनेसे तथा पीनेसे अपने जीवनकी आशा करता है, वैसेही हम युद्ध यात्रा करनेके लिये चल दिये कि, जानकीजी भी यह समाचार पाय जीवनकी आशा न छोड देंगी ॥ ४ ॥ चन्द्रमाके इस समय उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें टिकनेसे हमारा सिद्ध देनेवाला यह ग्रह हुआ है, परन्तु कलको इसका हस्तके सहित योग होनेसे यह हमारा निधन नक्षत्र हो जायगा कारण कि, पुनर्वसु नक्षत्रमें हमारा जन्म हुआ था उत्तरा जानकीजीकी तारा है इस लिये हे सुग्रीव! हम समस्त सेनाको साथ लेकर आजही युद्धके लिये यात्रा करेंगे ॥५॥ आगे जो शुभ लक्षण हमको हो रहे हैं इसको देखकर हमको बोध होता है कि, हम सब रणभूमिमें रावणका नाश करके जानकीजीको ले

आवेंगे ॥ ६ ॥ हमारे दाहिनेनेत्रके ऊपरका भाग बारम्बार फडककर मानो रामचन्द्र तुमने विजय पाई; यही प्रभास करता है ॥७॥ उसके पीछे अर्थ विशारद धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी वानरराज सुग्रीवऔर लक्ष्मणजीसे पूजे जाकर फिर यह बोले ॥८॥ कि; सेनापति नील वेगवान् शत २ सहस्र २ वानरोंकी सेना साथ लेकर मार्ग देखनेके लिये इस सेनाकेआगे २ चलें ॥९॥ हे सेनापति सुग्रीव ! जहां उत्तम फल; मूल और मीठा शीतल जल बहता है तुम नीलको ऐसे मार्गसे सेनाको ले जानेकी आज्ञा दो ॥१०॥ दुरात्मा राक्षसगण मार्गमेंके फलऔर जल इत्यादि सब वस्तुओंमें विषादि मिलाकर कहीं उनको दूषित न करदें इस कारण सदा तुम उनकी रक्षा करते रहना ❀ ॥ ११ ॥ वानर लोग छलांग मारकर टीकरी और वृक्षादि ऊंचे स्थलोंमें चढ २ कर पृथ्वीके नीचे टिके वनके किले और वनोंमें भी भली भाँति देखें कि, कहीं शत्रुकी सेना तो घात लगाये नहीं बैठी है ॥१२॥ हमारी इस सेनामें बालक वृद्ध होनेके कारण जो कोई भी साररहित

उपरिष्टाद्धिनयनंस्फुरमाणमिमंमम॥विजयंसमनुप्राप्तंशंसतीवमनोरथम्॥७॥ततोवानरराजेनलक्ष्मणेनसुपूजितः॥उवाचरामोधर्मात्मापुनरप्यर्थ कोविदः ॥८॥ अग्रेयातुबलस्यास्यनीलोमार्गमवेक्षितुम्॥वृतःशतसहस्रेणवानराणांतरस्विनाम्॥९॥फलमूलवतानीलशीतकाननवारिणा॥पथा मधुमताचाशुसेनांसेनापतेनय ॥१०॥ दूषयेयुर्दुरात्मानःपथिमूलफलोदकम्॥राक्षसाःपथिरक्षेथास्तेभ्यस्त्वंनित्यमुद्यतः॥११॥निम्नेषुवनदुर्गेषु वनेषुचवनौकसः॥अभिप्लुत्याभिपश्येयुःपरेषांनिहितंबलम्॥१२॥यत्तुफल्गुबलंकिंचित्तदत्रैवोपपद्यताम्॥एतद्धिकृत्यंघोरंनोविक्रमेणप्रयुज्यताम् ॥१३॥ सागरौघनिभंभीममग्रानीकंमहाबलाः ॥ कपिसिंहाःप्रकर्षंतुशतशोथसहस्रशः ॥१४॥गजश्चगिरिसंकाशोगवयश्चमहाबलः॥ गवाक्षश्चा ग्रतोयातुगवांदृप्तइवर्षभः ॥१५॥ यातुवानरवाहिन्यावानरःप्लवतांपतिः॥पालयन्दक्षिणंपार्श्वमृषभोवानरर्षभः॥१६॥गंधहस्तीवदुर्धर्षस्तरस्वी गंधमादनः॥यातुवानरवाहिन्याःसव्यपार्श्वमधिष्ठितः॥१७॥ यास्यामिबलमध्येहंबलौघमभिहर्षयन्॥अधिरुह्यहनूमंतमैरावतमिवेश्वरः ॥१८॥

ज्ञात हो उसको किष्किन्धा पुरीमें ही छोड चलो, कारण कि, हमारा यह लंकाका समरकार्य अत्यंतही घोर होता हुआ जान पडता है, इसलिये विक्रम सम्पन्न सेनाके ही सहित वहां पर जाना उचित है ॥ १३ ॥ शतसहस्र महाबलवान् भयंकर वानर सिंह इस महासागरके समान वानरसेनाको लेकर चलें ॥१४॥ पर्वताकार गज महाबलवान् गवय और गवाक्ष मदगर्वित गोवृषभके समान सेनाकेआगे २ चलें ॥ १५ ॥ कूदनेवालोंमें अग्रगण्य वानरश्रेष्ठ ऋषभ दक्षिणदिशाकी रक्षा करते हुए वानरसेनाके साथ चलें ॥१६॥ मतवाले हाथीके समान दुर्जेय वेगवान् गन्ध मादन नाम वानर सेनाके सहित बाईं ओरकी रक्षाकरता हुआ गमन करें ॥१७॥ जिस प्रकार देवराज इन्द्रजी ऐरावत हाथीपर सवार होकर चलते हैं वैसेही हम हनुमानजीके कंधेपर चढ कर समस्त सेनाको हर्ष उत्पन्न कराते सेनाके बीचमें

❀ मूलमें विष मिलनेकी कथा नहीं है, यह टीकाकारका अभिप्राय है ॥

चलेंगे ॥ १८ ॥ और सार्वभौमनामक हाथीपर चढकर धनाधिपती यक्षराजकुबेरजीके समान कालके समान कोप किये लक्ष्मणजी अंगदजीकी पीठपर चढकर हमारे साथ २ चलें ॥१९॥ ऋक्षराज जाम्बवान्; महाबाहुसुषेण और वेगदर्शी यह तीन सेनाकी कुक्षिसेनाके पुच्छभागकी रक्षा करते चलें ॥२०॥ जिस प्रकार तेजस्वी वरुणजी सब लोकोंके पश्चार्द्धकी रक्षा करते हैं, वैसेही कपिराज सुग्रीव; सेनाके जघन देशकी रक्षा करें। वानरश्रेष्ठ महाबलवान् सेनापति सुग्रीवजी श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर वानरलोगोंको श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञानुसार कार्य करनेको आज्ञादेतेहुए ॥२१॥ आज्ञापातेही वह महाबलवान् उछल २ वानरगण कूद २ अपने आश्रमके स्थान गुफा और पर्वतके शिखरोंसे बाहर आये ॥२२॥ उसके पीछे धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी वानरराज सुग्रीव और लक्ष्मणजीके सुपूजित

अंगदेनैषसंयातुलक्ष्मणश्चांतकोपमः ॥ सार्वभौमेनभूतेशोद्रविणाधिपतिर्यथा ॥ १९ ॥ जांबवांश्चसुषेणश्चवेगदर्शीचवानरः ॥ ऋक्षराजोमहाबाहुःकुक्षिंरक्षंतुतेत्रयः ॥ २० ॥ राघवस्यवचःश्रुत्वासुग्रीवोवाहिनीपतिः ॥ व्यादिदेशमहावीर्योवानरान्वानरर्षभः ॥ २१ ॥ तेवानरगणाःसर्वे समुत्पत्यमहौजसः ॥ गुहाभ्यःशिखरेभ्यश्चआशुपुप्लुविरेतदा ॥ २२ ॥ ततोवानरराजेनलक्ष्मणेनचपूजितः ॥ जगामरामोधर्मात्माससैन्योदक्षिणांदिशम् ॥ २३॥ शतैःशतसहस्रैश्चकोटिभिश्चायुतैरपि ॥ वारणाभैश्चहरिभिर्ययौपरिवृतस्तदा ॥ २४ ॥ तंयांतमनुयांतीसामहतीहरिवाहिनी ॥ हृष्टाःप्रमुदिताःसर्वेसुग्रीवेणाभिपालिताः ॥२५॥ आप्लवंतःप्लवंतश्चगर्जंतश्चप्लवंगमाः ॥ क्ष्वेलंतोनिनदंतश्चजग्मुर्वैदक्षिणांदिशम् ॥ २६॥ भक्षयंतःसुगंधीनिमधूनिचफलानिच ॥ उद्वहंतोमहावृक्षान्मंजरीपुंजधारिणः ॥ २७॥ अन्योन्यंसहसादृप्तानिर्वहंतिक्षिपंतिच ॥ पतंतश्चोत्पतंत्यन्येपातयंत्यपरेपरान् ॥ २८ ॥

हो दक्षिणदिशाको यात्रा करते हुए ॥२३॥ शत २ सहस्र २ कोटि २ अरब २ वानरोंकी सेना श्रीरामचन्द्रजीके साथ चली ॥ २४ ॥ उस कालमें हर्षित, कौतुक युक्त और सुग्रीवपालित वह बडी भारी वानरी सेना श्रीरामचन्द्रजीके पीछे २ चली ॥२५॥ कोई २ वानर सेनाकी रक्षा करनेके लिये चारों ओर कूदते फांदते व गर्जन करते हुए आगे लगे हुए फलमूलादिकी शुद्धशुद्ध परीक्षा करनेके लियेआगे बढे, कोई सिंहनाद कोई सामान्य नाद करके दक्षिणदिशाकी ओर चले ॥२६॥ वह वानर गमन करनेके समय सुगंधियुक्त मधुर फल भक्षण करते और मंजरी पुष्प शोभित महा वृक्षोंको उखाड २ अपने ऊपर लादकर ले चले॥२७॥कोई २ गर्वित होकर एक दूसरेको उठाकर लेचलते और कंधेसे पृथ्वीपर गिरने लगे। कोई२क्रम२से चलने लगे और कोई २ ऊंचेमें गमन करते

हुए दूसरोंको पृथ्वीपर गिराने लगे ॥ २८ ॥ रावण व और दूसरे समस्त राक्षसोंको हम मारडालेंगे, वानरलोग श्रीरामचन्द्रजीके सम्मुख वारंवार यह कह कर गर्जन करने लगे ॥ २९ ॥ महावीर ऋषभ, गन्धमादन और नील बहुत सारे वानरोंके साथ मार्गोंको शोध करते हुए सेनाके आगे २ चलने लगे ॥ ३० ॥ शत्रुओंके संहार करनेवाले श्रीरामचन्द्र लक्ष्मण और वानरराज सुग्रीवजी बल शाली और भयंकर मूर्ति वानर गणोंके साथ उनके मध्य भागमें गमन करने लगे ॥३१॥ महाबलवान् शतबली दश करोड वानर सेनाको संग लिये अकेला ही उस समस्त वानर सेनाकी रक्षा करने लगा ॥३२॥ एक अरब वानरोंकी सेना संग लिये महा बलवान् केशरी, पनस, गज और अर्क उस सेनाके एक पार्श्व की रक्षा करते हुए चले ॥३३॥ सुषेण और जाम्बवान् असंख्य रीछोंकी सेना को

रावणोनोनिहंतव्यः सर्वेचरजनीचराः ॥ इतिगर्जंतिहरयोराघवस्यसमीपतः ॥२९॥ पुरस्तादृषभोनीलोवीरः कुमुदएवच ॥ पंथानंशोधयंतिस्म वानरैर्बहुभिःसह ॥ ३० ॥ मध्येतुराजासुग्रीवोरामोलक्ष्मणएवच ॥ बलिभिर्बहुभिर्भीमैर्वृतः शत्रुनिबर्हणः ॥ ३१ ॥ हरिः शतबलिर्वीरः कोटिभिर्दशभिर्वृतः ॥ सर्वामेकोह्यवष्टभ्यररक्षहरिवाहिनीम् ॥३२॥ कोटिशतपरिवारः केसरीपनसोगजः ॥ अर्कश्चबहुभिः पार्श्वमेकंतस्याभिरक्षति ॥ ३३ ॥ सुषेणोजांबवांश्चैवऋक्षैर्बहुभिरावृतौ ॥ सुग्रीवंपुरतः कृत्वाजघनंसंररक्षतुः ॥ ३४ ॥ तेषांसेनापतिर्वीरोनीलोवानरपुंगवः ॥ संयतश्चरतांश्रेष्ठस्तद्बलंपर्यवारयत ॥ ३५ ॥ बलीमुखः प्रजंघश्चजंभोथरभसः कपिः ॥ सर्वतश्चययुर्वीरास्त्वरयंतः प्लवंगमान् ॥ ३६ ॥ एवंतेहरिशार्दूला गच्छंतिबलदर्पिताः ॥ अपश्यंतगिरिश्रेष्ठंसह्यंगिरिशतायुतम् ॥ ३७ ॥ सरांसिचसुफुल्लानितटाकानिवराणिच ॥ रामस्यशासनंज्ञात्वाभीमकोपस्यभीतवत् ॥ ३८ ॥ वर्जयन्नगराभ्याशांस्तथाजनपदानपि ॥ सागरौघनिभंभीमंतद्वानरबलंमहत् ॥ ३९ ॥

संग लिये सेनाके मध्यमें टिके सुग्रीवजीको आगे करके सेनाके पश्चात् भाग की रक्षा करते जाते थे ॥३४॥ पीछे वानर की सेना चलते चारों ओर के नगरों में पीडा करके वहां उपद्रव न मचावे, इस कारण कूदने फांदनेवालोंमें श्रेष्ठ वानर पुङ्गव महाबल सेना पति नील सर्व प्रकारसे उनको रोकता हुआ चला ॥३५॥ बलीमुख ❋ प्रजंघ, जम्भ, रभस ❋ यह शीघ्रतासे चलने के लिये सब सेना को उत्साहित करने लगे ॥३६॥ इस प्रकार से वीर्यवान् वानरोंकी सेनानेजाते २ अनेक प्रकार के वृक्षोंसे शोभित पर्वत श्रेष्ठ सह्य पर्वत देखा (यहां प्रथम विश्राम) ॥ ३७ ॥ और खिले हुए कमल फूलोंसे शोभायमान सरोवर और श्रेष्ठ तडागभी इस सेनाने देखे परन्तु भयंकर कोपकरनेवाले श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा जान डर के मारे ॥३८॥ वानर लोग नगर और जनपद के निकट भी न जाते, महासागर के

* किसी २ मल ग्रन्थमें "बलीमुख" के बदले "दरीमुख" यह पाठ दृष्टि आता है ॥ दो एक मूल ग्रन्थोंमें "रभस" के बदले 'सरभ' यह नामान्तर देखा जाता है ॥

समान भयानक वह वानरोंकी बडी भारी सेना ॥ ३९ ॥ भयंकर शब्द करते हुए महासागर की नाई शब्द करतीं क्रमसे सह्य पर्वत की प्रथमसीमापर आयपहुँचीं, श्रीरामचन्द्रजी के पार्श्वमें वह कपिकुंजर वानर गण ॥४०॥ श्रेष्ठ सारथिसे चलाये जाकर श्रेष्ठ घोडोंके समान छलांग मार कर शीघ्रतासे गमन करने लगे । उस काल अंगद व हनुमान के ऊपर चढे हुए वह पुरुष श्रेष्ठ श्रीरामलक्ष्मण ॥ ४१ ॥ राहु और केतुसे छुए हुए सूर्य चन्द्रमाके समान शोभा धारण करते हुए। फिर वानरराज सुग्रीव और लक्ष्मणजीनेसे सुपूजित होकर ॥ ४२ ॥ धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकारसे सेनासहित दक्षिण दिशाको चले, फिर भविष्यत् कर्मका तत्त्व जाननेवाले अंगदजीके कंधेपर सवार लक्ष्मणजी शुभ वाणीसे ॥ ४३ ॥ परिपूर्ण अर्थयुक्त वचन श्रीरामचन्द्रजीसे बोले हे रघुनाथजी ! हरी हुई

निःससर्पमहाघोरंभीमघोषमिवार्णवम् ॥ तस्यदाशरथेःपार्श्वेशूरास्तेकपिकुंजराः ॥ ४० ॥ तूर्णमापुप्लुवुःसर्वेसदश्वाइवचोदिताः ॥ कपिभ्या मुह्यमानौतौशुशुभातेनरर्षभौ ॥४१॥ महद्भ्यामिवसंस्पृष्टौग्रहाभ्यांचंद्रभास्करौ ॥ ततोवानरराजेनलक्ष्मणेनसुपूजितः ॥ ४२ ॥ जगामरामो धर्मात्माससैन्योदक्षिणांदिशम् ॥ तमंगदगतोरामंलक्ष्मणःशुभयागिरा ॥ ४३ ॥ उवाचपरिपूर्णार्थंपूर्णार्थप्रतिभानवान् ॥ हृतामवाप्यवैदेहीं क्षिप्रंहत्वाचरावणम् ॥४४॥ समृद्धार्थः समृद्धार्थामयोध्यांप्रतियास्यसि ॥ महांतिचनिमित्तानिदिविभूमौचराघव ॥४५॥ शुभानितवपश्या मिसर्वाण्येवार्थसिद्धये ॥ अनुवातिशिवोवायुःसेनांमृदुहितःसुखः ॥ ४६ ॥ पूर्णवल्गुस्वराश्चेमेप्रवदंतिमृगद्विजाः ॥ प्रसन्नाश्चदिशःसर्वाविम लश्चदिवाकरः ॥४७॥ उशनाचप्रसन्नार्चिरनुत्वांभार्गवोगतः ॥ ब्रह्मराशिर्विशुद्धश्चशुद्धाश्चपरमर्षयः ॥ अर्चिष्मंतःप्रकाशंतेध्रुवंसर्वेप्रदक्षिणम् ॥ ४८ ॥ त्रिशंकुर्विमलोभातिराजर्षिःसपुरोहितः ॥ पितामहःपुरोस्माकमिक्ष्वाकूणांमहात्मनाम् ॥ ४९ ॥

वैदेहीजीको पाय शीघ्रतासे रावणको मार ॥ ४४ ॥ आप पूर्ण मनोरथ हो धनजनसे पूर्ण अयोध्याको लौट जायँगे हे राघव ! पृथ्वी और आकाशमें हम बडे भारी निमित्त ॥ ४५ ॥ शुभ करनेवाले और आपके कार्यकी सिद्धि बतानेवाले देखते हैं यह देखिये मन्द शीतल, सुगंधित अनुकूल पवन, सेनाको सुख देनेके लिये चल रहा है ॥४६॥ समस्त मृग पक्षीगण वियोगरहित श्रवण सुखदायी स्वरसे शब्द कर रहे हैं । सब दिशायें प्रसन्न हैं; दिवाकर विमल किरणोंसे प्रकाश कर रहे हैं ॥४७॥ प्रसन्न किरणवाले भृगुनन्दन शुक्रजी भी आपके पीछे हैं । देखिये आकाशमेघ इत्यादि मलीनतासे रहित होकर विमल हो गया है इस कारण ब्रह्मर्षि और परमर्षिगण ध्रुवकी प्रदक्षिणा करते विमल किरणोंका प्रकाश प्रगटाते उदय हुए हैं *॥४८॥ महात्मा इक्ष्वाकुगणोंके पितामह राजर्षि त्रिशंकुजी,

* यह रात्रिकालकी यात्रा है ।

विश्वामित्रजीके बनाये सप्तर्षिमंडलके बीचमें पुरोहितवसिष्ठजीके साथ विमलदीप्तिप्रकाशित कर रहेहैं॥४९॥और इक्ष्वाकुलोगोंके परम हितकारी विमल व उपद्रव रहित दोनों विशाखा नक्षत्र वैसे ही प्रकाशित हो रहेहैं ॥ ५० ॥ यह देखिये राक्षस लोगोंके हितका करनेवाला निर्ऋति दैवत मूल नक्षत्र भी झुके हुए दंडाकार उदय हुए धूमकेतु ग्रहसे स्पर्शित हो पीडा और संताप पाय रहाहै ॥ ५१ ॥ महाराज ! इन सब बातोंको देखभाल कर जान पडताहै कि,राक्षसोंको विनाश करनेहीके लिये यह सब निमित्त उदय हुए हैं,कारण कि,जिसकी मृत्यु निकट आजाती है,उसको ही नक्षत्र और ग्रहोंकी पीडा होती है ॥५२॥ सरोवरोंका जल मधुर और विमल है,समस्त वृक्ष अकालमें फल उठे हैं,समस्त वृक्षोंके अकालमें फूलनेसे उनकी सुगंधि उनकी ऋतुसे भी अधिक हुई है ॥ ५३ ॥ हे प्रभो ! इसव्यूहाकारसे सजी हुईवानरोंकी सेनाने तारकासुरसे संग्राम करनेमें रत देवसेनाके समान अधिक शोभा धारणकी है । हे आर्य!यह समस्त शुभ निमित्त

विमलेचप्रकाशेतेविशाखेनिरुपद्रवे॥नक्षत्रंपरमस्माकमिक्ष्वाकूणांमहात्मनाम्॥५०॥नैर्ऋतंनैर्ऋतानांचनक्षत्रमतिपीडयते॥मूलोमूलवतास्पृष्टो धूप्यतेधूमकेतुना ॥५१॥ सर्वंचैतद्विनाशायराक्षसानामुपस्थितम्॥ कालेकालगृहीतानांनक्षत्रंग्रहपीडितम् ॥५२॥ प्रसन्नाःसुरसाश्चापोवनानि फलवंतिच ॥ प्रवांतिनाधिकागंधायथर्तुकुसुमद्रुमाः॥५३॥ व्यूढानिकपिसैन्यानिप्रकाशंतेधिकंप्रभो॥ देवानामिवसैन्यानिसंग्रामेतारकामये॥ एवमार्यसमीक्ष्यैतत्प्रीतोभवितुमर्हसि॥५४॥ इतिभ्रातरमाश्वास्यहृष्टःसौमित्रिरब्रवीत्॥ अथावृत्यमहींकृत्स्नांजगामहरिवाहिनी॥५५॥ऋक्ष वानरशार्दूलैर्नखदंष्ट्रायुधैरपि॥कराग्रैश्चरणाग्रैश्चवानरैरुद्धतंरजः॥५६॥भीममंतर्दधेलोकंनिवार्यसवितुःप्रभाम्॥ सपर्वतवनाकाशांदक्षिणांहरिवा हिनी ॥५७॥ छादयंतीययौभीमाद्यामिवांबुदसंततिः॥उत्तरंत्याश्चसेनायाःसततंबहुयोजनम्॥५८॥नदीस्रोतांसिसर्वाणिसस्यंदुर्विपरीतवत्॥ सरांसिविमलांभांसिद्रुमाकीर्णांश्चपर्वतान् ॥ ५९ ॥समान्भूमिप्रदेशांश्चवनानिफलवंतिच ॥ मध्येनचसमताच्चतिर्यक्चाधश्चसाविशत् ॥६०॥

देखकर प्रसन्नताको प्राप्त होवें ॥५४॥ सुमित्रानन्दन लक्ष्मणजीने इस प्रकारसे कहकर श्रीरामचन्द्रजीको समझाया,उसके पीछे वह वानरोंकी सेना,पृथ्वीके बडे भारी भागको ढककरगमन करनेलगी ॥५५॥ उस कालमें नख दांतोंको आयुधबनाये उन ऋक्ष वानर और गोपुच्छवानरोंके करचरणसे उठीहुई धूलिकी राशिने ॥५६॥ सूर्यकी शोभाको ढककर समस्त दिशाको भयंकर अन्धकारसे छाय लिया पर्वत वन आकाशसहित वह वानर वाहिनी सेना ॥५७॥ दक्षिण दिशाको गमन करनेलगी जैसे मेघमाला आकाशको छाय लेतीहै जब बहुत योजनोंतक व निरन्तर वानरोंकी सेना उतरने लगी॥५८॥तब उनके खलबलानेसे नदियां स्वाभाविक गतिको छोड विपरीत गतिको बहती थीं । इस प्रकारसे यह बडीभारी सेना विमल वारिपूर्ण सरोवर वृक्षपूर्ण पर्वत ॥५९॥ समान भूमिप्रदेश और

फल फूल युक्त वनोंके बीचमें प्रवेश करती हुई, ऊंची नीची तिर्छी सीधी सब ओरको सब प्रकारसे जाती थी ॥ ६० ॥ बडे भारी पृथ्वीके भागको ढक कर वह बडी भारी सेना गमन करने लगी, उस कालमें वायुके समान वेगवान् वह वानरोंके मुखसे हर्षका लक्षण प्रगट हो रहा था ॥ ६१ ॥ और वह सब वानर "श्रीरामचन्द्रजीके अर्थ संग्राम करेंगे" कहकर विक्रम और मार्गमें परस्पर हर्ष वीर्य और बलको दिखाते थे ॥ ६२ ॥ और यौवनोचित अनेक प्रकार के दर्प चिह्न दिखायकर क्रूर ध्वनि करते व क्रीडा करते थे, उन गजके समान वानरोंमें कोई २ बडी शीघ्रतासे चलते और कोई २ आकाशमार्गमें गमन कर नेलगे ॥६३॥ और कोई २ हर्षसहित रावणको सुनानेके लिये किलकिला शब्द करते, कोई २ पूंछ फटकारने लगे, कोई २ पृथ्वीपर चरण मारने लगे

समावृत्यमहींकृत्स्नांजगाममहतीचमूः॥ तेहृष्टवदनाःसर्वेजग्मुर्मारुतरंहसः ॥ ६१ ॥ हरयोराघवस्यार्थेसमारोपितविक्रमाः ॥ हर्षवीर्यबलोद्रेकान्दर्शयंतपरस्परम् ॥ ६२ ॥ यौवनोत्सेकजाद्दर्पाद्विविधांश्चक्रुरध्वनि ॥ तत्रकेचिद्द्रुतजग्मुरुत्पेतुश्चतथापरे ॥ ६३ ॥ केचित्किलकिलांचक्रुर्वानरावनगोचराः ॥ प्रास्फोटयंश्चपुच्छानिसन्निजघ्नुःपदान्यपि॥६४॥ भुजान्विक्षिप्यशैलांश्चद्रुमानन्येबभंजिरे ॥ आरोहंतश्चशृंगाणिगिरीणांगिरिगोचराः ॥६५॥ महानादान्प्रमुंचंतिक्ष्वेडामन्येप्रचक्रिरे ॥ ऊरुवेगैश्चममृदुर्लताजालान्यनेकशः ॥ ६६ ॥ जृंभमाणाश्चविक्रांताविचिक्रीडुः शिलाद्रुमैः ॥ ततःशतसहस्रैश्चकोटिभिश्चसहस्रशः ॥६७॥ वानराणांसुघोराणांश्रीमत्परिवृतामही ॥ सास्मयातिदिवारात्रंमहतीहरिवाहिनी ॥ ६८ ॥ प्रहृष्टमुदिताःसर्वेसुग्रीवेणाभिपालिताः ॥ वानरास्त्वरितायांतिसर्वेयुद्धाभिनंदिनः ॥ प्रमोक्षयिषवःसीतांमुहूर्तंक्वापिनावसन् ॥ ६९ ॥ ततःपादपसंबाधंनानावनसमायुतम् ॥ सह्यपर्वतमासाद्यवानरास्तेसमारुहन् ॥ ७० ॥

॥ ६४ ॥ और कोई २ बाँहें फैलाय कर वृक्ष और पर्वतोंको उखाडने व तोडने लगे, पर्वताकार कुछेक वानरगण पर्वतोंके शृंगोंपर चढ कर ॥ ६५ ॥ महानाद करके हँसते क्रीडा करने लगे, कोई२हँसते हुए विक्रम प्रकाश करके प्रलय वेगसे बहुतसारी कोमल बेलोंको तोड पृथ्वीपर गिराते ॥६६॥ जँभाई लेते विक्रमसे वृक्षादिकोंको उखाड २ फेंक२उनसे क्रीडा करने लगे । उन अनेक स्थानसे आये हुए सहस्रों, लक्षों, करोडों, अर्बों, खर्बों ॥६७॥ घोररूपी वानरोंसे पृथ्वी पूर्ण हो गई । वह वानरोंकी बडी भारी सेना दिन रात चली जाती थी ❋ ॥ ६८ ॥ हर्षप्रमुदित, युद्धाभिलाषी और सुग्रीवजीसे पालित सर्व वानरगण शीघ्रतासे चले जाते थे । सीताजीके छुडानेकी उनको इतनी शीघ्रता थी कि, एक मुहूर्त भी इन लोगोंने कहीं विश्राम न लिया ॥ ६९ ॥ अनन्तर उन वानर लोगोंने सम्मुख ही

❋ यह दूसरा निवास हुआ ॥ दिन रातमें एक पहर विश्राम यह तीसरा निवास हुआ ।

विविध वन शोभित अनेक प्रकारके वृक्षोंसे युक्त सह्य पर्वत देखा और उसपर चढगये॥७०॥और श्रीरामचन्द्रजी भी विचित्रकाननयुक्त सह्य व मलय दोनों पर्व तोंकी नदियां व झरने देखते भालते चले जातेथे॥७१॥उन पर्वतों पर लगे हुए चंपक,तिलक,आम,अशोक,सिन्धुवार,तिनिश,करवीरादि वृक्ष वानरगण चलते हुए तोडते जातेथे ॥७२॥ कोई २ अशोक,करञ्ज,प्लक्ष,न्यग्रोध,जामुन आमला और पुन्नागादि वृक्षोंको तोडते उखाडते चलले थे ॥७३॥ पत्थरोंपर लगेहुए अनेक जातिके वन वृक्षवायुके वेगसे चलायमान होकर अपने पुष्पोंको पृथ्वीके ऊपर बखर रहेथे ॥७४॥ स्पर्श करनेसे सुखका देनेनेवाला सुशील चन्दन सुगंधियुक्त वनवायु बहने लगा और भ्रमरगण उस सुरभि सुगन्धिसे मोहित होकर मधुके प्राप्त करनेकी लालसा किये आकाशमें ही अपनी चेष्टा प्रकाशित करने लगे॥७५॥परन्तु यह

काननानिविचित्राणिनदीप्रस्रवणानिच॥पश्यन्नपिययौरामः सह्यस्यमलयस्यच ॥७१॥ चंपकांस्तिलकांश्चूतान्प्रसेकान्सिंदुवारकान् ॥तिनिशान्करवीरांश्चभंजंतिस्मप्लवंगमाः॥७२अशोकांश्चकरंजांश्चप्लक्षन्यग्रोधपादपान्॥ जंबुकामलकान्नागान्भंजंतिस्मप्लवंगमाः७३प्रस्तरेषुचरम्येषु विविधाःकाननद्रुमाः॥वायुवेगप्रचलिताःपुष्पैरवकिरंतितान् ॥७४॥ मारुतःसुखसंस्पर्शोवातिचंदनशीतलः॥षट्पदैरनुकूजद्भिर्वनेषुमधुगंधिषु ॥७५॥अधिकंशैलराजस्तुधातुभिस्तुविभूषितः॥धातुभ्यःप्रसृतोरेणुर्वायुवेगेनघट्टितः॥७६॥सुमहद्वानरानीकंछादयामाससर्वतः गिरिप्रस्थेषुरम्येषुसर्वतःसंप्रपुष्पिताः॥७७॥केतक्यःसिंदुवाराश्चवासंत्यश्चमनोरमाः॥माधव्योगंधपूर्णाश्चकुंदगुल्माश्चपुष्पिताः॥७८चिरिबिल्वामधूकाश्चवंजुलाबकुलास्तथा॥रंजकास्तिलकाश्चैवनागवृक्षाश्चपुष्पिताः॥७९॥चूताःपाटलिकाश्चैवकोविदाराश्चपुष्पिताः॥मुचुलिंदार्जुनाश्चैवश्चवंशिंशपाःकुटजास्तथा॥८०॥हिंतालास्तिनिशाश्चैवचूर्णकानीपकास्तथा॥नीलाशोकाश्चसरलाअंकोलाःपद्मकास्तथा॥८१प्रीयमाणैःप्लवंगैस्तुसर्वेपर्याकुलीकृताः॥वाप्यस्तस्मिन्गिरौरम्याःपल्वलानितथैवच॥८२॥चक्रवाकानुचरिताःकारंडवनिषेविताः॥प्लवैःक्रौंचैश्चसंकीर्णावराहमृगसेविताः॥८३॥

पर्वत राज सह्य अनेक धातुओंके ही द्वारा विशेष करके शोभायमान हो रहा था,उस कालमें धातुओंकी रेणुने पवनसे चलायमान होकर ॥ ७६ ॥ उस बडी भारी वानर सेनाको ढक लिया कारण कि, उस पर्वत पर सब ओरसे रमणीय और फूली हुई ॥७७॥ केतकी, सिन्धुवार, वासन्ती, सुगन्धिपूर्ण माधवी, कुन्द जो कि फूल रहा था ॥७८॥ चिरबिल्व, मधूक, वञ्जुल; अर्थात् स्थलपद्म, बकुल, रंजक, तिलक, पुष्पित नागकेशर ॥७९॥ आम, पाटली अर्थात् गुलाब, कोविदार फूले हुए थे. मुचुलिन्द, अर्ज्जुन, शिंशपा, कुटज आदि वृक्ष फूले हुए महक रहेथे ॥८०॥ हिन्ताल, तिनिश, चूर्णक, कदम्ब, नील, अशोक, शाखू, अंकोल, पद्मक ॥८१॥ आदि सब वृक्षोंको देखकर वानरोंने छिन्न भिन्न कर डाला. उस रमणीक पर्वत पर रमणीक सरोवर और छोटी २ तलैयां ॥८२॥ चक्रवाकोंसे युक्त

कारण्डव निषेवितप्लव अर्थात् जलमुरगादि, व क्रौंच युक्त वराह मृगोंसे सेवित ॥ ८३ ॥ स्थान २ मेंभयानक व्याघ्र, रीछ और सिंह क्रीडा कर रहे हैं और भयंकराकार बहुत सारे सर्पोंसेयुक्त वहां की वापियें थीं ॥ ८४ ॥ वहां समस्त सरोवर सुगन्धि पूर्ण, फूले कमल,कुमुद व और दूसरे जलवाले फूलोंसे शोभित थे ॥८५॥ पर्वतोंके शिखरपर अनेकप्रकारके पक्षी बैठे हुए बराबर मधुरस्वरसे गान कर रहे थे, वानर गण इन समस्तसरोवरोंमें नहाय और जलपीकर फिर खेल करने लगे ॥ ८६ ॥ समस्त वानर पर्वतोंके शिखरों पर एक दूसरेको ढकेलने और वृक्षोंके अमृत समान मीठे फल व सुगंधितपुष्प तोडकर खाय २ फेंकने लगे * ॥८७॥ वानर लोग मदोन्मत्त होकर अनेकप्रकारके वृक्षोंको तोडने लगे, और बहुत सारे द्रोण * प्रमाण लटकते हुए मधुफलखाने लगे ॥८८॥

ऋक्षैस्तरक्षुभिः सिंहैः शार्दूलैश्चभयावहैः ॥ व्यालैश्चबहुभिर्भीमैः सेव्यमानाः समंततः ॥८४॥ पद्मैः सौगंधिकैः फुल्लैः कुमुदैश्चोत्पलैस्तथा॥वारिजै र्विविधैः पुष्पैरम्यास्तत्रजलाशयाः ॥८५॥ तस्यसानुषुकूजंतिनानाद्विजगणास्तथा ॥स्नात्वापीत्वोदकान्यत्रजलेक्रीडंतिवानराः ॥८६॥अन्यो न्यंप्लावयंतिस्मशैलमारुह्यवानराः ॥ फलान्यमृतगंधीनिमूलानिकुसुमानिच ॥ ८७ ॥ बभंजुर्वानरास्तत्रपादपानांमदोत्कटाः॥द्रोणमात्रप्र माणानिलंबमानानिवानराः ॥ ८८ ॥ ययुः पिबंतः स्वस्थास्तेमधूनिमधुपिंगलाः ॥ पादपानवभंजंतोविकर्षंतस्तथालताः ॥८९॥ विधमंतोगि रिवरान्प्रययुः प्लवगर्षभाः ॥ वृक्षेभ्योन्येतुकपयोनंदंतोमधुदर्पिताः ॥९०॥ अन्येवृक्षान्प्रपद्यंतेप्रपिबंत्यपिचापरे ॥ बभूववसुधातैस्तुसंपूर्णाहरि पुंगवैः ॥ यथाकलमकेदारैः पक्वैरिववसुन्धरा ॥९१॥ महेंद्रमथसंप्राप्यरामोराजीवलोचनः ॥ आरुरोहमहाबाहुः शिखरंद्रुमभूषितम् ॥ ९२ ॥

मधुके समान पिङ्गल वह वानर श्रेष्ठ गण मधुपान करते हुएवृक्षोंको तोडते लताओंको घसीटने लगे ॥८९॥ और पर्वत के सम्पूर्ण शिखरोंकोकम्पायमान करते हुए वह वानरश्रेष्ठ गमन करने लगे। कोई २ वानर मधुपानकरनेसे तृप्त होकर वृक्षोंपर चढ २ गर्जने लगे ॥ ९० ॥ उनमें कोई २ वानर गण वृक्षों परसे उतर रहे थे और कोई वृक्षोंपर चढ रहे थे, उस कालमें वह देश वानरश्रेष्ठोंसे परिपूर्ण होकर जडहन धान्यसे पूर्ण खेतके समान शोभायमान होने लगे * ॥९१॥ उसके पीछे कमल लोचन श्रीरामचन्द्रजी सह्य और मलय गिरिकोलांघ कर महेन्द्राचलपर आये। अनेकप्रकारके वृक्षोंसे भूषित उसके शिखर

* यह चौथा विश्राम हुआ ॥ बीस सेरका १ द्रोण होता है। * सजेउ जब प्रभुको कटक अपार ॥ चौंकि सिद्ध मुनि जगेउ डगेउ महि अहिसहिसक्यो न भार ॥ फरकेउ वाम अंग भुजसियके रावणहूंके धाम ॥ इतभये मंग लशकुन हरष उत हरषशोक परनाम ॥ चूमतिजात विजय पद पगपग सुर डर हुलसनघोर ॥ रह्यो पूरि धुनितूर्य जयति जय कोशलराज किशोर ॥

पर चढे॥ ९२ ॥ दशरथ कुमार श्रीरामचन्द्रजी उसके शिखर पर चढ कच्छप मीनों इत्यादिजीवोंसे पूर्ण जलनिधि (समुद्र) को देखते हुए ॥ ९३ ॥ तब श्रीरामचन्द्रजी वऔर सबने सह्य और मलय महापर्वतोंको लांघकर भयंकर शब्द युक्त समुद्र देखा ॥९४॥ तब रमण करने वालोंमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी पर्वत श्रेष्ठसे नीचे उतर कर सुग्रीव और लक्ष्मणजी के साथ अति शीघ्रतासे समुद्र के उत्तमवेलावनमें आये ॥९५॥ वहां पर आकर श्रीरामचन्द्रजी ने देखा कि समुद्रके किनारेवाले पहाडोंकी तली सदा समुद्रके प्रवाहसे धोई जाती है, श्रीरामचन्द्रजी जनरहित तीर भूमि देखकर कहने लगे ॥९६॥ हे बन्धु सुग्रीव ! देखते २ हम सब समुद्र के किनारे पर आय पहुँचे; इससमय समुद्र पार जानेके विषयमें वह चिन्ता हमारे मनमें इस समुद्रको देख कर उदित हुई है कि, जोपहले भी उदय हुई थी ॥ ९७ ॥ इस विशाल समुद्र का दूसरा किनारा दृष्टि नहीं आता, बिना किसीश्रेष्ठ उपायके किये इससमुद्रका उतरना कुछ सहज बात नहीं है ॥ ९८ ॥

ततःशिखरमारुह्यरामोदशरथात्मजः ॥ कूर्ममीनसमाकीर्णमपश्यत्सलिलाकुलम् ॥ ९३ ॥ तेसह्यंसमतिक्रम्यमलयंचमहागिरिम् ॥ आसेदुरानुपूर्व्येणसमुद्रंभीमनिःस्वनम् ॥९४॥ अवरुह्यजगामाशुवेलावनमनुत्तमम् ॥रामोरमयतांश्रेष्ठःससुग्रीवःसलक्ष्मणः ॥९५॥ अथधौतोपलतलांतोयौघैस्सरसोत्थितैः ॥वेलामासाद्यविपुलांरामोवचनमब्रवीत् ॥ ९६ ॥ एतेवयमनुप्राप्ताःसुग्रीववरुणालयम् ॥ इहेदानींविचिंतासायानःपूर्वमुपस्थिता ॥ ९७ ॥ अतःपरमतीरोयंसागरःसरितांपतिः ॥ नचायमनुपायेनशक्यस्तरितुमर्णवः ॥ ९८ ॥ तदिहैवनिवेशोस्तुमंत्रःप्रस्तूयतामिह ॥ यथेदंवानरबलंपरंपारमवाप्नुयात् ॥ ९९ ॥ इतीवसमहाबाहुःसीताहरणकर्शितः ॥ रामःसागरमासाद्यवासमाज्ञापयत्तदा ॥ १०० ॥ सर्वाःसेनानिवेश्यंतांवेलायांहरिपुंगव ॥ संप्राप्तोमंत्रकालोनःसागरस्येहलंघने ॥ १ ॥ स्वांस्वांसेनांसमुत्सृज्यमाचकश्चित्कुतोव्रजेत् ॥ गच्छंतुवानराःशूराज्ञेयंछन्नंभयंचनः ॥ २ ॥ रामस्यवचनंश्रुत्वासुग्रीवःसहलक्ष्मणः ॥ सेनांनिवेशयत्तीरेसागरस्यद्रुमायुते ॥ ३ ॥

हमारे विचारमें तो यह आता है कि यहींपर वानरोंकी सेनाका ठहर जाना उचित हैऔर यह वानरोंकी सेना जिस प्रकारसे समुद्रकेपार होजाय, ऐसी मंत्रणा तुम लोग स्थिर करो ॥९९॥ सीताजीके हरणसे पीडित महाबाहु सीतापतिमहा सागरके निकटपहुँचकर सुग्रीवको इस प्रकारसे सेनाके टिकनेकी आज्ञा देतेहुए ॥१००॥ उन्होंने सुग्रीवसे कहा हे कपिश्रेष्ठ! इस वेलाभूमिमें ही सेनाको टिका दो कारणकि, समुद्रके पार होनेके विषयमें परामर्श करनेका समय आपहुँचा है ॥ १०१ ॥ अपनी सेनाको छोडकर कहीं कोई नहीं जाय कारणकि यहां पर राक्षसोंकी नियतकी हुई अनेक गुप्त सेनाहैं, शूर वानर लोगसेनाके निवासस्थानके बाहर घूमतेहुए ऐसे भयसेइस सेनाकी रक्षा करें ॥२॥ सुग्रीवजी व श्रीलक्ष्मणजीने श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर; उस वृक्षपूर्ण समुद्रके किनारेपर समस्त सेनाको टिकाया ॥ ३ ॥

उस समय महासागरके समीप टिकी हुई यह वानरसेना मधु पिङ्गलवर्ण जलसे पूर्ण दूसरे महासागरके समान शोभायमान होने लगी ॥ ४ ॥ उसके पीछे वह वानर श्रेष्ठगणवेलानको प्राप्त हो उसी स्थानोंमें टिककर समुद्रको दूसरीपारजानेकी अभि लाषा करने लगे॥ ५॥ उस समय वानर सेना समूहकी चिल्लाहटका शब्दसमु द्रके महानादके शब्दको लोप करके श्रवणगोचर होने लगा॥ ६॥ सुग्रीवजीसे पालित वह वानरवाहिनी ऋक्ष वानर और गोपुच्छ इन तीन भागोंमें बांटकर श्रीरा मचन्द्रजीका कार्य सिद्ध करनेको यत्नवती हुई ॥ ७ ॥ समुद्रके किनारे पर टिकी वह वानरसेना पवन वेगसे चलायमान होनेके कारण अति तरंगे उठते हुये समुद्रको देखने लगी ॥ ८ ॥ अति कठिनसे पार जानेके अयोग्य राक्षस सेवित समुद्रको देखते हुए, वानरयूथपगण वहां बैठेथे ॥ ९ ॥ जो उदधि (समुद्र) बडे २

विरराजसमीपस्थंसागरस्यचतद्बलम् ॥ मधुपांडुजलःश्रीमान्द्वितीयइवसागरः ॥४॥ वेलावनमुपागम्यततस्तेहरिपुंगवाः ॥ निविष्टाश्चपरं पारंकांक्षमाणामहोदधेः ॥५॥ तेषांनिविशमानानांसैन्यसन्नाहनिःस्वनः ॥ अन्तर्धायमहानादमर्णवस्यप्रशुश्रुवे ॥६॥ सावानराणांध्वजिनीसु ग्रीवेणाभिपालिता ॥ त्रिधानिविष्टामहतीरामस्यार्थपराऽभवत् ॥ ७ ॥ सामहार्णवमासाद्यहृष्टावानरवाहिनी ॥ वायुवेगसमाधूतंपश्यमाना महार्णवम् ॥८॥ दूरपारमसंबाधंरक्षोगणनिषेवितम् ॥ पश्यंतोवरुणावासंनिषेदुर्हरियूथपाः॥ ९ ॥ चंडनक्रग्राहघोरंक्षपादौदिवसक्षये ॥ हसंत मिवफेनौघैर्नृत्यंतमिवचोर्मिभिः ॥ ११० ॥ चंद्रोदयेसमुद्भूतंप्रतिचंद्रसमाकुलम् ॥ चंडानिलमग्राहैःकीर्णंतिमितिमिंगिलैः ॥ ११ ॥ दीप्त भोगैरिवाकीर्णंभुजंगैर्वरुणालयम् ॥ अवगाढंमहासत्त्वैर्नानाशैलसमाकुलम् ॥ १२ ॥ सुदुर्गंदुर्गमार्गन्तमगाधमसुरालयम् ॥ मकरैर्नागभोगै श्चविगाढावातलोलिताः ॥ १२ ॥

नाके और घडियालोंके रहनेके कारण भयंकर हो रहा था, प्रदोषकालके समय जब उससे फेन आजाताहै; तब ऐसा जान पडता है मानों हँस रहा है, और जब यह अपनी तरंगोंका विस्तार करता है तब यही उसका नृत्यभाव जाना जाया करता है॥ ११० ॥ इस समय चंद्रमाके उदय होनेसे समुद्रका जल बढने लगा और चन्द्रमाका प्रतिबिम्ब उसके वक्षस्थलमें शोभायमान होने लगा । यह समुद्र पातालके सामान भयंकर उसकेइधर उधर तिमिङ्गिल मत्स्य शोभा देरहे थे॥ ११ ॥ उसकालमें महासागरतरं गोंके अग्रभागसे मानों फेनरूप चन्दनको पीस रहा था और चंद्रमा अपनी किरणसमूहोंसे उसको ग्रहण करके दिगङ्गनाओंके अंगोंमें लेपन कररहा था। यह सागर प्रकाशित फणवाले सर्पोंसे युक्त व और जलचर जीवोंसे भरे अनेक पर्वतोंसे व्याप्त ॥ १२ ॥ होनेके कारण मार्गरहित सब किसीके जानेके अयोग्य औ असुरलो

गोंके वास करनेकी भूमि है, मत्स्य नाके और नागादिके भोगका स्थान उन्हीं जीवोंके पवनके संयोगसे चलायमान होनेके कारण॥१३॥जलराशि कभी ऊपरको उठती थी कभी फिर नीचेको चली आती थी, समुद्रमें भयंकराकार जलसर्प जो रहते थे उनके फणोंकी मणिकी किरण जो जलपर छिटकती उससे ऐसा जान पडता थाकि मानो किसीने जलके ऊपर अग्निकी चिनगारियें बखेरदी हैं; ऐसा घोर समुद्र असुरोंके रहनेका तो स्थानही था इसीके नीचे पातालमें असुर रहतेहैं॥१४॥समुद्र आकाशके समान और आकाश समुद्रके समान होनेसे सागर और आकाश विशेषरहित होनेसेएकहीसे जान पडते थे ॥१५॥ समुद्रमें आकाशका प्रतिबिम्ब और आकाशमेंसमुद्रकी ऊंची लहरोंका जल मिल जानेसे दोनोंही तुल्यरूप नक्षत्रदीप्त और रत्न ज्योतिके रहनेसे दोनोंही एकसे जानपडते थे ॥ १६ ॥आकाशमें मेघमाला समुद्रमें तरंगमाला, इसलिये आकाशमें समुद्र और समुद्रमें आकाश मिला हुआ था कुछ अन्तर विदित नहीं होता था ॥१७॥ प्रबल तरंगोंके उठनेसे

उत्पेतुश्चनिपेतुश्चप्रहृष्टाजलराशयः ॥ अग्निचूर्णमिवाविद्धंभास्वरांबुमहोरगम्॥ सुरारिनिलयंघोरंपातालविषयंसदा ॥१४॥ सागरंचांबरप्रख्य मंबरंसागरोपमम् ॥ सागरंचांबरंचेतिनिर्विशेषमदृश्यत ॥१५॥ संपृक्तंनभसाप्यंभः संपृक्तंनभसोऽभसा ॥ तादृग्रूपेस्मदृश्येतेतारारत्नसमाकुले ॥ १६ ॥ समुत्पतितमेघस्यवीचिमालाकुलस्यच ॥ विशेषोनद्वयोरासीत्सागरस्यांबरस्यच ॥ १७ ॥ अन्योन्यैराहताः सक्ताः सस्वनुर्भीमनिः स्वनाः ॥ ऊर्मयः सिंधुराजस्यमहाभेर्यइवांबरे ॥ १८ ॥ रत्नौघजलसन्नादंविषक्तमिववायुना ॥उत्पतंतमिवक्रुद्धंयादोगणसमाकुलम् ॥ १९ ॥ ददृशुस्तेमहात्मानोवाताहतजलाशयम् ॥ अनिलोद्धूतमाकाशेप्रलपंतमिवोर्मिभिः ॥१२०॥ ततोविस्मयमापन्नाहरयोददृशुः स्थिताः ॥ भ्रांतोर्मिजालसन्नादंप्रलोलमिवसागरम् ॥१२१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥

महाकाशमें महाभेरीके बराबर भयंकर शब्द हो रहा था क्योंकि समुद्र लहरोंके उठनेसे शब्द करता था और फिर वह लहरें आकाशमेंएक दूसरीसे टकराकर शब्द करती थीं इससे भी समुद्र और आकाशकी समता पाई गई॥१८॥जलजीवसमाकुल जलनिधिका जल पवनके द्वारा चलायमान होकर सब रत्न अपनी लहरोंके द्वारा ऊपरको उछाल रहा था कि, जिससे ऐसा जान पडता था कि, महासागर क्रोधित होकर मानों इन रत्नोंको फेंक रहा है ॥ १९ ॥ वह महात्मा पवनसे चलायमान समुद्रके जलको पवनके संयोगसे आकाशमें उठता देखते हुये कि जैसे समुद्र कुछ प्रलाप वचन कर रहाहै ॥१२०॥ इस प्रकारसे वह महाबलवान् वानरगण चिन्तायुक्त होकर वारिविक्रम और जलशब्दसे परिपूर्ण महासागर और पवनकंपित तरंग विहँसित आकाशको देखने लगे ॥ १२१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०

वा० आदि० युद्धकांडे भाषायां चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥ वह वानरोंकी समस्त सेना सेनापति नीलकरके समुद्रके उत्तर तीर पर टिकाईजाकर विधि विधानसे रक्षित होने लगी ॥ १ ॥ वानर पुङ्गव मैन्द और द्विविद उससेनाकी रक्षा करनेके लिये उसके चारों ओर घूमने लगे ॥ २ ॥ जब सब सेना नद नदीपति समुद्रके तीरपर इस प्रकार टिकगई तब श्रीरामचन्द्रजी अपनी बगलमें बैठेहुये लक्ष्मणजीसे बोले ॥ ३ ॥ वत्स लक्ष्मण ! कहतेहैं कि ज्यों ज्यों काल चला जाता है त्यों २ शोक भी बीतता जाताहै, परन्तु हमारे लिये तो यह बात विपरीतसी जान पडती है क्योंकि सीताजीके न देखनेसे हमारा शोक दिन २ बढरहा हैं घटता नहीं ॥४॥ इसकारण हमें दुःख नहीं है, कि हमारी प्यारी दूर हैं और इस कारण भी हमको दुःख नहीं होता कि उनको रावण हरण करले गयाहै, परन्तु धीरे २ उनका जीवन जो क्षीण होता जाता है; बस दुःख एक इसी कारणसेहै ॥५॥ हे पवन ! हेसमीर ! जहां पर जानकीजी हैं तुमभी वहींपर जाओ,

सातुनीलेनविधिवत्स्वारक्षासुसमाहिता ॥ सागरस्योत्तरेतीरेसाधुसाविनिवेशिता ॥ १ ॥ मैंदश्चद्विविदश्चोभौतत्रवानरपुंगवौ ॥ विचेरतुश्चतांसेनांरक्षार्थंसर्वतोदिशम् ॥ २ ॥ निविष्टायांतुसेनायांतीरेनदनदीपतेः ॥ पार्श्वस्थंलक्ष्मणंदृष्ट्वारामोवचनमब्रवीत् ॥ ३ ॥ शोकश्चकिलकालेगनच्छताह्यपगच्छति॥ममचापश्यतःकांतामहन्यहनिवर्धते ॥४॥ नमेदुःखंप्रियादूरेनमेदुःखंहृतेतिच॥ एतदेवानुशोचामिवयोस्याह्यतिवर्तते ॥५॥ वाहिवातयतःकांतांतांस्पृष्ट्वामामपिस्पृश ॥ त्वयिमेगात्रसंस्पर्शश्चंद्रेदृष्टिसमागमः ॥६॥ तन्मेदहतिगात्राणिविषंपीतमिवाशये ॥ हानाथेतिप्रियासामांह्रियमाणायदब्रवीत ॥ ७ ॥ तद्वियोगेंधनवतातच्चिंताविमलार्चिषा ॥ रात्रिंदिवंशरीरंमेदह्यतेमदनाग्निना ॥ ८ ॥ अवगाह्यार्णवंस्वप्स्येसौमित्रेभवताविना ॥ एवंचप्रज्वलन्कामोनमांसुप्तंजलेदहेत् ॥ ९ ॥

वरन् उनका शरीर स्पर्श करके फिर आकर तुम हमारा अंग छूना, जो तुम ऐसा करो तो जिस प्रकार गर्मीकेतापसे नेत्रोंकी ज्योति खोये हुए मनुष्यको चन्द्रमाके देखनेसे फिर दृष्टि मिलजाती, प्यारीको स्पर्श करके जो तुम हमको स्पर्श करोगे, तो सीताजीके शोकसे संतापित हुआ जो हमारा शरीर वह शीतल हो जायगा व चन्द्रमामें दोनोंकी दृष्टिका समागमहै ॥ ६ ॥ जिससमय कि उनको रावणने हरण किया था, उससमय सीताजीनेलज्जित हो हा नाथ! यह कहकर जो हमको पुकारा था, सो वहीशब्द हमारे मनमेंइससमय विषवत् टिका हुआ हमारे शरीरको दग्धकर रहा है ॥७॥ हेलक्ष्मण ! हमारा शरीर दिन रात कामानलमें भस्म हो रहा है, प्यारीका जो विरह है, वहीतो उस अग्निमें मानो काठपर रहाहै, और उनके विरहकी जो चिन्ताहै वही मानों इस अग्निकी निर्मल शिखा है॥८॥ हे लक्ष्मण! तुम यहीं पर रहो हम इकलेही समुद्रमें प्रवेश करके सोये रहते हैं, कारणकि जब हम जलमें प्रवेशकर शयन करेंगे, तो प्रज्वलित कामानल वहां हमें दग्ध

नहीं कर सकेगा ॥९॥ वह वामोरू सीताजीऔर हम यह दोनोंही एक पृथ्वीपर हैंहे लक्ष्मण ! बस अबतक हम इसी आशासेहीजीवन धारण कियेहैं ॥ १० ॥ जिस प्रकार जलसे पूर्ण खेत जब सूख जाता है, तबउसमेंके जमे हुए धान उस खेतकी जलपूर्ण अवस्थाके वशहो कदाचित् जीवितभीरहते हैं, वैसेही " सीता जीवन धारण किये हैं" यही सुन कर हम जीवन धारणकिये हुए हैं ॥ ११ ॥ हाय! कितने दिनमें शत्रुको जीतकर कमलनेत्रवाली धनधान्ययुक्त राज्यलक्ष्मीके समान श्रीमती उन जानकीजीका दर्शन हम पावेंगे ॥१२॥ हाय! रोगी पुरुषके रसायन पीनेके समान कब उन सुन्दर दंशनवाली जानकीजीका मुखकमल झुका कर हम अधरसुधा पियेंगे ? ॥१३॥ कितने दिनोंमेंवह जानकीजी हँसती हुई ताल फलके समान पीन व ऊंचे स्तनयुगल कम्पायमान करके हमको भली भांति

बह्वेतत्कामयानस्यशक्यमेतेनजीवितुम् ॥ यदहंसानवामोरूरेकांधरणिमाश्रितौ ॥ १० ॥ केदारस्येवकेदारःसोकस्यनिरूदकः ॥ उपस्ने हेनजीवामिजीवंतींयच्छृणोमिताम् ॥ ११ ॥कदानुखलुसुश्रोणींशतपत्रायतेक्षणाम् ॥ विजित्यशत्रून्द्रक्ष्यामिसीतांस्फीतामिवश्रियम् ॥१२॥ कदासुचारुदंतोष्ठंतस्याःपद्ममिवाननम् ॥ ईषदुन्नाम्यपास्यामिरसायनमिवातुरः ॥१३॥ तौतस्याःसहितौपीनौस्तनौतालफलोपमौ ॥ कदानु खलुसोत्कंपौहसंत्यामांभजिष्यतः ॥१४॥ सानूनमसितापांगीरक्षोमध्यगतासती ॥ मन्नाथानाथहीनेवत्रातारंनाधिगच्छति ॥ १५ ॥ कथंज नकराजस्यदुहितामम चप्रिया ॥ राक्षसीमध्यगाशेतेस्नुषादशरथस्यच ॥ १६ ॥ अविक्षोभ्याणिरक्षांसिसाविधूयोत्पतिष्यति ॥ विधूयज लदान्नीलान्शशिलेखाशरत्स्विव ॥१७॥ स्वभावतनुकानूनंशोकेनानशनेचन ॥ भूयस्तनुतरासीतादेशकालविपर्ययात् ॥१८॥ कदानुराक्षसें द्रस्यनिधायोरसिसायकान् ॥ शोकंप्रत्याहरिष्यामिशोकमुत्सृज्यमानसम् ॥ १९ ॥

भेंटकर तृप्त करेंगी ॥ १४ ॥ वह श्याम नयनवाली जनककुमारी जानकीजी हमसमान स्वामीके रहते राक्षसोंके वशमें हो अनाथके समान किसीको भी अपना छुटानेवाला नहीं पातीहैं ॥ १५ ॥ हाय! कैसे दुःखकी बात है राजर्षि जनककी लडैती पुत्रीमहारा जाधिराज दशरथजीकी पुत्रवधू और हमारी प्राणसम प्यारी भार्या होकरभी जानकीजी किस प्रकारसे राक्षसोंकेबीचमें शयन करती होंगी॥१६॥ चन्द्रकला जिसप्रकार शरत्कालमें सुनील मेघमालाको भेदन करके उदित होती है वैसेही जानकीजीहमारे भुजबलसे दुर्द्धर्ष राक्षसोंको दलनकरके प्रकाशित होंगी ॥ १७ ॥ हे लक्ष्मणजी! एकतो प्राणप्यारी जानकीजी स्वभावसेही दुर्बल हैं उसके ऊपर देशकालके शोक व उपवासको पाय कर और भी अधिक दुर्बल हो गई होंगी ॥१८॥ या कितने दिनोंमेंहम उस दुरात्मा राक्षस रावणके वक्षस्थलमें

बाण मारकर जानकीजीको प्राप्त कर सकेंगे और अपना शोक दूरकरेंगे ॥१९॥ सुरसुन्दरी समान पतिव्रता जानकीजी कब उत्कंठित हो हमारे गलेसे लगकर आनंदके आँसू बहावेंगी ? ॥२०॥ नहीं जानते कि,सीताजीके वियोगसे उत्पन्न हुआ यह घोर शोक मलीन वस्त्रकी नांई कब हम छोडेंगे ? ॥२१॥ बुद्धिमान् रामचन्द्रजी शोकमें अधीर होकर इस प्रकारसे विलाप करने लगे । इस ओर दिनका अंतजान भगवान् भास्कर हीनकांति हो अस्ताचलको गमन करते हुए॥२२॥यद्यपि रामचन्द्रजी सीताजीके शोकसे अति संतापित हो रहे थे,परन्तु लक्ष्मणजीके समझाने बुझानेसे सावधान हो सन्ध्या वन्दनादिमें अपना मन लगाते हुए ॥२३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदि० युद्धकांडे भाषायां पञ्चमः सर्गः ॥५॥ उस ओर राक्षसोंका स्वामी रावण लंकाके मध्यमें महाबलवान् इन्द्रजीके समान हनुमानजीका किया वह घोरभयानक कार्य देख लज्जाके मारे कुछेक शिर झुकाकर राक्षसोंसे कहने लगा ॥१॥ कि,देखो केवल एकही वानरने आकर

कदानुखलुमेसाध्वीसीताऽमरसुतोपमा॥सोत्कंठाकंठमालंब्यमोक्ष्यत्यानंदजंजलम् ॥२०॥ कदाशोकमिमंघोरंमैथिलीविप्रयोगजम् ॥ सहसा विप्रमोक्ष्यामिवासःशुक्लेतरंयथा॥२१॥ एवंविलपतस्तस्यतत्ररामस्यधीमतः ॥ दिनक्षयान्मंदवपुर्भास्करोस्तमुपागतः ॥२२॥ आश्वासितो लक्ष्मणेनरामःसंध्यामुपासत॥स्मारन्कमलपत्राक्षींसीतांशोकाकुलीकृतः॥२३॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०युद्धकांडे पंचमः सर्गः॥५॥लंकायांतुकृतंकर्मघोरंदृष्ट्वाभयावहम्॥राक्षसेंद्रोहनुमताशक्रेणेवमहात्मना॥अब्रवीद्राक्षसान्सर्वान्ह्रियाकिंचिदवाङ्मुखः॥१॥ धर्षिताचप्रविष्टाचलंकादुष्प्रसहापुरी॥ तेनवानरमात्रेणदृष्टासीताचजानकी॥२॥ प्रासादोधर्षितश्चैत्यःप्रवराराक्षसाहताः॥ आविलाचपुरीलंका सर्वाहनुमताकृता॥३॥किंकरिष्यामिभद्रंवःकिंवोयुक्तमनंतरम्॥उच्यतांनःसमर्थंयत्कृतंचसुकृतंभवेत् ॥४॥मंत्रमूलंचविजयंप्रवदंतिमनस्विनः॥ तस्माद्वैरोचयेमंत्रंरामंप्रतिमहाबलाः ॥ ५ ॥ त्रिविधाःपुरुषालोकेउत्तमाधममध्यमाः ॥ तेषांतुसमवेतानांगुणदोषौवदाम्यहम् ॥ ६ ॥

इस अजेय लंकापुरीको व्याकुल कर दिया और वह इस पुरीमें प्रवेश करके जनककुमारी जानकीजीको भी देख गया,और हमाराभी अपमान करनेमें उसने कुछ कसर नहीं की॥२॥ हनुमान्ने अकेलेही देवीका बडा भारी मंदिर तोडताड डाला और उसने बडे २ राक्षसोंका संहार करके इस लंकापुरी फूंक फांक कर मलीन कर दिया॥३॥जो हो,अब तुम सब बताओ कि,हम तुम्हारे लिये किसकार्यका प्रारंभ करें ? और यह भी कहो कि,इससमय तुम सबको भी कौन कर्म करना उचित है उस कर्मका परिणाम वाञ्छनीय हो ऐसा कोई उपाय इस समय तुम लोग बताओ ॥ ४ ॥ इस समय रामचन्द्रके विरुद्धाचरणमें सलाह करना ठीक है,कारण कि,पंडित लोग मंत्रणा करनेहीको विजयप्राप्तिका मूल बतलाते हैं ॥५॥ पृथ्वीमें उत्तम,मध्यम,अधम यह तीन प्रकारके पुरुष दृष्टि आया करते

हैं, सो इस समय हम उन समस्त समवेत पुरुषोंके गुण दोष वर्णन करते हैं तुम लोग सुनो ॥६॥ जो पुरुष हितकारी और मंत्रके निर्णय करनेमें समर्थ मंत्री लोगोंके साथ कार्यके विषयमें परामर्श करता है अथवा बराबर अपना सुखदुःख भोगनेवाले मित्र और बन्धु बान्धवोंके साथ ॥७॥ परामर्श करके देवताकी सहा यता पानेका यत्नकर कार्यका आरंभ करता है पंडितलोग ऐसे पुरुषको उत्तम पुरुष कहा करते हैं ॥ ८ ॥ जो पुरुष इकलाही धर्म और अर्थका विचार करके अकेलाही कार्यका आरंभ करता है उसको ही मध्यम पुरुष कहते हैं ॥९॥ गुण दोषका विचार या देवताका आश्रय ग्रहण न करके मैं अकेला ही इस कार्यको करलूंगा यह निश्चय करता हुआ कार्य करने लगे और फिर उस कार्यकी उपेक्षा करताहै वह अधम पुरुष कहा जाता है ॥१०॥ जिस प्रकार पुरुषोंके मध्यमें उत्तम मध्यम और अधम यह तीन विभाग हैं मंत्री लोगोंके मंत्रनिर्णय करनेके विषयमें भी वैसेही उत्तम, मध्यम और अधम यह तीन विभागहैं ॥११॥ जिस सला

मंत्रस्त्रिभिर्हिसंयुक्तः समर्थैर्मंत्रनिर्णये ॥ मित्रैर्वापिसमानार्थैर्बांधवैरपिवाधिकैः ॥ ७ ॥ सहितोमंत्रयित्वायःकर्मारंभान्प्रवर्तयेत् ॥ दैवेचकुरुतेय त्नंतमाहुःपुरुषोत्तमम् ॥८॥ एकोर्थंविमृशेदेकोधर्मेप्रकुरुतेमनः ॥ एकःकार्याणिकुरुतेतमाहुर्मध्यमंनरम् ॥९॥ गुणदोषौननिश्चित्यत्यक्त्वादैवव्यपा श्रयम् ॥ करिष्यामीतियःकार्यमुपेक्षेत्सनराधमः ॥१०॥ यथेमेपुरुषानित्यमुत्तमाधममध्यमाः ॥ एवंमन्त्रोपिविज्ञेयउत्तमाधममध्यमः ॥११॥ ऐकमत्यमुपागम्यशास्त्रदृष्टेनचक्षुषा ॥ मंत्रिणोयत्रनिरतास्तमाहुर्मंत्रमुत्तमम् ॥१२॥ बह्वीरपिमतीर्गत्वामंत्रिणामर्थनिर्णयः ॥ पुनर्यत्रैकतांप्राप्तः समंत्रोमध्यमःस्मृतः ॥ १३ ॥ अन्योन्यमतिमास्थाययत्रसंप्रतिभाष्यते ॥ नचैकमत्येश्रेयोस्तिमंत्रःसोऽधमउच्यते ॥१४॥ तस्मात्सुमंत्रितंसा धुभवंतोमतिसत्तमाः ॥ कार्यंसंप्रतिपद्यंतामेतत्कृत्यंमतंमम ॥१५॥ वानराणांहिधीराणांसहस्रैःपरिवारितः ॥ रामोऽभ्येतिपुरींलंकामस्माकमुपरो धकः ॥१६॥ तरिष्यतिसुव्यक्तंराघवःसागरंसुखम् ॥ तरसायुक्तरूपेणसानुजःसबलानुगः ॥ १७ ॥

हमें सब एक मत होकर नीतिशास्त्रके अनुसार सब सम्मति किया करते हैं, उसे उत्तम मंत्र कहतेहैं ॥१२॥ जहां पर प्रथम मंत्रियोंकी अलग २ मति होकर विचार किया जाता है और फिर पीछेसे कार्यकेसमय फिर सबकी सम्मति एक होजातीहै वही मध्यममंत्र कहलाता है ॥१३॥ और जिस मंत्रणामें सबका अलग२ मत होनेसे मंत्रीगण विरुद्ध भाषी हों और कभी एकमति हो जाँय, तो भी उसका परिणाममंगलदाई नहीं होता, ऐसा परामर्श अधम मंत्र कहलाता है ॥१४॥ हे मंत्री गण ! तुम सब मंत्रणा कार्यमें पंडित हो, जो कर्तव्य और श्रेष्ठ हो उसको एकमतावलम्बी होकर स्थिर करो; बस वही हमारा कर्तव्य होगा ॥१५॥ विचार करके देखो कि, रामचन्द्र असंख्य वानरोंकी सेना साथ लेकर हमें रोकनेको लंकाकेऊपर चढाई करने आय रहेहैं ॥१६॥ वह रघुनंदन रामचन्द्र सगरके वंशमें उत्पन्न हुए हैं इससे निश्चय ही जान पडता है कि, वह तपोबल अथवा दिव्य अस्त्र बलसे किसी प्रकारसे भी हो, अनुज लक्ष्मण और समस्त वानरोंकी सेनाके सहित समुद्रके

पार आजायँगे ॥ १७॥ जब कि, उनके दलवाले एक ही वानरने यहां आयकर ऐसा कार्य निर्वाह किया परन्तु रामचन्द्र या तो बाणोंसे समुद्रको सुखाय देंगे या उसके ऊपर पुल बनावेंगे अथवा और कोई उपाय ग्रहण कर समुद्रके पार आय वानरोंके साथ जब लंकामें आवें उस काल हमारी पुरी और सेनाका जिससे मंगल हो, सो ऐसेउपायको तुम लोग विचार कर स्थिर करो ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदिकाव्ये युद्धकांडे भाषायां षष्ठः सर्गः ॥ ६ ॥ वह महाबलवान् राक्षसगण राक्षसोंके स्वामी रावणसे इस प्रकार कहे जाकर सबही हाथ जोडकर कहने लगे ॥ १ ॥ महाराज ! शत्रुकी ओरका बलाबलविना जाने सलाह करना निर्बोधका कार्य है । राजन् ! आपके पास मुद्गर, शूल, शक्ति, ऋष्टि, पटाधारी ॥ २ ॥ बडी भारी सेना है फिर आप किस कारणसे

समुद्रमुच्छोषयतिवीर्येणान्यत्करोतिवा ॥ तस्मिन्नेवंविधेकार्येविरुद्धोवानरैःसह॥ हितंपुरेचसैन्येचसर्वेसंमंत्र्यतांमम॥१८॥ इ० श्री० वाल्मी० आदि० च० सा० युद्धकांडे षष्ठः सर्गः ॥६॥ इत्युक्ताराक्षसेंद्रेणराक्षसास्तेमहाबलाः ॥ ऊचुःप्रांजलयःसर्वेरावणंराक्षसेश्वरम् ॥१॥ द्विषत्पक्षम विज्ञायनीतिबाह्यास्त्वबुद्धयः ॥ राजन्परिघशक्त्यृष्टिशूलपट्टिशकुंतलम् ॥ २ ॥ सुमहन्नोबलंकस्माद्विषादंभजतेभवान् ॥ त्वयाभोगवतींगत्वा निर्जिताःपन्नगायुधि ॥ ३ ॥ कैलासशिखरावासीयक्षैर्बहुभिरावृतः ॥ सुमहत्कदनंकृत्वावश्यस्तेधनदःकृतः ॥ ४ ॥ समहेश्वरसख्येनश्ला घमानस्त्वयाविभो ॥ निर्जितःसमरेरोषाल्लोकपालोमहाबलः ॥५॥ विनिपात्यचयक्षौघान्विक्षोभ्यविनिगृह्यच ॥ त्वयाकैलासशिखराद्विमान मिदमाहृतम् ॥ ६ ॥ मयेनदानवेंद्रेणत्वद्भयात्सख्यमिच्छता ॥ दुहितातवभार्यार्थेदत्ताराक्षसपुंगव ॥ ७ ॥ दानवेंद्रोमहाबाहोवीर्योत्सिक्तोदु रासदः ॥ विगृह्यवशमानीतःकुंभीनस्याःसुखावहः ॥ ८ ॥

विषाद करते हैं ? आपने पातालमें जायकर सर्पोंको युद्धमें जीत लिया है ॥ ३ ॥ कैलासके शिरपर रहनेवाले बहुत सारे यक्षोंके सहित कुबेरसे बडा भारी संग्राम करके उनको आपने अपने वशमें किया है ॥ ४ ॥ हे महाराज ! जो अपनेको महेश्वरका सखा कहकर अपनी बडाई किया करते हैं, आपने रोषमें भरकर रणभूमिमें इन लोकपालोंको भी जीता ॥ ५ ॥ और पराजित कर यक्षोंको जीत दंड दे उनमेंसे अनेकोंको मार डाल कर कैलास वनसे आप यह पुष्पक विमान ले आये ॥ ६ ॥ हे राक्षसोंके स्वामी ! दानवनाथ मयने आपके भयकी शंका कर आपके सहित मित्रता करनेकी वासनासे अपनी कन्या मन्दोदरी आपको स्त्री बनानेके लिये दी ॥ ७ ॥ कुम्भीनसीके प्यारे स्वामी वीर्यवान् अजीत दानवोंके स्वामी मधुके सहित युद्ध करके आपने उसको अपने

वशमें किया ॥ ८ ॥ हे महाबाहो ! आपने पातालमें गमन करके नागोंको जीत लिया है। और वासुकी, तक्षक, शंख और जटी इत्यादि सब नाग गण आपके वशमें आय गये हैं ॥९॥ हे प्रभो ! फिर अक्षय बलवान् शूर और वरदान पाये कालकेय दानवोंसे आपने वर्ष भरतक युद्ध कर उनको परास्त किया है ॥१०॥ हे शत्रु दमन कारी! हे राक्षसनाथ! फिर आपने उनको अपने वशमें करके उनके निकट से अनेक मायाकी विद्या ग्रहण की ॥११॥ हे महाभाग ! आपके रणभूमिमें चतुरंगिणी सेनाके सहित शूर और महाबलवान् जलनाथ वरुणके पुत्रोंको पराजित किया है ॥ १२ ॥ हे राजन् ! आपने मृत्युके दंडरूप महानाकोंसे युक्त यातना रूप शाल्मली द्रुम मंडित कालपाश रूप महातरंगसे पूर्ण यम किंकर रूप परिपूर्ण ॥१३॥ महाज्वरके होनेसे किसीके न सहने योग्य

निर्जितास्तेमहाबाहोनागागत्वारसातलम् ॥ वासुकिस्तक्षकःशंखोजटीचवशमाहृताः ॥ ९ ॥ अक्षयाबलवंतश्चशूरालब्धवराःपुनः ॥ त्वया संवत्सरेयुद्धासमरेदानवाविभो ॥ १० ॥ स्वबलंसमुपाश्रित्यनीतावशमरिंदम ॥ मायाश्चाधिगतास्तत्रबह्वचोवैराक्षसाधिप ॥ ११ ॥ शूराश्च बलवंतश्चवरुणस्यसुतारणे ॥ निर्जितास्तेमहाभागचतुर्विधबलानुगाः ॥ १२ ॥ मृत्युदंडमहाग्राहंशाल्मलीद्रुममंडितम् ॥ कालपाशमहावीचियमकिंकरपन्नगम् ॥ १३ ॥ महाज्वरेणदुर्धर्षयमलोकमहार्णवम् ॥ अवगाह्यत्वयाराजन्यमस्यबलसागरम् ॥ १४ ॥ जयश्चविपुलःप्राप्तो मृत्युश्चप्रतिषेधितः ॥ सुयुद्धेनचतेसर्वेलोकास्तत्रसुतोषिताः ॥ १५ ॥ क्षत्रियैर्बहुभिर्वीरैःशक्रतुल्यपराक्रमैः ॥ आसीद्वसुमतीपूर्णामहद्भिरिवपादपैः ॥ १६ ॥ तेषांवीर्यगुणोत्साहैर्नसमोराघवोरणे ॥ प्रसह्यतेत्वयाराजन्हताःसमरदुर्जयाः ॥ १७ ॥ तिष्ठवाकिंमहाराजश्रमेणतववानरान् ॥ अयमेकोमहाराजइंद्रजित्क्षेपयिष्यति ॥ १८ ॥

यम बलके सागर यम लोक रूप महासागरमें स्नान करके ॥१४॥ आप विपुल जयको प्राप्त हुए हैं, और आपने मृत्युको भी रोक दिया, हे महाराज ! वहां पर आपका उत्तम युद्ध देखकर समस्त लोग संतुष्ट हुये थे ॥ १५ ॥ जिस प्रकार वृक्षोंकी राशिसे पृथ्वी परिपूर्ण हो जाती है, वैसेही पूर्ण समय में देवेन्द्रके समान पराक्रमवाले बहुतसारे वीर क्षत्रियोंसे यह पृथ्वी परिपूर्ण हो गई थी ॥१६॥ अधिक क्या कहैं यह रामचन्द्र बल, वीर्य, उत्साह या गुणमें उन क्षत्रियों के समान नहीं हैं कि, जिन अजेय क्षत्रियोंको आपके पहले सरलतासे रणमें संहार कर डाला था, फिर रामके लिये क्या शोच विचार ?॥१७॥ हे महाराज ! आप को कष्ट करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं आप स्थिर रहिये; आप जान लीजिये कि अकेला इन्द्रजित ही समस्त वानरोंकी सेनाका विनाश कर देगा॥१८॥

विशेष करके इन मेघनादने दिव्य यज्ञ का आरंभ करके आशुतोष श्रीशिवजीका संतोष साधन करके उनसे दुर्लभ वर लाभ किया है ॥ १९ ॥ यह वीरही शक्तितोमर रूप मीनसेवित विकीर्ण अस्त्र रूप शैवाल पूर्ण गजरूप कच्छप और अश्वरूप भेकसंकुल ॥ २० ॥ रुद्र और आदित्यरूप महाग्राह समाकुल, वायु और वसुगण रूप महा सर्प युक्त रथ अश्व और गजरूप जलराशि पूर्ण और पदाति रूप बडी भारी पुलिन से युक्त ॥ २१ ॥ यही देवसेना रूप महासागरको प्राप्त हो देवराज इन्द्रको बांध कर लंकामें ले आया था ॥२२॥ हे राजन् ! फिर मेघनादने पितामह ब्रह्माजीके कहनेसे उन सर्व देवके नमस्कार करने योग्य शम्बर और वृत्रासुरके मारने वाले इन्द्र को छोड़ दिया, और देवताओंका राजा इन्द्रभी छूटकर स्वर्गको चला गयाथा ॥२३॥ हे महाराज! आप इन्द्रजीतको

अनेनचमहाराजमाहेश्वरमनुत्तमम् ॥ इष्ट्वायज्ञंवरोलब्धोलोकेपरमदुर्लभः ॥१९॥ शक्तितोमरमीनंचविनिकीर्णास्त्रशैवलम्॥ गजकच्छपसंबाधमश्वमण्डूकसंकुलम् ॥ २० ॥ रुद्रादित्यमहाग्राहंमरुद्वसुमहोरगम् ॥ रथाश्वगजतोयौघंपदातिपुलिनंमहत् ॥ २१ ॥ अनेनहिसमासाद्यदेवानांबलसागरम् ॥ गृहीतोदैवतपतिर्लंकांचापिप्रवेशितः ॥२२॥ पितामहनियोगाच्चमुक्तःशंबरवृत्रहा ॥ गतिस्त्रिविष्टपंराजन्सर्वदेवनमस्कृतः ॥ २३ ॥ तमेवत्वंमहाराजविसृजेन्द्रजितंसुतम् ॥ यावद्वानरसेनांतांसरामांनयतिक्षयम्॥ २४ ॥ राजन्नापदयुक्तेयमागताप्राकृताज्जनात् ॥ हृदिनैवत्वयाकार्यात्वंवधिष्यसिराघवम् ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥ ततोनीलांबुदप्रख्यःप्रहस्तोनामराक्षसः ॥ अब्रवीत्प्रांजलिर्वाक्यंशूरःसेनापतिस्तदा ॥ १ ॥ देवदानवगंधर्वाःपिशाचपतगोरगाः ॥सर्वेधर्षयितुंशक्याःकिंपुनर्मानवौरणे ॥२॥ सर्वेप्रमत्ताविश्वस्तावंचिताःस्महनूमता ॥ नहिमेजीवतोगच्छेज्जीवन्सवनगोचरः ॥ ३ ॥

इस कार्यका भार दे दीजिये बस निश्चय रखिये कि, यह इन्द्रजीतही राम और समस्त वानरोंकी सेनाको नाश कर देगा ॥ २४ ॥ हे महाराज ! आप नर वानर रूप साधारण जनसे जो विपदकी शंका करते हैं यह नितान्त अनुचित बात है, क्योंकि आप निश्चय ही रामका संहार कर डालेंगे ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० युद्धकांडे भाषायां सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥ उसके पीछे नील मेघके समान कांतिवाला वीर सेनापति प्रहस्त नामक राक्षस हाथ जोड कर रावणसे बोला ॥ १ ॥ कि, हे महाराज ! दो मनुष्य और वानरोंकी तो बातही क्या है हम तो रणभूमिमें देवता, दावन, गन्धर्व, पिशाच और सर्पगणोंकोभी पराजित कर सकते हैं ॥२॥ हम लोग भोगके वश होकर जिस समय मतवाले हो रहे थे; और विपद्के आजानेकी भी उस समय कोई शंका नहीं थी इसकारण

सेही हनुमान् हम लोगोंको धोखा दे गया; जो ऐसा न होता तो हम लोगोंके जीवित रहते वह वनचारी वानर किसी प्रकारसे जीता हुआ यहांसे नहीं जायसकता ॥३॥ जो आप आज्ञा कीजिये हम अभी आपकी आज्ञासे शैल काननयुक्तइसपृथ्वीको वानर रहित कर देंगे ॥४॥ हम ही सब राक्षसोंकी रक्षा वानरोंके भयसे करेंगे आप निश्चिन्त रहें; सीताजीका हरण करनेसे आपके ऊपर कोई विपद न पडेगी ॥५॥ उसके पीछे दुर्मुख नामक राक्षस बडा क्रोध करके रावणसे बोला, हे महाराज ! केवल एकही वानर आकर हमारा सब का अपमान कर गया है, सो इनको हम किसी प्रकारसे नहीं सह सकते ॥६॥ हम लोग अपना अपमान होना किसी प्रकारसे सहनकर भी लेते, परन्तु नगरी और अन्तःपुरका दाह न करके उसवानरने राक्षसराजकाजो अपमानकियाहै वह नितान्त ही असह्यहै उसकोहम नहीं सह सकते ॥७॥ महाराज ! आप अभी आज्ञा दीजिये; हम इसी मुहूर्तमें गमन करके अकेलेही उन वानरोंकी इतिश्री करदें । वह वानरगण भयानक समुद्र,

सर्वांसागरपर्यंतांसशैलवनकाननाम् ॥ करोम्यवानरांभूमिमाज्ञापयतुमांभवान् ॥ ४ ॥ रक्षांचैवविधास्यामिवानराद्रजनीचर ॥ नागमिष्यतितेदुःखंकिंचिदात्मापराधजम् ॥ ५ ॥ अब्रवीत्तंसुसंक्रुद्धोदुर्मुखोनामराक्षसः ॥ इदंनक्षमणीयंहिसर्वेषांनःप्रधर्षणम् ॥ ६ ॥ अयंपरिभवोभूयःपुरस्यांतःपुरस्यच ॥ श्रीमतोराक्षसेंद्रस्यवानरेंद्रप्रधर्षणम् ॥ ७ ॥ अस्मिन्मुहूर्तेगत्वैकोनिवर्तिष्यामिवानरान् ॥ प्रविष्टान्सागरंभीममंबरंवारसातलम् ॥ ८ ततोब्रवीत्सुसंक्रुद्धोवज्रदंष्ट्रोमहाबलः ॥ प्रगृह्यपरिघंघोरंमांसशोणितदूषितम् ॥ ९ ॥ किंनोहनूमताकार्यंकृपणेनतपस्विना ॥ रामेतिष्ठतिदुर्धर्षेसुग्रीवेपिसलक्ष्मणे ॥ १० ॥ अद्यरामंससुग्रीवंपरिघेणसलक्ष्मणम् ॥ आगमिष्यामिहत्वैकोविक्षोभ्यहरिवाहिनीम् ॥ ११ ॥ इदंममापरंवाक्यंशृणुराजन्यदीच्छसि ॥ उपायकुशलोह्येवजयेच्छत्रूनतंद्रितः ॥ १२ ॥ कामरूपधराःशूराःसुभीमाभीमदर्शनाः ॥ राक्षसानांसहस्राणिराक्षसाधिपनिश्चिताः ॥ १३ ॥

आकाश और पातालमें प्रवेश करके भी अपनी रक्षा करनेको समर्थ न होंगे ॥ ८ ॥ उसके पीछे महाबलवान् राक्षस वज्रदंष्ट्र अत्यन्त क्रोधातुर होकर मांस व रुधिरसेसना हुआ बडाभारी परिघ ग्रहण करके बोला ॥९॥ कि; रामलक्ष्मणके जीवित रहते उस तपस्वी दीनस्वभाव हनुमानका प्राण विनाश करनेसे हमकोक्या फल होगा ! ॥ १० ॥ हे महाराज ! अब हम अकेले ही उस वानरी सेनाको खलबलाय कर परिघसे राम लक्ष्मण और सुग्रीवका नाश करके लौट आवेंगे ॥ ११ ॥ हे राजन् ! आपसे विनती है कि, इस समय आप हमारी एक और बात सुनें; आप जान रक्खें जो उपाय करनेमें चतुर और उद्योगी हैं विजय लक्ष्मीउनकेही हाथमें रहती है, अर्थात् वही लोगशत्रुओंकोजीतलेतेहैं॥१२॥कामरूपधारी भयंकराकार शूर बहुत राक्षस लगभग तीन सहस्रके एकनिश्चयकर॥१३॥

मनुष्यरूपधार रघुवंशकुलमणिश्रीरामचन्द्रजीके निकट पहुँच कर बडी सावधानीके साथ कहें कि ॥ १४ ॥ " हम सबको तुम्हारे पास तुम्हारे छोटेभाई भरत जीने भेजा है" यह श्रवणकरके श्रीरामचन्द्र सेनाको छोड वहीं बहुत ही शीघ्र हमारी सेनाके साथ मिल जायँगे ॥ १५ ॥ उसके पीछे हम भी शूल, शक्ति, गदा, धनुष, बाण और खड्ग इत्यादि अस्त्र शस्त्र ले सज सजाय कर उनके निकट जायँगे ॥ १६ ॥ और अलग २ दल बांधकर आकाशमें टिककर शिला अस्त्रादि वर्षाय उस वानर सेनाको घायल कर मृत्युके वशमें कर देंगे ॥१७॥ हे महाराज ! इस प्रकारका कार्य करनेसे राम लक्ष्मण अवश्य ही हमारी इस अनीतिके चक्करमें पड जायँगे उसके पीछे जब वानरसेना का नाश हो जायगा; तब यह दोनोंजनअपने आपही मर जायँगे ॥ १८ ॥ जब इस राक्षसने

काकुत्स्थमुपसंगम्यविवृतंमानुषंवपुः ॥ सर्वेह्यसंभ्रमाभूत्वाब्रुवंतुरघुसत्तमम् ॥ १४ ॥ प्रेषिताभरतेनैवभ्रात्रातवयवीयसा ॥ सहिसेनांसमुत्थाप्यक्षिप्रमेवोपयास्यति ॥१५॥ ततोवयमितस्तूर्णंशूलशक्तिगदाधराः ॥ चापबाणासिहस्ताश्चत्वरितास्तत्रयामहे ॥१६॥ आकाशेगणशःस्थित्वाहत्वातांहरिवाहिनीम् ॥ अश्मशस्त्रमहावृष्ट्याप्रापयामयमक्षयम् ॥ १७ ॥ एवंचेदुपसर्पेतामनयंरामलक्ष्मणौ ॥ अवश्यमपनीतेनजहतामेव जीवितम् ॥ १८ ॥ कौंभकर्णिस्ततोवीरोनिकुंभोनामवीर्यवान् ॥ अब्रवीत्परमक्रुद्धोरावणंलोकरावणम् ॥ १९ ॥ सर्वेभवंतस्तिष्ठंतुमहाराजेन संगताः ॥अहमेकोहनिष्यामिराघवंसहलक्ष्मणम् ॥ २० ॥ सुग्रीवंसहनूमंतंसर्वांश्चैवात्रवानरान्॥ततोवज्रहनुर्नामराक्षसःपर्वतोपमः ॥ २१ ॥ क्रुद्धःपरिलिहन्सृक्कांजिह्वयावाक्यमब्रवीत ॥ स्वैरंकुर्वंतुकार्याणिभवतोविगतज्वराः ॥ २२ ॥ एकोहंभक्षयिष्यामितांसर्वांहरिवाहिनीम् ॥ स्वस्थाःक्रीडंतुनिश्चिताःपिबंतुमधुवारुणम् ॥ २३ ॥

ऐसा कहा तो प्रतापशाली वीर्यवान् कुम्भकर्णका बेटा निकुम्भ क्रोधित हो सब लोकोंके रुवानेवाले रावणने बोला ॥ १९ ॥ कि, आप सब जन यहींपर महाराज रावणके साथ निश्चिन्त मनसे रहें हम अकेलेही जाकर रामचन्द्रके सहित लक्ष्मणको मार डालेंगे ॥ २० ॥ और सुग्रीव हनुमान्केसाथउसवानरोंकी सेनाकाभी संहार कर डालेंगे उसके पीछे पर्वताकार वज्रहनु नाम राक्षस ॥ २१ ॥ क्रोधके मारे जीभसे अधरोंको चाटता हुआ बोला कि, तुम लोग आलस्य छोड अपना अपना कार्य सिद्ध करनेके लिये शीघ्रता करो ॥ २२ ॥ और कहीं न जाओ, लो हम अकेले ही उन वानरोंकीसेनाको भक्षण किये आते हैं। आप सब लोग सावधान और निश्चिन्त होकर वारुणी और मधुपान करके विहार कीजिये ॥ २३ ॥

हम अकेले ही राम लक्ष्मण और सुग्रीव अंगद हनुमानादि समस्त वानरोंका संहार कर डालेंगे ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदिकाव्ये युद्धकांडे भाषायामष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥ उसके पीछे कुम्भकर्णका बेटा निकुम्भ, रभस, महाबलवान सूर्यशत्रु, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, महापार्श्व महोदर ॥ १ ॥ अग्निकेतु, अजेय रश्मिकेतु राक्षस इन्द्रशत्रु, तेजस्वी महाबलवान् रावणका बेटा इन्द्रजीत ॥ २ ॥ प्रहस्त, विरूपाक्ष, महाबलवान् वज्रदंष्ट्र धूम्राक्ष, निकुंभ, दुर्मुख नाम राक्षस ॥ ३ ॥ परिघ, पटा, शूल कांशी, (प्रास) शक्ति; परशा, धनुष; सुवर्णके फलके लगे हुए बाण, अत्यन्तद्युतिमान् खड्ग ॥ ४ ॥ इत्यादि अस्त्र शस्त्र धारण कर परमक्रोधयुक्त खडे होकर, महातेजस्वी अग्निके समान प्रज्वलित हो यह सब राक्षस रावणसे बोले ॥५॥ कि, हम आजही रामचन्द्र; लक्ष्मण सुग्रीव और

अहमेकोवधिष्यामिसुग्रीवंसहलक्ष्मणम् ॥ सांगदंचहनूमंतंसर्वांश्चैवात्रवानरान् ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे अष्टमःसर्गः ॥ ८ ॥ ततोनिकुंभोरभसःसूर्यशत्रुर्महाबलः ॥ सुप्तघ्नोयज्ञकोपश्चमहापार्श्वमहोदरौ ॥ १ ॥ अग्निकेतुश्चदुर्धर्षोरश्मिकेतुश्चराक्षसः ॥ इंद्रशत्रुश्चबलवांस्ततोवैरावणात्मजः ॥ २ ॥ प्रहस्तोथविरूपाक्षोवज्रदंष्ट्रोमहाबलः ॥ धूम्राक्षोथनिकुंभश्चदुर्मुखश्चैव राक्षसः ॥ ३ ॥ परिघान्पट्टिशाञ्छूलान्प्रासाञ्छक्तिपरश्वधान् ॥ चापानिचसुबाणानिखड्गांश्चविपुलांबुभान् ॥ ४ ॥ प्रगृह्यपरमक्रुद्धाःसमुत्पत्यचराक्षसाः ॥ अब्रुवन्रावणंसर्वेप्रदीप्ताइवतेजसा ॥ ५ ॥ अद्यरामंवधिष्यामःसुग्रीवंचसलक्ष्मणम् ॥ कृपणंचहनूमंतंलंकायेनप्रधर्षिता ॥ ६ ॥ तान्गृहीतायुधान्सर्वान्वारयित्वाविभीषणः ॥ अब्रवीत्प्रांजलिर्वाक्यंपुनःप्रत्युपवेश्यतान् ॥७ ॥ अप्युपायैस्त्रिभिस्तातयोर्थःप्राप्तुंन शक्यते ॥ तस्यविक्रमकालांस्तान्युक्तानाहुर्मनीषिणः ॥ ८ ॥ प्रमत्तेष्वभियुक्तेषुदैवेनप्रहतेषुच ॥ विक्रमास्तातसिध्यंतिपरीक्ष्यविधिनाकृताः ॥ ९ ॥ अप्रमत्तंकथंतंतुविजगीषुंबलेस्थितम् ॥ जितरोषंदुराधर्षंतंधर्षयितुमिच्छथ ॥ १० ॥

उस लंकाके जलानेवाले दीन स्वभाव हनुमान्का प्राणभी संहार कर डालेंगे ॥ ६ ॥ तब बिभीषण अस्त्रधारी उन वीर पुरुषोंको रोक कर उन अपने २ आसनोंपर बैठनेके लिये कह, वह विज्ञ हाथ जोडकर रावणसे बोले ॥ ७ ॥ हे प्रभो ! साम, दान व भेद इन तीन उपायोंसे जो कार्य सिद्ध नहीं किया जायसके तब नीतिशास्त्रके जाननेवालोंने उसकार्यके सिद्ध करनेके लिये विक्रम प्रगट करना अर्थात् दंड देना लिखा है ॥ ८ ॥ शत्रुओंकी अवस्थाको देख असावधान, आलसी और रोगादिकसे पीडित शत्रुके प्रति विधिवत् दंड प्रकाश करनेसे वह शत्रु वशमें हो जाता है ॥ ९ ॥ परन्तु तुम लोग उन प्रमादविहीन जयाभिलाषी देवसहाय क्रोधको जीते हुए और अजेय रामचन्द्रको किस प्रकार जीतनेका साहस करते हो ? ॥ १० ॥

पहले किसने जानपाया था कि, हनुमान नदनदीपति घोर समुद्रको लांघकर दो मुहूर्त्तके मध्य इस लंकामें चला आवेगा, क्या तुम लोगोंमेंसे पहले किसीने इस बातका अनुभव किया था ? ॥ ११ ॥ हे निशाचरगण ! शत्रुलोगोंकी वीर्यशाली अगणित भयंकर सेना है; सो ऐसे शत्रुओंकी सहसा अवज्ञा (बेपरवाही) करना उचित नहीं है ॥१२॥ उन यशस्वी रामचन्द्रनेही पहले राक्षसराजका कौन भारी अपकार किया था कि जिससे यह जनस्थानसे उनकी भार्याको हरणकरके ले आये ? ॥१३॥ यदि कहो कि ''रामचन्द्रने खरको मार डाला है'' परन्तु खरने तो प्रथम ही श्रीरामचन्द्रजीका अपकार किया कि, जिससे वह मारा गया; इसी कारणसे हम खरके मारनेमें रामचन्द्रजीका कोई दोष नहीं देखते कारण कि, सामर्थ्यकेअनुसार अपनी रक्षा करना सब प्राणियोंका कर्त्तव्य है ॥१४॥ सो खर दूषणादिके वधका बदला लेनेके लिये ही सीताजीका हरण किया गया है, परन्तु हम लोगोंपर अब बहुत ही शीघ्र सीताजीके हरणसे उत्पन्न

समुद्रंलंघयित्वातुघोरंनदनदीपतिम् ॥ गतिंहनूमतोलोकेकोविद्यात्तर्कयेतवा ॥ ११ ॥ बलान्यपरिमेयानिवीर्याणिचनिशाचराः ॥ परेषां सहसावज्ञानकर्तव्यकथंचन ॥ १२ ॥ किंचराक्षसराजस्यरामेणापकृतंपुरा ॥ आजहारजनस्थानाद्यस्यभार्यांयशस्विनः ॥ १३ ॥ खरोयद्य तिवृत्तस्तुसरामेणहतोरणे ॥ अवश्यंप्राणिनांप्राणारक्षितव्यायथाबलम् ॥ १४ ॥ एतन्निमित्तंवैदेहीभयंनःसुमहद्भवेत् ॥ आहृतासापरित्या ज्याकलहार्थेकृतेनुकिम् ॥ १५ ॥ नतुक्षमंवीर्यवतातेनधर्मानुवर्तिनः ॥ वैरंनिरर्थकंकर्तुंदीयतामस्यमैथिली ॥ १६ ॥ यावन्नसगजांसाश्वांबहुर त्नसमाकुलाम् ॥ पुरींदारयतेबाणैर्दीयतामस्यमैथिली ॥ १७ ॥ यावत्सुघोरामहतीदुर्धर्षाहरिवाहिनी ॥ नावस्कन्दतिनोलंकांतावत्सीताप्रदी यताम् ॥ १८ ॥ विनश्येद्धिपुरीलंकाशूराःसर्वेचराक्षसाः ॥ रामस्यदीयतांपत्नीनस्वयंयदिदीयते ॥ १९ ॥

हुई विपद आकर पडेगी, इस कारण आनेवाली विपदका हेतु विना झगडेके जानकीको त्यागही देना उचित है । क्योंकि जिसके परिणाममें क्लेश उपस्थित हो उस कार्यको करनेकीआवश्यकता ही क्या है? ॥ १५ ॥रामचन्द्रजी अतिशय वीर्यवान् और धार्मिक हैं, विना कारण उनके साथ वैरभाव करनेकी आवश्य कता क्या है ? हे राजन् हमारी यह विनतीहै कि, श्रीरामचन्द्रजीको सीता देदीजिये ॥१६॥ रामचन्द्र जब तक हाथी घोडोंसे परिपूर्ण अनेक रत्नोंसे युक्त इस लंकापुरीको बाणोंसे छिन्नभिन्न न करे आप उससे पहले ही जानकीको रामचंद्रके हाथमें सौंप दो ॥ १७ ॥ जबतक कि वह घोर बडी भारी अजेय वानरोंकी सेना हमारी लंकापुरीको छिन्नभिन्न न करे, इससे पहले ही रामचन्द्रजीको आप सीताजी लौटादें ॥१८॥ हे महाराज! जो आप अपनी राजीसे उन रामच

न्द्रकी स्त्री सीताजीको उन्हें न लौटा देंगे तो यह लंकापुरी नष्ट हो जायगी, और महावीर्यवान् यह राक्षस भी मारे जायँगे ॥ १९ ॥ हम तो बंधु होनेसे आपके हितकी ही सत्य और पथ्यवाणी कहते हैं सो आप हमारे वचन मानकर सीताको रामचन्द्रके हाथमें समर्पण कर दीजिये ॥२०॥ हे महाराज ! वह राज कुमार रामचन्द्र जबतक आपका वध करनेके लिये सूर्यकी किरणोंके समान प्रकाशित व चमकते फलके पंख लगे अमोघ बाण न छोडें; उसके पहले ही जानकी आप उन्हें देदें ॥२१॥ हे महाराज ! सुख और धर्मके नाश करने वाले क्रोधका आप परित्याग कर दीजिये । जिसकी सेवाकरनेसे लोकानुराग और कीर्ति की वृद्धि होती है आप उस धर्मका ही आश्रय ग्रहण करें, आप प्रसन्न हो कर समझलें कि, जानकीको आप उन्हें देदेंगे तो हम सब अपने स्त्री पुत्रादिकोंके संग सुखसे समय बिताय सकेंगे ॥२२॥ राक्षसोंका स्वामी रावण विभीषणके ऐसे वचन श्रवण कर सबको बिदा दे अपने रनवासके भवनमें चला गया ॥२३॥

प्रसादयेत्वांबंधुत्वात्कुरुष्ववचनं मम ॥ हितंतथ्यंत्वहंब्रूमिदीयतामस्यमैथिली ॥२०॥ पुराशरत्सूर्यमरीचिसन्निभान्नवाग्रपुंखान्सुदृढान्नृपात्मजः ॥ सृजत्यमोघान्विशिखान्वधायतेप्रदीयतांदाशरथायमैथिली ॥ २१ ॥ त्यजाशुकोपंसुखधर्मनाशनभजस्वधर्मंरतिकीर्तिवर्धनम् ॥ प्रसीदजीवेमसपुत्रबांधवाःप्रदीयतांदाशरथायमैथिली ॥ २२ ॥ विभीषणवचःश्रुत्वारावणोराक्षसेश्वरः ॥ विसर्जयित्वातान्सर्वान्प्रविवेश स्वकंगृहम् ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्री० वा० आ० च० सा० युद्धकांडे नवमः सर्गः ॥ ९ ॥ ततःप्रत्युषसिप्राप्तेप्राप्तधर्मार्थनिश्चयः ॥ राक्षसाधिपतेर्वेश्मभीमकर्माविभीषणः ॥ १ ॥ शैलाग्रचयसंकाशंशैलश्रृंगमिवोन्नतम् ॥ सुविभक्तमहाकक्षंमहाजनपरिग्रहम् ॥ २ ॥ मतिमद्भिर्महामात्रैरनुरक्तैरधिष्ठितम् ॥ राक्षसैराप्तपर्याप्तैःसर्वतःपरिरक्षितम् ॥ ३ ॥ मत्तमातंगनिःश्वासैर्व्याकुलीकृतमारुतम् ॥ शंखघोषमहाघोषंतूर्यसंबाधनादितम् ॥४॥ प्रमदाजनसंबाधंप्रजल्पितमहापथम् ॥ तप्तकांचननिर्यूहंभूषणोत्तमभूषितम् ॥ ५ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि० युद्धकांडे भाषायां नवमः सर्गः ॥ ९ ॥ महातेजस्वी किरणयुक्त सूर्य जिस प्रकार आकाशमें प्रकाशित होते हैं, वैसे ही दूसरे दिन प्रभातकालको धर्मार्थके तत्त्व जाननेवाले भयंकर कर्मकारी और श्रेष्ठ महाद्युतिमान् विभीषणजी ॥ १ ॥ शैलश्रृङ्गसमूह सदृश पर्वत शिखरके समान ऊंचे सुविभक्त, बडे; दर दिवार दालानसे युक्त महाजनोंसे पूर्ण ॥२॥ बुद्धिमान् बडे २ शरीरवाले अनुरागी हितकारी और कार्यसाधनमें समर्थ राक्षसोंसे घेरे जाकर सब भाँतिसे रक्षित ॥३॥ मतवाले हाथियोंके साँस लेनेसे व्याकुलपवन, शंख शब्दके समान बाजे आदिके बडे भारी शब्दोंसे परिपूर्ण तुरहीके बजनेसे निनादित ॥ ४ ॥ स्त्रीजनोंसे पूर्ण रात्रिके शेष होनेसे प्रकाशित राजमार्ग, अनेकजनोंके शब्दोंसे युक्त उत्तमभूषणभूषित, तपाये हुये सुवर्णके बने द्वारोंसे शोभित ॥ ५ ॥

गन्धर्व और देवगणोंके स्थानोंके समान, नागभवनकेसमानरत्नसमूहसे परिपूर्णमंदिरमें॥६॥ महा मेघमें सूर्यका प्रवेशकरनेसे जैसी शोभा होतीहै वैसी ही शोभाको धारण करते हुए अपने बडे भाई रावणके द्युतिमान् भवनमें वीरश्रेष्ठ विभीषणजी प्रवेश करते हुए॥७॥ वहांपर प्रवेश करते हुये विभीषणजीनेवेदवादी राक्षसविप्रोंसे उच्चारितपुण्यरूप पवित्र पुण्याह शब्द अपने भ्राताकी विजयसूचकतामें सुना॥८॥ विभीषणजीने देखा, वेदमंत्र जाननेवाले महाबलवान् ब्राह्मणलोग पुष्प, अक्षत घृत और दधिसे पूजेगये हैं ॥९॥ उसके पीछे अपने तेजसे प्रदीप्त राक्षसलोगोंसे पूजित महाबाहु विभीषणजीने सिंहासनपर बैठे हुए कुबेरके छोटे भाई रावणको प्रणाम किया ॥१०॥ और रावणने भी विभीषणजीको सदाचारानुरूप आशीर्वाद देकर आसन ग्रहण करनेको कहा राजाज्ञा पातेही विभीषणजी सुवर्णके आसनपर बैठ गये॥११॥

गंधर्वाणामिवावासमालयंमरुतामिव ॥ रत्नसंचयसंबाधंभवनंभोगिनामिव ॥६॥ तंमहाभ्रमिवादित्यस्तेजोविस्तृतरश्मिवान्॥अग्रजस्यालयं वीरःप्रविवेशमहाद्युतिः ॥ ७ ॥ पुण्यान्पुण्याहघोषांश्चवेदविद्भिरुदाहृतान् ॥ शुश्रावसुमहातेजाभ्रातुर्विजयसंश्रितान् ॥ ८ ॥ पूजितान्दधि पात्रैश्चसर्पिर्भिः॑सुमनोक्षतैः ॥ मन्त्रवेदविदोविप्रान्ददर्शसमहाबलः ॥९॥ सपूज्यमानोरक्षोभिर्दीप्यमानंस्वतेजसा ॥आसनस्थंमहाबाहुर्ववंदेध नदानुजम् ॥ १० ॥ सराजदृष्टिसंपन्नमासनंहेमभूषितम् ॥ जगामसमुदाचारंप्रयुज्याचारकोविदः ॥ ११ ॥ सरावणंमहात्मानंविजनेमंत्रि सन्निधौ ॥ उवाचहितमत्यर्थंवचनंहेतुनिश्चितम् ॥१२॥ प्रसाद्यभ्रातरंज्येष्ठंसांत्वेनोपस्थितक्रमः ॥ देशकालार्थसंवादिदृष्टलोकपरावरः ॥१३॥ यदाप्रभृतिवैदेहीसंप्राप्तेहपरंतप ॥ तदाप्रभृतिदृश्यन्तेनिमित्तान्यशुभानिनः ॥ १४ ॥ सस्फुलिंगःसधूमार्चिःसधूमकलुषोदयः ॥ मंत्रसंघटु तोप्यग्निर्नसम्यगभिवर्धते ॥ १५ ॥ अग्निष्ठेष्वग्निशालासुतथाब्रह्मस्थलीषुच ॥ सरीसृपाणिदृश्यंतेहव्येषुचपिपीलिकाः ॥ १६ ॥

महात्मा विभीषणजी एकान्त जनरहित केवल मंत्रियोंके ही जाने योग्य स्थानमें बैठे अपने बडे भाई रावणको हितकारी व अर्थयुक्त वचन कहने लगे ॥१२॥ प्रथम यथाक्रमसे बडे भाई का आदरमर्यादा कर देशकाल ऊँच नीच जाननेमें कुशल विभीषणजी यह बोले ॥१३॥ हे शत्रुओंके तपानेवाले। जबसे सीताजी इस लंकापुरीमें आई हैं तबसे ही अनेक प्रकारके अशुभ सूचक दुर्निमित्त दिखाईदेते हैं ॥१४॥ इस समय मंत्रपूर्वक अग्नि आहुति पाय कर भी अपने तेजसे नहीं बढता; अधिक क्या कहें कि प्रदीप्त करनेके समय उसमेंसे धुआं निकलता है चिनगारियें उडती हैं और शिखामें बराबर धूम निकलता ही रहता है ॥१५॥ हे महाराज ! अग्नि होमशाला और वेद पढ़नेके स्थानोंमें सर्पादि दिखाई देतेहैं और हवन करनेके लिये जो खीरादि बनाई जाती हैं, उनमें चींटियें चढी हुई दिखाई

देती हैं ॥१६॥ गौओंका दूध सूखगया है, श्रेष्ठ गज मद विहीन हो गयेहैं और घोडे यथेष्ट आहार पाकर भी भूखके समान और चारा पाने की आशामें दीनभावसे शब्द करते हैं ॥१७॥ हे राजन् ! गधे, ऊंट खच्चड रोम ऊंचे कर २ के आंसू डाल २ रोय रहे हैं चिकित्सा शास्त्रके द्वारा यद्यपि उनकी औषधि भी भलीभाँति की जाती है, तथापि वे अपने स्वभाव पर नहीं आते ॥१८॥ क्रूर स्वभाववाले कौवे दल बाँध २ कर चारों ओर शोर करते हैं, और कभी २ उनके झुण्डके झुण्ड विमानों (महलों) के ऊपर बैठे काँय काँय शब्द करते दिखाई देते हैं ॥१९॥ गृध्रपीडित होकर पुरीके ऊपरी भागमें गिराकरते हैं और शृगालियाँ सन्ध्याके समय पुरीके निकट आकर चिल्लाया करती हैं ॥२०॥ पुरीकेद्वारपर व्याघ्रादि मांस खानेवालोंका चौपायोंके गिरनेके शब्दके समान बडा भारी घोर

गवांपयांसिस्कन्नानिविमदावरकुंजराः ॥ दीनमश्वाःप्रहेषंतेनवग्रासाभिनंदिनः ॥ १७ ॥ खरोष्ट्राश्वतराराजन्भिन्नरोमाःस्रवंतिच ॥नस्वभावेवतिष्ठंतेतेविधानैरपिचिंतिताः ॥ १८ ॥ वायसासंघशःक्रूराव्याहरंतिसमंततः ॥ समवेताश्चदृश्यंतेविमानाग्रेषुसंघशः ॥ १९ ॥ गृध्राश्चपरिलीयंतेपुरीमुपरिपीडिताः ॥ उपपन्नाश्चसंध्येद्वेव्याहरंत्यशिवंशिवाः ॥ २० ॥ क्रव्यादानांमृगाणांचपुरीद्वारेषुसंघशः ॥ श्रूयंतेविपुलाघोषाःसविस्फूर्जितनिःस्वनाः ॥ २१ ॥ तदेवंप्रस्तुतेकार्येप्रायश्चित्तमिदंक्षमम् ॥ रोचयेवीरवैदेहीराघवायप्रदीयताम् ॥ २२ ॥ इदंचयदिवामोहाल्लोभाद्वाव्याहृतंमया ॥ तत्रापिचमहाराजनदोषंकर्तुमर्हसि ॥ २३ ॥ अयंहिदोषःसर्वस्यजनस्यास्योपलक्ष्यते ॥ रक्षसांराक्षसीनांचपुरस्यांतःपुरस्यच ॥२४॥ प्रापणेचास्यमंत्रस्यनिवृत्ताःसर्वमंत्रिणः ॥ अवश्यंचमयावाच्यंयद्दृष्टमथवाश्रुतम् ॥संविधाययथान्यायंतद्भवान्कर्तुमर्हति॥२५॥ इतिस्वमंत्रिणांमध्येभ्राताभ्रातरमूचिवान् ॥ रावणंरक्षसांश्रेष्ठं पथ्यमेतद्विभीषणः ॥ २६ ॥

शब्द सुनाई आया करता है ॥२१॥ हे वीर ! आयेहुए रामचन्द्रको सीताजीका दे देना ही इन दुर्निमित्तोंकी शांतिका यथार्थ उपाय (प्रायश्चित्त) जान पडता है ॥२२॥ हे राजन् । लोभ अथवा मोहसे यदि कोई विरुद्ध बात हमारे मुखसे उच्चारण कीगई हो तो आप हमारा दोष क्षमा कर दीजिये ॥ २३ ॥ सीताजीके हरणसे दुर्निमित्त आजकल दिखाई देते हैं; यह इन सब जनोंके और राक्षस, राक्षसी अन्तःपुर व समस्त लंकापुरीके ही लिये बुरे जान पडते हैं ॥२४॥ यद्यपि भयके मारे कोई मंत्री आपके निकट इस सलाहको न उठासके तथापि हमने जो कुछ देखा या सुना है वह अवश्यही आपके निकट प्रकट करदेना कर्तव्य है अब जैसा कुछ उचित जान पडे वैसा आप कीजिये ॥ २५ ॥ भ्राता बिभीषण राक्षसोंके बीचमें बडे भ्राता राक्षस श्रेष्ठ रावणसे उसके व अपने मंत्रियोंके

सामने इस प्रकारसे शुभदायक हितकारी वचन कह कर चुप हो रहे ॥२६॥ तब लंकापति रावण बिभीषणजीके इस प्रकार न्याय युक्त महाअर्थ समन्वित; हेतु गर्भ, वर्त्तमान व भविष्यकालमें शुभकारी यह वचन सुन क्रोध करके उत्तर देता हुआ ॥२७॥ हम किसीके निकटसे भी भयका कारण नहीं देखते हैं, रामचन्द्र किसी प्रकार जानकीजीको प्राप्त नहीं हो सकेंगे, कारणकी, वह लक्ष्मणके बड़े भाई रामचन्द्र इन्द्रादि देवगणोंके साथ मिल कर भी रणभूमिमें हमारे सामने नहीं टिक सकेंगे॥२८॥रणभूमिमें प्रचंड पराक्रम करनेवाला सुरसेनाका नाशकारी महाबलवान् रावण हितकी कहनेवाले भ्राता बिभीषणको यह कह कर बिदा करता हुआ ॥२९॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे०वाल्मी०आदि०युद्धकांडे भाषायां दशमः सर्गः॥१०॥पापाचारी राक्षस राज रावण भार्या हरणका पापकर्म करनेवाला बिभीषणादि सुहृद्गणोंका निरादर करके जानकीजीकी कामनासे अत्यन्त मोहित हो दुर्बल होने लगा ॥१॥ काममोहित और निरन्तर जानकीजी का स्मरण करता हुआ

हितंमहार्थंमृदुहेतुसंहितंव्यतीतकालायतिसंप्रतिक्षमम् ॥निशम्यतद्वाक्यमुपस्थितज्वरःप्रसंगवानुत्तरमेतदब्रवीत् ॥२७॥ भयंनपश्यामिकुतश्चिद प्यहंनराघवःप्राप्स्यतिजातुमैथिलीम्॥सुरैः सहेंद्रैरपिसंगरेकथंममाग्रतःस्थास्यतिलक्ष्मणाग्रजः ॥२८॥ इत्येवमुक्त्वासुरसैन्यनाशनोमहाबलः संयतिचंडविक्रमः॥ दशाननोभ्रातरमाप्तवादिनंविसर्जयामासतदाविभीषणम् ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे दशमःसर्गः॥ १० ॥ सबभूवकृशोराजामैथिलीकाममोहितः ॥ असन्मानाच्चसुहृदांपापः पापेनकर्मणा ॥ १ ॥ अतीवकामसंप न्नोवैदेहीमनुचिंतयन् ॥ अतीतसमयेकालेतस्मिन्वैयुधिरावणः ॥ अमात्यैश्चसुहृद्भिश्चप्राप्तकालममन्यत ॥२॥ सहेमजालविततंमणिविद्रुमभूषि तम् ॥ उपगम्यविनीताश्वमारुरोहमहारथम् ॥ ३ ॥ तमास्थायरथश्रेष्ठंमहामेघसमस्वनम् ॥ प्रययौरक्षसांश्रेष्ठोदशग्रीवःसभांप्रति ॥ ४ ॥ असिचर्मधरायोधाः सर्वायुधधरास्ततः ॥ राक्षसाराक्षसेंद्रस्यपुरस्तात्संप्रतस्थिरे ॥ ५ ॥ नानाविकृतवेषाश्चनानाभूषणभूषिताः॥पार्श्वतःपृष्ठ तश्चैनंपरिवार्यययुस्तदा ॥६॥ रथैश्चातिरथाःशीघ्रंमत्तैश्चवरवारणैः॥ अनूत्पेतुर्दशग्रीवमाक्रीडद्भिश्चवाजिभिः ॥ ७ ॥

समयको बीत जाता हुआ देख कर उसकाल बिभीषणके सिवाय और सब सुहृद व मंत्रियोंके सहित मन लगाय, उसके विषय में युद्धकी ही सम्मति करनेका अव सर आया जान॥२॥सुवर्णकी जालियोंसे विभूषित; मूँगे मणिसे शोभायमान अच्छे सीखे सिखाये घोडे जिसमें जुत रहे ऐसे महारथमें सवार होता हुआ॥३॥और उस मेघके समान शब्द करते हुए श्रेष्ठ रथपर चढ कर वह दशवदन राक्षसश्रेष्ठ रावणसभाकी ओर गमन करने लगा॥४॥उस समय सर्व अस्त्रशस्त्रोंको धारण किये बहुत सारे राक्षस ढाल तलवार ग्रहण करके राक्षस रावणके आगे २ चले॥५॥बहुतसारे विकट वेशधारी अनेक भूषण पहरे राक्षसलोग रावणके अगल बगल पश्चाद्भागकी रक्षा करते हुए चले॥६॥महारथी गण रथपर सवार होकर व और दूसरे राक्षस शस्त्र सहित कोई हाथी पर कोई दिव्य घोडोंपर सवार होकर रावणके साथ २ जाने लगे॥७॥

व कोई२राक्षस गदा, परिघ, शक्ति, तोमरफरशा; नालादि अस्त्र लेकर रावणके साथचले; उससमय हजारों तुरही बजने लगीं॥८॥जबराक्षस रावण सभामें जानेके लिये निकला उस समय चारों ओरसे हजार २ तुरही और शंखोंके शब्दोंका बडा भारी घोर शब्द होने लगा तथा रथका भी शब्द होने लगा॥९॥महारथी रावण अपने रथका शब्द चारों ओरको सुनाता अनेक प्रकारकी शोभायुक्त राजा मार्गमें जाय पहुँचा राक्षसराज रावणके मस्तकपर श्वेत वर्णका प्रकाशमान छत्र॥१०॥विमल पौर्णमासीके चन्द्रमाके समान शोभा धारण करता हुआ सुवर्णसे बने तथा युक्तिसे शुद्ध स्फटिकमणिके समान॥११॥दो चमर पंखे उजले उसकी बाईं और दाहिनी बगलमें शोभित हो रहे थे मार्गमें बहुत सारे राक्षसगण रथके समीप हाथ जोडे खडे हुए थे ॥१२॥ वह सब राक्षसश्रेष्ठ रावणको झुका २ कर शिर नवाय २

गदापरिघहस्ताश्चशक्तितोमरपाणयः ॥ ततस्तूर्यसहस्त्राणांसंजज्ञेनिःस्वनोमहान् ॥ ८ ॥ तुमुलःशंखशब्दश्चसभांगच्छतिरावणे ॥ सनेमिघोषेणमहान्सहसाभिनिनादयन् ॥ ९ ॥ राजमार्गं श्रियाजुष्टंप्रतिपेदेमहारथः ॥ विमलंचातपत्रंचप्रगृहीतमशोभत ॥ १० ॥ पांडुरंराक्षसेंद्रस्य पूर्णस्ताराधिपोयथा ॥ हेममंजरिगर्भेचशुद्धस्फटिकविग्रहे ॥ ११ ॥ चामरव्यजनेतस्यरेजतुःसव्यदक्षिणे ॥ तेकृतांजलयःसर्वेरथस्थंपृथिवीस्थिताः ॥ १२ ॥ राक्षसाराक्षसश्रेष्ठंशिरोभिस्तंववंदिरे ॥ राक्षसैःस्तूयमानःसञ्जयाशीर्भिररिंदमः ॥ १३ ॥ आससादमहातेजाः सभांविरचितां तदा ॥ सुवर्णरजतास्तीर्णांविशुद्धस्फटिकांतराम् ॥ १४ ॥ विराजमानोवपुषारुक्मपट्टोत्तरच्छदाम् ॥ तांपिशाचशतैःषड्भिरभिगुप्तां सदाप्रभाम् ॥ १५ ॥प्रविवेशमहातेजाःसुकृतांविश्वकर्मणा ॥ तस्याःसवैदूर्यमयंप्रियकाजिनसंवृतम् ॥ १६ ॥ महत्सोपाश्रयंभेजेरावणःपरमासनम्॥ततःशशासेश्वरवद्दूतॉंल्लघुपराक्रमान् ॥१७॥ समानयतमेक्षिप्रमिहैताञ्राक्षसानिति ॥ कृत्यमस्तिमहज्जातंकर्तव्यमितिशत्रुभिः ॥१८॥

प्रमाण करते, इस प्रकार राक्षसोंसे स्तुति किया जाता हुआ, और विजयके लिये आशीर्वाद सुनता हुआ शत्रुदमनकारी रावण॥१३॥विश्वकर्माकी बनाई हुई सभामें पहुँचा, यह सभा सुनहरी रूपहरी बिस्तरोंसे शोभित थी, और विशुद्ध स्फटिकमणियोंसे शोभायमान ॥१४॥ उजला व सुनहरी चँदोवा ऊपर तन रहा था, और छःसौ पिशाच उस प्रभावाली सभाकी सदा शुद्ध भावसे रक्षा कर रहे थे ॥१५॥ ऐसी विश्वकर्माकी बनाई सभामें महातेजस्वी रावण प्रवेश करता हुआ । उसमें वैदूर्य मणिके प्रियका मृगका अति कोमल चर्म लग रहा था॥१६॥ऐसी सीढी लगे हुए परमासन पर रावण बैठा। उसके पीछे रावण बहुतसे पराक्रमी दूतोंको अधीश्वरके समान आज्ञा देने लगा ॥ १७ ॥ कि, तुम लोग लंकाके रहनेवाले राक्षसोंको बहुत ही शीघ्र हमारे पास ले आओ. कारण कि,

शत्रु लोगोंकेसाथ बडे भारी कार्यमें हमको अडना पडेगा ॥१८॥ दूतलोग राक्षसोंके स्वामी रावणकी ऐसी आज्ञा पायकर लंकावासी राक्षसोंके स्थानमें प्रवेश करते हुए, विहारमें रत शयन किये हुए ॥१९॥ उद्यानमें क्रीडा करते हुए, राक्षसलोगोंके निकट राक्षसेश्वर रावणकी आज्ञा का प्रचार करते हुए निडर होकर लंका में घूमने लगे, राक्षस लोग राक्षसनाथ रावणकी आज्ञा को जानकर कोई मनोहर रथपर चढ कोई अलग घोडे पर सवार हो, कोई हाथीपर चढ और कोई पैदल ही चलने लगे ॥ २० ॥ उस कालमें लंकापुरी रथ, कुंजर और अश्वगणोंसे समाकीर्ण हो गिरते हुए गरुडादि पक्षियोंसे व्याप्त आकाशमंडल के समान शोभायमान हुई ॥२१॥ उसके पीछे समस्त सभाके द्वारपर पहुँच अपनी २ सवारियें छोड सिंह जिस प्रकार पर्वतकी गुफामें प्रवेश करता है इसी प्रकार पैदल ही सभामें प्रवेश करते हुए ॥२२॥ वहां पहुँचकर उन्होंने राजाके चरणोंको वंदन किया, तब रावणने भी उन राक्षसोंका अत्यन्त सन्मान किया, फिर रावणकी

राक्षसास्तद्वचः श्रुत्वालंकायांपरिचक्रमुः ॥अनुगेहमवस्थायविहारशयनेषुच॥उद्यानेषुचरक्षांसिचोदयंतोह्यभीतवत्॥१९॥तेरथांतचराएकेदृप्तानेकेदृढान्हयान्॥ नागानेकेऽधिरुरुहुर्जग्मुश्चैकेपदातयः ॥ २० ॥ सापुरीपरमाकीर्णारथकुंजरवाजिभिः ॥ संपतद्भिर्विरुरुचेगरुत्मद्भिरिवांबरम् ॥२१॥तेवाहनान्यवस्थाययानानिविविधानिच॥सभांपद्भिःप्रविविशुःसिंहागिरिगुहामिव ॥२२॥ राज्ञःपदौगृहीत्वातुराज्ञातेप्रतिपूजिताः॥ पीठेष्वन्येबृसीष्वन्येभूमौकेचिदुपाविशन् ॥२३॥ तेसमेत्यसभायांवैराक्षसाराजशासनात् ॥ यथार्हमुपतस्थुस्तेरावणंराक्षसाधिपम् ॥ २४ ॥ मंत्रिणश्चयथामुख्यानिश्चितार्थेषुपंडिताः ॥ अमात्याश्चगुणोपेताःसर्वज्ञाबुद्धिदर्शनाः ॥ २५ ॥ समीयुस्तत्रशतशःशूराश्चबहवस्तथा ॥ सभायांहेमवर्णायांसर्वार्थस्यसुखायवै ॥ ॥ २६ ॥ ततोमहात्माविपुलंसुयुग्यंरथंवरंहेमविचित्रितांगम् ॥ शुभंसमास्थाययथौयशस्वीविभीषणः संसदमग्रजस्य ॥ २७ ॥ सपूर्वजायावरजः शशंसनामाथपश्चाच्चरणौववंदे ॥ शुकःप्रहस्तश्चतथैवतेभ्योददौयथार्हंपृथगासनानि ॥ २८ ॥

आज्ञा पाकर कोई कुरसी पर कोई आसनों पर कोई यथायोग्य बिछौनों पर और भूमिमें बैठ गये ॥२३॥ राक्षसगण राजाकी आज्ञाकी अनुसार सभाके बीचमें पहुँचकर यथायोग्य रावणकी स्तुति करने लगे ॥२४॥ मंत्रके जाननेमें चतुर मंत्रीलोग और गुणवान् सर्व शास्त्रोंके जानने वाले बुद्धि लोचन वाले शत२सहकारी मंत्रीगण व प्रधानादि यथाक्रमसे उस सभामें आये ॥२५॥इस प्रकार उस सुवर्णमय रमणीक राक्षसोंके स्वामी रावणकी सभामें मंत्र स्थिर करनेके लिये क्रम २ से अनेक वीरगण भी झुण्डके झुंड उस सभामें आ पहुँचे ॥ २६ ॥ उसके पीछे यशस्वी महात्मा विभीषणजी शोभायमान घोडोंसे युक्त सुवर्णसे चित्रित मंगल चिह्नोंसे शोभित अति बडे रथपर चढकर अपने बडे भाई की सभामें आये ॥ २७ ॥ बिभीषणने सभामें प्रवेश करके निज नाम सबको सुनाय

अपने बडे भाईके चरणोंमें प्रणाम किया। शुक औरप्रहस्त दोनों सभामें आये हुए सभासदोंको अलग २ आसन देने लगे ॥२८॥ उस कालमें सुनहरी और विविध मणि भूषणधारी, श्रेष्ठ भूषण पहरे सभामें विराजमान उन सब राक्षसोंके शरीरमें लगे श्रेष्ठ अगर चन्दनकी गंध व फूलमालाओंकी सुगंधि सभामें चारों ओर महकने लगी ॥२९॥ सभामें बैठे हुए सब ही चुप चाप थे, किसीके मुखसे कोई बात या मिथ्या बात नहीं उच्चारण होती और ऊंचे स्वरसे किसीके मुखसे कोई बात नहीं निकलती थी। कारण कि, वह उग्र वीर्यवाले राक्षसलोग पूर्ण मनोरथ होकर ही मानों अपने स्वामी रावणका मुख देख रहे थे ॥३०॥ उस कालमें उस सभामें विराजमान शस्त्रधारी सुन्दर चित्त राक्षस गणोंके बीचमें बैठा हुआ चिन्ताशील रावण सभाके मध्य वसुगणोंकेबीचमें बैठे हुए इन्द्रके समान शोभा धारण करता हुआ ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकादशः सर्गः ॥ ११ ॥ उसके पीछे संग्राममें जीतनेवाला रावण

सुवर्णनानामणिभूषणानांसुवाससांसंसदिराक्षसानाम्॥तेषांपराध्यार्गुरुचंदनानांस्रजांचगंधाःप्रववुःसमंतात्॥२९॥ नचुक्रुशुर्नानृतमाहकश्चित्सभासदोनापिजजल्पुरुच्चैः॥संसिद्धार्थाःसर्वएवोग्रवीर्याभर्तुःसर्वेददृशुश्चाननंते॥३०॥ सरावणःशस्त्रभृतांमनस्विनांमहाबलानांसमितौमनस्वी॥ तस्यांसभायांप्रभयाचकाशेमध्येवसूनामिववज्रहस्तः॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० च० सा० युद्धकाण्डे एकादशः सर्गः ॥ ११ ॥ सतांपरिषदंकृत्स्नासमीक्ष्यसमितिंजयः ॥ प्रबोधयामासतदाप्रहस्तंवाहिनीपतिम् ॥१॥ सेनापतेयथातेस्युःकृतविद्याश्चतुर्विधाः ॥ योधानगररक्षायांतथाव्यादेष्टुमर्हसि ॥ २ ॥ सप्रहस्तःप्रणीतात्माचिकीर्षन्राजशासनम्॥विनिक्षिप्यबलंसर्वंबहिरंतश्चमंदिरे ॥ ३ ॥ ततोविनिक्षिप्यबलंसर्वंनगरगुप्तये ॥ प्रहस्तःप्रमुखेराज्ञोनिषसादजगादच ॥४॥ विहितंबहिरंतश्चबलंबलवतस्तव ॥ कुरुष्वाविमनाःक्षिप्रंयदभिप्रेतमस्तिते ॥५॥

समस्त सभाको देखकर सेनापति प्रहस्तको इस प्रकारसे आज्ञा देता हुआ ॥१॥ हे सेनापति! अस्त्र शस्त्रके जाननेवाले रथ, अश्व, गज और पैदल, यह चार प्रकारके योद्धा लोग जिससे कि, अति सावधानी से नगरकी रक्षा करें, तुम उनको वैसाही उपदेश दो (कारणकि; हमने दूतोंके मुखसे सुना है कि, रामचन्द्र समुद्रके तीर पर आगये)॥ २ ॥ तब सावधान चित्त प्रहस्त राजाकी आज्ञा पालन करनेके लिये, राजपुरीके भीतर और बाहर यथा विधानसे सेनाको स्थापित करता हुआ ॥३॥ उसके पीछे नगरकी रक्षाके लिये अलग २ सेना नियत करके फिर सम्मुख आयकर प्रहस्त बैठ गया और यह बोला ॥ ४ ॥ हे राजन्! आपकी आज्ञानुसार हमने सब कार्य किया, बलवान् राक्षसोंको सेना नगरी केभीतर बाहर रक्षा करनेको स्थापित करदी गई, इस समय

मनकी घबडाहट छोड कर कर्त्तव्य कार्य जो कुछ हो उसको शीघ्र कीजिये ॥ ५ ॥ सुखका चाहने वाला राजा रावण हित चाहने वाले प्रहस्तके वचन सुन सब सुहृदगणोंको पुकारकर यह बोला ॥६॥ कि;विपदके समय प्रिय अप्रिय सुख,दुःख, हानि,लाभ;हित;अहित इन सब बातोंको भलीभाँतिसे जानलेना तुमको उचित है ॥७॥ हम भली भाँति जानतेहैं कि,तुम परस्पर सम्मति करके जो कार्य किया करते हो वह कदापि निष्फल नहीं होता है,क्योंकि पहले बहुतकार्य हमने तुम्हारी सम्मतिसे सिद्ध किये हैं ॥८॥ अधिक क्या कहें इन्द्र जिस प्रकार चन्द्रमा, ग्रह,नक्षत्र और मरुद्गणोंसे सेवित होकर स्वर्गके सुखका भोग किया करते हैं,वैसेही तुम्हारी अनुकूलतासे हम लंकापुरीका राज्य करतेहैं ॥९॥इस संकटके समय हम तुम लोगोंसे सहायताकी प्रार्थना करते हैं,हमारे पिछले भाई कुंभकर्ण सोय रहे थे,इसलिये बिना उनके जागे हमने तुम सबसे भी कुछ नहीं कहा ॥ १० ॥ शस्त्र धारियोंमें श्रेष्ठ वह कुम्भकर्ण छे माससे सोय रहे थे, सो

प्रहस्तस्यवचःश्रुत्वाराजाराज्यहितैषिणः ॥ सुखेप्सुःसुहृदांमध्येव्याजहारसरावणः॥ ६ ॥ प्रियाप्रियेसुखेदुःखेलाभालाभौहिताहिते ॥ धर्मकामार्थकृच्छ्रेषुयूयमर्हथवेदितुम् ॥ ७ ॥ सर्वकृत्यानियुष्माभिःसमारब्धानिसर्वदा ॥ मंत्रकर्मनियुक्तानिनजातुविफलानिमे ॥८॥ ससोमग्रहनक्षत्रैर्मरुद्भिरिववासवः ॥ भवद्भिरहमत्यर्थंवृतःश्रियमवाप्नुयाम्॥९॥अहंतुखलुसर्वान्वःसमर्थयितुमुद्यतः॥कुंभकर्णस्यतुस्वप्नान्नेममर्थमचोदयम् ॥१०॥ अयंहिसुप्तःषण्मासान्कुंभकर्णोमहाबलः ॥ सर्वशस्त्रभृतांमुख्यःसइदानींसमुत्थितः ॥११॥ इयंचदंडकारण्याद्रामस्यमहिषीप्रिया ॥ रक्षोभिश्चरितोद्देशादानीताजनकात्मजा ॥ १२ ॥ सामेनशय्यामारोढुमिच्छत्यलसगामिनी ॥ त्रिषुलोकेषुचान्यामेनसीतासदृशीतथा ॥१३॥ तनुमध्यापृथुश्रोणीशरदिंदुनिभानना ॥ हेमबिंबनिभासौम्यामायेवमयनिर्मिता ॥१४ ॥सुलोहिततलौश्लक्ष्णौचरणौसुप्रतिष्ठितौ ॥ दृष्ट्वाताम्रनखौतस्यादीप्यतेमेशरीरजः ॥ १५ ॥ हुताग्निरर्चिःसंकाशामेनांसौरीमिवप्रभाम् ॥ उन्नसंविमलंवल्गुवदनंचारुलोचनम् ॥ १६ ॥

यह आज जागकर सभामें आये हैं; इस लिये हमने जिस कार्यको किया है,आज वह समस्त तुम लोगोंसे कहते हैं ॥ ११ ॥ कि,हम राक्षस गणोंके घूमनेके स्थान दंडकवनसे रामचन्द्रजी की प्यारी नारी जनक कुमारी सीताको हरण करके ले आये हैं ॥ १२ ॥ वह अलसगामिनी हमारी शेजपर नहीं आना चाहती, इस त्रिलोकीमें सीताके समान हमारा मन हरण करनेवाली और कोई नहीं है ॥ १३ ॥ उसकी कमर पतली है पश्चात् भाग मोटा है वदनमंडल शरदऋतुके चन्द्रमाके समान है वह देखनेमें सुवर्णसेबनी हुई भूमि और मयकी बनाई हुई मायाके समान जान पड़ती है ॥१४॥ उसके चरणतल लाल वर्ण और कोमल हैं, उसके नखोंकी अरुण दीप्ति है कि जिसके देखनेसे हमारे अंगमें अनंगके बाण लगे हैं ॥ १५ ॥ वह प्रकाशमान अग्निकेसमान दीप्तिमान् और सूर्य किरणके

समान प्रभा युक्त है उसकी नाक ऊंची है, दोनों नेत्र सुन्दर और वदन रमणीक है ॥ १६ ॥ जिसके देखतेही हम उसके वश हो कामके पाले पडे हैं। इस विषयमें क्रोध व हर्ष बराबर होनेसे कांति रहित हुए जाते हैं ॥ १७ ॥ व शोक संताप सदा होनेसे कामने हमको बहुत सताया है उस स्त्री सीताने हमसे एक वर्ष का समय माँगा है ॥ १८ ॥ वह विशाल नेत्रवाली जानकी अपने स्वामी रामचन्द्रकी राह परख रही है; वह सुन्दरनेत्र वाली उस सीताकी प्रतिज्ञा हमने मान ली है ॥१९॥ इस समय हम मार्ग चलनेसेथके हुए घोडेके समान कामकी ताडनासे अत्यन्त चलायमान होगये हैं। और वनवासी वानरगण किस प्रकारसे इस अक्षोभ्य समुद्रको तरेंगे ॥२०॥ और दशरथके पुत्र राम लक्ष्मण ही बहुत मत्स्यव्यालोंसे युक्त किस प्रकारसे इसके पार होंगे? अथवा जब कि, एक ही वानरने इतना बडा हमारा अपमान और सेनाका नाश किया ॥२१॥ तब किसप्रकारसे उनके कार्यकी शांति जानी जासकती है,सो तुमलोग कहो,यद्यपि मनु

पश्यंस्तदवशस्तस्याःकामस्यवशमेयिवान् ॥ क्रोधहर्षसमानेनदुर्वर्णकरणेनच ॥ १७ ॥ शोकसंतापनित्येनकामेनकलुषीकृतः ॥ सातुसंवत्सरंकालंमामयाचतभामिनी ॥१८॥ प्रतीक्षमाणाभर्तारंराममायतलोचना ॥ तन्मयाचारुनेत्रायाः प्रतिज्ञातंवचःशुभम् ॥ १९ ॥ श्रांतोहंसततंकामाद्यातोहयइवाध्वनि ॥ कथंसागरमक्षोभ्यंतरिष्यंतिवनौकसः ॥ २० ॥ बहुसत्त्वझषाकीर्णंतौवादशरथात्मजौ ॥ अथवाकपिनैकेनकृतंनःकदनंमहत् ॥ २१ ॥ दुर्ज्ञेयाःकार्यगतयोब्रूतयस्ययथामति ॥ मानुषान्नोभयंनास्तितथापितुविमृश्यताम् ॥ २२ ॥ तदादेवासुरेयुद्धेयुष्माभिःसहितोजयम् ॥ तेमेभवंतश्चतथासुग्रीवप्रमुखान्हरीन् ॥ २३ ॥ परेपारेसमुद्रस्यपुरस्कृत्यनृपात्मजौ ॥ सीतायाःपदवींप्राप्यसंप्राप्तौवरुणालयम् ॥ २४ ॥ अदेयाचयथासीतावध्यौदशरथात्मजौ ॥ भवद्भिर्मंत्र्यतांमंत्रःसुनीतंचाभिधीयताम् ॥ २५ ॥ नहिशक्तिंप्रपश्यामिजगत्यन्यस्यकस्यचित् ॥ सायरंवानरैस्तीर्त्वानिश्चयेनजयोमम ॥ २६ ॥

ष्योंसे हमको किसी प्रकारसेभयकी संभावना नहीं है;सो तथापि इसविषयमें जो कुछ कर्तव्य है वह तुम लोग स्थिर करो॥२२॥हमने पहले देवासुरसंग्राममें तुमलोगोंकी सहायतासे जयलक्ष्मी पाई थी,इसकारण आय पहुँचे हुए कार्यमें तुम लोग साहायता करो। कारण कि हमने जान लिया है कि;सुग्रीवादि वानरोंकोसंग लिये ॥ २३ ॥ वह नृपकुमार राम लक्ष्मण समुद्रके उत्तर किनारेपर सीताका समाचार अपने दूतके मुखसे पाय समुद्रके उस पार आय पहुँचे ॥ २४ ॥ जिससे कि, इस समय सीताको न लौटना पडे और राम लक्ष्मणका विनाश भी हो जाय, ऐसी उचित मंत्रणा इस समय तुम लोग विचारो ॥ २५ ॥ विशेषतः इतनी बातता निःसन्देह ही याद रक्खो कि,युद्ध होने पर उसमें ज यतो हमारी ही होगी कारण कि,वानर लोग समुद्रके पार आय हमको जीतनेमें समर्थ नहीं हैं,

व और किसी दूसरेकी सामर्थ्य भी जगत्‌में हम नहीं देखतेकि, जो समुद्र उतरकर यहां लड़ने आवे॥२६॥तब कामी बडे भाईके करुणासहित ऐसे वचन सुनकर मध्यम भ्राता कुम्भकर्ण अतिशय क्रोधित हो कहने लगा ❀ ॥२७॥ हे बडे भाईसाहब ! आप जबकि राम लक्ष्मणके निकटसे बलपूर्वक जानकीकोहरण करलाये, तब हम लोगोंके सहित विचार न करके स्वयंही आपने एकक्षणभरमें इस बातका विचार कर लिया होगा। अतएव यमुनाने पृथ्वीमें उतरनेके समय जिस प्रकार पहले अपनेकुण्डोंको पूर्णकर फिर समुद्रको परिपूर्ण कर समुद्रके जलसे अपनी उन्नतिको नहीं प्राप्त किया; वैसे ही आपने जो चलायमान चित्तका कार्य किया है सो उसके परिणामके समय हम लोगोंकी सम्मतिसे अब क्या कल्याण होगा ? ॥२८॥ राजन् ! ऐसे कार्यको करनेके पहले हम सब लोगोंसे आपको सलाह लेना ठीक था परन्तु आप ऐसा नकरके राम लक्ष्मणके विना जाने उनको धोखा देकर जानकीको हरणकर लेआये यह कार्य आपने अत्यन्त अनुचित किया है॥२९॥ हे

तस्यकामपरीतस्यनिशम्यपरिदेवितम् ॥ कुंभकर्णःप्रचुक्रोधवचनंचेदमब्रवीत् ॥ २७ ॥ यदातुरामस्यसलक्ष्मणस्यप्रसह्यसीताखलुसाइहाहृता ॥ सकृत्समीक्ष्यैवसुनिश्चितंतदाभजेतचित्तंयमुनेवयामुनम् ॥ २८ ॥ सर्वमेतन्महाराजकृतमप्रतिमंतव ॥ विधीयेतसहास्माभिरादावेवास्य कर्मणः ॥ २९ ॥ न्यायेनराजकार्याणियःकरोतिदशानन ॥ नससंतप्यतेपश्चान्निश्चितार्थमतिर्नृपः ॥ ३० ॥ अनुपायेनकर्माणिविपरीतानि यानिच ॥ क्रियमाणानिदुष्यंतिहवींष्यप्रयतेष्विव ॥ ३१ ॥ यःपश्चात्पूर्वकार्याणिकर्माण्यभिचिकीर्षति ॥ पूर्वंचापरकर्याणिसनवेदनयानयौ ॥ ३२ ॥ चपलस्यतुकृत्येषुप्रसमीक्ष्याधिकंबलम् ॥ छिद्रमन्येप्रपद्यंतेक्रौंचस्यखमिवद्विजाः ॥३३॥ त्वयेदंमहदारब्धंकार्यमप्रतिचिंतितम् ॥ दिष्ट्यात्वांनावधीद्रामोविषमिश्रमिवामिषम् ॥ ३४ ॥

दशानन! जो राजा कर्त्तव्य कार्यके विषयमें परामर्श स्थिर करके न्यायानुसार कार्य करतेहैं, उनको पीछेसे कभी संताप नहीं भोगना पडता॥३०॥यदि सम्मति विना स्थिर किये जो कार्य किये जाते हैं, वह कार्य अभिचारिक होनेसे अपवित्र यज्ञ प्रयुक्त हव्य पदार्थके समान कष्टके कारण होजाते हैं ॥ ३१ जो प्रथम करने लायक कार्योंको पीछे और पीछे करने लायक कर्योंको पहले कर डालते हैं; वह राजा नीति और अनीतिको कुछ भी नहीं जानते हैं ॥३२॥ हे महाराज ! राजाके पास अधिक सेना रहनेही से विजय होती है, ऐसा नहीं है परन्तु पक्षियोंने जिस प्रकार स्वामि कार्तिकके लिये रन्ध्रसे क्रौञ्च पर्वतको उल्लंघन किया थावै से ही शत्रु राजा लोग भी अपने शत्रुके कार्यमें छिद्र देखते ही उसको कुछ नहीं समझते हैं॥३३॥आपने परिणामका फल न विचारकर प्रबलकी स्त्रीके हरनेका यह

❀ कामादिकी बात सभामें कहनेके अयोग्य जानकर कुम्भकर्ण अधिक क्रोधित हुआ ॥

जो महापापका कार्य किया है, जैसेकि विषका मिला हुआ मांस भोजन करतेही भोजन करने वालेके प्राणोंका विनाश कर डालता है; वैसेही श्रीरामचन्द्रजीने उस समय जो आपके प्राणोंका संहार नहीं किया, यही आपके परम भाग्यकी बात है ॥३४॥ परन्तु जबकि तुमने इस अनुचित कार्यको करही डाला और शत्रुओंके सहित समर करनेका विचार करलिया, तब हमही उन शत्रुओंका संहार करके इस कार्यकी शान्ति करेंगे ॥३५॥ यदि इन्द्र, सूर्य, अग्नि, पवन, कुबेर, और वरुण तुम्हारे साथ शत्रुताई करें तो भी उनके सहित संग्राम करनेमें विमुख न होकर उन तुम्हारे शत्रुओंको मार ही डालेंगे ॥ ३६ ॥ संग्राममें हमारा यह पर्वताकार शरीर और तीक्ष्ण डाढें देखकर गर्जना सुनकर तथा परिघ हाथमें ले युद्ध करते देख इन्द्रभी भयको प्राप्त हो जायगा ॥३७॥ आप निश्चिन्त रहिये, रामचन्द्र एक बाण छोडकर दूसरा बाण छोडने पावेंगे, कि हम उनका रुधिर पान करलेंगे ॥ ३८ ॥ हम दशरथ कुमार राम लक्ष्मणका नाश करके आपके प्रीति उप

तस्मात्त्वयासमारब्धंकर्मह्यप्रतिमंपरैः ॥ अहंसमीकरिष्यामिहत्वाशत्रूंस्तवानघ ॥ ३५ ॥ अहमुत्सादयिष्यामिशत्रूंस्तवनिशाचर ॥ यदिश क्रविवस्वंतौयदिपावकमारुतौ ॥ तावहंयोधयिष्यामिकुबेरवरुणावपि ॥ ३६ ॥ गिरिमात्रशरीरस्यमहापरिघयोधिनः ॥ नर्दतस्तीक्ष्णदंष्ट्रस्य बिभीयाद्वैपुरंदरः ॥ ३७ ॥ पुनर्मांसद्वितीयेनशरेणनहनिष्यति ॥ ततोहंतस्यपास्यामिरुधिरंकाममाश्वस ॥ ३८ ॥ वधेनवैदाशरथेःसुखाव हंजयंतवाहर्तुमहंयतिष्ये ॥ हत्वाचरामंसहलक्ष्मणेनखादामिसर्वान्हरियूथमुख्यान् ॥ ३९ ॥ रमस्वकामंपिबचाग्र्यवारुणींकुरुष्वकार्याणिहि तानिविज्वरः ॥ मयातुरामेगमितेयमक्षयंचिरायसीतावशगाभविष्यति ॥ ४० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥ रावणंक्रुद्धमाज्ञायमहापार्श्वोमहाबलः ॥ मुहूर्तमनुसंचिंत्यप्रांजलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ १ ॥ यःखल्वपिवनं प्राप्यमृगव्यालनिषेवितम् ॥ नपिबेन्मधुसंप्राप्यसनरोबालिशोभवेत् ॥ २ ॥

जाने वाली विजयके लिये यत्न करेंगे और लक्ष्मणके सहित रामचन्द्रको संहार हम वानर दलके यूथप लोगोंकोभी भक्षण कर जायँगे ॥३९॥ इस समय आप सावधान चित्त होकर सुखसहित अपने हित कार्यको साधनकरनेमें रत होजाइये और वारुणी पान करके इच्छानुसार विहार कीजिये, जब हम रामचन्द्रका संहार करडालेंगे तब सीता सदाके लिये आपके वश हो जायगी ॥ ४० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० युद्धकाडे भाषायां द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥ उसके पीछे महाबलवान् महापार्श्व रावणको क्रोधायमान देखकर एक मुहूर्त्तभर तक चिन्ताकर हाथ जोड रावणसे बोला ॥ १ ॥ कि हे महाराज ! आप जो रामचन्द्रके आश्रममें प्रवेश करके उनकी स्त्रीको हरण करके ले आये हैं, यह कार्य तो आपके योग्य ही हुआ है परन्तु जो पुरुष मृग और सर्पोंसे सेवित वनमें

प्रवेश करके मधुको प्राप्त होकर भी उसको न पिये वह बडा मूर्ख है ॥२॥ यदि आप कहेंकि परनारीके भोग करनेसे ईश्वरकी आज्ञाके विपरीत करना होता है और इससे अधिक भी होता है, परन्तु आपको भय क्या है? क्योंकि आप धर्मके प्रवर्तक यमादि ईश्वरगणोंके भी ईश्वर हैं; इसकारण इस समय शत्रुलोगोंके मस्तक पर पांव धरकर आप सीताजीके साथ विहार कीजिये॥३॥ हे महाबलवान्! यदि विहार करनेके समय सीता आपके अनुकूल न हो तो आप मुर्गेकी प्रवृत्ति धारण करकेवारंवार बल प्रकाशकर उसको भोगकर विहार कीजिये॥४॥ हे महाराज! जहां सीता आपके वशमें हुई, फिर पीछेसे किसी भयके आनेकी आपपर संभावना नहीं, यदि समयानुसार कोई भय आवे भी तो उसको रोकदिया जायगा ॥ ५ ॥ फिर आपके पास तो बलकी भी कमी नहीं है कारण कि महाबलवान् कुम्भकर्ण और इन्द्रजीत हमारे सहायक हैं; तब तो हम वज्र हाथमें लिये इन्द्रको भी पराजित कर सकते हैं ॥ ६ ॥ हे राजन्! नीति शास्त्रके जाननेवाले पंडित लोगोंने

ईश्वरस्येश्वरःकोऽस्तितवशत्रुनिबर्हण॥ रमस्वसहवैदेह्याशत्रूनाक्रम्यमूर्धसु॥३॥बलात्कुक्कुटवृत्तेनप्रवर्तस्वमहाबल॥ आक्रम्याक्रम्यसीतांवैतांभुंक्ष्वचरमस्वच ॥४॥ लब्धकामस्यतेपश्चादागमिष्यतिकिंभयम् ॥ प्राप्तमप्राप्तकालंवासर्वंप्रतिविधास्यते ॥५॥ कुंभकर्णःसहास्माभिरिंद्रजिच्च महाबलः॥ प्रतिषेधयितुंशक्तौसवज्रमपिवज्रिणम् ॥६॥ उपप्रदानंसांत्वंवाभेदंवाकुशलैःकृतम्॥ समतिक्रम्यदंडेनसिद्धिमर्थेषुरोचये ॥७॥ इह प्राप्तान्वयंसर्वान्छत्रूंस्तवमहाबल॥ वशंशस्त्रप्रतापेनकरिष्यामोनसंशयः ॥८॥एवमुक्तस्तदाराजामहापार्श्वेनरावणः॥तस्यसंपूजयन्वाक्यमिदं वचनमब्रवीत् ॥९॥ महापार्श्वप्रवदतोरहस्यंकिंचिदात्मनः ॥ चिरवृत्तंतदाख्यस्येयदवाप्तंपुरामया॥१०॥ पितामहस्यभवनंगच्छंतींपुंजिकस्थलीम् ॥ चंचूर्यमाणामद्राक्षमाकाशेऽग्निशिखामिव॥११॥ साप्रसह्यमयाभुक्ताकृताविवसनाततः॥ स्वयंभूभवनंप्राप्तालोलितानलिनीयथा॥१२॥

कार्यकी सिद्धिके लिये साम, दान, भेद दंड यह चार प्रकारकेउपाय स्थिर किये हैं, उसमें पिछले उपाय अर्थात् दंडको हम श्रेष्ठ मानतेहैं ॥७॥ हे महाबलवान्! आपके शत्रुलोग जब इस लंकापुरीमें आजायँगे तो इसमें कोई संशय न समझिये कि हम शस्त्रके प्रतापसे उनको अपने वशमें करलेंगे ॥८॥ तब राक्षसराज रावण महापार्श्वके गर्वसहित यह वचन सुनकर उसकी प्रशंसा करता हुआ बोला ॥९॥ हे महापार्श्व! तुमने जो कुछ कहा वह सबकी सत्य २ है परन्तु जिस लिये जानकीको हमने अबतक बलसे नहीं भोगा; उसका कोई गुप्त कारण है, सो इसमें जो कुछ रहस्य है, वह हम अभी तुमसे कहते हैं जो पहले हुआ है ॥ १० ॥ हमने एक दिन पुञ्जिकस्थली नाम एक अप्सराको ब्रह्माजीके निकट जाते देखा; इस अप्सराका शरीर अग्निकी शिखाके समान चमकता था ॥११॥ वह हमको देखतेही मानों आकाशमें मिलती हुईसी जाने लगी, तब हमने बलपूर्वक उसे उसी समय नंगी करके भोगा, तब वह अप्सरा कमलनीके समान काँपती हुई ब्रह्मा

जीके निकट पहुँची ॥१२॥ और ऐसा जान पड़ता है, कि उसने ब्रह्मा जीके निकट अपनी इस दुरअवस्था का भी सबवृत्तान्त कहाही होगा; तब ब्रह्माजीने अत्यन्त क्रोधित होकर हमको यह शाप दिया॥१३॥हे अधम ! यदि आजसे तू किसी स्त्रीके ऊपर बलकर उससे भोग करेगा तो तेरा मस्तक निश्चय हीशतखण्ड होजायगा ॥१४॥ हम उसी ब्रह्मशापसे भीत होकर उन विदेह राजनंदिनी सीताजीको अपनी शुभ सेजपर चढानेकी चेष्टा नहीं करते ॥ १५ ॥ हमारा वेग समुद्र तुल्य और गति वायुके समान है, सो हमारे विक्रमकोन जानकर ही राम लंकाकी ओरको चढने की चेष्टा करतेहैं ॥१६॥ हमारे पर्वतकी गुहामें सोते हुए सिंह और क्रोधित यमराजके समान विराजमान रहनेसे ऐसा कौन है जो हमारा विश्राम तोडनेका साहसकर सकता है ? ॥१७॥ रामचन्द्रने संग्राममें दो जीभ

तच्चतस्यतथामन्येज्ञानमासीन्महात्मनः ॥ अथसंकुपितोवेधामामिदंवाक्यमब्रवीत् ॥१३॥ अद्यप्रभृतियामन्यांबलान्नारींगमिष्यसि ॥ तदा तेशतधामूर्धाफलिष्यतिनसंशयः ॥ १४ ॥ इत्यहंतस्यशापस्यभीतःप्रसभमेवताम् ॥ नारोहयेबलात्सीतांवैदेहींशयनेशुभे ॥ १५ ॥ सागरस्येवमेवेगोमारुतस्येवमेगतिः ॥ नैतद्दाशरथिर्वेदह्यासादयतितेनमाम् ॥ १६ ॥ कोहिसिंहमिवासीनंसुप्तंगिरिगुहाशये ॥ क्रुद्धंमृत्युमिवासीनं संबोधयितुमिच्छति ॥ १७ ॥ नमत्तोनिर्गतान्बाणान्द्विजिह्वान्पन्नगानिव ॥ रामःपश्यतिसंग्रामेतेनमामभिगच्छति ॥ १८ ॥ क्षिप्रंवज्रसमैर्बाणैःशतधाकार्मुकच्युतैः ॥ राममादीपयिष्यामिउल्काभिरिवकुंजरम् ॥ १९ ॥ तच्चास्यबलमादास्येबलेनमहतावृतः ॥ उदितःसविताकाले नक्षत्राणांप्रभामिव ॥२०॥ नवासवेनापिसहस्रचक्षुषायुधास्मिशक्योवरुणेनवापुनः ॥ मयात्वियंबाहुबलेननिर्जितापुरापुरीवैश्रवणेनपालिता ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीम० वा० आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे त्रयोदशःसर्गः ॥ १३ ॥ निशाचरेंद्रस्यनिशम्यवाक्यंसकुंभकर्णस्यचगर्जितानि ॥ विभीषणोराक्षसराजमुख्यमुवाचवाक्यंहितमर्थयुक्तम् ॥ १ ॥

वाले सर्पोंके समान हमारे धनुषसे छूटे हुए बाण नहीं देखे हैं, इसी कारणसे वह हमारे निकट आय रहे हैं॥१८॥ जिस प्रकार उल्का समूहसे गतिवाले हाथीको दग्ध किया जाता है वैसेही हम वज्रतुल्य बाण धनुषसे वर्षाकर रामचन्द्रको भस्म कर डालेंगे ॥ १९ ॥ जिस प्रकार सूर्यके उदय होनेसे समस्त तारागणोंकी ज्योति जाती रहती है, वैसेही हम अपनी सेनाके सहित जायकर रामचन्द्रकी सेनाकोनाशकर डालेंगे ॥२०॥ अधिक क्या कहें सहस्रलोचन बलवान् इन्द्र और वरुणभी हमको परास्त नहीं कर सकते, और अधिक करके पहलेही हमने इस कुबेर पालित लंकापुरीको अपने बाहुबलसे अपने वश कियाथा॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि० युद्ध० भाषायां त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥ राक्षसराज रावणके वचन और कुम्भकर्णके गर्जनायुक्त वचन सुनकर

महात्मा बिभीषणजी रावणसे ऐसे हितकारी और अर्थयुक्त वचन कहने लगे ॥ १ ॥ हे महाराज ! आप किस लिये यह वक्षस्थल रूप फण; चिन्तारूप विष, हास्य रूप तीक्ष्ण दंत; पंचांगुलि रूप पांच शिरवाले बडे भारी सीतारूप सर्पको यहांपर ले आये हैं वा यह सर्प कंठमें किसने बांधा है ?॥ २॥ हे राजन् ! जबतक पर्वतके शिखरके समान और नखदांतको आयुध बनाये वानरगण लंकापुरीको न घेरलें इससे प्रथम ही आप श्रीरामचन्द्रजीको सीता समर्पण करदें॥ ३ ॥ जबतक श्रीरामचन्द्रजीके छोडे हुए वज्र समान और वायुके समान वेगवान् बाण राक्षस श्रेष्ठोंके मस्तकोंको न काट डालें; इससे प्रथमही आप रामचन्द्रजीको जानकी देदें॥ ४॥ हे महाराज ! जिस समय रामचन्द्रजी युद्ध करेंगे, उस समय कुम्भकर्ण महापार्श्व, महोदर अथवा अतिकाय यह लोगकोई भी उनके सामने खडे न होस

वृतोहिबाह्वंतरभोगराशिश्चिताविषःसुस्मिततीक्ष्णदंष्ट्रः ॥ पंचांगुलीपंचशिरोऽतिकायःसीतामहाहिस्तवकेनराजन् ॥ २ ॥ यावन्नलंकांसमभिद्रवंतिवलीमुखाःपर्वतकूटमात्राः ॥ दंष्ट्रायुधाश्चैवनखायुधाश्चप्रदीयतांदाशरथायमैथिली ॥ ३ ॥ यावन्नगृह्णंतिशिरांसिबाणारामेरिताराक्षसपुंगवानाम् ॥ वज्रोपमावायुसमानवेगाः प्रदीयतांदाशरथायमैथिली ॥ ४ ॥ नकुंभकर्णेंद्रजितौचराजस्तथामहापार्श्वमहोदरौवा ॥ निकुंभकुंभौचतथातिकायःस्थातुंसमर्थायुधिराघवस्य ॥ ५ ॥ जीवंस्तुरामस्यनमोक्ष्यसेत्वंगुप्तःसवित्राप्यथवामरुद्भिः ॥ नवासवस्यांकगतोनमृत्योर्नभोनपातालमनुप्रविष्टः ॥ ६ ॥ निशम्यवाक्यंतुविभीषणस्यततः प्रहस्तोवचनंबभाषे ॥ ननोभयंविद्मनदैवतेभ्योनदानवेभ्योप्यथवाकदाचित् ॥ ७ ॥ नयक्षगंधर्वमहोरगेभ्योभयंनसंख्येपतगोरगेभ्यः ॥ कथंनुरामाद्भविताभयंनोनरेंद्रपुत्रात्समरेकदाचित् ॥ ८ ॥ प्रहस्तवाक्यंत्वहितंनिशम्यविभीषणोराजहितानुकांक्षी ॥ ततोमहार्थंवचनंबभाषेधर्मार्थकामेषुनिविष्टबुद्धिः ॥ ९ ॥ प्रहस्तराजाचमहोदरश्चत्वंकुंभकर्णश्चयथार्थंजातम् ॥ ब्रवीतरामंप्रतितन्नशक्यंयथागतिःस्वर्गमधर्मबुद्धेः ॥ १० ॥

केंगे॥ ५॥ यदि रामचन्द्रजी लंकामें आय पहुँचें तब चाहे आपकी रक्षा सूर्य और समस्त देवगणभी करें अथवा इन्द्र व यमका आश्रय ग्रहण करने या आकाशपातालमें प्रवेश करने पर भी यहांसे तुम जीते हुए नहीं निकल सकोगे ॥ ६ ॥ उसके पीछे प्रहस्त बिभीषणके ऐसे वचन सुनकर बोला कि, संग्राममें होनेपर हम कदाचित् न देव दानवोंसे भय करते हैं ॥ ७ ॥ अधिक क्या कहें जब यक्ष, गंधर्व, उरग अथवा पक्षिश्रेष्ठ गणसे भी हमको भयकी संभावना नहीं, तब भला मनुष्य रामचन्द्रसे हमको कौन भय हो सकता है''॥ ८॥ राजाके हित चाहने वाले व धर्म, अर्थ काम, इस त्रिवर्गके तत्त्व भली भाँति जानने वाले बिभीषण भी प्रहस्तके अमंगलकारी वचन सुनकर यह अर्थयुक्त वचन बोले॥ ९ ॥ हे प्रहस्त ! राक्षसराज महोदर कुम्भकर्ण और तुम यह जो वृथा गाल बजाते हो कि, हम रामचंद्रको जीतलेंगे; परन्तु अधा

र्मिकके स्वर्ग करनेके समान तुम लोग कोई भी इस कार्यके करनेको समर्थ नहीं होगे॥१०॥ हे प्रहस्त ! जिसको जहाजकी सहायता नहीं ऐसे पुरुषके समुद्र पार जानेके समान तुम हम अथवा समस्त राक्षस गणोंसे किस प्रकारसे उन अर्थ विशारद श्रीरामचन्द्रजीका वध हो सकता है ? ॥११॥ अधिक करके यह इक्ष्वाकुकुलनंदनमहारथी श्रीरामचन्द्रजी अतिशय धार्मिक हैं। हे प्रहस्त ! हमारी बात तो दूर रहे,ऐसे सब कार्यमें सामर्थ्यवान् पुरुषके संग्राममें देवतालोग भी मूढके समान हो जाते हैं॥१२॥हे प्रहस्त ! जबतक रामचन्द्रजीके छोडे हुए तेज और अमोघ बाणोंने तुम्हारे शरीरको भेद कर उसमें प्रवेश नहीं किया है;तबतक तुम राक्षसराजके सम्मुख वृथा बकवाद करते हो॥१३॥जबतक श्रीरामचन्द्रजीकी बांहोंसे छूटे हुए प्राण हरणकारी वज्रतुल्य वेगशाली तीखे बाण तुम्हारे शरीरको भेद

वधस्तुरामस्यमयात्वयाचप्रहस्तसर्वैरपिराक्षसैर्वा॥ कथंभवेदर्थविशारदस्यमहार्णवंतर्तुमिवाप्लवस्य ॥ ११ ॥ धर्मप्रधानस्यमहारथस्यइक्ष्वाकुवंशप्रवरस्यराज्ञः ॥ पुरोस्यदेवाश्चतथाविधस्यकृत्येषुशक्तस्यभवंतिमूढाः ॥ १२ ॥ तीक्ष्णानतावत्तवकंकपत्रादुरासदाराघवविप्रमुक्ताः ॥ भित्त्वाशरीरंप्रविशंतिबाणाःप्रहस्ततेनैवविकत्थसेत्वम् ॥ १३ ॥ भित्त्वानतावत्प्रविशंतिकायंप्राणांतिकास्तेशनितुल्यवेगाः ॥ शिताःशराराघवविप्रमुक्ताःप्रहस्ततेनैवविकत्थसेत्वम् ॥ १४ ॥ नरावणोनातिबलस्त्रिशीर्षो नकुंभकर्णस्यसुतोनिकुंभः ॥ नचेंद्रजिद्दाशरथिंप्रवोढुंत्वंवारणेशक्रसमंसमर्थाः ॥१५॥ देवांतकोवापिनरांतकोवातथातिकायोतिरथोमहात्मा ॥ अकंपनश्चापिसमानसारःस्थातुंनशक्तायुधिराघवस्य ॥१६ ॥ अयंचराजाव्यसनाभिभूतोमित्रैरमित्रप्रतिमैर्भवद्भिः ॥ अन्वास्यतेराक्षसनाशनार्थेतीक्ष्णःप्रकृत्याह्यसमीक्ष्यकारी ॥ १७ ॥ अनंतभोगेनसहस्रमूर्ध्नानागेनभीमेनमहाबलेन ॥ बलात्परिक्षिप्तमिमंभवंतोराजानमुत्क्षिप्यविमोचयंतु ॥ १८ ॥

कर फिरउनके तरकसमें जायकर नहीं प्रवेश करते हैं। तभीतक प्रहस्त ! तुम इसी भांति अपनी बडाई मारते हो॥१४॥हे प्रहस्त! बलवान् राक्षस राज रावण त्रिशीर्ष,मेघनाद,तुम, कुम्भकर्ण अथवा उसका पुत्र निकुम्भ तुम लोग कोई भी रणभूमिमें इन इन्द्रके समान विक्रमी रामचन्द्रजीके विक्रम सहन करनेको समर्थ नहीं होगे ॥ १५ ॥ देवान्तक, नरान्तक, अतिकाय, अतिरथ, और अकम्पन, इनमेंसे कोई भी श्रीरामचन्द्रजीके संग युद्ध करनेका साहस न करेंगे॥१६॥ अधिक क्या कहें हमारे राजाही कुबुद्धिके वश हुए हैं और तुम ही लोग इनके मित्ररूपी अमित्रहो,और तुम लोगोंकीही सलाहसे राक्षस कुलका नाश हो जायगा ॥१७॥हमारा तुम सबसे यही कहना है कि अनन्त बलयुक्त शरीरधारी हजार शिरवाले महाबलवान् सर्पोंके मुखमें फँसे हुए रावणको किसी प्रकार मुखसे निक

लना बताओ अर्थात् रामचन्द्रजी इन्हें माराही चाहते हैं, तुम लोग बचाओ ॥ १८ ॥ जिस प्रकार किसी पुरुषको भूत लगने पर उसके सुहृद् लोग केश ग्रह णादिरूप दंड देकरउसकी रक्षा करते हैं ऐसेही तुम सब लोगोंको मिलकर रावणकी रक्षा करनीचाहिये ॥ १९ ॥ हे प्रहस्त ! सुचरित्र रूप जल पूर्णरामच न्द्ररूप समुद्रकी तरंगसे ढका हुआ, काकुत्स्थ रूप पातालमें यह रावण गिराही चाहता है, सो इस राक्षसकी यत्नसे तुम लोग रक्षा करलो ॥ २० ॥ हम इस लंकापुरीके राक्षस राजकेव इनके सुहृद् और सबही राक्षसोंके हितार्थ कहते हैं कि—राक्षस राज श्रीरामचन्द्रजीको सीताजी दे डालें ॥२१॥ जो मंत्री विचार करके शत्रुकी ओरका अपनीओरका वीर्य और बलक्षय, इन बातोंके विषयमें भली भाँति शोचविच.र और परामर्शकरके अपने स्वामीको हितकी बात कहतेहैं

यावद्धिकेशग्रहणात्सुहृद्भिःसमेत्यसर्वैःपरिपूर्णकामैः॥निगृह्यराजापरिरक्षितव्योभूतैर्यथाभीमबलैर्गृहीतः ॥१९॥ सुवारिणाराघवसागरेणप्रच्छा द्यमानस्तरसाभवद्भिः ॥ युक्तस्त्वयंतारयितुंसमेत्यकाकुत्स्थपातालमुखेपतन्सः ॥ २० ॥ इदंपुरस्यास्यसराक्षसस्यराज्ञश्चपथ्यससुहृज्जनस्य ॥ सम्यग्घिवाक्यंस्वमतंब्रवीमिनरेंद्रपुत्रायददातुमैथिलीम्।२१॥परस्यवीर्यंस्वबलंचबुद्ध्वास्थानंक्षयंचैवतथैववृद्धिम्॥तथास्वपक्षेप्यनुमृश्यबुद्ध्या वदेत्क्षमंस्वामिहितसमंत्री॥२२॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०युद्धकांडेचतुर्दशःसर्गः॥१४॥बृहस्पतेस्तुल्यमतेर्वचस्तन्नि शम्ययत्नेनविभीषणस्य ॥ ततोमहात्मावचनंबभाषेतत्रेंद्रजिन्नैर्ऋतयूथमुख्यः ॥ १ ॥ किंनामतेतातकनिष्ठवाक्यमनर्थकंवैबहुभीतवच्च ॥ अस्मि न्कुलेयोपिभवेन्नजातःसोपीदृशंनैववदेन्नकुर्यात् ॥ २ ॥ सत्त्वेनवीर्येणपराक्रमेणधैर्येणशौर्येणचतेजसाच ॥ एकःकुलेस्मिन्पुरुषोविमुक्तोविभी षणस्तातकनिष्ठएषः ॥ ३ ॥ किंनामतौमानुषराजपुत्रावस्माकमेकेनहिराक्षसेन ॥ सुप्राकृतेनापिनिहंतुमेतौशक्यौकुतोभीषयसेस्मभीरो ॥४॥

वही यथार्थ मन्त्री हैं ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥ बृहस्पतिके तुल्य बुद्धिमान् विभीषणजीके यह उदार वचन सुनकर निशाचर यूथपतियोंमें मुख्य राक्षसश्रेष्ठ महाबलवान् मेघनाद कहनेलगा॥१॥हे कनिष्ठतात आपडरे हुएके समान किस कारणसे ऐसे अनर्थकारीवचन कह रहे हैं?पौलस्त्यकुलमें जन्म लेनेवालेकी बात तो दूररहे;सहज दुर्बल मनुष्य कुलमें जन्माहुआ मनुष्यभी ऐसा नहीं कहेगा; और न ऐसाकार्य करेगा॥२॥इस कुलमें एककेवल छोटे चचा बिभीषणही बलवीर पराक्रम धीरता शूरता और तेजहीन पुरुष उत्पन्न हुए हैं॥३॥हे डरपोक ! आप यह क्या मर्यादा दिखाते हैं ? हमारा

तो केवल एकही साधारण राक्षस उन राजकुमारोंको मार डालेगा, आप हमको क्या भय दिखाते हैं॥४॥ आप जानतेही हैं कि देवराज इन्द्र त्रिलोकका राजा है, परंतु हम उसको बांधकर पृथ्वीपर लेआये व देवता लोग इस भयंकर वृत्तान्तको देख भयभीत हो दशोंदिशाओंको भाग गये ॥५॥ फिर हमने बलपूर्वक ऐरावत हाथीके दोनों दांत उखाड लिये, उस समयमें वह इन्द्रका हाथी आर्तनाद करता हुआ पृथ्वीपर गिरा उस समय हमारा यह पराक्रम देखकर समस्त देवता लोगोंने भय पाया था॥६॥ हमने देवता लोगोंका गर्वहरण किया है और रण भूमिमें दैत्योंका नाश करके उनकी स्त्रियोंको शोकउत्पन्न कराया है; इसकारण ऐसे वीर्यशालीहोकर भी किस कारण हम इन साधारण मनुष्य राजपुत्र राम लक्ष्मणसे युद्ध करनेको समर्थ न होंगे? ॥७॥ धनुष धारियोंमें श्रेष्ठ बिभीषणजी इन्द्रके समान अजेयमहातेजस्वी

त्रिलोकनाथोननुदेवराजःशक्रोमयाभूमितलेनिविष्टः॥ भयार्पिताश्चापिदिशःप्रपन्नाःसर्वेतदादेवगणाःसमग्राः ॥ ॥ ५ ॥ ऐरावतोनिःस्वनमुन्नद न्सनिपातितोभूमितलेमयातु ॥ विकृष्यदंतौतुमयाप्रसह्यवित्रासितादेवगणास्समग्राः ॥ ६ ॥ सोहंसुराणामपिदर्पहंतादैत्योत्तमानामपिशोक हर्ता ॥ कथंनरेंद्रात्मजयोर्नशक्तोमनुष्ययोःप्राकृतयोःसुवीर्यः ॥ ७ ॥ अथेंद्रकल्पस्यदुरासदस्यमहौजसस्तद्वचनंनिशम्य ॥ ततोमहार्थंवचनं बभाषेविभीषणःशस्त्रभृतांवरिष्ठः ॥ ८ ॥ नतातमंत्रेतवनिश्चयोस्तिबालस्त्वमद्याप्यविपक्वबुद्धिः॥ तस्मात्त्वयाप्यात्मविनाशनायवचोऽर्थहीनं बहुविप्रलप्तम् ॥९॥ पुत्रप्रवादेनतुरावणस्यत्वमिंद्रजिन्मित्रमुखोसिशत्रुः ॥ यस्येदृशंराघवतोविनाशंनिशम्यमोहादनुमन्यसेत्वम् ॥ १० ॥ त्वमेववध्यश्चसुदुर्मतिश्चसचापिवध्योयइहानयत्त्वाम् ॥ बालंदृढंसाहसिकंचयोऽद्यप्रावेशयन्मंत्रकृतांसमीपम् ॥ ११ ॥ मूढोऽप्रगल्भोऽविन योपपन्नस्तीक्ष्णस्वभावोल्पमतिर्दुरात्मा ॥ मूर्खस्त्वमत्यंतसुदुर्मतिश्चत्वमिंद्रजिद्बालतयाब्रवीषि ॥ १२ ॥

इन्द्रजीतके यह वचन सुनकर महा अर्थयुक्त वचन कहने लगे ॥८॥ हे पुत्र ! तुम कार्य अकार्यका विचार करनेमें अत्यन्त अज्ञानी हो कारण कि अबतक तुम्हारी बुद्धि बालकके समान पकी नहीं है, इस कारण तुम अपना नाश करनेके अर्थही ऐसे प्रलाप वचन कह रहे हो ॥९॥ हे मेघनाद !तुम नाम मात्रको रावणके पुत्र और अत्यन्त सुहृद हो, परन्तु वास्तवमें तुम इनके परम शत्रुहो. कारण कि, राक्षस राजको घोर विपदमें पडे हुए देखकर भी तुम उनको निवारण नहीं करते ॥ १० ॥ इन्द्रजीत ! तुमने जो खोटे मंत्रके यह वचन कहे, उससे हमारे मतसे तुम मार डालनेके योग्यहो, और जिसने ऐसे चपल चित्त बालकको यहां लाकर मंत्रियोंके बीचमें परामर्श करनेको बुलाया, उसकोभी मार डालना उचित है ॥ ११ ॥ हे मेघनाद! तुमकार्य अकार्यका विचार नहीं जानते, बडे

बोलने वाले विनय रहित तीक्ष्ण स्वभावअदीर्घदर्शी, मूर्ख, दुर्मति और दुरात्मा हो इसी कारणसे बालकके समान ऐसा कहतेहो॥१२॥ जब श्रीरामचन्द्रजी रण भूमिमें खडे होकर ब्रह्मदंडके समान व कालाग्निके समान प्रकाशित हो तीखे बाण छोडेंगे तब बाणोंको कौन सहनेमें समर्थ होगा यह हम जानना चाहते हैं ॥ १३ ॥ हे बडे भाईसाहब ! आपसे अधिक और क्या कहें ?धन, रत्न; वसन; भूषण और मणिके सहित रामचन्द्रजीको तुम सीता दे डालो ऐसाहो जाय तो तुम स्वच्छन्द होकर अपनी इस लंकापुरीमें वसे रहे और हमसुखी हों ॥१४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां पञ्चदशः सर्गः ॥ १५ ॥ जब धर्मात्मा विभीषणजीने इसप्रकार अर्थयुक्त हितकारी वचन कहे तब रावणने काल प्रेरितके समान उनको यह कठोर वचन कहे ॥ १ ॥ शत्रु अथवा क्रोधित सर्पके साथ एकत्रवास करले परंतु नाम मात्रके मित्र और शत्रुकी सेवा करनेवाले इस प्रकारके मित्रके साथ कभी वास नहीं करना योग्य है ॥२॥हे विभीषण !

कोब्रह्मदंडप्रतिमप्रकाशानर्चिष्मतःकालनिकाशरूपान् ॥ सहेतबाणान्यमदंडकल्पान्समक्षमुक्तान्युधिराघवेण ॥ १३ ॥ धनानिरत्नानिसुभूषणानिवासांसिदिव्यानिमणींश्चचित्रान् ॥ सीतांचरामायनिवेद्यदेवींवसेमराजन्निहवीतशोकाः ॥ १४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आ०च०सा०युद्धकांडे पंचदशः सर्गः ॥१५॥ सुनिविष्टंहितंवाक्यमुक्तवंतंविभीषणम् ॥ अब्रवीत्परुषंवाक्यंरावणःकालचोदितः ॥१॥ वसेत्सहसपत्नेनक्रुद्धेनाशीविषेणच ॥ नतुमित्रप्रवादेनसंवसेच्छत्रुसेविना॥२॥जानामिशीलंज्ञातीनांसर्वलोकेषुराक्षस ॥ हृष्यंतिव्यसनेष्वेतेज्ञातीनांज्ञातयःसदा ॥ ३ ॥ प्रधानंसाधकंवैद्यंधर्मशीलंचराक्षस ॥ ज्ञातयोप्यवमन्यंतेशूरंपरिभवंतिच ॥४॥ नित्यमन्योन्यसंहृष्टाव्यसनेष्वाततायिनः ॥ प्रच्छन्नहृदयाघोराज्ञातयस्तुभयावहाः ॥ ५ ॥ श्रूयंतेहस्तिभिर्गीताःश्लोकाःपद्मवनेपुरा ॥ पाशहस्तान्नरान्दृष्ट्वाशृणुष्वगदतोमम ॥ ६ ॥

त्रिलोकमें कौनसी बातको हम नहीं जानतेहैं,हम जाति वालोंका यह स्वभाव भलीभांति जानतेहैं, कि बिरादरीमें एकआदमी पर विपद पडनेसे दूसरे आनंदित होते हैं ॥३॥ विभीषण!जाति वाले लोग,—इसमें भी प्रधान पंचगण,विद्वान् धार्मिक और वीरपुरषोंका निरादर करतेहैं और उनको परास्त करनेके लिये वहलोग सदाही छिद्र ढूँढा करते हैं ॥ ४ ॥ जातिसे अधिक भयानक और कौन है ? इन बिरादरीके मनका भाव जानना अति कठिन है यह जातिरूपी आततायी गण परस्पर विपद आई हुई देख कर परस्परमें हर्ष प्रकाश किया करते हैं ॥५॥ बहुत दिन हुए कुछ हाथी पद्म वनमें भ्रमण कर रहे थे उस कालमें उन्होंने कई एक हाथी सवार देखे कि, जिनके हाथमें फन्दे भी थे, उन हाथियोंने इनको देखकर बिरादरी वालोंके संबंधमें कुछ श्लोक कहे थे जो कि तुमसे वर्णन

करते हैं ❋ ॥ ६ ॥ उन्होंने कहाथा कि हम अग्नि, पाश अथवा और शस्त्रोंके देखनेसे नहीं डरते, परंतु इन स्वार्थ पर जातिवाले लोगोंको देखकर हम अत्यन्त भय लगता है ॥७॥ कारण कि यह जातिवाले ही हाथी पकडने वालोंको बतायदेते हैं;इसही कारणसे कहते हैं समस्त भय और समस्त कष्टोंके जाति वाले कारण हैं ॥८॥ हमने सैकडों बार देखा है कि,जगत्में जितने प्रकारके भय हैं;उनमें जाति वालोंसे भय होता है,उसकाही परिणाम विशेष कष्ट भारी होताहै जैसे गायोंमें हव्य कव्यादिके लिये दुग्ध;स्त्रियोंमें चंचलता और ब्राह्मण लोगोंमें तपस्या होतीहै,इसीप्रकार निःसन्देह जातिवाले लोगोंसे सदा भय रहताहीहै ॥९॥ हे विभीषण ! हमने जो शत्रुगणोंके पराजित करकेअतुलनीय ऐश्वर्य प्राप्त कियाहै व तीनों लोक हमारा आदर करतेहैं सो हे सौम्य ! हम जानते हैं कि हमारा

नाग्निर्नान्यानिशस्त्राणिन नः पाशाभयावहाः ॥ घोराःस्वार्थप्रयुक्तास्तुज्ञातयोनोभयावहाः ॥७॥ उपायमेतेवक्ष्यंतिग्रहणेनात्रसंशयः ॥ कृत्स्ना द्भयाज्ज्ञातिभयंसुकृष्टंविदितंचनः ॥ ८ ॥ विद्यतेगोषुसंपन्नंविद्यतेज्ञातितोभयम् ॥ विद्यतेस्त्रीषुचापल्यंविद्यतेब्रह्मणेतपः ॥ ९ ॥ ततोनेष्टमिदं सौम्ययदहंलोकसत्कृतः ॥ ऐश्वर्यमभिजातश्चारिपूणांमूर्ध्निचस्थितः ॥ १० ॥ यथापुष्करपत्रेषुपतितास्तोयबिंदवः ॥ नश्लेषमभिगच्छन्ति तथानार्येषुसौहृदम् ॥ ११ ॥ यथाशरदिमेघानांसिंचतामपिगर्जताम् ॥ नभवत्यंबुसंक्लेदस्तथानार्येषुसौहृदम् ॥ १२ ॥ यथामधुकरस्त र्षाद्रसंविदन्नतिष्ठति ॥ तथात्वमपितत्रैवतथानार्येषुसौहृदम् ॥ १३ ॥

यह सौभाग्य तुम्हारे असंतोषका अत्यन्तही कारण हुआ है ॥१०॥ जैसे कमलके पत्तेपर जलकी बूँदे गिरने पर वह किसीप्रकार उस पत्रपर नहीं ठहर सकती हैं वैसेही क्रूर स्वभाव वाले पुरुषके साथ मित्रता करनेसे वह मित्रता किसीप्रकार उसकेअन्तःकरणमें नहीं जमती॥११॥शरत्कालका मेघ जिस प्रकार गर्जता और वर्षता है,परन्तु उससे किसीप्रकार भी पृथ्वी नहीं भीजती वैसेही दुर्जनके साथ कितनीही मित्रता प्रगट कीजाय,वह वास्तवमें किसी फलकी न देनेवाली होकर केवल वृथा गर्जने और वर्षनेकी तुल्य होतीहै ॥ १२ ॥ जिसप्रकार भौंराप्यासा होकर पुष्पोंसे इच्छानुसार मधुपान कर परितृप्त होनेपर फिर उन पुष्पोंपर क्षण भरके

❋ जातिवालों के सम्बन्धमें एक औरभी किंवदन्ती प्रसिद्ध है कि,एक समय एक सघन वनमें होकर कई एक गाडियें जाय रहीथीं इन गाडियोंमें केवल कुल्हाडियें भरी हुई थीं। जिनको देखकर वनके वृक्ष अतिघबडाये और बोले कि अब एक वृक्षभी इस बनका न बचेगा !! हमारे भाग्यहीऐसेहैं उस समय किसी दूसरे वृक्षने कहाकि भाई ! जबतक हमारे जातिवालेइन कुल्हाडियोंकी सहायता नहीं करते तबतक कुछ यह हमारा नहीं कर सकतीं। अर्थात् जब हमारी जाति वाले वृक्षोंके बेंटे इन कुल्हाडियोंमें पड़ेंगे तब यह हमको काटनेमें समर्थ होंगी । बस जातिवालेही समस्त अनर्थके मूल हैं ।

लिये भी नहीं बैठता इसीप्रकार दुर्जनके साथ मित्रता करनेसे वह केवल अपनाही कार्य निकाल लेता है. विभीषण! तुमभी ऐसे ही हो॥ १३॥ जिस प्रकार मधुलोभी भौंरा काश फूलपर आय विशेष यत्न करनेपर भी मधुको नहीं प्राप्त होता, वैसेही दुर्जनकेसाथ मित्रता करनेसेउ सके पापसे कोई फल नहीं प्राप्त होता॥ १४॥ जिस प्रकार हाथी प्रथम जलमें स्नान करके फिर शुण्डसे अपने ऊपर धूरि फेंककर स्नानकृत निर्मलता का नाश करके अपने गातको मलीन करता है, वैसेही दुर्जनके साथ मित्रता करनेसे वह अपना कार्य सिद्ध करलेने पर स्वयंही पहले स्नेहको भूलकर मित्रताका नाश करलेता है॥ १५॥ हे कुलकलंक? तुमसे और अधिक क्या कहें? तेरे जीवनको धिक्कार है, तू हमारा सगा भाई होनेहीके कारण ऐसी बात कहकर अबतक जीवित है, नहीं तो और कोई ऐसा कहता तो अबतक उसका हमने नाश कर दिया होता॥ १६॥ न्याय वचन कहने वाले विभीषणजी रावण करके इस प्रकार घोर वचनोंसे निन्दित होने पर गदा ग्रहण करके अपने चार मंत्रियोंके

यथामधुकरस्तर्षात्काशपुष्पंपिबन्नपि ॥ रसमत्रनविंदेततथानार्येषुसौहृदम् ॥ १४ ॥ यथापूर्वंगजःस्नात्वागृह्यहस्तेनवैरजः ॥ दूषयत्यात्मनो देहंतथानार्येषुसौहृदम् ॥ १५ ॥ योऽन्यस्त्वेवंविधंब्रूयाद्वाक्यमेतन्निशाचर ॥ अस्मिन्मुहूर्तेनभवेत्त्वांतुधिक्कुलपांसन ॥ १६ ॥ इत्युक्तःपरुषंवाक्यंन्यायवादीविभीषणः ॥ उत्पपातगदापाणिश्चतुर्भिःसहराक्षसैः ॥ १७ ॥ अब्रवीच्चतदावाक्यंजातक्रोधोविभीषणः ॥ अंतरिक्षगतः श्रीमान्भ्रातावैराक्षसाधिपम् ॥ १८ ॥ सत्त्वंभ्रांतोसिमेराजन्ब्रूहिमांयद्यदिच्छसि ॥ ज्येष्ठोमान्यःपितृसमोनचधर्मपथेस्थितः ॥ इदंहिपरुषंवाक्यंनक्षमाम्यग्रजस्यते ॥ १९ ॥ सुनीतंहितकामेनवाक्यमुक्तंदशानन ॥ नगृह्णंत्यकृतात्मानःकालस्यवशमागताः ॥ २० ॥ सुलभाःपुरुषा राजन्सततंप्रियवादिनः ॥ अप्रियस्यचपथ्यस्यवक्ताश्रोताचदुर्लभः ॥ २१ ॥

सहित आकाशमें उछल गये ॥१७॥ और अत्यन्त क्रोधित होकर आकाशमें टिककर अपने भ्राता राक्षसराज रावणसे कहने लगे ॥१८॥ हे महाराज ! आप बडे भ्राता होनेके कारण पिताके समान मानने लायक हैं; इस लिये आप जो कुछभी कहें वह समस्तही हमकोसहन कर लेना चाहिये, परन्तु आप धर्मका मार्ग परित्याग करके परदारा हरणादिरूप घोर अधर्मके आचरण करने लगे हैं इसी कारणसे बडेभाई होनेपर भी आज हम आपके यह घोर वचन न सह सकें॥ १९॥ हे वीर! हमने हितकी कामनासे तुमको हितकी वार्त्ता कही थी परन्तु कालके वशको प्राप्त होकर तुमने हमारे वचन नहीं सुने, यथार्थ में जिस पुरुषकी मृत्यु निकट आती है, उसकी यही दशा होती है जो तुम्हारी है ॥२०॥ हे महाराज ! सदा मीठी बात करने वाले अनेक हैं; परन्तु श्रवण करनेको अप्रिय और परिणाममें शुभ

दायक वचनोंके कहने वाले और श्रवण करनेवाले दोनोंही दुर्लभ हैं ॥२१॥ जिस प्रकार घरमें आग लग जानेपर फिर उसकी आग बुझानेमें आलस्य नहीं करना चाहिये, वैसेही आपको सब प्राणियोंके नाश करनेवाले कालकी फांसीमें बँधकर नष्ट होते देखकरही हमने ऐसे हितकारी वचन कहेथे ॥२२॥ महाराज ! हम तुम्हें रामचंद्र करके प्रदीप्त अग्निके समान सुवर्ण भूषित तीखे बाणोंसे भरा हुआ देखनेकी इच्छा नहीं करते इसी कारणसे हमने इस प्रकारसे हितके वचन कहे थे॥२३॥रेतेका पुल चाहै कितनाही दृढ क्यों न होवै वर्षा कालके आते ही वह टूट जाता है, वैसेही पुरुष कितना ही बलवान् अस्त्रका जानने वाला और शूर क्यों न हो कालके आनेपर उसका विनाश होजाता है॥२४॥हे महाराज ! जो कुछभी हो तुम स्वामी हो गुरु हो हमने आपके हितकी कामनासे जो कुछभी कहाहै यदि उसमें कोई अपराध आपने पायाहो तो उसको क्षमा कर दीजिये लीजिये हम जाते हैं, आप हमको बिदा देकर सुख प्राप्त कीजिये, और

बद्धंकालस्यपाशेनसर्वभूतापहारिणः ॥ ननश्यंतमुपेक्षेत्वांप्रदीप्तंशरणंयथा ॥२२॥ दीप्तपावकसंकाशैःशितैःकांचनभूषणैः ॥ नत्वामिच्छाम्यहंद्रष्टुंरामेणनिहतंशरैः ॥ २३ ॥ शूराश्चबलवंतश्चकृतास्त्राश्चनरारणे ॥ कालाभिपन्नाःसीदंतियथावालुकसेतवः ॥२४॥ तन्मर्षयतुयच्चोक्तंगुरुत्वाद्धितमिच्छता ॥ आत्मानंसर्वथारक्षपुरींचेमांसराक्षसाम् ॥ स्वस्तितेऽस्तुगमिष्यामिसुखीभवमयाविना ॥ २५ ॥ निवार्यमाणस्यमयाहितैषिणानरोचतेतेवचनंनिशाचर ॥ परांतकालेहिगतायुषोनराहितंनगृह्णंतिसुहृद्भिरीरितम् ॥ २६ ॥ इत्यार्षे श्रीम० वा० आ० च० सा० यु० षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥ इत्युक्त्वापरुषंवाक्यंरावणंरावणानुजः ॥ आजगाममुहूर्तेनयत्ररामःसलक्ष्मणः ॥ १ ॥ तंमेरुशिखराकारंदीप्तामिवशतह्रदाम् ॥ गगनस्थंमहीस्थास्तेददृशुर्वानराधिपाः ॥ २ ॥

राक्षसोंके सहित यह लंकापुरीभी सर्व प्रकारसे आपकी रक्षा करे ॥२५॥ हम तो मंगलकी कामनासे आपको रोकते थे, परन्तु आपने हमारे कहनेको न माना; महाराज ! आयु वीत जानेपर लोग जिस प्रकार कालके वश होकर आपने इष्ट मित्रोंके कहे हुए वचनोंको किसी प्रकारसे नहीं मानते; हे राक्षसनाथ ! अब तुम्हारी भी वही दशा आय पहुँची है, जो ऐसा न होता तो हम सरीखे सुहृद् लोगोंके वचनोंका ऐसा अनादर क्यों किया जाता ? ॥ २६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी आदि० युद्धकांडे भाषायां षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥ बिभीषण राक्षसराज रावणको इस प्रकार घोर वचन कहकर जिस स्थानमें श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीके सहित विराजमान थे एक मुहूर्त्त भरमें वहां पहुँच गये ॥ १ ॥ वानर यूथपोंने पृथ्वीपरसे आकाशमें टिके हुये तेजसे प्रकाशमान सुमेरु पर्वतके

शिखरके समान उन बिभीषणजीको देखा ॥ २ ॥ कवच बख्तर और शस्त्रधारी उत्तम भूषण भूषित भीम पराक्रमशाली चार मंत्रियोंके सहित ॥ ३ ॥ उन मेघ और पर्वतके समान, वज्रके समानजिनके अंग प्रकाशमान श्रेष्ठ आयुध धारण किये दिव्य भूषण वस्त्रधारी ॥ ४ ॥ बुधिमान् वानरराज सुग्रीवजी इन पांच जनोंको देखकर समस्त वानर गणोंके सहित चिन्ता करने लगे ॥५॥ सुग्रीवजी इस प्रकार एक मूहूर्त भरतक चिन्ता करके हनुमानादि वानरोंसे यह उत्तम वचन बोले॥६॥यह देखो हमको निश्चय जान पडता है कि यह सब अस्त्र शस्त्र धारी राक्षस हम लोगोंका प्राणनाश करनेही के लिये चार राक्षसोंके साथ यहांपर आये हैं ॥७॥ सुग्रीवजीके ऐसे वचन सुनकर यह समस्त वानर श्रेष्ठ वृक्ष और पर्वतादि ग्रहण करके यह बोले ॥८॥ कि, हे महाराज ! आप शीघ्रही इन दुरात्मा लोगोंका वध करनेके लिये हमको आज्ञा दीजिये, हम बहुतही शीघ्र इन पांचोंका नाश करके पृथ्वीपर गिरा देंगे ॥ ९ ॥ जब वानर लोगोंने परस्पर इस

तेचाप्यनुचरास्तस्यचत्वारोभीमविक्रमाः ॥ तेपिवर्मायुधोपेताभूषणोत्तमभूषिताः ॥३॥ सचमेघाचलप्रख्योवज्रायुधसमप्रभः॥वरायुधधरोवीरोदिव्याभरणभूषितः ॥४॥ तमात्मपंचमंदृष्ट्वासुग्रीवोवानराधिपः ॥ वानरैःसहदुर्धर्षश्चिंतयामासबुद्धिमान्॥५॥चिंतयित्वामुहूर्तंतुवानरांस्तानुवाचह ॥ हनूमत्प्रमुखान्सर्वानिदंवचनमुत्तमम् ॥६॥ एषसर्वायुधोपेतश्चतुर्भिःसहराक्षसैः ॥ राक्षसोऽभ्येतिपश्यध्वमस्मान्हंतुंनसंशयः ॥७॥ सुग्रीवस्यवचःश्रुत्वासर्वेतेवानरोत्तमाः ॥ शालानुद्यम्यशैलांश्चइदंवचनमब्रुवन् ॥८॥ शीघ्रंव्यादिशनोराजन्वधायैषांदुरात्मनाम् ॥ निपतंतिहतायावद्धरण्यामल्पचेतनाः ॥९॥ तेषांसंभाषमाणानामन्योन्यंसविभीषणः ॥ उत्तरंतीरमासाद्यखस्थएवव्यतिष्ठत॥१०॥सउवाचमहाप्राज्ञःस्वरेणमहतामहान्॥ सुग्रीवंतांश्चसंप्रेक्ष्यखस्थएवविभीषणः ॥ ११ ॥ रावणोनामदुर्वृत्तोराक्षसोराक्षसेश्वरः ॥ तस्याहमनुजोभ्राताविभीषणइतिश्रुतः ॥१२॥ तेनसीताजनस्थानाद्धृताहत्वाजटायुषम् ॥ रुद्धाचविवशादीनाराक्षसीभिःसुरक्षिता ॥१३॥ तमहंहेतुभिर्वाक्यैर्विविधैश्चन्यदर्शयम् ॥ साधुनिर्यात्यतांसीतारामायेतिपुनःपुनः ॥१४॥ सचनप्रतिजग्राहरावणःकालचोदितः ॥ उच्यमानंहितंवाक्यंविपरीतइवौषधम् ॥१५॥

प्रकारसे कहा तब विभीषणजीने समुद्रके उत्तरतीरपर पहुँच क्षण भरतक विश्राम ले आकाशमें ही टिके ॥१०॥ उन दीर्घदर्शी सुग्रीव और दूसरे वानर गणोंको पुकार कर दीर्घ व गंभीर स्वरसे आकाशमें स्थित हुएही कहा॥११॥राक्षस गणोंका स्वामी रावणनामक दुराचारी एक राक्षस है; हम उसके छोटे भाई हैं और हमारा नाम बिभीषण है ॥ १२ ॥ वही दुरात्मा जटायुको मारकर जनस्थानसे जनकलडैती सीताजीको हरण करके लेगया है । क्रूर स्वभाववाली राक्षसियोंसे रक्षित होकर जानकीजी उसके अधिकारमें दीन भावसे बास करती हैं ॥ १३ ॥ हमने "श्रीरामचन्द्रजीको जानकी देडालिये" इत्यादि बहुतसे नीतियुक्त वचन कह २ कर रावणसे वारंवार विनयकी थी॥१४॥परन्तु मृत्यु जिसकी निटक आई है ऐसा पुरुष जिसप्रकार औषधि का सेवन नहीं करता ऐसेही मृत्युकाल निकट आनेसे

उसने हमारे हितकारी बचनोंको ग्रहण नहीं किया ॥१५॥ वचन मानलेना तो दूर रहा, हमको उसने अनेक प्रकारके कटु वचन कहकर दासके समान हमारे साथ बर्ताव किया है; तिरस्कार किया है हम उसी कारणसे पुत्र स्त्री और परिवारको त्याग कर श्रीरामचन्द्रजीकी शरणमें आये हैं ॥ १६ ॥ महात्मा श्रीरामचन्द्रजी सर्व लोकोंके शरण देनेवाले हैं,इस कारण आप महात्मा श्रीरामचन्द्रजी से निवेदन करें कि, बिभीषण आये हैं॥१७॥तब वानरराज सुग्रीवजी बिभीषणके वचन सुनकर शीघ्रही श्रीराम लक्ष्मणजीके निकट गये और क्रोध सहित कहने लगे ॥१८॥हमको जान पडता है,शत्रुकी ओरका कोई भेदिया असावधानीसे हमारी सेनामें प्रवेशकर आया है, इस कारण अवसर पानेसे उल्लू जिस प्रकार कौओंको मार डालता है, ऐसेही यह हम लोगोंको मार डालेगा॥१९॥ हे शत्रुतापन ! जिससे वानर लोगोंका मंगल हो, आप इसी प्रकारसे कार्य अकार्यको विचार सेना सन्निवेश, उनको शिक्षादेना और शत्रु लोगोंकी सेनाका वृत्तान्त जान

सोहंपरुषितस्तेनदासवच्चावमानितः ॥ त्यक्त्वापुत्रांश्चदारांश्चराघवंशरणंगतः ॥ १६ ॥ सर्वलोकशरण्यायराघवायमहात्मने ॥ निवेदयत मांक्षिप्रंविभीषणमुपस्थितम् ॥ १७ ॥ एतत्तुवचनंश्रुत्वासुग्रीवोलघुविक्रमः ॥ लक्ष्मणस्याग्रतोरामंसंरब्धमिदमब्रवीत् ॥ १८ ॥ प्रविष्टःशत्रुसैन्यंहिप्राप्तःशत्रुरतर्कितः ॥ निहन्यादंतरंलब्ध्वाउलूकोवायसानिव ॥ १९ ॥ मंत्रव्यूहनयेचारेयुक्तोभवितुमर्हसि ॥ वानराणांचभद्रंतेपरेषांचपरंतप ॥ २० ॥ अंतर्धानगताह्येतेराक्षसाःकामरूपिणः ॥ शूराश्चनिकृतिज्ञाश्चतेषांजातुनविश्वसेत् ॥ २१ ॥ प्रणिधीराक्षसेन्द्रस्यरावणस्यभवेदयम् ॥ अनुप्रविश्यसोस्मासुभेदंकुर्यान्नसंशयः ॥ २२ ॥ अथवास्वयमेवैषच्छिद्रमासाद्यबुद्धिमान् ॥ अनुप्रविश्यविश्वस्तेकदाचित्प्रहरेदपि ॥ २३ ॥ मित्राटविबलंचैवमौलभृत्यबलंतथा ॥ सर्वमेतद्बलंग्राह्यंवर्जयित्वाद्विषद्बलम् ॥ २४ ॥

नेके लिये दूत नियत कीजिये, इससे अवश्य आपका मंगल होगा ॥२०॥ राक्षस लोग कामरूपी और अतिशय बलवान् होते हैं,—वह लोग गुप्त भावसे टिककर कूट उपायसे दूसरेका बुरा किया करते हैं इसलिये उन लोगोंके ऊपर विश्वास करना हम ठीक नहीं समझते ॥२१॥ हमको तो यह विश्वास होता है कि; यह राक्षसराज रावणका गुप्त भेदिया है,यह हम लोगोंके बीचमें प्रवेश करके निःसन्देह हम लोगोंमें परस्पर भेद डलवा देगा ॥ २२ ॥ अथवा जबकि हम इसका विश्वास करके जैसेही कि, असावधान होंगे वैसेही यह बुद्धिमान् छिद्र देखकर हम लोगोंको मार डालेगा २३ ॥ यदि कहो कि, आया हुआ राक्षस जो कोई भी हो सेनाके बीचमें आनेही से हमारे बलकी वृद्धि करेगा परन्तु यह बातनीति विरुद्ध है कारण कि पंडित लोगोंने कहा है कि "युद्धके समय अपने मित्र प्रेरित आरण्यक बल और भृत्यजनोंका बल(जिसको तत्काल आजीविका देकर संग्रह किया है) और अपने बंधुओंका बल यह त्रिविध बल ग्रहण करले" परन्तु शत्रुकी

सेनाको कभी ग्रहण न करे॥२४॥यह आया हुआ पुरुष आपके शत्रु राक्षस राजरावणका भाई है;जातिसे राक्षस हैं और शत्रु पक्षसे हीइसने आगमन कियाहै फिर भला यह किसप्रकार विश्वास करनेयोग्य है ?॥२५॥राक्षसोंके स्वामीकाछोटा भाई यह विभीषण चारराक्षसोंके साथ आपकीशरणागतमें आया है॥२६॥ परन्तु आप निश्चयही जानेकि,यह विभीषण रावणका पठाया आया है. हे क्षमाशील! कुछभी हो,हमारी सम्मतिमें तो इस रावणके पठाये हुये विभीषणको आप दंडही दीजिये ॥२७॥ यह कुटिल बुद्धि मायावी राक्षस प्रथम आपको अपना विश्वास कराय,यहांपर विराजमान रह फिर समय पाय आपपर प्रहार करनेके निमित्तही रावणका भेजा हुआ यहांपर आया है ॥२८॥ हे महाराज ! यह क्रूर विभीषण रावणका भाई है; इस कारण शीघ्रही तीक्ष्ण दंड विधान करके इसके

प्रकृत्याराक्षसोह्येषभ्राताऽमित्रस्यवैप्रभो ॥ आगतश्चरिपुःसाक्षात्कथमस्मिंश्चविश्वसेत् ॥ २५ ॥ रावणस्यानुजोभ्राताविभीषणइतिश्रुतः ॥ चतुर्भिःसहरक्षोभिर्भवंतंशरणंगतः ॥ २६ ॥ रावणेनप्रणीतंहितमवेहिभीषणम् ॥ तस्याहंनिग्रहंमन्येक्षमंक्षमवतांवर ॥ २७ ॥ राक्षसोजिह्म याबुद्धयासंदिष्टोऽयमिहागतः ॥ प्रहर्तुमाययाच्छन्नोविश्वस्तेत्वयिचानघ ॥२८॥ वध्यतामेषतीव्रेणदंडेनसचिवैःसह ॥ रावणस्यनृशंसस्य भ्राताह्येषविभीषणः ॥ २९ ॥ एवमुक्त्वातुतंरामंसंरब्धोवाहिनीपतिः ॥ वाक्यज्ञोवाक्यकुशलंततोमौनमुपागमत् ॥ ३० ॥ सुग्रीवस्यतुतद्वाक्यं श्रुत्वारामोमहाबलः ॥ समीपस्थानुवाचेदंहनूमत्प्रमुखान्कपीन् ॥ ३१ ॥ यदुक्तंकपिराजेनरावणावरजंप्रति ॥ वाक्यंहेतुमदत्यर्थंभवद्भिरपि चश्रुतम् ॥ ३२ ॥ सुहृदामर्थकृच्छ्रेषुयुक्तंबुद्धिमतासदा ॥ समर्थेनोपसंदेष्टुंशाश्वतींभूतिमिच्छता ॥ ३३ ॥

चारों मंत्रियोंके साथ इसको मरवा डालिये॥२९॥ वाक्यविशारद सेनापतिसुग्रीवजी क्रोधमें भर वाक्य कुशल श्रीरामचन्द्रजीसे यह कहकर मौन धारण करते हुए ॥३०॥ महाबलवान् श्रीरामचंद्रजी सुग्रीवजीके ऐसे वचन सुनकर समीपमें बैठे हुए हनुमानादि वानर गणोंसे यह वचन बोले ॥३१॥ वानरराज सुग्रीवजीने रावणके छोटे भाई विभीषणके विषयमें जो युक्तियुक्त वचन कहे हम जानते हैं कि इन समस्त वचनोंको तुम लोगोंने सुनाही है ॥३२॥ सुहृद्के कार्याकार्यमें संदेह उपस्थित होनेपर अखंड मंगलाभिलाषी बुद्धिमान् और विचार समर्थ मंत्रियोंको ऐसा उपदेश अवश्यही करना चाहिये इस कारण तुमलोग इस विषयमें

अपनी २ सम्मति प्रकाश करो ॥ ३३ ॥ आलस्य रहित वानरराज श्रीरामचन्द्रजीसे इसप्रकार कहे जाकर उनका प्रिय करनेकी कामनासे विनय व नम्रतायुक्त हो बोले ॥ ३४ ॥ हे रघुनन्दन ! हे श्रीरामचन्द्रजी ! आप त्रिलोकी की समस्त बातोंको जानते हैं, तथापि सुहृद्भावसे हम लोगोंसे जो कुछ आपने पूँछा, यह केवल हम लोगोंका सन्मान बढानेके लिये है ॥ ३५ ॥ आप सत्यव्रत; (शरणागतरक्षक) शूर, धार्मिक और विपुल विक्रमकारी हो इष्ट मित्रोंके प्रति तुम्हारा अटल विश्वास है, आप बडे विचारवान् हैं,स्वयं परीक्षासे कार्य करते हो ॥ ३६ ॥ इससमय आपके निकट बुद्धिमान्, चतुर कार्यकुशल मंत्री लोग एक २ करके अपनी २ सम्मति प्रगट करें ॥ ३७ ॥ उसके पीछे वानर युवराज बुद्धिमान् अंगदजी बिभीषणके चरित्र परीक्षा करनेके लिये श्रीरामचन्द्रजीसे कहने लगे ॥३८॥ हे महाराज बिभीषण शत्रुकी ओरसे आया हुआ है,इसकारण इससे शंका करनी चाहिये,व सहसा इसका विश्वास करना भी योग्य नहीं

इत्येवंपरिपृष्टास्तेस्वंस्वंमतमतंद्रिताः ॥ सोपचारंतदारामसूचुःप्रियचिकीर्षवः ॥ ३४ ॥ अज्ञातंनास्तितेकिंचित्रिषुलोकेषुराघव ॥ आत्मानं पूजयन्रामपृच्छस्यस्मान्सुहृत्तया ॥३५॥ त्वंहिसत्यव्रतःशूरोधार्मिकोदृढविक्रमः ॥ परीक्ष्यकारीस्मृतिमान्निसृष्टात्मासुहृत्सुच ॥३६॥ तस्मा देकैकशस्तावद्ब्रुवंतुसचिवास्तव ॥ हेतुतोमतिसंपन्नाःसमर्थाश्चपुनस्तथा ॥३७॥ इत्युक्तेराघवायाथमतिमानंगदोऽग्रतः ॥ विभीषणपरीक्षार्थ मुवाचवचनंहरिः ॥ ३८ ॥ शत्रोःसकाशात्संप्राप्तःसर्वथातर्क्यएवहि ॥ विश्वासनीयःसहसानकर्तव्योविभीषणः ॥ ३९ ॥ छादयित्वात्मभावं हिचरंतिशठबुद्धयः ॥ प्रहरंतिचरंध्रेषुसोऽनर्थः सुमहान्भवेत् ॥ ४० ॥ अर्थानर्थौविनिश्चित्यव्यवसायंभजेतह ॥ गुणतःसंग्रहंकुर्याद्दोषतस्तुवि सर्जयेत्॥४१॥ यदिदोषोमहांस्तस्मिंस्त्यज्यतामविशंकितम् ॥ गुणान्वापिबहूञ्ज्ञात्वासंग्रहःक्रियतांनृप॥४२॥शरभस्त्वथनिश्चित्यसार्थंवचन मब्रवीत्॥क्षिप्रमस्मिन्नरव्याघ्रचारप्रतिविधीयताम्॥४३॥प्रणिधायहिचारेणयथावत्सूक्ष्मबुद्धिना॥परीक्ष्यचततःकार्योयथान्यायंपरिग्रहः॥४४॥

है ॥ ३९ ॥ क्योंकि क्रूर स्वभाव वाले राक्षस लोग सदा अपने मनका भाव छिपाये घूमा करते और अवसर पायकर ऐसा प्रहार करते हैं कि,वह अनर्थ महा भयंकर हो उठताहै ॥ ४० ॥ पहले हिताहितका विचार करके बलसंग्रह करना चाहिये,जिसमें अधिक गुणहो उस बलको संग्रह करे,और जिसमें गुणसे दोष अधिक हों उस बलका त्याग करे ॥ ४१ ॥ महाराज ! इसी कारणसे हम कहते हैं कि;जो आप इस आये हुए बिभीषणमें अधिक दोष देखें,तब तो उसका त्याग कर दीजिये अथवा जो वह विशेष गुणशाली हो तो शंका रहित चित्तसे उसको ग्रहण कीजिये ॥४२॥ उसके पीछे शरभ नामक वानर क्षणभर तक चिन्ता करके यह अर्थ युक्त वचन बोला हे नरशार्दूल ! बिभीषणके चरित्रकी परीक्षा करनेके निमित्त एक दूत उसके पास भेजिये ॥४३॥ फिर दूतके मुखसे

यथार्थ मनका अभिप्राय जानकर यथाविधि अपनी सूक्ष्म बुद्धिसे भी विचार और परीक्षा करके इसको ग्रहण कर लीजिये ॥४४॥ उसके पीछे मंत्रजाननेमें चतुर जाम्बवानजी यथाशास्त्र विचार करते हुए गुणसहित और दोष रहित वचनबोले ॥४५॥ हे राजन् ! बिभीषण राक्षस राजको संकटमें पतित देखकर भी जब कि,वे अवसरमें उसकेअधिकारसे हमारे अधिकारमें आयाहै तब तो निश्चयहीजाना जाताहै कि,आपके सहित वैर बांधे हुए राक्षसोंके स्वामी रावणनेहींइसको भेजा है इस कारण इससे अनभल होनेकी सम्पूर्ण संभावना है,इस कारण इसको त्याग ही देना ठीकहै ॥४६॥ नीति अनीतिके जाननेमें पंडित-मैन्द नामक वानर विचार करके यह अर्थ युक्त वचन बोला ॥४७॥ हे नृपति ! यह बिभीषण रावणका छोटा भाई है,प्रथम तो इससे मधुर बाणीके द्वारा समस्त बात पूँछनी चाहिये ॥ ४८ ॥ हे नरश्रेष्ठ ! पहले यह जान लेना उचित है कि इस विभीषणका स्वभाव दुष्ट है अथवा नहीं ? उसके पीछे बुद्धिसे विचार कर जो करने

जांबवांस्त्वथसंप्रेक्ष्यशास्त्रबुद्ध्याविचक्षणः ॥ वाक्यंविज्ञापयामासगुणवद्दोषवर्जितम् ॥ ४५ ॥ बद्धवैराच्चपापाच्चराक्षसेंद्राद्विभीषणः ॥ अदेशकालेसंप्राप्तःसर्वथाशंक्यतामयम् ॥ ४६ ॥ ततोमैंदस्तुसंप्रेक्ष्यनयापनयकोविदः ॥ वाक्यंवचनसंपन्नोबभाषेहेतुमत्तरम् ॥ ४७ ॥ अनुजोनामतस्यैषरावणस्यविभीषणः ॥ पृच्छ्यतांमधुरेणायंशनैर्नरपतीश्वर ॥ ४८ ॥ भावमस्यतुविज्ञायतत्त्वतस्त्वंकरिष्यसि ॥ यदिदुष्टोनदुष्टोवा बुद्धिपूर्वंनरर्षभ ॥ ४९ ॥ अथसंस्कारसंपन्नोहनूमान्सचिवोत्तमः ॥ उवाचवचनंश्लक्ष्णमर्थवन्मधुरंलघु ॥ ५० ॥ नभवंतंमतिश्रेष्ठंसमर्थंवदतांवरम् ॥ अतिशाययितुंशक्तोबृहस्पतिरपिब्रुवन् ॥ ५१ ॥ नवादान्नापिसंघर्षान्नाधिक्यान्नचकामतः ॥ वक्ष्यामिवचनंराजन्यथार्थंरामगौरवात्॥ ५२ ॥ अर्थानर्थनिमित्तंहियदुक्तंसचिवैस्तव ॥ तत्रदोषंप्रपश्यामिक्रियानह्युपपद्यते ॥ ५३ ॥

योग्य हो वह कीजियेगा॥४९॥ उसके पश्चात् सर्वशास्त्रोंके जाननेवाले मंत्रिश्रेष्ठ हनुमानूजी यह अर्थ युक्त मिताक्षर मधुर सन्दर्भ व श्रवण सुखकारी वचन कहने लगे ॥५०॥ कि,हे वचन बोलने वालोंमें श्रेष्ठ ! आप अत्यन्त बुद्धि शक्ति सम्पन्न और समस्त शास्त्रोंके अर्थको निरूपण करनेमें समर्थ हैं,हमको जानपडता है कि,यदि सुरसचिवबृहस्पतिजीभी परामर्श देनेवाले हों तो वह भी आपको परामर्श नहीं दे सकते,वहीक्या वरन्कोई भी आपके बचनोंका अनादर नहींकरसकता ॥ ५१ ॥ हे राजन् ! हम तर्क करनेमें कुशल, मंत्रिपदवाच्य बुद्धिमान् या इच्छानुसार ऐसा नहीं करते हैं परन्तु इस बडे भारी कार्यके उपस्थित होनेसे जब आपने सन्मान देकर पूँछा है तब हम आपके गौरवसे यह वचन कहतेहैं ॥५२॥ हे महाराज ? आपके अंगदादि मंत्री लोगोंने बिभीषणके दोष गुणकी परीक्षा

करनेके विषयमें जो कुछ कहा इसमें दोष भी अनेक हैं विशेषतः इस समय विभीषणजीके चरित्रादिकी परीक्षा करनी ठीक नहीं हो सकेगी॥५३॥विभीषणको यहांपर बुलाकर उसका वृत्तान्त पूँछनेके अतिरिक्त उसके मनका भाव और बल व वीर्यादिका विषय कुछ भी नहीं जाना जाय सकता,परन्तु सहसा आपके समीप भी उसको लाना अनुचित है ॥५४॥ दूत भेजनेके सम्बन्धमें आपके मंत्रियोंने जो कुछ कहा है सो विना प्रयोजन हुए इसकी भी हम कुछ आवश्यकता नहीं देखते ॥ ५५ ॥ और जाम्बवानूजीने जो "विभीषण राक्षस राजको संकटमें पतित देखकर भी जब कुअवसरमें उसके अधिकारसे हमारे अधिकारमें आया है" इत्यादि कहा है परन्तु बिभीषण अनवसरमें रावणको परित्याग करके जिस कारणसे यहां आया है उसके संबन्धमें हम कुछ कहना चाहते हैं आप लोग स्थिर चित्तसे श्रवण करें ॥ ५६ ॥आपके व रावणके दोष गुण विचार अधार्म्मिक रावणके समीपसे जो अत्यन्त धर्मात्मा आपके निकट विभीषण आये

ऋतेनियोगात्सामर्थ्यमवबोद्धुंनशक्यते ॥ सहसाविनियोगोऽपिदोषवान्प्रतिभातिमे ॥५४॥ चारप्रणिहितंयुक्तंयदुक्तंसचिवैस्तव ॥ अर्थस्यासंभवात्तत्रकारणंनोपपद्यते ॥ ५५ ॥ अदेशकालेसंप्राप्तइत्ययंयद्विभीषणः ॥ विवक्षातत्रमेऽस्तीयतान्निबोधयथामति ॥ ५६ ॥ एषदेशश्चकालश्चभवतीहयथातथा ॥ पुरुषात्पुरुषंप्राप्यतथादोषगुणावपि ॥ ५७ ॥ दौरात्म्यंरावणेदृष्ट्वाविक्रमंचतथात्वयि ॥ युक्तमागमनंह्यत्रसदृशंतस्यबुद्धितः ॥ ५८ ॥ अज्ञातरूपैःपुरुषैःसराजन्पृच्छ्यतामिति ॥ यदुक्तमत्रमेप्रेक्षाकाचिदस्तिसमीक्षिता ॥ ५९ ॥ पृच्छ्यमानोविशंकेतसहसाबुद्धिमान्वचः ॥ तत्रमित्रंप्रदुष्येतमिथ्यापृष्टंसुखागतम् ॥ ६० ॥

तो आपके निकटका यह देश सुदेशहै और ऐसेही धर्मात्मा पुरुषके निकट पहुँचाने वाला काल भी श्रेष्ठकाल है,यह कुछ भी कुदेश व कुकाल नहीं है॥५७॥ कारण कि रावणमें दौरात्म्य और आपको गुणवान और अधिक विक्रम सम्पन्न देख जो विभीषण आपके निकट आया है, इससे तो उसका अधिक बुद्धिमानीहीका कार्य हुआ है ॥ ५८ ॥ अज्ञात कुलशील दूतके द्वारा विभीषणका वृत्तान्त जाननेकेविषयमें जो कुछ मैन्दने कहा है हमने इसके संबंधमें भी जो कुछ विचार करके सिद्धान्त किया है,वहभी आप लोग सुनें ॥ ५९ ॥ हे महाराज ! बिभीषण बुद्धिमान् है,इस कारण अज्ञात कुलशील किसी पुरुषके सहसा उससे कुछ पूँछनेपर उसके मनमें कोई शंका अवश्य होगी । फिर सुख पानेकी लालसासे जो आपके साथ वह मित्रता करने आया है वह दूषित होजायगी. कारण कि बुद्धिमान् पुरुषसे कोई बात पूँछनेपर सहसा उसकेमनमें शंका हो जाती है,वास्तवमें आया हुआ पुरुष मित्र हो तोमिथ्या अनुसन्धान करनेसे उसके

मनमें अन्तर पडनेकी संभावना है और यहभी कुछ बात नहीं कि प्रश्न करतेही किसीकी भावगति जानलीजावे ॥ ६० ॥ हे राजन् ! शत्रुके मनका भाव सरलतासे एकसाथही जान लेना अत्यन्त कठिन है; इस कारण कुछदिन बिभीषणको यहां रखकर उसका व्यवहार देखिये; बस उसकी बातोंके स्वरसेही उसका अभिप्राय प्रगट हो जायगा; चलाये हुए बाण समूहसे जिस प्रकार वीरोंकी धीरता जानली जातीहै वैसेही व्यवहार करनेसे पुरुषकी प्रकृति(आदत)जानली जाती है॥ ॥ ६१ ॥जो कुछ भी हो हमने तो जहाँतक परीक्षा की है, उससेतो बिभीषणके वाक्यादिमें कोई खोटा आशय जाना नहीं गया और उसके मुखपरभी अप्रसन्नताका कोई लक्षण नहीं दिखाई देता, इस कारण उसके चरित्र सम्बन्धमें हमको तो कोई भी सन्देह नहीं है ॥६२॥ जिसके अन्तःअरणमें कपट भरा होता है वह सावधान और अशंक होकर किसी प्रकारसे वचन नहीं कह सकता । सो हे महाराज! जो विभीषण शठ होता तो कभी शंकारहित सावधानीसे आपकेनिकट नहीं

अशक्यंसहसाराजन्भावोबोद्धुंपरस्यवै ॥ अंतरेणस्वरैर्भिन्नैर्नैपुण्यंपश्यतांभृशम् ॥ ६१ ॥ नत्वस्यब्रुवतोजातुलक्ष्यतेदुष्टभावता ॥ प्रसन्नंवदनंवापितस्मान्मेनास्तिसंशयः ॥६२॥ अशंकितमतिःस्वस्थोनशठःपरिसर्पति ॥ नचास्यदुष्टवागस्तितस्मान्मेनास्तिसंशयः ॥ ६३ ॥ आकारश्छाद्यमानोऽपिनशक्योविनिगूहितम् ॥ बलाद्धिविवृणोत्येवभावमंतर्गतंनृणाम् ॥ ६४ ॥ देशकालोपपन्नंचकार्य्यंकार्यविदांवर ॥ सफलंकुरुतेक्षिप्रंप्रयोगेणाभिसंहितम् ॥ ६५ ॥ उद्योगंतवसंप्रेक्ष्यमिथ्यावृत्तंचरावणम् ॥ वालिनंचहतंश्रुत्वासुग्रीवंचाभिषेचितम् ॥ ६६ ॥ राज्यंप्रार्थयमानस्तुबुद्धिपूर्वमिहागतः ॥ एतावत्तुपुरस्कृत्यविद्यतेतस्यसंग्रहः ॥ ६७ ॥

आ सकता और उसके वचनोंमेंभी कोई दोष नहीं पाया जाता अतएव हमको तो उसके प्रति कोई सन्देह नहीं है ॥६३॥ मनका भाव छिपाने की कितनी ही चेष्टा कीजावे परन्तु वह किसी प्रकारसे नहीं छिप सकता. कारण कि अंतःकरण शठतासे पूर्ण हो या श्रेष्ठ हो वह सहसा प्रकाशित होही जाताहै॥६४॥हे कार्य जानने वालोंमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी ! देशकालके संबंधमें विचार करके जो कार्य करता है उसका परिणाम अवश्यही सफल होता है इस कारण इन विभीषणका आना सफल है ॥ ६५ ॥कारण कि यह विभीषण आपको रावणके वधमें उद्योगी देख रावणको बलगर्वित और पाप कार्यमें लगा हुआ देख; वालिका नाश और सुग्रीवको राज्य पाये जान ॥ ६६ ॥ जिस प्रकार वालिको मारकर आपने सुग्रीवको राज्य दिया है वैसेही रावणका विनाश करके आप उसको ही

करते हुए यह उत्तर देते हुए कि ॥१॥ हे वानरगण ! तुमलोग हमारा हित सिद्ध करनेके लिये यत्न करते हो इस कारण विभीषणके संबंधमें हमको जो कुछ कहना है वह समस्तही तुम्हारे समीप वर्णन करते हैं, श्रवण करो ॥२॥ जब कि विभीषण मित्रता करनेके

है॥६७॥हे बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ ! हमने विभीषणके चरित्रकी सरलताके संबंधमें अपनी शक्तिके अनुसार जो कुछ कहा वह समस्तही आपने श्रवणकिया, अब जो कुछ करनाकर्तव्य हो वह आप कीजिये॥६८॥इत्यार्षे श्रीमद्वा०वाल्मी०आदि०युद्ध०भाषायां सप्तदशः सर्गः॥१७॥उसके पीछे सर्वशास्त्रोंके जाननेवाले अजीत श्रीरामचंद्रजी यत्न सहित पवनकुमार हनुमानूजीके वचन सुनकर अतिशय प्रसन्नता प्राप्त

लंकाका राज्य देदेंगे यही आशा करके विभीषण आपकी शरणमें आये हैं अतएव आदरमानसहित इनका ग्रहण करना ही कर्तव्य

यथाशक्तिमयोक्तंतुराक्षसस्यार्जवंप्रति ॥ प्रमाणंत्वंविशेषस्यश्रुत्वाबुद्धिमतांवर ॥६८॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०युद्धकाण्डे सप्तदशः सर्गः ॥१७॥ अथरामःप्रसन्नात्माश्रुत्वावायुसुतस्यह॥प्रत्यभाषतदुर्धर्षःश्रुतवानात्मनिस्थितम् ॥१॥ ममापिचविवक्षास्तिकाचित्प्रतिविभीषणम् ॥ श्रोतुमिच्छामितत्सर्वंभवद्भिःश्रेयसिस्थितैः ॥ २ ॥ मित्रभावेनसंप्राप्तंनत्यजेयंकथंचन ॥ दोषोयद्यपितस्यस्यात्सतामेतदगर्हितम् ॥३॥ सुग्रीवस्त्वथतद्वाक्यमाभाष्यचविमृश्यच ॥ ततःशुभतरंवाक्यमुवाचहरिपुंगवः ॥४॥ सदुष्टोवाप्यदुष्टोवाकिमेषरजनीचरः ॥ ईदृशंव्यसनंप्राप्तंभ्रातरंयःपरित्यजेत् ॥५॥ कोनामसभवेत्तस्ययमेषनपरित्यजेत् ॥ वानराधिपतेर्वाक्यंश्रुत्वासर्वानुदीक्ष्यतु ॥ ६ ॥

लिये हमारी शरणमें आया है तबतो चाहे उसमें अत्यन्त दोषभी हों तथापि हम उसको नहीं त्याग सकते अधिक करके ऐसा आचरण करने अर्थात शरणागतको शरण न देनेसे साधुलोगोंके निकट निन्दनीय होना पडता है ❋ ॥३॥ उसके पीछे वानरराज सुग्रीवजी श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर मनमें अनेक भाँतिके तर्क और परामर्श करते विभीषणजीके चरित्रमें दोष दिखाने वाले यह हितकारीवचन बोले ॥४॥ यह निशाचर अच्छे चरित्रवाला हो या बुरे चारित्र वाला हो जब कि यह अपने भ्राताको ऐसे संकटमें पडा देखकर उसे छोड यहां चला आया ॥ ५॥ तब विपद्में पडा हुआ देखकर विभीषण जिसका त्याग न करे ऐसा हम उसका कोई अन्तरंग मित्र नहीं देखते । हे महाराज ! विभीषण इस समय आपकी शरणमें आता है, परन्तु किसी विपदमें हम लोगोंके पडतेही यह उसी

❋ शिवि राजाने अपना प्राण देकर कबूतरको बचाया, और दधीचिने देवतालोगोंको शरणही जानअपने शरीरकी अस्थि देदी ।

समय हमको त्याग कर यहांसे चला जायगा. वानरनाथ सुग्रीव जीका वचन सुन सबकी ओर निहार ॥ ६ ॥ सत्यपराक्रम काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजी मुस्कुराकर पुण्य लक्षण लक्ष्मणजीसे बोले ॥७॥ हे लक्ष्मण ! वानरराज सुग्रीवजीने जो कुछ कहा है; वह विना बहुत काल तक वृद्ध जनोंकीसेवा किये, और शास्त्रोंके बिना पढे सुने कोई भी ऐसे वचन कहनेको समर्थ नहीं हो सकता॥८॥सुग्रीवजीने विभीषणका एक दोष जो बताया कि इसने अपने भाईको छोड दिया है, उसका संबंध भी सर्वभूप साधारण प्रत्यक्ष सर्वलोक प्रसिद्ध और प्रथमसे सूक्ष्मतर है इसमें और भी कुछ कहते हैं॥९॥पंडित लोग जाति और निकट रहनेवाले दूसरे राजाकोही शत्रु बताय कर कीर्तन किया करते हैं; कारण कि संकट पडनेसे यही राजाका नाश करनेकी चेष्टा किया करते हैं. हे लक्ष्मण ! रावणका भ्राता विभीषण भी राक्षसोंके स्वामी रावणको संकटमें पडा हुआ देखकर उसका नाश करानेके लियेही यहांपर आया है। जब कि यह विभीषण अपनी जातिके

ईषदुत्स्मयमानस्तुलक्ष्मणंपुण्यलक्षणम् ॥ इतिहोवाचकाकुत्स्थोवाक्यंसत्यपराक्रमः ॥ ७ ॥ अनधीत्यचशास्त्राणिवृद्धाननुपसेव्यच ॥ नश क्यमीदृशंवक्तुंयदुवाचहरीश्वरः ॥ ८ ॥ अस्तिसूक्ष्मतरंकिंचिद्यथात्रप्रतिभातिमे ॥ प्रत्यक्षंलौकिकंचापिवर्ततेसर्वराजसु ॥ ९ ॥ अमित्रास्त त्कुलीनाश्चप्रातिदेश्याश्चकीर्तिताः ॥ व्यसनेषुप्रहर्तारस्तस्मादयमिहागतः ॥ १० ॥ अपापास्तत्कुलीनाश्चमानयंतिस्वकान्हितान् ॥ एषप्रा योनरेंद्राणांशंकनीयस्तुशोभनः ॥ ११ ॥ यस्तुदोषस्त्वयाप्रोक्तोह्यादानेरिबलस्यच ॥ तत्रतेकीर्तयिष्यामियथाशास्त्रमिदंशृणु ॥ १२ ॥ नव यंतत्कुलीनाश्चराज्यकांक्षीचराक्षसः ॥ पंडिताहिभविष्यंतितस्माद्ग्राह्योविभीषणः ॥ १३ ॥

शत्रु रावणके भयसे यहां पर आया है, यदि यह अपने भाईसे प्रीतिकर उसके प्रेरण किये यहां पर आते तो कोई विश्वास घातकता दोषोंकी सम्भावना होसकती, यह पापाचारी अपने भ्राता के आचरणसे विरुद्ध होनेके कारण उससे निकाले जाकर, यहां आये हैं इस कारण हम इसमें किसी प्रकारका भी दोष नहीं देखते॥१०॥ जातिवाले लोग चाहे कितनेभी निष्पापहों परंतु अपना हित साधनेकी सदाही चेष्टा किया करते हैं; इस कारण जातीवाले लोग हितकारी होनेपरभी राजाके शंका दिलाने वाले होते हो हैं ॥११॥ हे सुग्रीव ! तुमने शत्रुकी सेवा साथ रखनेमें जो दोष बताये हैं, हम उसके संबंधमें भी यह नीतिशास्त्र सम्मत उत्तर देते हैं, तुम सुनो॥१२॥हम विभीषणके जाति वाले नहीं हैं इस कारण वह हमारा नाश करके हमारा राज्य अधिकार करनेको यहां नहीं आये हैं, वरनू अपने भ्राताका विनाश करायउसका राज्य पानेकी आशासे हमारे पास आये हैं। हमको ज्ञात होता है कि, विभीषण कार्य अकार्यके विचार करनेमें समर्थ हैं इस कारण

इनका ग्रहण करनाही योग्य है ॥१३॥ यह बात प्रसिद्ध है कि, भाई लोग परस्पर मिलकर अव्याकुल चित्त और सन्तुष्ट मनसे वास करते हैं, परन्तु कालक्र मसे सबकी राज्यलाभ लालसा बलवती होनेपर परस्पर भेद पड जाता है। उसके पीछे जाति वालोंकी रीति जिस प्रकारसे चली आई है, उसके अनुसारही युद्धकुलाहल और परस्पर भेद पड जाता है' इस कारण बोध होता है कि विभीषण अब तक रावणके साथ सुहृदतासे वास करता था, अब किसी कारणवश शत्रुता होनेपर उसका विनाश करके उसका राज्य पानेकी आशासे हमारे शरणागत हुआ है, इस कारण विभीषणका ग्रहण करनाही उचित है ॥१४॥ हे वत्स ! जो ऐसी शंका करो, कि भरतने राज्य पाय करभी किस कारणसे उसे ग्रहण न किया; परंतु हे लक्ष्मण ! पृथ्वीपर भरतके समान निर्लोभी भ्राता और हमारे समान पिता वचन मानने वाला पुत्र, और तुम्हारे समान सर्व यत्नसे सब प्रकारका सुख छोड छांडकर मित्रकार्यको साधन करनेवाले सुहृद अत्यन्त दुर्लभ

अव्यग्राश्चप्रहृष्टाश्चतेभविष्यंतिसंगताः ॥ प्रणादश्चमहानेषोऽन्योन्यस्यभयमागतम् ॥ इतिभेदंगमिष्यंतितस्मात्प्राप्तोविभीषणः ॥ १४ ॥ नसर्वेभ्रातरस्तातभवंतिभरतोपमाः ॥ मद्विधावापितुःपुत्राःसुहृदोवाभवद्विधाः ॥ १५ ॥ एवमुक्तस्तुरामेणसुग्रीवःसहलक्ष्मणः ॥ उत्थायेदंमहाप्राज्ञः प्रणतोवाक्यमब्रवीत् ॥ १६ ॥ रावणेनप्रणिहितंतमवेहिनिशाचरम् ॥ तस्याहंनिग्रहंमन्येक्षमंक्षमवतांवर ॥ १७ ॥ राक्षसोजिह्मया बुद्ध्यासंदिष्टोयमिहागतः ॥ प्रहर्तुंत्वयिविश्वस्तेविश्वस्तेमयिवानघ ॥ १८ ॥ लक्ष्मणेवामहाबाहोसवध्यःसचिवैःसह ॥ रावणस्यनृशंसस्य भ्राताह्येषविभीषणः ॥ १९ ॥ एवमुक्त्वारघुश्रेष्ठंसुग्रीवोवाहिनीपतिः ॥ वाक्यज्ञोवाक्यकुशलंततोमौनमुपागमत् ॥ २० ॥ ससुग्रीवस्यतद्वाक्यं रामःश्रुत्वाविमृश्यच ॥ ततःशुभतरंवाक्यमुवाचहरिपुंगवम् ॥ २१ ॥

हैं ॥ १५ ॥ जब श्रीरामचन्द्रजीने सुग्रीव व लक्ष्मणजीसे यह वार्ता कही तब बुद्धिमान् सुग्रीव जी खडे प्रणाम कर यह बोले ॥ १६ ॥ हे क्षमाशील । ऐसा समझमें आता है कि रावणनेही इस राक्षसको यहां पर भेजा है इस कारण हमारी सम्मतिसे तो इसका मार डालनाही उचित है ॥ १७ ॥ हे पापरहित ! यह कुटिल बुद्धिवाला राक्षस रावणके द्वारा पठाया जाकर आपके हमारे व सेनाके विनाश करनेहीके लिये यहांपर आया है। यह विश्वासमें डाल कर हमारे वा आपके ऊपर प्रहार करेगा ॥ १८ ॥ अथवा यह लक्ष्मणजीकेही ऊपर चोट चलावेगा, इस कारण रावणका भ्राता यह क्रूर विभीषण मंत्रीलोगोंके साथ वध कर डालनेहीके योग्य है ॥ १९ ॥ वचन बोलनेमें चतुर सेनापति वानरश्रेष्ठ सुग्रीवजी वाक्य विशारद श्रीरामचन्द्रजीसे ऐसा कह कर मौन हुए ॥ २० ॥ श्रीरामच

न्द्रजी वानरश्रेष्ठ सुग्रीवजीके यह वचन सुन एक क्षण भर चिन्ता करके वानरराज सुग्रीवजीसे यह शुभवचन बोले ॥ २१ ॥ हे सुग्रीव ! राक्षस विभीषण दुष्ट हो अथवा भला हो; परन्तु यह हमारा कुछ तनिक भी बुरा नहीं कर सकता ॥ २२ ॥ हे वानरराज ! एक साधारण राक्षस विभीषणकी क्या चलाई, यदि हम इच्छा करें तो क्षणभरमें ही पृथ्वीके समस्त पिशाच, दानव, यक्ष और राक्षसोंके उंगलीके पौरुष ऐसेही संहार कर सकते हैं * ॥ २३ ॥ और तुमने शत्रुसेनाके ग्रहण करनेमें जो दोष बताया है, इसके संबन्धमें हमने एक इतिहास सुना है वह तुम्हें सुनाते हैं कि एक समय कोई व्याधा कबूतरके घोसलेसे युक्त एक पेडके नीचे आया उस कबूतरकी कबूतरीको उसने पहले जंगलमें पकड़ लिया था; उस समय वर्षा हो रही थी और महाशीत पड़ रहाथा, भूकप्यास और जाड़ेसे व्याधा व्याकुल था, कबूतरने आश्रममें आये हुए उस शत्रुको शीतसे आर्त देख अग्नि लाय शीत निवारण कर साध्यानुसार उसकी सेवा करके पीछे

सदुष्टोवाप्यदुष्टोवाकिमेषरजनीचरः ॥ सूक्ष्ममप्यहितंकर्तुममशक्तःकथंचन ॥ २२ ॥ पिशाचान्दानवान्यक्षान्पृथिव्यांचैवराक्षसान्॥ अंगुल्यग्रेणतान्हन्यामिच्छन्हरिगणेश्वर ॥२३॥ श्रूयतेहिकपोतेनशत्रुःशरणमागतः॥ अर्चितश्चयथान्यायंस्वैश्चमांसैर्निमंत्रितः ॥२४॥ सहितंप्रतिजग्राहभार्याहर्तारमागतम् ॥ कपोतोवानरश्रेष्ठकिंपुनर्मद्विधोजनः ॥२५॥ ऋषेःकण्वस्यपुत्रेणकंडुनापरमर्षिणा ॥ शृणुगाथापुरागीताधर्मिष्ठासत्यवादिना ॥ २६ ॥ बद्धांजलिपुटंदीनंयाचंतंशरणागतम् ॥ नहन्यादानृशंस्यार्थमपिशत्रुंपरंतप ॥२७॥ आर्तोवायदिवादृप्तःपरेषांशरणंगतः ॥ अरिः प्राणान्परित्यज्यरक्षितव्यःकृतात्मना॥ २८ ॥

उसकी क्षुधा निवारण करनेको अपना मांसतक दे दिया अर्थात् उस अग्निमें कूद पड़ा और शरणागत वत्सलताके कारण विमानमें बैठ स्वर्गको गया. यह देख व्याधेको ज्ञान हुआ तब वह कबूतरीको छोड तप करने गया. और कबूतरी भी उसी अग्निमें प्राण त्याग स्वर्गको गई ॥२४॥ हेवानरश्रेष्ठ सुग्रीव ! जब जीवने भी भार्याके मार डालनेवाले शरणमें आये शत्रुका निरादर न करके यथाविधिसे उसका सन्मानही किया, फिर भला हम क्षत्रिय होकर किसप्रकारसे शरणमें आये शत्रुका अनादर करें ॥२५॥ प्रथम महर्षि कण्वजीके पुत्र सत्यवादी महर्षि कण्डुजीने जो कुछ धर्मयुक्त गाथा गाई थी; हम उन्हें कहते हैं तुम सुनो ॥२६॥ हे शत्रुओंके तपानेवाले सुग्रीवजी ! चाहे शत्रु क्यों न हो, परन्तु हाथ जोड़ दीनभावसे अपने घरमें आयकर प्रार्थना करे तो धर्मरक्षाके लिये उसको नहीं मारना चाहिये ॥२७॥ शत्रु आतुर हो या अहंकारयुक्त हो, परन्तु कातरभावसे उसके शरण आने पर प्राण देकर भी उसकी रक्षा करना उचित है, ऐसा करनेसेही यथार्थ

* यहां अपना ब्रह्मस्वभाव सूचन करते हैं कि नरलीलाके ! लियेही हमने वानर आदि सेनाकासंग्रहकिया है ।

रा.भा.
॥३३॥

धार्मिकपनका कार्य होता है ॥२८॥ रन्तु,यदि भय मोह अथवा इच्छानुसारही हो अपनी शक्तिके अनुसार जो शरणागतकी रक्षा नहीं करता तो पापग्रसित होकर उसको सब लोकमें निंदाका पात्र बनना पड़ता है॥२९॥इसप्रकारसे शरणागतकी रक्षा न करने पर यदि वह शरणागत किसी प्रकारसे नाशको प्राप्त हो जाय तो वह नाशको प्राप्त हुआ पुरुष उस रक्षा न करनेवालेके सब पुण्यको लेकर चला जाता है॥३०॥हे सुग्रीव!शरणागतकी रक्षा न करनेसे अवश्यही वीर्यहीनके समान खोटे यशको प्राप्त कर पवित्र स्वर्गसे भ्रष्ट होना पड़ताहै॥३१॥इसकारण हम उन महर्षिकण्डुके धर्मयुक्त यशके बढाने और स्वर्गके प्राप्त करनेवाले श्रेष्ठ उपदेश वचन यथावत् प्रतिपालन करेंगे,जिससे कि,हमको विशेषफलप्राप्तहोगा॥३२॥हे सुग्रीव!हमारा सबसे बड़ा संकल्प यहीहै कि,जो केवल एकहीवार "मैं आपकी

सचेद्भयाद्वामोहाद्वाकामाद्वापिनरक्षति॥स्वयाशक्त्यायथान्यायंतत्पापंलोकगर्हितम्॥२९॥ विनष्टःपश्यतस्तस्यरक्षिणःशरणंगतः॥ आदाय सुकृतंतस्यसर्वंगच्छेदरक्षितः॥ ३०॥ एवंदोषोमहानत्रप्रपन्नानामरक्षणे॥ अस्वर्ग्यंचायशस्यचबलवीर्यविनाशनम्॥ ३१॥ करिष्यामियथार्थंतुकण्डोर्वचनमुत्तमम्॥ धर्मिष्ठंचयशस्यंचस्वर्ग्यस्यात्तुफलोदये॥ ३२॥ सकृदेवप्रपन्नायतवास्मीतिचयाचते॥ अभयंसर्वभूतेभ्योददाम्येतद्व्रतंमम॥ ३३॥ आनयैनंहरिश्रेष्ठदत्तमस्याभयंमया॥ विभीषणोवासुग्रीवयदिवारावणःस्वयम्॥३४॥ रामस्यतुवचःश्रुत्वासुग्रीवःप्लवगेश्वरः॥प्रत्यभाषतकाकुत्स्थंसौहार्देनाभिपूरितः॥३५॥ किमत्रचित्रंधर्मज्ञलोकनाथशिखामणे॥ यत्त्वमार्यंप्रभाषेथाःसत्त्ववान्सत्पथेस्थितः॥ ३६॥ ममचाप्यंतरात्मायंशुद्धंवेत्तिविभीषणम्॥ अनुमानाच्चभावाच्चसर्वतःसुपरीक्षितः॥ ३७॥

युं० कां०
स० १८

शरण आया" यह वचन कह कर हमारी शरणमें आवेगा,वह कोई भी क्यों न हो हम उसी समय उसको अभयदान देदेंगे * ॥३३॥ हे वानरश्रेष्ठ सुग्रीवजी! आया हुआ पुरुष बिभीषण हो अथवा स्वयं रावणही हो तथापि हम अभयदान करतेहैं कि,तुम शीघ्र उसको हमारे निकट ले आओ॥३४॥वानरराज सुग्रीवजी श्रीरामचन्द्रजीके ऐसे वचन सुनकर सौहार्द्दभावसे परिपूरित हो इसप्रकार श्रीराघवजीको उत्तर देते हुए॥३५॥ हे धर्मज्ञ! आप वीर्यवान् और राजसमूहोंके शिरोमणिस्वरूप हैं इस कारण साधु सेवित मार्गका आश्रय लेकर आप इसप्रकारकी कल्याणजनक आज्ञा देंगे;इसमें विचित्रताही क्या है ॥३६॥एक तो परम चतुर

* दोहा—शरणगतको जे तजहिं निज अनहित अनुमानि। ते नर पामर पापमय, तिनहिं विलोकत हानि॥ चौपाई—कोटि विप्र वध लागहिं जाहू। आये शरण तजौं नहिं ताहू॥

हनुमानजीने भावरूप और अनुमानसे बिभीषणके चरित्रकी परीक्षा की, दूसरे आपके वचन सुन कर अब हमारा अंतःकरण भी बिभीषणको शुद्ध स्वभाव समझता है॥ ३७॥इस कारणहे श्रीरामचन्द्रजी! महाप्राज्ञ बिभीषणजी हमारे तुल्य होवें और हम लोगोंके साथ उनकी मित्रताई स्थापित कराई जावे॥ ३८॥तबनरेंद्रजीभी सुग्रीवजीके यह पुनीत वचन सुनकर इंद्र जिस प्रकार पक्षिराज गरुडजीके साथ शोभायमान हुए थे वैसेही राक्षसराज बिभीषणके साथ मिलकर शोभायमान हुए॥ ३९॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामष्टादशः सर्गः ॥ १८ ॥ रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीने जब इस प्रकारसे अभयदान दिया तब महापंडित रावणके लघुभ्राता बिभीषणजी पृथ्वीकी ओर देखते हुए॥ १॥आकाशसे चार मंत्रियोंके साथ हर्षित हो भूमि पर उतरे, और अपने चारों मंत्रियोंके साथ भक्ति भावसे श्रीराम चन्द्रजीके निकट आये ॥२॥ फिर अपने चारों राक्षसोंके साथ उनके चरणोंमें गिर कर बिभीषणजी श्रीरामचन्द्रजीसे बोले ॥३॥ बिभीषणजीने

तस्मात्क्षिप्रंसहास्माभिस्तुल्योभवतुराघव॥विभीषणोमहाप्राज्ञःसखित्वंचाभ्युपैतुनः ॥३८॥ततस्तुसुग्रीववचोनिशम्यतद्धरीश्वरेणाभिहितंनरेश्वरः॥विभीषणेनाशुजगामसंगमंपतत्रिराजेनयथापुरंदरः ३९इ०श्रीम०वा०आ० च०सा०युद्ध०अष्टादशःसर्गः॥१८राघवेणाभयेदत्तेसन्नतोरावणानुजः॥विभीषणोमहाप्राज्ञोभूमिंसमवलोकयत्१खात्पपातावनिंहृष्टोभक्तैरनुचरैःसह॥ सतुरामस्यधर्मात्मानिपपातविभीषणः२पादयोर्निपपाताथचतुर्भिःसहराक्षसैः ॥ अब्रवीच्चतदावाक्यंरामंप्रतिविभीषणः॥३॥धर्मयुक्तंचयुक्तंचसांप्रतंसंप्रहर्षणम्॥अनुजोरावणस्याहंतेनचास्म्यवमानितः॥४॥भवंतंसर्वभूतानांशरण्यंशरणंगतः॥परित्यक्तामयालंकामित्राणिचधनानिच॥५॥ भवद्गतंहिमेराज्यंजीवितंचसुखानिच ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वारामोवचनमब्रवीत॥६॥वचसासांत्वयित्वैनंलोचनाभ्यांपिबन्निव॥ आख्याहिममतत्त्वेनराक्षसानांबलाबलम् ॥७॥ एवमुक्तस्तदारक्षोरामेणाक्लिष्टकर्मणा॥रावणस्यबलंसर्वमाख्यातुमुपचक्रमे॥८॥ अवध्यःसर्वभूतानांगंधर्वोरगपक्षिणाम् ॥ राजपुत्रदशग्रीवोवरदानात्स्वयंभुवः ॥९॥

युक्तियुक्त, धर्मसंगत व प्रसन्नता उपजनेवाले वचन श्रीरामचन्द्रजीसे कहे कि हम रावणके सगे छोटे भाई उससे अपमानित होकर ॥ ४ ॥ लंका, मित्र और धनादि समस्त परित्याग करके आपको सर्व प्राणियोंका शरण देनेवाला देखकर आपकी शरणमें आया हूँ * ॥ ५ ॥ अब हमारा जीवन, सुख और राज्यलाभ समस्त आपकेही अधीन है। बिभीषणके यह वचन सुन कर श्रीरामचन्द्र जी बोले॥६॥मानों समझाते हुये व नेत्रोंसे पानही करते बोले कि, हे बिभीषण! प्रथम तुम राक्षसोंका बलाबल सब यथार्थ२हमारे निकट वर्णन करो॥७॥अक्लिष्ट कर्म करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीने जब ऐसा कहा तब राजा बिभीषण रावणकाबल विस्तारसहित वर्णन करने लगे ॥ ८ ॥ हे राजकुमार ! ब्रह्माजीके वरदानके प्रभावसे रावण गन्धर्व उरग और पक्षी इत्यादिक सबसेही अवध्य है ॥ ९ ॥

* शरण हरण भय जस उदार श्रवणनि सुनि आयो इतै। मैं कृपालु दशभाल बन्धु लघु निपट निरादरधार ॥श्र०॥ निशिचर कुल करतूति अधम अघ जानूं न सपनेहुं शुभाचार ॥ श्र० ॥ भव रुज ग्रसित त्रसित छिन पल २ दीन हीन मति सब प्रकार ॥ श्र० ॥ गद २ प्रेम खस्यो महि टेरत पाहि २ करुणाअगार ॥ श्र० ॥ सूरज दीनदयालुहि भायउ मेंटिदिये सब विपति भार ॥ श्र० ॥

रावणसेछोटा वीर्यवान् महातेजस्वी और युद्धमें देवराज इन्द्रजीके समान पराक्रमी कुम्भकर्ण नामक हमारा एक और बडा सहोदर है॥१०॥हे रघुनंदन ! कैलास पर्वतपरमणिभद्रनामक महादेवजीके गणकोयुद्ध करकेहराया था;वही प्रहस्त नामकराक्षसरावणका सेनापति है, कदाचित् इसका नाम आपने सुनाही होगा॥११॥ गोधारूप अंगुलित्राणधारी इन्द्रजीत मेघनाद कवचविहीन होकरभी धनुष हाथमें ले रणभूमिमें टिका रहकर इच्छानुसार अदृश्यभी हो सकताहै॥१२॥हे राघव! इन्द्रजीत यज्ञ द्वारा हुताशनको तृप्त करता हुआ अत्यन्त बडी व्यूहयुक्त रणभूमिसे अन्तर्धान होकर अन्तरिक्षमें अदृश्यभावसे शत्रुओंके ऊपर प्रहार किया करता है ॥१३॥ जो कि, युद्धमें बल लोकपालोंके समान प्रगट किया करतेहैं ऐसे महोदर महापार्श्व और अकम्पन इत्यादि राक्षसगण रावणके सेनापति हैं ॥१४॥

रावणानंतरोभ्राताममज्येष्ठश्ववीर्यवान् ॥ कुंभकर्णोमहातेजाःशक्रप्रतिबलोयुधि॥१०॥रामसेनापतिस्तस्यप्रहस्तोयदितेश्रुतः॥ कैलासेयेनसमरे मणिभद्रःपराजितः॥११॥बद्धगोधांगुलित्रश्च अवध्यकवचोयुधि॥धनुरादाययस्तिष्ठन्नदृश्योभवतींद्रजित ॥१२॥ संग्रामेसुमहद्व्यूहेतर्पयित्वाहुताशनम्॥ अंतर्धानगतःश्रीमानिंद्रजिद्धंतिराघव॥१३॥ महोदरमहापार्श्वौराक्षसश्चाप्यकंपनः ॥ अनीकपास्तुतस्यैतेलोकपालसमायुधि॥१४॥ दशकोटिसहस्राणिरक्षसांकामरूपिणाम् ॥ मांसशोणितभक्ष्याणांलंकापुरनिवासिनाम् ॥ १५ ॥ सतैस्तुसहितोराजालोकपालानयोधयत् ॥ सहदेवैस्तुतेभग्नारावणेनदुरात्मना ॥ १६ ॥ विभीषणस्यतुवचस्तच्छ्रुत्वारघुसत्तमः ॥ अन्वीक्ष्यमनसासर्वमिदंवचनमब्रवीत् ॥ १७ ॥ यानि कर्मापदानानिरावणस्यविभीषण ॥ आख्यातानिचतत्त्वेनह्यवगच्छामितान्यहम् ॥१८॥ अहंहत्वादशग्रीवंसप्रहस्तंसहात्मजम् ॥ राजानंत्वां करिष्यामिसत्यमेतच्छृणोतुमे ॥ १९ ॥ रसातलंवाप्रविशेत्पातालंवापिरावणः ॥ पितामहसकाशंवानमेजीवन्विमोक्ष्यते ॥ २० ॥

हे महाराज ! राक्षसराज रावण;मांस रुधिर भक्षण करनेवाले इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले दश करोड हजार प्रधान राक्षसोंके साथ लंकापुरीमें रहता है॥१५॥ इन राक्षसोंको साथ लेकर दुरात्मा रावणने देवतालोगोंके साथ युद्ध किया था लोकपालगण राक्षसलोगोंका असह्य तेज न सहन करके भाग गये थे ॥१६॥ रामचन्द्रजो विभीषणके मुखसे इस वचनको सुन कर और रावणके बलाबलको जाना मनहीमन चिन्ता कर बोले॥१७॥ हे विभीषण ! तुमने रावणकी जितनी सेना हैं उनको बताया वह हमने तत्त्वसे सब जाना ॥१८॥ जो कुछ भी हो तुम निश्चय जानो कि,हम प्रहस्त और इन्द्रजीतके सहित रावणको संहार करके तुमको लंकाका राज्य दे देंगे यह हम सत्य प्रतिज्ञा करते हैं॥१९॥यद्यपि रावण पाताल अथवा ब्रह्मलोकमें भी चलाजाय तथापि वह जीवित रहते हमसे छुटकारा

पानेको समर्थ नहीं होगा॥२०॥हम लक्ष्मण आदि तीन भ्राताओंकी शपथ करके कहते हैं कि पुत्र और बंधुबान्धवगणोंके सहित रावणका विनाश किये विना हम अयोध्यापुरी को न जायँगे ॥२१। अमानुषकर्मकारी श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुन कर धर्मात्मा विभीषणजी शिर झुकाय रामचन्द्रजीके दोनों चरणोंकी बंदना करके कहने लगे ॥२२॥ रावणकी सेनाके आते ही सबसे प्रथम हम उसमें प्रवेश करके राक्षसगणोंका वध और सबसे प्रथम लंकाके विध्वंस करनेमें यथासाध्य आपकी सहायता करेंगे ॥ २३ जब विभीषणने इस प्रकारसे कहा तब श्रीरामचन्द्रजीने प्रसन्नता प्राप्त करके उनको भेंट कर लक्ष्मणजीको समुद्रके जल लानेकी आज्ञा देकर कहा ॥२४॥ हे महामते ! समुद्रके जलसे अभिषेक करके महाप्राज्ञ विभीषणको राजा बनानाही हमारा अभिप्राय है अधिक क्या कहें, हम इनके व्यवहारसे अत्यन्त सन्तुष्ट हुए हैं ॥२५॥ जब श्रीरामचन्द्रजीने इस प्रकारसे आज्ञा दी तब सुमित्रानन्दन लक्ष्मणजीने उस आज्ञाके अनुसार वानरयूथ गणोंके बीचमें

अहत्वारावणंसंख्येसपुत्रजनबांधवम्॥अयोध्यांनप्रवेक्ष्यामित्रिभिस्तैर्भ्रातृभिःशपे॥२१॥श्रुत्वातुवचनंतस्यरामस्याक्लिष्टकर्मणः॥ शिरसावंद्य धर्मात्मावक्तुमेवप्रचक्रमे॥२२राक्षसानांवधेसाह्यंलंकायाश्चप्रधर्षणे॥करिष्यामियथाप्राणंप्रवेक्ष्यामिचवाहिनीम्॥२३इतिब्रुवाणंरामस्तुपरिष्वज्यविभीषणम्॥अब्रवील्लक्ष्मणंप्रीतःसमुद्राज्जलमानय२४॥तेनचेमंमहाप्राज्ञमभिषिंचविभीषणम्॥राजानंरक्षतांक्षिप्रंप्रसन्नेमयिमानद॥२५॥एवमुक्तस्तुसौमित्रिरभ्यषिंचद्विभीषणम्॥मध्येवानरमुख्यानांराजानंराजशासनात् ॥२६॥ तंप्रसादंतुरामस्यदृष्ट्वासद्यःप्लवंगमा॥प्रचुक्रुशुर्महात्मानंसाधुसाध्वितिचाब्रुवन् ॥ २७ ॥ अब्रवीच्चहनूमांश्चसुग्रीवश्चविभीषणम् ॥ कथंसागरमक्षोभ्यंतरामवरुणालयम् ॥सैन्यैःपरिवृताःसर्वेवानराणांमहौजसाम्॥ २८ ॥ उपायैरभिगच्छामयथानदनदीपतिम्॥ तरामतरसासर्वेससैन्यावरुणालयम्॥२९॥ एवमुक्तस्तुधर्मात्माप्रत्युवाचविभीषणः ॥ समुद्रंराघवोराजाशरणंगंतुमर्हति ॥ ३० ॥ खानितःसगरेणायमप्रमेयोमहोदधिः॥ कर्तुमर्हतिरामस्यज्ञातेःकार्यंमहोदधिः ॥ ३१ ॥

विभीषणको राज्यपद पर अभिषिक्त किया॥२६॥विभीषणके ऊपर श्रीरामचन्द्रजीकी ऐसी प्रसन्नता देखकर वानरगण किल किला शब्द करके महात्मा विभीषणजीको धन्य२कह बड़ाई करनेलगे॥२७॥तब हनुमान् और सुग्रीवजी विभीषणजीसे बोले कि, हम लोग किसप्रकारसे अपनी सर्व वानरोंकी सेनाके सहित इस अक्षोभ्य वरुणालय महासमुद्रके पार उतरेंगे॥२८॥तुम इसका कोई उपाय बताओ कि, जिससे हम सर्व सेनाके सहित नदनदीके पति वरुणजीके स्थान समुद्रके पार उतर जायँ ॥२९॥जब इस प्रकार महात्मा विभीषणजीसे कहा गया तब वह बोले कि, महाराजाधिराज रामचन्द्रजी समुद्रकी शरणमें जायँ यही हमें उचित जान पडता है ॥३०॥ कारण कि, शरण जानेसे यह अप्रमाण जलवाला महामति समुद्र सागर ❋ वंशमें अपनी उत्पत्ति मान श्रीरामचन्द्रजीका अपने पार जानेका अवश्यही कार्य सिद्ध

❋ सगरपुत्रोंका खोदा हुआ समुद्रके किनारेका कुछ अंश है ।

वा.रा.भा.
॥३५॥

कर देगा ॥ ३१ ॥ इसके पीछे पंडित श्रेष्ठ राक्षसनाथ बिभीषण करके इस प्रकार कहे जाकर वानर राज सुग्रीवजी लक्ष्मणजीके सहित रामचन्द्रजीके निकट गये ॥ ३२ ॥ फिर बडी गर्दनवाले सुग्रीवजी श्रीरामचन्द्रजीके निकट पहुँच कर बिभीषणजीके कहे वह शुभ वचन जो कि, समुद्र पार जानेके संबन्धमें थे यथावत् श्रीरामचन्द्रजीसे निवेदन किये ॥ ३३ ॥ इन वचनोंको श्रवण करते ही स्वभावसेही धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजीने भी मान्य किया, और महातेजस्वी श्रीरामचंद्रजी लक्ष्मणजी व वानरराज सुग्रीवजीसे बोले ॥ ३४ ॥ कारण कि इन दोनों जनोंको सत्क्रिया करनेके योग्य समझा है. हे लक्ष्मण ! बिभीषणका परामर्श हमको भी अच्छा लगता है॥३५॥हे सुग्रीव तुम! पंडित हो और सलाह देनेमें चतुर हो इस कारण तुम दोनोंजन सलाह करकेजो कुछ तुम्हारा मत हो वह हमसे प्रकाश करो ॥ ३६ ॥ तब वीरश्रेष्ठ लक्ष्मण और सुग्रीवजी इस प्रकारसे कहे जाकर उस समयके अनुसार उचित वचन बोले ॥ ३७ ॥ कि हे नर

एवंविभीषणेनोक्तंराक्षसेनविपश्चिता॥आजगामाथसुग्रीवोयत्ररामःसलक्ष्मणः ॥३२॥ ततश्चाख्यातुमारेभेविभीषणवचःशुभम् ॥सुग्रीवोविपुलग्रीवःसागरस्योपवेशनम् ॥३३॥प्रकृत्याधर्मशीलस्यरामस्यास्याप्यरोचत॥सलक्ष्मणंमहातेजाःसुग्रीवंचहरीश्वरम्॥३४॥ सत्क्रियार्थंक्रियादक्षंस्मितपूर्वमभाषत॥ विभीषणस्यमंत्रोऽयंममलक्ष्मणरोचते ॥३५॥ सुग्रीवःपंडितोनित्यंभवान्मंत्रविचक्षणः ॥उभाभ्यांसंप्रधार्यार्थंरोचतेयत्तदुच्यताम् ॥ ३६॥ एवमुक्तौततोवीरावुभौसुग्रीवलक्ष्मणौ ॥ समुदाचारसंयुक्तमिदंवचनमूचतुः ॥३७॥ किमर्थंनौनरव्याघ्रनरोचिष्यतिराघव ॥ विभीषणेनयत्तूक्तमस्मिन्कालेसुखावहम् ॥ ३८ ॥ अबद्ध्वासागरेसेतुंघोरेऽस्मिन्वरुणालये ॥ लंकानासादितुंशक्यासेंद्रैरपिसुरासुरैः ॥ ३९ ॥ विभीषणस्यशूरस्ययथार्थंक्रियतांवचः॥ अलंकालात्ययंकृत्वासागरायनियुज्यताम् ॥यथासैन्येनगच्छामपुरींरावणपालिताम् ॥४०॥ एवमुक्तःकुशास्तीर्णेतीरेनदनदीपतेः॥संविवेशतदारामोवेद्यामिवहुताशनः ॥ ४१ ॥ इत्या० श्रीम०वा०आ०च०सा०यु० एकोनविंशः सर्गः ॥१९॥

व्याघ्र ! बिभीषणजीने उस समय जो सारवान सुंदर परामर्श दिया है. वह भला किस कारणसे हमें अप्रीतिकर होगा ? ॥ ३८ ॥ हमलोगोंको विश्वास है कि इस महासमुद्रपर विना सेतु बांधे देवतालोगोंके साथ सुरपति इन्द्रजीभी लंकामें प्रवेश करनेकी सामर्थ्य नहीं रखते हैं ॥३९॥ इस कारण अब कुछ भी विलम्ब करनेकी आवश्यकता नहींहै, शीघ्र महात्मा बिभीषणजीकेवचनपालने में तैयार होकर आपसमुद्रकीशरण जाइये, और जिससे हम लोग सबसेनाके सहित रावण पालित लंकापुरीमें उपस्थित होसकें इसकी चेष्टा कीजिये ॥ ४० ॥ जब श्रीरामचन्द्रजीसे ऐसा कहा गया तो वह श्रीरामचन्द्रजी वेदीके बीचमें स्थापित हुई अग्निके समान नदनदीपति समुद्रके तीर कुश बिछाय कर समुद्रके तीरपर बैठ गये ॥४१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी० आदि०भाषायामेकोनविंशः सर्गः ॥१९॥

उसके पीछे शार्दूलनामक कोई बलवान् राक्षस समुद्रके तीर टिकी हुई सुग्रीव पालित इस वानरोंकी सेनाके निकट आय सबसेना भली भांतिसे देखता हुआ ॥ १ ॥ यह दुरात्मा राक्षसराज रावणका दूत सब सेनाको भलीभांति देख बडी शीघ्रतासे लंकाको गया ॥ २ ॥ और वहां पहुँच कर राजा रावणसे कहता हुआ कि वानर और रीछोंकी सेनाका समूह लंकापर आगया ॥३॥ महाराज ! यह सेना अप्रमाण और अगाध दूसरे समुद्रके ही समान उमड आई है और महाराज दशरथजीके पुत्र राम लक्ष्मण दोनों भाई॥४॥उत्तम रूप संपन्न सीताजीके लिये यहां पर आये हैं । यह दोनों महातेजस्वी समुद्रके तीर सेनाके सहित टिके हुए हैं॥५॥महाराज ! उनकी समस्त सेना दश योजनकी लंबाई, दशयोजनकी चौडाईमें आकाशको घेरे पडी हुई है आप हमारे वचनोंको सत्य विचार कर शीघ्रही उसका वृत्तांत जानलें॥६॥हे राजन् ! शीघ्र दूतलोगोंको भेजिये कि वह लोग उस बातको जान आवें कि शत्रुको पराजित करनेके लियेसाम या

ततोनिविष्टांध्वजिनींसुग्रीवेणाभिपालिताम् ॥ ददर्शराक्षसोऽभ्येत्यशार्दूलोनामवीर्यवान् ॥१॥ चारोराक्षसराजस्यरावणस्यदुरात्मनः ॥ तांदृष्ट्वासर्वतोव्यग्रांप्रतिगम्यसराक्षसः ॥ २ ॥ आविश्यलंकांवेगेनराजानमिदमब्रवीत् ॥ एषवैवानरर्क्षौघोलंकांसमभिवर्तते ॥ ३ ॥ अगाधश्चाप्रमेयश्चद्वितीयइवसागरः ॥ पुत्रौदशरथस्येमौभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ ४ ॥ उत्तमौरूपसंपन्नौसीतायाःपदमागतौ ॥एतौसागरमासाद्यसन्निविष्टौमहाद्युते ॥ ५॥ बलंचाकाशमावृत्यसर्वतोदशयोजनम् ॥तत्त्वभूतंमहाराजक्षिप्रंवेदितुमर्हसि॥ ६ ॥ तवदूतामहाराजक्षिप्रमर्हंतिवेदितुम् ॥ उपप्रदानंसांत्वंवाभेदोवात्रप्रयुज्यताम् ॥ ७ ॥ शार्दूलस्यवचःश्रुत्वारावणोराक्षसेश्वरः ॥ उवाचसहसाव्यग्रःसंप्रधार्यार्थमात्मनः ॥ शुकंसाधुतदारक्षोवाक्यमर्थविदांवरम् ॥ ८ ॥ सुग्रीवंब्रूहिगत्वाशुराजानंवचनान्मम ॥ यथासंदेशमक्लीबंश्लक्ष्णयापरयागिरा ॥ ९ ॥ त्वंवैमहाराजकुलप्रसूतोमहाबलश्चर्क्षरजःसुतश्च ॥ नकश्चनार्थस्तवनास्त्यनर्थस्तथापिमेभ्रातृसमोहरीश ॥ १० ॥

भेद वा जानकीका देना कौनसा उपाय ग्रहण करना चाहिये॥७॥शार्दूलके वचन सुनकर राक्षसोंका स्वामी रावण अपना उसकालके लिये उचित कार्य स्थिर करत शुकनामक एक कार्यके जाननेवाले राक्षससे यह अर्थ युक्त वचन बोला ॥८॥ हे शुक ! तुम बहुत शीघ्र सुग्रीवके निकट जाओ, और हमारे वचनानुसार हम जिस प्रकारसे कहते हैं; उसमें किसी प्रकारका अंतर न पडे और अकातर चित्तसे मधुर और पुरुषोचित वचनोंसे उन वानरराज सुग्रीवसे यह हमारा कहाहुआ सन्देश कह आओ ॥९॥उनसे कहना कि. हे वानरनाथ ! रामचन्द्रकी सहायता करनेपर कुछ तुम्हारी धनसम्पत्ति बढनेकी संभावना नहीं. और जो उनकी सहायता न करोगे तो कुछ हानि नहीं होगी विशेष करके तुम महाराजकुलमें उत्पन्न हुए ऋक्षराज वानरराजके पुत्र हो और तुम स्वयंभी महाबलवान हो इसलिये हमारे भाईके समान हो। इस कारण श्रीरा

मचन्द्रजीके सहायक होकर हमारे विरुद्ध अस्त्र शस्त्र धारण करना तुमको उचित नहीं॥१०॥हे सुग्रीव! हम बुद्धिमान् दशरथके पुत्र रामचन्द्रजीकी स्त्री हरण करलाये इसमें तुम्हारी क्या हानि है, जो कुछ भी हो अब तुम किष्किन्धाको लौट जाओ॥११॥तुम निश्चय जान रक्खो कि, तुम्हारे वानरगण किसी प्रकारसे लंकाके अधिकारकर लेनेमें समर्थ नहीं होंगे। हे सुग्रीव! नर वानरोंकी बात तो जानेही दो, देवगण या गन्धर्वगणभी परस्पर मिलकर लंकामें प्रवेश नहीं कर सकते हैं॥१२॥राक्षसराज रावणकी यह आज्ञा सुन कर राक्षस शुकपक्षीका रूप धारण करके शीघ्रतासे आकाशको उड गया॥१३॥इसके पीछे समुद्रके ऊपर आकाशमार्गमें बहुत दूर चल कर वानरोंकी सेनाके निकट पहुँच आकाशमें टिकेही टिके वह वचन सुग्रीवजीसे कहे॥१४॥ दुरात्मा रावणने जो वचन कहे थे वैसेही समस्त वचन उसने सुग्री

अहंयद्यहरंभार्यांराजपुत्रस्यधीमतः ॥ किंतत्रतवसुग्रीवकिष्किंधांप्रतिगम्यताम् ॥११॥ नहीयंहरिभिर्लंकाप्राप्तुंशक्याकथंचन ॥ देवैरपिसगंधर्वैःकिंपुनर्नरवानरैः ॥१२॥ सतदाराक्षसेंद्रेणसंदिष्टोरजनीचरः ॥ शुकोविहंगमोभूत्वातूर्णमाप्लुत्यचांबरम् ॥ १३ ॥ सगत्वादूरमध्वानमुपर्युपरिसागरम् ॥ संस्थितोह्यंबरेवाक्यंसुग्रीवमिदमब्रवीत् ॥ १४ ॥ सर्वमुक्तंयथादिष्टंरावणेनदुरात्मना ॥ तत्प्रापयंतंवचनंतूर्णमाप्लुत्यवानराः॥१५॥प्रापद्यंततदाक्षिप्रंलोप्तुंहंतुंचमुष्टिभिः॥सर्वैःप्लवंगैःप्रसभंनिगृहीतोनिशाचरः ॥१६॥ गगनाद्भूतलेचाशुप्रतिगृह्यावतारितः ॥ वानरैःपीड्यमानस्तुशुकोवचनमब्रवीत् ॥१७॥ नदूतान्घ्नंतिकाकुत्स्थवार्यंतांसाधुवानराः ॥ यस्तुहित्वामतंभर्तुःस्वमतंसंप्रधारयेत् ॥ अनुक्तवादी दूतःसन्सदूतोवधमर्हति ॥१८॥ शुकस्यवचनंरामःश्रुत्वातुपरिदेवितम् ॥ उवाचमावधिष्टेतिघ्नतःशाखामृगर्षभान् ॥ १९ ॥

वजीसे कहे,राक्षस शुक इस प्रकारसे कह रहा था कि,बानरोंने ताक और आकाशमें कूदकर उसको पकड लिया॥१५॥कोई २ उस राक्षसको काटने फाडनेके लिये तैयार हुए और किसी २ ने प्राण संहार करनेके लिये उसको घूँसोंसे मारना प्रारंभ किया। वानरगण शुककी इस प्रकारसे दुरवस्था करने लगे, कारण कि वह इनके वशमें पड गया था॥१६॥फिर वानरोंने उसको बलसे आकाशमेंसे पृथ्वीपर उतारा और मार धाड करने लगे, तब शुक अत्यन्त पीडित होकर बोला॥१७॥कि हे श्रीरामचन्द्रजी! आप निवारण कीजिये, कहीं ऐसा न हो कि यह वानरगण मुझे दूतको प्राणोंसे मार डालें, विशेषकरके जो दूत शत्रुके वशमें पड कर अपना छुटकारा करनेके लिये स्वामीका संदेश छिपाय और कालोचित अपने गढे हुए अनुरागयुक्त वचन कहे, हे महाराज! ऐसाही दूत मार डालने योग्य है॥१८॥तब करुणामय

श्रीरामचन्द्रजी शुकके वचन औ विलाप सुनकर शुकको मारडालने पर उतारू वानरयूथगणोंसे बोले कि तुम लोग दूतके प्राण मत लो ॥१९॥ तब दूत शुक राक्षस वानरोंके भयसे भीत हो छोटा आकार बनाय आकाशमें टिक वहींसे फिर कहने लगा॥२०॥हे महाबलवान् पराक्रम सत्वसम्पन्न सुग्रीवजी ! हम लौटकर लोगोंके रुवानेवाले रावणसे क्या कहें यह आप हमसे कह दीजिये॥२१॥वानरगणोंके स्वामी महाबलवान् सत्वगुणी हरीश्वर सुग्रीव जी इस प्रकारसे पूँछे जाकर राक्षसराज रावणके कहनेके लिये अदीनभावयुक्त राक्षस दूत शुकसे बोले॥२२॥ कि हे शुक ! तुम रावणसे यह कहना कि हे रावण ! तुम हमारे मित्र, उपकारी प्रिय अथवा दयाके पात्र नहीं हो, वरन् परिवारके सहित श्रीरामचन्द्रजीसे शत्रुता करनेके कारण तुमकोभी वालिके समान मारडालना उचित है ॥ २३ ॥

सचपत्रलघुर्भूत्वाहरिभिर्दर्शितेऽभये ॥ अंतरिक्षेस्थितोभूत्वापुनर्वचनमब्रवीत् ॥ २० ॥ सुग्रीवसत्त्वसंपन्नमहाबलपराक्रम ॥ किंमयाखलुवक्तव्योरावणोलोकरावणः ॥२१॥ सएवमुक्तःप्लवगाधिपस्तदाप्लवंगमानामृषभोमहाबलः ॥ उवाचवाक्यंरजनीचरस्यचारंशुकंशुद्धमदीनसत्त्वः ॥ २२ ॥ नमेऽसिमित्रंनतथानुकंप्योनचोपकर्तासिनमेप्रियोऽसि ॥ अरिश्चरामस्यसहानुबंधस्ततोऽसिवालीववधार्हवध्यः ॥२३॥ निहन्म्यहंत्वांससुतंसबंधुसज्ञातिवर्गंरजनीचरेश ॥ लंकांचसर्वांनिहताबलेनसर्वैःकरिष्यामिसमेत्यभस्म ॥ २४ ॥ नमोक्ष्यसेरावणराघवस्यसर्वैःसहेंद्रैरपिमूढगुप्तः ॥ अन्तर्हितःसूर्यपथंगतोऽपितथैवपातालमनुप्रविष्टः ॥ गिरीशपादांबुजसंगतोवाहतोऽसिरामेणसहानुजस्त्वम् ॥२५॥ तस्यतेत्रिषुलोकेषुनपिशाचंनराक्षसम् ॥ त्रातारंनानुपश्यामिनगंधर्वंनचासुरम् ॥ २६ ॥ अवधीस्त्वंजरावृद्धंगृध्रराजंजटायुषम् ॥ किंनुतेरामसान्निध्येसकाशेलक्ष्मणस्यच ॥ ह्रतासीताविशालाक्षीयांत्वंगृह्यनबुध्यसे ॥ २७ ॥

हे राक्षसेश्वर ! हम बहुतही शीघ्र बडी भारी सेनाकेसाथ भ्राता, ज्ञाति और बन्धु बांधवोंके तथा सेनाके साथ तुम्हारा नाश करके तुम्हरी लंकापुरीको भस्म कर डालेंगे ॥ २४ ॥ हे रावण ! जो इन्द्रादि देवगणभी तुम्हारी रक्षा करें अथवा तुम सूर्यके मार्गमें चले जाओ; या पातालमें प्रवेश करजाओ, व महादेवजीके चरणोंका आश्रय लो तथापि श्रीरामचन्द्रजीसे तुम्हारा छुटकारा नहीं हो सकता, तुम अपनेको अपने छोटे भ्राता सहित मृतकहीसमझो॥२५॥जो तुम्हें बचानेमें समर्थ हो, हम त्रिलोकीमें ढूँढभाल करके भी किसी राक्षस, पिशाच गन्धर्व या असुरलोगोंमें भी ऐसा किसीको नहीं देख पाते॥२६॥तुम जरायुक्त वृद्ध गृध्रराज जटायुको मारकरके अपनेको बलवान् समझकर गर्व न करो,जो तुममें बल होता तो तुम श्रीरामचन्द्रजीके आश्रममें न रहनेपर चोरके समान जानकीको हरण

करके न लाते, वरन् उनके सम्मुखसे हरण करते ॥ २७ ॥ हे रावण! जो तुम्हारे प्राणोंको हरण करेंगे तुम उन देवतालोगोंसेभी अजीत महात्मा महाबलवान् रघुश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीको नहीं जानतेहो इसीकारणसे तुमनेऐसा कार्य किया है॥२८॥इसके पीछे कपि श्रेष्ठ वालिके पुत्र अंगदजीबोले कि हे महाप्राज्ञ! यह निशाचर रावणका दूत नहीं है, वरन् हमको तो गुप्त भेदिया मालूम होताहै॥२९॥इस राक्षसनने यहां पर आकर हमारी सब सेना और व्यूहको भली भाँतिसे जांच लिया, इस कारण लंकाके वृत्तान्त जाननेके लिये यह वहां पर न जाना चाहिये, इस कारण इसका बांधलेना उचितहै. हमें तो यही अच्छा लगता है ॥३०॥ जब अंगदने ऐसा कहा तब वानरराज सुग्रीवजीकी आज्ञासे वानरलोगोंने कूद उसको पकड कर बांध लिया। जब बानरोंने पकडा तब वह अनाथके समान रोदन करने लगा॥३१॥उस समय वह राक्षसप्रचंड वानरवीरों करके इस प्रकार मार खाय वडेशब्दसे दशरथकुमार महात्मा श्रीरामचन्द्रजीको पुकारता

महाबलंमहात्मानंदुराधर्षंसुरैरपि ॥नबुध्यसेरघुश्रेष्ठंयस्तेप्राणान्हरिष्यति ॥२८॥ ततोऽब्रवीद्वालिसुतोप्यंगदोहरिसत्तमः ॥ नायंदूतोमहाप्राज्ञ चारकःप्रतिभातिमे ॥ २९ ॥ तुलितंहिबलंसर्वमनेनतवतिष्ठता ॥ गृह्यतांमागमल्लंकामेतद्धिममरोचते ॥ ३० ॥ ततोराज्ञासमादिष्टाःसमुत्पत्य वलीमुखा ॥ जगृहुश्चबबंधुश्चविलपंतमनाथवत् ॥ ३१ ॥ शुकस्तुवानरैश्चंडैस्तत्रतैःसंप्रपीडितः ॥ व्याचुक्रोशमहात्मानंरामंदशरथात्मजम् ॥ लुप्येतेमेबलात्पक्षौभिद्येतेमेतथाक्षिणी ॥३२॥ यांचरात्रिंमरिष्यामिजायेरात्रिंचयामहम् ॥ एतस्मिन्नंतरेकालेयन्मयाह्यशुभंकृतम्॥ सर्वंतदुप पद्येथाजह्यांचेद्यदिजीवितम् ॥३३॥ नाघातयत्तदारामःश्रुत्वातत्परिदेवितम् ॥ वानरानब्रवीद्रामोमुच्यतांदूतआगतः ॥३४॥ इत्यार्षे श्रीम द्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडेविंशः सर्गः ॥ २० ॥ ततःसागरवेलायांदर्भानास्तीर्यराघवः ॥ अंजलिंप्राङ्मुखःकृ त्वाप्रतिशिश्येमहोदधेः ॥ १ ॥ बाहुंभुजंगभोगाभमुपधायारिसूदनः ॥ जातरूपमयैश्चैवभूषणैर्भूषितंसदा ॥ २ ॥

हुआ रोने लगा कि हे रघुनंदन! वानरलोगोंने बलपूर्वक मेरे पंख उखाड डालेहैं; और नेत्र फोडनेके लिये तैयार हुए हैं॥ ३२ ॥ आप इन लोगोंको रोकिये नहीं तो ऐसा करनेसे मैं मर जाऊँगा, तो मैंने अपने जन्मके समयसे मृत्युके समय तक जितने पाप कियेहैं; आपही उन समस्त पापके फलको पावेंगे॥३३॥उस समय परमदयालु श्रीरामचन्द्रजीने ऐसी व्यथा सुन कर उसके जीवनकी रक्षा की और वानरलोगोंको उसके मारनेको निषेध करके आये हुये दूतको छोड देनेकी आज्ञा दी॥३४॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०युद्ध०भाषायां विंशतितमः सर्गः॥२०॥तदनन्तर दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजी समुद्रके तीर कुशा बिछाय कर उनके ऊपर समुद्रसे वर प्रार्थना करनेकी अभिलाषासे हाथ जोडकर पूर्वमुख हो बैठे॥१॥हाय! शत्रुओंके नाश करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीकी जो भुजाये सुवर्णके गहनोंसे

विभूषित होतीं, वही भुजंगभोग सदृश भुजा श्रीरामचन्द्रके शिरके नीचे तकियेका कार्य कर रही हैं ॥२॥ जिनकी मणि काञ्चनमय केयूर मुक्ता व और दूसरे भूषणोंसे बांहोंको अनेक वार परमरूपवती धाय स्त्रियोंने वारंवार बालकपनमें दबाया, व सहलाया था ॥ ३ ॥ जिसके अंग चंदन और अगर इत्यादि सुगंधित द्रव्यसे लिप्त रहते, जो प्रभातकालीन सूर्यके समान अरुणवर्ण कुंकुमसे चार्चित रहते ॥४॥ जो सीताजीके साथ सुन्दर सेज पर शयन करते उनको इस समय तक्षकके गगाजल सेवित सम्भोगके समान भोग करना पडता है ॥ ५ ॥ जो युद्धके समय यमराजके समान भयंकर, जो शत्रुओंका शोक बढानेवाले और इष्ट मित्रोंके आनंदको अत्यन्त उछालनेवाले हैं, आज वही समुद्रके तीर पर पडे हैं ॥ ६ ॥ जिनका दहना हाथ परिघके तुल्य, बायां हाथ बाण छोडनेसे प्रत्यंचके आघात चिह्नसे युक्त॥७॥व जिन भुजाओंसे हजारों गोदान किये गये हैं आज वही दोनों कर तकियेका कार्य कर रहे। हैं या तो तीन दिनतक निरशन व्रत करके समु

मणिकांचनकेयूरमुक्ताप्रवरभूषणैः ॥ भुजैःपरमनारीणामभिमृष्टमनेकधा ॥३॥ चंदनागुरुभिश्चैवपुरस्तादभिसेवितम् ॥ बालसूर्यप्रकाशैश्चचंद नैरुपशोभितम् ॥ ४ ॥ शयनेचोत्तमांगेनसीतायाःशोभितंपुरा ॥ तक्षकस्येवसंभोगंगंगाजलनिषेवितम् ॥५॥ संयुगेयुगसंकाशंशत्रूणांशोकव र्धनम् ॥ सुहृदांनंदनंदीर्घंसागरांतव्यपाश्रयम् ॥६॥ अस्यताचपुनःसव्यंज्याघातविहतत्वचम् ॥ दक्षिणोदक्षिणंबाहुंमहापरिघसन्निभम् ॥७॥ गोसहस्रप्रदातारंह्युपधायभुजंमहत् ॥ अद्यमेतरणंवाथमरणंसागरस्यवा ॥ ८ ॥ इतिरामोधृतिंकृत्वामहाबाहुर्महोदधिम् ॥ अधिशिश्येचवि धिवत्प्रयतोऽत्रस्थितोमुनिः ॥ ९ ॥तस्यरामस्यसुप्तस्यकुशास्तीर्णेमहीतले ॥ नियमादप्रमत्तस्यनिशास्तिस्रोऽभिजग्मतुः ॥ १० ॥ सत्रिरात्रो षितस्तत्रनयज्ञोधर्मवत्सलः ॥ उपासततदारामःसागरंसरितांपतिम् ॥ ११ ॥ नचदर्शयतेरूपंमदोरामस्यसागरः ॥ प्रयतेनापिरामेणयथार्हम भिपूजितः ॥ १२ ॥ समुद्रस्यततःक्रुद्धोरामोरक्तांतलोचनः ॥ समीपस्थमुवाचेदंलक्ष्मणंशुभलक्षणम् ॥ १३ ॥

द्रको उतरही जायँगे जो समुद्र न उतरने देगा तो इसका मरणही होगा॥८॥यह विचारकर महाबाहु श्रीरामचन्द्रजी समुद्र उतरने पर दृढ विश्वास बांध मौनव्रत धारणकर तीर्थोंपवासकी रीतिसे बिना कुछ खाये पीये मौनावलम्बन करके लेट रहे॥९॥कुशाकी सेज पर शयन करके नियम धारणपूर्वक पृथ्वीपर लेटे२श्रीरामचन्द्र जीने तीन रात्रि बिताईं॥१०॥नीति विशारद धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजीने इस प्रकारसे तीन रात्रि वास करके नदी पति समुद्रकी उपासना की॥११॥यद्यपि इस प्रकार परम पवित्रतासे श्रीरामचन्द्रजीने समुद्रकी पूजा की, परन्तु महा मन्दमति नदीपति समुद्रने इसभांति श्रीरामचन्द्रजीसे पूजापाय उनको दर्शन न दिया॥१२॥ तब श्रीरामचन्द्रजीने समुद्रके ऊपर बडा क्रोध किया; उनके नेत्र लालहो आये और तब वह निकट बैठे हुए अपने छोटे भाई सुलक्षणयुक्त लक्ष्मणजीसे यह बोले॥१३॥

जबकि, समुद्रने तीन दिनतक इस प्रकार विनती करने परभी हमको दर्शन न दिया, तब इससे तो उसका गर्व करनाही पाया जाता है; हम भली भांति जानते हैं कि शांति, क्षमा, सरलवृत्ति और प्रिय वचन बोलना॥१४॥इत्यादि जो साधुलोगोंके गुण हैं; यह गुणरहित दोषयुक्त दुर्जनोंके सम्मुख प्रयोग करनेसे उसकी असमर्थताको जताते हैं । अर्थात् गुणरहित पुरुषोंके प्रति इन गुणोंका प्रकाश करना निष्फल है। जो कोई गुण न होने परभी लोगोंके निकट अपनी शूरता इत्यादिकी प्रशंसा करे और अपना गुण सबसे कहनेके लिये इधर उधर दौडता फिरे ॥१५॥ और दंड देनेका प्रयोजन न होनेपर भी जो लोगोंको तीक्ष्ण दंड दिया करे ऐसे पुरुषका बुरे चरित्रवाले और अहंकारी लोगही सत्कार किया करते हैं। प्रथम उपाय बुझानेसे न कीर्ति मिलती, न सब ओर यश फैलता है ॥१६॥ हे लक्ष्मण ! अधिक कहां तक कहें कि, शांत स्वभावहोनेसे रणभूमिमें जयकी प्राप्ति भी नहीं हो सकती। हे लक्ष्मण ! इससे आजही हमारे चलाये हुए बाणोंसे मेरे कटे मत्स्योंसे युक्त मकरा

अवलेपःसमुद्रस्यनदर्शयतियःस्वयम् ॥ प्रशमश्चक्षमाचैवआर्जवंप्रियवादिता ॥ १४ ॥ असामर्थ्यफलाह्येतेनिर्गुणेषुसतांगुणाः ॥ आत्मप्रशंसिनंदुष्टं धृष्टंविपरिधावकम् ॥ १५ ॥ सर्वत्रोत्सृष्टदंडंचलोकःसत्कुरुतेनरम् ॥ नसाम्नाशक्यतेकीर्तिर्नसाम्नाशक्यतेयशः ॥१६॥ प्राप्तंलक्ष्मणलोकेऽस्मिन्जयोवारणमूर्धनि ॥ अद्यमद्बाणनिर्भिन्नैर्मकरैर्मकरालयम् ॥१७॥निरुद्धतोयसौमित्रेप्लवद्भिःपश्यसर्वतः ॥ भोगिनांपश्यभोगानिमयाभिन्नानिलक्ष्मण ॥१८॥ महाभोगानिमत्स्यानांकरिणांचकरानिह ॥ सशंखशुक्तिकाजालंसमीनमकरंतथा ॥१९॥ अद्ययुद्धेनमहतासमुद्रंपरिशोषये ॥ क्षमयाहिसमायुक्तंमामयंमकरालयः ॥ २० ॥ असमर्थंविजानातिधिक्क्षमामीदृशेजने ॥ नदर्शयतिसाम्नामेसागरोरूपमात्मनः ॥ २१ ॥ चापमानयसौमित्रेशरांश्चाशीविषोपमान् ॥ समुद्रंशोषयिष्यामिपद्भ्यांयांतुप्लवंगमाः ॥ २२ ॥

लय ॥ १७ ॥ समुद्रकी जलराशिको सब जगह ढका हुआ देखोगे; हे सुमित्रा नंदन लक्ष्मण ! मेरे बाणोंसे विदीर्ण अनेक सर्पोंके शरीर भी तुम देखोगे ॥ ॥१८॥ सर्प और मत्स्यगणोंके बडे २ भारी शरीर व जलके हाथियोंकी कटी हुई शुण्डें देखोगे, शंखसहित सीपी जालसे युक्त मछली व मकरोंके साथ ॥१९॥ इस समुद्रको आजही महायुद्ध करके हम शोष लेंगे । हमको क्षमा गुणका आधार देखकर मकरालय समुद्र॥२०॥हमको मनमें अतिशय कायर पुरुष समझता है, इस कारण क्षमाका अवलंबन करनेसे समुद्र हमारे पर गर्व प्रकाश करता है । इससे इस क्षमाको व हमको भी धिक्कार है । सामका ही अवलंबन करनेसे समुद्र अबतक हमारे निकट न आया॥२१॥हे लक्ष्मण ! अब हमारा धनुष विषधर सर्पोंके समान विषवत् बाण शीघ्र यहां पर लेआओ, कि हम समुद्रको सुखाडालें कि जिससे

वानरगण पैदलही समुद्रके पार उतर जावें ॥ २२ ॥ जो समुद्र किसीको लांघने योग्य नहीं है, जो समुद्र बडी २ तरंगोंसे युक्त है और जिसकी सीमा किनारेकी भूमि तक नियत है हम आज क्रोधित होकर उसी समुद्रको खलबला देंगे ॥ २३ ॥ हम बाणोंको चलाय कर हमसमुद्रकी सीमाको स्थिर नहीं रक्खेंगे, महादानवोंके रहनेके स्थान इस समुद्रको हम अवश्य शुष्क करडालेंगे ॥ २४ ॥ रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजीने यह कहकर धनुष धारण किया, व क्रोधके मारे उनके नेत्र फडकने लगे औरउसकाल श्रीरामचन्द्रजीने प्रज्वलितप्रलयकी अग्निके समान दुर्द्धर्ष हो गये ॥ २५ ॥ उसके पीछे श्रीरामचन्द्रजीने बडे भारी धनुष पर रोदा चढायकर उसकी फटकारसे समस्त जगतको कंपित करके इन्द्रजी जिसप्रकार वज्र चलाते हैं, वैसेही प्रचण्ड बाणोंको छोडने लगे ॥ २६ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके धनुषसे छूटे हुए तेजप्रदीप्त वह समस्त बाण श्रेष्ठ महावेगसे समुद्रके जलमें पैठगये, जिससे समुद्रके रहनेवाले सर्पगण त्रसित होगये, ॥ २७ ॥ उसकाल मछली मकरादि प्राणियोंसे युक्त समु

अद्याक्षोभ्यमपिक्रुद्धः क्षोभयिष्यामिसागरम् ॥ वेलासुकृतमर्यादं सहस्रोर्मिसमाकुलम् ॥ २३ ॥ निर्मर्यादंकरिष्यामिसायकैर्वरुणालयम् ॥ महार्णवं क्षोभयिष्येमहादानवसंकुलम् ॥ २४ ॥ एवमुक्त्वाधनुष्पाणिः क्रोधविस्फारितेक्षणः ॥ बभूवरामोदुर्धर्षोयुगांताग्निरिवज्वलन् ॥ २५ संपीडयचधनुर्घोरं कंपयित्वाशनैर्जगत् ॥ मुमोचविशिखानुग्रान्वज्रानिवशतक्रतुः ॥ २६ ॥ तेज्वलंतोमहावेगास्तेजसासायकोत्तमाः ॥ प्रविशंतिसमुद्रस्यजलंवित्रस्त पन्नगम् ॥ २७ ॥ तोयवेगः समुद्रस्यसमीनमकरोमहान् ॥ सबभूवमहाघोरः समारुतरवस्तथा ॥ २८ ॥ महोर्मिजालचलितः शंखजालसमावृतः ॥ सधूमः परिवृत्तोर्मिः सहसासीन्महोदधिः ॥ २९ ॥ व्यथिताः पन्नगाश्चासन्दीप्तास्यादीप्तलोचनाः ॥ दानवाश्चमहावीर्याः पातालतलवासिनः ॥ ३० ॥ ऊर्मयः सिंधुराजस्यसनक्रमकरास्तथा ॥ विंध्यमंदरसंकाशाः समुत्पेतुः सहस्रशः ॥ ३१ ॥ आघूर्णिततरंगौघः संभ्रांतोरगराक्षसः ॥ उद्वर्तितमहाग्राहः सघोषोवरुणालयः ॥ ३२ ॥ ततस्तुतंराघवमुग्रवेगंप्रकर्षमाणंधनुरप्रमेयम् ॥ सौमित्रिरुत्पत्यविनिःश्वसंतंमामेतिचोक्त्वाधनुराललंबे ॥ ३३ ॥

द्रका बड़ा भारी वेग; प्रचण्डपवनके लगनेसे अत्यन्त भयंकर शब्दकरने लगा ॥ २८ ॥ समुद्रमें सब ओरसे तरंगोंके बडे २ समूह उठे, व स्थान २ पर सर्पोंके ढेरके ढेर छितराने लगे; सब ओरसे धूम उठ कर लहर आगे लगी इस भांति अतिशीघ्र ऐसासमुद्रका रूप हो गया ॥ २९ ॥ ऐसी अवस्थामें सर्पगण व्यथित होगये और उनके नेत्र व मुखमंडल प्रदीप्त हो आये व उस समय पतालके रहनेवाले नागलोगों तकके त्रासकी सीमा न रही ॥ ३० ॥ समुद्रमें विन्ध्य और मन्दराचल पर्वतके समान हजार २ तरंगे उठने लगीं व उनमें नाके व मत्स्य आदि बहुतसे जलजन्तु भी उछलने लगे ॥ ३१ ॥ क्रमसे समुद्रकी तरंगें बराबर उछलने लगी नाग, राक्षसादिके घबडानेसे घड़ियालोंके उफन जानेसे समुद्रमें महाघोर शब्द होने लगा ॥ ३२ ॥ उसकेपीछे रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी लम्बी श्वास लेकर जिस समय जलजीवनाश

करनेको बडेभारी धनुषको खेंचने लगे उस समय लक्ष्मणजीने झटपट आगे बढ कर नहीं २ यह धनुष हमें दीजिये यह कह निवारण कर इस रामचन्द्रजीके धनुषको ग्रहण किया ॥३३॥ उस समय लक्ष्मणजी बोले कि, हे प्रभो ! जब कि,समुद्रके प्रति ऐसा बाण न चलाकर और प्रकारसे आपका कार्य सिद्ध हो सकता है,तब फिर ऐसे कठिन कार्यका क्या प्रयोजन है ? हम आपसे कहतेहैं कि आप सरीखे महात्मा पुरुषको क्रोधके वश होना कदापि कर्त्तव्य नहीं है। आप अपनी सदाकी साधु वृत्तिकी ओर एकबार दृष्टि कीजिये ॥ ३४ ॥ यह देखिये अन्तरिक्षमें अन्तर्हित हुए ब्रह्मर्षि सुरर्षिगण "हा कष्ट !" इस दारुण शब्दसे कष्ट प्रकाश करते हुए (मा) (मा) अर्थात् ऐसा मत करो ऐसा मत करो यह शब्द कह कह कर आपको निवारण कर रहे हैं ॥ ३५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकविंशः सर्गः ॥ २१ ॥ तब रघुश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी जीवोंकी पीडाको छोड समुद्रको लक्ष बनाय यह अतिदारुण

एतद्विनापिह्युदधेस्तवाद्यसंपत्स्यतेवीरतमस्यकार्यम्॥भवद्विधाःक्रोधवशंनयांतिदीर्घंभवान्पश्यतुसाधुवृत्तम्३४अंतर्हितैश्चापितथांऽतरिक्षेब्रह्मर्षिभिश्चैवसुरर्षिभिश्च॥शब्दःकृतःकष्टमितिब्रुवद्भिर्मामेतिचोक्त्वामहतास्वरेण॥३५इत्यार्षेश्रीम०वा०आ०च०सा०यु०एकविंशःसर्गः२१॥अथोवाचरघुश्रेष्ठःसागरंदारुणंवचः॥अद्याहंशोषयिष्यामिसपातालंमहार्णवम् ॥१॥ शरनिर्दग्धतोयस्यपरिशुष्कस्यसागर॥मयानिहतसत्त्वस्यपांसुरुत्पद्यतेमहान् ॥२॥ मत्कार्मुकनिसृष्टेनशरवर्षेणसागर॥परंतीरंगमिष्यंतिपद्भिरेवप्लवंगमाः॥३॥ विचिन्वन्नाभिजानासिपौरुषंनापिविक्रमम् ॥ दानवालयसंतापंमत्तोनामगमिष्यसि ॥४॥ब्राह्मेणास्त्रेणसंयोज्यब्रह्मदंडनिभंशरम् ॥ संयोज्यधनुषिश्रेष्ठेविचकर्षमहाबलः॥५॥ तस्मिन्विकृष्टेसहसाराघवेणशरासने॥रोदसीसंपफालेवपर्वताश्चचकंपिरे॥६॥तमश्चलोकमावव्रेदिशश्चनचकाशिरे॥प्रतिचुक्षुभिरेचाशुसरांसिसरितस्तदा ॥७॥

वचन बोले कि "हम आज पातालके सहित इस समुद्रको सुखा डालेंगे" फिर श्रीरामचन्द्रजीसमुद्रसे बोलेकि; हमारे बाणोंके द्वारा तुम्हारा जलल जन्तुओंके साथ सूख जायगा, व तुम्हारे भंडारमें बडी भारी धूरि उडेगी ॥ २ ॥ हे समुद्र ! हमारे धनुषसे बराबर बाण छूटने पर जब तुम्हारा जल सूख जायगा तब वानरगण पैदल ही तुम्हारे पार उतर जायँगे ॥ ३ ॥ हे दानवोंके स्थान समुद्र ! तुम हमारे पौरुष और विक्रमको नहीं जानते हो । जो कुछ भी हो परन्तु अब हमारे प्रभावके मर्मको तुम समझ सकोगे ॥ ४ ॥ महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजीने इस प्रकारसे कहकर ब्रह्मदंड नामक बाणको ब्राह्ममंत्रसे अभिमंत्रित किया और उसको बडे भारी धनुष पर चढाकर खेंचने लगे ॥ ५ ॥ जिस समय महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजीने बाणको खैंचा उस समय पृथ्वी मानों फटने लगी और स्वर्ग विदीर्णसा होने लगा सब पर्वत कंपायमान होने लगे ॥ ६ ॥ दशोंदिशाओंको अंधकारने छाय लिया । लोक इत्यादिकुछ भी नहीं देखने लगे;

सरोवरोंके सहित समस्त नदियें खलबलाय उठीं ॥ ७ ॥ नक्षत्रगणोंके साथ सूर्य चन्द्रमाकी तिरछी गति होगई। आकाशमंडल सूर्यनारायणकी किरणोंसे युक्त होनेपर भी अंधकारसे छाय गया॥८॥अन्तरिक्षमें बडे शब्दसे युक्त होकर वारंवार वज्रपात होने लगा और आकाशमंडल शत २ उल्कापातोंसे प्रकाशमान हो गया ॥ ९ ॥ भयानक पवनके वेगसे वृक्ष टूट कर गिरने लगे, वारंवार अति शीघ्रतासे बादल इधर उधर उडकर जाने लगे॥ १०॥बडे २ पर्वतोंको टकराता हुआ पवन उनके कंगूरोंको गिराने लगा, चारोंओर दामिनी आग प्रगट होनेसे॥ ११॥वारंवार वज्र गिरने लगा, साथही साथ जितने प्राणि दिखलाई देतेथे वह समस्त वज्रसे उत्पन्न हुए शब्दके समान चिंघाडकर उठे॥ १२॥और जो प्राणी अदृश्य थे वह भी सब सब इस भयंकर वज्रके शब्दको सुन भयके मारे कंपित शरीरहोकर भयंकर शब्द

तिर्यक्चसहनक्षत्रैःसंगतौचंद्रभास्करौ ॥ भास्करांशुभिरादीप्तंतमसाचसमावृतम् ॥ ८ ॥ प्रचकाशेतदाकाशमुल्काशतविदीपितम् ॥ अंतरिक्षाच्च निर्घातानिर्जग्मुस्तुमुलस्वनाः ॥९॥ वपुःप्रकर्षेणववुर्दिव्यमारुतपंक्तयः ॥ बभंजचतदावृक्षाञ्जलदानुद्वहन्मुहुः ॥१०॥ आरुजंश्चैवशैलाग्राञ्छिखराणिबभंजच ॥ दिविचस्पृममहावेगाःसंहताःसमहास्वनाः ॥११॥मुमुचुर्वैद्युतानग्नींस्तेमहाशनयस्तदा ॥ यानिभूतानिदृश्यानिचुकुशुश्चाशनेः समम् ॥१२॥अदृश्यानिचभूतानिमुमुचुर्भैरवस्वनम्॥शिश्यिरेचाभिभूतानिसंत्रस्तान्युद्विजंतिच ॥१३॥संप्रविव्यथिरेचापिनचपस्पंदिरेभयात सहभूतैःसतोयोर्मिःसनागःसहराक्षसः ॥ १४ ॥ सहसाभूत्ततोवेगाद्भीमवेगोमहोदधिः ॥ योजनंव्यतिचक्रामवेलामन्यत्रसंप्लवात् ॥१५॥ तंतथासमतिक्रांतंनातिचक्रामराघवः ॥ तमुद्धतममित्रघ्नोरामोनदनदीपतिम् ॥१६॥ततोमध्यात्समुद्रस्यसगारःस्वयमुत्थितः ॥उदयाद्रिमहाशैलान्मेरोरिवदिवाकरः ॥ १७ ॥ पन्नगैःसहदीप्तास्यैःसमुद्रःप्रत्यदृश्यत ॥ स्निग्धवैदूर्यसंकाशोजांबूनदविभूषणः ॥ १८ ॥

करते हुए ऐसे व्याकुलकी नाई जहां तहां लेट रहे॥ १३॥व्यथित हृदय होनेके कारण उनमें चलने फिरने की कुछ भी सामर्थ्य नहीं रही; सब जहांके तहां स्पन्दविहीन हो पडे रहे; फिर समस्त प्राणियोंके साथ व तरंग, नाग और राक्षसोंके सहित॥ १४॥समुद्रकी तरंगोंने विकटाकार रूप धारण किया, सहसा समुद्रका वेग इतना भयानक हो गया कि, जहां सदा वेलाभूमितक जल जाया करता था उस सीमाको उल्लंघन कर विनाही प्रलयकालके आये चार कोस तक दूर चला गया ॥ १५॥ शत्रुओंके मारनेवाले रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी नदनदी पति समुद्रको चलायमान होते देख कर भी आप चलायमान न हुये और अस्त्रको न लौटाते हुए अथवा अपना अस्त्र परित्याग नहीं करते हुए॥ १६॥फिर सूर्य भगवान् जिस प्रकार उदयाचल सुमेरुके बीचमें उदय होकर शोभायमान होते हैं; वैसेही समुद्रके बीचोंबीचसे समुद्र उठ कर शोभाको प्राप्त हुआ॥ १७॥इसके साथही साथ प्रदीप्त वदन सर्पगण मुख फैलाये दृष्टि आये समुद्रका आकार चिकनी वैदूर्यमणिके समान था; व उसका शरीर तपाये हुए

सुवर्णके भूषणोंसे शोभित था ॥१८॥ समुद्रके गलेमें रत्नोंकी माला, विचित्र वस्त्र पहरे हुए, उसके नेत्र फूले हुए कमलदलके तुल्य और शिरपर अनेक प्रकारके फूलोंकी माला शोभायमान होरही थीं॥१९॥उसके सब भूषण उत्तमसुवर्णके थे, उन गहनोंमें वही रत्न जडे थे जो कि, समुद्रके गर्भसे उत्पन्न हुए थे ॥२०॥ उस काल सर्व धातु करके भूषित हिमवान् पर्वतके समान समुद्र शोभायमान हुआ, और उसकी तरंगोंके समूह इधर उधर उठ कर गिर कर बादलोंको स्पर्श करते और हवाके झोंके उसमें लगते ॥२१॥ गंगासिन्धु इत्यादि समस्त नदियें समुद्रको चारों ओरसे घेरे हुई थीं, देखते २ सागर श्रीरामचन्द्रजीके निकट आनेको आगे बढा और धनुष धारण किये हुए रावणके शत्रु श्रीरामचन्द्रजीसे हाथ जोडकर बोला॥२२॥हे श्रीरामचन्द्रजी ! पृथ्वी, पवन, आकाश, जल और अग्नि यह समस्त ही अपने २ स्वभावके वश होकर रहते हैं॥२३॥हे शुद्धस्वभाव ! हम स्वभावसे ही अगाध और लांघनेके अयोग्य हैं, यदि लोग सहजसे ही हमारे पार चले जाय

रत्नमाल्यांबरधरः पद्मपत्रनिभेक्षणः ॥ सर्वपुष्पमयींदिव्यांशिरसाधारयन्स्रजम् ॥ १९ ॥ जातरूपमयैश्चैवतपनीयविभूषणैः ॥ आत्मजानां चरत्नानांभूषितोभूषणोत्तमैः ॥ २० ॥ धातुभिर्मंडितःशैलोविविधैर्हिमवानिव ॥ आघूर्णिततरंगौघःकालिकानिलसंकुलः ॥२१॥गंगासिंधुप्रधानाभिरापगाभिसमावृतः ॥ सागरः समुपक्रम्यपूर्वमामंत्र्यवीर्यवान् ॥ अब्रवीत्प्रांजलिर्वाक्यंराघवंशरपाणिनम् ॥ २२ ॥ पृथिवीवायुराकाशमापोज्योतिश्चराघव॥स्वभावेसौम्यतिष्ठंतिशाश्वतंमार्गमाश्रिताः॥२३॥ तत्स्वभावोममाप्येषयदगाधोहमप्लवः ॥ विकारस्तुभवेद्गाधएतत्तेप्रवदाम्यहम् ॥ २४ ॥ नकामान्नचलोभाद्वानभयात्पार्थिवात्मज ॥ रागान्नक्राकुलजलंस्तंभयेयंकथंचन ॥ २५ ॥ विधास्येयेनगंतासिविषहिष्येऽप्यहंतथा ॥ नग्राहाविधमिष्यंतियावत्सेनातरिष्यति ॥ हरीणांतरणेरामकरिष्यामियथास्थलम् ॥ २६ ॥ तमब्रवीत्तदारामःशृणुमेवरुणालय ॥ अमोघोऽयंमहाबाणःकस्मिन्देशेनिपात्यताम् ॥ २७ ॥

सकें, अथवा हममें थोडा जल हो जाय तो आप ही बतलाइये, कि ऐसा होनेसे हमारे स्वभावमें अंतर पाया या नहीं ? ॥२४॥ हे राजकुमार ! हम कामनाके हेतु लोभके अर्थ अथवा भयसे युक्त हो कभी भी नाके और मत्स्योंसे युक्त अपनी जलराशिको नहीं रोक सकते॥२५॥हे प्रभो ! आपकी जैसी इच्छाहै हम भी वही करनेको तैयार हैं, और जो आप करेंगे उसको भली भाँतिसे सहन करनेको भी हम राजी हैं, आपकी सेना जिस समय पार जायगी, उस समय जलके जीव उस सेनाको भक्षण न करेंगे, अधिक कहां तक कहें आपकी वानरीसेनाके पार होनेके समय यह जलराशि बीच २ में इनको उत्तम २ स्थल दिखलावेगी ॥ २६ ॥ तब श्रीरामचंद्रजी बोले कि, हे समुद्र ! हमारा यह बाण अमोघ है निरर्थक नहीं होताइस कारण किस स्थानमें इसको चलावें सो तुम बताओ ॥ २७ ॥

श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुन कर और उनके हाथमें महाभयंकर बाण देखकर समुद्र महातेजस्वी श्रीरामचंद्रजीसे बोला॥२८॥कि जिस प्रकारसे आप लोगोंमें विख्यात हैं,वैसेही यहांसे उत्तर दिशामें द्रुमकुल्य नामक हमारा कोई सुविख्यात पुण्य स्थान है॥२९॥ वहां पर उग्रस्वभाव युक्त क्रूर कर्म करनेवाले पापचारी बहुतसे आभीर चोर वास करते हुए हमारा जल पान किया करते हैं ॥ ३० ॥ हे श्रीरामचंद्रजी ! उन पापकर्म करनेवालोंके जल छूनेसे जो पाप होता है उसको हम नहीं सहन कर सकते हैं, इस कारण यह श्रेष्ठ बाण उस स्थानमें छोड कर आप सफल करें ॥ ३१ ॥ तब दयानिधि रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीने महात्मा जल निधिके वचन सुन उसके बतायेहुए स्थानमें वही प्रदीप्तबाण वहांपर छोडा ॥ ३२ ॥ वह वज्रकी अग्निके समान प्रदीप्त बाण जिस स्थानमें गिरा

रामस्यवचनंश्रुत्वातंचदृष्ट्वामहाशरम्॥महोदधिर्महातेजाराघववंवाक्यमब्रवीत्॥२८॥उत्तरेणावकाशोऽस्तिकश्चित्पुण्यतरोमम॥द्रुमकुल्यइतिख्यातोलोकेख्यातोयथाभवान् ॥२९॥ उग्रदर्शनकर्माणोबहवस्तत्रदस्यवः ॥ आभीरप्रमुखाःपापाःपिबंतिसलिलंमम ॥३०॥ तैर्नतत्स्पर्शनंपापंसहेयंपापकर्मभिः॥अमोघःक्रियतांरामअयंतत्रशरोत्तमः॥३१॥तस्यतद्वचनंश्रुत्वासागरस्यमहात्मनः॥मुमोचतंशरंदीप्तंपरंसागरदर्शनात्॥३२॥ तेनतन्मरुकांतारंपृथिव्यांकिलविश्रुतम्॥निपातितःशरोयत्रवज्राशनिसमप्रभः॥३३॥ननादचतदातत्रवसुधाशल्यपीडिता ॥ तस्माद्व्रणमुखात्तोयमुत्पपातरसातलात् ॥३४॥ सबभूवतदाकूपोव्रणइत्येवविश्रुतः ॥ सततंचोत्थितंतोयंसमुद्रस्येवदृश्यते ॥३५॥ अवदारणशब्दश्चदारुणःसमपद्यत ॥ तस्मात्तद्बाणपातेनअपःकुक्षिष्वशोषयत्॥३६॥ विख्यातंत्रिषुलोकेषुमरुकांतारमेवच ॥ शोषयित्वातुतंकुक्षिंरामोदशरथात्मजः॥ वरंतस्मैददौविद्वान्मरवेऽमरविक्रमः ॥३७॥ पशव्यश्चाल्परोगश्चफलमूलरसायुतः ॥ बहुस्नेहोबहुक्षीरःसुगंधिर्विविधौषधिः ॥ ३८ ॥

था वह स्थान तबसे पृथ्वीपर मरुकान्तार नामसे विख्यात हुआ है ॥३३॥ जिस समय वह बाण गिरा तब उस बाणकी चोटसे पृथ्वी पीडित होकर घोरशब्द करने लगी उस समय शतधार होकर पातालसे पृथ्वीपर जल निकलनेलगा॥३४॥यह जल कुएँके आकारमें बदल कर "व्रण" नामसे विख्यात हुआ ।यह निकलती हुई जलराशि समुद्रके समान दिखाई देने लगी॥३५॥उस बाणके घोर शब्दसे पृथ्वीमें प्रवेशकरनेपर रहनेवालोंकी जिसपर जीविका थी उन सरोवर व तडागादिका समस्त जल सूख गया॥३६॥ उस समयसे वह स्थान (मरु कान्तार)नामसे प्रसिद्ध हुआ । कमललोचन अमर विक्रम दशरथसुत श्रीरामचन्द्रजीके इस स्थानको सुखायकर पीछे उस मरुभूमिको वरदिया कि ॥३७॥ इस स्थानमें विशेष करके रोग नहीं हुआ करेंगे यह पशुगणोंके चरनेको अनुकूल होगा अधिक

करके फल मूल व रसपूर्ण अनेक भाँतिके औषधियुक्त स्नेहपूर्ण क्षीरसहित सुगन्धितवृक्षोंसे यह स्थान परिपूर्ण होगा ॥३८॥ श्रीरामचन्द्रजीसे वरदान पायकर यह स्थान अनेक गुणोंकाआधार हुआ और उसके समस्त मार्ग भी यात्रियोंके लिये सुखदायक हुए॥३९॥जब उन चारोंका देश इसप्रकारसे जलबल शुष्क होगया तब उस स्थान पर नद नदियोंके पति समुद्रने सर्व शास्त्रोंका मर्मजाननेवाले श्रीरामचन्द्रजीसे यह वचन कहे ॥ ४० ॥ हे सौम्य ! यह नलनाम वानर श्रीमान् विश्वकर्माका प्यारा पुत्र है,इसने अपने पितासे सर्ववस्तुओंके जाननेकी सामर्थ्यकावर पाया है॥४१॥इसकारण अपने पिताके समान सामर्थ्ययुक्त अतिउत्साही यह वानर हमारे ऊपर सेतु (पुल) बनावे हम उसको धारण किये रहेंगे ❋ ॥४२॥ यह कहकर समुद्र अन्तर्धान होगया,उसके पीछे वानरश्रेष्ठ नलने खडे होकर महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजीसे यह वचन कहे ॥४३॥ कि,हे महाराज ! समुद्रने जो कुछ कहा वह समस्त ही सत्य है;हम पिताके वरदानके प्रभावसे इस बडे भारी

एवमेतैश्चसंयुक्तोबहुभिःसंयुतोमरुः।।रामस्यवरदानाच्चशिवःपंथाबभूवह॥३९॥तस्मिन्दग्धेतदाकुक्षौसमुद्रःसरितांपतिः॥राघवंसर्वशास्त्रज्ञमिदं वचनमब्रवीत् ॥ ४० ॥ अयंसौम्यनलोनामतनयोविश्वकर्मणः॥ पित्रादत्तवरःश्रीमान्प्रीतिमान्विश्वकर्मणः ॥४१॥ एषसेतुंमहोत्साहःकरोतु मयिवानरः ॥ तमहंधारयिष्यामियथाह्येपपितातथा ॥४२॥ एवमुक्त्वोदधिर्नष्टःसमुत्थायनलस्ततः ॥ अब्रवीद्वानरश्रेष्ठोवाक्यंराममहाबलम् ॥४३॥ अहंसेतुंकरिष्यामिविस्तीर्णेमकरालये॥पितुःसामर्थ्यमासाद्यतत्त्वमाहमहोदधिः॥४४दंडएवपरोलोकेपुरुपस्येतिमेमतिः॥धिक्क्षमामकृतज्ञेषुसांत्वंदानमथापिवा॥४५॥अयंहिसागरोभीमःसेतुकर्मदिदृक्षया॥ददौदंडभयाद्गाधंराघवायमहोदधिः॥४६॥ममममातुर्वरोदत्तोमंदरेविश्वकर्मणा ॥ मयातुसदृशःपुत्रस्तवदेविभविष्यति॥४७॥औरसस्तस्यपुत्रोऽहंसदृशोविश्वकर्मणा॥नचाप्यहमनुक्तोवःप्रब्रूयामात्मनोगुणान्॥४८॥

विस्तारवाले मत्स्योंके स्थान ऊपर सेतु बनावेंगे ॥४४॥ हमारी तो यह संभावना है कि,संसारमें और दूसरे उपायोंकी बराबरीसे एक दंड ही सबसे बडा उपाय है । उपकार न माननेवाले पुरुषके प्रति क्षमा,शान्त वचन,या दान किसीसे भी काम नहीं निकलता;इसकारणसे जो उपकार न माननेवाले पुरुषको क्षमा अथवा दान देताहै; उसको धिक्कार है ॥४५॥ अतएव ऐसे पुरुषको तो दंड ही देना उचित है । देखिये कि,इस भयंकर रूपवाले सागरने दंडके भयसे ही अपने ऊपर पुल बंधवानेके लिये रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीको स्थान दे दिया ॥४६॥ जो कुछ भी हो समुद्रने ठीक ही कहा है कारणकि;उसके कहनेसे हमको याद आता है, कि पहले मन्दर पर्वतपर विश्वकर्माजीने हमारी माताको 'हे देवि । तुम्हारा पुत्र हमारेही समान उत्पन्न होगा, यह वरदान दिया था ॥४७॥ सो हम उन

❋ नलको वरदान था कि, जो वस्तु छूकर पानीमें डालेंगे वह जहांकी तहां नंगेही जलके ऊपर स्थित रहेगी ॥

ही महात्मा विश्वकर्माजीके और सपुत्र उनके ही समान सब कुछ बनानेमें चतुर हैं आपलोगोंके न पूँछने पर हमने आपसे अपने गुण नहीं कथन किये थे, कारण कि अपने मुखसे अपनी बडाई करना महालज्जाकी बात है॥४८॥हम निश्चय ही समुद्रके ऊपर पुल बनाय सकेंगे इस कारण आज ही वानरलोगोंको इस पुलकी तैयारी करनेकी आज्ञा दीजिये ॥ ४९ ॥ उसके पीछे श्रीरामचन्द्रजी करके प्रेरित असंख्य वानर श्रेष्ठगण हर्षित मन कूदते फांदते महावनमें प्रवेश करते हुए ॥ ५० ॥ फिर वह पर्वतोंके समान आकारवाले वानर यूथ पतिगण पर्वतोंके शिखर और वृक्षोंको उखाड २ समुद्रके किनारेपर लाने लगे ॥५१॥ उन वानर

समर्थश्चाप्यहंसेतुंकर्तुंवैवरुणालये॥ तस्मादद्यैवबध्नंतुसेतुंवानरपुंगवाः ॥४९॥ ततोविसृष्टारामेणसर्वतोहरिपुंगवाः ॥ उत्पेततुर्महारण्यंहृष्टाःश तसहस्रशः ॥५०॥ तेनगान्नगसंकाशाःशाखामृगगणर्षभाः ॥ बभंजुःपादपांस्तत्रप्रचकर्षुश्चसागरम् ॥५१॥ तेसालैश्चाश्वकर्णैश्चधवैर्वंशैश्चवा नराः ॥ कुटजैरर्जुनैस्तालैस्तिलकैस्तिनिशैरपि ॥५२॥ बिल्वकैःसप्तपर्णैश्चकर्णिकारैश्चपुष्पितैः ॥ चूतैश्चाशोकवृक्षैश्चसागरंसमपूरयन् ॥५३॥ समूलांश्चविमूलांश्चपादपान्हरिसत्तमाः॥ इंद्रकेतूनिवोद्यम्यप्रजह्रुर्वानरास्तरून् ॥५४॥ तालान्दाडिमगुल्मांश्चनारिकेलबिभीतकान् ॥ करी रान्बकुलान्निंबान्समाजह्रुरितस्ततः ॥५५॥ हस्तिमात्रान्महाकायाःपाषाणांश्चमहाबलाः॥ पर्वतांश्चसमुत्पाटच्ययंत्रैःपरिवहंतिच ॥५६॥ प्रक्षि प्यमाणैरचलैःसहसाजलमुद्धृतम् ॥ समुत्ससर्पचाकाशमवासर्पत्ततःपुनः ॥ ५७ ॥

गणोंने शाल, अश्वकर्ण, धव कुटज, अर्ज्जुन, ताल, तिलक तिनिश॥५२॥बेल, शतपत्री, फूला हुआ कठचम्पा, आम, अशोक इत्यादि वृक्षोंसे समुद्रके किना रेकी भूमि परिपूर्ण करडाली ॥ ५३ ॥ इस प्रकारसे वह वानरगण जडसहित और जडरहित वृक्षोंको ग्रहण करके इन्द्रध्वजके समान चारों ओरसे लाने लगे ॥५४॥वह वानर अनेक स्थानोंसे ताल, दाडिम(दारमि),नारियल, बहेडा, करील बकुल और नींब आदि समस्त वृक्षोंको सब ओरसे तोड उखाड कर ले आये ॥ ५५ ॥ हाथियोंके समान आकारवाले बडे२ पर्वतखंड और पर्वतोंको उखाड कर कलोंके द्वारा उनको समुद्रके तीरपर ले आये ❀ ॥५६॥ जब वानरगण

❀ इससे विदित है कि, सुग्रीवजीके यहां सब जंगी सामान था और सब प्रकारकी सामग्री थी

वार २ पर्वतोंको समुद्रमें फेंकते थे तब समुद्रका जल उफन कर बराबर आकाशको चला जाता और फिर नीचे गिर जाता था॥५७॥इस प्रकार चारों ओरसे पत्थरोंके पडनेसे समुद्रका जल खलबलाय गया । और बहुतसे वानरोंने १०० शत योजनका लंबा सूत समुद्रके इस पारसे उस पारतक सिधाई टेढाईकी परीक्षाकरनेके लिये थामा और बहुतसे बडे २ रस्से वृक्षादि आकर्षण करनेको बांधे॥५८॥जो कुछ हो इस प्रकारसे महावीर नल विचित्र कर्म करनेवाले वानरोंके साथ समुद्रपर पुल बांधने लगे॥५९॥कोई २ वानर दंड ग्रहण करके अपने आधीन हुए वानरोंसे कार्य कराने लगे और कोई इधर उधर वृक्षादिकोंको ढूँढने लगे, इस प्रकार श्रीरामचंद्रजीकी आज्ञासे सैकडों हजारों वानर ॥६०॥ जिनका आकार मेघ और पर्वतोंके समान था तृण, काठ और फूले हुए वृक्ष व पत्थरोंसे बांधनेका प्रारम्भ करने लगे ॥ ६१ ॥ हाथीके समान आकारवाले बहुत सारे वानरगण पर्वतके समान बडे पत्थरोंके खण्ड और पर्वतोंके शिखर पर

समुद्रंक्षोभयामासुर्निपतंतः समंततः ॥ सूत्राण्यन्येप्रगृह्णंतिह्यायतंशतयोजनम् ॥५८॥ नलश्चक्रेमहासेतुंमध्येनदनदीपतेः ॥ सतदाक्रियतेसेतुर्वानरैर्घोरकर्मभिः ॥५९॥ दंडानन्येप्रगृह्णंतिविचिन्वंतितथापरे ॥ वानरैःशतशस्तत्ररामस्याज्ञापुरःसरैः ॥ ६० ॥ मेघाभैःपर्वताभैश्चतृणैःकाष्ठैर्बबंधिरे ॥ पुष्पिताग्रैश्चतरुभिःसेतुंबध्नंतिवानराः ॥६१॥ पाषाणांश्चगिरिप्रख्यान्गिरीणांशिखराणिच ॥ दृश्यंतेपरिधावंतोगृह्यदानवसंनिभाः ॥६२॥ शिलानांक्षिप्यमाणानांशैलानांतत्रपात्यताम् ॥ बभूवतुमुलःशब्दस्तदातस्मिन्महोदधौ ॥६३॥ कृतानिप्रथमेनाह्नायोजनानिचतुर्दश ॥ प्रहृष्टैर्गजसंकाशैस्त्वरमाणैःप्लवंगमैः ॥ ६४ ॥ द्वितीयेनतथैवाह्नायोजनानितुविंशतिः ॥ कृतानिप्लवगैस्तूर्णंभीमकायैर्महाबलैः ॥ ६५ ॥ अह्नातृतीयेनतथायोजनानितुसागरे ॥ त्वरमाणैर्महाकायैरेकविंशतिरेवच ॥६६॥ चतुर्थेनतथाचाह्नाद्वाविंशतिरथापिवा ॥ योजनानिमहावेगैःकृतानित्वरितैस्ततः ॥ ६७ ॥ पंचमेनतथाचाह्नाप्लवंगैःक्षिप्रकारिभिः ॥ योजनानित्रयोविंशत्सुवेलमधिकृत्यवै ॥ ६८ ॥

ग्रहण करते हुए दानवोंके समान पुलके सन्मुखको दौडने लगे॥६२॥उस कालमें पर्वतोंके शिखर और पर्वतोंके खण्डबराबर पडनेसे समुद्रमें घोर शब्द होने लगा ॥ ६३ ॥ पवननन्दन हनुमानजी सरलतासे जो शैल उठाय कर लाते और पुलके ऊपर डालदेते, विश्वकर्माके पुत्र नल लीलापूर्वक बाँयें हाथसे ले उस पुलका समस्त कार्य आरंभ करने लगे,इसप्रकारसे पर्वताकार शीघ्रकर्मकारी वानरोंने अत्यन्त आनंदके सहित पहिले दिन चौदह योजन लंबा पुल बनाया था॥६४॥ भयंकराकार महाबली वानरोंने दूसरे दिन इस प्रकार शीघ्रता प्रगट करके और नया बीस योजन सेतु निर्माण किया॥६५॥तीसरे दिवस शीघ्र कर्मकारी पर्वताकार वानरलोगोंने इक्कीस योजन और अधिक बनाया ॥ ६६ ॥ उन महावेगवाले वानरोंने चौथे दिन बाईस योजन सेतु और अधिक बनाया ६७ ॥ पांचवें दिन उन शीघ्रकर्मचारी वानरोंने तेईस योजन पुलको और बनाया कि, जिससे चारशत कोशका लंबा पुल बन गया और लंकाके नीचे बेलाभूमिमें वह

पुल उन वानरोंने मिलादिया ॥६८॥ इसप्रकारसे विश्वकर्मा कि पुत्र बलशाली वानरश्रेष्ठ नलने अपने पिताकेसमान चतुरता दिखाय कर समुद्रकेऊपर सेतु बांधा ॥६९॥ मत्स्यादि जीवोंके स्थान समुद्रके ऊपर नलका बनाया वह अच्छी बनावटका पुल आकाशवाले देवमार्गके समान शोभायमान होने लगा ॥ ७० ॥ उसी समय देवता गंधर्व सिद्ध और महर्षिगण आकाशमें टिके रह कर यह अद्भुत सेतुका व्यापार देख कर परम सन्तुष्ट हुए ॥७१॥ नलके बनाये चालीस कोश चौडे,व चारसौ कोशके लंबे,इस दुष्कर पुलको देखकर देवता और गन्धर्वगणअतिविस्मित हुए ॥७२॥ कार्य सिद्धिकी सूचना जान कर वानरगण आनंदके मारे कूदने लगे,व कोई २ अति जोरसे कूद कर गर्जने लगे. अचिन्तनीय अद्भुत व रोमहर्षण॥७३॥ इस सेतुके बांधनेको देखकर सब प्राणी मोहित हो गये, महा

सवानरवरःश्रीमान्विश्वकर्मात्मजोबली ॥ बबंधसागरेसेतुंयथाचास्यपितातथा ॥६९॥ सनलेनकृतःसेतुःसागरेमकरालये ॥ शुशुभेसुभगःश्रीमान्स्वातीपथइवांबरे ॥ ७० ॥ ततोदेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ आगम्यगगनेतस्थुर्द्रष्टुकामास्तदद्भुतम् ॥७१॥ दशयोजनविस्तीर्णंशतयोजनमायतम् ॥ ददृशुर्देवगंधर्वानलसेतुंसुदुष्करम् ॥ ७२ ॥ आप्लवंतःप्लवंतश्चगर्जंतश्चप्लवंगमाः ॥ तमचिंत्यमसह्यंचह्यद्भुतंलोमहर्षणम् ॥ ७३ ॥ ददृशुःसर्वभूतानिसागरेसेतुबंधनम् ॥ तानिकोटिसहस्राणिवानराणांमहौजसाम् ॥ ७४ ॥ बध्नंतःसागरेसेतुंजग्मुःपारंमहोदधेः ॥ विशालःसुकृतःश्रीमान्सुभूमिःसुसमाहितः ॥ ७५ ॥ अशोभतमहान्सेतुःसीमंतइवसागरे ॥ ततःपारेसमुद्रस्यगदापाणिर्विभीषणः ॥ ७६ ॥ परेषामभियानार्थमतिष्ठत्सचिवैःसह ॥ सुग्रीवस्तुततःप्राहरामंसत्यपराक्रमम् ॥ ७७ ॥ हनूमंतंत्वमारोहअंगदंत्वथलक्ष्मणः ॥ अयंहिविपुलोवीरसागरोमकरालयः ॥ ७८ ॥ वैहायसौयुवामेतौवानरौधारयिष्यतः ॥ अग्रतस्तस्यसैन्यस्यश्रीमान्रामःसलक्ष्मणः ॥ ७९ ॥

बलवान् लाखों करोडों वानरगण इसप्रकारसे ॥७४॥ सेतु बांध कर समुद्रके दूसरे पार चले गये ।अति विशाल अच्छी तरहसे बनाया हुआ शोभायमान सुंदर समान भूमियुक्त अच्छा चिकना सेतु ॥७५॥ समुद्रके केशविन्यास करनेके समान शोभा प्राप्त करने लगा उसके पीछे गदा हाथमें लिये समुद्रके दूसरे पार बिभीषणजी ॥७६॥ अपने मंत्रियोंके साथ शत्रुलोगोंका संवाद और उनका मायाकार्य जाननेके लिये घूमने लगे । इस ओर वानरराज सुग्रीवजी सत्यपराक्रम श्रीरामचन्द्रजीसे बाले ॥ ७७ ॥ कि,हे वीर ! यह मध्यवर्ती समुद्रका मार्ग बहुत दूरतक है,इसकारण आपहनुमानजीकी और लक्ष्मणजी अंगदजीकी पीठपर चढलें ॥ ७८ ॥ आकाशमें चढनेवाले यह दोनों वीर आप दोनों जनोंको सवार कराकर ले जायेंगे । इस प्रकारइस सेनाके आगे २ श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी हनुमान्

व अंगदकी पीठपर चढे ॥ ७९ ॥ धनुष धारण किये धर्मात्मा सुग्रीवजीके साथ चलनेलगे, वानरोंमेंसे कोई २ बीचमें और कोई २ पीछे २ इधर उधर जाने लगे॥८०॥बहुतसे वानर जलमें तैरते हुए बहुतसे पुलके ऊपर होकर चले, और कोई २ गरुडजीके समान चतुरता प्रगट करके; आकाशमार्गमेंही गमन करने लगे॥८१॥वानरोंकी सेनाने पुलके ऊपर गमन करनेके समय इस प्रकारका बडाभारी शब्द किया कि, जिससे उन्होंने इस अपने शब्दसे समुद्रके भयंकर उछलनेके शब्दको भी मूंद लिया ॥८२॥ इस प्रकारसे वानरगण नलके बनाये सेतुकी सहायतासे समुद्रके पार हुए और वहां पहुँचकर सुग्रीवजीने उनको अधिक फल मूल पूर्ण समुद्रकेकिनारे पर टिकाया ॥८३॥ सिद्ध देवता लोग रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीका यह अद्भुत दुष्कर कर्म देख कर सहसा आकाशमार्गमें प्रगट हो, मंदाकिनीके पवित्र जलकोवर्षायकर अलग २ श्रीरामचन्द्रजीके अभिषेककरने लगे॥८४॥और बोले, "हे नरदेव! आप शत्रुलोगोंको पराजित करके बहुत काल

जगामधन्वीधर्मात्मासुग्रीवेणसमन्वितः॥अन्येमध्येनगच्छंतिपार्श्वतोन्येप्लवंगमाः॥८०॥सलिलंप्रपतंत्यन्येमार्गमन्येप्रपेदिरे ॥ केचिद्वैहायसगताःसुपर्णाइवपुप्लुवुः॥८१॥ घोषेणमहताघोषंसागरस्यसमुच्छ्रितम् ॥ भीममंतर्दधेभीमातरंतीहरिवाहिनी ॥८२॥ वानराणांहिसातीर्णावाहिनीनलसेतुना॥तीरेनिविविशेराज्ञाबहुमूलफलोदके ॥८३॥ तदद्भुतंराघवकर्मदुष्करंसमीक्ष्यदेवाःसहसिद्धचारणैः॥ उपेत्यरामंसहसामहर्षिभिस्तमभ्यषिंचन्सुशुभैर्जलैःपृथक् ॥८४॥ जयस्वशत्रून्नरदेवमेदिनींससागरांपालयशाश्वतीःसमाः॥इतीवरामंनरदेवसत्कृतंशुभैर्वचोभिर्विविधैरपूजयन्॥८५॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदि०च०सा० युद्धकांडे द्वाविंशः सर्गः॥२२॥निमित्तानिनिमित्तज्ञोदृष्ट्वालक्ष्मणपूर्वजः॥सौमित्रिंसंपरिष्वज्यइदंवचनमब्रवीत् ॥ १ ॥ परिगृह्योदकंशीतंवनानिफलवंतिच ॥ बलौघंसंविभज्येमंव्यूह्यतिष्ठेमलक्ष्मण ॥ २ ॥ लोकक्षयकरंभीमंभयंपश्याम्युपस्थितम् ॥ प्रबर्हणंप्रवीराणामृक्षवानररक्षसाम् ॥३॥ वाताश्चकलुषावांतिकंपतेचवसुंधरा ॥ पर्वताग्राणिवेपंतेपतंतिचमहीरुहाः॥४॥

तक इस सागरसहित पृथ्वीका पालन करो" इस प्रकार अनेक शुभ वचन कह २ कर उन राजश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीको आशीर्वाद देने लगे ॥ ८५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥ सर्व कारणोंके जाननेवाले लक्ष्मणजीके बडे भाई श्रीरामचन्द्रजी अनेक भांतिके बहुविध अघोर शकुन देखकर सुमित्राजीके पुत्र लक्ष्मणजीको हृदयसे लगाय बोले ॥ १ ॥ कि, हे लक्ष्मण ! जिस स्थानमें शीतल जल और फल वाले वृक्ष हों उसी स्थानमें ऋक्ष, गोपुच्छ और सब वानरोंकी सेना विभागसे व्यूहरचना करके टिकें ॥ २ ॥ रीछ, वानर और राक्षसगणोंको विनाशरूप अतिघोर लोकक्षयकारी अशुभ निमित्त देखते हैं कि, जिससे बडा भारी नाश राक्षसोंकी सेनाका होगा॥३॥यह देखो पवन विरुद्ध भावयुक्त हो धूलके सहित चल रही है, पृथ्वी कम्पा

यमान हो रही है, पर्वताग्र चलायमान हैं, वृक्ष अचानक टूट२कर गिर रहे हैं॥४॥गिद्ध, गीदड; बाज आदि मांसभक्षी जीवोंके वर्ण समान धौले रंगवाले मेघ अत्यन्त कठोर शब्दसे गर्जनकरके रुधिरकी बूँदोंके मिले हुए जलकी वर्षा करते हैं॥५॥संध्यासमयका लाल चंदनके समान अत्यन्त घोर लाल वर्ण होगयाहै और सूर्य मंडलसे प्रकाशमान अंगारे गिरते हैं॥६॥ जिनको देख कर क्रूर स्वभाववाले पशुपक्षीगण सूर्यके सामनेको मुख कर दीनभाव और करुणा भरी वाणीसे बारंबार शब्द कर रहे हैं, हे लक्ष्मण ! हमारे अंतःकरणमें अत्यन्त भय उत्पन्न होता है ॥७॥ रात्रिमें पहलेके समान चन्द्रमाका उदय नहीं होता, बरन् वह लाल और काली किरणोंसे युक्त दोषके सहित उदित है; मानो लोकक्षय करेगा॥८॥निर्मल सूर्यमंडलमें नीलेवर्णके दाग दिखाई देतेहैं, हे लक्ष्मण ! सूर्यके बाहरी भागमें छोटा शुष्क लाल घेरा बन गया है ॥९॥ हे लक्ष्मण ! प्रबल धूरीके उड़नेसे नक्षत्रगण ढककर दृष्टि नहीं आते इन सबको देखकर बोध होता है कि युगान्तका समय

मेघाःक्रव्यादसंकाशाःपरुषाःपरुषस्वनाः ॥ क्रूराःक्रूरंप्रवर्षंतिमिश्रंशोणितबिंदुभिः ॥५॥ रक्तचंदनसंकाशासंध्यापरमदारुणाः ॥ ज्वलतःप्रपतत्यतदादित्यादग्निमंडलम्॥ ६ ॥ दीनादीनस्वराःक्रूराःसर्वतोमृगपक्षिणः ॥ प्रत्यादित्यंविनर्दंतिजनयंतोमहद्भयम् ॥ ७ ॥ रजन्यामप्रकाशस्तुसंतापयतिचंद्रमाः ॥ कृष्णरक्तांशुपर्यंतोलोकक्षयइवोदितः ॥ ८ ॥ ह्रस्वोरूक्षोऽप्रशस्तश्चपरिवेषस्तुलोहितः ॥ आदित्येविमलेनीलंलक्ष्मलक्ष्मणदृश्यते॥९॥रजसामहताचापिनक्षत्राणिहतानिच॥ युगांतमिवलोकानांपश्यशंसंतिलक्ष्मण॥१०॥काकाःश्येनास्तथानीचागृध्राःपरिपतंतिच ॥ शिवाश्चाप्यशुभान्नादान्नदंतिसुमहाभयान् ॥११॥ शैलैःशूलैश्चखड्गैश्चविमुक्तैःकपिराक्षसैः॥ भविष्यत्यावृताभूमिर्मांसशोणितकर्दमा ॥१२॥ क्षिप्रमद्यैवदुर्धर्षांपुरींरावणपालिताम् ॥ अभियामजवेनैवसर्वैर्हरिभिरावृताः ॥ १३ ॥ इत्येवमुक्त्वाधन्वीसरामःसंग्राममर्धणः॥प्रतस्थेपुरतोरामोलंकामभिमुखोविभुः ॥१४॥ सविभीषणसुग्रीवाःसर्वेतेवानरर्षभाः ॥ प्रतस्थिरेविनर्दंतोधृतानांद्विषतांवधे ॥ १५ ॥

आ गया है॥१०॥कौए, बाज और गिद्धगण सहसा ऊपरसे गिरते हैं शृगाल इत्यादि जल जन्तुगण भय उत्पन्न करानेवाला बडा भारी भयंकर शब्द करते हैं॥११॥ हे लक्ष्मण ! इन सब उत्पाती चिह्नोंकी देखकर हमको निश्चय जान पडता है कि यहांकी पृथ्वी बहुत ही शीघ्र वानर और राक्षसगणोंके छोडे हुए पर्वत, शूल और अस्त्र इत्यादि खड्गोंसे ढक कर और मरे हुए वीरोंके मांस व रुधिर गिरनेसे धूलरहित हो कीचमें पूर्ण हो जायगी॥१२॥इस कारण हम आजही सब वानरगणोंके साथ अतिशीघ्र रावणसे पाली जाती हुई अजीत लंकापुरीमें चले जायँगे॥१३॥संग्राममें शत्रुओंके निरादर करनेवाले लोगोंको आनंद देनेवाले विभु श्रीरामचन्द्रजी यह कह कर हाथमें धनुष धारण करके सबसे आगे लंकाकी ओरको चले ॥ १४ ॥ विभीषण, सुग्रीव और दूसरे वानरगण भी अतीभारी शब्द करते हुए

श्रीरामचन्द्रजीके पीछे २ शत्रुका कुल निर्मूल करनेको चले ॥ १५ ॥ रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी श्रीजानकीजीके उद्धारके लिये वीर्यवान् वानरगणोंका ऐसा कार्य और यत्न देख कर अतिशय सन्तुष्टता प्राप्त करते हुए ॥१६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां त्रयोविंशः सर्गः॥ २३ ॥ इस प्रका रसे वह आये हुए समस्त वानरवीर लोग राजकुमार श्रीरामचन्द्रजी करके व्यूहमें स्थापित होकर शोभित नक्षत्र राजिविराजित शरदकालीन पूर्णमासीकी रात्रिके समान शोभा धारण करते हुए ॥ १ ॥ वहांकी पृथ्वी समुद्रके समान प्रकाशित रामचन्द्रजीकी उस सेनाके वेगसे अत्यन्त पीडित होकर वारंवार कंपायमान होने लगी ॥ २ ॥ तब लंकामें टिके हुए भयंकर राक्षसोंके भयंकर कुलाहलका शब्द और भेरी मृदंगोंका शब्द इन समस्त वानरोंने सुना ॥३॥ और इसको सुन कर वह यहां तक हर्षित हुए कि, वह किसी प्रकारसे उन राक्षसोंके शब्दको न सहन कर सके और बडा भारी उत्कंठ शब्द करने लगे ॥ ४ ॥ उस समय

राघवस्यप्रियार्थंतुसुतरांवीर्यशालिनाम् ॥हरीणांकर्मचेष्टाभिस्तुतोषरघुनंदनः ॥१६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे त्रयोविंशः सर्गः ॥ २३ ॥ सावीरसमितीराज्ञाविरराजव्यवस्थिता ॥ शशिनाशुभनक्षत्रापौर्णमासीवशारदी ॥ १ ॥ प्रचचालवेगेन त्रस्ताचैववसुंधरा॥पीडचमानाबलौघेनतेनसागरवर्चसा ॥२॥ ततःशुश्रुवुराकुष्टंलंकायांकाननौकसः ॥ भेरीमृदंगसंघुष्टंतुमुलंलोमहर्षणम्॥३॥ बभूवुस्तेनघोषेणसंहृष्टाहरियूथपाः ॥ अमृष्यमाणास्तद्घोषंविनेदुर्घोषवत्तरम् ॥४॥ राक्षसास्तत्प्लवंगानांशुश्रुवुस्तेपिगर्जितम् ॥ नर्दतामिवदृप्तानांमेघानामंबरेस्वनम् ॥ ५ ॥ दृष्ट्वादाशरथिर्लंकांचित्रध्वजपताकिनीम् ॥ जगामभनसासीतांदूयमानेनचेतसा ॥ ६ ॥ अत्रसामृगशावाक्षी रावणेनोपरुध्यते ॥ अभिभूताग्रहेणेवलोहितांगेनरोहिणी ॥ ७ ॥ दीर्घमुष्णंचनिःश्वस्यसमुद्वीक्ष्यचलक्ष्मणम् ॥ उवाचवचनंवीरस्तत्कालाहितमात्मनः ॥ ८ ॥ आलिखंतीमिवाकाशमुत्थितांपश्यलक्ष्मण ॥ मनसेवकृतांलंकांनगाग्रेविश्वकर्मणा ॥ ९ ॥

राक्षसलोगोंने आकाशमें मेघ गर्जनके समान वानर लोगोंकी उत्कट गर्जना सुनी और कांप उठे॥५॥इसी समय दशरथ कुमार श्रीरामचन्द्रजी ध्वजा पताकाओंसे शोभित लंकापुरीको देख कर सीताजीके लिये मन ही मन अति दुःखित हुए ॥६॥ कि इस समय वह मृगनयनी सीताजी रावणके घरमें रोकी हुई हैं मंगल ग्रहसे ग्रसी हुई रोहिणी नक्षत्रके समान जानकीजीकी शोचनीय अवस्था होगी॥७॥तब महाधीर श्रीरामचन्द्रजी लंबे२श्वास लेकर लक्ष्मणजीके सन्मुख दृष्टि करके उस कालके हित कर वचन उनसे बोले ॥८॥ हे लक्ष्मण ! निहार कर देखो कि, विश्वकर्माजीने पर्वत त्रिकूटकेऊपरइस लंकापुरीको बनाया है, कि जिससे ऐसा जान पडता है, कि विश्वकर्माजीनेइस पुरीकोमानो अपने मनहीसे बनाया है इसकीशोभा देखकर यह समझमें आता है कि; मानो आकाशमें कुछ तसबीरसी खिची

हुई है ॥ ९ ॥ देखो लंकानगरी सप्त भूमिके महलोंसे युक्त विमानोंसे युक्त होकर श्वेतवर्णके मेघसे ढके विष्णुजीके पद आकाशके समान शोभायमान हो रही है ॥१०॥ इस लंका नगरीमें अनेक प्रकारके चित्ररथ वनके समान अनेक पुष्पवन हैं,इन पुष्पवनोंके समस्त वृक्ष अनेक भांतिके फल,पुष्प और पक्षियोंसे युक्त हैं, ॥११॥ हे लक्ष्मण ! यह देखो ! सुशीतल मन्द पवनके झोंके वृक्षोंकी डालियोंको हिलाय रहे हैं,पक्षीगण मतवाले होकर उन पर बैठे हुए हैं,सुन्दर वायुवेगकरके चलायमान होनेके डरसे मानो भौंरे घबडाकर फूलोंमें घुसे बैठते हैं,कोकिलगणमानो वसन्तको ही मनमें आया हुआ समझकर अपनी कुहू !! कुहू !! का प्रचार कर रही हैं ॥१२॥ इसप्रकार दशरथ कुमार श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणजीसे कहकर शास्त्रमें कहे हुए कर्मके अनुसार वानर सेनाको यथा योग्य स्थानमें टिका दिया

विमानैर्बहुभिर्लंकासंकीर्णारचितापुरा॥ विष्णोःपदमिवाकाशंछादितंपांडुभिर्घनैः ॥१०॥ पुष्पितैःशोभितालंकावनैश्चित्ररथोपमैः ॥ नानापतंगसंघुष्टफलपुष्पोपगैःशुभैः ॥११॥ पश्यमत्तविहंगानिप्रलीनभ्रमराणिच ॥ कोकिलाकुलखंडानिदोधवीतिशिवोऽनिलः॥१२॥ इतिदाशरथीरामोलक्ष्मणंसमभाषत ॥ बलंचतत्रविभजच्छास्त्रदृष्टेनकर्मणा॥ १३ ॥ शशासकपिसेनांतांबलादादायवीर्यवान्॥ अंगदःसहनीलेनतिष्ठेदुरसिदुर्जयः॥ १४ ॥तिष्ठेद्वानरवाहिन्यावानरौघसमावृतः॥आश्रितोदक्षिणंपार्श्वमृषभोनामवानरः॥ १५॥ गंधहस्तीवदुर्धर्षस्तरस्वीगंधमादनः॥ तिष्ठेद्वानरवाहिन्याःसव्यंपक्षमधिष्ठितः ॥ १६ ॥ मूर्ध्निस्थास्याम्यहंयत्तोलक्ष्मणेनसमन्वितः ॥ जांबवांश्चसुषेणश्चवेगदर्शीचवानरः ॥१७॥ ऋक्षमुख्यामहात्मानः कुक्षिरक्षंतुतेत्रयः ॥ जघनंकपिसेनायाःकपिराजोऽभिरक्षतु ॥ पश्चार्धमिवलोकस्यप्रचेतास्तेजसावृतः ॥ १८ ॥ सुविभक्तमहाव्यूहामहावानररक्षिता ॥ अनीकिनीसाविबभौयथाद्यौःसाभ्रसंप्लवा॥ १९ ॥

॥१३॥ फिर श्रीरामचन्द्रजीने सब सेनाको आज्ञा दी कि,पुरुषव्यूहके मध्यमें नीलसहित अंगदजी अपनीसेनाके साथ अवस्थान करें ॥ १४ ॥ और इस वानरसेनाके दाहिनी ओर वानरश्रेष्ठ ऋषभ नामक वानर अवस्थान करें। १५॥तथा मदोन्मत्त हाथीकेसमान दुर्धर्ष गन्धमादन वानर सेना गणोंके साथ इस सेनाकी बाईं ओर ठहरें ॥१६॥ और हम लक्ष्मणजीके सहित सावधान हो कर सबसे आगे रहेंगे, ऋक्षश्रेष्ठ महाबलवान् जाम्बवान्, सुषेण और वेगदर्शी ॥१७॥ यह ऋक्षोंमें मुख्य तीन जने कुक्षिकी रक्षा करेंगे। वरुणजी जिसप्रकार अपने तेजसे पृथ्वीके पिछले अर्द्ध भागकी रक्षा करते हैं, वैसे ही वानरराज सुग्रीवजी इस सेना समूहके जघन देशकी रक्षा करें ॥ १८ ॥ वीरश्रेष्ठ वानरगणोंसे रक्षित यह वानरवाहिनी इस प्रकारसे व्यूह मध्यमें स्थापित और बँट कर घनघोरघटासे घिरे

हुए आकाशके समान शोभायमान हुई ॥१९॥ वानरगण पर्वतोंके शिखर और बडे २ वृक्षोंको ग्रहण करके मानो लंकानगरीको विध्वंस करनेकी अभिलाषासे ही उस पर चढाई करते हुए ॥ २० ॥ उस समय वह वानरगण ऐसे उत्साहित हुए कि; उन लोगोंने मनमें विचारा कि यातो पर्वतोंके शिखर चलाय कर लंकाको चूर्ण कर देंगे अथवा घूंसे मार २ कर उसके धवरहरोंको तोड ताड डालगे, यह विचारकर वानरगण आनंदमें अधीर हो गये ॥ २१ ॥ इसके पीछे महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजीः वानरराज सुग्रीवजीसे यह बोले कि, हे सखे अब तो सब सेना यथास्थानमें टिकगई इस कारण अब रावणके दूत शुकको छोड देना चाहिये ॥२२॥ महाबलवान् वानरोंके राजा सुग्रीवजीने श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञानुसार राक्षसराज रावणके दूत शुकको छोड दिया ॥२३ ॥श्रीरामचन्द्रजीके कहनेसे छुटकारा पाय वानरोंसे सताया हुआ शुक अतित्रासितहो राक्षसराज रावणके निकट उपस्थित हुआ ॥२४॥ राक्षसोंका स्वामी रावण शुकको आया

प्रगृह्यगिरिशृंगाणिमहतश्चमहीरुहान् ॥ आसेदुर्वानरालंकांविमर्दयिषवोरणे ॥२०॥ शिखरैर्विकिरामैनांलंकांमुष्टिभिरेववा ॥ इतिस्मदधिरेसर्वे मनांसिहरिपुंगवाः ॥२१॥ ततोरामोमहातेजाःसुग्रीवमिदमब्रवीत् ॥ सुविभक्तानिसैन्यानिशुकएषविमुच्यताम् ॥ २२ ॥रामस्यतुवचःश्रुत्वावा नरेंद्रोमहाबलः ॥ मोचयामासतंदूतंशुकंरामस्यशासनात् ॥२३॥ मोचितोरामवाक्येनवानरैश्चनिपीडितः ॥शुकःपरमसंत्रस्तोरक्षोधिपमुपागमत् ॥२४॥ रावणःप्रहसन्नेवशुकंवाक्यमुवाचह ॥ किमिमौतेसितौपक्षौलूनपक्षश्चदृश्यसे ॥२५॥ कच्चिन्नानेकचित्तानांतेषांत्वंवशमागतः ॥ ततः सभयसंविग्नस्तेनराज्ञाभिचोदितः ॥वचनंप्रत्युवाचेदंराक्षसाधिपमुत्तमम् ॥२६॥ सागरस्योत्तरेतीरेऽब्रुवंतेवचनंतथा ॥ यथासंदेशमक्लिष्टंसांत्व यन्श्लक्ष्णयागिरा ॥२७॥ क्रुद्धैस्तैरहमुत्प्लुत्यदृष्टमात्रःप्लवंगमैः ॥ गृहीतोस्म्यपिचारब्धोहंतुंलोप्तुंचमुष्टिभिः ॥२८॥ नतेसंभाषितुंशक्याः संप्रश्नोत्रनविद्यते॥ प्रकृत्याकोपनास्तीक्ष्णवानराराक्षसाधिप॥ २९ ॥

हुआ देखकर कुछेक हँस कर उससे बोला कि, यह क्या तुम्हारे श्वेतपंख उखड गये इनकी यह दशा कैसे हुई ? ॥ २५ ॥ कहीं तुम उन चंचलचित्त वानर लोगोंके वशमें तो नहीं पड गये थे ? इस प्रकार पूँछे जानेपर, राजकुमार श्रीरामचन्द्रजीके कहनेसे छूटा भयभीत शुक राक्षसपि रावणको यह उत्तर देता हुआ ॥ २६ ॥ शुक बोला कि महाराज ! हम समुद्रके उत्तर तीर जायकर प्रथम मधुर वचनोंसे वानरगणोंको समझानेके लिये जिसप्रकारसे आपने कहा था वैसे ही आपके आज्ञा किये वह वीरोचित वचनोंको मैं आरम्भ करता हुआ ॥२७॥ परन्तु वानरलोगोंने हमको देखते ही क्रोधायमान हो ऊपर आकाशमें छलांगमारकर हमको पकड लिया, और वह हमारे सब पंख उखाडने और घूसोंसे हमारे प्राणतकनिकालनेको तैयार हुए ॥ २८ ॥ उन वानरोंमे न तो हमसे कोई बात पूछी

न हमें कोई प्रश्नही करने दिया कारण कि, वह वनचारी वानर स्वभावसे क्रोधी होते हैं और बिना कुछ सोचे विचारे शीघ्रतासे कार्य किया करते हैं; इस कारणसे प्रथम ही वह हमको मार लगाने लगे ॥२९॥ उसके पीछे जिनके हाथसे विराध कबन्ध और खरका प्राण संहार हुआ है और जो सुग्रीवके साथ सीताजीके ढूँढनेको निकले हैं उनको हमने देखा ॥३०॥ वह समुद्रके पुल बांध उसके द्वारा खारी सिंधुके पार आये हैं। मानो वह राक्षसकुल निर्मूल करनेकी वासनासेही धनुष धारणकरके लंकामें आय पहुँचे हैं॥३१॥ पहाडी मेघोंके समान उनकी वानर और रीछोंकी इतनी सेना है कि जिसके देखनेसे ज्ञात होता है कि, इसने सब पृथ्वीको ढक रक्खा है ॥३२॥ हे महाराज ! आपकी और वानरराज सुग्रीवजीकी सेनाकेबीचमें देवगणोंके साथ दानव लोगोंके समान परस्पर संधि होनेकी कोई संभावना नहीं

सचहंताविराधस्यकबंधस्यखरस्यच ॥ सुग्रीवसहितोरामःसीतयाःपदमागतः ॥३०॥ सकृत्वासागरेसेतुंतीर्त्वाचलवणोदधिम् ॥ एषरक्षांसिनिर्धूयधन्वीतिष्ठतिराघवः ॥ ३१ ॥ ऋक्षवानरसंघानामनीकानिसहस्रशः ॥ गिरिमेघनिकाशानांछादयंतिवसुंधराम् ॥ ३२ ॥ राक्षसानांबलौघस्य वानरेंद्रबलस्यच ॥ नैतयोर्विद्यतेसंधिर्देवदानवयोरिव ॥ ३३ ॥ पुराप्राकारमायांतिक्षिप्रमेकतरंकुरु ॥ सीतांचास्मैप्रयच्छाशुयुद्धंवापिप्रदीयताम् ॥३४॥ शुकस्यवचनंश्रुत्वारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥ रोषसंरक्तनयनोनिर्दहन्निवचक्षुषा ॥ ३५ ॥ यदिमांप्रतियुद्ध्येरन्देवगंधर्वदानवाः ॥ नैवसीतांप्रदास्यामिसर्वलोकभयादपि ॥३६॥ कदासमभिधावंतिमामकाराघवंशराः ॥ वसंतेपुष्पितंमत्ताभ्रमराइवपादपम् ॥ ३७ ॥ कदाशोणितदिग्धांगंदीप्तैःकार्मुकविच्युतैः ॥ शरैरादीपयिष्यामिउल्काभिरिवकुंजरम् ॥ ३८ ॥

॥३३॥ इस कारण या तो आप बहुत शीघ्र श्रीरामचन्द्रजीको सीता समर्पण करदें अथवा उनके साथ युद्ध करें अतएव इन दो कार्योंमेंसे आप एक करें ॥३४॥ शुकके ऐसे वचन सुन कर रावणके दोनों नेत्र अत्यन्त लाल होगये; और उन नेत्रोंसे रावण शुकको जलाता हुआ सा बोला॥३५॥ कि यदि देव दानव, और गंधर्वगण एक साथ मिल कर हमारे साथ युद्ध करें, अथवा त्रिलोकीके सब रहनेवाले भी विरुद्ध हो जायँ तथापि हम भय पाकर कभी जानकीको रामके समर्पण न करेंगे ❋ ॥३६॥ अहो ! ऐसा शुभ समय कब आय पहुँचेगा कि, जिस समय मतवाले भ्रमरगण जिस प्रकार फूले हुए वृक्षके सामनेको दौडते हैं, वैसेही हमारे बाण उन रामचन्द्रके सन्मुख दौडेंगे ॥३७॥ कब हमारे धनुषसे छूटे हुए प्रदीप्त बाणोंसे अंगमें रुधिर लगे हुए उन रामको हम अपने बाणोंसे जला डालेंगे कि जिस प्रकार

---

* कवित्त–जानदेहों लंका निरशंक सब जानदेहों, जानदेहों वसन कुबेर वेगवानकी । जानदेहों सुभट विकट कट जानदेहों जानदेहों सकल समाज रजधानीकी ॥ कुंभ औ निकुंभ रघुनाथको न जानदेहों, जानदेहों हाथी रथप्यारी त समानकी । जानदेहों सकलशरीर पीर जानदेहोंजानपै न जानदेहों जानकी ॥ १ ॥

उल्का हाथीको जलाती है ॥३८॥ हे शुक ! हम निश्चय कहते हैं, कि जिस प्रकार सूर्य उदय होकर छोटे२तारागणोंका तेज हरण कर लेते हैं; वैसेही हमभी बडी भारी सेना साथ लेकर रामचन्द्रकी अल्पसाधारण सेनाका नाश कर डालेंगे ॥३९॥ अधिक क्या कहें, हमारा वेग समुद्रके तुल्य और बल पवनके समान है हमको ऐसा जान पडता है कि, राम हमारे बलाबलको कुछ भी नहीं जानते इसी कारणसे वह हमारे साथ युद्ध करनेका साहस करते हैं ॥४०॥ रामचन्द्रने हमारे विषधर सर्पके समान चलाये हुए बाणोंकी विकट मूर्ति नहीं देखी है, इसी कारणसे वह हमारेसाथ युद्ध करनेका साहस करते हैं ॥४१॥ रामचन्द्रने कभी हमारे साथ युद्ध नहीं किया है इस कारण वह हमारे वीर्यको नहीं जानते जब कि युद्धके समय हमारी चापमयी वीणा बजेगी, तब फिर हमको पहँचाननेके लिये रामचन्द्रको चिन्ता नहीं

तच्चास्यबलमादास्येबलेनमहतावृतः॥ज्योतिषामिवसर्वेषांप्रभामुद्यन्दिवाकरः ॥३९॥ सागरस्येवमेवेगोमारुतस्येवमेबलम् ॥ नचदाशरथिर्वेदते नमांयोद्धुमिच्छति ॥४०॥ नमेतूणीशयान्बाणान्सविषानिवपन्नगान्॥रामःपश्यतिसंग्रामेतेनमांयोद्धुमिच्छति ॥४१॥ नजानातिपुरावीर्यंमम युद्धेसराघवः॥ममचापमयींवीणांशरकोणैःप्रवादिताम्॥४२॥ज्याशब्दतुमुलांघोरामार्तगीतमहास्वनाम्॥नाराचतलसन्नादांनदीमहितवाहिनीम् ॥ ४३ ॥ अवगाह्यमहारंगंवादयिष्याम्यहंरणे ॥ ४४ ॥ नवासवेनापिसहस्रचक्षुषायुद्धेऽस्मिशक्योवरुणेनवास्वयम् ॥ यमेनवाधर्षयितुंशरा ग्निनामहाहवेवैश्रवणेनवास्वयम् ॥४५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च०सा० युद्धकांडे चतुर्विंशः सर्गः ॥२४॥ सबलेसागरं तीर्णेरामेदशरथात्मजे॥अमात्यौरावणःश्रीमानब्रवीच्छुकसारणौ॥१॥समग्रंसागरंतीर्णंदुस्तरंवानरंबलम्॥अभूतपूर्वंरामेणसागरेसेतुबंधनम्॥२॥

करनी पडेगी ॥ ४२ ॥ अतएव उस धनुषरूपी वीणाको हम प्रत्यंचा शब्दरूपी रणसंकुल शब्दयुक्त दुःखी लोगोंको गान सहित बाणोंके शब्दकी सन्नाहट होती हुई शत्रु सेनारूपी नदीमें स्नान कर समरमें बजावेंगे ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ हे शुक ! अबअधिक कहनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है हजार आंखवाला इंद्र अथवा वरुण हमको कोई भी युद्धमें नहीं जीत सकता; यम अथवा स्वयं कुबेर भी हमारे बाणकी अग्निके सामने समरमें खडे नहीं हो सकते ॥ ४५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां चतुर्विंशः सर्गः ॥ २४ ॥ दशरथजीके पुत्र श्रीरामचन्द्रजी अपनी सेनाके सहित महासमुद्रके पार होकर लंकामें आये हैं; इस वृत्तान्तको सुनकर रावण शुक और सारणनामक अपने दो मंत्रियोंको बुलाकर कहने लगा * ॥ १ ॥ कि, रामचन्द्रने समुद्रके ऊपर पुल

* यह मन्त्री शुक दूसरा है वह दूत पृथक् है ।

बांधलिया कि;जिसके ऊपर होकर समस्तवानर सेना बडी कठिनाईसे पारहोनेके योग्य समुद्रके पार चली आई, हमने कभी ऐसा काम किसीको करते हुए नहीं देखा ॥२॥ रामने साधारण मनुष्य होकर सेतु बांधलिया है यह बात किसी प्रकारसे विश्वास करनेके योग्य नहीं हैं,जो कुछ भी हो अब हमको यह जानलेना बहुतही आवश्यकीय बात है कि,रामचन्द्रके साथ कितनी सेना आई है।॥३॥इसकारण तुम दोनोंजन गुप्तरूपसे वानरोंकी सेनामें प्रवेश करके उस वानरसेनाकी संख्या और उसके बल वीर्यका पता लगालाओ ॥४॥ जो समस्त वानरोंके यूथप हैं और जो रामचन्द्रके मंत्री हैं और जो वानरगण सुग्रीवके सखाहैं और जो वानरलोग सेनाके आगे चलनेवाले हैं और जो वानरगण शूर होनेके कारण विख्यात हैं।॥५॥और जिसप्रकार उस महार्णव समुद्रके ऊपर पुल बांधागयाहै वह महाबलवान् वानरगण जिसप्रकारसे टिके हुए हैं ॥ ६ ॥ और महाबलवान् रामचन्द्र लक्ष्मणका उद्योग वीर्य बल आदिका वृत्तान्त भलीभांतिसे तुम दोनों

सागरेसेतुबंधंतंनश्रद्दध्यांकथंचन ॥ अवश्यंचापिसंख्येयंतन्मयावानरंबलम् ॥३॥ भवंतौवानरंसैन्यंप्रविश्यानुपलक्षितौ ॥ परिमाणंचवीर्यंच येचमुख्याःप्लवंगमाः ॥४॥ मंत्रिणोयेचरामस्यसुग्रीवस्यचसंगताः ॥ येपूर्वमभिवर्ततेयेचशूराःप्लवंगमाः ॥५॥ सचसेतुर्यथाबद्धःसागरेसलिलार्णवे ॥ निवेशंचयथातेषांवानराणांमहात्मनाम् ॥ ६ ॥ रामस्यव्यवसायंचवीर्यंप्रहरणानिच ॥ लक्ष्मणस्यचवीरस्यतत्त्वतोज्ञातुमर्हथः ॥७॥ कश्चसेनापतिस्तेषांवानराणांमहात्मनाम् ॥ तच्चज्ञात्वायथातत्त्वंशीघ्रमागंतुमर्हथः ॥८॥ इतिप्रतिसमादिष्टौराक्षसौशुकसारणौ ॥ हरिरूपधरौ वीरौप्रविष्टौवानरंबलम् ॥९॥ ततस्तद्वानरंसैन्यमचिंत्यंलोमहर्षणम् ॥ संख्यातुंनाध्यगच्छेतांतदातौशुकसारणौ ॥१०॥ तत्स्थितंपर्वताग्रेषुनिर्झरेषुगुहासुच ॥ तरमाणंचतीर्णंचततुकामंचसर्वशः ॥११॥ निविष्टंनिविशच्चैवभीमनादंमहाबलम् ॥ तद्बलार्णवमक्षोभ्यंददृशातेनिशाचरौ ॥ १२ ॥ तौददर्शमहातेजाःप्रतिच्छन्नौविभीषणः ॥ आचचक्षेसरामायगृहीत्वाशुकसारणौ ॥ १३ ॥

जान आओ ॥७॥ और उन महातेजस्वी वानरोंका सेनापति कौन है यह भीतुम दोनों भलीभांति जानकर शीघ्र ही यहांपर चले आओ ॥ ८ ॥ मंत्री शुक और सारण इसप्रकार रावणकी आज्ञा पाय वानररूप धारणकर बलवान् वानरोंकीसेनामें प्रवेश करते हुए॥९॥वह दोनों शुक और सारण अचिन्तनीय रूयेंखडे करनेवालीवानरोंकी सेना देखकर उसकी गिनती नहीं करसके ॥१०॥ कारण कि इससमय वह असंख्य वानर सेना समुद्रकेपार होकर कुछ पर्वतोंके शिखरपर कुछ झरनों कुछ पर्वतोंकी गुहाओंमें और कुछ समुद्रके किनारे वन उपवनमें पडी थी, कुछ सेना समुद्रके,पार हो रही थी,कुछ पारहोगई थी और कुछ पार होनेकी तैयारी कर रही थी ॥ ११ ॥ कुछ सेना व्यूहमें चली आई थी कुछ आय रही थी,इसप्रकारसे घोर शब्द कर गर्जती हुई वह सेना सब जगह छाय रही थी । दोनों राक्षसोंने इस अक्षोभ्य वानरी सेनाको समुद्रके समान देखा ॥१२॥ वह दोनों जने वानरोंकी सेना देखते हुए इधर उधर घूमते थे कि;इतनेमें

महातेजस्वी विभीषणजीने उन लोगोंको देखा और उनको पकडकर श्रीरामचन्द्रजीके पास लेजायकर कहा॥१३॥ विभीषणजी बोले कि,हे शत्रुओंके तपानेवाले ! यह दो निशाचरराक्षसराज रावणके मंत्री,शुक सागर नामक लंकामें वास करते हैं,यह दोनों दूत बनकर यहां आये हैं ॥१४॥ यह दोनों राक्षस श्रीरामचन्द्र जीको देखते ही अत्यन्त भयभीत हुए और अपने जीवनकी आशाको जलांजलि देते हुए,व हाथ जोडकर श्रीरामचन्द्रजीसे यह वचन बोले ॥१५॥ सौम्य ! राक्षसोंके राजा रावण करके प्रेरितहो आपकी सेनासंख्या जाननेके लिये यहांपर आये हैं ॥१६॥ सब प्राणियोंके हितकारी शूर दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजी इन दोनों राक्षसोंकेकरुणासहित वचन सुन मन्द२हँसकर यह बोलेकि॥१७॥जो तुम लोगोंने हमारी समस्त सेना देखली हो, मंत्रियोंके सहित सुग्रीवजीका व हमारा बलवीर्य भी यदितुम जान चुके हो;अथवा रावणने जिसप्रकार कह दिया था उसके सिवाय यदि तुम लोगोंने कुछ काम किया हो;तो हम उनसबकोक्षमा

तस्यैतौराक्षसेंद्रस्यमंत्रिणौशुकसारणौ ॥ लंकायाःसमनुप्राप्तौचारौपरपुरंजय ॥१४॥ तौदृष्ट्वाव्यथितौरामंनिराशौजीवितेतथा ॥ कृतांजलिपुटौभीतौवचनंचेदमूचतुः ॥१५॥ आवामिहागतौसौम्यरावणप्रहितावुभौ ॥ परिज्ञातुंबलंसर्वंतदिदंरघुनंदन ॥१६॥ तयोस्तद्वचनंश्रुत्वारामोदशरथात्मजः ॥ अब्रवीत्प्रहसन्वाक्यंसर्वभूतहितेरतः॥१७॥यदिदृष्टंबलंसर्ववयंवासुसमाहिताः॥यथोक्तंवाकृतंकार्यंछंदतःप्रतिगम्यताम्॥१८॥ अथकिंचिददृष्टंवाभूयस्तद्द्रष्टुमर्हथः॥विभीषणोवाकात्स्न्र्येनपुनःसंदर्शयिष्यति॥१९॥नचेदंग्रहणंप्राप्यभतव्यंजीवितंप्रति ॥ न्यस्तशस्त्रौगृहीतौचनदूतौवधमर्हथः॥२०॥प्रच्छन्नौचविमुंचेमौचारौरात्रिचरावुभौ ॥ शत्रुपक्षस्यसततंविभीषणविकर्षिणौ ॥२१॥ प्रविश्यमहतींलंकांभवद्भ्यां धनदानुजः ॥ वक्तव्योरक्षसांराजायथोक्तंवचनंमम॥२२॥यद्बलंत्वंसमाश्रित्यसीतांमेहृतवानसि॥ तद्दर्शययथाकामंससैन्यश्चसबांधवः॥२३॥

करते हैं; तुम निर्विघ्न यहांसे चले जाओ ॥ १८ ॥ यदि कोई बात देखनेको बाकी रहगई हो उसको भी देखजाओ; अथवा यह विभीषण फिरसे दिखादेंगे ॥१९॥तुम दोनों हमारे वशमें पडनेके कारण अपने जीवनकी आशा न छोडो,कारणकी;तुमलोग दूत शस्त्रविहीन और शरणमें आनेके कारण किसी भांतिसे मारडालनेके योग्य नहीं हो ॥ २० ॥ जो कुछ भी हो हे विभीषण ! यद्यपि शुक सारण कपटरूपसे हमारी सेनामें प्रवेश करनेके कारण सुग्रीवादिकोंसे मार पानेके योग्य हैं तथापि इन लोगोंपर अत्याचार न करके इन्हें छोड ही देना उचित है ॥ २१ ॥ श्रीरामचन्द्रजी विभीषणसे यह कहकर फिर शुक और सारणसे कहने लगे,तुम दोनोंजने लंकामें जायकर कुबेरके छोटे भाई रावणसे जैसा हम कहें वह समस्तही यथार्थ २ कह देना ॥२२॥ कि,तुम जिस बलका

आश्रय लेकर हमारी प्राणप्यारी स्त्री सीताको हरण करके लेगये हो इस समय सेना और बन्धुबान्धवोंके सहित तुम अपना वही बल दिखाओ ॥ २३ ॥ तुम कल प्रातःकाल ही फाटक शोभित और चारों ओरकी दीवालोंसे वेष्टित लंका नगरी और समस्त राक्षसोंकी सेनाको हमारे बाणसमूह द्वारा विध्वंसित होत देखोगे ॥२४॥ वज्र हाथमें लिये देवताओंके स्वामी इन्द्रजी जिस प्रकार दानव लोगोंके ऊपर वज्र छोडते हैं, वैसेही हम कल प्रभातको तुम्हारे ऊपर अपना क्रोध छोडेंगे ॥ २५ ॥ राक्षस शुक और सारणको जब इस प्रकारसे आज्ञा दी तब वह धर्मवत्सल रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीसे "आपकी जय हो" कहकर ॥२६॥ लंकानगरीमें आये और राक्षसराज रावणसे कहने लगे हे राक्षसेश्वर ! जैसेही हमने वानरोंकी सेनामें प्रवेश किया, वैसेही हमको विभीषणने वध करनेके लिये पकडा ॥२७॥ तब हमको पकडेहुए देखकर अमिततेजस्वी धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजीने छुडादिया कि, जहाँ एक ही स्थानपर चार पुरुष श्रेष्ठ ॥ २८ ॥ सर्व

श्वःकाल्येनगरींलंकांसप्राकारांसतोरणाम् ॥ रक्षसांचबलंपश्यशरैर्विध्वंसितंमया ॥२४॥ क्रोधंभीममहंमोक्ष्येससैन्येत्वयिरावणः॥ श्वःकाल्ये वज्रवान्वज्रंदानवेष्विववासवः॥२५॥ इतिप्रतिसमादिष्टौराक्षसौशुकसारणौ ॥ जयेतिप्रतिनंद्यैनंराघवंधर्मवत्सलम् ॥ २६ ॥ आगम्यनगरींलंकामब्रूतांराक्षसाधिपम् ॥ विभीषणगृहीतौतुवधार्थंराक्षसेश्वर ॥२७॥ दृष्ट्वाधर्मात्मनामुक्तौरामेणामिततेजसा ॥एकस्थानगतायत्रचत्वारःपुरुषर्षभाः॥२८॥ लोकपालसमाःशूराःकृतास्त्रादृढविक्रमाः॥ रामोदाशरथिःश्रीमाँल्लक्ष्मणश्चविभीषणः ॥ २९ ॥ सुग्रीवश्चमहातेजामहेंद्रसमविक्रमः ॥ एतेशक्ताःपुरींलंकांसप्राकारांसतोरणाम् ॥३०॥ उत्पाटचसंक्रामयितुंसर्वेतिष्ठंतुवानराः ॥ यादृशंतद्धिरामस्यरूपंप्रहरणानिच॥३१॥ वधिष्यतिपुरींलंकामेकस्तिष्ठंतुतेत्रयः ॥ रामलक्ष्मणगुप्तासासुग्रीवेणचवाहिनी ॥ बभूवदुर्धर्षतरासर्वैरपिसुरासुरैः ॥ ३२ ॥

अस्त्र शस्त्रोंके जाननेवाले, दृढ विक्रमवाले लोकपालोंके समान शूर दशरथकुमार श्रीरामचन्द्र श्रीमान् लक्ष्मण और विभीषण ॥ २९ ॥ व महातेजस्वी महेन्द्र समान विक्रमशाली सुग्रीवजी विद्यमान हैं केवल यही चारों फाटक और चहरदिवारीसे युक्त ध्वजा पताका सम्पन्न लंकापुरीको ॥ ३० ॥ विना और दूसरे वानरोंकी सहायता लिये त्रिकूट पर्वतसे उखाड सकते हैं,व दूसरे स्थानपर स्थापित कर सकते हैं, जिस प्रकारका हमने श्रीरामचंद्रजीका रूप देखा और उनके बाण समूहका परिचय लिया इससे और तीनजनोंका प्रयोजन नहीं ॥३१॥ केवल इकले श्रीरामचन्द्रजी ही लंकापुरीको छिन्न भिन्न कर सकते हैं । हे महाराज ! जैसा मैंने देखा उससे तो यही जानपडा कि, राम लक्ष्मण और सुग्रीव करके रक्षित उस वानरोंकी सेनाको समस्त देवता व असुर लोग भी नहीं जीत सकते

॥३२॥ हे राजन् ! वह महाबलवान् वानरोंकी समस्तसेना रण करनेमें चतुर है उसके समस्त वानर यह राह परख रहे हैं कि, कब युद्ध हो, इसकारण उससे विरोध करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है, आप दशरथके पुत्र श्रीरामचन्द्रजीको जानकी देकर उनके साथ संधि कर लीजिये ॥३३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदिकाव्ये युद्धकांडे भाषायां पंचविंशः सर्गः ॥ २५ ॥ राक्षसराज रावण सारणभाषित यह सत्य और वीरोचित वचन सुनकर उससे बोला ॥ १ ॥ कि, यदि देव दानव और गन्धर्वगण एकसाथ मिलकर हमारे साथ युद्ध करें अथवा त्रिलोकीके रहनेवाले भी समस्त हमसे विरुद्ध होजाँय तथापि हम भय पाकर कभी जानकीको रामचंद्रके समर्पण न करेंगे ॥ २ ॥ हे सौम्य ! वानर लोगोंने तुमको बहुतही सताया है तुम इसी कारणसे अत्यन्त पीडित होकर सीताको

प्रहृष्टयोधाध्वजिनीमहात्मनांवनौकसांसंप्रतियोद्धुमिच्छताम् ॥ अलंविरोधेनशमोविधीयतांप्रदीयतांदाशरथायमैथिली॥३३॥इत्यार्षे श्रीद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे पंचविंशः सर्गः॥२५॥तद्वचःसत्यमक्लीबंसारणेनाभिभाषितम्॥ निशम्यरावणोराजाप्रत्यभाषतसारणम् ॥१॥ यदिमामभियुंजीरन्देवगंधर्वदानवाः ॥ नैवसीतामहंदद्यांसर्वलोकभयादपि ॥ २ ॥ त्वंतुसौम्यपरित्रस्तोहरिभिःपीडितो भृशम् ॥ प्रतिप्रदानमद्यैवसीतायाःसाधुमन्यसे ॥३॥ कोहिनामसपत्नोमांसमरेजेतुमर्हति॥ इत्युक्त्वापरुषंवाक्यंरावणोराक्षसाधिपः ॥ ४ ॥ आरुरोहततःश्रीमान्प्रासादंहिमपाण्डुरम्॥ बहुतालसमुत्सेधंरावणोथदिदृक्षया ॥५॥ ताभ्यांचराभ्यांसहितोरावणक्रोधमूर्च्छितः॥ पश्यमानः समुद्रंतंपर्वतांश्चवनानिच ॥ ६ ॥ ददर्शपृथिवीदेशंसुसंपूर्णंप्लवंगमैः ॥ तदपारमसह्यंचवानराणांमहाबलम् ॥ ७ ॥ आलोक्यरावणोराजापरिपप्रच्छसारणम् ॥ एषांकेवानरामुख्याःकेशूराःकेमहाबलाः ॥ ८ ॥

लौटानेका अभीसे परामर्श देते हो ॥३॥ विशेष करके हमारे शत्रु लोगोंमें ऐसी किसकी सामर्थ्य है कि, जो रणभूमिमें हमको जीतसके यह कठोर वचन कह कर राक्षसोंका स्वामी रावण ॥ ४ ॥ सेना देखनेकी इच्छासे हिमवान्‌के समान ऊंचे श्वेत श्रीमान् धवरहरेके शिखरपर चढ गया । वह धवरहर कई तालके वृक्षोंको ऊपर नीचे करनेसेभी बहुत ऊँचा था ॥ ५ ॥ क्रोधमूर्च्छित रावण उन दोनों दूतोंके साथ उस धवरहरे पर चढ कर समुद्र, पर्वत और वनतक ॥ ६ ॥ समस्त पृथ्वीको वानरोंसे पूर्ण देखता हुआ * उन अपार सहन करनेके अयोग्य महाबलवान वानरोंकी सेनाको विश्राम करते हुए ॥ ७ ॥ देखकर राक्षसोंका

* दूरसे देखनेका यंत्र लेकर रावण देखने लगा था ।

स्वामी राजा रावण सारणसे पूँछता हुआ कि, इन वानर लोगोंमें कौन२ प्रधान हैं ? कौन२वीर हैं? और कौन २ महाबलवान् हैं ?॥८॥और कौन२वानर गण अत्यन्त उत्साहयुक्त होकर सर्व प्रकारसे वानरसेनाके अग्रभागकी रक्षा करते हैं ? औरसुग्रीवके मंत्री कौन वानर हैं ? और वह कौन ३ वानरगण हैं, जो यूथनाथोंके भी यूथपति हैं ? ॥९॥ और उन लोगोंका पराक्रम कैसा है, हेसारण ! तुम यह समस्त वृत्तान्त हमारे निकट ठीक २ वर्णन करो जब राक्षसोंके स्वामी रावणने ऐसा पूछा तब सारण॥१०॥जो कि समस्त मुख्य अमुख्य वानरोंको जानता था मुखिया २ वानरों के नाम धाम और बल विक्रमको बताने लगा कि, जो यह वानर लंकाके सम्मुखको गर्जन करता हुआ खडा है॥११॥यह शतसहस्र वानरोंका यूथपति है; इसके गर्जनेसे बडी भारी चहर दिवारी और फाटकोंसे युक्त ध्वजापताका सम्पन्न ॥१२॥ व सर्वशैल वनकानन सहित लंकापुरी कंपायमान हो रही है; और जो वानर शाखामृगों का अधिपति महात्मा

केपूर्वमभिवर्ततेमहोत्साहाःसमंततः ॥ केषांशृणोतिसुग्रीवःकेवायूथपयूथपाः ॥ ९ ॥ सारणाचक्ष्वमेसर्वंकिंप्रभावाःप्लवंगमाः ॥ सारणोराक्षसेंद्रस्यवचनंपरिपृच्छतः ॥ १० ॥ आबभाषेऽथमुख्यज्ञोमुख्यांस्तत्रवनौकसः ॥ एषयोऽभिमुखोलंकानर्दस्तिष्ठतिवानरः ॥ ११ ॥यूथपानांसहस्रणशतेनपरिवारितः॥ यस्यघोषेणमहतासप्राकारासतोरणा ॥१२ ॥लंकाप्रतिहतासर्वासशैलवनकानना ॥सर्वशाखामृगेंद्रस्यसुग्रीवस्यमहात्मनः ॥ १३ ॥ बलाग्रेतिष्ठतेवीरोनीलोनामैषयूथपः ॥ बाहूप्रगृह्ययःपद्भ्यांमहींगच्छतिवीर्यवान् ॥ १४ ॥लंकामभिमुखःकोपादभीक्ष्णंचविजृंभते॥ गिरिशृंगप्रतीकाशःपद्मकिंजल्कसन्निभः ॥१५॥ स्फोटयत्यतिसंरब्धोलांगूलंचपुनःपुनः॥ यस्यलांगूलशब्देनस्वनंतिप्रदिशोदश ॥ १६॥ एषवानरराजेनसुग्रीवेणाभिषेचितः॥युवराजोंगदोनामत्वामाह्वयतिसंयुगे ॥१७॥ वालिनःसदृशःपुत्रःसुग्रीवस्यसदाप्रियः ॥ राघवार्थेपराक्रांतःशक्रार्थेवरुणोयथा ॥ १८ ॥ एतस्यसामतिःसर्वायद्दृष्टाजनकात्मजा ॥ हनूमतावेगवताराघवस्यहितैषिणा ॥१९॥

सुग्रीवजी की ॥१३॥ सेनाके आगेखडा हुआ है; यह नील नाम वीर यूथपोंका स्वामीहै, और यहजो वीर्यवान् वानर दोनों बाहें उठाये मनुष्योंके समान पृथ्वी पर चरण धरता हुआ चला आता है॥१४॥जो बारंबार लंकाकी ओर देखकर जँभाईलेता है और कोपके मारे जिसकी दृष्टिकुटिल होगई है व जो वानर आकाशमें पर्वतके शृंगके समान ऊंचा और कमल रजके समान पीत जिसके देहका रंग है ॥ १५ ॥ और जोकि क्रोधमें भरनेके कारण वारंवार अपनी पूँछको फटकार रहा है, जिसकी पूँछकेशब्दसे दशों दिशायें गूंजरही हैं॥१६॥हे महाराज ! वानरराज सुग्रीव करके युवराज पदपर अभिषेकित यह युवराज अंगद आपको युद्ध करनेकेलिये पुकार रहे हैं ॥ १७ ॥ हे महाराज ! वरुणजी जिस प्रकार इन्द्रके लिये पराक्रम प्रकाश करते हैं; ऐसेही सुग्रीवके प्रिय और अपने पिताके समान पराक्रमी यह वालिकुमार अंगदभी श्रीरामचन्द्रजीके लिये पराक्रम प्रगट करनेको तैयार हुआ ॥ १८ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके हितकारी वेगवान् हनुमानजी

जो यहांपर आय लंकामें जानकीजीको देख गये थे, उन्होंने सब कार्य इन अंगदजीहीकी सम्मतिसे किये थे ॥ १९ ॥ यह वीर्यवान् अंगद असंख्य वानर यूथपगणोंके साथ आपका संहार करने हीके लिये सेनासमेत आगे बढा आताहै॥२०॥जिस वीरने समुद्रके ऊपर सेतु बांधा है, यह वही नलनाम वानर संग्राम का अभिलाष किये, बडीभारी सेनाके साथ वालिसुत अंगदजीके पीछे टिका हुआ है ॥ २१ ॥ हे महाराज ! यह चन्दनवननिवासी जो कि अपने अंगोंको थाम २ हर्षित होकर नाद करते हैं, यह समस्त वानर इसी वीर नलके पीछे २ चलते हैं ॥२२॥ यह समस्त वानर अपने यूथप नलके साथ इकलेही लंकाको मसलना चाहतेहैं, वह वानर नल कहता है कि, मैंही लंकाको विध्वंस करूँगा और यह चांदीके रंगका चपल भयंकर विक्रमकारी॥२३॥बुद्धिमान व शूर श्वेत वानर त्रिलोकीमेंविख्यात है, देखियेकि यह कैसी शीघ्रतासे सुग्रीवजीके पास जाता है और फिर लौटआता है॥२४॥जिसको युद्धमें आगे बढते हुए देखकर वान

बहूनिवानरेंद्राणामेषयूथानिवीर्यवान्॥परिगृह्याभियातित्वांस्वेनानीकेनमर्दितुम् ॥२०॥ अनुवालिसुतस्यापिबलेनमहतावृतः॥वीरस्तिष्ठतिसंग्रामेसेतुहेतुरयंनलः ॥२१॥ येतुविष्टभ्यगात्राणिक्ष्वेडयंतिनदंतिच ॥ यएनमनुगच्छंतिवीराश्चंदनवासिनः ॥२२॥ एषैवाशंसतेलंकांस्वेनानीकेनमर्दितुम्॥श्वेतोरजतसंकाशश्चपलोभीमविक्रमः ॥२३॥ बुद्धिमान्वानरःशूरस्त्रिषुलोकेषुविश्रुतः॥तूर्णंसुग्रीवमागम्यपुनर्गच्छतिवानरः ॥ २४ ॥ विभजन्वानरींसेनामनीकानिप्रहर्षयन् ॥ यःपुरागोमतीतीरेरम्यंपर्यैतिपर्वतम् ॥२५॥ नाम्नासरोचनोनामनानानगयुतोगिरिः ॥तत्रराज्यंप्रशास्त्येषकुमुदोनामयूथपः ॥ २६ ॥ योसौशतसहस्राणिसहस्रंपरिकर्षति ॥ यस्यवालाबहुव्यामादीर्घलांगूलमाश्रिताः ॥ २७ ॥ ताम्राःपीताःसिताःश्वेताःप्रकीर्णाघोरदर्शनाः ॥ अदीनोवानरश्चंडःसंग्राममभिकांक्षति ॥ एषैवाशंसतेलंकांस्वेनानीकेनमर्दितुम् ॥ २८ ॥ यस्त्वेषसिंहसंकाशःकपिलोदीर्घकेसरः ॥ निभृतःप्रेक्षतेलंकांदिधक्षन्निवचक्षुषा ॥ २९ ॥

रोंकी सेनाके आनंदकी सीमा नहीं रहती, यह वानर पूर्वकालमें गोमती नदीके तीर रमणीय पर्वतपर वास करता था ॥ २५ ॥ और अब संयोजन नाम पर्वतपर जो कि बहुत पर्वतोंसे घिरा हुआ है यह कुमुदनामक यूथप राज्य करता है॥२६॥और यह लाखवानरोंको हर्षसहित खैंचता हुआ चला आता है, व जिसके बाल बहुत लम्बे हैं, और बडीभारी पूँछके इधर उधर लटकते हैं ॥ २७ ॥ उनमें कुछ ताम्ररंगवाले कुछ पीले कुछ बहुतही श्वेत इससे अत्यन्तही भयंकर लगते हैं; इस वानरका चंड नाम हैं, यहसदा प्रसन्नचित्तरहकर युद्ध करनेकी अभिलाषा किया करता है हे महाराज! यह वीरभी केवल अपनीही सेनाकी सहायतासे लंका को मर्दन करता चाहना है ॥ २८ ॥ और यह जो सिंहसमान पिंगल वर्ण बडे केशवाले वानरको आप देखते हैं, इसके नेत्र मानो लंकाको दग्ध करनेहीकेलिये

तैयार होकर एकाग्रचित्तसे इधरको देख रहे हैं ॥ २९ ॥ हे राजन् ! यह रंभनाम यूथप है, विन्ध्याचल, कृष्णाचल और सह्य इन तीन मनोहर पर्वतोंमें इसके रह नेका स्थान है ॥३०॥ इस वानर श्रेष्ठके संगमें दशलाख तीस वा एक करोड तीस अति भयंकर रूपवाली ॥३१॥ घोर विक्रमकारी वानरोंकी सेना चला करतीहै ॥ ३२ ॥ और यह जो अपने कानोंको सकोडता और वारंवार जँभाई लेरहाहै जिसको अपनी मृत्युका भय नहीं है; और अपनी सेनाकी सहायताकीभी इच्छा नहीं करता है ॥ ३३ ॥ क्रोधके मारे जिसका सर्व शरीर कांप कहा है, और जो बलवान् अपनी पूँछको नचाय २ तिरछा होकर देख २ सिंहनाद कर रहा है ॥ ३४ ॥ जो कि अपनी वीरताईके गर्वसे सदा निडर रहता है, और रमणीय साल्वेयनाम पर्वतपर रहता है हे राजन् ! इस बडे भारी यूथपका

विंध्यकृष्णगिरिंसह्यंपर्वतंचसुदर्शनम् ॥ राजन्सततमध्यास्तेसरभोनामयूथपः ॥ ३० ॥ शतंशतसहस्राणांत्रिंशच्चहरिपुंगवाः ॥३१॥ यंयांतं वानराघोराश्चंडाश्चंडपराक्रमाः ॥ परीवार्यानुगच्छंतिलंकामर्दितुमोजसा ॥३२॥ यस्तुकर्णौविवृणुतेजृंभतेचपुनःपुनः ॥नतुसंविजतेमृत्योर्नच सेनांप्रधावति ॥ ३३ ॥ प्रकपतेचरोषेणतिर्यक्चपुनरीक्षते ॥ पश्यलांगूलविक्षेपंक्ष्वेडत्येषमहाबलः ॥ ३४ ॥ महौजसावीतभयोरम्यंसाल्वेय पर्वतम् ॥ राजन्सततमध्यास्तेशरभोनामयूथपः ॥ ३५ ॥ एतस्यबलिनःसर्वेविहारानामयूथपाः ॥ राजञ्छतसहस्राणिचत्वारिंशत्तथैवच ॥ ३६ ॥ यस्तुमेघइवाकाशंमहानावृत्यतिष्ठति ॥ मध्येवानरवीराणांसुराणामिववासवः ॥ ३७ ॥ भेरीणामिवसन्नादोयस्यैषश्रूयतेमहान् ॥ घोषःशाखामृगेंद्राणांसंग्राममभिकांक्षताम् ॥ ३८ ॥ एषपर्वतमध्यास्तेपारियात्रमनुत्तमम् ॥ युद्धेदुष्प्रसहोनित्यंपनसोनामयूथपः ॥ ३९ ॥ एनंशतसहस्राणांशतार्धंपर्युपासते ॥ यूथपायूथपश्रेष्ठंयेषांयूथानिभागशः ॥ ४० ॥

नाम शरभ है ॥ ३५ ॥ हे राजन् ! इस महाबली शरभके एक लक्ष चालीस विहारयूथप हैं ॥ ३६ ॥ मेघ जिस प्रकार आकाशको ढककर स्थित होते हैं उन मेघोंके ही समान जो वानर देवताओंके बीचमें इन्द्रजीके समान आकाशको ढककर बैठता है ॥ ३७ ॥ भेरी बजनेके शब्दके समान जिसके पीछे चलनेवाले युद्धकी आशा लगाये वानरोंका गर्जन बराबर सुनाई आता है ॥३८॥ यह पारियात्र पर्वतश्रेष्ठ पर सदा रहाकरताहै और युद्धमें सहने योग्य नहीं है । यह पनस नाम वानर यूथप है ॥ ३९ ॥ एक लक्ष पचास हजार यूथप इस वानरकी पूजा किया करते हैं कि जिन वानरोंके यूथ पृथक् २ हैं ॥ ४० ॥ जो वीर

बडी भारी भयंकर पराक्रमकारी वानरोंकी सेनाके बीचमें रहकर समुद्रके तीर टिके दूसरे सूर्यके समान शोभा विस्तार कर रहा है ॥४१॥ यह मेघके समान विनत नामक यूथपति घूमता हुआ सदा नदियोंमें श्रेष्ठ वेणानदीका जल पिया करता है ॥ ४२ ॥ साठ लाख वानर इस वीरके अधीनमें सेनापतिका कार्य करते हैं। यह देखिये क्रथन नामक यूथपति आपको युद्ध करनेके लिये पुकार रहा है ॥ ४३ ॥ हे महाराज ! इस वीरके अधीनमें जो समस्त बलविक्रमशाली यूथपति हैं; उनमेंसे प्रत्येकके अधीनमें वैसेही वानरोंकी बलवान् सेना व जिसके शरीरका गेरुआ वर्ण है और अपनी देहको पुष्ट कर रहा है ॥ ४४ ॥ यह तेजस्वी गवय नामका वानर क्रोधमें भर आपके सहित युद्ध करनेको तैयार हुआ है हे महाराज ! यह गवय ऐसा बलके घमंडमें है कि और किसी वानरको

यस्तुभीमांप्रवल्गंतींचमूंतिष्ठतिशोभयन्॥स्थितांतीरेसमुद्रस्यद्वितीयइवसागरः ॥४१॥ एषदर्दुरसंकाशोविनतोनामयूथपः॥पिबंश्चरतियोवेणां नदीनामुत्तमांनदीम् ॥४२॥ षष्टिःशतसहस्राणिबलमस्यप्लवंगमाः ॥त्वामाह्वयतियुद्धायक्रथनोनामवानरः ॥४३॥ विक्रांताबलवंतश्चयूथायूथानिभागशः॥यस्तुगैरिकवर्णाभंवपुःपुष्यतिवानरः॥४४॥अवमत्यसदासर्वान्वानरान्बलदर्पितः॥गवयोनामतेजस्वीत्वांक्रोधादभिवर्तते॥४५ एनंशतसहस्राणिसप्ततिःपर्युपासते॥एषैवाशंसतेलंकांस्वेनानीकेनमर्दितुम्॥४६॥एतेदुष्प्रसहावीरयेषांसंख्यानविद्यते॥यूथपायूथपश्रेष्ठास्तेषांयूथानिभागशः ॥४७॥ इत्यार्षे श्रीम०वा०आदिकाव्ये च०सा०युद्धकांडे षड्विंशः सर्गः ॥२६॥ तांस्तुतेसंप्रवक्ष्यामिप्रेक्षमाणस्ययूथपान् ॥ राघवार्थेपराक्रांतायेनरक्षंतिजीवितम् ॥१॥ स्निग्धायस्यबहुव्यामादीर्घलांगूलमाश्रिताः ॥ ताम्राःपीताःसिताःस्वेताप्रकीर्णाघोरकर्मणः ॥२॥

वीरहीं नहीं समझता ॥ ४५ ॥ इसके अधीनमें जो सत्रह लाख वानरोंके यूथप हैं यह उनकी ही सहायतासे लंकाको विध्वंस करनेकी इच्छा करते हैं॥४६॥ हे महाराज ! इन सहनेके अयोग्य वानर वीरोंकी गिनती नहीं करीजा सकती,कारण कि इनमें जो बडे २ यूथपति हैं फिर उनमें भी प्रत्येकके अधीनमें अनेक यूथनाथ हैं,और फिर उन यूथपतियोंके अधीनमें भी अलग सेना है ॥ ४७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी०आदि० युद्धकांडे भाषायां षड्विंशः सर्गः ॥२६॥ सारण फिर बोला कि हे राजन् ! आप जो यह समस्त पराक्रमवाले यूथप देखते हैं, उनको अपने जीवनका कुछभी मायामोह नहीं है वह श्रीरामचन्द्रजीके लिये पराक्रम प्रकाश करके अपना जीवन देदेनेको तैयार हुए हैं,अब हम इनसबका समाचार आपसे कहते हैं ॥१॥ जिसकी पूंछके अत्यन्त चिकने लम्बे

लाल पीले उजले और अत्यन्त श्वेत बाल इधर उधर छिटके हुए हैं॥२॥और इधर उधर छिटकनेके कारण सूर्यकिरणके समान प्रकाशित होरहे हैं, और भूमि स्पर्श करते चलते हैं जिसके बलका कुछपरिमाण नहीं यह वानर हरनामसे विख्यात है ॥ ३ ॥ इसकेही पीछे सैकडों हजारों वानरसेना वृक्षोंको धारण किये चलती है इन सबकी कामना लंकापर चढाई करनेकी है॥४॥यह सबही यूथपति वानरराज सुग्रीवजीके किंकर युद्ध करनेके लिये आये हैं । महामेघके समान नीलवर्णके खडे हुए जिन वानरोंको आप देखते हैं ॥ ५ ॥ उनका रंग अंजनके समान है और युद्धमें सत्य पराक्रमके करनेवाले हैं, और समुद्रके तीरवाले बालूके कणोंके समान इनकी संख्याका पार नहीं पायाजाता ॥६॥ यह पर्वत नद नदी इत्यादिमें वास किया करते हैं, हे राजन् ! देखिये; यह जो दारुण रीछ सब आपकी ओर देख रहे हैं ॥ ७ ॥ हे राजन् ! इनके बीचमें ही इनका यूथप बैठा हुआ है, वह देखनेमें भयंकर आकार है,और उसके दोनों नेत्रभी भयं

प्रगृहीताःप्रकाशंतेसूर्यस्येवमरीचयः॥ पृथिव्यांचानुकृष्यंतेहरोनामैषवानरः ॥३॥ यंपृष्ठतोनुगच्छंतिशतशोथसहस्रशः॥ वृक्षानुद्यम्यसहसालंकारोहणतत्पराः ॥४॥ यूथपाहरिराज्यस्यकिंकराःसमुपस्थिताः ॥ नीलानिवमहामेघास्तिष्ठंतोयांस्तुपश्यसि ॥ ५ ॥ असितांजनसंकाशान् युद्धेसत्यपराक्रमान् ॥ असंख्येयाननिर्देशान्परंपारमिवोदधेः ॥ ६ ॥ पर्वतेषुचयेकेचिद्विषयेषुनदीषुच॥ एतेत्वामभिवर्तन्तेराजन्नृक्षाःसुदारुणाः ॥ ७ ॥ एषांमध्येस्थितोराजाभीमाक्षोभीमदर्शनः ॥ पर्जन्यइवजीमूतैःसमंतात्परिवारितः ॥ ८॥ ऋक्षवंतंगिरिश्रेष्ठमध्यास्तेनर्मदांपिबन् ॥ सर्वर्क्षाणामधिपतिर्धूम्रोनामैषयूथपः ॥ ९ ॥ यवीयानस्यतुभ्रातापश्यैनंपर्वतोपमम् ॥ भ्रात्रासमानोरूपेणविशिष्टश्चपराक्रमे ॥ १० ॥ सएषजांबवान्नाममहायूथपयूथपः ॥ प्रशांतोगुरुवर्तीचसंप्रहारेष्वमर्षणः ॥ ११ ॥ एतेनसाह्यंतुमहत्कृतंशक्रस्यधीमता॥ देवासुरेजांबवतालब्धाश्चबहवो वराः ॥ १२ ॥ आरुह्यपर्वताग्रेभ्योमहाभ्रविपुलाःशिलाः ॥ मुंचंतिविपुलाकारानमृत्योरुद्विजंतिच ॥ १३ ॥

कर हैं, आकाश जिसप्रकार सब भांति मेघमालासे ढककर शोभायमान होता है वैसेही यह यूथपति अपूर्व शोभासे सुशोभित हैं॥८॥पर्वतोंमें श्रेष्ठ ऋक्षवान पर्वतपर इसका वास और नर्मदा नदीके निर्मल जल पीनेका अभ्यास है, इस समस्त रीछोंके अधिपतिका नाम धूम्र है ॥ ९ ॥ पर्वतके समान आकारवाले इसके छोटे भ्राताकी ओर आप निहारिये यह भी रूप और पराक्रममें अपने भ्राताके समानही है॥१०॥ इसका नाम जाम्बवान् है यह महायूथपतियोंका यूथपति सद्गुरुका उपासक है इसका स्वभाव यद्यपि शान्त है और यह अपने बडे भाईकी आज्ञामें रहता भी है परन्तु इसके प्रति शस्त्र चलानेहीसे यह उसको सहन नहीं कर सकता है॥११॥इस जाम्बवान्‌के साथ बुद्धिमान् देवराज इन्द्रजीने मित्रता स्थापन की है जब देवासुर संग्राम हुआ था; तब जाम्बवान्‌ने इन्द्रकी भारी सहायता कर उनसे अनेक वर पाये हैं ॥१२॥ इन्होंने उस युद्धमें पर्वके अग्रभागपर चढ महामेघके समान बहुतही शिलाओंकी वर्षा करके घोर गर्जन किया था और

से मृत्युसे कुछ भय नहीं खाया ॥१३॥ इनकी सेनाके शरीर राक्षस और पिशाचोंकी तुल्य रोमवाले हैं, उस सेनाकी कुछ गिनती नहीं हो सकती और इनका बलभी अमित है ॥ १४ ॥ देखिये इन जाम्बवान्‌को यह क्रोध किये व तडकते हुए निहार रहे हैं । हे राजन् ! यह कि जिसको सब वानर देखते हैं यूथप तियोंके यूथका अधिपति है॥१५॥हे राजन् ! यह वानरनाथ इन्द्रकी पूजा करनेवाला है । यह देखिये बडीभारी सेनाको साथ लिये हुए यही रंभनामक यूथप वानर है॥१६॥महाराज ! जो वानर पर्वतपर रहनेके समय एक योजन, चलनेकेसमय बगलसे एक योजन, आगे चरणोंसे एकयोजन, व ऊपरको अपने शरीरसे एक योजन बढकर चलता है व योजनपरभी विद्यमान पर्वतको अपनी बगलकी पसलियोंसे छूलेता है व योजनपर शरीर ऊंचा करलेता है ॥ १७ ॥ चौपायोंमें

राक्षसानांचसदृशाःपिशाचानांचरोमशाः ॥ एतस्यसैन्यावहवोविचरंत्यमितौजसः ॥ १४ ॥ यएनमभिसंरब्धंप्लवमानमवस्थितम् ॥ प्रेक्षंतेवा नराःसर्वेस्थितयूथपयूथपम् ॥१५॥ एषराजन्सहस्राक्षंपर्युपास्तेहरीश्वरः ॥ बलेनबलसंयुक्तोरंभोनामैषयूथपः ॥ १६ ॥ यःस्थितंयोजनेशैलंग च्छन्पार्श्वेनसेवते ॥ ऊर्ध्वंतथैवकायेनगतःप्राप्नोतियोजनम् ॥१७॥ यस्मात्तुपरमंरूपंचतुष्पात्सुनविद्यते ॥ श्रुतःसन्नादनोनामवानराणांपिता महः ॥१८॥ येनयुद्धंतदादत्तंरणेशक्रस्यधीमता ॥ पराजयश्चनप्राप्तःसोयंयूथपयूथपः ॥१९॥ यस्यविक्रममाणस्यशक्रस्येवपराक्रमः ॥ एषगंधर्व कन्यायामुत्पन्नःकृष्णवर्त्मना॥२०॥तदादेवासुरेयुद्धेसाह्यार्थंत्रिदिवौकसाम्॥यत्रवैश्रवणोराजाजंबूमुपनिषेवते॥२१॥ योराजापर्वतेन्द्राणांबहुकिन्न रसेविनाम्॥विहारसुखदोनित्यंभ्रातुस्तेराक्षसाधिप॥२२॥तत्रैषरमतेश्रीमान्बलवान्वानरोत्तमः॥ युद्धेष्वकत्थनोनित्यंक्रथनोनामयूथपः॥२३॥

इनके समान भयंकर मूर्ति और किसी को नहीं देखी जाती, यह वानरोंका पितामह सन्नादन नामक यूथपोंका भी यूथपति है; कदाचित् इसका नाम आपने सुनाही होगा ॥१८॥ इसने बुद्धिमान् इन्द्रजीतसे संग्राम करके जय प्राप्त की थी, यह वहीसन्नादन नाम यूथपोंका भी यूथप है॥१९॥और यह जो वानर युद्धके समय इन्द्रके समान पराक्रमी दिखाई देता है यह गन्धर्वकी कन्यामें अग्निसे उत्पन्न हुआ है ॥२०॥ जब कि देवासुर संग्राम हुआ यह वानर देवता लोगोंकी ओरसे लडनेको खडा हुआथा, और जहांपर कुबेरजीकी राजधानी अलकापुरी है वही स्थान उसका विहारस्थान है ॥ २१ ॥ तुम्हारे भ्राता कुबेरजी जिस प्रकार बहु किन्नर सेवित पर्वतोंपर विहार किया करते हैं, यह वानर उनके विहार करनेमें बडा सुख देता है ॥२२॥ और वनमें श्रेष्ठ बलवान् वहीं पर वैसेही विहार किया करता है,युद्ध करनेमें इसके समान और कोई वीर दिखाई नहीं देता,इस यूथपति वानरका नाम क्रथनहै ॥ २३ ॥

इसके अधीनमें करोड हजार वानरोंकी सेना रहती है; यह वीर भी केवल अपनी सेनासेही लंका नगरीमें मर्दन करनेकी इच्छा करता है ॥२४॥ जो वानर राजरूपी शम्बसाधन असुरके साथ वानर श्रेष्ठ केशरीका संग्राम हुआ जान, और वही वैर याद करके गंगाके समीप टिके हुए गजयूथोंको त्रासित किया करता है, इस सेनापतिको आप देखिये ॥ २५ ॥ हे महाराज ! यह यूथपति जब तक पर्वतकी गुहामें शयन करके गर्जन किया करता है, उस समय गजयूथप गण दूसरे इसके उस भयंकर शब्दको सुनकर खडे हो जाते हैं,और पेड़ भी टूट जाते हैं ॥ २६ ॥ यह वानर बडी भारी बानरीसेनाका सेनापति है यह गंगाके पीछेके भागवाले उशीर बीज,और पर्वत श्रेष्ठ मन्दर पर रहकर परम प्रसन्नता प्राप्त किया करता है ॥ २७ ॥ देवराज इन्द्रजी जिसप्रकार अमरा वतीमें वास किया करते हैं, वैसेही यह वानरश्रेष्ठ वहां रमण किया करता है इस वानरके साथ एक अरब सेना है ॥ २८ ॥ जो कि वीर्य विक्रमसे गर्वित

वृतःकोटिसहस्रेणहरीणांसमवस्थितः ॥ एषैवाशंसतेलंकांस्वेननीकेनमर्दितुम् ॥ २४ ॥ योगंगामनुपर्यैतित्रासयन्गजयूथपान् ॥ हस्तिनांवान राणांचपूर्ववैरमनुस्मरन् ॥ २५ ॥ एषयूथपतिर्नेतागर्जन्गिरिगुहाशयः ॥गजान्रोधयतेवन्यानारुजंश्चमहीरुहान् ॥ २६ ॥ हरीणांवाहिनीमुख्यो नदींहैमवतीमनु ॥ उशीरबीजमाश्रित्यमंदरंपर्वतोत्तमम् ॥ २७॥ रमतेवानरश्रेष्ठोदिविशक्रइवस्वयम् ॥ एनंशतसहस्राणांसहस्रमभिवर्तते ॥ २८ ॥ वीर्यविक्रमदृप्तानांनर्दतांबाहुशालिनाम् ॥ सएषनेताचैतेषांवानराणांमहात्मनाम् ॥ २९ ॥ सएषदुर्धरोराजन्प्रमाथीनामयूथपः ॥ वातेनेवोद्धतंमेघंयमेनमनुपश्यसि॥३०॥ अनीकमपिसंरब्धंवानराणांतरस्विनाम् ॥ उद्धूतमरुणाभासंपवनेनसमंततः ॥ ३१ ॥ विवर्तमानंबहु शोयत्रैतद्बहुलंरजः ॥ एतेसितमुखाघोरागोलांगूलामहाबलाः ॥ ३२ ॥ शतंशतसहस्राणिदृष्ट्वावैसेतुबंधनम् ॥ गोलांगूलंमहाराजगवाक्षंनाम यूथपम् ॥ ३३ ॥ परिवार्याभिनर्दंतेलंकांमर्दितुमोजसा ॥ भ्रमराचरितायत्रसर्वकालफलद्रुमाः ॥ ३४ ॥

और अमित बलशाली है; यह वानर उन्हीं सब महात्मा वानरोंका प्रेरक है ॥ २९ ॥ हे राजन् ! यह दुर्द्धर्ष प्रमाथी नामक यूथप है, जिसको कि, पवनसे उठे हुए मेघके समान आप चलते हुए देखते हैं ॥ ३० ॥ और जिसके साथ वानरोंकीसेना क्रोध करती वेगसे चलती पवनसे कम्पायमान अरुण रंगकी आप देखते हैं ॥ ३१ ॥ जिस सेनाके चारों ओर आप वानरोंकी उड़ाई हुई लाल रज देखते हैं और महाराज ! यह उजडे मुखके महाबली गोपुच्छ नाक महाबलवान् ॥ ३२ ॥ वानर जो कि, अर्ब्बों सेतुबंध पर दिखाई देते हैं, हे महाराज ! सब इन्हीं गोपुच्छ वानरोंका महाराज यह गवाक्ष नामक यूथप है ॥ ३३ ॥ देखिये इसी गवाक्ष यूथपको घेरे हुए सब गोपुच्छ वानर लंकाको मर्दन करना चाहते हैं, और गर्ज रहे हैं । जहां पर भौंरे सदा जाया करते

और जहां वृक्षोंमें सदा फल लगे रहते हैं ॥ ३४ ॥ सूर्य जिसको अपने स्थान वर्णवाला समझकर प्रतिदिन जिस पर्वतकी प्रदक्षिणा किया करते हैं, और जिस पर्वतकी अरुण कांतिसे जहांसे सब पक्षी अरुण वर्णके ही दृष्टि आते हैं ॥३५॥ हे महाराज ! जिस रमणीय पर्वत पर सदा महर्षि लोग रहा करते हैं, और उसको त्याग नहीं करते, और जहां सर्वकामनावाले वृक्ष सर्व फलोंसे युक्त ॥ ३६ ॥ व जिस पर्वत श्रेष्ठपर बडे मोलके मधु आदि मीठे २ पदार्थ उत्पन्न होते हैं, हे राजन् ! उस ही सुवर्णके पर्वत ॥ ३७ ॥ मुख्यपर वानरोंमें मुख्य केशरी नाम यूथप रहता है,साठ हजार रमणीक काञ्चन पर्वतोंके मध्यमें ॥ ३८ ॥ सौवर्णि मेरु नामक जो सबसे बडा पर्वत है,जैसे पाप रहित राक्षसोंमें आप हैं,पीले रंगका और बहुत श्वेत व बहुत ताम्रवत् अरुण मुखवाले और

यंसूर्यस्तुल्यवर्णाभमनुपर्येतिपर्वतम् ॥ यस्यभासाःसदाभांतितद्वर्णामृगपक्षिणः ॥३५॥ यस्यप्रस्थंमहात्मानोनत्यजंतिमहर्षयः ॥ सर्वकामफला वृक्षाःसर्वेफलसमन्विताः ॥ ३६ ॥ मधूनिचमहार्हाणियस्मिन्पर्वतसत्तमे ॥ तत्रैषरमतेराजन्रम्येकांचनपर्वते ॥३७॥ मुख्योवानरमुख्यानांकेसरी नामयूथपः ॥ षष्टिर्गिरिसहस्राणिरम्याःकांचनपर्वताः ॥३८॥ तेषांमध्येगिरिवरस्त्वमिवानघरक्षसाम् ॥ तत्रैकेकपिलाःश्वेतास्ताम्रास्यामधुपिंगलाः ॥ ३९ ॥ निवसंत्यंतिमगिरौतीक्ष्णदंष्ट्रनखायुधाः ॥ सिंहाइवचतुर्दंष्ट्राव्याघ्राइदुरासदाः ॥ ४० ॥ सर्वेवैश्वानरसमाज्वलदाशीविषोपमा॥सुदीर्घांचितलांगूलामत्तमातंगसन्निभाः ॥४१॥ महापर्वतसंकाशामहाजीमूतनिःस्वनाः॥ वृत्तपिंगलनेत्राहिमहाभीमगतिस्वनाः ॥४२॥ मर्दयंतीवतेसर्वेतस्थुर्लंकांसमीक्ष्यते॥एषचैषामधिपतिर्मध्येतिष्ठतिवीर्यवान्॥ ४३ ॥ जयार्थीनित्यमादित्यमुपतिष्ठतिवीर्यवान् ॥ नाम्नापृथिव्यांविख्यातोराजञ्शतबलीतियः ॥ ४४ ॥ एषैवाशंसतेलंकांस्वेनानीकेनमर्दितुम् ॥ विक्रांतोबलवाञ्छूरःपौरुषेस्वेव्यवस्थितः ॥ ४५ ॥

मधुके समान पीले रंगवाले ॥ ३९ ॥ वानर इस पर्वतपर बसते हैं, इन सबके बडे तीक्ष्ण दंत और नख आयुध हैं, सिंहके समान चौदन्ते व्याघ्रके समान बडे वरभावयुक्त ॥४०॥ सब अग्निके समान देदीप्यमान तीक्ष्ण विषवाले विषधर सर्पोंके समान बडी भारी और चौडी पूंछ वाले॥४१॥मतवाले हाथी महापर्वत और महामेघके समान पिंगल वर्ण गोलनेत्र युक्त महाभयंकर गतिवाले और भयंकर शब्द करनेवाले जो वानर वास करते हैं॥४२॥देखिये;मानो वुही सब वानरगण यह लंकाको मर्दन करनेके लिये आय रहेहैं,इनके बीचमें इनकावीर्यवान्यूथप टिका हुआ है॥४३॥और वह नित्य जयकी कामना करके सूर्य भगवान्की पूजा किया करता है,हे राजन्!यह समस्त पृथ्वीपर विख्यात हुआ शतबलिनाम वानरयूथप है॥४४॥ हेमहाराज ! यह वीर शतबलीऐसा विक्रमी बलवान् और

पौरुषयुक्त हैं, कि इसने अपनी सेनाहीसे लंका मर्दन करनेका विचार स्थिरकर रक्खा है॥ ४५॥ गज गवाक्ष, गवय, नल और नील इत्यादि वानरगण समस्तही प्राणोंका मोह छोड कर श्रीरामचन्द्रजीका प्रिय करनेके लिये ॥ ४६ ॥ एक २ योधा शत २ करोड वानरोंकी सेना संग लिये आये हैं, सब विन्ध्याचलके रहनेवाले और दूसरे वानरगण भी जो लघुविक्रमी हैं और बहुत होनेके कारण जिनकी गिन्ती नहीं हो सकती ॥ ४७॥ हे महाराज ! उन सबही वीर गणोंकी देह महापर्वतके समान हैं सबही महाप्रभाववाले और सबही शिला वर्षाय कर क्षण कालमें सारी पृथ्वीको ढक सकते हैं॥ ४८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० युद्धकांडे भाषायां सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥ सारणके वचन सुनकर राक्षसपति रावण शुकसे श्रीरामचन्द्रजीकी सेनाका समाचार पूँछता हुआ; तब शुक बोला

रामप्रियार्थंप्राणानांदयांनकुरुतेहरिः ॥ गजोगवाक्षोगवयोनलोनीलश्ववानरः ॥ ४६ ॥ एकैकमेवयोधानांकोटिभिर्दशभिर्वृतः ॥ तथान्येवानरश्रेष्ठाविंध्यपर्वतवासिनः॥ नशक्यंतेबहुत्वात्तुसंख्यातुंलघुविक्रमाः ॥ ४७ ॥ सर्वेमहाराजमहाप्रभावाःसर्वेमहाशैलनिकाशकायाः ॥ सर्वेसमर्थाःपृथिवींक्षणेनकर्तुंप्रविध्वस्तविकीर्णशैलाम् ॥ ४८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥ सारणस्यवचःश्रुत्वारावणंराक्षसाधिपम् ॥ बलमादिश्यतत्सर्वंशुकोवाक्यमथाब्रवीत् ॥१॥ स्थितान्पश्यसियानेतान्मत्तानिवमहाद्विपान् ॥ न्यग्रोधानिवगांगेयान्सालान्हैमवतानिव ॥२॥ एतेदुष्प्रसहाराजन्बलिनःकामरूपिणः ॥ दैत्यदानवसंकाशायुद्धेदेवपराक्रमाः॥३॥ एषांकोटिसहस्राणिनवपंचचसप्तच ॥ तथाशंकुसहस्राणितथावृंदशतानिच ॥ ४ ॥ एतेसुग्रीवसचिवाःकिष्किंधानिलयाःसदा ॥ हरयोदेवगंधर्वैरुत्पन्नाःकामरूपिणः ॥ ५ ॥ यौतौपश्यसितिष्ठंतौसमानौदेवरूपिणौ ॥ मैंदश्चद्विविदश्चैवताभ्यांनास्तिसमोयुधि ॥ ६ ॥ ब्रह्मणासमनुज्ञातावमृतप्राशिनावुभौ ॥ आशंसेतेयथा लंकामेतौमर्दितुमोजसा ॥ ७ ॥

॥ १ ॥ हे राजन् ! आप जिनको मतवाले महागजोंके समान गंगाके तीरवाले वट वृक्षोंके समान और हिमवान् पर्वतपर उपजे हुए शाल वृक्षके समान देखते हैं ॥ २ ॥ यह समस्तही सहनेके अयोग्य बलवान् और कामरूप धारणकरनेवाले हैं; यह युद्धमें देवगणोंके समान पराक्रमप्रगट करनेवाले हैं ॥ ३ ॥ इन समस्त वानरोंकी गिनती नौ करोड हजार; पांच करोड हजार व सात करोड हजार शंकु सहस्र, और शत वृन्द ॥ ४ ॥ और यह किष्किन्धाके रहनेवाले सुग्रीवके मंत्री वानरगण देवता और गन्धर्वोंके वीर्यसे वानरोंकी जातिमें उत्पन्न हुए हैं और यह इच्छानुसार रूप धारणकरनेवाले हैं ॥ ५ ॥ देवताओंके समान दोनों एकहीसे रूपवाले मैन्द और द्विविद नामक जो वानर आप देखते हैं इनके समान पुरुष लडनेवाला और कोई नहीं है ॥ ६ ॥ कारण

कि ब्रह्माजीकी आज्ञासे इन दोनों वानरोंने अमृतपान किया है, इस समय यह दोनों भी अपने प्रतापसे लंकाके उखाडनेका यत्न कर रहे हैं ॥ ७ ॥ मदान्ध हाथीके समान जिस वानरको तुम खडे देखते हो, इस वीरने क्रोधित होकर बल पूर्वक समुद्रकोभी खलबलायडाला है ॥८॥ हे राजन् ! जो लंकामें प्रवेश करके जानकीजीका और आपका पता लगा गयाथा, आपने इसको पहलेभी देखा है, परन्तु देखिये अब यह फिर आया है॥९॥यह केशरीका बडा बेटा पवनकुमारके नामसे विख्यात है, इसका दूसरा नाम हनुमानजी है; यही समुद्रको लांघकर जानकी देखनेको यहां आयाथा॥१०॥हे प्रभो । यह इच्छानुसार रूप धारण करनेवाला वानरोंमें श्रेष्ठ और रूपबलसम्पन्न है, जिसप्रकार पवनकी गति कोई नहीं रोक सकता, वैसेही इसकी गति नहीं रुकसकती इसकारण जहां इच्छा हो

यतुपश्यसितिष्ठंतंप्रभिन्नमिवकुंजरम् ॥ योबलात्क्षोभयेत्क्रुद्धःसमुद्रमपिवानरः ॥८॥ एषोऽभिगंतालंकायांवैदेह्यास्तवचप्रभो ॥ एनंपश्यपुराद्दृष्टं वानरंपुनरागतम् ॥ ९ ॥ज्येष्ठःकेसरिणःपुत्रोवातात्मजइतिश्रुतः॥ हनूमानितिविख्यातोलंघितोयेनसागरः ॥ १० ॥ कामरूपोहरिश्रेष्ठोबल रूपसमन्वितः ॥ अनिवार्यगतिश्चैवयथासततगःप्रभुः॥ ११ ॥ उद्यंतंभास्करंदृष्ट्वाबालःकिलबुभुक्षितः ॥ त्रियोजनसहस्रंतुअध्वानमवतीर्यहि ॥ १२ ॥ आदित्यमाहरिष्यामिनमेक्षुत्प्रतियास्यति ॥ इतिनिश्चित्यमनसापुप्लुवेबलदर्पितः ॥१३॥ अनाधृष्यतमंदेवमपिदेवर्षिराक्षसैः ॥ अनासाद्यैवपतितोभास्करोदयनेगिरौ ॥ १४ ॥ पतितस्यकपेरस्यहनुरेकाशिलातले ॥ किंचिद्भिन्नाद्दृढहनुर्हनूमानेषतेनवै ॥ १५ ॥सत्यमागम योगेनममैषविदितोहरिः ॥ नास्यशक्यंबलंरूपंप्रभावोवानुभाषितुम् ॥ १६ ॥

वहांपर यह जाय सकता है ॥११॥ बालकपनमें एक दिन यह वीर उदय होते हुए सूर्यभगवान्को देखकर " विना सूर्यको हरण किये पृथ्वीपरके किसी फलसे हमारी भूँख न मिटेगी" मनहीमन यह विचारकरबलसे दर्पित हो तीन हजारयोजन ऊपरको कूद गया और सूर्यमंडलपर पहुंचगया था॥१२॥१३॥परन्तु देव ऋषि और राक्षसोंसे धर्षित न होनेके योग्य उन सूर्य भगवान्को न प्राप्त होकर इन्द्रजीके वज्र मारनेसे यह उदयाचलपर गिरपडा ॥ १४ ॥ हे महाराज ! पहले इस वीरकी हनु (ठोडी) अत्यन्त दृढ थी परन्तु शिलापर गिरनेसे इसकी हनु कुछ एक टूट जानेसे, इसी कारण यह वीर्यवान् पहले वृत्तान्तके अनुसार हनुमान् नामसे विख्यात हुआ है॥१५॥वानरोंका संग होनेसे यद्यपि हमने इस वानरको जान लिया है, परन्तु इसका बलरूपऔर प्रभाव वर्णन करनेकी मुझमें सामर्थ्य

नहीं है, हमको तो जानपडता है कि, यही वीर अकेला लंकापुरीका नाश करनेकी शक्ति रखता है ॥ १६॥ हे राजन् ! पहले जिस वीरने आपके प्रतापसे रोकी हुई अग्निकोप्रज्वलित करके उसको लंकामेंही छोडाथा;भलाफिर आप किस कारणसे अब उस हनुमान्‌वीरको भूलते हैं ? यह वीर अकेलाही अपने पराक्रमसे लंका मथन करना चाहता है,व एकबेर कर भी चुका है ॥ १७॥हनुमानके निकटमें ही जो श्यामवर्ण कमललोचन वीर बैठेहुए हैं;यह ही इक्ष्वाकुवंशियोंमें अतिरथी हैं,और लोक इनकेही बल पौरुषकी कथा गाया करते हैं॥ १८॥हे महाराज ! धर्म जिनसे कभी चलायमान नहीं होता और जो कभी धर्मका उल्लंघन नहीं करते वेदविद्गणोंके अग्रणी जो वीरब्रह्मअस्त्र और समस्त वेद जाने हुए हैं ॥ १९ ॥ जो अपने बाणोंको छोडकर आकाशमंडलको भिन्न और पृथ्वीको विदारण कर सकते हैं,जिनका पराक्रम इन्द्रके समान और क्रोध मृत्युकी समान भयनक है॥ २०॥और जनस्थानसे आप इनकीही भार्या सीताको हरण करके

एषआशंसतेलंकामेकोमथितुमोजसा ॥ येनजाज्वल्यतेसौवैधूमकेतुस्तवाग्रवै ॥ लंकायांनिहितश्चापिकथंविस्मरसेकपिम्॥ १७॥ यस्यैषोनंतरः शूरःश्यामःपद्मनिभेक्षणः ॥ इक्ष्वाकूणामतिरथोलोकेविश्रुतपौरुषः ॥ १८ ॥ यस्मिन्नचलतेधर्मोयोधर्मंनातिवर्तते ॥ योब्राह्ममस्त्रंवेदांश्चवेदवेदविदांवरः ॥ १९ ॥ योभिंद्याद्गगनंबाणैर्मेदिनींवापिदारयेत् ॥ यस्यमृत्योरिवक्रोधःशक्रस्येवपराक्रमः ॥ २० ॥ यस्यभार्याजनस्थानात्सीताचापिहृतात्वया ॥ सएषरामत्वांराजन्योद्धुंसमभिवर्तते ॥ २१ ॥ यस्यैषदक्षिणेपार्श्वेशुद्धजांबूनदप्रभः ॥ विशालवक्षास्ताम्राक्षोनीलकुंचितमूर्धजः ॥ २२॥ एषोहिलक्ष्मणोनामभ्रातुःप्रियहितेरतः ॥ नयेयुद्धेचकुशलःसर्वशस्त्रभृतांवरः ॥ २३ ॥ अमर्षीदुर्जयोजेताविक्रांतश्चजयोबली ॥ रामस्यदक्षिणोबाहुर्नित्यंप्राणोबहिश्चरः ॥ २४ ॥ नह्येषराघवस्यार्थेजीवितंपरिरक्षति ॥ एषैवाशंसतेयुद्धेनिहंतुंसर्वराक्षसान् ॥ २५ ॥

ले आये हैं;यह वही रामचन्द्रजी आपसे युद्ध करनेके लिये यहांपर आये हैं॥ २१॥ श्रीरामचन्द्रजीकी दाहिनी ओर यह विशुद्ध कांचन वर्ण चौडी छातीवालेअरुण नयन आकुञ्चित नील केश दामभूषित (काले घुंघरारे बालोंसे शोभायमान) वीरको आप देखते हैं ॥ २२ ॥ यहीश्रीरामजन्द्रजीका हित करनेमें रत उनके छोटे भाई लक्ष्मणनामक हैं। नीतिशास्त्र और युद्धविद्या इन दोनों बातोंमें वह बड़े चतुर हैं व शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ हैं ॥ २३॥इनको रणमें कोई नहीं जीतसकता श्रीरामचन्द्रजीका अपकार करनेवालेके ऊपर यहक्षमा नहीं करतेसबकोजीतने वाले विक्रम, महाबली, श्रीरामचन्द्रजीकेमानो दाहिने हाथ व बाहरकेप्राणसमान हैं ॥ २४ ॥ यह लक्ष्मण अपने भ्राता श्रीरामचन्द्रजीके हितकारी कार्यमें ऐसे अनुरागी हैं; कि इनके लिये अपने प्राणोंके त्यागनेका मोहभी नहीं करते । हे

महाराज ! यह वीरभी इकेलेही सर्व राक्षसोंका संहार करनेके लिये कहते हैं ॥२५॥ जो आपने मंत्री चार राक्षसोंके साथ वीर रामचन्द्रजीकी बाई बगलमें इनके पक्षमें होकर बैठे हैं,वही यह राजा विभीषण हैं ॥२६॥ हे राजन् विभीषण राजराजेश्वर श्रीरामचन्द्रजीकरके लंकाके राज्यमें अभिषेकित होकर आपके साथ युद्धकरनेकी कामनासे क्रोधमें भरेहुए बैठे हैं ॥२७॥ जिनको आप अटल पर्वतके समान बीचमें बैठे हुए देखते हैं यह सब वानरोंके राजा हैं इनके बलका कुछ परिमाणही नहीं॥२८॥यह तेज यश बुद्धि और बलके प्रभावसे पर्वतोंकेमध्यमें हिमवान् पर्वतके समान समस्त वानरोंसे अधिक शोभायमान होते हैं॥२९॥ हे राजन्! यह प्रधानवीर यूथपतिलोगोंके साथ किष्किन्धामें पर्वतके दुर्गवाली वृक्षयुक्त व कोई और जहां न पहुँचसके,ऐसी गुहामें वानरयूथपोंके साथ रहतेहैं

यस्यसव्यमसौपक्षंरामस्याश्रित्यतिष्ठति॥ रक्षोगणपरिक्षिप्तोराजाह्येषविभीषणः॥२६॥श्रीमताराजराजेनलंकायामभिषेचितः ॥ त्वामसौप्रति संरब्धोयुद्धायैषोभिवर्तते ॥२७॥ यंतुपश्यसितिष्ठंतंमध्येगिरिमिवाचलम् ॥ सर्वशाखामृगेंद्राणांभर्तारममितौजसम् ॥ २८ ॥ तेजसायशसा बुद्ध्याबलेनाभिजनेनच॥यःकपीनतिबभ्राजहिमवानिवपर्वतः॥२९॥किष्किंधांयःसमध्यास्तेदुर्गांसगहनद्रुमाम्॥ दुर्गांपर्वतदुर्गम्यांप्रधानैःसह यूथपैः ॥ ३० ॥ यस्यैषाकांचनीमालाशोभतेशतपुष्करा ॥ कांतादेवमनुष्याणांयस्यांलक्ष्मीःप्रतिष्ठिता ॥ ३१ ॥ एतांमालांचतारांचकपि राज्यंचशाश्वतम्॥ सुग्रीवोवालिनंहत्वारामेणप्रतिपादितः ॥३२॥ शतंशतसहस्राणांकोटिमाहुर्मनीषिणः ॥ शतंकोटिसहस्राणांशंकुरित्यभि धीयते ॥३३॥ शतंशंकुसहस्राणांमहाशंकुरितिस्मृतः ॥ महाशंकुसहस्राणांशतंवृंदमिहोच्यते ॥३४॥ शतंवृंदसहस्राणांमहावृंदमितिस्मृतम् ॥ महावृन्दसहस्राणांशतंपद्ममिहोच्यते ॥ ३५ ॥ शतंपद्मसहस्राणांमहापद्ममितिस्मृतम् ॥ महापद्मसहस्राणांशतंखर्वमिहोच्यते ॥ ३६ ॥

॥ ३० ॥ और देवता व मनुष्यलोगोंकी प्रार्थनीया लक्ष्मी जिसमें सदा टिकी रहतीहै; वह शतपुष्पी कांचनमयी माला जिसके गलेमें शोभायमान होरही है ॥ ३१ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने वीरश्रेष्ठ वालिका प्राण संहार करके, यह माला वालिकी स्त्री तारा और किष्किन्धाका राज्य यह समस्तही इन सुग्रीवको देदिया है ॥ ३२ ॥ हे महाराज ! संख्याके जाननेवाले पंडित लोगशतगुणित शत सहस्रसे एक कोटि, शत सहस्र कोटिसे शंकु कहते हैं ॥ ३३ ॥ शतसहस्र शंकुसे महाशंकु;एक शत २ महाशंकु सहस्रसे एक वृन्द ॥३४॥ सहस्र वृन्दको सौसे गुणा करनेसे एक महावृन्द और हजार महावृन्दको सौसे गुणा करनेसे पद्म कहलाता है ॥ ३५ ॥ जो हजार पद्मको शतसे गुणा किया जाय तो एक महापद्म होता है, हजार महापद्मको शतसे गुणा करनेसे एक खर्व होताहै ॥ ३६ ॥

सहस्रखर्वको शतद्वारा गुणन करनेसे एक समुद्र होता है, और हजार समुद्रको शतसे गुणा करनेसे एक महौघ कहलाता है॥ ३७॥ इस गणितसे सहस्र महाकरोड सौशंकु हजार महाशंकु सहस्र कोटि, शत २ शंकु व हजार महापद्म शतवृन्द ॥ ३८ ॥ हजार महावृन्द और शत व हजार महापद्म, और शत खर्व ॥ ३९॥ और शत समुद्र शत महौघ, करोडमहौघ, करोड समुद्र ॥ ४० ॥ इतनी सेना विभीषण वीरके साथ लिये; और अपने मंत्रियोंको साथलिये वानरेन्द्र सुग्रीवजी आपको युद्ध करनेके लिये पुकारते हैं, यह बडी शक्तियुक्त महाबलवान् और महापराक्रमी हैं॥ ४१ ॥ हे महाराज ! प्रज्वलित ग्रहके समान इस आई हुई

शतंखर्वसहस्राणांसमुद्रमभिधीयते ॥ शतंसमुद्रसाहस्रंमहौघमितिविश्रुतम् ॥३७॥ एवंकोटिसहस्रेणतथाखर्वशतेनच ॥ महाशंकुसहस्रेणतथावृन्दशतेनच ॥३८॥ महावृन्दसहस्रेणतथापद्मशतेनच ॥ महापद्मसहस्रेणतथाखर्वशतेनच ॥३९॥ समुद्रेणचतेनैवमहौघेनतथैवच ॥ एषकोटीमहौघेनसमुद्रसदृशेनच ॥४०॥ विभीषणेनवीरेणसचिवैःपरिवारितः ॥ सुग्रीवोवानरेंद्रस्त्वांयुद्धार्थमनुवर्त्तते ॥ महाबलवृतोनित्यंमहाबलपराक्रमः ॥ ४१ ॥ इमांमहाराजसमीक्ष्यवाहिनीमुपस्थितांप्रज्वलितग्रहोपमाम् ॥ ततःप्रयत्नःपरमोविधीयतांयथाजयःस्यान्नपरैःपराभवः ॥४२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आ० च० सा० युद्धकांडेऽष्टाविंशः सर्गः ॥२८॥ शुकेनतुसमादिष्टान्दृष्ट्वासहरियूथपान् ॥ लक्ष्मणंचमहावीर्यंभुजंरामस्यदक्षिणम् ॥ १ ॥ समीपस्थंचरामस्यभ्रातरंचविभीषणम् ॥ सर्ववानरराजंचसुग्रीवंभीमविक्रमम् ॥ २ ॥ अंगदंचापिबलिनंवज्रहस्तात्मजात्मजम् ॥ हनूमंतंचविक्रांतंजांबवंतंचदुर्जयम् ॥३॥ सुषेणंकुमुदंनीलंनलंचप्लवगर्षभम् ॥ गजंगवाक्षंशरभंमैंदंचद्विविदंतथा ॥४॥

वानरोंकी सेनाको देखकर जिससे उसका उपाय हो और शत्रुलोग कहीं हमको जीतकर विजयी न होजायँ इस बातका आप विशेष यत्न करें ॥ ४२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामष्टाविंशः सर्गः ॥ २८ ॥ उसके पीछे दशानन शुकके मुखसे सेनागणोंके भुजवीर्यका समाचार पाय और श्रीरामचन्द्रजीके दक्षिण बाहुस्वरूप महाबलवान् लक्ष्मणजी ॥ १ ॥ और श्रीरामचन्द्रजीके समीप बैठे हुए अपने भ्राता विभीषणको व भयंकर पराक्रमकारी वानरराज सुग्रीवको बैठे देख ॥ २ ॥ व उनके निकट इन्द्रके औरस पुत्र वालिकुमार महावीर अंगद हनुमान् और अजीत जाम्बवान् ॥ ३ ॥ व उनकी बगलमें सुषेण, कुमुद, नील, नल, गज, गवाक्ष, शरभ, मैन्द और द्विविद ॥ ४ ॥

इत्यादि वानरगणोंको देखतेही रावणकुछ उदासभी हुआ; और फिर उदासीनताके आकारको छिपानेको यथार्थ वचन कहने वाले शुक और सारण दोनों निशा चरोंको बहुतही धिक्कारता हुआ निन्दा करने लगा ॥ ५ ॥ राक्षसराज रावण सामने बैठे प्रणाम करते हुए उन दोनों राक्षसोंसे रोष सहित गद्गद वचन बोला ॥ ६ ॥ तुम लोगोंने जो वचन हमसे कहे, यह उपजीवी मंत्रियोंको किसी प्रकारसे कहने कर्त्तव्य नहीं हैं, और अपने स्वामीके प्रति निग्रह या अनुग्रह करनाभी योग्य मंत्रीका कार्य नहीं है, राजाही निग्रह अनुग्रहमें समर्थ है ॥७॥ तुम लोगोंने बिना पूँछेज्ञानेपर भी जो कि युद्ध करनेके लिये आये श्रेष्ठ शत्रुके बलकी श्रेष्ठताका वर्णन किया, क्या यह राक्षसराजके मंत्रीका उचित कार्य हुआ है ! ॥ ८ ॥ हम समझगये कि तुम दोनों जनोंने आचार्य, गुरु और वृद्ध लोगोंकी वृथापूजा की है कारण कि तुम लोगोंको जो सीखनी चाहिये वैसी सार राजनीति तुमने अभीतक नहीं सीखी है ॥९॥ यदि कुछ राजनीतिका मर्म

किंचिदाविग्नहृदयोजातक्रोधश्चरावणः ॥ भर्त्सयामासतौवीरौकथांतेशुकसारणौ ॥ ५ ॥ अधोमुखौतौप्रणतावब्रवीच्छुकसारणौ ॥ रोषगद्गदयावाचासंरब्धंपरुषंतथा ॥ ६ ॥ नतावत्सदृशंनामसचिवैरुपजीविभिः ॥ विप्रियंनृपतेर्वक्तुंनिग्रहेप्रग्रहेप्रभोः ॥ ७ ॥ रिपूणांप्रतिकूलानांयुद्धार्थमभिवर्ततांम् ॥ उभाभ्यांसदृशंनामवक्तुमप्रस्तवेस्तवम् ॥ ८ ॥ आचार्योगुरवोवृद्धावृथावांपर्युपासिताः ॥ सारंयद्राजशास्त्राणामनुजीव्यंनगृह्यते ॥ ९ ॥ गृहीतोवानविज्ञातोभारोज्ञानस्यवाह्यते ॥ ईदृशैःसचिवैर्युक्तोमूर्खैर्दिष्ट्याधराम्यहम् ॥ १० ॥ किंनुमृत्योर्भयंनास्तिमांवक्तुंपरुषंवचः ॥ यस्यमेशासतोजिह्वाप्रयच्छतिशुभाशुभम् ॥ ११ ॥ अप्येवदहनंस्पृष्ट्वावनेतिष्ठंतिपादपाः ॥ राजदंडपरामृष्टास्तिष्ठंतेनापराधिनः ॥ १२ ॥ हन्यामहंत्विमौपापौशत्रुपक्षप्रशंसिनौ ॥ यदिपूर्वोपकारैर्मेक्रोधोनमृदुतांव्रजेत् ॥ १३ ॥

समझभी गयेहो परन्तु तुमलोगोंने उसको ग्रहण नहीं कियाहै मूर्ख पुरुषके समान तुम केवल शास्त्रके भारको धारण कियेहो, हमारा कैसा भाग्य है कि हम ऐसे अयोग्य मूर्ख मंत्रियोंसे युक्त होकरभी इस राज्यका भार बराबर उठाये हुए हैं ॥१०॥ जो कुछ भी हो हमको कठोर वचन कहते हुए तुमको प्राणोंकी शंका नहीं हुई । कारण कि शुभ और अशुभ हमारी आज्ञाको पाय जीभ जो कुछ कहजाती वही होता है फिर ऐसे राजाको अशुभ वचन कहने क्या उचित हैं ? ॥ ११ ॥ वनमें आग लगजानेपर चाहे वृक्ष किसी प्रकारसे कुछ स्थितभी रह जायँ परन्तु राजाका द्रोह करनेवाले बागी (अपराधी) लोग किसी प्रकारसे जीवित नहीं रह सकते ॥१२॥ यदि तुम्हारे पहले किये हुए उपकारोंको स्मरण करके हमारा क्रोध कुछेक कोमल न होजातातो इस ही घडी शत्रुके ओरकी

प्रशंसा करनेवाले तुम दोनों पापचारियोंको हम मारडालते ॥ १३ ॥ तुम लोग जैसे कृतघ्न हो और हमारे प्रति स्नेहहीन होगये हो, उससे तुम निश्चयही मार डालनेके योग्य हो परन्तु तुम्हारे पहले किये हुए उपकारोंका स्मरण करके हमने तुम्हें नहीं मारा, अच्छा जो हुआ सो हुआ अब तुम दोनों हमारे निकटसे दूर होजाओ और फिर कभी हमारी सभामें प्रवेश न करना ॥ १४ ॥ जब रावणने शुक और सारणसेऐसाकहा तब वह दोनों जन जयशब्दद्वारा रावणको प्रणाम करके लज्जितभावसे सभासे उठकर बाहर निकल गये ॥ १५ ॥ इन दोनोंके चले जानेपर रावणने "दूत लोगोंको शीघ्र हमारे निकट ले आओ" समीप बैठे हुए महोदरको यह आज्ञा दी; महोदरभी दूत लोगों को शीघ्रही रावणके पास जानेका आदेश देता हुआ ॥ १६ ॥ तब दूतगण राजाकी आज्ञा सुन शीघ्र वहां आय "जयहो" ऐसा आशीर्वाद कर रावणकी वन्दना हाथ जोड करते हुए ॥ १७ ॥ फिर राक्षसराज रावण उन भयविहीन शूर त्रिश्वासी

अपध्वंसतनश्यध्वंसन्निकर्षादितोमम ॥ नहिवांहंतुमिच्छामिस्मराम्युपकृतानिवाम् ॥ हतावेवकृतघ्नौद्वौमयिस्नेहपराङ्मुखौ॥१४॥एवमुक्तौतु सव्रीडौतौदृष्ट्वाशुकसारणौ ॥ रावणंजयशब्देनप्रतिनंद्याभिनिःसृतौ ॥१५॥ अब्रवीच्चदशग्रीवःसमीपस्थंमहोदरम् ॥ उपस्थापयमेशीघ्रंचारानि तिनिशाचरः ॥ महोदरस्तथोक्तस्तुशीघ्रमाज्ञापयच्चरान् ॥१६॥ ततश्चराःसंत्वरिताःप्राप्ताःपार्थिवशासनात् ॥ उपस्थिताःप्रांजलयोवर्धयित्वा जयाशिषः ॥ १७ ॥ तानब्रवीत्ततोवाक्यंरावणोराक्षसाधिपः ॥ चरान्प्रत्यायिकाञ्छूरान्धीरान्विगतसाध्वसान् ॥ १८ ॥ इतोगच्छतरामस्य व्यवसायंपरीक्षितुम् ॥ मंत्रेष्वभ्यंतरायेऽस्यप्रीत्यातेनसमागताः॥१९॥कथंस्वपितिजागर्तिकिमद्यचकरिष्यति ॥ विज्ञायनिपुणंसर्वमागंतव्य मशेषतः ॥२०॥ चारेणविदितःशत्रुःपंडितैर्वसुधाधिपैः ॥ युद्धेस्वल्पेनयत्नेनसमासाद्यनिरस्यते ॥ २१ ॥ चारास्तुतेतथेत्युक्त्वाप्रहृष्टाराक्षसे श्वरम्॥ शार्दूलमग्रतःकृत्वाततश्चक्रुःप्रदक्षिणम्॥२२॥ततस्तंतुमहात्मानंचाराराक्षससत्तमम् ॥ कृत्वाप्रदक्षिणंजग्मुर्यत्ररामःसलक्ष्मणः॥२३॥

दूतोंसे बोला ॥१८॥ कि तुम लोग रामचन्द्र और परम प्रसन्नता सहित जो मंत्री लोग उनके संगआये हैं; उनके कार्य व मनकीबात जाननेके लिये यहांसे शीघ्रही वहां पर जाओ ॥१९॥ हमारे शत्रु लोग किसप्रकारसे सोते हैं और जागते रहकर क्या करते हैं और अब आगेको क्या करेंगे ? यह बातें तुम लोग बडी सावधानीके साथ भलीभाँति जान बूझकर यहां चले आओ ॥२०॥ कारण कि चतुर राजा लोग दूतोंकी सहायतासे शत्रुलोगोंकी अवस्था जानकर रणभूमिमें सरलतासे उनको भगाय देते हैं ॥२१॥ दूत गण "जो आज्ञा" कह और शार्दूलको आगे कर हर्षित अंतः करणसे राक्षसराज रावणकी प्रदक्षिणा करने लगे ॥ २२ ॥ फिर वह राक्षसश्रेष्ठ रावणकी प्रदक्षिणा करके जहांपर श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीके सहित विराजमान थे उस स्थानमें गमन करते हुए ॥ २३ ॥

दूत लोगोंनेगमनकर सुबेल पर्वतके समीपमें गुप्तभावसे टिककर श्रीरामचन्द्रजीके सहित लक्ष्मणसुग्रीव और विभीषणको देखा ॥ २४ ॥ और इस बडी भारी वानरोंकी सेनाको देखतेही वह दूतगण भयकेमारे अत्यन्त विह्वल होगये, परन्तु उन राक्षसोंको देखकर धर्मात्मा राक्षसोंकेराजा॥ २५ ॥ विभीषणजीने बन्दरोंसे उनको इच्छापूर्वक पकडवाय लिया और "पापाशय" कहकर उनमेंसे दूतोंके सरदार शार्दूलको बँधवाया ॥ २६ ॥ परन्तु वानरलोगोंसे मारडाले जाते हुए देखकर उस दूतको श्रीरामचन्द्रजीने छुटायदिया, व इसी प्रकार और दूसरे राक्षसदूतोंको भी सौम्यस्वभाव श्रीरामचन्द्रजीने छुटायदिया ॥२७॥ इस प्रकारसे वह राक्षसदूत विपुलविक्रमकारी बानरोंके हाथसे भलीभाँति पिट कुटकर लंबी २ श्वास लेतेहुए चेतनारहितके समान फिर लंकापुरीमें आये ॥२८॥ उसके पीछे

तेसुवेलस्यशैलस्यसमीपेरामलक्ष्मणौ ॥ प्रच्छन्नाददृशुर्गत्वाससुग्रीवविभीषणौ ॥ २४ ॥ प्रेक्षमाणाश्चमूंतांचबभुवुर्भयविह्वलाः ॥ तेतुधर्मात्म नादृष्टाराक्षसेंद्रेणराक्षसाः ॥ २५ ॥ विभीषणेनतत्रस्थानिगृहीतायदृच्छया ॥ शार्दूलोग्राहितस्त्वेकःपापोयमितिराक्षसः ॥ २६ ॥ मोक्षितः सोपिरामेणवध्यमानःप्लवंगमैः ॥ अनृशंसेनरामेणमोक्षिताराक्षसाःपरे ॥ २७ ॥ वानरैरर्दितास्तेतुविक्रान्तैर्लघुविक्रमैः ॥ पुनर्लंकामनुप्राप्ताः श्वसंतोनष्टचेतसः ॥२८॥ ततोदशग्रीवमुपस्थितास्तेचराबहिर्नित्यचरानिशाचराः ॥ गिरेःसुवेलस्यसमीपवासिनंन्यवेदयन्रामबलंमहाबलाः ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे एकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥ ततस्तमक्षोभ्यबलंलंकाधिपतये चराः ॥ सुवेलेराघवंशैलेनिविष्टंप्रत्यवेदयन् ॥ १ ॥ चाराणांरावणः श्रुत्वाप्राप्तंराममंमहाबलम् ॥ जातोद्वेगोभवत्किंचिच्छार्दूलंवाक्यमब्रवीत् ॥ २ ॥ अयथावच्चतेवर्णोदीनश्चासिनिशाचर ॥ नासिकच्चिदमित्राणांक्रुद्धानांवशमागतः ॥ ३ ॥

महाबलवान् नित्य बाहर घूमनेवाले निशाचर वह दूतगण रावणके समीप पहुँचकर, सुबेल शैलके निकट टिकी हुई श्रीरामचन्द्रजीकी सेनाका समाचार कहने लगे ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥ उसके पीछे दूतलोगोंने सुबेलपर्वतके निकट पहुँचकर श्रीरामचन्द्रजीकी अचल सेनाका जो समाचार पायाथा वह समस्त रावणसे निवेदन किया ॥ १ ॥ राक्षस राज रावण दूतोंके मुखसे श्रीरामचन्द्रजीकी सेनाका लंकामें आना सुन भीतरसे बहुतही उदास हुआ और उसीसमय शार्दूलनाम दूतसे बोला ॥ २ ॥ अरे निशाचर ! तू विवर्ण और दीनके समान हो रहा है, इसका कारण क्या ? शत्रुओंने बलसहित क्रोधित होकर कहीं तुझे अपने वशमें तो नहीं कर लिया था ? जो कुछभी हो वह समस्तही हमसे ठीक २

वर्णन कर ॥ ३ ॥ भयके मारे व्याकुल शार्दूल इस प्रकारसे पूछे जानेपर राक्षसशार्दूल रावणको मन्द २ वचनोंसे उत्तर देता हुआ॥४॥ हे महाराज ! रामचन्द्रसे रक्षित उन अमितविक्रमकारी उन बलवान् वानरश्रेष्ठोंके बलाबलका विचार करना दूतलोगोंको साध्य नहीं ॥ ५ ॥ हे राजन् ! पर्वताकार वानरगण चारों ओरसे मार्गोंको इस प्रकारसे रक्षा करते हैं, कि उन वानरश्रेष्ठोंके बलाबलका विचार करना तो दूर रहे, उनसे कोई प्रश्न या बात चीत कुछभी न करसके॥ ६ ॥ हम लोग घूमते २ जब रामचंद्रजीकी सेनामें पहुंच गये, तब पहुँचतेही विभीषणजीके साथ रहनेवाले चार मंत्री राक्षसोंने हमको पहँचान लिया और पहँचान कर उन्होंने हमें पकड बांधकर सेनामें इधर उधर घुमाया ॥ ७ ॥ बांधकर लेजाने व घुमानेके समय वानरोंकी सेनाने हमको जांघ, मूका, दन्त, लातसे भली भांति मारकूटकर काटा व डरवाया ॥ ८ ॥ इस प्रकारसे सब कहीं घुमाय २ फिर वह हमको रामचद्रंजीके पास लेगये उस समय अत्यन्त मार पडनेके

इतितेनानुशिष्टस्तुवाचंमंदमुदीरयन् ॥ तदाराक्षसशार्दूलंशार्दूलोभयविक्लवः ॥ ४ ॥ नतेचारयितुंशक्याराजन्वानरपुंगवाः ॥ विक्रांताबलवंतश्चराघवेणचरक्षिताः ॥ ५ ॥ नापिसंभाषितुंशक्याःसंप्रश्नोत्रनलभ्यते ॥ सर्वतोरक्ष्यतेपंथावानरैःपर्वतोपमैः ॥६॥ प्रविष्टमात्रेज्ञातोहंबलेतस्मिन्विचारिते ॥ बलाद्गृहीतोरक्षोभिर्बहुधाऽस्मिविचारितः ॥ ७ ॥ जानुभिर्मुष्टिभिर्दंतैस्तलैश्चाभिहतोभृशम्॥ परिणीतोस्मिहरिभिर्बलमध्येअमर्षणैः ॥ ८ ॥ परिणीयचसर्वत्रनीतोहंरामसंसदि ॥ रुधिरस्राविदीनांगोविह्वलश्चलितेंद्रियः ॥ ९ ॥ हरिभिर्वध्यमानश्चयाचमानःकृतांजलिः ॥ राघवेणपरित्रातोमामेतिचयदृच्छया॥ १० ॥ एषशैलशिलाभिस्तुपूरयित्वामहार्णवम् ॥ द्वारमाश्रित्यलंकायारामस्तिष्ठतिसायुधः ॥११॥ गरुडव्यूहमास्थायसर्वतोहरिभिर्वृतः ॥ मांविसृज्यमहातेजालंकामेवातिवर्तते॥१२॥ पुरप्राकारमायातिक्षिप्रमेकतरंकुरु॥ सीतांवापिप्रयच्छाशुयुद्धंवापिप्रदीयताम् ॥ १३ ॥

कारण हमारा शरीर लोहूलुहान हो रहा था व इन्द्रिय विचलित होनेके कारण हम विह्वल हो रहे थे ॥ ९ ॥ जब कि; वानरगण हमारे प्राण लेनेको तैयार हुए उस समय हम सबने हाथ जोडकर रामचन्द्रजीसे प्राणोंकी भीख मांगी, तब उन्होंने अपनी इच्छासे दया करके हमें छुडाय दिया ॥ १० ॥ हे महाराज ! यह रामचन्द्र पर्वत और शिलाओंके द्वारा समुद्रमें सेतु बांध कर लंकाके द्वारपर शस्त्र सहित टिके हुए हैं ॥ ११ ॥ वह गरुडव्यूह बनाये और वानरोंसे वेष्टित होकर युद्धकी राह परख रहे हैं; उन्होंने हमको तो छोड दिया परन्तु लंकाको वह घेरे ही पडे हैं ॥ १२ ॥ अब या तो उन रामचन्द्रके साथ युद्ध कीजिये, अथवा उन्हें सीता लौटा दीजिये कारण कि, अब वह "कोटकी भीतके पास" आयाही चाहते हैं ॥ १३ ॥

तब राक्षसोंका स्वामी रावण शार्दूलके मुखसे यह वचन सुनकर मनमें एक क्षणभरकी चिन्ता करके यह महत् वचन बोला ॥ १४ ॥ कि, जो देवता, दानव या गन्धर्वगण हमारे विरुद्ध युद्ध करनेको खडे हो जायँ या त्रिलोकीके रहनेवाले भी सब हमारे विरुद्ध हो जायँ, तथापि हम भीत होकर सीता रामचन्द्रको नहीं देंगे ॥ १५ ॥ यह कह कर महा तेजस्वी रावण फिर कहने लगा कि, तुमलोग हमारी आज्ञा पाय दूतभावसे सब कहीं घूमे हो, इस कारण बताओ तो वानरोंमें कौन २ वीर हैं ? ॥१६॥ और यह भी बताओ कि, न सहने योग्य वह वानरगण किसके पुत्र हैं ? किसके पोते हैं ? उनके शरीरकी कांति कैसी है ? और उनमें कौन २ शूर विख्यात हैं॥१७॥क्योंकि यह सुनकर हम उनका बलाबल जान पीछेसे उनके प्रति विधानका यत्न करेंगे, कारण कि; जयकी

मनसातत्तदाप्रेक्ष्यतच्छ्रुत्वाराक्षसाधिपः ॥शार्दूलंसुमहद्वाक्यमथोवाचसरावणः॥ १४ ॥ यदिमांप्रतियुद्ध्यंतेदेवगंधर्वदानवाः ॥ नैवसीतांप्रदास्यामिसर्वलोकभयादपि ॥१५॥ एवमुक्त्वामहातेजारावणःपुनरब्रवीत् ॥ चरिताभवतासेनाकेत्रशूराःप्लवंगमाः ॥ १६ ॥ किंप्रभाःकीदृशाःसौम्यवानरायेदुरासदाः ॥ कस्यपुत्राश्चपौत्राश्चतत्त्वमाख्याहिसुव्रत ॥ १७ ॥ तथात्रप्रतिपत्स्यामिज्ञात्वातेषांबलाबलम् ॥ अवश्यंखलुसंख्यानंकर्तव्यंयुद्धमिच्छता ॥ १८ ॥ अथैवमुक्तःशार्दूलोरावणेनोत्तमश्चरः ॥ इदंवचनमारेभेवक्तुंरावणसन्निधौ ॥ १९ ॥ अथर्क्षरजसःपुत्रोयुधिराजन्सुदुर्जयः॥ गद्गदस्याथपुत्रोत्रजांबवानितिविश्रुतः ॥ २० ॥ गद्गदस्याथपुत्रोऽन्योगुरुपुत्रःशतक्रतोः ॥ कदनंयस्यपुत्रेणकृतमेकेनरक्षसाम् ॥ २१ ॥ सुषेणश्चात्रधर्मात्मापुत्रोधर्मस्यवीर्यवान् ॥ सौम्यःसोमात्मजश्चात्रराजन्दधिमुखःकपिः ॥२२॥ सुमुखोदुर्मुखश्चात्रवेगदर्शीचवानरः ॥ मृत्युर्वानररूपेणनूनंसृष्टःस्वयंभुवा ॥ २३ ॥

इच्छाकरनेवाले राजाको प्रथम शत्रुसेनाकी संख्या जानलेनी और इनका बलाबल जानलेना अवश्य कर्तव्य है॥१८॥जब दूतश्रेष्ठ शार्दूलसे रावणनेत्र इस प्रकार पूँछा तब रावणके निकट उसने यह वचन कहने आरम्भ किये॥१९॥हे महाराज! उस सेनामें ऋक्षराजका पुत्र अजीत गदगद उसका पुत्र जाम्बवान्, जो कि, समरमें अति अजेय है॥२०॥गदगदका दूसरा पुत्र केशरी नाम वानर भी यहां है और इन्द्रजीके गुरु बृहस्पतिजीका पुत्र धूम्रनाम भी इस सेनामें है, जिस केशरीके दूसरे पुत्र हनुमान् वानरने अकेलेही सब राक्षसोंका अनादर कर डाला था॥२१॥वीर्यवान् सुषेण जो कि, धर्मात्मा धर्मका पुत्र है वह भी यहां आया है, और सरल स्वभाव युक्त चन्द्रमाका पुत्र दधिमुख वानर भी इस सेनामें है॥२२॥यहांपर सुमुख दुर्मुख और वेगदर्शी नामक यह तीन वानरभी आये हैं उनको देखनेसेही ज्ञान

होता है कि मानो विधाताने वानर रूपसे साक्षात् मृत्युकोही रच डाला है॥२३॥अग्निका पुत्र नील स्वयं इस सेनाका सेनापति होकर आया है और पवनपुत्र विख्यात हनुमान् भी इस सेनामें टिका हुआ है॥२४॥इन्द्रका नाती वालिका पुत्र अंगद भी, और अश्विनी कुमारके पुत्र महाबली मैन्द व द्विविदभी इस वाहिनीमें हैं ॥ २५ ॥ और कालान्तक यम सदृश्य वैवस्वतादि यमके पांच पुत्र गज, गवाक्ष, गवय शरभ और गन्धमादन यह सबही वीर यहां पर टिके हुए हैं॥२६॥ देवताओंके पुत्र और जो दशकोटि शूर श्रीमान् वानरगण जो युद्धकी कामना करके लंकामें आये हैं, उनके विषयको हमसे कहकर पूरा नहीं किया जायगा ॥ ॥२७॥जो युवा अवस्थाके हैं, वीर कुलमें प्रथम गिने जानेके योग्य हैं वे दशरथ महाराजके पुत्र हैं; इनके हाथसे खर, दूषण और त्रिशिराका संहार हुआ है ॥२८॥अधिक क्या कहें? उन श्रीरामचन्द्रजीके समान संसारमें और किसीका पराक्रम नहीं देखा जाता है; उन्होंने युद्धमें अजीतविराध और यमराजकी समान

पुत्रोहुतवहस्यात्रनीलःसेनापतिःस्वयम् ॥अनिलस्यतुपुत्रोत्रहनूमानितिविश्रुतः ॥ २४ ॥ नप्ताशक्रस्यदुर्धर्षोबलवानंगदोयुवा ॥ मैंदश्चद्विविदश्चोभौबलिनावश्विसंभवौ ॥२५॥ पुत्रावैवस्वतस्याथपंचकालांतकोपमाः ॥ गजोगवाक्षोगवयःशरभोगंधमादनः ॥२६॥ दशवानरकोटचश्चशूराणांयुद्धकांक्षिणाम् ॥श्रीमतांदेवपुत्राणांशेषंनाख्यातुमुत्सहे॥२७॥ पुत्रोदशरथस्यैषसिंहसंहननोयुवा॥ दूषणोनिहतोयेनखरश्चत्रिशिरास्तथा ॥ २८ ॥ नास्तिरामस्यसदृशोविक्रमेभुविकश्चन ॥ विराधोनिहतोयेनकबंधश्चांतकोपमः ॥२९॥ वक्तुंनशक्तोरामस्यगुणान्कश्चिन्नरःक्षितौ ॥ जनस्थानगतायेनतावंतोराक्षसाहताः ॥३०॥ लक्ष्मणश्चात्रधर्मात्मामातंगानामिवर्षभः ॥ यस्यबाणपथंप्राप्यनजीवेदपिवासवः ॥३१॥ श्वेतोज्योतिर्मुखश्चात्रभास्करस्यात्मसंभवौ ॥ वरुणस्याथपुत्रोथहेमकूटःप्लवंगमः ॥३२॥ विश्वकर्मसुतोवीरोनलःप्लवगसत्तमः ॥ विक्रांतोवेगवानत्रवसुपुत्रःसुदुर्धरः ॥ ३३ ॥ राक्षसानांवरिष्ठश्चतवभ्रातुविभीषणः ॥ प्रतिगृह्यपुरींलंकांराघवस्यहितेरतः ॥ ३४ ॥

कबन्धका प्राणसंहार किया है॥२९॥संसारमें कोई भी पुरुष श्रीरामचन्द्रजीके गुणग्राम वर्णन करनेको समर्थ नहीं है उन्होंने जनस्थानमें आगमन करके अनेक राक्षसोंका प्राणसंहार किया है ॥ ३० ॥ वैसेही यह वीरपुरुष लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीकी एक ओर बैठे शोभाको प्राप्त हुए हैं हमारा विश्वास है कि इनके बाण चलाने पर इन्द्रके जीवन रक्षा होनेमें भी सन्देह है फिर और दूसरोंकी तो गिनती क्या है॥३१॥सूर्यके दो पुत्र श्वेत व ज्योतिर्मुख नामक यहां हैं और वरुणका पुत्र हेमकूट नाम बानर भी इसवाहिनीमें आया है ॥३२॥विश्वकर्माकापुत्र वानरश्रेष्ठ नल और अतिविक्रम युक्त वेगवान् वसुकापुत्र दुर्धर भी यहांपर है ॥३३॥ श्रीरामचन्द्रजीसे लंकाका राज्य पायकर उनका हितसाधन करनेकी वासनासे आपके भ्राता राक्षस शार्दूल विभीषणजी वहां पर विराजमान हैं॥३४॥

हमने सुवेल शैल पर टिककर वानर सेनाके समाचार जो कुछ जाने हैं; वह आपसे कह सुनाये; इसके पीछे अब जो कुछ कर्तव्य हो वह आप कीजिये॥३५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि० युद्धकांडे भाषायां त्रिंशः सर्गः ॥३०॥ इस प्रकार सुवेल पर्वतपर लंकाके मध्यमें टिके हुए श्रीरामचन्द्रजी और उनकी सेनाको राक्षसनाथ रावणको उन दूतोंनेबताया ॥ १ ॥ राक्षसोंके स्वामी रावणने दूतोंके मुखसे श्रीरामचन्द्रजीका समाचार पाय अत्यन्त व्याकुल होकर मंत्री लोगोंको बुलाया ॥२॥ रावणने मंत्रियोंसे यह कहला भेजा कि, हे मंत्रिगण ! अब हमारे मंत्रणा करनेका समय आय पहुँचा है; इस लिये शीघ्रही सावधान होकर तुम यहांपर आओ॥३॥राक्षसराज रावणकी आज्ञा जानकर मंत्रीलोग शीघ्रही वहांपर आय पहुँचे. तब लंकापति रावण उन राक्षस मंत्रीलोगोंके सहित

इतिसर्वंसमाख्यातंतथावैवानरंबलम् ॥ सुवेलेधिष्ठितंशैलेशेषकार्येभवान्गतिः ॥३५॥ इत्यार्षे श्री०वा०आदि०च०सा० युद्धकांडे त्रिंशःसर्गः ॥३०॥ ततस्तमक्षोभ्यबलंलंकायांनृपतेश्वराः ॥ सुवेलेराघवंशैलेनिविष्टंप्रत्यवेदयन् ॥ १ ॥ चाराणांरावणःश्रुत्वाप्राप्तंराममहाबलम् ॥ जातोद्वेगोऽभवत्किंचित्सचिवानिदमब्रवीत् ॥ २ ॥ मंत्रिणःशीघ्रमायांतुसर्वेवैसुसमाहिताः ॥ अयंनोमंत्रकालोहिसंप्राप्तइतिराक्षसाः ॥ ३ ॥ तस्यतच्छासनंश्रुत्वामंत्रिणोऽभ्यागमन्द्रुतम् ॥ ततःसमंत्रयामासराक्षसैःसचिवैःसह ॥ ४ ॥ मंत्रयित्वातुदुर्धर्षःक्षमंयत्तदनंतरम् ॥ विसर्जयित्वासचिवान्प्रविवेशस्वमालयम् ॥ ५ ॥ ततोराक्षसमादायविद्युज्जिह्वंमहाबलम् ॥ मायाविनंमहामायंप्राविशद्यत्रमैथिली॥ ६ ॥ विद्युज्जिह्वंचमायाज्ञमब्रवीद्राक्षसाधिपः ॥ मोहयिष्यावहेसीतांमाययाजनकात्मजाम् ॥ ७ ॥ शिरोमायामयंगृह्यराघवस्यनिशाचर ॥ मांत्वंसमुपतिष्ठस्वमहच्चसशरंधनुः ॥ ८ ॥ एवमुक्तस्तथेत्याहविद्युज्जिह्वोनिशाचरः ॥ दर्शयामासतांमायांसुप्रयुक्तांसरावणे ॥ ९ ॥

मंत्रणा करने लगा ॥४॥ और जब मंत्रणाका कार्य पूरा हो गया, तब मंत्रीलोगोंको बिदा देकर दुर्धर्ष रावण अपने मंदिरको चला गया ॥ ५ ॥ उसके पीछे राक्षसनाथ मायावी रावण महाबलवान् महादुष्ट विद्युज्जिह्व नाम राक्षसको साथ ले जहां रामप्यारी श्रीजानकीजी थीं वहांपर जानेकी इच्छा करता हुआ॥६॥ जानेके समय रावण भली भांति मायाके जाननेवाले विद्युज्जिह्व नामक राक्षससे बोला कि; हे निशाचर ! आओ हम दोनोंजने मायाके बलसे जनक कुमारी सीताजीको मोहित करें ॥७॥ इस लिये तुम मायाविरचित श्रीरामचन्द्रजीका मस्तक और एक बाण सहित धनुष ग्रहण करके सीताके समीप हमारे पास आना ॥ ८ ॥ तब मायावी विद्युज्जिह्व राक्षसने रावणके वचनोंको मान विस्तार करके उसको रामचन्द्रका मायामय कटा हुआ शिर दिखाया ॥ ९ ॥

उसको देखकर राजा रावण बहुत सन्तुष्ट हुआ और पारितोषिकस्वरूप विद्युज्जिह्वको बहुतसे गहने इत्यादि देकर सीताजीके दर्शनकी लालसासे अशोक वाटिकाको गया॥ १०॥ कुबेरके छोटे भाई बली रावणने अशोक वनमें प्रवेश करके दूरसेही शोकसे कर्षित॥ ११॥ अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीका ध्यान करती हुई और अदीन ताके योग्य होकर भी दीनके समान नीचेको मुख किये पृथ्वीपर बैठी हुई जनकनंदिनी जानकीजीको देखा॥ १२॥ कि, जिनको चारोंओर से राक्षसियें घेरे हुई थीं उसके पीछे कुछ एक आगे बढकर रावण हर्ष सहित अपना नाम कहता हुआ॥ १३॥ बडी ढीठता पूर्वक जानकीसे यह वचन बोला; हे भद्रे ! हमारे बहुविध समझाने बुझाने पर भी तुम जिसका आश्रय कर हमारे वचनोंका अनादर करती हो ॥ १४ ॥ तुम्हारे वही खरके मार डालनेवाले स्वामी रामचन्द्र समरमें

तस्यतुष्टोऽभवद्राजाप्रददौचविभूषणम् ॥ अशोकवनिकायांचसीतादर्शनलालसः ॥ १० ॥ नैर्ऋतानामधिपतिःसंविवेशमहाबलः ॥ ततोदीनामदीनार्हांददर्शधनदानुजः ॥ ११ ॥ अधोमुखींशोकपरामुपविष्टांमहीतले ॥ भर्तारंसमनुध्यांतीमशोकवनिकांगताम् ॥ १२ ॥ उपास्यमानांघोराभीराक्षसीभिरदूरतः ॥ उपसृत्यततःसीतांप्रहर्षन्नामकीर्तयन् ॥ १३ ॥ इदंचवचनंधृष्टमुवाचजनकात्मजाम् ॥ सांत्व्यमानामयाभद्रेयमाश्रित्यविमन्यसे ॥ १४ ॥ खरहंतासतेभर्ताराघवःसमरेहतः ॥ छिन्नंतेसर्वथामूलंदर्पश्चनिहतोमया ॥ १५ ॥ व्यसनेनात्मनःसीतेममभार्याभविष्यसि ॥ सृजैतांमतिंमूढेकिंमृतेनकरिष्यसि ॥ १६ ॥ भवस्वभद्रेभार्याणांसर्वासामीश्वरीमम ॥ अल्पपुण्येनिवृत्तार्थेमूढेपंडितमानिनि ॥ शृणुभर्तृवधंसीतेघोरंवृत्रवधंयथा ॥ १७ ॥ समायातःसमुद्रांतंहंतुंमांकिलराघवः ॥ वानरेंद्रप्रणीतेनबलेनमहतावृतः ॥ १८ ॥ सन्निविष्टःसमुद्रस्यपीडयतीरमथोत्तरम् ॥ बलेनमहतारामोव्रजत्यस्तंदिवाकरे ॥ १९ ॥

मारे गये; इस कारण अब तुम्हारी जडही कट गई और गर्व भी मैंने तुम्हारा तोडा॥ १५॥ हे मूढे जनकनंदिनि! अब इस समय उस मरे हुए पतिको लेकर क्या करोगी ? इस कारण इस आये हुए विपद्‌कालमें इस दुर्बुद्धिको छोड कर तुम हमारी भार्या बनो॥ १६॥ हे अल्प पुण्यवाली पंडित मानिनि मूढे जानकि ! तुम इतने दिनसे जिन रामचन्द्रकी आशामें दिन बिताय रही थीं अब तुम्हारी उस आशाका अन्त हो गया, इस कारण हे भद्रे ! अब तुम सब स्त्रियोंके बीचमें पटरानी होकर दिन बिताओ। हे सीते ! दारुण वृत्रासुरके वधके समान तुम अपने स्वामीके वधका वृत्तांत सुनो॥ १७॥ रामचन्द्र हमको मार डालनेके लिये समुद्र पार वानरोंके स्वामी सुग्रीवकी बडी भारी सेनाके संग आये॥ १८॥ और जिस समय सूर्य अस्ताचलको चले उसी समय उन्होंने सेनागणको समुद्रके उत्तर तीरपर

टिकाया और स्वयं भी आपवहां टिक रहे ॥१९॥ परन्तु वानरोंकी सेना मार्गमें अत्यन्त थक जानेके कारण जब सुखसे सोय गई, तब हमारे प्रथमसेही नियत किये हुए दूत लोग उनके कार्योंको देख भालकर आये ॥ २० ॥ उसके पीछे सेनापति प्रहस्त हमारी बडी भारी सेनाके साथ लेकर जहां रामलक्ष्मण बास करते थे वहां जाय उसने सोतेही रामचन्द्रकी सेनाको मार डाला॥२१॥इस सेनाको पटा, परिघ, चक्र, दुधारा और दंड नामक महास्त्र बाणोंके जाल तीक्ष्ण शूल; बडे मुद्गर; कूट॥२२॥लट्ठ; तोमर; पाश; चक्र और मूसल इत्यादि बडे२आयुध उठा कर राक्षस लोगोंने वानरोंके ऊपर चलाये, जिनके चलानेसे समस्त वानर मर गये॥२३॥उस समय रामचन्द्र सुख की नींदमें सोय रहा था इस कारण वह युद्ध करनेको आगे नहीं बढा; परन्तु पराई सेनाके मथन करनेवाले प्रहस्तने सरलतायुक्त हो अपने हाथकी फुरती दिखा तलवारसे रामचन्द्रका शिर काट डाला ॥२४॥ विभीषणको इस अवस्थामें जितना दंड देना चाहिये था उतना दंड देनेमें कसर

अथाध्वनिपरिश्रांतमर्धरात्रेस्थितंबलम् ॥ सुखसुप्तंसमासाद्यचरितंप्रथमंचरैः ॥ २० ॥ तत्प्रहस्तप्रणीतेनबलेनमहतामम ॥ बलमस्यहतंरात्रौ यत्ररामःसलक्ष्मणः ॥ २१ ॥ पट्टिशान्परिघांश्चक्रानृष्टीन्दंडान्महायुधान् ॥ बाणजालानिशूलानिभास्वरान्कूटमुद्गरान् ॥ २२ ॥ यष्टीश्च तोमरान्प्रासांश्चक्राणिमुसलानिच ॥ उद्यम्योद्यम्यरक्षोभिर्वानरेषुनिपातिताः ॥ २३ ॥ अथसुप्तस्यरामस्यप्रहस्तेनप्रमाथिना ॥ असक्तंकृत हस्तेनशिरश्छिन्नंमहासिना ॥ २४ ॥ विभीषणःसमुत्पत्यनिगृहीतोयदृच्छया ॥ दिशंप्रव्राजितःसैन्यैर्लक्ष्मणःप्लवगैःसह ॥ २५ ॥ सुग्रीवो ग्रीवयासीतेभग्नयाप्लवगाधिपः ॥ निरस्तहनुकःसीतेहनूमान्राक्षसैर्हतः ॥ २६ ॥ जांबवानथजानुभ्यामुत्पतन्निहतोयुधि ॥ पट्टिशैर्बहुभिश्छि न्नोनिकृत्तःपादपोयथा ॥ २७ ॥ मैंदश्चद्विविदश्चोभौतौवानरवरर्षभौ ॥ निःश्वसंतौरुदंतौचरुधिरेणपरीवृतौ ॥ २८ ॥ असिनाभ्यायतौछि न्नौमध्येह्यरिनिषूदनौ ॥ अनुष्वनतिमेदिन्यांपनसःपनसोयथा ॥ २९ ॥

नहीं की गई उस समय वह प्राणोंके भयसे भागा पर पकड लिया गया और लक्ष्मण भी कोई उपाय देखकर बची बचाई वानरोंकी सेनाके साथ भगगया॥२५॥ हे सीते ! वानरराज सुग्रीव गर्दन टूट जानेसे रणभूमिमें पडे हैं और राक्षसगणोंने हनुमानकी ठोडी तोडकर उसको भी रणभूमिमें मार डाला॥२६॥जब यह देखकरजाम्ब वान् भयके मारे उठने लगा तब राक्षस लोगोंने बहुतसे पटे मार२कर उनकी जांघें तोड दीं, ऐसी चोट खाय वह भी मर गया, और जड कटे पेडके समान वहांपर पडा है ॥२७॥ वानरश्रेष्ठ मैन्द और द्विविद नामक दोनोंजने लंबे २ श्वास लेते रुदन करते २ लोहू लुहान शरीर हो मरगये ॥२८॥ प्रथमही अस्त्र प्रहार करके इन शत्रुओंके मारनेवाले लोगोंके हाथ काटडाले गये थे, पनसफल जिस प्रकार पृथ्वीपर गिरता है, वैसेही वानर पनस पृथ्वीपर शरीरको फैलाये हुए

पडाहै ॥२९॥ वानर दधिमुख अनेक प्रकारके बाण चलाये जानेसे मस्तक हीन होककरके पर्वतकी कन्दरामें सदाके लिये सोगया है और महातेजस्वी कुमुद नाम वानरभी चुपचाप शब्दरहित हो पृथ्वीपर पडा है ॥३०॥ अंगदभी बहुतसे बाणोंसे छिन्नभिन्न होकर मारागया, उसका बाजू अंगभी भूमिपर पडा हुआ है और उसके सब अंगोंसे रुधिरकी धारा निकल रही है॥३१॥और वायु वेगके प्रभावसे चलायमान मेघमालाके समान हाथी व रथोंके टकराने और पिचनेसे जितनी वानरसेना मारीगई है उसकी कुछ गिनतीही नहीं हो सकती ॥३२॥ सिंह जिसप्रकार महागजोंके पीछे दौडता है, वैसेही राक्षस लोगोंके हाथसे असंख्य वानर सेना भागती हुई भी गिरगई॥३३॥रीछ लोग वानर दलके साथ मिल व छिपकर वृक्षोंपर चढ गये हैं, और कोई २ समुद्रमें गिर गये हैं और कोई२

नाराचैर्बहुभिश्छिन्नःशेतेदर्यांदरीमुखः ॥ कुमुदस्तुमहातेजानिष्कूजन्सायकैर्हतः ॥ ३० ॥ अंगदोबहुभिश्छिन्नःशरैरासाद्यराक्षसैः ॥ परितोरुधिरोद्गारीक्षितौनिपतितोऽगदः ॥३१॥ हरयोमथितानागैरथजालैस्तथापरे ॥ शयानामृदितास्तत्रवायुवेगैरिवांबुदाः ॥ ३२ ॥ प्रसृताश्चपरेत्रस्ताहन्यमानाजघन्यतः ॥ अनुद्रुतास्तुरक्षोभिःसिंहैरिवमहाद्विपाः ॥३३॥ सागरेपतिताःकेचित्केचिद्गगनमाश्रिताः ॥ ऋक्षावृक्षानुपारूढावानरैर्व्यतिमिश्रिताः ॥ ३४ ॥ सागरस्यचतीरेषुशैलेषुचवनेषुच ॥ पिंगलास्तेविरूपाक्षाराक्षसैर्बहवोहताः ॥३५॥ एवंतवहतोभर्तासससैन्योममसेनया ॥ क्षतजार्द्ररजोध्वस्तमिदंचास्याहृतंशिरः ॥ ३६ ॥ ततःपरमदुर्धर्षोरावणोराक्षसेश्वरः ॥ सीतायामुपशृण्वंत्यांराक्षसीमिदमब्रवीत् ॥ ३७ ॥ राक्षसंक्रूरकर्माणंविद्युज्जिह्वंसमानय ॥ येनतद्राघवशिरःसंग्रामात्स्वयमाहृतम् ॥ ३८ ॥ विद्युज्जिह्वस्तदागृह्यशिरस्तत्सशरासनम् ॥ प्रणामंशिरसाकृत्वारावणस्याग्रतःस्थितः ॥ ३९ ॥

आकाशका आश्रय ग्रहण किये हुए हैं ॥ ३४ ॥ समुद्रके किनारोंपर पर्वत और वनोंमें जिन पीले अंगवाले वानरोंने आश्रय लिया था वह समस्त विरूपाक्ष राक्षसके हाथसे मार डाले गये ॥३५॥ हे जानकि ! इस प्रकार हमारी सेना गण करके तुम्हारे स्वामी सर्व सेनागणके साथ मार डाले गये हैं, तुम्हें विश्वास दिलानेके लिये हम उसका रुधिरसे सना व कटाहुआ मस्तकभी यहां ले आये हैं ॥३६॥ उसके पीछे परमदुर्जय राक्षसेश्वर रावण सीताजीको सुनानेके लिये उनके निकट बैठीहुई राक्षसीसे बोला॥३७॥कि हे निशाचरि ! जो राक्षस रणभूमिसेस्वयं रामचन्द्रका शिर काटकर लेआया है, उस क्रूरकर्मकारीविद्युज्जिह्व राक्षसको शीघ्र यहां बुलालाओ ॥३८॥ उसके पीछे रावणके ऐसा कहते ही यह मायावी विद्युज्जिह्व धनुषबाणके सहित मायामय श्रीरामचन्द्रजीका कटा हुआ

शिर ग्रहणकर रावणके आगे आय प्रणाम करता हुआ ॥ ३९ ॥ इसके पीछे राजा रावण मंत्रिश्रेष्ठ महाजीभवाले उस राक्षस विद्युज्जिह्वको आगे आया हुआ देखकर बोला कि ॥ ४० ॥ रामचन्द्रका कटाहुआ मस्तक इन जानकीको दिखाओ, कारण कि, इस समय यह कृपणा सीता अपने स्वामीकी अंतिम अवस्था देखे ॥ ४१ ॥ जब राक्षस विद्युज्जिह्वसे रावणने ऐसा कहा; तब वह प्रियदर्शन सीताजीको दिखायकर (स्त्रीकी गोष्ठीमें रहना अयुक्त जान) शीघ्रही अन्तर्धान होगया ॥ ४२ ॥ उसके पीछे रावणबोला; हे सीते ! देखो यह उन्हीं रामचन्द्रक त्रिलोकविख्यात दीप्तिशील और बडाभारी धनुषबाण है यह कहकर रावणने वह भयंकर धनुष फेंकदिया ॥४३॥ हे सीते ! पहँचान लो यह वही रोदा चढाहुआ रामचन्द्रजीका धनुष है, जिसको रात्रिकालमें रामचन्द्रजीका प्राणसंहार

तमब्रवीत्ततोराजारावणोराक्षसंस्थितम् ॥ विद्युज्जिह्वंमहाजिह्वंसमीपपरिवर्तिनम् ॥४०॥ अग्रतःकुरुसीतायाःशीघ्रंदाशरथेःशिरः ॥ अवस्थां पश्चिमांभर्तुःकृपणांसाधुपश्यतु ॥ ४१ ॥ एवमुक्तंतुतद्रक्षःशिरस्तत्प्रियदर्शनम् ॥ उपनिक्षिप्यसीतायाःक्षिप्रमंतरधीयत ॥४२ ॥ रावणश्चापि चिक्षेपभास्वरंकार्मुकंमहत् ॥ त्रिषुलोकेषुविख्यातंरामस्यैतदितिब्रुवन् ॥ ४३ ॥ इदंतत्तवरामस्यकार्मुकंज्यासमावृतम् ॥ इहप्रहस्तेनानीतंतं हत्वानिशिमानुषम् ॥४४॥ सविद्युज्जिह्वेनसहैवतच्छिरोधनुश्चभूमौविनिकीर्यमाणः ॥ विदेहराजस्यसुतांयशस्विनींततोऽब्रवीत्तांभवमेवशानुगा ॥ ४५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे एकत्रिंशः सर्गः ॥३१॥ सासीतातच्छिरोदृष्ट्वातच्चकार्मुक मुत्तमम् ॥ सुग्रीवप्रतिसंसर्गमाख्यातंचहनूमता ॥ १ ॥ नयनेमुखवर्णंचभर्तुस्तत्सदृशंमुखम् ॥ केशान्केशांतदेशंचतंचचूडामणिंशुभम् ॥२॥ एतैःसर्वैरभिज्ञानैरभिज्ञायसुदुःखिता ॥ विजगर्हेंत्रकैकेयींक्रोशंतीकुररीयथा ॥ ३ ॥

करके प्रहस्त लाया है ॥ ४४ ॥ उसके पीछे रावण विद्युज्जिह्वका लाया हुआ वह मस्तक यशस्विनी सीताजीके सामने रखकर उनसे बोला " जो होना था सो तो होगया" अब तुम्हारा कर्तव्य यही है कि; तुम हमारे वशमें हो जाओ॥४५॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०युद्धकांडे भाषायामेकत्रिंशः सर्गः॥ ३१ ॥ तब सीताजी रामचन्द्रजीका शरासन और उनका मस्तक देख और वह सुधि कर जो कि हनुमानजीने कहा था कि,वानरराज सुग्रीवजीकी रामचंद्रसे मित्रता हुई है बहुत देरतक रोई ॥ १ ॥ जानकीजीने देखाकि कटेहुए मस्तकके दोनों नेत्र रामचन्द्रजीकेही समान हैं, वैसाही मुखका रंग केश और ठोडी व चूडामणिके सहित भी इसका कुछ अनमेल नहीं है ॥२॥ जनकनंदिनी सीताजी और भी अनेक प्रकारके चिह्न देख निश्चय अपने स्वामीकी मृत्युका होना जान अत्यन्त

दुःखित हुई और कुररी जिस प्रकार शोकसे व्याकुल होकर विलाप करती है वैसेही विलाप कैकेयीकी निन्दा कर कहने लगीं ॥३॥ हे कैकेयि ! तुम्हारी मनो-कामना पूरी हुई हे क्लेशको प्यार करनेवाली ! तुमनेही रघुकुल नंदन श्रीरामचन्द्रजी निहित हुए, तुझकोही प्राप्त होकर बडे भारी रघुकुलका नाश हो गया ॥४॥ हाय ! आर्य पुत्र श्रीरामचन्द्रजीने तेरा ऐसा क्या बुरा किया था, कि, जो तैंने चीरवसन पहरायकर हमारे सहित उनको वनवास दिया ? हा ! ॥५॥ इतनाही कहकर तपस्विनी छोटी अवस्थावाली जानकीजीकी देह कम्पायमान होने लगी और वह जड कटे हुए केलेकी समान पृथ्वीपर गिर पडीं ॥ ६ ॥ उसके पीछे बडे नेत्रोंवाली सीताजी सावधान होकर बहुत देरके पीछे चैतन्यता प्राप्त करती हुई और अपने निकट उस मस्तकको रखकर विलाप करने

सकामाभवकैकेयिहतोयंकुलनंदनः ॥ कुलमुत्सादितंसर्वंत्वयाकलहशीलया ॥ ४ ॥ आर्येणकिंनुकैकेय्याःकृतंरामेणविप्रियम् ॥ यन्मयाचीरवसनंदत्त्वाप्रव्राजितोवनम् ॥ ५ ॥ एवमुक्त्वातुवैदेहीवेपमानातपस्विनी ॥ जगामजगतींबालाछिन्नातुकदलीयथा ॥६॥ सामुहूर्तात्समाश्वस्यपरिलभ्याथचेतनाम् ॥ तच्छिरःसमुपास्थायविललापायतेक्षणा ॥७॥ हाहतास्मिमहाबाहोवीरव्रतमनुव्रत ॥ इमांतेपश्चिमावस्थांगतास्मिविधवाकृता ॥८॥ प्रथमंमरणंनार्याभर्तुर्वैगुण्यमुच्यते ॥ सुवृत्तःसाधुवृत्तायाःसंवृत्तस्त्वंममाग्रतः ॥९॥ महद्दुःखंप्रपन्नायाममग्नायाःशोकसागरे योहिमामुद्यतस्त्रातुंसोपित्वंविनिपातितः ॥ १० ॥ साश्वश्रूर्ममकौसल्यात्वयापुत्रेणराघव ॥ वत्सलातेयथाधेनुर्विवत्सावत्सलाकृता ॥ ११ ॥ उद्दिष्टंदीर्घमायुस्तेदैवज्ञैरपिराघव ॥ अनृतंवचनंतेषामल्पायुरसिराघव ॥ १२ ॥

लगीं ॥७॥ हा महाबाहो! हम जीवित हुई भी मारी गई? तुमने वीरश्रेष्ठके समान अपने पिताका सत्यप्रतिपालन किया, परन्तु हमने विधवा होकर तुम्हारी यह सबसे पीछे अवस्था देखी ॥ ८ ॥ हा नाथ ! पहले स्वामीका मरण होनेसे वह स्त्रीके दोषसेही मरण कहलाता है, परन्तु हमको साध्वी (पतिव्रता) जानकर भी तुम किस कारणसे साधुके समान पहिलेही मृतक होगये ॥ ९ ॥ हाय ! हम महादुःखके समुद्रमें डूबती हुई बडे कष्टसे दिन बिताय रही हैं' हमें भरोसा था कि, तुम हमें इस विपद्से छुड़ाओगे, परन्तु हमारे जले भाग्यसे आज तुमही मृतक हो गये ॥१०॥ हा नाथ ! तुम सरीखा पुत्र पायकरभी हमारी वह सास कौशल्याजी किस कारणसे विना बच्चेकी गायके समान वत्सरहित होगई ! ॥ ११ ॥ हे रामचन्द्रजी ! वसिष्ठ आदि दैवके जाननेवाले महर्षियोंने तुमको बडी आयुवाला कहा था, परन्तु हमारे कुभाग्यसे तुम अल्पायु होकरही मृतक होगये हा ! अब उन महर्षियोंके वचन मिथ्या हुए ॥ १२ ॥

अथवा तुम पंडित होकर भी जो सावधानताका नाश होनेके कारण शत्रुके वशमें पडे सो यह सब बात कालसेही हुई कारण कि, कालही सर्वभूतोंका ईश्वर है यह बुद्धिमानोंकी भी बुद्धि लोप कर देता है ॥१३॥ हा नीतिविशारद! तुम तो सब विपदोंसे बचनेका उपाय जानते थे, और इन विपदोंके निवारण करनेमें समर्थ होकर भी तुम किस कारणसे इस अदृष्टकी मृत्युके वश हुए ॥ १४ ॥ हा कमललोचन! हमहीने क्या क्रूर घोररूपवाली कालरात्रि स्वरूप हो तुम्हे चिपटाय; तुम्हारी प्राणवायुको हरण कर लिया है ? ॥ १५ ॥ हा महाबाहो पुरुषश्रेष्ठ! तपस्विनीकी समान हमको परित्यागकर प्रियतमा स्त्रीके समान पृथ्वीको छातीसे लगाये तुम कहां पडे हो ? ॥१६॥ तुम हमारे साथ सुगन्धित द्रव्य और हारोंसे सदा जिसकी पूजा किया करते थे और जो हमको भी बहुतही प्यारा था उसी तुम्हारे इस सुवर्णमय धनुषकी यह क्या अवस्था हुई है ? ॥ १७ ॥ हा पाप रहित! तुम निश्चयही स्वर्गधाममें हमारे श्वसुर पिताके

अथवानश्यतिप्रज्ञस्यापिसतस्तव ॥ पचायेनंतथाकालोभूतानांप्रभवोह्ययम् ॥ १३ ॥ अदृष्टंमृत्युमापन्नःकस्मात्त्वंनयशास्त्रवित् ॥ व्यसनानामुपायज्ञःकुशलोह्यविसर्जने ॥१४॥ यथात्वंसंपरिष्वज्यरौद्रयाऽतिनृशंसया ॥ कालरात्र्यामयाच्छिद्यहृतःकमललोचनः ॥१५॥ उपशेषे महाबाहोमांविहायतपस्विनीम् ॥ प्रियामिवयथानारींपृथिवींपुरुषर्षभ ॥१६॥ अर्चितंसततंयत्नाद्गन्धमाल्यैर्मयातव ॥ इदंतेमत्प्रियंवीरधनुःकांचनभूषितम् ॥ १७॥ पित्रादशरथेनत्वंश्वशुरेणममानघ ॥ सर्वैश्चपितृभिःसार्धंनूनंस्वर्गेसमागतः ॥१८॥ दिविनक्षत्रभूतंचमहत्कर्मकृतंतथा ॥ पुण्यंराजर्षिवंशंत्वमात्मनःसमुपेक्षसे ॥ १९ ॥ किंमांनप्रेक्षसेराजन्किंवानप्रतिभाषसे ॥ बालांबालेनसंप्राप्तांभार्यांमांसहचारिणीम् ॥ २० ॥ संश्रुतंगृह्णतापाणिंचरिष्यामीतियत्त्वया ॥ स्मरतन्नामकाकुत्स्थनयमामपिदुःखिताम् ॥ २१ ॥

समान महाराज दशरथजीके व और दूसरे पितृलोगोंके साथमें मिल गये हो ? ॥१८॥ जो आकाशमें नक्षत्रके स्वरूपमें टिक रहे हैं उन राजर्षि त्रिशंकुके पवित्र वंशमें जन्म ग्रहण करके तुमने अपने पिताके वचनोंका पालनरूप बडाभारी कार्य किया, परन्तु ऐसा पुण्य प्राप्त करके भी जो ऐसे पवित्र वंशको त्याग आप स्वर्गको चले गये यह बहुतही अनुचित हुआ ॥ १९ ॥ हा राजन्! तुमने बालपनमें ही जिस बालिकाको अपनीसम सुखदुःख भोग करनेवाली स्त्री कहकर स्वीकार किया था, अब तुम किस कारणसे उसकी बातका उत्तर नहीं देते ? प्यारे! अब हमारी ओरको दृष्टि उठायकर भी नहीं देखते ? ॥२०॥ हे काकुत्स्थ! तुमने विवाहमें पाणिग्रहण करनेके समय "तुम्हारे सहित धर्मकर्मका आचरण करेंगे" ऐसी जो प्रतिज्ञा की थी, इस समय उसको याद

करके हमको भी अपने साथ लेते चलो ॥ २१ ॥ हे भलीगतिको पहुँचे हुए ! हमको दुःख भोग करनेके लिये इस लोकको छोडकर तुम किस वास्ते परलोकमें चले गये ॥ २२ ॥ हाय ! तुम्हारा मंगलमय मनोहर शरीर केवल हमहीं भेंट करता था अब वही शरीर मांसभक्षी राक्षस लोगों करके इधर उधर खैंचा जाता होगा ? ॥ २३ ॥ तुमने बहुत दक्षिणाके साथ अग्निष्टोमादि यज्ञ करके जो संस्कार किये थे, इस समय अग्निहोत्र द्वारा तुम वह संस्कार क्यों नहीं ग्रहण करते ? ॥ २४ ॥ हाय ! हम तीनजने अयोध्या पुरीसे वनवास करनेको आये थे; परन्तु अब कौशल्या इकले लक्ष्मणजीको ही लौट आये देखकर शोकके समुद्रमें डूबजायँगी ॥ २५ ॥ उसके पीछे जब वह लक्ष्मणजीसे तुम्हारा वृत्तान्त पूछेंगी तब लक्ष्मणजीभी निश्चयही वानरोंकी सेनाका वध और जिस प्रकार

कस्मान्मामपहायत्वंगतोगतिमतांवर ॥ अस्माँल्लोकादमुंलोकंत्यक्त्वामामपिदुःखिताम् ॥२२॥ कल्याणैरुचिरंगात्रंपरिष्वक्तंमयैवतु ॥ क्रव्यादैस्तच्छरीरंतेनूनंविपरिकृष्यते ॥ २३ ॥ अग्निष्टोमादिभिर्यज्ञैरिष्टवानाप्तदक्षिणैः ॥ अग्निहोत्रेणसंस्कारंकेनत्त्वंनतुलप्स्यसे ॥२४॥ प्रव्रज्यामुपपन्नानांत्रयाणामेकमागतम् ॥ परिप्रेक्ष्यतिकौसल्यालक्ष्मणंशोकलालसा ॥२५॥ सतस्याःपरिपृच्छंत्यावधंमित्रबलस्यते ॥ तवचाख्यास्यतेनूनंनिशायांराक्षसैर्वधम् ॥२६॥ सात्वांसुप्तंहतंज्ञात्वामांचरक्षोगृहंगताम् ॥ हृदयेनावदीर्णेननभविष्यतिराघव ॥२७॥ ममहेतोरनार्यायाअनघःपार्थिवात्मजः ॥ रामःसागरमुत्तीर्यवीर्यवान्गोष्पदेहतः ॥ २८ ॥ अहंदाशरथेनोढामोहात्स्वकुलपांसनी ॥ आर्यपुत्रस्यरामस्यभार्यामृत्युरजायत ॥२९॥ नूनमन्यांमयाजातिंवारितंदानमुत्तमम् ॥ याहमद्यैवशोचामिभार्यासर्वातिथेरिह ॥ ३० ॥ साधुघातयमांक्षिप्रंरामस्योपरि रावण ॥ समानयपतिंपत्न्याकुरुकल्याणमुत्तमम् ॥ ३१ ॥

राक्षसोंसे तुम मार डाले गये वह सर्व वार्ता कहेंगे ॥२६॥ हा राघव! उस समय तुमको सोते हुए नाशको प्राप्त और हमको राक्षसके घरमें घिरी हुई सुनेंगी तब क्या उनका हृदय शतखंड नहीं हो जायगा ? ॥ २७ ॥ हाय मुझे खोटे शीलवालीकेही लिये पापरहित राजकुमार श्रीरामचन्द्रजी समुद्रके पार होकर एक गौके खुरभर पानीमें डूब गये ॥ २८ ॥ हाय ! आर्य पुत्र श्रीरामचन्द्रजी अज्ञानकेही वश इस कुलनाशनीकेही साथ विवाह किया था कारण कि, मुझे भार्याके ही परिणाममें श्रीरामचन्द्रजीकी मृत्यु हुई ॥२९॥ हे आर्य जब कि, हम अतिथिलोगोंके प्रिय तुम्हारी भार्या हो इस थोडी उमरमेंही यहां शोक करनेको रहगई तब निश्चयही जानपडता है कि, पहले जन्ममें हमने गोदान; सुवर्णदान व पृथ्वीदानादि कुछ भी नहीं किया ॥३०॥ हे रावण! तुम शीघ्रही यह पति स्त्रीका मिलनरूप

भलाईकादेनेवाला कार्य पूरा करो कि; श्रीरामचन्द्रजीके पीछे अब हमको भी मार डालो ॥३१॥ हे दशशीश! तुम हमारे स्वामीके मस्तकके साथ हमारा मस्तक और उनके शरीरके साथ हमारा शरीर मिला दो। हे रावण! महानुभाव पतिके साथही जान हमको अच्छा लगता है ॥ ३२ ॥ बडे २ नेत्रोंवाली जनककुमारी जानकी अपने स्वामीका मस्तक और वह बडाभारी धनुष देखते२अत्यन्त दुःखसे संतापित होकर विलाप करने लगीं ॥३३॥ इधर जानकीजी तो इस प्रकार रोदन कर रही थीं कि, इतनेमें सेनाका एक निशाचर राक्षस रावणके सन्मुख हाथ जोडे आ पहुंचा॥३४॥ और उनसे "आर्य पुत्र! आपकी जय हो" यह कह रावणको प्रसन्नकर हाथ जोड प्रणाम किया और कहा कि, प्रहस्तनाम सेनापति आया है ॥३५॥ वह फिर विशेष करके बोला कि हे प्रभो ! महावीर प्रहस्तने

शिरसामेशिरश्चास्यकायंकायेनयोजय ॥ रावणानुगमिष्यामिगतिंभर्तुर्महात्मनः ॥३२॥ इतीवदुःखसंतप्ताविललापायतेक्षणा ॥ भर्तुःशिरोधनुश्चैवददर्शजनकात्मजा ॥ ३३ ॥ एवंलालप्यमानायांसीतायांतत्रराक्षसः ॥ अभिचक्रामभर्तारमनीकस्थःकृतांजलिः ॥ ३४ ॥ विजयस्वार्यपुत्रेतिसोभिवाद्यप्रसाद्यच ॥ न्यवेदयदनुप्राप्तंप्रहस्तंवाहिनीपतिम् ॥ ३५ ॥ अमात्यैःसहितःसर्वैःप्रहस्तस्त्वामुपस्थितः ॥ तेनदर्शनकामेनअहंप्रस्थापितः प्रभो ॥ ३६ ॥ नूनमस्तिमहाराजभावात्क्षमान्वित ॥ किंचिदात्ययिकंकार्यंतेषांत्वंदर्शनंकुरु ॥ ३७ ॥ एतच्छ्रुत्वादशग्रीवोराक्षसप्रतिवेदितम् ॥ अशोकवनिकांत्यक्त्वामंत्रिणांदर्शनंययौ ॥ ३८ ॥ सतुसर्वंसमर्थ्यैवमंत्रिभिःकृत्यमात्मनः ॥ सभांप्रविश्यविदधे विदित्वारामविक्रमम् ॥ ३९ ॥ अंतर्धानंतुतच्छीर्षंतच्चकार्मुकमुत्तमम् ॥ जगामरावणस्यैवनिर्याणसमनंतरम् ॥४०॥ राक्षसेंद्रस्तुतैःसार्धंमंत्रिभिर्भीमविक्रमैः ॥ समर्थयामासतदारामकार्यविनिश्चयम् ॥ ४१ ॥

सर्वमंत्रियोंके साथ मिलकर आपके दर्शन पानेकी आशासे हमको यहां भेज दिया है ॥३६॥ हे राजन् ! ऐसा जान पडता है कि, निश्चय कोई राजकार्य आकर पडा है जो कि अति आवश्यकीय है, इसी कारणसे वह लोग यहांपर आये हैं इस कारण आप उनको दर्शन दीजिये ॥३७॥ राक्षसके मुखसे राक्षस रावण ऐसी घबराहटका समाचार पाय अशोकवनको छोड मंत्रियोंके देखनेको जाता हुआ ॥ ३८ ॥ और उन मंत्रियोंके मुखसे श्रीरामचन्द्रजीके पराक्रमको जान उसके विषयमें कर्त्तव्याकर्त्तव्यके विचार और उसके योग्य कार्यके अनुष्ठान करनेके निमित्त सभामें आया ॥ ३९ ॥ इस ओर जैसेही कि, रावण यहांसे चला गया कि, वैसेही उसके संग २ वह माया कल्पि रामचन्द्रका शिर और विचित्र धनुषभी अन्तर्धान होगया ॥ ४० ॥ इस समयमें राजा रावण भयंकर विक्रमकारी

मंत्रियोंके सहित रामचन्द्रजीके संबंधमें इसी समय क्या कर्तव्य है यह मंत्रणा करने लगा ॥ ४१ ॥ तब रावण समीप अपने बैठे हुए हितकारी अपने सेनापति लोगोंसे समयानुसार वचन बोला ॥ ४२ ॥ कि, बहुत शीघ्र भेरी (बिगुल) बजवाकर तुम लोग शीघ्रही हमारी सेनाको यहां बुलवाओ; परन्तु किसीसे भी बुलानेका कारण न कहना ॥४३॥ उसके पीछे वह युद्धाभिलाषी दूत गण ''तथास्तु'' कहकर राक्षसराज रावणके वचन मान उस बडी भारी राक्षसी सेनाको वहां लायकर रावणके निकट उनके आगमनकी वार्ता निवेदन करते हुए॥४४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी आदि युद्धकांडे भाषायां द्वात्रिंशः सर्गः ॥ ३२ ॥ इधर सीताजीको मोहित निहार अत्यन्त हितकारिणी सीताजीकी सरमानाम राक्षसी सखी जानकीजीके निकट आई ॥ १ ॥ और मीठे वचनों करके उस

अविदूरस्थितान्सर्वान्बलान्यक्षान्हितैषिणः ॥ अब्रवीत्कालसदृशोरावणोराक्षसाधिपः ॥ ४२ ॥ शीघ्रंभेरीनिनादेनस्फुटंकोणाहतेनमे ॥ समानयध्वंसैन्यानिवक्तव्यंचनकारणम् ॥४३॥ ततस्तथेतिप्रतिगृह्यतद्वचस्तदैवदूताःसहसामहद्बलम् ॥ समानयंश्चैवसमागतंचन्यवेदयन्भर्तरियुद्धकांक्षिणि ॥४४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि० च० सा० युद्धकांडे द्वात्रिंशःसर्गः ॥३२॥ सीतांतुमोहितांदृष्ट्वासरमानामराक्षसी ॥ आससादाथवैदेहींप्रियांप्रणयिनासखी ॥ १ ॥ मोहितांराक्षसेंद्रेणसीतांपरमदुःखिताम् ॥ आश्वासयामासतदासरमामृदुभाषिणी ॥ २ ॥ साहितत्रकृतामित्रंसीतयारक्ष्यमाणया ॥ रक्षंतीरावणादिष्टासानुक्रोशादृढव्रता ॥ ३ ॥ साददर्शसखीसीतांसरमानष्टचेतनाम् ॥ उपावृत्त्योत्थितांध्वस्तांवडवामिवपांसुषु ॥ ४ ॥ तांसमाश्वासयामाससखीस्नेहेनसुव्रताम् ॥ उक्तायद्रावणेनत्वंप्रत्युक्तश्चस्वयंत्वया ॥ ५ ॥ लीनयागहनेशून्येभयमुत्सृज्यरावणात् ॥ तवहेतोर्विशालाक्षिनहिमेरावणाद्भयम् ॥ ६ ॥

रावणके संताप देनेसे मोहित हुई परम दुःखित जानकीजीको यह समझने बुझाने लगी ॥ २ ॥ यद्यपि सरमा सीताजीकी रक्षा करनेमें नियुक्त तो थी, परन्तु वह सीताजीकी अनुरागिणी और पक्षपातिना थी, इसीलिये सीताजीके साथ उसकी घनी मित्रता हो गयी थी ॥३॥ उसने अपनी प्रियसखी जानकीजीको लगभग चेतनारहित देखा । घोडी जिस प्रकार पृथ्वीपर लोटा करती है वैसेही पृथ्वीकुमारी पृथ्वीपर लोटही रही थी, सरमा उनको उठाकर सखीके स्नेहसे समझाने बुझाने लगी ॥४॥ हे सखि ! रावणने तुमसे जो कुछ कहा था और तुमने उसको जिस प्रकारसे उत्तर दिया था, इसलिये तुहारे प्रति अधिक स्नेह होनेके कारण उन बातोंके श्रवण करनेमें हमने कसर नहीं की ॥ ५ ॥ हम रावणके भयसे तुमको छोडकर अबतक निबिड वनमें टिक रही थीं परन्तु हे बडे नेत्रोवाली ! जो

कुछ कार्य हो तो हम तुम्हारे लिये रावणसेभी कुछ शंका नहीं करतीं ॥ ६ ॥ हे मैथिलि ! वह राक्षसोंका स्वामी रावण जिस कारणसे इस स्थानको घबडाहटके साथ छोड चला गया था, वह समस्तही कारण उसके पीछे २ जाकर हम जान आई हैं ॥७॥ उन सर्व्वान्तर्यामी श्रीरामचन्द्रजीके सोते रहते उनकी सेनाके साथ कोई भी युद्ध नहीं कर सकता और उस अवस्थामें उनपुरुषसिंह श्रीरामचन्द्रजीका वध करना भी युक्तियुक्त नहीं हो सकता ॥८॥ श्रीरामचन्द्रजीकी बात तो दूर रही, इन्द्र करके रक्षित देवतालोगोंकी नाईं श्रीरामचन्द्रजीसे रक्षित उन वृक्ष हाथोंमें लेकर लडनेवाले वानरोंको भी नहीं मार सकता ॥ ९ ॥ उन श्रीरामचन्द्रजीकी सुगोल दोनों भुजाजंघातक लम्बी हैं उनके सब शरीर पुष्ट हैं प्रतापवान् धनुष धारण करनेवाले कवच बख्तर धारण किये वह धर्मात्मा तीन लोकमें विख्यात है ॥१०॥ वह अत्यन्त घोर पराक्रम करनेवाले और नित्यकाल अपने परायेकी रक्षा करनेवाले नीतिशास्त्रके असाधारण जाननेवाले परम कुलीन हैं। भ्राता लक्ष्मण

ससंभ्रांतश्चनिष्क्रांतोयत्कृतेराक्षसेश्वरः ॥ तत्रमेविदितंसर्वमभिनिष्क्रम्यमैथिलि ॥७॥ नशक्यंसौप्तिकंकर्तुरामस्यविदितात्मनः ॥ वधश्चपुरुषव्याघ्रेतस्मिन्नैवोपपद्यते ॥ ८ ॥ नत्वेवंवानराहंतुंशक्याःपादपयोधिनः ॥ सुरादेवर्षभेणेवरामेणहिसुरक्षिताः ॥ ९ ॥ दीर्घवृत्तभुजःश्रीमान्महोरस्कःप्रतापवान् ॥ धन्वीसन्नहनोपेतोधर्मात्माभुविविश्रुतः ॥ १० ॥ विक्रांतोरक्षितानित्यमात्मनश्चपरस्यच ॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्राकुलीनोनयशास्त्रवित् ॥ ११ ॥ हंतापरबलौघानामचिंत्यबलपौरुषः ॥ नहतोराघवःश्रीमान्सीतेशत्रुनिबर्हणः ॥ १२ ॥ अयुक्तबुद्धिकृत्येनसर्वभूतविरोधिना ॥ इयंप्रयुक्तारौद्रेणमायामायाविनात्वयि ॥ १३ ॥ शोकस्तेविगतःसर्वंकल्याणंत्वामुपस्थितम् ॥ ध्रुवंत्वांभजतेलक्ष्मीःप्रियंतेभवतिशृणु ॥ १४ ॥ उत्तीर्यसागरंरामःसहवानरसेनया ॥ सन्निविष्टःसमुद्रस्यतीरमासाद्यदक्षिणम् ॥ १५ ॥ दृष्टोमेपरिपूर्णार्थःकाकुत्स्थःसहलक्ष्मणः ॥ सहितैःसागरांतस्थैर्बलैस्तिष्ठतिरक्षितः ॥ १६ ॥

भी उनके साथही साथ रहते हैं ॥ ११ ॥ हे सीते ! शत्रुकी सेनाके नाशकरनेवाले अचिन्त्य बलपौरुषयुक्त, शत्रुके संहारकारी अपने लघु भ्राता लक्ष्मणके सहित श्रीरामचन्द्रजी नहीं मारे गये ॥ १२ ॥ अन्याय बुद्धियुक्त क्रूरकर्म करनेवाले सर्व प्राणियोंका विरोध करनेवाले भयंकर रावणने तुम्हारे निकट माया फैलाया यह धनुष बाण और शिर दिखलानेका कार्य किया है ॥ १३ ॥ हे सीते ! शोक बीतकर अब तुम्हारे बडे भारी कल्याणका समय आया है हे मान्ये ! तुम बहुतही थोडे समयमें बडीभारी सम्पत्ति प्राप्त करोगी कारण कि, तुम्हारे लिये जिस मंगलमय कार्यका प्रारम्भ हमने किया है, वह तुम सुनो ॥ १४ ॥ हम देख आई हूँ कि श्रीरामचन्द्रजी वानरसेनाके सहित समुद्रके पार होकर महासमुद्रके दक्षिण किनारेपर टिके हुए हैं ॥ १५ ॥ हमने अन्तरिक्षमें टिककर स्वयं देखा है कि,

परिपूर्णार्थं रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी समुद्रके तीर टिकी वानरोंकी सेनासे रहित होकर अपने भ्राता लक्ष्मणजीके साथ विराजमान होरहे हैं ॥१६॥ और राक्षसोंके स्वामी रावणने जिन लघुविक्रमी दूतोंको भेजा था उन लोगोंनेभी लौटकर रावणके निकट ''रामचंद्रजी समुद्रको उतर आये'' यह समाचार दिया है ॥ १७ ॥ हे विशालनेत्रवाली ! राक्षसनाथ रावण यह वार्ता सुन करके मंत्रीलोगोंके साथ परामर्श करता है ॥१८॥ सरमा यह बात कह रही थी कि, इतनेमें जानकीजी और सरमा दोनोंने रावणकी सेनाका समरमें तैयार होनेके लिये भयंकर सिंहनाद सुना ॥१९॥ मधुर वचन करनेवाली सरमा सेनाकी तैयारीका समाचार देनेवाली भेरीका महाशब्द सुनकर सीताजीसे बोली ॥२०॥ हे भीरु ! जिस भेरीके शब्दोंको सुनकर सेना बख्तर धारण समरकी तैयारी करती है, अतएव मेघके गर्जनके समान यह उस भेरीके शब्द सुनो ॥ २१ ॥ मदमाते हाथी समस्तही सज गये, रथोंमें घोडे जुत गये, कवच बख्तर पहरे हुए असंख्य वीरगण

अनेनप्रेषितायेचराक्षसालघुविक्रमाः ॥ राघवस्तीर्णइत्येवंप्रवृत्तिस्तैरिहाहृता ॥ १७ ॥ सतांश्रुत्वाविशालाक्षिप्रवृत्तिंराक्षसाधिपः ॥ एषमंत्रयतेसर्वैःसचिवैःसहरावणः ॥ १८ ॥ इतिब्रुवाणासरमाराक्षसीसीतयासह ॥ सर्वोद्योगेनसैन्यानांशब्दंशुश्रावभैरवम् ॥१९॥ दंडनिर्घातवादिन्याःश्रुत्वाभेर्यामहास्वनम् ॥ उवाचसरमासीतामिदंमधुरभाषिणी ॥ २० ॥ सन्नाहजननीह्येषाभैरवाभीरुभेरिका ॥ भेरीनादंचगंभीरंशृणु तोयदनिःस्वनम् ॥ २१ ॥ कल्प्यंतेमत्तमातंगायुज्यंतेरथवाजिनः ॥ दृश्यंतेतुरगारूढाःप्रासहस्ताःसहस्रशः ॥ २२ ॥ तत्रतत्रचसन्नद्धाःसंपतंतिसहस्रशः ॥ आपूर्यंतेराजमार्गाःसैन्यैरद्भुतदर्शनैः ॥ २३ ॥ वेगवद्भिर्नदद्भिश्चतोयौघैरिवसागरः ॥ शस्त्राणांचप्रसन्नानांचर्मणांवचर्मणां तथा ॥ २४ ॥ रथवाजिगजानांचराक्षसेंद्रानुयायिनाम् ॥ संभ्रमोरक्षसामेषहृषितानांतरस्विनाम् ॥ २५ ॥ प्रभांविसृजतांपश्यनानावर्णसमुत्थिताम् ॥ २६ ॥''वनंनिर्दहतोघर्मेयथारूपंविभावसो ॥ घंटानांशृणुनिर्घोषंरथानांनेमिनिःस्वनम् ॥ १ ॥ हयानांह्रेषमाणानांशृणुतूर्यध्वनितथा ॥ उद्यतायुधहस्तानांराक्षसेंद्रानुयायिनाम् ॥ २ ॥

भाला हाथमें लिये घोडोंपर सवार होरहे हैं ॥ २२ ॥ और अस्त्रधारी अगणित वीरगण आगे बढ रहे हैं, और राजमार्ग अद्भुत रूप धारण किये सेनासे इस प्रकार छाय रहा है ॥२३॥ कि जिस प्रकार वेगयुक्त शब्दायमान समुद्र तरंगोंसे परिपूर्ण होता है । सिपाहियोंके अस्त्र शस्त्र ढाल बख्तर ॥२४॥ रथ, घोडे, हाथी और रावणके अनुगमनकारी राक्षसोंका शब्द होरहा है, योधा लोग हर्षित मन और अतिवेगसे युद्धके लिये तैयार हो रहे हैं॥२५॥ यह देखो ! ध्वजापताका इत्यादिकी अनेक वर्णवाली प्रभा प्रकाशमान होरही है ॥२६॥ ''जैसे ग्रीष्मकालमें वनके जलानेवाले अग्निकी अनेक वर्णवाली प्रभा निकलती है । हे सीते ! यह घंटोंकी ध्वनि रथोंको खर २ शब्द और तुरही निनाद, और घोडोंके हिनहिनानेका शब्द तुम श्रवण करो रावणके अनुयायी राक्षसगण हथियार उठाये गमन कर रहे हैं''

देखते २ भयंकर रुओंको खडा करनेवाले राक्षसोंकी तैयारियें होने लगीं, देखो शोकका नाश करनेवाली लक्ष्मी तुम्हारे अंगोंमें शोभायमान होरही है; राक्षसलोगोंको श्रीरामचन्द्रजीसे भय उत्पन्न हुआ है ॥२७॥ कि, जिस प्रकार इन्द्रजीसे दैत्योंको भय उत्पन्न होता है। हे कमलदल सम नेत्रवाली ! जितेंद्रिय अचिन्त्यविक्रमकारी क्रोधको वशीभूत किये हुए तुम्हारे पति श्रीरामचन्द्रजी समरमें रावणको संहार करके तुमको प्राप्त करेंगे ॥२८॥ इन्द्रजीने जिस प्रकार विष्णुजीकी सहायतासे शत्रुलोगों पर विशेष पराक्रम प्रकाश किया था, वैसेही तुम्हारे स्वामी श्रीरामचन्द्रजी अपने भ्राता लक्ष्मणजीके साथ संग्राममें राक्षसोंके ऊपर विचित्र विक्रम प्रगट करेंगे ॥२९॥ जब शत्रुका नाश हो जायगा, तब तुम्हारा मनोरथ भी पूर्ण होगा और हम तुम्हें यहां आये हुए तुम्हारे स्वामीके अंगमें विराजमान देखेंगी ॥३०॥ हे जानकि !

संभ्रमोरक्षसामेषतुमुलंलोमहर्षणम् ॥ श्रीस्त्वांभजतिशोकघ्नीरक्षसांभयमागतम् ॥ ॥ २७॥ रामःकमलपत्राक्षोदैत्यानामिववासवः ॥ अवजित्यजितक्रोधस्तमचिंत्यपराक्रमः ॥ राणंसमरेहत्वाभर्तात्वाऽधिगमिष्यति ॥ २८ ॥ विक्रमिष्यतिरक्षस्सुभर्तातेसहलक्ष्मणः ॥ यथाशत्रुषुशत्रुघ्नोविष्णुनासहवासवः ॥२९॥ आगतस्यहिरामस्यक्षिप्रमंकगतांसतीम् ॥ अहंद्रक्ष्यामिसिद्धार्थांत्वांशत्रौविनिपातिते ॥ ३० ॥ अश्रूण्यानंदजानित्वंवर्तयिष्यसिजानकि ॥ समागम्यपरिष्वक्तातस्योरसिमहोरसः ॥ ३१ ॥ अचिरान्मोक्ष्यतेसीतेदेवितेजघनंगताम् ॥ धृतामेकांबहून्मामान्वेणींरामोमहाबलः ॥ ३२ ॥ तस्यदृष्ट्वामुखंदेविपूर्णचंद्रमिवोदितम् ॥ मोक्ष्यसेशोकजंवारिनिर्मोकमिवपन्नगी ॥ ३३ ॥ रावणंसमरेहत्वानचिरादेवमैथिलि ॥ त्वयासमग्रःप्रिययासुखार्होलप्स्यतेसुखम् ॥ ३४ ॥ सभाजितात्वंरामेणमोदिष्यसिमहात्मना ॥ सुवर्षेणसमायुक्तायथासस्येनमेदिनी ॥ ३५ ॥

उन चौडी छातीवाले अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीको भेंटकर तुम उनकी छातीपर शीघ्र आनन्दके आंसू बहाओगी ॥३१॥ हे देवि ! तुम कई महीनोंसे जो जांघोंतक लम्बायमान एक मात्र वेणी धारण किये हुए हो सो महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजी शीघ्रही इस चोटीकी बहुत शीघ्र अपने कर पंकजोंसे सुधार देंगे और तुम बहुतही शीघ्र विपदसे छूटोगी ॥ ३२ ॥ हे देवि ! जिस प्रकार सांपिनीपुरानी कैंचलीको छोड देती है, वैसेही तुम उदय हुए चन्द्रमाके समान अपने स्वामीका मुख देखकर शोकसे निकले हुए आंसू गिराने छोड दोगी ॥ ३३ ॥ हे राम प्यारी जानकी ! सुखके योग्य श्रीरामचन्द्रजी बहुतही शीघ्र रणभूमिमें रावणका संहार करके तुम्हारे साथ सुख प्राप्त करेंगे ॥३४॥ जिस प्रकार यथोचित वर्षा होनेसे धान्ययुक्त पृथ्वीकी अपूर्व शोभा होती है वैसेही तुम श्रीरामचन्द्रजीके

प्रेमव्यवहारसे सम्मानिन होकर अत्यन्त ही संतोष भोग करोगी ॥ ३५॥ हे देवि जानकि, जो पर्वत श्रेष्ठ सुमेरुसे चारों ओर अभ्रके समान गोलाकारगतिसे घूमा करते हैं अब तुम उन्हीं प्रजा लोगोंका मंगल करनेवाले अपने कुल देवता सूर्य भगवान्‌की शरणमें जाओ * ॥ ३६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्ध भाषायां त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३३ ॥ ग्रीष्मऋतुके तापसे संतापित हुई पृथ्वीको जलसे सींचनेके समान सरमाने इस प्रकारके वचन कहकर, उस रावणके वचनों करके मोहित जानकीजीका संतापित हृदय शीतल किया ॥ १ ॥ उसके पीछे समयको जाननेवाली सरमाने प्रिय सखी जानकीजीको हितकी कामनासे हँसकर उस समयके अनुसार कहा ॥ २॥ हे असितलोचने जानकि! हम गुप्तभावसे जाकर श्रीरामचन्द्रजीका संवाद जाना तुम्हारे निकट आयकर कहेगी ॥ ३॥ हमारे आश्रयरहित आकाशमें गमन करनेपर पवन या विनताके पुत्र गरुडजी भी हमारी गतिको नहीं रोक सकते हैं ॥ ४ ॥ यद्यपि सीताजी शोक संतापसे क्षीण शरीर होगई थी परन्तु सर-

गिरिवरमभितोविवर्तमानोहयइवमंडलमाशुयःकरोति ॥ तमिहशरणमभ्युपैहिदेविदिवसकरंप्रभवोह्ययंप्रजानाम् ॥३६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥३३॥ अथतांजातसंतापांतेनवाक्येनमोहिताम् ॥ सरमाह्लादयामासमहींदग्धा-मिवांभसा॥१॥ततस्तस्याहितंसख्याचिकीर्षंतीसखीवचः॥उवाचकालेकालज्ञास्मितपूर्वाभिभाषिणी॥२॥उत्सहेयमहंगत्वात्वद्वाक्यमसितेक्षणे॥ निवेद्यकुशलंरामेप्रतिच्छन्नानिवर्तितुम् ॥३॥ नहिमेक्रममाणायानिरालंबेविहायसि ॥ समर्थोगतिमन्वेतुंपवनोगरुडोपिवा ॥४॥ एवंब्रुवाणां तांसीतासरमामिदमब्रवीत् ॥ मधुरंश्लक्ष्णयावाचापूर्वंशोकाभिपन्नया ॥ ५॥ समर्थागगनंगंतुमपिचत्वंरसातलम् ॥ अवगच्छाद्यकर्तव्यंकर्त-व्यंतेमदंतरे ॥६॥ मत्प्रियंयदिकर्तव्यंयदिबुद्धिःस्थिरातव ॥ ज्ञातुमिच्छामितंगत्वाकिंकरोतीतिरावणः ॥ ७ ॥ सहिमायाबलःक्रूरोरावणःशत्रु-रावणः॥मांमोहयतिदुष्टात्मापीतमात्रेववारुणी॥८॥तर्जापयतिमांनित्यंभर्त्सापयतिचासकृत्॥राक्षसीभिःसुघोराभिर्योमांरक्षतिनित्यशः ॥९॥

माके धीरजयुक्त वचनोंसे उनको कुछेक धीरज आया और फिर वह मधुर कोमल वाणीसे सरमासे बोलीं ॥ ५ ॥ निःसन्देह तुम आकाशमें पातालमें जाय सकती हो और वह भी हम जानती हैं, ऐसा कोई कार्य नहीं है कि, जिसको हमारे लिये तूम न कर सकोगी ॥ ६ ॥ जो कुछ भी हो यदि हमारा प्रियकार्य सिद्ध करना तुम चाहती हो और यदि इस कार्यमें तुम्हारी स्थिर मति हुई हो तो रावण इस स्थानसे जायकर इस समय हमारे संबंधमें क्या विचार कर रहा है; यह जान आओ कारण कि- यही बात जाननेकी हमारी इच्छा हुई है ॥ ७॥ जिस प्रकार लोग मदिरा पानकरके मोहित हो जाते हैं वैसेही मायाके बलसे क्रूर शत्रु रावण हमको मोहित करनेकी चेष्टा कर रहा है ॥ ८॥ हे सरमे ! रावण सदा घोर राक्षसियोंसे हमारी रक्षा करता है; और उनसे हमको डरवाय धमकाय कर हमारी निन्दा भी करता है ॥ ९॥

* सूर्यकुलके रामचन्द्रकी तुम वधू हो सो दयानिधान सूर्य भगवान् तुम्हारी विपद दूर करेंगे यह आशय है ॥

हमारा मन हमारे वशमें न रहकर सदा उद्वेगको प्राप्त और शंकायुक्त रहता है हे सखि! अधिक क्या कहें, हम रावणके भयसे ही अशोकवनमें वास करती हैं, परन्तु क्षणभरके लिये भी हमारे मनकी व्याकुलता दूर नहीं होती ॥ १० ॥ हे सरमे! रावणकी सभामें हमारे छोड देनेके सम्बन्धमें अथवा और कोई दूसरा परामर्श हो; वह यदि तुम हमारे निकट समस्त प्रकाश करके कहो तो तुम्हारी हमारे ऊपर बडीही दया होगी, बस यही वरदान हम तुमसे माँगती हैं ॥ ११ ॥ मृदु वचन बोलनेवाली सरमाने सीताजीके ऐसे वचन सुनकर अपने दुपट्टेके अंचलसे उनका आँसूयुक्त मुखमंडल पोंछकर कहा ॥ १२ ॥ कि, हे जानकि! यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो हम सत्य करके कहती हैं कि तुम्हारे शत्रु रावणका सब वृत्तान्त जानकर हम शीघ्रही यहांपर लौटेंगी ॥१३॥ सरमा

उद्विग्नाशंकिता चास्मिनस्वस्थंचमनोमम ॥ तद्भयाच्चाहमुद्विग्नाअशोकवनिकांगता ॥ १० ॥ यदिनामकथातस्यनिश्चितंवापियद्भवेत् ॥ निवेदयेथाःसर्वंतद्वरोमेस्यादनुग्रहः ॥११॥ साप्येवंब्रुवतींसीतांसरमामृदुभाषिणी ॥ उवाचवचनंतस्याःस्पृशंतीबाष्पविक्लवम् ॥१२॥ एषतेयद्यभिप्रायस्तस्माद्गच्छामिजानकि ॥ गृह्यशत्रोरभिप्रायमुपावर्तामिमैथिलि ॥१३॥ एवमुक्त्वाततोगत्वासमीपंतस्यरक्षसः ॥ शुश्रावकथितंतस्यरावणस्यसमंत्रिणः ॥१४॥ साश्रुत्वानिश्चयंतस्यनिश्चयज्ञादुरात्मनः ॥ पुनरेवागमत्क्षिप्रमशोकवनिकांशुभाम् ॥१५॥ साप्रविष्टाततस्तत्रददर्शजनकात्मजाम् ॥ प्रतीक्षमाणांस्वामेवभ्रष्टपद्मामिवश्रियम् ॥१६॥ तांतुसीतापुनःप्राप्तांसरमांप्रियभाषिणीम् ॥ परिष्वज्यचसुस्निग्धंददौचस्वयमासनम् ॥ १७ ॥ इहासीनासुखंसर्वमाख्याहिममतत्त्वतः ॥ क्रूरस्यनिश्चयंतस्यरावणस्यदुरात्मनः ॥ १८ ॥ एवमुक्तातुसरमासीतयावेपमानया ॥ कथितंसर्वमाचष्टरावणस्यसमंत्रिणः ॥ १९ ॥

जानकीजीसे ऐसे वचन कहकर रावणकी सभामें चली गई, और मंत्रीलोगोंके साथ रावणकी जो सलाह हो रही थी वह समस्तही उसने सुनी ॥ १४ ॥ उसके पीछे सरमा बनाय निश्चय करके दुरात्मा रावणकी सम्मतिके समस्त समाचार जान शीघ्रही मनोहर अशोकवनमें चली आई ॥१५॥ उस सरमाने अशोक वाटिकामें आय जानकीजीको उस प्रकारसे अपने राह परखते हुए देखा कि, जिस प्रकार कमलफूलोंसे भ्रष्ट होकर लक्ष्मीजी बैठी हैं ॥१६॥ तब सीताजी मधुर वचन कहनेवाली सरमाको फिर आई हुई देखकर प्रेमसहित भलीभाँति उससे भेंटीं और स्वयं उसके बैठनेको आसन देकर कहा ॥ १७ ॥ कि हे सखि! इस आसनपर बैठकर उस क्रूरकर्मकारी रावणकी समस्त सलाह तुम हमसे कहो ॥ १८ ॥ कंपित होती हुई जब सीताजीने सरमासे इस प्रकार कहा तब सरमा मंत्रीलोगोंके सहित रावणकी

जो परामर्श हुई थी उसका समस्त भेद जानकीसे कहने लगी ॥१९॥ सरमा बोली कि, हे जानकी ! वृद्ध लोगोंने और रावणकी माताने तुमको श्रीरामचन्द्रजीके निकट लौटा देनेके लिये मधुरवाणीसे यह अत्युत्तम वचन रावणसे कहे ॥२०॥ कि "हे रावण ! तुम शीघ्र श्रीरामचन्द्रजीके पास आदरसहित सीताजीको लौटा दो हे राजन् ! उनका पराक्रम तो तुम जानतेही हो कि, जनस्थानमें उन्होंने कैसा अद्भुत कर्म किया था बस पराक्रमका तो प्रमाण इतनाही बहुत है ॥२१॥ हे राजन् ! समुद्रके पार आकर हनुमान्‌जी सीताको देखकर गये यह क्या कुछ थोडी बात है ? हे राक्षसराज ! श्रीरामचन्द्रजी साधारण मनुष्य नहीं हैं, कारण कि, ऐसा कौन मनुष्य है जो रणभूमिमें राक्षसोंको मार सकता है" ॥२२॥ हे जानकी ! इस प्रकारसे वृद्ध मंत्री और रावणकी माताने तुम्हें छोडदेनेके लिये रावणको बहुत समझाया बुझाया परन्तु

जनन्याराक्षसेंद्रोवैत्वन्मोक्षार्थंबृहद्वचः ॥ अतिस्निग्धेनवैदेहिमंत्रिवृद्धेनचोदितः ॥ २० ॥ दीयतामभिसत्कृत्यमनुजेंद्रायमैथिली ॥ निदर्शनं तेपर्याप्तंजनस्थनेयदद्भुतम् ॥ २१ ॥ लंघनंचसमुद्रस्यदर्शनंचहनूमतः ॥ वधंचरक्षसांयुद्धेकःकुर्यान्मानुषोयुधि ॥ २२ ॥ एवंसमंत्रिवृद्धैश्चमात्राचबहुबोधितः ॥ नत्वामुत्सहतेमोक्तुमर्थमर्थपरोयथा ॥२३॥ नोत्सहत्यमृतोमोक्तुंयुद्धेत्वामितिमैथिलि ॥ सामात्यस्यनृशंसस्यनिश्चयोह्येषवर्तते ॥२४॥ तदेषांसुस्थिराबुद्धिर्मृत्युलोभादुपस्थिता ॥ भयान्नशक्तस्त्वांमोक्तुमनिरस्तःससंयुगे ॥ २५ ॥ राक्षसनांचसर्वेषामात्मनश्चवधेनहि ॥ निहत्यरावणंसंख्येसर्वथानिशितैःशरैः ॥ प्रतिनेष्यतिरामस्त्वामयोध्यामसितेक्षणे ॥ २६ ॥ एतस्मिन्नंतरेशब्दोभेरीशंखसमाकुलः ॥ श्रुतोवैसर्वसैन्यानांकंपयन्धरणीतलम् ॥ २७ ॥

लालची पुरुष जिस प्रकार धनको किसी भाँति नहीं छोडता, वैसेही रावणकी इच्छा तुम्हें छोडनेकी नहीं है ॥२३॥ हे सीते ! रावणने अपने सब मंत्रियोंके साथ यह निश्चय किया है कि, हम प्राण रहते रामचन्द्रकी सीता रामचन्द्रको कभी नहीं देंगे॥२४॥राक्षसोंके साथ स्वयं रावण भी जबतक न मर जायगा तबतक तुमको त्याग नहीं करेगा ऐसा उस रावणने निश्चय सिद्धान्त कर लिया है ऐसी मति उसको मृत्युके लोभसेही उपस्थित हुई है, मृत्युनेही उसको वंचित किया है वह रामसे मृत्युका भय प्राप्त करके भी तुमको नहीं छोडना चाहता ॥ २५ ॥ हे श्यामनेत्रवाली ! तुम कुछ भी चिन्ता न करो रावणने अपने और सब राक्षसोंके वधके निमित्त यह कार्य किया है श्रीरामचन्द्रजी संग्राममें चलाये तीक्ष्ण बाणोंकी सहायतासे रावणका गर्व खर्व करके तुमको अपनी राजधानी अयोध्यापुरीमें ले जायेंगे ॥ २६ ॥ सरमा इस

प्रकारसे कहरही थी कि इतनेमें सेनाकी तैयारीका और शंखका भेरी युक्त बडा भारी शब्द उठा कि, जिससे समस्त पृथ्वी कांप गई ॥२७॥ तब लंकामें टिके हुए रावणके भृत्यराक्षस लोग वानरोंकी सेनाका यह कठोर सिंहनाद सुनकर अपनेको अत्यन्त हीनकार्य और दीनभाव युक्त समझते हुए रावणकी दुर्बुद्धि होनेके कारण वह लोग उस समय किसी प्रकारके कल्याणका सुख न दे सके ॥ २८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३४ ॥ पराये पुरको जीतनेवाले महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजी, भेरी शंख मिश्रित शब्दके साथ संग्राम करनेके लिये तैयार हुए ॥१॥ राक्षसपति रावण वह बडा भारी शब्द सुनकर मुहूर्त भरतक अपने मनमें शोच विचार करके समस्त मंत्रीगणोंकी ओर देखने लगा ॥२॥ महाबलवान् रावण मंत्रियोंको अपने सम्मुख कर सब सभाको

श्रुत्वातुतंवानरसैन्यनादंलंकागताराक्षसराजभृत्याः ॥ हतौजसोदैन्यपरीतचेष्टाःश्रेयोनपश्यन्तिनृपस्यदोषात् ॥२८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३४ ॥ तेनशंखविमिश्रेणभेरीशब्देननादिना ॥ उपयातिमहाबाहूरामः परपुरंजयः ॥ १ ॥ तंनिनादंनिशम्याथरावणोराक्षसेश्वरः ॥ मुहूर्तंध्यानमास्थायसचिवानभ्युदैक्षत ॥ २ ॥ अथतान्सचिवांस्तत्रसर्वानाभाष्य रावणः ॥ सभांसन्नादयन्सर्वानित्युवाचमहाबलः ॥ ३ ॥ जगत्संतापनःक्रूरोगर्हयन्राक्षसेश्वरः ॥ तरणंसागरस्यास्यविक्रमंबलपौरुषम् ॥ ४ ॥ यदुक्तवंतोरामस्यभवंतस्तन्मयाश्रुतम् ॥ भवतश्चाप्यहंवेद्मियुद्धेसत्यपराक्रमान् ॥ तूष्णीकानीक्षतोन्योऽन्यंविदित्वा रामविक्रमम् ॥५॥ ततस्तुसुमहाप्राज्ञोमाल्यवान्नामराक्षसः ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वाइतिमातामहोब्रवीत् ॥६॥ विद्यास्वभिविनीतोयोराजाराजन्नयानुगः ॥ सशास्ति चिरमैश्वर्यमरींश्चकुरुतेवशे ॥ ७ ॥ संदधानोहिकालेनविगृह्णंश्चारिभिःसह ॥ स्वपक्षेवर्धनंकुर्वन्महदैश्वर्यमश्नुते ॥ ८ ॥

अपने शब्दसे गुंजाता हुआ मंत्रियोंसे बोला ॥३॥ जगत्को सन्ताप देनेवाला क्रूर स्वभाव राक्षस रावण रामचन्द्रजीके पराक्रमकी व उनके समुद्र उतरनेकी निन्दा करने लगे ॥४॥ रावण मंत्रियोंसे बोला कि, तुम लोगोंने जो रामचन्द्रके समुद्रके उतर आने और उनके बलविक्रम पौरुषके विषयमें जो कुछ कहा वह समस्त ही हमने सुना, और तुम लोग सफल पराक्रम होकर भी जो रामचन्द्रके पराक्रमको जानकर उत्साहहीन हो परस्पर एक दूसरेका मुख देख रहे हो यह भी समस्त हमने जाना है ॥५॥ रावणने ऐसा कहा तो महापंडित माल्यवान् नामक रावणका नाना रावणके वचन सुनकर बोला ॥६॥ हे महाराज ! जो राजा चौदह विद्या निधान होकर नीतिशास्त्रके अनुसार कार्य करता है, वही शत्रु लोगोंको वश करके अपने ऐश्वर्यको सदा भोगता रहता है ॥७॥ जो राजा समयके अनुसार शत्रुके

साथ संधि और विग्रह (लडाई) करके अपने पक्षको बढाता है; वही बडे भारी ऐश्वर्यको प्राप्त करता है ॥८॥ राजा किसी समय भी शत्रुको तुच्छ समझकर छोड नहीं दे, जो आप शत्रुसे कम बलवान् हो या समान बलवाला हो, तब तो संधि करले, परन्तु जो शत्रुसे अधिक बलवाला हो तब तो शत्रुसे विग्रहही करना उचित है ॥९॥ हे रावण! हमारी सम्मतिमें तो जिसके लिये श्रीरामचन्द्रजीसे युद्ध करते हो उसी सीताको लौटायकर उन रामचन्द्रजीके साथ संधि करनाही तुमको उचित है ॥१०॥ देवता, गन्धर्व व ऋषिलोग सबहीकी यह कामना है कि, रामचन्द्रजीकी जीत हो; इस कारण उनके साथ विरोध न करके आपको संधि करलेनी उचित है ॥११॥ भगवान् पितामह ब्रह्माजीने सुर व असुर लोगोंके आश्रय वाले धर्म अधर्मरूप दो पक्ष बनाये हैं ॥१२॥ हे निशाचर ! हमने सुना है कि, उसमें धर्म, महात्मा देवताओंका, और अधर्म, राक्षस लोगोंका पक्ष कहलाया जाताहै॥१३॥ जिस समय सतयुग लगता है; उस समय धर्म अधर्मको ग्रास

हीयमानेनकर्तव्योराज्ञासंधिःसमेन च ॥ नशत्रुमवमन्येतज्यायान्कुर्वीतविग्रहम् ॥९॥ तन्मह्यंरोचतेसंधिःसहरामेणरावण॥ यदर्थमभियुक्तोसि सीतातस्मैप्रदीयताम् ॥१०॥ तस्यदेवर्षयःसर्वेगंधर्वाश्चजयैषिणः ॥ विरोधंमागमस्तेनसंधिस्तेतेनरोचताम् ॥११॥ असृजद्भगवान्पक्षौद्वावेव हिपितामहः॥सुराणामसुराणांचधर्माधर्मौतदाश्रयौ॥१२॥ धर्मोहिश्रूयतेपक्षअमराणांमहात्मनाम्॥अधर्मोरक्षसांपक्षोह्यसुराणांचराक्षस॥१३॥ धर्मोवै सतेऽधर्मंयदाकृतमभूद्युगम् ॥ अधर्मोग्रसतेधर्मंतदातिष्यःप्रवर्तते॥१४॥ तत्त्वयाचरतालोकान्धर्मोपिनिहतोमहान् ॥ अधर्मःप्रगृहीतश्च तेनास्मद्बलिनःपरे ॥१५॥ सप्रमादात्प्रवृद्धस्तेऽधर्मोहिर्ग्रसतेहिनः ॥ विवर्धयतिपक्षंचसुराणांसुरभावनः ॥१६॥ विषयेषुप्रसक्तेनयत्किंचित्का- रिणात्वया ॥ ऋषीणामग्निकल्पानामुद्वेगोजनितोमहान् ॥१७॥ तेषांप्रभावोदुर्धर्षःप्रदीप्तइवपावकः ॥ तपसाभावितात्मानोधर्मस्यानुग्रहेरताः ॥ १८ ॥ मुख्यैर्यज्ञैर्यजंत्येतेतैस्तैर्यत्तेद्विजातयः ॥ जुह्वत्यग्नींश्चविधिवद्वेदांश्चोच्चैरधीयते ॥ अभिभूयचरक्षांसिब्रह्मघोषानुदीरयन् ॥ १९ ॥

कर लेता है परन्तु जब अधर्म धर्मको लील लेता है तब कलिराजकी अवाई होती है ॥१४॥ परन्तु तुमने दिग्विजयके समय महाऐश्वर्य सिद्ध करनेवाले धर्मको छोड देव ब्राह्मणोंको पीडा पहुँचाय अधर्मका आचरण किया है, इसी कारणसे तुम्हारे शत्रु लोग ऐसे प्रबल होगये हैं॥१५॥ तुम्हारे चित्तके दोषसे उत्पन्न हुआ अधर्मरूप सर्पही इस समय हमको ग्रास किये लेता है; परन्तु देवता लोगोंके नित्य किये हुए धर्म कार्य उनके पक्षको बढा रहे हैं ॥ १६ ॥ तुमने स्वतंत्र होकर चलने और भोग विलासमें आसक्त होकर सदा ही अग्निके समान तेजस्वी ऋषिलोगोंको अत्यन्त क्रोध उपजाया है ॥ १७ ॥ हे रावण ! उन ऋषिलोगोंका प्रभाव प्रदीप्त अग्निके समान अत्यन्तही दुर्द्धर्ष है उनके अंतःकरण तपोबलसे शुद्ध होगये हैं, वह लोग धर्मके अनुग्रहमें टिके हुए हैं॥१८॥ हे रावण! वह

द्विजातिगण वेदका ऊच्चारण करते हुए राक्षस लोगोंको रोकते वेदाध्ययन ध्यानरूप मुख्य यज्ञसे ब्रह्मकी पूजा करके विधिपूर्वक अग्निमें आहुति दिया करते
हैं॥१९॥जिस प्रकार ग्रीष्मकालमें अत्यन्त तेजस्वी सूर्य भगवान्के उदय होनेपर बादल इधर उधरको भाग जाते हैं; वैसे ही राक्षस लोग उन ब्राह्मणकी वेदध्वनि
सुनकर चारों ओरको भाग जाते हैं,सो अग्नितुल्य तेजस्वी ऋषिलोगोंके अग्निहोत्रसे उठा हुआ ॥२०॥धुआँ राक्षस लोगोंके घरमें उनके तेजको ढककर दशों
दिशाओंमें फैला हुआ है वह व्रत धार किये ऋषि लोग जिस २ पुण्यवान् स्थानमें ॥२१॥ तपस्या करते हैं, वह वहींसे राक्षस लोगोंको संतापित किया करते
हैं और तुमको कदाचित् यह गर्व हो कि, वरदान पानेके प्रभावसे हमारा मरण हो भी नहीं सकता सो हे महाराज ! यही वर तो तुमने ब्रह्माजीसे मांगा
था कि-हम देव, दावन, यक्षसे न मरें मनुष्य और वानरोंको तो कुछ न गिन कर इनसे तो अवध्य मांगा ही नहीं ॥ २२ ॥ परन्तु महाबलवान् दृढवि-
क्रमकारी अजेय मनुष्य और गोपुच्छ वानर यहां आकर गर्जन कर रहे हैं। इनसे कैसे निबटोगे ? कारण कि इनके रोकनेका पहलेसे आपने कोई उपाय

दिशोविप्रद्रुताःसर्वैस्तनयित्नुरिवोष्णगे ॥ ऋषीणामग्निकल्पानामग्निहोत्रसमुत्थितः ॥२०॥ आवृत्यरक्षसांतेजोधूमोव्याप्यदिशोदश ॥ तेषु
तेषुचदेशेषुपुण्येष्टचवधृतव्रतैः ॥२१॥ चर्यमाणंतपस्तीव्रंसंतापयतिराक्षसान् ॥ देवदानवयक्षेभ्योगृहीतश्चवरस्त्वया ॥२२॥ मनुष्यावानरा
ऋक्षागोलांगूलामहाबलाः ॥ बलवंतइहागम्यगर्जंतिदृढविक्रमाः ॥ २३ ॥ उत्पातान्विविधान्दृष्ट्वाघोरान्बहुविधान्बहून् ॥ विनाशमनुपश्या-
मिसर्वेषांरक्षसामहम् ॥ २४ ॥ खराभिस्तनिताघोरामेघाःप्रतिभयंकराः ॥ शोणितेनाभिवर्षंतिलंकामुष्णेनसर्वतः ॥ २५ ॥ रुदतांवाहनानां
चप्रपतंत्यश्रुबिंदवः ॥ रजोध्वस्ताविवर्णाश्चनप्रभांतियथापुरम् ॥ २६ ॥ व्यालागोमायवोगृध्रावाश्यंतिचसुभैरवम् ॥ प्रविश्यलंकामारामेस-
मवायांश्चकुर्वते ॥ २७ ॥ कालिकाःपांडुरैर्दंतैःप्रहसंत्यग्रतःस्थिताः ॥ स्त्रियःस्वप्नेषुमुष्णंत्योगृहाणिप्रतिभाष्यच ॥ २८ ॥

नहीं किया है ॥२३॥ इस समय अनेक प्रकारके घोर उत्पात और विविध भांतिके घोर दुर्निमित्त दिखलाई देते हैं कि, जिससे हमको यह ज्ञात होता है कि
समस्त राक्षसोंका नास हो जायगा ॥२४॥ हे रावण ! हम गधोंको भयंकर शब्दसे रेंगता हुआ देखते हैं। और बादल घोर शब्दसे गर्ज२कर गरम रुधिरकी
वर्षा करते हैं! कि जिसको देखकर अत्यन्त भय लगता है॥२५॥ सवारीके समस्त पशुगण रोते हैं कि जिससे बराबर उनकी आंखोंसे आंसुओंकी बूंदें गिरती
रहती हैं और समस्त दिशा विदिशा धूरिसे छाये रहनेके कारण पहलेके समान प्रकाशित नहीं होतीं ॥२६॥ गीध, गीदड, सर्प इत्यादि मांस खानेवाले पशु
पक्षीगण लंकानगरीकी फुलवाडियोंमें प्रवेश करके झुण्ड बांध२ भयंकर शब्द करते हैं ॥ २७ ॥ महाकालिका पीले २ दांत निकालकर आगे २ हँसती हुई
चलती हैं; सब स्त्रियाँ स्वप्नमें ही बात करते२उठकर अपने घरोंको छोड चली आती हैं। अथवा यह कि, स्वप्नमें पीले दांतवाली काली स्त्रियाँ घरोंमें धरी हुई

चीज वस्तुसे हँस २ बातें करती हैं ।। २८।। कौओंके अर्थ जो बलिकी सामग्री दी जाती है; अथवा देव पूजनकी सामग्री जो होती है उसे कुत्ते खाजाते हैं। गायोंसे गधे और न्यौलोंसे चूहोंकी उत्पति होती है ।।२९।। व्याघ्रोंके साथ बिलाव, कुत्तोंके साथ सुअर, राक्षसोंके साथ किन्नर और मनुष्योंके साथ राक्षस मैथुन करते हैं ।। ३० ।। पीले वर्णके लाल चरणवाले बहुत सारे कबूतर राक्षस लोगोंके विनाशार्थही मानो कालके भेजे हुए घरोंमें घूमते हैं ।।३१।। और घरके भीतर पाली हुई सारिका परस्पर क्लेश करती चीची कूची शब्द करती हैं व लडनेके लिये दूसरे जंगली पक्षी भी उनके पास आते हैं उनसे लडते २ वह सारिका एक दूसरेसे गुँथकर अपने अड्डोंपरसे गिर पडती हैं ।। ३२ ।। पशु और पक्षीगण सूर्यकी ओरको मुख कर २ रोते हैं, विकराल रूप और शिर मुँड़ाये काले पीले वर्णका काला पुरुष ।। ३३ ।। सन्ध्याके समय हम लोगोंके घरोंमें प्रवेश करके घूमता फिरता है। इसी प्रकारके और दुष्ट निमित्त हम

गृहाणांबलिकर्माणिश्वानःपर्युपसेवते ।। खरागोषुप्रजायंतेमूषकानकुलेषुचः ।।२९।। मार्जाराद्वीपिभिःसार्धंसूकराःशुनकैःसह ।। किन्नराराक्षसैश्चापिसमेयुर्मानुषैःसह ।। ३० ।। पांडुरक्तपादाश्चविहगाःकालचोदिताः ।। राक्षसानांविनाशायकपोताविचरंतिच ।। ३१ ।। चीचीकूचीतिवाशंतःशारिकावेश्मसुस्थिताः ।। पतंतिग्रथिताश्चापिनिर्जिताःकलहैषिभिः ।। ३२।। पक्षिणश्चमृगाःसर्वेप्रत्यादित्यंरुदंतिते ।। करालोविकलो मुंडःपुरुषःकृष्णपिंगलः ।।३३।। कालोगृहाणिसर्वेषांकालेकालेऽन्ववेक्षते।। एतान्यन्यानिदुष्टानिनिमित्तान्युत्पतंतिच।।३४।। "रामंमन्यामहेविष्णुंमानुषंरूपमास्थितम् ।। नहिमानुषमात्रोसौराघवोदृढविक्रमः ।।१।। येनबद्धःसमुद्रेचसेतुःसपरमाद्भुतः ।। कुरुष्वनरराजेनसंधिंरामेणरावण ।।२।।" ज्ञात्वाऽवधार्यकर्माणिक्रियतामायतिक्षमम् ।।३५।। इदंवचस्तस्यनिगद्यमाल्यवान्परीक्ष्यरक्षोधिपतेर्मनःपुनः ।। अनुत्तमेषूत्तमपौरुषोबलीबभूवतूष्णींसमवेक्ष्यरावणम् ।। ३६ ।। इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे पंचत्रिंशः सर्गः ।। ३५ ।।

लोगोंको दिखाई देते हैं ।।३४।। "नराकार धारण किये श्रीरामचन्द्रजीको हम तो पुराण पुरुषोत्तम विष्णुही जानते हैं कारण कि मनुष्यमें दृढ पराक्रम होना कदापि संभव नहीं ।।१।। जिन्होंने समुद्रमें महा अद्भुत सेतु बांध लिया, वह नारायण विष्णुजी न होकर मनुष्य किस प्रकारसे हो सकते हैं ? इस लिये हे रावण! तुम श्रीरामचन्द्रजीसे मेल मिलाप कर लो ।।२।।" और श्रीरामचन्द्रजीकोही इन सब दुर्निमित्तोंका कारण जान परिणाममें जिस कार्यको सुखकारी समझो उसीको करो ।। ३५ ।। शास्त्र धारियोंमें श्रेष्ठ उत्तम पौरुषवाला बलवान् माल्यवान् यह वचन कहकर राक्षसराज रावणके मनकी परीक्षा करता हुआ उसके मुखका भाव देखकर चुप हो गया ।। ३६ ।। इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्ध० भाषायां पंचत्रिंशः सर्गः ।। ३५ ।।

दुष्ट बुद्धिवाला रावण माल्यवानके कहे हुए वह हितकारी वचन सुनकर कालके वश होनेसे उसके वचनोंको सहन नहीं कर सका ॥ १ ॥ बरन् क्रोधके मारे उसके दोनों नेत्र घूमने लगे, फिर क्रोधके वश हो और मुँह टेढा करके रावण माल्यवानसे बोला ॥ २ ॥ तुमने शत्रुपक्षको प्रबल विचार करके हमारा हित साधनेकी कामनासे जो कठोर वचन कहे उनको हमने ग्रहण नहीं किया ॥३॥ रामचन्द्र मनुष्य होनेके कारण स्वभावसेही दुर्बल हैं और केवल वानरलोगही उनकी सहायता करनेवाले हैं; यदि उसमें कुछ सामर्थ्य ही होती तो वह अपने बाप दादोंका राज्य छोडकर वनको ही क्यों आता ? ॥ ४ ॥ और जिसने अपने देवता लोगोंको भी भय उत्पन्न करा दिया है, और सर्व विक्रमी राक्षसोंके हम राजा हैं, फिर हमको जो तुम असमर्थ समझते हो इसका क्या कारण है ? ॥५॥ हमको जान पडता है कि, वीर लोगोंसे वैर या शत्रुकी पक्षपातता (तरफदारी) अथवा हमारे उत्साहसे उत्साहित होकर हमको और भी उत्साह दिलाने

तत्तुमाल्यवतोवाक्यंहितमुक्तंदशाननः ॥ नमर्षयतिदुष्टात्माकालस्यवशमागतः ॥ १ ॥ सबद्धाभ्रुकुटिंवक्त्रेक्रोधस्यवशमागतः ॥ अमर्षात्परिवृत्ताक्षोमाल्यवंतमथाब्रवीत् ॥ २ ॥ हितबुद्ध्यायदहितंवचःपरुषमुच्यते ॥ परपक्षंप्रविश्यैवनैतच्छ्रोत्रगतंमम ॥ ३ ॥ मानुषंकृपणंराममेकंशाखामृगाश्रयम् ॥ समर्थंमन्यसेकेनत्यक्तंपित्रावनाश्रयम् ॥ ४ ॥ रक्षसामीश्वरंमांचदेवानांचभयंकरम् ॥ हीनंमांमन्यसेकेनअहीनंसर्वविक्रमैः ॥ ५ ॥ वीरद्वेषेणवाशंकेपक्षपातेनवारिपोः ॥ त्वयाहंपरुषाण्युक्तोममप्रोत्साहनेनवा ॥६॥ प्रभवंतंपदस्थंहिपरुषंकोऽभिभाषते ॥ पंडितःशास्त्रतत्त्वज्ञोविनाप्रोत्साहनेनवा ॥ ७ ॥ आनीयचवनात्सीतांपद्महीनामिवश्रियम् ॥ किमर्थंप्रतिदास्यामिराघवस्यभयादहम् ॥८॥ वृतंवानरकोटीभिःससुग्रीवंसलक्ष्मणम् ॥ पश्यकैश्चिदहोभिश्वराघवंनिहतंमया ॥ ९ ॥ द्वंद्वेयस्यनतिष्ठंतिदैवतान्यपिसंयुगे ॥ सकस्माद्रावणोयुद्धे भयमाहारयिष्यति ॥ १० ॥

को तुमने ऐसे कठोर वचन कहे ॥ ६ ॥ कारण कि उत्साह करनेका आशय न होनेसे कौन शास्त्रके तत्त्वका जाननेवाला पंडित युद्धमें सामर्थ्यवान् राज्यपर विराजमान अपने स्वामीको ऐसे कठोर वचन कह सकता है ॥७॥ कमलहीन लक्ष्मीकी सुन्दरताई जिस प्रकारसे होती है, वैसे ही हम जनस्थानसे जानकीको हरण करके ले आये, इस समय क्या रामचन्द्रसे डरकर हम उनको सीता देदें ? ॥ ८ ॥ यह बात सत्य है कि कोटि २ वानरोंकी सेनाके सहित व सुग्रीव और लक्ष्मणके साथ रामचन्द्र लंकामें आये हैं, परन्तु हम तुमसे कहते हैं, कि थोडेही दिनोंमें तुम उनको हमारे हाथसे सेनासहित नाशको प्राप्त हुआ देखोगे ॥९॥ जिसके साथ युद्धमें देवता लोग भी खडे नहीं हो सकते, वह दिग्विजयी रावण क्या कभी युद्ध करनेसे डरेगा ? ॥ १० ॥

चाहे हमारे दो खण्ड होजायँ, परन्तु तो भी हम किसीसे नहीं दबेंगे, यद्यपि यह हमारे स्वभावका दोष है तो सही, तथापि स्वभाव अलंघनीय है इस कारण हम उसको त्याग नहीं सकते ॥११॥ रामचन्द्रका समुद्रमें सेतु बांधना देखकर जो तुम डर गये भला बतलाओ तो कि इसमें विस्मयकी क्या बात है, यहसेतु तो बडी सरलतासे बँधा हैं हम चाहें तो ऐसे २हजारों सेतु बँधवा दें ॥१२॥ रामचन्द्र वानरोंकी सेनाके साथ समुद्रके पार उतरकर यहां आये तो हैं, परन्तु हम तुमसे शपथके साथ प्रतिज्ञा करते हैं कि वह जीता हुआ लौटकर किसी प्रकारसे यहांसे जानेको समर्थ न होगा ॥१३॥ यह कहकर रावण बहुतही क्रोधकरता हुआ, सब निशाचर माल्यवान् लज्जाके मारे नीचेको मुख करके बैठ गया और किसी बातका उत्तर न देता हुआ ॥१४॥ परन्तु रावणकी यथोचित जयसूचक आशी-

द्विधाभज्येयमप्येवंननमेयंतुकस्यचित् ॥ एषमेसहजोदोषःस्वभावोदुरतिक्रमः ॥११॥ यदितावत्समुद्रेतुसेतुर्बद्धोयदृच्छया ॥ रामेणविस्मयः कोत्रयेनतेभयमागतम् ॥ १२ ॥ सतुतीर्त्वार्णवंरामःसहवानरसेनया ॥ प्रतिजानामितेसत्यंनजीवन्प्रतियास्यति ॥ १३ ॥ एवंब्रुवाणंसंरब्धं रुष्टंविज्ञायरावणम् ॥ व्रीडितोमाल्यवान्वाक्यंनोत्तरंप्रत्यपद्यत ॥१४॥ जयाशिषातुराजानंवर्धयित्वायथोचितम् ॥ माल्यवानभ्यनुज्ञातोजगामस्वंनिवेशनम् ॥ १५ ॥ रावणस्तुसहामात्योमंत्रयित्वाविमृश्यच ॥ लंकायास्तुतदागुप्तिंकारयामासराक्षसः ॥ १६ ॥ व्यादिदेशचपूर्वस्यांप्रहस्तंद्वारिराक्षसम् ॥ दक्षिणस्यांमहावीर्यौमहापार्श्वमहोदरौ ॥१७॥ पश्चिमायामथद्वारिपुत्रमिंद्रजितंतदा ॥ व्यादिदेशमहामायंराक्षसैर्बहुभिर्वृतम् ॥१८॥ उत्तरस्यांपुरद्वारिव्यादिश्यशुकसारणौ ॥ स्वयंचात्रगमिष्यामिमंत्रिणस्तानुवाचह ॥१९॥ राक्षसंतुविरूपाक्षंमहावीर्यपराक्रमम् ॥ मध्यमेऽस्थापयद्गुल्मेबहुभिःसहराक्षसैः ॥ २० ॥

र्वादसे बढती मनाय उसकी आज्ञा लेकर अपने गृह चला गया ॥ १५ ॥ तब लंकापति रावणने सब मंत्रियोंके साथ परामर्श करके भलीभांति शोच विचार लंकापुरीकी रक्षा करनेके लिये पहरेदारोंको नियत किया ॥ १६ ॥ राक्षस प्रहस्तको पूर्वद्वारपर और महावीर महापार्श्व और महोदरको दक्षिणके द्वारपर रावणने रहनेकी आज्ञा दी॥१७॥ और पश्चिमके द्वारपर रहनेके लिये इन्द्रका जीतनेवाला मेघनाद अत्यन्तही मायावी और बहुत सेनाको संग लिये हुए था॥१८॥ शुक और सारण नामक मंत्रियोंको उत्तरके द्वारसे हटाकर जहां कि, श्रीरामचन्द्रजीकी सेना पडी हुई थी, रावणने आज्ञा दी कि उत्तरके द्वारपर हम स्वयंही खडे रहेंगे ॥१९॥ महापराक्रमी महावीर्ययुक्त राक्षस विरूपाक्षको रावणने बहुत सारे राक्षसोंके साथ लंकाके बीचोंबीचमें जहां सेनाकी छावनी थी रहनेके लिये

पापमानता हुआ कि अपनेको कृतार्थ मानता हुआ कि
आज्ञा दी ॥२०॥ राक्षसोंमें श्रेष्ठ रावण लंकामें इस प्रकारसे सब ओर राक्षसोंको रक्षाके लिये नियुक्त करके कालप्रेरित होनेसे अपनेको कृतार्थ मानता हुआ कि
बस सब होगया, अब किसी प्रकारका खटका नहीं ॥२१॥ रावण इस प्रकारसे लंकाकी चौकसीके लिये राक्षसोंको नियत करके मंत्रीगणोंको बिदादेकर और आप भी
जयसूचक आशीर्वादसे पूजित होकर, धनजनपूर्ण अपने बडेभारी रनवासमें प्रवेश करता हुआ ॥२२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० युद्धकांडे भाषायां षट्त्रिंशः सर्गः॥३६॥
इधर मनुष्योंके राजा श्रीरामचंद्रजी, वानरराज सुग्रीव, कपिश्रेष्ठ पवनकुमार हनुमान्जी ऋक्षराज जाबवान राक्षसराज विभीषण ॥१॥ वालिके पुत्र अंगदजी सुमित्राके
पुत्र लक्ष्मणजी, वानरश्रेष्ठ शरभ अपने परिवारसहित सुषेण मैन्द, द्विविद ॥२॥ गज गवाक्ष कुमुद नल और पनस अपने शत्रुके राज्य लंकामें आय एकत्र हो बैठकर

एवंविधानंलंकायांकृत्वाराक्षसपुंगवः ॥ कृतकृत्यमिवात्मानंमन्यतेकालचोदितः ॥२१॥ विसर्जयामासततःसमंत्रिणोविधानमाज्ञाप्यपुरस्य
पुष्कलम् ॥ जयाशिषामंत्रिगणेनपूजितोविवेशसोंतःपुरमृद्धिमन्महत् ॥२२॥ इत्यार्षे श्रीम० वाल्मी० आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे षट्
त्रिंशः सर्गः ॥३६॥ नरवानरराजानौसतुवायुसुतःकपिः ॥ जांबवानृक्षराजश्चराक्षसश्चविभीषणः ॥ १ ॥ अंगदोवालिपुत्रश्चसौमित्रिःशरभः
कपिः ॥ सुषेणःसहदायादोमैंदोद्विविदएवच ॥ २ ॥ गजोगवाक्षःकुमुदोनलोथपनसस्तथा ॥ अमित्रविषयंप्राप्ताःसमवेताःसमर्थयन् ॥ ३ ॥
इयंसालक्ष्यतेलंकापुरीरावणपालिता ॥ सासुरोरगगंधर्वैःसर्वैरपिसुदुर्जया ॥४॥ कार्यसिद्धिंपुरस्कृत्यमंत्रयध्वंविनिर्णये ॥ नित्यंसन्निहितोयत्र
रावणोराक्षसाधिपः ॥५॥ अथतेषुब्रुवाणेषुरावणावरजोब्रवीत् ॥ वाक्यमग्राम्यपदवत्पुष्कलार्थंविभीषणः ॥६॥ अनलःपनसश्चैवसंपातिःप्रम
तिस्तथा ॥ गत्वालंकांममामात्याःपुरींपुनरिहागताः ॥७॥ भूत्वाशकुनयःसर्वेप्रविष्टाश्चरिपोर्बलम् ॥ विधानंविहितंयच्चतद्दृष्ट्वासमुपस्थिताः ॥८॥

कहने लगे ॥३॥ असुर, उरग और गन्धर्वगणोंको भी जो अजेय है, ऐसी रावणसे पाली जाती हुई लंकापुरीमें हम आगये हैं ॥४॥ लंकेश्वर रावण यहांपर सदाही
बडी सावधानीसे रहता है; अब जिस प्रकारसे कार्यकी सिद्धि होवे ऐसा परामर्श हम सबको करना उचित है ॥५॥ जब सबने यही कहा तब रावणके छोटे भाई
विभीषण उनके वचन सुनकर ग्रामीणादिदोषरहित अर्थयुक्त यह उदार वचन बोले ॥ ६ ॥ कि अनल पनस सम्पाति और प्रमतिनामक हमारे यह चारों मंत्री
लंकामें जायकर इसी समय वहांसे लौटकर यहां आये हैं ॥ ७ ॥ यह चारों पक्षियोंका रूप बनाकर शत्रुके दलमें प्रवेश करके, रावणने जो लंकापुरीकी रक्षा

करनेका उपाय किया उसको भलीभाँतिसे जानकर यह हमारे निकट आये हैं ॥८॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! दुरात्मा रावणके पुररक्षा करनेके विषयमें हमने अपने मंत्रियोंसे जो कुछ जाना है वह समस्तही कहते हैं सुनिये ॥९॥ कि प्रहस्त बहुतसारी सेनाके साथ पूर्वद्वारपर टिका है, और महावीर्यवान् महापार्श्व व महोदर लंकाके दक्षिणद्वारकी रक्षा करते हैं॥१०॥ पटा खड्ग इत्यादि विविध अस्त्र शस्त्रधारी और शूल मुद्गर हाथमें लिये असंख्य शूर राक्षसगणोंके साथ रावणपुत्र इन्द्रजित लंकाके पश्चिमद्वारकी रक्षा करता है॥११॥ अनेक प्रकारके और दूसरे हथियार धारण किये शूरवीर रावणके पुत्रके संग है और सहस्रों लक्षों शस्त्रपाणि राक्षसोंको संग लिये॥१२॥ मंत्रका जाननेवाला रावण उद्विग्नचित्त होकर राक्षसोंकेसाथ लंकाके उत्तर फाटकपर स्वयं स्थित हुआ॥१३॥ राक्षस विरूपाक्ष शूल,

संविधानंयथाहुस्तेरावणस्यदुरात्मनः ॥ रामतद्ब्रुवतःसर्वंयाथातथ्येनमेशृणु ॥९॥ पूर्वंप्रहस्तःसबलोद्वारमासाद्यतिष्ठति ॥ दक्षिणंचमहावीर्यौमहापार्श्वमहोदरौ ॥ १० ॥ इंद्रजित्पश्चिमंद्वारंराक्षसैर्बहुभिर्वृतः ॥ पट्टिशासिधनुष्मद्भिःशूलमुद्गरपाणिभिः ॥११॥ नानाप्रहरणैःशूरैरावृतोरावणात्मजः ॥ राक्षसानांसहस्रैस्तुबहुभिःशस्त्रपाणिभिः ॥ १२ ॥ युक्तःपरमसंविग्नोराक्षसैःसहमंत्रिवत् ॥ उत्तरंनगरद्वारंरावणःस्वयमास्थितः ॥ १३ ॥ विरूपाक्षस्तुमहताशूलखड्गधनुष्मता ॥ बलेनराक्षसैःसार्धंमध्यमंगुल्ममाश्रितः ॥ १४ ॥ एतानेवंविधान्गुल्माँल्लंकायाःसमुदीक्ष्यते ॥ मामकामंत्रिणसर्वेशीघ्रंपुनरिहागताः ॥ १५ ॥ गजानांदशसाहस्रंरथानामयुतंतथा ॥ हयानामयुतेद्वेचसाग्रांकोटिंचरक्षसाम् ॥ १६ ॥ विक्रांताबलवंतश्चसंयुगेष्वाततायिनः ॥ इष्टाराक्षसराजस्यनित्यमेतेनिशाचराः ॥ १७ ॥ एकैकस्यात्रयुद्धार्थेराक्षसस्यविशांपते ॥ परिवारःसहस्राणांसहस्रमुपतिष्ठति ॥ १८ ॥ एतांप्रवृत्तिंलंकायांमंत्रिप्रोक्तां विभीषणः ॥ एवमुक्त्वामहाबाहूराक्षसांस्तानदर्शयत् ॥ १९ ॥

खड्ग व धनुषधारी बडी भारी सेनाके साथ लंकाके बीचोंबीचमें जहां छावनी है टिका हुआ है ॥ १४ ॥ हमारे मंत्रीलोग लंकाकी समस्त घाटियोंको इस प्रकारसे देखकर शीघ्र ही हमारे पास लौट आये हैं ॥ १५ ॥ दशसहस्र हाथी दश हजार रथ, बीस हजार घोडे व करोडों राक्षस ॥ १६ ॥ जो कि अति बलवान और अति विक्रमकारी, समर करनेमें अत्यन्तही आततायी हैं, और राक्षसराज रावणका कार्य करनेको यत्न किये हुये हैं यह यूथपोंकी गिन्ती है ॥ १७ ॥ हे पृथ्वीनाथ ! इन करोड २ सेनाके एक २ राक्षसके साथ उसका असंख्य सहस्रों परिवार भी मिल जाकर युद्धके समय इकट्ठा होजाता है ॥ १८ ॥ महाबलवान् विभीषणजीने मंत्रियोंसे सुना हुआ यह लंकाका वृत्तान्त निवेदन करके अपने चारों मंत्री श्रीरामचन्द्रजीको दिखा दिये ॥ १९ ॥

व उन चारों मंत्रियोंने कमलदलके समान नेत्रवाले श्रीरामचन्द्रजीसे यह सब वृत्तान्त निवेदन किया॥२०॥ उसके पीछे रावणके छोटे भाई श्रीमान विभीषणजी रामचन्द्रजीका हित साधन करनेकी वासनासे उनसे बोले कि रावणके बलकी क्या बात है, जब यह रावण कुबेरके साथ युद्ध करता था ॥ २१ ॥ उस समय साठ लाख राक्षस इसके साथ युद्ध करनेको गये थे हे राजन्! वह दुरात्मा राक्षसगण पराक्रम,वीर्य,तेज,बल, धीरता और दर्प किसी बातमें किसी प्रकार रावणसे कम नहीं हैं ॥२२॥ हे राजन् ! आप क्रोध न कीजिये, हमने भय दिखलानेके लिये ऐसा नहीं कहा, वरन् केवल आपका क्रोध प्रदीप्त करनेहीके समय ऐसा कहा है; कारण कि आप क्रोधित होकर अपने वीर्यके बलसे देवता इन्द्रादिकोंको भी दंड दे सकते हैं ॥२३॥ हम निश्चयही कहते हैं कि, आप इस बडी

लंकायांसचिवैःसर्वैरामायप्रत्यवेदयत् ॥ रामंकमलपत्राक्षमिदमुत्तरमब्रवीत् ॥२०॥ रावणावरजःश्रीमान्रामप्रियचिकीर्षया ॥ कुबेरंतुयदारामरावणःप्रतियुध्यति ॥ २१ ॥ षष्टिःशतसहस्राणितदानिर्यातिराक्षसाः ॥ पराक्रमेणवीर्येणतेजसासत्त्वगौरवात् ॥ सदृशाह्यत्रदर्पेणरावणस्य दुरात्मनः ॥ २२ ॥ अत्रमन्युर्नकर्तव्यःकोपयेत्वांनभीषये ॥ समर्थोह्यसिवीर्येणसुराणामपिनिग्रहे ॥ २३ ॥ तद्भवांश्चतुरंगेणबलेनमहतावृतम् ॥ व्यूह्येदंवानरानीकंनिर्मथिष्यसिरावणम् ॥ २४ ॥ रावणावरजेवाक्यमेवंब्रुवतिराघवः ॥ शत्रूणांप्रतिघातार्थमिदंवचनमब्रवीत् ॥२५॥ पूर्वद्वारंतुलंकायानीलोवानरपुंगवः ॥ प्रहस्तंप्रतियोद्धास्याद्वानरैर्बहुभिर्वृतः ॥२६॥ अंगदोवालिपुत्रस्तुबलेनमहतावृतः ॥ दक्षिणेबाधतांद्वारे महापार्श्वमहोदरौ ॥ २७ ॥ हनूमान्पश्चिमद्वारंनिष्पीड्यपवनात्मजः ॥ प्रविशत्वप्रमेयात्माबहुभिःकपिभिर्वृतः ॥ २८ ॥ दैत्यदानवसंघानामृषीणांचमहात्मनाम् ॥ विप्रकारप्रियःक्षुद्रोवरदानबलान्वितः ॥ २९ ॥

भारी चतुरंगिनी सेनाको व्यूहकारमें स्थापन करके रावणको भलीभाँति मर्दन करेंगे ॥ २४ ॥ रावणके छोटे भाई विभीषणजीने जब ऐसा कहा तब रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी शत्रु गणोंका संहार करनेके लिये यह वचन बोले ॥२५॥ वानरश्रेष्ठ नील बहुत सारे वानरोंको साथ लेकर लंकाके पूर्वद्वारपर टिके हुए प्रहस्तके साथ युद्ध करेंगे ॥ २६ ॥ वालिपुत्र अंगदजीभी बडी भारी सेनाके साथ दक्षिणद्वारपर महापार्श्व और महोदरसे लडकर उसका विध्वंस करें ॥२७॥ अतुलबलशाली पवनकुमार हनुमानूजी बहुत सेनाको साथ लेकर पश्चिमद्वारपर जावें और वहां मेघनादसे युद्ध करें ॥२८॥ दैत्य दानवोंके समूहोंके संग और महात्मा ऋषि लोगोंके साथ जो सदाही अपकार करता है महानीच स्वभावयुक्त वरदान पानेके मदसे मदान्ध ॥ २९ ॥

१ इससे विदित होता है कि, रामचन्द्रको सेनामें भी रथादि थे ॥

जो कि सब लोगोंकी प्रजाओंको संतापित करता है और सब लोगोंको कुछ नहीं गिनता, उस राक्षसोंके स्वामी रावणका वध हम स्वयं ही जाकर करेंगे ॥३०॥ जहां कि रावण अपनी सेनाके साथ टिका हुआ है, हम लक्ष्मणजीके सहित लंकापुरीके उस उत्तर द्वारको पीडित करनेके समय प्रवेश करेंगे ॥३१॥ बलवान् वानरेन्द्र सुग्रीवजी, वीर्यवान् ऋक्षराज जाम्बवान और राक्षसराज रावणके छोटे भाई विभीषणजी यह सब मिलकर मध्यमगुल्ममें अर्थात् सेनासमूह के बीचमें रहकर उसकी रक्षा करें ॥ ३२ ॥ रणस्थलमें कोई भी वानर मनुष्यका रूप नहीं धारण करे यही हमारा संकेत है, मनुष्यरूपधारीसे युद्ध करना और जो वानर वानरसे युद्ध करे उस वानर कोराक्षसरूप धारण किये जानना कारण कि इस संग्राममें मनुष्यका चिह्न केवल हमही लोग धारण किये रहेंगे ॥३३॥ हे वानरगण ! तुम लोगोंका चिह्न वानरही है; इस कारण तुम सब यही रूप धारण किये रहना, केवल हम सातजन मनुष्यका रूप धारण करके

परिक्रामतियः सर्वांल्लोकान्संतापयन्प्रजाः ॥ तस्याहंराक्षसेंद्रस्यस्वयमेववधेधृतः ॥३०॥ उत्तरंनगरद्वारमहंसौमित्रिणासह ॥ निपीड्याभिप्रवेक्ष्यामिसबलोयत्ररावणः ॥३१॥ वानरेंद्रश्चबलवानृक्षराजश्चवीर्यवान् ॥ राक्षसेंद्रानुजश्चैवगुल्मेभवतुमध्यमे ॥३२॥ नचैवमानुषंरूपंकार्यंहरिभिराहवे एषाभवतुनःसंज्ञायुद्धेस्मिन्वानरेबले ॥३३॥ वानराएवनश्चिह्नंस्वस्मिन्भविष्यति ॥ वयंतुमानुषेणैवसप्तयोजनेत्स्यामहेपरान् ॥३४॥ अहमेवसहभ्रात्रालक्ष्मणेनमहौजसा ॥ आत्मनापंचमश्चायंसखाममविभीषणः ॥३५॥ सरामःकृत्यसिद्ध्यर्थमेवमुक्त्वाविभीषणम् ॥ सुवेलारोहणेबुद्धिंचकारमतिमान्प्रभुः ॥ ३६ ॥ रमणीयतरंदृष्ट्वासुवेलस्यगिरेस्तटम् ॥ ३७ ॥ ततस्तुरामोमहताबलेनप्रच्छाद्यसर्वांपृथिवींमहात्मा ॥ प्रहृष्टरूपोभिजगामलंकांकृत्वामतिंसोरिवधेमहात्मा ॥ ३८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७ ॥

शत्रुसे युद्ध करेंगे, ॥३४॥ उनमें हम, महातेजस्वी लक्ष्मणजी, सखा विभीषण और इनके सचिव चारों राक्षस बस यह सात जन मनुष्यका रूप धारण करके युद्ध करेंगे, इनके सिवाय मनुष्यका रूप धारण किये और जिसको भी देखेंगे मार डालेंगे ॥ ३५ ॥ सब कार्योंके करनेमें समर्थ बुद्धिमान् स्वामी श्रीरामचन्द्रजी धार्मिक विभीषणजीसे यह कहकर सुवेल पर्वतपर चढनेकी अपनी बुद्धि करते हुए ॥ ३६ ॥ क्योंकि, यह सुवेल पर्वतका तट श्रीरामचन्द्रजीको बहुत रमणीयतर दिखाई दिया ॥३७॥ इस प्रकारसे महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजी शत्रुका वध करनेके लिये कृतनिश्चय होकर अपनी बडी भारी वानरसेनासे पृथ्वीको ढककर हर्षित अंतःकरणसे लंकाके जंगलमें विराजमान होने लगे ॥ ३८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७ ॥

श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीके साथ सुवेलपर्वतपर चढनेकी अभिलाषा करके वानरराज सुग्रीवजीसे बोले ॥१॥ मंत्र जानने वाले, धर्मके जानकार अनुरागी चित्त और समस्त विधान समझनेवाले विभीषणजीसे भी मधुरवाणीसे श्रीरामचन्द्रजीने कहा ॥२॥ कि चलो हम सब जन द्रुम (वृक्ष) और धातुयुक्त सुवेल पर्वतपर चढकर आज वहांपर रात्रि बितावेंगे ॥३॥ और सुवेल पर्वतपरसे जो मृत्युके समयतक दुःखभोग करनेके लिये हमारी भार्याको हरण करके ले आया है; उस दुरात्मा रावणके गृह दीख पडेंगे ॥४॥ जिस क्रूर राक्षसने राक्षसी बुद्धिके वश होकर, धर्म सदाचार और कुलकी ओर दृष्टि न करके यह निन्दनीय कार्य किया है उस राक्षसोंमें नीच रावणका नाम लेनेपर भी हमको क्रोध उत्पन्न होता है; हे सुग्रीव ! हम इस रावणकेही अपराधसे समस्त राक्षसोंका नाश देखते हैं, देखो एकजन कालकी फांसीमें पड़कर पापाचार करता है, परन्तु इकले उस दुष्टात्माके अपराधसे उसका समस्त कुल भी नष्ट होता है ॥५॥ श्रीरामचंद्रजी रावणके प्रति

स कृत्वासुवेलस्यमतिमारोहणंप्रति॥लक्ष्मणानुगतोरामःसुग्रीवमिदमब्रवीत्॥१॥विभीषणंचधर्मज्ञमनुरक्तंनिशाचरम्।मंत्रज्ञंचविधिज्ञंचश्लक्ष्णयापरयागिरा ॥२॥ सुवेलंसाधुशैलेंद्रमिमंधातुशतैश्चितम् ॥ अध्यारोहामहेसर्वेवत्स्यामोत्रनिशामिमाम् ॥३॥ लंकांचालोकयिष्यामोनिलयंतस्यरक्षसः ॥ येनमेमरणांतायहृताभार्यादुरात्मना॥४॥ येनधर्मोनविज्ञातोनवृत्तंनकुलंतथा॥राक्षस्यानीचयाबुद्ध्यायेनतद्गर्हितंकृतम् ॥५॥ एवंसंमंत्रयन्नेवसक्रोधोरावणंप्रति ॥ रामःसुवेलमासाद्यचित्रसानुमुपारुहत्॥६॥ पृष्ठतोलक्ष्मणश्चैनमन्वगच्छत्समाहितः॥सशरंचापमुद्यम्यसुमहद्विक्रमेरतः ॥७॥ तमन्वारोहत्सुग्रीवःसामात्यःसविभीषणः ॥ तेवायुवेगप्रवणास्तंगिरिंगिरिचारिणः ॥ ८ ॥ अध्यारोहंतशतशःसुवेलंयत्रराघवः ॥ तेत्वदीर्घेणकालेनगिरिमारुह्यसर्वतः ॥९॥ ददृशुःशिखरेतस्यविषक्तामिवखेपुरीम् ॥ तांशुभांप्रवरद्वारांप्राकारवरशोभिताम् ॥१०॥

क्रोधमें भरकर यह वचन कहते सुवेलपर्वतपर वास करनेके लिये उसके विचित्र शृङ्गोपर चढते हुए ॥६॥ विक्रमी लक्ष्मणजी भी बाणसहित धनुष हाथमें लिये एकाग्रमनसे श्रीरामचन्द्रजीके पीछे २ चले ॥७॥ उनके पीछे अपने मंत्रियोंके साथ सुग्रीवजी चले, और सुग्रीवजीके पीछे २ विभीषण; तत्पश्चात् हनुमान्; अंगद, नील, द्विविद गज; गवाक्ष; गवय, शरभ, गन्धमादन, पनस; कुमुद, रंभ जाम्बवान्, सुषेण, शतबली, वानरश्रेष्ठ दुर्मुख इत्यादि पर्वतोंके चरनेवाले वानर वायु वेगसे उस पर्वतपर ॥८॥ चढे और सुवेल पर्वतपर श्रीरामचंद्रजीके निकट पहुँचे पर्वतपर चढनेके समय उन समस्त वानरोंको कुछ भी समय न लगा; वहां पर सबने चढकर ॥९॥ उस पर्वतके रमणीय शिखरोंपर आरोहण कर त्रिकूट पर्वतके शिखरपर बसी हुई सुन्दर तोरण छहर दिवारी युक्त आकाशको स्पर्शही

करती हुई सी॥१०॥राक्षसोंसे पूर्ण लंकापुरीको वानरयूथपोंने देखा, कोटकी भीत और खंवोंपर चढे राक्षसोंसे घिरी हुई उस लंकापुरीमें व नीलवर्णवाली राक्षसी सेनाकी श्रेणीको दूसरे दुर्ग प्राचीर(शहरपनाह)के तुल्य वानर श्रेष्ठोंने देखा॥११॥युद्धकी अभिलाषा किये वानरगण उन समस्त राक्षसोंकी सेनाको देख रामचंद्रजीके सामनेही सिंहनाद करने लगे॥१२॥ उसके पीछे सन्ध्यारागरंजित दिवाकर सूर्य भगवान् अस्ताचलको गमन करते हुए, और रात्रि हो आई. उस समय पूर्णचंद्रमाके उदय होनेसे रात्रिभी प्रदीप्त तुल्य बोध होने लगी॥१३॥उसके पीछे श्रीरामचंद्रजी अपने सेनापति वानरयूथप व विभीषणसे पूजित और सम्मानित होकर लक्ष्मणजीके साथ यूथपति और यूथगणोंके सहित यथासुखसे सुवेलपर्वतके शृङ्गोंपर वास करने लगे॥१४॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०युद्ध०भा०टी०अष्टात्रिंशः

लंकांराक्षससंपूर्णांददृशुर्हरियूथपाः ॥ प्राकारवरसंस्थैश्चतथानीलैश्चराक्षसैः ॥ ददृशुस्तेहरिश्रेष्ठाःप्राकारमपरंकृतम् ॥ ११ ॥ तंदृष्ट्वावानराःसर्वेराक्षसान्युद्धकांक्षिणः ॥ मुमुचुर्विविधान्नादांस्तस्यरामस्यपश्यतः ॥१२॥ ततास्तमगमत्सूर्यःसंध्ययाप्रतिरंजितः ॥ पूर्णचंद्रप्रदीप्ताचक्षपासमतिवर्तत ॥ १३ ॥ ततःसरामोहरिवाहिनीपतिर्विभीषणेनप्रतिनंद्यसत्कृतः ॥ सलक्ष्मणोयूथपयूथसंयुतःसुवेलपृष्ठेन्यवसद्यथासुखम् ॥ १४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे अष्टात्रिंशः सर्गः ॥ ३८ ॥ तांरात्रिमुषितास्तत्रसुवेलेहरियूथपाः ॥ लंकायांददृशुर्वीरावनान्युपवनानिच ॥ १ ॥ समसौम्यानिरम्याणिविशालान्यायतानिच ॥ दृष्टिरम्याणितेदृष्ट्वाबभूवुर्जातविस्मयाः ॥ २ ॥ चंपकाशोकबकुलशालतालसमाकुला ॥ तमालपनसच्छन्नानागमालासमावृता ॥ ३ ॥ हिंतालैरर्जुनैर्नीपैःसप्तपर्णैःसुपुष्पितैः ॥ तिलकैःकर्णिकारैश्चपाटलैश्चसमंततः ॥ ४ ॥ शुशुभेपुष्पिताग्रैश्चलतापरिगतद्रुमैः ॥ लंकाबहुविधैर्दिव्यैर्यथेंद्रस्यामरावती ॥५॥ विचित्रकुसुमोपेतैरक्तकोमलपल्लवैः ॥ शाद्वलैश्चतथानीलैश्चित्राभिर्वनराजिभिः ॥ ६ ॥

सर्गः॥३८॥उसके पीछे वानरोंकी सेनाके यूथप सुवेल पर्वतके शिखरपर वह रात्रि बिताय लंकापुरीके समस्त वन व उपवनोंको देखते हुऐ॥१॥ यह समस्त उपवन विशाल और समान सुखदाई लम्बे चौडे और देखतेही मन मोहते थे जिनको देखकर वानरगण अत्यन्त विस्मित हुए॥२॥वानरोंने देखा कि इन वन उपवनोंमें चम्पा; बकुल, शाकुल, शाल ताल छाय रहे हैं और तमाल कटहरसे छायकर यह वन नागवेलिसे युक्त हैं ॥३॥ हिन्ताल, अर्ज्जुन; कदम्ब, तिलक, कर्णिकार व पाटलसे समायुक्त ॥४॥ व फूले वृक्षोंसे शोभित होनेके कारण यह लंकापुरी देवनाथ इन्द्रजीकी अमरावतीके समान शोभित होती थी ॥ ५ ॥ विचित्रपुष्प और कोंपलवाले लाल पत्तोंसे शोभित वानराजि और नीलवर्णकी पत्र सहित गाछ उस लंकापुरीको सीमा रहित शोभायमान कर रही थी ॥ ६ ॥ जिस

प्रकार मनुष्य गहने पहरते हैं, वैसेही वहांके रमणीक वृक्ष मनोहर सुगन्धवाले पुष्प और फल धारण कर रहे थे॥७॥ वह चैत्ररथ और नन्दनवनके समान सब ऋतुमें मनोहर, और वहांही वनराजिमें भौंरोंके घूमनेसे वह वन परम रमणीक लगता था ॥ ८ ॥ उस वनमें झरनोंके किनारे चकई चकवा, जलमुर्ग, बगला मोर; कोकिल इत्यादि पक्षी नाच२ कर मधुर२ बोल रहे थे ॥९॥ सदाही मतवाले पक्षियोंसे युक्त भौंरोंसे परिपूर्ण कोकिलगणोंसे वृक्षसमूह सेवित पक्षियोंके शब्दसे शब्दायमान ॥१०॥ भ्रमरोंकी गुंजारसे पूरित, क्रौंचीकी वाणीसे सुहावने मनभावने जलकुक्कुटोंके शब्दोंसे पूरित राक्षसोंके शब्दसे शब्दायमान ऐसे वन उपवनोंमें ॥ ११ ॥ हर्षित व प्रमुदित होकर कामरूपी वानरगण प्रवेश करते हुए जब वह महातेजस्वी वानरगण उपवनोंमें पैठे ॥ १२ ॥ तब पुष्पोंका

गंधाढ्यान्यतिरम्याणिपुष्पाणिचफलानिच ॥ धारयंत्यागमास्तत्रभूषणानीवमानवाः ॥ ७ ॥ तच्चैत्ररथसंकाशंमनोज्ञंनंदनोपमम् ॥ वनंसर्वतुंकरम्यंशुशुभेषट्पदायुतम् ॥ ८ ॥ दात्यूहकोयष्टिबकैर्नृत्यमानैश्चबर्हिणैः ॥ रुतंपरभृतानांचशुश्रुवेवननिर्झरे ॥९॥ नित्यमत्तविहंगानिभ्रमराचरितानिच ॥ कोकिलाकुलखंडानिविहंगाभिरुतानिच ॥१०॥ भृङ्गराजाधिगीतानिकुररस्वनितानिच ॥ विविशुस्तेततस्तानिवनान्युपवनानिच ॥ ११ ॥ हृष्टाःप्रमुदितावीराहरयःकामरूपिणः ॥ तेषांप्रविशतांतत्रावानराणांमहौजसाम् ॥ १२ ॥ पुष्पसंसर्गसुरभिर्ववौप्राणसमोनिलः ॥ अन्येतुहरिवीराणांयूथान्निष्क्रम्ययूथपाः ॥ सुग्रीवेणाभ्यनुज्ञातालंकांजग्मुःपताकिनीम् ॥१३॥ वित्रासयंतोविहगान्ग्लापयंतोमृगद्विपान् ॥ कंपयंतश्चतांलंकांनादैःस्वैर्नदतांवराः ॥१४॥ कुर्वंतस्तेमहावेगामहींचरणपीडिताम् ॥ रजश्चसहसैवोर्ध्वंजगामचरणोत्थितम् ॥१५॥ ऋक्षाःसिंहाश्चमहिषावारणाश्चमृगाःखगाः ॥ तेनशब्देनवित्रस्ताजग्मुर्भीतादिशोदश ॥१६॥ शिखरंतुत्रिकूटस्यप्रांशुचैकंदिविस्पृशम् ॥ समंतात्पुष्पसंछन्नंमहारजतसन्निभम् ॥ १७ ॥

संसर्ग होनेसे सुगन्धित पवन प्राणवायुके समान चलने लगा । उस वानरोंकी सेनामेंसे कुछ एक यूथपति यूथसे निकलकर सुग्रीवकी आज्ञा पताका शोभित लंकापुरीको चले गये ॥ १३ ॥ जानेके समय वह वानरगण भयंकर शब्द करके मृग, हाथी, सर्प और समस्त पशु पक्षियोंको त्रासित और समस्त लंकापुरीको कंपायमान करने लगे॥१४॥वह महावेगवान् वानरगण दोनों चरणोंसे पृथ्वीको ऐसापीडित करने लगे कि, उनके चरणोंसे उठी हुई धूरिने आकाशको छाय लिया ॥१५॥ रीछ, सिंह, भैंसे हाथी और पक्षिगण उन वानरोंके भयंकर शब्दसे भीत होकर दशों दिशाओंमें भाग गये ॥१६॥ जिसके अति ऊंचे शिखर आका-

शको भेद करके उठे हैं वह त्रिकूट पर्वत फूलोंसे छानेके कारण उन वानरोंको सुवर्णके समान जान पडने लगा ॥ १७ ॥ वह शत अर्थात् अनेक योजनके विस्तारवाला विशाल सुन्दर दिखाव युक्त समान और ऊँचा श्रीमान् त्रिकूट पर्वत ऐसा ऊंचा था कि, पक्षी भी उसके शिखरपर नहीं पहुँच सकते थे ॥ १८ ॥ पदचारी मनुष्योंकी बाततो दूर रही वहांपर पहुँचनाभी दुःसाध्य था । उस त्रिकूटकेऊपर बसीहुई रावणसे पाली जाती हुई लंकापुरी ॥ १९ ॥ यह लंकानगरी दश योजनकी चौडी और वीस योजनकी लम्बी थी, वह पुरी श्वेत वर्णवाली प्राचीर (कोटकी भीत) जो कि बादलकेसमान बडी ऊंची थी, और सुवर्ण व चांदीकी परिकोटाके कारण अत्यन्त शोभायमान थी ❋ ॥ २० ॥ ग्रीष्मके अन्तमें आकाश जिसप्रकार घटावलीसे (बादलोंसे) शोभित होता है, वैसेहीबडे२प्राकार और विमा

शतयोजनविस्तीर्णंविमलंचारुदर्शनम् ॥ श्लक्ष्णंश्रीमन्महच्चैवदुष्प्रापंशकुनैरपि ॥ १८ ॥ मनसापिदुरारोहंकिंपुनःकर्मणाजनैः ॥ निविष्टातस्यशिखरेलंकारावणपालिता ॥ १९ ॥ दशयोजनविस्तीर्णाविंशद्योजनमायता ॥ सापुरीगोपुरैरुच्चैः पांडुरांबुदसन्निभैः ॥ कांचनेन चशालेनराजतेनचशोभते ॥ २० ॥ प्रासादैश्चविमानैश्चलंकापरमभूषिता ॥ घनैरिवातपापायेमध्यमंवैष्णवंपदम् ॥ २१ ॥ यस्यांस्तंभसहस्रेण प्रासादःसमलंकृतः ॥ कैलासशिखराकारोदृश्यतेखमिवोल्लिखन् ॥ २२ ॥ चैत्यःसराक्षसेंद्रस्यबभूवपुरभूषणम् ॥ शतेनरक्षसांनित्यंयःसमग्रेण रक्ष्यते ॥ २३ ॥ मनोज्ञांकांचनवतींपर्वतैरुपशोभिताम् ॥ नानाधातुविचित्रैश्चउद्यानैरुपशोभिताम् ॥ २४ ॥ नानाविहगसंघुष्टांनानामृगनिषेविताम् ॥ नानाकुसुमसंपन्नांनानाराक्षससेविताम् ॥ २५ ॥ तांसमृद्धांसमृद्धार्थोलक्ष्मीवाँल्लक्ष्मणाग्रजः ॥ नगरींत्रिदिवप्रख्यांविस्मयं प्रापवीर्यवान् ॥ २६ ॥

नोंसे लंकानगरी अत्यन्त शोभायमान हो रही थी ॥ २१ ॥ जिस लंकामें राजमंदिर जिसमें कि सहस्रों खम्भ लगे हुए थे, जो देखनेमें कैलास पर्वतके समान इतना ऊंचा था कि मानो वह आकाशमें कोई बात लिखरहा था ॥ २२ ॥ औरअसंख्य राक्षसगण सदा जिसकी रक्षा करते थे, ऐसा राक्षसराज रावणकी वह चैत्य नामक राजमंदिर समस्त लंकानगरीका भूषण रूपहुआ था ॥ २३ ॥ पुरीके स्थान२में मनोहर कानन दृष्टि आते थे, अनेकप्रकारके धातु उत्पन्न करनेवाले पर्वतोंकी असीम शोभा हो रही थी, और बीच२में रमणीय उद्यान शोभा विस्तार कर रहे थे ॥ २४ ॥ विविध भाँतिके विहारोंसे युक्त मृगगण निषेवित कुसुमोंसे- शोभायमान अगणित राक्षसोंसे रक्षित वह लंकापुरी भी ॥ २५ ॥ उसके पीछे लक्ष्मीवान लक्ष्मणजीके बडे भाई श्रीरामचन्द्रजी अमरावतीके समान समृद्धार्थ धनअन्नजनसे

❋ यह लंकारूप महादुर्गके अन्तरवर्तीरावणके सेनानिवेशस्थानकावर्णन है कारण कि, 'शतयोजन विस्तीर्णं विंशद्योजनमायता' ऐसा सौ योजनका विस्तार अन्यत्र वर्णन किया है ॥

परिपूर्ण लंकानगरीको देखकर अत्यन्त विस्मयको प्राप्त हुए ॥२६॥ इसप्रकारसे श्रीरामचन्द्रजी बडी भारी वानरी सेनाके साथ वहांपर विराजमान होकर उस राज पूर्ण धवहरोंकी श्रेणीसे शोभायमान अनेक बडे२यंत्र और किंवाडोंसे युक्त लंकानगरीको देखते हुए॥२७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०युद्धकांडे भाषायामे कोनचत्वारिंशः सर्गः॥३९॥इसके पीछे श्रीरामचन्द्रजी वानरोंकी सेनाके साथ सुग्रीवजीको संग लेकर दो योजनके विस्तारवाले सुवेल पर्वतकेशिखरपरचढतेहुये॥१॥ वहांपर चढकर एक मुहूर्तभर तक टिक दशों दिशाओंको श्रीरामचन्द्रजीने निहारा तब विश्वकर्माजीकी बनाई त्रिकूटपर्वतके शिखरपर बसीहुई लंकानगरी ॥२॥ श्रीरामचन्द्रजीने,देखी यह पुरी अच्छे नियमद्वारा क्रम२से बनाई गई थी;और रमणीक वन भी इसमें चारों ओर शोभायमान थे उस लंकामेंबनेहुए ऊंचे द्वारके(गोपुरके)

तांरत्नपूर्णांबहुसंविधानांप्रासादमालाभिरलंकृतांच ॥ पुरींमहायंत्रकवाटमुख्यांददर्शरामोमहताबलेन ॥ २७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे एकोनचत्वारिंशःसर्गः॥ ३९॥ ततोरामःसुवेलाग्रंयोजनद्वयमंडलम् ॥ उपारोहत्ससुग्रीवोहरियूथैःसमन्वितः ॥ १ ॥ स्थित्वामुहूर्ततत्रैवदिशोदशविलोकयन् ॥ त्रिकूटशिखरेरम्येनिर्मितांविश्वकर्मणा ॥ २ ॥ ददर्शलंकांसुन्यस्तांरम्यकाननशोभिताम् ॥ तस्यांगोपुरशृंगस्थंराक्षसेंद्रदुरासदम् ॥ ३ ॥ श्वेतचामरपर्यंतंविजयच्छत्रशोभितम् ॥ रक्तचंदनसंलिप्तंरक्ताभरणभूषितम् ॥ ४ ॥ नीलजीमूतसंकाशंहेमसंछादितांबरम् ॥ ऐरावतविषाणाग्रैरुत्कृष्टकिणवक्षसम् ॥ ५ ॥ शशलोहितरागेणसंवीतंरक्तवाससा ॥ संध्यातपेनसंछन्नमेघराशिमिवांबरे ॥ ६ ॥ पश्यतांवानरेंद्राणांराघवस्यापिपश्यतः ॥ दर्शनाद्राक्षसेंद्रस्यसुग्रीवःसहसोत्थितः ॥ ७ ॥ क्रोधवेगेनसंयुक्तःसत्त्वेनचबलेनच ॥ अचलाग्रादथोत्थायपुप्लुवेगोपुरस्थले ॥ ८ ॥

ऊपर राक्षसोंके राजा अति दुर्द्धर्ष रावणके मस्तकपर॥३॥विजयछत्र लगाये अगलबगल दो श्वेत चँवर ढुलते, लाल चन्दन लगाये, लाल कपडे व लालही गहनोंसे भूषित॥४॥ और नीले बाहरके रंगका सुवर्ण जडित उत्तरीय वस्त्र धारण किये,छातीमें ऐरावत हाथीके दांत लग जानेसे घावयुक्त होनेके कारण उनके चिह्नसे युक्त ॥ ५ ॥ खरगोशके रुधिरके समान रंगवाला लाल वस्त्र पहरे संध्याके धूपसे ढके हुए आकाशमें विराजमान बादलके समूहके समान ॥ ६ ॥ रावणको वानरोंने और श्रीरामचन्द्रजीने देखा; ऐसे राक्षस राजको देखतेही सुग्रीवजी सहसा उठ खडे हुए ॥ ७ ॥ वह सुग्रीव क्रोधके वेगसे परिपूर्ण और अपने बल विक्रमसे उत्साहित होकर पर्वतके ऊपरसे छलांग मारकर उसी गोपुरके स्थानमें पहुँच गये जहांकि, रावण खडा था ॥ ८ ॥

उसके पीछे वहांपर भय रहित मनसे कुछदेरतक खडे हो रावणके प्रति एक दृष्टिसे देख उसको तृणके समान समझ कठोर वचन कहने लगे ॥९॥ कि हे निशाचर ! हम सर्वलोकोंके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके दास हैं, हम उन पृथ्वीनाथके अनुग्रहसे जिस प्रकारके तेजस्वी हुए हैं, उससे तू आज किसी प्रकारसे हमसे छुटकारा पाने को समर्थ न होगा ॥ १० ॥ वानरराज सुग्रीवजी यह कह छलांग मार सहसा उसके मस्तकपर और रावणके शिरपरसे विचित्र मुकुट उतार पृथ्वीपर फेंक दिये, और फिर पृथ्वीपर उतर दुबारा उसके ऊपर झपटे ॥ ११ ॥ निशाचर रावण सुग्रीवको अति वेगसहित दूसरी बार आते हुए देख कर बोला कि, हे सुग्रीव ! जबतक तुम हमें दृष्टि नहीं आये तबहीतक तुम सुग्रीव थे, परन्तु अब हीनग्रीव हो जाओगे ॥ १२ ॥ रावणने यह कहकर सुग्रीवजीके दोनों हाथ पकड उनको पटक दिया, परन्तु सुग्रीवजीने भी जलसे लुढकती गेंदके समान शीघ्रतासे उठ रावणकी दोनों बाहें पकड उसको पृथ्वी पर पटकडाला ॥ १३ ॥ जब वह परस्पर

स्थित्वामुहूर्तंसंप्रेक्ष्यनिर्भयेनांतरात्मना ॥ तृणीकृत्यचतद्रक्षःसोब्रवीत्परुषंवचः ॥९ ॥ लोकनाथस्यरामस्यसखादासोस्मिराक्षस ॥ नमया मोक्ष्यसेऽद्यत्वंपार्थिवेंद्रस्यतेजसा ॥ १० ॥ इत्युक्त्वासहसोत्पत्यपुप्लुवेतस्यचोपरि ॥ आकृष्यमुकुटंचित्रंपातयामासतद्भुवि ॥ ११ ॥ समी क्ष्यतूर्णमायांतंबभाषेतंनिशाचरः ॥ सुग्रीवस्त्वंपरोक्षंमेहीनग्रीवोभविष्यसि ॥ १२ ॥ इत्युक्त्वोत्थायतंक्षिप्रंबाहुभ्यामाक्षिपत्तले ॥ कंदुवत्सस मुत्थायबाहुभ्यांमाक्षिपद्धरिः ॥ १३ ॥ परस्परंस्वेदविदिग्धागात्रौपरस्परंशोणितरक्तदेहौ ॥ परस्परंश्लिष्टनिरुद्धचेष्टौपरस्परंशाल्मलिकिंशुका विव ॥१४ ॥ मुष्टिप्रहारैश्चतलप्रहारैररत्निघातैश्चकराग्रघातैः ॥ तौचक्रतुर्युद्धमसह्यरूपंमहाबलौराक्षसवानरेंद्रौ ॥ १५ ॥ कृत्वानियुद्धंभृशमु ग्रवेगौकालंचिरंगोपुरवेदिमध्ये ॥ उत्क्षिप्यचोत्क्षिप्यविनम्यदेहौपादक्रमाद्गोपुरवेदिलग्नौ ॥ १६ ॥ अन्योन्यमापीड्यविलग्नदेहौतौपेततुःसा लनिखातमध्ये ॥ उत्पेततुर्भूमितलंस्पृशंतौस्थित्वामुहूर्तंत्वविनिःश्वसंतौ ॥ १७ ॥

इस प्रकारसे युद्ध करने लगे, तब दोनोंके शरीरसे पसीना बहने लगा; रुधिरकी धारा बहनेके कारण दोनोंके देह लाल होगये परस्पर लिपटनेके कारण दोनो के शारीरिक व्यापार बन्द होगये और दोनोंही एक दूसरेसे मिले सेमल और ढाकके वृक्षोंके समान शोभित होने लगे ॥१४॥ महा बलवान राक्षसराज रावण और वानरनाथ सुग्रीवजी इस प्रकारसे परस्पर मुक्का, लात, जांघ, चटकना आदिके आघातोंसे एक दूसरेको पीडित करने लगे ॥ १५ ॥ इस प्रकार बहुत समय तक लंकाके सामनेवाले फाटककी वेदीपर इन दोनोंका बहुयुद्ध होता रहा, उसके पीछे यहां तक युद्ध हुआ कि, कभी २ दोनों लात चलायकर कभी २ वह रावण इनके शरीरको ऊपर उछालता था और कभी यह सुग्रीव इसके शरीरको ऊपर उछालकर गिरा देते थे ॥१६॥ उसके पीछे दोनों परस्पर दबाय एक दूसरेसे लिपट दुर्ग प्राचीरकी खाईमें गिरे । वहांथोडी देर दोनोंहो चेष्टा रहित होकर निर्जीवसे पडे रहे और फिर अति कठिनतासे पृथ्वी पकड वहांसे

निकले, उसकाल दोनोंही वारंवार लंबी श्वासें ले रहे थे ॥१७॥ क्रोध शिक्ष और बलके सहित यह मार्गमें घूमते हुए दोनों परस्परोंको वारंवार लिपटते हुए ऐसे जान पडने लगे कि मानों दोनों परस्परोंको वारंवार रस्सीसे बांध रहे हैं॥ १८ ॥ इस प्रकारसे दांत निकले सिंह व शार्दूलशिशु के सदृश समरमें आसक्त हो हाथीके पाठोंके समान दोनों आपसमें आघात प्रतिघात करते हुए दोनोंही एक साथ पृथ्वी पर गिरने लगे ॥ १९ ॥ इस प्रकारसे वह दोनों वीर परस्पर एक दूसरेको बारंवार मारते और उछाल देते थे और उत्साह शिक्षा व बल सहित अनेक प्रकारकी चतुरता भी दिखाते थे परंतु तथापि उन दोनों वीरोंमेंसे शीघ्र कोई भी न थका ॥ २० ॥ मतवाले हाथियोंके समान वह दोनों वीर हाथीकी शुंडके समान आकारवाली अपनी दोनों भुजाओंसे एक दोनोंको

आलिंग्यचालिंग्यचबाहुयोक्रैःसंयोजयामासतुराहवेतौ ॥ संरंभशिक्षाबलसंप्रयुक्तौसुचेरतुःसंप्रतियुद्धमार्गे ॥ १८ ॥ शार्दूलसिंहाविवजातदंष्ट्रौगजेंद्रपोताविवसंप्रयुक्तौ ॥ संहत्यसंवेद्यचतौकराभ्यांतौपेततुर्वैयुगपद्धरायाम् ॥ १९ ॥ उद्यम्यचान्योन्यमधिक्षिपंतौसंचक्रमातेबहुयुद्धमार्गैं ॥ व्यायामशिक्षाबलसंप्रयुक्तौक्लमेनतौजग्मतुराशुवीरौ ॥ २० ॥ बाहूत्तमैर्वारणवारणाभैर्निवारयंतौपरवारणाभौ ॥ चिरेणकालेनभृशंप्रयुद्धौसंचेरतुर्मंडलमार्गमाशु ॥ २१ ॥ तौपरस्परमासाद्ययत्तावन्योन्यसूदने ॥ मार्जाराविवभक्षार्थेऽवतस्थातेमुहुर्मुहुः ॥ २२ ॥ मंडलानिविचित्राणिस्थानानिविविधानिच ॥ गोमूत्रकाणिचित्राणिगतप्रत्यागतानिच ॥ २३ ॥ तिरश्चीनगतान्येवतथावक्रगतानिच ॥ परिमोक्षंप्रहाराणांवर्जनंपरिधावनम् ॥ २४ ॥

निवारण करते हुए बहुत विलम्बतक युद्ध करके मंडलाकार होकर लडने लगे ॥ २१ ॥ किसी भोजन [1]करनेकी वस्तुको भोजन करनेके लिये लडते हुए दो बिलावोंके समान यह दोनों वीर भी एक दूसरे का प्राणसंहार करनेमें यत्न करने लगे ॥ २२ ॥ इस प्रकारसे युद्ध विशारद राक्षसेन्द्र और वानरेन्द्र कभी मंडल[1] कभी विविध स्थान[2] गोमूत्राकार[3] गति कभी विचित्र गतप्रत्यागत ॥ २३ ॥ कभी टेढी और चक्राकार गति कभी परस्परका प्रहार बचाय कुटिलतासे चलना और चोटके हारको युक्तिसे बचाना व कौशलपूर्वक मुष्टिक आदिसे बचना, दूसरेके प्रहार करने पर आगेको कूद जाना ॥ २४ ॥

---

१ मंडलके चारभागहैं—चारिमंडल, करणमंडल, खंडमंडल और महामंडल जिस मण्डलमें एक चरण चलानेका कार्यपडताहै उसे चारि, जिसमें दोनों चरण चल जातेहैं उसे करण जहां कई एक करणमंडलोंका संयोगहोताहै उसे खण्ड, और तीन या इससे अधिकजहां खंडमंडलहोतेहैं उसे महामंडल कहतेहैं। २ दोनों चरणोंका तिरछा चलाना-वैष्णवादि छःस्थानहैं वैष्णव संवाद वैशाख मण्डल, प्रत्यालीढ, अनालीढ। ३ गोमूत्र गति कुटिल भावसे चलना अर्था टेढे मेढे होकर चलना

शीघ्रतासे सन्मुखको दौडना ऊपरको कूदजानसविग्रह अवस्थिति अर्थात् विग्रह दिखा एक स्थानमें टिके रहना, कभी पराङ्मुखगति, कभी पीछेको हटकर शीघ्रतासे कूदजाना, बगलमें होकर अपहृत (जाँघपकडनेकेलिये झुक जाता) अवप्लुत ॥ २५ ॥ उपन्यासें कभी अपन्यासें इस प्रकारसे युद्धविशारद पार दर्शी दोनोंही वानरेन्द्र सुग्रीव और राक्षस नाथ रावण चतुरता दिखलायकर घूमने लगे ॥ २६ ॥ इतनेहीमें राक्षस वानर सुग्रीवजीसे अपने छुटकारेका उपाय न देखकर अपनी माया दिखलानेपर तैयार हुआ इसे जानकर वानर राज सुग्रीव॥२७॥ रावणको छोडकर आकाशमें कूदगये, वानरराज सुग्रीवजीको न देखकर रावण धोखा खाय वहांपर खडाही रहगया ॥ २८ ॥ उसके पीछे सूर्यके पुत्र वानरराज सुग्रीव अत्यन्त परिश्रमसे निशाचर पति रावणको परा

अभिद्रवणमाप्लावमवस्थानंसविग्रहम् ॥ परावृत्तमपावृत्तमपद्रुतमवप्लुतम् ॥ २५ ॥ उपन्यस्तमपन्यस्तंयुद्धमार्गविशारदौ ॥ तौविचेरतुर न्योन्यंवानरेन्द्रश्चरावणः ॥ २६ ॥एतस्मिन्नंतररेरक्षोमायाबलमथात्मनः ॥ आरब्धुमुपसंपेदेज्ञात्वातंवानराधिपः ॥ २७ ॥ उत्पपाततदाकाशं जितकाशीजितक्लमः ॥ रावणःस्थितएवात्रहरिराजेनवंचितः ॥ २८ ॥ अथहरिवरनाथःप्राप्तसंग्रामकीर्तिर्निशिचरपतिमाजौयोजयित्वाश्र मेण ॥ गगनमतिविशालंलंघयित्वार्कसूनुर्हरिगणबलमध्येरामपार्श्वंजगाम ॥ २९ ॥ सइतिसवितृसूनुस्तत्रतत्कर्मकृत्वापवनगतिरनीकंप्राविश त्संप्रहृष्टः ॥ रघुवरनृपसूनोर्वर्धयन्युद्धहर्षंतरुमृगगणमुख्यैःपूज्यमानोहरींद्रः ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४० ॥ अथतस्मिन्निमित्तानिदृष्ट्वालक्ष्मणपूर्वजः ॥ सुग्रीवंसंपरिष्वज्यरामोवचनमब्रवीत् ॥ १ ॥ असं मंत्र्यमयासार्धंतदिदंसाहसंकृतम् ॥ एवंसाहसयुक्तानिनकुर्वंतिजनेश्वराः ॥ २ ॥

जित और श्रमी कर स्वयंभी विजयरूप कीर्ति पाय अतिविशाल आकाशको लांघकर वानरोंकी सेनाके मध्यमें टिकेहुए श्रीरामचन्द्रजीके निकट पहुँचे॥२९॥ उसके पीछे सूर्य पुत्र सुग्रीवजी लंकामें यह अद्भुत कर्म करके हर्षित अन्तःकरण और पवन वेगसे वानरोंकी सेनाके बीचमें प्रवेश कर उन वानरोंसे पूजित युद्धका वृत्तान्त निवेदन करते हुयेश्रीरामचन्द्रजी के आनंदको बढाने लगे ॥३०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां चत्वारिंशः ॥ ४० ॥ इसके पीछे दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीवजीके शरीरमें युद्धचिह्न देख उनको भेंटकर कहने लगे ॥१॥ हे सखे ! तुमने हमारे साथ विना सलाह कियेही साहस प्रकाश किया है, सो राजालोग कभी भी ऐसा साहसका कार्य करनेमें नहीं लगते हैं, अर्थात् राजाओंका ऐसा साहस करना अनुचित है ॥ २ ॥

१ युद्धका आरंभ करके सन्मुख खडेरहना । ५शत्रुको मारनेके लिये पांव उठाकर दौड़ना शत्रु बाँहोंको न पकडले इस कारण बाँहोंको ऊंचीकिये रहना । ६ शत्रुकी बांहें पकडनेके लिये अपनी बांहें बाढ़ाना ॥

हेसाहसप्रिय वीर ! तुमने जिसप्रकार महासाहसका कार्य किया है, इससे हमें वानरोंके समूहको और विभीषणजीकोतुम्हारे यहांपर लौटनेमें संदेह हुआ था॥ ३॥ हे शत्रुदमनकारी ! जो करना था सो करचुके, परन्तु अब आगेको ऐसा साहस कभी न करना कारण कि, तुम्हारा जो किसी प्रकारसे भी कुछ अनभल होगया तो हम सीताको लेकर क्या करेंगे ? ॥ ४ ॥हे महाबलवान् शत्रुओंके मारनेवाले ! तुम्हारा कुछभी अपमान होनेपर हम भरत उनसे छोटे लक्ष्मण शत्रुघ्न अथवा इस अपने शरीरहीको लेकर क्या करेंगे ? ॥ ५ ॥ यद्यपि महेन्द्र और वरुणजीके तुल्य हम तुम्हारे बलविक्रमको जानते हैं तथापि तुम्हारे अबतक न आनेसे हमने अपने मनमें इस प्रकारसे स्थित किया था ॥ ६ ॥ कि रणभूमिमें पुत्र सेना और वाहनोंके सहित रावणका संहार करके विभीषणको लंकापुरीका राज्य देदेंगे ॥ ७ ॥ हे महाबल ! फिर अयोध्यामें जाय भरतजीको राज्यभार सौंप अपने शरीरकोभी त्याग करदेंगे. जब श्रीरामचन्द्रजीने ऐसा कहा तब सुग्रीवजी उनसे बोले

संशयेस्थाप्यमांचेदंबलंचेमंविभीषणम् ॥ कष्टंकृतमिदंवीरसाहसंसाहसप्रिय ॥ ३ ॥इदानींमाकृथावीरएवंविधमरिंदम ॥ त्वयिकिंचित्समापन्नेकिंकार्यंसीतयामम॥४॥भरतेनमहाबाहोलक्ष्मणेनयवीयसा ॥ शत्रुघ्नेनचशत्रुघ्नस्वशरीरेणवापुनः ॥५॥ त्वयिचानागतेपूर्वमितिमेनिश्चिता मतिः॥जानतश्चापितेवीर्यंमहेंद्रवरुणोपम्॥६॥हत्वाहंरावणंयुद्धेसपुत्रबलवाहनम्॥अभिषिच्यचलंकायांविभिषणमथापिच॥७॥ भरतेराज्यमारोप्यत्यक्ष्येदेहंमहाबल॥तमेवंवादिनंरामंसुग्रीवःप्रत्यभाषत॥८॥तवभार्यापहर्तारंदृष्ट्वाराघवरावणम्॥मर्षयामिकथंवीरजानन्विक्रममात्मनः॥९॥ इत्येवंवादिनंवीरमभिनंद्यचराघवः॥लक्ष्मणंलक्ष्मिसंपन्नमिदंवचनमब्रवीत्॥॥१०॥परिगृह्योदकंशीतंवनानिफलवंतिच॥बलौघंसंविभज्येमंव्यूह्य तिष्ठामलक्ष्मण॥११॥लोकक्षयकरंभीमंभयंपश्याम्युपस्थितम्॥निबर्हणंप्रवीराणामृक्षवानररक्षसाम् ॥१२॥ वाताहिपरुषंवांतिकंपतेचवसुंधरा ॥ पर्वताग्राणिवेपंतेनदंतिधरणीधराः ॥ १३ ॥ मेघाःक्रव्यादसंकाशाःपरुषाःपरुषस्वराः ॥ क्रूराःक्रूरंप्रवर्षंतेमिश्रंशोणितबिंदुभिः ॥ १४ ॥

॥ ८ ॥ हे वीर रघुनंदन ! हम अपने पराक्रमको जानकर आपकी भार्याके हरण करनेवाला रावणको देखकरभी हम किसप्रकार उसे विना दंडदिये रहसकते हैं ॥ ९ ॥ रघुनंदन ! श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीवजीके यह वचन सुनकर सुग्रीवजीकी बडाई करते हुए लक्ष्मीसम्पन्न लक्ष्मणजीसे बोले ॥१०॥ कि,आओ हम सब जन सुशीतल जल और फल मूलशोभित वनस्थलीका आश्रय ले सेनाका विभाग कर व्यूहकी रचना करके उसमें टिकैं ॥११॥ इससमय हम लोगोंका क्षय करने वाले भयंकर भयचिह्न देखते हैं इस युद्धमें जो कि होनेवाला है,अनेक २ वीर्यवान् ऋक्ष,राक्षस और वानरगणोंका विनाश होगा ॥१२॥ यह देखो भयंकर पवन चल रहाहै, पृथ्वी और पवतोंके शिखः तरु कंपायमान होरहेहैं;और समस्त पर्वतभी शब्दायमान होरहे हैं॥१३॥ व्याघ्र सिंहादि हिंसक जन्तुओंके समानभयं

करक्रूर जलदजाल(बादल)रुधिरकी बूंदोंसे मिलाहुआ अशुभ जल वर्षातेहैं॥ १४॥सन्ध्याने लाल चन्दनके समान लाल ललाई रंगसे दारुण मूर्ति धारण कीहै. सूर्य मंडलसे अग्निके अंगारे जलतेहुए गिरते हैं ॥ १५ ॥ दीन स्वभाव क्रूर बुरे पशु और पक्षीगण सूर्यके सन्मुखहोकर बडी दीनतासे रोते हैं कि जिनको सुनकर अत्यन्त भय उत्पन्न होता है ॥१६॥ रात्रिमें चन्द्रमा उदय होकर लोगोंको संताप किया करताहै और प्रलयकालके समान उसके चारों ओर काली और लाल किरणें दिखाई देती हैं,हे लक्ष्मण !चन्द्रमाका ऐसा विपरीतभाव बहुतही बुराहै ॥१७॥ हे लक्ष्मण ! देखो सूर्यकेमंडलमें नीले दाग दिखलाई देतेहैं,चन्द्रमाकी भांति सूर्यमंडल भी रूखा,छोटा,बुरा और लालवर्णका होगया है ॥१८॥ हे लक्ष्मण ! चन्द्रमाके प्रति नक्षत्रमें यथावत न टिकनेसे निश्चय ज्ञात होता है कि मानो शीघ्रही प्रलयकाल आया चाहता है॥१९॥गिद्ध,बाज और कौवे ऊपरमें सहसा गिरतेहैं,और श्रृगालियां मानो ऊंचे स्वरसे अशुभ समाचारकोही प्रगटकर

रक्तचंदनसंकाशासंध्यापरमदारुणा ॥ ज्वलच्चनिपतत्येतदादित्यादग्निमंडलम्॥ १५ ॥ आदित्यमभिवाश्यंतिजनयंतोमहद्भयम् ॥ दीनादीन स्वराःक्रूराअप्रशस्तामृगद्विजाः॥ १६ ॥ रजन्यामप्रशस्तश्चसंतापयतिचंद्रमाः ॥कृष्णरक्तांशुपर्यंतोयथालोकस्यसंक्षये॥१७॥ह्रस्वोरूक्षोऽप्र शस्तश्चपरिवेषःसुलोहितः ॥आदित्यमंडलेनीलंलक्ष्मलक्ष्मणदृश्यते ॥ १८ ॥ दृश्यतेनयथावच्चनक्षत्राण्यभिवर्तते॥ युगांतमिवलोकस्यपश्यल क्ष्मणशंसति ॥ १९ ॥ काकाःश्येनास्तथागृध्रानीचैःपरिपतंतिच ॥ शिवाश्चाप्यशुभावाचःप्रवदंतिमहास्वनाः ॥ २० ॥ शैलैःशूलैश्चखड्गै श्चविमुक्तैःकपिराक्षसैः ॥ भविष्यत्यावृताभूमिर्मांसशोणितकर्दमा॥ २१ ॥ क्षिप्रमद्यदुराधर्षांपुरींरावणपालिताम् ॥ अभियामजवेनैवसर्वतो हरिभिर्वृताः ॥२२॥ इत्येवंतुवदन्वीरोलक्ष्मणंलक्ष्मणाग्रजः ॥ तस्मादवातरच्छीघ्रंपर्वताग्रान्महाबलः ॥ २३ ॥ अवतीर्यतुधर्मात्मातस्माच्छै लात्सराघवः ॥ परैःपरमदुर्धर्षंददर्शबलमात्मनः ॥ २४ ॥ सन्नह्यतुससुग्रीवःकपिराजबलंमहत् ॥ कालज्ञोराघवःकालेसंयुगायाभ्यचोदयत् ॥ २५ ॥ ततःकालेमहाबाहुर्बलेनमहतावृतः ॥ प्रविष्टःपुरतोधन्वीलंकामभिमुखःपुरीम् ॥ २६ ॥

रही हैं॥२०॥वानर राक्षसोंके छोड़ेहुए वृक्ष शूल और खड्गादिकोंसे मरीहुई सेनाके मांस व रक्तसे यहांकी पृथ्वी परिपूर्ण होजायगी॥२१॥ हे लक्ष्मण !जो कुछ भी हो वानरगणोंके साथ बलपूर्वक आज हम रावणके पाली जाती हुई दुर्द्धर्ष लंकापुरीमें प्रवेश करेंगे ॥२२॥ वीरश्रेष्ठ महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीसे यह कहकर पर्वतके श्रृङ्गसे नीचे उतरनेकी इच्छा करतेहुए ॥ २३ ॥ धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजीने उस पर्वतपरसे उतर शत्रुओंकरके बडे दुःखसे भी भयभीत न होनेवाली अपनी वानरी सेनाको देखा ॥२४॥ सुग्रीवजीके साथ श्रीरामचन्द्रजीने कवच बख्तरादिकी सामग्री धारणकर सुग्रीवजीको व्यूहबनानेके लिये कहा और युद्ध करनेके लिये वानरोंको आज्ञा दी ॥२५॥ उसके पीछे महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजी विजयमुहूर्तमें बडी भारी सेनाके साथ धनुष धारण करके लंकापुरीकी

ओर मुख कर संग्राम करनेको चले ॥ २६ ॥ जब श्रीरामचन्द्रजी चले तो वानरराज सुग्रीव, हनुमान; ऋक्षराज जाम्बवान. नल नील और लक्ष्मण उनके पीछे २ चले ॥२७॥ रीछ और वानरोंकी बडीभारी सेना विस्तारित पृथ्वीके एक बडे भागको ढककर रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीके पीछे २ गमन करनेलगी ॥२८॥ शत्रुओं का विनाश करनेमें समर्थ हाथियोंके समान आकारवाले वानरोंने गमन करनेके समय असंख्य पर्वतोंके शिखर और बडे २ वृक्ष ग्रहण करलिये ॥ २९ ॥ इसप्रकारसे शत्रुओंके मारनेवाले श्रीरामचन्द्रजी बहुतही शीघ्रतासे राक्षस रावणकी लंकापुरीके द्वारपर पहुँचे ॥३०॥ यह लंकापुरी बहुत सारी पताकाओंके लगनेसे शोभायमान् होरही थी, रमणीक फुलवाडियोंसे शोभित थी उसकी दुर्ग प्राचीर अति विचित्र थी परिखा (खाई) व द्वारोंपरके स्थान अतिविशाल थे. इस कारण

तौविभीषणसुग्रीवौहनूमाञ्जांबवान्नलः ॥ ऋक्षराजस्तथानीलोलक्ष्मणश्चान्वयुस्तदा ॥२७॥ ततःपश्चात्सुमहतीपृतनर्क्षवनौकसाम् ॥ प्रच्छाद्यमहतींभूमिमनुयातिस्मराघवम् ॥२८॥ शैलशृंगाणिशतशःप्रवृद्धांश्चमहीरुहान् ॥जगृहुःकुंजरप्रख्यावानराःपरवारणाः ॥२९॥ तौत्वदीर्घेण कालेनभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ रावणस्यपुरींलंकामासेदतुररिंदमौ ॥३०॥ पताकामालिनींरम्यामुद्यानवनशोभिताम् ॥ चित्रवप्रांसुदुष्प्रापामुच्चैःप्रकारतोरणाम् ॥ ३१ ॥ तांसुरैरपिदुर्धर्षारामवाक्यप्रचोदिताः ॥ यथानिदेशंसंपीड्यन्यविशंतवनौकसः ॥३२॥ लंकायास्तूत्तरद्वारंशैलशृंगमिवोन्नतम् ॥ रामःसहानुजोधन्वीजुगोपचरुरोधच ॥ ३३ ॥ लंकामुपनिविष्टतुरामोदशरथात्मजः ॥लक्ष्मणानुचरोवीरःपुरींरावणपालिताम् ॥ ३४ ॥ उत्तरद्वारमासाद्ययत्रतिष्ठतिरावणः ॥ नान्योरामाद्धितद्द्वारंसमर्थःपरिरक्षितुम् ॥ ३५ ॥ रावणाधिष्ठितंभीमंवरुणेनेवसागरम् ॥ सायुधैराक्षसैर्भीमैरभिगुप्तंसमंततः ॥ ३६ ॥

बडे दुःखसेभी वहां कोई नहीं पहुँच सकता था॥३१॥ देवताओंकोभी अति दुःखसे प्रवेश करनेके योग्य लंकापुरीपर श्रीरामचन्द्रजीके वचनोंसे प्रेरित वानरगण यथायोग्य स्थानोंको दबाय २ बैठगये ॥ ३२ ॥ इस प्रकारसे श्रीरामचन्द्रने धनुष धारण करके अनुज लक्ष्मणजीके साथ पर्वतके शिखर समान ऊंचे उत्तर द्वारको रोककर अपनी सेनाकी रक्षा करने लगे ॥३३॥ महाराजाधिराज दशरथजीके पुत्र श्रीरामचन्द्रजी वीर लक्ष्मणजीको साथ लेकर रावणसे रक्षित लंकापुरीमें प्रवेश करते हुए ॥ ३४ ॥ जहां पर रावण स्वयं विराजमान था, रामचन्द्रजीके सिवाय और कोईभी उसकी रक्षा करनेको समर्थ नहीं होगा, यही विचार कर वीर दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीकेसहित स्वयं उस रावणपालित लंकापुरीके उत्तर द्वारको घेर लेते हुए॥३५॥वरुणजीसे रक्षित महासागर और

दानवोंके दलसे रक्षित पातालपुरीके समान शस्त्र लिये भयंकर रूप योद्धा राक्षसोंकरके सर्व प्रकारसे भी रक्षा किया जाता हुआ उत्तर द्वारके देखनेसे अल्पवीर्यवालोंको अत्यन्त भय लगता था ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ और वहांपर वानरलोगोंने राक्षस वीरोंके अनेक अस्त्र और कवच देखे, सेनापति नील वानरोंकी सेनाके साथ पूर्व द्वार पर पहुँचा ॥३८॥ इन नीलके साथ वीर्यवान् मैन्द और द्विविद यह दोनों वानरभी थे । महाबलीवालिके पुत्र अंगदजी दक्षिणके द्वारपर गये ॥ ३९ ॥ अंगदजीके साथ ऋषभ, गज, गवय और गवाक्ष यह चार वानरभी दक्षिण द्वारपर गये, महावीर हनुमान्‌जीने पश्चिम द्वारको जायकर घेरलिया ॥४०॥ जङ्घ, तरस्व और दूसरे वीर सेनापति उन हनुमान्‌जीके साथ दक्षिण द्वारपर गये, और मध्यके गुल्मपर स्वयं सुग्रीवजी जा डटे ॥४१॥ कि, जिनके

लघूनांत्रासजननंपातालमिवदानवैः ॥ विन्यस्तानिचयोधानांबहूनिविविधानिच ॥३७॥ ददर्शायुधजालानितथैवकवचानिच ॥ पूर्वंतुद्वारमासाद्यनीलोहरिचमूपतिः ॥ ३८ ॥ अतिष्ठत्सहमैंदेनद्विविदेनचवीर्यवान् ॥ अंगदोदक्षिणद्वारंजग्राहसुमहाबलः ॥ ३९ ॥ ऋषभेणगवाक्षेणगजेनगवयेनच ॥ हनूमान्पश्चिमद्वारंररक्षबलवान्कपिः ॥४०॥प्रजंघतरसाभ्यांचवीरैरन्यैश्चसंगतः ॥ मध्यमेचस्वयंगुल्मेसुग्रीवःसमतिष्ठत ॥४१॥ सहसर्वैर्हरिश्रेष्ठैःसुपर्णपवनोपमैः ॥ वानराणांतुषट्त्रिंशत्कोटयःप्रख्यातयूथपाः ॥४२॥निपीडचोपनिविष्टाश्चसुग्रीवोयत्रवानरः ॥ शासनेनतुरामस्यलक्ष्मणःसविभीषणः ॥ ४३ ॥ द्वारेद्वारेहरीणांतुकोटिंकोटीन्र्यवेशयत् ॥ पश्चिमेनतुरामस्यसुषेणःसहजांबवान् ॥४४॥ अदूरान्मध्यमेगुल्मेतस्थौबहुबलानुगः ॥तेतुवानरशार्दूलाःशार्दूलाइवदंष्ट्रिणः ॥गृहीत्वाद्रुमशैलाग्रान्हृष्टायुद्धायतस्थिरे ॥४५॥सर्वेविकृतलांगूलाःसर्वेदंष्ट्रानखायुधाः ॥सर्वेविकृतचित्रांगाःसर्वेचविकृताननाः ॥४६॥ दशनागबलाःकेचित्केचिद्दशगुणोत्तराः ॥ केचिन्नागसहस्रस्यबभूवुस्तुल्यविक्रमाः ॥४७॥

साथ सब श्रेष्ठवानर थे कि, जिसमें गरुण और पवनके समान बलथा, इस वानरोंकी सेनामें छत्तीस करोड विख्यात वानरोंके यूथप थे ॥४२॥ यह सब वानर वहांपर मिलकर आये कि, जहां सुग्रीवजी थे, रामचन्द्रजीकी आज्ञासे लक्ष्मण और विभीषणजीने ॥४३॥ लंकाके प्रत्येक द्वारपर करोड २ वानरोंको नियुक्त करते हुए सुषेण, जाम्बवान् बहुतसी वानरोंकी सेनाको संग लेकर श्रीरामचन्द्रजीके पीछे ॥ ४४ ॥ अत्यन्त निकटवाले मध्यगुल्मपर बहुतसी सेनाके साथ जाय टिके, इसप्रकार वानरशार्दूलगण कि, जिनके दांतभी सिंहके समान तीक्ष्ण थे, वृक्ष और पर्वतोंको धारण करके हर्षितमनसे युद्धकी राह परखने लगे ॥४५॥ नख और दांतोंको आयुध बनाये विचित्र देहवाले वह वानरगण क्रोधमें भरकर अपनी पूंछको फटकारने अंगचलाने और मुखबिरानेके आकार कहने लगे ॥४६॥ इन

वानरोंमें किसी२के दश हाथियोंका बल था, किसी२के शत हाथियोंका बल था, और किसी२मे हजार हाथियोंके समान बल विक्रम था॥४७॥ उन वानरोंमें कोई२ अमोघसंघ और कोई२शत अमोघसङ्घ हाथियोंके समान बलशाली थे, और कोई२यूथपतिके समान बलशाली थे कि, उनकी तुलना किसीके साथ नहीं हो सकती ॥४८॥ टीडियोंके समान उस बानरोंकी सेनाका ऐसा अद्भुत और विचित्र समागम हुआ था कि, पहले कभी भी ऐसा समागम नहीं हुआ था॥४९॥ लंकापर पहुँचे हुए वानरगणों करके वहांकी पृथ्वी और कूदते फांदते हुए वानरोंसे वहांका आकाश परिपूर्ण होरहा था॥५०॥ इनके सिवाय युद्धकी अभिलाषा करके असंख्य वानर और रीछगण चारों ओरसे लंकाके द्वारोंपर आय २ जुटने लगे ॥५१॥ उस समय समस्त पर्वतश्रेष्ठ गिरिकूट समस्त वानरोंसे छाया हुआ जान पड़ने

संतिचौघबलाकेचित्केचिच्छतगुणोत्तराः ॥ अप्रमेयबलाश्चान्येतत्रासन्हरियूथपाः ॥ ४८ ॥ अद्भुतश्चविचित्रश्चतेषामासीत्समागमः ॥ तत्र वानरसैन्यानांशलभानामिवोद्गमः ॥ ४९ ॥ प्रतिपूर्णमिवाकाशंसंपूर्णेवचमेदिनी ॥ लंकामुपनिविष्टैश्चसंपतद्भिश्चवानरैः ॥ ५० ॥ शतंशतसहस्राणांपृतनर्क्षवनौकसाम् ॥ लंकाद्वाराण्युपाजग्मुरन्येयोद्धुंसमंततः ॥ ५१ ॥ आवृतःसगिरिःसर्वैस्तैःसमंतात्प्लवंगमैः ॥ अयुतानांसहस्रंचपुरींतामभ्यवतत ॥५२॥ वानरैर्बलवद्भिश्चबभूवद्रुमपाणिभिः ॥ सर्वतःसंवृतालंकादुष्प्रवेशापिवायुना ॥ ५३ ॥ राक्षसाविस्मयंजग्मुःसहसाभिनिपीडिताः ॥ वानरैर्मेघसंकाशैःशक्रतुल्यपराक्रमैः ॥ ५४ ॥ महाञ्छब्दोभवत्तत्रबलौघस्याभिवर्ततः ॥ सागरस्येवभिन्नस्ययथास्यात्सलिलस्वनः ॥ ५५ ॥ तेनशब्देनमहतासप्राकारासतोरणा ॥ लंकाप्रचलितासर्वासशैलवनकानना ॥ ५६ ॥

लगा, प्रति द्वारपर सन्निवेशित सेनाका वृत्तांत जाननेके लिये एक कोटि वानरगण लंकापुरीके चारों ओर घूमने लगे ॥ ५२ ॥ लंकानगरी वृक्ष हाथोंमें लिये वानरों करके इसप्रकार सर्वभावसे घेरीगई कि, वहां पवनका प्रवेश करनाभी कठिन ज्ञात होने लगा ॥५३॥ मेघाकार और इन्द्रतुल्य पराक्रमकारी वानरगणोंसे पीडित होकर राक्षसगण अत्यन्त विस्मित हुए ॥५४॥ समुद्रके ऊपर सेतु बँधनेसे जिस प्रकार उसके जलका अत्यन्त भयंकर शब्द होता है, वैसेही अतिभारी वानरोंकी सेनाका तुमुल शब्द प्रगट होने लगा ❀ ॥ ५५ ॥ उस बडे भारी शब्दसे पर्वत, वन, कानन, प्राकार और फाटकोंके सहित समस्त

कवित्त–चढ़त कटक महाराजरामचन्द्रजीके गरदगगन रविझपिगो झडाकदें ॥ फूटिगो जलधि बन्ध लूटिके दुवनपुर छूटिगो मवीस वन हटिगो हडाकदें ॥ श्रीपति सुजान भने, चिरिगोवराह रद फिरिगो सुमेरगिरि गिरिगो धडाकदें ॥ धुंधरकी धरनिमें फलक्यो फनिन्द फन दरकी कमठ पीठ कडकी कडाकदें ॥ १ ॥ उज्ज्वल अमल आभा अधिक विराजमान गंगकी तरंग सुरलोकको निसेनी है ॥ रस रौद्र पूरन सरस्वती सहित जहां श्यामता सहित रविसुता सुखदेनी है ॥ भद्रअवतंस महाराज रघुवंशमणि कहें रसरूपजाकी धाराअति पैनीहै ॥ महामदमत्त बलवन्त बडे बैरिनको तारिवे की वारी तरवार यों त्रिवेनी है ॥ २ ॥

लंकाद्वीप वारंवार कम्पायमान होने लगा ॥५६॥ अधिक क्या कहें उस समयमें वह वानरोंकी सेना श्रीरामचन्द्र लक्ष्मण व सुग्रीवजीकरके रक्षित होनेके कारण देवता व राक्षसोंसे भी जीतनेके अयोग्य जानपडती थी ॥५७॥ श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकारसे राक्षसोंका वध करनेके लिये सेना स्थापन कर कर्त्तव्याकर्त्तव्यका निश्चय करनेके लिये मंत्रियोंके साथ सलाह करने लगे और वारंवार कार्यका निर्णय करनेमें आगे बढे ॥५८॥ श्रीरामचन्द्रजी साम दान भेद दंड इन चारों उपायोंको जानते थे, परन्तु उपस्थित कार्यमें शेष उपाय अर्थात् दंडदेनाही श्रेष्ठ विचार करके राजधर्ममें मन लगाते हुए, और विभीषणजीके परामर्शके अनुसार यही कर्त्तव्य स्थिर करके ॥५९॥ वालिके पुत्र अंगदजीको बुलायकर उनसे बोले, कि हे सौम्य ! तुम हमारे वचनोंको जायकर रावणसे कहना ॥६०॥ तुम

रामलक्ष्मणगुप्तासासुग्रीवेणचवाहिनी ॥ बभूवदुर्धर्षतरासर्वैरपिसुरासुरः ॥ ५७ ॥ राघवःसन्निवेश्यैवस्वसैन्यंरक्षसांवधे॥ संमंत्र्यमंत्रिभिःसार्धंनिश्चित्यचपुनःपुनः ॥ ५८ ॥ आनंतर्यमभिप्रेप्सुःक्रमयोगार्थतत्त्ववित् ॥ विभीषणस्यानुमतेराजधर्ममनुस्मरन् ॥ ५९ ॥ अंगदंवालितनयंसमाहूयेदमब्रवीत् ॥ गत्वासौम्यदशग्रीवंब्रूहिमद्वचनात्कपे ॥ ६० ॥ लंघयित्वापुरींलंकांभयंत्यक्त्वागतव्यथः ॥ भ्रष्टश्रीकंगतैश्वर्यंमुमूर्षांनष्टचेतनम् ॥ ६१ ॥ ऋषीणांदेवतानांचगंधर्वाप्सरसांतथा ॥ नागानामथयक्षाणांराज्ञांचरजनीचर ॥ ६२ ॥ यच्चपापंकृतंमोहादवलिप्तेनराक्षस ॥ नूनंतेविगतोदर्पःस्वयंभूवरदानजः ॥ ६३ ॥ यस्यदंडधरस्तेहंदाराहरणकर्शितः ॥ दंडंधारयमाणस्तुलंकाद्वारेव्यवस्थितः ॥ ६४ ॥ पदवींदेवतानांचमहर्षीणांचराक्षस ॥ राजर्षीणांचसर्वेषांगमिष्यसियुधिस्थिरः ॥ ६५ ॥ बलेनयेनवैसीतांमाययाराक्षसाधम ॥ मामतिक्रमयित्वात्वंहृतवांस्तन्निदर्शय ॥ ६६ ॥

निर्भय होकर समस्त लंकापुरीको लांघते हुए चलेजाना, और राक्षसोंका भय छोड उनसे कहनाकि हे लक्ष्मीरहित, ऐश्वर्यहीन, मृत्युके निकट पहुँचे; चेतनारहित राक्षस ॥६१॥ ऋषि, देवता, गन्धर्व, अप्सरा, सर्प, यक्ष और राजाओंका ॥६२॥ जो पाप विना विचारे व गर्वसे तुमने किया है, उस पापके भोगनेका समय अब आगया है, अब उन पापोंका दारुण परिणाम फलनाही चाहता है, ब्रह्माके वरदानसे ये गर्व तुमको हुआ है, आज वह चूर्ण करदेंगे ॥६३॥ तुमने जो हमारी भार्याका हरणरूप अपराध किया है, हम उसका उचित दंड देनेके लिये साक्षातकालके समान लंकाके द्वारपर टिक रहे हैं ॥ ६४ ॥ यदि हमारे साथ युद्ध करनेहीकी तेरी इच्छा है तो युद्ध में हमारे हाथसे तेरी मृत्यु होनेपर तेरे भाग्यमें देवता महर्षिकी राजओंकी गति प्राप्त होगी ॥६५॥ रे राक्षसाधम ! तुमने जो बल

और मायाका आश्रय करके हमारी कुटीसे दूर करके सीताको हरण किया है अब वही बल और वही माया तुमको दिखानी चाहिये॥६६॥ यदि तुम सीताको समर्पण करके हमारे शरणागत न होगेतो जानलेना कि अत्यन्त तीखे बाणोंसे हम समस्तलोक राक्षसशून्य करेंगे इससे जानकीको देदे, क्योंकि जानकी किसी प्रकारसे हम नहीं छोड सकते ❋ ॥६७॥ धर्मात्मा राक्षसश्रेष्ठ विभीषण हमारी शरणमें आये हैं हमभी इनकोही निष्कंटक लंकाका राज्य व तुम्हारा सब ऐश्वर्य दान कर देंगे ॥ ६८ ॥ तुम जिसप्रकारके पापचारी और ज्ञानहीन हो, और उसपर ऐसा अधर्म्माचरण करके इन मूर्ख मंत्रियोंकी सहायतासे अब अधिक कालतक राज्य नहीं कर सकोगे ॥६९॥ हे राक्षस ! यदि शरणमें आना तुम्हारा मनमाना न होवे तो धीरता और शूरताका आश्रय लेकर युद्ध करो कारण कि युद्ध करनेपर

अराक्षसमिमंलोकंकर्तास्मिनिशितैःशरैः ॥ नचेच्छरणमभ्येषितामादायतुमैथिलीम् ॥ ६७ ॥ धर्मात्मराक्षसश्रेष्ठःसंप्राप्तोयंविभीषणः ॥ लंकैश्वर्यमिदंश्रीमान्ध्रुवंप्राप्नोत्यकंटकम् ॥ ६८ ॥ नहिराज्यमधर्मेणभोक्तुंक्षणमपित्वया ॥ शक्यंमूर्खसहायेनपापेनाविदितात्मना ॥ ६९ ॥ युध्यस्वमाधृतिंकृत्वाशौर्यमालंब्यराक्षस ॥ मच्छरैस्त्वंरणेशांतस्ततःशांतोभविष्यसि ॥ ७० ॥ यद्याविशसिलोकांस्त्रीन्पक्षीभूतोनिशाचर ॥ ममचक्षुःपथंप्राप्यनजीवन्प्रतियास्यसि ॥ ७१ ॥ ब्रवीमित्वांहितंवाक्यंक्रियतामौर्ध्वदेहिकम् ॥ सुदृष्टाक्रियतांलंकाजीवितंतेमयिस्थितम् ॥ ७२ ॥ इत्युक्तःसतुतारेयोरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ जगामाकाशमाविश्यमूर्तिमानिवहव्यवाट् ॥ ७३ ॥ सोतिपत्यमुहूर्तेनश्रीमाद्रावणमंदिरम् ॥ ददर्शासीनमव्यग्रंरावणंसचिवैःसह ॥ ७४ ॥

हमारे चलाये हुए बाणोंसे तुम्हारा देह पवित्र होजायगा और तुमने जन्मसे लेकर अबतक जो पाप कार्य किये हैं उनसे तुम्हारा छुटकारा होजायगा ॥७०॥ हे निशाचर ! तुम यदि पक्षीकी देह धारण करके त्रिलोकीके मध्यमेंभी घूमोगे, तथापि हमारी दृष्टिसे अलग होजाने अथवा अपने जीवनकी रक्षा करनेको तुम समर्थ न होगे ॥७१॥ अब तुम्हारा जीवन हमारेही हाथमें है, इस कारण तुम्हारे हितके निमित्तही कहते हैं, कि तुम परलोक सद्गति प्राप्त करनेके लिये दान पुण्य जो कुछ करने हैं वह करलो और तुम्हारा मरण देखकर लंकानगरी प्रमुदित होवै ॥७२॥ दुष्करकर्म करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी करके इस प्रकारसे कहे जाकर ताराकुमार अंगदजी मूर्तिवान् अग्निके समान आकाशमार्गमें गमन करने लगे ॥७३॥ इसके पीछे एक मुहूर्त भरके बीचमें रावणके मंदिरपर पहुँचकर

❋ खर भर भये लंका शंकित सब रजनीचर अकुलाते है । सहि न जात वह तेज वदनकीमूंदि नयन रहजाते हैं ॥ दाहक लंककीश सोइ आयउ श्रवननि लागि सुनातेहैं । कौन विधाता अबकीराखै यह कहते विललाते हैं । कहि लंकेशहि पोच शोच सब पुरबासी घबडाते है । बिन पूंछे मग लंकागढकी कर जोरे बतलाते हैं ॥ मुकुट शीश कर गदा विराजै सूर्य तेज मन भाते हैं । दशग्रीव मानके मथन हेतु बल सीवें बालिसुत आते हैं ॥

मंत्रिलोगोंके साथ बैठ अविचलित हृदय रावणको अंगदजी देखते हुए ॥ ७४ ॥ उसके पीछे सुवर्णके बाजूमें भूषित प्रदीप्त अग्निके समान वानर श्रेष्ठ अंगदजी रावणके निकटही आकाशसे उतर ॥ ७५ ॥ स्वयं अपना नाम सबको सुनाय मंत्रियोंके सहित रावणसे वह श्रीरामचन्द्रजीके कहे हुए वचन यथार्थ २ कहने लगे ॥ ७६ ॥ अंगदजी बोले कदाचित् तुमने हमारा नाम सुनाही होगा, जो न सुना हो तो अब सुनो कि हम वालीके पुत्र हैं और अंगद हमारा नाम है । इस समय दुष्करकर्म करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीके दूत होकर यहां आये हैं ॥ ७७ ॥ कौशल्याजीको आनंद बढानेवाले श्रीरामचन्द्रजी तुमसे कह दिया है कि, रे पुरुषोंमें नीच क्रूर ! तुम लंकापुरीसे निकल हमसे युद्ध करो ॥ ७८ ॥ हम पुत्र जातिबांधव और मंत्रियोंके सहित तेरा संहार करेंगे हे रावण ! तुम्हारे मर जानेपर

ततस्तस्याविदूरेणनिपत्यहरिपुंगवः ॥ दीप्ताग्निसदृशस्तस्थावंगदःकनकांगदः ॥ ७५ ॥ तद्रामवचनंसर्वमन्यूनाधिकमुत्तमम् ॥ सामात्यंश्रावयामासनिवेद्यात्मानमात्मना ॥ ७६ ॥ दूतोहंकोशलेंद्रस्यरामस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ वालिपुत्रोंगदोनामयदितेश्रोत्रमागतः ॥ ७७ ॥ आहत्वांराघवोरामःकौसल्यानंदवर्धनः ॥ निष्पत्यप्रतियुध्यस्वनृशंसपुरुषोभव ॥ ७८ ॥ हंतास्मित्वांसहामात्यंसपुत्रज्ञातिबांधवम् ॥ निरुद्विग्नास्त्रयोलोकाभविष्यंतिहतेत्वयि ॥ ७९ ॥ देवदानवयक्षाणांगंधर्वोरगरक्षसाम् ॥ शत्रुमद्योद्धरिष्यामित्वामृषीणांचकंटकम् ॥ ८० ॥ विभीषणस्यचैश्वर्यंभविष्यतिहतेत्वयि ॥ नचेत्सत्कृत्यवैदेहींप्रणिपत्यप्रदास्यसि ॥ ८१ ॥ इत्येवंपरुषंवाक्यंब्रुवाणेहरिपुंगवे ॥ अमर्षवशमापन्नोनिशाचरगणेश्वरः ॥ ८२ ॥ ततःसरोषमापन्नःशशाससचिवांस्तदा ॥ गृह्यतामितिदुर्मेधावध्यतामितिचासकृत् ॥ ८३ ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वादीप्ताग्निमिवतेजसा ॥ जगृहुस्तंततोघोराश्चत्वारोरजनीचराः ॥ ८४ ॥

त्रिभुवनकी व्याकुलता और घबडाहट जाती रहेगी ॥ ७९ ॥ हम तुम्हारा संहार करके देव, दानव, यक्ष, गन्धर्व सर्प, राक्षस और ऋषिलोगोंके कण्टकका उद्धार करेंगे ॥ ८० ॥ तुम हमारे चरणोंमें झुककर आदर सहित यदि हमको जानकी न देदोगे तो निश्चय ही तुम नाशको प्राप्त होगे और तुम्हारा समस्त ऐश्वर्य विभीषण का हो जायगा॥ ८१॥ जब वानर वीर अंगदजीने इस प्रकारके कठोर वचन कहे तब राक्षसोंका राजा रावण क्रोधके वश हुआ॥ ८२॥ वह रावण अत्यन्तही क्रोधके वश होकर अपने मंत्रियोंसे बोला कि, तुम अभी इस वानरको पकडकर इसका प्राण संहार करडालो ॥ ८३ ॥ रावणके ऐसे वचन सुनकर रूपघोर वाले चार निशाचर उन प्रदीप्त अग्निके तुल्य अंगदजी को पकडनेके लिये तैयार हुए ॥ ८४ ॥

वीर श्रेष्ठ बुद्धिमान् तारा कुमार अंगदजीको समर्थ होकर भी अपना बल राक्षसोंको दिखलानेके लिये स्वयंही अपनेको पकडवा दिया ॥ ८५ ॥ जब राक्षस लोग अंगदजीकी बाहें बांध रहे थे, तब अंगदजी सहसा उन राक्षसोंके सहित पर्वतके शृङ्गोंके समान ऊंचे बडे भारी राज मंदिरपर कूदकर चढगये ॥ ८६ ॥ अंगदजीके कूदनेके समय राक्षस लोग ऐसे त्रासित हो उठे कि,वह समस्त राक्षस रावणके सामने ही पृथ्वीपर गिरपडे ॥८७॥उसके पीछे महाप्रतापी अंगदजीने पर्वतके शिखरके समान ऊंचे रावणके राजमंदिरपर चढकर उस पर बलसे एकपद प्रहार किय ॥ ८८ ॥ वज्रधारी इन्द्रके वज्र मारनेसे जिसप्रकार पूर्वकालमें हिमाचलका शृङ्ग चूर्णहोगया था वैसेही रावणके सम्मुख उसके देखते २ राजमंदिरका शिखर फटकर गिरपडा ॥ ८९ ॥ इसप्रकारसे अंगदजी राजमंदिरके

ग्राहयामासतारेयःस्वयमात्मानमात्मवान् ॥ बलंदर्शयितुंवीरोयातुधानगणेतदा ॥ ८५ ॥ सतान्बाहुद्वयासक्तानादायपतगानिव ॥ प्रासादं शैलसंकाशमुत्पपातांगदस्तदा ॥ ८६ ॥ तस्योत्पतनवेगेननिर्धूतास्तत्रराक्षसाः ॥ भूमौनिपतिताःसर्वेराक्षसेंद्रस्यपश्यतः ॥ ८७ ॥ ततःप्रासा दशिखरंशैलशृंगमिवोन्नतम् ॥ चक्रामराक्षसेंद्रस्यवालिपुत्रःप्रतापवान् ॥ ८८ ॥ पफालचतदाक्रान्तंदशग्रीवस्यपश्यतः ॥ पुराहिमवतःशृंगं वज्रेणेवविदारितम् ॥ ८९ ॥ भंक्त्वाप्रासादशिखरंनामविश्राव्यचात्मनः ॥ विनद्यसुमहानादमुत्पपातविहायसा ॥ ९० ॥ व्यथयन्राक्षसान्स र्वान्हर्षयंश्चापिवानरान् ॥ सवानराणांमध्येतुरामपार्श्वमुपागतः ॥ ९१ ॥ रावणस्तुपरंचक्रेक्रोधंप्रासादधर्षणात् ॥ विनाशंचात्मनःपश्यन्निः श्वासपरमोभवत् ॥ ९२ ॥ रामस्तुबहुभिर्हृष्टैर्विनदद्भिःप्लवंगमैः ॥ वृतोरिपुवधाकांक्षीयुद्धायैवाभिवर्तत ॥ ९३ ॥ सुषेणस्तुमहावीर्योगिरि कूटोपमोहरिः ॥ बहुभिःसंवृतस्तत्रवानरैःकामरूपिभिः ॥ ९४ ॥

शिखरको वारंवार अपना नाम सबको सुनाय अत्यन्त घोर सिंहनाद करतेहुए आकाशको उछलगये ॥ ९० ॥ वीर अंगदजी इसप्रकारसे राक्षसोंको दुःखी और वानरगणोंको हर्ष उपजातेहुए वानरगणोंके बीचमें बैठे श्रीरामचन्द्रजीके निकट पहुँचगये ॥ ९१ ॥ राजमंदिरके टूटनेपर रावणको अत्यन्तही क्रोध उत्पन्न हुआ और वह श्रीरामचन्द्रजीके दूतका बल और अपने होनेवालेविनाशको निश्चयजानकरचिन्तासहित वारंवार लंबे २ श्वासलेने लगा ॥ ९२ ॥ इस ओर महाबवान् श्रीरामचन्द्रजीं भी हर्षित किलकिलाते वानरगणोंसे वेष्टित होकर शत्रुका नाश करनेके लिये युद्धमें ही अपने मनको लगाते हुए ॥ ९३ ॥ पर्व ताकार महबलशाली सुषेणभी कामरूपधारी बहुत सारे वानरोंकी सेना संग लेकर आगे बढ शोभायमान हुआ ॥ ९४ ॥

वहअजेय सुषेण नामवानर कपिराज सुग्रीवजीकी आज्ञासे तारागणोंसे घिरेहुए चंद्रमंडलकेसमान बहुतसारी सेनाको साथ लेकरलंकाके समस्तद्वारोंपर घूमनेलगा॥९५॥ लंकाके मैदानमें समुद्रकी सीमातक उठीहुई असंख्य अक्षौहिणीके प्रमाणवाली वानरोंकी सेना देखकर॥९६॥ राक्षसलोगोंमें कोई२विस्मितहुए,कोई२भीत हुए और कोई२रणके उत्साहसे मत्त होकर अतिशय आनंदको प्राप्तहुए॥९७॥वानरोंकी सेनाने लंकाके दुर्गकी भीतको छायलिया था,जिससे ऐसा ज्ञातहुआ कि,वानरगणोंके घेरनेसे प्राकार दुर्गकी भीत गिरकर पृथ्वीमें मिल गया,ऐसा दीनभाव युक्त राक्षसोंने देखा ॥९८॥ यह देखकर राक्षस लोग भयकेमारे हाहाकार करनेलगे ॥९९॥ इस प्रकारसे राक्षसोंकी राजधानी लंकापुरीमें कठोर कुलाहल होने लगा, तब वीर राक्षसगण प्रचण्ड अस्त्र शस्त्र ग्रहण करके युगान्तकालके पवनके समान इधर

सतुद्वाराणिसंयम्यसुग्रीववचनात्कपिः ॥ पर्यक्रामतदुर्धर्षोनक्षत्राणीवचंद्रमाः ॥ ९५ ॥तेषामक्षौहिणिशतंसमवेक्ष्यवनौकसाम् ॥ लंकामुपनिविष्टानांसागरंचाभिवर्ततताम् ॥९६॥ राक्षसाविस्मयंजग्मुस्त्रासंजग्मुस्तथापरे ॥अपरेसमरेहर्षाद्धर्षमेवोपपेदिरे ॥९७॥ कृत्स्नंहिकपिभिर्व्याप्तंप्राकारपरिखांतरम् ॥ ददृशूराक्षसादीनाःप्राकारंवानरीकृतम् ॥ ९८॥ हाहाकारमकुर्वंतराक्षसाभयमागताः ॥ ९९ ॥ तस्मिन्महाभीषणकेप्रवृत्ते कोलाहलेराक्षसराजयोधाः ॥ प्रगृह्यरक्षांसिमहायुधानियुगांतवाताइवसंविचेरुः ॥ १०० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकाण्डे एकचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४१ ॥ ततस्तेराक्षसास्तत्रगत्वारावणमन्दिरम् ॥ न्यवेदयन्पुरींरुद्धांरामेणसहवानरैः ॥ १ ॥ रुद्धांतुनगरींश्रुत्वाजातक्रोधोनिशाचरः॥ विधानंद्विगुणंश्रुत्वाप्रासादंचाप्यरोहत ॥ २ ॥ सददर्शावृतांलंकांसशैलवनकाननाम् ॥ असंख्येयैर्हरिगणैःसर्वतोयुद्धकांक्षिभिः ॥ ३ ॥सदृष्ट्वावानरैःसर्वैर्वसुधांकपिलीकृताम् ॥ कथंक्षपयितव्याःस्युरितिचिंतापरोभवत ॥ ४ ॥

उधर घूमने लगे ॥१००॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकचत्वारिंशः सर्गः ॥४१॥ इसके पीछे राक्षस लोगोंने रावणके गृहमें प्रवेश करके निवेदन किया कि, श्रीरामचन्द्रजीने सेनाके समेत लंकापुरीको चारों ओरसे घेर लिया ॥ १ ॥ पुरीके रोकेजानेका समाचार सुनते ही राक्षस रावण क्रोधके मारे अधीर होगया और प्रतिद्वार पहलेसे दूनी सेना नियत कर स्वयं बडे ऊंचे धवरहरेपर चढा ॥ २ ॥ और देखा कि,शैल वन और काननसहित समस्त लंका असंख्य युद्धके अभिलाषी वानरगणोंसे घिररही है ॥३॥ उन सब वानरोंके बडे भारी जमाओंसे मानो लंकापुरीका वर्ण पीलासा हो रहाथा इनको देखकर रावणके मनमें यह चिन्ता होने लगी कि, किस प्रकारसे वानरोंका नाश किया जाय ॥ ४ ॥

बहुत देरतक यह चिन्ता करके वह धीर धारण करके नेत्र फैलाय २ रामलक्ष्मण और उनकी सेनाके समूहको देखने लगा ॥५॥ वहांपर श्रीरामचन्द्रजीने हर्षित अंतः- करणसे सेनाके सहित लंकापुरीके प्राकारके निकट पहुँच गुप्त राक्षसोंकी पुरी लंकाको सब जगह राक्षसोंसे पूरित होकर रक्षा की जाती हुई देखा ॥६॥ ध्वजापताकाओंसे शोभायमान लंकापुरीको देखतेही सीतापति रघुनाथजी मनमें विरहसे उत्पन्न हुए दुःखकी अवाई हुई और इसी समय रामचन्द्रजी मनही मनमें कहने लगे ॥ ७ ॥ हाय ! इसी स्थानमें वह मृगछोनाकेसे नेत्रवाली कृशांगी जनककुमारी जानकी हमारे लिये पीडित और शोकसे संतापित होकर पृथ्वीमें शयन करतीहैं॥८॥श्रीरामचन्द्रजी इसप्रकार वैदेहीजीके दुःखको विचारकर अत्यन्तही कातर हुए और शीघ्रही युद्धमें शत्रुओंका नाश करनेके लिये उन्होंने वानर लोगोंको आज्ञा दी ॥९॥ वानर लोग सरलतासे कर्म करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीकी इसप्रकारसे आज्ञा पाय समस्तही वानर एकसाथ आगे बढनेके लिये सिंहनाद

सचिंतयित्वासुचिरंधैर्यमालंब्यरावणः ॥ राघवंहरियूथांश्चददर्शायतलोचनः ॥ ५ ॥ राघवःसहसैन्येनमुदितोनामपुप्लुवे ॥ लंकांददर्शगुप्तांवै सर्वतोराक्षसैर्वृताम् ॥ ६ ॥दृष्ट्वादशरथिर्लंकांचित्रध्वजपताकिनीम् ॥ जगाममनसासीतांदूयमानेनचेतसा ॥ ७ ॥ अत्रसामृगशावाक्षीमत्कृ तेजनकात्मजा ॥ पीड्यतेशोकसंतप्ताकृशास्थंडिलशायिनी ॥ ८ ॥ निपीड्यमानांधर्मात्मावैदेहीमनुचिंतयन् ॥ क्षिप्रमाज्ञापयद्रामोवानरा न्द्विषतांवधे ॥ ९ ॥ एवमुक्तेतुवचसिरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ संघर्षमाणाःप्लवगाःसिंहनादैरपूरयन् ॥ १० ॥ शिखरैर्विकिरामैतांलंकांमुष्टिभिरे ववा ॥ इतिस्मदधिरेसर्वेमनांसिहरियूथपाः ॥ ११ ॥ उद्यम्यगिरिशृंगाणिमहांतिशिखराणिच ॥ तरूंश्चोत्पाट्यविविधांस्तिष्ठंतिहरियूथपाः ॥ १२ ॥ प्रेक्षतोराक्षसेंद्रस्यतान्यनीकानिभागशः ॥ राघवप्रियकामार्थंलंकामारुरुहुस्तदा ॥ १३ ॥ तेताम्रवक्त्राहेमाभारामार्थेत्यक्तजीविताः ॥ लंकामेवाभ्यवर्ततसालभूधरयोधिनः ॥ १४ ॥ तेद्रुमैःपर्वताग्रैश्चमुष्टिभिश्चप्लवंगमाः ॥ प्राकाराग्राण्यसंख्यानिममंथुस्तोरणानिच ॥ १५ ॥

कर२के चारोंदिशाओंको परिपूरित करते हुये ॥१०॥ उस कालमें वह वानरयूथपतिगण समस्तही "हम लोग पर्वतोंके शिखरसे इस लंकानगरी तितर बितरको करेंगे अथवा घुमाकर उसको चूर्ण कर डालेंगे" इसप्रकारसे सबही मनमें कहने लगे ॥११॥ वह वानरोंके समस्त यूथप पर्वत श्रृंग बडे २ शिखर और अनेक प्रकारके वृक्षोंको उखाडकर हाथमें ले लडनेको तैयार हुये ॥ १२ ॥ राक्षसोंके नाथ रावणने देखा कि; असंख्य वानरोंकी सेना श्रीरामचन्द्रजीका प्रिय कार्य सिद्ध करनेके लिये लंकापर चढी ॥१३॥ इसप्रकारसे वह शिला और वृक्षोंको लेकर युद्ध करनेवाले अरुणमुख स्वर्णके समान प्रभावान् वानरगण श्रीरामचन्द्रजीके लिये जीवतक छोडनेको तैयार होकर सबही लंकाकी ओरको धाये ॥ १४ ॥ वह वानरगण लंका नगरीके निकट आयकर वृक्ष और पर्वतोंके शिखर व मुष्टि

प्रहारसे लंकापुरीके प्राकार (भीत) और असंख्य फाटक तोडने फोडने लगे ॥ १५ ॥ वह वानरगण अति बडे २ पर्वतके टुकडोंसे, तिनकोंसे, काठसे व धूल डाल २ कर निर्मल जलसे शोभायमान लंकाके खांवेंको पूर्ण करने लगे ॥१६॥ और जो समस्त वीर कि, लंकापुरीके प्राकार पर चढ गये; उनमें कोई २ वानर सहस्र यूथका अधिपति था कोई करोड यूथका और कोई २ शत करोड यूथका स्वामी था ॥ १७ ॥ वह वानरगण लंकामें प्रवेश करके कांचन निर्मित तोरण और कैलास पर्वतके समान उस तोरणोंके ऊपर बने हुए बडे स्थानोंको तोडने फोडने लगे ॥ १८ ॥ महागजके समान अगणित वानरगण ऊपरको छलाँग भरते तडकते व गर्जते हुए लंकाके चारोंओर घूमने लगे ॥१९॥ दोहा "जयति जयति भ्राता सहित, महाबली रघुराज ॥ राघवपालित सूर्यसुत, जीतहिं सहित

परिखान्पूरयंतश्चप्रसन्नसलिलाशयान् ॥ पांसुभिःपर्वताग्रैश्चतृणैःकाष्ठैश्चवानराः ॥ १६ ॥ ततःसहस्रयूथाश्चकोटियूथाश्चयूथपाः ॥ कोटियूथश ताश्चान्येलंकामारुरुहुस्तदा ॥१७॥ कांचनानिप्रमर्दंतस्तोरणानिप्लवंगमाः ॥ कैलासशिखराग्राणिगोपुराणिप्रमथ्यच ॥१८॥ आप्लवंतःप्लवं तश्चगर्जंतश्चप्लवंगमाः ॥ लंकांतामभिधावंतिमहावारणसन्निभाः ॥१९॥ जयत्युरुबलोरामोलक्ष्मणश्चमहाबलः ॥ राजाजयतिसुग्रीवोराघवेणा भिपालितः ॥ २० ॥ इत्येवंघोषयंतश्चगर्जंतश्चप्लवंगमाः ॥ अभ्यधावंतलंकायाःप्राकारंकामरूपिणः ॥ २१ ॥ वीरबाहुसुबाहुश्चनलश्चपन सस्तथा ॥ निपीड्योपनिविष्टास्तेप्राकारंहरियूथपाः ॥ एतस्मिन्नंतरेचक्रुःस्कंधावारनिवेशनम् ॥२२॥ पूर्वद्वारंतुकुमुदःकोटिभिर्दशभिर्वृतः ॥ आवृत्यबलवांस्तस्थौहरिभिर्जितकाशिभिः ॥ २३ ॥ सहायार्थेतुतस्यैवनिविष्टःप्रसभोहरिः ॥ पनसश्चमहाबाहुर्वानरैरभिसंवृतः ॥ २४ ॥ दक्षिणद्वारमासाद्यवीरःशतबलिःकपिः ॥ आवृत्यबलवांस्तस्थौविंशत्याकोटिभिर्वृतः ॥२५॥ सुषेणःपश्चिमद्वारंगत्वातारापिताबली ॥ आवृ त्यबलवांस्तस्थौकोटिकोटिभिरावृतः ॥ २६ ॥

समाज" ॥ २० ॥ इस प्रकारसे पुकारते व गर्जन करते हुए कामरूपी वानरगण लंकाके प्राकार पर घूमने लगे ॥ २१ ॥ यूथपति वीर सुबाहु, वीरबाहु, नल और पनस यह यूथपतिगण सेनाको नगरीमें प्रवेश करानेके लिये लंकाकी छहर दिवारीको तोडतेप्ररमें प्रवेश करते हुए इसी समय इन वानरवीरोंने लंकाके निवास स्थानको पीडित किया ॥२२॥ कुमुद नाम रणविजयी महाबलवान् वानर दश करोड वानरोंको संग लेकर पूर्वके द्वारको घेर लेता हुआ ॥ २३ ॥ उसी कुमुदकी सहायता करनेके लिये बहुतसे वानरोंको साथ लिये वानरश्रेष्ठ प्रसभ और महाबाहु. पनस नाम वानर भी तैयार हो खडे हो गये ॥२४॥ वीरश्रेष्ठ बलवान् वानर शतबलि बीस करोड वानरोंकी सेनाके सहित लंकाके दक्षिण द्वारको घेर लेता हुआ ॥२५॥ ताराका पिता बलवान् सुषेण करोड २ वानरोंकी

सेनाको संग लेकर लंकाके पश्चिम द्वारपर विराजमान हुआ ॥ २६ ॥ उत्तर द्वारको घेरकर महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीके साथ खडे हुए, और सुग्रीवजी श्रीरामचन्द्रजीकी सहायता करनेके लिये तैयार हो गये ॥ २७ ॥ भयंकराकार महावीर्यवान् महाकाय गोपुच्छ गवाक्ष नामक वानर एक करोड वानरोंको साथ लेकर श्रीरामचन्द्रजीके पार्श्वमें रक्षा करने लगा ॥ २८ ॥ व श्रीरामचन्द्रजीके दूसरी बगलमें शत्रुओंका तपानेवाला महाबलवान् धूम्र करोड रीछोंके साथ विराजमान होने लगा ॥ २९ ॥ कवच बख्तर गदा हाथमें लिये महावीर्य विभीषणजी अपने चारों मंत्रियोंके साथ महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजीके निकट पहुँचे ॥ ३० ॥ गज, गवाक्ष, गवय, शरभ और गंधमादन यह कई एक वानरगण समस्त वानर सेनाकी रक्षा करनेके लिये चारोंओर

उत्तरद्वारमागम्यरामःसौमित्रिणासह ॥ आवृत्यबलवांस्तस्थौसुग्रीवश्चहरीश्वरः ॥ २७ ॥ गोलांगूलोमहाकायोगवाक्षोभीमदर्शनः ॥ वृतः कोटचामहावीर्यस्तस्थौरामस्यपार्श्वतः॥ २८॥ ऋक्षाणांभीमकोपानांधूम्रःशत्रुनिबर्हणः ॥ वृतःकोटचामहावीर्यस्तस्थौरामस्यपार्श्वतः ॥ २९ ॥ सन्नद्धस्तुमहावीर्योगदापाणिर्विभीषणः ॥ वृतोयत्तैस्तुसचिवैस्तस्थौयत्रमहाबलः ॥ ३० ॥ गजोगवाक्षोगवयःशरभोगंधमादनः ॥ समंतात्परिधावंतोररक्षुर्हरिवाहिनीम् ॥ ३१ ॥ ततःकोपपरीतात्मारावणोराक्षसेश्वरः ॥ निर्याणंसर्वसैन्यानांद्रुतमाज्ञापयत्तदा ॥ ३२ ॥ एतच्छ्रुत्वातदावाक्यंरावणस्यमुखेरितम् ॥ सहसाभीमनिर्घोषमुद्घुष्टंरजनीचरैः ॥ ३३ ॥ ततःप्रबोधिताभेर्यश्चंद्रपांडुरपुष्कराः ॥ हेमकोणैरभिहता राक्षसानांसमंततः ॥ ३४ ॥ विनेदुश्चमहाघोराःशंखाःशतसहस्रशः ॥ राक्षसानांसुघोराणांमुखमारुतपूरिताः ॥ ३५ ॥ तेबभुःशुकनीलांगाः सशंखारजनीचराः ॥ विद्युन्मंडलसन्नद्धाःसबलाकाइवांबुदाः ॥ ३६ ॥

घूमने लगे ॥ ३१ ॥ निशाचरपति रावण यह समस्त वृत्तांत जानकर अत्यन्तही क्रोधके वश हुआ, और शीघ्रही अपनी सेनाको युद्धकरनेके अर्थ बाहर निकलनेकी आज्ञा देता हुआ ॥ ३२ ॥ राक्षस लोगोंने भी रावणके मुखसे यह वचन सुनकर भेरी बजाकर उसके शब्दके साथ इस आज्ञाका सब कहीं प्रचार कर दिया ॥ ३३ ॥ उसके पीछे चारों ओरसे राक्षस लोगोंकी सुवर्णकोणाभिहत सोनेके दंडेसे ताडित और चन्द्रमाके समान उजले मुखवाले ढकनोंसे युक्त भेरियें बजने लगीं ॥ ३४ ॥ घोर रूपवाले राक्षस लोगोंके मुख पवनसे परिपूर्ण हो घोर शब्दसे युक्त सैकडों हजारों शंखएक समयमें ही बजने लगे ॥ ३५ ॥ मेघ मालाके साथ बिजलीके मिलने और बगलोंकी लगारके सम्मिलित होनेसे जिस प्रकार शोभा होती है वैसेही शुक पक्षिके समान नीले देहवाले राक्षस लोगोंके मुखमें

लगे हुए शंख शोभायमान हुए ॥३६॥ इसके पीछे राक्षस लोग रावणकी आज्ञा पाय प्रलयकालके समय उछलते हुए समुद्रकी तरंगोंके समान महावेगसेबाहर निकलकर चले गये ॥ ३७ ॥ इन राक्षसोंलोगोंको आते देखकर वानरोंकी सेना चारों ओरसे सिंहनाद करने लगीकि, जिससे बहुत दूरपर टिका हुआ मलयपर्वतभी शृङ्ग शिखर और कन्दराओंके साथ गूँजने लगा ॥ ३८ शंख, नगाडोंके बजने और वानरगणोंके सिंहनाद करनेसे पृथ्वी आकाश और समुद्रभी पूर्ण हो गया ॥ ३९ ॥ हाथियोंकी चिंघाड घोडोंकी हिनहिनाहट रथोंके खरखर शब्द व राक्षस लोगोंके चरण धरनेके शब्दसे पृथ्वी पूर्ण होगई ॥ ४० ॥ इसके पीछे फिर वानर और राक्षसोंके घोर संग्रामका प्रारंभ हुआ, कि जैसा पूर्वकालमें देवताओंके साथ असुरोंका संग्राम हुआ था ॥ ४१ ॥ राक्षसलोग

निष्पतंतिततः सैन्यात्दृष्ट्वा रावणचोदिताः ॥ समयेपूर्यमाणस्यवेगाइवमहोदधेः ॥३७॥ ततोवानरसैन्येनमुक्तोनादः समंततः ॥ मलयः पूरितो येनससानुप्रस्थकंदरः ॥ ३८ ॥ शंखदुंदुभिनीर्घोषः सिंहनादस्तरस्विनाम् ॥ पृथिवींचांतरिक्षंचसागरंचाभ्यनादयत ॥ ३९ ॥ गजानांबृंहितैः सार्धंहयानांहेषितैरपि ॥ रथानांनेमिनिर्घोषैरक्षसांपदनिःस्वनैः ॥ ४० ॥ एतस्मिन्नंतरेघोरः संग्रामः समपद्यत ॥ रक्षसांवानराणांचयथादेवासुरे पुरा ॥ ४१ ॥ तेगदाभिः प्रदीप्ताभिः शक्तिशूलपरश्वधैः ॥ निर्जघ्नुर्वानरान्सर्वान्कथयंतः स्वविक्रमान् ॥ ४२ ॥ तथावृक्षैर्महाकायाः पर्वताग्रैश्चवानराः ॥ निर्जघ्नुस्तानिरक्षांसिनखैर्दन्तैश्चवेगिनः ॥ ४३ ॥ राजाजयतिसुग्रीवइतिशब्दोमहानभूत् ॥ राजाञ्जयजयेत्युक्त्वास्वस्वनामकथांततः ॥ ४४ ॥ राक्षसास्त्वपरेभीमाः प्राकारस्थामहींगतान् ॥ वानरान्भिदिपालैश्चशूलैश्चैवव्यदारयन् ॥ ४५ ॥ वानराश्चापिसंक्रुद्धाः प्राकारस्थान्महींगताः ॥ राक्षसान्पातयामासुः खमाप्लुत्यस्वबाहुभिः ॥ ४६ ॥

बारंवार अपने २ विक्रमका प्रकाश करके प्रदीप शक्ति, शूल; फरसे और गदा चलाय २ कर वानरोंको प्रहार करने लगे ॥ ४२ ॥ वेगवान् बडे शरीरवाले वानरगण भी नख, दांत वृक्ष और पर्वतके शिखर चलाय २ कर राक्षसोंको मारने लगे ॥ ४३ ॥ उस समय उस वानरोंकी सेनामेंसे ''वानरराज सुग्रीवजीकी जय हो'' ऐसा बडा भारी शब्द हुआ और इधर ''राक्षस रावणकी जय हो'' ऐसा शब्द सुनाय अपने २ नामको बताय परस्पर दोनों दल लडने लगे ॥४४ ॥ भयंकर आकार वाले राक्षसगण लंकाकी दुर्ग प्राचीर पर चढकर वानरोंको भिंदिपाल और शूलादि अस्त्रोंसे मारने लगे ॥ ४५ ॥ यह देखकर पृथ्वीपर टिके हुए वानरलोग भी क्रोधसे आकाशमें कूद और भुजाओंके प्रहारसे कोटके भीतपर चढेहुए राक्षसोंको नीचे पृथ्वीमें गिराने लगे ॥ ४६ ॥

उस समय वानर और राक्षस लोगोंका ऐसा भारी घोर संग्राम हुआ कि दोनों ओरवाले वीरोंके शरीरसे निकले हुए मांस और रुधिरसे रणभूमि कीचडसे परिपूर्ण होगई और वह समर ऐसा हुआ कि;जैसा पहले कभी नहीं हुआ था ॥ ४७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४२ ॥ इस प्रकारसे महाबलवान् वानर और राक्षसगण जब युद्ध करने लगे; तब उनमें परस्पर जयलाभ करनेकी कामनासे अत्यन्त दारुण क्रोध हुआ ॥ १ ॥ वह समस्त वीर राक्षसगण सुवर्णके आभूषण पहरे, घोडे व अग्निकी शिखाके समान आकार वाले चमकते दमकते हाथियोंपर और सूर्यके समान प्रभावान् रथोंपर चढे मनोहर कवच बख्तर धारण कर ॥ २ ॥ दशों दिशाओंमें निहारते भयंकर कर्म करने वाले राक्षस रावणके जयकी कामना किये संग्राम करनेको आये ॥ ३ ॥ इन राक्षसोंकीसेनाको आती हुई देखकर जयकी इच्छा किये बडी भारी वानर सेना भी राक्षस लोगोंकी सेनाके

ससंप्रहारस्तुमुलोमांसशोणितकर्दमः ॥ रक्षसांवानराणांचसंबभूवाद्भुतोपमः ॥ ४७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४२ ॥ युध्यतांतुततस्तेषांवानराणां महात्मनाम् ॥ रक्षसांसंबभूवाथबालरोषःसुदारुणः ॥ १ ॥ तेहयैः कांचनापीडैर्गजैश्चाग्निशिखोपमैः ॥ रथैश्चादित्यसंकाशैःकवचैश्चमनोरमैः ॥ २ ॥ निर्ययूराक्षसावीरानादयंतोदिशोदश ॥ राक्षसाभीमकर्माणोरावणस्यजयैषिणः ॥ ३ ॥ वानराणामपिचमूर्बृहतीजयमिच्छताम् ॥ अभ्यधावततांसेनांरक्षसांघोरकर्मणाम् ॥ ४ ॥ एतस्मिन्नंतरेतेषामन्योन्यमभिधावताम् ॥ रक्षसांवानराणांचद्वंद्वयुद्धमवर्तत ॥ ५ ॥ अंगदेनेंद्रजित्सार्धंवालिपुत्रेणराक्षसः ॥ अयुध्यतमहातेजास्त्र्यंबकेणयथांधकः ॥ ६ ॥ प्रजंघेनचसंपातिर्नित्यंदुर्धर्षणोरणे ॥ जंबुमालिनमारब्धोहनुमानपिवानरः ॥ ७ ॥ संगतस्तुमहाक्रोधोराक्षसोरावणानुजः ॥ समरेतीक्ष्णवेगेनशत्रुघ्नेनविभीषणः ॥ ८ ॥ तपनेनगजःसार्धंराक्षसेनमहाबलः ॥ निकुंभेनमहातेजानीलोपिसमयुध्यत ॥ ९ ॥

सन्मुख धाई ॥ ४ ॥ जब इस प्रकार वानरोंकी सेना राक्षसोंपर धाई, व राक्षसीसेना वानरोंपर धाई तब राक्षस और वीर वानरगणोंका द्वंद्वयुद्ध होने लगा ॥ ५ ॥ जिस प्रकार अन्धकासुरके साथ युद्ध करते हुए महादेवजीका संग्राम हुआ था, वैसेही महातेजस्वी वालीकुमार अंगदजीके साथ इन्द्रजीतका युद्ध होने लगा ॥ ६ ॥ रणमें अतिअजेय सम्पाती नाम वानर राक्षस प्रजंघके साथ युद्ध करने लगा; और वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जी, जम्बुमाली राक्षससे जायकर भिडे ॥ ७ ॥ उस संग्राम भूमिमें रावणके छोटे भाई विभीषणजी अत्यन्त क्रोधयुक्त हो शत्रुघ्ननामक राक्षसके साथ युद्ध करतेहुए ॥ ८ ॥ महाबलवान् गज नाम वानर तपन राक्षसके साथ अतिपराक्रमसे युद्ध करने लगा; और महातेजस्वी नील नाम सेनापति निकुम्भ नाम राक्षससे जाय भिडा ॥ ९ ॥

वानरोंके राजा सुग्रीवजी राक्षस प्रघसके साथ द्वन्द्वयुद्ध करने लगे और विरूपाक्ष नामक राक्षसके साथ श्रीमान् लक्ष्मणजीका युद्ध होने लगा॥ १०॥ दुर्द्धर्ष अग्निकेतु, रश्मिकेतु, मित्रघ्न और यज्ञकोप यह चार राक्षस श्रीरामचन्द्रजीके साथ युद्ध करने लगे॥ ११॥ घोर रूपवान् वज्रमुष्टि और अशनिप्रभ नामक यह दो राक्षस मैन्द व द्विविदनामक दो वानरोंके साथ युद्ध करने लगे॥ १२॥ भयंकराकार रणमें दुर्जय वीर प्रतपन नामक राक्षस तीक्ष्णवेगवान् नल नाम वानरके साथ संग्राम करनेलगा ॥ १३॥ त्रिलोकविख्यात बलवान् धर्मका पुत्र महाकपि सुषेण विद्युन्माली राक्षसके साथ युद्ध करनेको जाय डटा ॥ १४॥ व और दूसरे भयंकर पराक्रम करनेवाले वानरगण भी अगणित राक्षसोंके साथ घोर द्वन्द्वयुद्ध करने लगे ॥ १५॥ इसप्रकारसे रणभूमिमें अपने २ जयकी अभिलाषा किये वीर राक्षस और वानरगणोंका

वानरेंद्रस्तुसुग्रीवःप्रघसेनसुसंगतः ॥ संगतःसमरेश्रीमान्विरूपाक्षेणलक्ष्मण ॥ १०॥ अग्निकेतुःसुदुर्धर्षोरश्मिकेतुश्चराक्षसः ॥ मित्रघ्नोयज्ञकोपश्चरामेणसहसंगताः ॥ ११॥ वज्रमुष्टिश्चमैंदेनद्विविदेनाशनिप्रभः ॥ राक्षसाभ्यांसुघोराभ्यांकपिमुख्यौसमागतौ ॥ १२॥ वीरःप्रतपनोघोरोराक्षसोरणदुर्धरः॥समरेतीक्ष्णवेगेननलेनसमयुध्यत॥ १३॥ धर्मस्यपुत्रोबलवान्सुषेणइतिविश्रुतः॥सविद्युन्मालिनासार्धमयुध्यतमहाकपिः ॥ १४॥ वानराश्चापरेघोराराक्षसैरपरैः सह ॥ द्वंद्वसमीयुःसहसायुद्धाचबहुभिःसह ॥ १५ ॥ तत्रासीत्सुमहद्युद्धंतुमुलंरोमहर्षणम् ॥ रक्षसांवानराणांच वीराणांजयमिच्छताम् ॥ १६॥ हरिराक्षसदेहेभ्यःप्रसृताःकेशशाद्वलाः ॥ शरीरसंघाटवहाःप्रसुस्रुःशोणितापगाः ॥ १७॥ आजघानेंद्रजित्क्रुद्धो वज्रेणेवशतक्रतुः ॥ अंगदंगदयावीरंशत्रुसैन्यविदारणम् ॥ १८ ॥ तस्यकांचनचित्रांगंरथंसाश्वंससारथिम् ॥ जघानगदयाश्रीमानंगदोवेगवान्हरिः ॥ १९ ॥ संपातिस्तुप्रजंघेनत्रिभिर्बाणैःसमाहतः ॥ निजघानाश्वकर्णेनप्रजंघंरणमूर्धनि ॥ २० ॥ जंबुमालिरथस्थस्तुरथशक्त्यामहाबलः ॥ बिभेदसमरेक्रुद्धोहनुमंतंस्तनांतरे ॥ २१ ॥

तुमुलरोम हर्षणकारी युद्ध प्रारंभ हुआ ॥ १६ ॥ राक्षस और वानरगणोंकी पर्वताकार देहसे प्रहारोंके लगनेसे जो रक्तकी धार निकलती थी, वही नदीके समान और उनके शरीरके रोमसमूह शैवालके समान जान पडने लगे ॥ १७ ॥ वज्रधारी इन्द्रजी जिसप्रकार वज्र चलाते हैं वैसेही इन्द्रजीत मेघनाधने क्रोधमें मूर्च्छित होकर शत्रुओंकी सेनाको विदारण करनेवाले अंगदजीको ताककर एक गदा इनके ऊपर चलाई ॥ १८ ॥ वानरश्रेष्ठ वेगवान् अंगदजीने मेघनादकी चलाई गदा पकड करके उसके अश्व, सारथी और सुवर्णके चित्रित रथको किर्च २ कर डाला ॥ १९ ॥ प्रजङ्घ राक्षसने तीन बाणद्वारा संपाति नाम वानरपर प्रहार किया, तदनन्तर संपातिने एक अश्वकर्णके वृक्षको उखाडकर प्रजङ्घके मस्तकपर चलाया ॥ २० ॥ रथोंमें बैठेहुए महाबलवान् जम्बुमाली

नाम राक्षसने क्रोधमें भरकर हनुमानूजीके बीच छातीमें एक शक्ति मारी ॥ २१ ॥ शक्ति लगनेपर हनुमानूजीने अति शीघ्रताके साथ उसके रथपर कूद उसमें एक लात मारी कि, जिससे वह रथ चूर्ण होगया; और उसके सहित उस राक्षसका भी नाश कर दिया ॥ २२ ॥ भयंकराकार प्रतपन नामक राक्षस शब्द करता हुआ नल नाम वानरकी ओर दौडा, वीर नलने भी विक्रम प्रकाश करके उस राक्षसकी दोनों आँखें निकाललीं ॥२३॥ बाण चलानेमें चतुर उस राक्षसके बाण चलानेसे यद्यपि नलका शरीर छिन्न भिन्न होरहा था,परन्तु तोभी उन्होंने उसकी आँखें निकाललीं इधर प्रघसनामक राक्षसने समस्त सेनाको निगल जाना विचारा परन्तु वानरोंके राजा ॥२४॥ सुग्रीवजीने महावेगसे सप्तपर्णका वृक्ष उखाड उसके प्रहारसे प्रघस नाम राक्षसको मारडाला, भयंकराकार राक्षसको बाणवर्षासे व्याकुल कर ॥ २५ ॥ फिर बाणसे लक्ष्मणजीने उस अपने शत्रु विरूपाक्ष नामक राक्षसको संहार किया । दुर्द्धर्ष अग्निकेतु व रश्मिकेतु मित्रघ्न व

तस्यतंरथमास्थायहनूमान्मारुतात्मजः ॥ प्रममाथतलेनाशुसहतेनैवरक्षसा ॥२२॥ नदन्प्रतपनोघोरोनलंसोभ्यनुधावत ॥ नलःप्रतपनस्याशु पातयामासचक्षुषी ॥ २३॥ भिन्नगात्रःशरैःस्तीक्ष्णैःक्षिप्रहस्तेनरक्षसा ॥ ग्रसंतमिवसैन्यानिप्रघसंवानराधिपः ॥ २४ ॥ सुग्रीवःसप्तपर्णेननि जघानजवेनच ॥ प्रपीड्यशरवर्षेणराक्षसंभीमदर्शनम् ॥२५॥ निजघानविरूपाक्षंशरणैकेनलक्ष्मणः ॥ अग्निकेतुश्चदुर्धर्षोरश्मिकेतुश्चराक्षसः ॥ मित्रघ्नोयज्ञकोपश्चराममादीपयच्छरैः ॥२६ ॥ तेषांचतुर्णांरामस्तुशिरांसिसमरेशरैः ॥ क्रुद्धश्चतुर्भिश्चिच्छेदघोरैरग्निशिखोपमैः ॥२७ ॥ वज्रमुष्टिस्तुमैंदेनमुष्टिनानिहतोरणे ॥ पपातसरथःसाश्वःसुराट्टइवभूतले॥२८॥ निकुंभस्तुरणेनीलंनीलांजनचयप्रभम् ॥ निर्बिभेदशरैस्तीक्ष्णैःकरैर्मेघमिवांशुमान् ॥२९॥ पुनःशरशतेनाथक्षिप्रहस्तोनिशाचरः ॥ बिभेदसमरेनीलंनिकुंभःप्रजहासच ॥ ३० ॥ तस्यैवरथचक्रेणनीलोविष्णुरिवाहवे ॥ शिरश्चिच्छेदसमरेनिकुंभस्यचसारथेः ॥ ३१ ॥

यज्ञकोप इन चार राक्षसोंने श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर बाणोंकी वर्षा की ॥ २६ ॥ तब रघुनंदन श्रीराम चन्द्रजीने अत्यन्त क्रोध करके अग्निकी शिखाके समान लपलपाते चार भयंकर बाणोंसे उन चार राक्षसोंका शिर काटडाला ॥२७॥ मैंद नामक वानरने घूंसा मारकर रणमें वज्रमुष्टिका संहार किया; तब यह राक्षस रथ और घोडोंके सहित पृथ्वीपर गिरपडा कि, जैसे कोई नगरकी ऊँची अटारी भहराय पडे ॥ २८ ॥ सूर्य नारायण जिसप्रकार अपनी किरणोंसे बादलोंको अलग २ करके उडाय देते हैं वैसेही वीर निकुम्भ राक्षसने तीक्ष्ण बाणोंको चला कर नील अंजनके समान प्रभावाले सेनापति नीलके शरीरको वींध डाला ॥ २९ ॥ और उसके पीछे दूसरी वार फिर शत बाण छोड नीलका शरीर भेद यह निकुम्भ राक्षस अति ऊँचे स्वरसे ठहाकरके हँसने लगा ॥ ३० ॥ परन्तु

सेनापति नीलने राक्षस निकुम्भके रथका पहिया ग्रहणकर चक्र धारण किये हुए विष्णुजीके समान निकुम्भ और उसके सारथिका मस्तक काटडाला ॥३१॥ वज्रके समान कठिन प्रहार करनेवाले द्विविद नाम वानरने सर्व राक्षसोंके सामने हो पर्वतके शिखरका प्रहार करके राक्षस अशनिप्रभके ऊपर चोट चलाई॥३२॥ राक्षस अशनिप्रभनेभी वज्रके समान बाणोंसे वृक्ष ग्रहण करके युद्ध करते हुए वानरोंमें श्रेष्ठ द्विविदको विद्ध किया ॥ ३३ ॥ परन्तु बाणोंके लगनेसे द्विविदको अत्यन्त क्रोध उत्पन्न हुआ और इन्होंने एक शालका वृक्ष उखाडकर अश्व और रथके सहित राक्षसका संहार किया ॥३४॥ रथमें बैठाहुआ राक्षस विद्युन्माली स्वर्णभूषित अनेकबाणोंको चलाय सुषेणजीको पीडितकरके वारंवार सिंह नाद करने लगा ॥ ३५ ॥ तब वानरोंमें श्रेष्ठ सुषेणजीने उसको रथमें बैठा हुआ देख

वज्राशनिसमस्पर्शोद्विविदश्चसमप्रभम् ॥ जघानगिरिशृंगेणमिषतांसर्वरक्षसाम् ॥३२॥ द्विविदंवानरेंद्रंतुद्रुमयोधिनमाहवे ॥ शरैरशनिसंकाशैः सविव्याधाशनिप्रभः ॥३३॥ सशरैरभिविद्धांगोद्विविदःक्रोधमूर्च्छितः ॥ सालेनसरथंसाश्वंनिजघानाशनिप्रभम् ॥३४॥ विद्युन्मालीरथस्थस्तुशरैःकांचनभूषणैः ॥ सुषेणंताडयामासननादचमुहुर्मुहुः ॥ ३५ ॥ तंरथस्थमथोदृष्ट्वासुषेणोवानरोत्तमः ॥ गिरिशृंगेणमहतारथमाशुन्यपातयत्॥ ३६ ॥ लाघवेनतुसंयुक्तोविद्युन्मालीनिशाचरः ॥ अपक्रम्यरथात्तूर्णंगदापाणिःक्षितौस्थितः ॥ ३७ ॥ ततःक्रोधसमाविष्टः सुषेणोहरिपुंगवः ॥ शिलांसुमहतींगृह्यनिशाचरमभिद्रवत् ॥ ३८ ॥ तमापतंतंगदयाविद्युन्मालीनिशाचरः ॥ वक्षस्यभिजघानाशुसुषेणंहरिपुंगवम् ॥३९॥ गदाप्रहारंतंघोरमचिंत्यप्लवगोत्तमः ॥ तांतूष्णींपातयामासतस्योरसिमहामृधे ॥ ४० ॥ शिलाप्रहाराभिहतोविद्युन्मालीनिशाचरः ॥ निष्पिष्टहृदयोभूमौगतासुर्निपपातह ॥ ४१ ॥ एवंतैर्वानरैःशूरैःशूरास्तेरजनीचराः ॥ द्वंद्वेविमथितास्तत्रदैत्याइवदिवौकसैः ॥४२॥

कर एक पर्वताकार शिला चलाय उसके रथको चूर्ण करदिया ॥ ३६ ॥ तब निशाचर विद्युन्माली अत्यन्तशीघ्र चतुरतासहित रथपरसे उतरकर अजेय गदा लेकर पृथ्वीमें खडा होगया ॥ ३७ ॥ तब वानर सुषेण राक्षसको खडा हुआ देखकर क्रोधित हो एक बडी शिला ग्रहण करके इसकी ओरको दौडे ॥ ३८ ॥ निशाचर विद्युन्माली उनको शिला ग्रहण किये आता हुआ देखकर शीघ्रतासे वानरश्रेष्ठ सुषेणजीकी छातीमें गदाका प्रहार करता हुआ ॥ ३९ ॥ वानरश्रेष्ठ सुषेणजीने उस गदाको कुछ भी न समझकर उस राक्षस विद्युन्मालीकी छातीमें प्रथमही ग्रहण कीहुई अपनी शिलाको चलाया ॥ ४० ॥ निशाचर विद्युन्माली उस शिलाके प्रहार होनेसे पीडित और चूर्णित हृदय होकर पृथ्वीपर गिरा जिससे उसके प्राणतक निकल गये ॥ ४१ ॥ इस प्रकारसे उस द्वंद्वयुद्धमें सुर

गणसे असुरगणोंके समान शूर निशाचरोंके समूह वीरश्रेष्ठ वानरों करके मर्दित होनेलगे ॥ ४२ ॥ भाले, गदा, शक्ति, तोमर और बाणोंके प्रहार होनेसे रथ और समरके घोडे समस्तही पृथ्वीपर गिरने लगे ॥ ४३ ॥ मरे हुए मतवाले हाथियोंसे, वानर राक्षसोंसे, रथके टूटे पहियोंसे, जुआ व धुरे आदिकोंसे ॥ ४४ ॥ संग्रामभूमि परिपूर्ण होगई, इसी कारणसे उस घोर रूप संग्राममें सहस्रों श्रृगाल घूमने लगे, अनेकभाँतिसे राक्षस और वानरोंके कबन्ध नृत्य करने लगे ॥ ४५ ॥ अधिक क्या कहें यह संग्राम भी वैसा ही हुआ जैसा कि देवासुर संग्राम पूर्वकालमें हुआ था ॥ ४६ ॥ परन्तु उस कालमें रक्तगन्धसे मूर्च्छित निशाचरोंने वानरवीरों करके अत्यन्त पीडित होकरके भी फिर अत्यन्त बलके साथ युद्ध करना आरंभ किया, और वह राक्षस लोग सूर्यभगवान्के छिपने और

भल्लैश्चान्यैर्गदाभिश्चशक्तितोमरसायकैः ॥ अपविद्धैश्चापिरथैस्तथासांग्रामिकैर्हयैः ॥ ४३ ॥ निहतैःकुंजरैर्मत्तैस्तथावानरराक्षसैः ॥ चक्राक्षयुगदंडैश्चभग्नैर्धरणिसंश्रितैः ॥४४॥ बभूवायोधनंघोरंगोमायुगणसेवितम् ॥ कबंधानिसमुत्पेतुर्दिक्षुवानररक्षसाम् ॥ ४५ ॥ विमर्देतुमुलेतस्मिन्देवासुररणोपमे ॥ ४६ ॥ निहन्यमानाहरिपुंगवैस्तदानिशाचराःशोणितगंधमूर्च्छिताः ॥ पुनःसुयुद्धंतरसासमाश्रितादिवाकरस्यास्तमयाभिकांक्षिणः ॥ ४७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे त्रिचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४३ ॥ युध्यतामेवतेषांतुतदावानररक्षसाम् ॥ रविरस्तंगतोरात्रिःप्रवृत्ताप्राणहारिणी ॥ १ ॥ अन्योन्यंबद्धवैराणांघोराणांजयमिच्छताम् ॥ संप्रवृत्तंनिशायुद्धंतदावानररक्षसाम् ॥ २ ॥ राक्षसोसीतिहरयोवानरोसीतिराक्षसः ॥ अन्योन्यंसमरेजघ्नुस्तस्मिंस्तमसिदारुणे ॥३॥ हतदारयचैहीतिकथंविद्रवसीतिच॥ एवंसुतुमुलःशब्दस्तस्मिन्सैन्येतुशुश्रुवे ॥ ४ ॥ कालाःकांचनसन्नाहास्तस्मिंस्तमसिराक्षसाः ॥ संप्रदृश्यंतशैलेंद्रादीप्तौषधिवनाइव ॥ ५ ॥

रात्रिके आनेकी बाट देखने लगे ॥ ४७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० युद्धकाण्डे भाषायां त्रिचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४३ ॥ जब राक्षस और वानरगणोंमें सहस्र २ घोर युद्ध होन लगा तब सूर्य भगवान् अस्ताचलका आश्रय ग्रहण करते हुए, और देखतेही देखते जीवजीवननाशिनी रात्रि आय पहुँची ॥ १ ॥ उससमय परस्पर वैर बांधेहुए जयके अभिलाषी घोररूपी उन वानर व राक्षसोंका रात्रियुद्ध आरंभ हुआ ॥ २ ॥ उस दारुण अंधकारको वानरलोग "तू राक्षस है" और राक्षस "तू वानर है" यह कहकर परस्पर परस्परको आघात करने लगे ॥ ३ ॥ उसकाल उस सेनाके बीचमें मारडालो फाडडालो भागता क्यों है लौटकर आ इस प्रकारसे कठोर शब्द सुनाई आने लगे ॥ ४ ॥ उस अंधकारमें काले वर्णवाले राक्षसलोग सुवर्णका बना कवच धारण करनेसे प्रदीप

औषधिवन भूषित पर्वतराजोंके समान जान पडनेलगे ॥ ५ ॥ उस अपार अंधकारमें क्रोधसे भरेहुए राक्षसलोग वानरोंकी सेनामें अतिवेगसे प्रवेश करके उनको भक्षण करनेलगे ॥६॥ भयंकर क्रोध किये हुए वागरगण भी छलांग मार२कर अपने तीक्ष्ण दातोंसे काटकर राक्षसलोगोंके सुवर्णसे मंडित घोडे और सर्पाकार ध्वजाओंके डंडे खंड २ करनेलगे ॥ ७ ॥ उस संग्रामभूमिमें बलवान् वानरगणोंने भी राक्षसोंकी सेनाको खलबलाय दिया, हाथी और हाथियोंके सवारपताका और ध्वजाशोभित रथ ॥ ८ ॥ सबको यह वानरगण क्रोधमें मूर्च्छित होकर खैंचनेव दांतसे काटने लगे। लक्ष्मण और श्रीरामचन्द्रजीभी विषके समान बाणधारा वर्षाकर ॥ ९ ॥ दीखत अन दीखते बडे २ राक्षसोंका संहारकरने लगे । उस कालमें घोडोंके खुरोंसे रथके पहियोंसे उठीहुई धूरिने ॥१०॥ युद्ध करती हुई

तस्मिंस्तमसिदुष्पारेराक्षसाःक्रोधमूर्च्छिताः॥ परिपेतुर्महावेगाभक्षयंतःप्लवंगमान्॥६॥ तेहयान्कांचनापीडान्ध्वजांश्चाशीविषोपमान्॥आप्लु त्यदशनैस्तीक्ष्णैर्भीमकोपाव्यदारयन् ॥७॥ वानराबलिनोयुद्धेऽक्षोभयन्राक्षसींचमूम् ॥ कुंजरान्कुंजरारोहान्पताकाध्वजिनोरथान् ॥ ८ ॥ चक र्षुश्चददंशुश्चदशनैःक्रोधमूर्च्छिताः ॥ लक्ष्मणश्चापिरामश्चशरैराशीविषोपमैः॥९॥ दृश्यादृश्यानिरक्षांसिप्रवराणिनिजघ्नतुः॥तुरंगखुरविध्वस्तंर थनेमिसमुत्थितम्॥१०॥ रुरोधकर्णनेत्राणियुध्यतांधरणीरजः ॥ वर्तमानेतथाघोरेसंग्रामेलोमहर्षणे ॥ रुधिरौघामहाघोरानद्यस्तत्रविसुस्रुवुः ॥ ११ ॥ ततोभेरीमृदंगानांपणवानांचनिःस्वनः ॥ शंखनेमिस्वनोन्मिश्रःसंबभूवाद्भुतोपमः ॥ १२ ॥ हयानांस्तनमानानांराक्षसानांचनिः स्वनः ॥शस्तानांवानराणांचसंबभूवात्रदारुणः ॥ १३ ॥ हतैर्वानरमुख्यैश्चशक्तिशूलपरश्वधैः ॥ निहतैःपर्वताकारैराक्षसैःकामरूपिभिः ॥१४॥ शस्त्रपुष्पोपहाराचतत्रासीद्युद्धमेदिनी ॥ दुर्ज्ञेयादुर्निवेशाचशोणितास्रावकर्दमा ॥ १५ ॥

सेनाके कान और नेत्र पृथ्वीपरसे उडकर मूँद लिये इस प्रकारसे कठोर और रोमहर्षणकारी संग्राम आरंभ हुआ; तब उस संग्राममें घोर रुधिरकी नदियें बहने लगीं ॥११॥ उसके पीछे शंखका शब्द रथचक्रकी खर २ ध्वनिसे मिला हुआ भेरी मृदंग और ढोलोंका अद्भुत अनुपम शब्द होने लगा ॥ १२ ॥ घायल हुए व ताडित हुए राक्षसोंकी आर्त्त वाणी और अस्त्र शस्त्र चलानेके शब्दसे व वानरगणोंके दारुण शब्दसे संग्राम भूमि परिपूर्ण हो गई ॥ १३ ॥ शक्ति, शूल और परशु इत्यादि अस्त्र शस्त्रोंसे मरे हुए वानर और पर्वताकार कामरूपी राक्षसलोगोंके गिरनेसे ॥ १४ ॥ वह रणभूमि शस्त्ररूप पुष्पोंसे शोभायमान उद्यान (फुलवाडी) के समान जान पडने लगी । सब जगहही रुधिरके बहनेसे कीचड हो जानेसे वह संग्राम भूमि सबके न देखने योग्य और न प्रवेश करने योग्य

हो गई ॥१५॥ वास्तवमें राक्षस और वानरगणोंका प्राण हरण करनेवालीवह रात्रि कालरात्रिके समान सबही प्राणियोंको अत्यन्त भयंकर हुई ॥१६॥ उसके पीछे उस दारुण अंधकारमें समस्तही राक्षस श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर बाण वर्षाते हुए आगे बढे ॥१७॥ उस समय जब भयंकर क्रोध किये हुए राक्षस सिंहनाद करते जब श्रीरामचन्द्रजीके सन्मुखको दौडे, तब प्रलय कालके समयमें सात समुद्रके समान कोलाहलरूप बडा भारी शब्द हुआ ॥ १८ ॥ परन्तु श्रीरामचन्द्र जीने एक पलक मारनेके समय इनमेंसे छःराक्षसोंको अग्निकी लपटके समान तीखे बाणोंसे मारा ॥ १९ ॥ अजेय यज्ञशत्रु, महापार्श्व, महोदर, बडे शरीरवाला वज्रदंष्ट्र शुक और सारण ॥ २० ॥ यह छै राक्षस श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंसे मर्ममें चोट खायकर अपने २ जीवको ले रणभूमिसे भाग गये कारण कि, उनके

सावभूवनिशा घोराहरिराक्षसहारिणी ॥ कालरात्रीवभूतानांसर्वेषांदुरतिक्रमा ॥१६॥ ततस्तेराक्षसास्तत्रतस्मिंस्तमसिदारुणे ॥ राममेवाभ्यवर्तंतसंहृष्टाःशरवृष्टिभिः ॥१७॥ तेषामापततांशब्दःक्रुद्धानामपिगर्जताम् ॥ उद्वर्तइवसत्त्वानांसमुद्राणामभूत्स्वनः ॥१८॥ तेषांरामःशरैःषड्भिःषड्जघाननिशाचरान् ॥ निमेषांतरमात्रेणशरैरग्निशिखोपमैः ॥ १९ ॥ यज्ञशत्रुश्चदुर्धर्षोमहापार्श्वमहोदरौ ॥ वज्रदंष्ट्रोमहाकायस्तौचोभौशुकसारणौ ॥ २० ॥ तेतुरामेणबाणौघैःसर्वमर्मसुताडिताः ॥ युद्धादपसृतास्तत्रसावशेषायुषोभवन् ॥ २१ ॥ निमेषांतरमात्रेणघोरैरग्निशिखोपमैः ॥दिशश्चकारविमलाःप्रदिशश्चमहारथः॥२२॥येत्वन्यराक्षसावीरारामस्याभिमुखेस्थिताः॥तेपिनष्टाःसमासाद्यपतंगाइवपावकम् ॥२३॥ सुवर्णपुंखैर्विशिखैःसंपतद्भिःसमंततः ॥ बभूवरजनीचित्राखद्योतेरिवशारदी॥२४॥ राक्षसानांचनिनदैर्भेरीणांचैवनिःस्वनैः ॥ सावभूवनिशाघोराभूयोघोरतराभवत् ॥ २५ ॥ तेनशब्देनमहताप्रवृद्धेनसमंततः ॥ त्रिकूटःकंदराकीर्णःप्रव्याहरदिवाचलः ॥ २६ ॥

प्राण निकलनेको रह गये थे॥२१॥उस कालमें महारथी श्रीरामचन्द्रजी इस कारण अग्निकी लपटके समान बाण चलाने लगे कि जिससे पलभरमें दशों दिशा व विदिशाओंमें उजेला छाय गया ॥ २२ ॥ जिस प्रकार अग्निके मुखमें गिरकर पतंग जल जाते हैं वैसेही जो राक्षस श्रीरामचन्द्रजीकी ओर धाये थे उनका उसी समय नाश होगया ॥ २३ ॥ सबही कहीं सुवर्ण लगे बाणोंके गिरनेसे वहरात्रि पटबीजनोंकरके युक्त शरद ऋतुकी रात्रिके समान विचित्र ज्ञात होने लगी ॥ २४ ॥ राक्ष सलोगोंके सिंहनाद और भेरीके शब्दसे शब्दायमान होनेके कारण वह घोर रात्रि और भी घोर भयंकर होगई ॥ २५ ॥ सर्व प्रकारसे बढा हुआ बडा भारी शब्द त्रिकूट पर्वतकी कन्दराओंमें प्रवेश करके गुंजार करने लगा प्रतिध्वनि होने लगी ॥ २६ ॥

श्यामरंगवाले महाशरीरधारी गोपुच्छ वानरगण अपनी बाँहोंसे राक्षसोंको पकड फिर भक्षण करने लगे ॥ २७ ॥ अंगदजी भी शत्रुका विनाश करनेकी वासनासे रणमें प्रवेश करके रावणके पुत्र इन्द्रजीतके ऊपर प्रहार करते हुए और इसके सारथी व घोडोंको मारडालापरन्तु मायाविशारद इन्द्रजीत अंगदजी करके घोडे और सारथिके मारे जाने पर भी रथको छोडकर उसी समय स्थानमें अन्तर्धान हो जाता हुआ ॥ २८ ॥ देवता और ऋषि लोगोंके प्रशंसा करनेके योग्य वालिकुमार अंगदजीका ऐसा कठिन कार्य देखकर उनकी व रामलक्ष्मण इन दोनोंकी भी सब देवता और ऋषि अनेक प्रशंसा करने लगे ॥ २९ ॥ महाबली इन्द्रजीतके रणका पराक्रम सबही जानते थे इसी लिये उसको अंगदजी करके पराजित देखकर सबही संतुष्ट हो आनंद करने लगे ॥३०॥ तब सुग्रीव विभीषण व और दूसरे वानरगण भी शत्रुको पराजित देखकर सिंहनाद करने लगे और साधु २ कहकर अंगदजीकी अनेक प्रकारसे बडाई करते हुए ॥ ३१ ॥ भयं

गोलांगूलामहाकायास्तमसातुल्यवर्चसः ॥ संपरिष्वज्यबाहुभ्यांभक्षयन्रजनीचरान् ॥ २७ ॥ अंगदस्तुरणेशत्रून्निहंतुंसमुपस्थितः ॥ इंद्रजित्तुरथंत्यक्त्वाहताश्वोहतसारथिः॥अंगदेनमहायस्तस्तत्रैवांतरधीयत ॥२८॥ तत्कर्मवालिपुत्रस्यसर्वेदेवाःसहर्षिभिः॥तुष्टुवुःपूजनार्हस्यतौचोभौरामलक्ष्मणौ ॥ २९ ॥ प्रभावंसर्वभूतानिविदुरिंद्रजितोयुधि ॥ ततस्तेनमहात्मानंदृष्ट्वातुष्टाःप्रधर्षितम् ॥ ३० ॥ ततःप्रहृष्टाःकपयःससुग्रीवविभीषणाः ॥ साधुसाध्वितिनेदुश्चदृष्ट्वाशत्रुंपराजितम् ॥३१ ॥ इन्द्रजित्तुतदानेननिर्जितोभीमकर्मणा॥संयुगेवालिपुत्रेणक्रोधंचक्रेसुदारुणम् ॥ ॥३२॥ सोंतर्धानगतःपापोरावणीरणकर्शितः॥ब्रह्मदत्तवरोवीरोरावणिःक्रोधमूर्च्छितः ॥३३॥ अदृश्योनिशितान्बाणान्मुमोचाशनिवर्चसः ॥ रामंचलक्ष्मणंचैवघोरैर्नागमयैःशरैः ॥ ३४ ॥ बिभेदसमरेक्रुद्धःसर्वगात्रेषुराघवौ॥माययासंवृतस्तत्रमोहयन्राघवौयुधि ॥ ३५ ॥ अदृश्यःसर्वभूतानांकूटयोधीनिशाचरः ॥ बबंधशरबंधेनभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ ३६ ॥

कर कर्मकारी अंगदजीसे संग्राम भूमिमें पराजित होकर इन्द्रजीत बडा लज्जित हुआ और उसको अत्यन्त क्रोध हो आया ॥ ३२ ॥ तब वह दुष्ट वीर रणकर्कश रावण पुत्र ब्रह्माजीके वरदान पानेसे गर्वित हो अत्यन्त क्रोधकर अन्तर्धान हो गया ॥ ३३ ॥ और किसीको दिखाई न देता हुआ आकाशमें टिककर वज्रके समान बाण चलाने लगा और रामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीके सबही अंग उसने सर्पमय बाणोंसे बींधडाले ॥ ३४ ॥ उस मेघनादने क्रोधित होकर संग्राममें श्रीरामचन्द्रजीके सब अंगोंको बाणोंसे भेदा, उसने अपनी मायासे समरमें दोनों भ्राताओंको मोहित किया ॥३५॥ वह छलसे युद्ध करनेवाला निशाचर इन्द्रजीत अंतर्धान रह सब प्राणियोंको न दीखकर मायाके बलसे रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीको बाणोंके बन्धनोंसे बांधलेता हुआ ॥३६ ॥

उन पुरुषसिंह श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीको क्रोधित इन्द्रजीत करके नागमय बाण समूहोंसे बँधनेपर वानरलोग विस्मित होकर देखने लगे॥ ३७॥राक्षसराज रावणके पुत्र इन्द्रजीतने जिस समय देखा कि, राम लक्ष्मणको सम्मुख संग्राममें जीत लेना कुछ सहज बात नहीं है, तब उस समय दुरात्मा निशाचर मायाके बलका आश्रय करके सर्वके सम्मुख अन्तर्धान होकर उन दोनों राजकुमारोंको बांध लेता हुआ॥ ३८॥इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायांचतुश्चत्वारिंशः सर्गः॥४४॥तब उस दुष्टात्मा मेघनादके खोजनेके लिये महाप्रतापी राजकुमारजीने दश बलवान् वानरयूथपोंको आज्ञा दी॥ १॥उनमें दो तो सुषेणके भाई थे और वानरोंमें श्रेष्ठ नील, वालिकुमार अंगद, अतिवेगवान् शरभ॥ २॥द्विविद, हनुमान; महाबलवान् प्रस्थ, ऋषभ और ऋषभस्कन्ध इन्हीं दश शत्रुओंके तपानेवालेवानरोंको

तौतेनपुरुषव्याघ्रौक्रुद्धेनाशीविषैःशरैः॥सहसाभिहतौवीरौतदाप्रैक्षंतवानराः ॥३७॥ प्रकाशरूपस्तुयदानशक्तस्तौबाधितुंराक्षसराजपुत्रः॥मायां प्रयोक्तुंसमुपाजगामबबंधतौराजसुतौदुरात्मा ॥ ३८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥४४॥सतस्यगतिमन्विच्छन्राजपुत्रःप्रतापवान्॥दिदेशातिबलोरामोदशवानरयूथपान्॥ १॥ द्वौसुषेणस्यदायादौनीलंचप्लवगाधिपम्॥ अंगदंवालिपुत्रंचशरभंचतरस्विनम् ॥२॥ द्विविदंचहनूमंतंसानुप्रस्थंमहाबलम् ॥ ऋषभंचर्षभस्कंधमादिदेशपरंतपः ॥ ३ ॥ तेसंप्रहृष्टाहरयो भीमानुद्यम्यपादपान्॥आकाशंविविशुःसर्वेमार्गमाणादिशोदश॥४॥तेषांवेगवतांवेगमिषुभिर्वेगवत्तरैः॥अस्त्रवित्परमास्त्रेणवारयामासरावणिः ॥५॥ तंभीमवेगाहरयोनाराचैःक्षतविक्षताः ॥ अंधकारेनददृशुर्मेघैःसूर्यमिवावृतम् ॥ ६ ॥ रामलक्ष्मणयोरेवसर्वदेहभिदःशरान् ॥ भृशमावशयामासरावणिःसमितिंजयः ॥ ७ ॥ निरंतरशरीरौतुतावुभौरामलक्ष्मणौ ॥ क्रुद्धेनेंद्रजितावीरौपन्नगैःशरतांगतैः ॥ ८ ॥

श्रीरामचन्द्रजीने आज्ञा दी ॥ ३ ॥ यह सुनकर वह वानरगण अत्यन्त आनंदित होकर बडे २ वृक्षोंको उठाय दशों दिशाओंको खोजते हुए आकाशमें प्रवेश करते हुए ॥ ४ अस्त्रके जाननेवाले इन्द्रजीतने ब्रह्मास्त्र मंत्र पढे हुए बाणोंसे उन वेगवान् वानरोंकी गति रोकदी ॥५॥ वह वेगवान् वानरगण बाण जालसे छिन्न भिन्न होकर बादलसे ढके हुए सूर्यके समान अंधकारमें छिपे हुए इन्द्रजीतको नहीं देख सके॥६॥इतनेही अवसरमें रणदुर्जय रावणका पुत्र मेघनाद सर्व देहके भेदन करनेवाले बाणोंसे राम लक्ष्मणजीको विद्ध करता हुआ ॥७॥ वह दोनों भाई क्रोधित मेघनादके चलाये सर्पमय बाणोंसे ऐसे विद्ध हुए कि, उनके शरीरका

कोई स्थान भी बिना घावके न रहा ॥८॥ उनके घावोंसे बहुत सारा रुधिर बहनेके कारण वह दोनों भाई फूले हुए दो टेशूके वृक्षोंके समान शोभायमान होने लगे ॥ ९ ॥ उसके पीछे लाल २ नेत्र किये अंजनवाले पर्वतके समान काला रावणका बेटा मेघनाद अदृश्यही रहकर उन दोनों भ्राताओंसे यह वचन बोला ॥१०॥ अरे बाणजालसे बंधे हुए दो राजकुमारो ! तुम्हारी बात तो दूर रही हम जिस समय अदृश्य होकर युद्ध करते हैं, उस समय स्वर्गके पति इन्द्र भी हमारा दर्शन नहीं करसकते, या हमको प्राप्त नहीं हो सकते हैं ॥११॥ जो कुछ हो अब हम बहुत ही शीघ्र कंकपत्र लगे बाणोंसे भलीप्रकार तुमको बींधकर यमराजके गृहमें भेजदेते हैं ॥१२॥ धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी दोनों भाइयोंसे ऐसाकह कर मेघनाद अत्यन्त तीक्ष्ण बाणोंसे उनकोघायल कर वारंवार हर्षसे सिंहनाद

तयोःक्षतजमार्गेणसुस्रावरुधिरंबहु ॥ तावुभौचप्रकाशेतेपुष्पिताविवकिंशुकौ॥९॥ततःपर्यंतरक्ताक्षोभिन्नांजनचयोपमः ॥ रावणिर्भ्रांतरौवाक्यमं तर्धानगतोब्रवीत ॥ १० ॥ युध्यमानमनालक्ष्यंशक्रोपित्रिदशेश्वरः ॥ द्रष्टुमासादितुंवापिनशक्तःकिंपुनर्युवाम् ॥ ११ ॥ प्रापिताविषुजाले नराघवौकंकपत्रिणा ॥ एषरोषपरीतात्मानयामियमसादनम् ॥ १२ ॥ एवमुक्त्वातुधर्मज्ञौभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ निर्बिभेदशितैर्बाणैःप्रजहर्ष न्नादच ॥ १३॥ भिन्नांजनचयश्यामोविस्फार्यविपुलंधनुः ॥ भूयएवशरान्घोरान्विससर्जमहामृधे ॥ १४॥ ततोमर्मसुमर्मज्ञोमज्जयन्निशिता ञ्छरान् ॥ रामलक्ष्मणयोर्वीरोननादचमुहुर्मुहुः ॥ १५ ॥ बद्धौतुशरबंधेनतावुभौरणमूर्धनि ॥ निमेषांतरमात्रेणनशेकतुरवेक्षितुम् ॥ १६ ॥ ततोविभिन्नसर्वांगौशरशल्याचितौकृतौ॥ ध्वजाविवमहेंद्रस्यरज्जुमुक्तौप्रकंपितौ ॥१७॥ तौसंप्रबलितौवीरौमर्मभेदेनकर्षितौ ॥ निपेततुर्महेष्वा सौजगत्यांजगतीपती ॥ १८ ॥ तौवीरशयनेवीरौशयानौरुधिरोक्षितौ ॥ शरवेष्टितसर्वांगावार्तौपरमपीडितौ ॥ १९॥

करने लगा ॥ १३ ॥ उस घोररूप संग्राममें काले अंजनके समान श्याम रंगवाला मेघनाद अपने धनुषपर टंकार दे वारंवार अत्यन्त घोर बाणजाल वर्षाने लगा ॥१४॥ इसके पीछे वह मेघनाद धर्मात्माश्रीरामचन्द्र और लक्ष्मणजीके मर्म स्थानमें तीखे बाण मारकर हर्ष सहित वारंवारसिंहनाद करता हुआ ॥१५॥ उस समय वह दोनों वीर रणभूमिमें बाणोंके बंधनसे बँधकर एक पलभर भी किसी ओर देखनेको समर्थ न हुए ॥ १६ ॥ परन्तु इस समय वह बाणोंके फलकोंसे पीडित हो गयेथे, व उनके अंग भी कट गये थे, इससे वह दोनोंजन रस्सीसे रहित कम्पायमान महेन्द्रके युगल ध्वजके समान शोभित हुए ॥१७॥इसप्रकारसे महाबलवान् जगतपति श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी मर्ममें घाव लग जानेसे पीडित होकर पृथ्वीपर गिरपडे ॥ १८ ॥ वह दोनों वीर सब अंगोंमें बाण लगनेके

कारण अत्यन्त पीडित होकर वीरोचित सेजपर शयन करते हुए,व उनके सब अंगोंसे रुधिरकी धारा निकलने लगी॥१९॥उनके अंगमें एक अंगुलभी ऐसा स्थान नहीं था कि,जहां बाण न लगा हो और उंगलियोंके पौरुवोंसे लेकर कोई भी उनके अंगका स्थान नागमय बाणसमूहसे अविचलित या साबित नहीं रहा;सबही अंग कटे थे॥२०॥वह दोनों जन,कामरूपी क्रूर राक्षसकरके बाणोंसे ऐसे घायलहुएकि,जिसप्रकार झरनेसे जलकी धारानिकलती है,वैसेही इनके सब अंगोंसे रुधिरकी धारा निकलने लगी॥२१॥पहले श्रीरामचन्द्रजी राक्षस इन्द्रजीतके दारुण बाणसे विद्ध होकर पृथ्वीमें गिरपडे,जिसप्रकार इन्द्रजीतने पहले इन्द्रको युद्धमें हराया था वैसेही श्रीरामचन्द्रजीकी पराजय भी उसको आनन्दकी देनेवाली हुई ॥२२॥ फिर भी इस दुष्ट मेघनादने सुवर्णके फोंके लगे हुए रजके समान सब कहीं पहुँचनेवाले वेगवान् बाणोंसे व अनेक प्रकारके भालोंसे, नाराच अर्धनाराच अंजलिके बछडेके दांतोंके समान तथा सिंहदशनके समान आकारवाले बाणोंसे

नह्यविद्धतयोर्गात्रेबभूवांगुलमंतरम् ॥ नानिर्विण्णंनचाध्वस्तमाकराग्रादजिह्मगैः ॥२०॥ तौतुक्रूरेणनिहतौरक्षसाकामरूपिणा ॥ असृक्सुस्रुवतुस्तीव्रंजलंप्रस्रवणाविव ॥२१॥ पपातप्रथमंरामोविद्धोमर्मसुमार्गणैः ॥ क्रोधादिंद्रजितायेनपुराशक्रोविनिर्जितः ॥ २२ ॥ रुक्मपुंखैःप्रसन्नाग्रैरजोगतिभिराशुगैः ॥ नाराचैरर्धनाराचैर्भल्लैरंजलिकैरपि ॥ विव्याधवत्सदंतैश्चसिंहदंष्ट्रैःक्षुरैस्तथा ॥ २३ ॥ सवीरशयनेशिश्येविज्यमाविध्यकार्मुकम् ॥ भिन्नमुष्टिपरीणाहंत्रिनतंरुक्मभूषितम् ॥ २४ ॥ बाणपातांतरेरामंपातितंपुरुषर्षभम् ॥ सतत्रलक्ष्मणोदृष्ट्वानिराशोजीवितेऽभवत् ॥ २५ ॥ रामंकमलपत्राक्षंशरण्यंरणतोषिणम् ॥ शुशोचभ्रातरंदृष्ट्वापतितंधरणीतले ॥ २६ ॥ हरयश्चापितंदृष्ट्वासंतापंपरमंगताः ॥ शोकार्ताश्चुक्रुशुर्घोरमश्रुपूरितलोचनाः ॥२७॥ बद्धौतुतौवीरशयेशयानौतेवानराःसंपरिवार्यतस्थुः ॥ समागतावायुसुतप्रमुख्याविषादमार्ताःपरमंचजग्मुः ॥ २८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे पंचचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४५ ॥

श्रीरामचन्द्रजीको मारा ॥ २३ ॥ तब ज्यारहित तीन स्थानोंपर झुकेहुए रुक्मभूषित और मुष्टिस्थानोंसे अलग शरासनको त्यागकर श्रीरामचन्द्रजी वीरोचित सेजपर शयन करते हुए,उस समय उनमें कवच बख्तर धारण करनेकीभी कुछ सामर्थ्य न रही ॥२४॥ पुरुषश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीको बाणोंकी सेजपर सोया हुआ देखकर लक्ष्मणजी जीवनकी आशा त्याग करते हुए ॥२५॥ और उन कमलदललोचन रणतोषण शरण देनेवाले अपने भ्राताको पृथ्वीमें गिरा हुआ देखकर विलापकरने लगे ॥२६॥ वानरगण भी श्रीरामचन्द्रजीकी ऐसी अवस्था देखकरअत्यन्त सन्तापित हुए और शोकके मारे नेत्रोंमें आंसू भरकर बड़े शब्दसे रोनेलगे ॥२७॥हनुमान् इत्यादि मुखिया२वानरलोग आकर श्रीराम व लक्ष्मण दोनों भाईयोंको नागफांससेबँधेहुए और वीरोचित सेजपर शयन कियेहुएदेखकर चारोंओरसे घेरकर पहले खडे हुए वानरोंके सहित अत्यन्त विलाप करने लगे ॥२८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां पंचचत्वारिंशः सर्गः ॥४५॥

इसके पीछे वानर लोगोंने भयके मारे आकाश और पृथ्वीको खोज करके देखा कि, राम लक्ष्मण दोनों भाई नागफाँससे बँधे हुए पडे हैं ॥ १ ॥ उसके पीछे इन्द्र जिस प्रकार जलधारा वर्षाकर थमजाते हैं, वैसे ही इन्द्रजीत इन दोनों वीरोंको बाणजालसे घायल और बांध कर थम गया, तब सुग्रीव विभीषणके सहित उस स्थानमें आये ॥२॥ उसके पीछे नील, द्विविद, मैन्द, सुषेण, कुमुद और अंगद हनुमानजीके साथ वहांपर आय श्रीरामचन्द्रजीके निमित्त शोक करने लगे ॥ ३ ॥ उन समस्त वानरोंने देखा कि, राम लक्ष्मण शरविद्ध होनेके कारण चेष्टारहित हैं, उनके सब शरीरमें रुधिर बह रहा है, श्वास मन्द २ चलरहा है और वह बाणोंकी सेजपर बाणोंसे विंधे हुए पडे हैं॥४॥ तेजहीन सर्पकी जो अवस्था होती है दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजीकी भी वही अवस्था हो रहीथी' वह धीरे२लंबे२ श्वास लेरहेथे, वह सर्वाङ्गमें रुधिर लगाये सुवर्णकी ध्वजाओंके डंडेके समान पृथ्वीपर पडे हुए शोभायमान होरहे हैं ॥ ५ ॥ वह वीरशय्यापर शयन करनेके

ततोद्यांपृथिवींचैववीक्षमाणावनौकसः ॥ ददृशुःसंततौबाणैर्भ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥१॥ दृष्ट्वैवोपरतेदेवेकृतकर्मणिराक्षसे ॥ आजगामाशतंदेशंस सुग्रीवोविभीषणः ॥ २ ॥ नीलश्चद्विविदोमैंदःसुषेणःकुमुदोंगदः ॥ तूर्णंहनुमतासार्धमन्वशोचंतराघवौ ॥ ३ ॥ अचेष्टौमंदनिःश्वासौशोणिते नपरिप्लुतौ ॥ शरजालचितौस्तब्धौशयानौशरतल्पगौ ॥ ४ ॥ निःश्वसंतौयथासर्पौनिश्चेष्टौक्षीणविक्रमौ ॥ रुधिरस्रावदिग्धांगौतपनीयाविव ध्वजौ ॥५॥ तौवीरशयनेवीरौशयानौमंदचेष्टितौ ॥ यूथपैःस्वैःपरिवृतौबाष्पव्याकुललोचनैः ॥६॥ राघवौपतितौदृष्ट्वाशरजालसमन्वितौ ॥ बभूवुर्व्यथिताःसर्वेवानराःसविभीषणाः ॥ ७ ॥ अंतरिक्षंनिरीक्षंतोदिशःसर्वाश्चवानराः ॥ नचैनंमाययाच्छन्नंददृशूरावणिंरणे ॥ ८ ॥ तंतुमाया प्रतिच्छन्नंमाययैवविभीषणः ॥ वीक्षमाणोददर्शाग्रेभ्रातुःपुत्रमवस्थितम् ॥ तमप्रतिमकर्माणमप्रतिद्वंद्वमाहवे ॥ ९ ॥ ददर्शांतर्हितंवीरंवरदाना द्विभीषणः ॥ तेजसायशसाचैवविक्रमेणचसंयुतः ॥ १० ॥

कारण हाथ पांव आदि न हिलाते, डुलाते अपने उस यूथपोंके बीचमें लोटे हुए थे जो कि, उनके चारोंओर नेत्रोंमें जल भरे व्याकुलचित्तसे खडे रोते थे॥६॥ बाणजालसे विंधे हुए श्रीरामचन्द्रजीको पृथ्वीपर गिरा हुआ देखकर विभीषणके सहित सबही वानर अत्यन्त व्यथित होते हुए ॥७॥ यद्यपि इस समय वानरगण रावणके पुत्र मेघनादको आकाशमें ढूँढरहे थे, परंतु मायासे अदृश्य होनेके कारण इसको कोईभी न देख सका॥८॥ परंतु विभीषण इस मायाको जानते थे; इस कारण जैसे कि, उन्होंने दृष्टि की; वैसेही मायाके बलसे ढके हुए उस अपने भाईके पुत्र भतीजे मेघनादको इन्होंने देखा कि, वह अनुपम कर्म करनेवाला संग्राममूमिमें अप्रतिद्वंद्व ॥ ९ ॥ वरदान पानेसे गर्वित वीर अन्तर्धान होकर सम्मुखही आकाशमें टिका हुआ है ऐसे मेघनादको तेज, यश, विक्रमसंयुक्त

विभीषणजीने देखा ॥ १० ॥ इसके पीछे इन्द्रजीत मेघनाद इन श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी दोनों वीरोंको वीरसेजपर पडा हुआ देखकर अत्यन्त संतुष्ट हो अपना कर्म सबको सुनाता हुआ, सब राक्षसोंको संतोष दिलाता कहने लगा ॥ ११ ॥ कि, जो सब जगत्में बडे बलवान् विख्यात हैं जिनके हाथसे खर दूषण मारेगये, उन्हीं राम लक्ष्मलण दोनों भाइयोंका आज हमने अपने बाणोंसे संहार करडाला ॥ १२ यदि सुर, और समस्त ऋषिलोग भी यहां आ कर इकठे हो इनको नाग फाँससे छुटानेका यत्न करें, परन्तु किसी प्रकारसे भी यह नागफाँस छूटने वाली नहीं॥ १३॥जिनके लिये हमारे पिता भय और शोकसे अत्यन्त व्याकुल थे, जिनके कारण वह हमारे पिता सेजपर बिनाअंगके लगाये ही तीन पहर रात्रि बिता देते हैं॥ १४॥जिनके लिये लंकाके रहने वाले सम

इंद्रजित्त्वात्मानःकर्मतौशयानौसमीक्ष्यच ॥ उवाचपरमप्रीतोहर्षयन्सर्वराक्षसान् ॥११॥ दूषणस्यचहंतारौखरस्यचमहाबलौ ॥ सादितौमाम कैर्बाणैर्भ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ १२ ॥ नेमौमोक्षयितुंशक्यावेतस्मादिषुबंधनात् ॥ सर्वैरपिसमागम्यसर्षिसंघैःसुरासुरैः ॥१३॥ यत्कृतेचिंतया नस्यशोकातस्यपितुर्मम ॥ अस्पृष्ट्वाशयनंगात्रैस्त्रियामायातिशर्वरी ॥१४॥ कृत्स्नेयंयत्कृतेलंकानदीवर्षास्विवाकुला ॥ सोयंमूलहरोनर्थःसर्वे षांशमितोमया ॥१५॥ रामस्यलक्ष्मणस्यापिसर्वेषांचवनौकसाम् ॥ विक्रमानिष्फलाःसर्वेयथाशरदितोयदाः ॥ १६ ॥ एवमुक्त्वातुतान्सर्वा न्राक्षसान्परिपश्यतः ॥ यूथपानपितान्सर्वास्ताडयत्सचरावणिः ॥१७॥ नीलंनवभिराहत्यमैंदंसद्विविदंतथा ॥ त्रिभिस्त्रिभिरमित्रघ्नस्ततापपरमे षुभिः ॥ १८ ॥ जांबवंतंमहेष्वासोविद्धाबाणेनवक्षसि ॥ हनूमतोवेगवतोविससर्जशरान्दश ॥ १९ ॥ गवाक्षंशरभंचैवतावप्यमितविक्रमौ ॥ द्वाभ्यांद्वाभ्यांमहावेगोविव्याधयुधिरावणिः ॥२०॥ गोलांगूलेश्वरंचैववालिपुत्रमथांगदम् ॥ विव्याधबहुभिर्बाणैस्त्वरमाणोथरावणिः ॥२१॥

स्तही लोग वर्षाके समय वाली नदीके समान व्याकुल थे, उस अनर्थके मूलको ही आज हमने उखाड डाला॥ १५॥शरदकालके मेघ जिस प्रकार निष्फल होते हैं, वैसेही राम लक्ष्णणके समान समस्त बानरोंका विक्रम निष्फल होगया ॥ १६ ॥ इन्द्रजीत राक्षसोंसे यह वचन कहकर उनके सन्मुख ही वानरोंके यूथ नाथोंको भी ताडना करने लगा॥ १७॥उस अमित्रघाती अतिधनुर्द्धर मेघनादने वीर नीलपर नौ और मैन्द व द्विविद वानर पर तीन २ अतितीखे बाण चला कर उनको बींध डाला ॥ १८ ॥ उसके पीछे जाम्बवानकी छातीमें एक बाण मार कर उसने हनुमानूजीके ऊपर दश बाण चलाये ॥१९॥ गवाक्ष और शर भके ऊपर महापराक्रमी बेगवान मेघनादने दो दो बाण चलाये और उनको भी बींध डाला ॥२०॥ और बडी शीघ्रताके साथ उसने गोपुच्छ वानरोंके स्वामी

ऋक्षराज धूम्र और वालिकुमार अंगदजीके ऊपर बहुत असंख्यबाण चलाये ॥२१॥ महासत्वयुद्ध बलवान् रावणकुमार उन अग्निकी शिखाके समान लपलपाते बाण समूहसे वानरोंको मारकर सिंहनाद करने लगा ॥२२॥ वह महा बाहु मेघनाद बाणोंकी चोटसे वानरोंको शंकित और पीडितकर बिकट हँसने लगा और राक्षस लोगोंको पुकारकर बोला ॥ २३ ॥ हे निशाचरगण ! श्रवण करो; हमने बराबर बाणोंकी वर्षा करके अंतमें राम लक्ष्मणको महा नाग फाँससे बांध लिया ॥ २४ ॥ छलसे युद्ध करने वाले राक्षस लोग मेघनादकी बात सुनकर उसके कार्यसे अत्यन्त सन्तुष्ट हुए और उनकी उपमारहित बीरताको देखकर अत्यन्त विस्मित होरहे ॥२५॥ तब मेघाकार राक्षसलोग "राम मारे गये" यह मनमें निश्चय करके सबही सिंहनाद करते हुए इन्द्रजीत मेघनादकी बडाई करने लगे

तान्वानरवरान्भित्त्वाशरैरग्निशिखोपमैः ॥ ननादबलवांस्तत्रमहासत्त्वःसरावणिः ॥ २२ ॥ तानर्दयित्वाबाणौघैस्त्रासयित्वाचवानरान् ॥ प्रजहासमहाबाहुर्वचनंचेदमब्रवीत् ॥२३॥ शरबंधेनघोरेणमयाबद्धौचमूमुखे ॥ सहितौभ्रातरावेतौनिशामयतराक्षसाः ॥२४॥ एवमुक्तास्तुतेसर्वेराक्षसाःकूटयोधिनः ॥ परंविस्मयमापन्नाःकर्मणातेनहर्षिताः ॥२५॥ विनेदुश्चमहानादान्सर्वेतेजलदोपमाः ॥ हतोरामइतिज्ञात्वारावणिसमपूजयन् ॥ २६ ॥ निष्पंदौतुतदादृष्ट्वाभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ वसुधायांनिरुच्छ्वासौहतावित्यन्वमन्यत ॥२७॥ हर्षेणतुसमाविष्टइंद्रजित्समितिंजयः ॥ प्रविवेशपुरींलंकांहर्षयन्सर्वनैर्ऋतान् ॥ २८ ॥ रामलक्ष्मणयोर्दृष्ट्वाशरीरेसायकैश्चिते ॥ सर्वाणिचांगोपांगानिसुग्रीवंभयमाविशत् ॥ २९ ॥ तमुवाचपरित्रस्तंवानरेंद्रंविभीषणः ॥ सबाष्पवदनंदीनंक्रोधव्याकुललोचनम् ॥ अलंत्रासेनसुग्रीवबाष्पवेगोनिगृह्यताम् ॥ ३० ॥ एवंप्रायाणियुद्धानिविजयोनास्तिनैष्ठिकः ॥ सभाग्यशेषतास्माकंयदिवीरभविष्यति ॥ ३१ ॥

॥२६॥ और उन दोनों भ्राता श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीको विना हाथ पैर हिलाने डुलाते और श्वासरहित पृथ्वीमें पडे देखा, तब मेघनाद और राक्षसोंने निश्चय जान लिया कि, यह मृतक हो गये ॥२७॥ उसके पीछे रणमें विजय करने वाला इन्द्रजीत रणमें विजयपाकर राक्षसोंको आनंदित करता हुआ लंकामें प्रवेश कर गया ॥२८॥ इसी समयमें कपिराज सुग्रीवजी राक्षसराज रावणके पुत्र मेघनादके बाणोंसे श्रीराम लक्ष्मणके समस्त अंगविद्ध और रुधिरसे भीगे देखकर अत्यन्त भयको प्राप्त हुए ॥२९॥ उस समय बडे चतुर विभीषणजी नेत्रोंमें आंसू भरेहुए दीनभावसे युक्त और क्रोधाकुलनेत्र वानरराज सुग्रीवजीसे बोले कि, हे सुग्रीव ! त्रासको छोडो और रोनेकाभी कुछ काम नहीं ॥३०॥ युद्धका फल इसी प्रकारसे हुआ करता है, कारण कि कभी किसीको सदा जय नहीं प्राप्त हुआ

करती है. हे वीर ! यदि हम लोगोंका भाग्य प्रसन्न हो जायगा॥३१॥ तो महाबलवान् महात्मा इन दोनों भाइयोंका मोह बहुत ही शीघ्र छूट जायगा हे वानरपति ! तुम निश्चय जानना कि जो लोग सत्य और धर्मके अनुरागी होते हैं, उन लोगोंको कभी मृत्यु उपस्थित नहीं होती इस लिये तुम अनाथके समान शोक न करके अपनेको और हमको सावधान करो ॥३२॥ विभीषणजीने यह कहकर प्रथम अपने हाथमें लिये हुए जलसे सुग्रीवजीके दोनों नेत्र धोयदिये ॥ ३३ ॥ उसके पीछे फिर जल हाथमें लेकर उसको शोक निवारण विद्यासे अभिमंत्रित कर उससे फिर सुग्रीवजीके दोनों नेत्र धोदिये ॥३४तब बुद्धिमान् वानरराज सुग्रीवजीके नेत्र जलसे पोछे समयके अनुसार व्याकुलताके निवारण करनेवाले वचन विभीषणजी बोले ॥३५॥ हे सखे ! यह व्याकुल होनेके योग्य समय नहीं है जानलो कि ऐसे कठिन समयमें स्नेह भी मृत्युका कारण हो जाता है ॥३६॥ इस कारण इन सब कार्योंके विनाश करनेवाली विकलताको छोडकर जिससे श्रीरामचन्द्रजीका

मोहमेतौप्रहास्येतेमहात्मानौमहाबलौ ॥ पर्यवस्थापयात्मानमनाथंमांचवानर ॥ सत्यधर्माभिरक्तानांनास्तिमृत्युवितंभयम् ॥३२॥ एवमुक्त्वा ततस्तस्यजलक्लिन्नेनपाणिना ॥ सुग्रीवस्यशुभेनेत्रेप्रममार्जविभीषणः ॥ ३३ ॥ ततःसलिसमादायविद्ययापरिजप्यच ॥ सुग्रीवनेत्रेधर्मात्मा प्रममार्जविभीषणः ॥ ३४ ॥ विमृज्यवदनंतस्यकपिराजस्यधीमतः ॥ अब्रवीत्कालसंप्राप्तमसंभ्रांतमिदंवचः ॥ ३५ ॥ नकालःकपिराजेंद्रवैक्लव्यमवलंबितुम् ॥ अतिस्नेहोपिकालेऽस्मिन्मरणायोपकल्पते ॥ ३६ ॥ तस्मादुत्सृज्यवैक्लव्यंसर्वकार्यविनाशनम् ॥ हितंरामपुरोगाणांसैन्यानामनुचिंतय॥ ३७ ॥ अथवारक्ष्यतांरामोयावत्संज्ञाविपर्ययः ॥ लब्धसंज्ञौहिकाकुत्स्थौभयंनौव्यपनेष्यतः ॥ ३८ ॥ नैतत्किंचनरामस्यनच रामोमुमूर्षति ॥ नह्येनंहास्यतेलक्ष्मीर्दुर्लभायागतायुषाम् ॥ ३९ ॥ तस्मादाश्वासयात्मानंबलंचाश्वासयस्वकम् ॥ यावत्सैन्यानिसर्वाणिपुनःसंस्थापयाम्यहम् ॥ ४० ॥ एतेहिफुल्लनयनास्त्रासादागतसाध्वसाः ॥ कर्णेकर्णेप्रकथिताहरयोहरिसत्तम ॥ ४१ ॥

और उनकी अनुगामी सेनाका मंगल होवे ऐसा तुमको करना उचित है ॥३७॥ अथवा जब तक श्रीरामचन्द्रजीका मोह छूट कर उनको संज्ञा प्राप्त हो तब तक तुम उनकी रक्षाकरते रहो. जानलो कि, जब काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजीने चैतन्यता प्राप्त करली तब फिर हमको कोई भी भय न रहेगा ॥ ३८ ॥ श्रीरामचन्द्रजी मोहकी अवस्था जो तुम देखते हो यह सब कुछ भी नहीं है, लक्षणसे अनुमान होता है कि, किसी प्रकारसे भी श्रीरामचन्द्रजीकी मृत्यु होने वाली नहीं, जीवका जीवन नष्ट होने पर जो दुर्लभ है, इन श्रीरामचन्द्रजीके शरीरमें वही श्री स्पष्ट दिखलाई देती है ॥३९॥ हे सुग्रीव ! जो हुआ सो हुआ तुम सावधान होवो और अपनी नाको भी ढाढस बँधाओ और हम भी अपनी सेनाको फिर स्थिर करते हैं ॥४०॥ हे वानरश्रेष्ठ ! यह देखो, वानरगण नेत्र फैलाय२ भीत और शंकित होकर

परस्पर एक दूसरेके कानमें श्रीरामचन्द्रजीकीवार्ता कर रहे हैं ॥ ४१ ॥ हमको इधर उधर घूमते हुए देखकर व समस्त वानरवाहिनीको भी हर्षित देख पहरनेसे मलगिजी व कुँभलाई हुई मालाके त्याग करनेके समान सब वानर अपनी व्याकुलताको छोडेंगे ॥४२॥ उसके पीछे वह राक्षसोंके इन्द्र विभीषणजी वानरराज सुग्रीवजीको यहकह समझाय बुझाय फिर भागी हुई सेनाको धीरज बँधानें लगे ॥४३॥ इस ओर मायाविशारद इन्द्रजीत सब सेनाको साथ लेकर लंका नगरीमें प्रवेशित हो अपने पिता रावणके निकट जायकर पहुँचा ॥४४॥ फिर रावणकेनिकट जाय हाथ जोड प्रणामकर रामचंद्र व लक्ष्मणके मारेजानेकी प्रिय वार्ता वह मेघनाद निवेदन करता हुआ ॥ ४५ ॥ राक्षसमंडलके बीचमें बैठा हुआ रावण अपने दोनों शत्रुओंका मारा जाना सुनकर खडा हो हर्षित

मांतुदृष्ट्वाप्रधावंतमनीकंसंप्रहर्षितम् ॥ त्यजंतुहरयस्त्रासंभुक्तपूर्वामिवस्रजम् ॥४२॥ समाश्वास्यतुसुग्रीवंराक्षसेंद्रोविभीषणः ॥विद्रुतंवानरानीकं तत्समाश्वासयत्पुनः॥ ४३ ॥इंद्रजित्तुमहामायःसर्वसैन्यसमावृतः॥ विवेशनगरींलंकांपितरंचाभ्युपागमत्॥४४॥ तत्ररावणमासाद्यअभिवाद्य कृतांजलिः॥आचचक्षेप्रियंपित्रेनिहतौरामलक्ष्मणौ॥४५॥उत्पपाततततोहृष्टःपुत्रंचपरिषस्वजे॥रावणोरक्षसांमध्येश्रुत्वाशत्रूनिपातितौ ॥४६॥ उपाघ्रायचतंमूर्ध्निपप्रच्छप्रीतमानसः॥पृच्छतेचयथावृत्तंपित्रेतस्मैन्यवेदयत्॥४७॥यथातौशरबंधेननिश्चेष्टौनिष्प्रभौकृतौ॥४८॥सहर्षवेगानुग तांतरात्माश्रुत्वागिरंतस्यमहारथस्य ॥ जहौत्वरंदाशरथेःसमुत्थंप्रहृष्टवाचाभिननंदपुत्रम्॥४९॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे षट्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४६ ॥ तस्मिन्प्रविष्टेलंकायांकृतार्थेरावणात्मजे ॥ राघवंपरिवार्याथररक्षुर्वानरर्षभाः ॥ १ ॥

अंतःकरणसे पुत्रको हृदयसे लगाता हुआ ॥४६॥ तब रावणनेअति प्रसन्नता सहित पुत्रका मस्तक सूँघकर पुत्रसे युद्धका समस्त वृत्तान्त पूँछा पुत्र इन्द्रजीतनेभी सब चरित्र पितासे निवेदन किया ॥४७॥ जिसप्रकारसे राम और लक्ष्मणको संग्राममें नागफाँससे बांधकर चेष्टाहीन और प्रभाहीन किया, वह सब वृत्तान्त रावणसे इन्द्रजीतने कहा ॥४८॥ महाबलवान् महारथ इन्द्रजीतके मुखसे संग्राममेंजीतनेका समाचार पाय अत्यन्त संतुष्ट हुआ,और उस समय उसके अंतः करणसे श्रीरामचंद्रजीका भय दूर होगया,तब वह हर्षित वचनोंसे पुत्रकी बडाई करनेलगा॥४९॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी० आदि०युद्धकांडे भाषायां षट्चत्वारिंशः सर्गः॥४६॥ उसके पीछे जब रावणका पुत्र मेघनाद रणविजयीहोकर लंकाको चलागया तब वानरश्रेष्ठगण श्रीरामचन्द्रजीको चारों ओरसे घेरकर उनकी रक्षा करनेलगे॥१॥

हनुमान्, अंगद, नील, सुषेण, कुमुद, नल, गज, गवाक्ष, पनस, महावानर सानुप्रस्थ ॥ २ ॥ जाम्बवान, ऋषभ, सुन्दरम्भ, शतबलि और पृथु इत्यादि यह सबही वानरयूथपगण वृक्षोंको हाथमें ग्रहण कर सेनाकाव्यूह बनाय श्रीरामचन्द्रजीकी रक्षा करने लगे ॥ ३ ॥ उस कालमें रक्षामें नियुक्त हुए वानरगण इस प्रकारकी सावधानतासे चारों ओर देखने लगे कि, जो कहीं तनक शब्दभी हुआ तो वह लोग "राक्षस आगया" ऐसा जानकरके उसही ओरको दौडनेलगे ॥ ४ ॥ इस ओर रावण हर्षितमनसे प्रियपुत्र इन्द्रजीतको बिदा देकर सीताजीके रक्षाकार्यमें नियत हुई राक्षसियोंको बुलाता हुआ ॥ ५ ॥ त्रिजटा व और भी सब राक्षसियें रावणकी आज्ञा जानकर वहांपर आईं, तब राक्षसोंका स्वामी रावण हर्षभरे मनसे यह कहता हुआ ॥ ६ ॥ कि, तुम सब सीताको समाचार दो कि,

हनुमानंगदोनीलःसुषेणःकुमुदोनलः ॥ गजोगवाक्षःपनसःसानुप्रस्थोमहाहरिः ॥ २ ॥ जांबवानृषभःसुंदोरंभःशतबलिःपृथुः ॥ व्यूढानीकाश्च यत्ताश्चद्रुमानादायसर्वतः ॥ ३ ॥ वीक्षमाणादिशःसर्वास्तिर्यगूर्ध्वंचवानराः ॥ तृणेष्वपिचचेष्टत्सुराक्षसाइतिमेनिरे ॥ ४ ॥ रावणाश्चापिसंहृष्टोविसृज्येंद्रजितंसुतम् ॥ आजुहावततः सीतारक्षणीराक्षसीस्तदा ॥ ५ ॥ राक्षस्यस्त्रिजटाचापिशासनात्तमुपस्थिताः ॥ ताउवाचततोहृष्टोरा क्षसीराक्षसाधिपः ॥ ६ ॥ हताविंद्रजिताख्यातवैदेह्यारामलक्ष्मणौ ॥ पुष्पकंतत्समारोप्यदर्शयध्वंरणेहतौ ॥ ७ ॥ यदाश्रयादवष्टब्धानेयंमा मुपतिष्ठते ॥ सोस्याभर्तासहभ्रात्रानिहतोरणमूर्धनि ॥ ८ ॥ निर्विशंकानिरुद्विग्नानिरपेक्षाचमैथिली ॥ मामुपस्थास्यतेसीतासर्वाभरणभूषिता ॥ ९ ॥ अद्यकालवशंप्राप्तंरणेरामंसलक्ष्मणम् ॥ अवेक्ष्यविनिवृत्तासाचान्यांगतिमपश्यती ॥ अनपेक्षाविशालाक्षीमामुपस्थास्यतेस्वयम् ॥ १० ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वारावणस्यदुरात्मनः ॥ राक्षस्यस्तास्तथेत्युक्त्वाजग्मुर्यत्रपुष्पकम् ॥ ११ ॥ ततःपुष्पकमादायराक्षस्योरावणाज्ञया ॥ अशोकवनिकास्थांतांमैथिलींसमुपानयन् ॥ १२ ॥

इन्द्रजीतके हाथसे राम लक्ष्मण दोनों भाई मारेगये उनसेयह कह फिर उन्हें पुष्पक विमानपर चढाकर रणभूमिमें मरेहुए दोनों भाइयोंको दिखालाओ ॥ ७ ॥ उस जानकीसे तुम कहना कि, जिनके आश्रयके गर्वके मारे तुम इतने दिनोंतक हमसे विरुद्ध थीं, इस समय वही तुम्हारे स्वामी अपने भाईके सहित मारडाले गयेहैं॥८॥ अब सीता रामके सहित मिलनेकी आशाको भलीभाँतिसे त्यागकर और शोक व शंकाको छोड सर्वगहनोंसे भूषित हो हमारे वशमें होजाय॥९॥ जानपडता है कि, आज वह बडे नेत्रोंवाली जानकी संग्रामभूमिमें लक्ष्मणजीके सहित रामचंद्रको प्राणरहित और अपनी और कोई गति न देखकर जब वहांसे लौटेगी, तब आपहीहमारे वशमें पडेगी॥१०॥ तब यह सब राक्षसी दुरात्मा रावणके यह वचन सुनकर और "ऐसेही होगा" कहकर जहां पुष्पकविमान रक्खा था वहांपर गईं॥११॥ उसके पीछे वह

राक्षसीगण रावणकी आज्ञासे वह पुष्पक विमान लेकर अशोकवनमें वास करती हुई सीताजीके निकट पहुँची ॥१२॥ और पतिके शोकसे दुर्बल हुई सीताको उन राक्षसियोंने अपने हाथसे पकडकर पुष्पकविमानपर चढाया ॥१३॥ रावण त्रिजटाके साथ सीताजीको पुष्पकविमानमें सवार कराकर ध्वजा पतकाओंसे शोभायमान लंकापुरीमें घुमवाया ॥ १४ ॥ उस राक्षसपति रावणने घुमानेके कालमें चारोंओर यह पुकरवाया कि " संग्रामभूमिमें इन्द्रजीतके हाथसे राम लक्ष्मण दोनों भाई मारे गये" ॥ १५ ॥ इसके पीछे जनककुमारी सीताजी त्रिजटाके सहित रणभूमिमें जायकर देखती हुई कि, लगभग समस्त वानरसेनाही मरी पडी है ॥ १६ ॥ मांसके खानेवाले राक्षसलोग हर्षित अंतः करणसे चारों ओर घूम रहे हैं;और वानरगण दुःखितमनसे श्रीराम लक्ष्मणजीके निकट खडे हुए हैं ॥१७॥

तामादायतुराक्षस्योभर्तृशोकपराजिताम् ॥ सीतामारोपयामासुर्विमानंपुष्पकंतदा ॥ १३ ॥ ततःपुष्पकमारोप्यसीतांत्रिजटयासह ॥(जग्मुर्दर्शयितुंतस्यैराक्षस्योरामलक्ष्मणौ) रावणश्चारयामासपताकाध्वजमालिनीम् ॥ १४ ॥ प्राघोषयतहृष्टश्चलंकायांराक्षसेश्वरः ॥ राघवोलक्ष्मणश्चैवहताविंद्रजितारणे ॥ १५ ॥ विमानेनापिगत्वातुसीतात्रिजटयासह ॥ ददर्शवानराणांतुसर्वंसैन्यंनिपातितम् ॥ १६ ॥ प्रहृष्टमनसश्चापिददर्शपिशिताशनान् ॥ वानरांश्चातिदुःखार्तान्रामलक्ष्मणपार्श्वतः ॥ १७ ॥ ततःसीताददर्शोभौशयानौशरतल्पगौ ॥ लक्ष्मणंचैवरामंचविसंज्ञौशरपीडितौ ॥ १८ ॥ विध्वस्तकवचौवीरौविप्रविद्धशरासनौ ॥ सायकैश्छिन्नसर्वांगौशरस्तंबमयौक्षितौ ॥ १९ ॥ तौदृष्ट्वाभ्रातरौतत्रप्रवीरौपुरुषर्षभौ ॥ शयनौपुंडरीकाक्षौकुमाराविवपावकी ॥ २० ॥ शरतल्पगतौवीरौतथाभूतौनरर्षभौ ॥ दुःखार्ताकरुणंसीतासुभृशंविललापह ॥ २१ ॥ भर्तारमनवद्यांगीलक्ष्मणंचासितेक्षणा ॥ प्रेक्ष्यपांसुषुचेष्टंतौरुरोदजनकात्मजा ॥ २२ ॥

उसके पीछे जनककुमारी जानकीने देखा कि, राम और लक्ष्मणजी बाणोंसेपीडित होनेके कारण चेतना रहित हो बाणोंकी सेजपर पडे हुए हैं ॥ १८ ॥ वह दो वीर श्रेष्ठ दोनों भाई राम और लक्ष्मणजी कवचहीन धनुष त्याग किये सब अंगोंमें बाण बिंधवाये पृथ्वीपर पडे हुए हैं ॥ १९ ॥ जानकीजीने देखा–वह वीराग्रगण्य पुरुषश्रेष्ठ पुण्डरीकाक्ष दोनों भ्राता,दोअग्निकुमारोंके समान बाणोंकीसेजपर शयन किये हुए हैं ॥ २० ॥ उन पुरुषश्रेष्ठ दोनों वीरोंकी ऐसी अवस्था मेंबाणोंकी सेजपर शयन किये हुए देख जनककुमारी सीताजी दुःखकी अधिकाईके मारे बारंबार विलाप करने लगीं ॥ २१ ॥ कृष्ण लोचनवाली व कोमल अंगवाली जानकीजी अपने स्वामी और लक्ष्मणजीको धूरिमें लोटता हुआ देखकर रोदन करने लगीं ॥ २२ ॥

इस प्रकारसे जनककुमारी जानकीजी सुरसुत समान दोनों भाइयोंको ऐसी अवस्थामें देख "यह मृतक होगये" ऐसा मनमें स्थिर करती हुई और शोकके मारे उनका वदनमंडल आंसुओंकरके पूर्ण होजानेसे वह अत्यन्त दुःखके मारे कहने लगीं ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४७ ॥ अपने स्वामी और महाबलवान् लक्ष्मणजीको मृतक देखकर मारे शोकके दुर्बल सीताजी अत्यन्त करुणाभरी वाणीसे इस प्रकार विलाप करने लगीं ॥ १ ॥ हाय ! सामुद्रिकके जाननेवाले पुरुष हमको देखकर कहते थे कि, तुम पुत्रवती होकर सदा सुहागन रहोगी, परन्तु आज श्रीरामचन्द्रजीके मृतक हो जानेसे उनके वह वचन मिथ्या हुए ॥ २ ॥ और जो पंडित हमको देखकर कहते थे कि, तुम यज्ञ करनेवाले राजाकी स्त्री होगी हाय ! आज श्रीरामचन्द्रजीके मृतक होजानेसे वह ज्ञानीलोगभी मिथ्यावादि हुए ॥ ३ ॥ हाय ! और उन ज्ञानीलोगोंने हमको देखकर यह भी कहा था कि, तुम

सबाष्पशोकाभिहतासमीक्ष्यतौभ्रातरौदेवसुतप्रभावौ ॥ वितर्कयंतीनिधनंतयोःसादुःखान्वितावाक्यमिदंजगाद ॥२३॥ इत्यार्षेश्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये युद्धकांडे च०सा०सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४७ ॥ भर्तारंनिहतंदृष्ट्वालक्ष्मणंचमहाबलम् ॥ विललापभृशंसीताकरुणं शोककर्शिता ॥ १ ॥ ऊचुर्लाक्षणिकायेमांपुत्रिण्यविधवेतिच ॥ तेऽद्यसर्वेहतेरामेज्ञानिनोऽनृतवादिनः ॥२॥ यज्वनोमहिषींयेमामूचुःपत्नींचसत्रिणः ॥ तेऽद्यसर्वेहतेरामेज्ञानिनोऽनृतवादिनः ॥३॥ वीरपार्थिवपत्नीनांयेविदुर्भर्तृपूजिताम् ॥ तेऽद्यसर्वेहतेरामेज्ञानिनोऽनृतवादिनः ॥ ४ ॥ ऊचुःसंश्रवणेयेमांद्विजाःकार्तांतिकाःशुभाम् ॥ तेऽद्यसर्वेहतेरामेज्ञानिनोऽनृतवादिनः ॥ ५ ॥ इमानिखलुपद्मानिपादयोर्वैकुलस्त्रियः ॥ अधिराज्येऽभिषिच्यंतेनरेंद्रैःपतिभिःसह ॥ ६ ॥ वैधव्यंयांतियैर्नार्योऽलक्षणैर्भाग्यदुर्लभाः ॥ नात्मनस्तानिपश्यामिपश्यंतीहतलक्षणा ॥ ७ ॥

वीरराजाकी सब रानियोंमें बडी होगी; परन्तु बडे शोककी बात है कि, आज श्रीरामचन्द्रजीके मरजानेसे उन ज्ञानी लोगोंकी बात भी मिथ्या हुई ॥ ४ ॥ ज्योतिषशास्त्रके जाननेवाले ब्राह्मणोंने हमको देख प्रतिज्ञा करके हमारे अभिषेकके सम्बन्धमें जो शुभकारी वार्ता कही थी; सो आज श्रीरामचन्द्रके मृतक होजानेसेउनके वचनभी विफल होगये ॥ ५ ॥ दोनों चरणोंमें पद्मचिह्न रहनेसे जो कुलकी स्त्रियां नरेन्द्रपतियोंके साथ अधिराज स्थानपर अभिषेचित होती हैं वे पद्माकार रेखारूप हमारे चरणोंमें हैं ॥ ६ ॥ क्या आश्चर्य है कि, जिन सब कुलक्षणोंके रहनेसे दुर्भाग्यवती स्त्रियें विधवा अवस्थाको प्राप्त होती हैं; हम विशेषरूपसे देखभालकर भी अपने शरीरमें वैसा कोई कुलक्षण नहीं देखतीं बरन् जब कि, हम ऐसे सुलक्षणयुक्त होकरभी विधवा हुई, इससे निश्चयही बोध होता है कि यह पद्मचिह्न इत्यादि हमसे हत होगये ॥ ७ ॥

हा ! लक्षण जाननेवाले पंडितलोग जिस पद्मचिह्नका "अमोघ" फल कहा करते हैं श्रीरामचन्द्रजीके निहत होनेसे आज हमारे जाने तो यह सब मिथ्या होगये ॥८॥ देखो ! स्त्रियोंके समस्त सुलक्षण हममें हैं नीले, पतले और बराबर हमारे केश हैं, दोनों भौंहे परस्पर मिली हुई नहीं हैं, दोनों जांघे गोल और रोम सहित हैं, दांतोंकी पंक्ति विरल (परस्परपृथक्) हैं ॥९॥ नेत्रोंके कोय, नेत्र, हाथ, पांव, घुटने, ऊरू यह सब हमारे मोटे हैं, चढाउतार चिकने लाल नख हैं उंगलियें समस्त बराबर हैं ॥१०॥ हमारे परस्पर मिले हुए स्तन ऐसे मोटे और ऊंचे हैं मानों दोनों स्तनकोरक उनमें पैठेही जाते हैं; हमारे स्तनके निकटवाली बगल व ऊरू विशाल है, नाभि ऊंचीपार्श्ववाली और सुगंभीर है॥११॥ हमारा वर्ण शानपर चढीमणिके समान उजला है, रोम समस्त कोमल हैं ॥१२॥ हमारी

सत्यनामानिपद्मानिस्त्रीणामुक्तानिलक्षणैः ॥ तान्यद्यनिहतेरामेवितथानिभवंतिमे ॥ ॥ ८ ॥ केशाःसूक्ष्माःसमानीलाभ्रुवौचासंहतेमम ॥ वृत्ते चारोमकेजंघेदंतांश्चाविरलामम ॥ ९ ॥ शंखेनेत्रेकरौ पादौगुल्फावूरूसमोचितौ ॥ अनुवृत्तनखाःस्निग्धाःसमाश्चांगुलयोमम ॥ १० ॥ स्तनौ चाविरलौपीनौमामकौमग्नचूचुकौ ॥ मग्नाचोत्सेधनीनाभिःपार्श्वोरस्कंचमेचितम् ॥ ११ ॥ ममवर्णोमणिनिभोमृदून्यंगरुहाणिच ॥ प्रतिष्ठि तांद्वादशभिर्मामूचुःशुभलक्षणाम् ॥ १२ ॥ समग्रयवमच्छिद्रंपाणिपादंचवर्णवत् ॥ मंदस्मितेत्येवचमांकन्यालाक्षणिकाविदुः ॥१३॥ अधि राज्येभिषेकोमेब्राह्मणैःपतिनासह ॥ कृतांतकुशलैरुक्तंतत्सर्ववितथीकृतम् ॥ १४ ॥ शोधयित्वाजनस्थानंप्रवृत्तिमुपलभ्यच ॥ तीर्त्वासागरम क्षोभ्यंभ्रातरौगोष्पदेहतौ ॥ १५ ॥ ननुवारुणमाग्नेयमैंद्रंवायव्यमेवच ॥ अस्त्रंब्रह्मशिरश्चैवराघवौप्रत्यपद्यत ॥ १६ ॥

उंगलियोंके पोरुवोंपर सब यव पूरे हैं, कोई रेखासे खंडित नहीं और हाथ पैरकी सब उंगलियें घनी हैं और समस्त अंग शोभासे युक्त हैं; इन सब लक्षणोंसे लक्षण जाननेवाले लोग हमको मन्दस्मिता कहा करते थे ॥ १३ ॥ हा ! ज्योतिषशास्त्रके जाननेवाले ब्राह्मण लोगोंने कहा था कि "पतिके साथ तुम अधि राज्यपर अभिषिक्त होगी" परन्तु यह सबही आज मिथ्या होगया ॥१४॥ हा ! यह दोनों भ्राता जनस्थानके कंटकको दूर करके हमारा पता लगाय लांघ नेके अयोग्य समुद्रके पार होकर अन्तमें हमारे भाग्यसे गायके खुरके गढेमें भरे हुये जलमें डूबगये ॥१५॥ हाय ! इन दोनों वीरोंने वारुण आग्नेय वायव्य और ब्रह्मशिर नामक जिन अस्त्रोंको प्राप्त किया था, किसकारणसे यह सब अस्त्र इन्होंने इस कुसमयमें स्मरण नहीं किये * ॥ १६ ॥

* किस कारणसे उन्होंने यह सब अस्त्र इस कुसमयमें स्मरण नहीं किये ।" यह कथा इसमें नहीं है परन्तु टीकाकारका अभिप्राय है

हाय ! हाय ! मुझ अनाथिनीके नाथ इन्द्रके समान पराक्रमकारी राम और लक्ष्मणजी मायाके बलसे अन्तर्धान हुए इन्द्रजीतके हाथसे संग्राम भूमिमें मारे गये हैं ॥ १७ ॥ इन्द्रजी तने अदृश्य रह करही ऐसा किया है परन्तु संग्राममें वह किसी प्रकारसे भी ऐसे नहीं कर सकता कारण कि; रणभूमिमें रघुनंदनकी दृष्टिके सामने पडकर मनके समान वेगवान् शत्रुभी जीता हुआ लौटकर नहीं जाय सकता॥ १८ ॥ जो कुछ हो कालके लिये कोई भी कार्य दुष्टकर नहीं है. और को तो जीत भी लिया जाय सकता है; परन्तु कालको कोई जीतने वाला नहीं, यदि ऐसा न होता तो यह दोनों भ्राता रणमें क्यों मारे जाते ? ॥१९॥ श्रीरामचन्द्रजी,महारथी लक्ष्मणजी,अपनी जननी अथवा अपने लिये भी हमें ऐसा शोक नहीं परन्तु तपस्विनी सास कौसल्याजीके परिणामकी चिंता

अदृश्यमानेनरणेमाययावासवोपमौ ॥ ममनाथावनाथायानिहतौरामलक्ष्मणौ ॥ १७ ॥ नहिदृष्टिपथंप्राप्यराघवस्यरणेरिपुः ॥ जीवन्प्रति निवर्तैतयद्यपिस्यान्मनोजवः ॥ १८ ॥ नकालस्यातिभारोस्तिकृतांतश्चसुदुर्जयः ॥ यत्ररामःसहभ्रात्राशेतेयुधिनिपातितः ॥ १९ ॥ नशोचा मितथारामंलक्ष्मणंचमहारथम् ॥ नात्मानंजननींचापियथाश्वश्रूंतपस्विनीम् ॥ २० ॥ सातुचिंतयतेनित्यंसमाप्तव्रतमागतम् ॥ कदाद्रक्ष्या मिसीतांचलक्ष्मणचसराघवम् ॥ २१ ॥ परिदेवयमानांतांराक्षसीत्रिजटाब्रवीत् ॥ माविषादंकृथादेविभर्तायंतवजीवति ॥ २२ ॥ कारणानि चवक्ष्यामिमहांतिसदृशानिच ॥ यथेमौजीवतोदेविभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ २३ ॥ नहिकोपपरीतानिहर्षपर्युत्सुकानिच ॥ भवंतियुधियोधानां मुखानिनिहतेपतौ ॥ २४ ॥ इदंविमानंवैदेहिपुष्पकंनामनामतः ॥ दिव्यंत्वांधारयेन्नेदंयद्येतौगतजीवितौ ॥ २५ ॥

करके हमारी छाती फटीजाती है॥२०॥वह सदा यही चिंता किया करती हैं,—कब राम लक्ष्मण वधूके सहित व्रत समाप्त करके आवेंगे ? कब उनको देखने पावेंगी? ॥२१॥ जब जनक कुमारी सीताजी इसप्रकारसे विलाप कर रही थीं तब त्रिजटा नाम राक्षसीने कहा कि,हे देवि ! तुम अब विलाप न करो कारण कि, तुम्हारे स्वामी अभी जीवित हैं॥२२॥हे देवि! भ्राता राम और लक्ष्मण जिसप्रकारसे जीवित हैं,इसका बडा भारी कारण हम कहती हैं, तुम उसको श्रवण करो॥२३॥ यह वानरगण क्रोध प्रकाश कर रहे हैं और उनके मुखोंपर हर्षके चिह्नभी दिखाई देते हैं,परन्तु रणस्थलमें राजाके मर जाने पर उसकी सेनाके मुखपर कभी इस प्रकारके चिह्न प्रकाशित नहीं होते ॥२४॥ हे वैदेहि ! और भी सुनो;यदि श्रीरामचंद्रजी और लक्ष्मणजी जीवित न होते तो यह पुष्पक विमान किसी प्रकारसे भी

तुमको धारण न करता, क्योंकि यह अपने ऊपर विधवा स्त्रियोंको नहीं चढाता है ॥२५॥ हम जानती हैं कि, युद्धमें सेनापति या प्रधानकी मृत्यु होजाने पर सेनाके लोगोंमें उत्साह और उद्यम नहीं रहता; परन्तु इन वानरोंमें हम यह सब बातें पाती हैं, यदि श्रीरामचन्द्रजीका कोई अंग नष्ट हुआ होता तो निश्चयही विना मांझीकी नौकाके समान यह सेना रंणभूमिमें इधर उधर फिरती ॥ २६ ॥ परन्तु हे तपस्विनी ! यह वानरोंकी सेना बडी सावधानसे उद्वेग रहित हो दोनों भ्राता राम लक्ष्मणजीकी रक्षा करती हैं इस कारण हमें ज्ञान होता है कि यह मृतक न होकर मूर्च्छित होगये हैं यह बात हमने प्रीतिके कारण तुमसे कही है ॥ २७ ॥ हे जानकि ! तुम इस समय सावधान होवो, हमको स्पष्ट अनुमान करनेसे जान पडता है कि, राम लक्ष्मणजीका कुछ अमंगल नहीं हुआ

हतवीरप्रधानाहिगतोत्साहानिरुद्यमा ॥ सेनाभ्रमतिसंख्येषुहतकर्णेवनौर्जले ॥ २६ ॥ इयंपुनरसंभ्रांतानिरुद्विग्नातपस्विनि ॥ सेनारक्षतिकाकुत्स्थौमयाप्रीत्यानिवेदितौ ॥ २७॥ सात्वंभवसुविस्रब्धाअनुमानैःसुखोदयैः ॥ अहतौपश्यकाकुत्स्थौस्नेहादेतद्ब्रवीमिते ॥ २८ ॥ अनृतंनोक्तपूर्वंमेनचवक्ष्यामिमैथिलि ॥ चारित्रसुखशीलत्वात्प्रविष्टासिमनोमम ॥ २९ ॥ नेमौशक्यौरणेजेतुंसेंद्रैरपिसुरासुरैः ॥ तादृशंदर्शनंदृष्ट्वा मयाचोदिरितंतव ॥ ३० ॥ इदंतुसुमहच्चित्रंशरैःपश्यस्वमैथिलि ॥ विसंज्ञौपतितावेतौनैवलक्ष्मीर्विमुंचति ॥ ३१ ॥ प्रायेणगतसत्त्वानांपुरुषाणांगतायुषाम् ॥ दृश्यमानेषुवक्रेषुपरंभवतिवैकृतम् ॥ ३२ ॥

तुम्हारे प्रति हमारा स्नेह जो है इसी कारणतो हम तुमसे यह बात कहती हैं ॥ २८ ॥ हे मैथिलि ! हमने पहले कभी तुमसे कोई मिथ्या वार्ता न कही न अब कहेंगी. ये देवि ! अधिक क्या कहें तुमने अपने निर्मल चरित्रके प्रभावसे हमारे अंतःकरणको अपने वशमें कर लिया है ॥ २९ ॥ हमने श्रीरामचंद्र व लक्ष्मणजीकी जो सौम्यमूर्ति देखी है, उसको देखकर हम निश्चयही कह सकती हैं कि इनको पराजित करनेकी सुर व असुरोंके सहित इंद्रमेंभी सामर्थ्य नहीं है, फिर यह राक्षस विचारे तो हैं ही क्या वस्तु ?॥३०॥ हे रामप्राणवल्लभे ! और एक बात आश्चर्यकी यहभी है कि, यह दोनों बाणोंसे विद्ध और संज्ञाहीन होकर पृथ्वीपर गिर पडे हैं; परन्तु उसपरभी इनकी सुन्दरताईमें कुछ अन्तर नहीं आया है ॥३१॥ बहुधा देखनेमें आता है कि, प्राणियोंका जीवन नष्ट या शक्तिहीन होने पर व गतायुष होनेपर उनके मुखकी शोभा नहीं रहती, बरन मुखकी आकृति बिगडजाती है ॥ ३२ ॥

हे जनक कुमारी ! हम इसलिये कहती हैं कि,तुम शोक दुःख और मोहको छोडो; कारण कि,यदि राम लक्ष्मण जीवरहित होते तो इनके शरीरों पर ऐसा लावण्य किसी प्रकारसेभी नहीं रहता ॥ ३३ ॥ मिथिलाराजनन्दिनी देवकन्याओंके समान सीता यह समस्त वचन श्रवणकर हाथ जोडकर बोलीं कि तुमने जो कुछ कहा वही समस्त वचन तुम्हारे सत्य हैं ॥ ३४ ॥ इसके पीछे त्रिजटा उस मनके वेगके अनुसार शीघ्र चलने वाले पुष्पकविमानको लौटायकर दीन सीताजीको फिर लंकापुरीमें प्रवेश कराती हुई ॥३५॥ तदनन्तर जनकपुत्री सीताजी त्रिजटाके सहितअशोकवनके समीप उपस्थित समस्त राक्षसियोंके सहित फिर उसमें प्रवेश करती हुई ॥ ३६ ॥ इस प्रकारसे जानकीजीने राक्षसोंमें इन्द्र रावणके विहारभूमि अनेक वृक्षोंसे युक्त अशोकवाटिकामें प्रवेश किया; परन्तु इन्होंने दोनों राजकुमारोंको जिस अवस्थामें पडा देखाथा अशोकवनमें आनेके समय वही चिंता आयकर इनके मनको अत्यन्त व्याकुल और हृदयको मथने

त्यजशोकंचदुःखंचमोहंचजनकात्मजे ॥ रामलक्ष्मणयोरर्थेनाद्यशक्यमजीवितुम् ॥ ३३ ॥ श्रुत्वातुवचनंतस्याःसीतासुरसुतोपमा ॥ कृतांज लिरुवाचेमामेवमस्त्वितिमैथिली ॥ ३४ ॥ विमानंपुष्पकंततुसन्निवर्त्यमनोजवम् ॥ दीनात्रिजटयासीतालंकामेवप्रवेशिता ॥ ३५ ॥ ततस्त्रि जटयासार्धंपुष्पकादवरुह्यसा ॥ अशोकवनिकामेवराक्षसीभिःप्रवेशिता ॥ ३६ ॥ प्रविश्यसीताबहुवृक्षखंडांतांराक्षसेंद्रस्यविहारभूमिम् ॥ संप्रे क्ष्यसंचिंत्यचराजपुत्रौपरंविषादंसमुपाजगाम् ॥ ३७ ॥ इत्यार्षे श्रीम० वा० आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे अष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४८ ॥ घोरेणशरबंधेनबद्धौदशरथात्मजौ ॥ निःश्वसंतौयथानागौशयानौरुधिरोक्षितौ ॥ १ ॥ सर्वेतेवानरश्रेष्ठाःससुग्रीवमहाबलाः ॥ परिवार्यमहात्मा नौतस्थुःशोकपरिप्लुताः ॥ २ ॥ एतस्मिन्नंतरेरामःप्रत्यबुध्यतवीर्यवान् ॥ स्थिरत्वात्सत्त्वयोगाच्चशरैःसंदानितोपिसन् ॥ ३ ॥ ततोदृष्ट्वासरु धिरंनिषण्णंगाढमर्पितम् ॥ भ्रातरंदीनवदनंपर्यदेवयदातुरः ॥ ४ ॥

लगी ॥ ३७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी आदि० युद्धकांडे भाषायामष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४८ ॥ दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी नाग फाँसमें बँधे हुए बाणोंकी सेजपर पडे थे व उनके सब अंगोंसे रुधिर निकल रहा था, हाथी जिस प्रकार श्वास लिया करता है, उस समय यह दोनों भ्राता भी इसी भाँति लंबे २ श्वास लेने लगे ॥१॥ सुग्रीवादि मुख्य २ बलवान् वानर श्रेष्ठगण शोकसे अत्यन्त पीडित होकर उनको चारों ओरसे घेरकर खडे हो गये॥२॥ यद्यपि श्रीरामचन्द्रजी दृढनाग फाँसमें बँधे हुए थे तथापि अपनी दृढता और बलकी अधिकाईके अनुसार वह इससमय सचेत हुए ॥३॥ जागकर श्रीरामचन्द्रजी अपने छोटे भइया लक्ष्मणजीको दीनवदन किये शरीरसे रक्त बहातेपृथ्वीपर शयन करते हुए देख कर आतुर पुरुषके समान रोदन करने लगे ॥ ४ ॥

कि, जब हमने प्राणोंसे भी अधिक अपने प्रिय भ्राता लक्ष्मणजीको युद्धमें पराजित और पृथ्वीपर पडे हुए देखा, फिर भला अब हम सीताका उद्धार करके क्या करेंगे, और हमारे इस जीवन धारण करनेका भी क्या प्रयोजन है ? ॥५॥ हाय पृथ्वीपर ढूँढनेसे सीताके समान स्त्री तो पाई जा सकती है, परंतु त्रिलोकीमें ढूँढनेसे भी लक्ष्मणके समान संग्रामका मंत्री भाई हम नहीं पा सकेंगे " मिलहिं न जगत सहोदर भ्राता " ॥ ६ ॥ जो यह सुमित्राजीके आनंद बढानेवाले लक्ष्मणजी मृतक हो गये हों तब हम इसी मुहूर्तमें समस्त वानरोंके सन्मुखही प्राण त्याग करेंगे ॥ ७ ॥ क्या कष्ट है ? जब कि हम अयोध्याजीमें लौटकर जायँगे तब माता कौशल्या, कैकेयी और पुत्रके दर्शनकी लालसा किये माता सुमित्राजीसे क्या कहेंगे ॥ ८ ॥ हा दैव ! जो हम अयोध्यापुरीको बिना लक्ष्मणकेही चले जायँ तो कुररीकी समान कम्पायमान उन वत्स रहित सुमित्राजीको हम क्या कहकर समझावेंगे ॥९॥ हा ! हम जिसके साथ वनमें आये थे उन

किंनुमेसीतयाकार्यंलब्धयाजीवितेनवा ॥ शयानंयोद्यपश्यामिभ्रातरंयुधिनिर्जितम् ॥ ५ ॥ शक्यासीतासमानारीमर्त्यलोकेविचिन्वता ॥ नलक्ष्मणसमोभ्रातासचिवःसांपरायिकः ॥ ६ ॥ परित्यक्ष्याम्यहंप्राणान्वानराणांतुपश्यताम् ॥ यदिपंचत्वमापन्नःसुमित्रानंदवर्धनः ॥ ७ ॥ किंनुवक्ष्यामिकौसल्यांमातरंकिंनुकैकयीम् ॥ कथमंबांसुमित्रांचपुत्रदर्शनलालसाम् ॥ ८ ॥ विवत्सांवेपमानांचवेपंतींकुररीमिव ॥ कथमाश्वासयिष्यामियदियास्यामितंविना ॥ ९ ॥ कथंवक्ष्यामिशत्रुघ्नंभरतंचयशस्विनम् ॥ मयासहवनंयातोविनातेनाहमागतः ॥ १० ॥ उपालंभंनशक्ष्यामिसोढुमंबासुमित्रया ॥ इहैवदेहंत्यक्ष्यामिनहिजीवितुमुत्सहे ॥ ११ ॥ धिङ्मांदुष्कृतकर्माणमनार्यंमत्कृतेह्यसौ ॥ लक्ष्मणःपातितःशेतेशरतल्पेगतासुवत् ॥ १२ ॥ त्वंनित्यंसुविषण्णंमामाश्वासयसिलक्ष्मण ॥ गतासुर्नाद्यशक्तोसिमामार्तमभिभाषितुम् ॥ १३ ॥ येनाद्यबहवोयुद्धेनिहताराक्षसाःक्षितौ ॥ तस्यामेवाद्यशूरस्त्वंशेषेविनिहतःशरैः ॥ १४ ॥

लक्ष्मणजीके बिना अयोध्यामें लौटकर हम यशस्वी भरत और शत्रुघ्नसे क्या कहेंगे कुछ समझमें नहीं आता ॥ १० ॥ जब कि अपने पुत्र लक्ष्मणजीके लिये सुमित्राजी हमारी निन्दा करेंगी, तब वह वचन हमसे किस प्रकार सहे जायँगे ? इस कारण यहींपर जीवन त्याग देना हमारा कर्तव्य है ॥ ११ ॥ हा ! हम बडे ही दुष्कार्यके करनेवाले और अतिशय अनार्य हैं, इस लिये हमको धिक्कार है, अहो ! हमारेही कारण हमारे छोटे भाई लक्ष्मण बाणोंकी सेजपर लेटे हुए मृतकके समान पडे हैं ॥ १२ ॥ भैया लक्ष्मण ! जब हमकुछ शोक करते तब तुम सदाही हमको समझाते, परन्तु आज हम इस प्रकारके पीडित हो रहे हैं, तथापि तुम मृतकके समान हमसे कुछ भी वार्तालाप नहीं करते और न हमें समझाते हो ॥ १३ ॥ हाय ! आज इस रणभूमिमें जिन करके असंख्य राक्षस वशको प्राप्त होकर पृथ्वीमें शयन कर रहे हैं, वही शूरश्रेष्ठ लक्ष्मणजीभी बाणोंसे घायल होकर आज बाणोंकी सेजपर शयन कररहे हैं ॥ १४ ॥

हा लक्ष्मण! तुम रुधिरसे भीगे हुए होकर बाणोंकी सेजपर शयन करके शररूप हुए अस्तगामी किरणमाली सूर्यके समान शोभा धारण किये हुए ॥ १५ ॥ हा ! तुम्हारे सब मर्मस्थानोंमें बाणोंके लगनेसे तुम कुछ कहनेको समर्थ नहीं हो, परन्तु कुछ न कहनेपर भी तुम्हारे नेत्रोंके लालेपनसे तुम्हारे मनकी समस्तही व्यथा प्रगट हो रही है ॥ १६ ॥ हाय ! जिस प्रकार हमारे वनमें आनेके समय तुम महाद्युतिमान हमारे पीछे २ आये थे, वैसेही हम भी तुम्हारे पीछे २ आज यमलोकमें गमन करेंगे ॥ १७ ॥ हाय ! जो सदा अपने बन्धुजनोंके प्रति प्रीति दिखलाते थे और हमारी भी आज्ञामें सदाही रहते थे आज इस कुभागी मुझ दशरथके पुत्रकी कुनीतिसेही उस लक्ष्मणजीकी ऐसी दशा हुई ॥ १८ ॥ हाय ! यह वीर लक्ष्मणजी जब कि महाकोपवश हो जाते तब भी इन्होंने हमको कोई कठोर वचन न सुनाया था, ऐसा हमको स्मरण नहीं होता अर्थात् इन्होंने कभी हमको कठोर वचन नहीं कहा ॥१९॥ हाय जो लक्ष्मण

शयानःशरतल्पेऽस्मिन्सशोणितपरिप्लुतः ॥ शरभूतस्ततोभासिभास्करोऽस्तमिवव्रजन् ॥ १५ ॥ बाणाभिहतमर्मत्वान्नशक्नोषीहभाषितुम् ॥ रुजाचाब्रुवतोयस्यदृष्टीरागेणसूच्यते ॥ १६ ॥ यथैवमांवनंयान्तमनुयातोमहाद्युतिः ॥ अहमप्यनुयास्यामितथैवैनंयमक्षयम् ॥ १७ ॥ इष्टबंधुजनोनित्यंमांचनित्यमनुव्रतः ॥ इमामद्यगतोऽवस्थांममानार्यस्यदुर्नयैः ॥ १८ ॥ सुरुष्टेनापिवीरेणलक्ष्मणेननसंस्मरे ॥ परुषंविप्रियंचापिश्रावितंतुकदाचन ॥ १९ ॥ विससर्जैकवेगेनपंचबाणशतानियः ॥ इष्वस्त्रेष्वधिकस्तस्मात्कार्तवीर्याच्चलक्ष्मणः ॥ २० ॥ अस्त्रैरस्त्राणियो हन्याच्छक्रस्यापिमहात्मनः ॥ सोयमुर्व्यांहतः शेतेमहार्हशयनोचितः ॥ २१ ॥ तत्तुमिथ्याप्रलप्तंमांप्रधक्ष्यतिनसंशयः ॥ यन्मयानकृतोराजाराक्षसानांविभीषणः ॥ २२ ॥ अस्मिन्मुहूर्तेसुग्रीवप्रतियातुमिहार्हसि ॥ सत्त्वहीनंमयाराजन्रावणोभिभविष्यति ॥ २३ ॥

दो बांहोंवाले होकर भी जब कि एक वेगमेंही पांच २ शत २ बाण छोडते थे, तब अस्त्र चलानेमें वह सहस्र बांहोंवाले कार्त्तवीर्यसे भी अधिक थे कारण कि वह तो हजारबांहेंहोने पर भी एक कालमें पांच शत बाण चलाता था, परन्तु यह दो बांहोंसेही एक कालमें पांचशत बाण छोडते थे ॥२०॥ हाय ! जो वीर अपने अस्त्रके बलसे इन्द्रके वज्रादि अस्त्रोंको भी निवारण कर सकते थे, और पहले जिनको बडे मोलकी शय्यापर शयन करनेसे भी निद्रा न आती थी आज वही लक्ष्मणजी मेघनादके बाणोंसे मृतक होकर पृथ्वीपर शयन कर रहे हैं ॥ २१ ॥ हाय ! हम जो " विभीषणको लंकाका राजा बनावेंगे " ऐसी प्रतिज्ञा की थी और अब इस प्रतिज्ञाको पूरा न कर सके बस इस समय वही मिथ्या प्रलाप हमारी आत्माको दग्ध किये डालता है॥ २२ ॥ हे सुग्रीव ! जब कि हम प्राणत्याग करेंगे, तब रावण तुमको बलहीन समझकर अवश्यही कोई न कोई उपद्रव करेगा, इस कारण तुम इसी मुहूर्त यहांसे अपने देश

किष्किन्धाको चले जाओ॥ २३ ॥ हे सुग्रीव ! तुम अंगद व सब सेनाकोभी आगे २ करके नील नलऔरभी सेनाके सब सामान सहित समुद्रके पार होकर शीघ्रता करके यहांसे चले जाओ ॥२४॥ हनुमान्‌ने हमारेलिये रणभूमिमें औरसे न होनेके योग्य जो कठिन कर्म किये, और ऋक्षराज जाम्बवान् व गोपुच्छके राजाने जो कठिन कर्म हमारे लिये किये इससे हम परम प्रसन्न हैं ॥२५॥ और अंगदनेभी बडेभारी कर्म किये व मैन्द, द्विविद, केशरी और सम्पाति नाम वानरने भी युद्धमें हमारे लिये बडे घोर कर्म किये ॥२६॥ गवय; गवाक्ष शरभ, गज, व औरभी दूसरे वानरोंने अपने प्राणतककी बाजी लगाकर युद्ध करनेकेलिये तैयार होकर संग्राम किया है ॥२७॥ हे सुग्रीव ! मनुष्य भाग्यको कभी उल्लंघन नहीं कर सकता जो मित्रको मित्रके साथ और सुहृद्‌को सुहृद्‌के साथ करना उचित है, वह मेरेलिये ॥२८॥हे सुग्रीव ! तुमने धर्म और शक्तिके अनुसार सबही कुछ किया. हे वानरश्रेष्ठ ! तुमने भी हमारा मित्रकार्य भली भाँतिसे किया

अंगदंतुपुरस्कृत्यससैन्यंसपरिच्छदम् ॥ सागरंतरसुग्रीवनीलेनचनलेनच ॥ २४ ॥ कृतंहिसुमहत्कर्मयदन्यैर्दुष्करंरणे ॥ ऋक्षराजेनतुष्यामि गोलांगूलाधिपेनच ॥ २५ ॥ अंगदेनकृतंकर्ममैंदेनद्विविदेनच ॥ युद्धंकेसरिणासंख्येघोरंसंपातिनाकृतम् ॥ २६ ॥ गवयेनगवाक्षेणशरभेणगजेनच ॥ अन्यैश्चदरिभिर्युद्धंदुर्धरंत्यक्तजीवितैः ॥ २७ ॥ नचातिक्रमितुंशक्यंदैवंसुग्रीवमानुषैः ॥ यत्तुशक्यंवयस्येनसुहृदावापरंमम ॥२८॥ कृतंसुग्रीवतत्सर्वंभवताधर्मभीरुणा ॥ मित्रकार्यंकृतमिदंभवद्भिर्वानरर्षभाः ॥ २९ ॥ अनुज्ञातामयासर्वेयथेष्टंगंतुमर्हथ ॥ शुश्रुवुस्तस्ययेसर्वे वानराःपरिदेवितम् ॥ वर्तयांचक्रिरेऽश्रूणिनेत्रैःकृष्णेतरेक्षणाः ॥ ३० ॥ ततःसर्वाण्यनीकानिस्थापयित्वाविभीषणः ॥ आजगामगदापाणिस्त्वरितंयत्रराघवः ॥ ३१ ॥ तंदृष्ट्वात्वरितंयांतंनीलांजनचयोपमम् ॥ वानरादुद्रुवुःसर्वेमन्यमानास्तुरावणिम् ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीम०वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे एकोनपंचाशः सर्गः ॥ ४९ ॥

॥२९॥ इसलिये अब हम तुमको आज्ञा देते हैं कि, तुम्हारी सबही जहांपर इच्छा हो वहांपर चले जाओ, जब रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकारसे विलाप कर कहने लगे तब उसकाल जितने वानरोंने उनका वह विलाप सुना, उन सबके अपने नेत्रोंसेही आँसुओंकी धारा गिरनेलगीं ॥ ३० ॥ इतनेमें ही विभीषणजी सब सेनाको धीरज बँधाते, जहांके तहां सबको टिकाते गदा ग्रहण कर अतिशीघ्रतासे श्रीरामचन्द्रजीके पास आये ॥ ३१ ॥ परन्तु नील अंजनके ढेरके समान उस वीर विभीषणको शीघ्रतासे श्रीरामचन्द्रजीके समीप आते देखकर वानर उनको इन्द्र जीत समझकर चारों ओर भागने लगे ॥ ३२॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकोनपंचाशः सर्गः ॥ ४९ ॥

इसके पीछे महाबलवान् महातेजस्वी वानरराज सुग्रीवजी बोले कि,जलके बीचमें प्रचण्ड पवनके लगनेसे नौकाके समान किसप्रकारसे यह वानरोंकी सेना ऐसी चलाय मान हुई ॥ १ ॥ सुग्रीवजीके ऐसे वचनसुन वालिके पुत्र अगद बोले क्या तुम महारथी श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीको नहीं देखते ? ॥२॥ जो दश रथकुमार बडे वीर होनेपरभी बाणजालसे विंधे हैं,इनके सब अंगोंसे रुधिर निकल रहा है और बाणोंकी शय्यापर सोय रहे हैं. जब कि,यही ऐसी अवस्थामें पडकर दुःख पाय रहे हैं तब सेनाके इसप्रकारसे चलायमान होनेका कारण इसके अतिरिक्त और क्या हो सकता है ? ॥ ३ ॥ उसके पीछे वानरोंके स्वामी सुग्रीवजी अपने भतीजे अंगदसे बोले कि;हे वत्स ! वानरगण जो ऐसे चलायमान हुए हैं,इसका कोई बडा भारी कारणहै ऐसा समझ पडताहै कि कोई भय आया होगा ॥ ४ ॥ यह देखो ! वानरगण व्याकुल मुख किये समस्त अस्त्र शस्त्रोंको त्याग चारों ओरको भागे जाते हैं,और भयके मारे उन सबके नेत्र लाल और

अथोवाचमहातेजाहरिराजोमहाबलः॥किमियंव्यथितासेनामूढवातेवनौर्जले॥१॥सुग्रीवस्यवचःश्रुत्वावालिपुत्रोंगदोऽब्रवीत्॥नत्वंपश्यसिरामं चलक्ष्मणंचमहारथम्॥२॥शरजालाचितौवीराबुभौदशरथात्मजौ॥शरतल्पेमहात्मानौशयानौरुधिरोक्षितौ ॥३॥ अथाब्रवीद्वानरेंद्रःसुग्रीवःपुत्र मंगदम् ॥ नानिमित्तमिदंमन्येभवितव्यंभयेनतु॥४॥ विषण्णवदनाह्येतेत्यक्तप्रहरणादिशः ॥ पलायंतेत्रहरयस्त्रासादुत्फुल्ललोचनाः॥५॥ अन्यो न्यस्यनलज्जंतेनरीक्षंतिपृष्ठतः ॥ विप्रकर्षंतिचान्योन्यंपतितंलंघयंतिच ॥ ६ ॥ एतस्मिन्नंतरेवीरोगदापाणिर्विभीषणः ॥ सुग्रीवंवर्धयामासरा घवंचजयाशिषा॥७॥विभीषणंचसुग्रीवोदृष्ट्वावानरभीषणम्॥ऋक्षराजंमहात्मानंसमीपस्थमुवाचह॥८॥विभीषणोयंसंप्राप्तोयंदृष्ट्वावानरर्षभाः ॥ द्रवंत्यागतसंत्रासारावणात्मजशंकया ॥९॥ शीघ्रमेतान्सुसंत्रस्तान्बहुधाविप्रधावितान् ॥ पर्यवस्थापयाख्याहिविभीषणमुपस्थितम् ॥१०॥

चंचल हो रहे हैं ॥ ५ ॥ देखो ! यह सब ऐसे डरगये हैं कि,भागनेमें कुछभी लाज नहीं करते, कोई सम्मुख पडकर गतिको रोके तो उसको खैंचकर पीछे ढकेल देते;और कोई गिरजाय तो उसको लांघते हुए सब भागेजाते हैं और कोई पीछेकी ओरको दृष्टि नहीं करता ॥ ६ ॥ सुग्रीवजी ऐसा कहरहे थे कि, इतनेमें वीर विभीषणजी गदा हाथमें लिये वहां आय पहुँचे और विजयसूचक आशीर्वाद देके सुवचनोंसे रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी और वानरराज सुग्रीवजीको प्रणाम करतेहुए ॥ ७ ॥ तब सुग्रीवजी विभीषणजीको ही वानरगणोंके भयका कारण जानकर समीपमें बैठे हुए ऋक्षराज जाम्बवानसे यह वचन बोले ॥ ८ ॥ यह विभीषण यहांपर आये हैं,इनकोही देख और रावणका पुत्र मेघनाद समझकर भयके मारे चकित नेत्रहोकर वानरगण यह शंका करके कि, फिर वह भय आया; भागे जाते हैं ॥ ९ ॥ इसकारण आप शीघ्रही त्रासित और चारों ओरको भागी जाती हुई इस वाहिनीको पुकारकर सावधान करो कि, यह इन्द्रजीत

नहीं बरन् विभीषणजी आये हैं ॥ १० ॥तब ऋक्षराज जाम्बवान्जी सुग्रीव जीके ऐसे वचन सुनकर भागतेहुए वानरोंको लौटनेको पुकारने लगे ॥ ११ ॥ उसके पीछे समस्त वानरगणभी जो कि, भागे जाते थेऋक्षराज जाम्बान्जीके वचन सुन और विभीषणको आया हुआ देख भय त्यागकर लौट आये ॥ १२ ॥ तत्पश्चात् धर्मात्मा विभीषणजी श्रीराम लक्ष्मणजी दोनोंहीके शरीरबाणोंसे छाये और रुधिरसे नहाये देख मनमें बहुतही दुःखी हुए ॥ १३ ॥ विभीषणजीने अपने हाथमें जल लेकर स्वंय महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके और लक्ष्मणजीके नेत्र धोये और फिरशोकित मनसे नेत्रोंमें आंसू भरकर देखने और विलाप करने लगे ॥१४॥ हाय ! यह दोनों सत्त्वसम्पन्न समरप्रिय भयंकर विक्रमकारी दोनों भाई कपटयुद्धकरनेवाले निशाचरोंसे ऐसी दुरअवस्थाको प्राप्त हुए हैं

सुग्रीवेणैवमुक्तस्तु जांबवानृक्षपार्थिवः ॥ वानरान्सान्त्वयामाससन्निवर्त्यप्रधावतः ॥ ११ ॥ तेनिवृत्ताःपुनःसर्वेवानरास्त्यक्तसाध्वसाः ॥ ऋक्ष राजवचःश्रुत्वातंचदृष्ट्वाविभीषणम् ॥ १२ ॥ विभीषणस्तुरामस्यदृष्ट्वागात्रंशरैश्चितम् ॥ लक्ष्मणस्यतुधर्मात्माबभूवव्यथितस्तदा ॥ १३ ॥ जलक्लिन्नेनहस्तेनतयोर्नेत्रेविमृज्यच ॥ शोकसंपीडितमनारुरोदविललापच ॥ १४ ॥ इमौतौसत्त्वसंपन्नौविक्रांतौप्रियसंयुगौ ॥ इमामवस्थां गमितौराक्षसैःकूटयोधिभिः ॥ १५ ॥ भ्रातृपुत्रेणचैतेनदुष्पुत्रेणदुरात्मना ॥ राक्षस्याजिह्मयाबुद्ध्यावंचितावृजुविक्रमौ ॥ १६ ॥ शरैरिमाव लंविद्धौरुधिरेणसमुक्षितौ ॥ वसुधायामिमौसुप्तौदृश्येतेशल्यकविवा ॥ १७ ॥ ययोर्वीर्यमुपाश्रित्यप्रतिष्ठाकांक्षितामया ॥ ताविमौदेहनाशा यप्रसुप्तौपुरुषर्षभौ ॥ १८ ॥ जीवन्नद्यविपन्नोऽस्मिनष्टराज्यमनोरथः ॥ प्राप्तप्रतिज्ञश्चरिपुःसकामोरावणःकृत ॥ १९ ॥ एवंविलपमानंतंपरि ष्वज्यविभीषणम् ॥ सुग्रीवःसत्त्वसंपन्नोहरिराजोऽब्रवीदिदम् ॥ २० ॥

॥१५॥ हाय ! रावणके पुत्र और हमारे भतीजे दुरात्मा मेघनादकी राक्षसी कुटिल बुद्धिसे यह सरल बुद्धिवाले दोनों राजकुमार धोखा खाय गये हैं ॥ १६ ॥ यह बाणोंसे युक्त और शरीरमें रुधिर निकलनेके कारण पृथ्वीमें पडे रहनेसे कांटोंसे युक्तसैं जनेकेवृक्षके समान जान पडते हैं ॥१७॥ हाय ! जिनके वीर्यके ऊपर भरोसा करकेही हमने लंकाकी राज्यगद्दीपर बैठनेकी आभिलाषा की थी, इस समय वही पुरुषश्रेष्ठ दोनों राजकुमार अपनी देहका नाश करनेके लिये ही पृथ्वी पर पडे हैं ॥ १८ ॥ हाय ! इनकी ऐसी अवस्था होनेपर हम तो जीते हुए मर गये; और मनमेंजो राज्य प्राप्त करनेकी बलवती आशा हुई थी, वहभी नाशको प्राप्त हुई परन्तु शत्रु रावणकी प्रतिज्ञा पूरी हुई और उसके मनोरथ भी पूरे हुए ॥ १९ ॥ जबकि, विभीषणजी इस प्रकारसे विलाप कर रहे थे, तब बलवान्

सत्त्वसंयुक्त वानरराज सुग्रीवजी उनको हृदयसे लगाय भलीभांति भेंटकर बोले ॥२०॥ हे धर्मज्ञ ! आप निश्चय जानलें कि; रावण अथवा इन्द्रजीतका मनोरथ किसी प्रकारसे पूर्ण नहीं होगा।और निश्चयही लंकापुरीका राज्य आपको मिलेगा, इसमें कुछभी संशय नहीं॥ २१॥ यह दोनों भ्राता गरुडजीके उपासक हैं, अथवा गरुडसे सेवित हैं बस गरुड़जीके आतेही राम लक्ष्मण दोनों भाई संज्ञा प्राप्त करेंगे, और इनका मोह दूरहो जायगा, और फिरयह बहुतही शीघ्र संग्राम भूमिमें रावणको वंशसहित विध्वंस करेंगे ॥ २२॥ सुग्रीवजी राक्षसश्रेष्ठ विभीषणजीको इस प्रकारसे समझा बुझाकर निकट बैठे हुए अपने श्वशुर सुषेण नामक यूथपसे बोले ॥ २३ ॥ कि, तुम इनदोनों भ्राता राम और लक्ष्मण व और दूसरे शूर वानर वीरोंको किष्किन्धापुरीमें लेजाओ और जब तक इन शत्रुओंके मारने वालोंको चैतन्यता न प्राप्त होवे. तबतक उसी स्थानमें इनकी रक्षा करते रहना ॥ २४ ॥ और इस ओर हम भी, इस रावणको पुत्रपौत्र और बान्धवोंके

राज्यंप्राप्स्यसिधर्मज्ञलंकायांनेहसंशयः ॥ रावणःसहपुत्रेणस्वकामंनेहलप्स्यते ॥ २१ ॥ गरुडाधिष्ठितावेतावुभौराघवलक्ष्मणौ ॥ त्यक्त्वामोहवधिष्येतेसगणंरावणंरणे ॥ २२ ॥ तमेवसांत्वयित्वातुसमाश्वास्यतुराक्षसम् ॥ सुषेणंश्वशुरंपार्श्वेसुग्रीवस्तमुवाचह ॥ २३ ॥ सहशूरैर्हरिगणैर्लब्धसंज्ञावरिंदमौ ॥ गच्छत्वंभ्रातरौगृह्यकिष्किंधांरामलक्ष्मणौ ॥ २४ ॥ अहंतुरावणंहत्वासपुत्रंसहबांधवम् ॥ मैथिलीमानयिष्यामिशक्रोनष्टामिवश्रियम् ॥ २५ ॥ श्रुत्वैतद्वानरेंद्रस्यसुषेणोवाक्यमब्रवीत् ॥ देवासुरंमहायुद्धमनुभूतंपुरातनम् ॥ २६ ॥ तदास्मदानवादेवान्शरसंस्पर्शकोविदान् ॥ निजघ्नुःशस्त्रविदुपश्छादयंतोमुहुर्मुहुः ॥ २७ ॥ तानार्तान्नष्टसंज्ञांश्चगतासूंश्चबृहस्पतिः ॥ विद्याभिर्मंत्रयुक्ताभिरोषधीभिश्चिकित्सति ॥ २८ ॥ तान्यौषधान्यानयितुंक्षीरोदंयांतुसागरम् ॥ जवेनवानराःशीघ्रंसंपातिपनसादयः ॥ २९ ॥ हरयस्तुविजानंतिपार्वतीतेमहौषधी ॥ संजीवकरणींदिव्याविशल्यांदेवनिर्मिताम् ॥ ३० ॥

साथ संहार करके रावणसे हरी हुई जानकीजीका उद्धार करके ले आवेंगे, कि जैसे नष्ट हुई राज्यलक्ष्मीको इन्द्रजीसे फिर प्राप्त किया था॥ २५॥ सुग्रीवजीके ऐसे वचन सुनकर सुषेण बोले कि–" पहले हमने देवता व असुरोंका बडा भारी संग्राम देखा था" ॥२६॥ उस संग्राममें बाण चलानेसे अतिचतुर और शस्त्रास्त्रके कर्ममें अतिकुशल राक्षसोंने जब रण करनेमें चतुर देवता लोगोंकोबाणोंके समूहसे वारंवार ढक लिया था ॥२७॥ तब देवगुरु बृहस्पतिजी उन देवताओंको पीडित चेतना रहित और विनाशको प्राप्त देखकर; मंत्रविद्याके प्रभावसे व यथायोग्य औषधियोंसे उनकी चिकित्सा करते रहेकि, जिससे वह समस्त देवताफिर जीवित होगये ॥ २८ ॥ हे राजन् ! उन ओषधियोंको लानेके अर्थ सम्पाति पनसादि वानर बहुतही शीघ्र क्षीर समुद्रके निकट जायँ ॥२९॥ कारण कि,यह वानर

दो पहाडी बूटियोंको भलीभांति जानते हैं उन दोनों बूटियोंमें एकका नाम (संजीवनी) मृतकको जिवानेवाली और एकका नाम (विशल्यकरणी) अर्थात् घावके पीडाको दूर करनेवाली है ॥३०॥ जिसस्थानपर देवता लोगोंने समुद्रकोमथन किया था वहां पर चन्द्र और द्रोण नामक दोनों पर्वत हैं उन्हीं पर्वतपर यह दोनों बूटियें हैं ॥३१॥ इन दोनों बूटियोंको देवताओंने क्षीरसमुद्रके बीचमें स्थापित कर दिया है;इसकारण हे राजन्! और किसी वानरको वहाँ जानेकी आवश्यकता नहीं,यह;पवनके पुत्र वेगवान् हनुमानजी वहांपर जायँ॥३२॥सुषेण यह वचन कहही रहे थे कि,इतनेमें दामिनिमाला शोभित मेघ,और प्रबल आंधीउठकर समुद्रके जल और पर्वतोंको कम्पायमान करने लगी ॥३३॥ प्रबल पंखोंके पवनके लगनेसे लगे हुए जो बडे २ वृक्ष थे उनकी शाखायें टूट गई और वह वृक्ष सब महा समुद्रके जलमें उडकर जाय गिरे ॥३४॥ देखते २ समुद्रके निवासी बडे शरीरवाले सर्पगण भयंकराकारसे व्याकुल होने लगे। और जलजन्तुगण बडी

चंद्रश्चनामद्रोणश्चक्षीरोदेसागरोत्तमे ॥ अमृतंयत्रमथितंतत्रतेपरमौषधी ॥ ३१ ॥ तौतत्रविहितौदेवैःपर्वतौतौमहोदधौ ॥ अयंवायुसुतोराजन्हनूमांस्तत्रगच्छतु ॥ ३२ ॥ एतस्मिन्नंतरेवायुर्मेघाश्चापिसविद्युतः ॥ पर्यस्यसागरेतोयंकंपयन्निवपर्वतान् ॥ ३३ ॥ महतापक्षवातेनसर्वद्वीपमहाद्रुमाः ॥ निपेतुर्भग्नविटपाःसलिलेलवणांभसि ॥ ३४ ॥ अभवन्पन्नगास्त्रस्ताभोगिनस्तत्रवासिनः ॥शीघ्रंसर्वाणियादांसिजग्मुश्चलवणार्णवम् ॥ ३५ ॥ ततोमुहूर्ताद्गरुडंवैनतेयंयथाबलम्॥ वानरादद्दृशुःसर्वेज्वलंतमिवपावकम् ॥ ३६ ॥ तमागतमभिप्रेक्ष्यनागास्तेविप्रदुद्रुवुः ॥ यैस्तुतौपुरुषौबद्धौशरभूतैर्महाबलैः ॥३७॥ ततःसुपर्णःकाकुत्स्थौस्पृष्ट्वाप्रत्यभिनद्य च॥ विममर्शचपाणिभ्यांमुखेचंद्रसमप्रभे ॥ ३८ ॥ वैनतेयेनसंस्पृष्टास्तयोस्संरुरुहुर्व्रणा ॥ सुवर्णेचतनूस्निग्धेतयोराशुबभूवतुः ॥ ३९ ॥

शीघ्रतासे लवण समुद्रके जलमें प्रवेश कर गये ॥३५॥ उसके पीछे समस्त वानरगणोंने एक मुहूर्त्त भरकेबीचमें प्रदीप्त अग्निके समान प्रकाशित विनताके पुत्र गरुड़जीको आते हुए देखा ॥३६॥ उन गरुडजीके आतेही, जिन्होंने बाणरूपसे श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीको बांध रक्खा था, और जो अतिशय बलवान् थे; ऐसे वह समस्त नाग डरके मारे अतिशीघ्रतासे भाग गये ॥३७॥ उसके पीछे विनतानन्दन गरुड़जी रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीको अभिनन्दनकरकरके उनके अंगको अपने हाथोंसे स्पर्श करते हुए इन दोनों भ्राताओंके चन्द्रमाके समान द्युतिवाले मुखमंडल अपने हाथसे सुहराने लगे ॥३८॥ गरुडजीके कर स्पर्शसे इन दोनों भ्राताओंके शरीरमें जितने घाव थे वह सब भर गये और वह दोनोंजने पहलेहीके समान चिकना शरीर और प्रथमहीके समान शोभा

धारण करते हुए ॥३९॥ इनका तेज पराक्रम, शरीरका बल, महागुण, उत्साह, दर्शन शक्ति, बुद्धि और स्मरणशक्ति यह सब बातें पहलेसे दुगुनी होगईं॥४०॥
जिस समय महातेजस्वी गरुडजीने इन्द्रतुल्य भाइयोंको उठाकर अति हर्षसे अपने हृदयसे लगा लिया, तब श्रीरामचन्द्रजीने हर्षित अंतःकरण युक्त गरुड़जीसे
बोले ॥ ४१ ॥ कि, तुम्हारेही प्रसादसे हम इन्द्रजीतकी कीहुई घोर विपद्से शीघ्र छूटगये, और अब आपके किये उपायसे हमारे शरीरमें भी प्रथमहीके समान
बल आगया है ॥ ४२ ॥ अधिक क्या कहें पितामह अज और पिता दशरथजीको देख हमें जिस प्रकारका आनंद होता, आपका दर्शन करनेसे भी हमारे
हृदयने वैसीही प्रसन्नता प्राप्त की है ॥४३॥ आपने स्वर्गीय हार और दिव्य अनुलेपन धारण किया है, दिव्य अलंकारसे अलंकृत होकर आपने विमल वस्त्र

तेजोवीर्यंबलंचौजउत्साहश्चमहागुणाः ॥ प्रदर्शनंचबुद्धिश्चस्मृतिश्चद्विगुणातयोः ॥४०॥ तावुत्थाप्यमहातेजागरुडोवासवोपमौ ॥ उभौचसस्व जेहृष्टोरामश्चैनमुवाचह ॥ ४१ ॥ भवत्प्रसादाद्व्यसनंरावणिप्रभवंमहत् ॥ उपायेनव्यतिक्रांतौशीघ्रंचबलिनौकृतौ ॥४२॥ यथाताततंदशरथंयथा ऽजंचपितामहम् ॥ तथाभवंतमासाद्यहृदयंमेप्रसीदति ॥ ४३ ॥ कोभवान्रूपसम्पन्नोदिव्यस्रगनुलेपनः ॥ वसानोविरजेवस्त्रेदिव्याभरणभूषितः ॥ ४४ ॥ तमुवाचमहातेजावैनतेयोमहाबलः ॥ पतत्रिराजःप्रीतात्माहर्षपर्याकुलेक्षणम् ॥४५॥ अहंसखातेकाकुत्स्थप्रियःप्राणोबहिश्चरः ॥ गरुत्मानिहसंप्राप्तोयुवयोःसाह्यकारणात् ॥ ४६ ॥ असुरावामहावीर्यावानरावामहाबलाः ॥ सुराश्चापिसगंधर्वाःपुरस्कृत्यशतक्रतुम् ॥ ४७ ॥ नेमंमोक्षयितुंशक्ताःशरबंधंसुदारुणम्॥ मायाबलादिंद्रजितानिर्मितंक्रूरकमणा ॥४८॥ एतेनागाःकाद्रवेयास्तीक्ष्णदंष्ट्राविषोल्बणाः ॥ रक्षोमा याप्रभावेणशरभूतास्त्वदाश्रयाः ॥ ४९ ॥

युगल धारण किये हैं; इस कारण सत्यही बताइये कि, आप कौन हैं ? ॥ ४४ ॥ तब ऐसा सुनकर महातेजस्वी विनताके पुत्र महाबल पक्षिराज गरुड़जी आनंदसे
उत्फुल्लनेत्र हो प्रीतिसहित श्रीरामचन्द्रजीसे बोले ॥४५॥ कि, हे श्रीरामचन्द्रजी ! हम आपके प्राणके समान प्रिय बाहर घूमनेवाले सखा हैं, हमारा नाम गरुड़ है,
आपकी सहायता करनेके अर्थही यहां पर आये हैं ॥४६॥ कारणकी महापराक्रमकारी दैत्य महाबलवान् वानरगण और गन्धर्वादिकोंके सहित देवतालोग या
स्वयं इन्द्रभी ॥ ४७ ॥ मायाके बलसे क्रूरकर्मकारी मेघनादका रचा हुआ यह अतिदारुण नागरूपी बाणबन्धन नहीं छुडा सकते थे, इसी कारण आपको इस
संकटमें छुडानेके लिये हम आये ॥ ४८ ॥ तीक्ष्ण दन्तयुक्त महाविषधर यह कद्रूके पुत्र नागगण राक्षसी मायाके प्रभावसेही बाणरूप होकरआपका आश्रय

किये हुये थे ॥ ४९ ॥ हे धर्मज्ञ सत्यपराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी ! समरमें रिपुघाती इन भ्राता लक्ष्मणजीके सहित आप अपनेको बडाहा भाग्यवान् समझें कारण कि, भाग्यहीसे आप इस घोर बन्धनसे मुक्त हुएहैं ॥५०॥ आपकी यह अत्यन्त शोचनीय दशा सुनकर हम बडीही शीघ्रतासे इस स्थानमें आये हैं, हमारा यह आना केवल आपसे स्नेह करनेहीके कारण हुआ ॥ ५१ ॥ इस समय अनायासमें यह कार्य हुआ कि, हमने आपको इस महाघोर सर्परूपी बाणबन्धनसे छुटा दिया अब आगेको आप सदाहीसावधान रहाकरें॥५२॥ आपके समान शुद्धस्वभाववाले शूर लोग रणभूमिमें सदा सरलतासेही युद्ध किया करते हैं, परन्तु राक्षस गण सदाही संग्राममें छलसे युद्ध किया करते हैं ॥ ५३ ॥ इसकारण आप रणभूमिमें इन राक्षसलोगोंका किसीप्रकारसे विश्वास न कीजिये, कारण कि, यह लोग सदाहीसे क्रूरबुद्धिवाले होते हैं, अब आप एक इन्द्रजीतके दृष्टांतसे जान गये कि, राक्षसलोग कैसे कुटिल होते हैं ॥५४॥ महाबलवान् विनताके पुत्र गरुणजी

सभाग्यश्चासिधर्मज्ञरामसत्यपराक्रम॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्रासमरेरिपुघातिना ॥५०॥ इमंश्रुत्वातुविक्रांतस्त्वरमाणोहमागतः ॥ सहसैवावयोः स्नेहात्सखित्वमनुपालयन् ॥५१॥ मोक्षितौचमहाघोरादस्मात्सायकबंधनात् ॥ अप्रमादश्चकर्तव्योयुवाभ्यांनित्यमेवहि ॥५२॥ प्रकृत्याराक्षसाःसर्वेसंग्रामेकूटयोधिनः ॥ शूराणांशुद्धभावानांभवतामार्जवंबलम् ॥ ५३ ॥ तन्नविश्वसनीयंवोराक्षसानांरणाजिरे ॥ एतेनैवोपमानेननित्यंजिह्माहिराक्षसाः ॥ ५४ ॥ एवमुक्त्वातदारामंसुपर्णःसमहाबलः ॥ परिष्वज्यचसुस्निग्धमाप्रष्टुमुपचक्रमे ॥५५॥ सखेराघवधर्मज्ञरिपूणामपि वत्सल ॥ अभ्यनुज्ञातुमिच्छामिगमिष्यामियथासुखम् ॥ ५६ ॥ नचकौतूहलंकार्यंसखित्वंप्रतिराघव ॥ कृतकर्मारणेवीरसखित्वंप्रतिवेत्स्यसि ॥ ५७ ॥ बालवृद्धावशेषांतुलंकांकृत्वाशरोर्मिभिः ॥ रावणंतुरिपुंहत्वासीतांत्वमुपलप्स्यसे ॥ ५८ ॥ इत्येवमुक्त्वावचनंसुपर्णःशीघ्रविक्रमः ॥ रामंचनीरुजंकृत्वामध्येतेषांवनौकसाम् ॥ ५९ ॥

यह कहकर दशरथकुमारश्रीरामचन्द्रजीको भेंट स्नेह सहित यह वचन बोले ॥५५॥ हे मित्र श्रीरामचन्द्रजी ! हे धर्मज्ञ ! शत्रुके प्रतिभी आप बहुतही अनुग्रह किया करते हैं । इस समय हम आपकी आज्ञा लेकर अपने स्थानमें जानेकीइच्छा करते हैं ॥५६॥ हे श्रीरामचन्द्रजी! हमारे प्रति तुम्हारा सखा सम्बन्ध किस प्रकारसे हुआ इसके जाननेको आप कौतूहल प्रकाश न कीजिये, युद्धमें विजयको प्राप्त करके जिससमय आप अपने देशको लौटेंगे उसी समय यह सम्बन्ध आप ज्ञात हो जायगा ॥५७॥ हे वीर श्रीरामचन्द्रजी ! आपके बाणोंकी तरंगोंके वेगसे लकापुरी विध्वंस होकर केवल बालक और बूढे लोगोंके रहनेकी भूमि हो जायगी, हम निश्चय कहते हैं कि, आप बहुतही शीघ्रसंग्राममें रावणका संहार करके सीताजीको प्राप्तकर सकेंगे ॥५८॥ शीघ्र विक्रम वीर्यवान् सुपर्ण (गरुडजी)

श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी दोनोंको रोगरहित करते यह कहकर वानरोंके बीचमें बैठे श्रीरामचन्द्रजीकी ॥ ५९ ॥ प्रदक्षिणा कर और हृदयसे लगायकर वीर्यवान् पवनके समान वेग धारण कर गरुडजी आकाश मार्गको चले गये ॥ ६० ॥ उसके उपरान्त दोनों रघुवीरोंको रोगरहित देखकर वानरयूथपगण मनमें आनंद मनाय सिंहनाद कर अपनी पूँछको कम्पायमान करने लगे ॥६१॥ इसके पीछे भेरियोंका शब्द उठा * मृदंगोंका नाद होने लगा, इतने शंख बजे कि, उनकी ध्वनि आकाशमें गुंजारती रही और सब वानर लोग हर्षित होकर प्रथमहीके समान क्रीडा करने लगे ॥६२॥ व और भी शत सहस्र पर्वतोंसे युद्ध

प्रदक्षिणंततःकृत्वापरिष्वज्यचवीर्यवान् ॥ जगामाकाशमाविश्यसुपर्णःपवनोयथा ॥ ६० ॥ नीरुजौराघवौदृष्ट्वाततोवानरयूथपाः ॥ सिंहनादं तदानेदुर्लांगूलंदुधुवुश्चते ॥६१॥ ततोभेरीःसमाजघ्नुमृदंगांश्चाप्यवादयन् ॥ दध्मुःशंखान्संप्रहृष्टाःक्ष्वेलंत्यपियथापुरम् ॥६२॥ अपरेस्फोटच विक्रांतावानरानगयोधिनः ॥ द्रुमानुत्पाटयविविधांस्तस्थुःशतसहस्रशः ॥ ६३ ॥ विसृजंतोमहानादांस्त्रासयंतोनिशाचरान् ॥ लंकाद्वाराण्युपाजग्मुर्युद्धकामाःप्लवंगमा ॥ ६४ ॥ तेषांसुभीमस्तुमुलोनिनादोबभूवशाखामृगयूथपानाम् ॥ क्षयेनिदाघस्ययथाघनानांनादःसुभीमोनदतां निशीथे ॥६५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे पंचाशः सर्गः ॥५०॥ तेषांतुतुमुलंशब्दंवानराणांमहौजसाम् ॥ नदंतांराक्षसैःसार्धंतदाशुश्रावरावणः ॥१॥ स्निग्धगंभीरनिर्घोषंश्रुत्वातंनिनदंभृशम् ॥ सचिवानांततस्तेषांमध्येवचनमब्रवीत् ॥२॥

करनेवाले विकरालवानरगण विविधभाँतिके वृक्षोंको उखाडते फाँदते कूदते दलके दल खडे हो॥६३॥राक्षसोंको त्रासित करते हुए बडाभारी नाद करने लगे और वह सब वानर युद्धकी कामनासे आगे बढकर लंकापुरीके द्वारपर जाय पहुँचे ॥६४॥ ग्रीष्मकालके अंत समय रात्रिके समय शब्दायमान घनघटा समूहके भयंकर गर्जनके समान उन वानरयूथनाथोंका भयंकर कठोर सिंहनाद श्रवणगोचर होने लगा ॥६५॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा०वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां पंचाशः सर्गः ॥ ५० ॥ इस ओर विभीषण इत्यादि राक्षसगणोंके सहित शब्दायमान उन महातेजस्वी वानरवृन्दोंका तुमुल कठोर सिंहनाद राक्षसोंके स्वामी रावणने सुना ॥ १ ॥ यह रावण स्पष्ट गंभीर और कठोर सिंहनाद बार २ श्रवण करके अपने मंत्रियोंसे जो कि वहां बैठे थे, यह कहने लगा ॥२॥

* इससे विदित होता है कि, रामचन्द्रकी सेनामें बाजे भी थे ।

जब कि, हर्षितचित्त हुए उन वानरोंका यह घोरसिंहनाद सुनाई आता है जब कि,बादलके समान वह वानर गंभीर गर्जन कर रहे हैं॥ ३ ॥ तब इसमें कोई भी सन्देह नहीं है कि,उनको कोई बडी प्रसन्नता प्राप्त हुई है यह देखो !उनके बडे भारी शब्दसे क्षार समुद्रभी खल बलाय रहा है ॥ ४ ॥ वह दोनों भाई राम और लक्ष्मण तीक्ष्ण बाणोंसे बंध गये थे, परन्तु इस समय उन वानरवृन्दोंका यह बडा भारी शब्द उठानेसे हमको अत्यन्तही शंका होती है ॥ ५ ॥ राक्षसोंका स्वामी रावण निज मंत्रियोंसे ऐसा कह अपने निकट बैठे हुए राक्षसोंसे बोला ॥ ६ ॥ कि, इन वनवासी वानर लोगोंका ऐसे शोकके समय एका एकी आनंदित होनेका कारण तुम लोग जानकर शीघ्र आओ ॥ ७ ॥ राक्षसगण इस प्रकारसे रावणकी आज्ञा पाय सावधानहो एक धवरहरेपर जो कि, अति ऊंचा था चढे,और उन्होंने देखा कि,महात्मा सुग्रीवजी उस वानरवाहिनीकी रक्षा करते हैं ॥ ८ ॥ श्रीरामचन्द्रजीव लक्ष्मणजी वह दोनों भ्राताभी नागफाँससे

यथाऽसौसंप्रहृष्टानांवानराणामुपस्थितः॥बहूनांसुमहान्नादोमेघानामिवगर्जताम् ॥३॥ सुव्यक्तंमहतीप्रीतिरेतेषांनात्रसंशयः ॥ तथाहिविपुलैर्नादैश्चुक्षुभेलवणार्णवः ॥ ४ ॥ तौतुबद्धौशरैस्तीक्ष्णैर्भ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ अयंचसुमहान्नादःशंकांजनयतीवमे ॥५॥ एवंचवचनंचोक्त्वामंत्रिणोराक्षसेश्वरः ॥ उवाचनैर्ऋतांस्तत्रसमीपपरिवर्तिनः ॥ ६ ॥ ज्ञायतांतूर्णमेतेषांसर्वेषांचवनौकसाम् ॥ शोककालेसमुत्पन्नेहर्षकारणमुत्थितम् ॥७॥ तथोक्तास्तेसुसंभ्रांताःप्राकारमधिरुह्यच ॥ ददृशुःपालितांसेनांसुग्रीवेणमहात्मना॥ ८ ॥तौचमुक्तौसुघोरेणशरबंधेनराघवौ ॥ समुत्थितौमहाभागौविषेदुःसर्वराक्षसाः ॥ ९ ॥ संत्रस्तहृदयाःसर्वेप्राकारादवरुह्यते ॥ विवर्णाराराक्षसाघोराराक्षसेंद्रमुपस्थिताः ॥ १० ॥ तदप्रियंदीनमुखारावणस्यचराक्षसाः ॥ कृत्स्नंनिवेदयामासुर्यथावद्वाक्यकोविदाः ॥ ११ ॥ यौताविंद्रजितायुद्धभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ निबद्धौशरबंधेननिष्प्रकंपभुजौकृतौ ॥ १२ ॥ विमुक्तौशरबंधेनदृश्येतेतौरणाजिरे ॥ पाशानिवगजौछित्त्वागजेंद्रसमविक्रमौ ॥ १३ ॥

छुटकर उठ बैठे हैं,यह देखकर वे राक्षस अत्यन्तही विषादित हुए ॥ ९ ॥ उस समय वे राक्षस त्रासित मनसे कोटकी अतिऊँची भीतसे नीचे उतरने लगे,उनके मुखकी कांति अतिमलीन होगई और यह सब अत्यन्त दीनभावसे रावणके निकट आये ॥ १० ॥ उन दीनमुख वचन बोलनेमें चतुर राक्षसोंने रावणसे अप्रिय वचन यथार्थ २ निवेदन किये ॥ ११ ॥ कि, जो राम लक्ष्मण संग्रामभूमिमें इन्द्रजीतके द्वारा बाणोंसे विंधगये थे और उसके बाद जिनकी दोनों भुजायें कुछ भी हिलडुल नहीं सकती थीं ॥ १२ ॥ इस समय हमने देखा कि, गजेन्द्र विक्रम कारी वह दोनों भ्राता दो गजोंके समान नागफासको तोडकर बाणबंधनसे छूट रणभूमिमें विराजमान होरहे हैं ॥ १३ ॥

महाबलवान् राक्षसोंका स्वामी राक्षसोंके मुखसे यह समाचार सुनकर चिन्ताके वशमें हुआ, और शोचके मारे उस समय उसका मुखमंडलभी प्रभाहीन होगया॥ १४॥ तब रावण कुछ एक रुष्ट होकर कहने लगा कि, मेघनादने संग्रामस्थलमें भलीभाँति मानमर्दन कर अति घोर वर प्राप्त किये हुए विषधर सर्पोंके समान सफल और सूर्यवत्प्रकाशित बाणोंसे जिनको बंधन किया था ॥ १५॥ जब कि, वह हमारे शत्रु ऐसे बाण बंधनसेभी छुटगये तब हमको ऐसा नहीं जान पडँता कि, हम इस राक्षसोंकी सेनासे वियजको प्राप्त करेंगे ॥ १६॥ आश्चर्य है कि, जिनसब अस्त्रोंने संग्राम भूमिमें वारंवार शत्रुगणोंके प्राण हरण कियेथे आज वही अग्निके समान तेजस्वी अस्त्र हमारे कुभाग्यहीसे निष्फल होगये ॥ १७ ॥ यह कहकर रावण अत्यन्त क्रोधमें भरकर सर्पके समान लंबे २ श्वास लेने लगा, और कुछ देर

तच्छ्रुत्वावचनंतेषांराक्षसेंद्रोमहाबलः ॥ चिंतारोषसमाक्रांतोविवर्णवदनोऽभवत् ॥ १४ ॥ घोरैर्दत्तवरैर्बद्धौशरैराशीविषोपमैः ॥ अमोघैःसूर्यसंकाशैःप्रमथ्येन्द्रजितायुधि ॥ १५ ॥ तदस्त्रबंधमासाद्ययदिमुक्तौरिपूमम ॥ संशयस्थमिदंसर्वमनुपश्याम्यहंबलम् ॥ १६ ॥ निष्फलाःखलुसंवृत्ताःशराःपावकतेजसः ॥ आदत्तंयैस्तुसंग्रामरिपूणांजीवितंमम ॥१७॥ एवमुक्त्वातुसंक्रुद्धोनिःश्वसन्नुरगोयथा ॥ अब्रवीद्रक्षसांमध्येधूम्राक्षंनामराक्षसम् ॥ १८ ॥ बलेनमहतायुक्तोराक्षसैर्भीमविक्रमैः ॥ त्वंवधायाशुनिर्याहिरामस्यसहवानरैः ॥ १९ ॥ एवमुक्तस्तुधूम्राक्षोराक्षसेंद्रेणधीमता ॥ परिक्रम्यततःशीघ्रंनिर्जगामनृपालयात् ॥२०॥ अभिनिष्क्रम्यतद्द्वारंबलाध्यक्षमुवाचह ॥ त्वरयस्वबलंशीघ्रंकिंचिरेणयुयुत्सतः ॥ २१ ॥ धूम्राक्षवचनंश्रुत्वाबलाध्यक्षोबलानुगः ॥बलमुद्योजयामासरावणस्याज्ञयाभृशम् ॥ २२ ॥ तेबद्धघंटाबलिनोघोररूपानिशाचराः॥ विनर्दमानाःसंहृष्टाधूम्राक्षंपर्यवारयन्॥ २३ ॥

पीछे रावणराक्षसोंके बीचमें बैठे हुए धूम्राक्षसे कहता हुआ॥१८॥ कि, हे भयंकर विक्रमकारी! वानरगणोंके और रामचन्द्रका संहार करनेके लिये तुम बडी भारी सेनाको संग लेकर शीघ्र युद्ध करनेको जाओ ॥ १९ ॥ राक्षस धूम्राक्ष, बुद्धिमान् राक्षसोंके स्वामी रावणकी आज्ञा पाय उसकी प्रदक्षिणा करता हुआ अति शीघ्र राजभवनसे बाहर निकला ॥२०॥ राक्षस धूम्राक्षने राजद्वारके बाहर आय करनेसेनाध्यक्षसे कहा कि, हमयुद्धमें जाना चाहतेहैं इसकारण कुछभी विलंब न लगायकर झटपट सेनाको सजाओ ॥ २१ ॥ धूम्राक्षके वचन सुन सेनाध्यक्षने रावणकी आज्ञानुसार समस्त सेनाको बहुतही शीघ्र सजाया ॥ २२ ॥ घोररूपी राक्षसगण सिंहनाद करते हुए हर्षित मनसे धूम्राक्षके चारों ओर खडे होगये वह समस्त राक्षस अतिशय बलवान् थे उनकी कमरमें घंटे लगे हुए बजरहे थे ॥२३॥

विविधभाँतिके अस्त्र शस्त्र ग्रहण कर, शूल, मुद्गर गदा, पटा, दंड मूसल आदि धारण किये ॥२४॥ बड़े २ मुद्गर, धनवासी भाले, फांसी फरसे आदि अस्त्रशस्त्र लिये समस्त राक्षसगण मेघके समान गर्जन करते हुए चले॥२५॥ उन राक्षसोंमें कोई२कवच धारण करके ध्वजा पताकासे शोभायमान विचित्र चित्रित रथोंमें सवार हुए और कोई २ सुवर्णजालमंडित विविधभाँतिके मुखवाले गधोंपर चढे॥२६॥ और कोई२ राक्षस अतिशीघ्रतासे चलनेवाले घोडेपर चढ चले और कोई२ मदान्ध हाथियोंके पीठपर सवार हुए, इसप्रकारसे वह राक्षसव्याघ्र लोग अजेय व्याघ्रके समान गमन करनेलगे ॥२७॥ महावीर तीक्ष्ण शब्दवाला धूम्राक्ष कनकभूषित भेडिया सिंह और व्याघ्रमुखवाले गधे जुते हुए रथमें बैठकर रणमें जाने लगा ॥२८॥ इसप्रकार महावीर धूम्राक्ष बडीभारी राक्षसोंकी सेनाके साथ हँसते हुए सुखसे

विविधायुधहस्ताश्चशूलमुद्गरपाणयः ॥ गदाभिःपट्टिशैर्दंडैरायसैर्मुसलैरपि ॥२४॥ परिघैर्भिंदिपालैश्चभल्लैःपाशैःपरश्वधैः॥निर्ययूराक्षसाघोरा नदंतोजलदायथा ॥ २५ ॥ रथैःकवचिनस्त्वन्येध्वजैश्चसमलंकृतैः ॥ सुवर्णजालविहितैःखरैश्चविविधाननैः॥ २६ ॥ हयैःपरमशीघ्रैश्चगजैश्च वमदोत्कटैः ॥ निर्ययुर्नैर्ऋतव्याघ्राव्याघ्राइवदुरासदाः ॥ २७ ॥ मृगसिंहमुखैर्युक्तंखरैःकनकभूषितैः ॥ आरुरोहरथंदिव्यंधूम्राक्षःखरनिःस्वनः ॥ २८ ॥ सनिर्यातोमहावीर्योधूम्राक्षोराक्षसैर्वृतः ॥ हसन्वैपश्चिमद्वाराद्धनूमान्यत्रतिष्ठति ॥ २९ ॥ रथप्रवरमास्थायखरयुक्तंखरस्वनम् ॥ प्रयांतंतुमहाघोरंराक्षसंभीमदर्शनम् ॥ ३० ॥ अंतरिक्षगताःक्रूराःशकुनाःप्रत्यषेधयन् ॥ रथशीर्षेमहाभीमोगृध्रश्चनिपपातह ॥३१॥ ध्वजाग्रेग्र थिताश्चैवनिपेतुःकुणपाशनाः ॥ रुधिरार्द्रोमहाञ्श्वेतःकबंधःपतितोभुवि ॥ ३२ ॥ विस्वरंचोत्सृजन्नादान्धूम्राक्षस्यनिपातितः ॥ ववर्षरुधिरंदे वःसंचचालचमेदिनी ॥ ३३ ॥ प्रतिलोमंववौवायुर्निर्घातसमनिःस्वनः ॥ तिमिरौघावृतास्तत्रदिशश्चनचकाशिरे ॥ ३४ ॥

जहां हनुमानजी बैठ रहे थे लंकाके उस पश्चिम द्वारपर आया ॥२९॥ कठोर शब्द करनेवाले गधेजुते श्रेष्ठ रथपर सवार हो महाघोर भयंकर विक्रमकारी राक्षसको जाता हुआ देख॥३०॥आकाशमें प्राप्त हुएक्रूर शकुन विविध अमंगलकारी चिह्नोंसे उस राक्षसको निवारण करते हुए कि, पहले तो धूम्राक्षके रथकी छत्रीपर एक बडा भयंकर गिद्ध आकाशसे गिरा ॥३१॥ मांसके खानेवाले पक्षीगण गुँधी हुई मालाके समान लंगार (श्रेणी) से उसके रथकी ध्वजापर गिरने लगे और रुधिरमें सना हुआ अत्यन्त श्वेत कबन्ध धूम्राक्षके निकट पृथ्वीपर गिरा॥३२॥अत्यन्त भयंकरशब्द करता हुआ कबंध धूम्राक्षके सम्मुख गिरा। बादलोंसे रुधिरकी वर्षा होने लगी, और पृथ्वी कंपायमान हुई ॥३३॥ और वज्रके समान शब्द करता हुआ प्रतिकूल पवन चलने लगा, घोर अंधकारसे ढक जानेके कारण

दशों दिशा अप्रकाशित हो गईं ॥३४॥ राक्षस धूम्राक्ष राक्षस लोगोंके यह अमंगल भयजनक घोर उत्पात देखकर हृदयमें अत्यन्त भय करता हुआ, और उसके साथ चलनेवाली राक्षसोंकी सेना भी यह अचानक अमंगलशकुन देखकर मूर्च्छित हो गई ॥३५॥ उसके पीछे रण करनेकी इच्छा किये महाबलवान् भयंकर रूप राक्षस धूम्राक्ष असंख्य निशाचर गणोंके सहित, लंकापुरीसे बाहर आय श्रीरामचन्द्रजीकी बाहुसे रक्षित प्रलयके समुद्रके समान उन वानरोंकी सेनाको देखता हुआ कि, जिसका कुछ ओर छोर न था ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकपंचाशः सर्गः ॥५१॥ युद्धकी अभिलाषा किये वानरगण भयंकरविक्रमकारी राक्षस धूम्राक्षको युद्ध करनेके लिये आये हुए देखकर हर्षित मनसे सिंहनाद करने लगे ॥ १ ॥ उसके पीछे धीरे २ उन वानर

सतूत्पातांस्ततोदृष्ट्वाराक्षसानांभयावहान् ॥ प्रादुर्भूतान्सघोरांश्चधूम्राक्षोव्यथितोभवत् ॥ मुमुहूराक्षसाःसर्वेधूम्राक्षस्यपुरःसराः ॥ ३५ ॥ ततः सुभीमोबहुभिर्निशाचरैर्वृतोभिनिष्क्रम्यरणोत्सुकोबली॥ ददर्शतांराघवबाहुपालितांमहौघकल्पांबहुवानरींचमूम् ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे एकपंचाशः सर्गः ॥ ५१ ॥ धूम्राक्षंप्रेक्ष्यनिर्यांतंराक्षसंभीमविक्रमम् ॥ विनेदुर्वानराःसर्वेप्रहृष्टायुद्धकांक्षिणः ॥ १ ॥ तेषांसुतुमुलंयुद्धंसंजज्ञेकपिरक्षसाम् ॥ अन्योन्यंपादपैर्घोरैर्निघ्नतांशूलमुद्गरैः ॥ २ ॥ राक्षसैर्वानराघोराविनिकृत्ताः समंततः ॥वानरैराक्षसाश्चापिद्रुमैर्भूमिसमीकृताः ॥३ ॥राक्षसास्त्वभिसंक्रुद्धावानरान्निशितैःशरैः॥ विव्यधुर्घोरसंकाशैःकंकपत्रैरजिह्मगैः ॥४॥ तेगदाभिश्चभीमाभिः पट्टिशैःकूटमुद्गरैः ॥ घोरैश्चपरिघैश्चित्रैस्त्रिशूलैश्चापिसंश्रितैः ॥ ५ ॥ विदार्यमाणारक्षोभिर्वानरास्तेमहाबलाः ॥ अमर्षजनितोद्धर्षाश्चक्रुःकर्माण्यभीतवत् ॥ ६ ॥ शरनिर्भिन्नगात्रास्तेशूलनिर्भिन्नदेहिनः ॥ जगृहुस्तेद्रुमांस्तत्रशिलाश्चहरियूथपाः ॥ ७ ॥

और राक्षसोंका घोर कठोर युद्धप्रारंभ हुआ। उस समय वह बडे २ वृक्ष, शूल, मुद्गर चलाय २ कर परस्पर परस्परके ऊपर प्रहार करने लगे ॥ २ ॥ निशाचरोंने वानर लोगोंको सब भाँतिसे घेर लिया, और वानरगण भी वृक्षोंको चलाय २ राक्षसोंको पृथ्वीपर शयन कराने लगे ॥ ३ ॥ राक्षस भी क्रोधमें भरकर तीखे बाण समूह और सीधे चलनेवाले घोररूप कंकपत्र युक्त बाणोंसे वानरोंका नाश करने लगे ॥४॥ उस समय महाबलवान् वानरगण भयंकर गदा, शूल, पटा, मुद्गर, घोर परिघ और चित्र विचित्र शूलोंके द्वारा॥५॥राक्षसोंसे विदारित हो क्रोधमें भरकर और उत्साहसे भरपूर हो भय रहितके समान युद्धके कर्म करने लगे॥६॥ वानरोंके शरीर बाणोंसे घायल होने लगे; उनकी देहमें स्थान२ पर घाव हो गये, वह वानरयूथप राक्षसोंके निकटसे अपनी पराजय सहन न

करके बडे २ वृक्षोंको ग्रहणकर नकी ओर दौडे ॥७॥ भयंकर वेगवान् वानरलोग सिंहनादकरके वीर राक्षसोंका संहार करने लगे; चोट चलानेके समय सबही एक दूसरेको अपना २ नाम बताने लगे ॥८॥ उसकालमें अनेक शाखाओंसे युक्त वृक्ष और विविध भांतिकी शिलाओंके चलाये जानेसे वह वानर और राक्षसोंका घोर युद्ध अद्भुत जान पडने लगा ॥९॥ उससमय कितने ही रुधिर पान करनेवाले निशाचरगण जीतेजानेसे प्रसन्न वानरोंसे मार खाय रुधिर उगलने लगे ॥ १० ॥ इसी प्रकारसे किसी २ की देह छिन्न हो गई,कोई २ वृक्षोंकी चोटसे मर गये,कोई २ शिलाओंकी चोटसे पिसकर चूर्णके समान होगये,और कोई २ तीक्ष्ण दाँतोंकेही प्रहारसे चीर फाड कर काटे गये ॥११॥ कोई २ ध्वजाओंसे मल डाले गये,कोई खड्गोंसे मारे गये और छूटे हुए रथोंसे भी विध्वं

तेभीमवेगाहरयोनर्दमानास्ततस्ततः ॥ ममंथूराक्षसान्वीरान्नामानिचबभाषिरे ॥ ८ ॥ तद्बभूवाद्भुतंघोरंयुद्धंवानररक्षसाम् ॥ शिलाभिर्विविधाभिश्चबहुशाखैश्चपादपैः ॥ ९ ॥ राक्षसामथिताःकेचिद्वानरैर्जितकाशिभिः ॥ प्रवेमूरुधिरंकेचिन्मुखैरुधिरभोजनाः ॥ १० ॥ पार्श्वेषुदारिताःकेचित्केचिद्राशीकृताद्रुमैः ॥ शिलाभिश्चूर्णिताःकेचित्केचिद्दंतैर्विदारिताः ॥ ११ ॥ ध्वजैर्विमथितैर्भग्नैःखड्गैश्चविनिपातितैः ॥ रथैर्विध्वंसिताःकेचिद्व्यथितारजनीचराः ॥ १२ ॥ गजेंद्रैःपर्वताकारैःपर्वताग्रैर्वनौकसाम् ॥ मथितैर्वाजिभिःकीर्णसारोहैर्वसुधातलम् ॥ १३ ॥ वानरैर्भीमविक्रांतैराप्लुत्योत्प्लुत्यवेगितैः ॥ राक्षसाःकरजैस्तीक्ष्णैर्मुखेषुविनिदारिताः ॥ १४ ॥ विषण्णवदनाभूयोविप्रकीर्णशिरोरुहाः ॥ मूढाःशोणितगंधेननिपेतुर्धरणीतले ॥ १५ ॥ अन्येतुपरमक्रुद्धाराक्षसाभीमविक्रमाः ॥ तलैरेवाभिधावंतिवज्रस्पर्शसमैर्हरीन् ॥ १६ ॥ वानरैःपातयंतस्तेवेगितावेगवत्तरैः ॥ मुष्टिभिश्चरणैर्दंतैःपादपैश्चावपोथिताः ॥ १७ ॥ सैन्यंतुविद्रुतंदृष्ट्वाधूम्राक्षोराक्षसर्षभः ॥ रोषेणकदनंचक्रेवानराणांयुयुत्सताम् ॥ १८ ॥

सित होकर कितने ही राक्षस अत्यन्त व्यथित हुए॥१२॥पर्वतोंके शिखरके समान पर्वताकार हाथी वानर गण और सवारोंके सहित मरे हुए घोडोंसे वह समरभूमि पूर्ण हो गई ॥१३॥ भयंकर विक्रमकारी वेगवान् वानरगण वारंवार छलांग मारते हुए अपने नखोंसे निशाचरोंके मुखोंको चीरने फाडने लगे ॥१४॥ तब राक्षस इस अवस्थाको पाय अत्यन्त विषादित हुए,उनके बाल खुल गये और वह बराबर बहते हुए रुधिर गन्धसे मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिरने लगे ॥१५॥ इसी समयमें बहुतसारे राक्षसगण क्रोधसेप्रदीप्त हो वेगवान् वानरोंको वज्रके समान लात मारेनकेलिये उनकी ओर दौडे॥१६॥ परन्तु वेगवान् वानरगण घूसा,लात;दांत और वृक्षोंसे उनको इस प्रकारकी मार देने लगे कि;वह राक्षस उनके सामने स्थिर न रहकर भाग निकले॥१७॥उसके पीछे राक्षस श्रेष्ठ धूम्राक्ष अपनी सेनाको चलाय

मान देखकर क्रोधमें भर युद्ध करनेवाले वानरोंके ऊपर प्रहार करने लगा ॥ १८ ॥ तब कोई २ वानर तो बाण लगनेसे मर्दित हो गये; और उनके शरीरसे रुधिर बहने लगा; और अनेक वानर मुद्गरोंसे घायल होकर पृथ्वीपर गिरते हुए ॥१९॥ कोई २ वानर परिघसे और कोई२ पटेसे कुचरडाले गये, और कोई धन वासी लगनेके कारण घायल होनेसे विह्वल हो जीवगँवाय संग्राममूमिमें गिरपडे॥२०॥ और बहुतसे वानर क्रोधित राक्षसोंकरके रणभूमिमें मारेजायकर रुधिर बहती हुई देहसे पृथ्वीपर गिरपडे; और कोई२ लोहू लुहान होकर भागने लगे॥२१॥इस दारुण संग्राममें राक्षसगण क्रोधकेमारे यमराजके समान मूर्ति धारणकर वानरोंके हृदय चीरने फाडने लगे जिससे कोई२ वानर एक ओरको गिर पडे, और कोई २ त्रिशूलसे घायल हुए ओर बहुतसे अस्त्रके प्रभावसे भाग निकले ॥२२॥ इस प्रकारसे वानर और राक्षसोंका भयंकर युद्ध होने लगा, दोनों ओरसे अनेक अस्त्र शस्त्र चले. और शिलासमेत वृक्षोंकी वृष्टि होने लगी ॥२३॥

प्रासैःप्रमथिताःकेचिद्वानराःशोणितस्रवाः ॥ मुद्गरैराहताःकेचित्पतिताधरणीतले॥ १९ ॥ परिघैर्मथिताःकेचिद्भिंदिपालैश्चदारिताः ॥ पट्टिशैर्मथिताःकेचिद्विह्वलंतोगतासवः ॥ २० ॥ केचिद्विनिहताभूमौरुधिरार्द्रावनोकसः ॥ केचिद्विद्राविताःनष्टाःसंक्रुद्धैराक्षसैर्युधि ॥ २१ ॥ विभिन्नहृदयाःकेचिदेकपार्श्वेनशायिताः ॥ विदारितास्त्रिशूलैश्चकेचिदांत्रैर्विनिःसृताः ॥२२॥ तत्सुभीमंमहद्युद्धंहरिराक्षससंकुलम् ॥ प्रबभौशस्त्रबहुलंशिलापादपसंकुलम् ॥ २३ ॥ धनुर्ज्यातंत्रिमधुरंहिक्कातालसमन्वितम् ॥ मंदस्तनितगीतंतद्युद्धंगांधर्वमाबभौ ॥ २४ ॥ धूम्राक्षस्तुधनुष्पाणिर्वानराब्रणमूर्धनि ॥ हसन्विद्रावयामासदिशस्तान्छरवृष्टिभिः॥ २५ ॥ धूम्राक्षेणार्दितंसैन्यंव्यथितंप्रेक्ष्यमारुतिः ॥ अभ्यवर्ततसंक्रुद्धः प्रगृह्यविपुलांशिलाम् ॥ २६ ॥ क्रोधाद्द्विगुणताम्राक्षःपितुस्तुल्यपराक्रमः ॥ शिलांतांपातयामासधूम्राक्षस्यरथंप्रति ॥ २७ ॥

धीरे २ रणभूमि गीत विद्याका रूप धारण करती हुई, राक्षसोंके धनुषोंके रोदोंका शब्द वीणाके तारका कार्य करनेलगा और वीरोंका गिरनेके समय जो हिचकियें आनें लगीं वही ताल गिनीगई, और हाथियोंकी गर्जना ही उस समय गीतके समान जान पडता था; इस प्रकार यह द्वन्द्वयुद्ध गंधर्वविद्याकी तुल्य शोभाको प्राप्त हुआ ॥ २४ ॥ राक्षस धूम्राक्ष इसप्रकारसे संग्राम भूमिमें धनुष धारण बाण वर्षाय सर्व दिशा छाय हँसते २ सब वानरोंको मार भगा देताहुआ ॥२५॥ धूम्राक्षके हाथसे वानरोंकी सेनाको अत्यन्त पीडित देखकर हनुमानूजी क्रोधके मारे घुमाते बडी भारी शिला ग्रहण करके उससे युद्ध करनेके लिये आगे बढे ॥२६॥ पिता पवनके तुल्य पराक्रमशाली हनुमानूजी क्रोधके मारे अरुणनयन हो उस बडी भारी शिलाको धूम्राक्षके रथपर अति जोरसे मारते हुए ॥२७॥

राक्षस सेनापति धूम्राक्ष महावेगसे इस शिलाको अपने ऊपर आती देख बडी शीघ्रताके साथ रथसे छलांगमार गदा ग्रहण कर पृथ्वीपर खडा होगया ॥२८॥ हनुमान्‌जीकी चलाई गदाके प्रहारसे केवल धूम्राक्षका रथही चूर्ण नहीं हुआ; बरन् चक्र, कूबर, ध्वजा और धनुषबाणतक नष्ट करके वह शिला पृथ्वीमें गिरी ॥२९॥ उसके पीछे हनुमान्‌जी धूम्राक्षके रथको छोडकर शाखा और पत्तोंके सहित वृक्षोंसे राक्षसोंका विध्वंस करने लगे और उनको भगाने लगे ॥३०॥ तब वृक्षोंके द्वारा पीडित होनेसे राक्षसोंके शिर फूटगये, और इसकारण रुधिरकी धारा निकलनेसे वह पृथ्वीपर गिरने लगे, कुछेक राक्षस मारडाले गये और कितनोंने अपने प्राणोंकी आशा छोड दी ॥३१॥ कुमार हनुमान्‌जी इस प्रकारसे राक्षसोंकी सेनाको तितर बितर कर भगाय एक पर्वतका शृंग ग्रहण करके धूम्राक्षके सामने दौडे ॥ ३२ ॥ वीर्यवान् राक्षस धूम्राक्ष भी हनुमान्‌जीको अपनी ओर आता हुआ देख सिंहनादकर एक गदा उठाय उनके सन्मुख हुआ ॥ ३३ ॥

आपतंतींशिलांदृष्ट्वागदामुद्यम्यसंभ्रमाम् ॥ रथादाप्लुत्यवेगेनवसुधायांव्यतिष्ठत ॥ २८ ॥ सप्रमथ्यरथंतस्यनिपपातशिलाभुवि॥ सचक्रकूबरमुखंसध्वजंसशरासनम् ॥ २९ ॥ सत्यक्त्वातुरथंतस्यहनूमान्मारुतात्मजः ॥ रक्षसांकदनंचक्रेसस्कंधविटपैर्द्रुमैः ॥ ३० ॥ विभिन्नशिरसोभूत्वारक्षसारुधिरोक्षिताः ॥ द्रुमैःप्रमथिताश्चान्येनिपेतुर्धरणीतले ॥ ३१ ॥ विद्राव्यराक्षसंसैन्यंहनूमान्मारुतात्मजः ॥ गिरेःशिखरमादायाधूम्राक्षमभिदुद्रुवे ॥ ३२ ॥ तमापतंतंधूम्राक्षोगदामुद्यम्यवीर्यवान् ॥ विनर्दमानःसहसाहनूमंतमभिद्रवत् ॥३३॥ तस्यक्रुद्धस्यरोषेणगदांतांबहुकंटकाम् ॥पातयामासधूम्राक्षोमस्तकेऽथहनूमतः ॥३४॥ ताडितःसतयातत्रगदयाभीमवेगया ॥ सकपिर्मारुतबलस्तंप्रहारमचिंतयन्॥३५॥ धूम्राक्षस्यशिरोमध्येगिरिशृंगमपातयत् ॥ सविस्फारितसर्वांगोगिरिशृंगेणताडितः ॥ ३६ ॥ पपातसहसाभूमौविकीर्णइवपर्वतः ॥ धूम्राक्षंनिहतंदृष्ट्वाहतशेषानिशाचराः॥ त्रस्ताःप्रविविशुर्लंकांवध्यमानाःप्लवंगमैः ॥ ३७ ॥

उसके पीछे धूम्राक्षने क्रोधमें भरकर वह अपनी बहुत कांटोंसे युक्त गदा क्रोधित हनुमान्‌जीके शिरपर मारी ॥३४॥ परंतु पवनके समान बलवान् हनुमान्‌जी उस भयंकर वेगवाली गदाका प्रहार अपने शिरमें लगनेसेभी उस प्रहारको कुछभी नहीं समझते हुए कि जाने कहां लगा ॥३५॥ उसके पीछे अंजनीहृदयनंदन पवनकुमार हनुमान्‌जीने अपनी वह पहली ग्रहण कीहुई बडी भारी शिला धूम्राक्षके ऊपर चलाई, कि वह जिस गिरिशृंगके प्रहारसे उस राक्षसके अंग फटकर फैलगये ॥३६॥ पर्वत जिसप्रकार फटकर गिरजाता है, वैसेही धूम्राक्षके अंग फटजाके कारण वह पृथ्वीपर गिरपडा और उसके प्राण निकल गये और मरनेसे बचे बचायेराक्षसगण सेनापति धूम्राक्षको मराहुआ देखकर अत्यन्तही त्रासित हुए और वानरगणोंकी मारखाय मरनेके निकट पहुँच भयके मारे शीघ्रही लंकापुरी

को भाग गये ॥३७॥ महाबलवान् पवनकुमार हनुमानजी इसप्रकारसे शत्रुओंका संहार करते हुए रणभूमिमें रुधिरकी नदी बहाय शत्रुके मारनेके श्रमसे अत्यन्त थकित होनें परभी वानरगणों करके पूजितहो अत्यन्त प्रसन्नता प्राप्त करते हुए ॥३८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां द्विपंचाशः सर्गः ॥५२॥ राक्षसोंका स्वामी रावण धूम्राक्षका संग्राममें मरना सुन अत्यन्त क्रोध युक्त हो सर्पके समान लम्बे२ श्वास त्याग करने लगा॥१॥ उसके पीछे क्रोधसे अधीर हो लंबे२ और गरम२ श्वास छोडता हुआ रावणक्रूरस्वभावी महाबलवान्वज्र दंष्ट्रनामक राक्षससे बोला ॥२॥ हे वीर ! तुम राक्षसोंकी सेनाके साथ रणभूमिमें जाकर दशरथकुमार रामचन्द्रऔर वानरगणोंके साथ सुग्रीवका नाशकर आओ॥३॥ रावणकी ऐसी आज्ञा पाय अति शीघ्रतासे मायावी राक्षसोंका

सतुपवनसुतोनिहत्यशत्रून्क्षतवहाःसरितश्चसंविकीर्य॥रिपुवधजनितश्रमोमहात्मामुदमगमत्कपिभिः सुपूज्यमानः ॥३८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० स० युद्धकांडे द्विपंचाशः सर्गः ॥ ५२ ॥ धूम्राक्षंनिहतंश्रुत्वारावणोराक्षसेश्वरः ॥ क्रोधेनमहताविष्टोनिःश्वसन्नुरगोयथा ॥ १ ॥ दीर्घमुष्णंविनिःश्वस्यक्रोधेनकलुषीकृतः ॥ अब्रवीद्राक्षसंक्रूरंवज्रदंष्ट्रंमहाबलम् ॥ २ ॥ गच्छत्वंवीरनिर्याहिराक्षसैःपरिवारितः ॥ जहिदाशरथिंरामंसुग्रीवंवानरैःसह॥ ३ ॥ तथेत्युक्त्वाद्रुततरंमायावीराक्षसेश्वरः ॥ निर्जगामबलैःसार्धंबहुभिःपरिवारितः ॥४॥ नागैरश्वैःखरैरुष्ट्रैःसंयुक्तःसुसमाहिताः ॥ पताकाध्वजचित्रैश्चबहुभिःसमलंकृतः ॥ ५ ॥ ततोविचित्रकेयूरमुकुटेनविभूषितः ॥ तनुत्रंचसमावृत्यसधनुर्निर्ययौद्रुतम् ॥ ६ ॥ पताकालंकृतंदीप्तंतप्तकांचनभूषितम् ॥ रथंप्रदक्षिणंकृत्वासमारोहच्चभूपतिः ॥ ७ ॥ ऋष्टिभिस्तोमरैश्चित्रैःश्लक्ष्णैश्चमुसलैरपि ॥ भिंदिपालैश्चचापैश्चशक्तिभिःपट्टिशैरपि ॥ ८ ॥

ईश्वर वज्र दंष्ट्र बहुतसे राससोंको संग लेकर चला ॥४॥ और उसके हाथमें हाथी, घोडे, गधे, ऊंट इत्यादि जीवगण भी चलने लगे और चित्रविचित्र ध्वजा पताकाओंसे यह सब विशेष सुशोभित थे ॥५॥ वीर वज्र दंष्ट्र विचित्र बाजू बांधे शोभायमान मुकुट शिरपर धारे युद्ध करनेको चला, उसका शरीर बख्तरसे ढका हुआ था, और हाथोंमें धनुष बाण था ॥ ६ ॥ उसका रथ ध्वजा पताकाओंके लगनेसे शोभायमान था तपाया हुआ सुवर्ण भी उसमें बहुत स्थानोंपर लगा हुआ था, ऐसे रथकी प्रदक्षिणाकरके बज्रदंष्ट्र उस पर सवार हुआ ॥ ७ ॥ तेगा, तोमर, मूसल, तीक्ष्णफरसे, भिन्दिपाल, धनुष, शक्ति, पटा ॥ ८ ॥

खड्ग, चक्र, गदा इत्यादि और अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र लिये पैदल सेना वज्रदंष्ट्र नामक राक्षसके साथ २ चली ॥ ९ ॥ वह राक्षसश्रेष्ठ सबही उजले और दीप्त विचित्र वस्त्र पहर रहे थे, उस सेनाके पीछे २ मदमाते हाथी, गमन करनेके समय चलते हुए पर्वतोंके समान ज्ञात होते थे ॥ १० ॥ वह समस्त हाथी युद्ध करनेमें बडे कुशल थे, उनपर भाला अंकुशादि धारण किये वीर लोग चढे थे व और भी महाबली सर्व लक्षण सम्पन्न वीरगण उनपर चढ रहे थे॥ ११॥ उस समय वह चलती हुई राक्षस सेना वर्षा समयकी श्रेणीसे शोभित गर्जती हुई मेघमालाके समान शोभायमान होने लगी ॥ १२॥ उससमय वह सेना निकल कर वहां पर जहां कि, यूथपति अंगदजी लंकाके दक्षिणद्वारपर टिके हुये थे चली। राक्षसोंकी सेना जैसेही निकली कि, उसके अशुभकी सूचना करनेवाले

खड्गैश्चक्रैर्गदाभिश्चनिशितैश्चपरश्वधैः ॥ पदातयश्चनिर्यातिविविधाःशस्त्रपाणयः ॥ ९ ॥ विचित्रवाससःसर्वेदीप्ताराक्षसपुंगवाः ॥ गजामदोत्कटाशूराश्चलंतइवपर्वताः ॥ १० ॥ तेयुद्धकुशलारूढास्तोमरांकुशपाणिभिः ॥ अन्येलक्षणसंयुक्ताःशूरारूढामहाबलाः ॥ ११ ॥ तद्राक्षसबलंसर्वंविप्रस्थितमशोभत ॥ प्रावृट्कालेयथामेघानर्दमानाःसविद्युतः ॥ १२ ॥ निःसृतादक्षिणद्वारादंगदोयत्रयूथपः ॥ तेषांनिष्क्रममाणानामशुभंसमजायत ॥ १३ ॥ आकाशाद्विघनात्तीव्रादुल्मुकान्यपतंस्तदा ॥ वमंतःपावकज्वालाःशिवाघोराववाशिरे ॥ १४ ॥ व्याहरंतमृगाघोरारक्षसांनिधनंतदा ॥ समापतंतोयोधास्तुप्रास्खलंस्तत्रदारुणम् ॥ १५ ॥ एतानौत्पातिकान्दृष्ट्वावज्रदंष्ट्रोमहाबलः ॥ धैर्यमालंब्यतेजस्वीनिर्जगामरणोत्सुकः ॥ १६ ॥ तांस्तुविद्रवतोदृष्ट्वावानराजितकाशिनः ॥ प्रणेदुःसुमहानादान्दिशःशब्देनपूरयन् ॥ १७ ॥ ततःप्रवृत्तंतुमुलंहरीणांराक्षसैःसह ॥ घोराणांभीमरूपाणामन्योन्यवधकांक्षिणाम् ॥ १८ ॥

अमंगल अशकुन दृष्टिआने लगे ॥ १३॥ आकाशसे विनाही मेघके तीव्र बिजलीके सहित उल्का गिरने लगी ॥ घोर रूपवाली शृगालियें अग्निकी लपटें उगलती हुई अशुभ शब्द करने लगीं ॥ १४॥ और मृगादि पशुगण चिल्लाय २ कर राक्षसोंके संहारको बताने लगे, चलते २ वीर योद्धा लोग एकाएक पैर फिसलनेसे भयंकर भाँतिसे गिरने लगे ॥ १५॥ परन्तु महाबलवान् तेजस्वी वज्रदंष्ट्र राक्षस यह समस्त उत्पात उठानेवाले लक्षण देखकर भी धीरज धारण कर समरका अभिलाषी हो लंका गढसे बाहर निकला ॥ १६॥ इस ओर विजयी वानर समूह राक्षसोंको आया हुआ देखकर ऐसा सिंहनाद करने लगे कि, उसकी गुंजारसे दशों दिशायें पूर्ण हो गई ॥ १७॥ उसके पीछे परस्पर एक दूसरेको मार डालनेकी आशा किये भयंकर रूप महाबलवान् वानर और राक्षसोंका घोर संग्राम आरंभ

हुआ ॥१८॥ उस समय उन अति उत्साहवाले वीरोंकी देह, मस्तक, अधर इत्यादि अंग कट जानेसे व रुधिरमें शरीर डूब जानेसे वह पृथ्वी पर गिर जाने लगे ॥ १९ ॥ समरसे न लौटनेवाले और परिघके समान लंबी २ बाँहवाले वीरगण लडते २ परस्पर लिपट जाते; और उसके पीछे विविध भाँतिके अस्त्र शस्त्र चलाने लगे ॥२०॥ उस घोर संग्राम भूमिमें वृक्ष पर्वत और अस्त्र शस्त्रोंका भयंकर हृदयको फाडनेवाला शब्द सुनाई आने लगा ॥२१॥ संग्राममें रथके चक्रोंका घर घर शब्द धनुषकी टंकार शंख भेरी और मृदंगोंका बडा कठोर शब्द हुआ ॥२२॥ अनन्तर कोई राक्षस वानर सब अस्त्र शस्त्रोंका त्याग करके तल चरण और घूसोंसे मल्लयुद्ध और कोई २ वृक्षोंको लेकर युद्ध करने लगे ॥ २३ ॥ उस समय, कोई २ राक्षस युद्धमें मतवाले वानर वीरगणोंसे जांघसे मारे जाकर

निष्पततोमहोत्साहाभिन्नदेहशिरोधराः ॥ रुधिरोक्षितसर्वांगान्यपतन्धरणीतले ॥ १९ ॥ केचिदन्योन्यमासाद्यशूराःपरिघबाहवः ॥ चिक्षिपुर्विविधाञ्छस्त्रान्समरेष्वनिवर्तिनः ॥ २० ॥ द्रुमाणांचशिलानांचशस्त्राणांचापिनिःस्वनः ॥ श्रूयतेसुमहांस्तत्रघोरोहृदयभेदनः ॥ २१ ॥ रथनेमिस्वनस्तत्रधनुषश्चापिघोरवत् ॥ शंखभेरीमृदंगानांबभूवतुमुलःस्वनः ॥ २२ ॥ केचिदस्त्राणिसंत्यज्यबाहुयुद्धमकुर्वत ॥ तलैश्चचरणैश्चापिमुष्टिभिश्चद्रुमैरपि ॥ २३ ॥ जानुभिश्चहताःकेचिद्भग्नदेहाश्चराक्षसाः ॥ शिलाभिश्चूर्णिताःकेचिद्वानरैर्युद्धदुर्मदैः ॥ २४ ॥ वज्रदंष्ट्रोथतंदृष्ट्वारणेवित्रासयन्हरीन् ॥ चचारलोकसंहारेपाशहस्तइवांतकः ॥ २५ ॥ बलवंतोऽस्त्रविदुषोनानाप्रहरणारणे ॥ जघ्नुर्वानरसैन्यानिराक्षसाः क्रोधमूर्च्छिताः ॥ २६ ॥ जघ्नेतान्राक्षसान्सर्वान्धृष्टोवायुसुतोरणे ॥ क्रोधेनद्विगुणाविष्टःसंवर्तकइवानलः ॥ २७ ॥ तान्राक्षसगणान्सर्वान्वृक्षमुद्यम्यवीर्यवान् ॥ अंगदःक्रोधताम्राक्षःसिंहःक्षुद्रमृगानिव ॥ २८ ॥

अपने शरीरको तुडवाते हुए, और कोई राक्षस वानरोंकी चलाई गई शिलाओंके प्रहारसे पिसकर चूर्ण हो गये ॥ २४ ॥ उसके पीछे वज्रदंष्ट्र यह समस्त व्यापार देख वानरोंको त्रासित करता हुआ लोक संहार करनेके लिये तैयार फांसी हाथमें लिये हुए यमराजके समान रणभूमिमें घूमने लगा ॥ २५ ॥ उस समय विविध अस्त्र शस्त्रधारी अस्त्रवित् बलवान् निशाचर गण क्रोधसे मूर्च्छित होकर वानरोंकी सेनाका संहारकरने लगे ॥२६॥ परन्तु महावीरजी रणभूमिमें राक्षसों करके वानर लोगोंको मरते देखकर प्रलयकालके अग्निके समान द्विगुण कोप करते हुए ॥ २७ ॥ इन्द्रतुल्य पराक्रमशाली अंगदजी भी क्रोधके

मारे लाल २ नेत्र कर सिंह जिस प्रकार छोटे २ मृगोंका नाश करता है वैसे ही वृक्षोंको उठाय २ यह घोर राक्षसोंका विनाश करने लगे ॥ २८ ॥ यद्यपि यह राक्षस लोग भी बडे विक्रमी थे परन्तु इन्द्रके समान घोर विक्रमकारी अंगदजीके द्वारा मारे जानेसे ॥ २९ ॥ इन राक्षसोंके शिर कट गये कि; जिससे यह राक्षस कटे हुए वृक्षके समान पृथ्वीपर गिरने लगे। रथ चित्र विचित्र ध्वजा पताका अश्व और वानर राक्षसोंके मृतक शरीरोंसे ॥ ३० ॥ और रुधिरके स्रोतेसे ढकनेके कारण वह रणभूमि अत्यन्त भयंकरी हो गई। हार, बाजू वस्त्र और कटे हुए शस्त्रोंसे सजनेके कारण ॥ ३१ ॥ वह रणभूमि शरद् ऋतुकी रात्रिके समान शोभा धारण करती हुई जिस प्रकार पवनके वेगसे मेघोंका जाल तितर बितर होकर उड जाता है वैसेही अंगदजीकी वीरता और उन करके मर्दित होनेसे राक्षसों की सेना

चकारकदनंघोरंशक्रतुल्यपराक्रमः ॥ अंगदाभिहतास्तत्रराक्षसाभीमविक्रमाः ॥२९॥ विभिन्नशिरसःपेतुर्निकृत्ताइवपादपाः ॥ रथैश्चित्रैर्ध्वजैर श्वैःशरीरैर्हरिरक्षसाम् ॥३०॥ रुधिरौघेणसच्छन्नाभूमिर्भयकरीतदा ॥ हारकेयूरवस्त्रैश्चच्छत्रैश्चसमलंकृता ॥३१॥ भूमिर्भातिरणेतत्रशारदीवय थानिशा ॥ अंगदस्यचवेगेनतद्राक्षसबलंमहत् ॥ प्राकंपततदातत्रपवनेनाम्बुदोयथा ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे त्रिपंचाशः सर्गः ॥ ५३ ॥ स्वबलस्यचसातेनअंगदस्यबलेनच ॥ राक्षसःक्रोधमाविष्टोवज्रदंष्ट्रोमहाबलः ॥ १ ॥ विस्फार्यचध नुर्घोरंशक्राशनिसमप्रभम् ॥ वानराणामनीकानिप्राकिरच्छरवृष्टिभिः ॥२॥ राक्षसाश्चापिमुख्यास्तेरथेश्वसमवस्थिताः ॥ नानाप्रहरणाःशूराः प्रायुध्यंततदारणे ॥३॥ वानराणांचशूरास्तुतेसर्वेप्लवगर्षभाः ॥ अयुध्यतशिलाहस्ताःसमवेताःसमंततः ॥४॥ तत्रायुधसहस्राणितस्मिन्नायो धनेभृशम् ॥ राक्षसाःकपिमुख्येषुपातयांचक्रिरेतदा ॥५॥ वानराश्चैवरक्षःसुगिरिवृक्षान्महाशिलाः ॥ प्रवीराःपातयामासुर्मत्तवारणसन्निभाः ॥६॥

कम्पायमान हुई ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां त्रिपंचाशः सर्गः ॥ ५३ ॥ तब महाबलवान् वज्रदंष्ट्र राक्षस अपनी सेनाका नाश और अंगदजीके बलका प्रकाश देखकर अत्यन्त ही क्रोध करता हुआ ॥ १ ॥ उस समय वह वज्रदंष्ट्र वज्रके समान प्रभा वाला भयंकर धनुष बाण शब्दितकर और उसे चढाय वानरोंकी सेनापर बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥ २ ॥ रथपर चढे हुए विविध भाँतिके अस्त्र शस्त्र धारण किये बडे २ शूर निशाचरभी युद्ध करने लगे ॥ ३ ॥ कूदने फाँदनेमें चतुर शूर वानरगण भी एकत्र शिला हाथमें लेकर सर्वप्रकारसे युद्ध करने लगे ॥ ४ ॥ उस रणभूमिमें राक्षसोंने वानर श्रेष्ठोंके ऊपर सहस्र २ घोर कठोर बाण चलाये ॥ ५ ॥ मतवाले हाथियोंके समान वानर वीरगणभी राक्षसोंको ताक २ कर बडे २ वृक्ष और बडी २ शिलायें चलाने लगे ॥ ६ ॥

इसप्रकार संग्रामसे न लौटनेवाले और समराभिलाषी उन राक्षस और वानरोंका महाघोर युद्ध आरंभ हुआ॥७॥उनमेंसे किसी२के शिरकट गये और किसी किसीके चरण और हाथ कटगये और शस्त्रोंसे कटजानेके कारण उनके सब अंगोंमें रुधिर बहने लगा ॥ ८ ॥ असंख्य वानर और राक्षसगण मर २ कर पृथ्वीपर गिर पडे, तब उनके मृतक शरीरोंपर सहस्रों काक गिद्ध व गीदड़ बैठ मांस खाय२कर नाचने लगे॥९॥डरपोकोंको डरावनेवाले कबंध उडने लगे,रणभूमिमें असंख्य सेनाके हाथ पैर शिर कटकर शरीरसे अलग होने लगे॥१०॥इसप्रकार वानर और राक्षसभी पृथ्वीपर गिरने लगे उसके पीछे वानरोंकी सेनाकरके मारी हुई निशाचरोंकी वह सेना॥११॥राक्षस वज्रदंष्ट्रके सम्मुख ही रणभूमिको छोडकर भागनेका आरंभ करने लगी,वानरोंकी सेनाके हाथसे राक्षसोंको मारा जाता हुआ और भयसे भीत

शूराणांयुध्यमानानांसमरेष्वनिवर्तिनाम् ॥ तद्राक्षसगणानांचसुयुद्धंसमवर्तत ॥७॥ अभग्नंशिरसःकेचिच्छिन्नैःपादैश्चबाहुभिः ॥ शस्त्रैरर्दितदेहा स्तुरुधिरेणसमुक्षिताः ॥८॥ हरयोराक्षसाश्चैवशेरतेगांसमाश्रिताः ॥ कंकगृध्रबलाढ्याश्चगोमायुकुलसंकुलाः ॥९॥ कबंधानिसमुत्पेतुर्भीरूणां भीषणानिवै ॥ भुजपाणिशिरश्छिन्नाच्छिन्नकायाश्चभूतले ॥ १० ॥ वानरराक्षसाश्चापिनिपेतुस्तत्रभूतले ॥ ततोवानरसैन्येनहन्यमाननिशाच रम् ॥११॥ प्राभज्यतबलंसर्ववज्रदंष्ट्रस्यपश्यतः ॥ राक्षसान्भयवित्रस्तान्हन्यमानान्प्लवंगमैः ॥१२॥ दृष्ट्वासरोषताम्राक्षोवज्रदंष्ट्रःप्रतापवान् ॥ प्रविवेशधनुष्पाणिस्त्रासयन्हरिवाहिनीम् ॥१३॥ शरैर्विदारयामासकंकपत्रैरजिह्मगैः ॥ बिभेदवानरांस्तत्रसप्ताष्टौनवपंचच ॥ विव्याधपरमक्रुद्धो वज्रदंष्ट्रःप्रतापवान्॥१४॥त्रस्ताःसर्वेहरिगणाःशरैःसंकृत्तदेहिनः ॥ अंगदंसंप्रधावंतिप्रजापतिमिवप्रजाः ॥१५॥ ततोहरिगणान्भग्नान्दृष्ट्वावालि सुतस्तदा ॥ क्रोधेनवज्रदंष्ट्रंतमुदीक्षंतमुदैक्षत ॥ १६ ॥ वज्रदंष्ट्रोऽगदश्चोभौयुध्येतेपरस्परम् ॥ चेरतुःपरमक्रुद्धौहरिमत्तगजाविव ॥ १७ ॥

देखकर॥१२॥प्रतापशाली राक्षसोंका सेनापति वज्रदंष्ट्र कोपसे परिपूर्ण होगया। उसके दोनों नेत्र क्रोधके मारे लाल होआये;वह धनुषकरके वानरोंकी सेनामें प्रवेश करके उसको ताडित करने लगा ॥१३॥ और अपनी कुटिलमतिसे कंकपत्र लगे हुए अगणितबाण चलाय२वानर सेनाको घायल करने लगा, उस महाप्रतापी वज्रदंष्ट्रने अत्यन्त कोपमें भरकर वानरगणोंको यथाक्रमसे सात, आठ, नौ और पांच बाण चलाय उन वानरोंके शरीरको भेदा ॥ १४ ॥ तब भयके मारे सब वानरगण भागनेलगे; उनके शरीर बाणोंके लगनेसे छिन्न भिन्न होगये सताई हुई प्रजा जिस प्रकार ब्रह्माजीके निकट जाया करती है वैसेही वानरगण अंगदजीके निकट दौडकर आने लगे॥१५॥ तब महाबलवान् अंगदजी वज्रदंष्ट्रके द्वारा वानरोंको भागा हुआ देखकर उसकी ओर क्रोधसे दृष्टि करते हुए। राक्षस सेनापति वज्रदंष्ट्र भी अंगदजीको बार२क्रोधकी दृष्टिसे देखने लगा॥१६॥तब वज्रदंष्ट्र और अंगदजी दोनोंही अत्यन्त क्रोधमें भरकर युद्ध करने लगे उस समय वह दोनों

मतवाले हाथी और केसरी (सिंह) के समान जान पडते थे ॥१७॥ उसके पीछे राक्षसोंकी सेनाके पति वज्रदंष्ट्रने अग्निकी शिखाके समान हजार बाण चलाकर वानर सेनापति अंगदजीके मर्मस्थानमें प्रहार किया ॥ १८ ॥ उस अत्यन्तहजार बाणका प्रहार लगनेसे वालिकुमार अंगदजीके सब शरीरमें रुधिर निकलने लगा और इन्होंने भयंकर शब्दोंसे गर्जकर उस राक्षस वज्रदंष्ट्रके ऊपर एक बडा भारी वृक्ष चलाया ॥१९॥ राक्षस वज्रदंष्ट्रने उस बडे भारी वृक्षको अपने ऊपर गिरता हुआ देखकर अति सावधानीसे बाण चलाय उस केटुकडेकर पृथ्वीमें गिरा दिया ॥२०॥ वानरश्रेष्ठ अंगदजीने वज्रदंष्ट्रका ऐसा विक्रम देखकर एक अत्यन्त बडी शिला ग्रहण करके उसके ऊपर चलाय सिंहनाद करने लगे ॥२१॥ परंतु वीर्यवान् राक्षस वज्रदंष्ट्र उस शिलाको गिरती हुई देख रथसे छलांगमार भ्रमरहित

ततःशरसहस्रेणहरिपुत्रंमहाबलम् ॥ जघानमर्मदेशेषुशरैरग्निशिखोपमैः॥१८॥रुधिरोक्षितसर्वांगोवालिसूनुर्महाबलः ॥ चिक्षेपवज्रदंष्ट्रायवृक्षंभीमपराक्रमः ॥१९॥ दृष्ट्वापतंतंवृक्षमसंभ्रांतश्चराक्षसः ॥ चिच्छेदबहुधासोपिमथितःप्रापतद्भुवि ॥२०॥ तंदृष्ट्वावज्रदंष्ट्रस्यविक्रमंप्लवगर्षभः ॥ प्रगृह्यविपुलंशैलंचिक्षेपचननादच ॥२१॥ तमापतंतंदृष्ट्वासरथादाप्लुत्यवीर्यवान् ॥ गदापाणिरसंभ्रांतःपृथिव्यांसमतिष्ठत ॥२२॥ अंगदेनशिलाक्षिप्तागत्वातुरणमूर्धनि॥ सचक्रकूबरंसाश्वंप्रममाथरथंतदा॥२३॥ततोऽन्यच्छिखरंगृह्यविपुलंद्रुमभूषितम् ॥ वज्रदंष्ट्रस्यशिरसिपातयामासवानरः ॥२४॥ अभवच्छोणितोद्गारीवज्रदंष्ट्रःसुमूर्च्छितः ॥ मुहूर्तमभवन्मूढोगदामालिंग्यनिःश्वसन्॥२५॥सलब्धसंज्ञोगदयावालिपुत्रमवस्थितम् ॥ जघानपरमक्रुद्धोवक्षोदेशेनिशाचरः ॥ २६ ॥ गदांत्यक्त्वाततस्तत्रमुष्टियुद्धमकुर्वत ॥ अन्योन्यंजघ्नतुस्तत्रतावुभौहरिराक्षसौ ॥ २७ ॥

हो गदा हाथमें ले पृथ्वी पर खडा होगया ॥ २२ ॥ उसकाल अंगदजीकी चलाई हुई शिलाने अत्यन्त जोरसे गिरकर रणभूमिके बीचमें टिके हुए चक्र और कूबरके सहित वज्रदंष्ट्रके रथको चूर्ण करडाला ॥ २३ ॥ तबवानरोंके सेनापति अंगदजीने वृक्षोंसे शोभायमान एक पर्वतका शिखर उखाडकर उस राक्षस वज्रदंष्ट्रके शिरपर दे मारा ॥ २४ ॥ उस घोर शैलशृङ्गकी चोट लगनेसे रुधिर वमन करता हुआ वज्रदंष्ट्र मूर्च्छित हो गया, और एक मुहूर्त भर तक चेतनारहित हो अपनी गदाको पकडेहुए लंबे श्वास चलाने लगा ॥२५॥फिर कुछ देरमें चेतना पाय राक्षसवज्रदंष्ट्रने क्रोधमें भरसंमुख खडेहुए वालिकुमार अंगदजीकी छातीमें एक गदा मारी ॥२६॥ उसके पीछे गदायुद्ध छोड वह वानर और राक्षस दोनों मूका लात चटकना इत्यादि मार २ बाहु युद्धकर

परस्पर एक दूसरेपर चोट चलाने लगे ॥२७॥ दोनों हीके शरीरसे रुधिर निकलने लगा घोर कठोर प्रहारोंके ही लगनेसे दोनोंही वीर थकगये उस समय वह ऐसे ज्ञात होते थे मानो रणभूमिमें मंगल और बुधग्रह घूमरहे हैं ॥२८॥ तब परम तेजस्वी वानरश्रेष्ठ अंगद जी पुष्प और फलोंसे शोभायमान एक बडा भारी वृक्ष उखाडकर रणभूमिमें खडे होगये ॥२९॥ परंतु निशाचर वज्रदंष्ट्रने किंकिणीजालसे युक्त विमल ऋषभके चर्मसे बनी ढाल और चमडेके म्यानसे ढकी हुई तलवार निकाली। तब बालिकुमार अंगदजीने भी मृगचर्मसे बनी हुई जयकी सूचना करनेवाली बडी ढाल और खड्ग ग्रहण किया ॥३०॥ उस समय विजयकी अभिलाषा किये वह दोनों वानर व राक्षस विचित्र मार्गमें घूमते हुए परस्परमें गर्जना करते कए दूसरेके ऊपरचोट चलाने लगे ॥३१॥ परस्पर युद्ध करते हुए उनदोनों वीरोंके सर्वाङ्गोंमें रुधिर निकलनेके कारण वह दोनों फूले हुए दो टेसूवृक्षोंके समान शोभायमानहो रहे थे. परस्पर जाँघोंको सकोडकर वह दोनों वीर थककर पृथ्वीमें बैठते हुए

रुधिरोद्गारिणौतौतुप्रहारैर्जनितश्रमौ ॥ बभूवतुःसुविक्रांतावंगारकबुधाविव ॥ २८ ॥ ततःपरमतेजस्वीअंगदःप्लवगर्षभः॥ उत्पाट्यवृक्षंस्थितवानासीत्पुष्पफलैर्युतः ॥२९॥ जग्राहचार्षभंचर्मखड्गंचविपुलंशुभम् ॥ किंकिणीजालसंछन्नंचर्मणाचपरिष्कृतम् ॥३०॥ चित्रांश्चरुचिरान्मार्गांश्चेरतुःकपिराक्षसौ ॥ जघ्नतुश्चतदान्योन्यंनर्दंतौजयकांक्षिणौ॥३१॥व्रणैःसमुत्थैःशोभेतांपुष्पिताविवकिंशुकौ ॥ युध्यमानौपरिश्रांतौजानुभ्यामवनींगतौ ॥ ३२ ॥ निमेषांतरमात्रेणअंगदःकपिकुंजरः ॥ उदतिष्ठतदीप्ताक्षोदंडाहतइवोरगः ॥ ३३ ॥ निर्मलेनसुधौतेनखड्गेनास्यमहच्छिरः ॥ जघानवज्रदंष्ट्रस्यवालिसूनुर्महाबलः ॥ ३४ ॥ रुधिरोक्षितगात्रस्यबभूवपतितंद्विधा ॥ तच्चतस्यपरीताक्षंशुभंखड्गहतंशिरः ॥ ३५ ॥ वज्रदंष्ट्रंहतंदृष्ट्वाराक्षसाभयमोहिताः ॥त्रस्ताह्यभ्यद्रवल्लँकांवध्यमानाःप्लवंगमैः ॥ विषण्णवदनादीनाह्रियाकिंचिदवाङ्मुखाः ॥ ३६ ॥

॥३२॥ कपिकुंजर अंगदजी एक निमेषमात्रमें दंडसे आहत हुए सर्पके समान तडककर उठे,उनके दोनों नेत्रोंमें दीप्तिमान् अग्निके समान प्रभा धारण किया॥३३॥ तब महाबलवान् अंगदजीने अत्यन्त तीक्ष्ण और विमल चमकते दमकते खड्गकी चोटसे वज्रदंष्ट्रका शिर काटकर पृथ्वीपर गिरा दिया ॥ ३४ ॥ राक्षसवीर वज्रदंष्ट्रकी देहदो खण्ड होकर गिरपडी;सर्व शरीरसे रुधिर निकलने लगा;उसकीदोनों आँखें उलटगईं और रुण्डपरसे पृथक्होकर शिर नीचे गिरपड़ा॥३५॥ राक्षसगण वज्रदंष्ट्रको मरा हुआ देखकर भयके मारे विकल हो लंकापुरीको भाग गये। भागनेके समय वानरवीरोंने उनके ऊपर ऐसी मार धाड मचाई कि, राक्षसोंके मरनेमें कुछ कसर न रही। यह समस्त राक्षस इस अवस्थामें व्याकुल वदन और दीनभावयुक्त हो लज्जासे मुखको नीचा करके लंकामें प्रवेशकरते हुए॥३६॥

इसप्रकारसे इन्द्रके समान प्रतापवान् वह महाबलशाली वालिकुमार अंगदजी वानरोंकी सेनाके बीचमें उस राक्षस वज्रदंष्ट्रको मार परमप्रसन्नता प्राप्त करते हुए, और देवतालोगोंके बीचमें बैठे सहस्रलोचन इन्द्रकी नाईं वानरगणोंसे पूजित हुए॥ ३७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायांचतुष्पंचाशःसर्गः ॥५४॥ उसके पीछे लंकापति रावण वालिके पुत्र अंगदजीके हाथसे वज्रदंष्ट्र राक्षसको मरा हुआ सुन निकट ही हाथजोडकर खडे हुए सेनापति प्रहस्तसे बोला ॥१॥ कि, भयंकर विक्रम करनेवाले दुर्द्धर्ष निशाचरलोक समस्त अस्त्रशस्त्रोंके जाननेमें पंडित राक्षस अकम्पनको अपना सेनापति बना कर युद्ध करनेके लिये जायँ ॥ २ ॥ यह अकम्पन वीर शत्रु लोगोंको दमन करनेमें बडा चतुर, है यह अपनी सेनाकी रक्षा करनेवाला और युद्धकार्यका प्रेरक है विशेषकरके यह हमारा

निहत्यतंवज्रधरःप्रतापवान्सवालिसूनुःकपिसैन्यमध्ये ॥जगामहर्षंमहितोमहाबलःसहस्रनेत्रस्त्रिदशैरिवावृतः ॥ ३७॥ इत्यार्षे श्रीम० वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्ध० चतुष्पंचाशः सर्गः॥ ५४ ॥ वज्रदंष्ट्रंहतंश्रुत्वावालिपुत्रेणरावणः॥ बलाध्यक्षमुवाचेदंकृतांजलिमुपस्थितम् ॥१॥ शीघ्रंनिर्यांतुदुर्धर्षाराक्षसाभीमविक्रमाः ॥ अकंपनंपुरस्कृत्यसर्वशस्त्रास्त्रकोविदम् ॥२॥ एषशास्ताचगोप्ताचनेताचयुधिसत्तमः ॥ भूतिकामश्चमेनित्यंनित्यंचसमरप्रियः॥३॥ एषजेष्यतिकाकुत्स्थौसुग्रीवंचमहाबलम्॥ वानरांश्चापरान्घोरान्हनिष्यतिनसंशयः ॥ ४ ॥ परिगृह्यसतामाज्ञांरावणस्यमहाबलः॥ स्वबलंप्रेरयामासतदालघुपराक्रमः ॥ ५ ॥ ततोनानाप्रहरणाभीमाक्षाभीमदर्शनाः ॥ निष्पेतूराक्षसामुख्याबलाध्यक्षप्रचोदिताः ॥ ६ ॥ रथमास्थायविपुलंतप्तकांचनभूषणम्॥ मेघाभोमेघवर्णश्चमेघस्वनमहास्वनः ॥ ७॥ राक्षसैःसंवृतोघोरैस्तदानिर्यात्यकंपनः ॥नहिकंपयितुंशक्यःसुरैरपिमहामृधे ॥ ८ ॥

एक हितकारी बन्धु है, युद्धकार्यमें इसका बडा अनुराग है॥ ३ ॥ यही महाबलवान् सुग्रीवके सहित रामचन्द्र और लक्ष्मणको युद्धमें पराजित करेंगे, और इसमेंभी कोई सन्देह नहीं कि, इनके हाथसे युद्धमें और वानरवीरगण भी मारेजायँगे ॥४॥ शीघ्र पराक्रम करनेवाला महाबलवान् प्रहस्त रावणकी ऐसी आज्ञाको पाकर सब सेनाको युद्ध करनेके लिये चलनेकी आज्ञा देता हुआ॥५॥ तब इस अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्रधारी भयंकर नेत्र और भयंकराकार प्रधान २ राक्षसगण सेनापतिकी यह आज्ञा पाकर युद्ध करनेके लिये निकले॥६॥ राक्षसोंके सेनापतिका वर्ण मेघतुल्य और शब्द मेघके गर्जन करनेके समान था, वह तपाये हुए सुवर्णसे विभूषित रथपर सवार होता हुआ॥७॥ उसके साथ २ भयंकराकार अगणित राक्षसोंकीसेना युद्ध करनेके लिये निकली इस वीर अकंपनको संग्राममस्था

नमें देवतालोग भी कंपायमान करनेको समर्थ नहीं थे॥८॥यह तेजस्वी अकंपन अपनी सेनाके बीचमें साक्षात् सूर्यभगवानके समान शोभायमान होने लगा। जब यह युद्ध करनेकी इच्छासे चला, तब क्रोधकर दौडते हुए अकम्पनके ॥९॥ रथमें जुते हुए घोडोंको अचानक दीनभाव प्राप्त हुआ; युद्ध करनेको प्रसन्नतासे चले जाते हुए अकम्पनका बायां नेत्र भी फडकने लगा॥१०॥इसका मुखमण्डल मलीन होगया और कंठस्वर विरूपताको प्राप्त हुआ, उस दिनके समय दुर्दिन आय पहुँचा; पवन रूखेपनसे बहने लगी ॥११॥ और मृग पक्षीगण सबहीके भयका उपजानेवाला क्रूर शब्द करना आरंभ करने लगे, परन्तु सिंहके समान ऊंचे कंधोंवाला और शार्दूलके समान विक्रमकारी ॥१२॥ वह अकम्पनवीर इन उत्पातोंको कुछ भी नहीं समझता हुआ रणभूमीको चला , वह निशाचरराक्ष

अकंपनस्ततस्तेषामादित्यइवतेजसा ॥ तस्यनिर्धावमानस्यसंरब्धस्ययुयुत्सया ॥ ९ ॥ अकस्माद्दैन्यमागच्छद्धयानांरथवाहिनाम् ॥ विस्फुरन्नयनंचास्यसव्यंयुद्धाभिनंदिनः ॥१०॥ विवर्णोमुखवर्णश्चगद्गदश्चाभवत्स्वनः॥ अभवत्सुदिनेकालेदुर्दिनंरूक्षमारुतम् ॥११॥ ऊचुःखगमृगाःसर्वेवाचःक्रूराभयावहाः॥ सर्सिहोपचितस्कंधःशार्दूलसमविक्रमः ॥१२॥ तानुत्पातानचिंत्यैवनिर्जगामरणाजिरम् ॥ तथानिर्गच्छतस्तस्यरक्षसःसहराक्षसैः॥ १३ ॥बभूवसुमहान्नादःक्षोभयन्निवसागरम् ॥ तेनशब्देनवित्रस्तावानराणांमहाचमूः ॥१४॥ द्रुमशैलप्रहाराणांयोद्धुंसमुपतिष्ठताम् ॥ तेषांयुद्धंमहारौद्रंसंजज्ञेकपिरक्षसाम् ॥ १५ ॥ रामरावणयोरर्थेसमभित्यक्तदेहिनः ॥ सर्वेह्यतिबलाःशूराःसर्वेपर्वतसन्निभाः ॥ १६ ॥ हरयोराक्षसाश्चैवपरस्परजिघांसया ॥ येषांविनर्दतांशब्दःसंयुगेऽतितरस्विनाम् ॥ १७ ॥ शुश्रावसुमहान्कोपादन्योन्यमभिगर्जताम् ॥ रजश्चारुणवर्णाभंसुभीमगभवद्भृशम् ॥ १८ ॥ उद्धूतंहरिरक्षोभिःसंरुरोधदिशोदश ॥ अन्योन्यंरजसातेनकौशेयोद्धतपांडुना ॥ १९ ॥

सोंकी सेनाके साथ लंका पुरीसे निकला॥१३॥इस सेनाके इस प्रकारका बडा भारी शब्द हुआ कि, जिससे समुद्रमें भी खलबली पडगई, और वानरोंकी सेना भी उस शब्दसे त्रासित होकर॥१४॥उसी समय वृक्ष और पर्वतोंको उठाय २ युद्ध करनेके लिये आगेबढी । तब उन वानर और राक्षसोंका महाघोर युद्ध आरंभ हुआ॥१५॥अनन्तर श्रीरामचन्द्रजी और रावणके लिये प्राणतक त्यागना दोनों ओरकेवीरोंने विचारा, दोनों ही बलवान् विक्रमशाली और पर्वताकार थे॥१६॥ राक्षस और वानरगण परस्पर एक दूसरेको मारडालनेके लिये तैयार थे। अति वेगवान् उन वानर और राक्षसोंका शब्द समरमें ॥ १७ ॥ श्रवणगोचर होने लगा, दोनों दलोंकेही क्रोधसहित गर्जनेका महाभयानक शब्द उठा,दोनों दलोंमें धूम पडनेसे बडी भारी धुमैली२धूल उडी ॥१८॥ वानरऔर राक्षसोंके चरनोंकी

उडीहुई धूलसे दशोंदिशा पूर्ण होगई यह धूल धूसरवर्णकी कुछ २ लालपन लिये हुए थी ॥१९॥ इस धूरने सब दिशाओंको ढकलिया, न राक्षस न वानर न ध्वजा, न पताका, न ढाल,न अश्व, न गज ॥ २० ॥ न हथियार; न रथ कुछ भी उस धूलके उडनेसे नहीं दीख पडते थे । संग्राममें गर्जनकरके धावमान होते हुए वानर और राक्षसोंका बडाभारी शब्द ही ॥ २१ ॥ केवल कठोर युद्धमें सुनाई देता था; परन्तु किसीका कोई रूप दिखाई नहीं देता था । अधिक क्या कहें यहांतक हुआकि रूप न दिखाई देनेके कारण वानरगण वानरोंको ही युद्धमें मारने लगे ॥ २२ ॥ और राक्षलोग अंधकारके मारे राक्षसोंको संहार करने लगे; वानर और राक्षस दोनों ही अपनी २ ओरवालोंको और अपने २ शत्रुओंको भी मारते थे ॥ २३ ॥ वानर और राक्षसगण यहांतक लडे कि पृथ्वी रुधिरसे गीली होगई और इनके शरीरमें रुधिरकी कीच लिपट गई; जब रुधिरसे कीच उठी तब धूल जाती रही॥२४॥ उसके पीछे देखते २ पृथ्वी मृतक

संवृतानिचभूतानिददृशुर्नरणाजिरे ॥ नध्वजोनपताकावाचर्मवातुरगोपिवा ॥ २० ॥ आयुधंस्यंदनोवापिददृशेतेनरेणुना ॥ शब्दश्चसुमहांस्तेषांनर्दतामभिधावताम् ॥ २१ ॥ श्रूयतेतुमुलोयुद्धेनरूपाणिचकाशिरे॥ हरीनेवसुसंरुष्टाहरयोजघ्नुराहवे ॥२२॥ राक्षसाराक्षसांश्चापिनिजघ्नुस्तिमिरेतदा ॥ तेपरांश्चविनिघ्नंतःस्वांश्चवानरराक्षसाः ॥२३॥ रुधिरार्द्रांतदाचक्रुर्महींपंकानुलेपनाम् ॥ ततस्तुरुधिरौघेणसिक्तंव्यपगतंरजः ॥२४॥ शरीरशवसंकीर्णाबभूवचवसुंधरा ॥ द्रुमशक्तिगदाप्रासैःशिलापरिघतोमरैः ॥ २५ ॥ राक्षसाहरयस्तूर्णंजघ्नुरन्योन्यमोजसा ॥ बाहुभिःपरिघाकारैर्युध्यंतःपर्वतोपमान् ॥ २६ ॥ हरयोभीमकर्माणोराक्षसाञ्जघ्नुराहवे ॥ राक्षसास्त्वभिसंक्रुद्धाःप्रासतोमरपाणयः ॥ २७ ॥ कपीन्निजघ्निरेतत्रशस्त्रैःपरमदारुणैः ॥ अकंपनःसुसंक्रुद्धोराक्षसानांचमूपतिः ॥ २८ ॥ संहर्षयतितान्सर्वान्राक्षसान्भीमविक्रमान् ॥ हरयस्त्वपिरक्षांसिमहाद्रुममहाश्मभिः ॥ २९ ॥ विदारयंत्यभिक्रम्यशस्त्राण्याच्छिद्यवीर्यतः ॥ एतस्मिन्नंतरेवीराहरयःकुमुदोनलः ॥ ३० ॥ मैंदश्चपरमक्रुद्धश्चक्रुर्वेगमनुत्तमम् ॥ तेतुवृक्षैर्महावीराराक्षसानांचमूमुखे ॥ ३१ ॥

शरीरोंसे पूर्ण होगई । वृक्ष, शक्ति, गदा; फांसी; शिला; परिघ, तोमर आदि अस्त्र शस्त्रोंसे ॥२५॥ वानर और राक्षसगण परस्पर एक दूसरेपर चोट चलाने लगे । परिघाकारवाली बांहोंसे युद्ध करते हुए पर्वतके समान ॥ २६ ॥ भयंकर कर्मकारी वानरगण राक्षसोंका संहार करने लगे; और राक्षसोंने भी प्रास, तोमर हाथोंमें ले ॥ २७ ॥ व और भी परमदारुण अस्त्र शस्त्रोंसे वानरोंको मारा उसके पीछे राक्षसोंका सेनापति अकंपन क्रोध करता हुआ ॥ २८ ॥ भयंकर कर्मकारी सब राक्षसोंको हर्षित कराने लगा, वानरलोग भी राक्षसोंको बडे २ वृक्ष और बडी २ शिलायें ग्रहणकर ॥२९॥ बलपूर्वक राक्षसोंके अस्त्र शस्त्र तथा उनको विदारण करनेलगे कि, उसी अवसरमें वानरवीर कुमुद, नल ॥३०॥ मैंदादि सब महाक्रोधकर बडा वेग करनेलगे, यह महाबीर वानरगण बडे २वृक्षों

को लेकर सेनाके मुखमें टिके हुए ॥ ३१ ॥ लीलासे ही खेलसा करतेहुए राक्षसोंकी बडीभारी दुर्दशा करनेलगे इन वानरश्रेष्ठोंने यहांतक वृक्ष चलाये कि, बहुतसे राक्षस मृतक होगये । इन वानरोंने और भी अनेक प्रकारके अस्त्रशस्त्रोंसे राक्षसोंका मान मथ डाला ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां पंचपंचाशः सर्गः ॥५५॥ तब वानर वीरगणोंका अद्भुत विक्रम देखकर और उनके बडे भारी कार्यको विचार कर राक्षससेनापति अकंपनने अत्यन्त क्रोध किया॥ १ ॥ वह वीर अकंपन शत्रुलोगोंका ऐसा कर्म देखकर बडाभारी विचित्र शरासन ग्रहण कर उसपर टंकार दे क्रोधसे मूर्छित हो अपने सारथिसे बोला ॥ २ ॥ हे सारथी ! यह बलवान वानरगण संग्राममें अगणित राक्षसोंको संहार कर रहे हैं,इसकारण जहांपर वह वानर हैं, वहीं पर हमारा

कदनंसुमहच्चक्रुर्लीलयाहरिपुंगवाः ॥ ममंथूराक्षसान्सर्वैर्नानाप्रहरणैर्भृशम् ॥३२॥ इत्यार्षे श्रीम०वा०आ० च० सा० युद्धाकांडे पंचपंचाशः सर्गः ॥ ५५ ॥ तद्दृष्ट्वासुमहत्कर्मकृतंवानरसत्तमैः ॥ क्रोधमाहारयामासयुधितीव्रमकंपनः ॥ १ ॥ क्रोधमूर्च्छितरूपस्तुधुन्वन्परमकार्मुकम् ॥ दृष्ट्वातुकर्मशत्रूणांसारथिंवाक्यमब्रवीत् ॥ २ ॥ तत्रैवतावत्त्वरितोरथंप्रापयसारथे ॥ एतेचबलिनोघ्नंतिसुबहून्राक्षसान्रणे ॥ ३ ॥ एतेचबलवंतोवाभीमकोपाश्चवानराः ॥ द्रुमशैलप्रहरणास्तिष्ठंतिप्रमुखेमम ॥ ४ ॥ एतान्निहंतुमिच्छामिसमरश्लाघिनोह्यहम् ॥ एतैःप्रमथितंसर्वंरक्षसांदृश्यतेबलम् ॥ ५ ॥ ततःप्रचलिताश्वेनरथेनरथिनांवरः ॥ हरीनभ्यपतद्दूराच्छरजालैरकंपनः ॥ ६ ॥ नस्थातुंवानराः शेकुःकिंपुनर्योद्धुमाहवे ॥ अकंपनशरैर्भग्नाःसर्वएवाभिदुद्रुवुः ॥ ७ ॥ तान्मृत्युवशमापन्नानकंपनशरानुगान् ॥ समीक्ष्यहनुमाञ्ज्ञातीनुपतस्थेमहाबलः ॥ ८ ॥

रथ लेचलो ॥ ३ ॥ जो वानर लोग कि, वृक्ष और शिलारूप हथियार धारण किये हुए हमारे सामने टिके हैं, यह समरकी अभिलाषा किये भयंकर कोप करनेवाले वानर अतिशय बलवान हैं ॥ ४ ॥ इसकारण हम पहले इनके ही संहार करनेकी इच्छा करते हैं कारण कि, हम देखते हैं तो कई एक वानरोंसेही समस्त राक्षसोंकी सेना मथी जा रही है ॥ ५ ॥ ऐसा सुनकर जब सारथिने घोडे हांके तब राक्षसश्रेष्ठ अकंपन, वानरगणोंके सामने जाय दूर सेही उन वानरोंके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥ ६ ॥ उस समय उस अकम्पनके साथ युद्ध करना तो दूर रहे वानरगण रणमें उसके सामनेभी नहींटिक सके, बरन् उसके बाणोंसे अत्यन्त पीडित और छिन्नभिन्न होकर सबही इधर उधरसे भागनेलगे॥ ७ ॥ परन्तु महाबलवान् हनुमानजी अपनी जातिवाले बानरोंको अकम्पनके बाणोंसे अत्यन्त पीडित और मृत्युके मुखमें धरेहुए देखकर उसके सामने को बढे ॥ ८ ॥

उस समय उन महाकपिको देखकर सब महावीर वानरगण फिर रणभूमिमें आकरके हनुमानूजीको घेरकर खडे होगये ॥ ९ ॥ हनुमानजीको युद्ध करने लिये पहुँचा हुआ देखकर वह भागे हुए वानरश्रेष्ठगण भी बल प्राप्त करते हुए, कारण कि बलवानसे सहाय प्रायकर दुर्बल भी बलवान होजाते हैं ॥ १० ॥ पर्वताकार हनुमानजीको आगे खडा हुआ देखकर राक्षस अकम्पन उनके ऊपर बाणोंकी वर्षाकरने लगाकि, जिसप्रकार इन्द्रजी पृथ्वीपर जलकी धारा वर्षाते हैं ॥ ११ ॥ परन्तु महाबलवान् वानर हनुमानजी अपने शरीरपर गिरते उन बाणों की कुछ भी चिन्ता न करते हुए अकम्पनके संहार करनेका विचार करते हुए ॥१२॥ वह महातेजस्वी पवनकुमार हनुमानूजी पृथ्वीको कम्पायमान करते हँसते २ उस राक्षस अकम्पनके सम्मुख धाये ॥१३॥ जिस समय यह हनुमा

तंमहाप्लवगंदृष्ट्वासर्वेतेप्लवगर्षभाः ॥ समेत्यसमरेवीराःसहिताःपर्यवारयन् ॥९॥ व्यवस्थितंहनूमंतंतेदृष्ट्वाप्लवगर्षभाः ॥ बभूवुर्बलवंतोहिबलवं तमुपाश्रिताः ॥ १० ॥ अकंपनस्तुशैलाभंहनूमंतमवस्थितम् ॥ महेंद्रइवधाराभिःशरैरभिववर्षह ॥ ११ ॥ अचिंतयित्वाबाणौघाञ्शरीरेपा तितान्कपिः ॥ अकंपनवधार्थायमनोदध्रेमहाबलः ॥ १२ ॥ सप्रहस्यमहातेजाहनुमान्मारुतात्मजः ॥ अभिदुद्राववतद्रक्षःकंपयन्निवमेदिनीम् ॥ १३ ॥ तस्याथनर्दमानस्यदीप्यमानस्यतेजसा ॥ बभूवरूपंदुर्धर्षंदीप्तस्येवविभावसोः ॥ १४ ॥ आत्मानंत्वप्रहरणंज्ञात्वाक्रोधसमन्वितः ॥ शैलमुत्पाटयामासवेगेनहरिपुंगवः ॥ १५ ॥ गृहीत्वासुमहाशैलंपाणिनैकेनमारुतिः ॥ सविनद्यमहानादंभ्रामयामासवीर्यवान् ॥ १६ ॥ ततस्त मभिदुद्रावराक्षसेंद्रमकंपनम् ॥ पुराहिनमुचिंसंख्येवज्रेणेवपुरंदरः ॥ १७ ॥ अकंपनस्तुतद्दृष्ट्वागिरि शृंगंसमुद्यतम् ॥ दूरादेवमहाबाणैरर्धचंद्रैरदा रयत् ॥ १८ ॥ तंपर्वताग्रमाकाशेरक्षोबाणविदारितम् ॥ विकीर्णपतितंदृष्ट्वाहनूमान्क्रोधमूर्च्छितः ॥ १९ ॥

नूजी घोर सिंहनाद करते हुए तब उनका रूप अत्यन्त असह्य हो गया और वह प्रदीप्त अग्निके समान अपने तेजसे आपही प्रकाशित हुए ॥ १४ ॥ वानरश्रेष्ठ क्रोधयुक्त हनुमानूजीने अपने आपको जब आयुधसे हीन जाना तब अतिवेगसे इन्होंने एक पर्वत उखाड लिया ॥१५॥ और एक हाथसे उस महापर्वतको ग्रहण कर पवननंदन हनुमानूजी वारंवार सिंहनाद करके उस पर्वतको घुमाने लगे ॥१६॥ पहले देवराज इन्द्रजी संग्राममें जिस प्रकार नमुचि दैत्य पर दौडे थे, वैसेही श्रीहनुमानूजी राक्षसश्रेष्ठ अकंपनकी ओर दौडे ॥१७॥ परन्तु अकम्पनने हनुमानूजीको गिरिशृंग लिये आता हुआ देखकर दूरसेही बडे भारी अर्द्धचन्द्र बाण चलाय इस पर्वतका खंड २ कर डाला ॥१८॥ हनुमानूजी उस पर्वतको राक्षसके बाणोंसे आकाश मार्गमें ही कटा और इधर उधर छितराया देखकर क्रोधके

मारे अधीर हो गये ॥ १९ ॥ तब क्रोध और गर्व किये हुए उन वानरश्रेष्ठ हनुमानजीने महापर्वतके समान ऊंचे एक अश्वकर्ण वृक्षके नीचे जाय अति शीघ्र ताके सहित उनको उखाड लिया ॥ २० ॥ उसके पीछे महाद्युतिमान हनुमानजीने शाखा फुलंचीयुक्त उस अति ऊंचे अश्वकर्णके वृक्षको ग्रहण करके परम प्रसन्नता सहित उसको रणस्थलमें घुमाया॥२१॥उस कालमें क्रोधपूर्ण हनुमानूजी करकेउस वृक्षके घुमानेसे अनेक वृक्ष टूट गये, और उनके चरणोंके वेगसे वसुमती पृथ्वीघूमने और विदीर्ण होने लगी ॥ २२ ॥ महावीरहनुमानूजी उस वृक्षको घुमाय २ हाथी, हाथियोंके चढनेवालोंके साथ रथी रथसहित रथोंके और भयंकर पराक्रम करनेवाले पदाति राक्षसोंको संहार करने लगे ॥ २३ ॥ तब राक्षसगण वृक्षका प्रहार करते हुए प्राण हरण करनेवाले यमराजके समान उन क्रोधित अंजनीके पुत्र हनुमानजीको देखकर भागने लगे ॥२४॥ राक्षस सेनापति महावीर अकम्पन उन महावीर्य क्रोधित हनुमानजीको राक्षसोंके लिये भय

सोऽश्वकर्णंसमासाद्यरोषदर्पान्वितोहरिः ॥ तूर्णमुत्पाटयामासमहागिरिमिवोच्छ्रितम् ॥ २० ॥ तंगृहीत्वामहास्कंधंसोऽश्वकर्णंमहाद्युति ॥ प्रगृह्यपरयाप्रीत्याभ्रामयामासभूतले ॥२१॥ प्रधावन्नुरुवेगेनबभंजतरसाद्रुमान् ॥ हनूमान्परमक्रुद्धश्चरणैर्दारयन्महीम् ॥ २२ ॥ गजांश्चसगजारोहान्सरथान्रथिनस्तथा ॥ जघानहनुमान्भीमात्राक्षसांश्चपदातिगान् ॥ २३ ॥ तमंतकमिवक्रुद्धंसद्रुमप्राणहारिणम् ॥ हनूमंतमभिप्रेक्ष्य राक्षसाविप्रदुद्रुवुः ॥ २४ ॥ तमापतंतंसंक्रुद्धंराक्षसानांभयावहम् ॥ ददर्शाकंपनोवीरश्चुक्षोभचननादच ॥२५॥ सचतुर्दशभिर्बाणैर्निशितैर्देहदारणैः ॥ निर्बिभेदमहावीर्यंहनूमंतमकंपनः ॥ २६ ॥ सतथाविप्रकीर्णस्तुनाराचैःशितशक्तिभिः ॥ हनूमान्ददृशेवीरःप्ररूढइवसानुमान् ॥ २७ ॥विरराजमहावीर्योमहाकायोमहाबलः॥ पुष्पिताशोकसंकाशोविधूमइवपावकः ॥ २८ ॥ ततोऽन्यंवृक्षमुत्पाटचकृत्वावेगमनुत्तमम्॥ शिरस्यभिजघानाशुराक्षसेंद्रमकंपनम्॥ २९ ॥

उत्पन्न कराते देखकर अत्यन्त ही क्रोध करता हुआ और उस समय अकम्पनने घोरनादसे गर्जना करना आरंभ किया ॥२५॥ और शरीरको विदारण करने वाले तीखे चौदह बाण उसने महाबली हनुमानजीके देहमें मारे ॥ २६ ॥ उस कालमें तीखे नाराच और शक्तियोंके लगनेसे हनुमानजीका शरीर ऐसा विद्ध हो रहा था कि, उस समय वह वृक्ष युक्त गिरिवरके समान शोभित होते थे ॥ २७ ॥ महाबलवान् महाकाय और महावीर्यवान् हनुमान्जी फूले हुए अशोक और धूमरहित अग्निके समान शोभायमान होने लगे ॥ २८ ॥ उसके पीछे पवन कुमार हनुमानजीने अति शीघ्रतासेएक और वृक्ष उखाडकर अत्यन्त वेगसे राक्षसोंके सेनापति अकंपनके शिरपर मारा॥ २९ ॥

क्रोधसे पूर्ण महाबलवान् वानरोंमें इन्द्र हनुमानजी करके इस प्रकारसे वृक्ष द्वारा घायल हो वह राक्षस तत्क्षणही पृथ्वीमें गिरकर मृतक हो गया ॥३०॥समस्त राक्षस राक्षसोंके स्वामी अकम्पनको मृतक और पृथ्वीमें पडा हुआ देखकर अत्यन्त दुःखित हुए, और भूडोलके समय जिस प्रकार वृक्ष कांपते हैं ऐसेही कम्पायमान होने लगे ॥ ३१ ॥ उस समय वह हारे हुए राक्षस वानर लोगोंसे खेदे जाकर अपने अस्त्र शस्त्र त्याग कर लंकाके सन्मुख भागने लगे ॥ ३२॥ उन राक्षसोंके बाल छूट रहे थे इन्होंने पराजित होकर मान मर्यादाको जल दे दिया, भयके मारे उनके सब अंगोंमें पसीना आ रहा था, और प्राणोंका डर करके उनके चित्त स्थिर नहीं थे ॥ ३३ ॥ उस समय उनको इस प्रकारका भय हुआ था कि, वह राक्षस भागनेके समय वारंवार पीछेको देखने लगे,

सवृक्षेणहतस्तेनसक्रोधेनमहात्मना॥ राक्षसोवानरेंद्रेणपपातचममारच ॥ ३० ॥ तद्दृष्ट्वानिहतंभूमौराक्षसेंद्रमकंपनम्॥ व्यथिताराक्षसाःसर्वेक्षितिकंपइवद्रुमाः ॥ ३१ ॥ त्यक्तप्रहरणाःसर्वेराक्षसास्तेपराजिताः॥ लंकामभिययुस्त्रासाद्वानरैस्तैरभिद्रुताः॥ ३२ ॥ तेमुक्तकेशःसंभ्रांताभग्नमानाःपराजिताः॥ भयाच्छ्रमजलैरंगैःप्रस्रवद्भिर्विदुद्रुवुः ॥३३॥ अन्योऽन्यंतेप्रमथ्नंतोविविशुर्नगरंभयात् ॥ पृष्ठतस्तेतुसंमूढाःप्रेक्षमाणामुहुर्मुहुः ॥३४॥ तेषुलंकांप्रविष्टेषुराक्षसेषुमहाबलाः॥ समेत्यहरयःसर्वेहनूमंतमपूजयन् ॥ ३५ ॥ सोऽपिप्रवृद्धस्तान्सर्वान्हरीन्संप्रत्यपूजयत्॥ हनूमान्सत्त्वसंपन्नोयथार्हमनुकूलतः ॥ ३६ ॥ विनेदुश्चयथाप्राणंहरयोजितकाशिनः ॥ चकृषुश्चपुनस्तत्रसप्राणानेवराक्षसान् ॥ ३७ ॥ सवीरशोभामभजन्महाकपिःसमेत्यरक्षांसिनिहत्यमारुतिः॥ महासुरंभीममभित्रनाशनंविष्णुर्यथैवोरुबलंचमूमुखे॥ ३८ ॥

और आपही परस्पर दूसरेको मारते हुए नगरमें प्रवेश करते हुए ॥ ३४ ॥ जब वह महाबली राक्षस लंकापुरीको चले गये तब समस्त वानर एकत्र हो हनुमानजीकी पूजा करने लगे ॥ ३५ ॥ और उन नीतिविशारद सत्त्वसम्पन्न हनुमान्जीने भी भेंट करके, व संभाषण करके उन सब वानरोंकी यथा योग्य रूपसे बडाई कर उनको प्रतिपूजित किया ॥ ३६ ॥ उसके पीछे वह विजयी वानरगण मृतक राक्षसोंको ऐसा समझकर कि, कदाचित् यह जीवित न हों, फिर इधर उधर खैंचने लगे ॥ ३७ ॥ जिस प्रकार शत्रुओंके मारनेवाले विष्णुजीने संग्रामभूमिमें भयंकर रूप महाबलवान् मधुकैटभादि महाअसुरोंको मारकर बडी भारी शोभा धारण की थी वैसेही यह महाकपि पवन कुमार हनुमान्जी राक्षसोंको ऐसा संहार करके वीरोंकी शोभासे शोभित हुए ॥ ३८ ॥

उस समय अकाशमें टिके हुए देवतागण सुग्रीवादि मुख्य २ वानरगण महाबलवान् विभीषण अतिबलवान् लक्ष्मण और स्वयं श्रीरामचन्द्रजी भी उन महाकपि हनुमान्जीकी वारंवार प्रशंसा करने लगे ॥ ३९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे षट्पंचाशः सर्गः ॥ ५६ ॥ अकम्पनके मारे जानेका वृत्तान्त सुनकर निशाचरपति रावण अत्यन्त क्रोध युक्त हुआ और दीन मलीनमुख हो मंत्रीलोगोंके मुखकी ओर देखने लगा ॥१॥ रावण एक मुहूर्त्त भर तक चिन्ता करके मंत्रीलोगोंके सहित सलाहकर समस्त लंकाकी मोरचेबन्दी देखनेके लिये दशघडी दिन चढे लंकाके तीर घूमनेको चला ॥ २ ॥ रावणने नगरमें घूमकर देखा कि ध्वजा पताका युक्त और बहुव्यूहसमन्वित वह लंकानगरी राक्षसलोगों करके सब भाँतिसे रक्षित होरही है ॥ ३ ॥ तब राक्षसोंका स्वामी रावण उस

अपूजयन्देवगणास्तदाकपिंस्वयंचरामोतिबलश्चलक्ष्मणः ॥ तथैवसुग्रीवमुखाःप्लवंगमाविभीषणश्चैवमहाबलस्तदा ॥ ३९ ॥ इत्यार्षेश्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडेषट्पंचाशः सर्गः ॥५६॥ अकंपनवधंश्रुत्वाक्रुद्धोवैराक्षसेश्वरः ॥ किंचिद्दीनमुखश्चापिसचिवांस्तानुदैक्षत ॥ १ ॥ सतुध्यात्वामुहूर्तंतुमंत्रिभिःसंविचार्यच ॥ ततस्तुरावणःपूर्वदिवसेराक्षसाधिपः ॥ पुरींपरिययौलंकांसर्वान्गुल्मानवेक्षितुम् ॥ २ ॥ तांराक्षसगणैर्गुप्तांगुल्मैर्बहुभिरावृताम् ॥ ददर्शनगरींराजापताकाध्वजमालिनीम् ॥३॥ रुद्धांतुनगरींदृष्ट्वारावणोराक्षसेश्वरः ॥ उवाचात्महितंकालेप्रहस्तंयुद्धकोविदम् ॥ ४ ॥ पुरस्योपनिविष्टस्यसहसापीडितस्यह ॥ नान्यंयुद्धात्प्रपश्यामिमोक्षंयुद्धविशारद ॥ ५ ॥ अहंवाकुंभकर्णोवात्वंवासेनापतिर्मम ॥ इंद्रजिद्वानिकुंभोवावहेयुर्भारमीदृशम् ॥ ६ ॥ सत्वंबलमतःशीघ्रमादायपरिगृह्यच ॥ विजयायाभिनिर्याहियत्रसर्वेवनौकसः ॥ ७ ॥ निर्याणादेवतूर्णंचचलिताहरिवाहिनी ॥ नर्दतांराक्षसेंद्राणांश्रुत्वानादंद्रविष्यति ॥ ८ ॥

लंकानगरीको सब भाँतिसे वानरोंके द्वारा रूंधी हुई देखकर यथा समयमें युद्ध विशारद प्रहस्तसे अपने हितकारी यह वचन बोला ॥४॥ रावण बोला कि हे युद्ध विशारद ! शत्रुकी सेना चारों ओरसे रूंधकर पुरीको जिसप्रकारसे संताप देरही है इससे तो युद्ध करनेके सिवाय छुटकारा पानेका हम दूसरा उपाय नहीं देखते ॥५॥ परन्तु इस समय हमारे इन्द्रजीतके कुम्भकर्ण निकुम्भके हमारे सेनापति तुम्हारे सिवाय और कौन इस बडे भारी भारको उठा सकता है अथवा॥६॥ इस कारण तुम शीघ्र रथपर सवार हो सेनाको साथले जिस स्थानपर वानरगण टिके हुए हैं वहांपर युद्धकरनेके लिये जाओ ॥ ७ ॥ ऐसा हम जानते हैं कि; "तुम लडनेके लिये आये हो" यह बात सुनते ही वह वानरोंकी सेना चलायमान हो जायगी । हम निश्चय कहते हैं कि, राक्षसोंका सिंहनाद सुनकर वह

वानर भयके मारे इधर उधर भाग जायँगे ॥ ८ ॥ हे वीर ! जिसप्रकारसे हाथी सिंहके सिंहनादको नहीं सह सकते हैं वैसेही वह नीतिरहित चपल और चंचलचित्तवानरोंकी सेना तुम्हारी भयंकर गर्जना नहीं सह सकेगी ॥ ९ ॥ हे प्रहस्त ! सब वानरोंकी सेनाके इधर उधर भागजानेसे वह स्वामी शक्तिहीन सहायरहित रामचन्द्र और सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणके सहित तुम्हारे वशमें हो जायँगे ॥१०॥ हे वीर ! यद्यपि आपत् अर्थात युद्धमें मरण संशययुक्त है कारण कि, यह नहीं जानें कि; कौन माराजायगा और निःसंशयमें अमंगल है इस कारण इसका प्रतिलोम और अनुलोम. जिसमें प्रवृत्तिहो वही तुम करो ❋॥११॥ जब रावणने यह कहा तब सेनापति प्रहस्त शुक्राचार्य जिस प्रकार दैत्येन्द्रसे कहा करते हैं वैसेही राक्षसोंके स्वामी रावणसे यह बोला ॥१२॥ हे महाराज ! पहले

चपलाह्यविनीताश्चचलचित्ताश्चवानराः ॥ नसहिष्यंतितेनादंसिंहनादमिवद्विपाः ॥ ९ ॥ विद्रुतेबजलेतस्मिन्रामःसौमित्रिणासह ॥ अवशस्तु निरालंबःप्रहस्तवशमेष्यति ॥ १० ॥ आपत्संशयिताश्रेयोनात्रनिःसंशयीकृता ॥ प्रतिलोमानुलोमंवायत्तुनोमन्यसेहितम् ॥ ११ ॥ रावणेनैव मुक्तस्तुप्रहस्तोवाहिनीपतिः ॥ राक्षसेंद्रमुवाचेदमसुरेंद्रमिवोशना ॥१२॥ राजन्मंत्रितपूर्वंनःकुशलैःसहमंत्रिभिः ॥ विवादश्चापिनोवृत्तःसमवेक्ष्यपरस्परम् ॥ १३ ॥ प्रदानेनतुसीतायाःश्रेयोव्यवसितंयया ॥ अप्रदानेपुनर्युद्धंदृष्टमेवतथैवनः ॥ १४ ॥ सोऽहंदानैश्चमानैश्चसततंपूजितस्त्वया ॥ सांत्वैश्चविविधैःकालेकिंनकुर्यांहितंतव ॥ १५ ॥ नहिमेजीवितंरक्ष्यंपुत्रदारधनानिच ॥ त्वंपश्यमांजुहूषंतंत्वदर्थेजीवितंयुधि ॥ १६ ॥

हमलोगोंने नीतिके जानने वाले मंत्रियोंके सहित इससम्बन्धमें परामर्श किया था परन्तु उस कालमें परस्पर एकमत न होनेसे हम लोगोंमें विवाद भी हुआ॥१३॥ उस समय हमने जानकीका दे देनाही निश्चय किया था; और यह भी हमने कहा था कि; सीता नदेनेसे युद्ध भी होगा सो हे महाराज ! इस समय हमें वही युद्ध प्राप्त हुआ है ॥१४॥ हे राक्षसनाथ ! जो कुछ भी हो आप दान, सन्मान मीठे वचनोंसे सदाही हमारा सन्मान किया करते हैं, इस कारण इस समय हम आपके लिये किसी प्रकार हितकारी कार्य करनेमें कोई कसर नहीं रक्खेंगे॥१५॥ अपना प्राण पुत्र परिवार और धन कुछ भी हम रखना नहीं चाहते इस कारण हम कहते हैं कि, इस समय आपके अर्थही युद्धमें इस जीवनकोभी हम देंगे सो आप देखना॥१६॥ सेनापति प्रहस्तने राक्षसपति रावणसे यह कहकर सामने आकर खडे

❋ तात्पर्य–युद्धक्षेत्रमें तुम्हारीही जय होगी इसकी क्या स्थिरता है ? परन्तु इसमें जयलाभ करना एक प्रकारसे स्थिर सिद्धान्त है इस कारण युद्धमें तुम्हारे लिये जानाही अच्छा है युद्धसे विमुख होना तुम्हारा कर्त्तव्य नहीं है

हुए सेनाध्यक्षोंसे कहा ॥ १७ ॥ कि जल्दीसे बडी भारी राक्षसोंकी सेनाको सजायकर लेआओ, हमारे बाणोंके वेगसे रणमें मृतक हुए ॥ १८ ॥ वानरोंके मांससे आज वनकेरहनेवाले पशुपक्षी भलीभाँति तृप्त होंगे । प्रहस्तके यह वचन सुनकर महाबलवान् सेनाध्यक्षलोगोंने ॥ १९ ॥ उस राक्षसराजकेगृहमें लाय कर सेनाको इकट्ठा कर दिया;एक मुहूर्त्तमें अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र धारण किये ॥२०॥राक्षसवीरोंसे लंका पुरी ऐसी पूर्ण हुई मानों हाथियोंसे पूर्ण होगई । कोई राक्षस अग्निको तृप्त करते हुए कोई ब्राह्मणोंको प्रणाम करते हुए ॥ २१ ॥ ऐसे राक्षसोंके घृतकी सुगन्धितसे युक्त होकर सुगंधित पवन चलने लगा और विविध प्रकारकी मालायें जो मंत्रोंसे पढी हुई थीं राक्षसोंने ग्रहणकी ॥ २२ ॥ और संग्राममें जानेके लिये वह राक्षस रणके आयुधोंसे सजने लगे उसके पीछे

एवमुक्त्वातुभर्तारंरावणंवाहिनीपतिः ॥ उवाचेदंबलाध्यक्षान्प्रहस्तःपुरतःस्थितान् ॥१७॥ समानयतमेशीघ्रंराक्षसानांमहाबलम् ॥ मद्बाणानां तुवेगेनहतानांतुरणाजिरे ॥१८॥ अद्यतृप्यंतुमांसादाःपक्षिणःकाननौकसः ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाबलाध्यक्षामहाबलाः ॥ १९ ॥ बलमुद्योजयामासुस्तस्मिन्राक्षसमंदिरे ॥ साबभूवमुहूर्तेनभीमैर्नानाविधायुधैः ॥२०॥ लंकाराक्षसवीरैस्तैर्गजैरिवसमाकुला ॥ हुताशनंतर्पयतांब्राह्मणांश्चनमस्यताम् ॥ २१ ॥ आज्यगंधप्रतिवहःसुरभिर्मारुतोववौ ॥ स्रजश्चविविधाकाराजगृहुस्त्वभिमंत्रिताः ॥ २२ ॥ संग्रामसज्जाःसंहृष्टाधारयन्राक्षसास्तदा ॥ सधनुष्काःकवचिनोवेगादुत्सृज्यराक्षसाः ॥२३॥ रावणंप्रेक्ष्यराजानंप्रहस्तंपर्यवारयन् ॥ अथामंत्र्यतुराजानंभेरीमाहत्यभैरवाम् ॥ २४ ॥ आरुरोहरथंयुक्तःप्रहस्तःसज्जकल्पितम् ॥ हयैर्महाजवैर्युक्तंसम्यक्सूतसुसंयुतम् ॥ २५ ॥ महाजलदनिर्घोषंसाक्षाच्चंद्रार्कभास्वरम् ॥ उरगध्वजदुर्धर्षंसुवरूथंस्वपस्करम् ॥ २६ ॥ सुवर्णजालसंयुक्तंप्रहसंतमिवश्रिया ॥ ततस्तंरथमास्थायरावणार्पितशासनः ॥ २७ ॥

कवच और धनुषधारी वह राक्षसगण ॥२३॥ अतिवेगसे राक्षसराज रावणको देखकर प्रहस्त नाम सेना पतिको घेर खडे होगये । फिर राजाकी आज्ञासे अति घोर भेरी बजवाय ॥२४॥ सर्व अस्त्र शस्त्रोंसे पूर्ण और तैयार रथपर सजा सजाया प्रहस्तनाम सेनापति सवार हुआ; इस रथमें अत्यन्त वेगवान् घोडे जुते थे और सर्वभाँतिसे चतुर सारथी भी इसपर चढाहुआ था ॥२५॥ इस रथका शब्द बडे भारी मेघगर्जनेके समान था चन्द्र सूर्यके समान इसमें प्रकाश था; सर्पाकार ध्वजा इसपर लटक रही थीं, सुन्दर गुम्मजदार ॥ २६ ॥ सुवर्णके जालसे युक्त अपनी सुन्दरताईकी शोभाको मानो आपही हँस रहा है ऐसे रथपर रावणकी आज्ञासे सेनापति प्रहस्त सवार होकर ॥ २७ ॥

बडीभारी राक्षसोंकी सेना संग ले लंकासे बहुतही शीघ्र निकला। उस समय मेघ गर्जनेके समान नगाडोंका शब्द होनेलगा व और दूसरे बाजोंके शब्दसे भी पृथ्वी और दशोंदिशापूर्ण होगई ॥२८॥ जब वह सेनापति प्रहस्त चला, तब बहुतसारे शंखभी बजने लगे और बडे उच्च शब्दसे घोर गर्जन करते हुए राक्षसगण भी आगे २ चले ॥२९॥ प्रहस्तके साथ इस प्रकारसे महाकाय और भयंकररूपवाले यह राक्षस आगे बढे। नारान्तक, कुंभहनु, महानाद, समुन्नत, प्रहस्तके यह चार मंत्री प्रहस्तको घेरकर लंकासे निकले ॥३०॥ हथियोंके यूथके समान बडी भारी राक्षसोंकी सेनाके साथ वह प्रहस्त घोर व्यूहकी रचना करता हुआ लंकाके समान पूर्वद्वारसे निकला ॥३१॥ प्रहस्तकी सेना बडेभारी विस्तारवाले समुद्रके समान थी, वह प्रहस्त करालकालके समान भयंकर मूर्ति धारण कर सेनाको संगले समरभूमिके

लंकायानिर्ययौतूर्णंबलेनमहतावृतः॥ततोदुंदुभिनिर्घोषःपर्जन्यनिनदोपमः ॥ वादित्राणांचनिनदःपूरयन्निवमेदिनीम् ॥ २८ ॥ शुश्रुवेशंखशब्दश्चप्रयातेवाहिनीपतौ॥ निनदंतःस्वरान्घोरान्राक्षसाजग्मुरग्रतः ॥ २९ ॥ भीमरूपामहाकायाःप्रहस्तस्यपुरःसराः ॥ नरांतकःकुंभहनुर्महानादःसमुन्नतः ॥ प्रहस्तसचिवाह्येतेनिर्ययुःपरिवार्यतम् ॥ ३० ॥ व्यूढेनैवसुघोरेणपूर्वद्वारात्सनिर्ययौ ॥ गजयूथनिकाशेनबलेनमहतावृत्तः ॥ ॥ ३१ ॥ सागरप्रतिमौघेनवृतस्तेनबलेनसः ॥ प्रहस्तोनिर्ययौक्रुद्धःकालांतकयमोपमः ॥ ३२ ॥ तस्यनिर्याणघोषेणराक्षसातांचनर्दताम् ॥ लंकायांसर्वभूतानिनिनेदुर्विकृतैःस्वरैः ॥ ३३ ॥ व्यभ्रमाकाशमाविश्यमांसशोणितभोजनाः ॥ मंडलान्यपसव्यानिखगाश्चक्रूरथंप्रति ॥३४॥ वमंतिपावकज्वालाःशिवाघोरावववाशिरे ॥ अंतरिक्षात्पपातोल्कावायुश्चपरुषंववौ ॥ ३५ ॥ अन्योन्यमभिसंरब्धाग्रहाश्चनचकाशिरे ॥ मेघाश्चखरनिर्घोषारथस्योपरिरक्षसः ॥ ३६ ॥ ववर्षूरुधिरंचास्यसिषिचुश्चपुरःसरान् ॥ केतुमूर्धनिगृध्रस्तुविलीनोदक्षिणामुखः ॥ ३७ ॥

सम्मुख गमन करने लगा॥३२॥ जब प्रहस्त निकला तब उसकेसाथवाले शब्द करते हुए राक्षसोंके निकलनेसे ऐसा बडाभारी नाद उत्पन्न हुआ कि, लंकानगरीके समस्त प्राणीपुञ्ज विकट स्वरसे चिल्लाने लगे ॥३३॥ मांस रुधिरके खाने पीने वाले गिद्ध आदि, बिना मेघके आकाशमें मंडलाकारसे रथके ऊपर घूमने लगे ॥३४॥ भयंकर रूपवाली शृगालियें भयंकर शब्दसे बोलकर मुखसे अग्निकी लपटें छोडती चिल्लाने लगीं, अन्तरिक्षसे बार २ उल्का गिरने लगीं, पवनभी रूखेपनसे चलने लगा ॥३५॥ परस्पर एक दूसरेसे क्रोधित हो युद्ध करनेसे सब ग्रह प्रभा हीन होगये, राक्षस सेनापतिके रथपर मेघमाला गंभीर शब्दसे गर्जन करके ॥ ३६ ॥ रुधिरकी वर्षा करने लगी और उसके आगे चलती हुई सेनापरभी रुधिरवर्षा हुई, रथकी ध्वजापर गिद्ध बैठ गया, और दक्षिणमुख होकर शब्द

करने लगा ॥३७॥ और अपने दोनों पंखोंको फैलायकर सेनापति प्रहस्तके समस्त प्रभा और श्रीको हरण करलेता हुआ। समरसे विमुख न होनेवाले सारथीकी भी श्री जाती रही॥३८॥ और घोडोंके सिखलानेवाले सारथिके हाथसे वारंवार चाबुक गिर पडने लगा युद्धमें जानेके समयकी जो दुर्लभ शोभा और दीप्ति थी ॥ ३९ ॥ वह एक मुहूर्त भरमें नाशको प्राप्त हुई, घोडोंका पैर समस्थानमें भी फिसलने लगा, इस प्रकारसे विख्यात बलपौरुषवाला प्रहस्त जब लंकासे युद्ध करनेको निकला, तब रणभूमिमें वानरगण, वृक्ष शिला इत्यादि अनेक प्रकारके आयुध धारण किये हुए उनके सन्मुख दौडे ॥ ४० ॥ इस समय वानरगण कटकटाय गर्जने लगे और वह बडे २ वृक्ष और बडी शिलायें ग्रहण करके पर्वतोंके शृङ्गोंको तोडते हुए धीरे २ आगे बढ़े ॥ ४१ ॥ उसके पीछे वानर और

नदन्नुभयतःपार्श्वेसमग्रांश्रियमाहरत् ॥ सारथेर्बहुशश्चात्रसंग्राममनिवर्तिनः ॥३८॥ प्रतोदोन्यपतद्धस्तात्सूतस्यहयसादिनः ॥निर्याणश्रीश्च याचस्याद्भास्वराचसुदुर्लभा ॥ ३९ ॥ साननाशमुहुर्तेनसमेचस्खलिताहयाः ॥ प्रहस्तंतंहिनिर्यातंप्रख्यातगुणपौरुषम् ॥ युधिनानाप्रहरणाक पिसेनाऽभ्यवर्तत ॥ ४० ॥ अथघोषःसुतुमुलोहरीणांसमजायत ॥ वृक्षाणांरुदतांचैवगुर्वीर्वैगृह्णतांशिलाः ॥४१॥ नदतांराक्षसानांचवानराणां चगर्जताम् ॥ उभेप्रमुदितेसैन्येरक्षोगणवनौकसाम् ॥ ४२ ॥ वेगितानांसमर्थानामन्योन्यवधकांक्षिणाम् ॥ परस्परंचाह्वयतांनिनादःश्रूयतेम हान् ॥ ४३ ॥ ततःप्रहस्तःकपिराजवाहिनीमभिप्रतस्थेविजयायदुर्मतिः ॥ विवृद्धवेगश्चविवेशितांचमूंयथामुमुर्षुःशलभोविभावसुम् ॥४४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे सप्तपंचाशः सर्गः ॥ ५७ ॥ ततःप्रहस्तंनिर्यांतंदृष्ट्वारणकृतोद्यमम् ॥ उवाचसस्मितंरामोविभीषणमरिंदमः ॥ १ ॥ कएषसुमहाकायोबलेनमहतावृतः ॥ आगच्छतिमहावेगःकिंरूपबलपौरुषः ॥ २ ॥

निशाचरोंकी सेना गर्जने और सिंहनाद करने लगी। दोनोंही ओरकी सेना युद्धकी वासनासे हर्षित चित्त हो रही थी ॥ ४२ ॥ यह दोनों वानर और राक्षसगण एक दूसरेको नाश करना चाहते थे, उस कालमें दोनों सेनाके वीर दोनों ओरके वीरोंको लडनेके लिये पुकारते थे बस यही शब्द उसकाल श्रवण होता था ॥ ४३ ॥ उसके पीछे राक्षसोंकी सेनाका पति खोटी मतिवाला प्रहस्त युद्धमें जय पानेकी वासनासे,पतंग जिस प्रकार मृत्युके निकट पहुँचकर प्रदीप्त अग्निकी शिखामें गिर जाता है, वैसेही अत्यन्त वेगसे वानरोंकी सेनामें प्रवेश करता हुआ ॥४४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आ०युद्धकांडे भाषायां सप्तपंचाशः सर्गः ॥५७॥ उसके पीछे शत्रुदमनकारी श्रीरामचन्द्रजी प्रहस्तको संग्राम करनेके लिये तैयार देख हँसकर विभीषणजीसे पूँछने लगे ॥१॥ यह महाकाय वीर्यवान् निशाचर

जो बडी भारी सेनाके साथ अति वेगसे यहां पर आय रहा है; इसका बल और पौरुष कैसा है ? और यह कौन है ? ॥२॥ हे महबाहो ! हमको इस वीर्यवान् निशाचरका यह समस्त वृत्तान्त सुनाओ, तब श्रीरामचन्द्रजीके ऐसे वचन सुनकर विभीषणजी उत्तर देते हुए ॥३॥ कि यह प्रहस्त नामक निशाचरराक्षसराज रावणका सेनापति है, लंकापुरीमें जितनीभर रावणकी सेना है यह विख्यात पराक्रम अस्त्रोंका जाननेवाला वीर्यवान् और शूर निशाचर उस तीन भागवाली सेनामेंसे एकभागसेना अपने साथ लेकर यहां आया है ॥४॥ औरइस ओर सेनापति प्रहस्त भयंकर पराक्रम दिखाता, गर्जता हुआ बहुत सारे राक्षसोंके सेनाके साथ निकला ॥ ५ ॥ उसने महाबलवान् वानरगणोंकी बडी भारी सेनाको देखा और वे वानर इसकी सेना देखकर अत्यन्त क्रोधयुक्त होकर गर्जन करने

आचक्ष्वमेमहाबाहोवीर्यवंतंनिशाचरम् ॥राघवस्यवचः श्रुत्वाप्रत्युवाचविभीषणः ॥३॥ एषसेनापतिस्तस्यप्रहस्तोनामराक्षसः ॥ लंकायांराक्षसेंद्रस्यत्रिभागबलसंवृतः ॥ वीर्यवानस्त्रविच्छूरःसुप्रख्यातपराक्रमः ॥ ४ ॥ ततःप्रहस्तंनिर्यांतंभीमंभीमपराक्रमम् ॥ गर्जंतंसुमहाकायंराक्षसैरभिसंवृतम् ॥५॥ ददर्शमहतीसेनावानराणांबलीयसाम् ॥ अभिसंजातघोषाणांप्रहस्तमभिगर्जताम् ॥ ६ ॥ खड्गशक्त्यृष्टिशूलाश्चबाणानिमुसलानिच ॥ गदाश्चपरिघाःप्रासाविविधाश्चपरश्वधाः ॥ ७ ॥ धनूंषिचविचित्राणिराक्षसानांजयैषिणाम् ॥ प्रगृहीतान्यराजंतवानरानभिधावताम्॥ ८ ॥जगृहुःपादपांश्चापिपुष्पितांस्तुगिरींस्तथा ॥ शिलाश्चविपुलादीर्घायोद्धुकामाःप्लवंगमाः ॥ ९॥ तेषामन्योन्यमासाद्यसंग्रामःसुमहानभूत् ॥ बहूनामश्मवृष्टिंचशरवर्षंचवर्षताम् ॥१०॥ बहवोराक्षसायुद्धेबहून्वानरपुंगवान् ॥ वानराराक्षसांश्चापिनिजघ्नुर्बहवोबहून् ॥११॥ शूलैःप्रमथिताःकेचित्केचित्तुपरमायुधैः ॥ परिघैराहताःकेचित्केचिच्छिन्नाःपरश्वधैः ॥ १२ ॥

लगे ॥ ६ ॥ खड्ग, शक्ति, दंड ऋष्टि, शूल, बाण, मुसल, गदा, परिघ, प्रास विविध भांतिके फरसे ॥ ७ ॥ चित्रविचित्र धनुष लिये जीतनेकी इच्छा किये, वानरोंके ऊपर धावमान होते हुए राक्षसोंके अस्त्र शस्त्र शोभायमान होते थे ॥८॥ यह देखकर समरके अभिलाषी वानरगणभी पुष्पित वृक्ष और पर्वतोंके शिखर और बडी २ शिलायें ग्रहण करते हुए ॥९॥ दोनों ओरकी सेनामें भयंकर संग्राम हुआ; दोनोंही ओरके वीर शिला और बाणोंकी वर्षा करने लगे ॥१०॥ राक्षसगणोंने संग्राममें अगणित वानरोंको मार डाला और वानरोंनेभी असंख्य राक्षसोंका प्राणसंहार किया ॥ ११॥ वानरोंमेंसे कोई २ राक्षसोंके शूलप्रहारसे मारेगये और कोई २ दूसरे अस्त्रशस्त्रोंसे मृतक हुए; कोई परिघकी रणभूमिमें गिरे और फरसेके प्रहारसे किसी २ का शिर कटगया ॥ १२ ॥

किसीने पृथ्वीपर गिरकर प्राण त्याग दिया किसी२का हृदय छिन्नभिन्न होगया। किसी २ के शरीरमें बाणही लगे; कि जिससे वह गिरे ॥ १३ ॥ कोई२ वानर शूरराक्षसोंके खड्गसे दो टुकडे करडाले गये, किसी २ वानरकी बगलही कटगई थी, इससे वहभी पृथ्वीपर पडे थे ॥ १४ ॥ इसी प्रकारसे बड़ा क्रोध करके वानरोंने राक्षसोंके ऊपर पर्वतोंके शिखर और वृक्षोंका प्रहार किया, कि जिससे वह पिसकर पृथ्वीपर गिरपडे ॥ १५ ॥ कोई २ राक्षस वानरोंके चट कने खाय और कोई २ घूंसे खाय २ कर मारेगये, कोई २ रुधिर उगलने लगे, और किसी २ राक्षसके मुख सूखकर नेत्र फैल गये थे ॥ १६ ॥ इस प्रकारसे राक्षस और वानरोंकी सेनाके बीचमें आर्त वाणी सिंहनाद और गर्जन करनेका कठोर शब्द उत्पन्न हुआ ॥ १७ ॥ इस प्रकारसे वह विकराल वदन

निरुच्छ्वासाःपुनःकेचित्पतिताजगतीतले ॥ विभिन्नहृदयाःकेचिदिषुसंधानसादिताः ॥ १३ ॥ केचिद्द्विधाकृताःखड्गैःस्फुरंतःपतिताभुवि ॥ वानराराक्षसैःशूरैःपार्श्वतश्चविदारिताः ॥ १४ ॥ वानरैश्चापिसंक्रुद्धैराक्षसौघाःसमंततः ॥ पादपैर्गिरिशृंगैश्चसंपिष्टावसुधातले ॥१५॥ वज्रस्पर्श तलैर्हस्तैर्मुष्टिभिश्चहताभृशम् ॥ वमञ्छोणितमास्येभ्योविशीर्णवदनेक्षणाः ॥ १६ ॥ आर्तस्वनंचस्वनतांसिंहनादंचनर्दताम्बभूवतुमुलःशब्दोह रीणांरक्षसामपि ॥ १७ ॥ वानराराक्षसाःक्रुद्धावीरमार्गमनुव्रताः ॥ विवृत्तवदनाःक्रूराश्चक्रुःकर्माण्यभीतवत् ॥ ॥ १८ ॥ नरांतकःकुंभहनुर्म हानादःसमुन्नतः ॥ एतेप्रहस्तसचिवाःसर्वेजघ्नुर्वनौकसः ॥१९॥ तेषांनिपततांशीघ्रंनिघ्नतांचापिवानरान् ॥ द्विविदोगिरिशृंगेणजघानैकंनरां तकम् ॥ २० ॥ दुर्मुखःपुनरुत्थायकपिःसविपुलद्रुमम् ॥ राक्षसंक्षिप्रहस्तंतुसमुन्नतमपोथयत् ॥ २१ ॥ जांबवांस्तुसुसंक्रुद्धःप्रगृह्यमहतीं शिलाम् ॥ पातयामासतेजस्वीमहानादस्यवक्षसि ॥ २२ ॥

क्रूर निशाचर और वानरगण वीर मार्गमें टिके हुए क्रोधमें भर भय छोड युद्ध करते हुए अद्भुत कर्म करने लगे ॥ १८ ॥ प्रहस्तके मंत्री नरान्तक, कुम्भहनु, महानाद ओर समुन्नत नामक यह चारों राक्षसभी अनेक वानरोंका संहार करने लगे ॥ १९ ॥ परन्तु द्विविद नाम वानरने इनको इस प्रकारसे कूदकूदकर वानरोंको मारते देख पर्वतका शृङ्ग उठाय उससे राक्षस नरान्तकका प्राणसंहार किया ॥ २० ॥ कपिश्रेष्ठ दुर्मुखने एक बडाभारी वृक्ष उठाय उसे शीघ्र कर्म कारी निशाचर समुन्नतको मार डाला ॥ २१ ॥ महावीर तेजस्वी जाम्बवान्‌जीने अत्यन्त क्रोधमें भरकर महानादकी छातीमें एक बडी भारी शिला मार उसको पृथ्वीपर गिरा दिया॥ २२ ॥

कपिवर वीर्यवान् तारने बडेभारी वृक्षको कुम्भहनुके ऊपर ऐसी चोट चलाई जिससे उसका प्राण निकल गया ॥ २३ ॥ परन्तु रथपर चढा हुआ प्रहस्त उन वानरलोगोंके इस कर्मको न सहकर धनुष धारण करके बानरोंका घोर नाश करने लगा ॥ २४ ॥ उस कालमें दोनों ओरकी सेना वेगसे इधर उधर भ्रमण करनेसे उनकी वह विचित्र गति आवर्तके समान जान पडने लगी और उससे खलबलायमान अप्रमेय समुद्रके समान शब्द होने लगा ॥२५॥ उस रणभूमिमें दुर्मद निशाचर प्रहस्त अत्यन्त क्रोधित होकर बाणोंकी झड लगाकर वानरोंको मारने लगा ॥ २६ ॥ उस समय वह रणभूमि बानर और राक्षसगणोंके मृतन देहोंसे परिपूर्ण होगई कि, जिससे वह ऐसी ज्ञातहोने लगी मानो यह भयंकर पर्वतोंसे घिर रही है ॥२७॥ वसन्तऋतुके आगमनसे खिले हुए पलाशके फूलोंसे जिस प्रकार पृथ्वी शोभायमान होती है, वैसेही रणभूमिमें रुधिरकी नदी प्रवाहित होकर अत्यन्त शोभा धारण की ॥ २८ ॥ मरे हुए वानर राक्षस इसके तट

अथकुंभहनुस्तत्रतारेणासाद्यवीर्यवान् ॥ वृक्षेणमहतासद्यःप्राणान्संत्याजयद्रणे ॥ २३ ॥ अमृष्यमाणस्तत्कर्मप्रहस्तोरथमाश्रितः ॥ चकार कदनंघोरंधनुष्पाणिर्वनौकसाम् ॥ २४ ॥ आवर्तइवसंजज्ञेसेनयोरुभयोस्तदा ॥ क्षुभितस्याप्रमेयस्यसागरस्येवनिःस्वनः ॥ २५ ॥ महताहि शरौघेणराक्षसोरणदुर्मदः ॥ अर्दयामाससंक्रुद्धोवानरान्परमाहवे ॥ २६ ॥ वानराणांशरीरैस्तुराक्षसानांचमेदिनी ॥ बभूवातिचिताघोरैःपर्व तैरिवसंवृता ॥ २७ ॥ सामहीरुधिरौघेणप्रच्छन्नासप्रकाशते ॥ संछन्नामाधवेमासिपलाशैरिवपुष्पितैः ॥ २८ ॥ हतवीरौघवप्रांतुभग्नायुधमहा द्रुमाम् ॥ शोणितौघमहातोयांयमसागरगामिनीम् ॥ २९ ॥ यकृत्प्लीहमहापंकांविनिकीर्णांत्रशैवलाम् ॥ भिन्नकायशिरोमीनामंगावयवशा द्वलाम् ॥ ३० ॥ गृध्रहंसवराकीर्णांकंकसारससेविताम् ॥ मेदःफेनसमाकीर्णामावर्तस्वननिःस्वनाम् ॥ ३१ ॥ तांकापुरुषदुस्तारांयुद्धभूमिम यींनदीम् ॥ नदीमिवघनापायेहंससारससेविताम् ॥ ३२ ॥

टूटेहुए अस्त्र शस्त्रही किनारेवाले बडे २ वृक्ष रुधिरका बहनाही जलराशि; ऐसे यह रणभूमि उसकालमें यमरूपी सागरगामिनी नदीसी ज्ञात हुई ॥२९॥ प्लीहा और यकृत् जिसकी घनी कीचड, इधर उधर पडी हुई राक्षसोंकी आतेंही इसके शिवार, वीरोंके कटेहुए रुण्डही इस नदीके बडे मच्छ, व कटेहुए अंगजलकी घासके समान ॥३०॥ रक्त मांसकी चाहना करनेवाले गृध्रही इस नदीके हंस, कंकरूप सारसही जिसमें बैठे हैं और चरबीही जिसका फेनरूप है आर्त बाणीही जिसके गमनका गर्जनारूप शब्द है ॥३१॥ कायर पुरुषोंके लिये यह युद्धमय नदी अतिदुःखसे पार होनेके योग्य है, शरद्कालमें जैसे श्रेष्ठ नदी हंस सारस पक्षियोंसे सेवित होती है ऐसी ॥ ३२ ॥

नदीमें गजयूथपतिगण जिसप्रकारसे पद्मरजशालिनी नलीनीके पार उतर जाते हैं वैसेही वह राक्षस और वानरमुख्य २गण अतिसरलतासे इस नदीके पार उतरने लगे ॥३३॥ उसके पीछे प्रहस्तको रथपर सवार हुआ बाणोंकी वर्षा करते हुए वानरगणोंको विदारित करते देख सेनापति नील अत्यन्त वेगसे धाये ॥३४॥ सेनापति प्रहस्त बडेभारी रणभूमिमें अपनी ओर झपटकर आता हुआ देख॥३५॥अपने सूर्यके समान रथको चलायकर नीलके सन्मुख आया उसके पीछे धनुष धारियोंमें श्रेष्ठ सेनापति प्रहस्त अपनेबडेभारीधनुषको खैंचकर ॥३६॥ सेनापति नीलके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगा,वह समस्त महावेगवान् बाण नीलके शरीरपर गिरनीलकी देहको फोड उसमें प्रवेश करते हुए ॥३७॥ मानी क्रोधित सर्प पृथ्वीमें प्रवेश कर रहे हैं, सेनापति नील अग्निके समान बाणोंसे घायल

राक्षसाःकपिमुख्यास्तेतेरुस्तांदुस्तरांनदीम् ॥ यथापद्मरजोध्वस्तांनलिनींगजयूथपाः ॥ ३३ ॥ ततःसृजंतंबाणौघान्प्रहस्तंस्यंदनेस्थितम् ॥ ददर्शतरसानीलोविधमंतंप्लवंगमान् ॥ ३४ ॥ उद्धूतइववायुःखेमहदभ्रबलंबलात् ॥ समीक्ष्याभिद्रुतंयुद्धेप्रहस्तोवाहिनीपतिः ॥ ३५ ॥ रथेनादित्यवर्णेननीलमेवाभिदुद्रुवे ॥ सधनुर्धन्विनांश्रेष्ठोविकृष्यपरमाहवे ॥ ३६ ॥ नीलायव्यसृजद्बाणान्प्रहस्तोवाहिनीपतिः ॥ तेप्रेत्यविशिखानीलंविनिर्भिद्यसमाहिताः ॥ ३७ ॥ महींजग्मुर्महावेगारोषिताइवपन्नगाः ॥ नीलःशरैरभिहतोनिशितैर्ज्वलनोपमैः ॥ ३८ ॥ सतंपरमदुर्धर्षमापतंतंमहाकपिः ॥ प्रहस्तंताडयामासवृक्षमुत्पाट्यवीर्यवान् ॥ ३९ ॥ सतेनाभिहतःक्रुद्धोनर्दन्राक्षसपुंगवः ॥ ववर्षशरवर्षाणिप्लवंगानांचमूपतौ ॥४०॥ तस्यबाणगणानेवराक्षसस्यदुरात्मनः ॥ अपारयन्वारयितुंप्रत्यगृह्णान्निमीलितः ॥ यथैवगोवृषोवर्षंशारदंशीघ्रमागतम् ॥४१॥ एवमेवप्रहस्तस्यशरवर्षान्दुरासदान् ॥ निमीलिताक्षःसहसानीलःसेहेदुरासदान् ॥ ४२ ॥ रोषितःशरवर्षेणसालेनमहतामहान् ॥ प्रजघानहयान्नीलःप्रहस्तस्यमहाबलः ॥ ४३ ॥

होकर ॥३८॥ वह परम दुर्द्धर्ष वीर्यवान् महाकपिएक वृक्ष उखाडकर उस परम दुर्निवार आते हुए प्रहस्तके ऊपर प्रहार करतेहुए॥ ३९ ॥ राक्षसश्रेष्ठ प्रहस्त इस घोर प्रहारसे अत्यन्त दुःखित और व्यथित होकर अत्यन्त क्रोध युक्तहो वारंवार सिंहनाद करएकही वानरोंके सेनापति नीलके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥४०॥वानरोंके सेनापतिनील इस दुरात्मा प्रहस्तके बाणोंको न रोक सके और नेत्र मूँदकर समस्त बाणोंको सहन कर लिया। जैसे कि शरदऋतुकी शीघ्र वर्षाको वृषभ सहन कर लेता है॥४१॥ इसी प्रकार बडे दुःखसे सहनेके अयोग्य भी प्रहस्तके बाण सेनापति नीलने नेत्र मूँद करके सहन कर लिया॥४२॥ उसके पीछे वह महाबलवान् सेनापति नील प्रहस्तके बाणोंकी वर्षा देख क्रोधित हो एकबडा भारी शालका वृक्ष ग्रहण करते हुए,और उसको चलाय कर प्रहस्तके रथमें जुते हुए चार घोडोंका

संहार किया॥४३॥ और क्रोधमें भर कर उस दुरात्मा राक्षस प्रहस्तका धनुष नीलने बलपूर्वक ग्रहण करके तोड डाला, धनुष तोडकर वानर सेनापति नील वारंवार सिंहनाद करने लगे ॥४४॥ धनुष हीन होने पर सेनापति प्रहस्त घोर मूसल ग्रहण करके रथसे छलांग मारकर पृथ्वीपर कूद पडा ॥ ४५ ॥ दोनों घोर युद्ध करने लगे, दोनों जिसप्रकार वैर बांधे हुए थे; वैसेही बलवान् भी थे । युद्ध करते २ दोनोंका शरीर कट गया, मतवाले हाथियोंके समान युद्ध करते दोनों हीके शरीरसे रुधिर बहने लगा॥४६॥ दोनोंही तीक्ष्ण दाँतोंके प्रहारसे परस्पर एक दूसरेको काटने लगे, दोनोंका विक्रम और चेष्टा सिंहशार्दूलके समान थी । दोनोंही सिंहशार्दूलके समान थे ॥४७॥ वृत्रासुर और वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्रमें जिस प्रकारसे युद्ध हुआ था, इस ही प्रकारसे यह दोनों वीर समरमें यश प्राप्त करनेकी

ततोरोषपरीतात्माधनुस्तस्यदुरात्मनः ॥ बभंजतरसानीलोननादचपुनःपुनः ॥४४॥ विधनुःसकृतस्तेनप्रहस्तोवाहिनीपतिः ॥ प्रगृह्यमुसलंघोरं स्यंदनादवपुप्लुवे ॥४५॥ तावुभौवाहिनीमुख्यौजातवैरौतरस्विनौ ॥ स्थितौक्षतजसिक्तांगौप्रभिन्नाविवकुंजरौ ॥ ४६ ॥ उल्लिखंतौसुतीक्ष्णा भिर्दंष्ट्राभिरितरेतरम् ॥ सिंहशार्दूलसदृशौसिंहशार्दूलचेष्टितौ ॥४७॥ विक्रांतविजयौवीरौसमरेष्वनिवर्तिनौ ॥ कांक्षमाणौयशःप्राप्तुंवृत्रवास वयोरिव ॥ ४८ ॥ आजघानतदानीलंललाटेमुसलेनसः ॥ प्रहस्तःपरमायत्तस्ततःसुस्रावशोणितम् ॥ ४९ ॥ ततःशोणितदिग्धांगःप्रगृह्यचम हातरुम् ॥ प्रहस्तस्योरसिक्रुद्धोविससर्जमहाकपिः ॥ ५० ॥ तमचिंत्यप्रहारंसप्रगृह्यमुसलंमहत् ॥ अभिदुद्रावबलिनंबलान्नीलंप्लवंगमम् ॥ तमुग्रवेगंसंरब्धमापतंतंमहाकपिः ॥ ५१ ॥ ततःसंप्रेक्ष्यजग्राहमहावेगोमहाशिलाम् ॥ तस्ययुद्धाभिकामस्यमृधेमुसलयोधिनः ॥ ५२ ॥ प्रह स्तस्यशिलांनीलोमूर्ध्नितूर्णमपातयत् ॥ नीलेनकपिमुख्येनविमुक्तामहतीशिला ॥ बिभेदबहुधाघोराप्रहस्तस्यशिरस्तदा ॥ ५३ ॥

वासनासे युद्ध करने लगे, दोनोंही परस्पर एक दूसरेको विना जीते हुए समरसे लौटनेवाले नहीं थे॥४८॥ उसके पीछे विपुल बलशाली सेनापति प्रहस्तने नीलके माथेपर मूसलका प्रहार किया; जिसके प्रहारसे नीलके माथेसे रुधिर बहने लगा ॥४९॥ जब अंगोंसे रुधिर निकलने लगा तब महाकपि सेनापति नीलने अत्यन्त क्रोधित हो एक बड़ा भारी वृक्ष ग्रहण कर प्रहस्तकी छातीमें प्रहार किया॥५०॥ परंतु सेनापति वीर प्रहस्त उस प्रहारको कुछ भी न समझता हुआ वहीं बडा भारी मूसल ग्रहणकर अत्यन्त जोरसे बलवान् वानरश्रेष्ठ नीलके सन्मुख धाया, महाकपि नील उस उग्र वेगवान् राक्षसको सन्मुख दौडे आते हुए ॥५१॥ देख एक महा शिला ग्रहण करके उस समरकी अभिलाषा करनेवाले मूसलसे युद्ध करते हुए ॥५२॥ प्रहस्तके मूसल प्रहार करनेसे पहलेही उसके मस्तकपर वहशिला मारी,

कपिश्रेष्ठ नीलकी चलाई हुई उस घोर और महाशिलाने प्रहस्तके मस्तकको खंड२कर डाला, उस समय उस प्रहस्तकी इन्द्रियें लोप हो गईं, बल जाता रहा, देहकी श्री नष्ट हो गई और वह प्राण रहित होकर जड कटे हुए वृक्षके समान पृथ्वीमें गिर पडा ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ उस काल प्रहस्तका मस्तक धडसे अलग हो जानेपर उससे और उसके शरीरसे रुधिरकी धारें गिरने लगीं कि, जिस प्रकार पर्वतसे झरना झरते हैं ॥ ५५ ॥ इस प्रकार सेनापति नीलके हाथसे जब प्रहस्त मारा गया, तब निशाचरोंकी बची हुई वह कंपायमान करनेके अयोग्य बडी भारी सेना दुःखी हो शिर झुकायकर लंकाको चली गई ॥५६॥ जिस प्रकार पुल और उसके बांधके टूट जानेपर सब जल निकल जाता है और नहीं रुक सकता है, वैसेही सेनापति प्रहस्तके मारे जानेपर वह निशाचरगण वहां टिका

सगतासुर्गतश्रीकोगतसत्त्वोगतेंद्रियः॥ पपातसहसाभूमौछिन्नमूलइवद्रुमः ॥५४॥ विभिन्नशिरसस्तस्यबहुसुस्रावशोणितम् ॥ शरीरादपिसुस्राव गिरेःप्रस्रवणोतथा ॥ ५५ ॥ हतेप्रहस्तेनीलेनतदकंप्यंमहाबलम् ॥ राक्षसानामहृष्टानांलंकामभिजगामह ॥५६॥ नशेकुःसमवस्थातुंनिहतेवाहिनीपतौ ॥ सेतुबंधसमासाद्यविशीर्णंसलिलंयथा ॥ ५७ ॥ हतेतस्मिंश्चमूमुख्येराक्षसास्तेनिरुद्यमाः ॥ रक्षःपतिगृहंगत्वाध्यानमूकत्वमागताः॥ प्राप्ताःशोकार्णवंतीव्रंविसंज्ञाइवतेऽभवन् ॥५८॥ ततस्तुनीलोविजयीमहाबलःप्रशस्यमानःसुकृतेनकर्मणा ॥ समेत्यरामेणसलक्ष्मणेनप्रहृष्टरूपस्तुबभूवयूथपः ॥ ५९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे अष्टपंचाशः सर्गः ॥ ५८ ॥ तस्मिन्हतेराक्षससैन्यपालेप्लवंगमानामृषभेणयुद्धे ॥ भीमायुधंसागरवेगतुल्यंविदुद्रुवेराक्षसराजसैन्यम् ॥ १ ॥ गत्वातुरक्षोधिपतेःशशंसुःसेनापतिंपावकसूनुशस्तम् ॥ तच्चापितेषांवचनंनिशम्यरक्षोधिपःक्रोधवशंजगाम ॥ २ ॥

नेको समर्थ न हुये ॥५७॥ उस सेनापति प्रहस्तके मारे जानेपर वह निशाचरगण शोकके समुद्रमें डूबकर चेतना रहित हो गये और पीछे सब उद्यम छोड राक्षसपति रावणके मन्दिरमें आय ध्यान करते हुये पुरुषके समान मौन धारण किये रहे॥५८॥ इस ओर महावीर सेनापति नील युद्धमें जय प्राप्त करके प्रसन्न मनसे श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके निकट आये; तत्काल सबही उनकी इस वीरताकी बहुतसी बडाई करने लगे ॥ ५९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामष्टपंचाशः सर्गः ॥ ५८ ॥ वानरश्रेष्ठ नीलके हाथसे जब सेनापति प्रहस्त संग्राम भूमिमें मारा गया तब भयंकर अस्त्र शस्त्रधारी समुद्रके वेगके समान राक्षस रावण की भागी हुई ॥ १ ॥ उस सेनाने लंकानगरीमें रावणके निकट जाय "अग्निके पुत्र नीलके हाथसे प्रहस्त मारा गया" उसको यह

संवाद सुनाया। राक्षस रावण सेनाके मुखसे प्रहस्तका मरना सुनकर अत्यन्त क्रोधित हुआ ॥ २ ॥ रणभूमिसे प्रहस्तको मरा हुआ सुनकर रोषके परवश और शोकसे विकल चित्त होकर देवराज इन्द्रजी जिस प्रकार देव सेनाके अधिनायकोंसे कहते हैं इसी भांति रावण राक्षस दलके यूथनाथोंसे बोला ॥ ३ ॥ कि, जिन करके इन्द्रके बलका मथनकारी हमारा वह सेनापति अपने अनुयायीवर्ग और हाथी घोडेके सहित मारडाला गया ऐसे शत्रुको अब तुच्छ नही समझना चाहिये ॥४॥ इस कारण शत्रुओंका विनाश करने और विजय प्राप्त करनेके लिये हम स्वयही अद्भुत रणभूमिमें जायँगे, अब शोचविचार करनेकीभी कुछ आवश्यकता नहीं ॥५॥ प्रदीप्त अग्निसे वनके जलनेके समान आज हम बाणसमूहोंसे रामचन्द्र व लक्ष्मणके सहित उस वानरोंकी सेनाको मारडालेंगे ॥६॥ अपने प्रकाशित शरीरसे प्रकाशमान होता हुआ अमरराज इन्द्रजीका शत्रु रावण यह कहकर दामिनीके समान दमकते हुए उत्तम घोडे जोतेहुए रथपर सवार हुआ ॥७॥ उस

संख्येप्रहस्तंनिहतंनिशम्यक्रोधार्दितः शोकपरीतचेताः॥उवाचतान्राक्षसयूथमुख्यानिंद्रोयथानिर्जरयूथमुख्यान् ॥३॥ नावज्ञारिपवेकार्या यैरिंद्र बलसादनः ॥ सूदितः सैन्यपालोमेसानुयात्रः संकुजरः ॥४॥ सोऽहंरिपुविनाशायविजयायाविचारयन् ॥ स्वयमेवगमिष्यामिरणशीर्षंतदद्भुतम् ॥ ५ ॥ अद्यतद्वानरानीकंरामंचसहलक्ष्मणम् ॥ निर्दहिष्यामिबाणौघैर्वनंदीप्तैरिवाग्निभिः ॥ ६ ॥ सएवमुक्त्वाज्वलनप्रकाशंरथंतुरंगोत्तमराजियुक्तम् ॥ प्रकाशमानंवपुषाज्वलंतंसमारुरोहामरराजशत्रुः ॥७॥ सशंखभेरीप्रणवप्रणादैरास्फोटितक्ष्वेडितसिंहनादैः ॥ पुण्यैःस्तवैश्चाप्यभिपूज्यमानस्तदाययौराक्षसराजमुख्यः॥ ८ ॥ सशैलजीमूतनिकाशरूपैर्मांसाशनैःपावकदीप्तनेत्रैः ॥ बभौवृतोराक्षसराजमुख्योभूतैर्वृतोरुद्रइवामरेशः ॥ ९ ॥ ततोनगर्याःसहसामहौजानिष्क्रम्यतद्वानरसैन्यमुग्रम् ॥ महार्णवाभ्रस्तनितंददर्शसमुद्यतंपादपशैलहस्तम् ॥ १० ॥ तद्राक्षसानीकमतिप्रचंडमालोक्यरामोभुजगेंद्रबाहुः ॥ विभीषणंशस्त्रभृतांवरिष्ठमुवाचसेनानुगतःपृथुश्रीः ॥ ११ ॥

समय शंख, भेरी और ढोल बजने लगे, वीरगण कोई बाँहोंको थपकाने लगे। कोई २ किलकिलाने लगे और कोई २ सिंहनाद करने लगे। इस प्रकारसे राक्षस रावण पवित्र स्तोत्रसे पूजित होकर शीघ्रही युद्ध करनेको चलता हुआ॥८॥ उस कालमें पर्वत व बादलके समान आकार वाले और अग्निके समान दीप्तनेत्रयुक्त मांस खानेवाले राक्षसोंके संगमें वह राक्षसपति रावण भूतोंके संग अमरनाथ रुद्रके समान शोभायमान होने लगा ॥ ९ ॥ उसके पीछे उस महातेजस्वी रावणने सेनाके सहित नगरसे बाहर आय महासमुद्र और महामेघके समान शब्दायमान पर्वत, वृक्ष हाथमें लिये रण करनेको तैयार और उग्ररूपवाली बलशाली निराली वानरोंकी सेनाको देखा ॥१०॥ इस ओर भुजगेन्द्र सदृश बाहुयुगलशाली अपनी सेनामें टिकेहुए सुन्दरदर्शन रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी उसपरम प्रचंडराक्ष

सकी सेनाको देख कर अस्त्र धारियोंमें श्रेष्ठ विभीषणजीसे बोले ॥ ११ ॥ रंगाविरंगी ध्वजापताओंसे शोभित महेन्द्राचल के समान हाथी घोडोंसेयुक्त और प्रास खड्ग शूल इत्यादिभांति२के अस्त्रशस्त्रोंसे परिपूर्ण यह किस वीरकीसेना है ? ॥१२॥ श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर इन्द्र तुल्य वीर्यवान् विभीषणजी उन महाबलवान् महात्मा राक्षसश्रेष्ठोंकी सेनाका परिचय श्रीरामचन्द्रजीके समीपनिवेदन करने लगे ॥१३॥ विभीषणजी बोले हे राजन् ! प्रभातकालके उदय होते हुए सूर्यके समान लालमुखवाला जो महाबलवान् राक्षस हाथीपर चढकर उसके मस्तकको कम्पायमान करता हुआ आताहै उसका नाम अकम्पनहै (यह दूसरा अकम्पन था) ॥१४॥ जो रथपर चढकर वारंवार इन्द्रके धनुषके तुल्य अपने धनुषकोकंपायमान करताहै जिसके रथपर सिंहध्वज लगाहै, जो तिरछे दांतवाले हाथीके समान शोभायमान होरहा हैवही वरदानपाया हुआ राक्षसोंमेंश्रेष्ठ इन्द्रजीत है ॥१५॥ विंध्याचल अस्ताचलऔर महेन्द्रपर्वतके समान अप्रमेय देहवाला

नानापताकाध्वजछत्रजुष्टंप्रासासिशूलायुधशस्त्रजुष्टम् ॥ कस्येदमक्षोभ्यमभीरुजुष्टंसैन्यंमहेंद्रोपमनागजुष्टम् ॥ १२ ॥ ततस्तुरामस्यनिशम्यवाक्यंविभीषणः शक्रसमानवीर्यः ॥ शशंसरामस्यबलप्रवेकंमहात्मनांराक्षसपुंगवानाम् ॥ १३ ॥ योसौगजस्कंधगतोमहात्मानवोदिताकोपमताम्रवक्त्रः ॥ संकंपयन्नागशिरोभ्युपैतिह्यकंपनंत्वेनमवेहिराजन् ॥ १४ ॥ योसौरथस्थोमृगराजकेतुर्धुन्वन्धनुःशक्रधनुःप्रकाशम् ॥ करीवभात्युग्रविवृत्तदंष्ट्रःसइंद्रजिन्नामवरप्रधानः ॥ १५॥ यश्चैषविंध्यास्तमहेंद्रकल्पोधन्वीरथस्थोऽतिरथोतिवीरः ॥ विस्फारयंश्चापमतुल्यमानंनाम्नातिकायोतिविवृद्धकायः ॥ ॥ १६ ॥ योसौनवार्कोदितताम्रचक्षुरारुह्यघंटानिनदप्रणादम् ॥ गजंखरंगर्जतिवैमहात्मामहोदरोनामसएषवीरः ॥ १७ ॥ योसौहयंकांचनचित्रभांडमारुह्यसंध्याभ्रगिरिप्रकाशः ॥ प्रासंसमुद्यम्यमरीचिनद्धंपिशाचएषोशनितुल्यवेगः ॥ १८ ॥ यश्चैषशूलंनिशितंप्रगृह्यविद्युत्प्रभंकिंकरवज्रवेगम् ॥ वृषेंद्रमास्थायशशिप्रकाशमायातियोसौत्रिशिरायशस्वी ॥ १९ ॥ असौचजीमूतनिकाशरूपःकुंभःपृथुव्यूढसुजातवक्षाः ॥ समाहितःपन्नगराजकेतुर्विस्फारयन्यातिधनुर्विधुन्वन् ॥ २० ॥

जो धनुर्धारी अतिरथ है,और अपनेअतुल प्रभाववाले धनुषपरटंकार देताहुआ आयरहा है इसही बडेआकारवाले वीरका नाम अतिकाय है ॥१६॥ प्रभातकालके सूर्यके समान लाल २ नेत्र किये, जो महाबलवान् राक्षस घंटेके नादके समान नाद करतेहुए क्रूरस्वभाववाले हाथीके ऊपर चढकर गर्जना कर रहा है यही महात्मा महोदर नाम वीरहै ॥१७॥जो सन्ध्याकालके मेघ और पर्वतके समान आकारवालाहै और सुवर्णके गहनोंसे भूषित घोडोंपर चढकर मरीच्याकार झालर लगा प्रास उठायेहुए है, इस वज्रके समान वेगवान् वीरका नाम पिशाच है ॥ १८ ॥ जो तीक्ष्ण शूल ग्रहण करके वज्रसेभी अधिक वेगवान् चंद्रमाके समान प्रकाशमान और बिजलीके समान श्रेष्ठ बैलपर चढकर चलाआताहै वह बडा यशस्वी त्रिशिरानामक राक्षस है ॥१९ ॥विशाल और चौडी छातीवाला और

मेघके समान रूपवान् जो वीर स्थिरभावसे अपने धनुषको टंकारता और कंपायमान करता चला आता है और जिसके रथकी ध्वजापर शेषजीका चिह्न दिखाई देता है उसका नाम कुम्भ है ॥ २० ॥ निशाचरोंकी सेनाका पताकारूप जो अद्भुत कर्म करने वाला वीर सुवर्ण और हीरोंसे खचित प्रकाशमान धूमसहित परिघ लियेहुए आगमन करता है इसका नाम निकुम्भ है ॥२१॥ जो बडे शरीरवाला वीर अग्निके समान तेजयुक्त पताका शोभित, चाप खड्ग बाण समूहसे परिपूर्ण रथपर चढा हुआ शोभायमान होरहा है इसकाही नाम नरान्तक कहते हैं। हे महाराज यह वीर अपने समान योद्धा न पायकर अपनी बांहों की चुलचुलाहट मिटानेको पर्वतके शृङ्गोंसेही युद्ध किया करता है ॥२२॥ जिसने देवता लोगोंकाभी गर्व नाश किया है, और विविध प्रकारके घोर रूपवाले विकट नेत्रयुक्त व्याघ्र, ऊँट, हाथी, मृग, घोडेके समान मुखवाले भूतोंके संग जो शोभित हैं ॥ २३ ॥ और भूतोंसे घिरे हुए शिवजीके समान शोभायमान हो

यश्चैषजांबूनदवज्रजुष्टंदीप्तंसधूमंपरिघंप्रगृह्य ॥ आयातिरक्षोबलकेतुभूतोयोसौनिकुंभोऽद्भुतवीरकर्मा ॥ २१ ॥ यश्चैषचापासिशरौघजुष्टंपताकिनंपावकदीप्तरूपम् ॥ रथंसमास्थायविभात्युदग्रोनरांतुकोसौनगशृंगयोधी ॥२२॥ यश्चैषनानाविधघोररूपैर्व्याघ्रोष्टनागेंद्रमृगाश्ववक्त्रैः ॥ भूतैर्वृतोभातिविवृत्तनेत्रैर्योसौसुराणामपिदर्पहंता ॥ २३ ॥ यत्रतदिंदुप्रतिमंविभातिच्छत्रंसितंसूक्ष्मशलाकमग्र्यम् ॥ अत्रैवरक्षोधिपतिर्महात्माभूतैर्वृतोरुद्रइवावभाति ॥२४॥ असौकिरीटीचलकुंडलास्योनगेंद्रविंध्योपमभीमकायः ॥ महेंद्रवैवस्वतदर्पहंतारक्षोधिपःसूर्यइवावभाति ॥ ॥ २५ ॥प्रत्युवाचततोरामोविभीषणमरिंदमः ॥ अहोदीप्तमहातेजारावणोराक्षसेश्वरः ॥२६॥ आदित्यइवदुष्प्रेक्ष्योरश्मिभिर्भातिरावणः ॥ नव्यक्तंलक्षयेह्यस्यरूपंतेसजःसमावृतम् ॥ २७ ॥

रहा है, और जहांपर महीन सौ कमानियोंका बना हुआ चन्द्रमाके समान उज्ज्वल व श्रेष्ठ छत्रलगा दिखाई देता है इसी स्थानमें राक्षसोंका स्वामी विराजमान है ॥ २४ ॥ हे महाराज ! जिसने इन्द्र और यमराजके गर्वकाभी नाश किया है, और जिसके मुखपर हिलते हुए कुण्डल दीख पडते हैं, यह वही हिमालय और विन्ध्याचल पर्वतके समान भयंकराकार निशाचरपति सूर्यके समान प्रकाशमान हो रहाहै ॥ २५ ॥ उसके पीछे शत्रुनाशी श्रीरामचन्द्रजी विभीषणसे कहने लगे कि, अहो ! राक्षसराज रावणका तेज कैसा प्रदीप्त है ? और बडाही तेजस्वी है ॥ २६ ॥इसके देहकी किरणें चारों ओर ऐसी फैल रहीहैं, और यह सूर्यके समान ऐसा दुष्प्रेक्ष्य हुआ है कि, इसका तेजसे ढका हुआ रूप हमको नहीं दीख पाता है ॥ २७ ॥

इस राक्षसोंके स्वामी रावणका शरीर जिस प्रकारसे प्रकाशित हो रहाहै, देवता और दानव वीरगणोंका शरीरभी ऐसा प्रकाशित नहीं हुआ करताहै ॥ २८ ॥ महाबलवान् राक्षस जो कि, रावणके अनुगामी वर्ग हैं वह सबही पर्वतोंके समान बडे आकारवाले दीप्तायुधधारी हैं और देहकी चुलबुलाहट निवारण करनेके लिये सबही पर्वतोंके सहित युद्धकरनेवाले हैं ॥२९॥ यह राक्षस रावण प्रदीप्त भयंकर दर्शन और तीक्ष्ण देहवाले राक्षसोंके संग होनेसे भूत गणोंके साथयमराजके समान जान पडताहै ॥ ३० ॥ बडेही भाग्यकी बात हैं कि आज यह पापात्मा हमारे दृष्टिगोचर हुआ है, इसलिये सीता हरण होनेसे जो क्रोध हमारे मनमें उत्पन्न हुआहै, वह क्रोध आज हम इसके ऊपर छोडेंगे ॥३१॥ वीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजी यह कहकर धनुषपर रोदा चढाय आगे बढ़े और लक्ष्मण जीभी इनके पीछे२ चले ॥ ३२ ॥ उसके पीछे महात्मा राक्षसपति रावण उन महाबलवान् राक्षसोंसे बोला कि, तुम लोग हमारी आज्ञासे इस समय जाय लंकाके चार पुर द्वार राज

देवदानववीराणांवपुर्नैवंविधंभवेत् ॥ यादृशंराक्षसेंद्रस्यवपुरेतद्विराजते ॥ २८ ॥ सर्वेपर्वतसंकाशाःसर्वेपर्वतयोधिनः ॥ सर्वेदीप्तायुधधरा योधास्तस्यमहात्मनः ॥ २९ ॥ विभातिरक्षोराजोसौप्रदीप्तैर्भीमदर्शनैः ॥ भूतैःपरिवृतस्तीक्ष्णैर्देहवद्भिरिवांतकः ॥ ३० ॥ दिष्ट्यायमद्यपा पात्मामामदृष्टिपथंगतः ॥ अद्यक्रोधंविमोक्ष्यामिसीताहरणसंभवम् ॥ ३१ ॥ एवमुक्त्वाततो रामोधनुरादायवीर्यवान् ॥ लक्ष्मणानुचरस्त स्थौसमुद्धृत्यशरोत्तमम् ॥ ३२ ॥ ततःसरक्षोधिपतिर्महात्माराक्षांसितान्याहमहाबलानि ॥ द्वारेषुचर्यागृहगोपुरेषुसुनिर्वृतास्तिष्ठतनिर्विशंकाः ॥ ३३ ॥ इहागतंमांसहितंभवद्भिर्वनौकसश्छिद्रमिदंविदित्वा ॥ शून्यांपुरींदुष्प्रसहांप्रमथ्यप्रधर्षयेयुःसहसासमेताः ॥ ३४ ॥ विसर्जयित्वास चिवांस्ततस्तान्गतेषुरक्षःसुयथानियोगम् ॥ व्यदारयद्वानरसागरौघमहाझषःपूर्णमिवार्णवौघम् ॥ ३५ ॥ तमापतंतंसहसासमीक्ष्यदीप्तेषुचापं युधिराक्षसेंद्रम् ॥ महत्समुत्पाट्यमहीधराग्रंदुद्रावरक्षोधिपतिंहरीशः ॥ ३६ ॥

मार्ग और घरोंमें शंका रहित मनके सुख सहित टिके रहो ॥३३॥ कारण कि एकत्र हुए महाबलवान् वनवासी वानरगण तुमलोगोंके सहित हमारी पुरीसेबाहर आनेका यह छिद्र पाय, प्रवेश करनेके अयोग्य वीर शून्य लंकापुरीको मर्दन करके विध्वंस कर डालेंगे ॥३४॥ जब राक्षसलोग रावणकी आज्ञाके अनुसार पुरीकी रक्षा करनेको उसमें प्रवेश करते हुए; तब निशाचरपति रावण भी अपने मंत्रियोंके विदा देकर स्वयं बडे २ मत्स्य आदि जीवोंसे परिपूर्ण महासमुद्रके समान उस बडी भारी वानरोंकी सेनाको विदारण करने लगा ॥ ३५ ॥ तब वानरराज सुग्रीवजी प्रदीप्त बाण सहित धनुष धारण किये राक्षसोंके स्वामी रावणको अचानक आया हुआ देख एक बडा भारी पर्वतका शिखर उखाडकर निशाचर पतिकी ओर दौडे ॥ ३६ ॥

उसके पीछे बहुत वृक्ष और कँगूरोंसे शोभित वह पर्वतका शृङ्ग इन्होंने राक्षस रावणके ऊपर चलाया परन्तु रावणने अपने ऊपर गिरते २ उस पर्वतके शृङ्गको सुवर्णकी फोंक लगे हुए बाणोंसे सहसा खंड २ कर डाला ॥ ३७ ॥ वह बडे भारी और उत्तम कँगूरे व तरुश्रेणीविराजित पर्वतका शृङ्ग जब पृथ्वीमें गिरपडा तब निशाचरनाथ रावण क्रोधित होकर महासर्पके तुल्य यमराजके समान एक बाण ग्रहण करता हुआ ॥ ३८ ॥ इस कुमतिवाले रावणने सुग्रीवजीके मार डालनेकी वासनासे यह महावेगवान् बाण उनके ऊपर चलाया यह बाण चिनगार निकलते ही अग्निके समान प्रदीप्त था उसकी गति वज्र और पवनके समान थी ॥ ३९ ॥ षडानन स्वामी कार्तिकजीकी चलाई हुई उस शक्तिने जिसप्रकार क्रौञ्चपर्वतको भेद डाला था, वैसे ही रावणकी बाँहोंसे छूटे एहु उस बाणने इन्द्र

तच्छैलशृंगंबहुवृक्षसानुंप्रगृह्यचिक्षेपनिशाचराय॥तमापतंतंसहसासमीक्ष्यचिच्छेदबाणैस्तपनीयपुंखैः॥३७॥तस्मिन्प्रवृद्धोत्तमसानुवृक्षंशृगोविदीर्णेपतितेपृथिव्याम्॥महाहिकल्पंशरमंतकाभंसमादधेराक्षसलोकनाथः॥३८॥ सतंगृहीत्वाऽनिलतुल्यवेगंसविस्फुलिंगज्वलनप्रकाशम्॥बाणंमहेंद्राशनितुल्यवेगंचिक्षेपसुग्रीववधायरुष्टः॥३९॥ससायकोरावणबाहुमुक्तःशक्राशनिस्पर्शवपुःप्रकाशम्॥सुग्रीवमासाद्यबिभेदवेगाद्गुहेरिताक्रौंचमिवोग्रशक्तिः ॥॥४०॥ससायकार्तोविपरीतचेताःकूजन्पृथिव्यांनिपपातवीरः॥तंवीक्ष्यभूमौपतितंविसंज्ञंनेदुःप्रहृष्टायुधियातुधानाः॥४१॥ततोगवाक्षोगवयःसुषेणस्त्वथर्षभोज्योतिमुखोनलश्च॥ शैलान्समुत्पाटचविवृद्धकायाःप्रदुद्रुवुस्तंप्रतिराक्षसेंद्रम्॥४२॥ तेषांप्रहारान्सचकारमोघान्रक्षोधिपोबाणक्षतैःशिताग्रैः॥तान्वानरेंद्रानपिवाणजालैर्बिभेदजांबूनदचित्रपुंखैः॥तेवानरेंद्रास्त्रिदशारिबाणैर्भिन्नानिपेतुर्भुविभीमकायाः ॥४३॥

जीके वज्रके समान प्रकाशित देहवाले वानरराज सुग्रीवजीके ऊपर गिर कर उनके हृदयको भेद डाला ॥ ४० ॥ वीरश्रेष्ठ वानरराज सुग्रीवजी उस बाणके प्रहारसे अत्यन्त, आर्त और चेतनारहित हो घोरशब्द करते पृथ्वीपर गिरपडे राक्षसगण उनको रणभूमिके मध्य मूर्च्छित होकर पृथ्वीमें पडा हुआ देखकर आनन्दके मारे सिंहनाद करने लगे ॥ ४१ ॥ फिर गवाक्ष, गवय सुषेण, ऋषभ, ज्योतिर्मुख नल इत्यादि वानरगण अपनी २ देहको बढाय शैलशृङ्ग को उठाय २ राक्षसराज रावणके सन्मुख दौडे ॥ ४२ ॥ परन्तु राक्षसोंके स्वामी रावणने अत्यन्त तीखे शत बाण चलाय उनके पर्वतप्रहारको व्यर्थकर सुवर्णकी फोंक लगेहुए चित्रपुंखवाले बाणोंसे उन बानरश्रेष्ठोंके ऊपर प्रहारकिया तब वह भयंकर शरीरवाले वानरगण भी राक्षसनाथ रावणकेबाणोंके लगनेसे छिन्नभिन्न शरीर हो पृथ्वीपर गिरने लगे ॥ ४३ ॥

तब राक्षस रावण बाणोंके ढेरके ढेर चलायकर उग्र स्वभाववाली उस वानरोंकी सेनाको बाणजालसे छानेलगा इसप्रकार रावणके बाणोंसे मर्ममें चोटखाय वानरोंमेंसे अनेक मर गये और अनेक गिर पडे अनेक छिन्नभिन्न हो गये कोई चिल्लाने लगे और उनमेंसे अनेक भयके मारे विह्वल होकर शरणागत प्रतिपालक अनाथनाथ श्रीरामचन्द्रजीके शरणमेंगये ॥ ४४ ॥ वानरोंको शरणमें आया हुआ देखकर धनुष धारियोंमें श्रेष्ठ महात्मा श्रीरामचन्द्रजी सहसा आगे बढनेको तैयार हुए कि इतनेहीमें लक्ष्मणजीने हाथ जोडकर उनसे यह परमार्थ युक्त वचन कहे ॥ ४५ ॥ हे आर्य ! यद्यपि आप अकेले ही इस दुरात्मा रावणका संहार कर सकते हैं, परन्तु हे विभो ! आप निश्चय जानिये कि, इस निशाचरको हम ही मारनेकी इच्छा करते हैं हमको आप युद्धकी आज्ञा दीजियेगा अथवा मैं इसके मार डालनेमें अकेलाही समर्थ हूँ आप आज्ञा दें ॥ ४६ ॥ यह वचन सुनकर सत्य पराक्रम महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि, हे लक्ष्मण ! जाओ

ततस्तुतद्वानरसैन्यमुग्रंप्रच्छादयामाससबाणजालैः॥तेबध्यमानाःपतिताश्चवीरानानद्यमानाभयशल्यविद्धाः ॥ शाखामृगारावणसायकार्ताञ्जग्मुःशरण्यंशरणंस्मरामम्॥४४ततोमहात्मासधनुर्धनुष्मानादायरामःसहसाजगाम्॥तंलक्ष्मणःप्रांजलिरभ्युपेत्यउवाचरामंपरमार्थयुक्तम्॥४५॥ काममार्यसुपर्याप्तोवधायास्यदुरात्मनः॥विधमिष्याम्यहंचैतमनुजानीहिमांविभो॥४६॥तमब्रवीन्महातेजारामःसत्यपराक्रमः॥ गच्छयत्नपरश्चापिभवलक्ष्मणसंयुगे॥४७॥रावणोहिमहावीर्योरणेऽद्भुतपराक्रमः॥त्रैलोक्येनापिसंक्रुद्धोदुष्प्रसह्योनसंशयः॥४८॥ तस्यच्छिद्राणिमार्गस्वस्वच्छिद्राणिचलक्षय॥चक्षुषाधनुषात्मानंगोपायस्समाहितःव॥४९॥राघवस्यवचःश्रुत्वासंपरिष्वज्यपूज्यच ॥ अभिवाद्यचरामायययौसौमित्रिराहवे ॥ ५० ॥ सरावणंवारणहस्तबाहुंददर्शभीमोद्यतदीप्तचापम्॥प्रच्छादयंतंशरवृष्टिजालैस्तान्वानरान्भिन्नविकीर्णदेहान्॥ ५१ ॥

परन्तु रणमें भली भांति सावधान रहना ॥ ४७ ॥ तुमसे इतना कहनेका यही अभिप्राय है कि, रावण अत्यन्त वीर और महाबलवान् है उसका पराक्रम अद्भुत है, जब उसको क्रोध उत्पन्न हो जाता है तब त्रिलोकवासी समस्त जन भी इसके पराक्रमको नहीं सह सकते इसमें कोई भी संदेह नहीं ॥४८॥ तुम उस रावणके प्रहार करनेका अवसर खोजते रहना और सावधान चित्तसे अपनी रक्षा करते रहकर अपने प्रहारके समय शत्रुपर दृष्टि रक्खो व धनुषपर बाण चढाय सँभालकर रिपुपर चलाओ ॥४९॥ श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजी उनको प्रणाम करते हुए, और उनकी पूजा की व श्रीरामचन्द्रजी भी इनको गलेसे लगायकर भेंटे जब लक्ष्मणजी युद्ध करनेको गये॥५०॥तब युद्धमें आगे बढकर लक्ष्मणजीने देखा कि हाथीके शुण्डके समान चढावा उतर बांहोंवाला राक्षस रावण भयंकर धनुष उठाय अनिवार बाणोंकी वर्षा करता हुआ वानरोंको ढक रहा है; और वानर लोग भी छिन्नभिन्न शरीरहो पृथ्वीपर गिर रहे हैं॥५१॥

इतनेहीमें महातेजस्वी पवनकुमार हनुमानूजी लक्ष्मणजीको आगे बढा हुआ देखकर उनको रोक आप रावणके बाणजालको चीरते फाडते उसके सन्मुख धाये ॥ ५२ ॥ उसके पीछेबुद्धिमानू हनुमानूजी रावणके रथपर चढ दहिनी भुजाका तमाचा उठाय उसको भयदिखाते हुए बोले ॥ ५३ ॥ कि; तुम वरदान के प्रभावसे देवता, दानव, गन्धर्व और राक्षस लोगोंसे ही अवध्य हुए हो, परन्तु वानर लोगोंसे तुमको सम्पूर्ण भयकी सम्भावना है ॥ ५४ ॥ इस समय पांच उँग लियोंके सहित हमारा दहना हाथ जो उठाहुआ देखते हो यही तीर देहमें बहुत कालके बसे हुए प्राणोंको सदाके लिये निकालकर अलग करेगा ॥५५॥ भयंकर पराक्रमकारी रावण हनुमानूजीके वचन सुन क्रोधके मारे लाल २ नेत्रकर उनसे कहता हुआ ॥५६॥ कि, हे वानर ! तुम शंका रहितहोकर शीघ्र

तमालोक्यमहातेजाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ निवार्यशरजालानिविदुद्रावसरावणम् ॥ ५२ ॥ रथंतस्यसमासाद्यबाहुमुद्यम्यदक्षिणम् ॥ त्रास यन्रावणंधीमान्हनूमान्वाक्यमब्रवीत् ॥ ५३ ॥ देवदानवगंधर्वैर्यक्षैश्चसहराक्षसैः ॥ अवध्यत्वंत्वयाप्राप्तंवानरेभ्यस्तुतेभयम् ॥५४॥ एषमे दक्षिणोबाहुःपंचशाखःसमुद्यतः ॥ विधमिष्यतितेदेहेभूतात्मानंचिरोषितम् ॥ ५५ ॥ श्रुत्वाहनूमतोवाक्यंरावणोभीमविक्रमः ॥ संरक्तनयनः क्रोधादिदंवचनमब्रवीत् ॥ ५६ ॥ क्षिप्रंप्रहरनिःशंकंस्थिरांकीर्तिमवाप्नुहि ॥ ततस्त्वांज्ञातविक्रांतंनाशयिष्यामिवानर ॥ ५७ ॥ रावणस्यवचः श्रुत्वावायुसूनुर्वचोब्रवीत् ॥ प्रहतंहिमयापूर्वमक्षंतवसुतंस्मर ॥ ५८ ॥ एवमुक्तोमहातेजारावणोराक्षसेश्वरः ॥ आजघानानिलसुतंतलेनोरसि वीर्यवान् ॥ सतलाभिहतस्तेनचचालचमुहुर्मुहुः ॥ ५९ ॥ स्थितोमुहूर्ततेजस्वीस्थैर्यंकृत्वामहामतिः ॥ आजघानचसंक्रुद्धस्तलेनेवामरद्वि षम् ॥ ६० ॥ ततःसतेनाभिहतोवानरेणमहात्मना ॥ दशग्रीवःसमाधूतोवथाभूमिचलेऽचलः ॥ ६१ ॥

हमारे ऊपर प्रहार करके अचलकीर्तिको प्राप्त करो, उसके पीछे तुम्हारे पराक्रमकी परीक्षा करके फिर हम भी तुम्हारा संहार करेंगे ॥ ५७ ॥ रावणके वचन सुनकर हनुमानूजी बोले कि; हमारे पराक्रमको और अधिक जाननेकी क्या आवश्यकता है; यदि तुम हमारा पराक्रम जानही लेना चाहतेहो तो हमसे विना शको प्राप्त हुए अपने पुत्र अक्षकुमारकी याद कर लो ॥५८॥ महातेजस्वी वीर्यवान् राक्षसोंके स्वामी रावणनेहनुमानूजीसे ऐसा सुन उन पवनकुमारकी छातीमें एक लात मारीउस लातके लगनेसे हनुमानूजी वारंवार विचलित भी हुए॥५९॥परन्तु उन महातेजस्वी हनुमानूजीने भी एकमुहूर्तमें स्थिर अत्यन्त क्रोध सहित एक लात देवशत्रु रावणके ऊपर चलाई ॥ ६० ॥ तब दशमुख रावण उन महाबलवान् हनुमानूजीके चरणकी चोट खाये भूडोलके समय कांपते हुए पर्वतके

समान कम्पायमान होने लगा ॥ ६१ ॥ उस कालमें सिद्ध, चारण, ऋषि, देवता और असुरगण रावणको संग्रामभूमिमें इस प्रकारसे लातके प्रहारसे चेतना रहित होते देखकर आनंदकेमारे सिंहनाद करने लगे ॥६२॥ उसके पीछे रावण कुछ देरमें चेतना पाकर स्थिर हो हनुमान् जीसे बोला कि; हे वानर ! तुम अपने वीर्यके प्रभावसे बडाई करनेके योग्य हुए हो और इस बातसे हम भी बडाई करनेके योग्य हुए हैं कि, तुम समान बलवान् हमारे शत्रु हुए हैं तुम श्लाघनीय शत्रु हो ॥ ६३ ॥ जब रावणने इस प्रकारसे कहा तब हनुमान्जी बोले हे रावण ! मेरे वीर्यको धिक्कार है; कारण कि, मेरे लातके प्रहारको खाकर भी तू अबतक जीवित है ॥ ६४ ॥ रे निर्बोध ! तू वृथा क्यों गर्व करता ? और एक बार प्रहार कर देख उसके पीछे हमारा यह घूंसा तुझको यमराजके भवनमें

संग्रमेंततथादृष्ट्वारावणंतलताडितम् ॥ ऋषयोवानराःसिद्धानेदुर्देवाःसुरासुरैः ॥६२॥ अथाश्वास्यमहातेजारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥साधुवान रवीर्येणश्लाघनीयोसिमेरिपुः ॥ ६३ ॥ रावणेनैवमुक्तस्तुमारुतिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ धिगस्तुममवीर्यस्ययत्त्वंजीवसिरावण ॥ ६४ ॥ सकृत्तुप्र हरेदानींदुर्बुद्धेकिंविकत्थसे॥ततस्त्वामामकोमुष्टिर्नयिष्यतियमक्षयम् ॥६५॥ततोमारुतिवाक्येनकोपस्तस्यप्रजज्वले ॥ संरक्तनयनोयत्नान्मुष्टि मावृत्यदक्षिणम् ॥ पातयामासवेगेनवानरोरसिवीर्यवान् ॥६६॥ हनूमान्वक्षसिव्यूढेसंचचालपुनःपुनः ॥ विह्वलंततदादृष्ट्वाहनूमंतंमहाबलम् ॥ ६७ ॥ रथेनातिरथःशीघ्रंनीलंप्रतिसमभ्यगात् ॥ राक्षसानामधिपतिर्दशग्रीवःप्रतापवान् ॥ ६८ ॥ पन्नगप्रतिमैर्भीमैःपरमर्माभिभेदनैः ॥ शरैरादीपयामासनीलंहरिचमूपतिम् ॥ ६९ ॥ सशरौघसमायस्तोनीलोहरिचमूपतिः ॥ करेणैकेनशैलाग्रंरक्षोधिपतयेसृजत् ॥ ७० ॥

पहुँचावेगा ॥ ६५॥ पवनकुमार हनुमान्जीके ऐसे वचन सुनकर वीर्यवान् रावणके क्रोधकी अग्नि भडक उठी, और दोनों नेत्र लाल हो आये, और उस पराक्रमीने अपने हाथकी मुठ्ठी बांधकर वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीकी छातीमें एक घूंसा मारा ॥ ६६ ॥ हनुमान्जी भी बडी छातीमें घूंसेका प्रहार लगनेसे वारंवार चलायमान हो चेतना रहित हुए महाबलवान् हनुमान्जीको विह्वल देखकर ॥ ६७ ॥ अतिरथ रावण रथपर चढा हुआ शीघ्र नीलके सन्मुख आया राक्षसोंके राजा दशग्रीव प्रतापशाली रावणने ॥ ६८ ॥ पराये मर्मको भेदनेवाले भयंकर सर्पके विषके समान बाणोंके समूहसे वानरोंके सेनापति नीलको मारा॥६९॥ परन्तु वानरोंके सेनापति नीलने बाणोंसे घायल होकर भी एक हाथसे एक पर्वतका शृङ्ग ग्रहण कर राक्षस पति रावणके ऊपर चलाया ॥ ७० ॥

इतनेहीमें इस ओर महातेजस्वी हनुमानजी चेतना प्राप्तकर सावधान हो समर करनेकी वासनासे चारोंओर निहार राक्षस रावणको नीलके साथ युद्ध करते हुए देख क्रोधमें भरकर बोले ॥७१॥ कि, हे रावण ! इस समय तुम नीलके साथ युद्ध कर रहे हो; इस कारण इस समय तुम्हारे ऊपर धावमान होना हमें उचित नहीं है नहीं तो अभी तुम्हें हम भलीभांति सिखावन देते ॥ ७२ ॥ परन्तु अतुल तेजस्वी बलशाली राक्षसेंद्र रावणने हनुमानजीके वचनोंका निरादर करके उस नीलके छोडे हुए पर्वतके शिखरको ताडकर ऐसे सात बाण छोड़े कि, जिससे वह श्रृङ्ग खंड २ होकर पृथ्वीमें पर गिर पडा ॥७३॥ तब परवीरघाती वानरसेनापति नील संग्रामभूमिमें उस पर्वतके श्रृङ्गको खंड २ होकर पृथ्वीपर गिरा हुआ देख कोपके मारे प्रलयकी अग्निके समान जल उठे ॥ ७४ ॥ उस समय वह सेनापति नील अश्वकर्ण, धव, शाल और बौरे हुए आम इत्यादि वृक्ष उखाड २ कर समरमें रावणके ऊपर चलाने लगे ॥ ७५ ॥ राक्षसोंके राजा

हनूमानपितेजस्वीसमाश्वस्तोमहामनाः ॥ विप्रेक्षमाणोयुद्धेप्सुःसरोषमिदमब्रवीत् ॥ ७१ ॥ नीलेनसहसंयुक्तंरावणंराक्षसेश्वरम् ॥ अन्येनयुध्यमानस्यनयुक्तमभिधावनम् ॥ ७२ ॥ रावणोथमहातेजास्तंशृंगंसप्तभिःशरैः ॥ आजघानसुतीक्ष्णाग्रैस्तद्विशीर्णंपपातह ॥ ७३ ॥ तद्विशीर्णंगिरेःशृंगंदृष्ट्वाहरिचमूपतिः ॥ कालाग्निरिवजज्वालकोपेनपरवीरहा ॥ ७४ ॥ सोश्वकर्णद्रुमान्शालांश्चूतांश्चापिसुपुष्पितान् ॥ अन्यांश्चविविधान्वृक्षान्नीलश्चिक्षेपसंयुगे ॥ ७५ ॥ सतान्वृक्षान्समासाद्यप्रतिचिच्छेदरावणः ॥अभ्यवर्षच्चघोरेणशरवर्षेणपावकिम् ॥ ७६ ॥ अभिवृष्टःशरौघेणमेघेनेवमहाबलः ॥ ह्रस्वंकृत्वाततोरूपंध्वजाग्रेनिपपातह ॥ ७७ ॥ पावकात्मजमालोक्यध्वजाग्रेसमवस्थितम् ॥ जज्वालरावणःक्रोधात्ततोनीलोननादच ॥ ७८ ॥ ध्वजाग्रेधनुषश्चाग्रेकिरीटाग्रेचतंहरिम् ॥ लक्ष्मणोथहनूमांश्चरामश्चापिसुविस्मिताः ॥ ७९ ॥ रावणोपिमहातेजाःकपिलाघवविस्मितः ॥ अस्त्रमाहारयामासदीप्तमाग्नेयमद्भुतम् ॥ ८० ॥

रावणने इन समस्त चलाए हुए वृक्षोंको देखते २ खंड २ करडाला और नीलके ऊपर बाणोंकी घोर वर्षा करने लगा ॥ ७६ ॥ मेघ जिस प्रकार जल वर्षाते हैं वैसेही लंकेश्वर रावणकी बाणवर्षासे घबडाय वानरसेनापति नील अपने देहको छोटा बनाय कूदकर रावणकी ध्वजापर कूद गये ॥ ७७ ॥ तब दशानन रावण अग्निपुत्र नीलको अपनी ध्वजापर बैठा हुआ देखकर क्रोधके मारे जल उठा यह देखकर वानर सेनापति नीलने घोर सिंहनाद किया ॥ ७८ ॥ इस प्रकारसे वानरोंके सेनापति नील कभी रावणकी ध्वजाके डंडेपर; कभी धनुषपर, और कभी २ रावणके मुखके आगे विराजमान होने लगे सेनापति नीलकी यह अनुपम वीरता देखकर श्रीरामचन्द्र, लक्ष्मण व हनुमानजीअत्यन्त विस्मित हुए ॥ ७९ ॥ रावणने भी सेनापति नीलकी यह अद्भुतरणकी चतुरता देख अत्यन्त विस्मित हो एक अद्भुत प्रदीप्त अग्निबाण ग्रहण किया ॥ ८० ॥

इस ओर वानरगण रावणको नीलकी शीघ्रता और चंचलतासे सम्भ्रान्तचित्त देख आनंदसे कुलाहल करने लगे ॥ ८१ ॥ रावण भी वानर दलका ऐसा शब्द सुनकर इस प्रकार क्रोधयुक्त और सम्भ्रान्त चित्त हुआ कि, अपने कर्तव्यको वह निश्चय न कर सका कि, अब क्या करना चाहिये ? ॥ ८२ ॥ उसके पीछे उस महातेजस्वी राक्षसोंके पति रावणने आग्नेयास्त्रसे युक्त बाण ग्रहण करके ध्वजापर बैठे हुए नीलकी ओर दृष्टि करके कहा ॥८३॥ तब महातेजस्वी राक्षसोंका स्वामी रावणने नीलसे कहा कि, हे वानर ! तुमने वारंवार मायासे अपना छोटा रूप बनाकर हमको धोखा दिया ॥८४॥ परन्तु अब जो समर्थ हो तो अपने जीवकी रक्षा कर, कारण कि, हमने देखा कि, तैंने मायाके प्रभावसे वारंवार अपने रूपको छोटा बनाया है सो अब भी वही छोटारूप बनाकर अपने जीवन

ततस्तेचुक्रुशुर्हृष्टालब्धलक्षाःप्लवंगमाः ॥ नीललाघवसंभ्रांतंदृष्ट्वारावणमाहवे ॥ ८१ ॥ वानराणांचनादेनसंरब्धोरावणस्तदा ॥ संभ्रमाविष्टहृदयोनकिंचित्प्रत्यपद्यत ॥ ८२ ॥ आग्नेयेनापिसंयुक्तंगृहीत्वारावणःशरम् ॥ ध्वजशीर्षस्थितंनीलमुदैक्षतनिशाचरः ॥ ८३ ॥ ततोऽब्रवीन्महातेजारावणोराक्षसेश्वरः ॥ कपेलाघवयुक्तोसिमायययापरयासह ॥ ८४ ॥ जीवितंखलुरक्षस्वयदिशक्तोसिवानर ॥ तानितान्यात्मरूपाणिसृजसित्वमनेकशः ॥ ८५ ॥ तथापित्वांमयामुक्तःसायकोस्त्रप्रयोजितः ॥ जीवितंपरिरक्षंतंजीवितादभ्रंशयिष्यति ॥ ८६ ॥ एवमुक्त्वामहाबाहूरावणोराक्षसेश्वरः ॥ संधायबाणमस्त्रेणचमूपतिमताडयत् ॥ ८७ ॥ सोस्त्रमुक्तेनबाणेननीलोवक्षसिताडितः ॥ निर्दह्यमानःसहसासपपातमहीतले ॥ ८८ ॥ पितृमाहात्म्यसंयोगादात्मनश्चापितेजसा ॥ जानुभ्यामपतद्भूमौनतुप्राणैर्वियुज्यत॥ ८९ ॥ विसंज्ञंवानरंदृष्ट्वादशग्रीवोरणोत्सुकः ॥ रथेनांबुदनादेनसौमित्रिमभिदुद्रुवे ॥ ९० ॥

की रक्षा कर ॥८५॥ परन्तु तुम्हारे अनंत चेष्टाओं करके जीवनकी रक्षामें यत्नवान् होनेपर भी आग्नेयास्त्र युक्त हमारा यह बाण प्राणरक्षा करते हुए तुम्हारे प्राणोंका नाश कर देगा ॥ ८६ ॥ महाबाहु राक्षसराज रावणने यह कहकर आग्नेयास्त्रसे शर सन्धान कर सेनापति नीलके ऊपर वह बाण चलाया ॥ ८७ ॥ तब सेनापति नीलकी छातीमें वह अग्निबाण लगा कि, जिसके लगनेसे वह जलते हुए सहसा गिर पडे ॥८८॥ परन्तु अपने तेज और पिता अग्निके माहात्म्यसे इस आग्नेयास्त्रसे उनके प्राणोंका नाश नहीं हुआ वह केवल दोनों जांघोंको पकडे हुए पृथ्वीपर गिर पडे ॥ ८९ ॥ इस ओर समरका अभिलाषी रावण वानरश्रेष्ठ नीलको चेतना रहित देख मेघके समान शब्द करते हुए अपने रथको चलायकर सुमित्राकुमार लक्ष्मणजीकी ओर चला ॥९०॥

प्रतापवान् रावण लक्ष्मण जीको प्राप्त होकर वानरोंको निवारण कर अपने तेजसे विराजमान हो वारंवार अपने धनुषको टंकारने लगा ॥९१॥ तब प्रबल बलशाली सुमित्रानंदन लक्ष्मणजी रावणको इस प्रकारसे धनुषपर टंकार देते देखकर बोले, हे राक्षसनाथ! वानरोंके साथ युद्ध करना तुमको उचित नहीं है क्योंकि वह तुम्हारे समानके नहीं हैं इस कारण उनसे युद्ध न करके हमारे साथ युद्ध करो, हम तुमसे युद्ध करनेके लिये तैयार हैं ॥९२॥ यह कहकर लक्ष्मणजी धनुषपर टंकार देने लगे तब राक्षसराज दशानन उनके प्रति शब्दपूर्ण वचन और धनुषकी टंकारका उग्र शब्द श्रवण करके और सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजीको इस प्रकारसे आगे खडा देखकर क्रोधसे पूर्ण यह वचन बोला ॥९३॥ हे लक्ष्मण! तुम्हारा समय पूर्ण होगया इस कारणसे तुम्हारी बुद्धिमें विपरीतता आगई है इस कारणसे ही या हमारे सौभाग्यहीसे जब कि तुम आज हमारी दृष्टिके मार्गमें पडे हो तब निश्चयही हमारे बाणोंसे छिन्न भिन्न इसी मुहूर्तमें तुम यमलोककी

आसाद्यरणमध्येतुवारयित्वास्थितोज्वलन् ॥ धनुर्विस्फारयामासराक्षसेंद्रःप्रतापवान् ॥९१॥ तमाहसौमित्रिरदीनसत्त्वोविस्फारयंतंधनुरप्रमेयम् ॥ अवेहिमामद्यनिशाचरेंद्रनवानरांस्त्वंप्रतियोद्धुमर्हसि ॥ ९२ ॥ सतस्यवाक्यंप्रतिपूर्णघोषंज्याशब्दमुग्रंचनिशम्यराजा॥ आसाद्यसौमित्रिमुपस्थितंतंरोषान्वितंवाचमुवाचरक्षः ॥ ९३ ॥ दिष्ट्यासिमेराघवदृष्टिमार्गंप्राप्तोंतगामीविपरीतबुद्धिः ॥ अस्मिन्क्षणेयास्यसिमृत्युलोकंसंसाद्यमानोममबाणजालैः ॥ ९४ ॥ तमाहसौमित्रिरविस्मयानोगर्जंतमुद्वृत्तशिताग्रदंष्ट्रम् ॥ राजन्नगर्जंतिमहाप्रभावाविकत्थसेपापकृतांवरिष्ठ ॥ ९५ ॥ जानामिवीर्यंतवराक्षसेंद्रबलंप्रतापंचपराक्रमंच ॥ अवस्थितोहंशरचापपाणिरागच्छकिंमोघविकत्थनेन ॥ ९६ ॥ सएवमुक्तःकुपितःससर्जरक्षोधिपःसप्तशरान्सुपुंखान् ॥ ताँल्लक्ष्मणःकांचनचित्रपुंखैश्चिच्छेदबाणैर्निशिताग्रधारैः॥ ९७ ॥

यात्रा करोगे ॥ ९४ ॥ रावणके यह वचन सुनकर महावीर लक्ष्मणजी विस्मय रहित हो बोले हे रावण! तुम पापी लोगोंके अगुए हो इसीसे निर्लज्ज हो गर्ज २ कर अपने उज्ज्वल दांत बाहर निकाल ऐसी बकवाद कर रहे हो परन्तु महाप्रभावी लोग कभी ऐसा नहीं कहते ॥ ९५ ॥ हे राक्षसेंद्र! हम तुम्हारे वीर्य, बल, प्रताप और पराक्रमको भली भाँति जानते हैं (अर्थात् सूने आश्रमको पाकर जानकीको हर लाये हो इससे यह ध्वनि निकलती है) इस लिये अब ऐसे बकवाद करनेका कुछ प्रयोजन नहीं है, हम धनुष बाण धारण करके टिके हुए हैं, तुम भी आगेको बढो ॥ ९६ ॥ जब लक्ष्मणजीने ऐसा कहा तब रावणने लक्ष्मणजीके ऊपर श्रेष्ठ फोंक लगे हुए सात बाण चलाये सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजीने तीखे धारयुक्त सुपुंख बाणोंसे उन रावणके चलाये बाणोंको

काट डाला ॥ ९७ ॥ तब लंकापति रावण शरीर कटे सर्पोंके समान उन बाणोंको सहसाखण्ड २ देखकर अत्यन्त क्रोधित हुआ व और दूसरे तीखे बाण लक्ष्मण जीके ऊपर चलाने लगा ॥ ९८ ॥ परन्तु श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई वीर लक्ष्मणजी उन बाणोंसे चलायमान न होकर अपने धनुषको चढाकर बाणोंकी वर्षा करने लगे, और छुरे अर्द्धचन्द्र व तीखे फलके लगे हुए भालोंसे रावणके चलाये हुए बाणोंको खण्ड २ करते हुए ॥ ९९ ॥ उन अमोघ बाणोंके जालको निष्फल देख और लक्ष्मणजीकी शीघ्रतासे भी विस्मित हो देवशत्रु राजा रावणने फिर तीक्ष्ण बाण चलाये ॥ १०० ॥ तब लक्ष्मणजीने भी अपने धनुषको चढाय इन्द्रके वज्रके समान वेगवान् अग्निके समान तीक्ष्ण धारवाले बाण राक्षसपति रावणके वध करनेके लिये छोडे ॥ १०१ ॥ परन्तु राक्षसोंके

तान्प्रेक्षमाणःसहसानिकृत्तान्निकृत्तभोगानिवपन्नगेंद्रान् ॥ लंकेश्वरःक्रोधवशंजगामससर्जचान्यान्निशितान्पृषत्कान् ॥ ९८ ॥ सबाणवर्षंतुववर्षतीव्रंरामानुजःकार्मुकसंप्रयुक्तम् ॥ क्षुरार्धचंद्रोत्तमकर्णभल्लैःशरांश्चचिच्छेदनचुक्षुभेच ॥ ९९ ॥ सबाणजालान्यपितानितानिमोघानिपश्यंस्त्रिदशारिराजः॥ विसिस्मियेलक्ष्मणलाघवेनपुनश्चबाणान्निशितान्मुमोच॥ १०० ॥ सलक्ष्मणश्चाशुशरान्शिताग्रान्महेंद्रतुल्योशनिभीमवेगान् ॥ संधायचापज्वलनप्रकाशान्ससर्जरक्षोधिपतेर्वधाय ॥ १ ॥ सतान्प्रचिच्छेदहिराक्षसेंद्रःशितान्छराँल्लक्ष्मणमाजघान ॥ शरेणकालाग्निसमप्रभेणस्वयंभुदत्तेनललाटदेशे ॥ २ ॥ सलक्ष्मणोरावणसायकार्तश्चचालचापंशिथिलंप्रगृह्य ॥ पुनश्चसंज्ञांप्रतिलभ्यकृच्छ्राच्चिच्छेदचापंत्रिदशेन्द्रशत्रोः ॥३॥ निकृत्तचापंत्रिभिराजघानबाणैस्तदादाशरथिःशिताग्रैः॥ ससायकार्तोविचचालराजाकृच्छ्राच्चसंज्ञांपुनराससाद ॥ ४ ॥ सुकृत्तचापःशरताडितश्चमेदार्द्रगात्रोरुधिरावसिक्तः ॥ जग्राहशक्तिंस्वयमुग्रशक्तिःस्वयंभुदत्तांयुधिदेवशत्रुः ॥ ५ ॥

स्वामी रावणने उन समस्त बाणोंको काटकर ब्रह्माजीके दिये हुए प्रलयकी अग्निके प्रचण्ड बाणसे लक्ष्मणजीके माथेमें प्रहार किया॥१०२॥ लक्ष्मणजी रावणके बाणसे अत्यन्त पीडित आर्त होकर क्षणभरको चलायमान हुए, परन्तु अनेक कष्ट करके क्षणभरमें ही चेतना पाय अपने हाथसे शिथिल हुये धनुष काट डाला ॥ १०३ ॥ दशरथ कुमार लक्ष्मणजीने इस प्रकारसे रावणका धनुष काटकर अत्यन्त तीखे तीन बाण उन राक्षसराजके मारे, रावण उन बाणोंसे अत्यन्त पीडित होकर मोहित हो गया और फिर अत्यन्त कष्टसे मूर्च्छासे जागा ॥ १०४ ॥ लक्ष्मणजीसे धनुष कटजाने और उनके बाणोंसे ताडित होनेके कारण उग्र सामर्थ्यवान् देवशत्रु रावणके अंगोंमें चरबीसे मिला हुआ रुधिर निकलनेसे दूसरा उपाय देखकर उसने युद्धमें ब्रह्माजीकी दी हुई अमोघ (अव्यर्थ) शक्ति

ग्रहण की ॥ १०५ ॥ राक्षसोंके राजा रावणने सुमित्रा कुमार लक्ष्मणजीको ताककर संग्रामभूमिमें वानरोंको त्रास उपजानेवाली और धुयें सहित अग्निके समान जलती हुई वह शक्ति छोड दी ॥ १०६ ॥ भरतजीके छोटे भाई लक्ष्मणजीने उस शक्तिको अपने ऊपर गिरती हुई देखकर उसको ताक असंख्य अग्निके समान बाण छोडे तथापि वह शक्ति किसी प्रकारसे व्यर्थ न होकर लक्ष्मण जीकी विशाल भुजामें आकर प्रवेश करती हुई ॥ १०७ ॥ तब वह शक्तिमान् रघुवीर लक्ष्मणजी शक्तिसे घायल होकर पृथ्वीमें गिरते हुए देखकर राक्षसराज रावण सहसा उनके निकट चला गया, और उनको उठानेके अभिप्रायसे भुजाओंके बल सहित ग्रहण करता हुआ ॥ १०८ ॥ परन्तु आश्चर्य ! जो महावीर हिमालय; मन्दर, सुमेरु, बरन् सब प्राणियोंके सहित त्रिलोकके

सतांसधूमानलसन्निकाशांवित्रासनींसंयतिवानराणाम् ॥ चिक्षेपशक्तिंतरसाज्वलंतींसौमित्रयेराक्षसराष्ट्रनाथः ॥६॥ तामापतंतींभरतानुजोस्त्रैर्जघानबाणश्चहुताग्निकल्पैः ॥ तथापिसातस्यविवेशशक्तिर्भुजांतरंदाशरथेर्विशालम् ॥७॥ सशक्तिमाञ्छक्तिसमाहतःसञ्जज्वालभूमौसरघुप्रवीरः॥ तंविह्वलंतंसहसाभ्युपेत्यजग्राहराजातरसाभुजाभ्याम् ॥८॥ हिमवान्मंदरोमेरुस्त्रैलोक्यंवासहामरैः ॥ शक्यंभुजाभ्यामुद्धर्तुंनशक्योभरतानुजः ॥९॥शक्त्याब्राह्मयातुसौमित्रिस्ताडितोपिस्तनांतरे॥ विष्णोरमीमांस्यभागमात्मानंप्रत्यनुस्मरत्॥११०॥ततोदानवदर्पघ्नंसौमित्रिंदेवकंटकः॥ तंपीडयित्वाबाहुभ्यांनप्रभुर्लंघनेभवत् ॥ ११ ॥ ततःक्रुद्धोवायुसुतोरावणंसमभिद्रवत् ॥ आजघानोरसिक्रुद्धोवज्रकल्पेनमुष्टिना ॥ १२ ॥

उठानेको समर्थ हैं; वही वीर रावण आज लक्ष्मणजीके उठानेको किसी प्रकारसे समर्थ नहीं हुआ॥ १०९ ॥ ब्रह्माजीकी शक्तिके छातीमें लगनेसे यद्यपि लक्ष्मणजी मूर्च्छित भी हुए तथापि विष्णुजी भी जिन श्रीरामचन्द्रजीको यथार्थतासे नहीं जानते कि, इनमें कितनी सामर्थ्य है, ऐसे ऐश्वर्ययुक्त सबके प्रेरणा करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीका इन लक्ष्मणजीने स्मरण किया अथवा यह कि, मैं विष्णुका अप्रमेय भाग हूं इस प्रकार स्मरण किया, इस कारणचौदह भुवनोंसे कोटिगुणी अधिक गरुआई लक्ष्मणजीमें आगई कि; जिससे रावण इनको उठा नहीं सका ॥ ११० ॥ देवताओंका कण्टक रावण इस बातको जानकरही देव दानवोंका गर्व हरनेवाले लक्ष्मणजीको उठानेके लिये अपनी बीसों भुजाओंसे बहुतेरी चेष्टा करता हुआ परन्तु इससे किसी प्रकारसे लक्ष्मणजीकी मर्यादा उल्लंघन नहीं हो सकी ॥ १११ ॥ इतनेहीमें पवनकुमार हनुमान्‌जीने लक्ष्मणजीको मूर्च्छित हुआ देख क्रोधित हो रावणके सम्मुख धाये और वज्रके समान मूका बांधकर अतिवेगसे उसकीछातीमें मारा ॥ ११२ ॥

राक्षसोंका स्वामी रावण उस मूकके प्रहारसे चेतना रहित और रथसे गिरकर अपनी दोनों जांघोंके बल कांपता थरथराता रथकी पृष्ठरूप भूमिपर वा भूमिपर गिर पडा ॥ ११३ ॥ इस समय रावणके मुख नेत्र और कानोंसे बहुतही रुधिर बहने लगा और जब उठा तो वह ज्ञान रहित हो घूमता २ फिर अपने रथपर जाकर गिरा ॥११४॥ ऐसा मूर्च्छित यह रावण हुआ कि, हाथ पैर कुछ भी इसके नहीं चलते थे, तब भयंकर विक्रमकारी रावणको मूर्च्छित हुआ देखकर ॥ ११५ ॥ वानर ऋषि सिद्ध और इन्द्रादि देवगण सिंहनाद करने लगे उसकेपीछे तेजस्वी हनुमानजी रावणसे पीडित लक्ष्मणजीको ॥११६॥ अपने दोनों बांहोंसे ग्रहण करके श्रीरामचन्द्रजीके पास लाये सुमित्रानंदन लक्ष्मणजी शत्रुलोगोंसे कंपायमान होनेके योग्य नहीं इस कारण रावणके उठानेसे न उठे,

तेनमुष्टिप्रहारेणरावणोराक्षसेश्वरः ॥ जानुभ्यामगमद्भूमौचचालचपपातच ॥ १३ ॥ आस्यैश्चनेत्रैःश्रवणैःपपातरुधिरंबहु ॥ विघूर्णमानोनिश्चेष्टोरथोपस्थउपाविशत् ॥ १४ ॥ विसंज्ञोमूर्च्छितश्चासीन्नचस्थानंसमालभत् ॥ विसंज्ञंरावणंदृष्ट्वासमरेभीमविक्रमम् ॥ ११५ ॥ ऋषयोवानराश्चैवनेदुर्देवाश्चसासुराः ॥ हनूमानथतेजस्वीलक्ष्मणंरावणार्दितम् ॥ १६ ॥ आनयद्राघवाभ्याशंबाहुभ्यांपरिगृह्यतम् ॥ वायुसूनोःसुहृत्त्वेन भक्त्यापरमयाचसः ॥ शत्रूणामप्यकंप्योपिलघुत्वमगमत्कपेः ॥ ११७ ॥ तंसमुत्सृज्यसाशक्तिःसौमित्रिंयुधिनिर्जितम् ॥ रावणस्यरथेतस्मिन्स्थानंपुनरुपागमत् ॥ १८ ॥ रावणोपिमहातेजाःप्राप्यसंज्ञांमहाहवे ॥ आददेनिशितान्बाणाञ्जग्राहचमहद्धनुः ॥ १९ ॥ आश्वस्तश्चविशल्यश्चक्ष्लमणःशत्रुसूदनः ॥ विष्णोर्भागममीमांस्यमात्मानंप्रत्यनुस्मरन् ॥ १२० ॥ निपातितमहावीरांवानराणांमहाचमूम् ॥ राघवस्तुरणे दृष्ट्वारावणंसमभिद्रवत् ॥ २१ ॥ अथैनमनुसंक्रम्यहनूमान्वाक्यमब्रवीत् ॥ ममपृष्ठंसमारुह्यराक्षसंशास्तुमर्हसि ॥ २२ ॥

परन्तु हनुमानजीकी सौहार्दता और परमभक्तिसे प्रसन्न होकर वह उनके लिये बहुतही हलके होगये ॥११७॥ उसके पीछेवह शक्ति संग्रामभूमिको छोडे हुए लक्ष्मणजीको त्यागकर रावणके रथमेंआकर अपने स्थानपर विराजमान हुई ॥११८॥ अतुलतेजस्वी रावणनेभी उस बडेभारी संग्राममें चैतन्यताको पायफिर अपना बडा भारी धनुष और तीक्ष्ण बाण ग्रहणकिये ॥११९॥ इस ओर शत्रुओंके मारनेवाले लक्ष्मणजीभी अपने अचिन्तनीय वैष्णवअंशको स्मरण कर व्यथारहित और सावधानचित्तहुए ॥१२०॥ तब रघुनंदन श्रीरामचंद्रजी वानरोंकी सेनाके अनेकवीरोंको रावणके हाथसे मृतक होते देखकरशीघ्रतासे उसकीओर चले ॥१२१॥ श्रीरामचन्द्रजीको संग्राम करनेके लिये तैयारदेखकर वीर हनुमानजी उनसे हाथजोडकर बोले कि, हमारी पीठपर सवार होकरआप रावणका वध कीजिये॥१२२॥

विष्णुजीने जिसप्रकार गरुणजीपर सवार होकर देवताओंके वैरी दैत्योंका संहार किया था वैसेही आप कीजिये,श्रीरामचन्द्रजी हनुमानूजीके कहे हुए ऐसे वचन सुनकर ॥ १२३ ॥ महाबाहु हनुमानूजीकी पीठपर चढे और श्रीरामचन्द्रजीने रावणकोभी रथपर चढे हुए देखा ॥ १२४ ॥ महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी उस रावणको देखकर विष्णुजी जिस प्रकार क्रोधित हो अस्त्र धारणकर राजा बलिपर दौडे थे वैसेही रावणके सन्मुख धाये ॥ १२५ ॥ तब श्रीरामचन्द्रजी अपने धनुषपर वज्रके शब्दके समान कठोर टंकार दे रावणसे यह गंभीर वचन बोले ॥१२६॥ रे राक्षस शार्दूल ! खडारह ? खडारह तू हमारे ऐसे कुप्यारे कार्यको करके क्या स्थानमें भागकर छुटकारा पासकता है ? ॥ १२७ ॥ तुम यदि भागकर इन्द्र, यम, सूर्य, ब्रह्मा, अग्नि अथवा श्रीशंकरजीके भी शरणमें जाओ; या

विष्णुर्यथागरुत्मंतमारुह्यामरवैरिणम् ॥ तच्छ्रुत्वाराघवोवाक्यंवायुपुत्रेणभाषितम् ॥२३॥ अथारुरोहसहसाहनूमंतंमहाकपिम् ॥ रथस्थरावणं संख्येददर्शमनुजाधिपः ॥२४॥ तमालोक्यमहातेजाःप्रदुद्रावसरावणम् ॥ वैरोचनमिवक्रुद्धोविष्णुरभ्युद्यतायुधः ॥२५॥ ज्याशब्दमकरोत्तीव्रंवज्रनिष्पेषनिष्ठुरम् ॥ गिरागंभीरयारामोराक्षसेंद्रमुवाचह ॥ २६ ॥ तिष्ठतिष्ठममत्वंहिकृत्वाविप्रियमीदृशम्॥ क्वनुराक्षसशार्दूलगत्वामोक्षमवाप्स्यसि ॥२७॥ यदींद्रवैवस्वतभास्करान्वास्वयंभुवैश्वानरशंकरान्वा ॥ गमिष्यसित्वंदशधादिशोवातथापिमेनाद्यगतोविमोक्ष्यसे ॥२८॥ यश्चैषशक्त्यानिहतस्त्वयाद्यगच्छन्विषादंसहसाभ्युपेत्य ॥ सएषरक्षोगणराजमृत्युःसपुत्रपौत्रस्यतवाद्ययुद्धे ॥२९॥ एतेनचात्यद्भुतदर्शनानि शरैर्जनस्थानकृतालयानि ॥ चतुर्दशान्यात्तवरायुधानिरक्षःसहस्राणिनिषूदितानि ॥ १३० ॥ राघवस्यवचःश्रुत्वाराक्षसेंद्रोमहाबलः ॥ वायुपुत्रंमहावेगंवहंतंराघवंरणे ॥ ३१ ॥ रोषेणमहताविष्टःपूर्ववैरमनुस्मरन् ॥ आजघानशरैर्दीप्तैःकालानलशिखोपमैः ॥ ३२ ॥

दशों दिशाओंमें कहीं जाकर छिपो तथापि आज हमारे हाथसे तुम किसी प्रकारसे निस्तार न पासकोगे ॥ १२८ ॥ हे राक्षसराज ! तेरे द्वाराघायल होकर लक्ष्मण विषादित हुए हैंहम इसी दुःखसे आज प्रतिज्ञा करके तुम्हारे पुत्रोंके सहित तुम्हारे मृत्युके स्वरूप हो रणभूमिमें आये हैं ॥ १२९ ॥ विचार कर याद करले कि, जनस्थानके रहनेवाले श्रेष्ठ अस्त्र शस्त्र धारण किये अद्भुतदर्शन चौदह हजार (१४०००) राक्षसोंका हमनेही प्राणसंहार किया है ॥ १३० ॥ महा बलवान् रावणने श्रीरामचन्द्रजीके ऐसे वचन सुन महावेगवान् पवनकुमार हनुमानूजीकी पीठमें जो कि, श्रीरामचन्द्रजीको अपने ऊपर चढा रहे थे ॥ १३१ ॥ अत्यन्त क्रोधयुक्त हो पहला वैर सँभाल; कालाग्निके समान प्रकाशित अत्यन्त तीखे बाण मारे ॥ १३२ ॥

जो कि, हनुमान्‌जीके लगे, परन्तु संग्राममें रावणके बाणोंसे ताडित हुए स्वभावसेही महातेजस्वी हनुमानजीका तेज और भी अधिक बढा ॥ १३३ ॥ उसके पीछे महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी हनुमान्‌जीकी पीठमें रावणके बाणोंसे घाव हुआ देखा अत्यन्त क्रोध करते हुए॥ १३४ ॥ उन श्रीरामचन्द्रजीने तीक्ष्ण बाणोंको चलायकर पहिये, घोडे, छत्र, पताका, सारथि, शूल और खड्गके सहित रावणका रथ चूर्ण और छिन्नभिन्न करके रत्ती २ काट डाला॥ १३५ ॥ जिस प्रकार भगवान् इन्द्रजीने सुमेरु पर्वतको चूर्ण किया था, वैसेही वज्र और अशनिसमान बाणोंसे उन्होंने इन्द्रके शत्रु रावणकी छातीमें चोट दी; और विविध भांतिके गहनोंसे युक्त भुजामें भी प्रहार किया ॥ १३६ ॥ जो पहले वज्र अथवा अशनिके आघातसेभी क्षुभित या चलायमान नहीं हुआ वही वीर श्रेष्ठ रावण

राक्षसेनाहतेतस्यताडितस्यापिसायकैः ॥ स्वभावतेजोयुक्तस्यभूयस्तेजोभ्यवर्धत ॥३३॥ ततोरामोमहातेजारावणेनकृतव्रणम् ॥ दृष्ट्वाप्लवगशार्दूलंक्रोधस्यवशमेयिवान् ॥३४॥ तस्याभिसंक्रम्यरथंसचक्रंसाश्वध्वजच्छत्रमहापताकम् ॥ ससारथिंसाशनिशूलखड्गंरामःप्रचिच्छेदशितैःशराग्रैः ॥ ३५ ॥ अथेंद्रशत्रुंतरसाजघानबाणेनवज्राशनिसन्निभेन ॥ भुजांतरेव्यूढसुजातरूपेवज्रेणमेरुंभगवानिवेंद्रः ॥ ३६ ॥ योवज्रपाताशनिसन्निपातान्नचुक्षुभेनापिचचालराजा ॥ सरामबाणाभिहतोभृशार्तश्चचालचापंचमुमोचवीरः ॥ १३७ ॥ तंविह्वलंतंप्रसमीक्ष्यरामःसमाददेदीप्तमथार्धचंद्रम् ॥ तेनार्कवर्णंसहसाकिरीटंचिच्छेदरक्षोधिपतेर्महात्मा ॥ ३८ ॥ तंनिर्विषाशीविषसन्निकाशंशांतार्चिषंसूर्यमिवाप्रकाशम् ॥ गतश्रियंकृत्तकिरीटकूटमुवाचरामोयुधिराक्षसेंद्रम् ॥ ३९ ॥ कृतंत्वयाकर्ममहत्सुभीमंहतप्रवीरश्चकृतस्त्वयाहम् ॥ तस्मात्परिश्रांतइतिव्यवस्यनत्वांशरैर्मृत्युवशंनयामि ॥ १४० ॥

श्रीरामचन्द्रजीके बाणसे घायल होकर ऐसा आर्त और चलायमान हुआ कि; उसका धनुष उसके हाथसे गिर पडा ॥ १३७ ॥ महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजीने रावणको ऐसा व्याकुल देख एक अर्द्धचंद्र दीप्तबाण ग्रहण कर उससे राक्षसपतिका सूर्यके समान प्रकाशित मुकुट काट डाला ॥ १३८ ॥ इस समयमें राक्षसराज रावणकी अवस्था विषहीन सर्प और तेजहीन सूर्यके समान होगई । मुकुटके कटजानेसे रावणकी समस्त सुन्दरता जाती रही, तब श्रीरामचन्द्रजी उससे बोले ॥ १३९ ॥ हे राक्षस ! तुमने घोर युद्ध किया है, तुम्हारे हाथसे हमारी सेनाके अनेक वीर मारे गये हैं इस समय हम तुमको इसी कारणसे बहुत थका हुआ देखते हैं वही विचारकर हमने आज अपने बाणोंसे तुमको यमराजके गृहमें नहीं पठाया ॥ १४० ॥

हे राक्षसराज ! तुम संग्राम करके श्रमके मारे अत्यन्त कातर हुए हो इसलिये हम सलाह देते हैं कि, तुम इससमय लंकामें जायकर सावधान होवो । सावधान होनेके पीछे धनुष धारणकर जब कि फिर संग्रामभूमिमें आगमन करोगे उसी समय तुम हमारा पराक्रम जान सकोगे ॥ १४१ ॥ जब श्रीरामचन्द्रजीने ऐसा कहा तब रावण लंकापुरीको झटपट चला गया, उसका वीरगर्व और उत्साह जाता रहा धनुष कट कुटगया घोडे और सारथीभी नष्टहुए रावणका शरीर बाणोंके लगनेसे घायल होकर उसकी चूडामणि लुप्त होगई ऐसी अवस्थाको पाय मनमें अतिदुःखित रावण लंकापुरीमें प्रवेश करता हुआ ॥ १४२ ॥ देवता और दानव गणोंका शत्रु महाबलवान् निशाचरपतिरावण जब इस प्रकारसे लंकाको चला गया तब श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणजीके सहित रणभूमिमें जो वानर पडेथे; और उनके अंगोंमें जो बाण गडेथे उनको निकलवाडाला और सबकी व्यथा निवारण की ॥ १४३ ॥ इस ओर इन्द्रके शत्रु रावणको रणसे भागते और इसप्रकारसे लंकामें प्रवेश करते

प्रयाहिजानामिरणार्दितस्त्वंप्रविश्यरात्रिंचरराजलंकाम् ॥ आश्वास्यनिर्याहिरथीसधन्वीतदाबलंप्रेक्ष्यसिमेरथस्थः ॥ ४१ ॥ सएवमुक्तोहतदर्पहर्षोनिकृत्तचापःसहताश्वसूतः ॥ शरार्दितोभग्नमहाकिरीटोविवेशलंकांसहसास्मराजा ॥ ४२ ॥ तस्मिन्प्रविष्टेरजनीचरेंद्रेमहाबलेदानवदेवशत्रौ ॥ हरीन्विशल्यान्सहलक्ष्मणेनचकारराम: परमाहवाग्रे ॥ ४३ ॥ तस्मिन्प्रभग्नेत्रिदशेन्द्रशत्रौसुरासुराभूतगणादिशश्च ॥ ससागराःसर्वमहोरगाश्चतथैवभूम्यंबुचराःप्रहृष्टाः ॥ १४४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे एकोनषष्टितमः सर्गः ॥ ५९ ॥
सप्रविश्यपुरींलंकांरामबाणभयार्दितः ॥ भग्नदर्पस्तदाराजाबभूवव्यथितेंद्रियः ॥ १ ॥ मातंगइवसिंहेनगरुडेनेवपन्नगः ॥ अभिभूतोभवद्राजा राघवेणमहात्मना ॥ २ ॥ ब्रह्मदंडप्रतीकानांविद्युच्चलितवर्चसाम् ॥ स्मरन्राघवबाणानांविव्यथेराक्षसेश्वरः ॥ ३ ॥

देखकर सुर, असुर महर्षि उरग, भूगणादिक और समस्तज सागर व भूचर जलचरादि सबही प्राणी प्रसन्न हुए ॥ १४४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकोनषष्टितमः सर्गः ॥ ५९ ॥ इसके पीछे लंकेश्वर दशानन श्रीरामचन्द्रजी बाणोंसे व्यथितहृदय होकर लंकापुरीमें प्रवेश करता हुआ; उसके हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीका भय तबतक प्रबलथा दिग्विजयी होनेका इतनेदिनोंतक जो अभिमानथा आजवह अभिमान चूर्ण होगया ॥ १ ॥ सिंहके निकट हाथी और पन्नगराज गरुड़जीके निकट सर्पकी अवस्था जिसप्रकार होजाती है, श्रीरामचन्द्रजीके निकट रावणकी भी आजवहीअवस्था हुईथी ॥ २ ॥ रावण घरमें बैठकर विकसित सौदामिनीके समान तेजशाली और ब्रह्मदंडके समान बाणोंको याद करके अत्यन्त दुःखी हुआ ॥ ३ ॥

उसके पीछे सुवर्णके बने सिंहासनपर बैठ राक्षसोंकी ओर निहार रावण बोला ॥ ४ ॥ हा ! हमने जो कठोर तप किया था; हमजानते हैं कि आज वह तप वृथा होगया, हम इन्द्रतुल्य प्रतापी होकर जब कि, एक साधारण मनुष्यसे रणभूमिमें हारगये, तब हमारी वीरताही क्या हुई? ॥ ५ ॥ पूर्वकालमें प्रजापति ब्रह्माजीने हमसे कहाथा कि हे राक्षसराज! मनुष्यके हाथसेही तुमको भय है इस समय उनकी वहीबात हमको याद आती है. देखतेहैं कि, अब सत्यही सत्य मनुष्यसे हमको घोर भय आपहुँचा कि, जिसका ठिकाना नहीं ॥ ६ ॥ हमनेवरदान पानेके समय ब्रह्माजीसे देवता गन्धर्व, दानव, यक्ष, राक्षस और सर्प इन सब जातियोंसे न मारे जायं; यह वर मांगा था, मनुष्य जातिको अपदार्थ समझकर "मनुष्य जातिसे भी हम न मारे जायँ" ऐसा वरदान हमने नहीं मांगा

सकांचनमयंदिव्यमाश्रित्यपरमासनम् ॥ विप्रेक्षमाणोरक्षांसिरावणोवाक्यमब्रवीत् ॥४॥ सर्वंतत्खलुमेमोघंयत्ततप्तंपरमंतपः ॥ यत्समानोमहेंद्रेणमानुषेणविनिर्जितः ॥ ५ ॥ इदंतद्ब्रह्मणोघोरंवाक्यंमामभ्युपस्थितम् ॥ मानुषेभ्योविजानीहिभयंत्वमितितत्तथा ॥ ६ ॥ देवदानवगंधर्वैर्यक्षराक्षसपन्नगैः॥अवध्यत्वंमयाप्रोक्तंमानुषेभ्योनयाचितम् ॥७॥ तमिमंमानुषंमन्येरामंदशरथात्मजम् ॥ इक्ष्वाकुकुलजातेनअनरण्येनयत्पुरा ॥ ८ ॥ उत्पत्स्यतिहिमद्वंशेपुरुषोराक्षसाधम ॥ यस्त्वांपुत्रंसामात्यंसबलंसाश्वसारथिम् ॥ ९ ॥ निहनिष्यतिसंग्रामेत्वांकुलाधमदुर्मते ॥ शप्तोहंवेदवत्याचयथासाधर्षितापुरा ॥ १० ॥ सेयंसीतामहाभागाजाताजनकनंदिनी ॥ उमानंदीश्वरश्चापिरंभावरुणकन्यका ॥ ११ ॥

॥ ७ ॥ पूर्व समय इक्ष्वाकुकुलमें उत्पन्न हुए महाराजाधिराज अनरण्यने जो शाप हमको दिया था सो जान पडता है कि, उसही शापका फल फलनेके लिये उनके वंशमें दशरथकुमार रामचन्द्रका जन्म हुआ होगा ॥८॥ महाराजा अनरण्यने कहाथा कि हे राक्षसों में नीच ! हमारे वंशमेंसे एक वीर पुरुष जन्म ग्रहण करेंगे कि, जिसके हाथसे तुम, तुम्हारे पुत्र, मंत्री समस्त सेना, अश्व, सारथी ॥ ९ ॥ इन सबके साथ हे दुर्मति नराधम ! तुम संग्राममें मारे जाओगे. हमने पूर्वकालमें एक बार वेदवतीके प्रति बलप्रकाश करके उसके सतीपनका अपमान किया था ॥ १० ॥ सो अब जान पडता है कि, उन वेदवतीहीने इन महाभागा जनकनंदिनीके रूपसे जन्म ग्रहण किया है इनसेही हमारा नाश होगा, इनके अतिरिक्त देवी उमा, नन्दीश्वर रंभा और वरुणजीकी कन्या पुञ्जिकस्थलीने ॥११॥

जो शाप हमको दिये हैं ❋ इस समय हमको वही शापकी दशा उपस्थित हुई है, ऋषिलोगोंके वचन कभी मिथ्या होनेवाले नहीं. हे राक्षसगण ! यह समस्त जान बूझकर अब जो कुछ कर्तव्य हो सो तुम करो॥ १२॥ इस समय राजमार्ग और कोट कीभीतके किनारे २ राक्षसलोग रक्षा करनेको टिके रहे हैं अतिगंभीरतायुक्त देव दानव गर्व खर्वकारी ॥ १३॥ पितामह ब्रह्माजीके शापसे सोते हुए कुम्भकणकोभी अब जगाना उचित है। अपने आपको समरमें श्रीरामचन्द्रजीसे हारा और प्रहस्तको मरा हुआ जान ॥ १४ ॥ और कुम्भकर्णको महाबलवान् जाना तब महाबली रावणने राक्षसोंको आज्ञा दी कि, सब द्वारोंपर प्रथम यत्न करो, और फिर सब प्राकांरपर चढकर उसको रखाओ ॥ १५ ॥ और नींदके वश हुए कुम्भकर्णकोभी जगाओ, कारण कि वह कामके मारे हमारे बिचले भाई सदा सोये ही

यथोक्तास्तन्मयाप्राप्तंनमिथ्याऋषिभाषितम् ॥ एतदेवसमागम्ययत्नंकर्तुमिहार्हथ ॥१२॥ राक्षसाश्चापितिष्ठंतुचर्यागोपुरमूर्धसु ॥ सचाप्रतिमगांभीर्योदेवदानवदर्पहा ॥ १३ ॥ ब्रह्मशापाभिभूतस्तुकुंभकर्णोविबोध्यताम्॥ समरेजितमात्मानंप्रहस्तंचनिषूदितम् ॥१४॥ ज्ञात्वारक्षोभीमबलमादिदेशमहाबलः ॥ द्वारेषुयत्नःक्रियतांप्राकारश्चाधिरुह्यताम्॥ १५॥ निद्रावशसमाविष्टःकुंभकर्णोविबोध्यताम्॥ सुखंस्वपितिनिश्चितःकामोपहतचेतनः ॥१६॥ नवसप्तदशाष्टौचमासान्स्वपितिराक्षसः ॥ मंत्रंकृत्वाप्रसुप्तोयमितस्तुनवमेहनि ॥१७ ॥ सहिसंख्येमहाबाहुःककुदंसर्वरक्षसाम् ॥ वानराञ्राजपुत्रौचक्षिप्रमेवहनिष्यति ॥ १८ ॥ एषकेतुःपरंसंख्येमुख्योवैसर्वरक्षसाम् ॥ कुंभकर्णःसदाशेतेमूढोग्राम्यसुखेरतः ॥ १९ ॥

रहते हैं ॥ १६ ॥ पितामह ब्रह्माजीसे वर पानेके अनुसार निशाचर कुम्भकर्ण छः महीने तक सोयेहुए रहकर केवल एक दिनको जागता है कभी २ सात आठ नौ दश महीनेतक सोता रहता है परन्तु इस समय उसको सोयेहुए केवल नौही दिन ❋ हुए हैं, इस कारण उसको यत्न सहित इस समय जगानाही कर्तव्य है॥ १७॥ एक वही महाबाहु इस भयंकर युद्धमें बडा चतुर है; वही सब वीरोंका शिरोमणि है, वही राम लक्ष्मण और समस्त वानरोंका बहुत शीघ्रविनाश करेगा ॥१८॥ सम्पूर्ण राक्षसोंमें श्रेष्ठ कुम्भकर्ण ऐसा महाबलशाली होकर भी ग्राम्यसुख (स्त्रीपुत्रादिकोंके सुख) में अनुरागी रहकर मूढतासे सोया ही रहता है ॥ १९ ॥

❋ जबरावणनेकैलास उठायातब पार्वतीने शापदियाकि स्त्रीकेनिमित्त तेरा मरणहोगा नंदीश्वरको वानराकार मूर्तिदेखकर हँसा तब उन्होंने शाप दियाकि, वानरही तेरा नाश करेंगे रंभाके निमित्त नल कूबरके शापकी कथा लिख चुके हैं। वरुणकी कन्या पंजिकस्थलीको रावणने पकडा तो ब्रह्माने शाप दिया कि स्त्रीहरणसे तेरा मरण होगा।

❋ कुंभकर्णकेजागनेकानियम नहींथा वर्षों सोताही रहताथा, क्योंकि "नवसप्तदशाष्टौचमासानिति" इससे महीनों और अगस्त्यके वाक्यसेवर्षोंका सोनापायाजाता है। अथवा नौसात दश आठमहीनेतक सोता ही रहता है कोई कहते हैं कि यह निद्राके पहरोंका नियमविधायक वाक्य है. "शयिता ह्येष षण्मासाने कोऽहंजागरिष्यतः इस वाक्यसे छःमहीनेसे पहले इसका जागरण नहीं होता था और न जागे तो छमहीनेसे अधिक सात आठ नौ महीने तक सोता रहता था एक दिन जागना जागनेके नियममें है कि, जब जागता था तो एक ही दिन जाग सकता था कारण कि 'स्वप्तुं वर्षाण्यनेकानि देवदेव ममेप्सितम्' "ऐसा अनेकवर्षों सोनेका वर माँगाथा कोई कहते हैं नौ औरसात सोलहमेंसे १० गये तो छशेष रहे और नौ दिन सोये हुएपर कहते हैं कि, संग्राम हुएपर यहां अधिकदिन बीतचुके हैं। इससे यहां अहः शब्द मासपरक लेना कि, नौ महीनेसे सोता है कारण कि आगे लिखा है कि 'अयं ते सुमहान्कालः शयानस्यमहाबलः' ॥

हम उस दारुण संग्राम भूमिमें रामचन्द्रसे यद्यपि हार गयेहैं परंतु कुम्भकर्णके जागनेपर हमको यह शोक नहीं दुःखित करेगा॥ २० ॥ हम पर ऐसी घोरविपद पडनेकेसमय भी यदि इन्द्रके समान पराक्रम करनेवाला कुम्भकर्ण हमारी किसी प्रकारकी सहायताके कामोंमें न आवेगा तब फिर हम उसको लेकर क्या करेंगे ? ॥ २१ ॥ राक्षसोंके राजा रावणके ऐसे वचन सुनकर सब राक्षसगण अतिशीघ्रतासे कुम्भकर्णके स्थानको गये ॥ २२ ॥ रक्तमांस प्रिय वे राक्षस लोग रावणकी आज्ञाके अनुसार कुम्भकर्णके लिये सुगंधित माला और श्रेष्ठ भोजन करनेकी सामग्री इकठ्ठी करके ले जाने लगे ॥ २३ ॥ उसके पीछे वहराक्षस कुम्भकर्णकी गुहामें प्रवेश करते हुए यह गुफा अति रमणीय थी; यहांपर फूलोंकी सुगंधि आय रही थी, इस गुहाका द्वार अति विस्तारवाला था, यह गुफा चार कोशकी

रामेणाभिनिरस्तस्यसंग्रामेस्मिन्सुदारुणे ॥ भविष्यतिनमेशोकःकुंभकर्णेविबोधिते ॥ २० ॥ किंकरिष्याम्यहंतेनशक्रतुल्यबलेनहि ॥ ईदृशे व्यसनेघोरेयोनसाह्यायकल्पते ॥ २१ ॥ तेतुतद्वचनंश्रुत्वाराक्षसेंद्रस्यराक्षसाः॥ जग्मुःपरमसंभ्रांताःकुंभकर्णनिवेशनम् ॥ २२ ॥ तेरावणसमादिष्टामांसशोणितभोजनाः ॥ गंधंमाल्यंमहद्भक्ष्यमादायसहसाययुः ॥२३॥ तांप्रविश्यमहाद्वारांसर्वतोयोजनायताम् ॥ कुंभकर्णगुहांरम्यांरत्नकांचनकुट्टिमाम् ॥२४॥ कुंभकर्णस्यनिःश्वासादवधूतामहाबलाः ॥ प्रतिष्ठमानाःकृच्छ्रेणयत्नात्प्रविविशुर्गुहाम् ॥२५॥ तांप्रविश्यगुहांरम्यां रत्नकांचनकुट्टिमाम् ॥ ददृशुर्नैर्ऋतव्याघ्राःशयानंभीमविक्रमम् ॥ २६ ॥ तेतुतंविकृतंसुप्तंविकीर्णमिवपर्वतम् ॥ कुंभकर्णमहानिद्रंसमेताःप्रत्यबोधयन् ॥ २७ ॥ ऊर्ध्वलोमांचिततनुंश्वसंतमिवपन्नगम् ॥ भ्रामयंतंविनिःश्वासैःशयानंभीमविक्रमम् ॥ २८ ॥ भीमनासापुटंतंतुपातालविपुलाननम् ॥ शयनेन्यस्तसर्वांगंमेदोरुधिरगंधिनम् ॥ २९ ॥

लंबी चौडी थी ॥ २४ ॥ वह महाबली राक्षस कुम्भकर्णके श्वासोंके पवन लगनेके कारण बहुत ही कंपायमान हुए और बडे कष्टसे स्थिर हो अति यत्नसहित उस गुफामें पैठे ॥२५॥ उसके पीछेराक्षसोंने रत्नकांचनसे बनेहुए फर्शसे युक्त उस रमणीय गुफामें प्रवेश करके सोते हुएभयंकर विक्रमकारी कुम्भकर्णको देखा ॥२६॥ सब राक्षसलोग मिलकर कुम्भकर्णकी निद्रा तोडनेका उपाय करने लगे इन राक्षसोंने देखा कि, महावीर्य कुम्भकर्ण सोता हुआ विकराल हो रहा है और पर्वतके समान पडा है ॥२७॥ कुम्भकर्णके बसरुयें ऊपरको खडे थे वह सर्पके समान लंबे २ श्वासोंके पवनसे मानो राक्षसोंको घुमायरहा था ऐसा भयंकर कर्मकारी कुम्भकर्णको राक्षसोंने देखा ॥ २८॥ इसका मुखपातालके समान बडा था, नाकके स्वर भी बहुत ही लंबे चौडे थे उसके सब शरीरमें(जो कि सेजपरपडा था)

चरबी और रुधिरकी दुर्गन्ध आ रही थी ॥ २९ ॥ वह सुवर्णका बाजू पहरे हुए था उसके शिरपर मुकुट सूर्यभगवान्की किरणोंके समानप्रकाशित हो रहा था ऐसे राक्षसव्याघ्र शत्रुओंका नाश करनेवाले कुम्भकर्णको राक्षसोंने देखा ॥ ३० ॥ उसके पीछे राक्षसोंने कुम्भकर्णके निकट तृप्ति करनेवाली पर्वताकार जीवजन्तुओंकी राशि उसके खानेको खडी कर दी ॥ ३१ ॥ असंख्य मृग महिष और शूकर इकठे किये गये, इसके पीछे अद्भुत ढेरका ढेर अन्न भी राक्षस व्याघ्रोंने वहांपर संग्रह किया ॥ ३२ ॥ उसके पीछे राक्षसलोगोंने रुधिरके भरे हुए घडे और विविध भाँतिके मांस भी इकठे करके कुम्भकर्णके निकट रख दिये ॥ ३३ ॥ उसके पीछे उसकी देहमें सुगंधित उत्तम चन्दन लगाया और वह सब राक्षस उसको श्रेष्ठ २ हार और श्रेष्ठ चन्दनकी सुगंधिको

कांचनांगदनद्धांगंकिरीटेनार्कवर्चसम् ॥ ददृशुर्नैर्ऋतव्याघ्रंकुंभकर्णमरिंदमम् ॥ ३० ॥ ततश्चक्रुर्महात्मानःकुंभकर्णस्यचाग्रतः ॥ भूतानांमेरुसंकाशंराशिंपरमतर्पणम् ॥३१॥ मृगाणांमहिषाणांचवराहाणांचसंचयान् ॥ चक्रुर्नैर्ऋतशार्दूलाराशिमन्नस्यचाद्भुतम् ॥ ३२ ॥ ततःशोणितकुंभांश्चमांसानिविविधानिच ॥ पुरस्तात्कुंभकर्णस्यचक्रुस्त्रिदशशत्रवः ॥ ३३ ॥ लिलिपुश्चपरार्ध्येनचंदनेनपरंतपम् ॥ दिव्यैराश्वासयामासुर्माल्यैर्गंधैश्चगंधिभिः ॥३४॥ धूपंगंधांश्चससृजुस्तुष्टुवुश्चपरंतपम् ॥ जलदाइवचानेदुर्यातुधानास्ततस्ततः ॥ ३५ ॥ शंखांश्चपूरयामासुःशशांकसदृशप्रभान् ॥ तुमुलंयुगपच्चापिविनेदुश्चाप्यमर्षिताः ॥ ३६ ॥ नेदुरास्फोटयामासुश्चिक्षिपुस्तेनिशाचराः ॥ कुंभकर्णविबोधार्थंचक्रुस्तेविपुलंस्वरम् ॥ ३७ ॥ सशंखभेरीपणवप्रणादंसास्फोटितक्ष्वेलितसिंहनादम् ॥ दिशोद्रवंतस्त्रिदिवंकिरंतःश्रुत्वाविहंगाःसहसानिपेतुः ॥ ३८ ॥ यदाभृशंतैर्निनदैर्महात्मानकुंभकर्णोबुबुधेप्रसुप्तः ॥ ततोभुशुंडीर्मुसलानिसर्वेरक्षोगणास्तेजगृहुर्गदाश्च ॥ ३९ ॥

सुँघाने लगे ॥ ३४ ॥ निशाचरगण उस शत्रुनाशी कुंभकर्णके सन्मुख तीव्रगंधवाली धूप इत्यादि सुगंधियें रखकर बादलके समान गंभीरशब्दसे गर्जकर उसकी स्तुति करने लगे॥३५॥चन्द्रमाके समान श्वेत शंखोंको वायुपूरित कर बजाने लगे, जब कुम्भकर्ण न जागा तो क्रोधमें भरकर सिंहनाद भीकरने लगे॥३६॥ कोई २ राक्षस बडे शब्दसे चिल्लाने लगे; कोई ३ बाजे आदि अंग बजाय २ ताल देते, कोई २ उसके चरण उठाय पृथ्वीपर पटक देते; और कोई २ कुंभकर्णके जागनेके लिये विविध भांतिसे शब्दही करने लगे ॥३७॥ उस समय शंख,भेरी और ढोलकी नादके सहित बाहुस्फोटन और सिंहनादका शब्द श्रवण कर पक्षीगण चारोंओरको उडे परन्तु उडते हुए पृथ्वीपर गिर पडे॥३८॥ परन्तु जब नींदसे अचेत हुआ महाबलवान् महात्मा कुम्भकर्ण निशाचर गणोंके घोर

सिंहनाद करनेसे भी न जागा, तब राक्षसोंने क्रोधित होकर भुशुण्डी, मूसल और गदा इत्यादि अस्त्र शस्त्र ग्रहण किये ॥ ३९ ॥ उसके पीछे प्रचण्ड निशाचर गण पर्वतोंके शिखर, मूसल, गदा और मूकोंसे पृथ्वीपर सुखसे सोये हुए कुम्भकर्ण की छातीमें अत्यन्त बलसे प्रहार करने लगे, परन्तु किसीसे भी कुछ न हुआ ॥४०॥ यह राक्षसगण महाबलवान् होकर भी कुम्भकर्णके प्रबल श्वासोंके पवनके आगे किसी प्रकार ठहरनेको समर्थ नहीं हुए ॥ ४१ ॥ उसके पीछे भयंकर विक्रमकारी वह राक्षसगण धोती जाँघिये आदि अपने वस्त्रोंको सँभालकर मृदंग ढोल, भेरी, शंख और कुम्भनामक बाजोंको बजाने लगे ॥४२॥ इस प्रकारसे दशहजार नीले अंजनके ढेरके समान उस कुम्भकर्णको जगानेके लिये बडेही यत्न करने लगे॥४३॥वह राक्षस अनेक प्रकारके प्रहार, गर्जन और भाँति २ के

तंशैलशृंगैर्मुसलैर्गदाभिर्वक्षःस्थलेमुद्गरमुष्टिभिश्च ॥ सुखप्रसुप्तंभुविकुंभकर्णंरक्षांस्युदग्राणितदानिजघ्नुः ॥ ४० ॥ तस्यनिःश्वासवातेनकुंभकर्णस्यरक्षसः ॥ राक्षसाबलवंतोपिस्थातुंशेकुर्नचाग्रतः ॥ ४१ ॥ ततःपरिहितागाढंराक्षसाभीमविक्रमाः ॥ मृदंगपणवान्भेरीःशंखकुंभगणांस्तथा ॥ ४२ ॥ दशराक्षससाहस्रंयुगपत्पर्यवारयत् ॥ नीलांजनचयाकारंतेतुतंप्रत्यबोधयन् ॥ ४३ ॥ अभिघ्नंतोनदंतश्चनचसंबुबुधेतदा ॥ यदा चैनंनशेकुस्तेप्रतिबोधयितुंतदा ॥ ४४ ॥ ततोगुरुतरंयत्नंदारुणंसमुपाक्रमत ॥ अश्वानुष्ट्रान्खरान्नागाञ्जघ्नुर्दंडकशांकुशैः ॥ ४५ ॥ भेरीशंखमृदंगाश्चसर्वप्राणैरवादयन् ॥ निजघ्नुश्चास्यगात्राणिमहाकाष्ठकटंकरैः ॥ ४६ ॥ मुद्गरैर्मुसलैश्चापिसर्वप्राणसमुद्यतैः ॥ तेननादेनमहतालंकासर्वाप्रपूरिता ॥ सपर्वतवनासर्वासोपिनैवप्रबुध्यते ॥४७॥ ततोभेरीसहस्रंतुयुगपत्समहन्यत ॥ मृष्टकांचनकोणानामसक्तानांसमंततः ॥ ४८ ॥

बाजे बजाकर भी उस कुम्भकर्णको नहीं जगाय सके॥४४॥ जब वह राक्षस इन सब कार्योंके करनेका कुछ फल न पाते हुए, तब उन राक्षसोंकीमति इससेभी भारी उपाय करनेकी हुई, वह राक्षसगण उन्हींके अनुसार ऊंट, गधे और हाथियोंको वारंवार दंडोंसे चाबुकोंसे और अंकुशोंसे मारकर कुम्भकर्णके ऊपर चलाने लगे ॥ ४५ ॥ सब इकट्ठे होकर भेरी, शंख और अतिजोरसे मृदंग बजाने लगे और कुम्भकर्णके शरीरमें बडे काँटे लगे काठोंसे ठोकने लगे ॥ ४६ ॥ और मुद्गर व मूसलसेभी कुम्भकर्णको यह राक्षस अतिजोरसे मारने लगे उसकालमें उस तुमुलनिनादसे पर्वत और समस्त वनोंके सहितलंका पूर्ण होगई, परन्तु कुम्भकर्णकी नींद न टूटी॥४७॥उसके पीछे सुवर्णके बने हुए सहस्रों नगाडे एकही संग बजाये गये और चारों ओर उनकी ध्वनि गूँज उठीपरन्तु कुम्भकर्ण न

जागा॥४८॥जब कि, कुम्भकर्ण शापसे ग्रसित रहनेकेकारण ऐसी घोर निद्रामें सोया रहकर किसी प्रकारसे न जागा तब यह सब राक्षसअत्यन्त क्रोधित हुए ॥ ४९ ॥ उसके पीछे वह कोपयुक्त भयंकर कर्मकारी राक्षसकुम्भकर्णको जगानेके लिये अपना २ पराक्रम दिखाने लगे ॥ ५० ॥ कोई २ नगाडे और भेरी बजानेको लगे,कोई सिंहनाद ही करते हुए, किसी २ ने उसके बालपकडकर खेंचे और कोई २ उसके कानोंको काटने लगे ॥ ५१ ॥ और बहुतसे राक्षस सैकडों जलके भरे हुए घडे लेकर कुम्भकर्णके कानोंको जलसे भरने लगे तथापि नींदमें मस्त कुम्भकर्ण कुछ भी चलायमान न हुआ ॥५२॥ और दूसरे कूट मुद्गरादिहाथमें लिये बलवान् निशाचरगण मुद्गरोंसे उसके समस्त छाती और सब अंगोंमें चोट देने लगे ॥ ५३ ॥ बहुत सारे राक्षस रस्सियोंके बन्धनसे

एवमप्यतिनिद्रस्तुयदानैवप्रबुध्यत ॥ शापस्यवशमापन्नस्ततःक्रुद्धानिशाचराः ॥४९॥ ततःकोपसमाविष्टाःसर्वेभीमपराक्रमाः ॥ तद्रक्षोबोधयिष्यंतश्चक्रुरन्येपराक्रमम् ॥ ५० ॥ अन्येभेरीःसमाजघ्नुरन्येचक्रुर्महास्वनम् ॥ केशानन्येप्रलुलुपुःकर्णानन्येदशंतिच ॥ ५१ ॥ उदकुंभशतान्यन्येसमसिंचंतकर्णयोः ॥ नकुंभकर्णःपस्पंदेमहानिद्रावशंगतः ॥ ५२ ॥ अन्येचबलिनस्तस्यकूटमुद्गरपाणयः ॥ मूर्ध्निवक्षसिगात्रेषुपातयन्कूटमुद्गरान् ॥ ५३ ॥ रज्जुबंधनबद्धाभिःशतघ्नीभिश्चसर्वशः ॥ वध्यमानोमहाकायोनप्राबुध्यतराक्षसः ॥ ५४ ॥ वारणानांसहस्रंचशरीरेस्यप्रधावितम् ॥ कुंभकर्णस्तदाबुद्धास्पर्शंपरमबुध्यत ॥ ५५ ॥ सपात्यमानैर्गिरिशृंगवृक्षैरचिंतयंस्तान्विपुलान्प्रहारान् ॥ निद्राक्षयात्क्षुद्भयपीडितश्चविजृंभमाणःसहसोत्पपात ॥ ५६ ॥ सनागभोगाचलशृंगकल्पोविक्षिप्यबाहूजितवज्रसारौ ॥ विवृत्यवक्रंवडवामुखाभंनिशाचरोसौविकृतंजजृंभे ॥ ५७ ॥ तस्यजाजृंभमाणस्यवक्रंपातालसन्निभम् ॥ ददृशेमेरुशृंगाग्रेदिवाकरइवोदितः ॥ ५८ ॥ सजृंभमाणोतिबलःप्रबुद्धस्तुनिशाचरः ॥ निःश्वासश्चास्यसंजज्ञेपर्वतादिवमारुतः ॥ ५९ ॥

बांधकर उसके शरीरमें शतघ्नियोंका प्रहार करने लगे, इस प्रकारसे भी मार खाकर कुम्भकर्णने निद्राके सुखको नहीं त्यागा ॥५४॥ तब राक्षसोंने उसके ऊपर अतिवेगसहित हजारों हाथियोंकी दांय चलाई, तब हाथियोंके पैरोंसे दबनेका सुख पाय कुम्भकर्ण जाग उठा॥५५॥कुम्भकर्ण उन गिराये हुए पर्वतोंके शिखर और वृक्षोंसे मार खाकरभी निद्रानाशके वश, भूखसे व्याकुल हो वारंवार जँभाई लेता सहसा उठकर बैठगया ॥५६॥ उसके पीछे राक्षसेन्द्र कुम्भकर्ण वज्रसे भी अधिक सारवान् और अचल शृङ्ग व नागभोगके समान दोनों बांहोंको फैलाय घोडोंके समान अपने विकट मुखको खोल जँभाई लेने लगा ॥५७॥ जँभाई लेनेके समय उसका वदन पातालके समान गंभीर और मुखमंडल सुमेरुगिरिपर उदय हुए सूर्यके समान दृष्टि आया ॥५८॥ जब जँभाई लेता हुआ वह निशा

चर जागा तब जिस प्रकार पर्वतपरसे निकलकर पवन बहता है उसही भाँति कुम्भकर्णकी श्वासका पवन बहने लगा ॥५९॥ जब कुम्भकर्ण जागा तब उसका रूप संसारको जलानेके लिये तैयार प्रलयकालीन कालके समान जान पडने लगा, ॥६०॥ उसकी दोनों आंखें प्रकाशमान अग्निके समान थीं उनसे बिजलीसी निकल रही थी; मानों वह कुम्भकर्णके नेत्र दो प्रकाशमान महाग्रह थे ॥६१॥ उसके पीछे उसके भोजन करनेको जो महिष शूकरादि विविध प्रकारकी सामग्री गई थीं वह इकठी कीगई, वह सब राक्षसोंने कुम्भकर्णको दिखाये, तब महाबलवान् कुम्भकर्ण उन सबको भक्षण करनेमें लगा ॥ ६२ ॥ बहुत दिनोंसे भूँखा प्यासा वह इन्द्रका शत्रु राक्षस कुम्भकर्ण ढेरके ढेर विविध भाँतिके मांस खाय और असंख्य चरबी व मदिराके घडोंको पान करके अपनी प्यास बुझाता हुआ ॥६३॥

रूपमुत्तिष्ठतस्तस्यकुंभकर्णस्यतद्बभौ ॥ युगांतेसर्वभूतानिकालस्येवदिधक्षतः ॥ ६०॥ तस्याग्निदीप्तसदृशेविद्युत्सदृशवर्चसी ॥ ददृशातेमहानेत्रेदीप्ताविवमहाग्रहौ ॥ ६१ ॥ ततस्त्वदर्शयन्सर्वान्भक्ष्यांश्चविविधान्बहून् ॥ वराहान्महिषांश्चैवबभक्षसमहाबलः॥६२॥ आददद्बुभुक्षितोमांसंशोणितंतृषितोपिबत् ॥ मेदःकुंभांश्चमद्यांश्चपपौशक्ररिपुस्तदा ॥६३॥ ततस्तृप्तइतिज्ञात्वासमुत्पेतुर्निशाचराः ॥ शिरोभिश्चप्रणम्यैनंसर्वतःपर्यवारयन् ॥ ६४ ॥ निद्राविशदनेत्रस्तुकलुषीकृतलोचनः ॥ चारयन्सर्वतोदृष्टिंतानुवाचनिशाचरान् ॥ ६५ ॥ ससर्वान्सांत्वयामासनैर्ऋतान्नैर्ऋतर्षभः ॥ बोधनाद्विस्मितश्चापिराक्षसानिदमब्रवीत् ॥ ६६ ॥ किमर्थमहमादृत्यभवद्भिःप्रतिबोधितः ॥कच्चित्सुकुशलंराज्ञोभयंवानेहकिंचन ॥ ६७ ॥ अथवाध्रुवमन्येभ्योभयंपरमुपस्थितम् ॥ यदर्थमेवत्वरितैर्भवद्भिःप्रतिबोधितः ॥ ६८ ॥ अद्यराक्षसराजस्यभयमुत्पाटयाम्यहम् ॥ दारयिष्येमहेंद्रंवाशीतयिष्येतथानलम् ॥ ६९ ॥

राक्षसगण उसको तृप्त जानकर धीरे २ उसके आगे बढते गये और शिर झुकाकर प्रणाम कर उसके चारों ओर खडे होगये ॥६४॥ उसकी आंखें नींदके वश होनेसे कुछ एक खुलीं और लाल२हो रही थीं, उस कुम्भकर्णने चारों ओर दृष्टि डालकर राक्षसोंको देखा ॥६५॥ राक्षस श्रेष्ठ कुम्भकर्ण इन सब राक्षसोंको समझाय बुझाय फिर अकालमें जगानेके कारण विस्मित हो इन सबसे बोला ॥ ६६ ॥ हे राक्षसगण ! तुमने आदरसहित अतियत्न किस कारण हमको जगाया? महाराज निशाचरनाथ कुशलसे तो हैं ? इस समय भयका तो कोई कारण नहीं है ? ॥६७॥ अथवा इस पूँछनेका क्या प्रयोजन है जब कि,तुमने हमको ऐसी शीघ्रतासे जगाया है तब तो कोई बडा भारी भय आ पहुँचा है इसमें कोई भी संदेह नहीं ॥ ६८ ॥ जो कुछ भी हो आज हम राक्षसराजका भय दूर करदेंगे;

महेंद्र पर्वतको उखाड और तोडफोडकर फेंक देंगे अथवा अग्निके तेजको खर्व करदेंगे ॥ ६९ ॥ जब कि हमारे समान सोते हुए वीरको जगाया गया है तब इसका साधारण कारण नहीं जान पडता, इससे हमारे जगानेका क्या कारण है वह तुम यथार्थ २ कहो ॥ ७० ॥ शत्रुओंके नाश करनेवाले कुम्भकर्णके ऐसा कहनेपर रावणका यूपाक्ष मंत्री हाथ जोडकर बोला ॥ ७१ ॥ हे महाराज ! हमलोगोंको देवकृत कोई भी भय नहीं पडा है परन्तु इस समय मनुष्योंसे हमको तुमुल भय आ पहुँचा है ॥ ७२ ॥ हे राजन् ! मनुष्योंसे इस समय जैसा भय हमको पहुँचा है, दैत्य अथवा दानवोंसेभी ऐसा भय हमको कभी नहीं हुआ ॥ ७३ ॥ सीताके हरणसे संतापित हुए श्रीरामचन्द्र ही हमारे इस बडेभारी भयके कारण हैं, उनकी ही पर्वताकार बानरोंकी सेनासे लंकापुरीघिरी हुई है ॥ ७४ ॥ पहले केवल एकही वानर करके लंका जलाई गई, और कुंजर वा अपने साथियोंके सहित कुमार अक्ष भी मारा गया है ॥७५॥ औरकी बात क्या

नह्यल्पकारणेसुप्तंबोधयिष्यतिमादृशम् ॥तदाख्यातार्थतत्त्वेनमत्प्रबोधनकारणम् ॥ ७० ॥ एवंब्रुवाणंसंरब्धंकुंभकर्णमरिंदमम् ॥ यूपाक्षःसचिवोराज्ञःकृतांजलिरभाषत॥ ७१ ॥ननोदेवकृतंकिंचिद्भयमस्तिकदाचन ॥ मानुषान्नोभयंराजंस्तुमुलंसंप्रबाधते ॥ ७२ ॥ नदैत्यदानवेभ्योवाभयमस्तिननःक्वचित् ॥ यादृशंमानुषंराजन्भयमस्मानुपस्थितम् ॥७३॥ वानरैःपर्वताकारैर्लंकेयंपरिवारिता ॥ सीताहरणसंतप्ताद्रामान्नस्तुमुलंभयम् ॥ ७४ ॥एकेनवानरेणेयंपूर्वंदग्धामहापुरी ॥ कुमारोनिहतश्चाक्षःसानुयात्रःसकुंजरः ॥ ७५ ॥ स्वयंरक्षोधिपश्चापिपौलस्त्योदेवकंटकः ॥ व्रजेतिसंयुगेमुक्तोरामेणादित्यवर्चसा ॥ ७६ ॥ यन्नदेवैःकृतोराजानापिदैत्यैर्नदानवैः ॥ कृतःसइहरामेणविमुक्तःप्राणसंशयात् ॥ ७७ ॥ सयूपाक्षवचःश्रुत्वाभ्रातुर्युधिपराभवम् ॥ कुंभकर्णोविवृत्ताक्षोयूपाक्षमिदमब्रवीत् ॥ ७८ ॥सर्वमद्यैवयूपाक्षहरिसैन्यंसलक्ष्मणम् ॥ राघवंचरणेजित्वाततोद्रक्ष्यामिरावणम्॥ ७९ ॥

कहें देवतालोगोंके कण्टक स्वयं पुलस्त्यनंदन राक्षसराज रावण भी सूर्यके समान तेजस्वी श्रीरामचन्द्रजीके सामनेसे भागकर चले आये हैं; सोभी जब रामचन्द्रजीने दया करके उनसे कहा कि "जाओ भागजाओ, इस समय हमने तुम्हें छोड दिया" ॥७६॥ देव, दैत्य और दानवोंसे भी जिन महाराजकी कभी पहले दुरवस्था नहीं हुई, आज रामच न्द्रकरके ऐसी प्राणसंशयकारिणी दशा उनको आई, उन रामचन्द्रने दया करके राजाको प्राणोंसे नहीं मारा ॥७७॥ उस समय कुम्भकर्ण यूपाक्षके वचन सुनकर और संग्रामभूमिमें अपने भ्राता रावणका पराजय होना जानकर नेत्र घुमाय उससे बोला ॥७८॥ हे यूपाक्ष ! हम प्रथम सबसे पहले वानरोंकी सेनाके सहित राम और लक्ष्मणका नाश करके पीछे अपने बडे भाईके चरणोंको देखेंगे ॥ ७९ ॥

हम वानरलोगोंकेमांस और रुधिरसे राक्षसोंको तृप्त करेंगे; और हम स्वयं राम और लक्ष्मणका रुधिर पियेंगे ॥ ८० ॥ राक्षससेनापति वीरोंमें मुख्य महोदर कुम्भकर्ण ऐसेगर्वित और रोषके मारे दोषयुक्त वचन सुनकर हाथ जोडकर बोला ॥८१॥ कि हे महाबाहो ! रावणके वचन सुनकर और उनके गुण दोष विचार पीछेसे शत्रुलोगोंको आप जीतें ॥ ८२ ॥ विपुलबलशाली महातेजस्वी कुम्भकर्ण महोदरके ऐसे वचन सुनकर राक्षसोंके साथ २ उस स्थानसे चलनेका अभिलाषी हुआ ॥ ८३ ॥ उस कालमें कुछएक निशाचर भयंकर नेत्रवाले भीमरूप और भयंकर पराक्रम कुम्भ कर्णको जागाहुआ देखकर पहलेहीसे रावणके निकट चले गये थे ॥ ८४ ॥ उन्होंनें वहांजाकर देखा कि, रावण दिव्य सिंहासनपर बैठा है, तब उन राक्षसोंने यह देखते ही हाथ जोडकर रावणसे

राक्षसांस्तर्पयिष्यामिहरीणांमांसशोणितैः॥ रामलक्ष्मणयोश्चापिस्वयंपास्यामिशोणितम् ॥ ८० ॥ तत्तस्यवाक्यंब्रुवतोनिशम्यसगर्वितंरोषविवृद्धदोषम् ॥ महोदरोनैर्ऋतयोधमुख्यः कृतांजलिर्वाक्यमिदंबभाषे ॥ ८१ ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वागुणदोषौविमृश्यच ॥ पश्चादपिमहाबाहोशत्रून्युधिविजेष्यसि ॥ ८२ ॥ महोदरवचःश्रुत्वाराक्षसैःपरिवारितः॥ कुंभकर्णोमहातेजाःसंप्रतस्थेमहाबलः ॥ ८३ ॥ सुप्तमुत्थाप्यभीमाक्षंभीमरूपपराक्रमम् ॥ राक्षसास्त्वरिताजग्मुर्दशग्रीवनिवेशनम् ॥ ८४ ॥ तेभिगम्यदशग्रीवमासीनंपरमासने ॥ ऊचुर्बद्धांजलिपुटाःसर्वएवनिशाचराः ॥ ८५ ॥ कुंभकर्णःप्रबुद्धोसौभ्रातातेराक्षसेश्वर ॥ कथंतत्रैवनिर्यातुद्रक्ष्यसेतमिहागतम्॥ ८६ ॥ रावणस्त्वब्रवीद्धृष्टोराक्षसांस्तानुपस्थितान् ॥ द्रष्टुमेनमिहेच्छामियथान्यायंचपूज्यताम् ॥ ८७ ॥ तथेत्युक्त्वातुतेसर्वेपुनरागम्यराक्षसाः ॥ कुंभकर्णमिदंवाक्यमूचूरावणचोदिताः ॥ ८८ ॥ द्रष्टुंत्वांकांक्षतेराजासर्वराक्षसपुंगवः ॥ गमनेक्रियतांबुद्धिर्भ्रातरंसंप्रहर्षय ॥ ८९ ॥

कहा ॥ ८५ ॥ राक्षसेश्वर ! आपके भ्राता कुम्भकर्ण जाग गये हैं, अब वह सीधे ही वहांसे रणभूमिको चलेजायँ या आप इस स्थानमें इसके साथ साक्षात् करनेकी इच्छा करते हैं ? ॥ ८६ ॥तब लंका पति रावणने हर्षित होकर उनसे कहा कि, हम एकबार कुम्भकर्णको देखनेकी इच्छा करते हैं; तुम परम आदर मानके साथ उसको संग लेकर यहांपर चले आओ ॥ ८७ ॥ वे राक्षस रावणकी आज्ञाके अनुसार उसके वचनोंको स्वीकारकर कुम्भकर्णके निकट आकर निवेदन करते हुए ॥ ८८ ॥ राक्षसराज रावण आपके देखनेकी इच्छा करते हैं इस कारण आप गमन करनेमें स्थिरनिश्चय कीजिये, हम लोगोंके निवेदन करनेसे बडे भ्राताका आनंद बढावें ॥ ८९ ॥

महावीर दुर्द्धर्ष कुम्भकर्ण अपने भ्राताकी आज्ञाको जान और उसे माथेपर चढायकर बहुत अच्छा कह सेजपरसे उठा ॥९०॥ और हर्षितमनसे मुख धो स्नानकर परमसुख पाय बलको बढानेवाली मदिकेपीनेका अभिलाष करता हुआ॥९१॥तब राक्षसलोग रावणकी आज्ञाके अनुसार विविधभाँति मदिरा और विविध प्रकारके भोजनपदार्थ लेआये॥९२॥तेजबलयुक्त कुम्भकर्ण मदिराको पीकर कुछ एक मतवाला और तीव्रस्वभाव होकर चलनेके लिये तैयार हुआ ॥९३॥कुम्भकर्ण हर्षित होकर कालान्तक यमराजके समान शोभामान होने लगा उस कालमें कुंम्भकर्ण जब राक्षसोंके साथ२अपने भ्राता रावणके भवनमेंगमन करने लगा तब उसकेवारं वार चरण उठानेसे पृथ्वी कंपायमान होने लगी ॥९४॥ जिसप्रकार सूर्य भगवान अपनी किरणोंके जालसे पृथ्वीको प्रकाशित करतेहैं वैसे ही कुंम्भकर्ण भी अपनी कान्तिसे राजमार्गको प्रकाशित करता हुआ चला। इन्द्रजीके ब्रह्माजीके भवनमें जानेके समान हाथ जोडे हुए राक्षसरूपी मालासे घिरकर कुम्भकर्ण अपने भ्राताके

कुंभकर्णस्तुदुर्धर्षोभ्रातुराज्ञायशासनम् ॥ तथेत्युक्त्वामहावीर्यः शयनादुत्पपातह॥९०॥प्रक्षाल्यवदनंहृष्टःस्नातःपरमहर्षितः ॥ पिपासुस्त्वरयामासपानंबलसमीरणम्॥९१ततस्तेत्वरितास्तत्रराक्षसारावणाज्ञया॥मद्यंभक्ष्यांश्वविविधान्क्षिप्रमेवोपहारयन्॥९२ पीत्वाघटसहस्रेद्वेगमनायोपचक्रमे॥ईषत्समुत्कटोमत्तस्तेजोबलसमन्वितः॥९३॥कुंभकर्णोबभौरुष्टःकालांतकयमोपमः॥भ्रातुःसभवनंगच्छन्रक्षोबलसमन्वितः॥कुंभकर्णःपदन्यासैरकंपयतमेदिनीम्॥९४॥सराजमार्गंवपुषाप्रकाशयन्सहस्ररश्मिर्धरणीमिवांशुभिः॥जगामतत्रांजलिमालयावृतःशतक्रतुर्गेहमिवस्वयंभुवः॥॥९५॥तंराजमार्गस्थममित्रघातिनंवनौकसस्तेसहसाबहिःस्थिताः॥दृष्ट्वाप्रमेयंगिरिशृंगकल्पंवितत्रसुस्तेसहयूथपालैः॥९६॥केचिच्छरण्यंशरणंस्मरामंव्रजंतिकेचिद्व्यथिताःपतंति॥केचिद्दिशश्चव्यथिताःपतंतिकेचिद्भयार्ताभुविशेरतेस्म॥९७॥तमद्रिशृंगप्रतिमंकिरीटिनंस्पृशंतमादित्यमिवात्मतेजसा॥वनौकसःप्रेक्ष्यविवृद्धमद्भुतंभयार्दितादद्रुविरेयतस्ततः॥९८इत्यार्षेश्रीमद्रा०वाल्मी०आदिच०सा०युद्धकांडेषष्टितमःसर्गः६०॥

स्थानको जाने लगा॥९५॥ वह पर्वतके शृङ्गके समान शत्रुओंका नाश करनेवाला अप्रमेय वीर जब राजमार्गमें चलाजाता था तब बाहर खडेहुए वन वासी वानर अपने यूथपतियोंके साथ इनको देखतेही त्रासित हुए ॥ ९६ ॥ उन वानरोंसे कोई२ सबके शरण देनेवाले श्रीरामचन्द्रजीकी शरणमें गये और कोई २दुःखी होकर पृथ्वीपर गिर पडे, कोई २ दशों दिशाओंमें भाग गये; और कोई २ मारे भयके पृथ्वीपर गिरकर सोय रहे ॥ ९७ ॥ अधिक क्या कहें ? जिसने अपने तेजसे सूर्यको भी उल्लंघन कर दिया है,उस पर्वतके शृङ्गके समान किरीट धारी बडे ऊंचे और अद्भुत दर्शन वीर कुम्भकर्णको देखतेही वानरोंमें जिसने जहां सुभीता पाया वह भयके मारे उसी स्थानमें भाग गया ॥ ९८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां षष्टितमः सर्गः ॥६०॥

उसके पीछे महातेजस्वी वीर्यवान् धनुष धारण करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीने उस किरीटधारी महाकाय कुम्भकर्णको देखा ॥ १ ॥ पहले समयमें आकाश मापते समय वामनजीके समान उस पर्वताकार राक्षसश्रेष्ठ कुम्भकर्णको देखकर श्रीरामचन्द्रजी सतर्क हुए ॥ २ ॥ परन्तु सजल जलद (पानी सहित बादल) के समान आकारवाले सुवर्णके बाजू पहरे उस वीरको धीरे २ बढता हुआ देखकर वानरोंकी बडी सेना फिर भाग खडी हुई ॥३॥ तब रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी वानरोंकी सेनाको त्रासित और राक्षस कुम्भकर्णको बढाहुआ देखकर विस्मययुक्त हो विभीषणजीसे बोले॥४॥ लंकाके बीचमें पर्वतके समान मस्तकपर किरीट धारण किये वानरोंकेसे नेत्रवाला दामिनीयुक्त मेघके समान यह कौन वीर है ? ॥५॥ यह तो पृथ्वीका एक बडा पताकारूप अकेला ही जानपडताहै, कारण

ततोरामोमहातेजाधनुरादायवीर्यवान् ॥ किरीटिनंमहाकायंकुंभकर्णंददर्शह ॥ १ ॥ तंदृष्ट्वाराक्षसश्रेष्ठंपर्वताकारदर्शनम् ॥ क्रममाणमिवाकाशंपुरानारायणंयथा ॥२॥ सतोयांबुदसंकाशंकांचनांगदभूषणम् ॥ दृष्ट्वापुनःप्रदुद्राववानराणांमहाचमूः ॥३॥ विद्रुतांवाहिनींदृष्ट्वावर्धमानंचराक्षसम् ॥ सविस्मितमिदंरामोविभीषणमुवाचह ॥४॥ कोसौपर्वतसंकाशःकिरीटीहरिलोचन ॥ लंकायांदृश्यतेवीरःसविद्युदिवतोयदः ॥५॥ पृथिव्यांकेतुभूतोसौमहानेकोत्रदृश्यते ॥ यंदृष्ट्वावानराःसर्वेविद्रवंतियतस्ततः ॥ ६ ॥ आचक्ष्वसुमहान्कोसौरक्षोवायदिवासुरः ॥ नमयैवंविधंभूतंदृष्टपूर्वंकदाचन॥ ७ ॥ संपृष्टोराजपुत्रेणरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ विभीषणोमहाप्राज्ञःकाकुत्स्थमिदमब्रवीत् ॥८॥ येनवैवस्वतोयुद्धेवासवश्चपराजितः ॥ सैषविश्रवसःपुत्रःकुंभकर्णःप्रतापवान् ॥ अस्यप्रमाणसदृशोराक्षसोन्योनविद्यते ॥९॥ एतेनदेवायुधिदानवाश्चयक्षाभुजंगाःपिशिताशनाश्च ॥ गंधर्वविद्याधरपन्नगाश्चसहस्रशोराघवसंप्रभग्नाः ॥ १० ॥ शूलपाणिंविरूपाक्षंकुंभकर्णंमहाबलम् ॥ हंतुंनशेकुस्त्रिदशाःकालोऽयमितिमोहिताः ॥ ११ ॥

कि इसके केवल देखनेसेही समस्त वानरोंकी सेना भागी जाती है ॥ ६ ॥ हमने पहले कभी इस प्रकारका अद्भुत प्राणी नहीं देखा इस लिये यह महाप्राणी राक्षस है या असुर है;यह हमको ठीक२बताओ ॥ ७ ॥ सरलतासे कठिन कर्म करनेवाले रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीसे इस भाँति कहे जाकर महाप्राज्ञ विभीषणजी उनसे बोले ॥८॥ जिसने संग्रामभूमिमें यमराज और इन्द्रको भी हरा दिया था, यह वही विश्रवाका पुत्र प्रतापवान् कुम्भकर्ण है, इसके प्रमाणके समान और कोई राक्षस नहीं है ॥ ९ ॥ हे रामचन्द्रजी ! इस करके ही संग्राम भूमिमें दानव, यक्ष; राक्षस, गन्धर्व, विद्याधर और पन्नगगण हजारों वार हारकर इसके सामनेसे भागे हैं ॥१०॥ हे राजन् ! इस महाबलवान् टेढे नेत्रवाले कुम्भकर्णको मारना तो दूर रहे;जब यह शूल हाथमें लेकर खडा होता है;तब देवता

गण भी इसको काल समान समझकर मोहित हो जाते हैं ॥ ११ ॥ और दूसरे राक्षसश्रेष्ठ तो वरदान पाय उसके ही बलसे बलवान् हुए हैं; परन्तु यह महाबलवान् कुंभकर्ण स्वभावसेही तेजस्वी है ॥ १२ ॥ इस महाबलवान् महात्मा कुंभकर्णने जन्म ग्रहण करते ही जब यह बहुत बालक था, हजारों प्रजापुञ्जोंको भक्षण कर लिया ॥१३॥ तब प्रजागण ऐसी अवस्था देखकर प्राणके भयसे अत्यन्त भीत हुए, और देवराज इन्द्रकी शरणमें जाकर उनसे अपनी इस दुर्गतिको निवेदन किया ॥ १४ ॥ यह सुनकर इन्द्रने क्रोधित हो इसके ऊपर वज्र चलाया यह महात्मा कुम्भकर्ण वज्रसे कुछ चोट खाय और विचलित होकर भी वारंवार सिंहनाद करने लगा॥१५॥उस कालमें सिंहनाद करते हुए राक्षसश्रेष्ठकुम्भकर्णका वह घोर शब्द सुनकर प्रजा फिर बहुतही भयभीत हुई ॥१६॥उसके

प्रकृत्याह्येषतेजस्वीकुंभकर्णोमहाबलः ॥ अन्येषांराक्षसेंद्राणांवरदानकृतंबलम् ॥ १२ ॥ बालेनजातमात्रेणक्षुधार्तेनमहात्मना ॥ भक्षितानिसहस्राणिप्रजानांसुबहून्यपि ॥ १३ ॥ तेषुसंभक्ष्यमाणेषुप्रजाभयनिपीडिताः ॥ यांतिस्मशरणंशक्रंतमप्यर्थंन्यवेदयन् ॥१४॥ सकुंभकर्णंकुपितोमहेंद्रोजघानवज्रेणशितेनवज्री ॥ सशक्रवज्राभिहतोमहात्माचचालकोपाच्चभृशंननाद ॥ १५ ॥ तस्यनानद्यमानस्यकुंभकर्णस्यरक्षसः ॥ श्रुत्वानिनादंवित्रस्ताःप्रजाभूयोवितत्रसुः ॥ १६॥ ततःक्रुद्धोमहेंद्रस्यकुंभकर्णोमहाबलः ॥ निष्कृष्यैरावतादंतंजघानोरसिवासवम् ॥ १७ ॥ कुंभकर्णप्रहारार्तोविजज्वालसवासवः ॥ ततोविषेदुःसहसादेवब्रह्मर्षिदानवाः ॥ प्रजाभिःसहशक्रश्चययौस्थानंस्वयंभुवः ॥ १८ ॥ कुंभकर्णस्यदौरात्म्यंशशंसुस्तेप्रजापतेः ॥ प्रजानांभक्षणंचापिशशंसुस्तेदिवौकसाम् ॥ आश्रमध्वंसनंचापिपरस्त्रीहरणंतथा ॥ १९ ॥ एवंप्रजायदित्वेषभक्षयिष्यतिनित्यशः ॥ अचिरेणैवकालेनशून्योलोकोभविष्यति ॥ २० ॥ वासवस्यवचःश्रुत्वासर्वलोकपितामहः ॥ रक्षांस्यवाहयामासकुंभकर्णंददर्शह ॥ २१ ॥

पीछे महाबलवान् कुंभकर्णने ऐरावत हाथीके दांत खेंचकर उखाड उससे इन्द्रकी छातीमें प्रहार किया ॥१७॥ अत्यन्त दारुण प्रहारसे वज्रधर इन्द्रजी बहुत व्याकुल हुए, उनके सब शरीरसे रुधिर बहने लगा; ब्रह्मर्षि और दानवगण यह अवस्था देखकर अत्यन्त विषाद करने लगे और सबही इन्द्र और प्रजाके साथ मिलकर सहसा प्रजापति ब्रह्माजीके निकट गये ॥१८॥ और वहाँ उन्होंने प्रजागणोंको भक्षण करना, देवतालोगोंको सताना, आश्रमोंका विध्वंसितहोना औरपराई स्त्रीका हरणरूपी कुंभकर्णकी यह सब दुष्टता ब्रह्माजीसे निवेदन की॥१९॥तब इन्द्रजीने कहा कि, यह यदि नित्यप्रति प्रजाको भक्षण किया करेगा; तो बहुतही शीघ्रतासे सब लोक उजाड हो जायँगे॥२०॥ सर्व लोगोंके पितामह ब्रह्माजीने इन्द्रजीके वचन सुनकर गायत्र्यादि मंत्रोंसे राक्षसोंको आह्वान करके उनमें कुम्भ

कर्णको भी देखा ॥ २१ ॥ परन्तु कुंभकर्णको देखते ही ब्रह्माजीको अत्यन्त भय उपस्थित हुआ तब क्षणभरके पीछे घबडाये हुएसे ब्रह्माजी कुंभकर्णसे बोले ॥२२॥हम निश्चयही जानतेहैं कि, विश्रवाने तुमको लोकका विनाश ही करनेकेलिये उत्पन्न कियाहै, हम इसीलिये तुमको यह शाप देते हैं कि, तुम आजसेमृतकके समान होकर बराबर शयन करते रहो ॥२३॥ जब पितामह ब्रह्माजीने ऐसा शाप दिया तब कुंभकर्ण उनके आगेही नींदसे ग्रसित होकर पृथ्वीपर गिरपडा यह देख रावण अत्यन्त व्याकुल होकर बोला ॥२४॥ भगवन्! यह कांचनवृक्षबढा है सो फल आनेकेसमय आप क्यों इसको काटते हैं? हेप्रजापते ! विशेषकरके अपने नातीको ऐसा शाप देना आपको किसीप्रकारसे उचित नहीं है ॥२५॥ आपके वचन किसीप्रकारसे मिथ्या होनेवाले नहीं हैं निश्चयही कुंभकर्णको निद्रा घेरेगी परन्तु आपके निकट यह प्रार्थनाहै कि, आप इसके जागने और सोनेका उपयुक्त समय नियत कर दीजिये ॥ २६ ॥ राक्षस पतिके यह वचन सुनकर प्रजापति ब्रह्माजी बोले कि, यह छः महीनेतक सोता रहकर केवल एक दिनके लिये जागा करेगा और फिर दूसरे दिन छै महीनेके लिये सो जाया करेगा

कुंभकर्णंसमीक्ष्यैवचितत्रासप्रजापतिः ॥ कुंभकर्णमथाश्वस्तःस्वयंभूरिदमब्रवीत्॥२२॥ध्रुवंलोकविनाशायपौलस्त्येनासिनिर्मितः ॥ तस्मात्त्व मद्यप्रभृतिमृतकल्पःशयिष्यसे ॥२३॥ ब्रह्मशापाभिभूतोथनिपपाताग्रतःप्रभोः॥ततःपरमसंभ्रांतोरावणोवाक्यमब्रवीत् ॥२४॥ प्रवृद्धःकांचनो वृक्षःफलकालेनिकृत्यते ॥ ननप्तारंस्वकंन्याय्यंशप्तुमेवंप्रजापते ॥२५॥ नमिथ्यावचनश्चत्वंस्वप्स्यत्येवनसंशय ॥ कालस्तुक्रियतामस्यशय नेजागरणेतथा ॥२६॥ रावणस्यवचःश्रुत्वास्वयंभूरिदमब्रवीत् ॥ शयिताह्येषषण्मासमेकाहंजागरिष्यति ॥ २७ ॥ एकेनाह्नात्वसौवीरश्चरन्भू मिंबुभुक्षितः ॥ व्यात्तास्योभक्षयेल्लोकान्संवृद्धइवपावकः ॥ २८ ॥ सोसौव्यसनमापन्नःकुंभकर्णमबोधयत् ॥ त्वत्पराक्रमभीतश्चराजासंप्रतिरा वणः ॥ २९ ॥ सएषनिर्गतोवीरःशिबिराद्भीमविक्रमः ॥ वानरान्भृशसंक्रुद्धोभक्षयन्परिधावति ॥३०॥ कुंभकर्णंप्रतीक्ष्यैवहरयोद्यप्रदुद्रुवुः ॥ कथमेनंरणेक्रुद्धंवारयिष्यंतिवानराः ॥ ३१ ॥ उच्यंतांवानराःसर्वेयंत्रमेतत्समुच्छ्रितम्॥इतिविज्ञायहरयोभविष्यंतीहनिर्भयाः ॥ ३२ ॥

॥२७॥ जागनेके दिन यह क्षुधासे व्याकुलहो पृथ्वीपर घूमाकरेगा और प्रदीप्त अग्निके समानमुख फैलाकर अनेक लोगोंको भक्षण करेगा ॥२८॥ हे श्रीराम चन्द्रजी ! इससमय तुम्हारे प्रतापसे भीत और विपदमें पड़कर लंकापति रावणने कुंभकर्णको जगवाया है ॥२९॥ हे रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी! हम निश्चय कहते हैं कि, यह भयंकर विक्रमकारी वीर कुंभकर्ण अपनी गुफासे निकलकर क्रोधमें भर वानरोंके भक्षण करनेको तैयार होगा ॥३०॥ इस कुंभकर्णको देखतेही वानर गण भाग रहे हैं परन्तु जब यह क्रोधित होकर रणभूमिमें खडा होगा उस काल वानरोंमेंसे कौन इसको निवारण कर सकेगा॥३१॥ इस कारणसे सब वानरोंकी सेनाके मध्यमें इस बातको प्रचारित कर दिया जाय कि, यह मूर्ति सजीव नहीं है बरन् रावणने तुम लोगोंके डरवानेके लिये यह कल बनाई है, बस इस बातको

सुन सब वानर भयरहित हो जायँगे॥ ३२॥ वानर लोगोंके हितकारी और युक्ति युक्त विभीषणजीके कहे हुए वचन सुनकर रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजी सेनापति नीलसे बोले॥ ३३॥ हे अग्निकुमार ! तुम जायकर सब वानरोंका व्यूह बनाओ और सावधान होकर लंका के पुरद्वार राजमार्ग व और भी सब मोर्चे घेरलो ॥ ३४ ॥ हमारी आज्ञानुसार तुम सब शैलशृङ्ग वृक्ष और शिला इकट्ठीकर रक्खो तुम लोग अस्त्र और पर्वतादि धारण करके सावधानतासे टिके रहो॥ ३५॥ वानरसेनापति कपिकुञ्जर नीलने श्रीरामचन्द्रजीकी ऐसी आज्ञा पाय समस्त वानरोंमें उस आज्ञाका प्रचार कर दिया॥ ३६॥ उस के पीछे गवाक्ष, शरभ, हनुमान् और अंगद; यह समस्त वानर पर्वतोंके शृङ्ग ग्रहण करके लंकाके द्वारपर उपस्थित हुए ॥ ३७॥ इस प्रकारसे वह जय युक्त वानरगण श्रीरामचन्द्रजीके वचनोंसे सावधान हो शत्रुकी

विभीषणवचःश्रुत्वाहेतुमत्सुसुखोद्गतम् ॥ उवाचराघवोवाक्यंनीलंसेनापतितदा ॥३३॥ गच्छसैन्यानिसर्वाणिव्यूह्यतिष्ठस्वपावके ॥ द्वाराण्यादायलंकायाश्चर्याश्चास्याथसंक्रमान् ॥३४॥ शैलशृंगाणिवृक्षांश्चशिलाश्चाप्युपसंहरन् ॥ भवंतःसायुधासर्वैवानराःशैलपाणयः ॥३५॥ राघवेणसमादिष्टोनीलोहरिचमूपतिः॥ शशासवानरानीकंयथावत्कपिकुंजरः॥३६॥ ततोगवाक्षःशरभोहनूमानंगदस्तथा ॥ शैलशृंगाणिशैलाभागृहीत्वाद्वारमभ्ययुः ॥३७॥ रामवाक्यमुपश्रुत्यहरयोजितकाशिनः ॥ पादपैरर्दयन्वीरावानराःपरवाहिनीम्॥३८॥ ततोहरीणांतदनीकमुग्रंरराजशैलोद्यतवृक्षहस्तम्॥ गिरेःसमीपानुगतंयथैवमहन्महांभोधरजालमुग्रम् ॥३९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मी० आदि च० युद्धकांडे एकषष्टितमः सर्गः ॥ ६१ ॥ सतुराक्षसशार्दूलोनिद्रामदसमाकुलः ॥ राजमार्गंश्रियाजुष्टंययौविपुलविक्रमः ॥१॥ राक्षसानांसहस्रैश्चवृतःपरमदुर्जयः ॥ गृहेभ्यःपुष्पवर्षेणकीर्यमाणस्तदाययौ ॥ २ ॥ सहेमजालविततंभानुभास्वरदर्शनम् ॥ ददर्शविपुलंरम्यंराक्षसेंद्रनिवेशनम् ॥ ३ ॥

ओरके राक्षसोंको वृक्षोंसे मारने लगे ॥३८॥ वानरगण जब कि; वृक्ष और पर्वतोंके शृङ्गग्रहण करके लंकाके द्वारपर जाय डटे, तब पर्वतके निकटवाली मेघमाला जिस प्रकार प्रकाशित होती है, वैसे ही यह वानर प्रकाशित हुए ॥३९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकषष्टितमः सर्गः ॥६१॥ इस ओर निद्राके मदसे आकुल विपुलविक्रमकारी राक्षसशार्दूल कुंभकर्ण शोभायमान राजमार्गमें गमन करने लगा ॥१॥ वह परमदुर्जयवीर कुंभकर्ण सहस्र राक्षसोंके साथ जिस समय राज मार्गमें जाय रहा था, उस समय दोनों ओर जो धवरहरोंकी श्रेणी थीं उनके ऊपरसे कुम्भकर्णके ऊपर पुष्पोंकी वर्षा होने लगी ॥२॥ कुम्भकर्णने इस प्रकारसे गमन करतेहुए अति निकट अपने भाई रावणके सुवर्णकी जालियोंसे युक्त, सूर्यके समान प्रकाशमान विपुल और रमणीक गृहको देखा॥ ३॥

जिसप्रकार सूर्य भगवान् बादलके मध्यमें प्रवेश करते हैं वैसे ही उस वीरने राक्षसपति रावणके स्थानमें प्रवेश करके देवराजके हंसासन समासीन ब्रह्माजीके दर्शनकी नांई सिंहासन पर बैठे हुए अपने बडे भाई रावणको देखा ॥४॥ वीरश्रेष्ठ कुंभकर्ण राक्षस गणोंके साथ जिस समय कि,रावणके भवनमें जा रहा था उस समय उसके प्रति पगके धरनेसे पृथ्वी कंपायमान हो रही थी ॥५॥ वीर कुंभकर्णने गमन कर भवनमें जाय उदास मनसे पुष्पक विमानमें बैठे हुए अपने भ्राताको देखा ॥ ६ ॥ रावण भी आये हुए कुम्भकर्णके दर्शन पाते ही शीघ्रतासहित हर्षित अंतःकरणसे उठकर कुम्भकर्णको अपने समीप लाया ॥७॥ इसके उपरान्त रावणके आसनपर बैठनेके पीछे महाबलवान्कुम्भकर्ण अपने भ्राताके चरण युगल वंदन करके बोला कि "हमें क्या करना होगा?" ॥८॥ रावण कुम्भक

सतत्तदासूर्यइवाभ्रजालंप्रविश्यरक्षोधिपतेर्निवेशनम् ॥ ददर्शदूरेग्रजमासनस्थंस्वयंभुवंशक्रइवासनस्थम् ॥ ४ ॥ भ्रातुःसभवनंगत्वारक्षोगणसमन्वितः ॥ कुंभकर्णःपदन्यासैरकंपयतमेदिनीम् ॥ ५ ॥ सोभिगम्यगृहंभ्रातुःकक्ष्यामभिविगह्यच ॥ ददर्शोद्विग्नमासीनंविमानेपुष्पकेगुरुम् ॥ ६ ॥ अथदृष्ट्वादशग्रीवःकुम्भकर्णमुपस्थितम् ॥ तूर्णमुत्थायसंहृष्टःसन्निकर्षमुपानयत् ॥ ७ ॥ अथासीनस्यपर्यंकेकुंभकर्णोमहाबलः ॥ भ्रातुर्ववंदेचरणौकिंकृत्यमितिचाब्रवीत् ॥ ८ ॥ पुनःसमुदितोत्पत्यरावणःपरिषस्वजे ॥ सभ्रात्रासंपरिष्वक्तोयथावच्चाभिनंदितः ॥ ९ ॥ कुंभकर्णःशुभंदिव्यंप्रतिपेदेवरासनम् ॥ सतदासनमाश्रित्यकुम्भकर्णोमहाबलः ॥ १० ॥ संरक्तनयनःक्रोधाद्रावणंवाक्यमब्रवीत् ॥ किमर्थमहमादृत्यत्वयाराजन्प्रबोधितः ॥ ११ ॥ शंसकस्माद्भयंतेत्रकोवाप्रेतोभविष्यति ॥ भ्रातरंरावणःक्रुद्धंकुम्भकर्णमवस्थितम् ॥ रोषेणपरिवृत्ताभ्यांनेत्राभ्यांवाक्यमब्रवीत् ॥ १२ ॥ अयंतेसुमहान्कालःशयानस्यमहाबल ॥ सुषुप्तस्त्वंनजानीषेममरामकृतंभयम् ॥ १३ ॥

र्णको प्रणाम करता हुआ देखकर हर्षित अंतःकरणसे फिर उठकर उसे भली भाँति अपने हृदयसे लगाता हुआ ॥९॥ महाबलवान् कुम्भकर्ण भी अपने भ्राता करके भेंटे जाकर और यथायोग्य रूपसे आदर पाय श्रेष्ठ व देवताओंके बैठनेके योग्य आसनपर बैठा ॥१०॥ तब कुम्भकर्ण क्रोधके मारे लाल २ नेत्र करके रावणसे बोला कि; हे महाराज ! किस कारणसे आपने ऐसे आदर यत्नसे हमको जगाया है ? ॥११॥ किससे आपको भय पहुँचा है ? और किसको आज हम यमराजके भवनमें भेजें ? यह समस्त वृत्तांत आप हमारे निकट प्रकाश करकेकहिये;कुम्भकर्ण क्रोधसे यह वचन कह मौन रहा, और अपने लघु भ्राताके वचन सुनकर रावण भी क्रोधके मारे अपनी दोनों आंखोंको घुमाने लगा ॥१२॥ हे महाबलवान् ! तुम बराबर शयन करके सुखसे सोरहे थे इस लिये रामचन्द्रसे

जो भय हमको उपस्थित हुआ है वह तुम कुछ भी नहीं जानते हो ॥१३॥ महाबलशाली श्रीमान् दशरथके पुत्र रामचन्द्र सुग्रीव सहित समुद्रके पार आकर हमारे जाति कुलका नाश कर रहे हैं ॥ १४ ॥ लकाके वन उपवनोंकी ओर एकबार निहारकर देखो कि, वानरोंने सेतु बांध उसकी सहायतासे सुखपूर्वक समुद्रके पार होइन सबको मानो बानरोंके सागरके समान करदिया ॥१५॥ जो राक्षस बडे२ प्रधान कहकर प्रसिद्ध थे,वही सब रणभूमिमें वानरगणोंसे मारे गये हैं, परन्तु हमने वानरोंका मरना एक दिन भी नहीं श्रवण किया,और न कभी पहले हमने वानरोंको युद्धमें जीता ॥१६॥ इनसेही हमको भय उत्पन्न हुआ है और इस समय तुम इस संकटसे हमारा त्राण(उद्धार) करो तुमहीसे यह विपद् नाशको प्राप्त होगी, इसी कारणसे तुमको जगाया है ॥१७॥ हमारा

एषदाशरथिःश्रीमान्सुग्रीवसहितोबली ॥ समुद्रंलंघयित्वातुकुलंनःपारिकृंतति ॥ १४ ॥ हंतपश्यस्वलंकायांवनान्युपवनानिच ॥ सेतुनासुख मागत्यवानरैकार्णवंकृतम् ॥ १५ ॥ येराक्षसामुख्यतमाहतास्तेवानरैर्युधि ॥ वानराणांक्षयंयुद्धेनपश्यामिकथंचन ॥ नचापिवानरायुद्धेजितपू र्वाःकदाचन ॥ १६ ॥ तदेतद्भयमुत्पन्नंत्रायस्वेहमहाबल ॥ नाशयत्वमिमानद्यतदर्थंबोधितोभवान् ॥ १७ ॥ सर्वक्षपितकोशंचसत्त्वमभ्युपप द्यमाम् ॥ त्रायस्वेमांपुरींलंकांबालवृद्धावशेषिताम् ॥ १८॥ भ्रातुरर्थेमहाबाहोकुरुकर्मसुदुष्करम् ॥ मयैवंनोक्तपूर्वोहिभ्राताकश्चित्परंतप ॥ १९ ॥ त्वय्यस्तिममचस्नेहःपरासंभावनाचमे ॥ देवासुरेषुयुद्धेषुबहुशोराक्षसर्षभ ॥ त्वयादेवाःप्रतिव्यूह्यनिर्जिताश्चामरायुधि ॥२०॥ तदेत त्सर्वमातिष्ठवीर्यभीमपराक्रम ॥ नहितेसर्वभूतेषुदृश्यतेसदृशोबली ॥ २१ ॥

समस्त खजाना खाली *होगया है इसलिये तुम उद्धार करो; और बालक बूढेही जिसपुरीमें रहे हैं,ऐसी लंकापुरीकी तुम रक्षा करो ॥१८॥ हे शत्रुओंके नाश करनेवाले ! हे महाबाहो ! हमने पहले कभीकिसी भ्रातासे ऐसे दीन वचन नहीं कहे परन्तुआज तुमहमारा कहना मान अपने भ्राताके लिये अतिकठिन कर्मकरनेके लिये तैयार होवो ॥ १९ ॥ हे राक्षसश्रेष्ठ ! तुमने देवासुरसंग्रामके समयमें व्यूह बनाकरके अनेकबार देवताओंको रणभूमिमें पराजित किया था, इस कारण तुम्हारा तो हमें बडा भारी भरोसा है और हम तुमसे स्नेहभी अधिक करते हैं ॥२०॥ हे भयंकर पराक्रमकारी ! हम त्रिलोकीमें किसीकोभी तुम्हारे समान बलवान् नहीं देखते, इस कारण तुमहीं हमारे लिये अधिक वीर्य प्रकाश करो ॥ २१ ॥

* सेनाकी तैयारी रसद आदि कार्योंमें कोश व्यय होगया है ।

प्रचंड पवन जिस प्रकारसे शरद् समयके मेघको उडा देती है,वैसेही तुम अपने तेजके प्रभावसे शत्रुकी सेनाके धुरें उडादो; हे बान्धवप्रिय ! हे समराभिलाषी! तुम हमारे हितार्थ यह उत्तम कार्य पूरा करो ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां द्विषष्टितमः सर्गः ॥ ६२ ॥ राक्षसराज रावणके ऐसे विलापके वचन सुनकर कुम्भकर्ण हँसता हुआ बोला ॥१॥ हमने परामर्श होनेके समयमें जिस दोषकी शंका की थी, आपने उन हितकारी वचनोंपर श्रद्धा नहीं की, इस कारणसे अब आपको वही दोष आय प्राप्त हुआ है ॥ २ ॥ कुकर्म करनेवाले जन जिसप्रकार शीघ्रही नरकमें पडाकरते हैं ऐसे ही तुमको अपने पापकर्म करनेका फल बहुत शीघ्र मिलगया ॥ ३ ॥ हे महाराज ! आपने केवल वीर्यके घमण्डके वशमें हो पहले इस सम्बन्धमें कुछ चिन्ता नही की और ऐसे निन्दनीय कार्यके विषयमें कुछ सुविचार भी नहीं किया ॥ ४ ॥ जो ऐश्वर्यके मदसे मतवाले होकर पहले करने योग्य कार्य पीछे,और पीछे

कुरुष्वमेप्रियहितमेतदुत्तमंयथाप्रियंप्रियरणबांधवाप्रिय ॥ स्वतेजसाव्यथयसपत्नवाहिनींशरद्घनंपवनइवोद्यतोमहान् ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकाण्डे द्विषष्टितमः सर्गः ॥ ६२ ॥तस्यराक्षसराजस्यनिशम्यपरिदेवितम् ॥ कुम्भकर्णोबभाषेदंवचनंप्रजहासच ॥ १ ॥ दृष्टोदोषोहियोस्माभिःपुरामंत्रविनिर्णये ॥ हितेष्वनभियुक्तेनसोयमासादितस्त्वया॥ २ ॥ शीघ्रंखल्वभ्युपेतंत्वांफलंपापस्यकर्मणः ॥ निरयेष्वेवपतनंयथादुष्कृतकर्मणः ॥ ३ ॥ प्रथमंवैमहाराजकृत्यमेतदचिंतितम् ॥ केवलंवीर्यदर्पेणनानुबंधोविचारितः ॥ ४ ॥ यःपश्चात्पूर्वकार्याणिकुर्यादैश्वर्यमास्थितः ॥ पूर्वंचोत्तरकार्याणिनसवेदनयानयौ ॥ ५ ॥ देशकालविहीनानिकर्माणिविपरीतवत् ॥ क्रियमाणानिदुष्यंतिहवींष्यप्रयतेष्विव ॥ ६ ॥ त्रयाणांपंचधायोगंकर्मणांयःप्रपद्यते ॥ सचिवैःसमयंकृत्वाससम्यग्वर्ततेपथि ॥ ७ ॥ यथागमंचयोराजासमयंचचिकीर्षति ॥ बुध्यतेसचिवैर्बुद्ध्यासुहृदश्चानुपश्यति ॥ ८ ॥

करने योग्य कार्योंको पहले किया करते हैं, उन्होंने नीति अनीतिको कुछ भी नहीं जाना ॥ ५ ॥ जिस प्रकार संस्कारके अयोग्य अग्निमें दी हुई आहुति विफल होजाती है वैसेही देशकालको विना बिचारे जो कार्य किये जाते हैं वह समस्त ही विपरीत और दूषित हो जाते हैं ॥६॥ जो राजा विचार करनेके पीछे कर्त्तव्य, क्षय वृद्धि स्थान और सभादिके विषयमें चिंता करके मंत्रियोंके साथ सब कार्योंका आरम्भोपाय पुरुष द्रव्य समस्त देशकाल विभाग विपरीत विकार और कार्यसिद्धि इन पांचोंका विचार करता हुआ कार्य करता है वह नीतिमार्गसे कभी चलायमान नहीं होता ॥ ७ ॥ जो राजा मंत्रिलोगोंके मनका भाव और उनमें कौन यथार्थ सुहृद् और कौन केवल खुशामद करके मनको बहलाया करता है यह सब वह जानते हैं ॥ ८ ॥

हे राक्षसनाथ ! सब लोगोंमें कोई प्रभातकाल, कोई मध्याह्नकाल और कोई रात्रिकाल इन तीनों कालमें यथाक्रमसे धर्म और कामकी सेवा करते हैं, कोई २ एकही समयमें धर्म कामादिरूप दंडका सेवन करते हैं;और कोई २ एक कालमेंही तीनोंकी सेवा किया करते हैं ॥९॥ इन तीनोंमेंसे कौन श्रेष्ठ है, इसको जो सुनकर भी नहीं जान सकते हैं; वह राजाही हों अथवा राजकुमार हों सबके सबही विफल हो जाते हैं और वह बहुश्रुत कहकर नहीं मानाजाता अर्थात उसका शास्त्रज्ञान व्यर्थ है ॥ १० ॥ हे राक्षस श्रेष्ठ ! साम, दान, दण्ड, भेद, विक्रम पहले कहे हुए पांच योग नीति और अनीति ॥ ११ ॥ और धर्म, अर्थ, काम सम्बन्धी मंत्रणा मंत्रीलोगोंके साथ उचित समयपर जो बुद्धिमान राजा किया करते हैं उनको कभी दुःख प्राप्त नहीं होता ॥ १२ ॥ बुद्धिमान् अर्थके तत्त्वोंको जाननेवाले मंत्रीलोगोंके सहित अपने शुभ परिणामका विचार करके जो राजा कार्य किया करता है उसकी भाग्यलक्ष्मी अचल होकरटिकी

धर्ममर्थंहिकामंवासर्वान्वारक्षसांपते॥ भजतेपुरुषः कालेत्रीणिद्वंद्वानिवापुनः ॥ ९ ॥ त्रिषुचैतेषुयच्छ्रेष्ठंश्रुत्वातन्नावबुध्यते ॥ राजावाराजमात्रोवाप्यर्थंतस्यबहुश्रुतम् ॥ १० ॥ उपप्रदानंसांत्वंचभेदंकालेचविक्रमम् ॥ योगंचरक्षसांश्रेष्ठतावुभौचनयानयौ ॥ ११ ॥ कालेधर्मार्थकामान्यःसंमंत्र्यसचिवैःसह ॥ निषेवेतात्मवाँल्लोकेनसव्यसनमाप्नुयात् ॥१२॥ हितानुबंधमालोक्यकुर्यात्कार्यमिहात्मनः ॥ राजासहार्थतत्त्वज्ञैःसचिवैर्बुद्धिजीविभिः ॥ १३ ॥ अनभिज्ञायशास्त्रार्थान्पुरुषाःपशुबुद्धयः ॥ प्रागल्भ्याद्वक्तुमिच्छंतिमंत्रिष्वभ्यंतरीकृताः ॥ १४ ॥ अशास्त्रविदुषांतेषांकार्यंनाभिहितंवचः ॥ अर्थशास्त्रानभिज्ञानांविपुलांश्रियमिच्छताम् ॥ १५ ॥ अहितंचहिताकारंधाष्टर्याज्जल्पंतियेनराः ॥ अवश्यंमंत्रबाह्यास्तेकर्तव्याःकृत्यदूषकाः ॥ १६ ॥ विनाशयंतोभर्तारंसहिताःशत्रुभिर्बुधैः ॥ विपरीतानिकृत्यानिकारयंतीहमंत्रिणः ॥ १७ ॥

रहती है ॥ १३ ॥ परन्तु कोई २ पुरुष किसी प्रकारसे जो परामर्श करनेमें बुलाये गये तो वे पशुबुद्धिलोग मारे ढिठाईके शास्त्रका अर्थ न जाननेवाले पुरुषसे कुछ औरका औरही अर्थ कह देते हैं ॥ १४ ॥ जो शास्त्रको न जानते हों,उनका वचन राजा कभी ग्रहण नहीं करे,कारण कि,वह अहितकाही करनेवाला होता है कारण कि; वे लोग, अर्थ शास्त्रके न जाननेसे धनकी बडी आशा रखते और ठकुरसुहाती बात कह देते हैं इससे उनकी बातका क्या ठीक है ? ॥ १५॥ जो पुरुष अहित बातको ऐसा नोन मिर्च लगाकर कहतेहैं कि,मानों यह बडाही हित कर रहे हैं,ऐसे धूर्तोंको मंत्रणा कार्यसे बाहर निकाल देना चाहिये, कारण कि, उनसे सब कार्य भ्रष्ट होजाते हैं ॥ १६ ॥ हे महाराज ! ऐसेभी अनेक मंत्री होते हैं, जो सब कुछ जाननेवाले शत्रुओंके साथ सलाह करके

विपरीत कार्य करके स्वामीका विनाश करदेते हैं ॥ १७ ॥ राजाको उचित है कि,उन मंत्रियोंको जो मित्र बनेहुये वैरी हैं व्यवहारसे जानले और जान बूझ कर उनका त्याग करदे ॥ १८ ॥ जिस प्रकार पक्षीगण स्वामिकार्तिकजीसे विदारित किये हुए क्रौञ्चपर्वतके छिद्रमें प्रवेश करते हैं, वैसेही शत्रुलोगभी चपल और इधर उधर दौडकर जानेवाले राजामें छिद्र पायकर प्रवेश किया करते हैं ॥१९॥ जो शत्रुको तुच्छ समझकरअपनी रक्षा नहीं करते हैं, वे बडे भारी अनर्थको प्राप्त होकर स्थानसे भी भ्रष्ट होजाते हैं ॥ २० ॥ रानी मन्दोदरी और हमारे छोटे प्रिय भ्राता विभीषणजीने जो कुछ कहा था;वही कहना हमारे हितका करनेवाला है,उसके पीछे जो आपकी इच्छा हो सो कीजिये ॥ २१ ॥ तब दशमुख रावण कुम्भकर्णके ऐसे वचन सुनकर भ्रुकुटी चढाय क्रोध प्रगटकर यह कहने लगा ॥२२॥ हे कुम्भकर्ण ! हम तुम्हारे गुरु और आचार्यके समान पूजनीय हैं सो तुम हमको उलटा उपदेश देते हो? जो कुछ भी हो इस वार्ता

तान्भर्तामित्रसंकाशानमित्रान्मंत्रनिर्णये ॥ व्यवहारेणजानीयात्सचिवानुपसंहितान् ॥ १८ ॥ चपलस्येहकृत्यानिसहसानुप्रधावतः ॥ क्षिप्र मन्येप्रपद्यंतेक्रौंचस्यखमिवद्विजाः ॥ १९ ॥योहिशत्रुमवज्ञायआत्मानंनाभिरक्षति ॥ अवाप्नोतिहिसोऽनर्थान्स्थानाच्चव्यवरोप्यते ॥ २० ॥ यदुक्तमिहतेपूर्वंप्रिययामेनुजेनच ॥ तदेवनोहितंवाक्यंयथेच्छसितथाकुरु ॥ २१ ॥ तत्तुश्रुत्वादशग्रीवःकुंभकर्णस्यभाषितम् ॥ भ्रुकुटिंचैवसं चक्रेक्रुद्धश्चैनमभाषत ॥ २२ ॥ मान्योगुरुरिवाचार्यःकिंमांत्वमनुशाससि ॥ किमेवंवाक्छ्रमंकृत्वायद्युक्तंतद्विधीयताम् ॥ २३ ॥ विभ्रमाच्चि त्तमोहाद्वाबलवीर्याश्रयेणवा ॥ नाभिपन्नमिदानींयद्व्यर्थातस्यपुनःकथा ॥ २४ ॥ अस्मिन्कालेतुयद्युक्तंतदिदानींविचिंत्यताम् ॥ (गतंतुनानु शोचन्तिगतन्तुगतमेवहि ॥) ममापनयजंदुःखंविक्रमेणसमीकुरु ॥ २५ ॥ यदिखल्वस्तिमेस्नेहोविक्रमंवाधिगच्छसि ॥ यदिकार्यंममैतत्ते हृदिकार्यतमंमतम् ॥ २६ ॥ ससुहृद्योविपन्नार्थंदीनमभ्युपपद्यते ॥ सबंधुर्योपनीतेषुसाहाय्यायोपकल्पते ॥ २७ ॥

लापसे क्या प्रयोजन है ? जो कुछ हमने कहा उसको तुम पूरा करो ॥२३॥ और हमने विभ्रमसे चित्तके मोहसे और बल वीर्यके घमंडके वशमें होकर पहले जो तुम सबका उपदेश नहीं सुना;सो उसही उपदेशको अब फिरसे कहनेकी क्या आवश्यकता है ? ॥ २४ ॥ बीतगये हुए कार्यके लिये सोच करना कर्तव्य नहीं है कारण कि, जो बीतगया वह तो बीतही गया, इसलिये हे वीर ! इस समय जो करना उचित हो, उसकीही चिंता तुम करो, हमको अन्याय करनेसे जो दुःख उत्पन्न हुआ है वह तुम अपने विक्रमसे दूर करो ॥ २५ ॥ यदि हमारे प्रति तुम्हारा स्नेह हो,यदि तुम्हारे शरीरमें बल विक्रमहो,यदि हमारा यह कार्य तुम्हारे मनमें बडाभारी कार्य हो तो हमको इस दुःखसे छुटाओ॥२६॥जो विपदमें पडे हुएऔर दीनभावापन्न लोगोंकेऊपर दया किया करते हैं वह सुहृद

हैं परन्तु नीतिके मार्गसे चलायमान होनेपर भी जो सहायता किया करते हैं बन्धु उनकोही कहते हैं॥ २७॥ रावणके इसप्रकार धीर और करुणा वचन कहनेपर कुम्भकर्णने (भाईसाहब क्रोधित होगये) यह जानकर धीरे२ मधुरवाणीसे कहनेका अभिलाश किया ॥ २८ ॥ महावीर कुम्भकर्ण अपने भ्राताको महाविकलेन्द्रिय देखकर समझाता बुझाता हुआ बोला ॥ २९ ॥ हे राजन् ! एकाग्रचित होकर हमारे वचन सुनो ऐसे संतापित होनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है, क्रोध छोडकर सावधानचित्त हो जाइये ॥ ३० ॥ हे पृथ्वीनाथ ! हमारे जीवित रहते हुए आप मनमें कभी ऐसे सन्तापको स्थान न दीजिये । हम निश्चय कहते हैं कि, जिनके लिये आपको इतना सन्तापित होना पडता है, हम उनका नाश कर डालेंगे॥ ३१ ॥ हे महाराज ! आप चाहे जिस अवस्थामें हों उस समय हमको हितके ही वचन कहने चाहिये, इस कारणही बन्धुभाव और भ्राताके स्नेहके वशहोकर हमने आपसे ऐसा कहा ॥ ३२ ॥ संकट पडनेके समयमें स्नेहके अधीन हुए

तमथैवंब्रुवाणंसवचनंधीरदारुणम् ॥ रुष्टोऽयमितिविज्ञायशनैःश्लक्ष्णमुवाचह ॥ २८ ॥ अतीवहिसमालक्ष्यभ्रातरंक्षुभितेंद्रियम् ॥ कुंभकर्णः शनैर्वाक्यंबभाषेपरिसांत्वयन् ॥ २९ ॥ श्रृणुराजन्नवहितोममवाक्यमरिंदम ॥ अलंराक्षसराजेंद्रसंतापमुपपद्यते ॥ रोषंचसंपरित्यज्यस्वस्थो भवितुमर्हसि ॥ ३० ॥ नैतन्मनसिकर्तव्यंमयिजीवतिपार्थिव॥ तमहंनाशयिष्यामियत्कृतेपरितप्यते ॥ ३१ ॥ अवश्यंचहितंवाच्यं सर्वावस्था गतंमया ॥ बंधुभावादभिहितंभ्रातृस्नेहाच्चपार्थिव ॥ ३२ ॥ सदृशंयच्चकालेस्मिन्कर्तुंस्नेहेनबंधुना॥शत्रूणांकदनंपश्यक्रियमाणंमयारणे ॥ ३३ ॥ अद्यपश्यमहाबाहोमयासमरमूर्धनि॥हतेरामेसहभ्रात्राद्रवंतींहरिवाहिनीम्॥ ३४ ॥अद्यरामस्यतद्दृष्ट्वामयानीतंरणाच्छिरः ॥सुखीभवमहाबाहोसीताभवतुदुःखिता ॥ ३५ ॥ अद्यरामस्यपश्यंतुनिधनंसुमहत्प्रियम् ॥ लंकायांराक्षसाःसर्वेयेतेनिहतबांधवाः॥ ३६ ॥अद्यशोकपरीतानांस्वबंधुवधशोचिनाम्॥शत्रोर्युधिविनाशेनकरोम्यश्रुप्रमार्जनम्॥ ३७ ॥अद्यपर्वतसंकाशंससूर्यमिवतोयदम् ॥ विकीर्णंपश्यसमरेसुग्रीवंप्लवगेश्वरम् ॥ ३८ ॥

बन्धुके लिये जो कुछ करना उचित है हम उससे विमुख नहीं हैं, आज युद्धमें जाकर हम शत्रुओंकी सेनाका नाश करते हैं सो आप देखें॥ ३३ ॥हे महाबाहो ! आज हमने संग्रामभूमिमें भ्राताके सहित रामचन्द्रके मारनेपर आपवानरोंकीसेनाको भागती हुई देखेंगे॥ ३४ ॥हे महाभुज! आज मुझ करके रणभूमिसे लगायेहुएराम चन्द्रके मस्तकको देखकर आप सुखी और जानकी दुःखीहोंगी॥ ३५ ॥युद्धमें जिनके बन्धुबान्धव मारे गये हैं, आज लंकावासी वह निशाचरगण बडे भारी सुखका मूल रामचन्द्रका मारा जाना देखेंगे॥ ३६ ॥युद्धमें बान्धव लोगोंका विनाश होनेके कारण जो लोग शोकाकुल होकर अश्रु छोड रहे हैं आज रणभूमिमें शत्रुओंका विनाश करके उनके आंसुओंको पोछेंगे॥ ३७ ॥आप पर्वताकार वानरराज सुग्रीवको रण भूमिमें सूर्यके सहित बादलके समान फैला हुआ और रुधिरसे भीगा हुआ देखोगे

॥३८॥ हे अनघ ! कैसा आश्चर्य है ? कि, रामचंद्रजीके विनाशकी अभिलाष किये यह समस्त राक्षसगण व हम यह सबही आपको अनेक प्रकारसेसमझा रहे हैं, तथापि आप क्यों ऐसे व्यथित होते हैं ॥३९॥ हे राक्षसोंके नाथ ! रामचन्द्रके लिये आपको भय? अच्छा ! वह पहले हमारा नाश करे पीछे आपका अधिक क्या कहें यदि हम पहले मारेजायँ तो हमको इसके लिये कुछ संतापित न होना चाहिये॥४०॥हे शत्रुओंके तपानेवाले ! हे अतुलविक्रम ! इस समय जैसी इच्छा हो वैसीही आज्ञा हमको दीजिये। शत्रुओंके साथ युद्ध करनेके लिये आपके जानेका क्या प्रयोजन है? अब और किसीको युद्धमें भेजनेके लिये न देखिये ॥ ४१ ॥ हमही अकेले महाबलवान् शत्रुका प्राण संहार कर डालेंगे. यदि इन्द्र, यम, अग्नि, वायु ॥ ४२ ॥ कुबेर और वरुण यह समस्तभी हमारे सन्मुख युद्धमें खडे हो जायँतो उनको भी संहार करेंगे. युद्ध करनेकी कथा तो दूर रहे,जिससमय तीक्ष्ण शूलधारण करके खडेहोजायँगे तो उस कालमें हमारा

कथंचराक्षसैरेभिर्मयाचपरिसांत्वितः ॥ जिघांसुभिर्दाशरथिंव्यथसेत्वंसदानघ ॥ ३९ ॥ मांनिहत्यकिलत्वांहिनिहनिष्यतिराघवः ॥ नाहमा त्मनिसंतापंगच्छेयंराक्षसाधिप ॥ ४० ॥ कामंत्विदानीमपिमांव्यादिशत्वंपरंतप॥ नपरःप्रेक्षणीयस्तेयुद्धायातुलविक्रम॥ ४१ ॥ अहमुत्साद यिष्यामिशत्रूंस्तवमहाबलान् ॥ यदिशक्रोयदियमोयदिपावकमारुतौ ॥ ४२ ॥ तानहंयोधयिष्यामिकुबेरवरुणावपि ॥गिरिमात्रशरीरस्यशि तशूलधरस्यमे ॥ ४३ ॥ नर्दतस्तीक्ष्णदंष्ट्रस्यबिभीयाद्वैपुरंदरः ॥ अथवात्यक्तशस्त्रस्यमृद्नतस्तरसारिपून् ॥ ४४ ॥ नमेप्रतिमुखःकश्चित्स्थातुंश क्तोजिजीविषुः ॥ नैवशक्त्यानगदयानासिनानिशितैःशरैः ॥ ४५ ॥ हस्ताभ्यामेवसंरभ्यहनिष्यामिसवज्रिणम् ॥ यदिमेमुष्टिवेगंसराघवोद्यस हिष्यति ॥ ४६ ॥ ततःपास्यंतिबाणौघारुधिरंराघवस्यमे ॥ चिंतयातप्यसेराजन्किमर्थंमयितिष्ठति ॥ ४७ ॥

यह पर्वताकार शरीर ॥४३॥ और तीक्ष्ण दंत देख व सिंहनाद श्रवण करके इन्द्रभी डरकर भाग जायगा, अथवा अधिक कहनेकी क्या आवश्यकता है जब कि, हम अस्त्र शस्त्रोंको चलाय २ कर शत्रुओंको मलते होंगे ॥४४॥ उस कालमें अपने जीवन बचानेकी आशा किये कोई जन हमारे सन्मुख टिकनेके लिये समर्थ न होगा. न शक्ति; न गदा, न असि, न तीखे बाण, इनमेंसे किसीको भी हम नहीं चाहते ॥ ४५ ॥ हम क्रोधित होकर केवल अपनी बांहोंके बलहीसे जो इन्द्रभी हो तो उसकोभी मारडालेंगे, यदि वह राम हमारे मुक्केके वेगको सहकर जीवित रहें ॥ ४६ ॥ तो हमारे बाण उस रामचन्द्रके रुधिरको पान करेंगे । इसलिये हे महाराज ! आप हमारे जीवित रहते हुए किस कारणसे संताप करते हैं ॥ ४७ ॥

लीजिये, हम आपके शत्रुका प्राण संहार करनेके लिये जाते हैं; आप रामचंद्रका भयछोड दीजिये, क्यों कि हम घोर युद्धमें उनको मार डालेंगे ॥४८॥ हम राम लक्ष्मण सुग्रीवको और जिस वानरने राक्षसोंका नाश करके लंकापुरी जलाई थी उस हनुमानका भी संहार करेंगे ॥४९॥ और वहांपर जो वानरगण युद्धकरनेके लिये आये हैं उनको भी हम खाडालेंगे । हे महाराज ! हमने आपके बडेभारी यशकी कामना करके उस असाधारण कामके करनेकी अभिलाषा की है ५० ॥ हे राजन् ! यदि इन्द्र अथवा ब्रह्मासेभी आपको भय पहुँचा हो तो हम उनकोभी मारडालेंगे । हमारे क्रोधित होनेपर देवता लोग पृथ्वीपर सोतेहुए दीखेंगे ॥५१॥ हम यमराजका भी नाश करदेंगे, अग्निको भक्षण कर डालेंगे और हम सूर्यकोभी आकाशसे तारागणोंकेसहित पृथ्वीपर गिरादेंगे ॥५२॥ इन्द्रको मार डालेंगेसमुद्रको पानकर जायँगे, पर्वतोंको चूर्ण २ करदेंगे और पृथ्वीको भी हम विदीर्ण करेंगे ॥५३॥ हम बहुत समयसे सोय रहे थे परन्तु आज

सोहंशत्रुविनाशायतवनिर्यातुमुद्यतः ॥ मुंचरामाद्भयंघोरंनिहनिष्यामिसंयुगे ॥४८॥ राघवंलक्ष्मणंचैवसुग्रीवंचमहाबलम् ॥ हनूमंतंचरक्षोघ्नं येनलंकाप्रदीपिता ॥४९॥ हरींश्चभक्षयिष्यामिसंयुगेसमुपस्थिते ॥ असाधारणमिच्छामितवदातुंमहद्यशः ॥ ५० ॥ यदिचेंद्राद्भयंराजन्यदि चापिस्वयंभुवः ॥ अपिदेवाःशयिष्यंतेमयिक्रुद्धेमहीतले ॥५१॥ यमंचशमयिष्यामिभक्षयिष्यामिपावकम् ॥ आदित्यंपातयिष्यामिसनक्षत्रंम हीतले ॥५२॥ शतक्रतुंवधिष्यामिपास्यामिवरुणालयम् ॥ पर्वतांश्चूर्णयिष्यामिदारयिष्यामिमेदिनीम् ॥ ५३ ॥ दीर्घकालंप्रसुप्तस्यकुंभक र्णस्यविक्रमम् ॥ अद्यपश्यंतुभूतानिभक्ष्यमाणानिसर्वशः ॥ नत्विदंत्रिदिवंसर्वमाहारोममपूर्यते ॥ ५४ ॥ वधेनतेदाशरथेःसुखावहंसुखंसमाहर्तुं महंव्रजामि ॥ निहत्यरामंसहलक्ष्मणेनखादामिसर्वान्हरियूथमुख्यान् ॥५५॥ रमस्वराजन्पिबचाद्यवारुणींकुरुष्वकृत्यानिविनीयदुःखम् ॥ मयाद्य रामेगमितेयमक्षयंचिरायसीतावशगाभविष्यति ॥५६ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे त्रिषष्टितमः सर्गः ॥६३॥

समस्त जीव इस कुम्भकर्णसे भक्षित होकर इसका विक्रम देखें. अधिक क्या कहें यह त्रिलोकीभी हमारे पेटको भरनेके लिये पूरी न होगी ॥ ५४ ॥ हे राजन् ! हम दशरथकुमार रामचन्द्रका वध करके आपको असीम सुख प्राप्त करनेकेलियेचले, लक्ष्मणके सहित रामचन्द्रका विनाश करके हम समस्त वानरोंके यूथपोंको खालेंगे ॥ ५५॥ इससमय आप मनके सुखसे मदिरापानकर स्त्रियोंके सहित विहार करते रहें और जितना भर मनका दुःख है वह आप छोडदें आप निश्चय रक्खें कि, यमराजके भवनमें रामचन्द्रके पहुँच जानेपर सीता सदाके लिये आपके वशमें हो जायगी ॥ ५६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० युद्धकांडे भाषायां त्रिषष्टितमः सर्गः ॥ ६३ ॥

विशालबाहु बडेभारी देहवाले महाबलवान् कुम्भकर्णके ऐसे वचन सुनकर राक्षस महोदर कहने लगा ॥ १ ॥ हे कुम्भकर्ण ! तुम बडेभारी कुलमें जन्मे तो हो परन्तु ढिठाई और गर्वके मारे तुम यथार्थ अवस्थाको नहीं जान सकते इसी कारणसे कौन समय क्या करना चाहिये; यहभी तुम नहीं जानते ॥२॥ हमारे राजा क्या नीति अनीतिको नहीं जानतेहैं ? तुम बालकपनसेही ढीठहो, इसी कारणसे ऐसे अनर्थक वचनोंका जाल फैलाया करते हो ॥३॥ राक्षस राज देश और कालके विभागको जानते हैं,इनसे अपने ओरकी और शत्रुके ओर की उन्नति छिपी नहीं है,और अपने पक्षके क्षय वृद्धिके अभावमें किस प्रकासे रहना होता है, इन सब बातोंकोभी यह जानतेहैं॥४॥जिससे कभी बडे बूढ़ेकी पूजा नहीं की ऐसी प्राकृत बुद्धिवाले और बलसे गर्वित लोग जो कार्य कियाकरते हैं

तदुक्तमतिकायस्यबलिनोबाहुशालिनः ॥ कुंभकर्णस्यवचनंश्रुत्वोवाचमहोदरः ॥१॥कुंभकर्णकुलेजातोधृष्टःप्राकृतदर्शनः ॥ अवलिप्तोनशक्नोषिकृत्यंसर्वत्रवेदितुम् ॥ २ ॥ नहिराजानजानीतेकुंभकर्णनयानयौ ॥ त्वंतुकैशोरकाद्धृष्टःकेवलंवक्तुमिच्छसि ॥ ३ ॥ स्थानंवृद्धिंचहानिंचदेशकालविधानवित् ॥ आत्मनश्चपरेषांचबुध्यतेराक्षसर्षभः ॥ ४ ॥ यत्त्वशक्यंबलवतावक्तुंप्राकृतबुद्धिना ॥ अनुपासितवृद्धेनकःकुर्यात्तादृशंनरः ॥ ५ ॥ यांस्तुधर्मार्थकामांस्त्वंब्रवीषिपृथगाश्रयान् ॥ अवबोद्धुंस्वभावेननहिलक्षमणमस्तितान् ॥ ६ ॥ कर्मचैवहिसर्वेषांकारणानांप्रयोजनम् ॥ श्रेयःपापीयसांचात्रफलंभवतिकर्मणाम् ॥ ७ ॥ निःश्रेयसफलावेवधर्मार्थावितरावपि ॥ अधर्मानर्थयोःप्राप्तंफलंचप्रात्यवायिकम् ॥ ८ ॥ ऐहलौकिकपारक्यंकर्मपुंभिर्निषेव्यते ॥ कर्माण्यपितुकल्पानिलभतेकाममास्थितः ॥ ९ ॥ तत्रक्लृप्तमिदंराज्ञाहृदिकार्यंमतंचनः ॥ शत्रौहिसाहसंयत्तत्किमिवात्रापनीयते ॥ १० ॥

क्या नीति जाननेवाले लोग वैसे कार्योंको कर सकतेहैं ? ॥५॥ तुमने जो धर्म अर्थ और कामको पृथक्२समयमें सेवन करनेका वर्णन किया,इन सबका उपदेश औरोंको देना तोदूर रहा, तुम स्वयंही स्वभावसे इन सबको नहीं जानते ॥६॥ देखो कर्महो—धर्म अर्थ और काम इन तीनोंका कारण है; क्रियाहीन पुरुषका किसीप्रकारसे भी पुरुषार्थ नहीं है;इसकारण अनुष्ठाताको शुभाशुभ कर्मोंका फल भोगना पडता है॥७॥धर्म अर्थ यह दोनों मोक्षकोभी देते हैं,और इन करके स्वर्गकी प्राप्ति व महाराज्यादिक लोकभी मिल सकतेहैं;जो अधर्म और अनर्थको प्राप्ति हो तोभी कभी२अपराधीको सुख प्राप्त होजाता है॥८॥ पुरुष इसलोक और परलोकके लिये भी कर्म करतेहैं और कामपर आरूढ हुआ पुरुषभी सामर्थ्यकर्मोंके फलोंको प्राप्त करलेता है॥९॥ हमने महाराजकेइस विषयको

अपने विषयको अपने अन्तरके साथ भला कहा है, इसलिये राक्षसराजके मनमें जो कि निश्चय हो गया है उस कार्यकाही अनुष्ठान करना ठीक है; कारण कि शत्रुगणोंके प्रति साहस प्रगट करनेमें कुछभी अनीति दृष्टि नहीं आती॥ १० ॥ और तुमने जो अभिमानके वशहोकर बिना दूसरेकी सहायताके अकेलेही शत्रुओंको जीतनेकी बातकही यह भी हमारे विचारमें असंगत और असाधुपन है, श्रवण करो ॥११॥ कि जिन रामचन्द्रने पहले जनस्थानमें असंख्य महाबलवान् राक्षसोंका संहार किया है, विना किसीकी सहायता लिये तुम उनको अकेले किस प्रकारसे विनाश करोगे ? ॥ १२ ॥ उस समय जनस्थानमें जो महातेजस्वी राक्षसगण रामचन्द्रजीसे हारकर संग्राममसे भाग आये थे वे रामचन्द्रके भयसे भीत होकर ऐसे छिपे हुए हैं कि, तुम अब भी उनको युद्धमें आया हुआ नहीं देखोगे ॥१३॥ अहाहा ! कैसे आश्चर्यकी बात है कि तुम जान बूझकर भी क्रोधित होकर सोये हुए केसरी और श्रेष्ठ सर्पके समान दशरथकुमार रामचन्द्रजीको जगानेकी इच्छा

एकस्यैवाभियानेतुहेतुर्यःप्राहृतस्त्वया ॥तत्राप्यनुपपन्नंतेवक्ष्यामियदसाधुच ॥ ११ ॥ येनपूर्वंजनस्थानेबहवोतिबलास्तदा ॥ राक्षसाराघवंध्वस्ताःकथमेकोजयिष्यसि ॥ ॥ १२ ॥ येपूर्वंनिर्मितास्तेनजनस्थानेमहौजसः ॥ राक्षसांस्तान्पुरेसर्वान्भीतानद्यनपश्यसि ॥ १३ ॥ तंसिंहमिवसंक्रुद्धंरामंदशरथात्मजम् ॥ सर्पंसुप्तमहोबुद्ध्वाप्रबोधयितुमिच्छसि ॥ १४ ॥ ज्वलंतंतेजसानित्यंक्रोधेनचदुरासदम् ॥ कस्तंमृत्युमिवासह्यमासादयितुमर्हति ॥ १५ ॥ संशयस्थमिदंसर्वंशत्रोःप्रतिसमासने ॥ एकस्यगमनंतातनहिमेरोचतेभृशम् ॥ १६ ॥ हीनार्थस्तुसमृद्धार्थंकोरिपुंप्राकृतंयथा ॥ निश्चितंजीवितत्यागेवशमानेतुमिच्छति ॥ १७ ॥ यस्यनास्तिमनुष्येषुसदृशोराक्षसोत्तम ॥ कथमाशंससेयोद्धुंतुल्येनेंद्रविवस्वतोः ॥ १८ ॥

करते हो ॥ १४ ॥ जो रामचन्द्र अपने तेजसे प्रदीप्त हैं और क्रोधवश होनेके कारण अत्यन्तदुर्द्धर्ष हैं सो कौन पुरुष मृत्युके समान सहन करनेके अयोग्य उन वीरश्रेष्ठके निकट बढनेकी इच्छा करता है ? ॥ १५ ॥ हे तात! यह समस्त राक्षस गण इकट्ठे होकर रामचन्द्रके सम्मुख टिककर जीते हुए नहीं रह सकते हैं हमें तो इसमें भी सन्देह है, इसलिये रामचन्द्र से युद्ध करनेकेलिये अकेले तुम्हारा जाना हमारी सम्मतिमें नहीं आता ॥१६॥ स्वयं हीनबल होकरभी कौन पुरुष अपना जीवही देनेके लिये दूसरे प्राकृत शत्रुके समान बलवान् शत्रुको अपने वशमें लानेकी इच्छाकर सकता है ? ॥१७॥ हे राक्षसोंमें श्रेष्ठ ! त्रिलोकीमें जिनके समान कोई भी नहीं हैं, तुम किसलिये सूर्य और इन्द्रके समान इन इक्ष्वाकुवंशावतंस श्रीरामचन्द्रजीके साथ अकेलेही युद्ध करनेकी अभिलाषा करते हो ? ॥१८॥

राक्षस महोदरने क्रोधित होकर कुम्भकर्णसे ऐसा कह राक्षसोंके बीचमें बैठे हुए फिर लोगोंके रुवानेवाले रावणसे कहा ॥१९॥ आप सीताको प्राप्त करनेमें किस लिये देर कर रहे हैं ? यदि आपकी इच्छा हो तो सीता इसी समय आपके वशमें हो सकती है ॥ २० ॥ हमने सीताको वशमें करनेका एक उपाय स्थिर किया है, यदि आपकी बुद्धिमें भी वह भला ज्ञात हो उसको सुनकर आप कीजिये ॥ २१ ॥ वह उपाय यह है कि आप सब कहीं ऐसा ढंडोरा पिटवा दीजिये कि, द्विजिह्व, संहारी, कुंभकर्ण, वितर्द्दन और मैं (महोदर) यह पांच राक्षस रामचन्द्रका विनाश करनेके लिये गमन करेंगे ॥२२॥ इस ओर हम रणभूमिमें गमन करके यत्नसहित युद्ध करके यदि आपके शत्रुको जीत सके तब तो हमको और किसी उपायके करनेकी आवश्यकता नपडेगी ॥ २३ ॥

एवमुक्तातुसंरब्धंकुंभकर्णंमहोदरः ॥ उवाचरक्षसांमध्येरावणंलोकरावणम् ॥ १९ ॥ लब्ध्वापुरस्ताद्वैदेहींकिमर्थंत्वंविलंबसे ॥ यदीच्छसितदा सीतावशगातेभविष्यति ॥ २० ॥ दृष्टःकश्चिदुपायोमेसीतोपस्थानकारकः ॥ रुचितश्चेत्त्वयाबुद्ध्याराक्षसेंद्रततःशृणु ॥ २१ ॥ अहंद्विजिह्वः संह्रादीकुंभकर्णोवितर्दनः ॥ पंचरामवधायैतेनिर्यांतीत्यवघोषय ॥ २२ ॥ ततोगत्वावयंयुद्धंदास्यामस्तस्ययत्नतः ॥ जेष्यामोयदितेशत्रून्नोपायैःकार्यमस्तिनः ॥ २३ ॥ अथजीवतिनःशत्रुर्वयंचकृतसंयुगाः ॥ ततःसमभिपत्स्यामोमनसायत्समीक्षितम् ॥ २४ ॥ वयंयुद्धादिहैष्यामोरुधिरेणसमुक्षिताः ॥ विदार्यस्वतनुंबाणैरामनामांकितैःशरैः ॥ २५ ॥भक्षितोराघवोस्माभिर्लक्ष्मणश्चेतिवादिनः ॥ ततःपादौग्रहीष्यामस्त्वन्नःकामंप्रपूरय ॥ २६ ॥ ततोऽवघोषयपुरेगजस्कंधेनपार्थिव ॥ हतोरामःसहभ्रात्रासमैन्यइतिसर्वतः ॥ २७ ॥ प्रीतोनामततोभूत्वाभृत्यानां त्वमरिंदम ॥ भोगांश्चपरिवारांश्चकामान्वसुचदापय ॥ २८ ॥

परन्तु यदि हम लोगोंके बडे भारी युद्ध करनेपर भी आपका शत्रु जीवित रह जाय तब हमने मनमें जो उपाय स्थिर किया है उसकोही किया जाय ॥२४॥ वह उपाय यह है कि, हम लोग रामनामांकित तीक्ष्ण बाणोंसे अपनी देहको कटाय अंगोंसे रुधिर बहाय समरभूमिसे यहां आवेंगे ॥२५॥ हम लोग आपपर प्रगट करेंगे कि हम राम लक्ष्मणको भक्षण करके चले आये उसके पीछे इस कार्यका पुरस्कार पानेको हम आपके चरणोंमें प्रार्थना करेंगे ॥२६॥ हे महीपाल ! उसके पीछे नगरमें आप सबकहीं हाथीपर एक राक्षसको चढवाय इस प्रकारसे पुकरवादेना कि,भ्राता और अपनी सब सेनाके सहित रामचन्द्र मारे गये हैं ॥ २७ ॥ आप मानो ऐसा होनेसे बडेही प्रसन्न हुए हैं इस प्रकारसे दास दासियोंको और नौकरों चाकरोंको भोजनके पदार्थ धन धान्य रत्नादिक

देना ॥ २८ ॥ उसके उपरान्त वस्त्र, भूषण और गन्धप्रदान कीजियेगा और उनके सन्तोष करानेको उन्हें सुरा देना और आप भी मनसहित आनंदमें मग्न हो सुरापान करना ॥ २९ ॥ उसके पीछे सुहृद्गणोंके सहित राम लक्ष्मण सब राक्षसोंकरके भक्षण कर लिये गये इस प्रकारकी जनश्रुति (अफवाह) जब सब ओर फैलेगी; तब इसको सीता भी सुनेगी ॥ ३० ॥ तब आप अशोक वनमें प्रवेश करके एकान्तमें सीताको समझाना बुझाना और धनधान्य रत्न और कामना करने लायक वस्तुओंसे लुभाना ॥ ३१ ॥ हे राजन् ! नाथहीन सीता अभिलाष न होनेपर भी ऐसे शोकके उत्पन्न करानेवालेसे धोखा खाय आपके वशमें हो जायगी ॥ ३२ ॥ जानकी अपने प्यारे पतिको नाश हुआ देख सब भाँतिकी आशा छोड स्त्री स्वभावकी लघुताईसे आपके वशमें पडकर आपहीका आश्रय ग्रहण करेंगी ॥ ३३ ॥ उन सीताने पहले अनेक प्रकारके भोगसुख भोगे थे, कभी दुःखका मुख भी नहीं देखा, इससमय वह महादुःख भोग रही हैं, बस वह यह

ततोमाल्यानिवासांसिवीराणामनुलेपनम् ॥ देयंचबहुयोधभ्यःस्वयंचमुदितःपिब ॥ २९ ॥ ततोस्मिन्बहुलीभूतेकौलीनेसर्वतोगते ॥ भक्षितः ससुहृद्रामोराक्षसैरितिविश्रुते ॥ ३० ॥ प्रविश्याश्वास्यचापित्वंसीतांरहसिसांत्वयन् ॥ धनधान्यैश्चकामैश्चरत्नैश्चैनांप्रलोभय ॥ ३१ ॥ अनयोपधयाराजन्भूयःशोकानुबंधया ॥ अकामात्वद्वशंसीतानष्टनाथागमिष्यति ॥ ३२ ॥ रमतीयंहिभर्तारंविनष्टमधिगम्यसा ॥ नैराश्या त्स्त्रीलघुत्वाच्चत्वद्वशंप्रतिपत्स्यते ॥ ३३ ॥ सापुरासुखसंवृद्धासुखार्हादुःखकर्षिता ॥ त्वय्यधीनंसुखंज्ञात्वासर्वथैवागमिष्यति ॥ ३४ ॥ एत त्सुनीतंममदर्शनेनरामंहिदृष्ट्वैवभवेदनर्थः ॥ इहैवतेसेत्स्यतिमोत्सुकोभूर्महानयुद्धेनसुखस्यलाभः ॥ ३५ ॥ अनष्टसैन्योह्यनवाप्तसंशयोरिपुंत्व युद्धेनजयञ्जनाधिप ॥ यशश्चपुण्यंचमहान्महीपतिःश्रियंचकीर्तिंचचिरंसमश्नुते ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० च० सा० युद्धकांडे चतुःषष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥

समझकर कि आपके निकट रहनेसे बडा सुख मिलेगा, आपके वशमें होनेके लिये असम्मत नहीं होंगी ॥ ३४ ॥ हे महाराज ! हमारे विचारमें तो यही बात उचित जान पडती है और इससेही आपका अभिलाष पूर्ण होगा, इस कारण आप संग्रामभूमिमें रामचन्द्रके सहित युद्ध करनेका अभिलाष न कीजिये, क्योंकि उससे सुख प्राप्त न होकर बरन् बडे भारी अनर्थके होनेकी संभावना है ॥ ३५ ॥ हे जनाधिप ! जो महान् महीपति अपने आप संशयमें न पडकर और सेनाको नाश न करके बिना युद्ध किये शत्रुलोगोंको जीतलेते हैं, वह विपुल यश, सुख, सम्पत्ति और कीर्तिको प्राप्त करते हैं ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्ध० भाषायां चतुःषष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥

जब महोदरने यह कहा तब महाबलवान् कुंभकर्ण घुडककर उसकी निन्दा करता हुआ राक्षसराज रावणसे यह वचन बोला ॥ १ ॥ हे महाराज ! आप यथा सुखसे विचरण करें हम उस दुरात्मा रामचन्द्रको वधकरके आपका घोर भय दूरकरके आपको शत्रुरहित करदेंगे॥२॥शूर लोग कालमेंभी विना जलके बादलके समान वृथा कभी गर्जन नहीं करते,हमने जो गर्जन किया है,आप संग्रामभूमिमें भी हमको वही कार्य करतेहुए देखेंगे ॥३॥ अधिक क्या कहें वीरलोग अपनी बडाई करके कभी अपनेको छोटा नहीं बनाते,और वह लोग जो कार्य किया करते हैं,उसको वह अद्भुत और दूसरेसे न होनेयोग्य न होनेपर कभी नहीं करते ॥४॥ हे महोदर ! तुमने जो वृथा ऐसे वचन कहे यह कायर,बुद्धि रहित,अपने आपको पंडित माननेवाले और उजड्ड राजाकोही रुचिकर हो सकते हैं।॥५॥तुम

सतथोक्तस्तुनिर्भर्त्स्यकुंभकर्णोमहोदरम् ॥ अब्रवीद्राक्षसश्रेष्ठभ्रातरंरावणंततः ॥ १ ॥ सोहंतवभयंघोरंवधात्तस्यदुरात्मनः ॥ रामस्याद्यप्रमार्जामिनिर्वैरोहिसुखीभव ॥ २ ॥गर्जंतिनवृथाशूरानिर्जलाइवतोयदाः॥ पश्यसंपद्यमानंतुगर्जितंयुधिकर्मणा ॥३॥ नमर्षयंतिचात्मानंसंभावयितुमात्मना ॥ अदर्शयित्वाशूरास्तुकर्मकुर्वंतिदुष्करम् ॥ ४ ॥ विक्लवानांह्यबुद्धीनाराज्ञांपंडितमानिनाम् ॥ रोचतेत्वद्वचोनित्यंकथ्यमानंमहोदर ॥ ५ ॥ युद्धेकापुरुषैर्नित्यंभवद्भिःप्रियवादिभिः॥ राजानमनुगच्छद्भिःसर्वंकृत्यंविनाशितम् ॥ ६ ॥ राजशेषाकृतालंकाक्षीणःकोशोबलंहतम् ॥ राजानमिममासाद्यसुहृच्चिह्नममित्रकम् ॥ ७ ॥ एषनिर्याम्यहंयुद्धमुद्यतःशत्रुनिर्णये ॥ दुर्नयंभवतामद्यसमीकर्तुंमहाहवे ॥ ८ ॥ एवमुक्तवतोवाक्यंकुंभकर्णस्यधीमतः ॥ प्रत्युवाचततोवाक्यंप्रहसन्राक्षसाधिपः ॥ ९ ॥ महोदरोयंरामात्तुपरित्रस्तोनसंशयः ॥ नहिरोचयतेतातयुद्धंयुद्धविशारद ॥ १० ॥ कश्चिन्मेत्वत्समोनास्तिसौहृदेनबलेनच ॥ गच्छशत्रुवधायत्वंकुंभकर्णजयायच ॥ ११ ॥

लोग डरपोक और कायर पुरुष हो,प्यारे वचनोंसेराजाके मनको सन्तुष्ट रखनाही तुम्हारा कार्य है ! तुम लोगोंसे राजाके कर्त्तव्यकर्मोंकी भली भांति अंगहीनता होती है और तुमने ही राजाका सब कृत्य विनाश कर दिया है॥६॥हा ! लंकापुरीकी कैसी दुर्दशा है ? केवल एक राजाही बचगये हैं,कोषागार (खजाना) शून्य होगया,सेना मारीगई और मित्रोंका चिह्न धारणकिये शत्रुलोगोंसे महाराजघिर रहेहैं॥७॥हम तुम्हारी इस दुर्नीतिको शान्तकरने और युद्धमें गानेकेलिये शत्रुके जीतनेको कृतनिश्चयहोकर संग्राममें जाते हैं ॥८॥ बुद्धिमान् कुम्भकर्णनेजब यह कहा तब राक्षस रावण उससे हँसकर बोला ॥९॥ हे वत्स युद्धविशारद ! हम निश्चय कहते हैं कि, महोदर श्रीरामचन्द्रको देखकर डरगया इसी कारणसे इसका युद्ध करनेका अभिलाष नहीं होता ॥ १० ॥ हे कुम्भकर्ण ! क्या

सुहृदतामें, क्या बलकेप्रभावमें तुम्हारे समान अपना पुरुष हमारा कोईभी नहीं है; इस कारण तुम शत्रुलोगोंका वध साधन करनेके लिये और विजय पानेकेअर्थ शीघ्र लंकापुरीसे बाहर चलो ॥११॥ हे शत्रुनाशी ! तुम घोर नींदमें मग्न थे; हमने शत्रुको जीतलेनेकेही अर्थ तुमको जगवाया है, इस समय राक्षसलोगोंपर घोर संकट पडा देखकर ॥१२॥ फांसी हाथमें लिये यमराज जिस प्रकारसे दौडते हैं, उनकेही समान तुमभी शूल हाथमें धारण कर युद्धकी यात्रा करो और सूर्यके समान प्रभावाले राम लक्ष्मणको मारकर पीछेसे वानरोंको भी भक्षण कर लेना ॥ १३ ॥ हम जानते हैं कि, तुम्हारी भयंकर मूर्ति देखनेपर वानरलोग प्राणोंके डरसे भागजायँगे, और राम लक्ष्मणका भी हृदय विदीर्ण हो जायगा ॥१४॥ राक्षसश्रेष्ठ रावणने महाबलवान् कुम्भकर्णसे यह कहकर जयकी आशासे यह समझा कि, मानो दूसरा जन्म हुआ ॥१५॥ उस समय रावणका अंतःकरण पूर्णमासीके चन्द्रमाके समान निर्मल हो गया; रावण कुंभकर्णके बल विक्रमको जानता था; इस

शयानःशत्रुनाशार्थंभवान्संबोधितोमया ॥ अयंहिकालःसुमहान्राक्षसानामरिंदम ॥ १२ ॥ संगच्छशूलमादायपाशहस्तइवांतकः ॥ वानरान्राजपुत्रौचभक्षयादित्यतेजसौ ॥ १३ ॥ समालोक्यतुतेरूपंविद्रविष्यंतिवानराः ॥ रामलक्ष्मणयोश्चापिहृदयेप्रस्फुटिष्यतः ॥ ॥ १४ ॥ एवमुक्त्वामहातेजाःकुंभकर्णंमहाबलम् ॥ पुनर्जातमिवात्मानंमेनेराक्षसपुंगवः ॥ १५ ॥ कुंभकर्णबलाभिज्ञोजानंस्तस्यपराक्रमम् ॥ बभूवमुदितोराजाशशांकइवनिर्मलः ॥ १६ ॥ इत्येवमुक्तःसंहृष्टोनिर्जगाममहाबलः ॥ राज्ञस्तुवचनंश्रुत्वायोद्धुमुद्युक्तवांस्तदा ॥ १७ ॥ आददेनिशितंशूलंवेगाच्छत्रुनिबर्हणः ॥ सर्वकालायसंदीप्तंतप्तकांचनभूषणम् ॥ १८ ॥ इंद्राशनिसमप्रख्यंवज्रप्रतिमगौरवम् ॥ देवदानवगंधर्वयक्षपन्नगसूदनम् ॥ १९ ॥ रक्तमाल्यमहादामंस्वतश्चोद्गतपावकम् ॥ आदायविपुलंशूलंशत्रुशोणितरंजितम् ॥ २० ॥ कुंभकर्णोमहातेजारावणंवाक्यमब्रवीत् ॥ गमिष्याम्यहमेकाकीतिष्ठत्विहबलंमहत् ॥ २१ ॥

लिये उसको युद्धके लिये तैयार देख इसके आनन्दकी सीमा न रही ॥१६॥ कुंभकर्ण भी राक्षसराज रावणके कहे हुए ऐसे वचन सुनकर परम सन्तुष्ट हुआ और युद्धमें जानेकी तैयारियें करने लगा ॥१७॥ शत्रुओंको मारनेवाले वीर कुंभकर्णने अतिवेगसे काले लोहेका बना हुआ अतितीक्ष्ण शूल लिया । यह शूल प्रदीप्त तपाये हुए सुवर्णसे भूषित था ॥ १८ ॥ यह शूल इन्द्रके वज्रके समान और अशनिके समान भारी था देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष और पन्नगोंके मारनेको यह समर्थ था ॥ १९ ॥ बडी भारी रत्नमालासे शोभित होनेके कारण उस शूलसेअग्नि निकल रहीथी; ऐसे शत्रुओंके रुधिरसे रँगे हुए शूलको ग्रहण करके ॥ २० ॥ महातेजस्वी कुम्भकर्णने रावणसे कहा हम अकेलेही रणमें जाते हैं, तुम्हारी सेना यहींपर रहे ॥ २१ ॥

आज हम क्षुधित होनेकेकारणक्रोधित होकर वानरगणोंको भक्षण करेंगे, कुम्भकर्णके वचन सुनकर रावणने कहा ॥२२॥ कि;कुम्भकर्ण ! तुम शूल मुद्गर ग्रहण किये सेनाको साथ लेकर यहाँसे जाओ. कारण कि, वह वानरगण महाबलवान् शूर और रण करनेमें बडे निपुण हैं ॥२३॥ तुम सदाही मतवाले रहते हो इस लिए तुमको अकेला देखकर वह उसी समय दाँतोंसे विनाश करडालेंगे हम इसी कारणसे कहते हैं तुम परम दुर्द्धर्ष सेनाको साथ लेकर राक्षस लोगोंके अहितकारी शत्रुगणोंका विनाश कर आओ ॥२४॥ यह कह महातेजस्वी रावणने आसनपरसे उठ मणिकी माला कुम्भकर्णके गलेमें पहराय दी ॥२५॥फिर बाजू अँगूठी आदि श्रेष्ठ २ भूषण और चन्द्रमाके समान उज्ज्वल हार महात्मा कुम्भकर्णको रावणने पहराया ॥ २६ ॥ कुम्भकर्णके कानोंमें मनोहर दो कुंडल शोभायमान

अद्यतान्क्षुधितःक्रुद्धोभक्षयिष्यामिवानरान् ॥ कुंभकर्णवचःश्रुत्वारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥ २२ ॥ सैन्यैःपरिवृतोगच्छशूलमुद्गरपाणिभिः ॥ वानराहिमहात्मानःशूराःसुव्यवसायिनः ॥ २३ ॥ एकाकिनंप्रमत्तंवानयेयुर्दशनैःक्षयम् ॥ तस्मात्परमदुर्धर्षःसैन्यैःपरिवृतोव्रज ॥ रक्षसामहितं सर्वंशत्रुपक्षंनिषूदय ॥ २४ ॥ अथासनात्समुत्पत्यस्रजंमणिकृतांतराम् ॥ आबबंधमहातेजाःकुंभकर्णस्यरावणः ॥ २५ ॥ अंगदान्यंगुलीवेष्टा न्वराण्याभरणानिच ॥ हारंचशशिसंकाशमाबबंधमहात्मनः ॥ २६ ॥ दिव्यानिचसुगंधीनिमाल्यदामानिरावणः ॥ गात्रेषुसज्जयामासश्रोत्र योश्चास्यकुंडले ॥ २७ ॥ कांचनांगदकेयूरनिष्काभरणभूषितः ॥ कुंभकर्णोबृहत्कर्णःसुहुतोग्निरिवाबभौ ॥ २८ ॥ श्रोणीसूत्रेणमहतामेच केनविराजता ॥ अमृतोत्पादनेनद्धोभुजंगेनेवमंदरः ॥ २९ ॥ सकांचनंभारसहंनिवातंविद्युत्प्रभंदीप्तमिवात्मभासा ॥ आबध्यमानःकवचंररा जसंध्याभ्रसंवीतइवाद्रिराजः ॥ ३० ॥ सर्वाभरणसर्वांगःशूलपाणिःसराक्षसः ॥ त्रिविक्रमकृतोत्साहोनारायणइवाबभौ ॥ ३१ ॥

हुए, और उसके गलेमें अति सुगन्धित शोभायमान माला रावणने पहराई ॥२७॥ बडे कानवाला कुम्भकर्ण सुवर्ण बाजू केयूर और वह दूसरे आभूषणोंसे भूषित होकर प्रदीप्त अग्निके समान शोभायमान होने लगा ॥ २८॥ उसकी कमरमें काला तगडीका डोरा देखनेसे ऐसा जान पडता था,मानो समुद्रसे अमृत मथन करनेके समय सर्पद्वारा मन्दर पर्वत दृढरूपसे बँधा हुआ है ॥२९॥ कुम्भकर्णने सुवर्णका बनाहुआ बिजलीकी प्रभाके समान वर्म बख्तर धारण किया, वह तेजके प्रभावसे दमक रहा था. बडाभारी था. अभेद्य था इस बख्तरसे संध्या समयकेमेघसे रँगेहुए हिमालय पर्वतके समान कुम्भकर्णने अपूर्व शोभा धारण की ॥ ३० ॥ कुंभकर्ण समस्त भूषणोंसे भूषित और हाथमें बडाभारी शूल लेकर ऐसा ज्ञात हुआ कि, मानो त्रिविक्रम विष्णु स्वर्ग मृत्यु और पाताल लोक

नापनेको तैयार हुए हैं॥३१॥महाबली कुम्भकर्ण रावणने भलीभांति मिल भेंट कर उसकी प्रदक्षिणा कर प्रणाम करके युद्ध करनेकेलिये चला॥३२॥ राक्षसराज रावणने उस समय उसको मंगलसूचक आशीर्वाद दिया उसकालमें शंखव नगाडोंका कठोर शब्द उत्पन्न हुआ॥३३॥श्रेष्ठ हथियार लगाये हुए उन महात्माओंकी सेना चली मेघके समान शब्दायमान रथ,हाथी,घोडे और रथीलोग उस सेनाके पीछे२चलने लगे ॥३४॥ ❀ सर्प,ऊंट, गधे,सिंह; हाथी; मृगादि पक्षियोंके ऊपर सवार होहो कर राक्षसलोग महाबलवान् कुम्भकर्णके पीछे २ गमन करने लगे ॥ ३५ ॥ इस प्रकारसे वह महोत्कट रुधिरकी गन्धसे मतवाला और तीक्ष्ण शूल धारण किये हुए देव दानवोंका शत्रु कुम्भकर्ण चला,उस कालमें उसकेमस्तकपर छत्र लग रहाथा और चारों ओरसे उसके ऊपर फूलोंकी वर्षाहोरही थी

भ्रातरंसंपरिष्वज्यकृत्वाचापिप्रदक्षिणम् ॥प्रणम्यशिरसातस्मैप्रतस्थेसमहाबलः॥३२॥तमाशीर्भिःप्रशस्ताभिःप्रेषयामासरावणः॥शंखदुंदुभिनिर्घोषैःसैन्यैश्चापिवरायुधैः ॥ ३३ ॥तंगजैश्चतुरंगैश्वस्यंदनैश्चांबुदस्वनैः॥अनुजग्मुर्महात्मानोरथिनोरथिनांवरम् ॥३४॥ सर्पैरुष्ट्रैःखरैश्चैवसिंहद्विपमृगद्विजैः॥अनुजग्मुश्चतंघोरंकुंभकर्णंमहाबलम्॥३५॥सपुष्पवर्षैरवकीर्यमाणोधृतातपत्रःशितशूलपाणिः॥ महोत्कटःशोणितगंधमत्तोविनिर्ययौदानवदेवशत्रुः॥३६॥पदातयश्चबहवोमहानादामहाबलाः॥अन्वयूराक्षसाभीमाभीमाक्षाःशस्त्रपाणयः॥३७॥ रक्ताक्षाःसुबहुव्यामानीलांजनचयोपमाः॥शूलानुद्यम्यखड्गांश्चनिशितांश्चपरश्वधान्॥३८॥भिंदिपालांश्चपरिघान्गदाश्चमुसलानिच॥तालस्कंधांश्चविपुलान्क्षेपणीयान्दुरासदान् ॥३९॥अथान्यद्वपुरादायदारुणंघोरदर्शनम् ॥ निष्पपातमहातेजाःकुंभकर्णोमहाबलः॥ ४० ॥ धनुःशतपरीणाहःसषट्शतसमुच्छ्रितः ॥ रौद्रःशकटचक्राक्षोमहापर्वतसन्निभः॥४१॥सन्निपत्यचरक्षांसिदग्धशैलोपमोमहान्॥ कुंभकर्णोमहावक्त्रःप्रहसन्निदमब्रवीत् ॥ ४२ ॥

॥३६॥ कुम्भकर्णके पीछे२ बहुतसे पैदल सारवान् महाबलवान् भयंकर पराक्रमकारी और भयंकर नेत्रवाले राक्षस हाथोंमें शस्त्र लिये चले ॥३७॥ राक्षसोंकी आँखें लाल होरही थीं,मूर्ति नीले अंजनके ढेरके समान थी वह राक्षसगण शूल खड्ग,फरसोंको और दूसरे अस्त्र शस्त्र धारण करके गमन करने लगे ॥३८॥ और भिन्दिपाल,परिघ,गदा. मूसल,तालस्कन्ध बड़े२क्षेपणीय शस्त्रादि लिये वह दुष्ट राक्षस चले ॥३९॥ इसके उपरान्त महावीर कुम्भकर्णने इस समस्त सेनाको साथ ले सौम्यमूर्तिसे भिन्न भयंकर मूर्तिधारणकर युद्ध करनेकेलिये यात्रा की॥४०॥उस समय कुम्भकर्णका देह शत धनुष अर्थात् तीनशतहाथकी चौडाईमेंथा और एकशत छःधनुष अर्थात् ३१८हाथका लंबाथा. छकडेके पहियोंके समान नेत्र थे और पर्वतके समान दिखाई देता था॥४१॥भस्म हुए पर्वतके समान बडेभारी मुखवाला कुम्भकर्ण

❀ वाहनोंके सर्पादिकके समान आकारभी थे ।

व्यूहकी रचना करके अपनी सेनासे मृदु हँसकर बोला॥४२॥हे राक्षसगण!तुम लोग वानरोंके यूथपतियोंको देखते हो हम इनको इसप्रकारसे भस्म करडालेंगे, कि;जैसे अग्नि पतंगको भस्मकर देतीहै॥४३॥ अथवा वनचारीवानरलोगोंका अपराधही क्या है वह तो हमसमान पुरुषोंकी पुरी और फुलवाडियोंकेही भूषण हैं ॥४४॥ हमारे विचारमें रामचन्द्रहीलंका घेरनेके मूलहैंइसलिये आज रामचन्द्र व लक्ष्मणको मारडालनेसे और सब अपनेआपहीसे मरजायँगे ॥४५॥ कुम्भकर्ण यह बात कहही रहा था कि,इतनेहीमें महाबलवान् योद्धालोग समुद्रको कंपायमानही करनेसे मानो घोर सिंहनाद करने लगे॥४६॥ महा बुद्धिमान् कुम्भकर्ण युद्धके लिये निकल रहा था कि,इतनेमेंही चारों ओर अतिघोर दुर्निमित्त होने लगे ॥४७॥ उल्का व वज्रसे युक्त मेघगण गर्दभके समान अरुण रंग होगये

अथवानरमुख्यानांतानियूथानिभागशः ॥ निर्दहिष्यामिसंक्रुद्धःपतंगानिवपावकः ॥ ४३ ॥ नापराध्यंतिमेकामंवानरावनचारिणः ॥ जातिरस्मद्विधानांसापुरोद्यानविभूषणम् ॥ ४४ ॥ पुररोधस्यमूलंतुराघवःसहलक्ष्मणः ॥ हतेतस्मिन्हतंसर्वंतंवधिष्यामिसंयुगे ॥ ४५ ॥ एवंतस्यब्रुवाणस्यकुंभकर्णस्यरक्षसः ॥ नादंचक्रुर्महाघोरंकंपयंतइवार्णवम् ॥ ४६ ॥ तस्यनिष्पततस्तूर्णंकुंभकर्णस्यधीमतः ॥ बभूवुर्घोररूपाणिनिमित्तानिसमंततः ॥ ४७ ॥ उल्काशनियुतामेघाबभूवुर्गर्दभारुणाः ॥ ससागरवनाचैववसुधासमकंपत ॥ ४८ ॥ घोररूपाःशिवानेदुःसज्वालकवलैर्मुखैः ॥ मंडलान्यपसव्यानिबबंधुश्चविहंगमाः ॥ ४९ ॥ निष्पपातचगृध्रोस्यशूलेवैपथिगच्छतः ॥प्रास्फुरन्नयनंचास्यसव्योबाहुरकंपत ॥५०॥ निष्पपाततदाचोल्काज्वलंतीभीमनिःस्वना ॥ आदित्योनिष्प्रभश्चासीन्नवातिचसुखोनिलः ॥ ५१ ॥ अचिंतयन्महोत्पातानुदितान्रोमहर्षणान् ॥ निर्ययौकुम्भकर्णस्तुकृतांतबलचोदितः ॥ ५२ ॥ सलंघयित्वाप्राकारंपद्भ्यांपर्वतसन्निभः ॥ सददर्शघनप्रख्यंवानरानीकमद्भुतम् ॥ ५३ ॥ तेदृष्ट्वाराक्षसश्रेष्ठंवानराःपर्वतोपमम् ॥ वायुनुन्नाइवघनाययुःसर्वदिशस्तदा ॥ ५४ ॥

और समुद्र वनके सहित पृथ्वी कंपायमान होने लगी ॥ ४८ ॥ घोररूप शृगालियें अंगारोंको मुखमें दिये शब्द करने लगीं और पक्षीगण अशुभ मंगल बांध कर दाहिनीओर चलने लने ॥ ४९ ॥ जब कि,कुम्भकर्ण मार्गमें चल रहा था तब उस समय उसके शूलपर गिद्ध बैठ गया और उसका बायां नेत्र फडककर बायाँहाथभी कंपायमान होने लगा ॥५०॥ सन्मुख बडीभारी भयंकर जलती हुई उल्का गिरपडी सूर्य भगवान् प्रभाहीन होगये और जिससेसुख प्राप्त होसके ऐसी वायुभी नहीं चली ॥५१॥ परन्तु कालवशसे प्रेरित हुआ कुंभकर्ण उन रोमहर्षकारी बडे २ उत्पातोंको कुछ भी न समझता हुआ चलाहीगया ॥५२॥ पर्वताकार कुम्भकर्ण पैदलही चलकर कोटकी भीतके बाहर आया कि, उसमें मेघमालाके समान अद्भुत वानरोंकी सेनाको देखा ॥५३॥ पर्वताकार राक्षसवीर

कुम्भकर्णको निहारकर पवनसे उडाये हुए मेघके समान सब वानरलोग इधर उधर भागने लगे ॥ ५४ ॥ मेघके समान वीर कुंभकर्ण प्रचंड वानरोंकी सेनाको मेघजालके समान इधर उधर भागती हुई देखकर हर्षके मारे मेघके समान गंभीर शब्दसे सिंहनाद करने लगा ॥५५॥ जिस प्रकार आकाशमें मेघोंका गर्जना शब्द हुआ करता है ऐसेही कुंभकर्णका घोर सिंहनाद सुनकर वानरोंमेंसे बहुतसे जड कटे शाल वृक्षके समान पृथ्वीपर गिर पडे ॥५६॥ इस प्रकारसे शत्रुका विनाश करनेके लिये आया हुआ बडा भारी शूल हाथमें लिये हुए महाबलवान् कुम्भकर्ण किंकरगणोंके साथ प्रलयकालीन दंड हाथमें लिये शंकरजीके समान वानरलोगोंको भयंकर भय उत्पन्न करने लगा ॥ ५७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां पंचषष्टितमः सर्गः ॥ ६५ ॥ इसके उपरान्त

तद्वानरानीकमतिप्रचंडंदिशोद्रवद्भिन्नमिवाभ्रजालम् ॥ सकुम्भकर्णःसमवेक्ष्यहर्षान्ननादभूयोघनवद्घनाभः ॥५५॥ तेतस्यघोरंनिनदंनिशम्ययथा निनादंदिविवारिदस्य ॥ पेतुर्धरण्यांबहवःप्लवंगानिकृत्तमूलाइवशालवृक्षाः ॥ ५६ ॥ विपुलपरिघवान्सकुंभकर्णोरिपुनिधानायविनिःसृतो महात्मा ॥ कपिगणभयमाददत्सुभीमंप्रभुरिवकिंकरदंडवान्युगांते ॥ ५७ ॥ इत्यार्षे श्रीम० वा० आ० च० सा० युद्धकांडे पंचषष्टितमः सर्गः ॥ ६५ ॥ सलंघयित्वाप्राकारंगिरिकूटोपमोमहान् ॥ निर्ययौनगरात्तूर्णंकुम्भकर्णोमहाबलः ॥ १ ॥ ननादचमहानादंसमुद्रमभिना दयन् ॥ विजयन्निवनिर्घातान्विधमन्निवपर्वतान् ॥ २ ॥ तमवध्यंमघवतायमेनवरुणेनवा ॥ प्रेक्ष्यभीमाक्षमायांतंवानराविप्रदुद्रुवुः ॥३॥ तांस्तु विप्रद्रुतान्दृष्ट्वाराजपुत्रोंगदोब्रवीत् ॥ नलंनीलंगवाक्षंचकुमुदंचमहाबलम् ॥ ४ ॥ आत्मनस्तानिविस्मृत्यवीर्याण्यभिजनानिच ॥ क्वगच्छत भयत्रस्ताःप्राकृताहरयोयथा ॥५॥ साधुसौम्यानिवर्तध्वंकिंप्राणान्परिरक्षथ ॥ नालंयुद्धायवैरक्षोमहतीयंविभीषिका ॥ ६ ॥

पर्वताकार महावीर कुम्भकर्ण लंकाके प्राकार (कोटकीभीत) को लांघ अति शीघ्रतापूर्वक नगरके बाहर निकला ॥ १ ॥ वह कुम्भकर्ण समुद्रको कंपायमान, पर्वतोंके चलायमान और वज्रको पराजित करके घोर सिंहनाद करने लगा ॥२॥ वानरगण, इन्द्र यम और वरुणसे भी न मारे जाने योग्य भयंकर नेत्रवाले उस राक्षसको देखकर डरके मारे भागने लगे ॥ ३ ॥ तब वालिके पुत्र अंगदजी वानरोंको भागते हुए देखकर नल नील गवाक्ष और कुमुदसे बोले ॥ ४ ॥ यह क्या और साधारण वानर लोगोंके समान तुम लोग भी भयके मारे विह्वलहो कहांको भागे जाते हो ? क्या तुम अपने २ परिवार और अपने२बडे भारी वीर्यको भूल गये ? ॥ ५ ॥ हे सौम्य स्वभाववालो ! भाग करके प्राणरक्षा करनेकी क्या आवश्यकता है ? जो कुछ भी हो इससमय तुम लौट आओजिसको

देखकर तुम लोग भय करते हो यह तो केवल धोखाही धोखा है, इसमें युद्ध करनेकी सामर्थ्य नहीं है ॥६॥ हे वानरलोगो! तुम सबके लौट आनेपर हम सब एकत्र हो मिलकर विक्रम प्रकाश करके राक्षसोंके उठाये हुए बडे भारी धोखेको नाश कर देंगे ॥ ७ ॥ अंगदजीके ऐसे वचन सुनकर वानरगण धीरज बांध बडी कठिनाईसे लौटे और वृक्ष पर्वतादि ग्रहण करके युद्ध करनेके लिये तैयार हुए ॥ ८ ॥ मदमाते हाथियोंके समान वह वानरगण उत्साह सहित लौटते ही क्रोधमें भरकर कुंभकर्णके ऊपर प्रहार करने लगे ॥९॥ परन्तु महाबलवान् कुंभकर्ण बडे २ पर्वतोंके शृङ्ग, शिला और फूले हुए वृक्षोंसे ताडित होकर भी क्षण भरके लिये भी चलायमान नहीं हुआ ॥१०॥ अधिक करके शिला और फूले हुए वृक्ष उसके शरीरपर गिर खंड२हो पृथ्वीपर गिरने लगे ॥ ११ ॥ वनको

महतीमुत्थितामेनांराक्षसानांविभीषिकाम् ॥ विक्रमाद्विधमिष्यामोनिवर्तध्वंप्लवंगमाः॥७॥ कृच्छ्रेणतुसमाश्वस्यसंगम्यचततस्ततः॥वृक्षान्गृही त्वाहरयःसंप्रतस्थूरणाजिरे ॥८॥ तेनिवर्त्यतुसंरब्धाःकुम्भकर्णवनौकसः ॥ निर्जघ्नुःपरमक्रुद्धाःसमदाइवकुंजराः ॥९॥ प्रांशुभिर्गिरिशृंगैश्चशि लाभिश्चमहाबलाः ॥ पादपैःपुष्पिताग्रैश्चहन्यमानोनकंपते ॥१०॥ तस्यगात्रेषुपतिताभिद्यंतेबहवःशिलाः ॥ पादपाःपुष्पिताग्राश्चभग्नाःपेतुर्म हीतले ॥ ११ ॥ सोपिसैन्यानिसंक्रुद्धोवानराणांमहौजसाम् ॥ ममंथपरमायत्तोवनान्यग्निरिवोत्थितः ॥ १२ ॥ लोहितार्द्रास्तुबहवःशेरतेवान रर्षभाः ॥ निरस्ताःपतिताभूमौताम्रपुष्पाइवद्रुमाः ॥१३॥ लंघयन्तःप्रधावंतोवानरानावलोकयन् ॥ केचित्समुद्रेपतिताःकेचिद्गगनमास्थिताः ॥१४॥ वध्यमानास्तुतेवीराराक्षसेनचलीलया ॥ सागरंयेनतेतीर्णाःपथातेनैवदुद्रुवुः ॥१५॥ तेस्थलानितदानिम्नंविवर्णवदनाभयात् ॥ ऋक्षा वृक्षान्समारूढाःकेत्पिर्वतमाश्रिताः ॥ १६ ॥ निपेतुःकेचिदपरेकेचिन्नैवावतस्थिरे ॥ केचिद्भूमौनिपातिताःकेचित्सुप्तामृताइव ॥ १७ ॥

जलानेके लिये अग्निके समान क्रोधमें भरकर महातेजस्वी कुंभकर्ण भी वानरोंकी उस सेनाको अति यत्नके साथ मथने लगा ॥१२॥ उस कालमें बहुतसे वानरगण अरुण रंगके पुष्पोंसे शोभित वृक्षोंके समान लाल२रुधिरसे देह भिगोये पृथ्वीपर गिर२कर शयन करने लगे ॥१३॥ उनमेंसे कोई२वानर किसी ओरको न देख कर भागते हुए लांघनेके अभिप्रायसे समुद्रमें गिरने लगे, और कोई२सघन वनोंमें छिप गये, कोई आकाशमें कूद गये॥१४॥अधिक क्या कहें उस कालमें अनेक वानरवीर उस राक्षस कुम्भकर्णसे लीला सहित मारे जाकर मरनेके निकट पहुँच जिस मार्गसे समुद्रके पार हुए थे उसी मार्गसे भागने लगे ॥१५॥ रीछगण भी भयके मारे विवर्णमुख हो कोई२गुफामें प्रवेश कर गये, कोई२वृक्षोंपर चढे और कोई २ पर्वतोंपर आरोहण करते हुए ॥ १६ ॥ कोई २ पर्वतोंपरसे नीचे उतर

आये और कोई२नीचे नहीं उतरे वहींपर रहे,कोई२मृतक हो गये और कोई२मृतक तुल्य होकर पृथ्वीपर सो रहे ॥१७॥ तब अंगदजी वानरोंकी यह अवस्था देखकर उनसे बोले तुम लोग लौटो,हम फिर युद्ध करेंगे ॥१८॥ हे वानरगण ! तुम रणभूमिको छोडकर भागे जातेहो परन्तु हम सारी पृथ्वीपर भी तुम्हारे कहीं रहनेका स्थान नहीं देखते कि,तुम वहाँ भय रहित होकर बच जाओ और अपने२प्राणोंकी रक्षा कर सको,इस लिये शीघ्र लौट आओ;इसप्रकारकी प्राणरक्षा करनेसे क्या होगा ? क्योंकि जहां रहोगे वहां सुग्रीव तुम्हें मरवाडालेंगे ॥१९॥ हे अतुलगतिमान्,पौरुषयुक्तवानरो ! तुम यदि अपने आयुधोंका त्याग करके इस प्रकारसे भाग अपने प्राणोंकी रक्षा करोगे;तब तुम्हारी स्त्रियें जो तुम्हारा उपहास करेंगीवह उसका हँसना ही मृत्युके समानहो जायगा ॥२०॥ आश्चर्य !

तान्समीक्ष्यांगदोभग्नान्वानरानिदमब्रवीत् ॥ अवतिष्ठतयुध्यामोनिवर्तध्वंप्लवंगमाः ॥ १८ ॥ भग्नानांवोनपश्यामिपरिक्रम्यमहीमिमाम् ॥ स्थानंसर्वेनिवर्तध्वंकिंप्राणान्परिरक्षथ ॥ १९ ॥ निरायुधानांक्रमतामसंगगतिपौरुषाः ॥ दाराह्युपहसिष्यंतिवैघातःसुजीवताम् ॥ २० ॥ कुलेषुजाताःसर्वेस्मिन्विस्तीर्णेषुमहत्सुच ॥ क्वगच्छतभयत्रस्ताःप्राकृताहरयोयथा ॥ अनार्याःखलुयद्भीतास्त्यक्त्वावीर्यंप्रधावत ॥२१॥ विकत्थनानिवायानिभवद्भिर्जनसंसदि ॥ तानिवःक्वनुयातानिसोदग्राणिहतानिच ॥ २२ ॥ भीरोःप्रवादाःश्रूयंतेयस्तुजीवतिधिक्कृतः ॥ मार्गःसत्पुरुषैर्जुष्टःसेव्यतांत्यज्यतांभयम् ॥ २३ ॥ शयामहेवानिहतापृथिव्यामल्पजीविताः ॥ प्रांप्नुयामोब्रह्मलोकंदुष्प्रापंचकुयोधिभिः ॥२४॥ अवाप्नुयामः कीर्तिंवानिहत्वाशत्रुमाहवे ॥ निहतावीरलोकस्यमोक्ष्यामोवसुवानराः ॥ २५ ॥

तुम सबने बडे२ कुलोंमें जन्म ग्रहण कियाहै सो तुम साधारण वानरोंकेसमान भयभीत होकर कहां भागे जाते हो! तुम लोग जब कि अपना विपुल विक्रम भूल कर भयभीत हुए हो तबतुम अतिनीचऔर राजद्रोही हो ॥ २१ ॥ अपनी२ उग्रता दिखलाने और वानरराज सुग्रीवका हित साधन करनेके लिये तुमने उस समय जो बडी २ बातें मारी थीं वह समस्त बातेंकहां अन्तर्धान होगई ! ॥२२॥ जिसको सत्पुरुष लोग धिक्कार दिया करते हैं, उस भीरु के नरकमें गिरने आदिके प्रवाद सुनाई देते हैं इस कारण सत्पुरुषोंके सेवनकरनेयोग्य मार्गमें चलकर भयको त्याग दो क्यों भय खाते हो ? ॥ २३ ॥ यदि आयुके पूरे होजानेसे हम सब शत्रुओंसे नाशको प्राप्त होकर रण भूमिमें दैवात् पृथ्वीपर गिरें तो अवीरगणोंको प्राप्त होनेकेअयोग्य ब्रह्मलोकको हम प्राप्त करेंगे ॥२४॥ और वीर गणोंके सुखसे भोग करनेके धनको प्राप्त करेंगे, और जो समरमें शत्रुलोगोंका नाशकरसके तो इस लोकमे अतुलकीर्तिको प्राप्त करेंगे ॥ २५ ॥

जिस प्रकार पतंग दीप्तिमान् अग्निके निकट हो कर अपने जीवनकी रक्षा करनेमें समर्थ नहीं होता; वैसेही कुंभकर्णभी रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी के निकट आयकर फिर जीता हुआ लंकाको लौट कर नहीं जासकेगा ॥ २६ ॥ विशेष करके हम लोग महावीर और बहुत सारे होकर भी यदि एक राक्षससे भय पायकर भाग जायँगे और इस प्रकार अपने प्राणोंकी रक्षा करेंगे तो इससे हमारा यश नष्ट होजायगा ॥२७॥ कनकका बाजू पहरे शूरश्रेष्ठ अंगदजीके यह वचन सुन कर भागकर चले जातेहुए वानरलोग शूरगणोंके आगे निंदा पानेके योग्य वचन बोले ॥ २८ ॥ हे वीरश्रेष्ठ ! महाबलवान् कुंभकर्ण अतिघोर संग्राम कर रहा है इस समय हम लोग उसके सन्मुख किसी प्रकारसे खडे नहीं हो सकते हैं; जो कुछभी हो हमें अपना प्राण अत्यन्त प्यारा है इस कारण भागजा नेमें ही हमारी भलाई है ॥२९॥ वानरोंके यूथपति भयंकर नेत्रवाले रूपवान् कुम्भकर्णको आया हुआ देखकर केवल इतनाही कहकर चारोंओरको भागने लगे

नकुंभकर्णःकाकुत्स्थंदृष्ट्वाजीवन्गमिष्यति ॥ दीप्यमानमिवासाद्यपतंगोज्वलनंयथा ॥२६॥ पलायनेनचोद्दिष्टाःप्राणान्रक्षामहेवयम् ॥ एकेन बहवोभग्नायशोनाशंगमिष्यति ॥ २७ ॥ एवंब्रुवाणंतंशूरमंगदंकनकांगदम् ॥ द्रावमाणास्ततोवाक्यमूचुःशूरविगर्हितम् ॥ २८ ॥ कृतंनः कदनंघोरंकुम्भकर्णेनरक्षसा ॥ नस्थानकालोगच्छामोदयितंजीवितंहिनः ॥ २९ ॥ एतावदुक्त्वावचनसर्वेतेभेजिरेदिशः ॥ भीमंभीमाक्षमा यांतंदृष्ट्वावानरयूथपाः ॥ ३० ॥ द्रवमाणास्तुतेवीराअंगदेनवलीमुखाः ॥ सांत्वनैश्चानुमानैश्चततःसर्वेनिवर्तिताः ॥॥ ३१ ॥ प्रहर्षमुपनी ताश्चवालिपुत्रेणधीमता ॥ आज्ञाप्रतीक्षास्तस्थुश्चसर्वेवानरयूथपाः ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे षट्षष्टितमः सर्गः ॥६६॥ तेनिवृत्तामहाकायाःश्रुत्वांगदवचस्तदा ॥ नैष्ठिकींबुद्धिमास्थायसर्वेसंग्रामकांक्षिणः ॥ १ ॥ समुदीरित वीर्यास्तेसमारोपितविक्रमाः ॥ पर्यवस्थापितावाक्यैरंगदेनबलीयसा ॥ २ ॥

॥३०॥ परंतु अंगद जीने समझाय बुझाय लालच दिलाय उन भागते हुए वानरणोंके यूथनाथोंको किसी प्रकारसे फिर लौटाया ॥३१॥ तब बुद्धिमान् अंगद जीने उन सब वानरोंको उत्साहित किया और यूथपति लोग भी युद्ध करनेके लिये बाट जोहने लगे ॥३२॥ (इसके उपरान्त शरभ,मैंद,धूम्र,नील,कुमुद,सुषेण, गवाक्ष रंभ,'तार,द्विविद और पवनकुमार हनुमानादि मुख्य२वानर अति शीघ्रतासे समर भूमिकी ओर चले) ॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०युद्धकांडे भाषायां षट्षष्टितमः सर्गः॥६६॥अंगदजीके वचन सुनकर समस्त वानर लौट पडे और अपनी मृत्युका होना मनमें ठान युद्ध करनेका अभिलाष करते हुए ॥ १ ॥ उसके पीछे बलवान् अंगदजीके बचनोंसेवे सब प्रकारसे युद्ध करनेको आरूढ हुए और उन लोगोंका वीर्य प्रदीप्त होनेसे वह सब फिर पराक्रम प्रकाश करने लगे ॥२॥

वह समस्त वानरगण अपने प्राणोंकी आशा छोडकर मरणमें कृतनिश्चय हो कठोर युद्धका आरंभ करते हुए ॥ ३ ॥ उसके उपरांत वह बडे शरीरवाले वानर गण वृक्ष और पर्वतोंके शृंग उठायकर कुंभकर्णके सन्मुख धाये ॥ ४ ॥ परंतु वीर्यवान् महाकाय कुंभकर्ण क्रोधमें भर गदा उठाय शत्रुओंको धर्षित करके चारों ओरसे उनके ऊपर प्रहार करने लगा ॥ ५ ॥ उस समय सौ सात आठ सहस्र असंख्य वानर वीर कुंभकर्ण के प्रहारसे ताडित हो अपनी देह पृथ्वीपर पसार कर सोगये ॥ ६ ॥ जिस प्रकार गरुडजी सर्पोंको भक्षण करते हैं वैसेही अत्यन्त क्रोधित हुआ कुंभकर्ण एक २ बारमें सोलह, अठारह और वीस तीस तक वानरोंको अपनी बाहोंसे पकड कर मुखमें डाल कर खाय जाता था ॥ ७ ॥ वानर लोग भी बडे कष्टसे सावधान चित्त हो इकट्ठे हुए और वृक्ष व पर्वतोंको हाथमें ग्रहण कर रणभूमिमें विराज मान होनेलगे ॥ ८ ॥ इसके उपरान्त लंबमान बादलके समान वानर श्रेष्ठ द्विविद एक पर्वत उखाड के पर्वताकार कुंभकर्ण की ओर दौडा ॥ ९ ॥ वानर श्रेष्ठने पर्वत का शिखर उखाडते ही कुम्भकर्ण पर चलाया: परन्तु वह पर्वत का शिखर कुंभकर्णके ऊपर न गिर उसकी सेना पर गिरा ॥ १० ॥ उस पर्वत शृंगके गिरनेसे उस सेनाके अश्व, गज और रथ समस्त चूर्ण होगये । तब वानर द्विविद और एक पर्वतका शृंग चलायकर और राक्षसोंका नाश करने लगे ॥ ११ ॥ वानरश्रेष्ठ द्विविदके चलाये शैलशृंगने अत्यन्त वेगसे गिरकर राक्षसोंके रथ सारथियोंकेसहित चूर्ण कर डाले । क्षणभरमें रणभूमि राक्षसोंके रथ रुधरसे गीली होगई ॥ १२ ॥ तब रणमें बैठे हुए महावीर राक्षस लोग भयंकर सिंहनाद करके कालाग्निके समान बाण चलाय २ वानरोंका नाश करने लगे ॥ १३ ॥

प्रयाताश्चगताहर्षंमरणेकृतनिश्चयाः ॥ चक्रुःसुतुमुलंयुद्धंवानरास्त्यक्तजीविताः ॥३॥ अथवृक्षान्महाकायाःसानूनिसुमहांतिच ॥ वानरास्तूर्णमुद्यम्यकुंभकर्णमभिद्रवन् ॥४॥ कुंभकर्णःसुसंक्रुद्धोगदामुद्यम्यवीर्यवान् ॥ धर्षयन्समहाकायःसमंताद्व्यक्षिपद्रिपून् ॥५॥ शतानिसप्तचाष्टौच सहस्राणिचवानराः ॥ प्रकीर्णाःशेरतेभूमौकुंभकर्णेनताडिताः ॥६॥ षोडशाष्टौचदशचविंशत्रिंशत्तथैवच ॥ परिक्षिप्यचबाहुभ्यांखादन्सविरिधावति ॥ भक्षयन्भृशसंक्रुद्धोगरुडःपन्नगानिव ॥७॥ कृच्छ्रेणचसमाश्वस्ताःसंगम्यचततस्ततः ॥ वृक्षाद्रिहस्ताहरयस्तस्थुःसंग्राममूर्धनि ॥८॥ततः पर्वतमुत्पाट्यद्विविदःप्लवगर्षभः ॥ दुद्रावगिरिशृंगाभंविलंबइवतोयदः ॥९॥तंसमुत्पाट्यचिक्षेपकुंभकर्णायवानरः ॥ तमप्राप्यमहाकायंतस्यसैन्येपतत्ततः ॥ १० ॥ममर्दाश्वान्गजांश्चापिरथांश्चापिगजोत्तमान् ॥ तानिचान्यानिरक्षांसिएवंचान्यद्गिरेःशिरः ॥११॥ तच्छैलवेगाभिहतंहताश्वंहतसारथिम् ॥ रक्षसांरुधिरक्लिन्नंबभूवायोधनंमहत् ॥१२॥ रथिनोवानरेंद्राणांशरैःकालांतकोपमैः ॥शिरांसिनदतांजह्रुःसहसाभीमनिःस्वनाः ॥१३॥

उस ओर महाबलवान् वानरगणभी बडे २वृक्षोंको उखाडकर रथ, अश्व, हाथी, ऊंट और राक्षसोंका विध्वंस करने लगे ॥१४॥ महावीर हनुमानूजीने आकाश मार्गमें टिककर पर्वतोंके शृंग विविध शिलाखंड और अनेक वृक्ष कुंभकर्णके मस्तकपर चलाये ॥ १५ ॥ राक्षसवीर महाबलवान् कुंभकर्णने देखते २ इन सब शैलशृंगादिकोंको शूलसे खंड २ कर डाला और पलक मारतेमें वृक्षादिकोंको चूर्ण कर दिया ॥ १६ ॥ इसके उपरान्त कुंभकर्ण तीक्ष्ण शूल हाथमें लेकर वानरसेनाकी ओर दौडा, यह देखकर हनुमानूजी एक बडाभारी पर्वतका शृंग ग्रहण करके उसके सन्मुख खडे रहे ॥१७॥ तब हनुमानूजीने अत्यन्त क्रोधमें भरकर वह पर्वतका शृंग अतिवेगसे पर्वतश्रेष्ठके समान निशाचर कुंभकर्णको मारा कि, जिसके लगनेसे वह अत्यन्त कातर औरव्याकुल हुआ और उसके अंग

वानराश्चमहात्मानः समुत्पाट्यमहाद्रुमान् ॥ रथानश्वान्गजानुष्ट्रानाक्षसानभ्यसूदयन् ॥१४॥ हनूमाञ्छैलशृंगाणि शिलाश्चविविधान्द्रुमान् ॥ ववर्षकुंभकर्णस्यशिरस्यंबरमास्थितः ॥॥ १५ ॥ तानिपर्वतशृंगाणिशूलेनसबिभेदह ॥ बभंजवृक्षवर्षंचकुंभकर्णोमहाबलः ॥ १६ ॥ ततोहरीणांतदनीकमुग्रंदुद्रावशूलंनिशितंप्रगृह्य ॥ तस्थौसतस्यापततःपुरस्तान्महीधराग्रंहनुमान्प्रगृह्य ॥ १७ ॥ सकुंभकर्णंकुपितोजघानवेगेनशैलोत्तमभीमकायम् ॥संचुक्षुभेतेनतदाभिभूतोमेदार्द्रगात्रोरुधिरावसिक्तः ॥ १८ ॥ सशूलमाविध्यतडित्प्रकाशंगिरिंयथाप्रज्वलिताग्निशृंगम् ॥ बाह्वंतरेमारुतिमाजघानगुहोचलंक्रौंचमिवोग्रशक्त्या ॥ १९ ॥ सशूलनिर्भिन्नमहाभुजांतरःप्रविह्वलःशोणितमुद्वमन्मुखात् ॥ ननादभीमंहनुमान्महाहवेयुगांतमेघस्तनितस्वनोपमम् ॥ २० ॥ ततोविनेदुःसहसाप्रहृष्टारक्षोगणास्तंव्यथितंसमीक्ष्य ॥ प्लवंगमास्तुव्यथिताभयार्ताःप्रदुद्रुवुःसंयतिकुंभकर्णात् ॥ २१ ॥

रुधिर और वसा (चरबी) से भीगगये ॥ १८ ॥ तब महावीर कुंभकर्णने बिजलीके समान प्रकाशमान् और शब्दित शूल घुमायकर पर्वत जिसप्रकार जलते हुए अग्निके शृंगको धारण करता है, वैसेही वह शूल हनुमानूजीकी बाहोंमें मारा उस समय ऐसा जान पडा मानो कुमारने शक्ति चलायकर क्रौंच पर्वतको फोडडाला ॥ १९ ॥ अत्यन्त दारुण प्रहारसे रणभूमिमें वानरवीर हनुमानूजी अत्यन्त विह्वल हुए, उनके मुखसे अनिवारित रुधिरकी धारा बहने लगी, और वह प्रलयकालीन मेघके गर्जनके समान अत्यन्त भयंकर गर्जन करने लगे ॥ २० ॥ राक्षसगण हनुमानूजीको अचानक इसप्रकार व्यथित देखकर हर्षसे सिंहनाद करने लगे और वानरगण भयसे दुःखितहृदय हो कुंभकर्णके निकटसे भागने लगे ॥ २१ ॥

उसके पीछे भयंकर पराक्रमकारी वानर सेनापति नीलने सेनाको सावधान करके कुंभकर्णपर एक बडा भारी पर्वतका शृंग चलाया ॥२२॥ दूरसे उस पर्वतके शृंगको आता हुआ देखकर बलवान् कुंभकर्णने घूसा मारकर उसको चूर्ण करडाला, देखते २ उस पर्वतशृंगमेंसे चिनगारियें निकलने लगीं और ज्वाला सहित उसके टुकडे पृथ्वीपर गिरने लगे ॥ २३ ॥ उस समय ऋषभ शरभ, नील, गवाक्ष और गन्धमादन यह पांच वानरश्रेष्ठ कुंभकर्णकी ओर धाये ॥ २४ ॥ यह पांचों वानर वृक्षोंके आघातसे पर्वतोंके प्रहारसे चपतकी मारसे, लातोंकी चोटसे और मूकोंकी मारसे पर्वताकार कुंभकर्णपर प्रहार करने लगे ॥२५॥ परन्तु कुंभकर्ण उन सब प्रहारोंको सुखका स्पर्श समझकर कुछभी पीडित नहीं हुआ; और उसने महावेगसे ऋषभको अपनी बांहोंसे पकडकर अपनी छातीमें लगा लिया ॥२६॥ वानरश्रेष्ठ ऋषभ कुंभकर्णकी बांहोंके प्रहारसे पीडित होकर उसी समय पृथ्वीपर गिरपडा उसके मुखसे बराबरा रुधिरकीधार बहने लगी ॥२७॥ उसके

ततस्तुनीलोबलवान्पर्यवस्थापयन्बलम् ॥ प्रविचिक्षेपशैलाग्रंकुंभकर्णायधीमत ॥२२॥ तदापतंतंसंप्रेक्ष्यमुष्टिनाभिजघानह ॥ मुष्टिप्रहाराभिह तंतच्छैलाग्रंव्यशीर्यत ॥ सविस्फुलिंगंसज्वालंनिपपातमहीतले ॥२३॥ ऋषभःशरभोनीलोगवाक्षोगंधमादनः ॥ पंचवानरशार्दूलाःकुंभकर्ण मुपाद्रवन् ॥२४॥ शैलैर्वृक्षैस्तलैःपादैर्मुष्टिभिश्चमहाबलाः ॥ कुंभकर्णमहाकायंनिजघ्नुःसर्वतोयुधि ॥ २५ ॥ स्पर्शानिवप्रहारांस्तान्वेदयानो नविव्यथे ॥ ऋषभंतुमहावेगंबाहुभ्यांपरिषस्वजे ॥ २६ ॥कुंभकर्णभुजाभ्यांतुपीडितोवानरर्षभः ॥ निपपातर्षभोभीमःप्रमुखागतशोणितः ॥ २७ ॥ मुष्टिनाशरभंहत्वाजानुनानीलमाहवे ॥ आजघानगवाक्षंतुतलेनेंद्ररिपुस्तदा ॥ २८ ॥ दत्तप्रहारव्यथितामुमुहुःशोणितोक्षिताः ॥ निपेतुस्तेतुमेदिन्यांनिकृत्ताइवकिंशुकाः ॥ ॥२९॥ तेषुवानरमुख्येषुपातितेषुमहात्मसु ॥ वानराणांसहस्राणिकुंभकर्णंप्रदुद्रुवुः ॥३०॥ तंशैल मिवशैलाभाःसर्वेतुप्लवगर्षभाः ॥ समारुह्यसमुत्पत्यददंशुःप्लवगर्षभाः ॥३१॥ तंनखैर्दशनैश्चापिमुष्टिभिर्बाहुभिस्तथा॥ कुंभकर्णंमहाबाहुंनिजघ्नुः प्लवगर्षभाः ॥ ३२ ॥ सवानरसहस्रैस्तुविचितःपर्वतोपमः ॥ रराजराक्षसव्याघ्रोगिरिरात्मरुहैरिव ॥ ३३ ॥

उपरान्त इन्द्रके शत्रु कुंभकर्णने रणभूमिमें मूकामारकर शरभको, जाँघके प्रहारसे नीलको और लात मारकर गवाक्षके ऊपर प्रहार किया ॥ २८ ॥ यह सब वानरवीर अत्यन्त दारुण प्रहारसे मर्ममें घायल होकर गिरगये, उनके सब अंगोंमें रुधिरकी धारा बहनेसे वह जड कटे हुए टेसूके वृक्षके समान पृथ्वीमें गिरपडे ॥ २९ ॥ उन महाबलवान् मुख्य २ वानरोंके पृथ्वीपर गिरनेसे असंख्य वानरोंकी सेना कुंभकर्णके सम्मुख दौडी ॥ ३० ॥ पर्वताकार वानर श्रेष्ठ गण छलांग मारकर पर्वताकार कुंभकर्णके शरीरपर सवार होकर वारंवार दांतोंसे उसको काटने लगे ॥ ३१ ॥ वह वानर श्रेष्ठ गण, नख दंत मूका और बाहोंसे महा बलवान् कुंभकर्णको मारने लगे ॥३२॥ उस कालमें पर्वताकार राक्षसश्रेष्ठ कुंभकर्ण हजारों वानरोंके लिपटजानेसे वृक्षराजिविराजित पर्वतश्रेष्ठके समान ॥ ३३ ॥

गरुडजी जिसप्रकार सर्पोंको भक्षण करते हैं,वैसेही वह महाबलवान् कुंभकर्ण क्रोधमें भरकर अपनी बांहोंसे वानरोंको पकड२ कर खाने लगा ॥३४॥ परन्तु वानरगण कुंभकर्णकरके उसके पातालके समान मुखविवरमें डालेजाकर नाकके छेद और कानोंमें होकर निकलने लगे॥३५॥वह पर्वताकार राक्षसश्रेष्ठ अत्यन्त क्रोधित होकर वानरोंको भक्षण करता हुआ समस्त वानरोंकी सेनाको पटक २ कर उसके अंग भंगकरने लगा ॥ ३६ ॥ इस प्रकार राक्षस कुंभकर्ण रणभूमिमें मांस और रुधिरकी कीचड उठाय प्रलयकालके प्रदीप्त अग्निके समान वानरोंकी सेनाके बीचमें घूमने लगा ॥३७॥ इन्द्रजी वज्र धारण करके जिस प्रकार शोभित होते हैं, फांसी हाथमें लिये यमराज जिसप्रकार शोभायमान होते हैं वैसेही शूल धारण करके कुंभकर्णकी चमत्कार शोभा हुई ॥ ३८ ॥ जिसप्रकार अग्नि

बाहुभ्यांवानरान्सर्वान्प्रगृह्यसमहाबलः ॥ भक्षयामाससंक्रुद्धोगरुडःपन्नगानिव ॥३४॥ प्रक्षिप्ताःकुंभकर्णेनवक्त्रेपातालसन्निभे ॥ नासापुटाभ्यां संजग्मुःकर्णाभ्यांचैववानराः ॥ ३५ ॥ भक्षयन्भृशसंक्रुद्धोहरीन्पर्वतसन्निभः ॥ बभंजवानरान्सर्वान्संक्रुद्धोराक्षसोत्तमः ॥ ३६ ॥ मांसशोणितसंक्लेदांकुर्वन्भूमिंसराक्षसः ॥ चचारहरिसैन्येषुकालाग्निरिवमूर्च्छितः ॥३७॥ वज्रहस्तोयथाशक्रःपाशहस्तइवांतकः ॥ शूलहस्तोबभौयुद्धे कुंभकर्णोमहाबलः ॥॥३८॥ यथाशुष्काण्यरण्यानिग्रीष्मेदहतिपावकः ॥ तथावानरसैन्यानिकुंभकर्णोददाहसः ॥३९॥ ततस्तेवध्यमानास्तुहतयूथाःप्लवंगमाः ॥ वानराभयसंविग्नाविनेदुर्विकृतैःस्वरैः ॥ ४० ॥ अनेकशोवध्यमानाःकुम्भकर्णेनवानराः ॥ राघवंशरणंजग्मुर्व्यथिताभिन्नचेतसः ॥४१॥ प्रभग्नान्वानरान्दृष्ट्वावज्रहस्तात्मजात्मजः ॥ अभ्यधावतवेगेनकुम्भकर्णंमहाहवे ॥४२॥ शैलशृंगंमहद्गृह्यविनदन्समुहुर्मुहुः ॥ त्रासयत्राक्षसान्सर्वान्कुम्भकर्णपदानुगान् ॥ ४३ ॥ चिक्षेपशैलशिखरंकुम्भकर्णस्यमूर्धनि ॥ सतेनाभिहतोमूर्ध्निशैलेनेंद्ररिपुस्तदा ॥ ४४ ॥

यु० कां०
स० ६७

ग्रीष्मऋतु(ग्रीष्मके समय) में सूखे हुए वनको जलाते हैं वैसेही कुंभकर्णभी वान रोंकी सेनाको भस्म करने लगा॥३९॥तब मोरचेसे तितर बितर हुए वानरगण कुंभर्णसे वध्यमान होकर भयके मारे उद्विग्न मनसे विकट नाद करनेलगे॥४०॥इसप्रकारसे वानरगण कुंभकर्णसे मारे जाकर उत्साहरहित हो गये,और अत्यन्त भीतहो व्यथितमनसे श्रीरामचन्द्रजीकी शरणमें गये ॥४१॥ वालिकुमार अंगदजी महारणमें वानरोंको कुंभकर्णकी डरसे भगा हुआ देखकर वेगसहित उसके सन्मुख दौडे ॥ ४२ ॥ उन वीर वालिकुमार अंगदजीने बडाभारी वर्वतका श्रृंग ग्रहण करके कुंभकर्णके अनुगामी सब राक्षसोंको त्रासित कर ॥ ॥ ४३ ॥ वह पर्वताकार शिखर कुंभकर्णके मस्तकपर चलाया, इन्द्रका शत्रु कुंभकर्ण उस शिखरके लगनेसे ॥ ४४ ॥

क्रोधके मारे अत्यन्त प्रज्वलित हो उठा और वेगसे वालिकुमार अंगदजीके ऊपर धाया ॥४५॥ महानाद करके कुंभकर्णने समस्त वानरोंको त्रासितकर अत्यन्त रोषसे वह शूल महाबलवान् अगदजीके ऊपर छोडा ॥ ४६ ॥ परन्तु युद्ध विशारद कपिश्रेष्ठ अंगदजी उस शूलको आता हुआ देख उसे छोडकर दूरको कूदगये; और शूलको व्यर्थ कर दिया ॥४७॥ उसके पीछे वेगसे उछलकर वीरश्रेष्ठ अंगदजीने कुम्भककर्णकी छातीमें इसप्रकार जोरसे लात मारी कि; पर्वतके समान कुम्भकर्णभी उस लात के लगनेसे मूर्च्छित हो गया ॥ ४८ ॥ विपुलबलशाली कुंभकर्णने क्षणभरमें चेतना पाय हँसकर अंगदजीकी छातीमें एक मूका मारा कि; जिसके लगनेसे वीर श्रेष्ठ अंगदजीभी मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर पडे ॥ ४९ ॥ वानरशार्दूल अंगदजी जब पृथ्वी पर गिरकर मूर्च्छित होगये तब कुंभकर्ण

कुम्भकर्णःप्रजज्वालक्रोधेनमहतातदा ॥ सोभ्यधावतवेगेनवालिपुत्रममर्षणम् ॥४५॥ कुम्भकर्णोमहानादस्त्रासयन्सर्ववानरान् ॥ शूलंससर्जवै रोषादंगदेतुमहाबलः ॥ ४६ ॥ तदापतंतंबलवान्युद्धमार्गविशारदः ॥ लाघवान्मोक्षयामासबलवान्वानरर्षभः ॥ ४७ ॥ उत्पत्यचैनंतरसा तलेनोरस्यताडयत् ॥ सतेनाभिहतःकोपात्प्रमुमोहाचलोपमः ॥ ४८ ॥ सलब्धसंज्ञोऽतिबलोमुष्टिंसंगृह्यराक्षसः ॥ अपहासेनचिक्षेपविसंज्ञः सपपातह ॥४९॥ तस्मिन्प्लवगशार्दूलेविसंज्ञेपतितेभुवि ॥ तच्छूलंसमुपादायसुग्रीवमभिदुद्रुवे ॥ ५० ॥ तमापतंतंसंप्रेक्ष्यकुंभकर्णंमहाबलम् उत्पपाततदावीरःसुग्रीवोवानराधिपः ॥५१॥ सपर्वताग्रमुत्क्षिप्यसमाविध्यमहाबलः ॥ अभिदुद्राववेगेनकुंभकर्णंमहाबलम् ॥५२॥ तमापतंतं संप्रेक्ष्यकुंभकर्णःप्लवंगमम् ॥ तस्थौविवृत्तसर्वांगोवानरेंद्रस्यसंमुखः ॥५३॥ कपिशोणितदिग्धांगंभक्षयंतंमहाकपीन् ॥ कुंभकर्णंस्थितंदृष्ट्वासुग्री वोवाक्यमब्रवीत् ॥ ५४ ॥ पातिताश्चत्वयावीराःकृतंकर्मसुदुष्करम् ॥ भक्षितानिचसैन्यानिप्राप्तंतेपरमंयशः ॥ ५५ ॥

शूलग्रहण करके सुग्रीवजीके सन्मुख धाया ॥५०॥ वीर श्रेष्ठवानरराज सुग्रीवजी महाबलवान् कुंभकर्णको आता हुआ देखकर आपही उछल गये ॥५१॥ वह महाबलवान् सुग्रीवजी एक पर्वतको उखाडकर महाबलवान् कुंभकर्णके ऊपर चलाय स्वयं अतिवेगसे उसके ऊपरको दौडे ॥ ५२ ॥ परन्तु कुंभकर्ण वानरराज सुग्रीवजीको वीरदर्पसे आता हुआ देखकर अपने हाथपांव फैलाकर सुग्रीवजीके सन्मुख हुआ ॥ ५३ ॥ महा २ वानरोंके भक्षण करनेसे जिसके सर्वाङ्गोंमें वानरोंका रुधिर लगा हुआ था उस कुंभकर्णको सन्मुख खडा हुआ देखकर सुग्रीवजी कहने लगे ॥ ५४ ॥ हे वीर ! तुमने हमारी ओरके प्रधान २ वीरोंको मारकर वीरताका परिचय दिखा है, हमारीबहुतसारी सेना तुमने भक्षणभी करली है; अधिक क्या कहें तुमने यह कार्य करकेअनुपम यश प्राप्त किया है ॥५५॥

इसलिये इस समय तुम इन वानरोंको छोडदो, साधारण वानरोंके साथ युद्ध करनेसे तुमको क्या फल मिलेगा ! हे राक्षस ! जो युद्धकी वासना हो तो हम यह पर्वतका शृङ्ग चलाते हैं, तुम आज हमारे साथ युद्ध करो ॥५६॥ वानरराज सुग्रीवजीके वीरता धीरता युक्त ऐसे वचन सुनकर राक्षस शार्दूल कुंभकर्णबोला ॥५७॥ तुम प्रजापति ब्रह्माजीके पोते और ऋक्षराज वानरके पुत्र हो विशेषकरके तुममें धीरता और पौरुष है, इसलिये तुम ऐसा गर्जन करते हो ॥५८॥ उसके पीछे वानरराज सुग्रीवजीने राक्षसराज रावणके छोटे भ्राता कुंभकर्णके ऐसे वचन सुनकर; उस पर्वतके शिखरको घुमाय कुंभकर्णके ऊपर चलाया; वज्र और अशनिके समान वह शैलशृङ्ग कुंभकर्णकी छातीमें लगा ॥५९॥ परन्तु वह पर्वतका शृंग कुंभकर्णकी बडी छातीमें लगकर सहसा चूर्ण हो गया उसके चूर्ण होनेसे

त्यजतद्वानरानीकंप्राकृतैःकिंकरिष्यसि ॥ सहस्वैकंनिपातंमेपर्वतस्यास्यराक्षस ॥५६॥ तद्वाक्यंहरिराजस्यसत्त्वधैर्यसमन्वितम् ॥ श्रुत्वाराक्षसशार्दूलःकुंभकर्णोऽब्रवीद्वचः ॥ ५७ ॥ प्रजापतेस्तुपौत्रस्त्वंतथैवर्क्षरजःसुतः ॥ धृतिपौरुषसंपन्नस्तस्माद्गर्जसिवानर ॥ ५८ ॥ सकुंभकर्णस्यवचोनिशम्यव्याविध्यशैलंसहसामुमोच ॥तेनाजघानोरसिकुंभकर्णंशैलेनवज्राशनिसन्निभेन॥५९॥ तच्छैलशृंगंसहसाविभिन्नंभुजांतरेतस्य तदाविशाले ॥ ततोविषेदुसहसाप्लवंगारक्षोगणाश्चापिमुदाविनेदुः ॥६०॥ सशैलशृंगाभिहतश्चुकोपननादरोषाच्चविवृत्यवक्त्रम् ॥ व्याविध्य शूलंचतडित्प्रकाशंचिक्षेपहर्यृक्षपतेर्वधाय ॥६१॥ तत्कुंभकर्णस्यभुजप्रणुन्नंशूलंशितंकांचनदामयष्टिम् ॥ क्षिप्रंसमुत्पत्यनिगृह्यदोर्भ्यांबभंजवेगेनसुतोऽनिलस्य ॥६२॥ कृतंभारसहस्रस्यशूलंकालायसंमहत् ॥ बभंजजानुमारोप्यतदाहृष्टःप्लवंगमः ॥६३॥ शूलंभग्नंहनुमताहृष्ट्वावानरवाहिनी ॥ हृष्टाननादबहुशःसर्वतश्चापिदुद्रुवे ॥ ६४ ॥

वानरगण शोकित हुए और राक्षसगण आनन्दके मारे सिंहनाद करने लगे ॥ ६० ॥ शैलशृंगकी ताडनासे कुंभकर्ण अत्यन्तकुपित हुआ, वह मुख फैलाकर सिंहनाद करने लगा। इसके उपान्त क्षणकालमें बिजलीके समान प्रकाशमान शूलग्रहण कर व घुमाय उसने वानररीछोंके पति सुग्रीवजीका प्राणसंहार करनेके लिये उनके ऊपर चलाया ॥ ६१ ॥ कि, इतनेमें पवनकुमार हनुमानजी मूर्च्छासे जाग अतिवेगसे उछलकर कुम्भकर्णकी भुजाओंके चलाये सुवर्णकी मालासे शोभित और पैने उस शूलको दोनों बाहोंसे पकडकर तोड डाला ॥ ६२ ॥ महावीर हनुमान्‌जीने सौ भारके बने हुए उस काले लोहके शूलको अपनी जाँघपर रखकर लीलापूर्वक तोड़ डाला जिसको देखकर वानरोंके आनन्दकी सीमा न रही ॥ ६३ ॥ हनुमान्‌जीसे शूलको टूटाहुआ देख कर वानरों

कीसेना आनन्दसे सिंहनाद करतीहुई सब ओरसे आगेको धाई ॥ ६४ ॥ त्रासितहोकर राक्षसभी युद्ध करनेस विमुख हो गये, उनको देखकर वानरगण हर्षित हो वारंवार सिंहनाद करने लगे, और शूलको टूटा हुआ देखकर हनुमान्‌जीकी बडाई करने लगे ॥६५॥ राक्षसपति महाबलवान् कुम्भकर्ण शूलको इसप्रकार टूटा हुआ देखकर अत्यन्त क्रोधित हुआ और लंकाके समीपस्थित मलयाचलका एक शृङ्ग उखाडकर सुग्रीवजीके निकट आय उसने इनके ऊपर प्रहार किया॥६६॥ वानरोंके राजा सुग्रीवजी उस पर्वतके शृङ्गसे अत्यन्त घायल और चेतना रहित होकर पृथ्वीमें गिरपडे, उनको मूर्च्छित होकर पृथ्वीमें पडा देख निशाचर गण आनंदसे सिंहनाद करने लगे ॥ ६७ ॥ उसके उपरान्त प्रचंड पवन जिस प्रकारसे बादलोंको उडाकर लेजाता है वैसेही कुंभकर्ण अद्भुत वीर्यवान् घोर

बभूवाथपरित्रस्तोराक्षसोविमुखोऽभवत् ॥ सिंहनादंचतेचक्रुःप्रहृष्टावनगोचराः ॥ मारुतिंपूजयांचक्रुर्दृष्ट्वाशूलंतथागतम् ॥६५॥ सतत्तथाभग्नम वैक्ष्यशूलंचुकोपरक्षोधिपतिर्महात्मा ॥ उत्पाटचलंकामलयात्सशृंगंजघानसुग्रीवमुपेत्यतेन ॥ ६६ ॥ सशैलशृंगाभिहतोविसंज्ञःपपातभूमौ युधिवानरेंद्रः ॥ तंवीक्ष्यभूमौपतितंविसंज्ञंनेदुःप्रहृष्टायुधियातुधानाः ॥६७॥ समभ्युपेत्याद्भुतघोरवीर्यंसकुंभकर्णोयुधिवानरेंद्रम् ॥ जहारसुग्री वमभिप्रगृह्ययथानिलोमेघमिवप्रचंडः ॥६८॥ सतंमहामेघनिकाशरूपमुत्पाटचगच्छन्युधिकुंभकर्णः ॥ रराजमेरुप्रतिमानरूपोमेरुर्यथाभ्युच्छ्रि तघोरशृंगः ॥६९॥ ततस्तमादायजगामवीरःसंस्तूयमानोयुधिराक्षसेंद्रः ॥ शृण्वन्निनादंत्रिदिवालयानांप्लवंगराजग्रहविस्मितानाम् ॥ ७० ॥ ततस्तमादायतदासमेनेहरींद्रमिंद्रोपममिंद्रवीर्यः ॥ अस्मिन्हतेसर्वमिदंहतंस्यात्सराघवंसैन्यमितींद्रशत्रुः ॥७१॥ विद्रुतांवाहिनींदृष्ट्वावानरणा मितस्ततः ॥ कुंभकर्णेनसुग्रीवंगृहीतंचापिवानरम् ॥ ७२ ॥

पराक्रमकारी वानरेंद्रसुग्रीवके निकट आय उनको कांखमें दबाय उडाले चला ॥ ६८ ॥ उस कालमें सुमेरुपर्वतके समान आकारवाला कुंभकर्ण, महामेघके समान सुग्रीवजीको ग्रहण करके बडे ऊंचे शृङ्गोंसे युक्त चलते हुए मेरु पर्वतके समान शोभायमान होने लगा ॥६९॥ और वानरराज सुग्रीवजीको पकडा हुआ देखकर देवता लोग अत्यन्त विस्मित हो अनेक प्रकारसे शोकका जतानेवाला हाहाकार शब्द करेन लगे और वीरश्रेष्ठ राक्षसेन्द्र कुम्भकर्ण उन समस्तशब्दोंको श्रवण करता हुआ निशाचरोंसे बडाई पाता लंकाको चला॥७०॥ इन्द्रके समान वीर्यवान् इन्द्रका शत्रु कुम्भकर्ण उस समय वानरोंके स्वामी सुग्रीवजीको पकडकर मनमें निश्चय करता हुआ कि,सुग्रीवके मरनेपर रामचन्द्र व लक्ष्मणके सहित समस्त वानरोंकी सेना अपने आप मरजायगी ॥ ७१ ॥ उस समय इधर उधर भागती

हुई वानरोंकी सेनाको निहार और कुम्भकर्णसे पकडे हुए सुग्रीवजी को देख वानर॥७२॥ पवनकुमार बडे बुद्धिमान् हनुमानूजी अपने मनमें चिन्ता करने लगे कि, सुग्रीवजी तो इस भांतिसे पकडे गये अब हमको क्या करना उचित है॥७३॥ इससमय जो कुछ करना उचित है, हम वही समस्त पूर्ण करनेके निमित्त पर्वताकार देह धारण करके निश्चयही निशाचर कुम्भकर्णका संहार करेंगे ॥ ७४ ॥ हम देखते हैं कि हमारे हाथके मूका लगनेसे युद्धमें कुम्भकर्णका सब शरीर फट जायगा और वह मर जायगा तब वानरराज सुग्रीवजी व समस्त वानरोंके आनंदकी सीमा न रहेगी ॥ ७५ ॥ अथवा हमारी इस प्रकारकी सहायताका क्या प्रयोजन है ? यह वानरराज सुग्रीवजी यदि असुर व सर्पोंके सहित देवता लोगोंसे पकडे जायँ तथापि यह अपने आपहीसे अपनेको

हनूमांश्चिंतयामासमतिमान्मारुतात्मजः ॥ एवंगृहीतेसुग्रीवेकिंकर्तव्यंमयभवेत् ॥७३॥ यद्धिन्याय्यंमयाकर्तुंतत्करिष्याम्यसंशयम् ॥ भूत्वा पर्वतसंकाशोनाशयिष्यामिराक्षसम् ॥७४॥ मयाहतेसंयतिकुंभकर्णेमहाबलेमुष्टिविशीर्णदेहे ॥ विमोचितेवानरपार्थिवेचभवंतुहृष्टाःप्लवगाःसमग्राः ॥७५॥ अथवास्वयमप्येषमोक्षंप्राप्स्यतिवानरः ॥ गृहीतोऽयंयदिभवेत्त्रिदशैःसासुरोरगैः ॥७६॥ मन्येनतावदात्मानंबुध्यतेवानराधिपः ॥ शैलप्रहाराभिहतःकुंभकर्णेनसंयुगे ॥७७॥ अयंमुहूर्तात्सुग्रीवोलब्धसंज्ञोमहाहवे ॥ आत्मनोवानराणांचयत्पथ्यंतत्करिष्यति ॥ ७८ ॥ मया तुमोक्षितस्यास्यसुग्रीवस्यमहात्मनः ॥ अप्रीतिश्चभवेत्कष्टाकीर्तिनाशश्चशाश्वतः ॥७९॥ तस्मान्मुहूर्तंकांक्षिष्येविक्रमंमोक्षितस्यतु ॥ भिन्नं चवानरानीकंतावदाश्वासयाम्यहम् ॥ ८० ॥ इत्येवंचिंतयित्वाथहनूमान्मारुतात्मजः ॥ भूयःसंस्तंभयामासवानराणांमहाचमूम् ॥ ८१ ॥

छुडा लेंगे ॥७६॥ ऐसा जान पडता है कि पर्वतके प्रहारसे अत्यन्त चोट खानेके कारण इन सुग्रीवजीका ज्ञान लोप हुआ होगा इसी कारणसे स्वयं जो कुम्भकर्णसे रणस्थलमें वह पकडे गये हैं ॥७७॥ इस बातको अबतक नहीं जान सके हैं. हमको निश्चय है कि, यह महात्मा सुग्रीवजी इसी मुहूर्त्त में चेतनाको पाय अपना और वानरगणोंका जिससे मंगल होगा उसकी चेष्टा करेंगे ॥ ७८ ॥ और जो अवश्यही हम महाबलवान् सुग्रीवजीको ऐसे कष्टसे छुडा दें तो इनकी निरंतर कीर्तिका नाश होगा और इसही कारणसे हमारे साथ अनबनाव हो जाना भी संभव है ॥७९॥ इस लिये हम क्षणभर परख कर इन शत्रुसे छुटे हुए वीरका पराक्रम देखें और इतनी इस भागी हुई वानरोंकीसेनाको समझावें ॥ ८० ॥ पवनकुमार हनुमानूजी इस प्रकार

चिन्ता करके इस बडी भारी वानरोंकी सेनाको फिर समझा बुझाकर स्थापित करने लगे॥८१॥ इस ओरकुम्भकर्ण उन दीप्तिमान् महावानर सुग्रीवजीको ग्रहण करके विमान, मार्ग, गृह और फाटकोंपर बैठे हुए राक्षसों करके उत्तम पुष्पोंकी वर्षासे पूजित हो लंकामें प्रवेश करता हुआ ॥८२॥ तब अक्षत चन्दन युक्त जलकी वर्षासे धीरे २ सींचे जानेके कारण और मार्गकी शीतलताई लगनेसे धीरे २ महाबलवान् सुग्रीवजीकी मूर्च्छा जागी ॥८३॥ इस प्रकारसे वह महाबलवान् सुग्रीवजी बहुत कष्टसे चेतना पाय अपनेको लंकापुरीके मार्ग बीच उस महाबलशाली कुम्भकर्णकी बांहोंमें फँसा देख विचार करने लगे ॥ ८४ ॥ कि, इस प्रकारसे जब यह हमको पकडेहुएहै तब हमसे क्या हो सकताहै ? जो कुछ भी हो आज इस अवस्थामें भी हम ऐसा कार्य करेंगे कि, जिससे वानरगणोंका मंगल और हितकारी कार्य सिद्ध हो ॥८५॥ यह विचारकर महाबलवान् सुग्रीवजीने तीखे दांत और नखोंके आघातसे अति शीघ्रता पूर्वक कुम्भकर्णकी नाक काट

सकुंभकर्णोंथविवेशलंकांस्फुरंतमादायमहाहरितम् ॥ विमानचर्यागृहगोपुरस्थैःपुष्पाग्र्यवर्षैरभिपूज्यमानः॥८२॥लाजगंधोदवर्षैस्तुसेव्यमानः शनैःशनैः ॥ राजवीथ्यास्तुशीतत्वात्संज्ञांप्रापमहाबलः ॥ ८३ ॥ ततःससंज्ञामुपलभ्यकृच्छ्राद्बलीयसस्तस्यभुजांतरस्थः ॥ अवेक्षमाणःपुर राजमार्गंविचिंतयामासमुहुर्महात्मा ॥ ८४ ॥ एवंगृहीतेनकथंनुनामशक्यंमयासंप्रतिकर्तुमद्य ॥ तथाकरिष्यामियथाहरीणांभविष्यतीष्टंचहितं चकार्यम् ॥ ८५ ॥ ततःकराग्रैःसहसासमेत्यराजाहरीणाममरेंद्रशत्रोः ॥ खरैश्चकर्णौदशनैश्चनासांददंशपादैर्विददारपार्श्वौ ॥ ८६ ॥ सकुम्भकर्णोंहृतकर्णनासोविदारितस्तेनरदैर्नखैश्च ॥ रोषाभिभूतःक्षतजार्द्रगात्रःसुग्रीवमाविध्यपिपेषभूमौ ॥ ८७ ॥ सभूतलेभीमबलाभिपिष्टःसुरारिभिस्तैरभिहन्यमानः ॥ जगामखंकंदुकवज्जवेनपुनश्चरामेणसमाजगाम ॥८८॥ कर्णनासाविहीनस्तुकुम्भकर्णोमहाबलः ॥ रराजशोणितोत्सिक्तो गिरिःप्रस्रवणैरिव ॥ ८९ ॥ शोणितार्द्रोमहाकायोराक्षसोभीमदर्शनः ॥ आमर्षाच्छोणितोद्गारीशुशुभेरावणानुजः ॥ ९० ॥

डाली, व दोनों कान भी साफ उडा दिये और अपने पांवोंके तीक्ष्ण नखोंसे उसकी दोनों बगलें चीर फाड डालीं ॥८६॥ उससमय नाक कानके कट जानेसे नख और दांतोंसे भलीभांति विदीर्ण होनेसे और सर्वाङ्ग रुधिर द्वारा भीग जानेसे कुम्भकर्णने अत्यन्त क्रोधित होकर सुग्रीवजीको पृथ्वीपर पटक दिया और उनको पीसने लगा ॥८७॥ परन्तु वानरराज सुग्रीवजी उस भयंकर बलवान् कुम्भकर्ण करके पीसे जाकर व और दूसरे राक्षस लोगोंसे सर्व प्रकार मार खाकर भी गेंदके समान लुढकते हुए झटपट बडे वेगसे आकाशको उछल गये और श्रीरामचन्द्रजीके निकट आयकर खडे हुए ॥ ८८ ॥ उस कालमें महा बलवान् कुम्भकर्ण नाक कान विहीन होकर रुधिर उगलता हुआ बहुत सारे झरनोंसे युक्त पर्वतराजके समान शोभायमान होने लगा ॥ ८९ ॥ रुधिरसे भीगा हुआ,

भयंकर रूप और बडे आकारवाला रावणका छोटा भाई कुम्भकर्ण रुधिर उगलता हुआ शोभित हुआ ॥ ९० ॥ महावीर कुम्भकर्णका आकार नीले अंजनके समान काले रंगका था, सन्ध्या फूलनेके रंगसे रंगे हुए मेघके समान उसकी शोभा अनुपम थी; ऐसे अति भयंकर रूप निशाचरने फिर युद्धभूमिमें चलनेके लिये अभिलाष किया ॥९१॥ वानरराज सुग्रीवजीके चले जानेपर रौद्रमूर्ति इन्द्रका शत्रु कुंभकर्ण दूसरी बार रणभूमिकी ओरको दौड और अपनेको आयुधहीन विचारकर एक मुद्गर इसने ग्रहण किया ॥९२॥ इसकेउपरान्त वह महाबलवान्राक्षस कुम्भकर्ण सहसा लंकापुरीसे निकल प्रलय समयके अग्नि जिसप्रकार प्रजा गणोंको भस्म करते हैं वैसेही वानरोंको भक्षण करनेलगा ॥९३॥ मांस रुधिरकालालची कुंभकर्ण भूखा हुआ था इसकारणसे मोहके मारे ज्ञानहीन होकर उग्र वानरोंकी सेनामें प्रवेश करके उसने वानर, राक्षस; पिशाच या रीछोंमें जिसको पाया उसेही खाने लगा जैसे युगान्तम मृत्यु प्राणियोंको हरता है ॥९४॥ वह

नीलांजनचयप्रख्यःससंध्यइवतोयदः ॥ युद्धायाभिमुखोभीमोमनश्चक्रेनिशाचरः ॥९१॥ गतेचतस्मिन्सुरराजशत्रुःक्रोधात्प्रदुद्रावरणायभूयः ॥ अनायुधोऽस्मीतिविचिंत्यरौद्रोघोरंतदामुद्गरमाससाद ॥ ९२ ॥ ततःसपुर्याःसहसामहात्मानिष्क्रम्यतद्वानरसैन्यमुग्रम् ॥ बभक्षरक्षोयुधिकुम्भकर्णःप्रजायुगांताग्निरिवप्रवृद्धः ॥९३॥ बुभुक्षितःशोणितमांसगृध्नुःप्रविश्यतद्वानरसैन्यमुग्रम् ॥ चखादरक्षांसिहरीन्पिशाचानृक्षांश्चमोहाद्युधिकुम्भकर्णः ॥ यथैवमृत्युर्हरतेयुगांतेसभक्षयामासहरींश्चमुख्यान् ॥९४॥ एकंद्वौत्रीन्बहून्क्रुद्धोवानरान्सहराक्षसैः ॥ समादायैकहस्तेनप्रचिक्षेपत्वरन्मुखे ॥ ९५ ॥ संप्रस्रवत्तदामेदःशोणितंचमहाबलः ॥ वध्यमानोनगेंद्राग्रैर्भक्षयामासवानरान् ॥ ९६ ॥ तेभक्ष्यमाणाहरयोरामंजग्मुस्तदागतिम् ॥ कुम्भकर्णोभृशंक्रुद्धःकपीन्खादन्प्रधावति ॥ ९७ ॥ शतानिसप्तचाष्टौचविंशत्त्रिंशत्तथैवच ॥ संपरिष्वज्यबाहुभ्यांखादन्विपरिधावति ॥ ९८ ॥ मेदोवसाशोणितदिग्धगात्रःकर्णावसक्तग्रथितांत्रमालः ॥ ववर्षशूलानिसुतीक्ष्णदंष्ट्रःकालोयुगांतस्थइवप्रवृद्धः ॥ ९९ ॥

वीर कुंभकर्ण क्रोधके मारे एक दो तीन या इससे अधिक वानरगणोंको राक्षसोंके सहित एक हाथसे उठाय अपने मुखमें डालने लगा ॥९५॥ उस समय वसा (चरबी) और रुधिरकी धारा बहनेसे उसका शरीर भीग गया, वानरगण पर्वतके शृंगोंसे उसको प्रहार करते जाते थे, तथापि उसने वानरोंके भक्षण करनेमें कोई कसर नहीं रक्खी ॥९६॥ इस कुम्भकर्णके क्रोधम भरकर वानरोंको भक्षण करते दौडनेपर वानरगण भक्ष्यमाण होकर श्रीरामचन्द्रजीकी शरणागतमें गये ॥९७॥ इस ओर कुम्भकर्ण सात आठ वीस तीस वानरोंको अपने हाथोंसे पकड२कर उसको अपने पेटमें डालता हुआ रणभूमिमें दौडने लगा ॥९८॥ इसके उपरान्त मेद, चरबी और रुधिर अंगोंमें लगाये तीक्ष्ण दांतवाला कुम्भकर्ण दोनों कानोंके शेषमें आंतोंकी माला पहरे महाप्रलयमें बढे हुए कराल मूर्त्ति; कालके समान

वानरोंकी सेनापर शूल चलाने लगा ॥ ९९ ॥ उसी समयमें गोहके चर्मसे बना हुआ अंगुलित्राण (अंगुस्ताना) पहरे वीरवेषधारी शत्रुकी सेनाका नाश करनेवाले सुमित्राकुमार लक्ष्मणजी युद्ध करनेके लिये आये ॥१००॥ वीर्यवान्लक्ष्मणजीने कुम्भकर्णके शरीरमें सात बाण मारकर फिर और भी बाण ग्रहण करके उसके ऊपर छोडे ॥ १०१ ॥ कुंभकर्णने उन अस्त्रोंके प्रहारोंसे पीडित हो उन बाणोंको हाथोंसे पकड२ कर अपने विक्रम प्रभावसे खंड २करके फेंक दिये. यह देख सुमित्राजीके आनंद बढानेवाले बलवान् लक्ष्मणजीने महाकोप किया ॥१०२॥ पवन जिसप्रकार संध्या समयके मेघको उडा ले जाता है वैसेही कुंभकर्णके सुवर्णमय शुभ शुक्ल कवचको लक्ष्मणजीने बाणोंसे रूंध दिया ॥१०३॥ उस कालमें नीले अंजनके समान कुंभकर्ण सुवर्णभूषित बाणोंसे पीडित होकर मेघमालासे घिरे हुए सूर्य भगवान्के समान शोभायमान होने लगा ॥१०४॥ उसके पीछे राक्षसवीर कुंभकर्ण मनुजवीर लक्ष्मणजीसे मेघके समान गंभीर स्वरसे

तस्मिन्कालेसुमित्रायाःपुत्रःपरबलार्दनः ॥ चकारलक्ष्मणःक्रुद्धोयुद्धंपरपुरंजयः ॥ १०० ॥ सकुम्भकर्णस्यशरान्शरीरेसप्तवीर्यवान् ॥ निचखानाददेचान्यान्विससर्जचलक्ष्मणः ॥ १ ॥ पीड्यमानस्तदस्त्रंतुविशेषंतत्सराक्षसः ॥ ततश्चुकोपबलवान्सुमित्रानंदवर्धनः ॥ २ ॥ अथास्यकवचंशुभ्रंजांबूनदमयंशुभम् ॥ प्रच्छादयामासशरैःसंध्याभ्रमिवमारुतः ॥ ३ ॥ नीलांजनचयप्रख्यः शरैः कांचनभूषणैः ॥ आपीड्यमानःशुशुभेमेघैःसूर्यइवांशुमान् ॥ ४ ॥ ततःसराक्षसोभीमःसुमित्रानंदवर्धनम् ॥ सावज्ञमेवप्रोवाचवाक्यंमेघौघनिःस्वनः ॥ ५ ॥ अंतकस्याप्यकष्टेनयुधिजेतारमाहवे ॥ युध्यतांमामभीतेनख्यापितावीरतात्वया ॥६॥ प्रगृहीतायुधस्येहमृत्योरिवमहामृधे ॥ तिष्ठन्नप्यग्रतःपूज्यःकिमुयुद्धप्रदायकः ॥ ७ ॥ ऐरावतंसमारूढोवृतःसर्वामरैःप्रभुः ॥ नैवशक्रोऽपिसमरेस्थितपूर्वःकदाचन ॥ ८ ॥ अद्यत्वयाहंसौमित्रेबालेनापिपराक्रमैः ॥ तोषितोगंतुमिच्छामित्वामनुज्ञाप्यराघवम् ॥ १०९ ॥

निरादरके प्रगट करनेवाले वचन कहने लगा ॥ १०५ ॥ जिसने संग्रामभूमिमें कालको सरलतासे जीत लिया है;उस कुंभकर्णके साथ निर्भय युद्ध करके तुमने आज बडी भारी वीरता प्रकाश की ॥१०६॥ जिस समय हम अस्त्र शस्त्र धारण करके साक्षात् मृत्युके सामने घूमते हैं,उस समय हमारे साथ युद्ध करना तो रकऔर रहे, जो हमारे सामने उस समय खडा भी हो जाय; वही धन्यवाद देनेके योग्य है ॥ १०७ ॥ कारण कि,सब ओरसे देवताओंके बीचमें घिरे हुए ऐरावत हाथीपर सवार देवराज इन्द्र भी पहले कभी रणभूमिमें हमारे सामने टिकनेको समर्थ नहीं हुए ॥ १०८ ॥ परन्तु हे लक्ष्मण ! तुमने बालक होनेपर भी आज अपने बल और पराक्रमसे हमको सन्तुष्ट कर दियाहै इस लिये हम तुम्हारी अनुमति लेकर रामचन्द्रके निकट जानेका अभिलाष करतेहैं ॥१०९॥

हम संग्रामभूमिमें तुम्हारे वीर्य बल और उत्साहसे परम संतोषको प्राप्त हुए हैं इसकारण तुम्हें छोडकर अब हम रामकेही मारडालनेकी इच्छा करते हैं कारण कि,उसके मारे जानेपर सेना सबही मर जायगी॥११०॥रामचन्द्रके मर जानेपर बचे बचाये जो कोई भी समरमें टिके रहेंगे;हम अपने प्रचंड बलसे युद्धकर उनके मानको भी मथ डालेंगे॥१११॥ जब कुम्भकर्णने स्तुति युक्त और घोर यह वचन कहे तो सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजी हँसते हुए यह वचन बोले॥११२॥हे वीर! तुमने जो इन्द्रादि देवताओंसे असह्य पराक्रम पाया है वह सत्य है और हमने आज तुम्हारा वह पराक्रम सत्य देखा ॥११३॥ और,श्रीरामचन्द्रजीको जो तुमने पूछा,यह दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजी अचल पर्वतके समान विराजमान हो रहे हैं। यह सुन लक्ष्मणजीका अनादर कर वह निशाचर चला॥११४॥ महाबलवान् कुम्भकर्ण लक्ष्मणजीको छोड पृथ्वीको कंपायमान करता हुआ श्रीरामचन्द्रजीके सम्मुख दौडा ॥ ११५ ॥ इसके उपरान्त दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजीने

यत्तुवीर्यबलोत्साहैस्तोषितोऽहंरणेत्वया॥ राममेवैकमिच्छामिहंतुंयस्मिन्हतेहतम् ॥११०॥ राममेमयात्रनिहतेयेऽन्येस्थास्यंतिसंयुगे।तांनहंयोधयीष्यामिस्वबलेनप्रमाथिना ॥१११॥ इत्युक्तवाक्यंतद्रक्षःप्रोवाचस्तुतिसंहितम् ॥ मृधेघोरतरंवाक्यंसौमित्रिःप्रहसन्निव ॥१२॥ यस्त्वंशक्रादिभिर्देवैरसह्यःप्राप्यपौरुषम्॥ तत्सत्यंनान्यथावीरदृष्टस्तेऽद्यपराक्रमः॥१३॥एषदाशरथीरामस्तिष्ठत्यद्रिरिवाचलः ॥ इतिश्रुत्वाह्यनादृत्यलक्ष्मणंसनिशाचरः ॥१४॥ अतिक्रम्यचसौमित्रिंकुम्भकर्णोमहाबलः ॥ राममेवाभिदुद्रावकंपयन्निवमेदिनीम् ॥१५॥ अथदाशरथीरामोरौद्रमस्त्रंप्रयोजयन्॥कुम्भकर्णस्यहृदयेससर्जनिशितान्छरान्॥१६॥तस्यरामेणविद्धस्यसहसाभिप्रधावतः॥अंगारमिश्राःक्रुद्धस्यमुखान्निश्चेरुरर्चिषः ॥१७॥ रामास्त्रविद्धोघोरंवैनर्दन्राक्षसपुंगवः ॥ अभ्यधावततंक्रुद्धोहरीन्विद्रावयन्रणे ॥१८॥ तस्योरसिनिमग्नास्तेशराबर्हिणवाससः ॥ हस्ताच्चास्यपरिभ्रष्टागदाचोर्व्यांपपातह ॥ १९ ॥ आयुधानिचसर्वाणिविप्रकीर्यंतभूतले ॥ सनिरायुधमात्मानंयदामेनेमहाबलः ॥ १२० ॥

घोर अस्त्रोंका प्रयोग करके कुंभकर्णके हृदयको ताक कर उसमें तीखे बाण मारे ॥ ११६ ॥ राक्षस कुंभकर्ण श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंसे विंधकर सहसा उनकी ओर धाया। उस समय कुम्भकर्णका शरीर क्रोधके मारे फडकने लगा उसके शरीरसे अग्निकी चिनगारियें निकलने लगी ॥११७॥ राक्षसश्रेष्ठ कुम्भकर्ण रणभूमिमें श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंसे विंधकर श्रीरामचन्द्रजीको छोड क्रोधके मारे वानरोंको तितरबितर करता हुआ धाया ॥ ११८ ॥ इसी समयमें श्रीरामचन्द्रजीके छोडे हुए मोरपंखोंसे शोभित उन समस्त बाणोंके कुम्भकर्णकी छातीमें घुसजानेसे इस कुंभकर्णके हाथसे गदा छुटकर पृथ्वीपर गिरपडी ॥ ११९ ॥ वह कुंभकर्ण औरभी जितने हथियार लगाये था वह भी सब पृथ्वीपर गिरपडे इसप्रकारसे जब महाबलवान् कुंभकर्णने अपनेको आयुध

हीन देखा ॥ १२० ॥ तब उसने मूकोंऔर हाथोंके चपत लगाय २ कर बडा भारी युद्ध आरंभ किया जिस प्रकार पर्वतसे झरने गिरा करते हैं वैसेही कुंभकर्णका रुधिरसे भीगा हुआ शरीर बाणोंसे अतिविद्ध होनेके कारण रुधिरकी धाराओंको छोडने लगा अर्थात् उससे रुधिरकी धारें निकलने लगीं ॥ १२१ ॥ उस समय वह वीर तीक्ष्णकोप और रुधिरकी गंधसे मूर्च्छित होकर वानर राक्षसऔर रीछोंको भक्षण करता हुआ दौडने लगा ॥१२२॥ इसके उपरान्त यमराजके समान भयंकर पराक्रमकारी महाबलवान् कुम्भकर्णने एक पर्वतका शृङ्ग उखाडे श्रीरामचन्द्रजीके मारनेको चलाया परन्तु रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजी फिर धनुष चढायकर सीधे चलनेवाले सात बाणोंसे बीचमेंही उस पर्वतके शृङ्गको खंड २ कर देते हुए ॥ १२३ ॥ उसके उपरान्त धर्मात्मा

मुष्टिभ्यांचकराभ्यांचचकारकदनंमहत् ॥ सबाणैरतिविद्धांगःक्षतजेनसमुक्षितः ॥ रुधिरंपरिसुस्रावगिरिःप्रस्रवणंयथा ॥ २१ ॥ सतीव्रेणचको पेनरुधिरेणचमूर्च्छितः ॥ वानरान्राक्षसानृक्षान्खादन्सपरिधावति ॥ २२ ॥ अथशृंगंसमाविध्यभीमंभीमपराक्रमः ॥ चिक्षेपराममुद्दिश्यबल वानंतकोपमः ॥ अप्राप्तमंतरारामःसप्तभिस्तमजिह्मगैः ॥ २३ ॥ ततस्तुरामोधर्मात्मातस्यशृंगंमहत्तदा ॥ शरैःकांचनचित्रांगैश्चिच्छेदभरता ग्रजः ॥ २४ ॥ तन्मेरुशिखराकारैर्द्योतमानमिवश्रिया ॥ द्वेशतेवानराणांचपतमानमपातयत् ॥ २५ ॥ तस्मिन्कालेसधर्मात्मालक्ष्मणोराम मब्रवीत् ॥ कुम्भकर्णवधेयुक्तोयोगान्परिमृशन्बहून् ॥ २६ ॥ नैवायंवानरान्राजन्नविजानातिराक्षसान् ॥ मत्तःशोणितगंधेनस्वान्परांश्चैवखादते ॥ २७ ॥ साध्वेनमधिरोहंतुसर्वतोवानरर्षभाः ॥ यूथपाश्चयथामुख्यास्तिष्ठंत्वस्मिन्समंततः ॥ २८ ॥

भरतजीके बडे भाई श्रीरामचन्द्रजीने सुवर्णकी फोंक लगे हुए बाणोंसे उसका बडा भारी कवच काटकर फेंकदिया ॥ १२४ ॥ अपनी कांतिसे मेरु पर्वतके शिखरके समान प्रकाशमान वह कवच पृथ्वीपर गिरा और दो शत (२००) वानर उसके नीचे दबगये ॥ १२५ ॥ उस समय धर्मात्मा लक्ष्मणजी स्वस्थ मनसे कुम्भकर्णके वध करनेको बहुतसे उपाय सोचते विचारते श्रीरामचन्द्रजीसे बोले ॥ १२६ ॥ हे महाराज ! कुम्भकर्णको इस समय वानर और राक्षसोंका कुछभी भय ज्ञात नहीं है, देखिये ! यह रुधिरकी गन्धसे मतवाला होकर अपनी पराई दोनों सेनाके वीरोंको पकडकर खारहा है ॥ १२७ ॥ हे राजन् इससे वानर श्रेष्ठगण इसके ऊपर चढ जावें; और प्रधान यूथपति इसके ऊपर चढकर उसको चारों ओरसे घेरे रहे ॥ १२८ ॥

इससे यह दुर्मति राक्षस वानरोंके बोझसे अत्यन्त ही पीडित हो पृथ्वीपर घूमता हुआ और वानरोंको संहार नहीं कर सकेगा ॥ १२९ ॥ बुद्धिमान् राजकुमार लक्ष्मणजीके ऐसे वचन सुनकर महाबलवान् वानरगण कुंभकर्णके ऊपर चढगये ॥ १३० ॥ परन्तु वानरोंके चढनेपर कुंभकर्णने अत्यन्त पीडित होहाथी जिस प्रकार अपने ऊपर चढनेवालेको गिराता है ऐसे ही गर्दन कंपायमान करके वानरोंको गिरा दिया ॥ १३१ ॥ वानरोंको गिरा हुआ देखकर श्रीरामचन्द्रजी "कुंभकर्ण क्रोधित हुआ है" यह विचार उत्तम धनुष बाण धारण कर सहसा उठ खडे हुए ॥ १३२ ॥ तब मारे क्रोधके लाल नेत्रकर नेत्रोंसे मानों भस्मही करते हुए श्रीरामचन्द्रजी उसके ऊपर अतिवेगसे दौडे ॥१३३॥ और कुंभकर्णके बलसे पीडित हुए उन यूथपति वानरोंको हर्षित कराया ॥ १३४ ॥ महावीर श्रीरामचन्द्रजीके हाथमें दृढ प्रत्यंचा सहित सुवर्णके वेलबूटेसे बना हुआ धनुष और कन्धेपर उत्तम बाणोंसे भरा हुआ तरकस लगा था वह श्रीरामचन्द्रजी वानर

अद्यायंदुर्मतिःकालेगुरुभारप्रपीडितः ॥ प्रचरन्राक्षसोभूमौनान्यान्हन्यात्प्लवंगमान् ॥ २९ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराजपुत्रस्यधीमतः ॥ तेसमारुरुहुर्हृष्टाकुंभकर्णंमहाबलाः ॥ १३० ॥ कुंभकर्णस्तुसंक्रुद्धःसमारूढैःप्लवंगमैः ॥ व्यधूनयत्तान्वेगेनदुष्टहस्तीवहस्तिपान् ॥३१॥ तान्दृष्ट्वानिर्धुतान्रामोरुष्टोऽयमितिराक्षसम् ॥ समुत्पपातवेगेनधनुरुत्तममाददे ॥ ३२ ॥ क्रोधरक्तेक्षणोधीरोनिर्दहन्निवचक्षुषा ॥ राघवोराक्षसंवेगादभिदुद्राववेगितः ॥ ३३ ॥ यूथपान्हर्षयन्सर्वान्कुंभकर्णबलार्दितान् ॥ ३४ ॥ सचापदामायभुजंगकल्पंदृढज्यमुग्रंतपनीयचित्रम् ॥ हरीन्समाश्वास्यसमुत्पपातरामोनिबद्धोत्तमतूणबाणः ॥ ३५ ॥ सवानरगणैस्तैस्तुवृतःपरमदुर्जयैः ॥ लक्ष्मणानुचरोवीरःसंप्रतस्थेमहाबलः ॥ ३६ ॥ सददर्शमहात्मानंकिरीटिनमरिंदमम् ॥ शोणिताप्लुतरक्ताक्षंकुंभकर्णंमहाबलम् ॥ ३७ ॥ सर्वान्समभिधावंतंयथारुष्टंदिशागजम् ॥ मार्गमाणंहरीन्क्रुद्धंराक्षसैःपरिवारितम् ॥ ३८ ॥ विंध्यमंदरसंकाशंकांचनांगदभूषणम् ॥ स्रवंतंरुधिरंवक्त्राद्वर्षमेघमिवोत्थितम् ॥ ३९ ॥

लोगोंको समझाते बुझाते कुंभकर्णसे युद्ध करनेके लिये आगे बढे ॥ १३५ ॥महाबलवान् वीरधुरीण श्रीरामचन्द्रजीके चलनेपर लक्ष्मणजी उनके पीछे २ चले और परमदुर्जय वानरगण उनको चारों ओरसे घेरे हुए गमन करने लगे ॥ १३६ ॥ इस प्रकार गमन करते हुए दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजीने रुधिरसे शरीर भीगे महाबलवान् महावीर किरीटधारी शत्रुनाशी कुम्भकर्णको देख पाया ॥१३७॥इसके संगमें असंख्य राक्षसोंकी सेना थी,वह क्रोधसहित वानरोंकी सेनाको खोजता फिरता था, जिस प्रकार दिक्पाल हस्ती क्रोधित होता है वैसेही यह राक्षसवीर सबको व्याकुल कर रहा था,॥१३८॥ उसका आकार विंध्याचल और मन्दराचल पर्वतके समान था सुवर्णका बाजू वह पहरे हुए था उसके मुखसे अनिवारित रुधिरकी धारा गिर रही थी जिसके देखनेसे वह वर्षाकालीनमेघकेसमान

जानपडता था॥ १३९॥ जिससे अपने रुधिर लगे दोनों गलफडोंको कुम्भकर्ण बारंबार चाट रहा था, वह यमराजके समान आकार धारण किये बराबर वानरोंकी सेना संहार कर रहा था॥ १४०॥ पुरुष श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीने प्रज्वलित अग्निकेसमान उस उग्रमूर्तिवाले राक्षस कुम्भकर्णको देख अपने धनुषपर टंकार दी॥ १४१॥ परंतु राक्षस श्रेष्ठ कुंभकर्ण उस धनुषकी टंकारको नहीं सहन करसका वरन् वह दूना क्रोध कर श्रीरामचन्द्रजीके सन्मुख दौडा॥ १४२॥ इसके उपरान्त भुजगराजसदृश बाहु युगशाली श्रीरामचन्द्रजी पर्वतके समान कुंभकर्णको पवनसे उडाये हुए मेघके समान आता हुआ देखके कहने लगे॥ १४३॥ हे राक्षसपति! तुम विषाद न करो, वह देखा हम धनुष हाथमें लिये खडे हुए हैं। हमकोही राक्षसोंके कुलका अन्त कराने वाला राम जानो। हे वीर! तुम इसी मुहूर्तमें जीवविहीन होगये?

जिह्वयापरिलिह्यंतंसृक्किणीशोणितोक्षिते॥ मृदूनंतंवानरानीकंकालांतकयमोपमम्॥ १४०॥ तंदृष्ट्वाराक्षसश्रेष्ठंप्रदीप्तानलवर्चसम्॥ विस्फारयामासतदाकार्मुकंपुरुषर्षभः॥ ४१॥ सतस्यचापनिर्घोषात्कुपितोराक्षसर्षभः॥ अमृष्यमाणस्तंघोषमभिदुद्रावराघवम्॥ ४२॥ ततस्तुधारोद्धतमेघकल्पंभुजंगराजोत्तमभोगबाहुः॥ तमापतंतंधरणीधराभमुवाचरामोयुधिकुम्भकर्णम्॥ ४३॥ आगच्छरक्षोऽधिपमाविषादमवस्थितोऽहंप्रगृहीतचापः॥ अवेहिमांराक्षसवंशनाशनंयस्त्वंमुहूर्ताद्भविताविचेताः॥ ४४॥ रामोऽयमितिविज्ञायजहासविकृतस्वनम्॥ अभ्यधावतसंक्रुद्धोहरीन्विद्रावयन्रणे॥ ४५॥ दारयन्निवसर्वेषांहृदयानिवनौकसाम्॥ प्रहस्यविकृतंभीमंसमेघस्तनितोपमम्॥ ४६॥ कुम्भकर्णोमहातेजाराघवंवाक्यमब्रवीत्॥ नाहंविराधोविज्ञेयोनकबंधःखरोनच॥ नवालीनचमारीचःकुम्भकर्णःसमागतः॥ ४७॥ पश्यमेमुद्गरंभीमंसर्वकालायसंमहत्॥ अनेननिर्जितादेवादानवाश्चपुरामया॥ ४८॥ विकर्णनासइतिमांनावज्ञातुंत्वमर्हसि॥ स्वल्पापिहिनमेपीडाकर्णनासाविनाशनात्॥ ४९॥

॥ १४४॥ श्रीरामचन्द्रजीके ऐसा कहने पर "यही रामचन्द्र हैं" ऐसा जानकर कुम्भकर्ण विकटस्वरसे हँसता हुआ क्रोधके मारे वानरोंकी सेनाको भगाता श्रीरामचन्द्रजीके सन्मुख दौडा॥ १४५॥ इसके उपरान्त सब वनवासी वानरोंके हृदय विदारण करता, मेघके गर्जनके समान विकट भयंकर स्वरसे हँसता हुआ॥ १४६॥ महातेजस्वी कुम्भकर्ण श्रीरामचन्द्रजीसे बोला; हमको विराध, कबन्ध, खर अथवा मारीच मनमें न समझलेना हम कुम्भकर्ण आये हैं॥ १४७॥ हमारा यह काले लोह का बना हुआ बडा भारी मुद्गर देखो हमने इससेही पहले देवता और दानव लोगोंको जीत लिया है॥ १४८॥ हमको नाक कान हीन हुआ जानकर तुम हमारा निरादर मत करना कारण कि, नाशिका और कान कटजानेसे हमको कुछभी पीडा नहीं हुई है॥ १४९॥

हे पापरहित इक्ष्वाकुशार्दूल ! तुम हमारे शरीर पर पहले अपना बलवीर्य दिखाओ उसके पीछे तुम्हारा विक्रम और पौरुष देखकर हम तुमको भक्षण करेंगे ॥ १५०॥ कुंभकर्णके वचन सुनकर रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजीने फोंक लगे हुए बाण उसके ऊपर चलाये, परन्तु वज्रके समान वेगवान् उन सब बाणोंके लगने परभी देवताओंका शत्रु कुम्भकर्ण कुछ भी दुःखी या चलायमाननहीं हुआ ॥ १५१ ॥ जिन बाणोंसे और दूसरे राक्षस मारडाले गये और वानरश्रेष्ठ वाली मारा गया वही वज्रके समान बाण कुम्भकर्णके शरीरमें कुछ भी व्यथा उपजानेको समर्थ नहीं हुए ॥ १५२ ॥ इन्द्रके शत्रु कुंभकर्णने पानीकी धाराके समान वह समस्त बाण अपने शरीरमें धारण करके अति उग्र वेग वाले मुद्गरके प्रहारसे श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंका वेग निवारण करदिया ॥ १५३ ॥ इसके उपरान्त कुंभकर्ण जिससे देवताओंकी सेना भी भागगई थी उसी रुधिर लगेहुए उग्र वेगवान् मुद्गरके प्रहारसे बडी भारी वानरोंकी सेनाको भगाने लगा

दर्शयेक्ष्वाकुशार्दूलवीर्यंगात्रेषुमेऽनघ ॥ततस्त्वांभक्षयिष्यामिदृष्टपौरुषविक्रमम् ॥१५०॥ सकुम्भकर्णस्यवचोनिशम्यरामःसपुंखान्विससर्जबाणान् ॥ तैराहतोवज्रसमप्रवेगैर्नचुक्षुभेनव्यथतेसुरारिः॥ ५१ ॥ यैःसायकैःसालवरानिकृत्तावालीहतोवानरपुंगवश्च ॥ तेकुम्भकर्णस्यतदाशरीरं वज्रोपमानव्यथयांप्रचक्रुः ॥५२॥ सवारिधाराइवसायकांस्तान्पिबञ्शरीरेणमहेंद्रशत्रुः॥जघानरामस्यशरप्रवेगंव्याविध्यतंमुद्गरमुग्रवेगम् ॥५३॥ ततस्तुरक्षःक्षतजावलिप्तंवित्रासनंदेवमहाचमूनाम् व्याविध्यतंमुद्गरमुग्रवेगंविद्रावयामासचमूंहरीणाम् ॥५४॥वायव्यमादायततोपरास्त्रंरामःप्रचिक्षेपनिशाचराय॥समुद्गरंतेनजहारबाहुंसकृत्तबाहुस्तुमुलंननाद ॥ ५५ ॥ सतस्यबाहुर्गिरिशृंगकल्पःसमुद्गरोराघवबाणकृत्तः ॥ पपाततस्मिन्हरिराजसैन्येजघानतांवानरवाहिनींच॥ ५६ ॥ तेवानराभग्नहतावशेषाःपर्यंतमाश्रित्यतदाविषण्णाः ॥ प्रपीडितांगाददृशुःसुघोरंनरेंद्ररक्षोऽधिपसन्निपातम् ॥ ॥ ५७ ॥ सकुम्भकर्णोऽस्त्रनिकृत्तबाहुर्महासिकृत्ताग्रइवाचलेंद्रः ॥ उत्पाटयामासकरेणवृक्षंततोऽभिदुद्रावरणेनरेंद्रम् ॥ ५८ ॥

॥१५४॥ यह देखकर श्रीरामचन्द्रजीने वायव्यनामक श्रेष्ठअस्त्र ग्रहण कर कुंभकर्णके ऊपर चलाय उससे मुद्गरके सहित उसकी बांहकाट डाली और कुंभकर्ण भी बांह कट जानेसे कठोर शब्द करने लगा ॥ १५५ ॥ पर्वतके शृङ्गके समान मुद्गर युक्त श्रीरामचन्द्रके बाणसे कटा हुआ वह हाथ वानरराज सुग्रीवजीकी सेनामें गिरा कि; जिससे बहुतसी वानरोंकी सेना दबकर मरगई ॥१५६॥ भागे हुए और बचे बचाये देहमें पीडा पाय वानरगण व्याकुल वदन्से एक बगल खडे हो मनुष्योंमें इन्द्र श्रीरामचन्द्रजी और राक्षसोंमें इन्द्र कुंभकर्णका घोर संग्राम देखने लगे ॥ १५७ ॥ इसके उपरान्त बडे भारी खड्गसे कटे हुए पर्वतके समान श्रीरामचन्द्रजीके बाणसे हाथ कटाहुआ कुंभकर्ण दूसरे हाथसे एक वृक्ष उखाड कर नरेन्द्र श्रीरामचन्द्रजीकी ओर दौडा ॥ १५८ ॥

परन्तु श्रीरामचन्द्रजीने सुवर्णसे चित्रित ऐन्द्रास्त्रसंयोजित बाणसे शालवृक्षके सहित सर्पके शरीरके समान चढाव उतारवाला ऊपरको उठाहुआ उसका वह हाथभी काट डाला ॥ १५९ ॥ कुंभकर्णके पर्वतके समान उस कटी हुई भुजाने चेष्टाहीनहो पृथ्वीपर गिर तडपतेहुए वृक्ष पर्वत और वानर राक्षसोंको चूर्ण कर डाला ॥ १६० ॥ उसके पीछे श्रीरामचन्द्रजीने उस राक्षसको फिरभी सिंहनाद करके आते हुए देख दो तीखे अर्द्धचन्द्र बाण ग्रहण करके उसके दोनों पांव काट डाले ॥ १६१ ॥ उसके वह दोनों पांव दिशा, विदिशा, पर्वतोंकी गुफा, समुद्र, लंका और वानर व राक्षसोंकी सेनाको शब्दायमान करते हुए पृथ्वीमें गिरे ॥१६२॥ जैसे अन्तरिक्षमें राहु चन्द्रमाको ग्रास करनेके लिये दौडता है वैसेही हाथ पांव कटा कुंभ कर्ण उस समय घोडेके मुखके समान अपना मुख फैलाय

तंतस्यबाहुंसहतालवृक्षंसमुद्यतंपन्नगभोगकल्पम् ॥ ऐंद्रास्त्रयुक्तेनजघानरामोबाणेनजांबूनदचित्रितेन ॥५९॥ सकुम्भकर्णस्यभुजोनिकृत्तःपपात भूमौगिरिसन्निकाशः ॥ विचेष्टमानोनिजघानवृक्षाञ्शैलाञ्शिलावानरराक्षसांश्च ॥ १६० ॥ तंछिन्नबाहुंसमवेक्ष्यरामःसमापतंतंसहसानदंतम् द्वावर्धचंद्रौनिशितौप्रगृह्यचिच्छेदपादौयुधिराक्षसस्य ॥ ६१ ॥ तौतस्यपादौप्रदिशोदिशश्चगिरिर्गुहाश्चैवमहार्णवंच ॥ लंकांचसेनांकपिराक्षसानांविनादयंतौविनिपेततुश्च ॥ ६२ ॥ निकृत्तबाहुर्विनिकृत्तपादोविदार्यवक्रंवडवामुखाभम् ॥ दुद्रावरामंसहसाभिगर्जन्राहुर्यथाचंद्रमिवांतरिक्षे ॥ ६३ ॥ अपूरयत्तस्यमुखंशिताग्रैरामःशरैर्हेमपिनद्धपुंखैः ॥ संपूर्णवक्रोनशशाकवक्तुंचुकूजकृच्छ्रेणमुमूर्च्छचापि ॥ ६४ ॥ अथाददेसूर्यमरीचिकल्पंसब्रह्मदंडांतककालकल्पम् ॥ अरिष्टमैंद्रंनिशितंसुपुंखंरामःशरंमारुततुल्यवेगम् ॥ ६५ ॥ तंवज्रजांबूनदचारुपुंखंप्रदीप्तसूर्यज्वलनप्रकाशम् ॥ महेंद्रवज्राशनितुल्यवेगंरामःप्रचिक्षेपनिशाचराय ॥ ६६ ॥

शब्द करता हुआ आकाशमार्गसे होकर सहसा श्रीरामचन्द्रजीकी ओर दौड़ा ॥ १६३ ॥ कुंभकर्णको इस प्रकारसे आता हुआ देखकर रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीने सुवर्णके फोंक लगे हुए बाणोंसे उसका मुख पूर्ण करदिया, तब बाणोंसे समस्त मुख पूर्ण हो जानेके कारण कुंभकर्ण कुछभी नहीं बोल सका और सूक्ष्मसा शब्द करके मूर्च्छित होगया ॥ १६४ ॥ उसके पीछे श्रीरामचन्द्रजीने सूर्यके किरणोंके समान प्रकाशमान दीप्तियुक्त ब्रह्मदंड और कालदंडके सदृश शत्रुओंको नाश करनेवाला अति तीक्ष्ण सुन्दर फोंक लगा प्रचंड पवनके वेगसमान ऐन्द्रनामक बाण लिया ॥ १६५ ॥ जिसमें कि, हीरे और सुवर्णकी फोंक लगी थी, प्रदीप्त सूर्य अग्निके समान प्रकाशित और इन्द्रके वज्रके तुल्य वेगवाला यह बाण निशाचर कुम्भकर्णके ऊपर चलाया ॥ १६६ ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी भुजाओंसे चलाहुआ वह बाण अपनी प्रभासे प्रकाशित करता हुआ धुँआरहित अग्निके समान भयंकर दर्शन हो इन्द्रवज्रके समान विक्रमकारी उस राक्षसके ऊपर पहुचा॥१६७॥ जिसप्रकार पूर्वकालमें पुरन्दर इन्द्रजीने वृत्रासुरका मस्तक काट डाला था वैसेही हिलते हुए दोकुण्डलोंसे शोभायमान दांत निकला हुआ कुम्भकर्णका मस्तक पहुँचतेही उस बाणने काटडाला ॥ १६८ ॥ उस कालमें कुंभकर्णका कुंडलहीन बडा भारी मस्तक सूर्यके उदय होनेसे मलीन हुए आकाशमें टिके चन्द्रमाके समान शोभायमान हुआ ॥१६९॥ राक्षस कुंभकर्णका पर्वतके समान मस्तक श्रीरामचन्द्रजीके बाणसे कटकर जब लंकाके कोटकी भीत सेनानिवासस्थान और प्राकारपर जैसेही गिरा कि,उसके गिरतेही धमाकेसे यह ढह पडे ॥१७०॥ हिमालयके समान बडे आकारवाले उस राक्षसका धड

ससायकोराघवबाहुचोदितोदिशःस्वभासादशसंप्रकाशयन्॥विधूमवैश्वानरभीमदर्शनोजगामशक्राशनिभीमविक्रमम्॥६७॥सतन्महापर्वतकूटसन्निभंसुवृत्तदंष्ट्रंचलचारुकुण्डलम्चकर्तरक्षोऽधिपतेःशिरस्तदायथैववृत्रस्यपुरापुरंदरः६८॥कुम्भकर्णशिरोभातिकुंडलालंकृतंमहत्॥आदित्येऽभ्युदितेरात्रौमध्यस्थइवचंद्रमाः॥ ६९ ॥तद्रामबाणाभिहतंपपातरक्षःशिरःपर्वतसन्निकाशम्॥बभंजचर्यागृहगोपुराणिप्राकारमुच्चंतमपातयच्च॥७०॥ तच्चातिकायंहिमवत्प्रकाशंरक्षस्तदातोयनिधौपपात॥ग्राहान्परान्मीनवरान्भुजंगमान्ममर्दभूमिंचतथाविवेश ॥७१॥ तस्मिन्हतेब्राह्मणदेवशत्रौमहाबलेसंयतिकुम्भकर्णे॥चचालभूर्भूमिधराश्चसर्वेहर्षाच्चदेवास्तुमुलंप्रणेदुः॥७२॥ ततस्तुदेवर्षिमहर्षिपन्नगाःसुराश्चभूतानिसुपर्णगुह्यकाः ॥सयक्षगंधर्वगणानभोगताःप्रहर्षितारामपराक्रमेण॥७३॥ततस्तुतेतस्यवधेनभूरिणामनस्विनोनैर्ऋतराजबांधवाः॥विनेदुरुच्चैर्व्यथितारघूत्तमंहरिंसमीक्ष्यैवयथामतंगजाः॥७४॥सदेवलोकस्यतमोनिहत्यसूर्योयथाराहुमुखाद्विमुक्तः॥तथाव्यभासीद्धरिसैन्यमध्येनिहत्यरामोयुधिकुम्भकर्णम्॥१७५॥

समुद्रमें जाकर गिरा, और बडे २ ग्राह, मीन सर्पगण और पृथ्वीको भी मर्दित करता हुआ जलमें डूब गया ॥१७१॥ देवता और ब्राह्मण लोगोंके शत्रु महाबलवान् उस कुंभकर्णके रणभूमिके मध्य मारेजानेपर पृथ्वी और समस्त पर्वत कंपायमान होने लगे और देवतालोग हर्षके मारे कठोर सिंहनाद करने लगे ॥ १७२ ॥ आकाशमें टिके हुए देव देवर्षि, पन्नग, गरुड, गुह्यक; यक्ष और गंधर्वगणोंके सहित समस्त प्राणीही श्रीरामचन्द्रजीका पराक्रम देखकर परमप्रसन्न हुए ॥ १७३ ॥ राक्षसराज रावणके चिन्ताशील बन्धुबान्धवगण कुंभकर्णके ऐसे दारुण वधसे अत्यन्त दुःखी हो जिस प्रकार मृगराज सिंहको देख हाथी भागते हैं वैसेही श्रीरामचन्द्रजी और वानरोंको देखकर शब्द करते हुए भागने लगे ॥ १७४ ॥ उस कालमें श्रीरामचन्द्रजी देवता लोगोंके काल

स्वरूप कुंभकर्णका संग्रामभूमिमें संहार कर अपनी सेनाके बीचमें बैठे राहुके मुखसे छुटे हुए सूर्यके समान शोभायमान हुए ॥१७५॥ उस भयंकरबलवान् शत्रुक मारे जानेपर हर्षके मारे वानर लोगोंके मुख कमलके फूलके समान खिलगये और वह सब उस समय जगत्पूज्य श्रीरामचन्द्रकी पूजा करने लगे ॥१७६॥ अमरराज इन्द्रजी महाअसुर वृत्रासुरका संहार करके जिस प्रकारसे आनंदित हुए थे वैसेही भरतजीके बडे भ्राता श्रीरामचन्द्रजीनेजो कभी किसीसे महारणमें नहीं हाराथा उस देवताओंकी सेनाके मर्दन करनेवाले कुंभकर्णका नाश करके परम हर्ष प्राप्तकिया ॥ १७७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां सप्तषष्टितमः सर्गः ॥६७॥ कुम्भकर्णको महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजीसे मारा हुआ देखकर राक्षसलोगोंने राक्षसोंके स्वामी रावणके समीप जाकर निवेदन किया ॥ १ ॥ हे राजन् ! कालके समान आपके भ्राता कुंभकर्ण कालधर्मसंयुक्त हुए । प्रथम रणभूमिमें पहुँचतेही पहुँचते उन्होंने समस्त वानरोंकी सेनाको

प्रहर्षमीयुर्बहवश्चवानराःप्रबुद्धपद्मप्रतिमैरिवाननैः ॥ अपूजयन्राघवमिष्टभागिनंहतेरिपौभीमबलेनृपात्मजम् ॥७६॥ सकुम्भकर्णंसुरसैन्यमर्दनं महत्सुयुद्धेषुकदाचनाजितम् ॥ ननंदहत्वाभरताग्रजोरणेमहासुरंवृत्रमिवामराधिपः ॥१७७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च० सा० युद्धकांडे सप्तषष्टितमः सर्गः ॥६७॥ कुम्भकर्णंहतंदृष्ट्वाराघवेणमहात्मना ॥ राक्षसाराक्षसेंद्रायरावणायन्यवेदयन् ॥१॥ राजन्सकालसंकाशः संयुक्तःकालकर्मणा ॥ विद्राव्यवानरींसेनांभक्षयित्वाचवानरान् ॥२॥ प्रतपित्वामुहूर्ततुप्रशांतोरामतेजसा ॥ कायेनार्धप्रविष्टेनसमुद्रंभीमदर्शनम् ॥३॥ निकृत्तनासाकर्णेनविक्षरद्रुधिरेणच ॥ रुद्ध्वाद्वारंशरीरेणलंकायाःपर्वतोपमः ॥ ४ ॥ कुम्भकर्णस्तवभ्राताकाकुत्स्थशरपीडितः ॥ अगंडभूतोविवृतोदावदग्धइवद्रुमः ॥ ५ ॥ श्रुत्वाविनिहतंसंख्येकुम्भकर्णंमहाबलम् ॥ रावणःशोकसंतप्तोमुमोहचपपातच ॥ ६ ॥

भगा दिया और जब वानरगण उनके निकट आये तो सहस्रों लक्षोंको उन्होंने खालिया ॥ २ ॥ इस प्रकार एक मुहूर्त भरतक सबको संतापित कर और आपभी संतप्त हो फिर वह कुंभकर्ण श्रीरामचन्द्रजीके तेजसे आपही बुझगये, उनका मस्तक विहीन (अगण्ड) देह भयंकर दर्शनवाले समुद्रमें प्रवेश करगया ॥३॥उनका नाककान विहीन रुधिरसे सना हुआ पर्वतके समान मस्तक लंकाके द्वारको रूंधे हुए डटा हुआ है॥४॥अधिक क्या कहें तुम्हारे भ्राता कुंभकर्णको श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंसे पीडित और हाथ पांव रहित होकर दावानलसे भस्म हुए वृक्षके समान अनावृत्त देहसे प्राणत्याग करने पडे हैं ॥ ५ ॥ महाबल वान् कुंभकर्णको रणभूमिमें मरा हुआ सुनकर रावण शोकसे संतापित हो मूर्च्छा खाय पृथ्वीपर गिर पडा ॥ ६ ॥

उस समय देवान्तक नरान्तक त्रिशिरा और अतिकाय यह सब अपने चचाके मरनेका समाचार पाय शोकसे आतुर हो रोने लगे॥७॥ महोदर और महापार्श्वयह दोनों अपने सौतेले भाईको सरल कर्मकारी श्रीरामचन्द्रजीके हाथसे नष्ट हुआ सुनकर शोकसे अत्यन्त अधीर होगये ॥८॥इसके उपरांत राक्षस श्रेष्ठ रावणबडे कष्टसे चेतना पाय कुम्भकर्णके मारे जानेसे इंद्रियोंकी व्याकुलताके वश दीनभावसे विलाप करता हुआ कहने लगा ॥९॥हा वीर ! हा शत्रु गर्वखर्वकारी । हा महाबलवान् ! हा कुंभकर्ण ! प्रारब्धके वश तुम हमको छोडकर यमराजके भवनको चले गये॥ १० ॥ हा महाबलवान् । तुम हमारे और हमारे बन्धु बान्धवोंके हृदयमें गडे हुए फलके विनाही उखाडे हम सबको छोड शत्रुकी सेनाको भगाय अकेले ही कहांको चले गये*॥११॥ हा वीर ! तुम हमारे दाहिने हाथ थे इसी

पितृव्यंनिहतंश्रुत्वादेवांतकनरांतकौ ॥ त्रिशिराश्चातिकायश्चरुरुदुःशोकपीडिताः ॥ ७ ॥ भ्रातरंनिहतंश्रुत्वारामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ महोदरमहापार्श्वौशोकाक्रान्तौबभूवतुः ॥ ८ ॥ ततःकृच्छ्रात्समासाद्यसंज्ञांराक्षसपुंगवः ॥ कुम्भकर्णवधाद्दीनोविललापाकुलेंद्रियः ॥ ९ ॥ हावीररिपुदर्पघ्नकुम्भकर्णमहाबल॥ त्वंमांविहायवैदैवाद्यातोऽसियमसादनम् ॥ १० ॥ ममशल्यमनुद्धृत्यबांधवानांमहाबल ॥ शत्रुसैन्यंप्रताप्यैकःक्वमांसंत्यज्यगच्छसि ॥ ११ ॥ इदानींखल्वहंनास्मियस्यमेपतितोभुजः ॥ दक्षिणोयंसमाश्रित्यनबिभेमिसुरासुरान् ॥ १२ ॥ कथमेवंविधोवीरोदेवदानवदर्पहा ॥ कालाग्निप्रतिमोह्यद्यराघवेणरणेहतः ॥ १३ ॥ यस्यतेवज्रनिष्पेषोनकुर्याद्व्यसनंसदा ॥ सकथंरामबाणार्तःप्रसुप्तोऽसिमहीतले ॥ १४ ॥ एतेदेवगणाःसार्धमृषिभिर्गगनेस्थिताः ॥ निहतंत्वांरणेदृष्ट्वानिनदंतिप्रहर्षिताः ॥ १५ ॥ ध्रुवमद्यैवसंहृष्टालब्धलक्षाःप्लवंगमाः ॥ आरोक्ष्यंतीहदुर्गाणिलंकाद्वाराणिसर्वशः ॥ १६ ॥

कारणसे हम सुर या असुरलोगोंसे भय नहीं करते थे परन्तु आज हम अपनी उस बांहके गिरनेसे लोपहोनेके निकट पहुँच गये॥१२॥हाय ! जिस कालके समयकी अग्निके समान वीरने देवता और दानवगणोंकाभी गर्व खर्व किया था सो एक दशरथकुमार रणभूमिमें किस प्रकारसे उसको मार डालनेके अर्थ समर्थ हुए॥१३॥ हा! वज्रकी चोट खानेपरभी जिसको कुछ पीडा नहीं ज्ञात होती थी वही वीर किस प्रकारसे आज रामचन्द्रके बाणसे पीडित हो पृथ्वीपर शयन कर रहा है॥१४॥ हा ! यह देखो भइया ! ऋषि लोगोंके साथ आकाशमें टिके हुए देवतागण तुमको रणमें मरा हुआ देखकर हर्षके मारे सिंहनाद कर रहे हैं ॥१५॥हम निश्चय

* हाय भ्राता किधरको सिधारे ॥ आजतक दुःख मैंने न माना, युद्ध संसारमें मौत ठाना, मुझको दीखे कहीं ना ठिकाना, फिर जिऊंगा मैं किसके सहारे ॥ १ ॥ जो बडे शूरमा ये निशाचर, जिनका मुझको भरोसा सहोदर, युद्धमें जो न हारे कहींपर, अब गये बीर वे सारे मारे ॥ २ ॥ जो विभीषणने हमको सुनाया उसका कहना सभी आगे आया, अपना मुंह जाते अब न दिखाया, कौन धीरज बन्धावे हमारे ॥ ३ ॥ जान की कालके रूप आई, गढकूं मेरे हुई दुःखदाई, उसकी माया नहीं जानि जाई, जो लिखा है टरे ना वो टारे ॥ ४ ॥

जानते हैं कि, वानरगण अवसर पायकर आजही लंकाके द्वार और दुर्गपर चढ आवेंगे॥१६॥ हमको अब राज्यसे क्या प्रयोजनहै और हम सीताको भी अब लेकर क्या करेंगे कारण कि, कुंभकर्ण विहीन होकर अब हम जीवन धारण करनेका भी अभिलाष नहीं करते ॥१७॥ हम यदि उस भाईके मारने वाले रामचन्द्रको संग्राममें नहीं मार सकते तो वृथा इस जीवनके बोझको रखनेसे हमारे लिये मरना ही भला है ॥१८॥ हम भ्राताहीन होकर एक क्षणभरको भी प्राण नहीं रख सकते इस कारण जिस स्थानमें हमारे भाई कुंभकर्ण सोये हैं, हम भी आज उसी स्थानमें गमन करेंगे ॥१९॥ हा कुंभकर्ण ! हमने पहले देवतालोगोंके अनेक अपकार कियेहैं परन्तु आज तुम्हारे मारेजानेसे जो हम इन्द्रको नहीं जीत सकेंगे तो देवता लोग हमारी हँसी करेंगे ॥२०॥ हाय! हमने अज्ञानके मारे महात्मा विभीषणके जो शुभ वचन नहीं माने, आज उसकाही परिणाम हमारे ऊपर आय पहुँचा है ॥२१॥ जबसे हमने कुंभकर्ण और प्रहस्तके मारे जानेका संवाद सुना

राज्येननास्तिमेकार्यंकिंकरिष्यामिसीतया ॥ कुम्भकर्णविहीनस्यजीवितेनास्तिमेमतिः ॥१७॥ यद्यहंभ्रातृहंतारंनहन्मियुधिराघवम् ॥ ननुमेमरणंश्रेयोनचेदंव्यर्थजीवितम् ॥१८॥ अद्यैवतंगमिष्यामिदेशंयत्रानुजोमम ॥ नहिभ्रातॄन्समुत्सृज्यक्षणंजीवितुमुत्सहे ॥१९॥ देवाहिमांहसिष्यंतिदृष्ट्वापूर्वापकारिणम् ॥ कथमिंद्रंजयिष्यामिकुम्भकर्णहतेत्वयि ॥२०॥ तदिदंमामनुप्राप्तंविभीषणवचःशुभम् ॥ यदज्ञानान्मयातस्यनगृहीतंमहात्मनः ॥२१॥ विभीषणवचस्तावत्कुम्भकर्णप्रहस्तयोः ॥ विनाशोऽयंसमुत्पन्नोमांव्रीडयतिदारुणः ॥२२॥ तस्यायंकर्मणःप्राप्तोविपाकोममशोकदः ॥ यन्मयाधार्मिकःश्रीमान्सनिरस्तोविभीषणः ॥२३॥ इतिबहुविधमाकुलांतरात्माकृपणमतीवविलप्यकुम्भकर्णम् ॥ न्यपतदपिदशाननोभृशार्तस्तमनुजमिंद्ररिपुंहतंविदित्वा ॥२४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे अष्टषष्टितमः सर्गः ॥६८॥ एवंविलपमानस्यरावणस्यदुरात्मनः ॥ श्रुत्वाशोकाभिभूतस्यत्रिशिरावाक्यमब्रवीत ॥१॥ एवमेवमहावीर्योहतोनस्तातमध्यमः ॥ नतुसत्पुरुषाराजन्विलपंतियथाभवान् ॥ २ ॥ नूनंत्रिभुवनस्यापिपर्याप्तस्त्वमसिप्रभो ॥ सकस्मात्प्राकृतइवशोचस्यात्मानमीदृशम् ॥ ३ ॥

है तबसे विभीषणके वचनहमको लज्जा देरहे हैं ॥२२॥ हाय ! हमने धार्मिक श्रीमान् विभीषणको जो यहांसे निकाल दिया है, आज उसी दारुण कर्मका शोक दिलानेवाला परिणाम आय पहुँचा है॥२३॥ उस समय रावण इन्द्रके शत्रु कुंभकर्णको मराहुआ सुनकर शोकाकुलमनसे दीनभावयुक्त हो अनेक प्रकारके विलाप करने लगा इसके उपरान्त शोकका वेग अत्यन्त प्रबल होनेसे रावण मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर पडा॥२४॥ इत्यार्षेश्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०युद्धकांडेभाषायामष्टषष्टितमः सर्गः ॥६८॥ शोकसे व्याकुल दुरात्मा रावणके इस प्रकारसे विलापके वचनसुन त्रिशिरा नाम राक्षस कहने लगा॥१॥ हे महाराज! आपने जिस प्रकारसे कहा हमारे ऐसे गुणसम्पन्न मध्यम चचा मारे तो अवश्यगये, परन्तु कोई भी वीरपुरुष आपकेसमान विलाप नहीं करता॥२॥ हेस्वामी! आप किसकारणसे साधारण पुरुषकी

नाई अपने आपही ऐसे शोकसे संतापित हो रहे हो ? हम निश्चय जानते हैं कि,आप इस त्रिभुवनकाभी नाशकर सकते हैं ॥३॥ आपके पास पितामह ब्रह्मा जीकी दी हुई शक्ति,कवच,वाण,धनुष और मेघके समान शब्दायमान रथहै कि,जिसमें सहस्र गधेजुते हैं ॥४॥ आपने तो विनाही शस्त्रग्रहण किये अनेकवार देवता लोगोंका पराजय किया है,इसकारण अब सब भाँतिके आयुध धारण करनेसे निश्चयही आप रामचन्द्रके जीतनेको समर्थ होंगे ॥५॥ अथवा आप सुखसहित विश्राम करें हम अकेलेही समरमें जायकर आपके शत्रुओंका नाश करेंगे कि जिसप्रकार गरुड सर्पोंका नाश करतेहैं ॥६॥ जिसप्रकार इन्द्रने शम्बरासुरको और विष्णुजीने नरकासुरको मारडाला था,वैसेही हम भी रणभूमिमें रामचन्द्रका संहारकर उनको पृथ्वीपर लुटा देंगे ॥७॥ राक्षसोंके स्वामी रावणने त्रिशिराके ऐसे वचन सुनकर कालप्रेरित हो अपना दूसरा जन्म होना माना(अर्थात्) रावणने तो जान लिया कि,बस अब हम मरगये औरसब आशा जाती रही परन्तु त्रिशि

ब्रह्मदत्तास्तितेशक्तिः कवचंसायकोधनुः ॥ सहस्रखरसंयुक्तोरथोमेघसमस्वनः ॥ ४ ॥ त्वयाऽसकृद्धिशस्त्रेणविशस्तादेवदानवाः ॥ ससर्वायुध संपन्नोराघवंशास्तुमर्हसि ॥ ५ ॥ कामंतिष्ठमहाराजनिर्गमिष्याम्यहंरणे ॥ उद्धरिष्यामितेशत्रून्गरुडःपन्नगानिव ॥ ६ ॥ शंबरोदेवराजेननर कोविष्णुनायथा ॥ तथाद्यशयितारामोमयायुधिनिपातितः ॥ ७ ॥ श्रुत्वात्रिशिरसोवाक्यंरावणोराक्षसाधिपः ॥ पुनर्जातमिवात्मानंमन्यते कालचोदितः ॥ ८ ॥ श्रुत्वात्रिशिरसोवाक्यंदेवांतकनरांतकौ ॥ अतिकायश्चतेजस्वीबभूवुर्युद्धहर्षिताः ॥ ९ ॥ ततोऽहमहमित्येवगर्जंतोनैर्ऋत र्षभाः ॥ रावणस्यसुतावीराःशक्रतुल्यपराक्रमाः ॥१०॥ अंतरिक्षगताः सर्वेसर्वेमायाविशारदाः ॥ सर्वेत्रिदशदर्पघ्नाःसर्वेसमरदुर्मदाः ॥११॥ सर्वेसुबलसंपन्नाःसर्वेविस्तीर्णकीर्तयः ॥ सर्वेसमरमासाद्यनश्रूयंतेस्मनिर्जिताः ॥ १२ ॥ देवैरपिसगंधर्वैः सकिन्नरमहोरगैः ॥ सर्वेऽस्त्रविदुषो वीराःसर्वेयुद्धविशारदाः ॥ १३ ॥

राके वचन सुन फिर आशा हुई और इसप्रकार उसने अपना दूसरा जन्म समझा ॥८॥ तब त्रिशिराके ऐसे वचन सुनकर तेजस्वी अतिकाय देवान्तक और नरान्तक युद्ध करनेके लियेहर्ष प्रकाश करने लगे ॥९॥ इसके उपरान्त इन्द्रकेसमान पराक्रमशाली राक्षसश्रेष्ठ वीरवर रावणके पुत्रगण "आगे हम जायँगे आगे हम जायँगे" ऐसा कह गर्जन करने लगे ॥१०॥ सबही अंतरिक्षमें चलनेवाले सबही सब प्रकारकी माया जाननेवाले, सबही देवतालोगोंके दर्प तोडनेवाले और सबही समरमें जीतनेके अयोग्य थे ॥ ११ ॥ सबही बलशाली थे सबहीकी कीर्ति फैली हुई थी, और सबही जायकर कभी हारे हुए नहीं सुने गये थे ॥ १२ ॥ देवता गन्धर्व, किन्नर और उरग चाहे किसीसेभी उन्होंनेयुद्ध किया परन्तु पराजित नहीं हुए कारण कि, युद्ध करनेमें बडे पंडित थे ॥ १३ ॥

सबही बडेभारीविज्ञानी थे और सबही वरदान पाये हुए थे॥ १४ ॥उससमय सूर्यके तुल्य शत्रुकी सेनाको मथनेवाले अपनेवीर पुत्रगणोंके बीचमें बैठाहुआराक्षसराज रावण दानवगर्वखर्वकारी देवतालोगोंके बीचमें बैठे देवराज इन्द्रजीके समान शोभायमान होने लगा ॥ १५॥ इसके पीछे रावणने अपने पुत्रोंको छातीसे लगाय कर उत्तम २ भूषण पहराय बडे आशीर्वाद देकर उनको समरमें भेजा ॥ १६॥ रावणने युद्ध करनेको उन्मत्त वीर सहोदरमहोदर और महापार्श्व दो भाइयोंको अपने पुत्रोंकी रक्षा करनेके निमित्त समरमें भेजा ॥ १७॥ वह सब महाशरीरवाले शत्रुओंको मारने वाले महात्मा रावणको प्रणाम और प्रदक्षिणा करके युद्ध करनेके लिये यात्रा करते हुए ॥ १८॥ वए छ राक्षस घावको भरनेवाली बुटी और सब सुगन्धित पदार्थ स्पर्श करके संग्राममें विजय पानेकी वासनासे चले ॥ १९॥

सर्वेप्रवरविज्ञानाःसर्वेलब्धवरास्तथा ॥ १४ ॥ सतैस्तथाभास्करतुल्यदर्शनैःसुतैर्वृतःशत्रुबलश्रियार्दनैः ॥ रराजराजामघवान्यथामरैर्वृतोमहादानवदर्पनाशनैः ॥१५॥ सपुत्रान्संपरिष्वज्यभूषयित्वाचभूषणैः ॥ आशीर्भिश्चप्रशस्ताभिःप्रेषयामाससंयुगे ॥ १६ ॥ युद्धोन्मत्तंचमत्तंचभ्रातरौचापिरावणः ॥ रक्षणार्थंकुमाराणांप्रेषयामाससंयुगे ॥ १७ ॥ तेऽभिवाद्यमहात्मानंरावणंलोकरावणम् ॥ कृत्वाप्रदक्षिणंचैवमहाकायाःप्रतस्थिरे ॥ १८ ॥ सर्वौषधीभिर्गंधैश्चसमालभ्यमहाबलाः ॥ निर्जग्मुर्नैर्ऋतश्रेष्ठाःषडेते युद्धकांक्षिणः ॥ १९ ॥ त्रिशिराश्चातिकायश्चदेवांतकनरांतकौ ॥ महोदरमहापार्श्वौनिर्जग्मुःकालचोदिताः ॥ २० ॥ ततःसुदर्शनंनागंनीलजीमूतसन्निभम् ॥ ऐरावतकुलेजातमारुरोहमहोदरः ॥ २१ ॥ सर्वायुधसमायुक्तस्तूणीभिश्चाप्यलंकृतः ॥ रराजगजमास्थायसवितेवास्तमूर्धनि ॥ २२ ॥ हयोत्तमसमायुक्तंसर्वायुधसमाकुलम् ॥ आरुरोहरथश्रेष्ठंत्रिशिरारावणात्मजः ॥ २३ ॥ त्रिशिरारथमास्थायविरराजधनुर्धरः ॥ सविद्युदुल्कःसज्वालःसेंद्रचापइवांबुदः ॥ २४ ॥ त्रिभिःकिरीटैस्त्रिशिराःशुशुभेसरथोत्तमे ॥ हिमवानिवशैलेंद्रस्त्रिभिःकांचनपर्वतैः ॥ २५ ॥

त्रिशिरा, अतिकाय, देवान्तक,नरान्तक महोदर और महापार्श्व यह छ निशाचर मानों कालसेही भेजे जाकर संग्राममें गमन करते हुए ॥ २० ॥ तब नीले बादरके रंगके समान ऐरावतके कुलसे उत्पन्न हुए सुदर्शन नाम हाथीपर महोदर सवार हुआ ॥ २१ ॥ तरकस और बाणोंसे अलंकृत सर्वायुधधारी वह वीर हाथीपर सवार हो अस्ताचलपर आरोहण करतेहुए सूर्यभगवानके समान शोभायमान होने लगा ॥ २२॥ रावणका पुत्र त्रिशिरा दिव्य घोडे जिसमें जुते, और सब भाँतिके अस्त्र,शस्त्र भी भर रहे थे ऐसे एक श्रेष्ठ रथपर सवार हुआ॥ २३॥ धनुष धारण किये हुए त्रिशिरा रथपर सवार होकर बिजली,उल्का,ज्वाला और इन्द्रधनुष युक्त बादलके समान शोभायमान हुआ॥ २४॥ तीन सुवर्णके शृङ्गोंसे हिमवान् पर्वतकी जैसी शोभा होती है,वैसेही त्रिशिरा अपनेतीन मस्तकोंपर तीन

किरीट धारणकरके श्रेष्ठ रथपर सवार हो शोभित होने लगा॥२५॥ धनुषधारणकरनेवालोंमें प्रथम गिने जानेके योग्य रावणकापुत्र अतितेजस्वी अतिकाय श्रेष्ठ रथपर आरोहण करता हुआ ॥२६॥ इसरथके पहिये और धुरे सुगठित थे अनुकर्ष और कूबरयुक्त दो विशेष अंगोंसे यह शोभित था; इसमें बाण, शरासन, प्रास, खड्ग और परिघ यह सब सजे सजाये रक्खे थे ॥ २७ ॥ वीर श्रेष्ठ अतिकायके शिरपर विचित्र कांचनमय मुकुट था वह अनेक प्रकारके गहनोंसे भूषित था; सुमेरु जिसप्रकार अपनी प्रभासे सबको प्रकाशित करता है, वैसेही अतिकाय अनुपम शोभा पानेलगा ॥२८॥ राक्षस शार्दूलगण उन महाबलवान् राज कुमारोंको चारों ओरसे घेरे हुए थे, इससे वह राजकुमार देवता लोगोंसे घिरे हुए इन्द्रजीके समान शोभित होने लगा ॥ २९ ॥ निशाचर नरान्तक उच्चैःश्रवाके

अतिकायोऽतितेजस्वीराक्षसेंद्रसुतस्तदा ॥ आरुरोहरथश्रेष्ठंश्रेष्ठः सर्वधनुष्मताम् ॥ २६ ॥ सुचक्राक्षंसुसंयुक्तंसानुकर्षसकूबरम् ॥ तूणीबाणास नैर्दीप्तंप्रासासिपरिघाकुलम् ॥ २७ ॥ सकांचनविचित्रेणकिरीटेनविराजता ॥ भूषणैश्चबभौमेरुःप्रभाभिरिवभासयन् ॥ २८ ॥ सरराजरथेत स्मिन्राजसूनुर्महाबलः ॥ वृतोनैर्ऋतशार्दूलैर्वज्रपाणिरिवामरैः ॥ २९ ॥ हयमुच्चैःश्रवःप्रख्यंश्वेतंकनकभूषणम् ॥ मनोजवंमहाकायमारुरोहन रांतकः ॥ ३० ॥ गृहीत्वाप्रासमुल्काभंविरराजनरांतकः ॥ शक्तिमादायतेजस्वीगुहःशिखिगतोयथा ॥ ३१ ॥ देवांतकःसमादायपरिघंहेम भूषणम् ॥ परिगृह्यगिरिंदोर्भ्यांवपुर्विष्णोर्विडंबयन् ॥ ३२ ॥ महापार्श्वोमहातेजागदामादायवीर्यवान् ॥ विरराजगदापाणिःकुबेरइवसंयुगे ॥ ३३ ॥ तेप्रतस्थुर्महात्मानोऽमरावत्याःसुराइव ॥ तान्गजैश्चतुरंगैश्चरथैश्चांबुदनिःस्वनैः ॥ ३४ ॥ अनूत्पेतुर्महात्मानोराक्षसाःप्रवरायुधाः ॥ तेविरेजुर्महात्मानःकुमाराःसूर्यवर्चसः ॥ ३५ ॥

समान श्वेतवर्ण कमलभूषित पवनके समान वेगसे जानेवाले एक बडे भारी घोडे पर चढा ॥३०॥ तेजस्वी नरान्तक उल्काके तुल्य भाला हाथमें लिये हुए मोर पर चढे शक्ति हाथमें लिये स्वामिकार्तिकके समान शोभायमान होने लगा ॥३१॥ राक्षस देवान्तक सुवर्ण लगा हुआ एक परिघ ग्रहण करके इसप्रकार शोभित हुआ कि, समुद्र मथनेके समय विष्णुजीने जिस प्रकार बांहोंसे मन्दराचलको धारण किया था ॥ ३२ ॥ महातेजस्वी वीर्यवान् महापार्श्व गदा ग्रहण करके रणभूमिमें कुबेरजीके समान शोभा धारण करता हुआ ॥३३॥ जिस प्रकार देवता लोग अमरावतीसे चलते हैं, वैसेही वह वीरगण भी लंकापुरीसे युद्धकरनेके लिये चले. तुरंग, घोडे, मातंग, हाथी और मेघके समान शब्दायमान रथोंपर चढ२ ॥ ३४ ॥ बडे२ आयुध ले २ कर महाकाय महात्मा राक्षस लोग चले व सूर्यके

समान तेजस्वी महात्मा राजकुमार ॥३५॥ किरीट धारण किये हुए आकाशमें प्रकाशमान ग्रहोंके समान शोभायमान हुए उन राक्षसलोगोंके हाथोंमेंकी ग्रहण की हुई आयुधोंकी श्रेणी (पांती) ॥ ३६ ॥ ऐसी शोभित हुई जैसे शरद् ऋतुके समय आकाशमें उडती हुई हंसोंकी पांति शोभायमान होती है, यह या तो मरही जायँगे या शत्रुलोगोंको हीजीतलेंगे ॥ ३७ ॥ ऐसा निश्चय कर वह सब महात्मा वीर युद्ध करनेके लिये चले उनमेंसे कोई २ गर्जने लगे, कोई सिंहनाद करने लगे और कोई २ शत्रुकी ओर बाणोंकी वर्षा करने लगे ॥ ३८ ॥ इसप्रकारसे रणमें दुर्मद वह महात्मा वीर चले, उन राक्षसोंके घोर सिंहनाद करनेसे पृथ्वी कंपायमान होने लगी ॥३९॥ वह और दूसरे राक्षसोंके भी सिंहनाद करनेसे आकाश भी मानो फूट ही गया; इस प्रकारसे वह महाबलवान् राक्षस हर्षयुक्त

किरीटिनः श्रियाजुष्टाग्रहादीप्ताइवांबरे ॥ प्रगृहीताबभौतेषांवस्त्राणामावलिःशिवा ॥३६॥ शरद्भ्रमप्रतीकाशाहंसावलिरिवांबरे ॥ मरणंवापि निश्चित्यशत्रूणांवापराजयम् ॥ ३७ ॥ इतिकृत्वामतिंवीराःसंजग्मुःसंयुगार्थिनः ॥ जगर्जुश्चप्रणेदुश्चचिक्षिपुश्चापिसायकान् ॥ ३८ ॥ जगृहुश्चमहात्मानोनिर्यातायुद्धदुर्मदाः॥क्ष्वेडितास्फोटितानांवैसंचचालेवमेदिनी ॥३९॥ रक्षसांसिंहनादैश्चसंस्फोटितमिवांबरम् ॥ तेभिनि ष्क्रम्यमुदिताराक्षसेंद्रामहाबलाः ॥ ४० ॥ ददृशुर्वानरानीकंसमुद्यतशिलानगम् ॥ हरयोऽपिमहात्मानोददृशूराक्षसंबलम् ॥ ४१ ॥ हस्त्य श्वरथसंबाधंकिंकिणीशतनादितम् ॥ नीलजीमूतसंकाशंसमुद्यतमहायुधम् ॥४२॥ दीप्तानलरविप्रख्यैर्नैर्ऋतैःसर्वतोवृतम् ॥ तद्दृष्ट्वाबलमायातं लब्धलक्षाःप्लवंगमाः ॥ ४३ ॥ समुद्यतमहाशैलाःसंप्रणेदुर्मुहुर्मुहुः ॥ अमृष्यमाणारक्षांसिप्रतिनर्दंतवानराः ॥ ४४ ॥ ततःसमुत्कृष्टरवंनिश म्यरक्षोगणावानरयूथपानाम् ॥ अमृष्यमाणाःपरहर्षमुग्रंमहाबलाभीमतरंप्रणेदुः ॥ ४५ ॥ तेराक्षसबलंघोरंप्रविश्यहरियूथपाः ॥ विचेरुरु द्यतैःशैलैर्नगाःशिखरिणोयथा ॥ ४६ ॥

होकर समर करनेको चले ॥४०॥ उन महाबली अत्यन्त आनन्दित राक्षसोंने वृक्ष शिलादि हाथमें लिये ऊपरको उठाये हुये वानरोंको देखा ॥४१॥ वानर लोगोंने भी देखा कि, राक्षसोंकी सेना युद्ध करनेके लिये आगे बढरही है; यह समस्त सेना हाथी घोडे और रथोंसे परिपूर्ण थी और किंकिणियोंके शब्दसे शब्दाय मानथी ॥४२॥ इस सेनाका आकार नीले मेघके समान था और इस सेनाके हाथमें अनेक प्रकारके अस्त्रशस्त्र थे और उसका तेज दीप्त अग्नि और सूर्यके समान उज्ज्वल था॥४३॥ वानरलोग राक्षसोंको युद्धके लिये आया हुआ देखकर पर्वतोंको ग्रहण करके वारंवार सिंहनाद करने लगे ॥ ४४ ॥ इसके उपरान्त वानर यूथपति लोगोंका घोर शब्द श्रवण करके राक्षसलोगोंने उसको असह्य समझा और परमानंदसे सब मिलकर अपने आपही सिंहनाद करने लगे॥४५॥ इसके पीछे

वानर वीरगण पर्वत धारण करके शिखरधारी पर्वतोंके समान राक्षसोंकी सेनामें प्रवेश करते हुए ॥ ४६ ॥ वृक्ष और पर्वतको ग्रहण करके कोई २ वानर तो क्रोधके मारे आकाशको चले गये और वहांसे राक्षसोंपर टूटे और कोई२वृक्ष शिलादि ग्रहण अरके पृथ्वीपरही राक्षसोंसे जाय जुटे ॥४७॥ कोई २ वानर श्रेष्ठ बहुत शाखावाले वृक्षोंको ग्रहणकर युद्ध करने लगे इसप्रकारसे वानर और राक्षसोंका तुमुल संग्राम होने लगा॥४८॥वानरगण बराबर वृक्ष और शिला राक्षसोंके ऊपर वर्षा रहेथे और राक्षसलोगभी वानरोंके शरीरमें बाण गाड रहे थे ॥४९॥ धीरे२दोनों ओरसे घोर सिंहनाद होने लगा शिलाधारी वानरलोग शिलाके प्रहारसे राक्षसोंको चूर्ण करने लगे ॥ ५० ॥ वानरगण रणमें क्रोध करके कवच धारण किये हुए राक्षसोंका संहार करने लगे,कोई रथपर चढे हुए वीरोंको

केचिदाकाशमाविश्यकेचिदुर्व्यांप्लवंगमाः ॥ रक्षःसैन्येषुसंक्रुद्धाःकेचिद्द्रुमशिलायुधाः ॥ ४७ ॥ द्रुमांश्चविपुलस्कंधान्गृह्यवानरपुंगवाः ॥ तद्यु द्धमभवद्घोरंरक्षोवानरसंकुलम् ॥ ४८ ॥ तेपादपशिलाशैलैश्चक्रुर्वृष्टिमनूपमाम् ॥ बाणौघैर्वार्यमाणाश्चहरयोभीमविक्रमाः ॥ ४९ ॥ सिंहनादा न्विनेदुश्चरणेराक्षसवानराः ॥ शिलाभिश्चूर्णयामासुर्यातुधानान्प्लवंगमाः ॥ ५० ॥ निर्जघ्नुःसंयुगेक्रुद्धाःकवचाभरणावृतान् ॥ केचिद्रथ गतान्वीरान्गजवाजिगतानपि ॥ ५१ ॥ निर्जघ्नुःसहसावीरान्यातुधानान्प्लवंगमाः ॥ शैलशृंगान्वितांगास्तेमुष्टिभिर्वांतलोचनाः ॥५२॥ चेलुःपेतुश्चनेदुश्चतत्रराक्षसपुंगवाः॥ राक्षसाश्चशरैस्तीक्ष्णैर्बिभिदुःकपिकुञ्जरान् ॥५३॥ शूलमुद्गरखड्गैश्चजघ्नुःप्रासैश्चशक्तिभिः ॥ अन्यो न्यंपातयामासुःपरस्परजयैषिणः ॥५४॥ रिपुशोणितदिग्धांगास्तत्रवानरराक्षसाः ॥ ततःशैलैश्चखड्गैश्चविसृष्टैर्हरिराक्षसैः ॥ ५५ ॥ मुहूर्तेना वृताभूमिरभवच्छोणितोक्षिता ॥ विकीर्णैःपर्वताकारैरक्षोभिरभिमर्दितैः ॥ आसीद्वसुमतीपूर्णातदायुद्धमदान्वितैः ॥ ५६ ॥

॥५१॥ वानरलोग मारते हुए इस प्रकारसे असंख्य राक्षसोंकी सेना वानरोंके हाथसे मारी गई । बहुत राक्षसोंकी सेना वानरोंके हाथसे मारी गई । बहुत राक्ष सोंका शरीर शृङ्गोंके प्रहारसे चूर्ण होगया, और किसी २ का नेत्र घूसा मारनेसे निकल पडा ॥ ५२ ॥ इस प्रकार दारुण प्रहारसे राक्षसगण विचलित हो गिरकर कठोर आर्त शब्द करने लगें; और राक्षस लोगभी कपिकुंजरोंको तीक्ष्ण बाणोंसे मारते थे; ॥ ५३ ॥ शूल,मुद्गर,खड्ग, भाला,शक्ति इत्यादिसेभी मारते थे; और दूसरे अस्त्रशस्त्रोंसे परस्पर जयकी इच्छा किये एक दूसरेको मारते थे ॥५४॥ धीरे २ इस प्रकारका युद्ध हुआ कि, वानर और राक्षसगणोंका शरीर परस्परके शत्रुओंके रुधिरसे रंगगया । वानर औरराक्षस लोगोंके चलाये पर्वत खड्ग इत्यादि अस्त्र शस्त्रोंसे ॥५५॥ केवल मुहूर्तभरमें रणभूमि ढकगई

और वहांपर रुधिरकी नदी बहने लगी उस कालमें वानरोंसे मारे हुए रणमें मतवाले राक्षसोंके पडे हुए पर्वताकार देहोंसे रणभूमि परिपूर्ण होगई ॥५६॥ जब मारते २ और चलाते २ वृक्ष पर्वतादि टूट फूटगये तब वानरगण अपने अंगोंमें युद्ध करने लगे ॥ ५७ ॥ वानर श्रेष्ठ गण राक्षसोंको उठाय २ राक्षसोंपर दे दे मारते थे और राक्षस श्रेष्ठ गण वानरोंको उठाय २ वानरोंपर दे दे मारते थे ॥५८॥ राक्षस लोग वानरोंकी चलाई शिला और पर्वतोंको बलसे ग्रहण करके उनको उनकेही ऊपर चलाने लगे और वानरगण भी राक्षसोंके अस्त्र शस्त्र छीनकर उनसेही राक्षसोंका नाश करने लगे ॥५९॥ इस प्रकारसे वह वानर और निशाचर गण पर्वतोंके शृङ्गोंसे रणभूमिमें परस्पर एक दूसरे पर चोट चलाते हुए सिंहनाद करने लगे ॥६०॥ वानरोंके हाथसे राक्षसोंके धनुष टूट गये, कवच, किर्च२

आक्षिप्ताःक्षिप्यमाणाश्चभग्नशैलैश्चवानरैः ॥ पुनरंगैस्तदाचक्रुर्वानरायुद्धमद्भुतम् ॥५७॥ वानरान्वानरैरेवजघ्नुस्तेनैर्ऋतर्षभाः ॥ राक्षसान्राक्षसैरेवजघ्नुस्तेवानराअपि ॥ ५८ ॥ आक्षिप्यचशिलाःशैलाञ्जघ्नुस्तेराक्षसास्तदा ॥ तेषांचाच्छिद्यशस्त्राणिजघ्नूरक्षांसिवानराः ॥ ५९ ॥ निर्जघ्नुःशैलशृंगैश्चबिभिदुश्चपरस्परम् ॥ सिंहनादान्विनेदुश्चरणेराक्षसवानराः ॥ ६० ॥ छिन्नवर्मतनुत्राणाराक्षसावानरैर्हताः ॥ रुधिरंप्रस्रुतास्तत्ररससारमिवद्रुमाः ॥ ६१ ॥ रथेनचरथंचापिवारणेनापिवारणम् ॥ हयेनचहयंकेचिन्निर्जघ्नुर्वानरारणे ॥ ६२ ॥ क्षुरप्रैरर्धचंद्रैश्चभल्लैश्चनिशितैःशरैः ॥ राक्षसावानरेन्द्राणांबिभिदुःपादपाञ्छिलाः ॥ ६३ ॥ विकीर्णाःपर्वतास्तैश्चद्रुमच्छिन्नैश्चसंयुगे ॥ हतैश्चकपिरक्षोभिर्दुर्गमावसुधाभवत् ॥ ६४ ॥ तेवानरागर्वितहृष्टचेष्टाःसंग्राममासाद्यभयंविमुच्य ॥ युद्धंस्मसर्वेसहराक्षसैस्तेनानायुधाश्चक्रुरदीनसत्त्वाः ॥ ६५ ॥ तस्मिन्प्रवृत्तेतुमुलेविमर्देप्रहृष्यमाणेषुवलीमुखेषु ॥ निपात्यमानेषुचराक्षसेषुमहर्षयोदेवगणाश्चनेदुः ॥ ६६ ॥

हो गये और वह मरने भी लगे । जिस प्रकार वृक्षसे गोंद निकलता है वैसेही राक्षसलोगोंके देहसे रुधिरकी धारा बहने लगी॥६१॥वानरलोग रथको चलाय२ कर रथ तोडने लगे हाथीको उठाय२हाथीपर मारने लगे और घोडोंको उठा कर घोडोंका संहार करते हुए ॥६२॥ वानरगण शिला वृक्षसे राक्षसोंको मारते थे और राक्षसगण वानरोंके छोडे हुए वह शिला वृक्ष; तेज छूरे अर्द्धचन्द्र और भाला आदि अस्त्रशस्त्रोंसे काट डालते थे॥६३॥उस समय फेंके हुए पर्वतोंसे अस्त्रशस्त्रोंके कटे हुए वृक्षोंसे और राक्षस वानरोंके शरीरसे रणभूमि दुर्गम हो गई॥६४॥गर्वित और हर्षित चित्त अदीनता युक्त समरमें अनुषंगी वानरगण भय छोड, नखदांत, वृक्ष, शिला,आदि अस्त्र शस्त्रोंको चलाय२राक्षसोंके साथ युद्ध करने लगे॥६५॥इस प्रकारसे कठोर युद्धमें वानरगण हर्षित होकर जब निशाचरोंका संहार करने

लगे, तब महर्षि और देवतालोग यह युद्ध देखकर आनंदका कुलाहल करते थे ॥६६॥ इसके उपरान्त मत्स्य जिस प्रकार महासमुद्रमें प्रवेश करता है; वैसेही नरान्तक पवनके समान वेगवान् एक घोडेपर सवार हुआ तीक्ष्ण शक्ति ग्रहण करके वानरोंकी सेनामें प्रवेश कर गया ॥ ६७ ॥ उस महाबलवान् वीर नरान्तकने प्रकाशमान भालेसे सात सौ वानरोंको मार डाला, एकही क्षणमें इन्द्रके शत्रु महात्मा इस राक्षसने और भी बहुतसी वानरोंकी सेना मार डाली॥ ६८ ॥ इस महात्माको घोडेकी पीठपर संग्रामभूमिके मध्य वानरोंकी सेनामें घूमता हुआ विद्याधर और महर्षि लोगोंने देखा ॥६९॥ वह जिस ओरको चला जाता था उसी ओर मार्गको रुधिर मांसकी कीच और गिरे हुए पर्वताकार वानरोंके शरीरोंसे ढकता जाता था ॥७०॥ वानरलोग जब२जिस२स्थानमें भाग जाने लगे, नरान्तक तब उसीही स्थानपर जाकर उनको संहार करने लगा ॥ ७१ ॥ अग्निके वनको जलानेके समान निशाचर नरान्तक जब वानरोंकी सेनाको भस्म करने

ततोहयंमारुततुल्यवेगमारुह्यशक्तिंनिशितांप्रगृह्य ॥ नरांतकोवानरसैन्यमुग्रंमहार्णवंमीनइवाविवेश ॥ ६७ ॥ सवानरान्सप्तशतानिवीरःप्रासेनदीप्तेनविनिर्बिभेद ॥ एकक्षणेनेंद्ररिपुर्महात्माजघानसैन्यंहरिपुंगवानाम् ॥ ६८ ॥ ददृशुश्चमहात्मानंहयपृष्ठप्रतिष्ठितम् ॥ चरंतंहरिसैन्येषु विद्याधरमहर्षयः ॥ ६९ ॥ सतस्यददृशेमार्गोमांसशोणितकर्दमः ॥ पतितैःपर्वताकारैर्वानरैरभिसंवृतः ॥ ७० ॥ यावद्विक्रमितुंबुद्धिंचक्रुःप्लवगपुंगवाः ॥ तावदेतानतिक्रम्यनिर्बिभेदनरांतकः ॥ ७१ ॥ ददाहहरिसैन्यानिवनानीवविभावसुः ॥ यावदुत्पाटयामासुर्वृक्षाञ्शैलान्वनौकसः ॥ ७२ ॥ तावत्प्रासहताःपेतुर्वज्रकृत्ताइवाचलाः ॥ ज्वलंतंप्रासमुद्यम्यसंग्रामांतेनरांतकः ॥ ७३ ॥ दिक्षुसर्वासुबलवान्विचचारनरांतकः ॥ प्रमृद्नन्सर्वतोयुद्धेप्रावृट्कालेयथानिलः ॥७४॥ नशेकुर्धावितुंवीरानस्थातुंस्पंदितुंकुतः ॥ उत्पतंतंस्थितंयांतंसर्वान्विव्याधवीर्यवान् ॥ ७५ ॥ एकेनांतककल्पेनप्रासेनादित्यतेजसा ॥ भग्नानिहरिसैन्यानिनिपेतुर्धरणीतले ॥ ७६ ॥

लगा वैसेही वनचारी वानरोंने भी वृक्ष उखाडने आरंभ किये और जैसेही कि, उसपर चलाये वैसेही भालेसे कटकर ऐसे गिरे कि, जैसे वज्रसे कटकर पर्वत गिरे थे संग्राममें नरान्तकने प्रकाशमान उस भालेको उठाया ॥७२॥ ॥७३॥ वह महाबलवान् राक्षस नरान्तक संग्रामभूमिमें चारोंओर घूमने लगा और सर्व वानरोंको इस प्रकारसे युद्धमें मर्दित करता था, जैसे वर्षाकालमें प्रचंड पवन झोके देकर सर्वको व्याकुल करता है ॥ ७४ ॥ वीर्यवान् राक्षसका पराक्रम देखकर वानर लोग न तो भागही सके न युद्धही कर सके, वह घोर विपद्में घिर गये उन वानरोंने कुछ उपाय न देखकर जैसेही कूदकर और कहीं जानेका उद्योग किया वैसेही अस्त्र लायकर नरान्तकने ऊपरही सबको वेध डाला॥७५॥सूर्यके समान तेजयुक्त चकेवल उस एकही शूलके मारनेसे समस्त सेना भाग गई और कुछ पृथ्वी

पर गिर पडी ॥ ७६ ॥ वानरलोग वज्र पडनेके तुल्य उस भालेके प्रहारको न सहकर अत्यन्त दारुण आर्त नाद करने लगे ॥७७॥ जिसप्रकार वज्रके गिरनेसे पर्वतका शृङ्ग गिर पडता है, वैसेही वानरोंकी सेनाने गिरकर अपूर्व मूर्ति प्रकाश की ॥ ७८ ॥ इसके उपरान्त जो महावीर वानर श्रेष्ठगण पहले कुंभकर्णके मारे हुए संग्राममें मूर्च्छित पडे थे, वह सावधान होकर सुग्रीवजीके निकट गये ॥ ७९ ॥ और सुग्रीवजीने नरान्तकके भयसे वानरोंकी सेनाको इधर उधर भागती हुई देखा ॥ ८० ॥ सुग्रीवजीने वानरोंकी सेनाको भागती हुई देखकर दूरको निहार कर देखा कि; भाला धारण किये घोडेपर सवार हुआ नरान्तक आगमन कर रहा है ॥८१॥ उसको आता हुआ देखकर महा तेजस्वी वानरराज सुग्रीवजी इन्द्रके समान पराक्रमशाली वालिके पुत्र वीरश्रेष्ठ अंगदजीसे कहने

वज्रनिष्पेपसदृशंप्रासस्याभिनिपातनम् ॥ नशेकुर्वानराःसोढुंतेविनेदुर्महास्वनम् ॥ ७७ ॥ पततांहरिवीराणांरूपाणिप्रचकाशिरे ॥ वज्रभिन्नाग्रकूटानांशैलानांपततामिव ॥ ७८ ॥ येतुपूर्वंमहात्मानःकुंभकर्णेनपातिताः ॥ तेस्वस्थावानरश्रेष्ठाःसुग्रीवमुपतस्थिरे ॥ ७९ ॥ प्रेक्षमाणः ससुग्रीवोददृशेहरिवाहिनीम् ॥ नरांतकभयत्रस्तांविद्रवंतींयतस्ततः ॥ ८० ॥ विद्रुतांवाहिनींदृष्ट्वासददर्शनरांतकम् ॥ गृहीतप्रासमायांतंहयपृष्ठप्रतिष्ठितम् ॥८१॥ दृष्ट्वोवाचमहातेजाःसुग्रीवोवानराधिपः ॥ कुमारमंगदेवीरंशक्रतुल्यपराक्रमम् ॥८२॥ गच्छैनंराक्षसंवीरंयोऽसौतुरगमास्थितः॥ भक्षयंतंपरबलंक्षिप्रंप्राणैर्वियोजय ॥८३॥ सभर्तुर्वचनंश्रुत्वानिष्पपातांगदस्तदा ॥ अनीकान्मेघसंकाशादंशुमानिववीर्यवान्॥८४॥ शैलसंघातसंकाशोहरिणामुत्तमोऽङ्गदः ॥ रराजांगदसन्नद्धःसधातुरिवपर्वतः ॥ ८५ ॥ निरायुधोमहातेजाःकेवलंनखदंष्ट्रवान् ॥ नरांतकमभिक्रम्यवालिपुत्रोऽब्रवीद्वचः ॥ ८६ ॥ तिष्ठकिंप्राकृतैरेभिर्हरिभिस्त्वंकरिष्यसि ॥ अस्मिन्वज्रसमस्पर्शंप्रासंक्षिपममोरसि ॥ ८७ ॥

लगे, यह घोडेपर चढा हुआ निशाचर जो कि, वानरोंकी सेनाको भागता हुआ चला आता है, जाओ इस वीर राक्षसको तुम शीघ्र मारकर आओ ॥ ८२ ॥ ॥८३॥ वीर्यवान् अंगदजी वानरोंके राजा सुग्रीवजीके ऐसे वचन सुनकर वानरोंकी सेनामेंसे इस प्रकार निकले कि, जिस प्रकार सूर्य भगवान् घटासे निकल आते हैं ॥८४॥ उस कालमें निविड कृष्ण पर्वतके समान आकारवाले वह वानरश्रेष्ठ अंगदजी बांहोंमें दो बाजू धारण किये हुये पर्वतके समान शोभायमान होने लगे ॥ ८५ ॥ केवल नख, दांतके अतिरिक्त और कोई भी आयुध नहीं धारण किये । महातेजस्वी वालिकुमार अंगदजी नरान्तकके निकट पहुँच कर बोले ॥ ८६ ॥ खडा रह, साधारण वानरोंके मरनेसे क्या होगा ? इस वज्रके समान भालेसे तू हमारी छातीमें प्रहार कर ॥ ८७ ॥

अंगदजीके वचन सुनकर नरान्तक अत्यन्त क्रोधित हुआ, और क्रोधके मारे लंबे२ श्वास लेता हुआ, दांतोंसे होठोंको चाटता वालिकुमार अंगदजीके निकट गया॥८८॥ इसके उपरान्त प्रकाशमान भाला उठाकर उसने अंगदजीके ऊपर चलाया परन्तु वह भाला अंगदजीके वज्रसमान छातीमें लगकर और टूटकर पृथ्वीमें गिर पडा ॥८९॥ गरुडजी जिसप्रकार सर्पका शरीर छिन्न भिन्नकर डालते हैं; वैसेही उस भालेको चूर्ण देखकर अंगदने नरान्तकके घोडेके मस्तकमें एक लात मारी॥९०॥ उस दारुणप्रहारसे उस पर्वताकार घोडेके चारों पांव टूट गये, नेत्रोंकी पुतलियें बाहर निकल आईं; जीभ मुँहसे निकल आई, मस्तक चूर्ण हो गया, घोडा मृतक होकर पृथ्वीमें गिर पडा ॥९१॥ घोडेको मृतक होकर पृथ्वीपर पडा हुआ देखकर महाप्रभाव नरान्तकने अत्यन्त कोप किया, और मूका उठाकर वालिकुमार अंगद

अंगदस्यवचःश्रुत्वाप्रचुक्रोधनरांतकः ॥ संदश्यदशनैरोष्ठंनिःश्वस्यचभुजंगवत् ॥ अभिगम्यांगदंक्रुद्धोवालिपुत्रंनरांतकः ॥ ८८ ॥ सप्रासमाविध्यतदांगदायसमुज्ज्वलंतंसहसोत्ससर्ज ॥ सवालिपुत्रोरसिवज्रकल्पेबभूवभग्नोन्यपतच्चभूमौ ॥ ८९ ॥ तंप्रासमालोक्यतदाविभग्नंसुपर्णकृत्तोरगवीर्यकल्पम् ॥ तलंसमुद्यम्यसवालिपुत्रस्तुरंगमस्याभिजघानमूर्ध्नि ॥ ९० ॥ निमग्नपादःस्फुटिताक्षितारोनिष्क्रांतजिह्वोचलसन्निकाशः ॥ सतस्यबाजीनिपपातभूमौतलप्रहारेणविकीर्णमूर्धा ॥ ९१ ॥ नरांतकःक्रोधवशंजगामहतंतुरंगंपतितंसमीक्ष्य ॥ समुष्टिमुद्यम्यमहाप्रभावोजघानशीर्षेयुधिवालिपुत्रम् ॥ ९२ ॥ अथांगदोमुष्टिविशीर्णमूर्धासुस्नावतीव्रंरुधिरंभृशोष्णम् ॥ मुहुर्विजज्वालमुमोहचापिसंज्ञांसमासाद्यविसिस्मियेच ॥ ९३ ॥ अथांगदोमृत्युसमानवेगंसंवर्त्यमुष्टिंगिरिशृंगकल्पम् ॥ निपातयामासतदामहात्मानरांतकस्योरसिवालिपुत्रः ॥ ९४ ॥ समुष्टिनिर्भिन्ननिमग्नवक्षाज्वालावमञ्शोणितदिग्धगात्रः ॥ नरांतकोभूमितलेपपातयथाऽचलोवज्रनिपातभग्नः ॥ ९५ ॥ तदान्तरिक्षेत्रिदशोत्तमानांवनौकसांचैवमहाप्रणादः ॥ बभूवतस्मिन्निहतेऽग्र्यवीर्येनरांतकेवालिसुतेनसंख्ये ॥ ९६ ॥

जीके मस्तकमें मारा ॥९२॥ उस प्रहारसे अंगदजीका मस्तक फट गया और उससे गरम२ रुधिरकी धारा बहने लगी; और वह मूर्च्छित हो गये, परन्तु एक क्षणभरमें ही वह चेतना पाय अत्यन्त विस्मित और क्रोधसे दूने प्रज्वलित हो गये ॥९३॥ उसके उपरान्त उन महाबलवान् वालिके पुत्र अंगदजीने नरान्तककी छातीमें मृत्युके समान महावेगसे पर्वतके शृङ्गकी नाईं एक मूका मारा ॥९४॥ उस मूकेके लगनेसे राक्षसकी छाती सुखडकर टूट गई, उसके मुखसे रुधिरकी धारा निकलने लगी, सर्व शरीर रुधिरसे भीग गया. उस समय वह नरान्तक वज्रके गिरनेसे टूटे हुए पर्वतके समान पृथ्वीपर गिरकर मर गया ॥९५॥ उस संग्राममें जब वालिनंदन अंगदजी करके उग्र वीर्यवान् निशाचर नरान्तक मारा गया तब आकाशसे देवतागणोंका और रणभूमिमें वानरोंका बडा भारी शब्द होने लगा इस

प्रकारसे भयंकर कर्मकारी अंगदजी श्रीरामचन्द्रजीके हर्षजनक इस प्रकारका कठिन विक्रम प्रगट करके श्रीरामचन्द्रजीको हर्षित कराय, और फिर आप भी समर करनेके लिये उत्साह प्रगट करनेलगे,॥९७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकोनसप्ततितमः सर्गः ॥६९॥(कतक मतसे सर्गसमाप्ति नहीं) नरान्तकको मरा हुआ देखकर देवान्तक त्रिशिरा और महोदर इत्यादि निशाचरगण अत्यन्त क्रोध करते हुए॥९८॥वेगवान् राक्षस महोदर मेघके समान हाथीपर चढा हुआ वालिकुमार वीर्यवान् अंगदजीके सन्मुख दौडा॥९९॥और बलवान् देवान्तक भी अपने भाईके वधसे अत्यन्त दुःखी होकर घोर परिघ धारण करके अंगदजीकी ओरको धाया ॥१००॥ वीर त्रिशिरा उत्तम घोडोंसे जुते हुए आदित्यके समान रथपर सवार होकर वालिकुमार अंगदजीकी ओर झपटा ॥१०१॥

अथांगदोराममनःप्रहर्षणंसुदुष्करंतंकृतवान्हिविक्रमम् ॥ विसिस्मियेसोप्यथभीमकर्मापुनश्चयुद्धेसबभूवहर्षितः ॥ ९७ ॥ नरांतकंहतंदृष्ट्वाचुक्रुशुर्नैर्ऋतर्षभाः ॥ देवांतकस्त्रिमूर्धाचपौलस्त्यश्चमहोदरः॥९८॥ आरूढोमेघसंकाशंवारणेंद्रंमहोदरः ॥ वालिपुत्रंमहावीर्यमभिदुद्राववेगवान् ॥ ९९ ॥ भ्रातृव्यसनसंतप्तस्तदादेवांतकोबली ॥ आदायपरिघंघोरमंगदंसमभिद्रवत् ॥ १०० ॥ रथमादित्यसंकाशंयुक्तंपरमवाजिभिः ॥ आस्थायत्रिशिरावीरोवालिपुत्रमथाभ्यगात् ॥ १ ॥ सत्रिभिर्देवदर्पघ्नैराक्षसेन्द्रैरभिद्रुतः ॥ वृक्षमुत्पाटयामासमहाविटपमंगदः ॥ २ ॥ देवांतकायतंवीरश्चिक्षेपसहसांगदः ॥ महावृक्षंमहाशाखंशक्रोदीप्तमिवाशनिम् ॥ ३ ॥ त्रिशिरास्तंप्रचिच्छेदशरैराशीविषोपमैः ॥ सवृक्षंकृत्तमालोक्यउत्पपाततदांगदः ॥ ४ ॥ सववर्षततोवृक्षाञ्छिलाश्चकपिकुंजरः ॥ तान्प्रचिच्छेदसंक्रुद्धस्त्रिशिरानिशितैःशरैः ॥ ५ ॥ परिघाग्रेणतान्वृक्षान्बभंजसमहोदरः ॥ त्रिशिराश्चांगदंवीरमभिदुद्रावसायकैः ॥ ६ ॥

उन अंगदजीके ऊपर जब दर्पके नाश करनेवाले तीन राक्षसश्रेष्ठ इस प्रकारसे दौडे तब अंगदजीने बहुत शाखाओंसे युक्त एक बडा भारी वृक्ष उखाड डाला ॥१०२॥ इसके उपरान्त देवराज इन्द्रजी जिस प्रकारसे वज्र चलाते हैं; वैसेही अंगदजीनेभी देवान्तकको लक्ष करके बहुत शाखायुक्त उस वृक्षको चलाया।॥१०३॥ परन्तु राक्षस त्रिशिराने विषधर सर्पके समान उसको काट डाला और अंगदजी भी उस वृक्षको कटा हुआ देखकर कूद गये ॥१०४॥अनन्तर उन कपिकुंजर अंगदजीके पर्वत और वृक्षोंकी वर्षा करने पर त्रिशिराने क्रोधित होकर उन समस्त वृक्ष पर्वतोंको काट डाला॥१०५॥ दूसरी ओरसे महोदरभी बाणोंकी वर्षा करके जब उन अंगदजीके चलाये वृक्ष और पर्वतोंको काटने लगा, तब त्रिशिरा अवसर पाय बाण हाथमें ले वीर वालिकुमार अंगदजीकी ओर धाया ॥ १०६ ॥

हाथीपर सवार हुए महोदरनेभी अंगदजीकी ओरको झपटकर क्रोध सहित वज्रके समान भालेसे उनकी छातीमें प्रहार किया ॥ १०७ ॥ क्रोधयुक्त देवान्तकभी अतिवेगसे आय अंगदजीकी छातीमें परिघ मारकर भागा ॥१०८॥ इसप्रकारसे यद्यपि तीन राक्षस वीरोंने एक साथही अंगदजीको मारा तथापि वालिकुमार महातेजस्वी प्रतापवान् अंगदजी कुछभी व्यथित न हुए ॥१०९॥ इसके उपरान्त परमदुर्जय वानरश्रेष्ठ अंगदजीने महावेगसे उस हाथीके मस्तकमें एक लात मारी जिसपर महोदर चढा हुआ था ॥ ११० ॥ उसलातके घोर प्रहारसे उस हस्तिराजके दोनों नेत्र बाहर निकल आये;और वह हाथी अत्यन्त दारुणशब्द करने लगा और मरगया तब वालिके पुत्र महाबलवान् अंगदजीने उस हाथीका एक दांत निकालकर ॥ १११ ॥ देवान्तककी ओर दौड उस दांतसे रणभू

गजेनसमभिद्रुत्यवालिपुत्रंमहोदरः ॥ जघानोरसिसंक्रुद्धस्तोमरैर्वज्रसन्निभैः ॥७॥ देवांतकश्चसंक्रुद्धःपरिघेणतदांगदम् ॥ उपगम्याभिहत्याशु व्यपचक्रामवेगवान् ॥ ८ ॥ सत्रिभिर्नैर्ऋतश्रेष्ठैर्युगपत्समभिद्रुतः ॥ नविव्यथेमहातेजावालिपुत्रःप्रतापवान् ॥ ९ ॥ सवेगवान्महावेगंकृत्वाप रमदुर्जयः ॥ तलेनसमभिद्रुत्यजघानास्यमहागजम् ॥ ११० ॥ पेततुर्नयनेतस्यविननाशसकुंजरः ॥ विषाणंचास्यनिष्कृष्यवालिपुत्रोमहा बलः ॥ ११ ॥ देवांतकमभिद्रुत्यताडयामाससंयुगे ॥ सविह्वलस्तुतेजस्वीवातोद्धूतइवद्रुमः ॥ १२ ॥ लाक्षारससवर्णंचसुस्रावरुधिरंमहत् ॥ अथाश्वस्यमहातेजाःकृच्छ्राद्देवांतकोबली ॥१३॥ आविध्यपरिघंवेगादाजघानतदांगदम् ॥ परिघाभिहतश्चापिवानरेंद्रात्मजस्तदा ॥ १४ ॥ जानुभ्यःपतितोभूमौपुनरेवोत्पपातह ॥ तमुत्पतंतंत्रिशिरास्त्रिभिर्बाणैरजिह्मगैः ॥१५॥ घोरैर्हरिपतेःपुत्रंललाटेऽभिजघानह ॥ ततोऽङ्गदंपरिक्षि प्तंत्रिभिर्नैर्ऋतपुंगवैः ॥ १६ ॥

मिमें उसको मारा जिसके लगनेसे वह तेजस्वी देवान्तक ऐसा विह्वल हुआ जैसे पवनके लगनेसे वृक्ष कंपित होताहै ॥ ११२ ॥ उसके मुखसे लाखके रंगकेसा बहुतही रुधिर निकलने लगा इसके पीछे महातेजस्वी वीरवर देवान्तकने अति कष्टसे चेतना पाय ॥११३॥ अंगदजीकी छातीमें अतिवेगसे एक गदा मारी, वानरोंमें इन्द्र अंगदजी गदाके प्रहारसे घायल हो ॥ ११४ ॥ जांघोंके बल पृथ्वीपर गिरे, और क्षणभरके पीछे फिर उठ बैठे; उनके उठनेके समय तीन सीधे चलनेवाले बाण ॥ ११५ ॥ जो कि, अतिघोर थे अंगदजीके माथेमें मारे अंगदजीको तीन राक्षस श्रेष्ठों करके घिरा हुआ जान ॥ ११६ ॥

हनुमान् और नीलभी उनके निकट चले आये; तब नीलने त्रिशिराको ताककर उसके मस्तकपर एक पर्वतका शिखर चलाया ॥ ११७ ॥ परन्तु बुद्धिमान् रावणके पुत्र त्रिशिराने तीखे बाणोंसे उस शिखरको खंड २ करडाला, उस कालमें शत बाणोंसे वह पर्वतका शिखर जब चूर्ण करडाला गया ॥ ११८ ॥ तब चिनगारियें और अग्नि निकलता हुआ वह पर्वतका शृङ्ग पृथ्वीपर गिरपडा उस पर्वतके शृङ्गको व्यर्थ देख हर्षित हो महाबली देवान्तक ॥ ११९ ॥ परिघ ग्रहण करके समरमें हनुमान्जीकी ओर दौडा, उसको सामने आता हुआ देखकर कपिकुंजर हनुमान्जीने ॥१२०॥ कूदकर वज्रके समान मूका उसके शिरपर मारा और उन महाकपि बलशाली वीर पवनकुमारने उसके मस्तकपर प्रहार करके सिंहनाद किया कि जिससे समस्त निशाचर गण कंपायमान होने

हनूमानथविज्ञायनीलश्चापिप्रतस्थतुः ॥ ततश्चिक्षेपशैलाग्रंनीलस्त्रिशिरसेतदा ॥१७॥ तद्रावणसुतोधीमान्बिभेदनिशितैःशरैः ॥ तद्बाणशतनिर्भिन्नंविदारितशिलातलम् ॥१८॥ सविस्फुलिंगंसज्वालंनिपपातगिरेःशिरः ॥ सविजृंभितमालोक्यहर्षाद्देवांतकोबली ॥१९॥ परिघेणाभिदुद्राव मारुतात्मजमाहवे॥तमापतंतमुत्पत्यहनूमान्कपिकुञ्जरः॥१२०॥आजघानतदामूर्ध्निवज्रकल्पेनमुष्टिना॥शिरसिप्राहरद्वीरस्तदावायुसुतोबली॥ नादेनाकंपयच्चैवराक्षसान्समहाकपिः ॥ २१ ॥ समुष्टिनिष्पिष्टविभिन्नमूर्धानिर्वांतदंताक्षिविलंबिजिह्वः ॥ देवांतकोराक्षसराजसूनुर्गतासुरुर्व्यां सहसापपात ॥ २२ ॥ तस्मिन्हतेराक्षसयोधमुख्येमहाबलेसंयतिदेवशत्रौ ॥ क्रुद्धस्त्रिशीर्षानिशितास्त्रमुग्रंववर्षनीलोरसिबाणवर्षम् ॥२३॥ महोदरस्तुसंक्रुद्धःकुञ्जरंपर्वतोपमम् ॥ भूयःसमाधिरुह्याशुमंदरंरश्मिवानिव ॥२४॥ ततोबाणमयंवर्षंनीलस्योपर्यपातयत्॥ गिरौवर्षंतडिच्चक्रंसगर्जन्निवतोयदः ॥ २५ ॥ ततःशरौघैरभिवृष्यमाणोविभिन्नगात्रःकपिसैन्यपालः ॥ नीलोबभूवाथविसृष्टगात्रोविष्टंभितस्तेनमहाबलेन ॥ २६ ॥

लगे ॥ १२१ ॥ उस घूंसेके लग नेसे राक्षसराजके पुत्र देवान्तकका मस्तक पिसकर टूटगया दांत और नेत्र पडे और जीभ लंबी होकर मुखके बाहर निकल आई और वह प्राणरहित हो सहसा पृथ्वीपर गिरपडा ॥ १२२ ॥ उस राक्षसवीर प्रधान महाबलवान् देवताओंके शत्रु देवान्तकके रणभूमिमें मारेजानेपर त्रिशिरा क्रोधित हो नीलकी छातीको ताककर उग्र और तीखेबाणोंकी वर्षा करने लगा ॥१२३ ॥ इस ओर वीर श्रेष्ठ महोदर क्रोधित होकर पर्वताकार हाथीपर सवारहो सूर्य जिसप्रकार मन्दराचलपर आरोहण करतेहैं वैसेही नीलके सामनेको झपटता हुआ॥१२४॥अनन्तर नीलके शरीरको बाणोंके जालसे बीधने लगा उस समय ऐसा जानपडा कि,इन्द्रधनुषयुक्त मेघ वारंवार गर्जन करके पर्वतपर जलकी वर्षा कर रहाहै॥१२५॥वानरोंकी सेनाकेपति नील उस बलवान् राक्ष

ससे घिरकर विद्धशरीर एवं बाणोंसे रोकेजाकर और देहमें घाव खाकर अत्यन्त व्यथित हुए उनका शरीर अवश हुआ चेतना जाती रही और मूर्च्छा आयगई ॥१२६॥ परन्तु महावीर नीलने एकक्षणभरमें चेतना पाय वृक्षोंके सहित एक पर्वत उखाड और कूदकर वह पर्वत महावीर महोदरके शिरपर देमारा ॥१२७॥ महोदरभी पर्वतके लगनेसे उस बडे भारी हाथीके सहित चूर्णित और प्राणरहित होकर वज्रसे ताडित हुए पर्वतके समान पृथ्वीपर गिर पडा ॥१२८॥ अपने चचा मदोदरको मरा हुआ देखकर त्रिशिरा अत्यन्त क्रोधित हुआ; और धनुषपर चढाय तीखे बाणोंसे हनुमानूजीको बींधने लगा ॥१२९॥ पवनकुमार हनुमानूजीने भी क्रोधित होकर एक पर्वतका शिखर चलाया कि, उसकोबलशाली त्रिशिराने खंड २ कर डाला ॥१३०॥ संग्राम भूमिमें पर्वतके शिखरको व्यर्थ हुआ देखकर कपिश्रेष्ठ हनुमानूजीने रावणके पुत्रको निशाना बनाया उसके ऊपर वृक्षोंकी वर्षा करनी आरंभ की ॥ १३१ ॥ परन्तु प्रतापशाली त्रिशिरा उन सब

ततस्तुनीलःप्रतिलब्धसंज्ञःशैलंसमुत्पाटचसवृक्षखंडम् ॥ ततःसमुत्पत्यमहोग्रवेगोमहोदरंतेनजघानमूर्ध्नि ॥ २७ ॥ ततःसशैलाभिनिपातभग्नोमहोदरस्तेनमहाद्विपेन ॥ व्यामोहितोभूमितलेगतासुःपपातवज्राभिहतोयथाद्रिः ॥ २८ ॥ पितृव्यंनिहतंदृष्ट्वात्रिशिराश्चापमाददे ॥ हनुमंतंचसंक्रुद्धोविव्याधनिशितैःशरैः ॥ २९ ॥ सवायुसूनुःकुपितश्चिक्षेपशिखरंगिरेः ॥ त्रिशिरास्तच्छरैस्तीक्ष्णैर्बिभेदबहुधाबली ॥ १३० ॥ तद्व्यर्थशिखरंदृष्ट्वाद्रुमवर्षंतदाकपिः ॥ विससर्जरणेतस्मिन्रावणस्यसुतंप्रति ॥ ३१ ॥ तमापतंतमाकाशेद्रुमवर्षंप्रतापवान् ॥ त्रिशिरानिशितैर्बाणैश्चिच्छेदचननादच ॥ ३२ ॥ हनूमांस्तुसमुत्पत्यहयंत्रिशिरसस्तदा ॥ विददारनखैःक्रुद्धोनागेंद्रंमृगराडिव ॥ ३३ ॥ अथशक्तिंसमासाद्यकालरात्रिमिवांतकः ॥ चिक्षेपानिलपुत्रायत्रिशिरारावणात्मजः ॥ ३४ ॥ दिवःक्षिप्तामिवोल्कांतांशक्तिंक्षिप्तामसंगताम् ॥ गृहीत्वाहरिशार्दूलोबभंजचननादच ॥ ३५ ॥ तांदृष्ट्वाघोरसंकाशांशक्तिंभग्नांहनूमता ॥ प्रहृष्टावानरगणाविनेदुर्जलदायथा ॥ ३६ ॥ ततःखड्गंसमुद्यम्यत्रिशिराराक्षसोत्तमः ॥ निचखानतदाखड्गंवानरेंद्रस्यवक्षसि ॥ ३७ ॥

वृक्षोंको तीखे बाणोंके समूहसे आकाशमार्गमें हीकाटकर सिंहनाद कर उठा ॥१३२॥ यह देख हनुमानूजीने कूदकर त्रिशिराके घोडेपर चढ उस घोड़ेको अपने नखोंसे इस प्रकार चीर फाड डाला कि जैसे सिंह हाथीको चीर डालताहै ॥१३३॥ इसके उपरान्त रावणके पुत्र त्रिशिराने जिसप्रकार यमराज प्रलयकालमें कालरात्रिको पाय सब प्रजाको भक्षण कर लेते हैं वैसेही शक्तिग्रहण करके पवनकुमार हनुमानूजीकी ओर चलाई ॥१३४॥ वानरशार्दूल हनुमानूजीने आकाशसे छूटती हुई उल्काके समान उस बड़ीभारी शक्तिको पकडकर तोडडाली और बडाभारी सिंहनाद करने लगे ॥ १३५ ॥ उस भयंकर शक्तिको हनुमानूजीसे टूटी हुई देखकर वानरलोग हर्षसे मेघके समान गर्जन करने लगे ॥ १३६ ॥ उसके उपरान्त राक्षसश्रेष्ठ त्रिशिराने खड्ग उठाकर वानरोंमें इन्द्र हनुमानूजीकी

छातीमें मारा ॥ १३७ ॥ वीर्यवान् पवनकुमार हनुमान्‌जीने भी खड्गके प्रहारसे घायल हो त्रिशिराकी छातीमें एक लात मारी ॥१३८॥ उस लातके लगनेसे राक्षसके हाथसे सब अस्त्र शस्त्र छूटपड़े और वह महातेजस्वी अति शीघ्र मूर्छित होकर पृथ्वीपर गिर पडा ॥ १३९ ॥ महाकपि हनुमान्‌जी उसके हाथसे खड्ग छीनकर राक्षसोंके मनमें शंका उपजाय सिंहनाद करने लगे ॥१४०॥ परन्तु राक्षस त्रिशिरा उस शब्दको न सहन करके उसी समय उठा और कूदकर उसने हनुमान्‌जीकी छातीमें एक घूँसा मारा ॥१४१॥ महाकपि हनुमान्‌जी उस मुष्टिके प्रहारसे अत्यन्त क्रोधित हुए और क्रोधमें भरकर उन्होंने राक्षसश्रेष्ठके मुकुटको पकड लिया ॥ १४२ ॥ देवराज इन्द्रजीने जिस प्रकार वृत्रासुरका मस्तक काट डाला वैसेही हनुमान्‌जीने अत्यन्त क्रोधसे उस तीक्ष्ण खड्गसे उस कुण्डलसे

खड्गप्रहाराभिहतोहनूमान्मारुतात्मजः ॥ आजघानत्रिमूर्धानंतलेनोरसिवीर्यवान् ॥३८॥ सतलाभिहतस्तेनस्रस्तहस्तांबरोभुवि ॥ निपपातमहातेजास्त्रिशिरास्त्यक्तचेतनः ॥३९॥ सतस्यपततःखड्गंतमाच्छिद्यमहाकपिः ॥ ननादगिरिसंकाशस्त्रासयन्सर्वराक्षसान् ॥१४०॥ अमृष्यमाणस्तंघोषमुत्पपातनिशाचरः ॥ उत्पत्यचहनूमंतंताडयामासमुष्टिना ॥४१॥ तेनमुष्टिप्रहारेणसंचुकोपमहाकपिः ॥ कुपितश्चनिजग्राहकिरीटेराक्षसर्षभम् ॥४२॥सतस्यशीर्षाण्यसिनाशितेनकिरीटजुष्टानिसकुंडलानि॥ क्रुद्धःप्रचिच्छेदसुतोऽनिलस्यत्वष्टुःसुतस्येवशिरांसिशक्रः ॥४३॥ तान्यायताक्षाण्यगसन्निभानिप्रदीप्तवैश्वानरलोचनानि॥पेतुःशिरांसींद्ररिपोःपृथिव्यांज्योतींषिमुक्तानियथेंद्रमार्गात् ॥४४॥ तस्मिन्हतेदेवरिपौत्रिशीर्षेहनूमताशक्रपराक्रमेण॥ नेदुःप्लवंगाःप्रचचालभूमीरक्षांस्यथोदुद्रुविरेसमंतात् ॥४५॥ हतंत्रिशिरसंदृष्ट्वायुद्धोन्मत्तंतथैवच ॥ हतौप्रेक्ष्यदुराधर्षौदेवांतकनरांतकौ ॥४६॥ चुकोपपरमामर्षीमत्तोराक्षसपुंगवः ॥ जग्राहार्चिष्मतींचापिगदांसर्वायसींतदा ॥ ४७ ॥

अलंकृत और कीरीट शोभित उसके तीनों मस्तक काट डाले ॥१४३॥ जिसप्रकार आकाशमार्गमें नक्षत्र गिरा करते हैं वैसेही उस इन्द्रशत्रु निशाचर त्रिशिराके प्रदीप्त अग्निके समान नेत्रवाले, नेत्र निकले हुए और पर्वतके मान मस्तक पृथ्वीपर गिरे ॥ १४४ ॥ इसप्रकार इन्द्रके समान पराक्रमशाली हनुमान्‌जीसे त्रिशिराका संहार होनेपर पृथ्वी चलायमान हुई वानरगणोंने सिंहनाद किया और राक्षसलोग चारों ओरको भागने लगे ॥ १४५ ॥ त्रिशिरा युद्धमें उन्मत्त महोदर और महादुर्द्धर्ष देवान्तक औ नरान्तकको भी मारा हुआ देखा ॥ १४६ ॥ और इस वृत्तान्तको न सहन कर क्रोधयुक्त राक्षस श्रेष्ठ महापार्श्वने

लोहेकी बनी हुई दीप्तियुक्त एक गदा ग्रहण की ॥१४७॥ इस बड़ी भारी गदामें सुवर्णकी पहिये लगी हुई थीं, मांस लगा हुआ था, शत्रुओंका रुधिर जिसमें लगा हुआ था और लाल झागभी उसमें लग रहे थे ॥ १४८ ॥ उसका अग्र भाग तेजसे प्रदीप्त हो रहा था उसमें लाल माला पडी हुई शोभायमान हो रही थी कि, जिसके देखनेसे ऐरावत महापद्म और सार्वभौम इत्यादि दिग्गजोंको भी डर लगे ॥ १४९ ॥ राक्षसवीर महापार्श्व क्रोधमें भरकर उस गदाको ग्रहण करके प्रलयकी अग्निके समान वानरसेनाकी ओर धाया ॥१५०॥ इसके उपरान्त वानरश्रेष्ठ ऋषभ कूदकर महापार्श्वके सन्मुख आय उसके सन्मुख खडे होगये ॥ १५१ ॥ महापार्श्वने उस पर्वताकार ऋषभको अपने सन्मुख विराजमान देखकर वह वज्रके समान गदा उसकी छातीमें मारी ॥ १५२ ॥ राक्षसकी चलाई

हेमपट्टपरिक्षिप्तांमांसशोणितफेनिलाम्॥ विराजमानांविपुलांशत्रुशोणिततर्षिताम्॥४८॥ तेजसासंप्रदीप्ताग्रांरक्तमाल्यविभूषिताम् ॥ ऐरावत महापद्मसार्वभौमभयावहाम् ॥ ४९ ॥ गदामादायसंक्रुद्धोमत्तोराक्षसपुंगवः ॥ हरीन्समभिदुद्रावयुगांताग्निरिवज्वलन् ॥ १५० ॥ अथर्षभः समुत्पत्यवानरोरावणानुजम् ॥ मत्तानीकमुपागम्यतस्थौतस्याग्रतौबली ॥ ५१ ॥ तंपुरस्तात्स्थितंदृष्ट्वावानरंपर्वतोपमम् ॥ आजघानोरसिक्रुद्धोगदयावज्रकल्पया ॥५२॥ सतयाभिहतस्तेनगदयावानरर्षभः ॥ भिन्नवक्षाः समाधूतःसुस्रावरुधिरंबहु ॥५३॥ ससंप्राप्यचिरात्संज्ञामृषभोवानरेश्वरः ॥ क्रुद्धोविस्फुरमाणौष्ठोमहापार्श्वमुदैक्षत ॥ ५४ ॥ सवेगवान्वेगवदभ्युपेत्यतंराक्षसंवानरवीरमुख्यः ॥ संवर्त्यमुष्टिंसहसाजघानबाह्वंतरेशैलनिकाशरूपः ॥ ५५ ॥ सकृत्तमूलःसहसैववृक्षःक्षितौपपातक्षतजोक्षितांगः ॥ तांचास्यघोरांयमदंडकल्पांगदांप्रगृह्याशुतदाननाद ॥ ५६ ॥ मुहूर्तमासीत्सगतासुकल्पःप्रत्यागतात्मासहसासुरारिः ॥ उत्पत्यसंध्याभ्रसमानवर्णस्तंवारिराजात्मजमाजघान ॥ ५७ ॥

उस गदाके लगनेसे वह वानरश्रेष्ठ कंपायमान हुआ और उसकी छाती टूटजानेसे उसमेंसे बहुत रुधिर बहने लगा ॥ १५३ ॥ इसके उपरान्त वानरयूथपति ऋषभ बहुत विलम्बमें मूर्छासे जागा; क्रोधके मारे उसके अधर फडकने लगे और उसने महापार्श्वकी ओरको देखा ॥ १५४ ॥ पर्वताकार उस वेगवान् वानर वीर श्रेष्ठ ऋषभने अत्यन्त वेगसे सहसा आय मूका उठा कर उसकी छातीमें मारा ॥ १५५ ॥ वृक्षकी जड कट जाने पर जो दशा होती है वैसे ही वह राक्षस माहापार्श्व लोहूलुहान शरीरसे पृथ्वीपर गिर पडा तब वानरवीर ऋषभ समय पाय उस राक्षसके हाथसे यमदंडके समान प्रचंड गदा ग्रहण करके घोर गर्जना करने लगा ॥१५६॥ एक मुहूर्त्तभर तक यह राक्षस मृतक तुल्य पडा रहा उसके उपरान्त चैतन्यता पाय कूदकर सन्ध्याकालीन बादलके रंगके समान उस महापा

र्वने वरुणजीके पुत्र उस ऋषभनाम वानरपर चोट चलाई॥१५७॥यह चोट ऐसीलगी कि,वानरश्रेष्ठ मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिर पडा एक मुहूर्तके उपरान्त मूर्च्छासे जागने पर वह पर्वताकार ऋषभने राक्षस महापार्श्वके हाथसे छीनी हुई गदाको खेंच अत्यन्त बलसे महापार्श्वकी छातीमें मारी॥१५८॥वह गदा देवता,यज्ञ और ब्राह्मणोंके शत्रु इस रौद्ररूप निशाचरके शरीरमें भयंकर रूपसे लगी कि,जिसके लगनेसे उसके शरीरसे बहुत रुधिर बहने लगा,जैसे पर्वतराज हिमवान्‌से गेरु आदि धातु बहा करती हैं॥१५९॥इसके उपरान्त महात्मा ऋषभके सन्मुख वह महापार्श्व दौडा परन्तु फिर महात्मा उस वानरने उस भयंकर गदाको तोल और जांचकर वारंवार बलपूर्वक ग्रहण कर ॥१६०॥ महापार्श्वके शिरपर प्रहार किया,अपनीही गदासे इसप्रकार घायल हो महापार्श्वकी जीभ निकल आई और दांत भी

सम्मूर्च्छितोभूमितलेपपातमुहूर्तमुत्पत्यपुनःससंज्ञः ॥ तामेवतस्याद्रिवराद्रिकल्पांगदांसमाविध्यजघानसंख्ये ॥ ५८ ॥ सातस्यरौद्रासमुपेत्य देहंरौद्रस्यदेवाध्वरविप्रशत्रोः ॥ बिभेदवक्षःक्षतजंचभूरिसुस्रावधात्वंभइवाद्रिराजः ॥ ५९ ॥ अभिदुद्राववेगेनगदांतस्यमहात्मनः ॥ तांगृही त्वागदांभीमामाविध्यचपुनःपुनः ॥ १६० ॥ मत्तानीकंमहात्मासजघानरणमूर्धनि ॥ सस्वयागदयाभग्नोविशीर्णदशनेक्षणः ॥ ६१ ॥ निप पाततदामत्तोवज्राहतइवाचलः ॥ विशीर्णनयनोभूमौगतसत्त्वोगतायुषः ॥ पतितेराक्षसेतस्मिन्विद्रुतंराक्षसंबलम् ॥ ६२ ॥ तस्मिन्हतेभ्रातरि रावणस्यतन्नैर्ऋतानांबलमर्णवाभम् ॥ त्यक्तायुधंकेवलजीवितार्थंदुद्रावभिन्नार्णवसन्निकाशम् ॥ १६३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा०आ०च० सा०यु० सप्ततितमः सर्गः ॥ ७० ॥ स्वबलंव्यथितंदृष्ट्वातुमुलंलोमहर्षणम् ॥ भ्रातॄंश्चनिहतान्दृष्ट्वाशक्रतुल्यपराक्रमान् ॥ १ ॥ पितृव्यौचापि संदृश्यसमरेसंनिपातितौ ॥ युद्धोन्मत्तंचमत्तंचभ्रातरौराक्षसोत्तमौ ॥ २ ॥

टूटकर बाहर आन पडे।१६१॥और वह वज्रसे टूटे हुए पर्वतके समान पृथ्वीपर गिर पडा,उसके दोनों नेत्र निकल पडे और वह प्राणरहित हो गया उस राक्षस महा पार्श्वके गिरतेही राक्षसोंकी सेना भाग गई ॥१६२॥ इसप्रकारसे उस रावणके भ्राता महापार्श्वके मर जानेसे वह समुद्र समान निशाचरोंकी सेना अस्त्रशस्त्र त्याग करके केवल अपना जीवही बचानेको उछलते हुए समुद्रकी भाँति चारों ओरको भाग गई ॥१६३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०युद्धकांडे भाषायां सप्ततितमः सर्गः ॥७०॥ अति भयंकर लोमहर्षणकारी अपनी सेनाका संहार देख और इन्द्रके समान पराक्रमकारी देवान्तक,नरान्तक;त्रिशिरा इन तीन भाइयोंको मृतक देख ॥१॥ और अपने दोनों चचा युद्धमें मत्त उन्मत्त भ्राताके समान परस्पर प्यार करनेवाले महोदर व महापार्श्वको भी संग्राममें मरा हुआ निहारकर ॥२॥

ब्रह्माजीसे वरदान पाया हुआ देवता दानवोंका अहंकार तोडनेवाला पर्वताकार अतिकाय नामक राक्षस समरमें बडा क्रोध करता हुआ ॥ ३ ॥ सहस्र सूर्योंके उदय होनेसे जिसप्रकार तेज होता है ऐसेही यह राक्षस अतिकाय अति तेजस्वी था यह इस समय रथपर चढकर वानरोंकी सेनाके सन्मुख दौडा ॥४॥ यह कुण्डलसे अलंकृत और किरीटधारी वीर अतिकाय धनुषपर टंकार देता हुआ वारंवार अपना नाम सबको सुनाय घोर शोरसे सिंहनाद करने लगा ॥५॥ उसके सिंहके समान गर्जनेसे वारंवार नामके कीर्तनसे और रोदेकी टंकारका भयंकर शब्द श्रवण करनेसे वानरोंको भयसे अत्यन्त त्रास उपजा ॥६॥ वानर लोग उसकी भयंकर मूर्ति देखकर " यह एक दूसरा कुम्भकर्ण आया है " ऐसा विचार भयके मारे परस्पर एक दूसरेका आसरा ग्रहण करने लगे ॥ ७ ॥ राजा

चुकोपचमहातेजाब्रह्मदत्तवरोयुधि ॥ अतिकायोऽद्रिसंकाशोदेवदानवदर्पहा ॥ ३ ॥ सभास्करसहस्रस्यसंघातमिवभास्वरम् ॥ रथमारुह्यशक्रारिरभिदुद्राववानरान् ॥ ४ ॥ सविस्फार्यंतदाचापंकिरीटीमृष्टकुण्डलः ॥ नामसंश्रावयामासननादचमहास्वनम् ॥ ५ ॥ तेनसिंहप्रणादेननामविश्रावणेनच ॥ ज्याशब्देनचभीमेनत्रासयामासवानरान् ॥ ६ ॥ तेदृष्ट्वादेहमाहात्म्यंकुंभकर्णोऽयमुत्थितः ॥ भयार्तावानराःसर्वेसंश्रयंतेपरस्परम् ॥ ७ ॥ तेतस्यरूपमालोक्ययथाविष्णोस्त्रिविक्रमे ॥ भयाद्वानरयोधास्तेविद्रवंतिततस्ततः ॥ ८ ॥ तेऽतिकायंसमासाद्यवानरामूढचेतसः ॥ शरण्यशरणंजग्मुर्लक्ष्मणाग्रजमाहवे ॥९॥ ततोऽतिकायंकाकुत्स्थोरथस्थंपर्वतोपमम् ॥ ददर्शधन्विनंदूराद्गर्जंतंकालमेघवत् ॥१०॥ सतंदृष्ट्वामहाकायंराघवस्तुसुविस्मितः ॥ वानरान्सांत्वयित्वाचविभीषणमुवाचह ॥ ११ ॥ कोऽसौपर्वतसंकाशोधनुष्मान्हरिलोचनः ॥ युक्तेहयसहस्रेणविशालेस्यंदनेस्थितः ॥ १२ ॥

बलिको छलनेकेसमय विष्णुजीने जिस मूर्तिसे तीनों लोकोंको नाप लिया था ऐसी हीमूर्ति इस राक्षसकी देखकर वानरोंके यूथप;इधरउधर भागने लगे ॥८॥ वह मूढ चित्त वानरगण अतिकाय राक्षसको संग्रामभूमिमें आता हुआ देखकर ही सबको शरण देनेवाले लक्ष्मणजीके बडे भ्राता श्रीरामचन्द्रजीकी शरणमें आये ॥९॥ इसके उपरान्त रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजीने देखा कि,राक्षसवीर अतिकायका आकार पर्वतके समान है,वह रथपर बैठा हुआ है वह हाथमें प्रचंड धनुष लिये दूरसेही गंभीर गर्जन करता हुआ चला आता है;देखनेसे वह काले मेघके समान जान पडता था ॥१०॥ श्रीरामचन्द्रजी उस मायावी अतिकायकी मूर्ति देखकर अत्यन्त विस्मित हुए, और वानरोंको समझाते हुए बिभीषणजीसे बोले ॥११॥ कि, सिंहके समान आंखोंवाला जो पर्वतके समान धनुष धारण किये हुए

वीर हजार घोंडोंके नथे हुए विशाल रथमें सवार होकर चला आता है,सो यह कौन वीर है ? ॥ १२ ॥ तीक्ष्ण शूल और तीक्ष्ण भाले मुद्गरा दिद्वारा सजनेसे तो भूतगणोंसे वेष्टित महेश्वर शिवजीके समान जान पडता है,इस वीरका क्या नाम है ? ॥ १३ ॥ जोकि; कालजिह्वाके समान प्रकाशमान रथ और शक्तियोंको धारण किये हुए विजलीसहित बादलके समान विराजमान हो रहा है ॥ १४ ॥ इन्द्र धनुष जिसप्रकार आकाशको शोभित करता है,वैसे ही यह वीर सुवर्णका सुसाज शरासन धारण करके रथको सुशोभित कर रहा है ॥१५॥ जो सूर्यके समान तेजमय रथपर आरोहण करके प्रधान रथीके स्वरूपमें रणभूमिको शोभायमान करता हुआ युद्ध करनेके लिये चला आता है ॥ १६ ॥ जिसके रथकी ध्वजापर राहुकी मूर्ति है,जो सूर्यकी किरणोंके समान बाण चलाकरके दशों दिशाओंको ढकता हुआ आगमन कर रहा है ॥१७॥ जो निशाचर मेघके समान शब्दायमान तीन जगहसे झुका हुआ सुवर्णकी पीठसे युक्त अलंकृत धनुष लिये हुए इन्द्र धनुषके समान शोभायमान हो रहा है ॥ १८ ॥ जिसका मेघके समान शब्दायमान ध्वजा पताकासे शोभित चार सारथियोंसे चलाया

सएषनिशितैःशूलैःसुतीक्ष्णैःप्रासतोमरैः॥ आर्चिष्मद्भिर्वृतोभातिभूतैरिवमहेश्वरः ॥१३॥ कालजिह्वाप्रकाशाभिर्यएषोभिविराजते ॥ आवृतो रथशक्तीभिर्विद्युद्भिरिवतोयदः॥१४॥ धनूंषिचास्यसज्जानिहेमपृष्ठानिसर्वशः॥शोभयंतिरथश्रेष्ठंशक्रचापमिवांबरम् ॥१५॥ यएषरक्षःशार्दूलोरणभूमिंविराजयन् ॥ अभ्येतिरथिनांश्रेष्ठोरथेनादित्यवर्चसा ॥ १६ ॥ ध्वजशृंगप्रतिष्ठेनराहुणाभिविराजते ॥ सूर्यरश्मिप्रभैर्बाणैर्दिशोदशविराजयन् ॥१७॥ त्रिनतंमेघनिर्ह्रादंहेमपृष्ठमलंकृतम् ॥ शतक्रतुधनुष्प्रख्यंधनुश्चास्यविराजते ॥ १८ ॥ सध्वजःसपताकश्चसानुकर्षोमहारथः ॥ चतुःसादिसमायुक्तोमेघस्तनितनिःस्वनः॥ १९ ॥ विंशतिर्दशचाष्टौचतूणास्यरथमास्थिताः ॥ कार्मुकाणिचभीमानीज्याश्चकांचनपिंगलाः ॥ २० ॥ द्वौचखड्गौचपार्श्वस्थौप्रदीप्तौपार्श्वशोभितौ ॥चतुर्हस्तत्सरुचितौव्यक्तहस्तदशायतौ ॥२१॥ रक्तकंठगुणोधीरोमहापर्वतसन्निभः ॥ कालःकालमहावक्रोमेघस्थइवभास्करः ॥२२॥ कांचनांगदनद्धाभ्यांभुजाभ्यामेषशोभते ॥ शृंगाभ्यामिवतुंगाभ्यांहिमवान्पर्वतोत्तमः ॥२३॥

जाता हुआ रथ घर्घराता हुआ चला आता है ॥१९॥ जिस रथपर अडतीस तर्कस, भयंकर धनुष भी इतने ही और कांचनकेसमान पिंगल वर्णवाली जिसपर बहुतसी ज्या रक्खी हुई हैं ॥ २० ॥ जिसके दो खड्ग जिसकी दोनों बगलोंको शोभायमान कर रहे हैं; जिनके चार २ हाथके कब्जेही देखकर मालूम पडता है कि,इन दोनों खड्गोंमेंसे प्रत्येक दश२हाथका लम्बा होगा ॥२१॥ जिसके गलेमें पडी हुई लाल माला शोभायमान होरही है,जिसका वदन कालके समान है, यह महापर्वतके समान घोर रूपवाला कालेरंगका राक्षसमेघमें छिपे हुए सूर्यके समान शोभायमान होरहा है ॥ २२ ॥ जिसप्रकार हिमवान् अति

ऊंचे अपने दो शृंगोंसे शोभित हो वैसेही यह निशाचर भी सोनेके बाजू जिनमें बँधे हुए ऐसे दो बांहोंसे वैसा ही शोभायमान होरहा है ॥२३॥ इसका सुन्दर नेत्र युक्त मुख कुण्डल युगलसे ऐसा शोभायमान होरहा है कि,जो पुनर्वसु नक्षत्रके मध्यमें गये हुए परिपूर्ण निशाकर (चन्द्रमा) के समान जान पडताहै ॥२४॥ हे महाबाहो ! जिसको देखकर वानरगण मारे भयके चारों ओरको भागे जातेहैं यह राक्षस कौन है,यह तुम हमारे निकट प्रकाश करो ॥२५॥ अमित तेजस्वी रघुवंशावतंस राजकुमार श्रीरामचन्द्रजी करके इस प्रकारसे पूछे जाकर महातेजस्वी विभीषणजी बोले ॥ २६ ॥ कि, दशगर्दनवाला महातेजस्वी राजा कुबेरजीका छोटा भाई, भयंकर कर्मकारी राक्षसोंका स्वामी जो महात्मा रावण है ॥२७॥ यह वीर्यवान् उसका ही पुत्र है और रावणकेही समान इसमें बल है वृद्धोंकी सेवा करनेवाले विख्यात बलवाला और सब अस्त्र धारण करनेवालोंमें यह अगुआ है॥२८॥ यहवीर घोडेपर चढनेमें रथ अथवा हाथीपर सवार होनेमें

कुंडलाभ्यामुभाभ्यांचभातिवक्त्रंसुभीषणम् ॥ पुनर्वस्वंतरगतःपरिपूर्णोनिशाकरः ॥२४॥ आचक्ष्वमेमहाबाहोत्वमेनंराक्षसोत्तमम् ॥ यंदृष्ट्वावानराःसर्वेभयार्ताविद्रुतादिशः ॥२५॥ सपृष्टोराजपुत्रेणरामेणामिततेजसा ॥ आचचक्षेमहातेजाराघवायविभीषणः ॥ २६ ॥ दशग्रीवोमहातेजाराजावैश्रवणानुजः ॥ भीमकर्मामहात्माहिरावणोराक्षसेश्वरः ॥२७॥ तस्यासीद्वीर्यवान्पुत्रोरावणप्रतिमोबले ॥ वृद्धसेवीश्रुतबलःसर्वास्त्रविदुषांवरः ॥ २८ ॥ अश्वपृष्ठेनागपृष्ठेखड्गेधनुषिकर्षणे ॥ भेदेसांत्वेचदानेचनयेमंत्रेचसंमतः ॥ २९ ॥ यस्यबाहुंसमाश्रित्यलंकाभवतिनिर्भया ॥ तनयंधान्यमालिन्याअतिकायमिमंविदुः ॥३०॥ एतेनाराधितोब्रह्मातपसाभावितात्मना ॥ अस्त्राणिचाप्यवप्तानिरिपवश्चपराजिताः ॥३१॥ सुरासुरैरवध्यत्वंदत्तमस्मैस्वयंभुवा ॥ एतच्चकवचंदिव्यंरथश्चरविभास्वरः ॥३२॥ एतेनशतशोदेवादानवाश्चपराजिताः ॥ रक्षितानिचरक्षांसियक्षाश्चापिनिषूदिताः ॥ ३३ ॥ वज्रंविष्टंभितंयेनबाणैरिंद्रस्यधीमता ॥ पाशःसलिलराजस्ययुद्धेप्रतिहतस्तथा ॥ ३४ ॥

खड्ग धनुष अथवा भालादि अस्त्र शस्त्रोंसे युद्ध करनेमें और साम, दान;भय, भेदविषयक राजनीति और मंत्र सलाह देनेमें चतुर है ॥ २९ ॥ इसकेही बाहुबलका आश्रय करके लंकापुरी निर्भय विराजमान होरही है। यह धान्यमालिन राक्षसीके गर्भसे उत्पन्न हुआ है, इसका नामअतिकाय है ॥ ३० ॥ इस निशाचरने पूर्वकालमें पवित्रभावसे बहुतसारी तपस्या करके पितामह ब्रह्माजीको प्रसन्न किया था और उनके ही अनुग्रहसे इसने अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र पायकर अपने शत्रुओंको पराजित किया है ॥ ३१ ॥ यह स्वयंभू प्रजापति ब्रह्माजीके वरसे सुर असुर किसीसे भी नहीं मर सकता,इसने तपोबलसे दिव्य कवच और सूर्यके समान प्रकाशित रथ भी पाया है॥३२॥बहुतसारे देव दानवगण इसकेहाथसे हारगये हैं,इसने राक्षसोंकी रक्षा करके यक्षोंका संहार किया है ॥३३॥इसने

रणभूमिमें बाणोंसे बुद्धिमान् देवराज इन्द्रजीके वज्रको रोक दिया, और जलराज वरुणजीकी फांसीको भी इसने व्यर्थ करदिया ॥३४॥ देवता और दानवलोगोंके दर्पका नाश करनेवाला यह वही राक्षसश्रेष्ठ बलवान् अतिकाय है॥३५॥हे पुरुषोत्तम ! शीघ्रतासे इसका विनाश करनेमें यत्न कीजिये कारण कि, यह सबसे पहले वानरोंकी सेनाको ही बाणोंसे संहार कर रहा है ॥३६॥ इसके उपरान्त बलवान् अतिकायनाम राक्षस वानरोंकी सेनाके बीचमें प्रवेशकरके धनुषटंकार दे वारंवार सिंहनाद करने लगा ॥३७॥ भयंकराकार उस राक्षसको श्रेष्ठ रथपर चढा हुआ देखकर महात्मा मुखिया २ वानरगण उसके सामनेको दौडे ॥३८॥ कुमुद, द्विविद, मैन्द, नील, शरभ यह कई एक वानरवीर इकट्ठे होकर वृक्ष और पर्वतोंके शृंग धारण करके अतिकायपर एकही संग धाये ॥ ३९ ॥ परन्तु अस्त्र

एषोऽतिकायोबलवान्राक्षसानामथर्षभः ॥ सरावणसुतोधीमान्देवदानवदर्पहा ॥ ३५ ॥ तदस्मिन्क्रियतांयत्नःक्षिप्रंपुरुषपुंगव ॥ पुरावानरसैन्यानिक्षयंनयतिसायकैः ॥ ३६ ॥ ततोऽतिकायोबलवान्प्रविश्यहरिवाहिनीम् ॥ विस्फारयामासधनुर्ननादचपुनःपुनः ॥ ३७ ॥ तंभीमवपुषंदृष्ट्वारथस्थंरथिनांवरम् ॥ अभिपेतुर्महात्मानःप्रधानायेवनौकसः ॥३८॥ कुमुदोद्विविदोमैंदोनीलःशरभएवच ॥ पादपैर्गिरिशृंगैश्चयुगपत्समभिद्रवन् ॥ ३९ ॥ तेषांवृक्षांश्चशैलांश्चशरैःकनकभूषणैः ॥ अतिकायोमहातेजाश्चिच्छेदास्त्रविदांवरः ॥ ४० ॥ तांश्चैवसर्वान्सहरीञ्शरैःसर्वायसैर्बली ॥ विव्याधाभिमुखान्संख्येभीमकायोविशारदः ॥ ४१ ॥ तेऽर्दिताबाणवर्षेणभिन्नगात्राःपराजिताः ॥ नशेकुरतिकायस्यप्रतिकर्तुमहाहवे ॥ ४२ ॥ तत्सैन्यंहरिवीराणांत्रासयामासराक्षसः ॥ मृगयूथमिवक्रुद्धोहरिर्यौवनदर्पितः ॥ ४३ ॥ सराक्षसेंद्रोहरियूथमध्येनायुध्यमानंनिजघानकंचित् ॥ उत्पत्यरामंसधनुःकलापीसगर्वितंवाक्यमिदंबभाषे ॥४४॥ रथेस्थितोऽहंशरचापपाणिर्नप्राकृतंकंचनयोधयामि ॥ यस्यास्तिशक्तिर्व्यवसाययुक्तोददातुमेशीघ्रमिहाद्ययुद्धम् ॥ ४५ ॥

धारियोंमें श्रेष्ठ महातेजस्वी अतिकायने कनकभूषित बाणोंसे उन वानरोंके चलाये समस्त वृक्ष और पर्वतोंको काटडाला ॥ ४० ॥ उसके पीछे उस रणपंडित अस्त्रविशारद बलशाली निशाचरने स्वच्छ लोहेके बाणोंसे सन्मुखको दौडे आते हुए उन वानरोंको ताडित किया ॥४१॥ वानरलोग भी अतिकायकी बाणवर्षासे छिन्नगात्र और पराजित होकर वह इसका कुछभी बदला उस राक्षससे न ले सके ॥ ४२ ॥ युवावस्थाके आनेसे गर्वित मृगराज (सिंह) जिस प्रकार मृगके झुण्डोंको भयभीत करता है वैसेही वह अतिकायनाम राक्षस वानरोंकी सेनाको त्रासित करने लगा ॥ ४३ ॥ जो बानर रीछ युद्धमें विमुख थे उनपर अतिकायने अस्त्रका प्रहार नहीं किया इसके उपरांत वीरवर अतिकाय धनुष धारणकरके श्रीरामचन्द्रजीके सन्मुखहो उनसे गर्वरहित यहवचनबोला॥४४॥हम किसी

साधारण वीरके साथ युद्ध करनेको अभिलाषा नहीं करते यह हम धनुषबाण हाथमें लिये स्थितहैं यदि किसीको युद्ध करना आता हो या किसीमें शक्तिहोतो शीघ्रआकर हमारे साथ युद्ध करें॥४५॥राक्षस अतिकायके ऐसे वचन सुनकर शत्रुनाशी लक्ष्मणजी न सहकर मुसकाते हुए धनुष बाण हाथमें लेकर उठे ॥४६॥ लक्ष्मणजीने उठतेही तरकससे बाण ग्रहण किया, और अतिकायके सन्मुखही अपने बड़े धनुपपर टंकोर दी॥४७॥ उनके धनुषकी टंकोरसे वहांपरकी सब पृथ्वी सागर और समस्त दिशायें परिपूर्ण होगईं और राक्षसोंको बहुतही त्रास हुआ ॥ ४८ ॥ सुमित्राकुमार लक्ष्मणजीके धनुषकी टंकारका ऐसा भयंकर शब्द सुनकर महातेजस्वी रावणका पुत्रभी अत्यन्त विस्मित हुआ ॥ ४९ ॥ अतिकायने लक्ष्मणजीको युद्धके लिये उठा हुआ देख क्रोधित हो तीक्ष्ण बाण धारणकर उनसे यह कहा ॥ ५० ॥ अरे

तत्तस्यवाक्यंब्रुवतोनिशम्यचुकोपसौमित्रिरमित्रहंता ॥ अमृष्यमाणश्चसमुत्पपातजग्राहचापंचततःस्मयित्वा ॥४६॥ क्रुद्धःसौमित्रिरुत्पत्य तूणादाक्षिप्यसायकम् ॥ पुरस्तादतिकायस्यविचकर्षमहद्धनुः ॥ ४७ ॥ पूरयन्समहींसर्वामाकाशंसागरंदिशः ॥ ज्याशब्दोलक्ष्मणस्योग्रस्त्रा सयत्रजनीचरान् ॥ ४८ ॥ सौमित्रेश्चापिनिर्घोषंश्रुत्वाप्रतिभयंतदा ॥ विसिस्मियेमहातेजाराक्षसेंद्रात्मजोबली ॥ ४९ ॥ तदातिकायःकुपितो दृष्ट्वालक्ष्मणमुत्थितम् ॥ आदायनिशितंबाणमिदंवचनमब्रवीत् ॥ ५० ॥ बालस्त्वमसिसौमित्रेविक्रमेष्वविचक्षणः ॥ गच्छकिंकालसंकाशंमां योधयितुमिच्छसि ॥ ५१ ॥ नहिमद्बाहुसृष्टानांबाणानांहिमवानपि ॥ सोढुमुत्सहतेवेगमंतरिक्षमथोमही ॥ ५२ ॥ सुखप्रसुप्तंकालाग्निंविबो धयितुमिच्छसि ॥ न्यस्यचापंनिवर्तस्वप्राणान्नजहिमद्गतः ॥ ५३ ॥ अथवात्वंप्रतिस्तब्धोननिवर्तितुमिच्छसि ॥ तिष्ठप्राणान्परित्यज्यगमि ष्यसियमक्षयम् ॥ ५४ ॥ पश्यमेनिशितान्बाणान्त्रिपुदर्पनिषूदनान् ॥ ईश्वरायुधसंकाशांस्तप्तकांचनभूषणान् ॥ ५५ ॥

लक्ष्मण ! तुम बालक हो, इसलिये समरकार्यमें अभी चतुर नहीं हो, हम तो तुम्हारे लिये कालके समान हैं इस कारण हमारे संगमें युद्धका अभिलाष त्याग करके शीघ्र भाग जाओ ५१॥ तुम्हारी बात तो दूर रहे; पृथ्वी, आकाश अथवा हिमवान् पर्वतभी हमारी बाहोंसे छोड़े हुए इन बाणोंका वेग सहन करनेको समर्थ नहीं है ॥ ५२ ॥ सुखसे सोई हुई कालकी अग्निको क्यों जगानेकी इच्छा करते हो ? क्यों हमारे हाथसे प्राण खोते हो ? धनुष बाण त्याग कर शीघ्रही भाग जाओ ॥ ५३ ॥ अथवा यदि गर्वके वश होकर लौटना नहीं चाहते हो तो एक क्षणभर खड़े रहो बस प्राणोंको त्याग करके एक बारही सीधे यमराजके घरपर चले जाना॥५४॥शत्रुके दलका गर्व खर्व करनेवाले शिवजीके त्रिशूलके समान तपाये हुए सुवर्णसे भूषित हमारे इन तीखे बाणोंको तुम देखो॥५५॥

सिंह जिस प्रकार क्रोधित होकर गजराजके रुधिरको पान करता है वैसेंही शिवजीके शूलके समान यह बाण तुम्हारा रुधिर पान करेंगे ॥५६॥ बलशाली मन स्वी श्रीमान् राजकुमार लक्ष्मणजी रणभूमि में अतिकायके ऐसे सरोष और गर्वित वचन सुन अत्यन्त क्रोधित होकर बोले ॥५७॥ हे दुरात्मन् ! तुम केवल वचनोंहीके कहनेसे वीर नहीं हो सकते कारण की, केवल अपनी बडाई करनेसे लोग गुणवान् कहाकर नहीं विख्यात होते, यह धनुषबाण हाथमें लेकर टिका हुआ हूँ तुममें जितनी कुछ सामर्थ्य हो अपना पराक्रम दिखाओ॥५८॥जिसमें पौरुष है लोग उसकोही शूर कहते हैं, इस लिये तुम वृथा अपनी बडाई न मारक रके कार्यके द्वारा अपनेको प्रकाश करो ॥५९॥ तुम रथपर सवार होकर अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र ले युद्ध करनेके लिये आये हो इस समय बाण छोडकर या

एषतेसर्पसंकाशोबाणःपास्यतिशोणितम् ॥ मृगराजइवक्रुद्धोनागराजस्यशोणितम् ॥ इत्येवमुक्त्वासंक्रुद्धःशरंधनुषिसंदधे ॥५६॥ श्रुत्वातिका यस्यवचःसरोषंसगर्वितंसंयतिराजपुत्रः ॥ ससंचुकोपातिबलोमनस्वीउवाचवाक्यंचततोबृहच्छ्रीः ॥५७॥ नवाक्यमात्रेणभवान्प्रधानोनकत्थ नात्सत्पुरुषाभवंति ॥ मयिस्थितेधन्विनिबाणपाणौनिदर्शयस्वात्मबलंदुरात्मन् ॥५८॥ कर्मणासूचयात्मानंनविकत्थितुमर्हसि ॥ पौरुषेणतुयोयु क्तःसतुशूरइतिस्मृतः ॥५९॥ सर्वायुधसमायुक्तोधन्वीत्वंरथमास्थितः ॥ शरैर्वायदिवाप्यस्त्रैर्दर्शयस्वपराक्रमम् ॥६०॥ ततःशिरस्तेनिशितैः पातयिष्याम्यहंशरैः ॥ मारुतःकालसंयुक्तंवृंतात्तालफलंयथा ॥ ॥६१॥ अद्यतेमामकाबाणास्तप्तकांचनभूषणाः ॥ पास्यंतिरुधिरंगात्राद्बाणश ल्यांतरोत्थितम् ॥ ६२ ॥बालोऽयमितिविज्ञायनचावज्ञातुमर्हसि ॥ बालोवायदिवावृद्धोमृत्युंजानीहिसंयुगे ॥ ६३ ॥ बालेनविष्णुनालोका स्त्रयःक्रांतास्त्रिविक्रमैः ॥ लक्ष्मणस्यवचःश्रुत्वाहेतुमत्परमार्थवत् ॥ अतिकायःप्रचुक्रोधबाणंचोत्तममाददे॥ ६४ ॥ ततोविद्याधराभूतादेवादै त्यामहर्षयः ॥ गुह्यकाश्चमहात्मानस्तद्युद्धंददृशुस्तदा ॥ ६५ ॥

और कोई अस्त्र चलाय कर तुमहीं अपना पराक्रम दिखाओ॥६०॥ उसके पीछे पवन जिस प्रकार पके हुए तालके पत्तेको गुच्छेसे गिरा देती है वैसेही तीखे बाणोंसेहम तुम्हारा मस्तक गिरादेंगे॥६१॥आज हमारे तपाये हुए सुवर्णसे भूषित बाण; बाणोंसे किये हुए छेदमेंसे निकलते हुए तेरे शरीरमेंके रुधिरको पान करेंगे ॥६२॥ बालक समझकर निरादर करना उचित नहीं है हम बालक हों या वृद्धही हों हमारेही हाथसे रणमें निश्चय तेरी मृत्यु होगी ॥६३॥ कारण कि; बालक रूपी विष्णुजीके तीन चरणोंसे त्रिलोकी नापली गई थी; लक्ष्मणजीके हेतुयुक्त और परमार्थ समन्वित वचन सुनकर अतिकायने अत्यन्त क्रोधित हो श्रेष्ठ बाण चलाये ॥६४॥ उस काल लक्ष्मणजी और अतिकायका वह युद्ध देखनेके लिये महात्मा विद्याधर, भूत, देव, दैत्य, महर्षि और गुह्यकगण सबही आये ॥६५॥

इसके उपरान्त अतिकायने क्रोधमें भरकर धनुषपर बाण चढाय मानो आकाश ग्रास करनेके अभिप्रायसे ही लक्ष्मणजीकी ओर चलाया ॥६६॥ परन्तु परवी रघाती लक्ष्मणजीने उस विषधर सर्पके समान फूंकारते हुए तीखे बाणको एक अर्द्धचन्द्र नामक बाणसे काटडाला ॥ ६७ ॥ निशाचर अतिकायने शरीर कटे हुए सर्पके समान उस बाणको कटा हुआ देखकर अत्यन्त क्रोध किया, और पांच बाण हाथमें लिये ॥ ६८ ॥ अति शीघ्रतासे लक्ष्मणजीके ऊपर चलाये; परन्तु लक्ष्मणजीने अपने निकट पहुँचते हुए उन बाणोंको काट डाला ॥ ६९ ॥ परवीरविनाशी वीर्यवान् लक्ष्मणजीने अपने तीखे बाणोंसे उन सब बाणोंको काटकर एक तेजसे प्रकाशमान् पैना बाण ग्रहण कर ॥ ७० ॥ उसको श्रेष्ठ धनुष पर चढाकर लक्ष्मणजीने खेंचा और अतिवेगसे उस बाणको छोड दिया

ततोऽतिकायः कुपितश्चापमारोप्य सायकम् ॥ लक्ष्मणाय प्रचिक्षेप संक्षिपन्निव चांबरम् ॥६६॥ तमापतंतं निशितं शरमाशीविषोपमम् ॥ अर्धचंद्रेण चिच्छेद लक्ष्मणः परवीरहा ॥६७॥ तं निकृत्तं शरं दृष्ट्वा कृत्तभोगमिवोरगम् ॥ अतिकायो भृशं क्रुद्धः पंच बाणान्समादधे ॥ ६८ ॥ तान्च्छरान्संप्र चिक्षेप लक्ष्मणाय निशाचरः ॥ तानप्राप्तान्छितैर्बाणैश्चिच्छेद भरतानुजः ॥ ६९ ॥ स तान्छित्त्वा शितैर्बाणैर्लक्ष्मणः परवीरहा ॥ आददे निशितं बाणं ज्वलंतमिव तेजसा ॥७०॥ तमाधाय धनुश्रेष्ठे योजयामास लक्ष्मणः ॥ विचकर्ष च वेगेन विससर्ज च सायकम् ॥७१॥ पूर्णायतविसृष्टेन शरेणा नतपर्वणा ॥ ललाटे राक्षसश्रेष्ठमाजघान स वीर्यवान् ॥ ७२ ॥ स ललाटे शरो मग्नस्तस्य भीमस्य रक्षसः ॥ ददृशे शोणितेनाक्तः पन्नगेंद्र इवाचले ॥ ७३ ॥ राक्षसः प्रचकंपेऽथ लक्ष्मणेषुप्रपीडितः ॥ रुद्रबाणहतं घोरं यथा त्रिपुरगोपुरम् ॥ चिंतयामास चाश्वस्य विमृश्य च महाबलः ॥ ७४ ॥ साधु बाणनिपातेन श्लाघनीयोऽसि मे रिपुः ॥ विधायैवं विदार्यास्यं विनम्य च महाभुजौ ॥ स रथोपस्थमास्थाय रथेन प्रचचार ह ॥ ७५ ॥

॥७१॥ अपनी कमरसे खेंचे हुए और लगभग फलक झुके उस बाणको उस समय राक्षसश्रेष्ठके बीच माथेमें तानकर लक्ष्मणजीने मारा ॥ ७२ ॥ वह तीक्ष्ण बाण उस भयंकर राक्षसके माथेमें विंधकर रुधिरकी धारा निकलता हुआ उस समय ऐसा जानपडा मानो पर्वतमें रुधिरसे सना हुआ सांप घुसरहा है ७३ ॥ जिस प्रकार पूर्वकालमें शिवजीके बाणसे त्रिपुरासुरके पुरद्वार कंपायमान हुए थे वैसेही लक्ष्मणजीके बाणोंसे राक्षस वीर व्यथित होकर कांपा, इसके उपरान्त महाबलवान् अतिकाय क्षणभरमें सावधान हो मनही मनमें विचारकर कहने लगा ॥ ७४ ॥ धन्य लक्ष्मण ! तुम्हारा बाण चलाना देखकर हम तुमको बडाई करनेके योग्य शत्रु समझते हैं, उसके पीछे यह अतिकाय मुख बाय दोनों बांहें फैलाय अपने रथपर चढा हुआ रणभूमिमें इधर उधर घूमने लगा॥ ७५ ॥

उस कालमें वह राक्षस धनुषको खैंचकर एकही बारमें एक तीन पांच और सात तक बाण धनुषपर चढ़ायकर छोडने लगा ॥ ७६ ॥ जिस प्रकार सूर्यनारायण आकाश मंडलको दीप्ति युक्त करते हैं वैसेही राक्षसोंमें इन्द्र अतिकायके धनुषसे छूटे हुए काल समान सुवर्णकी फोंकवाले बाणोंने आकाशमें अग्निसी लगाकर उसको प्रदीप्त कर दिया ॥ ७७ ॥ यह देखकर श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई लक्ष्मणजीने सावधान चित्तसे तीखे बाणोंके द्वारा उस राक्षसके चलाये हुए वह समस्त बाण काट डाले ॥ ७८ ॥ महातेजस्वी इन्द्रका शत्रु रावणका पुत्र अत्यन्त क्रोध करता हुआ तब उसने एक और तीखा बाण ग्रहण किया ॥७९॥ उसने एक पलकके मध्यमें बाण चढाय कर जैसेही छोडा कि, वैसेही वह लक्ष्मणजीकी छातीमें आकर लगा ॥८०॥ जब अतिकायका वह बाण लक्ष्मणजीकी

एकंत्रीन्पंचसप्तेतिसायकान्राक्षसर्षभः ॥ आददेसंदधेचापिविचकर्षोत्ससर्जच ॥ ७६ ॥ तेबाणाःकालसंकाशाराक्षसेंद्रधनुश्च्युताः ॥ हेमपुंखारविप्रख्याश्चक्रुर्दीप्तमिवांबरम् ॥ ७७ ॥ ततस्तान्राक्षसोत्सृष्टाञ्च्छरौघान्राघवानुजः ॥ असंभ्रान्तःप्रचिच्छेदनिशितैर्बहुभिःशरैः ॥ ७८ ॥ ताञ्च्छरान्युधिसंप्रेक्ष्यनिकृत्तान्रावणात्मजः ॥ चुकोपत्रिदशेन्द्रारिर्जग्राहनिशितंशरम् ॥ ७९ ॥ ससंधायमहातेजास्तंबाणंसहसोत्सृजत् ॥ तेनसौमित्रिमायांतमाजघानस्तनांतरे ॥ ८० ॥ अतिकायेनसौमित्रिस्ताडितोयुधिवक्षसि ॥ सुस्रावरुधिरंतीव्रंमदंमत्तइवद्विपः ॥ ८१ ॥ सचकारतदात्मानंविशल्यंसहसाविभुः ॥ जग्राहचशरंतीक्ष्णमस्त्रेणापिसमादधे ॥ ८२ ॥ आग्नेयेनतदास्त्रेणयोजयामाससायकम् ॥ सजज्वालतदाबाणोधनुश्चास्यतदात्मनः ॥ ८३ ॥ अतिकायोऽतितेजस्वीरौद्रमस्त्रंसमाददे ॥ तेनबाणंभुजंगाभंहेमपुंखमयोजयत् ॥ ८४ ॥ तदस्त्रंज्वलितंघोरंलक्ष्मणःशरमाहितम् ॥ अतिकायायचिक्षेपकालदण्डमिवान्तकः ॥ ८५ ॥

छातीमें लगा तो मतवाले हाथीके जिस प्रकारसे मद चुआ करता है,वैसेही महावीर लक्ष्मणजीके रुधिरकी धारा गिरनेलगी ॥ ८१ ॥ उसके उपरान्त बहुत शीघ्र लक्ष्मणजीने वह बाण अपनी छातीसे निकालकर अलग फेंक दिया और अपनी व्यथाको दूर कर सावधान हो मंत्र पढकर एक तीक्ष्ण बाण लिया ॥८२॥ जब अग्नि अस्त्रसे उस बाणको संयुक्त किया, तब उस बाणने इन महात्मा लक्ष्मणजीके धनुषको भी दीप्तिमान् किया ॥८३॥ महातेजस्वी अतिकायने भी रौद्र बाण ग्रहण किया और उसको चढाकर रौद्र मंत्रसे अभिमंत्रित किया, इस बाणका आकार भुजंगके समान था और इसमें सुवर्णकी फोंक लग रही थी ॥ ८४ ॥ जिस प्रकार यमराज कालदंडको चलाते हैं वैसेही लक्ष्मणजीने उस वायव्यास्त्रसे संयोजित बाणको अतिकायपर चलाया ॥ ८५ ॥

निशाचर अतिकायने भी आग्नेयास्त्रसे अभिमंत्रित बाणको अपने ऊपर आता हुआ देखकर सूर्यके मंत्रसे अभिमंत्रित हुआ अपना रौद्र बाण चलाया ॥८६॥ दोनों बाणही क्रोधित सर्पराजके समान आकाशमें परस्पर एक दूसरेको भस्म करने लगे, दोनों बाणही तेजके प्रभावसे प्रदीप्त और अधिक उग्र थे; वह लडते २ पृथ्वीपर गिरे ॥ ८७ ॥ वह दो उत्तम बाण परस्पर एक दूसरेको जलाते हुए शिखा रहित व दीप्ति हीन होनेके कारण अंतमें क्षार होकर पृथ्वीपर गिर पडे ॥८८॥ इसके उपरान्त क्रोधित होकर जब अतिकायने त्वाष्ट्र ऐषिकास्त्र चलाया तब वीर्यवान् लक्ष्मणजीने उसको ऐन्द्रास्त्रसे काटकर फेंक दिया ॥ ८९ ॥ ऐषिक बाणको नष्ट देखकर रावणके पुत्र अतिकायने एक बाणको यम देवताके मंत्रसे अभिमंत्रित किया ॥९०॥ अतिकायने बहुतही शीघ्र यह

आग्नेयास्त्राभिसंयुक्तंदृष्ट्वाबाणंनिशाचरः ॥ उत्ससर्जंतदाबाणंरौद्रंसूर्यास्त्रयोजितम् ॥ ८६ ॥ तावुभावंबरेबाणावन्योन्यमभिजघ्नतुः ॥ तेजसासंप्रदीप्ताग्रौक्रुद्धाविवभुजंगमौ ॥ तावन्योन्यंविनिर्दह्यपेततुःपृथिवीतले ॥ ८७ ॥ निरर्चिषौभस्मकृतौनभ्राजेतेशरोत्तमौ ॥ तावुभौदीप्यमानौस्मनभ्राजेतेमहीतले ॥ ८८ ॥ ततोऽतिकायःसंक्रुद्धस्त्वाष्ट्रमैषीकमुत्सृजत् ॥ ततश्चिच्छेदसौमित्रिरस्त्रमैंद्रेणवीर्यवान् ॥ ८९ ॥ ऐषीकंनिहतंदृष्ट्वाकुमारोरावणात्मजः ॥ याम्येनास्त्रेणसंक्रुद्धोयोजयामाससायकम् ॥ ९० ॥ ततस्तदस्त्रंचिक्षेपलक्ष्मणायनिशाचरः ॥ वायव्येनतदस्त्रेणनिजघानसलक्ष्मणः ॥ ९१ ॥ अथैनंशरधाराभिर्धाराभिरिवतोयदः ॥ अभ्यवर्षतसंक्रुद्धोलक्ष्मणोरावणात्मजम् ॥ ९२ ॥ तेऽतिकायंसमासाद्यकवचेवज्रभूषिते ॥ भग्नाग्रशल्याःसहसापेतुर्बाणामहीतले ॥ ९३ ॥ तान्मोघानभिसंप्रेक्ष्यलक्ष्मणःपरवीरहा ॥ अभ्यवर्षतबाणानांसहस्रेणमहायशाः ॥ ९४ ॥ सवृष्यमाणोबाणौघैरतिकायोमहाबलः ॥ अवध्यकवचःसंख्येराक्षसोनैवविव्यथे ॥ ९५ ॥ नशशाकरुजंकर्तुंयुधितस्यनरोत्तमः ॥ अथैनमभ्युपागम्यवायुर्वाक्यमुवाचह ॥ ९६ ॥

बाण लक्ष्मणजीके ऊपर चलाया लक्ष्मणजीने पलभरमें वायव्यास्त्रसे राक्षसके चलाये उस बाणको काट डाला ॥ ९१ ॥ इसके उपरान्त महातेजस्वी वीरश्रेष्ठ लक्ष्मणजी निरन्तर राक्षसके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगे कि, जिस प्रकारसे मेघ जलको वर्षाते हैं ॥ ९२ ॥ परन्तु वह बाण अतिकायके वज्रमय कवचमें ज्योंही लगे कि, वैसेही उनके फलके टूट गये और वह सब पृथ्वीपर गिर पडे ॥९३॥ पर वीर घाती महायशस्वी लक्ष्मणजीने उन समस्त बाणोंको व्यर्थ देखकर एकही साथ हजार बाण अतिकायके ऊपर चलाये ॥ ९४ ॥ परन्तु अभेद बख्तर पहरनेके कारण निशाचर श्रेष्ठ महाबलवान् अतिकाय संग्राम भूमिमें उन बाणोंकी वर्षासे व्यथित न हुआ ॥ ९५ ॥इस भांतिसे पुरुषोत्तम लक्ष्मणजी जब किसी प्रकारसे उस निशाचरको पीडित नहीं कर सके तब पवन

देवताने उनके निकट आकर कहा ॥ ९६ ॥ इस निशाचरने ब्रह्माजीसे वर पाया है और इस समय यह अनेक कवच पहरे हुए है, इस कारण ब्रह्मास्त्रसे तुम इसका वध करो. कारण कि, इस ब्रह्मास्त्रके अतिरिक्त किसी बाणसे तुम इसको नहीं मार सकोगे ॥९७॥ इंद्रके समान वीर्यवान् सुमित्रारानीके पुत्र लक्ष्मणजीने पवनके वचनसुन ब्रह्ममंत्रसे अभिमंत्रित कर एक उग्र वेगवान् बाण ले धनुषपर चढाया ॥९८॥ सुमित्राकुमार लक्ष्मणजीने श्रेष्ठ अभिमंत्रसे अभिमंत्रित कर जब वह तीक्ष्ण फलकयुक्त बाण धनुषपर चढाया; तब दिशा, विदिशा, चन्द्रमा इत्यादि समस्त महाग्रह पृथ्वी व आकाश त्रासित हो गये और शब्दायमान हुआ ॥९९॥ लक्ष्मणजीने रणभूमिमें यमदूत और वज्रके समान वह तीक्ष्ण फोंकवाला बाण ब्रह्मास्त्रसे अभिमंत्रित करके इन्द्रशत्रु रावणपुत्र अतिकायके ऊपर चलाया ॥१००॥

ब्रह्मदत्तवरोह्येषअवध्यकवचावृतः ॥ ब्राह्मेणास्त्रेणभिंध्येनमेषवध्योहिनान्यथा ॥ अवध्यएषह्यन्येषामस्त्राणांकवचीबली ॥९७॥ ततस्तुवायोर्वचनंनिशम्यसौमित्रिरिंद्रप्रतिमानवीर्यः ॥ समादधेबाणमथोग्रवेगंतद्ब्राह्ममस्त्रंसहसानियुज्य ॥९८॥ तस्मिन्वरास्त्रेतुनियुज्यमानेसौमित्रिणाबाणवरेशिताग्रे ॥ दिशश्चचंद्रार्कमहाग्रहाश्चनभश्चतत्राससरासचोर्वी ॥ ९९ ॥ तंब्रह्मणोऽस्त्रेणनियुज्यचापेशरंसपुंखंयमदूतकल्पम् ॥ सौमित्रिरिंद्रारिसुतस्यतस्यससर्जबाणंयुधिवज्रकल्पम् ॥१००॥ तंलक्ष्मणोत्सृष्टविवृद्धवेगंसमापतंतंश्वसनोग्रवेगम् ॥ सुपर्णवज्रोत्तमचित्रपुंखंतदातिकायःसमरेददर्श ॥१०१॥ तंप्रेक्षमाणःसहसातिकायोजघानबाणैर्निशितैरनेकैः ॥ ससायकस्तस्यसुपर्णवेगस्तदातिवेगेनजगामपार्श्वम् ॥१०२॥ तमागतंप्रेक्ष्यतदातिकायोबाणंप्रदीप्तांतककालकल्पम् ॥ जघानशक्त्यृष्टिगदाकुठारैःशूलैःशरैश्चाप्यविपन्नचेष्टः ॥१०३॥ तान्यायुधान्यद्भुतविग्रहाणिमोघानिकृत्वासशरोऽग्निदीप्तः ॥ प्रगृह्यतस्यैवकिरीटजुष्टंतदातिकायस्यशिरोजहार ॥ १०४ ॥

उत्तम सुवर्णसे चित्रित वज्रकी फोंक लगा हुआ और पवनके समान वेगसे आते हुए लक्ष्मणजीके छोडनेसे और भी प्रचंड वेगवान् उस संग्रामभूमिमें अतिकायने देखा ॥१०१॥ उस बाणको वेगसे आता हुआ देखकर अतिकाय बडी शीघ्रताके साथ अत्यन्त पैने बाणोंसे उस बाणको काटने लगा, परन्तु गरुडजीके समान वेगवान् वह बाण बाणोंसे न रुककर अतिकायके निकट पहुँचही तो गया ॥ १०२ ॥ महावीर रावणके पुत्र अतिकायके प्रदीप्त कालकी अग्निके मान उस ब्रह्मास्त्रको निकट आते देखकर उसके ऊपर यद्यपि शक्ति, ऋष्टि, शूल, गदा, बाण, फरसा इत्यादि चलाकर उसको काटने लगा, परन्तु किसीसे भी कुछ न हुआ ॥१०३॥ परन्तु उस अग्निके समान प्रदीप्त बाणने उन समस्त अद्भुत आयुधोंको विफल करके अतिबलसे अतिकायका किरीटशोभित मस्तक काट डाला ॥ १०४ ॥

लक्ष्मणजीके बाणसे कटा हुआ और लोहेकी टोपी इत्यादिसे शोभित राक्षस अतिकायका शिर हिमाचलके शृंगके समान सहसा पृथ्वीपर गिर पडा ॥१०५॥ मरनेसे बचेबचाये राक्षस उस वीर अतिकायको पृथ्वीपर गिरा हुआ देखकर अत्यन्त दुःखी हुए ॥ १०६ ॥ वानरलोगोंके प्रहारसे जर्जरित विषादित मुख और दीनभावयुक्त वह निशाचरगण सहसा महाशब्द कर विकट स्वरसे शब्द करने लगे ॥१०७॥ इस प्रकारसे वह राक्षसगण अपने सेनापतिके मारे जानेपर अत्यन्त दुःखित और भीत होकर अतिशीघ्रतासे लंकाकी ओर भागे ॥ १०८ ॥ भयंकर और दुर्द्धर्ष राक्षसके मारेजानेपर वानर लोगोंके आनन्दकी सीमा न रही, उन वानरोंके मुखके रंगने खिले हुये कमलको पराजित किया। वह सबही वीरश्रेष्ठ लक्ष्मणजीकी वीरताको सराहसराहकर उनका उचित सन्मान

तच्छिरःसशिरस्त्राणंलक्ष्मणेषुप्रमर्दितम् ॥ पपातसहसाभूमौशृंगंहिमवतोयथा ॥ १०५ ॥ तंभूमौपतितंदृष्ट्वाविक्षिप्तांबरभूषणम् ॥ बभूवुर्व्यथिताःसर्वेहतशेषानिशाचराः ॥१०६॥ तेविषण्णमुखादीनाःप्रहारजनितश्रमाः ॥ विनेदुरुच्चैर्बहवःसहसाविस्वरैःस्वरैः ॥ १०७ ॥ ततस्तत्परितोयातानिरपेक्षानिशाचराः ॥ पुरीमभिमुखाभीताद्रवंतोनायकेहते ॥१०८॥ प्रहर्षयुक्तावहवस्तुवानराःप्रफुल्लपद्मप्रतिमाननास्तदा ॥ अपूजयँल्लक्ष्मणमिष्टभागिनंहतेरिपौभीमबलेदुरासदे ॥ १०९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे एकसप्ततितमः सर्गः ॥७१॥ अतिकायंहतंश्रुत्वालक्ष्मणेनमहात्मना ॥ उद्वेगमगमद्राजावचनंचेदमब्रवीत् ॥ १ ॥ धूम्राक्षःपरमामर्षीसर्वशस्त्रभृतां वरः ॥ अकंपनःप्रहस्तश्चकुम्भकर्णस्तथैवच ॥ २ ॥ एतेमहाबलावीराराक्षसायुद्धकांक्षिणः ॥ जेतारःपरसैन्यानांपरैर्नित्यापराजिताः ॥ ३ ॥ ससैन्यास्तेहतावीरारामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ राक्षसाःसुमहाकायानानाशस्त्रविशारदाः ॥ ४ ॥ अन्येचबहवःशूरामहात्मानोनिपातिताः ॥ प्रख्यातबलवीर्येणपुत्रेणेंद्रजितामम ॥ ५ ॥

करते हुए ॥ १०९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकसप्ततितमः सर्गः ॥७१॥ महात्मा लक्ष्मणजीसे अतिकायका संहार कियाजाना सुनकर राक्षसराज रावण बहुतही उदास हुआ और कहने लगा ॥१॥ सर्वशस्त्रास्त्र धारण करनेवालोंमें श्रेष्ठ दारुण क्रोधयुक्त धूम्राक्ष, वीरश्रेष्ठ अकम्पन, प्रहस्त और कुम्भकर्ण ॥ २ ॥ इत्यादि महाबलशाली वीरगण जो युद्धमें अद्वितीय और संग्राम जीतनेका अभिलाष करते थे, यह सबही शत्रुके हाथसे पराजित होनेवाले नहीं थे, और सदा शत्रुको जीतते थे ॥ ३ ॥ हाय ! सरलस्वभाववाले श्रीरामचन्द्रजीके हाथसे सेनासहित यह सबही वीर मारेगये; अनेकशस्त्र विशारद महाकाय राक्षस ॥ ४ ॥ और भी अनेक राक्षस जो कि बडे शूर थे, मारे गये और विख्यात बलवीर्यवाले हमारे पुत्र इन्द्रजीतने ॥ ५ ॥

वरदान पाये हुए घोर बाणोंसे दोनों भाइयोंको बांधलिया था कि, जिस बन्धनको महाबलवान् असुर कोईभी नहीं छुटासकते ॥ ६ ॥ बरन् उस घोर बन्धनको यक्ष गन्धर्व पन्नग कोई भी नहीं छुटा सकते थे, फिर हम नहीं जानते कि,अपने प्रभावसे; मायासे अथवा किसी मोहन मंत्रसे ॥ ७ ॥ वह दोनों भाई राम लक्ष्मण उस शरबन्धनसे छूट गये और जो शूर योद्धावीर राक्षस भेजे हुए रणमें गये ॥ ८ ॥ वह सबही युद्धमें महाबलवान् वानरोंसे मारडाले गये हम ऐसा किसीको नहीं देखते जो आज युद्धमें जाकर लक्ष्मणके साहित रामचन्द्रको सुग्रीव व विभीषण और उनकी सेनाके सहित मार डाले ॥९॥ अहो ? जिसके विक्रमसे निशाचर मारे गये हैं,वह रामचन्द्र अत्यन्त बलवान् है और उसके अस्त्रबलकोभी धन्यवाद है ॥ १० ॥ (हमको बोध होता है कि, वह अनामय

तौभ्रातरौतदाबद्धौघोरैर्दत्तवरैःशरैः ॥ यन्नशक्यंसुरैःसर्वैरसुरैर्वामहाबलैः ॥ ६ ॥ मोक्तुंतद्बंधनंघोरंयक्षगंधर्वपन्नगैः ॥ तन्नजानेप्रभावैर्वामायया मोहनेनवा ॥ ७ ॥ शरबंधाद्विमुक्तौतौभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ येयोधानिर्गताःशूराराक्षसाममशासनात् ॥ ८ ॥ तेसर्वेनिहतायुद्धेवानरैःसुमहाबलैः ॥ तंनपश्याम्यहंयुद्धेयोऽद्यरामंसलक्ष्मणम् ॥ नाशयेत्सबलंवीरंससुग्रीवंविभीषणम् ॥ ९ ॥ अहोसुबलवान्रामोमहदस्त्रबलंचवै ॥ यस्य विक्रममासाद्यराक्षसानिधनंगताः ॥१०॥ अप्रमत्तैश्चसर्वत्रगुल्मैरक्ष्यापुरीत्वियम् ॥ अशोकवनिकाचैवयत्रसीताभिरक्ष्यते ॥ ११ ॥ निष्कामोवाप्रवेशोवाज्ञातव्यःसर्वदैवनः ॥ यत्रयत्रभवेद्गुल्मस्तत्रतत्रपुनःपुनः ॥ १२ ॥ सर्वतश्चापितिष्ठध्वंस्वैःस्वैःपरिवृताबलैः ॥ द्रष्टव्यंचपदंतेषांवा नराणांनिशाचराः ॥ १३ ॥ प्रदोषेवार्धरात्रेवाप्रत्यूषेवापिसर्वशः ॥ नावज्ञातत्रकर्तव्यावानरेषुकदाचन ॥ १४ ॥ द्विषतांबलमुद्युक्तमापतत्किंस्थितंयथा ॥ ततस्तेराक्षसाःसर्वेश्रुत्वालंकाधिपस्यतत् ॥ १५ ॥

वीर रघुनंदन नारायणही होंगे कारण कि, भयसेही लंकानगरीके द्वार और तोरण सब रुके हुए हैं) इस समय अति सावधानीसे लंकापुरीकी रक्षा करनी कर्तव्य है; जहांपर सीतादेवी विराजमान है उस अशोकवाटिकाकी भी रक्षा भलीभांति करनी चाहिये ॥ ११ ॥ अशोकवन, राजपुर या और कहीं सेना निवासस्थानोंमें कोई आवे या कोई बाहर जावे;उसको बारंबार सर्व प्रकार परीक्षा करके देखना ॥ १२ ॥ सब ओरसे तुमलोग जाय टिके रहो और सब कहीं सेनाभी टिकी रहे । हे निशाचर ! वानरोंके स्थान और उनके पद सदा देखते रहो ॥ १३ ॥ प्रदोषके समय, आधी रातके समय या प्रातःकालके समयभी वानरोंको छोटे मत समझो कि यह हैं ही क्या ! ॥ १४ ॥ कारण कि हम सबके निकट बडी भारी वानरोंकी सेना तैयार पडी है, न जानें किस समय

लंकापर आकर धावा करदे, यह सब राक्षस लंकापति रावणके वचन सुनकर ॥ १५ ॥ महाबलवान् तो थेही उस रावणकी आज्ञानुसार जहां तहां टिके ॥ १६ ॥ राक्षस राज रावण सब राक्षसोंको ऐसी आज्ञा देकर हृदयमें शोकरूप प्रदीप्त बाण धारण किये हुए अपने भवनमें प्रवेश करता हुआ ॥ १७ ॥ शोकसे निशाचरपति रावण अपने पुत्रोंके संकटकी अवस्था विचारकर कोपसे जल बल उठा और वारंवार लंबे २ श्वास लेने लगा ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आदि० युद्धकाण्डे भाषायां द्विसप्ततितमः सर्गः ॥७२॥ इसके उपरान्त मरनेसे बचे बचाये राक्षसोंने देवान्तक अतिकाय और त्रिशिरा इत्यादि निशाचरोंको मारा हुआ देख राक्षसराज रावणसे यह समाचार कहे॥१॥तब रावण उन राक्षसोंके मुखसे यह अशुभ वार्ता सुनकर रोते २ मोहको प्राप्त हुआ

वचनंसर्वमातिष्ठन्यथावत्तुमहाबलाः ॥ १६ ॥ तान्सर्वान्हिसमादिश्यरावणोराक्षसाधिपः ॥ मन्युशल्यंवहन्दीनःप्रविवेशस्वमालयम् ॥१७॥ ततःससंदीपितकोपवह्निर्निशाचराणामधिपोमहाबलः ॥ तदेवपुत्रव्यसनंविचिंतयन्मुहुर्मुहुश्चैवतदाविनिःश्वसन् ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीम० वा० आदि० च० सा० युद्धकांडे द्विसप्ततितमः सर्गः ॥ ७२ ॥ ततोहतान्राक्षसपुंगवांस्तान्देवांतकादित्रिशिरोऽतिकायान् ॥ रक्षोगणास्तत्र हतावशिष्टास्तेरावणायत्वरिताःशशंसुः ॥ १ ॥ ततोहतांस्तान्सहसानिशम्यराजामहाबाष्पपरिप्लुताक्षः ॥ पुत्रक्षयंभ्रातृवधंचघोरंविचिंत्यराजाविपुलंप्रदध्यौ ॥ २ ॥ ततस्तुराजानमुदीक्ष्यदीनंशोकार्णवेसंपरिपुप्लुवानम् ॥ रथर्षभोराक्षसराजसूनुस्तमिन्द्रजिद्वाक्यमिदंबभाषे ॥३॥ नतातमोहंपरिगंतुमर्हसेयत्रेंद्रजिज्जीवतिनैर्ऋतेश ॥ नेंद्रारिबाणाभिहतोहिकश्चित्प्राणान्समर्थःसमरेऽभिपातुम् ॥ ४ ॥ पश्याद्यरामंसहलक्ष्मणेनमद्बाणनिर्भिन्नविकीर्णदेहम् ॥ गतायुषंभूमितलेशयानंशितैःशरैराचितसर्वगात्रम् ॥ ५ ॥ इमांप्रतिज्ञांशृणुशक्रशत्रोःसुनिश्चितांपौरुषदैवयुक्ताम् ॥ अद्यैवरामंसहलक्ष्मणेनसंतर्पयिष्यामिशरैरमोघैः ॥ ६ ॥

इसके पीछे पुत्रोंके नाश और पोताओंके संहारकी घोर विपत्तिकी चिंता करतेहुए कुछसमय तक ध्यान साधे रहा॥२॥तब शोकसागरमें डूबते हुए दीनमन राजा रावणको देख परमश्रेष्ठ रथी राक्षसराज रावणका पुत्र इन्द्रजीत (मेघनाद) बोला ॥ ३ ॥ हे राक्षसनाथ ! हे पिता ! इन्द्रजीतके जीवित रहते आप इस प्रकार संतापमें न जलिये,आप निश्चय जानेंकि रणमें इन्द्रजीतके बाणसे घायल होकर कोई भी अपने प्राण नहीं रख सकता ॥ ४ ॥ आप देखेंगे कि, लक्ष्मणजीके सहित आजही रामचन्द्रजीके सब अंग हमारे बाणोंसे कटजायँगे,वह मेरे अस्त्रसे प्राण त्याग करके आजही पृथ्वीपर शयन करेंगे ॥५॥ आप इन्द्रजीतकी दैव

और पौरुष संयुक्त यह निश्चित प्रतिज्ञा श्रवण करें कि, हम आजही लक्ष्मणके सहित रामचन्द्रको अमोघ बाणोंसे नाश करदेंगे ॥ ६ ॥ अधिक क्या कहें; बलिके यज्ञमें वामनरूपी विष्णुजीके समान आज इन्द्र, यम, रुद्र, अग्नि, साध्यगण और सूर्य यह सबही आज हमारे अप्रमाण विक्रमको देखेंगे ॥ ७ ॥ इस प्रकार रावणसे कह व उसकी आज्ञा लेकर प्रसन्न चित्त हो मेघनाद श्रेष्ठ गधेजुते वायुके समान वेगसे चलने वाले रथपर सवार हुआ ॥८॥ सूर्यके समान दिव्य रथपर सवार होकर महातेजस्वी शत्रुघाती मेघनाद झटपट युद्ध भूमिको गया कि, जहांपर शत्रुनाशी श्रीरामचन्द्रजी विराजमान थे ॥९॥ तब मेघनादको रणमें जानेके लिये तैयार देख श्रेष्ठ धनुषधारी भयंकर विक्रमकारी अनेक महाबलवान् राक्षस हर्षसहित उस महात्माके पीछे २ चले ॥ १० ॥ कोई २ हाथीपर चढ

अद्यैंद्रवैवस्वतविष्णुरुद्रसाध्याश्चवैश्वानरचंद्रसूर्याः॥द्रक्ष्यंतुमेविक्रममप्रमेयंविष्णोरिवोग्रंबलियज्ञवाटे॥७॥सएवमुक्त्वात्रिदशेंद्रशत्रुरापृच्छचराजानमदीनसत्त्वः ॥ समारुरोहानिलतुल्यवेगंरथंखरश्रेष्ठसमाधियुक्तम् ॥८॥ समास्थायमहातेजारथंहरिरथोपमम् ॥ जगामसहसातत्रयत्रयुद्धमरिंदमः ॥ ९ ॥ तंप्रस्थितंमहात्मानमनुजग्मुर्महाबलाः ॥ संहर्षमाणाबहवोधनुःप्रवरपाणयः ॥१०॥ गजस्कंधगताःकेचित्केचित्परमवाजिभिः ॥ व्याघ्रवृश्चिकमार्जारखरोष्ट्रैश्चभुजंगमैः ॥११॥ वराहैःश्वापदैःसिंहैर्जंबुकैःपर्वतोपमैः॥काकहंसमयूरैश्चराक्षसाभीमविक्रमाः॥प्रासमुद्गरनिस्त्रिंशपरश्वधगदाधराः॥१२॥सशंखनिनदैःपूर्णैर्भेरीणांचापिनिःस्वनैः॥जगामत्रिदशेंद्रारिरराजिवेगेनवीर्यवान्॥१३॥सशंखशशिवर्णेनच्छत्रेणरिपुसूदनः॥रराजप्रतिपूर्णेननभश्चंद्रमसायथा॥१४॥वीज्यमानस्ततोवीरोहैमैर्हैमविभूषणः॥चारुचामरमुख्यैश्चमुख्यःसर्वधनुष्मताम्॥१५॥

कर चले,कोई२ घोडेपर सवार होकर गमन करने लगे, कोई २ व्याघ्रपर, कोई २ वृश्चिक * पर,कोई २ मार्जार (बिलाव) पर कोई २ गधे ऊँट और सिंहपर आरोहण करके चले ॥ ११ ॥ कोई२ पर्वताकार सिंहोंके ऊपर और गीदडोंके ऊपर और काक हंस और मयूरादि पक्षियोंके ऊपर भीमविक्रम राक्षस सवार होकर भाला, मुद्गर,निस्त्रिंश,फरसा, गदा, भुशुण्डि, ऋष्टि,शतघ्नी और परिघादि आयुध उठाय सज्जित होकर गमन करने लगे ॥ १२ ॥ क्रमसे शंख और भेरी बजनेके शब्दसे दशोंदिशा पूर्ण हो गई इसप्रकारसे वीर्यवान् राक्षसराजका पुत्र इन्द्रजीत युद्ध करने लिये चला ॥ १३ ॥ पूर्णचन्द्रमाके उदय होने पर आकाशकी जिसप्रकारसे शोभा होती है वैसेही शत्रुओंके मारनेवाले इन्द्रजीतके शिरपर शंख और चन्द्रमाकी नाईं उज्ज्वल श्वेत वर्णका छत्र था ॥१४॥उस

* वृश्चिकादि आकारके वाहन भी थे

समय धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ उस वीर मेघनादके ऊपर हेमभूषितसुन्दर चामर ढुल रहा था ॥१५॥ उस कालमें सूर्यके समान तेजस्वी उस अप्रमेयवीर्यवान् इन्द्र जीतके रूपसे लंका नगरी तेजसे प्रकाशमान सूर्यनारायणसे शोभित अकाशमंडलकी नाई प्रकाशमान होनेलगी ॥१६॥ अनन्तर वह अग्निके समान शत्रुदमन कारी महातेजस्वी राक्षसश्रेष्ठइन्द्रजीत युद्धमें जय दिलानेवाले निकुम्भलास्थितरणभूमिमें पहुँचगया और वहां पहुँचतेही उसने अपने रथके चारों ओर सेनाको स्थापित किया ॥१७॥ इस स्थानका नाम निकुम्भिला था, अग्नितुल्यतेजस्वी इन्द्रजीत यहांपर उत्तम मंत्रोंसे विधिपूर्वक अग्निमें होम करने लगा ॥१८॥ उस प्रतापशाली राक्षसोंमें श्रेष्ठ इन्द्रजीतने प्रथम अग्निमें माला और सुगंधित द्रव्य चढाकर उसकेपीछे खीर अक्षतसे उसका संस्कार पूरा करके हवनकर्मको आरंभ

ततस्त्विन्द्रजितालंकासूर्यप्रतिमतेजसा ॥ रराजाप्रतिवीर्येणद्यौरिवार्केणभास्वता ॥ १६ ॥ ससंप्राप्यमहातेजायुद्धभूमिमरिंदमः ॥ स्थापयामा सरक्षांसिरथंप्रतिसमंततः ॥१७॥ ततस्तुहुतभोक्तारंहुतभुक्सदृशप्रभः ॥ जुहुवेराक्षसश्रेष्ठोविधिवन्मंत्रसत्तमैः ॥ १८ ॥ सहविर्लाजसत्कारैर्मा ल्यगंधपुरस्कृतैः ॥ जुहुवेपावकंतत्रराक्षसेंद्रः प्रतापवान् ॥१९॥ शस्त्राणिशरपत्राणिसमिधोऽथविभीतकः ॥ लोहितानिचवासांसिस्रुवंकार्ष्णा यसंतथा ॥ २० ॥ सतत्राग्निंसमास्तीर्यशरपत्रैःसतोमरैः ॥ छागस्यकृष्णवर्णस्यगलंजग्राहजीवतः ॥ २१ ॥ सकृदेवसमिद्धस्यविधूमस्य महार्चिषः ॥ बभूवुस्तानिलिंगानिविजयायान्यदर्शयन् ॥ २२ ॥ प्रदक्षिणावर्तशिखस्तप्तकांचनसन्निभः ॥ हविस्तत्प्रतिजग्राहपावकःस्वयमु त्थितः ॥ २३ ॥ सोऽस्त्रमाहारयामासब्राह्ममस्त्रविशारदः ॥ धनुश्चात्मरथंचैवसर्वंतत्राभ्यमंत्रयत् ॥ २४ ॥

किया॥१९॥उस यज्ञकुण्डके चारों ओर जहां शरपत बिछानेचाहियेवह उसनेसबशस्त्र बिछाये व बहेडेकी लकडीको इन्धन बनाया, समस्त लालही वस्त्र धारणकिये और लोहेका स्रुवा बनाया कारण कि, मारणमें यही पदार्थ कार्यमें आते हैं॥२०॥तबभालोंके ऊपर अग्निस्थापन कर सम्पूर्ण काले वर्णका छाग ले उसकी गर्दन पकड जीवितही उसे अग्निमें डालदिया ॥ २१ ॥ उस छागकी जैसेही आहुति दीगई कि वैसेही अग्नि विधूम होगई और शिखाविस्तार करके जल उठीऔर अग्निमें जो जयसूचक सब चिह्न दृष्टि आते हैं वह सब प्रकाशित हुए ॥ २२ ॥ इसके उपरान्त तपाए हुए सुवर्णके समान अग्नि दाहिनी ओरको घूमती हुई अपनी शिखाके साथ स्वयं अग्निकुण्डमेंसे उठे और मेघनादकी दीहुई आहुति उन्होंने ग्रहणकी ॥ २३ ॥ इसके उपरान्त अस्त्रविशारद इन्द्रजीतने अपने अस्त्र धनुष रथको कवच मंत्रसे अभिमंत्रित किया ॥ २४ ॥

जब उस वीर मेघनादने अग्निमें आहुति दी और सब अस्त्रोंको ब्रह्ममंत्रसे अभिमंत्रित किया उस समय चन्द्र सूर्य इत्यादि ग्रह नक्षत्रगणोंके सहित समस्त आकाशमंडल ग्रासित होगया ॥ २५ ॥ इन्द्रके समान प्रतापशाली और अग्निके समान प्रदीप्त वह अप्रमेय वीर्यवाला इन्द्रजीत इस प्रकारसे अग्निमें आहुति दे धनुष बाण शूल अश्व और रथके सहित आकाशमें जाय अन्तर्धान होगया ॥ २६ ॥ उसके उपरान्त ध्वजा पताकासे शोभित और अश्वरथ युक्त राक्षसोंकी सेना भीयुद्धकी वासनासे सिंहनाद करती हुई चली ॥२७॥इस सेनाके राक्षस निकुम्भिलासे निकलतेही महावेगसे अलंकृत असंख्य बाण तोमर और अंकुशोंसे वानर वीरोंको मारने लगे ॥ २८ ॥ रावणका पुत्र मेघनाद अपनी सेनाको समर करती हुई देखकर क्रोधमें भरकर कहने लगा कि तुम सब वानरोंके संहार

तस्मिन्नाहूयमानेस्त्रेहूयमानेचपावके ॥ सार्कग्रहेंदुनक्षत्रंवितत्रासनभःस्थलम् ॥२५॥ सपावकंपावकदीप्ततेजाहुत्वामहेन्द्रप्रतिमप्रभावः॥ सचापबाणासिरथाश्वशूलःखेऽन्तर्दधेत्यानमचिंत्यवीर्यः॥२६॥ततोहयरथाकीर्णंपताकाध्वजशोभितम्॥निर्ययौराक्षसबलंनर्दमानंयुयुत्सया॥२७॥ तेशरैर्बहुभिश्चित्रैस्तीक्ष्णवेगैरलंकृतैः ॥ तोमरैरंकुशैश्चापिवानराञ्जघ्नुराहवे ॥२८॥ रावणिस्तुसुसंक्रुद्धस्तान्निरीक्ष्यनिशाचरान् ॥ हृष्टाभवंतोयुध्यंतुवानराणांजिघांसया ॥ २९ ॥ ततस्तेराक्षसाःसर्वेगर्जंतोजयकांक्षिणः ॥ अभ्यवर्षंस्ततोघोरान्वानरांञ्छरवृष्टिभिः ॥३०॥ सतुनालीकनाराचैर्गदाभिर्मुसलैरपि ॥ रक्षोभिःसंवृतःसंख्येवानरान्विचकर्षह ॥३१॥ तेवध्यमानाःसमरेवानराःपादपायुधाः ॥ अभ्यवर्षंतसहसारावणिंशैलपादपैः ॥३२॥ इंद्रजित्तुतदाक्रुद्धोमहातेजामहाबलः ॥ वानराणांशरीराणिव्यधमद्रावणात्मजः ॥३३॥ शरेणैकेनचहरीन्नवपंचचसप्तच ॥ बिभेदसमरेक्रुद्धोराक्षसान्संप्रहर्षयन् ॥ ३४ ॥ सशरैः सूर्यसंकाशैःशातकुम्भविभूषणैः ॥ वानरान्समरेवीरःप्रममाथसुदुर्जयः ॥ ३५ ॥

करनेकी इच्छासे युद्ध करते रहो ॥ २९ ॥ विजयकी अभिलाषा किये हुए राक्षसगण यह बात सुनतेहीवानरोंके ऊपर घोर बाणोंकी वर्षा करने लगे ॥३०॥ वानरोंकी सेनाके ऊपर आकाशमें टिका हुआ इन्द्रजीत भी नालीक, नाराच, गदा और मुसल इत्यादि अस्त्र शस्त्रोंसे वानरगणोंको विद्ध करने लगा ॥३१॥ वृक्षोंको आयुध बनाये हुए वानरगण भी राक्षसोंसे इस प्रकार समरमें मारे जाकर उन राक्षसोंके ऊपर पर्वत और वृक्षोंकी वर्षा करने लगे ॥ ३२ ॥ महातेजस्वी महाबलवान् रावणका पुत्र इन्द्रजीत इससे अत्यन्त क्रोधित होकर वानरोंकी देहको छिन्न भिन्न करने लगा ॥ ३३ ॥ वह इन्द्रजीत संग्रामभूमिमें राक्षसलोगोंको हर्षित करता हुआ एक २ बाणसे पांच, सात और नौ नौ वानरोंको मारने लगा ॥ ३४ ॥ इस प्रकारसे रणमें अजित इंद्रजित सुवर्णभूषित सूर्यके

समान बाणजालसे वानर लोगोंको छिन्नभिन्न करता हुआ ॥३५॥ मेघनादके बाण मारनेसे पीडित और व्यथित होकर वानरोंके शरीर विंधने लगे देवतालोगों के हाथसे असुरलोगोंकी जैसी अवस्था हुई थी उस कालमें रावणकुमार इन्द्रजीतके हाथसे वानरोंकी भी वही दशा हुई ॥३६॥ अनेक वानरश्रेष्ठगण क्रोधमें भरकर बाणरूपी किरणोंसे अलंकृत गिरते हुए सूर्यके समान उस इन्द्रजीतके सन्मुखको धाये॥३७॥ और बहुतसे वानर अपना शरीर कटाय दुःख पाय देहसे रुधिर बहनेके कारण ज्ञानहीन हो भागने लगे ॥३८॥ परन्तु वह वानरलोग श्रीरामचन्द्रजीका कार्य साधन करनेके लिये प्राणतक अर्पण करके वृक्ष शिला उठाय २ फिर युद्ध करनेको लौटे ॥ ३९ ॥ वह समस्त वानर मेघनादको ताक २ कर उसके ऊपर अनवरत वृक्ष और शिलाकी वर्षा करने लगे ॥ ४० ॥ महातेजस्वी रावणके पुत्र मेघनादने इन सब वानरोंके फेंके हुए प्राण हरनेवाले शिला वृक्ष और पर्वतोंको अपने तीखे बाणोंसे खंड २ कर डाला ॥ ४१ ॥

तेभिन्नगात्राःसमरेवानराःशरपीडिताः ॥ पेतुर्मथितसंकल्पाःसुरैरिवमहासुराः ॥३६॥ तेतपंतमिवादित्यंघोरैर्बाणगभस्तिभिः ॥ अभ्यधावंत संक्रुद्धाःसंयुगेवानरर्षभाः ॥ ३७ ॥ ततस्तुवानराःसर्वेभिन्नदेहाविचेतसः ॥ व्यथिताविद्रवंतिस्मरुधिरेणसमुक्षिताः ॥ ३८ ॥ रामस्यार्थेपराक्र म्यवानरास्त्यक्तजीविताः ॥ नर्दंतस्तेनिवृत्तास्तुसमरेसशिलायुधाः ॥ ३९ ॥ तेद्रुमैःपर्वताग्रैश्चशिलाभिश्चप्लवंगमाः ॥ अभ्यवर्षंतसमरेराव णिंसमवस्थिताः ॥ ४० ॥ तंद्रुमाणांशिलानांचवर्षंप्राणहरंमहत् ॥ व्यपोहतमहातेजारावणिःसमितिंजयः ॥४१॥ ततःपावकसंकाशैःशरैराशी विषोपमैः ॥ वानराणामनीकानिबिभेदसमरेप्रभुः ॥४२॥ अष्टादशशरैस्तीक्ष्णैःसविद्ध्वागंधमादनम् ॥ विव्याधनवभिश्चैवनलंदूरादवस्थितम् ॥ ४३ ॥ सप्तभिस्तुमहावीर्योमैंदंमर्मविदारणैः ॥ पंचभिर्विशिखैश्चैवगजंविव्याधसंयुगे ॥४४॥ जांबवंतंतुदशभिर्नीलंत्रिंशद्भिरेवच ॥ सुग्रीव मृषभंचैवसोऽङ्गदंद्विविदंतथा ॥ ४५ ॥ घोरैर्दत्तवरैस्तीक्ष्णैर्निष्प्राणानकरोत्तदा ॥ अन्यानपितदामुख्यान्वानरान्बहुभिःशरैः ॥ ४६ ॥

तब समर्थ मेघनाद विषधर सर्पके समान विषैले और अग्निके समान बाण समूहसे उस वानरोंकी सेनाको छिन्नभिन्न करने लगा ॥ ४२ ॥ उस महावीर्यवान् मेघनादने अत्यन्त तीक्ष्ण मर्मविदारण करनेवाले अठारहबाणोंसे नीलको और नव बाणोंसे नलनाम वानरको दूरसेही खडे रहकर रणभूमिमेंमारा ॥ ४३ ॥ उस महावीर्यवान्ने सात मर्मविदारी बाणोंसे नीलको वींध डाला और पांच बाणोंसे संग्रामभूमिमें गजको विद्ध किया ॥ ४४ ॥ इस प्रकारसे दशबाणोंसे जाम्बवान्को व फिर तीस बाणोंसे नलको मर्माहत किया इसके उपरान्त वानरराज सुग्रीव, ऋषभ, अंगद और द्विविदको तीक्ष्ण बाणोंसे मारकर मृतकतुल्य कर दिया ॥४५॥ इस प्रकारसे उस मेघनादने अत्यन्त घोर वरदानसे प्राप्त तीक्ष्णबाणोंसे इन वानरोंको मारा और समस्त वानरोंको भी असंख्य बाणोंसे मारा ॥४६॥

क्रोधसे कालाग्निके समान मूर्च्छित हो उस महापराक्रमी मेघनादने सूर्यके समान प्रकाशित शीघ्रगामी भली भाँतिसे चलाये हुए बाणोंसे मर्दित ॥४७॥ वानरोंको एक बारही मर्दित कर डाला बाणोंसे पीडित होनेके कारण व्याकुल और रुधिरसे भीगी हुई वानरोंकी सेनाको॥४८॥ देखकर मेघनाद अत्यन्त हर्षित हुआ और फिर महातेजस्वी रावणका पुत्र बली मेघनाद ॥४९॥ दारुण शब्द और बाणोंकी वर्षा करके वानरोंकी सेनाको बली इन्द्रजीत सब प्रकारसे मर्दितकर कंपायमान करने लगा ॥५०॥ मेघनाद सहसा अपनी सेनाको छोडकर वानरोंकी दृष्टिसे लोप हो गया और अदृश्य रहकर नीलाबादर जिस प्रकार जलकी वर्षा करता है वै सेही वानरोंको ताककर उनके ऊपर अनिवारित बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥५१॥ इन्द्रजीके वज्र चलानेसे जिस प्रकार पर्वत पंख कटकर नीचे गिरे थे, वैसेही वानरलोग राक्षसी मायासे मोहित हो गये, इनका सब शरीर राक्षसके बाणोंसे फट गया और वह धीरे २ विकटस्वरसे शब्द करके

अर्दयामाससंक्रुद्धःकालाग्निरिवमूर्च्छितः ॥ सशरैःसूर्यसंकाशैःसुमुक्तैःशीघ्रगामिभिः ॥ ४७ ॥ वानराणामनीकानिनिर्ममंथमहारणे॥ आकुलांवानरींसेनांशरजालेनपीडिताम् ॥४८॥ हृष्टःसपरयाप्रीत्याददर्शक्षतजोक्षिताम् ॥ पुनरेवमहातेजाराक्षसेन्द्रात्मजोबली ॥ ४९ ॥ संसृज्य बाणवर्षंचशस्त्रवर्षंचदारुणम् ॥ ममर्दवानरानीकंपरितस्त्विन्द्रजिद्बली ॥ ५० ॥ स्वसैन्यमुत्सृज्यसमेत्यतूर्णंमहाहवेवानरवाहिनीषु ॥ अदृश्यमानःशरजालमुग्रंववर्षनीलांबुधरोयथांबु ॥५१॥ तेशक्रजिद्बाणविशीर्णदेहामायाहताविस्वरमुन्नदंतः ॥ रणेनिपेतुर्हरयोऽद्रिकल्पायथेंद्रवज्राभिहतानगेंद्राः ॥ ५२ ॥ तेकेवलंसंददृशुःशिताग्रान्बाणान्रणेवानरवाहिनीषु ॥ मायाविगूढंचसुरेंद्रशत्रुंनचात्रतंराक्षसमप्यपश्यन् ॥५३॥ ततःसुरक्षोऽधिपतिर्महात्मासर्वादिशोबाणगतैःशिताग्रैः ॥ प्रच्छादयामासरविप्रकाशैर्विदारयामासचवानरेंद्रान् ॥ ५४ ॥ सशूलनिस्त्रिंशपरश्वधानिव्याविद्धदीप्तानलसप्रभाणि ॥ सविस्फुलिंगोज्ज्वलपावकानिववर्षतीव्रंप्लवगेंद्रसैन्ये॥५५॥ ततोज्वलनसंकाशैर्बाणैर्वानरयूथपाः ॥ ताडिताःशक्रजिद्बाणैःप्रफुल्लाइवकिंशुकाः ॥ ५६ ॥

रणभूमिमें गिरने लगे ॥ ५२ ॥ उससमय वानरगण सेनामें केवल इन्द्रजीतके छोडे हुए अत्यन्त तीखे बाणोंको देख पाया, परन्तु मायाके बलसे छिपे हुए उस इन्द्रके शत्रु मेघनादको न देखा कि, कहां खडा हुआ बाणोंकी वर्षा करता है ॥ ५३ ॥ इसके उपरान्त राक्षसपति महाबलवान् इन्द्रजीतने सूर्यके समान गांसी लगे हुए बाणोंसे सब दिशाओंको छाय लिया और अत्यन्त पैने बाणोंसे वानरोंको मारने भी लगा ॥५४॥ और प्रदीप्त अग्निके समान अगारे व चिनगारियोंसे युक्त शूल, निस्त्रिंश और परशु इत्यादि सब आयुधोंको ग्रहण करके वानरराज सुग्रीवजीकी सेनाके ऊपर वह मेघनाद वर्षाने लगा ॥ ५५ ॥ इस प्रकार इंद्रके शत्रु मेघनादके बाणोंसे जब वानर गणोंका शरीर छिन्न भिन्न होकर रुधिरसे भीग गया तब वह समस्त वानर खिले हुए टेसूके वृक्षके समान

शोभायमान हुए ॥ ५६ ॥ उस समय कोई २ वानर ऊपरको नेत्र उठाये आकाशकी ओर देखरहे थे कि, इतनेमेंही बाण आकर उनकी आंखोंमें लगा,तब वह परस्पर एकदूसरेका आश्रय लेने लगे और कोई पृथ्वीपर गिर पडे ॥ ५७॥ इसके उपरान्त हनुमानूजी, सुग्रीव, अंगद, गन्धमादन, जाम्बवानू, सुषेण, वेगदर्शी ॥ ५८ ॥ मैन्द, द्विविद, नील, गवय, गवाक्ष, केसरी, हरिलोम, विद्युद्दंष्ट्र; यह वानर ॥ ५९ ॥ और सूर्यानन, ज्योतिर्मुख तथा दधिमुख, वानर पावकाक्ष. नल और कुमुद वानरोंको ॥ ६० ॥ प्रास और शूलसे वानरश्रेष्ठोंको मारा और तीखे अभिमंत्रित बाणोंसे राक्षसोंमें श्रेष्ठ इन्द्रजीत मेघनादने उन सब वीरश्रेष्ठोंको ताडित किया और सूर्यके समान वर्णवाले बाणोंसे तथा गदा इत्यादि अस्त्र शस्त्रोंसे वानरोंके यूथनाथोंको इस प्रकार बींधता हुआ

उदीक्षमाणागगनंकेचिन्नेत्रेषुताडिताः॥ शनैर्विविशुरन्योन्यंपेतुश्चजगतीतले ॥ ५७ ॥ हनूमंतंचसुग्रीवमंगदंगंधमादनम् ॥ जांबवंतंसुषेणंच वेगदर्शिनमेवच॥ ५८॥ मैंदंचद्विविदंनीलंगवाक्षंगवयंतथा ॥ केसरिंहरिलोमानंविद्युद्दंष्ट्रंचवानरम् ॥ ५९ ॥ सूर्याननंज्योतिर्मुखंतथादधिमुखंहरिम् ॥ पावकाक्षंनलंचैवकुमुदंचैववानरम् ॥ ६० ॥ प्रासैःशूलैःशितैर्बाणैरिंद्रजिन्मंत्रसंहितैः ॥ विव्याधहरिशार्दूलान्सर्वांस्तान्राक्षसोत्तमः ॥ ६१ ॥ सवैगदाभिर्हरियूथमुख्यान्निर्भिद्यबाणैस्तपनीयवर्णैः॥ ववर्षरामंशरवृष्टिजालैःसलक्ष्मणंभास्कररश्मिकल्पैः ॥ ६२ ॥ सबाणवर्षैरभिवृष्यमाणोधारानिपातानिवतानचिंत्य ॥ समीक्षमाणःपरमाद्भुतश्रीरामस्तदालक्ष्मणमित्युवाच ॥६३॥ असौपुनर्लक्ष्मणराक्षसेंद्रोमहास्त्रमाश्रित्यसुरेंद्रशत्रुः ॥ निपातयित्वाहरिसैन्यमस्मान्छितैःशरैरर्दयतिप्रसक्तम् ॥ ६४ ॥ स्वयंभुवादत्तवरोमहात्मासमाहितोऽन्तर्हितभीमकायः ॥ कथंनुशक्योयुधिनष्टदेहोनिहंतुमद्येन्द्रजिदुद्यतास्त्रः ॥ ६५ ॥

श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीके ऊपर सूर्यकी किरणोंके समान बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ अद्भुत श्रीसम्पन्न श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर सर्व प्रकारसे बाणोंकी वर्षा वर्षाई गई,परन्तु वह उस समय बाण वर्षाकोजलकी धाराके तुल्य कुछ न विचारकर लक्ष्मणजीसे बोले ॥ ६३ ॥ हे लक्ष्मण! यह देखो इन्द्रका शत्रु राक्षसोंमें श्रेष्ठ मेघनाद इंद्रजीत महा अस्त्रका आश्रय लेकर उग्र वानरोंकी सेनाको मार रहा है, यह ब्रह्माजीके वरदानसे पाये हुए बाणोंके समूहसे फिरभी हमको पीडित कर रहा है ॥६४॥ यह भयंकर शरीरवाला अस्त्र उठाये महाबलवान् इन्द्रजीत ब्रह्माजीसे वर पायकर आकाशमें अन्तर्धान होगया है फिर भला इस प्रकार छिपे हुए रहकर युद्धकरते हुए इस राक्षस मेघनादका हम किस प्रकारसे वध करनेमें समर्थ होंगे ? ॥ ६५ ॥

हे बुद्धिमान् ! इन्होंने इस विश्वको बनाया है यह सब बाणभी उन्हीं ब्रह्माजीके बनाये जान पडते हैं कि, जिनका विजय चिन्तासे बाहर होनेके कारण अपना उवार पार नहीं रखता, इसलिये पितामह ब्रह्माजीके सम्मानकी रक्षा करनेके लिये जिस प्रकार अब हम इन गिरते हुए बाणोंको सहैं वैसेही तुम भी अव्याकुल चित्तसे इन समस्त बाणोंको सहन करो ॥ ६६ ॥ यह देखो ! राक्षसोंमें श्रेष्ठ इन्द्रजीत बाणोंके जालको वर्षाकर दशों दिशाओंको छायरहा है और वानरराज सुग्रीवजीके अनेक सेनापति मरगये हैं कि, जिससे यह समस्त वानरोंकी सेना शोभाहीन हुई है ॥ ६७ ॥ जो हम ऐसा करके इस राक्षसके बाणोंकी वर्षाको सहलेंगे तो इन्द्रजीत हमको हर्ष रोष रहित युद्धसे निवृत्त और चेतनारहित हो पृथ्वीपर पडा देख संग्राममभूमिमें अपनी जय समझ निश्चयही

मन्येस्वयंभूर्भगवानचिंत्यस्तस्यैतदस्त्रंप्रभवश्चयोऽस्य ॥ बाणावपातंत्वमिहाद्यधीमन्मयासहाव्यग्रमनाःसहस्व ॥६६॥ प्रच्छादयत्वेषहिराक्षसेंद्रःसर्वांधिकःसायकवृष्टिजालैः ॥एतच्चसर्वंपतिताग्र्यशूरंनभ्राजतेवानरराजसैन्यम्॥६७॥आवांतुदृष्ट्वापतितौविसंज्ञौनिवृत्तयुद्धौहतहर्षरोषौ ॥ ध्रुवंप्रवेक्ष्यत्यमरारिवासमसौसमासाद्यरणाग्र्यलक्ष्मीम् ॥६८॥ ततस्तुताविंद्रजितोऽस्त्रजालैर्बभूवतुस्तत्रतदाविशस्तौ ॥ सचापितौतत्रविशादयित्वाननादहर्षाद्युधिराक्षसेंद्रः ॥ ६९ ॥ ततस्तदावानरसैन्यमेवंरामंचसंख्येसहलक्ष्मणेन ॥ निषूदयित्वासहसाविवेशपुरींदशग्रीवभुजाभिगुप्ताम् ॥ संस्तूयमानःसतुयातुधानैःपित्रेचसर्वंहृषितोऽभ्युवाच ॥ ७० ॥ इत्यार्षे श्रीम० वा० आ० च० सा० युद्धकांडे त्रिसप्ततितमः सर्गः ॥ ७३ ॥ तयोस्तदासादितयोरणाग्रेमुमोहसैन्यंहरियूथपानाम् ॥ सुग्रीवनीलांगदजांबवंतोनचापिकिंचित्प्रतिपेदिरेते ॥ १ ॥

लंकाको चलाजायगा ॥६८॥ इसके उपरान्त मेघनादके बाणोंसे श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी पीडित हो मूर्छा खाय पृथ्वीपर गिरगये यह देखकर राक्षसराजका पुत्र मेघनाद युद्धमें अपनी जय समझ हर्षमें भर घोर सिंहनाद करने लगा ॥६९॥ इस प्रकारसे राक्षसराजनंदन मेघनाद श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके सहित समस्त वानरोंकी सेनाको समरमें पराजित कर सहसा रावणकी बाँहोंसे पाली जाती हुई लंकापुरीमें प्रवेश करता हुआ और यहांपर निशाचरलोगोंने उसकी बहुतसी स्तुति की और हर्षसहित उसने अपने पिताके निकट समस्त वृत्तान्त निवेदन किया ॥७०॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां त्रिसप्ततितमः सर्गः ॥७३॥ श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीको इस प्रकारसे रणभूमिमें व्याकुल हुआ देखकर अंगद, नील, जाम्बवान् व और दूसरे वानर यूथपति

गणोंकी सेना निरुपाय और चेष्टारहित होकर मोहको प्राप्त हुई ॥ १ ॥ तब बुद्धिमान् लोगोंमें आगे गिने जानेके योग्य विभीषणजी सबको ऐसा विषादित देखकर वानरराज सुग्रीवजीके वीरोंको अनुपम वचनोंसे समझाने बुझाने लगे ॥ २ ॥ हे वीरगण ! तुम लोग डरो मत यह शोक करनेका अवसर नहीं है, तुम जो इन्द्रजीतके बाणजालसे श्रीराम, लक्ष्मणजीको व्याकुल और मृतक देखते हो; भगवान् स्वयंभू ब्रह्माजीका सन्मानही करनेके लिये श्रीराम लक्ष्मणजीने ऐसा किया है ॥ ३ ॥ स्वयंभू ब्रह्माजीने इंद्रजीतको यह बडा भारी अमोघ (अव्यर्थ)वीर्यवाला ब्रह्मास्त्र दान किया है यह दोनों राजकुमार इस अस्त्रकी मर्यादारक्षा करनेके लियेही ऐसी अवस्थाको प्राप्त होकर गिरे हैं, जो कुछभी हो फिर इसमें शोक करनेका वा घबडानेका क्या कारण है ? ॥४॥ पवनकुमार हनुमान्जी

ततोविषण्णंसमवेक्ष्यसर्वंविभीषणोबुद्धिमतांवरिष्ठः॥उवाचशाखामृगराजवीरानाश्वासयन्नप्रतिमैर्वचोभिः॥२॥माभैष्टनास्त्यत्रविषादकालोयदा र्यपुत्रौह्यवशौविषण्णौ॥स्वयंभुवोवाक्यमथोद्वहंतौयत्सादिताविंद्रजितास्त्रजालैः॥३॥तस्मैतुदत्तपरमास्त्रमेतत्स्वयंभुवाब्राह्ममोघवीर्यम्॥तन्मा नयंतौयुधिराजपुत्रौनिपातितौकोऽत्रविषादकालः॥४॥ब्राह्ममस्त्रंततोधीमान्मानयित्वातुमारुतिः॥ विभीषणवचःश्रुत्वाहनूमानिदमब्रवीत्॥५॥ अस्मिन्नस्त्रहतेसैन्येवानराणांतरस्विनाम् ॥ योयोधारयतेप्राणांस्तंतमाश्वासयावहे॥६॥ तावुभौयुगपद्वीरौहनूमद्राक्षसोत्तमौ ॥ उल्काहस्तौत दारात्रौरणशीर्षेविचेरतुः ॥७॥ भिन्नलांगूलहस्तोरुपादांगुलिशिरोधरैः॥ स्रवद्भिःक्षतजंगात्रैःप्रस्रवद्भिःसमंततः॥८॥ पतितैःपर्वताकारैर्वानरैर भिसंवृताम् ॥ शस्त्रैश्चपतितैर्दीप्तैर्ददृशातेवसुंधराम् ॥ ९ ॥ सुग्रीवमंगदंनीलंशरभंगंधमादनम् ॥ जांबवंतंसुषेणंचवेगदर्शिनमेवच ॥ १० ॥

विभीषणजीके वचन सुनकर उनकीही कही ब्रह्मास्त्रकी मर्यादाको "यथार्थ है" ऐसा कहते हुए बोले ॥५॥ हे राक्षसकुलतिलक ! राक्षसवीर इन्द्रजीतके चलाये हुए ब्रह्मास्त्रसे लगभग हमारी समस्त सेना मारीगई है इस समय जो वानर कि, जीवित हैं उनको समझाना बुझाना हमारा कर्तव्य है ॥ ६ ॥ इसके उपरान्त हनुमान्जी और विभीषणजी यह दोनों वीर उस रात्रिमेंमसाल हाथमें लेकर रणभूमिमें घूमने लगे ॥७॥ उन्होंने रणभूमिमें घूमते हुए देखा कि, हाथ, जांघ, पैर, उंगली, मस्तक और पूंछ कटेहुए अनेक वानर रणभूमिमें पडेहुए हैं, बहुत वानरोंके शरीरसे रुधिरकी धारा बहरही है, किसी २ वानरोंको भयके मारे मूत्र हो गया है ॥८॥ पर्वताकार प्रधान २ वानरोंके गिरनेसे रणभूमि परिपूर्ण हो रही है और बहुतसारे अस्त्र शस्त्रभी टूटे फूटे हुए पडे हैं ॥९॥ सुग्रीव, अंगद, नील, शरभ, गन्धमादन, जाम्बवन्त, सुषेण और वेगदर्शी ॥ १० ॥

मैन्द, नल, ज्योतिर्मुख और द्विविद वानरोंकोभी हनुमान् और विभीषणजीने रणभूमिमें मृतक हुए देखा ॥११॥ इस संग्रामके मध्यमें दिनके पांचवें भागमें अर्थात् छः घडीमें ब्रह्माजीके अस्त्रसे रावणके पुत्र मेघनादने सतसठ करोड वानरोंको मारडाला था, उन सबको उन दोनों वीरोंने देखा ॥१२॥ हनुमानूजी विभीषणके सहित समुद्रके प्रवाहके समान विस्तार वाली भयंकर वानर सेनाकी यह दशा देखकर जाम्बवानूको खोजने लगे॥१३॥ बहुत ढूंढ भाल करनेके पीछे शीघ्र बुझाने वाली अग्निके समान सैकडों हजारों बाणोंसे विंधे हुए जराग्रसित वृद्ध प्रजापतिके पुत्र वीर जाम्बवानूको ॥१४॥ देखकर पौलस्त्य विभीषणजी उनके समीप जायकर बोले कि हे आर्य! इस दारुण तीक्ष्ण बाणोंकी वर्षासे आपके कहीं चोट तो नहीं लगी आप प्राण तो धारण किये हैं? ॥१५॥ विभीषणजीके वचन सुनकर ऋक्षश्रेष्ठ

मैंदंनलंज्योतिर्मुखंद्विविदंचापिवानरम् ॥ विभीषणोहनूमांश्चददृशातेहतान्रणे ॥ ११ ॥ सप्तषष्टिर्हताःकोट्योवानराणांतरस्विनाम् ॥ अह्नःपंचमशेषेणवल्लभेनस्वयंभुवः ॥ १२ ॥ सागरौघनिभंभीमंदृष्ट्वाबाणार्दितंबलम् ॥ मार्गतेजांबवंतंचहनूमान्सविभीषणः ॥ १३ ॥ स्वभावजरयायुक्तंवृद्धंशरशतैश्चितम् ॥ प्रजापतिसुतंवीरंशाम्यंतमिवपावकम् ॥१४॥ दृष्ट्वासमभिसक्रम्यपौलस्त्योवाक्यमब्रवीत् ॥ कच्चिदार्यशरैस्तीक्ष्णैर्नप्राणाध्वंसितास्तव ॥ १५ ॥ विभीषणवचःश्रुत्वाजांबवानृक्षपुंगवः ॥ कृच्छ्रादभ्युद्गिरन्वाक्यमिदंवचनमब्रवीत् ॥ १६ ॥ नैर्ऋतेंद्रमहावीर्यस्वरेणत्वाभिलक्षये ॥ विद्धगात्रःशितैर्बाणैर्नत्वांपश्यामिचक्षुषा ॥ १७ ॥ अंजनासुप्रजायेनमातरिश्वाचसुव्रत ॥ हनूमान्वानरश्रेष्ठःप्राणान्धारयतेक्वचित् ॥ १८ ॥ श्रुत्वाजांबवतोवाक्यमुवाचेदंविभीषणः ॥ आर्यपुत्रावतिक्रम्यकस्मात्पृच्छसिमारुतिम् ॥ १९ ॥ नैवराजनिसुग्रीवेनांगदेनापिराघवे ॥ आर्यसंदर्शितःस्नेहोयथावायुसुतेपरः ॥ २० ॥

जाम्बवानूजी अत्यन्त कष्टसे वचन उच्चारण कर कहने लगे ॥१६॥ हे वीर्यवान्! तीखे बाणोंसे हमारा शरीर ऐसा विद्ध हुआ है, कि हम आपको अपने नेत्रोंसे देख भी नहीं सकते हैं, केवल आपका बोल सुनकर ही हम आपको राक्षसोंका स्वामी विभीषण मानते हैं॥१७॥ हे सुव्रत! जिनको पुत्र प्राप्त करके अंजनी सुपुत्रवती हुई है और पवनदेव पुत्रवान् हुए हैं वह वानरश्रेष्ठ हनुमान् क्या जीवित हैं? ॥१८॥ जाम्बवानूके वचन सुनकर विभीषणजी बोले आर्य! आप आर्यपुत्र श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीको छोडकर प्रथम किस कारणसे हनुमानूजीका वृत्तान्त पूछते हैं?॥१९॥ आपने रघुनंदन, वानर सुग्रीवजी अथवा अंगदजीके प्रति स्नेहानुराग न दिखाकर हनुमानूजीमें जो ऐसा स्नेह प्रकाश किया इसका कारण क्या है! ॥२०॥

विभीषणजीके वचन सुनकर जाम्बवन्तजीने कहा; हे राक्षसशार्दूल! हमने जिस कारणसे और सबको छोडकर केवल हनुमान्जीका वृत्तान्त पूछा, उसका कारण श्रवण करो ॥२१॥ यद्यपि यह वानरोंकी सेना मारी तो गई है परन्तु वीरश्रेष्ठ वानर हनुमान्जीके जीवित रहते हम किसीको भी मरा हुआ नहीं समझते परन्तु पवनकुमार हनुमान्जीके मर जानेसे हम लोग जीते हुए भी मरेही हैं ॥२२॥ इससे जो हनुमान् जीवित हों तब हमें जीवनकी आशा होगी नहीं तो जीना क्या है ? कारण कि वह पवनके समान समरमें वेगवान् हैं और वीर्यमें अग्निके समान हैं, हे तात! हनुमान्जीका जीना सुनकर फिर हमें जीनेकी आशा होगी ॥२३॥ तब महावीर हनुमान्जी वृद्ध जाम्बवान्के निकट जाकर उनके चरण पकड विनीतभावसे प्रणाम करके अपना नाम बतायकर बोले कि, हम आपकी कृपासे जीते हैं ॥२४॥ तब हनुमान्जीके वचन सुनकर रीछराज अत्यन्त कातर रहनेपर भी आनन्दके मारे अत्यन्त हर्षित हो अपना दूसरा जन्म समझते हुए॥२५॥

विभीषणवचःश्रुत्वाजांबवान्वाक्यमब्रवीत ॥ शृणुनैर्ऋतशार्दूलयस्मात्पृच्छामिमारुतिम् ॥ २१ ॥ अस्मिञ्जीवतिवीरेतुहतमप्यहतंबलम् ॥ हनूमत्युज्झितप्राणेजीवंतोऽपिमृतावयम् ॥ २२ ॥ धरतेमारुतिस्तातमारुतप्रतिमोयदि ॥ वैश्वानरसमोवीर्येजीविताशाततोभवेत् ॥ २३ ॥ ततोवृद्धमुपागम्यविनयेनाभ्यवादयत् ॥ गृह्यजांबवतःपादौहनूमान्मारुतात्मजः ॥ २४ ॥ श्रुत्वाहनूमतोवाक्यंतदाविव्यथितेंद्रियः ॥ पुनर्जातमिवात्मानंमन्यतेप्लवगोत्तमः ॥ २५ ॥ ततोऽब्रवीन्महातेजाहनूमंतंसजांबवान् ॥ आगच्छहरिशार्दूलवानरांस्त्रातुमर्हसि ॥ २६ ॥ नान्योविक्रमपर्याप्तस्त्वमेषांपरमःसखा ॥ त्वत्पराक्रमकालोऽयंनान्यंपश्यामिकंचन ॥ २७ ॥ ऋक्षवानरवीराणामनीकानिप्रहर्षय ॥ विशल्यौकुरुचाप्येतौसादितौरामलक्ष्मणौ ॥ २८ ॥ गत्वापरममध्वानमुपर्युपरिसागरम् ॥ हिमवंतंनगश्रेष्ठंहनूमन्गंतुमर्हसि ॥ २९ ॥ ततःकांचनमत्युग्रमृषभंपर्वतोत्तमम् ॥ कैलासशिखरंचात्रद्रक्ष्यस्यरिनिषूदन ॥ ३० ॥

इसके उपरांत महा तेजस्वी जाम्बवान्जी हनुमान्जीसे बोले कि, हे वानरश्रेष्ठ ! आओ, प्रथम इन सब वानरोंकी रक्षा करना तुम्हारा कर्त्तव्य है ॥२६॥ हे वीर! इस समय हम और किसीको नहीं देखते केवल तुमही इन लोगोंके परमसखा हो और तुम्हारा पराक्रमही इन लोगोंका उद्धार करनेमें यथेष्ट होगा, विशेष करके इस समय तुम्हारे उस पराक्रमके प्रकाश करनेका समय आया है ॥२७॥ रीछ और वानरवीरगणोंकी इस समस्त सेनाको हर्षित कराओ और पीडित हुए श्रीराम व लक्ष्मणजीके अंगोंमेंसे बाण निकाल डालो ॥२८॥ हे शत्रुदमनकारी हनुमान् ! तुम इस समय महासमुद्रके पार बहुत दूरतक गमन करके पर्वतश्रेष्ठ हिमालय पर पहुँचोगे ॥२९॥ इसके आगे सुवर्णमय ऋषभनाम पर्वतश्रेष्ठ है, हे शत्रुदमनकारी ! वहांपर तुम कैलास पर्वतके शिखरभी देखोगे ॥ ३० ॥

वहांपर इन दोनों शिखरोंके मध्यमें समस्त औषधियोंसे युक्त अतुलप्रभायुक्त और प्रदीप्त औषधि पर्वत तुमको दिखाई देगा ॥ ३१ ॥ हे वानरशार्दूल ! तुम उस पर्वतके शिखरपर चार प्रकारकी औषधि देख पाओगे, तुम देखोगे कि, वह अपने प्रभावसे दशों दिशाओंको प्रकाशमान् कर रही होंगी ॥ ३२ ॥ उसके मृतसञ्जीवनी [मरे हुएको जिलाने वाली] विशल्यकरणी [अंगोंकी व्यथा दूर करने वाली] सवर्णकरिणी [घाव आदिकसे हुई विवर्णताको दूर कर अग सुन्दर करती है] और सन्धानकरणी [लगातेही घावको भरदेती है] यह चार नाम हैं ॥३३॥ हे गन्धवह [पवन] नंदन हनुमान् ! तुम इन सब औषधियोंको जितनी जलदी लासकते हो, उतनी जलदी लेआओ; और वानरोंको प्राणदान देकर इन लोगोंको आनंदित करो ॥ ३४ ॥ उस समय पवन

तयोःशिखरयोर्मध्येप्रदीप्तमतुलप्रभम् ॥ सर्वौषधियुंतवीरद्रक्ष्यस्योषधिपर्वतम् ॥ ३१॥ तस्यवानर शार्दूलचतस्रोमूर्ध्निसंभवाः॥द्रक्ष्यस्योषधयोदीप्तादीपयंतीर्दिशोदश ॥ ३२ ॥ मृतसंजीवनींचैवविशल्यकरणीमपि ॥ सुवर्णकरणींचैवसंधानींचमहौषधीम् ॥ ३३ ॥ ताःसर्वाहनुमन्गृह्यक्षिप्रमागंतुमर्हसि ॥ आश्वासयहरीन्प्राणैर्योज्यगंधवहात्मज ॥३४॥ श्रुत्वाजांबवतोवाक्यंहनूमान्मारुतात्मजः ॥ आपूर्यतबलोद्धर्षैर्वायुवेगैरिवार्णव ॥ ३५ ॥ सपर्वततटाग्रस्थःपीडयन्पर्वतोत्तमम्॥ हनूमान्दृश्यतेवीरोद्वितीयइवपर्वतः ॥ ३६ ॥ हरिपादविनिर्मग्नोनिषसादसपर्वतः ॥ नशशाकतदात्मानंवोढुंभृशनिपीडितः॥३७॥ तस्यपेतुर्नगाभूमौहरिवेगाच्चजज्वलुः ॥ श्रृंगाणिचव्यकीर्यंतपीडितस्यहनूमता ॥३८॥ तस्मिन्संपीड्यमानेतुभग्नद्रुमशिलातले॥ नशे कुर्वानराःस्थातुंघूर्णमानेनगोत्तमे ॥ ३९ ॥

नंदन हनुमान्जी जाम्बवन्तके वचन सुनकर पवनके वेगसे जिस प्रकार समुद्र उफन जाता है, वैसेही प्रबल वेगसे आप भी उद्धत हो उठे॥३५॥ इसके उपरान्त कूदनेके लिये ही जब यह त्रिकूट पर्वतके आगे खडे हुए तब दूसरे पर्वतके समान जान पडते थे ॥ ३६ ॥ उस काल वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीके पावोंद्वारा अत्यन्त पीडित होनेसे वह पर्वत अपने स्थानमें रहनेको असमर्थ हो टूटकर झुक पडा ॥ ३७ ॥ वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीके वेगसे पीडित होनेसे उस पर्वतके समस्त वृक्ष पृथ्वीपर गिर पडे और उसके समस्त शिखर फट गये कि, जिनसे अग्नि निकलने लगी और सब श्रृंग भी फट गये ॥३८॥ इस प्रकार पर्वतश्रेष्ठ त्रिकूटके सब वृक्ष टूट गये, शिलाओंका चूरा हो गयाऔर वहपर्वत भीपीडित होकर घूमने लगा;उस पर्वतके रहनेवाले वानरलोग उसपर नहीं टिक सके॥३९॥

लंकाके गृह और पुरद्वार टूट गये और कंपायमान होने लगे, सबही शंका युक्त हुए उस समय ऐसा ज्ञात हुआ कि मानो राक्षसोंकी पुरी लंका नाचरही है ॥४०॥ पर्वताकार वानरवीर पवनकुमार पर्वतको पीडित करके समस्त पृथ्वीको समुद्रके सहित चलायमान कर देते हुए ॥४१॥ हनुमानूजी चरणके आघातसे पृथ्वीको विदीर्ण करके घोडीके मुखके समान प्रदीप्त मुख फैलाय राक्षसोंको शंकित करके घोर गर्जन करनेलगे॥४२॥ लंकामें टिके हुए राक्षसलोगअचानक कठोर गर्जन सुनकर चमक उठे और बात तो अलग रही उस समय किसीको भी हिलने डुलने तकका सामर्थ्य न रहा ॥ ४३ ॥ इसके उपरान्त भयंकर विक्रमकारी शत्रुओंके मारनेवाले श्रीहनुमानूजीश्रीरामचन्द्रजीको नमस्कार करके उनका कार्यसाधन करनेके लिये तैयार हुए * ॥४४॥ श्रीहनुमानूजी सर्पाकार

साघूर्णितमहाद्वाराप्रभग्नगृहगोपुरा ॥ लंकात्रासाकुलारात्रौप्रनृत्येवाभवत्तदा ॥४०॥ पृथिवीधरसंकाशोनिपीड्यपृथिवीधरम् ॥ पृथिवींक्षोभयामाससार्णवांमारुतात्मजः ॥४१॥ पद्भ्यांतुशैलमाविध्यवडवामुखवन्मुखम् ॥ विवृत्योग्रंननादोच्चैस्त्रासयन्नजनीचरान् ॥४२॥ तस्यनानद्यमानस्यश्रुत्वानिनदमुत्तमम् ॥ लंकास्थाराक्षसव्याघ्रानशेकुःस्पंदितुंक्वचित् ॥ ४३ ॥ नमस्कृत्वाथरामायमारुतिर्भीमविक्रमः॥राघवार्थेपरं-कर्मसमीहतपरंतपः ॥ ४४ ॥ सपुच्छमुद्यम्यभुजंगकल्पंविनम्यपृष्ठंश्रवणेनिकुच्य ॥ विवृत्यवक्त्रंवडवामुखाभमापुप्लुवेव्योम्निसचंडवेगः ॥ ४५ ॥ सवृक्षखंडांस्तरसाजहारशैलाच्छिलाःप्राकृतवानरांश्च ॥ बाहूरुवेगोद्धतसंप्रणुन्नास्तेक्षीणवेगाःसलिलेनिपेतुः ॥ ४६ ॥ सतौप्रसार्योरगभोगकल्पौभुजौभुजंगारिनिकाशवीर्यः ॥ जगामशैलंनगराजमग्र्यंदिशःप्रकर्षन्निववायुसूनुः ॥ ४७ ॥ ससागरंघूर्णितवीचिमालंतदंभसाभ्रामितसर्वसत्त्वम् ॥ समीक्ष्यमाणःसहसाजगामचक्रंयथाविष्णुकराग्रमुक्तम् ॥ ४८ ॥

अपनी पूंछ ऊपरको उठाय दोनों कानोंको सकोड घोडीके समान मुख फैलाय कमर झुकाय अतिप्रचंड वेगसे आकाश मार्गमें कूदे ॥ ४५ ॥ हनुमानूजीके कूदनेके समय उनकी भुजा और उरुके वेगसे वृक्ष शिला, शैल और पर्वतपर रहनेवाले छोटे वानर भी ऊपरको उछल गये, परन्तु यह सब पदार्थ क्षीणबल होनेके कारण हनुमानूजीका प्रबल वेग न सहकर सबके सब समुद्रके जलमें जाकर गिरे ॥ ४६ ॥ इस ओर गरुडजीके वेगसे समान वीर्यवान् पवनकुमार हनुमानूजी अपनी सर्पाकार दोनों बांहैं फैलाते मानो सब दिशाओंको खैंचते हुए से उस पर्वतराजके सामनेको चले॥४७॥उस कालमें बलशाली वह वीर हनुमानूजी

* किसी 'किसी पुस्तकमें लिखा है 'नमस्कृत्या समद्राय मारुतिर्भीमदिक्रमः" परन्तु यह पाठ असंगत है, प्राचीन सब पुस्तकोंमें यही श्लोक है 'नमस्कृत्वाथ रामाय मारुतिर्भीमविक्रमः ।। राघवार्थे परं कर्म समीहितपरंतपः ।।

महातरंगोंसे व्याप्त महासागर और उसके जलमें घूमनेवाले जलजीव समूहोंको देखते २ विष्णुजीके हाथसे छूटे हुए चक्रके समान प्रचंड वेगसे गमन करने लगे ॥४८॥ उस कालमें पिता पवनके समान वेगसे गमन करनेवाले हनुमानूजीने असंख्य पर्वत, वृक्ष, सरोवर, नदी तट और बहुत जनोंसे समाकुलजनपद देखके गमन किये ॥४९॥ पिताके समान पराक्रमशाली वीर हनुमानूजीको सूर्य भगवानूका आश्रय ले गमन करनेपर भी उनको कुछ भी परिश्रम नहीं ज्ञात हुआ ॥५०॥ वानरश्रेष्ठ पवनकुमार हनुमानूजी पवनके समान अति वेगसे गमन करते हुए शब्दसे दशोंदिशाओंको शब्दायमान करने लगे ॥ ५१ ॥ भयंकर पराक्रमकारी महाकपि हनुमानूजीने जांबवानूजीके वचनोंको याद कर अत्यन्त वेगसे गमन करते २ हिमवानू पर्वतराजको देखा। ॥५२॥ इसके उपरान्त असंख्य सोते, कन्दर, झरनोंसे युक्त और श्वेत बादलके समान उजले वर्णवाले सुन्दर २ शिखर और विविध वृक्षोंसे शोभित उस पर्वत श्रेष्ठपर हनुमानूजी गमन करते

सपर्वतान्यक्षिगणान्सरांसिनदीस्तटाकानिपुरोत्तमानि ॥ स्फीताञ्जनांस्तानपिसंप्रवीक्ष्यजगामवेगात्पितृतुल्यवेगः ॥४९॥ आदित्यपथमाश्रित्यजगामसगतश्रमः ॥ हनूमांस्त्वरितोवीरःपितुस्तुल्यपराक्रमः ॥५०॥ जवेनमहतायुक्तोमारुतिर्वातरंहसा ॥ जगामहरिशार्दूलोदिशःशब्देननादयन् ॥ ५१ ॥ स्मरञ्जांबवतोवाक्यंमारुतिर्भीमविक्रमः ॥ ददर्शसहसाचापिहिमवंतंमहाकपिः ॥५२॥ नानाप्रस्रवणोपेतंबहुकंदरनिर्झरम् ॥ श्वेताभ्रचयसंकाशैःशिखरैश्चारुदर्शनैः ॥ शोभितंविविधैर्वृक्षैरगमत्पर्वतोत्तमम् ॥५३॥ सतंसमासाद्यमहानगेंद्रमतिप्रवृद्धोत्तमहेमशृंगम् ॥ ददर्शपुण्यानिमहाश्रमाणिसुरर्षिसंघोत्तमसेवितानि ॥५४॥ सब्रह्मकोशंरजतालयंचशक्रालयंरुद्रशरप्रमोक्षम् ॥ हयाननंब्रह्मशिरश्चदीप्तंददर्शवैवस्वतकिंकरांश्च ॥५५॥ वह्न्यालयंवैश्रवणालयंचसूर्यप्रभंसूर्यनिबंधनंच ॥ ब्रह्मालयंशंकरकार्मुकंचददर्शनाभिंचवसुंधरायाः ॥५६॥ कैलासमुग्रंहिमवच्छिलांचतंवैवृषंकांचनशैलमग्र्यम् ॥ प्रदीप्तसर्वौषधिसंप्रदीप्तंददर्शसर्वौषधिपर्वतेंद्रम् ॥ ५७ ॥

हुए ॥५३॥ हनुमानू जीने अति ऊंचे सुवर्णके श्रृङ्गोंसे सुशोभित उस महापर्वतपर पहुँच कर देवर्षिगणोंसे सेवित वहांके उत्तम पवित्र महाश्रमोंका दर्शन किया ॥ ५४ ॥ ब्रह्मकोष, रजतालय, इन्द्रालय और त्रिपुरके संहार कालमें जिस स्थानसे रुद्रजीने अस्त्र छोडा था, जहां भगवानू हयग्रीवजी विराजमान हो रहे थे, जिस स्थानमें ब्रह्मास्त्रके अधिष्ठात्री देवता विराजते थे वह सब आश्रम और समस्त यमके किंकरगणोंको हनुमानूजीने देखा ॥ ५५ ॥ अग्नि और बेरजीका स्थान सूर्यके समान प्रभावशाली सूर्यगणोंका सम्मिलनस्थान, ब्रह्माजीका स्थान, जयश्रीशंकरजीका पिनाकनामक धनु, और वसुन्धराकी नाभि, अर्थात् सब प्राजापत्य स्थानोंको देखा ॥५६॥ महावीर पवनकुमार हनुमानूजीने उस हिमालय पर विघ्नेश्वर (गणेशजी), नन्दिकेश्वर; देवता लोगोंसे वेष्टित कुमार कार्तिकेय

और कन्यागणोंके साथमें दीप्तिमती हैमवती (दुर्गाजी) को देखा। इसके उपरान्त हिमवत् शिखर कैलास,जाम्बवंतके बताये हुए वृक्ष पर्वतश्रेष्ठ सुवर्णका पर्वत देख कर सब औषधियोंसे प्रदीप्त औषधि पर्वत हनुमानूजीने देखा॥ ५७॥ पवनकुमार हनुमानूजी कूदकर अनलकी राशिके समान प्रदीप्त और औषधि पर्वतपर पहुँच कर जाम्बवानूकी बताई हुई सब औषधियोंको खोजने लगे और इन औषधियोंको अग्निके समान प्रकाशमान देख हनुमानूजी विस्मित भी हुए ॥५८॥ इस प्रकार महाकपि हनुमानूजी हजार योजन मार्ग चलकर सब औषधियुक्त उस पर्वतपर पहुँच कर घूमने लगे ॥५९॥ परन्तु उस पर्वतश्रेष्ठके ऊपर जो समस्त महौषधि थीं, वह समझकर कि, हमको ढूँढनेको कोई आया है, सबही अदृश्य हो गईं॥ ६०॥ उन समस्त औषधियोंको न देखपाय पर क्रोधके मारे हनुमानूजीके दोनों नेत्र अग्निके समान लाल हो गये और और वह उन औषधियोंका ऐसा कार्य न सहन करके वारंवार सिंहनाद करते हुए

सतंसमीक्ष्यानलराशिदीप्तंविसिस्मियेवासवदूतसूनुः ॥ आप्लुत्यतंचौषधिपर्वतेंद्रंतत्रौषधीनांविचयंचकार ॥ ५८ ॥ सयोजनसहस्राणिस मतीत्यमहाकपिः ॥ दिव्यौषधिधरंशैलंव्यचरन्मारुतात्मजः ॥ ५९ ॥ महौषध्यस्ततःसर्वास्तस्मिन्पर्वतसत्तमे ॥ विज्ञायार्थिनमायांतंततोज ग्मुरदर्शनम् ॥ ६० ॥ सतामहात्माहनुमानपश्यंश्चुकोपरोषाच्चभृशंननाद ॥ अमृष्यमाणोऽग्निसमानचक्षुर्महीधरेंद्रंतमुवाचवाक्यम् ॥६१॥ किमेतदेवंसुविनिश्चितंतेयद्राघवेनासिकृतानुकंपः ॥ पश्याद्यमद्बाहुबलाभिभूतोविकीर्णमात्मानमथोनगेंद्र ॥ ६२ ॥ सतस्यशृंगंसनगंसनागं सकांचनंधातुसहस्रजुष्टम् ॥ विकीर्णकूटंज्वलिताग्रसानुंप्रगृह्यवेगात्सहसोन्ममाथ ॥६३॥ सतंसमुत्पाटचखमुत्पपातवित्रास्यलोकान्ससुरा सुरेंद्रान् ॥ संस्तूयमानःखचरैरनेकैर्जगामवेगाद्गरुडोऽग्रवेगः ॥ ६४ ॥

उस पर्वतसे बोले॥ ६१ ॥ हे पर्वत ! तुम जो श्रीरामचन्द्रजीके प्रति दया प्रगट नहीं करते यह कैसा कार्य तुमने निश्चय किया है ? यदि तुमने अपनी सामर्थ्यपर भरोसा रखके कार्यमें ऐसी उदासीनता प्रकाश की तो आज हमारे बाहु बलसे व्याकुल होकर तुम अपनेको रत्ती २ चूर्ण हुआ देखोगे ॥ ६२॥ यह कह कर हनुमानूजीने शृंग, प्रस्तर, खण्ड, मातंग और सुवर्ण आदि धातुओंके उस अनेक शिखरवाले और सहस्रों धातुओंसे प्रज्वलित शृंग सानु समन्वित उस पर्वतको सहसा ग्रहण करके अतिवेगसे उखाड लिया ॥६३॥ गरुडजीके समान अति उग्र वेगवाले हनुमानूजी उस पर्वतशृंगको उखाड आकाशमें उछलगये और सुरेंद्र व असुरगणोंके सहित समस्त लोकोंको त्रासित करते २ असंख्य आकाशचारियोंसे स्तुति कियेजाते हुए अतिवेगसे गमन करतेहुए ॥६४॥

सूर्यके समान रूपसम्पन्न वह वीर हनुमानूजी सूर्यके समान पर्वतग्रहण करके सूर्यके मार्गमें उपस्थित हो दूसरे सूर्यके समान शोभा धारण करते हुए ॥६५॥ पर्वताकार हनुमानूजी उस पर्वतको ग्रहण करके अग्निकी ज्वालासे युक्त हाथमें सहस्र धार चक्रद्वाराशोभित विष्णुजीके समान शोभायमान होने लगे ॥ ६६ ॥ उस कालमें लंकाके मैदानमें खडे हुए वानरगण उनको देखकर सिंहनाद करने लगे और हनुमानूजीको उनको देखकर सिंहनाद कर उठे, उस अत्यन्त दारुण शब्दको श्रवण करके लंकानिवासी निशाचरगण भी भयंकर घोर सिंहनाद करने लगे ॥ ६७ ॥ इसके उपरान्त महाबलवानू हनुमानूजी पर्वतश्रेष्ठ त्रिकूटके ऊपर वानरोंकी सेनामें उतरकर मुख्य २ वानरोंको प्रणाम करके विभीषणजीको लिपटायकर मिले ॥ ६८ ॥ इस ओर मनुष्य राजकुमार राम और

सभास्कराध्वानमनुप्रपन्नस्तंभास्कराभंशिखरंप्रगृह्य ॥ बभौतदाभास्करसन्निकाशोरवेःसमीपेप्रतिभास्कराभः॥ ६५ ॥ सतेनशैलेनभृशंरराजशैलोपमोगंधवहात्मजस्तु ॥ सहस्रधारेणसपावकेनचक्रेणखेविष्णुरिवार्पितेन ॥६६॥ तंवानराःप्रेक्ष्यतदाविनेदुःसतानपिप्रेक्ष्यमुदाननाद ॥ तेषांसमुत्कृष्टरवंनिशम्यलंकालयाभीमतरंविनेदुः ॥६७॥ ततोमहात्मानिपपाततस्मिञ्शैलोत्तमेवानरसैन्यमध्ये ॥ हर्युत्तमेभ्यःशिरसाभिवाद्य विभीषणंतत्रचसस्वजेसः॥६८॥तवाप्युभौमानुषराजपुत्रौतंगंधमाघ्रायमहौषधीनाम्॥बभूवतुस्तत्रतदाविशल्याबुत्तस्थुरन्येचहरिप्रवीराः॥६९॥ सर्वेविशल्याविरुजाःक्षणेनहरिप्रवीराश्चहताश्चयेस्युः ॥ गंधेनतासांप्रवरौषधीनांसुप्तानिशांतेष्विवसंप्रबुद्धाः ॥७०॥ यदाप्रभृतिलंकायांयुध्यंते हरिराक्षसाः ॥ तदाप्रभृतिमानार्थमाज्ञयाराघवस्यच ॥७१॥ येहन्यंतेरणेतत्रराक्षसाःकपिकुंजरैः ॥ हताहतास्तुक्षिप्यंतेसर्वएवतुसागरे ॥७२॥

लक्ष्मणजी सब महौषधियोंकी सुगन्धि सूंघकर उसी समय घाव रहित हो गये और वानरवीर गणभी घाव रहित हो उठ बैठे ॥ ६९ ॥ जिस प्रकार रात्रिके आनेसे समस्त जीव सो जाते हैं और रात्रि बीत जानेपर जाग उठते हैं वैसेही एक क्षण समस्त वानर रोगरहित होकर उठ बैठे और जो वानर रणमें मृतक हो गये थे उन वानरोंकी भी देहोंमें प्राण आय गये ॥ ७० ॥ परन्तु उन महौषधियोंसे राक्षस कोई भी नहीं जिया, कारणकि जबसे वानर और राक्षसोंका युद्ध आरंभ हुआ था उस समयसेही रावणकी आज्ञाके अनुसार परिमाण जाननेके लिये ॥७१॥ जो राक्षस रणमें वानरवीरोंसे मारेजाते थे वह समस्त राक्षसोंके द्वारा तुरंतही समुद्रमें फेंक दिये जाते थे, फिर भला राक्षस कैसे जियें ॥ ७२ ॥

इसके उपरान्त जब समस्त वानर जीगये तब अत्यन्त वेगसम्पन्न गन्धवहनंदन (पवनकुमार) वानरश्रेष्ठ हनुमान्जी उस औषधिपर्वतको ग्रहण करके वेगसे हिमालय पर्वतपर जहांका तहां स्थापन करके फिर श्रीरामचन्द्रजीके निकट चले आये ॥ ७३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां चतुःसप्ततितमः सर्गः ॥ ७४ ॥ इसके उपरांत वानरराज सुग्रीवजी किसी एक कार्यको विचार करके हनुमान्जीसे यह कहते हुए ॥ १ ॥ जब कि कुम्भकर्ण मारा गया और रावणके पुत्र भी मारे गये उसपर भी यह रावण अपनी लंकापुरीकी रक्षाकरनेमें समर्थ होगा ऐसा तो हमें ज्ञात नहीं होता ॥ २ ॥ इसलिये इन सब वानरोंमें जो महाबलवान् और शीघ्र विक्रमकारी वानरगण हैं वह वानरगण शीघ्रही मसाले हाथमें लेकर लंकापुरीको जलावें ॥३॥ जब वानरराज

ततोहरिर्गंधवहात्मजस्तुतमोषधीशैलमुदग्रवेगः ॥ निनायवेगाद्धिमवंतमेवपुनश्चरामेणसमाजगाम ॥७३॥ इत्यार्षे श्रीम० वा० आ० च० सा० युद्धकांडे चतुःसप्ततितमः सर्गः ॥७४॥ ततोऽब्रवीन्महातेजाःसुग्रीवोवानरेश्वरः ॥ अर्थ्यंविज्ञापयंश्चापिहनूमंतमिदंवचः ॥१॥ यतोहतःकुम्भकर्णःकुमाराश्चनिषूदिताः॥ नेदानीमुपनिर्हाररावणोदातुमर्हति ॥२॥ येयेमहाबलाःसंतिलघवश्चप्लवंगमाः ॥ लंकामभिपतंत्वाशुगृह्योल्काःप्लवगर्षभाः ॥३॥ ततोऽस्तंगतआदित्येरौद्रेतस्मिन्निशामुखे ॥ लंकामभिमुखाःसोल्काजग्मुस्तेप्लुवगर्षभाः ॥ ४ ॥ उल्काहस्तैर्हरिगणैःसर्वतःसमभिद्रुताः ॥ आरक्षस्थाविरूपाक्षाःसहसाविप्रदुद्रुवुः ॥५॥ गोपुराट्टप्रतोलीषुचर्यासुविविधासुच ॥ प्रासादेषुचसंहृष्टाःससृजुस्तेहुताशनम् ॥ ६ ॥ तेषांगृहसहस्राणिददाहहुतभुक्तदा ॥ प्रासादाःपर्वताकाराःपतंतिधरणीतले ॥ ७ ॥ अगुरुर्दह्यतेतत्रपरंचैवसुचंदनम् ॥ मौक्तिकामणयःस्निग्धावज्रंचापिप्रवालकम् ॥ ८ ॥

सुग्रीवजीने इसप्रकारसे आज्ञा दी तो उसी दिन सूर्य छिपनेके पीछे घोर रात्रिमें वानर श्रेष्ठगण मसाले हाथमें लेलेकर लंकाके सन्मुख गये॥४॥ विरूपाक्ष राक्षसगण जो कि, लंकाके द्वारकी रक्षा करते थे वह सब वानरोंको लूके हाथमें लिये हुए देखकर घबडाये और वानरगणोंसे मार खाय कर भाग गये ॥५॥ तब वानर लोगोंने हर्षित अंतःकरणसे बाहर द्वारपर अटारियोंपर, छज्जोंपर विविध चर्या और धवरहरोंपर सबही जगह अग्नि लगादी ॥ ६ ॥ उस कालमें अग्निने उन राक्षसोंके हजारों गृह भस्म कर दिये. और पर्वताकार समस्त धवरहर भस्म हो पृथ्वीपर भहरायकर गिरने लगे ॥७॥ लंकाके स्थान २ में अगर, परमसुगंधियुक्त चन्दन, मुक्ता, मणि, उत्तम २ हीरे मूंगे भस्म होने लगे ॥ ८ ॥

अनेक प्रकारके क्षौम, कौशय (रेशमी), राकव और ऊनके बने हुए वस्त्रादि भस्म होगये, आयुध व सुवर्णके पात्रभी जलकर मिट्टीमें मिलगये ॥९॥ भांति २ अन्नादि धरनेके स्थान घोडोंके और दूसरे भी बहुत सारे अलंकार, हाथियोंके गलोंमें बांधनेकी वस्तुमें और कमरमें बांधनेके रस्से, रथोंके गहने व भोजनादिके पात्र जोकुछ भी बने ठने धरे थे ॥१०॥ योद्धागणोंके कवच वर्म इत्यादि; हाथी घोडोंके कवच, खड्ग धनुष, प्रत्यंचा, बाण, भाला, अंकुश, शक्ति ॥११॥ ऊनके बने हुए वस्त्र बालोंके बने हुए चामरादि असंख्य व्याघ्रचर्म, अण्डजात मृगमदादि और मुक्ता मणि इत्यादिसे जडित चित्र विचित्र धवरहर ॥१२॥ और विविध भांतिके अस्त्र शस्त्रादि इन सबको अग्निने भस्म करडाला, अनेक प्रकारके चित्र विचित्र भवनभी अग्निने भस्म करदिये ॥ १३ ॥ सब गृहनिवासी

क्षौमंचदह्यतेतत्रकौशेयंचापिशोभनम् ॥ आविकंविविधंचीर्णकांचनंभांडमायुधम् ॥९॥ नानाविकृतसंस्थानंवाजिभांडपरिच्छदम् ॥ गजग्रैवेयकक्ष्याश्चरथभांडांश्चसंस्कृतान् ॥१०॥ तनुत्राणिचयोधानांहस्त्यश्वानांचचर्मच ॥ खड्गाधनूंषिज्याबाणास्तोमरांकुशशक्तयः ॥११॥ रोमजंवालजंचर्मव्याघ्रजंचांडजंबहु ॥ मुक्तामणिविचित्रांश्चप्रासादांश्चसमंततः ॥१२॥ विविधानस्त्रसंघातानग्निर्दहतितत्रवै ॥ नानाविधान्गृहांश्चित्रान्ददाहहुतभुक्तदा ॥१३॥ आवासान्राक्षसानांचसर्वेषांगृहगृध्नुनाम् ॥ हेमचित्रतनुत्राणांस्रग्भांडांबरधारिणाम् ॥१४॥ सीधुपानचलाक्षाणांमदविह्वलगामिनाम् ॥ कांतालंबितवस्त्राणांशत्रुसंजातमन्युनाम् ॥१५॥ गदाशूलासिहस्तानांखादतांपिबतामपि ॥ शयनेषुमहार्हेषुप्रसुप्तानांप्रियैस्सह ॥१६॥ त्रस्तानांगच्छतांपूर्णंपुत्रानादायसर्वतः ॥ तेषांशतसहस्राणितदालंकानिवासिनाम् ॥१७॥ अदहत्पावकस्तत्रजज्वालचपुनःपुनः ॥ सारवंतिमहार्हाणिगंभीरगुणवंतिच ॥ १८ ॥ हेमचंद्रार्धचंद्राणिचंद्रशालोत्तमानिच ॥ तत्रचित्रगवाक्षाणिसाधिष्ठानानिसर्वशः ॥ १९ ॥

राक्षसोंके भवन, सुवर्णके कवचादि पहरे माला भूषण श्रेष्ठ वस्त्र धारण किये ॥१४॥ मदपान करनेसे चलायमान नेत्रवाले मदमाते होनेके कारण विह्वलतासे चलनेवाले स्त्रियोंकेकपडे पकडे हुए शत्रुओंके ऊपर क्रोध धारे ॥१५॥ गदा, शूल खड्ग हाथोंमें ग्रहण किये भोजन पान करते अपनी २ प्यारियोंके साथ अमोल बिछौनोंपर शयन करते ॥१६॥ भयभीत हो अपने २ पुत्रोंको साथ लेकर दशोंदिशाओंको भागते इस प्रकार शत २ सहस्र २ लंकानिवासियोंके समूहके समूह ॥१७॥ अग्निने भस्म करडाले, इस परभी अग्नि प्रचंड हो धुध करता हुआ अतिवेगसे जल रहा था बडे २ मोलके गंभीर गुणयुक्त ॥ १८ ॥ सुवर्णके बने पूर्ण चंद्रमा और अर्धचंद्रसे युक्त उत्तम चंद्रशाला कि जिनमें चित्र विचित्र झरोखे बनेथे और वह पंचमहले दुमहले बनेथे इनको ॥ १९ ॥

मणिऔर विद्रुमके जडावसे चित्र विचित्र और जो कि मानो सूर्यके छूनेहीको बनायेगये थे। क्रौंच और मोरोंके समानशोभित वर्ण भूषणोंके नादसे विनादित ॥२०॥ यहसमस्त पर्वताकार धवरहरे अग्निने जलादिये, उस कालमें अग्निसे दीप्तिमान समस्त तोरण ॥२१॥ ग्रीष्मकालमें दामिनीसे विराजित घटाके समान प्रकाश पाने लगे, अग्नि लगनेसे प्रकाशित समस्त गृह ॥२२॥ दावाग्निसे प्रकाशित महापर्वतके समान शोभायमान होनेलगे, समस्त विमानोंमें सोती हुई श्रेष्ठ स्त्रियें अग्निसे जलती हुई ॥२३॥ सबअंगोंसे गहने निकाल २ कर ऊंचे शब्दसे हाहाकार करके रोदन करने लगीं, अग्निसे जलाये समस्त भवन भी ॥२४॥ इन्द्रके वज्रसे आहत हुए महापर्वतोंके शृंगोंके समान गिरने लगे, वह भस्म हुए समस्त धवरहर दूसरे ऐसे प्रकाशित होते थे ॥२५॥ कि मानो जलते हुए हिमवान् पर्वतके शिखर जल रहे

मणिविद्रुमचित्राणिस्पृशंतीवदिवाकरम् ॥ क्रौंचबर्हिणवर्णानांभूषणानांचनिःस्वनैः ॥२०॥ नादितान्यचलाभानिवेश्मान्यग्निर्ददाहसः ॥ ज्वलनेनपरीतानितोरणानिचकाशिरे ॥ २१ ॥ विद्युद्भिरिवनद्धानिमेघजालानिघर्मगे ॥ ज्वलनेनपरीतानिगृहाणिप्रचकाशिरे ॥२२॥ दावाग्निदीप्तानियथाशिखराणिमहागिरेः ॥ विमानेषुप्रसुप्ताश्चदह्यमानावरांगनाः ॥२३॥ त्यक्ताभरणसंयोगाहाहेत्युच्चैर्विचुक्रुशुः ॥ तत्रचाग्निपरीतानिनिपेतुर्भवनान्यपि ॥ २४ ॥ वज्रिवज्रहतानीवशिखराणिमहागिरेः ॥ तानिनिर्दह्यमानानिदूरतःप्रचकाशिरे ॥ २५ ॥ हिमवच्छिखराणीवदह्यमानानिसर्वशः ॥ हर्म्याग्रैर्दह्यमानैश्चज्वालाप्रज्वालितैरपि ॥ ॥ २६ ॥ रात्रौसादृश्यतेलंकापुष्पितैरिवकिंशुकैः ॥ हस्त्याध्यक्षैर्गजैर्मुक्तैर्मुक्तैश्चतुरगैरपि ॥ बभूवलंकालोकांतेभ्रांतग्राहइवार्णवः ॥ २७ ॥ अश्वमुक्तंगजोदृष्ट्वाक्वचिद्भीतोपसर्पति ॥ भीतोभीतंगजंदृष्ट्वाक्वचिदश्वोनिवर्तते ॥ २८ ॥ लंकायांदह्यमानायांशुशुभेचमहोदधिः ॥ छायासंसक्तसलिलोलोहितोदइवार्णवे ॥ २९ ॥ साबभूवमुहूर्तेनहरिभिर्दीपितापुरी ॥ लोकस्यास्यक्षयेघोरेप्रदीप्तेववसुंधरा ॥ ३० ॥

हैं; ज्वालासे प्रज्वलित हर्म्यादिकोंके भस्म होनेसे ॥२६॥ फूले हुए पलाशके वृक्षोंसे पूर्ण रात्रिमें वह समस्त लंकानगरी ज्ञात होने लगी, उस कालमें अध्यक्ष लोगोंने अग्निके भयसे भीत होकर हाथी और घोडोंको उनके थानपरसे खोलदिया; उस समय ऐसा जानागया मानो लंकापुरी महाप्रलयमें घूमते हुए ग्राह मकरादिसे पूर्ण महासमुद्रके समान होगई है ॥२७॥ किसी स्थानमें हाथी घोडोंको खुला देखकर भागने लगा और कहीं डरे हुए हाथियोंको देख घोडाही लौट पडता था ॥२८॥ जब कि लंकानगरी इस प्रकारसे दग्ध होगई तब अग्निकी शिखाओंकी परछाईं समुद्रके जलमें पडनेसे समुद्र लाल समुद्रके समान जानपडता था ॥२९॥ अधिक क्या कहें वानरगणों करके दीप्तिमान की हुई वह लंकापुरी एक मुहूर्तभरमें प्रलयकालमें प्रदीप्त हुई पृथ्वीके समान भस्म होगई ॥३०॥

उस कालमें अग्निसे संतापित धुएंसे व्याप्त और रुदन करती हुई राक्षसोंकी स्त्रियोंका शब्द सौ योजनसेउनको मारने लगे ॥ ३२ ॥ उसकालमें वानरलोगोंके सुनाई आने लगा ॥ ३१ ॥ उस समय जले अधजले जो राक्षस भाग कर लंकाके बाहरको आते थे, युद्ध करनेके लिये वानरवृन्द उनके सन्मुख जाय २ कर उद्योगसे और निशाचरगणोंके शब्दसे दशोंदिशा समुद्र और समस्त पृथ्वी शब्दायमान होने लगी ॥३३॥ इस ओर दोनों राजकुमार महात्मा श्रीरामलक्ष्मण जीने घावरहित व सावधान चित्त हो श्रेष्ठ धनुष धारण किये ॥३४॥उसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजीने जब अपने बडे भारी उत्तम धनुषपर टंकोर दी तब राक्षस लोगोंका भयावह कठोर शब्द होने लगा ॥३५॥ जिससमय श्रीरामचन्द्रजीनेबडे भारी धनुषपर टंकोर दी, तब उससमय वह संहारकालमें शब्दब्रह्मात्मक वेदमय

नारीजनस्यधूमेनव्याप्तस्योच्चैर्विनेदुषः॥स्वनोज्वलनतप्तस्यशुश्रुवेशतयोजनम् ॥ ३१ ॥ प्रदग्धकायानपरान्राक्षसान्निर्गतान्बहिः ॥सहसाह्युत्प तंतिस्महरयोथयुयुत्सवः ॥३२॥ उद्घुष्टंवानराणांचराक्षसानांचनिःस्वनम् ॥ दिशोदशसमुद्रंचपृथिवींचव्यनादयत् ॥ ३३ ॥ विशल्यौचम हात्मानौताबुभौरामलक्ष्मणौ ॥ असंभ्रांतौजगृहतुस्तेउभेधनुषीवरे ॥३४॥ ततोविस्फारयामासरामश्चधनुरुत्तमम् ॥ बभूवतुमुलःशब्दोराक्षसा नांभयावहः ॥ ३५ ॥ अशोभततदारामोधनुर्विस्फारयन्महत् ॥ भगवानिवसंक्रुद्धोभवोवेदमयंधनुः ॥ ३६ ॥ उद्घुष्टंवानराणांचराक्षसानां चनिःस्वनम् ॥ ज्याशब्दस्ताबुभौशब्दावतिरामस्यशुश्रुवे ॥३७॥ वानरोद्घुष्टघोषश्चराक्षसानांचनिःस्वनः ॥ ज्याशब्दश्चापिरामस्यत्रयंव्याप दिशोदश ॥३८॥ तस्यकार्मुकनिर्मुक्तैःशरैस्तत्पुरगोपुरम् ॥ कैलासशृंगप्रतिमंविकीर्णमभवद्भुवि ॥ ३९ ॥ततोरामशरान्दृष्ट्वाविमानेषुगृहेषुच ॥ सन्नाहोराक्षसेंद्राणांतुमुलःसमपद्यत ॥ ४० ॥ तेषांसन्नह्यमानानांसिंहनादंचकुर्वताम् ॥ शर्वरीराक्षसेंद्राणांरौद्रीवसमपद्यत ॥ ४१ ॥

धनुर्विस्फारणकारी भगवान् भवानीपतिके समान जान पडने लगे ॥३६॥ वानरोंके गर्जन करने और राक्षसोंके रोदन करनेका शब्द और श्रीरामचन्द्रजीकेधनुषकी टंकारका शब्द यह तीनों शब्द एक दूसरेको मूँदलेतेहुएसे सुनाई देते थे ॥३७॥ औरवानर गणोंका गर्जना, निशाचरगणोंका रोना और श्रीरामचन्द्रजीके धनु षकी टंकोर यह तीनों शब्द दशों दिशाओंमें व्याप्त होगये ॥ ३८ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके धनुषसे छूटे हुए बाणोंसे उस लंकापुरीके फाटक कैलासपर्वतके शिखरके समान चूर्ण होकर पृथ्वीमें गिरपडे ॥ ३९ ॥ इस ओर विमान और गृहोंको गिरता हुआ व श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंको देख राक्षसश्रेष्ठोंमें भी कठोर युद्धकी तैयारियां होने लगीं॥४०॥जब राक्षसश्रेष्ठगण सिंहनाद करके संग्राम करनेके लिये तैयार होने लगे तब उससमय यहरात्रिकाल रात्रिके समान जान पडने

लगी ॥ ४१ ॥ इसी अवसरमें महाबलवान् वानर सुग्रीवजीने वानरश्रेष्ठोंको यहआज्ञा दी कि "हे वानरगण ! तुम लोगोंमेंसे जो वानर जिस द्वारके निकट हो वह उसी द्वारपर युद्ध करे ॥ ४२ ॥ श्रेणी (मोरचा) पर उपस्थित रहकरभी जो हमारी आज्ञाका निरादर करेगा, राजाज्ञाके अनादर करने वाले उस वानरको निःसन्देह मारडालेंगे" ॥ ४३ ॥ इसके उपरान्त जब वह मुखिया२वानर कूके हाथमें लिये सब द्वारोंको घेरेहुए खडेरहे तब निशाचरराज रावणको अत्यन्त क्रोध उत्पन्न हुआ ॥४४॥ जब रावणने जँभाई ली तब दशोंदिशा कलुषित होगईं और प्रलयकालीन रुद्रके रूपवान् क्रोधके समान रावणके शरीरमेंभीक्रोधके चिह्न दिखाई देने लगे॥४५॥उसके उपरान्त निशाचरपति रावणने क्रोधमें भरकर कुम्भकर्णके पुत्र कुम्भ और निकुम्भको बहुत निशाचरोंके साथ युद्ध करनेके लिये

आदिष्टावानरेंद्रास्तेसुग्रीवेणमहात्मना ॥ आसन्नंद्वारमासाद्ययुध्यध्वंचप्लवंगमाः ॥ ४२ ॥ यश्चवोवितथंकुर्यात्तत्रतत्राप्युपस्थितः ॥ सहंतव्यो ऽभिसंप्लुत्यराजशासनदूषकः ॥ ॥ ४३ ॥ तेषुवानरमुख्येषुदीप्तोल्कोज्ज्वलपाणिषु ॥ स्थितेषुद्वारमाश्रित्यरावणंक्रोधआविशत् ॥ ४४ ॥ तस्यजृंभितविक्षेपाद्व्यामिश्रावैदिशोदश ॥ रूपवानिवरुद्रस्यमन्युर्गात्रेष्वदृश्यत ॥ ४५ ॥ सकुम्भंचनिकुम्भंचकुम्भकर्णात्मजावुभौ ॥ प्रेषयामाससंक्रुद्धोराक्षसैर्बहुभिःसह ॥ ४६ ॥ यूपाक्षशोणिताक्षश्चप्रजंघःकंपनस्तथा ॥ निर्ययुःकौंभकर्णाभ्यांसहरावणशासनात् ॥ ४७ ॥ शशासचैवतान्सर्वान्राक्षसान्समहाबलान् ॥ राक्षसागच्छताद्यैवसिंहनादंचनादयन् ॥ ४८ ॥ ततस्तुचोदितास्तेनराक्षसाज्वलितायुधाः ॥ लंकायांनिर्ययुर्वीराःप्रणदंतःपुनःपुनः ॥४९॥ रक्षसांभूषणस्थाभिर्भाभिःस्वाभिश्चसर्वशः ॥ चक्रुस्तेसप्रभंव्योमहरयश्चाग्निभिःसह ॥५०॥ तत्रताराधिपस्याभाताराणांभातथैवच ॥ तयोराभरणाभाचज्वलिताद्यामभासयत् ॥ ५१ ॥

भेजा ॥४६॥ रावणकी आज्ञाके अनुसार यूपाक्ष, शोणिताक्ष, प्रजङ्घ और कंपन नामक चार राक्षस कुम्भकर्णके दो पुत्रोंके साथ चले ॥ ४७ ॥ तब उस समय रावणने राक्षसोंका भय दूर करनेके लिये सिंहनाद करके उन महाबलवान् राक्षसोंसे कहा "हे निशाचरगण! तुम सब उस रात्रिमेंही युद्ध करनेके लिये आओ" ॥४८॥ राक्षसगण राक्षसराज रावण करके इस प्रकारसे युद्धमें भेजेजाकर आयुध उठाय वारंवार सिंहनाद करते हुए लकासे निकले ॥४९॥ तब राक्षसोंके धारण किये हुए अलंकारोंसे और शरीरोंकी कांतिसे और वानरोंके पकडे हुए उल्कासे आकाश प्रकाशित होगया ॥ ५० ॥ ऊपरसे चन्द्रमा और तारागण व नीचे वानरराक्षसोंके भूषणोंकी प्रकाशमय कांतिसे दोनों सैनाओंके बीचमें टिका हुआ आकाश प्रदीप्त होगया ॥ ५१ ॥

चन्द्रमाकी चाँदनी,गहनोंकी कांति और जलते हुए भवनोंकी अग्नि; यह सब वानर और राक्षसोंको प्रकाशित करने लगीं ॥ ५२ ॥ अग्निसे जलते हुए गृहोंकी परछाईं जब समुद्रके जलमें पडीं तब चंचल तरंगमालाशोभित समुद्र और भी अधिक शोभायमान हुआ ॥ ५३ ॥ ध्वजा पताकासंयुक्त, उत्तम खड्ग फरसासहित, भयंकर घोडे व हाथियोंके साथ अनेक प्रकारके पैदलोंके सहित ॥ ५४ ॥ प्रदीप्त शूल, गदा, खड्ग, प्राश, तोमर, धनुष ऐसे राक्षसोंकी घोर विक्रम कारी और पौरुषयुक्त सेनाको ॥५५॥ प्रकाशमान देखा वह सेना शत २ किंकिणीनिनादित, प्रज्वलित कुठार और सुवर्णभूषणोंसे भूषित बाहु और प्रज्वलित भालोंसे युक्त ॥ ५६ ॥ महाशस्त्रोंको घुमाते हुए धनुष बाण चढाते हुए, गन्धमाला व मधुकी महकसे पवनको संमोदित करती ॥ ५७ ॥ शूरगणोंके

चंद्राभाभूषणाभाचगृहाणांज्वलिताचभा ॥ हरिराक्षससैन्यानिभ्राजयामाससर्वतः ॥ ५२ ॥ तत्रचार्धप्रदीप्तानांगृहाणांसागरःपुन ॥ भाभिःसं सक्तसलिलश्चलोर्मिःशुशुभेध्रुवम् ॥५३॥ पताकाध्वजसंयुक्तमुत्तमासिपरश्वधम् ॥भीमाश्वरथमातंगंनानापत्तिसमाकुलम्॥५४॥दीप्तशूलगदा खड्गप्रासतोमरकार्मुकम् ॥ तद्राक्षसबलंभीमंघोरविक्रमपौरुषम् ॥ ५५ ॥ ददृशेज्वलितप्रासंकिंकिणीशतनादितम् ॥ हेमजालाचितभुजंव्या वेष्टितपरश्वधम् ॥ ५६ ॥ व्याघूर्णितमहाशस्त्रंबाणसंसक्तकार्मुकम् ॥ गंधमाल्यमधूत्सेकसंमोदितमहानिलम् ॥ ५७ ॥ घोरंशूरजनाकीर्णमहां बुधरनिःस्वनम् ॥ तद्दृष्ट्वाबलमायातंराक्षसानांदुरासदम् ॥ ५८ ॥ संचचालप्लवंगानांबलमुच्चैर्ननादच ॥ जवेनाप्लुत्यचपुनस्तद्बलंरक्षसां महत् ॥५९॥ अभ्ययात्प्रत्यरिबलंपतंगाइवपावकम् ॥ तेषांभुजपरामर्शव्यामृष्टपरिघाशनि ॥ ६० ॥ राक्षसानांबलंश्रेष्ठंभूयःपरमशोभत ॥ तत्रोन्मत्ताइवोत्पेतुर्हरयोधयुयुत्सवः ॥ ६१ ॥ तरुशैलैरभिघ्नंतोमुष्टिभिश्चनिशाचरान् ॥ तथैवापततांतेषांहरीणांनिशितैःशरैः ॥ ६२ ॥

भरे रहनेसे अतिघोर महामेघके गर्जनके समान शब्द करती ऐसी दुर्द्धर्ष राक्षसोंकी सेना आई देखकर ॥ ५८ ॥ वानरोंकी सेनाने विचलित होकर ऊंचे स्वरसे सिंहनाद किया । फिर उस राक्षसोंकी बडी भारी सेनाके बीचमें ॥५९॥अतिवेगसे कूद पडे कि, जैसे पतंगे अग्निमें कूद पडते हैं,उन राक्षस लोगोंके भुजोंके व्यापारसे कंपायमान किये गये व वज्र अशनिसे युक्त ॥ ६० ॥ राक्षसोंकी सेना फिर अत्यन्त शोभित हुई इसके उपरान्त युद्ध करनेके लिये तैयारवानर लोग उन्मत्तके समान झुकपडे ॥६१॥ वृक्ष, शैल, मूकोंसे कूद २ कर निशाचरोंको मारने लगे तब उन कूद २ कर आते वानरोंके तीक्ष्ण बाणोंसे॥६२॥

भयंकर विक्रमकारी राक्षस लोग शिर कटाने लगे. निशाचरलोग वानर लोगोंके दांतोंसे काटेजाकर कर्णरहित, मूकोंकेमारनेसे शिर रहित और शिलाओंके प्रहारसे अंगभंगहो उस रणभूमिमें विचरण करने लगे॥ ६३ ॥ व दूसरी ओरसे घोररूप निशाचगणोंने भी तीक्ष्ण खड्गसे मुख्य २ वानरोंका संहार करना आरंभ किया ॥६४॥ बलवान् वानरवीरोंनेभी प्रबल राक्षसोंका संहार किया, एक २ जनके मारनेको जैसेही तैयार हुआ कि; वैसेही एक दूसरेने आकर उसको ढकेल दिया;कोई किसीको काटरहा था कि; दूसरेने आकर उसको काटखाया, कोई एक किसीकी निन्दा कर रहा था कि,वैसेही एक तीसरेने आकर उसका निरादर किया ॥६५॥ किसीकेयुद्ध चाहने पर दूसरा उससे युद्ध कर रहा है कि, इतनेमेंही कोई आकर बोला कि, "हम युद्ध करेंगे क्यों क्लेश देते हो ? तुम यहां खड़े रहो रणभूमिमें उसकाल एक दूसरे ऐसा कह रहे थे ॥ ६६ ॥ धीरे २ दोनों ओरका युद्ध अति भयंकर हो उठा, राक्षसलोगोंके शस्त्र व्यर्थ

शिरांसिसहसाजह्रूराक्षसाभीमविक्रमाः ॥ दशनैर्हतकर्णाश्चमुष्टिभिर्भिन्नमस्तकाः ॥ शिलाप्रहारभग्नांगाविचेरुस्सत्रराक्षसाः ॥ ६३ ॥ तथैवा प्यपरेतेषांकपीनामसिभिःसितैः ॥ प्रवरानभितोजघ्नुर्घोररूपानिशाचराः ॥ ६४ ॥ घ्नंतमन्यंजघानान्यःपातयंतमपातयत् ॥ गर्हमाणंज गर्हान्योदशंतमपरोदशत् ॥ ६५ ॥ देहीत्यन्योददात्यन्योददामीत्यपरःपुन ॥ किंक्लेशयसितिष्ठेतितत्रान्योन्यंबभाषिरे ॥ ६६ ॥ विप्रलंभित शस्त्रंचविमुक्तकवचायुधम् ॥ समुद्यतमहाप्रासंमुष्टिशूलासिकुंतलम् ॥ ६७ ॥ प्रावर्ततमहारौद्रंयुद्धंवानरराक्षसाम् ॥ वानरान्दशसप्तेतिराक्षसा जघ्नुराहवे ॥ ६८ ॥ विप्रलंभितवस्त्रंचविमुक्तकवचध्वजम् ॥ बलंराक्षसमालंब्यवानराःपर्यवारयन् ॥ ६९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे पंचसप्ततितमः सर्गः ॥ ७५ ॥

होने लगे उनके कवच आयुध समस्त छिन्नभिन्न होगये । राक्षसलोग बडे २ भाले, ऋष्टि, शूल और तलवार उठाये रहगये ॥ ६७ ॥ "प्रावर्तत महारौद्रं युद्धं वानररक्षसाम् ॥ वानरान्दशसप्तेति राक्षसा जघ्नुराहवे" इस प्रकारसे वानर और राक्षसोंका महाघोर युद्ध होने लगा निशाचरलोग एकही वारमें सहस्र २वानरोंका संहार करने लगे ॥ ६८ ॥ इसका बदला "राक्षसान्दशसप्तेति वानरास्त्वभ्यापातयन् । बलं राक्षसमालंब्य वानराः पर्यवारयन् ॥ " और वानरलोग भी इतनेही राक्षसोंको एक २ बाणसे रणभूमिमें मारते हुए और उनके वस्त्र फाड कवच तोड ध्वजा नष्ट करदी, उस युद्धमें वानरगण राक्षसलोगोंके समान बलका आश्रय करके राक्षसलोगोंको निवारण करने लगे ॥६९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां पंचसप्ततितमः सर्गः ॥७५॥

जब इस प्रकारसे लोकक्षयकारी घोर कठोर संग्राम होने लगा, तब महावीर अंगदजी युद्धका अभिलाष करके राक्षसवीर कंपनके सन्मुख जायकर डट गये ॥ १ ॥ वेगवान् कंपनने भी युद्ध करनेके लिये अंगदको पुकारकर अपनी गदासे उनको मारा कि; जिससे अत्यन्त घायल हो अंगदजी चलायमान हो गये ॥ २ ॥ परन्तु तेजस्वी अंगदजीने क्षणकालमेंही मूर्च्छासे जागकर एक पर्वतका शिखर उसके ऊपर चलाया कि उस प्रहारके लगतेही कंपन अर्दित होकर पृथ्वीमें गिर पडा ॥ ३ ॥ कंपनको रणमें मरा हुआ देखकर शोणिताक्ष अपने रथको चलाता हुआ निर्भय ही, शीघ्रतासे अंगदजीके समीप गया ॥ ४ ॥ इसके उपरान्त अत्यन्त वेगसे अंगदजीके ऊपर तीक्ष्ण बाणोंकी वर्षा करने लगा, वह कालकी अग्निके समान सायक वीरश्रेष्ठ अंगदजीके शरीरमें बिंध गये ॥५॥ राक्षसवीरने वानरवीरके प्रति क्रमसे छुरे, क्षुरप्र, नाराच, वत्सदन्त, शिलीमुख, कर्णीशल्य और विपाट इत्यादिक अनेक प्रकारके बाण छोडे ॥ ६ ॥

प्रवृत्तेसंकुलेतस्मिन्वीरघोरजनक्षये ॥ अंगदःकंपनंवीरमाससादरणोत्सुकः ॥१॥ आहूयसोऽङ्गदंकोपात्ताडयामासवेगितः ॥ गदायाकंपनःपूर्वं सचचालभृशाहतः ॥२॥ ससंज्ञांप्राप्यतेजस्वीचिक्षेपशिखरंगिरेः ॥ अर्दितश्चप्रहारेणकंपनःपतितोभुवि ॥३॥ ततस्तुकंपनंदृष्ट्वाशोणिताक्षोहतं रणे ॥ रथेनाभ्यपतत्क्षिप्रंतत्रांगदमभीतवत् ॥ ४ ॥ सोऽङ्गदंनिशितैर्बाणैस्तदाविव्याधवेगितः ॥ शरीरदारणैस्तीक्ष्णैःकालाग्निसमविग्रहैः ॥ ५ ॥ क्षुरक्षुरप्रनाराचैर्वत्सदंतैःशिलीमुखैः ॥ कर्णीशल्यविपाटैश्चबहुभिर्निशितैःशरैः ॥ ६ ॥ अंगदःप्रतिविद्धांगोवालिपुत्रःप्रतापवान् ॥ धनुरुग्रंरथंबाणान्ममर्दतरसाबली ॥ ७ ॥ शोणिताक्षस्ततःक्षिप्रमसिचर्मसमाददे ॥ उत्पपाततदाक्रुद्धोवेगवानविचारयन् ॥ ८ ॥ तंक्षिप्रतर माप्लुत्यपरामृश्यांगदोबली ॥ करेणतस्यतंखड्गंसमाच्छिद्यननादच॥ ९ ॥ तस्यांसफलकेखड्गंनिजघानततोऽङ्गदः ॥ यज्ञोपवीतवच्चैनंचिच्छे दकपिकुञ्जरः ॥ १० ॥ तंप्रगृह्यमहाखड्गंविनद्यचपुनःपुनः ॥ वालिपुत्रोऽभिदुद्रावरणशीर्षेपरानरीन्॥ ११ ॥

प्रतापवान् बलशाली वालिकुमार अंगदके शरीरमें जब यह समस्त बाण लगे तब उन्होंने अत्यन्त वेगसे उस राक्षसका उग्र धनु और समस्त बाणोंको छिन्न छिन्न कर डाला ॥७॥ इसके उपरान्त शोणिताक्ष क्रोधमें भरकर शीघ्रतासे ढाल तलवार ग्रहण कर विनाविचारे वेगसे कूद पडा ॥८॥ तब विपुलबलशाली अंगदजीने शीघ्रतासे छलांग मारकर उस राक्षसको पकडा और उसके हाथसे बलपूर्वक ढाल तलवार छीन वारंवार सिंहनाद करने लगे ॥९॥ उसकाही खड्ग उसके बांयें हाथपर इस प्रकारसे अंगदजीने मारा कि यज्ञोपवीतकी नाईं उसके दोखंड हो गये (बांयां हाथ धडमें लगा रहा और दहिना हाथ शिरके संग) ॥ १० ॥ वालिकुमार अंगदजी शोणिताक्षका संहार करके वारंवार सिंहनाद कर और दूसरे शत्रुओंकी ओर दौडे ॥ ११ ॥

यह देखकर महाबलवान् यूपाक्ष क्रोधमें भरकर महाबली वालिके पुत्र अंगदजीके सामने आया ॥ १२॥ इस ओर सुवर्णके बाजूसे शोभित वीर शोणिताक्ष भी उस खड्गके प्रहारसे प्राणरहित न होकर फिर सावधानहो उठा और एककाले लोहेसे बनी हुई गदाको ग्रहण करके दूसरी बार अंगदजीकी ओर झपटा ॥ १३॥ महाबलशाली प्रजंघ भी यूपाक्षके साथ गदा हाथमें ले वालितनय अंगदजीके सन्मुख दौडा ॥ १४ ॥ उस कालमें कपिश्रेष्ठ वालिकुमार अंगदजी उन यूपाक्ष और प्रजंघके मध्यमें इन्द्र और अग्निके बीचमें टिके हुए पूर्ण चंद्रमाके समान शोभायमान होने लगे॥ १५॥मैंद और द्विविद नामक यह दो वीर वानर अंगद जीके पार्श्वरक्षक थे, दोनों परस्पर एक दूसरेका बल देखनेकी इच्छासे अंगदजीके निकट खडे हुए ॥१६॥ इस ओर खड्ग बाण और गदाधारी महाकाय महा

प्रजंघसहितोवीरोयूपाक्षस्तुततोबली ॥ रथेनाभिययौक्रुद्धोवालिपुत्रंमहाबलम् ॥ १२ ॥ आयसींतुगदांगृह्यसवीरःकनकांगदः ॥ शोणिताक्षः समाश्वस्यतमेवानुपपातह ॥ १३ ॥ प्रजंघस्तुमहावीरोयूपाक्षसहितोबली ॥ गदयाभिययौक्रुद्धोवालिपुत्रंमहाबलम् ॥ १४ ॥ तयोर्मध्ये कपिश्रेष्ठःशोणिताक्षप्रजंघयोः ॥ विशाखयोर्मध्यगतःपूर्णचंद्रइवाबभौ ॥ १५ ॥ अंगदंपरिरक्षंतौमैंदोद्विविदएवच ॥ तस्यतस्थरतुभ्याशेपर स्परदिदृक्षया ॥ १६ ॥ अभिपेतुर्महाकायाःप्रतियत्तामहाबलाः ॥ राक्षसावानरान्रोषादसिबाणगदाधराः ॥१७॥ त्रयाणांवानरेंद्राणांत्रिभी राक्षसपुंगवैः ॥ संसक्तानांमहद्युद्धमभवद्रोमहर्षणम् ॥ १८ ॥ तेतुवृक्षान्समादायसंप्रचिक्षिपुराहवे॥ खड्गेनप्रतिचिक्षेपतान्प्रजंघोमहाबलः ॥ १९ ॥ रथान्सर्वाद्रुमान्च्छैलान्प्रतिचिक्षिपुराहवे ॥ शरौघैःप्रतिचिच्छेदतारयूपाक्षोमहाबलः ॥ २० ॥ सृष्टान्द्विविदमैंदाभ्यांद्रुमानुत्पाट्यवी र्यवान् ॥ बभंजगदयामध्येशोणिताक्षःप्रतापवान् ॥ २१ ॥

बलवान् निशाचरगण क्रोधमें भर अत्यन्त सावधानतासे उस वानरोंकी सेनाके सन्मुख गमन करते हुए ॥१७॥ उस कालमें परस्पर समर करते हुए मैंद द्विविद और अंगद इन तीन वानरश्रेष्ठोंके साथ प्रजंघ यूपाक्ष और शोणिताक्ष इन तीन राक्षसश्रेष्ठोंका बडा भारी रोमहर्षणकारी संग्राम होने लगा ॥१८॥ वानरोंने बडे२वृक्ष लेकर राक्षसोंपर चलाये परंतु राक्षसवीर महाबलवान् प्रजंघने उन वृक्षोंको खड्गके प्रहारसे खंड२कर डाला ॥ १९ ॥ कपिश्रेष्ठने रथ घोड़े वृक्ष लेकर राक्षसोंपर चलाये पर्वतोंके श्रृङ्ग जो कुछ भी पाते थे वहां चलाते थे परन्तु महाबलवान् यूपाक्षने बाण चलाय उन सबको टुकडे२कर डाला ॥ २० ॥ इसके उपरान्त वीर द्विविद और मैंदने वृक्षोंको उखाडकर राक्षसोंके ऊपर चलाया इन सबको वीर्यवान् प्रतापशाली शोणिताक्षने अधबीचमेंही तोड डाला ॥ २१ ॥

इसी समयमें वीरश्रेष्ठ प्रजंघ पर मर्मभेदी विपुल खड्ग धारण करके अतिवेगसे अंगदजीकी ओर धाया ॥ २२ ॥ तब विपुलबलशाली वानरेंद्र वालिकुमार अंगद जीने इस राक्षसको निकट आया हुआ देखकर एक अश्वकर्ण वृक्ष ले बडे वेगसे उसके मारा ॥२३॥ और उस राक्षसके खड्ग युक्त हाथमें एक मूका भी अंगद जीने मारा कि, उसके चोटसे उस निशाचरके हाथसे खड्ग गिर पडा ॥ २४ ॥ उस मूसलके समान खड्गको पृथ्वीमें गिरा हुआ देखकर महावीर प्रजंघने वज्रके समान मूका बाँधकर अंगदजीपर उठाया ॥ २५ ॥ और महावीर्यवान् वानरश्रेष्ठ अगदजीके माथेमें वह मूका मारा उस मूकेके लगनेसे अंगद एक मूहूर्तभर तक चलायमान रहे ॥ २६ ॥ परंतु प्रतापवान् तेजस्वी वालिकुमार अंगदजीने भी शीघ्र चेतना पाय एक मूका मारकर प्रजंघके धडसे शिरको अलग कर दिया ॥ २७ ॥ अपने चचा प्रजंघको संग्राममें मरा हुआ देखकर यूपाक्ष आंखोंमें आंसू भर धनुष बाण छोड खड्ग धारण कर रथसे उतर पडा ॥ २८ ॥

उद्यम्यविपुलंखड्गंपरमर्मविदारणम् ॥ प्रजंघोवालिपुत्रायअभिदुद्राववेगितः ॥ २२ ॥ तमभ्याशगतंदृष्ट्वावानरेंद्रोमहाबलः ॥ आजघानाश्वकर्णेनद्रुमेणातिबलस्तदा ॥ २३ ॥ बाहुंचास्यसनिस्त्रिंशमाजघानसमुष्टिना ॥ वालिपुत्रस्यघातेनसपपातक्षितावसिः ॥२४॥ तंदृष्ट्वापतितंभूमौखड्गंमुसलसन्निभम् ॥ मुष्टिंसंवर्तयामासवज्रकल्पंमहाबलः ॥२५॥सललाटेमहावीर्यमंगदंवानरर्षभम् ॥ आजघानमहातेजाःसमुहूर्तंचचालह ॥ २६ ॥ ससंज्ञांप्राप्यतेजस्वीवालिपुत्रःप्रतापवान् ॥ प्रजंघस्यशिरःकायात्पातयामाससमुष्टिना ॥ २७ ॥सयूपाक्षोऽश्रुपूर्णाक्षःपितृव्येनिहतेरणे ॥ अवरुह्यरथात्क्षिप्रंक्षीणेषुःखड्गमाददे ॥ २८ ॥ तमापतंतंसंप्रेक्ष्ययूपाक्षंद्विविदस्त्वरन् ॥ आजघानोरसिक्रुद्धोजग्राहचबलाद्बली ॥ २९ ॥ गृहीतंभ्रातरंदृष्ट्वाशोणिताक्षोमहाबलम् ॥ आजघानमहातेजावक्षसिद्विविदंततः ॥ ३० ॥ सततोऽभिहतस्तेनचचालचमहाबलः ॥ उद्यतांचपुनस्तस्यजहारद्विविदोगदाम् ॥ ३१ ॥ एतस्मिन्नंतरेमैंदोद्विविदाभ्याशमागमत् ॥ तौशोणिताक्षयूपाक्षौप्लवंगाभ्यांतरस्विनौ ॥ चक्रतुः समरेतीव्रमाकर्षोत्पाटनंभृशम् ॥ ३२ ॥

परन्तु महाबलवान् वीर द्विविदने इस राक्षसको आता हुआ देखकर क्रोधसहित इसकी छातीमें एक शिला मारी और अत्यन्तबलसे इस राक्षसको पकड लिया ॥ २९ ॥ अपने भाईको पकडा हुआ देखकर महातेजस्वी महाबलवान् शोणिताक्षने द्विविदवीरकी छातीमें एक गदामारी ॥३०॥ उस अत्यन्त दारुण प्रहारसे वानरवीर द्विविद चलायमान होगया परंतु थोडीही देरमें स्थिर हो उस राक्षसकी दूसरी बार उठी गदाको देख इस वीरने छीन लिया ॥ ३१ ॥ इसी अवसर में मैन्द अपने भ्राताकी सहायता करनेके लिये द्विविदके निकट आय पहुँचा और शोणिताक्ष यूपाक्ष नाम इन दोनों राक्षसोंसे यह दोनों वानरश्रेष्ठ मल्लयुद्ध करने लगे परस्पर एक दूसरेको खेंचते खाँचते झटकाझोरी करते कठोर युद्ध करने लगे ॥ ३२ ॥

तब द्विविदने अपने मुखसे नखोंसे शोणिताक्षका मुख चीर फाड डाला और बकोट लिया और पकडकर अत्यन्त बलसे पृथ्वीमें दबायकर! पीसडाला ॥ ३३ ॥ तब वानरश्रेष्ठ वीर्यवान् मैन्दने अत्यन्न क्रोधित हो दोनों बाँहोंसे यूपाक्षको उठाय पृथ्वीपर पटक दिया कि, जिससे यह राक्षस अत्यन्त पीडित और निहत होकर पृथ्वीमें गिर पडा ॥३४॥ मारनेसे बची हुई राक्षसोंकी सेना राक्षसवीरोंको संग्राममें मृतक देख अत्यन्त दुःखी हुई, और अतिशीघ्रतासे वहां गई जहां कुम्भकर्णका पुत्र कुंभ खडा था वहाँ जाकर इस सेनासे यह अशुभ संवाद कुंभसे निवेदन किया ॥३५॥ कुंभने भी उस समीप भागकर आई हुई सेनाको अनेक प्रकारसे समझाया बुझाया, अतिश्रेष्ठ महावीर्यवान् वानरोंसे ॥ ३६ ॥ महावीर राक्षसोंकी सेनाको मरी हुई देखकर महातेजस्वी कुंभने संग्राममें अत्यन्त दुष्कर

द्विविदःशोणिताक्षंतुविददारनखैर्मुखे ॥ निष्पिपेषसवीर्येणक्षितावाविध्यवीर्यवान् ॥३३॥ यूपाक्षमभिसंक्रुद्धोमैंदोवानरपुंगवः ॥पीडयामासबाहुभ्यांपपातसहतःक्षितौ ॥३४॥ हतप्रवीराव्यथिताराक्षसेन्द्रचमूस्तथा ॥ जगामाभिमुखीसातुकुम्भकर्णात्मजोयतः ॥३५॥आपतंतींचवेगेनकुम्भस्तांसांत्वयच्चमूम् ॥ अथोत्कृष्टंमहावीर्यैर्लब्धलक्षैःप्लवंगमैः ॥ ३६ ॥निपातितमहावीरांदृष्ट्वारक्षश्चमूंतदा॥ कुम्भःप्रचक्रेतेजस्वीरणेकर्मसुदुष्करम् ॥ ३७ ॥ सधनुर्धन्विनांश्रेष्ठःप्रगृह्यसुसमाहितः ॥ मुमोचाशीविषप्रख्याञ्छरान्देहविदारणान् ॥॥ ३८ ॥ तस्यतच्छुशुभेभूयःसशरंधनुरुत्तमम् ॥ विद्युदैरावतार्चिष्मद्द्वितीयेंद्रधनुर्यथा ॥ ३९ ॥ आकर्णकृष्टमुक्तेनजघानद्विविदंतदा ॥ तेनहाटकपुंखेनपत्रिणापत्रवाससा ॥ ४० ॥ सहसाभिहतस्तेनविप्रमुक्तपदःस्फुरन् ॥ निपपातत्रिकूटाभोविह्वलन्प्लवगोत्तमः ॥ ॥ ४१ ॥मैंदस्तुभ्रातरंतत्रभग्नंदृष्ट्वामहाहवे ॥ अभिदुद्राववेगेनप्रगृह्यविपुलांशिलाम् ॥ ४२ ॥ तांशिलांतत्रचिक्षेपराक्षसायमहा बलः ॥ बिभेदतांशिलांकुम्भःप्रसन्नैःपञ्चभिःशरैः ॥ ४३ ॥

कर्म किया ॥ ३७ ॥ वह धनुष धारियोंमें श्रेष्ठ कुंभ सावधान मनसे धनुष धारणकर विषधर सर्पोंके समान फुंकारते हुए देहविदारी बाण छोडने लगा ॥३८॥ उस कालमें कुम्भका बाण सहित श्रेष्ठ धनुष; बिजली ऐरावतके सहित दूसरे इन्द्रधनुषके समान शोभायमान होने लगा ॥३९॥ उस वीर कुम्भने सुवर्णकी फोंक वाले पत्र शोभित बाणोंको कानतक खेंचकर द्विविदको मारा ॥४०॥ पर्वतके शृङ्गके समान वानरोंमें श्रेष्ठ द्विविद उन बाणोंके लगनेसे अत्यन्त घायल हो मुँह बाय और दोनों पैर फैलाय विकल हो पृथ्वीपर गिर पडा॥४१॥ मैंद अपने भ्राता द्विविदको उस महासंग्राममें व्याकुल होते देख एक बडी भारी शिला ग्रहण कर कुम्भके ऊपर दौडा॥४२॥महाबलवान् मैन्दने राक्षसके ऊपर वह शिला चलाई परन्तु महातेजस्वी कुम्भने हँसते२पांच बाणोंसे उस शिलाको काट डाला॥४३॥

और विषधर सर्पके समान एक और सुमुख वाण धनुषधर चढाकर द्विविदके बडे भारी मैंदकी छातीमें कुम्भने मारा ॥४४॥ कुम्भका चलाया हुआ वह बाण वानरयूथपति मैंदके मर्मस्थानमें लगा कि, जिससे वह मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर पडा ॥४५॥ तब वानरवीर अंगदजी महाबलवान् अपने दो मामा द्विविद और मैंदको पीडित देखकर धनुषधारी कुम्भके सन्मुख धाये ॥४६॥ महावत जिस प्रकार अंकुशसे हाथीको मारता है वैसेही कुम्भने अंगदजीके ऊपर काले लोहेके बने प्रथम पांच बाण, और उसके पीछे तीन बाण चलाये ॥ ४७ ॥ इस प्रकारसे महावीर्यवान् कुम्भ अंगदजीके ऊपर और भी बहुतसे अस्त्र शस्त्र चलाय उनको बींधने लगा ॥ ४८ ॥ परन्तु सुवर्ण भूषित तीखे रुधिरसे सने हुए अकुंठधारवाले बाणोंके अंगोंमें लगने पर भी अंगदजी कंपायमान नहीं हुए

संधायचान्यंसुमुखंशरमाशीविषोपमम् ॥ आजघानमहातेजावक्षसिद्विविदाग्रजम् ॥ ४४ ॥ सतुतेनप्रहारेणमैंदोवानरयूथपः ॥ मर्मण्यभिहत स्तेनपपातभुविमूर्च्छितः ॥ ४५ ॥ अंगदोमातुलौदृष्ट्वामथितौतुमहाबलौ ॥ अभिदुद्राववेगेनकुम्भमुद्यतकार्मुकम् ॥ ४६ ॥ तमापतंतंविव्या धकुम्भःपंचभिरायसैः ॥ त्रिभिश्चान्यैस्त्रिभिर्बाणैर्मातंगमिवतोमरैः ॥ ४७ ॥ सोऽङ्गदंबहुभिर्बाणैःकुम्भोविव्याधवीर्यवान् ॥ ४८ ॥ अकुण्ठ धारैर्निशितैस्तीक्ष्णैःकनकभूषणैः॥ अंगदःप्रतिविद्धांगोवालिपुत्रोनकंपते ॥ ४९ ॥ शिलापादपवर्षाणितस्यमूर्ध्निववर्षह ॥ सप्रचिच्छेदतान्स र्वान्बिभेदचपुनःशिलाः ॥ ५० ॥ कुम्भकर्णात्मजःश्रीमान्वालिपुत्रसमीरितान् ॥ आपतंतंचसंप्रेक्ष्यकुम्भोवानरयूथपम् ॥ ५१ ॥ भ्रुवौवि व्याधबाणाभ्यामुल्काभ्यामिवकुञ्जरम् ॥ तस्यसुस्रावरुधिरंपिहितेचास्यलोचने ॥ ५२ ॥ अंगदःपाणिनानेत्रेपिधायरुधिरोक्षिते ॥ सालमा सन्नमेकेनपरिजग्राहपाणिना ॥ ५३ ॥ संपीड्योरसिसस्कंधंकरेणाभिनिवेश्यच ॥ किंचिदभ्यवनम्यैनमुन्ममाथमहारणे ॥ ५४ ॥ तमिंद्रके तुप्रतिमंवृक्षंमंदरसन्निभम् ॥ समुत्सृजतवेगेनमिषतांसर्वरक्षसाम् ॥ ५५ ॥

॥ ४९ ॥ और उस निशाचरके मस्तकपर शिला औरवृक्षोंकी वर्षा करने लगे, परन्तु वह सब शिला वृक्ष वारंवार काट डाले गये ॥५०॥ कुम्भकर्णके पुत्र कुम्भने श्रीमान् वालिके पुत्र अंगदजीके चलाये सब शिला वृक्ष काट डाले; इसके उपरान्त कुम्भने उन वानरयूथपको आता हुआ देखकर ॥५१॥ अंगदजीकी भौंहके बीचमें दो बाण मारे जिस प्रकार उल्कासे लोग हाथीको मारते हैं, उन बाणोंके लगनेसे ऐसा रुधिर बहने लगा कि, अंगदजीके नेत्र उस रुधिरसे ढक गये ॥५२॥ वालिकुमार अंगदजीने उस समय एक हाथसे रुधिरसे गीले नेत्रोंको ढका व दूसरे हाथसे एक बडा भारी शालका वृक्ष जो निकटही थाले लिया ॥५३॥ उस पेडको छातीसे दबाये एक हाथसे कुछेक नवाये उसके पत्ते व छोटी २ डालियें तोड डाली और महा संग्राममें ॥५४॥ मन्दर पर्वतके सदृश इन्द्रध्वजके

समान उस वृक्षको सब राक्षसोंके सामने अत्यन्त वेगसे कुम्भके ऊपर चलाया ॥५५॥ कुम्भकर्णके पुत्र कुम्भर्न सात देहको भेदनेवाले तीखे बाणोंसे अंगदके भेजे उस वृक्षको काटडाला और एक बाण अतिशीघ्रतासे अंगदजीकी छातीमें मारा, अंगदजीभी उस बाणसे पीडित और मोहित होकर पृथ्वीमें गिर पडे ॥५६॥ समुद्रके जलमें डूबे हुएके समान अंगदजीको उस महारणमें व्याकुल होकर मूर्छित हुआ देख वानरश्रेष्ठोंने यह वृत्तांत श्रीरामचन्द्रजीके निकट जायकर निवेदन किया ॥५७॥ श्रीरामचन्द्रजीने महासंग्राममें वालिपुत्र महाबलवान् अंगदजीको संग्राममें व्याकुल हुआ सुनकर जाम्बवान् इत्यादि मुख्य २ वानरोंको अंगदजीको सहाय करनेकी आज्ञा दी॥५८॥यह वानरशार्दूलगण श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञाको सुनकर क्रोधित धनुष उठाये हुए कुम्भकी ओर दौडे॥५९॥उस सबके हाथोंमें वृक्ष

सचिच्छेदशितैर्बाणैःसप्तभिःकायभेदनैः ॥ अंगदोविव्यथेभीक्ष्णंसपपातमुमोहच॥५६॥अंगदंपतितंदृष्ट्वासीदंतमिवसागरम्॥ दुरासदंहरिश्रेष्ठा राघवायन्यवेदयन् ॥ ५७ ॥ रामस्तुव्यथितंश्रुत्वावालिपुत्रंमहाहवे ॥ व्यादिदेशहरिश्रेष्ठाञ्जांबवत्प्रमुखांस्ततः ॥ ५८ ॥ तेतुवानरशार्दूलाः श्रुत्वारामस्यशासनम् ॥ अभिपेतुःसुसंक्रुद्धाःकुंभमुद्यतकार्मुकम् ॥ ५९ ॥ ततोद्रुमशिलाहस्ताःकोपसंरक्तलोचनाः ॥ रिरक्षिषंतोऽभ्यपतन्नंगदंवानरर्षभाः ॥ ६० ॥ जांबवांश्चसुषेणश्चवेगदर्शीचवानरः ॥ कुम्भकर्णात्मजंवीरंक्रुद्धाःसमभिदुद्रुवुः ॥ ६१ ॥ समीक्ष्यापततस्तांस्तुवानरेंद्रान्महाबलान् ॥ आववारशरौघेणनगेनेवजलाशयम् ॥ ६२ ॥ तस्यबाणपथंप्राप्यनशेकुरपिवीक्षितुम् ॥ वानरेंद्रामहात्मानोवेलामिवमहोदधिः ॥ ६३ ॥ तांस्तुदृष्ट्वाहरिगणाञ्छरवृष्टिभिरार्दितान् ॥ अंगदंपृष्ठतःकृत्वाभ्रातृजंप्लवगेश्वरः ॥ ६४ ॥ अभिदुद्रावसुग्रीवःकुम्भकर्णात्मजंरणे ॥ शैलसानुचरंनागंवेगवानिवकेसरी॥ ६५ ॥

और पर्वत थे; क्रोधसे इन सबकेनेत्र लाल हो रहे थे यह सब अंगदजीके जीवनकी रक्षा करनेके लिये आगे बढ़े ॥६०॥ जाम्बवान्, सुषेण और वानरवेगदर्शी यह तीनों महाक्रोध कर कुंभके सन्मुख धावमान हुए॥६१॥जिस प्रकार पत्थरोंके टुकडोंसे जलके सोतेको रोक दिया जाता है वैसेही कुम्भने उन महाबलवान् वानरश्रेष्ठोंको आता हुआ देख बाणोंसे उनकी गतिको रोक दिया ॥६२॥ जिस प्रकार महासमुद्रका जल वेलाभूमिको नहीं लांघ सकता वैसेही वह महाबलवान् वानरश्रेष्ठ भी उसके बाणोंको तोडकर आगे बढनेमें समर्थ न हुए॥६३॥वानरश्रेष्ठ उन वानरोंसे संग्राममें बाणोंकी वर्षासे मार्दित देख अपने भतीजे अंगदजीको पीछे छोड वानरराज सुग्रीवजी ॥६४॥ कुम्भकर्णके पुत्र कुम्भपर झपटे जिस प्रकार वेगवान् केसरी सिंह पर्वतके शृङ्गोंपर चरते हुए हाथीपर दौडता है॥६५॥

वह महाकपि सुग्रीवजी अश्वकर्णादि अनेक प्रकारके वृक्ष उखाड २ कर कुम्भपर चलाने लगे ॥ ६६ ॥ परन्तु कुम्भकर्णके पुत्र कुम्भने आकाशको छालेनेवाली दुर्द्धर्ष वृक्ष वृष्टिको तीखे बाणोंके समूहसे अतिशीघ्र खंड २ कर डाला॥ ६७॥ वह काटेहुए दुर्द्धर्ष सब वृक्ष शतघ्नियोंके समान दिखाई देने लगे, बाणोंकी वर्षाको वीर्यवान् कुम्भ करके छिन्न भिन्न देख महाबली वानरोंके स्वामी॥ ६८॥ श्रीमान् महासत्त्व सम्पन्न सुग्रीवजी कुछभी व्यथित न हुए वानरराज राक्षसके बाणसे विंधकर अतिसरलतासे उस दारुण आघातको सहलेतेहुए। उन सुग्रीवजीने इसके उपरांत कुम्भके हाथसे बलपूर्वक ॥ ६९ ॥ इन्द्रके धनुषके तुल्य उसका धनुष छीन तोड डाला वानर राज सुग्रीवजी ऐसा दुष्कर कर्म करके छलांग मार॥ ७०॥ कोप किये हुए दांत टूटे हुए हाथीके समान खडे हुए कुम्भसे जायकर बोले। हे निकुम्भके बडे भाई कुंभ! तुम्हारे बाणोंका वेग व वीर्य अति अनंत है॥ ७१॥ तुममें विनय और प्रताप रावणकी नांई है; तुम्हारा विक्रम, बल, प्रह्लाद, इन्द्र, कुबेर और वरुणके समान है

उत्पाटचचमहावृक्षानश्वकर्णादिकान्बहून्॥ अन्यांश्वविविधान्वृक्षांश्चिक्षेपसमहाकपिः ॥६६॥ तांछादयंतीमाकाशंवृक्षवृष्टिंदुरासदाम् ॥ कुम्भकर्णात्मजःश्रीमांश्चिच्छेदस्वशरैःशितैः ॥६७॥ अर्दितास्तेद्रुमारेजुर्यथाघोराःशतघ्नयः ॥ द्रुमावर्षंतुतद्भिन्नंदृष्ट्वाकुम्भेनवीर्यवान्॥ ॥६८॥ वानराधिपतिःश्रीमान्महासत्त्वोनविव्यथे ॥ सविध्यमानःसहसासहमानस्तुताञ्छरान् ॥६९॥ कुम्भस्यधनुराक्षिप्यबभंजेंद्रधनुःप्रभम् ॥ अवप्लुत्यधनुःशीघ्रंकृत्वाकर्मसुदुष्करम् ॥७०॥ अब्रवीत्कुपितःकुम्भंभग्नशृंगमिवद्विपम्॥ निकुम्भाग्रजवीर्यंतेबाणवेगंतुतदद्भुतम् ॥७१॥ सन्नितिश्चप्रभावश्चतववारावणस्यवा॥ प्रह्लादबलिवृत्रघ्नकुबेरवरुणोपमम्॥ ७२ ॥ एकस्त्वमनुजातोऽसिपितरंबलवत्तरम् ॥ त्वामेवैकंमहाबाहुंशूलहस्तमरिंदमम् ॥७३॥ त्रिदशानातिवर्ततेजितेंद्रियमिवाधयः॥ विक्रमंस्वमहाबुद्धेकर्माणिममपश्यच ॥७४॥ वरदानात्पितृव्यस्तेसहतेदेवदानवान् ॥ कुम्भकर्णस्तुवीर्येणसहतेचसुरासुरान् ॥७५॥ धनुषीन्द्रजितस्तुल्यःप्रतापेरावणस्यच ॥ त्वमद्यरक्षसांलोकेश्रेष्ठोऽसिबलवीर्यतः ॥ ७६ ॥

॥ ७२॥ तुम सब प्रकारसे अपने पिता कुम्भकर्णके अनुरूप पुत्र हो. हे महाबाहो ! शत्रुदमनकारी ! जब तुम अकेले शूल हाथमें लेकर खड़े हो जाओ॥ ७३॥ तब देवताभी भयभीत हो तुम्हारे सम्मुख न आय सकेंगे कि, जिसप्रकारसे मनकी पीडा इंद्रियोंके जीतनेवाले पुरुषके सन्मुख नहीं खड़ी हो सकती (अर्थात् उसको पीडा नहीं दे सकती) अच्छा जो हुआ सो हुआ आज तुम इस महासंग्राममें अपना विक्रम प्रकाश करो और हमारा विक्रम देखो ॥ ७४ ॥ तुम्हारे ताऊ रावणने तो ब्रह्माजीके वरदानके प्रभावसेही देवता और दानव लोगोंको जीता था परंतु कुम्भकर्णने अपने वीर्यके प्रभावसे सुर असुर लोगोंको पराजित किया था॥ ७५॥ तुम प्रतापमें रावणके समान और धनुष विद्यामें इन्द्रजीतके तुल्य हो इसलिये अब राक्षसोंके बीचमें एक तुमही हमको बल वीर्यमें श्रेष्ठ जान पडते हो ॥७६॥

जिसप्रकार शत्रुलोगोंके साथ शम्बरासुरका संग्राम हुआ था, वैसेही तुम्हारे साथ आज हमारा कठोर संग्राम होगा, समस्त प्राणी इस भयंकर समरको अपनी आंखोंसे देखेंगे॥७७॥तुमने असाधारणकर्म किया है तुमने अपने अस्त्रकी चतुरताभी बाणोंको चलायकर दिखाई है कि,इन भीम विक्रमकारी जाम्बवान् आदि वानरोंको बाणोंसे रोंक दियाहै ॥७८॥ तुम अकेले इन बहुत सारे वानरोंके साथ युद्ध करके थक गये हो अतएव इस समय बल प्रकाश करके तुम्हारे वध करनेपर लोग निन्दा करेंगे इसी भयसे हम तुमको नहीं मार डालते हैं एक क्षणभर विश्राम करके तुम हमारा पराक्रम देखो॥७९॥सुग्रीवजीके ऐसे सारवान् सम्मानयुक्त वचनोंसे अग्निमें आहुति लगनेके समान कुम्भका तेज और भी बढा॥८०॥इसके उपरांत वीर्यवान् कुम्भने दोनों बांहोंसे सुग्रीवजीको पकड लिया, वह दोनोंजने

महाविमर्दंसमरेमयासहतवाद्भुतम् ॥ अद्यभूतानिपश्यंतुशक्रशंबरयोरिव ॥७७॥ कृतमप्रतिमंकर्मदर्शितंचास्त्रकौशलम् ॥ पातिताहरिवीराश्च त्वयैतेभीमविक्रमाः॥ ७८ ॥ उपालंभभयाच्चैवनासिवीरमयाहतः ॥ कृतकर्मपरिश्रांतोविश्रान्तःपश्यमेबलम् ॥ ७९ ॥ तेनसुग्रीववाक्येनसावमानेनमानितः ॥अग्नेराज्यहुतस्येवतेजस्तस्याभ्यवर्धत॥ ८० ॥ ततःकुम्भस्तुसुग्रीवंबाहुभ्यांजगृहेतदा ॥ गजाविवावीतमदौनिःश्वसंतौमुहुर्मुहुः ॥ ८१ ॥ अन्योन्यगात्रग्रथितौघर्षंतावितरेतरम् ॥ सधूमांमुखतोज्वालांविसृजंतौपरिश्रमात् ॥ ८२ ॥ तयोःपादाभिघाताच्चनिमग्नाचाभवन्मही ॥ व्याघूर्णिततरंगश्चचुक्षुभेवरुणालयः ॥ ॥ ८३ ॥ ततःकुम्भंसमुत्क्षिप्यसुग्रीवोलवणांभसि ॥पातयामासवेगेनदर्शयन्नुदधेःस्थलम् ॥ ८४ ॥ ततःकुम्भनिपातेनजलराशिःसमुत्थितः ॥ विंध्यमंदरसंकाशोविससर्पसमंततः ॥ ८५ ॥ ततःकुम्भःसमुत्पत्यसुग्रीवमभिपात्यच ॥ आजघानोरसिक्रुद्धोवज्रकल्पेनमुष्टिना ॥ ८६ ॥

उस समय मदचुचाते हाथीकेसमान वारवार लंबे २ श्वास लेने लगे ॥ ८१ ॥ परस्पर एक दूसरेका शरीर गांठने लगे, दोनोंही एक दूसरेको खचतेथे अत्यन्त जोरसे लडनेके कारण दोनोंहीके मुखसे मारे परिश्रमके धुवें सहित अग्निकी शिखा निकलरही थी॥८२॥दोनों वीरोंके चरणोंकी धमकसे पृथ्वी नीचेको धसने लगी, समुद्रसे बडी तरंगें उठने लगीं और समुद्र कम्पायमान भी हुआ॥८३॥उसके उपरान्त सुग्रीवजीने कुम्भको पकडकर मानों समुद्रकी तली दिखलानेके लियेही उसको अतिवेगसे लवणसमुद्रमें झोंक दिया॥८४॥जब कुम्भ समुद्रमें झोंका गया तब समुद्रके जलकी राशि विन्ध्य और मन्दराचल पर्वतके समान ऊँची उठकर चारों ओर उफनाय उठी ॥८५॥ कुम्भ एक क्षण भरके पीछेही समुद्रसे निकलकर सुग्रीव जीके निकट आया और क्रोधमें भरकर उनकी छातीमें एक वज्रके

समान मूका मारा ॥ ८६ ॥ उस भयंकर आघातसे सुग्रीवजीके शरीरकी खाल फटनेसे अति वेगसे रुधिरकी धारा बहने लगी और उस महावेगसे चले हुए मूकेने सुग्रीवजीकी छातीकी हड्डियें तोड डालीं ॥ ८७ ॥ जिस प्रकार वज्रके चलानेसे सुमेरु पर्वतसे अग्नि निकलती थी वैसेही उस मूकेके लगनेसे सुग्रीवकी छातीकी हड्डियोंमेंसे तेज निकलने लगा ॥ ८८ ॥ महाबलशाली वीर्यवान् वानरश्रेष्ठ सुग्रीवजीने कुम्भ करके इस प्रकारसे चोट खाय वज्रके समान महाबलसे मूका बांधा ॥८९॥ सहस्र किरणोंसे समुज्ज्वल रविमंडलके समान वह घूंसा बडे वेगसे सुग्रीवने कुम्भके छातीमें मारा ॥९०॥ तब उस प्रहारसे कुम्भ अत्यन्त ताडित और विह्वल होकर लपटहीन अग्निके समान पृथ्वीमें गिर पडा ॥ ९१ ॥ और वह निशाचर मूकेसे मारा जायकर आकाशसे अपने आपसे गिरे हुए

तस्यचर्मचपुस्फोटसंजज्ञेचापिशोणितम् ॥ तस्यमुष्टिर्महावेगःप्रतिजघ्नेऽस्थिमंडले ॥ ८७ ॥ तस्यवेगेनतत्रासीत्तेजःप्रज्वलितंमहत् ॥ वज्रनिष्पेषसंजाताज्वालामेरोर्यथागिरेः ॥ ८८ ॥ सतत्राभिहतस्तेनसुग्रीवोवानरर्षभः ॥ मुष्टिंसंवर्तयामासवज्रकल्पंमहाबलः ॥ ८९ ॥ अर्चिःसहस्रविकचरविमंडलवर्चसम् ॥ समुष्टिंपातयामासकुम्भस्योरसिवीर्यवान् ॥९०॥ सतुतेनप्रहारेणविह्वलोभृशपीडितः॥ निपपाततदाकुम्भोगतार्चिरिवपावकः ॥९१॥ मुष्टिनाभिहतस्तेननिपपाताशुराक्षसः ॥ लोहितांगइवाकाशाद्दीप्तरश्मिर्यदृच्छया ॥ ९२ ॥ कुम्भस्यपततोरूपंभग्नस्योरसिमुष्टिना ॥ बभौरुद्राभिपन्नस्ययथारूपंगवांपते ॥ ९३ ॥ तस्मिन्हतेभीमपराक्रमेणप्लवंगमानामृषभेणयुद्धे ॥ महीसशैलासवनाचचालभयंचरक्षांस्यधिकंविवेश ॥ ९४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये युद्धकांडे षट्सप्ततितमः सर्गः ॥ ७६ ॥ निकुम्भोभ्रातरंदृष्ट्वा सुग्रीवेणनिपातितम् ॥ प्रदहन्निवकोपेनवानरेंद्रमुदैक्षत ॥ १ ॥

मंगल ग्रहके समान गिरके शोभायमान हुआ ॥९२॥ मूकेके प्रहारसे कुम्भकी छाती टूट गई और गिरे हुए कुम्भका रूप महादेवजीके मारनेसे गिरे हुए सूर्यके समान शोभित हुआ ॥ ९३ ॥ इस प्रकार भयंकर पराक्रमकारी वानरराज करके रणभूमिमें जब कुम्भ मारा गया, तब समस्त वन और पर्वतोंके साथ पृथ्वी चलायमान हो गई व निशाचरगण और भी अधिक भीत हुए॥९४॥इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां षट्सप्ततितमः सर्गः॥७६॥वानरराज सुग्रीवजीके हाथसे अपने भ्राता कुम्भको निहत देखकर महावीर निकुंभ क्रोधसे लाल२नेत्रकर जलाताही हुआसा मानों सुग्रीवजीकी ओर देखने लगा ॥ १ ॥

इसके उपरान्त उस वीरने काले लोहेका बना हुआ पांच अंगुलके प्रमाणवाला बन्धोंसे बँधा ज्वालामालसे शोभित पर्वतके शिखरके समान एक परिघ ग्रहण किया ॥ २ ॥ सुवर्णके बन्धनोंसे बँधा हुआ हीरे मणियोंसे जडा देखनेमें यमराजके दंडके समान राक्षस लोगोंके भयका नाश करनेवाला ॥३॥ भयंकर विक्रमकारी निकुंभ इन्द्रध्वजाके समान ऐसा भयंकर परिघ घुमाय २ विकटाकार मुखसे वारंवार सिंहनाद करने लगा ॥ ४ ॥ वह राक्षसवीर छातीमें निष्कल भूषण पहरे था, बाहोंमें बाजू पहरे कानोंमें विचित्र कुण्डल धारण किये और गलेमें हार डाले हुए था ॥ ५ ॥ निकुम्भ इन समस्त गहनोंके पहरनेसे और परिघ हाथमें लेनेसे ऐसा शोभायमान हुआ जैसे बिजलीकी कडक और इन्द्र धनुषसे युक्त मेघ शोभायमान होता है ॥ ६ ॥ शब्दायमान हुए अग्निके समान उस परिघके अग्रभागसे महात्मा बलवान् निकुम्भकी आवह, प्रवह; आदि सात पवनकी गांठें खुल गईं ॥ ७ ॥ यह वीर निकुंभ जब परिघको घुमाय रहा था तब

ततःस्रग्दामसन्नद्धंदत्तपंचांगुलंशुभम्॥आददेपरिघंधीरोमहेंद्रशिखरोपमम् ॥२॥ हेमपट्टपरिक्षिप्तंवज्रविद्रुमभूषितम्॥ यमदंडोपमंभीमंरक्षसांभयनाशनम्॥३॥तमाविध्यमहातेजाःशक्रध्वजसमौजसम्॥विननादविवृत्तास्योनिकुम्भोभीमविक्रमः ॥४॥उरोगतेननिष्केणभुजस्थैरंगदैरपि ॥ कुण्डलाभ्यांचचित्राभ्यांमालयाचसचित्रया ॥ ५ ॥ निकुंभोभूषणैर्भातितेनस्मपरिघेणच ॥यथेंद्रधनुषामेघःसविद्युत्स्तनयित्नुमान् ॥ ६ ॥ परिघाग्रेणपुस्फोटवातग्रंथिर्महात्मनः ॥ प्रजज्वालसघोषश्चविधूमइवपावकः ॥७॥ नगर्याविटपावत्यागंधर्वभवनोत्तमैः॥सतारागणनक्षत्रंसचंद्रंसमहाग्रहम् ॥ निकुम्भपरिघाघूर्णंभ्रमतीवनभःस्थलम् ॥८॥ दुरासदश्चसंजज्ञेपरिघाभरणप्रभः ॥ क्रोधेंधनोनिकुम्भाग्निर्युगान्ताग्निरिवोत्थितः ॥९॥ राक्षसावानराश्चापिनशेकुःस्पंदितुंभयात् ॥ हनूमांस्तुविवृत्योरस्तस्थौप्रमुखतोबली ॥ १० ॥ परिघोपमबाहुस्तुपरिघंभास्करप्रभम् ॥ बलीबलवतस्तस्यपातयामासवक्षसि ॥ ११ ॥ स्थिरेतस्योरसिव्यूढेपरिघःशतधाकृतः ॥ विकीर्यमाणःसहसाउल्काशतमिवांबरे ॥ १२ ॥

ऐसा शोभायमान हुआ मानो गन्धर्व लोगोंके सहित उत्तम भवन युक्त गंधर्वनगरी; सुरगृहयुक्त अमरावती, तारागण नक्षत्र चन्द्र और दूसरे समस्त महाग्रहोंके सहित आकाश मंडलही घूम रहा है ॥८॥ जो भूषण कि, परिघमें शोभित हो रहे थे, उन सबकी प्रभा ऐसी बढी कि, क्रोधरूप काठसे दीप्तिमान् निकुम्भरूप अग्नि प्रलयकालके अग्निके समान प्रज्वलित हो उठी ॥ ९ ॥ उस समय राक्षस अथवा वानरोंमेंसे कोई भी भयके मारे अस्त्र चलानेको समर्थ नहीं हुए परन्तु बलशाली हनुमानूजी छातीको फैलायकर उसके आगे गये ॥१०॥ परिघके समान बाहुवाले बलवान् वीर निकुंभने उस सूर्यके समान प्रभावाले परिघको हनुमानूजीकी छातीमें मारा ॥११॥ हनुमानूजीके वज्रके समान पुष्ट छातीमें लगकर वह परिघ शत खण्ड होगया और शत २ उल्काकी नाईं समस्त आकाशमें

बिथर गया ॥ १२ ॥ भूचालमें जिस प्रकार पर्वत अचल रहता है वैसेही महावीर हनुमानूजी परिघके लगनेपर अचल और अटल भावसे खडे रहे ॥ १३ ॥ परंतु महाकपि बलवान् वानरश्रेष्ठ हनुमानूजीने निकुम्भका परिघ सहन कर अतिबलसे मूका बांध कर ॥१४॥ महावीर्यवान् महातेजस्वी निकुंभकी छातीमें यह घूंसा उठायकर पवनके समान वेगवान् विक्रमशाली हनुमानूजीने मारा ॥ १५ ॥ उस दारुण घूंसेके लगनेसे निकुंभका बख्तर चर्म फूट गया और सबअंगोंसे रुधिरके सोते निकलने लगे, मेघमालमें जिस प्रकार सौदामिनी (बिजली) मिलजाती है वैसेही अकस्मात् एक ज्योति निकल कर राक्षसकी छातीमें मिल

सतुतेनप्रहारेणनचचालमहाकपिः ॥ परिघेणसमाधूतोयथाभूमिचलेऽचलः ॥ १२ ॥ सतथाभिहतस्तेनहनूमान्प्लवगोत्तमः ॥ मुष्टिंसंवर्तयामासबलेनातिमहाबलः ॥ १४ ॥ तमुद्यम्यमहातेजानिकुम्भोरसिवीर्यवान् ॥ अभिचिक्षेपवेगेनवेगवान्वायुविक्रमः ॥ १५ ॥ तत्रपुस्फोटचर्मास्यप्रसुस्रावचशोणितम् ॥ मुष्टिनातेनसंजज्ञेमेघेविद्युदिवोत्थिता ॥ १६ ॥ सतुतेनप्रहारेणनिकुम्भोविचचालच ॥ स्वस्थश्चापिनिजग्राहहनूमंतंमहाबलम् ॥ १७ ॥ चुक्रुशुश्चतदासंख्येभीमंलंकानिवासिनः ॥ निकुम्भेनोद्यतदृष्ट्वाहनूमंतंमहाबलम् ॥ ॥१८॥ सतथाह्रियमाणोऽपिहनूमांस्तेनरक्षसा ॥ आजघानानिलसुतोवज्रकल्पेनमुष्टिना ॥ १९ ॥ आत्मानंमोक्षयित्वाथक्षितावभ्यवपद्यत ॥ हनूमानुन्ममाथाशुनिकुम्भंमारुतात्मजः ॥ २० ॥

गई ❀ ॥१६॥ निकुम्भ इस प्रकारसे चलायमान तो हुआ परन्तु क्षणभरमेंही सावधान होकर उसने महाबलवान् हनुमानूजीको पकडा ॥ १७ ॥ जिस समय निकुंभ महावीर हनुमानूजीको उठाय आकाशमार्गसे लंकाकी ओर जाने लगा तब राक्षसलोग युद्धके इस वृत्तान्तको देखकर हर्षितमनसे कुलाहल करने लगे ॥ १८ ॥ उस समय महावीर हनुमानूजी अपनेको राक्षसके हाथमें पडाहुआ देखकर अत्यन्तही लज्जित हुए और उन्होंने उस राक्षसकी छातीमें वज्रके समान एक घूसा मारा ॥ १९ ॥ हनुमानूजी उसी समय राक्षसके हाथसे अपनेको छुटाय कूद कर पृथ्वीपर खडे होगये और निकुम्भको पकडकर उन्होंने शीघ्रही

❀ किसी ग्रंथमें इस सर्गके १६ संख्याके श्लोकमें "तव पुस्फोट चर्मास्य"के. वदले "तव पुस्फोट वर्मास्य" यह पाठ लिखा गया इस कारण बहुत अनुवादकरनेवालोंने वहांका कवचटूट गया ऐसा अर्थ कियाहै । हमारे विचारमें वर्मके स्थलमें चर्मपदका उल्लेख रहनेसे हनुमानजीके पराक्रममें गौरवके अतिरिक्त कुछ लघुता नहीं प्रकाश होगी इसलिये और ग्रन्थोंका पाठ युक्तियुक्त देखकर हमने चर्मपदकाही प्रयोग किया, हैं प्रमाणकेलिये वह श्लोक नीचे लिखते हैं तत्रपुस्फोट चर्मास्य मसुश्राव च शोणितम् । मुष्टिना तेन संजज्ञे मेघे विद्युदिवोत्थिता" ॥ १ ॥

पृथ्वीपर पटक दिया ॥२०॥ वह वेगवान् वीर हनुमानजी क्रोधमें भरकर निकुम्भको पृथ्वीपर पटक वारंवार पीसकरदेदे मारने लगे और आपभी कूदकर उसकी छाती पर चढ बैठे ॥ २१ ॥ इसके उपरान्त अपनी दोनों बांहोंसे पकडकर उसका शिर मरोर दिया और उस भयंकर शब्द करते हुएका शिर उखाडकर फेंकदिया ॥ २२ ॥ इस प्रकार जब पवनकुमार हनुमानजीसे संग्राममें शब्द करता हुआ निकुंभ मारा गया तब अत्यन्त क्रोधपूर्ण श्रीरामचन्द्रजीका और राक्षसोंमें श्रेष्ठ खरके पुत्र मकराक्षका युद्ध आरंभ हुआ ॥ २३ ॥ निकुंभके मारे जानेपर वानरलोगोंके आनंदपूर्ण सिंहनादसे दशों दिशा शब्दायमान, पृथ्वी चलायमान और आकाश मानो पृथ्वीपर गिरपडा। निकुंभको मरा हुआ देखकर वानरलोगोंका भयंकर शब्द सुनकर राक्षसोंकी सेनामें अत्यन्त भयका संचार हुआ ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां सप्तसप्ततितमः सर्गः ॥ ७७ ॥ इसके उपरान्त लंकापति दशानन रावण, निकुंभ और

निक्षिप्यपरमायत्तोनिकुंभंनिष्पिपेषच ॥ उत्पत्यचास्यवेगेनपपातोरसिवेगवान् ॥२१॥ परिगृह्यचबाहुभ्यांपरिवृत्यशिरोधराम् ॥ उत्पाटयामासशिरोभैरवंनदतोमहम् ॥ २२ ॥ अथनिनदतिसादितेनिकुंभेपवनसुतेनरणेबभूवयुद्धम् ॥ दशरथसुतराक्षसेंद्रसूनोर्भृशतरमागतरोषयोःसुभीमम् ॥२३॥ व्यपेतेतुजीवेनिकुम्भस्यहृष्टाविनेदुःप्लवंगादिशःसस्वनुश्च ॥ चचालेवचोर्वीपपातेवसाद्यौर्बलंराक्षसानांभयंचाविवेश ॥२४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे सप्तसप्ततितमःसर्गः ॥७७॥ निकुम्भंनिहतंदृष्ट्वाकुम्भंचविनिपातितम् ॥ रावणःपरमामर्षीप्रजज्वालानलोयथा ॥ १ ॥ नैर्ऋतःक्रोधशोकाभ्यांद्वाभ्यांतुपरिमूर्च्छितः ॥ खरपुत्रंविशालाक्षंमकराक्षमचोदयत्॥२॥गच्छपुत्रमयाज्ञप्तोबलेनाभिसमन्वितः ॥ राघवंलक्ष्मणंचैवजहितौसवनौकसौ ॥ ३ ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वाशूरमानीखरात्मजः ॥ बाढमित्यब्रवीद्धृष्टोमकराक्षोनिशाचरम् ॥ ४ ॥ सोऽभिवाद्यदशग्रीवंकृत्वाचापिप्रदक्षिणम् ॥ निर्जगामगृहाच्छुभ्राद्रावणस्याज्ञयाबली ॥ ५ ॥ समीपस्थंबलाध्यक्षखरपुत्रोऽब्रवीद्वचः॥ रथमानीयतांतूर्णंसैन्यंत्वानीतांत्वरात् ॥ ६ ॥

कुंभके मरनेकी वार्ता सुनकर अत्यन्त क्रोधसे अग्निके समान प्रज्वलित हो गया ॥ १ ॥ राक्षसराज रावण क्रोध और शोकसे व्याकुल होकर विशाल नेत्रवाले खरके पुत्र मकराक्षसे बोला ॥२॥ वत्स ! हम तुमको आज्ञा देते हैं तुम बडी भारी सेनाको साथ लेकर संग्रामभूमिमें जाय वानरोंके सहित उन रामचंद्र और लक्ष्मणको मार डालो ॥ ३ ॥ रावणके वचन सुनकर अपनेको शूर मानने वाले बलशाली ढीठ खरके पुत्र राक्षस मकराक्षने "बहुत अच्छा" कहकर रावणके वचनको स्वीकार किया ॥ ४ ॥ इसके उपरान्त वह रावणको प्रणाम कर व उसकी प्रदक्षिणा कर रावणकी आज्ञानुसार उजले वर्णके गृहोंसे निकला ॥ ५ ॥ तब खरके पुत्र मकराक्षने समीपही खड़े हुए सेनाके नायकसे कहा कि, तुम जल्दीसे रथ तैयार कराओ और सब सेनाको भी सजा लाओ ॥६॥

सेनाध्यक्षने मकराक्षकी यह आज्ञा पाय उसका रथ व सब सेनाको वहां सजाकर उपस्थित किया ॥ ७ ॥ निशाचर मकराक्ष रथकी प्रदक्षिणा करके शीघ्रही उसपर सवार हुआ और सारथीसे कहने लगा, सूत ! शीघ्रतासे रथको चलाओ ॥ ८ ॥ इसके उपरान्त मकराक्ष उन सब राक्षसोंको पुकारकर कहता हुआ "हे निशाचरगण ! तुम हमारे आगे रहकर वानरोंसे युद्ध करना ॥ ९ ॥ और हमको महात्मा राक्षसोंके स्वामी रावणसे संग्राममें उन राम लक्ष्मण दोनोंके मारनेकी आज्ञा मिली है" ॥१०॥ इसलिये हे राक्षसगण ! आज हम उत्तम बाणोंसे राम लक्ष्मण सुग्रीव व और दूसरे वानरोंकाभी प्राणसंहार करेंगे ॥११॥ जिसप्रकार अग्नि सूखेहुए काठको जलाताहै वैसेही हमभी आजशूल चलायकर बडी भारी वानरोंकी सेनाको भस्म कर देंगे॥१२॥तब वीरवर मकराक्षके वचनोंके

तस्यतद्वचनंश्रुत्वाबलाध्यक्षोनिशाचरः ॥ स्यंदनंचबलंचैवसमीपंप्रत्यपादयत् ॥७॥ प्रदक्षिणंरथंकृत्वासमारुह्यनिशाचरः॥सूतंतंचोदयामास शीघ्रंवैरथमावह॥ ॥ ८ ॥ अथतान्राक्षसान्सर्वान्मकराक्षोऽब्रवीदिदम् ॥ यूयंसर्वेप्रयुध्यध्वंपुरस्तान्ममराक्षसाः ॥ ९ ॥ अहंराक्षसराजेनराव णेनमहात्मना ॥ आज्ञप्तःसमरेहंतुंतावुभौरामलक्ष्मणौ ॥ १० ॥ अद्यरामंवधिष्यामिलक्ष्मणंचनिशाचराः ॥ शाखामृगंचसुग्रीवंवानरांश्चश रोत्तमैः ॥ ११ ॥ अद्यशूलनिपातैश्चवानराणांमहाचमूम् ॥ प्रदहिष्यामिसंप्राप्तंशुष्केंधनमिवानलः ॥ १२ ॥ मकराक्षस्यतच्छ्रुत्वावचनंतेनि शाचरा ॥ सर्वेनानायुधोपेताबलवंतसमाहिताः॥१३॥तेकामरूपिणःक्रूरादंष्ट्रिणःपिंगलेक्षणाः ॥ मातंगाइवनर्दंतोध्वस्तकेशाभयावहाः ॥१४॥ परिवार्यमहाकायामहाकायंखरात्मजम् ॥ अभिजग्मुस्ततोहृष्टाश्चालयंतोनभस्तलम् ॥ १५ ॥ शंखभेरीसहस्राणामाहतानांसमंततः ॥ क्ष्वे लितास्फोटितानांचतत्रशब्दोमहानभूत् ॥ १६ ॥ प्रभ्रष्टोऽथकरात्तस्यप्रतोदःसारथेस्तदा ॥ पपातसहसादेवाद्ध्वजस्तस्यतुरक्षसः ॥ १७ ॥

अनुसारबलवान् राक्षसगण युद्धके लिये तैयार हुए,उनके हाथोंमें अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र थे ॥१३॥ वह राक्षस क्रूरस्वभाव पीले २ नेत्रवाले कामरूपी और भयंकर दर्शन थे,उनके बाल विखरे हुएथे,आकार भयंकर था;यह सब राक्षस मतवाले हाथीके समान बडा भारीशब्द करने लगे ॥१४॥ ऐसे बडे२ शरीरवाले राक्षस महावीरगण मकराक्षको घेरकर चलने लगे,उनके पैर धरनेकी धमकसे पृथ्वी कंपायमान होने लगी आकाश कंपितसा दीखनेलगा ॥१५॥ उस समय भेरी शंख हजारों नगाडोंका और लोगोंकी ताल देनेका और सिंहनाद करनेका बडा भारी शब्द हुआ ॥ १६ ॥ रणभूमिमें जानेके समय सहसा मकराक्षके सारथीके

हाथसे कोडा गिरपडा और अचानक रथध्वजभी पृथ्वीपर गिरा ॥१७॥ मकराक्षके रथमें जुतेहुए दीन दशाको प्राप्तहुए घोडे विक्रमहीन हो व्याकुल पवनकी चालसे आंखोंसे आंसू गिराते हुए गमन करने लगे ॥१८॥ उस दुर्मति घोर राक्षस मकराक्षके युद्धमें जानेके समय धूलसे युक्त दारुण कठोर पवन चलनेलगी॥१९॥ परन्तु अत्यन्त वीर्यवान् वह निशाचर उन दुर्निमित्तोंको देखकरभी उनकी कुछभी चिंता न करके जिस स्थानमें श्रीराम लक्ष्मणजी विराजमान थे उसी ओरको चला ॥ २० ॥ युद्धकी अभिलाषा किये राक्षसोंका आकार मेघ मातंग (हाथी) महिष (भैंसे) के तुल्य था उन राक्षसोंकी देहोंमें गदा खड्ग व और दूसरे अस्त्रोंके चिह्न प्रकाशमान थे वह सबही युद्धविद्यामें पंडित थे पहले हम युद्ध करेंगे पहले हम युद्ध करेंगे समस्त इस उत्साहमें सिंहनाद करते हुए रणभूमिमें विचरने

तस्यतेरथसंयुक्ताहयाविक्रमवर्जिताः ॥ चरणैराकुलैर्गत्वादीनाःसाश्रुमुखाययुः ॥१८॥प्रवातिपवनस्तस्मिन्सपांसुःखरदारुणः॥निर्याणेतस्यरौद्रस्यमकराक्षस्यदुर्मतेः॥ १९ ॥ तानिदृष्ट्वानिमित्तानिराक्षसावीर्यवत्तमाः ॥ अचिंत्यनिर्गताःसर्वेयत्रतौरामलक्ष्मणौ॥२०॥ घनगजमहिषांगतुल्यवर्णाःसमरमुखेष्वसकृद्गदासिभिन्नाः॥अहमहमितियुद्धकौशलास्तेरजनिचराःपरिबभ्रमुर्मुहुस्ते ॥२१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकाण्डे अष्टसप्ततितमःसर्गः॥७८॥ निर्गतंमकराक्षंतेदृष्ट्वावानरपुंगवाः॥ आप्लुत्यसहसासर्वेयोद्धुकामाव्यवस्थिताः ॥ १ ॥ ततःप्रवृत्तंसुमहत्तद्युद्धंलोमहर्षणम् ॥ निशाचरैःप्लवंगानांदेवानांदानवैरिव ॥ २ ॥ वृक्षशूलनिपातैश्चगदापरिघपातनैः ॥ अन्योन्यंमर्दयंतिस्मतदाकपिनिशाचराः ॥३॥ शक्तिखड्गगदाकुंतैस्तोमरैश्चनिशाचराः ॥ पट्टिशैर्भिंदिपालैश्चबाणपातैःसमंततः॥४॥पाशमुद्गरदंडैश्चनिर्घातैश्चापरैस्तथा॥कदनंकपिसिंहानांचक्रुस्तेरजनीचराः॥५॥ बाणौघैरर्दिताश्चापिखरपुत्रेणवानराः॥ संभ्रांतमनसःसर्वेदुद्रुवुर्भयपीडिताः ॥६॥

लगे ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामष्टसप्ततितमः सर्गः ॥ ७८ ॥ वानर श्रेष्ठगण मकराक्षको युद्ध करनेके लिये निकला हुआ देखकर अतिबलसे कूदते फांदते युद्धकी अभिलाषासे तैयार हुए ॥१॥ इसके उपरान्त देवतालोगोंके सहित दानवगणोंके समान राक्षसोंके साथ बानरोंका बडा भारी रोमहर्षणकारी युद्ध आरंभ हुआ ॥२॥ उस समय वानर और राक्षसगण—वृक्ष,शूल,गदा,परिघादि चलाय २ कर परस्पर एक दूसरेको मारनेलगे ॥३॥ राक्षसलोग शक्ति खड्ग गदा भाला सांग पटा भिन्दिपाल और बाणोंसे वानरोंको मारते हुए॥४॥फिर पाश मुद्गरादि श्रेष्ठ२आयुधोंसे भी उन राक्षसोंको वानरोंने मारा कि,जिससे बहुतसे सारे वानरशार्दूल मरगये ॥५॥ खरके पुत्र मकराक्षके बाणोंसे इसप्रकार पीडितहो वानरगण भयके मारे व्याकुल हो भागने लगे ॥ ६ ।

रणविजयी राक्षस लोग वानरोंको चारों ओर भागते हुए देखकर गर्वसहित सिंहनाद करने लगे॥ ७॥ जब वानरगण इस प्रकारसे चारों ओरको भागे तब श्रीरामचन्द्रजी बाणोंकी वर्षा करके राक्षसोंको रोकने लगे॥ ८॥ राक्षसोंको बाणोंसे रुद्ध देखकर राक्षस मकराक्षने कोपकी अग्निसे प्रज्वलित हो यह कहा॥ ९॥ हे राम! क्षणभर टिककर हमारे साथ द्वन्द्वयुद्ध करो हम धनुषसे तीक्ष्ण बाण चलाय तुम्हारे प्राणोंको शरीरसे अलग करेंगे ॥ १० ॥ तुमने जब पहले दंडकारण्यमें हमारे पिताका संहार किया था, तबसे तुम्हारे ऊपर हमको क्रोध उपजा था, आज तुमको आगे खडे देखकर और अपने कार्यके साधन करनेमें तैयार हमारा वह क्रोध और भी बढा जाता है ॥ ११ ॥ रे दुरात्मन् राघव! तुम उसी समय जो हमको महावनमें नहीं दीखपडे इसी लिये हमारे समस्त अंग तबसे बराबर भस्म

तान्दृष्ट्वाराक्षसाःसर्वेद्रवमाणान्वनौकसः ॥ नेदुस्तेसिंहवद्दृप्ताराक्षसाजितकाशिनः ॥ ७ ॥ विद्रवत्सुतदातेषुवानरेषुसमंततः ॥ रामस्तान्वारयामासशरवर्षेणराक्षसान् ॥ ८ ॥ वारितान्राक्षसान्दृष्ट्वामकराक्षोनिशाचरः ॥ कोपानलसमाविष्टोवचनंचेदमब्रवीत् ॥ ९ ॥ तिष्ठराममयासार्धंद्वंद्वयुद्धंभविष्यति ॥ त्याजयिष्यामितेप्राणान्धनुर्मुक्तैःशितैःशरैः ॥ १० ॥ यत्तदादंडकारण्येपितरंहतवान्मम ॥ तदग्रतःस्वकर्मस्थंस्मृत्वारोषोऽभिवर्धते ॥ ११ ॥ दह्यंतेभृशमंगानिदुरात्मन्ममराघव ॥ यन्मयासिनदृष्टस्त्वंतस्मिन्कालेमहावने ॥ १२ ॥ दिष्ट्यासिदर्शनंराममत्वंप्राप्तवानिह ॥ कांक्षितोऽसिक्षुधार्तस्यसिंहस्येवेतरोमृगः ॥ १३ ॥ अद्यमद्बाणवेगेनप्रेतराड्विषयंगतः ॥ येत्वयानिहताःशूराःसहतैश्चवसिष्यसि ॥ १४ ॥ बहुनात्रकिमुक्तेनशृणुरामवचोमम ॥ पश्यंतुसकलालोकास्त्वांमांचैवरणाजिरे ॥ १५ ॥ अस्त्रैर्वागदयावापिबाहुभ्यांवारणाजिरे ॥ अभ्यस्तंयेनवारामवर्ततांतेनवामृधम् ॥ १६ ॥ मकराक्षवचःश्रुत्वारामोदशरथात्मजः ॥ अब्रवीत्प्रहसन्वाक्यमुत्तरोत्तरवादिनम् ॥ १७ ॥

हो रहे हैं॥ १२॥ हे राम! भूखे सिंहके निकटमें अपने आपहीसे मृगके चले आनेके समान आज भाग्यहीसे तुम हमारे देखनेको आये हो॥ १३॥ जिन शूरवीर लोगोंको तुम पहले समरमें मार चुके हो आज हमारे बाणोंके वेगसे यमराजके भवनमें जाकर तुम भी उन सबके साथमें मिलोगे ॥ १४ ॥ हे रामचन्द्र ! अधिक कहनेका कुछ प्रयोजन नहीं है; हम केवल इतनाही कहते हैं कि, आज सब लोक हमको और तुमको इस संग्रामभूमिमें आया हुआ देखें॥ १५॥ हे दशरथकुमार ! अस्त्र, गदा, बाहु अथवा और जिस प्रकारके युद्धमें तुमको विशेष आभ्यास हो आज उसीसे तुम हमारे साथ युद्ध करो ॥ १६॥ दशरथनन्दन श्रीरामचन्द्रजी

मकराक्षके यह वचन सुनकर हँसते २ उस वृथा बकवाद करनेवाले मकराक्षसे बोले ॥१७॥ हे निशाचर! किस कारणसे बहुत सारी बकवादकरके अपनी बडाई कर रहा है? तू युद्ध न करके केवल वचनोंहीसे जय प्राप्त करनेके लिये समर्थ नहीं होगा॥१८॥हमने अकेलेही दंडकारण्यमें तुम्हारे पिता खर, त्रिशिरा, दूषण और उनके संगी चौदह हजार राक्षसोंका संहार किया है ॥१९॥ रे पापी! आज तेराभी प्राण संहार कराजायगा और तेरा मांस तीक्ष्ण चोंच और तीक्ष्ण पंजों वाले गिद्ध शृगाल और कौए खाकर तृप्त हो जायँगे ॥२०॥ "रुधिरार्द्रमुखा हृष्टा रक्तपक्षाण्डजाश्च ये। खेचरा वसुधाराश्च भविष्यन्ति च सर्वतः॥ जो आकाशके चरनेवाले और लाल पंख युक्त हैं वह सब पक्षीभी अपनी चोंचसे तेरा रुधिर पान करके हर्षितचित्त हो पृथ्वीके अनेक स्थानोंमें घूमेंगे * ॥" जब श्रीराम

कत्थसेकिंवृथारक्षोबहून्यसदृशानिते ॥ नरणेशक्यतेजेतुंविनायुद्धेनवाग्बलात् ॥ १८ ॥ चतुर्दशसहस्राणिरक्षसांत्वत्पिताचयः ॥त्रिशिरा दूषणश्चापिदंडकेनिहतोमया ॥ १९ ॥ स्वाशितास्चापिमांसेनगृध्रगोमायुवायसाः ॥ भविष्यंत्यद्यवैपापतीक्ष्णतुंडनखांकुशाः ॥ २० ॥ राघवेणैवमुक्तस्तुमकराक्षोमहाबलः ॥ बाणौघानमुचत्तस्मैराघवायरणाजिरे ॥ २१ ॥ ताञ्छराञ्छरवर्षेणरामश्चिच्छेदनैकधा ॥ निपेतुर्भुविविच्छिन्नारुक्मपुंखाःसुवाससः ॥ २२ ॥ तद्युद्धमभवत्तत्रसमेत्यान्योन्यमोजसा ॥ खरराक्षसपुत्रस्यसूनोर्दशरथस्यच ॥ २३ ॥ जीमूतयोरिवाकाशेशब्दोज्यातलयोरिव ॥ धनुर्मुक्तस्वनोन्योन्यंश्रूयतेचरणाजिरे ॥ २४ ॥

चन्द्रजीने यह वचन कहे तब महाबलवान् मकराक्षने समर करनेके लिये तैयार होकर एकहीवारमें श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर अगणित बाणोंकी वर्षाकी ॥२१॥ परन्तु श्रीरामचन्द्रजीने अपनी बाणवर्षासे उन समस्त बाणोंको काटडाला; वह सुवर्णकी फोंक लगे, गांसीयुक्त समस्त बाण कटकर पृथ्वीपर गिरपडे ॥ २२ ॥ इस प्रकारसे राक्षस खरके पुत्र मकराक्ष और नरेन्द्र महाराज दशरथजीके पुत्र श्रीरामचन्द्रजीका परस्पर तेज सहित मिलने पर दोनोंका घोर युद्ध आरंभ हुआ ॥२३॥ उसकाल उस रणभूमिमें आकाशमें शब्द करते हुए दो मेघोंके समान दोनोंके धनुषकी टंकार और हाथसे खेंचनेका धनुषसे बाण छोडनेका शब्द सुनाई

* यह श्लोक प्राचीनपुस्तकोंमें है यद्यपि टीकाकारोंने एकार्थप्रतिपादक जानकर इस श्लोकको छोड दिया है परन्तु वाल्मीकीजीकी कविता का छोडना उचित नहीं इस कारण यह श्लोक यहां पर लिखा गया है।

आने लगा ॥ २४ ॥ तब देव, दानव, गन्धर्व, किन्नर और बडे२ सर्पगण उस अद्भुत युद्ध देखनेके लिये आकाशमें विराजमान हुए ॥२५॥ उससमय दोनोंके शरीर जितनेही बाणोंसे विंधे वैसेही वैसे दोनोंकी सामर्थ्य बढने लगी; जब एक दूसरेको मारता था, तब दूसराभी उसका उत्तर देनेके लिये उसके उसी अंगमें घाव लगाता था ॥ २६ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने जितने बाण चलाये मकराक्षने उन सबको काट डाला और राक्षस मकराक्षके छोडे हुए बाणसमूहोंकी बाणकी वर्षा करके श्रीरामचन्द्रजीने काट डाला ॥२७॥ दोनों वीरोंके चलाये हुये बाणोंसे समस्त दिशा विदिशा भर गई और पृथ्वी आकाश दोनोंमें छायगये. दिशा विदिशा विदित नहीं होती थीं ॥ २८ ॥ इसके उपरान्त महाबाहु श्रीरामचन्द्रजीने क्रोधित होकर मकराक्षका धनुष काटकर अठारह बाण चलायकर उसके सारथिको

देवदानवगंधर्वाःकिन्नराश्चमहोरगाः ॥ अन्तरिक्षगताःसर्वेद्रष्टुकामास्तदद्भुतम् ॥ २५ ॥ विद्धमन्योन्यगात्रेषुद्विगुणंवर्धतेबलम् ॥ कृतप्रतिकृतान्योन्यंकुरुतांतौरणाजिरे ॥ २६ ॥ राममुक्तांस्तुबाणौघान्राक्षसस्त्वच्छिनद्रणे ॥ रक्षोमुक्तांस्तुरामोवैनैकधाप्राच्छिनच्छरैः ॥ २७ ॥ बाणौघविततासर्वादिशश्चप्रदिशस्तथा ॥ संच्छन्नावसुधाचैवसमंतान्नप्रकाशते ॥ २८ ॥ ततःक्रुद्धोमहाबाहुर्धनुश्चिच्छेदसंयुगे ॥ अष्टाभिरथनाराचैःसूतंविव्याधराघवः ॥ २९ ॥ भित्त्वारथंशरैरामोहत्वाअश्वानपातयत् ॥ विरथोवसुधास्थःसमकराक्षोनिशाचरः ॥ ३० ॥ तत्तिष्ठद्वसुधांरक्षःशूलंजग्राहपाणिना ॥ त्रासनंसर्वभूतानांयुगांताग्निसमप्रभम् ॥३१॥ दुरवापंमहच्छूलंरुद्रदत्तंभयंकरम् ॥ जाज्वल्यमानमाकाशेसंहारास्त्रमिवापरम् ॥ ३२ ॥ यंदृष्ट्वादेवताःसर्वाभयार्ताविद्रुतादिशः ॥ विभ्राम्यचमहच्छूलंप्रज्वलंतंनिशाचरः ॥ ३३ ॥ सक्रोधात्प्राहिणोत्तस्मैराघवायमहात्मने ॥तमापतंतंज्वलितंखरपुत्रकराच्च्युतम् ॥ ३४ ॥

बींधा ॥ २९ ॥ और बहुतसे बाणोंसे रथको भेदकर उसमेंके जुते हुए घोडोंका भी संहार किया तब राक्षस मकराक्ष रथहीन होकर पृथ्वीपर खडा रह गया ॥३०॥ तब पृथ्वीपर खडे हुए उस राक्षस मकराक्षने सब प्राणियोंको भय दिलानेवाला प्रलयकालके समान प्रकाशित शूल अपने हाथमें ग्रहण किया ॥३१॥ यह शूल राक्षस मकराक्षने महादेवजीकी तपस्या करके प्राप्त किया था, यह भयंकर और अतिदुर्द्धर्ष था, वह अपने तेजसे आकाशमें प्रज्वलित हो रहा था ॥ ३२ ॥ देखनेसे यह शूल दूसरे संहार अस्त्रके समान जान पडता था जिसको देखकर सब देवता भयके मारे आर्त हो दशों दिशाओंको भाग गये ॥ ३३ ॥ ऐसा बडा भारी प्रज्वलित शूल घुमायकर राक्षसने क्रोधसहित वह शूल महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर चलाया उस आतेहुए खरपुत्र मकराक्षके हाथसे चलाये हुए

प्रज्वलित ॥३४॥ शूलको चार बाणोंसे आकाशमेंही श्रीरामचन्द्रजीने काट डाला । तपायेहुए सुवर्णसे शोभित वह दिव्य शूल श्रीरामचन्द्रजीके बाणसे मर्दित और अनेक खण्ड होकर बडी भारी उल्काके समान पृथ्वीपर गिर पडा ॥३५॥ उससमय सकल कर्मकारी श्रीरामचन्द्रजी करके उस शूलको कटा हुआ देखकर आकाशमें टिके हुए सब प्राणी "धन्यहो, धन्यहो" ऐसा कहने लगे ॥३६॥ निशाचर मकराक्ष शूलको कटा हुआ देख मूका उठाय "खडे रहो खडे रहो" ऐसा कहकर श्रीरामचन्द्रजीके सन्मुख धाया ॥ ३७ ॥ रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीने भी उस राक्षसको आता हुआ देख मंद २ हँसते हुए धनुषको धारण किया और उसपर अग्निबाण चढाया ॥ ३८ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके उस आग्नेयास्त्रसे राक्षस मकराक्षका हृदय फट गया और वह संग्रामभूमिमें गिरकर प्राण छोडता

बाणैश्चतुर्भिराकाशेशूलंचिच्छेदराघवः ॥ सभिन्नोनैकधाशूलोदिव्यहाटकमंडितः ॥व्यशीर्यतमहोल्केवरामबाणार्दितोभुवि ॥ ३५ ॥ तच्छूलं निहतंदृष्ट्वारामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ साधुसाध्वितिभूतानिव्याहरंतिनभोगताः॥ ३६ ॥ तंदृष्ट्वानिहतंशूलंमकराक्षोनिशाचरः ॥ मुष्टिमुद्यम्यका कुत्स्थंतिष्ठतिष्ठेतिचाब्रवीत् ॥ ३७ ॥ सतदृष्ट्वापतंतंतुप्रहस्यरघुनंदनः ॥ पावकास्त्रंततोरामःसंदधेतुशरासने ॥ ३८ ॥तेनास्त्रेणहतंरक्षःकाकु त्स्थेनतदारणे ॥ सच्छिन्नहृदयंतत्रपपातचममारच ॥ ३९ ॥ दृष्ट्वातेराक्षसाःसर्वेमकराक्षस्यपातनम् ॥ लंकामेवप्रधावंतरामबाणभयार्दिताः ॥४०॥ दशरथनृपसूनुबाणवेगैरजनिचरंनिहतंखरात्मजंतम् ॥ प्रददृशुरथदेवताःप्रहृष्टागिरिमिववज्रहतंतथाविकीर्णम् ॥४१॥ इत्यार्षे श्रीम० वाल्मी० आदि० च० सा० युद्धकांडेनवसप्ततितमः सर्गः ॥७९ ॥ मकराक्षंहतंश्रुत्वारावणःसमितिंजयः ॥ रोषेणमहताविष्टोदंतान्कटकटा य्यच ॥ १ ॥ कुपितश्चतदातंकिंकार्यमितिचिंतयन् ॥ आदिदेशाथसंक्रुद्धोरणायेंद्रजितंसुतम् ॥ २ ॥ जहिवीरमहावीर्यौभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ अदृश्योदृश्यमानोत्रवासवंथात्वंबलाधिकः ॥ ३ ॥

हुआ ॥ ३९ ॥ उस समय और सब राक्षस मकराक्षको मृतक देख रामबाणके भयसे अत्यन्त व्याकुल हो लंकाकी ओरको भागे ॥ ४० ॥ इस ओर देवता लोग राजा दशरथजीकेपुत्रश्रीरामचन्द्रजी करके खरकेपुत्रनिशाचरमकराक्षको मृतक और बज्रसे विदारण हुए पर्वतकेसमानपडे देखकर परम प्रसन्न हुए॥४१॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा०वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां नवसप्ततितमः सर्गः ॥७९॥ महावीर रावण मकराक्षकी मृत्युका समाचार सुनकर अत्यन्त क्रोधयुक्त हुआ और दांतोंसे दांत पीसकर "कटकट" शब्द करने लगा॥१॥इसके उपरांत क्षणभर तक "अब क्या करना उचितहै" यह चिंता करके महा क्रोधकर पुत्र इन्द्रजीतको संग्राममें जानेकी आज्ञा देता हुआ ॥ २ ॥ रावणने कहा, हे वीर ! तुम सब प्रकारसे महाबलवान् हो इसलिये प्रगट होकर अथवा अन्तर्धान होकर दोनों

भ्राता राम और लक्ष्मणको मार डालो ॥३॥ तुमने जो रणभूमिमें अनुपमकर्मकारी इन्द्रको जीत लिया है फिर भला "दो मनुष्योंको" तो देखतेही तुम मार डालोगे इसमें संदेहही क्या है ॥४॥ इन्द्रजीतने राक्षसोंके स्वामी रावणकी इस प्रकारसे आज्ञा पाय यज्ञ भूमिको जाय अग्निमें यथाविधिसे होम करना आरंभ किया ॥ ५ ॥ जिस स्थानमें राक्षसराजका पुत्र मेघनाद यज्ञकार्यमें दीक्षित हुआ था वहांपर कईएक लाल वस्त्र धारण किये हुए राक्षसियें अति सावधानीसे आकर इस यज्ञकी सेवा करने लगीं॥६॥उस यज्ञमें शस्त्रही शरपतके तुल्य बिछ रहे थे और उसके पूरा करनेके लिये बहेडेकी लकडी लाल वर्णके वस्त्र और काले लोहेसे बना हुआ स्रुवा लाया गया ॥ ७ ॥ तब इन्द्रजीतने तोमर स्वरूप शरपत्रोंसे अग्नि प्रज्वलित की और एक जीतेहुए काले छागकी गर्दन पकडी॥ और उस छागको अग्निमें होमदिया; होम करतेही वह शरपत्रों पर फैली हुई अग्नि धूमरहित होगई और उसमें निकली हुई शिखाओंसे विजयकी सूचना देनेवाले चिह्न

त्वमप्रतिमकर्माणमिंद्रंजयसिसंयुगे ॥ किंपुनर्मानुषौदृष्ट्वानवधिष्यसिसंयुगे ॥ ४ ॥ तथोक्तारक्षसेंद्रेणप्रतिगृह्यपितुर्वचः ॥ यज्ञभूमौसविधिवत्पावकंजुहवेंद्रजित् ॥ ५ ॥ जुह्वतश्चापितत्राग्निंरक्तोष्णीषधराःस्त्रियः ॥ आजग्मुस्तात्रसंभ्रांताराक्षस्योयत्ररावणिः ॥ ६ ॥ शस्त्राणिशरपत्राणिसमिधोऽथविभीतकाः ॥ लोहितानिचवासांसिस्रुवंकार्ष्णायसंतथा ॥ ७ ॥ सर्वतोऽग्निंसमास्तीर्यशरपत्रैःसतोमरैः ॥ छागस्यसर्वकृष्णस्यगलंजग्राहजीवतः ॥ ८ ॥ शरहोमसमिद्धस्यविधूमस्यमहार्चिषः ॥ बभूवुस्तानिलिंगानिविजयंदर्शयंतिच ॥ ९ ॥ प्रदक्षिणावर्तशिखस्तप्तहाटकसन्निभः ॥ हविस्तत्प्रतिजग्राहपावकःस्वयमुत्थितः ॥ १० ॥ हुत्वाग्निंतर्पयित्वाथदेवदानवराक्षसान् ॥ आरुरोहरथश्रेष्ठमंतर्धानगतंशुभम् ॥ ११ ॥ सवाजिभिश्चतुर्भिस्तुबाणैस्तुनिशितैर्युतः ॥ आरोपितमहाचापःशुशुभेस्यंदनोत्तमे ॥ १२ ॥ जाज्वल्यमानोवपुषातपनीयपरिच्छदः ॥ मृगैश्चंद्रार्धचंद्रैश्चसरथःसमलंकृतः ॥ १३ ॥ जांबूनदमहाकंबुर्दीप्तपावकसन्निभः ॥ बभूवेंद्रजितःकेतुर्वैदूर्यसमलंकृतः ॥ १४ ॥ तेनचादित्यकल्पेनब्रह्मास्त्रेणचपालितः ॥ सबभूवदुराधर्षोरावणिःसुमहाबलः ॥ १५ ॥

प्रकाशित हुए ॥८॥९॥ और तपाये हुए कांचनके समान अग्निने दाहिनी ओरकी धूम लपटोंके सहित उठकर मेघनादकी दीहुई आहुति ग्रहणकी॥१०॥रावणका पुत्र मेघनाद इस प्रकार अग्निको आहुतिदे देव दानव और राक्षसोंकी तृप्ति करता हुआ व किसीको दीखनेवाले शुभलक्षणयुक्त रथपर सवार हुआ ॥११॥ उस कालमें चारघोडोंसे चलाये जाते उत्तमरथमें सवार होकर वह वीर बडा भारी धनुष और तीखे बाणसमूह ग्रहण करके परम शोभायमान होने लगा॥१२॥महावीर इन्द्रजीतका देह सुवर्णके वस्त्राभूषणसे शोभायमान था उसका रथभी सुवर्णसे भूषित था उस रथमें मृगोंकी तसवीर बनरही थी और अर्द्धचन्द्रोंसेभी वह भलीभांति अलंकृत था ॥ १३ ॥ सोनेके वलयसे युक्त और प्रदीप्त अग्निके समान उसका केतुभी वैदूर्यमणिसे सब प्रकार सज रहा था ॥ १४ ॥ उस सूर्यके समान रथ

और ब्रह्मास्त्रसे रक्षित होनेके कारण महाबलवान् रावणका पुत्र मेघनाद अत्यन्त अजीत हो गया॥ १५॥ समर विजयी इन्द्रजीत इस प्रकारसे अग्निमें होम करके नगरसे बाहर निकला और राक्षसी मंत्रोंसे अन्तर्धान होकर बोला॥ १६॥ मिथ्या वनको निकले हुए राम और लक्ष्मणको संग्राममें मारकर हम रणमें बटोरी हुई जय अपने पिता रावणको देंगे ॥ १७ ॥ आज लक्ष्मणके सहित रामचंद्रका नाश कर पृथ्वीको वानरविहीन और पिताजीको परम प्रसन्न करेंगे ऐसा कहकर अन्तर्धान हो गया ॥१८॥ इसके उपरान्त महावीर इन्द्रजीत रावणकी प्रेरणासे प्रेरित होकर क्रोधसहित युद्धभूमिमें आया, मेघनाद हाथमें तीक्ष्ण अस्त्र धारण करके औरभी अधिक तीक्ष्ण होगया ॥ १९॥ इन्द्रजीतने देखा कि, वानरलोगोंके बीचमें तीन फणवाले सर्पके समान श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी खडे हैं इनके बन्धनोंमें दो दो तरकस लग रहे थे और मस्तकके साथ तीन २ शिरवाले ज्ञात होते थे इस कारण तीन फणवाला सर्प कहा] यह श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी वानर

सोऽभिनिर्यायनगरादिंद्रजित्समितिंजयः ॥ हुत्वाग्निंराक्षसैर्मंत्रैरंतर्धानगतोऽब्रवीत् ॥ १६ ॥ अद्यहत्वारणेयौतौमिथ्याप्रव्रजितौवने ॥ जयं पित्रेप्रदास्यामिरावणायरणेऽधिकम् ॥ १७ ॥ अद्यनिर्वानरामुर्वींहत्वारामंचलक्ष्मणम् ॥ करिष्येपरमांप्रीतिमित्युक्त्वांतरधीयत ॥ १८ ॥ आपपाताथसंक्रुद्धोदशग्रीवेणचोदितः ॥ तीक्ष्णकार्मुकनाराचैस्तीक्ष्णस्त्विंद्ररिपूरणे ॥ १९ ॥ सददर्शमहावीर्यौनागौत्रिशिरसाविव ॥ सृजंतौ विषुजालानिवीरौवानरमध्यगौ ॥ २० ॥ इमौताविति संचिंत्यसज्जंकृत्वाचकार्मुकम् ॥ संततानिषुधाराभिः पर्जन्यइववृष्टिमान् ॥ २१ ॥ सतुवैहायसरथोयुधितौरामलक्ष्मणौ ॥ अचक्षुर्विषयेतिष्ठन्विव्याधनिशितैःशरैः ॥ २२ ॥ तौतस्यशरवेगेनपरीतौरामलक्ष्मणौ ॥ धनुषीसशरेकृत्वादिव्यमस्त्रंप्रचक्रतुः ॥ २३ ॥ प्रच्छादयतौगगनंशरजालैर्महाबलौ ॥ तमस्त्रैःसूर्यशंकाशैर्नैवपस्पर्शतुःशरैः ॥ २४ ॥ सहिधूमांधकारं चचक्रेप्रच्छादयन्नभः ॥ दिशश्चांतर्दधेश्रीमान्नीहारतमसावृतः ॥ २५ ॥

लोगोंके बीचमें खडे रहकर बाणोंकी वर्षा कर रहे थे ॥२०॥ इन्द्रजीतने उनको देखतेही पहँचान लिया और मेघ जिस प्रकार जलकी धारा वर्षाते हैं वैसेही मेघनाद धनुषपर बाण चढाकर निरन्तर बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥२१॥ आकाशगामी रथपर सवार होकर वह वीरदृष्टिके ओझल होकर टिका हुआ तीखे बाणसमूहसे श्रीरामचंद्रजी व लक्ष्मणजीको बींधता हुआ॥२२॥ महावीर श्रीरामचंद्र व लक्ष्मणजी राक्षसके बाण लगनेसे धनुष चढायकर दिव्यास्त्रका प्रयोग करते हुए ॥ २३ ॥ यद्यपि श्रीरामचंद्रजी व लक्ष्मणजीके बाणोंसे आकाशमंडल छागया परन्तु वह समस्त बाण इन्द्रजीतके शरीरको स्पर्श नहीं कर सके ॥ २४ ॥ राक्षसवीर इन्द्रजीतने मायाकेबलसे धुवेंसहित अंधकार विस्तार करके दशों दिशाओंको छाय लिया और आप उस अंधकार मंडलसे ढका रहकर किसी दूसरेकी

दृष्टिमें न आनेयोग्य होगया ॥२५॥ उस कालमें उसके रथका घर्घरशब्द धनुषकी टंकोर घोडोंके पैर धरनेका शब्द कुछ भी सुनाई नहीं आता था और मेघनाद स्वयंभी भली भाँतिसे लोप होगया ॥२६॥ उस निबिड अंधकारमें सब दिशा विदिशा अंधकारसे छाय गई, महाबाहु इंद्रजीत पत्थर वर्षनेके समान अद्भुत नाराच और बाणोंकी वर्षा आरंभ करता हुआ॥२७॥मेघनाद क्रोधमें भरकर सूर्यके समान प्रदीप्त बाणसमूहसे रणभूमिमें श्रीरामचन्द्रजीको मारने लगा॥२८॥पर्वतपर जिसप्रकारसे वृष्टि होतीहै वैसेही वह दोनों नरशार्दूल श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी मेघनादके बाणोंसे ताडित होकर घोररूप सुवर्णकी फोंक लगे बाणसमूह मेघनादके ऊपर चलाने लगे ॥२९॥ वह समस्त कंकबाण आकाशमें मेघनादके समीप जायकर उनकी देहको भेद रुधिरसे भीग पृथ्वीपर गिरने लगे ॥३०॥ इन्द्रजी

नैवज्यातलनिर्घोषोनचनेमिखुरस्वनः ॥ शुश्रुवेचरतस्तस्यनचरूपंप्रकाशते॥२६॥घनांधकारेतिमिरेशिलावर्षमिवाद्भुतम् ॥ सववर्षमहाबाहुर्नाराचशरवृष्टिभिः ॥२७॥ सरामंसूर्यसंकाशैःशरैर्दत्तवरैर्भृशम् ॥ विव्याधसमरेक्रुद्धःसर्वगात्रेषुरावणिः ॥ ॥ २८ ॥ तौहन्यमानौनाराचैर्धाराभिरिवपर्वतौ ॥ हेमपुंखान्नरव्याघ्रौतिग्मान्मुमुचतुःशरान् ॥ २९ ॥ अंतरिक्षेसमासाद्यरावणिंकंकपत्रिणः ॥ निकृत्यपतगाभूमौपेतुस्तेशोणिताप्लुताः ॥ ३० ॥ अतिमात्रंशरौघेणदीप्यमानौनरोत्तमौ ॥ तानिषूून्पततोभल्लैरनेकैर्विचकर्ततुः ॥ ३१ ॥ यतोहिददृशातेतौशरान्निपतितान्छितान् ॥ ततस्तुतौदाशरथीससृजातेऽस्त्रमुत्तमम् ॥ ३२ ॥ रावणिस्तुदिशःसर्वारथेनातिरथोपतत् ॥ विव्याधतौदाशरथीलघ्वस्त्रोनिशितैःशरैः ॥ ३३ ॥ तेनातिविद्धौतौवीरौरुक्मपुंखैःसुसंहतैः ॥ बभूवतुर्दाशरथीपुष्पिताविवकिंशुकौ ॥ ३४ ॥ नास्यवेगगतिंकश्चिन्नचरूपंधनुःशरान् ॥ नचास्यविदितंकिंचित्सूर्यस्येवाभ्रसंप्लवे ॥ ३५ ॥

तके बाण चलानेसे श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजीकी दीप्ति बढ उठी कि; उन्होंने भी राक्षसके चलाये हुए समस्त बाणोंको भाले चलाकर व्यर्थ कर दिया॥३१॥ यद्यपि श्रीराम लक्ष्मण इंद्रजीतको देख नहीं पाते थे परंतु जिस ओरसे उसके बाण चले आते थे उसही ओरको यह दोनोंजन तीखे बाण चलाने लगे ॥३२॥ अतिरथ इंद्रजीतने भी सर्व दिशाओंमें रथ चलाते २ तीखे बाणसमूहसे उन बाण वर्षाते हुए दोनोंराजकुमारोंको मारना आरंभ किया ॥३३॥ उस समय वह वीरश्रेष्ठ दोनों दशरथकुमार सुवर्णकी फोंक लगे मेघनादके बाणोंसे बींधकर फूले हुए दो पलाश वृक्षोंके समान शोभायमान हुए ॥३४॥ जिस प्रकार मेघसे ढके

हुए सूर्यकी गति नहीं जानी जाती है, वैसेही कोई भी इंद्रजीतकी गति, रूप, धनुष अथवा बाण कुछ भी नहीं देख सकता था ॥ ३५॥ उस युद्धमें सैकडों हजारों वानर घायल हुए और मृतक होकर पृथ्वीपर गिर पडे ॥ ३६॥ इसी अवसरमें क्रोधित होकर रामचन्द्रजीके छोटे भ्राता लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीसे यह वचन बोले कि, जो आज्ञा हो तो हम राक्षसोंके कुलको निर्मूल करनेके लिये ब्रह्मास्त्र छोडें. हे महाबलवान् ! हमारी यही इच्छा है कि, इस लोकको राक्षसशून्य करदे ॥३७॥ यह वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजी शुभ लक्षण युक्त लक्ष्मणजीसे बोले कि, एक राक्षसके लिये पृथ्वीके समस्त राक्षसोंको नहीं मार डालना चाहिये ॥ ३८ ॥ युद्ध न करते हुए छिपे हुए हाथ जोडकर शरण आये हुए भागे हुए अथवा मतवाले शत्रुका मार डालना ठीक नहीं ॥ ३९ ॥ हे महाभुज ! इस

तेनविद्धाश्चहरयोनिहताश्चगतासवः ॥ बभूवुःशतशस्तत्रपतिताधरणीतले ॥३६॥ लक्ष्मणस्तुततःक्रुद्धोभ्रातरंवाक्यमब्रवीत् ॥ ब्राह्ममस्त्रंप्रयो क्ष्यामिवधार्थंसर्वरक्षसाम् ॥३७॥ तमुवाचततोरामोलक्ष्मणंशुभलक्षणम् ॥ नैकस्यहेतोरक्षांसिपृथिव्यांहंतुमर्हसि ॥३८॥अयुध्यमानंप्रच्छन्नं प्रांजलिंशरणागतम् ॥ पलायमानंमत्तंवानहंतुंत्वमिहार्हसि ॥ ३९ ॥ तस्यैवतुवधेयत्नंकरिष्यामिमहाभुज ॥ आदेक्ष्यावोमहावेगानस्त्रानाशीविषोपमान् ॥ ४० ॥ तमेनंमायिनंक्षुद्रमंतर्हितरथंबलात् ॥ राक्षसंनिहनिष्यंतिदृष्ट्वावानरयूथपाः ॥ ४१ ॥ यद्येषभूमिंविशतेदिवंवारसातलंवापि नभस्तलंवा ॥ एवंविगूढोऽपिममास्त्रदग्धःपतिष्यतेभूमितलेगतासुः ॥४२॥ इत्येवमुक्त्वावचनंमहार्थंरघुप्रवीरः प्लवगर्षभैर्वृतः॥ वधायरौद्रस्य नृशंसकर्मणस्तदामहात्मात्वरितंनिरीक्षते ॥ ४३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० च० सा० युद्धकांडे अशीतितमः सर्गः ॥ ८० ॥

कारण आज हम इसके वध करनेके निमित्तही यत्नवान् होकर विषधर सर्पके समान बाण अति वेगसे छोडेंगे ॥४०॥ हे वीर ! मायाके बलसे अदृश्य रथ किये यह मायावी राक्षस जो किसी प्रकारसे वानरलोगोंकी दृष्टिमें आजावे तब तो वानरोंके यूथपही उसको मार डालेंगे ॥ ४१ ॥ अधिक क्या है जो इन्द्रजीत स्वर्गलोक, मृत्युलोक, पाताल अथवा आकाश चाहे जहां प्रवेश कर छिप जावे तथापि हमारे अस्त्रोंसे यह भस्म और प्राण रहित होकर पृथ्वीपर गिर जायगा ॥ ४२ ॥ महात्मा रघुवीरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी यह महाअर्थयुक्त वचन कहकर वानरोंकी सेनाके संग खडे हुए क्रूरकर्मकारी राक्षसका प्राणसंहार करनेके लिये अनेक प्रकारसे उपाय विचारने लगे ॥ ४३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामशीतितमः सर्गः ॥ ८० ॥

महावीर इन्द्रजीत महात्मा श्रीरामचन्द्रजीका ऐसा अभिप्राय जानकर उसी समय समरसे निवृत्त होकर लंकापुरी को चला गया ॥१॥ परन्तु वह शूर मेघनाद महाबली कुम्भकर्ण इत्यादि तेजस्वी निशाचरोंके वधको विचार क्रोधसे लाल २ नेत्र कर फिर लंकापुरीसे निकला॥२॥ पौलस्त्यकुलमें उत्पन्नहुआ देवकंटक महावीर्यवान् मेघनाद बहुत सारे राक्षसोंको साथलेकर लंकाके पश्चिम द्वारसे निकला॥३॥और इन्द्रजीतने वीरश्रेष्ठ दोनों भाई रामचन्द्र और श्रीलक्ष्मणजीको युद्ध करनेकेलिये तैयार देख वैसे उनको अजीत विचार कर मायाका विस्तार किया ॥ ४ ॥उस समय मायावी निशाचरने रथके ऊपर मायाकी सीताजीको मार डालनेकीही मेघनादकी कामना थी ॥५॥ वह दुर्मति इन्द्रजीत सबको मायासे मोहनेके लिये उन मायामयी सीताजीका वध करनेके निमित्त वानरलोगों के सम्मुख गमन करता हुआ ॥ ६ ॥ इन्द्रजीतको दूसरी बार आया हुआ देखकर रणाभिलाषी वनचर वानरगण अत्यन्त क्रोधकर शिला हाथमें ले कूद २

विज्ञायतुमनस्तस्यराघवस्यमहात्मनः ॥ सनिवृत्याहवात्तस्मात्प्रविवेशपुरंततः ॥१॥ सोऽनुस्मृत्यवधंतेषांराक्षसानांतरस्विनाम् ॥ क्रोधताम्रेक्षणःशूरोनिर्जगामाथरावणिः ॥ २ ॥ सपश्चिमेनद्वारेणनिर्ययौराक्षसैर्वृतः ॥ इंद्रजित्सुमहावीर्यःपौलस्त्योदेवकंटकः ॥ ३ ॥ इंद्रजित्तुततो दृष्ट्वाभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ रणायात्युद्धतौवीरौमायांप्रादुष्करोत्तदा॥ ४ ॥ इंद्रजित्तुरथेस्थाप्यसीतांमायामयींतदा ॥ बलेनमहतावृत्यतस्यावधमरोचयत् ॥ ५ ॥ मोहनार्थंतुसर्वेषांबुद्धिंकृत्वासुदुर्मतिः ॥ हंतुंसीतांव्यवसितोवानराभिमुखोययौ ॥ ६ ॥ तंदृष्ट्वात्वभिनिर्यांतंसर्वेते काननौकसः॥उत्पेतुरभिसंक्रुद्धाःशिलाहस्तायुयुत्सवः ॥७॥ हनूमान्पुरतस्तेषांजगामकपिकुंजरः ॥ प्रगृह्यसुमहच्छृंगंपर्वतस्यदुरासदम् ॥८॥ सददर्शहतानंदांसीतामिंद्रजितोरथे ॥ एकवेणीधरांदीनामुपवासकृशाननाम् ॥ ९ ॥ परिक्लिष्टैकवसनाममृजांराघवप्रियाम् ॥ रजोमलाभ्यामालिप्तैःसर्वगात्रैर्वरस्त्रियम् ॥१०॥ तांनिरीक्ष्यमुहूर्तंतुमैथिलीमध्यवस्यच ॥ बभूवाचिरदृष्टाहितेनसाजनकात्मजा ॥११॥ अब्रवीत्तांतुशोकार्तां निरानंदांतपस्विनीम् ॥ दृष्ट्वारथस्थितांदीनांराक्षसेंद्रसुताश्रिताम् ॥ १२ ॥

कर आगे बढे ॥ ७ ॥ कपिकुंजर हनुमानूजी बडा भारी पर्वतका शृङ्ग ग्रहण करके उस दुर्द्धर्ष मेघनादके सामने गये॥८॥ और उन्होंने देखा कि; इन्द्रजीत के रथपर सीताजी विराजमानहैं, उनका शरीर उपवास करनेके क्लेशसे दुर्बल होगया है; उनके अन्तरमें आनंदका लेशमात्र नहीं है; मस्तकपर बडी भारी एक वेणी पडी है और वह दीनभावसे बैठी हुईहैं॥९॥ वह रामप्यारी जानकी केवल एक मलीन वस्त्रपहर रहीहैं सुंदरमुखवालीहोने पर भी उनके सर्व देहकी ज्योति धूलिके जालसे ढक गई है ॥१०॥ हनुमानूजीने कुछ दिन पहलेही जानकीजीको देखा था इस कारण उन्होंने एक मुहूर्ततक देख भालकर ही जान लिया कि, यह जनककुमारी जानकी हैं ॥ ११ ॥ दीनभावयुक्त मैलसे शरीरयुक्त जानकीजीको रथमें बैठी हुई देखकर हनुमानूजी अत्यन्त व्यथित हुए और

उनका मुखमंडल आंसुओंके गिरनेसे गीला हो गया तब हनुमानूजी यह बोले ॥ १२ ॥ इस दुर्वृत्त इन्द्रजीतका क्या अभिप्राय है ? हनुमानूजी उस समय मनमें अनेक प्रकारकी चिन्ता करके वानरवीर लोगोंके साथ मेघनादके सम्मुख दौडे॥ १३ ॥ राक्षसवीर इन्द्रजीत वानरोंको आते हुए देख क्रोधके वश हो खड्ग निकाल मायाकी सीताजीका शिर काटनेके लिये तैयार हुआ ॥१४॥ उस राक्षसने वानर लोगोंके सामनेही सीताजीको ताडन किया उसकाल मायाकी सीता "हा राम ! हा राम !" कहकर रोने लगी॥१५॥ फिर मेघनादसे सीताजीके बाल पकडे जाते हुए देखकर पवनकुमार हनुमानूजी अत्यन्त व्याकुल हुए और दुखः के मारे उनके दोनों नेत्रोंसे आंसू निकलने लगे॥१६॥ श्रीरामचन्द्रजीकी प्यारी भार्या उन सर्वांगसुन्दरी जानकीजीकी ऐसी अवस्था देखकर हनुमानूजी

किंसमर्थितमस्येतिचिंतयन्समहाकपिः ॥ सहतैर्वानरश्रेष्ठैरभ्यधावतरावणिम् ॥१३॥ तद्वानरबलंदृष्ट्वारावणिःक्रोधमूर्च्छितः ॥ कृत्वाविकोशं निस्त्रिंशंमूर्ध्निसीतामकर्षयत् ॥१४॥ तांस्त्रियंपश्यतांतेषांताडयामासराक्षसः ॥ क्रोशंतींरामरामेतिमाययायोजितांरथे ॥ १५॥ गृहीतमूर्धजां दृष्ट्वाहनूमान्दैन्यमागतः॥ दुःखजंवारिनेत्राभ्यामुत्सृजन्मारुतात्मजः॥१६॥ तांदृष्ट्वाचारुसर्वांगींरामस्यमहिषींप्रियाम् ॥ अब्रवीत्परुषंवाक्यं क्रोधाद्रक्षोऽधिपात्मजम् ॥१७॥ दुरात्मन्नात्मनाशायकेशपक्षेपरामृशः ॥ ब्रह्मर्षीणांकुलेजातोराक्षसींयोनिमाश्रितः ॥१८॥ धिक्त्वांपापसमाचारंयस्यतेमतिरीदृशी ॥नृशंसानार्यदुर्वृत्तक्षुद्रपापपराक्रमः ॥ अनार्यस्येदृशंकर्मघृणातेनास्तिनिर्घृण ॥१९॥ च्युतागृहाच्चराज्याच्चरामहस्ताच्च मैथिली ॥ किंतवैषापराद्धाहियदेनांहंसिनिर्दय ॥ २० ॥ सीतांहत्वातुनचिरंजीविष्यसिकथंचन ॥ वधार्हकर्मणातेनममहस्तगतोह्यसि ॥२१॥

अतिकड़े वचनोंसे रावणके पुत्र इंद्रजीतसे बोले ॥ १७ ॥ रे दुरात्मन् ! तू जो रघुकुलकी लक्ष्मी जानकी के केश पकड़ता है; सो अपना नाशही करनेके लिये ऐसा करता है, विचार करके देख, परमपूज्य ब्रह्मर्षिवंशमें जन्म ग्रहण करके तुझको राक्षसयोनि धारण करनी हुई ॥ १८ ॥ तेरी जब कि, स्त्री हत्या करनेमें ऐसी स्थिरगति हुई है, तब तुझको धिक्कार है, तू अतिदुर्वृत्त निर्लज्ज और अनार्य है । रे पापपराक्रम ! यदि ऐसा न होता तो ऐसे घृणित कार्यके करनेमें तेरी ऐसी प्रवृत्ति क्यों होती?॥१९॥ रे निर्दयी! जिनसे गृह छूटगया, राज्य छूट गया और पीछेसे श्रीरामचन्द्रजीके छूटजानेसे जो महाकष्ट पाय रहीहैं, सो इन्होंने तेरा क्या अपराध किया है? किजिससे तू इनका प्राणसंहार करनेको तैयार हुआहै?॥२०॥ रे वध करनेके योग्य ! जब कि तू हमारे हाथोंमें पड गयाहै तब

किसीप्रकारसे भी सीताजीका वध करके तू बहुत कालतकजीवन धारण करनेको समर्थनहीं होगा॥२१॥स्त्रियोंके मारनेवाले जिसस्थानमें गमन करतेहैं अथवा नरघातक चोर जिस स्थानको कलंकित करते हैं, तू उसी स्थानमेंप्राणोंको छोडकर सब लोकोंको जायगा॥२२॥ हनुमान्जी केवल यही वचन कह आयुधधारी वानरोंके साथ क्रोधमें भर राक्षसराजके पुत्र इन्द्रजीतके सम्मुख दौडे ॥२३॥ उस महावीर्यवान् वानरोंकी सेनाको आती हुई देखकर इन्द्रजीतने महाकोप कर राक्षसोंकी सेनासे उनको रुकवाया ॥२४॥ उस समय महावीर इन्द्रजीत हजार बाण चलाय वानरोंकी सेनाको चलायमानकर वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीसे यहवचन बोला ॥ २५ ॥ राम, सुग्रीव अथवा तुम जिस कारणसे इस स्थानमें आयेहो आजहम तुम्हारे सामनेही उन जानकीजीका वध करेंगे ॥२६॥ अरे वानर! इसको

येचस्त्रीघातिनालोकालोकवध्यैश्चकुत्सिताः ॥ इहजीवितमुत्सृज्यप्रेत्यतान्प्रतिलप्स्यसे ॥ २२ ॥ इतिब्रुवाणोहनुमान्सायुधैर्हरिभिर्वृतः ॥ अभ्यधावत्सुसंक्रुद्धोराक्षसेंद्रसुतंप्रति ॥ २३ ॥ आपतंतंमहावीर्यंतदनीकंवनौकसाम् ॥ रक्षसांभीमकोपानामनीकेनन्यवारयत् ॥ २४ ॥ सतां बाणसहस्रेणविक्षोभ्यहरिवाहिनीम् ॥ हनूमंतंहरिश्रेष्ठमिंद्रजित्प्रत्युवाचह ॥ २५ ॥ सुग्रीवस्त्वंचरामश्चयन्निमित्तमिहागताः ॥ तांवधिष्यामि वैदेहीमद्यैवतवपश्यतः ॥ २६ ॥ इमांहत्वाततोरामंलक्ष्मणंत्वांचवानर ॥ सुग्रीवंचवधिष्यामितंचानार्यंविभीषणम् ॥ २७ ॥ नहंतव्याःस्त्रिय श्चेतियद्ब्रवीषिप्लवंगम ॥ पीडाकरममित्राणांयच्चकर्तव्यमेवतत ॥ २८ ॥ तमेवमुक्त्वारुदतींसीतांमायामयींचताम् ॥ शितधारेणखड्गेननिज घानेंद्रजित्स्वयम् ॥ २९ ॥ यज्ञोपवीतमार्गेणच्छिन्नातेनतपस्विनी ॥ सापृथिव्यांपृथुश्रोणीपपातप्रियदर्शना ॥ ३० ॥ तामिंद्रजित्स्त्रियंहत्वा हनुमंतमुवाचह ॥ मयारामस्यपश्येमांप्रियांशस्त्रनिषूदिताम् ॥ ३१ ॥

मारकर उसके पीछे हम राम, लक्ष्मण, सुग्रीव, अनार्य विभीषण सहित तुझको भी मार डालेंगे ॥२७॥ रे बंदर ! तैंने जो कहा कि, "स्त्रीका वधकरना कर्त्तव्य नहीं" सो राजनीतिके अनुसार शत्रुओंको जिस २ कार्यके करनेसे पीडा पहुँचे वह कार्य करना उचितहै उसके करनेसे पाप नहीं होता ❋ ॥२८॥ इन्द्रजीतने यह वचन कहतेही तेजधारवाले खड्गसे अपनेआप उन रोती हुई मायामयी जानकीजीके ऊपरप्रहारकर दिया॥२९॥जैसेही मेघनादने प्रहारकियाकि बडेनितम्बवाली प्रियदर्शना वह जानकी यज्ञोपवीतके स्थानसे कटकर छिन्नभिन्न हो पृथ्वीपर गिरी ॥३०॥ तब इन्द्रजीतने हनुमान्जीसे कहा कि, यह देखो हमने अबके

❋ अनेक रामायणोंमें २९ संख्याका श्लोक नहीं, हम नहीं जानते कि छापनेवालोंने इसे क्यों छोड दिया है। "ताडकाया वधं रामः किमर्थं कृतवान् पुरा ॥ तदहं हन्मि रामस्य महिषीं जनकात्मजाम् ॥ २९ ॥" भला यह न सही परन्तु पहले रामने किस प्रकारसे ताडकाको मारडाला था। उन्होंने जिस कारण यह कार्य किया हमभी इसीकारण से इस रामकी भार्या जनककी बेटीसीताको मार डालेंगे ॥॥ २९ ॥

प्रहारसे रामचन्द्रजीकी प्यारी वैदेहीको मारडाला ॥ ३१ ॥ फिर जब कि, जानकीही मृतक होगई तब फिर तुम लोगोंको और वृथा परिश्रम करनेका क्या फल है ? ॥ ३२ ॥ इन्द्रजीत इस प्रकारसे उन मायामयी सीताजीको खड्गसे मारकर हर्षित अंतःकरणसे अपने रथपर सवार हो घोर शब्दसे सिंहनाद करने लगा ॥ ३३ ॥ वानरलोग निकटही टिककर वज्रसमान कठोर शब्द सुनने लगे और उन्होंने देखा कि महावीर इन्द्रजीत दुर्गमें प्रवेश करके विकटाकार मुखसे कठोर हर्षकी ध्वनि कर रहा है ॥ ३४ ॥ दुर्मति रावणके पुत्र इन्द्रजीतने जब इस प्रकारसे उस मायाकी सीताका प्राणसंहार किया तब वानरलोग उस हर्षित वीरको देखकर शोकाकुल हो चारों ओरको भागने लगे॥३५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि युद्धकांडे भाषायामेकाशीतितमः सर्गः॥८१॥

एषाविशस्तावैदेहीनिष्फलोवःपरिश्रमः ॥ ३२ ॥ ततःखड्गेनमहताहत्वातामिंद्रजित्स्वयम् ॥ हृष्टःसरथमास्थायननादचमहास्वनम् ॥ ३३ ॥ वानराःशुश्रुवुःशब्दमदूरेप्रत्यवस्थिताः ॥ व्यादितास्यस्यनदतस्तद्दुर्गसंश्रितस्यतु ॥ ३४ ॥ तथातुसीतांविनिहत्यदुर्मतिःप्रहृष्टचेताःसबभूव रावणिः ॥ तंहृष्टरूपंसमुदीक्ष्यवानराविषण्णरूपाःसमभिप्रदुद्रुवुः ॥ ३५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे एकाशीतितमः सर्गः ॥ ८१ ॥ श्रुत्वातंभीमनिह्रादंशक्राशनिसमस्वनम् ॥ वीक्षमाणादिशःसर्वादुद्रुवुर्वानराभृशम् ॥ १ ॥ तानुवाच ततःसर्वान्हनूमान्मारुतात्मजः ॥ विषण्णवदनान्दीनांस्त्रस्तान्विद्रवतःपृथक् ॥ २ ॥ कस्माद्विषण्णवदनाविद्रवध्वंप्लवंगमाः॥ त्यक्तयुद्धसमुत्साहाःशूरत्वंक्वनुवोगतम् ॥ पृष्ठतोनव्रजध्वंमामग्रतोयांतमाहवे ॥ ३ ॥ एवमुक्ताःसुसंक्रुद्धावायुपुत्रेणधीमता ॥ शैलशृंगान्द्रुमांश्चैवजगृहुर्हृष्टमानसाः ॥ ४ ॥ अभिपेतुश्चगर्जंतोराक्षसान्वानरर्षभाः ॥ परिवार्यहनूमंतमन्वयुश्चमहाहवे ॥ ५ ॥

देवराज इन्द्रजीके वज्रके शब्दके समान इन्द्रजीतके वह भयंकर सिंहनाद सुनकर वानर चारोंओरको निहारते हुए भागने लगे ॥ १ ॥ परन्तु पवनकुमार हनुमानूजी उनको भयके मारे शोकाकुलवदन और दीनभावसे भागा हुआ देखकर सबहीसे अलग२ कहने लगे ॥२॥ हे वानरगण ! तुम सब किस कारणसे रणका उत्साह छोडकर व्याकुलमुख किये भागे जातेहो ? तुम्हारी वह शूरता कहां गई? नामवाले शूरलोगोंको भागना उचित नहीं है इसलिये हम आगे२ चलते हैं और तुम सब हमारे पीछे २ चलो ॥ ३ ॥ बुद्धिमान् हनुमानूजी करके इस प्रकार कहे जाकर वानरोंको क्रोधउत्पन्न हुआ और वह सबही उत्साहसहित शिला और वृक्षोंको ग्रहण करने लगे ॥ ४ ॥ इसके उपरान्त वह सब वानर श्रेष्ठ हनुमानूजीको घेरे हुए गर्जते२ महा समरके सन्मुख चले ॥ ५ ॥

वानरवीर हनुमान्जी वानरोंकी सेनासे घेरे जाकर चलते हुए, और जिस प्रकार अग्नी अपनी शिखाओंके संगमें शोभायमान होते हैं वैसेहीशोभायमान होकर शत्रुओंकी सेनाको भस्म करने लगे ॥ ६ ॥ कालांतक यमराजके समान महाकपि हनुमानूजीने वानरसेनाकी सहायतासे बहुत सारे राक्षसोंको मारडाला॥ ७॥ हनुमानूजीने शोक और क्रोधसे अधीर होकर एक बडी भारी शिला ग्रहणकरके रावणके पुत्र मेघनादके रथपर चलाई॥ ८॥ परन्तु शिलाको रथके ऊपरआती हुई देख सारथिने संकेत (इशारा) ही किया कि सीखे सिखाये घोडे रथको दूर लेजाकर रक्षा करते हुए॥ ९॥ तब वह हनुमानूजीकी चलाई हुई शिला सारथिकेसहित रथपर बैठे हुए इन्द्रजीतको न पाकर विफल हो पृथ्वीमें घुस गई ॥ १० ॥ वहशिला इस प्रकारके वेगसे चलाई गई थी कि, जिस समय वह गिरी

सतैर्वानरमुख्यैस्तुहनूमान्सर्वतोवृतः ॥ हुताशनइवार्चिष्मानदहच्छत्रुवाहिनीम् ॥ ६ ॥ सराक्षसानांकदनंचकारसुमहाकपिः ॥ वृतोवानरसैन्येनकालांतकयमोपमः ॥ ७ ॥ सतुशोकेनचाविष्टःकोपेनमहताकपिः ॥ हनूमान्रावणिरथेमहतींपातयच्छिलाम् ॥ ८ ॥ तामापतंतीदृष्ट्वैव रथंसारथिनातदा ॥ विधेयाश्वसमायुक्तोविदूरमपवाहितः ॥ ९ ॥ तमिंद्रजितमप्राप्यरथस्थंसहसारथिम् ॥ विवेशधरणींभित्त्वासाशिला व्यर्थमुद्यता ॥ १० ॥ पतितायांशिलायांतुव्यथितारक्षसांचमूः ॥ निपतंत्याचशिलयाराक्षसामथिताभृशम् ॥ ११ ॥ तमभ्यधावञ्शतशोनदंतःकाननौकसः ॥ तेद्रुमांश्चमहाकायागिरिशृंगाणिचोद्यताः ॥ १२ ॥ क्षिपंतींद्रजितंसंख्येवानराभीमविक्रमाः ॥ वृक्षशैलमहावर्षंविसृजंतःप्लवंगमाः॥ १३॥शत्रूणांकदनंचक्रुर्नेदुश्चविविधैःस्वनैः॥वानरैस्तैर्महाभीमैर्घोररूपानिशाचराः॥ १४॥वीर्यादभिहतावृक्षैर्व्यचेष्टंतरणक्षितौ॥ ससैन्यमभिवीक्ष्याथवानरार्दितमिंद्रजित् ॥ १५॥ प्रगृहीतायुधःक्रुद्धःपरानभिमुखोययौ ॥ सशरौघानवसृजन्स्वसैन्येनाभिसंवृतः ॥ १६ ॥

असंख्य राक्षसोंकी सेना उससे व्यथित हुई व कुचलीगई ॥ ११॥ तब उस समय सैकडों हजारों बलशाली बडे२ शरीर वाले वानरगण पर्वतोंके शिखर और वृक्षोंको उठाये ॥ १२॥ अतिशीघ्रतासे यह भयंकर विक्रमकारी वानर इन्द्रजीतके सन्मुख दौडे और इन समस्त वानरोंने मेघनादकी सेनापर शिलावृक्षादिकी वर्षा करदी ॥ १३ ॥ वानरलोगोंने राक्षसोंके ऊपर वृक्ष और पर्वतोंकी वर्षा करके उनमेंसे बहुतसारोंका नाश कर दिया और विविधभांतिसे सिंहनाद करने लगे भयंकर आकार वाले वानरगण घोररूपवाले निशाचरोंको ॥ १४॥ अति वीर्यसे वृक्ष व शिलाके प्रहारसे चूर्ण करके पृथ्वीपर लुटाने लगे तब महावीरइन्द्रजीत वानरोंके हाथसे राक्षसोंको पीडित देखकर॥ १५॥ क्रोधसहित हथियार उठाय शत्रुकी सेनामें प्रवेश करता हुआ, उसने अपनी सेनाके बीचमें खडे होकर

बाणोंकी झडी लगादी ॥ १६ ॥ कि जिससे बहुतसे दृढ विक्रमकारी वानरगण मृतक होगये जो कि शूल; वज्र, खड्ग, पटा; कूट व मुद्गरादिकोंसे मारे गये ॥ १७ ॥ उस समयमें वानरगणोंने भी मेघनादकी बहुत सेना मार डाली ॥१८॥ महाबलवान् हनुमान्जी स्कन्ध और शाखायुक्त शालवृक्ष और शिलाओंके प्रहारसे भयंकर कर्मकारी राक्षसोंको मारने लगे॥ १९ ॥ और अपने पराक्रमसे शत्रुओंकी सेनाको निवारित करते हुए अपनी सेनासे बोले कि, हे वानरो ! लौट चलो अब इन राक्षसोंके साथ युद्ध करनेकी आवश्यकता नहीं है ॥२० ॥ तुम सब श्रीरामचन्द्रजीका प्रियकार्य सिद्ध करनेकी वासनासे प्राणतक देनेको तैयार होकर पराक्रम प्रकाश करते हो परंतु जिनके लिये युद्ध किया जाता है वह जानकीजीही मार डाली गई हैं ॥ २१ ॥ चलो रामचन्द्रजी व सुग्रीवजी

जघानकपिशार्दूलान्सुबहून्दृढविक्रमः ॥ शूलैरशनिभिः खड्गैःपट्टिशैःशूलमुद्गरैः ॥ १७ ॥ तेचाप्यनुचरांस्तस्यवानराजघ्नुराहवे ॥ १८ ॥ सुस्कंधविटपैःशैलैःशिलाभिश्चमहाबलः ॥ हनूमान्कदनंचक्रेरक्षसांभीमकर्मणाम् ॥ १९ ॥ सन्निवार्यपरानीकमब्रवीत्तान्वनौकसः ॥ हनूमान्सन्निवर्तध्वंननःसाध्यमिदंबलम् ॥ २० ॥ त्यक्त्वाप्राणान्विचेष्टंतोरामप्रियचिकीर्षवः ॥ यन्निमित्तंहियुध्यामोहतासाजनकात्मजा ॥ २१ ॥ इममर्थंहिविज्ञाप्यरामंसुग्रीवयेवच ॥ तौयत्प्रतिविधास्येतेतत्करिष्यामहेवयम् ॥ २२ ॥ इत्युक्त्वावानरश्रेष्ठोवारयन्सर्ववानरान् ॥ शनैःशरैरसंत्रस्तःसबलःसंन्यवर्तत ॥ ॥ २३ ॥ ततःप्रेक्ष्यहनूमंतंव्रजंतंयत्रराघव ॥ सहोतुकामोदुष्टात्मागतश्चैत्यंनिकुम्भिलाम् ॥ २४ ॥ निकुम्भिलामधिष्ठायपावकंजुहवेंद्रजित् ॥ यज्ञभूम्यांततोगत्वापावकस्तेनरक्षसा ॥ २५ ॥ हूयमानःप्रजज्वालहोमशोणितभुक्तदा ॥ सार्चिःपिनद्धोददृशेहोमशोणिततर्पितः ॥ संध्यागतइवादित्यःसुतीव्रोऽग्निसमुत्थितः ॥ २६ ॥

को यह समाचार सुनादें, वह जैसी आज्ञादें वैसेही किया जायगा ॥ २२ ॥ वानरश्रेष्ठ हनुमान्जी निर्भय हो यह वचन कह समस्त वानरोंको निवारित कर धीरे २ सेनासहित संग्रामसे लौटते हुए ॥२३॥ हनुमान्जीको श्रीरामचन्द्रजीके निकट जाता हुआ देखकर दुष्टात्मा राक्षस इन्द्रजीत होम करनेके लिये प्रथम निकुंभिला देवालयके वृक्षोंके समीप गमन करके अग्निमें होम करता हुआ ॥ २४ ॥ इसके उपरान्त यज्ञभूमिमें गमन करके अग्निमें होम आरंभ करनेसे होममें रुधिरका पान करने वाली अग्नि प्रज्वलित हो उठी ॥ २५ ॥ उस कालमें ज्वालासे युक्त और होम तथा रुधिरसे तृप्तकी हुई वह उठी हुई तीव्रअग्नि

संध्यासमयके सूर्यके समान ज्ञात होनेलगी॥२६॥ इसप्रकारसे राक्षसलोगोंकी उन्नतिके हेतु विधानको जाननेवालाइन्द्रजीत जब यथाविधिसे होम करनेलगातब संग्राम करनेमें कुशल निशाचरगण स्थिरभावसे बैठे हुए इस यज्ञको देखनेलगा॥२७॥इत्यार्षेश्रीमद्रा०वाल्मीकीयेआदि०युद्धकांडेभाषायां द्वयशीतितमःसर्गः॥८२॥
उस ओर रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी वानर राक्षसोंका बडा भारी समरका शब्द सुनकर जाम्बवानूसे कहनेलगे॥१॥ हे सौम्य! ऐसा जान पडता हैकि, हनुमानूने अति दुष्कर कार्य किया है, कारण कि, अतिभारी भयंकर आयुध चलानेका शब्द सुनाई देता है॥२॥ इस कारण हे ऋक्षराज! इन युद्धकरते हुये वानरश्रेष्ठ की सहायता करनेके लिये तुम अतिशीघ्रतासे अपनी सेनाके साथ जाओ॥३॥ ऋक्षराजजाम्बवानूजी "बहुत अच्छा" कहकर जिसस्थानमें वानरश्रेष्ठ हनुमानूजी युद्ध करतेविराजते थे अपनी सेनाके सहित उसी पश्चिमद्वारको गये॥४॥ वहां जाकर ऋक्षराजजाम्बवानूजीने देखा कि,हनुमानूजी लौटेहुए आरहे हैं और उनके

अथेंद्रजिद्राक्षसभूतयेतुजुहावहव्यंविधिनाविधानवित् ॥ दृष्ट्वाव्यतिष्ठंतचराक्षसास्तेमहासमूहेषुनयानयज्ञाः ॥ २७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येःच० सा० युद्धकांडे द्वयशीतितमः सर्गः ॥ ८२ ॥ रावघश्चापिविपुलंतंराक्षसवनौकसाम् ॥ श्रुत्वासंग्रामनिर्घोषंजांबवंतमुवाचह ॥१॥ सौम्यनूनंहनुमताकृतंकर्मसुदुष्करम्॥श्रूयतेचयथाभीमःसुमहानायुधस्वनः ॥२॥ तद्गच्छकुरुसाहाय्यंस्वबलेनाभिसंवृतः ॥ क्षिप्रमृक्षपतेतस्यकपिश्रेष्ठस्ययुध्यतः ॥३॥ ऋक्षराजस्तथेत्युक्त्वास्वेनानीकेनसंवृतः ॥ आगच्छकुरुसाहाय्यंस्वबलेनाभिसंवृतः ॥४॥ अथायांतंहनूमंतंददर्शर्क्षपतिस्तदा ॥ वानरैःकृतसंग्रामैःश्वसद्भिरभिसंवृतम् ॥ ५ ॥ दृष्ट्वापथिहनूमांश्चतदृक्षबलमुद्यतम् ॥ नीलमेघनिभंभीमंसन्निवार्यन्यवर्तत ॥ ६ ॥ सतेनसहसैन्येनसन्निकर्षमहायशाः ॥ शीघ्रमागम्यरामायदुःखितोवाक्यमब्रवीत् ॥ ७ ॥ समरेयुध्यमानानामस्माकंप्रेक्षतांचसः ॥ जघानरुदतींसीतामिंद्रजिद्रावणात्मजः ॥ ८ ॥ उद्भ्रांतचित्तस्तांदृष्ट्वाविषण्णोऽहमरिंदम ॥ तदहंभवतोवृत्तंविज्ञापयितुमागतः ॥ ९ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराघवःशोकमूर्च्छितः ॥ निपपाततदाभूमौछिन्नमूलइवद्रुमः ॥ १० ॥

साथमें जो वानरोंकी सेना है, युद्ध कर थकित शरीर हो वारंवार लंबे २ श्वास लेरही है ॥५॥ हनुमानूजीने मार्गमें उस नीले बादलके समान समर करनेके लियेतैयार भयंकर रीछोंकीसेनाको देखकर उन सबको लौटाये॥६॥महायशस्वी हनुमानूजी ऋक्ष और वानरोंकी सबसेनाके साथदुःखितमनसे श्रीरामचन्द्रजीके निकट पहुँचे और उनसे यहकहा॥७॥ "हम सबने संग्रामभूमिमें युद्ध करते२ देखाकि; रावणके पुत्र इन्द्रजीतने हम लोगोंके सामनेही रोती हुई जानकीजीको मार डाला॥८॥ हे शत्रुओंका नाश करनेवाले ! उनकी ऐसी अवस्था देख हमारा चित्त उद्भ्रान्त और व्याकुल होगया इससे हम आपसे यह वृत्तान्त निवेदन करनेके लिये यहां आये हैं" ॥९॥ हनुमानूजीके ऐसे वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजी मारे शोकके मूर्छित हो जड कटे हुए वृक्षकेसमान पृथ्वीमें गिर पडे॥१०॥

देवताओंके समान रघुनाथजीको ऐसी अवस्थामें पृथ्वीपर गिरा हुआ देखकर वानर श्रेष्ठ गण कूद २ कर उनके समीप आये ॥११॥ और सीताजीका विनाश होनेके शोकसे प्रज्वलित निवारण करनेके अयोग्य अग्निके समान प्रदीप्त रघुनाथजीके शरीरमें कमलके पत्तोंकी सुगंधि युक्त जलसे छींटे मारने लगे ॥१२॥ इसके उपरान्त लक्ष्मणजी दुःखित अंतःकरणसे शोकसे पीडित श्रीरामचन्द्रजीको अपनी दोनों बांहोंसे पकडकर हेतु और अर्थयुक्त यह वचन बोले ॥ १३ ॥ हे आर्य! हमको धर्मनिरर्थक जान पडताहै कारणकि,आपने इन्द्रियोंको जीतकर राज्यकोत्याग व पिताजीका वचन पालनरूपजो धर्मका आचरण कियाहै फिर यह धर्म आपको अनर्थसे उद्धार करनेके लिये समर्थ क्यों न हुआ?॥१४॥ स्थावर अथवा जंगमपशुआदि प्राणियोंके दर्शनसे जिस प्रकार उनका होनाजाना

तंभूमौदेवसंकाशंपतितंदृश्यराघवम् ॥ अभिपेतुःसमुत्पत्यसर्वतःकपिसत्तमाः ॥ ११ ॥ आसिंचन्सलिलैश्चैनंपद्मोत्पलसुगंधिभिः ॥ प्रदहंतमसंहार्यंसहसाग्निमिवोत्थितम् ॥ १२ ॥ तंलक्ष्मणोऽथबाहुभ्यांपरिष्वज्यसुदुःखितः ॥ उवाचराममस्वस्थंवाक्यंहेत्वर्थसंयुतम् ॥ १३ ॥ शुभेवर्त्मनितिष्ठंतंत्वामार्यविजितेंद्रियम् ॥ अनर्थेभ्योनशक्नोतित्रातुंधर्मोनिरर्थकः ॥ १४ ॥ भूतानांस्थावराणांचजंगमानांचदर्शनम् ॥ यथास्तिनतथाधर्मस्तेननास्तीतिमेमतिः ॥ १५ ॥ यथैवस्थावरंव्यक्तंजंगमंचतथाविधम् ॥ नायमर्थस्तथायुक्तस्त्वद्विधोनविपद्यते ॥१६॥ यद्यधर्मोभवेद्भूतोरावणोनरकंव्रजेत् ॥ भवांश्चधर्मसंयुक्तोनैवंव्यसनमाप्नुयात ॥ १७ ॥ तस्यचव्यसनाभावाद्व्यसनंचागतेत्वयि ॥ धर्मोभवत्यधर्मश्चपरस्परविरोधिनौ ॥ १८ ॥ धर्मेणोपलभेद्धर्ममधर्मंचाप्यधर्मतः ॥ यद्यधर्मेणयुज्येयुर्येष्वधर्मःप्रतिष्ठितः ॥ १९ ॥ नधर्मेणवियुज्येरन्नधर्मरुचयोजनाः ॥ धर्मेणाचरतांतेषांतथाधर्मफलंभवेत् ॥ २० ॥

जाताहै धर्मका ऐसेदर्शन न होनेसे हमको जान पडता है कि,धर्म है ही नहीं ॥१५॥धर्ममें अनुरागरहित स्थावर और वैसेही स्थावर धर्मविरोधी जंगमपशु आदि प्राणिपुंजको जिस प्रकार सुखी देखा जाता है वैसा धर्मके आश्रयवाले सुखी नहीं देखे जाते, यदि धर्मसे कुछभी भला होता तो आपके समान धार्मिक मनुष्य कभी ऐसी विपत्तिमें नहीं पडते॥१६॥ यदि अधर्मसे दुःख और धर्मसे सुखप्राप्त होता तो रावण नरकमेंजाता और आपऐसे दुःखमें किसी प्रकारसे नहीं पडते ॥१७॥ आपका दुःख और रावणको दुःखरहित देखकर ऐसा जानपडता है कि, परस्पर विरोधी धर्म औरअधर्म श्रुतिविरुद्ध फल देते हैं, कारण कि जिस प्रकार धर्मसे श्रुतिविरुद्ध दुःखरूप फल प्राप्त होता है वैसेही अधर्मसे सुखरूप फल प्राप्त हुआ करता है॥१८॥ अथवा यदि धर्मसे सुख प्राप्त होता और अधर्मसे दुःख प्राप्त होता तो रावण इत्यादि अधार्मिकगणभी दुःखमें पडते ॥१९॥ यदि धार्मिक लोग विपद्में न पडकर अपने आचरण किये हुए धर्मका सुखरूप

फल प्राप्त करते तो अधर्मको विरुद्ध फलरहित कहकर निर्देश किया जाता॥२०॥ हे वीर! जो लोग सदा अधर्माचरण करतेहैं, उनकी श्रीवृद्धि और धार्मिक लोगोंकी विपत्ति देखकर धर्म और अधर्म यह दोनोंही निरर्थक जान पडतेहैं॥२१॥ हे राघव ! अधर्म पापकर्म करनेवाले पुरुषको नष्ट करनेमें समर्थ नहीं होता कारण कि, क्रियाशरीररूप तीन क्षण स्थाई हो अधर्म आपही क्रियाके सहित चौथे क्षणमें नष्ट होता है उसके पीछे वह और किसीको नष्टकर सकेगा ?॥२२॥ यदि कर्मके लिये भाग्यको मान लियाजाय तो भी कार्यका करनेवाला पुरुष उस पापमें लिप्त नहीं होसकता कारण कि;विधान की हुई जिस विधिसे श्येनादि आभिचारिक यज्ञमें हिंसादि कार्य हुआ करते हैं वह विधि अथवा उसका बतलानेवाला ही उसके लिये पापका भागी हो सकता है ॥२३॥ हे शत्रुनाशी ! धर्म वर्त्तमान होने पर भी वह वध इत्यादि करनेके पापमें लिप्त नहीं होसकता. कारणकि; अपनी शक्तिसे अनुभव होनेवाला असत्कल्प अप्रत्यक्षरूप धर्म स्वयं अचे

यस्मादर्थाविवर्धंतेयेष्वधर्मः प्रतिष्ठितः ॥ क्लिश्यंतेधर्मशीलाश्चतस्मादेतौनिरर्थकौ ॥ २१ ॥ वध्यंतेपापकर्माणोयद्यधर्मेणराघव ॥ वधकर्महतो ऽधर्मःसहतःकंवधिष्यतिः ॥ २२ ॥ अथवाविहितेनायंहन्यतेहंतिचापरम् ॥ विधिःसलिप्यतेतेननसपापेनकर्मणा ॥ २३ ॥ अदृष्टप्रतिकारेणअव्यक्तेनासतासता ॥ कथंशक्यंपरंप्राप्तुंधर्मेणारिविकर्षणः ॥ २४ ॥ यदिसत्स्यात्सतांमुख्यनासत्स्यात्तवकिंचन ॥ त्वयायदीदृशंप्राप्तं तस्मात्तन्नोपपद्यते ॥२५॥ अथवादुर्बलःक्लीबोबलंधर्मोनुवर्तते ॥ दुर्बलोहृतमर्यादोनसेव्यइतिमेमतिः ॥२६॥ बलस्ययदिचेद्धर्मोगुणभूतःपराक्रमैः ॥ धर्ममुत्सृज्यवर्तस्वयथाधर्मेतथाबले ॥२७॥ अथचेत्सत्यवचनंधर्मःकिलपरंतपः ॥ अनृतंत्वय्यकरुणेकिंनबद्धस्त्वयाविना ॥ २८ ॥

तन है; इस कारण वह स्वकर्तव्य शत्रु प्रतिकारादि कार्यको कुछ भी नहीं जानता है ॥२४॥ हे साधुश्रेष्ठ ! यथार्थ विचार करनेपर यदि कुछ धर्म होता तो आपको किसी प्रकारके दुःख भोग करनेकी संभावना नहीं होती। फिर जब कि, आप ऐसा दुःख भोगकर रहे हैं तब हमको यह नहीं जान पडता है कि धर्म कुछ है ॥२५॥ अथवा हमारे विचारसे धर्म एक क्षुद्र पदार्थ है उसके कुछ कार्य साधन नहीं होता न उसमें कोई शक्ति है, हां वह केवल कार्य करनेके समय बलकी सहायता किया करता है, वह सुखका साधन करनेवाला नहीं, हमारी सम्मतिमें उस दुर्बल मर्यादाहीन धर्मकी उपासना करना उचित नहीं है ॥२६॥ यदि धर्म केवल बलका सहायकही हुआ तब फिर उसकी पूजा करनेका क्या प्रयोजन ? आप जो धर्मकी पूजा करते हैं उस धर्मकी पूजा छोड जैसे अधर्मकी पूजा करते हैं वैसेही यत्नसहित पौरुषका आश्रय लीजिये ॥ २७ ॥ हे शत्रुओंको तपानेवाले ! यदि सत्यवचनही आपके विचारमें धर्म माना गया

हो तो जब पिता दशरथजीने आपको युवराज देना चाहा था, तब प्रथम आपने वचनको अंगीकार किया और फिर आपने उस वचनको नहीं पाला, तब उसके लिये आपको अधर्म क्यों नहीं हुआ? ॥२८॥ हे शत्रुदमनकारी ! यदि धर्म अथवा अधर्म इन दोनोंके बीचमें कोई बडा होता तो इन्द्रजी विश्वरूप मुनिका वधरूप अधर्म और उसके पीछे यज्ञरूप धर्म इन दोनोंको न करते॥२९॥हे श्रीरामचन्द्रजी! पौरुषका आश्रय किया हुआ धर्मही शत्रुके विनाशादिमें समर्थ है; हे काकुत्स्थ ! इसी कारणसे लोग यथासमय दोनोंका अनुष्ठान किया करते हैं ॥३०॥ हे रघुनंदन ! देशकाल और पात्रके अनुसार कार्य करनाही परम धर्म ज्ञात होता है परन्तु आपने उस कालमें राज्यको छोडकर उस अर्थमूल धर्मकी मूल काट डाली ॥ ३१ ॥ जिस प्रकार पर्वतसे नदियें निकलती हैं वैसेही अनेक देशसे लाये जाकर बढे हुये अर्थसेही सब क्रिया प्रवर्तित हुआ करती हैं ॥३२॥ इसकेविरुद्ध जिस प्रकार छोटी नदियें ग्रीष्म कालमें सूख जाती

यदिधर्मोभवेद्भूतअधर्मोवापरंतप ॥ नस्महत्वामुनिंवज्रीकुर्यादिज्यांशतक्रतुः ॥ २९ ॥ अधर्मसंश्रितोधर्मोविनाशयतिराघव ॥ सर्वमेतद्यथा कामंकाकुत्स्थकुरुतेनरः ॥ ३० ॥ ममचेदमतंतातधर्मोऽयमितिराघव ॥ धर्ममूलंत्वयाछिन्नंराज्यमुत्सृजतातदा ॥ ३१ ॥ अर्थेभ्योऽथप्रवृद्धे भ्यःसंवृत्तेभ्यस्ततस्ततः ॥ क्रियाःसर्वाःप्रवर्ततेपर्वतेभ्यइवापगाः ॥३२॥ अर्थेनहिवियुक्तस्यपुरुषस्याल्पचेतसः ॥ विच्छिद्यंतेक्रियाःसर्वाग्री ष्मेकुसरितोयथा ॥ ३३ ॥ सोयमर्थंपरित्यज्यसुखकामःसुखैधितः ॥ पापमाचरतेकर्तुंतदादोषःप्रवर्तते ॥ ३४ ॥ यस्यार्थास्तस्यमित्राणिय स्यार्थास्तस्यबांधवाः ॥ यस्यार्थाःसपुमाँल्लोकेयस्यार्थाःसचपंडितः ॥ ३५ ॥ यस्यार्थाःसचविक्रांतोयस्यार्थाःसचबुद्धिमान् ॥ यस्यार्थाः समहाबाहुर्यस्यार्थाःसगुणाधिकः ॥ ३६ ॥ अर्थस्यैतेपरित्यागेदोषाःप्रव्याहृतामया ॥ राज्यमुत्सृजताधीरयेनबुद्धिस्त्वयाकृता ॥ ३७ ॥ यस्यार्थाधर्मकामार्थास्तस्यसर्वंप्रदक्षिणम् ॥ अधनेनार्थकामेननार्थःशक्यंविचिन्वता ॥ ३८ ॥

हैं वैसे अल्पबुद्धि अर्थहीन पुरुषकी सब क्रिया नष्ट होजाती हैं॥३३॥ अनेकबार ऐसाभी देखा जाताहै कि पुरुष प्रथम सुखसाधनअर्थ छोडकर पीछेसे सुखका अभिलाषी होता है और काल पायकर जब अभिलाषा बढजाती है तब वह पापके आचरण करने आरंभ कर देता है कि, जिससे दोष हो जाता है ॥३४॥ इससंसारमें जिसके पास धनहै वहीपुरुषहै, और मित्र व बंधु बांधवगणभी उसके हैं, जिसके पास धन है धनवान्ही पंडित है॥३५॥ जिसकेपास धनहै उसकाही विक्रम है, जिसके पास धन है वही बुद्धिमान् है, जिसकेपास धनहै वही महावीर और वहीगुणवान्है॥३६॥ हे वीर ! हमने जो कुछकहा धनका त्याग करनेसे दोषहो जातेहैं परन्तु हम नहीं कहसकतेकि, आपनेकिसबुद्धिके वशहोकर राज्य छोडदिया॥३७॥ जिसके पासधनहै उसके सबही कुछ वशमेंहै; और वहसहजहीसे

धर्म कामादिकोंको सिद्धकर सकताहैं; परंतु निर्धन पुरुष चाहे अनंत उद्योगकरे उसका कोई प्रयोजनभी सिद्धनहीं होसकता॥ ३८॥ हे नरनाथ ! हर्ष, काम, गर्व धर्म, क्रोध, शम और दंभ, यह समस्त धनहीसेहोतेहैं॥ ३९॥ धनके न होनेसे तपस्वी लोगभी इस लोकमें पुरुषार्थ रहित हो जातेहैं; परन्तु जिसप्रकार बादल छाये हुए रातमें चन्द्रमा व तारागण दृष्टि नहीं आते वैसेही सुखका साधन करनेवाले धर्म अपने आपसे दिखाई नहीं देता॥ ४०॥ हे वीर ! आप पिताजीके वचनोंके अनुसार जो वनको चले आये तभीतो राक्षसने आपकी प्राणोंसेभी अधिक प्यारी जानकीजीको हरण करलियाहै, जो आप नहीं आतेतो यह राक्षसकैसे हरलेता ? ॥ ४१॥ हेवीर श्रीरघुनंदनजी ! आप उठ बैठें इन्द्रजीतने जो दुःखकामूल बडाभारी कार्यकिया है; हम कार्यहीसे उस दुःखका प्रतिकारकरेंगे॥ ४२॥

हर्षःकामश्चदर्पश्चधर्मःक्रोधःशमोदमः ॥ अर्थादेतानिसर्वाणिप्रवर्ततेनराधिप ॥ ३९॥ येषांनश्यत्ययंलोकश्चरतांधर्मचारिणाम् ॥ तेऽर्थास्त्वयिनदृश्यंतेदुर्दिनेषुयथाग्रहाः ॥ ४०॥ त्वयिप्रव्रजितेवीरगुरोश्चवचनेस्थिते ॥ रक्षसापहृताभार्याप्राणैःप्रियतरातव ॥ ४१ ॥ तदद्यविपुलंवीरदुःखमिंद्रजिताकृतम् ॥ कर्मणाव्यपनेष्यामितस्मादुत्तिष्ठराघव ॥ ४२ ॥ उत्तिष्ठनरशार्दूलदीर्घबाहोधृतव्रत ॥ किमात्मानंमहात्मानमात्मानंनावबुध्यसे ॥ ४३॥ अयमनघतवोदितःप्रियार्थंजनकसुतानिधनंनिरीक्ष्यरुष्टः ॥ सरथगजहयांसराक्षसेंद्रांभृशमिषुभिर्विनिपातयामिलंकाम् ॥ ४४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे त्र्यशीतितमः सर्गः ॥ ८३॥ राममाश्वासमानेतुलक्ष्मणेभ्रातृवत्सले ॥ निक्षिप्यगुल्मान्स्वस्थानेतत्रागच्छद्विभीषणः ॥ १ ॥ नानाप्रहरणैर्वीरैश्चतुर्भिरभिसंवृतः ॥ नीलांजनचयाकारैर्मातंगैरिवयूथपैः ॥ २ ॥

हे बडी२बांहोंवाले नरशार्दूल ! आप उठ बैठें आप व्रताचारी और महात्मा होकर भी किस कारणसे परमात्मभूतअपने आपको भूलते हैं!॥ ४३॥ हे पापरहित जानकीजीका मृतकहोना सुनकर जो क्रोध हमको उत्पन्न हुआहैं इसी कारणसे हमने आपकी प्रियकामनासे यहसब कहा, सोजो कुछ भीहो आप उठ बैठें हम बाणोंके समूहसे रथ, तुरंगमातंग और राक्षसश्रेष्ठकेसहित समस्त लंकानगरीका नाशकरदेंगे॥ ४४॥ इत्यार्षेश्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकाण्डे भाषायांत्र्यशीतितमः सर्गः॥ ८३॥ भ्रातासे अधिक स्नेह करनेवाले लक्ष्मणजी जब श्रीरामचन्द्रजीकोइस प्रकारसे समझाबुझा रहेथे कि, इसी अवसरमेंविभीषणजी सेनाकोउनकेंअपने२नियत किये हुएद्वारोंपर स्थापित करके उस स्थानमें आये॥ १॥ हाथियोंसे घिरनेके कारण हाथियोंके यूथपतिकी शोभा जिस प्रकारसे होती है वैसेही विभीषणजी नीले

बादलकेसमान विविध प्रकारके आयुधधारी चार मंत्रियोंको संग लिये हुएथे ॥२॥ उन्होंने वहां आकर देखा कि, महात्मा श्रीरामचन्द्रजी शोकके भारसे दबे हुए हैं और वानरलोग भी रोते हुए उनके निकट बैठे हैं ॥३॥ महात्मा इक्ष्वाकुकुलनंदन श्रीरामचन्द्रजी मोहको प्राप्त होकर अपने छोटे भ्राता लक्ष्मणजीकी गोदमें पडे हुए हैं । श्रीरामचन्द्रजीकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय थी, वह शोकसागरमें डूब रहेथे, उनकोदेखकर मनमें दुःखी हो विभीषणजीने कहाकि, यह क्या बात है ? ॥४॥५॥ तब महावीर लक्ष्मणजी विभीषण सुग्रीव इत्यादि मुख्य २ वानर लोगोंको भी दीनवदन देखकर नेत्रोंमें जल भरकर यह बोले ॥६॥ हे सौम्य ! " इन्द्रजीत करके जानकीजी मार डाली गई हैं " हनुमान्‌जीके मुखसे यह वृत्तान्त सुनतेही रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीमोहको प्राप्त हुएहैं ॥७॥ जब लक्ष्मणजी इस प्रकारसे कहरहे थे कि, विभीषणजी उनको रोककर श्रीरामचन्द्रजीसे यह भारी अर्थयुक्त वचन बोले॥८॥ हे मनुष्योंमेंइंद्र ! हनुमान्‌जीने दीन

सोऽभिगम्यमहात्मानंराघवंशोकलालसम् ॥ वानरांश्चापिदद्दशेबाष्पपर्याकुलेक्षणान् ॥ ३ ॥ राघवंचमहात्मानमिक्ष्वाकुकुलनंदनम् ॥ ददर्श मोहमापन्नंलक्ष्मणस्यांकमाश्रितम् ॥ ४ ॥ व्रीडितंशोकसंतप्तंदृष्ट्वारामंविभीषणः ॥ अंतर्दुःखेनदीनात्माकिमेतदितिसोऽब्रवीत् ॥५॥ विभीषणमुखंदृष्ट्वासुग्रीवंतांश्चवानरान् ॥ लक्ष्मणोवाचमंदार्थमिदंबाष्पपरिप्लुतः ॥६॥ हताइंद्रजितासीताइतिश्रुत्वैवराघवः ॥ हनूमद्वचनात्सौम्यत तोमोहमुपाश्रितः ॥७॥ कथयंतंतुसौमित्रिंसन्निवार्यविभीषणः ॥ पुष्कलार्थमिदंवाक्यंविसंज्ञंराममब्रवीत् ॥८॥ मनुजेंद्रार्तरूपेणयदुक्तस्त्वंहनूमता ॥ तदयुक्तमहंमन्येसागरस्यैवशोषणम् ॥ ९ ॥ अभिप्रायंतुजानामिरावणस्यदुरात्मनः ॥ सीतांप्रतिमहाबाहोनचघातंकरिष्यति ॥१०॥ याच्यमानःसुबहुशोमयाहितचिकीर्षुणा॥ वैदेहीमुत्सृजस्वेतिनचतत्कृतवान्वचः ॥११॥नैवसाम्नानदानेननभेदेनकुतोयुधा ॥ साद्रष्टुमपिशक्येतनैवचान्येनकेनचित् ॥ १२ ॥ वानरान्मोहयित्वातुप्रतियातःसराक्षसः ॥ मायामयींमहाबाहोतांविद्धिजनकात्मजाम् ॥ १३ ॥

भावसे जो बात आपसे कहीहै वह समुद्रके सुखलानेके समान असंभव है अर्थात् समुद्रको कोई नहीं सुखाय सकता ॥९॥ हे महाबाहो ! हम दुरात्मा रावणके सीताके विषयके अभिप्रायको जानते हैं, वह कभी सीताको नहीं मारने देगा ॥ १० ॥ हमने रावणके हितकीही कामनासे उससे वारंवार कहा कि, जानकी श्रीरामचन्द्रजीको देदो, परन्तु उसने हमारी इस बातपर कानतक भी नहीं दिया ॥ ११ ॥ सीताजीको वध करना दूर रहा महाराज ! जब कि, साम दान अथवा भेद इन तीन उपायोंसे भी जब कोई सीताजीका दर्शन नहीं पाय सकता तब इंद्रजीत संग्रामस्थलमें किस प्रकारसे उनकादर्शन प्राप्तकरनेमें समर्थ होगा? ॥ १२॥ हे महावीर ! वह मायाकी सीता इन्द्रजीतने मार डाली होगीहम निश्चय जानते हैं कि; राक्षस इन्द्रजीत इस उपायसे वानरोंको मोहित करके चला

गया है ॥ १३ ॥ आज निकुम्भिलामें वह मेघनाद जाकर होम करेगा, इन्द्रादि देवताओंके साथ अग्नि वहांपहुँचे हैं ॥१४॥ जब कि, वह यज्ञमें होम करके अग्निको प्रसन्नकर लेगा तब देवताओंके सहित इन्द्रकेभी संग्राममें रावणकापुत्र मेघनाद दुर्द्धर्षहोजायगा, हम निश्चय कहतेहैं कि, अपना अभिलाष सिद्धकरनेके लिये और वानरोंको पराक्रमहीन ही करनेके लिये उसने ऐसी माया प्रगटकी है ॥१५॥ जबतक उसका यज्ञ समाप्त न होजाय तब तक हम सेनाके सहित वहां पहुँच जायँ, हे नरशार्दूल! आप शोक संतापका त्याग कीजिये ॥१६॥ कारण कि; आपकोशोकसे पीडितदेखकरही समस्त वानरोंकी सेना व्याकुल हो रहीहै, इस कारण अब धीरज धर सावधान हो उस स्थानमें आप विराजमान रहें ॥१७॥ और सब सेनाके सहित लक्ष्मजीको हमारे साथ भेज दीजिये ॥१८॥ यह

चैत्यंनिकुंभिलामद्यप्राप्यहोमंकरिष्यति ॥ हुतवानुपयातोहिदेवैरपिसवासवैः ॥ १४ ॥ दुराधर्षोभवत्येषसंग्रामेरावणात्मजः ॥ तेनमोहयता नूनमेषामायाप्रयोजिता ॥ विघ्नमन्विच्छतातत्रवानराणांपराक्रमे॥१५॥ ससैन्यास्तत्रगच्छामोयावत्तन्नसमाप्यते ॥ त्यजेनंनरशार्दूलमिथ्या संतापमागतम् ॥ १६ ॥ सीदतेहिबलंसर्वंदृष्ट्वात्वांशोककर्शितम् ॥ इहत्वंस्वस्थहृदयस्तिष्ठसत्त्वसमुच्छ्रितः ॥ १७ ॥ लक्ष्मणंप्रेषयास्मा भिःसहसैन्यानुकर्षिभिः ॥ १८ ॥ एषतंनरशार्दूलोरावणिंनिशितैःशरैः ॥ त्याजयिष्यतितत्कर्मततोवध्योभविष्यति ॥ १९ ॥ तस्यैतेनि शितास्तीक्ष्णाःपत्रिपत्रांगवाजिनः ॥ पतत्रिणइवासौम्याःशराःपास्यंतिशोणितम् ॥ २० ॥ तत्संदिशमहाबाहोलक्ष्मणंशुभलक्षणम् ॥ राक्षस स्यविनाशायवज्रंवज्रधरोयथा ॥ २१ ॥ मनुजवरनकालविप्रकर्षोरिपुनिधनंप्रतियत्क्षमोऽद्यकर्तुम् ॥ त्वमतिसृजरिपोर्वधायवज्रादिविजरिपुम थनेयथामहेंद्रः ॥ २२ ॥

महावीर नरशार्दूल लक्ष्मणजी तीक्ष्ण बाण चलाय२ कर उसके यज्ञकार्यमें विघ्न करदेंगे, जब उसके यज्ञ करना छूटजायगा तबहम उसे मार डालेंगे॥१९॥इनके गरुडजीके समान अंगयुक्त वेगशाली तीक्ष्णरुधिरके पीने वाले बाण गिद्ध इत्यादि अशुभ पक्षियोंके समान उस राक्षसका रुधिर पीयेंगे ॥ २० ॥ इस लिये हे महावीर ! जिस प्रकार वज्रधर इन्द्रजी दैत्योंके मारनेकेलिये वज्रको आज्ञा देतेहैं, वैसेही आपभी शुभलक्षणयुक्त लक्ष्मणजीको हम लोगोंकेसाथ जानेकी आज्ञा देदें॥२१॥हे मनुजश्रेष्ठ ! शत्रुके मारनेमें विलम्ब करना उचित नहींहै, इस लिये जिसप्रकार इन्द्रजी दैत्योंका वध करनेके लिये वज्रकोभेजते हैं वैसेही लक्ष्मण

जीको आप हमारे संग भेज दें॥२२॥ हे महाराज! वह राक्षसश्रेष्ठ जब कार्य अर्थात होम समाप्त करलेगा, तब सुर और असुरलोगभी उसकोनहीं देख सकते, बस जब कि वह होम समाप्त करके युद्ध करने लगेगा तब देवता लोगोंको भी बडा भारी संशय उपस्थित होगा ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां चतुरशीतितमः सर्गः ॥ ८४ ॥ शोकाकुल श्रीरामचन्द्रजी विभीषणके वचनोंको सुनकरके जो वचन कि, विभीषण जीने स्पष्ट २ कहे थे उनको धारण करनेमें समर्थ न हुए ॥१॥ इसके उपरान्त परपुर जीतनेवाले श्रीरामचन्द्रजी धीरज धारण करके वानरलोगोंके निकट बैठे हुए विभीषणजीसे बोले॥२॥ हे राक्षसराज विभीषण! तुमने जो वचन कहे हम फिर उनकोश्रवण करनेकी इच्छाकरतेहैं, इसकारण तुमको जोकुछ कहना

समाप्तकर्माहिसराक्षसर्षभोभवत्यदृश्यःसमरेसुरासुरैः ॥ युयुत्सतातेनसमाप्तकर्मणाभवेत्सुराणामपिसंशयोमहान् ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० च० सा० युद्धकांडे चतुरशीतितमःसर्गः ॥ ८४ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराघवःशोककर्षितः ॥ नोपधारयतेव्यक्तंयदुक्तंतेनरक्षसा ॥ १ ॥ ततोधैर्यमवष्टभ्यरामःपरपुरंजयः ॥ विभीषणमुपासीनमुवाचकपिसन्निधौ ॥ २ ॥ नैर्ऋताधिपतेवाक्यंयदुक्तंतेविभीषणः ॥ भूयस्तच्छ्रोतुमिच्छामिब्रूहियत्तेविवक्षितम् ॥ ३ ॥ राघवस्यवचःश्रुत्वावाक्यंवाक्यविशारद ॥ यत्तत्पुनरिदंवाक्यंबभाषेऽथविभीषणः ॥४॥ यथाज्ञप्तंमहाबाहोत्वयागुल्मनिवेशनम् ॥ तत्तथानुष्ठितंवीरत्वद्वाक्यसमनंतरम् ॥ ५ ॥ तान्यनीकानिसर्वाणिविभक्तानिसमंततः ॥ विन्यस्तायूथपाश्चैवयथान्यायंविभागशः ॥ ६ ॥ भूयस्तुममविज्ञाप्यंतच्छृणुष्वमहाप्रभो ॥ त्वय्यकारणसंतप्तेसंतप्तहृदयावयम् ॥ ७ ॥ त्यजराजन्निमंशोकंमिथ्यासंतापमागतम् ॥ यदियंत्यज्यतांचिंताशत्रुहर्षविवर्धिनी ॥ ८ ॥ उद्यमःक्रियतांवीरहर्षःसमुपसेव्यताम् ॥ प्राप्तव्यायदितेसीताहंतव्याश्चनिशाचराः ॥ ९ ॥

हो फिरसे कहो॥३॥श्रीरामचन्द्रजीके वचन श्रवण करके वाक्यविशारद विभीषणजीनेजो कुछकहा था उसकोही उन्होंनेफिर कहना आरंभकिया; विभीषणजी बोले॥४॥ हे महावीर ! आपने जिस प्रकारसे सेनाको स्थापन करने की आज्ञा दीथी आपकी आज्ञानुसार उसी समय वहसेना उसीप्रकारसे श्रेणीबद्ध कीगई ॥५॥ सब सेनाको सब प्रकारसे बांट कर विभागानुसार यथायोग्य सबके यूथपति नियत किये गये हैं ॥ ६॥ हे महाप्रभो ! हमको और भी कुछ कहना है; वह भी श्रवण कीजिये' आप वृथाही शोकसे संतापित होरहे हैं, इस लिये हम लोगोंके भी संतापका पारावार नहींहै॥७॥ हे राजन् ! इस समय आप वृथा और अकारण शोकभारको छोड दीजिये, कारण कि, आपको ऐसा चिन्तित देखकर शत्रुलोगोंका हर्ष बढता है ॥८॥ हे वीर ! यदि राक्षसलोगोंका नाश

करना और सीताजीको फिर प्राप्त करनेकी आप इच्छा रखते हो तो आप हर्षसहित अपना कार्य सिद्ध करनेके लिये तैयार हो जाँ ॥ ९ ॥ हे रघुनंदन ! हम एक हितकी वार्ता कहते हैं, आप श्रवण करें कि; आप बडीभारी सेनाके संग लक्ष्मणजीको हमारे साथ करदें॥ १०॥ निशाचर इन्द्रजीत निकुंभिला नाम देवालयमें यज्ञ करनेके लिये गया है, वीरश्रेष्ठ लक्ष्मणजी वहां जा विषधर सर्पोंके समान बाणोंको धनुषसे चलाय उसके यज्ञमें विघ्न करें॥ ११॥ वीर इन्द्रजीतने तपस्या करके ब्रह्माजीसे वर पाय ब्रह्मशिर नामक अस्त्र और इच्छानुसार चलने वाले अश्व प्राप्त किये हैं ॥ १२॥ जो वह इस समय निकुंभिलासे कार्य सिद्ध करके सेनासहित समर करनेको चला आवे तो आप हमलोगोंको मृतक हुआही निश्चय कर लीजिये ॥ १३॥ ब्रह्माजीका ऐसा वरदान है कि, हे इन्द्रके शत्रु ! तुम्हारे निकुंभिला नाम देवालयमें बने हुए महाकालीके क्षेत्रमें उपस्थित होकर अभिचारी होम करनेसे पहले जो तुम पर शत्रुभावसे चढाई करेगा, वही तुमको

रघुनंदनवक्ष्यामिश्रूयतांमेहितंवचः ॥ साध्वयंयातुसौमित्रिर्बलेनमहतावृतः ॥ १० ॥ निकुंभिलायांसंप्राप्तंहंतुंरावणिमाहवे ॥ धनुर्मंडलनिर्मुक्तैराशीविषविषोपमैः ॥ ११ ॥ तेनवीरेणतपसावरदानात्स्वयंभुवः ॥ अस्त्रंब्रह्मशिराःप्राप्तंकामगाश्चतुरंगमाः ॥ १२ ॥ सएषकिलसैन्येनप्राप्तःकिलनिकुम्भिलाम् ॥ यद्युत्तिष्ठेत्कृतंकर्महतान्सर्वांश्चविद्धिनः ॥ १३ ॥ निकुम्भिलामसंप्राप्तमकृताग्निचयोरिपुः ॥ त्वामाततायिनंहन्यादिंद्रशत्रोसतेवधः ॥ १४ ॥ वरोदत्तोमहाबाहोसर्वलोकेश्वरेणवै ॥ इत्येवंविहितोराजन्वधस्तस्यैषधीमतः ॥ १५ ॥ वधायेंद्रजितोरामसंदिशस्वमहाबलम् ॥ हतेतस्मिन्हतंविद्धिरावणंससुहृद्गणम् ॥ १६ ॥ विभीषणवचःश्रुत्वारामोवाक्यमथाब्रवीत् ॥ जानामितस्यरौद्रस्यमायांसत्यपराक्रम ॥ १७ ॥ सहिब्रह्मास्त्रवित्प्राज्ञोमहामायोमहाबलः ॥ करोत्यसंज्ञान्संग्रामेदेवान्सवरुणानपि ॥ १८ ॥ तस्यांतरिक्षेचरतः सरथस्यमहायशः ॥ नगतिर्ज्ञायतेवीरसूर्यस्येवाभ्रसंप्लवे ॥ १९ ॥

मार डालनेमें समर्थ होगा ॥ १४॥ हे महावीर ! सब लोगोंकें ईश्वर प्रजापति ब्रह्मा जीने उसको इस प्रकारका वरदान दिया है, इस लिये इस समय आप उसके वध करनेका उपाय निश्चय कीजिये ॥ १५॥ इस कारण आप उसका संहार करनेके लिये महाबलवान् लक्ष्मणजीको आज्ञा दीजिये कारण कि, इन्द्रजीतके मारे जातेही आप सब इष्टमित्रोंकेसहित रावणको भी माराही समझिये ॥ १६॥ विभीषणजीके वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजीने कहा, हे सत्यपराक्रम ! हम उस घोर निशाचरकी मायाको भलीभांति जानते हैं ॥ १७॥ वह ब्रह्मास्त्रका जाननेवाला चतुर महाबलवान् मायावी वीर संग्राममें वरुणप्रमुख देवतालोगोंको भी मूर्च्छित कर सकता है ॥ १८॥ हे महायशस्वी वीर ! जिस प्रकार मेघके भीतर छिपनेसे सूर्यकी गति नहीं जानी जाती वैसेही जब वह वीर रथपर सवार होकर आकाशमें विचरेगा

तो उसकी गतिका भी जानना कठिन है ॥ १९ ॥ तब भगवान् श्रीरामचन्द्रजी विभीषणजीसे यह वचन कहकर शत्रु इन्द्रजीतकी मायाके प्रभावको जानकर कीर्तिमान् लक्ष्मणजीसे कहने लगे ॥२०॥ हे वत्स ! तुम हनुमान्‌जी आदि वानर वीर लोगोंको संग लेकर और समस्त वानरोंकी सेनाके साथ इन्द्रजीतका नाश करनेके लिये युद्धमें जाओ ॥२१॥ ऋक्षोंके राजा जाम्बवान्‌जी सेना सहित तुम्हारे साथ जावें। जाओ तुम राक्षसराजके पुत्र मेघनादको जो कि बडा मायावी है, जाकर मार आओ ॥२२॥ महात्मा निशाचर विभीषणजी उस राक्षसकी समस्त मायाको जानते हैं इस लिये यह भी मंत्रियोंके सहित तुम्हारे साथ जायँगे ॥ २३ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके वचनको सुनकर भयंकर पराक्रमकारी लक्ष्मणजी और विभीषणजी हाथका पहला धनुष त्यागकर और दूसरा श्रेष्ठ धनुष धारण

राघवस्तुरिपोर्ज्ञात्वामायावीर्यंदुरात्मनः ॥ लक्ष्मणंकीर्तिसंपन्नमिदंवचनमब्रवीत् ॥२०॥ यद्वानरेंद्रस्यबलंतेनसर्वेणसंवृतः ॥ हनूमत्प्रमुखैश्चैवयूथपैःसहलक्ष्मण॥२१॥जांबवेनर्क्षपतिनासहसैन्येनसंवृतः॥जहितंराक्षससुतंमायाबलसमन्वितम्॥२२॥ अयंत्वांसचिवैःसार्धंमहात्मारजनीचरःअभिज्ञस्तस्यमायानांपृष्ठतोऽनुगमिष्यति॥२३॥ राघवस्यवचःश्रुत्वालक्ष्मणःसविभिषणः॥ जग्राहकार्मुकश्रेष्ठमन्यद्भीमपराक्रमः ॥२४॥ सन्नद्धःकवचीखड्गीसशरीवामचापभृत्॥रामपादावुपस्पृश्यहृष्टःसौमित्रिरब्रवीत्॥२५॥अद्यमत्कार्मुकोन्मुक्ताःशरानिर्भिद्यरावणिम् ॥ लंकामभिपतिष्यंतिहंसाःपुष्करिणीमिव ॥ २६ ॥ अद्यैवतस्यरौद्रस्यशरीरंमामकाःशराः ॥ विधमिष्यंतिभित्त्वातमहाचापगुणच्युताः ॥ २७ ॥ एवमुक्त्वातुवचनंद्युतिमान्भ्रातुरग्रतः ॥सरावणिवधाकांक्षीलक्ष्मणस्त्वरितंययौ॥२८॥सोऽभिवाद्यगुरोःपादौकृत्वाचापिप्रदक्षिणम्॥निकुम्भिलामभिययौचैत्यंरावणिपालितम् ॥ २९ ॥ विभीषणेनसहितोराजपुत्रःप्रतापवान् ॥ कृतस्वस्त्ययनोभ्रात्रालक्ष्मणस्त्वरितोययौ ॥ ३० ॥

करते हुए ॥ २४ ॥ इसके उपरांत सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजी बख्तर, कवच खड्ग, व और दूसरे समस्त आयुध धारण करके श्रीरघुनाथजीके चरण छू हर्षसहित उनसे बोले ॥ २५ ॥ जिस प्रकार हंसगण सरोवरमें गिरते हैं वैसेही आज हमारे धनुषसे छूटे हुए बाण मेघनादके शरीरको भेदकर लंकामें गिरेंगे ॥२६॥ हमारे बडे भारी धनुषसे छूटे गए समस्त बाण आजही घोर राक्षसका शरीर भेदकर चीर फाड डालेंगे ॥ २७ ॥ दिव्यकांतिवाले लक्ष्मणजी अपने बडे भ्राता श्रीरामचन्द्रजीसे यह कमनीय वचन कह रावणके पुत्र इन्द्रजीतका संहार करनेको अति शीघ्रतासे गमन करते हुए ॥ २८ ॥ लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीको प्रणाम करके इंद्रजीतसे रक्षित निकुम्भिला देवालयकी ओर जानेको तैयार हुए ॥ २९ ॥ इस प्रकारसे राजकुमार प्रतापवान् लक्ष्मणजी

अपने भ्रातासे आशीर्वाद पाय विभीषणजीके सहित शीघ्रतासे चले ॥ ३०॥ बहुत सारे सहस्त्रों वानरोंकी सेनाको साथ लेकर हनुमानूजी और विभीषणजी भी अपने चार मंत्रियोंके सहित उनके साथ चले ॥ ३१ ॥ इन सबने जाते जाते द्वाररक्षा करनेकें लिये स्थापित वानरोंकी बडी भारी सेना और ऋक्षराज जाम्बवानूजीकी सेनाको भी देखा ॥ ३२ ॥ इस प्रकार मित्रोंका आनंद बढानेवाले लक्ष्मणजीने बहुत दूर जाकर श्रेणीबद्ध हुई राक्षसोंकी सेनाको दूरहीसे देखा ॥ ३३ ॥ श्रीलक्ष्मणजी मायावी वीरका संहार करनेके लिये ब्रह्माजीकी की हुई विधिके अनुसार उसी स्थानमें धनुष धारण करके खडे होगये ॥३४॥ महावीर अंगदजी पवनकुमार हनुमानूजी और राक्षसराज विभीषणजी प्रतापवानू राजकुमार लक्ष्मणजीके संग थे ॥३५॥ राक्षसोंकी सेना विविध प्रकारके चमकीले दम

वानराणांसहस्रैस्तुहनूमान्बहुभिर्वृतः ॥ विभीषणश्चसामात्योलक्ष्मणंत्वरितंययौ ॥ ३१ ॥ महताहरिसैन्येनसवेगमभिसंवृतः ॥ ऋक्षराजबलंचैवददर्शपथिविष्ठितम् ॥३२॥ सगत्वादूरमध्वानंसौमित्रिर्मित्रनंदनः ॥ राक्षसेंद्रबलंदूरादपश्यद्व्यूहमाश्रितम् ॥ ३३ ॥ ससंप्राप्यधनुष्पाणिर्मायायोगमरिंदमः ॥ तस्थौब्रह्मविधानेनविजेतुंरघुनंदनः ॥ ३४ ॥ विभीषणेनसहितोराजपुत्रःप्रतापवान् ॥ अंगदेनचवीरेणतथानिलसुतेनच ॥ ३५ ॥ विविधममलशस्त्रभास्वरंतद्ध्वजगहनंगहनंमहारथैश्च ॥ प्रतिभयतममप्रमेयवेगंतिमिरमिवद्विषतांबलंविवेश ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदिकाव्ये च०सा० युद्धकांडे पंचाशीतितमःसर्गः॥८५॥अथतस्यामवस्थायांलक्ष्मणंरावणानुजः ॥ परेषामहितंवाक्यमर्थसाधकमब्रवीत् ॥ १ ॥ यदेतद्राक्षसानीकंमेघश्यामंविलोक्यते ॥ एतदायोध्यतांशीघ्रंकपिभिश्चशिलायुधैः ॥ २ ॥ तस्यानीकस्यमहतोभेदनेयतलक्ष्मण ॥ राक्षसेंद्रसुतोऽप्यत्रभिन्नेदृश्योभविष्यति ॥ ३ ॥

कीले अस्त्र शस्त्र धारण करकेदीप्ति पाय रही है,वह सेना रथ और ध्वजाके डंडोंसे अत्यन्त गहन व भयंकर थी उसके वेगका कुछ पार नहीं था, लोग जिसप्रकार गंभीर अंधकारमें प्रवेश करते हैं वैसेही महावीर लक्ष्मणजी शत्रुकी सेनामें प्रवेश करते हुए॥३६॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि० युद्धकांडे भाषायां पंचाशीतितमःसर्गः॥८५॥महावीर लक्ष्मणजीने जब शत्रुकी सेनामें प्रवेश किया उस समय विभीषणजीशत्रुलोगोंके लिये अहितकारी और अपनी ओरके लियेहितकारी वचन बोले॥१॥यह जो मेघके समान काले रंगकी राक्षसोंकी सेना दिखाई देतीहै,वानर लोग अतिशीघ्रतासे इनके साथ शिलाओंको उठाय२संग्राम करें ॥ २॥ हे लक्ष्मणजी ! आप अतिशीघ्रतासे इन राक्षसोंकी सेनाको छिन्न भिन्न कीजिये कारण, निशाचरोंकी सेनाके छिन्न भिन्न हो जानेसे इस स्थानमें रावणका पुत्र

इन्द्रजीत दिखाई देगा ॥३॥ जब तक यह अभिचारक होम पूरा नहीं होता है तबतक वज्रधारी इन्द्रजीके वज्रके समान बाणोंसे तुम राक्षसोंकी सेनाको पीडा देते रहो ॥ ४ ॥ इसके उपरान्त सब लोगोंको भयके देनेवाले क्रूरकर्मकारी अधार्मिक और मायावी दुरात्मा रावणके पुत्रको तुम विनाश करना ॥ ५ ॥ शुभल क्षणयुक्त लक्ष्मणजी विभीषणजीके ऐसे वचन सुनकर बाणोंकी ऐसी वर्षा करने लगे कि, जिससे इन्द्रजीत जानले ॥ ६ ॥ वानर और रीछ भी वृक्षोंको धारण करके इकट्ठे हो उस श्रेणीबद्ध राक्षसोंकी सेनापर दौडे ॥ ७ ॥ और राक्षस लोगभी वानरोंको मारडालनेकी वासनासे तीखे बाण शक्ति और तोमरस मूहके सहित वानरोंकी सेनाके सन्मुख हुए ॥ ८ ॥ इस प्रकारसे वानर और राक्षसोंका कठोर संग्राम आरंभ हुआ । उनके बडे भारी शब्दसे लंकापुरी सर्व

सत्वमिंद्राशनिप्रख्यैःशरैरवकिरन्पराान् ॥ अभिद्रवाशुयावद्वैनैतत्कर्मसमाप्यते ॥ ४ ॥ जहिवीरदुरात्मानंमायापरमधार्मिकम् ॥ रावणिंक्रूरकर्माणंसर्वलोकभयावहम् ॥ ५ ॥ विभीषणवचःश्रुत्वालक्ष्मणःशुभलक्षणः ॥ ववर्षशरवर्षेणराक्षसेंद्रसुतंप्रति ॥ ६ ॥ ऋक्षाःशाखामृगाश्चैवद्रुमप्रवरयोधिनः ॥ अभ्यधावंतसहितास्तदनीकमवस्थितम् ॥ ७ ॥ राक्षसाश्चाशितैर्बाणैरसिभिःशक्तितोमरैः ॥ अभ्यवर्ततसमरेकपिसैन्यंजिघांसवः ॥ ८ ॥ ससंप्रहारस्तुमुलःसंजज्ञेकपिरक्षसाम् ॥ शब्देनमहतालंकांनादयन्वैसमंततः ॥ ९ ॥ शस्त्रैश्चविविधाकारैःशितैर्बाणैश्चपादपैः ॥ उद्यतैर्गिरिशृंगैश्चघोरैराकाशमावृतम् ॥१०॥ राक्षसावानरेंद्रेषुविकृताननबाहवः ॥ निवेशयंतःशस्त्राणिचक्रुस्तेसुमहद्भयम् ॥११॥ तथैवसकलैर्वृक्षैर्गिरिशृंगैश्चवानराः ॥ अभिजघ्नुर्निजघ्नुश्चसमरेसर्वराक्षसान् ॥ १२ ॥ ऋक्षवानरमुख्यैश्चमहाकायैर्महाबलैः ॥ रक्षसायुध्यमानानांमहद्भयमजायत ॥ १३ ॥ स्वमनीकंविषण्णंतुश्रुत्वाशत्रुभिरर्दितम् ॥ उदतिष्ठतदुर्धर्षःसकर्मण्यननुष्ठिते ॥ १४ ॥ वृक्षांधकारान्निर्गम्यजातक्रोधःसरावणिः ॥ आरुरोहरथंसज्जंपूर्वयुक्तंसुसंयतम् ॥ १५ ॥

प्रकारसे गुंजारने लगी ॥ ९ ॥ विविध प्रकारके अस्त्रशस्त्र तीखे बाण और चलाये हुए घोर पर्वतोंके शृङ्ग और वृक्षोंसे आकाशमंडल ढकगया ॥ १० ॥ विकटाकार मुखवाले राक्षसलोग वानरश्रेष्ठोंके शरीरमें अस्त्र शस्त्र मारकर उनको दारुण भय उपजाने लगे ॥ ११ ॥ इसी प्रकार वानरगणभी शिला हाथोंमें उठायकर राक्षसोंके निकट जाय २ रणभूमिमें उनका संहार करने लगे ॥ १२ ॥ महाकाय महाबलवान् वानर और रीछोंके संग युद्ध करते हुए राक्षसोंको बडाभारी भय उत्पन्न हुा ॥ १३ ॥ इस ओर अजेय रावणका पुत्र मेघनाद अपनी सेनाको शत्रुलोगोंसे सब प्रकारसे मर्दित और व्याकुल देखकर अपने यज्ञको विनाही पूरा किये उठ बैठा ॥ १४ ॥ वह मेघनाद निकुम्भिला क्षेत्रके लगेहुए वृक्षोंके बने अंधकारसे निकलकर क्रोध सहित पहलेही जुते हुए सजेसजाये

रथपर सवार हुआ ॥१५॥ उस कालमें काले अंजनके ढेरके समान लाल वदन और लालही नेत्र किये वह वीर बडा भारी धनुष ले सर्व प्राणियोंके संहारकारी मृत्युके समान प्रकाशित होने लगा ॥१६॥ उस मेघनादको रथपर सवार हुआ देखतेही लक्ष्मणजीके संग युद्धकी अभिलाषा किये राक्षसलोग भी लौट आये; जो कि; प्रथम भागनाही चाहते थे ॥१७॥ उस कालमें पर्वताकार शत्रुविनाशी वानरश्रेष्ठ हनुमानूजी दुरासद वृक्षको उठाकर दौडे ॥ १८ ॥ जिस प्रकार प्रलय कालकी अग्नि लोकोंको भस्म करती है, वैसेही असंख्य वृक्षोंसे महावीर हनुमानूजी राक्षसोंकी सेनाको मूर्च्छित करने लगे ॥ १९ ॥ पवनकुमार हनुमानूजीसे राक्षसोंकी सेनाको विध्वंसित देखकर सहस्र२राक्षस उनके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगे ॥२०॥ तीखा शूल धारण करनेवाले निशाचर लोग शूलसे; शक्ति

सभीमकार्मुकशरःकृष्णांजनचयोपमः ॥ रक्तास्यनयनोभीमोबभौमृत्युरिवांतकः ॥ १६ ॥ दृष्ट्वैतुरथस्थंतंपर्यवर्तततद्बलम् ॥ रक्षसांभीमवेगानांलक्ष्मणेनयुयुत्सताम् ॥ १७ ॥ तस्मिंस्तुकालेहनुमानरुजत्सदुरासदम् ॥ धरणीधरसंकाशोमहावृक्षमरिंदमः ॥ १८ ॥ सराक्षसानांतत्सैन्यंकालाग्निरिवनिर्दहन् ॥ चकारबहुभिर्वृक्षैर्निःसंज्ञंयुधिवानरः ॥ १९ ॥ विध्वंसयंतंतरसादृष्ट्वैवपवनात्मजम् ॥ राक्षसानांसहस्राणिहनूमंतमवाकिरन् ॥२०॥ शितशूलधराःशूलैरसिभिश्चासिपाणयः ॥ शक्तिहस्ताश्चशक्तीभिःपट्टिशैःपट्टिशायुधाः ॥ २१ ॥ परिघैश्चगदाभिश्चकुंतैश्चशुभदर्शनैः ॥ शतशश्चशतघ्नीभिरायसैरपिमुद्गरैः ॥ २२ ॥ घोरैःपरशुभिश्चैवभिंदिपालैश्चराक्षसाः ॥ मुष्टिभिर्वज्रकल्पैश्चतलैरशनिसन्निभैः ॥ २३ ॥ अभिजघ्नुःसमासाद्यसमंतात्पर्वतोपमम् ॥ तेषामपिचसंक्रुद्धश्चकारकदनंमहत् ॥ २४ ॥ सददर्शकपिश्रेष्ठमचलोपममिंद्रजित् ॥ सूदमानमसंत्रस्तममित्रान्पवनात्मजम् ॥२५॥ ससारथिमुवाचेदंयाहियत्रैषवानरः ॥ क्षयमेवहिनःकुर्याद्राक्षसानामुपेक्षितः ॥ २६ ॥

हाथमें लिये निशाचरगण शक्तिसे, पटाधारी पटेसे ॥२१॥ और दूसरे निशाचरलोग परिघ, गदा, शुभदर्शन कुंत, शत२ शतघ्नी और लोहेके बने हुए मुद्गरोंसे ॥२२॥ घोर फरशा भिन्दिपालोंसे भी मारने लगे, वज्रके समान मूकोंसे और वज्रकेही समान लातोंसे वह राक्षस॥२३॥पर्वतके समान हनुमानूको मारने लगे महावीर हनुमानूजीने भी क्रोधित होकर बहुत सारे राक्षसोंको मार डाला ॥२४॥ तब इन्द्रजीत पर्वताकार शत्रुदमनकारी हनुमानूजीको मारता हुआ देखकर ॥२५॥ सारथीसे कहने लगा कि, जहांपर यह वानर है उसी स्थानमें रथ ले चलो कारण कि; अब जो वहां न जायँगे तो यह हमारी सेनाका क्षयही करता

रहेगा ॥ २६ ॥ जैसेही कि; इन्द्रजीतने यह कहा कि; वह परम दुर्द्धर्ष इंद्रजीतको लेकर जहांपर हनुमानूजी टिके हुए थे वहींपर रथको ले गया ॥ २७ ॥ इन्द्रजीत वहाँ पहुँचतेही वानरश्रेष्ठ हनुमानूजीके ऊपर बाण; खड्ग, पटा, फरशा इत्यादि अस्त्रशस्त्रोंको वर्षा करने लगा ॥ २८ ॥ परन्तु महावीर हनुमानूजी उन घोर बाणोंको सहन करके अत्यन्त क्रोध करके उसी समय इन्द्रजीतसे यह बोले ॥२९॥ रे दुरात्मा रावणके पुत्र इन्द्रजीत! तू यदि शूरत रखता हो तो कुछदेर हमारे साथ युद्ध करनेमें समर्थ होगा; परन्तु पवनपुत्र हनुमान्के हाथमें पडकर जीता हुआ लौट जानेकी तेरी सामर्थ्य नहीं होगी ॥३०॥ तुझको जो द्वन्द्वयुद्ध करनेका अभिलाष हो तो हमारे साथ बाहु युद्ध करके जब तू हमारा वेग सहलेनेको समर्थ होगा, तब हम तुझे राक्षस लोगोंमें श्रेष्ठ समझेंगे ॥३१॥

इत्युक्तः सारथिस्तेनययौयत्रसमारुतिः॥ वहन्परमदुर्धर्षस्थितमिंद्रजितंरथे ॥२७॥ सोऽभ्युपेत्यशरान्खड्गान्पट्टिशासिपरश्वधान्॥ अभ्यवर्षत दुर्धर्षःकपिमूर्धनिराक्षसः ॥२८॥ तानिशस्त्राणिघोराणिप्रतिगृह्यसमारुतिः ॥ रोषेणमहताविष्टोवाक्यंचेदमुवाचह ॥२९॥ युध्यस्वयदिशूरोऽसिरावणात्मजदुर्मते ॥ वायुपुत्रंसमासाद्यनजीवन्प्रतियास्यसि ॥३०॥ बाहुभ्यांसंप्रयुध्यस्वयदिमेद्वंद्वमाहवे ॥ वेगंसहस्वदुर्बुद्धेततस्त्वंरक्षसांवरः ॥३१॥ हनूमंतंजिघांसंतंसमुद्यतशरासनम्॥ रावणात्मजमाचष्टेलक्ष्मणायविभीषणः ॥३२॥ यःसवासवनिर्जितारावणस्यात्मसंभवः॥ सएषरथमास्थायहनूमंतंजिघांसति ॥ ३३ ॥ तमप्रतिमसंस्थानैःशरैःशत्रुनिवारणैः ॥ जीवितांतकरैर्घोरैःसौमित्रेरावणिंजहि ॥ ३४ ॥ इत्येवमुक्तस्तुतदामहात्माविभीषणेनारिविभीषणेन ॥ ददर्शतंपर्वतसन्निकाशंरथस्थितंभीमबलंदुरासदम् ॥३५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येच०सा०युद्धकांडे षडशीतितमः सर्गः॥८६॥ एवमुक्त्वातुसौमित्रिंजातहर्षोविभीषणः॥ धनुष्पाणिंतमादायत्वरमाणोजगामसः॥१॥

इसी समयमें अत्यन्त चतुर विभीषणजी हनुमानूजीके मारनेको धनुष लिये तैयार मेघनादको बताकर लक्ष्मणजीसे बोले॥३२॥ यह देखिये रावणके जिस पुत्रने सुर और असुर लोगोंको जीत लिया है वही इन्द्रजीत फिर भी रथपर सवार होकर हनुमानूजीके मार डालनेकी अभिलाषा करता है ॥ ३३ ॥ इसलिये हे महाराज सुमित्रानन्दन लक्ष्मणजी! आप जीवनका अंत करनेवाले शत्रुओंको निवारण करनेवाले घोररूप अनुपम बाणोंसे इस रावणके पुत्र मेघनादको मार डालिये ॥३४॥ शत्रुओंको डरानेवाले विभीषणजीसे इस प्रकार कहे जाकर महात्मा लक्ष्मणजी उस पर्वताकार रथपर बैठे हुए भयंकर बलवान् इन्द्रजीतको देखते हुए ॥३५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां षडशीतितमः सर्गः ॥८६॥ इसके उपरान्त राक्षसराज हर्षयुक्त विभीषणजी यह कहकर धनुषधारी

लक्ष्मणजीको संग लिये हुए अतिशीघ्रतासे गमन करनेलगे॥ १॥विभीषणजीनेथोडीही दूरपर जाय एक बडे बनमें प्रवेश करके वह कर्म लक्ष्मणजीको दिखाया॥ २॥ इसके उपरान्त तेजस्वी विभीषणजी नीले बादरकेसमान भयंकराकार बडका वृक्ष दिखाकर लक्ष्मणजीसे बोले ॥३॥ कि,बलवान् रावणका पुत्र मेघनाद इसी स्थानमें भूतोंको बलि देकर पीछे संग्राम करनेके लिये गमन करता है॥ ४ ॥ और हे नरोत्तम ! इसीकारण वह संग्रामभूमिमें सबकी दृष्टिसे लोप हो उत्तम बाणोंके समूहसे शत्रुलोगोंको बांध लेता है,और मार भीडालताहै॥ ५॥इसलिये जब तक वह बलवान् राक्षसराजका पुत्र मेघनाद फिर इस बडके नीचे आवे आप उससे पहलेही प्रदीप्त बाणोंसे उसका रथ काटकर सारथिके सहित उसको भी मार डालिये ॥६॥ मित्रोंके आनंद बढानेवाले सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजी "ऐसाही होगा"

अविदूरंततोगत्वाप्रविश्यतुमहद्वनम् ॥ आदर्शयततत्कर्मलक्ष्मणायविभीषणः ॥ २ ॥ नीलजीमूतसंकाशंन्यग्रोधंभीमदर्शनम् ॥ तेजस्वीरावणभ्रातालक्ष्मणायन्यवेदयत् ॥ ३ ॥ इहोपहारंभूतानांबलवान्रावणात्मजः ॥ उपहृत्यततःपश्चात्संग्राममभिवर्तते ॥ ४ ॥ अदृश्यःसर्वभूतानांततोभवतिराक्षसः ॥ निहंतिसमरेशत्रून्वध्नातिचशरोत्तमैः ॥५॥ तमप्रविष्टंन्यग्रोधंबलिनंरावणात्मजम् ॥ विध्वंसयशरैर्दीप्तैःसरथंसाश्वसारथिम् ॥६॥ तथेत्युक्त्वामहातेजाःसौमित्रिर्मित्रनंदनः ॥ बभूवावस्थितस्तत्रचित्रंविस्फारयन्धनुः ॥७॥ सरथेनाग्निवर्णेनबलवान्रावणात्मजः ॥ इंद्रजित्कवचीखड्गीसध्वजःप्रत्यदृश्यत ॥ ८ ॥ तमुवाचमहातेजाःपौलस्त्यमपराजितम् ॥ समाह्वयेत्वांसमरेसम्यग्युद्धंप्रयच्छमे ॥९॥ एवमुक्तोमहातजामनस्वीरावणात्मजः ॥ अब्रवीत्परुषंवाक्यंतत्रदृष्ट्वाविभीषणम् ॥ १० ॥ इहत्वंजातसंवृद्धःसाक्षाद्भ्रातापितुर्मम ॥ कथंद्रुह्यसिपुत्रस्यपितृव्योममराक्षस ॥ ११ ॥ नजातित्वंनसौहार्दंनजातिस्तवदुर्मते ॥ प्रमाणंनचसौंदर्यंनधर्मोधर्मदूषणम् ॥ १२ ॥

यह कहकर विचित्र धनुषपर टंकार दे युद्ध करनेको वहां खडे हो गये ॥७॥ इस प्रकार बलशाली रावणका पुत्र मेघनाद भी कवच और खड्ग धारण करके ध्वजासे शोभित अग्निके समान वर्णवाले रथपर सवार हुआ दृष्टि आया ॥८॥ यह देखकर महातेजस्वी लक्ष्मणजी उस अजेय रावणके पुत्र मेघनादसे बोले "हम तुमको बुलाते हैं; तुम सब प्रकारसे हमारे साथ संग्राम करो " ॥ ९ ॥ महातेजस्वी चिंताशील रावणका पुत्र मेघनाद इस प्रकारसे लक्ष्मणके वचन सुन उस स्थानमें विभीषणको देखकर कठोर वचन कहने लगा॥१०॥कि अरे निर्बोध ! तू इसी स्थानमें जन्म ग्रहण करके इतना बडा हुआ;तू हमारे पिताका साक्षात भ्राता,फिर तू हमारा चाचाहोकर किस प्रकारसे भतीजेका बुरा चिंतनेको उतारू हुआहै ॥११॥ रे दुर्मते ! तुझसे धर्म दूषित होता है कारण कि तुझको कर्त

व्याकर्तव्यका विचार नहीं है, और एक उदरसे जन्म लेनेका, अथवा जाति और जातिभावका तुझको कुछभी ज्ञान नहीं ॥१२॥ रे कुबुद्धिवाले ! तू अपने बंधु बान्धवोंको त्याग करता हुआ शत्रुलोगोंका सेवक होकर साधुलोगोंमें निन्दनीय और शोचनीय हुआ है ॥१३॥ कहां तो बन्धु बान्धवों और स्वजन लोगोंमें वास ! और कहां नीच शत्रुके साथ सहवास परन्तु तेरी बुद्धि कार्य अकार्यका विचार करनेमें असमर्थ है इसलिये तू इन दोनों बडी भारी बातोंका अन्तर नहीं जान सकता है ॥ १४ ॥ स्वजन गुणरहित और शत्रु गुणवान् होनेपर भी गुणविहीन स्वजनही आश्रय लेनेवाला योग्य है, कारण कि शत्रु मित्र होनेके नहीं वह सदा शत्रुही रहताहै जो पर है वह परहीहै॥१५॥विशेष करके जो अपने पक्षको छोडकर पराये पक्षका आश्रय ग्रहण करे वह अपने पक्षके मारेजानेपर उसही शत्रुसे आप भी मार डाला जाता है ॥ १६ ॥ हे निशाचर ! तू रावणका छोटा सगा भाई होकर जैसा निर्दयी कार्य करता है; सगाजन होकर

शोच्यस्त्वमसिदुर्बुद्धेनिंदनीयश्चसाधुभिः ॥ यस्त्वंस्वजनमुत्सृज्यपरभृत्यत्वमागतः ॥ १३ ॥ नैतच्छिथिलयाबुद्धयात्वंवेत्सिमहदंतरम् ॥ क्वचस्वजनसंवासःक्वचनीचपराश्रयः ॥१४॥ गुणवान्वापरजनःस्वजनोनिर्गुणोऽपिवा ॥ निर्गुणःस्वजनःश्रेयान्यःपरःपरएवसःयः ॥ १५ ॥ स्वपक्षंपरित्यज्यपरपक्षंनिषेवते ॥ सस्वपक्षेक्षयंयातेपश्चात्तैरेवहन्यते ॥१६॥ निरनुक्रोशताचेयंयादृशीतेनिशाचर॥स्वजनेनत्वयाशक्यंपौरुषं रावणानुज ॥ १७ ॥ इत्युक्तोभ्रातृपुत्रेणप्रत्युवाचविभीषणः ॥ अजानन्निवमच्छीलंकिंराक्षसविकत्थसे ॥ १८ ॥ राक्षसेंद्रसुतासाधोपारुष्यं त्यजगौरवात् ॥ कुलेयद्यप्यहंजातोरक्षसांक्रूरकर्मणाम् ॥ गुणोयःप्रथमोनॄणांतन्मेशीलमराक्षसम् ॥ १९ ॥ नरमेदारुणेनाहंनचाधर्मेणवैरमे ॥ भ्रात्राविषमशीलोऽपिकथंभ्रातानिरस्यते ॥ २० ॥ धर्मात्प्रच्युतशीलंहिपुरुषंपापनिश्चयम् ॥ त्यक्त्वासुखमवाप्नोतिहस्तादाशीविषंयथा ॥ २१ ॥

और कोई भी ऐसा कार्य नहीं कर सकता है ॥१७॥ जब भतीजा मेघनाद इसप्रकारसे बोला तो विभीषणजीने कहा, हे इन्द्रजीत ! तुम हमारे स्वभावके विनाही जाने हुए किस लिये ऐसा वृथा बकवाद करे जाते हो ॥१८॥ हे असाधु पुत्र! तुम यदि हमको चाचा कहकर गौरव करते हो तो ऐसा कठोर भावछोड दो! हमने क्रूरकर्मकारी राक्षसोंके कुलमें जन्म ग्रहण तो किया है तथापि जो गुण पुरुषोंमें प्रथम होताहै अर्थात् इसी सत्त्वगुणसे युक्त हमारा स्वभाव है राक्षसोंका स्वभाव नहीं है ॥१९॥ हम न कभी दारुण कर्म करते हैं, न कभी अधर्ममें प्रवृत्त होते हैं, हम तुमसे पूँछते हैं, भ्राता खोटे शीलवाला हो तो क्या उसका परित्याग हो सकता है ॥२०॥ हम यदि धर्मत्यागी व पापाचारी होते तो रावण हमको हाथपर स्थित सर्पके समान त्यागकर सुखी हो सकता, ऐसा पुरुषका त्याग

करके सुखी हुआ जाता है॥२१॥पराये धन हरनेमें तैयार और पराई स्त्रीके हरनेवाले दुरात्माको जलते हुए गृहके समान त्याग करनाही उचित जानकर हमने रावणका परित्याग किया है ॥२२॥ जो पुरुष पराया धन ग्रहण करे और पराई स्त्री जिसने ग्रहण की हो और जिसके लिये बन्धु बान्धव शंका करते हो उसका इन्हीं तीन दोषोंसे क्षय हो जाता है, यह सब अवगुण तुम्हारे पितामें हैं ॥२३॥ इसके उपरान्त महर्षियोंका घोर वध; सब देवताओंसे लडाई, क्रोध, वैर, अभिमान और विरुद्धता ॥२४॥ प्राण व ऐश्वर्यका नाश करनेवाले यह सब दोष तुम्हारे पिता हमारे बडे भाई साहबमें हैं, सो इन दोषोंने इनके गुणोंको ढकलिया जैसे बादल पर्वतको छाय लेते हैं ॥ २५ ॥ इन सब दोषोंको देखकरही तो हमने तुम्हारे पिता और अपने ज्येष्ठभाई रावणको परित्याग किया है, अब तुम्हारा पिता; तुम या लंकानगरी कुछ भी नहीं रहेगी ॥२६॥ हे राक्षस ! तुम बालक गर्वित और अतिशय दुर्विनीत हो इसी कारणसे ऐसे कालके फंदेमें

परस्वहरणेयुक्तंपरदाराभिमर्शकम् ॥ त्याज्यमाहुर्दुरात्मानंवेश्मप्रज्वलितंयथा ॥२२॥ परस्वानांचहरणंपरदाराभिमर्शनम् ॥ सुहृदामतिशंकाचत्रयोदोषाःक्षयावहाः॥ २३ ॥ महर्षीणांवधोघोरःसर्वदेवैश्चविग्रहः ॥ अभिमानश्चरोषश्चवैरत्वंप्रतिकूलता॥ २४ ॥एतेदोषाममभ्रातुर्जीवितैश्वर्यनाशनाः ॥गुणान्प्रच्छादयामासुःपर्वतानिवतोयदाः ॥ ॥२५॥ दोषैरेतैःपरित्यक्तोमयाभ्रातापितातव ॥ नेयमस्तिपुरीलंकानचत्वंनचतेपिता ॥ २६ ॥ अतिमानश्चबालश्चदुर्विनीतश्चराक्षस ॥ बद्धस्त्वंकालपाशेनब्रूहिमांयद्यदिच्छसि ॥ २७ ॥ अद्यहव्यसनंप्राप्तंयन्मांपरुषमुक्तवान् ॥ प्रवेष्टुंनत्वयाशक्यंन्यग्रोधंराक्षसाधम ॥ २८ ॥ धर्षयित्वाचकाकुत्स्थंनशक्यंजीवितुंत्वया॥ युध्यस्वनरदेवेनलक्ष्मणेनरणेसह॥ हतस्त्वंदेवताकार्यंकरिष्यतियमक्षयम् ॥ २९ ॥ निदर्शयित्वात्मबलंसमुद्यतंकुरुष्वसर्वायुधसायकव्ययम् ॥ नलक्ष्मणस्यैत्यहिबाणगोचरंत्वमद्यजीवन्सबलोगमिष्यसि ॥३०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे सप्ताशीतितमः सर्गः ॥८७॥

फँसे हो इस समय जोइच्छा हो वह हमको तुम कहलो॥२७॥रे राक्षसोंमें नीच! तुमने पहले हमको कडवे वचन कहे थे इसीलिये तुम आज घोर विपदमें पडे हो अधिक क्या कहें इस समय वटवृक्षके नीचे प्रवेश करना भी तुम्हारे लिये बडा कठिन कामहै॥२८॥काकुत्स्थ लक्ष्मणजीको पराजित करके तुम आज जीवित अथवा करके लौटनेको समर्थ नहीं होगे; तुम संग्राममें नरदेव लक्ष्मणजीके साथ संग्राम करके उनके हाथसे मृतक हो यमराजके गृहमें गमन करके देवतालोगोंको संतोष रूप बडाभारी कार्य पूरा करोगे ॥२९॥ हे इन्द्रजीत ! तुम सब प्रकारसे आयुध उठाय लक्ष्मणजीपर चलाय अपनी सामर्थ्य दिखाओ, परन्तु लक्ष्मणजीके बाण मार्गमें पतित होकर सेनासहित आज जीवित रहते तुम यहांसे नहीं जा सकोगे॥३०॥इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां सप्ताशीतितमः सर्गः॥८७॥

विभीषणजीसे वचन सुनकर भयंकर बलवान् रावणका पुत्र मेघनाद क्रोधसे प्रज्वलित और क्रोधमें भर उठकर अनेक कठोर वचन कहता हुआ ॥ १ ॥ वीर श्रेष्ठ इन्द्रजीतके हाथमें खड्ग व और दूसरे अस्त्रशस्त्र भी थे, उसके रथमें काले रंगके घोडे जुते हुए थे, वह कालमृत्युके समान खडा होगया॥ २॥ उसके हाथमें बडा भारी वेगवान् धनुष था और उसपर शत्रुओंके नाश करनेवाले भयंकर बाण मेघनादने चढाये ॥ ३॥ इसके उपरान्त उस विपुलधनुषधारी समलंकृत अमित्रघाती बल शाली इन्द्रजीतने स्वाभाविक रूपसे भूषित लक्ष्मणजीको देखा॥ ४॥ अपने तेजसे दीप्तिमान् हनुमान्‌जीकी पीठपर सवार लक्ष्मणजीको उसने देखा, उनके देखनेसे जाना गया कि मानो उदयाचलपर सूर्य भगवान् उदय हुए हैं ऐसे लक्ष्मणजीको और उनके सहकारी विभीषणजीको ॥ ५ ॥ व और दूसरे वानरशार्दूलोंको

विभीषणवचःश्रुत्वारावणिःक्रोधमूर्च्छितः ॥ अब्रवीत्परुषंवाक्यंक्रोधेनाभ्युत्पपातच ॥१॥ उद्यतायुधनिस्त्रिंशोरथेसुसमलंकृते ॥ कालाश्वयुक्तेमहतिस्थितःकालांतकोपमः ॥ २ ॥ महाप्रमाणमुद्यम्यविपुलंवेगवद्दृढम् ॥ धनुर्भीमंबलोभीमंशरांश्चामित्रनाशनान् ॥ ३ ॥ तंददर्शमहेष्वासोरथस्थःसमलंकृतः ॥ अलंकृतममित्रघ्नोरावणस्यात्मजोबली ॥ ४ ॥ हनूमत्पृष्ठमारूढमुदयस्थरविप्रभम् ॥ उवाचैनंसुसंरब्धःसौमित्रिंसविभीषणम् ॥ ५ ॥ तांश्चवानरशार्दूलान्पश्यध्वंमेपराक्रमम् ॥ अद्यमत्कार्मुकोत्सृष्टंशरवर्षंदुरासदम् ॥ ६ ॥ मुक्तवर्षमिवाकाशेधारयिष्यथसंयुगे ॥ अद्यवोमामकाबाणामहाकार्मुकनिःसृताः ॥ विधमिष्यंतिगात्राणितूलराशिमिवानलः ॥ ७ ॥ तीक्ष्णसायकनिर्भिन्नाञ्छूलशक्त्यृष्टिसायकैः ॥ अद्यवोगमयिष्यामिसर्वानेवयमक्षयम् ॥ ८ ॥ सृजतःशरवर्षाणिक्षिप्रहस्तस्यसंयुगे ॥ जीमूतस्येवनदतःकःस्थास्यतिममाग्रतः ॥ ९ ॥ रात्रियुद्धेतदापूर्वंवज्राशनिसमैःशरैः ॥ शायितौतौमयाभूयोविसंज्ञौसपुरःसरौ ॥ १० ॥

देखकर मेघनादने कहा कि; हमारा पराक्रम देखो आज हमारे धनुषसे छूटी हुई दुरासद् बाणोंकी वर्षा देखो॥ ६॥ जो कि आकाशसे वर्षती हुई जलधाराके समान दिखाई देगी और उसको तुम सब सहोगे, जिस प्रकार अग्नि रुईके ढेरको भस्म कर देती है वैसेही आज हमारे बडे भारी धनुषसे छूटे हुए बाणोंके समूह तुम्हारी सबकी देहोंको विदीर्ण करेंगे ॥७॥ आज तीक्ष्ण शूल; शक्ति, ऋष्टि, पटा व दूसरे सायकसमूहसे काटकर हम तुम सबको यम लोकमें भेज देंगे ॥ ८ ॥ जिस समय हम संग्राममें बादलोंके समान शब्द करके अति शीघ्रतासे बाणवर्षण करते रहेंगे तब कौन हमारे सामनेसे खडा रहनेको समर्थ होगा ? ॥९॥ रे लक्ष्मण ! पहले

हमारे बज्रके समान बाणोंके प्रहारसे रात्रिके समय तुमदोनों भ्राता जो अनुचरलोगोंके साथ अचेत होकर गिर पडे थे ॥ १० ॥ सो क्या अब तुम उसको भूलगये? बोध होताहै कि भूलही गये हम सर्पके समान क्रोधमें भरे खडे हैं, आजइस समय जब कि, तुम हमारे साथ युद्ध करते हो तब निश्चयही आज तुम यमराजके भवन सिधारोगे ॥११॥ अभयवदन रघुनंदन लक्ष्मणजी राक्षसोंमें श्रेष्ठ इन्द्रजीतके ऐसे गर्वित वचन सुन क्रोधमें भरकर कहते हुए ॥१२॥ अरे निशाचर तुम वचनसे कार्यके दुर्गम पार कुछ चले गये परन्तु जो कार्यसे दुर्गम पार जाय सकते हैं वही बुद्धिमान् कहे जाते हैं ॥१३॥ हे दुर्मते ! कोई पुरुष भी जिसके साधनेको समर्थ नहीं हो सकता तुम हीनार्थ होकर भी वचनोंसे हमारे पराजयरूप उस कार्यको साधन करते हुए अपनेको कृतार्थ समझते हो ॥१४॥ और तुमने हमारे मूर्च्छित करनेके विषयमें जो कहा तो तुमने उस समय संग्राममें अन्तर्धान होकर जो कार्य किया उस कार्यकी वीरलोग प्रशंसा नहीं करते, वैसा कार्य

स्मृतिनेतेऽस्तिवामन्येऽव्यक्तंयातोयमक्षयम् ॥ आशीविषसमंक्रुद्धंयन्मांयोद्धुमुपस्थितः ॥११॥ तच्छ्रुत्वाराक्षसेंद्रस्यगर्जितंराघवस्तदा ॥ अभीतवदनःक्रुद्धोरावणिंवाक्यमब्रवीत् ॥ १२ ॥ उक्तश्चदुर्गमःपारःकार्याणांराक्षसत्वया ॥ कार्याणांकर्मणापारंयोगच्छतिसबुद्धिमान् ॥ १३ ॥ सत्वमर्थस्यहीनार्थोदुरवापस्यकेनचित् ॥ वाचाव्याहृत्यजानीषेकृतार्थोऽस्मीतिदुर्मते ॥१४॥ अंतर्धानगतेनाजौयत्त्वयाचरितस्तदा॥ तस्कराचरितोमार्गोनैषवीरनिषेवित ॥१५॥ यथाबाणपथंप्राप्यस्थितोऽस्मितवराक्षस ॥ दर्शयस्वाद्यतत्तेजोवाचात्वंकिंविकत्थसे ॥ १६ ॥ एवमुक्तोधनुर्भीमंपरामृश्यमहाबलः॥ससर्जनिशितान्बाणानिंद्रजित्समितिंजयः ॥१७॥ तेनसृष्टामहावेगाःशरा सर्पविषोपमाः॥संप्राप्यलक्ष्मणंपेतुःश्वसंतइवपन्नगाः ॥ १८ ॥ शरैरतिमहावेगैर्वेगवान्रावणात्मजः ॥ सौमित्रिमिंद्रजिद्युद्धेविव्याधशुभलक्षणम् ॥१९॥ सशरैरतिविद्धांगोरुधिरेणसमुक्षितः॥शुशुभेलक्ष्मणःश्रीमान्विधूमइवपावकः॥२०॥इन्द्रजित्त्वात्मनःकर्मप्रसमीक्ष्याभिगम्यच॥विनद्यसुमहानादमिदंवचनमब्रवीत्॥२१॥

तस्करलोग ही किया करते हैं॥१५॥हे निशाचर ! वृथा अपनी बडाई क्यों मारते हो ? जिसप्रकार हम तुम्हारे बाणोंके सामने खडे हैं, वैसेही तुम भी सन्मुख समरमें टिककर अपने पराक्रमको दिखाओ॥१६॥ महाबलवान् समरविजयी इन्द्रजीतने इसप्रकारसे कहेजाकर भयंकर धनुषपर टंकार दे तीक्ष्ण बाणोंका चलाना आरंभ किया ॥१७॥ उस कालमें मेघनादके चलाये हुए सर्पके विषके समान महावेगवान् बाणोंके समूह लक्ष्मणजीके शरीरपर गिरतेही श्वास लेते हुए सर्पके समान पृथ्वीपर गिरने लगे ॥१८॥ इसप्रकारसे वेगवान् रावणका पुत्र इन्द्रजीत महावेगवाले बाणोंके समूहसे सुमित्राके पुत्र शुभलक्षणयुक्त लक्ष्मणजीको बींधता हुआ ॥ १९ ॥ मेघनादके बाणसमूहसे अंग अति विंधाये रुधिरसे भीगे हुए लक्ष्मणजी धुआँरहित अग्निके समान शोभायमान होने लगे ॥२०॥ तब इन्द्र

जीत अपना यह वीरयुक्त कर्म देख बडाभारी सिंहनाद कर गर्वित भावसे लक्ष्मणजीसे बोला ॥२१॥ कि, हे लक्ष्मण ! आज हमारे बडे भारी धनुषसे छूटे हुए जीवनका अन्त करनेवाले तीखी धारवाले बाण तुम्हारा जीवन ग्रहण करेंगे॥२२॥हे लक्ष्मण ! आज हमारे द्वारा तुम्हारे गिरने और मृतक होनेपर शृगाल, गिद्ध और बाज मांस खानेको तुम्हारे ऊपर टूटेंगे ॥ २३ ॥ परमदुर्मति क्षत्रियोंमें नीच अनार्य राम आजही तुम सरीखे भक्त भ्राताको हमसे मारा हुआ देखेगा ॥ २४ ॥ हे लक्ष्मण ! आज हमसे तुम्हारे मारे जानेपर;राम तुम्हारा कवच छिन्न भिन्न धनुष टूटा हुआ और सब उत्तम अंगोंको कटा हुआ देखेंगे ॥२५॥ रावणके पुत्र मेघनादने जब कठोर भावसे यह कडे वचन कहे तब अर्थके जाननेवाले लक्ष्मणजीने क्रोधमें भरकर उसको उत्तर दिया ॥ २६ ॥ रे क्रूरकर्मकारी

पत्रिणःशितधारास्तेशरामत्कार्मुकच्युताः ॥ यंतेऽद्यआदास्सौमित्रेजीवितंजीवितांतकाः॥२२॥अद्यगोमायुसंघाश्चश्येनसंघाश्चलक्ष्मण॥ गृध्राश्चनिपतंतुत्वांगतासुंनिहतंमया॥२३॥ क्षत्रबंधुंसदानार्यंरामःपरमदुर्मतिः ॥ भक्तंभ्रातरमद्यैवत्वांद्रक्ष्यतिहतंमया ॥२४॥ विस्रस्तकवचंभूमौव्यपविद्धशरासनम् ॥ हृतोत्तमांगंसौमित्रेत्वामद्यनिहतंमया॥२५॥इतिब्रुवाणंसंक्रुद्धःपरुषंरावणात्मजम् ॥ हेतुमद्वाक्यमर्थज्ञोलक्ष्मणःप्रत्युवाचह ॥ २६ ॥वाग्बलंत्यजदुर्बुद्धेक्रूरकर्मन्हिराक्षस ॥ अथकस्माद्वदस्येतत्संपादयसुकर्मणा ॥२७॥ अकृत्वाकत्थसेकर्मकिमर्थमिहराक्षस ॥ कुरुतत्कर्मयेनाहंश्रद्धेयंतवकत्थनम् ॥२८॥ अनुक्त्वापरुषंवाक्यंकिंचिदप्यनवक्षिपन् ॥ अविकत्थन्वधिष्यामित्वांपश्यपुरुषादन ॥२९॥इत्युक्त्वापंचनाराचानाकर्णापूरिताञ्छितान् ॥ विजघानमहावेगाल्लक्ष्मणोराक्षसोरसि ॥३०॥ सुपत्रवाजिताबाणाज्वलिताइवपन्नगाः ॥ नैर्ऋतोरस्यभासंतसवितूरश्मयोयथा ॥ ३१ ॥ सशरैराहतस्तेनसरोषोरावणात्मजः ॥ सुप्रयुक्तैस्त्रिभिर्बाणैःप्रतिविव्याधलक्ष्मण ॥॥ ३२ ॥

खोटी बुद्धिवाले निशाचर ! ऐसा कहनेकी क्या आवश्यकता है? वचनबल छोडकर कार्यसे अपने कहे हुएको पूराकर दिखा ॥ २७ ॥ रे निशाचर ! विनाही कार्य किये हुए क्यों अपनी बडाई मारता है ? जिससे तेरी बडाई करनेमें हमारी श्रद्धा होसके ऐसा कार्य कर ॥ २८ ॥ रे पुरुषोंमें नीच ! यह देख, हम वृथा अपनी बडाई और किसीकी निन्दा न करके और विनाही किसीको कठोर वचनके कहे तुमको वध करते हैं ॥ २९ ॥ लक्ष्मणजीने यह कहकर धनुषको कानतक खैंच वेगवान् अतितीखे पाँच बाण इन्द्रजीतकी छातीमें मारे ॥ ३० ॥ उस काल सुन्दर पुंखोंके लगनेसे अतिवेग शाली और प्रकाशमान् सर्पोंके समान वह बाण इन्द्रजीतकी छातीमें सूर्यकी किरणोंके समान शोभा पाने लगे ॥ ३१ ॥ लक्ष्मणजीके बाणोंसे घायल हो, क्रोधमें भर राक्षसवीर

मेघनादनेभी तीन बाण मारकर लक्ष्मणजीको विद्ध किया ॥ ३२ ॥ इस प्रकारसे संग्रामभूमिमें परस्पर विजयकी अभिलाषा किये उन दोनों नरराक्षस सिंहका भयंकर और कठोर युद्ध होनेलगा॥ ३३॥ दोनोंही विकराल बलसम्पन्न और विक्रमशाली थे, दोनोंही परम अजेय, समानबल और तेजवाले थे॥ ३४॥ इसलिये उन दोनों वीरोंके संग्राममें भिडनेपर यह दोनोंही, वृत्रासुर और इन्द्र व आकाशमें टिकेहुए दो ग्रहोंके समान दुराधर्ष जान पडनेलगे। ३५॥ महाबल दो सिंहोंके समान रणमें खडे होकर दोनोंजने असंख्य बाण चलाय असंख्य युद्ध करनेलगे ॥ ३६ ॥ इसप्रकार नर-राक्षस-राजनन्दन युगल संग्राममें विराजमान हो हर्षित अंतःकरणसे युद्ध करनेलगे॥ ३७॥ "श्लोक ❀ परस्परं तौ प्रतिवर्षतुर्भृशं शरौघवर्षेण बलाहकाविव। अतिक्षमा विव्यथतुर्महाबलौ महाहवे शम्बरवासवोपमौ ❀" अनुवाद

सबभूवमहाभीमोनरराक्षससिंहयोः ॥ विमर्दस्तुमुलोयुद्धेपरस्परजयैषिणोः ॥३३॥ विक्रांतौबलसंपन्नावुभौविक्रमशालिनौ ॥ उभौपरमदुर्जेयाव तुल्यबलतेजसौ ॥ ३४ ॥ युयुधातेतदावीरौग्रहाविवनभोगतौ ॥ वलवृत्राविविहितौयुधिवेदुष्प्रधर्षणौ ॥ ३५ ॥ युयुधातेमहात्मानौतदाकेस रिणाविव ॥ बहूनवसृजंतौहिमार्गणौघानवस्थितौ॥३६॥ नरराक्षसमुख्यौतौप्रहृष्टावभ्ययुध्यताम् ॥ ३७ ॥ सर्गः ॥ ८८ ॥ ततःशरान्दा शरथिःसंधायामित्रकर्षणः ॥ ससर्जराक्षसेंद्रायक्रुद्धःसर्पइवश्वसन् ॥ ॥ ३८ ॥ तस्यज्यातलनिर्घोषंसश्रुत्वाराक्षसाधिपः ॥विवर्णवदनोभूत्वा लक्ष्मणंसमुदैक्षत ॥ ३९ ॥ विषण्णवदनंदृष्ट्वाराक्षसंरावणात्मजम् ॥ सौमित्रिर्युद्धसंयुक्तंप्रत्युवाचविभीषणः ॥ ४० ॥

"उस कालमें वासव (इन्द्र) और शम्बरासुरके समान महाबलवान् दोनों वीर दो मेघोंके समान बाणोंकी वर्षाकरके एक दूसरेके ऊपर बाण वर्षाने लगे" ॥ इत्यार्षेश्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामष्टाशीतितमः सर्गः॥८८॥ इसके उपरान्त शत्रुओंके मारनेवाले दशरथकुमार लक्ष्मणजी क्रोधितहो सर्व श्रेष्ठके समान श्वास छोडते हुए राक्षसोंमें श्रेष्ठ इन्द्रजीतके ऊपर बाण चलाने लगे॥ ३८॥ तब लक्ष्मणजीके धनुषकी प्रत्यंचाका शब्द सुनकर राक्षसोंमें श्रेष्ठ इंद्रजीतका मुख विवर्ण होगया और उसने लक्ष्मणजीकी ओर देखा ॥३९॥ राक्षसश्रेष्ठ रावणके पुत्र इन्द्रजीतको विवर्णवदन और सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजीको युद्धमें अनुरागी

❀ यहां सर्ग समाप्त हुआ ऐसा लिखाहै तो सही परंतु यहां सर्गसमाप्ति हुई नहीं कारण, इन्द्रजीत और लक्ष्मणजीका युद्धवृत्तान्त वर्णन पूरा नहीं हुआ इसके आगेभी युद्धका वर्णन चलताही है, यहां किसी अतिप्राचीन पुस्तकोंमें सर्गका परिच्छेद किया होगा जिसके अनुसार संस्कृत टीकाभी बनाई गई है, परंतु वह संप्रदाय नहीं इसवास्ते यहां पूर्वमें ३७ श्लोक होगये हैं और आगे ३८ श्लोकसेही चलता है; सो यहां वैसेही लिखा गया है, यह नागोजीभट्टकृत रामाभिरामीटीकामें कतकटीकेका अभिप्राय लिखा है ॥

हुआ देख विभीषणजीने लक्ष्मणजीसे कहा ॥ ४० ॥ हे महावीर ! रावणके पुत्र मेघनादका मुख विवर्ण होगया व औरभी जो दुर्निमित्त दृष्टि आते हैं इससे निश्चय जाना जाता है कि, इसका उत्साह जाता रहा इसमें संदेह नहीं इसलिये आप शीघ्रतासे इसका वध करनेमें यत्नवान् हों ॥४१॥ विभीषणजीके वचन सुनकर सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजीने तीक्ष्णविषवाले विषधरसर्पोंके समानबाण धनुषपर चढ़ाकर छोड़े ॥४२॥ लक्ष्मणजीके वज्रके समान कठिन स्पर्शवाले उन बाणोंसे घायल हुआ रावणका पुत्र मेघनाद मुहूर्त भरतक मूर्छित रहा और उसकी सब इंद्रियें विकल होगईं ॥ ४३ ॥ परंतु मुहूर्त भरके पीछेही सावधान हो चेतना पाकर उसने देखा कि, वीरश्रेष्ठ लक्ष्मणजी संग्राममें खडे हैं तब उसने क्रोधके मारे लाल२नेत्रकर लक्ष्मणजीके निकट ॥४४॥ फिर जाकर उनसे यह

निमित्तान्युपपश्यामियान्यस्मिन्रावणात्मजे ॥ त्वरतेनमहाबाहोभग्नएषनसंशयः ॥४१॥ ततःसंधायसौमित्रिःशरानाशीविषोपमान् ॥मुमोच विशिखांस्तस्मिन्सर्पानिवविषोल्बणान् ॥ ४२ ॥ शक्राशनिसमस्पर्शैर्लक्ष्मणेनाहतःशरैः ॥ मुहूर्तमभवन्मूढःसर्वसंक्षुभितेंद्रियः ॥ ४३ ॥ ददर्शावस्थितंवीरमाजौदशरथात्मजम् ॥ सोऽभिचक्रामसौमित्रिंरोषात्संरक्तलोचनः ॥४४॥ अब्रवीच्चैनमासाद्यपुनःसपरुषंवचः ॥ किंनस्मरसितद्युद्धेप्रथमेमत्पराक्रमम् ॥ निबद्धस्त्वंसहभ्रात्रायदायुधिविचेष्टसे ॥ ४५ ॥ युवांखलुमहायुद्धेशक्राशनिसमैःशरैः ॥ शायितौप्रथमंभूमौविसंज्ञौसपुरःसरौ ॥ ४६ ॥ स्मृतिर्वानास्तितेमन्येव्यक्तंवायमसादनम् ॥ गंतुमिच्छसियन्मांत्वमाधर्षयितुमिच्छसि ॥ ४७ ॥ यदितेप्रथमेयुद्धेन दृष्टोमत्पराक्रमः ॥ अद्यत्वांदर्शयिष्यामितिष्ठेदानींव्यवस्थितः ॥ ४८ ॥ इत्युक्त्वासप्तभिर्बाणैरभिविव्याधलक्ष्मणम्॥ दशभिस्तुहनूमंतंतीक्ष्णधारैःशरोत्तमैः ॥४९॥ ततःशरशतेनैवसुप्रयुक्तेनवीर्यवान् ॥ क्रोधाद्द्विगुणसंरब्धोनिर्बिभेदबिभीषणम् ॥ ५० ॥

कठोर वचन कहे; कि, पहले युद्धमें तुम जो अपने भ्राताके साथ हमारी बाँहोंके बलसे बिंधगये थे वह क्या तुमको याद नहीं है ? ॥४५॥ जिस दिन हमारे साथ प्रथम युद्ध हुआ उस दिन हमने नागफांससे तुम्हारे भ्राताके सहित तुमको वज्रके समान बाणोंसे बांधलिये थे और तुम पृथ्वीपर पडे लोटते थे क्या उस दिनको तुम भूल गये ? ॥४६॥ हम जानते हैं कि, उस दिनकी तुमको याद नहीं रहीं, जो कुछभी हो जब कि, तुमने हमारा नाश करना चाहा है तब यमराजके भवनमें जानेकीही तुम्हारी इच्छा है ॥४७॥ अथवा यदि पहले युद्धमें हमारा पराक्रम न देखा हो तो क्षणभरतक ठहरो; हम तुमको इसी समय अपनी सामर्थ्य दिखलाते हैं॥ ४८ ॥ मेघनादने यह कहकर सात बाण लक्ष्मणजीको मारे और हनुमानजीपरभी तीक्ष्ण धारवाले दश बाण चलाये ॥ ४९ ॥ और क्रोधके मारे दूने

उत्साहसे युक्त होकर उस वीर्यवान्‌ने बडे बलसे सौ बाण विभीषणजीको मारे ॥ ५० ॥ नरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीके लघुभ्राता लक्ष्मणजी इन्द्रजीतका ऐसा कार्य देख उसके विषयमें चिंता न कर हँसते २ यह बोले कि, "ऐसे बाणचलानेसे क्या फल हो सकता है" इस ॥ ५१ ॥ निडर वदन लक्ष्मणजीने धनुष चढाय क्रोधमें भर इन्द्रजीतके ऊपर घोर बाण चलाकर कहा ॥ ५२ ॥ रे निशाचर ! तुम्हारे अल्प वीर्यवाले और लाघवयुक्त बाण हमको क्लेशके देनेवाले नहीं बरन् सुखहीके देनेवाले हुए हैं, शूरोंके ऐसे लघु प्रहार नहीं होते ॥ ५३ ॥ तुमने जिस प्रकारका प्रहार किया समरके अभिलाषी रणके बीच जाय शूरलोग युद्ध करते हुए कभी ऐसा प्रहार नहीं करते। लक्ष्मणजी यह कहकर बाणोंकी वर्षा करने लगे ॥५४॥ जिस प्रकार तारागणोंका समूह पृथ्वीपर गिरपडे, वैसेही लक्ष्म

तद्दृष्ट्वेंद्रजिताकर्मकृतंरामानुजस्तदा ॥ अचिंतयित्वाप्रहसन्नैतत्किंचिदितिब्रुवन् ॥५१॥ मुमोचचशरान्घोरान्संगृह्यनरपुंगवः ॥ अभीतवदनः क्रुद्धोरावणिंलक्ष्मणोयुधि ॥५२॥ नैवंरणगताःशूराःप्रहरंतिनिशाचर ॥ लघवश्चाल्पवीर्याश्चशराहीमेसुखास्तव ॥५३॥ नैवशूरास्तुयुध्यंतेसमरेयुद्धकांक्षिणः ॥ इत्येवंतंब्रुवन्धन्वीशरैरभिववर्षह ॥ ५४ ॥ तस्यबाणैःसुविध्वस्तंकवचंकाञ्चनंमहत् ॥ व्यशीर्यतरथोपस्थेताराजालमिवांबरात् ॥ ५५ ॥ विधूतवर्मानाराचैर्बभूवसकृतव्रणः ॥ इंद्रजित्समरेवीरःप्रत्यूषेभानुमानिव ॥ ५६ ॥ ततःशरसहस्रेणसंक्रुद्धोरावणात्मजः ॥ बिभेदसमरेवीरोलक्ष्मणंभीमविक्रमः ॥ ५७ ॥ व्यशीर्यतमहद्दिव्यंकवचंलक्ष्मणस्यतु ॥ कृतप्रतिकृतान्योन्यंबभूवतुरभिद्रुतौ ॥ ५८ ॥ अभीक्ष्णंनिःश्वसंतौवैयुध्येतांतुमुलंयुधि ॥ शरसंकृत्तसर्वांगौसर्वतोरुधिरोक्षितौ ॥ सुदीर्घंकालंतौवीरावन्योन्यंनिशितैःशरैः ॥ ५९ ॥

णजीके बाणोंसे इन्द्रजीतका सुवर्णसे बना हुआ कवच छिन्नभिन्न हो बिथराकर रथके नीचे गिर पडा ॥५५॥ उस कालमें उस वीर रावणके पुत्र मेघनादका लक्ष्मणजीके बाणोंसे जब कवचभी टूटगया, और उसके शरीरमें घाव हो उनसे रुधिर निकलने लगा, तब वह प्रभातकालीनसूर्यके समान शोभायमान होने लगा ॥ ५६ ॥ तब भयंकर विक्रमकारी वीरश्रेष्ठ रावणके पुत्र मेघनादने क्रोधकर हजार बाण संग्राममें लक्ष्मणजीके मारे ॥ ५७ ॥ तब राक्षसके बाणोंसे लक्ष्मणजीका भी बडाभारी दिव्य कवच छिन्नभिन्न होगया; अब दोनों वीर बराबर हुए कारण कि, लक्ष्मणजीने मेघनादके कवचको काटा, मेघनादने इनके कवचको काटा, इससे इन दोनों जनोंकी बराबर मार हुई ॥ ५८ बाणोंके लगनेसे दोनों जने वारंवार श्वास ले लेकर भयानक युद्ध करने लगे, इन दोनों जनेके बहुत

देरतक तीखे बाणोंसे सब प्रकार परस्पर एक दूसरेका शरीर विद्ध करनेसे दोनोंकेसब अंग कटगये और उनसे रुधिर बहनेलगा॥५९॥रण करनेमें चतुर भयंकर विक्रमकारी वह दोनों महात्मा विजय प्राप्त करनेके लिये यत्नवान् हो परस्पर एक दूसरेके अंगोंको घायल करने लगे ॥६०॥ दोनों वीरोंके ध्वज और कवच कटगये और दोनोंके शरीरमें बाणोंके लगनेसे घाव होगये और उससे गरम रुधिर निकलने लगा कि, जैसे झरनेसे जल निकलता है ॥ ६१ ॥ जलकी वर्षा करते हुए नीले रंगके काले दो मेघोंके समान इन दोनों जनोंने भयंकर शब्दकारीघोर बाण वर्षाने आरंभ किये ॥६२॥ इसप्रकारसे युद्ध करते हुए इन दोनों वीरोंको बहुत समय बीतगया,परन्तु इन दोनोंमेंसे कोई नहीं थका,न रणसे विमुखही हुआ ॥६३॥ अस्त्रविद्या जानने वालोंमें श्रेष्ठ दोनोंही परस्पर एक दूसरेको

ततक्षतुर्महात्मानौरणकर्मविशारदौ ॥ बभूवतुश्चात्मजयेयत्तौभीमपराक्रमौ ॥ ६० ॥ तौशरौघैस्तथाकीर्णौनिकृत्तकवचध्वजौ ॥ सृजंतौरुधिरंचोष्णंजलंप्रस्रवणाविव ॥ ६१ ॥ शरवर्षंततोघोरंमुंचतोर्भीमनिःस्वनम् ॥ सासारयोरिवाकाशेनीलयोःकालमेघयोः ॥ ६२ ॥ तयोरथमहान्कालोव्यतीयाद्युध्यमानयोः ॥ नचतौयुद्धवैमुख्यंक्लमंचाप्युपजग्मतुः ॥ ६३ ॥ अस्त्राण्यस्त्रविदौश्रेष्ठौदर्शयंतौपुनःपुनः ॥ शरानुच्चावचाकारानंतरिक्षेबबंधतुः ॥ ६४ ॥ व्यपेतदोषमस्यंतौलघुचित्रंचसुष्ठुच ॥ उभौतुतुमुलंघोरंचक्रतुर्नरराक्षसौ ॥ ६५ ॥ तयोःपृथक्पृथग्भीमःशुश्रुवेतुमुलःस्वनः ॥ सकंपंजनयामासनिर्घातइवदारुणः ॥ ६६ ॥ तयोःसभ्राजतेशब्दस्तथासमरयत्तयोः ॥ सुघोरयोर्निःस्तनतोर्गगनेमेघयोरिव ॥ ६७ ॥ सुवर्णपुंखैर्नाराचैर्बलवंतौकृतव्रणौ ॥ प्रसुस्रुवातेरुधिरंकीर्तिमंतौजयेधृतौ ॥ ६८ ॥ तेगात्रयोर्निपतितारुक्मपुंखाःशरायुधि ॥ असृग्दिग्धाविनिष्पेतुर्विविशुर्धरणीतलम् ॥ ६९ ॥

अपने शरीरको प्रबल दिखाने लगे यहांतक कि, इन दोनों वीरोंके चलाये हुए बाणोंसे आकाश ढक गया ॥ ६४ ॥ इन दोनों नर व राक्षसोंने दोषविहीन लाघवसंपन्न विचित्र और उत्तम बाण चलाय घोर कठोर युद्ध आरंभ किया ॥ ६५ ॥ इन दोनों वीरोंका अलग२ सिंहनाद करना सुनाई आनेलगा, जिसने वज्रके समान शब्द सुना,इस घोरदारुणशब्दसे उसकाही हृदय कांप गया ॥६६॥ समरमें मतवाले दोनों वीरोंका शब्द अत्यन्त घोर कठोर शब्द करते हुए मेघोंके समान श्रवण होता था ॥ ६७ ॥ विजय और कीर्ति पानेको यत्न करते हुए उन बलशालियोंके शरीरमेंसुवर्णके फोंक लगे हुए बाणोंसे घाव होगये, और उन बाणोंसे रुधिरकी धार निकलने लगी ॥६८॥ दोनों वीरोंकी देहोंके अंगोंसे निकले और रुधिर लगे सुवर्णके फोंकसे युक्त बाण गिरकर पृथ्वीमें प्रवेश कर

गये ॥ ६९ ॥ और दूसरे निशाचर गण अपने तीक्ष्ण बाणोंसे आकाशमेंही बाणोंके हजारों टुकडे करके बिथराने लगे, और बाणोंको बाणोंसे भिडानेलगे ॥७०॥ जिसप्रकार यज्ञभूमिमें दो अग्नियोंके चारों ओर कुशोंके ढेर रक्खे रहते हैं वैसेही उन दोनों वीरोंके घोर युद्धमें सब बाणराशि हुई॥७१॥उस कालमें जब उन महाबलवानोंकी देहमें घाव होगये तब वह दोनों जन बनमें लगेहुए पत्तोंसे विहीन और पुष्पोंसे ढकेहुए टेसू और शाल्मलीके वृक्षोंके समान शोभायमान हुए ॥ ७२ ॥ इस प्रकारसे परस्पर वियजकी अभिलाषा किये लक्ष्मण और इन्द्रजीत वारंवार घोरकठोर संग्राम करने लगे ॥ ७३ ॥ कभी लक्ष्मण इन्द्रजीतपर चोटचलाते थे कभीइन्द्रजीत लक्ष्मणजीपर प्रहार करता था परन्तुइन दोनोंमेंसे कोई नहीं थकता था ॥७४॥ वह महावीर्य वेगवान् वीरयुगल शरीरमें

अन्येसुनिशितैःशस्त्रैराकाशेसंजघट्टिरे॥ बभंजुश्चिच्छिदुश्चैवतयोर्बाणाःसहस्रशः ॥७०॥ सबभूवरणेघोरस्तयोर्बाणमयश्चयः ॥ अग्निभ्यामिव दीप्ताभ्यांसत्रेकुशमयश्चयः ॥ ७१ ॥ तयोःकृतव्रणौदेहौशुशुभातेमहात्मनोः ॥ सुपुष्पाविवनिष्पत्रौवनेकिंशुकशाल्मली ॥ ७२ ॥ चक्रतु स्तुमुलंघोरंसन्निपातंमुहुर्मुहुः ॥ इन्द्रजिल्लक्ष्मणश्चैवपरस्परजयैषिणौ ॥ ७३ ॥ लक्ष्मणोरावणिंयुद्धेरावणिश्चापिलक्ष्मणम् ॥ अन्योन्यंता वभिघ्नंतौनश्रमंप्रतिपद्यताम् ॥७४॥ बाणजालैःशरीरस्थैरवगाढैस्तरस्विनौ ॥ शुशुभातेमहावीर्यौप्ररूढाविवपर्वतौ ॥७५॥ ततोरुधिरसिक्ता निसंवृतानिशरैर्भृशम् ॥ बभ्राजुःसर्वगात्राणिज्वलंतइवपावकाः ॥७६॥ तयोरथमहान्कालोव्यतीयाद्युध्यमानयोः ॥ नचतौयुद्धवैमुख्यंश्रमंचा प्यभिजग्मतुः ॥ ७७ ॥ अथसमरपरिश्रमंनिहंतुंसमरमुखेष्वजितस्यलक्ष्मणस्य ॥ प्रियहितमुपपादयन्महात्मासमरमुपेत्यविभीषणोऽवतस्थे ॥७८॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा० युद्धकाण्डे एकोननवतितमःसर्गः॥८९॥ युध्यमानौततोदृष्ट्वाप्रसक्तौनरराक्षसौ प्रभिन्नाविवमातंगौपरस्परजयैषिणौ ॥ १ ॥

प्रवेशित हुए बाणसमूहसे आच्छादित होकर वृक्षोंसे व्याप्त दो पर्वतोंके समान शोभायमान् होने लगे ॥७५॥ उनके बाणोंसे युक्त रुधिरसे गीले समस्त गात्र जलतीहुई अग्निके समान प्रकाशितहोगये ॥७६॥ इस प्रकार युद्ध करते २ उनको बहुतसमय बीत गयापरन्तु उनमेंसे कोईभी नहीं थकानकोई रणसे विमुख हुआ ॥ ७७ ॥ इतनेमेंही महात्मा विभीषणजी संग्राममें अपराजित लक्ष्मणजीके रणका परिश्रम दूर करनेके लिये उनका प्रिय और हित साधन करनेकी वासनासे निकट आय विराजमान् हुए ॥ ७८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकोननवतितमः सर्गः ॥ ८९ ॥ परस्पर जीतनेकी

इच्छा किये मदसे अन्धे दो हाथियोंके समान युद्ध करते हुए व एकमें सटे हुए राक्षसश्रेष्ठ और मनुष्यश्रेष्ठको ॥ १ ॥ परस्पर समर करते हुए देखनेकी इच्छासे महाबलवान् व शूर रावणके भाई विभीषणजी आप संग्राममें खडे हुए ॥२॥ इसके उपरान्त अपने श्रेष्ठ धनुषपर टंकार दे उन्होंने राक्षस लोगोंके ऊपर तीक्ष्ण महाबाण चलाये ॥३॥ जिस प्रकार वज्र महापर्वतोंको विदारण करता है वैसेही अग्निके समान इन सब बाणोंने सावधानीसे गिरकर राक्षसोंके देहोंको विदीर्ण किया ॥४॥ विभीषणके अनुचर वीर राक्षसश्रेष्ठगण भी शूल, असि और पटेसे युद्धमें राक्षसोंके मारने लगे ॥५॥ उस कालमें विभीषणजी उन सचिवरा क्षसोंसे परिवृत होकर हिरसकरनेवाले हाथीके बच्चोंसे परिवेष्टित महामातंगके समान शोभायमान होने लगे॥६॥इसके उपरान्त काल जाननेवाले राक्षसश्रेष्ठ विभी

तयोर्युद्धंद्रष्टुकामोवरचापधरोबली ॥ शूरःसरावणभ्रातातस्थौसंग्राममूर्धनि॥२॥ ततोविस्फारयामाससमहद्धनुरवस्थितः ॥ उत्ससर्जचतीक्ष्णा ग्रान्राक्षसेषुमहाशरान् ॥३॥ तेशराःशिखिसंस्पर्शानिपतंतःसमाहिताः ॥ राक्षसान्दरयामासुर्वज्राइवमहागिरीन् ॥ ४ ॥ विभीषणस्यानु चरास्तेऽपिशूलासिपट्टिशैः ॥ चिच्छिदुःसमरेवीराद्राक्षसान्राक्षसोत्तमाः ॥५॥ राक्षसैस्तैःपरिवृतःसतदातुविभीषणः ॥ बभौमध्येप्रधृष्टानांक लभानामिवद्विपः ॥ ६ ॥ ततःसंचोदमानेवैहरीन्रक्षोवधप्रियान् ॥ उवाचवचनंकालेकालज्ञोरक्षसांवरः ॥ ७ ॥ एकोयंराक्षसेंद्रस्यपरायणमव स्थितः ॥ एतच्छेषंबलंतस्यकिंतिष्ठतहरीश्वराः ॥८॥ तस्मिन्श्चनिहतेपापेराक्षसेरणमूर्धनि ॥ रावणंवर्जयित्वातुशेषमस्यबलंहतम् ॥९॥ प्रह स्तोनिहतोवीरोनिकुम्भश्चमहाबलः॥ कुम्भकर्णश्चकुम्भश्चधूम्राक्षश्चनिशाचरः॥१०॥ जंबुमालीमहामाली तीक्ष्णवेगोशनिप्रभः सुप्तघ्नोयज्ञको पश्चवज्रदंष्ट्रश्चराक्षसः ॥११॥ संह्रादीविकटोऽरिघ्नस्तपनोमंदएवच ॥ प्रघासःप्रघसश्चैवप्रजंघोजंघएवच॥१२॥ अग्निकेतुश्चदुर्धर्षोरश्मिकेतुश्चवी र्यवान् ॥ विद्युज्जिह्वोद्विजिह्वश्चसूर्यशत्रुश्चराक्षसः ॥ १३ ॥

षणजी राक्षसोंके वध करनेमें अभिलाषी वानरलोगोंको पुकारकर समयानुसार यह वचन बोले ॥७॥ हे वानरो ! यह इन्द्रजीतही रावणका एकमात्र आश्रय है इसके साथमें जो सेनाहै वह भी थोडीसी ही है फिर भला इस समय तुम लोग निश्चित और चेष्टा रहित क्यों हो ?॥८॥इस पापी राक्षसके संग्राममें मारे जाने पर रावणके सिवाय मानो और सबही मार डाले गये॥९॥वीर प्रहस्त मारागया महाबलवान् निकुंभ कुंभकर्ण, कुम्भ, निशाचर धूम्राक्ष॥१०॥जम्बुमाली, महा माली, तीक्ष्णवेग अशनिप्रभ, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, राक्षस, वज्रदंष्ट्र ॥ ११ ॥ संह्रादविकट, अरिघ्न तपन, व मंद, प्रघास; प्रजंघ, जंघ ॥ १२ ॥ दुर्द्धर्ष, अग्निकेतु;

वीर्यवान् रश्मिकेतु, विद्युज्जिह्व, द्विजिह्व, राक्षस सूर्यशत्रु ॥ १३ ॥ अकंपन, सुपार्श्वराक्षस, चक्रमाली, कम्पन, सत्त्ववन्त, देवान्तक, नरान्तक ॥ १४ ॥ इत्यादि बलवान् राक्षसश्रेष्ठोंको मारकर तुम अपनी बाँहोंसे समुद्रको पार करचुके हो अब शीघ्रतासे इस गोपदके समान छोटे जलके पार तुम लोग होजाओ ॥ १५ ॥ हे वानरगण! बलदर्पित समस्त राक्षस मारे गये हैं तुम लोगोंको जीतनेके लिये केवल एक यही बचा हुआ है ॥ १६ ॥ चचाके स्थानमें होकर पुत्रके समान् इन्द्रजीतको मार डालना अकर्तव्य होनेपरभी हम श्रीरामचन्द्रजीके लिये घृणा त्यागकर अपने भतीजेका विनाश करेंगे ॥ १७ ॥ हे वानरश्रेष्ठगण ! हम स्वयंही इसके वध करनेका अभिलाष करते हैं परन्तु आंसुओंका जल दोनों नेत्रोंको रोकलेता है इसकारणमहाबाहु लक्ष्मणजी इसका वध करें ॥ १८ ॥ और तुम सब आगे बढकर अगल

अकंपनःसुपार्श्वश्चचक्रमालीचराक्षसः ॥ कंपनःसत्त्ववंतश्चदेवांतकनरांतकौ ॥ १४ ॥ एतान्निहत्यातिबलान्बहून्राक्षससत्तमान् ॥ बाहुभ्यांसागरं तीर्त्वालंघ्यतांगोष्पदंलघु ॥ १५ ॥ एतावदेवशेषंवोजेतव्यमितिवानराः ॥ हताःसर्वेसमागम्यराक्षसाबलदर्पिताः ॥ १६ ॥ अयुक्तंनिधनंकर्तुंपु त्रस्यजनितुर्मम ॥ घृणामपास्यरामार्थेनिहन्यांभ्रातुरात्मजम् ॥ १७ ॥ हंतुकामस्यमेबाष्पंचक्षुश्चैवनिरुध्यति ॥ तमेवैषमहाबाहुर्लक्ष्मणःशम यिष्यति ॥ १८ ॥ वानराघ्नतसंभूयभृत्यानस्यसमीपगान् ॥ इतितेनातियशसाराक्षसेनाभिचोदिताः ॥ १९ ॥ वानरेंद्राजहृषिरेलांगूलानिच विव्यधुः ॥ ततस्तुकपिशार्दूलाःक्ष्वेडंतश्चपुनःपुनः ॥ मुमुचुर्विविधान्नादान्मेघान्दृष्ट्वेवबर्हिणः ॥ २० ॥ जांबवानपितैःसर्वैःसयूथ्यैरभिसंवृतः ॥ तेऽश्मभिस्ताडयामासुर्नखैर्दंतैश्चराक्षसान् ॥ २१ ॥ निघ्नंतमृक्षाधिपतिंराक्षसास्तेमहाबलाः ॥ परिभत्स्यभयंत्यक्त्वातमनेकविधायुधाः ॥ २२ ॥ शरैःपरशुभिस्तीक्ष्णैःपट्टिशैर्यष्टितोमरैः ॥ जांबवंतंमृधेजघ्नुर्निघ्नंतंराक्षसींचमूम् ॥ २३ ॥

बगलकी रक्षा करनेवाले इसके अनुचर लोगोंको मारडालो इसप्रकार जब अतितेजस्वी विभीषणजीने कहा तो ॥ १९ ॥ वानरलोग अत्यन्त संतुष्ट हुए और हर्षित अंतःकरणसे अपनी२ पूँछ उठायकर कंपायमान करनेलगे इसके उपरान्त मेघकोदेखकर मोरगण जिसप्रकारसे शब्द करते हैं, वानरशार्दूलगण भी वैसेही सिंहनाद और अनेक प्रकारके शब्द करने लगे ॥ २० ॥ इसी अवसरमें ऋक्षराज जाम्बवान्‌जी अपने दलके साथ आगे बढे और उनकी सेनाने नख, दांत चलाय और पत्थरोंकी वर्षासे राक्षसोंको पीडित करना आरंभ किया ॥ २१ ॥ राक्षसोंने रीछोंके हाथसे अपना नाश होता देखकर अनेक प्रकारके अस्त्रशस्त्र धारण करके निर्भय हो रीछोंको आच्छादित करलिया ॥ २२ ॥ बाण, तीक्ष्ण फरसे, पटा, यष्टि, तोमर आदि आयुधोंसे राक्षसोंकी सेनाको मारते हुए जाम्बवान्‌जीको

समरमें सब राक्षस मारने लगे ॥ २३ ॥ पूर्वकालमें देवता और असुरलोगोंकाजिसप्रकार बडाभारी सिंहनादयुक्त घोर युद्ध हुआ था उसी प्रकारसे रोषपूर्ण वानर और राक्षसोंका घोर युद्ध होने लगा ॥२४॥ इसी अवसरमें महावीर हनुमान्‌जीनेभी पीठपर सवार हुए लक्ष्मणजीको विश्राम करनेके लिये भूमिमें उतार क्रोधमें भर पर्वतका शृङ्ग उखाड ॥ २५ ॥ दुरासदू सहस्रों राक्षस लोगोंका बडा भारी नाश करने लगे, इसी समयमें बली इन्द्रजीत अपने चचासे घोर युद्ध करके ॥ २६ ॥ फिर परवीरघाती लक्ष्मणजीके सामने धाया, तब फिर उन वीरश्रेष्ठ नर और राक्षसका युद्ध आरंभ हुआ ॥ २७ ॥ महाबली वेगवान् दोनों वीर बाणोंके समूह वर्षण करते परस्पर एक दूसरेको चोट पहुँचाने लगे और दोनोंही क्षण२में बाणजालसे अन्तर्धान होने लगे ॥ २८ ॥ चन्द्रमा और सूर्य जिस प्रकार मेघमें छिप जाते हैं लक्ष्मण इन्द्रजीत भी वैसेही कभी बाणोंके जालसेढकजाते और कभी प्रकाशित होने लगते यह दोनों वीर इस प्रकार लघुहस्ततासे

ससंप्रहारस्तुमुलःसंजज्ञेकपिरक्षसाम् ॥ देवासुराणांक्रुद्धानांयथाभीमोमहास्वनः॥२४॥ हनूमानपिसंक्रुद्धःसानुमुत्पाटचपर्वतात् ॥ सलक्ष्मणं स्वयंपृष्ठादवरोप्यमहामनाः ॥ २५ ॥ रक्षसांकदनंचक्रेदुरासादःसहस्रशः ॥ सदत्त्वातुमुलंयुद्धंपितृव्यस्येंद्रजिद्बली ॥ २६ ॥ लक्ष्मणंपर वीरघ्नःपुनरेवाभ्यधावत ॥ तौप्रयुद्धौतदावीरौमृधेलक्ष्मणराक्षसौ॥२७॥ शरौघानभिवर्षंतौजघ्नतुस्तौपरस्परम्॥ अभीक्ष्णमंतर्दधतुःशरजालै महाबलौ ॥ २८ ॥ चंद्रादित्याविवोष्णांतेयथामेघैस्तरस्विनौ ॥ नह्यादानंनसंधानंधनुषोवापरिग्रहः ॥२९॥ नविप्रमोक्षोबाणानांनविकर्षोन विग्रहः ॥ नमुष्टिप्रतिसंधानंनलक्ष्यप्रतिपादनम्॥३०॥ अदृश्यततयोस्तत्रयुध्यतोःपाणिलाघवात्॥चापवेगप्रयुक्तैश्चबाणजालैःसमंततः॥३१॥ अंतरिक्षेऽभिसंपन्नेनरूपाणिचकाशिरे॥ लक्ष्मणोरावणिंप्राप्यरावणिश्चापिलक्ष्मणम् ॥३२॥ अव्यवस्थाभवत्युग्राताभ्यामन्योन्यविग्रहे ॥ ताभ्यामुभाभ्यांतरसाप्रसृष्टैर्विशिखैःशितैः ॥३३॥

कार्य करते कि, धनुषका ग्रहण करना और बाण चढाना और छोडना किसीने नहीं देख पाया ॥ २९ ॥ उस कालमें कब धनु ग्रहण करते हैं व कब हाथ बदलते हैं कबबाण लेते हैं कब तीरको खैंचते हैं कब मुट्ठी बांधते हैं और कब निशाना मारते हैं यह किसीने भी नहीं जाना ॥ ३० ॥ इस प्रकार अन्तर्धान रहकर अपनी२हस्त लाघवता दिखाते जब दोनोंजने युद्ध करने लगे, तब उनके धनुषके वेगसे छूटेहुए बाणजालसे॥ ३१॥आकाशमंडल व्याप्त होगया कि,जिससे सबही अदृश्य होगये कोई किसीको नहीं देखता था;केवल लक्ष्मणजी रावणके पुत्र मेघनादको और मेघनाद लक्ष्मणजीको ताककर बाण मारते थे ॥३२॥ उस समय उस युद्धमें यह अपनी ओरका है,यह पराई ओरका है,इस बातके जाननेमें घोर असुभीताहुआ, वह दोनों वीर अत्यन्त वेगसे तीखे बाण

चलाय रहे थे ॥३३॥ उनसे आकाशभी अंतर्हित हो घोर अन्धकारसे ढक गया, उस दोनोंके छोडे तीखे सैकडों हजारों बाणोंसे ॥ ३४ ॥ सब दिशाविदिशा बाणोंसे व्याप्त हो गई सब दिगन्तर भयंकर अन्धकारसे पूर्ण होगये ॥३५॥ इस ओर सूर्यनारायणके छिपजानेसे और भी महाअँधियारा छाया और वहांपर रुधिरकी हजारों बडी बडी नदियें बहने लगीं ॥३६॥ मांसके खानेवाले क्रूर पक्षी गण सबकहीं घोर शब्दसे चिल्लाते थे, वहांपर वायु नहीं चलती थी अग्निभी नहीं जलती थी॥३७॥ यह देखकर महर्षिगण और चारणलोगोंके सहित सिद्धगणभी "सब लोगोंका मंगलहो" यह वचन कहते २ उस स्थानमें आये॥३८॥इसके उपरांत सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजीने चारबाणोंसे राक्षसोंमें सिंह इन्द्रजीतके सुवर्णभूषित काले रंगके चारों घोडोंको वींधडाला ॥३९॥ उसके पीछे भालेसे जो

निरंतरमिवाकाशंबभूवतमसावृतम्॥तैःपतद्भिश्चबहुभिस्तयोःशरशितैःशितैः॥३४॥ दिशश्चप्रदिशश्चैवबभूवुःशरसंकुलाः ॥ तमसापिहितंसर्वमासीत्प्रतिभयंमहत् ॥३५॥ अस्तंगतेसहस्रांशौसंवृतेतमसाचवै ॥ रुधिरौघामहानद्यःप्रावर्ततसहस्रशः ॥ ३६ ॥ क्रव्यादादारुणावाग्भिश्चिक्षिपुर्भीमनिःस्वनान् ॥ नतदानींववौवायुर्नचजज्वालपावकः॥३७॥स्वस्त्यस्तुलोकेभ्यइतिजजल्पुस्तेमहर्षयः॥ संपेतुश्चात्रसंतप्तागंधर्वाःसहचारणैः ॥३८॥अथराक्षससिंहस्यकृष्णान्कनकभूषणान्॥ शरैश्चतुर्भिःसौमित्रिर्विव्याधचतुरोहयान्॥३९॥ ततोपरेणभल्लेनपीतेननिशितेनच ॥ संपूर्णायतमुक्तेनसुपत्रेणसुवर्चसा ॥४०॥ महेंद्राशनिकल्पेनसूतस्यविचरिष्यतः ॥ सतेनबाणाशनिनातलशब्दानुनादिना ॥ ४१ ॥ लाघवाद्राघवःश्रीमाञ्शिरःकायादपाहरत् ॥ सयंतरिमहातेजाहतेमंदोदरीसुतः ॥४२॥ स्वयंसारथ्यमकरोत्पुनश्चधनुरस्पृशत् ॥ तदद्भुतमभूत्तत्रसारथ्यंपश्यतांयुधि ॥४३॥ हयेषुव्यग्रहस्तंतंविव्याधनिशितैःशरैः ॥ धनुष्यथपुनर्व्यग्रंहयेषुमुमुचेशरान् ॥४४॥

कि पीत और पैना था और अतिजोरसे खैंचकर चलाये हुए और सुवर्णसमप्रकाशित ॥४०॥ इन्द्रके वज्रके समान बहुतसे बाणोंसे इधर उधर रथ दौडते हुए सारथिका उसी अशनिके समान बाणसे जोकि, प्रत्यंचाके शब्दसे नाद कर रहा था॥४१॥ अति जल्दबाजीके साथ श्रीमान् लक्ष्मणजीने उसका शिर काटडाला सारथिके मारेजाने पर महातेजस्वी मन्दोदरीका पुत्र इन्द्रजीत ॥४२॥ स्वयंसारथिका कार्य करने लगा और धनुषकोभी चलाता हुआ। उस कालमें जिन्होंनेभी वह उसका सारथीपनका कार्य देखा, वह सबही उसको अद्भुत माननेलगे ॥४३॥ जब मेघनाद सारथिका कार्य करता तब लक्ष्मणजी उसके ऊपर बाणोंकी वर्षा

करते और जब वह रथी होकर युद्ध करता; तब उसके घोडोंके ऊपर बाणोंकी झडी लगा दीजाती थी ॥४४॥ उसी समयमें महावीर लक्ष्मणजी इन्द्रजीतको निर्भय विचरण करते देखकर शीघ्रतासे बाणोंको छोड उसको वींधने लगे ॥४५॥ सारथिको इस प्रकारसे मरा हुआ देख और आपभी इस प्रकार बाणोंसे पीडित हो रावणका पुत्र मेघनाद मनमें मलीन हुआ और उसका युद्ध उत्साह जाता रहा ॥४६॥ वानरोंके यूथपति उस निशाचरोंको पीडित और उदास देख परम प्रसन्न हो लक्ष्मणजीकी बहुतही प्रशंसा करने लगे ॥४७॥ इसके उपरान्त प्रमाथी, रभस शरभ गन्धमादन; यह चार वानरोंके यूथप राक्षसवीर मेघनादका वीरपन न सह कर उसके साथ युद्ध करने लगे ॥४८॥ यह सब वानर बडे वेगसे अपने संपूर्ण बलसे ऊपरको कूद उसके चारों घोडोंपर अतिभयंकर विक्रम करके कूदे ॥४९॥

छिन्नेषुतेषुबाणौघैर्विचरंतमभीतवत् ॥ अर्दयामाससमरेसौमित्रिःशीघ्रकृत्तमः ॥ ४५ ॥ निहतंसारथिंदृष्ट्वासमरेरावणात्मजः ॥ प्रजहौसमरोद्धर्षंविषण्णःसबभूवह ॥४६॥ विषण्णवदनंदृष्ट्वाराक्षसंहरियूथपाः ॥ ततःपरमसंहृष्टालक्ष्मणंचाभ्यपूजयन् ॥४७॥ ततःप्रमाथीरभसःशरभोगंधमादनः ॥ अमृष्यमाणाश्चत्वारश्चक्रुर्वेगंहरीश्वराः ॥४८॥ तेचास्यहयमुख्येषुतूर्णमुत्पत्यवानराः ॥ सतुर्षुसुमहावीर्यानिपेतुर्भीमविक्रमाः ॥ ४९ ॥ तेषामधिष्ठितानांतैर्वानरैःपर्वतोपमैः ॥ मुखेभ्योरुधिरंव्यक्तंहयानांसमवर्तत ॥ ५० ॥ तेहयामथिताभग्नाव्यसवोधरणिंगताः ॥ तेनिहत्यहयांस्तस्यप्रमथ्यचमहारथम् ॥५१॥ पुनरुत्पत्यवेगेनतस्थुर्लक्ष्मणपार्श्वतः ॥ ५२ ॥ सहताश्वादवप्लुत्यरथान्मथितसारथिः ॥ शरवर्षेणसौमित्रिमभ्यधावतरावणिः ॥ ५३ ॥ ततोमहेंद्रप्रतिमःसलक्ष्मणःपदातिनंतंनिहतैर्हयोत्तमैः ॥ सृजंतमाजौनिशिताञ्छरोत्तमान्भृशंतदाबाणगतैर्व्यदारयत् ॥ ५४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे नवतितमः सर्गः ॥ ९० ॥

उन पर्वताकार वानरेंद्रोंके घोडोंकी पीठपर कूदनेसे चारो घोडोंके मुखसे रुधिरकी धारा बहने लगी ॥५०॥ वह घोडे मथित होगये उनकी देह टूटगई और वह मृतक होकर पृथ्वीपर गिरपडे जब उसके घोडेभी मरगये और बडा भारी रथभी टूट गया ॥५१॥ तब यह सब वानर अति वेगसे कूदकर लक्ष्मणजीके पार्श्वमें आगये ॥५२॥ जब घोडे मरगये और सारथीभी मारागया तब इन्द्रजीत रथसे उतरकर बाणोंकी वर्षा करता हुआ सुमित्रानन्दन लक्ष्मणजीकी ओर धाया ॥५३॥ यह देखकर सुरराज इन्द्रके समान लक्ष्मणजी उस तीखे बाण चलाते हुए घोडे मरजानेसे पैदलहुए इन्द्रजीतको घोर बाणोंके समूहसे युद्धमें वारंवार विदारित करने

लगे ॥५४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०युद्धकांडे भाषायां नवतितमः सर्गः ॥९०॥ चारों रथके घोडोंके मरजाने और भूमिमें पैदल चलना होनेके कारण निशाचर इन्द्रजीत अत्यन्त क्रोधित हुआ और तेजसे प्रज्वलित हो उठा ॥१॥ दो श्रेष्ठ हाथियोंके समान वह दो धनुषधारी श्रेष्ठ विजयकी अभिलाषा करके परस्पर एक दूसरेको बाण मारने लगे ॥२॥ वानर और निशाचरगणभी अपने २ स्वामीको न छोडकरके उनके निकटही टिके रहे और परस्पर एक दूसरेको मारडालने लगे ॥३॥ इसके उपरान्त रावणका पुत्र मेघनाद अतिहर्षसे राक्षसोंको हर्षित करता और समझाता हुआ उनकी बडाई करता हुआ कहने लगा ॥४॥ हे राक्षसश्रेष्ठगण ! सब दिशाओंमें घोरतर अंधकार छाजानेके कारण रणभूमिमें अपना पराया कुछभी नहीं जाना जाता है ॥५॥ इसलिये वानरगणोंको मोहित करनेके

सहताश्वोमहातेजाभूमौतिष्ठन्निशाचरः ॥ इंद्रजित्परमक्रुद्धःसंप्रजज्वालतेजसा ॥ १ ॥ तौधन्विनौजिघांसंतावन्योन्यमिषुभिर्भृशम् ॥ विजयेनाभिनिष्क्रांतौवनेगजवृषाविव ॥ २ ॥ निबर्हयंतश्चान्योन्यंतेराक्षसवनौकसः ॥ भर्तारंनजहुर्युद्धेसंपतंतस्ततस्ततः ॥ ३ ॥ ततस्तान्राक्षसान्सर्वान्हर्षयन्रावणात्मजः ॥ स्तुन्वानोहर्षमाणश्चइदंवचनमब्रवीत् ॥४॥ तमसाबहुलेनेमाःसंसक्ताःसर्वतोदिशः ॥ नेहविज्ञायतेस्वोवापरोवाराक्षसोत्तमाः ॥ ५ ॥ धृष्टंभवंतोयुध्यंतुहरीणांमोहनायवै ॥ अहंतुरथमास्थायआगमिष्यामिसंयुगे ॥ ६ ॥ तथाभवंतःकुर्वंतुयथेमेहिवनौकसः ॥ नयुध्येयुर्महात्मानःप्रविष्टेनगरंमयि ॥७॥ इत्युक्त्वारावणसुतोवंचयित्वावनौकसः ॥ प्रविवेशपुरींलंकांरथहेतोरमित्रहा ॥ ८ ॥ सरथंभूषयित्वाथरुचिरंहेमभूषितम् ॥ प्रासासिशरसंयुक्तंयुक्तंपरमवाजिभिः ॥ ९ ॥ अधिष्ठितंहयज्ञेनसूतेनाप्तोपदेशिना ॥ आरुरोहमहातेजारावणिःसमितिंजयः ॥१०॥ सराक्षसगणैर्मुख्यैर्वृतोमंदोदरीसुतः ॥ निर्ययौनगराद्वीरःकृतांतबलचोदितः ॥ ११ ॥

लिये तुम निर्भय युद्ध करो और इतनेमें मैं भी रथपर सवार होकर आया ॥ ६ ॥ तुम लोग वानर लोगोंके साथ ऐसा घोर युद्ध करो कि; हमारे नगरमें प्रवेश करनेके समय यह लोग युद्ध करके जिससे हमारी गति नहीं रोक सकें ॥ ७ ॥ यह कहकर रावणका पुत्र शत्रुनाशी मेघनाद वानरोंको धोखा दे रथके हेतु लंकापुरीमें प्रवेश करता हुआ ॥ ८ ॥ बहुतही शीघ्र उसका हेमभूषित रथ सजकर तैयार होगया, मेघनादने उसमें दिव्य घोडे जुतवाये और उस रथमें प्रास, खड्ग व अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्रभी रक्खे ॥ ९ ॥ इसके उपरांत हितका उपदेश देनेवाला अश्व निपुण एक योग्य सारथीको सारथीके कर्ममें नियत करके महातेजस्वी मेघनाद रथपर सवार हुआ ॥१०॥ मन्दोदरीका पुत्र मेघनाद प्रधान राक्षसोंसे वेष्टित और कालकी फांसीसे बँधकर अति शीघ्रतापूर्वक अपनी

पुरीसे निकला ॥११॥ रावणका पुत्र मेघनाद, इस प्रकार अत्यन्त तेजमान हो लंका नगरीमें निकल जिस स्थानमें विभीषण और लक्ष्मणजी विराजमान थे उसी ओर गमन करता हुआ ॥ १२ ॥ मेघनादको रथपर सवार हुआ देखकर रानी सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजी, राक्षस विभीषणजी और महावीर वानरगण ॥१३॥ उस बुद्धिमान् कार्यकी शीघ्रता विचार अत्यन्त विस्मित हुए इस ओर मेघनाद क्रोधित होकर रणमें वानरयूथपोंको ॥ १४ ॥ बाणोंसे मारकर एकही बारमें सैकडों हजारोंको गिराने लगा, समरविजयी मेघनाद अपने धनुषको मंडलाकार कर ॥ १५ ॥ वानरोंको बडी जल्दबाजीके साथ मारने लगा । वह वानरगण भयंकर विक्रमकारी नाराचोंसे वध्यमान हो ॥ १६ ॥ लक्ष्मणजीकी शरणमें प्राप्त हुए, जिसप्रकार प्रजापतिकी शरणमें प्रजा जाती है. उसके उपरान्त समरमें

सोऽभिनिष्क्रम्यनगरादिंद्रजित्परमौजसा ॥ अभ्ययाज्जवनैरश्वैर्लक्ष्मणंसविभीषणम् ॥१२॥ ततोरथस्थमालोक्यसौमित्रीरावणात्मजम् ॥ वानराश्चमहावीर्याराक्षसश्चविभीषणः॥१३॥विस्मयंपरमंजग्मुर्लाघवात्तस्यधीमतः॥रावणिश्चापिसंक्रुद्धोरणेवानरयूथपान्॥१४॥ पातयामास बाणौघैःशतशोऽथसहस्रशः॥समंडलीकृतधनूरावणिःसमितिंजयः॥१५॥हरीनभ्याहनत्क्रुद्धःपरंलाघवमास्थितः॥तेवध्यमानाहरयोनाराचैर्भीम विक्रमैः॥१६॥सौमित्रिंशरणंप्राप्ताःप्रजापतिमिवप्रजाः॥ततःसमरकोपेनज्वलितोरघुनंदनः॥ चिच्छेदकार्मुकंतस्यदर्शयन्पाणिलाघवम्॥१७॥ सोऽन्यत्कार्मुकमादायसज्जंचक्रेत्वरन्निव ॥तदप्यस्यत्रिभिर्बाणैर्लक्ष्मणोनिरकृंतत ॥१८॥ अथैनंछिन्नधन्वानमाशीविषविषोपमैः ॥ विव्याधो रसिसौमित्रीरावणिंपंचभिःशरैः॥१९॥तेतस्यकायंनिर्भिद्यमहाकार्मुकनिःसृताः॥निपेतुर्धरणींबाणारक्ताइवमहोरगाः॥२०॥सच्छिन्नधन्वारुधिरं वमन्वक्रेणरावणिः॥जग्राहकार्मुकश्रेष्ठंदृढज्यंबलवत्तरम्॥२१॥सलक्ष्मणंसमुद्दिश्यपरंलाघवमास्थितः॥ववर्षशरवर्षाणिवर्षाणीवपुरंदरः॥२२॥

क्रोधसे प्रज्वलित हो रघुनंदन लक्ष्मणजीने अपने हस्तकी शीघ्रता दिखाय मेघनादका धनुष काट डाला ॥ १७ ॥ इसके उपरान्त जिसने शीघ्रतापूर्वक दूसरा धनुष ग्रहण किया और उसपर रोदा चढाताही था कि, लक्ष्मणजीने तीन बाणोंसे उसको भी खंड २ कर डाला ॥ १८ ॥ इस प्रकारसे जब रावणके पुत्र मेघनादका धनुष कटगया तब सुमित्रानन्दन लक्ष्मणजीने विषधर सर्पके समान पांच बाण उसकी छातीमें मारे ॥१९॥ लक्ष्मणजीके बडे भारी धनुषसे छूटे हुए इन सब बाणोंने उस निशाचरकी देहमें प्रवेश किया, और रुधिरसे भीगे लाल वर्णवाले सर्पोंके समान पृथ्वीपर गिर पडे ॥ २० ॥ जब धनुष कट गया और यह पांच बाण लगे तो मेघनादके मुखसे रुधिर निकलने लगा, और फिर उस बलवान्ने दृढ रोदेसे युक्त बडा प्रचंड श्रेष्ठ धनुष ग्रहण किया॥२१॥और जिस प्रकार

देवराज इन्द्रजी जल वर्षाते हैं वैसेही लक्ष्मणजीको ताककर अति लाघवतासे मेघनाद बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥२२॥ मेघनादकी छोडी हुई बाणोंकी वर्षा यद्यपि बडी कठिनतासे सहनेके योग्य थी परन्तु शत्रुदमनकारी लक्ष्मणजीने सरलतासे उस बाणवर्षाको रोकदिया ॥ २३ ॥ उस समय महातेजस्वी संभ्रान्त चित्त लक्ष्मणजीका मेघनादके बाण काटनेका यह वीरजनोंके योग्य कार्य देख सबही विस्मित हुए और उस कार्यको जहांतक संभव होसका सबने मनमें अद्भुत समझा ॥२४॥ उस संग्राममें सुमित्रानन्दन लक्ष्मणजीने अपनी शीघ्रता दिखाय क्रोधमें भर प्रत्येक राक्षसके तीन२बाण मारे और असंख्य बाणोंसे राक्षसनन्दन मेघनादको पीडित किया ॥ २५ ॥ रावणका पुत्र मेघनादभी इन बलवान् शत्रुकरके समरमें अतिघायल हो लक्ष्मणजीपर निरन्तर बाणोंकी वर्षा करने लगा

मुक्तमिंद्रजितातत्तुशरवर्षमरिंदमः ॥ अवारयदसंभ्रांतोलक्ष्मणःसुदुरासदम्॥२३॥संदर्शयामासतदारावणिंरघुनंदनः॥असंभ्रातोमहातेजास्तद द्भुतमिवाभवत्॥२४॥ ततस्तान्राक्षसान्सर्वांस्त्रिभिरंकैकमाहवे॥ अविध्यत्परमक्रुद्धःशीघ्रास्त्रंसंप्रदर्शयन्॥ राक्षसेंद्रस्तुतंचापिबाणौघैःसमताड यत् ॥ २५ ॥ सोऽतिविद्धोबलवताशत्रुणाशत्रुघातिना ॥ असक्तंप्रेषयामासलक्ष्मणायबहूञ्छरान् ॥ २६ ॥ तानप्राप्ताञ्छितैर्बाणैश्चिच्छेद परवीरहा ॥ सारथेरस्यचरणेरथिनोरथसत्तमः ॥ २७ ॥ शिरोजहारधर्मात्माभल्लेनानतपर्वणा ॥ असूतास्तेहयास्तत्ररथमूहूरविक्लवाः ॥ २८ ॥ मंडलान्यभिधावंतितदद्भुतमिवाभवत् ॥ अमर्षवशमापन्नःसौमित्रिर्दृढविक्रमः ॥ २९ ॥ प्रत्यविध्यद्धयांस्तस्यशरैर्विंत्रासयन्रणे अमर्षमाणस्तत्कर्मरावणस्यसुतोरणे ॥ ३० ॥ विव्याधदभिर्बाणैःसौमित्रिंरोमहर्षणम् ॥ तेतस्यवज्रप्रतिमाःशराःसर्पविषोपमाः ॥ विलयं जग्मुरागत्यकवचंकांचनप्रभम् ॥ ३१ ॥ अभेद्यकवचंमत्वालक्ष्मणंरावणात्मजः ॥ ललाटेलक्ष्मणंबाणैःसुपुंखैस्त्रिभिरिंद्रजित ॥३२॥

॥ २६ ॥ परन्तु परवीरघाती धर्मात्मा रघुश्रेष्ठ लक्ष्णजीने उन समस्त बाणोंको अपने निकट आते २ अधबिचमेंही काटडाला ॥ २७ ॥ और उसके सारथिका शिर बडे भारी तीक्ष्ण भालेसे काटडाला,जब वह घोडे, सारथिसे हीन होगये तबभी विह्वल होकर ॥ २८ ॥ ऐसी मंडलाकार गतिसे रथको लेकर घूमनेलगे कि,वह घूमना अद्भुतके समान जानपडा,यह देखकर दृढविक्रमकारी लक्ष्मणजीरोषके वश हुए॥२९॥और सबको त्रास उपजाय मेघ नादके रथके घोडोंको बाण मारकर विद्ध किया,यह कर्म देख रावणका पुत्र मेघनाद रणमें क्रोध करता हुआ ॥३०॥ और दश बाणोंसे रोमहर्षणकारी सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजीको मारा, वह विषधर सर्पोंके समान वज्रतुल्य बाण लक्ष्मणजीके सुवर्णके समान प्रभावाले कवचपर गिरकर खंड२होगये ॥३१॥ तब रावणके पुत्र मेघनादने उनके कवचको

अभेद समझ उनके माथेमें तीन बाण मारे, जिनमें श्रेष्ठ फोंक लगी हुई थीं ॥३२॥ इसप्रकारसे अपने बाणोंके चलानेकी शीघ्रता क्रोधकर उसने प्रगट की उस शुभ माथेमें तीन बाणोंके गडनेसे रघुनंदन लक्ष्मणजी ॥ ३३ ॥ समरकी अभिलाषा किये रणमें तीन शृंगवाले पर्वतके समान शोभायमान हुए राक्षस इन्द्रजीत करके रणमें इस प्रकार आघात पाय ॥ ३४ ॥ लक्ष्मणजीने भी अतिशीघ्रतापूर्वक पांच बाण मेघनादके मारे, यह बाण इसप्रकारसे खैंचकर लक्षसे मारे गये कि, कुंडलशोभित इन्द्रजीतके मुखमेंही लगे ॥३५॥ इसप्रकारसे भयंकर विक्रमकारी महाधनुषधारी वीरश्रेष्ठ लक्ष्मणजी और इन्द्रजीत परस्पर एक दूसरेको बाणसे घायल करने लगे॥३६॥ उस कालमें इन दोनों वीरोंको देह रुधिरमें भीग जानेसे फूले हुए टेसूके दो वृक्षोंके समान शोभायमान होने लगे ॥३७॥ वह दोनोंही विजयकी अभिलाषा करके धनुषकी चतुरता दिखाय घोररूपी बाण छोड परस्परएक दूसरेके सर्व शरीरमें मार पीडा देने लगे॥३८॥ इसके उपरान्त रावणके पुत्र

अविध्यत्परमक्रुद्धःशीघ्रमस्त्रंप्रदर्शयन् ॥ तैःपृषत्कैर्ललाटस्थैःशुशुभेरघुनंदनः ॥३३॥ रणाग्रेसमरश्लाघीत्रिशृंगइवपर्वतः ॥ सतथाप्यर्दितोबाणैराक्षसेनतदामृधे ॥३४॥ तमाशुप्रतिविव्याधलक्ष्मणःपंचभिःशरैः ॥ विकृष्येंद्रजितोयुद्धेवदनेशुभकुंडले ॥ ३५ ॥ लक्ष्मणेंद्रजितौवीरौमहाबलशरासनौ ॥ अन्योन्यंजघ्नतुर्वीरौविशिखैर्भीमविक्रमौ ॥ ३६ ॥ ततःशोणितदिग्धांगौलक्ष्मणेंद्रजितावुभौ ॥ रणेतौरेजतुर्वीरौपुष्पिताविवकिंशुकौ ॥ ॥ ३७ ॥ तौपरस्परमभ्येत्यसर्वगात्रेषुधन्विनौ ॥ घोरैर्विव्यधतुर्बाणैःकृतभावावुभौजये ॥ ३८ ॥ ततःसमरकोपेनसंयुतोरावणात्मजः ॥ विभीषणंत्रिभिर्बाणैर्विव्याधवदनेशुभे ॥ ३९ ॥ अयोमुखैस्त्रिभिर्विद्ध्वाराक्षसेंद्रंविभीषणम् ॥ एकैकानभिविव्याधतान्सर्वान्हरियूथपान् ॥ ४० ॥ तस्मैदृढतरंक्रुद्धोजघानगदयाहयान् ॥ विभीषणोमहातेजारावणेःसुदुरात्मनः ॥४१॥ सहताश्वादवप्लुत्यरथान्मथितसारथिः ॥ अथशक्तिंमहातेजाःपितृव्यायमुमोचह ॥ ४२ ॥ तामापतंतींसंप्रेक्ष्यसुमित्रानंदवर्धनः ॥ चिच्छेदनिशितैर्बाणैर्दशधापातयद्भुवि ॥ ४३ ॥ तस्मैदृढधनुःक्रुद्धोहताश्वायविभिषणः ॥ वज्रस्पर्शसमान्पंचससर्जोरसिमार्गणान् ॥४४॥

मेघनादने क्रोधसे पूर्ण हो अत्यन्त तीक्ष्ण बाणोंसे विभीषणजीके शुभवदनको बींध डाला॥३९॥ लोहेकी गांसी लगी तीन बाणोंसे राक्षसोंमें इन्द्र विभीषणजीको बींध मेघनादने एक २ बाणसे समस्त वानर यूथपोंको बींध डाला ॥ ४० ॥ तब महातेजस्वी विभीषणजीने अत्यन्त क्रोधित होकर गदाके प्रहारसे दुरात्मा इन्द्रजीतके चारों घोडोंको मार डाला ॥ ४१ ॥ जब रावणके पुत्र मेघनादका सारथि मर गया और घोडे भी नाशको प्राप्त हुए, तब वह रथसे कूद एक शक्ति ग्रहण कर अपने चचा विभीषणपर चलाता हुआ ॥ ४२ ॥ परन्तु सुमित्राके आनंद बढानेवाले लक्ष्मणजीने उस शक्तिको गिरती हुई देखकर तीखे बाण चलाया उसके दश टुकडेकर दिये कि, जिसमें वह पृथ्वीपर गिर पडी ॥४३॥ धनुषधारियोंमेंश्रेष्ठ विभीषणजीनेभी उस अश्वविहीन मेघनादकी छातीको निशाना

बनाय वज्रके समान दारुण स्पर्शवाले पांच बाण चलाये ॥ ४४ ॥ वह निशानेको भेद करनेवाले सुवर्णके फोंक लगे समस्त बाण मेघनादकी देह फोड लाल वर्णवाले महा सर्पोंके समान अरुण रंगके होगये ॥४५॥ तब इन्द्रजीतने अपने चचा विभीषणजीके ऊपर महाक्रोध करके यमराजका दिया हुआ महाबलसे युक्त उत्तम बाण ग्रहण किया ॥ ४६ ॥ भीम पराक्रमकारी महातेजस्वी लक्ष्मणजीने रोषयुक्त हो इन्द्रजीत करके चढाया हुआ वह महाबाण देख एक और बाण उठाया॥४७॥यह बाण स्वप्नमें अमितात्मा कुबेरजीने लक्ष्मणजीको दिया था वह बाण जैसा दुर्जेय था वैसेही सुर असुर किसीके सहनेके योग्य नहींथा॥४८॥ उस कालमें इन दोनोंकी परिघाकार दोनों बांहों करके दोनों ओरसे खींचे जायकर दोनों धनुष दो क्रौञ्चपक्षियोंके समान शब्द करने लगे ॥ ४९ ॥ उन

तेतस्यकायंभित्त्वातुरुक्मपुंखानिमित्तगाः ॥ बभूवुर्लोहितादिग्धारक्ताइवमहोरगाः ॥४५॥ सपितृव्यस्यसंक्रुद्धइंद्रजिच्छरमाददे ॥ उत्तमंरक्षसांमध्येयमदत्तंमहाबलम् ॥४६॥ तंसमीक्ष्यमहातेजामहेषुंतेनसंधितम् ॥ लक्ष्मणोप्याददेबाणमन्यद्भीमपराक्रमः ॥४७॥ कुबेरेणस्वयंस्वप्ने यद्दत्तममितात्मना ॥ दुर्जयंदुर्विषह्यंचसेंद्रैरपिसुरासुरैः ॥४८॥ तयोस्तुधनुषीश्रेष्ठेबाहुभिःपरिघोपमैः ॥ विकृष्यमाणेबलवत्क्रौंचाविवचुकूजतुः ॥ ४९ ॥ ताभ्यांतुधनुषिश्रेष्ठेसंहितौसायकोत्तमौ ॥ विकृष्यमाणौवीराभ्यांभृशंजज्वलतुःश्रिया ॥ ५० ॥ तौभासयंतावाकाशंधनुर्भ्यां विशिखौच्युतौ ॥ मुखेनमुखमाहत्यसन्निपेततुरोजसा॥५१॥ सन्निपातस्तयोश्चासीच्छरयोर्घोररूपयोः ॥ सधूमविस्फुलिंगश्चतज्जोऽग्निर्दारुणोऽभवत् ॥५२॥ तौमहाग्रहसंकाशावन्योन्यंसन्निपत्यच ॥ संग्रामेशतधायातौमेदिन्यांचैवपेततुः॥५३॥ शरौप्रतिहतौदृष्ट्वातावुभौरणमूर्धनि ॥ व्रीडितौजातरोषौचलक्ष्मणेंद्रजितौतदा ॥५४॥ ससंरब्धस्तुसौमित्रिरस्त्रंवारुणमाददे ॥ रौद्रंमहेंद्रजिद्युद्धेव्यसृजद्युद्धविष्ठितः ॥ ५५ ॥

दोनों वीरोंकरके श्रेष्ठ धनुषोंपर चढे हुए वह उत्तम तेजसे प्रदीप्त दोनों बाण खैंचे जाकर प्रकाशमान होने लगे ॥ ५० ॥ जैसेही कि, वे दोनों बाण खेंचकर छोड़े गये वैसेही वह आकाशको प्रकाशमान करते हुए अतिवेगसे चले, और परस्पर एक दूसरेके मुखमें टक्कर मार वेगमें भरे रहनेके कारण गिर पडे ॥५१॥ तब उन घोर रूपवान उन दोनों बाणोंके परस्पर घिसनेसे उससे चिनगारियें और धुंआयुक्त दारुण अग्नि निकलने लगी॥५२॥परस्पर टकराये हुए दो महाग्रहोंके समान वह बाणयुगल संग्राममें सैकडों टुकडे होकर पृथ्वीमें गिर पडे ॥५३॥ दोनोंको संग्राममें परस्पर टक्कर खानेसे खंड २ देखकर लक्ष्मण और इन्द्रजीत दोनोंही लज्जित और क्रोधित हुए ॥ ५४ ॥ इसके उपरान्त सुमित्राकुमार लक्ष्मणजीने क्रोधमें भरकर वरुणास्त्र लिया और समरप्रिय मेघनादने रुद्रास्त्र उठाया और

दोनोंने एक दूसरेके ऊपर चलाया ॥५५॥ तब मेघनादके चलाये हुए रौद्रास्त्रको लक्ष्मणजीके छोडे हुए वरुणास्त्रने नष्ट कर दिया, तब समर विजयी महातेजस्वी इन्द्रजीतने मानो सब लोकोंका नाश करनेहीके लिये आग्नेय बाण ग्रहण किया ॥ ५६ ॥ परन्तु वीर लक्ष्मणजीने सौर्यास्त्र चलाय उसको निवारण करडाला, अस्त्रको निवारित हुआ देख मेघनाद क्रोधसे मूर्च्छित हो गया ॥५७॥ और उसने शत्रुओंका विदारण करनेवाला तीक्ष्ण एक आसुरीबाण ग्रहण किया, जैसेही उसने वह बाण ग्रहण किया वैसेही उसके धनुषसे प्रभायुक्त कूद, मुद्गर ॥५८॥ शूल, भुशुण्डी, गदा, खड्ग, फरसे इत्यादि निकलने लगे। उस अस्त्रको समरमें देख लक्ष्मणजीने अत्यन्त घोर और दारुण ॥५९॥ किसी प्राणीसे निवारण न होनेवाला सर्व शस्त्रोंको विदारण करनेवाला द्युतिमान् माहेश्वरास्त्र चलाय उस बाणको निवारण कर दिया

तेनतद्विहतंशस्त्रंवारुणंपरमाद्भुतम् ॥ ततःक्रुद्धोमहातेजाइंद्रजित्समितिंजयः ॥ आग्नेयंसंदधेदीप्तंसलोकंसंक्षिपन्निव ॥५६॥ सौर्येणास्त्रेणतंवीरोलक्ष्मणःपर्यवारयत् ॥ अस्त्रंनिवारितंदृष्ट्वारावणिःक्रोधमूर्च्छितः ॥५७॥ आददेनिशितंबाणमासुरंशत्रुदारुणम् ॥ तस्माच्चापाद्विनिष्पेतुर्भास्वराःकूटमुद्गराः ॥५८॥ शूलानिचभुशुंड्यश्चगदाःखड्गाःपरश्वधाः ॥ तद्दृष्ट्वालक्ष्मणःसंख्येघोरमस्त्रंसुदारुणम् ॥५९॥ अवार्यंसर्वभूतानांसर्वशस्त्रविदारणम् ॥ माहेश्वरेणद्युतिमांस्तदस्त्रंप्रत्यवारयत् ॥ ६० ॥ तयोःसमभवद्युद्धमद्भुतंरोमहर्षणम् ॥ गगनस्थानिभूतानिलक्ष्मणंपर्यवारयन् ॥ ६१ ॥ भैरवाभिरुतेभीमैर्युद्धेवानररक्षसाम् ॥ भूतैर्बहुभिराकाशंविस्मितैरावृतंबभौ ॥६२॥ ऋषयःपितरोदेवागंधर्वगरुडोरगाः ॥ शतक्रतुंपुरस्कृत्यररक्षुर्लक्ष्मणंरणे ॥६३॥ अथान्यंमार्गणश्रेष्ठंसंदधेराघवानुजः ॥ हुताशनसमस्पर्शंरावणात्मजदारणम् ॥६४ ॥ सुपत्रमनुवृत्तांगंसुपर्वाणसुसंस्थितम् ॥ सुवर्णविकृतंवीरःशरीरांतकरंशरम् ॥ ६५ ॥

॥६०॥ इस प्रकार परस्पर रोमहर्षणकारी तुमुलसंग्राम होने लगा तब आकाशमें टिके हुए सब प्राणी लक्ष्मणजीकी रक्षा करने लगे ॥६१॥ जब इस प्रकार भयंकर शब्दयुक्त वानर और राक्षसोंका महाघोर संग्राम हुआ, तब इस युद्धके देखनेको बहुतसे प्राणी स्वर्गसे आये कि, जिनके आनेसे आकाशमंडल शोभायमान होने लगा ॥६२॥ गरुण, समस्त पितृगण और ऋषि, देवगण, गंधर्वगण और उरगगण, देवराज इन्द्रजीको आगे करके रणमें लक्ष्मणजीकी सबही रक्षा करने लगे ॥ ६३ ॥ इसके उपरान्त वीरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई लक्ष्मणजीने अग्निके समान स्पर्शवाला एक श्रेष्ठ धनुष मेघनादका संहार करनेको धारण किया॥ ६४ ॥ जिसके पूर्व ओरके पंख अति शोभायमान थे, जो बडाभयंकर था प्राणका नाश करनेवाला था, क्रमसे गोलाकार था, जिसमें सुवर्ण मढा था ॥ ६५ ॥

किसीसे भी निवारण होनेके अयोग्य भयंकर सहनेके अयोग्य राक्षसोंको भय पहुंचनेवाला विषधर सर्पके समान विषैला देवतालोग भी जिसकी पूजा किया करते हैं ॥ ६६ ॥ जिससे महातेजस्वी हरिवाहन; वीर्यवान् इन्द्रजीने पूर्वकालके समय देवासुर संग्राममें वानरोंके दलको दलन किया था ॥ ६७ ॥ संग्राममें अपराजित नरश्रेष्ठ लक्ष्मणजीने अपने श्रेष्ठ धनुषपर वह श्रेष्ठ ऐन्द्रास्त्र चढाया और बोले ॥ ६८ ॥ लक्ष्मीवान् महात्मा लक्ष्मणजी अपने अर्थको साधन करनेवाले यह वचन बोले कि "दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजी जो धर्मात्मा व सत्यवादी होवें और उनका पौरुष यदि प्रतिपक्षी वीररहित हो तो हे बाण! तुम इस रावणके पुत्रका विनाश करो" ॥६९॥ लक्ष्मणजीने यह कहकर कानतक खेंच वह बाण समरमें इन्द्रजीतके ऊपर छोडदिया ॥ ७० ॥ बाण त्याग करनेके समय परवीर

दुरावारंदुर्विषमंराक्षसानांभयावहम् ॥ आशीविषविषप्रख्यंदेवसंघैःसमर्चितम् ॥ ६६ ॥ येनशक्रोमहातेजादानवानजयत्प्रभुः ॥ पुरादैवासुरे युद्धेवीर्यवान्हरिवाहनः ॥६७॥ अथैंद्रमस्त्रंसौमित्रिःसंयुगेष्वपराजितम् ॥ शरश्रेष्ठंधनुःश्रेष्ठेविकर्षन्निदमब्रवीत्॥६८॥ लक्ष्मीवाँल्लक्ष्मणोवाक्यमर्थसाधकमात्मनः ॥ धर्मात्मासत्यसंधश्चरामोदाशरथिर्यदि ॥ पौरुषेचाप्रतिद्वंद्वस्तदैनंजहिरावणिम्॥६९॥ इत्युक्त्वाबाणमाकर्णविकृष्यतमजिह्मगम् ॥ लक्ष्मणःसमरेवीरःससर्जैंद्रजितंप्रति ॥ ७० ॥ ऐंद्रास्त्रेणसमायुज्यलक्ष्मणःपरवीरहा ॥ ७१ ॥ तच्छिरःसशिरस्त्राणंश्रीमज्ज्वलितकुंडलम् ॥ प्रमथ्यैंद्रजितःकायात्पातयामासभूतले ॥७२॥ तद्राक्षसतनूजस्यभिन्नस्कंधंशिरोमहत् ॥ तपनीयनिभंभूमौददृशेरुधिरोक्षितम् ॥ ७३ ॥ हतःसनिपपाताथधरण्यांरावणात्मजः ॥ कवचीसशिरस्त्राणोविप्रविद्धशरासनः ॥७४॥ चुक्रुशुस्तेततःसर्वेवानराःसविभीषणाः ॥ हृष्यतेनिहतेतस्मिन्देवावृत्रवधेयथा ॥७५॥

घाती लक्ष्मणजीने उस अस्त्रको ऐन्द्रास्त्रसे भी संयोजित किया ॥ ७१ ॥ उस बाणको चलाकर लक्ष्मणजीने कुण्डल युगलसे सजे प्रकाशमान कुण्डी आदि शिरस्त्राण सहित उसकी शोभा युक्त मस्तकको काट शरीरसे अलग कर पृथ्वीपर गिरा दिया॥७२॥ उस कालमें राक्षसराजनंदन मेघनादका वह अलग हुआ धड और रुधिर निकलता हुआ बडाभारी मस्तक गिरकर तेजसे प्रदीप्त होनेके समान दृष्टि आनेलगा ॥ ७३ ॥ इस प्रकारसे कवच, कुण्डी आदि शिरस्त्राण और शरासन युक्त रावणका पुत्र इन्द्रजीत नाशको प्राप्त होकर पृथ्वीपर गिरपडा ॥ ७४ ॥ जिस प्रकार देवता लोग वृत्रासुरके वधसे आनंदित हुएथे, वैसेही इन्द्रजीतके मारे जानेपर विभीषणप्रमुख वानरगण आनंद करने लगे ॥ ७५ ॥

और आकाशमें महात्मा देव, दानव, गन्धर्व, महर्षि और अप्सरागणोंका "जय जय" शब्द हो उठा ॥ ७६ ॥ इस प्रकार इन्द्रजीतके मारेजानेपर राक्षसोंकी बडी भारी सेना विजयी वानरोंसे मरनेके निकट पहुँचकर चारों ओरको भागने लगी॥७७॥वह राक्षसोंकी सेना वानरगणोंसे मार खाय कुछ भी प्रतिकार न करसकी; और अस्त्र शस्त्र छोड संज्ञारहित हो वेगसे लंकाकी ओरको दौडी ॥ ७८ ॥ असंख्य निशाचर भयके मारे पटा; फरशा इत्यादि अपने २ आयुध डालकर जिसका जिस ओरको अभिलाषा हुआ वह उसी ओरको भागा ॥ ७९ ॥ वानरगणोंसे मर्दित हो कोई लंकामें प्रवेश करता हुआ कोई समुद्रके जलमें गिर पडा, और कोई भयभीत हो पर्वतपर चढकर आश्रय ग्रहण करता हुआ ॥ ८० ॥ अधिक क्या कहें उस कालमें इन्द्रजीतके मृतक होजानेको देख

अथांतरिक्षेभूतानामृषीणांचमहात्मनाम्॥ जज्ञेऽथजयसन्नादोगंधर्वाप्सरसामपि॥७६॥ पतितंसमभिज्ञायराक्षसीसामहाचमूः ॥ वध्यमानादिशोभेजेहरिभिर्जितकाशिभिः॥७७॥वानरैर्वध्यमानास्तेशस्त्राण्युत्सृज्यराक्षसाः॥लंकामभिमुखाःसम्भ्रष्टसंज्ञाःप्रधाविताः॥७८॥ दुद्रुवुर्बहुधाभीताराक्षसाःशतशोदिशः॥त्यक्त्वाप्रहरणान्सर्वेपट्टिशासिपरश्वधान्॥७९॥ केचिल्लंकांपरित्रस्ताःप्रविष्टावानरार्दिताः ॥ समुद्रेपतिताःकेचित्केचित्पर्वतमाश्रिताः ॥८०॥ हतमिंद्रजितंदृष्ट्वाशयानंचरणक्षितौ ॥ राक्षसानांसहस्रेषुनकश्चित्प्रत्यदृश्यत ॥ ८१ ॥ यथास्तंगतआदित्येनावतिष्ठंतिरश्मयः ॥ तथातस्मिन्निपतितेराक्षसास्तेगतादिशः ॥८२॥ शांतरश्मिरिवादित्योनिर्वाणइवपावकः ॥ बभूवसमहाबाहुर्व्यपास्तगतजीवितः ॥८३॥ प्रशांतपीडाबहुलोविनष्टारिःप्रहर्षवान् ॥ बभूवलोकःपतितेराक्षसेंद्रसुतेतदा ॥८४॥ हर्षंचशक्रोभगवान्सहसर्वैर्महर्षिभिः ॥ जगामनिहतेतस्मिन्राक्षसेपापकर्मणि ॥ ॥ ८५ ॥ आकाशेचापिदेवानांशुश्रुवेदुंदुभिस्वनः ॥ नृत्यद्भिरप्सरोभिश्चगंधर्वैश्चमहात्मभिः ॥ ८६ ॥

और उसको पृथ्वीपर पडा निहार सहस्र २ राक्षसोंमेंसे किसीने रणभूमिकी ओर एकबार निहारा भी नहीं ॥ ८१ ॥ जिसप्रकार सूर्यभगवान्के छिप जानेपर उनकी किरणें भी उनके साथही साथ चली जाती हैं,वैसेही इन्द्रजीतके मारेजाने पर निशाचरगणभी दशों दिशाओंमें छिप गये ॥८२॥ उस कालमें ऐन्द्रास्त्रसे जीवन रहित वह महावीर इन्द्रजीत बुझी हुई अग्निके समान और किरणरहित सूर्यके समान ज्ञात होने लगा ॥८३॥ उसके मरनेपर सबको बडीभारी शांति होगई, इस शत्रुके मारे जानेपर संसार हर्षित हुआ,और सबलोकपतिभी रावणकेपुत्र मेघनादके मारेजानेसे हर्षित हुए ॥८४॥ और महर्षियोंके साथ देवराज इन्द्रजी भी परम प्रसन्नता प्राप्त करते हुए जब कि,वह पापकर्म करनेवाला राक्षस मारा गया॥८५॥ तब आकाशमंडलमें श्रेष्ठ आशयवाले देवताओंको नगाडोंकी

बाजनेकी ध्वनि होनेलगी और अप्सराओंका व महात्मा गन्धर्वोंका नाच होनेलगा ॥ ८६ ॥ देवता लोग फूलोंकी वर्षा करने लगे यह कर्म बडा अद्भुतसा हुआ, पृथ्वीपरकी उडती हुई धूल उस क्रूर कर्मचारी राक्षसके मरतेही शांत होगई ॥ ८७ ॥ जल निर्मल होगया; आकाशभी स्वच्छ होगया देवता; दानव गण अत्यन्त हर्षित हुए यह देवतादिक सम्पूर्ण संसारके भयदायक उस राक्षसके मरने पर वहां आये ॥ ८८ ॥ व देवता दानव, गंधर्व एकत्र हो संतोष पाय सब कहने लगे "अबसे ब्राह्मणगण निरुपद्रव और पापरहित हो सुखपूर्वक विचरण किया करें" ॥ ८९ ॥ इसके उपरान्त वानरयूथपतिगण इस अनुपम बल वाले राक्षस श्रेष्ठ मेघनादको मृतक देखकर हर्षित अंतःकरणसे लक्ष्मणजीकी बडाई करनेलगे ॥ ९० ॥ विभीषण, हनुमान् और ऋक्षयूथपति जाम्बवान्जी

ववर्षुःपुष्पवर्षाणितदद्भुतमिवाभवत् ॥ प्रशशामहतेतस्मिन्राक्षसेक्रूरकर्मणि ॥८७॥ शुद्धाआपोनभश्चैवजहृषुर्देवदानवाः ॥ आजग्मुःपतितेतस्मिन्सर्वलोकभयावहे ॥८८॥ ऊचुश्चसहितास्तुष्टादेवगंधर्वदानवाः ॥ विज्वराःशांतकलुषाब्राह्मणाविचरंत्विति ॥८९॥ ततोऽभ्यनंदन्संहृष्टाः समरेहरियूथपाः ॥ तमप्रतिबलंदृष्ट्वाहतंनैर्ऋतपुंगवम् ॥९०॥ विभीषणोहनूमांश्चजांबवांश्चर्क्षयूथपः ॥ विजयेनाभिनंदंतस्तुष्टुवुश्चापिलक्ष्मणम् ॥९१॥ क्ष्वेडंतश्चप्लुवंतश्चगर्जन्तश्चप्लवंगमाः ॥ लब्धलक्षारघुसुतंपरिवार्योपतस्थिरे ॥९२॥ लांगूलानिप्रविध्यंतःस्फोटयंतश्चवानराः ॥ लक्ष्मणोजयतीत्येवंवाक्यंविश्रावयंस्तदा ॥९३॥ अन्योन्यंचसमाश्लिष्यहरयोहृष्टमानसाः ॥ चक्रुरुच्चावचगुणाराघवाश्रयसत्कथाः ॥९४॥ तदसुकरमथाभिवीक्ष्यहृष्टाःप्रियसुहृदोयुधिलक्ष्मणस्यकर्म ॥ परममुपलभन्मनःप्रहर्षंविनिहतमिंद्ररिपुंनिशम्यदेवाः ॥९५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च० सा० युद्धकांडे एकनवतितमः सर्गः ॥९१॥ रुधिरक्लिन्नगात्रस्तुलक्ष्मणःशुभलक्षणः ॥ बभूवहृष्टस्तंहत्वाशत्रुंजेतारमाहवे ॥१॥

"जयहो" ऐसा कह वंदनाकर लक्ष्मणजीकी बहुत प्रशंसा करते हुए ॥९१॥ यह सुअवसर पायकर वानरगण किलकिलाने लगे नादकरने लगे गर्जने लगे और लक्ष्मणजीके चारोंओर एकत्र होकर खडे होगये ॥९२॥ उनमेंसे कुछेक वानर मारे आनंदके अपनी पूंछको कंपायमान करने लगे, और कोई २ अपनी पूंछको पटककर ताल देने लगे; और लक्ष्मणजीकी सदा "जयहो" ऐसा वचन सबको सुनाने लगे ॥ ९३ ॥ चौपाई—हर्षित ह्वै भेंटहिं सब वानर । गावहिं लषण चरित गुण आगर ॥ ९४ ॥ दोहा—हितू लषणके देवगण; निहत देख मघवारि ॥ भये मुदित रण बीच यह, दुष्कर कर्म निहारि ॥ ९५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकनवतितमः सर्गः ॥ ९१ ॥ जिसने पहले देवराज इन्द्रजीकोभी जीतलिया था, रुधिरसे शरीर भिगोय

इसके उपरांत लक्ष्मणजी वीर्यवान् हनुमान् व जाम्बवान् व और दूसरे सर्व
शुभलक्षणयुक्त लक्ष्मणजी उसी इन्द्रजीतका वध करके परमप्रसन्न हुए ॥ १ ॥ वानरगणोंके सहित ॥ २ ॥ विभीषण और हनुमान्जीसे भेंटकर जहां सुग्रीव और श्रीरामचन्द्रजी विराजमान थे वहां आय पहुँच गये ॥ ३ ॥ लक्ष्मणजी वहां पहुँच कर श्रीरामचन्द्रजीकी प्रदक्षिणा की और प्रणाम करके अपने भ्राताके समीप बैठगये, जैसे इन्द्रजीके समीपवामनजी बैठते हैं॥४॥वीर विभीषणजी मानो इन्द्रजीतके घोरवधकी वार्ता पुकारते २ आये और महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके निकट उसको निवेदन किया ॥५॥ विभीषणजीने हर्षित अन्तःकरणसे श्रीरामचन्द्रजीके समीप आकर कहा कि "महाबलवान् लक्ष्मणजी करके रावणके पुत्र इन्द्रजीतका मस्तक काट डाला गया"॥६॥ महावीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीके हाथसे मेघनादका मारा जाना सुन अत्यन्त आनन्द प्राप्तकरते हुए लक्ष्मणजीसे उस समयबोले ॥७॥ लक्ष्मण तुम्हें धन्य है ! तुम्हारा दुष्कर कर्म देखकर हम परमप्रसन्न

ततःसजांबवंतंचहनूमंतंचवीर्यवान् ॥ सन्निपत्यमहातेजास्तांश्चसर्वान्वनौकसः ॥ २ ॥ आजगामततःशीघ्रंयत्रसुग्रीवराघवौ ॥ विभीषणमवष्टभ्यहनूमंतंचलक्ष्मणः ॥ ३ ॥ ततोराममभिक्रम्यसौमित्रिरभिवाद्यच ॥ तस्थौभ्रातृसमीपस्थःशक्रस्येंद्रानुजोयथा ॥ ४ ॥ निष्टनन्निवचागत्यराघवायमहात्मने ॥ आचचक्षेतदावीरोघोरमिंद्रजितोवधम् ॥ ५ ॥ रावणेस्तुशिरश्छिन्नंलक्ष्मणेनमहात्मना ॥ न्यवेदयतरामायतदाहृष्टोविभीषणः ॥ ६ ॥ श्रुत्वैवतुमहावीर्योलक्ष्मणेनेंद्रजिद्वधम् ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेवाक्यंचेदमुवाचह ॥ ७ ॥ साधुलक्ष्मणतुष्टोऽस्मिकर्मचासुकरंकृतम् ॥ रावणेर्हिविनाशेनजितमित्युपधारय ॥ ८ ॥ सतंशिरस्युपाघ्रायलक्ष्मणंकीर्तिवर्धनम् ॥ लज्जमानंबलात्स्नेहादंकमारोप्यवीर्यवान् ॥ ९ ॥ उपवेश्यतमुत्संगेपरिष्वज्यावपीडितम् ॥ भ्रातरंलक्ष्मणंस्निग्धंपुनःपुनरुदैक्षत ॥१०॥ शल्यसंपीडितंशस्तंनिःश्वसंतंतुलक्ष्मणम् ॥ रामस्तुदुःखसंतप्तंतंतुनिःश्वासपीडितम् ॥११॥ मूर्ध्निचैनमुपाघ्रायभूयःसंस्पृश्यचत्वरन् ॥ उवाचलक्ष्मणंवाक्यमाश्वास्यपुरुषर्षभः ॥१२॥ कृतंपरमकल्याणंकर्मदुष्करकर्मणा ॥ अद्यमन्येहतेपुत्रेरावणंनिहतंयुधि ॥ १३ ॥

हुए हैं क्योंकि,जब रावणका पुत्र मारा गया तब हमारी जय होनेमें कुछभी संदेहनहीं है ॥८॥ श्रीरामचन्द्रजीने यह वचन कहकर कीर्तिवर्द्धन भ्राता लक्ष्मणजीका शिर सूंघ लिया; यद्यपि लक्ष्मणजी लजाये जाते थे परन्तु वीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजीने बलपूर्वक उठा कर अपनी गोदमें बैठाया ॥९॥ और उनको भलीभांतिसे गाढ आलिंगन किया और हृदयसे लगाय वारंवार स्नेहकी दृष्टिसे निहारा॥१०॥और श्रीरामचन्द्रजीने देखा कि,लक्ष्मणजीका सब शरीर छिन्न भिन्न होरहाहै और बाणोंकी गांसीके गडनेसे व्यथित हैं और वह युद्धके श्रमसे थक वारंवार लंबे२श्वास ले रहे हैं,और कष्टसे अत्यन्त संतापित हैं ॥११॥ पुरुषश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी वारंवार श्रीलक्ष्मणजीका मस्तक सूँघकर उनके सब अंगोंपर हाथ फेरने लगे और उनको धीरज बँधाते हुए यह वचनबोले॥१२॥सेनाके योग्य परमकल्याणकारी

कार्य आज तुमने किया है,क्योंकि जब रावणका पुत्र मारा गया;तब रावणतो जानो मरहीचुका ॥१३॥ दुरात्मा इन्द्रजीतके मृतक होनेसे अब हम अपनेको रणविजयी समझते हैं. हे लक्ष्मण ! बडे भाग्यकी बातहै कि,तुमने दुष्ट रावणका समरमें॥१४॥ दाहिना हाथ उस अवलंबके साथ काट लिया और विभीषणजी व हनुमान् इन दोनोंने भीसंग्राममें बडा भारी कर्म किया ॥ १५॥ जब कि,तीन दिन व तीन रात्रिमें यह शत्रु किसी प्रकारसे मार डाला गया, तब आज तुमने हमको शत्रुरहित कर दिया कारण कि, पुत्र मारा जाना सुन रावण ॥ १६ ॥ बडीभारी सेनाको साथ लेकर युद्ध करनेको आवेगा;पुत्रका मरना सुन बडी भारी सेनाको साथ ले॥ १७ ॥वह राक्षसराज पुत्रके वधसे संतप्त हो बडीभारी सेनाको साथले जैसेही यहां आवेगा,वैसेही हम उस दुर्जेयको मारडालेंगे

अद्याहंविजयीशत्रौहतेतस्मिन्दुरात्मनि ॥ रावणस्यनृशंसस्यदिष्ट्यावीरत्वयारणे ॥ १४ ॥ छिन्नोहिदक्षिणोबाहुःसहितस्यव्यपाश्रयः ॥ विभीषणहनूमद्भ्यांकृतंकर्ममहद्रणे ॥ १५ ॥ अहोरात्रैस्त्रिभिर्वीरःकथंचिद्विनिपातितः ॥ निरमित्रःकृतोऽस्म्यद्यनिर्यास्यतिहिरावणः ॥१६॥ बलव्यूहेनमहतानिर्यास्यतिहिरावणः ॥ बलव्यूहेनमहताश्रुत्वापुत्रंनिपातितम् ॥ १७ ॥ तंपुत्रवधसंतप्तंनिर्यांतंराक्षसाधिपम् ॥ बलेनावृत्यमह तानिहनिष्यामिदुर्जयम् ॥ १८ ॥ त्वयालक्ष्मणनाथेनसीताचपृथिवीचमे ॥ नदुष्प्रापहतेतस्मिन्शक्रजेतरिचाहवे ॥ १९ ॥ सतंभ्रातरमा श्वास्यपरिष्वज्यचराघवः ॥ रामःसुषेणंमुदितःसमाभाष्येदमब्रवीत् ॥ २० ॥ विशल्योऽयंमहाप्राज्ञःसौमित्रिर्मित्रवत्सलः ॥ यथाभवतिसु स्वस्थस्तथात्वंसमुदाचर ॥२१॥ विशल्यःक्रियतांक्षिप्रंसौमित्रिर्मित्रवत्सलः ॥ ऋक्षवानरसैन्यानांशूराणांद्रुमयोधिनाम् ॥ २२ ॥ येचाप्य न्येऽत्रयुध्यंतिसशल्याव्रणिनस्तथा ॥ तेऽपिसर्वेप्रयत्नेनक्रियंतांसुखिनस्तथा ॥ २३ ॥

॥१८॥ इन्द्रजीतके नाश हे करने वाले ! रणके बीचमें तुम्हारे सहायक रहते हमको सीता या वसुमती (पृथ्वी) का प्राप्त कर लेना कुछभी दुर्लभ न रहेगा ॥१९॥ श्रीरामचन्द्रजीने यह कह अपने भ्राता लक्ष्मणजीको धीरज बँधाया और उनको हृदयसे लगाय हर्षसहित सुषेणसे यह वचन बोले ॥२०॥ हे महाप्राज्ञ ! मित्रवत्सल सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजी जिससे शीघ्र घावरहित हो सावधान होजायँ इस प्रकारकी औषधि तुम दो ॥२१॥ मित्रवत्सल लक्ष्मणजीको जल्दीसे घावर हित कर महावीर रीछ और वानरोंकी सेना जो वृक्षोंको उठाकर युद्ध करती हैं॥२२॥ व इनके सिवाय और भी जो कोई युद्ध करतेहों और उनको बाणोंके

लगनेसे घाव हुए हों इन सबको तुम अतियत्न करके सुखी करदो ॥२३॥ जब महात्मा श्रीरामचन्द्रजीने वानरयूथप सुषेणको ऐसी आज्ञा दी तब लक्ष्मणजीको सुषेणने परम औषधिका नास दिया ॥२४॥ इस नासके सूंघतेही लक्ष्मणजीके अंगोंमें जो बाणोंकी गांसियें गडरही थीं. वह सब निकलगईं घाव भरआये; पीडा जाती रही और घावोंके चिह्नभी जाते रहे ॥ २५ ॥ इसके उपरांत सुषेणने श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञासे विभीषणको आदि ले सुहृद्वर्ग और वानरयूथपतिगणोंकी चिकित्सा की ॥२६॥ इसप्रकारसे रानी सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणजी क्षणभरमें सावधान, घावरहित, श्रमहीन और विगतज्वर होकर आनंदित हुए ॥२७॥ सुमित्रानंदन लक्ष्मणजीको रोगविहीन हो उठा हुआ निहार रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी वानरराज सुग्रीवजी और ऋक्षराज जाम्बवान् अपनी२सेनाके साथ सबही

एवमुक्तस्तुरामेणमहात्माहरियूथपः ॥ लक्ष्मणायददौनस्तःसुषेणःपरमौषधम् ॥ २४ ॥ सतस्यगंधमाघ्रायविशल्यःसमपद्यत ॥ तदानिर्वेदनश्चैवसंरूढप्राणएवच ॥ २५ ॥ विभीषणमुखानांचसुहृदांराघवाज्ञया ॥ सर्ववानरमुख्यानांचिकित्सामकरोत्तदा ॥ २६ ॥ ततःप्रकृतिमापन्नोहृतशल्योगतक्लमः ॥ सौमित्रिर्मुमुदेतत्रक्षणेनविगतज्वरः ॥ २७ ॥ तदैवरामःप्लवगाधिपस्तथाविभीषणश्चर्क्षपतिश्चवीर्यवान् ॥ अवेक्ष्यसौमित्रिमरोगमुत्थितंमुदाससैन्याःसुचिरंजहर्षिरे ॥ २८ ॥ अपूजयत्कर्मसलक्ष्मणस्यसुदुष्करंदाशरथिर्महात्मा ॥ बभूवहृष्टोयुधिवानरेंद्रोनिशम्यतंशक्रजितंनिपातितम् ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे द्विनवतितमः सर्गः ॥ ९२ ॥ ततः पौलस्त्यसचिवाःश्रुत्वाचेंद्रजितोवधम् ॥ आचचक्षुरवज्ञायदशग्रीवायसत्वराः ॥ १ ॥ युद्धेहतोमहाराजलक्ष्मणेनतवात्मजः ॥ विभीषणासहायेनमिषतांनोमहाद्युतिः ॥ २ ॥ शूरःशूरेणसंगम्यसंयुगेष्वपराजितः ॥ लक्ष्मणेनहतःशूरःपुत्रस्तेविबुधेंद्रजित् ॥ ३ ॥ गतःसपरमाँल्लोकाञ्शरैःसंतर्प्यलक्ष्मणम् सतंप्रतिभयंश्रुत्वावधंपुत्रस्यदारुणम् ॥ ४ ॥

परमप्रसन्नताको प्राप्त होते हुए ॥ २८ ॥ महात्मा दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीके उस कठिन कार्यकी बहुत बडाई करते हुए और इन्द्रजीतके मारे जानेसे वानरोंके स्वामी सुग्रीवजीने यथार्थ प्रसन्नता प्राप्त की ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां द्विनवतितमः सर्गः ॥ ९२ ॥ उधर मेघनादके वधका समाचार रावणके मंत्रियोंने राक्षसोंसे सुन और फिर रणभूमिमें जाय उसकी लोथ देख पुत्रके वधका समाचार न जाननेवाले रावणके समीप जाकर कहा॥१॥हे महाराज! हमने देखा कि, लक्ष्मणजीने विभीषणकी सहायतासे रणमें आपके उस तेजस्वी पुत्र इन्द्रजीतको मारडाला॥२॥हे राजन्! जो वीर रणभूमिमें कभी किसीसे पराजित नहीं हुआ; आपका वही शूरश्रेष्ठ देवतालोगोंको जीतनेवाला पुत्र लक्ष्मणजीसे मारडालागया ॥ ३ ॥ वह लक्ष्मणको

बाणोंसे तृप्तकर वीरलोकको चलागया, इसप्रकार अपने पुत्रका दारुण व भयंकर वध सुनकर ॥४॥ इन्द्रके जीतनेवालेको मरा सुन रावणको एक साथ बडीभारी मूर्छा आगई, उसके उपरान्त बडी देरके पीछे मूर्छा जागी तो राक्षसोंमें श्रेष्ठ राजा रावण ॥५॥ पुत्रशोकसे व्याकुल और विकलेन्द्रिय हो दीनभावसे विलाप कर कहने लगा; हा वत्स ! हा राक्षससेनापते ! हा महाबलवान् ! ॥ ६ ॥ तुम इन्द्रको भी पराजित करके आज किसप्रकार लक्ष्मणके हाथसे मारे गये ? हे पुत्र ! तुम तो क्रोधित होकर चाहतेतो बाणोंसे कालकोभी मारडालते ॥ ७ ॥ मंदराचलके श्रृंगोंकोभी तोड फोडदेते फिर लक्ष्मणकी तो युद्धमें बातही क्या थी, आज हम वैवस्वत यमराजको फिर बडाईके योग्य समझते हैं॥८॥ कि जिस करके महाबाहु तुम भी कालधर्मसे संयुक्त हुए तुम जिस मार्गके यात्री हुएहो

घोरमिंद्रजितःसंख्येकश्मलंप्राविशन्महत् ॥ उपलभ्यचिरात्संज्ञांराजाराक्षसपुंगवः ॥ ५ ॥ पुत्रशोकाकुलोदीनो विललापाकुलेंद्रियः ॥ हारा क्षसचमूमुख्यममवत्समहाबल ॥ ६ ॥ जित्वेंद्रंकथमद्यत्वंलक्ष्मणस्यवशंगतः ॥ ननुत्वमिषुभिःक्रुद्धोभिंद्याःकालांतकावपि ॥ ७ ॥ मंदरस्यापिश्रृंगाणिकिंपुनर्लक्ष्मणंयुधि ॥ अद्यवैवस्वतोराजाभूयोबहुमतोमम ॥८॥ येनाद्यत्वंमहाबाहोसंयुक्तःकालधर्मणा ॥ एषपंथाःसुयो धानांसर्वामरगणेष्वपि ॥ यःकृतेहन्यतेभर्तुः सपुमान्स्वर्गमृच्छति ॥ ९ ॥ अद्यदेवगणाःसर्वेलोकपालामहर्षयः ॥ हतमिंद्रजितंदृष्ट्वासुखंस्व प्स्यंतिनिर्भयाः ॥ १० ॥ अद्यलोकास्त्रयःकृत्स्नापृथिवीचसकानना ॥ एकेनेंद्रजिताहीनाशून्येवप्रतिभातिमे ॥ ११ ॥ अद्यनैर्ऋतकन्यानां श्रोष्याम्यंतःपुरेरवम् ॥ करेणुसंघस्ययथानिनादंगिरिगह्वरे ॥१२॥ यौवराज्यंचलंकांचरक्षांसिचपरंतप ॥ मातरंमांचभार्यांश्चक्वगतोऽसिविहा यनः ॥ १३ ॥ ममनामत्वयावीरगतस्ययमसादनम् ॥ प्रेतकार्याणिकार्याणिविपरीतेहिवर्तसे ॥ १४ ॥

वीरलोग और देवतालोग उसी मार्गके अभिलाषी हुआ करते हैं कारण कि, जो पुरुष स्वामीके लिये प्राण छोडता है वह निश्चयही स्वर्गको जाता है ॥९॥ हाय ! आज इन्द्रजीतको मृतक हुआ देखकर समस्त देवता महर्षि लोकपालगण भयरहित हो सुखकी नींद सोवेंगे ॥ १० ॥ हा ! एक इन्द्रजीतके न रहनेसे आज यह वनयुक्त पृथ्वी अथवा यह समस्त त्रिलोकी भी हमको सूनी जान पडती है ॥११॥ जिसप्रकार हथिनियें पर्वतकी कन्दरामें हाथियोंके मारेजानेपररोती हैं, वैसेही आज हमारे रनवासमें राक्षस लोगोंकी स्त्रियोंका रोना सुनपडेगा ॥१२॥ हे शत्रुदमनकारी ! तुम यौवराज्य, लंकापुरी, राक्षसकुल, पिता, माता और अपनी स्त्रीको त्याग करके कहाँ चले गये ? ॥१३॥ हा वीर ! कहां तो हमारे परलोकमें चले जानेपर तुम हमारा प्रेतकार्य करते कहां इसके विपरीत हमको ही तुम्हारा

प्रेतकार्य करना पडा ॥१४॥ हा पुत्र ! सुग्रीव, रामचन्द्र और लक्ष्मण जीवितरहते तुम हमारा कांटा विनाही निकाले कहां चले गये ? ॥ १५ ॥ राक्षसोंका राजा रावण इस प्रकारसे विलाप और संताप कर रहा था कि, इतनेमें उसके हृदयमें पुत्रके शोकसे भयंकर क्रोधरूपी अग्नि उदय हुई ॥ १६ ॥ जिस प्रकार ग्रीष्मकालमें किरणें अपने आपसे प्रदीप्त सूर्यके तेजको अधिक बढा देती हैं वैसेही पुत्रके वधसे उत्पन्न दारुण मनकी व्यथा उस स्वभावसेही कोपी रावणको और भी संतप्त करने लगी॥१७॥ जिस प्रकार वृत्रासुरके मुखसे अग्नि निकली थी वैसेही क्रोधके मारे जँभाईलेते हुए रावणके मुखसे धुवेंके सहित अग्नि निकलने लगी ॥१८॥ इसके उपरान्त पुत्रवधसे सन्तप्त शूरश्रेष्ठ रावणने शोकके वश हो बहुत देरतक चिन्ता करके जानकीजीके वध करनेका अभिलाष किया॥१९॥

सत्वंजीवतिसुग्रीवेलक्ष्मणेनचराघवे ॥ ममशल्यमनुद्धृत्यक्कगतोऽसिविहायनः ॥ १५ ॥ एवमादिविलापार्तंरावणंराक्षसाधिपम् ॥ आविवेशमहान्कोपःपुत्रव्यसनसंभवः ॥ १६ ॥ प्रकृत्याकोपनंह्येनंपुत्रस्यपुनराधयः ॥ दीप्तंसंदीपयामासुर्घर्मेऽर्कमिवरश्मयः ॥ १७ ॥ कोपाद्विजृंभमाणस्यवक्त्राद्व्यक्तमिवज्वलन् ॥ उत्पपातसधूमाग्निर्वृत्रस्यवदनादिव ॥ १८ ॥ सपुत्रवधसंतप्तःशूरःक्रोधवशंगतः ॥ समीक्ष्यरावणोबुद्ध्यावैदेह्यारोचयद्वधम् ॥ १९ ॥ तस्यप्रकृत्यारक्तेचरक्तेक्रोधाग्निनापिच ॥ रावणस्यमहाघोरेदीप्तेनेत्रेबभूवतुः ॥ २० ॥ घोरंप्रकृत्यारूपंतत्तस्यक्रोधाग्निमूर्च्छितम् ॥ बभूवरूपंक्रुद्धस्यरुद्रस्येवव्यवस्थितम् ॥ ॥ २१ ॥ तस्यक्रुद्धस्यनेत्राभ्यांप्रापतन्नश्रुबिंदवः ॥ दीपाभ्यामिवदीप्ताभ्यांसार्चिषःस्नेहबिंदवः ॥ २२ ॥ दंतान्विदशतस्तस्यश्रूयतेदशनस्वनः ॥ यंत्रस्याकृष्यमाणस्यमथ्नतोदानवैरिव ॥ २३ ॥ तमंतकमिवक्रुद्धंचराचरचिखादिषुम् ॥ वीक्षमाणंदिशःसर्वाराक्षसानोपचक्रमुः ॥ २४ ॥

उसके घोरतर स्वभावसेही लाल दोनोंनेत्र क्रोधकी ज्वालासे और दूनेलाल होगये और अधिक प्रदीप्तहो उठे॥२०॥एक तो रावणका रूप स्वभावसे ही घोर था उसपर क्रोधाग्निसे मूर्च्छित होवह लोक संहार करनेके लिये तैयार क्रोधित रुद्रके समान होगया॥२१॥जिस प्रकार जलते हुए दो दीपकोंसे अग्निकी शिखाके सहित तेलकी बूंदें गिरती हैं वैसेही उस क्रोधितरावणके दोनों नेत्रोंसे लाल२आंसुओंकी बूंदें गिरने लगीं ॥२२॥रावण क्रोधके मारे दांत रगडकर कटकटाने लगा, समुद्र मथनेके समय जब मन्दराचल सर्परूपी रस्सीसे खेंचा गया था; और उस खेंचनेसे जिस प्रकारका भयंकर शब्द उत्पन्न हुआ, था, रावणकेदांतोंका शब्द भी वैसेही हुआ ॥२३॥ उस कालमें उस सर्व लोक भयदाता वीरको कालान्तक यमराजके समान क्रोधित देखकर सबही चारों ओरको देखने लगे परन्तु

कोई भी उसके निकट नहीं जासका ॥२४॥ इसके उपरान्त राक्षसोंके स्वामीराजा रावणने अत्यन्त क्रोधित हो राक्षसलोगोंको संग्राममें पठानेका अभिलाष करके कहा ॥ २५ ॥ कि, हमने कई हजार वर्षतक बडी भारी तपस्या की है, और उसी अवकाशमें ब्रह्माजीको भी प्रसन्न किया है ॥ २६॥ और उस तपस्याका फलस्वरूप हमने उसके निकटसे ऐसा वर पाया है कि, देवता अथवा असुरगणसे हमको कभी भय पहुँचनेकी सम्भावना नहीं ॥ २७ ॥ पितामह ब्रह्माजीने सूर्यके समान प्रकाशमान जो कवच हमको दिया है, वह कवच वज्रसे भी उस समय नहीं टूटा जब कि देवता लोगोंसे और हमसे संग्राम हुआ था ॥ २८ ॥ हम वही कवच धारण करके रथपर सवार हो जब संग्राममें जायँगे तब सक्षात् इन्द्रके समान होनेपरभी आज कौन हमारे सामने हो सकेगा ? ॥ २९ ॥ जो बडा भारी धनुष बाण हमको देवता व दैत्योंके साथ लडते देख प्रसन्न होकर ब्रह्माजीने दिया है ॥ ३० ॥ हे राक्षसगण ! महासंग्राममें राम और

ततःपरमसंक्रुद्धोरामणोराक्षसाधिपः॥ अब्रवीद्रक्षसांमध्येसंस्तंभयिषुराहवे॥२५॥ मयावर्षसहस्राणिचरित्वापरमंतपः॥ तेषुतेष्ववकाशेषुस्वयंभूः परितोषितः॥२६॥ तस्यैवतपसोव्युष्ट्याप्रसादाच्चस्वयंभुवः॥ नासुरेभ्योनदेवेभ्योभयंममकदाचन॥२७॥ कवचंब्रह्मदत्तंमेयदादित्यसमप्रभम्॥ देवासुरविमर्देषुनच्छिन्नंवज्रमुष्टिभिः ॥२८॥ तेनमामद्यसंयुक्तंरथस्थमिहसंयुगे ॥ प्रतीयात्कोऽद्यमामाजौसाक्षाददपिपुरंदरः ॥२९॥ यत्तदाभि प्रसन्नेनसशरंकार्मुकंमहत्॥ देवासुरविमर्देषुममदत्तंस्वयंभुवा ॥३०॥ अद्यतूर्यशतैर्भीमंधनुरुत्थाप्यतांमम ॥ रामलक्ष्मणयोरेववधायपरमाहवे ॥ ३१ ॥ सपुत्रवधसंतप्तःक्रूरःक्रोधवशंगतः॥ समीक्ष्यरावणोबुद्ध्यासीतांहंतुंव्यवस्यत ॥ ३२ ॥ प्रत्यवेक्ष्यतुताम्राक्षःसुघोरोघोरदर्शनः ॥ दीनोदीनस्वरान्सर्वांस्तानुवाचनिशाचरान् ॥ ३३ ॥ माययाममवत्सेनवंचनार्थंवनौकसाम् ॥ किंचिदेवहतंतत्रसीतेयमितिदर्शितम् ॥ ३४॥ तदिदंतथ्यमेवाहंकरिष्येप्रियमात्मनः ॥ वैदेहींनाशयिष्यामिक्षत्रबंधुमनुव्रताम् ॥ इत्येवमुक्त्वासचिवान्खड्गमाशुपराशमृत् ॥ ३५ ॥

लक्ष्मणका वध करनेके लिये आज सैकडों हजारों तुरही आदि मंगल बाजोंको बजाते २ हमारे उस धनुषको तुम लोग उठा लाओ ॥ ३१ ॥ पुत्रके वधसे संतापित हुआ क्रूर रावण यह कह क्षणभरतक चिन्ताकर क्रोधके वशीभूत हो सीताजीके ही मारडालनेका अभिलाष प्रगट करता हुआ ॥ ३२ ॥ वह दीनदशायुक्त घोरदर्शन दुराशय रावणवीर क्रोधके मारे लाल २ नेत्रकर समस्त निशाचरगणोंसे कहने लगा ॥ ३३ ॥ वत्स इन्द्रजीतने मायाका आश्रय ग्रहणकर वानरोंको धोखा देकर किसी वस्तुपर प्रहारकर यह कह दिया था कि यह सीताका वध हुआ ॥ ३४ ॥ हमारे पुत्र मेघनादने जो कुछ झूंठ कहा था सो आज हम सत्य ही सत्य क्षत्रियोंमें नीच रामचन्द्रमेंही जी लगाये हुए जानकीको मारकर अपना हितसाधन करेंगे, मंत्रियोंसे ऐसा कह उसने अतिशीघ्रतासे अपने खड्ग पर हाथ

फेरा ॥ ३५ ॥ यह खड्ग विमल गगनके समान निर्मल था इसकी धार बडी तेजथी निमेषमात्रमें वेगसहित अपने भत्री और अपनी स्त्रियोंके साथ ॥ ३६ ॥
रावण पुत्रशोकके मारे व्याकुल व चेतनारहित हो खड्ग उठायकर सहसा वहाँको चला जहाँ जानकीजी थीं ॥३७॥ क्रोधमें भरे हुए रावणको जाता हुआ देखकर
राक्षस सिंहनाद करने लगे और परस्पर एक दूसरेको भेंटकर यह कहने लगे ॥ ३८ ॥ इन महाराजने जबकि क्रोधित होकर पहले चारों लोकपालोंको जीत
लिया था और दूसरे असंख्य शत्रुलोगोंका रणमें संहार किया था, तब आज इनका ऐसा रूप देखकर वह दोनों भाई राम लक्ष्मण निश्चय ही व्यथा पावेंगे ॥ ३९ ॥
त्रिलोकोके बीचमें कोई भी इनके समान विक्रमकारी या बलवान् नहीं है कारण कि, त्रिभुवनके समस्त रत्न यही हरण करके भोगते हैं ॥ ४० ॥ वह राक्षसगण आप

उद्धृत्यगुणसंपन्नंविमलांबरवर्चसम् ॥ निष्पपातसवेगेनसभार्यःसचिवैर्वृतः ॥३६॥ रावणःपुत्रशोकेनभृशमाकुलचेतनः ॥ संक्रुद्धःखड्गमादाय
सहसायत्रमैथिली ॥३७॥ व्रजंतंराक्षसंप्रेक्ष्यसिंहनादंविचुक्रुशुः ॥ ऊचुश्चान्योन्यमालिंग्यसंक्रुद्धंप्रेक्ष्यराक्षसम् ॥३८॥ अद्यैनंतावुभौदृष्ट्वाभ्रात
रौप्रव्यथिष्यतः ॥ लोकपालाहिचत्वारःक्रुद्धेनानेननिर्जिताः ॥ बहवःशत्रवश्चान्येसंयुगेष्वभिपातिताः ॥ ३९ ॥ त्रिषुलोकेषुरत्नानिभुंक्तेचाहृ
त्यरावणः ॥ विक्रमेचबलेचैवनास्त्यस्यसदृशोभुवि ॥४०॥ तेषांसंजल्पमानानामशोकवनिकांगताम् ॥ अभिदुद्राववैदेहींरावणःक्रोधमूर्च्छितः
॥४१॥ वार्यमाणःसुसंक्रुद्धःसुहृद्भिर्हितबुद्धिभिः ॥ अभ्यधावतसंक्रुद्धःखेग्रहोरोहिणीमिव ॥४२॥ मैथिलीरक्ष्यमाणातुराक्षसीभिरनिंदिता ॥
ददर्शराक्षसंक्रुद्धंनिस्त्रिंशवरधारिणम् ॥ ४३ ॥ तंनिशम्यसनिस्त्रिंशंव्यथिताजनकात्मजा ॥ निवार्यमाणंबहुशःसुहृद्भिरनिवर्तिनम् ॥ ४४ ॥
सीतादुःखसमाविष्टाविलपंतीदमब्रवीत् ॥ यथायंमामभिक्रुद्धःसमभिद्रवतिस्वयम् ॥ वधिष्यतिसनाथांमामनाथामिवदुर्मतिः ॥ ४५ ॥

समें इस प्रकारसे कहते २ जब अशोक वनमें आये तब रावण क्रोधसे मूर्च्छित हो जानकीजीकी ओर धाया ॥ ४१ ॥ यद्यपि जानकीजीपर झपटनेके समय हितकारी
मंत्रियोंने" यह कर्तव्य नहीं है,, ऐसा कहकर समझाया भी, परन्तु मंगल ग्रह जिसप्रकार आकाशमें रोहिणीकी ओर दौडता है, रावण भी वैसेही श्रीरामचन्द्रजीकीप्यारी
जानकीजीकी ओर दौडाही चलागया ॥ ४२ ॥ जानकीजी राक्षसियोंसे रक्षित थीं इन अनिंदिता जानकीजीने दूरसे देखा कि रावण क्रोधित हो खड्ग धारणकरके
उनके सामने झपटकर आरहा है ॥ ४३ ॥ सुहृद्लोगों करके वारंवार निवारण किये जानेपरभी न लौटे हुए खड्ग हाथमें लिये रावणको देखकर जानकी अत्यन्त
दुःखी हुई ॥ ४४ ॥ और अतिदुःखसे जानकीजी विलाप कर कहने लगीं कि; जब यह दुर्मति क्रोधमें भरकर हमारी ओर चला आता है; कि सनाथ होनेपर भी

आज हमको अनाथके समान वध करेगा ॥ ४५ ॥ यद्यपि हम अपने स्वामीमेंही चित्त लगाये हुए हैं, परन्तु इसने बारंवार हमसे "हमारी भार्या होवो" ऐसी प्रार्थना की, परन्तु हमने इसके वचनोंको नहीं माना॥४६॥तो जान पडता है कि हमने जो इसके वचनोंको अंगीकार नहीं किया इसी कारण यह निराश और क्रोधके वश हो निश्चय ही हमारा वध करनेके लिये तैयार हुआ है ॥ ४७ ॥ अथवा वह नरव्याघ्र दोनों भ्राता श्रीरामचन्द्रजीव लक्ष्मणजी हमारे लिये संग्राममें इस अनार्य करके आज मारडाले गये हैं ॥ ४८ ॥ कारण कि, असंख्य हर्षित निशाचरगणों का अपने किसी प्यारेके लिये द्वन्द मचाते बडा भारी भैरव सिंहनाद हमने सुना है ॥ ४९ ॥ हा ! हमें धिक्कार है हमारे लिये ही वह दोनों राजकुमार मारे गये, अथवा पुत्रशोकसे व्याकुल होनेके कारणश्रीराम चन्द्रजी व लक्ष्मणजीको न मार पायकर ॥ ५० ॥ यह रौद्रपाप राक्षस निश्चय हमारे ही मारनेको यहां आया है; हा ! हम ओछेस्वभाववालीने हनुमान्के

बहुशश्चोदयामासभर्तारंमामनुव्रताम् ॥ भार्याममभवस्वेतिप्रत्याख्यातोध्रुवंमया ॥४६॥ सोऽयंमामनुपस्थानेव्यक्तंनैराश्यमागतः ॥ क्रोधमोह समाविष्टोव्यक्तंमांहंतुमुद्यतः ॥४७॥ अथवातौनरव्याघ्रौभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ मन्निमित्तमनार्येणसमरेऽद्यनिपातितौ ॥४८॥ भैरवोहिमहान्नादोराक्षसानांश्रुतोमया ॥ बहूनामिहहृष्टानांतथाविक्रोशतांप्रियम् ॥४९॥ अहोधिङ्मन्निमित्तोऽयंविनाशोराजपुत्रयोः ॥ अथवापुत्रशोकेन अहत्वारामलक्ष्मणौ ॥५०॥ विधमिष्यतिमांरौद्रोराक्षसःपापनिश्चयः ॥ हनूमतस्तुतद्वाक्यंनकृतंक्षुद्रयामया ॥५१॥ यद्यहंतस्यपृष्ठेनतदायासम निर्जिता ॥ नाद्यैवमनुशोचेयंभर्तुरंकगतासती ॥५२॥ मन्येतुहृदयंतस्याःकौसल्यायाःफलिष्यति ॥ एकपुत्रायदापुत्रंविनष्टंश्रोष्यतेयुधि ॥ ५३ ॥ साहिजन्मचबाल्यंचयौवनंचमहात्मनः ॥ धर्मकार्याणिरूपंचरुदतीसंस्मरिष्यति ॥ ५४ ॥ निराशानिहतेपुत्रेदत्त्वाश्राद्धमचेतना ॥ अग्निमावेक्ष्यतेनूनमपोवापिप्रवेक्ष्यति ॥५५॥ धिगस्तुकुब्जामसतींमंथरांपापनिश्चयाम् ॥ यन्निमित्तमिमंशोकंकौसल्याप्रतिपत्स्यते ॥५६॥

वचनानुसार कार्य न किया ॥५१॥ हम यदि श्रीरामचन्द्रजीसे बिनाही जीते जाकर हनुमान्जीकी पीठपर चढकर चली जातीं तो स्वामीकी गोदमें रहकर आज हमको ऐसा शोक नहीं करना पडता॥ ५२ ॥ हे भगवन् ! एक पुत्रवाली कौशल्याजी जब इकलौते पुत्रको संग्राममें मृतक हुआ सुनेंगी तो निश्चय ही उनका हृदय फटजायगा ॥ ५३ ॥ वह रोदन करके उस समय पुत्रका बालपन युवा अवस्था और समस्त धर्म कार्योंको स्मरण करके आंसुओंके जलमें डूब जायँगी ॥ ५४ ॥ हमको निश्चय जान पडता है कि "पुत्र मृतक होगये" यह बात सुनकर वह कौशल्याजी निराश और ज्ञानहीन हो किसी प्रकारसे उनका श्राद्ध करके अग्निमें जल जायँगीअथवा जलमें कूद पडेंगी ॥ ५५ ॥ हाय ! जिसके लिये कौशल्याजीको ऐसा शोक प्राप्त हुआ उस असती और पापिनी कुबरी

मन्थराको धिक्कार है॥ ५६ ॥ चन्द्रमाके समान और ग्रहके वशमें पडी हुई रोहणीके समान श्रीजानकीजीको इस प्रकारसे विलाप करते देखकर ॥ ५७ ॥ इसी अवसरमें रावणका मंत्री शीलवान् शुद्धचरित्र बुद्धिशाली सुपार्श्व नामवाला दूसरे मंत्रियोंसे रोके जाकर भी राक्षसश्रेष्ठ रावणसे यह वचन बोला॥५८॥ हे दशग्रीव ! आप कुबेरजीके साक्षात् छोटे भाई होकर भी किस प्रकारसे धर्मको छोड क्रोधके वश होजानकीके वध करनेका अभिलाष करते हैं॥ ५९॥हेवीर राक्षसेश्वर ! यथाविधि व्रत अवलंबन करके वेदादिक विद्या पढकर और उसके अनुरूप अग्निहोत्रादि अपने कर्ममें अनुरागी रह करभी आपकिस लिये स्त्रीका वधकरनेको तैयार हुए हैं ॥६०॥हे महाराज ! आप सुन्दर रूपवाली जानकीको छोडकर हम लोगोंके साथ संग्राममें उन रामचन्द्रके ऊपर क्रोध प्रकाश कीजिये ॥६१॥

इत्येवंमैथिलींदृष्ट्वाविलपंतींतपस्विनीम् ॥ रोहिणीमिवचंद्रेणविनाग्रहवशंगताम् ॥ ५७ ॥ एतस्मिन्नंतरेतस्यअमात्यःशीलवाञ्छुचिः ॥ सुपार्श्वोनाममेधावीरावणंरक्षसांवरम् ॥ निवार्यमाणःसचिवैरिदंवचनमब्रवीत् ॥ ५८ ॥ कथंनामदशग्रीवसाक्षाद्वैश्रवणानुज ॥ हंतुमिच्छसिवैदेहीं क्रोधाद्धर्ममपास्यच ॥ ५९ ॥ वेदविद्याव्रतस्नातःस्वकर्मनिरतस्तथा ॥ स्त्रियःकस्माद्वधंवीरमन्यसेराक्षसेश्वर ॥ ६० ॥ मैथिलींरूपसंपन्नांप्रत्यवेक्षस्वपार्थिव ॥ तस्मिन्नेवसहास्माभिराहवेक्रोधमुत्सृज ॥ ६१ ॥ अभ्युत्थानंत्वमद्यैवकृष्णपक्षचतुर्दशीम् ॥ कृत्वानिर्याह्यमावास्यांविजयायबलैर्वृतः ॥ ६२ ॥ शूरोधीमान्रथीखड्गीरथप्रवरमास्थितः ॥ हत्वादाशरथिंभीमंभवान्प्राप्स्यतिमैथिलीम् ॥ ६३ ॥ सतद्दुरात्मासुहृदा निवेदितंवचःसुधर्म्यंप्रतिगृह्यरावणः ॥ गृहंजगामाथततश्चवीर्यवान्पुनःसभांचप्रययौसुहृद्वृतः ॥ ६४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च० सा० युद्धकांडे त्रिनवतितमः सर्गः ॥ ९३ ॥ सप्रविश्यसभांराजादीनःपरमदुखितः ॥ निषसादासनेमुख्येसिंहःक्रुद्धइवश्वसन् ॥ १ ॥ अब्रवीच्चसतान्सर्वान्बलमुख्यान्महाबलः ॥ रावणःप्रांजलिर्वाक्यंपुत्रव्यसनकर्शितः ॥ २ ॥

हे राक्षसराज ! आज कृष्णपक्षकी चतुर्दशी है, इस कारण आज युद्धकासामान करकेकल अमावास्याको सेनाको साथले विजयके लिये यात्रा कीजिये॥६२॥ हे राजन् ! आप शूर, बुद्धिमान् और महारथी हैं,इसलिये हम निश्चय कहते हैं कि, आप श्रेष्ठ रथपर सवार हो खड्गसे दशरथकुमार रामको संहारकर जनककुमारीको प्राप्त करेंगे॥६३॥ इसके उपरान्त दुरात्मा वीर्यवान् रावण अपने मंत्री सुपार्श्वके ऐसे धर्मयुक्त वचन सुनकर अपने गृहको लौटगया, और फिर सुहृद्लोगोंसे वेष्टित होकर सभागृहमें प्रवेश करता हुआ ॥६४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां त्रिनवतितमः सर्गः ॥ ९३ ॥ इसके उपरान्त राक्षसराज रावण क्रोधित सिंहके समान लम्बे २ श्वास ले दीन वदनसे अपने सिंहासनपर जाकर बैठगया ॥ १ ॥ पुत्रके शोकसे अतिदुर्बल और दुःखीहो रावण

बलवान् सब मुख्य २ राक्षसवीरोंसे बोला, जोकि, हाथ जोडे खडे हुए थे ॥ २ ॥ आज तुम सबही बचे हुए रथ; पदाति, हस्ति और समस्त अश्वोंके सहित संग्राम करनेके लिये जाओ ॥ ३ ॥ बादलोंके जल वर्षानेके समान आज तुम सब हर्षित अन्तःकरणसे संग्राममें बाणोंकी वर्षा करके केवल एक रामकोही वध करनेका यत्न करो ॥ ४ ॥ अथवा हमही तुम सबके साथ कल महासमरमें तीक्ष्ण बाणोंसे सबके सन्मुख रामचन्द्रका नाश कर डालेंगे ॥ ५ ॥ राक्षसगण रावणकी ऐसी आज्ञा पाय रथादि चतुरंगिनी सेनाको साथले शीघ्रही निकले॥६॥और वानरगणोंको ताककर शरीरका अंत करनेवाले परिघ; पटा, फरशे, बाण और खड्ग इत्यादि आयुध उठा कर चलाने लगे॥७॥वानरोंनेभी राक्षसोंके ऊपर वृक्ष और पर्वत चलाने आरंभ किये॥८॥इस प्रकार सूर्यभगवान्

सर्वेभवंतःसर्वेणहस्त्यश्वेनसमावृताः ॥ निर्यातरथसंघैश्चहस्त्यश्वैश्चोपशोभिताः ॥ ३ ॥ एकंरामंपरिक्षिप्यसमरेहंतुमर्हथ ॥ प्रहृष्टाःशरवर्षाणिप्रावृट्कालइवांबुदाः ॥ ४ ॥ अथवाहंशरैस्तीक्ष्णैर्भिन्नगात्रंमहाहवे ॥ भवद्भिःश्वोनिहंतास्मिरामंलोकस्यपश्यतः ॥ ५ ॥ इत्येतद्वाक्यमादायराक्षसेंद्रस्यराक्षसाः ॥ निर्ययुस्तेरथैःशीघ्रैर्नानानीकैश्चसंयुताः ॥ ६ ॥ परिघान्पट्टिशांश्चैवशरखड्गपरश्वधान् ॥ शरीरांतकरान्सर्वेचिक्षिपुर्वानरान्प्रति ॥ ७ ॥ वानराश्चद्रुमाञ्छैलान्राक्षसान्प्रतिचिक्षिपुः ॥ ८ ॥ ससंग्रामोमहाभीमःसूर्यस्योदयनंप्रति ॥ रक्षसांवानराणांचतुमुलःसमपद्यत ॥ ९ ॥ तेगदाभिश्चचित्राभिःप्रासैःखड्गैःपरश्वधैः ॥ अन्योन्यंसमरेजघ्नुस्तदावानरराक्षसाः ॥ १० ॥ एवंप्रवृत्तेसंग्रामेह्यद्भुतंसुमहद्रजः ॥ रक्षसांवानराणांचशांतंशोणितविस्रवैः ॥ ११ ॥ मातंगरथकूलाश्चशरमत्स्याध्वजद्रुमाः ॥ शरीरसंघाटवहाःप्रसस्रुःशोणितापगाः ॥ १२ ॥ ततस्तेवानराःसर्वेशोणितौघपरिप्लुताः ॥ ध्वजवर्मरथानश्वान्नानाप्रहरणानिच ॥ आप्लुत्याप्लुत्यसमरेवानरेंद्राबभंजिरे ॥१३॥ केशान्कर्णललाटंचनासिकाश्चप्लवंगमाः ॥ रक्षसांदशनैस्तीक्ष्णैर्नखैश्चापिव्यकर्तयन् ॥ १४ ॥

के उदय होतेही वानर और राक्षसगणोंका घोर कठोर भयंकर युद्ध आरंभ हुआ ॥ ९ ॥ उस कालमें वानर और राक्ष सगण विचित्र पटा, प्राश, फरसा, खड्ग इत्यादि आयुधोंसे परस्पर एक दूसरेको मारने लगे ॥ १० ॥ उस रणभूमिकी उडीहुई बडी भारी अद्भुत धूल वानर और राक्षसोंके शरीरोंसे बडाभारी रुधिरकी धारा निकलनेसे शान्त होगई ॥११॥ वहां जो रुधिरकी नदियें बहने लगीं उन नदियोंके रथही मानों किनारे थे, बाणही मच्छ थे ध्वजाही उसके किनारोंपरके वृक्षथे और इस नदीमें मृतकदेह काठके समान तैरते थे ॥ १२ ॥ इसके उपरान्त वानरगण राक्षसोंके प्रहारसे और लोहूलुहा न हो कूद कूदकर उनके ध्वज, चर्म, रथ, घोडे व सब अस्त्र शस्त्रोंको चूर्ण और तोडताडकर फेंकने लगे ॥ १३ ॥ और तीक्ष्ण नख और दांतोंसे काट २ कर

राक्षसोंके केश, कान माथा और नाक इत्यादि अंग काटने लगे ॥ १४ ॥ जिस प्रकार पक्षी फले हुए वृक्षकी ओर दौडते हैं वैसेही एक २ राक्षसके ऊपर सैकडों वानर दौडे ॥१५॥ यह देखकर पर्वताकार निशाचरगण भाले,खड्ग,फरशे और बडी२गदा उठाय२कर घोररूपवाले वानरोंको मारने लगे ॥१६॥ तब वह बडीभारी वानरोंकी सेना राक्षसोंसे मारखाय शरणके देनेवाले शरणागतवत्सल दशरथकुमार रामचन्द्रजीके शरणमें गई ॥१७॥ इसकेउपरान्त महातेजस्वी वीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजीने धनुष ग्रहण करकेराक्षसोंकी सेनामें पैठ बाणोंकी वर्षा करनी आरंभकी ॥१८॥ मेघ जिस प्रकार तपते हुए सूर्यभगवान्के निकट नहीं ठहर सकता, वैसे ही श्रीरामचन्द्रके बाणप्रहारसे राक्षसोंका शरीर जलनेके कारण वह श्रीरामचन्द्रजीके सन्मुख नहीं ठहर सके ॥१९॥ वह राक्षस युद्ध भूमिमें केवल श्रीरामचन्द्रजीका किया हुआ घोर कठिन कार्य देखने लगे॥२०॥जिसप्रकार शरीरमें लगनेसे वनकी पवनजानी जातीहै,वैसेही रघुनंनदश्रीरामचन्द्रजीभी

एकैकंराक्षसंसंख्येशतंवानरपुंगवाः ॥ अभ्यधावंतपतितंवृक्षंशकुनयोयथा ॥ १५ ॥ तदागदाभिर्गुर्वीभिःप्रासैःखङ्गैःपरश्वधैः ॥ निर्जघ्नुर्वानरान्घोरान्राक्षसाःपर्वतोपमाः ॥ १६ ॥ राक्षसैर्वध्यमानानांवानराणांमहाचमूः ॥ शरण्यंशरणंयातारामंदशरथात्मजम् ॥ १७ ॥ ततोरामोमहातेजाधनुरादायवीर्यवान् ॥ प्रविश्यराक्षसंसैन्यंशरवर्षंववर्षच ॥ १८ ॥ प्रविष्टंतुतदारामंमेघाःसूर्यमिवांबरे ॥ नाधिजग्मुर्महाघोरानिर्दहंतशराग्निना ॥ १९ ॥ कृतान्येवसुघोराणिरामेणरजनीचराः ॥ रणेरामस्यददृशुःकर्माण्यसुकराणिते ॥ २० ॥ चलयंतंमहासैन्यंविधमंतंमहारथान् ॥ ददृशुस्तेनवैरामंवातंवनगतंयथा ॥ २१ ॥ छिन्नंभिन्नंशरैर्दग्धंप्रभग्नंशस्त्रपीडितम् ॥ बलंरामेणददृशुर्नरामंशीघ्रकारिणम् ॥ २२ ॥ प्रहरंतंशरीरेषुनतेपश्यंतिराघवम् ॥ इंद्रियार्थेषुतिष्ठंतंभूतात्मानमिवप्रजाः ॥ २३ ॥ एषहंतिगजानीकमेषहंतिमहारथान् ॥ एषहंतिशरैस्तीक्ष्णैःपदातीन्वाजिभिःसह ॥ २४ ॥ इतितेराक्षसाःसर्वेरामस्यसदृशान्रणे ॥ अन्योन्यंकुपिताजघ्नुःसादृश्याद्राघवस्यतु ॥ २५ ॥

राक्षसोंकी सेनाको चलायमान और महारथी गणोंकोदलन करकेउनसे अनुमान किये जाने लगे परन्तु किसीने उनको देखा नहीं ॥२१॥ रघुनंदनश्रीरामचन्द्रजी क्रमसे सब राक्षसोंकी सेनाको छिन्नभिन्न, बाणोंसे विद्ध, पीडित,मर्दित और नाश करने लगे,सबनेही इन सब कार्योंको देखा, परंतु किसीने भी शीघ्र कर्मकारी श्रीरामचन्द्रजीको नहीं देख पाया,जिस प्रकार सब प्राणी समस्त इंद्रियोंकेस्वामी प्राणात्माको नहीं देख पाते,वैसेही श्रीरामचन्द्रजी,सबके शरीरोंमें बाणोंका प्रहार करते थे, परन्तु कोई भी उनको नहीं देख पाता था॥२२॥२३॥ यह देखो राम हाथियोंकीसेनाका संहार करता है यह महारथीगणोंका नाश करता है; यह तीक्ष्ण बाणोंको चलाय घोडोंके साथ पैदलोंकी सेना मार रहा है ॥२४॥ इस प्रकारसे सब राक्षस ऐसे शब्दकर करके रणमें रामरूपधारी निशाचरोंको सादृश्य

वश रामचन्द्रजी समझकर मारने लगे ॥२५॥ महात्मा रामचन्द्रजीनेगन्धर्व नामक परमास्त्रसे सब राक्षसोंको मोहित किया; यद्यपि श्रीरामचन्द्रजी इसी अस्त्रसे राक्षसोंकी समस्त सेनाको भस्म कर भी रहे थेपरंतु तो भी उनको किसीने नहीं देखा॥२६॥वह निशाचर कभी तो रणमें हजार २ श्रीराम देखने लगे और कभी उन्होंने देखा कि, उस महासंग्राममें केवल एक ही श्रीरामचन्द्रजी विराजमान हैं ॥२७॥ किसी २ समयमें उन राक्षसोंने देखा कि; उन महात्मा श्रीराम चन्द्रजीके धनुषकी बनेटीके चक्रके समान सुवर्णमयी कोटि ही घूमतीहै; परन्तु रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी दृष्टि नहीं आते ॥२८॥ फिर श्रीरामचन्द्रजीका शरीर ही मानो जिसकी नाभि है, जिनका बलही ज्वाला है; वर्णही जिसके मानो आरागज हैं, प्रत्यञ्चा और तलका शब्दही मानो जिनका तेज है और बुद्धि ही

नतेददृशिरेरामंदहंतमपिवाहिनीम् ॥ मोहिताःपरमास्त्रेणगांधर्वेणमहात्मना ॥२६॥ तेतुरामसहस्राणिरणेपश्यंतिराक्षसाः ॥ पुनःपश्यंतिकाकुत्स्थमेकमेवमहाहवे ॥ २७ ॥ भ्रमंतींकांचनींकोटिंकार्मुकस्यमहात्मनः ॥ अलातचक्रप्रतिमांददृशुस्तेनराघवम् ॥२८॥ शरीरनाभिसत्त्वार्चिः शरीरंनेमिकार्मुकम् ॥ ज्याघोषतलनिर्घोषंतेजोबुद्धिगुणप्रभम् ॥२९॥ दिव्यास्त्रगुणपर्यंतंनिघ्नंतंयुधिराक्षसान् ॥ ददृशूरामचक्रंतत्कालचक्रमिवप्रजाः ॥ ३० ॥ अनीकंदशसाहस्रंरथानांवातरंहसाम् ॥ अष्टादशसहस्राणिकुंजराणांतरस्विनाम् ॥ ३१ ॥ चतुर्दशसहस्राणिसारोहाणांचवाजिनाम् ॥ पूर्णेशतसहस्रेद्वेराक्षसानांपदातिनाम् ॥ ३२ ॥ दिवसस्याष्टभागेनशरैरग्निशिखोपमैः ॥ हतान्येकेनरामेणरक्षसांकामरूपिणाम् ॥ ॥ ३३ ॥ तेहताश्वाहतरथाःशांताविमथितध्वजाः ॥ अभिपेतुःपुरींलंकांहतशेषानिशाचराः ॥३४॥ हतैर्गजपदात्यश्वैस्तद्बभूवरणाजिरम् ॥ आक्रीडभूमिःक्रुद्धस्यरुद्रस्येवमहात्मनः ॥ ३५ ॥ ततोदेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ साधुसाध्विवतिरामस्यतत्कर्मसमपूजयन् ॥ ३६ ॥

मानो गुणोदय है ॥२९॥दिव्यास्त्रही मानो जिसकी प्रत्यंचाके अंत हैं, इस प्रकार रणमें घूमता हुआ राजसोंने रामरूप चक्रको राक्षसोंका नाश करते हुए देखा ॥३०॥ इस प्रकारसे वायुके समान वेगयुक्त दश हजार रथियोंकी अनी, सवारोंके साथ अठारह हजार हाथी ॥ ३१ ॥ सवारोंके सहित चौदह हजार घोडे और दो लक्ष पैदल राक्षसोंको ॥३२॥ जो कि कामरूपी थे, दिनके आठवें भागमें अग्निकी शिखाके समान बाणसमूहोंसे अकेले श्रीरामचन्द्रजीने मारडाला ॥ ३३ ॥ तब उस समय बचे बचाये निशाचरगण अश्व, रथ; और ध्वजादि विहीन उत्साहसे रहित हो लंकापुरीको भाग गये ॥ ३४ ॥ उस कालमें वह रणभूमि,--मृतक तुरंग मातंग और पैदलोंके देहोंसे पूर्ण होनेके कारण क्रोधसे पूर्ण महात्मा रुद्र(शिव)जीकी क्रीडाभूमिके समान होगई ॥ ३५ ॥ आकाशमें

विराजमान देवता, गन्धर्व, सिद्ध और परमर्षि श्रीरामचन्द्रजीके उस कर्मको "धन्यधन्य" कहकर बडाई करने लगे ॥ ३६ ॥ इसके उपरान्त धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीव विभीषण व हनुमान्‌जीसे बोले ॥ ३७ ॥ हे वानरश्रेष्ठ! जाम्बवान्‌मैन्द द्विविदसे भी श्रीरामचन्द्रजी बोले कि" इस प्रकारका भयंकर अस्त्रका बल यातो हममें है या श्रीमहादेवजीमें है " ॥ ३८ ॥ इस प्रकारसे अस्त्र और शस्त्रके जाननेमें देवराजइन्द्रजीके समान महात्मा श्रीरामचन्द्रजी उस राक्षसराज रावणकी सेनाकानाश करते हुए और देवता हर्षित होकर उनकी स्तुति करने लगे ॥ ३९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां चतुर्णवतितमः सर्गः ॥ ९४ ॥ सवार जिसपर बैठे ऐसे सहस्रों हाथी इसी प्रकार सवार सहित हजारों घोडे हजारों रथ कि जिनमें ध्वजायें लग रहीं और रथी बैठे व घोडे जुत रहे थे ॥ १ ॥ हजारों राक्षस जो कि गदा और भाला लेकर युद्ध करनेवाले सुवर्णके चित्र विचित्र रूपवाले कामरूपी और भी अनेक शूर

अब्रवीच्चतदारामःसुग्रीवंप्रत्यनंतरम् ॥ विभीषणंचधर्मात्माहनूमंतंचवानरम् ॥३७॥ जांबवंतंहरिश्रेष्ठंमैंदंद्विविदमेवच ॥ एतदस्त्रबलंभीमंमम वात्र्यंबकस्यवा ॥ ३८॥ निहत्यतांराक्षसराजवाहिनींरामस्तदाशक्रसमोमहात्मा ॥ अस्त्रेषुशस्त्रेषुजितक्लमश्चसंस्तूयतेदेवगणैःप्रहृष्टैः ॥ ३९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा०आदिकाव्ये च०सा०युद्धकांडे चतुर्नवतितमः सर्गः ॥९४॥ तानिनागसहस्राणिसारोहाणिचवाजिनाम् ॥ रथानांत्वग्निवर्णानांसध्वजानांसहस्रशः ॥ १ ॥ राक्षसानांसहस्राणिगदापरिघयोधिनाम् ॥ कांचनध्वजचित्राणांशूराणांकामरूपिणाम् ॥२॥ निहतानि शरैर्दीप्तैस्तप्तकांचनभूषणैः ॥ रावणेनप्रसक्तानिरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥३॥ दृष्ट्वाश्रुत्वाचसंभ्रांताहतशेषानिशाचराः ॥ राक्षस्यश्चसमागम्यदीनाश्चितापरिप्लुताः ॥४॥ विधवाहतपुत्राश्चक्रोशंत्योहतबांधवाः ॥ राक्षस्यःसहसंगम्यदुःखार्ताःपर्यदेवयन् ॥ ५ ॥ कथंशूर्पणखावृद्धाकरालानिर्णतोदरी ॥ आससादवनेरामंकंदर्पसमरूपिणम् ॥ ६॥ सुकुमारंमहासत्त्वंसर्वभूतहितेरतम् ॥ तंदृष्ट्वालोकवध्यासाहीनरूपाप्रकाशिता ॥ ७ ॥

राक्षस ॥२॥ रावणके भेजे हुए इन सबको ही सरल कर्मकारी श्रीरामचन्द्रजीने सुवर्णभूषित तीखे बाणोंसे मार डाला ॥ ३ ॥ इन सब राक्षसोंको मरा हुआ देख व सुनकर मरनेसे बचेबचाये राक्षस व निशाचरी सब इकट्ठे हो बैठे, और सबहीका मुख चिन्ताके मारे व्याकुल था ॥४॥ इस समयमें जिनकेपुत्र मर गये थे और जिनके पति मारे गये थे वह दुःखके वेगके मारे यह सब राक्षसोंके साथ एकत्र हो बैठकर दुःखसे विलापकरने लगीं ॥५॥ हाय ! किसकुघडीमें नीचे पेटवाली कराल वदनयुक्त बूढी शूर्पणखाने वनमें कामदेवके समान रूपवान् श्रीरामचन्द्रजीको देखा था ॥६॥ हाय ! जिसको देखतेहीलोग वध करनेकी अभिलाषा करें, वह कुरूपयुक्त शूर्पणखा भी सब प्राणियोंके हितकारी महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजीको देख उनके प्रेमकी अभिलाषिणी हुई थी ॥ ७ ॥

हाय ! उस राक्षसीने सर्व गुण विहीना व कुमुखी होकर भी किस प्रकारसे ऐसे महा तेजस्वी गुणवान्श्रीरामचन्द्रका कामके वश हो अभिलाष किया था ? ॥८॥ राक्षसोंके दुर्भाग्यसे जरासे जीर्ण और श्वेत केशवाली शूर्पणखाने यह बडा भारी कुकार्य किया जो कि सब लोकोंमें निन्दनीय और हँसाईके योग्य था ॥ ९ ॥ राक्षसगण खर दूषणका विनाश करनेको श्रीरामचन्द्रजीको देख उनके धर्षण करनेको ही शूर्पणखा ऐसी कामसे आर्त हुई थी ॥ १० ॥ उस शूर्पणखाहीके रहनेसे राक्षसोंके वधके कारणको ही दशानन रावणने सीताजीको लाय यह बड़ा भारी बैरबाँधा ॥ ११ ॥ रावण जानकीजीको ले तो आया, परन्तु उनको किसी प्रकारसे भी नहीं पायसकेगा अब उनकेही लिये रामचन्द्रसे इस रावणका घोर वैर बँधरहा है ॥ १२ ॥ रावण जो जानकीजीको नहीं पावेगा, एकमात्र रामचन्द्रजी करके बिनाशको प्राप्त ब्रह्माजीसे वरदान पाये हुए जानकीजीकी इच्छा करनेवाले विराध ही उसमें प्रमाण हैं ॥ १३ ॥ जब कि

कथंसर्वगुणैर्हीनागुणवंतंमहौजसम् ॥ सुमुखंदुर्मुखीरामंकामयामासराक्षसी ॥८॥ जनस्यास्याल्पभाग्यत्वाद्वलिनीश्वेतमूर्धजा ॥ अकार्यमप हास्यंचसर्वलोकविगर्हितम् ॥ ९ ॥ राक्षसानांविनाशायदूषणस्यखरस्यच ॥ चकाराप्रतिरूपासाराघवस्यप्रधर्षणम् ॥१०॥ तन्निमित्तमिदंवै रंरावणेनकृतंमहत् ॥ वधायसीतासानीतादशग्रीवेणरक्षसा ॥ ११ ॥ नचसीतांदशग्रीवःप्राप्नोतिजनकात्मजाम् ॥ बद्धंबलवतावैरमक्षयंराघवे णच ॥ १२ ॥ वैदेहींप्रार्थयानंतंविराधंप्रेक्ष्यराक्षसम् ॥ हतमेकेनरामेणपर्याप्तंतन्निदर्शनम् ॥ १३ ॥ चतुर्दशसहस्राणिरक्षसांभीमकर्मणाम् ॥ निहतानिजनस्थानेशरैरग्निशिखोपमैः ॥ १४ ॥ खरश्चनिहतःसंख्येदूषणस्त्रिशिरास्तथा ॥ शरैरादित्यसंकाशैःपर्याप्तंतन्निदर्शनम् ॥ १५ ॥ हतोयोजनबाहुश्चकबंधोरुधिराशनः ॥ क्रोधान्नादंनदन्सोथपर्याप्तंतन्निदर्शनम् ॥ १६ ॥ जघानबलिनंरामःसहस्रनयनात्मजम् ॥ वालिनंमेघ संकाशंपर्याप्तंतन्निदर्शनम् ॥ १७ ॥ ऋष्यमूकेवसंश्चैवदीनोभग्नमनोरथः ॥ सुग्रीवःप्रापितोराज्यंपर्याप्तंतन्निदर्शनम् ॥ १८ ॥

उनमहावीर श्रीरामचन्द्रजीने जनस्थानमें भयंकर कर्मकारी चौदह हजार राक्षसोंको अग्निकी शिखाके तुल्य बाण चलाकर मारडाला तबयही उनकी वीरताका भरपूर प्रमाण है ॥१४॥ जबकि, युद्धमें खर दूषण और त्रिशरा इत्यादि वीरगण रामचन्द्रके सूर्यसमान बाणजालसे मारेगये, तबही उनके बल वीर्यका पूरा प्रमाण है ॥ १५ ॥चार कोशकी लंबी बाँहोंवाला, रुधिरपानकरनेवाला कबन्ध क्रोधमें भरा हुआ और सिंहनाद करता हुआ जब मारडाला गया तब श्रीरा मचन्द्रजीकी पुरुषोत्तमतासे यही पूरा प्रमाण है ॥ १६ ॥ रामचन्द्रजीकरके बलशाली मेघके समान देवराज इन्द्रनन्दन वालि ही जब मारागया, बस फिर अधिक दृष्टान्त देनेकी कुछ आवश्यकता नहीं ॥ १७ ॥ उन रामचन्द्रजीने जो ऋष्यमूकपर्वतपर टिके हुए दीनभावापन्न मनोरथटूटे सुग्रीवको जो राज्यदिया

बस यही उनके लिये पूरादृष्टान्त है ॥ १८ ॥ हाय ? विभीषणने राक्षसका हित साधन करनेकी वासनासे धर्मअर्थयुक्त, युक्ति समन्वित ही वचन कहेथे परन्तु राक्षसराज रावणको वह वचन नहीं भाये ॥ १९ ॥ यदि कुबेरका छोटा भाई रावण विभीषणके वचनानुसार कार्य करता तो यह दुःखसे व्याकुल समस्त लंकानगरी कभी मरघटभूमिकी नाईं नहीं होती.॥ २० ॥ हाय ! श्रीरामचन्द्रजी करके महाबलवान् कुम्भकर्णका मरना सुन और लक्ष्मणजीसे दुर्द्धर्ष अति कायको ॥ २१ ॥ और प्रियपुत्र इन्द्रजीतको मृतक सुनकर भी क्या रावणने रामचन्द्रके पराक्रमको नहीं जाना ? ॥ २२ ॥ श्लोक "पुरा हनुमता लंका दग्धा लांगूलवह्निना । हतमक्षकुमारश्च दृष्ट्वासौ नावबुद्ध्यते" (अनुवाद) जब कि पहले अकेले वानर हनुमानने लंकापुरीमें प्रवेश करकेकुमार अक्षका प्राण

धमार्थसहितंवाक्यंसर्वेषांरक्षसांहितम् ॥ युक्तंविभीषणेनोक्तंमोहात्तस्यनरोचते ॥ १९ ॥ विभीषणवचःकुर्याद्यदिस्मधनदानुजः ॥ श्मशानभूतादुःखार्तानेयंलंकाभविष्यति ॥ २० ॥ कुंभकर्णंहतंश्रुत्वाराघवेणमहाबलम् ॥ अतिकायंचदुर्मर्षंलक्ष्मणेनहतंतदा ॥ २१ ॥ प्रियंचेंद्रजितं पुत्रंरावणोनावबुध्यते ॥ २२ ॥ ममपुत्रोममभ्राताममभर्तारणेहतः ॥ इत्येषश्रूयतेशब्दोराक्षसीनांकुलेकुले ॥ २३ ॥ रथाश्वनागाश्चहतास्तत्रतत्रसहस्रशः ॥ रणेरामेणशूरेणहताश्चापिपदातयः ॥२४॥ रुद्रोवायदिवाविष्णुर्महेंद्रोवाशतक्रतुः ॥ हंतिनोरामरूपेणयदिवास्वयमंतकः ॥२५॥ हतप्रवीरारामेणनिराशाजीवितेवयम् ॥ अपश्यंतोभयस्यांतमनाथाविलपामहे ॥ २६ ॥ रामहस्ताद्दशग्रीवःशूरोदत्तमहावरः ॥ इदंभयंमहाघोरंसमुत्पन्नंनबुद्ध्यते ॥ २७ ॥ तंनदेवानगंधर्वानपिशाचानराक्षसाः ॥ उपसृष्टंपरित्रातुंशक्तारामेणसंयुगे ॥ २८ ॥

संहार किया और पूँछकी लगी हुई आगसे लंकापुरीको जलाया, तबभी राक्षसराज रावणको समझ नहीं आई ॥२३॥हाय ! हमारा पुत्र हमारा भइया हमारा स्वामी रणमें मारागया, हाय ! यह हमें छोडकर कहां चलेगये" लंकापुरीके घर २ में राक्षसियोंका इस प्रकारसे रोना सुनाई आता है ॥ २४ ॥ हजार हजार रथी; अश्वहाथियोंके सवार और पैदलगण शूर श्रीरामचन्द्रजी करके रणमें मारडालेगये ॥२५॥ जान पडता है कि--रुद्र, विष्णु देवराज इन्द्र, अथवा आपही यमराजही रामरूप धार रणमें हमारा विनाश कररहे हैं ॥ २६ ॥ हाय ! रामचन्द्रजी करकें वीरोंका नाश होनेके कारण हम सब जीनेकी आशासे निराश हो और भयंकर अंत न देखकर ही ऐसा विलाप करती हैं ॥ २७ ॥ शूर श्रेष्ठ रावणने ब्रह्माजीके निकटसे जो बडा भारी वरपाया है उसी गर्वके मारे रामचन्द्रजीसे जो महाघोर भय आया है, वह उसको नहीं जानता है ॥ २८ ॥

जब कि; रणमें रामचन्द्र उसके मारनेका निश्चय करचुके हैं तब देवता गन्धर्व पिशाच अथवा राक्षसोंमें कोई भी उसकी रक्षा नहीं कर सकता ॥२९॥ प्रति संग्राममें रावणकी ओर दुर्निमित्त दिखाई देते हैं और माल्यवान् इत्यादि वृद्ध राक्षसगण वा निमित्त रामचन्द्रजीसे रावणका वध होना प्रगट करते हैं॥३०॥ पहले ब्रह्माजीने प्रसन्न होकर रावणको देव दानव और राक्षसोंसे अभयरूप वरदान दिया था, परन्तु उस समय रावणने मनुष्यकी कोई बात ही नहीं उठाई थी ॥३१॥ हमको ऐसा ज्ञात होता है कि, रावणके दुर्भाग्यसे स्वयं उसका और राक्षसोंके प्राणोंकोअन्त करनेवाला यह मनुष्यरूपधर आया है ॥ ३२ ॥ एकसमय वरदान पाकर गर्वित हुए रावणके अत्याचारसे पीडित होकर देवताओंने कठिन तपकरके ब्रह्माजीकी उपासना की थी ॥३३॥ देवताओंका हित कर

उत्पाताश्चापिदृश्यंतेरावणस्यरणेरणे ॥ कथयंतिहिरामेणरावणस्यनिबर्हणम् ॥ २९ ॥ पितामहेनप्रीतेनदेवदानवराक्षसैः ॥ रावणस्याभयंदत्तंमनुष्येभ्योनयाचितम् ॥ ३० ॥ तदिदंमानुषंमन्येप्राप्तंनिःसंशयंभयम् ॥ जीवितांतकरंघोरंरक्षसांरावणस्यच ॥ ३१ ॥ पीडयमानास्तुबलिनावरदानेनरक्षसा ॥ दीप्तैस्तपोभिर्विबुधाःपितामहमपूजयन् ॥ ३२ ॥ देवतानाहितार्थायमहात्मावैपितामहः ॥ उवाचदेवतास्तुष्टइदंसर्वामहद्वचः ॥३३॥ अद्यप्रभृतिलोकांस्त्रीन्सर्वेदानवराक्षसाः ॥ भयेनप्रभृतानित्यंविचरिष्यंतिशाश्वतम् ॥३४॥ दैवतैस्तुसमागम्यसर्वैश्चेंद्रपुरोगमैः॥ वृषध्वजस्त्रिपुरहामहादेवःप्रतोषितः ॥३५॥ प्रसन्नस्तुमहादेवोदेवानेतद्वचोऽब्रवीत् ॥ उत्पत्स्यतिहितार्थंवोनारीरक्षःक्षयावहा ॥३६॥ एषादेवैःप्रयुक्तातुक्षुद्यथादानवान्पुरा ॥ भक्षयिष्यतिनःसर्वान्राक्षसघ्नीसरावणान् ॥ ३७॥ रावणस्यापनीतेनदुर्विनीतस्यदुर्मतेः ॥ अयंनिष्ठानकोघोरःशोकेनसमभिप्लुतः ॥ ३८ ॥ तंनपश्यामहेलोकेयोनःशरणदोभवेत् ॥ राघवेणोपसृष्टानांकालेनेवयुगक्षये ॥ ३९ ॥

नेके लिये पितामह महात्मा ब्रह्माजीने देवताओंकी तपस्यासे संतुष्ट होकर सबसे यह बडे गौरवयुक्त वचन कहे ॥ ३४ ॥ कि, आजसे दानव और राक्षसगण भयके मारे विह्वल होकर त्रिभुवनमें विचरण करते रहा करेंगे ॥३५॥ उसके उपरान्त इन्द्रादिदेवताओंने मिलकर त्रिपुरारि वृषध्वज महादेवजीका तप किया था ॥ ३६ ॥ पशुपति महादेवजी देवतालोगोंके तपसे प्रसन्न होकर बोले कि, हे देवताओ ! तुम्हारे मंगलकेलिये राक्षसकुलका नाश करनेवाली एकस्त्री उत्पन्न होगी ॥३७॥ जिसप्रकार पहले समयमें क्षुधानामक स्त्रीने देवताओंसे नियोजित हो दानवगणोंको भक्षणकिया था सो जान पडता है इस राक्षसनाशिनी सीताने भी वैसेही देवताओंसे नियुक्त हो हमलोगोंको भक्षण करनेके लिये जन्मग्रहण किया है ॥ ३८ ॥ हाय ! दुर्मति दुर्विनीत रावणकी खोटी नीतिके

ही वशसे यह घोर शोकयुक्त विनाश उपस्थित हुआ है॥३९॥ हा ! जिस प्रकार युगक्षय होनेके समय कालके पंजेमें फँसेहुए जीवोंकी रक्षा कोई नहीं कर सकता, वैसेही हम सब रामचन्द्रके वशमें पडकर ऐसा किसीको भी नहीं देखती हैं जो हम लोगोंकी रक्षा करनेमें समर्थ हो ॥ ४० ॥ हाय ! वनके बीच दावाग्निसे घिरी हुई हथिनियोंके समान हम इस बडीभारी विपदमें पडकर किसीको भी अपना रक्षक नहीं देखती हैं ॥ ४१ ॥ हाय ! जिनसे हम ,सबको यह बडाभारी भय जान पडता है महात्मा पौलस्त्य विभीषण यथा समयमेंही उनकी शरणमें गये हैं ॥ ४२ ॥ भयके बोझसे पीडित शोकसे आर्त राक्षसोंकी स्त्रियें ऐसाविलाप करती हुई परस्पर एक दूसरीको बांहोंसे चिपटाकर दारुण शब्द करके रोने लगीं ॥ ४३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां पंचनवतितमः सर्गः ॥ ९५ ॥ तब राक्षसोंके राजा रावणने लंकाके भवन २ में राक्षसोंकी स्त्रियोंका तुमुल करुणासहित आर्त शब्द सुना॥ १ ॥

नास्तिनःशरणंकिंचिद्भयेमहतितिष्ठताम् ॥ दावाग्निवेष्टितानांहिकरेणूनांयथावने ॥४०॥ प्राप्तकालंकृतंतेनपौलस्त्येनमहात्मना॥ यतएवभयंदृष्टंतमेवशरणंगतः ॥४१॥ इतीवसर्वारजनीचरस्त्रियःपरस्परंसंपरिरभ्यबाहुभिः॥ विषेदुरार्तातिभयाभिपीडिताविनेदुरुच्चैश्चतदासुदारुणम्॥४२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्येच०सा० युद्धकांडे पंचनवतितमःसर्गः ॥९५॥ आर्तानांराक्षसीनांतुलंकायांवैकुलेकुले ॥ रावणः करुणंशब्दंशुश्रावपरिदेवितम् ॥१॥ सतुदीर्घंविनिःश्वस्य मुहूर्तंध्यानमास्थितः ॥ बभूव परमक्रुद्धोरावणो भीमदर्शनः ॥२॥ संदश्यदशनैरोष्ठं क्रोधसंरक्तलोचनः ॥ राक्षसैरपिदुर्दर्शःकालाग्निरिवमूर्तिमान् ॥३॥ उवाचचसमीपस्थान्राक्षसान्राक्षसेश्वरः ॥ क्रोधाव्यक्तकथस्तत्रनिर्दहन्निव चक्षुषा ॥४॥ महोदरंमहापार्श्वंविरूपाक्षंचराक्षसम् ॥ शीघ्रंवदतसैन्यानिनिर्यातेतिममाज्ञया ॥५॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराक्षसास्तेभयार्दिताः ॥ चोदयामासुरव्यग्रान्राक्षसांस्तान्नृपाज्ञया ॥ ६ ॥ तेतुसर्वेतथेत्युक्त्वाराक्षसाभीमदर्शनाः ॥ कृतस्वस्त्ययनाःसर्वेतेरणाभिमुखाययुः ॥ ७ ॥

रावण लंबे २ श्वास लेकर मुहूर्तभरतक चिन्ता करता रहा इसके उपरान्त क्रोधके मारे शरीर कांपनेसे उनकी मूर्ति भयंकर हो गई ॥ २ ॥ वह वीर राक्षसोंका स्वामी रावण क्रोधसे लाल २ नेत्रकर दांतोंसे होठोंको काटता हुआ मूर्तिमान् कालकी अग्निके समान राक्षसोंकोभी अतिकठिनसे देखनेके योग्य हुआ ॥३॥ पीछे मानो नेत्रोंसे सर्व प्राणियोंके जलानेके अभिप्रायसे क्रोधके मारे लडखडाती वाणीसे समीपमें बैठे हुए निशाचरोंसे निशाचरपति यह कहने लगा ॥४॥ रावणने महापार्श्व, महोदर और विरूपाक्ष इत्यादि राक्षसोंसे कहा, ❀ कि हमारी आज्ञाके अनुसार तुम सेनाको निकलनेके लिये कहो ॥५॥ रावणके यह वचन सुनकर भयपीडित निशाचरोंने राजाकी अज्ञानुसार निर्भय निशाचरोंकी सेनाको अतिशीघ्र तैयार होनेके लिये कहा ॥ ६ ॥ भयंकर

❀ यह इस नामके दूसरे राक्षस वीर हैं ।

राक्षसोंकी सेनाभी युद्ध करनेके लियेतैयार हो "बहुत अच्छा" कह अनेक प्रकारके मंगलाचार मनाय संग्रामकी ओरको चली ॥७॥ व और दूसरे महारथी भी हाथ जोडकर रावणकी यथाविधिसे पूजा करके उसकी विजय मनाय तैयार हुए ॥८॥ इसके उपरान्त क्रोधमूर्छित रावणने हँसते २ निशाचर महोदर महापार्श्व और विरूपाक्षसे कहा ॥९॥ कि आज हम युगान्तकालीन सूर्यकी नाईं [युगक्षय होनेके समय जो सूर्य उदय होते हैं] प्रदीप्त धनुषसे छूटे हुए बाणोंके समूहसे राम लक्ष्मणको यमराजके भवनमें पठावेंगे ॥१०॥ आज वैरियोंका वध करके खर, कुंभकर्ण, प्रहस्त और इन्द्रजीतके वधका बदला लेंगे ॥११॥ आज हमारे बाणरूप बादलोंके जालसे छायकर आकाश, दशों दिशा, अन्तरिक्ष अथवा सागर इनमेंसे किसीमें भी प्रकाश न रहेगा ॥१२॥ इस धनुष और श्रेष्ठ फोंकलगे

प्रतिपूज्ययथान्यायंरावणंतेमहारथाः ॥ तस्थुःप्रांजलयःसर्वेभर्तुर्विजयकांक्षिणः ॥ ८ ॥ ततोवाचप्रहस्यैतान्रावणःक्रोधमूर्च्छितः ॥ महोदर महापार्श्वौविरूपाक्षंचराक्षसम् ॥ ९ ॥ अद्यबाणैर्धनुर्मुक्तैर्युगांतादित्यसन्निभैः ॥ राघवंलक्ष्मणंचैवनेष्यामियमसादनम् ॥ १० ॥ खरस्यकु म्भकर्णस्यप्रहस्तेंद्रजितोस्तथा ॥ करिष्यामिप्रतीकारमद्यशत्रुवधादहम् ॥ ११ ॥ नैवांतरिक्षंनदिशोनचद्यौर्नापिसागराः ॥ प्रकाशत्वंगमि ष्यंतिमद्बाणजलदावृताः ॥ १२ ॥ अद्यवानरमुख्यानांतानियूथानिभागशः ॥ धनुषाशरजालेनवधिष्यामिपतत्रिणा ॥ १३ ॥ अद्यवानरसै न्यानिरथेनपवनौजसा ॥ धनुःसमुद्रादुद्भूतैर्मथिष्यामिशरोर्मिभिः ॥ ॥ १४ ॥ व्याकोशपद्मवक्त्राणिपद्मकेसरवर्चसाम् ॥ अद्ययूथतटाकानि गजवत्प्रमथाम्यहम् ॥ १५ ॥ सशरैरद्यवदनैःसंख्येवानरयूथपाः ॥ मंडयिष्यंतिवसुधांसनालैरिवपंकजैः ॥१६॥ अद्ययूथप्रचंडानांहरीणांद्रुम योधिनाम् ॥ मुक्तेनैकेषुणायुद्धेभेत्स्यामिचशतंशतम् ॥ १७ ॥ हतोभ्राताचयेषांवैयेषांचतनयोहतः ॥ वधेनाद्यरिपोस्तेषांकरोम्यश्रुप्रमार्जनम् ॥ १८ ॥ अद्यमद्बाणनिर्भिन्नैःप्रस्तीर्णैर्गतचेतनैः ॥ करोमिवानरैर्युद्धेयत्नावेक्ष्यतलांमहीम् ॥ १९ ॥

हुए बाणोंसे आज हम भाग्यहीन वानरोंके यूथपतिगणोंका संहार करेंगे ॥१३॥ आज पवनके वेगकेसमान रथपर सवार होकर धनुषरूप समुद्रसे उत्पन्न हुई बाणरूप लहरोंके द्वारा हम वानरोंकीसेनाको मर्दित करेंगे॥१४॥ हम हाथीके समान होकर केशररूप रोमराजिविराजित और मुखरूप खिलेहुए कमलफूलोंसे युक्त वानररूपी तडागोंको मथ डालेंगे ॥१५॥ आज संग्रामभूमिमें वानरगणोंके बाणयुक्त समस्त वदन डंडीसहित कमलके समान पृथ्वीको शोभित करेंगे ॥१६॥ अधिक क्या कहें आज हम एक २ बाणको चलायकर सैकडों हजारों वृक्षोंसे युद्धकरनेवाले वानरोंको पृथ्वीपर लुटादेंगे ॥१७॥ जिन स्त्रियोंके भ्राता स्वामी अथवा पुत्रगण मारे गये हैं हम आज शत्रुओंका वध करके उनके आसुओंको पोंछ देंगे॥१८॥ आज संग्राममें अपने बाणोंसे छिन्नभिन्न होकर पडे चेतनारहित वानरोंसे पृथ्वीको

हम ऐसा ढकदेंगे, कि विशेष यत्न करनेपर किसी प्रकारसेभी पृथ्वी दृष्टि न पडे ॥१९॥ कौए, गृध्र व औरभी जो मांस खाने वाले पशु, पक्षी हैं आज बाणोंसे मृतक हुए वैरियोंके मांससे उन सबही पक्षियोंको हम तृप्त करदेंगे ॥२०॥ शीघ्र हमारा रथ तैयार करो. और धनुष लाओ, और बचे बचाये निशाचर हमारे साथ समरमें चलनेके लिये तैयार होजायँ ॥२१॥ राक्षसराजरावणके वचन सुनकर महापार्श्वने सब सेनाको शीघ्रता करानेके लिये समीप खडे हुए सेनाध्यक्षको आज्ञा दी ॥२२॥ शीघ्रतासे कार्य करनेवाले सेनाध्यक्षोंने मिलकर लंकानगरीके घर घरमें घूम निशाचरगणोंको यह संवाद दिया ॥२३॥ इसके उपरान्त एक मुहूर्त भरके पीछे भयंकराकार राक्षस अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र धारण करके घोर गर्जन करते २ आये ॥२४॥ उन राक्षसोंमेंसे किसीके हाथमें खड्ग, किसीके हाथमें

अद्यकाकाश्चगृध्राश्चयेचमांसाशिनोपरे ॥ सर्वांस्तांस्तर्पयिष्यामिशत्रुमांसैःशराहतैः ॥ २० ॥ कल्प्यतांमेरथःशीघ्रंक्षिप्रमानीयतांधनुः ॥ अनुप्रयांतुमांयुद्धेयेत्रशिष्टानिशाचराः ॥ २१ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वामहापार्श्वोऽब्रवीद्वचः ॥ बलाध्यक्षान्स्थितांस्तत्रबलंसंत्वर्यतामिति ॥ २२ ॥ बलाध्यक्षास्तुसंयुक्ताराक्षसांस्तान्गृहेगृहे ॥ चोदयंतःपरिययुर्लंकांलघुपराक्रमाः ॥ २३ ॥ ततोमुहूर्तान्निष्पेतूराक्षसाभीमदर्शनाः ॥ नदंतोभीमवदनानानाप्रहरणैर्भुजैः ॥ २४ ॥ असिभिःपट्टिशैःशूलैर्गदाभिर्मुसलैर्हलैः ॥ शक्तिभिस्तीक्ष्णधाराभिर्महद्भिःकूटमुद्गरैः ॥ २५ ॥ यष्टिभिर्विविधैश्चक्रैर्निशितैश्चपरश्वधैः ॥ भिंदिपालैःशतघ्नीभिरन्यैश्चापिवरायुधैः ॥ २६ ॥ अथानयन्बलाध्यक्षाश्चत्वारोरावणाज्ञया ॥ रथानांनियुतंसाग्रंनागानांनियुतत्रयम् ॥ २७ ॥ अश्वानांषष्टिकोटयस्तुखरोष्ट्राणांतथैवच ॥ पदातयस्त्वसंख्याताजग्मुस्तेराजशासनात् ॥ २८ ॥ बलाध्यक्षाश्चसंस्थाप्यराज्ञःसेनांपुरःस्थिताम् ॥ एतस्मिन्नंतरेसूतःस्थापयामासतंरथम् ॥ २९ ॥ दिव्यास्त्रवरसंपन्नंनानालंकारभूषितम् ॥ नानायुधसमाकीर्णंकिंकिणीजालसंयुतम् ॥ ३० ॥

पटा, किसीके हाथमें गदा, किसीके हाथमें शूल, किसीपै मूसल, किसीपै हल, किसीपै तीक्ष्णधारवाली शक्ति, किसीपै कूट मुद्गर थे ॥२५॥ कोई २ विविध प्रकारके लठ, चक्र, तीक्ष्ण फरशे, भिन्दिपाल व शतघ्नी ❋ आदिके और भी अनेक प्रकारके श्रेष्ठ आयुध लिये हुए आये ॥२६॥ इसके पीछे सेनाध्यक्ष रावणकी आज्ञासे दश लाख रथ, तीस लाख हाथी ॥२७॥ साठ करोड़ घोड़े, गधे और ऊंट और असंख्य पैदलोंको ले राजाकी आज्ञासे निकले ॥ २८ ॥ सेनापतियोंने राजाके आगे सेना स्थापन की और उसी अवसरमें सारथिने उस रथको स्थापन किया ॥ २९ ॥ दिव्यास्त्र करके युक्त अनेक भूषणोंसे भूषित

❋ जिसके एक प्रहारमें सौ मरें वह शतघ्नी कहाती है ।

बहुत सारे हथियारोंसे समन्वित किंकिणी जालसे शोभायमान ॥३०॥ अनेक भाँतिके रत्न लगे हुए रत्नमय खंभोंसे विराजित, सुवर्णके हजार कलशोंकरके शोभित ॥३१॥ऐसे रथको देखकर सब राक्षस बहुत विस्मयको प्राप्त हुए;उसको देख राक्षसोंका राजारावण तुरन्त उठ खड़ा हुआ ॥३२॥ करोड़ सूर्यकी कांतिसम प्रकाशमान जलतीहुई अग्निके समान चमकता हुआ शीघ्रतासे आठ घोडेजोडकर ऐसा रथ सारथी ले आया, अपने तेजसे दीप्तिमान भयंकरदर्शन रावण उसपर सवार होगया॥३३॥वह राक्षस सहसा बहुत राक्षसोंके साथ निकला। रावण सत्त्व और गम्भीरतासे मानो पृथ्वीको विदारणही करता हुआ चला॥३४॥ उस समय बडाभारी भेरीका शब्द चारोंओरसे होने लगा, और अनेक राक्षस मृदंग, पटह, शंख, काहल बजाने लगे ॥ ३५ ॥ इस प्रकार वह राक्षसोंका राजा

नानारत्नपरिक्षिप्तंरत्नस्तंभैर्विराजितम् ॥ जांबूनदमयैश्चैवसहस्रकलशैर्वृतम् ॥ ३१ ॥ तंदृष्ट्वाराक्षसाःसर्वेविस्मयंपरमंगता ॥ तंदृष्ट्वासहसोत्था यरावणोराक्षसेश्वरः ॥ ३२ ॥ कोटिसूर्यप्रतीकाशंज्वलंतमिवपावकम् ॥ द्रुतंसूतसमायुक्तंयुक्ताष्टतुरगंरथम् ॥ आरुरोहतदाभीमंदीप्यमानंस्व तेजसा ॥ ३३ ॥ ततःप्रयातःसहसाराक्षसैर्बहुभिर्वृतः ॥ रावणःसत्त्वगांभीर्याद्दारयन्निवमेदिनी ॥ ३४ ॥ ततश्चासीन्महानादस्तूर्याणांचतत स्ततः ॥ मृदंगैःपटहैःशंखैःकलहैसहरक्षसाम् ॥ ३५ ॥ आगतोरक्षसांराजाछत्रचामरसंयुतः ॥ सीतापहारीदुर्वृत्तोब्रह्मघ्नोदेवकंटकः ॥ योद्धुंर घुवरेणेतिशुश्रुवेकलहध्वनिः ॥ ३६ ॥ तेननादेनमहतापृथिवीसमकंपत ॥ तंशब्दंसहसाश्रुत्वावानरादुद्रुवुर्भयात् ॥ ३७ ॥ रावणस्तुमहाबाहुः सचिवैःपरिवारितः ॥ आजगाममहातेजाजयायविजयंप्रति ॥ ३८ ॥ रावणेनाभ्यनुज्ञातौमहापार्श्वमहोदरौ ॥ विरूपाक्षश्चदुर्धर्षोरथानारुरु हुस्तदा ॥ ३९ ॥ तेतुहृष्टाभिनर्दंतोभिंदंतइवमेदिनीम् ॥ नादंघोरंविमुंचंतोनिर्ययुर्जयकांक्षिणः ॥ ४० ॥ ततोयुद्धायतेजस्वीरक्षोगणबलैर्वृतः ॥ निर्ययावुद्यतधनुःकालांतकयमोपमः ॥ ४१ ॥ ततःप्रजविताश्वेनरथेनसमहारथः ॥ द्वारेणनिर्ययौतेनयत्रतौरामलक्ष्मणौ ॥ ४२ ॥

सीताका हरनेवाला; कुचाली, ब्राह्मणोंको मारनेवाला देवताओंको संकटस्वरूप छत्र चामर संयुक्त हो रामचन्द्रसे युद्ध करनेको आरहा है। यह ध्वनि चारोंओरसे सुनाई आने लगी ॥३६॥उस बडे भारी शब्दसे पृथ्वी कंपायमान होने लगी। और अकस्मात् उस शब्दको सुनकर वानर भयसे भागने लगे ॥३७॥ महाबाहु महातेजस्वी रावण संग्रामभूमिमें युद्ध करनेके वास्ते जयकी इच्छा करके आया॥३८॥तब रावणकी आज्ञाके अनुसार महापार्श्व; महोदर, दुर्द्धर्ष और विरूपाक्ष यह चार राक्षस भी रथपर सवार हुए ॥३९॥ यह सब मनमें हर्षित हो जयकी आशासे मानो पृथ्वीको भेदकरतेही हुएसे घोर सिंहनाद करके गमन करने लगे ॥४०॥ तेजस्वी रावण राक्षसोंकी सेनाके साथ धनुषको उठाय कालान्तक यमराजके समान युद्ध करनेको चला ॥४१॥उसके उपरान्त अतिवेगवान् घोडे

जुते हुए रथपर सवार हुआ रावण उसी द्वारसे होकर निकला कि; जिसके सन्मुख श्रीरामचन्द्र व लक्ष्मणजी विराजमान थे॥४२॥ उस समय सूर्यकी ज्योति मलीन होगई, दशों दिशाओंमें अन्धकार छागया, अशुभकारी पक्षी चारों ओर घोर शोर करने लगे, पृथ्वी चलायमान होगई॥४३॥ घोररूपपक्षी और शृगालियें अशुभ शब्द करने लगीं, घोडे वारंवार ठोकरें खाने लगे और बादलोंसे रुधिरकी वर्षा होने लगी, रावणकी ध्वजाके आगे गिद्ध गिरपडा॥४४॥ रावणकी वाणी कुछ बिगड गई, वदन विवर्ण होगया, बायां नेत्र फडकने लगा, बायां हाथ कम्पायमान हुआ॥४५॥जब राक्षसश्रेष्ठ रावण युद्ध करनेके लिये चला तो उसका मृतक होना प्रगट करनेके लिये यह सब कुशकुन होने लगे॥ ४६ ॥ बडी २ उल्का वज्रके समान शब्द करती अन्तरिक्षसे गिरने लगीं और कौवोंके साथ

ततोनष्टप्रभःसूर्योदिशश्चतिमिरावृताः ॥ द्विजाश्चनेदुर्घोरश्चसंचचालचमेदिनी ॥ ४३ ॥ ववर्षरुधिरंदेवश्चस्खलुश्चतुरंगमाः ॥ ध्वजाग्रेन्यपतद्गृध्रोविनेदुश्चाशिवाःशिवाः ॥ ४४ ॥ नयनंचस्फुरद्वामंवामोबाहुरकंपत ॥ विवर्णवदनश्चासीत्किंचिदभ्रश्यतस्वनः ॥ ४५ ॥ ततोनिष्पततोयुद्धे दशग्रीवस्यरक्षसः ॥ रणेनिधनशंसीनिरूपाण्येतानिजज्ञिरे ॥ ४६ ॥ अंतरिक्षात्पपातोल्कानिर्घातसमनिःस्वना ॥ विनेदुरशिवागृध्रावायसैरभिमिश्रिताः ॥ ४७ ॥ एतानचिंतयन्घोरानुत्पान्समवस्थितान् ॥ निर्ययौरावणोमोहाद्वधार्थंकालचोदितः ॥ ४८ ॥ तेषांतुरथघोषेणराक्षसानांमहात्मनाम् ॥ वानराणामपिचमूर्युद्धायैवाभ्यवर्तत ॥ अन्योन्यमाह्वयानानांक्रुद्धानांजयमिच्छताम् ॥ ४९ ॥ ततःक्रुद्धोदशग्रीवःशरैःकांचनभूषणैः ॥ वानराणामनीकेषुचकारकदनंमहत् ॥ ५० ॥ निकृत्तशिरसःकेचिद्रावणेनवलीमुखाः ॥ केचिद्विच्छिन्नहृदयाःकेचिच्छ्रोत्रविवर्जिताः ॥ ५१ ॥ निरुच्छ्वासाहताःकेचित्केचित्पार्श्वेषुदारिताः ॥ केचिद्विभिन्नशिरसःकेचिच्चक्षुर्विनाकृताः ॥ ५२ ॥

मिलकर गिद्धगणोंने भी अशुभ चिल्लाहट करनी आरम्भ की॥४७॥परन्तु दशानन कालप्रेरितकी नाईं मोहके वश अपने वधके निमित्तही प्रगट हुए इनसब घोर उत्पातोंको देखकर भी न समझता हुआ युद्ध करनेके लिये चलाही गया ॥४८॥ उस अवसरमें महाबलवान् निशाचरगणोंके रथोंका शब्द श्रवण करतेही वानरोंकी सेना युद्ध करनेके लिये तैयार हुई,इसके उपरान्त परस्पर एक दूसरेको लडनेके लिये पुकारते हुए निशाचर और वानरोंका तुमुल युद्ध आरम्भ हुआ॥४९॥तब रावणने क्रोध करके सुवर्णभूषित बाणोंसे वानरोंकी सेनामें बहुतसे वानरोंको मारडाला ॥ ५० ॥ रावणके प्रहारसे किसीका मस्तक कटगया, किसीका हृदय फटगया, किसीका कान कटगया ॥५१॥ और कोई २ श्वासहीन हो २ कर गिर पडे,किसी२की बगलेंही चीर फाड़ डालीगई । किसी२के मस्तक फूटगये

और किसी २ के नेत्रही फूटगये ॥५२॥ उस कालमें रावण क्रोधके मारे दोनों नेत्रोंको घुमाता रथको चलाता जिस २ स्थानमें जाता था उसी २ मोरचेके वानरगण उसके वेग नहीं सहन कर सकते थे ॥५३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां षण्णवतितमः सर्गः ॥९६॥ इस प्रकार रावण करके बाण समूहसे छिन्नशरीर हुए वानरगणोंसे रणभूमि परिपूर्ण होगई ॥ १ ॥ जिस प्रकार पतंग जलती हुई आगकी लपेटको नहीं सहसकते वैसेही किसी ओरके वानरभी रावणके बाण वर्षानेको नहीं सहसके ॥२॥ अग्निकी ज्वालामें घिरकर जलते हुए हाथियोंके समान तीखे बाणोंसे पीडित हुए यह वानरगणभी रोते २ भाग खडे हुए ॥ ३ ॥ जिस प्रकारसे बडा भारी मेघमालाकोभी उडाकर ले जाती है वैसेही राक्षसराज रावण बाणोंके समूहसे वानरोंको विध्वंसित करता हुआ आगे बढने लगा ॥ ४ ॥ राक्षसोंमें इन्द्र रावण अतिवेगसे वानरोंकी सेनाको पीडित करता और वेगसे गमन करता रणभूमिके मध्यमें विराजमान

दशाननःक्रोधविवृत्तनेत्रोयतोयतोऽभ्येतिरथेनसंख्ये ॥ ततस्ततस्तस्यशरप्रवेगंसोढुंनशेकुर्हरियूथपास्ते ॥५३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे षण्णवतितमः सर्गः ॥ ९६ ॥ तथातैःकृत्तगात्रैस्तुदशग्रीवेणमार्गणैः ॥ बभूववसुधातत्रप्रकीर्णाहरिभिस्तदा ॥ १ ॥ रावणस्याप्रसह्यंतंशरसंपातमेकतः ॥ नशेकुःसहितुंदीप्तंपतंगाज्वलनंयथा ॥ २ ॥ तेऽर्दितानिशितैर्बाणैःक्रोशंतोविप्रदुद्रुवुः ॥ पावकार्चिःसमाविष्टादह्यमानायथागजाः ॥ ३ ॥ प्लवंगानामनीकानिमहाभ्राणीवमारुतः ॥ संययौसमरेतस्मिन्विधन्रावणःशरैः ॥ ४ ॥ कदनंतरसाकृत्वाराक्षसेंद्रोवनौकसाम् ॥ आससादतोयुद्धेत्वरितंराघवंरणे ॥ ५ ॥ सुग्रीवस्तान्कपीन्दृष्ट्वाभग्नान्विद्रावितान्रणे ॥ गुल्मेसुषेणंनिक्षिप्यचक्रेयुद्धेद्रुतंमनः ॥ ६ ॥ आत्मनःसदृशंवीरंसतंनिक्षिप्यवानरम् ॥ सुग्रीवोभिमुखंशत्रुंप्रतस्थेपादपायुधः ॥ ७ ॥ पार्श्वतःपृष्ठतश्चास्यसर्वेवानरयूथपाः ॥ अनुजग्मुर्महाशैलान्विविधांश्चवनस्पतीन् ॥ ८ ॥ ननर्दयुधिसुग्रीवःस्वरेणमहतामहान् ॥ पोथयन्विविधांश्चान्यान्ममंथोत्तमराक्षसान् ॥ ९ ॥ ममर्दचमहाकायोराक्षसान्वानरेश्वरः ॥ युगांतसमयेवायुःप्रवृद्धानगमानिव ॥ १० ॥

श्रीरामचन्द्रजीको देखता हुआ ॥ ५ ॥ इस ओर सुग्रीवजी रणमें वानरोंको भागा हुआ और तितरबितर देख सुषेणको मोरचेपर स्थापित कर रणमें गमन करनेका अभिलाष करते हुए ॥ ६ ॥ इसके उपरान्त वह वीर सुग्रीवजी अपनेही समान वीर वानरको अपनी श्रेणीपर स्थापित कर वृक्ष हाथमें ले शत्रुकी ओर दौडे ॥ ७ ॥ व और दूसरे वानरयूथपतिगण बडेभारी पर्वतोंके शिखर और विविधभांतिके वृक्ष ग्रहण करके उन सुग्रीवजीके अगल बगल और पीठकी ओरका आश्रय करके गमन करने लगे ॥ ८ ॥ रणमें पहुँचतेही सुग्रीव बडे ऊंचे शब्दसे गर्जे और बहुतसे राक्षसोंको मारने पीटने लगे ॥९॥ बडेशरीरवाले

वानरोंके राजा सुग्रीवजी युगक्षय होनेके समय पवन जिस प्रकार बडे वृक्षोंको चूर्ण करके तोडताड देता है वैसेही राक्षसोंको मार २ कर फेंका ॥ १० ॥ बादल जिस प्रकारसे वनमें पक्षियोंके ऊपर ओले वर्षाते हैं वैसेही सुग्रीवजी राक्षसवाहिनी (सेना) के ऊपर पत्थरोंकी वर्षा करनेलगे॥११॥ वानरराज सुग्रीव जीकेचलाये पत्थर और वृक्षोंसे राक्षसोंके शिर फटगये और वह पृथ्वीपर इस प्रकार गिरनेलगे कि, जैसे इन्द्रजीके वज्र चलानेसे पर्वत फूट कर गिरे थे॥१२॥ इस प्रकार महावीर सुग्रीवजी सिंहनाद करके राक्षसोंकी सेनापर धावा मार उसकी श्रेणीको तोडडाला, और उसको पराजित करके छिन्नभिन्न करदिया ॥१३॥ इसी अवसरमें राक्षसवीर विरूपाक्षने विरूपाक्ष हूं; इस प्रकार अपना नाम सबको सुनाय रथसे कूद हाथीपर सवार होगया॥१४॥ हाथीपर चढा हुआ महाबलवान् विरूपाक्ष भयंकर घोर शब्दसे सिंहनाद करता हुआ वानर लोगोंके ऊपर दौडा॥१५॥ और सेनाके मुखमें विराजमान होकर सुग्रीवजीके ऊपर घोरबाणोंकी वर्षा

राक्षसानामनीकेषुशैलवर्षंववर्षह ॥ अश्मवर्षंयथामेघःपक्षिसंघेषुकानने ॥ ११ ॥ कपिराजविमुक्तैस्तैःशैलवर्षैस्तुराक्षसाः ॥ विकर्णशिरसःपेतु र्विकीर्णाइवपर्वताः ॥१२॥ अथसंक्षीयमाणेषुराक्षसेषुसमंततः ॥ सुग्रीवेणप्रभग्नेषुनदत्सुचपतत्सुच ॥ १३ ॥ विरूपाक्षःस्वकंनामधन्वीविश्रा व्यराक्षसः ॥ रथादाप्लुत्यदुर्धर्षोगजस्कंधमुपारुहत् ॥१४॥ सतंद्विपमथारुह्यविरूपाक्षोमहाबलः ॥ ननर्दभीमनिर्ह्रादंवानरानभ्यधावत॥१५॥ सुग्रीवेसशरान्घोरान्विससर्जचमूमुखे॥ स्थापयामासचोद्विग्नान्राक्षसान्संप्रहर्षयन् ॥१६॥ सोऽतिविद्धःशितैर्बाणैःकपींद्रस्तेनरक्षसा॥ चुक्रोशच महाक्रोधोवधेचास्यमनोदधे ॥ १७ ॥ ततःपादपमुद्धृत्यशूरःसंप्रधनोहरिः ॥ अभिपत्यजघानास्यप्रमुखेतंमहागजम् ॥ १८ ॥ सतुप्रहारा भिहतःसुग्रीवेणमहागजः ॥ आपासर्पद्धनुर्मात्रंनिषसादननादच ॥ १९ ॥ गजात्तुमथितात्तूर्णमपक्रम्यसवीर्यवान् राक्षसोऽभिमुखःशत्रुंप्र त्युद्गम्यततःकपिम् ॥ २० ॥ आर्षभंचर्मखड्गंचप्रगृह्यलघुविक्रमः ॥ भर्त्सयन्निवसुग्रीवमाससादव्यवस्थितम् ॥ २१ ॥

करता घबराये हुए राक्षसोंको हर्षित करके फिर रणमें स्थापित करता हुआ ॥१६॥ वानरराज सुग्रीवजीउस राक्षस करके तीखे बाणोंसे अतिविद्ध हो क्रोधमें भर वारंवार अतिशब्द कर उस राक्षसके वध करनेका अभिलाष करते हुए ॥१७॥ इसके उपरान्त शूर समरविशारद वानरश्रेष्ठ सुग्रीवजीने एक वृक्ष उखाड दौडकर उस हाथीके मस्तकपर मारा जिसपर विरूपाक्ष चढा हुआ था ॥ १८ ॥ जब वह महागज सुग्रीवजीके प्रहारसे अत्यन्त व्याकुल हो तीन हाथ पीछेको हटगया और आर्त नाद करके चिंघाडता हुआ पृथ्वीपर बैठगया ॥१९॥ वीर्यवान् निशाचर विरूपाक्ष शीघ्रतासे छलांग मार मथित हुए हाथीसे उतर अपने शत्रु वानरराज सुग्रीवजीकी ओर धाया ॥ २० ॥ वह अतिशीघ्र कर्मकारी वीर विरूपाक्ष गैंडेकी ढाल और खड्गः ग्रहण करके सामने खडे हुए सुग्रीवजीकी

निन्दा करता हुआ उनके निकट पहुँचा ॥ २१ ॥ यह देखकर वानरराज सुग्रीवजीने भी क्रोधित हो मेघाकार एक बडीभारी शिला ग्रहण करके विरूपाक्ष राक्षसपर चलाई ॥२२॥ उस विपुलविक्रमकारी राक्षसश्रेष्ठ विरूपाक्षने भी उस शिलाको अपने ऊपर गिरती हुई देख किसी प्रकारसे उसको बचाय सुग्रीवजीके ऊपर खड्गका प्रहार किया ॥ २३ ॥ वानरराज सुग्रीवजी बलशाली निशाचरके उस खड्ग प्रहारसे घायल हो क्षणकालके निमित्त मूर्च्छित हो पृथ्वीपर गिर पडे ॥ २४ ॥ इसके उपरान्त झटपट उठ मुक्का बांध सुग्रीवजीने उस संग्राममें वह घूंसा विरूपाक्षकी छातीमें मारा ॥ २५ ॥ निशाचर विरूपाक्षने घूंसा खाय अत्यन्त क्रुद्ध हो सब सेनाके सामने खड्ग से सुग्रीवजीका ॥२६॥ कवच काटकर गिरादिया; तब सुग्रीवजी दोनों पैरोंको सकोडते हुए पृथ्वीपर गिरपडे और

सहितस्यापिसंगृह्यप्रगृह्यविपुलांशिलाम् ॥ विरूपाक्षस्यचिक्षेपसुग्रीवोजलदोपमाम् ॥२२॥ सतांशिलामापतंतींदृष्ट्वाराक्षसपुंगवः ॥ अपक्रम्य सुविक्रांतःखड्गेनप्राहरत्तदा ॥ २३ ॥ तेनखड्गप्रहारेणरक्षसाबलिनाहतः ॥ मुहूर्तमभवद्भूमौविसंज्ञइववानरः ॥ २४ ॥ सहसासतदोत्पत्यराक्षसस्यमहाहवे ॥ मुष्टिंसंवर्त्यवेगेनपातयामासवक्षसि ॥ २५ ॥ मुष्टिप्रहाराभिहतोविरूपाक्षोनिशाचरः ॥ तेनखड्गेनसंक्रुद्धःसुग्रीवस्यचमूमुखे ॥ २६ ॥ कवचंपातयामासपद्भ्यामभिहतोऽपतत् ॥ ससमुत्थायपतितःकपिस्तस्यव्यसर्जयत् ॥ २७ ॥ तलप्रहारमशनेःसमानंभीमनिःस्वनम् ॥ तलप्रहारंतद्रक्षःसुग्रीवेणसमुद्यतम् ॥ २८ ॥ नैपुण्यान्मोचयित्वैनंमुष्टिनोरस्यताडयत् ॥ ततस्तुसंक्रुद्धतरःसुग्रीवोवानरेश्वरः ॥२९॥ मोक्षितंचात्मनोदृष्ट्वाप्रहारंतेनरक्षसा ॥ सददर्शांतरंतस्यविरूपाक्षस्यवानरः ॥ ३० ॥ ततोऽन्यंपातयत्क्रोधाच्छंखदेशेमहातलम् ॥ महेंद्राशनिकल्पेनतलेनाभिहतःक्षितौ ॥ ३१ ॥ पपातरुधिरक्लिन्नःशोणितंहिसमुद्गिरन् ॥ स्रोतोभ्यस्तुविरूपाक्षोजलंप्रस्रवणादिव ॥ ३२ ॥ विवृत्तनयनक्रोधात्सफेनरुधिराप्लुतम् ॥ ददृशुस्तेविरूपाक्षंविरूपाक्षतरंकृतम् ॥ ३३ ॥

फिर झटपट उठकर उस राक्षसकी छातीमें ॥२७॥ वज्रके समान एक लात बडे भयंकर शब्दसे मारी परंतु सुग्रीवजीकी उठाई हुई उस लातसे राक्षस बचगया ॥२८॥ क्योंकि वह युद्धमें बडा निपुण था और वानरराज सुग्रीवजीकी छातीमें उसने एक घूंसा मारा; तब वानरराज सुग्रीवजी बहुत क्रोधित हुए ॥२९॥ क्योंकि इनके प्रहारसे वह राक्षस बच गया । उसी बीचमें अवसर देख सुग्रीवजीने विरूपाक्ष राक्षसके ॥३०॥ माथेपर और लात बडे बलसे मारी इन्द्रके वज्रके समान उस लातके लगनेसे ॥ ३१ ॥ रुधिरसे भीगा हुआ और रुधिरही उगलता हुआ वह राक्षस पृथ्वीपर गिर पडा, राक्षस विरूपाश इस प्रकारसे गिराजिस प्रकार सोतेसे जल गिराता हुआ पर्वत गिरे ॥३२॥ तब वानरगणोंने झागसहित रुधिरसे सने और बडे २ नेत्र फैलाये राक्षस विरूपाक्षके निकट

जाकर देखा ॥३३॥ उस शत्रुके घूमते हुए दोनों नेत्र कंपायमान होते हैं, और वह वीर सब देहमें रुधिर लगाये इधर उधर करवटें लेता आर्तवाणीसे चिल्लाय रहा है॥३४॥उस कालमें राक्षस और वानरगणोंकी सेना समर करनेके लिये अपने सामने खडी हुई वेगवान् और भयंकराकार पुल टूटे हुए दो महासमुद्रोंके समान कठोर शब्द करने लगी ॥३५॥ और वानरराज सुग्रीवजी करके महाबलवान् विरूपाक्षको मृतक देखकर कपि और राक्षसोंकी सेना बढी हुई तरंग सहित गंगाजीके जलके समान होगई ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० युद्धकांडे भाषायां सप्तनवतितमः सर्गः ॥९७॥ उस कालमें उस महासमरके बीच दोनों ओरकी सेना परस्पर एक दूसरेसे मारी जाकर ग्रीष्म समयके क्षीण जलवाले सरोवरके समान होगई ॥१॥ इस ओर अपनी सेनाका नाश और

स्फुरंतंपरिवर्तंतंपार्श्वेनरुधिरोक्षितम् ॥ गरुणंचविनर्दंतंददृशुःकप्योरिपुम् ॥ ३४ ॥ तथातुतौसंयतिसंप्रयुक्तौतरस्विनौवानरराक्षसानाम् ॥ बलार्णवौसस्वनतुश्चभीमौमहार्णवौद्राविवभिन्नसेतू ॥ ३५ ॥ विनाशितंप्रेक्ष्यविरूपनेत्रंमहाबलंतंहरिपार्थिवेन ॥ बलंसमेतंकपिराक्षसानामुद्वृत्तगंगाप्रतिमंबभूव ॥ ३६ ॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च०सा०युद्धकांडेसप्तनवतितमः सर्गः ॥ ९७ ॥ हन्यमानेबलेतूर्णमयोन्यंतेमहामृधे ॥ सरसीवमहाघर्मसूपक्षीणेबभूवतुः ॥ १ ॥ स्वबलस्यतुघातेनविरूपाक्षवधेनच॥ बभूवद्विगुणंक्रुद्धोरावणोराक्षसाधिपः ॥ २ ॥ प्रक्षीणंस्वबलंदृष्ट्वावध्यमानंवलीमुखैः ॥ बभूवास्यव्यथायुद्धेदृष्ट्वादैवविपर्ययम् ॥ ३ ॥ उवाचचसमीपस्थंमहोदरमनंतरम् ॥ अस्मिन्कालेमहाबाहोजयाशात्वयिमेस्थिता ॥४॥ जहिशत्रुचमूंवीरदर्शयाद्यपराक्रमम् ॥ भर्तृपिंडस्यकालोऽयंनिर्वेष्टुंसाधुयुध्यताम् ॥ ५ ॥ एवमुक्तस्तथेत्युक्काराक्षसेंद्रोमहोदरः ॥ प्रविवेशारिसेनांसपतंगइवपावकम् ॥ ६ ॥

विरूपाक्षको मृतक देखकर राक्षसराज रावण दूना क्रोधित हुआ॥२॥ रावण अपनी सेनाका क्षय और वानरोंके हाथसे उन राक्षसोंका मरना देख समझता हुआ कि, भाग्यही उलटा है इसी कारणसे वह मनमें बहुतही व्यथित हुआ॥३॥और इसके पीछे अपने समीपही खडे हुए महोदरसे बोला कि, हे महावीर ! इस समय तुमही हमारी जयप्राप्तिके एक आशारूप हो ॥४॥ इसलिये हे वीर ! तुम युद्धकी यात्रा करके अपना विक्रम दिखा कर शत्रुकी सेनाको संहार करो हमने इतने समयसे तुमको अन्न दान करके पाला पोषाहै इस समय तुम्हारा प्रत्युपकार करनेकायथार्थ समय आ पहुँचा है ॥ ५ ॥ राक्षस रावणके यह कहनेपर राक्षसोंमें इन्द्र महोदर बहुत अच्छा कह शत्रुकी सेनामें प्रवेश करता हुआ कि, जिस प्रकार पतंग अग्निमें प्रवेश करता है ॥ ६ ॥

इसके उपरान्त उस महाबलवान् महोदरसे अपने स्वामीके वचन व अपने बडे भारी तेजसे वानरोंकी सेनाको मार बिथरा दिया ॥७॥ महाबलवान् वानरभी बडी २ शिलायें ग्रहणकर भयंकर शत्रुओंकी सेनामें प्रवेश कर राक्षसगणोंका नाश करने लगे ॥८॥ उस महासंग्राममें महोदरने क्रोधित हो अपने सुवर्णकी फोंकवाले तीखे बाणोंसे वानरोंमेंसे किसीका हाथ काटडाला और किसी २ की जांघें काटकर फेंक दीं ॥९॥ उस काल वानरगण राक्षस महोदरके प्रहारसे व्याकुल हो दशों दिशाओंको भागने लगे और कुछएक भयसे भीत हो सुग्रीवजीकी शरणमें गये ॥१०॥ तब वानरराज सुग्रीवजी अपनी सेनाको वानरोंकी छिन्नभिन्न दशा देख उनको पीछे रख आप स्वयं महोदरके सन्मुख जानेको आगे बढे ॥११॥ माहातेजस्वी वानरराज सुग्रीवजीने राक्षस महोदरका प्राणसंहार

ततःसकदनंचक्रेवानराणांमहाबलः ॥ भर्तृवाक्येनतेजस्वीस्वेनवीर्येणचोदितः ॥७॥ वानराश्चमहासत्त्वाःप्रगृह्यविपुलाःशिलाः ॥ प्रविश्यारि बलंभीमंजघ्नुस्तेसर्वराक्षसान् ॥ ८ ॥ महोदरःसुसंक्रुद्धःशरैःकांचनभूषणैः ॥ चिच्छेदपाणिपादोरूवानराणांमहाहवे ॥९॥ ततस्तेवानराःसर्वे राक्षसानांमहामृधे ॥ दिशोदशद्रुताःकेचित्केचित्सुग्रीवमाश्रिताः ॥ १० ॥ प्रभग्नंसमरेदृष्ट्वावानराणांमहाबलम् ॥ अभिदुद्रावसुग्रीवोमहोदर मनंतरम् ॥११॥ प्रगृह्यविपुलांघोरांमहीधरसमांशिलाम् ॥ चिक्षेपचमहातेजास्तद्वधायहरीश्वरः ॥ १२ ॥ तामापतंतींसहसाशिलांदृष्ट्वामहो दरः ॥ असंभ्रांतस्ततोबाणैर्निर्बिभेदततःशिलाम् ॥१३॥ रक्षसातेनबाणौघैर्निकृत्तासासहस्रधा ॥ निपपाततदाभूमौगृध्रचक्रमिवाकुलम् ॥१४॥ तांतुभिन्नांशिलांदृष्ट्वासुग्रीवःक्रोधमूर्च्छितः ॥ सालमुत्पाटयचिक्षेपतंसचिच्छेदनैकधा ॥ १५ ॥ शरैश्चविददारैनंशूरःपरबलार्दनः ॥ सददर्श ततःक्रुद्धःपरिघंपतितंभुवि ॥ १६ ॥ आविध्यतुसतंदीप्तंपरिघंतस्यदर्शयन् ॥ परिघेणोग्रवेगेनजघानास्यहयोत्तमान् ॥ १७ ॥

करनेके लिये पर्वततुल्य एक बडीभारी शिला ग्रहण करके उसके ऊपर चलाई ॥ १२ ॥ परंतु महोदरने उस शिलाको सहसा अपने ऊपर आती हुई देखकर सावधानचित्त हो बाणोंसे उसको खंड २ करडाला ॥१३॥ निशाचर महोदरसे बाणद्वारा हजारों टुकडे हुई वह शिला व्याकुल हुए दलबांधे गिद्धोंके चक्रके समान पृथ्वीपर गिरपडी ॥ १४ ॥ शिलाको खंड २ हुई देखकर सुग्रीवजी अत्यन्त क्रोधित हुए, और एक बडाभारी शालका वृक्ष उस राक्षसपर चलाया परन्तु राक्षसने उसके भी खंड २ कर दिये ॥ १५ ॥ और उस निशाचरने शत्रुओंकी सेनाको पीडा पहुँचानेवाले उन सुग्रीव शूरको बहुत बाणोंसे मारा, तब सुग्रीवजीने बहुत क्रोधितहो पृथ्वीपर पडा हुआ एक परिघ देखा ॥१६॥ और उसको जल्दीसे ग्रहण कर और निशाचरको दिखाकर; उस उग्र वेगवाले

परिघसे उस राक्षसके श्रेष्ठ घोडोंको मारडाला ॥१७॥ घोडोंके मरजानेपर वीरराक्षस महोदर कूदकर उस अश्वविहीन महारथसे उतरपडा और उसने क्रोधमें भरकर एक महागदा ग्रहण की ॥१८॥ उस कालमें बिजलीसे युक्त दो बादलोंके समान और दो बैलोंके समान एक गदा लिये एक परिघ धारण किये वह दोनों सिंहनाद कर २ के परस्पर समर करने लगे ॥१९॥ इसके उपरान्त निशाचर महोदरने क्रोधसे लाल लाल नेत्र कर वह गदा वानरराज सुग्रीवजीपर चलाई इस गदाका तेज सूर्यके समान था और यह प्रदीप्त होकर आगेको चली ॥२०॥ क्रोधसे लाल २ नेत्र किये महाबलवान् वानरराज सुग्रीवजीने गदा को अपने ऊपर आती हुई देख परिघ उठाय ॥ २१ ॥ उसकी गदाके ऊपर चलाया, परन्तु वह परिघही गदाके प्रहारसे टूट गया; और वह गदाभी व्यर्थ होकर

तस्माद्धतहयाद्वीरःसोपप्लुत्यमहारथात् ॥ गदांजग्राहसंक्रुद्धोराक्षसोऽथमहोदरः ॥ १८ ॥ गदापरिघहस्तौतौयुधिवीरौसमीययुः ॥ नर्दंतौ गोवृषप्रख्यौघनाविवसविद्युतौ ॥ १९ ॥ ततःक्रुद्धोगदांतस्यचिक्षेपरजनीचरः ॥ ज्वलंतींभास्कराभासांसुग्रीवायमहोदरः ॥ २० ॥ गदांतांसु महाघोरामापतंतींमहाबलः ॥ सुग्रीवोरोषताम्राक्षःसमुद्यम्यमहाहवे ॥ २१ ॥ आजघानगदांतस्यपरिघेणहरीश्वरः॥पपाततरसा भिन्नःपरिघ स्तस्यभूतले ॥ २२ ॥ ततोजग्राहतेजस्वीसुग्रीवोवसुधातलात् ॥ आयसंमुसलंघोरंसर्वतोहेमभूषितम् ॥ २३ ॥ सतमुद्यम्यचिक्षेपसोऽप्यस्य प्राक्षिपद्गदाम् ॥ भिन्नावन्योन्यमासाद्यपेततुस्तौमहीतले ॥२४॥ ततोभिन्नप्रहरणौमुष्टिभ्यांतौसमीयतुः॥ तेजोबलसमाविष्टौदीप्ताविवहुताशनौ ॥ २५ ॥ जघ्नतुस्तौतदान्योन्यंनदंतौचपुनःपुनः ॥ तलैश्चान्योन्यमासाद्यपेततुश्चमहीतले ॥ २६ ॥

पृथ्वीपर गिरपडी ॥२२॥ इसके उपरान्त तेजस्वी सुग्रीवजीनें एक काले लोहेका बना हुआ घोररूप मूसल पृथ्वीपरसे उठाय लिया कि जो चारों ओर सुवर्णसे भूषित हो रहा था, उस मूसलको उठायकर सुग्रीवजीने चलाया ॥ २३ ॥ यह देखकर महोदरने भी उसके विफल करनेके लिये एक गदा चलाई परस्पर एक दूसरेसे टकरानेके कारण गदा और मूसल दोनों चूर्ण होकर पृथ्वीपर गिर पड़े ॥ २४ ॥ इसके उपरान्त दोनों वीर अपने २ अस्त्र शस्त्रोंको व्यर्थ देखकर घूँसाघांसीसे युद्ध करनेके लिये तैयार हुए, यह दोनोंही वीर अतिशय तेजस्वी देखनेमें प्रदीप्त अग्निके समान थे ॥ २५ ॥ और दोनोंही परस्पर एक दूसरेके ऊपर चोट चलाय २ वारंवार सिंहनाद करने लगे और दोनोंही एक दूसरेको लात मारकर पृथ्वीपर गिराने लगे ॥ २६ ॥

फिर शीघ्रही उठकर परस्पर एक दूसरेको मारते और एक दूसरेको ऊपरको हाथ चलाते परन्तु परस्पर कोई भी नहीं हारा ॥ २७॥ शत्रुघाती दोनों वीर इस प्रकारसे बहुत देरतक बाहु युद्ध करते रहे पर कोई भी किसीसे नहीं हारा और दोनोंही थकगये तब महोदर राक्षसने एक निकटही पडा हुआ खड्ग हाथमें लिये और एक ढालभी ग्रहण की ॥ २८॥ वेगशालियोंमें श्रेष्ठ वानरवीर सुग्रीवजीने भी ढालके सहित पृथ्वीपर पडा हुआ एक बडाभारी खड्ग ग्रहण किया, इस प्रकार ढाल तलवार ग्रहण करने और चलनेमें बडे चतुर दोनों वीर हर्षित हो खड्ग उठाय बडे शब्द करते हुएएक दूसरेकेऊपरको दौडे ॥२९॥ दक्षिणावर्तमंडल और इधर उधर दोनों वीर कावा देने लगे दोनों अपनी२ विजयका अभिलाष करके क्रोध किये हुए थे ॥३०॥ उसी समयमें अपनी बडाई चाहने वाले शूर दुर्मतिमहोदरने

उत्पेततुस्तदातूर्णंजघ्नतुश्चपरस्परम् ॥ भुजैश्चिक्षिपतुर्वीरावन्योन्यमपराजितौ ॥२७॥ जग्मतुस्तौश्रमंवीरौबाहुयुद्धेपरंतपौ ॥ जहारचतदाखड्ग मदूरपरिवर्तिनम् ॥ २८ ॥ ततोरोषपरीतांगौनदंतावभ्यधावताम् ॥ उद्यतासीरणेहृष्टौयुद्धेशस्त्रविशारदौ ॥ २९ ॥ दक्षिणंमंडलंचोभौसुतूर्णं संपरीयतुः ॥ अन्योन्यमभिसंक्रुद्धौजयेप्रणिहिताबुभौ ॥ ३० ॥ सतुशूरोमहावेगोवीर्यश्लाघीमहोदरः ॥ महावर्मणितंखड्गंपातयामासदुर्मतिः ॥ ३१ ॥ लग्नमुत्कर्षतःखड्गंनखड्गेनकपिकुंजरः ॥ जहारसशिरस्त्राणंकुंडलोपगतंशिरः ॥ ३२ ॥ निकृत्तशिरसस्तस्यपतितस्यमहीतले ॥ तद्बलंराक्षसेंद्रस्यदृष्ट्वातत्रनदृश्यते ॥ ३३ ॥ हत्वातंवानरैःसार्धंननादमुदितोहरिः ॥ चुक्रोधचदशग्रीवोबभौहृष्टश्चराघवः ॥ ३४ ॥ विषण्णवदनाःसर्वेराक्षसादीनचेतसः ॥ विद्रवंतिततःसर्वेभयवित्रस्तचेतसः ॥ ३५ ॥ महोदरंतंविनिपात्यभूमौमहागिरेःकीर्णमिवैकदेशम् ॥ सूर्यात्मजस्तत्रराजलक्ष्म्यासूर्यःस्वतेजोभिरिवाप्रधृष्यः ॥ ३६ ॥

महावेगसे बडा भारी खड्ग सुग्रीवजीके बडे बख्तरमें मारा ॥३१॥ वह खड्ग लगकर सुग्रीवजीके बख्तरमें उलझ गया जैसेही वह राक्षस उस वर्ममेंसे खड्गको खेंचने लगा वैसेही वानरराज सुग्रीवजीने कुंडलशोभित और कुंडी आदि शिरस्त्राणसे युक्त उसका मस्तक काटकर फेंक दिया ॥ ३२ ॥ उसके मस्तकको कटकर पृथ्वीपर पडा देखकरही उस राक्षसेन्द्रकी सेना भागने लगी ॥३३॥ महोदरके मारे जानेपर वानरोंके सहित वानरराज सुग्रीवजी आनंदित हुए, रावणने कोप किया और श्रीरामचन्द्रजी हर्षित होकर प्रकाश पाने लगे ॥३४॥ सब राक्षसगणभयसे विह्वल हो और शोकाकुल मुखसे और दीनमनसे चारों ओरको भागने लगे ॥३५॥ इस प्रकारसे महापर्वतके विदीर्ण हुए एक भागके समान महोदरको पृथ्वीपर गिराय विजयी सूर्यके पुत्र वानरेंद्र सुग्रीवजी अपने तेजसे दुर्द्धर्ष सूर्यके

समान शोभायमान हुए ॥ ३६ ॥ उस अवसरमें आकाशमें टिके हुए देवता, सिद्ध, राक्षसगण और पृथ्वीपर स्थिर हुए सबही प्राणी हर्षसे प्रफुल्लनेत्र हो रणमें
विराजमान विजयको प्राप्त हुए उन वीर सुग्रीवजीको देखने लगे ॥३७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामष्टनवतितमः सर्गः ॥ ९८ ॥
सुग्रीवजीसे महोदरको मृतक देख महाबलवान् निशाचर महापार्श्व क्रोधके मारे लाल२नेत्रकर सुग्रीवजीको देखने लगा ॥१॥ और गणोंके समूहसे अंगदजीकी
भयंकररूप सेनाको पीडित करने लगा; मुख्य २ वानरगणोंके उत्तम२अंगोंमें बाण मारकर वह राक्षस ॥२॥ काट२गिराने लगा जिसप्रकार पवन गुच्छेसे फलको
गिराता है, उस राक्षसने किसी२की बांहें काटडालीं ॥३॥ किसी२वानरकी बगलचीर फाड डालीं इस प्रकार वानरगण महापार्श्वकी बाणवर्षासे अत्यन्त पीडित

अथविजयमवाप्यवानरेंद्रःसमरमुखेसुरसिद्धयक्षसंघैः ॥ अवनितलगतैश्चभूतसंघैर्हरुषसामाकुलितैर्निरीक्षमाणः ॥३७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामा०
वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे अष्टनवतितमः सर्गः ॥ ९८ ॥ महोदरेतुनिहतेमहापार्श्वोमहाबलः ॥ सुग्रीवेणसमीक्ष्याथक्रोधा
त्संरक्तलोचनः ॥१॥ अंगदस्यचमूंभीमांक्षोभयामाससमार्गणैः ॥ सवानराणांमुख्यानामुत्तमांगानिराक्षसः ॥२॥ पातयामासकायेभ्यःफलंवृंता
दिवानिलः ॥ केषांचिदिषुभिर्बाहूंश्चिच्छेदाथसराक्षसः ॥३॥ वानराणांसुसंरब्धःपार्श्वंकेषांचिदाक्षिपत् ॥ तेऽर्दिताबाणवर्षेणमहापार्श्वेनवा
नराः ॥ ४ ॥ विषादविमुखाःसर्वेबभूवुर्गतचेतसः ॥ निशम्यबलमुद्विग्नमंगदोराक्षसार्दितम् ॥ ५ ॥ वेगंचक्रेमहावेगःसमुद्रइवपर्वसु ॥ आय
संपरिघंगृह्यसूर्यरश्मिसमप्रभम् ॥६॥ समरेवानरश्रेष्ठोमहापार्श्वेन्यपातयत् ॥ सतुतेनप्रहारेणमहापार्श्वोविचेतनः ॥ ससूतःस्यंदनात्तस्माद्वि
संज्ञश्चापतद्भुवि ॥ ७ ॥ तस्यर्क्षराजस्तेजस्वीनीलांजनचयोपमः ॥ निष्पत्यसुमहावीर्यःस्वयूथान्मेघसन्निभात् ॥ ८ ॥ प्रगृह्यगिरिशृंगाभां
क्रुद्धःसविपुलांशिलाम् ॥ अश्वाञ्जघानतरसाबभंजस्यंदनंचतम् ॥ ९ ॥

होगये॥४॥वानरगण विषादित होगये उनको कार्याकार्यका विचार भी नहीं रहा औरवह सबही भागने लगे, तब महावेगवान् अंगदजी अपनी सेनाको बलसहित
राक्षस महापार्श्वसे मर्दित और उदास देख॥५॥पूर्णमासीके समुद्रके समान वेग धारणकर सूर्यकी किरणोंके समान प्रभावाला एक काले लोहेका बना हुआ परिघ ग्रहण
किया ॥६॥ और वानरश्रेष्ठ अंगदजीने वह परिघ संग्राममें महापार्श्व राक्षसपर चलाया उस परिघके प्रहारसे महापार्श्व चेतनाविहीन हो सारथिके सहित पृथ्वी
पर गिरपडा ॥७॥ उसी अवसरमें नीले अंजनके ढेरके समान महावीर्ययुक्त तेजस्वी ऋक्षराज जाम्बवान मेघके समान अपने दलसे कूदकर निकल आये ॥८॥
जाम्बवानजीने अत्यंत क्रोध करके पर्वतके शृङ्गके समान एक बडी भारी शिला ग्रहण करके महापार्श्वके रथपर देमारी कि, जिससे क्षणभरमें महापार्श्वका

रथ चूर्ण२हो गया और घोडे मृतक हो गये ॥९॥महाबलवान् महापार्श्वभी एक मुहूर्तभरमें चेतना पाय असंख्य बाण धनुषपर चढाय अंगदजीके मारता हुआ ॥१०॥ और उसने तीन बाण ऋक्षराज जाम्बवानकी छातीमे मारे, और गवाक्षको भी बहुत बाणोंसे बींध डाला ॥११॥ गवाक्ष व जाम्बवानजीको बाणोंसे पीडित देखकर क्रोधसे अधीर हो एक घोर परिघ ग्रहण किया ॥ १२ ॥ और अंगदजीने लाल२नेत्र करके वह लोहेसे बना हुआ सूर्य की किरणोंके समान प्रभावाला परिघ दूर खडेहुए राक्षस ॥१३॥ महापार्श्वके वध करनेके अभिलाषसे बालिकुमार अंगदजीने दोनों भुजाओंसे पकड अतिवेगसे घुमाय उसके ऊपर चलाया ॥ १४ ॥ अतिवेग और बलसे छूटे हुए उस परिघने उस राक्षसका धनुष खंडित किया, बाण काट डाला कुंडी आदि शिरस्त्राणगिरादिये ॥ १५॥

मुहूर्ताल्लब्धसंज्ञस्तुमहापार्श्वोमहाबलः ॥ अंगदंबहुभिर्बाणैर्भूयस्तंप्रत्यविध्यत ॥ १० ॥ जांबवंतंत्रिभिर्बाणैराजघानस्तनांतरे ॥ ऋक्षराजगवाक्षंचजघानबहुभिःशरैः ॥ ११ ॥ गवाक्षंजांबवंतंचसदृष्ट्वाशरपीडितौ ॥ जग्राहपरिघंघोरमंगदःक्रोधमूर्च्छितः ॥ १२ ॥ तस्यांगदःसरोषाक्षोराक्षसस्यतमायसम् ॥ दूरस्थितस्यपरिघंरविरश्मिसमप्रभम् ॥ १३ ॥ द्वाभ्यांभुजाभ्यांसंगृह्यभ्रामयित्वाचवेगवत् ॥ महापार्श्वायचिक्षेपवधार्थंवालिनःसुतः ॥१४॥ सतुक्षिप्तोबलवतापरिघस्तस्यरक्षसः ॥ धनुश्चसशरंहस्ताच्छिरस्त्राणंचपातयत् ॥ १५ ॥ तंसमासाद्यवेगेनवालिपुत्रःप्रतापवान् ॥ तलेनाभ्यहनत्क्रुद्धःकर्णमूलेसकुंडले ॥ १६ ॥ सतुक्रुद्धोमहावेगोमहापार्श्वोमहाद्युतिः ॥ करेणैकेनजग्राहसुमहांतंपरश्वधम् ॥१७॥ तंतैलधौतंविमलंशैलसारमयंदृढम् ॥ राक्षसःपरमक्रुद्धोवालिपुत्रेन्यपातयत् ॥१८॥ तेनवामांसफलकेभृशंप्रत्यवपातितम् ॥ अंगदोमोक्षयामाससरोषःसपरश्वधम् ॥ १९ ॥ सवीरोवज्रसंकाशमंगदोमुष्टिमात्मनः ॥ संवर्तयत्ससंक्रुद्धः पितुस्तुल्यपराक्रमः ॥ २० ॥ राक्षसस्यस्तनाभ्याशेमर्मज्ञोहृदयंप्रति ॥ इंद्राशनिसमस्पर्शंसमुष्टिंविन्यपातयत् ॥ २१ ॥

यह देखकर प्रतापवान् अंगदजीने अतिवेगसे उसके निकट जा क्रोधमें भर उसके कुंडल शोभित कानके मूल अर्थात् कनपटीमें एक लात मारी ॥१६॥ तबमहाद्युतिमान् महापार्श्वने क्रोधित होकर एक हाथमें एक बडा भारी फरशा लिया ॥१७॥ यह फरशा तेल लगाकर साफ किया गया, पर्वतसारसेभी अति पुष्ट था राक्षसने परमक्रोधसे वह फरशा अङ्गदजीको मारा ॥१८॥ परन्तु क्रोधपूर्ण अङ्गदजीने अतिबलसे बांयी ओर गिरे हुए उस फरशेको व्यर्थ करदिया ॥१९॥ अनन्तर पिताके समान पराक्रमशाली वीर अंगदजीने क्रोधित होकर वज्रके समान मूका बांधकर ॥२०। राक्षसके हृदयमें मर्मके जाननेवाले अङ्गदजीने इन्द्रके वज्रके समान स्पर्श करनेवाला वह मूका मारा ॥ २१ ॥

उस मूकेके लगनेसे निशाचरका हृदय विदीर्ण होगया और वह प्राणरहित होकर रणमें पृथ्वीपर गिरपडा ॥ २२ ॥ इस महापार्श्वके निहत होकर पृथ्वीपर गिरनेपर उसकी सेना भाग खडी हुई, तब रावण अत्यन्त क्रोधित हुआ ॥ २३ ॥ उस समय देवराज इन्द्रजीके सहित देवतालोगोंका और अङ्गदजीके सहित हर्षित वानर गणोंका ऐसा तुमुल सिंहनाद होनेलगा कि; अटा अटारी और समस्त फाटकोंके सहित लंकानगरीमानो उस शब्दसे फूटी जाती थी॥२४॥ इन्द्रका शत्रु राक्षसोंमें इन्द्र रावण संग्राममें शूर और वानर लोगोंका वह बडा भारी सिंहनाद सुनकर अत्यन्त क्रोधित हो फिर संग्राम करनेको तैयार हुआ ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां नवनवतितमः सर्गः ॥९९॥ वह रावण, महोदर व महापार्श्वको मारागया देखकर व महाबली वीर विरूपाक्षको

तेनतस्यनिपातेनराक्षसस्यमहामृधे ॥ पफालहृदयंचास्यसपपातहतोभुवि ॥ २२ ॥ तस्मिन्विनिहतेभूमौतत्सैन्यंसंप्रचुक्षुभे ॥ अभवच्चमहान्क्रोधःसमरेरावणस्यतु ॥२३॥ वानराणांप्रहृष्टानांसिंहनादःसुपुष्कलः ॥ स्फोटयन्निवशब्देनलंकासाट्टालगोपुराम् ॥ सहेंद्रेणेवदेवानांनादःसमभवन्महान् ॥ २४ ॥ अथेंद्रशत्रुस्त्रिदशालयानांवनौकसांचैवमहाप्रणादम् ॥ श्रुत्वासरोषंयुधिराक्षसेंद्रःपुनश्चयुद्धाभिमुखोऽवतस्थे ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० च० सा० युद्धकांण्डे० नवनवतितमःसर्गः ॥ ९९ ॥ महोदरमहापार्श्वौहतौदृष्ट्वासरावणः ॥ तस्मिंश्चनिहतेवीरे विरूपाक्षेमहाबले॥ १ ॥ आविवेशमहान्क्रोधोरावणंतुमहामृधे ॥ सूतंसंचोदयामासवाक्यंचेदमुवाचह ॥ २ ॥ निहतानाममात्यानांरुद्धस्यनगरस्यच ॥ दुःखमेवापनेष्यामिहत्वातौरामलक्ष्मणौ ॥ ३ ॥ रामवृक्षंरणेहन्मिसीतापुष्पफलप्रदम् ॥ प्रशाखायस्यसुग्रीवोजांबवान्कुमुदोनलः॥ ४ ॥ द्विविदश्चैवमैंदश्चअंगदोगंधमादनः ॥ हनूमांश्चसुषेणश्चसर्वेचहरियूथपाः ॥ ५ ॥ सदिशोदशघोषेणरथस्यातिरथोमहान् ॥ नादयन्प्रययौतूर्णंराघवंचाभ्यधावत ॥६॥ पूरितातेनशब्देनसनदीगिरिकानाना ॥ संचचालमहीसर्वात्रस्तसिंहमृगद्विजा ॥ ७ ॥

भी मारा हुआ देखकर ॥ १ ॥ रावणको महाक्रोध होआया और सारथीको शीघ्रतासे प्रेरण करता हुआ यह बोला ॥२॥ आज हम राम लक्ष्मणको मारके मंत्रियोंके मारेजानेका और पुरीके घेरे जानेका दुःख दूर करैंगे ॥ ३ ॥ इस समय रणमें रामरूपी वृक्षके उखाड डालनेहीका मेरा अभिलाष हैं; सीता इस वृक्षका पुष्प और फल है, उसकी शाखा टहनियें सुग्रीव, जाम्बवान, कुमुद, नल ॥ ४ ॥ द्विविद, मैन्द, अंगद, गंधमादन, हनुमान्, सुषेण व और सब वानरयूथ हैं ॥ ५ ॥ अतिरथ बडे आशयवाला रावण यह वचन कह रथके शब्दसे दशों दिशाओंको शब्दायमान करता रघुनाथजीके सम्मुख दौडा ॥ ६ ॥ उस कालमें उस शब्दसे नदी पर्वत और वनोंके सहित समस्त पृथ्वी परिपूर्ण होकर कम्पायमान होगई; और मृग व पक्षीगण अत्यन्त त्रासित हुए ॥ ७ ॥

इसके उपरांत राक्षसराज रावण अत्यन्त घोर अतिदारुण तामस अस्त्र चलाय वानरोंको सर्वप्रकारसे भस्म करने लगा ॥८॥ ब्रह्माजीने स्वयं उसअस्त्रको चलाया था इस कारण वानरगण उसको नहीं सहसके और श्रेणियोंसे कूद २ कर भागने लगे कि, जिनके भागनेसे पृथ्वीपर बडी भारी धूलउडी ॥९॥ तब वानरोंकी बहुतसारी सेनाको रावणके उत्तम बाणोंसे चोट खाय इधर उधर भागती हुई देख श्रीरामचन्द्रजी आगे बढे ॥ १० ॥ तब राक्षसशार्दूल रावणने इस प्रकार वानरोंकी सेनाको भगाय वहांपर श्रीरामचन्द्रजीको विराजमान देखा जो कि, कभी किसीसे हारे नहीं थे ॥११॥ वह अपने भ्राता लक्ष्मणजीके सहित विराजमान थे जैसे विष्णुजी के साथ इन्द्रजी बैठे हों; जो कि, बडाभारी धनुष उठाये मानो आकाशको स्पर्शहीकररहे थे ॥१२॥ कमलदलके समान विशालने

तामसंसुमहाघोरंचकारास्त्रंसुदारुणम् ॥ निर्ददाहकपीन्सर्वांस्तेप्रपेतुःसमंततः ॥८॥ उत्पपातरजोभूमौतैर्भग्नैःसंप्रधावितैः ॥ नहितत्सहितुंशेकुर्ब्रह्मणानिर्मितंस्वयम् ॥९॥ तान्यनीकान्यनेकानिरावणस्यशरोत्तमैः ॥ दृष्ट्वाभग्नानिशतशोराघवःपर्यवस्थितः ॥ १० ॥ ततोराक्षसशार्दूलोविद्राव्यहरिवाहिनीम् ॥ सददर्शततोरामंतिष्ठंतमपराजितम् ॥ ११ ॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्राविष्णुनावासवंयथा ॥ आलिखंतमिवाकाशमवष्टभ्यमहद्धनुः ॥१२॥ पद्मपत्रविशालाक्षदीर्घबाहुमरिंदमम् ॥ ततोरामोमहातेजाःसौमित्रिसहितोबली ॥ १३ ॥ वानरांश्चरणेभग्नानापतंतंचरावणम् ॥ समीक्ष्यराघवोहृष्टोमध्येजग्राहकार्मुकम् ॥१४॥ विस्फारयितुमारेभेततःसधनुरुत्तमम् ॥ महावेगंमहानादंनिर्भिंदन्निवमेदिनीम् ॥१५॥ रावणस्यचबाणौघैरामविस्फारितेनच ॥ शब्देनराक्षसास्तेनपेतुश्चशतशस्तदा ॥ १६ ॥ तयोःशरपथंप्राप्यरावणोराजपुत्रयोः ॥ सबभौचयथाराहुःसमीपेशशिसूर्ययोः ॥ १७ ॥ तमिच्छन्प्रथमंयोद्धुंलक्ष्मणोनिशितैःशरैः ॥ मुमोचधनुरायम्यशरानग्निशिखोपमान् ॥ १८ ॥

त्रवाले बडी २ बाँहोंवाले शत्रुनाशी महातेजस्वी महाबली श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणजीके सहित ॥१३॥ वानरोंको रणमें भागते हुए और रावणकोभी बडी भारी तैयारीके साथ आता हुआ देखा; यह देखकर श्रीरामचन्द्रजीने हर्षितमनसे धनुष ग्रहण किया ॥ १४ ॥ और उस श्रेष्ठ धनुषको धारणकरके उसपर टंकार देने लगे, और महावेगसे पृथ्वीको भेदकरही मानो सिंहनाद करने लगे ॥ १५ ॥ उस कालमें रावणके बाण बरसानेसे और श्रीरामचन्द्रजीके धनुषपर टंकार देनेसे इन दोनों तुमुल शब्दोंसे सैंकडों हजारों राक्षस पृथ्वीपर गिरने लगे ॥१६॥ उस समय दो महाराजकुमार श्रीरामलक्ष्मणजीकेबाणोंके मार्गमें प्राप्त होकर राक्षसराज रावण चन्द्रसूर्यके समीप पहुँचे हुए राहुग्रहके समान शोभायमान होने लगा ॥ १७ ॥ श्रीलक्ष्मणजी तीखे बाणोंके द्वारा प्रथमही रावणके सहितयुद्ध करनेका

अभिलाषकरधनुषपर टंकार दे अग्निकी शिखाके समान बाण रावणके ऊपर चलानेलगे ॥१८॥ परन्तु महातेजस्वी रावणने अपने बाणोंके समूहसे धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ लक्ष्मणजीके चलाये हुए उन समस्त बणोंको आकाशमें ही रोकदिया ॥१९॥ रावणने अपने हाथोंकी शीघ्रता दिखाकर शरसे एक बाण तीन सायकसे तीन बाण, और दश नाराचोंसे दश बाणोंको खंड २ करके फेंक दिया ॥२०॥ रावण इस प्रकारसे समरविजयी लक्ष्मणजीको छोडदूसरे पर्वत समान विराजमान श्रीरामचन्द्रजीके निकट गया ॥२१॥ उनको देखते ही क्रोधके मारे रावणके नेत्र लाल हो आये औरयह श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥२२॥ परन्तु रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजीने रावणके धनुषसे छूटी हुई उस बाणधाराको आती हुई देख शीघ्रतासे भाले ग्रहण किये ॥२३॥ और उन तीक्ष्ण भालोंसे रावणके उन क्रोधित सर्पके समान फुंकार मारते हुए दीप्तिमान् महाघोर बाणोंको काटकर फेंक दिया ॥ २४ ॥ उसके पीछेश्रीरामचन्द्रजी और

तान्मुक्तमात्रानाकाशेलक्ष्मणेनधनुष्मता ॥ बाणान्बाणैर्महातेजारावणःप्रत्यवारयत् ॥१९॥ एकमेकेनबाणेनत्रिभिस्त्रीन्दशभिर्दश ॥ लक्ष्मणस्यप्रचिच्छेददर्शयन्पाणिलाघवम् ॥ २० ॥ अभ्यतिक्रम्यसौमित्रिंरावणःसमितिंजयः ॥ आससादरणेरामंस्थितंशैलमिवापरम् ॥ २१ ॥ सरावघवंसमासाद्यक्रोधसंरक्तलोचनः ॥ व्यसृजच्छरवर्षाणिरावणोराक्षसेश्वरः ॥ २२ ॥ शरधारास्ततोरामोरावणस्यधनुश्च्युताः ॥ दृष्ट्वैवापतिताःशीघ्रंभल्लाञ्जग्राहसत्वरम् ॥२३॥ तान्छरौघांस्ततोभल्लैस्तीक्ष्णैश्चिच्छेदराघव ॥ दीप्यमानान्महाघोराञ्छरानाशीविषोपमान् ॥२४॥ राघवोरावणंतूर्णंरावणोराघवंतथा॥अन्योन्यंविविधैस्तीक्ष्णैःशरवर्षैर्ववर्षतुः॥२५॥चेरतुश्चचिरंचित्रंमंडलंसव्यदक्षिणम्॥बाणवेगात्समुत्क्षिप्तावन्योन्यमपराजितौ ॥ २६ ॥ तयोर्भूतानिवित्रेसुर्युगपत्संप्रयुध्यतोः ॥ रौद्रयोःसायकमुचोर्यमांतकनिकाशयोः॥ २७ ॥ संततंविविधैर्बाणैर्बभूवगगनंतदा ॥ घनैरिवातपापायेविद्युन्मालासमाकुलः ॥२८॥गवाक्षितमिवाकाशंबभूवशरवृष्टिभिः॥महावेगैःसुतीक्ष्णाग्रैर्गृध्रपत्रैःसुवाजितैः॥२९॥

रावण परस्पर एक दूसरेको ताककर अत्यन्त तीक्ष्ण अनेक प्रकारके बाणोंकी वर्षा करने लगे ॥२५॥ वह परस्पर एक दूसरेके बाणोंका वेग बचाय कूदते हुए बांई और दाहिनी ओरको मंडलाकार हो घूमने लगे, परन्तु कोई भी पराजित नहीं हुए॥२६॥उस समय दोनों वीर यमराज और अन्तकके समान रौद्रमूर्ति धारण किये बाणोंको चलाय २ महायुद्ध करते थे, उनकी वह मूर्ति देखकर जीवलोक त्रासके मारे घबडा उठा॥२७॥उस काल ग्रीष्मऋतुके अंतमें विद्युन्माला विलासित (बिजलीसहित) मेघोंकी नांई इन दोनों वीरोंके चलाये हुए विविध बाणोंसे आकाशमंडल छा गया ॥ २८ ॥ उन दोनों वीरोंके गिद्धपक्षयुक्त महावेगसे उडानेवाले तीक्ष्ण बाणजालीकी वर्षा होनेसे मानों आकाश झरोखा युक्त हो गया था (अर्थात् आकाश झंझरी हो गया)॥ २९ ॥

उठे हुए दो महामेघोंके समान उन दोनों वीरोंने दिनके समय भी बाणोंकी वर्षा करके आकाशमंडलको महा अन्धकारसे छाय लिया ॥ ३० ॥ पहले समय वृत्रासुर और इन्द्रका युद्ध जिस प्रकारसे हुआ था वैसेही परस्पर एक दूसरेके वधकी इच्छा किये इन दोनों वीरोंका अचिन्तनीय अपूर्व बडा भारी युद्ध होनेलगा ॥ ३१ ॥ यह दोनोंही वीर युद्ध विशारद थे, धनुष धारियोंमें श्रेष्ठ और अस्त्र जाननेवालोंमें आगे गिने जानेके योग्य थे, दोनोंही विविध भांतिकी गतिसे गमनकरने लगे ॥ ३२ ॥ जिस २ मार्गमें वे दोनों वीर जाते थे, उस २ स्थानमेंही पवनके वेगसे उछली हुई समुद्रकी तरंगोंके समान बाणरूपी तरंग उछलने लगीं ॥ ३३ ॥ इसके उपरान्त बाण चलानेमें व्यस्त लोकोंके रुवानेवाले रावणने श्रीरामचन्द्रजीके माथेको ताककर उसमें बहुतसे बाण मारे ॥ ३४ ॥ परंतु रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजीने नीलोत्पलदल (नीले कमल)

शरांधकारमाकाशंचक्रतुःप्रथमंतदा ॥ गतेऽस्तंतपनेचापिमहामेघाविवोत्थितौ ॥ ३० ॥ तयोरभून्महायुद्धमन्योन्यवधकांक्षिणोः ॥ अनासाद्यमचिंत्यंचवृत्रवासवयोरिव ॥ ३१ ॥ उभौहिपरमेष्वासावुभौयुद्धविशारदौ ॥ उभावस्त्रविदांमुख्यावुभौयुद्धेविचेरतुः ॥ ३२ ॥ उभौहियेनव्रजतस्तेनतेनशरोर्मयः ॥ ऊर्मयोवायुनाविद्धाजग्मुःसागरयोरिव ॥ ३३ ॥ ततःसंसक्तहस्तस्तुरावणोलोकरावणः ॥ नाराचमालांरामस्यललाटेप्रत्यमुंचत ॥ ३४ ॥ रौद्रचापप्रयुक्तांतांनीलोत्पलदलप्रभाम् ॥ शिरसाधारयद्रामोनव्यथामस्यपद्यत ॥ ३५ ॥ अथमंत्रानपिजपन्रौद्रमस्त्रमुदीरयन् ॥ शरान्भूयःसमादायरामःक्रोधसमन्वितः ॥ ३६ ॥ मुमोचचमहातेजाश्चापमायम्यवीर्यवान् ॥ तान्छरान्राक्षसेंद्रायचिक्षेपाच्छिन्नसायकः ॥ ३७ ॥ तेमहामेघसंकाशेकवचेपातिताःशराः ॥ अवध्येराक्षसेंद्रस्यनव्यथांजनयंस्तदा ॥ ३८ ॥ पुनरेवाथतंरामोरथस्थंराक्षसाधिपम् ॥ ललाटेपरमास्त्रेणसर्वास्त्रकुशलोऽभिनत् ॥ ३९ ॥

के समान प्रभायुक्त और रावणके बडे भारी रौद्र धनुषसे छूटे हुए उन सब बाणोंको मस्तकपर धारण करलिया और कुछ भी व्यथित नहीं हुए ॥ ३५ ॥ इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजीने रौद्रास्त्र का प्रयोग करनेके लिये क्रोधमें भरकर फिर बहुत सारे बाणोंको ग्रहण कर उनको अभिमंत्रित किया ॥ ३६ ॥ अन्तररहित बाणवर्षणकारी महातेजस्वी वीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजी उन समस्त बाणोंको ग्रहण करके राक्षसोंके स्वामी रावणपर चलाते हुए परन्तु यह सब अस्त्र व्यर्थ होगये ॥ ३७ ॥ राक्षसराज रावणका शरीर महामेघके समान कवचसे रक्षित था इस कारणसे श्रीरामचन्द्रजीके बाण रावणके शरीरपर गिरकर भी उसको कुछ भी पीडा नहीं दे सके ॥ ३८ ॥ यह देखकर सर्व अस्त्र शस्त्रोंके चलानेमें कुशल रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीने तीक्ष्ण परमास्त्रसे फिर रावणके माथेको बींध डाला ॥ ३९ ॥

वे पांच मस्तकवाले सर्पके समान छोडे हुए बाण रावणके बाणोंद्वारा रोकनेपर भी रावणके माथेमें जायलगही गये, परन्तु कुछ घाव न कर सके पृथ्वीमें प्रवेश करते हुए ॥४०॥ रावणने इस प्रकारसे श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंको निवारण किया, और क्रोधमें भर श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर आसुरी बाण चलाये ॥४१॥ यह सब आसुरी बाण कोई सिंह और कोई व्याघ्रके मुखके समान थे; बहुत कंक और काकमुखके समान थे, कुछ एक गिद्ध, बाज; और गीदडके समान मुखवाले थे ॥४२॥ और कितनेही बाणोंका भेडियोंके मुखके समान अत्यन्त भयानक मुख था जो कि, अपने भयानक मुखोंको फैलाय रहे थे और बहुत पंचमुखी बाण थे जो कि, इधर उधरको जीभ लपलपा रहे थे, इस प्रकारके अनेक बाण रावणने चलाये ॥४३॥ इनमें अनेक बाणोंके मुख गधोंके तुल्य थे शूकरोंके मुखोंवाले कुत्तोंके व मुरगोंके मुख और महाविषधर सर्पोंके समान जिनके मुखका आकार था ॥४४॥ महातेजस्वी रावणने यह व और भी अनेक अस्त्र अपनी

तेभित्त्वाबाणरूपाणिपंचशीर्षाइवोरगाः ॥ श्वसंतोविविशुर्भूमिंरावणप्रतिकूलिताः ॥४०॥ निहत्यराघवस्यास्त्रंरावणःक्रोधमूर्च्छितः ॥ आसुरं सुमहाघोरमन्यदस्त्रंचकारसः ॥४१॥ सिंहव्याघ्रमुखांश्चापिकंककोकमुखानपि ॥ गृध्रश्येनमुखांश्चापिशृगालवदनांस्तथा ॥४२॥ ईहामृगमुखांश्चापिव्यादितास्यान्भयावहान् ॥ पंचास्याँल्लेलिहानांश्चससर्जनिशितान्छरान् ॥४३॥ शरान्खरमुखांश्चान्यान्वराहमुखसंश्रितान् ॥ श्वानकुक्कुटवक्रांश्चमकराशीविषाननान् ॥४४॥ एतांश्चान्यांश्चमायाभिःससर्जनिशितान्छरान् ॥ रामंप्रतिमहातेजाःक्रुद्धःसर्पइवश्वसन् ॥४५॥ आसुरेण समाविष्टःसोऽस्त्रेणरघुपुंगवः ॥ ससर्जास्त्रंमहोत्साहंपावकंपावकोपमः ॥४६॥ अग्निदीप्तमुखान्बाणांस्तत्रसूर्यमुखानपि ॥ ग्रहनक्षत्रवर्णांश्चमहोल्कामुखसंस्थितान् ॥४७॥ विद्युज्जिह्वोपमांश्चापिससर्जविविधाच्छरान् ॥ तेरावणशराघोराराघवास्त्रसमाहताः ॥४८॥ विलयंजग्मुराकाशेजघ्नुश्चैव सहस्रशः ॥ तदस्त्रंनिहतंदृष्ट्वारामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥४९॥ हृष्टानेदुस्ततःसर्वेकपयःकामरूपिणः ॥सुग्रीवाभिमुखावीराःसंपरिक्षिप्यराघवम् ॥५०॥

मायाके प्रभावसे उत्पन्न करके श्रीरामचन्द्रजीपर चलाये, क्रोधित सर्प जिस प्रकारसे गमन करता है वह भी वैसेही फुंकार करते हुए श्रीरामचन्द्रजीकी ओर गमन करने लगे ॥४५॥ अग्नितुल्य तेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी आसुरी बाणोंसे घिरकर अतिउत्साहसे आग्नेयास्त्र छोडते हुए ॥४६॥ जिस आग्नेयास्त्रमें अनेक बाणोंके मुख अग्निके समान प्रज्वलित थे और बहुत सूर्यकी नांई प्रकाशित मुखवाले थे; अनेक बाण चन्द्राकार व अर्द्धचन्द्राकार मुखयुक्त थे और उनके बाणोंका आकार केतुके मुखके समान था बहुत बाण ग्रह और नक्षत्रोंके समान वर्णके थे अनेक बडीभारी उल्काओंकी भांति थे ॥४७॥ और बहुत बाणोंकी जीभ बिजलीके समान आकारवाली थी; इस प्रकार विविध भांतिके बाण श्रीरामचन्द्रजीने चलाये। श्रीरामचन्द्रजीके चलाये हुए बाणोंसे अतिघोर बाण हत होकर ॥४८॥ आकाशमेंही नष्ट होकर सब टूटफूट गये; सरलकर्मकारी श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंसे रावणके अस्त्रोंको नष्ट देखकर ॥ ४९ ॥ कामरूपधारी सब वानरलोग बहुतही हर्षित हुए

सुग्रीवादि मुख्य २ वानरगण श्रीरामचन्द्रजीके निकट आये और उनको भेंटकर अत्यन्त हर्षित हुए ॥ ५० ॥ इस प्रकारसे महात्मा रघुनंदन दशरथकुमार धनुषधारी श्रीरामचन्द्रजी अपने अस्त्रोंके प्रभावसे रावणकी बांहसे छुटेहुए अस्त्रोंको विफल कर अत्यन्तही आनंदित हुए और कपीश्वरगण ऊंचे स्वरसे सिंहनाद करने लगे ॥ ५१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां शततमः सर्गः ॥१००॥ राक्षसराज रावणने अपने अस्त्रको विफल देखकर दूना क्रोध किया, व इसके उपरान्त मारे क्रोधके ॥ १ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर मयनाम दानवका बनाया महाभयंकर द्युतिमान् अस्त्र लेकर छोडा ॥ २ ॥ जिस अस्त्रमेंसे शूल; गदा, मूसल, वज्रके समान दृढ, व दीप्तिमान् और भी बहुतसे अस्त्र शस्त्र निकले ॥३॥ उस अस्त्र मेंसे मुद्गर कूट, पाश, प्रकाशित, अशनि यह

ततस्तदस्त्रंविनिहत्यराघवःप्रसह्यतद्रावणबाहुनिःसृतम्॥मुदान्वितोदाशरथिर्महात्माविनेदुरुच्चैर्मुदिताःकपीश्वराः ॥५१॥ इत्यार्षेश्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे शततमःसर्गः॥१००॥तस्मिन्प्रतिहतेऽस्त्रेतुरावणोराक्षसाधिपः ॥ क्रोधंचद्विगुणंचक्रेक्रोधाच्चास्त्रम नंतरम् ॥ १ ॥ मयेनविहितंरौद्रमन्यदस्त्रंमहाद्युतिः ॥ मुत्स्रष्टुंरावणो भीमंराघवायप्रचक्रमे ॥ २ ॥ ततःशूलानिनिश्चेरुर्गदाश्चमुसलानिच ॥ कार्मुकाद्दीप्यमानानिवज्रसाराणिसर्वशः ॥ ३ ॥ मुद्गराःकूटपाशाश्चादीप्ताश्चाशनयस्तथा ॥ निष्पेतुर्विविधास्तीक्ष्णावाताइवयुगक्षये ॥ ४ ॥ तदस्त्रराघवःश्रीमानुत्तमास्त्रविदांवरः॥ जघानपरमास्त्रेणगांधर्वेणमहाद्युतिः ॥ ५ ॥ तस्मिन्प्रतिहतेऽस्त्रेतुराघवेणमहात्मना ॥ रावणःक्रोधताम्राक्षःसौरमस्त्रमुदीरयत् ॥६॥ ततश्चक्राणिनिष्पेतुर्भास्वराणिमहांतिच॥ कार्मुकाद्भीमवेगस्यदशग्रीवस्यधीमतः॥ ७॥तैरासीद्गगनंदीप्तंसंपतद्भिः समंततः॥पतद्भिश्चदिशो दीप्तैश्चंद्रसूर्यग्रहैरिव॥८॥तानिचिच्छेदबाणौघैश्चक्राणितुसराघवः ॥ आयुधानिचचित्राणिरावणस्यचमूमुखे ॥९॥

सबसन २ करते ऐसे वेगसे निकले कि, जैसे युगान्तमें पवन निकल चलता है ॥ ४ ॥ परन्तु अस्त्र जाननेवालोंमें श्रेष्ठ महाद्युतिमान् श्रीरामचन्द्रजीने श्रेष्ठ गान्धर्वास्त्रसे इस रावणके अस्त्रको काट डाला ॥ ५ ॥ जब कि मयका बनाया हुआ मायास्त्र विफल होगया, तब रावण मारे क्रोधके अग्निके समान होगया, तब उसने लाल २ नेत्रकर सौर अस्त्र चलाया ॥ ६ ॥ जिस अस्त्रसे अति प्रज्वलित बडे सहस्रों लक्षों चक्र निकले, यह सब भयंकर वेगवाले चक्र रावणके धनुषसे निकलने लगे ॥ ७ ॥ उन दीप्तिमान् चक्रोंसे समस्त आकाश प्रकाशित होगया , प्रदीप्त चन्द्रसूर्य और तारागणोंसे वेष्टित होनेपर जो आकाशकी अवस्था होती है उस समय रावणके बाणोंसे अंतरिक्षभी वैसाही होगया ॥ ८ ॥ परन्तु रघुनंदन श्रीरामचंद्रजीने समस्त सेनाके सामने रावणके चलाये वह चक्र और समस्त विचित्रआयुध काटडाले ॥ ९ ॥

राक्षसराज रावणने उस अस्त्रको भी व्यर्थ देखकर दश बाण लेकर श्रीरामचंद्रजीके मर्मस्थानोंमें मारे॥ १०॥ यद्यपि श्रीरामचन्द्रजी शरीरमें महातेजस्वी रावणके महाधनुषसे छूटे हुए बाणलगे परन्तु वह कुछभी कंपायमान न हुए ॥११॥ जब समरविजयी श्रीरामचन्द्रजीने अत्यन्त क्रोधकरके राक्षसके सर्व शरीरमें अति पैने बहुतसे बाण मारे ॥ १२ ॥ इसी अवसरमें क्रोधित श्रीरामचन्द्रके लघुभ्राता बली, परवीरघाती, लक्ष्मणजीने सात बाण हाथमें लिये ॥ १३॥ और उन दीप्तिमान् तीक्ष्ण बाणोंसे लक्ष्मणजीने रावणकी मनुष्यचिह्नित रथकी ध्वजाके अनेक खंड कर दिये ॥१४॥ और परम श्रीयुत लक्ष्मणजीने राक्षस रावणके सारथिका प्रकाशमान् कुंडल सहित शिरभी काट डाला ॥१५॥इसके उपरान्त लक्ष्मणजीने हाथीके शुण्डके समान आकारवाला राक्षसराज रावणका धनुषभी

तदस्त्रंतुहतंदृष्ट्वारावणोराक्षसाधिपः ॥ विव्याधदशभिर्बाणैरामंसर्वेषुमर्मसु ॥ १० ॥ सविद्धोदशभिर्बाणैर्महाकार्मुकनिःसृतैः ॥ रावणेनमहाते
जानप्राकंपतराघवः ॥ ११ ॥ ततोविव्याधगात्रेषुसर्वेषुसमितिंजयः ॥ राघवस्तुसुसंक्रुद्धोरावणंबहुभिःशरैः ॥ १२ ॥ एतस्मिन्नंतरेक्रुद्धोराघ
वस्यानुजोबली॥ लक्ष्मणःसायकान्सप्तजग्राहपरवीरहा: ॥१३॥ तैःसायकैर्महावेगैरावणस्यमहाद्युतिः ॥ ध्वजंमनुष्यशीर्षंतुतस्यचिच्छेदनै
कधा ॥ १४ ॥ सारथेश्चापिबाणेनशिरोज्वलितकुंडलम् ॥ जहारलक्ष्मणःश्रीमान्नैर्ऋतस्यमहाबलः ॥१५॥ तस्यबाणैश्चचिच्छेदधनुर्गजकरो
पमम् ॥ लक्ष्मणोराक्षसेंद्रस्यपंचभिर्निशितैस्तदा ॥ १६ ॥ नीलमेघनिभांश्चास्यसदश्वान्पर्वतोपमान् ॥ जघानाप्लुत्यगदयारावणस्यविभी
षणः॥ १७ ॥हताश्वात्तुतदावेगादवप्लुत्यमहारथात्॥कोपमाहारयत्तीव्रंभ्रातरंप्रतिरावणः ॥१८॥ ततःशक्तिंमहाशक्तिःप्रदीप्तामशनीमिव ॥
विभीषणायचिक्षेपराक्षसेंद्रःप्रतापवान् ॥ १९ ॥ अप्राप्तामेवतांबाणैस्त्रिभिश्चिच्छेदलक्ष्मणः ॥ अथोदतिष्ठत्सन्नादोवानराणांमहारणे ॥ २० ॥
संपपातत्रिधाछिन्नाशक्तिःकांचनमालिनी ॥ सविस्फुलिंगाज्वलितामहोल्केवदिवश्च्युता ॥ २१ ॥ ततःसंभाविततरांकालेनापिदुरासदाम् ॥
जग्राहविपुलांशक्तिंदीप्यमानांस्वतेजसा ॥ २२ ॥

पांच तीखे बाणोंसे काट डाला ॥ १६ ॥ इसी समयमें विभीषणजीने कूदकर गदासे राक्षसराज रावणके नीलमेघ और पर्वताकार उत्तम चारों घोडोंका संहार किया ॥१७॥ अपने रथमें जुते हुए घोडोंको मरे हुए देख रथसे उतरकर रावणने अपने भ्राता विभीषणपर अत्यन्त क्रोध किया ॥१८॥ महाशक्तियुक्त प्रतापवान् रावणने प्रदीप्त वज्रके समान महाशक्तिले विभीषणके ऊपरको चलाई ॥१९॥ परन्तु उस शक्तिको विभीषणजीकेऊपर गिरते२लक्ष्मणजीने तीन बाणोंसे समरमें काट डाला । बानरलोग रावणकी शक्तिव्यर्थ देखकर समरमें घोर सिंहनाद करने लगे ॥२०॥ चिनगारियोंसे युक्त प्रकाशमान बडीभारी उल्काजिस प्रकारसे आकाशसे गिर पडती है वैसेही सुवर्णकी मालासे भूषितरावणकी वह शक्तितीन खंडहोकर पृथ्वीमें गिरपडी ॥२१॥इसके उपरान्त महावीररावणने एक

और दूसरी शक्ति ग्रहणकी, यह शक्ति अपने तेजसे आपही प्रकाशमान थी और यमराजके लिये भी कठोर व सहनेके अयोग्य थी ॥ २२ ॥ उस कालमें महातेजस्वी बलशाली दुरात्मा रावण करके अत्यन्त वेगसे घुमाई गई वह प्रदीप्त वज्रके प्रभायुक्त शक्ति प्रज्वलित होगई ॥२३॥ इसी अवसरमें सुमित्रानन्दन वीर लक्ष्मणजी विभीषणके प्राण बचानेमें संशय देखकर उनकी रक्षाकरनेके लिये शीघ्रतासे उस शक्तिके सन्मुख आगये॥२४॥राजकुमार लक्ष्मणजी विभीषणजीका प्राण बचानेके लिये शक्ति धारी रावणके ऊपर अपने धनुषको नवाय बाणोंकी वर्षा करने लगे ॥ २५ ॥ महात्मा बलवान् लक्ष्मणजीके बाण वेगसे रावण ऐसा घबडा गया, कि वह अपने भ्राता विभीषणजीके वधका उत्साह छोड बैसा उन पर कुछ पराक्रम न दिखला सका ॥ २६ ॥ रावण अपने भ्राताकी

सावेगिताबलवतारावणेनदुरात्मना॥जज्वालसुमहातेजादीप्ताशनिसमप्रभा॥२३॥एतस्मिन्नंतरेवीरोलक्ष्मणस्तंविभीषणम्॥प्राणसंशयमापन्नंतूर्ण मभ्यवपद्यत॥२४॥तंविमोक्षयितुंवीरश्चापमायम्यलक्ष्मणः॥रावणंशक्तिहस्तंवैशरवर्षैरवाकिरत्॥२५॥ कीर्यमाणःशरौघेणविसृष्टेनमहात्मना॥ सप्रहर्तुमनश्चक्रेविमुखीकृतविक्रमः ॥२६॥ मोक्षितंभ्रातरंदृष्ट्वालक्ष्मणेनसरावणः ॥ लक्ष्मणाभिमुखस्तिष्ठन्निदंवचनमब्रवीत् ॥ २७ ॥ मोक्षित स्तेबलश्लाघिन्यस्मादेवंविभीषणः ॥ विमुच्यराक्षसंशक्तिस्त्वयीयंविनिपात्यते ॥२८॥ एषातेहृदयंभित्त्वाशक्तिर्लोहितलक्षणा ॥ मद्बाहुपरि घोत्सृष्टाप्राणानादाययास्यति ॥ २९ ॥ इत्येवमुक्त्वातांशक्तिमष्टघंटांमहास्वनाम् ॥ मयेनमायाविहिताममोघांशत्रुघातिनीम् ॥ ३० ॥ लक्ष्मणायसमुद्दिश्यज्वलंतीमिवतेजसा ॥ रावणःपरमक्रुद्धश्चिक्षेपचननादच ॥ ३१ ॥ साक्षिप्ताभीमवेगेनशक्रशनिसमस्वना ॥ शक्तिरभ्यप तद्वेगाल्लक्ष्मणंरणमूर्धनि ॥३२॥ तामनुव्याहरच्छक्तिमापतंतींसराघवः ॥ स्वस्त्यस्तुलक्ष्मणायेतिमोघाभवहतोद्यमा ॥ ३३ ॥

रक्षा लक्ष्मणजीसे होते देखकर उनके सामने जाकर खडा हो गया और उन लक्ष्मणजीसे गर्वसहित यह वचन बोला ॥ २७ ॥ हे अपने बलकी बडाई चाहनेवाले ! तुम्हारे रक्षा करनेसे हमारा भाई विभीषण तो बचगया, परन्तु इस समय इसको छोडकर यह शक्ति अब हम तुम्हारे ऊपर गिराते हैं ॥२८॥ परिघके समान मेरी बाँहोंसे छुटीहुई शत्रुका रुधिरपान करनेवाली यह शक्ति तुम्हारा हृदय भेद कर प्राण निकाल बाहर आवेगी ॥ २९ ॥ यह कहकर रावणने अमोघ शक्ति चलाई, यह शत्रुघातिनी मयदानवकी मायासे बनी हुई थी, इसमें आठ घंटे लगे हुए थे और घोर शब्द निकल रहा था ॥३०॥ वह लक्ष्मणजीका प्राण संहार करनेके लिये अपने तेजसे दीप्तिमान थी, रावणने अत्यन्त घोर सिंहनाद करके यह शक्ति छोडी ॥३१॥ भयंकर वेगसे छूटीहुई और वज्र व अशनिके समान वह शक्तिभी रणमें विराजमान लक्ष्मणजीकी ओर अतिवेगसे दौडी ॥३२॥ उस शक्तिको गिरती हुई देखकर श्रीरामचन्द्रजीने भयरहित होकर कहा—कि लक्ष्मणजीका मंगलहो और

यह शक्ति विफल और हतोद्यम होजावे ॥ ३३ ॥ श्रीरामचन्द्रजी यह कहही रहे थे कि इतनेमें विषधर सर्पके समान रावणकी घोर शक्ति रावणके हाथसे छूटकर वह बलवान् लक्ष्मणजीकी छातीमें लगी ॥३४॥ देखते २ सर्पराज वासुकीकी जिह्वाके समान दीप्तिमान वह भयंकर शक्ति महाद्युतियुक्त लक्ष्मणजीके हृदयमें बहुतही प्रवेश करगई ॥३५॥ अतिवेगसे चलाई और शरीरमें बहुत पठी हुई उस रावणकी छोडी शक्तिसे भिन्न हृदय हो लक्ष्मणजी पृथ्वीपर गिरपडे ॥३६॥ उस समय महावीर श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीकी ऐसी अवस्था देखकर भायपनके स्नेहके वश होकर हृदयमें व्यथा पाते हुए ॥३७॥ श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकार नेत्रोंसे आंसू बहाते एक मुहूर्तभरतक चिन्ता करके युगान्तकालीन अग्निके समान अत्यन्त क्रोधित हो उठे॥३८॥ श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीको देखकर और यह विषादका

रावणेनरणेशक्तिः क्रुद्धेनाशीविषोपमा॥ मुक्ताशूरस्यभीतस्यलक्ष्मणस्यममञ्जसा ॥३४॥ न्यपतत्सामहावेगालक्ष्मणस्यमहोरसि॥ जिह्वेवोरगराजस्यदीप्यमानामहाद्युतिः ॥३५॥ ततोरावणवेगेनसुदूरमवगाढया ॥ शक्त्याविभिन्नहृदयःपपातभुविलक्ष्मणः ॥३६॥ तदवस्थंसमीपस्थोलक्ष्मणंप्रेक्ष्यराघवः ॥ भ्रातृस्नेहान्महातेजाविषण्णहृदयोऽभवत् ॥ ३७ ॥ समुहूर्तमिवध्यात्वाबाष्पपर्याकुलेक्षणः ॥ बभूवसंरब्धतरोयुगांतइवपावकः ॥ ३८ ॥ नविषादस्यकालोऽयमितिसंचिंत्यराघवः ॥ चक्रेसुतुमुलंयुद्धंरावणस्यवधेधृतः ॥ सर्वयत्नेनमहतालक्ष्मणंपरिवीक्ष्यच ॥ ३९ ॥ सददर्शततोरामःशक्त्याभिन्नंमहाहवे ॥ लक्ष्मणंरुधिरादिग्धंसपन्नगमिवाचलम् ॥ ४० ॥ तामपिप्रहितांशक्तिंरावणेनबलीयसा ॥ यत्नतस्तेहरिश्रेष्ठानशेकुरवमर्दितुम् ॥ ४१ ॥ अर्दिताश्चैववाणौघैस्तेप्रवेकेणरक्षसाम् ॥ सौमित्रेःसाविनिर्भिद्यप्रविष्टाधरणीतलम् ॥ ४२ ॥ तांकराभ्यांपरामृश्यरामःशक्तिंभयावहाम् ॥ बभंजसमरेक्रुद्धोबलवान्विचकर्षच ॥ ४३ ॥ तस्यनिष्कर्षतःशक्तिंरावणेनबलीयसा ॥ शराःसर्वेषुगात्रेषुपातितामर्मभेदिनः ॥ ४४ ॥

समय नहीं है ऐसा विचार कर रावणका वधकरनेके लिये सर्वप्रयत्नसे युद्ध करनेका अभिलाष करते हुए ॥ ३९ ॥ इसके उपरान्त रणके वीच टिके हुए अचल पन्नगके समान लक्ष्मणजीके निकट पहुँचकर श्रीरामचन्द्रजीने देखा कि उनके सब शरीरमें शक्तिके लगनेसे रुधिर निकल रहा है, और उनका हृदय विदीर्ण होगया है ॥४०॥ कपिश्रेष्ठगण बलशाली रावणकी छोडी हुई उस शक्तिके उद्धार करनेमें किसी प्रकारसे समर्थ न हुए ॥४१॥ क्योंकि वेगवान् जन उस शक्तिके उठानेकी चेष्टा करतेथे तब राक्षसराजने बाणसमूहसे उनको मारा कि जिससे वह पीडित होगये, वह शक्ति लक्ष्मणजीको भेद पृथ्वीमें प्रवेश किये जाती थी ॥४२॥ बलवान श्रीरामचन्द्रजीने क्रोधमें भरकर संग्राममें दोनों हाथोंसे पकड और मरोरकर उस भयंकर शक्तिको तोड डाला ॥४३॥ श्रीरामचन्द्रजी जिस समय उस

शक्तिको खेंचरहे थे उसी समय बलशाली रावणने मर्मभेदी बाणोंसे उनके सर्व मर्मस्थानोंको विद्ध किया॥४४॥परन्तु रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी उनसब बाणोंकी कुछ चिन्ता न करते हुए लक्ष्मणजीको हृदयसे लगाय महाकपि सुग्रीव व हनुमान्‌जीसे बोले ॥ ४५ ॥ हे वानर श्रेष्ठ गण ! यह हमारा बहुत दिनोंका चाहा विक्रम प्रकाश करनेका समय आय पहुँचाहै, इसलिये तुम सबजनेलक्ष्मणजीको घेर यहां टिकेरहकर इनकी रक्षा करो॥४६॥ग्रीष्मकालमें प्यासे चातकके जल पानेके समान बहुत दिनोंसे अभिलषित यह पापात्मा पापनिश्चय रावण यहां हमारे सामने आया है इस कारण शीघ्र इसका वध करनाही कर्तव्य है ॥४७॥ हे वानरगण ! बहुत दिन हुए कि तुम लोगोंके आगे जो प्रतिज्ञा की है आज इसी मुहूर्तमें हम उस सत्यप्रतिज्ञाको मर्यादाकी रक्षा करेंगे तुमलोग शीघ्रही इस पृथ्वीको

अचिंतयित्वातान्बाणान्समाश्लिष्यचलक्ष्मणम् ॥ अब्रवीच्चहनूमंतंसुग्रीवंचमहाकपिम् ॥४५॥ लक्ष्मणंपरिवार्यैवंतिष्ठध्वंवानरोत्तमाः ॥ पराक्रमस्यकालोऽयंसंप्राप्तोमेचिरेप्सितः ॥४६॥ पापात्मायंदशग्रीवोवध्यतांपापनिश्चयः ॥ कांक्षितंचातकस्येवघर्मांतेमेघदर्शनम् ॥ ४७ ॥ अस्मिन्मुहूर्तेनचिरात्सत्यंप्रतिश्रृणोमिवः ॥ अरावणमरामंवाजगद्द्रक्ष्यथवानराः ॥ ॥ ४८ ॥ राज्यनाशंवनेवासंदंडकेपरिधावनम् ॥ वैदेह्याश्चपरामर्शंरक्षोभिश्चसमागमम् ॥ ४९ ॥ प्राप्तंदुःखंमहद्घोरंक्लेशश्चनिरयोपमः ॥ अद्यसर्वमहंत्यक्ष्येनिहत्वारावणंरणे ॥ ५० ॥ यदर्थंवानरंसैन्यंसमानीतमिदंमया ॥ सुग्रीवश्चकृतोराज्येनिहत्वावालिनंरणे ॥ ५१ ॥ यदर्थंसागरःक्रांतःसेतुर्बद्धश्चसागरे ॥५२॥ सोऽयमद्यरणेपापश्चक्षुर्विषयमागतः ॥ चक्षुर्विषयमागम्यनायंजीवितुमर्हति ॥॥५३॥ दृष्टिंदृष्टिविषस्येवसर्पस्यममरावणः ॥ यथावावैनतेयस्यदृष्टिंप्राप्तोभुजंगमः ॥५४॥ सुखंपश्यथदुर्धर्षायुद्धंवानरपुंगवाः ॥ आसीनापर्वताग्रेषुममेदंरावणस्यच ॥ ५५ ॥

रामचन्द्रसे शून्य या रावणसे शून्य देखोगे॥४८॥राज्यका नाश होना, वनवास, दंडकारण्यमें प्रवेश, सीताहरण और राक्षसोंके सहित युद्ध, यह जो सबदुःख पडे हैं ॥ ४९ ॥ और हमने घोरतर मानसिक क्लेश और नरककी पीडाके समानजो शारीरिक कष्ट पाये हैं, आज रणमें रावणका संहार करके हम उनसमस्तदुःखोंको भूल जायँगे ॥५०॥ हम जिस कारणसे वानरोंकी सेनाको यहांपर लाये हैं, और जिसके कारणसे हमने वालीका प्राणसंहार करके सुग्रीवको राज्याभिषेक किया ॥५१॥ और जिसके लिये सेतु बांधकर महासमुद्रके पार हुए हैं ॥५२॥ यह वही पापी रावण आज हमारी दृष्टिके सन्मुख आया है अब हमारी दृष्टिके सामनेआय रावण जीता हुआ नहीं बच सकता॥५३॥दृष्टिविषवाले सर्पकीदृष्टिमें जिसप्रकार किसीके जीवनकी रक्षा नहीं हो सकती; जिसप्रकार गरुडजीकीदृष्टिमें आजानेसे सर्पका निस्तारा नहीं वैसेही यह दुरात्मा रावण हमारी दृष्टिको प्राप्त हुआ है, अर्थात् अब यह जीता नहीं बचेगा ॥५४॥ हे दुर्द्धर्ष वानरश्रेष्ठगण ! तुम लोग

विना घबडाहटके पर्वतके ऊपर बैठकर हमारा और रावणका युद्ध देखो ॥५५॥ आज गणोंके सहित सिद्ध, गन्धर्व, चारण इत्यादि त्रिलोकवासी प्राणीगण संग्राममें मुझ रामका रामपन देखें ॥ ५६ ॥ आज हम इस प्रकारका कर्म करेंगे कि, जितने दिन पृथ्वी प्राणियोंको धारण किये रहेगी तबतक देवताओंके साथ चराचर लोकसबही इस युद्धको कहा करेंगे॥५७॥रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजीने सावधानीसे यह वचन कह सात सुवर्णभूषित तीखे बाणोंसे संग्रामके बीचमें टिके हुए रावणको मारा ॥५८॥ मेघ जिस प्रकार जलकी धारा वर्षाता है वैसेही रावण भी प्रसिद्ध२बाणों और मूसल इत्यादि अस्त्रशस्त्रोंकी वृष्टि श्रीरामपर करने लगा ॥ ५९ ॥ उसकाल परस्पर एक दूसरेके मारनेकी इच्छा किये जाकर रामरावणके चलाये हुए श्रेष्ठ बाण और मूसलोंका कठोर शब्द उत्पन्न हुआ

अद्यपश्यंतुरामस्यरामत्वंममसंयुगे ॥ त्रयोलोकाःसगंधर्वाःसिद्धगंधर्वचारणाः ॥ ५६ ॥ अद्यकर्मकरिष्यमियल्लोकाःसचराचराः ॥ सदेवाः कथयिष्यतियावद्भूमिर्धरिष्यति ॥ ५७ ॥ एवमुक्त्वासितैर्बाणैस्तप्तकांचनभूषणैः ॥ आजघानरणेरामोदशग्रीवंसमाहितः ॥ ५८ ॥ तथाप्र विद्धैर्नाराचैर्मुसलैश्चापिरावणः ॥ अभ्यवर्षत्तदारामंधाराभिरिवतोयदः ॥ ५९ ॥ रामरावणमुक्तानामन्योन्यमभिनिघ्नताम् ॥ वराणांचशरा णांचबभूवतुमुलःस्वनः ॥ ६० ॥ विच्छिन्नाश्चविकीर्णाश्चरामरावणयोःशराः ॥ अंतरिक्षात्प्रदीप्ताग्रान्निपेतुर्धरणीतले ॥ ६१ ॥ तयोर्ज्यातल निर्घोषोरामरावणयोर्महान् ॥ त्रासनःसर्वभूतानांबभूवाद्भुतदर्शनः ॥ ६२ ॥ विकीर्यमाणःशरजालवृष्टिर्महात्मनादीप्तधनुष्मतार्दितः ॥ भया त्प्रदुद्रावसमेत्यरावणोयथानिलेनाभिहतोबलाहकः ॥६३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० च० सा० यु० एकाधिकशततमःसर्गः ॥ १०१ ॥ शक्त्यानिपातितंदृष्ट्वारावणेनबलीयसा ॥ लक्ष्मणंसमरेशूरंशोणितौघपरिप्लुतम् ॥१॥ सदत्त्वातुमुलंयुद्धंरावणस्यदुरात्मनः ॥ विसृजन्नेवबा णौघान्सुषेणमिदमब्रवीत् ॥ २ ॥

॥ ६० ॥ राजा रावणके प्रदीप्त मुखवाले बाण परस्पर टकराय २ टूटफूटकर आकाशसे पृथ्वीपर गिरने लगे ॥ ६१॥ श्रीरामचन्द्रजी व रावण प्रत्यंचाका जो बडा भारी शब्द करते थे, सब प्राणी अति आश्चर्य युक्त होकर उसको देखने लगे ॥ ६२ ॥ परंतु रावण धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ महात्मा श्रीरामचन्द्रजीकरके बाणोंकी वर्षासे ढककर व पीडित होकर भयके मारे पवनसे टकराये बादलके समान भाग गया ॥ ६३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामेकाधिकशततमः सर्गः ॥ १०१ ॥ बलवान् रावणकरके संग्राममें शक्तिसे गिरे हुए शूर लक्ष्मणजीको रुधिरसे डूबे हुए देखकर भी ॥ १ ॥ दुरात्मा रावणके सहित तुमुल युद्धको करके बाणसमूहको छोडश्रीरघुनाथ सुषेण नाम वानरसे बोले ॥ २ ॥

यह वीर लक्ष्मण रावणके वीर्यप्रभावसे पृथ्वीपर गिरकर हाथ पैरहीन सर्पके समान जो चेष्टा करते हैं यह देखकर हमकोअत्यन्त शोक होता है ॥ ३ ॥ अब हममें युद्ध करनेकी शक्ति नहीं है, कारण कि, प्राणसे भी अधिक प्यारे इन वीरको रुधिरमें डूबा हुआ देखकर हमारी आत्मा व्याकुलहो रही है ॥ ४ ॥ यह समरमें बडाई पानेके योग्य शुभलक्षण भ्राता लक्ष्मणही यदि मृतक हो गये तो फिर सुखके भोगनेसे या जीवन धारण करनेसे हमको क्या फल है ? ॥ ५ ॥ इस समय हमारा बलवीर्य मानो लज्जित हो रहा है, हाथसे धनुष मानो गिर पडता है; और सब अस्त्र शस्त्र मानो टूटे पडते हैं व दृष्टि आँसुओंसे रुकीजाती है ॥ ६ ॥ सब अंग इस प्रकार कंपायमान होते हैं कि; जैसे बुरा स्वप्न देखनेसे रात्रिमें कांपते हैं, और बडी भारी चिन्ता हमको बढीही चली जाती है, मरनेकी इच्छा भी होती है ॥७॥ दुरात्मा रावण करके आघात पाये और मर्मस्थान विदीर्ण हुए अपने भ्राता लक्ष्मणको दुःखसे आर्त हो विकृत शब्द करते देख

एषरावणवीर्येणलक्ष्मणःपतितोविभुः ॥ सर्पवच्चेष्टतेवीरोममशोकमुदीरयन् ॥३॥ शोणितार्द्रमिमंवीरंप्राणैःप्रियतरंमम ॥ पश्यतोममकाशक्तियोद्धुंपर्याकुलात्मनः ॥४॥ अयंससमरश्लाघीभ्रातामेशुभलक्षणः ॥ यदिपंचत्वमापन्नःप्राणैर्मेकिंसुखेनवा ॥५॥ लज्जतीवहिमेवीर्यंभ्रश्यतीवकराद्धनुः ॥ सायकाव्यवसीदंतिदृष्टिर्बाष्पवशंगता ॥६॥ अवसीदंतिगात्राणिस्वप्नयानेनृणामिव ॥ चिंतामेवर्धतेतीव्रामुमूर्षापिचजायते ॥७॥ भ्रातरंनिहतंदृष्ट्वारावणेनदुरात्मना ॥ विनष्टंतंतुदुःखार्तंमर्मण्यभिहतंभृशम् ॥ ८ ॥ परंविषादमापन्नोविललापाकुलेंद्रियः भ्रातरंनिहतंदृष्ट्वालक्ष्मणंरणपांसुषु ॥९॥ विजयोऽपिहिमेशूरनप्रियायोपकल्पते ॥ अचक्षुर्विषयश्चंद्रःकांप्रीतिंजनयिष्यति ॥१०॥ किंमेयुद्धेनकिंप्राणैर्युद्धकार्यंनविद्यते ॥ यत्रायंनिहतःशेतेरणमूर्धनिलक्ष्मणः ॥ ११ ॥ यथैवमांवनंयांतमनुयातिमहाद्युतिः ॥ अहमप्यनुयास्यामितथैवैनंयमक्षयम् ॥१२॥

हमारे मर्ममें अत्यन्त पीडा हुई है ॥८॥ रणकी धूरिमें लोटंते हुए अपने भ्राता लक्ष्मणजीको गिरा हुआ देख श्रीरामचन्द्रजीकी इन्द्रियें व्याकुल हो गईं और वह शोकाकुल होकर फिर विलाप करने लगे ॥९॥ हा ! शूर लक्ष्मणके न रहनेपर विजयका प्राप्त होना भी हमको प्यारा नहीं लगता, कारण प्रजा पुत्रको आह्लादित करते हैं इससेही तो निशाकरका नाम चन्द्रमा है परन्तु अस्त होकर चन्द्रमा प्रजाओंको हर्षित नहीं करते ॥१०॥ अथवा जब यह भ्राता लक्ष्मणही मृतकतुल्य होकर रणभूमिमें शयन किये हुए हैं तब फिर युद्धकी कुछ आवश्यकता नहीं कारण कि, युद्ध करना और प्राण रखना इन दोनोंहीसे कुछ प्रयोजन नहीं ॥ ११ ॥ हमारे वनको आनेपर जिस प्रकार यह महाद्युतिमान् हमारे पीछे २आये थे वैसेही हम भी प्राणोंको त्यागकर इनका साथ देंगे ॥ १२ ॥

हा ! बन्धुजन जिनको सदा इष्ट थे और जो सदाही हमारी आज्ञा पालन करनेमें तत्पर रहते थे वही वीर लक्ष्मण मायासे युद्ध करनेवाले निशाचरों करके ऐसी अवस्थाको प्राप्त हुए हैं ॥१३॥ प्रतिदेशमें स्त्री और बांधव मिल सकते हैं, परन्तु जहां सहोदर भ्राता प्राप्त हो जाय ऐसा देश हम कहीं नहीं देखते ॥१४॥ जब दुर्द्धर्ष लक्ष्मणही नहीं, तब फिर राज्यकी हमको कुछ आवश्यकता नहीं। हाय ! हम किसी प्रकारसे पुत्रवत्सला माता सुमित्राजीसे लक्ष्मणजीकी मृत्युका समाचार कहेंगे ॥ १५ ॥ जननी कौशल्या और माता कैकेयीसेहम क्या कहेंगे और माता सुमित्राजी जो हमारा तिरस्कार करेंगी, उसको भी हम किस प्रकारसे सहेंगे ॥ १६ ॥ हा ! महाबलवान् भरत अथवा शत्रुघ्न जब हमसे "भैया लक्ष्मण आपके साथ वनको गये थे, परंतु आप अब उनको बिनाही साथ लिये कैसे लौट आये ?" ऐसा पूछेंगे तब हम उन्हें क्या उत्तर देंगे ? ॥ १७ ॥ इस समय बन्धु बान्धवोंमें जाकर निन्दित होनेसे हमारा

इष्टबंधुजनोनित्यंमांसनित्यमनुव्रतः ॥ इमामस्थांगमितोराक्षसैःकूटयोधिभिः ॥१३॥ देशेदेशेकलत्राणिदेशेदेशेचबांधवाः ॥ तंतुदेशंनपश्यामियत्रभ्रातासहोदरः॥ १४ ॥ किंनुराज्येनदुर्धर्षलक्ष्मणेनविनामम ॥ कथंवक्ष्याम्यहंत्वंबांसुमित्रांपुत्रवत्सलाम् ॥ १५ ॥ उपालंभंनशक्ष्यामिसोढुंतत्तंसुमित्रया ॥ किंनुवक्ष्यामिकौसल्यांमातरंकिंनुकैकयीम् ॥१६॥ भरतंकिंनुवक्ष्यामिशत्रुघ्नंचमहाबलम् ॥ सहतेनवनंयातोविनातेनागतःकथम् ॥१७॥ इहैवमरणंश्रेयो नतुबंधुविगर्हणम् ॥ किंमयादुष्कृतंकर्मकृतमन्यत्रजन्मनि ॥१८॥ येनमेधार्मिकोभ्रातानिहतश्चाग्रतःस्थितः ॥ हाभ्रातर्मनुजश्रेष्ठशूराणांप्रवरप्रभो ॥ १९ ॥ एकाकीकिंनुमांत्यक्त्वापरलोकायगच्छसि ॥ विलपंतंचभ्रातःकिमर्थंनावभाषसे ॥ २० ॥ उत्तिष्ठपश्यकिंशेषेदोनंमांपश्यचक्षुषा ॥ शोकार्तस्यप्रमत्तस्यपर्वतेषुवनेषुच ॥ २१ ॥ विषण्णस्यमहाबाहोसमाश्वासयितामम ॥ राममेवंब्रुवाणंतुशोकव्याकुलितेंद्रियम् ॥ २२ ॥

यहीं मर जाना अच्छा है हाय ! न जाने हमने पहले जन्ममें कौनसा पाप कर्म किया था ॥ १८ ॥ कि, जिससे यह हमारे धर्मात्मा भाई हमारे आगेही मृतकसे होकर पडे हैं। हा ! भइया लक्ष्मण ! हे मनुजश्रेष्ठ ! हे शूर लोगोंमें प्रथम गिननेके योग्य ! ॥ १९ ॥ तुम किस कारणसे हमको यहां छोड अकेले परलोकको चले जाते हो ? हा भइया लक्ष्मण ! हम तुम्हारे लिये ऐसा विलाप कर रहे हैं तथापि तुम किस कारणसे उठकर हमसे नहीं बोलते ॥ २० ॥ अरे भ्राता ! इस समय उठो और आंखें खोलकर एक बार अपने दीन भाईकी ओर निहारो तो शोकसे आर्तऔर प्रमत्त होकर पर्वतोंमें और वनोंसे घूमते२ ॥ २१ ॥ जब हम शोक करते थे हे महाबाहो ! तब तुमही हमको समझाते बुझाते थे, श्रीरामचन्द्रजी शोकके मारे व्याकुलेन्द्रिय होकर जब इस प्रकारसे

१ सुत वित नारि भवन परिवारा होहिं जाहिंजग बारहिंबारा ॥ अस विचारि जिय जागहु ताता मिलहिं न जगत सहोदर भ्राता ॥

विलाप कर रहे थे ॥ २२ ॥ तब सुषेण उनको समझाते बुझाते हुए यह परम वचनबोले हे नरशार्दूल ! विकलताकी करनेवाली इस बुद्धिका त्यागकर दीजिये ॥२३॥ लक्ष्मीके बढाने वाले लक्ष्मणजी मृतक नहीं होगयेहैं, शोक छोड दीजिये यह शत्रुके चलाये बाणोंसे पृथ्वीपर मृतकसे होकर पडे हैं, परंतु वास्तवमें मृतक नहीं हुए हैं ॥२४॥ क्योंकि इनके मुखमें कुछ भी विकार प्राप्त नहीं हुआ है, न इनपर श्यामता आई है और न प्रभाहीन हुआ है बरन् इनका मुख सुन्दर और प्रभायुक्त दिखाई देता है ॥२५॥ इनके हाथोंकी हथेलियें कमलपत्रके समान लालवर्णयुक्त हैं नेत्र प्रकाशमान हैं, हे प्रजापालक ! मृतक पुरुषका रूपऐसा नहीं दिखाई देता है ॥२६॥ हे वीर ! शत्रुदमनकारी ! विषाद न कीजिये लक्ष्मणजी अभी जीवित हैं, क्योंकि शिथिल अंग किये और पृथ्वीपर सोते हुए ॥२७॥ लक्ष्मणजीकाश्वास

आश्वासयन्नुवाचेदंसुषेणःपरमंवचः ॥ त्यजेमांनरशार्दूलबुद्धिंवैक्लव्यकारिणीम् ॥२३॥ शोकसंजननींचिंतांतुल्यांबाणैश्चमूमुखे ॥ नैवपंचत्वमापन्नोलक्ष्मणोलक्ष्मिवर्धनः ॥ २४ ॥ नह्यस्यविकृतंवक्रंनचश्यामत्वमागतम् ॥ सुप्रभंचप्रसन्नंचमुखमस्यनिरीक्ष्यताम् ॥ २५ ॥ पद्मपत्रतलौहस्तौसुप्रसन्नेचलोचने ॥ नेदृशंदृश्यतेरूपंगतासूनांविशांपते ॥ २६ ॥ विषादंमाकृथावीरसप्राणोऽयमरिंदम ॥ आख्यातितुप्रसुप्तस्यस्रस्तगात्रस्यभूतले ॥२७॥ सोच्छ्वासंहृदयंवीरकंपमानंमुहुर्मुहुः ॥ एवमुक्त्वामहाप्राज्ञःसुषेणोराघवंवचः ॥२८॥ समीपस्थमुवाचेदंहनूमंतंमहाकपिम् ॥ सौम्यशीघ्रमितोगत्वापर्वतंहिमहोदयम् ॥ २९ ॥ पूर्वंतुकथितोयोऽसौवीरजांबवतातव ॥ दक्षिणेशिखरेजातांमहौषधिमिहानय ॥ ३० ॥ विशल्यकरणींनाम्नासावर्ण्यकरणींतथा ॥ संजीवकरणींवीरसंधानींचमहौषधीम् ॥ ३१ ॥ संजीवनार्थंवीरस्यलक्ष्मणस्यत्वमानय ॥ इत्येवमुक्तोहनुमान्गत्वाचौषधिपर्वतम् ॥ चिंतामभ्यगमच्छ्रीमानजानंस्तामहौषधीः ॥ ३२ ॥

सहित हृदय अभी वारंवार कंपायमान होता है। महाप्राज्ञ सुषेणजी श्रीरामचन्द्रजीसे ऐसा कहकर ॥२८॥ समीपमेंही खडे हुए महाकपि हनुमान्‌जीसे यह वचन बोले कि, हे सौम्य ! शीघ्र उस महोदय पर्वतको ॥२९॥ कि, जिसको पहलेही वीर जाम्बवानने तुमको बताया था जिसके दक्षिण शिखरपर महौषधियें उत्पन्नहोतीहैंउसको जायकर ले आओ ॥ ३० ॥ विशल्यकरणी (जिसके सुंघातेही शरीरमें गड़े बाण निकल आते हैं) सावर्ण्यकरणी (जिसके सुंघातेही घाव भर आते हैं) संजीवकरणी (जिसके सुंघा नेसे मृतक जी उठता है)सन्धानकरणी (जिसके सूंघनेसे सब अंगोंमें प्रथमसे अधिकबल होजाता है) नामक जो चार महौषधियें हैं ॥३१॥ वीरवत्स लक्ष्मणजीको जीवित करनेके लिये इन औषधियोंको तुम लेआओ जब सुषेणने हनुमान्‌जीसे ऐसा कहा तो हनुमान्‌जी औषधि पर्वतपर

गये परन्तु महौषधियोंको न पहँचाननेके कारण इनको बडी चिंता हुई ॥ ३२ ॥ तब अमितबलशाली अंजनीकुमार हनुमान्‌जीने मनही मनमें स्थिर किया कि अनर्थक चिंता करनेका कुछ प्रयोजन नहीं. लाओ अभी इस पर्वतके सम्पूर्ण शिखरकोही लिये चलते हैं ॥ ३३ ॥ सुषेणजीने जिस प्रकारके लक्षण बताये थे उन लक्षणोंसे तो यही जान पडता है कि इसी शिखरपर बहुत सुखकी देने वाली औषधियां हैं ॥ ३४ ॥ यदि हम वहां इन औषधियोंके लक्षण पूछ नेको जायँ और इस समय विशल्यकरणीको न ले जायँगे तो समय बीत जानेसे दोषभी होगा और बडी भारी विकलताभी आ पडेगी ॥३५॥ महाबलवान् हनुमान्‌जीने इसप्रकारकी चिंता करके शीघ्र जाय उस पर्वतश्रेष्ठको धारणकर तीन बार कंपायमान किया ॥३६॥ इस शिखरपर वृक्ष फूल रहे थे इसको महाबल

तस्यबुद्धिःसमुत्पन्नामारुतेरमितौजसः ॥ इदमेवगमिष्यामिगृहीत्वाशिखरंगिरेः ॥ ३३ ॥ अस्मिंस्तुशिखरेजातामोषधींतांसुखावहाम् ॥ प्रत र्केणावगच्छामिसुषेणोह्येवमब्रवीत् ॥ ३४ ॥ अगृह्ययदिगच्छामिविशल्यकरणीमहम् ॥ कालात्ययेनदोषःस्याद्वैक्लव्यंचमहद्भवेत् ॥ ३५ ॥ इतिसंचिंत्यहनुमान्गत्वाक्षिप्रंमहाबलः ॥ आसाद्यपर्वतश्रेष्ठंत्रिःप्रकंप्यगिरेस्तटम् ॥ ३६ ॥ फुल्लनानातरुगणंसमुत्पाटचमहाबलः ॥ गृहीत्वा हरिशार्दूलोहस्ताभ्यांसमतोलयत् ॥ ३७ ॥ सनीलमिवजीमूतंतोयपूर्णनभस्तलात् ॥ उत्पपातगृहीत्वातुहनूमाञ्छिखरंगिरेः ॥ ३८ ॥ समा गम्यमहावेगःसंन्यस्यशिखरंगिरेः ॥ विश्रम्यकिंचिद्धनुमान्सुषेणमिदमब्रवीत् ॥ ३९ ॥ ओषधीर्नावगच्छामिताअहंहरिपुंगव ॥ तदिदंशिख रंकृत्स्नंगिरेस्तस्याहृतमया ॥ ४० ॥ एवंकथयमानंतुप्रशस्यपवनात्मजम् ॥ सुषेणोवानरश्रेष्ठोजग्राहोत्पाटचचौषधीः ॥ ४१ ॥ विस्मिता स्तुबभूवुस्तेसर्वेवानरपुंगवाः ॥ दृष्ट्वातुहनुमत्कर्मसुरैरपिसुदुष्करम् ॥ ४२ ॥

वान् हनुमान्‌जीने उखाडलिया वानरशार्दूल हनुमान्‌जीने दोनों हाथोंमें उठाय इसको तोल लिया ॥ ३७ ॥ जलसे भरे हुए नीले बादलके समान उस पर्वतके शिखरको ग्रहण करके हनुमान्‌जी आकाशमें कूदगये ॥३८॥ इसके उपरान्त अत्यन्त वेगसे लंकामें पहुँच पर्वतके शिखरको रख और क्षणभरतक विश्राम करके सुषेणसे कहते हुए ॥ ३९ ॥ हे वानरश्रेष्ठ ! तुमने जिन सब दवाइयोंको बताया था हम उन सबको न पहँचान कर सारे पर्वतके शिखरकोही लाये हैं ॥ ४० ॥ जब पवनकुमार हनुमान्‌जीने ऐसा कहा तब वानरश्रेष्ठ सुषेणने उनकी प्रशंसा करके शिखरसे औषधियें उखाड लीं ॥ ४१ ॥ देवताओंसेभी जो न हो सके ऐसा हनुमान्‌जीका यह विचित्र कर्म देखकर समस्त वानरश्रेष्ठगण विस्मित हुए ॥ ४२ ॥

इसके उपांतर महाद्युतिमान् वानरोंमें श्रेष्ठ सुषेणजीने उस औषधिको पीस लक्ष्मणजीकीनासिकामें उसका नास दिया ॥ ४३ ॥ परवीरघाती शक्तिसे पीडित लक्ष्मणजीउस औषधिकी सुगंधिको सूँघकर घावरहित व्याधिहीन हो शीघ्र पृथ्वीपर उठ बैठे ॥ ४४ ॥ लक्ष्मणजीको पृथ्वीपरसे उठता हुआ देखकर समस्त वानरलोग आनंदसहित " धन्यहो, धन्यहो " ऐसा कहकर लक्ष्मणजीकी बडाई करने लगे ॥ ४५ ॥ परवीरघाती श्रीरामचन्द्रजीने " आओ आओ " यह पुकार नेत्रोंमें आंसूभर भलीभांति लक्ष्मणजीको अपने हृदयसे लगाया ॥ ४६ ॥ रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी सुमित्रासुत लक्ष्मणजीको इस प्रकार हृदयसेलगाकर बोले कि, हे वीर ! हमने भाग्यके बलसेही तुमको मृत्युसे फिर जीवित होते देखा ॥ ४७ ॥ विजयलाभ, सीता अथवा जीवन धारण यह सब हमारे किसी

ततःसंक्षोदयित्वातामोषधींवानरोत्तमः ॥ लक्ष्मणस्यददौनस्तःसुषेणःसुमहाद्युतिः ॥ ४३ ॥ सशल्यःससमाघ्रायलक्ष्मणःपरवीरहा ॥ विशल्योविरुजःशीघ्रमुदतिष्ठन्महीतलात् ॥४४॥ तमुत्थितंतुहरयोभूतलात्प्रेक्ष्यलक्ष्मणम ॥ साधुसाध्वितिसुप्रीतालक्ष्मणंप्रत्यपूजयन् ॥ ४५ ॥ एह्येहीत्यब्रवीद्रामोलक्ष्मणंपरवीरहा ॥ सस्वजेगाढमालिंग्यबाष्पपर्याकुलेक्षणः ॥ ४६ ॥ अब्रवीच्चपरिष्वज्यसौमित्रिंराघवस्तदा ॥ दिष्ट्या त्वांवीरपश्यामिमरणात्पुनरागतम् ॥ ४७ ॥ नहिमेजीवितेनार्थःसीतयाचजयेनवा ॥ कोहिमेजीवितेनार्थस्त्वयिपंचत्वमागते ॥ ४८ ॥ इत्येवंब्रुवतस्तस्यराघवस्यमहात्मनः ॥ खिन्नःशिथिलयावाचालक्ष्मणोवाक्यमब्रवीत् ॥ ४९ ॥ तांप्रतिज्ञांप्रतिज्ञायपुरासत्यपराक्रम ॥लघुःकश्चिदिवासत्त्वोनैवंत्वंवक्तुमर्हसि ॥ ५० ॥ नहिप्रतिज्ञांकुर्वंतिवितथांसत्यवादिनः ॥ लक्षणंहिमहत्त्वस्यप्रतिज्ञापरिपालनम् ॥ ५१ ॥ नैराश्यमुपगंतुंचनालंतेमत्कृतेऽनघ ॥ वधेनरावणस्याद्यप्रतिज्ञामनुपालय ॥ ५२ ॥ नजीवन्यास्यतेशत्रुस्तवबाणवशंगतः ॥ नर्दतस्तीक्ष्णदंष्ट्रस्यसिंहस्येवमहागजः ॥ ५३ ॥

काममेंभी नहीं आते । कारण कि, तुम्हारे मृतक होजानेपर हमारे प्राणधारण करनेसे क्या फल होता ? ॥ ४८ ॥ महात्मा रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजीने जब यह वचन कहे, तब लक्ष्मणजी दुःखित अन्तःकरणसे और करुणाकी वाणीसे बोले ॥ ४९ ॥ हे सत्यपराक्रम ! पहले वह प्रतिज्ञा करके पुरुषार्थरहित छोटे दुर्बल पुरुषके समान आपको ऐसा कहना उचित नहीं है ॥ ५० ॥ प्रतिज्ञापालन करनाही महत्त्वका लक्षण है; सत्यवादी महात्मा लोग कभीभी प्रतिज्ञाको भंग नहीं करते हैं ॥५१॥ हे वीर ! हमारे लिये आप इतने उत्साहहीन क्यों होते हैं ? आज आप रावणका संहार करके अपनी प्रतिज्ञाको पालन कीजिये ॥ ५२ ॥ हम जानते हैं कि आपके बाणके वशमें होकर किसी शत्रुके प्राणोंकी रक्षा नहीं होसकती । जो सिंह तीक्ष्ण दांत निकाल गर्जकर आवे, तब

महागज विचारेकाभी क्या प्राण है जो उससे अपनी रक्षा कर सके ॥५३॥ जबतक सूर्यभगवान् अपना पूरा कार्य करके अस्ताचलको न चले जांय आप उससे पहले ही शीघ्रतासे इस दुरात्माका वध करडालैं ऐसी हमारी इच्छा है ॥५४॥ हे आर्य ! यदि संग्राममें रावणका नाश करना और अपनेको सत्यप्रतिज्ञ कहलानेकी आप इच्छा रखते हो और जो राजकुमारी जानकीजीके लाभ करनेका आपको अभिलाष हो तो शीघ्रतासे हमारे कहनेके अनुसार आप कार्य करें ॥ ५५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां द्व्यधिकशततमः सर्गः ॥ १०२ ॥ लक्ष्मणजीके कहे हुए यह समस्त वचन सुनकर परवीरघाती वीर्यवान् रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी दिव्यधनुष धारण कर उसपर बाण चढाय ॥ १ ॥ सब सेनाके सामनेही रावणके ऊपर बाणोंकी घोर वृष्टि करने लगे । इस ओर राक्षसराज रावणभी दूसरे रथपर सवार होकर ॥ २ ॥ राहु जिस प्रकार सूर्यके ऊपर दौडता है वैसेही वह श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर दौडा, जिस प्रकार मेघ

अहंतुवधमिच्छामिशीघ्रमस्यदुरात्मनः ॥ यावदस्तंनयात्येषकृतकर्मादिवाकरः ॥५४॥ यदिवधमिच्छसिरावणस्यसंख्येयदिचकृतांहितवेच्छसिप्रतिज्ञाम् ॥ यदितवराजसुताभिलाषआर्यकुरुचवचोममशीघ्रमद्यवीर ॥५५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे द्व्यधिकशततमः सर्गः ॥ १०२ ॥ लक्ष्मणेनतुतद्वाक्यमुक्तंश्रुत्वासराघवः ॥ संदधेपरवीरघ्नोधनुरादायवीर्यवान् ॥ १ ॥ रावणायशरान्घोरान्विससर्जचमूमुखे॥अथान्यरथमास्थायरावणोराक्षसाधिपः ॥२॥ अभ्यधावतकाकुत्स्थंस्वर्भानुरिवभास्करम् ॥ दशग्रीवोरथस्थस्तुरामंवज्रोपमैःशरैः ॥ आजघानमहाशैलंधाराभिरिवतोयदः ॥३॥ दीप्तपावकसंकाशैःशरैःकांचनभूषणैः ॥ अभ्यवर्षद्रणेरामोदशग्रीवंसमाहितः ॥ ४ ॥ भूमौस्थितस्यरामस्यरथस्यचरक्षसः ॥ नसमंयुद्धमित्याहुर्देवगंधर्वकिन्नराः ॥ ५ ॥ ततोदेववरःश्रीमाञ्श्रुत्वातेषांवचोऽमृतम् ॥ आहूयमातलिंशक्रोवचनंचेदमब्रवीत ॥ ६ ॥ रथेनममभूमिष्ठंशीघ्रंयाहिरघूत्तमम् ॥ आहूयभूतलंयातःकुरुदेवहितंमहत् ॥ ७ ॥

जलकी धारासे महा पर्वतपर जलकी वर्षा करते हैं, वैसेही रथपर बैठा हुआ रावण वज्रके समान बाणोंसे श्रीरामचन्द्रजीको मारने लगा ॥ ३ ॥ श्रीरामचन्द्रजीनेभी अतिसावधानीसे प्रदीप्त अग्निके समान सुवर्णभूषित बाणोंसे रावणको मर्दित करना प्रारंभ किया ॥ ४ ॥ परंतु आकाशमें विराजमान हुए देवता गन्धर्व और किन्नरगण, परस्पर इस प्रकारसे कहने लगे कि रघुनंदन तो पृथ्वीपर खडे होकर संग्राम करते हैं और रावण रथपर बैठकर युद्ध कर रहा है, इस कारण इन दोनोंका युद्ध समान नहीं है ॥ ५ ॥ देवताओंके ऐसे वचन सुनकर देवताओंमें श्रेष्ठ श्रीमान् इन्द्रजी मातलिको बुलाकर बोले ॥ ६ ॥ हे मातलि ! शीघ्र हमारा रथ पृथ्वीपर लेजाय रणमें विराजमान रघुश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीके निकट जाय उनको इस रथपर बैठाकर कहना कि, देवराज इन्द्रने यह रथ भेजा है.

इसपर चढकर आप देवताओंका कार्य सिद्ध कीजिये ॥ ७ ॥ देवसारथि मातलि देवराज इन्द्रजी करके इस प्रकार कहे जाकर उनको शिर झुकाकर प्रणाम करके बोला ॥८॥ कि हम आपकी आज्ञाके अनुसार शीघ्र जाकर श्रीरामचन्द्रजीका सारथ्य कार्य करते हैं मातलिने यह कहकर उस उत्तम रथमें हरे रंगके घोडे जोते, वह रथ सुवर्णसे चित्रित हो रहा था और सौकडों किंकिणियोंसे भूषित था ॥९॥ प्रातःकालके सूर्यके समान प्रकाशित था उसके कूबर वैदूर्यमणिके बने थे अच्छे घोडे और सुवर्णके भूषणोंसे भूषित था, इसमें श्वेत रंगके चामरादि धरे थे ॥१०॥ सूर्यके समान प्रकाशित हरे रंगके घोडे जिसमें जुतरहे थे; सुवर्णके भूषण जिसमें सर्वप्रकारसे लगरहे थे, उसकी ध्वजाका बांस सुवर्णका बना हुआ था ऐसा श्रीमान् देवराज इन्द्रजीका श्रेष्ठ रथ ॥ ११ ॥ इस प्रकारसे इन्द्रका सारथि मातलि देवराज इन्द्रजीकी आज्ञा पाय रथपर सवार हो स्वर्गसे उतरा और श्रीरामचन्द्रजीके निकट आया ॥ १२ ॥ चाबुक हाथमें लिये

इत्युक्तोदेवराजेनमातलिर्देवसारथिः ॥ प्रणम्यशिरसादेवंततोवचनमब्रवीत् ॥ ८ ॥ शीघ्रंयास्यामिदेवेंद्रसारथ्यंचकरोम्यहम् ॥ ततोहयैश्चसंयोज्यहरितैःस्यंदनोत्तमम् ॥ ततःकांचनचित्रांगःकिंकिणीशतभूषितः ॥ ९ ॥ तरुणादित्यसंकाशोवैदूर्यमयकूबरः ॥ सदश्वैःकांचनापीडैर्युक्तःश्वेतप्रकीर्णकैः॥१०॥हरिभिःसूर्यसंकाशैर्हेमजालविभूषितैः॥ रुक्मवेणुध्वजःश्रीमान्देवराजरथोवरः॥११॥ देवराजेनसंदिष्टोरथमारुह्य मातलिः ॥ अभ्यवर्ततकाकुत्स्थमवतीर्यत्रिविष्टपात् ॥ १२ ॥ अब्रवीच्चतदारामंसप्रतोदोरथेस्थितः ॥ प्रांजलिर्मातलिर्वाक्यंसहस्राक्षस्यसारथिः ॥१३॥ सहस्राक्षेणकाकुत्स्थरथोऽयंविजयायते ॥ दत्तस्तवमहासत्त्वश्रीमञ्छत्रुनिबर्हण ॥ १४ ॥ इदमैन्द्रंमहच्चापंकवचंचाग्निसन्निभम् ॥ शराश्चादित्यसंकाशाःशक्तिश्चविमलाशिवा ॥ १५ ॥ आरुह्येमंरथंवीररराक्षसंजहिरावणम् ॥ मयासारथिनादेवमहेंद्रइवदानवान् ॥ १६ ॥ इत्युक्तःसंपरिक्रम्यरथंतमभिवाद्यच॥ आरुरोहतदारामोलोकाल्लक्ष्म्याविराजयन् ॥ १७ ॥

रथपरही बैठा हुआ हजारनेत्रवाले इन्द्रजीका सारथि हाथ जोडकर श्रीरामचन्द्रजीसे यह वचन बोला ॥१३॥ हे महासत्त्वसम्पन्न शत्रुदमनकारी श्रीरामचन्द्रजी आपकी विजयप्राप्तिके लिये देवराज इंद्रजीने यह रथ भेजा है ॥१४॥ और इंद्रजीने आपको यह ऐन्द्र धनुष, अग्निके समान कवच, सूर्यके समान बाण और यह विमल तीक्ष्ण शक्ति दी है ॥१५॥ हे देववीर रघुनाथजी ! हमारे सारथिपनकी चतुरतासे देवराज इंद्रजी जिसप्रकार दानवोंका दलन करते हैं वैसेही आपभी इस रथपर सवार होकर राक्षस रावणका विनाश कीजिये ॥ १६ ॥ जब मातलिने इस प्रकारसे कहा तब श्रीरामचन्द्रजीने उस रथकी प्रदक्षिणा की और अपनी कांतिसे सब लोगोंको विराजमान करके उसपर सवार हुए ॥ १७ ॥

उस समय राक्षस रावण और महावीर श्रीरामचंद्रजीका अद्भुत और रोमहर्षणकारी द्वैरथ युद्ध होने लगा ॥ १८ ॥ परम अस्त्रोंके जाननेवाले श्रीरामचन्द्रजीने गान्धर्वास्त्रसे सब गान्धर्व बाणोंको और देवबाणोंसे सब देवास्त्रोंको काटडाला ॥ १९ ॥ फिर राक्षसोंके राजा निशाचर रावणने परमक्रोधित होकर महाघोर राक्षसास्त्र चलाया ॥ २० ॥ रावणके धनुषसे छूटे हुए काञ्चनभूषित बाण महाविषधर सर्पका रूप धारण करके श्रीरामचन्द्रजीकी देहमें आकर लगे ॥ २१ ॥ यह बाण अपने प्रदीप्त मुखसे प्रदीप्त आग उगलते हुए मुख फैलाये हुए श्रीरामचन्द्रजीके सन्मुख आकर चिपटने लगे ॥ २२ ॥ उस कालमें उनके प्रकाशित महाविषवाले वासुकी नागके समान स्पर्शकारी बाणोंसे सब दिशा विदिशा भरगई ॥ २३ ॥ रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीने उन पन्नगरूप समस्त बाणोंको आते

तद्बभौचाद्भुतंयुद्धंद्वैरथंरोमहर्षणम् ॥ रामस्यचमहाबाहोरावणस्यचरक्षसः ॥ १८ ॥ सगांधर्वेणगांधर्वंदैवंदैवेनराघवः ॥ अस्त्रंराक्षसराजस्यज घानपरमास्त्रवित् ॥ १९ ॥ अस्त्रंतुपरमंघोरंराक्षसंराक्षसाधिपः ॥ससर्जपरमक्रुद्धःपुनरेवनिशाचरः ॥ २० ॥ तेरावणधनुर्मुक्ताःशराःकांचनभू षणाः ॥ अभ्यवर्तंतकाकुत्स्थंसर्पाभूत्वामहाविषाः ॥ २१ ॥ तेदीप्तवदनादीप्तंवमंतोज्वलनंमुखैः ॥ राममेवाभ्यवर्तंतव्यादितास्याभयानकाः ॥ २२ ॥ तैर्वासुकिसमस्पर्शैर्दीप्तभोगैर्महाविषैः ॥ दिशश्चसंतताःसर्वाविदिशश्चसमावृताः ॥ २३ ॥ तान्दृष्ट्वापन्नगान्रामःसमापततआहवे ॥ अस्त्रंगारुत्मतंघोरंप्रादुश्चक्रेभयावहम् ॥ २४ ॥ तेराघवधनुर्मुक्तारुक्मपुंखाःशिखिप्रभाः ॥ सुपर्णाःकांचनाभूत्वाविचेरुःसर्पशत्रवः ॥ २५ ॥ तेतान्सर्वाञ्शराञ्जघ्नुःसर्परूपान्महाजवान् ॥ सुपर्णरूपारामस्यविशिखाःकामरूपिणः ॥ २६ ॥ अस्त्रेप्रतिहतेक्रुद्धोरावणोराक्षसाधिपः ॥ अ भ्यवर्षत्तदारामंघोराभिःशरवृष्टिभिः ॥ २७ ॥ ततःशरसहस्रेणराममक्लिष्टकारिणम् ॥ अर्दयित्वाशरौघेणमातलिंप्रत्यविध्यत ॥ २८ ॥ चिच्छेदकेतुमुद्दिश्यशरेणैकेनरावणः ॥ पातयित्वारथोपस्थेरथात्केतुंचकांचनम् ॥ २९ ॥

हुए देखकर घोर भयका देनेवाला गरुड नामक अस्त्र छोडा ॥ २४ ॥ वह श्रीरामचन्द्रजीके धनुषसे छूटा हुआ अग्निके समान प्रभाववाला सुवर्ण फोंकसे युक्त सर्पशत्रु बाण सुवर्णके पर लगाये गरुडरूप हो चारों ओर घूमने लगा ॥ २५ ॥ इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजीके इस कामरूपधारी गरुडजीके रूपवाले बाण रावणके सर्पाकार बाणोंको काटने लगे ॥ २६ ॥ ॥ २६ ॥ अपने अस्त्रको व्यर्थ हुआ देखकर राक्षसोंका राजा रावण क्रोधित हो श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर बाणोंकी घोर वर्षा करने लगा ॥ २७ ॥ सरलकर्मकारी श्रीरामचन्द्रजीको हजार बाणोंसे पीडित कर व और भी बहुतसे बाण मार मातलिकी ओर दौडा ॥ २८ ॥ और इन्द्रकी ध्वजापर एक बाण चलाया, और रावणने उस सुवर्णमय ध्वजाको रथके निकट गिराकर ॥ २९ ॥

बाणोंको बाणोंके जालसे इंद्रके घोडोंको मारा तब देवता, गंधर्व व चरण, दानवोंके सहित विषादित हुए ॥ ३० ॥ परमर्षि सिद्धलोग भी रावणसे श्रीराम चन्द्रजीको पीडित देख व्याकुल हुए और वानरराज सुग्रीव तथा विभीषण भी अत्यन्त व्यथित हुए ॥ ३१ ॥ उस कालमें रामरूप चंद्रमाको रावणरूप राहुसे ग्रसित देखकर चन्द्रमाके अतिप्रिय रोहिणी नक्षत्रपर ॥ ३२ ॥ बुध ग्रह जाकर झटपट हो रहा,जो कि ऐसा होनेपर प्रजापुञ्जोंके अत्यन्त अशुभका देनेवाला हो जाता है धुएँके सहित लहरोंसे प्रज्वलितसा होता हुआ समुद्र ॥ ३३ ॥ क्रोधकर मानो सूर्यके छूनेके कारणही ऊपरको उछला. सूर्यभगवान् रूखे और श्यामवर्णके घेरेमें घिर गये और उनकी किरणें मन्द होगईं ॥ ३४ ॥ और केतुके युक्त होनेसे उस समय उनमें कबन्ध दिखाई देने लगा. इक्ष्वाकुवंशियोंके

ऐंद्रानपिजघानाश्वाञ्छरजालेनरावणः ॥ विषेदुर्देवगंधर्वचारणादानवैःसह ॥ ३० ॥ राममार्ततदादृष्ट्वासिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ व्यथितावानरेंद्रा श्चबभूवुःसविभीषणाः ॥ ३१ ॥ रामचंद्रमसंदृष्ट्वाग्रस्तंरावणराहुणा ॥ प्राजापत्यंचनक्षत्रंरोहिणींशशिनःप्रियाम् ॥ ३२ ॥ समाक्रम्यबुधस्त स्थौप्रजानामहितावहः ॥ सधूमपरिवृत्तोर्मिःप्रज्वलन्निवसागरः ॥ ३३ ॥ उत्पपाततदाक्रुद्धःस्पृशन्निवदिवाकरम् ॥ शस्त्रवर्णःसुपरुषोमंदर श्मिर्दिवाकरः ॥ ३४ ॥ अदृश्यतकबंधांकःसंसक्तोधूमकेतुना ॥ कोसलानांचनक्षत्रंव्यक्तमिंद्राग्निदैवतम् ॥ ३५ ॥ आहत्यांगारकस्तस्थौ विशाखामपिचांबरे ॥ दशास्योविंशतिभुजःप्रगृहीतशरासनः ॥ ३६ ॥ अदृश्यतदशग्रीवोमैनाकइवपर्वतः ॥ निरस्यमानोरामस्तुदशग्रीवेण रक्षसा ॥ ३७ ॥ नाशक्नोदभिसंधातुंसायकान्रणमूर्धनि ॥ सकृत्वाभ्रुकुटिंक्रुद्धःकिंचित्संरक्तलोचनः ॥ ३८ ॥ जगामसुमहाक्रोधंनिर्दहन्निव राक्षसान् ॥ तस्यक्रुद्धस्यवदनंदृष्ट्वारामस्यधीमतः ॥ सर्वभूतानिवित्रेसुःप्राकंपतचमेदिनी ॥ ३९ ॥ सिंहशार्दूलवाञ्छैलःसंचचालचलद्रुमः ॥ बभूवचापिक्षुभितःसमुद्रःसरितांपतिः ॥ ४० ॥

सदा शुभकारी इन्द्राग्निदैवत नक्षत्र ॥३५॥ विशाखापर झटपट आकर आकाशमें दशमुख और बीस भुजावाला रावण धनुष धारण करके विराजमान होने लगा ॥ ३६ ॥ उस समय रावण अदृश्यमैनाक पर्वतके समान जान पडने लगा,पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी राक्षस रावण करके ॥ ३७ ॥ दूर किये जाकर संग्राममें बाणोंसे अपनेको नहीं छुटाय सके न बाण छोड सके व क्रोधके मारे भौहैं चढाय कुछ एक लाललाल नेत्र करते हुए ॥ ३८ ॥ कि मानो निशाचरगण उस भ्रुकुटिके टेढे होनेसे भस्म होने लगे,उस समय बुद्धिमान् रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीका वह क्रोधपूर्ण वदन देखकर पृथ्वी कंपायमान होने लगी और सब प्राणियोंको त्रास उपजा ॥ ३९ ॥ वृक्ष चलायमान हुए, सिंह व शार्दूलयुक्त पर्वत वारंवार कांपने लगे और नदियोंका पति समुद्र अत्यन्त खलबलाय गया ॥ ४० ॥

गधे बडा कठोर शब्द करने लगे और उत्पातकी करनेवाली बादलोंकी घटा दारुण शब्द करती हुई संपूर्ण आकाशमंडलमें घूमने लगी ॥ ४१ ॥ अधिक क्या कहें, उस कालमें क्रोधित श्रीरामचन्द्रजीको और इन समस्त कठोर उपद्रवोंको देखकर सब प्राणियोंको त्रास हुआ और रावणभी भयभीत हुआ॥४२॥ विमानोंमें बैठे हुए देवता, गन्धर्व, उरग, ऋषि, दानव, दैत्यगण, व ग्रहआदि नक्षत्रगण ॥ ४३ ॥ उस महाप्रलयके समान युद्धको देखने लगे वह दोनों वीर अनेकप्रकारके भयंकर रूप अस्त्रशस्त्र चलायकर परस्पर युद्ध करते थे ॥ ४४ ॥ उस महासंग्रामके देखनेवाले देवता और असुर लोगोंके बीचमें राम रावणका जयपराजय विषयके संदेह उपस्थित होनेपर भक्तिऔर प्रसन्नतासे॥४५॥असुरगण हर्षसहित वारंवार "रावणकी जयहो" और देवतालोग वारंवार श्रीरा

खराश्चखरनिर्घोषागगनेपरुषाघनाः॥ औत्पातिकाश्चनर्दतःसमन्तात्परिचक्रमुः ॥ ४१ ॥ रामंदृष्ट्वासुसंक्रुद्धमुत्पातांश्चैवदारुणान् ॥ वित्रेसुः सर्वभूतानिरावणस्याभवद्भयम् ॥ ४२ ॥ विमानस्थातदादेवागंधर्वाश्चमहोरगाः ॥ ऋषिदानवदैत्याश्चगरुत्मतश्चखेचराः ॥४३ ॥ ददृशुस्तेतदायुद्धंलोकसंवर्तसंस्थितम् ॥ नानाप्रहरणैर्भीमैःशूरयोःसंप्रयुध्यतोः॥ ४४ ॥ ऊचुःसुरासुराःसर्वेतदाविग्रहमागताः ॥ प्रेक्षमाणामहायुद्धंवाक्यंभक्त्याप्रहृष्टवत् ॥ ४५ ॥ दशग्रीवंजयेत्याहुरसुराःसमवस्थिताः ॥ देवाराममथोचुस्तेत्वंजयेतिपुनःपुनः ॥ ४६ ॥ एतस्मिन्नंतरेक्रोधाद्राघवस्यचरावणः ॥ प्रहर्तुकामोदुष्टात्मास्पृशन्प्राहरणंमहत् ॥ ४७ ॥ वज्रसारंमहानादंसर्वशत्रुनिबर्हणम्॥ शैलशृंगनिभैःकूटैश्चित्तदृष्टिभयावहम् ॥ ४८ ॥ सधूममिवतीक्ष्णाग्रंयुगांताग्निचयोपमम् ॥ अतिरौद्रमनासाद्यंकालेनापिदुरासदम् ॥ ४९ ॥ त्रासनंसर्वभूतानांदारणंभेदनंतथा ॥ प्रदीप्तइवरोषेणशूलंजग्राहरावणः ॥ ५० ॥ तच्छूलंपरमक्रुद्धोजग्राहयुधिवीर्यवान् ॥ अनीकैःसमरेशूरैराक्षसैःपरिवारितः ॥ ५१ ॥ समुद्यम्यमहाकायोननादयुधिभैरवम् ॥ संरक्तनयनोरोषात्स्वसैन्यमभिहर्षयन् ॥ ५२ ॥

मचन्द्रजीकी जयहो" इस प्रकारसे कहने लगे ॥४६॥ इसी समयमें महावीर रावणने श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर अत्यन्त कोप कर उनके विनाश करनेकी इच्छासे एक प्रचंड शूल ग्रहण किया ॥४७॥ यह शूल वज्रके समान सारवान् महाशब्द करता हुआ सर्व शत्रुदमनकारी पर्वतके शिखरके समान कि,जिसके देखनेहीसे डर लगे ॥ ४८ ॥ धुएँसहित दीप्त प्रलयकी अग्निके समान कालकरके भी बडे दुःखसे सहनेके योग्य अति भयानक अत्यन्त तीक्ष्ण और अव्यर्थ ॥ ४९ ॥ सर्व प्राणियोंको त्रास देनेवाला सबका विदारण और भेदन करनेवाला इस प्रकारका शूल रोषसे जलते हुए रावणने ग्रहण किया ॥ ५० ॥ यह शूल परम क्रोधित होकर वीर्यवान् रावणने ग्रहण किया रणके बीचमें असंख्य शूल राक्षसोंसे घेरे जाकर ॥ ५१ ॥ बडे भारी शरीरवाले राव णने शूलको उठाय

बडाभारी नाद किया । क्रोध केमारे लाल २ नेत्रकर इसने अपनीसेनाको हर्षित कराया ॥५२॥ रावणके उस घोर सिंहनादसे पृथ्वी, अंतरिक्ष, दिशा;विदिशा सबही कंपायमान होने लगी ॥५३॥ अतिकाय, दुरात्मा रावणकेसिंहनादसे सब प्राणियोंको त्रास उपजा और समुद्र खलबला गया ॥ ५४ ॥ महावीर्यवान् रावण उस शूलको ग्रहण करके महाशब्दसे सिंहनाद कर श्रीरामचन्द्रजीसे कठोर वचन कहने लगा ॥५५॥ हे राम! हम क्रोधमें भरकर यह शूल ग्रहण करके तुम्हारे ऊपर चलाते हैं यह शूल भ्राताके सहित तुम्हारे प्राणोंको हरण करेगा ॥५६॥ हे समरमें अपनी बडाई चाहने वाले राम ! संग्राममें जितने शूर मारे गये हैं; आज तुम्हारा विनाश करके हम उन सबका बदला लगे ॥ ५७ ॥ इसलिये क्षणभरतक टिके रहो, लो हम यह शूल चलाते हैं, यह कहकर राक्षसोंके राजा रावणने

पृथिवींचान्तरिक्षंचदिशश्चप्रदिशस्तथा ॥ प्राकंपयत्तदाशब्दोराक्षसेंद्रस्यदारुणः॥५३॥ अतिकायस्यनादेनतेनतस्यदुरात्मनः ॥ सर्वभूतानिवित्रेसुःसागरश्चप्रचुक्षुभे ॥ ५४ ॥ सगृहीत्वामहावीर्यःशूलंतद्रावणोमहत् ॥ विनद्यसुमहानादंरामंपरुषमब्रवीत् ॥ ५५ ॥ शूलोऽयंवज्रसारस्तेरामरोषान्मयोद्यतः ॥ तवभ्रातृसहायस्यसम्यक्प्राणान्हरिष्यति ॥५६॥ रक्षसामद्यशूराणांनिहतानांचमूमुखे॥ त्वांनिहत्यरणश्लाघीकरोमितरसासमम् ॥५७॥ तिष्ठेदानींनिहन्मित्वामेषशूलेनराघव ॥ एवमुक्त्वासचिक्षेपतच्छूलंराक्षसाधिपः ॥ ५८ ॥ तद्रावणकरान्मुक्तंविद्युन्मालासमावृतम् ॥ अष्टघंटंमहानादंवियद्गतमशोभत ॥५९॥ तच्छूलंराघवोदृष्ट्वाज्वलंतंघोरदर्शनम्॥ ससर्जविशिखान्रामश्चापमायम्यवीर्यवान् ॥ ६० ॥ आपतंतंशरौघेणवारयामासराघवः ॥ उत्पतंतंयुगांताग्निंजलौघैरिववासवः ॥ ६१ ॥ निर्ददाहसतान्बाणान्रामकार्मुकनिःसृतान् ॥ रावणस्यमहाञ्शूलःपतंगानिवपावकः ॥ ६२ ॥ तान्दृष्ट्वाभस्मसाद्भूताञ्छूलसंस्पर्शचूर्णितान् ॥ सायकानंतरिक्षस्थान्राघवःक्रोधमूर्च्छितः ॥ ६३ ॥

वह शूल चलाया ॥ ५८ ॥ दामिनी की श्रेणीके समान चमकता हुआ वह आठघंटे लगा हुआ भयंकर शूल रावणके हाथसे छूटकर महाशब्द करता आकाशमें प्रकाशित हो शोभायमान होने लगा॥ ५९ ॥ महावीर रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीने उस घोरदर्शन प्रज्वलित शूलको देखा धनुष झुकाय असंख्य बाण चलाये ॥६०॥ जिस प्रकार इन्द्रजी जल वर्षाकर उठीहुई प्रलयकी अग्निको बुझाते हैं, वैसेही श्रीरामचन्द्रजीने बाणोंसे उस शूलको रोकनेकी अभिलाषाकिया॥६१॥ परन्तु अग्नि जिस प्रकार पतंगोंको भस्म कर देते हैं वैसेही रावणके छोडे हुए उस शूलनेभी श्रीरामचन्द्रजीके धनुषसे छूटे उन सब बाणोंको भस्म करडाला ॥६२॥ जब श्रीरामचन्द्रजीने देखा कि हमारे चलाये आकाशमें गये हुए बाण उस अद्भुत शूलसे टकराकर चूर्ण हो भस्म होगये तब श्रीरामचन्द्रजीने अत्यन्तही

कोप किया ॥ ६३ ॥ और इन्द्रजीकी दीहुई शक्ति कि, जिसको मातलि लाया था, उसको महाक्रोधित हो रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीने ग्रहण किया ॥ ६४ ॥ युगान्तकालीन उल्काके समान प्रभासहित घंटेके शब्दसे युक्त वह शक्ति बलवान् श्रीरामचन्द्रजी करके तोली जाकर आकाशमंडलको प्रकाशित करती हुई ॥६५ ॥ इसके उपरान्त श्रीरामचंद्रजीकी चलाई हुई शक्ति राक्षसोंमें इन्द्र रावणके शूलपर गिरी, और वह महाशूलभी उस शक्तिके लगनेसे तेजहीन होकर पृथ्वीपर गिरपडा ॥६६॥ इसके उपरांत श्रीरामचचंद्रजीने सीधे चलने वाले और वज्रके समान तीक्ष्ण बाणोंसे रावणके रथकेघोडोंका संहार किया ॥ ६७ ॥ इसके पीछे फिर महाराज रघुनंदन श्रीरामचंद्रजीने बहुतसे तीखे बाण रावणकी छातीमें मारे और तीन बाण अतिवेगसे उसके माथमें मारे॥ ६८ ॥ राक्षस श्रेष्ठोंके मध्यमें विराजमान राक्षसराज रावण जब बाणोंसे विद्ध हुआ तब उसके सब अंगोंसे रुधिर निकलने लगा, उस कालमें वह फूलेहुए अशोक वृक्षके

सतांमातलिनानीतांशक्तिंवासवसंमताम् ॥ जग्राहपरमक्रुद्धोराघवोरघुनंदनः ॥ ६४ ॥ सातोलिताबलवताशक्तिर्घंटाकृतस्वना ॥ नभःप्रज्वालयामासयुगांतोल्केवसप्रभा ॥ ६५ ॥ साक्षिप्तारा‌क्षसेंद्रस्यतस्मिञ्छूलेपपातह ॥ भिन्नःशक्त्यामहाञ्शूलोनिपपातगतद्युतिः ॥ ६६ ॥ निर्बिभेदततोबाणैर्हयानस्यमहाजवान् ॥ रामःक्षिप्तैर्महावेगैर्बाणवद्भिरजिह्मगैः ॥ ६७ ॥ निर्बिभेदोरसितदारावणंनिशितैःशरैः ॥ राघवः परमायत्तोललाटेपत्रिभिस्त्रिभिः ॥६८॥ सशरैर्भिन्नसर्वांगोगात्रप्रस्तुतशोणितः ॥ राक्षसेंद्रसमूहस्थः फुल्लाशोकइवाबभौ ॥ ६९ ॥सरामबाणैरपिविद्धगात्रोनिशाचरेंद्रःक्षतजार्द्रगात्रः ॥ जगामखेदंचसमाजमध्येक्रोधंचचक्रेसुभृशंतदानीम् ॥ ७० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि० च० सा० युद्धकांडे त्र्यधिकशततमःसर्गः ॥ १०३ ॥ सतुतेनतदाक्रोधात्काकुत्स्थेनार्दितोभृशम् ॥ रावणःसमरश्लाघीमहाक्रोधमुपागमत् ॥ १ ॥ सदीप्तनयनोमर्षाच्चापमुद्यम्यवीर्यवान् ॥ अभ्यर्दयत्सुसंक्रुद्धोराघवंपरमाहवे ॥ २ ॥ बाणधारासहस्रैस्तुसतोयदइवांबरात् ॥ राघवंरावणोबाणैस्तटाकमिवपूरयन् ॥ ३ ॥

समान शोभायमान होने लगा ॥६९॥ इस प्रकारसे जब संग्रामके मध्यमें राक्षसराजके सब गात्रोंमें श्रीरामचन्द्रजीके बाण बहुतही लगे, तब वह रुधिरमें डूबकर अतिशय खिन्न हो गया परंतु एक क्षणभरमें ही अत्यन्त क्रोधमें आकर उसके चित्त पर चढाई की ॥ ७० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्ध० भाषायां त्र्यधिकशततमः सर्गः ॥ १०३ ॥ इसके उपरांत राक्षसराज रावण श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंसे व्याकुल और अत्यन्त पीडित होकर अत्यन्त क्रोध करता हुआ ॥ १ ॥ इसकी दोनों आंखें क्रोधके मारे लाल २ होगईं वह वीर्यवान् रावण धनुष उठाय महासमरमें श्रीरामचन्द्रजीके संमुखदौडा ॥२॥ और मेघ जिस प्रकार आकाशसे जलधारा वर्षाकर तालाबोंको भर देते हैं वैसेही वह सहस्र बाण रूप धारासे श्रीरामचन्द्रजीको परिपूर्ण करता हुआ ॥ ३ ॥

परंतु महापर्वतके समान कांपनेके अयोग्य वीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजी रणमें रावणके धनुषसे छूटे हुए बाणोंसे पूरित होकर कंपायमान नहीं हुए ॥ ४ ॥ अधिक करके वीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजीने संग्राममें टिककर बाणोंके समूहसे उनमेंसे बहुत बाणोंको निवारण कर दिया और शेष बाणोंको सूर्यकी किरण समझकर ग्रहण कर लिया ॥ ५ ॥ तब लघुहस्तवाले निशाचरने महाक्रोधकर महावीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजीके हृदयमें हजार बाण मारे ॥ ६ ॥ इन बाणोंके प्रहारसे लक्ष्मणजीके बडे भाईका शरीर रक्तसे लाल हो गया जिससे ज्ञात होने लगा कि, मानों फूला हुआ टेसू वृक्ष खडा है ॥७॥ महातेजस्वी काकुत्स्थकुल तिलक श्रीरामचन्द्रजीने बाणोंके प्रहारसे क्रोधित होकर प्रलयकालके सूर्यके समान तेज युक्त बाण ग्रहण किये ॥८॥ इस प्रकारसे वह वीरयुगल राम रावण क्रोधमें

पूरितःशरजालेनधनुर्मुक्तेनसंयुगे ॥ महागिरिरिवाकंप्यःकाकुत्स्थोनप्रकंपते ॥ ४ ॥ सशरैःशरजालानिवारयन्समरेस्थितः ॥ गभस्तीनिव सूर्यस्यप्रतिजग्राहवीर्यवान् ॥ ५ ॥ ततःशरसहस्राणिक्षिप्रहस्तोनिशाचरः ॥ निजघानोरसिक्रुद्धोराघवस्यमहात्मनः ॥६॥ सशोणितसमादिग्धःसमरेलक्ष्मणाग्रजः ॥ दृष्टःफुल्लइवारण्येसुमहान्किंशुकद्रुमः ॥ ७ ॥ शराभिघातसंरब्धःसोऽभिजग्राहसायकान् ॥ काकुत्स्थःसुमहातेजायुगांतादित्यवर्चसः ॥ ८ ॥ ततोन्योन्यंसुसरब्धौरामरावणौ ॥ शरांधकारेसमरेनोपलक्षयतांतदा ॥ ९ ॥ ततःक्रोधसमाविष्टोरामो दशरथात्मजः ॥ उवाचरावणंवीरःप्रहस्यपरुषंवचः ॥ १० ॥ ममभार्यांजनस्थानादज्ञानाद्राक्षसाधम ॥ हृतातेविवशायस्मात्तस्मात्त्वंनासिवीर्यवान् ॥ ११ ॥ मयाविरहितांदीनांवर्तमानांमहावने ॥ वैदेहींप्रसभंहृत्वाशूरोऽहमितिमन्यसे ॥ १२ ॥ स्त्रीषुशूरविनाथासुपरदाराभिमर्शनम् ॥ कृत्वाकापुरुषंकर्मशूरोऽहमितिमन्यसे ॥ १३ ॥

भरकर परस्पर एक दूसरेके ऊपर इस प्रकारकी बाणवृष्टि करने लगे कि, उन बाणोंसे उत्पन्न हुए अंधकारसे परस्पर कोई भी किसीको नहीं देख सका ॥९॥ इसके उपरान्त दशरथकुमार वीर श्रीरामचन्द्रजी क्रोधित होकर कठोर वचन रावणसे कहने लगे ॥१०॥ हे राक्षसोंमें नीच ! तुम जन स्थानसे हमारे बिना जाने विवशमें पड़ी हुई हमारी भार्याको हरण करके ले आये हो इस कारण तुमको वीर्यवान् नहीं कह सकते ॥ ११ ॥ हम दोनों भाइयोंमेंसे कोईभी कुटीमें नहीं थे बस फिर जानकी उस महावनमें अकेली दीनभावसे टिकरही थीं, तुम उनको वैसी अवस्थामें बलपूर्वक हरण करके अपनेको शूर समझते हो ॥ १२ ॥ अरे शूर ! नाथविहीन स्त्रियोंके ऊपर परदारा हरणरूप कायर पुरुषोंका कार्य करके तुम अपनेको शूर समझते हो ? ॥ १३ ॥

हे मर्यादारहित निर्लज्ज दुश्चरित्र ! तुम गर्वके मारे अपनी मृत्युको लाकरभी अपनेको शूर कहकर मानते हो ॥ १४ ॥ आहा ! तुमने शूर प्रबल बलशाली और कुबेरके छोटे भ्राता होकरभी जो बडाईके योग्य बडा भारी कार्य किया है इस कार्यके करनेसे तुम्हारा यश बहुतही बढेगा (यह निन्दाके वाक्य हैं) ॥ १५ ॥ तुमने वर्गके वशमें पडकर जो निन्दित और अहित कार्य किया है अब उसका बडाभारी फल तुमको मिलेगा ॥ १६ ॥ रे खोटी मतिवाले ! तुम चोरके समान सीताको हरण करके जो अपनेको शूर समझते हो उससे क्या तुमको लाज नहीं आती है ? ॥ १७ ॥ जिस समय हम कुटीमें थे उस समय जो तुम बलपूर्वक सीताको हरणकरते तो उसी घडी तुम हमारे बाणोंसे मृतक होकर अपने भ्राता खरको देखते ॥१८॥ रे दुर्मते ! तू मेरे नेत्रके सामने आया है यह बहुत सुभाग्यकी बात है, आज मैं तुझे तीक्ष्ण बाणोंसे यमराजके घरमें भेज दूंगा ॥ १९ ॥ आज मेरे बाणोंसे वींधा हुआ यह दीप्तिमान्

भिन्नमर्यादनिर्लज्जचारित्रष्वनवस्थित ॥ दर्पान्मृत्युमुपादायशूरोऽहमितिमन्यसे ॥१४॥ शूरेणधनदभ्रात्राबलैःसमुदितेनच॥श्लाघनीयंमहत्कर्मयशस्यंचकृतंत्वया ॥१५॥ उत्सेकेनाभिपन्नस्यगर्हितस्याहितस्यच ॥ कर्मणःप्राप्नुहीदानींतस्याद्यसुमहत्फलम् ॥ १६ ॥ शूरोऽहमितिचात्मानमवगच्छसिदुर्मते ॥ नैवलज्जास्तितेसीतांचौरवद्व्यपकर्षतः ॥ १७ ॥ यदिमत्सन्निधौसीताधर्षितास्यात्त्वयाबलात् ॥ भ्रातरंतुखरंपश्येस्तदामत्सायकैर्हतः ॥ १८ ॥ दिष्ट्यासिममसंदात्मंश्चक्षुर्विषयमागतः ॥अद्यत्वांसायकैस्तीक्ष्णैर्नयामियमसादनम् ॥ १९ ॥ अद्यतेमच्छरैश्छिन्नंशिरोज्वलितकुंडलम् ॥ क्रव्यादाव्यपकर्षंतुविकीर्णंरणपांसुषु ॥ २०॥ निपत्योरसिगृध्रास्तेक्षितौक्षिप्तस्यरावण ॥ पिबंतुरुधिरंतर्षाद्बाणशल्यांतरोत्थितम् ॥२१॥ अद्यमद्बाणभिन्नस्यगतासोःपतितस्यते ॥ कर्षंत्वंत्राणिपतगागरुत्मतइवोरगान् ॥ २२ ॥ इत्येवंसवदन्वीरोरामःशत्रुनिबर्हणः ॥ राक्षसेंद्रंसमीपस्थंशरवर्षैरवाकिरत् ॥२३॥ बभूवद्विगुणंवीर्यंबलंहर्षश्चसंयुगे॥ रामस्यास्त्रबलंचैवशत्रोर्निधनकांक्षिणः ॥२४॥

कुंडलवाला तेरा मस्तक इस रणकी धूलिमें गिरजायगा और उसको मांसखानेवाले जीव खेंचेंगे ॥ २० ॥ आज हम बाणोंके फलकोंसे तुम्हारे हृदयमें जो छेद करेंगे और तुम पृथ्वीपर गिरजाओगे, तब प्यासे गिद्ध गण तुम्हारे हृदयमें बैठकर उसी छेदसे निकला हुआ रुधिर पान करेंगे ॥ २१ ॥ जिस प्रकार गरुडजी सर्पोंको खेंचते हैं वैसेही आज तुम जब हमारे बाणोंसे घायल हो व मृतक हो गिरजाओगे तब पक्षी गण तुम्हारी आंतोंको खेंचते फिरेंगे ॥ २२ ॥ शत्रुदमनकारी वीर श्रीरामचन्द्रजी समीप खडे हुए राक्षसोंकें स्वामी रावणसे यह वचन कह उसके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगे ॥ २३ ॥ जब श्रीरामचन्द्रजीने रणमें शत्रुके वध करनेका अभिलाष किया तब उनका वीर्य, बल, हर्ष, अस्त्र बल दूना होगया ॥ २४ ॥

यद्यपि महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी सर्वज्ञ थे तथापि सर्व अस्त्रोंके अधिष्ठात देवता उनके निकट आये और वह आनंदके मारे औरभी अतिशीघ्रतासे बाण छोडने लगे॥ २५॥ तब राक्षसोंके मारनेवाले रघुनाथजी अपने यह शुभ लक्षण देखकर फिर रावणको बाणोंसे पीडित करने लगे॥ २६॥ तब वानरगणोंके छोडे हुए पत्थर और श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंसे वध्यमान होकर रावणका हृदय मानो घूमने लगा॥ २७॥ परन्तु इस प्रकारकी मूर्छित अवस्थापर जब कि रावण बाण चलाने और धनुष खेंचनेमेंभी असमर्थ हुआ, उस समय श्रीरामचन्द्रजीने उसके वधके लिये किसी प्रकार वीर्य प्रकाशित नहीं किया ॥ २८ ॥ परंतु तो भी उसकी मूर्च्छासे पहले जो इन्होंने विविधभांतिके अस्त्र शस्त्र छोडे थे उससेही राक्षसराजका प्राण जानेपर होगया; और रावणकी अंतिम दशा आगई ॥२९॥ तब उसके रथका

प्रादुर्बभूवुरस्त्राणिसर्वाणिविदितात्मनः ॥ प्रहर्षाच्चमहातेजाःशीघ्रहस्ततरोऽभवत् ॥ २५ ॥ शुभान्येतानिचिह्नानिविज्ञायात्मगतानिसः ॥ भूय एवार्दयद्रामोरावणंराक्षसांतकृत् ॥ २६ ॥ हरीणांचाश्मनिकरैःशरवर्षैश्चराघवात् ॥ हन्यमानोदशग्रीवोविघूर्णहृदयोऽभवत् ॥ २७ ॥ यदाचशस्त्रंनारेभेनचकर्षशरासनम् ॥ नास्यप्रत्यकरोद्वीर्यंविक्लवेनांतरात्मना ॥ २८ ॥ क्षिप्ताश्चाशुशरास्तेनशस्त्राणिविविधानिच ॥ मरणार्थायवर्ततेमृत्युकालोऽभ्यवर्तत ॥ २९ ॥ सूतस्तुरथनेतास्यतदवस्थंनिरीक्ष्यतम् ॥ शनैर्युद्धादसंभ्रांतोरथंतस्यापवाहयत् ॥ ३० ॥ रथंचतस्याथजवेनसारथिर्निवार्यभीमंजलदस्वनंतदा ॥ जगामभीत्यासमरान्महीपतिंनिरस्तवीर्यंपतितंसमीक्ष्य ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे चतुरधिकशततमःसर्गः ॥ १०४ ॥ सतुमोहात्सुसंबुद्धःकृतांतबलचोदितः ॥ क्रोधसंरक्तनयनो रावणःसूतमब्रवीत् ॥ १ ॥ हीनवीर्यमिवाशक्तंपौरुषेणविवर्जितम् ॥ भीरुंलघुमिवासत्त्वंविहीनमिवतेजसा ॥ २ ॥ विमुक्तमिवमायाभिरस्त्रैरिवबहिष्कृतम् ॥ मामवज्ञाचदुर्बुद्धेस्वयाबुद्ध्याविचेष्टसे ॥ ३ ॥

चलानेवाला सारथि उसकी ऐसी अवस्था देखकर सावधानचित्त हो धीरे २ संग्राममसे उसका रथ अलग लेगया ॥३०॥ राक्षसपतिको वीर्यहीन और गिरा हुआ देखकर सारथि भयके मारे उस बादलके समान शब्द करनेवाले रथको छिपायकर संग्रामभूमिसे अलग लेगया ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि०युद्धकांडे भाषायां चतुरधिकशततमः सर्गः ॥१०४॥ कालसे प्रेरित रावण एक मुहूर्तभरमें मूर्च्छासे जाग क्रोधसे लाल २ नेत्र कर सारथिसे बोला ॥ १ ॥ क्या हमको वीर्यहीन, अस्त्र चलानेमें असमर्थ, पौरुषविवर्जित, अल्पचित्त डरपोक, बलहीनके तुल्य तेजसे रहित समझा ॥ २ ॥ राक्षसीमायाने क्याहमको छोडदिया ? क्या हम अस्त्रविद्याको नहीं जानते ? रे खोटी बुद्धिवाले ! तू क्या अपनी बुद्धिसे हमको साररहित समझकर इच्छानुसार हमारा निरादर करता है और अपनी

इच्छानुसार चेष्टा करता है ? ॥ ३ ॥ हमारा अभिप्राय न जानकरही निरादर करके तू किस कारणसे हमारा रथ शत्रुके सामने रणभूमिके मध्यसे अलग ले आया ? ॥४॥ रे अनार्य ! सब लोक हमको जो शूर कहकर विश्वास करते थे, सो आज तैंने हमारा सब दिनका इकट्ठा किया हुआ वह यश, वीर्य, विक्रम और शूरपनेका विश्वास तूने नष्ट कर दिया ॥५॥ प्रख्यातवीर्यवाला और विक्रमानुरागी शत्रु मेरे सामने खडा रहकर युद्ध करता था और वहां मैं भी उसके साथ युद्ध करनेमें लुब्ध होगया था, रे नीच ! तूने मुझको शत्रुके सामने कायर पुरुष किया ॥६॥ रे खोटीमतिवाले ! जब कि तू भूल करभी संग्रामसे ले आया है और अब वह, नहीं ले जाता तब हमारा वह अनुमान असत्य नहीं जान पडता कि, तूने शत्रुसे उत्कोच (रिशवत–घुस) ग्रहण कर ऐसा कार्य किया है ॥ ७ ॥ कारण कि, तैंने शत्रुके समान जो किया है ऐसा कार्य हितकी अभिलाषा किये सुहृद् लोग कभी नहीं कर सकते हैं ॥८॥ जो कुछभी हो तू बहुत कालतक

किमर्थंमामवज्ञायमच्छंदमनवेक्ष्यच ॥ त्वयाशत्रुसमक्षंमेरथोऽयमपवाहितः ॥ ४ ॥ त्वयाद्यहिममानार्यचिरकालमुपार्जितम् ॥ यशोवीर्यंचतेजश्चप्रत्ययश्चविनाशितः ॥ ५ ॥ शत्रोःप्रख्यातवीर्यस्यरंजनीयस्यविक्रमैः ॥ पश्यतोयुद्धलुब्धोऽहंकृतःकापुरुषस्त्वया ॥६॥ यस्त्वंकथमिदंमोहान्नचेद्वसिदुर्मते ॥ सत्योऽयंप्रतितर्कोमेपरेणत्वमुपस्कृतः ॥७॥ नहितद्विद्यतेकर्मसुहृदोहितकांक्षिणः ॥ रिपूणांसदृशंत्वेतद्यत्त्वयैतदनुष्ठितम् ॥८॥ निवर्तयरथंशीघ्रंयावन्नापैतिमेरिपुः ॥ यदिवाध्युषितोऽसित्वंस्मर्यंतेयदिमेगुणाः ॥९॥ एवंपरुषमुक्तस्तुहितबुद्धिरबुद्धिना ॥ अब्रवीद्रावणंसूतोहितंसानुनयंवचः ॥१०॥ नभीतोऽस्मिनमूढोऽस्मिनोपजप्तोऽस्मिशत्रुभिः ॥ नप्रमत्तोननिस्नेहोविस्मृतानचसत्क्रिया ॥११॥ मयातुहितकामेनयशश्चपरिरक्षता ॥ स्नेहप्रसन्नमनसाहितमित्यप्रियंकृतम् ॥१२॥ नास्मिन्नर्थेमहाराजत्वंमांप्रियहितेरतम् ॥ कश्चिल्लघुरिवानार्योदोषतोगंतुमर्हसि ॥१३॥

हमसे पालागया है इस लिये जो हमारे उपकार तुमको स्मरण हों जब तक हमारा शत्रु यहांपर पहुँचे उससे पहलेही तुम हमारा रथ संग्राम भूमिमें उनके सामने शीघ्र लौटकर लेचलो ॥ ९ ॥ इस प्रकारके कठोर वचन जब दुर्मति रावणने कहे तब शुभबुद्धिवाला सारथि रावणसे यह हितकारी विनययुक्त वचन बोला ॥ १० ॥ न मैं डरा हुआ हूं, मूढहूं, न मतवाला हूं, न स्नेहको भूला हूं, न हम आपके किये हुएसत्कारको भूले हैं न शत्रुके कहनेसे हमने यह कार्य किया है ॥ ॥११॥ रणभूमिसे रथका अलग करना अकर्तव्य होनेपरभी हमने आपके यशकी रक्षा करनेकेलिये हितसाधन करनेकी वासनासे स्नेहयुक्त हृदयद्वारा हित समझकरही यह अप्रिय कार्य किया है ॥ १२ ॥ हे महाराज ! हम सदा आपका प्रिय और हितकारी कार्य किया करते हैंइस कारण अब

इसके अर्थ ओछे आशय वाले श्रेष्ठ पुरुषकेसमान आपका हमारे ऊपर दोष लगाना कर्तव्य नहीं है ॥ १३ ॥ जिसप्रकार चन्द्रमाके उदयसे बढी हुई समुद्रकी जलराशि नदीके वेगको लौटा देती है; वैसेही हमने आपके रथको जो संग्रामसे लौटाया है इसका कारण आप श्रवण करें ॥ १४ ॥ जब हमने देखा कि, आप युद्धमें घोर परिश्रमकरके थक गये हैं और उस समय आपकी शक्ति शत्रुकी शक्तिसे निस्तेजभी होरही थी ॥ १५ ॥ इसके अतिरिक्त घोडेभी बहुत देरतक थर में जुते २ थकगये और उनकी देह पसीनेमें डूबगई थी और उस समय वह अश्व ऐसे व्याकुल थे जैसे अकालकी[वर्षामें भीगनेसे गायें व्याकुल होती हैं ॥१६॥ जितनेभर दुर्निमित्त वहां होरहे थे उनको देखकर जानपडा कि, यह समस्त हमारे अमंगलके लियेही होरहे हैं ॥ १७ ॥ हे राक्षस राज ! सारथिको अनेक बातोंपर दृष्टि रखनेका प्रयोजन है, देशकालका जानना शुभ अशुभ लक्षण, संकेत, दीनता, हर्ष, खेद और रथीका बला बल जानते रहना

श्रूयतांप्रतिदास्यामियन्निमित्तंमयारथः ॥ नदीवेगइवांभोभिःसंयुगेविनिवर्तितः ॥ १४ ॥ श्रमंतवावगच्छामिमहतारणकर्मणा॥नहितेवीर्यसौमुख्यंप्रकर्षंनोपधारये ॥ १५ ॥ रथोद्वहनखिन्नश्चभग्नामेरथवाजिनः ॥ दीनाघर्मपरिश्रांतागावोवर्षहताइव ॥१६॥ निमित्तानिचभूयिष्ठंयानि प्रादुर्भवंतिनः॥तेषुतेष्वभिपन्नेषुलक्षयाम्यप्रदक्षिणम्॥१७॥देशकालौचविज्ञेयौलक्षणानींगितानिच॥दैन्यंहर्षश्चखेदश्चरथिनश्चमहाबल ॥१८॥ स्थूलनिम्नानिभूमेश्चसमानिविषमाणिच॥युद्धकालश्चविज्ञेयःपरस्यांतरदर्शनम् ॥१९॥उपयानापयानेचस्थानंप्रत्यवसर्पणम्॥सर्वमेतद्रथस्थेन ज्ञेयंरथकुटुंबिना ॥२०॥ तवविश्रामहेतोस्तुतथैषांरथवाजिनाम्॥रौद्रंवर्जयताखेदंक्षमंकृतमिदंमया ॥२१॥ स्वेच्छयानमयावीररथोऽयमपवाहितः ॥ भर्तुःस्नेहपरीतेनमयेदंयत्कृतंप्रभो ॥२२॥ आज्ञापययथातत्त्वंवक्ष्यस्यरिनिषूदन ॥ तत्करिष्याम्यहंवीरगतानृण्येनचेतसा ॥२३॥

सारथिका कर्तव्यकर्म है ॥१८॥ पृथ्वीके ऊंचे नीचे स्थानको देखना, सम, विषम, ऊंचे; खाली आदि स्थानोंको भी जाने रहना, युद्धका शत्रुके छिद्रोंको देखते रहना ॥ १९ ॥ और किस समय शत्रुके सन्मुखको रथ ले जाना चाहिये और किस समय लौटाकर भागना चाहिये, और कब शत्रुके सामने ठहरना उचित है, और कबतक शत्रुके पीछे खडा रहना उचित है, यह सब बातें रथके हांकनेवालेको जाननी योग्य हैं ॥ २० ॥ हमने आपको विश्राम देनेके लिये और रथमें जुते हुए घोडोंको दारुण श्रम दूर करनेके लिये ही यह हितकारी कार्य किया है ॥ २१ ॥ हे स्वामी ! हे वीर मैं अपनी इच्छासे रणभूमिमेंसे रथको नहीं लाया, स्वामीके स्नेहके वश होकर ही मैंने यह कार्य किया है ॥ २२ ॥ हे वीर! शत्रुदमनकारी ! इस समय आप जो कुछ आज्ञा देंगे वह सब

ही कार्य करके मैं आपका ऋण चुका देऊंगा ॥ २३ ॥ सारथिके इस प्रकार वचन कहनेपर रावण अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ और उसकी बहुतसी बडाई करके युद्धकी वासनासे बोला ॥२४॥ हे सूत ! शीघ्र रामचंद्रके सामनेको रथ चलाओ आज रावण संग्राममें शत्रुओंका विना विनाश किये नहीं लौटेगा ॥२५॥ राक्षस रावणने हर्षित अन्तःकरणसे वह वचन कह सारथिको एक शुभजनक भुजामें पहरनेका उत्तम गहना दिया, और सारथिनेभी रावणके वचनानुसार रथ लौटाया ॥२६॥ इसके उपरान्त राक्षसोंके स्वामी रावणका वह महारथ सारथि रावणके वचनसे शीघ्रताकर घोडोंको लाता हुआ और क्षणभरमें संग्रामके बीचमें खडे हुए श्रीरामचन्द्रजीके सन्मुख आ गया ॥२७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां पंचाधिकशततमः सर्गः ॥१०५॥ तब रघुनाथजीको

संतुष्टस्तेनवाक्येनरावणस्तस्यसारथेः॥प्रशस्यैनंबहुविधंयुद्धलुब्धोऽब्रवीदिदम् ॥ २४ ॥ रथंशीघ्रमिमंसूतराघवाभिमुखंनय ॥ नाहत्वासमरेशत्रून्निवर्तिष्यतिरावणः॥२५॥एवमुक्त्वारथस्थस्यरावणोराक्षसेश्वरः॥ ददौतस्यशुभंह्येकंहस्ताभरणमुत्तमम्॥श्रुत्वारावणवाक्यानिसारथिःसंन्यवर्तत॥२६॥ततोद्रुतंरावणवाक्यचोदितःप्रचोदयामासहयान्ससारथिः॥सराक्षसेंद्रस्यततोमहारथःक्षणेनरामस्यरणाग्रतोऽभवत्॥२७॥इत्यार्षे श्रीमद्रावाल्मी०आदि०च०सा०युद्धकांडेपंचाधिकशततमःसर्गः ॥१०५॥ततोयुद्धपरिश्रांतंसमरेचिंतयास्थितम्॥ रावणंचाग्रतोदृष्ट्वायुद्धायसमुपस्थितम्॥१॥दैवतैश्चसमागम्यद्रष्टुमभ्यागतोरणम् ॥ उपगम्याब्रवीद्राममगस्त्योभगवांस्तदा॥२॥ रामराममहाबाहोशृणुगुह्यंसनातनम् ॥ येनसर्वानरीन्वत्ससमरेविजयिष्यसि ॥३॥ आदित्यहृदयंपुण्यंसर्वशत्रुविनाशनम् ॥जयावहंजपन्नित्यमक्षय्यंपरमंशिवम् ॥४॥ सर्वमंगलमांगल्यंसर्वपापप्रणाशनम्॥चिंताशोकप्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम्॥५॥रश्मिमंतंसमुद्यंतंदेवासुरनमस्कृतम्॥पूजयस्वविवस्वंतंभास्करंभुवनेश्वरम्॥६॥

समरमें थका हुआ और चिंतायुक्त व रावणको युद्ध करनेके लिये संमुख खडा हुआ देख ॥१॥ देवता लोगोंके सहित युद्ध देखनेके लिये आये हुए ऋषियोंमें श्रेष्ठ भगवान् अगस्त्यजी श्रीरामचन्द्रजीके समीप आकर कहने लगे ॥२॥ हे वत्स महावीर रामचन्द्र! जिससे तुम इन शत्रुओंको हरानेमें समर्थ होगे हम वैसाही एक सनातन अतिगोपनीय स्तोत्र कहते हैं श्रवण करो ॥३॥ हे रामचन्द्र! तुम सर्व शत्रुओंका विनाश करने वाला अक्षय और परममंगलकारी ''आदित्यहृदय'' नामक स्तोत्र पाठ करो तो निश्चयही जय प्राप्त कर सकोगे ॥४॥ हे वत्स ! जो सब मंगलोंका निदान है, पापपुञ्जके क्षयकारी चिन्ता और शोकके नाश करनेवाले और परमायुके बढानेवाले हैं ॥५॥ तुम उन्हीं देवता व असुर लोगोंके नमस्कार करने योग्य उदय होते हुए मरीचिमाली भास्वर और भुवनेश्वर आदि

नामोंसे प्रसिद्ध सूर्य भगवान्‌की पूजा करो * ॥६॥ यह सर्व देवमय तेजस्वी दिवाकर ज्ञानरश्मियोंसे (ज्ञानकी किरणोंसे) सब लोगोंको प्रकाशित किया करते और समस्त किरणोंहीसे देवता व असुरगणोंकी रक्षा किया करते हैं ॥७॥ यह दृश्यमान देव दिवाकर अतुल ऐश्वर्य और समस्त विद्याओंकी सृष्टि करनेके लियेही योगके द्वारा दर्शनीय ब्रह्मरूप अपने रचे हुए सब पदार्थोंका पालन करनेके लियेही विष्णुरूप, और उनका विनाश करनेके लियेही शिवरूप धारण करनेके कारण ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरके नामसे पुकारे जाते हैं सब इंद्रियोंको स्कन्दित अर्थात् सुखा देते हैं इसी कारणसे स्कन्द, अपनी शक्तिसे सबको उपादान स्वरूप और कारण वस्तुमात्रके अधीश्वर होनेसे प्रजापति, सुवर्णमय सुमेरुके शिखरपर भ्रमण और वज्रादि अस्त्र शस्त्र धारण करते हैं इसलिये महेन्द्र सबके अन्तरमें धन अर्थात् चित्तशक्ति देते हैं इस कारणसे धनद, अपरोक्ष बुद्धिकी वृत्तिको कार्य विशेषमें कलित अर्थात् चलाते हैं इसीलिये काल, सबके अंतर्यामी होनेसे यम, अमृत छोडते हैं इस कारण चन्द्रमा, जलराशिकी क्षय और वृद्धि करते हैं इससे वरुण ॥८॥ सब प्रकारके बीजप्रदान करते हैं इसीसे बीजके देनेवाले पितृगण, सब धनोंकी खानि हैं इसी कारणसे वसुगण, प्रधान होनेके कारण योगीलोग सदा साधना किया करते हैं इसलिये साध्यगण सब रोगोंका शान्ति करनेवाले हैं इसी कारणसे अश्वि

सर्वदेवात्मकोह्येषतेजस्वीरश्मिभावनः ॥ एषदेवासुरगणाँल्लोकान्पातिगभस्तिभिः ॥ ७ ॥ एषब्रह्माचविष्णुश्चशिवःस्कंदःप्रजापतिः ॥ महें द्रोधनदःकालोयमःसोमोह्यपांपतिः ॥ ८ ॥ पितरोवसवःसाध्याअश्विनौमरुतोमनुः ॥ वायुर्वह्निःप्रजाःप्राणऋतुकर्ताप्रभाकरः ॥ ९ ॥ आदि त्यःसवितासूर्यःखगःपूषागभस्तिमान् ॥ सुवर्णसदृशोभानुर्हिरण्यरेतादिवाकरः ॥ १० ॥

नीकुमार, सब जीवोंके प्राणस्वरूप होनेके कारण मरुद्गण, सर्वज्ञ होनेसे मनु; निरन्तर गमन करते रहते हैं इससे वायु, अपनी महिमामें आपही प्रतिष्ठित रहकर अपनी प्रभाको वहन करते हैं इसी कारणसे वह्नि, सब जीवात्मा इनसेही जन्म ग्रहण करते हैं इस कारण प्रजा, प्राणयात्राके प्रवर्त्तक होनेसे प्राण, ऋतु अर्थात् ज्ञान और वसन्तादि सब ऋतुओंके उपादान होनेसे ऋतुकर्ता और सबलोगोंको प्रकाशित करते हैं इसीलिये प्रभाकर कहलाये जाते हैं, इसीलिये उनको नमस्कार करना कर्तव्य है ॥ ९ ॥ हे देव ! तुम सब विषयोंको दान करके भोगते हो इससे आदित्य, अंतःकरणकी उपाधिसे चिदात्मवर्गको और अपनी किरणोंसे उठे हुए मेघादिद्वारा अन्नादिकी सृष्टि करते हो इसी कारणसे सविता, सबको कार्यमें नियुक्त करते हो इसी अर्थ सूर्य, महाकाश और सबोंके हृदयरूपी आकाशमें विचरण करते हो इस कारणसे खग, समस्त जीवोंका पालन करते हो इससे पूषा, सर्वव्यापिनी लक्ष्मीजी विष्णुजीके समान तुम्हारा आश्रय किये हुई हैं इस निमित्त गभस्तिमान् तुम्हारा वर्ण सुवर्णके समान है इसलिये सुवर्णसदृश, सब लोकोंको प्रकाशित करते हो इसलिये भानु हिरण्य अर्थात् सुवर्ण और उसका उपजाने

* यह आदित्यके अन्तरात्मा ब्रह्मकी स्तुति है।

वाला पाराही तुम्हारा रेत अर्थात् अण्डोत्पादक है इसी कारणसे हिरण्यरेता सब वस्तुओंको प्रकाशित करते हो इसीसे तुम्हारा नाम दिवाकर है, तुमको नमस्कार है ॥ १० ॥ तुम सब दिशाओंमें व्याप रहे हो और तुम्हारे घोडोंका रंग हरा हैं इसी कारणसे हरिदश्व, तुम्हारे ज्ञानकी सीमा नहीं किरणें भी हजार प्रकारकी हैं इसनिमित्त सहस्रार्चि, तुमही दोनों नेत्र दोनों कान नाकके दोनों स्वर और मन इस प्राणात्मक सात इन्द्रियोंको विषयदेशमें लगा देते हो इसी निमित्त सप्तसप्ति, किरणोंकी खानि होनेसे मरीचिमान् आज्ञानरूप अन्धकारका नाश करते हो इसलिये तिमिरोन्मथन उपवर्गादिरूप परमानंद तुमसेही होते हैं इसलिये शम्भु, भक्तवृदोंकी उत्पत्ति और विनाशरूप अनर्थजनित दुःखका नाश करते हो इसलिये त्वष्टा, प्रलय होनेके पीछे मृत अण्ड अर्थात् ब्रह्माण्डको फिर जिलाते हो इसलिये मार्त्तण्डक, और विश्वमें व्यापकर विराजमान होरहे हो इस कारणसे तुम्हारा अंशुमान नाम है, तुमको नमस्कार है ॥११॥ ब्रह्मा, विष्णु और रुद्रस्वरूप होकर समस्त जगत्की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करते हो इसी लिए हिरण्यगर्भ, तीन तापके सताये हुओंको विश्रामके स्थान होनेके

हरिदश्वः सहस्रार्चिस्सप्तसप्तिर्मरीचिमान् ॥ तिमिरोन्मथनः शंभुस्त्वष्टामार्तंडकोंऽशुमान् ॥११॥ हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनोहस्करोरविः ॥
अग्निगर्भोदितेः पुत्रः शंखः शिशिरनाशनः ॥ १२ ॥ व्योमनाथस्तमोभेदीऋग्यजुःसामपारगः ॥ घनवृष्टिरपांमित्रोविंध्यवीथीप्लवंगमः ॥१३॥

कारण शिशिर, स्वभावसेही सर्वेश्वर होनेके कारण अहस्कर ब्रह्मादिकको भी वेदविषयक उपदेश देते हो इससे रवि, कालाग्नि रुद्र तुमहीसे उत्पन्न हुए हैं इसलिये अग्निगर्भ अविनाशिनी ब्रह्मविद्यासे तुम प्राप्त होते हो और देवमाता अदितिके गर्भसे तुमने जन्म लिया था इसलिये अदिति पुत्र, परमानंद और गगन इन दोनोंके आत्मस्वरूप हो इसलिये शंख, और शिशिर अर्थात् जाडे और हिमको दूर करते हो इसलिये तुमने शिशिरनाशन नाम धारण किया है, तुमको नमस्कार है ॥१२॥ तुमने आकाशकी सृष्टिकी है इसलिये व्योमनाथ, अंधकारका नाश करते हो इसलिये तमोभेदी ऋक् यजु और साम इन तीन वेदोंके और इनके शिरोभाग समस्त उपनिषदोंके एक मात्र प्रतिपाद्य इसलिये ऋग्यजुःसामपारग, बादलके जल वर्षानेके समान भक्तोंको बराबर कर्मोंका फल देतेहो इस कारण घनवृष्टि, चैतन्यदानसे सात्त्विकगणोंका उपकार करने और जलके उपजानेसे अपांमित्र, और दुर्गम ब्रह्मनाडीमार्गमें वानरकी नाईं शीघ्रतासे भ्रमण करते हो इसलिये विन्ध्यवीथिप्लवङ्गम तुम्हारा

नाम है सो आपको नमस्कार है ॥१३॥ तुमने सब प्रकारसे जगत्से निर्माण करनेका संकल्प किया है इसलिये आतपी, मंडल अर्थात् कौस्तुभादि मणिधारण करते हो इसलिये मंडली, सब भांतिसे मृत्युके सम्पादक होनेके कारण मृत्यु, पिङ्गलानाडीके लौटानेसे कर्ममार्गप्रवर्तक और पीतवर्ण हो इसलिये पिङ्गल, सबकाही संहार करते हो इसलिये सर्वतापन, सर्वज्ञ और कार्यके कर्ता होनेसे कवि, विश्वरूप होनेसे विश्व, तुम्हारा स्वरूप बडा है इसलिये महातेजस्वी, पालन करनेसे सबको अनुरागी करते हो इसलिये कार्यवर्गके उत्पत्ति हेतु हो इसलिये सर्वभवोद्भव नाम धारण किया है सो आपको नमस्कार है ॥१४॥ तुम अन्तर्यामीरूपसे नक्षत्र ग्रह तारा युक्त इस विश्वको सब भांतिसे पालन करते हो इस लिये विश्वभावन, तुम अन्नादि समस्त तेज पदार्थके स्फूर्तिसाधक चिन्मय तेज स्वरूप हो इसी निमित्त तेजस्तेजस्वी और तुम्हारा स्वरूप बारह प्रकारका है [मेषादि राशिपर बारह आदित्य हैं] इसलिये तुम्हारा द्वादशात्मा नाम है, तुमको नमस्कार है ॥१५॥ तुम पूर्वगिरि और पश्चिमगिरि नक्षत्रगणोंके और दिनके पति हो सो तुमको नमस्कार है ॥ १६ ॥ तुम ब्रह्मलोकतक सब लोकोंको जयके देनेवाले हो और जयनामक ब्रह्मद्वारपर

आतपीमंडलीमृत्युःपिंगलःसर्वतापनः॥ कविर्विश्वोमहातेजारक्तःसर्वभवोद्भवः॥१४॥ नक्षत्रग्रहताराणामधिपोविश्वभावनः॥ तेजसामपितेजस्वीद्वादशात्मन्नमोऽस्तुते ॥ १५ ॥ नमःपूर्वायगिरयेपश्चिमायाद्रयेनमः ॥ ज्योतिर्गणानांपतयेदिनाधिपतयेनमः ॥ १६ ॥ जयायजयभद्रायहर्यश्वायनमोनमः ॥ नमोनमःसहस्रांशोआदित्यायनमोनमः ॥ ॥ १७ ॥ नमउग्रायवीरायसारंगायनमोनमः ॥ नमःपद्मप्रबोधायप्रचंडयनमोऽस्तुते ॥ १८ ॥ ब्रह्मेशानाच्युतेशायसूरायादित्यवर्चसे ॥ भास्वतेसर्वभक्षायरौद्रायवपुषेनमः ॥ १९ ॥

तुम्हारी मूर्ति है इसलिये जय, ब्रह्मलोकादि जयसे किये मंगलात्मक और जयभद्राख्य द्वितीय, ब्रह्मद्वारपालभी तुम्हारी ही मूर्ति है इसलिये जयभद्र, तुमने पहले कल्पमें जब राममूर्ति धारण की थी तब वानर श्रेष्ठ हनुमान् तुम्हारेही अश्व अर्थात् वाहन हुए थे इसीसे हर्यश्व, सहस्र २ जीव तुम्हारे अंश हैं इसलिये सहस्रांशु, और प्रधान होनेके कारण आदित्य नाम तुमने धारण किया इसलिये तुमको नमस्कार है ॥१७॥ बलवान् इन्द्रियोंको जीत लेते हो इसलिये उग्र; प्राणियोंको विविधभांतिकी चेष्टा करनेमें लगादेते हो इसलिये वीर, प्राणसे प्रतिपाद्य हो इसलिये सारंग, कमलदल और हृदयकमल इन दोनोंको खिलाते हो इसलिये पद्मप्रबोध और सब कार्योंमें समर्थ व अतिक्रोधी होनेके कारण तुमने प्रचंड नाम धारण किया है, तुमको बारंबार नमस्कार है ॥१८॥ तुम सृष्टि स्थिति और संहार करनेवाले ब्रह्मा नारायण और रुद्रको अपने २ कार्यमें लगाते हो इसलिये ब्रह्मेशानाच्युतेश, सुरब्रह्मज्ञानके मार्ग हो इसलिये आदित्यवर्चा, सचेतन और अचेतन सबको प्रकाशित करते हो इसलिये भास्वान्, सबका नाश करते हो इसलिये सर्वभक्ष और अज्ञानसंहारसमर्थ ज्ञानस्वरूप हो इसलिये तुम्हारा रौद्रवपुष नाम है; तुमको

नमस्कार है ॥१९॥ तुम तमोघ्न अंधकारनाशक हिमघ्न शत्रुघ्न हो, तुम्हारा स्वरूप काल और देशके परिच्छेदसे रहित है इसलिये जो अमितात्मा भगवत्का किया उपकार भूलजाते हैं तुम उन्हीं अज्ञानी संसारियोंको संसाररूप अनर्थमें गिराकर नाश करते हो इसलिये कृतघ्न, चिदानन्दके ज्योतिस्वरूप हो इसलिये देव और ज्योतिपति नाम धारण किया है इस कारण तुमको नमस्कार है ॥२०॥ तुम तप्त काञ्चनके समान होनेके कारण तप्तचामीकराभ, सब अज्ञानको हरण कर लेतेहो इसलिये हरि; सब विश्व तुम्हारा कर्म है इसलिये विश्वकर्ता, सब प्रकारके अंधकारका नाश करते हो इससे तमोभिनिघ्न, विलक्षण दीप्तिमान् हो इसलिये रुचि, और दृश्यपंचकको साक्षात् देखते हुए सब लोकोंके पाप पुण्यके साक्षी होनेके कारण तुम्हारा लोकसाक्षी नाम है तुमको नमस्कारहै ॥२१॥ यह प्रभु दिवाकरही प्राणियोंको उत्पन्न, पालन और संहार करते हैं, सूर्यभगवान्ही अपनी किरणमालासे उनको संतापित करते और सींचते हैं ॥ २२ ॥

तमोघ्नायहिमघ्नायशत्रुघ्नायामितात्मने॥कृतघ्नघ्नायदेवायज्योतिषांपतयेनमः॥२०॥ तप्तचामीकराभायहरयेविश्वकर्मणे ॥ नमस्तमोऽभिनिघ्नायरुचयेलोकसाक्षिणे ॥ २१ ॥ नाशयत्येषवैभूतंतमेवसृजतिप्रभुः ॥ पायत्येषतपत्येषवर्षत्येषगभस्तिभिः॥ २२ ॥ एषसुप्तेषुजागर्ति भूतेषुपरिनिष्ठितः ॥ एषचैवाग्निहोत्रंचफलंचैवाग्निहोत्रिणाम् ॥ २३ ॥ देवाश्चक्रतवश्चैवक्रतूनांफलमेवच ॥ यानिकृत्यानिलोकेषुसर्वेषुपरमप्रभुः॥ २४ ॥ एनमापत्सुकृच्छ्रेषुकांतारेषुभयेषुच ॥ कीर्तयन्पुरुषःकश्चिन्नावसीपतिराघव ॥ २५ ॥ पूजयस्वैनमेकाग्रोदेवंजगत्पतिम् ॥ एतत्त्रिगुणितंजप्त्वायुद्धेषुविजयिष्यति ॥ २६॥ अस्मिन्क्षणेमहाबाहोरावणंत्वंजहिष्यसि॥ एवमुक्त्वाततोऽगस्त्योजगामसयथागतम् ॥ २७ ॥

सबके सोजानेपर प्राणियोंके अन्तर्यामी रूप दिवाकरही जागते रहाकरते हैं और यही अग्निहोत्र हैं और यही उसके फल हैं ॥२३॥ लोकमें जो अश्वमेधादि सब यज्ञ हैं, यज्ञके अधिदेवता; यज्ञफल व और समस्त क्रिया हैं, परमप्रभु दिवाकर सूर्यभगवान् उन सबमेंही वर्तमान हैं ॥२४॥ हे राघव! जो पुरुष मृत्युके मुखमें पडा हो ज्वरादिरोगोंसे ग्रस्त हो चोरादिभयसे व्याकुल हो, दुर्गमस्थानोंमें घिरगया हो, यदि वह पुरुषभी सूर्यभगवान्का स्तोत्र पढेगा तो वह भी कष्ट नहीं पावेगा ॥२५॥ हे रामचन्द्र ! तुम एकाग्रमनसे इन जगत्पति देवदेव सूर्यभगवान्की पूजा करके तीन बार "यह आदित्यहृदय" पाठ करो तो तुम्हारी निश्चय युद्धमें विजय होगी ॥ २६ ॥ हे महावीर ! हम निश्चय करते हैं कि ऐसा करनेसे तुम इसी मुहूर्तमें रावणका संहार कर डालोगे" अगस्त्यजी यह वचन कहकर जिस स्थानसे आये थे फिर उसी स्थानको चले गये ॥ २७ ॥

महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी यह वचन सुनकर मनकी व्याकुलता दूर करते हुए और चिंतारहित मनसे चित्तको वशमें कर इस स्तोत्रको धारण करतेहुए ॥२८॥ सूर्यदेवको देख पवित्रभावसे आचमन करके तीन बार इस मंत्रका जप कर अत्यन्त सतुष्ट हुए और दृढतासे धनुष धारण किया उस समय लोकसाक्षी सूर्यभगवान् उतर कर उनके दृष्टि आये ॥२९॥ इसके उपरांत महावीर श्रीरामचन्द्रजी धनुष धारण करके राक्षसराज रावणको संमुख आया हुआ देख उसका वध करनेके लिये सब प्रकार यत्न करने लगे ॥३०॥ इसी समयमें सूर्य भगवान् रावणका मृत्युकाल आपहुँचा विचार कर अत्यन्त हर्षित हुए और देवतालोगोंकेबीचमें टिककर श्रीरामचन्द्रजीको देख बोले कि, वत्स! तुम इस समय रावणका वध करनेमें शीघ्रता करो ॥३१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां षड्डुत्तरशततमः सर्गः ॥१०६॥ इस ओर रावणका सारथि हर्षितमनसे रणभूमिमें शत्रुकी सेनाको भयभीत करानेवाला रथ लेगया, यह रथ देखनेमें गंधर्वनगरीकी तुल्य था

एतच्छ्रुत्वामहातेजानष्टशोकोऽभवत्तदा॥धारयामाससुप्रीतोराघवःप्रयतात्मवान्॥२८॥ आदित्यंप्रेक्ष्यजप्त्वेदंपरंहर्षमवाप्तवान्॥ त्रिराचम्यशुचिर्भूत्वाधनुरादायवीर्यवान् ॥२९॥ रावणंप्रेक्ष्यहृष्टात्माजयार्थंसमुपागमत्॥सर्वयत्नेनमहतावृतस्तस्यवधेऽभवत् ॥३०॥ अथरविरवदन्निरीक्ष्य रामंमुदितमनाःपरमंप्रहृष्यमाणः॥ निशिचरपतिसंक्षयंविदित्वासुरगणमध्यगतोवचस्त्वरेति ॥३१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० च० सा० यु० षड्डुत्तरशततमः सर्गः ॥ १०६ ॥ सारथिःसरथंहृष्टःपरसैन्यप्रधर्षणम् ॥ गंधर्वनगराकारंसमुच्छ्रितपताकिनम् ॥ १ ॥ युक्तंपरमसंपन्नैर्वाजिभिर्हेममालिभिः॥ युद्धोपकरणैःपूर्णंपताकाध्वजमालिनम् ॥ २ ॥ ग्रसंतमिवचाकाशंनादयंतंवसुंधराम् ॥ प्रणाशंपरसैन्यानांस्वसैन्यस्यप्रहर्षणम् ॥ ३ ॥ रावणस्यरथंक्षिप्रंचोदयामाससारथिः ॥ तमापतंतंसहसास्वनवंतंमहाध्वजम् ॥ ४ ॥ रथंराक्षसराजस्यनरराजोददर्शह ॥ कृष्णवाजिसमायुक्तंयुक्तंरौद्रेणवर्चसा ॥ ५ ॥ दीप्यमानमिवाकाशेविमानंसूर्यवर्चसम् ॥ तडित्पताकागहनंदर्शितेंद्रायुधप्रभम् ॥ ६ ॥

इसमें अतिऊंची पताका शोभायमान थीं॥१॥ इस रथमें सुवर्णके गहने पहनेहुए काले रंगके घोडे जुत रहे थे और यह अनेक प्रकारकी युद्धसामाग्रीसे परिपूर्ण था व और भी अनेक प्रकारकी ध्वजा पताका इसमें लग रही थीं ॥२॥ यह इतना ऊंचा था कि जिससे ज्ञात होता था कि मानों आकाशके लीलनेकोही तैयार हुआ है। इसके शब्दसे पृथ्वी कंपायमान होती थी वह अपनी सेनाका आनन्द बढानेवाला और शत्रुकी सेनाका नाश करनेवाला था ॥३॥ ऐसे रावणके रथको शीघ्रही सारथि लाया. इसको सहसा आते हुए शब्दायमान महाध्वजासे युक्त देखा॥४॥ इस प्रकार राक्षसराज रावणका रथ नरराज श्रीरामचन्द्रजीने देखा इसमें काले रंगके घोडे जुते हुए थे और भयंकर तेजसे युक्त था॥५॥ और आकाशमें प्रभाकरकेसमान दीप्तिमान् विमानके समान यह रथ था, बिजलीके आकारकी पताकाओंसे सघन

वइन्द्रधनुषके अकारवाले आयुधोंकी प्रभासे युक्त॥६॥ और बाणोंकी धारा त्यागते हुए जलधारा छोडते हुए मेघके समान इस आते हुए शत्रुके रथको देखा ॥७॥ वज्रके विदीर्ण होनेपर पर्वतका घोर शोर जिस प्रकारसे होता है वैसेही यह रथ घर्घर शब्द करता हुआ रणमें आगया; दोयजके चंद्रमाके समान टेढा धनुष वेगसे शब्द करते हुए ॥८॥ सहस्र नेत्रवाले इन्द्रके सारथि मातलिसे श्रीरामचन्द्रजी बोले, मातलि! देखो शत्रुका रथ कैसी शीघ्रतासे चला आता है ॥९॥ यह देखो फिर बाईं ओरको झुका हुआ अतिवेगसे संग्रामभूमिमें चला आता है, जिससे जान पडता है कि रावण समरमें हमारा संहार करनेके विचारसेही चला आता है ॥१०॥ इस लिये तुम शत्रुके सामने गमन करके अतिसावधानीसे टिके रहो कारण कि सूर्यभगवान् जिस प्रकार उठे हुए मेघको उडादेते वैसेही हमभी इस रावणके वध

शरधारांविमुंचंतंधाराधरमिवांबुदम् ॥ सदृष्ट्वामेघसंकाशमापततंरथंरिपोः ॥७॥ गिरेर्वज्राभिमृष्टस्यदीर्यतःसदृशस्वनम् ॥ विस्फारयन्वैवेगेन बालचंद्रानतंधनुः ॥ ८ ॥ उवाचमातलिंरामःसहस्राक्षस्यसारथिम् ॥ मातलेपश्यसंरब्धमापततंरथंरिपोः ॥ ९ ॥ यथापसव्यंपततावेगेन महतापुनः ॥ समरेहंतुमात्मानंतथाऽनेनकृतामतिः ॥ १० ॥ तदप्रमादमातिष्ठप्रत्युद्गच्छरथंरिपोः ॥ विध्वंसयितुमिच्छामिवायुर्मेघमिवोत्थितम् ॥ ११ ॥ अविक्लवमसंभ्रांतमव्यग्रहृदयेक्षणम् ॥ रश्मिसंचारनियतंप्रचोदयरथद्रुतम् ॥ १२ ॥ कामंनत्वंसमाधेयःपुरंदररथोचितः ॥ युयुत्सुरहमेकाग्रःस्मारयेत्वांनशिक्षये ॥ १३ ॥ परितुष्टःसरामस्यतेनवाक्येनमातलिः ॥ प्रचोदयामासरथंसुरसारथिरुत्तमः ॥ १४ ॥ अपसव्यंततःकुर्वन्रावणस्यमहारथम् ॥ चक्रसंभूतरजसारावणंव्यवधूनयत् ॥ १५ ॥ ततःक्रुद्धोदशग्रीवस्ताम्रविस्फारितेक्षणः ॥ रथप्रतिमुखंरामंसायकैरवधूनयत् ॥ १६ ॥ धर्षणामर्षितोरामोधैर्यंरोषेणलंभयन् ॥ जग्राहसुमहावेगमैंद्रंयुधिशरासनम् ॥ १७ ॥

करनेकी इच्छा करते हैं ॥११॥ तुम क्षुधित या व्याकुल न होकर अचलहृदयसे और अव्यग्र नेत्रोंसे लगामको धारणकर शीघ्रतासे रथको चलाओ ॥१२॥ तुम देवराज इन्द्रजीके सारथीको इस लिये तुमको कुछभी कहनेकी आवश्यकता नहीं है तो भी युद्धाभिलाषी होकर जो कहा है; वह केवल तुम्हारे याद दिलानेके लिये कहा है सिखानेके लिये नहीं ॥ १३ ॥ सुरसारथिश्रेष्ठ मातलिने श्रीरामचन्द्रजीके ऐसे वचन सुन परमप्रसन्न हो घोडोंको हांका ॥ १४ ॥ इसके उपरांत रावणके बडेभारी रथको मातलिने दायीं ओर रखकर पहियोंकी उडीहुई धूरसे उस रथको ढांप दिया ॥ १५ ॥ तब दशवदन रावण क्रोधमें भरकर लाल २ नेत्र फैलाय श्रीरामचन्द्रजीके सामने रथ लौटाकर उनके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥ १६ ॥ परंतु श्रीरामचन्द्रजीने संग्राममें उस रावणके

बाणजालसे पीडित होकर क्रोधमें भर किसी प्रकारसे धीरज धर बडेभारी वेगसे युक्त इन्द्रका धनुष ग्रहण करके ॥१७॥ सूर्यकी किरणोंके समान दीप्तियुक्त महावेगवान् बाण छोडे। इस प्रकार क्रोधित हो दो सिंहोंकेस मान परस्पर सन्मुख खडेहुए और एकदूसरेके मारडालनेकी अभिलाषा किये उन दोनों वीरोंका युद्ध आरंभ हुआ ॥१८॥ उस समय रावणका विनाश चाहने वाले देव, गन्धर्व, सिद्ध और परमर्षि उन दोनों सारथियोंके युद्ध देखनेके लिये एकत्र हुए ॥१९॥ इसके उपरांत उसी समय श्रीरामचन्द्रजीकी विजयके लिये और रावणकी क्षयके लिये दारुण रोमहर्षण उत्पात उत्पन्न होने लगे ॥२०॥ बादल रावणके रथ रथ पर रुधिरवर्षा करने लगे और रावणकी बाईं ओर तीव्र वायुमंडल चलने लगा ॥२१॥ रावणका रथ जिस २ ओरको जाता था आकाशमंडलमें घूमते

शरांश्चसुमहावेगान्सूर्यरश्मिसमप्रभान् ॥ तदुपोढंमहद्युद्धमन्योन्यवधकांक्षिणोः ॥ परस्पराभिमुखयोर्दृप्तयोरिवसिंहयोः ॥१८॥ ततोदेवाः सगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ समीयुर्द्वैरथंद्रष्टुंरावणक्षयकांक्षिणः ॥१९॥ समुत्पेतुरथोत्पातादारुणारोमहर्षणाः ॥ रावणस्यविनाशायराघवस्योदयायच॥ २० ॥ ववर्षरुधिरंदेवोरावणस्यरथोपरि ॥ वातामंडलिनस्तीव्राव्यपसव्यंप्रचक्रमुः ॥ २१ ॥ महद्गृध्रकुलंचास्यभ्रममाणंनभस्थले ॥ येनयेनरथोयातितेनतेनप्रधावति ॥ २२ ॥ संध्ययाचावृतालंकाजपापुष्पनिकाशया ॥ दृश्यतेसंप्रदीप्तेवदिवसेऽपिवसुंधरा ॥ २३ ॥ सनिर्घातामहोल्काश्चसंप्रपेतुर्महास्वनाः ॥ विषादयंस्तेरक्षांसिरावणस्यतदाहिताः ॥ २४ ॥ रावणश्चयतस्तत्रप्रचचालवसुंधरा ॥ रक्षसांचप्रहरतांगृहीताइवबाहवः ॥ २५ ॥ ताम्राःपीताःसिताःश्वेताःपतिताःसूर्यरश्मयः ॥ दृश्यंतेरावणस्याग्रेपर्वतस्येवधातवः ॥ २६ ॥ गृध्रैरनुगताश्चास्यवमंतोज्वलनंमुखैः ॥ प्रणेदुर्मुखमीक्षंत्यःसंरब्धमशिवंशिवाः ॥ २७ ॥ प्रतिकूलंववौवायूरणेपांसून्समुत्किरन् ॥ तस्यराक्षसराजस्य कुर्वन्दृष्टिविलोपनम् ॥ २८ ॥

हुए गिद्धगण भी उसी २ ओरको घूमते २ चलते थे ॥२२॥ दिनके समय भी जवाके फूलके समान संध्याके रंगके समान रँगजानेसे धनधान्य सयुक्त सुन्दर भूमिवाला समस्त लंकाद्वीप बलताहुआसा जान पडने लगा ॥ २३ ॥ राक्षसराज रावणके अशुभकी सूचना देने वाली बडी २ उल्कायें वज्रके समान शब्द करके महाशब्दसे गिरकर राक्षसोंको विषादित्त करने लगीं ॥२४॥ जिस स्थानमें रावण था वहाँकी पृथ्वी वारंवार कंपायमान हुई और राक्षस योद्धागणोंकी बांहें मानो किसीने पकडलीं ॥२५॥ राक्षसराज रावणके आगे पर्वतसे निकली हुई सब धातुओंके समान लाल, पीली, श्वेत और काली सूर्यकी किरणें दिखाईं देने लगीं॥२६॥अत्यन्त अमंगलजनक शृगालियें गिद्धोंके आगे२चलकर मुखसे आगकी लपटें छोडती रावणके मुखको देखती क्रोधसे शब्द करने लगीं॥२७॥पवन रणभूमिमें धूरि उडायकर राक्षसराज रावणकी दृष्टिको छिपाय प्रतिकूलभावसे चलने लगा ॥ २८ ॥

विनाही मेघके घोररूप इन्द्रके वज्र सहनेके अयोग्य विकट शब्द करके सब आकर रावणकी सेनापर गिरने लगे ॥ २९ ॥ धूलकी बडीभारी वर्षा होनेसे सब दिशा विदिशा घोर अंधकारसे ढ़क गईं, और प्रकाशमंडल लोप हो गया ॥३०॥ सैकडों हजारों मैना पक्षी दारुण क्लेश करते २ रावणके रथपर गिरने लगे ॥३१॥ रावणके रथमें जो घोडे जुते थे उनकी जांघोंसे अग्निकी चिनगारियें और नेत्रोंसे अग्निके तुल्य गरम आंसू बहने लगे ॥ ३२ ॥ उस समय रावणके नाशकी सूचना देनेवाले इस प्रकारके बहुतेरे भयानक दारुण उत्पात होने लगे ॥ ३३ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके विजयकी सूचना देनेवाले और मंगलसूचक सब प्रकारके सुनिमित्त उत्पन्न हुए ॥ ३४ ॥ उस समय श्रीरामचन्द्रजीके पक्षवाले श्रीरामचन्द्रजीकी विजय बतानेवाले इन सुनिमित्तोंको देखकर प्रसन्न हुए और

निपेतुरिंद्राशनयःसैन्येचास्यसमंततः ॥ दुर्विषह्यस्वराघोरंविनाजलधरोदयम् ॥ २९ ॥ दिशश्चप्रदिशःसर्वाबभूवुस्तिमिरावृताः ॥ पांसुवर्षेणमहतादुर्दर्शंचनभोऽभवत् ॥ ३० ॥ कुर्वंत्यःकलहंघोरंसारिकास्तद्रथंप्रति ॥ निपेतुःशतशस्तत्रदारुणादारुणारुताः ॥ ३१ ॥ जघनेभ्यःस्फुलिंगाश्चनेत्रेभ्योऽश्रूणिसंततम् ॥ मुमुचुस्तस्यतुरगास्तुल्यमग्निंचवारिच ॥ ३२ ॥ एवंप्रकाराबहवःसमुत्पाताभयावहाः ॥ रावणस्यविनाशायदारुणाःसंप्रजज्ञिरे ॥ ३३ ॥ रामस्यापिनिमित्तानिसौम्यानिचशिवानिच ॥ बभूवुर्जयशंसीनिप्रादुर्भूतानिसर्वशः ॥ ३४ ॥ निमित्तानीहसौम्यानिराघवस्यजयायवै ॥ दृष्ट्वापरमसंहृष्टोहतंमेनेचरावणम् ॥ ३५ ॥ ततोनिरीक्ष्यात्मगतानिराघवोरणेनिमित्तानिनिमित्तकोविदः ॥ जगामहर्षंचपरांचनिर्वृतिंचकारयुद्धेह्यधिकंचविक्रमम् ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० च० सा० यु० सप्तोत्तरशततमः सर्गः ॥ १०७ ॥ ततःप्रवृत्तंसुक्रूरंरामरावणयोस्तदासुमहद्द्वैरथंयुद्धंसर्वलोकभयावहम् ॥ १ ॥ ततोराक्षससैन्यंचहरीणांचमहद्बलम् ॥ प्रगृहीतप्रहरणंनिश्चेष्टंसमवर्तत ॥ २ ॥ संप्रयुद्धौतुतौदृष्ट्वाबलवन्नरराक्षसौ ॥ व्याक्षिप्तहृदयाःसर्वेपरंविस्मयमागताः ॥ ३ ॥ नानाप्रहरणैर्व्यग्रैर्भुजैर्विस्मितबुद्धयः ॥ तस्थुःप्रेक्ष्यचसर्वंतेनाभिजग्मुःपरस्परम् ॥ ४ ॥

सबने रावणको मरा हुआही समझा ॥ ३५ ॥ सब निमित्तोंको जाननेवाले श्रीरामचन्द्रजी अपने पक्षमें आत्मगत इन समस्त सुनिमित्तोंको देखकर और आनंदित होकर युद्धमें अधिक विक्रम प्रकाश करने लगे ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां सप्तोत्तरशततमः सर्गः ॥ १०७ ॥ इसके उपरान्त फिर श्रीरामचन्द्रजी और रावणका सब लोकोंका भय देनेवाला बडाभारी द्वैरथ क्रूर युद्ध आरंभ हुआ ॥ १ ॥ उस समय राक्षस और वानरगणोंकी सेना शस्त्र अस्त्र और वृक्षादि धारण करके युद्ध करनेके लिये तैयार होनेपर भी चेष्टा रहित हो खडी रहगई ॥ २ ॥ उस समय वह बलवान् नर रामचन्द्र और राक्षस रावण जब परस्पर युद्ध करने लगे तब सबही अत्यन्त विस्मित हुए और सबके चित्त दग्धाय गये ॥ ३ ॥ वहबडी २बाँहोंवाले

सेनाके योद्धा इन दोनों धीरोंको देखकर बहुत सारे अस्त्र शस्त्र उठाये खडे रहगये परंतु परस्पर कोई किसीके साथ समर नहीं करता था ॥ ४ ॥ राक्षसोंकी सेना रावणकी ओर वानरोंकी सेना श्रीरामचन्द्रजीकी ओर विस्मितभावसे देखने लगी, तो उस समय यह दोनों सेना चित्रलिखीसी जान डती थीं ॥ ५ ॥ राम और रावण निमित्त देखकर निश्चिन्तबुद्धि हुए और क्रोधसे विचलित न होकर निर्भय युद्ध करने लगे ॥६॥ इन दोनोंमेंसे श्रीरामचन्द्रजीने तो जान लिया कि "हम जीतेंगे ही" और रावणने मनमें ठान लिया कि "हमको मरनाही है" इस प्रकार निश्चय करते शक्तिके अनुसार अपनी सामर्थ्यको दोनोंजने दिखाने लगे ॥७॥ इसके उपरान्त रावणने बडा क्रोध करके रामचन्द्रजीके रथकी ध्वजाको ताक धनुषपर बाण चढाय छोडे ॥ ८ ॥ परन्तु वे समस्त बाण इन्द्रके रथकी ध्वजाको प्राप्त न होकर अद्भुत शक्तिवाले रथपरलग पृथ्वीपर गिर पडे ॥९॥ इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजीने क्रोधके मारे लालनेत्र हो धनुष

रक्षसांरावणंचापिवानराणांचराघवम् ॥ पश्यतांविस्मिताक्षाणांसैन्यंचित्रमिवाबभौ ॥ ५ ॥ तौतुतत्रनिमित्तानिदृष्ट्वाराघवरावणौ ॥ कृतबुद्धीस्थिरामर्षौयुयुधातेह्यभीतवत् ॥ ६ ॥ जेतव्यमितिकाकुत्स्थोमर्तव्यमितिरावणः ॥ धृतौस्ववीर्यसर्वस्वंयुद्धेऽदर्शयतांतदा ॥७॥ ततःक्रोधाद्दशग्रीवःशरान्संधायवीर्यवान् ॥ मुमोचध्वजमुद्दिश्यराघवस्यरथेस्थितम् ॥८॥ तेशरास्तमनासाद्यपुरंदररथध्वजम् ॥ रथशक्तिपरामृश्यनिपेतुर्धरणीतले ॥९॥ ततोरामोऽपिसंक्रुद्धश्चापमाकृष्यवीर्यवान् ॥ कृतप्रतिकृतंकर्तुंमनसासंप्रचक्रमे ॥ १० ॥ रावणध्वजमुद्दिश्यमुमोचनिशितंशरम् ॥ महासर्पमिवासह्यंज्वलंतंस्वेनतेजसा ॥११॥ रामश्चिक्षेपतेजस्वीकेतुमुद्दिश्यसायकम् ॥जगामसमहींभित्त्वादशग्रीवध्वजंशरः ॥१२॥ सनिकृत्तोऽपतद्भूमौरावणस्यंदनध्वजः ॥ ध्वजस्योन्मथनंदृष्ट्वारावणःसमहाबलः ॥ १३ ॥ संप्रदीप्तोऽभवत्क्रोधादमर्षात्प्रदहन्निव ॥ सरोषवशमापन्नःशरवर्षववर्षह ॥ १४ ॥ रामस्यतुरगान्दीप्तैःशरैर्विव्याधरावणः ॥ तेदिव्याहरयस्तत्रनास्खलन्नापिबभ्रमुः ॥ १५ ॥

धारण करके इसका बदला लेनेको रावणके विरुद्ध बाण चलानेका निश्चय किया ॥ १० ॥ उन्होंने रावणकी ध्वजाको ताककर बाण चलाया, यह बाण अपने तेजसे आपही प्रदीप्त था और महासर्पके समान अत्यंत भयंकर था ॥ ११ ॥तेजस्वी रामचन्द्रजीका ध्वजापर ताककर चलाया हुआ वह बाण रावणके रथकी ध्वजाको खंड करके पृथ्वीमें प्रवेश कर गया ॥ १२ ॥ और कटी हुई ध्वजा भी पृथ्वीपर गिर पडी महाबलवान् रावण रथकी ध्वजाको कटी हुई देखकर ॥१३॥ क्रोधके कारण उपजी हुई अग्निसे प्रज्वलित हो समरमें अग्निके समान प्रकाशित हुआ, और क्रोधके वश होकर मानों सबको भस्मही करने लगा मारे क्रोधके रावणने श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर बाण वर्षाये ॥१४॥ उसने प्रथम प्रकाशमान बाणोंसे श्रीरामचन्द्रजीके घोडोंको मारा परंतु वह दिव्य घोडे

चलायमान भी न हुए न उन्हें व्याकुलता आई ॥ १५ ॥ जिस प्रकार कमलफूलोंकी मालाके लगनेसे कुछ पीडा नहीं होती वैसेही वे घोडे व्यथा रहित रहे उन घोडोंको रावण व्याकुलता रहित देखकर ॥ १६ ॥ क्रोधित होकर फिर बाणोंकी वर्षा करने लगा गदा, परिघ, चक्र, मूसल ॥१७॥ पर्वतोंके शिखर, वृक्ष, शूल, फरशे व और भी बहुत सारे अस्त्र शस्त्र चलाने लगा उस रावणने थकावट रहित हृदयसे अति उद्यमसे माया करके हजारों अस्त्र शस्त्र चलाये ॥१८॥ इस प्रकारसे डरपोकोंको त्रासके उपजानेवाले भयंकर प्रतिशब्दसे युक्त भयावने और बहुतसारे शस्त्रोंकी जिसमें वर्षा होरही थी ऐसा कठोर युद्ध होने लगा ॥१९॥ उस समय रावणने प्राणोंकी आशा छोड श्रीरामचन्द्रजीके रथको त्याग बाणोंके समूहसे वानरोंकी सेना और आकाशमंडलको सब प्रकारसे छाय दिया

बभूवुःस्वस्थहृदयाःपद्मनालैरिवाहताः॥ तेषामसंभ्रमंदृष्ट्वावाजिनांरावणस्तदा ॥१६॥ भूयएवसुसंक्रुद्धःशरवर्षंमुमोचह ॥ गदाश्चपरिघांश्चैवच क्राणिमुसलानिच ॥ १७ ॥ गिरिशृंगाणिवृक्षांश्चतथाशूलपरश्वधान् ॥ मायाविहितमेतत्तुशस्त्रवर्षमपातयत् ॥ सहस्रशस्तदाबाणानश्रांतहृद योद्यमः ॥ १८ ॥ तुमुलंत्रासजननंभीमंभीमप्रतिस्वनम् ॥ तद्वर्षमभवद्युद्धेनैकशस्त्रमयंमहत् ॥ १९ ॥ विमुच्यराघवरथसमंताद्वानरेबले ॥ सायकैरंतरिक्षंचचकारसुनिरंतरम्॥ २० ॥ (सहस्रशस्ततोबाणानश्रांतहृदयोद्यमः)मुमोचचदशग्रीवोनिःसंगेनांतरात्मना ॥ व्यायच्छमानंतं दृष्ट्वातत्परंरावणंरणे॥ २१ ॥ प्रहसन्निवकाकुत्स्थःसंदधेनिशिताञ्छरान् ॥ समुमोचततोबाणाञ्छतशोऽथसहस्रशः ॥२२॥ तान्दृष्ट्वारावणश्चक्रे स्वशरैःखंनिरंतरम् ॥ ताभ्यांनियुक्तेनतदाशरवर्षेणभास्वता ॥ २३ ॥ शरबद्धमिवाभातिद्वितीयंभास्वदंबरम् ॥ नानिमित्तोऽभवद्बाणोनानिर्भे त्तानिष्फलः ॥२४॥ अन्योन्यमभिसंहत्यनिपेतुर्धरणीतले ॥ तथाविसृजतोर्बाणान्रामरावणयोर्मृधे ॥ २५ ॥ प्रायुध्येतामविच्छिन्नमस्यंतौ सव्यदक्षिणम् ॥ चक्रतुश्चशरैर्घोरैर्निरुच्छ्वासमिवांबरम् ॥ २६ ॥

॥२०॥ विना अन्तरके रावणने रणमें बाण छोडकर मानो बाणोंकी झडी लगादी, रावणको वानरोंकी सेनाके ऊपर निरन्तर बाणोंकी वर्षा करते देख ॥२१॥ हँसते २ श्रीरामचन्द्रजीने तीक्ष्ण बाण धनुषपर चढाये व हजारों लाखों बाण रावणके ऊपर छोडे ॥२२॥ यह देखकर राक्षसराज रावणनेभी बाणोंके समूहसे आकाशमंडलको छालिया कि; कहींभी आकाश नहीं दीखा, उस कालमें उन दोनोंकी की हुई प्रदीप्त बाणोंकी वर्षासे ॥२३॥ मानो आकाशमें और भी एक बाणमय आकाश बनगया । श्रीरामचन्द्रजीने रावणपर और रावणने श्रीरामचन्द्रजीपर जो बाण चलाये उनमेंसे कोईभी बाण उत्साहरहित निरर्थक या अभेदक नहीं हुआ ॥ २४ ॥ संग्राममें राम रावणके छोडे हुए बाण परस्पर एक दूसरेको तोडते हुए पृथ्वीपर गिरने लगे ॥ २५ ॥ वह दोनों वीर संग्राममें अनुरागी हो

दायें बायें दोनों ओरको धनुष चलाते हुए बाणोंकी ऐसी घोर वर्षा करते हुए कि, जिससे आकाश छिद्ररहित होगया ॥ २६ ॥ रावण बाण चलाकर श्रीरामचन्द्रजीके और श्रीरामचन्द्रजी बाण चलाकर रावणके घोडोंको वींधने लगे इस प्रकार एक चोट करते और दूसरा उसका बदला लेता था ॥२७॥ इस प्रकार दोनों वीर क्रोध करके एक मुहूर्त्तभरतक उत्तम तुमुल रोमहर्षणकारी युद्ध करते रहे ॥२८॥ इस प्रकारसे यह दोनों महाबलवान् वीर रावण और लक्ष्मणजीके बडे भाई श्रीरामचंद्रजी तीखे बाण चलाय चलाय युद्ध करने लगे, परन्तु रथकी ध्वजा कट जानेसे राक्षसराज रावण रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर अत्यन्त क्रोध करता हुआ ॥२९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायामष्टाधिकशततमः सर्गः ॥ १०८ ॥ तब राम और रावणको युद्ध करते

रावणस्यहयात्रामोहयात्रामस्यरावणः ॥ जघ्नतुस्तौतदान्योन्यंकृतानुकृतकारिणौ ॥ २७ ॥ एवंतुतौसुसंक्रुद्धौचक्रतुर्युद्धमुत्तमम् ॥ मुहूर्तमभवद्युद्धंतुमुलंरोमहर्षणम् ॥२८॥ प्रयुध्यमानौसमरेमहाबलौशितैःशरैरावणलक्ष्मणाग्रजौ ॥ ध्वजावपातेनसराक्षसाधिपोभृशंप्रचुक्रोधतदारघूत्तमे ॥ २९ ॥ तौतथायुध्यमानौतुसमरेरामरावणौ ॥ ददृशुःसर्वभूतानिविस्मितेनांतरात्मना ॥ ३० ॥ अर्दयंतौतुसमरेतयो स्तौस्यंदनोत्तमौ ॥ परस्परमभिक्रुद्धौपरस्परमभिद्रुतौ ॥ ३१ ॥ परस्परवधेयुक्तौघोररूपौबभूवतुः ॥ मंडलानिचवीथीश्चगतप्रत्यागतानिच ॥ ३२ ॥ दर्शयंतौबहुविधांसूतौसारथ्यजांगतिम् ॥ अर्दयन्रावणंरामोराघवंचापिरावणः ॥३३॥ गतिवेगंसमापन्नौप्रतिवेगेनिवर्तने ॥ क्षिपतोःशरजालानितयोस्तौस्यंदनोत्तमौ ॥ ३४ ॥ चेरतुःसंयुगमहींसासारौजलदाविव ॥ दर्शयित्वातदातौतुगतिंबहुविधांरणे ॥ ३५ ॥

हुए देखकर सबही प्राणी विस्मितनेत्रोंसे इस संग्रामको देखने लगे ॥ ३० ॥ इन दोनों वीरोंके वह दोनों उत्तम रथ क्रोधसहित परस्पर एक दूसरेकी ओर दौड परस्पर एक दूसरेको अर्दित करने लगे ॥ ३१ ॥ परस्पर एक दूसरेको वध करनेमें तैयार हो मंडलाकार सीधे तीखे तिरछेबाण इधरसे उधर और उधरसे इधर घूमने लगे ॥३२॥ और दोनों रथोंके सारथी अपनी सारथिपनकी चतुरता भलीभांति दिखाते थे, रावण रामको पीडित करता और श्रीरामचन्द्रजी रावणको पीडित करते थे॥३३॥कभी वेगयुक्त मायाकी गतिसे लौटकर और हटकर एक दूसरेको पीडित करते थे, वह दोनोंही वीर परस्पर एक दूसरेके उत्तम रथपर बाणोंकी वर्षा करते थे॥३४॥इससे वह दोनों वीर परस्पर बरसते हुए दो मेघोंके समान दिखाई देने लगे; इस प्रकारसे संग्राममें अनेक प्रकारकी गतिदिखाय ॥३५॥

१ यहां सर्गकी समाप्ति की है, परन्तु युद्धविषय पूरा नहीं होनेसे सर्गस्थ श्लोकसंख्या आगेको चलती है ॥

फिर परस्पर एक दूसरेके सामने अपने२रथ लेजाकर खड़े होगये तो उसके रथकी धूरीसे इनके रथकी धूरी मिलगई और घोडोंके मुखभी एक दूसरेके घोडोंसे मिलगये ॥३६॥ और एकके रथकी पताका दूसरेके रथकी पताकासे मिलगई जब श्रीरामचन्द्रजीने धनुषसे छुटे हुए तीक्ष्ण ॥३७॥ दीप्तिमान् चार बाणोंसे रावणके चार घोडोंको मारा कि, यह घोडे बडी दूरतक पीछेको हटगये, घोडोंके पछडनेसे बडे क्रोधके वेशमें हो॥३८॥श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर रावणने बहुत सारे तीखे बाण चलाये; तब बलवान् श्रीरामचंद्रजी रावणके बाणोंसे अतिविद्ध होकर ॥ ३९ ॥ न तो कुछ विकारहीको प्राप्त हुए और न कुछ पीडितही हुए। फिर वज्रके समान शब्द करते हुए सारवान् बाण छोडे ॥४०॥ रावणने यह बाण इन्द्रके सारथी मातलिको ताककर छोडे थे। यह सब बाण अतिवेगसे मातलिके शरीरपर

परस्परस्याभिमुखौपुनरेवचतस्थतुः ॥ धुरंधरेणरथयोर्वक्रंवक्रेणवाजिनाम् ॥३६॥ पताकाश्चपताकाभिःसमीयुःस्थितयोस्तदा॥रावणस्यततो रामोधनुर्मुक्तैःशितैःशिरैः ॥३७॥ चतुर्भिश्चतुरोदीप्तान्हयान्प्रत्यपसर्पयत् ॥ सक्रोधवशमापन्नोहयानामपसर्पणे ॥३८॥ मुमोचनिशितान्बा णन्राघवायदशाननः ॥ सोऽतिविद्धोबलवतादशग्रीवेणराघवः ॥ ३९ ॥ जगामनविकारंचनचापिव्यथितोऽभवत् ॥ चिक्षेपचपुनर्बाणान्वज्र सारसमस्वनान् ॥ ४० ॥ सारथिंवज्रहस्तस्यसमादिश्यदशाननः ॥ मातलेस्तुमहावेगाःशरीरेपतिताःशराः ॥ ४१ ॥ नसूक्ष्ममपिसंमो हंव्यथांवाप्रददुर्युधि ॥ तयाधर्षणयाक्रुद्धोमातलेर्नतथात्मनः ॥४२॥ चकारशरजालेनराघवोविमुखंरिपुम्॥ विंशतिंत्रिंशतिंषष्टिंशतशोऽथसह स्रशः ॥ ४३ ॥ मुमोचराघवोवीरःसायकान्स्यंदनेरिपोः ॥ रावणोऽपिततःक्रुद्धोरथस्थोराक्षसेश्वरः ॥४४॥ गदामुसलवर्षेणरामंप्रत्यर्दयद्रणे ॥ तत्प्रयुक्तंपुनर्युद्धंतुमुलंरोमहर्षणम् ॥ ४५ ॥ गदानांमुसलानांचपरिघाणांचनिःस्वनैः ॥ शरणांपुंखवातैश्चक्षुभिताःसप्तसागराः ॥ ४६ ॥

गिरे ॥ ४१ ॥ परंतु यह बाण मातलिको न कुछ विकलताही दे सके नकुछ पीडाही इन बाणोंने दी; जिसपर प्रहार करना उचित नहीं था, उस मातलिको रावणसे धर्षित देख ॥ ४२ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने अत्यन्त क्रोधकर बाणोंकी वर्षा करके अपने शत्रुको विमुख कर दिया। बीस; तीस; साठ; सौ और हजार ॥ ४३ ॥ बाण श्रीरामचन्द्रजी वीर शत्रुके रथपर चलाने लगे; यह देखकर रथपर बैठा हुआ राक्षसोंका राजा रावण क्रोधित हुआ ॥ ४४ ॥ और इन श्रीराम चन्द्रजीके ऊपर गदा और मूसलकी वर्षा करने लगा। इस प्रकार फिर इन दोनों वीरोंका तुमुल रोमहर्षणकारी युद्ध होने लगा॥४५॥गदा, मूसल, परिघादि

अस्त्र शस्त्रोंके शब्दसे और बाणोंके पंखोंकी पवनसे सात समुद्र खलबला गये ॥ ४६ ॥ समुद्रोंके खलबलानेसे पातालवासी समस्त दानव और पन्नग जो कि हजारों थे व्यथित हुए ॥ ४७ ॥ पर्वत वन और उपवन सहित समस्त पृथ्वी कांपने लगी, सूर्य भगवान् प्रकाशसे हीन हुए और पवन चलना बंद हो गया ॥ ४८ ॥ जिस समय देवता, गन्धर्वसिद्ध, महर्षि, किन्नर और समस्त बडे २ सर्पगण अत्यन्त चिंता युक्त हुए ॥ ४९ ॥ "गो ब्राह्मणोंका मंगल हो सब लोग निर्विघ्न हो विराजमान होरहे हैं, श्रीरामचन्द्रजीकी जयहो और रावणका नाश हो" ॥ ५० ॥ इस प्रकारसे श्रीरामचन्द्रजीकी विजयका मना करते हुए देवतागण और ऋषिगण राम रावणका घोररूप रोमहर्षणकारी संग्राम देखने लगे ॥ ५१ ॥ गंधर्व और अप्सरायें सबने मिलकर यह उपमारहित युद्ध देखा कि, उस युद्धमें

क्षुब्धानांसागराणांचपातालतलवासिनः ॥ व्यथितादानवाःसर्वेपन्नगाश्चसहस्रशः ॥ ४७ ॥ चकंपेमेदिनीकृत्स्नासशैलवनकानना ॥ भास्करो निष्प्रभश्चासीन्नववौचापिमारुतः ॥ ४८ ॥ ततोदेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ चिंतामापेदिरेसर्वेसकिन्नरमहोरगाः ॥ ४९ ॥ स्वस्तिगोब्राह्मणेभ्योऽस्तुलोकास्तिष्ठंतुशाश्वताः ॥ जयतांराघवःसंख्येरावणंराक्षसेश्वरम् ॥ ५० ॥ एवंजपंतोऽपश्यंस्तेदेवाःसर्षिगणास्तदा ॥ रामरावणयोर्युद्धंसुघोरंरोमहर्षणम् ॥ ५१ ॥ गंधर्वाप्सरसांसंघादृष्ट्वायुद्धमनूपमम् ॥ सागरंचांबरप्रख्यमंबरंसागरोपमम् ॥ ५२ ॥ रामरावणयोर्युद्धंरामरावणयोरिव ॥ एवंब्रुवंतोददृशुस्तद्युद्धंरामरावणम् ॥ ५३ ॥ ततःक्रोधान्महाबाहूरघूणांकीर्तिवर्धनः ॥ संधायधनुषारामःशरमाशीविषोपमम् ॥ ५४ ॥ रावणस्यशिरोच्छिदच्छ्रीमज्ज्वलितकुंडलम् ॥ तच्छिरःपतितंभूमौदृष्टंलोकैस्त्रिभिस्तदा ॥ ५५ ॥ तस्यैवसदृशंचान्यद्रावणस्योत्थितंशिरः ॥ तत्क्षिप्रंक्षिप्रहस्तेनरामेणक्षिप्रकारिणा ॥ ५६ ॥ द्वितीयंरावणशिरश्छिन्नंसंयतिसायकैः ॥ छिन्नमात्रंचतच्छीर्षंपुनरेवप्रदृश्यते ॥ ५७ ॥

सागर अथवा आकाशमें कोई विशेषता नहीं दीखती. सागर अम्बरके समान आकाश समरके समान होगया ॥ ५२ ॥ राम रावणके युद्धकी उपमा नहीं; राम रावणका युद्ध राम रावणकेही युद्धके समान है, बस यह युद्धही इसकी उपमा हैं ऐसा कहकर उस राम रावणके युद्धको देखने लगे ॥ ५३ ॥ इसके उपरांत रघुकुलकी कीर्ति बढानेवाले महावीर श्रीरामचन्द्रजीने धनुषपर विषधर सर्पके समान बाण चलाया ॥ ५४ ॥ और रावणका शोभायुक्त कुण्डलोंके पहरनेसे उज्ज्वल मस्तक काट डाला, त्रिभुवनके समस्त प्राणियोंने उस मस्तकको पृथ्वीपर गिरते हुए देखा ॥ ५५ ॥ परंतु श्रीरामचन्द्रजीने जैसेही उस मस्तकको काटा कि, वैसेही एक और उसी प्रकारका मस्तक निकलकर उसके धडपर लग गया उसकोभी बडी शीघ्रतासे शीघ्रकर्म करनेवाले श्रीरामचंद्रजीने ॥ ५६ ॥ रावणके उस दूसरे मस्तककोभी

बाणोंसे काटडाला इस शिरके भी काटतेही रावणके एक और शिर लगा हुआ दिखाई दिया ॥ ५७ ॥ उस मस्तककोभी श्रीरामचन्द्रजीने वज्रके समान बाणोंसे काटडाला इस प्रकारसे एकसे रूपवाले शत मस्तक रावणके, श्रीरामचन्द्रजीने काटे ॥ ५८ ॥ तथापि रावणके जीवनका अंत दिखाई नहीं दिया तब सब अस्त्र शस्त्रोंके जाननेवाले कौशल्यानंदवर्द्धनकारी ॥ ५९ ॥ हाथमें बाण लिये और कमरमें तरकश लगाये श्रीरामचन्द्रजी बहुत भांतिकी चिंता करने लगे कि, जिन बाणोंसे हमने मारीचको मारा, खर दूषणका संहार किया ॥ ६० ॥ और क्रौञ्चवनमें रहने वाले विराध और दंडकवनवासी कबंधको मारडाला और जिनसे सात तालके वृक्ष एकही साथमें गिराये गये, पर्वतोंको भेदडाला, वाली मारा गया और जिन बाणोंसे समुद्रको खलबलाय दियाथा ॥६१॥ इस

तदप्यशनिसंकाशैश्छिन्नंरामस्यसायकैः ॥ एवमेवशतंछिन्नंशिरसांतुल्यवर्चसाम् ॥५८॥ नचैवरावणस्यांतोदृश्यतेजीवितक्षये ॥ ततःसर्वास्त्रविद्वीरःकौसल्यानंदवर्धनः ॥ ५९ ॥ मार्गणैर्बहुभिर्युक्तश्चिंतयामासराघवः॥ मारीचोनिहतोयैस्तुखरोयैस्तुसदूषणः ॥६०॥ क्रौंचावटेविराधस्तुकबंधोदंडकावने ॥ यैःसालागिरयोभग्नावालिचक्षुभितोऽम्बुधिः ॥ ६१ ॥ तइमेसायकाःसर्वेयुद्धेप्रात्ययिकामम ॥ किंतुतत्कारणंयेनरावणेमंदतेजसः ॥ ६२ ॥ इतिचिंतापरश्चासीदप्रमत्तश्चसंयुगे ॥ ववर्षशरवर्षाणिराघवोरावणोरसि ॥ ६३ ॥ रावणोऽपिततःक्रुद्धोरथस्थोराक्षसेश्वरः ॥गदामुसलवर्षेणरामंप्रत्यर्दयद्रणे ॥ ६४ ॥ तत्प्रवृत्तंमहद्युद्धंतुमुलंरोमहर्षणम् ॥ अंतरिक्षेचभूमौचपुनश्चगिरिमूर्धनि ॥६५॥ देवदानवयक्षाणांपिशाचोरगरक्षसाम् ॥ पश्यतांतन्महद्युद्धंसर्वरात्रमवर्तत ॥ ६६ ॥

युद्धमेंभी हमारे पास वही सब अमोघ बाण हैं, परन्तु यह समस्त बाण जो रावणसे तेजहीन हो गये इसका कारण क्या है ? ॥ ६२ ॥ श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकारकी चिंताके वश हो कर भी अति सावधानीसे रावणकी छातीकोताककर बाणोंकी वर्षा करने लगे ॥६३॥ रथपर बैठाहुआ राक्षसोंका राजा रावणभी गदा और मूसलोंकी वर्षा करके श्रीरामचन्द्रजीकोपीडितकरने लगा ॥६४॥ इसप्रकार फिरसे आकाश, भूमि और कभी पर्वत शिखरके ऊपरी भागमें उन दोनों कामचारी रथिश्रेष्ठोंका तुमुल और रोमहर्षणकारी बडाभारी युद्ध आरंभ हुआ ॥६५॥ उस बडेभारी युद्धको देखते २ देवता; दानव, यक्ष, पिशाच, उरग और राक्षसोंको अनेक दिन रात अथवा सात रात्रियें बीतगई ॥ ६६ ॥

इसमें रात्रि, दिन, मुहूर्त अथवा क्षणभरके लियेभी तो यह राम रावणका युद्ध बंद नहीं हुआ ॥ ६७ ॥ उस काल राक्षसोंमें इन्द्र रावण और दशरथ कुमार रामचंद्र इन दोनोंके युद्धमें श्रीरामचन्द्रजीको विजय प्राप्त करते हुए न देखकर देवराज इन्द्रका सारथि महात्मा मातलि संग्राम करते हुऐ श्रीरामचन्द्रजीसे यह वचन बोला ॥ ६८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां नवोत्तरशततमः सर्गः ॥ १०९ ॥ मातलिने श्रीरामचन्द्रजीको याद दिलानेके लिये यह कहा, हे वीर! आप अनजानके समान यह क्या चिंता करते हैं ॥ १ ॥ हे प्रभो! देवतोंने जो इनके विनाश कालकी वार्ता कही थी वह समय अब आगया है; इस कारण अब रावणको वध करनेके लिये आप ब्रह्मास्त्र छोडिये ॥ २ ॥ मातलि सारथिनें जैसेही यह बात याद दिलाई

नैवरात्रिनदिवसंनमुहूर्तंनचक्षणम्॥ रामरावणयोर्युद्धंविराममुपगच्छति ॥६७॥ दशरथसुतराक्षसेंद्रयोस्तयोर्जयमनवेक्ष्यरणेसराघवस्य ॥ सुरवररथसारथिर्महात्मारणरतराममुवाचवाक्यमाशु ॥ ६८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे नवोत्तरशततमः सर्गः ॥ १०९ ॥ अथसंस्मारयामासमातलीराघवंतदा ॥ अजानन्निवकिंवीरत्वमेनमनुवर्तसे ॥ १ ॥ विसृजास्मैवधायत्वमस्त्रंपैतामहंप्रभो ॥ विनाशकालःकथितोयःसुरैःसोऽद्यवर्तते ॥२॥ ततःसंस्मारितोरामस्तेनवाक्येनमातलेः॥जग्राहसशरंदीप्तंनिश्वसंतमिवोरगम् ॥३॥ यंतस्मैप्रथमंप्रादादगस्त्योभगवानृषिः ॥ ब्रह्मदत्तमहद्बाणममोघंयुधिवीर्यवान् ॥४॥ ब्रह्मणानिर्मितंपूर्वमिंद्रार्थममितौजसा ॥ दत्तंसुरपतेःपूर्वत्रिलोकजयकांक्षिणः ॥ ५ ॥ यस्यवाजेषुपवनःफलेपावकभास्करौ ॥ शरीरमाकाशमयंगौरवेमेरुमंदरौ ॥ ६ ॥ जाज्वल्यमानंवपुषासुपुंखंहेमभूषितम्॥रजसासर्वभूतानांकृतंभास्करवर्चसम्॥७॥सधूममिवकालाग्निंदीप्तमाशीविषोपमम्॥नरनागाश्ववृन्दानांभेदनंक्षिप्रकारिणम् ॥८॥

कि, वैसेही श्रीरामचन्द्रजीने ब्रह्मास्त्र ग्रहण किया. यह अस्त्र महाब्रह्मतेजके समान प्रदीप्त था और क्रोधित सर्पके समान श्वास ले रहा था ॥ ३ ॥ युद्धमें वीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजीको पहले यह अमोघ ब्रह्मदत्त अस्त्र ऋषिश्रेष्ठ भगवान् अगस्त्यजीने दिया था ॥ ४ ॥ पहले अमिततेजस्वी पितामह ब्रह्माजीने त्रिलोक विजयाभिलाषी सुरपति इन्द्रके लिये अस्त्र बनाया था उनकोही दिया था ॥ ५ ॥ इस अस्त्रके वेगमें पवन, फलकमें अग्नि और सूर्य, सब अंगोंमें ब्रह्माजी और भारीपनमें मेरु और मंदराचलके अधिष्ठाता दो देवता वास करते थे ॥ ६ ॥ यह अस्त्र अपने प्रभावसे आपही सूर्यके समान प्रदीप्त था सब महाभूतोंका सारअंश निकालकर बनाया गया था, इसके पंख सुशोभित थे और वह सुन्दर व सुवर्णसे भूषित थे ॥ ७ ॥ यह प्रदीप्त विषधर सर्पके समान धुवेंसहित

कालाग्निके समान हाथी घोडे व रथोंके समूहोंको विदारण करनेमें चतुर और अत्यन्त शीघ्र कार्य करनेवाला ॥ ८ ॥ इसके तेजसे द्वार (गोपुर) परिघ और पर्वततक चूर्ण हो जाते थे, उसमें रुधिर व मेद लगा हुआ था और अत्यन्तही भयकर था॥९॥यह वज्रके समान सारवान और वज्रहीके समान शब्दयुक्त था और सब प्राणियोंको भयउपजानेवालाथा और वह श्वास लेते हुए सर्पके समान दिखलाई देता था॥१०॥कंक, गिद्ध, बगले, गीदडवराक्षसोंको नित्यरणमें भक्ष देनेवाला यमके समान त्रास उपजानेवाला॥११॥वानरयूथपोंको आनंदका देनेवाला राक्षसोंका मारनेवाला था, गरुडजीके अनेक प्रकारके पंखोसे जिसके पंख बने हुए थे,॥१२॥उस इक्ष्वाकुवंशियोंके भयको नाश करनेवाले शत्रुओंकी कीर्तिको हरण करनेवाले अपनेको हर्षित करानेवाले ऐसे उत्तम बाणोंको॥१३॥महाबलवान्

द्वाराणांपरिघाणांचगिरीणांचापिभेदनम् ॥ नानारुधिरदिग्धांगंमेदोदिग्धंसुदारुणम् ॥ ९ ॥वज्रसारंमहानादंनानासमितिदारणम् ॥ सर्ववित्रासनंभीमंश्वसंतमिवपन्नगम् ॥ १० ॥ कंकगृध्रबकानांचगोमायुगणरक्षसाम् ॥ नित्यंभक्ष्यप्रदंयुद्धेयमरूपंभयावहम् ॥ ११ ॥ नंदनंवानरेंद्राणांरक्षसामवसादनम् ॥ वाजितंविविधैर्वाजैश्चारुचित्रैर्गरुत्मतः ॥ १२ ॥ तमुत्तमेषुलोकानामिक्ष्वाकुभयनाशनम् ॥ द्विषतांकीर्तिहरणंप्रहर्षकरमात्मनः ॥ १३ ॥ अभिमंत्र्यततोरामस्तंमहेषुंमहाबलः ॥ वेदप्रोक्तेनविधिनासंदधेकार्मुकेबली ॥ १४ ॥ तस्मिन्संधीयमानेतुराघवेणशरोत्तमे ॥ सर्वभूतानिसंत्रेसुश्चचालचवसुंधरा ॥१५॥ सरावणायसंक्रुद्धोभृशमायम्यकार्मुकम् ॥ चिक्षेपपरमायत्तःशरंमर्मविदारणम् ॥ १६ ॥ सवज्रइवदुर्धर्षोवज्रिबाहुविसर्जितः ॥ कृतांतइवचावार्योन्यपतद्रावणोरसि ॥ १७ ॥ सविसृष्टोमहावेगःशरीरांतकरःपरः ॥ बिभेदहृदयंतस्यरावणस्यदुरात्मनः ॥ १८ ॥ रुधिराक्तःसवेगेनशरीरांतकरःशरः ॥ रावणस्यहरन्प्राणान्विवेशधरणीतलम् ॥ १९ ॥सशरोरावणंहत्वारुधिरार्द्रकृतच्छविः ॥ कृतकर्मानिभृतवत्सतूणींपुनराविशत् ॥ २० ॥

श्रीरामचन्द्रजीने ग्रहण करके वेदके मंत्रोंसे विधिपूर्वक इसको अभिमंत्रित किया और बलसे धनुषपर चढाया ॥१४॥ जब उस उत्तम बाणोंको श्रीरामचन्द्रजीने धनुषपर चढाया तब सब प्राणियोंको भय उपजा और पृथ्वी कंपायमान हुई ॥१५॥ इसके उपरांत श्रीरघुनाथजीने क्रोधकर अतियत्नपूर्वक धनुषको झुकाय वह मर्मविदारी बाण रावणके ऊपर चलाया ॥ १६ ॥ वज्रके समान दुर्द्धर्ष इन्द्रकी बाहोंसे छूटे हुए के समान किसीके रोकनेसे भी न रुकनेवालाकालकी नाईं वह बाण रावणकी छातीमें लगा ॥१७॥ महाबली रघुनाथजी करके छोडे हुए उस शरीरका अन्त करनेवाले महावेगयुक्त बाणने दुरात्मा रावणके हृदयको भेदडाला॥१८॥रुधिरसे सना हुआ और वेगसे शरीरकी इति करनेवाला यह बाण रावणके प्राणोंको लेता हुआ प्रथम तो पृथ्वीमें प्रवेश कर गया॥१९॥पीछे

वह बाण रावणके मारनेका कार्य पूरा करके रुधिरसे गीला हो फिर श्रीरामचन्द्रजीके तरकसमें आगया ॥२०॥ अस्त्रके लगनेके कारण रावणका जीवन शेष न होजानेसे उसका धनुष और बाण प्राणोंके साथ छूटकर पृथ्वीपर गिर पडा*॥ २१ ॥ और महाद्युतिमान् राक्षसराज रावण भी प्राणरहित हो वज्रके लगनेसे वृत्रासुरके समान महावेगयुक्त हो रथसे पृथ्वीपर गिरपडा ॥२२॥ राक्षसराज रावणको गिरा हुआ देखकर मरनेसे बचे हुए निशाचरनाथ विहीन और

तस्यहस्ताद्धतस्याशुकार्मुकंचापिसायकम् ॥ निपपातसहप्राणैर्भ्रश्यमानश्चजीवितात् ॥ २१ ॥ गतासुर्भीमवेगस्तुनैर्ऋतेंद्रोमहाद्युतिः ॥ पपा तस्यंदनाद्भूमौवृत्रोवज्रहतोयथा ॥ २२ ॥ तंदृष्ट्वापतितंभूमौहतशेषानिशाचराः ॥ हतनाथाभयत्रस्ताःसर्वतःसंप्रदुद्रुवुः ॥ २३ ॥ सर्वतश्चा भिपेतुस्तान्वानरान्द्रुमयोधिनः ॥ दशग्रीववधंदृष्ट्वाविजयंराघवस्यच ॥ ॥ २४ ॥ आर्दितावानरैर्हृष्टालंकामभ्यपतन्भयात् ॥ हताश्रयत्वा त्करुणैर्बाष्पप्रस्रवणैर्मुखैः ॥ २५ ॥

भयके मारे विह्वल हो सब ओरको भागने लगे ॥२३॥ वृक्षोंसे युद्ध करनेवाले वानर सिंहनाद करते हुए मारनेको उन राक्षसोंके पीछे२ दौडे परंतु दशग्रीवका मरना और श्रीरामचन्द्रजीकी विजय देख ॥ २४ ॥ और वानरोंकी मार पीटसे अत्यन्त कातर हो व किसीका आश्रय न देखकर दीनवदन हो आंसुओंको छोडते २ सब राक्षस लंकापुरीमें प्रवेश करते हुए ॥ २५ ॥

---

* दोहा–असुरसुभट रघुवीरसों, भिरत क्रोध सरसाय । अमर होनंहित मरतहं समर सामुहे आय ।। कवित्त–गज रथवाले घट सामुहे परं जु कहूं गरद मिलाइवेमें हौंसिला बढतहं ।। रावरे वदनपं नरेश रामचन्द्र वर लाली रस वीरकी बहालीमें चढ़त हं।। लछिराम अचरज धूम धाम वारी यह देवलोक दुंदुभी दे विरद पढ़त हं ।। म्यानते कृपान तेरी अरि उर प्रानसंग समरमें दोउ एक वारही कढतहं ।।१।।दरशन पान वृषभानको गरीचंमान खल दल कम्प होत देख प्रलै माईसी ।। बांके गढ़ टूट फूट वैरिनके प्राण छूट कालसी कराल कालकूटमें बुझाईसी ।। भनत हृदेश राम लच्छमन तेरी तेग काटि २ जात फौज फाटि जात काईसी ।। काटि जाति टोप शीश पांयनलों फाटिजात चाटिजात झिलमझपाटन मलाईसी ।।२।। रनवनबीच बर वडवा अनलरु जब गनीमनके ऊपर परत है।।मारतंड भोरसुर मण्डली सरोजनपं ज्वालामुखी ज्वालहुं दरीन विहरत है।। खलदल नाशन बिराग पन्नगेशफन लछिराम लालीके तरङ्गन करत है।। मण्डित प्रताप राम रावरो अखण्ड फंले चौदों भुवनमें प्रचण्ड विचरतहै ।।३।। कठिन कठोर कबजाको बर जोर घोर वसन मरोर रंग रोशनतरीरको।। गुनन गहीलो गहगहो अरु गरबीलो गरबार चापतं रंगीलो प्रभाभोरको।। वीर तीर वरसे सुनी तरते गभीर रन पीर उपजावत अधीर करि धीरको ।। देवसुखदायक सहायकविहारी सदा मारो लंकनायकसो धनु रघुवीरको ।। ४ ।।
दोहा–धनुषधारि शरकरण लगि, खंच्यों राम महीश ।। दोऊ एकहिसंग छुटे, धनुते शर रिपुशीश ।। ५ ।।

इसके उपरांत विजयी वानरवृन्द हर्षित अंतःकरणसे रावणका मरना और श्रीरामचन्द्रजीकी विजयकी वार्ताको प्रकाश करने लगे ॥ २६ ॥ तब आकाशमें मंगलकी पुकार करनेवाले देवताओंके नगाडे बजने लगे और सुखकी देनेवाली दिव्यगन्ध लिये पवन बहने लगी ॥२७॥ आकाशमंडलसे मनोहर व दूसरेके लिये दुर्लभ ऐसी फूलोंकी वर्षाने गिरकर श्रीरामचन्द्रजीके रथको ढक लिया ॥ २८ ॥ आकाशसे महात्मा देवताओंकी स्तुति संयुक्त "धन्य हो !" यह श्रेष्ठ वाणी सुनाई आने लगी ॥२९॥ सर्व लोकोंके भयको देनेवाले रौद्र रावणके मारे जानेपर चारणोंके सहित देवता आनंदकी सीमातक पहुँच गये ॥३०॥ इस प्रकारसे श्रीरामचन्द्रजी राक्षसश्रेष्ठ रावणका वध करके प्रसन्न हुए और सुग्रीव व अंगद विभीषणकी मनोकामना पूरी हुई ॥ ३१ ॥ राक्षसराज रावणके मारे जानेपर मरुद्गण शान्त हो गये, सब दिशायें निर्मल होगईं, आकाशमंडल विमल हुआ, पृथ्वी कंपायमान न होकर अचल होगई, पवन सुखदाई बहनेलगी

ततोविनेदुःसंहृष्टावानराजितकाशिनः ॥ वदंतोराघवजयंरावणस्यचतद्वधम् ॥ २६ ॥ अथान्तरिक्षेव्यनदत्सौम्यस्त्रिदशदुंदुभिः ॥ दिव्यगंधवहस्तत्रमारुतःसुसुखोववौ ॥ २७ ॥ निपपातांतरिक्षाच्चपुष्पवृष्टिस्तदाभुवि ॥ किरंतीराघवरथंदुरवापामनोहरा ॥ २८ ॥ राघवःस्तवसंयुक्तागगनेचविशुश्रुवे ॥ साधुसाध्वितिवागग्र्यादेवतानांमहात्मनाम् ॥ २९ ॥ आविवेशमहान्हर्षोदेवानांचारणैःसह ॥ रावणेनिहतेरौद्रेसर्वलोकभयंकरे ॥ ३० ॥ ततःसकामंसुग्रीवमंगदंचविभीषणम् ॥चकारराघवःप्रीतोहत्वाराक्षसपुंगवम् ॥३१॥ ततःप्रजग्मुःप्रशमंमरुद्गणादिशःप्रसेदुर्विमलंनभोऽभवत् ॥ महीचकंपेनचमारुतोववौस्थिरप्रभश्चाप्यभवद्दिवाकरः ॥ ३२ ॥ ततस्तुसुग्रीवविभीषणांगदाःसुहृद्विशिष्टाःसहलक्ष्मणास्तदा ॥ समेत्यहृष्टाविजयेनराघवंरणेऽभिरामंविधिनाभ्यपूजयन् ॥ ३३ ॥ सतुनिहतरिपुःस्थिरप्रतिज्ञःस्वजनबलाभिवृतोरणेबभूव ॥ रघुकुलनृपनंदनोमहौजास्त्रिदशगणैरभिसंवृतोमहेंद्रः ॥ ३४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे दशाधिकशततमःसर्गः ॥ ११० ॥ भ्रातरंनिहतंदृष्ट्वाशयानंनिर्जितंरणे ॥ शोकवेगपरीतात्माविललापविभीषणः ॥ १ ॥

और सूर्य स्थिर प्रभासे युक्त हुए ॥३२॥ इसके उपरांत सुग्रीव, विभीषण, अंगदादि सुहृद्गण लक्ष्मणजीके सहित हर्षित मनसे जयके आनन्दमें मग्न हो समरमें दुर्जय श्रीरामचन्द्रजीके निकट आकर यथाविधिसे उनकी पूजा करते हुये ॥ ३३ ॥ चौपाई ॥ दृढप्रतिज्ञ रघुराज कुमारा । तेजवान श्रीराम उदारा ॥ शत्रु विनाश स्वजन गण संगा । लहत यहै छबि अटल अभंगा ॥ सब देवन युतमनहु सुरेशा ॥ त्यौंही सखन सहित अवधेशा ॥ ३४ ॥ इत्यार्षे श्री० वाल्मी० आदि० युद्धकांडे भाषायां दशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११० ॥ भ्राताको संग्राममें पराजित और मृतक होकर पृथ्वीमें शयन करता देख विभीषण शोकके वेगसे अधीर होकर विलाप करते हुए बोले ॥ १ ॥

हा वीर ! हा विक्रमो ! हा विख्यात ! हा प्रवीर ! हा नीतिमें चतुर ! आप तो बडे मोलके बिछौनोंपर शयन करनेका अभ्यास किये हुए थे, फिर किस निमित्त आज मृतक होकर पृथ्वीपर शयन कर रहे हो ! ॥२॥ हा वीर ! आपका सूर्यके समान प्रभावाला मुकुट रामचन्द्रके बाणोंसे छिन्न होगया है, और बाजूसे भूषित तुम्हारी लंबी बांहें भी चेष्टारहित होकर पडी हैं ॥ ३ ॥ हा शूर ! पहले हमने जो कुछ कहा था और काम व लोभके वश होकर जिसमें तुमने अपनी सम्मति नहीं दी थी आज वही बात तुम्हारे आगे आई है ॥ ४ ॥ हाय ! पहले गर्वके वश प्रहस्त, इन्द्रजित, अतिरथ, कुम्भकर्ण, अतिकाय, नरान्तक और स्वयं आपनेभी व और राक्षसोंने जिस उपदेशको नहीं माना यह उसहीका फल है ॥ ५ ॥ हा ! आपके मारेजानेसे धार्मिकगणोंकी मर्यादा जाती रही, धर्मकी मूर्ति, मानों जाती रही, बलका संग्रहस्थान आज जाता रहा, धर्मकी मूर्ति' सत्यगुणोंके आश्रय आप वीरगणोंकी गतिको प्राप्त हुए हैं

वीरविक्रांतविख्यातप्रवीणनयकोविद ॥ महार्हशयनोपेतकिंशेषेनिहतोभुवि ॥ २ ॥ निक्षिप्यदीर्घौनिश्चेष्टौभुजावंगदभूषितौ ॥ मुकुटेनाप वृत्तेनभास्कराकारवर्चसा ॥ ३ ॥ तदिदंवीरसंप्राप्तयन्मयापूर्वमीरितम् ॥ काममोहपरीतस्ययत्तन्नरुचितंतव ॥ ४ ॥ यन्नदर्पात्प्रहस्तोवा नेंद्रजिन्नापरेजनाः ॥ नकुंभकर्णोऽतिरथोनातिकायोनरांतकः ॥ नस्वयंबहुमन्येथास्तस्योद कोंऽयमागतः ॥ ५ ॥ गतःसेतुःसुनीतानांगतो धर्मस्यविग्रहः ॥ गतःसत्त्वस्यसंक्षेपःसुहस्तानांगतिर्गता ॥ ६ ॥ आदित्यःपतितोभूमौमग्नस्तमसिचंद्रमाः ॥ चित्रभानुःप्रशांतार्चिर्व्यवसा योनिरुद्यमः ॥ अस्मिन्निपतितेवीरेभूमौशस्त्रभृतांवरे ॥७॥ किंशेषमिहलोकस्यगतसत्त्वस्यसंप्रति ॥ रणेराक्षसशार्दूलेप्रसुप्तइवपांसुषु ॥ ८ ॥ धृतिप्रवालःप्रसभाग्र्यपुष्पस्तपोबलःशौर्यनिबद्धमूलः ॥ रणेमहान्राक्षसराजवृक्षःसंमर्दितोराघवमारुतेन ॥ ९ ॥ तेजोविषाणःकुलवंशवंशः कोपप्रसादापरगात्रहस्तः ॥ इक्ष्वाकुसिंहावगृहीतदेहःसुप्तःक्षितौरावणगंधहस्ती ॥ १० ॥

॥ ६ ॥ हा वीर ! अस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ ! आपके गिरनेसे सूर्यको पृथ्वीमें गिरे हुए, चंद्रमा राहुके उदरमें पडे हुए और अग्निको शत जलके घडोंसे बुझाहुआ सा हम देखते हैं ॥ ७ ॥ हा राक्षसशार्दूल ! आपके रणकी धूरिमें पडे रहनेसे अब यह बचे हुए राक्षसगण सत्त्वहीनसे जान पडते हैं अब इनकी क्या गति होगी ? ॥ ८ ॥ आज धैर्ययुक्त पल्लव, सहज शीलतायुक्त पुष्प, तपस्यारूप फल और शूरतायुक्त दृढमूलवाला राक्षसराजरूप वृक्ष संग्राममें रामरूपपवनसेमर्दित हुआ ॥ ९ ॥ हा ! तेजरूप, दांत, पिताओंके पितामहादिक पूर्व पुरुषोंकी परम्पराको पीठ बनाये, कोपही देहके दूसरे अंग बनाये और प्रसन्नतारूप शुण्डयुक्तमतवाला हाथी रामरूपसिंहसे मृतक होकर पृथ्वीपर शयन कररहा है ॥ १० ॥

हाय ! पराक्रम और उत्साहसूचक फैली हुई लपटोंसे युक्त, विश्व सरूप धुआं और अपने बलरूप भस्मकरकेभी शक्तिसे समन्वित रावणरूप अग्नि रामरूप मेघसे बुझा डाला गया है ॥ ११ ॥ हाय ! राक्षस गणरूप पूछ, स्कंध और सींगसमन्वित पवनके समानविक्रमी उत्साहशाली शत्रुओंका विजय करने वाला राक्षसरूप वृषभ (बैल) रामरूप सिंहसे निहत हो व्याकुल और विकलेन्द्रिय हुआ है ॥ १२ ॥ विभीषणने शोकसे व्याकुल होकर जब इस प्रकारके हेतुयुक्त और अर्थसहित वचन कहे तब श्रीरामचन्द्रजीने कहा ॥१३॥ यह प्रचंडपराक्रमी राक्षसराज रावण रणमें सामर्थ्यहीन या निश्चेष्टहोकर नहीं मारागया है, यह अतिशय बलशाली और मृत्युके भयसे हीन था यह तो दैवके वश होकर रणभूमिमें गिरा है ॥ १४ ॥ श्रीकी वृद्धिही जिनको प्रार्थनीय है ऐसे महात्मा क्षत्रियधर्मपरायण वीरगणोंके संग्राममें मरनेसे उनको यह नहीं समझना चाहिये कि यह मृतक होगये' और इनके लिये शोक करनाभी उचित

पराक्रमोत्साहविजृंभितार्चिर्निःश्वासधूमःस्वबलप्रतापः॥प्रतापवान्संयतिराक्षसाग्निर्निर्वापितोरामपयोधरेण॥११॥ सिंहर्क्षलांगूलककुद्विषाणः पराभिजिद्गंधनगंधवाहः॥रक्षोवृषश्चापलकर्णचक्षुःक्षितीश्वरव्याघ्रहतोऽवसन्नः ॥१२॥ वदंतंतेतुमद्वाक्यंपरिद्दष्टार्थनिश्चयम् ॥रामःशोकसमाविष्टमित्युवाचविभीषणम् ॥ १३ ॥नायंविनष्टोनिश्चेष्टःसमरेचंडविक्रमः ॥ अत्युन्नतमहोत्साहःपतितोऽयमशंकितः ॥ १४ ॥नैवंविनष्टाःशोच्यंतेक्षत्रधर्मव्यवस्थिताः॥वृद्धिमाशंसमानायेनिपतंतिरणाज़िरे ॥१५॥ येनसेंद्रास्त्रयोलोकास्त्रासितायुधिधीमता ॥ अस्मिन्कालसमायुक्तेन कालःपरिशोचितुम् ॥ १६ ॥ नैकांतविजयोयुद्धेभूतपूर्वःकदाचन ॥ परैर्वाहन्यतेवीरःपरान्वाहंतिसंयुगे ॥१७॥ इयंहिपूर्वैःसंदिष्टागतिःक्षत्रियसंमता ॥ क्षत्रियोनिहतःसंख्येशोच्यइतिनिश्चयः॥१८॥तदेवंनिश्चयंदृष्ट्वातत्त्वमास्थायविज्वरः॥यदिहानंतरंकार्यंकल्प्यंतदनुचिंतय॥१९॥ तमुक्तवाक्यंविक्रांतंराजपुत्रंविभीषणः ॥ उवाचशोकसंतप्तो भ्रातुर्हितमनंतरम् ॥ २० ॥

नहीं ॥ १५ ॥ यह बुद्धिमान् इन्द्रादि देवताओंके साथ त्रिभुवनको पराजित करके काल पाय कालधर्मके वश हुआ है, इस कारणसे इसके लिये शोक करनाठीक नहीं ॥१६॥ हे वीर ! ऐसा कभी नहीं देखागया कि युद्धमें सदाजयही होती हो, चाहे जैसा वीर क्यों न हो कभी रणमें शत्रुको पराजित करता है और कभी स्वयं भी उससे पराजित हो जाता है ॥१७॥ सन्मुख संग्राममें देहत्याग करनाही प्राचीन मन्वादिक क्षत्रियभी कहते चले आये हैं इसकारण रणभूमिमें क्षत्रियके मारे जानेपर उसके लिये शोक करना उचित नहीं है ॥१८॥ हे विभीषण ! हमने जो कुछ कहा इसको तुम ठीकही ठीक जानो और धीरज धारण करके सावधान हो जाओ व अब जो आगेको कर्तव्य हो उसके लिये विचार करो ॥१९॥ राजकुमार विक्रमकारी श्रीरामचन्द्रजीने जब यह कहा तो शोकसे

संतापित विभीषण अपने भ्राताकी प्रशंसा करते हुए यह वचन बोले ॥२०॥ जो पहले कभी इन्द्रादि देवता लोगोंके साथ भी संग्राममें नहीं हारा वही आज आपसे संग्राममें भग्न होगया, जैसे महासमुद्रका जल वेलाभूमिको पाय फिर अपने भंडारमेंको लौट जाता है ॥२१॥ इसने जीवित रहते विधिपूर्वक अग्निमें होम किये, सब भोगोंको भोगा, नौकरचाकरोंको संतोषित किया, मित्रोंको धन दिया और शत्रुगणोंसे अपना वैर लेकर निहत हुआ है ॥२२॥ इसने महातप किया था, यह महातेजस्वी था और इसने सब उपनिषद् पढके समस्त अग्निहोत्रादि कार्य पूरे किये थे इस कारण अब आपकी आज्ञाके अनुसार हम इसके प्रेतकर्मोंके करनेकी इच्छा करते हैं ॥२३॥ साधुश्रेष्ठ विभीषणजीने करुणासहित वाणीसे जब इस प्रकार निवेदन किया तब राजकुमार महात्मा श्रीरामचन्द्रजीने राक्षसराज रावणके स्वर्ग जानेके लिये उसके मृतककर्म करनेकी आज्ञा दी ॥ २४ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने कहा विभीषण ! मरनेहीतक वैर रहता है, परंतु अब प्रयोजनके

योयंविमर्देष्वविभग्नपूर्वःसुरैःसमस्तैरपिवासवेन ॥ भवंतमासाद्यरणेविभग्नोवेलामिवासाद्ययथासमुद्रः ॥ २१ ॥ अनेनदत्तानिवनीपकेषुभुक्ताश्चभोगानिभृताश्चभृत्याः ॥ धनानिमित्रेषुसमर्पितानिवैराण्यमित्रेषुनिपातितानि ॥२२॥ एषोहिताग्निश्चमहातपाश्चवेदांतगःकर्मसुचाग्र्यशूरः ॥ एतस्ययत्प्रेतगतस्यकृत्यंतत्कर्तुमिच्छामितवप्रसादात् ॥२३॥ सतस्यवाक्यैःकरुणैर्महात्मासंबोधितःसाधुविभीषणेन॥आज्ञापयामासनरेंद्रसूनुःस्वर्गीयमाधानमदीनसत्त्वः ॥ २४ ॥ मरणांतानिवैराणिनिवृत्तंनःप्रयोजनम् ॥ क्रियतामस्यसंस्कारोममाप्येषयथातव ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे एकादशाधिकशततमः सर्गः ॥ १११ ॥ रावणंनिहतंदृष्ट्वाराघवेणमहात्मना ॥ अंतःपुराद्विनिष्पेतुराक्षस्यःशोककर्शिताः ॥ १ ॥ वार्यमाणाःसुबहुशोवेष्टंत्योहरणपांसुषु ॥ विमुक्तकेश्यःशोकार्तागावोवत्सहतायथा ॥२॥ उत्तरेणविनिष्क्रम्यद्वारेणसहराक्षसैः ॥ प्रविश्यायोधनघोरंविचिन्वंत्योहतंपतिम् ॥ ३ ॥ आर्यपुत्रेतिवादिन्योहानाथेतिचसर्वशः ॥ परिपेतुःकबंधांकांमहींशोणितकर्दमाम् ॥ ४ ॥ ताबाष्पपरिपूर्णाक्ष्योभर्तृशोकपराजिताः ॥ करिण्यइवनर्दंत्यःकरेण्वोहतयूथपाः ॥ ५ ॥

सिद्ध हो जानेसे यह जैसा तुम्हारा बंधु है वैसाही हमारा बंधु हुआ इसलिये इसका संस्कार करो ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० युद्ध० भाषायामेकादशाधिकशततमः सर्गः ॥ १११ ॥ "महात्मा श्रीरामचन्द्रजीसे रावण मारडाला गया है" यह समाचार सुन राक्षसियें शोकके मारे विह्वल हो रनवाससे निकल खडी हुईं ॥ १ ॥ वह सब स्त्रियें वारंवार रोकी जानेपर भी मृतवत्सा गायके समान शोकसे पीडित हो बालखोले रणकी धूरिमें लोटने लगीं ॥ २ ॥ यह समस्त राक्षसियें लंकाके उत्तरवाले द्वारसे राक्षसोंके संग निकलीं और रणभूमिमें प्रवेश करके अपने मरे हुए पतिको ढूंढने लगीं ॥३॥ वह सब "हा आर्यपुत्र ! हा नाथ !" यह कहती रुधिरकी कीचसे परिपूर्ण कबंधोंसे युक्त रणभूमिमें इधर उधर फिरने लगीं ॥४॥ वह सब स्त्रियें स्वामीके शोकसे शोकाकुल थीं उनके

नेत्र आंसुओंसे भरे हुए थे और वे यूथपतिहीन हथिनियोंकी नांई जिधर तिधर अपने स्वामीको खोजती फिरती थीं ॥५॥ इसके उपरांत उन्होंने देखा कि निकटहीमहावीर्य, महाकाय, महाद्युतिमान रावण रणभूमिमें शयन किये पडा है, उसकी मूर्ति नीले अंजनके ढेरके समान थी ॥६॥ रणकी धूरिमें पडेहुए पतिको सहसा देखकर यह सब स्त्रियें टूटी हुई वनवेलिके समान राक्षसराज रावणके शरीरपर गिर पडीं ॥७॥ रावणकी इन सब स्त्रियोंमें कोई २ बडे गौरवसे रावणको आलिंगन करने लगीं, और कोई दोनों पांव या ग्रीवाको ग्रहण करके रोने लगीं ॥८॥ कोई अपने दोनों हाथ फैलायकर पृथ्वीपर लोट गई और कोई २ मृतक पतिका वदनमंडल

ददृशुस्तामहाकायंमहावीर्यंमहाद्युतिम् ॥ रावणंनिहतंभूमौनीलांजनचयोपमम् ॥६॥ ताःपतिंसहसादृष्ट्वाशयानंरणपांसुषु ॥ निपेतुस्तस्यगात्रेषुच्छिन्नावनलताइव ॥ ७ ॥ बहुमानात्परिष्वज्यकाचिदेनंरुरोदह ॥ चरणौकाचिदालंब्यकाचित्कंठेऽवलंब्यच ॥ ८ ॥ उत्क्षिप्यचभुजौकाचिद्भूमौसुपरिवर्तते ॥ हतस्यवदनंदृष्ट्वाकाचिन्मोहमुपागमत ॥ ९ ॥ काचिदंकेशिरःकृत्वारुरोदमुखमीक्षती ॥ स्नापयंतीमुखंबाष्पैस्तुषारैरिवपंकजम् ॥ १० ॥ एवमार्ताःपतिंदृष्ट्वारावणंनिहतंभुवि ॥ चुक्रुशुर्बहुधाशोकाद्भूयस्ताःपर्यदेवयन् ॥ ॥ ११ ॥ येनवित्रासितःशक्रोयेनवित्रासितोयमः॥ येनवैश्रवणोराजापुष्पकेणवियोजितः॥ १२ ॥ गंधर्वाणामृषीणांचसुराणांचमहात्मनाम् ॥ भयंयेनगणेदत्तंसोऽयंशेतेरणेहतः ॥ १३ ॥ असुरेभ्यःसुरेभ्योऽपिपन्नगेभ्योऽपिवातथा ॥ भययोनविजानातितस्येदंमानुषाद्भयम् ॥ १४ ॥ अवध्योदेवतानांयस्तथादानवरक्षसाम् ॥ हतःसोऽयंरणेशेतेमानुषेणपदातिना ॥ १५ ॥

देखकर मूर्च्छित होगई ॥९॥ कोई स्त्री उसका शिर अपने अंगमें रखकर देखती ओसकी नांई आंसुओंकी बूंदोंसे उसका कमलके समान मुख गीलाकरने लगीं॥१०॥ इस प्रकार वह सब स्त्रियें मृतक पतिको पृथ्वीपर पडा देखकर बहुतही रोय २ विलापकलाप करके कहने लगीं ॥ ११ ॥ जिन्होंने इन्द्रको त्रासित किया यम जिसके भयसे शंकित रहता था, जिन्होंने वैश्रवण कुबेरका विमान बलसे छीन लिया ॥१२॥ और देवता, गन्धर्व व ऋषि इत्यादि महात्मालोगोंका संग्राममें भयसे व्याकुल किया था, वही आज निहत हो रणभूमिमें शयन कर रहे हैं ॥१३॥ अहो ! राक्षसराजने सुर असुर अथवा पन्नगोंसे जिस भयकी शंका नहीं की थी आज मनुष्यसे उनको वही भय हुआ ॥१४॥ हाय ! यह देव, दानव और राक्षसोंसे अवध्य होकर भी एक पैदल मनुष्यसे मार डाले जाकर रणभूमिमें

शयनकर रहे हैं ॥ १५ ॥ हायरे ! देवता, असुर अथवा यक्षलोग भी जिसका वध नहीं करसके वह एक मनुष्यसे साधारण प्राणीके समान मारा गया॥१६॥ रावणकी स्त्रियें दुःखितमनसे इस प्रकारसे विलाप करके व्यथित हृदय हो क्षणभरमें रोकर फिर भी विलाप करके कहने लगीं ॥ १७ ॥ महाराज ! तुमने हितकी कहनेवाले सुहृद् लोगोंके वचनोंपर ध्यान न देकर अपनी मृत्युके लिये ही सीता हरण किया था और इसी कारणसे सब पक्षवालोंका वध हुआ, व इसीसे इस समय हम भी मूलसहित निर्मूल हुईं॥१८॥हा! तुम्हारा मंगल चाहनेवाले भ्राता विभीषणजीने हित वचन कहे भी परंतु तुमने मोहके वश अपने वधके लिये ही उनको कठोर वचन कहे थे, कि उन कठोर वचनोंका फल अब दिखाई देता है ॥१९॥हा ! यदि तुम उन विभीषणके वचनोंको मान जनक कुमारी सीता श्रीरामचन्द्रजीको दे डालते, तो न यह हमारा मूलनाश होता और न यह बडी भारी विपद् हमपर पडती ॥ २० ॥ हा प्राणेश्वर ! जो

योनशक्यःसुरैर्हन्तुंनयक्षैर्नासुरैस्तथा ॥ सोऽयंकश्चिदिवासत्त्वोमृत्युंमर्त्येनलंभितः ॥ १६ ॥ एवंवदंत्योरुरुदुस्तस्यतादुःखितास्त्रियः ॥ भूयएवचदुःखार्ताविलेपुश्चपुनःपुनः॥ १७॥ अशृण्वतातुसुहृदांसततंहितवादिनाम्॥ मरणायाहृतासीताराक्षसाश्चनिपातिताः ॥ एताःसममिदानींतेवयमात्माचपातितः ॥ १८ ॥ब्रुवाणोऽपिहितंवाक्यमिष्टोभ्राताविभीषणः ॥ दृष्टंपरुषितोमोहात्त्वयात्मवधकांक्षिणा ॥ १९ ॥ यदि निर्यातितातेस्यात्सीतारामायमैथिली॥ ननःस्याद्व्यसनंघोरमिदंमूलहरंमहत् ॥ २०॥ वृत्तकामोभवेद्भ्रातारामोमित्रकुलंभवेत्॥ वयंचाविधवाः सर्वाःसकामानचशत्रवः॥ २१ ॥ त्वयापुनर्नृशंसेननसीतांसंरुंधताबलात्॥ राक्षसावयमात्माचत्रयंतुल्यंनिपातितम्॥ ॥ २२ ॥ नकामकारःकामंवातवराक्षसपुंगव ॥दैवंचेष्टयतेसर्वंहतंदैवेनहन्यते ॥ २३ ॥ वानराणांविनाशोऽयंराक्षसानांचतेरणे ॥ तवचैवमहाबाहोदैवयोगादुपागतः ॥ २४ ॥ नैवार्थेनचकामेनविक्रमेणनचाज्ञया ॥ शक्यादैवगतिर्लोकेनिवर्तयितुमुद्यता ॥ २५ ॥

तुम सीताको दे देते तो विभीषण राम और तुम्हारे मित्र कुलकी कामना पूरी होती और हम सबको यह विधवापनकी पीडा नहीं सहनी पडती व तुम्हारे शत्रुलोग भी ऐसे आनंदित नहीं हो सकते ॥ २१ ॥ परंतु तुमने दुष्टके समान कार्य करके बलपूर्वक सीताको रोक एक ही समयमें अपने आपको, हम सबको और राक्षसोंको मरवा डाला ॥ २२ ॥ अथवा हे राक्षसश्रेष्ठ ! तुम्हारी स्वेच्छाचारीका कुछभी दोष नहीं कारण कि सबही दैवकी चेष्टा है, तुम दैवकरके मारडाले गये थे, अब रामचन्द्रने तो निमित्त मात्र होकर तुम्हारा वध किया ॥ २३ ॥ हे महावीर ! असंख्य राक्षस वानर और तुम्हारी मृत्यु यह सब दैवशक्तिकाही कार्य है और दैवयोगसेही हुआ है ॥ २४ जब कि दैवगति फलनेको होती है तब अर्थ, काम, विक्रम और आज्ञा किसीसेभी उसका

निवारण नहीं होता ॥२५॥ इस प्रकारसे वह राक्षसराज रावणकी स्त्रियें दुःखसे आर्त हो दीनभावऔर नेत्रोंमें आंसूभरभरके कुररी पक्षियोंके समान विलाप करने लगीं ॥ २६ ॥ इत्यार्षे श्रीम० वाल्मी० आदि० युद्ध० भाषायां द्वादशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११२॥ इस प्रकारसे विलाप करती हुई रावणकी सब स्त्रियोंमें उनकी पटरानी प्यारी नारीदीन हो अपने स्वामीको देखने लगी ॥ १ ॥ अचिन्त्यकर्मकारी श्रीरामचन्द्रजीने अपने पति रावणको मृतक हुआ देखकर मन्दोदरी कृपणचित्त हो विलाप करने लगी ॥२॥ हे महावीर ! कुबेरके छोटे भाई राक्षसेश्वर ! पहले जब तुम क्रोधित होते थे तो देवराज पुरन्दर भी तुम्हारे सन्मुख खडा होनेसे डरता था ॥ ३ ॥ और महर्षि यशस्वी गन्धर्वगण और चारणभी तुम्हारे भयसे दशों दिशाओंको भागते थे ॥ ४ ॥ परंतु

विलेपुरेवंदीनास्ताराक्षसाधिपयोषितः ॥ कुरर्यइवदुःखार्ताबाष्पपर्याकुलेक्षणाः ॥ २६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च०सा० युद्धकांडे द्वादशाधिकशततमः सर्गः ॥११२॥ तासांविलपमानानांतदाराक्षसयोषिताम् ॥ ज्येष्ठपत्नीप्रियादीनाभर्तारंसमुदैक्षतः॥१॥ दशग्रीवंहतंदृष्ट्वारामेणाचिंत्यकर्मणा ॥ पतिंमंदोदरीतत्रकृपणापर्यदेवयत् ॥ २ ॥ ननुनाममहाबाहोतववैश्रवणानुज ॥ क्रुद्धस्यप्रमुखेस्थातुंत्रस्यत्यपिपुरंदरः ॥ ३ ॥ ऋषयश्चमहांतोऽपिगंधर्वाश्चयशस्विनः ॥ ननुनामतवोद्वेगाच्चारणाश्चदिशोगताः ॥ ४ ॥ सत्वंमानुषमात्रेणरामेणयुधिनिर्जितः ॥ नव्यपत्रपसेराजन्किमिदंराक्षसेश्वर ॥ ५ ॥ कथंत्रैलोक्यमाक्रम्यश्रियावीर्येणचान्वितम् ॥ अविषह्यंजघानत्वांमानुषोवनगोचरः ॥ ६ ॥ मानुषाणामविषयेचरतःकामरूपिणः ॥ विनाशस्तवरामेणसंयुगेनोपपद्यत ॥ ७ ॥ नचैतन्कर्मरामस्यश्रद्दधामिचमूमुखे॥ सर्वतःसमुपेतस्यतवतेनाभिमर्षणम् ॥ ८ ॥ अथवारामरूपेणकृतांतःस्वयमागतः ॥ मायांतवविनाशायविधायाप्रतितार्किताम ॥ ९ ॥

आजभी वही तुम केवल मनुष्य रामचन्द्रकरके संग्राममें पराजित होकर नहीं लजाते, हे राक्षसनाथ ! इसका कारण क्या है? ॥ ५॥ हाय ! तुमने वीर्यबलसे त्रिलोकीको जीत करके बडीभारी सम्पत्ति बटोरी थी परंतु आज तुमको एक वनवासी मनुष्यने मार डाला यह बडी असहनीय बात है ॥ ६ ॥ तुम इच्छानुसार अनेक प्रकारके रूप धारण करके मनुष्योंके अगमें लंकापुरीमें विचरण करते हो इस लिये रामचंद्र करके तुम्हारा विनाश किसी प्रकारसे संभव नहींहो सकता ॥ ७ ॥ तुम सबही स्थानोंमें विजय प्राप्त करते थे, इस कारण अब संग्राममें तुम्हारा विनाश होना यह कार्य रामचन्द्रजीका है, ऐसा हमको विश्वास नहीं होता ॥ ८ ॥ ऐसा समझ पडता है कि, कृतान्त स्वयं ही मायाके बलसे रामरूप धारणकर तुम्हारे वध करनेको आया था सो तुमने यह नहीं

जाना ॥ ९ ॥ अथवा हे महाबलवान् ! तुम क्या इन्द्रसे धर्षित हुए हो, यह भी नहीं, क्योंकि इन्द्रमें इतनी शक्ति कहां है कि वह रणभूमिमें तुम्हारे सामने खडा हो सके ॥ १० ॥ अथवा और संदेह करनेकी क्या आवश्यकता है ? हमको निश्चय जान पडता है कि, महाबलवान्, महावीर्ययुक्त देवताओंके शत्रुओंका नाश करने वाले यह महायोगी, परम पुरुष सनातनही होंगे ॥११॥ आदि, अंत मध्यसे रहित बडे परममहान् तमसे परे नित्य वर्त्तमान् शंख चक्र गदाधारी ॥१२॥ जिनकी छातीमें श्रीवत्स शोभायमान् है जो नित्य हैं जिनको कोई भी नहीं जीत सके, क्षयरहित परिमाणशून्य सत्यपराक्रम विष्णुजीही ॥१३॥ वानररूपधारी सब देवताओंके साथ अवतार लेकर आये हैं; सब लोगोंके ईश्वर श्रीमान्ने सर्व लोगोंके हितकीकामनासे ॥१४॥ भयके देनेवाले देवशत्रु राक्षसको

अथवावासवेनत्वंधर्षितोऽसिमहाबल ॥ वासवस्यतुकाशक्तिस्त्वांद्रष्टुमपिसंयुगे ॥ १० ॥ महाबलंमहावीर्यंदेवशत्रुंमहौजसम् ॥ व्यक्तमेषमहायोगीपरमात्मासनातनः ॥ ११ ॥ अनादिमध्यनिधनोमहतःपरमोमहान् ॥ तमसः परमोधाताशंखचक्रगदाधरः ॥१२॥ श्रीवत्सवक्षानित्यश्रीरजय्यःशाश्वतोध्रुवः ॥ मानुषंरूपमास्थायविष्णुःसत्यपराक्रमः ॥१३॥ सर्वैःपरिवृतोदेवैर्वानरत्वमुपागतैः ॥ सर्वलोकेश्वरःश्रीमाँल्लोकानांहितकाम्यया ॥ १४ ॥ सराक्षसपरीवारंदेवशत्रुंभयावहम् ॥ इंद्रियाणिपुराजित्वाजितंत्रिभुवनंत्वया ॥ १५ ॥ स्मरद्भिरिवतद्वैरमिंद्रियैरेवनिर्जितः ॥ यदैवहिजनस्थानेराक्षसैर्बहुभिर्वृतः ॥ १६ ॥ खरस्तुनिहतोभ्राताततदारामोनमानुषः ॥ यदैवनगरींलंकांदुष्प्रवेशांसुरैरपि ॥ १७ ॥ प्रविष्टोहनुमान्वीर्यात्तदैवव्यथितावयम् ॥ क्रियतामविरोधश्चराघवेणेतियन्मया ॥१८॥ उच्यमानंनगृह्णासितस्येयंव्युष्टिरागता ॥ अकस्माच्चाभिकामोऽसिसीतांराक्षसपुंगव ॥ १९ ॥ ऐश्वर्यस्यविनाशायदेहस्यस्वजनस्यच ॥ अरुंधत्याविशिष्टांतांरोहिण्याश्चापिदुर्मते ॥ २० ॥

परिवारके सहित मार डाला अथवा हम जानती हैं कि तुमने सब इन्द्रियोंको जीत फिर त्रिभुवनको जीता था ॥१५॥ सो जान पडता है कि, इन्द्रियोंने उसी वैरको याद करके अब तुमको पराजित किया है । हाय जब कि जनस्थानमें बहुत सारे राक्षसोंके साथ॥१६॥ तुम्हारे भ्राता खर मारे गये थे, हमने तबही जाना था कि, रामचन्द्र मनुष्य नहीं हैं, जबकि देवतालोगोंके प्रवेश करनेके अयोग्य लंकापुरीमेंभी ॥१७॥ हनुमान्ने बलसे प्रवेश करके सबका मान मर्दन किया, तबही हम सब समझगईं कि, अब कोई महाप्रचण्ड शत्रु आया, उस समय जो हमने कहा था कि, रघुनाथजीसे विरोध न करो ॥१८॥ परन्तु तुमने हमारी बातको एकभी न माना, यह उसकाही फल आकर प्राप्त हुआ है. हे राक्षसश्रेष्ठ ! तुम अकस्मात् जो सीताके प्रति अभिलाषी हुए थे॥१९॥ इससे तुम अपने स्वजन

देह और ऐश्वर्यके साथ मूलसहित नाशको प्राप्तहो गये। हे दुर्मते ! अरुन्धती व रोहिणीसेभी सब प्रकारसे श्रेष्ठ ॥२०॥ पूजा करनेके योग्य सीताजीको तुम हरण करके लाये यह बडा अनुचित कर्म हुआ। अधिक क्या कहें. वह सहनशीलताके गुणमें पृथ्वीको धारण करने वाली पृथ्वी हैं, लक्ष्मीकी लक्ष्मी और अपने स्वामीकी प्यारी हैं ॥२१॥ तुमने पतिकी प्यारी सर्वाङ्गसुन्दरी दीन सीताजीको जनरहित वनसे बलपूर्वक हरण कर लिया और अपने प्राणोंको नाश किया ॥२२॥ हे प्रभो ! तुमने सीताके सहवासकी कामना की थी परन्तु वह पूर्ण नहीं हुई। बरन् उस पतिव्रताकी तपस्यासे तुम भस्म हो गये ॥२३॥ तुमने जिस समय उस पतली कमरवाली जानकीका हरण किया था, तुम तो उसीसमय भस्म होजाते; परंतु इससे भस्म नहीं हुए कि इन्द्र व अग्निप्रमुख देवता तुमसे भय

सीतांधर्षयतामान्यांत्वयाह्यसदृशंकृतम् ॥ वसुधायाहिवसुधांश्रियाःश्रीभर्तृवत्सलाम् ॥ २१ ॥ सीतांसर्वानवद्यांगीमरण्येविजनेशुभाम् ॥ आनयित्वातुतांदीनांछद्मनात्मस्वदूषणम् ॥ २२ ॥ अप्राप्यतंचैवकामंमैथिलीसंगमेकृतम् ॥ पतिव्रतायास्तपसानूनंदग्धोऽसिमेप्रभो ॥२३॥ तदैवयन्नदग्धस्त्वंधर्षयंस्तनुमध्यमाम् ॥ देवाबिभ्यतितेसर्वेसेंद्राःसाग्निपुरोगमाः ॥२४॥ अवश्यमेवलभतेफलंपापस्यकर्मणः ॥ भर्तःपर्यागतेकालेकर्तानास्त्यत्रसशंयः ॥ २५ ॥ शुभकृच्छुभमाप्नोतिपापकृत्पापमश्नुते ॥ विभीषणःसुखंप्राप्तस्त्वंप्राप्तःपापमीदृशम् ॥२६॥ संत्यन्याःप्रमदास्तुभ्यंरूपेणाभ्यधिकास्ततः ॥ अनंगवशमापन्नस्त्वंतुमोहान्नबुध्यसे ॥२७॥ नकुलेननरूपेणनदाक्षिण्येनमैथिली ॥ मयाऽधिकावातुल्यावात्तुमोहान्नबुध्यसे ॥ २८ ॥ सर्वदासर्वभूतानांनास्तिमृत्युरलक्षणः ॥ तवतद्वदयंमृत्युर्मैथिलीकृतलक्षणः ॥ २९ ॥ सीतानिमित्तजोमृत्युस्त्वयादूरादुपाहृतः ॥ मैथिलीसहरामेणविशोकाविहरिष्यति ॥ ३० ॥

करते थे ॥ २४ ॥ लोग जो पापकर्म करते हैं कालके वशसे पकनेका समय आनेपर अवश्यही उसका फल प्राप्त होता है कारण कि उसका कोई कर्त्ता नहीं है ॥ २५ ॥ जो अच्छे कार्य करते हैं वह शुभ फल, जो बुरे कार्य करते हैं वह बुरे फलको प्राप्त होते हैं इसी कारणसे विभीषण सुखी और तुम अत्यन्त दुःखमें गिरे ॥२६॥ तुम्हारे यहां तो सीतासे अधिक रूपवती और भी अनेक स्त्रियें थीं परंतु तुमने कामाधीन मोहके वश उन सबका निरादर किया ॥२७॥ रूप, कुल या चतुरतामें जानकीका हमसे श्रेष्ठ होना तो दूर रहे वह हमारे समान होनेके योग्य भी नहीं है परंतु तुम मोहके वश होकर यह नहीं देखते थे ॥२८॥ जानकी हरणहीतुम्हारी मृत्युका कारण जान पडता है, कारण कि निमित्तके विना कोई भी प्राणी मृत्युको प्राप्त नहीं होता है ॥२९॥ तुमने अपने आपही उस सीतानिमित्त

मृत्युको दूरसे हरण किया था; अब जानकी शोकहीन हो श्रीरामचन्द्रजीके साथ विहार करेंगी ॥३०॥ परंतु हम जो थोडे पुण्यवाली हैं इसलिये शोकसागरमें डूब गई। कैलासमें, मंदरमें, मेरुपर्वतमें तथा चैत्ररथमें ॥३१॥ और देवताओंके सब उद्यानोंमें हमने तुम्हारे सहित अतुल शोभायुक्त अनुरूप विमानोंमें चढकर विहार किया ॥३२॥ उन विमानोंपर चढे हुए अनेक देश देखे और माला चन्दनादि चित्र विचित्र वस्त्र देखती व भोगती हुई विहार करती थीं। हे वीर! अब तुम्हारे मारे जानेके कारण हम कामके भोगोंसे नीचे गिरा दी गई ॥३३॥ अब वही हम और साधारण स्त्रियोंके समान होगई, इस समय हमने जाना कि राजश्री अतिशय चंचल होती है इस कारण ऐसी श्रीको धिक्कार है। हा राजन्! अति सुकुमार, सुन्दर भौंहवाला सुन्दर त्वचा सहित ऊंची नाकवाला ॥३४॥ कीर्तिश्रीप्रदीप्त

अल्पपुण्यात्वहंघोरेपतिताशोकसागरे ॥ कैलासेमंदरेमेरौतथाचैत्ररथेवने ॥ ३१ ॥ देवोद्यानेषुसर्वेषुविहृत्यसहितात्वया ॥ विमानेनानुरूपेण यायाम्यतुलयाश्रिया ॥ ३२ ॥ पश्यंतीविविधान्देशांस्तांस्तांश्चित्रस्रगंबरा ॥ भ्रंशिताकामभोगेभ्यःसास्मिवीरवधात्तव ॥३३॥ सैवान्येवा स्मिसंवृत्ताधिग्राज्ञांचंचलांश्रियम् ॥ हाराजन्सुकुमारंतेसुभ्रुसुत्वक्समुन्नसम् ॥ ३४ ॥ कांश्रितीद्युतिभिस्तुल्यमिंद्रपद्मादिवाकरैः ॥ किरीटकू टोज्ज्वलितंताम्रास्यंदीप्तकुंडलम् ॥ ३५ ॥ मदव्याकुललोलाक्षंभूत्वायत्पानभूमिषु ॥ विविधस्रग्धरंचारुवल्गुस्मितकथंशुभम् ॥३६॥ तदेवा द्यतवैवंहिवक्रंनभ्राजतेप्रभो ॥ रामसायकनिर्भिन्नंरक्तंरुधिरविस्रवैः ॥३७॥ विशीर्णमेदोमस्तिष्कंरूक्षंस्यंदनरेणुभिः॥हापश्चिमामेसंप्राप्तादशावै धव्यदायिनी॥३८॥ यामयासीन्नसंबुद्धाकदाचिदपिमंदया॥ पितादानवराजोमेभर्तामेराक्षसेश्वरः॥ ॥ ३९ ॥ पुत्रोमेशक्रनिर्जेताइत्यहंगर्विता भृशम्॥ दृप्तारिमथनाःक्रूराःप्रख्यातबलपौरुषाः ॥ ४० ॥

चन्द्रकमल व सूर्यके समान शोभायमान, किरीटसे शोभित ताम्रवत् अरुण व प्रकाशमान कुंडलोंसे युक्त ॥३५॥ मदसे व्याकुल होनेके कारण चंचल नेत्र सहित जो मुख मदपानभूमिमें हो जाता था। विविध भांतिकी पुष्पमालाओंसे शोभित और मनोहर वचन युक्त तुम्हारा मुख था ॥३६॥ इस समय हे स्वामी! वही तुम्हारा मुख शोभित नहीं होता रामचन्द्रके बाणोंसे छिन्नभिन्न हुआ लाल रुधिरसे सनाहुआ॥३७॥ मस्तक फटजानेसे वसा व शिरका गूदा दिखाई देता है; व ऊपरसे रथकी धूल पडनेसे रूखासा दिखाई देता है, हाय! आज हमको सबसे पिछली विधवापन देनेवाली दशा प्राप्त हुई॥३८॥ जिसको मन्दबुद्धिवाली हमने कभी स्वप्नमें भी नहीं सोचा था हमारे पिता दानवराज मयस्वामी राक्षसराज ॥३९॥ पुत्र इन्द्रका जीतनेवाला इन्द्रजित था यही जानकर हम गर्वित थीं

अहंकारी शत्रुओंके मथनेवाले, क्रूर, बल पौरुषमें विख्यात ॥४०॥ किसी भयसे न डरनेवाले हमारे यह नाथ हैं, बस यही हमारी मति सदा रहती थी सो इस प्रकारके प्रभाववाले तुम राक्षसश्रेष्ठोंको ॥४१॥ मनुष्योंसे ऐसा एकाएक विना विचारा हुआ भय किस प्रकारसे प्राप्त हुआ ? हा नाथ! चिकनी इन्द्रमणिके समान नीलवर्ण महापर्वतके समान ऊँचा ॥ ४२ ॥ केयूर, बाजू, वैदूर्य, मुक्ताहार और पुष्पमालासे उज्ज्वल विहारके समयमें अतिरमणीय संग्रामभूमिमें प्रदीप्त ॥४३॥ दामिनी संयोगसे मेघकी शोभा जिस प्रकार होती है वैसेही यह इन सब गहनोंकी प्रभासे सजा हुआ रहता है. हे देव! आज वही आपका शरीर असंख्य तीक्ष्ण बाणोंसे कटकुटकर बिंध गया है ॥ ४४ ॥ इसलिये इस शरीरका स्पर्श दुर्लभ हो जायगा; यह जानकर भी हम इसको नहीं चिपटाय सकती, क्योंकि

अकुतश्चिद्भयानाथममेत्यासीन्मतिर्ध्रुवा ॥ तेषामेवंप्रभावाणांयुष्माकंराक्षसर्षभाः ॥ ४१ ॥ कथंभयमसंबुद्धंमानुषादिदमागतम् ॥ स्निग्धेंद्रनीलनीलंतुप्रांशुशैलोपममहत् ॥ ४२ ॥ केयूरांगदवैदूर्यमुक्ताहारस्रगुज्ज्वलम् ॥ कांतंविहारेष्वधिकंदीप्तंसंग्रामभूमिषु ॥ ४३ ॥ भात्याभरणभाभिर्यद्विद्युद्भिरिवतोयदः ॥ तदेवाद्यशरीरंतेतीक्ष्णैर्नैकशरैश्चितम् ॥ ४४ ॥ पुनर्दुर्लभसस्पर्शंपरिष्वक्तुंनशक्यते ॥ श्वाविधःशललैर्युक्तंलग्नैर्बाणैर्निरंतरम्॥ ४५ ॥ स्वर्पितैर्मर्मसुभृशंसंछिन्नस्नायुबंधनम् ॥ क्षितौनिपतितंराजञ्श्यामंवैरुधिरच्छवि ॥ ४६ ॥ वज्रप्रहारमभितोविकीर्णइवपर्वतः ॥ ह्यस्वप्नःसत्यमेवेदंत्वंरामेणकथंहतः ॥ ४७ ॥ त्वंमृत्योरपिमृत्युःस्याःकथंमृत्युवशंगतः ॥ त्रैलोक्यवसुभोक्तारंत्रैलोक्योद्वेगदंमहत् ॥ ४८ ॥ जेतारंलोकपालानांक्षेप्तारंशंकरस्यच ॥ दृप्तानांनिग्रहीतारमाविष्कृतपराक्रमम् ॥ ४९ ॥ लोकक्षोभयितारंचसाधुभूतविदारणम् ॥ ओजसादृप्तवाक्यानांवक्तारंरिपुसन्निधौ ॥ ५० ॥

इसमें अनेक प्रकारके बाण लगनेसे यह सेईके कांटोंसे युक्त होनेके समान शोभित है ॥४५॥ और मर्ममें लगे हुए गहरे बाणोंसे तुम्हारा शरीर रत्ती २ बिध रहा है सब नसोंके बंधन टूट टाट गये हैं हे राजन् ! तुम्हारे काले रंगका रुधिर निकलनेसे युक्त ॥४६॥ वज्र प्रहारसे गिरकर टूटे हुए पर्वतके समान प्रकाशित होता है हाय! सबही स्वप्नके समान जान पडता है क्योंकि तुम रामचन्द्रसे किस प्रकार मारे गये ॥४७॥ तुम तो मृत्युके भी मृत्युस्वरूप थे फिर किस प्रकारसे मृत्युके वश हुए । हाय ! जिसने सब त्रिलोकीके भोगोंको भोगा, जिसने त्रिभुवनके महावीरोंको घबडा दिया ॥ ४८ ॥ जिसने लोकपरलोकोंको भी जीत लिया महादेव जीको भी जिसने उठा लिया; गर्व करनेवालोंको जिसने पकड लिया, जिसने सब पराक्रमोंको प्रकाशितकिया ॥४९॥ जिसने लोकोंको खलबलाय दिया और

सिंहनाद करके सब प्राणियोंको विदारण किया शत्रुओंके सामने जो अत्यन्त तेजसे गर्वित वचन कहते थे ॥५०॥ संबंधी सेवकोंकी रक्षाकरनेवाले भयंकर कर्मकारियोंके मारनेवाले हजारों यक्षदानवोंका संहार करनेवाले ॥५१॥ संग्राममें निवातकवच नाम दानवोंके पकडनेवाले सब यज्ञोंके लोपकरने वाले अपने लोगोंकी रक्षा करनेवाले॥५२॥ धर्मकी व्यवस्थाके उल्लंघन करनेवाले रणभूमिमें मायाके रचनेवाले अनेक स्थानोंसे मनुष्य, देव व असुरोंकी कन्याओंका हरण करनेवाले॥५३॥ शत्रुओंकी स्त्रियोंको शोक देनेवाले, अपनी सेनाको शिक्षा देनेवाले, गुप्त लंकापुरीकी रक्षाकरने वाले, भयंकर कर्मकारी ॥५४॥ हम सबोंको काम व उपभोगोंके, देनेवाले रथिश्रेष्ठ, ऐसे प्रभावसम्पन्न स्वामीको श्रीरामचन्द्रजी करके निहत और पतित देख ॥५५॥ प्यारेके मारे जानेपर अबतक भी जीवन धारण करके

स्वयूथभृत्यगोप्तारंहंतारंभीमकर्मणाम् ॥ हंतारंदानवेंद्राणांयक्षाणांचसहस्रशः॥५१॥निवातकवचानांतुनिग्रहीतारमाहवे ॥ नैकयज्ञविलोप्तारंत्रातारंस्वजनस्यच ॥ ५२ ॥ धर्मव्यवस्थाभेत्तारंमायास्रष्टारमाहवे ॥ देवासुरनृकन्यानामाहर्तारंततस्ततः ॥ ५३ ॥ शत्रुस्त्रीशोकदातारंनेतारंस्वजनस्यच ॥ लंकाद्वीपस्यगोप्तारंकर्तारंभीमकर्मणाम् ॥ ५४ ॥ अस्माकंकामभोगानांदातारंरथिनांवरम् ॥ एवंप्रभावंभर्तारंदृष्ट्वारामेणपातितम् ॥५५॥ स्थिरास्मियादेहमिमंधारयामिहतप्रिया ॥ शयनेषुमहार्हेषुशयित्वाराक्षसेश्वर ॥५६॥ इहकस्मात्प्रसुप्तोऽसिधरण्यांरेणुगुंठितः ॥ यदामेतनयःशस्तोलक्ष्मणेनेंद्रजिद्युधि ॥ ५७ ॥ तदात्वभिहतातीव्रमद्यत्वस्मिनिपातिता ॥ साहंबंधुजनैर्हीनाहीनानाथेनचत्वया ॥५८॥ विहीनाकामभोगैश्चशोचिष्येशाश्वतीःसमाः ॥प्रपन्नोदीर्घमध्वानंराजन्नद्यसुदुर्गमम् ॥५९॥ नयमामपिदुःखार्तांनवर्तिष्येत्वयाविना॥कस्मात्त्वंमांविहायेहकृपणांगंतुमिच्छसि ॥ ६० ॥ दीनांविलपतींमंदांकिंचमांनाभिभाषसे ॥ दृष्ट्वानखल्वभिक्रुद्धोमामीहानवगुंठिताम् ॥ ६१ ॥

देहका बोझा ढोती हैं ! हे राक्षसेश्वर ! तुम तो बडे मोलके बिछौनों पर शयनकरते थे॥५६॥ परन्तु आज इन कंकडोंसे युक्त पृथ्वीमें तुम किस प्रकार सोरहे हो ? हाय ! जब हमारा पुत्र कुमार इन्द्रजीत रणमें लक्ष्मणसे मारडाला गया॥५७॥ उस समय तो हमने केवल तीक्ष्णरूपसे आघातही पाया था, परन्तु तुम्हारे मृतक होनेसे हम भी मरगई । हाय ! हम वही मन्दोदरी होकरभी अपने परमबन्धु तुम्हारे समान नाथके मारे जानेपर ॥५८॥ कामभोगसे विहीन होकर अनन्त कालतक शोक करती रहेंगी। हा राजन् ! तुम दुर्गम दूरके मार्गमें चले जाते हो ॥५९॥ इसलिये इस दुःखिनीकोभी अपने साथ ले चलो क्योंकि तुम्हारे विना हम प्राण नहीं रखसकेंगी। अरे ! हम कृपण विचारीको त्याग तुम कैसे गमन करनेकी इच्छा करतेहो॥६०॥ हम मंदभागिनी कातर होकर दीनभावसे विलाप

कर रहीहैं, सो तुम हमसे क्यों नहीं बोलते? महाराज! यह देखकर क्रोधित क्यों नहीं होते कि हम विना पर्देके ॥६१॥ नगरके द्वारसे निकलकर यहांपर पैदलही चली आई हैं। हे स्वामी! देखो तुम्हारी स्त्रियें लाज और घूंघटको त्याग ॥६२॥ सबही यहांपर चली आई हैं सो यह देखकर तुम क्रोध नहीं करते यह देखो! जोकि क्रीडाके समय तुम्हारी निरन्तर सहायता करती थीं सो तुम्हारी वही सब स्त्रियें अनाथ होकर वारंवार विलाप करती हैं ॥६३॥ सो उनका सन्मान करना तो दूर रहा, तुम उसको समझाते भी नहीं हो, हे राजन्! जिन कुलस्त्रियोंको तुमने विधवा किया ॥६४॥ पतिव्रता, धर्ममें रत, बडे जनोंकी सेवा करनेवाली उन्होंनेही शोकसे संतापित हो पराये वशमें पड़ ॥६५॥ तुमसे अपकार पाय इन्होंने जो शाप तुमको दिया है, वही आगे आया है; इसीलिये आज तुम शत्रुके हाथसे मारे गये। यह जो प्रवाद संसारमें है सो हे राजा! आज वह तुमने सम्पूर्ण सत्य किया वह यह है कि ॥६६॥ किसी अनर्थका कारण न होनेपर अन

निर्गतांनगरद्वारात्पद्भ्यामेवागतांप्रभो॥ पश्येष्टदारादारांस्तेभ्रष्टलज्जावगुंठनान् ॥६२॥ बहिर्निष्पतितान्सर्वान्कथंदृष्ट्वानकुप्यसि॥ अयंक्रीडा सहायस्तेऽनाथोलालप्यतेजनः ॥६३॥ नचैनमाश्वासयसिकिंमानबहुमन्यसे ॥ यास्त्वयाविधवाराजन्कृतानैकाःकुलस्त्रियः ॥६४॥ पतिव्रताधर्म रतागुरुशुश्रूषणेरताः ॥ ताभिःशोकाभितप्ताभिःशप्तःपरवशंगतः ॥६५॥ त्वयाविप्रकृताभिश्चतदाशप्तस्तदागतम् ॥ प्रवादःसत्यमेवायंत्वांप्रतिप्रा यशोनृप: ॥६६॥ पतिव्रतानांनाकस्मात्पतंत्यश्रूणिभूतले ॥ कथंचनामतेराजँल्लोकानाक्रम्यतेजसा ॥६७॥ नारीचौर्यमिदंक्षुद्रंकृतंशौंडीर्यमानिना॥ अपनीयाश्रमाद्रामंयन्मृगच्छद्मनात्वया ॥६८॥ आनीतारामपत्नीसाअपनीयचलक्ष्मणम् ॥ कातर्यंचनतेयुद्धेकदाचित्संस्मराम्यहम् ॥६९॥ तत्तुभाग्यविपर्यासान्नूनंतेपक्वलक्षणम् ॥ अतीतानागतार्थज्ञोवर्तमानविचक्षणः ॥ ७० ॥ मैथिलीमाहृतांदृष्ट्वाध्यात्वानिःश्वास्यचायतम् ॥ सत्यवाक्समहाबाहोदेवरोमेयदब्रवीत् ॥ ७१ ॥ अयंराक्षसमुख्यानांविनाशःप्रत्युपस्थितः ॥ कामक्रोधसमुत्थेनव्यसनेनप्रसंगिना ॥ ७२ ॥

र्थक पतिव्रता स्त्रियोंके आंसू पृथ्वीपर नहीं गिरते, हे राजन् अपने पराक्रमसे तीनों लोकोंको जीत लिया फिर कैसे ॥६७॥ अब यह नारीहरणरूप चोरीका कार्य तुमने किया? क्योंकि, तुम जो अपनेको शूर मानते थे, तुम जो कपटमृगके द्वारा रामचन्द्रजीको आश्रमसे दूरकर ॥६८॥ और फिर लक्ष्मणजीकोभी आश्रमसे दूर रामचन्द्रजीकी स्त्री जानकीजीको जो हरलाये थे। युद्धमें तुम्हारा इस प्रकारसे कातर होना तो हमें याद नहीं आता ॥ ६९ ॥ तोभी जब तुमने ऐसा किया तो भाग्यके क्रमसे यह आनेवाली मृत्युकाही लक्षण था भूत, भविष्य, वर्तमान् इस त्रिकालज्ञानमें पंडित ॥७०॥ जानकीको हरणके द्वारा यहांपर आई हुई देख बहुत देरतक लम्बी श्वास ले चिंताकर महावीर हमारे देवर विभीषणने हमसे यह सत्य वचन कहे ॥ ७१ ॥ कि यह मुख्य राक्षसोंके विनाशका

समय आगया है सो सत्यही हुआ काम, क्रोधसे उत्पन्न व्यसनके प्रसंगसे ॥७२॥ तुमसे जो यह परस्त्रीहरणरूप दुःख प्राप्त हुआ इससे बडेभारी राक्षसोंके कुलका मूल कटगया और यह सब राक्षसोंका कुल अनाथभी होगया है ॥७३॥ जो कुछभी हो तुमने बल और पौरुषसे त्रिभुवनमें बडीभारी प्रसिद्धता पाईथी इस कारण तुम्हारेलिये शोक करना कर्तव्य नहीं है, परन्तु स्त्रीस्वभावके वश हमारी बुद्धि शोकमें डूब रही है ॥७४॥ तुम अपने पाप पुण्यको लेकर स्वर्गकी गतिको प्राप्त हुए परंतु हमको तुम्हारे नाशके होनेसे दुःखित अपनी आत्माको कलपना पडा ॥७५॥ हा दशानन ! मारीचादि हित चाहनेवाले सुहृद् और भाई बन्धुओंने सब भांतिसे तुम्हारा मंगल करनेके लिये अनेक बातें कही थी परन्तु तुमने उनका एक नहीं मानी ॥७६॥ हमारे देवर विभीषणजीने तुमसे शांतभावसे जो समस्त

निवृत्तस्त्वत्कृतेनार्थःयोऽयंमूलहरोमहान् ॥ त्वयाकृतमिदंसर्वमनाथंराक्षसंकुलम् ॥७३॥ नहित्वंशोचितव्योमेप्रख्यातबलपौरुषः ॥ स्त्रीस्वभावात्तुमेबुद्धिःकारुण्येपरिवर्तते ॥ ७४ ॥ सुकृतंदुष्कृतंचत्वंगृहीत्वास्वांगतिंगतः ॥ आत्मानमनुशोचामित्वद्विनाशेनदुःखिताम् ॥ ७५ ॥ सुहृदांहितकामानांनश्रुतंवचनंत्वया ॥ भ्रातॄणांचैवकात्स्न्येंनहितमुक्तंदशानन ॥ ७६ ॥ हेत्वर्थयुक्तंविधिवच्छ्रेयस्करमदारुणम् ॥ विभीषणेनाभिहितंनकृतंहेतुमत्त्वया ॥ ७७ ॥ मारीचकुंभकर्णाभ्यांवाक्यंममपितुस्तथा ॥ नकृतंवीर्यमत्तेनतस्येदंफलमीदृशम् ॥ ७८ ॥ नीलजीमूतसंकाशपीतांबरशुभांगद ॥ स्वगात्राणिविनिक्षिप्यकिंशेषेरुधिरावृतः ॥ ७९ ॥ प्रसुप्तइवशोकार्तांकिमांनप्रतिभाषसे ॥ महावीर्यस्यदक्षस्यसंयुगेष्वपलायिनः ॥ ८० ॥ यातुधानस्यदौहित्रींकिमांनप्रतिभाषते ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठकिंशेषेनवेपरिभवेकृते ॥ ८१ ॥ अद्यवैनिर्भयालंकांप्रविष्टाःसूर्यरश्मयः ॥ येनसूदयसेशत्रून्समरेसूर्यवर्चसा ॥ ८२ ॥

श्रेयजनक विधि सहित हेतुयुक्त वचन कहे थे तुमने उनकोभी ग्रहण नहीं किया ॥७७॥ मारीच, कुम्भकर्ण और हमारे पिताजीके वचनोंको जो तुमने अपने वीर्यके घमंडसे नहीं माना इस समय उसकाही यह फल हुआ है ॥ ७८ ॥ नीले बादरके समान पीताम्बर धारे, शुभ बाजू पहरे अपने शरीरको इधर उधर फैलाये रुधिरमें साने क्यों यहां पडे हो ? ॥७९॥ हे प्राणप्यारे ! तुम न सोकरभी सोते हुएके समान किस कारण हमसे नहीं बोलते हो? महावीर सब कार्योंके करनेमें चतुर जो रणस्थलसे कभी नहीं भागा ॥८०॥ उस राक्षस श्रेष्ठ सुमालीकी धेवती तुमको पुकार रहीहै तथा तुम उत्तर क्यों नहीं देतेहो? नई हार होनेसे क्या इस प्रकार सोरहते हैं ? उठो उठो ॥८१॥ देखो आज तुम्हारी नई हारको देखकरही निर्भय हो सूर्यकी किरणोंने लंकामें प्रवेश किया है जिससे शत्रुको मारते थे, सम

रमें सूर्यकी किरणोंके समान ॥८२॥ वज्रधारी इन्द्रजीके वज्रके समान वही यह तुम:करके पूजित हुआ रणमें बहुत आयुधोंसे युक्त सुवर्णके जालसे ढका हुआ ॥८३॥ वही परिघ रामचन्द्रजीके बाणोंसे कटकर हजारों खंड हो बडेभारी रणमें पडा है हाय ! तुम प्यारीके समान रणभूमिको हृदयसे लगाकर सोरहे हो ॥ ८४ ॥ परन्तु हम किस कारणसे ऐसी कुप्यारी हुई जो तुम हमारे साथ बोलनेकी इच्छा नहीं करते । हमारे हृदयको धिक्कार है । हा ! अबतक इसके हजार टुकडे नहीं हो गये ॥ ८५ ॥ तुम्हारे मृतक हो जाने परभी यह शोकसे पीडित नहीं हुआ । इस प्रकार विलाप करती हुई मन्दोदरी नेत्रोंमें आँसू भर ॥ ८६ ॥ मारे स्नेहके हृदयको कंपायमान कर मूर्च्छित होगई; और दुःखसे अत्यन्त हत हो रावणकी छातीपर गिर पडीं ॥८७॥ मन्दोदरी संध्या समयके

वज्रंवज्रधरस्येवसोऽयंतेसततार्चितः ॥ रणेबहुप्रहरणोहेमजालपरिष्कृतः ॥ ८३ ॥ परिघोव्यवकीर्णस्तेबाणैश्छिन्नःसहस्रधा ॥ प्रियामिवोपसंगृह्यकिंशेषेरणमेदिनीम् ॥ ८४ ॥ अप्रियामिवकस्माच्चमांनेच्छस्यभिभाषितुम् ॥ धिगस्तुहृदयंयस्यममेदंनसहस्रधा ॥ ८५ ॥ त्वयिपंचत्वमापन्नेफलतेशोकपीडितम् ॥ इत्येवंविलपंतीसाबाष्पपर्याकुलेक्षणा ॥ ८६ ॥ स्नेहोपस्कन्नहृदयातदामोहमुपागमत् ॥ कश्मलाभिहतासन्नाबभौसारावणोरसि ॥ ८७ ॥ संध्यानुरक्तेजलदेदीप्ताविद्युदिवोज्ज्वला ॥ तथागतांसमुत्थाप्यसपत्न्यस्तांभृशातुराः ॥ ८८ ॥ पर्यवस्थापयामासूरुदत्योरुदतींभृशम् ॥ किंतेनविदितादेविलोकानांस्थितिरध्रुवा ॥ ८९ ॥ दशाविभागपर्यायेराज्ञांवैचंचलाःश्रियः ॥ इत्येवमुच्यमानासासशब्दंप्ररुरोदह ॥ ९० ॥ स्नपयंतीतदास्रेणस्तनौवक्त्रंसुनिर्मलम् ॥ एतस्मिन्नंतरेरामोविभीषणमुवाचह ॥ ९१ ॥ संस्कारःक्रियतांभ्रातुस्त्रीगणःपरिसांत्व्यताम् ॥ तमुवाचततोधीमान्विभीषणइदंवचः ॥ ९२ ॥

रंगीन बादरमें बिजलीके समान शोभायमान हुई मयनंदिनीकी ऐसी अवस्था देख उसकी सौतोंने जो शोकसे व्याकुल होरही थीं, उसको उठाया ॥ ८८ ॥ रोदन करते २ उस रोती हुई मन्दोदरीको उठाय सावधान करनेके लिये उन्होंने कहा कि, हे देवी ! क्या तुम नहीं जानतीं कि लोकोंकी स्थिति अनित्य है ॥८९॥ विशेष करके पुण्यपारिपाक कालरूप दशा विशेषकी राजलक्ष्मी जो सदा चंचल रहती है यह क्या आपकी विचार शक्तिसे सिद्ध नहीं होता ? जब इस प्रकार उन सबोंने कहा तो वह मंदोदरी फिर बडा शब्द करके रोने लगी॥९०॥ अपने आंसुओंसे अपने निर्मल कुच भिगोती हुई रावणका आश्रय ले फिर रोई, इसी अवसरमें श्रीरामचन्द्रजीने विभीषणसे कहा ॥९१॥ कि, हे विभीषण रावणकी सब स्त्रियोंको समझाबुझाकर तुम अपने भ्राताका संस्कार करो रामचन्द्रजीके

ऐसा वचनसुन बुद्धिमान्, विभीषणजी ॥ ९२ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके मनकी यथार्थ बात जाननेके लिये धर्म अर्थ युक्त और अपने हितकारी वचन बोले; धर्मको त्यागे हुए क्रूरस्वभाव निर्लज्ज मिथ्यावादी ॥ ९३ ॥ परस्त्रीगामी महादुष्ट रावणका संस्कार हम नहीं करेंगे, यह नामको हमारा भ्राता था परन्तु इसने सब शत्रुके समान कार्य हमारे साथ कियेहैं और यह सब प्राणियोंके अहितमें रत है ॥९४॥ इसलिये बडप्पनके गौरवसे युक्त होकर भी यह हमसे पूजे जानेके योग्य नहीं है, हे श्रीरामचन्द्रजी ! जो लोग हमको भ्राताका संस्कार न करनेके कारण प्रथम क्रूर कहेंगे ॥ ९५ ॥ परंतु वही सब जब इस रावणके बडे २ दुर्गुणोंको सुनेंगे तब हमारे किये हुए कार्यको धन्यवाद देंगे ! धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी विभीषणके ऐसे वचन सुनकर परम प्रसन्न हुए ॥९६॥ और उन वाक्यके जाननेवाले रामचन्द्रजीने वाक्यविशारद विभीषणजीसे यह कहा "तुम्हारा प्रिय हमको कर्तव्य है, क्योंकि तुम्हारे प्रभावसे हमने जय पाई है ॥९७॥

विमृश्यबुद्ध्याप्रश्रितंधर्मार्थसहितंहितम् ॥ त्यक्तधर्मव्रतंक्रूरंनृशंसमनृतंतथा ॥९३॥ नाहमर्हामिसंस्कर्तुंपरदाराभिमर्शनम् ॥ भ्रातृरूपोहिमे शत्रुरेषसर्वाहितेरतः ॥९४॥ रावणोनार्हतेपूजांपूज्योऽपिगुरुगौरवात् ॥ नृशंसइतिमांरामवक्ष्यंतिमनुजाभुवि ॥ ९५ ॥ श्रुत्वातस्यागुणान्सर्वे वक्ष्यंतिसुकृतंपुनः ॥ तच्छ्रुत्वापरमप्रीतोरामोधर्मभृतांवरः ॥ ९६ ॥ विभीषणमुवाचेदंवाक्यज्ञंवाक्यकोविदः ॥ तवापिमेप्रियंकार्यंत्वत्प्रभा वान्मयाजितम् ॥ ९७ ॥ अवश्यंतुक्षमंवाच्योमयात्वंराक्षसेश्वर ॥ अधर्मानृतसंयुक्तःकामंत्वेषनिशाचरः ॥ ९८ ॥ तेजस्वीबलवाञ्छूरः संग्रामेषुचनित्यशः ॥ शतक्रतुमुखैर्देवैःश्रूयतेनपराजितः ॥ ॥ ९९ ॥ महात्माबलसंपन्नोरावणोलोकरावणः ॥ मरणांतानिवैराणिनिर्वृत्तंनः प्रयोजनम्॥१००॥क्रियतामस्यसंस्कारोममाप्येषयथातव॥ त्वत्सकाशान्महाबाहोसंस्कारंविधिपूर्वकम्॥१॥क्षिप्रमर्हतिधर्मेणत्वंयशोभाग्भवि ष्यसि ॥ राघवस्यवचःश्रुत्वात्वरमाणोविभीषणः ॥२॥ संस्कारयितुमारेभेभ्रातरंरावणंहतम्॥ सप्रविश्यपुरींलंकांराक्षसेंद्रोविभीषणः ॥ ३ ॥

इस लिये तुमको भला उपदेश हम अवश्यदेंगे" हे राक्षसेश्वर ! यद्यपि अधर्म और मिथ्यामें यह निशाचर तत्पर रहा ॥ ९८ ॥ तथापि यह बडा तेजस्वी बलवान् शूर और संग्राममें सदा प्रबल रहता था हमने इसको इंद्रादि देवतोंके सामनेभी हारता हुआ नहीं सुना ॥९९॥ महात्मा बलसम्पन्न सब लोकोंको रुलानेवाला यह रावण था मरनेही तक वैर रहता है, परंतु अब हमारा प्रयोजन सिद्ध हो जानेसे ॥१००॥ यह जैसा तुम्हारा बन्धु था वैसाही हमारा बन्धु हुआ इसलिये इसका संस्कार करो; हे महावीर ! तुम विधिपूर्वक इस रावणका संस्कार ॥ १०१ ॥ अतिशीघ्र और धर्मानुसार करो, ऐसा करनेसे तुम सब लोकोंमें यश पाओगे श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुन शीघ्रतायुक्त हो विभीषणजी ॥१०२॥ अपने संग्राममें मारे गये भ्राता रावणका संस्कार करने लगे । राक्षसोंमें

इंद्र विभीषणजी लंकापुरीमें प्रवेश करके ॥ १०३ ॥ अतिशीघ्रतासे उन्होंने रावणके अग्निहोत्रको निकाला छकडोंमें काष्ठके पात्र यज्ञाग्नि व यज्ञकरनेवाले लोग ॥ १०४ ॥ और चंदनकी लकडी व और भी विविध भांतिके काठ अगर आदि सुगन्धित पदार्थ और भी बहुतसी सुगन्धियें ॥ १०५ ॥ मणि, मोती मूँगे यह सब विभीषणजी लाये यह सब पदार्थ एक मुहूर्तभरमें आये और विभीषणजी राक्षसोंके साथ आगये ॥१०६॥ और माल्यवान् राक्षसके साथ सब क्रिया करने लगे प्रथम उत्तम दिव्य शिबिका मँगाय उसपर रेशमीन वस्त्रोंमें लपेट मृतक देहको चढाया ॥ १०७ ॥ इस प्रकार उसपर राक्षसोंके राजा रावणको चढाय रोते हुए वह राक्षस और ब्राह्मण चले । आगे२नगाडे बजानेवाले व स्तुति करनेवाले लोग चले ॥ १०८ ॥ पताकासेचित्रित औरफूलोंसेभी

रावणस्याग्निहोत्रंतुनिर्यापयतिसत्वरम् ॥ शकटान्दारुरूपाणिअग्नीन्वैयाजकांस्तथा ॥ ४ ॥ तथाचंदनकाष्ठानिकाष्ठानिविविधानिच ॥ अगुरूणिसुगंधीनिगंधांश्चसुरभींस्तथा ॥ ५ ॥ मणिमुक्ताप्रवालानिनिर्यापयतिराक्षसः ॥ आजगाममुहूर्तेनराक्षसैःपरिवारितः ॥६॥ ततोमाल्यवतासार्धंक्रियामेवचकारसः ॥ सौवर्णींशिबिकांदिव्यामारोप्यक्षौमवाससम् ॥ ७ ॥ रावणंराक्षसाधीशमश्रुपूर्णमुखाद्विजाः ॥ तूर्यघोषैश्चविविधैःस्तुवद्भिश्चाभिनंदितम् ॥ ८ ॥ पताकाभिश्चचित्राभिःसुमनोभिश्चचित्रिताम् ॥ उत्क्षिप्यशिबिकांतांतुविभीषणपुरोगमाः ॥ ९ ॥ दक्षिणाभिमुखाःसर्वेगृह्यकाष्ठानिभेजिरे ॥ अग्नयोदीप्यमानास्तेतदाध्वर्युसमीरिताः ॥ ११० ॥ शरणाभिगताःसर्वेपुरस्तात्तस्यतेययुः ॥ अंतःपुराणिसर्वाणिरुदमानानिसत्वरम् ॥ ११ ॥ पृष्ठतोनुययुस्तानिप्लवमानानिसर्वतः ॥ रावणंप्रयतेदेशेस्थाप्यतेभृशदुःखिताः ॥ १२ ॥ चितांचंदनकाष्ठैश्चपद्मकोशीरचंदनैः ॥ ब्राह्म्यासंवर्तयामासूरांकवास्तरणावृताम् ॥ १३ ॥

चित्रित मनोहर शिबिकाको विभीषण इत्यादि राक्षसगणोंने उठा लिया ॥ १०९ ॥ हाथोंमें काठ लेलेकर सबही दक्षिणको मुखकर चले । अध्वर्यु लोगोंनेअग्निको प्रज्वलित किया और अग्निले रावणके संग२चले ॥ ११० ॥ और सब शरणागत पुरुषभी मृतक रावणके पीछे २ चले । अंतःपुरीकी समस्त स्त्रियें रोती हुई अति शीघ्रतासे ॥ १११ ॥ रावणके पीछे २ गिरती पडती हुई चलीं. राक्षसगण दुःखित मनसे राक्षसराज रावणको किसी पवित्रस्थानमें स्थापित कर ॥ ११२ ॥ चंदन, कमल,उशीर आदि सुगन्धित पदार्थों व और दूसरे काठोंसे भी चिता बनाय उसपर रंकनाम मृगका चमडा वेदके मंत्रोंसे अभिमंत्रित कर बिछाया ॥ ११३ ॥

और राक्षसोंके राजा रावणका पितृमेध यज्ञ करने लगे. प्रथम तो दक्षिण पूर्वके कोनेपर वेदी बनाय उसपर अग्नि स्थापन की ॥ ११४ ॥ और उसपर रावणका मृतक शरीर धर दही व घीसे भर स्रुव कांधेपर छोडा और पांओंपर शकट तथा जांघोंपर उलूखल रक्खा ॥ ११५ ॥ सब काष्ठपात्र अरणी और उत्तरारणी मुशल शास्त्रके अनुसार जो जहां चाहिये यथा स्थानपर किया गया ॥ ११६ ॥ फिर शास्त्रकी रीतिसे और महार्षियोंकी कही हुई रीतिसे रावणके अर्थ पवित्र पशुका वध किया गया ॥ ११७ ॥ राक्षसराज रावणके अर्थ घृतयुक्त परिस्तरणिका * प्राप्त किया । फिर दीन मनवाले जातिके निशाचर रावणको गंध व मालाओंसे सजाने लगे ॥ ११८ ॥ विविध भांतिके वस्त्रोंको उसके ऊपर डाला, विभीषणजीने नेत्रोंमें आंसू भरकर रावणके ऊपर अक्षतोंकी

प्रचक्रूराक्षसेंद्रस्यपितृमेधमनुत्तमम् ॥ वेदिंचदक्षिणाप्राचींयथास्थानंचपावकम् ॥ १४॥ पृषदाज्येनसंपूर्णस्रुवंस्कंधेप्रचिक्षिपुः ॥ पादयोःशकटंप्रादुरूर्वोश्चोलूखलंतदा ॥ १५ ॥ दारुपात्राणिसर्वाणिअरणिंचोत्तरारणिम् ॥ दत्त्वातुमुसलंचान्यंयथ स्थानंविचक्रमुः ॥ १६॥ शास्त्रदृष्टेनविधिनामहर्षिविहितेनच ॥ तत्रमेध्यंपशुंहत्वाराक्षसेंद्रस्यराक्षसाः ॥१७॥ परिस्तरणिकांराज्ञोघृताक्तांसमवेशयन्॥ गंधैर्माल्यैरलंकृत्यरावणंदीनमानसाः ॥ १८ ॥ विभीषणसहायास्तेवस्त्रैश्चविविधैरपि ॥ लाजैरवकिरंतिस्मबाष्पपूर्णमुखास्तथा ॥ १९ ॥ सददौपावकंतस्यविधियुक्तंविभीषणः ॥ स्नात्वाचैवार्द्रवस्त्रेणतिलान्दर्भविमिश्रितान् ॥ २० ॥ उदकेनचसंमिश्रान्प्रदायविधिपूर्वकम् ॥ ताःस्त्रियोऽनुनयामाससांत्वयित्वापुनःपुनः ॥ २१ ॥ गम्यतामितिताःसर्वाविविशुर्नगरंततः ॥ प्रविष्टासुपुरींस्त्रीषुराक्षसेंद्रोविभीषणः ॥ रामपार्श्वमुपागम्यसमतिष्ठद्विनीतवत् ॥ २२ ॥ रामोऽपिसहसैन्येनससुग्रीवःसलक्ष्मण ॥ हर्षंलेभेरिपुंहत्वावृत्रंवज्रधरोयथा ॥ २३ ॥

वर्षा की ॥ ११९ ॥ और विभीषणजीने विधिपूर्वक इस चितामें अग्नि लगादी इसके पीछे स्नानकर भीजे वस्त्रही पहरे हुए तिल और दर्भ मिश्रित ॥ १२० ॥ और जल भी हाथमें ले सब विधिपूर्वक रावणको तिलाञ्जलि देने लगे। उसके पीछे उन सब स्त्रियोंको वारंवार समझाया ॥ १२१ ॥ कि अब सब नगरको जाओ तब वह समस्त नगरमें प्रवेश करती हुई जब सब स्त्रियें नगरमें प्रवेश करती हुई तब राक्षसोंमें इन्द्र विभीषणजी श्रीरामचन्द्रजीके निकट आय विनीतभावसे खडे हो गये ॥ १२२ ॥ वज्रधारी इन्द्रजीने जिस प्रकार वध करके हर्ष प्राप्त किया था, वैसेही श्रीरामचन्द्रजी, सुग्रीव, लक्ष्मण और सब सेनाके सहित रिपुका संहार करके अत्यानंदित हुए ॥ १२३ ॥

---

* परिस्तरणिका अर्थात् वपा रावणके मुखमें डाली ॥ वपास्य मुखं प्रोर्णोति सूत्रम् ।

इसके पीछे शत्रुओंके मारनेवाले श्रीरामचन्द्रजीने इन्द्रका दिया हुआ बडा भारी धनुष, बाण, कवच और शत्रुके जीतनेका क्रोध त्याग करके फिर सौम्य मूर्ति धारण कर लेते हुए ॥१२४॥ इत्यार्षे श्रीमदा० वाल्मी० आदि० युद्ध० भाषायांत्रयोदशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११३ ॥ इस ओर रावणका वध देखकर देव दानव और गन्धर्व लोग अपने २ विमानोंपर चढके बहुत सारी श्रेष्ठ बातें करते २ वहां आये ॥ १ ॥ रावणका घोर मारा जाना, श्रीरामचन्द्रजीका पराक्रम, वानरोंका श्रेष्ठ युद्ध, सुग्रीवजीकी मंत्रणा ॥ २ ॥ लक्ष्मण और हनुमान्‌जीका अनुराग वीर्य और पराक्रम और जनककुमारी सीताजीका पातिव्रत्य ॥ ३ ॥ कहते हुए सब महाभाग हर्षित चित्तसे वहां आये श्रीरामचन्द्रजीने भी इन्द्रके भेजे हुए दिव्य और अग्निके समान प्रभावाले रथको ॥ ४ ॥ जानेके

ततोविमुक्तासशरंशरासनंमहेंद्रदत्तंकवचंसतन्महत् ॥ विमुच्यरोषंरिपुनिग्रहात्ततोरामःससौम्यत्वमुपागतोऽरिहा ॥ १२४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे त्रयोदशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११३ ॥ तेरावणवधंदृष्ट्वादेवगंधर्वदानवाः ॥जग्मुःस्वैःस्वैर्विमानैस्तेकथयंतःशुभाःकथाः ॥ १ ॥ रावणस्यवधंघोरंराघवस्यपराक्रमम् ॥ सुयुद्धंवानराणांचसुग्रीवस्यचमंत्रितम् ॥ २ ॥ अनुरागंचवीर्यंचमारुतेर्लक्ष्मणस्यच ॥ पतिव्रतात्वंसीतायाहनूमतिपराक्रमम् ॥३॥ कथयंतोमहाभागाजग्मुर्हृष्टायथागतम् ॥ राघवस्तुरथंदिव्यमिंद्रदत्तंशिखिप्रभम् ॥४॥ अनुज्ञाप्यमहाबाहुर्मातलिंप्रत्यपूजयत ॥ राघवेणाभ्यनुज्ञातोमातलिःशक्रसारथिः॥५॥ दिव्यंतरथमास्थायदिवमेवोत्पपात ह॥ तस्मिंस्तुदिवमारूढेसरथेरथिनांवरः॥ ६ ॥ राघवःपरमप्रीतःसुग्रीवंपरिषस्वजे ॥ परिष्वज्यचसुग्रीवंलक्ष्मणेनाभिवादितः॥ ७ ॥पूज्यमानोहरिगणैराजगामबलालयम् ॥ अथोवाचसकाकुत्स्थःसमीपपरिवर्तिनम् ॥ ८ ॥ सौमित्रिंमित्रसंपन्नंलक्ष्मणंशुभलक्षणम् ॥ विभीषणमिमंसौम्यलंकायामभिषेचय ॥ ९ ॥

लिये आज्ञा दे फिर महाबाहु श्रीरामचन्द्रजीने मातलिकी पूजा की इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीने इन्द्रके सारथी मातलिको जानेकीआज्ञा दी ॥ ५ ॥ कि अब तुम इस दिव्य रथको ले जाओ, मातलि श्रीरामचन्द्रजीकी ऐसी आज्ञा पाय उस रथपर सवार हो आकाशको चला गया वह सुरसारथिश्रेष्ठ जब देवमार्गको चला गया ॥ ६ ॥ तब श्रीरामचन्द्रजीने परम प्रसन्नतासे सुग्रीवजीको भेंटा और सुग्रीवजीसे जब भलीभांतिमिल भेंट चुके तब लक्ष्मणजीने आकर प्रणाम किया ॥ ७ ॥ और सब वानर लोगोंसे पूजित होकर श्रीरामचन्द्रजी वहां गये जहां कि सब सेना पडी थी और श्रीरामचन्द्रजीने वहां आय अपने समीप रहनेवाले ॥ ८ ॥ मित्रोंसे युक्त सुमित्रानंदन शुभलक्षणवाले लक्ष्मणजीसे कहा कि, हे सौम्य ! इस समय तुम विभीषणजीको लंकाके सिंहासनपर प्रतिष्ठित

करो ॥ ९ ॥ यह हमारे अनुरागी हैं भक्त हैं, तथा पहले हमारे साथ उपकार भी किये हुए हैं यह हमारी बहुतही बडी कामना है सो हम रावणके छोटे भाई विभीषणजीको ॥ १० ॥ हे सौम्य ! लंकाके राजसिंहासनपर अभिषेकित देखें, जब लक्ष्मणजीसे महात्मा श्रीरामचन्द्रजीने ऐसा कहा ॥ ११ ॥ तब लक्ष्मणजीने श्रीरामचन्द्रजीके वचनको सुन यह कहा कि ऐसाही करेंगे, यह कह लक्ष्मणजीने हर्षित हो सुवर्णके कलश लेकर उन कलशोंको मनके समान वेगवाले वानरेन्द्रोंको दिया ॥ १२ ॥ और उन महापराक्रमी वानरोंको चारों समुद्रोंका जल लानेके लिये आज्ञा दी वह मनके समान वेगवाले वानर अतिशीघ्र वहां गये ॥ १३ ॥ और चारों समुद्रोंसे जल ग्रहण करके वह वानरश्रेष्ठ वहांपर आगये। वानरलोग तो कई २ घडे जल ले आये थे पर उनमेंसे एक २ घडा लेकर परमासन

अनुरक्तंचभक्तंचतथापूर्वोपकारिणम् ॥ एषमेपरमःकामोयदिमंरावणानुजम् ॥ १० ॥ लंकायांसौम्यपश्येयमभिषिक्तंविभीषणम् ॥ एवमुक्तस्तुसौमित्रीराघवेणमहात्मना ॥ ११ ॥ तथेत्युक्त्वासुसंहृष्टःसौवर्णंघटमाददे ॥ तंघटंवानरेन्द्राणांहस्तेदत्त्वामनोजवान् ॥ १२ ॥ व्यादिदेशमहासत्त्वःसमुद्रसलिलंतदा ॥ अतिशीघ्रंततोगत्वावानरास्तेमनोजवाः ॥ १३ ॥ आगतास्तुजलंगृह्यसमुद्राद्वानरोत्तमाः ॥ ततस्त्वेकंघटंगृह्यसंस्थाप्यपरमासने ॥ १४ ॥ घटेनतेनसौमित्रिरभ्यषिंचद्विभीषणम् ॥ लंकायांरक्षसांमध्येराजानंरामशासनात् ॥ १५ ॥ विधिनामंत्रदृष्टेनसुहृद्गणसमावृतः ॥ अभ्यषिंचंस्तदासर्वेराक्षसावानरास्तथा ॥ १६ ॥ प्रहर्षमतुलंगत्वातुष्टुवूराममेवहि ॥ तस्यामात्याजहृषिरेभक्तायेचास्यराक्षसाः ॥ १७ ॥ दृष्ट्वाभिषिक्तंलंकायांराक्षसेंद्रंविभीषणम् ॥ राघवःपरमांप्रीतिंजगामसहलक्ष्मणः ॥ १८ ॥ सांत्वयित्वाप्रकृतयस्ततोराममुपागमत् ॥ दध्यक्षतान्मोदकांश्चलाजाःसुमनसस्तथा ॥ १९ ॥

पर रक्खा गया ॥ १४ ॥ एक घडेको ग्रहण करके लक्ष्मणजीने विभीषणजीका अभिषेक किया, लंकामें राक्षसोंके मध्यमें विभीषणको श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञासे राजा किया ॥ १५ ॥ विधिपूर्वक मंत्रोंसे सब सुहृद्गणोंके साथ लक्ष्मणजीने जब अभिषेक किया फिर सब राक्षस और वानर विभीषणजीको अभिषेक करते हुए ॥ १६ ॥ जब विभीषणको राज्याभिषेक हुवा तब विभीषणजीके मंत्री और प्रीति करने वाले नौकर रामकोही अभिनंदन करने लगे और इसके आनन्दकी सीमा नहीं रही ॥ १७ ॥ राक्षसोंमें इन्द्र विभीषणजीका लंकामें अभिषेक हुआ देखकर श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीके सहित परमप्रसन्नताको प्राप्त करते हुए ॥ १८ ॥ इसके उपरांत राक्षसराज विभीषणजी सब प्रजाको समझाय बुझाय ढाढस बँधाय जब श्रीरामचन्द्रजीके निकट आये, तब दधि चावल लड्डू खीलैंव फूल ॥ १९ ॥

पुरवासी लोग हर्षित अंतःकरणसे उनके सामने लाने लगे, उन सबको ग्रहण करके दुर्द्धर्ष विभीषणजीने श्रीरामचन्द्रजीको निवेदन किया ॥२०॥ और इन सब मंगलकारी मंगल द्रव्योंको वीर्यवान् लक्ष्मणजीको निवेदन किया श्रीरामचन्द्रजी विभीषणको समृद्धिशाली और कृतकार्य देखकरही उन सब द्रव्योंको उनकी प्रसन्नताकी कामनासे ग्रहण कर लेते हुए ॥ २१ ॥इसके उपरांत सन्मुख हो हाथ जोडकर खडे हुए पर्वताकार वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीसे श्रीरामचन्द्रजी बोले ॥२२॥ सौम्य ! महाराज विभीषणजीकी आज्ञासे लंकापुरीमें प्रवेश करो, और जानकीजीसे कुशल समाचार पूँछकर अपना हमारा कुशल निवेदन करो॥२३॥ इसके उपरांत सुग्रीव, लक्ष्मण और हमारी कुशल वार्ता कहकर फिर यहभी कहदेना कि, लंकेश्वर रावण युद्धमें मारा गया ॥ २४ ॥ हे वानरश्रेष्ठ ! तुम

आजह्रूरथसंहृष्टाःपौरास्तस्मैनिशाचराः॥सतान्गृहीत्वादुर्धर्षोराघवायन्यवेदयत् ॥२०॥ मांगल्यंमंगलंसर्वंलक्ष्मणायचवीर्यवान् ॥ कृतकार्यंसमृद्धार्थंदृष्ट्वारामोविभीषणम् ॥ प्रतिजग्राहतत्सर्वंतस्यैवप्रीतिकाम्यया ॥ २१ ॥ ततःशैलोपमंवीरंप्रांजलिंप्रणतंस्थितम्॥उवाचेदंवचोरामोहनूमंतंप्लवंगमम् ॥ २२ ॥ अनुज्ञाप्यमहाराजमिमंसौम्यविभीषणम् ॥ प्रविश्यनगरींलंकांकौशलंब्रूहिमैथिलीम् ॥ २३ ॥ वैदेह्यैमांकुशलिनंसुग्रीवंसहलक्ष्मणम् ॥ आचक्ष्ववदतांश्रेष्ठरावणंचहतंरणे ॥ २४ ॥ प्रियमेतदिहाख्याहिवैदेह्यास्त्वंहरीश्वर ॥ प्रतिगृह्यतुसंदेशमुपावर्तितुमर्हसि ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे चतुर्दशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११४ ॥ इतिप्रतिसमादिष्टोहनूमान्मारुतात्मजः ॥ प्रविवेशपुरींलंकांपूज्यमानोनिशाचरैः ॥ १ ॥ प्रविश्यपुरींलंकामनुज्ञाप्यविभीषणम् ॥ ततस्तेनाभ्यनुज्ञातोहनूमान्वृक्षवाटिकाम् ॥ २ ॥ संप्रविश्ययथान्यायंसीतायाविहितोहरिः ॥ ददर्शमृजयाहीनांसतंकांरोहिणीमिव ॥ ३ ॥ वृक्षमूलेनिरानंदांराक्षसीभिःपरीवृताम् ॥ निभृतःप्रणतःप्रह्वःसोऽभिगम्याभिवाद्यच ॥ ४ ॥

जानकीजीको महा प्रिय समाचार देकर उनका संदेशा ले शीघ्रही यहांपर चले आओ ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आ० युद्ध० भाषायांचतुर्दशाधिकशततमः सर्गः ॥११४॥ पवनकुमार हनुमान्जी इस प्रकारसे आज्ञा पाय जब लंकापुरीमें प्रवेश करते हुए; तब राक्षसोंने उनका बहुत सत्कार किया ॥ १ ॥ विभीषणजीकी आज्ञा लेनेको हनुमान्जी लंकापुरीमें गये और उनकी आज्ञासे वृक्ष वाटिकामें गये ॥२॥ वहां पहुंचतेही जानकीजीने इनको देखा; इन्होंने देखा कि स्नानादि विहीन शंकारहित रोहिणीके समान ॥३॥ वृक्षमूलमें आनन्दरहित राक्षसियोंके घेरेमें पडी सीताजी बैठी हैं, यह देख हनुमान्जी चुपचाप उनके निकट चले आये और शिर झुकाय विनीत हो प्रणाम कर खडे होगये ॥ ४ ॥

देवी जानकीजीभी महाबलवान् हनुमान्जीको आया हुआ देख प्रथम न पहँचान कर कुछ देर तक चुपचाप रहीं, और फिर यन्द करके बहुत आनंदित हुई ॥ ५ ॥ तब वानर श्रेष्ठ हनुमान्जी उनका सौम्य मुख देखकर श्रीरामचन्द्रजीकेकहे वचनोंको आरम्भ करते हुए बोले ॥ ६ ॥ कि हे वैदेही ! महानुभाव श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजी और सुग्रीवजीके सहित कुशलपूर्वक हैं इस समय वह शत्रुका संहार करके कृतकार्य हुए हैं; उन्होंने आपका कुशल समाचार जानने के लिये हमको भेजा है ॥ ७ ॥ हे देवि ! वानर लोगोंके सहित विभीषणजी और लक्ष्मणजीकी सहायतासे श्रीरामचन्द्रजीने वीर्यवान् रावणको मार डाला ॥ ८ ॥ हे देवि ! यह प्रिय समाचार हम तुमको सुनाते हैं और फिर तुमको प्रसन्न करते हैं कि तुम्हारेही प्रभावसे धर्मके जाननेवाले श्रीरामचन्द्रजीने महा संग्राममें ॥ ९ ॥ विजय पाई, अब सब व्यथा दूर कर तुम सावधान होवो क्योंकि शत्रु रावण मार डाला गया और लंका अपने वशमें हुई ॥ १० ॥

दृष्ट्वासमागतंदेवीहनूमंतंमहाबलम् ॥ तूष्णीमास्ततदादृष्ट्वास्मृत्वाहृष्टाभवत्तदा ॥ ५ ॥ सौम्यंतस्यामुखंदृष्ट्वाहनूमान्प्लवगोत्तमः ॥ रामस्य वचनंसर्वमाख्यातुमुपचक्रमे ॥ ६ ॥ वैदेहिकुशलीरामःसुग्रीवःसहलक्ष्मणः ॥ कुशलंत्वाहसिद्धार्थोहतशत्रुरमित्रजित् ॥ ७ ॥ विभीषणसहायेनरामेणहरिभिःसहः ॥ निहतोरावणोदेविलक्ष्मणेनचवीर्यवान् ॥ ८ ॥ प्रियमाख्यामितेदेविभूयश्चत्वांसभाजये ॥ तवप्रभावाद्धर्मज्ञेमहासंग्रामेणसंयुगे ॥ ९ ॥ लब्धोऽयंविजयःसीतेस्वस्थाभवगतज्वरा ॥ रावणश्चहतःशत्रुर्लंकाचैववशीकृता ॥ १० ॥ मयाह्यलब्धनिद्रेणधृतेनतवनिर्जये ॥ प्रतिज्ञैषाविनिस्तीर्णाबद्ध्वासेतुंमहोदधौ ॥ ११ ॥ संभ्रमश्चनकर्तव्योवर्तंत्यारावणालये ॥ विभीषणविधेयंहिलंकैश्वर्यमिदंकृतम् ॥ १२ ॥ तदाश्वसिहिविस्रब्धंस्वगृहेपरिवर्तसे ॥ अयंचाभ्येतिसंहृष्टस्त्वद्दर्शनसमुत्सुकः ॥ १३ ॥ एवमुक्तातुसादेवीसीताशशिनिभानना ॥ प्रहर्षेणावरुद्धासान्याहतुनशशाकह ॥ ॥ १४ ॥ ततोऽब्रवीद्धरिवरःसीतामप्रतिजल्पतीम् ॥ किंत्वंचिंतयसेदेविकिंचमांनाभिभाषसे ॥ १५ ॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा है कि हमने तुम्हारा अपमान होनेके हेतु जो प्रतिज्ञा की थी तबसे हमने नींदको दूरकर दिया था और समुद्रमेंसेतुभी बांधाथा, सो आज हम प्रतिज्ञासे छूटे ॥ ११ ॥ हमने लंका जीतकर विभीषणको सब ऐश्वर्य दान कर दिया है; अब तुम रावणके स्थानमें रहनेसे कुछ भय न करो ॥ १२ ॥ इस समय तुम सावधान होकर ऐसा समझो कि मानो हम अपने घरमेंही टिकी हुई हैं, तुम्हारे दर्शनोंकी इच्छासे हर्षित हो विभीषण इसी समय तुम्हारे निकट आवेंगे ॥ १३ ॥ हनुमान्जीके ऐसे वचन सुनकर चन्द्रमुखी सीताजी कुछ भी नहीं कहसकीं आनंदके मारे मानो उनका कंठ रुक गया ॥ १४ ॥ तब सीताजीको कुछ न बोलते हुए देखकर वानरश्रेष्ठ हनुमान्जी बोले हे देवि ! क्या चिंता करती हो, हमसे संभाषण क्यों नहीं करती हो ॥ १५ ॥

हनुमान्‌जी करके इस प्रकार कही जाकर धर्ममार्गमें टिकी हुई जानकीजी परम प्रसन्नता प्राप्त कर गद्गदवाणीसे उत्तर देती हुईं ॥१६॥ कि तुम्हारे मुखसे अपने स्वामीकी विजयमिश्रित यह वार्ता सुन, अत्यन्त हर्षके कारण क्षणभरके लिये हमारी वचनशक्ति लोप होगई थी ॥ १७ ॥ हे वानर ? तुमने जिस प्रकारका प्यारा समाचार,दिया, उससे तुमको क्या पुरस्कार दें, यही हम सोच विचार रही थीं, परन्तु हम ऐसा कुछभी नहीं देख पातीं ॥ १८ ॥ हे हनुमान् ! हम पृथ्वी पर ऐसा कोईभी पदार्थ नहीं देखतीं कि, जो तुम्हारे समान प्रिय समाचार देनेंवालेको दिया जावे ॥ १९ ॥ हे पवनकुमार ! हिरण्य, सुवर्ण, बहुत सारे रत्न, अथवा त्रिलोकीका राज्यभी देडालें तोभी यह सब तुमको इस भाषणसे कुछ अधिक नहीं दियाजाय॥२०॥ जनककुमारी सीताजीसे इस प्रकारसे कहे जाकर

एवमुक्ताहनुमतासीताधर्मपथेस्थिता ॥ अब्रवीत्परमप्रीताबाष्पगद्गदयागिरा ॥ १६ ॥ प्रियमेतदुपश्रुत्यभर्तुर्विजयसंश्रितम् ॥ प्रहर्षवशमापन्नानिर्वाक्यास्मिक्षणान्तरम् ॥ १७ ॥ नहिपश्यामिसदृशंचिन्तयंतीप्लवंगम ॥ आख्यानकस्यभवतोदातुंप्रत्यभिनंदनम् ॥ १८ ॥ नचपश्यामिसदृशंपृथिव्यांतवकिंचन ॥ सदृशंमत्प्रियाख्यानेतवदत्त्वाभवेत्सुखम् ॥१९॥ हिरण्यंवासुवर्णंवारत्नानिविविधानिच ॥ राज्यंवात्रिषुलोकेषुएतन्नार्हतिभाषितम् ॥ २० ॥ एवमुक्तस्तुवैदेह्याप्रत्युवाचप्लवंगमः ॥ प्रगृहीतांजलिर्हर्षात्सीतायाःप्रमुखेस्थितः ॥२१॥ भर्तुःप्रियहितेयुक्तेभर्तुर्विजयकांक्षिणि॥ स्निग्धवंमेविधंवाक्यंत्वमेवार्हस्यनिंदिते॥२२॥ "तवैतद्वचनंदेवित्वत्तोऽर्हामिप्रियंमहत्॥रत्नौघाद्विविधाच्चापिदेवराज्याद्विशिष्यते ॥१॥ अर्थतश्चमयाप्राप्तादेवराज्यादयोगुणाः ॥ हतशत्रुंविजयिनंरामंपश्यसिसुस्थिरम् ॥२॥" तस्यतद्वचनंश्रुत्वामैथिलीजनकात्मजा ॥ ततःशुभतरंवाक्यमुवाचपवनात्मजम् ॥ २३ ॥ अतिलक्षणसंपन्नंमाधुर्यगुणभूषणम् ॥ बुद्ध्याह्यष्टांगयायुक्तंत्वमेवार्हसिभाषितुम् ॥ २४ ॥

वानर श्रेष्ठ हनुमान्‌जीउनके सामने खडे होकर हाथ जोडकर बोले ॥२१॥ हे पतिकी प्यारी ! हितकारी,स्वामीकी विजयको चाहनेवाली निन्दारहितसीते ! आपके समान स्त्रीही ऐसे स्नेहमय वचन कह सकती हैं, औरकी सामर्थ्य नहीं ॥२२॥ "हे देवि ! हम तुम्हारे स्निग्ध और प्रियवचनोंके निकट धन विविध प्रकारके रत्न और देवराज्यको भी अधिक नहींसमझते ॥१॥ जब कि त्रिलोकविजय करनेवालेश्रीरामचन्द्रजीको हमने शत्रुका संहार करते देखा है तब वास्तवमें हमने देवराज इन्द्रसेभी अधिक गुण पाय लिया है ॥२॥ " हनुमान्‌जीके यह वचन सुनकर जनककुमारी सीताजी पवनकुमार हनुमानजीसे शुभवचन बोलीं ॥ २३ ॥ हे पवनकुमार ! तुमने शुश्रूषा श्रवण, ग्रहण, धारण, ऊह (तर्क), अपोह (तर्कविशेष), अर्थविज्ञान और तत्त्वज्ञान इन गुणोंसे युक्त अष्टाङ्ग

बुद्धिसे युक्त विचार कर व्याकरणके मतसे पदोंको परस्पर जोड जो मधुर वचन कहे हैं यह तुम्हारेही योग्य हैं॥२४॥ तुम पवनके विख्यात पुत्र हो; परमधार्मिक हो इस कारण बडाई करनेके योग्य हो बल, शूरता, वीरता विक्रमकारियोंमें उत्तम हो॥२५॥ तेज, क्षमा, धीरता, स्थिरता, विनीतताभी तुममें हैं इसमें कुछ संशय नहीं, यह सब गुण व औरभी सब गुण तुममें शोभित हैं॥२६॥ इसके उपरान्त सीताजीके वचनसे कुछ भी चलायमान न होकर हनुमान्जी फिर हर्षितचित्तसे हाथ जोड सन्मुख खडे हो नम्रतापूर्वक जानकीजीसे बोले ॥२७॥ कि हमारी बहुतही अभिलाषा है, कि जिन राक्षसियोंने पहले आपको बहुत सताया है, यदिआपकी आज्ञा हो तो हम इन सबको मारडालें ॥२८॥ आप पतिकी चिन्तामें दुर्बल होकर जबतक अशोकवाटिकामें रहती हुई सहनेके अयोग्य जो कष्ट भोगती थीं, उस समय

श्लाघनीयोऽनिलस्यत्वंसुतःपरमधार्मिकः ॥ बलंशौर्यंश्रुतंसत्त्वंविक्रमोदाक्ष्यमुत्तमम् ॥ २५ ॥ तेजःक्षमाधृतिःस्थैर्यंविनीतत्वंनसंशयः ॥ एते चान्येचबहवोगुणास्त्वय्येवशोभनाः ॥ २६ ॥ अथोवाचपुनःसीतामसंभ्रांतोविनीतवत् ॥ प्रगृहीतांजलिर्हर्षात्सीतायाःप्रमुखेस्थितः ॥२७॥ इमास्तुखलुराक्षस्योयदित्वमनुमन्यसे ॥ हंतुमिच्छामिताःसर्वायाभिस्त्वंतर्जितापुरा ॥ २८ ॥ क्लिश्यतींपतिदेवांत्वामशोकवनिकांगताम् ॥ घोररूपसमाचाराःक्रूराःक्रूरतरेक्षणाः ॥ २९ ॥ इहश्रुतामयादेविराक्षस्योविकृताननाः ॥ असकृत्परुषैर्वाक्यैर्वदंत्योरावणाज्ञया ॥३०॥ विकृताविकृताकाराःक्रूराःक्रूरकचेक्षणाः ॥ इच्छामिविविधैर्घातैर्हंतुमेताःसुदारुणाः ॥ ३१ ॥ राक्षस्योदारुणकथावरमेतत्प्रयच्छमे ॥ मुष्टिभिः पार्ष्णिघातैश्चविशालैश्चैवबाहुभिः ॥ ३२ ॥ जंघाजानुप्रहारैश्चदंतानांचैवपीडनैः ॥ भक्षणैःकर्णनासानांकेशानांलुंचनैस्तथा ॥ ३३ ॥ निपात्यहंतुमिच्छामितवविप्रियकारिणीः ॥ एवंप्रहारैर्बहुभिःसंप्रहार्ययशस्विनि ॥ ३४ ॥

यह सब घोररूपवाली निर्लज्ज अतिकुटिलरूपवाली राक्षसियें सदाही आपको डराती धमकाती थीं॥२९॥ हे देवि ! हम देख गये थे कि, यह विकटाकार मुखवाली राक्षसियें रावणकी आज्ञासे आपको सदा कठोर वचन कहा करती थीं ॥३०॥ हमारी इच्छा होती है कि, इन विकटाकार मुखवाली क्रूर स्वभावसे युक्त और क्रूर दर्शन रूखे केशवाली समस्त राक्षसियोंको हम विविध प्रकारके प्रहार करके मारडालें ॥ ३१ ॥ जिन राक्षसियोंने दारुण वचन कहकर आपको दिक्क किया है हम ऐसा वर चाहते हैं कि, घूसोंसे लातोंसे और बडी२ बाहोंसे॥ ३२ ॥ व जंघाके प्रहारसे और दांतोंसे पीडा देकर कान नाकोंको काटकर केशोंको खसोटकर ॥३३॥ इन राक्षसियोंको हम मारडाला चाहते हैं कि जिन्होंने तुम्हारा कुप्यारा कार्य किया है । हे यशस्विनि ! ऐसे प्रहारोंसे व और भी अनेक

प्रकारके प्रहरोंसे ॥ ३४ ॥ हम इन दुष्टिनियोंको तीव्र भांतिसे मारडाला चाहते हैं क्योंकि इन्होंने आपको पहले बहुत दुःख दिया है हनुमानूजीके यह वचन सुन वह कृपासागर दीनवत्सला ॥ ३५ ॥ जानकीजी हनुमानूजीसे विचारकर धर्मयुक्त वचन बोलीं राजसेवाके वश, पराई आज्ञासे कर्म करती हुई ॥ ३६ ॥ इन विचारी रावणके यहांसे पेटपालती दासियोंके ऊपर हे वानरोंमें श्रेष्ठ ! तुमने क्यों कोप किया ? भला ऐसियोंपर कौन कोप करेगा ? भाग्यकी विषमताके दोषसे और पहले किये दुष्कर्मोंसे॥ ३७॥यह सब मुझको प्राप्त हुई हैं, क्योंकि सबही अपने किये कर्मोंको भोगते हैं हे महावीर ! अब ऐसा मत कहो दैवकी गति अतिविचित्र है ॥३८॥दशाके अनुसार सबही फल भोग करने होते हैं, हमने यहबात निश्चय करली है, रावणकी दासियोंका क्रोधभी हम अति दुर्बलने सहा॥ ३९॥हे पवनकुमार !

घातयेतीव्ररूपाभिर्याभिस्त्वंतर्जितापुरा ॥ इत्युक्तासाहनुमताकृपणादीनवत्सला ॥ ३५ ॥ हनूमंतमुवाचेदंचिंतयित्वाविमृश्यच ॥ राजसंश्रयवश्यानांकुर्वतीनांपराज्ञया ॥ ३६ ॥ विधेयानांचदासीनांकःकुप्येद्वानरोत्तम ॥ भाग्यवैषम्यदोषेणपुरस्ताद्दुष्कृतेनच ॥ ३७ ॥ मयैतत्प्राप्यतेसर्वंस्वकृतंह्युपभुज्यते ॥ मैवंवदमहाबाहोदैवीह्येषापरागतिः ॥ ३८ ॥ प्राप्तव्यंतुदशायोगान्मयैतदितिनिश्चितम् ॥ दासीनांरावणस्याहंमर्षयामीहदुर्बला ॥ ३९ ॥ आज्ञप्तारावणेनैताराक्षस्यस्तर्जयंतिमाम् ॥ हतेतस्मिन्नकुर्वंतितर्जनंमारुतात्मज ॥ ४० ॥ अयंव्याघ्रसमीपेतुपुराणोधर्मसंहितः ॥ ऋक्षेणगीतःश्लोकोऽस्तितंनिबोधप्लवंगम ॥ ४१ ॥ नपरःपापमादत्तेपरेषांपापकर्मणाम् ॥ समयोरक्षितव्यस्तुसंतश्चारित्रभूषणाः ॥ ४२ ॥ पापानांवाशुभानांवावधार्हाणामथापिवा ॥ कार्यंकारुण्यमार्येणनकश्चिन्नापराध्यति ॥ ४३ ॥

इन राक्षसियोंने रावणकी आज्ञाके अनुसारही हमको पीडा दीथी इस समय रावण मृतक होगया है; इससे अब यह हमको पीडित नहीं करेंगी॥४०॥हे वानर ! किसी समय एक व्याध व्याघ्रकरके ताडित हो रीछका आश्रय किये हुए एक वृक्षके ऊपर चढगया, तब व्याघ्रने वहां आय उस व्याधेको पेडपैसे गिरानेके लियेरीछसे वारंवार कहा, तब रीछने व्याघ्रसे जो धर्मश्लोक कहा था वह सुनो ❋॥४१॥चतुर पुरुषको अपकार करनेवालेके साथ प्रत्युपकार करना नहीं चाहिये इसलिये हमने जो नियम किया है उसको कभी नहीं तोडेंगे कारण कि, चरित्रही साधुलोगोंका भूषण है ॥ ४२ ॥ इस कारण हे हनुमन् ! हमें इन राक्षसियोंने भला बुरा जो कुछ भी किया हो, और चाहे यह मार डालनेके योग्य भी हों तो भी साधुलोगोंको इनका वध करना कर्त्तव्य नहीं है. कारण कि संसारमें निर

❋ यह कथा इस प्रकार है कि, जब व्याघ्रसे ताडित हो व्याध वृक्षपर चढ़गया तब व्याघ्रने आकर कहा यह हमारा तुम्हारा दोनोंका शत्रु है तुम इसे गिरादो रीछने कहा मं शरण आयेको नहीं त्यागूंगा यह कहकर सोगया तब व्याघ्रने व्याधेसे कहा तू रीछको नीचे गिरादे नहीं तो मेरे चले जाने पर यह तुझे खा जायगा व्याधेने रीछको ढकेल दिया तब रीछ अभ्यासके कारण अन्यशाखाको ग्रहण कर रह गया, न गिरा तब व्याघ्र बोला अबतो इस अपराधीको गिरादे, तबभी रीछने कहा ऐसा नहीं होगा ।

पराधी कोई भी नहीं पायाजाता ॥ ४३ ॥ लोकोंकी हिंसा करनाही जिन निष्ठुर पापात्माओंका खेल और आनंद है, उनके विविध अपकार करने पर भी उनके ऊपर अशुभ कार्य नहीं किये जा सकते ॥ ४४ ॥ जब वचन बोलनेमें चतुर हनुमानूजीसे जानकीजीने ऐसा कहा तब निंदारहित श्रीरामचन्द्रजीकी स्त्री सीताजीको हनुमानूजी उत्तर देते हुए ॥ ४५ ॥ हे देवि ! श्रीरामचन्द्रजीकी धर्ममयी भार्याको इस प्रकारकी गुणवाली होना ही कर्त्तव्य है सो अब हमको आज्ञा कीजिये कि, श्रीरामचन्द्रजीके समीप जाँय ॥ ४६ ॥ मिथिलाराजकुमारी जानकीजी हनुमानूजीसे इस प्रकार पूछी जाकर कहने लगीं "हम शीघ्रही धर्मवत्सल पतिको देखनेकी इच्छा करती हैं" ॥ ४७ ॥ महामतिमान् पवनकुमार हनुमानजीने जनककुमारी श्रीजानकीजीके ऐसे वचन

लोकहिंसाविहाराणांक्रूराणांपापकर्मणाम् ॥ कुर्वतामपिपापानिनैवकार्यमशोभनम् ॥ ४४ ॥ एवमुक्तस्तुहनुमान्सीतयावाक्यकोविदः ॥ प्रत्युवाचततःसीतांरामपत्नीमनिंदिताम् ॥ ४५ ॥ युक्तारामस्यभवतीधर्मपत्नीगुणान्विता ॥ प्रतिसंदिशमांदेविगमिष्येयत्रराघवः ॥ ४६ ॥ एवमुक्ताहनुमतावैदेहीजनकात्मजा ॥ साब्रवीद्द्रष्टुमिच्छामिभर्तारंभक्तवत्सलम् ॥ ४७ ॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाहनूमान्मारुतात्मजः ॥ हर्षयन्मैथिलींवाक्यमुवाचेदंमहामतिः ॥ ४८ ॥ पूर्णचंद्रमुखंरामंद्रक्ष्यस्यद्यसलक्ष्मणम् ॥ स्थितमित्रंहतामित्रंशचीवेंद्रंसुरेश्वरम् ॥ ४९ ॥ तामेवमुक्त्वाभ्राजंतींसीतांसाक्षादिवश्रियम् ॥ आजगाममहातेजाहनूमान्यत्रराघवः ॥ ५० ॥ सपदिहरिवरस्ततोहनूमान्प्रतिवचनंजनकेश्वरात्मजायाः ॥ कथितमकथयद्यथाक्रमेणत्रिदशवरप्रतिमायराघवाय ॥ ५१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे पंचदशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११५ ॥

सुन उनको आनंदित करते हुए बोले ॥ ४८ ॥ हे देवि ! इन्द्राणी जिस प्रकार इन्द्रजीका दर्शनकरती हैं, वैसेही आप भी लक्ष्मणजीके सहित शत्रुओंका नाश किये हुए मित्रलोगोंसे घिरे हुए पूर्णचन्द्रमाके समान मुखवाले श्रीरामचन्द्रजीका दर्शन करोगी ॥ ४९ ॥ महातेजस्वी वानरश्रेष्ठ हनुमानूजी साक्षात् लक्ष्मीजीके समान शोभायुक्त जानकीजीसे यह वचन कह श्रीरामचन्द्रजीके समीप आये ॥ ५० ॥ और उनके निकट आय जानकीजीने जिसप्रकार कहा था वही वचन हनुमानूजीने इन्द्रसे भी अधिक ऐश्वर्यसम्पन्न श्रीरामचन्द्रजीके निकट वह कथा क्रमसे निवेदन किया ॥ ५१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा०आदि० युद्ध० भाषायां पंचदशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११५ ॥

महापंडित वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌जी धनुषधारियोंमें अग्रणी कमललोचन श्रीरामचन्द्रजीको प्रणाम करके बोले ॥ १ ॥ जिनके निमित्त यह सब तैयारियें की गईं और जो समुद्रमें सेतु बांधने और रावणवधादि कार्योंका कथारूप है, आप शीघ्र उनशोकसे संतापित देवी जानकीजीको देखिये॥२॥ शोकसे तपाई हुई जानकीजीने आपकी विजय वार्त्ता सुन आनंदके आंसू छोडते २ आपको देखनेका अभिलाष किया है ॥३॥ उन्होंने पहले समयकी पहँचानके वश विश्वासी हद यसे और व्याकुल नेत्रोंसे हमसे केवल यही कहा कि, हम शीघ्रही पतिको देखनेकी इच्छा करती हैं ॥४॥ धर्मात्माओंमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी हनुमान्‌जीसे इस प्रकार कहे जाकर नेत्रोंमें नीर भरकर चिन्ता करने लगे ॥ ५ ॥ इसके पीछे श्रीरामचन्द्रजी भूमिको निहार लंबे २ और गरम २ श्वास लेकर सन्मुख खडे

तमुवाचमहाप्राज्ञःसोऽभिवाद्यप्लवंगमः ॥ रामंकमलपत्राक्षंवरंसर्वधनुष्मताम् ॥१॥ यन्निमित्तोऽयमारंभःकर्मणांयःफलोदयः ॥ तांदेवींशोकसंतप्तांद्रष्टुमर्हसिमैथिलीम् ॥ २ ॥ साहिशोकसमाविष्टाबाष्पपर्याकुलेक्षणा ॥ मैथिलीविजयंश्रुत्वाद्रष्टुंत्वामभिकांक्षति ॥ ३ ॥ पूर्वकात्प्रत्ययाच्चाहमुक्तोविश्वस्तयातया ॥ द्रष्टुमिच्छामिभर्तारमितिपर्याकुलेक्षणा ॥४॥ एवमुक्तोहनुमतारामोधर्मभृतांवरः ॥ आगच्छत्सहसाध्यानमीषद्बाष्पपरिप्लुतः ॥५॥ सदीर्घमभिनिःश्वस्यजगतीमवलोकयन् ॥ उवाचमेघसंकाशंविभीषणमवस्थितम् ॥६॥ दिव्यांगरागांवैदेहींदिव्याभरणभूषिताम् ॥ इहसीतांशिरःस्नातामुपस्थापयमाचिरम् ॥७॥ एवमुक्तस्तुरामेणत्वरमाणोविभीषणः ॥ प्रविश्यांतःपुरंसीतांस्त्रीभिःस्वाभिरचोदयत् ॥८॥ ततःसीतांमहाभागांदृष्ट्वोवाचविभीषणः ॥ मूर्ध्निबद्धांजलिःश्रीमान्विनीतोराक्षसेश्वरः ॥९॥ दिव्यांगरागावैदेहिदिव्याभरणभूषिता ॥ यानमारोहभद्रंतेभर्तायत्वांद्रष्टुमिच्छति ॥ १० ॥ एवमुक्तातुवैदेहीप्रत्युवाचविभीषणम् ॥ अस्नात्वाद्रष्टुमिच्छामिभर्तारंराक्षसेश्वर ॥ ११ ॥

मेघाकार विभीषणजीसे बोले ॥६॥ कि सीताको स्नान कराय दिव्य उबटन लगाय, दिव्यवस्त्र और गहनोंसे भूषित करके शीघ्र इस स्थानमें ले आओ; विलम्ब मत करना ॥७॥ श्रीमान् राक्षसोंके राजा विभीषणजीने श्रीरामचन्द्रजीकी ऐसी आज्ञा पाय शीघ्र अन्तःपुरमें अपनी स्त्रियोंसे सीताजीके पास समाचार कहला भेजा ॥ ८॥ इस पीछे सनाथ विभीषणजी महाभाग सीताजीके समीप जाय विनीततासहित शिरसे हाथ जोडकर कहते हुए ॥९॥ हे देवी ! आपका मंगल हो ! आपके स्वामी आपको देखनेकी अभिलाषा करते हैं, इस कारण उत्तमरूपसे उबटन लगाय दिव्य वस्त्रालंकारोंसे भूषित हो शीघ्र आपविमानपर चढें ॥ १० ॥ जनककुमारी जानकीजी इस प्रकारके वचन सुन विभीषणजीसे बोलीं हे राक्षसेश्वर ! अब हमसे विलम्ब नहीं सही जाती इसलिये विना स्नान

कियेही हम स्वामीके देखनेकी इच्छा करती हैं ॥ ११ ॥ उनके ऐसे वचन सुन विभीषणजीने कहा, आपके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीने जो कुछ आज्ञा की है आपको वही करनी चाहिये ॥ १२ ॥ विभीषणजीने जब यह वचन कहे तो पतिकोही देवता समझती हुई पतिव्रता सीताजीने पतिकी भक्तिके वश उत्तर दिया, अच्छा ऐसाही हो ॥१३॥ इसके उपरांत विभीषणजीने अपनी दासियोंके द्वारा जानकीजीको स्नान कराय उबटन लगाय, भांति २ के गहने और बडे २ मोलके दिव्य वस्त्र पहरायकर ॥ १४ ॥ आसनोंसे युक्त पालकीपर सवार कराया । उस पालकीमें राक्षस कहार लगे हुए थे ऐसी पालकीको हजारों राक्षसोंसे रक्षितकर विभीषणजी वहां लाये ॥१५॥ सर्वज्ञ होकर भी ध्यान करते हुए महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके समीप हर्षित अंतःकरणसे विभीषणजीने प्रणाम करसीताजीके आनेके समाचारको निवेदन किया ॥ १६ ॥ परंतु राक्षसके घरमें बहुत कालतक टिकी हुई सीताजीको आती हुई सुन शत्रुविनाशी श्रीराम

तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाप्रत्युवाचविभीषणः ॥ यथाहरामोभर्तातेतत्तथाकर्तुमर्हसि ॥१२॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वामैथिलीपतिदेवता ॥ भर्तृभक्त्यावृता साध्वीतथेतिप्रत्यभाषत ॥१३॥ ततःसीतांशिरःस्नातांसंयुक्तांप्रतिकर्मणा ॥ महार्हाभरणोपेतांमहार्हांबरधारिणीम् ॥१४॥ आरोप्यशिबिकां सीतांराक्षसैर्वहनोचितैः ॥ राक्षसैर्बहुभिर्गुप्तामाजहारविभीषणः ॥१५॥ सोऽभिगम्यमहात्मानंज्ञात्वाऽपिध्यानमास्थितम् ॥ प्रणतश्चप्रहृष्टश्चप्रा प्तांसीतांन्यवेदयत् ॥१६॥ तामागतामुपश्रुत्यरक्षोगृहचिरोषिताम् ॥ रोषंहर्षंचदैन्यंचराघवःप्रापः शत्रुहा ॥१७॥ ततोयानगतांसीतांसविमर्शं विचारयन् ॥ विभीषणमिदंवाक्यंप्रहृष्टोराघवोऽब्रवीत् ॥ १८ ॥ राक्षसाधिपतेसौम्यानित्यंमद्विजयेरत ॥ वैदेहीसन्निकर्षंमेक्षिप्रंसमभिगच्छतु ॥१९॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराघवस्यविभीषणः ॥ तूर्णमुत्सारणंतत्रकारयामासधर्मवित् ॥२०॥ कंचुकोष्णीषिणस्तत्रवेत्रझर्झरपाणयः ॥ उत्सा रयंतस्तान्योधान्समंतात्परिचक्रमुः ॥ २१ ॥ ऋक्षाणांवानराणांचराक्षसानांचसर्वशः ॥ वृंदान्युत्सार्यमाणानिदूरमुत्तस्थुरंततः ॥ २२ ॥

चन्द्रजी एकही समयमें रोष हर्ष और दीनतासे युक्त हुए ॥ १७ ॥ इसके उपरान्त पालकीपर चढी हुई सीताजीके विषयमें सोच विचार कर कुछेक हर्षित हो विभीषणजीसे श्रीरामचन्द्रजीने यह वचन कहे ॥ १८ ॥ हे हमारी विजयको चाहने वाले सौम्य राक्षसेश्वर ! जानकीजीको शीघ्रतासे हमारे निकट ले आओ ॥ १९ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुन धर्मात्मा विभीषणजीने वहांसे सब किसीके हटानेका उपाय किया ॥ २० ॥ कुरता और पगडी धारी कंचुकी लोग बेत और छडी हाथमें ले सब भीडको हटाते हुए चारों ओर घूमने लगे ॥ २१ ॥ तब ऋक्ष वानर और राक्षसगणोंने ताडित होकर दूर २ को भागना आरंभ किया ॥ २२ ॥

जब वह सबजन इस प्रकारसे हटाये गये तब पवन करके उछल पुछल किये हुए महासमुद्रके समान बडा भारी शब्द हुआ॥२३॥इन सबको बलसे हटायेजानेके कारण उदास देख दयाके मारे उन सबका अनादर न सहकर श्रीरामचन्द्रजीने रोक दिया॥२४॥क्रोधयुक्त हो मानो नेत्रोंसे जलातेहीसे श्रीरामचन्द्रजी कुछ निन्दा करते हुए महाप्राज्ञ विभीषणजीसे बोले॥२५॥कि तुम किस कारणसे इन सबका क्लेश देकर हमारा अनादर करते हो ? अभी इन लोगोंकी घबडाहटको शान्त करो; क्योंकि यह सबही हमारे सगे हैं ॥ २६ ॥ गृह, वस्त्र, प्राकार, चहारदिवारी, कनात आदि अथवा लौकिक परदे स्त्रियोंके नहीं हैं, अपने स्वामीसे सत्कारित होनाही और सच्चरित रहनाही स्त्रियोंका परदा है सो जानकीजीके पास वही परदा है ॥ २७ ॥ विशेष करके विपदके समय, पीडाके समय, युद्धके समय, स्वयंबरके

तेषामुत्सार्यमाणानांनिःस्वनःसुमहानभूत् ॥ वायुनोद्धूयमानस्यसागरस्येवनिःस्वनः ॥ २३ ॥ उत्सायमाणान्दृष्ट्वाथजगत्यांजातसंभ्रमान् ॥ दाक्षिण्यात्तदमर्षाच्चवारयामासराघवः ॥ २४ ॥ संरंभाच्चाब्रवीद्रामश्चक्षुषाप्रदहन्निव ॥ विभीषणंमहाप्राज्ञंसोपालंभमिदंवचः ॥ २५ ॥ किम र्थंमामनादृत्यक्लिश्यतेऽयंत्वयाजनः ॥ निवर्तयैनमुद्वेगंजनोऽयंस्वजनोमम ॥ २६ ॥ नगृहाणिनवस्त्राणिनप्रकारस्तिरस्क्रिया ॥ नेदृशाराजस त्कारावृत्तमावरणंस्त्रियः ॥ ॥ २७ ॥ व्यसनेषुनकृच्छ्रेषुनयुद्धेषुस्वयंवरे ॥ नक्रतौनोविवाहेवादर्शनंदूष्यतेस्त्रियः ॥ २८ ॥ सैषाविपद्गताचैवकृ च्छ्रेणचसमन्विता ॥ दर्शनेनास्तिदोषोऽस्यामत्समीपेविशेषतः ॥ २९ ॥ विसृज्यशिबिकांतस्मात्पद्भ्यामेवापसर्पतु ॥ समीपेममवैदेहींपश्यंत्वे तेवनौकसः ॥ ३० ॥ एवमुक्तस्तुरामेणसविमर्शोविभीषणः ॥ रामस्योपानयत्सीतांसन्निकर्षंविनीतवत् ॥ ३१ ॥ ततोलक्ष्मणसुग्रीवौहनूमां श्चप्लवंगमः ॥ निशम्यवाक्यंरामस्यबभूवुर्व्यथिताभृशम् ॥ ३२ ॥ लज्जयात्ववलीयंतीस्वेषुगात्रेषुमैथिली ॥ विभीषणेनानुगताभर्तारंसाऽभ्य वर्तत ॥ ३३ ॥ विस्मयाच्चप्रहर्षाच्चस्नेहाच्चपतिदेवता ॥ उदैक्षतमुखंभर्तुःसौम्यंसौम्यतरानना ॥ ३४ ॥

समय, यज्ञ और विवाहके समय स्त्रियोंका जनसमाजके सन्मुख होना दोषयुक्त नहीं है ॥२८॥ जानकीजीभी बडी भारी विपद् और क्लेशमें पडी हैं इस कारण ऐसे समय विशेष करके हमारे सन्मुख उनका दर्शन दोषयुक्त नहीं होगा॥२९॥इस कारण सीता पालकी छोडकर हमारे निकट आवें और यह समस्त वानरगण उनके दर्शन करें॥३०॥श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुन विभीषणजी दुःखित और नम्र भावसे सीताजीको पैदलही लानेके लिये गये ॥ ३१ ॥ लक्ष्मण वानर श्रेष्ठ सुग्रीवजी और हनुमानूजी श्रीरामचन्द्रजीके ऐसे वचन सुनकर व्यथा पाते हुए॥३२॥इस ओर जनककुमारी सीताजी लाजके मारे सिकुडती हुई मानो अपने शरीरमेंही बैठी जाती हुई विभीषणके पीछे २ आती हुई श्रीरामचन्द्रजीके समीप आईं॥३३॥सुन्दरमुखवाली पतिकोही देवता समझनेवाली श्रीजानकीजी विस्मय

हर्ष और स्नेहके मारे बहुत देरतक अपने पतिका सुन्दर मुख देखती रहीं ॥ ३४ ॥ अपने प्यारे प्राणनाथका पूर्णमासीके चन्द्रमाके समान सरल मुखमंडल बहुत देरतक देखकर जानकीके मनका शोक दुःख जाता रहा उस समय उनका वदनमंडल निर्मल चन्द्रमाके समान शोभायमान होने लगा ॥ ३५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्ध० भाषायां षोडशाधिकशततमः सर्गः॥११६॥ तब जानकीजीको अपने समीपमें आई हुई देखकर श्रीरामचन्द्रजी अपने मनका भाव प्रकाशित करना आरंभ करने लगे ॥ १ ॥ श्रीरामचन्द्रजी बोले भद्रे ! संग्राममें शत्रुका वध करके हमने तुम्हारा उद्धार किया, बलसे जो कुछ करना उचित है यह सब हमने किया ॥२॥ तुम जोराजा रावणसे धर्षित हुईथीं हम वह अवमानना और शत्रुके मूलको विनाश करके हम शान्त हुए हैं शत्रुने

अथसमपनुदन्मनःक्लमंसासुचिरमदृष्टमुदीक्ष्यवैप्रियस्य ॥ वदनमुदितपूर्णचंद्रकांतंविमलशशांकनिभाननातदासीत् ॥ ३५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे षोडशाधिकशततमःसर्ग ॥ ११६ ॥ तांतुपार्श्वेस्थितांप्रह्वांरामःसंप्रेक्ष्यमैथिलीम् ॥ हृदयांतर्गतंभावंव्याहर्तुमुपचक्रमे ॥ १ ॥ एषासिनिर्जिताभद्रेशत्रुंजित्वारणाजिरे ॥ पौरुषाद्यदनुष्ठेयंमयैतदुपपादितम् ॥ २ ॥ गतोऽस्म्यंतममर्षस्यधर्षणासंप्रमार्जिता ॥ अवमानश्चशत्रुश्चयुगपन्निहतौमया ॥ ३ ॥ अद्यमेपौरुषंदृष्टमद्यमेसफलःश्रमः ॥ अद्यतीर्णप्रतिज्ञोऽहंप्रभवाम्यद्यचात्मनः ॥ ४ ॥ यात्वंविरहितानीताचलचित्तेनरक्षसा ॥ दैवसंपादितोदोषोमानुषेणमयाजितः ॥ ५ ॥ संप्राप्तमवमानंयस्तेजसानप्रमार्जति ॥ कस्तस्यपौरुषेणार्थोमहताप्यल्पचेतसः ॥ ६ ॥ लंघनंचसमुद्रस्यलंकायाश्चापिमर्दनम् ॥ सफलंतस्यचश्लाघ्यमकर्महनूमतः ॥ ७ ॥ युद्धेविक्रमतश्चैव हतंमंत्रयतस्तथा ॥ सुग्रीवस्यससैन्यस्यसफलोऽद्यपरिश्रमः ॥ ८ ॥

जो वारंवार अनादरकी बातें कही थीं उनको और शत्रुको साथही हमने नष्ट किया॥३॥आज हमारा श्रम सफल हुआ और सब लोकोंने हमारा पौरुष देखा अधिक करके प्रतिज्ञासे उत्तीर्णहो हमने अपनेको कृतार्थ समझा ॥ ४ ॥ हमारे आश्रममें न रहनेपर चंचलचित्तवाले निशाचरने जो तुमको हरण किया था वह दैवका किया हुआ था सो आज हमनेमानुष होकर उस दैवकृत दोषको दूर किया॥५॥जो पुरुष अपमानको प्राप्त होकर अपने पौरुषसे उसको दूर न करे उसको बलका क्या प्रयोजन है; वह यदि बडाभी हो तोभी उसको अल्प तेजस्वी कहते हैं॥६॥ हनुमान्‌जीका समुद्रको लांघना और लंकाजलाना इत्यादि बडाई करने योग्य जो सर्व कार्यउन्होंने किये आज वहसुफल हुए॥७॥सेनाके सहित सुग्रीवजीने जो हितकारी परामर्श दी थी और युद्धमें पराक्रम प्रगट किया था आज उसका श्रम

सार्थक हुआ ॥ ॥८॥ जो आपसेही वीरश्रेष्ठ विभीषणजी गुणहीन भ्राताको छोडकर हमारे निकट आये थे, आज उन विभीषणजीकाभी परामर्श सफल हुआ ॥ ९ ॥ जब श्रीरामचंद्रजी यह कह रहे थे तब सीताजी यह सब श्रवण करती हुई मृगीके समान उत्फुल्ललोचनवाली हो आंसू छोडने लगीं ॥ १० ॥ परन्तु श्रीरामचन्द्रजीने प्राणप्यारी जानकीजीको निकट उपस्थित देख लोकापवादके भयसे व्याकुल हुए उनका हृदय दुबधामें पडगया था ॥११॥ इस कारण श्रेष्ठ मुखयुक्त कमलनयनी काले घुँघरारे केशवाली, मंद २ चाल चलनेवाली सीताजीसे समस्त राक्षसों और वानरोंके सामने श्रीरामचन्द्रजी बोले ॥१२॥ कि अपमानको दूर करनेके लिये मनुष्यका जो कुछ कर्तव्य है अभिलाष न रहनेपरभी हमने रावणका विनाश करके उस अपमानको दूर कर दिया ॥१३॥ तपस्वियोंमें श्रेष्ठमुनिवर

विभीषणस्यचतथासफलोऽद्यपरिश्रमः ॥ विगुणंभ्रातरंत्यक्त्वायोमांस्वयमुपस्थितः ॥ ९ ॥ इत्येवंवदतःश्रुत्वासीतारामस्यतद्वचः ॥ मृगीवोत्फुल्लनयनाबभूवाश्रुपरिप्लुता ॥ १० ॥ पश्यतस्तांतुरामस्यसमीपेहृदयप्रियाम् ॥ जनवादभयाद्राज्ञोबभूवहृदयंद्विधा ॥ ११ ॥ सीतामुत्पलपत्राक्षींनीलकुंचितमूर्धजाम् ॥ अवदद्वैवरारोहांमध्येवानररक्षसाम् ॥ १२ ॥ यत्कर्तव्यंमनुष्येणधर्षणांप्रतिमार्जता ॥ तत्कृतंरावणंहत्वामयेदंमानकांक्षिणा ॥ १३ ॥ निर्जिताजीवलोकस्यतपसाभावितात्मना ॥ अगस्त्येनदुराधर्षामुनिनादक्षिणेवदिक् ॥ १४ ॥ विदितश्चास्तुभद्रंतेयोऽयंरणपरिश्रमः ॥ सुतीर्णःसुहृदांवीर्यान्नत्वदर्थंमयाकृतः ॥ १५ ॥ रक्षतातुमयावृत्तमपवादंचसर्वतः ॥ प्रख्यातस्यात्मवंशस्यन्यंगंचपरिमार्जता ॥ १६ ॥ प्राप्तचारित्रसंदेहाममप्रतिमुखेस्थिता ॥ दीपोनेत्रातुरस्येवप्रतिकूलासिमेदृढा ॥ १७ ॥ तद्गच्छत्वाऽनुजानेद्ययथेष्टंजनकात्मजे ॥ एतादक्षदिशोभद्रेकार्यमस्तिनमेत्वया ॥ १८ ॥

अगस्त्यजीने जिस प्रकार दुराधर्ष दक्षिण दिशाको जय किया था वैसेही हमनेभी युद्ध करके तुमको रावणसे जीतलिया ॥१४॥ हे भद्रे ! तुम्हारा मंगलहो और तुम निश्चय जानलो कि, सुहृद् लोगोंके वीर्यबलसे रणमें जो दारुण परिश्रम किया है यह परिश्रम हमने कुछ तुम्हारे निमित्त नहीं किया ॥१५॥ तुम्हारे हरण होनेका अपवाद दूर करने और नीचता मिटाने और विख्यात रघुवंशियोंका बलबीर्य दिखानेके लियेही हम ऐसा कार्य करनेको तैयार हुए ॥१६॥ हे सीते ! तुम्हारे चरित्रमें हमको सन्देह पड गया है इस कारण आंख दुखनेवाले रोगीके सामने रक्खे हुए दीपकके समान तुम हमको सहनेके अयोग्य पीडाही देरहीहो ॥ १७ ॥ इसलिये हे भद्रे जनकनंदिनी ! यह दशों दिशा खुली पडी है इनमेंसे जिस दिशामें तुम्हारा अभिलाष हो उस ओरको तुम चली जाओ तुमसे अब

हमारा कोई प्रयोजन नहीं है ॥ १८ ॥ कौन श्रेष्ठ वंशमें उत्पन्न हुआ तेजस्वी पुरुष बहुत समयतक पराये घरमें रही हुई अपनी भार्याको सुहृद् समझकर फिर ग्रहण कर सकता है ॥ १९ ॥ रावणने तुमको कुदृष्टिसे देखा है और अंकमें खैंचा है भला फिर हम तुमको ग्रहण करके किस प्रकारसे अपने सुन्दर और बडे कुलको कलंकित कर सकते हैं? इस कार्यसे हम कुलीन नहीं रह सकते ॥ २० ॥ जिसलिये तुमको जीत लिया हमारा वह अभिप्राय सिद्ध होगया इस कारण अब तुमसे हमारा कोई प्रयोजन नहीं जहां इच्छा हो वहीं चली जाओ ॥ २१ ॥ हे भद्रे सीते! हमने कर्त्तव्य निश्चय करकेही तुमसे यह कहा यदि तुम्हारी इच्छा हो तो तुम लक्ष्मण, भरत या शत्रुघ्नके निकट रह सकती हो ॥ २२ ॥ अथवा हे सीते! तुम सुग्रीव वा विभीषणको या जहां तुम आत्मसमर्पण करसकती हो या जहां तुम स्वच्छन्दता समझो उसी स्थानमें चली जाओ ॥ २३ ॥ तुम रावणके गृहमें बहुत दिनोंतक रही हो उसके ऊपर फिर तुम्हारा रूप असाधारण है, हे

कः पुमांस्तुकुलेजातःस्त्रियंपरगृहोषिताम् ॥ तेजस्वीपुनरादद्यान्सुहृल्लोभेनचेतसा ॥ १९ ॥ रावणांकपरिक्लिष्टांदृष्टांदुष्टेनचक्षुषा ॥ कथंत्वां पुनरादद्यांकुलंव्यपदिशन्महत् ॥ २० ॥ यदर्थंनिर्जितामेत्वंसोऽयमासादितोमया ॥ नास्तिमेत्वय्यभिष्वंगोयथेष्टंगम्यतामिति ॥ २१ ॥ तदद्यव्याहृतंभद्रेमयैतत्कृतबुद्धिना ॥ लक्ष्मणेवाथभरतेकुरुबुद्धिंयथासुखम् ॥ २२ ॥ शत्रुघ्नेवाथसुग्रीवेराक्षसेवाविभीषणे ॥ निवेशयमनःसीते यथावासुखमात्मनः ॥ २३ ॥ नहित्वांरावणोदृष्ट्वादिव्यरूपांमनोरमाम् ॥ मर्षयत्यचिरंसीतेस्वगृहेपर्यवस्थिताम् ॥ २४ ॥ ततःप्रियार्हश्रव णातदाप्रियंप्रियादुपश्रुत्यचिरस्यमानिनी ॥ मुमोचबाष्पंरुदतीतदाभृशंगजेंद्रहस्ताभिहतेववल्लरी ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे सप्तदशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११७ ॥ एवमुक्तातुवैदेहीपरुषंरोमहर्षणम् ॥ राघवेणसरोषेणश्रुत्वाप्रव्यथिता भवत् ॥ १ ॥ सातदाऽश्रुतपूर्वंहिजनेमहतिमैथिली ॥ श्रुत्वाभर्तुर्वचोघोरंलज्जयावनताभवत् ॥ २ ॥ प्रविशंतीवगात्राणिस्वानिसाजनक त्मजा ॥ वाक्छरैस्तैःसशल्येवभृशमश्रूण्यवर्तयत् ॥ ३ ॥

सीते! तुम्हारा दिव्य रूप देख और ऐसा सुयोग पाय और ऐसा सुअवसर पाय रावणका तुमको क्षमा करना असंभव है ॥ २४ ॥ जिन्होंने सदाही प्यारे वचन सुने वही मानिनी जानकीजी प्राणनाथके मुखसे ऐसे कुप्यारे वचन सुनकर श्रेष्ठ हाथीकी शुण्डसे खैंची वेलिके समान वारंवार कंपायमान होकर नेत्रोंसे जल गिराने लगीं ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० युद्ध० भाषायां सप्तदशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११७ ॥ रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजीने क्रोधयुक्त होकर जब ऐसे रोमहर्षणकारी कठोर वचन कहे तब जानकी यह वचन सुनकर अत्यन्त व्यथित हुई ॥ १ ॥ वह सबोंके सामने स्वामीके ऐसे पहले कभी न सुने हुए वचन सुनकर लज्जित हो बहुत ही झुक गई ॥ २ ॥ और अपने अङ्गोंमें ही प्रवेश कर जाती हुई जानकीजी वचनरूप बाणोंकी गांसी हृदयमें लगनेसे अति पीडित हुई ॥ ३ ॥ उसके पीछे

आंसुओंसे युक्त अपना मुख पोंछ धीरे२गद्गद वाणीसे श्रीजानकीजीने अपने स्वामीसे कहा ॥४॥ हे वीर! प्राकृतपुरुष प्राकृत स्त्रीको जिस प्रकारसे वचन कहता है सो आपभी वैसेही दारुण व रूखे वचन हमको सुनाते हैं ॥५॥ हे महावीर ! आप हमको जिस प्रकारसे अपमानित करते हैं सो हम अपने चरित्रसे शपथ करके कहती हैं कि, हम वैसी नहीं ! इसलिये आप हमारे कहनेका विश्वास कीजिये ॥ ६ ॥ प्राकृतस्त्रियोंका चरित्र देखकर आप स्त्री जातीके ऊपर शंका करते हैं परन्तु आपने तो अनेक बार हमारी परीक्षा ली है इस कारण इस शकाको छोड दीजिये ॥७॥ हे प्राणनाथ! जब रावणने हमारे शरीरको स्पर्श किया था तब हम अपने वशमें नही थीं, सो हमारी इच्छा नुसार उसने हमारा अंग नहीं छुआ, इसमें तो दैवही अपराध है ॥ ८ ॥ हे नाथ ! जो हमारे अधीन है उस

ततोवाष्पपरिक्लिन्नंप्रमार्जंतीस्वमाननम् ॥ शनैर्गद्गदयावाचाभर्तारमिदमब्रवीत् ॥ ४ ॥ किंमामसदृशंवाक्यमीदृशंश्रोत्रदारुणम् ॥ रूक्षंश्राव यसेवीरप्राकृतःप्राकृतामिव ॥ ५ ॥ नतथास्मिमहाबाहोयथामावगच्छसि ॥ प्रत्ययंगच्छमेस्वेनचरित्रेणैवतेशपे ॥ ६ ॥ पृथक्स्त्रीणांप्रचारे णजातिंत्वंपरिशंकसे ॥ परित्यजैनांशंकांतुयदितेऽहंपरीक्षिता ॥ ७ ॥ यदहंगात्रसंस्पर्शंगतास्मिविवशाप्रभो ॥ कामकारोनमेतत्रदैवंतत्रापरा ध्यति ॥ ८ ॥ मदधीनंतुयत्तन्मेहृदयंत्वयिवर्तते ॥ पराधीनेषुगात्रेषुकिंकरिष्याम्यनीश्वरी ॥ ९ ॥ सहसंवृद्धभावेनसंसर्गेणचमानद ॥ यदि तेऽहंनविज्ञाताहतातेनास्मिशाश्वतम् ॥ १० ॥ प्रेषितस्तेमहावीरोहनूमानवलोककः ॥ लंकास्थाहंत्वयाराजन्किंतदानविसर्जिता ॥ ११ ॥ प्रत्यक्षंवानरस्यास्यतद्वाक्यसमनंतरम् ॥ त्वयासंत्यक्तयावीरत्यक्तंस्याज्जीवितंमया ॥ १२ ॥ नवृथातेश्रमोऽयंस्यात्संशयेन्यस्यजीवितम् ॥ सुहृज्जनपरिक्लेशोनचायंविफलस्तव ॥ १३ ॥

हृदयको तो कोई नहीं छूसका, वह हृदय तो बराबर आपमेंही लगा हुआ है, परन्तु सब अंग हमारे वशमें नहीं हैं, फिर रक्षकके न होनेसे रावणने इन अंगोंको छुआ इसमें हमारा क्या अपराध है ? ॥ ९ ॥ बहुत कालतक एक साथ रहनेसे आपका और हमारा अनुराग एक दूसरेपर बहुत बढ गया था परन्तु इतने दिनोंतक संग रहनेसे भी जो आपने हमारे स्वभावको नहीं जाना हम इससेही अत्यन्त दुःखमें गिरीं ॥१०॥ हे वीर! जब आपने वीरश्रेष्ठ हनुमान्‌जीको हमारे देखनेको भेजा था तबही हमको क्यों नहीं छोड दिया ? ॥११॥ हे वीर! हनुमान् हमको हमारे छोडनेकी वार्ता श्रवण कराते तो हम उसी समय इनके सन्मुखही अपने प्राणोंको छोड देतीं ॥१२॥ हे महाराज श्रीरामचन्द्रजी !जो हम उसी समय प्राण छोड देतीं तो आपको ऐसे जीवन संशय कर युद्धमें परिश्रम न

करना पडता और वृथा सुहृद् लोगोंको भी ऐसा कष्ट नहीं पडता ॥ १३ ॥ हे राजशार्दूल ! आपने क्रोधके वश हो प्राकृत मनुष्योंके समान हमको भी साधारण स्त्री मनमें समझ लिया ॥ १४ ॥ हम जनकजीके औरससे पैदा हुई हैं इससे कुछ लोग हमको "जानकी–मैथिली" इत्यादि नामोंसे नहीं पुकारते? हम उनकी यज्ञ भूमिसे उत्पन्न हुई थी, इसी कारण अयोनिजा होनेपर भी वह हमको इन २ नामोंसे पुकारा करते हैं। परंतु हे कृतज्ञ! आपने हमारे ऐसे संस्कारित पवित्र चरित्रको भी हमारे ग्रहण करनेका हेतु नहीं समझा ॥ १५॥ हमारी भक्ति और सच्चारित्र्य इत्यादि गुण ग्रामोंने आपके निकट आदर नहीं पाया, ऐसा समझ पडता है कि आपने जो हमारा बालकपनमें पाणि ग्रहण किया था इसको भी आप इसके अस्वीकार करेंगे ॥ १६ ॥ जनककुमारी सीताजी गद्गदवाणीसे ध्यान करती हुई चिन्ता

त्वयातुनृपशार्दूलरोषमेवानुवर्तता ॥ लघुनेवमनुष्येणस्त्रीत्वमेवपुरस्कृतम् ॥ १४ ॥ अपदेशोमेजनकान्नोत्पत्तिर्वसुधातलात् ॥ ममवृत्तंचवृत्तज्ञबहुतेनपुरस्कृतम् ॥ १५ ॥ नप्रमाणीकृतःपाणिर्बाल्येममनिपीडितः ॥ ममभक्तिश्चशीलंचसर्वंतेपृष्ठतःकृतम् ॥ १६ ॥ इतिब्रुवंतीरुदती बाष्पगद्गदभाषिणी ॥ उवाचलक्ष्मणंसीतादीनंध्यानपरायणम् ॥ १७ ॥ चितांमेकुरुसौमित्रेव्यसनस्यास्यभेषजम् ॥ मिथ्यापवादोपहतानाहंजीवितुमुत्सहे ॥ १८ ॥ अप्रीतेनगुणैर्भर्त्रात्यक्तायाजनसंसदि ॥ याक्षमामेगतिर्गंतुंप्रवेक्ष्येहव्यवाहनम् ॥ १९ ॥ एवमुक्तस्तुवैदेह्यालक्ष्मणः परवीरहा ॥ अमर्षवशमापन्नोराघवंसमुदैक्षत ॥ २० ॥ सविज्ञायमनश्छंदंरामस्याकारसूचितम् ॥ चितांचकारसौमित्रिर्मतेरामस्यवीर्यवान् ॥ २१ ॥ नहिरामंतदाकश्चित्कालांतकयमोपमम् ॥ अनुनेतुमथोवक्तुंद्रष्टुंवाप्यशकत्सुहृत् ॥ २२ ॥ अधोमुखंस्थितंरामंततःकृत्वाप्रदक्षिणम् ॥ उपावर्ततवैदेहीदीप्यमानंहुताशनम् ॥ २३ ॥

युक्त हो रोती हुई, दीन भाव युक्त लक्ष्मणजीसे बोलीं ॥१७॥ हे लक्ष्मण ! ऐसी मिथ्या निन्दासे ग्रसित हो अब हम जीना नहीं चाहती हैं इसलिये ऐसे रोगकी एकही औषधिरूप चिता तुम बनाओ ॥१८॥ स्वामीने हमारे गुणोंसे अप्रसन्न होकर जनसमूहके बीचमें हमको छोड दिया, इसलिये अब हम अग्निमें प्रवेश करके अपनी अनुरूप गतिको प्राप्त करेंगी ॥१९॥ जानकीजीके वचन सुन परवीरघाती वीर्यवान् लक्ष्मणजीने क्रोधमें भरकर श्रीरामचन्द्रजीके मुखकी ओर देखा ॥ २० ॥ और आकार व संकेतोंसे श्रीरामचन्द्रजीके मनका अभिप्राय जान उनके अभिलाषानुसार चिता बनाई ॥२१॥ उस कालमें कोई भी उस कालान्तक यमराजके समान श्रीरामचन्द्रजीकी किसी प्रकार विनय करनेपर अथवा उनके साथ बात करनेमें या उनकी ओर देखनेमें साहसी नहीं हुआ ॥२२॥ इसके उपरांत जान

कीजी नीचेको मुख करके स्थित हुए श्रीरामचन्द्रजीकी प्रदक्षिणा कर प्रज्वलित अग्निके निकट गईं ॥२३॥ जानकीजी देवतोंको व ब्राह्मणोंको प्रणाम करके हाथ जोड अग्निके समीप जाय बोलीं ॥२४॥ जब कि हमारा मन कभी श्रीरामचन्द्रकी ओरसे चलायमान नहीं हुआ, तब सब लोकोंके साक्षी अग्नि सब प्रकारसे हमारी रक्षा करें ॥२५॥ हमारा चरित्र शुद्ध होने पर भी श्रीरामचन्द्रजी हमको दुष्ट समझते हैं वैसेही सब लोकके साक्षी अग्नि सब प्रकारसे हमारी रक्षा करें ॥२६॥ सीताजी यह वचन कहती हुई प्रदीप्त चिताकी प्रदक्षिणा करके निःशंकहृदयसे उसमें बैठीं ॥२७॥ इकठे हुए बालक स्त्री इत्यादि सब भीडने देखा कि श्रीजानकीजी प्रदीप्त अग्निमें प्रवेश कर गईं ॥ २८ ॥ तपाये हुए सुवर्णके समान उज्ज्वलकांतिवाली जानकीजी सब लोकोंके सामने प्रज्वलित पावकमें प्रवेश करतीं

प्रणम्यदैवतेभ्यश्चब्राह्मणेभ्यश्चमैथिली॥ बद्धांजलिपुटाचेदमुवाचाग्निसमीपतः ॥२४॥ यथामेहृदयंनित्यंनापसर्पतिराघवात् ॥ तथालोकस्य साक्षीमांसर्वतःपातुपावकः ॥२५॥ यथामांशुद्धचारित्रांदुष्टांजानातिराघवः ॥ तथालोकस्यसाक्षीमांसर्वतःपातुपावकः ॥२६॥ एवमुक्त्वातुवैदेहीपरिक्रम्यहुताशनम् ॥ विवेशज्वलनंदीप्तंनिःशंकेनांतरात्मना ॥२७॥ जनश्चसुमहांस्तत्रबालवृद्धसमाकुलः ॥ ददर्शमैथिलींदीप्तांप्रविशंतीं हुताशनम् ॥२८॥ सातप्तनवहेमाभातप्तकांचनभूषणा ॥ पपातज्वलनंदीप्तंसर्वलोकस्यसन्निधौ॥२९॥ ददृशुस्तांविशालाक्षींपतंतींहव्यवाहनम्॥ सीतांसर्वाणिरूपाणिरुक्मवेदिनिभांतदा॥३०॥ ददृशुस्तांमहाभागांप्रविशंतींहुताशनम्॥ ऋषयोदेवगंधर्वायज्ञेपूर्णाहुतीमिव ॥३१॥ प्रचुक्रुशुः स्त्रियःसर्वास्तांदृष्ट्वाहव्यवाहने ॥ पतंतींसंस्कृतांमंत्रैर्वसोर्धारामिवाध्वरे ॥३२॥ ददृशुस्तांत्रयोलोकादेवगंधर्वदानवाः ॥ शप्तांपतंतींनिरयेत्रिदिवाद्देवतामिव॥३३॥तस्यामग्निंविशंत्यांतुहाहेतिविपुलःस्वनः॥रक्षसांवानराणांचसंबभूवाद्भुतोपमः॥३४॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवा०आदि०च०सा०युद्धकांडेअष्टादशाधिकशततमःसर्गः ॥११८॥ ततोहिदुर्मनारामःश्रुत्वैववदतांगिरः॥दध्यौमुहूर्तंधर्मात्माबाष्पव्याकुललोचनः ॥१॥

हुईं ॥२९॥ सबनेही देख पाया कि, बडे २ नेत्रोंवाली जनककुमारी जानकीजी सुवर्णवेदिकाकेसमान अग्निमें पैठीं ॥३०॥ जब महाभागा सीताजीने अग्निमें प्रवेश किया तब त्रिभुवनके समस्त देवता, गन्धर्व लोकोंने जाना कि मानो यज्ञकुंडमें सम्पूर्ण आहुति दी गई ॥ ३१ ॥ त्रिलोकीकी रहनेवाली स्त्रियाँ सीताजीको परम मंत्रसे संस्कारित वसुधाराकेसमान अग्निमें पैठी हुई देखकर श्रीरामचन्द्रजीकी निन्दा करने लगीं ॥३२॥ देवता, गन्धर्व और दानवगणोंने शापसे ग्रसित हो स्वर्गसे नरकमें गिरती हुई स्वर्गाधिष्ठात्री देवीके समान जानकीजीको अग्निमें गिरते हुए देखा ॥३३॥ इस प्रकारसे जब श्रीजानकीजीने अग्निमें प्रवेश किया तब वानर और राक्षस लोगोंके अद्भुत हाहाकारका बडाभारी शब्द उठा ॥३४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि०युद्ध० भाषायामष्टादशाधिकशततमः सर्गः ॥११८॥ धर्मात्मा

श्रीरामचन्द्रजी उन सबका ऐसा हाहाकार शब्द श्रवण करके उदास हो नेत्रोंमें आंसू भर चिन्ता करने लगे ॥ १ ॥ उसी समयमें यक्षराज कुबेरजी, सब पितृ लोगोंके साथ धर्मराज यम, सहस्राक्ष (हजार नेत्रवाले) इन्द्रजी, जलके राजा वरुण ॥२॥ भगवान् वृषध्वज त्रिलोचन महादेवजी और सर्व लोकोंके रचनेवाले वेदवादियोंमें श्रेष्ठ भगवान् ब्रह्माजी ॥ ३ ॥ व और भी देवतालोग सूर्यके समान प्रकाशित अपने २ विमानोंपर चढ लंकानगरीमें उपस्थित हो श्रीरामचन्द्रके समीप आये ॥४॥ इन सब देवताओंको देखकर जब श्रीरामचन्द्रजी हाथ जोड कर खडे हो गये तब श्रेष्ठ देवतागण अपने २ हाथके गहनोंसे युक्त विशाल बाहु उठाकर कहने लगे ॥५॥ आप सब लोकोंकी सृष्टि करनेवाले हैं और सब कुछ जाननेवालोंके आप स्वामी हैं; और विभु होकरभी किसकारण अग्निमें गिरती

ततोवैश्रवणोराजायमश्चपितृभिःसह ॥ सहस्राक्षश्चदेवेशोवरुणश्चजलेश्वरः ॥ २ ॥ षडर्धनयनःश्रीमान्महादेवोवृषध्वजः ॥ कर्तासर्वस्यलोकस्यब्रह्माब्रह्मविदांवरः ॥ ३ ॥ एतेसर्वेसमागम्यविमानैःसूर्यसन्निभैः ॥ आगम्यनगरींलंकामभिजग्मुश्चराघवम् ॥ ४ ॥ ततःसहस्ताभरणान्प्रगृह्यविपुलान्भुजान् ॥ अब्रुवंस्त्रिदशश्रेष्ठाराघवंप्रांजलिंस्थितम् ॥ ५ ॥ कर्तासर्वस्यलोकस्यश्रेष्ठोज्ञानविदांविभुः ॥ उपेक्षसेकथंसीतांपतंतींहव्यवाहने ॥ कथंदेवगणश्रेष्ठमात्मानंनावबुध्यसे ॥ ६ ॥ ऋतधामावसुःपूर्ववसूनांचप्रजापतिः ॥ त्रयाणामपिलोकानामादिकर्तास्वयंप्रभुः ॥ ७ ॥ रुद्राणामष्टमोरुद्रःसाध्यानामपिपंचमः ॥ अश्विनौचापिकर्णौतेसूर्याचंद्रमसौदृशौ ॥८॥ अंतेचादौचमध्येचदृश्यसेचपरंतप ॥ उपेक्षसेचवैदेहींमानुषःप्राकृतोयथा ॥ ९ ॥ इत्युक्तोलोकपालैस्तैःस्वामीलोकस्यराघवः ॥ अब्रवीत्त्रिदशश्रेष्ठान्रामोधर्मभृतांवरः ॥१०॥ आत्मानंमानुषंमन्येरामंदशरथात्मजम् ॥ सोऽहंयश्चयतश्चाहंभगवांस्तद्ब्रवीतुमे ॥ ११ ॥

हुई जानकीजीकी अपेक्षा करते हैं? आप देवताओंमें श्रेष्ठ होकरभी किस कारणसे अपनेको भूले हुए हैं ॥६॥ आप पहले कल्पमें वसुलोगोंमेंसे प्रजापति ऋतुधामा नाम वसु थे, आप तीनों लोकोंके कर्त्ता स्वयं प्रभु प्रजापति हैं ॥ ७ ॥ रुद्रोंके बीचमें अष्टम रुद्र महादेव तुमही हो और साध्यगणोंमें वीर्यवान् नामक पंचम साध्यरूप तुम नेही धारण किया है. हे देव ! जब आपने विराट्रूप धारण किया था; तब दोनों अश्विनीकुमार आपके श्रवण और चन्द्रमा सूर्य आपके नेत्र हुए थे ॥ ८ ॥ हे देव ! आप प्राणियोंके आदि अन्त दोनोंसे विराजमान रहते इस कारण सब कुछ जानकरभी आज आप प्राकृत मनुष्यके समान जानकीजीको क्यों त्यागते हैं ॥ ९ ॥ धार्मिकश्रेष्ठ लोकनाथ श्रीरामचन्द्रजी इन सब श्रेष्ठ लोकपालोंके वचन सुनकर कहने लगे ॥ १० ॥ कि, "हम तो अपनेको महाराज

दशरथका पुत्र रामनाम मनुष्य जानते हैं, सो हम कौन हैं ? यह आप प्रकाश करके कहिये" ॥ ११ ॥ जब श्रीरामचन्द्रजीने यह कहा तब ब्रह्मवादियोंमें श्रेष्ठ ब्रह्माजी बोले हे सत्यपराक्रम ! हम सत्य कहते हैं आप श्रवण करें ॥१२॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! आपही जलमें शयन करनेवाले विराट्रूपी नारायण हैं शंख, चक्र, गदा और पद्मधारी श्रीमान् देवदेव विष्णु, और जन्ममृत्युरूप शत्रु का नाश करनेवाले एकदंत वाराह स्वरूप हैं ॥१३॥ जो सब लोकोंके आदि, अन्त मध्यमें सबकहीं विराजमान रहते हैं, आप वही सत्यस्वरूप वही अक्षर ब्रह्म और सब लोकोंके परमधर्मस्वरूप चतुर्भुज विष्वक्सेन हैं ॥१४॥ शृङ्गरूप कालही आपका धनुष है, इसलिये शार्ङ्गधन्वा; सब इंद्रियोंके नियंता हो इसीसे हृषीकेश, आपका जन्म नहीं है और अक्षरसेभी आप उत्तम हैं इसलिये पुरुषोत्तम, पाप और लोभ आपको नहीं जीत सकते इसलिये अजित, आप नंदक नामक खड्ग धारण करते हैं इसीसे खड्गधृक्, सर्वव्यापक हैं इससे विष्णु, कृष्ण वर्ण होनेके कारण

इतिब्रुवाणंकाकुत्स्थंब्रह्माब्रह्मविदांवरः ॥ अब्रवीच्छृणुमेवाक्यंसत्यंसत्यपराक्रम ॥ १२ ॥ भवान्नारायणोदेवःश्रीमांश्चक्रायुधःप्रभुः ॥ एकशृंगोवराहस्त्वंभूतभव्यसपत्नजित् ॥ १३ ॥ अक्षरंब्रह्मसत्यंचमध्येचांतेचराघव ॥ लोकानांत्वंपरोधर्मोविष्वक्सेनश्चतुर्भुजः ॥ १४ ॥ शार्ङ्गधन्वाहृषीकेशःपुरुषःपुरुषोत्तमः ॥ अजितःखड्गधृग्विष्णुःकृष्णश्चैवबृहद्बलः ॥ १५ ॥ सेनानीर्ग्रामणीःसर्वस्त्वंबुद्धिस्त्वंक्षमादमः ॥ प्रभवश्चाव्ययश्चत्वमुपेंद्रोमधुसूदनः ॥ १६ ॥ इंद्रकर्मामहेंद्रस्त्वंपद्मनाभोरणांतकृत् ॥ शरण्यंशरणंचत्वामाहुर्दिव्यामहर्षयः ॥ १७ ॥ सहस्रशृंगोवेदात्मशतशीर्षोमहर्षभः ॥ त्वंत्रयाणांहिलोकानामादिकर्तास्वयंप्रभुः ॥ १८ ॥ सिद्धानामपिसाध्यानामाश्रयश्चासिपूर्वजः ॥ त्वंयज्ञस्त्वंवषट्कारस्त्वमोंकारःपरात्परः ॥ १९ ॥

कृष्ण, और इस समस्त ब्रह्माण्डको आप गेंदरूप खिलौनेके समान धारण किये हैं इसीसे आपका बृहद्बल नाम है ॥१५॥ आपही सेनानी, ग्रामणी, सत्यनिश्चयात्मिक बुद्धिवाले हैं, आप भक्तोंका अपराध सहलेते हैं इसीसे क्षमा, इंद्रियोंका निग्रह करनेवाले हैं, इसीसे दम, सृष्टिके उत्पन्न करनेवाले हो इसीसे प्रभव, विनाश न होनेसे अव्यय हो तथा उपेंद्र और मधुसूदन तुम्हारा नाम है ॥१६॥ दिव्य महर्षिगण आपको ही इन्द्रकर्मा, महेन्द्र, रणान्तकृत, शरण और शरण्य नामसे पुकारते हैं ॥१७॥ आपही सहस्रशाखासमन्वित वेदरूप होनेके कारण सहस्रशृङ्ग वेदात्मा विधिमय हैं, बहुत शिरवाले हैं इसलिए शतशीर्ष हैं, श्रेष्ठतम हैं इस लिये महर्षभ और त्रिलोकीकी सृष्टिके उत्पन्न करने वालेहोनेसे आपका स्वयंप्रभु आदिकर्त्ता नाम है॥१८॥आप सबसे पहलेके हैं, सिद्ध साधकलोगोंको आप आश्रय

देनेवाले हैं और आप यज्ञ, वषट्कार, ॐकार और परात्पर स्वरूप हैं ॥१९॥ ब्राह्मण गो इत्यादिमें अन्तर्यामी रूपसे आप दिखाई देते हो, आपका जन्म और अन्त कोई नहीं जानता कि, आप कौनहैं, सर्वप्राणी ब्राह्मणजाति गोजाति ॥२०॥ दशोंदिशा, आकाश, पर्वत और नदी सबही कहीं आप अन्तर्यामी रूपसे प्रवेश किये हुए हैं, आप हजार शिरवाले नेत्रवाले हैं ॥२१॥ आपही सब प्राणियोंके सहित और समस्त पर्वतोंके सहित इस पृथ्वीको धारण करते हैं और पृथ्वीके अन्तमें अर्थात् प्रलयके पीछे जलपर आप शेषशय्यापर शयन करते दिखाई देते हैं ॥२२॥ हे राम! आपही विराटमूर्ति होकर देव, गन्धर्व और दानव युक्त त्रिभुवनको धारण करते हैं। हे राघव ! हम आपके हृदय देवी सरस्वती आपकी जीभ ॥ २३ ॥ और हमारे उत्पन्न किये हुए सब देवता लोग आपके शरीरके रोम हैं, तुम्हारा पलक मारना रात्रि है, और दिन आपका उन्मेष (देखना) है ॥ २४ ॥ सब वेदही आपके संस्कार हैं; जगत्में आपके सिवाय

प्रभवंनिधनंचापिनोविदुःकोभवानिति ॥ दृश्यसेसर्वभूतेषुगोषुचब्राह्मणेषुच ॥ २० ॥ दिक्षुसर्वासुगगनेपर्वतेषुनदीषुच ॥ सहस्रचरणःश्रीमाञ्शतशीर्षःसहस्रदृक् ॥ २१ ॥ त्वंधारयसिभूतानिपृथिवींसर्वपर्वतान् ॥ अंतेपृथिव्याःसलिलेदृश्यसेत्वंमहोरगः ॥ २२ ॥ त्रींल्लोकान्धारयन्रामदेवगंधर्वदानवान् ॥ अहंतेहृदयंरामजिह्वादेवीसरस्वती ॥ २३ ॥ देवारोमाणिगात्रेषुब्रह्मणानिर्मिताःप्रभो ॥ निमेषस्तेस्मृतारात्रिरुन्मेषोदिवसस्तथा ॥ २४ ॥ संस्कारास्त्वभवन्वेदानैतदस्तित्वयाविना ॥ जगत्सर्वंशरीरंतेस्थैर्यंतेवसुधातलम् ॥ २५ ॥ अग्निःकोपःप्रसादस्तेसोमःश्रीवत्सलक्षणः ॥ त्वयालोकास्त्रयःक्रांताःपुरास्वैर्विक्रमैस्त्रिभिः ॥ २६ ॥ महेंद्रश्चकृतोराजाबलिंबद्ध्वासुदारुणम् ॥ सीतालक्ष्मीर्भवान्विष्णुर्देवःकृष्णःप्रजापतिः ॥ २७ ॥ वधार्थंरावणस्येहप्रविष्टोमानुषींतनुम् ॥ तदिदंनस्त्वयाकार्यंकृतंधर्मभृतांवर ॥ २८ ॥ निहतोरावणोरामप्रहृष्टोदिवमाक्रम ॥ अमोघंदेववीर्यंतेनतेमोघाःपराक्रमाः ॥ २९ ॥

और कोई है ही नहीं, सब जगत् आपका शरीरहै, पृथ्वी आपकी स्थिरता है ॥२५॥ अग्नि आपका कोप है, चन्द्रमा आपकी प्रसन्नता है, आप श्रीवत्सलक्षणयुक्त हैं, आपने पहले अपने तीन चरणसे तीन लोक नाप लिये थे ॥२६॥ आपनेही दारुण स्वभाववाले राजा बलिको बांध इंद्रजीको देवताओंका राजा किया था, सीता देवी साक्षात् लक्ष्मीजी हैं और आपही यह प्रजापालक स्वयं प्रकाश कृष्णवर्ण विष्णुजी हैं ॥२७॥ आपने रावणका वध करनेके लियेही यह मनुष्य देह धारण किया है, हे धार्मिकश्रेष्ठ! आपने जिस कारणसे अवतार लिया हमारा वह इच्छित कार्य सिद्ध हो गया॥२८॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! इस समय रावण मरागया है इसकारण कुछ कालतक हर्षितचित्तसे मनुष्य लोकमेंविचरण करते हुए पीछे ब्रह्मलोकको सिधारिये, हे देव ! आपका वीर्य अमोघ है, आपका

पराक्रम निष्फल नहीं होता ॥२९॥ हे राम ! आपका दर्शन कभी व्यर्थ नहीं जाता, और आपकी स्तुतिभी कभी निष्फल नहीं होती; और जो लोग भक्तिपूर्वक आपकी आराधना किया करते हैं, उनकोभी अमोघ फल प्राप्त होता है ॥३०॥ आप साक्षात् पुराणपुरुष पुरुषोत्तम हैं, इस कारण जो आपका अकपट चित्तसे ध्यान करते हैं वह इस लोक और परलोक दोनों जग ही अभिलषित फल पाते हैं ॥३१॥ जो पुरुष इस दिव्य अति श्रेष्ठ मंत्रोंसे कहे हुए सगुण और निर्गुण ब्रह्मविद्याप्रकाशक पुराणइतिहास प्रतिपादक स्तोत्रको पढेंगे, क्या इस लोकमें क्या परलोकमें उनकी कहीं भी पराजय नहीं होगी ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० युद्ध० भाषायामेकोनविंशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११९ ॥ पितामह ब्रह्माजीके कहे हुए यह शुभवचन सुनकर अग्नि देवता सीताजीको

अमोघंदर्शनंरामअमोघस्तवसंस्तवः ॥ अमोघास्तेभविष्यंतिभक्तिमंतोनराभुवि ॥ ३० ॥ येत्वांदेवंध्रुवंभक्ताःपुराणंपुरुषोत्तमम् ॥ प्राप्नुवंतितथाकामानिहलोकेपरत्रच ॥ ३१ ॥ इममार्षस्तवंदिव्यमितिहासंपुरातनम् ॥ येनराःकीर्तयिष्यंति नास्तितेषांपराभवः ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे एकोनविंशाधिकशततमःसर्गः ॥ ११९ ॥ एतच्छ्रुत्वाशुभंवाक्यंपितामहसमीरितम् ॥ अंकेनादायवैदेहीमुत्पपातविभावसुः ॥ १ ॥ विधूयाथचितांतांतुवैदेहींहव्यवाहनः ॥ उत्तस्थौमूर्तिमानाशुगृहीत्वाजनकात्मजाम् ॥२॥ तरुणादित्यसंकाशांतप्तकांचनभूषणाम् ॥ रक्ताम्बरधराम्बालांनीलकुंचितमूर्धजाम् ॥ ३ ॥ अक्लिष्टमाल्याभरणांतथारूपामनिंदिताम् ॥ ददौरामायवैदेहीमंकेकृत्वाविभावसुः ॥ ४ ॥ अब्रवीत्तुतदारामंसाक्षीलोकस्यपावकः ॥ एषातेरामवैदेहीपापमस्यांनविद्यते ॥ ५ ॥

गोदमें लेकर अपनी ज्वालाके भीतरसे निकले ॥१॥ हव्यवाहन (अग्नि) मूर्ति धारे चिताको कंपाते हुए जनककुमारी वैदेहीजीको लेकर शीघ्रतासे निकले ॥२॥ तरुण सूर्यके समान तपाये हुए सुवर्णके गहने पहने लालही रेशमीन वस्त्र पहरे और घुँघरारे बालोंसे युक्त उस समय श्रीजानकीजो थीं ॥३॥ खिले हुए फूलोंकी निर्मल माला पहने हुए थीं वह उनका रूप निंदारहित था, ऐसी जानकीजीको गोदमें लेकर अग्निने श्रीरामचन्द्रजीको दिया ❋ ॥४॥ इसके पीछे सब लोगोंके साक्षी भगवान् अग्निजीने श्रीरामचन्द्रजीके हाथमें जानकीको सौंपकर कहा—यह तुम्हारीही जानकी हैं इनमें कोई पाप नहीं है ॥ ५ ॥

❋ कूर्मपुराणविकाभी इस विषयमें लेखहै कि जानकी खर दूषणके वध उपरान्त अग्निमें प्रवेश करगई थीं, मायाकीसीताका रावणने हरण किया अब वहीं अग्निदेव लाये ॥

हे चरित्रका गर्व करनेवाले ! इन शुभ लक्षणयुक्त अच्छे चरित्रवाली सीताजीने वचन, मन, बुद्धि और नेत्रोंसेभी कभी आपको नहीं उलाघा है ॥६॥ निर्जनव नमें जब आप निकट नहीं थे तब यह उपायरहित और विवश थीं, इस कारण बलगर्वित रावण बलपूर्वक इनको हरण करके लेगया था ॥७॥ यह अतःपुरमें रोकी गई थीं और अपने बंधुबान्धवोंके सम्बन्धसे अलग थीं, भयंकर आकारवाली राक्षसियें सदा इनका पहरा दिया करती थीं, इनका चित्त सदा तुममेंही लगा रहता था, तुम्हारे सिवाय इनके चित्तने और किसीको आश्रय नहीं किया ॥८॥ इनको अनेक प्रकारका धमकाना और लोभ दिखाया गया परन्तु इन्होंने किसी प्रकारसेभी तो रावणको कुछ नहीं समझा, कारण कि इनका अन्तरात्मा तो एकांतभावसे आपमें लगा हुआ है ॥ ९ ॥ इनका अंतःकरण शुद्ध हैं इस कारण यह पापरहित हैं, बस आप इनको ग्रहणकरें और इस विषयमें आप कुछ न कहें सुनें यही हम आपको आज्ञा देते हैं ॥ १० ॥ अग्नि देवताके

नैववाचानमनसानैवबुद्ध्यानचक्षुषा ॥ सुवृत्तावृत्तशौंडीर्यनत्वामत्यचरच्छुभा ॥ ६ ॥ रावणेनापनीतैषावीर्योत्सिक्तेनरक्षसा ॥ त्वयाविरहितादीनाविवशानिर्जनेसती ॥ ७ ॥ रुद्धाचांतःपुरेगुप्तात्वच्चित्तात्वत्परायणा ॥ रक्षिताराक्षसीभिश्चघोराभिर्घोरबुद्धिभिः ॥ ८ ॥ प्रलोभ्यमानाविविधंतर्ज्यमानाचमैथिली ॥ नाचिंतयततद्रक्षस्त्वद्गतेनांतरात्मना ॥ ९ ॥ विशुद्धभावांनिष्पापांप्रतिगृह्णीष्वमैथिलीम् ॥ नकिंचिदभिधातव्याअहमाज्ञापयामिते ॥ १० ॥ ततःप्रीतमनारामःश्रुत्वैवंवदतांवरः ॥ दध्यौमुहूर्तंधर्मात्माहर्षव्याकुललोचनः ॥ ११ ॥ एवमुक्तोमहातेजाधृतिमानुरुविक्रमः ॥ उवाचत्रिदशश्रेष्ठंरामोधर्मभृतांवरः ॥ १२ ॥ अवश्यंचापिलोकेषुसीतापावनमर्हति ॥ दीर्घकालोषिताहीयंरावणांतःपुरेशुभा ॥ १३ ॥ बालिशोबतकामात्मारामोदशरथात्मजः ॥ इतिवक्ष्यतिमांलोकोजानकीमविशोध्यहि ॥ १४ ॥

यह वचन सुनकर वचन बोलनेवालोंमें चतुर श्रीरामचन्द्रजीं प्रसन्न हुए, उनके नेत्र हर्षके मारे खिल गये और एक मुहूर्त्तभरतक चिन्ता करते रहे ॥ ११ ॥ फिर महातेजस्वी महाविक्रमकारी धृतिमान् धार्मिकश्रेष्ठ दशरथकुमार श्रीरामचन्द्रजी देवताओंमें प्रधान अग्नि देवतासे बोले ॥१२॥ जानकीजी तीनों लोकोंमें सबसे अधिक पवित्र हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं, परन्तु इन्होंने रावणके रनिवासमें बहुत दिनों तक बास किया था सो जो हम भली भांतिसे परीक्षा न कर केही इनको ग्रहण कर लेते तो ॥ १३ ॥ " दशरथका पुत्र राम अत्यन्त कामके वश है और संसारी व्यवहारोंको कुछ भी नहीं जानता है " ऐसा सब लोग हमको जानकीके विना परीक्षा ग्रहण करनेपर कहते ॥ १४ ॥

हम प्रथमहीसे जानते थे कि, जानकीजी अपने मनसे और किसीको कुछभी नहीं समझतीं और हमींमें सदा चित्त लगाये रहकर सदा हमारे चरित्रकी रक्षा करती हैं; परन्तु उन्होंने सब सभाके सम्मुख जा अग्निमें प्रवेश किया तो केवल त्रिभुवनके विश्वासके निमित्तही हमने उस समय इनको त्यागा था ॥ १५ ॥ जिस प्रकार महासमुद्र वेलाभूमिको अतिक्रम नहीं कर सकता वैसेही रावणभी अपने तेजसे रक्षित हुई इन बडे२नेत्रवाली जानकीजीको अतिक्रमनहीं कर सका ॥१६॥ हम जानते हैं कि वह दुष्टात्मा रावण प्रदीप्त अग्निकी शिखाके समान इन प्राप्त होनेंके अयोग्य जानकीजीके धर्षण करनेका अभिलाषभी नहीं कर सका ॥१७॥ सूर्यकी प्रभाके समान जानकीजी भी हमसे अभिन्न हैं; सो यह रावणके अंतःपुरमें वास करके व्याकुल हो किसी औरमें हृदयको लगावेंगी यह बात बिल

अनन्यहृदयांसीतांमच्चित्तपरिरक्षिणीम् ॥ अहमप्यवगच्छामिमैथिलींजनकात्मजाम् ॥ १५ ॥ इमामपिविशालाक्षींरक्षितांस्वेनतेजसा ॥ रावणोनातिवर्तेतवेलामिवमहोदधिः ॥ १६ ॥ नचशक्तःसुदुष्टात्मामनसापिहिमैथिलीम् ॥ प्रधर्षयितुमप्राप्यांदीप्तामग्निशिखामिव ॥ १७ ॥ नेयमर्हतिवैक्लव्यंरावणांतःपुरेसती ॥ अनन्याहिमयासीताभास्करस्यप्रभायथा ॥ १८ ॥ विशुद्धात्रिषुलोकेषुमैथिलीजनकात्मजा ॥ नवि हातुंमयाशक्याकीर्तिरात्मवतायथा ॥ १९ ॥ अवश्यंचमयाकार्यंसर्वेषांवोवचोहितम् ॥ स्निग्धानांलोकनाथानामेवंचवदतांहितम् ॥ २० ॥ इत्येवमुक्त्वाविजयीमहाबलःप्रशस्यमानःस्वकृतेनकर्मणा ॥ समेत्यरामःप्रिययामहायशाःसुखंसुखार्होऽनुबभूवराघवः ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च० सा० युद्धकांडे विंशोत्तरशततमःसर्गः ॥ १२० ॥ एतच्छ्रुत्वाशुभंवाक्यंराघवेणानुभाषितम् ॥ ततःशुभतरंवाक्यं व्यजहारमहेश्वरः ॥ १ ॥ पुष्कराक्षमहाबाहोमहावक्षःपरंतप ॥ दिष्ट्याकृतमिदंकर्मत्वयाधर्मभृतांवर ॥ २ ॥

कुल असंभव है ॥ १८ ॥ जिस प्रकारसे आत्मवान् पुरुष कीर्तिको नहीं छोड सकता है वैसेही हमभी त्रिलोकीमें शुद्ध जनककुमारी सीताजीको त्याग करनेमें असमर्थ हैं ॥ १९ ॥ आपने और हितकी कहनेवाले लोकपालोंने स्नेहसहित जो हितकारी वचन कहे वह हमको अवश्य कर्तव्य हैं ॥ २० ॥ महाबलवान् महायशस्वी सुख पानेके योग्य श्रीरामचन्द्रजीने यह वचन कह अपने कर्मसे लोकपालगणोंसे प्रशंसित हुए और प्राणप्यारी जानकीजीसे फिर मिलनेके कारण अत्यन्त प्रसन्नता पाई ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० युद्ध० भाषायां विंशोत्तरशततमः सर्गः ॥ १२० ॥ श्रीरामचन्द्रजीके उच्चारण किये हुए ऐसे शुभवचन सुनकर महेश्वर महादेवजी यह शुभयुक्त वचन बोले ॥ १ ॥ हे धार्मिक श्रेष्ठ कमललोचन ! महावीर विशाल छातीवाले शत्रुघातकी श्रीराम चन्द्रजी ! आपने भाग्यके बलसेही ऐसा बडा कार्य सिद्ध किया है ॥ २ ॥

हे रामचन्द्रजी ! सब लोकोंके सौभाग्यसेही रावणसे उत्पन्न हुआ भयरूप दारुण अंधकार समरमें आपसे दूर होगया ॥ ३ ॥ हे राम ! अब दीन भरत और यशस्विनी कौसल्याजी तथा माता कैकेई व सुमित्राको दर्शन दिखायकर समझाओ बुझाओ ॥४॥ हे महाबलवान् ! इसके पीछे अयोध्याका राज्य प्राप्तकर इष्टमित्रोंको आनंदितकर इक्ष्वाकु कुलमें अपना वंश स्थापन कर ॥ ५ ॥ अश्वमेध यज्ञके अनुष्ठानसे ब्राह्मणोंको धनदान करनेसे उत्तमपद पाय आपका स्वर्गमें आगमन होगा ॥ ६॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! जो पिता होनेके कारण मनुष्यलोकमें तुम्हारे महा गुरु थे; यह देखो वही श्रीमान् महाराज दशरथजी विद्यमान खडे हुए हैं ॥ ७ ॥ यह तुम सरीखे पुत्रके तारनेसे इन्द्रलोकको प्राप्त हुए हैं; तुम भ्राता लक्ष्मणजीके सहित इनको प्रणाम करो ॥८॥ महादेवजीके वचन सुन

दिष्ट्यासर्वस्यलोकस्यप्रवृद्धंदारुणंतमः ॥ अपावृत्तंत्वयासंख्येरामरावणजंभयम् ॥ ३ ॥ आश्वास्यभरतंदीनंकौसल्यांचयशस्विनीम् ॥ कैकेयींचसुमित्रांचदृष्ट्वालक्ष्मणमातरम् ॥ ४ ॥ प्राप्यराज्यमयोध्यांचनंदयित्वासुहृज्जनम् ॥ इक्ष्वाकूणांकुलेवंशंस्थापयित्वामहाबलः ॥ ५ ॥ इष्ट्वातुरगमेधेनप्राप्यचानुत्तमंयशः ॥ ब्राह्मणेभ्योधनंदत्त्वात्रिदिवंगंतुमर्हसि ॥ ६ ॥ एषराजादशरथोविमानस्थःपितातव ॥ काकुत्स्थमानुषेलोकेगुरुस्तवमहायशाः ॥ ७ ॥ इंद्रलोकंगतश्रीमांस्त्वयापुत्रेणतारितः॥लक्ष्मणेनसहभ्रात्रात्वमेनमभिवादय ॥ ८ ॥ महादेववचःश्रुत्वाराघवःसहलक्ष्मणः ॥ विमानशिखरस्थस्यप्रणाममकरोत्पितुः ॥ ९ ॥ दीप्यमानंस्वयालक्ष्म्याविरजोऽम्बरधारिणम् ॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्राददर्शपितरंप्रभुः ॥ १० ॥ हर्षेणमहताविष्टोविमानस्थोमहीपतिः ॥ प्राणैःप्रियतरंदृष्ट्वापुत्रंदशरथस्तदा ॥११॥ आरोप्यांकेमहाबाहुर्वरासनगतःप्रभुः ॥ बाहुभ्यांसंहरिष्वज्यततोवाक्यंसमाददे ॥ १२ ॥ नमेस्वर्गोबहुमतःसमानश्चसुरर्षभैः ॥ त्वयारामविहीनस्यसत्यंप्रतिश्रृणोमिते ॥ १३ ॥ कैकेय्यायानिचोक्तानिवाक्यानिवदतांवर ॥ तवप्रव्राजनार्थानिस्थितानिहृदयेमम ॥ १४ ॥

कर रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजीनेलक्ष्मणजी केसहित विमानके ऊपर बैठे हुए पिता दशरथजीको प्रणाम किया ॥९॥ श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणजीके सहित देखा कि पिता दशरथजी निर्मल वस्त्र पहर करके अपने तेजसे दीप्तिमान् हो रहे हैं ॥ १० ॥ विमानपर बैठे हुए महाराज दशरथजी भी प्राणसे अधिक प्यारे पुत्रोंको देखकर आनंदकी शेषसीमाको प्राप्त कर लेते हुए ॥११॥ इसके उपरान्त, उत्तम आसनपर बैठे उन महावीर राजा दशरथजीने विमानको समीप लायउनको गोदमें ले दोनों बाहोंसे पकड हृदयसे लगा लिया ॥ १२ ॥ वत्स रामचन्द्र ! हम शपथ करके कहते हैं कि तुम्हारे विना हमको स्वर्ग, अथवा श्रेष्ठदेवताओंकी समानता पाना यह कुछ भी अधिक सुखका कारण नहीं लगता ॥ १३ ॥ हे वचन बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ ! तुम्हारे वनवासके लिये जो दारुण वचन कैकेयीने कहे थे, वह सब अब भी हमारे मनमें जाग रहे हैं ॥ १४ ॥

जो हुआ सो आज तुमको कुशल देख व लक्ष्मणको हृदयसे लगाय; हम कुहरसे छूटे हुए सूर्यके समान दुःखसे छूटे ॥१५॥ हे पुत्र ! जिस प्रकार ❀ अष्टावक्रजीसे कहोल नामक धर्मात्मा तरगये थे वैसेही हम भी तुम सरीखे सुपुत्रोंसे तरगये हैं ॥ १६ ॥ हे सौम्य ! तुम साक्षात् पुरुषोत्तम होकर भी देवताओंका कार्य सिद्ध करनेकी वासनासे रावणका संहार करनेके लिये हमारे पुत्ररूप हो गूढभावसे अवतरे थे, यह सब बातें अब हमको जान पडी हैं ॥ १७ ॥ हे शत्रुदमनकारी रामचन्द्रजी कौसल्याके भी अभिलाषा पूर्ण होंगे, और हमारे मतमें वही सिद्धार्थ होंगी कारण कि जब तुम वनसे लौटकर घरको जाओगे तो

त्वांतुदृष्ट्वाकुशलिनंपरिष्वज्यसलक्ष्मणम् ॥ अद्यदुःखाद्विमुक्तोऽस्मिनीहारादिवभास्करः ॥ १५ ॥ तारितोऽहंत्वयापुत्रसुपुत्रेणमहात्मना ॥ अष्टावक्रेणधर्मात्माकहोलोब्राह्मणोयथा ॥ १६ ॥ इदानींचविजानामियथासौम्यसुरेश्वरैः ॥ वधार्थंरावणस्येहपिहितंपुरुषोत्तमम् ॥ १७ ॥ सिद्धार्थाखलुकौसल्यायात्वांरामगृहंगतम् ॥ वनान्निवृत्तंसंहृष्टाद्रक्ष्यतेशत्रुसूदनम् ॥ १८ ॥ सिद्धार्थाःखलुतेरामनरायेत्वांपुरींगतम् ॥ राज्येचैवाभिषिक्तंचद्रक्ष्यंतेवसुधाधिपम् ॥ १९ ॥ अनुरक्तेनबलिनाशुचिनाधर्मचारिणा ॥ इच्छेयंत्वामहंद्रष्टुंभरतेनसमागतम् ॥ २० ॥ चतुर्दशसमाःसौम्यवनेनिर्यापितास्त्वया ॥ बसतासीतयासार्धमत्प्रीत्यालक्ष्मणेनच ॥ २१ ॥ निवृत्तवनवासोऽसिप्रतिज्ञापूरितात्वया ॥ रावणंचरणेहत्वादेवताःपरितोषिताः ॥ २२ ॥

वह हर्षित मनसे तुम्हारा वदनसरोज देखेंगी ॥१८॥ हे राम ! तुम अयोध्यापुरीमें जाय राज्यपर जब प्रतिष्ठित होंगे तो उस समय जो तुमको अभिषेकित हुए देखेंगे उनकी मनोकामना पूर्ण होजायगी ॥ १९ ॥ हे राम ! अनुरागी, बलवान्, पवित्र, धर्मचारी भरतके सहित तुम्हारा समागम देखनेकी हमारी इच्छा है ॥ २० ॥ हे सौम्य ! तुमने हमारी प्रसन्नताके लिये सीता और लक्ष्मणजीके सहित सम्पूर्ण चौदह वर्षतक वनमें बास किया है ॥ २१ ॥ इस समय तुम्हारा वनवास बीत गया है; तुम्हारी वह भारी प्रतिज्ञा पूर्ण होगई है रणमें रावणको मारकर तुमने देवताओंको भी प्रसन्न किया है ॥ २२ ॥

❀ अष्टावक्रके जन्म होनेपर इनके पिता द्रव्यके निमित्त जनकजीके यहां गये उस समय उनकी सभामें एक वंदीवेषकिये महापंडित विद्यमान था यह वरुणका पुत्र छलसे वंदीका वेषकियेथा वरुण जीके यहांयज्ञ होता था ब्राह्मणोंकी आवश्यकताथी स्वयं कोई जाना स्वीकार नहींकरता था इसने यह प्रतिज्ञाकर लीथी किजो हारेगा वह सागरमें डालाजायगा इस बातको कोई नहीं जानताथा जोशा स्त्रार्थ करने आते हारकर सागरमें डाले जाते वहांसे वरुणके दूत उनको ले जाते ऐसे यज्ञमें बडे २ ब्राह्मण पहुंचगये । द्वादश वर्षके होनेपर अष्टावक्रजीने सुना कि मेरेपिताभी सागरमें डाले गये उसी समय जनकको सभामेंजाय बंदीको परास्त कर उसके भी हाथ पैर बांधकर सागरमें डालनेको कहा तब उसने कहा मुझे मत मारो अभीतुम्हारे पिता सहित सब ब्राह्मण आते हैं पिता वरुणके यहांयज्ञ था सो आज पूर्ण होगया यह वार्त्ता होही रहीथी कि सम्पूर्ण ब्राह्मण अष्टावक्रके पितासहित आगये और उन्होंने पुत्रको हृदयसे लगाया और जनकराजासे संमानित हो धनपाय घरआये वरुणपुत्र जलमें अन्तर्धान होगया ॥

इस समय तुम्हारा कार्य सिद्ध होगया है । हे शत्रुविनाशी ! वांछनीय यश भी तुमको मिल गया है इससमय राज्यपर बैठकर सब भ्राताओंके साथ बडी आयुको पाओ ॥२३॥ जब राजा दशरथजीने इसप्रकारसे कहा तब श्रीरामचन्द्रजी हाथ जोडकर उनसे बोले कि हे धर्मज्ञ ! आप कैकेई और भरतके प्रति प्रसन्न होवें ॥२४॥ हे पितः ! आपने कैकेईको "पुत्रके सहित तुमको त्यागकर दिया" यह जो कहा था, सपुत्रा कैकेयीको यह घोररूप शापस्पर्श न कर सके॥२५॥ तब राजा दशरथजीने हाथ जोडकर खड़े हुए श्रीरामचन्द्रजीसे कहा कि "ऐसा ही होगा" और लक्ष्मणजीको फिर हृदयसे लगायकर कहा ॥२६॥ कि हे धर्मज्ञ! श्रीरामचन्द्रजीके प्रसन्न रहनेसे तुम बडा पुण्य, विपुल यश, उत्तम महिमा, और स्वर्ग प्राप्तकर सकोगे ॥२७॥ हे सुमित्राके आनंद बढानेवाले! रामचन्द्र सदा सब लोगोंका

कृतंकर्मयशःश्लाघ्यंप्राप्तंतेशत्रुसूदन॥भ्रातृभिःसहराज्यस्थोदीर्घमायुरवाप्नुहि ॥२३॥ इतिब्रुवाणंराजानंरामःप्रांजलिरब्रवीत्॥ कुरुप्रसादंधर्मज्ञकैकेय्याभरतस्यच ॥२४॥ सपुत्रांत्वांत्यजामीतियदुक्ताकैकयीत्वया ॥ सशापःकैकयींघोरःसपुत्रांनस्पृशेत्प्रभो ॥२५॥ तथेतिसमहाराजोराममुक्त्वाकृतांजलिम् ॥ लक्ष्मणंचपरिष्वज्यपुनर्वाक्यमुवाचह ॥२६॥ धर्मप्राप्स्यसिधर्मज्ञयशश्चविपुलंभुवि ॥ रामेप्रसन्नेस्वर्गंचमहिमानंतथोत्तमम् ॥ २७ ॥ रामंशुश्रूषभद्रंतेसुमित्रानंदवर्धन ॥ रामःसर्वस्यलोकस्यहितेष्वभिरतःसदा ॥ २८ ॥ एतेसेंद्रास्त्रयोलोकाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ अभिवाद्यमहात्मानमर्चंतिपुरुषोत्तमम् ॥ २९ ॥ एतत्तदुक्तमव्यक्तमक्षरंब्रह्मसंमितम् ॥ देवानांहृदयंसौम्यगुह्यंरामःपरंतपः ॥३०॥ अवाप्तंधर्माचरणंयशश्चविपुलंत्वया ॥ एनंशुश्रूषताव्यग्रंवैदेह्यासहसीतया ॥३१॥ इत्युक्त्वालक्ष्मणंराजास्नुषांबद्धांजलिंस्थिताम् ॥ पुत्रीत्याभाष्यमधुरंशनैरेनामुवाचह ॥ ३२ ॥ कर्तव्योनतुवैदेहिमन्युस्त्यागमिमंप्रति ॥ रामेणेदंविशुद्ध्यर्थंकृतंवैत्वद्धितैषिणा ॥ ३३ ॥

हित करनेमें अनुरागी हैं इस कारण तुम इनकीही सेवा करो बस, इससे ही तुम्हारा मंगल होगा ॥ २८ ॥ देखो सिद्ध परमर्षि व इन्द्रादि देवगण सब इन महात्मा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजीको प्रणामादि करके पूजा किया करते हैं ॥ २९ ॥ वेदमें जो अव्यक्त अक्षय ब्रह्मको देवताओंका हृदय और गुप्ततत्व कहकर कीर्तन किया है शत्रु विनाशी परमतपस्वी राम वही गुप्त अक्षर है ॥ ३० ॥ हे लक्ष्मण ! तुमने धीरज धरके वैदेही सीताजीके सहित जो रामचन्द्रजीकी सेवा की है इससे तुमको परमधर्म और विपुल यश प्राप्त हुआ है ॥ ३१ ॥ महाराज दशरथजी लक्ष्मणजीसे यह वचन कहकर फिर सामने हाथ जोडकर खडी हुई पुत्रवधू जानकीजीसे धीरे २ यह मधुर वचन बोले ॥ ३२ ॥ कि बेटी वैदेही ! इस समयके त्यागका रामचन्द्रजीके ऊपर क्रोध न करना कारण कि

इन्होंने तुम्हारे हितका अभिलाष करकेही विशुद्धिके लिये यह कार्य किया है ॥३३॥ बेटी ! तुमने सच्चरित्र प्रणाम करनेके लिये जो दुष्कर कार्य किया यह और स्त्रियोंके लिये बडा कठिन है तुमनेजो कुछ किया इससे समस्त नारीजातिको ही यश प्राप्त होगा ॥३४॥ यद्यपि स्वामीकी सेवाके सम्बन्धमें तुम्हें कुछ भी सिखानेकी आवश्यकता नहीं है तो भी हम अपना कर्तव्य समझकर कहते हैं कियही तुम्हारे परमदेवता हैं ॥३५॥ राजा दशरथजी दोनों पुत्रोंको और पुत्रवधू सीताजीको इस प्रकारकी आज्ञा करके विमानपर बैठे इन्द्रलोकको चले गये ॥३६॥ इस प्रकारसे तेजसे प्रकाशमान महानुभाव राजश्रेष्ठ दशरथजी सीताजीके सहित दोनों पुत्रोंको शिक्षा दे उनसे पूंछ हर्षित मनसे विमानपर चढ इन्द्रलोकको चले गये ॥३७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० युद्धकांडे भाषायामेकविंशाधिकशततमः सर्गः ॥१२१॥

सुदुष्करमिदंपुत्रितवचारित्रलक्षणम् ॥ कृतंयत्तेऽन्यनारीणांयशोह्यभिभविष्यति ॥३४॥ नत्वंकामंसमाधेयाभर्तृशुश्रूषणंप्रति ॥ अवश्यंतुमया वाच्यमेषतेदैवतंपरम् ॥३५॥ इतिप्रतिसमादिश्यपुत्रौसीतांचराघवः ॥ इंद्रलोकंविमानेनययौदशरथोनृपः ॥३६॥ विमानमास्थायमहानुभावः श्रियाचसंहृष्टतनुर्नृपोत्तमः ॥ आमंत्र्यपुत्रौसहसीतयाचजगामदेवप्रवरस्यलोकम् ॥ ३७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे एकविंशाधिकशततमः सर्गः ॥१२१॥ प्रतिप्रयातेकाकुत्स्थेमहेंद्रःपाकशासनः ॥ अब्रवीत्परमप्रीतोराघवंप्रांजलिंस्थितम् ॥१॥ अमोघंदर्शनंरामतवास्माकंनरर्षभ ॥ प्रीतियुक्ताःस्मतेनत्वंब्रूहियन्मनसेप्सितम् ॥२॥ एवमुक्तोमहेंद्रेणप्रसन्नेनमहात्मना ॥ सुप्रसन्नमनाहृष्टो वचनंप्राहराघवः ॥ ३ ॥ यदिप्रीतिःसमुत्पन्नामयितेविबुधेश्वर ॥ वक्ष्यामिकुरुमेसत्यंवचनंवदतांवर ॥ ४ ॥ ममहेतोःपराक्रांतायेगतायमसादनम् ॥ तेसर्वेजीवितंप्राप्यसमुत्तिष्ठंतुवानराः ॥ ५ ॥ मत्कृतेविप्रयुक्तायेपुत्रैर्दारैश्चवानराः ॥ तान्प्रीतमनसःसर्वान्द्रष्टुमिच्छामिमानद ॥ ६ ॥

जब महाराज दशरथजी स्वर्गको चले गये तब देवराजजी परम प्रसन्नतासे हाथ जोड खडे हुए श्रीरामचन्द्रजीसे बोले ॥१॥ हे शत्रुविनाशी ! श्रीरामचन्द्रजी ! तुम्हारे साथहम लोगोंका दर्शन विफल नहीं होना चाहिये; इस कारण हम प्रसन्नतासे कहते हैं कि; जो तुम्हारे मनमें कोई अभिलाष हो तो कहो ॥२॥ जब महात्मा इन्द्रजीने प्रसन्न होकर यह कहा तब श्रीरामचन्द्रजी अत्यन्त प्रसन्न व हर्षित होकर विनीत भावसे यह वचन बोले ॥३॥ हे वचन बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ देव राज इन्द्र ! जो आप हमसे प्रसन्न हुए हैं तो जो कुछ हम कहते हैं, हमारे वही वाक्य सफल हों ॥४॥ हे देवराज ! जो वानरगण हमारे लिये पराक्रम प्रकाश करके यमपुरको चले गये हैं वह समस्तही उठ बैठें ॥५॥ हे मान देनेवाले ! हमारे यह अभिलाष हैं कि, जो हमारे लिये पुत्र स्त्रीजनोंसे वियुक्त हुए हैं वह फिर

जीवितहो विचरते हुए प्रसन्नता पूर्वक फिरें ॥६॥ हे पुरन्दर! जो विक्रमकारी शूर वानरगण हमारी विजयके लिये अपनी मृत्युको कुछ न समझते हुए अत्यन्त यत्न करके मृतक हुए हैं आप उन सबको जिला दीजिये ॥७॥ हे देवराज! हम यही वर चाहते हैं कि; जिन वानरोंने हमारे हितके लिये अपनी मृत्युको कुछ भी नहीं समझा, वह सब आपके प्रसादसे हमारे साथ मिलें ॥८॥ हे मानद! हम इन ऋक्ष, गोपुच्छ और वानरोंको पहलेके समान नीरोग, व्रणरहित, और बल व पौरुषयुक्त देखनेकी इच्छा करते हैं ॥९॥ और जिस स्थानमें यह वानर लोग रहें वह स्थान अकालमें भी कंद मूल फल और पुष्पोंसे परिपूर्ण रहे और वहांकी नदियां सब निर्मल जलवाली रहें ॥१०॥ महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर इन्द्रजीने प्रीतिसे पूर्ण वचनोंसे उत्तर दिया ॥११॥ हे तात! रघुश्रेष्ठ

विक्रान्ताश्चापिशूराश्चनमृत्युंगणयंतिच ॥ कृतयत्नाविपन्नाश्चजीवयैतान्पुरंदर ॥७॥ मत्प्रियेष्वभिरक्ताश्चनमृत्युंगणयंतिये ॥ त्वत्प्रसादात्समेयुस्तेवरमेतमहंवृणे ॥ ८ ॥ नीरुजोनिर्व्रणांश्चैवसंपन्नबलपौरुषान् ॥ गोलांगूलांस्तथर्क्षांश्चद्रष्टुमिच्छामिमानद ॥९॥ अकालेचापिपुष्पाणि मूलानिचफलानिच ॥ नद्यश्चविमलास्तत्रतिष्ठेयुर्यत्रवानराः ॥१०॥ श्रुत्वातुवचनंतस्यराघवस्यमहात्मनः ॥ महेंद्रःप्रत्युवाचेदंवचनंप्रीतिसंयुतम् ॥११॥ महानयंवरस्तातयस्त्वयोक्तोरघूत्तम॥ द्विर्मयानोक्तपूर्वंचतस्मादेतद्भविष्यति ॥ १२ ॥ समुत्तिष्ठंतुतेसर्वेहतायेयुधिराक्षसैः ॥ ऋक्षाश्चसहगोपुच्छैर्निकृत्ताननबाहवः ॥१३॥ नीरुजोनिर्व्रणाश्चैवसंपन्नबलपौरुषाः ॥ समुत्थास्यंतिहरयःसुप्तानिद्राक्षयेयथा ॥ १४ ॥ सुहृद्भिर्बान्धवैश्चैवज्ञातिभिःस्वजनेनच ॥ सर्वएवसमेष्यंतिसंयुक्ताःपरमामुदा ॥ १५ ॥ अकालेपुष्पशबलाःफलवंतश्चपादपाः ॥ भविष्यंतिमहेष्वास नद्यश्चसलिलायुताः ॥ १६ ॥ सव्रणैःप्रथमंगात्रैरिदानींनिर्व्रणैःसमैः ॥ ततःसमुत्थिताःसर्वेसुप्त्वेवहरिसत्तमाः ॥ ११७ ॥

तुमने दुर्लभ वरकी प्रार्थना की है परन्तु हमारा वचन कभी मिथ्या नहीं होता इस कारण तुमने जो कुछ मांगा वही होगा ॥ १२ ॥ जो रीछ और गोपुच्छ वानरगण राक्षसकुल करके बांहोंके कटजानेसे या शिरके फट जानेसे मृतक हुए हैं वह सबही जीवितहोजाँय ॥१३॥ समस्त वानरगण पहलेके समान बल वीर्य संपन्न हो रोगरहित व घावहीन हो इस प्रकारसे उठ बैठें मानो सोतेसे जागे हैं ॥१४॥ यह सब सुहृदयबांधव जातिसुजन सखाओंकेसाथ तथा परम प्रीतियुक्तहो फिर अपनी स्त्रीआदिके साथ मिलेंगे ॥१५॥ हे महाधनुष धारणकरने वाले यह वानर जहाँ कहीं भी वास करेंगे, उस स्थानके वृक्ष विना ऋतुके आयेभी फल उत्पन्न करेंगे और उनमें फूल लगेंगे, व नदियोंमें सदा ही जल भरा रहा करेगा ॥१६॥ इनकी देहोंमें जो घाव हुए हैं, इस समय यह घावरहित और पहलेके

समान सावधान होजायँगे, इन्द्रजीके यह वचन कहते हीमृतक हुए वानरश्रेष्ठगण सोते हुएके समानउठने लगे ❀॥१७॥ यह देखकर सब वानर यह क्या हुआ कहकर विस्मित हुए इसके उपरान्त समस्त उत्तम देवता परमहर्षित होकर कार्य सिद्ध किये श्रीराम लक्ष्मणजीकी बडी भारी प्रशंसा कर श्रीरामचन्द्रजीको निहार ॥१८॥ परमप्रीतिकेसहित स्तुति करतेहुए श्रीरामचन्द्रजीसे बोले कि, हे राजन्! इस समयइस स्थानसे अयोध्याको जाइये और वानरलोगोंकोभी अपने २ स्थानपर पठाइये ॥१९॥ व अनुरागिनी यशस्विनी जानकीजीको समझाइये बुझाइये और तुम्हारे शोकके मारे मुनियोंके व्रतका आचरण करतेहुए अपने भ्राता भरतजीसे तुम मिलो ॥२०॥ महात्मा शत्रुघ्न और माताओंको जाकर दर्शन दीजिये, और राज्यपर अभिषेकित हो पुरवासी व मंत्रियोंको आनंदित कीजिये॥२१॥

बभूवुर्वानराःसर्वेकिंत्वेतदितिविस्मिताः॥काकुत्स्थपरिपूर्णार्थंदृष्ट्वासर्वेसुरोत्तमाः ॥१८॥ अब्रुवन्परमप्रीताःस्तुत्वारामंसलक्ष्मणम् ॥ गच्छायो ध्यामितोराजन्विसर्जयचवानरान् ॥ १९ ॥ मैथिलींसांत्वयस्वैनामनुरक्तांयशस्विनीम् ॥ भ्रातरंभरतंपश्यत्वच्छोकाद्व्रतचारिणम् ॥ २० ॥ शत्रुघ्नंचमहात्मानंमातॄःसर्वाःपरंतप ॥ अभिषेचयचात्मानंपौरान्गत्वाप्रहर्षय ॥ २१ ॥ एवमुक्त्वासहस्राक्षोरामंसौमित्रिणासह ॥विमानैःसू र्यसंकाशैर्ययौहृष्टःसुरैःसह ॥ २२ ॥ अभिवाद्यचकाकुत्स्थःसर्वांस्तांस्त्रिदशोत्तमान् ॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्रावासमाज्ञापयत्तदा ॥ २३ ॥ तत स्तुसालक्ष्मणरामपालितामहाचमूर्हृष्टजनायशस्विनी ॥ श्रियाज्वलंतीविरराजसर्वतोनिशाप्रणीतेवहिशीतरश्मिना॥२४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामा यणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडेद्वाविंशाधिकशततमः ॥ सर्गः ॥ १२२ ॥ तांरात्रिमुषितंरामंसुखोदितमरिंदमम्॥ अब्रवी त्प्रांजलिर्वाक्यंजयपृष्ट्वाविभीषणः ॥ १ ॥

लक्ष्मणजीके सहित श्रीरामचन्द्रजीसे यह वचन कहकर हर्षित मनसे और सब देवताओंके साथ सूर्यके समान चमकवाले विमानपर चढकर इन्द्रजी चले गये ॥२२॥ श्रीरामचन्द्रजीने भी भ्राता लक्ष्मणजीके सहित उनसब देवताओंको प्रणाम कर सब सेनाको टिकानेकी आज्ञा दी ॥२३॥ उस कालमें रामलक्ष्मणजीसे पालित वह तेजयुक्त यशस्विनी बडी भारी प्रसन्नता युक्त वानरसेना चन्द्रमायुक्त रात्रिके समान सब ओर कान्तिसे प्रकाशित होती शोभायमान हुई ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि०युद्ध०भाषायां द्वाविंशाधिकशततमः सर्गः ॥१२२॥ श्रीरामचन्द्रजी उसरात्रिको सुखसे बिताय जब दूसरे दिन प्रातःकालको उठे तब

❀ जो अमृत वर्षा इन्द्रने वानर जिवाये ऐसा अर्थ किया जाय तो यदि राक्षसोंके जी उठनेकी शंका प्राप्त हो सो नहीं करनी क्योंकि मरे हुए राक्षसोंको निशाचर दग्ध करके उनकी भस्म सागरमें फेंक देते थे अथवा उनके शरीरोंको सागरमें डाल देते थे, जिससे यह रावणको विदित हो कि राक्षस नहीं मारे गये जैसा पूर्व लिख आये हैं इस कारण राक्षसोंके जीनेकी संभावना नहीं ।

विभीषणजीने "जयजय" करके हाथ जोड उनसे कहा ॥१॥ स्नानकरनेके लिये उत्तम २ अंगरागउबटन वस्त्राभूषण और विविध भाँतिके दिव्य चंदनकी मालायें ॥२॥ पहरानेमें बडी चतुर कमलनयनी स्त्रियें वह सब पदार्थ लिये आपके सामने खडी हैं; हे राघव! यह आपको स्नान कराकर भूषित करेंगी सो क्या आज्ञा होती है ? ॥ ३ ॥ जब विभीषणजीने ऐसा कहा तो श्रीरामचन्द्रजी विभीषणजीसे बोले कि तुम सुग्रीवादि वानरश्रेष्ठोंके लिये स्नानादिका सत्कार करो ॥४॥ हे सखा ! सत्यनिष्ठ महावीर सुखपानेके योग्य भरत हमारे लिये सत्यमें टिके व्याकुल मनसे रहते हैं ॥ ५ ॥ सो हम जबतक उन धर्मात्मा कैकेयीके पुत्रको नहीं देखते हैं तबतक स्नान या वस्त्र आभूषणादिको अच्छा नहीं समझते ❀ ॥६॥ इस कारण जिससे शीघ्रही हम अयोध्या नगरीमें पहुँचे ऐसा उपाय देखो

स्नानानिचांगरागाणिवस्त्राण्याभरणानिच ॥ चंदनानिचमाल्यानिदिव्यानिविविधानिच ॥२॥ अलंकारविदश्चैतानार्यःपद्मनिभेक्षणाः ॥ उपस्थितास्त्वांविधिवत्स्नापयिष्यंतिराघव ॥३॥ एवमुक्तस्तुकाकुत्स्थःप्रत्युवाचविभीषणम् ॥ हरीन्सुग्रीवमुख्यांस्त्वंस्नानेनोपनिमंत्रय ॥ ४ ॥ सतुताम्यतिधर्मात्मामममहेतोःसुखोचितः॥ सुकुमारोमहाबाहुर्भरतःसत्यसंश्रयः॥५॥ तंविनाकैकयीपुत्रंभरतंधर्मचारिणम् ॥ नमेस्नानंबहुमतंवस्त्राण्याभरणानिच ॥६॥ एतत्पश्ययथाक्षिप्रंप्रतिगच्छामतांपुरीम् ॥ अयोध्यांगच्छतोह्येषपंथाःपरमदुर्गमः॥ ७ ॥ एवमुक्तस्तुकाकुत्स्थंप्रत्युवाचविभीषणः॥अह्नात्वांप्रापयिष्यामितांपुरींपार्थिवात्मजः ॥८॥ पुष्पकंनामभद्रंतेविमानंसूर्यसन्निभम् ॥ ममभ्रातुःकुबेरस्यरावणेनबलीयसा ॥ ९ ॥ हृतंनिर्जित्यसंग्रामेकामगंदिव्यमुत्तमम् ॥ त्वदर्थंपालितंचेदंतिष्ठत्यतुलविक्रम ॥१०॥ तदिदंमेघसंकाशंविमानमिहतिष्ठति ॥ येनयास्यसियानेनत्वमयोध्यांगतज्वरः ॥ ११ ॥ अहंतेयद्यनुग्राह्योयदिस्मरसिमेगुणान् ॥ वसतावदिहप्राज्ञयद्यस्तिमयिसौहृदम् ॥ १२ ॥

कारण कि जानेको मार्ग अतिदुर्गम है ॥७॥ जब श्रीरामचन्द्रजीने यह कहा तब विभीषणजी बोले कि, हे राजकुमार! आपका मंगल हो हम आपको अतिशीघ्र अयोध्या नगरीमें पहुँचा देंगे ॥८॥ हमारे भ्राता कुबेरजीका पुष्पक नामक जो सूर्यके समान विमान था सो रावण बलपूर्वक उसको हरण कर लाया था ॥९॥ हे अतुल विक्रम! युद्धमें जीतकर लाया हुआ वह कामगामी दिव्य विमान आपके लियेही तैयार रक्खा है ॥१०॥ वह मेघके समान विमान इस लंकापुरीमेंही रक्खा हुआ है आप उस विमानपर चढकर सरलतासे अयोध्यापुरीमें पहुँचजायँगे ॥११॥ हे प्राज्ञश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी! इस समय जो हमारे ऊपर अनुग्रह करना कर्तव्य

❀ दोहा-तोर कोश गृह मोर सब सत्यवचन सुन तात । दशा भरतकी सुमिरि मोहि, पलक कल्प सम जात ॥ १ ॥ तापस वेष शरीर कृश, जपे निरन्तर मोहि । देखौं वेगि सो यत्न कर, सखा निहोरौं तोहि ॥ २ ॥ जो जैहों बीते अवधि, जियत न पाऊं वीर ॥ दशा भरतकी सुमिरि प्रभु, पुनि २ पुलक शरीर ॥ ३ ॥

समझते हो, यदि हमारे समस्त गुण आपको याद हों और यदि आप हमको अपना सुहृद् समझते हों ॥१२॥ हे महाराज रामचन्द्र! तो आप लक्ष्मण और जानकी जीके सहित कुछ थोडेसे दिन इस स्थानमें टिके हमारी पूजा ग्रहण कर अयोध्याको जायँ ॥१३॥ हे महाराज! हम प्रीति सहित आपकी पूजा करेंगे, आप अपनी सेना व सुहृद् लोगोंके साथ प्रीतिसे कीहुई हमारी इस सत्क्रियाको ग्रहण कीजिये ॥१४॥ हे रघुनंदन! हम आपको आज्ञा नहीं देते, प्रीति मान और सुहृद ताके वश सेवकके समान आपकी प्रसन्नता पानेकी अभिलाषा करते हैं ॥१५॥ विभीषणजीने जब इस प्रकारसे कहा तब श्रीरामचन्द्रजी समस्त वानर राक्षसोंके सन्मुख बोले ॥१६॥ हे वीर! सब प्रकारसे चेष्टा करके यत्न सहित मंत्रीपन और सुहृदताहीसे तुम करके हम भलीभांति पूजे गये हैं ॥१७॥ हे राक्षसनाथ!

लक्ष्मणेनसहभ्रात्रावैदेह्याभार्ययासह ॥ अर्चितःसर्वकामैस्त्वंततोरामगमिष्यसि ॥ १३ ॥ प्रीतियुक्तस्यविहितांससैन्यःससुहृद्गणः ॥ सत्क्रियांराममेतावद्गृहाणत्वंमयोद्यताम् ॥१४॥ प्रणयाद्बहुमानाच्चसौहार्देनचराघव ॥ प्रसादयामिप्रेष्योऽहंनखल्वाज्ञापयामिते ॥१५॥ एवमुक्तस्ततोरामःप्रत्युवाचविभीषणम् ॥ रक्षसांवानराणांचसर्वेषामेवशृण्वताम् ॥ १६ ॥ पूजितोऽस्मित्वयावीरसाचिव्येनपरेणच ॥ सर्वात्मनाचचेष्टाभिःसौहार्देनपरेणच ॥ १७ ॥ नखल्वेतन्नकुर्यांतेवचनंराक्षसेश्वर ॥ तंतुमेभ्रातरंद्रष्टुंभरतंत्वरतेमनः ॥ १८ ॥ मांनिवर्तयितुंयोऽसौचित्रकूटमुपागतः ॥ शिरसायाचतोयस्यवचनंनकृतंमया ॥१९॥ कौसल्यांचसुमित्रांचकैकेयींचयशस्विनीम् ॥ गुहंचसुहृदंचैवपौराञ्जानपदैःसह ॥ २० ॥ अनुजानीहिमांसौम्यपूजितोऽस्मिविभीषण ॥ मन्युर्नखलुकर्तव्यःसखेत्वांचानुमानये ॥ २१ ॥ उपस्थापयमेशीघ्रंविमानंराक्षसेश्वर ॥ कृतकार्यस्यमेवासःकथंस्यादिहसंमतः ॥ २२ ॥

भ्राता भरतके देखनेको हमारा मन अत्यन्त चाह रहा है; इसी कारण हम तुम्हारा कहा नहीं कर सकते ॥१८॥ भरतजी हमको लौटानेके लिये चित्रकूटतक आये और हमारे चरणोंपर गिरकर उन्होंने प्रार्थना भी की परन्तु हमने उनकी प्रार्थनाके अनुसार कार्य नहीं किया इसलिये हमारा मन अत्यन्त व्याकुल हो रहा है ॥१९॥ अब यशस्विनी कौशल्या, सुमित्रा, कैकेयी व मित्र गुहको और सब पुरवासियोंके सहित जनपदोंको हम बहुत शीघ्र देखा चाहते हैं ॥२०॥ इस कारण हे सौम्य विभीषण! हमको विदा दो। हे विभीषण! हम तुम्हारी सुहृदतासेही पूजे जाचुके; हे सखे! हमने तुम्हारी प्रार्थना न मानी इससे कुछ दुःखित न होना ॥२१॥ विशेष करके हमारा कार्य सिद्ध होगया है; फिर भला इस स्थानमें और अधिक दिनतक रहना किस प्रकारसे संभव हो सकता है? तुम शीघ्रही उस विमानको यहांपर ले आओ॥२२॥

रामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर राक्षसराज विभीषणजीने अति शीघ्रतासे सूर्यके समान वह विमान मँगवाया ॥ २३ ॥ सब अंगोंमें कंचनसे चित्रित वैदूर्य मणियोंसे जडा हुआ; वेदीयुक्त भाँति२के शालागृहोंसे रक्षित सब जगह चांदीकी कांतिवाला ॥ २४ ॥ श्वेत वर्णकी ध्वजा पताकाओंसे अलंकृत कनककमल विभूषित कंचनकी अटाअटारियोंसे युक्त ॥ २५ ॥ किंकिणीजालसे शोभित मणिमुक्तामय झरोखोंके सहित, और स्थान २ पर उसमें मधुर मधुर शब्द करनेवाले घंटे लग रहे थे ॥ २६ ॥ मेरु पर्वतके शिखरके समान आकारवाला विश्वकर्माका बनाया हुआ चांदी और मोतीसे बने अनेक धवरहरोंसे समन्वित ॥ २७ ॥ जिसका नीचे कासब फरश स्फटिक मणिका बनाया और वैदूर्य मणिसे भी बडे २ मोलके बिछौने बिछे हुए थे; स्थान २ पर धन भरा

एवमुक्तस्तुरामेणराक्षसेंद्रोविभीषणः ॥ विमानंसूर्यसंकाशमाजुहावत्वरान्वितः ॥२३॥ ततःकांचनचित्रांगंवैदूर्यमणिवेदिकम् ॥ कूटागारैःपरिक्षिप्तंसर्वतोरजतप्रभम् ॥ २४ ॥ पांडुराभिःपताकाभिर्ध्वजैश्चसमलंकृतम् ॥ कांचनंकांचनैर्हर्म्यैर्हेमपद्मविभूषितैः ॥२५॥ प्रकीर्णकिंकिणीजालैर्मुक्तामणिगवाक्षकम् ॥ घंटाजालैःपरिक्षिप्तंसर्वतोमधुरस्वनम् ॥२६॥ तंमेरुशिखराकारंनिर्मितंविश्वकर्मणा ॥ बृहद्भिर्भूषितंहर्म्यैर्मुक्तारजतशोभितैः ॥२७॥ तलैःस्फटिकचित्रांगैर्वैदूर्यैश्चवरासनैः ॥ महार्हास्तरणोपेतैरुपपन्नंमहाधनैः ॥२८॥ उपस्थितमनाधृष्यंतद्विमानंमनोजवम्॥ निवेदयित्वारामायतस्थौतत्रविभीषणः२९॥तत्पुष्पकंकामगमंविमानमुपस्थितंभूधरसन्निकाशम्॥दृष्ट्वातदाविस्मयमाजगामरामःससौमित्रिरुदारसत्त्वः॥३०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०युद्धकांडे त्रयोविंशाधिकशततमः सर्गः॥१२३॥ उपस्थितंतुतंकृत्वापुष्पकंपुष्पभूषितम्॥अविदूरेस्थितोराममित्युवाचविभीषणः॥१॥सतुबद्धांजलिपुटोविनीतोराक्षसेश्वरः॥अब्रवीत्त्वरयोपेतःकिंकरोमीतिराघवम् ॥२॥

हुआ था ॥ २८ ॥ इस प्रकारका मनके वेगके समान चलनेवाला और धर्षण न होनेवाला विमान जब आया तब राक्षसराज विभीषणजी श्रीरामचन्द्रजीको विमान निवेदन करके खडे हो गये ॥ २९ ॥ कामनाके अनुसार चलनेवाले पर्वतके समान पुष्पकविमानको देखकर उदार चित्तवाले श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीके सहित अत्यन्त विस्मित हुए ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० युद्ध० भषायां त्रयोविंशत्यधिकशततमः सर्गः ॥ १२३ ॥ पुष्पोंसे सजे हुए पुष्पक विमानको बहुतही निकट खडा कर और धोरेही खडे हो श्रीरामचन्द्रजीसे विभीषणजी बोले ॥ १ ॥ हाथ जोडकर नीतिभावसे राक्षसोंके राजा विभीषणजी बडी शीघ्रतासे बोले कि; हे रघुनन्दन ! अब हम क्या करें ? ॥ २ ॥

महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी यह वचन सुनकर लक्ष्मणजीके साथ परामर्श कर स्नेह सहित विभीषणजीसे बोले ॥ ३ ॥ कि, हे विभीषण ! इन वानर और रीक्षलोगोंने अतियत्नसहित कार्य किया है इस कारण अनेक प्रकारके रत्न, धन और वस्त्रादि देकर उनको सन्तुष्ट करो ॥ ४ ॥ हे राक्षसनाथ ! इन सबने प्राणोंका भय छोड हर्षित अंतःकरणसे युद्ध किया था, संग्राममसे इन सबोंने कभी मुख नहीं मोडा हमने उन्हीं सबकी सहायतासे इस लंकापुरीको जीता कि जिसको पहले किसीने नहीं जीता था ॥ ५ ॥ इस कारण तुम इन कार्य सिद्ध किये समस्त वानर और रीछोंको धन रत्न दान करके इनका परिश्रम सफल करो ॥ ६ ॥ तुम कृतज्ञताके सहित इनका इस प्रकार यथाविधिसे सन्मान करोगे तो यह वानरयूथपतिगण आनंदित और कृतज्ञ हो जायँगे ॥ ७ ॥ तुमको दान करनेमें रत और न्यायानुसार यथासमयमें कर ग्राहक, कृपापरवश व कृतज्ञ जानकर सबही तुम्हारे ऊपर अनुराग करेंगे इस कारणही हम तुमसे

तमब्रवीन्महातेजालक्ष्मणस्योपश्रृण्वतः ॥ विमृश्यराघवोवाक्यमिदंस्नेहपुरस्कृतम् ॥ ॥ ३ ॥ कृतप्रयत्नकर्माणःसर्वएववनौकसः ॥ रत्नैरर्थैश्चविविधैःसंपूज्यंतांविभीषण ॥ ४ ॥ सहामीभिस्त्वयालंकानिर्जिताराक्षसेश्वरः ॥ हृष्टैःप्राणभयंत्यक्त्वासंग्रामेष्वनिवर्तिभिः ॥ ५ ॥ तइमेकृतकर्माणःसर्वएवबनौकसः ॥ धनरत्नप्रदानैश्चकर्मैषांसफलंकुरु ॥ ६ ॥ एवंसंमानिताश्चैतेनंद्यमानायथात्वया ॥ भविष्यंतिकृतज्ञेननिर्वृताहरियूथपाः ॥ ७ ॥ त्यागिनंसंग्रहीतारंसानुक्रोशंजितेंद्रियम् ॥ सर्वेत्वामभिगच्छंतिततःसंबोधयामिते ॥ ८ ॥ हीनंरतिगुणैःसर्वैरभिहंतारमाहवे ॥ सेनात्यजतिसंविग्नानृपतिंतंनरेश्वर ॥९॥ एवमुक्तस्तुरामेणवानरांस्तान्विभीषणः ॥ रत्नार्थसंविभागेनसर्वानेवाभ्यपूजयत् ॥ १० ॥ ततस्तान्पूजितान्दृष्ट्वारत्नार्थैर्हरियूथपान् ॥ आरुरोहतदारामस्तद्विमानमनुत्तमम् ॥ ११ ॥ अंकेनादयवैदेहींलज्जमानांमनस्विनीम् ॥ लक्ष्मणेनसहभ्रात्राविक्रांतेनधनुष्मता ॥ १२ ॥ अब्रवीत्सविमानस्थःपूजयन्सर्ववानरान् ॥ सुग्रीवंचमहावीर्यंकाकुत्स्थःसविभीषणम् ॥ १३ ॥

ऐसा कहते हैं ॥ ८ ॥ हे राक्षसराज ! कामिनियें जिस प्रकार रतिशक्तिहीन पतिको त्याग देती हैं, वैसेही सेना दानमानादिसे सेनाको न प्रसन्न करनेवाले और समरमें वृथा सिपाहियोंका नाश करनेवाले राजाको उदास हो त्याग देती है ॥ ९ ॥ श्रीरामचन्द्रजीसे इस प्रकार कहे जाकर विभीषणजीने विभागके अनुसार रत्न व धनादिदान करके सब वानरोंका सन्मान किया ॥१०॥ धन और रत्नोंसे वानर और यूथपति लोगोंको पूजित देखकर वहांही श्रीरामचन्द्रजी उस श्रेष्ठ विमान पर चढे ॥ ११ ॥ गोदमें चिन्ताशील व लज्जित हुई जानकीजीको बैठाय भ्राता लक्ष्मणजीके सहित धनुषधारी विक्रमकारी श्रीरामचन्द्रजी चढे ॥ १२ ॥ जब विमानपर महावीर रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजी बैठगये तब महावीर्ययुक्त विभीषण और सुग्रीव प्रमुख वानरोंसे श्रीरामचन्द्रजी बोले ॥ १३ ॥

हे वानरश्रेष्ठ ! मित्रको जो कुछ करना चाहिये वह सबही तुमने किया, अब हमारी आज्ञासे इच्छानुसार तुम लोग अपने २ स्थानको जाओ ॥ १४ ॥ हे सुग्रीव ! हितैषी सखाको जो कुछ करना उचित है, तुमने धर्मके डरसे व स्नेहके वश हो वह समस्त पूरा किया ॥ १५ ॥ अब तुम अपनी सब सेनाके साथ किष्किन्धापुरीको जाओ हे विभीषणजी? तुम उसी हमारे दिये हुए अपने राज्यको भोगते रहो और सब प्रजाको नीति मार्गमें चलाते रहो, हमारे प्रभावसे तुमको इंद्रादि देवता भी धर्षित नहीं कर सकेंगे ॥१६॥ हम भी आप सबजनोंको आमंत्रण कर और आप सब जनोंकी आज्ञाले अपने पिताकी राजधानी अयोध्यापुरी जानेका अभिलाष करते हैं ॥ १७ ॥ जब श्रीरामचन्द्रजीने इस प्रकारसे कहा, तब महाबलवान् वानरोंने और राक्षसराज विभीषणने हाथ

मित्रकार्यंकृतमिदंभवद्भिर्वानरर्षभाः ॥अनुज्ञातामयासर्वेयथेष्टंप्रतिगच्छत ॥ १४ ॥ यत्तुकार्यंवयस्येनस्निग्धेनचहितेनच ॥ कृतंसुग्रीवतत्सर्वं भवताऽधर्मभीरुणा ॥ १५ ॥ किष्किंधांप्रतियाह्याशुस्वसैन्येनाभिसंवृतः ॥ स्वराज्येवसलंकायांमयादत्तेविभीषण ॥ नत्वांधर्षयितुंशक्ताःसें द्राअपिदिवौकसः ॥ ॥ १६ ॥ अयोध्यांप्रतियास्यामिराजधानींपितुर्मम ॥ अभ्यनुज्ञातुमिच्छामिसर्वानामंत्रयामिवः ॥ १७ ॥ एवमुक्ता स्तुरामेणहरींद्रास्तथा ॥ ऊचुःप्रांजलयःसर्वेराक्षसश्चविभीषणः ॥१८॥ अयोध्यांगंतुमिच्छामःसर्वान्नयतुनोभवान् ॥ मुद्युक्ताविचरिष्या मोवनान्युपवनानिच ॥१९॥ दृष्ट्वात्वामभिषेकार्हंकौसल्यामभिवाद्यच ॥ अचिरादागमिष्यामःस्वगृहान्नृपसत्तम ॥ २० ॥ एवमुक्तस्तुधर्मा त्मावानरैःसविभीषणैः ॥ अब्रवीद्वानरान्रामःससुग्रीवविभीषणान् ॥ ॥ २१ ॥ प्रियात्प्रियतरंलब्धंयदहंससुहृज्जनः ॥ सर्वैर्भवद्भिःसहितः प्रीतिंलप्स्येपुरींगतः ॥ २२ ॥ क्षिप्रमारोहसुग्रीवविमानंसहवानरैः ॥ त्वमप्यारोहसामात्योराक्षसेंद्रविभीषण ॥ २३ ॥

जोडकर निवेदन किया ॥ १८ ॥ कि हम सब भी अयोध्यानगरीमें चलकर हर्षसहित वहांके वन उपवनोंमें विचरण करनेकी इच्छा करते हैं; इस कारण आप हम लोगोंको अपने संगले चलें ॥ १९ ॥ हे राजश्रेष्ठ ! हम आपका राजतिलक देखकर और कौशल्याजीको प्रणाम कर हम सब बहुतही शीघ्र अपने २ स्थानोंको लौट आवेंगे ॥२०॥ विभीषण और वानरोंकरके इस प्रकार कहे जाकर धर्मात्मा श्रीरामचंद्रजी राक्षसराज व सुग्रीव प्रमुख वानरोंसे बोले ॥२१॥ हम यदि तुम सरीखे सुहृद् लोगोंके साथ अयोध्यानगरीमें जाकर आनंद पासकेंगे तो दूनी प्रसन्नताकी बात है ॥ २२ ॥ इसकारणसे हे सुग्रीव ! शीघ्र वानरगणोंके सहित विमान पर चढ आओ । हे सखे ! राक्षसेन्द्र विभीषणजी ! तुम भी मंत्री और सुहृज्जनोंके साथ विमानपर आओ ॥ २३ ॥

इस प्रकारसे श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पाकर वानरोंके साथ सुग्रीवजी और मंत्रियोंके सहित विभीषणजी आनंदयुक्त हो उस दिव्य पुष्पक विमानपर चढे ॥२४॥ इस प्रकारसे जब सब कोई चढचुके तब कुबेरजीका वह दिव्य विमान श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पाय आकाशको उठा ॥२५॥ उस काल उस तेजसे प्रदीप्त हंस युक्त विमानमें सवार हो आकाशमें जाकर श्रीरामचन्द्रजी ऐसे रोमहर्षित और हर्षितचित हुए कि, वह कुबेरके समान शोभायमानहोने लगे ॥२६॥ इस प्रकार वह महाबल वानर और राक्षसगण उस दिव्य विमानपर सुखसहित विना क्लेशके बैठे ॥२७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा० आ०युद्धकांडे भाषायां चतुर्विंशत्यधिकशततमः सर्गः ॥१२४॥ इस प्रकारसे हंसयुक्त वह दिव्य विमान श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञापाकर महाशब्द करता हुआ आकाशको उठा ॥१॥ तब रघुनंदनजी चारोंओरको

ततःसपुष्पकंदिव्यंसुग्रीवःसहवानरैः ॥ आरुरोहमुदायुक्तःसामात्यश्चविभीषणः ॥ २४ ॥ तेष्वारूढेषुसर्वेषुकौबेरंपरमासनम् ॥ राघवेणाभ्यनुज्ञातमुत्पपातविहायसम् ॥ २५ ॥ खगतेनविमानेनहंसयुक्तेनभास्वता ॥ प्रहृष्टश्चप्रतीतश्चबभौरामःकुबेरवत् ॥ २६ ॥ तेसर्वेवानरार्क्षाश्चराक्षसाश्चमहाबलाः ॥ यथासुखमसंबाधंदिव्येतस्मिन्नुपाविशन् ॥ २७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येच० सा० युद्धकांडे चतुर्विंशाधिकशततमः सर्गः ॥ १२४ ॥ अनुज्ञातंतुरामेणतद्विमानमनुत्तमम् ॥ हंसयुक्तंमहानादमुत्पपातविहायसम् ॥ १ ॥ पातयित्वाततश्चक्षुःसर्वतोरघुनंदनः ॥ अब्रवीन्मैथिलींसीतांरामःशशिनिभाननाम् ॥ २ ॥ कैलासशिखराकारेत्रिकूटशिखरेस्थिताम् ॥ लंकामीक्षस्ववैदेहिनिर्मितांविश्वकर्मणा ॥ ३ ॥ एतदायोधनंपश्यमांसशोणितकर्दमम् ॥ हरीणांराक्षसानांचसीतेविशसनंमहत् ॥ ४ ॥ एषदत्तवरःशेतेप्रमाथीराक्षसेश्वरः ॥ तवहेतोर्विशालाक्षिनिहतोरावणोमया ॥ ५ ॥ कुंभकर्णोऽत्रनिहतःप्रहस्तश्चनिशाचरः ॥ धूम्राक्षश्चात्रनिहतोवानरेणहनूमता ॥ ६ ॥ विद्युन्मालीहतश्चात्रसुषेणेनमहात्मना ॥ लक्ष्मणेनेंद्रजिच्चात्ररावणिर्निहतोरणे ॥ ७ ॥

निहारकर चन्द्रमुखी जानकीजीसे बोले ॥ २ ॥ हे वैदेही ! कैलाशपर्वतके शिखरके समान त्रिकूट शिखरपर स्थापित हुई लंकापुरीकी ओर देखो, विश्वकर्माने इस पुरीको बनाया था ॥३॥ हे सीते ! वानर और राक्षसोंका जिसमें बडा भारी वध हुआ है ऐसी रणभूमिको तुम देखो, यह मांस और रुधिरकी कीचडसे पूर्णहो रही है ॥४॥ हे विशालनेत्रोंवाली! यह देखो, वरदान पानेसे गर्वितलोगोंका मर्दन करने वाला राक्षसोंका राजा रावण तुम्हारे निमित्त ही निहत हो रण भूमिमें शयनकर रहा है ॥५॥ यह देखो, इस स्थानमें निशाचरश्रेष्ठ कुम्भकर्ण; इस स्थानमें राक्षस सेनापति प्रहस्त और इस स्थानपर वानरश्रेष्ठ हनुमान्‌से धूम्राक्ष मारा गया है ॥ ६ ॥ इस स्थानमें महात्मा सुषेणने विद्युन्मालीका नाश किया है, और इस स्थानमें लक्ष्मणजीसे रावणका पुत्र इन्द्रजीत मारा गया है ॥७॥

अंगदने इस स्थानमें विकटनामक राक्षसका वधकिया था, दुष्प्रेक्ष, विरूपाक्ष, महापार्श्व, महोदर ॥ ८ ॥ अकंपनभी मारा गया व और भी बहुत सारे बली राक्षस मरे। जैसेकि त्रिशिरा, अतिकाय, देवान्तक, नरान्तक, ॥९॥ राक्षसश्रेष्ठ युद्धोन्मत्त मत्त कुंभकर्णके पुत्र बलशाली कुंभ और निकुम्भ ॥१०॥ वज्रदंष्ट्र दंष्ट्र अनेक राक्षस मारेगेये और दुर्द्धर्ष मकराक्ष भी हमसे मारागया ॥११॥ अकंपन भी मारा गया, वीर्यवान् शोणिताक्ष यूपाक्षऔर प्रजंघ भी इस स्थानमें बडा भारी संग्राम करके मारे गये ॥ १२ ॥ भयंकर दर्शन निशाचर विद्युज्जिह्व, यज्ञशत्रु व महाबलवान् सुप्तघ्न भी मारा गया ॥ १३ ॥ सूर्यशत्रुका भी वध हुआ उसके पीछे ब्रह्मशत्रु मारा गया । हे सीते ! इसी स्थानमें रावणकी भार्या मन्दोरीने रावणके लिये विलाप किया था ॥१४॥ जब मन्दोदरीने विलाप

अंगदेनात्रनिहतोविकटोनामराक्षसः ॥ विरूपाक्षश्चदुष्प्रेक्षोमहापार्श्वमहोदरौ ॥ ८ ॥ अकंपनश्चनिहतोबलिनोऽन्येचराक्षसाः ॥ त्रिशिराश्चाति कायश्चदेवांतकनरांतकौ ॥ ९ ॥ युद्धोन्मत्तश्चमत्तश्चराक्षसप्रवरावुभौ ॥ निकुंभश्चैवकुंभश्चकुंभकर्णात्मजोबली ॥१०॥ वज्रदंष्ट्रश्चदंष्ट्रश्चबहवोराक्षसाहताः ॥ मकराक्षश्चदुर्धर्षोमयायुधिनिपातितः ॥११॥ अकंपनश्चनिहतःशोणिताक्षश्चवीर्यवान् ॥ यूपाक्षश्चप्रजंघश्चनिहतौतुमहाहवे ॥१२॥ विद्युज्जिह्वोऽत्रनिहतोराक्षसोभीमदर्शनः॥यज्ञशत्रुश्चनिहतःसुप्तघ्नश्चमहाबलः ॥१३॥ सूर्यशत्रुश्चनिहतोब्रह्मशत्रुस्तथापरः ॥ अत्रमंदोदरीनाम भार्यातंपर्यदेवयत् ॥१४॥ सपत्नीनांसहस्रेणसाग्रेणपरिवारिता ॥ एतत्तुदृश्यतेतीर्थंसमुद्रस्यवरानने ॥१५॥ यत्रसागरमुत्तीर्यतांरात्रिमुषिताव यम् ॥ एषसेतुर्मयाबद्धःसागरेलवणार्णवे ॥ १६ ॥ तवहेतोर्विशालाक्षिनलसेतुःसुदुष्करः ॥ पश्यसागरमक्षोभ्यंवैदेहिवरुणालयम् ॥ १७ ॥ अपारमिवगर्जंतंशंखशुक्तिसमाकुलम् ॥ हिरण्यनाभंशैलेंद्रंकांचनंपश्यमैथिलि ॥ १८॥ विश्रमार्थंहनुमतोभित्त्वासागरमुत्थितम्॥ एतत्कुक्षौ समुद्रस्यस्कंधावारनिवेशनम् ॥ ॥१९॥ अत्रपूर्वमहादेवःप्रसादमकरोद्विभुः ॥ एतत्तुदृश्यतेतीर्थंसागरस्यमहात्मनः ॥ २० ॥

किया था तो उसी समय उसके हजारों सौतें भी थीं । हे श्रेष्ठ मुख वाली ! यह समुद्रका तीर्थ स्थान दिखाई देता है ॥१५॥ समुद्रको उतर कर हम उसी स्थानमें बसे थे यह सेतु हमनेही लवणसागरमें बांधा ॥१६॥ हे विशालाक्षि ! तुम्हारे लियेही यह बडा दुष्कर कर्म नलने किया जो पुल बांधा । हे वैदेही ! अचल वरुणालय समुद्रको देखो ॥ १७ ॥ अपार गर्जन करता हुआ शंख शुक्तियुक्त यह सागर है हे जानकि ! हिरण्यनाभ पर्वतोंके राजा सुवर्णमय इन मैनाक पर्वतको देखो ॥ १८ ॥ यह हनुमानजीको विश्राम देनेके लिये समुद्रसे अपने आप उठा था, यह समुद्रका कच्छ है यहीं सेनाकी छावनी पडी थी ॥ १९ ॥ और इसी स्थानमें सेतु बांधनेके लिये विभु महा देव हमारे ऊपर प्रसन्न हुए थे। यह देखो समुद्रके इस स्थानमें हमने सेतु बांधना आरंभ करके

उसकी निर्विघ्न समाप्तिके लिये महाराज शिवजीको स्थापन किया था ❋ ॥२०॥ देवी ! आगेको यह स्थान "सेतुबन्ध" नामक त्रैलोक्यपूजित तीर्थ विख्यता होगा, स्थान परम पवित्र है और इसके प्रभावसे लोग महापातकसे भी छूट सकेंगे ॥ २१ ॥ राक्षसराज विभीषण इसी स्थानमें आकर हमसे मिले थे हे सीते ! यह विचित्रवनयुक्त किष्किन्धापुरी दिखाई देती है ॥ २२ ॥ सुग्रीवजीकी यही रमणीक पुरी है, यहीं हमने वालिको मारा था, वालिपालित किष्कि न्धापुरीको देखकर सीताजी ॥ २३ ॥ प्रीतियुक्त व आदरसहित वचन श्रीरामचन्द्रजीसे बोलीं कि हे रघुश्रेष्ठ ! हे आर्यपुत्र ! तारा इत्यादि सुग्रीवकी प्यारी स्त्रियें ॥२४॥ व और दूसरे वानर श्रेष्ठोंकी सब स्त्रियोंके साथ हम तुम्हारे सहित अयोध्याकी राजधानीमें जानेकी इच्छा करती हैं ॥२५॥ यह बात सुनकर

सेतुबंधइतिख्यातंत्रैलोक्येनचपूजितम्॥ एतत्पवित्रंपरमंमहापातकनाशनम् ॥ २१ ॥ अत्रराक्षसराजोऽयमाजगामविभीषणः ॥ एषासादृश्य तेसीतेकिष्किंधाचित्रकानना ॥ ॥ २२ ॥ सुग्रीवस्यपुरीरम्यायत्रबालीमयाहतः ॥ अथदृष्ट्वापुरींसीताकिष्किंधांवालिपालिताम् ॥ २३ ॥ अब्रवीत्प्रश्रितंवाक्यंरामंप्रणयसाध्वसा ॥ सुग्रीवप्रियभार्याभिस्ताराप्रमुखतोनृप ॥ २४ ॥ अन्येषांवानरेंद्राणांस्त्रीभिःपरिवृताह्यहम् ॥ गंतु मिच्छेसहायोध्यांराजधानींत्वयासह ॥ २५ ॥ एवमुक्तोऽथवैदेह्याराघवःप्रत्युवाचताम् ॥ एवमस्त्वितिकिष्किंधांप्राप्यसंस्थाप्यराघवः ॥ २६ ॥ विमानंप्रेक्ष्यसुग्रीवंवाक्यमेतदुवाचह ॥ ब्रूहिवानरशार्दूलसर्वान्वानरपुंगवान् ॥२७॥ स्त्रीभिःपरिवृताःसर्वेह्ययोध्यांयान्तुसीतया ॥ तथात्वमेभिःसर्वाभिःस्त्रीभिःसहमहाबल ॥ २८ ॥ अभित्वरयसुग्रीवगच्छामःप्लवगाधिप ॥ एवमुक्तस्तुसुग्रीवोरामेणामिततेजसा ॥ २९ ॥ वानराधिपतिःश्रीमांस्तैश्चसर्वैःसमावृतः ॥ प्रविश्यांतःपुरंशीघ्रंतारामुदीक्ष्यसोऽब्रवीत् ॥ ३० ॥

श्रीरामचन्द्रजीने सीताजीसे कहा कि, ऐसा ही होगा, यह कह उन्होंने किष्किन्धापुरीमें पहुँच विमानको ठहराया॥२६॥ और विमानको ठहरा हुआ देखकर सुग्रीवजीसे कहा कि, हे वानरराज ! तुम समस्त वानरश्रेष्ठोंसे कहो कि, वह सबही अपनी २ स्त्रियोंके साथ अयोध्याजीको चलें॥२७॥ क्योंकि सीताजीइन सब वानरोंकी स्त्रियोंके साथ अयोध्याजीको चलेंगी और हे महाबलवान् ! तुम भी अपनी सब स्त्रियोंको शीघ्र ही ले आओ॥२८॥ हे वानरराज सुग्रीव !शीघ्रता करो हमको अभी जाना है अमित तेजस्वी श्रीरामचन्द्रजीने जब सुग्रीवजीसे इस प्रकार कहा ॥२९॥ तो वानरोंके राजा श्रीमान् सुग्रीवजी सब वानरोंको साथ लेकर शीघ्रता

❋ सेतु बांधनेसे प्रथम रघुनाथजीने सेतुकी सिद्धि और रावणसे जय प्राप्त करनेके निमित्त शिवलिंगका स्थापन कियाथा जोकि पवित्र और दर्शन करनेसे समस्त पापका नाशक हैं कविने जयंतकी कथाके समान अन्तमें इस तीर्थका उल्लेख किया है कूर्मपुराणादिमें स्पष्ट शिवलिंगस्थापनकी कथा विद्यमान है ।

से अपने जनानेमें प्रवेश करते हुए और वहां ताराको देखकर बोले ॥३०॥ हे प्रिये! सीताजीकी प्रियकामनासे श्रीरामचन्द्रजीने आज्ञा दी है कि, तुम सब प्रधान २ वानरोंकी स्त्रियोंको लेकर ॥३१॥ शीघ्र आओ, हम वानरोंकी स्त्रियोंको अयोध्यापुरी और महाराज दशरथजीकी रानियोंको दिखावेंगे ॥३२॥ सुग्रीवजीके वचन सुनकर सब अंगोंसे शोभायमान ताराने वानरश्रेष्ठोंकी समस्त स्त्रियोंको बुलाकर कहा ॥३३॥ सुग्रीवजीकी आज्ञासे तुम सब अयोध्यापुरीके देखनेको चलोगे तो हमारा बडा कार्य करोगी ॥३४॥ कारण कि अयोध्यापुरीके देखनेका हमको बडा भारी अभिलाष है चलो हम सब पुरवासियों व जनपदवासियोंके साथ श्रीरामचन्द्रजीकी पुरीमें प्रवेश कर, और महाराज दशरथजीकी स्त्रियोंकी विभूति देखें ॥३५॥ ताराकी इस प्रकारसे आज्ञा पाय वानरोंकी स्त्रियें विधिपूर्वक आभूषणादि

प्रियेत्वंसहनारीणांवानराणांमहात्मनाम् ॥ राघवेणाभ्यनुज्ञातामैथिलीप्रियकाम्यया ॥ ३१ ॥ त्वरत्वमभिगच्छामोगृह्यवानरयोषितः ॥ अयोध्यांदर्शयिष्यामःसर्वादशरथस्त्रियः ॥३२॥ सुग्रीवस्यवचःश्रुत्वातारासर्वांगशोभना ॥ आहूयचाब्रवीत्सर्वावानराणांतुयोषितः ॥३३॥ सुग्रीवेणाभ्यनुज्ञातागंतुंसर्वैश्चवानरैः ॥ ममचापिप्रियंकार्यमयोध्यादर्शनेनच ॥ ३४ ॥ प्रवेशंचैवरामस्यपौरजानपदैःसह ॥ विभूतिंचैवसर्वासांस्त्रीणांदशरथस्यच ॥ ३५ ॥ तारयाचाभ्यनुज्ञाताःसर्वावानरयोषितः ॥ नेपथ्यविधिपूर्वंतुकृत्वाचापिप्रदक्षिणम् ॥ ३६ ॥ अध्यारोहन्विमानंतत्सीतादर्शनकांक्षया ॥ ताभिःसहोत्थितंशीघ्रंविमानंप्रेक्ष्यराघवः ॥ ३७ ॥ ऋष्यमूकसमीपेतुवैदेहींपुनरब्रवीत् ॥ दृश्यतेऽसौमहान्सीतेसविद्युदिवतोयदः ॥ ३८ ॥ ऋष्यमूकोगिरिवरःकांचनैर्धातुभिर्वृतः ॥ अत्राहंवानरेंद्रेणसुग्रीवेणसमागतः ॥ ३९ ॥ समयश्चकृतःसीतेवधार्थंवालिनोमया ॥ एषासादृश्यतेपंपानलिनीचित्रकानना ॥ ४० ॥ त्वयाविहीनोयत्राहंविललापसुदुःखिताः ॥ अस्यास्तीरेमयादृष्टाशबरीधर्मचारिणी ॥ ४१ ॥ अत्रयोजनबाहुश्चकबंधोनिहतोमया ॥ दृश्यतेऽसौजनस्थानेश्रीमान्सीतेवनस्पतिः ॥ ॥ ४२ ॥

पहर शृंगार कर उस विमानकी प्रदक्षिणा करके ॥३६॥ सीताजीके देखनेकी वासनासे शीघ्र ही उस मानपर चढीं तब तारादि स्त्रियोंको लेकर उस विमानको शीघ्रतासे आकाशमें उठा हुआ देख श्रीरामचंद्रजी ॥३७॥ ऋष्यमूकके समीप पहुँचकर फिर जानकीजीसे बोले कि; हे जानकि! यह बडा भारी बिजलीकी श्रेणीसे युक्त बादलके समान ॥३८॥ पर्वतश्रेष्ठ कांचनादि धातुओंसे युक्त ऋष्यमूक पर्वत है इसी पर्वतपर वानरराज सुग्रीवजीसे हमारा मिलाप हुआ था ॥३९॥ और यहीं पर हमने वालिका संहार करनेकी प्रतिज्ञा की थी यह चित्रकानन शोभित पंपासरोवर दिखाई देता है ॥४०॥ हे प्रिये! तुम्हारे विरह दुःखसे कातर हो हमने यहां बहुत ही विलाप किया था इसी पंपाके तीरपर हमने धर्मचारिणी शबरीको देखा ॥४१॥ इसी स्थानपर हमने चारकोसकी लम्बी बांहवाले कबंधको मारा था हे सीते! यह वही उस जनस्थानकी

शोभायमान वनस्पतियें दिखाई देती हैं ॥ ४२ ॥ हे विलासिनी ! तुम्हारे ही लिये महातेजस्वी पक्षियोंमें श्रेष्ठ बलवान् जटायु भी इसी स्थानमें रावणके हाथसे मारागया ॥४३॥ हे श्रेष्ठ मुखवाली! यह हमारा वही आश्रमपद है हे शुभदर्शने! वह पर्णकुटी अब भी पहीलेके समान सुन्दर दिखाई देती है ॥४४॥ राक्षसराज रावण इसी पर्णशालासे बलपूर्वक तुमको हरण करके ले गया था यह वही निर्मल जलवाली रमणीक गोदावरी दिखाई देती है ॥४५॥ कदलीवनसे युक्त यह अगस्त्यजीका आश्रम दिखाई देता है। हे वैदेही! यह देखो महर्षि शरभंगका बडा भारी आश्रम है ॥ ४६ ॥ देवराज इन्द्रजी इसी स्थानमें आये थे, हे देवि ! हे तनुमध्यमे! यह वही सर्व तपस्वी दिखाई देते हैं ॥४७॥ सूर्य तथा अग्निके समान कुलपति अत्रिजी इसी स्थानमें वास करते हैं इसी देशमें हमने बडे शरीरवाले विराध

जटायुश्चमहातेजास्तवहेतोर्विलासिनि ॥ रावणेनहतोयत्रपक्षिणांप्रवरोबली ॥४३॥ एतत्तदाश्रमपदमस्माकंवरवर्णिनि ॥ पर्णशालातथाचित्राहृश्यतेशुभदर्शने ॥ ४४ ॥ यत्रत्वंराक्षसेंद्रेणरावणेनहृताबलात् ॥ एषागोदावरीरम्याप्रसन्नसलिलाशुभा ॥ ४५ ॥ अगस्त्यस्याश्रमश्चैवहृश्यतेकदलीवृतः ॥ हृश्यतेचैववैदेहिशरभंगाश्रमोमहान् ॥ ४६ ॥ उपयातःसहस्राक्षोयत्रशक्रःपुरंदरः ॥ एतेतेतापसादेविहृश्यंतेतनुमध्यमे ॥ ४७ ॥ असौ अत्रिःकुलपतिर्यत्रसूर्यवैश्वानरोपमः ॥ अस्मिन्देशेमहाकायोविराधोनिहतोमया ॥ ४८ ॥ अत्रसीतेत्वयाहृष्टातापसीधर्मचारिणी ॥ असौ सुतनुशैलेंद्रश्चित्रकूटःप्रकाशते ॥४९॥ अत्रमांकैकयीपुत्रःप्रसादयितुमागतः ॥ एषासायमुनारम्याहृश्यतेचित्रकानना ॥५०॥ भरद्वाजाश्रमःश्रीमान्हृश्यतेचैषमैथिलि ॥ इयंचहृश्यतेगंगापुण्यात्रिपथगानदी ॥५१॥ शृंगवेरपुरंचैतद्गुहोयत्रसखामम ॥ एषासाहृश्यतेसीतेराजधानीपितुर्मम ॥ अयोध्यांकुरुवैदेहिप्रणामंपुनरागता ॥ ५२ ॥ ततस्तेवानराःसर्वेराक्षसाःसविभीषणाः ॥ उत्पत्योत्पत्यसंहृष्टास्तांपुरींददृशुस्तदा ॥ ५३ ॥

को मार डाला था ॥४८॥ हे सीते ! इसी स्थानमें तुमने उन धर्मचारिणी तपस्विनी अनसूयाजीको देखा था. हे सुतनु ! यह देखो पर्वतराज चित्रकूट दिखाई देता है ॥४९॥ इसी स्थानमें कैकेयीके पुत्र भरत हमको प्रसन्न करनेके लिये आये थे; यह देखो दूसरे विचित्र काननयुक्त यमुना नदी दिखाई देती हैं ॥५०॥ हे मैथिली! महर्षि भरद्वाजजीका शोभायमान आश्रम भी दिखाई देता है। हे सीते! यह देखो पुण्यमयी त्रिपथगामिनी गंगाभी दृष्टि आती हैं ॥५१॥ यह वही शृङ्गवेरपुर है कि, जहां हमारा सखा गुह रहता है। हे सीते! वह हमारे पिताकी राजधानी अयोध्यापुरी भी दिखाई देती है, हे जानकी! फिर लौटकर आई हो इस समय अयोध्याजीको प्रणाम करो ॥५२॥ श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर समस्त वानर और राक्षसगण व विभीषणजी वारंवार हर्षितचित्तसे उचक २ कर

अयोध्याजीको देखने लगे ॥५३॥ इस प्रकारसे वह वानरगण पुरी अमरावतीके समान उस श्वेतवर्णकी अटा अटारियोंमें अलंकृत तुरंग व हाथियोंसे समाकुल और बडे २ राजमार्गोंसे शोभायमान उस अयोध्या नगरीको देखकर परम प्रसन्नता प्राप्त करते हुए ॥ ५४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वा० आ० युद्ध० भाषायां पंचविंशत्यधिकशततमः सर्गः ॥ १२५ ॥ इस प्रकारके पूर्ण चतुर्दश वर्षके पीछे पंचमी तिथिको श्रीरामचन्द्रजी भरद्वाजजीके आश्रममें पहुँचे और मुनिजीके निकट जाकर प्रणाम करते हुए ॥ १ ॥ रघुनंदन भरद्वाजजीसे प्रणाम करके बोले कि, हे भगवन् ! अयोध्या नगरीमें सब कोई कुशल तो हैं ? दुर्भिक्षादिके मारे वहां किसीको कुछ क्लेश तो नहीं हुआ ? ॥ २ ॥ भरतजी धर्मके अनुसार प्रजापालन तो करते हैं ? हमारी मातायें कुशलसे तो हैं ? श्रीरामचन्द्रजीके

ततस्तुतांपांडुरहर्म्यमालिनींविशालकक्ष्यांगजवाजिभिर्वृताम् ॥ पुरीमपश्यन्प्लवगाःसराक्षसाःपुरींमहेंद्रस्ययथामरावतीम् ॥ ५४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे पंचविंशोत्तरशततमः सर्गः ॥ १२५ ॥ पूर्णेचतुर्दशेवर्षेपंचम्यांलक्ष्मणाग्रजः ॥ भरद्वाजाश्रमंप्राप्यववंदेनियतोमुनिम् ॥ १ ॥ सोपृच्छदभिवाद्यैनंभरद्वाजंतपोधनम् ॥ शृणोषिकच्चिद्भगवन्सुभिक्षानामयंपुरे ॥ २ ॥ कच्चित्सयुक्तोभरतोजीवंत्यपिचमातरः ॥ एवमुक्तस्तुरामेणभरद्वाजोमहामुनिः ॥ प्रत्युवाचरघुश्रेष्ठंस्मितपूर्वंप्रहृष्टवत् ॥ ३ ॥ आज्ञावशत्वेभरतोजटिलस्त्वांप्रतीक्षते ॥ पादुकेतेपुरस्कृत्यसर्वंचकुशलंगृहे ॥४॥ त्वांपुराचीरवसनप्रविशंतंमहावनम् ॥ स्त्रीतृतीयंच्युतंराज्याद्धर्मकामंचकेवलम् ॥ ५ ॥ पदातिंत्यक्तसर्वस्वंपितृनिर्देशकारिणम् ॥ सर्वभोगैःपरित्यक्तंस्वर्गच्युतमिवामरम् ॥ ६ ॥ दृष्ट्वातुकरुणापूर्वंममासीत्समितिंजय ॥ कैकयीवचनेयुक्तंवन्यमूलफलाशिनम् ॥ ७ ॥ सांप्रतंतुसमृद्धार्थंसमित्रगणबांधवम् ॥ समीक्ष्यविजितारिंचममाभूत्प्रीतिरुत्तमा ॥ ८ ॥

वचन सुनकर महामुनि भरद्वाजजी महा आनंदित हो कुछ मुसकुराकर कहने लगे ॥ ३ ॥ तुम्हारे घरपर सबही कुशल पूर्वक हैं, भरतजी जटावल्कल धारण करके तुम्हारी आज्ञानुसार उन दोनों खड़ाउँओंको आगे धरे आपके आनेकी राह परख रहे हैं ॥ ४ ॥ हे वीर श्रीरामचन्द्रजी ! चीरवस्त्रधारणकर अपनी स्त्री व लक्ष्मणजीको संगलिये केवल धर्मकी कामनासे राज्य छोडे हुए ॥ ५ ॥ पिताके वचन पालनार्थ सब धन छोड सब भोग विलासके पदार्थोंसे मुख मोड स्वर्गमें गिरे हुए देवताके समान प्रकाशमान ॥ ६ ॥ कैकेयीके वचन मान, वचनको बन्धन मूल फलादि भोजन करते कराते, पांवपयादे तुमको वन जाते हुए देख हमको बड़ी करुणा हुई थी ॥७॥ अब तुम शत्रुओंको जीतकर समृद्धि प्राप्तकर बन्धुबान्धवोंके सहित यहां लौटकर आये हो, यह देखकर हमने अनुपम

प्रसन्नता प्राप्त की ॥८॥ राघव ! तुमने जनस्थानमें वास करके जो विपुल सुख दुःख भोग किया है, वह समस्तही हम जानते हैं ॥ ९ ॥ तुम ब्राह्मण धर्ममें नियुक्त रहकर समस्त तपस्वियोंकी रक्षा करते थे, वह उस समय रावणने तुम्हारी निन्दारहित भार्याको हरण किया था यह समाचार भी हमको ज्ञात है ॥१०॥ फिर मारीचका आना, तुम्हारा उनके पीछे २ जाना, जानकीका हरण, कबन्धका दर्शन, पंपाके समीप आपका आगमन ॥ ११ ॥ सुग्रीवसे तुम्हारी मित्रता व प्यार; तुम करके बालिका संहार, पवनकुमार हनुमानूजीका सीताजीका समाचार लेनेको जाना ॥ १२ ॥ सीताजीकी सुधि पानेपर नलका सेतु बांधना, फिर वानरयूथपोंको हर्षित हो लंकाको जलाना ॥ १३ ॥ पुत्र बांधव, मंत्री; सेना और वाहनके सहित युद्धमें बलगर्वित रावणका मारा जाना ॥ १४ ॥ देवताओंको कंटक रावणके मारे जाने पर देवताओंका आना और उनका वर देना ॥ १५॥ हे धर्मवत्सल ! तपके बलसे हम यह सब वृत्तान्त ज्योंका त्यों

सर्वंचसुखदुःखंतेविदितंममराघव ॥ यत्त्वयाविपुलंप्राप्तंजनस्थाननिवासिना ॥९॥ ब्राह्मणार्थेनियुक्तस्यरक्षतःसर्वतापसान् ॥ रावणेनहृताभार्या बभूवेयमनिंदिता ॥१०॥ मारीचदर्शनंचैवसीतोन्मथनमेवच ॥ कबंधदर्शनंचैवपंपाभिगमनंतथा ॥११॥ सुग्रीवेणचतेसख्यंयत्रवालीहतस्त्वया ॥ मार्गणंचैववैदेह्याःकर्मवातात्मजस्यच ॥ १२ ॥ विदितायांचवैदेह्यांनलसेतुर्यथाकृतः ॥ यथावादीपितालंकाप्रहृष्टैर्हरियूथपैः ॥ १३ ॥ सुपुत्रबांधवामात्यःसबलःसहवाहनः ॥ यथाचनिहतःसंख्येरावणोबलदर्पितः ॥१४॥ यथाचनिहतेतस्मिन्रावणेदेवकंटके॥ समागमश्चत्रिदशैर्यथादत्तश्चतेवरः ॥ १५ ॥ सर्वममैतद्विदितंतपसाधर्मवत्सल ॥ संपतंतिचमेशिष्याःप्रवृत्त्याख्याःपुरीमितः ॥१६॥ अहमप्यत्रतेदद्मिवरंशस्त्रभृतांवर॥ अर्घ्यंप्रतिगृहाणेदमयोध्यांश्वोगमिष्यसि ॥१७॥ तस्यतच्छिरसावाक्यंप्रतिगृह्यनृपात्मजः ॥ बाढमित्येवसंहृष्टःश्रीमान्वरमयाचत ॥१८॥ अकालफलिनोवृक्षाःसर्वेचापिमधुस्रवाः ॥ फलान्यमृतगंधीनिबहूनिविविधानिच ॥ १९ ॥ भवंतुमार्गेभगवन्नयोध्यांप्रतिगच्छतः ॥ तथेतिचप्रतिज्ञातेवचनात्समनंतरम् ॥ २० ॥

जानते हैं; और समाचार लेनेके लिये हमारे शिष्य लोग भी आश्रमसे सदा अयोध्याको जाते आते रहते हैं, ॥ १६ ॥ हे शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ ! देवताओंने तुमको जो जो वरदान दिये हैं हम भी तुमको वही सब वरदान देते हैं तुम आज इस स्थानमें टिक हमारी पहुनाई ग्रहण करके कल अयोध्याजीको चले जाना ॥ १७ ॥ राजकुमार श्रीमान् श्रीरामचन्द्रजी भरद्वाजजीके वह वचन शिर माथे चढाय और अंगीकार करके हर्षित मनसे यह वर मांगते हुए ॥ १८ ॥ हे ब्रह्मन् ! वृक्ष अकालमें फलें और उनमेंसे मधु टपके और उनके समस्त फल अमृतके समान सुगन्धिवाले होजायँगे और सब मार्ग धनसे पूर्ण हो जायँ ॥१९॥ जिससे अयोध्याजीको जाते हुए मार्गमें यह आपकी महिमा दिखाई दे जब श्रीरामचन्द्रजीने इस प्रकारका वर मांगा, तब ऋषिश्रेष्ठके "तथास्तु" कहते ही ॥२०॥

वहांके समस्त वृक्ष स्वर्गीय कल्पवृक्षके समान हुए जिन सब वृक्षोंमें फल फूल न थे वे फल फूल युक्त हुए ॥२१॥ और जो सूख गये थे उनमें पत्ते लग गये और समस्त वृक्षोंसे मधु टपकने लगा, अयोध्याके जानेके मार्गमें बारह २ कोश तकके समस्त वृक्ष इस भांतिके हो गये ॥ २२ ॥ तब वह हजार २ वानर श्रेष्ठगण हर्षित अंतःकरणसे अनेक भांतिके दिव्य फल भक्षण करते मानो स्वर्ग विजय करनेवालोंके समान घूमने लगे ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० युद्ध० भाषायां षड्विंशत्युत्तरशततमः सर्गः ॥१२६॥ विमानके शिखरपरसे जब अयोध्या नगरी दिखाई देने लगी तब शीघ्र विक्रमकारी प्रिय कार्यकर्ता श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीवादिका सत्कार करनेके अर्थ ॥ १ ॥ एक क्षणभर चिन्ताकर वानरलोगोंकी ओर निहार बुद्धिमान् तेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी वानरश्रेष्ठ हनुमान्जीसे बोले

अभवन्पादपास्तत्रस्वर्गपादपसन्निभाः॥ निष्फलाःफलिनश्चासन्विपुष्पाःपुष्पशालिनः ॥२१॥ शुष्काःसमग्रपत्रास्तेनगाश्चैवमधुस्रवाः ॥ सर्व-तोयोजनात्रीणिगच्छतामभवंस्तदा ॥२२॥ ततःप्रहृष्टाःप्लवगर्षभास्तेबहूनिदिव्यानिफलानिचैव ॥ कामादुपाश्नंतिसहस्रशस्तेमुदान्विताःस्वर्ग-जितोमुदेव ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे षड्विंशोत्तरशततमःसर्गः ॥१२६॥ अयोध्यांतु समालोक्यचिंतयामासराघव ॥ प्रियकामःप्रियंरामस्ततस्त्वरितविक्रमः ॥ १ ॥ चिंतयित्वाततोदृष्टिंवानरेषुन्यपातयत् ॥ उवाचधीमांस्ते-जस्वीहनूमंतंप्लवंगमम् ॥२॥ अयोध्यांत्वरितोगत्वाशीघ्रंप्लवगसत्तम ॥ जानीहिकच्चित्कुशलीजनोनृपतिमंदिरे ॥३॥ शृंगवेरपुरंप्राप्यगुहंगहन-गोचरम् ॥ निषादाधिपतिंब्रूहिकुशलंवचनान्मम ॥४॥ श्रुत्वातुमांकुशलिनमरोगंविगतज्वरम्॥ भविष्यतिगुहःप्रीतःसममात्मसमःसखा॥५॥ अयोध्यायाश्चतेमार्गंप्रवृत्तिंभरतस्यच ॥ निवेदयिष्यतिप्रीतोनिषादाधिपतिर्गुहः ॥६॥ भरतस्तुत्वयावाच्यःकुशलंवचनान्मम ॥ सिद्धार्थंशं-समांतस्मैसभार्यंसहलक्ष्मणम् ॥ ७ ॥ हरणंचापिवैदेह्यारावणेनबलीयसा ॥ सुग्रीवेणचसंवादंवालिनश्चवधंरणे ॥ ८ ॥

॥२॥ हे वानरोत्तम ! तुम शीघ्र अयोध्यानगरीमें जाकर राजमंदिरकी कुशल जान आओ कि; वहां सब कुशल हैं या नहीं ॥३॥ तुम पहले तो शृङ्गवेरपुरमें जाकर वनचारी निषादराज गुहसे हमारे आनेका समाचार कहो ॥ ४ ॥ गुह हमारा प्राणोंके समान प्रिय सखा है हम रोगादि विहीन हो स्वच्छन्दचित्तसे कुशल सहित हैं यह सुनकर वह परम प्रसन्न होगा ॥ ५ ॥ वह निषादराज गुह हर्षित मनसे तुम्हें अयोध्याजीका मार्ग दिखावेगा और भरतजीका भी सब वृत्तान्त कहेगा ॥ ६ ॥ तुम अयोध्याजीमें जाकर हमारी ओरसे भरतजीकी कुशल पूँछना और कहना कि, हम पिताजीके सत्यको पालनकर लक्ष्मण और जानकीके सहित आते हैं ॥ ७ ॥ हे सौम्य ! बलवान् रावण करके जानकीजीका हरण सुग्रीवसे समागम संग्राममें वालिका वध ॥ ८ ॥

फिर जिस प्रकार जानकीजीके खोजनेको तुम गये और महासमुद्रको लांघा व जानकीजीका पता लगाया ॥९॥ समुद्रके तीर वानरलोगोंकी यात्रा, समुद्रका दर्शन करना, पुल बांधना, रावणका मारा जाना ॥१०॥ ब्रह्मा, इन्द्र, और वरुणजीसे वरदानपाना, महादेवजीके प्रसादसे पिता दशरथजीके साथ हमारा मिलना ॥११॥ यह समस्त समाचार भरतजीसे ठीक २ कहकर कहना कि हम राक्षसराज और वानरराजके सहित नगरके निकट आय गये हैं ॥१२॥ तुम भरतजीसे यह भी कहना कि, राम शत्रुओंको जीत श्रेष्ठ यश पाय पिताजीकी आज्ञाका पालन कर पूर्ण मनोरथ हो महाबलवान् मित्रोंके साथ आते हैं ॥१३॥ हे वीर ! यह समस्त समाचार तुम्हारे मुखसे सुनकर भरतका जैसे आकार हो या उनसे जैसा भाव प्रकाशित हो वह समस्त तुम जान लेना ॥१४॥ आकारसे, चेष्टासे दृष्टिसे

मैथिल्यन्वेषणंचैवयथाचाधिगतात्वया ॥ लंघयित्वामहातोयमापगापतिमव्ययम् ॥९॥ उपमानंसमुद्रस्यसागरस्यचदर्शनम् ॥ यथाचकारितःसे-तूरावणश्चयथाहतः ॥१०॥ वरदानंमहेंद्रेणब्राह्मणावरुणेनच ॥ महादेवप्रसादाच्चपित्रामगसमागमम् ॥११॥ उपयातंचमांसौम्यभरतायनिवेदय ॥ सहराक्षसराजेनहरीणामीश्वरेणच ॥१२॥ जित्वाशत्रुगणान्रामःप्राप्यचानुत्तमंयशः ॥ उपायातिसमृद्धार्थःसहमित्रैर्महाबलैः ॥१३॥ एतच्छ्रुत्वा यमाकारंभजतेभरतस्ततः ॥ सचतेवेदितव्यःस्यात्सर्वंयच्चापिमांप्रति ॥१४॥ ज्ञेयाःसर्वेचवृत्तांताभरतस्येंगितानिच ॥ तत्त्वेनमुखवर्णेनदृष्ट्याव्या भाषितेनच ॥ १५ ॥ सर्वकामसमृद्धंहिहस्त्यश्वरथसंकुलम् ॥ पितृपैतामहंराज्यंकस्यनावर्तयेन्मनः ॥ १६ ॥ संगत्याभरतःश्रीमान्राज्येनार्थी स्वयंभवेत् ॥ प्रशास्तुवसुधांसर्वामखिलांरघुनंदनः ॥ १७ ॥ तस्यबुद्धिंचविज्ञायव्यवसायंचवानर ॥ यावन्नदूरंयाताःस्मःक्षिप्रमागंतुमर्हसि ॥ १८ ॥ इतिप्रतिसमादिष्टोहनूमान्मारुतात्मजः ॥ मानुषंधारयन्रूपमयोध्यांत्वरितोययौ ॥ १९ ॥ अथोत्पपातवेगेनहनूमान्मारुतात्मजः ॥ गरुत्मानिववेगेनजिघृक्षन्नुरगोत्तमम् ॥ २० ॥ लंघयित्वापितृपथंविहगेंद्रालयंशुभम् ॥ गंगायमुनयोर्भीमंसमतीत्यसमागमम् ॥ २१ ॥

और वचनसे भरतका समस्त वृत्तान्त तुम ठीक २ जान लेना ॥ १५ ॥ हाथी, घोडे, व रथोंके समूहसे परिपूर्ण सर्वकाम समृद्ध, पिता पितामहादिकोंका राज्य किसके मनमें फेर नहीं डाल सकता है ? ॥ १६ ॥ बहुत समयतक राज्यपालन करके रघुनंदन श्रीमान् भरतजी जो राज्यकी चाहना रखते हों तो वह समस्त पृथ्वीका पालन करें ॥ १७ ॥ हे वानरश्रेष्ठ ! हम जबतक बहुत आगे न बढें, तुम उससे पहले ही उनकी बुद्धि व उनका विचार जानकर शीघ्र ही यहां फिर आना ॥ १८ ॥ वीर्यवान् पवनकुमार हनुमानजी इस प्रकारसे आज्ञा पाय मनुष्यरूप धारणकर शीघ्रतासे अयोध्याजीकी ओर चले ॥ १९ ॥ गरुडजी जिस प्रकारसे महासर्पके ऊपर दौड़ते हैं वैसेही पवनकुमार हनुमानजी अतिवेगसे आकाश मार्गको उछल गये ॥२०॥ फिर छाया मार्ग और श्रेष्ठ पक्षियोंके

उडनेके स्थानको नांघ गंगा यमुनाके भयंकर संग्राम स्थानके पार हो ॥२१॥ श्रृंगवेरपुर पहुँचे, वीर्यवान् हनुमान्जी वहां गुहसे मिले उससे हर्षित वदन हो शुभ वचन बोले ॥२२॥ तुम्हारे सखा सत्य पराक्रम रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीने सीता और लक्ष्मणजीके सहित तुमसे अपनी कुशल कही है ॥२३॥ रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजी मुनिश्रेष्ठ भरद्वाजजीकी आज्ञानुसार आज पंचमीकी रात उनके आश्रममें रहकर आवेंगे। तुम कल प्रभात ही उनको देखोगे ॥२४॥ यह वचन कहकर महातेजस्वी विचारवान् हनुमान्जी रुयें फुलाय मार्गके श्रमको कुछ भी न समझ आनन्द सहित फिर बडे वेगसे आकाशको उछल गये॥२५॥और फिर शीघ्रतासे एक२ करके परशुरामतीर्थ, वालुकी नदी, वरूथी व गोमती नदी और भयंकर शालवन् हनुमान्जीने देखा ॥२६॥ और बहुत सारीप्रजासे भरे हुए श्रेष्ठ जन

श्रृंगवेरपुरंप्राप्यगुहमासाद्यवीर्यवान् ॥ सवाचाशुभयाहृष्टोहनूमानिदमब्रवीत् ॥२२॥ सखातुतवकाकुत्स्थोरामःसत्यपराक्रमः ॥ ससीतःसहसौमित्रिःसत्वांकुशलमब्रवीत् ॥२३॥ पंचमीमद्यरजनीमुषित्वावचनान्मुनेः ॥ भरद्वाजाभ्यनुज्ञातंद्रक्ष्यस्यत्रैवराघवम् ॥२४॥ एवमुक्त्वामहातेजाःसंप्रहृष्टतनूरुहः ॥ उत्पपातमहावेगाद्वेगवानविचारयन् ॥२५॥ सोऽपश्यद्रामतीर्थंचनदींवालुकिनींतथा ॥ वरूथींगोमतींचैवभीमंशालवनंतथा ॥२६॥ प्रजाश्चबहुसाहस्रीःस्फीताञ्जनपदानपि ॥ सगत्वादूरमध्वानंत्वरितःकपिकुंजरः ॥ २७ ॥ आससाददुमान्फुल्लान्नंदिग्रामसमीपगान् ॥ सुराधिपस्योपवनेयथाचैत्ररथेद्रुमान् ॥२८॥ स्त्रीभिःसपुत्रैःपौत्रैश्चरममाणैःस्वलंकृतैः ॥ क्रोशमात्रेत्वयोध्यायाश्चीरकृष्णाजिनांबरम् ॥ २९ ॥ ददर्शभरतंदीनंकृशमाश्रमवासिनम् ॥ जटिलंमलदिग्धांगंभ्रातृव्यसनकर्शितम् ॥ ३० ॥ फलमूलाशिनंदांतंतापसंधर्मचारिणम् ॥ समुन्नतजटाभारंवल्कलाजिनवाससम् ॥ ३१ ॥ नियतंभावितात्मानंब्रह्मर्षिसमतेजसम् ॥ पादुकेतेपुरस्कृत्यप्रशासंतंवसुंधराम् ॥ ३२ ॥

पदोंको देख कपिकुंजर हनुमान्जी बहुत दूरतक चले ॥ २७ ॥ फिर चैत्ररथ और इन्द्रके नन्दवनमें उत्पन्न हुए वृक्षोंके समान नंदिग्रामके निकटवाले वृक्षको प्राप्त हुए ॥२८॥ सुन्दरश्रृंगार बनाय सैकडों स्त्रियें वस्त्राभूषणोंसे शोभायमान बेटे पोतोंके साथ इन सब वृक्षोंसे फूल चुन चुन आनंद कर रहीं थीं उसके पीछे अयोध्याजीसे एक कोश दूरपर टिके हुए जटा चीरधारी ॥२९॥ दुर्बल अपने भ्राताके दुःखसे दुःखी दीनभावसे युक्त शरीरमें मैल लगाये आश्रमवासी भरतजीको देखा ॥३०॥ फल मूल आहारी, जितेन्द्रिय, धर्मचारी, मुनिव्रतधारी ऊंची २ जटा रखाये, भोजपत्र और मृगचर्म बिछाये ॥३१॥ इन्द्रियोंको जीते

सिद्ध स्वरूप ब्रह्मर्षियोंके समान तेजस्वी राजगद्दीपर रामकी खडाऊं धर उनकी आज्ञासे पृथ्वीको शासन करते ॥३२॥ ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र, चारों वर्णके लोगोंकी सब भांतिसे रक्षा करते पवित्र चित्तवाले मंत्री और पुरोहितोंको समीप बैठाये ॥३३॥ और सब सेनापतिगण व ऊनी वस्त्र पहरेदूतोंकोनिकट लिये इस प्रकारके भरतजीको देखा। राजकुमार भरतजीने चीर और मृगचर्म पहर रक्खा था ॥३४॥ इस कारण उनको त्यागकर धर्मवत्सलराजकर्मचारियोंने भी सुखभोग करना उचित नहीं समझा तब धर्मकी दूसरी मूर्तिके समान धर्मके जाननेवाले भरतजीके निकट ॥३५॥ पवनकुमार हनुमानूजी हाथ जोडकर बोले कि, जटावल्कल धारण करके दंडकारण्यमें वास करनेके कारण ॥३६॥ आप जिनके लिये शोक करते हैं उन्ही रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीने आपके पास कुशलसमाचार कहला

चातुर्वर्ण्यस्यलोकस्यत्रातारंसर्वतोभयात् ॥ उपस्थितममात्यैश्चशुचिभिश्चपुरोहितैः ॥३३॥ बलमुख्यैश्चयुक्तैश्चकाषायांबरधारिभिः ॥ नहिते राजपुत्रंतंचीरकृष्णाजिनांबरम् ॥ ३४ ॥ परिभोक्तुंव्यवस्यंतिपौरावैधर्मवत्सलाः ॥ तंधर्ममिवधर्मज्ञंदेहबंधमिवापरम् ॥ ३५ ॥ उवाचप्रांजलिर्वाक्यंहनूमान्मारुतात्मनः ॥ वसंतंदंडकारण्येयंत्वंचीरजटाधरम् ॥३६॥ अनुशोचसिकाकुत्स्थंसत्वांकौशलमब्रवीत् ॥ प्रियमाख्यामिते देवशोकंत्यजसुदारुणम् ॥३७॥ अस्मिन्मुहूर्तेभ्रात्रात्वंरामेणसहसंगतः ॥ निहत्यरावणंरामःप्रतिलभ्यचमैथिलीम् ॥३८॥ उपयातिसमृद्धार्थःसहमित्रैर्महाबलैः ॥ लक्ष्मणश्चमहातेजावैदेहीचयशस्विनी ॥ सीतासमग्रारामेणमहेंद्रेणशचीयथा ॥ ३९ ॥ एवमुक्तोहनुमताभरतःकैकयीसुतः ॥ पपातसहसाहृष्टोहर्षान्मोहमुपागमत् ॥४०॥ ततोमुहूर्तादुत्थायप्रत्याश्वस्यचराघवः ॥ हनूमंतमुवाचेदंभरतःप्रियवादिनम् ॥४१॥ अशोकजैःप्रीतिमयैःकपिमालिंग्यसंभ्रमात् ॥ सिषेचभरतःश्रीमान्विपुलरश्रुबिंदुभिः ॥४२॥ देवोवामानुषोवात्वमनुक्रोशादिहागतः ॥ प्रियाख्यानस्यतेसौम्यददामिब्रुवतःप्रियम् ॥ ४३ ॥

भेजे हैं, हे देव! हम आपको शुभसमाचार देने आये हैं इस कारण आप अब दारुण शोकका त्याग कीजिये ॥३७॥ आपबहुतही शीघ्र अपने भ्राता श्रीरामचन्द्रजीसे मिलेंगे श्रीरामचन्द्रजी रावणको मार सीताको पाय ॥३८॥ सिद्धमनोरथ हो महाबलवान् मित्रोंके साथ आगमन कर रहे हैं महातेजस्वी लक्ष्मणजी और यशस्विनी सीताजी भी आई हैं। इन्द्रके सहित इन्द्राणीशचीके समान सीताजी श्रीरामचन्द्रजीके सहित कुशलसहित हैं ॥३९॥ हनुमानूजीके यहवचन सुनकैकेयी पुत्र भरत एकाएकी हर्षमें भर मूर्छित हो गिर पडे ॥४०॥ एक मुहूर्तके पीछे फिर चेतना पाय सावधान हो भरतजी प्रिय समाचारके देनेवाले हनुमानूजीसे बोले ॥४१॥ प्रथम तो प्रीतिमें भर अतिआदरसे श्रीमान् भरतजीने हनुमानूजीको भेट विपुल आंसुओंकी बूंदोंसे उनको भिजो दिया ॥४२॥ और बोले, हे सौम्य!

क्या तुम मनुष्य हो ? या कृपाके वश होकर कोई देवताही यहांपर आये हे ? तुम जो कोई भी हो; तुमने जैसा सुखका समाचार सुनाया है वैसेही तुमको पुर स्कारके देने लायक हम कोई भी वस्तु नहीं देखते हैं॥४३॥अच्छा, तुम्हारे योग्य न होनेपर भी एकलाख गौवें एकसौ गांव कुंडलादिभूषण धारण किये श्रेष्ठ आचार वालीं षोडश कन्या कि, जिनकी सोलह २ वर्षकी उमर है भार्या बनानेके लिये ॥४४॥ सुवर्णसम रंगवाली श्रेष्ठ नासिका व श्रेष्ठ जाँघोंवाली चन्द्रवदनी सब गहने पहरे हुए श्रेष्ठ कुलजातिवाली यह सब स्त्रियें हम तुमको देते हैं ॥४५॥ इस प्रकारसे राजकुमार भरतजी वानर श्रेष्ठ हनुमानूजीके मुखसे अचानक श्रीरामचन्द्रजीके आनेका समाचार सुन श्रीरामचन्द्रजीका दर्शन करनेकी वासनासे प्रसन्नताकी सीमातक पहुँच गये और फिर हर्षमें भरकर यह वचन बोले ॥ ४६ ॥

गवांशतसहस्रंचग्रामाणांचशतपरम् ॥ पकुंडलाःशुभाचाराभार्याःकन्यास्तुषोडश ॥४४॥ हेमवर्णाःसुनासोरूःशशिसौम्याननाःस्त्रियः ॥ सर्वाभरणसंपन्नाःसंपन्नाःकुलजातिभिः ॥ ४५ ॥ निशम्यरामागमनंनृपात्मजःकपिप्रवीरस्यतदाद्भुतोपमम् ॥ प्रहर्षितोरामदिदृक्षयाभवत्पुनश्चहर्षादिदमब्रवीद्वचः ॥४६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे सप्तविंशाधिकशततमः सर्गः १२७॥ बहूनिनामवर्षाणिगतस्यसुमहद्वनम् ॥ श्रृणोम्यहंप्रीतिकरंममनाथस्यकीर्तनम् ॥ १ ॥ कल्याणीबतगाथेयंलौकिकीप्रतिभातिमाम् ॥ एतिजीवंतमानंदोनरंवर्षशतादपि ॥२॥ राघवस्यहरीणांचकथमासीत्समागमः ॥ अस्मिन्देशेकिमाश्रित्यतत्त्वमाख्याहिपृच्छतः ॥३॥ सपृष्टोराजपुत्रेणबृस्यांसमुपवेशितः ॥ आचचक्षेततःसर्वंरामस्यचरितंवने ॥४॥ यथाप्रव्राजितोरामोमातुर्दत्तौवरौतव ॥ यथाचपुत्रशोकेनराजादशरथोमृतः ॥ ५ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० युद्ध० भाषायांसप्तविंशत्यधिकशततमःसर्गः ॥१२७॥ बडे भ्राता श्रीरामचन्द्रजी बहुत वर्ष हुए वनमें वास करते हैं आज बहुत दिनोंके पीछे उनका समाचार पाकर हम परमप्रसन्न हुए ॥१॥ अहो ? "मनुष्य भी जीवित रहे तो सौ वर्षके पीछे भी आनंद पासकता है यह कहावत जो संसारमें चली आती है वह आज कल्याणदायक विदित होती है ॥२॥ अच्छा तुमने जो कहा कि रामचन्द्र सुग्रीवादि वानरोंके सहित आते हैं सो श्रीरामचन्द्रजीका और वानरोंका किस स्थानमें कैसे समागम हुआ यह समस्त वार्ता तुम हमसे कहो ॥३॥ जब भरतजीने इस प्रकारसे पूँछा तो हनुमानूजी कुशके आसनपर बैठकर श्रीरामचन्द्रजीके वनवासचरित कहने लगे ॥४॥ हनुमानूजी बोले कि, महाराज दशरथजीने आपकी माताको वरदान देकर जिस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीको

वनवास दिया था और वह जिस प्रकार पुत्रके शोकसे मृत्युको प्राप्त हुए ॥५॥ मामाके घरसे दूत जिस प्रकार आपको शीघ्रतासे बुलाकर लाये आपने जिस प्रकार अयोध्यामें आय राज ग्रहण नहीं करना चाहा था ॥६॥ साधुओंके योग्य धर्मका प्रतिपालन करके चित्रकूट पर्वतपर जाय राज्यग्रहण करनेके लिये जिस प्रकार आपने भ्राता श्रीरामचन्द्रजीसे विनय की थी ॥७॥ श्रीरामचन्द्रजीने जिस प्रकारसे पिताके सत्यमें टिककर वहांपर राज्यका त्याग किया था; और फिर आप उन श्रेष्ठ भाईकी खडाऊं ग्रहण करके अयोध्याको लौट आये थे ॥८॥ हे महावीर ! यह समस्त वृत्तान्त तो आप जानतेही हैं अब वह सुनिये कि जो कुछ आपके लौट आनेपर हुआ है ॥९॥ जब आप लौट आये तो मृग और पक्षियोंके त्रासके मारे वह वन अत्यन्त पीडित हो उठा ॥१०॥ इसके उपरान्त

यथादूतैस्त्वमानीतस्तूर्णराजगृहात्प्रभो ॥ त्वयायोध्यांप्रविष्टेनयथाराज्यंनचेप्सितम् ॥६॥ चित्रकूटगिरिंगत्वाराज्येनामित्रकर्शन ॥ निमंत्रितस्त्वयाभ्राताधर्ममाचरतासताम् ॥ ७ ॥ स्थितेनराज्ञोवचनेयथाराज्यंविसर्जितम् ॥ आर्यस्यपादुकेगृह्ययथासिपुनरागतः ॥८॥ सर्वमेतन्महाबाहोयथावद्विदितंतव ॥ त्वयिप्रतिप्रयातेतुयद्वृत्तंतन्निबोधमे ॥९॥ अपयातेत्वयितदासमुद्भ्रांतमृगद्विजम् ॥ परिद्यूनमिवात्यर्थंतद्वनंसमपद्यत ॥ १० ॥ तद्धस्तिमृदितंघोरंसिंहव्याघ्रमृगाकुलम् ॥ प्रविवेशाथविजनंसुमहद्दंडकावनम् ॥११॥ तेषांपुरस्ताद्बलवान्गच्छतांगहनेवने ॥ विनदन्सुमहानादंविराधःप्रत्यदृश्यत ॥ १२ ॥ तमुत्क्षिप्यमहानादमूर्ध्वबाहुमधोमुखम् ॥ निखातेप्रक्षिपंतिस्मनदंतमिवकुंजरम् ॥१३॥ तत्कृत्वादुष्करंकर्मभ्रातरौरामलक्ष्मणौ ॥ सायाह्नेशरभंगस्यरम्यमाश्रममीयतुः ॥१४॥ शरभंगेदिवंप्राप्तेरामःसत्यपराक्रमः ॥ अभिवाद्यमुनीन्सर्वाञ्जनस्थानमुपागमत् ॥ १५ ॥ चतुर्दशसहस्राणिजनस्थाननिवासिनाम् ॥ हतानिवसतातत्रराघवेणमहात्मना ॥ १६ ॥

श्रीरामचन्द्रजी सिंहव्याघ्र व मृगोंसे व्याप्त और अपनी सेनाके हाथियोंसे मथेहुए उस चित्रकूटको छोड मनुष्यरहित बडे भारी दंडकारण्यमें प्रवेश करते हुए ॥११॥ उन्होंने उस घने वनमें जाते २ देखा कि;विराध राक्षस महासिंहनाद करता हुआ सन्मुख चला आ रहा है॥१२॥परंतु श्रीरामचंद्रजीने बांह उठाये नीचेको मुख किये शब्द करते हुए हाथीके समान उस निशाचरको गढेमें डालकर पाट दिया॥१३॥इस प्रकारसे वह दोनों भ्राता राम और लक्ष्मणजी इस प्रकारका कठिनकार्य करके सन्ध्याके समय ऋषिश्रेष्ठ शरभंगके रमणीय आश्रममें पहुँचे॥१४॥वहांपर जब शरभंग श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनकर स्वर्गको चले गये तब सत्यपराक्रमकारी श्रीरामचन्द्रजी और सब मुनियोंको प्रणामकरके जनस्थानको चले गये॥१५॥उसके पीछे महात्मा श्रीरामचन्द्रजीने जनस्थानमें वासकर वहांके रहनेवाले चौदह

हजार राक्षसोंका संहार करडाला ॥१६॥ उस समय चौदह सहस्र राक्षस इकट्ठे तो हुए परंतु अकेले श्रीरामचन्द्रने संग्राम में दिनके पिछले पहरमें उन समस्त राक्षसोंका विनाश किया था ॥१७॥ इस प्रकारसे दंडकवनके रहनेवाले तपमें विघ्न करनेवाले महाबली महावीर्यवान् निशाचरगणको श्रीरामचन्द्रजीने मार डाले ॥१८॥ जब इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीने राक्षसोंको मारा खरका संहार किया, वह प्रथम खरदूषणको मार फिर त्रिशिराका वध किया॥१९॥इससे पहिले उस स्थानमें शूपणखा नाम एक राक्षसी श्रीरामचन्द्रजीके निकट आई; तब श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञासे लक्ष्मणजीने एकाकी उठकर ॥२०॥ खड्ग ले उसके नाक कान काट डाले। तब शूर्पणखाने अत्यन्त शोकसे पीडित हो रावणके निकट गयी ॥२१॥ फिर रावणके सेवक मारीच नाम राक्षसने सुवर्णमृगरूप धारणकर जानकी

एकेनसहसंगम्यरामेणरणमूर्धनि ॥ अह्नश्चतुर्थभागेननिःशेषाराक्षसाःकृताः ॥ १७ ॥ महाबलामहावीर्यास्तपसोविघ्नकारिणः ॥ निहताराघवेणाजौदंडकारण्यवासिनः ॥ १८ ॥ राक्षसाश्चविनिष्पिष्टाःखरश्चनिहतोरणे ॥ दूषणंचाग्रतोहत्वात्रिशिरास्तदनंतरम् ॥ १९ ॥ पश्चाच्छूर्पणखानामरामपार्श्वमुपागता ॥ ततोरामेणसंदिष्टोलक्ष्मणःसहसोत्थितः ॥ २० ॥ प्रगृह्यखड्गंचिच्छेदकर्णनासेमहाबलः ॥ ततस्तेनार्दिताबालारावणंसमुपागता ॥२१॥ रावणानुचरोघोरोमारीचोनामराक्षसः ॥ लोभयामासवैदेहींभूत्वारत्नमयोमृगः ॥२२॥ सारामब्रवीद्दृष्ट्वावैदेहीगृह्यतामिति ॥ अयंमनोहरःकांतआश्रमोनोभविष्यति ॥२३॥ ततोरामोधनुष्पाणिर्मृगंतमनुधावतिः ॥ सतंजघानधावंतंशरेणानतपर्वणा ॥२४॥ अथ सौम्यदशग्रीवोमृगयांयातिराघवे ॥ लक्ष्मणेचापिनिष्क्रांतेप्रविवेशाश्रमंतदा ॥ २५ ॥ जग्राहतरसासीतांग्रहःखेरोहिणीमिव ॥ त्रातुकामंततोयुद्धेहत्वागृध्रंजटायुषम् ॥ २६ ॥ प्रगृह्यसहसासीतांजगामाशुसराक्षसाम् ॥ ततस्त्वद्भुतसंकाशाःस्थिताःपर्वतमूर्धनि ॥ २७ ॥

जोको लुभाया ॥२२॥ जानकीजीने उसको देखकर श्रीरामचन्द्रजीसे कहा कि आप इस मृगको ग्रहण कीजिये, यह मनोहर कान्तिवाला मृग पकड लिये जानेपर हमारे आश्रमकी अपूर्व शोभा होगी ॥२३॥ यह सुन श्रीरामचन्द्रजीने धनुष धारण किया व उसके पीछे धाये और बाणसे उस मृगको मारडाला ॥२४॥ हे सौम्य ! जब रामचन्द्रजी तो इस प्रकारसे, मृगके पीछे गये और लक्ष्मणजी उनके ढूँढ़नेको गये तब रावणने आश्रममें प्रवेश किया ॥२५॥ जिस प्रकार आकाशमें मंगलग्रह रोहिणीको ग्रसले ऐसे रावण जानकीजीको ग्रहण करता हुआ, जटायुपक्षीने सीताजीके छुटानेकी चेष्टा की थी उसको भी रावणने संग्राममें मारडाला॥२६॥ उससमय

सहसा सीताजीको लेकर रावण चला गया उस शीघ्रतासे जाते हुए को पर्वतके शिखरपरसे ॥ २७ ॥ सीताजीको ग्रहण करके जाते हुए पर्वताकार बडे २ वानरोंने राक्षसोंके स्वामी रावणको देखा; और देखकर वह विस्मित हुए ॥ २८ ॥ मनके वेगके समान चलनेवाले पुष्पक विमानपर सीताजीके सहित सवार हो महाबलवान् रावण अतिशीघ्रतासे चला ॥२९॥ और वह राक्षसोंका राजा रावण लंकामें प्रवेश करता हुआ । सुवर्णकी चहार दिवारोंसे युक्त बडे भारी स्वच्छ गृहमें ॥३०॥ जानकीजीको रावण वचनोंसे बहुत समझाता बुझाता हुआ, जानकीजीने रावणके उन समझाने बुझानेको और उसके तिनकेके समान भी ग्रहण न किया ॥ ३१ ॥ फिर रावणने जानकीजीको अशोकवाटिकामें रक्खा । इधर श्रीरामचन्द्रजी वनमें मृगको मारकर ॥ ३२ ॥ आश्रमको लौटे और

सीतांगृहीत्वागच्छंतंवानराःपर्वतोपमाः ॥ ददृशुर्विस्मिताकारारावणंराक्षसाधिपम् ॥२८॥ ततःशीघ्रतरंगत्वातद्विमानंमनाजवम् ॥ आरुह्यस-हवैदेह्यापुष्पकंसमहाबलः ॥२९॥ प्रविवेशतदालंकांरावणोराक्षसेश्वरः ॥ तांसुवर्णपरिष्कारेशुभेमहतिवेश्मनि ॥३०॥ प्रवेश्यमैथिलींवाक्यैः सांत्वयामासरावणः ॥ तृणवद्भाषितंतस्यतंचनैर्ऋतपुंगवम् ॥ ३१ ॥ अचिंतयंतीवैदेहीह्यशोकवनिकांगता ॥ न्यवर्ततदारामोमृगंहत्वातदा वने ॥३२॥ निवर्तमानःकाकुत्स्थोदृष्ट्वागृध्रंसविव्यथे ॥ गृध्रंहतंतदादृष्ट्वारामःप्रियतरंपितुः ॥ ३३ ॥ मार्गमाणस्तुवैदेहींराघवःसहलक्ष्मणः ॥ गोदावरीमनुचरन्वनोद्देशांश्चपुष्पितान् ॥३४॥ आसेदतुर्महारण्येकबंधंनामराक्षसम् ॥ ततःकबंधवचनाद्रामःसत्यपराक्रमः ॥ ३५ ॥ ऋष्य-मूकगिरिंगत्वासुग्रीवेणसमागतः ॥ ततःसमागमःपूर्वंप्रीत्याहार्दोग्यजायत ॥ ३६ ॥ भ्रात्रानिरस्तःक्रुद्धेनसुग्रीवोवालिनापुरा ॥ इतरेतरसंवा-दात्प्रगाढःप्रणयस्तयोः ॥ ३७ ॥ रामःस्वबाहुवीर्येणस्वराज्यंप्रत्यपादयत् ॥ वालिनंसमरेहत्वामहाकायंमहाबलम् ॥ ३८ ॥

आश्रममें जानकीजीको न देखकर व्याकुल हुए फिर आगे चल गिद्धको देख रघुनंदनजी व्यथित हुए पिताके समान प्यारे गिद्धको मरा हुआ देख श्रीरामचन्द्र-जी उसकी क्रिया करते हुए ॥३३॥ फिर जानकीजीको खोजते हुए लक्ष्मणजीके सहित श्रीरामचन्द्रजी गोदावरी नदीके तीर पुष्पित वनोंमें जानकीजीको ढूँढते २ ॥ ३४ ॥ कवंध नाम राक्षसके सन्मुख महावनमें आय पडे उसको श्रीरामचन्द्रजीने मार भी डाला फिर उसी कवंधके वचनोंसे सत्यपराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी ॥ ३५ ॥ ऋष्यमूक पर्वतपर जाकर सुग्रीवजीके साथ मिले संभाषण होनेके पहले ही उन दोनोंमें परस्पर अतिगाढी मित्रता हो गई थी ॥ ३६ ॥ सुग्रीव-जी अपने क्रोधित भ्राता वालि करके निकाले गये थे इस कारण परस्पर एक दूसरेका वृत्तान्त जानकर दोनोंका प्रेम परस्पर बढ गया ॥ ३७ ॥

श्रीरामचन्द्रजीने अपने बाहोंकेवीर्यसे महाकाय और महाबलवान् वालिको संग्राममें वध करके॥ ३८॥ सुग्रीवजीको उनके राज्यपर सब वानरोंके साथ स्थापित किया, तब सुग्रीवजीने श्रीरामचन्द्रजीके साथ प्रतिज्ञा की कि; हम राजकुमारी जानकीजीको ढूँढ देंगे ॥ ३९ ॥ तब वानरोंमें इंद्र महात्मा सुग्रीवजीकी आज्ञासे दश करोड वानर दशों दिशाओंमें भेजे गये ॥४०॥ परंतु उनमेंसे हम कुछ एक वानर जानकीजीको ढूँढते हुए विन्ध्यपर्वतकी एक गुफामें घुस गये थे और हमको वहां बहुत दिन लग गये निकलनेका मार्ग न देख पायकर हम सब बहुत डरे ॥४१॥ इतनेमें गृद्धराज जटायुके भ्राता वीर्यवान् संपतिनाम गृद्धने हम लोगों से कहा कि, जानकीजी रावणके गृहमें ॥४२॥ तब हम अपने शोकसे संतापित बंधु बान्धवोंका दुःख दूर करनेके लिये छलांग मारशतयोजनके फांटवाले समुद्रके पार

सुग्रीवःस्थापितोराज्येसहितःसर्ववानरैः ॥ रामायप्रतिजानीतेराजपुत्र्यास्तुमार्गणम् ॥३९॥ आदिष्टावानरेंद्रेणसुग्रीवेणमहात्मना ॥ दशकोटयःप्लवंगानांसर्वाःप्रस्थापितादिशः ॥ ४० ॥ तेषांनोविप्रणष्टानांविंध्येपर्वतसत्तमे ॥ भृशंशोकाभितप्तानांमहान्कालोत्यवर्वत ॥४१॥ भ्रातातुगृध्रराजस्यसंपातिर्नामवीर्यवान् ॥ समाख्यातिस्मवसतीसीतांरावणमंदिरे ॥४२॥ सोऽहंदुःखपरीतानांदुःखंतज्ज्ञातिनांनुदन् ॥ आत्मवीर्यसमास्थाययोजनानांशतंप्लुतः ॥ तत्राहमेकामद्राक्षमशोकवनिकांगताम ॥४३॥ कौशेयवस्त्रांमलिनांनिरानंदांदृढव्रताम् ॥ तयासमेत्यविधिवत्पृष्ट्वासर्वमनिंदिताम् ॥४४॥ अभिज्ञानंमयादत्तंरामनामांगुलीयकम् ॥ अभिज्ञानंमणिलब्ध्वाचरितार्थोऽहमागतः ॥ ४५ ॥ मयाचपुनरागम्यरामस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ अभिज्ञानंमयादत्तमर्चिष्मान्समहामणिः ॥४६॥ श्रुत्वातांमैथिलींरामस्त्वाशशंसेचजीवितम् ॥ जीवितांतमनुप्राप्तःपीत्वामृतमिवातुरः ॥ ४७ ॥ उद्योजयिष्यन्नुद्योगंदध्रेलंकावधेमनः ॥ जिघांसुरिवलोकांतेसर्वांल्लोकान्विभावसुः ॥ ४८ ॥

होगये। और लंकाके मध्य अशोकवाटिकामें पहुँच कर हमने देखा॥४३॥केवल एक रेशमीन मलीन सारी पहरे आनंदरहित दृढ पातिव्रत प्रतिपालन करती हुई एकांतमें टिकी हुई हैं वहां हमने उन जानकीजीसे विधानसे कुसल पूंछी॥४४॥और उनको निशानीरूप रामचद्रनामांकित अँगूठी दी, और उनसे स्नेहस्वरूपमणि ग्रहण कर सिद्धकाम हो हम लौट आये ॥४५॥ हमने लौटकर सकलकर्मकारी श्रीरामचन्द्रजीके हाथमें वह स्नेहस्वरूप दीप्तयुक्तमणि दी ॥४६॥ जिस प्रकार पीडित पुरुष अन्तसमयमें अमृत पीकर जीवित होजाय वैसेही श्रीरामचन्द्रजी जानकीजीका वृत्तान्त सुनकर मानो जीवित हो गये ॥४७॥ उसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजीने प्रलयकालके अनुसार सब लोकोंको भस्म करनेकी अभिलाषा किये अग्निके समान राक्षसोंके वधका अभिलाषकर सेना एकत्र करनेकी आज्ञा दी॥४८॥

इसके उपरान्त समुद्रके निकट पहुँच नलसे सेतु बँधवाया तब समस्त वानरोंकी सेना इस पुलके ऊपर होकर समुद्रके पार हुई ॥ ४९ ॥ इसके पीछे जब युद्ध आरंभ हुआ तब नीलने प्रहस्तको, लक्ष्मणने रावणके पुत्र इंद्रजीतको और स्वयं रामचन्द्रजीने कुम्भकर्ण व रावणका वध किया ॥५०॥ उसके पीछे देवराज इंद्र, यम महेश्वर, ब्रह्मा, राजा दशरथ; यह सब वहां आये॥५१॥और श्रीमान देवर्षि व महर्षिगण श्रीरामचन्द्रजीके निकट आये और वरुण, इन्द्र तथा देवर्षियोंने शत्रुघाती श्रीरामचन्द्रजीको विविध भांतिके वरदान दिये ॥५२॥ इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजी परमप्रसन्नतासे वानरगणोंके सहित पुष्पकविमानपर सवार हो किष्किन्धामें आये॥५३॥ वहांसे वह गंगाजीके तीरपर आगमन करके इस समय भरद्वाजजीके आश्रमपर ठहरे हुए हैं; सो आप कल पुष्य नक्षत्रके योगमें श्रीराम-

ततःसमुद्रमासाद्यनलंसेतुमकारयत् ॥ अंतरत्कपिवीराणांवाहिनीतेनसेतुना ॥४९॥ प्रहस्तमवधीन्नीलःकुंभकर्णंतुराघवः ॥ लक्ष्मणोरावणसुतं स्वयंरामस्तुरावणम् ॥५०॥ सशक्रेणसमागम्ययमेनवरुणेनच ॥ महेश्वरःस्वयंभूभ्यांतथादशरथेनच ॥५१॥ तैश्चदत्तवरःश्रीमानृषिभिश्चसमागतैः सुरर्षिभिश्चकाकुत्स्थोवराँल्लेभेपरंतपः ॥५२॥ सतुदत्तवरःप्रीत्यावानरैश्चसमागतः ॥ पुष्पकेणविमानेनकिष्किंधामभ्युपागमत् ॥५३॥ तां गंगांपुनरासाद्यवसंतंमुनिसन्निधौ॥अविघ्नंपुष्ययोगेनश्वोरामंद्रष्टुमर्हसि॥५४॥ततःसवाक्यैर्मधुरैर्हनूमतोनिशम्यहृष्टोभरतःकृतांजलिः॥उवाच वाणींमनसःप्रहर्षिणींचिरस्यपूर्णःखलुमेमनोरथः ॥ ५५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे अष्टाविंशाधिकशततमः सर्गः ॥१२८॥ श्रुत्वातुपरमानंदंभरतःसत्यविक्रमः ॥ हृष्टमाज्ञापयामासशत्रुघ्नंपरवीरहा ॥ १ ॥ दैवतानिचसर्वाणिचैत्यानि नगरस्यच ॥ सुगंधमाल्यैर्वादित्रैरर्चन्तुशुचयोनराः ॥२॥ सूताःस्तुतिपुराणज्ञाःसर्वेवैतालिकास्तथा॥ सर्वेवादित्रकुशलागणिकाश्चैवसर्वशः ॥३॥

चन्द्रजीके दर्शन प्राप्त करेंगे ॥५४॥ हनुमानूजीके ऐसे मधुर वचन सुनकर भरतजीने आनंदकी अंतिम सीमाप्राप्त करली और सबके अंतरात्माको परिपूर्ण करते हाथ जोडकर बोले; अहो! बहुत दिनोंसे जो अभिलाष हमारे मनमें था आज वह पूर्ण हुआ ॥५५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि०युद्ध०भाषायामष्टाविंशत्यधिकशततमः सर्गः ॥१२८॥ परवीरघाती सत्यविक्रम भरतजी हनुमानूजीके ऐसे प्रसन्नता उपजाने वाले वचन सुनकर आनंदित हो शत्रुघ्नजीसे बोले ॥ १ ॥ कि तुम यह डौंडी फिरवा दो कि विशुद्ध वेषवाले और शुद्धचारी पुरुष सुगन्धि मालाओंसे कुल देवताओंके मंदिरोंको और साधारण देवस्थानोंको सजावें और सब स्थानोंमें अनेक प्रकारके बाजे बजते रहें॥२॥स्तुतिपुराणनिपुणसूत और वैतालिक बाद्यशास्त्रके जाननेवाले बजवैये, व नृत्य गीत करनेवाली वेश्यायें ॥ ३ ॥

और सब मंत्रियोंके साथ हमारी मातायें, अपनी २ स्त्रियोंके सहित सेनाके सिपाही लोग, ब्राह्मण, क्षत्रिय, मुखिया २ वैश्यलोग व औरभी जातियें ॥ ४ ॥ यह सब ही श्रीरामचन्द्रजीका चंद्रमुख दर्शन करनेके लिये नगरसे बाहर चलें। भरतजीके ऐसे वचन सुनकर परवीरघाती शत्रुघ्नजीने ॥ ५ ॥ असंख्य सेवक लोगोंको बुलाय इन सब कार्योंको बांटदिया और कहा कि, जो स्थान ऊंचे नीचे हैं उन सबको काटपाट खोदखादकर बराबर कर दो ॥ ६ ॥ और अयोध्यासे लेकर नंदिग्रामतक समस्त मार्ग स्वच्छ सुथरा करो और बर्फके समान ठंढा जल वहांसे गृहांतक की पृथिवी पर छिडक दो ॥७॥ और सब स्थानोंमें खीलें और सुगंधित पुष्प बखेर दो और झंडी लगाकर नगरीके सब मार्गशोभायमान करो ॥ ८ ॥ सूर्य निकलनेके पहले ही इस नगरीके समस्त भवन और

राजदारास्तथामात्याःसैन्यासेनांगनागणाः ॥ ब्राह्मणाश्चसराजन्याःश्रेणीमुख्यास्तथागणाः ॥४॥ अभिनिर्यांतुरामस्यद्रष्टुंशशिनिभंमुखम् ॥ भरतस्यवचःश्रुत्वाशत्रुघ्नःपरवीरहा ॥५॥ विष्टिरनेकसाहस्रीश्चोदयामासभागशः ॥ समीकुरुतनिम्नानिविषमाणिसमानिच ॥६॥ स्थानानिचनिरस्यंतांनंदिग्रामादितःपरम् ॥सिंचंतुपृथिवींकृत्स्नांहिमशीतेनवारिणा ॥७॥ ततोऽभ्यवभिरंत्वन्येलाजैःपुष्पैश्चसर्वतः ॥समुच्छ्रितपताकास्तुरथ्याःपुरवरोत्तमे ॥ ८ ॥ शोभयंतुचवेश्मानीसूर्यस्योदयनंप्रति ॥ स्रग्दाममुक्तपुष्पैश्चसुवर्णैःपंचवर्णकैः ॥९॥ राजमार्गमसंबाधंकिरंतुशतशोनराः ॥ ततस्तच्छासनंश्रुत्वाशत्रुघ्नस्यमुदान्विताः ॥१०॥ धृष्टिर्जयंतोविजयःसिद्धार्थश्चार्थसाधकः ॥ अशोकोमंत्रपालश्चसुमंत्रश्चापिनिर्ययुः ॥११॥ मत्तैर्नागसहस्रैश्चसध्वजैःसुविभूषितैः ॥ अपरेहेमकक्षाभिःसगजाभिःकरेणुभिः ॥१२॥ निर्ययुस्तुरगाक्रांतारथैश्चसुमहारथाः ॥ शक्त्यृष्टिपाशहस्तानांसध्वजानांपताकिनाम् ॥१३॥ तुरगाणांसहस्रैश्चमुख्यैर्मुख्यतरान्वितैः ॥पदातीनांसहस्रैश्चवीराःपरिवृताययुः ॥ १४ ॥

राज मार्ग माला फूल और सोने चांदीसे सजा दिये जायँ ॥ ९ ॥ और सैकडों हजारों पहरेदार भी हटानेके लिये राजमार्गोंपर घूमते रहें। हर्षित हुएशत्रुघ्नजीकी ऐसी आज्ञा सुनकर ॥ १० ॥धृष्टि, जयन्त,विजय, सिद्धार्थ, अर्थ साधक, अशोक, मंत्रपाल;सुमंत्र यह आठ मंत्री चले ॥ ११ ॥ और सूर्य निकलनेके पहले ही राजमार्गको शोभित करते हुए ध्वजाशोभित सजेसजाये असंख्य मतवाले हाथियोंके साथ चले और बहुतसे सुनहरी अम्बारी व झूलसे शोभित हाथियोंपर व साधारण हाथियोंपर चढे ॥ १२ ॥ और बहुतसे लोग घोडोंपर चढकर चले और बहुतसे बडे २ रथोंपर चढकर चले और बहुतं सारे शक्ति ऋषि, प्राश व ध्वजा पताकादि ले लेकर चले ॥ १३ ॥ सहस्र २ घोडोंकी सेना और अगणित प्रधान पैदलोंकी पलटनोंके साथ वीरगण चले ॥ १४ ॥

उसके पीछे दशरथजीकी सब स्त्रियें यथायोग्य रथोंपर सवार होकर कौशल्या और सुमित्राजीको आगे कर चलीं ॥१५॥ इसके उपरान्त मुख्य२ ब्राह्मणोंको संग लिये और सब मुखिया २ मंत्री व महाजनोंको साथ ले माला, मोदक (लड्डू) हाथमें लिये वणिकोंको साथ ॥ १६ ॥ शंखभेरियोंका शब्द कराते बंदीलोगोंसे वंशावलीका वर्णन कराते, श्रीरामचन्द्रजीकी खडाऊं शिरपर धर धर्मपंडित ॥ १७ ॥ श्वेतछत्र लिये मालाओंसे शोभित और शुक्ल बालोंके सुवर्णकी डंडी लगे राजयोग्य दो चमरहाथमें लिये ॥ १८ ॥ उपवास करनेसे दुर्बल हुए दीनभावसे युक्त चीर व मृगचर्म धारण किये भ्राताका आगमन सुन प्रथम हर्षित हो ॥ १९ ॥ महात्मा भरतजी मंत्रियोंके संग पैदल ही श्रीरामचन्द्रजीके लिवानेको चले घोडोंके खुर शब्द और रथोंके घर्घर शब्दसे ॥२०॥

ततोयानान्युपारूढाःसर्वादशरथस्त्रियः॥कौसल्यांप्रमुखेकृत्वासुमित्रांचापिनिर्ययुः॥१५॥द्विजातिमुख्यैर्धर्मात्माश्रेणीमुख्यैःसनैगमैः॥ माल्यामोदकहस्तैश्चमंत्रिभिर्भरतोवृतः॥ १६ ॥ शंखभेरीनिनादैश्चबंदिभिश्चाभिनंदितः॥ आर्यपादौगृहीत्वातुशिरसाधर्मकोविदः॥१७॥पांडुरंछत्रमादायशुक्लमाल्योपशोभितम् ॥ शुक्लेचवालव्यजनेराजार्हेहेमभूषिते ॥ १८ ॥ उपवासकृशोदीनश्चीरकृष्णाजिनांबरः॥भ्रातुरागमनंश्रुत्वाततपूर्वंहर्षमागतः ॥१९॥ प्रत्युद्ययौतदारामंमहात्मासचिवैःसह॥अश्वानांखुरशब्दैश्चरथनेमिस्वनेनच ॥२०॥शंखदुंदुभिनादेनसंचचालेवमेदिनी ॥ गजानांबृंहितैश्चापिशंखदुंदुभिनिःस्वनैः ॥२१॥ कृत्स्नंतुनगरंतत्तुनंदिग्राममुपागमत् ॥ समीक्ष्यभरतोवाक्यमुवाचपवनात्मजम् ॥२२॥कच्चिन्नखलुकापेयीसेव्यतेचलचित्तता ॥ नहिपश्यामिकाकुत्स्थंराममार्यंपरंतपम् ॥२३॥ कच्चिन्नचानुदृश्यंतेकपयःकामरूपिणः ॥ अथैवमुक्तेवचनेहनुमानिदमब्रवीत्॥२४॥ अर्थ्यंविज्ञापयन्नेवभरतंसत्यविक्रमम्॥सदाफलान्कुसुमितान्वृक्षान्प्राप्यमधुस्रवान्॥२५॥

और शंख व नगाडोंके नादसे पृथ्वी कंपायमान होगई । हांथियोंके चिंघाडनेसे शंख व दुन्दुभीके नाद सहित ॥ २१ ॥ सब अयोध्यावासी व राज समाज नंदिग्राममें पहुँच गये । इन सबको आये हुए देख भरतजीने हनुमान्‌जीसे कहा ॥ २२ ॥ वानर स्वभावसे ही चंचलचित्त होते हैं तुमने वही अपनी जातिके स्वभावसे ही तो हमसे यह बात नहीं कही ? हमको यही भय होता है कि कदाचित् हम परमतपस्वी आर्यको न देखपावें ॥ २३ ॥ और कामरूपी वानर गणभी दिखाई नहीं देवें. हनुमान्‌जी ऐसे सन्देहयुक्त वचन सुनकर बोले ॥ २४ ॥ हनुमान्‌जी अपने वचनोंकी यथार्थता जतलानेके लिये सत्यविक्रमी भरत जीसे बोले कि फूले फले हुए और मधु चुआते हुए वृक्ष हैं क्या तुम उनको नहीं देखते ॥ २५ ॥

और इनपर भौंरे मतवाले हो गुंजार रहे हैं यह सब भरद्वाजजीका प्रसाद है सोदेखो शत्रुघाती इन्द्रजीने उन भरद्वाजजीको यह वर दिया था ॥२६॥ अब सब गुणवान् महर्षि भरद्वाजजीने उस वरकी पोषकता करके सेना सहित श्रीरामचंद्रजीकी पहुनई की है, यह हर्षित हुई वानरोंकी सेनाका बडा भारी शब्द सुनिये ॥२७॥ ऐसा जान पडता है कि, इस समय वह वानरोंकी सेना गोमती नदीके पार होरही है। यह देखिये शालवनसे उठा हुआ बडा भारी धुन्धकार दिखाई देता है ॥२८॥ ऐसा जान पडता है कि, वानरोंकी सेना रमणीय शालवनको हिला डुला रही है। यह देखिये बहुत दूरपर चन्द्रमाके समान विमान दिखाई दिया ॥२९॥ दिव्य मनके समान चलनेवाले पुष्पकविमानको ब्रह्माजीने बनाया था; इस विमानको महात्मा श्रीरामचन्द्रजीने बन्धु बांधवोंके सहित रणमें रावणको मारकर पाया है

भरद्वाजप्रसादेनमत्तभ्रमरनादितान् ॥ तस्यचैववरोपत्तोवासवेनपरंतप ॥२६॥ ससैन्यस्यतदातिथ्यंकृतंसर्वगुणान्वितम् ॥ निःस्वनःश्रूयतेभीमःप्रहृष्टानांवनौकसाम् ॥ २७ ॥ मन्येवानरसेनासानदींतरतिगोमतीम् ॥ रजोवर्षसमुद्भूतंपश्यसालवनंप्रति ॥ २८ ॥ मन्येसालवनंरम्यंलोलयंतिप्लवंगमाः ॥ तदेतद्दृश्यतेदूराद्विमानंचंद्रसन्निभम् ॥ २९ ॥ विमानंपुष्पकंदिव्यंमनसाब्रह्मनिर्मितम् ॥ रावणंबांधवैःसार्धंहत्वालब्धंमहात्मना ॥ ३० ॥ तरुणादित्यसंकाशंविमानंरामवाहनम् ॥ धनदस्यप्रसादेनदिव्यमेतन्मनोजवम् ॥ ३१ ॥ एतस्मिन्भ्रातरौवीरौवैदेह्यासहराघवौ ॥ सुग्रीवश्चमहातेजाराक्षसश्चविभीषणः ॥ ३२ ॥ ततोहर्षसमुद्भूतोनिःस्वनोदिवमस्पृशत ॥ स्त्रीबालयुववृद्धानांरामोऽयमितिकीर्तिते ॥३३॥ रथकुंजरवाजिभ्यस्तेवतीर्यमहींगताः ॥ ददृशुस्तंविमानस्थंनराःसोममिवांबरे ॥३४॥ प्रांजलिर्भरतोभूत्वाप्रहृष्टोराघवोन्मुखः ॥ यथार्थेनार्घ्यपाद्याद्यैस्ततोराममपूजयत् ॥ ३५ ॥

॥३०॥ प्रभातकालके सूर्यके समान यह विमान श्रीरामचन्द्रजीको अपने ऊपर चढाये हुए लिये आता है, कुबेरजीके प्रसादसे यह दिव्य विमान मनके वेगके समान चलनेवाला है ॥३१॥ इस विमानमें जानकीजीके सहित दोनों भ्राता राम लक्ष्मणजी और महा तेजस्वी सुग्रीवजी व राक्षसराज विभीषणजी बैठे हुए हैं ॥३२॥ हनुमान्जी इस प्रकार कह ही रहे थे कि इतनेमें वह, स्त्री, बालक, युवा और वृद्ध लोगोंका आकाशव्यापी 'श्रीरामचन्द्रजी यह आगये' इस प्रकार बडा भारी शब्द हुआ ॥ ३३ ॥ तब सबजने हाथी, घोडे, रथोंपरसे पृथ्वीपर उतरकर आकाशमें टिके हुए चन्द्रमाके समान विमानपर बैठे श्रीरामचन्द्रजीको देखने लगे ॥ ३४ ॥ भरतजीने हर्षित मनसे हाथ जोड श्रीरामचन्द्रजीके सामने खडे हो कुशलप्रश्न किया और विधिपूर्वक पाद्य व अर्घ्यादि देकर उनकी पूजाकी ॥३५॥

उस समय विशाललोचन भरतजीके बडे भ्राता श्रीरामचन्द्रजी ब्रह्माजीके मनसे बने उस विमानपर बैठे हुए वज्र हाथमें लिये देवराज इन्द्रजीके समान शोभाय मान होने लगे ॥ ३६ ॥ इसके उपरांत भरतजीने विमानपर बैठे हुए अपने भ्राता श्रीरामचन्द्रजीसे प्रणाम किया कि जिस प्रकार सब लोग मेरु पर्वतके शिख रपर स्थित हुए सूर्य भगवानूको प्रणाम करते हैं ॥ ३७ ॥ वह हंसों करके चलाया जाता हुआ महावेगयुक्त अत्युत्तम विमान श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पाय पृथ्वीपर उतरा ॥ ३८ ॥ तब सत्यविक्रमी भरतजीने श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञासे उस विमानके ऊपर सवार हो प्रसन्नमनसे फिर रघुनंदनको प्रणाम किया ॥३९॥ श्रीरामचन्द्रजी भी बहुत दिनोंके पीछे भरतजीको देखकर परमप्रसन्न हुए और उनको चरणोंपरसे उठाय अंकमें धारण किया ॥४०॥ इसके पीछे परम तपस्वी

मनसाब्रह्मणासृष्टेविमानेभरताग्रजः ॥ रराजपृथुदीर्घाक्षोवज्रपाणिरिवामरः ॥३६॥ ततोविमानाग्रगतंभरतोभ्रातरंतदा ॥ ववंदेप्रणतोरामंमे रुस्थमिवभास्करम् ॥३७॥ ततोरामभ्यनुज्ञातंततद्विमानमनुत्तमम् ॥ हंसयुक्तंमहावेगंनिपपातमहीतलम् ॥ ३८ ॥ आरोपितोविमानंतद्भरतः सत्यविक्रमः ॥ राममासाद्यमुदितःपुनरेवाभ्यवादयत् ॥३९॥ तंसमुत्थाप्यकाकुत्स्थश्चिरस्याक्षिपथंगतम् ॥ अंकेभरतमारोप्यमुदितःपरिष स्वजे ॥४०॥ ततोलक्ष्मणमासाद्यवैदेहींचपरंतपः ॥ अथाभ्यवादयत्प्रीतोभरतोनामचाब्रवीत् ॥ ४१ ॥ सुग्रीवंकैकयीपुत्रोजांबवंतमथांदगम् ॥ मैंदंचद्विविदंनीलमृषभंचैवसस्वजे ॥ ४२ ॥ सुषेणंचनलंचैवगवाक्षंगंधमादनम् ॥ शरभंपनसंचैवपरितःपरिषस्वजे ॥ ४३ ॥ तेकृत्वामानुषंरू पंवानराःकामरूपिणः ॥ कुशलंपर्यपृच्छंस्तेप्रहृष्टाभरतंतदा ॥४४॥ अथाब्रवीद्राजपुत्रःसुग्रीवंवानरर्षभम् ॥ परिष्वज्यमहातेजाभरतोधर्मि णांवरः ॥ ४५ ॥ त्वमस्माकंचतुर्णांवैभ्रातासुग्रीवपंचमः ॥ सौहृदाज्जायतेमित्रमपकारोऽरिलक्षणम् ॥ ४६ ॥

भरतजीने आनंद सहित जानकीजीके समीप जाय अपना नाम सुनाकर उनको प्रणाम किया और लक्ष्मणजी उनको प्रणाम करते हुए ॥ ४१ ॥ फिर भरत जीने यथाक्रमसे सुग्रीव, जाम्बवान् अंगद, मैन्द, द्विविद, नील, ऋषभ; इन सबको हृदयसे लगाया ॥ ४२ ॥ और फिर सुषेण, नल, गवाक्ष, गंधमादन, शरभ और पनससे मिले ॥ ४३ ॥ उन कामरूपी वानरोंने मनुष्योंका रूप धारण करके हर्षित अंतःकरणसे भरतजीकी कुशलवार्त्ता पूँछी ॥ ४४ ॥ इसके उपरांत धर्मात्माओंमें श्रेष्ठ महातेजस्वी राजकुमार भरतजी वानश्रेष्ठ सुग्रीवजी और विभीषणजीसे मिलकर समझाते बुझाते हुए बोले ॥ ४५ ॥ हे सुग्रीव ! उप कारादि रूप सुहृदताके वश मित्र और अपकारादिसे अमित्र हुआ करते हैं परंतु तुम अपने किये कर्मोंसे आज हम चारों भ्राताओंके पांचवें हुए ॥ ४६ ॥

हे राक्षसराज! बडे भाग्यकी बात है कि, अपनी सहायतासे रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीने ऐसा दुष्कर कार्य किया है ॥४७॥ इसके उपरान्त वीर शत्रुघ्नजी लक्ष्मणजीके सहित श्रीरामचन्द्रजीको प्रणाम करके विनययुक्त हो सीताजीके चरणयुगल ग्रहण करते हुए ॥ ४८ ॥ उसकेपीछे श्रीरघुनाथजीने शोककर्षिता विवर्णी माता कौशल्याजीके निकट जाय उनको हर्षितकर प्रणाम किया ॥ ४९ ॥ फिर यशस्वी कैकेयी और सुमित्राको प्रणामकरके सब माताओंके सहित पुरोहित वसिष्ठजीके स्थानपर गये ॥ ५० ॥ हे महावीर ! कौशल्याजीके आनंद बढानेवाले ! आपका आना मंगलकारी हो इस प्रकार हाथ जोडकर सब नगरवासी करते थे ! ॥ ५१ ॥ इस प्रकार जयध्वनि करते रहनेपर नगरवासियोंकी असंख्य अंजलियें खिलेहुए फूलोंके समान जानपडनेलगीं ॥ ५२ ॥ धार्मिकश्रेष्ठ

विभीषणंचभरतःसांत्ववाक्यमथाब्रवीत्॥ दिष्टयात्वयासहायेनकृतंकर्मसुदुष्करम् ॥ ४७ ॥ शत्रुघ्नश्चतदाराममभिवाद्यसलक्ष्मणम् ॥ सीतायाश्चरणौवीरोविनयादभ्यवादयत् ॥ ४८ ॥ रामोमातरमासाद्यविवर्णांशोककर्शिताम् ॥ जग्राहप्रणतःपादौमनोमातुःप्रहर्षयन् ॥४९॥ अभिवाद्यसुमित्रांचकैकेयींचयशस्विनीम् ॥ समातॄश्चततःसर्वाःपुरोहितमुपागमत् ॥ ५० ॥ स्वागतंतेमहाबाहोकौसल्यानंदवर्धन ॥ इतिप्रांजलयःसर्वेंनागरारामम‌ब्रुवन् ॥ ५१ ॥ तान्यंजलिसहस्राणिप्रगृहीतानिनागरैः ॥ व्याक्रोशानीवपद्मानिददर्शभरताग्रजः ॥५२॥ पादुकेतेतुरामस्यगृहीत्वाभरतःस्वयम् ॥ चरणाभ्यांनरेंद्रस्ययोजयामासधर्मवित् ॥ ५३ ॥ अब्रवीच्चतदारामंभरतःसकृतांजलिः ॥ एतत्तेसकलंराज्यंन्यासंनिर्यातितंमया ॥ ५४ ॥ अद्यजन्मकृतार्थंमेसंवृत्तश्चमनोरथः ॥ यत्त्वांपश्यामिराजानमयोध्यांपुनरागतम् ॥ ५५ ॥ अवेक्षतांभवान्कोशंकोष्ठागारंगृहंबलम् ॥ भवतस्तेजसासर्वंकृतंदशगुणंमया ॥५६॥

भरतजीने वह दोनों खडाऊं ग्रहण करके अपने आपही नरनाथ उन श्रीरामचन्द्रजीके दोनों चरणोंमें पहरायदीं ॥ ५३ ॥ फिर भरतजी श्रीरामचन्द्रजीसे हाथ जोड़कर बोले जो राज्य आपने हमको थातीके समान सौंपा था आज हम फिर उस आपकी थातीको आपके समर्पण करते हैं ॥ ५४ ॥ आज हमारा जन्म सार्थक हुआ और मनोरथ भी पूर्ण होगये । क्योंकि अयोध्याजीके राजाको आज हमने फिर अयोध्याजीमें आया हुआ देखा ॥ ५५ ॥ आप धनागार, कोषागार, गृह, सेनाकी भलीभांति देखभाल करलीजिये आपके तेज बल सेही हमने इन समस्त वस्तुओंको दशगुण कर रक्खा है ॥ ५६ ॥

भरतजीका ऐसा भाईपन देख और उनके ऐसे वचन सुनकर वानरगण और विभीषणजी आनंदके मारे आंसू विसर्जन करने लगे ॥ ५७ ॥ इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजीहर्षितहोभरतजीको अंकमेंभर विमानपर चढभरतजीके भवनकीओर चले॥५८॥जब रघुनाथजीसेनाके सहित भरतजीके आश्रममें आये,तब विमान परसे उतर पृथ्वीपर खडेहुए ॥५९॥ और उस श्रेष्ठ विमानसे श्रीरामचन्द्रजी कहने लगेकि,हमआज्ञा देते हैं तुम इससमयइस स्थानसे जायकर कुबेरजीको वहन करो ॥ ६० ॥ जब श्रीरामचन्द्रजीने इस प्रकारसेआज्ञा दी तबवह उत्तम विमान कुबेरजीके स्थानपर जानेकोउत्तर दिशाकी ओर चला ॥६१॥ पहले राक्षस रावणने जिस पुष्पक दिव्य विमानको बलसे ग्रहण करलिया था वही अब श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पायकर फिर कुबेरके समीप गया ॥६२॥ फिर देवराज

तथाब्रुवाणंभरतंदृष्ट्वातंभ्रातृवत्सलम् ॥ मुमुचुर्वानराबाष्पंराक्षसश्चविभीषणः ॥ ५७ ॥ ततःप्रहर्षाद्भरतमंकमारोप्यराघवः ॥ ययौतेनविमानेन ससैन्योभरताश्रमम् ॥ ५८ ॥ भरताश्रममासाद्यससैन्योराघवस्तदा ॥ अवतीर्यविमानाग्रादवतस्थेमहीतले ॥ ५९ ॥ अब्रवीत्तुतदारामस्त द्विमानमनुत्तमम् ॥ वहवैश्रवणंदेवमनुजानामिगम्यताम् ॥ ६० ॥ ततोरामाभ्यनुज्ञातंतद्विमानमनुत्तमम् ॥ उत्तरांदिशमुद्दिश्यजगामधन दालयम् ॥ ६१ ॥ विमानंपुष्पकंदिव्यंसंगृहीतंतुरक्षसा ॥ अगमद्धनदंवेगाद्रामवाक्यप्रचोदितम् ॥ ६२ ॥ पुरोहितस्यात्मसखस्यराघवोबृह स्पतेःशक्रइवामराधिपः ॥ निपीड्यपादौपृथगासनेशुभेसहैवतेनोपविवेशवीर्यवान् ॥ ६३ ॥ इत्यार्षेश्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० युद्धकांडे एकोनत्रिंशाधिकशततमः सर्गः ॥ १२९ ॥ शिरस्यंजलिमाधायकैकेय्यानंदवर्धनः ॥ बभाषेभरतोज्येष्ठंरामंसत्यपरा क्रमम् ॥ १ ॥ पूजितामामिकामातादत्तंराज्यमिदंमम ॥ तद्ददामिपुनस्तुभ्यंयथात्वमददामम ॥ २ ॥ धुरमेकाकिनान्यस्तांवृषभेणबलीय सा ॥ किशोरवद्गुरुंभारंनवोढुमहमुत्सहे ॥ ३ ॥

इन्द्रजी जिसप्रकारसे बृहस्पतिजीके चरण ग्रहण करते हैं वैसे ही वीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजी ब्रह्मके जाननेवाले पुरोहित वसिष्ठजीके चरण ग्रहण करते हुए उनके समीप बिछेहुए एक शुभ आसनपर विराजमान हुए ॥ ६३ ॥ इ० श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० युद्ध० भाषायामेकोनत्रिंशाधिकशततमः सर्गः॥ १२९ ॥ इसके उपरान्तकैकेयीके आनन्द बढानेवाले भरतजी शिरसे हाथ जोड सत्यपराक्रम बडे भ्राता श्रीरामचन्द्रजीसे बोले ॥ १ ॥ हे शत्रुओंके तपानेवाले ! महले आपने हमारी माताका मान रखकेर जो राज्य हमको देदिया था,हम इस समय आपको धरोहर स्वरूप रक्खा हुआ वही राज्य सौंपते हैं ॥ २ ॥ जिस प्रकार एक किशोर बछडा बलवान् धुरन्धर दो बैलोंका त्याग किया हुआ बडाबारी बोझा नहीं उठाय सकता, वैसेहीहम इस राज्यभारके उठानेमें असमर्थ हैं ॥ ३ ॥

राज्यमें बहुतसारे छिद्र होते हैं, जिस प्रकार जलका वेग पुलको तोडकर उछलता है वैसेही इस राज्यके छिद्रोंकबंद करना कठिन है ॥ ४ ॥ हे वीर शत्रुदमन कारी ! गधा घोडेकी और कौआ हंसकी गति नहीं पाय सकता वैसेही हम भी आपकी पदवी अवलंबन करनेको असमर्थ हैं ॥ ५ ॥ हे महावीर श्रीरामचन्द्रजी ! जैसे किसीने अपने घरकी फूलबगियामें भला वृक्ष लगाया, जब बडाभरी होनेपर उस वृक्षकी शाखा प्रशाखा बढीं और उसमें पत्ते भी बहुत हुए ॥६॥ और फूलभी उसमें बहुत लगे परन्तु फल आनेके पहलेही वह टूटकर गिर पडा, तब उस पेडके लगानेवालेका अर्थ जिस प्रकारसे विफल हो जाता है ॥ ७ ॥ हे महावीर ! इसी प्रकार हम सरीखे सेवकोंका आपने राजा होकर प्रतिपालन न किया तो ऊपर कही हुई उपमा आपहीपर लगेगी, सो आप इस उपमाका अर्थ भलीभांतिसे जानतेही हैं ॥ ८ ॥ हे रघुनन्दन! दुपहरियाके प्रतापशाली प्रदीप्त सूर्यके समान राजगद्दीपर बैठे हुए आज आपको सब संसार देखे ॥ ९ ॥ आप

वारिवेगेनमहताभिन्नःसेतुरिवक्षरन् ॥ दुर्बंधनमिदंमन्येराज्यच्छिद्रमसंवृतम् ॥ ४ ॥ गतिखरइवाश्वस्यहंसस्येवचवायसः ॥ नान्वेतुमुत्सहेवीरतवमार्गमरिंदमः ॥ ५ ॥ यथाचारोपितोवृक्षोजातश्चांतर्निवेशने ॥ महानपिदुरारोहोमहास्कंधःप्रशाखवान् ॥ ६ ॥ शीर्येतपुष्पितोभूत्वानफलानिप्रदर्शयन् ॥ तस्यनानुभवेदर्थंयस्यहेतोःसरोपितः ॥७॥ एषोपमामहाबाहोत्वमर्थंवेत्तुमर्हसि ॥ यद्यस्मान्मनुजेंद्रत्वंभर्ताभृत्यान्नशाधिहि ॥८॥ जगदद्याभिषिक्तंत्वामनुपश्यतुराघव ॥ प्रतपंतमिवादित्यंमध्याह्नेदीप्ततेजसम् ॥ ९ ॥ तूर्यसंघातनिर्घोषैःकांचीनूपुरनिःस्वनैः ॥ मधुरैर्गीतशब्दैश्चप्रतिबुध्यस्वशेष्वच ॥ १० ॥ यावदावर्ततेचक्रंयावतीचवसुंधरा ॥ तावत्त्वमिहलोकस्यस्वामित्वमनुवर्तय ॥ ११ ॥ भरतस्यवचःश्रुत्वारामःपरपुरंजयः ॥ तथेतिप्रतिजग्राहनिषसादासनेशुभे ॥१२॥ ततःशत्रुघ्नवचनान्निपुणाःश्मश्रुवर्धनाः ॥ सुखहस्ताःसुशीघ्राश्चराघवंपर्यवारयन् ॥ १३ ॥ पूर्वंतुभरतेस्नातेलक्ष्मणेचमहाबले ॥ सुग्रीवेवानरेंद्रेचराक्षसेंद्रेविभीषणे ॥ १४ ॥

राजाओंके योग्य सेजपर शयन कीजिये, नगाडोंपर डंका पडनेके शब्द, क्षुद्रघंटिका नूपुर आदिका आवाज और ललित गीतोंकेशब्दसे जागा कीजिये ॥१०॥ जबतक यह ज्योतिषचक्र घूमता रहे, और जबतक यह भूमि है तबतक आप समस्त पृथ्वीके राजा होकर सब लोकोंका पालन करते रहिये ॥ ११ ॥ परपुरविजय कारी श्रीरामचन्द्रजी भरतजीके वचन सुन "तथास्तु" कह स्वीकार कर शुभ आसनपर बैठे ॥ १२ ॥ अनन्तर शत्रुघ्नजीकी आज्ञासे बडे निपुण सुखस्पर्श हाथवाले और शीघ्रकारी नाई प्रणाम करके श्रीरामचन्द्रजीके निकट उपस्थित हुए ॥ १३ ॥ पहले उन नाइयोंने भरतजीको, महाबलवान् लक्ष्मणजीको, वानरोंमें इंद्र सुग्रीव, व राक्षसोंमें श्रेष्ठ विभीषणको स्नान कराया ॥ १४ ॥

उसके पीछे रामचन्द्रजी शिरकी जटा अलग कराय स्नान कर चित्र विचित्र माला उबटन लगाय मूल्यवान् वस्त्रोंसे सुशोभित हो अपने शरीरकी शोभासे चारों ओर प्रकाश करने लगे ॥ १५ ॥ वीर्यवान्, लक्ष्मीवान्, इक्ष्वाकुकुलके बढाने वाले शत्रुघ्नजीने लक्ष्मणजीके और श्रीरामचन्द्रजीके सब अंगोंमें मनोहर गहने पहराये ॥ १६ ॥ बडे मनवाली राजा दशरथजीकी स्त्रियोंमें अपने हाथसे सीताजीके सब अंगोंमें मनोहर गहने पहराये ॥ १७ ॥ पुत्रवत्सला कौशल्याजीने हर्षित मनसे शोभायमान भूषण पहराय सम्पूर्ण वानरोंकी स्त्रियोंको शोभित किया ॥ १८ ॥ इनके उपरांत शत्रुघ्नजीके वचनसे सारथी सुमंत्र सब अंगोंसे शोभायमान रथको जोतकर उस स्थानमें लाये ॥ १९ ॥ परपुरविजयी महावीर श्रीरामचन्द्रजी अग्नि और सूर्य भगवान्के समान दीप्तिमान उस रथके निकट

विशोधितजटःस्नातश्चित्रमाल्यानुलेपनः॥महार्हवसनोपेतस्तस्थौतत्रश्रियाज्वलन् ॥१५॥ प्रतिकर्मचरामस्यकारयामासवीर्यवान् ॥ लक्ष्मणस्यचलक्ष्मीवानिक्ष्वाकुकुलवर्धनः ॥१६॥ प्रतिकर्मचसीतायाःसर्वादशरथस्त्रियः ॥ आत्मनैवतदाचक्रुर्मनस्विन्योमनोहरम् ॥ १७ ॥ ततोवानरपत्नीनांसर्वासामेवशोभनम् ॥ चकारयत्नात्कौसल्याप्रहृष्टापुत्रवत्सला ॥ १८॥ ततःशत्रुघ्नवचनात्सुमंत्रोनामसारथिः ॥ योजयित्वाभिचक्रामरथंसर्वांगशोभनम् ॥ १९ ॥ अग्न्यर्कामलसंकाशंदिव्यंदृष्ट्वारथंस्थितम् ॥ आरुरोहमहाबाहुरामःपरपुरंजयः ॥ २० ॥ सुग्रीवोहनुमांश्चैवमहेंद्रसदृशद्युती ॥ स्नातौदिव्यनिभैर्वस्त्रैर्जग्मतुःशुभकुंडलौ ॥ २१ ॥ सर्वाभरणजुष्टाश्चययुस्ताःशुभकुंडलाः ॥ सुग्रीवपत्न्यःसीताचद्रष्टुंनगरमुत्सुकाः ॥ २२ ॥ अयोध्यायांचसचिवाराज्ञोदशरथस्यच॥पुरोहितंपुरस्कृत्यमंत्रयामासुरर्थवत् ॥२३॥ अशोकोविजयश्चैवसिद्धार्थाश्चसमाहिताः॥मंत्रयन्रामवृद्ध्यर्थंवृत्त्यर्थंनगरस्यच ॥२४॥ सर्वमेवाभिषेकार्थंजयार्हस्यमहात्मनः॥कर्तुमर्हथरामस्ययद्यन्मंगलपूर्वकम् ॥२५॥

आय शीघ्र उसपर सवार हुए ॥ २० ॥ इन्द्रजीके समान शोभायमान शुभकुंडलधारी सुग्रीव व हनुमान्जी स्नान करके दिव्य वसन भूषणोंसे सुशोभित हो श्रीरामचन्द्रजीके साथ २ चले ॥ २१ ॥ समस्त आभरणोंसे शोभायमानशुभकुंडल पहरे हुई जानकीजी और सुग्रीवजीकी स्त्रियें नगर देखनेकी वासनासे उत्कंठित हो उनके पीछे २ गमन करने लगीं ॥२२॥ इधर अयोध्याजीमें राजा दशरथजीके सब मंत्री वसिष्ठजीको आगे करके मंत्रणा करने लगे ॥२३॥ अशोक विजय और सिद्धार्थ प्रमुख श्रीरामचन्द्रजीका वृद्धि अभिषेक और नगरको सजानेके लिये परामर्श करते हुए ॥ २४ ॥ उन्होंने सेवक लोगोंको आज्ञा दी कि, "महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके विजय और उनके अभिषेक करनेके लिये जो जो मंगलाचार करने चाहिये, तुम सब जने मिलकर उनकेकरनेका यत्न करो" ॥२५॥

पुरोहित वसिष्ठजी और मंत्री और कार्याधिकारियोंको इस प्रकारकी आज्ञा देकर श्रीरामचन्द्रजी दर्शन करनेकी वासनासे शीघ्रतापूर्वक नगरसे निकलनेकी ॥२६॥ इसओर पापरहित श्रीरामचन्द्रजी भी इन्द्रके समान श्रेष्ठ घोडोंसे चलाये जाते हुए रथपर सवार हो नगरकी ओर गमन करने लगे ॥ २७ ॥ उस कालमें भरतजीने घोडोंकी लगाम और शत्रुघ्नजीने छत्र धारण किया, व लक्ष्मणजी श्रीरामचंद्रजीके मस्तकपर चमर हिलाने लगे ॥२८॥ राक्षसराज विभीषणजी चंद्रमाके समान श्वेत बालोंका एक चमर धारण करके श्रीरामचन्द्रजीकी बगलमें आय बैठे ॥ २९ ॥ उसकाल अंतरिक्षमें टिके हुए ऋषि और मरुतोंके सहित देवताओंका श्रीरामचन्द्रजीके स्तुतिकी सूचना देनेवाला मधुर शब्द हुआ ॥ ३० ॥ उसके पीछे महातेजस्वी वानरोंमें इंद्र सुग्रीवजी महाराज दशरथजीके

इतितेमंत्रिणःसर्वेसंदिश्यचपुरोहितः ॥ नगरान्निर्ययुस्तूर्णंरामदर्शनबुद्धयः ॥२६॥ हरियुक्तंसहस्राक्षोरथमिंद्रइवानघः ॥ प्रययौरथमास्थायरामो नगरमुत्तमम् ॥ २७ ॥ जग्राहभरतोरश्मीञ्शत्रुघ्नश्छत्रमाददे ॥लक्ष्मणोव्यजनंतस्यमूर्ध्निसंवीजयंस्तदा ॥ २८ ॥ श्वेतंचवालव्यजनंजगृहे परितःस्थितः ॥ अपरंचंद्रसंकाशंराक्षसेंद्रोविभीषणः ॥ २९ ॥ ऋषिसंघैस्तदाकाशेदेवैश्चसमरुद्गणैः ॥ स्तूयमानस्यरामस्यशुश्रुवेमधुरध्वनिः ॥ ३० ॥ ततःशत्रुंजयंनामकुंजरंपर्वतोपमम् ॥ आरुरोहमहातेजाःसुग्रीवःप्लवगर्षभः ॥ ३१ ॥ नवनागसहस्राणिययुरास्थायवानराः ॥ मानुषंविग्रहंकृत्वासर्वाभरणभूषिताः ॥ ३२ ॥ शंखशब्दप्रणादैश्चदुंदुभीनांचनिःस्वनैः ॥ प्रययौपुरुषव्याघ्रस्तांपुरींहर्म्यमालिनीम् ॥ ३३ ॥ ददृशुस्तेसमायांतंराघवंसपुरःसरम् ॥ विराजमानंवपुषारथेनातिरथंतदा ॥ ३४ ॥ तेवर्धयित्वाकाकुत्स्थंरामेणप्रतिनंदिताः ॥ अनुजग्मुर्महात्मानंभ्रातृभिःपरिवारितम् ॥ ३५ ॥ अमात्यैर्ब्राह्मणैश्चैवतथाप्रकृतिभिर्वृतः ॥ श्रियाविरुरुचेरामोनक्षत्रैरिवचंद्रमाः ॥ ३६ ॥

शत्रुञ्जय नामक हाथीपर चढे ॥ ३१ ॥ व दूसरे वानरगण मनुष्योंका रूप धारणकर वस्त्राभूषणोंसे भूषित हो नौ हजार हाथियोंके ऊपर सवार होकर गमन करने लगे ॥ ३२ ॥ इस प्रकारसे पुरुषशार्दूल श्रीरामचन्द्रजी शंख और नगाडोंके शब्दके साथ उस धवरहरोंसे शोभायमान अयोध्यापुरीमें प्रवेश करते हुए ॥३३॥ वह नगरवासी लोग अपने शरीरकी दीप्तिसे विराजमान उन अतिरथ श्रीरामचन्द्रजीको सब साजसमाज सहित आते हुए रथपर देखने लगे ॥३४॥ उन नगर वासियोंने भ्राताओंके साथ इन महात्माओंकी जय शब्दसे परिवर्द्धित किया, तब श्रीरामचन्द्रजीने भी उनको प्रणामादि किया तब सब पुरवासी आनंदित होकर उनके पीछे २ चले ॥ ३५ ॥ उस कालमें श्रीरामचन्द्रजी प्रजापुञ्ज, ब्राह्मण और मंत्रियोंके साथ तारागणोंसे युक्त चन्द्रमाके समान शोभा पाने

लगे ॥ ३६ ॥ इस प्रकारसे श्रीरामचन्द्रजी' आगे आगे चलते हुए नगाडे आदि बजाने वाले करताल व झांझ आदि बजानेवाले और मंगल पाठ करने वाले लोगोंके साथ २ जाने लगे ॥ ३७ ॥ गो कन्या चावल और सुवर्ण हाथमें लिये हुए ब्राह्मणगण तथा लड्डू हाथमें लिये सब मनुष्य श्रीरामचन्द्रजीके आगे २ चले ॥३८॥ उस समय श्रीरामचन्द्रजी मंत्रिवर्गोंके सामने सुग्रीवजीकी मित्रता हनुमान्‌जीका प्रभाव और वानरोंके अद्भुत कार्यका वृत्तान्त वर्णन करने लगे ॥ ३९ ॥ अयोध्यानगरीके समस्त रहने वाले राक्षसगणोंका बल और वानरोंका इस प्रकारका कार्य सुनकर विस्मित हुए ॥ ४० ॥ मंत्रिवर्गके साथ द्युतिमान् श्रीरामचन्द्रजी वानरोंके पराक्रमकी यह समस्त वार्त्ता कहते २ हृष्टपुष्ट मनुष्योंसे परिपूर्ण अयोध्या नगरीमें पैठे ॥ ४१ ॥ पुरवासियोंने घर २ झंडियां लगाईं

सपुरोगामिभिस्तूर्यैस्तालस्वस्तिकपाणिभिः ॥ प्रव्याहरद्भिर्मुदितैर्मंगलानिवृतोययौ ॥३७॥ अक्षतंजातरूपंचगावःकन्याःसहद्विजाः ॥ नरामोदकहस्ताश्चरामस्यपुरतोययुः ॥ ३८ ॥ सख्यंचरामःसुग्रीवेप्रभावंचानिलात्मजे ॥ वानराणांचतत्कर्मह्याचचक्षेऽथमंत्रिणाम् ॥३९॥ श्रुत्वाच विस्मयंजग्मुरयोध्यापुरवासिनः ॥ वानराणांचतत्कर्मराक्षसानांचतद्बलम् ॥ ४० ॥ द्युतिमानेतदाख्यायरामोवानरसंयुतः ॥ हृष्टपुष्टजनाकीर्णांमयोध्यांप्रविवेशसः ॥४१॥ ततोह्यभ्युच्छ्रयन्पौराःपताकाश्चगृहेगृहे ॥ ऐक्ष्वाकाध्युषितंरम्यमाससादपितुर्गृहम् ॥४२॥ अथाब्रवीद्राजपुत्रोभरतंधर्मिणांवरम् ॥ अर्थोपहितयावाचामधुरंरघुनंदनः ॥ ४३॥ पितुर्भवनमासाद्यप्रवेश्यचमहात्मनः ॥ कौसल्यांचसुमित्रांचकैकेयीमभिवादय ॥ ४४ ॥ तच्चमद्भवनंश्रेष्ठंसाशोकवनिकंमहत् ॥ मुक्तावैदूर्यसंकीर्णंसुग्रीवायनिवेदय ॥ ४५ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाभरतःसत्यविक्रमः ॥ हस्तेगृहीत्वासुग्रीवंप्रविवेशतामलयम् ॥४६॥ ततस्तैलप्रदीपांश्चपर्यंकास्तरणानिच ॥ गृहीत्वाविविशुःक्षिप्रंशत्रुघ्नेनप्रचोदिताः ॥ ४७ ॥

और श्रीरामचन्द्रजी भी इक्ष्वाकुकुलमें उत्पन्न हुए पुरुषोंसे सेवित अपने पिता दशरथजीके गृहमें प्रवेश करते हुए ॥ ४२ ॥ वहांपर पहुंचते २ श्रीरामचन्द्रजी अर्थयुक्त मधुरवाणीसे धर्मचारियोंमें श्रेष्ठ भरतजीसे बोले ॥ ४३ ॥ महात्मा श्रीरामचन्द्रजीने पिताजीके भवनमें पैठ कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयीको प्रणाम किया और फिर भरतजीसे कहा कि ॥ ४४ ॥ मुक्ता और वैदूर्यमणियोंसे परिपूर्ण और अशोकवाटिकासे युक्त हमारा जो बडा भारी गृह है वही गृह सुग्रीवजीके लिये दे दो ॥ ४५ ॥ सत्यविक्रमकारी भरतजी श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा सुनकर सुग्रीवजीका हाथ पकड उस गृहमें गये ॥४६॥ इसके उपरांत सेवक लोग शत्रुघ्नजीकी आज्ञा पाय तेजसे जलती हुई मसालें पलंग और बिछौने लेकर उस गृहमें शीघ्रतासे प्रवेश करते हुए ॥ ४७ ॥

तब महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भ्राता भरतजीने सुग्रीवजीसे कहा कि, अब श्रीरामचन्द्रजीके अभिषेकार्थ जल लानेके लिये दूतोंको आज्ञा दीजिये ॥ ४८ ॥ भरतजीके ऐसे वचन सुनकर सुग्रीवजीने चार घडे दिये, जो घडे सब रत्नोंसे भूषित हो रहे थे वह घडे देखकर सुग्रीवजीने कहा ॥ ४९ ॥ हे वानरगण ! जिससे कल प्रभातके समय शीघ्र चारों समुद्रका जल ले आय सको ऐसा करनेमें तुम यत्नवान् हो ॥ ५० ॥ सुग्रीवजीकी इस प्रकारसे आज्ञा पाय हस्तीके समान बलवान् और गरुडजीके समान शीघ्रगामी वानरगण शीघ्रतासे ऊपरको कूदे ॥ ५१ ॥ वानरश्रेष्ठ हनुमानूजी, वेगदर्शी, ऋषभ और जाम्बवान् यह चार जने कलशोंमें भरकर जल लाये ॥ ५२ ॥ यह चारोंजने पांच शत नदियोंका जल घडोंमें भरकर लाये, पूर्वके समुद्रसे कलशमें जल भरकर लाया

उवाचचमहातेजाःसुग्रीवंराघवानुजः ॥ अभिषेकायरामस्यदूतानाज्ञापयप्रभो ॥४८॥ सौवर्णान्वानरेंद्राणांचतुर्णांचतुरोघटान् ॥ ददौक्षिप्रंससुग्रीवःसर्वरत्नविभूषितान् ॥ ४९ ॥ तथाप्रत्यूषसमयेचतुर्णांसागरांभसाम् ॥ पूर्णैर्घटैःप्रतीक्षध्वंतथाकुरुतवानराः ॥ ५० ॥ एवमुक्तामहात्मानोवानरावारणोपमाः ॥ उत्पेतुर्गगनंशीघ्रंगरुडाइवशीघ्रगाः ॥ ५१ ॥ जांबवांश्चहनूमांश्चवेगदर्शीचवानरः ॥ ऋषभश्चैवकलशाञ्जलपूर्णानथानयन् ॥५२॥ नदीशतानांपंचानांजलंकुंभैरुपाहरन् ॥ पूर्वात्समुद्रात्कलशंजलपूर्णमथानयत् ॥५३॥ सुषेणःसत्त्वसंपन्नःसर्वरत्नविभूषितम् ॥ ऋषभोदक्षिणात्तूर्णंसमुद्राज्जलमानयत् ॥ ५४ ॥ रक्तचंदनकर्पूरैःसंवृतंकांचनंघटम् ॥ गवयःपश्चिमात्तोयमाजहारमहार्णवात् ॥ ५५ ॥ रत्नकुंभेनहताशीतंमारुतविक्रमः ॥ उत्तराच्चजलंशीघ्रंगरुडानिलविक्रमः ॥ ५६ ॥ आजहारसधर्मात्मानीलःसर्वगुणान्वितः ॥ ततस्तैर्वानरश्रेष्ठैरानीतंप्रेक्ष्यतज्जलम् ॥ ५७ ॥ अभिषेकायरामस्यशत्रुघ्नःसचिवैःसह ॥ पुरोहितायश्रेष्ठायसुहृद्भ्यश्चन्यवेदयत् ॥ ५८ ॥

गया ॥ ५३ ॥ सब रत्नोंसे विभूषित इस कलशमें जल भरकर सत्यसंपन्न सुषेणजी लाये । वानर ऋषभ दक्षिणसमुद्रसे शीघ्रतासे जल लाये ॥ ५४ ॥ यह जल लालचन्दन और सुवर्णसे लेपित कंचनके घडेमें लाया गया । गवय नाम वानर पश्चिमके समुद्रसे जल लाया ॥ ५५ ॥ पवनके समान विक्रमकारी गवय यह जल बडे भारी रत्नजटित घडेमें लाया, उत्तरके समुद्रसे भी जल आया। यह जल अति शीघ्र गरुड व पवनके समान विक्रमी ॥ ५६ ॥ धर्मात्मा सर्वगुण युक्त पवनकुमार हनुमान्जी लाये तब वानरश्रेष्ठों करके लाये हुए उस जलको देखकर ॥ ५७ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके अभिषेकके लिये शत्रुघ्नजीने सब मंत्रियोंके साथ बैठे हुए पुरोहितश्रेष्ठ वसिष्ठजीसे और सब सुहृद् लोगोंसे कहा ॥ ५८ ॥

शत्रुघ्नजीके वचन सुनकर वृद्धगुरु वसिष्ठजीने व और दूसरे ब्राह्मणोंने श्रीरामचन्द्रजीको सीताजीके सहित रत्नमय सिंहासनपर बैठाया ॥५९॥ वसिष्ठ, विजय, जाबालि, काश्यप, कात्यायन, गौतम और वामदेव ॥ ६० ॥ इत्यादि महर्षियोंने निर्मल और सुगंधित जलसे पुरुषव्याघ्र श्रीरामचन्द्रजीका अभिषेक किया कि, जैसे वसु नामक देवोंने इन्द्रका अभिषेक किया था ॥ ६१ ॥ प्रथम ऋत्विक् ब्राह्मणोंने, उसके पीछे कन्याओंने, फिर मंत्री, योद्धागण, पुरवासी और बनियोंने हर्षित मनसे श्रीरामचन्द्रजीका अभिषेक किया ॥ ६२ ॥ फिर आकाशमें टिके हुए देवताओंने चारों लोकपालोंके साथ मिलकर सब औषधियोंसे युक्त जलसे श्रीरामचन्द्रजीका अभिषेक किया ॥ ६३ ॥ इसके उपरांत पितामह ब्रह्माजीने अपने बनाये हुए रत्नमय मुकुटसे पहले अतितेजस्वी राजा मनुका

ततःसंप्रयतोवृद्धोवसिष्ठोब्राह्मणैःसह ॥ रामंरत्नमयेपीठेससीतंसंन्यवेशयत् ॥५९॥ वसिष्ठोविजयश्चैव जाबालिरथकाश्यपः ॥ कात्यायनोगौतमश्चवामदेवस्तथैवच ॥ ६० ॥ अभ्यषिंचन्नरव्याघ्रंप्रसन्नेनसुगंधिना ॥ सलिलेनसहस्राक्षंवसवोवासवंयथा ॥६१॥ ऋत्विग्भिर्ब्राह्मणैःपूर्वंकन्याभिर्मन्त्रिभिस्तथा ॥ योधैश्चैवाभ्यषिंचंस्तेसंप्रहृष्टैःसनैगमैः ॥६२॥ सर्वौषधिरसैश्चापिदैवतैर्नभसिस्थितैः ॥ चतुर्भिर्लोकपालैश्चसर्वैर्देवैश्चसंगतैः ॥ ६३ ॥ ब्रह्मणानिर्मितंपूर्वंकिरीटंरत्नशोभितम् ॥ अभिषिक्तःपुरायेनमनुस्तंदीप्ततेजसम् ॥६४॥ तस्यान्ववायेराजानःक्रमाद्येनाभिषेचिताः ॥ सभायांहेमक्लृप्तायांशोभितायांमहाधनैः ॥६५॥ रत्नैर्नानाविधैश्चैवचित्रितायांसुशोभनैः ॥ नानारत्नमयेपीठेकल्पयित्वायथाविधि ॥ ६६ ॥ किरीटेनततःपश्चाद्वसिष्ठेनमहात्मना ॥ ऋत्विग्भिर्भूषणैश्चैवसमयोक्ष्यतराघवः ॥ ६७ ॥ छत्रंतस्यच जग्राहशत्रुघ्नःपांडुरंशुभम् ॥ श्वेतंचवालव्यजनंसुग्रीवोवानरेश्वरः ॥ ६८ ॥ अपरंचंद्रसंकाशंराक्षसेंद्रोविभीषणः ॥ मालांज्वलंतींवपुषाकांचनींशतपुष्कराम् ॥ ६९ ॥

अभिषेक किया था ॥६४॥ और मनुजीने पीछे इनके वंशमें राजोंका भी क्रमसे जब अभिषेक कराया गया था उन सबके शिरपर सुवर्णनिर्मित महाधनोंसे शोभित ॥ ६५ ॥ अनेक प्रकारके रत्नोंसे चित्र विचित्र होनेके कारण सुशोभित अनेक प्रकारके रत्नोंसे जडी हुई चौकियोंपर बैठाय २ विधिविधानसे धारण कराया गया ॥६६॥ वही मुकुट अभिषेक होनेके पीछे महात्मा वसिष्ठजीने श्रीरामचन्द्रजीके मस्तकपर धारण कराया, व ऋत्विग्जनोंने और गहनोंसे श्रीरामचन्द्रजीको सुसज्जित करदिया ॥६७॥ शत्रुघ्नजीने उनके मस्तकपर मंगलसूचक श्वेतछत्र और वानरराज सुग्रीवजीने श्वेतचमर श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर व्यजन माला किया ॥६८॥ और दूसरे चन्द्रमाके समान श्वेत चमर राक्षसोंमें इंद्र विभीषणजीने ग्रहण किया शतपद्मशोभित प्रकाशमान शरीरको शोभायमान करनेवाली ॥६९॥

इन्द्रजीसे प्रेरित होकर वायुने श्रीरामचन्द्रजीको दी सर्व रत्नोंसे जटित मणियोंसे भूषित ॥ ७० ॥ एक मोतियोंका हार भी पवनजीने इंद्रकी प्रेरणासे रघुनाथजीको दिया । आकाशमें गन्धर्वोंने गाना आरंभ किया व अप्सरायें नृत्य करने लगीं ॥ ७१ ॥ बुद्धिमान् श्रीरामचन्द्रजीके उस अभिषेकमें उसके योग्य ही यह सब हुआ, उस कालमें पृथ्वी धान्यसे युक्त हुई वृक्षोंमें फल लगे ॥ ७२ ॥ और फूल सुगन्धियुक्त हो गये यह सब कुछ श्रीरामचन्द्रजीके अभिषेकके उत्सवमें हुआ । एक लाख घोडे नई ब्याई हुई गायें व और भी गायें ॥ ७३ ॥ और शत बैल प्रथम ब्राह्मणोंको मनुष्यश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीने दिये, और फिर ब्राह्मणोंको तीस करोड अशर्फियें दीं ॥ ७४ ॥ फिर श्रीरामचन्द्रजीने बडे मोलके अनेक भाँतिके वस्त्राभूषण सूर्यकी किरणोंके समान प्रकाशित मणियोंसे

राघवायददौवायुर्वासवेनप्रचोदितः ॥ सर्वरत्नसमायुक्तंमणिभिश्चविभूषितम् ॥ ७० ॥ मुक्ताहारंनरेंद्रायददौशक्रप्रचोदितः ॥ प्रजगुर्देवगंधर्वाननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥ ७१ ॥ अभिषेकेतदर्हस्यतदारामस्यधीमतः ॥ भूमिःसस्यवतीचैवफलवंतश्चपादपाः ॥ ७२ ॥ गंधवंतिचपुष्पाणिबभूवूराघवोत्सवे ॥ सहस्रशतमश्वानांधेनूनांचगवांतथा ॥ ७३ ॥ ददौशतवृषान्पूर्वंद्विजेभ्योमनुजर्षभः ॥ त्रिंशत्कोटीर्हिरण्यस्यब्राह्मणेभ्योददौपुनः ॥ ७४ ॥ नानाभरणवस्त्राणिमहार्हाणिचराघवः ॥ अर्करश्मिप्रतीकाशांकांचनींमणिविग्रहाम् ॥ ७५ ॥ सुग्रीवायस्रजंदिव्यांप्रायच्छन्मनुजाधिपः ॥ वैदूर्यमयचित्रेचचंद्ररश्मिविभूषिते ॥ ७६ ॥ वालिपुत्रायधृतिमानंगदायांगदेददौ ॥ मणिप्रवरजुष्टंतंमुक्ताहारमनुत्तमम् ॥ ७७ ॥ सीतायैप्रददौरामश्चन्द्ररश्मिसमप्रभम् ॥ अरजेवाससीदिव्ये शुभान्याभरणानिच ॥ ७८ ॥ अवेक्षमाणावैदेहीप्रददौवायुसूनवे ॥ अवमुच्यात्मनःकंठाद्धारंजनकनंदिनी ॥ ७९ ॥ अवैक्षतहरीन्सर्वान्भर्तारंचमुहुर्मुहुः ॥ तामिंगितज्ञःसंप्रेक्ष्यबभाषेजनकात्मजाम् ॥ ८० ॥ प्रदेहिसुभगेहारंयस्यतुष्टासिभामिनि ॥ अथसावायुपुत्रायतंहारमसितेक्षणा ॥ ८१ ॥

जडी सुवर्णसे बनी ॥ ७५ ॥ दिव्य माला सुग्रीवजीको मनुजेश्वर श्रीरामचन्द्रजीने दी फिर वैदूर्य मणिसे चित्रित चंद्रमाकी किरणोंसे विभूषित ॥ ७६ ॥ धृतिमान्‌वालिकुमार अंगदजीको दो अंगद (बाजू) दिये, मणिश्रेष्ठोंसे जडित श्रेष्ठ मोतियोंका हार ॥ ७७ ॥ चंद्रमाकी किरणोंके समानप्रभावाला सीताजीको दिया, दिव्य वस्त्रयुगल निर्मल जो कभी पुराने न हों और शुभ गहने ॥ ७८ ॥ सीताजीने हनुमान्‌जीके पहले किये उपकारको स्मरणकर हनुमान्‌जीको देदिये, और अपने कंठकाहार निकाल कर जानकीजीने ॥ ७९ ॥ सब वानरोंकी ओर और अपने पति श्रीरामचन्द्रजीकी ओर वारंवार देखा । यह देखकर संकेत व इंगितके जाननेवाले श्रीरामचन्द्रजीने जानकीजीसे कहा ॥ ८० ॥ हे सुभगे ! हे भामिनि ! जिसपर तुम प्रसन्न हुई हो उसको यह हार दे डालो । इसके

उपरांत कमलके समान नेत्रवाली सीताजीने वह हार पवनकुमारको दिया ॥ ८१ ॥ कि जिनमें तेज, धृति, यश, निपुणता, सामर्थ्य, विनय नय पौरुष; विक्रम और बुद्धि इत्यादि गुण सब सदा वर्त्तमान रहते हैं ॥ ८२ ॥ उन्हीं वानरश्रेष्ठ पवनकुमार हनुमानूजीको वह हार सुभगा सीताजीने दिया उस कालमें चंद्रमाके समान वानरश्रेष्ठ हनुमानूजी वह गौरवर्णका हार धारण करके श्वेत बादरोंसे युक्त पर्वतके समान शोभयमान होनेलगे ॥ ८३ ॥ और दूसरे वानर जो कि वृद्ध थे व और यूथपति सबहीवसन भूषणादिसे यथायोग्य रूपसे प्रतिपूजित हुए ॥ ८४ ॥ इस प्रकारसे विभीषण, सुग्रीव, जाम्बवानू; हनुमानू व और दूसरे वानर यूथपति सरलकर्मकारी श्रीरामचन्द्रजीसे ॥ ८५ ॥ बडे २ मोलके रत्न और माला चंदनादि द्वारा सत्कृत हो हर्षितमनसे अपने २ टिकनेके

तेजोधृतिर्यशोदाक्ष्यंसामर्थ्यंविनयोनयः ॥ पौरुषंविक्रमोबुद्धिर्यस्मिन्नेतानिनित्यदा ॥ ८२ ॥ हनूमांस्तेनहारेणशुशुभेवानरर्षभः ॥ चंद्रांशुचयगौरेणश्वेताभ्रेणयथाचलः ॥ ८३ ॥ सर्वेवानरवृद्धाश्चयेचान्येवानरोत्तमाः ॥ वासोभिर्भूषणैश्चैवयथार्हंप्रतिपूजिताः ॥ ८४ ॥ विभीषणोऽथसुग्रीवोहनूमाञ्जांबवांस्तथा ॥ सर्वेवानरमुख्याश्चरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ ८५ ॥ यथार्हंपूजिताःसर्वेकामैरत्नैश्चपुष्कलैः ॥ प्रहृष्टमनसःसर्वेजग्मुरेवयथागतम् ॥ ८६ ॥ ततोद्विविदमैंदाभ्यांनीलायचपरंतपः ॥ सर्वान्कामगुणान्वीक्ष्यप्रददौवसुधाधिपः ॥ ८७ ॥ दृष्ट्वासर्वेमहात्मानस्ततस्तेवानरर्षभाः ॥ विसृष्टाःपार्थिवेंद्रेणकिष्किंधांसमुपागमन् ॥ ८८ ॥ सुग्रीवोवानरश्रेष्ठोदृष्ट्वारामाभिषेचनम् ॥ पूजितश्चैवरामेणकिष्किंधांप्राविशत्पुरीम् ॥ ८९ ॥ विभीषणोऽपिधर्मात्मासहतैर्नैर्ऋतर्षभैः ॥ लब्ध्वाकुलधनंराजालंकांप्रायान्महायशाः ॥ ९० ॥ सराज्यमखिलंशासन्निहतारिर्महायशाः ॥ राघवःपरमोदारःशशासपरयामुदा ॥ उवाचलक्ष्मणंरामोधर्म्मज्ञंधर्मवत्सलः ॥ ९१ ॥ आतिष्ठधर्मज्ञमयासहेमांगांपूर्वराजाध्युषितांबलेन ॥ तुल्यंयथात्वांपितृभिःपुरस्तात्तैयौवराज्येधुरमुद्वहस्व ॥ ९२ ॥

स्थानपर गये ॥८६॥ इसके पीछे शत्रुदमनकारी महीपति श्रीरामचंद्रजीनेमैन्द, द्विविद और नीलकी इच्छानुसार सब कामना पूर्ण की ॥ ८७ ॥ इस प्रकारसे यह समस्त वानरश्रेष्ठगण महात्मा मनुजनाथ श्रीरामचंद्रजीका अभिषेकदर्शन करके उनसे विदा हो फिर किष्किन्धापुरीको आये ॥ ८८ ॥ वानरोंमें श्रेष्ठ सुग्रीवजी रामाभिषेकदेखकर श्रीरामचन्द्रजीसे सम्मानित हो किष्किन्धापुरीमें प्रवेश करते हुए ॥ ८९ ॥ महायशस्वी धर्मात्मा राक्षसोंमें श्रेष्ठ विभीषणजी राज्य और धन रत्न पाकर राक्षसश्रेष्ठोंके सहित लंकापुरीमें चले आये ॥ ९० ॥ इस ओर धर्मवत्सल उदारस्वभाव महायशस्वी श्रीरामचन्द्रजी शत्रुको विजयकर बडा भारी राज्यपाय परमानंदसे प्रजापालनमें नियुक्त हो धर्मके जाननेवाले लक्ष्मणजीसे कहनेलगे ॥ ९१ ॥ हमारे पूर्ण पुरुषाओंने बलपूर्वक जिस राज्यको

अपने अधीन किया था तुम हमारे सहित उस राज्यको भोगो, हे वीर ! पुरुषाओंने जो धुरी पहले धारण की थी तुम भी यौवराज्यमें अभिषेकित होकर वैसेही धुरीको उठाओ अर्थात् राज्यका कुछ भार सँभालो ॥ ९२ ॥ परन्तु इस भांतिसे कहे सुने जानेपरभी जब सुमित्रानंदन लक्ष्मणजीने युवराज पदवीपर अभिषेकित होनेकी किसी प्रकारभी वासना नहीं की तब धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजीने भरतजीको युवराजपदवीपर अभिषेकित किया ॥ ९३ ॥ राजकुमार श्रीरामचन्द्रजीने पौण्डरीक अश्वमेध व और भी बहुतसारे यज्ञ करके देवताओंको तृप्त किया ॥९४॥ रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीने दशसहस्र वर्ष राज्य पालन करके एक २ करके श्रेष्ठ अश्वोंसे युक्त और बहुत सारी दक्षिणा देकर दश अश्वमेध यज्ञ किये ॥९५॥ इस प्रकारसे वह आजानुलम्बितबाहु जांघोंतक जिनकी बांहें लम्बायमान चौडी छातीवाले प्रतापवान् श्रीरामचंद्रजी लक्ष्मणजीके सहित राज्य पालन करने लगे॥ ९६ ॥ धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजीने उत्तम राज्यको पाकर

सर्वात्मनापर्यनुनीयमानोयदानसौमित्रिरुपैतियोगम् ॥ नियुज्यमानोभुवियौवराज्येततोऽभ्यषिंचद्भरतंमहात्मा ॥ ९३ ॥ पौंडरीकाश्वमेधाभ्यांवाजिमेधेनचासकृत् ॥ अन्यैश्चविविधैर्यज्ञैरयजत्पार्थिवात्मजः ॥ ९४ ॥ राज्यंदशसहस्राणिप्राप्यवर्षाणिराघवः ॥ दशाश्वमेधानाजह्रेसदश्वान्भूरिदक्षिणान् ॥ ९५ ॥ आजानुलंबिबाहुःसमहावक्षाःप्रतापवान् ॥ लक्ष्मणानुचरोरामःशशासपृथिवीमिमाम् ॥ ९६ ॥ राघवश्चापिधर्मात्माप्राप्यराज्यमनुत्तमम् ॥ ईजेबहुविधैर्यज्ञैःससुतभ्रातृबांधवः ॥ ९७ ॥ नपर्यदेवन्विधवानचव्यालकृतंभयम् ॥ नव्याधिजंभयंचासीद्रामेराज्यंप्रशासति ॥ ९८ ॥ निर्दस्युरभवल्लोकोनानर्थंकश्चिदस्पृशत् ॥ नचस्मवृद्धाबालानांप्रेतकार्याणिकुर्वते ॥ ९९ ॥ सर्वंमुदितमेवासीत्सर्वोधर्मपरोऽभवत् ॥ राममेवानुपश्यंतोनाभ्यहिंसन्परस्परम् ॥ १०० ॥ आसन्वर्षसहस्राणितथापुत्रसहस्रिणः ॥ निरामयाविशोकाश्चरामेराज्यंप्रशासति ॥ १०१ ॥ नित्यमूलानित्यफलास्तरवस्तत्रपुष्पिताः ॥ कामवर्षीचपर्जन्यःसुखस्पर्शश्चमारुतः ॥ १०२ ॥

पूर्णमनोरथ हो भ्राता सुहृद् पुत्र और बांधवोंके सहित अनेक प्रकारके यज्ञ किये ॥ ९७ ॥ जब श्रीरामचन्द्रजी राज्य करते थे उस समय न तो किसी स्त्रीको विधवापनका शोक करना पडा और रोग व सर्पादिकसे उत्पन्न भय तो उस कालमें लोप होगये थे ॥ ९८ ॥ चोरोंका तो नाम भी नहीं था इस कारण किसीकाभी कुछ धनादिक चोरी नहींजाता था। उससमय वृद्धलोगोंको बालकोंके मृतककर्म नहीं करने पडते थे ॥९९॥ सबही कोई श्रीरामचन्द्रजीका दर्शन पाय धर्मकी चिंतामें लगे हुए परमानंदसे समय बितातेथे और कोई भी किसीकी हिंसा नहीं करते थे ॥१००॥ उन श्रीरामचन्द्रजीके राज्यमें सबही रोगशोकसे हीनथे और सबहीकी सहस्रवर्षकी परमायु होती थीं॥१०१॥ उसकालमें सब वृक्ष सदापुष्पफल और मूल उत्पन्न करते जब लोगोंकी इच्छा होती तभी बादलजल वर्षादेते और

पवन भी उस समय सुखका देनेवाला चलता था॥१०२॥श्रीरामचन्द्रजीके राज्यमें उनकी धर्मपरायण प्रजा संतुष्टमनसे अपने२कार्यमें लगी रहती व धर्माचरणकरती कोई भी अन्यायाचरण नहीं करता ॥१०३॥ सबही समस्त लक्षणोंसे युक्तऔर धर्मवान् थे इस प्रकारसे दशहजार वर्षतक श्रीरामचंद्रजीने राज्य किया॥१०४॥ धर्म यश व आयु बलका बढानेवाला राजालोगोंका विजय देनेवाला यह आदिकाव्य महर्षिवाल्मीकिजीने बहुत दिन हुए बनाया,यहकाव्य वेदसम्मत है ॥१०५॥ इस लोकमें जो पुरुष इसको सदा श्रवण करता रहे सब पापोंसे छूट जाता है । इस आदिकाव्यका श्रवण करनेसे पुत्र चाहनेवाले पुत्र और धन चाहनेवाला धन पावेगा ॥ १०६ ॥ इस लोकमें रामाभिषेक युक्त इस काव्यके श्रवण करनेसे राजालोग अपने शत्रुओंको जीतेंगे और समस्त पृथ्वी जीतनेको समर्थहोंगे ॥ १०७ ॥ जिस प्रकारसे रामचन्द्र लक्ष्मण भरत शत्रुघ्नको पुत्र पाकर कौशल्या सुमित्रा कैकेयी सुपुत्रवती हुई थीं वैसेही समस्त स्त्रियें इस आदि काव्यके

स्वकर्मसुप्रवर्तंतेतुष्टाः स्वैरेवकर्मभिः ॥ आसन्प्रजाधर्मपरारामेशासतिनानृताः ॥३॥ सर्वेलक्षणसंपन्नाःसर्वेधर्मपरायणाः ॥ दशवर्षसहस्राणि रामोराज्यमकारयत् ॥ ४ ॥ धर्म्यंयशस्यमायुष्यंराज्ञांचविजयावहम् ॥ आदिकाव्यमिदंचार्षंपुरावाल्मीकिनाकृतम् ॥ ५ ॥ यःश्रृणोतिसदा लोकेनरःपापात्प्रमुच्यते ॥ पुत्रकामश्चपुत्रान्वैधनकामोधनानिच ॥ ६ ॥ लभतेमनुजोलोकेश्रुत्वारामाभिषेचनम् ॥ महींविजयतेराजारिपूंश्चा प्यधितिष्ठति ॥ ७ ॥ राघवेणयथामातासुमित्रालक्ष्मणेनच ॥ भरतेनचकैकेयीजीवत्पुत्रास्तथास्त्रियः ॥ ८ ॥ श्रुत्वारामायणमिदंदीर्घमायुश्च विंदति ॥ रामस्यविजयंचेमंसर्वमक्लिष्टकर्मणः ॥ ९ ॥ श्रृणोतियइदंकाव्यंपुरावाल्मीकिनाकृतम् ॥ श्रद्दधानोजितक्रोधोदुर्गाण्यतितरत्यसौ ॥११०॥ समागम्यप्रवासांतेरमंतेसहबांधवैः॥श्रृण्वंतियइदंकाव्यंपुरावाल्मीकिनाकृतम् ॥११॥ तेप्रार्थितान्वरान्सर्वान्प्राप्नुवंतीहराघवात् ॥ श्रवणेनसुराःसर्वेप्रीयंतेसंप्रश्रृण्वताम् ॥ १२ ॥ विनायकाश्चशाम्यंतिगृहेतिष्ठतियस्यवै ॥ विजयेतमहींराजाप्रवासीस्वस्तिमान्भवेत् ॥ १३ ॥

श्रवण करनेसे सुपुत्रवती होंगी ॥ १०८ ॥ पूर्ण पराक्रमी श्रीरामचन्द्रजीके इस विजयचरित्रके रामायणको जो कोई पुरुष श्रवण करता है उसकी दीर्घायु होती है ॥१०९॥ जो कोई इस प्राचीनकाव्यवाल्मीकिके निर्माण कियेको श्रवण करतेहैं और श्रद्धासे क्रोधरहितहो इसका अनुसरणकरते हैं सो बडे२कष्टोंसे भी मुक्त हो जाहे हैं ॥ ११० ॥ जो प्राचीन समयमें बनाये हुए इस वाल्मीकिकृत काव्यका श्रवण करते हैं; वह प्रवासके अंतमें कुशलपूर्वक आकर अपने कुटुंब बान्धवोंकेसहित आनंदको प्राप्त होते हैं ॥१११॥जो इस चरित्रको श्रवण करतेहैंवे रामचन्द्रके प्रसादसे संपूर्ण मनोरथोंको प्राप्त होतेहैं और इसके श्रवणकरनेवा लोंसे सब देवता प्रसन्न होते हैं॥११२॥जिसके घरमें यह पुस्तक रहती है उसके विघ्न करनेवाले देवताउपद्रव नहीं करते किंतु शांत होजाते हैं राजा पृथ्वीकी

जय प्राप्त करते, प्रदेशी कल्याणको प्राप्त होते हैं ॥ ११३ ॥ रजस्वला स्त्री शुद्धिस्नान दिनसे सोलहवें दिनतक रामायणको नियमसेश्रवण कर उत्तम पुत्रोंको उत्पन्न करती हैं ॥ ११४ ॥ और जो इस पुरातन इतिहासको पूजन करते व पाठ करते हैं उनके सब पाप दूर होकर दीर्घायुकी प्राप्ति होती है । शिरसे भक्तिपूर्वक प्रणाम करके क्षत्रियोंको यह कथा ब्राह्मणसे श्रवण करनी चाहिये ॥ ११५ ॥ जो इसको सुनेंगे उन्हें ऐश्वर्य और पुत्रप्राप्ति निश्चय होगी इसमें संदेह नहीं, जो कोई इस रामायणको सम्पूर्ण सुनते तथा करते हैं ॥ ११६ ॥ उनके ऊपर वही आदिदेव बडी भुजावाले स्वामी नारायण सनातन विष्णु रामचन्द्रजी सदा प्रसन्नरहते हैं ॥ ११७ ॥ यह प्राचीन आख्यान संपूर्ण श्रोताओंको मंगलकारी है इसे निरंतर श्रवण कर विष्णुजीके बल वीर्यका गान

स्त्रियोरजस्वलाःश्रुत्वापुत्रान्सूयुरनुत्तमान् ॥ पूजयंश्चपठंश्चैनमितिहासंपुरातनम् ॥१४॥सर्वपापैःप्रमुच्यतेदीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥ प्रणम्यशिरसानित्यंश्रोतव्यंक्षत्रियैर्द्विजात् ॥१५॥ ऐश्वर्यंपुत्रलाभश्चभविष्यतिनसंशयः ॥ रामायणमिदंकृत्स्नंश्रृण्वतःपठतःसदाः ॥१६॥ प्रीयतेसततं रामःसहिविष्णुःसनातनः ॥ आदिदेवोमहाबाहुर्हरिर्नारायणःप्रभुः ॥ १७ ॥ एवमेतत्पुरावृत्तमाख्यानंभद्रमस्तुवः ॥ प्रव्याहरतविस्रब्धंबलंविष्णोःप्रवर्धताम् ॥१८॥ देवाश्चसर्वेतुष्यंतिग्रहणाच्छ्रवणात्तथा ॥ रामायणस्यश्रवणेतृप्यंतिपितरःसदा ॥१९॥ भक्त्यारामस्ययेचेमांसंहितामृषिणाकृताम् ॥ येलिखंतीहचनरास्तेषांवासस्त्रिविष्टपे ॥ २० ॥ कुटुंबवृद्धिंधनधान्यवृद्धिंस्त्रियश्चमुख्याःसुखमुत्तमंच ॥ श्रुत्वाशुभंकाव्यमिदंमहार्थंप्राप्नोतिसर्वांभुविचार्थसिद्धिम् ॥ १२१ ॥आयुष्यमारोग्यकरंयशस्यंसौभ्रातृकंबुद्धिकरंशुभंच ॥ श्रोतव्यमेतन्नियमेनसद्भिराख्यानमोजस्करमृद्धिकामैः ॥ १२२ ॥

करते रहें ॥ ११८ ॥ इस रामायणके श्रवण करनेसे और पढनेसे समस्त देवता और पितृलोक प्रसन्न होते हैं ॥ ११९ ॥ जो मनुष्य इस ऋषिप्रणीत श्रीरामसंहिताको भक्तिपूर्वक लिखेंगे वह लोग स्वर्गमें वास पावेंगे ॥ १२० ॥ पुरुष और स्त्रियें इस मंगलमय सुखजनक महाअर्थयुक्त वचनोंको श्रवण करनेसे सब प्रकारकी सिद्धि पावेंगी और उनके कुटुम्ब व धन धान्यादिकी वृद्धि होगी ॥ १२१ ॥ इस शुभआख्यानके श्रवण करनेसे आयु बढती है, शरीर रोगरहित रहता है यशका विस्तार होता है इसके श्रवण करनेसे भ्रातृभाव स्थिर रहता है, वृद्धि वृति बढती है तेज बढता है इस कारण सब शुभाभिलाषी पुरुषोंको नियमसहित इसका पाठ करना चाहिये ॥ १२२ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये कात्यायनकुमारपं० ज्वालाप्रसादमिश्रकृते भाषानुवादे चतुर्विंशतिसाहस्रिकायां संहितायां श्रीमद्युद्धकांडे पंचविंशेऽह्नि वर्तमानकथाप्रसंगः समाप्तः ॥

हरिः ओम् ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये चतुर्विंशतिसाहस्र्यां संहितायां युद्धकांडेसर्वजनपरिवृतस्यराजाधिराजस्य श्रीरामचंद्रस्यपट्टाभिषेकभद्राख्यंनामत्रिंशदधिकशततमःसर्गः ॥ १३० ॥ इति श्रीगोमतीतीरनैमिषारण्याश्वमेधसत्रतंतुवाटगतमुनींद्रद्विजेंद्रादिवसुधाधिपेंद्रपरिवृतस्य ॥ मुनिवृंदारकवृंदवंद्यमानकोरकाकारचरणयुगलस्यसद्भ्रातृसन्मित्रसन्मंत्रिसहितस्यसाकेतपुरवराधीश्वरस्यदीनानांदैन्यहरणउदीर्णवीर्योत्सिक्तस्यरावणवधार्थदेवैः प्रार्थितस्यरघुकुलतिलकसंभूतस्यश्रीसीताविशेषकस्यलक्ष्मीपतेः ॥ साम्यांशस्यलक्ष्मीवतो राजाधिराजस्यलोकाभिरामस्यनिकटोक्तयोः श्रीरामात्मजयोरादिकविशिष्ययोःकुशलवयोराख्याने ॥ श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येचतुर्विंशतिसाहस्रिकायांसंहितायांश्रीमद्युद्धकांडेपंचविंशेऽह्निवर्तमानकथा प्रसंगःसमाप्तः ॥ अतः परमुत्तरकांडम् ॥ तस्यायमाद्यःश्लोकः प्राप्तराज्यस्यरामस्यराक्षसानांवधेकृते ॥ आजग्मुर्मुनयःसर्वेराघवं प्रतिनंदितुम् ॥ १ ॥

इसके पीछे उत्तरकांड है जिसके पहले श्लोकका अर्थ यह है—राक्षसकुलको निर्मूल करके जब श्रीरामचन्द्रजी राजगद्दीपर बैठे तब मुनिजन उनके वैभवकी प्रशंसा करनेकी वासनासे उनके निकट आये ॥ १ ॥

इति युद्धकाण्ड समाप्त

दोहा—असुर निकन्दन भय हरण, श्रीपति श्रीरघुनाथ। निज भक्तन कहँ एकही, पुनि पुनि नावों माथ ॥ १ ॥
रूपायतन अवधेश प्रभु, विनय करों दिन रैन। पलक न एक बिसारहू, विनु देखे नहिं चैन ॥ २ ॥
सदा दासहित सकल विधि, करत अमित उपकार। दीन दुसह दुख टारिबे, तनिक न लावत बार ॥ ३ ॥
कारुणीक तव नाम प्रभु, अरु करुणाकर ऐन। भक्तपाल भव भय हरण, सदा सुमंगल दैन ॥ ४ ॥
जनकलली जगनाथ तुम, प्रीय लषण कर भ्रात। पितु दशरथ कर नैन इव, चहौं दरश नित प्रात ॥ ५ ॥
दीनबन्धु करुणायतन, कारण रहित कृपाल। भय मोचन लोचन कमल, करहु मुक्त जंजाल ॥ ६ ॥
पाणि जोरि चरणन परों, कोउ विधि कीजै पार। नहिं रक्षक तुम बिन कोऊ; बूडत कष्ट मँझार ॥ ७ ॥
कृपासिंधु रघुवीर मम, काटहु भवके पास। काम क्रोध मद लोभते, छुटकारहु पुनि दास ॥ ८ ॥
दिनकर कुल कमलापती, सुन्दर रूप स्वरूप। सहज सुलोचन पुलक तनु, भजौं अवध सुत भूप ॥ ९ ॥
जलज नयन करुणानिधि, विनौं पाणि युगजोर। लषण सहित सिय उरवसौ, हे अवधेश किशोर ! ॥ १० ॥
जोरि पाणि विनवत सुनौ, शीलसिन्धु मम बैन। नहिं विवेक कछु बुद्धि मुहि, दरश देहु सुखदैन ॥ ११ ॥
करुणाकर सानुज सिया, मम उर कीजै वास। निंशा दिवस शोचित रहत, तुम्हरी प्रभु इक आस ॥ १२ ॥
मद मोचन दोषन हरण, नयन कंज रघुनाथ। दिवश ईश कुल मण्डनम्. पुलकित नावउँ माथ ॥ १३ ॥
धन्वाधर कोमल प्रिय, सेवत देव सुरेश। तव शुभ पद सादर नमौं, राखहु शरण हमेश ॥ १४ ॥
अतुलित बल परताप तव, मैं मतिमन्द अजान। कथन चहौं पै शक नहीं, नहिं कथ योग महान ॥ १५ ॥
सुनहु नाथ निज दासकहँ, अति आरत सह बान। भक्तिहीन बुधिहीन प्रभु, नहिं कछु राखत ध्यान ॥ १६ ॥
तदपि पाहि मन राखिके, चहौं दरश पद तोर। सेवक स्वामि न छोडही, यदपि मन्द घन घोर ॥ १७ ॥

भव दुख भंजन हे प्रभो, हरहु जगतकी पीर । धन्य नाथ ! तो सम नहीं, सब जगजानत वीर ॥ १८ ॥
विनय करी अतिप्रेमसों, सुनहु नाथ चित लाय । अन्त समय मुखते कढै, रामहि रघुकुलराय ॥ १९ ॥
हे रंजन जन मन! सदा, धरणीधर! गोविन्द ! । हे पालक ! घालक अरी! राखहु निजकुल इन्द ॥ २० ॥
ज्यहि श्रुति गावत रैन दिन, मुनिवर राखत ध्यान । ज्यहि सुमिरत कलिमल नशै, करहु सोइ कल्यान ॥ २१ ॥
ज्यहि कहँ भाषत श्रुति सदा, अगम अनादि अनंत । जो व्यापक विभु विरज अज, रक्षहु सोइ भगवन्त ॥ २२ ॥
हे जगनायक ! विश्वपति, जगत पिता ! जगदीश । तारक भक्त सनेह सह, देव दिवाकर ! ईश ! ॥ २३ ॥
अन्तर्यामी तुम प्रभु, आदि अन्त नहिं तोर । सत्यसिन्धु उपमा रहित, हेरहु मम दिशि कोर ॥ २४ ॥
सुखसागर सीतारमण, शोभाकर रघुराज । रवि कुलकैरवचंद पुनि, राखहु मोरी लाज ॥ २५ ॥
विपद काल रक्षक तुमहिं, तुमहिं छांडि नहिं कोउ । यासों रक्षहु प्रेमसह, लषण सीय सह दोउ ॥ २६ ॥
किमि वरणै मतिमन्द कवि, रघुवर शील सनेह । शेष शारदा मुख थक्यो, वर्णत प्रभुता नेह ॥ २७ ॥
यह अभिलाषा मोर मन, बरणौं तोसन आज । तव पद अम्बुजरज लहउँ; सिद्ध होंहिं सब काज ॥ २८ ॥
नहिं धनतृष्णा बल नहीं, नहिं तिय सुतकी चाहि । नहिं प्रभुता जगमें चहौं, तव पद नेह सदाहि ॥ २९ ॥
कविजन मन आनँद करन, गुणियनके शिरमौर । सदा निरतरत भक्तपथ, न्यायिक जगमें सोर ॥ ३० ॥
गोद्विज सेवक शीलनिधि, धर्मधुरन्धर धीर । खेमराजको जान जन, कृपा करहु रघुवीर ॥ ३१ ॥
सिया-लषण शत्रुघ्न अरु, भरतभ्रातके साथ । जन ज्वाला परसाद उर, बास करहु रघुनाथ ! ॥ ३२ ॥
द्वितिया शुक्ल अषाढकी, सुभग आज शनि वार । युद्धकांड भाषा कियो, निजमतिके अनुसार ॥ ३३ ॥

इति युद्धकाण्ड समाप्त ६.

इदं वाल्मीकीयरामायणे युद्धकाण्डं भाषाटीकासमेतं मुम्बय्यां
क्षेमराज-श्रीकृष्णदास श्रेष्ठिना स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर"-
(स्टीम्) मुद्रणालये मुद्रयित्वा प्रकाशितम्।

इति श्रीवाल्मीकीयरामायणे युद्धकाण्डं भाषाटीकासमेतं समाप्तम्

अथ श्रीवाल्मीकीयरामायणे उत्तरकाण्डं भा. टी. समेतं प्रारभ्यते

उत्तरकाण्डम्-७.



दोहा—भरत लषण शत्रुघ्न सह, दशरथ राजकुमार। राजत सीताराम प्रभु, सब सुखमा आगार ॥ १ ॥
सुर नर मुनि वंदन करत, योग समाधि बिसारि। शत्रुजीति निज जननके, दिये सकल दुख टारि ॥ २ ॥
मुखकी द्युति छबिसों छई, कही कौन पै जाय। या झलकन मन कविनको, लिये चुराय रिझाय ॥ ३ ॥
धनुष धारि सब महीको, दीनों भार उतार। तिन रघुनायक स्वामिको, बन्दौं वारम्वार ॥ ४ ॥

सीता रामकी वंदना—छप्पय।

जयति जयति जय जननि लडैती जनक जानकी। जयति जयति प्रियतमा रामकरुणा निधानकी॥जयति जयति सिय सती तीयगण मणि गणनीया जयति २ ललना ललाम अतिशय कमनीया ॥ जयति२लीला ललित, मनुज जन्म पावन धरणि। जयति२दुख हरणि सब, मम इच्छा पूरण करणि ॥ १ जयति जानकीरमण जनक कन्या प्रिय हित रत। जयति अनुज जाया समेत धृत कठिन तपोव्रत॥ जयति वाट वट विटप क्षीर कृत जटा जूट लट। जयति उरज संकट विचित्र श्रित चित्रकूट तट ॥ जय जयति कुटिल प्रति भट जनित, जटिल बिकट संकटहरण। जयति पीतपट धरण,जय मम इच्छा पूरण करण॥२

श्रीगणेशाय नमः ॥ राक्षसकुलको निर्मूल करके जब श्रीरामचन्द्रजी राजगद्दीपर बैठे तब मुनिगण उनके वैभवकी प्रशंसा करनेकी वासनासे उनके निकटआये ॥ १ ॥ कौशिक, यवक्रीत, गार्ग्य, गालव, कण्व और मेधातिथिके पुत्र प्रभृति जो कि पूर्व दिशाके रहनेवाले थे ॥२॥ स्वस्त्यात्रेय, भगवान् नमुचि, प्रमुचि

श्रीगणेशायनमः ॥ प्राप्तराज्यस्यरामस्यराक्षसानांवधेकृते ॥ आजग्मुर्मुनयःसर्वेराघवंप्रतिनंदितुम् ॥ १ ॥ कौशिकोऽथयवक्रीतोगार्ग्योगालवएवच ॥ कण्वोमेधातिथेःपुत्रःपुर्वस्यांदिशियेश्रिताः ॥२॥ स्वस्त्यात्रेयश्चभगवान्नमुचिःमुचिप्रस्तथा॥ अगस्त्योऽत्रिश्चभगवान्सुमुखोविमुखस्तथा ॥ ३ ॥ आजग्मुस्तेसहागस्त्यायेश्रितादक्षिणांदिशम् ॥ नृषङ्गुःकवषीधौम्यःकौषेयश्चमहानृषिः ॥ ४ ॥ तेऽप्याजग्मुःसशिष्यावैयेश्रिताःपश्चिमांदिशम्॥ वसिष्ठःकश्यपोऽथात्रिर्विश्वामित्रःसगौतमः ॥ ५ ॥ जमदग्निर्भरद्वाजस्तेऽपिसप्तर्षयस्तथा ॥ उदीच्यांदिशिसप्तैते नित्यमेवनिवासिनः ॥ ६ ॥

अगस्त्य, अत्रि, भगवान् सुमुख और विमुख ॥३॥ इत्यादि जो कि, दक्षिण दिशामें वास करते थे आये, नृषङ्ग, कवरी, धौम्य, महाऋषि कौषेय॥४॥इत्यादि यह सबही पश्चिम दिशाके रहनेवाले अपने शिष्योंके सहित आये। वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, विश्वामित्र; गौतम॥५॥जमदग्नि, भरद्वाज और सप्तर्षि जो कि सातों

नित्य उत्तर दिशामें वास करते थे॥६॥ यह सब महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके स्थानपर आये, इन सब अग्निके समान प्रभावालोंको प्रतिहारियोंने भलीभांति बैठाया ॥७॥ वेद वेदाङ्गके जाननेवाले अनेक शास्त्रविशारद मुनिश्रेष्ठ धर्मात्मा अगस्त्यजी द्वारपालसे बोले॥८॥कि, हम समस्त ऋषि यहांपर आये हैं, यह समाचार तुम श्रीरामचन्द्रजीसे निवेदन कर दो। अगस्त्यजीके वचन सुनकर प्रतिहारी अतिशीघ्रतासे चला ॥९॥ वह शीघ्रही महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके समीप प्रवेश करता हुआ और नीति और मनकी बातजाननेवाला श्रेष्ठव्रतयुक्त चतुर व धैर्यवान् ॥१०॥वह द्वारपाल पूर्ण चंद्रमाके समान श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन करके कहने लगा कि भगवन्! ऋषिश्रेष्ठ अगस्त्यजी प्रभृति ऋषि यहांपर आये हैं ॥११॥बाल सूर्यके समान उन समस्त लोगोंका आना सुनकर श्रीरामचन्द्रजीने द्वारपालसे कहा कि,

संप्राप्यैते महात्मानोराघवस्यनिवेशनम् ॥ विष्ठिताःप्रतिहारार्थंहुताशनसमप्रभाः॥ ७ ॥ वेदवेदांगविदुषोनानाशास्त्रविशारदाः ॥ द्वाःस्थंप्रोवाचधर्मात्माअगस्त्योमुनिसत्तमः ॥८॥ निवेद्यतांदाशरथेर्ऋषयोवयमागताः ॥ प्रतीहारस्ततस्तूर्णमगस्त्यवचनाद्द्रुतम् ॥ ९ ॥ समीपंराघवस्याशुप्रविवेशमहात्मनः ॥ नयेंगितज्ञःसद्वृत्तोदक्षोधैर्यसमन्वितः ॥१०॥ सरामंदृश्यसहसापूर्णचंद्रसमद्युतिम् ॥ अगस्त्यंकथयामाससंप्राप्तमृषिसत्तमम् ॥११॥ श्रुत्वाप्राप्तान्मुनींस्तांस्तुबालसूर्यसमप्रभान् ॥ प्रत्युवाचततोद्वाःस्थंप्रवेशययथासुखम् ॥१२॥ दृष्ट्वाप्राप्तान्मुनींस्तांस्तुप्रत्युत्थायकृतांजलिः ॥ पाद्यार्घ्यादिभिरानर्चगांनिवेद्यचसादरम्॥१३॥ रामोऽभिवाद्यप्रयतआसनान्यादिदेशह ॥ तेषुकांचनचित्रेषुमहत्सुचवरेषुच॥१४॥ कुशांतर्धानदत्तेषुमृगचर्मयुतेषुच ॥ यथार्हमुपविष्टास्तेआसनेष्वृषिपुंगवाः॥१५॥ रामेणकुशलंपृष्टाःसशिष्याःसपुरोगमाः॥ महर्षयोवेदविदोरामंवचनमब्रुवन्॥कुशलंनोमहाबाहोसर्वत्ररघुनंदन ॥ १६ ॥ त्वांतुदिष्ट्याकुशलिनंपश्यामोहतशात्रवम् ॥ दिष्ट्यात्वयाहतोराजन्रावणोलोकरावणः ॥ १७ ॥

तुम आदर सन्मान सहित उनको यहाँपर ले आओ ॥१२॥जब मुनि लोग वहांपर आगये तब श्रीरामचन्द्रजी हाथ जोडकर खडे होगये और पाद्य अर्घ्यसे आदर सहित उनकी पूजा कर प्रत्येकको गोदान किया ॥१३॥ श्रीरामचन्द्रजीने अतियत्नसहित सबको प्रणाम करके बैठनेको आसन दिये,उन सुवर्णचित्रित बडे श्रेष्ठ ॥१४॥ कुशासनोंपर और मृगचर्मादि पर यथायोग्य आसन बिछाय२सब मुनिश्रेष्ठ बैठे ॥१५॥ फिर श्रीरामचन्द्रजीने उन सबसे कुशलमङ्गल पूँछा तब वेदके जाननेवाले शिष्योंके सहित महर्षीगण बोले हेमहावीर रघुनंदन! हमारा सब प्रकारसेमंगल है ॥१६॥अधिक करके आप शत्रुओंका संहार कर कुशल सहित हैं यह देखकर हमको अत्यन्त आनन्द हुआ। हे राजन्! आपने बडे भाग्यसे ही लोकोंके रुवानेवाले रावणको मारा ॥ १७ ॥

हे श्रीरामचन्द्र ! इसमें कुछ संदेह नहीं कि आप धनुषकी सहायतासे त्रिलोकी भी जीत सकते हैं फिर पुत्रपौत्रसहित रावणका नाशकरना तो एक साधारण बात है ॥ १८ ॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! आपने भाग्यसेही पुत्रपौत्रसहित रावणका संहार किया और हमने भी आज बडे भाग्यसेही सीताजीके सहित आपको विजयी देखा ॥१९॥ हे धर्मात्मन् ! आपके हितकारी भ्राता लक्ष्मणभ्राता व और बन्धुबान्धवोंके साथ आपको बडे भाग्यसेही आजहम लोगोंने देखा॥२०॥ हे राजन् ! प्रहस्त, विकटरूपाक्ष, महोदर और अकम्पन इत्यादि दुर्द्धर्ष राक्षसोंको आपने भाग्यसे ही संहार किया है ॥ २१ ॥ जिसके शरीरके प्रमाणसे बडे प्रमाणके शरीरवाले और राक्षस इस जगत्में नहीं हैं, आपने बडे भाग्यसे ही ऐसे शरीरधारी कुम्भकर्णको संग्राममें विनाश किया॥२२॥हे राम ! त्रिशिरा, अतिकाय,देवान्तक और नरान्तक इत्यादि महावीर्यवान् निशाचरोंको आपने भाग्यहीसे वधकिया है ॥ २३ ॥ देवतालोगोंसे भी अवध्य राक्षसराज रावणके

नहिभारःसतेरामरावणःपुत्रपौत्रवान् ॥ सधनुस्त्वंहिलोकांस्त्रीन्विजयेथानसंशयः ॥१८॥ दिष्ट्यात्वयाहतोरामरावणःपुत्रपौत्रवान् ॥ दिष्ट्या विजयिनंत्वाद्यपश्यामःसहसीतया ॥ १९ ॥ लक्ष्मणेनचधर्मात्मन्भ्रात्रात्वद्धितकारिणा ॥ मातृभिर्भ्रातृसहितंपश्यामोऽद्यवयंनृप ॥ २० ॥ दिष्ट्याप्रहस्तोविकटोविरूपाक्षोमहोदरः ॥ अकंपनश्चदुर्धर्षोनिहतास्तेनिशाचराः ॥ २१ ॥ यस्यप्रमाणाद्विपुलंप्रमाणंनेहविद्यते ॥ दिष्ट्या तेसमरेरामकुंभकर्णोनिपातितः ॥२२॥ त्रिशिराश्चातिकायश्चदेवांतकनरांतकौ ॥ दिष्ट्यातेनिहतारामहावीर्यानिशाचराः ॥२३॥ दिष्ट्या त्वंराक्षसेंद्रेणद्वंद्वयुद्धमुपागतः ॥ देवतानामवध्येनविजयंप्राप्तवानसि ॥ २४ ॥ संख्येतस्यनकिंचित्तुरावणस्यपराभवः ॥ द्वंद्वयुद्धमनुप्राप्तो दिष्ट्यातेरावणिर्हतः ॥ २५ ॥ दिष्ट्यातस्यमहाबाहोकालस्येवाभिधावतः ॥ मुक्तःसुररिपोर्वीरप्राप्तश्चविजयस्त्वया ॥ २६ ॥ अभिनंदामते सर्वेसंश्रुत्येंद्रजितोवधम् ॥ अवध्यः सर्वभूतानांमहामायाधरोयुधि ॥ २७ ॥

सहित द्वन्द्वयुद्ध करके आपने विजय पाई है यह बडे आनंदकी बात है॥ २४ ॥ हे महावीर ! संग्राममें रावणका जीत लेना तो कुछ नहीं है परंतु इंद्रजीतका मार डालना अति कठिन कार्य था; सो आपने उस मेघनादको द्वन्द्वयुद्धमें प्राप्त हो भाग्यसेही उसकासंहार किया है ॥ २५ ॥ हे वीर ! आप कालके समान दृष्टि न आयकर ऊपर दौडनेवाले देवताओंके शत्रु इंद्रजीतके अस्त्रबंधनसे भाग्यहीसे छूटे और उसपर विजय पाई, इस कारण इन्द्रजीतका वध सुनकर हम अत्यन्त आनंदित हुए ॥ २६ ॥ हे वीर ! संग्राममें इंद्रजीत अनेक प्रकारके मायारूप धारण करता था, विशेष करके वह सब प्राणियोंसे अवध्य था उस इंद्रजीतके वधका वृत्तांत सुन २ हम सब आपकी बडाई करते हैं ॥ २७ ॥

इन्द्रजीतका संहार सुन हम सबको परमविस्मय होता है.हे वीर ! यह बडे भाग्यकी बात है कि आपने इस प्रकारसे राक्षसकुल निर्मूल करके जगत्‌को शान्ति देनेवालीपरमपुण्य अभय दक्षिणा दी. हे शत्रुओंके खेंचनेवाले रघुनंदन ! बडा ही भाग्य है कि; आप इस प्रकार विजय पाय बढे हैं ॥ २८ ॥ इसके उपरांत श्रीरामचन्द्रजी ब्रह्मज्ञानसम्पन्न मुनिलोगोंके वचन सुनकर अतिविस्मित हो हाथ जोडकर बोले ॥२९॥ हे भगवन् ! महावीर निशाचर रावण और कुम्भकर्णको छोडकर आप किस कारणसे रावणके पुत्र इंद्रजीतकी बडाई करते हैं ? ॥ ३० ॥ महोदर, प्रहस्त, विरूपाक्ष, मत्त, उन्मत्त, दुर्द्धर्ष, देवांतक, नरांतक इत्यादि महावीर राक्षसोंको छोडकर आप किस कारणसे रावणके पुत्र मेघनादकी प्रशंसा करते हैं ? ॥ ३१ ॥ अतिकाय त्रिशिरा, धूम्राक्ष इत्यादि महावीर निशाचरोंको त्यागकर आप किस लिये रावणके सुतकी बडाई करते हैं ? ॥ ३२ ॥ उस वीरका प्रभाव कैसे था ? बल कैसा था और उसमें पराक्रम कितना

विस्मयस्त्वेषचास्माकंतंश्रुत्वेंद्रजितंहतम्॥दत्त्वापुण्यामिमांवीरसौम्यामभयदक्षिणाम्॥दिष्ट्यावर्धसिकाकुत्स्थजयेनामित्रकर्शन॥२८॥श्रुत्वा तुवचनंतेषांमुनीनांभावितात्मनाम्॥विस्मयंपरमंगत्वारामः प्रांजलिरब्रवीत् ॥२९॥ भगवंतःकुंभकर्णंरावणंचनिशाचरम्॥अतिक्रम्यमहावीर्यौकिंप्रशंसथरावणिम्॥३०॥महोदरंप्रहस्तंचविरूपाक्षंचराक्षसम् ॥ मत्तोन्मत्तौचदुर्धर्षौदेवांतकनरांतकौ॥अतिक्रम्यमहावीरान्किंप्रशंसथराव णिम् ॥ ३१ ॥ अतिकायंत्रिशिरसंधूम्राक्षंचनिशाचरम् ॥ अतिक्रम्यमहावीर्यान्किंप्रशंसथरावणिम् ॥३२॥ कीदृशोवैप्रभावोऽस्यकिंबलंकः पराक्रमः॥केनवाकारणेनैषरावणादतिरिच्यते॥३३॥शक्यंयदिमयाश्रोतुंनखल्वाज्ञापयामिवः॥यदिगुह्यंनचेद्वक्तुंश्रोतुमिच्छामिकथ्यताम्॥३४॥ शक्रोऽपिविजितस्तेनकथंलब्धवरश्चसः॥कथंचबलवान्पुत्रोनपितातस्यरावणः॥३५॥कथंपितुश्चाप्यधिकोमहाहवेशक्रस्यजेताहिकथंसराक्षसः॥ वराश्चलब्धाःकथयस्वमेऽद्यपाप्रच्छतश्चास्यमुनींद्रसर्वम्॥३६॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०उत्तरकांडेप्रथमःसर्गः॥१॥

था, व वह इंद्रजीत किस कारणसे रावणसे बलवीर्यमें अधिक था ? ॥ ३३ ॥ वह वृत्तान्त जो छिपानेके योग्य न हो, और आप लोगोंको भी इसके कहनेमें बाधा न हो तो हम उसके श्रवण करनेकी इच्छा करते हैं कुछ आपको यह आज्ञा नहीं दी जाती है ॥ ३४ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! इन्द्रजीतने इन्द्रको किस प्रकारसे जीतलिया और उसने किस उपायसे वर पाया ? पुत्र बलवान् हुआ परंतु उसका पिता रावण वैसा बलवान् क्यों नहुआ ? औरवह राक्षस ,संग्राममें ॥ ३५ ॥ अपने पितासे क्यों अधिक पराक्रमी हुआ ? किस प्रकारसे इन्द्रको जीता किस प्रकारसे वर प्राप्त किया ? हे मुनिश्रेष्ठ ! हम पूँछते हैं आप इन सब बातोंका उत्तर दीजिये ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

घडेसे उत्पन्न हुए महातेजस्वी अगस्त्यजी महात्मा रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीके ऐसे वचन सुनकर बोले ॥ १ ॥ हे श्रीरामचन्द्र ! रावणके पुत्रने जिस कारण सब शत्रुओंको संहार किया था, और जिस कारण वह समस्त शत्रुओंसे अवध्य था हम, उसके बडे भारी बलवीर्यका वृत्तांत ठीक २ कहेंगे ॥ २॥ हे रघुनाथजी ! प्रथम जो रावणके कुल जन्म और जिस प्रकारसे उसने वर पाया था वह समस्त तुम्हारे निकट यथार्थ २ वर्णन करता हूँ आप श्रवण करें ॥ ३ ॥ हे राम ! सत्ययुगमें पुलस्त्यनामक प्रजापतिके एक पुत्र हुए ब्रह्मर्षि पुलस्त्यजी तपके प्रभावसे साक्षात् ब्रह्माजीके समान थे ॥ ४ ॥ क्या धर्ममें क्या शीलमें उनकी गुण राशिका वर्णन करना असाध्य है तो भी इस नाममात्रसे उनकी गुण राशिका वर्णन हो सकता है कि वह प्रजापतिके पुत्र हुए ॥ ५ ॥ वह महामतिमान् पुलस्त्यजी प्रजापतिकी संतान होनेके कारण देवताओंके अत्यन्त प्यारे थे बरन् विमलगुणोंसे वह सबलोकोंमें पूज्य हुए थे ॥ ६ ॥ परन्तु वह धर्मात्मा मुनि

तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराघवस्यमहात्मनः॥कुंभयोनिर्महातेजावाक्यमेतदुवाचह॥१॥ शृणुरामतथावृत्तंतस्यतेजोबलंमहत् ॥ जघानशत्रून्येनासौ नचवध्यःसशत्रुभिः ॥ २ ॥ तावत्तेरावणस्येदंकुलंजन्मचराघव ॥ वरप्रदानंचतथातस्मैदत्तंब्रवीमिते ॥ ३ ॥ पुराकृतयुगेरामप्रजापतिसुतः प्रभुः ॥ पुलस्त्योनामब्रह्मर्षिःसाक्षादिवपितामहः॥ ४ ॥ नानुकीर्त्यागुणास्तस्यधर्मतःशीलतस्तथा ॥ प्रजापतेःपुत्रइतिवक्तुंशक्यंहिनामतः ॥ ५॥ प्रजापतिसुतत्वेनदेवानांवल्लभोहिसः ॥ इष्टःसर्वस्यलोकस्यगुणैःशुभ्रैर्महामतिः ॥ ६ ॥ सतुधर्मप्रसंगेनमेरोःपार्श्वेमहागिरेः॥तृणबिंद्वाश्रमंगत्वाप्यवसन्मुनिपुंगवः॥ ७ ॥तपस्तेपेसधर्मात्मास्वाध्यायनियतेंद्रियः॥ गत्वाश्रमपदंतस्यविघ्नंकुर्वंतिकन्यकाः ॥ ८ ॥ ऋषिपन्नगकन्याश्चराजर्षितनयाश्चयाः ॥ क्रीडंत्योऽप्सरसश्चैवतंदेशमुपपेदिरे ॥ ९ ॥ सर्वर्तुषूपभोग्यत्वाद्रम्यत्वात्काननस्यच ॥ नित्यशस्तास्तुतंदेशंगत्वाक्रीडंतिकन्यकाः ॥ १० ॥ देशस्यरमणीयत्वात्पुलस्त्योयत्रसद्विजः ॥ गायंत्योवादयंत्यश्चोल्लासयंत्यस्तथैवच ॥ ११ ॥

श्रेष्ठ तप करनेकी इच्छासे महापर्वत मेरुकी बगलमें तृणबिंदुके आश्रममें जाय बसते हुए ॥ ७ ॥ वह पुलस्त्यजी वेदाध्ययन कर तथा अपनी इन्द्रियोंको जीत तपस्या करने लगे, इतनेहीमें कन्यागण आश्रमके निकट आय उनके तपमें विघ्न करने लगीं ॥ ८ ॥ राजर्षियोंकी लडकियें ऋषियें, पुत्रियें नागोंकी बेटी व अप्सरागण विहार करते २ उस स्थानमें आय पहुँचीं ॥ ९ ॥ वह वन समस्त ऋतुओंमें ही विहार करनेके योग्य था और अत्यन्त सुहावन मनभावना था इसी कारण यह सब कन्यायें उस बनमें आयकर नित्य खेल कूद करने लगीं ॥ १० ॥ जिस स्थानमें वह ब्राह्मण पुलस्त्यजी रहते थे उसी देशमें रमणीय होनेके कारण यह सब कन्यागण गाती बजाती और भांति २ के विलाश दिखाती थीं ॥ ११ ॥

इस प्रकारसे यह निन्दारहित कन्यागण उन तपस्वीकी तपस्यामें विघ्न करने लगीं , तब महातेजस्वी पुलस्त्यजी क्रोधित होकर बोले ॥ १२ ॥ कि "जो हमारी दृष्टिके सामने आवेगी वह उसी समय गर्भ धारण करेगी" वह सब इन महात्मा ऋषिके वचन सुनकर ॥ १३ ॥ ब्रह्मशापके भयसे भीत हो फिर उस स्थानमें न गईं, परन्तु राजर्षि तृणबिन्दुकी पुत्रीने यह वचन नहीं सुन पाया ॥१४॥इस कारण वही उस आश्रममें जायकर निर्भय घूमने लगी; परन्तु वहां उसने अपनी किसी सखीको आते हुए न देखा ॥१५॥उस कालमें महातेजस्वी महर्षि प्रजापतिपुत्र पुलस्त्यजी तपके प्रभावसे प्रदीप्त हो आश्रममें जाकर रहने लगी ॥१६॥ परन्तु तृणबिन्दुने कन्याकी श्रवण करनेकी अभिलाषा करके जैसे ही उन तपनिधानका दर्शन करती हुई वैसेही उसका शरीरमें पीला पड गया;

मुनेस्तपस्विनस्तस्यविघ्नंचक्रुरनिंदिताः ॥ अथरुष्टोमहातेजाव्याजहारमहामुनिः ॥ १२ ॥ यामेदर्शनमागच्छेत्सागर्भंधारयिष्यति ॥
तास्तुसर्वाःप्रतिश्रुत्यतस्यवाक्यंमहात्मनः ॥ १३ ॥ ब्रह्मशापभयाद्भीतास्तंदेशंनापचक्रमुः ॥ तृणबिंदोस्तुराजर्षेस्तनयानशृणोतितत् ॥१४॥
गत्वाश्रमपदंतत्रविचचारसुनिर्भया ॥ नचापश्यच्चसातत्रकांचिदभ्यागतांसखीम् ॥१५॥ तस्मिन्कालेमहातेजाःप्राजापत्योमहानृषिः ॥ स्वा
ध्यायमकरोत्तत्रतपसाभावितःस्वयम् ॥॥ १६ ॥ सातुवेदश्रुतिंश्रुत्वादृष्ट्वावैतपसोनिधिम् ॥ अभवत्पांडुदेहासासुव्यंजितशरीरजा ॥ १७ ॥
बभूवचसमुद्विग्नादृष्ट्वातद्दोषमात्मनः ॥ इदंमेकिंत्वितिज्ञात्वापितुर्गत्वाश्रमेस्थिता ॥ १८ ॥ तांतुदृष्ट्वातथाभूतांतृणबिंदुरथाब्रवीत ॥ किंत्व
मेतत्त्वसदृशंधारयस्यात्मनोवपुः ॥ १९ ॥ सातुकृत्वांजलिंदीनाकन्योवाचतपोधनम् ॥ नजानेकारणंतातयेनमेरूपमीदृशम् ॥ २० ॥
किंतुपूर्वंगतास्म्येकामहर्षेर्भावितात्मनः ॥ पुलस्त्यस्याश्रमंदिव्यमन्वेष्टुंस्वसखीजनम् ॥ २१ ॥ नचपश्यम्यहंतत्रकांचिदभ्यागतांसखीम् ॥
रूपस्यतुविपर्यासंदृष्ट्वात्रासादिहागता ॥ २२ ॥

और गर्भके लक्षण प्रकाशित हो गये ॥१७॥ वह अपने शरीरमें इन लक्षणोंको देखकर उदास तो हुई परन्तु अपने शरीरकी अवस्था जान पिताके आश्रममें जाकर रहने लगी ॥१८॥ परन्तु तृणबिन्दुने कन्याकी अवस्था देखकर कहा तुमने कन्यापनके अयोग्य अंग क्यों धारण किया है? ॥ १९ ॥ उस कन्याने अत्यन्त दीनभावसे हाथ जोडकर उन तपोधन पितासे कहा हे पितः ! जिस कारणसे हमारा ऐसा रूप हुआ उसको हम कुछ भी नहीं जानती हैं ॥ २० ॥ परन्तु इससे पहले मैं अपनी सखियोंको ढूँढते २ ब्रह्मचिन्तापरायण महर्षि पुलस्त्यजीके रमणीय आश्रममें अकेली चली गई ॥ २१ ॥ वहां हमने किसी सखीको भी आती हुई न देखा परन्तु रूपका यह पलट जाना देखकर मैं भयके मारे यहां चली आई हूँ ॥ २२ ॥

तब तपके प्रभावसे युक्त राजर्षि तृणबिंदुने ध्यान धरकर दिव्य नेत्रोंसे गर्भका सब कारण देख पाया, कि ऋषिके कर्मबलसेही यह सब हुआ है ॥ २३ ॥ वह ब्रह्मचिन्तापरायण महर्षि पुलस्त्यजीके शापका वृत्तांत जानकर कन्याके सहित वहां जाय पुलस्त्यजीसे बोले ॥ २४ कि हे भगवन् ! अपनेही गुणोंसे भूषित हमारी पुत्री आप ही यहांपर आई है सो आप भिक्षाके लिये इसको ग्रहण कर लीजिये ॥ २५ ॥ हे महर्षि ! तपस्या करते २ जब आपकी इंद्रियां थक जाया करेंगी; तब यह सदा आपकी सेवा किया करेगी; इसमें कुछ भी संदेह नहीं है ॥२६॥ उस कालमें ब्राह्मणश्रेष्ठ पुलस्त्यजी धार्मिक राजर्षिके ऐसे वचन सुन उसे अंगीकार करलेते हुए कि "अच्छा हम इसका पाणि ग्रहण कर लेंगे" ॥ २७ ॥ राजर्षि कन्यादान करके अपने आश्रमको चले आये

तृणबिंदुस्तुराजर्षिस्तपसाद्योतितप्रभः ॥ ध्यानंविवेशतच्चापिअपश्यदृषिकर्मजम् ॥ २३ ॥ सतुविज्ञायतंशापंमहर्षेर्भावितात्मनः ॥ गृहीत्वा तनयांगत्वापुलस्त्यमिदमब्रवीत् ॥ २४ ॥ भगवंस्तनयांमेत्वंगुणैःस्वैरेवभूषिताम् ॥ भिक्षांप्रतिगृहाणेमांमहर्षेस्वयमुद्यताम् ॥ २५ ॥ तपश्चर णयुक्तस्यश्राम्यमाणेंद्रियस्यते ॥ शुश्रूषणपरानित्यंभविष्यतिनसंशयः ॥ २६ ॥ तंब्रुवाणंतुतद्वाक्यंराजर्षिंधार्मिकंतदा ॥ जिघृक्षुरब्रवीत्कन्यांबा ढमित्येवसद्विजः ॥२७॥ दत्त्वातुतनयांराजास्वमाश्रमपदंगतः ॥ सापितत्रावसत्कन्यातोषयंतीपतिंगुणैः ॥ २८ ॥ तस्यास्तुशीलवृत्ताभ्यांतु तोषसुनिपुंगवः ॥ प्रीतःसतुमहातेजावाक्यमेतदुवाचह ॥ २९ ॥ परितुष्टोऽस्मिसुश्रोणिगुणानांसंपदाभृशम् ॥ तस्माद्देविददाम्यद्यपुत्रमात्मस मंतव ॥ उभयोर्वंशकर्तारंपौलस्त्यइतिविश्रुतम् ॥ ३० ॥ यस्मात्तुविश्रुतोवेदस्त्वयेहाध्ययतोमम ॥ तस्मात्सविश्रवानामभविष्यतिनसंशयः ॥ ॥ ३१ ॥ एवमुक्तातुसादेवीप्रहृष्टेनांतरात्मना ॥ अचिरेणैवकालेनासूतविश्रवसंसुतम् ॥ त्रिषुलोकेषुविख्यातंयशोधर्मसमन्वितम् ॥ ३२ ॥

और कन्या भी अपने गुणोंसे पतिको सन्तुष्ट करके वहाँ बास करने लगी ॥ २८ ॥ इसी अवसरमें मुनिश्रेष्ठ उस कन्याके सच्चरित्र व्यवहारसे संतुष्ट हुए और वह महातेजस्वी प्रसन्न होकर यह बोले ॥ २९ ॥ हे सुश्रोणि ! हम तुम्हारे गुणोंसे परम प्रसन्न हुए हैं इस कारण हे देवि ! आज तुमको अपनी समान पुत्र देंगे; यह पुत्र पौलस्त्यनामसे विख्यात हो पिता और माताके वंशकी वृद्धि करेगा ॥ ३० ॥ हमारे वेद पढनेके समयमें तुम करके वेद सुना गया था; इस कारण तुम्हारे इस पुत्रका नाम विश्रवा होगा, इसमें संशय नहीं ॥ ३१ ॥ देवी इस प्रकारसे वर पाय अपने मनके सहित अत्यंत हर्षित हो थोडे ही दिनोंमें त्रिलोकविख्यात यशस्वी और धर्मवान् विश्रवा नामक पुत्र उत्पन्न करती हुई ॥ ३२ ॥

श्रुतिज्ञानयुक्त विश्रवाजी मुनि सब बातोंमें समदर्शी हुए, और व्रताचारमें रत हो अपने पिताके समान तपस्या करने लगे ॥३३॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां द्वितीयः सर्गः ॥२॥ इसके उपरांत पुलस्त्यजीके पुत्र मुनियोंमें श्रेष्ठ विश्रवाजी बहुत थोडे समयमें पिताके समान तपवान हुए॥१॥ वे सत्यवान् शीलवान् इन्द्रियोंको जीतनेवाले वेदाध्ययनमें तत्पर पवित्र; सब भोगके पदार्थोंसे चित्तको हटाये और अपने धर्मोंमें नित्यपरायण थे ॥२॥ महामुनि भरद्वाजजीने विश्रवाके ऐसे चरित्र ज्ञान देख देववर्णिनी नामक अपनी कन्या उनको बनानेके लिये देदी ॥ ३ ॥ धर्मानुसार भरद्वाजजी कन्याको ग्रहण कर प्रजालोगोंके शुभकांक्षी हो अधिक करके ज्योतिष ज्ञानके प्रभावसे होनेवाले उन्होंने पुत्रकी भलाई विचार ॥ ४ ॥ अतिहर्षसे युक्त हो मुनियोंमें श्रेष्ठ

श्रुतिमान्समदर्शीचव्रताचाररतस्तथा॥पितेवतपसायुक्तोअभवद्विश्रवामुनिः॥३३॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च०सा० उत्तरकांडे द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥ अथपुत्रःपुलस्त्यस्यविश्रवामुनिपुंगवः॥अचिरेणैवकालेनपितेवतपसिस्थितः ॥ १ ॥ सत्यवान्शीलवान्दान्तःस्वाध्यायनिरतःशुचिः॥ सर्वभोगेष्वसंसक्तोनित्यंधर्मपरायणः ॥ २॥ ज्ञात्वातस्यतुतद्वृत्तंभरद्वाजोमहामुनिः॥ददौविश्रवसेभार्यांस्वसुतांदेववर्णिनीम् ॥३॥ प्रतिगृह्यतुधर्मेणभरद्वाजसुतांतदा ॥ प्रजान्वीक्षिकयाबुद्ध्याश्रेयोह्यस्यविचिंतयन् ॥ ४ ॥मुदापरमयायुक्तोविश्रवामुनिपुंगवः ॥ सतस्यांवीर्यसंपन्नमपत्यंपरमाद्भुतम् ॥ ५ ॥ जनयामासधर्मज्ञः सर्वैर्ब्रह्मगुणैर्वृतम् ॥ तस्मिञ्जातेतुसंहृष्टःसबभूवपितामहः ॥ ६॥ दृष्ट्वाश्रेयस्करींबुद्धिंधनाध्यक्षोभविष्यति॥नामचास्याकरोत्प्रीतःसार्धंदेवर्षिभिस्तदा ॥७॥ यस्माद्विश्रवसोऽपत्यंसादृश्याद्विश्रवाइव ॥ तस्माद्वैश्रवणोनामभविष्यत्येषविश्रुतः ॥ ८ ॥ सतुवैश्रवणस्तत्रतपोवनगतस्तदा ॥ अवर्धताहुतिहुतोमहातेजायथाऽनलः ॥ ९ ॥ तस्याश्रमपदस्थस्यबुद्धिर्जज्ञेमहात्मनः ॥ चरिष्येपरमंधर्मंधर्मोहिपरमागतिः ॥१०॥ सतुवर्षसहस्राणितपस्तप्त्वामहावने ॥ यंत्रितोनियमैरुग्रैश्चकारसुमहत्तपः ॥ ११ ॥

विश्रवाजीने उस अपनी भार्यामें वीर्यसम्पन्न परम अद्भुत पुत्र ॥ ५ ॥ ब्राह्मणोंके सम्पूर्ण गुणोंसे युक्त इन धर्मज्ञने उत्पन्न किया, इस पुत्रके जन्म ग्रहण करनेसे इसके पितामह पुलस्त्यजी अत्यन्त हर्षित हुए ॥ ६ ॥ और उस पुत्रकी कल्याणकारिणी बुद्धिके देखनेसे परिणाममें इसका धनाध्यक्ष होना जान परम प्रसन्न चित्तसे देवर्षि लोगोंके सहित उस पुत्रका नामकरण करते हुए ॥ ७ ॥ विश्रवाके सहित पुत्रका सादृश्य हुआ है इसलिये यह पुत्र वैश्रवणके नामसे प्रसिद्ध हागा ॥ ८ ॥ उसकालमें वैश्रवण तपोवनमें रहकर आहुति होमे हुए महातेजस्वी अग्निके समान बढनेलगे ॥ ९ ॥ आश्रममें रहनेके समय उन महात्माको ऐसा ज्ञानका उदय हुआ कि धर्मही परमगति है इसकारण हम परमधर्मका आचरण करें ॥१०॥ उन्होंने इस प्रकारसे विचार तपस्याके उत्तम नियमोंके वश हो

महावनमें हजारवर्षतक घोरतप किया ॥ ११ ॥ जब सहस्रवर्ष पूर्ण होगये तब कभी जल ही पीकर रहजाते कभी पवनही पीते और कभी २ निराहार ही रहकर तपस्या करने लगे इस प्रकारसे वह हजारवर्ष एक वर्षके समान बीतगये ॥१२॥ इसके उपरांत महातेजस्वी पितामह ब्रह्माजी प्रसन्न हो इन्द्रादि देवताओंके साथ उनके आश्रममें आयकर यह वचन बोले ॥ १३ ॥ वत्स ! तुम्हारे इस कार्यसे हम प्रसन्न हुए हैं, हे सुव्रत ! तुम अत्यन्त बुद्धिमान और वरके योग्य पात्र हो इस कारण वर माँगो तुम्हारा मंगल होगा ॥१४॥ इसके उपरांत वैश्रवण आये हुए ब्रह्माजीसे बोले कि हे भगवन् ! हम धनरक्षक लोकपाल होनेकी वासना करते हैं ॥ १५ ॥ ब्रह्माजीसे सब देवताओंके साथ प्रसन्नचित्त हो वैश्रवणके वचनोंको हर्ष सहित अंगीकार कर उनसे बोले ॥ १६ ॥ कि

पूर्णेवर्षसहस्रांतेतंतंविधिमकल्पयत् ॥ जलाशीमारुताहारोनिराहारस्तथैवच ॥ एवंवर्षसहस्राणिजग्मुस्तान्येकवर्षवत् ॥ १२ ॥ अथप्रीतोमहातेजाःसेंद्रैःसुरगणैःसह ॥ गत्वातस्याश्रमपदंब्रह्मेदंवाक्यमब्रवीत् ॥ १३ ॥ परितुष्टोऽस्मितेवत्सकर्मणानेनसुव्रत ॥ वरंवृणीष्वभद्रंतेवरार्हस्त्वंमहामते ॥१४॥ अथाब्रवीद्वैश्रवणःपितामहमुपस्थितम् ॥ भगवँल्लोकपालत्वमिच्छेहंलोकरक्षणम् ॥ १५ ॥ अथाब्रवीद्वैश्रवणंपरितुष्टेनचेतसा ॥ ब्रह्मासुरगणैःसार्धंबाढमित्येवहृष्टवत् ॥१६॥ अहंवैलोकपासानांचतुर्थस्रष्टुमुद्यतः ॥ यमेंद्रवरुणानांचपदंयत्तवचेप्सितम् ॥१७॥ तद्गच्छ बतधर्मज्ञ निधीशत्वमवाप्नुहि ॥ शक्रांबुपयमानांचचतुर्थस्त्वंभविष्यसि ॥१८॥ एतच्चपुष्पकंनामविमानंसूर्यसन्निभम् ॥ प्रतिगृह्णीष्वयानार्थंत्रिदशैःसमतांव्रज ॥१९॥ स्वस्तितेऽस्तुगमिष्यामःसर्वएवयथागतम् ॥कृतकृत्यावयंतातदत्त्वातववरद्वयम् ॥२०॥इत्युक्त्वासगतोब्रह्मास्वस्थानंत्रिदशैःसह ॥ गतेषुब्रह्मपूर्वेषुदेवेष्वथनभस्थलम् ॥ २१ ॥ धनेशःपितरंप्राहप्रांजलिःप्रयतात्मवान् ॥ भगवँल्लब्धवानस्मिवरमिष्टंपितामहात् ॥ २२ ॥

हे वत्स ! हम चौथा लोकपाल सृजन करनेको तैयार हैं, इन्द्र, यम और वरुणजीको तुम्हारी लोकपाल पदवी (ईप्सित)है सो तुम उसको ग्रहण करो ॥१७॥ हे धर्मज्ञ ! तुम धनाध्यक्षका पद प्राप्त कर इन्द्र, वरुण और यममें चौथे लोकपाल होगे ॥ १८ ॥ सूर्यके समान प्रभावाला पुष्पकनामक यह विमान अपने चढनेके लिये ग्रहण करके तुम देवताओंके समान तपाओ ॥ १९ ॥ हे तात ! तुमको दो वर देकर हम कृतकृत्य हुये, इस समय हम जिसस्थानसे आये हैं उसी स्थानको जाते हैं, अब तुम्हारा मंगल हो ॥ २० ॥ यह कहकर ब्रह्माजी सब देवताओंके साथ अपने स्थानको चले गये। ब्रह्मादि देवगण जब आकाशमंडलको चलेगये ॥२१॥तब धनेश सावधानचित्त हो हाथ जोडकर पिताजीसे बोले कि; हे भगवन् ?हमने पितामह ब्रह्माजीसे मनमाना वर पाया है ॥२२॥

परन्तु उन देवप्रजापतिने हमारे रहनेको कोई वासस्थान नहीं बताया । हे प्रभु भगवान् ! जहां रहनेसे किसी प्राणीको पीडा पहुँचनेकी सम्भावना नहीं हो आप हमारे लिये ऐसाही श्रेष्ठ वासस्थान खोज देखिये ॥ २३ ॥ मुनिश्रेष्ठ विश्रवाजीने धर्मज्ञपुत्रके ऐसे वचन सुनकर उनसे कहा हे श्रेष्ठ ? सुन ॥ २४ ॥ दक्षिण समुद्रके तीरपर त्रिकूट नाम पर्वत है, उसके शिखरपर इन्द्रजीके समान पुरी वसती है ॥ २५ ॥ विश्वकर्माकी बनाई हुई उस रमणीक पुरीका नाम लंका है, यह पुरी राक्षसलोगोंके रहनेके लिये ही मानो इन्द्रकी अमरावती पुरी है ॥२६॥ तुम उसी लंकापुरीमें जायकर वासकरो तुम्हारा मंगल होगा इसमें कुछ संदेह नहीं, सुवर्णकी कोटकी भीत है, चारों ओर खाई खुदीहैयंत्र (कलें) और शस्त्रोंसे भरीपुरी है ॥२७॥ उसके समस्त फाटक सुवर्ण और वैदूर्य मणिके बने हैं।

निवासनंनमेदेवोविदधेसप्रजापतिः ॥ तंपश्यभवन्कंचिन्निवासंसाधुमेप्रभो ॥ नचपीडाभवेद्यत्रपाणिनोयस्यकस्यचित् ॥ २३ ॥ एवमुक्तस्तुपुत्रणविश्रवामुनिपुंगवः ॥ वचनंप्राहधर्मज्ञःश्रूयतामितिसत्तमः ॥ २४ ॥ दक्षिणस्योदधेस्तीरेत्रिकूटोनामपर्वतः॥ तस्याग्रेतुविशालासामहेंद्रस्य पुरीयथा ॥ २५ ॥ लंकानामपुरीरम्यानिर्मिताविश्वकर्मणा ॥ राक्षसानांनिवासार्थंयथेंद्रस्यामरावती ॥ २६ ॥ तत्रत्वंवसभद्रंतेलंकायांनात्रसंशयः ॥ हेमप्राकारपरिखायंत्रशस्त्रसमावृता ॥२७॥ रमणीयापुरीसाहिरुक्मवैदूर्यतोरणा ॥ राक्षसैःसापरित्यक्तापुराविष्णुभयार्दितैः ॥ २८ ॥ शून्यारक्षोगणैःसर्वैरसातलतलंगतैः ॥ शून्यासंप्रतिलंकासाप्रभुस्तस्यानविद्यते ॥ २९ ॥ सत्वंतत्रनिवासायगच्छपुत्रयथासुखम् ॥ निर्दोषस्तत्रतेवासोनबाधास्तत्रकस्यचित् ॥ ३० ॥ एतच्छ्रुत्वासधमात्मार्धर्मिष्ठंवचनंपितुः ॥ निवासयामासतदालंकांपर्वतमूर्धनि ॥ ३१ ॥ नैर्ऋतानां सहस्रैस्तुहृष्टैःप्रमुदितैःसदा ॥ अचिरेणैवकालेनसंपूर्णातस्यशासनात् ॥ ३२ ॥ सतुतत्रावसत्प्रीतोधर्मात्मानैर्ऋतर्षभः ॥ समुद्रपरिखायांसलंकायांविश्रवात्मजः ॥ ३३ ॥

इस रमणीयपुरीको पहले समयमें विष्णुजीके भयसे भीत हो राक्षस लोग छोडगये ॥ २८ ॥ वह सबही राक्षस इस पुरीको शून्य करके पातालको चले गये, अब लंकापुरी सूनी है उसका स्वामी कोई नहीं है ॥ २९ ॥ हे पुत्र ! तुम वहां वास करनेके लिये सुखसे गमन करो; तुम्हारा वहां रहना निर्दोष होगा; वहां रहनेमें तुम्हें कोई बाधा नहीं देसकेगा ॥३०॥ धर्मात्मा कुबेरजी पिताके ऐसे धर्मयुक्त वचन सुनकर पर्वतके शिखरपर बसी हुई लंकानगरीमें वास करने लगे ॥ ३१ ॥ सहस्र २ राक्षसगण हर्षित होकर उनके साथ गये; कुबेरजीके पालन करनेसे लंकानगरी बहुत थोडे कालमें ही समृद्धियुक्त होगई ॥ ३२ ॥ तब नैर्ऋतवर धर्मात्मा विश्रवाजीके पुत्र कुबेरजी प्रसन्नहो समुद्ररूप खाईसे घिरी लंकानगरीमें वास करने लगे ॥ ३३ ॥

धर्मात्मा धनेश्वर कुबेरजी पुष्पकविमानपर सवार होकर विनीत भावसे समय २ पिता माताके निकट आते थे ॥ ३४ ॥ उस कालमें देवता व गन्धर्व लोग उनकी स्तुति करते, अप्सरागण उनके पुष्पक विमानमें नाचते रहते थे, किरणोंकी माला बनाये सूर्यके समान शोभायमान होकर कुबेरजी पिता माताके समीप आते थे ॥ ३५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ महामुनि अगस्त्यजीके यह वचन सुनकर अत्यन्त विस्मित हो श्रीरामचन्द्रजी मनहीमन चिंता करने लगे कि, कुबेरजीके बसनेसे पहले भी लंकापुरीमें राक्षसोंका रहना किस प्रकारसे संभव हो सकता है ? ॥ १॥ फिर शिर कंपाय श्रीरामचन्द्रजी तीन अग्निके समान देह धारे अगस्त्यजीको बार २ निहार विस्मितहो उनसे बोले ॥ २ ॥ हे भगवन् ! पहले भी इस

कालेकालेतुधर्मात्मापुष्पकेणधनेश्वरः ॥ अभ्यागच्छद्विनीतात्मापितरंमातरंचहि ॥ ३४ ॥ सदेवगंधर्वगणैरभिष्टुतस्तथाप्सरोनृत्यविभूषिता लयः ॥ गभस्तिभिःसूर्यइवावभासन्पितुःसमीपंप्रययौसवित्तपः ॥ ३५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० उत्तरकाण्डे तृतीयः सर्गः ॥३॥ श्रुत्वाऽगस्त्येरितंवाक्यंरामोविस्मयमागतः ॥ कथमासीत्तुलंकायांसंभवोरक्षसांपुरा ॥ १ ॥ ततःशिरःकंपयित्वात्रेताग्निसम विग्रहम् ॥ तमगस्त्यंमुहुर्दृष्ट्वास्मयमानोऽभ्यभाषत ॥ २ ॥ भगवन्पूर्वमप्येषालंकासीत्पिशिताशिनाम् ॥ श्रुत्वेदंभगवद्वाक्यंजातोमेविस्मयः परः ॥ ३ ॥ पुलस्त्यवंशादुद्भूताराक्षसाइतिनःश्रुतम् ॥ इदानीमन्यतश्चापिसंभवःकीर्तितस्त्वया ॥ ४ ॥ रावणात्कुंभकर्णाच्चप्रहस्ताद्विकटा दपि ॥ रावणस्यचपुत्रेभ्यःकिंनुतेबलवत्तराः ॥ ५ ॥ कएषांपूर्वकोब्रह्मन्किंनामाचबलोत्कटः ॥ अपराधंचकंप्राप्यविष्णुनाद्राविताःकथम् ॥ ६ ॥ एतद्विस्तरतःसर्वंकथयस्वममानघ ॥ कुतूहलमिदंमह्यंनुदभानुर्यथातमः ॥ ७ ॥ राघवस्यवचःश्रुत्वासंस्कारालंकृतंशुभम् ॥ अथ विस्मयमानस्तमगस्त्यःप्राहराघवम् ॥ ८ ॥

लंकापुरीमें राक्षस लोग ही बास करते थे, आपका यह वचन सुनकर हमको अत्यन्त विस्मय हुआ है ॥३॥ हमने तो यही सुन रक्खा है कि, पुलस्त्यजीके वंशसे ही राक्षसोंकी उत्पत्ति हुई है परंतु इस समय आपने यह कहा कि औरसे राक्षसोंकी उत्पति हुई है ॥४॥ रावण कुम्भकर्ण प्रहस्त, विकट और रावणके पुत्रोंसे क्या वह अधिक बलवान् थे ? ॥५॥ हे भगवन् ! इन लोगोंका पूर्व पुरुष कौन था ? उसका नाम क्या था ? और बल कैसा था ? और किस अपराधसे भगवान् विष्णुजीने इनको वहांसे निकाल दिया था ॥ ६॥ इनका समस्त वृत्तांत विस्तार सहित वर्णन कीजिये हे पापरहित ! सूर्य जिस प्रकार अंधकारका नाश करते हैंवैसेही आप हमारे इस कौतूहलको दूर कीजिये॥७॥श्रीरामचन्द्रजीके यह व्याकरणकी रीतिसे शुद्ध औरअलंकार युक्त वचन सुनकर अगस्त्यजी

विस्मित हो श्रीरामचन्द्रजीसे बोले ॥ ८ ॥ कि पूर्व समयमें पृथ्वीकेआधे भागके बराबर जलको उत्पन्नकर उससे प्रजापतिजी उत्पन्न हुए, पद्मयोनि ब्रह्माजीने अपने बनाये प्राणियोंकी रक्षा करनेको कुछ एक जीव उत्पन्न किये ॥ ९ ॥ वह समस्त प्राणी भूँख प्याससे और भयसे पीडित हो सृष्टि उत्पन्न करनेवाले ब्रह्माजीके निकट जाय विनीतभावसे बोले कि, हम लोग क्या करें ? ॥ १० ॥ तब प्रजापति ब्रह्माजी हँसते हुए उन सब प्राणियोंको पारकर बोले कि हे प्राणियो ! तुमलोग यत्न सहित मनुष्योंकी रक्षा करो ॥ ११ ॥ उनमेंसे कुछ एक भूखे प्राणी ''रक्षाम'' और कुछ एक क्षुधा रहित प्राणी ''यक्षाम'' इस प्रकारसे कहते हुए ॥ १२ ॥ उसके पीछे भूतपावन प्रजापति ब्रह्माजी उनसे बोले कि, तुम सबमेंसे जिन्होंने ''रक्षाम''कहा है वह राक्षस हों और जिन्होंने

प्रजापतिःपुरासृष्ट्वाअपःसलिलसंभवः ॥ तासांगोपायनेसत्त्वानसृजत्पद्मसंभवः ॥९॥ तेसत्त्वाःसत्त्वकर्तारंविनीतवदुपस्थिताः ॥ किंकुर्मइति भाषंतः क्षुत्पिपासाभयार्दिताः ॥ १० ॥ प्रजापतिस्तुगान्सर्वान्प्रत्याहप्रहसन्निव ॥ आभाष्यवाचायत्नेनरक्षध्वमितिमानवाः ॥ ११ ॥ रक्षा मइतितत्रान्यैर्यक्षामइतिचापरैः ॥ भुंक्षिताभुंक्षितैरुक्तस्ततस्तानाहभूतकृत् ॥ १२ ॥ रक्षामइतियैरुक्तंराक्षसास्तेभवंतुवः ॥ यक्षामइतियैरुक्तंयक्षा एवभवंतुवः ॥ १३॥ तत्रहेतिःप्रहेतिश्चभ्रातरौराक्षसाधिपौ ॥ मधुकैटभसंकाशौबभूवतुररिंदमौ ॥ १४॥ प्रहेतिर्धार्मिकस्तत्रतपोवनगतस्तदा ॥ हेतिर्दारक्रियार्थेतुपरंयत्नमथाकरोत् ॥ १५ ॥ सकालभगिनींकन्यांभयांनाममहाभयाम् ॥ उदावहदमेयात्मास्वयमेवमहामतिः ॥ १६ ॥ स तस्यां जनयामासहेती राक्षसपुंगवः ॥ पुत्रंपुत्रवतांश्रेष्ठोविद्युत्केशमितिश्रुतम् ॥ १७ ॥ विद्युत्केशोहेतिपुत्रःसदीप्तार्कसमप्रभः ॥ व्यवर्धतम हातेजास्तोयमध्यइवांबुजम् ॥ १८ ॥ सयदायौवनंभद्रमनुप्राप्तोनिशाचरः ॥ ततोदारक्रियांतस्यकर्तुंव्यवसितः पिता ॥ १९॥

'यक्षाम'' कहा है वह यक्ष हों ॥ १३ ॥ उन राक्षसोंमेंसे उनके स्वामीरूप हेति और प्रहेति नामक मधुकैटभके समान शत्रुदमनकारी दो भ्राता जन्म लेते हुए ॥ १४ ॥ उन दोनोंमेंसे प्रहेति धर्मात्मा हुआ, इस कारणसे वह विरागी हो तपोवनको चला गया, परंतु हेति उस समय विवाह करनेके लिये अतिशय यत्न करने लगा ॥१५॥ अप्रमेयात्मा महामतिमान् हेतिने आपही कालके निकट जाय प्रार्थना करके कालकी बहन भयानामक महाभयावनी कन्यासे विवाह किया ॥१६॥ फिर पुत्रवानोंमें प्रथम गिने जानेके योग्य राक्षस हेतिने उस स्त्रीके गर्भसे विद्युत्केश नामक विख्यात पुत्र उत्पन्न किया॥१७॥ महातेजस्वीहेतिका त्र विद्युत्केश प्रदीप्तसूर्यके समान अत्यन्त तेजस्वी हो जलमें लगे हुए कमलके समान बढने लगा ॥१८॥ जब वह निशाचर शोभायमान यौवनको प्राप्त हुआ

तब उसके पिता हेतिने उसका विवाह करना निश्चय किया ॥१९॥ फिर राक्षसश्रेष्ठ हेतिने सन्ध्याके समान प्रतापवाली संध्याकी पुत्रीको अपने पुत्रके लिये संध्यासे मांगा॥२०॥ हे श्रीरामचन्द्रजी! "कन्या अवश्यही किसीको देनी होगी" संध्याने यह शोच विद्युत्केशको अपनी बेटी देदी ॥२१॥राक्षस विद्युत्केश संध्याकी पुत्रीको पाय उसके साथ विहार करने लगा, जैसे इन्द्राणीके साथ इन्द्रजी विहार करते हैं॥२२॥ हे राम! कुछकालके पीछे वह सालकटंकटा विद्युत्केशसे गर्भधारण करती हुई जैसे समुद्रसे बादलोंकी राशि गर्भ धारण करती है॥२३॥ फिर गंगाजीने जिस प्रकार तेजसे उत्पन्न महादेवजीके गर्भको त्यागन कर दिया था वैसेही उस राक्षसीने मन्दर पर्वतपर गमन करके जलगर्भ मेघके समान प्रभाववाला गर्भ उत्पन्न किया । इसके पीछे वह विद्युत्केशकी रतिके अभिलाषसे पुत्रके उत्पन्न होते ही ॥२४॥

संध्यादुहितरंसोऽथसंध्यातुल्यांप्रभावतः॥ वरयामासपुत्रार्थंहेतीराक्षसपुंगवः ॥२०॥अवश्यमेवदातव्यापरस्मैसेतिसंध्यया॥ चिंतयित्वासुताद त्ताविद्युत्केशायराघवः ॥ २१ ॥ संध्यायास्तनयांलब्ध्वाविद्युत्केशोनिशाचरः ॥ रमतेसतयासार्धंपौलोम्यामघवानिव ॥ २२ ॥ केनचि त्त्वथकालेनरामसालकटंकटा ॥ विद्युत्केशाद्गर्भमापघनराजिरिवार्णवात् ॥ २३ ॥ ततःसाराक्षसीगर्भंघनगर्भसमप्रभम् ॥ प्रसूतामंदरंगत्वा गंगागर्भमिवाग्निजम् ॥ समुत्सृज्यतुसागर्भंविद्युत्केशरतार्थिनी ॥२४॥ रेमेतुसार्धंपतिनाविसृज्यसुतमात्मजम् ॥ उत्सृष्टस्तुतदागर्भोघनशब्द समस्वनः ॥ २५ ॥ तयोत्सृष्टःसतुशिशुःशरदर्कसमद्युतिः ॥ निधायास्येस्वयंमुष्टिंरुरोदशनकैस्तदा ॥ २६ ॥ ततोवृषभमास्थायपार्वत्यास हितःशिवः ॥ वायुमार्गेणगच्छन्वैशुश्रावरुदितस्वनम् ॥ २७ ॥ अपश्यदुमयासार्धंरुदंतंराक्षसात्मजम् ॥ कारुण्यभावात्पार्वत्याभवस्त्रिपु रसूदनः ॥ २८ ॥ तंराक्षसात्मजंचक्रेमातुरेववयःसमम् ॥ अमरंचैवतंकृत्वामहादेवोऽक्षरोऽव्ययः ॥ २९ ॥ पुरमाकाशगंप्रादात्पार्वत्याः प्रिय काम्यया ॥ उमयापिवरोदत्तोराक्षसीनांनृपात्मज ॥ ३० ॥

अपने पुत्रको छोडकर स्वामीके साथ विहार करनेमें रत हुई, उसका त्यागा हुआ वह पुत्र वहीं मेघके समान शब्द करने लगा ॥२५॥ परंतु शारदीय सूर्यके समान द्युतिमान् वह बालक पिता माता करके त्यागा हुआ मुँहमें अंगूठा देकर धीरे२रोने लगा ॥२६॥ इसकेउपरांत महादेवजी श्रीपार्वतीजीके साथ बैलपर चढकर गमन करते२आकाश मार्गमें यह रोनेका शब्द सुनते हुए ॥२७॥ फिर रोतेहुए इस राक्षसपुत्रको दोनोंने देखा और करुणाके वश ही पार्वतीजीके कहनेसे त्रिपुरदमनकारी महादेवजीने ॥ २८ ॥ उस राक्षसके पुत्रकी अवस्था उसकी माताके समान कर दी; उस अवसरमें महादेवजीने उसको अमर भी करदिया ॥ २९ ॥ और पार्वतीकी प्रियकामनासे उसे एक आकाशमें चलनेवाला पुर भी दिया. हे राजकुमार ! पार्वतीजीने भी राक्षसियोंको यह वरदान दिया ॥३०॥

विस्मित हो श्रीरामचन्द्रजीसे बोले ॥ ८ ॥ कि पूर्व समयमें पृथ्वीकेआधे भागके बराबर जलको उत्पन्नकर उससे प्रजापतिजी उत्पन्न हुए, पद्मयोनि ब्रह्माजीने अपने बनाये प्राणियोंकी रक्षा करनेको कुछ एक जीव उत्पन्न किये ॥ ९ ॥ वह समस्त प्राणी भूँख प्याससे और भयसे पीडित हो सृष्टि उत्पन्न करनेवाले ब्रह्माजीके निकट जाय विनीतभावसे बोले कि, हम लोग क्या करें ? ॥ १० ॥ तब प्रजापति ब्रह्माजी हँसते हुए उन सब प्राणियोंको पारकर बोले कि हे प्राणियो ! तुमलोग यत्न सहित मनुष्योंकी रक्षा करो ॥ ११ ॥ उनमेंसे कुछ एक भूखे प्राणी ''रक्षाम'' और कुछ एक क्षुधा रहित प्राणी ''यक्षाम'' इस प्रकारसे कहते हुए ॥ १२ ॥ उसके पीछे भूतपावन प्रजापति ब्रह्माजी उनसे बोले कि, तुम सबमेंसे जिन्होंने ''रक्षाम''कहा है वह राक्षस हों और जिन्होंने

प्रजापतिःपुरासृष्ट्वाअपःसलिलसंभवः ॥ तासांगोपायनेसत्त्वानसृजत्पद्मसंभवः ॥९॥ तेसत्त्वाःसत्त्वकर्तारंविनीतवदुपस्थिताः ॥ किंकुर्मइति भाषंतः क्षुत्पिपासाभयार्दिताः ॥ १० ॥ प्रजापतिस्तुतान्सर्वान्प्रत्याहप्रहसन्निव ॥ आभाष्यवाचायत्नेनरक्षध्वमितिमानवाः ॥ ११ ॥ रक्षा मइतित्रान्यैर्यक्षामइतिचापरैः ॥ भुंक्षिताभुंक्षितैरुक्तस्ततस्तानाहभूतकृत् ॥ १२ ॥ रक्षामइतियैरुक्तंराक्षसास्तेभवंतुवः ॥ यक्षामइतियैरुक्तंयक्षा एवभवंतुवः ॥ १३ ॥ तत्रहेतिःप्रहेतिश्चभ्रातरौराक्षसाधिपौ ॥ मधुकैटभसंकाशौबभूवतुररिंदमौ ॥ १४ ॥ प्रहेतिर्धार्मिकस्तत्रतपोवनगतस्तदा ॥ हेतिर्दारक्रियार्थंतुपरंयत्नमथाकरोत् ॥ १५ ॥ सकालभगिनींकन्यांभयांनाममहाभयाम् ॥ उदावहदमेयात्मास्वयमेवमहामतिः ॥ १६ ॥ स तस्यां जनयामासहेती राक्षसपुंगवः ॥ पुत्रंपुत्रवतांश्रेष्ठोविद्युत्केशमितिश्रुतम् ॥ १७ ॥ विद्युत्केशोहेतिपुत्रःसदीप्तार्कसमप्रभः ॥ व्यवर्धतम हातेजास्तोयमध्यइवांबुजम् ॥ १८ ॥ सयदायौवनंभद्रमनुप्राप्तोनिशाचरः ॥ ततोदारक्रियांतस्यकर्तुंव्यवसितः पिता ॥ १९ ॥

''यक्षाम'' कहा है वह यक्ष हों ॥ १३ ॥ उन राक्षसोंमेंसे उनके स्वामीरूप हेति और प्रहेति नामक मधुकैटभके समान शत्रुदमनकारी दो भ्राता जन्म लेते हुए ॥ १४ ॥ उन दोनोंमेंसे प्रहेति धर्मात्मा हुआ, इस कारणसे वह विरागी हो तपोवनको चला गया, परंतु हेति उस समय विवाह करनेके लिये अतिशय यत्न करने लगा ॥ १५ ॥ अप्रमेयात्मा महामतिमान् हेतिने आपही कालके निकट जाय प्रार्थना करके कालकी बहन भयानामक महाभयावनी कन्यासे विवाह किया ॥ १६ ॥ फिर पुत्रवानोंमें प्रथम गिने जानेके योग्य राक्षस हेतिने उस स्त्रीके गर्भसे विद्युत्केश नामक विख्यात पुत्र उत्पन्न किया ॥ १७ ॥ महातेजस्वीहेतिका त्र विद्युत्केश प्रदीप्तसूर्यके समान अत्यन्त तेजस्वी हो जलमें लगे हुए कमलके समान बढने लगा ॥ १८ ॥ जब वह निशाचर शोभायमान यौवनको प्राप्त हुआ

तब उसके पिता हेतिने उसका विवाह करना निश्चय किया ॥१९॥ फिर राक्षसश्रेष्ठ हेतिने सन्ध्याके समान प्रतापवाली संध्याकी पुत्रीको अपने पुत्रके लिये संध्यासे मांगा॥२०॥ हे श्रीरामचन्द्रजी! ''कन्या अवश्यही किसीको देनी होगी'' संध्याने यह शोच विद्युत्केशको अपनी बेटी देदी ॥२१॥राक्षस विद्युत्केश संध्याकी पुत्रीको पाय उसके साथ विहार करने लगा, जैसे इन्द्राणीके साथ इन्द्रजी विहार करते हैं॥२२॥ हे राम! कुछकालके पीछे वह सालकटंकटा विद्युत्केशसे गर्भधारण करती हुई जैसे समुद्रसे बादलोंकी राशि गर्भ धारण करती है॥२३॥ फिर गंगाजीने जिस प्रकार तेजसे उत्पन्न महादेवजीके गर्भको त्यागन कर दिया था वैसेही उस राक्षसीने मन्दर पर्वतपर गमन करके जलगर्भ मेघके समान प्रभाववाला गर्भ उत्पन्न किया । इसके पीछे वह विद्युत्केशकी रतिके अभिलाषसे पुत्रके उत्पन्न होते ही ॥२४॥

संध्यादुहितरंसोऽथसंध्यातुल्यांप्रभावतः॥ वरयामासपुत्रार्थंहेतीराक्षसपुंगवः॥२०॥अवश्यमेवदातव्यापरस्मैसेतिसंध्यया॥ चिंतयित्वासुतादत्ताविद्युत्केशायराघवः॥ २१॥ संध्यायास्तनयांलब्ध्वाविद्युत्केशोनिशाचरः॥ रमतेसतयासार्धंपौलोम्यामघवानिव ॥ २२ ॥ केनचित्त्वथकालेनरामसालकटंकटा॥ विद्युत्केशाद्गर्भमापघनराजिरिवार्णवात् ॥ २३ ॥ ततःसाराक्षसीगर्भंघनगर्भसमप्रभम् ॥ प्रसूतामंदरंगत्वागंगागर्भमिवाग्निजम् ॥ समुत्सृज्यतुसागर्भंविद्युत्केशरतार्थिनी ॥२४॥ रेमेतुसार्धंपतिनाविसृज्यसुतमात्मजम् ॥ उत्सृष्टस्तुतदागर्भोघनशब्दसमस्वनः ॥ २५ ॥ तयोत्सृष्टःसतुशिशुःशरदर्कसमद्युतिः॥ निधायास्येस्वयंमुष्टिंरुरोदशनकैस्तदा॥ २६ ॥ ततोवृषभमास्थायपार्वत्यासहितःशिवः॥ वायुमार्गेणगच्छन्वैशुश्रावरुदितस्वनम् ॥ २७॥ अपश्यदुमयासार्धंरुदंतंराक्षसात्मजम् ॥ कारुण्यभावात्पार्वत्याभवस्त्रिपुरसूदनः॥ २८ ॥ तंराक्षसात्मजंचक्रेमातुरेववयःसमम् ॥ अमरंचैवतंकृत्वामहादेवोऽक्षरोऽव्ययः॥ २९ ॥ पुरमाकाशगंप्रादात्पार्वत्याः प्रियकाम्यया ॥ उमयापिवरोदत्तोराक्षसीनांनृपात्मज ॥ ३० ॥

अपने पुत्रको छोडकर स्वामीके साथ विहार करनेमें रत हुई, उसका त्यागा हुआ वह पुत्र वहीं मेघके समान शब्द करने लगा ॥२५॥ परंतु शारदीय सूर्यके समान द्युतिमान् वह बालक पिता माता करके त्यागा हुआ मुँहमें अंगूठा देकर धीरे२रोने लगा ॥२६॥ इसके उपरांत महादेवजी श्रीपार्वतीजीके साथ बैलपर चढकर गमन करते२आकाश मार्गमें यह रोनेका शब्द सुनते हुए ॥२७॥ फिर रोतेहुए इस राक्षसपुत्रको दोनोंने देखा और करुणाके वश ही पार्वतीजीके कहनेसे त्रिपुरदमनकारी महादेवजीने ॥ २८ ॥ उस राक्षसके पुत्रकी अवस्था उसकी माताके समान कर दी; उस अवसरमें महादेवजीने उसको अमर भी करदिया ॥ २९ ॥ और पार्वतीकी प्रियकामनासे उसे एक आकाशमें चलनेवाला पुर भी दिया.हे राजकुमार ! पार्वतीजीने भी राक्षसियोंको यह वरदान दिया ॥३०॥

कि राक्षसियें पतिका संयोग होते ही शीघ्र गर्भ धारण करें और शीघ्र ही उनका प्रसव करें और शीघ्र ही उनका बालक माताके समान अवस्थावाला हो जाया करे ॥ ३१ ॥ महामतिवाला राक्षसश्रेष्ठ विद्युत्केश यह वर पाय अत्यन्त गर्वित हुआ, अधिक करके स्वामी शिवके निकट लक्ष्मी और आकाशगामी विमानको प्राप्त होकर वह सब जगह घूनने लगा कि जिस प्रकार इन्द्रजी विचरण करते हैं ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥ सूर्यके समान तेजस्वी ग्रामिणीनामक गन्धर्व राक्षस सुकेशको धार्मिक और वरदान पाया हुआ देखकर ॥ १ ॥ रूप यौवनमें त्रिभुवन विख्यात और दूसरी लक्ष्मीके समान अपनी पुत्री देववती नामक कन्याको ॥ २ ॥ उसने धर्मात्मा राक्षसराज सुकेशको राक्षसोंकी लक्ष्मीके समान दान दी।

सद्योपलब्धिर्गर्भस्यप्रसूतिःसद्यएवच ॥ सद्यएववयःप्राप्तिमातुरेववयःसमम्॥३१॥ ततःसुकेशोवरदानगर्वितःश्रियंप्रभोःप्राप्यहरस्यपार्श्वतः ॥ चचारसर्वत्रमहान्महामतिःखगंपुरंप्राप्यपुरंदरोयथा ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे चतुर्थः सर्गः ॥४॥ सुकेशंधार्मिकंदृष्ट्वावरलब्धंचराक्षसम् ॥ ग्रामणीर्नामगंधर्वोविश्वावसुसमप्रभः ॥ १ ॥ तस्यदेववतीनामद्वितीयाश्रीरिवात्मजा ॥ त्रिषुलोकेषुविख्याताऋपयौवनशालिनी ॥२॥ तांसुकेशायधर्मात्माददौरक्षःश्रियंयथा ॥ वरदानकृतैश्वर्यंसातंप्राप्यपतिंप्रियम् ॥३॥ आसीद्देववतीतुष्टाधनंप्राप्येवनिर्धनः॥ सतयासहसंयुक्तोरराजरजनीचरः ॥४॥ अंजनादभिनिष्क्रान्तःकरेण्वेवमहागजः॥ ततःकालेसुकेशस्तुजनयामास राघव ॥ त्रीन्पुत्राञ्जनयामासत्रेताग्निसमविग्रहान्॥ ५ ॥ माल्यवंतंसुमालिंचमालिंचबलिनांवरम्॥ त्रींस्त्रिनेत्रसमान्पुत्रान्राक्षसानाक्षसाधिपः ॥६॥ त्रयोलोकाइवाव्यग्राःस्थितास्त्रयइवाग्नयः ॥ त्रयोमंत्राइवात्युग्रास्त्रयोघोराइवामयाः ॥ ७ ॥

शिवजीसे वरदान पानेके कारण सुकेश ऐश्वर्यशाली होगया था, ऐसे प्रियपतिको पाय ॥ ३ ॥ देववती परम प्रसन्न हुई जैसे निर्धन पुरुष धनको पाकर प्रसन्न होता है. वह राक्षस भी उसके संग ऐसे शोभायमान होनेलगा ॥४॥ कि जैसे हथिनीके संग अंजननामक दिग्गजसे उत्पन्न हुए महागजकी अति शोभा होती है हे रघुनंदन ! राक्षसपति सुकेशने देववतीके गर्भसे तीन अग्नियोंके समान मूर्तिमान् तीन पुत्र उत्पन्नकिये ॥ ५ ॥ माल्यवान, सुमाली और बलवानोंमें श्रेष्ठ माली, राक्षसपति सुकेशने तीन नेत्रोंके समान यह तीन पुत्र उत्पन्न किये थे, ॥ ६ ॥ एक स्थानपर स्थित तीन अग्निके समान अव्यग्र हुए तीन लोकके समान अतिउग्र तीन मंत्रोंकेसमान वात पित कफसे उत्पन्न हुए तीन रोगोंकी समान घोर ॥ ७ ॥

व तीनों अग्नियोंके ही समान तेजस्वी सुकेशके वह तीन पुत्र इसप्रकारसे बढने लगे कि जैसे विना औषधि किये रोग दिन २ बढता है ॥ ८ ॥ वह तोनों राक्षसपुत्र तपके बलसे पिताको वर पाया देख; और तपके प्रभावसे उस ऐश्वर्यके पानेको जान तप करनेका संकल्प मनमें ठान मेरु पर्वतपर चले गये॥ ९ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! वह तीनों राक्षस उस समय कठोर नियमोंका आश्रय लेकर सब प्राणियोंको भय उपजानेवाला घोर तप करनेलगे ॥१०॥ सत्य बोलना, सबसे सरलता रखना, इन्द्रियोंको सब ओर से आकर्षण कर अपने वशमें रखना इस भांतिसे और भी पृथ्वीतलपर दुर्लभ तपोंको करके उनलोगोंने देवता दैत्य, मनुष्य सहित तीन लोकोंको संतापित करदिया ॥११॥ इसके उपरान्त विभु भूतभावन चतुरानन ब्रह्माजी विमानपर चढकर सुकेशके सब पुत्रोंसे बोले कि "हम वरदान

त्रयःसुकेशस्यसुतास्त्रेताग्निसमतेजसः ॥ विवृद्धिमगमंस्तत्रव्याधयोपेक्षिताइव॥८॥ वरप्राप्तिंपितुस्तेतुज्ञात्वैश्वर्यंतपोबलात् ॥ तपस्तप्तुंगतामेरुंभ्रातरःकृतनिश्चयाः॥९॥ प्रगृह्यनियमान्घोरान्राक्षसानृपसत्तम ॥ विचेरुस्तेतपोघोरंसर्वभूतभयावहम् ॥ १० ॥ सत्यार्जवशमोपेतैस्तपोभिर्भुविदुर्लभः ॥ सतापयंतस्त्रील्लोँकान्सदेवासुरमानुषान् ॥११॥ ततोविभुश्चतुर्वक्त्रोविमानवरमाश्रितः ॥ सुकेशपुत्रानामंत्र्यवरदोऽस्मीत्यभाषत ॥ १२ ॥ ब्रह्माणंवरदंज्ञात्वासेंद्रैर्देवगणैर्वृतम् ॥ ऊचुःप्राञ्जलयःसर्वेवेपमानाइवद्रुमाः ॥ १३ ॥ तपसाराधितोदेवयदिनोदिशसेवरम् ॥ अजेयाःशत्रुहंतारस्तथैवचिरजीविनः ॥ प्रभविष्णवोभवामेतिपरस्परमनुव्रताः ॥ १४ ॥ एवंभविष्यथेत्युक्त्वासुकेशतनयान्विभुः ॥ सययौब्रह्मलोकायब्रह्माब्राह्मणवत्सलः ॥१५॥ वरंलब्ध्वातुतेसर्वेरामरात्रिंचरास्तदा ॥ सुरासुरान्प्रबाधंतेवरदानसुनिर्भयाः ॥१६॥ तैर्बाध्यमानास्त्रिदशाःसर्षिसंघाःसचारणाः ॥ त्रातारंनाधिगच्छंतिनिरयस्थायथानराः ॥१७॥

देनेको आये हैं" ॥१२॥ इन्द्रादि देवता लोगोंके साथ ब्रह्माजीको वरदान देनेको तैयार देख वह सब राक्षस वृक्षोंकी श्रेणीके समान कांपते हुए हाथ जोड कर उनसे बोले ॥ १३ ॥ हे देव ! तप करके आराधना किये जानेपर जो आप वर देनेको आये हैं; तो हमारा परस्पर महा अनुराग रहै, कोई हम लोगोंकोजीत न सके, शत्रुको हम लोग संहार किया करें और अजर अमर हों; आप हमें यह वरदान दीजिये ॥ १४ ॥ ब्राह्मण प्रिय विभु ब्रह्माजी बोले कि "तुम लोग ऐसे ही होगे" यह वरदान सुकेशके पुत्रोंको दे ब्रह्मा ब्रह्मलोक की ओर चले गये ॥१५॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! इस प्रकारसे वह राक्षस वरदान पाकर अत्यन्त निर्भय हो देवता व असुर लोगोंको पीडा देने लगे ॥ १६ ॥ देवतालोगोने ऋषि व चारण गणोंने राक्षसोंसे वध्यमान हो नरकमें पडे हुए

मनुष्यके समान अपना उद्धार करने वाला किसीको भी न देखा ॥१७॥ हे रघु श्रेष्ठ ! उनराक्षसोंने हर्षित चित्तसे आगमन करकेशिल्पियोंमें श्रेष्ठ चिरंजीवी विश्वकर्माजीसे कहा ॥१८॥ हे महामते ! शुभगुण समन्वित; तेजस्वी बलवान; महान् सब देवताओंके भवन उनके मनमाने आप ही बनानेवाले हैं ॥ १९ ॥ इस कारण हम लोगोंके लिये मनमाना भवन आप ही बनादें मेरु मन्दर अथवा हिमालय पर्वतका अवलंबन करके ॥२०॥ शिवजीके स्थानके समान हमारा बडाबारी गृह आप बनाइये । उन महाबलवान् राक्षसोंके वचन सुन विश्वकर्माजीने ॥ २१ ॥ लोगोंके रहने की इन्द्र की अमरावतीके समान निवास स्थान बताया कि दक्षिणसमुद्रके तीर त्रिकूट नाम पर्वत है ॥ २२ ॥ हे राक्षस गण ! और इस त्रिकूटके ही समान सुवेल नामक दूसरा एक पर्वत है उस पर्वतका

अथतेविश्वकर्माणंशिल्पिनांवरमव्ययम्॥ऊचुःसमेत्यसंहृष्टाराक्षसारघुसत्तम॥१८॥ओजस्तेजोबलवतांमहतामात्मतेजसा॥गृहकर्ताभवानेवदेवानांहृदयेप्सितम्॥१९॥ अस्माकमपितावत्त्वंगृहंकुरुमहामते॥ हिमवंतमुपाश्रित्यमेरुंमंदरमेववा॥२०॥महेश्वरगृहप्रख्यंगृहंनःक्रियतांमहत्॥ विश्वकर्माततस्तेषांराक्षसानांमहाभुजः ॥२१॥ निवासंकथयामासशक्रस्येवामरावतीम्॥दक्षिणस्योदधेस्तीरेत्रिकूटोनामपर्वतः ॥२२॥ सुवेल इतिचाप्यन्योद्वितीयोराक्षसेश्वर॥शिखरेतस्यशैलस्यमध्यमेंऽबुदसन्निभे ॥२३॥ शकुनैरपिदुष्प्रापेटंकच्छिन्नचतुर्दिशि ॥ त्रिंशद्योजनविस्तीर्णाशतयोजनमायता ॥२४॥ स्वर्णप्राकारसंवीताहेमतोरणसंवृता ॥ मयालंकेतिनगरीशक्राज्ञप्तेननिर्मिता ॥२५॥ तस्यांवसतदुर्धर्षायूयंराक्षसपुंगवाः॥अमरावतींसमासाद्यसेंद्राइवदिवौकसः॥२६॥ लंकादुर्गंसमासाद्यराक्षसैर्बहुभिर्वृताः॥भविष्यथदुराधर्षाःशत्रूणांशत्रुसूदनाः ॥२७॥ विश्वकर्मवचःश्रुत्वाततस्तेराक्षसोत्तमाः॥सहस्रानुचराभूत्वागत्वातामवसन्पुरीम् ॥२८॥

बीचवाला श्रृङ्ग मेघके समान है ॥२३॥ जिस पर पक्षी भी किसी प्रकारसे नहीं जा सकते क्योंकि उसके सब ओर विदीर्ण पत्थर फैले हुए हैं । तीस योजन की विस्तारवाली और सौ योजन की चौडी ॥ २४ ॥ सुवर्ण की चहरदिवारीसे युक्त और सुवर्णके ही फाटकोंसे समन्वित इस प्रकार की लंका हमने इन्द्र की आज्ञा से बनाई थी ॥ २५ ॥ हे दुर्द्धर्ष राक्षस लोगो ! स्वर्गवासी इन्द्रादि देवता जिस प्रकार अमरावतीमें वास करते हैं तुम भी वैसे ही उस लंकानगरीमें जाकर वसो ॥ २६ ॥ हे शत्रुओंका संहार करनेवाले राक्षस वृन्दो ! तुम सब बहुत सारे राक्षसोंके साथ लंकागढमें टिककर शत्रुगणोंके लिये दुराधर्ष होओगे ॥ २७ ॥ इसके उपरांत वह सब राक्षसश्रेष्ठ, विश्वकर्माजीके वचन सुनकर सहस्त्र २ सेवकोंके साथ जाकर उस पुरीमें बसे ॥ २८ ॥

दृढ गढकी भीत व खाईसे युक्त सैकडों हजारों सुवर्णगृहमालासे अलङ्कृत लंकानगरीको प्राप्त होकर राक्षसगण हर्षितचित्तसे वास करने लगे ॥ २९ ॥ हे रामचंद्रजी ! इसी समयमें नर्मदा नामक एक गन्धर्वी अपनी इच्छासे उत्पन्न हुई ॥ ३० ॥ इसके ही श्री औ कीर्तिके समान द्युतिवाली तीन कन्या हुईं । उस नामकी राक्षसीने ज्येष्ठके क्रमसे राक्षसोंको ॥३१॥ कन्या देदी । हर्षित होकर पूर्णमासीके चंद्रमाके समान मुखवाली तीन कन्याएँ उस गन्धर्वीने तीन राक्षस श्रेष्ठोंको दीं ॥३२॥ उस महाभागाने अपनी तीनों कन्याओंको पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमें उन राक्षसोंको दिया था । हे राम ! वह सुकेशके पुत्र अपनी स्त्रियोंके संग ॥ ३३ ॥ उस कालमें अप्सराओंके सहित देवताओंके समान विहार करनेमें रत हुए, सुन्दरी नामक माल्यवानकी सुन्दरी भार्या थी ॥ ३४ ॥ माल्य

दृढप्राकारपरिखांहैमैर्गृहशतैर्वृताम् ॥ लंकामवाप्यतंहृष्टान्यवसन्रजनीचराः ॥२९॥ एतस्मिन्नेवकालेतुयथाकामंचराघव ॥ नर्मदानामगंधर्वीबभूवरघुनंदन ॥३०॥ तस्याःकन्यात्रयंह्यासीद्ध्रीश्रीकीर्तिसमद्युति ॥ ज्येष्ठक्रमेणसातेषांराक्षसानामराक्षसी ॥३१॥ कन्यास्ताःप्रददौहृष्टापूर्णचंद्रनिभाननाः ॥ त्रयाणांराक्षसेंद्राणांतिस्रोगंधर्वकन्यकाः ॥ ३२ ॥ दत्तामात्रामहाभागानक्षत्रेभगदैवते ॥ कृतदारास्तुतेरामसुकेशतनयास्तदा ॥३३॥ चिक्रीडुःसहभार्याभिरप्सरोभिरिवामराः ॥ ततोमाल्यवतोभार्यासुंदरीनामसुंदरी ॥३४॥ सतस्यांजनयामासयदपत्यंनिबोधतत् ॥ वज्रमुष्टिर्विरूपाक्षोदुर्मुखश्चैवराक्षसः ॥३५॥ सुप्तघ्नोयज्ञकोपश्चमत्तोन्मत्तौतथैवच ॥ अनलाचाभवत्कन्यासुंदर्यांरामसुंदरी ॥३६॥ सुमालिनोऽपिभार्यासीत्पूर्णचंद्रनिभानना ॥ नाम्नाकेतुमतीरामप्राणेभ्योऽपिगरीयसी ॥३७॥ सुमालीजनयामासयदपत्यंनिशाचरः ॥ केतुमत्यांमहाराजतन्निबोधानुपूर्वशः ॥३८॥ प्रहस्तोऽकंपनश्चैवविकटःकालिकामुखः ॥ धूम्राक्षश्चैवदण्डश्चसुपार्श्वश्चमहाबलः ॥३९॥ संह्रादिःप्रघसश्चैवभासकर्णश्चराक्षसः ॥ राकापुष्पोत्कटाचैवकैकसीचशुचिस्मिताः ॥ कुंभीनसीचइत्येतेसुमालेःप्रसवाःस्मृताः ॥४०॥

वानने उस सुन्दरी नामक भार्यामें जो जो पुत्र उत्पन्न कियेथे वह मैं कहता हूँ । वज्रमुष्टि, विरूपाक्ष, राक्षस दुर्मुख ॥ ३५ ॥ सुप्तघ्न; यज्ञकोप, मत्त; उन्मत्त हे राम ? यह तो सुन्दरीके पुत्र हुए, और अनला नामक एक सुन्दर कन्या भी उसके हुई ॥ ३६ ॥ हे श्रीरामचंद्रजी ! सुमालीकी भार्याका नाम केतुमती था वह भी पूर्ण चंद्रमाके समान विमलवदनवाली और उस राक्षसको प्राणोंसे भी अधिक प्यारी थी ॥ ३७ ॥ हे महाराज ! निशाचर सुमालीने केतुमतीके गर्भसे जिन सन्तानोंको जन्म दिया आप उन सबके नाम क्रमानुसार हमसे सुनिये ॥ ३८ ॥ प्रहस्त, कंपन, विकट, कालिकामुख, धूम्राक्ष, दंड, महाबली सुपार्श्व ॥३९॥ संह्रादि, प्रघस और भासकर्णराक्षस यह तो महाबलवान् सुमालीके पुत्र हुए और कुम्भीनसी,केकसी राका और पुष्पोत्कटानामक कन्या भी

सुमालीकी पुत्री हुई ॥४०॥ हे प्रभो ! दक्षसुताके समान अत्यन्त रूपवाली वसुदा नामक गन्धर्वी मालीकी भार्या थी, उसके नेत्र कमलदलके समान विशाल थे, और दृष्टि मधुर थी, ॥ ४१ ॥ हे राघव ! सुमालीके छोटे भ्राता मालीने उस स्त्रीके गर्भसे जो जो सन्तान उत्पन्न की हम उनका वर्णन करते हैं आप श्रवण करें ॥४२॥ अनल, अनिल, हर और सम्पाति, यह मालीके पुत्र थे और यही निशाचर विभीषणके मंत्री हुए ॥४३॥ इसके उपरांत राक्षस श्रेष्ठ माल्यवान्, सुमाली अधिक बलवान् होनेसे गर्वित हो सैकडों हजारों निशाचर पुत्रोंके साथ इन्द्रादिदेवगण, ऋषिगण और राक्षसलोगोंको पीडा देने लगे ॥ ४४ ॥ वह सब पवनके समान दुर्द्धर्ष होकर सदा सब संसारमें घूमते हुए अधिक क्या कहैं वह सब राक्षस लोग संग्रामभूमिमें कालके समान अपार तेजस्वी और वह धन

मालेस्तुवसुदानामगंधर्वीरूपशालिनी ॥ भार्यासीत्पद्मपत्राक्षीस्वक्षीयक्षीवरोपमा ॥४१॥ सुमालेरनुजस्तस्यांजनयामासयत्प्रभो ॥ अपत्यं कथ्यमानंतुमयात्वंशृणुराघव ॥४२॥ अनलश्चानिलश्चैवहरःसंपातिरेवच ॥ एतेविभीषणामात्यामालेयास्तेनिशाचराः ॥ ४३ ॥ ततस्तुतेराक्षसपुंगवास्त्रयोनिशाचरैःपुत्रशतैश्चसंवृताः ॥ सुरान्सहेंद्रानृषिनागयक्षान्बबाधिरेतान्बहुवीर्यदर्पिताः ॥४४॥ जगद्भ्रमंतोऽनिलवद्दुरासदारणेषुमृत्युप्रतिमानतेजसः ॥ वरप्रदानादपिगर्विताभृशंक्रतुक्रियाणांप्रशमंकराःसदा ॥ ४५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० च० सा० उत्तरकांडे पंचमःसर्गः ॥५॥ तैर्बाध्यमानादेवाश्चऋषयश्चतपोधनाः ॥ भयार्ताःशरणंजग्मुर्देवदेवंमहेश्वरम् ॥१॥ जगत्सृष्ट्यंतकर्तारमजमव्यक्तरूपिणम् ॥ आधारंसर्वलोकानामाराध्यंपरमंगुरुम् ॥ २ ॥ तेसमेत्यतुकामारिंत्रिपुरारिंत्रिलोचनम् ॥ ऊचुःप्रांजलयोदेवाभयगद्गदभाषिणः ॥ ३ ॥ सुकेशपुत्रैर्भगवन्पितामहवरोद्धतैः ॥ प्रजाध्यक्षप्रजाःसर्वाबाध्यंतेरिपुबाधनैः ॥ ४ ॥

पानेसे अत्यन्त गर्वित हो सर्वदा यज्ञादि क्रियाओंका नाश करने लगे ॥४५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥ राक्षसोंसे पीडित होकर देवता और तपोधन मुनिगण भयसे अत्यन्त संतापित हो देवाधिदेव महादेवजीकी शरणमें गये ॥१॥ जो महादेवजी जगत्के उत्पन्न करनेवाले और संहारकारी, अव्यक्तस्वरूप अज (जो कभी उत्पन्न नहीं होते,) और सबसे अलग जिनका स्वरूप है सब लोकोंके आधार, आराधना करनेके योग्य और परम गुरु ॥२॥ कामके शत्रु त्रिपुरके दहन करनेवाले त्रिनेत्र महादेवजीके निकट एकत्र हो सब देवता हाथजोड भयके मारे गद्गद वचनोंसे बोले ॥३॥ भगवान् प्रजाध्यक्ष ! सुकेशके पुत्रगण ब्रह्माजीके बडे वरप्रभावसे ढीठ हो शत्रुओंके मलनेकी वासनासे प्रजापतिकी सब प्रजाको पीडा देते हैं ॥४॥

हमारे रक्षाके स्थान सब आश्रमोंको उन्होंने अरक्षाका स्थान कर दिया; वह सर्गसे देवतागणोंको निकाल कर स्वयं आप स्वर्गमें देवताओंके समान विहार करते हैं ॥५॥ हमही विष्णु, हमही ब्रह्मा, हमही देवराज इन्द्र, हमही यम, हमही वरुण, हमही चंद्रमा और हमही सूर्य हैं ॥६॥ इस प्रकार कहकर माली, सुमाली माल्यवान् यह तीन राक्षस संग्राममें उत्साही हो जिसको सामने पाते हैं उसकोही मारडालते हैं ॥ ७ ॥ इस कारण हे देव ! भयसे आर्त हम लोगोंको आप अभय दीजिये । आप रौद्रमूर्ति धारण करके इस समय इन समस्त देवकंटकोंका संहार कीजिये ॥ ८ ॥ प्रभुनीललोहित महादेवजीने देवताओंके इस प्रकारसे वचन सुनकर सुकेशपर दया कर देवताओंसे कहा ॥९॥ हे देवगण ! वह हमसे नहीं मारे जायँगे इसकारण हम उनको नहींमारेंगे परन्तु जो उनको

शरणान्यशरण्यानिआश्रमाणिकृतानिनः ॥ स्वर्गाच्चदेवान्प्रच्याव्यस्वर्गेक्रीडंतिदेववत् ॥५॥ अहंविष्णुरहंरुद्रोब्रह्माहंदेवराडहम् ॥अहंयमश्च वरुणश्चंद्रोऽहंरविरप्यहम् ॥ ६ ॥ इतिमालीसुमालीचमाल्यवांश्चैवराक्षसाः ॥ बाधंतेसमरोद्धर्षायेचतेषांपुरःसराः ॥७॥ तन्नोदेवभयार्तानाम भयंदातुमर्हसि ॥ अशिवंवपुरास्थायजहिवैदेवकंटकान् ॥८॥ इत्युक्तस्तुसुरैःसर्वैःकपर्दीनीललोहितः ॥ सुकेशप्रतिसापेक्षःप्राहदेवगणान्प्रभुः ॥ ९ ॥ अहंतान्नहनिष्यामिममावध्याहितेसुराः ॥ किंतुमंत्रंप्रदास्यामियोवैतान्निहनिष्यति ॥१०॥ एतमेवसमुद्योगंपुरस्कृत्यमहर्षयः ॥ गच्छ ध्वंशरणंविष्णुंहनिष्यतिसतान्प्रभुः ॥ ११ ॥ ततस्तुजयशब्देनप्रतिनंद्यमहेश्वरम् ॥ विष्णोः समीपमाजग्मुर्निशाचरभयार्दिताः ॥१२॥ शंख चक्रधरंदेवंप्रणम्यबहुमान्यच ॥ ऊचुःसंभ्रांतवद्वाक्यंसुकेशतनयान्प्रति ॥ १३ ॥ सुकेशतनयैर्देवत्रिभिस्त्रेताग्निसन्निभैः ॥ आक्रम्यवरदानेन स्थानान्यपहृतानिनः ॥ १४ ॥ लंकानामपुरीदुर्गात्रिकूटशिखरेस्थिता ॥ तत्रस्थिताः प्रबाधंतेसर्वान्नःक्षणदाचराः ॥१५॥

मारडालेगा हम उसका उपाय बताय देते हैं ॥ १० ॥ हे महर्षियो ! कुछ भी विलम्ब न करके उस उद्योगमें ही आप सबजन विष्णुजीकी शरणमें जायँ,वही इनका संहार करेंगे ॥११॥ उसके पीछे राक्षसोंके भयसे पीडित हुए देवतागण जयशब्दसे महादेवजीकी वंदना कर भगवान् विष्णुजीके समीप आये ॥१२॥ उन शंख चक्रधारी देवता विष्णुजीको अधिक सन्मानसे प्रणामकर सुकेशके पुत्रोंपर कोप किये और घबडाकर सब देवता यह वचन बोले ॥ १३ ॥ हे देव ! अग्निके समान अत्यन्त तेजःपुंज सुकेशके तीन पुत्रोंने वर पानेसे चढाई कर हमारे सब स्थान छीन लिये हैं ॥१४॥ त्रिकूटपर्वतके शिखरपर एक लंकानामक पुरी बसी हुई है निशाचरगण उसी पुरीमें रहकर हम सबको सताते हैं ॥ १५ ॥

हे मधुसूदन ! आप हमारे हित करनेकी कामनासे उनको मार डालिये. हे सुरेश्वर ! हम आपकी शरण आये इस कारण आपही हमारे आश्रय हो ॥१६॥ उनका वदनकमल अपने चक्रसे काटकर आप यमको सौंपदे, आपके सिवाय भयके समय हमको आश्रयका देनेवाला और कोई नहीं है ॥ १७ ॥ हे देव! सूर्यभगवान् जिस प्रकार अंधकारका नाश करते हैं, वैसे ही आप हर्षित चित्तसे मदसे उद्धत मस्तक राक्षसोंको उनके सेवकोंके साथ संग्राममें मारकर हमारा भय दूर कीजिये ॥१८॥ शत्रुओंके भय देनेवाले जनार्दन देवताओंके ऐसे वचन सुनकर सबको अभय देकर बोले कि ॥१९॥ हम सुकेश राक्षसकोजानते हैं और उसके सब पुत्र भी हमारे जाने हुए हैं उन सबमें बडा माल्यवान् है ॥ २० ॥ उन समस्त अधर्मी राक्षसोंनेलंकाकी मर्यादाको तोड दिया है इसकारण

सत्वमस्मद्धितार्थायजहितान्मधुसूदन॥ शरणंत्वावयंप्राप्तागतिर्भवसुरेश्वर॥१६॥ चक्रकृत्तास्यकमलान्निवेदययमायवै ॥ भयेष्वभयदोऽस्माकंनान्योऽस्तिभवताविना॥१७राक्षसान्समरेहृष्टान्सानुबंधान्मदोद्धतान्॥नुदत्वंनोभयंदेवनीहारमिवभास्करः॥१८॥ इत्येवंदैवतैरुक्तोदेवदेवो जनार्दनः ॥ अभयंभयदोऽरीणांदत्त्वादेवानुवाचह ॥ १९ ॥ सुकेशंराक्षसंजानेईशानवरदर्पितम् ॥ तांश्चास्यतनयाञ्जानेयेषांज्येष्ठःसमाल्यवान् ॥ २० ॥ तानहंसमतिक्रांतमर्यादान्राक्षसाधमान् ॥ निहनिष्यामिसंक्रुद्धःसुराभवतविज्वराः ॥ २१ ॥ इत्युक्तास्तेसुराःसर्वेविष्णुनाप्रभविष्णुना ॥ यथावासययुर्हृष्टाःप्रशंसतोजनार्दनम् ॥२२॥ विबुधानांसमुद्योगंमाल्यवांस्तुनिशाचरः ॥ श्रुत्वातौभ्रातरौवीराविदंवचनमब्रवीत् ॥ २३ ॥ अमराऋषयश्चैवसंगम्यकिलशंकरम् ॥ अस्मद्वधंपरीप्संतइदवचनमब्रुवन् ॥ २४ ॥ सुकेशतनयादेववरदानबलोद्धताः ॥ बाधंतेऽस्मान्समुद्दृप्ताघोररूपाःपदेपदे ॥२५॥ राक्षसैरभिभूताःस्मोनशक्ताःस्मप्रजापते॥ स्वेषुसद्मसुसंस्थातुंभयात्तेषांदुरात्मनाम् ॥२६॥

हम क्रोधसहित उनको संहार करेंगे. हे सुरगण! तुम निडर होवो ॥ २१ ॥ समस्त देवताओंके शिरोमणि विष्णुजीके यह वचन सुनकर सब देवता हर्षित हो जनार्दनजीकी बडाई करते हुए अपने २ स्थानोंको गये ॥ २२ ॥ परंतु निशाचर माल्यवान् देवताओंकेइस उद्योगका वृत्तांत सुन अपने दो वीर भ्राताओंसे कहता हुआ ॥ २३ ॥ देवता और ऋषिवृन्दोंने हमारे वध करवानेकी वासनासे शिवजीके निकट जाकर उसने ऐसा कहा है कि ॥२४॥ हे देव ! घोररूपी सुकेशकी संतान एक तो वैसे ही गर्वित है और विशेष करके वरदान पानेसे उद्धत हो वह प्रतिक्षण हमको पीडा देती है ॥ २५ ॥ हे प्रजारक्षक ! उन दुरात्मा राक्षसोंकरके निरादर पानेसे घबडाय उनके भयसे हम सब अपने २ स्थानोंसे रहनेको भी तो समर्थ नहीं हैं ॥ २६ ॥

इस कारण हे त्रिलोचन ! हमारे हितके लिये आप उनका संहार कीजिये । हे भस्म करने वालोंमेंश्रेष्ठ ! आप हुंकारसे ही उन सब राक्षसोंको भस्म कर डालिये ॥२७॥ अंधकासुरके मार डालनेवाले त्रिलोचन महादेवजी देवताओंके ऐसे वचन सुन कान हाथ और शिर कंपायकर बोले कि ॥ २८ ॥ हे देव गण ! वह सुकेशके पुत्र हमसे अवध्य हैं. जो उनको संग्राममें मारेगा; हम तुमको उसका उपाय बताये देते हैं ॥ २९ ॥ "कि तुम सब गदाधर; चक्रपाणि, पीताम्बरधारी; जनार्दन, श्रीमान् नारायण हरिकी शरणमें जाओ" ॥ ३० ॥ वह देवता महादेवजीसे इस प्रकारसे उपाय जान कामके शत्रु महादेवजीको प्रणाम कर नारायणजीके निकट आय उनसे सब वृत्तांत निवेदन करते हुए ॥ ३१ ॥ तब नारायणजीने इन्द्रादि देवताओंसे कहा कि "हे देवगण तुम सब

तदस्माकंहितार्थायजहितांश्चत्रिलोचन ॥ राक्षसान्हुंकृतेनैवदहप्रदहतांवर ॥२७॥ इत्येवंत्रिदशैरुक्तोनिशम्यांधकसूदनः ॥ शिरःकरंचधुन्वान इदंवचनमब्रवीत् ॥२८॥ अवध्याममतेदेवासुकेशतनयारणे ॥ मंत्रंतुवःप्रदास्यामियस्तान्वैनिहनिष्यति ॥२९॥ योऽसौचक्रगदापाणिःपीत वासाजनार्दनः ॥ हरिर्नारायणःश्रीमाञ्छरणंतंप्रपद्यथ ॥३०॥ हरादवाप्यतेमंत्रंकामारिमभिवाद्यच ॥ नारायणालयंप्राप्यतस्मैसर्वंन्यवेदयन् ॥ ३१ ॥ ततोनारायणेनोक्तादेवाइंद्रपुरोगमाः ॥ सुरारींस्तान्हनिष्यामिसुराभवतनिर्भयाः ॥ ३२ ॥ देवानांभयभीतानांहरिणाराक्षसर्षभौ ॥ प्रतिज्ञातोवधोऽस्माकंचिंत्यतांयदिहक्षमम् ॥ ३३ ॥ हिरण्यकशिपोर्मृत्युरन्येषांचसुरद्विषाम् ॥ नमुचिःकालनेमिश्चसह्रादोवीरसत्तमः ॥३४॥ राधेयोबहुमायीचलोकपालोऽथधार्मिकः ॥ यमलार्जुनौचहार्दिक्यःशुंभश्चैवनिशुंभकः ॥ ३५ ॥ असुरादानवाश्चैवसत्त्ववंतोमहाबलाः ॥ सर्वे समरमासाद्यनश्रूयंतेऽपराजिताः ॥ ३६ ॥ सर्वैःक्रतुशतैरिष्टंसर्वेमायाविदस्तथा ॥ सर्वेसर्वास्त्रकुशलाःसर्वेशत्रुभयंकराः ॥३७॥

निर्भय होवो, हम उन देवताओंके शत्रु राक्षसोंका संहार कर डालेंगे" ॥३२॥ हे दोनों राक्षसश्रेष्ठो ! भयसे भीत हुए देवताओंसे नारायणजीने हम लोगोंके मार डालनेकी प्रतिज्ञा की है इसलिये अब जो कुछ उचित हो सो करो ॥३३॥ नारायण करके हिरण्यकशिपु व और भी देवताओंके शत्रु मारे गये हैं; उनके सिवाय नमुचि कालनेमि वीरश्रेष्ठ संह्राद ॥ ३४ ॥ बहुत सारी माया जाननेवाला राधेय; धार्मिक लोकपाल, यमल, अर्जुन, हार्दिक्य, शुम्भ, निशुम्भ ॥ ३५ ॥ इत्यादि बलसम्पन्न महाबलवान् असुर व दानवगण समस्त ही उन विष्णुजीके निकट संग्राममें पराजित हुए हैं ॥ ३६ ॥ विशेष करके वह सबही मायाके जाननेवाले थे और सबही सब शास्त्रोंमें पदारर्शीथे सबही शत्रुओंकेलिये भयंकर थे और सबहीने सैकड़ों यज्ञ भी किये थे ॥ ३७ ॥

हे मधुसुदन ! आप हमारे हित करनेकी कामनासे उनको मार डालिये. हे सुरेश्वर ! हम आपकी शरण आये इस कारण आपही हमारे आश्रय हो ॥१६॥ उनका वदनकमल अपने चक्रसे काटकर आप यमको सौंपदें, आपके सिवाय भयके समय हमको आश्रयका देनेवाला और कोई नहीं है ॥ १७ ॥ हे देव! सूर्यभगवान् जिस प्रकार अंधकारका नाश करते हैं, वैसे ही आप हर्षित चित्तसे मदसे उद्धत मस्तक राक्षसोंको उनके सेवकोंके साथ संग्राममें मारकर हमारा भय दूर कीजिये ॥१८॥ शत्रुओंके भय देनेवाले जनार्दन देवताओंके ऐसे वचन सुनकर सबको अभय देकर बोले कि ॥१९॥ हम सुकेश राक्षसकोजानते हैं और उसके सब पुत्र भी हमारे जाने हुए हैं उन सबमें बडा माल्यवान् है ॥ २० ॥ उन समस्त अधर्मी राक्षसोंनेलंकाकी मर्यादाको तोड दिया है इसकारण

सत्वमस्मद्धितार्थायजहितान्मधुसूदन॥ शरणंत्वावयंप्राप्तागतिर्भवसुरेश्वर॥१६॥ चक्रकृत्तास्यकमलान्निवेदययमायवै ॥ भयेष्वभयदोऽस्माकंनान्योऽस्तिभवताविना॥१७राक्षसान्समरेहृष्टान्सानुबंधान्मदोद्धतान्॥नुदत्वंनोभयंदेवनीहारमिवभास्करः॥१८॥ इत्येवंदैवतैरुक्तोदेवदेवो जनार्दनः ॥ अभयंभयदोऽरीणांदत्त्वादेवानुवाचह ॥ १९ ॥ सुकेशंराक्षसंजानेईशानवरदर्पितम् ॥ तांश्चास्यतनयाञ्जानेयेषांज्येष्ठःसमाल्यवान् ॥ २० ॥ तानहंसमतिक्रांतमर्यादान्राक्षसाधमान् ॥ निहनिष्यामिसंक्रुद्धःसुराभवतविज्वराः ॥ २१ ॥ इत्युक्तास्तेसुराःसर्वेविष्णुनाप्रभविष्णुना ॥ यथावासययुर्हृष्टाःप्रशंसतोजनार्दनम् ॥२२॥ विबुधानांसमुद्योगंमाल्यवांस्तुनिशाचरः ॥ श्रुत्वातौभ्रातरौवीराविदंवचनमब्रवीत् ॥ २३ ॥ अमराऋषयश्चैवसंगम्यकिलशंकरम् ॥ अस्मद्वधंपरीप्संतइदवचनमब्रुवन् ॥ २४ ॥ सुकेशतनयादेववरदानबलोद्धताः ॥ बाधंतेऽस्मान्समुद्दप्ताघोररूपाःपदेपदे ॥२५॥ राक्षसैरभिभूताःस्मोनशक्ताःस्मप्रजापते॥ स्वेषुसद्मसुसंस्थातुंभयात्तेषांदुरात्मनाम् ॥२६॥

हम क्रोधसहित उनको संहार करेंगे. हे सुरगण! तुम निडर होवो ॥ २१ ॥ समस्त देवताओंके शिरोमणि विष्णुजीके यह वचन सुनकर सब देवता हर्षित हो जनार्दनजीकी बडाई करते हुए अपने २ स्थानोंको गये ॥ २२ ॥ परंतु निशाचर माल्यवान् देवताओंकेइस उद्योगका वृत्तांत सुन अपने दो वीर भ्राताओंसे कहता हुआ ॥ २३ ॥ देवता और ऋषिवृन्दोंने हमारे वध करवानेकी वासनासे शिवजीके निकट जाकर उसने ऐसा कहा है कि ॥२४॥ हे देव ! घोररूपी सुकेशकी संतान एक तो वैसे ही गर्वित है और विशेष करके वरदान पानेसे उद्धत हो वह प्रतिक्षण हमको पीडा देती है ॥ २५ ॥ हे प्रजारक्षक ! उन दुरात्मा राक्षसोंकरके निरादर पानेसे घबडाय उनके भयसे हम सब अपने २ स्थानोंसे रहनेको भी तो समर्थ नहीं हैं ॥ २६ ॥

इस कारण हे त्रिलोचन ! हमारे हितके लिये आप उनका संहार कीजिये । हे भस्म करने वालोंमेंश्रेष्ठ ! आप हुंकारसे ही उन सब राक्षसोंको भस्म कर डालिये ॥२७॥ अंधकासुरके मार डालनेवाले त्रिलोचन महादेवजी देवताओंके ऐसे बचन सुन कान हाथ और शिर कंपायकर बोले कि ॥ २८ ॥ हे देव गण ! वह सुकेशके पुत्र हमसे अवध्य हैं. जो उनको संग्राममें मारेगा; हम तुमको उसका उपाय बताये देते हैं ॥ २९ ॥ "कि तुम सब गदाधर; चक्रपाणि, पीताम्बरधारी; जनार्दन, श्रीमान् नारायण हरिकी शरणमें जाओ" ॥ ३० ॥ वह देवता महादेवजीसे इस प्रकारसे उपाय जान कामके शत्रु महादेवजीको प्रणाम कर नारायणजीके निकट आय उनसे सब वृत्तांत निवेदन करते हुए ॥ ३१ ॥ तब नारायणजीने इन्द्रादि देवताओंसे कहा कि "हे देवगण तुम सब

तदस्माकंहितार्थायजहितांश्चत्रिलोचन ॥ राक्षसान्हुंकृतेनैवदहप्रदहतांवर ॥२७॥ इत्येवत्रिदशैरुक्तोनिशम्यांधकसूदनः ॥ शिरःकरंचधुन्वान इदंवचनमब्रवीत् ॥२८॥ अवध्याममतेदेवासुकेशतनयारणे ॥ मंत्रंतुवःप्रदास्यामियस्तान्वैनिहनिष्यति ॥२९॥ योऽसौचक्रगदापाणिःपीत वासाजनार्दनः ॥ हरिर्नारायणःश्रीमाञ्छरणंतंप्रपद्यथ ॥३०॥ हरादवाप्यतेमंत्रंकामारिमभिवाद्यच ॥ नारायणालयंप्राप्यतस्मैसर्वंन्यवेदयन् ॥ ३१ ॥ ततोनारायणेनोक्तादेवाइंद्रपुरोगमाः ॥ सुरारींस्तान्हनिष्यामिसुराभवतनिर्भयाः ॥ ३२ ॥ देवानांभयभीतानांहरिणाराक्षसर्षभौ ॥ प्रतिज्ञातोवधोऽस्माकंचिंत्यतांयदिहक्षमम् ॥ ३३ ॥ हिरण्यकशिपोर्मृत्युरन्येषांचसुरद्विषाम् ॥ नमुचिःकालनेमिश्चसह्लादोवीरसत्तमः ॥३४॥ राधेयोबहुमायीचलोकपालोऽथधार्मिकः ॥ यमलार्जुनौचहार्दिक्यःशुंभश्चैवनिशुंभकः ॥ ३५ ॥ असुरादानवाश्चैवसत्त्ववंतोमहाबलाः ॥ सर्वे समरमासाद्यनश्रूयंतेऽपराजिताः ॥ ३६ ॥ सर्वैःक्रतुशतैरिष्टंसर्वेमायाविदस्तथा ॥ सर्वेसर्वास्त्रकुशलाःसर्वेशत्रुभयंकराः ॥३७॥

निर्भय होवो, हम उन देवताओंके शत्रु राक्षसोंका संहार कर डालेंगे" ॥३२॥ हे दोनों राक्षसश्रेष्ठो ! भयसे भीत हुए देवताओंसे नारायणजीने हम लोगोंके मार डालनेकी प्रतिज्ञा की है इसलिये अब जो कुछ उचित हो सो करो ॥३३॥ नारायण करके हिरण्यकशिपु व और भी देवताओंके शत्रु मारे गये हैं; उनके सिवाय नमुचि कालनेमि वीरश्रेष्ठ संह्राद ॥ ३४ ॥ बहुत सारी माया जाननेवाला राधेय; धार्मिक लोकपाल, यमल, अर्जुन, हार्दिक्य, शुम्भ, निशुम्भ ॥ ३५ ॥ इत्यादि बलसम्पन्न महाबलवान् असुर व दानवगण समस्त ही उन विष्णुजीके निकट संग्राममें पराजित हुए हैं ॥ ३६ ॥ विशेष करके वह सबही मायाके जाननेवाले थे और सबही सब शास्त्रोंमें पदारर्शीथे सबही शत्रुओंकेलिये भयंकर थे और सबहीने सैकड़ों यज्ञ भी किये थे ॥ ३७ ॥

परंतु नारायणजीने उन सैकडों हजारों देवताओंके शत्रुओंको मारडाला है। इस कारण यह जानकर सबका जिसमें भला हो वही तुम सबको करना चाहिये; परंतु जिन्होंने हमारे मार डालनेकी वासना की है, उन नारायणका जीतना अत्यन्त कठिन है ॥ ३८ ॥ इसके उपरांत सुमाली माली माल्यवान्‌के वचन सुनकर अपने बडे भ्रातासे बोले जैसे दोनों अश्विनी कुमार इन्द्रजीसे बोलते हैं ॥ ३९ ॥ हम लोगोंने भलीभांतिसे वेद पढा; बहुतेरे दान दिये, ऐश्वर्य बढाय कर उसका पालन बहुत किया और रोगरहित आयुर्बल पाय उसके अनुसार धर्मकी स्थापना की ॥४०॥ अधिक करके देवरूप अचल समुद्रोंमें शस्त्रसमूहोंसे स्नानकर अप्रमाण बलवाले शत्रुओंको हमने जीता; उससे अब हमको मृत्युका भी भय नहीं रहा है ॥४१॥ नारायण रुद्र इन्द्र अथवा यमराज सबही हमारे सन्मुख खडे होते हुए सदा डरते हैं ॥४२॥ हे राक्षसराज ! हमारे प्रति विष्णुजीके द्वेष होनेका कोई कारण नहीं हैं, देवतालोगोंके दोषसे ही विष्णुजीका मन इस

नारायणेननिहताःशतशोऽथसहस्रशः॥एतज्ज्ञात्वातुसर्वेषांशमंकर्तुमिहार्हथ॥दुःखंनारायणंजेतुंयोनोहंतुमिहेच्छति३८॥ततःसुमालीमालीचश्रुत्वामाल्यवतोवचः॥ऊचतुर्भ्रातरंज्येष्ठमश्विनाविववासवम्॥३९॥स्वधीतंदत्तमिष्टंचऐश्वर्यंपरिपालितम्॥आयुर्निरामयंप्राप्तंसुधर्मःस्थापितःपथि॥४०॥देवसागरमक्षोभ्यंशस्त्रैःसमवगाह्यच॥जिताद्विषोह्यप्रतिमास्तन्नोमृत्युकृतंभयम्॥४१॥नारायणश्चरुद्रश्चशक्रश्चापियमस्तथा॥अस्माकंप्रमुखेस्थातुंसर्वेबिभ्यतिसर्वदा ॥४२॥ विष्णोर्द्वेषस्यनास्त्येवकारणंराक्षसेश्वर ॥ देवानामेवदोषेणविष्णोःप्रचलितंमनः॥४३॥ तस्माद्द्यैवसहिताःसर्वेऽन्योन्यसमावृताः ॥ देवानेवजिघांसामोयेभ्योदोषःसमुत्थितः॥ ४४ ॥ एवंसंमन्त्र्यबलिनःसर्वसैन्यमुपासिताः॥ उद्योगंघोषयित्वातुसर्वेनैर्ऋतपुंगवाः ॥४५॥ युद्धायनिर्ययुःक्रुद्धाजंभवृत्रादयोयथा ॥ इतितेराममंमंत्र्यसर्वोद्योगेनराक्षसाः ॥४६॥ युद्धायनिर्ययुःसर्वेमहाकायमहाबलाः॥ स्यंदनैर्वारणैश्चैवहयैश्चकरिसन्निभैः॥४७॥ खरैर्गोभिरथोष्ट्रैश्चशिशुमारैर्भुजंगमैः॥मकरैःकच्छपैर्मीनैर्विहंगैगरुडोपमैः॥४८॥

प्रकारसे चलाय मान हुआ है ॥ ४३ ॥ इस लिये हम सब और सब राक्षसोंके साथ इकठे होकर आज इनके सहित देवताओंको मार डालेगे, क्योंकि उन लोगोंसे ही यह दोष उपजा है ॥ ४४ ॥ राक्षस परस्पर इस प्रकार की सम्मति करके युद्धके उद्योगका ढँढोरा फिरवा देते हुए और सब सेना की योजना करने लगे ॥४५॥ फिर वृत्रासुर और जम्भासुरके समान युद्ध करनेके लिये निकले; हे राम ! इस प्रकार सम्मति और उद्योग करके वह राक्षस ॥ ४६ ॥ युद्ध करनेके लिये निकले, वह सब बडे २ शरीरवाले थे और महाबलवान् थे, उनमेंसे कोई रथोंपर, कोई हाथी पर, कोई हाथीके समान ऊंचे घोडों पर ॥ ४७ ॥ कोई गधोंपर, कोई बैलपर जुडे हुए रथोंपर, कोई ऊंटोंपर कोई शिशुमार सर्पोंपर, कोई मछलियों, कच्छपों और गरुडजीकी समान वेगवाले

पक्षियोंपर भी कोई २ सवार हुए ॥ ४८ ॥ कोई सिंह, व्याघ्र, वाराह, सृमर व चमरपर चढ २ लकाको त्यागकर बलसे गर्वित हुए राक्षस चले ॥ ४९ ॥ इस प्रकारसे देवताओंके शत्रु राक्षस युद्ध करनेके लिये देवलोकको कंपायमान करते हुए, उन राक्षसोंके गमन करनेके समय लंकाके रहनेवाले और दूसरे प्राणियोंने बडीभारी उथलापथली देखी ॥५०॥ उसकाल लंकाके जितने भयदर्शी प्राणी थे सबके सब उदासचित्त होगये। श्रेष्ठ रथोंपर चढकर सैकडों हजारो ॥५१॥ राक्षस अतियत्नके सहित देवताओंके लोकको शीघ्रतासे चले देवता भी राक्षसोंकी यात्राके संगही वहांसे निकले ॥ ५२ ॥ भय उपजानेवाले पृथ्वी आकाशमें समस्त उत्पात कालसे प्रेरित हो राक्षसनाथोंकी पराजयके लिये उठने लगे ॥ ५३ ॥ मेघ गरम २ रुधिर और हड्डियोंकी वर्षा करने लगे, समुद्र

सिंहैर्व्याघ्रैर्वराहैश्चसृमरैश्चमरैरपि॥ त्यक्त्वालंकांगताःसर्वेराक्षसाबलगर्विता ॥४९॥ प्रयतादेवलोकायायोद्धुंदैवतशत्रवः॥ लंकाविपर्ययंदृष्ट्वायानिलंकालयान्यथ॥ ५० ॥ भूतानिभयदर्शीनिविमनस्कानिसर्वशः ॥ रथोत्तमैरुह्यमानाःशतशोऽथसहस्रशः ॥५१॥ प्रयाताराक्षसास्तूर्णंदेवलोकंप्रयत्नतः ॥ रक्षसामेवमार्गेणदैवतान्यपचक्रमुः ॥ ५२ ॥ भौमाश्चैवांतरिक्षाश्चकालाज्ञप्ताभयावहाः ॥ उत्पाताराक्षसेन्द्राणामभवायसमुत्थिताः ॥ ५३ ॥ अस्थीनिमेघाववृषुरुष्णंशोणितमेवच ॥ वेलांसमुद्राश्चोत्क्रांताश्चेलुश्चाप्यथभूधराः ॥ ५४ ॥ अट्टहासान्विमुंचंतोघननादसमस्वनाः ॥ वाश्यंत्यश्चशिवास्तत्रदारुणंघोरदर्शनाः॥५५॥ संपतंत्यथभूतानिदृश्यंतेचयथाक्रमम् ॥ गृध्रचक्रंमहच्चात्रप्रज्वालोद्गारिभिर्मुखैः ॥ ५६ ॥ रक्षोगणस्योपरिष्टात्परिभ्रमतिकालवत् ॥ कपोतारक्तपादाश्चसारिकाविद्रुतायथुः ॥५७॥ काकावाश्यंतितत्रैवबिडालावैद्विपादिकाः॥ उत्पातांस्ताननादृत्यराक्षसाबलदर्पिताः ॥५८॥ यांत्येवननिवर्तंतेमृत्युपाशावपाशिताः ॥ माल्यवांश्चसुमालीचमालीचसुमहाबलः ॥५९॥ पुरस्सराराक्षसानांज्वलिताइवपावकाः ॥ माल्यवंतंतुतेसर्वेमाल्यवंतमिवाचलम् ॥ ६० ॥

अपनी मर्यादाको छोडकर उछलने लगा, और पर्वत चलायमान होने लगे ॥ ५४ ॥ सब प्राणी मेघोंके समान गंभीर स्वरसे अट्टहास करने लगे, अतिघोर शृगालियें दारुण शब्दसे चिल्लाने लगीं ॥ ५५ ॥ सब प्राणी क्रम क्रमसे गिरकर दिखाई देने लगे, गिद्धगण बडे २ मंडल बांधकर मुखसे ज्वाला उगलते हुए ॥ ५६ ॥ राक्षसोंके ऊपर कालके समान घूमने लगे। कबूतर और लाल २ पांववाली मैनायें लड २ कर राक्षसोंपर टूटने लगीं ॥ ५७ ॥ दो पैरवाले कौए और बिल्लियें वहांपर चिल्लाने लगीं इन सब उत्पातोंको कुछ भी न समझते हुए बलगर्वित राक्षसगण ॥५८॥ आगेको चलेही गये लौटे नहीं, क्योंकि, वह मृत्युकी फाँसीसे बँध रहे थे। माल्यवान् सुमाली और महाबलवान् माली ॥ ५९ ॥ यह तीनों सब राक्षसोंके आगे जलती हुई अग्निके समान चलते थे।

उनमें माल्यवान् पर्वतके समान था माल्यवान्का सब कोई ॥ ६० ॥ राक्षस आश्रय करके चले जैसे देवता विधाताका आश्रय ग्रहण करते हैं । वह राक्षसश्रेष्ठोंकी सेना महाघनके समान गर्जती हुई ॥ ६१ ॥ मालीके वशमें रहकर जयकी अभिलाषासे देवताओंके लोकमें गई; राक्षसोंकी इस तैयारीको नारायण प्रभु ॥ ६२ ॥ देवदूतके मुखसे सुनकर नारायणजी युद्ध करनेके लिये गमन करते हुए, सब आयुधोंसे सज तरकश धारण कर गरुडजीपर सवार हो ॥ ६३ ॥ सहस्रसूर्यके समान द्युतिमान् दिव्य कवचसे अपने शरीरको आवृत कर बाणोंसे पूर्ण विमलदो तरकश ॥ ६४ ॥ कमलनेत्र नारायणने कमर बांधनेकी डोरी, विमलखड्ग, शंख, चक्र, गदा धनुष और खड्गादि श्रेष्ठ आयुध धारण कर ॥ ६५ ॥ सम्पूर्ण पर्वतके समान गरुडजीपर सवार हो राक्षसोंके विनाश करनेके लिये शीघ्र यात्रा करते हुए ॥ ६६॥ बिजलीकी दरारसे विराजमान बादल जिस प्रकार कांचनगिरिके शिखरपर शोभायमान होते हैं, उस कालमें श्यामवर्ण

निशाचराआश्रयंतिधातारमिवदेवताः॥ तद्बलंराक्षसेंद्राणांमहाभ्रघननादितम् ॥६१॥ जयेप्सयादेवलोकंययौमालिवशेस्थितम्॥ राक्षसानांसमुद्योगंतंतुनारायणःप्रभुः॥ ६२ ॥ देवदूतादुपश्रुत्यचक्रेयुद्धेतदामनः॥ ससज्जायुधतूणीरोवैनतेयोपरिस्थितः ॥ ६३ ॥ आसाद्यकवचंदीव्यंसहस्रार्कसमद्युति ॥ आवध्यशरसंपूर्णेइषुधीविमलेतदा ॥६४॥ श्रोणिसूत्रंचखड्गंचविमलंकमलेक्षणः ॥ शंखचक्रगदाशार्ङ्गखड्गांश्चैववरायुधान् ॥६५॥ संपूर्णगिरिसंकाशंवैनतेयमथास्थितः ॥ राक्षसानामभावाययययौतूर्णतरंप्रभुः ॥ ६६ ॥ सुपर्णपृष्ठेसबभौश्यामःपीतांबरोहरिः ॥ कांचनस्यगिरेःशृंगेसतडित्तोयदोयथा॥६७॥ ससिद्धदेवर्षिमहोरगैश्चगंधर्वयक्षैरुपगीयमानः ॥ समाससादासुरसैन्यशत्रुश्चक्रासिशार्ङ्गायुधशंखपाणिः ॥ ६८ ॥ सुपर्णपक्षानिलनुन्नपक्षंभ्रमत्पताकंप्रविकीर्णशस्त्रम् ॥ चचालतद्राक्षसराजसैन्यचलोपलंनीलमिवाचलाग्रम् ॥ ६९ ॥ ततःशितैःशोणितमांसरूषितैर्युगांतवैश्वानरतुल्यविग्रहैः ॥ निशाचराःसंपरिवार्यमाधवंवरायुधैर्निर्बिभिदुःसहस्रशः ॥७०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे षष्ठः सर्गः ॥ ६॥ नारायणगिरिंतेतुगर्जंतोराक्षसांबुदाः॥ अर्दयंतोऽस्त्रवर्षेणवर्षेणेवाद्रिमंबुदाः ॥१॥

पीतांबर धारे हरिभी गरुडपर चढकर वैसेही शोभायमान होते थे ॥ ६७ ॥ वह हरि नारायण शंख, चक्र, खड्ग और शार्ङ्गआयुधहाथमें धारण किये सिद्ध, महर्षि, नाग, यक्ष, और गन्धर्वोंसे गाये जाते हुए देवतोंके शत्रुओंकी सेनामें आपहुँचे ! ॥ ६८ ॥ पाषाणोंके चंचल होनेसे नीलाचलाके अग्रभागकी शोभा जैसी होती है उस समय राक्षसराजकी वह समस्त सेना गरुडजीके पंखोंसे निकली हुई पवनके घातसे बलहीन हो गई उसकी सब झंडियां गिरगई और हथियार हाथसे छुटकर चलायमान हो गये ॥ ६९ ॥ उसके पीछे सहस्र २ राक्षस माधवको चारों ओरसे घेरकर रुधिर और मांससे रंगे प्रलयकालके अग्निकी नांई आकारवाले तेजस्वी तीखे श्रेष्ठ अस्त्र शस्त्रोंसे उनको विद्ध करने लगे ॥७०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी०आदि उत्तरकांडे भाषायां षष्ठः सर्गः ॥६॥ मेघगण

जिस प्रकार पर्वतके ऊपर वर्षा करते हैं वैसेही राक्षसरूप मेघसमूह गर्जन करके नारायणजी स्वरूप पर्वतको अस्त्र वर्षायकर पीडित करने लगे ॥ १ ॥ निर्मल श्यामवर्णवाले विष्णुजी; नीलेरंगकी कान्तिवाले निशाचरोंसे घिरजानेके कारण ऐसे जान पडे मानो वर्षा करते हुए मेघोंने अंजन पर्वतको ढकलिया है ॥२॥ जैसे टीडियोंके झुण्ड खेतीमें, मच्छर अग्निमें, मक्खियें शहदके घडेमें और मछलियें समुद्रमें पैठती हैं ॥३॥ वैसे वज्र पवन और मनके समान वेगसे चल नेवाले बाणोंके समूह राक्षसोंके धनुषसे छूटकर नारायण हरिजीकी देहमें प्रवेश करने लगे, जैसे प्रलयकालमें सब लोक नारायणमें मिल जाते हैं ॥४॥ रथ पर चढे हुए रथके सहित आकाशमें टिके, हाथियोंके चढनेवाले हाथियोंके सहित घुडसवार घोडोंके सहित और पैदल पैदल हीयुद्ध करनेके लिये खडे रहे ॥५॥ पर्वतके समान देहवाले राक्षसोंने बाण,शक्ति,ऋष्टि,भाला आदि अस्त्र शस्त्रोंसे श्रीनारायणजीको श्वासरहित करदिया जैसे प्राणायाम ब्राह्मणोंके श्वासको रोक लेता

श्यामावदातस्तैर्विष्णुर्नीलैर्नक्तंचरोत्तमैः ॥ वृतोऽञ्जनगिरीवायंवर्षमाणैःपयोधरैः ॥ २ ॥ शलभाइवकेदारंमशकाइवपावकम् ॥ यथामृतघटंदंशामकराइवचार्णवम् ॥३॥ तथारक्षोधनुर्मुक्तावज्रानिलमनोजवाः ॥ हरिंविशंतिस्मशरालोकाइवविपर्यये ॥ ४ ॥ स्यंदनैःस्यंदनगतागजैश्चगजमूर्धगाः॥ अश्वारोहास्तथाश्वैश्चपादाताश्चांबरेस्थिताः॥५॥राक्षसेन्द्रागिरिनिभाःशरःशक्त्यृष्टितोमरैः॥ निरुच्छ्वासंहरिंचक्रुःप्राणायामाइवद्विजम् ॥ ६ ॥ निशाचरैस्ताड्यमानोमीनैरिवमहोदधिः ॥ शार्ङ्गमायम्यदुर्धर्षोराक्षसेभ्योऽसृजच्छरान् ॥ ७ ॥ शरैःपूर्णायतोत्सृष्टैर्वज्रकल्पैर्मनोजवैः॥ चिच्छेदविष्णुर्निशितैःशतशोऽथसहस्रशः ॥ ८ ॥ विद्राव्यशरवर्षेणवर्षंवायुरिवोत्थितम् ॥ पांचजन्यंमहाशंखंप्रदध्मौपुरुषोत्तमः ॥ ९ ॥ सोऽम्बुजोहरिणाध्मातःसर्वप्राणेनशंखराट् ॥ ररासभीमनिर्ह्रादस्त्रैलोक्यंव्यथयन्निव ॥१०॥ शंखराजरवःसोऽथत्रासयामासराक्षसान् ॥ मृगराजइवारण्येसमदानिवकुंजरान् ॥११॥ नशेकुरश्वाःसंस्थातुंविमदाःकुंजराभवन् ॥ स्यंदनेभ्यश्च्युतावीराःशंखरावितदुर्बलाः ॥१२॥

है॥ ६ ॥ जैसे मछलियोंसे समुद्र ताडित होता है; वैसेही निशाचरोंसे परम दुर्द्धर्ष हरि ताडित होकर शार्ङ्गधनुषको खेंच राक्षसोंके ऊपर बाण छोडने लगे ॥७॥ कानतक खेंचकर वज्रके समान और मनके वेगके समान चलनेवाले तीखे बाणोंके समूहको छोडकर विष्णुजीने सैकडों हजारों राक्षसोंको मारडाला ॥ ८ ॥ उठे हुए मेघोंको पवन जिस प्रकार छिन्न भिन्न कर उडाय देती है; वैसेही पुरुषोत्तम विष्णुजीने बाण वर्षाय राक्षसोंको भगाय पाञ्चजन्य नामक बडाभारी शंख बजाय ॥९॥ वह जलसे निकला हुआ शंखराज हरिनारायण करके अतिजोरसे बजाया जाकर त्रिलोकीको व्यथित करता ही हुआसा मानो घोर शब्दसे गर्जन कर उठा॥१०॥मृगराज सिंह जिस प्रकार वनमें मतवाले हाथियोंको त्रासित करता है, वैसेही उस शंखराजके शब्दने राक्षसोंको त्रासित किया॥११॥उस कालमें

समस्त राक्षसवीर शंखके घोर शब्दसे दुर्बल होकर रथसे गिर पडे हाथी मदको त्याग करते हुए और घोडे भी स्थिर होकर खडे न रह सके ॥१२॥ वज्रके समान मुखवाले फोकदार समस्त बाण शार्ङ्गधनुषसे छूट उन राक्षसोंको घायल कर पृथ्वीमें पैठ गये ॥ १३ ॥ राक्षस लोग नारायणके करकमलसे छूटे हुए बाणसमूहसे संग्राममें विदारित हो वज्रलगे हुए पर्वतके समान पृथ्वीपर गिरे ॥१४॥ पर्वतोंसे जिस प्रकार गेरुकी धारा निकला करती है, वैसेही राक्षसोंके शरीरमें जो घाव विष्णुजीके चक्रसे होगये थे उनसे रुधिरकी धारा गिरने लगी ॥१५॥ विष्णुके किये हुए शंखोंके राजा पांचजन्यका शब्द और शार्ङ्गधनुषका शब्द, इन शब्दोंने मिलकर राक्षसोंके शब्द और प्राणोंको मानो ग्रास करलिया॥१६॥तब विष्णुजीने बाणसमूहसे राक्षसोंके कंपायमान गले, बाण, ध्वजा, धनुष, रथ, पताका और तरकश काट डाले ॥१७॥ सूर्यमंडलसे जिस प्रकार किरणोंकी राशि निकलती है,समुद्रसे जिस प्रकार जलसमूह निकलता है, बडे २ पर्व

शार्ङ्गचापविनिर्मुक्तावज्रतुल्याननाःशराः ॥ विदार्यतानिरक्षांसिसुपुंखाविविशुःक्षितिम्॥१३॥ भिद्यमानाःशरैःसंख्येनारायणकरच्युतैः॥ निपेतू राक्षसाभूमौशैलावज्रहताइव॥१४॥व्रणानिपरगात्रेभ्योविष्णुचक्रकृतानिहि॥असृक्क्षरंतिधाराभिःस्वर्णधाराइवाचलाः॥१५॥शंखराजरवश्चापि शार्ङ्गचापरवस्तथा॥ राक्षसानांरवांश्चापिग्रसतेवैष्णवोरवः॥१६॥ तेषांशिरोधरान्धूतान्शरध्वजधनूंषिच॥रथान्पताकास्तूणिरांश्चिच्छेदसहरिः शरैः॥१७॥ सूर्यादिवकराघोरावार्योघाइवसागरात्॥ पर्वतादिवनागेंद्राधारौघाइवचांबुदात्॥१८॥तथाशार्ङ्गविनिर्मुक्ताःशरानारायणेरिताः ॥ निर्धावंतीषवस्तूर्णंशतशोऽथसहस्रशः॥१९॥ शरभेणयथासिंहासिंहेनद्विरदायथा ॥ द्विरदेनयथाव्याघ्राव्याघ्रेणद्वीपिनोयथा ॥ २० ॥ द्वीपि नेवयथाश्वानःशुनामार्जारकायथा ॥ मार्जारेणयथासर्पाःसर्पेणचयथाखवः ॥ २१ ॥ तथातेराक्षसाःसर्वेविष्णुनाप्रभविष्णुना ॥ द्रवंतिद्राविता श्चान्येशयिताश्चमहीतले ॥ २२ ॥ राक्षसानांसहस्राणिनिहत्यमधुसूदनः ॥ वारिजंपूरयामासतोयदंसुरराडिव ॥ २३ ॥ नारायणशरत्रस्तंशंख नादसुविह्वलम् ॥ ययौलंकामभिमुखंप्रभग्नंराक्षसंबलम्॥२४॥ प्रभग्नराक्षसबलेनारायणशराहते ॥ सुमालीशरवर्षेणनिववाररणेहरिम् ॥ २५ ॥

तोंसे जैसे सर्प निकलते हैं, मेघसे जैसे जलधारा निकलती है ॥१८॥ वैसे ही सैकडों हजारों बाण नारायणजीके शार्ङ्गधनुषसे निकलकर अतिवेगसे दौडनेलगे ॥१९॥ जिस प्रकार महाबली शरभकरके सिंह, सिंहसे हाथी, हाथीसे व्याघ्र, व्याघ्रसे चीता ॥ २० ॥ चीतेसे कुत्ता, कुत्तेसे बिल्ली, बिल्लीसे सर्प और सर्पसे चूहे भागते हैं ॥ २१ ॥ वैसेही समस्त राक्षस विष्णुजीके भयसे भागगये और बहुतसारे मरकर पृथ्वीपर सोगये ॥२२॥ मधुसूदन नारायणजी इसप्रकार हजार२ राक्षसोंका संहार करके पाञ्चजन्य शंखकी ध्वनि करने लगे कि जैसे देवराज इन्द्रजीके बादल गर्जन करते हैं ॥२३॥ मुख्य२राक्षसोंकी सेना नारायणजीके बाण लगनेसे त्रासित शंखनादसे विह्वलहो लंकाकी ओरको भागी ॥ २४ ॥ नारायणजीके बाणोंसे घायल होकर जब राक्षसोंकी सेना भागी तब सुमाली बाणोंकी

वर्षाकरके नारायणजीको संग्राममें निवारण करता हुआ ॥ २५ ॥ कुहर जिस प्रकार सूर्यभगवान्को ढक लेता है वैसेही सुमालीने नारायणजीको बाणोंसे छायदिया उसकाल सत्त्वसम्पन्न राक्षसोंको धीरज आया॥२६॥इसके पीछे बलदर्पित वहराक्षस सुमाली क्रोधके वश हो घोर गर्जन करते २ राक्षसोंको मानो फिर जिलाता हुआ, विष्णुजीको प्राप्त ॥ २७ ॥ लंबायमान भूषणयुक्त हाथ ऊपरको उठाय सुमाली राक्षस हर्षके वश हो उस कालमें बिजलीयुक्त मेघके समान गर्जने लगा जैसे हाथी गर्जता है ॥२८॥ जब सुमाली राक्षस गर्जनेलगा तब नारायणजीने उसके सारथीका प्रज्वलित कुण्डलभूषितशिर काटडाला, उस कालमें राक्षसके रथके घोडे सारथिहीन इच्छानुसार इधर उधर घूमने लगे ॥ २९ ॥ धीरजहीन मनुष्य जिस प्रकार इन्द्रियरूप घोड़ोंसे भ्रमके मार्गमें गिरता है राक्षसोंका राजा सुमाली भी वैसेही इन सब घोडोंके इधर उधर घूमनेसे कुमार्गमें चलने लगा ॥ ३० ॥ इसके उपरांत सुमालीके घोडे जब उसका

सतुतंछादयामासनीहारइवभास्करम् ॥ राक्षसाःसत्त्वसंपन्नाःपुनर्धैर्यसमादधुः ॥ २६ ॥ अथसोऽभ्यपतद्रोषाद्राक्षसोबलदर्पित ॥ महानादंप्र कुर्वाणोराक्षसाञ्जीवयन्निव ॥ २७ ॥ उत्क्षिप्यलंबाभरणंधुन्वन्करमिवद्विपः ॥ ररासराक्षसोहर्षात्सतडित्तोयदोयथा ॥२८॥ सुमालेर्नर्दतस्त स्यशिरोज्वलितकुंडलम् ॥ चिच्छेदयंतुरश्वाश्चभ्रांतास्तस्पतुरक्षसः ॥ २९ ॥ तैरश्वैर्भ्राम्यतेभ्रांतैःसुमालीराक्षसेश्वरः ॥ इंद्रियाश्वैःपरिभ्रांतै र्धृतिहीनोयथानरः ॥३०॥ ततोविष्णुंमहाबाहुंप्रततंतंरणाजिरे ॥ हृतेसुमालेरश्वैश्चरथेविष्णुरथंप्रति ॥ मालीचाभ्यद्रवद्युक्तःप्रगृह्यसशरासनम् ॥३१॥ मालेर्धनुच्युताबाणाःकार्तस्वरविभूषिताः ॥ विविशुर्हरिमासाद्यक्रौंचपत्ररथाइव ॥ ३२ ॥ अर्द्यमानःशरैःसोऽथमालिमुक्तैःसहस्रशः ॥ चुक्षुभेनरणेविष्णुर्जितेंद्रियइवाधिभिः ॥ ३३ ॥ अथमौर्वीस्वनंकृत्वाभगवान्भूतभावनः ॥ मालिनंप्रतिबाणौघान्ससर्जासिगदाधरः ॥३४॥ तेमालिदेहमासाद्यवज्रविद्युत्प्रभाःशराः ॥ पिबंतिरुधिरंतस्यनागाइवसुधारसम् ॥३५॥

रथ विष्णुजीके सामने लाये तब महाबाहु विष्णुजीको संग्राम खेतमें आया हुआ देखकर, माली धनुष ग्रहण करके विष्णुजीके सन्मुख धाया ॥३१॥ सुवर्णसे विभूषित बाण मालीके धनुषसे छूटकर श्रीहरिजीके शरीरमें प्रवेश करने लगे, जैसे स्वामि कार्तिकजीको शक्तिसे कटे हुए क्रौञ्चनाम पर्वतपर पक्षीगण आकर कूदते हैं ॥ ३२ ॥ उस समय भगवान् विष्णुजी मालीके चलाये हुए हजार२बाणोंसे पीडित होकर भी चलायमान नहीं हुए, जैसे जितेन्द्रिय पुरुष मानसिक व्यथाओंसे चलायमान नहीं होता ॥३३॥ उसके पीछे गदाधर, खड्गधारी, भूतभावन विष्णुजी अपने धनुषपर टंकार देकर मालीके ऊपर बाण चलाने लगे ॥ ३४ ॥ वज्र सौदामिनीके समान तेजःपुंज वह बाण मालीके शरीरमें पैठकर उसके रुधिरको पीने लगे जैसे नाग सुधारसको पीते हैं ॥ ३५ ॥

तब शंख, चक्र, गदाधारी नारायणजीने मालीको विमुख करके उसका मुकुट, ध्वजा, तथा धनुष काट डाला और रथके घोडोंको भी गिरा दिया ॥ ३६ ॥ परंतु निशाचर माली रथहीन हो, गदा हाथमें ले विष्णुजीके सामने आय कूदा जैसे पर्वतपरसे कूदकर सिंह आवे ॥ ३७ ॥ यमराजने जिस प्रकार शिवजी के ऊपर अस्त्र चलाया था, और इन्द्रजीने जिसप्रकार पर्वतोंको घायल किया था; वैसेही राक्षसने पक्षिराज गरुडजीके माथेमें गदा मारी ॥ ३८ ॥ तब गरुडजी उस मालीकी गदा लगनेसे अत्यन्त व्याकुल हुए; और पीडासे व्यथित हो वह देव हरिको विमुख करते हुए क्योंकि विष्णुजी उनके ऊपर सवार थे ॥ ३९ ॥ तब राक्षसोंके घोर गर्जनसे कठोर शब्द उत्पन्न हुआ यह शब्द उस समय हुआ जब गरुडजीने राक्षसोंको रणमें विमुख किया ॥ ४० ॥ गर्जते

मालिनंविमुखंकृत्वाशंखचक्रगदाधरः ॥ मालिमौलिंध्वजंचापंवाजिनश्चाप्यपातयत् ॥ ३६ ॥ विरथस्तुगदांगृह्यमालीनक्तंचरोत्तम ॥ आपुप्लुवेगदापाणिर्गिर्यग्रादिवकेसरी॥३७॥ गदयागरुडेशानमीशानमिवचांतकः ॥ ललाटदेशेऽभ्यहनद्वज्रेणेंद्रोयथाचलम्॥३८॥ गदयाभिहतस्तेनमालिनागरुडोभृशम्॥ रणात्पराङ्मुखंदेवंकृतवान्वेदनातुरः॥३९॥पराङ्मुखेकृतेदेवेमालिनागरुडेनवै ॥ उदतिष्ठन्महाञ्शब्दोरक्षसामभिनर्दताम् ॥४०॥ रक्षसांरुवतांरावंश्रुत्वाहरिहयानुजः ॥ तिर्यगास्थायसंक्रुद्धः पक्षीशेभगवान्हरिः ॥४१॥ पराङ्मुखोऽप्युत्ससर्जमालेश्चक्रंजिघांसया ॥ तत्सूर्यमंडलाभासंस्वभासाभासयन्नभः ॥ ४२ ॥ कालचक्रनिभंचक्रंमालेःशीर्षमपातयत् ॥ तच्छिरोराक्षसेंद्रस्यचक्रोत्कृत्तंविभीषणम् ॥ पपातरुधिरोद्गारिपुराराहुशिरोयथा ॥ ४३ ॥ ततःसुरैःसंप्रहृष्टैःसर्वप्राणसमीरितः ॥ सिंहनादरवोमुक्तःसाधुदेवेतिवादिभिः॥ ४४ ॥ मालिनंनिहतंदृष्ट्वासुमालीमाल्यवानपि ॥ सबलौशोकसंतप्तौलंकामेवप्रधावितौ ॥ ४५ ॥

हुए निशाचरोंका वह सिंहनाद इन्द्रानुजजीने सुना तब पक्षिराज गरुडजीकी पीठपर पूंछकी ओरको मुखकर संभल भगवान् हरिजीने ॥ ४१॥ विमुखहोकर भी मालीका संहार करनेके लिये चक्र चलाया । सूर्यमंडलके समान प्रकाशित व अपनी दीप्तिसे आकाशको प्रकाशित करते हुए ॥४२॥ कालचक्रके समान द्युतियुक्त उस चक्रने मालीका शिर काट डाला राक्षसराजका वह अत्यन्त भयंकर मस्तक चक्रसे कटकर रुधिर उगलता हुआ पृथ्वीपर गिर पडा, जैसे पूर्वकालमें राहुका शिर चक्रसे कटकर अलग गिरा था ॥ ४३ ॥ उस कालमें देवता अत्यन्त हर्षित हो "धन्य हो महाराज !" यह वचन कह सब मिल अति जोरसे सिंहनाद करने लगे ॥४४॥ मालीको मृतक देखकर, सुमाली और माल्वान् शोकसे संतापित हृदय हो अपनी सेनाके साथ लंकाको भाग गये ॥४५॥

उस कालमें गरुडजी सावधान होकर फिर रणभूमिमें आये; और क्रोधके मारे पहलेके समान पंखोंकी निकली हुई पवनसे राक्षसोंको भगाने लगे ॥ ४६ ॥ श्रीविष्णुजीने किसी २ राक्षसके मुखकमल चक्रसे काटडाले और किसी २ की छातीको गदासे चूर्णकर दिया, किसी २ की गर्दन हलसे खेंचली, मूसलके प्रहारसे किसीका शिर फोड दिया ॥ ४७ ॥ और किसी २ के सर्वाङ्ग खड्गसे काट डाले, किसी२को बाणोंसे पीडित कर दिया इस प्रकारसे राक्षस घायल होकर आकाशसे अतिशीघ्र समुद्रके जलमें गिरने लगे क्योंकि यह राक्षस आकाशमें ही टिककर लड रहे थे ॥४८॥ सौदामिनी सहित महामेघ जिस प्रकार वज्रसे फट जाता है वैसे ही नारायणजी भी धनुषसे छोडे श्रेष्ठतीर प्रहारसे बालखुले राक्षसोंको विदीर्ण करने लगे ॥ ४९ ॥ उस कालमें राक्षसोंकी सेनाका

गरुडस्तुसमाश्वस्तःसन्निवृत्त्ययथापुरा॥राक्षसान्द्रावयामासपक्षवातेनकोपितः॥४६॥चक्रकृत्तास्यकमलागदासंचूर्णितोरसः॥लांगलग्लपितग्रीवामुसलैर्भिन्नमस्तकाः॥४७॥केचिच्चैवासिनाछिन्नास्तथान्येशरताडिताः॥निपेतुरंबरात्तूर्णंराक्षसाःसागरांभसि॥४८॥नारायणोऽपीषुवराशनीभिर्विदारयामासधनुर्विमुक्तैः॥नक्तंचरान्धूतविमुक्तकेशान्यथाशनीभिःसतडिन्महाभ्रः॥४९॥भिन्नातपत्रंपतमानशस्त्रंशरैरपध्वस्तविनीतवेषम्॥विनिःसृतांत्रंभयलोलनेत्रंबलंतदुन्मत्ततरंबभूव ॥५०॥ सिंहार्दितानामिवकुंजराणांनिशाचराणांसहकुंजराणाम् ॥ रवाश्चवेगाश्चसमंबभूवुःपुराणसिंहेनविमर्दितानाम्॥५१॥ तेवार्यमाणाहरिबाणजालैःस्वबाणजालानिसमुत्सृजंतः ॥धावंतिनक्तंचरकालमेघावायुप्रणुन्नाइवकालमेघाः॥५२॥ चक्रप्रहारैर्विनिकृत्तशीर्षाःसंचूर्णितांगाश्चगदाप्रहारैः॥ असिप्रहारैर्द्विविधाविभिन्नाःपतंतिशैलाइवराक्षसेंद्राः ॥५३॥ विलंबमानैर्मणिहारकुंडलैर्निशाचरैर्नीलबलाहकोपमैः ॥ निपात्यमानैर्ददृशेनिरंतरंनिपात्यमानैरिवनीलपर्वतैः ॥५४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आ०उ सप्तमः सर्गः॥७॥

विनीत वेष बाणोंसे नष्ट होगया, और अस्त्रोंसे छत्र कट जानेसे बाणोंके प्रहारसे आँतोंके निकल आनेसे वह राक्षसोंकी सेना मारे भयके चलायमान नेत्र हो अपने परायेके ज्ञानको भूलगई ॥ ५० ॥ सिंह करके हाथीकी समान नृसिंहसे पीडित राक्षसगणोंका शब्द और वेग व हाथियोंका चिंघाडना और वेग एक समय ही उत्पन्न हुआ ॥५१॥ जिस प्रकार काले बादल पवनसे छिन्न भिन्न होकर उड जाते हैं वैसेही राक्षसरूपी काले बादल हरिके बाणजालसे निवारित हो अपने २ बाणजालको छोडते हुए भागे ॥ ५२ ॥ समस्त श्रेष्ठ राक्षसगण चक्रके प्रहारसे मस्तक कटाय, गदाकी चोटसे अंग चूर्ण कराय, खड्गके प्रहारसे शरीरके दो भाग कराय पर्वतके समान गिर पडे ॥५३॥ उस कालमें गिरते हुए नीले पर्वतके समान लम्बायमान् मणिमय हार और कुण्डलोंसे शोभित नीले बादलके समान गिरते जाते हुए राक्षसोंसे पृथ्वी ढक गई ॥ ५४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां सप्तमः सर्गः ॥ ७ ॥

पद्मनाभ नारायणजी पीछे २ धायकर जब उस राक्षसोंकी सेनाको मारते ही गये, तो माल्यवान् राक्षस लंकापुरी तक पहुँचकर फिर लौटा, जैसे तीर पर पहुँच कर समुद्रका जल फिर शीघ्र लौट जाता है ॥ १ ॥ फिर निशाचर माल्यवान् क्रोधके मारे लाल२नेत्र कर शिर कँपाय पुरुषोत्तम पद्मनाभ श्रीनारायणजीसे यह बोला ॥ २ ॥ हे नारायण ! तुम प्राचीन क्षत्रियोंके धर्मको नहीं जानते कारण कि हम तो भीत होकर युद्ध करनेकी इच्छा नहीं करते हैं तथापि तुम नीचके समान हम लोगोंको मारेही डालते हो ॥ ३ ॥ हे सुरेश्वर ! जो भागे हुए पुरुषका वधजनित पाप करता है वह पुण्यकर्मकारियोंके जाने योग्य स्वर्गको प्राप्त नहीं होता ॥४॥ हे शंख चक्र गदाधर ! यदि तुमको बहुत ही युद्धका अभिलाष हुआ है तो लीजिये हम यह टिके हुए हैं; आपमें जो कुछ

हन्यमानेबलेतस्मिन्पद्मनाभेनपृष्ठतः ॥ माल्यवान्सन्निवृत्तोऽथवेलामेत्यइवार्णवः ॥ १ ॥ संरक्तनयनःक्रोधाच्चलन्मौलिर्निशाचरः ॥ पद्मनाभमिदंप्राहवचनंपुरुषोत्तमम् ॥ २ ॥ नारायणनजानीषेक्षात्रधर्मंपुरातनम् ॥ अयुद्धमनसोभीतानस्मान्हंसियथेतरः ॥ ३ ॥ पराङ्मुखवधंपापंयःकरोतिसुरेश्वर ॥ सहंतानगतःस्वर्गंलभतेपुण्यकर्मणाम् ॥ ४ ॥ युद्धश्रद्धाथवातेऽस्तिशंखचक्रगदाधर ॥ अहंस्थितोऽस्मिपश्यामिबलंदर्शययत्तव ॥ ५ ॥ माल्यवंतंस्थितंदृष्ट्वामाल्यवंतमिवाचलम् ॥ उवाचराक्षसेंद्रंतंदेवराजानुजोबली ॥ ६ ॥ युष्मत्तोभयभीतानांदेवानांवैमयाऽभयम् ॥ राक्षसोत्सादनंदत्तंतदेतदनुपाल्यते ॥ ७ ॥ प्राणैरपिप्रियंकार्यंदेवानांहिसदामया ॥ सोऽहंवोनिहनिष्यामिरसातलगतानपि ॥ ८ ॥ देवदेवंब्रुवाणंतंरक्तांबुरुहलोचनम् ॥ शक्त्याबिभेदसंक्रुद्धोराक्षसेंद्रोभुजांतरे ॥ ९ ॥ माल्यवद्भुजनिर्मुक्ताशक्तिर्घंटाकृतस्वना ॥ हरेरुरसिबभ्राजमेघस्थेवशतह्रदा ॥ १० ॥

बल है सो दिखाइये ॥ ५ ॥ यह राक्षसराज माल्यवान्को पर्वतके समान टिका हुआ देखकर महाबलवान् देवराजके अनुज विष्णुजी उससे बोले ॥ ६ ॥ तुम लोगोंके भयसे भीत देवताओंको हमने राक्षसनाशरूप अभयदान किया है सो इस समय राक्षसोंका विनाश करके हम वह प्रतिज्ञा पूरी करते हैं ॥७॥ प्राणोंसे भी देवताओंका प्रिय कार्य करना हमारा सदा ही योग्य कर्तव्य है, तुम चाहे पातालमें प्रवेश करो तोभी हम तुम सबको मार डालेंगे ॥८॥ लाल कमलके समान नेत्रवाले देवदेव विष्णुजी इस प्रकारसे कह ही रहे थे कि इतनेहीमें राक्षसश्रेष्ठ माल्यवान्ने क्रोधके वश हो शक्तिसे उनकी दोनों बांहोंके बीच छातीमें घाव किया ॥९॥ उस समय वह माल्यवान्की बांहोंसे चलाई हुई शक्ति घंटोंके शब्दसे शब्दायमान होती हुई सौदामिनी (बिजली) युक्त मेघके समान

शोभायमान होने लगी ॥ १० ॥ शक्तिधर प्रिय कमलदललोचन हरिने तत्काल ही उस शक्तिको उठायकर माल्यवान्के ऊपर चलाया ॥ ११ ॥ बडाभारी उल्का जिस प्रकार अंजन पर्वतकी ओर दौडती है, वैसेही वह शक्ति गोविंद नारायणके हाथसे छूटकर स्वामीकार्तिकजीके समान राक्षसके संहार करनेकी अभिलाषासे दौडी ॥ १२ ॥ जिस प्रकार वज्र पर्वतके शिखरपर गिरे वैसेही वह शक्ति राक्षसश्रेष्ठ माल्यवान्की हारमाला विभूषित विशाल छातीमें जाकर लगी ॥ १३ ॥ शक्तिप्रहारसे कवच कटजानेपर माल्यवान् अतिमोहको प्राप्त हुआ परन्तु फिर सावधान हो पर्वतके समान अचल हो उठा ॥ १४ ॥ उसके पीछे बहुतसारे कांटोंसे युक्त काले लोहेसे बनाहुआ शूल लेकर माल्यवान्ने देवताओंमें श्रेष्ठ विष्णुजीकी छातीमें अतिजोरसे मारा ॥ १५॥ और वह रणप्रिय

ततस्तामेवचोत्कृष्यशक्तिंशक्तिधरप्रियः ॥ माल्यवंतंसमुद्दिश्यचिक्षेपांबुरुहेक्षणः ॥११॥ स्कंदोत्सृष्टेवसाशक्तिर्गोविंदकरनिःसृता ॥ कांक्षंती राक्षसंप्रायान्महोल्केवांजनाचलम् ॥ १२ ॥ सातस्योरसिविस्तीर्णेहारभारावभासिते ॥ आपतद्राक्षसेंद्रस्यगिरिकूटइवाशनिः ॥ १३ ॥ तयाभिन्नतनुत्राणःप्राविशद्विपुलंतमः ॥ माल्यवान्पुनराश्वस्तस्तस्थौगिरिरिवाचलः॥१४॥ ततःकालायसंशूलंकंटकैर्बहुभिश्चितम् ॥ प्रगृह्या भ्यहनद्देवंस्तनयोरंतरेदृढम् ॥ १५ ॥ तथैवरणरक्तस्तुमुष्टिनावासवानुजम् ॥ ताडयित्वाधनुर्मात्रमपक्रांतोनिशाचरः ॥ १६ ॥ ततोऽम्ब रेमहाञ्छब्दःसाधुसाध्वितिचोत्थितः ॥ आहत्यराक्षसोविष्णुंगरुडंचाप्यताडयत् ॥१७॥ वैनतेयस्ततःक्रुद्धोपक्षवातेनराक्षसम्॥ व्यपोहद्ब लवान्वायुःशुष्कपर्णचयंयथा ॥ ॥ १८ ॥ द्विजेंद्रपक्षवातेनद्रावितंदृश्यपूर्वजम् ॥ सुमालीस्वबलैःसार्धंलंकामभिमुखोययौ ॥१९॥ पक्षवातब लोद्धूतोमाल्यवानपिराक्षसः ॥ स्वबलेनसमागम्यययौलंकांह्रियावृतः॥ २० ॥ एवंतेराक्षसारामहरिणाकमलेक्षण ॥ बहुशःसंयुगेभग्नाहतप्रव रनायकाः ॥ २१ ॥

निशाचर इन्द्रजीके अनुज विष्णुजीको मूका मारकर तीन हाथ पीछे हट गया ॥ १६ ॥ तब आकाशमंडलमें "साधु साधु" यह बडा भारी शब्द हुआ, राक्षसने विष्णुजीको मार फिर गरुडजीके ऊपर प्रहार किया ॥ १७ ॥ फिर बलवान् विनताके पुत्र गरुडजीने महाक्रोध कर पवनसे उडते हुए सूखे पत्तोंके समान राक्षसको बहुत दूर फेंक दिया ॥१८॥अपने बडे भाईमाल्यवान्को पक्षिराज गरुडजीके पंखोंकी पवनसे ताडित देख कर सुमाली सेनाके सहित लंकाको भाग गया ॥ १९ ॥ पंखोंसे उत्पन्न पवनके बलसे फेंका जाकर माल्यवान् राक्षस भी लाजके मारे अपनी सेनामें जाय घुसा ॥ २० ॥ हे कमललोचन ! श्रीरामचन्द्रजी ! इस प्रकारसे भगवान् हरिने उन राक्षसोंको अनेक बार रणमें भगाया और उनमें मुखिया २ सेनापतियोंका संहार किया ॥ २१ ॥

वह बलसे पीडित हुए राक्षस विष्णुजीके सहित युद्ध करनेमें असमर्थ हो लंकाको छोड अपनी २ स्त्रियोंके साथ पाताल लोकमें रहनेको चले गये ॥ २२ ॥ हे रघुनंदनश्रेष्ठ ! विख्यात बलवीर्यवाले राक्षस सालकटंकटाके वंशवाले सुमाली राक्षसका आश्रय लेकर समय बिताने लगे ॥ २३ ॥ हे राम ! तुमने पुलस्त्यवंशवाले जिन समस्त राक्षसोंका संहार किया है महाभाग सुमाली माल्यवान् और माली यह सबही उनसे प्रधान थे अधिक क्या कहें यह रावणसे भी अधिक बलवान् थे ॥ २४ ॥ शंख चक्र गदाधारी देव नारायणके सिवाय और कोई भी देवताओंको पीडा देनेवाले सुरशत्रु राक्षसोंका संहार नहीं कर सकता है ॥ २५ ॥ तुमही चार भुजावाले देव सनातन नारायण हो आप ही अजित प्रभु अविनाशी हैं परन्तु आप राक्षसका नाश करनेके लिये मायारू

अशक्नुवंतस्तेविष्णुंप्रतियोद्धुंबलार्दिताः ॥ त्यक्त्वालंकांगतावस्तुंपातालंसहपत्नयः॥ २२ ॥ सुमालिनंसमाश्रित्यराक्षसंरघुसत्तम ॥ स्थिताः प्रख्यातवीर्यास्तेवंशेसालकटंकटे॥२३॥ येत्वयानिहतास्तेतुपौलस्त्यानामराक्षसाः ॥ सुमालीमाल्यवान्मालीयेचतेषांपुरःसराः॥ सर्वएतेमहाभागारावणाद्बलवत्तराः ॥ २४ ॥ नचान्योराक्षसान्हंतासुरारीन्देवकंटकान् ॥ ऋतेनारायणंदेवंशंखचक्रगदाधरम् ॥ २५ ॥ भवान्नारायणोदेवश्चतुर्बाहुःसनातनः ॥ राक्षसान्हंतुमुत्पन्नोह्यजय्यःप्रभुरव्ययः ॥ २६ ॥ नष्टधर्मव्यवस्थानांकालेकालेप्रजाकरः ॥ उत्पद्यतेदस्युवधेशरणागतवत्सलः ॥२७॥ एषामयातवनराधिपराक्षसानामुत्पत्तिरद्यकथितासकलायथावत् ॥ भूयोनिबोधरघुसत्तमरावणस्यजन्मप्रभावमतुलंससुतस्यसर्वम् ॥२८॥ चिरात्सुमालीव्यचरद्रसातलंसराक्षसोविष्णुभयार्दितस्तदा ॥ पुत्रैश्चपौत्रैश्चसमन्वितोबलीततस्तुलंकामवसद्धनेश्वरः ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येच० सा० उत्तरकांडे अष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

पसे उत्पन्न हुए हैं ॥ २६ ॥ आप नष्ट हुए धर्मकी सुव्यवस्था किया करते हैं, आप समय २ पर प्रजाकी सृष्टि करते हैं, आप शरणागतवत्सल हैं बस इस कारणसे अधर्मी पापाचारोंका वध करनेके लिये समय २ पर आपको अपनी मायासे रूप धारण करना पडता है ॥ २७ ॥ हे नरनाथ! आज आपके निकट राक्षसोंका यह समस्त उत्पत्तिवृत्तान्त कहा । हे रघुश्रेष्ठ ! रावण और उसके पुत्रोंका जन्म व अतुल प्रभावका वर्णन हम फिर आदिसे अंत तक कहते हैं आप श्रवण करें ॥ २८ ॥ जब वह बलवान् राक्षस सुमाली विष्णुजीके भयसे पीडित बेटे पोतोंके सहित बहुत कालतक पातालमें ही बिचरता रहा, तब उसकाल कुबेरजी लंकामें वास करते रहे ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आ० उत्तरकांडे भाषायामष्टमः सर्गः ॥ ८ ॥

इसके उपरान्त कुछ काल बीतनेपर सुमाली नाम राक्षस पातालसे निकल मृत्युलोकके सब स्थानोंमें घूमनेलगा ॥ १ ॥ नीले मेघके समान तपाये हुए सुवर्णके कुंडल पहरे वह सुमाली घूमनेके समय पद्मरहित लक्ष्मीके समान कुमारी बेटीको संगमें लेलेता हुआ ॥ २ ॥ इस प्रकारसे पृथ्वीपर घूमते २ उस राक्षसनाथने पुष्पक विमानपर बैठे हुए कुबेरजीको देखा ॥ ३ ॥ पुलस्त्यजीके पुत्र विभु धनेश्वर कुबेरजी उस समय पिताजीके दर्शनको पुष्पकविमानपर चढकर जाय रहे थे, देवताके समान व अग्निकी नाई उन कुबेरजीकी जाता हुआ देख ॥ ४ ॥ राक्षस मृत्युलोकसे विस्मयसहित पातालको चलागया, महामति राक्षसवहां जा कर इस प्रकारकी चिन्ता करने लगा ॥ ५ ॥ " किस श्रेष्ठ कार्य करनेसे हम लोगोंकी बढती ऐसी हो ? " नीले बादलके समान; तपाये हुए सुवर्णके कुंडल

कस्यचित्त्वथकालस्यसुमालीनामराक्षसः ॥ रसातलान्मर्त्यलोकंसर्वंवैविचचारह॥१॥ नीलजीमूतसंकाशस्तप्तकांचनकुंडलः॥ कन्यांदुहितरं गृह्यविनापद्ममिवश्रियम् ॥२॥ राक्षसेंद्रःसतुतदाविचरन्वैमहीतले ॥ तदापश्यत्सगच्छंतंपुष्पकेणधनेश्वरम् ॥३॥ गच्छंतंपितरंद्रष्टुंपुलस्त्य तनयंविभुम् ॥ तंदृष्ट्वामरसंकाशंगच्छंतंपावकोपमम् ॥ ४ ॥ रसातलंप्रविष्टःसन्मर्त्यलोकात्सविस्मयः ॥ इत्येवंचिंतयामासराक्षसानांमहा मतिः ॥५॥ किंकृत्वाश्रेयइत्येववर्धेमहिकथंवयम् ॥ नीलजीमूतसंकाशस्तप्तकांचनकुंडलः ॥ ६ ॥ राक्षसेंद्रःसतुतदाचिंतयत्सुमहामतिः ॥ अथाब्रवीत्सुतांरक्षःकैकसींनामनामतः ॥७॥ पुत्रिप्रदानकालोऽयंयौवनंव्यतिवर्तते ॥ प्रत्याख्यानाच्चभीतौस्त्वंनवरैःपरिगृह्यसे ॥८॥ त्वत्कृते चवयंसर्वेयंत्रिताधर्मबुद्धयः ॥ त्वंहिसर्वगुणोपेताश्रीःसाक्षादिवपुत्रिके ॥९॥ कन्यापितृत्वंदुःखंहिसर्वेषांमानकांक्षिणाम् ॥ नज्ञायतेचकः कन्यांवरयेदितिकन्यके ॥१०॥ मातुःकुलंपितृकुलंयत्रचैवचदीयते ॥ कुलत्रयंसदाकन्यासंशयेस्थाप्यतिष्ठति ॥ ११ ॥

पहरे ॥ ६ ॥ महामति उस कालमें ऐसी चिन्ता करके कैकसीनामक अपनी बेटीसे बोला ॥ ७ ॥ हे बेटी ! तुम्हारी यह अवस्था बीती जाती है, इससे तुमको विवाह देनेका यही उचित समय है, कदाचित् तुम उसको अंगीकार न करो, इसी आशंकासे भीत हो कोई भी पात्र तुमको ग्रहण नहीं करता है ॥ ८ ॥ हे बेटी ! तुम साक्षात् लक्ष्मीके समान समस्त गुणोंसे भूषित हो; इस कारण हम सबधर्ममें बुद्धि स्थापन करके तुम्हारे योग्य वर प्राप्त करनेके लिये यत्न कर रहे हैं ॥ ९ ॥ मानके चाहनेवाले पुरुषोंके लिये कन्याका पिता होना बडे ही दुःखकी बात है; वह दिन रात यही विचार करते हैं कि " यह कन्या किसको दीजायगी " परन्तु कन्या इस दुःखको नहीं जानती ॥ १० ॥ माताके कुलको, पिताके कुलको, श्वशुरके कुलको इन तीन कुलोंको कन्या सदा संशयमें

डालकर टिकी रहती है ॥ ११ ॥ हे पुत्रि ! प्रजापतिके कुलमें उत्पन्न हुए मुनिश्रेष्ठ पुलस्त्यजीके पुत्र विश्रवाजीके निकट जाय उनको तुम अपना पति बनालो ॥ १२ ॥ हे बेटी जो तुम उनको अपना पति बना लोगीं तो तेजसे सूर्यके समान इस धनेश्वर कुबेरके समान तुम्हारेभी पुत्र उत्पन्न होंगे इसमें कुछ संदेह नहीं ॥१३॥ वह कन्या ऐसे वचन सुन पिताजीके गौरवके मारे वहां परजाकर खडी होगई कि, जहां विश्रवाजी मुनि तप कर रहे थे ॥१४॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! उस कालमें पुलस्त्यजीके पुत्र ब्राह्मणश्रेष्ठ विश्रवाजी चतुर्थ अग्निके समान प्रदोषके समय अग्निहोत्रकी उपासना कर रहे थे ॥१५॥ कैकसी उस दारुण प्रदोष कालका कुछ विचार न करके पिताके गौरवके मारे मुनिके निकट जाय उनके चरणोंमें दृष्टि लगाय खडी होगई ॥१६॥ और वह भामिनी वारंवार

सात्वंमुनिवरंश्रेष्ठंप्रजापतिकुलोद्भवम् ॥ भजविश्रवसंपुत्रिपौलस्त्यंवरयस्वयम् ॥१२॥ ईदृशास्तेभविष्यंतिपुत्राःपुत्रिनसंशयः ॥ तेजसाभास्करसमोयादृशोऽयंधनेश्वरः ॥१३॥ सातुतद्वचनंश्रुत्वाकन्यकापितृगौरवात् ॥ तत्रगत्वाचसातस्थौविश्रवायत्रतप्यते ॥ १४ ॥ एतस्मिन्नंतरेरामपुलस्त्यतनयोद्विजः ॥ अग्निहोत्रमुपातिष्ठच्चतुर्थइवपावकः ॥१५॥ अविचिंत्यतुतांवेलांदारुणांपितृगौरवात् ॥ उपसृत्याग्रतस्तस्य चरणाधोमुखीस्थिता ॥ ॥ १६ ॥ विलिखंतीमुहुर्भूमिमंगुष्ठाग्रेणभामिनी ॥ सतुतांवीक्ष्यसुश्रोणींपूर्णचंद्रनिभाननाम् ॥१७॥ अब्रवीत्परमोदारोदीप मानांस्वतेजसा ॥ भद्रेकस्यासिदुहिताकुतोवात्वमिहागता ॥ किंकार्यंकस्यवाहेतोस्तत्त्वतोब्रूहिशोभने ॥१८॥ एवमुक्तातुसाकन्या कृतांजलिरथाब्रवीत् ॥ आत्मप्रभावेणमुनेज्ञातुमर्हसिमेमतम् ॥ १९ ॥ किंतुमांविद्धिब्रह्मर्षेशासनात्पितुरागताम् ॥ कैकसीनामनाम्नाहंशेषं त्वंज्ञातुमर्हसि ॥ २० ॥ सतुगत्वामुनिर्ध्यानंवाक्यमेतदुवाचह ॥ विज्ञातंतेमयाभद्रेकारणंयन्मनोगतम् ॥ २१ ॥

अपने पांवके अँगूठेसे पृथ्वीकोकुरेदने लगी, तब पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान मुखवाली परमसुन्दरीको देख ॥ १७ ॥ परम उदार स्वभाववाले अपने तेजसे दीप्तिमान् ऋषिजी उस कन्यासे बोले कि " हे भद्रे ! तुम किसकी बेटी हो ? और किस स्थानसे यहांपर आई हो ? किसके निमित्त आई हो ? व हमको कौनसा कार्य करना होगा ? हे शोभने ! तुम यह समस्त वृत्तान्त ठीक २ हमसे कहो " ॥ १८ ॥ वह कन्या इस भांतिसे पूँछेजानेपर हाथ जोड़कर बोली कि, हे महाराज ! आप अपने प्रभावसेही हमारे मनका वृतान्त जानलें ॥ १९ ॥ हे ब्रह्मर्षे ! हमारा नाम कैकसी हम अपने पिताके कहनेसे यहां आई हैं, शेष वृत्तान्त हम नही कह सक्ती वह आप स्वयं जानले ॥ २० ॥ वह मुनि ध्यान धरकर सब वृत्तान्त जानकर बोले; हे भद्रे ! हम तुम्हारे आनेका कारण

और मनका अभिप्राय जान गये हैं ॥२१॥ हे मतवाले हाथीकीसी चालवाली ! तुमने हमसे पुत्रकी कामना की है; परन्तु तुम दारुण समयमें हमारे निकट आई हो ॥ २२ ॥ इसलिये हे भद्रे ! तुम जैसे पुत्र उत्पन्न करोगी वह सुनो, क्रूर बान्धवोंके प्यारे दारुण स्वभाव और दारुणरूप होंगे ॥ २३ ॥ हे सुश्रोणि ऐसे ! क्रूरकर्मचारी राक्षसोंको तुम उत्पन्न करोगी, कैकसी उनके वचन सुन प्रणाम कर बोली ॥ २४ ॥ कि हे भगवन् ! आप ब्रह्मवादी हैं । इसलिये आपके निकटसे हम ऐसे दुराचारी पुत्रोंको उत्पन्न करना नहीं चाहतीं इस कारण जिससे उत्तम पुत्र उत्पन्न हों ऐसा अनुग्रह कीजिये ॥ २५ ॥ मुनिश्रेष्ठ विश्रवाजी इस कन्याके ऐसे वचन सुनकर कैकसीसे फिर बोले, जिस प्रकार पूर्ण चन्द्रमा रोहिणीसे बोलते हैं ॥ २६ ॥ हे श्रेष्ठमुखवाली । तुम्हारा छोटा पुत्र हमारे

सुताभिलाषोमत्तस्तेमत्तमातंगगामिनि ॥ दारुणायांतुवेलायांयस्मात्त्वंमामुपस्थिता ॥ २२ ॥ शृणुतस्मात्सुतान्भद्रेयादृशाञ्जनयिष्यसि ॥ दारुणान्दारुणाकारान्दारुणाभिजनप्रियान् ॥२३॥ प्रसविष्यसिसुश्रोणिराक्षसान्क्रूरकर्मणः ॥ सातुतद्वचनंश्रुत्वाप्रणिपत्याब्रवीद्वचः ॥२४॥ भगवन्नीदृशान्पुत्रांस्त्वत्तोऽहब्रह्मवादिनः ॥ नेच्छामिसुदुराचारान्प्रसादंकर्तुमर्हसि ॥ २५ ॥ कन्ययात्वेवमुक्तस्तुविश्रवामुनिपुंगवः ॥ उवाचकैकसींभूयःपूर्णेंदुरिवरोहिणीम् ॥ २६ ॥ पश्चिमोयस्तवसुतोभविष्यतिशुभानने ॥ ममवंशानुरूपःसधर्मात्माचनसंशयः ॥२७॥ एवमुक्तातुसा कन्यारामकालेनकेनचित् ॥ जनयामासबीभत्संरक्षोरूपंसुदारुणम् ॥ २८ ॥ दशग्रीवंमहादंष्ट्रंनीलांजनचयोपमम् ॥ ताम्रोष्ठंविंशतिभुजंमहास्यंदीप्तमूर्धजम् ॥ २९ ॥ तस्मिञ्जातेततस्तस्मिन्सज्वालंकवलाःशिवाः ॥ क्रव्यादाश्चापसव्यानिमंडलानिप्रचक्रमुः ॥ ३० ॥ ववर्षरुधिरं देवोमेघाश्चखरनिःस्वनाः ॥ प्रबभौनचसूर्योवैमहोल्काश्चापतन्भुवि ॥३१॥ चकंपेजगतीचैववबुर्वाताःसुदारुणाः॥ अक्षोभ्यःक्षुभितश्चैवसमुद्रः सरितांपतिः ॥ ३२ ॥ अथनामाऽकरोत्तस्यपितामहसमःपिता ॥ दशग्रीवःप्रसूतोऽयंदशग्रीवोभविष्यति॥ ३३ ॥

वंशके अनुरूप धर्मात्मा होगा इसमें कुछ भी संदेह नहीं ॥ २७ ॥ हे राम ! वह कन्या इस प्रकारसे कही जाकर कुछ समयके बीतनेपर दारुण व बीभत्स राक्षस उत्पन्न करती हुई ॥ २८ ॥ इसके दश शिर बडे विशाल थे, बाल चमकीले थे बीस अधर तांबेके रंगके समान लाल थे, बीस भुजा थीं, रंग काले अंजनके समान नीला था ॥२९॥ जब इस पुत्रने जन्म ग्रहण किया तब शृगालियें मुखसे ज्वाला उगलने लगीं । मांस खानेवाले गिद्धादि पक्षी बांई ओर को मंडल बांधकर घूमने लगे ॥३०॥ देवताओंने रुधिर वर्षाना आरंभ किया, मेघ अतिशब्दसे गर्जने लगे; सूर्यमें दीप्ति न रही बडी भारी उल्का पृथ्वीपर गिरी ॥३१॥ पृथ्वी कंपायमान हो गई, दारुण पवन चलने लगी, अचल नदीपति समुद्र खलबलाय उठा ॥ ३२ ॥ उसके पीछे पितामह ब्रह्माजीके समान

उसके पिताने उसका नामकरण किया, यह बालक दशगर्दन होकर जन्मा है इस कारण इसका "दशग्रीव" नाम होगा ॥३३॥ जिसके शरीरके परिमाणसे बडे परिमाणवाला और कोई इस जगत्में विद्यमान नहीं हैं ऐसे महाबली कुम्भकर्णका जन्म इसके पीछे हुआ ॥३४॥ उसके पीछे विकटाकारवाली शूर्पणखा जन्मी । धर्मात्मा विभीषणजी कैकसीके सबसे छोटे या पीछले पुत्र हुए ॥ ३५ ॥ उन महासत्त्ववान् विभीषणका जन्म होते ही आकाशसे देवताओंने नगाडे बजाये, फूल वर्षाये और आकाशसे वारंवार "धन्य धन्य" शब्द उत्पन्न होने लगा ॥३६॥ रावण और कुंभकर्ण यह दोनों सब लोकोंके व्याकुल करनेवाले उस महावनमें बढने लगे ॥ ३७ ॥ यह कुंभकर्ण धर्मवत्सल महर्षियोंको भक्षण करके सदा असंतुष्ट हो त्रिलोकीमें घूमने लगा ॥ ३८ ॥ परन्तु विभीषणजी

तस्यत्वनंतरंजातःकुंभकर्णोमहाबलः ॥ प्रमाणाद्यस्यविपुलंप्रमाणंनेहविद्यते ॥३४॥ ततःशूर्पणखानामसंजज्ञेविकृतानना ॥ विभीषणश्चधर्मात्माकैकस्याःपश्चिमःसुतः ॥ ३५ ॥ तस्मिञ्जातेमहासत्त्वेपुष्पवर्षंपपातह ॥ नभःस्थानेदुंदुभयोदेवानांप्राणदंस्तथा ॥ वाक्यंचैवांतरिक्षेचसाधुसाध्वितितत्तदा ॥३६॥ तौतुतत्रमहारण्येववृधातेमहौजसौ ॥ कुंभकर्णदशग्रीवौलोकोद्वेगकरौतदा॥३७॥कुंभकर्णःप्रमत्तस्तुमहर्षीन्धर्मवत्सलान् ॥ त्रैलोक्येनित्यासंतुष्टोभक्षयन्विचचारह॥३८॥ विभीषणस्तुधर्मात्मानित्यंधर्मव्यवस्थितः ॥ स्वाध्यायनियताहारउवासविजितेंद्रियः ॥३९॥अथवैश्रवणोदेवस्तत्रकालेनकेनचित् ॥ आगतःपितरंद्रष्टुंपुष्पकेणधनेश्वरः ॥४०॥ तंदृष्ट्वाकैकसीतत्रज्वलंतमिवतेजसा॥आगम्यराक्षसीतत्रदशग्रीवमुवाचह॥४१॥ पुत्रवैश्रवणंपश्यभ्रातरंतेजसावृतम्॥ भ्रातृभावेसमेचापिपश्यात्मानंत्वमीदृशम् ॥४२ ॥ दशग्रीवतथायत्नंकुरुष्वामितविक्रम ॥ यथात्वमपिमेपुत्रभवेर्वैश्रवणोपमः ॥४३॥ मातुस्तद्वचनंश्रुत्वादशग्रीवःप्रतापवान् ॥ अमर्षमतुलंलेभेप्रतिज्ञांचाकरोत्तदा॥४४॥ सत्यंतेप्रतिजानामिभ्रातृतुल्योऽधिकोऽपिवा ॥ भविष्याम्योजसाचैवसंतापंत्यजहृद्गतम् ॥४५॥

धर्मशील होनेके कारण सदाही विधिपूर्वक धर्मकार्यमें लगे रहते; विशेष करके वह इन्द्रियोंको जीत वेदशास्त्र संमत आहार करते थे ॥३९॥ कुछ समयके पीछे वैश्रवण देवता धनेश्वर कुबेरजी पुष्पक विमानपर चढ अपने पिताजीके दर्शन करनेको आये॥४०॥कुबेरजीको अपने तेजसे प्रदीप्त देख राक्षसी कैकसी अपने पुत्र दशग्रीवसे बोली ॥ ४१ ॥ हे पुत्र ! तुम अपने द्युतिमान् भ्राता वैश्रवण कुबेरको देखो, भायपन समान होनेपर भी कुबेरसे अपनेको तू हीन अवस्थामें देख ॥ ४२ ॥ इसलिये हे अमितविक्रमकारी पुत्र दशग्रीव ! जिससे तू कुबेरके समान ऐश्वर्यवान् हो सके ऐसा यत्न कर ॥ ४३ ॥ उस कालमें माताके ऐसे वचन सुनकर प्रतापवान् दशग्रीव क्रोधके वश हो प्रतिज्ञा करके बोला ॥ ४४ ॥ कि, हे माता ! हम आपके निकट सत्यही सत्य प्रतिज्ञा करके कहते हैं कि

अपने तेजके प्रभावसे भ्राताके समान या उससे भी अधिक हम होंगे इस कारण तुम अपने हृदयका संताप दूर करो ॥४५॥ इसके उपरांत दशग्रीव उसी कोपके मारे मनमें तप करना ठान अपने छोटे भ्राताओंके साथ दुष्कर कार्य करनेका अभिलाष करता हुआ॥४६॥ दशग्रीव "तपस्यासे मनवांछित फल प्राप्तहोगा" ऐसा निश्चयकरके कार्यका आश्रय ले तप सिद्ध करनेका गोकर्ण नामक आश्रममेंअ या ॥४७॥ वह उग्र विक्रमवाला राक्षस अपने छोटे भ्राताओंके सहित अनुपम तप करके विभु ब्रह्माजीको प्रसन्न करता हुआ तब ब्रह्माजीने परमप्रसन्न होकर बहुत जयदायक वरदान दिये ॥ ४८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां नवमः सर्गः ॥९॥ इसके उपरान्त श्रीरामचन्द्रजीने कहा, हे ब्रह्मन् ! महाबलवान् उन समस्त भ्राताओंने वनमें किस प्रकार कैसी

ततःक्रोधेनतेनैवदशग्रीवःसहानुजः॥ चिकीर्षुर्दुष्करंकर्मतपसेधृतमानसः॥४६॥ प्राप्स्यामितपसाकाममितिकृत्वाऽध्यवस्यचः॥ आगच्छदात्मसिद्ध्यर्थंगोकर्णस्याश्रमंशुभम्॥४७॥ सराक्षसस्तत्रसहानुजस्तदातपश्चचारातुलमुग्रविक्रमः॥ अतोषयच्चापिपितामहंविभुंददौसतुष्टश्चवराञ्जयावहान्॥४८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामा० वा० आ० च० सा० उत्तरकांडे नवमः सर्गः ॥९॥ अथाब्रवीन्मुनिंरामःकथंतेभ्रातरोवने॥ कीदृशंतुतदाब्रह्मंस्तपस्तेपुर्महाबलाः ॥ १ ॥ अगस्त्यस्त्वब्रवीत्तत्ररामंसुप्रीतमानसम् ॥ तांस्तान्धर्मविधींस्तत्रभ्रातरस्तेसमाविशन् ॥ २ ॥ कुंभकर्णस्ततोयत्तोनित्यंधर्मपथेस्थितः॥ ततापग्रीष्मकालेतुपंचाग्नीन्परितःस्थितः ॥ ३ ॥ मेघांबुसिक्तोवर्षासुवीरासनमसेवत ॥ नित्यंचशिशिरेकालेजलमध्यप्रतिश्रयः ॥ ४ ॥ एवंवर्षसहस्राणिदशतस्यापचक्रमुः ॥ धर्मेप्रयतमानस्यसत्पथेनिष्ठितस्यच ॥ ५ ॥ विभीषणस्तुधर्मात्मानित्यंधर्मपरःशुचिः॥ पंचवर्षसहस्राणिपादेनैकेनतस्थिवान् ॥६॥ समाप्तेनियमेतस्यननृतुश्चाप्सरोगणाः॥ पपातपुष्पवर्षंचतुष्टुवुश्चापिदेवताः॥ ७ ॥ पंचवर्षसहस्राणिसूर्यंचैवान्ववर्तत ॥ तस्थौचोर्ध्वशिरोबाहुःस्वाध्यायेधृतमानसः ॥ ८ ॥

तपस्या की थी ॥१॥ ऋषि अगस्त्यजी अतिशय प्रसन्न चित्त हो श्रीरामचन्द्रजीसे बोले कि; वनमें समस्त भाई विविध भाँतिके तपके धर्म करने लगे ॥२॥ मतवाला कुंभकर्ण नियमधार सदा धर्ममार्गमें टिक ग्रीष्म समयमें पंचाग्नि तापकर तप करने लगा ॥ ३ ॥ वर्षाऋतुमें वीरासन पर बैठे बरसातके जलसे भीजने लगा, और शीतकालमें सदा जलमें वास करने लगा॥४॥इसप्रकारसे उसनेदश हजार वर्ष बिताये। इन दश हजार वर्षतक सदा धर्ममार्गमेंटिककर कुंभकर्णने केवल तपही किया था ॥ ५ ॥ धर्मात्मा विभीषणजी सदा धर्मपरायण और पवित्र रहकर पांच हजार वर्षतक केवल एक चरणसेही खडे रहे॥ ६ ॥ इस नियमके समाप्त होनेपर देवताओंनेउनकी स्तुतिकी आकाशसे फूलोंकी वर्षा हुई, व अप्सरागण नाचने लगीं॥७॥इसके उपरान्त विभीषणजीने वेदपाठ करनेमें

चित्त लगाय नीचेको शिर कर पांच सहस्र वर्षतक सूर्यनारायणका तप किया ॥ ८ ॥ इस प्रकारसे मनको प्रसन्न किये विभीषणजी नन्दन वनमें टिके हुए देवताओंके समान परमानन्दसे दश सहस्र वर्ष बिताय देते हुए ॥९॥ दशानन भी निराहार हो दश सहस्रवर्षतक तप करता रहा, इन दश सहस्र वर्षोंके बीचमें जब २ एक२सहस्र वर्ष पूर्ण होते तब दशग्रीव अपना एक शिर अग्निमें होम देता था ॥१०॥ इस प्रकारसे जब नौ हजार वर्ष पूर्ण हो गये तब एक२ करके रावणके नौ मस्तक अग्निमें चढ गये ॥११॥ इस प्रकारसे जब दश हजारवां वर्ष आया तब रावणने अपने दशवें शिरकोभी काटनेकी वासना की, उसी समय ब्रह्माजी वहां आये ॥१२॥ ब्रह्माजीने अत्यन्त प्रसन्न हो सब देवताओंके सहित वहां आकर कहा कि हे दशग्रीव! हम तुमपर प्रसन्न हुए हैं ॥१३॥ हे धर्मज्ञ! तुम जिस वरकी अभिलाषा करतेहो उस वरको अतिशीघ्र हमसे मांगो तुम्हारा परिश्रम वृथा नहीं होगा, इसलिये तुम्हारी कौनसी मनोकामना पूर्ण करें॥१४॥

एवंविभीषणस्यापिस्वर्गस्थस्येवनंदने॥ दशवर्षसहस्राणिगतानिनियतात्मनः॥९॥दशवर्षसहस्रंतुनिराहारोदशाननः॥ पूर्णेवर्षसहस्रेतुशिरश्चाग्नौ जुहावसः ॥ १० ॥ एवंवर्षसहस्राणिनवतस्यातिचक्रमुः ॥ शिरांसिनवचाप्यस्यप्रविष्टानिहुताशनम् ॥ ११ ॥ अथवर्षसहस्रेतुदशमेदशमं शिरः ॥ छेत्तुकामेदशग्रीवेप्राप्तस्तत्रपितामहः॥१२॥पितामहस्तुसुप्रीतःसार्धंदेवैरुपस्थितः ॥ तवतावद्दशग्रीवप्रीतोऽस्मीत्यभ्यभाषत ॥१३॥ शीघ्रंवरयधर्मज्ञवरोयस्तेऽभिकांक्षितः ॥ कंतेकामंकरोम्यद्यनवृथातेपरिश्रमः ॥१४॥ अथाब्रवीद्दशग्रीवःप्रहृष्टेनांतरात्मना ॥ प्रणम्यशिरसा देवंहर्षगद्गदयागिरा ॥ १५ ॥ भगवन्प्राणिनांनित्यंनान्यत्रमरणाद्भयम् ॥ नास्तिमृत्युसमःशत्रुरमरत्वमहंवृणे ॥ १६ ॥ एवमुक्तस्तदाब्रह्मादशग्रीवमुवाचह ॥ नास्तिसर्वामरत्वंतेवरमन्यंवृणीष्वमे ॥ १७ ॥ एवमुक्तेतदारामब्रह्मणालोककर्तृणा ॥ दशग्रीवउवाचेदंकृतांजलिरथाग्रतः ॥ १८ ॥ सुपर्णनागयक्षाणांदैत्यदानवरक्षसाम् ॥ अवध्योऽहंप्रजाध्यक्षदेवतानांचशाश्वत ॥ १९ ॥ नहिचिंताममान्येषुप्राणिष्वमरपूजित ॥ तृणभूतहितेमन्येप्राणिनोमानुषादयः ॥ २० ॥

तब रावण मनमें सन्तुष्ट हो शिरको झुकाय देव पितामहको प्रणाम कर हर्षसे गद्गदवाणीसे बोला॥१५॥हे भगवन्! समस्त प्राणियोंको सदा मृत्युका भय हुआ करता है और कोई भय नहीं विशेषकरके मृत्युके समान शत्रु नहीं इसलिये हम अमर होनेकी वासना करते हैं॥१६॥ रावणके वचन सुनकर ब्रह्माजी बोले, सबको अमरत्व नहीं, इसकारण तुम अमरता नहीं पाय सकते इससे दूसरा वर मांगो ॥१७॥ संसारके बनानेवाले ब्रह्माजीने जब ऐसे वचन कहे तब दशग्रीव उनके सामने हाथ जोडकर इसप्रकारसे कहने लगा ॥१८॥ हे लोकनाथ! हे नित्यस्वरूप! हम गरुड, नाग, यक्ष, दैत्य, दानव, राक्षस और देवताओंसे न मारे जायँ ॥१९॥ हे देवपूज्य! मनुष्य इत्याहि प्राणियोंको तो हम तिनकेके समान समझते हैं, इसलिये और प्राणियोंसे तो हमको कोईभी चिंता नहीं है ॥२०॥

देव पितामह ब्रह्माजी धर्मात्मा राक्षस दशग्रीवके ऐसे वचन सुनकर सब देवताओंके साथ उससे यह वचन बोले ॥ २१ ॥ हे राक्षसश्रेष्ठ! तुम जैसा चाहते हो वैसाही होगा, हे राम! ब्रह्माजी यह कहकर फिर रावणसे बोले ॥२२॥ हे पापरहित! हम प्रसन्न होकर जो वर तुमको देते हैं वह तुम श्रवण करो! तुमने जो अपने शिर पूर्व समय अग्निमें होम दिये हैं ॥२३॥ हे राक्षस! वह शिर अब फिर वैसेही हो जायँगे। हे सौम्य! हम तुमको एक और भी दुर्लभ वर देते हैं ॥२४॥ कि तुम मनही मनमें जिस रूपके धारण करनेकी अभिलाषा करोगे, इच्छा करतेही तुम्हारा वैसा ही रूपहो जायगा जब पितामह ब्रह्माजीने ऐसा कहा तब राक्षस दशग्रीवके ॥ २५ ॥ मस्तक जो कि अग्निमें होम दिये गये थे वह वैसेही निकल आये। हे राम! ब्रह्माजी इसप्रकार दशग्रीवसे कह ॥२६॥ फिर वह पितामह विभीषणजीसे बोले, हे वत्स विभीषण! तुम्हारी बुद्धि धर्ममें लगी हुई ॥ २७ ॥ इससे हम तुम्हारे ऊपर अत्यन्त प्रसन्न हुए हैं अब हे

एवमुक्तस्तुधर्मात्मादशग्रीवेणरक्षसा ॥ उवाचवचनंदेवःसहदेवैःपितामहः ॥ २१ ॥ भविष्यत्येवमेतत्तेवचोराक्षसपुंगव ॥ एवमुक्त्वातुतंरामदशग्रीवंपितामहः ॥ २२ ॥ शृणुचपिवरोभूयःप्रीतस्येहशुभोमम ॥ हुतानियानिशीर्षाणिपूर्वमग्नौत्वयानघ ॥ २३ ॥ पुनस्तानिभविष्यंतितथैवतवराक्षस ॥ वितरामीहतेसौम्यवरंचान्यंदुरासदम् ॥ २४ ॥ छंदतस्तवरूपंचमनसायद्यथेप्सितम् ॥ एवंपितामहोक्तेचदशग्रीवस्यरक्षसः ॥ २५ ॥ अग्नौहुतानिशीर्षाणिपुनस्तान्युत्थितानिवै ॥ एवमुक्त्वातुतंरामदशग्रीवंपितामहः ॥२६॥ विभीषणमथोवाचवाक्यंलोकपितामहः ॥ विभीषणत्वयावत्सधर्मसंहितबुद्धिना ॥ २७ ॥ परितुष्टोऽस्मिधर्मात्मन्वरंवरयसुव्रत ॥ विभीषणस्तुधर्मात्मावचनंप्राहसांजलिः ॥ २८ ॥ वृतःसर्वगुणैर्नित्यंचंद्रमारश्मिभिर्यथा ॥ भगवन्कृतकृत्योऽहंयन्मेलोकगुरुःस्वयम् ॥ २९ ॥ प्रीतेनयदिदातव्योवरोमेशृणुसुव्रत ॥ परमापद्गतस्यापिधर्मेममतिर्भवेत ॥ ३० ॥ अशिक्षितंचब्रह्मास्त्रंभगवन्प्रतिभातुमे ॥ यायामेजायतेबुद्धिर्येषुयेष्वाश्रमेषुच ॥ ३१ ॥ सासाभवतुधर्मिष्ठातंतंधर्मंचपालये ॥ एषमेपरमोदारवरःपरमकोमतः ॥ ३२ ॥

धर्मात्मा सुव्रत! तुम वर मांगों, तब धर्मात्मा विभीषणजी हाथ जोड कर बोले ॥ २८ ॥ हे भगवन्! आप समस्त लोंगोंके गुरु होकर स्वयंही हमारे ऊपर प्रसन्न हुए हैं इससे हम कृतार्थ होगये। और किरणसे युक्त चन्द्रमाके समान हममें पुरुषार्थ आगये ॥२९॥ जो प्रसन्न होकर आप हमको कोई वर अवश्यही देना चाहते हैं तो श्रवण कीजिये. हे सुव्रत! अत्यन्त विपद् पडने पर भी महारी मति धर्ममें रत रहे ॥ ३० ॥ और गुरुसे न सीखा हुआ भी ब्रह्मास्त्र हमको आजावे, हे भगवन्! और जिस किसी आश्रममें भी हमारी कोई बुद्धि हो ॥ ३१ ॥ वह समस्त धर्मकी बुद्धि हो; और हम उसी धर्मको पालन करें, हे परमदाता! यही हमारा परम चहीता वर है ॥ ३२ ॥

कारण कि, धर्मानुरागी पुरुषोंको लोकमें कुछ भी दुर्लभ नहीं रहता, फिर ब्रह्माजी प्रसन्न होकर विभीषणजीसे बोले ॥ ३३ ॥ हे वत्स ! तुम धर्मिष्ठ हो; जो कुछ चाहते हो वही होगा, हे शत्रुनाशी ! राक्षसकुलमें उत्पन्न होकर भी ॥ ३४ ॥ तुम्हारी अधर्ममें बुद्धि नहीं है इस कारण हम तुम्हें अमरता देते हैं। यह कहकर कुम्भकर्णके वर देनेके लिये तैयार हुए ॥ ३५ ॥ तब समस्त देवता हाथ जोड कर ब्रह्माजीसे बोले इस कुम्भकर्णको आप वरदान न दें ॥ ३६ ॥ आप जानतेही हैं कि यह दुर्मति सब लोगोंको त्रास देता है नन्दनवनमें सात अप्सरा और दश इन्द्रके सेवकोंको ॥ ३७ ॥ हे ब्रह्मन् ! इसने भक्षण करलिया इसके सिवाय कितनेही ऋषि और मनुष्य इसने खाये हैं, जब विना वरदानही इस राक्षसने ऐसे कार्य किये हैं ॥ ३८ ॥ जो यह वरदान पावेगा तो त्रिभुवनको ही खाजायगा । इसलिये हे अमितप्रभायुक्त वरदानके छलसे आप इसको मोह दीजिये ॥ ३९ ॥ इससे त्रिभुवनका मंगल होगा और इसके सन्मानकी

नहिधर्माभिरक्तानांलोकेकिंचनदुर्लभम् ॥ पुनःप्रजापतिःप्रीतोविभीषणमुवाचह ॥ ३३ ॥ धर्मिष्ठस्त्वंयथावत्सतथाचैतद्भविष्यति ॥ यस्माद्राक्षसयोनौतेजातस्यामित्रनाशन ॥ ३४ ॥ नाधर्मेजायतेबुद्धिरमरत्वंददामिते ॥ इत्युक्त्वाकुंभकर्णायवरंदातुमवस्थितम् ॥ ३५ ॥ प्रजापतिंसुराःसर्वेवाक्यंप्रांजलयोऽब्रुवन् ॥ नतावत्कुंभकर्णायप्रदातव्योवरस्त्वया ॥ ३६ ॥ जानीषेहियथालोकांस्त्रासयत्येषदुर्मतिः ॥ नंदनेऽप्सरसःसप्तमहेंद्रानुचरादश ॥ ३७ ॥ अनेनभक्षिताब्रह्मन्नृषयोमानुषास्तथा ॥ अलब्धवरपूर्वेणयत्कृतंराक्षसेनतु ॥ ३८ ॥ यद्येषवरलब्धःस्याद्भक्षयेद्भुवनत्रयम् ॥ वरव्याजेनमोहोऽस्मैदीयताममितप्रभ ॥ ३९ ॥ लोकानांस्वस्तिचैवंस्याद्भवेदस्यचसंमतिः ॥ एवमुक्तःसुरैर्ब्रह्माचिंतयत्पद्मसंभवः ॥ ४० ॥ चिंतिताचोपतस्थेऽस्यपार्श्वेदेवीसरस्वती ॥ प्रांजलिःसातुपार्श्वस्थाप्राहवाक्यंसरस्वती ॥ ४१ ॥ इयमस्म्यागतादेवकिंकार्यंकारवाण्यहम् ॥ प्रजापतिस्तुतांप्राप्तांप्राहवाक्यंसरस्वतीम् ॥ ४२ ॥ वाणित्वंराक्षसेंद्रस्यभववाग्देवतेप्सिता ॥ तथेत्युक्त्वाप्रविष्टासाप्रजापतिरथाब्रवीत् ॥ ४३ ॥ कुंभकर्णमहाबाहोवरंवरययोमतः ॥ कुंभकर्णस्तुतद्वाक्यंश्रुत्वावचनमब्रवीत् ॥ ४४ ॥

हो जायगी देवताओंके यह वचन सुनकर कमलयोनि ब्रह्माजीने चिन्ता की ॥४०॥ चिन्ता करते ही देवी सरस्वतीजी ब्रह्माजीके निकट आखडी हुई । उन सरस्वतीजीने ब्रह्मा जीके निकट आ हाथ जोडकर उनसे निवेदन किया ॥ ४१ ॥ हे देव ! हम आई हैं हमको कौन कार्य करना होगा ? आज्ञा कीजिये, देवी सरस्वतीजीको आई हुई देखकर ब्रह्माजीने उनसे कहा ॥ ४२ ॥ हे भारती ! देवता जैसी इच्छा करते हैं तुम इस राक्षसकी जीभके आगे बैठकर वैसेही भी रक्षा वचन कहो ॥ "जो आज्ञा" ऐसा कहकर देवी सरस्वतीजी कुम्भकर्णके मुखमें पैठ गई ॥ ४३ ॥ इसके उपरान्त ब्रह्माजी बोले, हे महावीर कुम्भकर्ण ! जिस वरका तू अभिलाषा करता है उसहीको मांग ले, कुम्भकर्ण ब्रह्माजीके ऐसे वचन सुनकर बोला ॥ ४४ ॥

कि हे देवदेव ! हमारा यह अभिलाष है कि वर्षोंतक सोतेही रहैं (परन्तु हे देव छः मासतक निद्राका सुख पाय एकदिन भोजन करलियाकरें "ऐसाही होगा" यह कह ब्रह्माजी सब देवताओंके संग चले गये ॥४५॥ फिर देवी सरस्वतीनेभी उस राक्षसको त्याग दिया जब देवता ब्रह्माजीके सहित आकाशमंडलको चले गये ॥४६॥ तब यह राक्षस सरस्वतीसे छूटकर अपनी चेतनाको प्राप्त करता हुआ । उसके पीछे दुष्टात्मा कुंभकर्ण दुःखित होकर चिन्ता करने लगा ॥४७॥ कि, आज ऐसे वचन हमारे मुखसे क्यों निकले ऐसा जान पडता है कि, उस काल देवताओंने आकर हमको मोहित कर रक्खा होगा ॥ ४८ ॥ वह दीप्तिसे तेजसम्पन्न तीनों भाई इस प्रकारके वर पाकर श्लेष्मातक वनमें जाय वहां अत्यन्त सुखसे वसने लगे ॥ ४९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे

स्वप्तुंवर्षाण्यनेकानिदेवदेवममेप्सितम् ॥ एवमस्त्वितितंचोक्त्वाप्रायाद्ब्रह्मासुरैःसमम् ॥ ४५ ॥ देवीसरस्वतीचैवराक्षसंतंजहौपुनः ॥ ब्रह्मणा सहदेवेषुगतेषुचनभःस्थलम् ॥ ४६ ॥ विमुक्तोऽसौसरस्वत्यास्वांसंज्ञांचततोगतः ॥ कुंभकर्णस्तुदुष्टात्माचिंतयामासदुःखितः ॥ ४७ ॥ ईदृशंकिमिदंवाक्यंममाद्यवदनाच्च्युतम् ॥ अहंव्यामोहितोदेवैरितिमन्येतदागतैः ॥ ४८ ॥ एवंलब्धवराःसर्वेभ्रातरोदीप्ततेजसः ॥ श्लेष्मा तकवनंगत्वातत्रतेन्यवसन्सुखम् ॥ ४९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० च० सा० उत्तरकांडे दशमः सर्गः ॥ १० ॥ सुमालीवरलब्धांस्तु ज्ञात्वाचैतान्निशाचरान् ॥ उदतिष्ठद्भयंत्यक्त्वासानुगःसरसातलात् ॥ १ ॥ मारीचश्चप्रहस्तश्चविरूपाक्षोमहोदरः ॥ उदतिष्ठन्सुसंरब्धाःसचि वास्तस्यरक्षसः ॥ २ ॥ सुमालीसचिवैःसार्धंवृतोराक्षसपुंगवैः ॥ अभिगम्यदशग्रीवंपरिष्वज्येदमब्रवीत् ॥ ३ ॥ दिष्ट्यातेवत्ससंप्राप्तश्चिंति तोऽयंमनोरथः ॥ यस्त्वंत्रिभुवनश्रेष्ठाल्लब्धवान्वरमुत्तमम् ॥ ४ ॥ यत्कृतेचवयंलंकांत्यक्त्वायाताररसातलम् ॥ तद्गतंनोमहाबाहोमहद्विष्णुकृतं भयम् ॥ ५ ॥ असकृत्तद्भयाद्भग्नाःपरित्यज्यस्वमालयम् ॥ विद्रुताःसहिताःसर्वेप्रविष्टाःस्मरसातलम् ॥ ६ ॥

भाषायां दशमः सर्गः ॥ १० ॥ इधर सुमाली इन तीनों राक्षसोंका वर पाना सुनकर भय छोड अपने सेवकोंके साथ पातालसे निकला ॥ १ ॥ मारीच, महोदर; प्रहस्त, विरूपाक्ष इत्यादि वह राक्षसमंत्रीभी अत्यन्त उत्साहके सहित निकले ॥२॥ सुमाली मुख्य २ राक्षसवृन्दोंके साथ और मंत्रीजनोंके संग जाय रावणको भेटकर यह वचन बोला ॥३॥ हे वत्स ! तुमने त्रिभुवन श्रेष्ठ ब्रह्माजीके निकट उत्तम वर पाया है जो मनोरथ हम सोचते चले आते थे तुमने भाग्यसे ही वही वर पाया ॥४॥ हे महावीर ! हम जिसके लिये लंका छोडकर पातालमें चले गये थे हम लोगोंको उन विष्णुजीका जो बडाभारी डर था वह भी अब दूर हो गया है ॥ ५ ॥ विष्णुजीके भयसे वारंवार भागकर अपने स्थानको छोड और भागकर हम सब दलसहित पातालमें प्रवेश कर गये थे ॥ ६ ॥

र्वकालके समय यह लंकानगरी हमारे अधिकारमें थी उस समय राक्षस इसमें वसते थे परन्तु अब श्रीमान् धनेश्वर कुबेरजी इसमें वास करते हैं ॥ ७ ॥ हे पापरहित महावीर ! साम दान या बल जो लंकापुरीके लौटानेमें समर्थ हो तो हम लोगोंका शुभकार्य किया जाय ॥८॥ हे तात ! इसमें कुछ संदेह नहीं है कि, तुम लंकाके राजा हो जाओगे राक्षसवंश डूब रहा था हे महावीर ! इस डूबेहुएका तुमनेही उद्धार किया है ॥ ९ ॥ इस कारण हे महाबलवान् ! तुमही हम सबोंके राजा होगे । तब रावण पास आये हुए नानासे बोला ॥ १० ॥ धनपति कुबेरजी भाई होनेके कारण हमारे गुरु हैं इस कारण आप ऐसे वचन न कहिये जब राक्षसश्रेष्ठने इसप्रकार भलीभाँतिसे समझा दिया ॥ ११ ॥ तब वह सुमाली राक्षस उसके मनकी बात जानकर कुछ न बोला कुछ कालतक रावणके वहां वसनेपर ॥१२॥ एक दिन प्रहस्त नाम राक्षस हाथ जोड विनीतभावसे रावणसे बोला कि; महावीर दशग्रीव ! आपको ऐसा कहना उचित नहीं

अस्मदीयाचलंकेयंनगरीराक्षसोषिता ॥ निवेशितातवभ्रात्राधनाध्यक्षेणधीमता ॥ ७ ॥ यदिनामात्रशक्यंस्यात्साम्नादानेनवानघ ॥ तरसा वामहाबाहोप्रत्यानेतुंकृतंभवेत् ॥ ८ ॥ त्वंचलंकेश्वरस्तातभविष्यसिनसंशयः ॥ त्वयाराक्षवंशोऽयंनिमग्नोऽपिसमुद्धृतः ॥ ९ ॥ सर्वेषांनःप्रभु श्चैवभविष्यसिमहाबल ॥ अथाब्रवीद्दशग्रीवोमातामहमुपस्थितम् ॥ १० ॥ वित्तेशोगुरुरस्माकंनार्हसेवक्तुमीदृशम् ॥ साम्नाहिराक्षसेंद्रेणप्र त्याख्यातोगरीयसा ॥ ११ ॥ किंचिन्नाहतदारक्षोज्ञात्वातस्यचिकीर्षितम् ॥ कस्यचित्त्वथकालस्यवसंतंरावणंततः ॥ १२ ॥ प्रहस्तःप्रश्रितं वाक्यमिदमाहसरावणम् ॥ दशग्रीवमहाबाहोनार्हसेवक्तुमीदृशम् ॥ १३ ॥ सौभ्रात्रंनास्तिशूराणांशृणुचेदंवचोमम ॥ अदितिश्चदितिश्चैवभगि न्यौसहितेहिते ॥ १४ ॥ भार्येपरमरूपिण्यौकश्यपस्यप्रजापतेः ॥ अदितिर्जनयामासदेवांस्त्रिभुवनेश्वरान् ॥ १५ ॥ दितिस्त्वजनयद्दैत्या न्कश्यपस्यात्मसंभवान् ॥ दैत्यानांकिलधर्मज्ञपुरेयंसवनार्णवा ॥ १६ ॥ सपर्वतामहीवीरतेऽभवन्प्रभविष्णवः ॥ निहत्यतांस्तुसमरेविष्णुना प्रभविष्णुना ॥ १७ ॥ देवानांवशमानीतंत्रैलोक्यमिदमव्ययम् ॥ नैतदेकोभवानेवकरिष्यतिविपर्ययम् ॥ १८ ॥

हुआ ॥ १३ ॥ शूर लोगोंमें भ्रातापन नहीं होता हम इसका दृष्टान्त कहते हैं तुम सुनो अदिति व दिति दोनों बहने हितके साथ हितसे मिल ॥ १४ ॥ प्रजापति कश्यपजीकी भार्या हुईं यह दोनों परमरूपवती थीं उन दोनोंके मध्य अदितिने त्रिभुवनके स्वामी देवताओंको उत्पन्न किया ॥ १५ ॥ परन्तु तिदिने कश्यपजीके औरससे दैत्योंको उत्पन्न किया । हे धर्मज्ञ ! पूर्वकालमें दैत्योंहीके सागर कानन और पर्वत सहित यह पृथ्वी अधिकारमें थी और दैत्य लोगही राजा थे, फिर प्रभावशाली विष्णुजीने संग्राममें सब दैत्योंका संहार कर ॥ १६ ॥ १७ ॥ यह अविनाशी त्रिलोकी देवतोंके वशमें ले आये, केवल आपही अपने भाईके साथ वैरभाव करेंगे ऐसा नहीं ॥ १८ ॥

पूर्वकालमें देवता और असुरोंनेभी ऐसा आचरण किया है, रावण उसके ऐसे वचन सुन मनमें हर्षित हो ॥ १९ ॥ एक मुहूर्त भरतक चिंता करके बोला कि, अच्छा हमने स्वीकार किया । तब ऐसा कहकर हर्षके मारे वीर्यवान् ॥ २० ॥ दशग्रीव उसी दिन निशाचरोंके साथ लंकाके समीपवाले वनमें गया । उस समय निशाचर दशग्रीवने त्रिकूट पर्वतपर टिककर ॥ २१ ॥ वाक्य विशारद प्रहस्तको दूत बनाकर भेजा, हे राक्षसोंमें श्रेष्ठ प्रहस्त ! तुम शीघ्र जाकर कहो ॥ २२ ॥ तुम हमारे कहनेके अनुसार धनपति कुबेरसे समझाकर यह कहना कि हे राजन् ! यह लंकापुरी पूर्वकालमें महात्मा राक्षसोंके अधिकारमें थी ॥ २३ ॥ हे पाप रहित सौम्य ! इस समय आप इसमें विराजमान हैं यह आपको उचित नहीं है हे अतुल विक्रमकारी ! अब जो लंकापुरी आप हमको लौटादें ॥ २४ ॥ तो

सुरासुरैराचरितंतत्कुरुष्ववचोमम ॥ एवमुक्तोदशग्रीवःप्रहृष्टेनांतरात्मना ॥ १९ ॥ चिंतयित्वामुहूर्तंवैबाढमित्येवसोऽब्रवीत् ॥ सतुतेनैवहर्षेण तस्मिन्नहनिवीर्यवान् ॥ २० ॥ वनंगतोदशग्रीवःसहतैःक्षणदाचरैः ॥ त्रिकूटस्थःसतुतदादशग्रीवोनिशाचरः ॥ २१ ॥ प्रेषयामासदौत्येनप्रहस्तंवाक्यकोविदः ॥ प्रहस्तशीघ्रंगच्छत्वंब्रूहिनैर्ऋतपुंगव ॥ २२ ॥ वचसाममवित्तेशंसामपूर्वमिदंवचः ॥ इयंलंकापुरीराजन्राक्षसानांमहात्मनाम् ॥ २३ ॥ त्वयानिवेशितासौम्यनैतद्युक्तंतवानघ ॥ तद्भवान्यदिनोह्यद्यदद्यातुलविक्रम ॥ २४ ॥ कृताभवेन्ममप्रीतिर्धर्मश्चैवानुपालितः ॥ सतुगत्वापुरींलंकांधनदेनसुरक्षिताम् ॥ २५ ॥ अब्रवीत्परमोदारंवित्तपालमिदंवचः ॥ प्रेषितोऽहंतवभ्रात्रादशग्रीवेणसुव्रत ॥ २६ ॥ त्वत्समीपंमहाबाहोसर्वशस्त्रभृतांवर ॥ वचनंममवित्तेशयद्ब्रवीतिदशाननः ॥ २७ ॥ इयंकिलपुरीरम्यासुमालिप्रमुखैःपुरा ॥ भुक्तपूर्वाविशालाक्षराक्षसैर्भीमविक्रमैः ॥ २८ ॥ तेनविज्ञाप्यतेसोऽयंसांप्रतंविश्रवात्मज ॥ तदेषादीयतांतातयाचतस्तस्यसामतः ॥ २९ ॥ प्रहस्तादपिसंश्रुत्यदवोवैश्रवणोवचः ॥ प्रत्युवाचप्रहस्तंतंवाक्यंवाक्यविदांवरः ॥ ३० ॥

हमको बडीही प्रीति दिखाई जाय, और धर्मका प्रतिपालनभी हो तब प्रहस्त धननाथ कुबेरजीसे रक्षा कीजाती हुई लंकापुरीमें गया ॥ २५ ॥ और परमोदार धनेश्वर कुबेरजीसे बोला हे सुव्रत ! आपके भ्राता दशग्रीवसे भेजे जाकर ॥ २६ ॥ हम आपके समीप आये हैं । हे सर्व शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ महावीर धनेश्वर ! उस दशाननने जो कुछ कहा है आप हमारे मुखसे निकले हुए उन सब वचनोंको सुनें ॥ २७ ॥ हे विशालनेत्र ! पूर्वकालमें यह रमणीक सुप्रसिद्ध लंकापुरी भयंकर विक्रमकारी सुमाली इत्यादि राक्षसोंकरके प्रथम भोगी गई है ॥ २८ ॥ हे वत्स ! विश्रवाके पुत्र ! इसी कारणसे वह इस लंकापुरीको मांगते हैं, आप समझानेसे इसको दे दीजिये यह बात हम आपको जताते हैं ॥२९॥ वचन बोलनेमें चतुर धननाथ कुबेरजी प्रहस्तसे ऐसे वचन सुनकर उसको उत्तर देते हुए ॥३०॥

हे रात्रिचर! यह राक्षसशून्य लंकापुरी पिताजीने हमको दी है। हमने दान और सन्मानादिगुणद्वारा अनेक प्रकारके लोगोंको यहां बसाया है ॥३१॥ तुम रावणके निकट जाकर उनसे कहना कि हे महावीर! हमारा जो राज्य और पुरी है यह सब तुम्हारी है, इस कारण तुम अकंटकराज्य भोगो ॥३२॥ और हमारा धन व राज्य यह हमारा व आपका एकही है। कुबेरजी यह कहकर अपने पिताके निकट गये ॥३३॥ और उनको प्रणाम कर रावणके अभिप्रायको निवेदन करके कहा,—हे पितः! रावणने अभी हमारे पास दूत भेजा था ॥३४॥ और कहा है कि, लंकापुरी हमको देदो क्योंकि पहले राक्षसही इसके रहनेवाले थे। हे सुव्रत! इस समय हमको क्या करना चाहिये सो आप उपदेश कीजिये ॥३५॥ मुनिश्रेष्ठ ब्रह्मर्षि विश्रवाजी यह वचन सुनकर हाथ जोडकर आगे खडे कुबेरजीसे बोले कि; हमारे

दत्ताममेयंपित्रातुलंकाशून्यानिशाचरैः ॥ निवेशिताचमेरक्षोदानमानादिभिर्गुणैः ॥ ३१ ॥ ब्रूहिगच्छदशग्रीवंपुरीराज्यंचयन्मम ॥ तवाप्येतन्महाबाहोभुंक्ष्वराज्यमकंटकम् ॥ ३२ ॥ अविभक्तंत्वयासार्धंराज्यंयच्चापिमेवसु ॥ एवमुक्त्वाधनाध्यक्षोजगामपितुरंतिकम् ॥ ३३ ॥ अभिवाद्यगुरुंप्राहरावणस्यतदीप्सितम् ॥ एषताताशग्रीवोदूतंप्रेषितवान्मम ॥ ३४ ॥ दीयतांनगरीलंकापूर्वंरक्षोगणोषिता ॥ मयात्रयदनुष्ठेयंतन्ममाचक्ष्वसुव्रत ॥ ३५ ॥ ब्रह्मर्षिस्त्वेवमुक्तोऽसौविश्रवामुनिपुंगवः ॥ प्रांजलिंधनदंप्राहशृणुपुत्रवचोमम ॥ ३६ ॥ दशग्रीवोमहाबाहुरुक्तवान्ममसन्निधौ ॥ मयानिर्भर्त्सितश्चासीद्बहुशोक्तःसुदुर्मतिः ॥ ३७ ॥ सक्रोधेनमयाचोक्तोध्वंससेचपुनःपुनः ॥ श्रेयोऽभियुक्तंधर्म्यंचशृणुपुत्रवचोमम ॥ ३८ ॥ वरप्रदानसंमूढोमान्यामान्यंसुदुर्मतिः ॥ नवेत्तिममशापाच्चप्रकृतिंदारुणांगतः ॥ ३९ ॥ तस्माद्गच्छमहाबाहोकैलासंधरणीधरम् ॥ निवेशयनिवासार्थंत्यक्त्वालंकांसहानुगः ॥ ४० ॥ तत्रमंदाकिनीरम्यानदीनामुत्तमानदी ॥ कांचनैःसूर्यसंकाशैःपंकजैःसंवृतोदका ॥४१॥ कुदैमुरुत्पलैश्चैवअन्यैश्चैवसुगंधिभिः ॥ तत्रदेवाःसगंधर्वाःसाप्सरोरगकिन्नराः ॥ ४२ ॥

वचन सुनो ॥३६॥ महावीर दशग्रीवने हमसे भी पहले यह बात कही थी, हमने उस दुर्मतिको बहुत तिरस्कार किया और कह दिया था ॥३७॥ हमने क्रोधित होकर "तेरा नाश हो जायगा" वारंवार उसको यह कहा है, हे पुत्र! कल्याणकारी धर्मयुक्त हमारे वचन तुम सुनो ॥३८॥ वह दुर्मति वरदान पानेसे मोहित हो मान्य अमान्य किसीको कुछ नहीं मानता; हमारे शापसे उसका दारुण स्वभाव हो गया है ॥३९॥ इसलिये हे महावीर! तुम लंकाको छोडकर अपने सब संगियोंके साथ कैलास पर्वतपर जाय रहनेके लिये पुरी बनाओ ॥ ४० ॥ सब नदियोंसे उत्तम नदी रमणीक मन्दाकिनी वहां विराजमान है, कंचनके समान सूर्यके समान उज्ज्वल कमलफूलोंसे युक्त उसका जल है ॥४१॥ बबूले अरुणकमल और सुगन्धियुक्त फूल भी उसमें खिल रहे हैं; वहांपर देवता, गन्धर्व, अप्सरा,

उरग, किन्नर ॥ ४२ ॥ मन्दाकिनीके जलमें नित्य विहार करते हैं। हे धनद! इस राक्षसने परम वरदान पाया है; यह तुम जानतेही हो इस कारण इसके साथ विरोध करना तुमको उचित नहीं है ॥ ४३ ॥ यह सुनकर कुबेरजी पिताजीके गौरवके वश हो उनके वचन मान स्त्री, पुत्र, मंत्री, समस्त वाहन और धनको लेकर कैलासको चले गये ॥ ४४ ॥ इसके उपरान्त प्रहस्तने हर्षित चित्तसे अनुज और मंत्रियोंके साथ बैठे हुए महाबलवान् रावणके निकट जाकर कहा कि ॥ ४५ ॥ लंकापुरी इस समय सूनी पडी है। धनेश्वर कुबेरजी लंकापुरीको छोडकर चले गये इस कारण आप हम लोगोंको संग लेकर वहांपर अपना धर्मप्रतिपालन कीजिये ॥४६॥ महाबलवान् रावण प्रहस्तके ऐसे वचन सुनकर अति हर्षित हुआ और सेना;संगी व छोटे भ्राताओंको संग ले लंकानगरीमें प्रवेश करता

विहारशीलाःसततंरमंतेसर्वदाश्रिताः ॥ नहिक्षमंतवानेनवैरंधनदरक्षसा ॥ जानीषेहियथानेनलब्धःपरमकोवरः ॥४३॥ एवमुक्तोगृहीत्वातुतद्वचःपितृगौरवात् ॥ सदारपुत्रःसामात्यःसवाहनधनोगतः ॥४४॥ प्रहस्तोऽथदशग्रीवंगत्वावचनमब्रवीत् ॥ प्रहृष्टात्मामहात्मानंसहामात्यंसहानुजम् ॥४५॥ शून्यासानगरीलंकात्यक्त्वैनांधनदोगतः ॥ प्रविश्यतांसहास्माभिःस्वधर्मंतत्रपालय ॥४६॥ एवमुक्तोदशग्रीवःप्रहस्तेनमहाबलः ॥ विवेशनगरींलंकांभ्रातृभिःसबलानुगैः ॥४७॥ धनदेनपरित्यक्तांसुविभक्तमहापथाम् ॥ आरुरोहसदेवारिःस्वर्गंदेवाधिपोयथा ॥४८॥ सचाभिषिक्तःक्षणदाचरैस्तदानिवेशयामासपुरींदशाननः ॥ निकामपूर्णाचबभूवसापुरीनिशाचरैर्नीलबलाहकोपमैः ॥४९॥ धनेश्वरस्त्वथपितृवाक्यगौरवान्न्यवेशयच्छशिविमलेगिरौपुरीम् ॥ स्वलंकृतैर्भवनवरैर्विभूषितांपुरंदरःस्वरिवयथामरावतीम् ॥५०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येच०सा०उत्तरकांडेएकादशःसर्गः ॥११॥ राक्षसेंद्रोऽभिषिक्तस्तुभ्रातृभिःसहितस्तदा ॥ ततःप्रदानराक्षस्याभगिन्याःसमचिंतयत् ॥१॥

हुआ ॥ ४७ ॥ देवनाथ इन्द्रजी जिस प्रकार स्वर्गमें पहुँचते थे वैसेही वह देवताओंका शत्रु रावण कुबेरजीकी छोडी हुई बडे २ मार्गवाली लंका नगरीमें पहुँचा ॥ ४८ ॥ पहले तो वहांपर पहुँचकर निशाचरोंने रावणका अभिषेक किया, फिर रावणने पुरीको बसाया, नीले बादरके समान देहवाले निशाचरोंके झुंडोंसे वह लंकापुरी अत्यन्त परिपूर्ण हो गई ॥ ४९ ॥ इन्द्रजीने जिस प्रकार स्वर्गमें अमरावतीपुरी बसाई थी वैसेही कुबेरजीने चन्द्रमाके समान निर्मल कैलास पर्वतके शिखरपर शोभित गहनोंसे सजाय श्रेष्ठ गृहोंसे विराजमान अलकापुरी बसाई ॥५०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आ० उत्तरकांडे भाषायामेकादशः सर्गः ॥ ११ ॥ इसके उपरान्त राक्षसपपि रावण लंकाका राज्य पाय राक्षसी बहनके व्याह करनेके लिये अपने भ्राताओंके सहित चिन्ता करता हुआ ॥ १ ॥

उस कालमें राक्षसराज रावण उस शूर्पणखा नामक राक्षसी बहनको कालकेय दानवोंमें श्रेष्ठ विद्युज्जिह्वको दान करता हुआ ॥२॥ हे राम ! इस प्रकारसे अपनी बहनका विवाह कर दशग्रीव शिकार करनेको निकला, शिकार खेलते २ उसने दितिके पुत्र मयको देखा ॥ ३ ॥ निशाचर रावणने उसको कन्याके सहित देखकर पूँछा, आप कौन हैं ? जो विना मनुष्यके और मृगके वनमें विचरते हैं ॥४॥ इस मृगनयनी कन्याके सहित आप किस कारण घूमते हैं ? हे राम ! तब मयने ऐसा पूँछते हुए उस निशाचरसे कहा ॥ ५ ॥ आपसे यह समस्त वृत्तान्त यथार्थ २ वर्णन करता हूं श्रवण कीजिये. जान पडता है,-आपने सुना होगा—हेमानामक अप्सरा है ॥ ६ ॥ जैसे इन्द्रजीको शची मिली थी वैसेही देवताओंने उस हेमाको हमें देदिया था; मैं हजार वर्षतक उसमें चित्त लगाये

ददौतांकालकेंद्रायदानवेंद्रायराक्षसीम् ॥ स्वसांशूर्पणखांनामविद्युज्जिह्वायराक्षसः ॥ २ ॥ अथदत्त्वास्वयंरक्षोमृगयामटतेस्मतत् ॥ तत्रापश्यत्ततोराममयंनामदितेःसुतम् ॥ ३ ॥ कन्यासहायंतंदृष्ट्वादशग्रीवोनिशाचरः ॥ अपृच्छत्कोभवानेकोनिर्मनुष्यमृगेवने ॥ ४ ॥ अनयामृगशावाक्ष्याकिमर्थंसहतिष्ठसि ॥ मयस्तदाब्रवीद्रामपृच्छंतंतंनिशाचरम् ॥ ५ ॥ श्रूयतांसर्वमाख्यास्येयथावृत्तमिदंतव ॥ हेमानामाप्सरास्तत्रश्रुतपूर्वायदित्वया ॥ ६ ॥ दैवतैर्ममसादत्तापौलोमीवशतक्रतोः ॥ तस्यांसक्तमनाह्यासंदशवर्षशतान्यहम् ॥ ७ ॥ साचदैवतकार्येणत्रयोदशसमागता ॥ वर्षंचतुर्दशंचैवततोहेममयंपुरम् ॥ ८ ॥ वज्रवैदूर्यचित्रंचमाययानिर्मितंमया ॥ तत्राहमवसंदीनस्तयाहीनःसुदुःखितः ॥ ९ ॥ तस्मात्पुराद्दुहितरंगृहीत्वावनमागतः ॥ इयंममात्मजाराजंस्तस्यःकुक्षौविवर्धिता ॥ १० ॥ भर्तारमनयासार्धमस्याःप्राप्तोऽस्मिमार्गितुम् ॥ कन्यापितृत्वंदुःखंहिसर्वेषांमानकांक्षिणाम् ॥ ११ ॥ कन्याहिद्वेकुलेनित्यंसंशयेस्थाप्यतिष्ठति ॥ पुत्रद्वयंममाप्यस्यांभार्यायांसंबभूवह ॥ १२ ॥ मायावीप्रथमस्तातदुंदुभिस्तदनंतरः ॥ एवंतेसर्वमाख्यातंयाथातथ्येनपृच्छतः ॥ १३ ॥

आसक्त रहा ॥ ७ ॥ अब वह देवताओंका कार्य करनेके लिये देव लोकको चली गई, मैं उसके विरहसे कातर हो चौदह वर्ष तक अपनी सुवर्णमय पुरीमें रहा ॥ ८ ॥ यह पुरी हमने वज्र और वैदूर्य मणिसे चित्रित मायासे बनाई थी वहां मैं दीन हीन होकर रहा ॥ ९ ॥ इस समय इस पुरीसे अपनी बेटीको लेकर हम वनमें आये हैं । हे राजन् ! यह मेरी बेटी उसी हेमाके गर्भसे उत्पन्न हुई है ॥ १० ॥ इसके योग्य वरको खोजनेके लिये इसको साथ ले वनमें आये हैं ! मानी जनोंके लिये कन्याका पिता होना बडे दुःखकी बात है ॥११॥ अविवाहिता कन्यापिता, माता दोनोंके कुलको संशयमें डालती है, हे तात ! भार्या हेमाके गर्भसे हमको दो पुत्रभी उत्पन्न हुए थे ॥ १२ ॥ हे तात पहलेका नाम मायावी और दूसरेका नाम दुन्दुभी था, हे तात ! तुम्हारे पूंछने पर हमने

सबही यथार्थ२कह दिया ॥ १३ ॥ हे वत्स ! तुम कौन हो ? यह हम किस प्रकारसे जान सकें ? वह राक्षस ऐसे वचन सुनकर विनीतभावसे बोला ॥ १४ ॥ कि, हम ब्रह्माजीके पोते पुलस्त्यके पुत्र विश्रवा मुनिके सुत हैं, हमारा नाम दशग्रीव है ॥ १५ ॥ हेराम ! उस कालमें दानवोंमेंश्रेष्ठ दानव राक्षसपतिके यह वचन सुन उसको ऋषि पुत्र जानता हुआ ॥१६॥ यह जानतेही उसने अपनी पुत्री मदोदरीका विवाह रावणके साथ करनेका अभिलाषकिया, इसके उपरान्त मय कन्याका हाथ रावणके हाथमें पकडवाय ॥ १७ ॥ और हँसकर दैत्योंमें इन्द्रमयने राक्षसोंमें इन्द्र रावणसे कहा, हे राजन् ! इस मेरी पुत्रीको हेमा अप्सराने गर्भमें धारण करके उत्पन्न किया है ॥ १८ ॥ तुम इस मंदोदरी कन्याको अपनी भार्या बनानेके लिये ग्रहण करो, हे राम ! दशग्रीवने कहा, आपके वचनोंको हमने अंगीकार किया ॥ १९ ॥ ऐसा कहकर उसी स्थानमें अग्नि जलाय मंदोदरीका पाणिग्रहण किया । हे राम ! रावण दारुणस्वभावको

त्वामिदानींकथंतातजानीयांकोभवानिति ॥ एवमुक्तंतुतद्रक्षोविनीतांमिदमब्रवीत् ॥ १४ ॥ अहंपौलस्त्यतनयोदशग्रीवश्चनामतः ॥ मुनेविश्र वसोयस्तुतृतीयोब्रह्मणोऽभवत् ॥१५॥ एवमुक्तस्तदारामराक्षसेंद्रेणदानवः ॥ महर्षेस्तनयंज्ञात्वामयोदानवपुंगवः ॥१६॥ दातुंदुहितरंतस्मैरोच यामासतत्रवै ॥ करेणतुकरंतस्याग्राहयित्वामयस्तदा ॥१७॥ प्रहसन्प्राहदैत्येंद्रोराक्षसेंद्रमिदंवचः ॥ इयंममात्मजाराजन्हेमयाप्सरसाधृता ॥१८॥ कन्यामंदोदरीनामपत्न्यर्थंप्रतिगृह्यताम् ॥ बाढमित्येवतंरामदशग्रीवोऽभ्यभाषत ॥१९॥ प्रज्वाल्यतत्रचैवाग्निमकरोत्पाणिसंग्रहम् ॥ सहित स्यमयोरामशापाभिज्ञस्तपोधनात् ॥ २० ॥ विदित्वातेनसादत्तातस्यपैतामहंकुलम् ॥ अमोघांतस्यशक्तिंचप्रददौपरमाद्भुताम् ॥ २१ ॥ परेणतपसालब्धांजघ्निवाँल्लक्ष्मणंयया ॥ एवंसकृत्वादारान्वैलंकायाईश्वरःप्रभुः ॥२२॥ गत्वातुनगरींभार्येभ्रातृभ्यांसमुपाहरत् ॥ वैरोचनस्य दौहित्रींवज्रज्वालेतिनामतः ॥ २३ ॥ तांभार्यांकुम्भकर्णस्यरावणःसमकल्पयत् ॥ गंधर्वराजस्यसुतांशैलूषस्यमहात्मनः ॥ २४ ॥

प्राप्त होगा तपोधन विश्रवाजीके दिये हुये इस शापके वृत्तान्तको ॥ २० ॥ मय जानता था तो भी उसने यह जानकर कि जो मैं कन्या न दूंगा तो यह बलसे ग्रहण करेगा यह जान और ब्रह्माजीके वंशसे उसकी उत्पत्ति समझ मयने अपनी पुत्रीको दिया और मयने रावणको अमोघ परमअद्भुत शक्तिभी दी ॥ २१ ॥ जो कि उसने अति तप करके पाई थी; रावने युद्धमें उसी शक्तिसे लक्ष्मणके ऊपर प्रहार किया था इस प्रकारसे भार्या ग्रहण कर राक्षसोंका राजा रावण लंकाको गया ॥ २२ ॥ अपने छोटे भ्राताओंकाविवाह करनेको दो भार्याओंको रावण ले आया था । वैरोचनकी बेटी वज्र ज्वाला नामकको ॥ २३ ॥ रावणने कुंभकर्णकी भार्या बनाया शैलूष नाम महात्मा गन्धर्वराजकी पुत्री ॥ २४ ॥

सरमा नामकी उसने विभीषणकी स्त्री किया । इस सरमाने मानस सरोवरके तीर पर जन्म ग्रहण किया था ॥ २५ ॥ इस समय वर्षा ऋतुके आजानेसे मानस सरोवर उस स्थान तक बढा कि जहां वह कन्या थी, वह देखकर कन्याकी माता स्नेहके मारे रोते २ यह बोली ॥ २६ ॥ "सरःमा वर्द्धत" (सरोवरतुम मत बढो) इस कहनेहीसे इस कन्याका नाम सरमा हुआ इस प्रकारसे विवाह कर निशाचर रावण, कुम्भकर्ण, विभीषण ॥ २७ ॥ अपनी २ स्त्रियोंके साथ लंकामें विहार करने लगे । जैसे नंदनवनमें गन्धर्व लोग विहार करते हैं कुछ काल बीते मन्दोदरीने मेघनादनामक पुत्रको उत्पन्न किया ॥ २८ ॥ यही पुत्र आप सब लोगोंके निकट इन्द्रजीत नामसे विख्यात हुआ । पूर्वकालमें यह रावणका पुत्र ॥ २९ ॥ रोदन करते २ बादलके समान महान् शब्दसे नाद करने

सरमांनामधर्मज्ञांलेभेभार्यांविभीषणः ॥ तीरेतुसरसोवैतुसंजज्ञेमानसस्यहि ॥ २५ ॥ सरस्तदामानसंतुववृधेजलदागमे ॥ मात्रातुतस्यःकन्या याःस्नेहेनाक्रंदितंवचः ॥ २६ ॥ सरोमावर्धतेत्युक्तंततःसासरमाऽभवत् ॥ एवंतेकृतदारावैरेमिरेतत्रराक्षसाः ॥ २७ ॥ स्वांस्वांभार्यामुपादाय गंधर्वाइवनंदने ॥ ततोमंदोदरीपुत्रंमेघनादमजीजनत् ॥ २८ ॥ सएषइन्द्रजिन्नामयुष्माभिरभिधीयते ॥ जातमात्रेणहिपुरातेनरावणसूनुना ॥ २९ ॥ रुदतासुमहान्मुक्तोनादोजलधरोपमः ॥ जडीकृताचसालंकातस्यनादेनराघव ॥ ३० ॥ पितातस्याकरोन्नाममेघनादइतिस्वयम् ॥ सोऽवर्धततदारामरावणांतःपुरेशुभे ॥ ३१ ॥ रक्ष्यमाणोवरस्त्रीभिश्छन्नःकाष्ठैरिवानलः ॥ मातापित्रोर्महाहर्षजनयन्रावणात्मजः ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडेद्वादशःसर्गः ॥ १२ ॥ अथलोकेश्वरोत्सृष्टातत्रकालेनकेनचित् ॥ निद्रासमभवत्तीव्राकुंभकर्णस्यरूपिणी ॥ १ ॥ ततोभ्रातरमासीनंकुंभकर्णोऽब्रवीद्वचः ॥ निद्रामांबाधतेराजन्कारयस्वममालयम् ॥ २ ॥ विनियुक्तास्ततोराज्ञाशिल्पिनोविश्वकर्मवत् ॥ विस्तीर्णंयोजनंस्निग्धंततोद्विगुणमायतम् ॥ ३ ॥

लगा, हे राघव ! उसके नाद करनेंसे यह लंकापुरी जड होगई॥ ३० ॥इस कारणसे उसके पिता रावणने स्वयं उसका नाममेघनाद रक्खा हे राम! वह रावणके शुभ अन्तःपुरमें बढने लगा ॥ ३१ ॥ भली स्त्रियोंसे उसकी रक्षा होने लगी, वह काठसे ढकी हुई अग्निके समान माता पिताको अत्यन्त हर्ष उपजाता हुआ मेघनाद बढने लगा ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां द्वादशः सर्गः ॥ १२ ॥ इसके उपरांतमूर्तिमान घोर निद्रा कुछ कालके पीछे ब्रह्माजीसे प्रेरित हो कुम्भकर्णका आश्रय करती हुई ॥ १ ॥ तब कुम्भकर्ण बैठे हुए अपने भ्रातासे बोला कि, हे राजन् ! नींद हमको पीडित करती है इस लिये हमारे सोनेको वासस्थान बनवा दो ॥ २ ॥ उसके पीछे विश्वकर्माके समान थवई लोगोंने राजासे नियुक्तहो एक योजन चौडा और दो

योजन लम्बा ॥ ३ ॥ बाधा रहित स्थान जो कि देखने योग्य था कुम्भकर्णके लिये बनाया, यह स्थान स्फटिकमय और सुवर्णमय खंबोंसे सब जगह शोभायमान था ॥ ४ ॥ इसकी सीढियें वैडूर्यमणिकीबनी हुई थीं द्वार हाथी दांतके और चबूतरे स्फटिकके बने और किंकिणियोंके जालसे वह स्थान छायागया ॥ ५ ॥ मेरुपर्वतकी पुण्ययुक्त गुफाके समान सब कहीं सदा सुखदायक सर्वसुखकारी मनोहर स्थान राक्षसराज रावणने बनवाया ॥ ६ ॥ महाबल कुम्भकर्ण निद्रासे युक्त होकर सहस्रों वर्षतक वहां सोता रहा परन्तु जागा नहीं ॥ ७ ॥ जब कुम्भकर्ण नींदके वश हुआ तब रावण निरंकुश हो देवता, गन्धर्व, यक्ष और ऋषि जनोंको संहार करने लगा ॥८॥ नन्दन इत्यादि जितने विचित्र उद्यान थे दशानन अत्यन्त क्रोधमें भरकर जाय उन सब वनोंको उजाडने लगा ॥ ९ ॥ हाथी जिस प्रकार नदीमें क्रीडा करके उसको विध्वंस करता है; पवन जिस प्रकार वृक्षोंको हिलायकर उखाड डालता है, वज्र जिस प्रकार पर्वतपर गिरकर उसको

दर्शनीयंनिराबाधंकुंभकर्णस्यचक्रिरे ॥ स्फाटिकैःकांचनैश्चित्रैःस्तंभैःसर्वत्रशोभितम् ॥४॥ वैडूर्यकृतसोपानंकिंकिणीजालकंतथा ॥ दांततोरणविन्यस्तंवज्रस्फटिकवेदिकम् ॥५॥ मनोहरंसर्वसुखंकारयामासराक्षसः ॥ सर्वत्रसुखदंनित्यंमेरोःपुण्यांगुहामिव ॥६॥ तत्रनिद्रांसमाविष्टःकुंभकर्णोमहाबलः ॥ बहून्यब्दसहस्राणिशयानोनचबुध्यते ॥७॥निद्राभिभूतेतुतदाकुंभकर्णेदशाननः ॥ देवर्षियक्षगंधर्वान्संजघ्नेहिनिरंकुशः॥८॥ उद्यानानिविचित्राणिनंदनादीनियानिच ॥ तानिगत्वासुसंक्रुद्धोभिनत्तिस्मदशाननः ॥ ९ ॥ नदींगजइवक्रीडन्वृक्षान्वायुरिवक्षिपन् ॥ नगान्वज्रइवोत्सृष्टोविध्वंसयतिराक्षसः ॥ १० ॥ यथावृत्तंतुविज्ञायदशग्रीवंधनेश्वरः ॥ कुलानुरूपंधर्मज्ञोवृत्तंसंस्मृत्यचात्मनः ॥ ११ ॥सौभ्रात्रदर्शनार्थंतुदूतंवैश्रवणस्तदा ॥ लंकांसंप्रेषयामासदशग्रीवस्यवैहितम् ॥१२॥ सगत्वानगरींलंकामाससादविभीषणम् ॥ मानितस्तेनधर्मेणपृष्टश्चागमनंप्रति ॥१३॥ पृष्ट्वाचकुशलंराज्ञोज्ञातीनांचविभीषणः ॥ सभायांदर्शयामासतमासीनंदशाननम् ॥ १४ ॥ सदृष्ट्वातत्रराजानंदीप्यमानंस्वतेजसा ॥ जयेतिवाचासंपूज्यतूष्णींसमभिवर्तते ॥१५॥ सतत्रोत्तमपर्यंकेवरास्तरणशोभिते॥ उपविष्टंदशग्रीवंदूतोवाक्यमथाब्रवीत् ॥ १६ ॥

भेदता है वैसेही रावण राक्षसने इन उद्यानोंका नाश किया ॥१०॥ परन्तु धर्मात्मा कुबेरजीने रावणका ऐसा चरित्र जानकर अपने कुलके अनुरूप व्यवहारका स्मरण किया ॥११॥ उस कालमें कुबेरजीने भायपन दिखानेकी वासनासे हितकारी उपदेश देनेके लिये रावणके निकट लंकामें एक दूत भेजा ॥१२॥ दूत लंकानगरीमें जाकर पहले विभीषणजीके साथ मिला, विभीषणजीने धर्मानुसार उसका सन्मान करके आनेका कारण पूँछा ॥१३॥ और धनपति कुबेरजीका कुशल व अपने जातिवालोंका कुशल पूँछकर विभीषणजीने उस दूतको सभामें बैठे हुए रावणको दिखा दिया ॥१४॥ अपने तेजकी प्रभासे देदीप्यमान राजा रावणको वहां देखकर दूत जयवाक्यसे उनको सम्मानित कर एक क्षण तो वह चुपचाप खडा रहा ॥ १५ ॥ फिर सभामें बिछे हुए बिछौनोंमें सजे हुए उत्तम

आसन पर बैठे हुए रावणसे वह दूत बोला ॥१६॥ हे राजन् ! आपके भ्राता कुबेरजीने माता पिताके कुलचरित्रके समान जो आपसे कहा है हम वह समस्त आपके निकट कहते हैं ॥ १७ ॥ हे राजन् ? अबतक आपने जो कुछ किया है, बस वह बहुत होगया; इस समय श्रेष्ठ चरित्रको संग्रह करना आपको उचित है, यदि तुम सामर्थ्य रखतेहो तो साधु लोगोंका आचरण किया हुआ धर्म आप आचरण करो ॥१८॥ आपसे नन्दनवन उजाडा गया, अनेक ऋषि मारडाले गये यह सब हमने देखा और सुना है; देवता तुम्हारा नाश करनेके लिये जो बडाभारी उद्योग करते हैं वहभी समस्त हमने सुना है ॥ १९ ॥ हे राक्षसनाथ बालकअपराध करनेपरभी बन्धुलोगोंसे रक्षित होता है, यद्यपि तुमने वारंवार हमारा निरादर किया है, तथापि तुम्हारी रक्षा करनी हमारा कर्तव्य है ॥२०॥ और हम जितेंद्रिय व नियमके वश हो रुद्रजीके प्रसाद पानेका व्रत धारणकर हिमालयपर्वतपर धर्मकी उपासना करनेकेलिये गये थे ॥ २१ ॥ उसी स्थानमें

राजन्वदामितेसर्वंभ्रातातवयदब्रवीत् ॥ उभयोःसदृशंवीरवृत्तस्यचकुलस्यच॥१७॥ साधुपर्याप्तमेतावत्कृतश्चारित्रसंग्रहः ॥ साधुधर्मेव्यवस्था नंक्रियतांयदिशक्यते ॥१८॥ दृष्टंमेनंदनंभग्नमृषयोनिहताःश्रुताः ॥ देवतानांसमुद्योगस्त्वत्तोराजन्मयाश्रुतः ॥१९॥ निराकृतश्चबहुशस्त्वयाहं राक्षसाधिप ॥ सापराधोऽपिबालोहिरक्षितव्यःस्वबांधवैः ॥२०॥ अहंतुहिमवत्पृष्ठंगतोधर्ममुपासितुम् ॥ रौद्रंव्रतंसमास्थायनियतोनियतेंद्रियः ॥२१॥ तत्रदेवोमयादृष्टउमयासहितःप्रभुः ॥ सव्यंचक्षुर्मयादैवात्तदेव्यांनिपातितम् ॥२२॥ कान्वेषेतिमहाराजनखल्वन्येनहेतुना ॥ रूपं चानुपमंकृत्वारुद्राणीतत्रतिष्ठति ॥२३॥ देव्यादिव्यप्रभावेणदग्धंसव्यंममेक्षणम् ॥ रेणुध्वस्तमिवज्योतिःपिंगलत्वमुपागतम् ॥२४॥ ततोऽहमन्यद्विस्तीर्णंगत्वातस्यगिरेस्तटम् ॥ तूष्णींवर्षशतान्यष्टौसमधारंमहाव्रतम् ॥२५॥ समाप्तेनियमेतस्मिंस्तत्रदेवोमहेश्वरः ॥ ततःप्रीतेनमनसाप्राहवाक्यमिदंप्रभुः ॥ २६ ॥ प्रीतोऽस्मितवधर्मज्ञतपसानेनसुव्रत ॥ मयाचैतद्व्रतंचीर्णंत्वयाचैवधनाधिप ॥ २७ ॥

हमने पार्वतीजीके सहित देवाधिदेव महादेवजीको देखपाया, उस कालमें रुद्राणीजी अनुपम रूप धारण करके वहां स्थित थीं सो "यह कौन है" इसको जाननेके लिये विस्मित हो हमने भाग्यके वश हो देवीकी ओर बाईं आंखसे देखा, इस देखनेमें और किसी प्रकारकाभी कारण नहीं था ॥२२॥ ॥२३॥ परन्तु आंखसे निहारतेही देवीजीके दिव्य प्रभावसे हमारा बायां नेत्र भस्म होगया और धूल पडनेसे ढके नक्षत्रके समान हमारा वह नेत्र पीला पडगया ॥२४॥ इसके उपरान्त हमने उस पर्वतकी ओर एक बडे विस्तारवाले तटपर मौनभावसे आठ शत वर्षतक सर्व भाँतिसे महाव्रत धारण किया ॥ २५ ॥ जबवह नियम समाप्त होगया तब देव महेश्वरजी वहां उपस्थित हुए उसके पीछे वह प्रसन्न होकर बोले ॥ २६ ॥ हे धर्मज्ञ ! सुव्रत ? इस तुम्हारी तपस्यासे हम प्रसन्न हुए हैं हे धनेश्वर !

एक हमनेही इस व्रतको पूर्ण किया था और एक इस समय तुमने किया ॥ २७ ॥ हम दोनोंके सिवाय ऐसा तीसरा पुरुष दिखाई नहीं देता कि, जो ऐसे व्रत आचरण करनेमें समर्थ हो; हमनेही यह परम दुष्कर व्रत प्रथम कालमें सिद्ध किया था ॥ २८ ॥ इस कारण हे सौम्य ! धनेश्वर ! तुम हमारे संग सखा होनेकी वासना करो, हे पापरहित ! तुमने तपके प्रभावसे हमको जीत लिया है इसलिये तुम हमारे सखा होओ ॥ २९ ॥ अधिक करके तुम्हारा बायां नेत्र जो दग्ध होगया है, देवीजीका रूप देखनेसे पिंगल वर्ण होगया है ॥ ३० ॥ इसी कारणसे तुम्हारा "एकाक्षिपिङ्गली" नाम बहुत दिनोंतक बना रहेगा, इस प्रकारसे शिवाजीके साथ बन्धुता प्राप्त करके उनकी आज्ञा ले ॥ ३१ ॥ जब हम लौटकर आये तब हम तुम्हारे पाप कार्योंकी बातें सुनने लगे इसी कार णसे तुमसे कहते हैं कि, तुम कुलके कलंकजनक अधर्मी लोगोंका संग करना छोड दो ॥ ३२ ॥ निश्चय जानरक्खो कि देवता और देवर्षि लोग मिलकर

तृतीयःपुरुषोनास्तियश्चरेद्व्रतमीदृशम् ॥ व्रतंसुदुष्करंह्येतन्मयैवोत्पादितंपुरा ॥ २८ ॥ तत्सखित्वंभमयासौम्यरोचयस्वधनेश्वर ॥ तपसा निर्जितश्चैवसखाभवममानघ ॥ २९ ॥ देव्यादग्धंप्रभावेणयच्चसव्यंतवेक्षणम् ॥ पैंगल्यंयदवाप्तंहिदेव्यारूपनिरीक्षणात् ॥ ३० ॥ एकाक्षि पिंगलीत्येवमातस्थास्यतिशाश्वतम् ॥ एवंतेनसखित्वंचप्राप्यानुज्ञांचशंकरात् ॥ ३१ ॥ आगतेनमयाचैवंश्रुतस्तेपापनिश्चयः ॥ तदधर्मिष्ठसं योगान्निवर्तकुलदूषणात् ॥ ३२ ॥ चिंत्यतेहिवधोपायःसर्षिसंघैःसुरैस्तव ॥ एवमुक्तोदशग्रीवःकोपसंरक्तलोचनः ॥ ३३ ॥ हस्तान्दंतांश्चसं पिष्यवाक्यमेतदुवाचह ॥ विज्ञातंतेमयादूतवाक्यंयत्त्वंप्रभाषसे ॥ ३४ ॥ नैवत्वमसिनैवासौभ्रात्रायेनासिचोदितः ॥ हितंनैषममैतद्धिब्रवीति धनरक्षकः ॥३५॥ महेश्वरसखित्वंतुमूढःश्रावयतेकिल ॥ नैवेदंक्षमणीयंमेयदेतद्भाषितंत्वया ॥३६॥ यदेतावन्मयाकालंदूतंतस्यतुमर्षितम् ॥ नहंतव्योगुरुर्ज्येष्ठोमयायमितिमन्यते ॥ ३७ ॥

तुम्हारे वधका उपाय सोच रहे हैं ! यह सुनकर रावणके नेत्र क्रोधके मारे लाल हो आये ॥ ३३ ॥ दांतोंको किटकिटाता हुआ और हाथोंको मलता हुआ क्रोधसे पूर्ण होकर बोला कि रे दूत ! तेरा कहा हुआ हम समस्त जानते हैं ॥ ३४ ॥ तू या तेरा भेजनेवाला हमारा भ्राता दोनोंकोही अब जीवित रहना नहीं पडेगा धनेश्वरने जो कुछ भी कहा है, वह कुछ भी हमारा हितकर नहीं है ॥ ३५ ॥ उस मूढने हमको केवल यही सुनाया है कि महेश्वर सखा हो गया, इससे जो कुछ तैंने कहा उसको हम नहीं सह सकते ॥ ३६ ॥ हे दूत ! इतने दिनोंतक जो हम चुप रहे इसका यह कारण है कि हम समझते थे कि वह गुरुजन हैं बडे भ्राता हैं उनका मारना उचित नहीं है ॥ ३७ ॥

परन्तु इस समय उसका वचन सुनकर हमारी यह मति स्थिर हुई है कि हम उसका विनाश करेंगे, अधिक करके आज हम बाहुवीर्यका आश्रय लेकर त्रिलोकीको जीतेंगे ॥ ३८ ॥ अधिक क्या कहैं, हम केवल इस कुबेरके वध प्रसंगसे चारों लोकपालोंको इसी मुहूर्त यमराजके भवनमें पठावेंगे ॥३९॥ लंकापति रावणने यह कहकर खड्गके प्रहारसे दूतके प्राणोंका नाश किया, और उस दूतकी मृतक देह खानेको रावणने दुरात्मा राक्षसोंको आज्ञा दी ॥ ४० ॥ उसके पीछे रावण त्रिलोकीको जीतनेके अभिलाषसे स्वस्त्ययनादि पढ, रथपर चढ वहांको गया जहां कुबेरजी बसते थे ॥४१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां त्रयोदशः सर्गः ॥ १३ ॥ इसके उपरांत सदाके बलदर्पित रावणने छः मंत्रियोंको संग ले जिनके नाम महोदर, प्रहस्त, मारीच, शुक,

तस्यत्विदानींश्रुत्वामेवाक्यमेषाकृतामतिः ॥ त्रींल्लोकानपिजेष्यामिबाहुवीर्यमुपाश्रितः ॥३८॥ एतन्मुहूर्तमेवाहंतस्यैकस्यतुवैकृते ॥ चतुरो लोकपालांस्तान्नयिष्यामियमक्षयम्॥३९॥एवमुक्त्वातुलंकेशोदूतंखड्गेनजघ्निवान् ॥ ददौभक्षयितुंह्येनंराक्षसानांदुरात्मनाम् ॥४०॥ ततःकृत स्वस्त्ययनोरथमारुह्यरावणः॥त्रैलोक्यविजयाकांक्षीययौयत्रधनेश्वरः॥४१॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०उत्तरकांडे त्रयोदशःसर्गः ॥ १३ ॥ ततःससचिवैःसार्धंषड्भिर्नित्यबलोद्धतः ॥ महोदरप्रहस्ताभ्यांमारीचशुकसारणैः ॥ १ ॥ धूम्राक्षेणचवीरेणनित्यं समरगर्धिनाः ॥ वृतः संप्रययौश्रीमान्क्रोधाल्लोकान्दहन्निव ॥२॥ पुराणिसनदीःशैलान्वनान्युपवनानिच॥अतिक्रम्यमुहूर्तेनकैलासंगिरिमागमत् ॥३॥ सन्निविष्टंगिरौतस्मिन्राक्षसेंद्रंनिशम्यतु ॥ युद्धप्सुंतंकृतोत्साहंदुरात्मानंसमंत्रिणम् ॥४॥ यक्षानशेकुःसंस्थातुंप्रमुखेतस्यरक्षसः ॥ राज्ञोभ्रातेतिविज्ञायगतायत्रधनेश्वरः ॥ ५ ॥ तेगत्वासर्वमाचख्युर्भ्रातुस्तस्यचिकीर्षितम् ॥ अनुज्ञातायथुर्हृष्टायुद्धायधनदेवते ॥ ६ ॥

सारण ॥ १ ॥ और धूम्राक्ष थे इन सब वीरोंको जो कि नित्य संग्राम करनेके लिये तैयार थे साथलिये तीनों लोकोंको भस्म करता हुआसाही रावण चला ॥ २ ॥ विविध नगर, नदी, पर्वत और इन उपवनोंको एक मुहूर्तमें नांघकर कैलासके शिखरपर आया ॥ ३ ॥ दुर्मति राक्षसपति रावण मंत्रिजनोंके साथ समरकी वासनासे उत्साहित हो उस पर्वतके शिखरपर आया है ॥ ४ ॥ यहांके यक्ष लोग यह वृत्तांत सुनकर उस राक्षसके सन्मुख खडे होनेमें समर्थ न हुए बरन् यह राक्षस कुबेरजी राजाका भ्राता है यह जान कुबेरजीके पास चले गये ॥५॥ समस्त राक्षसोंने जाकर कुबेरजीसे उनके भ्राताके किये कार्य बताये उसके पीछे वह लोग कुबेरजीकी आज्ञा पाकर हर्षित मनसे युद्ध करनेके लिये निकले ॥ ६ ॥

उस समय कैलास पर्वत समुद्रकी नाईं रावणकी सेनाके बढनेसे मानो चलायमान होने लगा ॥ ७ ॥ फिर यक्ष और राक्षस लोगोंका कठोर युद्ध आरंभ हुआ शीघ्रही राक्षसराजके सब मंत्री व्याकुल हुए ॥ ८ ॥ तब निशाचर दशग्रीव अपनी सेनाका ऐसा हाल देख हर्ष सहित बडा भारी सिंहनाद करके क्रोधके वश हो उनके सन्मुख दौडा ॥ ९ ॥ राक्षसपति रावणके जो घोर पराक्रमी सचिव थे, उनमेंसे एक २ मंत्री हजार २ यक्षोंके साथ युद्ध करने लगे ॥ १० ॥ तब रावण शक्ति, तोमर, असि, मूसल और गदासे बध्यमान हो उस सेनाकी थाह लेने लगा ॥११॥ वेगसे छूटी हुई वर्षाकी धाराके समान शस्त्रोंकी धारासे निरंतर घायल हो रावणको श्वास लेनेका अवकाश भी न रहा ॥ १२ ॥ मेघ जिस प्रकार पर्वतको जलसे गीला करते हैं वैसेही रावण रुधिर धारासे भीग

ततोबलानांसंक्षोभोऽभ्यवर्धतइवोदधेः ॥ तस्यनैर्ऋतराजस्यशैलंसंचालयन्निव ॥ ७ ॥ ततोयुद्धंसमभवद्यक्षराक्षससंकुलम् ॥ व्यथिताश्चाभवंस्तत्रसचिवाराक्षसस्यते ॥ ८ ॥ सदृष्ट्वाताहशंसैन्यंदशग्रीवोनिशाचरः ॥ हर्षनादान्बहून्कृत्वासक्रोधादभ्यभाषत ॥ ९ ॥ येतुतेराक्षसेंद्रस्य सचिवाघोरविक्रमाः ॥ तेषांसहस्रमेकैकोयक्षाणांसमयोधयत् ॥ १० ॥ ततोगदाभिर्मुसलैरसिभिःशक्तितोमरैः ॥ हन्यमानोदशग्रीवस्तत्सैन्यंसमगाहत ॥ ११ ॥ सनिरुच्छ्वासवत्तत्रवध्यमानोदशाननः ॥ वर्षद्भिरिवजीमूतैर्धाराभिरवरुध्यत ॥ १२ ॥ नचकारव्यथांचैवयक्षशस्त्रैः समाहतः ॥ महीधरइवांभोदैर्धाराशतसमुक्षितः ॥ १३ ॥ समहात्मासमुद्यम्यकालदंडोपमांगदाम् ॥ प्रविवेशततःसैन्यंनयन्यक्षान्यमक्षयम् ॥ १४ ॥ सकक्षमिवविस्तीर्णंशुष्केंधनमिवाकुलम् ॥ वातेनाग्निरिवादीप्तोयक्षसैन्यंददाहतत् ॥१५॥ तैस्तुतत्रसहामात्यैर्महोदरशुकादिभिः ॥ अल्पावशेषास्तेयक्षाःकृतावातैरिवांबुदाः ॥१६॥ केचित्समाहताभग्नाःपतिताःसमरेक्षितौ ॥ ओष्ठांश्चदशनैस्तीक्ष्णैरदशन्कुपितारणे ॥१७॥ श्रांताश्चान्योन्यमालिंग्यभ्रष्टशस्त्रारणाजिरे ॥ सीदंतिचतदायक्षाःकूलाइवजलेनह ॥ १८ ॥

गया, परंतु यक्ष लोगोंके असंख्य अस्त्रोंसे घायल होकर भी रावणने कुछ पीडा नहीं मानी ॥ १३ ॥ महाबलवान् रावणने कालदंडके समान गदा उठाय सेनामें प्रवेश करते २ अनेक यक्षोंको यमराजके भवनमें पहुँचा दिया ॥१४॥ अग्निसे लहकी हुई आग जिस प्रकार बडे २ बहुत सूखे काठको जला देती है वैसेही रावण यक्षोंकी सेनाको भस्म करने लगा ॥ १५ ॥ पवनके चलनेसे जिस प्रकार बादल टुकडे २ हो जाते हैं वैसेही महोदर और शुकादि मंत्रियोंने भी यक्षोंको छिन्न भिन्न करके उनको बहुतही अल्प करडाला ॥ १६ ॥ कोई २ संग्राममें घायल हो अंग कटाय पृथ्वीपर गिर पडे और कोई २ कुपितभावसे युद्ध भूमिमें तीक्ष्ण दांतोंसे ओठ काटते २ पृथ्वीपर गिरा ॥ १७ ॥ सैकडों यक्ष थककर रणभूमिमें शस्त्र छोड परस्परको लिपटने चिपटने लगे।

इस प्रकारसे वह लोग धारसे टूटे हुए नदीके किनारेके समान भहरा पडे ॥ १८ ॥ यक्षवीरलोग पृथ्वीपर धाय २ युद्ध करते२ शत्रुके हाथसे मृतक हो झुण्डके झुण्ड स्वर्गको गमन करने लगे. इसकारण युद्ध देखनेवाले ऋषिजनोंको और स्वर्गमें गये वीर लोगोंको वहां ठहरनेके लिये स्थान मिलना कठिन हुआ॥ १९॥ पहले यक्षोंका राक्षसोंसे भागा जाता देख धननाथमहावीर कुबेरजी और दूसरे यक्षलोगोंको संग्राममें भेजने लगे ॥ २० ॥ हे राम ! इसी अवसरमें संयोगकंटक नामक यक्ष कुबेरजीका भेजा हुआ बडी भारी सेना और वाहनोंके सहित संग्राममें आया॥ २१ ॥ विष्णुजीके चक्रके समान उस यक्षके चक्र मारनेसे मारीच राक्षस संग्राममें घायल हो पुण्यक्षीण नक्षत्रोंके समान पर्वतसे पृथ्वीपर गिर पडा ॥२२॥ निशाचर मारीच चेतना पाय एक मुहूर्ततक विश्राम करके उस यक्षसे युद्ध करता है कि, इतनेहीमें वह संग्रामसे भाग गया ॥ २३ ॥ जिसस्थानमें द्वारपाल लोग खडे रहते हैं, सुवर्ण, चांदी और वैदूर्यमणिसे खचित मनोहर

हतानांगच्छतांस्वर्गंयुध्यतामथधावताम् ॥ प्रेक्षतामृषिसंघानांबभूवनतदांतरम् ॥ १९ ॥ भग्नांस्तुतान्समालक्ष्ययक्षेंद्रांस्तुमहाबलान् ॥ धनाध्यक्षोमहाबाहुःप्रेषयामासयक्षकान् ॥ २० ॥ एतस्मिन्नंतरेरामविस्तीर्णबलवाहनः ॥ प्रेषितोन्यपतद्यक्षोनाम्नासंयोधकंटकः ॥ २१ ॥ तेनचक्रेणमारीचोविष्णुनेवरणेहतः ॥ पतितोभूतलेशैलात्क्षीणपुण्यइवग्रहः ॥ २२ ॥ ससंज्ञस्तुमुहूर्तेनसविश्रम्यनिशाचरः ॥ तंयक्षंयोधयामाससचभग्नःप्रदुद्रुवे ॥ २३ ॥ ततःकांचनचित्रांगंवैदूर्यरक्षतोक्षितम् ॥ मर्यादांप्रतिहाराणांतोरणान्तरमाविशत् ॥ २४ ॥ तंतुराजन्दशग्रीवंप्रविशंतंनिशाचरम् ॥ सूर्यभानुरितिख्यातोद्वारपालोन्यवारयत् ॥ २५ ॥ सवार्यमाणोयक्षेणप्रविवेशनिशाचरः ॥ यदातुवारितोरामनव्यतिष्ठत्सराक्षसः ॥ २६ ॥ ततस्तोरणमुत्पाट्यतेनयक्षेणताडितः ॥ रुधिरंप्रस्रवन्भातिशैलोधातुस्रवैरिव ॥२७॥ सशैलशिखराभेणतोरणेनसमाहतः ॥ जगामनक्षतिंवीरोवरदानात्स्वयंभुवः ॥ २८ ॥

फाटकमें इसके पीछे रावण पैठा ॥ २४ ॥ हे राजन् ! निशाचर रावण उस फाटकमें प्रवेश कर रहा था, कि इतनेमें सूर्यभानु नामक द्वारपालने उसको निवारण किया ॥ २५ ॥ जब कि वह राक्षस रोका जाकरभी नहीं खडा हुआ और उसमें पैठताही गया । हे राम ! जब कि निवारण किये जाने पर भी वह राक्षस शान्त नहीं हुआ ॥ २६ ॥ तब उस यक्षने फाटकमें लगा हुआ दंड उखाडकर उस रावणको मारा तो उस कालमें रावण रुधिर चुआता हुआ ऐसा शोभायमान हुआ मानो गेरूधातुवाले पर्वतसे गेरू निकल रहा है ॥ २७ ॥ पर्वतके शिखरके समान उस तोरणदंडसे घायल होकर भी वीर रावण केवल ब्रह्माजीके वरदानके प्रभावसे पृथ्वीपर नहीं गिरा ॥ २८ ॥

उसके पीछे रावणनेभी उसी तोरण दंडसे यक्षपर ऐसा प्रहार किया कि, उसका शरीर एक बारही चूर्णहो गया बरन् वह यक्ष फिर दिखाई भी न दिया ॥ २९ ॥ तब राक्षस रावणका ऐसा पराक्रम देखकर वहांसे सब द्वारपाल भाग गये फिर भयकेमारे सब यक्ष अस्त्र छोडकर थकावटके वश विवर्णमुख हो कोई नदियोंमें घुसे और कोई गुफाओंमें पैठे ॥ ३० ॥ इत्यर्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥ सहस्र २ पराक्रमकारी यक्षोंको त्रासित देखकर धनाध्यक्ष कुबेरजी माणिभद्र नामक एक महायक्षसे बोले ॥१॥ हे यक्षश्रेष्ठ ! दुराचारी पापपरायण रावणको संग्राममें संहारकर तुम युद्धकी इच्छावाले वीर यक्षोंके रक्षक होवो ॥ २ ॥ यह वचन सुनकर दुर्जय महावीर माणिभद्र यक्ष चार हजार सेनाको साथ लेकर युद्ध करने लगा ॥ ३ ॥ यक्षलोग गदा; मुसल, प्रास, शक्ति; तोमर और मुद्गरादि प्रहार करते २ राक्षसोंके ऊपर दौडने लगे ॥४॥ " अस्त्र दो " नहीं हम इच्छा नहीं करते तुम दो" इस प्रकारसे

तेनैव तोरणेनाथ यक्षस्तेनाभिताडितः ॥ नादृश्यत तदा यक्षो भस्मीकृततनुस्तदा ॥२९॥ ततः प्रदुद्रुवुः सर्वे दृष्ट्वा रक्षःपराक्रमम् ॥ ततो नदीर्गुहाश्चैव विविशुर्भयपीडिताः ॥ त्यक्तप्रहरणाः श्रांता विवर्णवदनास्तदा ॥३०॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे चतुर्दशः सर्गः ॥ १४ ॥ ततस्ताँल्लक्ष्य वित्रस्तान्यक्षेंद्रांश्च सहस्रशः ॥ धनाध्यक्षो महायक्षं माणिचारमथाब्रवीत ॥१॥ रावणं जहि यक्षेंद्र दुर्वृत्तं पापचेतसम् ॥ शरणं भव वीराणां यक्षाणां युद्धशालिनाम् ॥२॥ एवमुक्तो महाबाहुर्माणिभद्रः सुदुर्जयः ॥ वृतो यक्षसहस्रैस्तु चतुर्भिः समयोधयत् ॥३॥ ते गदामुसलप्रासैः शक्तितोमरमुद्गरैः ॥ अभिघ्नंतस्तदा यक्षा राक्षसान्समुपाद्रवन् ॥४॥ कुर्वंतस्तुमुलं युद्धं चरंतः श्येनवल्लघु ॥ बाढं प्रयच्छ नेच्छामि दीयतामिति भाषिणः ॥५॥ ततो देवाः सगंधर्वा ऋषयो ब्रह्मवादिनः ॥ दृष्ट्वा तत्तुमुलं युद्धं परं विस्मयमागमन् ॥६॥ यक्षाणां तु प्रहस्तेन सहस्रं निहतं रणे ॥ महोदरेण चानिंद्यं सहस्रमपरं हतम् ॥७॥ क्रुद्धेन च तदा राजन्मारीचेन युयुत्सुना ॥ निमेषांतरमात्रेण द्वे सहस्रे निपातिते ॥ ८ ॥ क्व च यक्षार्जवं युद्धं क्व च मायाबलाश्रयम् ॥ रक्षसां पुरुषव्याघ्र तेन तेऽभ्यधिका युधि ॥९॥ धूम्राक्षेण समागम्य माणिभद्रो महारणे ॥ मुसलेनोरसि क्रोधात्ताडितो न च कंपितः ॥ १० ॥

कहते २ यक्ष और राक्षसलोग बाजपक्षीके समान घूम २ कर तुमुल युद्ध करने लगे ॥ ५ ॥ उसके पीछे ब्रह्मवादि ऋषि, देवता और गन्धर्वगण उस संग्रामको देख कर अत्यन्त विस्मित हुए ॥६॥ परन्तु प्रहस्तने हजार यक्षोंको संग्राममें मार डाला और महोदरने भी एक सहस्र यक्षोंका गदाघातसे संहार किया ॥७॥ हे राजन् ! उस कालमें मारीचने युद्धमें क्रोध कर एक पलक मारनेमें दो हजार यक्षोंको यमभवनमें भेज दिया ॥ ८ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! राक्षसोंका युद्ध मायाके बलसे होता था, और यक्षोंका युद्ध सरलतासे पूर्ण था, इसलिये इन दोनोंके संग्राममें अधिक अन्तर था और इसीसे राक्षसलोग संग्राममें प्रबल थे ॥ ९ ॥ धूम्राक्षने उस महासंग्राममें आकर कोपके वशहो मूसल माणिभद्रकी छातीमें मारा, परन्तु माणिभद्र उस मूसलके लगनेसे चलायमान नहीं हुआ ॥ १० ॥

बरन् माणिभद्रने गदा उठायकर धूम्राक्षके शिर पर मारी वह इस गदाके लगनेसे विह्वल हो गिर पडा ॥ ११ ॥ धूम्राक्षको ताडित और रुधिरसे रंगकर पृथ्वी पर गिरते देख रावण माणिभद्रके सन्मुख युद्ध करनेके लिये दौडा ॥ १२ ॥ तब यक्षोंमें श्रेष्ठ माणिभद्रने क्रोध वश हो सन्मुख दौडकर आते हुए रावणके तीन शक्तियें मारीं ॥१३॥ राक्षसराज रावणने उन शक्तियोंके प्रहारसे ताडित हो माणिभद्रके मुकुटपर प्रहार किया, उस माणिभद्रका मुकुट शिर सहित आय बगल में हो रहा ॥ १४ ॥ हे राजन् ! तबसे यह यक्ष "पार्श्वमौलि" हुआ अर्थात् वह मुकुट सहित शिर उसकी बगलमें स्थित हुआ फिर शिरके स्थान पर हुआ, जब महात्मा माणिभद्रजी भागे तब राक्षसलोगोंका बडाभारी शब्द उस पर्वतपर बढने लगा ॥ १५ ॥ इसके उपरान्त गदाधारी कुबेरजी—पद्म व शंख

ततोगदांसमाविध्यमाणिभद्रेणराक्षसः ॥ धूम्राक्षस्ताडितोमूर्ध्निविह्वलःसपपातह ॥ ११ ॥ धूम्राक्षंताडितंदृष्ट्वापतितंशोणितोक्षितम् ॥ अभ्यधावतसंग्रामेमाणिभद्रंदशाननः ॥ १२ ॥ संक्रुद्धमभिधावंतंमाणिभद्रोदशाननम् ॥ शक्तिभिस्ताडयामासतिसृभिर्यक्षपुंगवः ॥ १३ ॥ ताडितोमाणिभद्रस्यमुकुटेप्राहरद्रणे ॥ तस्यतेनप्रहारेणमुकुटंपार्श्वमागतम् ॥ १४ ॥ ततःप्रभृतियक्षोऽसौपार्श्वमौलिरभूत्किल ॥ तस्मिंस्तुविमुखीभूते माणिभद्रेमहात्मनि ॥ सन्नादःसुमहान्राजंस्तस्मिञ्शैलेव्यवर्धत ॥ १५ ॥ ततोदूरात्प्रददृशेधनाध्यक्षोगदाधरः ॥ शुक्रप्रौष्ठपदाभ्यांचपद्मशंखसमावृतः ॥१६॥ सदृष्ट्वाभ्रातरंसंख्येशापाद्विभ्रष्टगौरवम् ॥ उवाचवचनंधीमान्युक्तंपैतामहेकुले ॥ १७ ॥ यन्मयावार्यमाणस्त्वंनावगच्छसिदुर्मते ॥ पश्चादस्यफलंप्राप्यज्ञास्यसेनिरयंगतः ॥ १८ ॥ योहिमोहाद्विषंपीत्वानावगच्छतिदुर्मतिः ॥ सतस्यपरिणामांतेजानीतेकर्मणःफलम् ॥ १९ ॥ दैवतानिननंदंतिधर्मयुक्तेनकेनचित् ॥ येनत्वमीदृशंभावंनीतस्तच्चनबुध्यसे ॥ २० ॥

नामक निधिके अधिष्ठाता देवताके साथ हो शुक्र और प्रोष्ठपद नामक दो मंत्रियोंके साथ दूरसे ॥ १६ ॥ अपने भ्राताको देखते हुए विश्रवाके शापके मारे गौरवहीन भ्राताको संग्राममें देख कर वह कुबेरजी उससे ब्रह्मजीके कुलके योग्य वचन कहने लगे ॥ १७ ॥ हे दुर्मते ! तू हम करके असत्कार्यसे निवारित होकर भी हमारे वचनोंका तात्पर्य नहीं जानता; इस कारण पीछेसे नरकमें जाकर उसके फलको जानेगा ॥ १८ ॥ विशेष करके जो दुर्मति मोहके वश हो विष पीकर उसको नहीं जान सकता; वह उसके परिणाममें कर्मके फलको जानता है ॥ १९ ॥ धर्मयुक्त किसी प्राकृत कारणके वश इस समय सब देवता तुझसे विमुख हुए हैं, अब तुझमें धर्म न रहनेसे देवता लोगोंका अनादर होनेसे तेरा जो ऐसा क्रूर स्वभाव हो गया है तू इसको नहीं जानता है॥ २० ॥

जो पुरुष माता, पिता, विप्र और गुरुका अपमान करता है वह प्रेतराज यमराजके वशमें पड उसका फल देखता है ॥ २१ ॥ जो नाशवान् शरीर धारण कर तपस्याका उपार्जन नहीं करता वह मूढ मृतक होकर अपने कर्मसे सम्पादित गति प्राप्त करके पीछेसे संतापित होता है ॥ २२ ॥ विशेष करके माता पिताकी सेवा विना बुद्धि किसी भी पुरुषको अपनी इच्छासे सुमति नहीं होती इस कारण मातापिताकी सेवासे विहीन हो जैसा कर्म करता है वैसाही उसको फल मिलता है ॥ २३ ॥ मनुष्य इस जगत्में पुण्यकार्यके करनेसे पुत्र, धन, बल, रूप समृद्धि और शूरताको प्राप्त होते हैं ॥ २४ ॥ तू जो ऐसा दुष्कपट करता है, इसलिये तू अवश्यही नरकमें जायगा; विशेष करके जब कि तेरी ऐसी बुद्धि है इससे हम तेरे साथ बातचीत भी नहीं कर सकते हैं क्योंकि अस दाचारी पुरुषोंसे सदाचारी लोगोंको यही कर्त्तव्य है ॥ २५ ॥ उसके पीछे यक्षराज कुबेरजीने रावणके मारीचादि मंत्रियोंसेभी यह कहकर उन लोगोंके ऊपर

मातरंपितरंविप्रमाचार्यंचावमन्यवै ॥ सपश्यतिफलंतस्यप्रेतराजवशंगतः ॥ २१ ॥ अध्रुवेहिशरीरेयोनकरोतितपोर्जनम् ॥ सपश्चात्तप्यतेमूढोमृतोगत्वात्मनोगतिम् ॥२२॥ कस्यचिन्नहिदुर्बुद्धेश्छंदतोजायतेमतिः ॥ यादृशंकुरुतेकर्मतादृशंफलमश्नुते ॥२३॥ ऋद्धिंरूपंबलंपुत्रान्वित्तंशूरत्वमेवच ॥ प्राप्नुवंतिनरालोकेनिर्जितंपुण्यकर्मभिः ॥ २४ ॥ एवंनिरयगामीत्वंयस्यतेमतिरीदृशी ॥ नत्वांसमभिभाषिष्येऽसद्वृत्तेष्वेषनिर्णयः ॥ २५ ॥ एवमुक्तास्ततस्तेनतस्यामात्याःसमाहताः ॥ मारीचप्रमुखाःसर्वेविमुखाविप्रदुद्रुवुः ॥२६॥ ततस्तेनदशग्रीवोयक्षेंद्रेणमहात्मना ॥ गदयाभिहतोमूर्ध्निनचस्थानात्प्रकंपितः ॥ २७ ॥ ततस्तौरामनिघ्नंतौतपान्योन्यंमहामृधे ॥ नविह्वलौनचश्रांतौताबुभौयक्षराक्षसौ ॥ २८ ॥ आग्नेयमस्त्रंतस्मैसमुमोचधनदस्तदा ॥ राक्षसेंद्रोवारुणेनतदस्त्रंप्रत्यवारयत् ॥ २९ ॥ ततोमायांप्रविष्टोऽसौराक्षसींराक्षसेश्वरः ॥ रूपाणांशतसाहस्रंविनाशायचकारच ॥ ३० ॥ व्याघ्रोवराहोजीमूतःपर्वतःसागरोद्रुमः ॥ यक्षोदैत्यस्वरूपीचसोऽदृश्यतदशाननः ॥ ३१ ॥

प्रहार किया, वह कुबेरजीसे घायल होतेही संग्रामसे विमुख हो भाग गये ॥ २६ ॥ जब मंत्री भागगये तब महात्मा यक्षनाथ कुबेरजीने रावणके मस्तकपर गदासे प्रहार किया रावणके यह गदा लगी तो सही, परन्तु वह अपने स्थानसे चलायमान नहीं हुआ ॥ २७ ॥ हे रामचन्द्रजी उस कालमें यक्ष और राक्षस दोनों परस्पर चोट चलाकर न थकेही न कुछ विह्वलही हुए ॥ २८ ॥ तब कुबेरजीने रावणके ऊपर अग्नि अस्त्र चलाया, राक्षसपति रावणने वरुणास्त्रसे उसको शान्त करदिया ॥ २९ ॥ उसके पीछे निशाचरनाथ रावणने कुबेरजीका संहार करनेके लिये राक्षसीमायाका आश्रय ले सैकडों हजारों रूप धारण किये ॥ ३० ॥ रावण क्रमसे वराह (शूकर) व्याघ्र, पर्वत, बादल, वृक्ष, यक्ष और दैत्यरूप धारण करके दर्शन देने लगा ॥ ३१ ॥

और बाणोंकी धारा छोडने लगा, परन्तु उसकी ओर किसीने नहीं देख पाया। हे राम ! इसके उपरान्त रावण बडाभारी अस्त्र ग्रहण करके उस गदाको विद्ध कर कुबेरजीके मस्तक पर प्रहार करता हुआ ॥ ३२ ॥ रावणसे इस प्रकार घायल हो धनेश्वर कुबेरजी सब अंगोंसे रुधिर बहाते और विह्वल हो जड कटे हुए वृक्षके समान पृथ्वीपर गिर पडे ॥ ३३ ॥ तब पद्म इत्यादि निधि देवता कुबेरजीको नंदन काननमें लाय चारों ओरसे घेर उनको चैतन्य करते हुए ॥३४॥ इस प्रकारसे धनेश्वर कुबेरजीको जीतकर राक्षसपति रावण हर्षितचित्त हो जयचिह्न स्वरूप उनका पुष्पक नाम विमान ग्रहण कर लेता हुआ ॥ ३५ ॥ इस विमानके सब स्तम्भ सुवर्णके बने हुए थे और द्वार वैदूर्यमणिसे खचित थे, मोतियोंके जालसे यह ढका हुआ था और सर्व कालमें फलदेनेवाले वृक्ष इसमें लग रहे थे ॥ ३६ ॥ मनके वेगके समान चलनेवाला कामनाके समान चलनेवाला कामरूपी विहंगमके समान वेग युक्त मणि व सुवर्णकी जिसमें सीढियें लग

बहूनिचकरोतिस्मदृश्यंतेनत्वसौततः ॥ प्रतिगृह्यततोराममहदस्त्रंदशाननः ॥ जघानमूर्ध्निधनदंव्याविध्यमहतींगदाम् ॥ ३२ ॥ एवंसतेनाभिहतोविह्वलःशोणितोक्षितः ॥ कृत्तमूलइवाशोकोनिपपातधनाधिपः ॥ ३३ ॥ ततःपद्मादिभिस्तत्रनिधिभिःसतदावृतः ॥ धनदोच्छ्वासितस्तैस्तुवनमानीयनंदनम् ॥ ३४ ॥ निर्जित्यराक्षसेंद्रस्तंधनदंहृष्टमानसः ॥ पुष्पकतस्यजग्राहविमानंजयलक्षणम् ॥ ३५ ॥ कांचनस्तंभसंवीतंवैदूर्यमणितोरणम् ॥ मुक्ताजालप्रतिच्छन्नंसर्वकालफलद्रुमम् ॥ ३६ ॥ मनोजवंकामगमंकामरूपंविहंगमम् ॥ मणिकांचनसोपानंतप्तकांचनवेदिकम् ॥ ३७ ॥ देवोपवाह्यमक्षय्यंसदादृष्टिमनःसुखम् ॥ बह्वाश्चर्यभक्तिचित्रंब्रह्मणापरिनिर्मितम् ॥ ३८ ॥ निर्मितंसर्वकामैस्तुमनोहरमनुत्तमम् ॥ नतुशीतंनचोष्णंचसर्वर्तुसुखदंशुभम् ॥ ३९ ॥ सतंराजासमारुह्यकामगंवीर्यनिर्जितम् ॥ जितंत्रिभुवनंमेनेदर्पोत्सेकात्सुदुर्मतिः ॥ जित्वावैश्रवणंदेवंकैलासात्समवातरत् ॥ ४० ॥

रहीं, तपाये हुए सुवर्णके जिसमें चबूतरे बनरहे थे ॥ ३७ ॥ अपने ऊपर सदा देवतोंकोही चढानेवाला, दृष्टि और मनको सदा सुखदेनेवाला। उसपरके सब पदार्थ अक्षय थे, अनेकप्रकारकी आश्चर्ययुक्त वस्तुयें उसपर रक्खी थीं, अनेक प्रकारकी रचनाओंसे जिसे विश्वकर्माजीने बनाया था ॥ ३८ ॥ यह विमान ऐसा बनाथा कि, सर्व कामना देनेवाला था, मनोहर और श्रेष्ठ था, न उसमें बहुत गरमी ही, न बहुत शीतलता ही, वरन् वह शुभविमान सर्व ऋतुओंमें सुखदाई था ॥ ३९ ॥ वह दुर्मति राक्षसराज रावण अपने वीर्यबलसे जीते हुए कामगामी उस पुष्पक विमानपर सवार हो गर्वके वश हो अपने मनमें समझता हुआ कि, तीनों लोक जीत लिये गये इस प्रकारसे देवता कुबेरजीको जीतकर रावण कैलासके शिखरपरसे उतरा ॥ ४० ॥

प्रतापवान् निशाचर रावण तेजके प्रभावसे उस बडीभारी विजयको पाय विमल किरीट और हारसे शोभायमान बने उत्तम विमानपर सवार हो सभामें पधार कर अग्निके समान विराजमान हुआ ॥ ४१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकाण्डे भाषायां पंचदशः सर्गः ॥ १५ ॥ हे राम ! राक्षसपति रावण अपने भाई धननाथ कुबेरजीको जीत अतिशूर सेनापति कार्तिकजीकी जन्मभूमिके बडेभारी शरपत बनमें गया ॥ १ ॥ वहां जाकर रावणने सुवर्णमय बडा भारी शरपतका वन चारोंओर किरणजाल छिटकाते हुए दूसरे सूर्यके समान प्रकाशमान देखा ॥ २ ॥ हे राम ! उस रमणीय काननयुक्त पर्वतपर चढकर राव णने देखा कि, यहाँ पुष्पक विमानकी गति रुकगई है ॥ ३ ॥ तब राक्षसराज रावण अपने मंत्रियोंके साथ चिन्ता करने लगा कि यह विमान तो स्वभावसे

सतेजसाविपुलमवाप्यतंजयंप्रतापवान्विमलकिरीटहारवान् ॥ रराजवैपरमविमानमास्थितोनिशाचरःसदसिगतोयथानलः ॥ ४१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे पंचदशःसर्गः ॥१५॥ सजित्वाधनदंरामभ्रातरंराक्षसाधिपः॥ महासेनप्रसूतिंत द्ययौशरवणंमहत् ॥ १ ॥ अथापश्यद्दशग्रीवोरौक्मंशरवणंमहत् ॥ गभस्तिजालसंवीतंद्वितीयमिवभास्करम् ॥ २ ॥सपर्वतंसमारुह्यकंचिद्रम्य वनांतरम् ॥ प्रेक्षतेपुष्पकंतत्ररामविष्टंभितंतदा ॥ ३ ॥ विष्टब्धंकिमिदंकस्मान्नागमत्कामगंकृतम् ॥ अचिंतयद्राक्षसेंद्रःसचिवैस्तैःसमावृतः ॥ ४ ॥ किंनिमित्तंचेच्छयामेनेदंगच्छतिपुष्पकम्॥पर्वतस्योपरिष्ठस्यकर्मेदंकस्यचिद्भवेत् ॥ ५ ॥ ततोऽब्रवीत्तदाराममारीचोबुद्धिकोविदः ॥ नेदंनिष्कारणंराजन्पुष्पकंयन्नगच्छति ॥ ६ ॥ अथवापुष्पकमिदंधनदान्नान्यवाहनम् ॥ अतोनिस्पंदमभवद्धनाध्यक्षविनाकृतम् ॥ ७ ॥ इति वाक्यांतरेतस्यकरालःकृष्णपिंगलः ॥ वामनोविकटोमुंडीनंदीह्रस्वभुजोबली ॥ ८ ॥ ततःपार्श्वमुपागम्यभवस्यानुचरोऽब्रवीत् ॥ नंदीश्वरोवचश्चेदंराक्षसेंद्रमशंकितः ॥ ९ ॥

कामगामी है तथापि किसकारणसे इसकी गति रुकगई ॥ ४ ॥ पर्वतके ऊपर आकर पुष्पकविमान हमारी इच्छानुसार क्यों नहीं चलता है इसकी गतिको रोकना किसका काम है ॥ ५ ॥ हे राम ! उसी समय बुद्धिकोविद मारीचने कहा कि राजन् ? पुष्पक जो आगमन नहीं करता यह कारणरहित बात नहीं, अवश्य कोई कारण होगा ॥ ६ ॥ अथवा यह पुष्पक विमान कुबेरजीके सिवाय और किसीको अपने ऊपर नहीं ले चलता होगा इसलिये यह कुबेरजीसे छुटकर निश्चल हो गया है ॥ ७ ॥ इधर रावणादि यही विचार करते थे कि अति करालरूप काले पीले रंगके बहुत छोटा डील विकटरूप मूँड़ मुड़ाये छोटे हाथवाले बलवान् नंदी ॥ ८ ॥ जोकि महादेवजीके अनुचर थे वहां आयकर बोले, इन नंदीश्वरने अशंकित भावसे राक्षसराज रावणसे कहा ॥ ९ ॥

हे दशग्रीव ! तुम लौट जाओ, क्योंकि इस पर्वतपर शिवजी महाराज क्रीडा करते हैं क्या गरुड, क्या नाग, क्या गन्धर्व, क्या देवता, क्या यक्ष ॥ १० ॥ सब प्राणियोंको भी इस पर्वतपर आनेकी मनाई है नन्दीके यह वचन सुनकर क्रोधके मारे रावणके कुंडल कंपायमान होने लगे ॥ ११ ॥ और क्रोधके मारे लाल २ नेत्र करके कौन शंकर है यह कह वह पुष्पक विमानसे उतर नीचे आया ॥ १२ ॥ रावणने देखा कि, वहां नन्दी शूलको उठाये दूसरे महादेवजीके समान हो व शंकरजीके निकटही खडे हैं ॥ १३ ॥ निशाचर रावण उन नन्दीश्वरका वानरके समान मुख देख निरादर कर जलमेघके समान ऊंचे शब्दसे ठठायकर हँस पडा ॥ १४ ॥ श्रीशंकरजीके दूसरे शरीर भगवान् नन्दीश्वरजी उसे अत्यन्त क्रुद्ध होकर आये हुए राक्षस रावणसे बोले ॥ १५ ॥ रे दशानन !

निवर्तस्वदशग्रीवशैलेक्रीडतिशंकरः॥ सुपर्णनागयक्षाणांदेवगंधर्वरक्षसाम् ॥ १० ॥ सर्वेषामेवभूतानामगम्यःपर्वतःकृतः ॥ इतिनंदिवचः श्रुत्वाक्रोधात्कंपितकुंडलः ॥११॥ रोषात्तुताम्रनयनःपुष्पकादवरुह्यसः ॥ कोऽयंशंकरइत्युक्त्वाशैलमूलमुपागतः ॥१२॥सोऽपश्यन्नंदिनंतत्रदेवस्यादूरतःस्थितम् ॥ दीप्तंशूलमवष्टभ्यद्वितीयमिवशंकरम् ॥ १३ ॥ तंदृष्ट्वावानरमुखमवज्ञायसराक्षसः ॥ प्रहासंमुमुचेतत्रसतोयइवतोयदः ॥ १४ ॥ तंक्रुद्धोभगवानंदीशंकरस्यापरातनुः ॥ अब्रवीत्तत्रतद्रक्षोदशाननमुपस्थितम् ॥ १५ ॥ यस्माद्वानररूपंमामवज्ञायदशानन ॥ अशनीपातसंकाशमपहासंप्रमुक्तवान् ॥ १६ ॥ तस्मान्मद्वीर्यसंयुक्तामद्रूपसमतेजसः ॥ उत्पत्स्यंतिवधार्थंहिकुलस्यतववानराः ॥१७॥ नखदंष्ट्रायुधाःक्रूरमनःसंपातरंहसः ॥ युद्धोन्मत्ताबलोद्रिक्ताःशैलाइवविसर्पिणः ॥ १८॥ तेतवप्रबलंदर्पमुत्सेधंचपृथग्विधम् ॥ व्यपनेष्यंतिसंभूयसहामात्यसुतस्यच ॥ १९ ॥ किंत्विदानींमयाशक्यंहंतुंत्वांहेनिशाचर ॥ नहंतव्योहतस्त्वंहिपूर्वमेवस्वकर्मभिः ॥ २० ॥

हमको वानररूपी दर्शन करके निरादर दिखाय वज्रके गिरनेके समान गंभीर शब्दसे हँसा ॥ १६ ॥ इसलिये तेरे वंशका नाश करनेके निमित्त हमारे समान वीर्यवान् और तेजस्वी वानर हमारे वीर्यसे संयुक्त होकर उत्पन्न होंगे ॥ १७ ॥ वह नख दांतको आयुध बनावे वानर मनके समान शीघ्र चलनेवाले रणमें उन्मत्त पर्वतके समान विशाल बलसम्पन्न और शूर होंगे ॥ १८ ॥ वह यों उत्पन्न होकर पुत्र और मंत्रियोंके साथ तुम्हारा मानसिक प्रबल दर्प्प और अहंकार सब दूर कर देंगे ॥ १९ ॥ हे निशाचर ! हम अभी तुमको मार सकते हैं परंतु तेरे विनाश करनेके लिए चेष्टा करना वृथा है कारण कि तू अपने कर्मदोषसे आपही नाशको प्राप्त हुआ है ॥ २० ॥

महात्मा नन्दीश्वरजीने जैसेही यह वचन कहे वैसेही देवताओंके नगाडे बजने लगे और आकाशसे फूलोंकी वर्षा हुई ॥ २१ ॥ तब महाबलवान् दशानन नन्दीश्वरजीके यह वचन सुन पर्वतके निकट जाय यह वचन बोले ॥ २२ ॥ हे रुद्र ! जिसका आश्रय करके क्रीडाके लिये गमन करते २ हमारे पुष्पक विमानकी गति रुक गई है तुम्हारे इस पर्वतको भी उखाडे डालते हैं ॥२३॥ किस प्रभावसे महादेवजी राजाके समान क्रीडा करते हैं, यह जानना उचित है विशेष करके अधिक भय उपस्थित हुआ है और वह उसको नहीं जानते हैं ॥ २४ ॥ हे राम ! इस प्रकारसे कह रावण पर्वतके नीचे अपने हाथ लगाय शीघ्र पर्वतको उठाने लगा तब उठनेसे वह पर्वत कम्पायमान हुआ ॥ २५ ॥ पर्वतके चलायमान होनेसे महादेवजीके समस्त गण कांप गये, पार्वतीजी भी

इत्युदीरितवाक्येतुदेवेतस्मिन्महात्मनि॥देवदुंदुभयोनेदुःपुष्पवृष्टिश्चखाच्च्युता॥२१॥अचिंतयित्वासतदानंदिवाक्यंमहाबलः॥ पर्वतंतुसमासाद्यवाक्यमाहदशाननः ॥ २२ ॥ पुष्पकस्यगतिश्छिन्नायत्कृतेममगच्छतः ॥ तमिमंशैलमुन्मूलंकरोमितवगोपते ॥ २३ ॥ केनप्रभावेणभवोनित्यंक्रीडतिराजवत् ॥ विज्ञातव्यंनजानीतेभयस्थानमुपस्थितम् ॥२४॥ एवमुक्त्वाततोरामभुजान्विक्षिप्यपर्वते ॥ तोलयामासतंशीघ्रंस शैलःसमकंपत ॥ २५ ॥ चालनात्पर्वतस्यैवगणादेवस्यकंपिताः ॥ चचालपार्वतीचापितदाश्लिष्टामहेश्वरम् ॥२६॥ ततोराममहादेवोदेवानां प्रवरोहरः ॥ पादांगुष्ठेनतंशैलंपीडयामासलीलया ॥ २७ ॥ पीडितास्तुततस्तस्यशैलस्तंभोपमाभुजाः ॥ विस्मिताश्चाभवंस्तत्रसचिवास्तस्य रक्षसः ॥ २८ ॥ रक्षसातेनरोषाच्चभुजानांपीडनात्तथा ॥ मुक्तोविरावःसहसात्रैलोक्यंयेनकंपितम् ॥ २९ ॥ मेनिरेवज्रनिष्पेषंतस्यामात्यायुगक्षये॥तदावर्त्मसुचलितादेवांइंद्रपुरोगमाः॥३०॥समुद्राश्चापिसंक्षुब्धाश्चलिताश्चापिपर्वताः ॥ यक्षाविद्याधराःसिद्धाःकिमेतदितिचाब्रुवन्॥३१॥

चंचल होकर उसी समय महादेवजीको लिपट गई ॥ २६ ॥ इसके उपरांत देवताओंमें श्रेष्ठ महादेवजीने पैरके अँगूठेसे इस पर्वतको जरा दाब दिया ॥ २७ ॥ महादेवजीके कुछ दबानेसेही पर्वतके थंभके समान रावणकी बडी २ भुजायें पिचलने लगीं और उसे अति व्यथा हुई तब रावणके सब मंत्री विस्मित हुए ॥२८॥ रावण राक्षस क्रोधके मारे और बांहोंकी पीडासे सहसा चिल्लाने लगा इस चिल्लानेसे त्रिलोकी कम्पायमान हो गई ॥२९॥ दशाननके मंत्रियोंने इस शब्दको सुनकर समझा कि, मानो युगान्त समयमें वज्र गिरनेका शब्द हुआ इस शब्दको श्रवण कर मार्गमें स्थित हुए इन्द्रादि देवता सबही चलायमान हुए ॥ ३० ॥ सब समुद्र खलबलाय गये पर्वत कंपायमान होने लगे और यक्ष विद्याधर व सिद्धगण यह क्या है ? ऐसे परस्पर कहने लगे ॥ ३१ ॥

इसके उपरान्त दशग्रीवके मंत्री बोले कि हे दशानन ! आप उमाकान्त नीलकंठ महादेवजीको सन्तुष्ट कीजिये इस विपदमें उनके सिवाय और किसीको हम नहीं देख सकते ॥ ३२ ॥ आप उनको प्रणामकर अनेक स्तुतिसे उनकी शरणमें जाइये देवशंकर कृपालु हैं वह सन्तुष्ट होकर अवश्यही आपपर अनुग्रह करेंगे॥३३॥ उसकाल मंत्रीजनोंके यह वचन सुन दशानन प्रणाम कर सामवेदके मंत्रोंसे व विविध भांतिके स्तोत्रोंसे वृषभध्वज महादेवजीकी स्तुति करने लगा यहां तक कि रोदन करते २ राक्षसके वहांपर सहस्र वर्षव्यतीत हो गये ॥३४॥ हे राम ! उसके पीछे कैलाशपर विहार करते हुए प्रभुमहादेवजीने प्रसन्न हो दशग्रीवकी सब भुजा छोड उससे कहा ॥ ३५ ॥ हे दशानन ! तुमने पर्वतसे दबकर वीर दर्पके मारे जो दारुण बडा नाद किया है उससे हम तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हुए

तोषयस्वमहादेवंनीलकंठमुमापतिम् ॥ तमृतेशरणंनान्यंपश्यामोऽत्रदशानन ॥३२॥ स्तुतिभिःप्रणतोभूत्वातमेवशरणंव्रज ॥कृपालुःशंकरस्तुष्टःप्रसादंतेविधास्यति ॥ ३३ ॥ एवमुक्तस्तदामात्यैस्तुष्टाववृषभध्वजम् ॥ सामभिर्विविधैःस्तोत्रैःप्रणम्यसदशाननः ॥ संवत्सरसहस्रंतुरुदतोरक्षसोगतम् ॥ ३४ ॥ ततःप्रीतोमहादेवःशैलाग्रेविष्ठितंप्रभुः ॥ मुक्त्वाचास्यभुजान्राममप्राहवाक्यंदशाननम् ॥ ३५ ॥ प्रीतोऽस्मितववीरस्यशौंडीर्याच्चदशानन ॥शैलाक्रांतेनयोमुक्तस्त्वयारावःसुदारुणः॥३६॥ यस्माल्लोकत्रयंचैतद्रावितंभयमागतम् ॥ तस्मात्त्वंरावणोनामनाम्नाराजन्भविष्यसि ॥३७॥ देवतामानुषायक्षायेचान्येजगतीतले ॥ एवंत्वामभिधास्यंतिरावणंलोकरावणम् ॥३८॥ गच्छपौलस्त्यविस्रब्धंपथायेनत्वमिच्छसि ॥ मयाचैवाभ्यनुज्ञातोराक्षसाधिपगम्यताम् ॥ ३९ ॥ एवमुक्तस्तुलंकेशःशंभुनास्वयमब्रवीत् ॥ प्रीतोयदिमहादेववरंमेदेहियाचतः ॥ ४० ॥ अवध्यत्वंमयाप्राप्तंदेवगंधर्वदानवैः ॥ राक्षसैर्गुह्यकैर्नागैर्येचान्येबलवत्तराः ॥ ४१ ॥

हैं ॥ ३६ ॥ हे राजन् ! विशेष करके तीनों लोक इस समय तुम्हारे शब्दसे शब्दित होकर भीत हुए हैं इसलिये तुम 'रावण' नामसे विख्यात होगे ॥ ३७ ॥ देवता मनुष्य और यक्ष व इस समय जितने जीव हैं वह सबही तुमको इस प्रकारसे लोगोंका रुवानेवाला रावण कहकर पुकारेंगे ॥ ३८ ॥ हे पुलस्त्यनंदन ! तुमको जिस मार्गमें जानेकी इच्छा हो तुम विशुद्ध भावसे उसी मार्गमें चले जाओ हे राक्षसनाथ ! हम आज्ञा देते हैं, तुम पुष्पकविमान पर चढकर चलेजाओ ॥३९॥श्रीमहादेवजीके ऐसे वचन सुनकर लंकेश्वर दशाननने कहा कि, 'हे महादेव ! यदि हमपर आप प्रसन्न हुए हैं तो हम प्रार्थना करते हैं कि, हमें यह वरदान दीजिये॥४०॥हमने यह वरदान जो पाया है इससे देवता, गन्धर्व, दानव, राक्षस, गुह्यक, नाग या और कोई महाबलवान् प्राणी हमारा वध नहीं कर सकेगा ॥४१॥

हे देव ! हम मनुष्योंको तो कुछ गिनते ही नहीं हैं, क्योंकि हम जानते हैं कि, मनुष्य अति अल्प वीर्यवाले हैं । हे त्रिपुरारि ! ब्रह्माजीसे हमने अति बडी आयु पाई है उसका कुछ काल चला गया है इस समय हम प्रार्थना करते हैं कि, शेष भाग भी इसी प्रकारसे अप्रतिहत और अजेय होकर इच्छानुसार वितावें आप हमें यह वर और सर्व प्राणियोंको जीतनेके लिये कोई दिव्य अस्त्रभी दीजिये ॥ ४२ ॥ रावणके यह वचन सुनकर भूतपति शंकर महादेवजीने उसको चन्द्रहासनामक विख्यात महातेजस्वी खड्ग दिया ॥ ४३ ॥ और ब्रह्माजीके देनेसे रही हुई शेष परमायु भी दी ॥ ४४ ॥ इस प्रकारसे खड्ग और वरदान देकर श्रीमहादेवजी बोले कि, हे रावण ! तुम कभी इस खड्गका निरादर मत करना, जो निरादर करोगे तो यह अस्त्र उसी समय हमारे निकट आजा

मानुषान्नगणेदेवस्वल्पास्तेममसंमताः ॥ दीर्घमायुश्चमेप्राप्तंब्रह्मणस्त्रिपुरांतक ॥ वांछितंचायुषःशेषंशस्त्रंत्वंचप्रयच्छमे ॥ ४२ ॥ एवमुक्तस्तत स्तेनरावणेनसशंकरः ॥ ददौखड्गंमहादीप्तंचंद्रहासमितिश्रुतम् ॥ ४३ ॥ आयुषश्चावशेषंचददौभूतपतिस्तदा ॥ ४४ ॥ दत्त्वोवाचततःशंभु र्नावज्ञेयमिदंत्वया ॥ अवज्ञातंयदिहितेमामेवैष्यत्यसंशयः ॥ ४५ ॥ एवंसहेश्वरेणैवकृतनामासरावणः ॥ अभिवाद्यमहादेवमारुरोहाथपुष्प कम् ॥ ४६ ॥ ततोमहीतलंरामपर्यक्रामतरावणः ॥ क्षत्रियान्सुमहावीर्यान्बाधमानस्ततस्ततः ॥ ४७ ॥ केचित्तेजस्विनःशूराःक्षत्रियायुद्धदु र्मदाः ॥ तच्छासनमकुर्वंतोविनेशुःसपरिच्छदाः ॥४८॥ अपरेदुर्जयंरक्षोजानंतःप्राज्ञसंमताः ॥ जिताःस्मइत्यभाषंतराक्षसंबलदर्पितम् ॥४९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥ अथराजन्महाबाहुर्विचरन्पृथिवीतले ॥ हिम वद्वनमासाद्यपरिचक्रामरावणः ॥ १ ॥

यगा इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥४५॥ महादेवजी करके इस प्रकारसे नाम धराय रावण शिवजीको प्रणाम करके पुष्पकविमानपर सवार हुआ ॥ ४६ ॥ हे राम ! उसके पीछे रावण महावीर्यवान् क्षत्रियगणोंको पीडित करता हुआ पृथ्वीपर घूमने लगा ॥ ४७ ॥ कोई २ तेजस्वी युद्धोन्मत्त क्षत्रिय शूरवीरगण रावणकी आज्ञा पालन न करके उस कालमें अपने परिवार सहित नाशको प्राप्त हुए ॥ ४८ ॥ व और दूसरे अनेक विज्ञ विचारवान् क्षत्रिय जनोंने बल गर्वित रावणको अजीत जानकर उसके निकट पराजय मानली ॥ ४९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां षोडशः सर्गः ॥ १६ ॥ हे राम ! महावीर रावण पृथ्वीपर विचरण करते २ एक समय हिमालयके निकट वनमें जाय वहां घूमने लगा ॥ १ ॥

इसी समय उसने इस वनमें मृगचर्म पहर जटा धारण किये तप करनेमें निरत साक्षात् देव कन्याके समान दीप्तिमती एक कन्याको देखा ॥ २ ॥ सुन्दरताईसे युक्त महाव्रतवाली कन्याको देखकर कामदेवके मोहसे मानो हँसीही करता हुआ सा रावण उससे बोला ॥ ३ ॥ हे भद्रे ! यह आचरण तुम्हारे यौवनके विरुद्ध हैं, इसलिये क्यों इसका अनुष्ठान करती हो ? विशेष करके यह आचरण तुम्हारे ऐसे रूपके योग्य नहीं है ॥ ४ ॥ हे भीरु ! तुम्हारी उपमारहित सुन्दरताई मनुष्योंको कामका उन्माद करने वाली है, इसलिये तुमको तप करना उचित नहीं है, ऐसा निर्णय वृद्धलोगोंने किया है ॥ ५ ॥ हे भद्रे ! तुम किसकी कन्या हो ? यह व्रत क्यों करती हो ? हे सुन्दरमुखवाली ! तुम्हारे स्वामी कौन हैं ? हे भीरु ! जो पुरुष तुमको भोग करता है पृथ्वीपर वही पुण्य

तत्रापश्यत्सवैकन्यांकृष्णाजिनजटाधराम् ॥ आर्षेणविधिनायुक्तांदीप्यंतींदेवतामिव ॥ २ ॥ सदृष्ट्वारूपसंपन्नांकन्यांतांसुमहाव्रताम् ॥ काममोहपरीतात्मापप्रच्छप्रहसन्निव ॥ ३ ॥ किमिदंवर्तसेभद्रेविरुद्धयौवनस्यते ॥ नहियुक्तातवैतस्यरूपस्यैवंप्रतिक्रिया ॥ ४ ॥ रूपंतेऽनुपमंभीरुकामोन्मादकरंनृणाम् ॥ नयुक्तंतपसिस्थातुंनिर्गतोह्येषनिर्णयः ॥५॥ कस्यासिकिमिदंभद्रेकश्चभर्तावरानने ॥ येनसंभुज्यसेभीरुसनरःपुण्यभाग्भुवि ॥ ६ ॥ पृच्छतःशंसमेसर्वंकस्यहेतोःपरिश्रमः ॥ एवमुक्तातुसाकन्यारावणेनयशस्विनी ॥ ७ ॥ अब्रवीद्विधिवत्कृत्वातस्यातिथ्यंतपोधना ॥ कुशध्वजोनामपिताब्रह्मर्षिरमितप्रभः ॥ बृहस्पतिसुतःश्रीमान्बुद्ध्यातुल्योबृहस्पतेः ॥ ८ ॥ तस्याहंकुर्वतोनित्यंवेदाभ्यासंमहात्मनः ॥ संभूतावाङ्मयीकन्यानाम्नावेदवतीस्मृता ॥९॥ ततोदेवाःसगंधर्वायक्षराक्षसपन्नगाः ॥ तेपिगत्वाहिपितरंवरणंरोचयंतिमे ॥१०॥ नचमांसपितातेभ्योदत्तवान्राक्षसेश्वर ॥ कारणंतद्वदिष्यामिनिशामयमहाभुज ॥ ११ ॥

वान् है ॥ ६ ॥ तुम किस कारणसे इतना परिश्रम कर रही हो ? हम पूँछते हैं हमसे समस्त कहो । रावणके यह वचन सुनकर यशस्विनी तपस्विनी ॥७॥ रावणका भलीविधिसे अतिथि सत्कार करके बोली बृहस्पतिजीके पुत्र बुद्धिमें बृहस्पतिजीके ही समान अमितप्रभावान् श्रीमान् कुशध्वज नामक ब्रह्मर्षि हमारे पिता हैं ॥ ८ ॥ वह महात्मा नित्यही वेदाभ्यास करते हैं, और हम उनके वेदवाक्यसे वाङ्मयी कन्या होकर उत्पन्न हुई थीं हमारा नाम वेदवती है ॥९॥ देव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और नागगण सदा पिताके निकट जाकर हमको विवाह करनेकी प्रार्थना करते हैं ॥ १० ॥ परन्तु हे राक्षसेश्वर ! हमको पिताजीने उन लोगोंके साथ न विवाहा । हे महावीर ! इसका कारण कहती हैं तुम सुनो ॥ ११ ॥

सुरेश्वर त्रिलोकेश्वर विष्णुजीको जामाता करनाही हमारे पिताकी इच्छा थी, इसलिये उन्होंने और किसीको हमें नहीं दिया ॥ १२ ॥ जब पिताजीने हमको विष्णुजीके साथ विवाह देनेकी इच्छा की तब यह बात सुनकर बलगर्वित दैत्यराज शुम्भने अत्यन्त कोप किया ॥ १३ ॥ और एक दिन रात्रिके समय जब कि पिताजी सोते थे; उस पापात्मानेआकर उनको उसी समय मार डाला ॥ १४॥ उस कालमें हमारी महाभागा माता शोकसे आतुर हो पिताकेमृतक शरीरकेसाथ अग्निमें प्रवेश कर गई॥ १५। उसके पीछे नारायणके प्रति जो हमारे पिताजीका मनोरथ था; वह सत्य करनेकेकारणही हम नारायणजीको हृदयमें धारण किये हुए हैं ॥ १६॥ हे राक्षसश्रेष्ठ! इसही प्रतिज्ञाके वश हो हम यह बडी भारी तपस्या करती हैं यह समस्त वृत्तान्त हमने तुमसे कहा ॥ १७॥ नारायण

पितुस्तुममजामाताविष्णुःकिलसुरेश्वरः ॥ अभिप्रेतस्त्रिलोकेशस्तस्मान्नान्यस्यमेपिता ॥ १२ ॥ दातुमिच्छतितस्मैतुतच्छ्रुत्वाबलदर्पितः ॥ शंभुर्नामततोराजादैत्यानांकुपितोऽभवत् ॥ १३ ॥ तेनरात्रौशयानोमेपितापापेनहिंसितः ॥ १४॥ ततोमेजननीदीनातच्छरीरंपितुर्मम ॥ परिष्वज्यमहाभागाप्रविष्टाहव्यवाहनम् ॥ १५ ॥ ततोमनोरथंसत्यंपितुर्नारायणंप्रति ॥ करोमीतितमेवाहंहृदयेनसमुद्वहे ॥ १६ ॥ इतिप्रतिज्ञामारुह्यचरामिविपुलंतपः ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंमयाराक्षसपुंगव ॥ १७ ॥ नारायणोममपतिर्नत्वन्यःपुरुषोत्तमात ॥ आश्रयेनियमंघोरंनारायणपरीप्सया ॥ १८ ॥ विज्ञातस्त्वंहिमेराजन्गच्छपौलस्त्यनंदन ॥ जानामितपसासर्वंत्रैलोक्येयद्धिवर्तते ॥ १९ ॥ सोऽब्रवीद्रावणोभूयस्तांकन्यांसुमहाव्रताम् ॥ अवरुह्यविमानाग्रात्कंदर्पशरपीडितः ॥ २० ॥ अवलिप्ताऽसिसुश्रोणियस्यास्तेमतिरीदृशी ॥ वृद्धानांमृगशावाक्षिभ्राजतेपुण्यसंचयः ॥ २१ ॥ त्वंसर्वगुणसंपन्नानार्हसेवक्तुमीदृशम् ॥ त्रैलोक्यसुंदरीभीरुयौवनंतेऽतिवर्तते ॥ २२ ॥ अहंलंकापतिर्भद्रेदशग्रीवइतिश्रुतः ॥ तस्यमेभवभार्यात्वंभुङ्क्ष्वभोगान्यथासुखम् ॥ २३ ॥

ही हमारे पति हैं पुरुषोत्तम नारायणके सिवाय हम और किसीको नहीं जानती नारायणजीको पानेके लियेही यह घोर व्रत किया है ॥ १८॥ हे पौलस्त्यनंदन ! हम तुमको जानती हैं तुम जाओ त्रिलोकीमें जो कुछभी होता है हम तपकेबलसे वह समस्त जानती हैं ॥ १९॥ हे राम ! कामसे मोहित हुए रावणने विमानसे उतरकर उस श्रेष्ठ महाव्रतको करती हुई कन्यासे फिर कहा ॥ २०॥ हे श्रेष्ठ वदनवाली ! तुम गर्वित हो, जो ऐसा न होता तो तुम्हारी ऐसी प्रवृत्ति न होती ! हे मृगछोनाकेसे नेत्रवाली ! पुण्य उपार्जन करना वृद्ध लोगोंकोही शोभा देता है ॥ २१॥ तुम सर्वगुणसम्पन्न हो, तुमको ऐसा करना उचित नहीं है, हे भीरु ! तुम त्रैलोक्यसुन्दरी हो तुम्हारा यौवन बीता जाता है ॥ २२ ॥ हे भद्रे ! हम लंकाके स्वामी हैं, हमारा नाम रावण है तुम हमारी भार्या होकर सुखसहित

भोग्यवस्तुओंको भोगो ॥ २३ ॥ तुम जिसको विष्णु कहती हो वह कौन हैं ? हे लावण्यवती ! तुम जिसकी कामना करती हो वह कभी वीर्य, तप, भोग बल किसीमें भी हमारी तुल्य नहीं है ॥ २४ ॥ जब राक्षसराज रावणने इस प्रकारसे कहा तब वह वेदवती कन्या निशाचरसे बोली, तुम विष्णुजीके संबंधमें ऐसा न कहो ॥२५॥ वह तीनों लोकोंके स्वामी विष्णुजी सब लोकोंके नमस्कार करनेके योग्य हैं इसलिये हे राक्षसेन्द्र ! कौन बुद्धिमान् उनका अपमान करेगा ॥ २६ ॥ वेदवती कन्याके ऐसे वचन सुनकर निशाचर रावणने उस कन्याके बाल हाथसे पकड उसे आगेको खेंचा ॥२७॥ उसके पीछे वह वेदवती क्रोधित होकर हाथसे अपने बाल काटने लगी, अधिक क्या कहैं उस वेदवतीके हाथनेही खड्गरूप होकर उसके केश कलाप काट डाले ॥ २८ ॥ वह कन्या मरनेके

कश्चतावदसौयंत्वंविष्णुरित्यभिभाषसे ॥ वीर्येणतपसाचैवभोगेनचबलेनच ॥ समयानोसमोभद्रेयंत्वंकामयसेऽङ्गने ॥ २४ ॥ इत्युक्तवतितस्मिंस्तुवेदवत्यथसाऽब्रवीत् ॥ मामैवमितिसाकन्यातमुवाचनिशाचरम् ॥ २५ ॥ त्रैलोक्याधिपतिंविष्णुंसर्वलोकनमस्कृतम् ॥ त्वदृतेराक्षसेंद्रान्यःकोऽवमन्येतबुद्धिमान् ॥ २६ ॥ एवमुक्तस्तयातत्रवेदवत्यानिशाचरः ॥ मूर्धजेषुतदाकन्यांकराग्रेणपरामृशत् ॥ २७ ॥ ततोवेदवतीक्रुद्धाकेशान्हस्तेनसाच्छिनत् ॥ असिर्भूत्वाकरस्तस्याःकेशांश्छिन्नांस्तदाऽकरोत् ॥ २८ ॥ साज्वलंतीवरोषेणदहंतीवनिशाचरम् ॥ उवाचाग्निंसमाधायमरणायकृतत्वरा ॥ २९ ॥ धर्षितायास्त्वयाऽनार्यनमेजीवितमिष्यते ॥ रक्षस्तस्मात्प्रवेक्ष्यामिपश्यतस्तेहुताशनम् ॥ ३० ॥ यस्मात्तुधर्षिताचाहंत्वयापापात्मनावने ॥ तस्मात्तववधार्थंहिसमुत्पत्स्याम्यहंपुनः ॥ ॥ ३१ ॥ नहिशक्यःस्त्रियाहंतुंपुरुषःपापनिश्चयः ॥ शापेत्वयिमयोत्सृष्टेतपसश्चव्ययोभवेत् ॥३२॥ यदित्वस्तिमयाकिंचित्कृतंदत्तंहुतंतथा ॥ तस्मात्त्वयोनिजासाध्वीभवेयंधर्मिणःसुता ॥३३॥ एवमुक्त्वाप्रविष्टासाज्वलितांजातवेदसम् ॥ पपातचदिवोदिव्यापुष्पवृष्टिःसमंततः ॥ ३४ ॥

लिये शीघ्रता कर और क्रोधसे प्रज्वलित हो मानो राक्षसको भस्मही करती हुईसी बोली ॥ २९ ॥ रे अनार्य राक्षस ! तूने हमको धर्षित किया तो सही परन्तु तू हमको जीती हुई नहीं कर सकेगा इसलिये तेरे सामनेही हम अग्निमें प्रवेश करेंगी ॥ ३० ॥ तैंने पापात्मा होकर केशोंको स्पर्श कर वनमें हमको धर्षित किया इस कारणसे तेरा वध करनेको हम फिर जन्म लेंगी ॥ ३१ ॥ जो हम तुमको शाप दें तो वृथा हमारी तपस्या क्षय होजायगी, विशेष करके हत संकल्प पुरुषको मारडालना स्त्रियोंके वशकी बात नहीं है ॥३२॥ जो हमने कुछ थोडाभी दानकार्य, या होम कियाहो तो उन सब कार्योंसे हम अयोनिजा और पतिव्रता होकर फिर किसी धर्मात्मा महाराजकी कन्या होंगी ॥३३॥ यह वचन कह वेदवती कन्या प्रज्वलित अग्निमें प्रवेश करगयीउस समय आकाशसे

चारों ओरको दिव्यपुष्पोंकी वर्षा होने लगी ॥३४॥ हे प्रभो! वेही वेदवती जनक राजाके यहां कन्यारूपसे उत्पन्न होकर तुम्हारी भार्या हुई हैं हे महाबाहो ! तुमभी वही सनातन विष्णु हो ॥३५॥ पहले जिस वेदवतीहीके कोपसे शत्रु तिरस्कृत किया गया था, अब उन्हीं वेदवतीजीने तुम्हारे अमानुषीयवीर्यका आश्रय लेकर उस पर्वतके समान शत्रुका संहार किया ॥३६॥ यह महाभागा वेदीके मध्यमें अग्निकी शिखाके समान, आनेवाले कल्पमें हलकी अनीसे खींचे हुए खेतमें इस प्रकारसे वारंवार उत्पन्न होंगी * ॥ ३७ ॥ हे महाराज यही पहले सतयुगमें वेदवती नाम विख्यात थीं सो यह त्रेता युगमें प्राप्त होकर राक्षसोंके कुलको संहार करनेको मैथिलकुलमें महात्मा जनकजीके यहां उनकी कन्या उत्पन्न हुई ॥३८॥ इत्यार्षे श्रीम० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां सप्तदशः सर्गः ॥१७॥

सैषाजनकराजस्यप्रसूतातनयाप्रभो ॥ तवभार्यामहाबाहोविष्णुस्त्वंहिसनातनः ॥ ३५ ॥ पूर्वंक्रोधहतःशत्रुर्ययासौनिहतस्तया ॥ उपाश्रयित्वाशैलाभस्तववीर्यममानुषम् ॥ ३६ ॥ एवमेषामहाभागामर्त्येषूत्पत्स्यतेपुनः ॥ क्षेत्रेहलमुखोत्कृष्टेवेद्यामग्निशिखोपमा ॥३७॥ एषावेदवतीनामपूर्वमासीत्कृतेयुगे ॥ त्रेतायुगमनुप्राप्यवधार्थंतस्यरक्षसः ॥ उत्पन्नामैथिलकुलेजनकस्यमहात्मनः ॥३८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे सप्तदशःसर्गः ॥१७॥ प्रविष्टायांहुताशंतुवेदवत्यांसरावणः ॥ पुष्पकंतुसमारुह्यपरिचक्राममेदिनीम् ॥१॥ ततोमरुत्तंनृपतिंयजंतंसहदैवतैः ॥ उशीरबीजमासाद्यददर्शसतुरावणः ॥ २ ॥ संवर्तोनामब्रह्मर्षिःसाक्षाद्भ्राताबृहस्पतेः ॥ याजयामासधर्मज्ञःसर्वैर्देवगणैर्वृतः ॥ ३ ॥ दृष्ट्वादेवास्तुतद्रक्षोवरदानेनदुर्जयम् ॥ तिर्यग्योनिंसमाविष्टास्तस्यधर्षणभीरवः ॥४॥ इंद्रोमयूरःसंवृत्तोधर्मराजस्तुवायसः ॥ कृकलासोधनाध्यक्षोहंसश्चवरुणोऽभवत् ॥ ५ ॥ अन्येष्वपिगतेष्वेवंदेवेष्वरिनीषूदन ॥ रावणःप्रविशद्यज्ञंसारमेयइवाशुचिः ॥६॥

जब वेदवती अग्निमें प्रवेश करगई तब रावण पुष्पकविमानपर सवार होकर पृथ्वीपर घूमने लगा ॥ १ ॥ फिर उसने उशीरबीज नामक स्थानमें जाकर देखा कि मरुत राजा सब देवताओंके संग यज्ञ कर रहे हैं ॥ २ ॥ बृहस्पतिजीके सगे भ्राता धर्मके जाननेवाले संवर्तनामक ब्रह्मर्षि समस्त देवताओंके साथ उनका यज्ञ करा रहे थे ॥ ३ ॥ वरदान पानेसे अजितराक्षसको देख उसके सतानेके भयसे देवता पक्षियोंका रूप धारण कर उडगये ॥४॥ इन्द्रजी मोर, धर्मराज काग, कुबेरजी गिरगिट और वरुणजी हंसरूप हुए ॥ ५ ॥ हे शत्रुनाशी ! और देवताभी इसी प्रकार पक्षियोंकी योनिमें प्रवेश करते हुए तब रावणभी अपवित्र

* वैशाख शुक्ल नवमीके दिन जानकीका जन्म हुआ है ।

कुत्तेके समान यज्ञके स्थानमें पैठा ॥६॥ तब राक्षसपति रावणने राजा मरुत्के निकट पहुँचकर उनसे कहा कि "युद्ध करो" अथवा कहदो "हम हारगये" ॥७॥ उसके पीछे मरुत्ने रावणसे कहा, तुम कौन हो ! तब रावण हँसकर बोला ॥ ८ ॥ हे राजन् ! हम धनेश्वर कुबेरजीके छोटे भाई हैं; हमारा नाम रावण है, इस लिये इस कौतूहलरहित भावसे आपपर प्रसन्न हुए हैं ॥९॥ तुम हमारा पराक्रम नहीं जानते;ऐसा पुरुष त्रिलोकीमें कोई नहीं है । हम भ्राताकुबेरको जीतकर उससे यह विमान छीन लाये हैं ॥१०॥ इसके उपरान्त मरुत राजाने रावणसे कहा—तुम्हें धन्य है । क्योंकि तुमने अपने बडे भ्राताको संग्राममें जीता है तुम्हारे समान बडाई करनेके योग्य पुरुष तीनोंलोकमें कोई भी नहीं है ॥११॥ हे मूढ ! अधर्मयुक्त कर्म, या लोकनिन्दित कर्मकभी बडाई योग्य नहीं हो सकता, तूने ज्येष्ठ

तंचराजानमासाद्यरावणोराक्षसाधिपः ॥ प्राहयुद्धंप्रयच्छेतिनिर्जितोऽस्मीतिवावद ॥ ७ ॥ ततोमरुत्तोनृपतिःकोभवानित्युवाचतम् ॥ अपहा संततोमुक्त्वारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥ ८ ॥ अकुतूहलभावेनप्रीतोऽस्मितवपार्थिव ॥ धनदस्यानुजंयोमांनावगच्छसिरावणम् ॥ ९ ॥ त्रिषुलोकेषुकोन्योऽस्तियोनजानातिमेबलम् ॥ भ्रातरंयेननिर्जित्यविमानमिदमाहृतम् ॥ १० ॥ ततोमरुत्तःसनृपस्तंरावणमथाब्रवीत् ॥ धन्यःखलु भवान्येनज्येष्ठोभ्रातारणेजितः ॥ नत्वयासदृशःश्लाघ्यस्त्रिषुलोकेषुविद्यते ॥ ११ ॥ "नाधर्मसहितंश्लाघ्यंनलोकप्रतिसंहितम् ॥ कर्मदौरात्म्यकंकृत्वाश्लाघसेभ्रातृनिर्जयात् ॥ १ ॥" कंत्वंप्राक्केवलंधर्मंचरित्वालब्धवान्वरम् ॥ श्रुतपूर्वंहिनमयाभाषसेयादृशंस्वयम् ॥ १२ ॥ तिष्ठेदानींनमेजीवन्प्रतियास्यसिदुर्मते ॥ अद्यत्वांनिशितैर्बाणैःप्रेषयामियमक्षयम् ॥ १३ ॥ ततःशरासनंगृह्यसायकांश्चनराधिपः ॥ रणायनिर्ययौक्रुद्धःसंवर्तोमार्गमावृणोत् ॥ १४ ॥ सोऽब्रवीत्स्नेहसंयुक्तंमरुत्तंतंमहानृषिः ॥ श्रोतव्यंयदिमद्वाक्यंसंप्रहारोनतेक्षमः ॥ १५ ॥ माहेश्वरमिदंसत्रमसमाप्तंकुलंदहेत् ॥ दीक्षितस्यकुतोयुद्धंक्रोधित्वंदीक्षितेकुतः ॥ १६ ॥

भ्राताको पराजित करके दुरात्माकेसमान कार्य किया है, फिर तू क्या अपनी बडाई करता है ? कारण पूज्यापूज्यरहित तैंने किस धर्मका आचरण करके पहले वरदान पाया है? कारण कि; तू जिस प्रकारसे कहता है हमने तो पहले कभी सुना नहीं ॥१२॥ रे दुर्मते! खडा रह हमारे निकटसे तू जीता हुआ न जा सकेगा, तीखे बाणसमूहसे आजही हम तुझको यमराजके भवनका पाहुना करेंगे ॥१३॥ इसके उपरान्त राजा मरुत धनुष बाण ग्रहण करके क्रोधमें भरे हुए युद्ध करनेको बाहर निकले, परन्तु यज्ञ करनेको आये हुए संवर्त्त मुनिने उनका मार्ग रोका ॥ १४ ॥ महर्षि संवर्त्त स्नेहयुक्त वचनोंके द्वार राजा मरुतसे बोले कि, यदि हमारे वचन श्रवण करनेके योग्य हों तब तो युद्ध करना तुम्हारा मंगलकारी नहीं है ॥ १५ ॥ यह माहेश्वर यज्ञ पूर्ण न होनेसे तुम्हारे कुलको भस्म करेगा,

यज्ञमें दीक्षित हुए पुरुषको युद्ध करना कैसा? दीक्षितजनको क्रोधका उदय होना भी न चाहिये ॥ १६ ॥ और जय होनेसे भी तो सन्देह है क्योंकि यह राक्षस अजित है राजा मरुत गुरुजीके कहनेसे युद्ध न करके धनुषबाण त्याग स्थिरचित्त हो फिर यज्ञ करनेमें मन लगाते हुए ॥ १७ ॥ उसके पीछे रावणके मंत्री शुकने राजा मरुतको हारा हुआ विचार हर्षके वश रावणकी जय हुई यह विचारकर बडे शब्दसे रावणकी जय पुकारने लगा ॥ १८ ॥ इसके उपरान्त रावण यज्ञमें आये हुए महर्षि लोगोंको भक्षण कर उनका रुधिर पीनेसे अत्यन्त तृप्त हो फिर पृथ्वीपर घूमनेके लिये चला ॥ १९ ॥ जब रावण चला गया तब स्वर्गवासी इन्द्रादि देवता अपने २ स्वरूपको प्राप्त हो उन जीवोंसे कहने लगे ॥ २० ॥ तब इन्द्र हर्षित होकर नीली चन्द्रिका युक्त मोरसे बोला, कि हे धर्मज्ञ ! हम तुमपर अति प्रसन्न हुए हैं, इस लिये तुमको सर्पसे भय नहीं होगा ॥ २१ ॥ हमारे यह सहस्र नेत्र तुम्हारी चन्द्रिकापर शोभायमान होंगे, हमारे जल वर्षातेही हमारीप्रीतिका

संशयश्चचयोनित्यंराक्षसश्चसुदुर्जयः ॥ सनिवृत्तोगुरोर्वाक्यान्मरुत्तः पृथिवीपतिः ॥ विसृज्यसशरंचापंस्वस्थोमखमुखोऽभवत् ॥ १७ ॥ ततस्तं निर्जितंमत्वाघोषयामासवैशुकः ॥ रावणोजयतीत्युच्चैर्हर्षान्नादंविमुक्तवान् ॥ १८ ॥ तान्भक्षयित्वातत्रस्थान्महर्षीन्यज्ञमागतान् ॥ वितृप्तोरुधिरैस्तेषांपुनःसंप्रययौमहीम् ॥ १९ ॥ रावणेतुगतेदेवाःसेंद्राश्चैवदिवौकसः ॥ ततःस्वांयोनिमासाद्यतानिसत्त्वानिचाब्रुवन् ॥ २० ॥ हर्षात्तदाब्रवीदिंद्रोमयूरंनीलबर्हिणम् ॥ प्रीतोऽस्मितवधर्मज्ञभुजंगाद्धिनतेभयम् ॥ २१ ॥ इदंनेत्रसहस्रंतुयत्तद्बर्हेभविष्यति ॥ वर्षमाणेमयिमुदंप्राप्स्यसेप्रीतिलक्षणम् ॥ २२ ॥ एवमिंद्रोवरंप्रादान्मयूरस्यसुरेश्वरः ॥ २३ ॥ नीलाःकिलपुराबर्हामयूराणांनराधिप ॥ सुराधिपाद्वरंप्राप्यगताःसर्वेऽपिबर्हिणः ॥ २४ ॥ धर्मराजोऽब्रवीद्रामप्राग्वंशेवायसंप्रति ॥ पक्षिंस्तवास्मिसुप्रीतःप्रीतस्यःवचनंशृणु ॥ २५ ॥ यथान्येविविधैरोगैःपीड्यंतेप्राणिनोमया ॥ तेनतेप्रभविष्यंतिमयिप्रीतेनसंशयः ॥ २६ ॥ मृत्युतस्तेभयंनास्तिवरान्ममविहंगम ॥ यावत्त्वांनवधिष्यंतिनरास्तावद्भविष्यसि ॥ २७ ॥

चिह्न तुमको आनंद उत्पन्न हुआ करेगा ॥ २२ ॥ देवराज इन्द्रजीने इस प्रकारसे मोरको वरदान दिया ॥ २३ ॥ हे राजन् ! पूर्वकालमें मोरोंकी पूंछ केवल नीले रंगकी थी, इन्द्रजीने निकटसे वर पाय मोरोंकी पूछ अनेक प्रकारसे चिकित हुई ॥ २४ ॥ हे राम ! अनन्तर धर्मराजने यज्ञशालामें स्थित कागसे कहा कि हे पक्षिन् ! हम तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हुए हैं इसलिये हमारे वचन सुनो ॥ २५ ॥ और प्राणि जिस प्रकारसे हम करके अनेक प्रकारके रोगोंसे पीडित होते हैं सो हमारे प्रसन्न होनेसे वह रोग तुमको पीडित नहीं कर सकेंगे, इसमें कुछ भी संशय नहीं है ॥ २६ ॥ हे विहंगम ! हमारे वरप्रभावसे तुमको मृत्युसे कुछ भय नहीं जबतक तुमको मनुष्य मारेंगे नहीं तबतक तुम जीते रहोगे ॥ २७ ॥

और जो मनुष्य मेरे स्थानपर भूंखके मारे व्याकुल होंगे उनके पुत्रादि जो तुम्हारी जातिवालोंको भोजन करावेंगे, बस तुम्हारेही भोजन करनेसे हमारे यहांके प्राणी तृप्त हो जायँगे ॥२८॥ उसके पीछे वरुणजी गंगासलिलसंचारी हंससे बोले कि, हे पत्ररथेश्वर ! तुम हमारे प्रीतिसंयुक्तवचनोंको सुनो ॥ २९ ॥ तुम्हारी चन्द्रमाके मण्डलके समान निर्मल फेन समान कान्ति और श्रेष्ठ मनोहर सुन्दर वर्ण होगा॥३०॥ विशेष करके हमारे शरीरस्वरूप जलपर संचालन करके सदा ही सौन्दर्य और अतुल आनंद पाओगे यही हमारा चिह्न है ॥ ३१ ॥ हे राम ! पहले समयमें हंसोंका सब शरीर श्वेत वर्ण नहीं था, उनके पंखोंका अग्रभाग नीलवर्ण और छाती कोमलश्यामवर्ण थी ॥ ३२ ॥ इसके उपरान्त कुबेरजी पर्वतपर स्थिर गिरगिटसे बोले, हम तुमपर प्रसन्न होकर तुम्हारा रंग सुवर्णकासा

येचमद्विषयस्थावैमानवाःक्षुधयार्दिताः ॥ त्वयिभुक्तेसुतृप्तास्तेभविष्यंतिसबांधवाः ॥ २८ ॥ वरुणस्त्वब्रवीद्धंसंगंगातोयविचारिणम् ॥ श्रूयतांप्रीतिसंयुक्तंततःपत्ररथेश्वरम् ॥ २९ ॥ वर्णोमनोरमःसौम्यश्चंद्रमंडलसन्निभः ॥ भविष्यतितवोदग्रःशुद्धफेनसमप्रभः ॥ ३० ॥ मच्छरीरंसमासाद्यकांतोनित्यंभविष्यसि ॥ प्राप्स्यसेचातुलांप्रीतिमेतन्मेप्रीतिलक्षणम् ॥ ३१ ॥ हंसानांहिपुरारामनवर्णःसर्वपांडुरः ॥ पक्षानीलाग्रसंवीताःक्रोडाःशष्पाग्रनिर्मलाः ॥ ३२ ॥ अथाब्रवीद्वैश्रवणःकृकलासंगिरौस्थितम् ॥ हैरण्यंसंप्रयच्छामिवर्णंप्रीतस्तवाप्यहम् ॥ ३३ ॥ सद्रव्यंचशिरोनित्यंभविष्यतितवाक्षयम् ॥ एषकांचनकोवर्णोमत्प्रीत्यातेभविष्यति ॥ ३४ ॥ एवंदत्त्वावरांस्तेभ्यस्तस्मिन्यज्ञोत्सवेसुराः ॥ निवृत्तेसहराज्ञातेपुनःस्वभवनंगताः ॥ ३५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडेऽष्टादशः सर्गः ॥१८॥ अथजित्वामरुत्तंसप्रययौराक्षसाधिपः ॥ नगराणिनरेंद्राणांयुद्धाकांक्षीदशाननः ॥ १ ॥ समासाद्यतुराजेंद्रान्महेंद्रवरुणोपमान् ॥ अब्रवीद्राक्षसेंद्रस्तुयुद्धंमेदीयतामिति ॥ २ ॥ निर्जिताःस्मेतिवाब्रूतएषमेहिसुनिश्चयः ॥ अन्यथाकुर्वतामेवंमोक्षोनैवोपपद्यते ॥ ३ ॥

किये देते हैं ॥३३॥ तुम्हारा मस्तक भी सुवर्णके रंगका हो जायगा. और अधिक करके हमारे प्रसन्न होनेसे तुम्हारा काञ्चन वर्ण सदा अक्षय होगा ॥ ३४ इस प्रकार देवता इन समस्त पक्षियोंको वरदान देकर यज्ञोत्सव समाप्त होनेके पीछे राजा मरुतके सहित फिर अपने२ भवनको चले गये ॥३५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामष्टादशः सर्गः ॥१८॥ तदनन्तर मरुत राजाको जीतकर राक्षसाधिप रावण युद्धकी इच्छासे राजाओंके नगर२में घूमलगा॥१॥ निशाचरनाथ रावण इन्द्र और वरुणजीके समान राजाओंके निकट जाकर बोला कि तुम या तो हमसे युद्ध करो॥२॥ और नहीं तोयह कहो कि हम पराजित हो गये; कारण कि हमारा स्थिर निश्चय है, जो इन दोनोंमेंसे एकका आश्रय न लेगा उसके छुटकारेका उपाय किसी प्रकारसे नहीं देखाजाता ॥ ३ ॥

स्वभावसेही निडर और महाबलवान् होनेपर भी धर्ममें निश्चय किया राजा परस्पर सम्मति करने लगे ॥ ४ ॥ वह सबही शत्रुको अधिक बलवान् जानकर बोले कि, "हम हार गये" दुष्यन्त, सुरथ, गाधि, गवय, राजा पुरूरवा ॥५॥ इन सब महीपालोंने कह दिया कि हम पराजित हुए उसके पीछे राक्षसराज रावण अयोध्यानगरीमें आया ॥६॥ उन दिनोंमें अयोध्यापुरीकी रक्षा महाराजाधिराज अनरण्यजी करते थे जैसे इन्द्रजी अमरावतीकी रक्षा करते हैं सिंहके समान बल वान् अनरण्यजीसे ॥७॥ रावण बोला कि, युद्ध करो अथवा हम "हार गये" यह कहदो बस यही हमारी आज्ञा है ॥८॥ परन्तु अयोध्याका राजा अन रण्य उस पापात्माके वचन सुनकर क्रोधित हो राक्षसेंद्र रावणसे बोला ॥ ९ ॥ हे निशाचर ! तुम एक क्षण भर ठहरो हम तुमसे द्वंद्व युद्ध करते हैं, हम इस प्रक।

ततस्त्वभीरवःप्राज्ञाःपार्थिवाधर्मनिश्चयाः॥मंत्रयित्वाततोऽन्योन्यंराजानःसुमहाबलाः ॥४॥ निर्जिताःस्मेत्यभाषंतज्ञात्वावरबलंरिपोः॥ दुष्यं तःसुरथोगाधिर्गयोराजापुरूरवाः ॥५॥ एतेसर्वेऽब्रुवंस्तातनिर्जिताःस्मेतिपार्थिवाः ॥ अथायोध्यांसमासाद्यरावणोराक्षसाधिपः ॥६॥ सुगुप्ताम नरण्येनशक्रेणेवामरावतीम्॥ सतंपुरुषशार्दूलंपुरंदरसमंबले ॥ ७ ॥ प्राहराजानमासाद्ययुद्धंदेहीतिरावणः ॥ निर्जितोस्मीतिवाब्रूहित्वमेवंमम शासनम् ॥८॥ अयोध्याधिपतिस्तस्यश्रुत्वापापात्मनोवचः॥अनरण्यस्तुसंक्रुद्धोराक्षसेंद्रमथाब्रवीत् ॥९॥ दीयतेद्वंद्वयुद्धंतेराक्षसाधिपतेमया॥ संतिष्ठक्षिप्रमायत्तोभवचैवंभवाम्यहम् ॥१०॥ अथपूर्वंश्रुतार्थेननिर्जितंसुमहद्बलम् ॥ निष्क्रामत्तन्नरेंद्रस्यबलंरक्षोवधोद्यतम् ॥ ११ ॥ नागानां दशसाहस्रंवाजिनांनियुतंतथा ॥ रथानांबहुसाहस्रंपत्तीनांचनरोत्तम ॥१२॥ महींसंछाद्यनिष्क्रांतंसपदातिरथंरणे ॥ ततःप्रवृत्तंसुमहद्युद्धंयुद्धवि शारद ॥ १३ ॥ अनरण्यस्यनृपतेराक्षसेंद्रस्यचाद्भुतम् ॥ तद्रावणबलंप्राप्यबलंतस्यमहीपतेः ॥ १४ ॥ प्राणश्यततदासर्वंहव्यंहुतमिवानले॥ युद्ध्वाचसुचिरंकालंकृत्वाविक्रममुत्तमम् ॥ १५ ॥ प्रज्वलंतंतमासाद्यक्षिप्रमेवावशेषितम् ॥ प्रविशत्संकुलंतत्रशलभाइवपावकम् ॥ १६ ॥

रकी सेना लेकर लडेंगे कि, तुम शीघ्रही हमारे वशमें हो जाओगे ॥१०॥ राजा अनरण्यजीने पहलेही रावणका वृत्तान्त सुनकर युद्ध करनेके लिये प्रथमसे ही अपनी बडी सेनाको सजाय रक्खी थी सो नरपतिकी वह सेना राक्षसका वध करनेके लिये निकली ॥११॥ हे नरोत्तम ! अनरण्यकी सेनामें दश हजार हाथी, एक लाख घोडे व हजारों रथ और अगणित पैदल पृथ्वीको ढककर युद्ध करनेके लिये पैदलों व रथोंके सहित निकले ॥१२॥ हे युद्ध विशारद ! उसके पीछे बडा भारी युद्ध होने लगा ॥१३॥ राजा अनरण्यजीका राक्षसोंमें इन्द्र रावणसे अद्भुत युद्ध होने लगा उस कालमें राजा अनरण्यजीकी सेना रावणकी सेनाको प्राप्त होकर ॥१४॥ कुछ थोडेही कालतक संग्राम कर सकी फिर उत्तम विक्रम प्रकाश करके अग्निमें हुतेहुए हव्यके समान नाशको प्राप्त हो गई ॥१५॥ जलती हुई

अग्निके निकट जायकर जिस प्रकार पतंगपक्षी फिर उस अग्निमें बैठही जाते हैं वैसे राजाकी बची हुई सेना रावणको प्राप्त होकर संग्राममें शीघ्र ही नाश हो गई ॥१६॥ तब राजाओंमें श्रेष्ठ उन अनरण्यजीने देखा कि जैसे सैकडों नदी समुद्रके निकट जायकर उसमें मिल जाती हैं वैसेही वहमहाबलवान् वीर रावणसे मारे जा रहे थे ॥१७॥ उसके पीछे राजा अनरण्यजी क्रोधसे परिपूर्ण हो इन्द्रके धनुषके समान धनुषकी टंकार कर आपही रावणके निकट पहुँचे ॥१८॥ मारीच, शुक, सारण, प्रहस्त, इत्यादि रावणके समस्त मंत्री राजा अनरण्यजीके निकट न ठहरकर मृगझुंडके समान भागे ॥१९॥ उसके पीछे इक्ष्वाकुकुलनंदन अनरण्यजीने उस राक्षस रावणके शिरमें आठ सौ बाण मारे ॥ २० ॥ जलकी धारा जिस प्रकार निकल पर्वतके शिखरपर गिरती है वैसेही वह समस्त बाण रावणके मस्तकपर गिरकर कहीं भी घाव न कर सके ॥२१॥ तब राक्षस रावणने बडा क्रोध कर राजा अनरण्यजीके शिरपर एक चटकना मारा कि जिसके

सोऽपश्यत्तन्नरेंद्रस्तुनश्यमानंमहाबलम् ॥ महार्णवंसमासाद्यवनापगशतंयथा ॥ १७ ॥ ततःशक्रधनुःप्रख्यंधनुर्विस्फारयन्स्वयम् ॥ आससाद नरेंद्रस्तंरावणंक्रोधमूर्च्छितः ॥ १८ ॥ अनरण्येनतेऽमात्यामारीचशुकसारणाः ॥ प्रहस्तसहिताभग्नाव्यद्रवंतमृगाइव ॥१९॥ ततोबाणशतान्य ष्टौपातयामाससमूर्धनि ॥ तस्यराक्षसराजस्यइक्ष्वाकुकुलनंदनः ॥२०॥ तस्यबाणाःपतंतस्तेचक्रिरेनक्षतंक्वचित् ॥ वारिधाराइवाभ्रेभ्यःपतंत्यो गिरिमूर्धनि ॥२१॥ ततोराक्षसराजेनक्रुद्धेननृपतिस्तदा ॥ तलेनाभिहतोमूर्ध्निसरथान्निपपातह ॥२२॥ सराजापतितोभूमौविह्वलःप्रविवेपितः ॥ वज्रदग्धइवारण्येसालोनिपतितोयथा ॥ २३ ॥ तंप्रहस्याब्रवीद्रक्षइक्ष्वाकुंपृथिवीपतिम् ॥ किमिदानींफलंप्राप्तंत्वयामांप्रतियुद्ध्यता ॥ २४ ॥ त्रैलोक्येनास्तियोद्वंद्वंममदद्यान्नराधिप ॥ शंकेप्रसक्तोभोगेषुनश्रृणोषिबलंमम ॥ २५ ॥ तस्यैवंब्रुवतोराजामंदासुर्वाक्यमब्रवीत् ॥ किंशक्यमि हकर्तुंवैकालोहिदुरतिक्रमः ॥ २६ ॥ तद्यहंनिर्जितोरक्षस्त्वयाचात्मप्रशंसिना ॥ कालेनैवविपन्नोहंहेतुभूतस्तुमेभवान् ॥ २७ ॥

मारेजानेसे राजा रथसे पृथ्वीपर गिर पडे ॥२२॥ शालका वृक्ष जिस प्रकार वज्रसे भस्म होकर,वनमें गिर पडता है वैसेही वह राजा अनरण्यजी विह्वल हो पृथ्वी पर गिर कंपायमान होने लगे ॥२३॥ राक्षसराज रावण उपहास करके इनइक्ष्वाकुनन्दन पृथ्वीनाथअनरण्यजीसे बोला कि, तुमने हमारे साथ युद्ध करके इस समय क्या फल पाया ॥२४॥ हे नरनाथ! त्रिलोकीमें ऐसा कोई भी नहीं है कि जो हमारे साथ द्वंद्व युद्ध कर सके, हम जानते हैं कि, तुमने विषयभोगमें आसक्त रहकर हमारे बलका समाचार नहीं सुना होगा ॥२५॥ इस प्रकार कहने पर हीनबल हुए राजा अनरण्यजीने रावणसे कहा कि तुम्हारी क्या सामर्थ्य है कालकी गति बडी कठिन है ॥ २६ ॥ तुम अपनी बडाई करते हो परन्तु तुम हमको पराजित नहीं कर सके कालहीनेहमारा यह हाल किया है तुम तो

केवल इसके मिष हुए हो ॥२७॥ हे निशाचर! जीवनके अंतकाल (वृद्धावस्था) में अब हम क्या करनेको समर्थ हैं परन्तु हम विमुख तो नहीं हुए सन्मुख संग्राममेंही तुमसे घायल हुए हैं ॥२८॥ हे निशाचर! तैंने जो इक्ष्वाकुवंशका अपमान किया है इसके अर्थ हम कहते हैं कि जो हमने प्रजाको भलीभांतिसे पालन किया हो तो हमारा वचनसत्य हो ॥२९॥ हे राक्षस! महात्मा इक्ष्वाकुकुलके दाशरथी श्रीरामचन्द्रजी होंगे वह दशरथ कुमार ही तेरा प्राण संहार करेंगे ॥३०॥ जब अनरण्यजीने यह शाप दिया तो आकाशसे फूलोंकी वर्षा होने लगी और बादलके शब्दके समान गंभीर देवताओंके नगाडे बजने लगे ॥३१॥ तदनंतर राजाओंमें श्रेष्ठ राजा अनरण्य स्वर्ग धामको चले गये राजाके स्वर्गको चले जानेपर राक्षस भी वहांसे चल दिया ॥३२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामेकोन

किंत्विदानींमयाशक्यंकर्तुंप्राणपरिक्षये ॥ नह्यहंविमुखोरक्षोयुध्यमानस्त्वयाहतः ॥२८॥ इक्ष्वाकुपरिभावित्वाद्वचोवक्ष्मामिराक्षस ॥ यदि दत्तंयदिहुतंयदिमेसुकृतंतपः ॥यदिगुप्ताःप्रजाःसम्यक्तदासत्यंवचोऽस्तुमे ॥२९॥ उत्पत्स्यतेकुलेह्यस्मिन्निक्ष्वाकूणांमहात्मनाम्॥ रामोदाशरथिर्नामयस्तेप्राणान्हरिष्यति ॥३०॥ ततोजलधरोदग्रस्ताडितोदेवदुंदुभिः॥तस्मिन्नुदाहृतेशापेपुष्पवृष्टिश्चखाच्च्युता ॥३१॥ ततःसराजाराजेंद्रगतःस्थानंत्रिविष्टपम् ॥ स्वर्गंतेचनृपेतस्मिन्राक्षसःसोपसर्पत ॥३२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा० उत्तरकांडे एकोनविंशः सर्गः ॥१९॥ ततोवित्रासयन्मर्त्यान्पृथिव्यांराक्षसाधिपः ॥ आससादघने तस्मिन्नारदंमुनिपुंगवम् ॥१॥ तस्याभिवादनंकृत्वा दशग्रीवोनिशाचरः ॥ अब्रवीत्कुशलंपृष्ट्वाहेतुमागमनस्यच ॥ २ ॥ नारदस्तुमहातेजादेवर्षिरमितप्रभः ॥ अब्रवीन्मेघपृष्ठस्थोरावणंपुष्पके स्थितम्॥३॥ राक्षसाधिपतेसौम्यतिष्ठविश्रवसःसुत ॥ प्रीतो स्म्यभिजनोपेतविक्रमैरूर्जितैस्तव॥४॥ विष्णुनादैत्यघातैश्चगंधर्वोरगधर्षणैः ॥ त्वयासमंविमर्दैश्चभृशंहिपरितोषितः ॥ ५ ॥ किंचिद्वक्ष्यामितावत्तुश्रोतव्यंश्रोष्यसेयदि ॥ तन्मेनिगदतस्तातसमाधिंश्रवणेकुरु ॥ ६ ॥

विंशः सर्गः ॥१९॥ इसके उपरान्त राक्षसोंका राजा रावण पृथ्वीपर मनुष्योंको त्रास देता हुआ घूमता फिरता था कि उसने मेघके ऊपर बिराजे हुए मुनिश्रेष्ठ नारदजीको देखा ॥१॥ तब निशाचर रावणने प्रणाम करके उनकी कुशल पूँछी व आनेका कारणभी पूंछा ॥२॥ अमित प्रभायुक्त महातेजस्वी देवर्षि नारदजी मेघके ऊपर विराजमान पुष्पक विमानपर सवार होकर आये रावणसे कहने लगे ॥ ३ ॥ हे विश्रवानंदन सौम्य राक्षसनाथ! तुम हमारे वचन श्रवण करनेके लिये कुछ समय ठहरो हम तुम्हारा यह उग्र विक्रम देखकर बहुत प्रसन्न हुए हैं ॥४॥ पहले समयमें विष्णुजीने दैत्योंका नाश करके हमें अत्यन्त सन्तुष्ट किया था, पीछेसे तुम्हारे साथ गन्धर्व व नागोंका विनाश करनेवाला जो युद्ध होगा उससे हम अत्यन्त प्रसन्न होंगे ॥ ५ ॥ हे तात! जो तुम सुनो तो कुछ श्रवण करनेके योग्य बात

हम तुमसे कहनेकी इच्छा करते हैं इसलिये कहते हैं, तुम श्रवण करनेके लिये अपने चित्तको लगाओ ॥६॥ हे वत्स! यह मृत्युलोक जब कि मृत्युके वश है तब तो यह आपही नाश हुआ रखा है इसलिये तुम देवताओंसे अवध्य होकर वृथा क्यों इनका संहार करते हो; तुम, देव, दानव, दैत्य, यक्ष, राक्षस और गन्धर्वोंसे अवध्य हो इस कारण इन मनुष्योंको क्लेश देना तुम्हें उचित नहीं है ॥ ७ ॥ ८ ॥ यह मृत्युलोक सदाही विपत्तियोंसे युक्त है, विशेष करके अपनी भलाईका आचरण करनेमें अत्यन्त मूढ और जरा व्याधिसे अच्छादित हुआ है इसलिये ऐसे लोकका नाश करनेसे क्या ॥९॥ अनेक प्रकारके अनिष्ट सम्बन्धोंसे मनुष्य जहां तहां सदा पीडित हुआ करता है,इसलिये युद्धसे मनुष्य लोकका नाश करना कौन मतिमान् पुरुष चाहता है ? ॥ १० ॥ और भूख, प्यास व जरासेभी यह नित्य क्षय होताहै, इस कारण भाग्यकरके निहत विषाद और शोकसे संतापित मनुष्यलोकको तुम मत उजाडो ॥११॥ हे महावीर ! राक्षसनाथ ! देखो

किमयंबध्यतेतातत्वयाऽवध्येनदैवतैः ॥ हतएवह्ययंलोकोयदामृत्युवशंगतः ॥ ७ ॥ देवदानवदैत्यानांयक्षगंधर्वरक्षसाम् ॥ अवध्येनत्वयालोकःक्लेष्टुंयोग्योनमानुषः ॥ ८ ॥ नित्यंश्रेयसिसंमूढंमहद्भिर्व्यसनैर्वृतम् ॥ हन्यात्कस्तादृशंलोकंजराव्याधिशतैर्युतम् ॥ ९ ॥ तैस्तैरनिष्टोपगमैरजस्रंयत्रकुत्रकः ॥ मतिमान्मानुषेलोकेयुद्धेनप्रणयीभवेत् ॥ १० ॥ क्षीयमाणंदैवहतंक्षुत्पिपासाजरादिभिः ॥ विषादशोकसंमूढंलोकंत्वंक्षपयस्वमा ॥ ११ ॥ पश्यतावन्महाबाहोराक्षसेश्वरमानुषम् ॥ मूढमेवंविचित्रार्थंयस्यनज्ञायतेगतिः ॥ १२॥ क्वचिद्वादित्रनृत्यादिसेव्यतेमुदितैर्जनैः रुद्यतेचापरैरार्तैर्धाराश्रुनयनाननैः ॥ १३ ॥ मातापितृसुतस्नेहभार्याबंधुमनोरमैः ॥ मोदितोयंजनोध्वस्तःक्लेशंस्वंनावबुध्यते ॥ १४ ॥ तत्किमेवंपरिक्लिश्यलोकंमोहनिराकृतम् ॥ जितएवत्वयासौम्यमर्त्यलोकोनसंशयः ॥ १५ ॥ अवश्यमेभिःसर्वैश्चगंतव्यंयमसादनम् ॥ तन्निगृह्णीष्वपौलस्त्ययमंपरपुरंजय ॥ १६ ॥

मनुष्यलोक इतना मूढहै कि, वह अपने सुख दुःख भोग करनेके कालकोभी नहीं जानता और विविधभांतिके साधारण २ पुरुषार्थमें अनुरागी हुआ करता है ॥१२॥ कहीं तो मनुष्य हर्षित होकर गाते बजाते हैं, कहीं और दूसरे आर्त पुरुषके साथ आंसुओंकी धाराप्रवाहसे मुख व नेत्रोंको गीला करके रोदन कर रहे हैं ॥१३॥ और मनुष्यलोक—माता, पिता पुत्रके स्नेह और बन्धु इत्यादिके मनोरथसे मोहित है। इसलिये नीचेको गिरता हुआ अपनेपरलोकके क्लेशको नहीं जान सकता ॥ १४ ॥ इस कारण हे सौम्य ! इस प्रकारके मोहसे पीडित हुए मनुष्यको क्लेश देना वृथा है, और इसपर तुमने इस मृत्युलोकको जीत भी लिया है इसमें कुछ संदेह नहीं ॥ १५ ॥ यह समस्त मनुष्य अवश्यही यमराजके भवनको सिधारेंगे इससे हे परपुरको जीतने वाले ! पुलस्त्यके पौत्र ! तुम यमराजको

जीतो तो भला है ॥ १६ ॥ जहां तुमने उस यमराजको जीतलिया फिर मानो सबहीको जीतलिया इसमें कुछ संशय नहीं, अपने तेजसे दीप्तिमान् लंकापति रावण इस प्रकारसे नारदके समझानेसे ॥ १७ ॥ प्रणाम करके हँसता हुआ नारदजीसे बोला—कि हे देवर्षि ? हे देव गन्धर्व लोकविहार प्रिय ! हे समदर्श नप्रिय ॥ १८ ॥ जयकी अभिलाषा किये हम पातालके जानेको तैयार हैं फिर त्रिलोकीको जीत देवता और नागोंको अपने वशमें लाकर अमृतके लिये हम अमृत का स्थान समुद्र मथेंगे ॥ १९ ॥ तब भगवान् ऋषि नारदजी रावणसे बोले कि, तुम जो पातालहीको जाना चाहतेहो तो इस मार्गसे कहां जातेहो ? ॥ २० ॥ हे दुर्द्धर्ष ! हे शत्रुनाशी ? यह अत्यन्त दुर्गम यमपुरीका मार्ग प्रेतराज नगरके सामनेको चलागया है ॥ २१ ॥ तब वह रावण ऐसाही करेंगे यह कह हँसकर शरद्कालके

तस्मिञ्जितेजितंसर्वंभवत्येवनसंशयः ॥ एवमुक्तस्तुलंकेशोदीप्यमानःस्वतेजसा ॥ १७ ॥ अब्रवीन्नारदंतत्रसंप्रहस्याभिवाद्यच ॥ महर्षेदेवगंधर्वविहारसमरप्रिय ॥ १८ ॥ अहंसमुद्यतोगंतुंविजयार्थंरसातलम् ॥ ततोलोकत्रयं जित्वास्थाप्यनागान्सुरान्वशे ॥ समुद्रममृतार्थंचमथिष्यामिरसालयम् ॥ १९ ॥ अथाब्रवीद्दशग्रीवंनारदोभगवानृषिः ॥ क्वखल्विदानींमार्गेणत्वयेहान्येनगम्यते ॥ २० ॥ अयंखलुसुदुर्गम्यःप्रेतराजपुरंप्रति ॥ मार्गोगच्छतिदुर्धर्षयमस्यामित्रकर्शन ॥ २१ ॥ सतुशारदमेघाभंहासंमुक्त्वादशाननः ॥ उवाचकृतमित्येववचनंचेदमब्रवीत् ॥ २२ ॥ तस्मादेवंमहाब्रह्मन्वैवस्वतवधोद्यतः ॥ गच्छामिदक्षिणा माशांयत्रसूर्यात्मजोनृपः ॥ २३ ॥ मयाहिभगवन्क्रोधात्प्रतिज्ञातंरणार्थिना ॥ अवजेष्यामिचतुरोलोकपालानितिप्रभो ॥ २४ ॥ तदिहप्रस्थितोहंवैपितृराजपुरंप्रति ॥ प्राणिसंक्लेशकर्तारंयोजयिष्यामिमृत्युना ॥ २५ ॥ एवमुक्त्वादशग्रीवोमुनिंतमभिवाद्यच ॥ प्रययौदक्षिणामाशांप्रविष्टःसहमंत्रिभिः ॥ २६ ॥ नारदस्तुमहातेजामुहूर्तंध्यानमास्थितः ॥ चिंतयामासविप्रेंद्रोविधूमइवपावकः ॥ २७ ॥ येनलोकास्त्रयःसेंद्राःक्लिश्यंतेसचराचराः ॥ क्षीणेचायुषिधर्मेणसकलोजेष्यतेकथम् ॥ २८ ॥

मेघके समान द्युतिवाले नारदजीसे बोला ॥ २२ ॥ कि यमपुरीके मार्गसे जानेका और यमको जीतनेका विचार हमसे पक्का करलिया है इससे दक्षिण दिशाको ही जायँगे कि, जहां सूर्यके पुत्र यमराज हैं ॥ २३ ॥ हे भगवन् ! हे प्रभो ! हमने युद्धकी अभिलाषा कर क्रोधके वश हो प्रतिज्ञाकी है कि, चारों लोकपालोंको जीतेंगे ॥ २४ ॥ इसके लिये अब हम प्रेतराजकी नगरीकी ओर जाते हैं, बहुतही शीघ्र प्राणियोंके समूहको क्लेश देनेवाले उन यमराजको हम मृत्युसे मिलाप करावेंगे ॥ २५ ॥ रावण यह कह नारद मुनिको प्रणाम करउनके निकटसे चलकर मंत्रियोंके ॥ साथ दक्षिण दिशाको गया ॥ २६ ॥ परन्तु महातेजस्वी विप्रश्रेष्ठ धुवांरहित अग्निके समान नारदजी एक मुहूर्त भर तक ध्यानमें रहकर स्थिर हो चिन्ता करनेलगे ॥ २७ ॥ आयुके क्षीण होजानेपर जो इन्द्रादि देवता और सचराचर त्रिलोकीको क्लेश देता

है उस कालको रावण किस प्रकारसे जीतेगा ॥२८॥जो प्राणियोंके दान और कर्मादिका साक्षी है और जो दूसरा अग्निके स्वरूप है जिस महात्माके अनुग्रहसे जीव चेतना प्राप्त होकर अपने २ कार्यमें लगते हैं ॥ २९ ॥ त्रिलोकी जिसके भयसे व्याकुल होकर भागती है, यह राक्षसोंमें श्रेष्ठ रावण अपनी इच्छानुसार किस प्रकारसे उनके निकट जाय सकेगा ॥ ३० ॥ जो सब लोकका धाता और विधाता पाप पुण्यके फलका दाता है, जिसने त्रिलोकीको जीतलिया है उसकालको रावण किस प्रकारसे जीतेगा ? कालही तो सबका विधान है, रावण कालके सिवाय किस विधिका आश्रय लेकर कालको जीतेगा ? ॥ ३१ ॥ सो इसका हमको बडा कौतुक उत्पन्न होता है, इस कारण हम साक्षात् यम और राक्षसका युद्ध देखनेके निमित्त यमराजकी पुरीको जायँगे ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां विंशः सर्गः ॥ २० ॥अतिशीघ्र चलनेवाले विप्रोंमें श्रेष्ठ नारदजी इस प्रकारसे चिंताकर यह समाचार

स्वदत्तकृतसाक्षीयोद्वितीयइवपावकः ॥ लब्धसंज्ञाविचेष्टंतेलोकायस्यमहात्मनः ॥ २९ ॥ यस्यनित्यंत्रयोलोकविद्रवंतिभयार्दिताः ॥ तंकथंराक्षसेंद्रोसौस्वयमेवगमिष्यति॥ ३० ॥ योविधाताचधाताचसुकृतंदुष्कृतंतथा ॥ त्रैलोक्यंविजितंयेनतंकथंविजयिष्यते ॥ अपरंकिंतुकृत्वैवंविधानंसंविधास्यति॥ ३१ ॥ कौतूहलंसमुत्पन्नोयास्यामियमसादनम् ॥ विमर्दंद्रष्टुमनयोर्यमराक्षसयोःस्वयम् ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडेविंशः सर्गः ॥ २० ॥ एवंसंचिंत्यविप्रेंद्रोजगामलघुविक्रमः ॥ आख्यातुंतद्यथावृत्तंयमस्यसदनंप्रति ॥१॥ अपश्यत्सयमंतत्रदेवमग्निपुरस्कृतम् ॥ विधानमनुतिष्ठंतंप्राणिनोयस्ययादृशम्॥ २ ॥ सतुदृष्ट्वायमःप्राप्तंमहर्षितत्रनारदम् ॥ अब्रवीत्सुखमासीनमर्घ्यमावेद्यधर्मतः ॥ ३ ॥ कच्चित्क्षेमंनुदेवर्षेकच्चिद्धर्मोननश्यति ॥ किमागमनकृत्यंतेदेवगंधर्वसेवितः ॥ ४ ॥ अब्रवीत्तुतदावाक्यंनारदोभगवानृषिः ॥ श्रूयतामभिधास्यामिविधानंचविधीयताम् ॥ ५ ॥ एषनाम्नादशग्रीवः पितृराजनिशाचरः ॥ उपयातिवशंनेतुंविक्रमैस्त्वांसुदुर्जयम् ॥ ६ ॥

यमराजको सुनानेकी अभिलाषासे यमपुरीकी ओर चले॥ १ ॥ फिर उन्होंने यमराजजीके भवनमें जायकर देखा कि प्रेतराज अपने स्थानके सम्मुख अग्निको साक्षीकर जिस प्राणीका जैसा कर्म है, उसको वैसाही दंड और अनुग्रह कर रहे हैं॥ २॥यमराज महर्षि नारदजीको वहांपर आया हुआ देख धर्मानुसार अर्घ्य देकर उनको विराजमान करता हुआ ॥ ३ ॥ नारदजीके सुखपूर्वक बैठनेपर यमराज बोले हे देव गन्धर्वसेवित ! हे देवर्षे ! आप कुशल मंगलसे हैं ? धर्मका नाश तो नहीं होता ? आपके पधारनेका क्या हेतु है ?॥ ४ ॥ तब भगवान् नारदऋषि बोले कि, हम कहते हैं सुनो, फिर जो कुछ कर्त्तव्य हो सो करना ॥ ५ ॥ हे पितृराज ! दशग्रीव नामका अति अजित निशाचर विक्रमप्रकाश करते तुमको वशमें लानेकी कामना करके यहांपर चला आता है ॥ ६ ॥

हे प्रभो ! इसी कारण अति शीघ्रतासे हम आपके निकट आये हैं; यद्यपि आप दंडधारी हैं; तो भी आज आपके जय या पराजय होनेकी कुछ स्थिरता नहीं है ॥ ७ ॥ इसी अवसरमें दूरसे दिखाई दिया कि, उदित सूर्य भगवान्‌के समान प्रभावान् राक्षसका विमान चला आता है ॥८॥ महाबलवान् रावण उस पुष्पक विमानकी प्रभासे वहांके अन्धकारको दूर करता हुआ आया ॥९॥ तहां महाबलवान् रावणने देखा कि, सब प्राणी अपने पापपुण्यका फल पारहे हैं॥ १० ॥ यमराजकी सेना उनके दूतोंके साथ प्रजागणोंकी उनके पापपुण्यके अनुसार किसीका आदर कर रही है और किसीको बांध रही है ॥ ११ ॥ रावणने फिर देखा, घोररूपी भयानक उग्र २ यमदूतों करके मारे जाकर सब प्राणी दुःखके मारे आर्त चिल्लाय रहे हैं ॥ १२ ॥ कीडे व कुत्ते आदि जन्तु उन सबोंको

एतेनकारणेनाहंत्वरितोह्यागतःप्रभो ॥ दंडप्रहरणस्याद्यतवकिंनुभविष्यति ॥ ७ ॥ एतस्मिन्नंतरेदूरादंशुमंतमिवोदितम् ॥ ददृशुर्दीप्तमायांतं विमानंतस्यरक्षसः ॥ तंदेशंप्रभयातस्यपुष्पकस्यमहाबलः ॥८॥ कृत्वावितिमिरंसर्वंसमीपमभ्यवर्तत ॥ ९ ॥ सोऽपश्यत्समहाबाहुर्दशग्रीव स्ततस्ततः ॥ प्राणिनःसुकृतंचैवभुंजानांश्चैवदुष्कृतम् ॥१०॥ अपश्यत्सैनिकांश्चास्ययमस्यानुचरैःसह ॥ यमस्यपुरुषैरुग्रैर्घोररूपैर्भयानकैः ॥११॥ ददर्शबध्यमानांश्चक्लिश्यमानांश्चदेहिनः ॥ क्रोशतश्चमहानादंतीव्रनिष्टनतत्परान् ॥१२॥ कृमिभिर्भक्ष्यमाणांश्चसारमेयैश्चदारुणैः ॥ श्रोत्रायासकरावाचोवदतश्चभयावहाः॥ १३ ॥ संतार्यमाणान्वैतरणींबहुशःशोणितोदकाम् ॥ वालुकासुचतप्तासुतप्यमानान्मुहुर्मुहुः ॥ १४ ॥ असिपत्रवनेचैवभिद्यमानानधार्मिकान् ॥ रौरवेक्षारनद्यांचक्षुरधारासुचैवहि ॥ १५ ॥ पानीयंयाचमानांश्चतृषितान्क्षुधितानपि ॥ शवभूतान्कृशान्दीनान्विवर्णान्मुक्तमूर्धजान् ॥१६॥ मलपंकधरान्दीनान्रूक्षांश्चपरिधावतः॥ ददर्शरावणोमार्गेशतशोथसहस्रशः ॥ १७ ॥

काट रहे हैं; और सब ऐसे भयानक वचन बोलते थे कि, सुनतेही मन व्याकुल हो जाय और उन प्राणियोंपर दया आवे ॥ १३ ॥ अनेक प्राणी रुधिररूप जलसे भरी हुई वैतरणी नदीके पार हो रहे हैं कोई२उस नदीकी तत्ती २ वालूमें वारंवार संतापित हो रहे हैं ॥१४॥ व अनेक अधर्मी लोगोंका शरीर असिपत्र वनमें काटा जाता है; पापी गण रौरव, क्षार नदी और छूरीकी धारपर गिरकर आर्त शब्द कर रहे हैं ॥ १५ ॥ अनेक मुरदोंके समान कृश देह हो गये, वदन विवर्ण हो गया है, बाल छूटे हुए हैं, बहुतसे पापी भूँखे प्यासे होकर "जलजल" ऐसे शब्दकर बारबार जल मांग रहे हैं ॥ १६ ॥ सैकड़ों पापी मैले कुचैलेही धूरी लगाये, रूखे अंग किये इधर उधर दौडते हैं, रावणने मार्गके बीच दुरवस्थामें पडे सैकडों हजारों पापी देखे ॥ १७ ॥

फिर यमराजके भवनमें यह भी देखा कि,कोई२पुण्यात्मा अपने पुण्यके प्रभावसे उत्तम स्थानोंमें गीत और बाजोंके बजानेसे आनंद कर रहे हैं॥ १८॥जिन्होंने गोदान, अन्नदान और गृहदान किये हैं वे लोग अपने कर्मके फलानुसार गोरस अन्न और गृहभोग कर रहे हैं ॥ १९ ॥ धर्मात्मा लोग सुवर्ण, मणि और मुक्तासे सजधजकर स्त्रियोंके सहित विहार कर रहे हैं ॥ २० ॥ व और दूसरे धर्मात्मा लोग अपने तेजके प्रभावसे प्रदीप्त हो रहे हैं, महावीर राक्षसपति रावणने वहां इस प्रकारसे देखा ॥ २१ ॥ उसके पीछे बलवान् रावणने विक्रम प्रकाश करके बलके सहित अपने दुष्कृत कार्यसे दंड पाते हुए उन पापियोंको छोड दिया ॥ २२ ॥ पापी प्राणिगण राक्षस दशग्रीव करके छुटाये जायकर एक मुहूर्त्त भरके लिये अचिन्तनीय और अतर्कित सुख प्राप्त करते हुए, जब बलवान्

कांश्चिच्चगृहमुख्येषुगीतवादित्रनिःस्वनैः ॥ प्रमोदमानानद्राक्षीद्रावणःसुकृतैःस्वकैः ॥ १८ ॥गोरसंगोप्रदातारोअन्नंचैवान्नदायिनः ॥ गृहांश्चगृहदातारःस्वकर्मफलमश्नुतः ॥ १९ ॥ सुवर्णमणिमुक्ताभिःप्रमदाभिरलंकृतान् ॥ धार्मिकानपरांस्तत्रदीप्यमानान्स्वतेजसा ॥ २० ॥ ददर्शसमहबाहूरावणोराक्षसाधिपः ॥ ततस्तान्भिद्यमानांश्चकर्मभिर्दुष्कृतैःस्वकैः ॥ २१ ॥ रावणोमोचयामासविक्रमेणबलाद्बली ॥ प्राणिनोमोक्षितास्तेनदशग्रीवेणरक्षसा ॥२२॥ सुखमापुर्मुहूर्तंतेह्यतर्कितमचिंतितम् ॥ प्रेतेषुमुच्यमानेषुसुराक्षसेनमहीयसा ॥२३॥ प्रेतगोपाःसुसंक्रुद्धाराक्षसेंद्रमभिद्रवन् ॥ ततोहलहलाशब्दःसर्वदिग्भ्यःसमुत्थितः ॥ धर्मराजस्ययोधानांशूराणांसंप्रधावताम् ॥ २४ ॥ तेप्रासैःपरिघैःशूलैर्मुसलैःशक्तितोमरैः ॥ पुष्पकंसमधर्षंतशूराःशतसहस्रशः ॥ २५ ॥ तस्यासनानिप्रासादान्वेदिकास्तोरणानिच ॥ पुष्पकस्यबभंजुस्तेशीघ्रंमधुकराइव ॥ २६ ॥ देवनिष्ठानभूतंतद्विमानंपुष्पकंमृधे ॥ भज्यमानंतथैवासीदक्षयंब्रह्मतेजसा ॥ २७ ॥ ततस्तेसमहत्यासीत्तस्यसेनामहात्मनः ॥ शूराणामग्रयातॄणांसहस्राणिशतानिच ॥ २८ ॥

राक्षसोंने प्रेतोंको छोड दिया ॥२३॥ तब प्रेतरक्षक अत्यन्त क्रुद्ध हो राक्षस रावणके सन्मुख दौडे। इसके पीछे धर्मराजके शूरवीर हल्ला करते हुए दशों दिशाओंसे आगमन करने लगे ॥ २४ ॥ वह सैकडों हजारों शूरवीर शूल, मूशल, शक्ति, परिघ और तोमर इत्यादि अस्त्र शस्त्र पुष्पक विमानपर वर्षाने लगे ॥ २५ ॥ वह सब शहदकी मक्खियोंके समान एक साथ ही गिरकर अतिशीघ्र पुष्पक विमानके चारों तरफसे आसन, महल, चौंतरे और द्वार तोडने लगे ॥ २६ ॥ परंतु विमान देवताके अधिष्ठान और ब्रह्मतेजसे अक्षय था इस कारण टूटनेपर भी वह पहलेके समान फिर ज्योंका त्यों नया हो जाता था ॥ २७ ॥ उन महात्मा धर्मराजकी अगणित बडी भारी सेन थी परन्तु उनमेंसे सैकडों हजारों शूर अग्रगण्य थे ॥ २८ ॥

उसके पीछे यमराजके महावीर समस्त मंत्री सैकडों पहाड वृक्ष और भाला इत्यादिसे सामर्थ्यके अनुसार अभिलाषाके योग्य युद्ध करने लगे ॥२९॥ राजा दशानन उसके मंत्री सर्व प्रकारके अस्त्र शस्त्रोंसे बनाय सब भांति घायल लोहू लुहान हो घोर संग्राम करने लगे ॥ ३० ॥ महावीर यम और रावणके महाभाग मंत्री अस्त्र शस्त्र चलायकर परस्पर एक दूसरेके ऊपर प्रहार करने लगे ॥ ३१ ॥ परन्तु महावीर यमराजके मंत्री महाबलवान् रावणके मंत्रीजनोंको छोड कर वह महाबलशाली वीर ॥३२॥ शूल वर्षण करते २ रावणके सन्मुख ही धाये। फिर राक्षसोंका राजा उनके प्रहारसे जर्जरतन हो गया व उसकेसब अंगोंसे रुधिर निकलने लगा, और खिले हुए पुष्प समूहोंसे शोभित अशोकवृक्षके समान वह पुष्पक विमान शोभायमान होने लगा ॥ ३३ ॥ उस कालमें बलवान् रावण

ततोवृक्षैश्चशैलैश्चप्रासादानांशतैस्तथा ॥ ततस्तेसचिवास्तस्ययथाकामंयथाबलम् ॥ २९ ॥ आयुध्यंतमहावीराःसचराजादशाननः ॥ तेतुशोणितदिग्धांगाःसर्वशस्त्रसमाहताः ॥ ३० ॥ अमात्याराक्षसेंद्रस्यचक्रुरायोधनंमहत् ॥ अन्योन्यंतेमहाभागाजघ्नुःप्रहरणैर्भृशम् ॥ ३१ ॥ यमस्यचमहाबाहोरावणस्यचमंत्रिणः ॥ अमात्यांस्तांस्तुसंत्यज्ययमयोधामहाबलाः ॥ ३२ ॥ तमेवचाभ्यधावंतशूलवर्षैर्दशाननम् ॥ ततः शोणितदिग्धांगांप्रहारैर्जर्जरीकृतः ॥ फुल्लाशोकइवाभातिपुष्पकेराक्षसाधिपः ॥ ३३ ॥ सतुशूलगदाप्रासान्छक्तितोमरसायकान् ॥ मुमोचशिलावृक्षान्मुमोचास्त्रबलाद्बली ॥ ३४ ॥ तरूणांचशिलानांचशस्त्राणांचातिदारुणम् ॥ यमसैन्येषुतद्वर्षंपपातधरणीतले ॥ ३५ ॥ तांस्तु सर्वान्विनिर्भिद्यतदस्त्रमपहत्यच ॥ जघ्नुस्तेराक्षसंघोरमेकंशतसहस्रशः ॥ ३६ ॥ परिवार्यचतंसर्वेशैलमेघौत्कराइव ॥ भिंदिपालैश्चशूलैश्च निरुच्छ्वासमपोथयन् ॥ ३७ ॥ विमुक्तकवचःक्रुद्धःसिद्धःशोणितविस्रवैः ॥ ततःसपुष्पकंत्यक्त्वापृथिव्यामवतिष्ठत ॥ ३८ ॥ ततःसकार्मुकी बाणीसमरेचाभिवर्धत ॥ लब्धसंज्ञोमुहूर्तेनक्रुद्धस्तस्थौयथांतकः ॥ ३९ ॥

भी अस्त्र चलानेकी निपुणतासे तोमर बाण अस्त्रबलसे शिला और वृक्षोंको चलाने लगा ॥ ३४ ॥ यमराजकी सेनामें वृक्षशिलाकी अतिदारुण वर्षा होने लगी कि; जिससे वह सेना पृथ्वीपर गिरी ॥ ३५ ॥ परन्तु यमके योद्धा सब वृक्षादिको काट और अस्त्र शस्त्रोंको हटाय एक साथही सैकडों हजारों यमकिंकर रावणके ऊपर प्रहार करने लगे ॥३६॥ मेघसमूह जिस प्रकार पर्वतको घेर लेते हैं वैसेही वह सब रावणको घेरकर उसका श्वास रोक उसके ऊपर हजार २ भिन्दिपाल और शूल वर्षाने लगे ॥३७॥ रावणका कवच टूटगया और उसके सब अंगोंसे रुधिर बहने लगा;तब वह महा क्रोधित हो पुष्पकको छोडपृथ्वीपर उतरा ॥३८॥ एक मुहूर्तमें रावण भलीभांति सुस्त या कुपित हो दूसरे यमराजके समान खडा हो गया फिर धनुषबाण धारण कर संग्राममें बढने लगा ॥३९॥

उसके पीछे दिव्य पाशु पत अस्त्र धनुषपर चढाय यमकिङ्करोंसे "खडे रहो २" यह कह धनुषको खेंचने लगा ॥ ४० ॥ इस इन्द्रके शत्रु रावणने कोपके वश हो कानतक धनुषको खेंच समरमें वह बाण छोड़े जैसे शिवजीने त्रिपुरासुरके ऊपर बाण छोडे थे ॥ ४१ ॥ धूम और ज्वालामंडल सम्पन्न इन बाणोंका रूप ग्रीष्मकालमें वन दहनकारी प्रज्वलित दावानलके समान दिखाई देने लगा ॥ ४२ ॥ ज्वालाकी मालासे युक्त वह बाण छूटकर लता और वृक्षोंको भस्म करते हुए संग्राममें दौडे ॥४३॥ मांस खाने वाले पशुपक्षी भी उन बाणोंके तेजसे भस्महोकर इन्द्रध्वजाओंके समान उसी समय गिरे ॥४४॥ उसके पीछे भयंकर विक्रमकारी राक्षस रावण अपने मंत्रियोंके साथ पृथ्वीको कंपायमान करता हुआ महानाद करने लगा ॥ ४५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामेकविंशः सर्गः ॥ २१ ॥ वह सूर्यनन्दन पराक्रमी यमराज रावणका महानाद श्रवण करके अपनी सेनाका क्षय होना और शत्रुका विजय

ततःपाशुपतंदिव्यमस्त्रंसंधायकार्मुके॥ तिष्ठतिष्ठेतितानुक्त्वातच्चापंव्यपकर्षत ॥४०॥ आकर्णात्सविकृष्याथचापमिंद्रारिराहवे॥मुमोचतंशरंक्रुद्ध स्त्रिपुरेशंकरोयथा ॥४१॥ तस्यरूपंशरस्यासीत्सधूमज्वालमंडलम्॥वनंदहिष्यतोघर्मेदावाग्नेरिवमूर्च्छतः ॥४२॥ ज्वालामालीसतुशरःक्रव्या दानुगतोरणे॥मुक्तोगुल्मान्द्रुमांश्चापिभस्मकृत्वाप्रधावति॥४३॥तेतस्यतेजसादग्धाःसैन्यावैवस्वतस्यतु॥बलेतस्मिन्निपतितामाहेंद्राइवकेतवः ॥४४॥ ततस्तुसचिवैःसार्धंराक्षसोभीमविक्रमः॥ननादसुमहानादंकंपयन्निवमेदिनीम् ॥४५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा उत्तरकांडे एकविंशः सर्गः ॥२१॥ सतस्यतुमहानादंश्रुत्वावैवस्वतःप्रभुः॥शत्रुंविजयिनंमेनेस्वबलस्यचसंक्षयम् ॥१॥ सहियोधान्हतान्म त्वाक्रोधसंरक्तलोचनः ॥ अब्रवीत्त्वरितःसूतंरथोमेउपनीयताम् ॥२॥ तस्यसूतस्तदादिव्यमुपस्थाप्यमहारथम् ॥ स्थितःसचमहातेजाअध्यारो हततंरथम् ॥३॥ प्रासमुद्गरहस्तस्यमृत्युस्तस्याग्रतःस्थितः ॥ येनसंक्षिप्यतेसर्वंत्रैलोक्यमिदमव्ययम् ॥४॥ कालदंडस्तुपार्श्वस्थोमूर्तिमानस्य चाभवत् ॥ यमप्रहरणंदिव्यंतेजसाज्वलदग्निवत् ॥५॥ ततोलोकत्रयंक्षुब्धमकंपतदिवौकसः ॥ कालंदृष्ट्वातथाक्रुद्धंसर्वलोकभयावहम् ॥ ६ ॥

पाना जानते हुए ॥ १ ॥ यमराज योद्धाओंका नाथ जान क्रोधके मारे लाल नेत्रकर सारथीसे बोले कि, "शीघ्र हमारा रथ ले आओ ॥ २ ॥ सारथीभी शीघ्रतासे उनका महारथ लायकर खडा हो गया, तब महातेजस्वी यमराजजी उस रथपर सवार हुए ॥ ३ ॥ जो इस चराचर नित्य प्रवाहमान त्रिभुवनका संहार करता है, वह मृत्युभी पाश और मुद्गर हाथमें लेकर यमराजके आगे बैठा ॥ ४ ॥ जलती हुई अग्निके समान तेजसम्पन्न यमराजका अस्त्र कालदंडभी मूर्तिमान् होकर उनकी बगलमें बैठ गया ॥ ५ ॥ सब लोगोंके भय देनेवाले यमराजको ऐसाकुपित देखकर उस समय त्रिलोकी चलायमान हो गई औ देवता कंपायमान हो गये ॥ ६ ॥

इसके उपरान्त जब सारथीने रुचिर प्रभावाले घोडोंको चलाया, तब वह रथ घोर शब्द करके राक्षसराज रावणके निकटको चला ॥ ७ ॥ अधिक क्या कहें वह मनके समान वेगगामी इन्द्रके घोडोंके समान इन घोंडोंने एक मुहूर्तभरमें यमराजको संग्रामभूमिमें पहुँचा दिया ॥ ८ ॥ मृत्युरूप इस प्रकारके विकटाकाररूपको देखकर राक्षसपति रावणके मन्त्री एकाएकी भागने लगे ॥ ९ ॥ बलहीनताके मारे भयसे कातरहो और अचेतहो वह सचिव " हम इस स्थानमें अब युद्ध नहीं कर सकते " यह कहकर दशों दिशाओंको भागे ॥ १० ॥ परन्तु सब लोगोंको भय पहुँचाने वाले यमराजके ऐसे रथ को देख कर यह रावण कुछ भी चलायमान नहीं हुआ और न इसने कुछ भय पाया ॥ ११ ॥ फिर यमराज रावणके निकट जाय कोपके वश हो शक्ति और तोमर चलाय उसके मर्मस्थानोंको काटने लगे ॥ १२ ॥ तब रावण सावधान होकर जल वर्षाते हुए बादलके समान यमराजके उस रथ पर बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥ १३ ॥

ततस्त्वचोदयत्सूतस्तानश्वान्रुचिरप्रभान् ॥ प्रययौभीमसन्नादोयत्ररक्षःपतिःस्थितः ॥ ७ ॥ मुहूर्तेनयमंतेतुहयाहरिहयोपमाः ॥ प्रापयन्मनसस्तुल्यायत्रतत्प्रस्तुतंरणम् ॥ ८ ॥ दृष्ट्वातथैवविकृतंरथंमृत्युसमन्वितम् ॥ सचिवाराक्षसेंद्रस्यसहसाविप्रदुद्रुवुः ॥ ९ ॥ लघुसत्त्वतयातेहिनष्टसंज्ञाभयार्दिताः ॥ नेहयोद्धुंसमर्थाःस्मइत्युक्त्वाप्रययुर्दिशः ॥ १० ॥ सतुतंतादृशंदृष्ट्वारथंलोकभयावहम् ॥ नाक्षुभ्यतदशग्रीवोनचापिभयमाविशत् ॥ ११ ॥ सतुरावणमासाद्यव्यसृजच्छक्तितोमरान् ॥ यमोमर्माणिसंक्रुद्धोरावणस्यन्यकृंतत ॥ १२ ॥ रावणस्तुततःस्वस्थःशरवर्षंमुमोचह ॥ तस्मिन्वैवस्वतरथेतोयवर्षमिवांबुदः ॥ १३ ॥ ततोमहाशक्तिशतैःपात्यमानैर्महोरसि ॥ नाशक्नोत्प्रतिकर्तुंसराक्षसःस्वल्पपीडितः ॥ १४ ॥ एवंनानाप्रहरणैर्यमेनामित्रकर्षिणा ॥ सप्तरात्रकृतःसंख्येविसंज्ञोविमुखोरिपुः ॥ १५ ॥ तदासीत्तुमुलंयुद्धंयमराक्षसयोर्द्वयोः ॥ जयमाकांक्षतोर्वीरसमरेष्वनिवर्तिनोः ॥ १६ ॥ ततोदेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ प्रजापतिंपुरस्कृत्यसमेतास्तद्रणाजिरे ॥ १७ ॥ संवर्तइवलोकानांयुध्यतोरभवत्तदा ॥ राक्षसानांचमुख्यस्यप्रेतानामीश्वरस्यच ॥ १८ ॥

सैकडों महाशक्तियोंके छातीमें लगनेसे वह राक्षस रावण कुछ पीडित हुआ, परन्तु उन शक्तियोंके निवारणका कुछ उपाय न कर सका ॥ १४ ॥ शत्रुओंके मारनेवाले यमराजने इस प्रकारके अनेक अस्त्र शस्त्रोंके द्वारा सातदिन रात संग्राम करके शत्रुको चेतनाहीन और संग्रामसे विमुख किया ॥ १५ ॥ परन्तु हे वीर ! इन सात रात्रियोंके बीचमें संग्रामको किसीने नहीं छोडा परस्पर जयकी अभिलाषा किये हुए यमराज और राक्षसराजका तुमुल युद्ध होता था ॥ १६ ॥ उसकाल देवगण, गन्धर्वगण सिद्धगण और परमर्षिगण ब्रह्माजीको आगे करके उस रणभूमिमें आये ॥ १७ ॥ प्रेतोंके स्वामी यमराज और राक्षसराज रावण के युद्ध कालमें मानों प्रलय आय पहुँची थी ॥ १८ ॥

उसके पीछे राक्षसोंमें श्रेष्ठ रावण भी इन्द्रके वज्रके समान घोर नाद कर धनुषपर टंकारदे आकाशको सम्पूर्णतासे ही गुंजार कराता हुआ बाणोंके समूहको छोडने लगा ॥ १९ ॥ रावणने चार बाणोंसे मृत्युको और सात बाणोंसे सारथीको पीडित करके सकडों हजारों बाण अति शीघ्रतासे यमराजके मर्मस्थानमें मारे ॥ २० ॥ तब क्रोधके वश होनेके कारण यमराजके मुखमंडलसे श्वासके साथ धुआंसहित ज्वालामाली कोपरूप पावक उत्पन्न हुआ॥२१॥ यह आश्चर्य देख देवता व दानवोंके समीप मृत्यु काल दोनों बहुत हर्षित व क्रोधित हुए ॥ २२ ॥ फिर मृत्युने अत्यन्त क्रोधित होकर वैवस्वत यमराजसे कहा; आप हमको आज्ञा दीजिये, हम संग्राममें इस भयंकर पापी राक्षसको मारडालते हैं ॥२३॥ हमारी स्वभावसे ही यह मर्यादा है कि, जिसके ऊपर हम डटते हैं वह फिर जीवित नहीं रहता सो जब हमको आप छोडेंगे तब यह राक्षस जीता हुआ न बचेगा हिरण्यकशिपु, श्रीमान्नमुचि, शंबर ॥२४॥ निसंदी, धूम्रकेतु;

राक्षसेंद्रोऽपिविस्फार्यचापमिंद्राशनिप्रभम्॥निरंतरमिवाकाशंकुर्वन्बाणांस्ततोऽसृजत् ॥१९॥ मृत्युंचतुर्भिर्विशिखैःसूतंसप्तभिरार्दयत् ॥ यमं शतसहस्रेणशीघ्रंमर्मस्वताडयत् ॥२०॥ ततःक्रुद्धस्यवदनाद्यमस्यसमजायत ॥ ज्वालामालीसनिःश्वासःसधूमःकोपपावकः ॥ २१ ॥ तदाश्चर्यमथोदृष्ट्वादेवदानवसन्निधौ ॥ प्रहर्षितौसुसंरब्धौमृत्युकालौबभूवतुः ॥२२॥ ततोमृत्युःक्रुद्धतरोवैवस्वतमभाषत ॥ मुंचमांसमरेयावद्धन्मीमंपापराक्षसम् ॥ २३ ॥ नैषारक्षोभवेद्यमर्यादाहिनिसर्गतः ॥ हिरण्यकशिपुःश्रीमान्नमुचिःशंबरस्तथा ॥ २४ ॥ विसंदिर्धूमकेतुश्चबलिर्वैरोचनोपिच ॥ शंभुर्दैत्योमहाराजोवृत्रोबाणस्तथैवच ॥ २५ ॥ राजर्षयःशास्त्रविदोगंधर्वाःसमहोरगाः ॥ ऋषयःपन्नगादैत्यायक्षाश्चह्यप्सरोगणाः ॥ २६ ॥ युगांतपरिवर्तेचपृथिवीसमहार्णवा ॥ क्षयंनीतामहाराजसपर्वतसरिद्रुमा ॥ २७ ॥एतेचान्येचबहवोबलवंतोदुरासदाः ॥ विनिपन्नामयादृष्टाकिमुतायंनिशाचरः ॥ ॥ २८ ॥ मुंचमांसाधुधर्मज्ञयावदेनंनिहन्म्यहम् ॥ नहिकश्चिन्मयादृष्टोबलवानपिजीवति ॥ २९ ॥

विरोचनकापुत्र बलि महाराज, शुंभदैत्य, वृत्रासुर और बाणासुर ॥२५॥ शास्त्र जानने वाले सैकडों राजर्षि; गंधर्व, महोरग; ऋषि, पन्नग, दैत्य, यक्ष, व अप्सरायें इनको ॥ २६ ॥ और युगान्त बदलनेके समय हम पर्वत. नदी, वृक्षोंके सहित सागर सहित सब पृथ्वीको विध्वंश कर देते हैं ॥ २७ ॥ इनको व और सब महाबलवानोंको जो अति दुर्द्धर्ष थे देखते ही हमलोगोंने विनाश किया है; यह निशाचर तो एक साधारण बात है ॥ २८ ॥ इस कारण हे साधु धर्मज्ञ ! आप हमको छोड दीजिये हम इसको मारडालेंगे, चाहै जितना ही कोई बलवान् क्यों न हो हमारी दृष्टिके आगे पडकर कोई भी जीता हुआ नहीं रहता ॥ २९ ॥

यह हमारा निजका बल नहीं है, परन्तु स्वभावसे हमारा स्वरूप ऐसा है, हे यमराज ! हम करके देखेजाते ही यह निशाचर फिर एक क्षणभर भी जीता न बचेगा ॥ ३० । तब प्रतापवान् धर्मराजने इस मृत्युके ऐसे वचन सुनकर उससे कहा तुम ठहरो हमही इसका नाश करते हैं ॥ ३१ ॥ उसके पीछे प्रभु वैवस्वत यमराजजीने क्रोधके मारे लाल २ नेत्र करके हाथमें अमोघ व्यर्थ न होनेवाला कालदंड उठाया ॥३२॥ जिस दण्डके निकट ही सदा कालपाश रक्खारहता है और पावक व वज्रके समान मुद्गर भी मूर्तिमान होकर जिसके निकट रहता है ॥ ३३ ॥ जो देखते ही प्राणियोंके प्राण निकालता है वह यदि किसीको पाशसे पीस डाले या दंडसे गिरादे तो इसमें बात ही क्या है ॥३४॥ अधिक क्या हैं वह अग्निकी लपटसे युक्त महाशस्त्र उन बलशाली यमराज करके उठाया

बलंममनखल्वेतन्मर्यादैषानिसर्गतः ॥ सदृष्टोनमयाकालमुहूर्तमपिजीवति ॥ ३० ॥ तस्यैवंवचनंश्रुत्वाधर्मराजःप्रतापवान् ॥ अब्रवीत्तत्रतं मृत्युंत्वंतिष्ठैनंनिहन्म्यहम् ॥ ३१ ॥ ततःसंरक्तनयनःक्रुद्धोवैवस्वतःप्रभुः॥ कालदंडममोघंतुतोलयामासपाणिना ॥ ३२ ॥ यस्यपार्श्वेषुनि हिताःकालपाशाःप्रतिष्ठिताः ॥ पावकाशनिसंकाशोमुद्गरोमूर्तिमान्स्थितः ॥ ३३ ॥ दर्शनादेवयःप्राणान्प्राणिनामपकर्षति ॥ किंपुनःस्पृश मानस्यपात्यमानस्यवापुनः ॥ ३४ ॥ सज्वालापरिवारस्तुनिर्दहन्निवराक्षसम्॥तेनस्पृष्टोबलवतामहाप्रहरणोस्फुरत् ॥ ३५ ॥ ततोविदुद्रुवुः सर्वेतस्मात्त्रस्तारणाजिरे ॥ सुराश्चक्षुभिताःसर्वेदृष्ट्वादंडोद्यतंयमम्॥ ३६॥ तस्मिन्प्रहर्तुकामेतुयमेदंडेनरावणम् ॥ यमंपितामहःसाक्षाद्दर्शयित्वे दमब्रवीत्॥ ३७ ॥ वैवस्वतमहाबाहोनखल्वमितविक्रमः ॥ नहंतव्यस्त्वयैतेनदंडेनैषनिशाचरः ॥ ३८ ॥ वरःखलुमयैतस्मैदत्तस्त्रिदशपुंगव ॥ सत्वयानानृतःकार्योयन्मयाव्याहृतंवचः॥ ३९ ॥ योहिमामनृतंकुर्याद्देवोवामानुषोपिवा ॥ त्रैलोक्यमनृतंतेनकृतंस्यान्नात्रसंशयः ॥ ४० ॥ क्रुद्धेनविप्रमुक्तोयंनिर्विशेषंप्रियाप्रिये ॥ प्रजाःसंहरतेरौद्रोलोकत्रयभयावहः ॥ ४१ ॥

हुआ राक्षस रावणको भस्म करनेके लिये ही मानो एकाएकी प्रज्वलित हो उठा ॥ ३५ ॥ तब रणमें खडे हुए सब ही प्राणी दण्डके भयसे त्रासित हो भागने लगे और यमराजका दंड उठा हुआ देखकर देवतालोग भी चलायमान हुए ॥ ३६ ॥ इस प्रकार जब यमराजजी दंड रावणके ऊपर चलानेको तैयार हुए तब ब्रह्माजी उनके निकट आकर बोले ॥ ३७ ॥ हे अमित विक्रमकारी महावीर ! (यमराज) तुम यह दंड चलायकर इस निशाचरको न मारो ॥ ३८ ॥ हे देवश्रेष्ठ ! हमने इसको वरदान दिया है इसलिये हम जो कहते हैं वह तुमको मिथ्या न करना चाहिये ॥ ३९ ॥ और देवता या मनुष्य जो कोई भी हमारे वचन उल्लंघन करेंगे वह त्रिलोकीको झूंठा करेंगे इसमें संशय नहीं ॥ ४० ॥ तुम जो हमारे प्रिय वा अप्रिय प्राणिके ऊपर क्रोधित होकर त्रिभुवनका भयदायी

घोर दंड छोडोगे तो यह दंड प्रिय अप्रिय आदि समस्त प्राणियोंको संहार कर डालेगा ॥४१॥विशेष करके सबकी मृत्युके कारणहीअमित प्रभाववाले अमोघ कालदण्ड अपनी सृष्टिके विनाशको हमने उत्पन्न किया है ॥४२॥ इस कारण हे सौम्य ! यह दण्ड रावणके मस्तक पर गिराना तुमको उचित नहींहै, कारण कि इस दंडके गिरनेसे कोई पुरुष एक मुहूर्तभर तक भी नहीं जी सकता ॥ ४३ ॥ इस दंडके लगनेसे जो रावण मृतक न हुआ अथवा मृतक होगया, तो दोनों ही प्रकारसे हमारा वचन मिथ्या होगा ॥ ४४ ॥ इस कारणसे यह उठाया हुआ दंड रावणके ऊपरसे हटालो; और जो इस त्रिलोकीके रक्षा करनेकी वासना हो तो हमारे वचनोंको सत्य करो ॥ ४५ ॥ यह वचन सुनकर धर्मात्मा यमराजने उत्तर दिया कि, आप हमारे स्वामी हैं इस कारण आपकी आज्ञासे दंडसे निवृत्त किया गया ॥ ४६ ॥ परन्तु जो इस वरदान पाये हुए राक्षसको संहारनेमें हम समर्थ न हुए तो फिर समरमें रह कर हम क्या करनेको समर्थ

अमोघोह्येषसर्वेषांप्राणिनाममितप्रभः ॥ कालदंडोमयासृष्टःसर्वमृत्युपुरस्कृतः ॥ ४२ ॥ तन्नखल्वेषतेसौम्यपात्योरावणमूर्धनि ॥ नह्यस्मिन्पतितेकश्चिन्मुहूर्तमपिजीवति ॥ ४३ ॥ यदिह्यस्मिन्निपतितेनम्रियेतैषराक्षसः ॥ म्रियतेवादशग्रीवस्तदाप्युभयतोऽनृतम् ॥ ४४ ॥ तन्निवर्तयलंकेशाद्दण्डमेतंसमुद्यतम् ॥ सत्यंचमांकुरुष्वाद्यलोकांस्त्वंयद्यवेक्षसे ॥ ४५ ॥ एवमुक्तस्तुधर्मात्माप्रत्युवाचयमस्तदा ॥ एषव्यावर्तितोदण्डःप्रभविष्णुर्हिनोभवान् ॥ ४६ ॥ किंत्विदानींमयाशक्यंकर्तुंरणगतेनहि ॥ नमयायद्ययंशक्योहंतुंवरपुरस्कृतः ॥ ४७ ॥ एषतस्मात्प्रणश्यामिदर्शनादस्यरक्षस ॥ इत्युक्त्वासरथःसाश्वस्तत्रैवांतरधीयत ॥४८॥ दशग्रीवस्तुतंजित्वानामविश्राव्यचात्मनः ॥ आरुह्यपुष्पकंभूयोनिष्क्रांतोयमसादनात् ॥ ४९ ॥ सतुवैवस्वतोदेवैःसहब्रह्मपुरोगमैः ॥ जगामत्रिदिवंहृष्टोनारदश्चमहामुनिः ॥ ५० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे द्वाविंशःसर्गः ॥ २२ ॥ ततोजित्वादशग्रीवोयमंत्रिदशपुंगवम् ॥ रावणस्तुरणश्लाघीस्वसहायान्ददर्शह ॥ १ ॥ ततोरुधिरसिक्तांगंप्रहारैर्जर्जरीकृतम् ॥ रावणंराक्षसादृष्ट्वाविस्मयंसमुपागमन् ॥ २ ॥

होंगे ॥ ४७ ॥ इसलिये इस राक्षसकी दृष्टिसे हम अन्तर्धान हुए जाते हैं। यह कह कर यमराजजी वहांसे रथ व अश्वोंके सहित अन्तर्द्धान हो गये ॥४८॥ ब्रह्माजीकी कृपासे रावण यमराजको पराजित करके अपना नाम सबको सुनाय पुष्पकविमान पर सवार हो यमराजकी पुरीसे निकला ॥ ४९ ॥ उसके पीछे वैवस्वत यमराजजी ब्रह्मादि सब देवता लोगोंके संग स्वर्गको गये और महामुनि नारदजी भी हर्षित होकर चले गये ॥ ५० ॥इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां द्वाविंशः सर्गः ॥ २२ ॥ इसके उपरान्त समरमें बडाई पाये दशानन रावण देवश्रेष्ठ यमराजको जीत कर अपने सेवक लोगोंको देखता हुआ ॥ १ ॥ तब राक्षस लोग प्रहारसे जर्जरित तन सब अंगोंमें रुधिर लगे रावणको देखकर अत्यन्त विस्मित हुए ॥ २ ॥

फिर मारीचादि मंत्री जयजय शब्द कह रावणकी बढती मनाय रावणके सहित उस पुष्पक विमानपर चढे, तब रावणने उन लोगोंका भय दूर कर उन्हें समझाया बुझाया ॥ ३ ॥ फिर राक्षसराज रावण पातालमें जानेकी अभिलाषसे दैत्य और उरगगण करके अधिष्ठित वरुणजीके रक्षित समुद्रमें प्रवेश करता हुआ ॥ ४ ॥ वह रावण वासुकी नागसे पालीजाती हुई भोगपुरीमें जाय नागोंको अपने वशमें कर हर्षित हो मणिमयी पुरीमें गया ॥ ५॥ वरदान पाये हुये निवातकवच दैत्य वहां बसते थे, राक्षस रावणने वहां जाय उनको युद्ध करनेके लिये पुकारा ॥ ६ ॥ वह बलवान् दैत्यगण सन्तुष्ट अतिविक्रमी थे सबही संग्राममें उन्मत्त और अनेक अस्त्र शस्त्र धारी थे ॥ ७ ॥ वह दैत्यगण और राक्षसगण क्रोधित होकर शूल, त्रिशूल, कुलिश, पटा, असि, फरशासे एक

जयेनवर्धयित्वाचमारीचप्रमुखास्ततः ॥ पुष्पकंभेजिरेसर्वेसांत्विताराणेनतु ॥ ३ ॥ ततोरसातलंरक्षःप्रविष्टःपयसांनिधिम् ॥ दैत्योरगगणाध्युष्टंवरुणेनसुरक्षितम् ॥ ४ ॥ सतुभोगवतींगत्वापुरींवासुकिपालिताम् ॥ कृत्वानागान्वशेहृष्टोययौमणिमयींपुरीम् ॥ ५ ॥ निवातकवचास्तत्रदैत्यालब्धवरावसन् ॥ राक्षसस्तान्समागम्ययुद्धायसमुपाह्वयत् ॥ ६ ॥ तेतुसर्वेसुविक्रांतादैतेयाबलशालिनः ॥ नानाप्रहरणास्तत्रप्रहृष्टायुद्धदुर्मदाः ॥ ७ ॥ शूलैस्त्रिशूलैःकुलिशैःपट्टिशासिपरश्वधैः ॥ अन्योन्यंबिभिदुःक्रुद्धाराक्षसादानवास्तथा ॥ ८ ॥ तेषांतुयुध्यमानानांसाग्रःसंवत्सरोगतः ॥ नचान्यतरतस्तत्रविजयोवाक्षयोपिवा ॥ ९ ॥ ततःपितामहस्तत्रत्रैलोक्यगतिरव्ययः ॥ आजगामद्रुतंदेवोविमानवरमास्थितः ॥ १० ॥ निवातकवचानांतुनिवार्यरणकर्मतत् ॥ वृद्धःपितामहोवाक्यमुवाचविदितार्थवत् ॥ ११ ॥ नह्ययंरावणोयुद्धेशक्योजेतुंसुरासुरैः ॥ नभवंतःक्षयंनेतुमपिसामरदानवैः ॥ १२ ॥ राक्षसस्यसखित्वंचभवद्भिःसहरोचते ॥ अविभक्ताश्चसर्वार्थाःसुहृदांनात्रसंशयः ॥ १३ ॥ ततोग्निसाक्षिकंसख्यंकृतवांस्तत्ररावणः ॥ निवातकवचैःसार्धंप्रीतिमानभवत्तदा ॥ १४ ॥

दूसरेको मारने लगे ॥ ८ ॥ उन दैत्य और राक्षसोंको लडते २ पूरा एक संवत् बीतगया तो भी संग्राममें किसी पक्षकी जय अथवा हार न हुई ॥ ९ ॥ तब त्रिभुवनके पति अविनाशी देव पितामह ब्रह्माजी विमानपर सवार होकर अतिशीघ्र वहां आये ॥ १० ॥ और संग्राम करते हुए निवात कवचोंको रोक सर्वज्ञताके योग्य सार्थकवचन ब्रह्माजी बोले ॥ ११ ॥ सुर या असुर संग्राममें कोई भी इस रावणको पराजित करनेमें समर्थ नहीं है और देव, दानव कोई भी तुम लोग क्षय नहीं कर सकते ॥ १२ ॥ इस कारण इस राक्षसके साथ तुम लोगोंको मित्रता करनी चाहिये, इसमें कुछ संदेह नहीं कि मित्रोंका सब बातोंमें परस्पर समान अधिकार होता है ॥ १३ ॥ इसके उपरान्त रावण अग्निको साक्षी बनाय निवातकवच दानवोंके संग मित्रता करके अत्यन्त प्रसन्न हुआ ॥ १४ ॥

निवातकवच दानवोंने भी रावणका अत्यन्त सत्कार किया । इस प्रकारसे आ०९ ५।यरावण वहां अपने स्थानहीनके समान परमसुखसे एक वर्षतक रहा ॥ १५ ॥ और दैत्योंके स्थानमें मित्रताके वशसे दैत्योंको वशमें कर रावणने एक माया सीखी । वहांसे विदा हो लंकेश्वर रावण जलराज वरुणजीकी पुरीको ढूँढनेका अभिलाषी होकर उन निवातकवच दैत्योंसे विदा हो पातालमें घूमने लगा ॥१६॥ उसके पीछे कालकेय दैत्योंसे अधिष्ठित अश्मनामक नगरमें रावण गया, वहां उसकी मायाके प्रभावसे बलवान् कालकेय दैत्योंको रावणने मार डाला ॥ १७ ॥ अधिक क्या कहें, उस कालमें रावणने अपने बहनोई शूर्पणखाके स्वामी शक्तिसे दुस्सह बलवान् विद्युजिह्वको भी खड्गसे काट डाला ॥१८॥ तब जीभसे रावणवंशीय राक्षसोंको भक्षण करने वाले, राक्षस विद्युजिह्वको संग्राममें पराजित कर रावणने एक मुहूर्तभरमें चार शत दैत्योंका संहार किया॥१९॥ इसके उपरान्त राक्षसपति रावणने कैलास पर्वतके शिखरके समान चमकता हुआ उज्ज्वल

अर्चितस्तैर्यथान्यायंसंवत्सरमथोषितः॥स्वपुरान्निर्विशेषंचप्रियंप्राप्तोदशाननः ॥१५॥ तत्रोपधार्यमायानांशतमेकंसमाप्तवान् ॥ सलिलेंद्रपुरा न्वेषीभ्रमतिस्मरसातलम् ॥१६॥ ततोश्मनगरंनामकालकेयैरधिष्ठितम् ॥ गत्वातुकालकेयांश्चहत्वातत्रबलोत्कटान् ॥१७॥शूर्पणख्याश्चभर्ता रमसिनाप्राच्छिनत्तदा॥श्यालंचबलवंतंचविद्युज्जिह्वंबलोत्कटम्॥१८॥जिह्वयासंलिहंतंचराक्षसःसमरेतदा॥तंविजित्यमुहूर्तेनजघ्नेदैत्यांश्चतुःश तम्॥ १९ ॥ ततःपांडुरमेघाभकैलासमिवभास्वरम् ॥ वरुणस्यालयंदिव्यमपश्यद्राक्षसाधिपः॥२०॥क्षरतींचपयस्तत्रसुरभिंगामवस्थिताम् ॥ यस्याःपयोभिनिष्यंदात्क्षीरोदोनामसागरः॥२१॥ददर्शरावणस्तत्रगोवृषेंद्रवरारणिम्॥यस्माच्चंद्रःप्रभवतिशीतरश्मिर्निशाकरः॥२२॥यंसमाश्रि त्यजीवंतिफेनपाःपरमर्षयः॥ अमृतंयत्रचोत्पन्नंस्वधाचस्वधभोजिनाम्॥२३॥यांब्रुवंतिनरालोकेसुरभिनामनामतः ॥प्रदक्षिणंतुतांकृत्वारावणः परमाद्भुताम्॥प्रविवेशमहाघोरंगुप्तंबहुविधैर्बलैः ॥२४॥ततोधाराशताकीर्णंशारदाभ्रनिभंतदा ॥ नित्यप्रहृष्टंददृशेवरुणस्यगृहोत्तमम् ॥२५॥

मेघके समान दिव्य वरुणजीका स्थान देखा ॥२०॥ उस स्थानमें वह गायभी विराजमान थी कि, जिसके थनोंसे सदाही दूधकी धारा निकला करती है और इस धारासे ही क्षीरोदनामक सागर उत्पन्न हुआ है ॥ २१ ॥ उस क्षीरोद समुद्रसे ही शीतल किरणवाले निशाचर चन्द्रमाजी उत्पन्न हुए हैं, रावणने महावृषकी साक्षात् जननी उस सुरभीको वहां देखा ॥२२॥ कि, जिसका आश्रय करके फेनपायी परमर्षि लोग जीवित रहते हैं । और जिससे देवताओंका अमृत और स्वधा भोजन करनेवाले पितृलोगोंका भोजन कव्य उत्पन्न हुआ है ॥ २३ ॥ मनुष्य जिसको सुरभीके नामसे पुकारा करते हैं, रावणने उस परम अद्भुत गौकी प्रदक्षिणा करके अनेक प्रकारकी सेनासे रक्षित उस महाधारा पुरीमें प्रवेश किया ॥२४॥ उस कालमें सैकडों जलधारासे युक्त शरद् ऋतुके बादलोंके समान

प्रभासंपन्न सदा संतुष्ट जनोंसे परिपूर्ण वरुणजीका उत्तम स्थान दिखाई दिया ॥ २५॥ इसके उपरांत वरुणजीके सेनापतियोंने जब रावणको ताडित किया तब रावण समरमें उनको संहारकर योद्धागणोंसे बोला कि, तुम लोग बहुत शीघ्रही बहुत अपने राजासे निवेदन करो ॥ २६॥ कि, रावण युद्ध करनेके लिये यहां आया है; इसलिये उसको युद्धदान दीजिये, अथवा हाथ जोडकर कहिये हम हार गये, तबबस यह कहनेपर आपको किसी प्रकारका कुछ भय नहीं होगा ॥ २७॥ इसी अवसरमें महात्मा वरुणजीके पुत्रपौत्रगण, व उनके गौ और पुष्पक नामक सेनापति दोनों कोप करके आये ॥ २८॥ वह गुण सम्पन्न वरुणजीके सब पुत्र अपनी सेनाको साथ लेकर उदय हुए सूर्यके समान प्रभावाले मनके समान वेगगामी रथोंपर चढ़कर आये ॥ २९॥ फिर बुद्धिमान् रावण और जलराज वरुणजीके पुत्रोंमें अत्यन्त दारुण युद्ध होने लगा ॥ ३०॥ राक्षस रावणके महावीर्यवान् मंत्रियोंने जलराजवरुणजीकी वह समस्त सेना एक क्षणमें नाश कर दी ॥ ३१॥ तब संग्राममें अपनी

ततोहत्वाबलाध्यक्षान्समरेतैश्चताडितः ॥ अब्रवीच्चततोयोधान्राजाशीघ्रंनिवेद्यताम् ॥ २६ ॥ युद्धार्थीरावणःप्राप्तस्तस्ययुद्धंप्रदीयताम् ॥ वद वानभयंतेऽस्तिनिर्जितोस्मीतिसांजलिः ॥ २७ ॥ एतस्मिन्नंतरेक्रुद्धावरुणस्यमहात्मनः ॥ पुत्राःपौत्राश्चनिष्क्रामन्गोश्चपुष्करएवच ॥ २८ ॥ तेतुतत्रगुणोपेताबलैःपरिवृताःस्वकैः ॥ युक्त्वारथान्कामगमानुद्यद्भास्करवर्चसः ॥ २९ ॥ ततोयुद्धंसमभवद्दारुणंरोमहर्षणम् ॥ सलिलेंद्रस्यपु त्राणांरावणस्यचधीमतः ॥ ३० ॥ अमात्यैश्चमहावीर्यैर्दशग्रीवस्यरक्षसः ॥ वरुणंतद्बलंसर्वंक्षणेनविनिपातितम् ॥ ३१ ॥ समीक्ष्यस्वबलंसं ख्येवरुणस्यसुतास्तदा ॥ अर्दिताःशरजालेननिवृत्तारणकर्मणः ॥ ३२ ॥ महीतलगतास्तेतुरावणंदृश्यपुष्पके ॥ आकाशमाशुविविशुःस्यं दनैःशीघ्रगामिभिः ॥ ३३ ॥ महदासीत्ततस्तेषांतुल्यंस्थानमवाप्यतत् ॥ आकाशयुद्धंतुमुलंदेवदानवयोरिव ॥ ३४ ॥ ततस्तेरावणंयुद्धेशरैः पावकसन्निभैः ॥ विमुखीकृत्यसंहृष्टाविनेदुर्विविधान्रवान् ॥ ३५ ॥ ततोमहोदरःक्रुद्धोराजानंवीक्ष्यधर्षितम् ॥ त्यक्त्वामृत्युभयंक्रुद्धोयुद्धकां क्षीव्यलोकयत् ॥ ३६ ॥ तेनतेवारुणायुद्धेकामगाःपवनोपमाः ॥ महोदरेणगदयाहतास्तेप्रययुःक्षितिम् ॥ ३७ ॥

सेनाका नाश देख करके और शरजालसे पीडित हो वरुणजीके पुत्र क्षणभरतक युद्धसे विमुख होते हुए ॥ ३२ ॥ वह अबतक पृथ्वीपर रहकर युद्ध करते थे और रावणके मंत्री पुष्पक विमानपर बैठे हुए बाण वर्षाय रहे थे इस लिये यह विचारकर वह भी शीघ्रगामी रथपर सवार हो आकाशको उठे ॥ ३३ ॥ उसके पीछे समतुल्य स्थान प्राप्त होकर देवता और दानवोंके समान उन लोगोंका वह महातुमुल संग्राम आकाशमें होने लगा ॥ ३४॥ उसके पीछे वह लोग अग्निके समान बाणोंसे रावणको विमुख करके हर्षित चित्तसे अनेक प्रकारके शब्दोंसे चिल्लाने लगे ॥ ३५ ॥ उसके पीछे शूर महोदर अपने स्वामीको पराजित देख मृत्युका भय छोड वरुणजीकीसेनाको देखने लगा ॥ ३६ ॥ फिर उस महोदरने संग्राममें पवनके समान वेगसे चलनेवाले वरुणके पुत्रोंके घोडोंको गदासे मारा

गदासे घायल हो घोडे पृथ्वीपर गिर पडे ॥ ३७॥ वरुणजीके पुत्रोंके अश्व और योद्धाओंका नाश देख और विना रथके खडा हुआ पृथ्वीपर निहार महोदरने शीघ्रही सिंहनाद किया ॥ ३८॥ उस समय उनके वह समस्त रथ महोदरने चूर्ण करडाले, और घोडे भी उत्तम सारथी लोगोंके सहित पृथ्वीपर गिरपडे ॥ ३९ ॥ महात्मा वरुणजीके वीर पुत्रगण रथ गँवाय आकाशके तलेही विराजमान होने लगे, वे लोग केवल अपने प्रभावके वशसे पृथ्वीपर नहीं गिरे॥४०॥ उन सबोंने कोप करके समरमें धनुषपर रोदा चढाकर बाणोंसे महोदरको विदीर्ण करके फिर सबोंने मिलकर संग्राममें रावणको रोका ॥ ४१ ॥ वह सब अत्यन्त क्रोधके वश हो पर्वतपर मेघके समान धनुषसे छूटे हुए वज्रके समान दारुण बाण समूहोंसे रावणको घायल करने लगे ॥ ४२ ॥ उसके पीछे दशवदन रावण क्रोधके

तेषांवरुणसूनूनांहत्वायोधान्हयांश्वतान् ॥ मुमोचाशुमहानादंविरथान्प्रेक्ष्यतान्स्थितान् ॥ ३८ ॥ तेतुतेषांरथाःसाश्वाःसहसारथिभिर्वरैः ॥ महोदरेणनिहताःपतिताःपृथिवीतले ॥३९॥ तेतुत्यक्त्वारथान्पुत्रावरुणस्यमहात्मनः ॥ आकाशेविष्ठिताःशूराःस्वप्रभावान्नविव्यथुः ॥४०॥ धनूंषिकृत्वासज्जानिविनिर्भिद्यमहोदरम् ॥ रावणंसमरेक्रुद्धाःसंहिताःसमवारयन् ॥ ४१ ॥ सायकैश्चापविभ्रष्टैर्वज्रकल्पैःसुदारुणैः ॥ दारयंतिस्मसंक्रुद्धामेघाइवमहागिरिम् ॥ ४२ ॥ ततःक्रुद्धोदशग्रीवःकालाग्निरिवमूर्च्छितः ॥ शरवर्षंमहाघोरंतेषांमर्मस्वपातयत् ॥ ४३ ॥ मुसलानिविचित्राणिततोभल्लशतानिच ॥ पट्टिशांश्चैवशक्तीश्चशतघ्नीर्महतीरपि ॥ पातयामासदुर्धर्षस्तेषामुपरिष्ठितः ॥ ४४ ॥ ततस्तेनैवसहसासीदंतिस्मपदातयः ॥ महापंकमिवासाद्यकुंजराःषष्टिहायनाः ॥ ४५ ॥ सीदमानान्सुतान्दृष्ट्वाविह्वलान्समहाबलः ॥ ननादरावणोहर्षान्महानंबुधरोयथा ॥ ४६ ॥ ततोरक्षोमहानादान्मुक्त्वाहंतिस्मवारुणान् ॥ नानाप्रहरणोपेतैर्धारापातैरिवांबुदः ॥ ४७ ॥ ततस्तेविमुखाःसर्वेपतिताधरणीतले ॥ रणात्स्वपुरुषैःशीघ्रंगृहाण्येवप्रवेशिताः ॥ ४८ ॥

मारे कालाग्निके समान बढकर वरुणपुत्रोंके मर्मस्थानोंमें घोर बाण मारने लगा ॥ ४३ ॥ वह दुर्द्धर्ष रावण स्थिर होकर विचित्र मूसल, पटा, शक्ति, बडी शतघ्नी और सैकडों भाले व बाणसमूहोंको वरुणपुत्रोंके ऊपर छोडने लगा ॥ ४४ ॥ साठ वर्षकी उमरवाले हाथी जिसप्रकार दलदलमें फँसकर पीडित होते हैं, वैसेही पांव पयादे वरुणजीके सब पुत्र रावणके बाण वर्षानेसे एकाएकी व्याकुल मृत्युका भय छोड वरुणजीकी सेनाको देखने लगा॥४५॥ फिर उसमहोदरने देख हर्षित हो महामेघके समान गंभीरशब्दसे गर्जन करने लगा॥ ४६॥ उसके पीछे वारंवार गर्जन करके राक्षस दशानन जलधारा वर्षातेहुए मेघके समान अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्रोंको वर्षाय वरुणजीके पुत्रोंको मारने लगा॥ ४७॥ अन्तमें वह वरुणजीके पुत्र समरसे विमुख हो पृथ्वीपर गिरने लगे, सेवक लोग अतिशीघ्र उनको

रणस्थानसे उठायकर उनके गृहमें पहुँचाते हुए ॥ ४८ ॥ इसके उपरान्त राक्षस दशाननने उन सेवक लोगोंसे कहा कि, "अब तुम वरुणजीसे समाचार कहो" तब प्रहास नामक वरुणके मंत्रीने रावणसे कहा ॥४९॥ कि, जिनको तुम युद्ध करनेके लिये पुकारते हो वह सलिलेश्वर महाराज वरुणजी संगीतश्रवण करनेको ब्रह्मलोकमें गये हैं॥ ५० ॥ हे वीर ! अधिक करके जो वीर कुमार लोगोंके निकट थे वह सबही पराजित हुए हैं, इस कारण राजाके न रहनेसे तुम्हें वृथा परिश्रम करनेसे क्या लाभ ? ॥ ५१ ॥ राक्षसपति रावण यह सुने अपना नाम सबको सुनाय हर्षके मारे गर्जता हुआ वरुणजीके स्थानसे निकला ॥५२॥ वह राक्षस रावण जिस मार्गका अवलंबन करके आया था उसीसे निवृत्त हो आकाशमंडलमें गमन कर लंकाको और चला ॥ ५३ ॥

तानब्रवीत्ततोरक्षोवरुणायनिवेद्यताम् ॥ रावणंत्वब्रवीन्मंत्रीप्रहासोनामवारुणः ॥४९॥ गतःखलुमहाराजोब्रह्मलोकंजलेश्वरः ॥ गांधर्ववरुणः श्रोतुंयंत्वमाह्वयसेयुधि ॥ ५० ॥ तत्किंतवयथावीरपरिश्रम्यगतेनृपे ॥ येतुसन्निहितावीराःकुमारास्तेपराजिताः ॥ ५१ ॥ राक्षसेंद्रस्तुत च्छ्रुत्वानामविश्राव्यचात्मनः ॥ हर्षान्नादंविमुंचन्वैनिष्क्रांतोवरुणालयात् ॥ ५२ ॥ आगतस्तुपथायेनतेनैवविनिवृत्यसः ॥ लंकामभिमुखो रक्षोनभस्तलगतोययौ ॥ ५३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे त्रयोविंशः सर्गः ॥ २३ ॥ ततोश्मनग रंभूयोविचेरुर्युद्धदुर्मदाः ॥ यत्रापश्यद्दशग्रीवोगृहंपरमभास्वरम् ॥ १ ॥ वैदूर्यतोरणाकीर्णमुक्ताजालविभूषितम् ॥ सुवर्णस्तंभगहनंवेदिकाभिः समंततः ॥२॥ वज्रस्फटिकसोपानकिंकिणीजालसंवृतम् ॥ बह्वासनयुतंरम्यंमहेंद्र भवनोपमम् ॥ ३ ॥ दृष्ट्वागृहवरंरम्यंदशग्रीवः प्रतापवान् ॥ कस्येदंभवनंरम्यंमेरुमंदरसन्निभम् ॥ ४ ॥ गच्छप्रहस्तशीघ्रंत्वंजानीष्वभवनोत्तमम् ॥ एवमुक्तःप्रहस्तुविवेशगृहोत्तमम् ॥ ५ ॥

इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां त्रयोविंशः सर्गः ॥२३॥ (यह आगेके पांच सर्ग क्षेपक हैं) इसके उपरांत दशानन युद्धोन्मत्त राक्षसोंके साथ फिर अश्म नगरमें घूमने लगा, रावणने उस स्थानमें एक परम रमणीय उज्ज्वल गृह देख पाया ॥ १ ॥ इस स्थानके समस्त द्वार वैदूर्यमणिसे बनेहुए और मोतियोंकी जालीसे विभूषित थे, सुवर्णके खंभ लगे हुए थे, उनमें सबही जगह आसन बन रहे थे ॥२॥ इसमें चढनेकी जो सीढियें बनी हुई थीं, उनमें हीरा व स्फटिकमणि लगी हुई थीं; और किंकिणियोंका जाल जिसपर लगा हुआ था; वह बहुत सुन्दर स्थान इन्द्रके भवनके समान था ॥ ३ ॥ उस रमणीक श्रेष्ठ गृहको देखकर प्रतापवान् रावणने विचारा कि. मेरुपर्वतकी तुल्य यह रमणीक गृह किसका है ?॥४॥ और बोला कि, हे प्रहस्त ! तुम शीघ्र जाकर जान तो आओ कि

वा.रा.भा.
॥४६॥

यह भवन किसका है. यह वार्त्ता सुनकर प्रहस्त उस उत्तम गृहमें प्रवेश करता हुआ ॥ ५ ॥ उस गृहका द्वार सूना देखकर प्रहस्त एक दूसरी कोठरीमें गया, क्रमसे सात कोठरियोंमें जाकर वहां उसने एक ज्वाला देखी और उसमें एक पुरुषभी देखा ॥ ६ ॥ वह पुरुष हर्षित होकर हँसने लगा, उस कालमें प्रहस्त उस उंची हँसीको सुनकर कांप गया और उसके रुयें खडे हो गये ॥ ७ ॥ प्रहस्तने यह भी देखा कि, अग्निकी शिखाके बीजमें सुवर्णके फूलोंकी माला पहरे एक पुरुष सूर्यके समान अति कठिनतासे देखे जानेके योग्य होकर साक्षात् यमके समान विमोहित भावसे बैठा है ॥ ८ ॥ निशाचर प्रहस्तने यह सब बात देखकर अतिशीघ्रतासे निकल रावणस यह सब समाचार कह सुनाया ॥९॥ हे राम ! उसके पीछे दूसरे अंजनके समान कृष्णवर्ण रावणने पुष्पक विमानसे उतरकर उस गृहमें प्रवेश करनेकी इच्छा की॥ १०॥ जैसेही रावणने उसमें प्रवेश करना चाहा वैसेही चन्द्रमा शिरपर धारण किये बडे शरीरवाला एक भयंकर पुरुष एकाएकी द्वारको

निःशून्यंप्रेक्षतवरंपुनःकक्ष्यांतरेययौ॥सप्तकक्ष्यांतरंगत्वाततोज्वालामपश्यत ॥६॥ ततोदृष्टःपुमांस्तत्रदृष्टोहासंमुमोचसः ॥ श्रुत्वासतुमहाहासमूर्ध्वरोमाभवत्तदाः ॥७॥ ज्वालामध्येस्थितस्तत्रहेममालीविमोहितः॥आदित्यइवदुष्प्रेक्ष्यःसाक्षादिवयमःस्थितः॥८॥ तथादृष्ट्वातुवृत्तांतंत्वमारणोविनिर्गतः ॥ विनिर्गम्याब्रवीत्सर्वंरावणायनिशाचरः ॥ ९ ॥ अथरामदशग्रीवःपुष्पकादवरुह्यसः ॥ प्रवेष्टुमिच्छन्वेश्माथभिन्नांजनचयोपमः॥ १० ॥ चंद्रमौलिवपुष्मांश्चपुरुषोस्याग्रतःस्थितः ॥ द्वारमावृत्यसहसाज्वालाजिह्वोभयानकः ॥ ११ ॥ रक्ताक्षश्चारुदशनोबिंबोष्ठश्चारुदर्शनः ॥ महाभीषणनासश्चकंबुग्रीवोमहाहनुः ॥ १२ ॥ रूढश्मश्रुर्निगूढांस्थिर्दंष्ट्रालोलोमहर्षणः॥ गृहीत्वालोहमुसलंद्वारंविष्टभ्यतिष्ठति ॥१३॥ अथसंदर्शनात्तस्यऊर्ध्वरोमाबभूवसः ॥ हृदयंकंपतेचास्यवेपथुश्चाप्यजायत ॥१४॥ निमित्तान्यमनोज्ञानिदृष्ट्वारामव्यचिंतयत ॥ अथचिंतयतस्तस्यसएवपुरुषोऽब्रवीत् ॥ १५ ॥ किंत्वंचिन्तयसेरक्षोब्रूहिविस्रब्धमानसः ॥ युद्धातिथ्यमहंवीरकरिष्येरजनीचर ॥ १६ ॥

उ० कां०
प्र०स० १

रोकता हुआ रावणके सन्मुख खडा हुआ; उस पुरुषकी जीभ आगके लपटके समान थी॥ ११॥ उसके नेत्र लाल; दांतोंकी पांति सुन्दर अधर बिम्बाफलके समान; गठन मनोहर, नासिका अत्यन्त भीषण, गर्दन शंखके समान ठोढी बहुत बडी ॥ १२ ॥ उसकी डाढी मोछें घनी थीं, अस्थियें मांसल थीं, डाढें बडी और आकार सब प्रकारसे रोमहर्षणकारी था। वह लोहेका मुद्गर धारण करके द्वार रोककर खडा होगया ॥१३॥ उसको देखते ही भयके मारे रावणके रोम खडे होगये, हृदय व देह कम्पायमान होने लगा ॥ १४ ॥ हे राम ! रावण बुरे निमित्त देखकर चिन्ता करने लगा, इसी अवसरमें वह पुरुष चिंता करते हुए रावणसे बोला ॥१५॥ हे राक्षस ! तुम क्या चिन्ता करते हो ? विश्वास करके सब कहो, हे रजानीचर वीर! हम तुम्हारी युद्धकी पहुनई भलीभांति करेंगे ॥१६॥

वह इस प्रकारसे कहकर फिर उस राक्षससे बोला कि "तुम बलिके सहित युद्ध करोगे या और कुछ विचार किया है" ॥ १७ ॥ उस पुरुषके यह वचन सुनकर रावणको फिर रोमाञ्च हो आया, फिर धीरज धरकर कहने लगा ॥ १८ ॥ हे वचन बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ ! इस गृहमें कौन पुरुष विराजमान है सो बताइये ? हम उनके सहित युद्ध करेंगे अथवा वह करेंगे जो आपकी इच्छा हो ॥ १९ ॥ उस पुरुषने फिर रावणसे कहा. अत्यन्त उदार स्वभाव सत्यपराक्रम शूर दानवपति बलि इस स्थानमें विराजमान हैं ॥२०॥ वीर अनेक प्रकारके गुणग्रामसे विभूषित हैं, प्रभातकालके सूर्यके समान तेजस्वी हैं; फांसी हाथमें लिये यमराजके समान संग्राममें न लौटनेवाले हैं ॥२१॥ क्रोधी, अजित, औरोंको विजय करने वाले, गुणसागर, प्रिय वचन कहनेवाले, आश्रितका पालनकरने वाले, सदा गुप्त व ब्राह्मणोंके प्यारे ॥ २२ ॥ समयको देखने वाले, महासत्त्व, सत्यवादी प्रियदर्शन चतुर सर्व गुण सम्पन्न वेदपाठ करनेमें निरत ॥ २३ ॥ व पैदल

एवमुक्त्वासतद्रक्षःपुनर्वचनमब्रवीत्॥ योत्स्यसेबलिनासार्धमथवामन्यसेकथम् ॥ १७॥ रावणोभिहतोभूयऊर्ध्वरोमाभ्यजायत ॥ अथधैर्यंस मालंब्यरावणोवाक्यमब्रवीत् ॥१८॥ गृहेषुतिष्ठतेकोहितद्ब्रूहिवदतांवर ॥ तेनैवसार्धंयोत्स्यामियथावामन्यतेभवान् ॥१९॥ सएनंपुनरप्याहपानवेंद्रोत्रतिष्ठति॥एषवैपरमोदारःशूरःसत्यपराक्रमः॥२०॥वीरोबहुगुणोपेतःपाशहस्तइवांतकः॥बालार्कइवतेजस्वीसमरेष्वनिवर्तकः॥२१॥ अमर्षीदुर्जयोजेताबलवान्गुणसागरः ॥ प्रियंवदःसंविभागीगुरुविप्रप्रियःसदा॥२२॥कालाकांक्षीमहासत्त्वःसत्यवाक्सौम्यदर्शनः ॥ दक्षःसर्व गुणोपेतःशूरःस्वाध्यायतत्परः ॥२३॥ एषगच्छतिवात्येषज्वलतेतपतेतथा ॥ देवैश्चभूतसंघैश्चपन्नगैश्चपतत्रिभिः ॥२४॥ भययोनाभिजानाति तेनत्वंयोद्धुमिच्छसि ॥ बलिनायदितेयोद्धुंरोचतेराक्षसेश्वर ॥२५॥ प्रविशत्वंमहासत्त्वसंग्रामंकुरुमाचिरम् ॥ एवमुक्तोदशग्रीवःप्रविवेशय तोबलिः ॥२६॥ सविलोक्याथलंकेशंजहासदहनोपमः ॥ आदित्यइवदुष्प्रेक्ष्यःस्थितोदानवसत्तमः ॥२७॥ अथसंदर्शनादेवबलिर्वैविश्वरूप वान् ॥ सगृहीत्वाचतद्रक्षउत्संगेस्थाप्यचाब्रवीत् ॥२८॥ दशग्रीवमहाबाहोकिंतेकामंकरोम्यहम् ॥ किमागमनकृत्यंतेब्रूहित्वंराक्षसेश्वर ॥२९॥

हीं घूमते हैं उसपर वायुके समान चलते हैं अग्निके समान प्रज्वलित होते हैं और सूर्यके समान ताप देते हैं ॥२४॥ वह यह नहींजानते हैं कि भय किसको कहते हैं, हे राक्षसराज ! तुमने इसी राजा बलिके साथ युद्ध करनेकी वासना की है ॥२५॥ हे महाराज ! यदि राजा बलिके साथ संग्राम करनेकी तुम्हारी इच्छा हो तो अतिशीघ्र प्रवेश करके युद्ध करो रावण यह वचन सुनकर बलिके निकट प्रवेश करता हुआ ॥२६॥ इसके उपरांत तहां विराजमान सूर्यके समान देखनेके अयोग्य अग्निकी नाईं वह दानवश्रेष्ठ बलि रावणको देखतेही हँसदिये ॥ २७ ॥ फिर विश्वरूप राजा बलि राक्षस रावणको देखते ही पकड अपनी गोदमें बैठाय बोले ॥२८॥ हे महावीर दशानन ! हम तुम्हारी कौन वासना पूर्ण करें ? हे राक्षस हे राक्षसेश्वर ! तुम्हारे आनेका क्या प्रयोजन है ? सो कहो ॥२९॥

राजा बलिके यह वचन सुनकर रावणने कहा कि, हे महाभाग ! हमने सुना है कि पूर्वकालमें विष्णुजीने आपको बांधा है ॥ ३० ॥ हम आपको बंधनसे छुडानेके लिये निःसंदेह समर्थ हैं, यह बात सुन राजा बलि हँसकर बोले ॥ ३१ ॥ हे रावण ! तुमने जो कुछ पूछा वह हम वर्णन करते हैं तुम सुनो, वह जो श्याम रंगके पुरुष द्वारपर सदा विराजमान रहते हैं ॥ ३२ ॥ पहले जो समस्त दानवेन्द्र और दूसरे बलवान् पुरुष थे, वह बल पूर्वक उन सबको प्रथम अपने वशमें लाये थे ॥ ३३ ॥ हे रावण ! इन पुरुषने ही हमको बांधा है, यह यमराजके समान दुर्द्धर्ष हैं, इसकारण इस लोकमें कौन पुरुष इनको ठग सकता है, ॥ ३४ ॥ जो हमारे द्वारपर रहते हैं, यही सब प्राणियोंकी सृष्टि, स्थिति, संहार करते हैं, यही त्रिभुवन के स्वामी ॥ ३५ ॥ यही प्रभु सर्व प्राणियोंके हरण करने वाले काल हैं और भूत

एवमुक्तस्तुबलिनारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥ श्रुतंमयामहाभागबद्धस्त्वंविष्णुनापुरा ॥ ३० ॥ सोहंमोक्षयितुंशक्तोबंधनात्त्वांनसंशयः ॥ एवमुक्ते ततोहासंबलिर्मुक्त्वैनमब्रवीत ॥ ३१ ॥ श्रूयतामभिधास्यामियत्त्वंपृच्छसिरावण ॥ यएषपुरुषःश्यामोद्वारेतिष्ठतिनित्यदा ॥ ३२ ॥ एतेनदानवेंद्राश्चतथान्येबलवत्तराः ॥ वशंनीताबलवतापूर्वेपूर्वतराश्चये ॥ ३३ ॥ बद्धःसोहमनेनैवंकृतांतोदुरतिक्रमः ॥ कएनंपुरुषोलोकेवंचयिष्यति मानवः ॥ ३४ ॥ सर्वभूतापहर्तावैयएषद्वारितिष्ठति ॥ कर्ताकारयिताचैवधाताचभुवनेश्वरः ॥ ३५ ॥ नत्वंवेदनचैवाहंभूतभव्यभवत्प्रभुः ॥ कलिश्चैवैषकालश्चसर्वभूतापहारकः ॥ ३६ ॥ लोकत्रयस्यसर्वस्यहर्तास्रष्टातथैवच ॥ संहरत्येषभूतानिस्थावराणिचराणिच ॥ ३७ ॥ पुनश्च सृजतेसर्वमनाद्यंतमहेश्वरः ॥ इष्टंचैवहिदत्तंचहुतंचैवनिशाचर ॥ ३८ ॥ सर्वमेवहिलोकेशोधातागोप्तानसंशयः ॥ नैवंविधंमहद्भूतंविद्यतेभुवनत्रये ॥ ३९ ॥ अहंत्वंचैवपौलस्त्ययेचान्येपूर्ववत्तराः ॥ नेताह्येषांमहद्भूतंपशुंरशनयायथा ॥ ४० ॥ वृत्रोदनुःशुकःशंभुर्निशुंभःशुंभएवच ॥ कालनेमिश्चप्राह्लादिःकूटोवैरोचनोमृदुः ॥ ४१ ॥ यमलार्जुनौचसश्चकंकैटभोमधुनासह ॥ एतेतपंतिद्योतंतिवांतिवर्षंतिचैवहि ॥ ४२ ॥

भविष्य वर्तमान स्वरूप हैं, न इनको तुम जानते हो न हम जानते हैं ॥ ३६ ॥ यही तीनों लोकोंकी उत्पत्ति करते हैं और संहार करते हैं और यही चराचर सर्व भूतोंके संहारकारी हैं ॥ ३७ ॥ यह महेश्वर आदि अन्त रहित हैं, यही सबको फिर उत्पन्न करते हैं, हे निशाचर ! दान, यज्ञ; होम यह सबके विधानकारी हैं ॥ ३८ ॥ और यही सबके धाता विधाता रक्षा करते हैं इसमें कुछ संदेह नहीं इस प्रकारका महाप्राणी कोई त्रिभुवनमें नहीं है ॥ ३९ ॥ हे पौलस्त्य ! जैसे रस्सीमें बांधकर पशुको चलाते हैं, वैसेही इन महाप्राणीने समस्त दानवोंको चलाया और हम तुमको भी चलावेंगे ॥ ४० ॥ वृत्र, दनु, शुक, शुंभ, निशुम्भ; कालनेमि, प्रह्लादादि, कूट, वैरोचन, मृदु ॥ ४१ ॥ यमल, अर्ज्जुन; कंस, कैटभ व मधु यह सब सूर्यके समान ताप देते थे, नक्षत्रोंके समान दीप्तिमानथे. इन्द्रके

समान वर्षा करते थे ॥ ४२ ॥ और सबनेही बहुत तप किया था सबही अतिमहात्मा थे और सबही योगधारी थे ॥४३॥ सबही ऐश्वर्यको प्राप्त होकर विविधभांतिके भोग भोगते थे, दान, यज्ञ, वेदका पाठ करना और प्रजापालन करते थे ॥४४॥ सबही अपने जनोंका प्रतिपालन करनेवाले और शत्रुसंहार कारी थे; समर करनेमें त्रिलोकीके बीच उनके समान कोई नहीं था ॥४५॥ यह सबही शास्त्रविशारद थे, समस्त शास्त्र और शस्त्रोंमें भलीभांति निपुणथे, शूर थे; बडे कुलमें उत्पन्न हुए थे और संग्राममें न लौटनेवाले थे ॥४६॥ सबही महात्मा इन्द्रके समान थे और युद्धमें सबनेही सब देवताओंको सहस्र २वार जीताथा ॥ ४७ ॥ सबही देवतोंका अप्रिय कार्य करनेमें सदा अनुरागी होकर अपने जनोंका प्रतिपालन करते थे, सबही सदा प्रमत्त रहते थे सबही दम्भी और बाल

सर्वैःक्रतुशतैरिष्टंसर्वैस्तप्तंमहत्तपः ॥सर्वेतेसुमहात्मानःसर्वेवैयोगधर्मिणः ॥ ४३ ॥सर्वैरैश्वर्यमासाद्यभुक्तभोगैर्महत्तरैः ॥ दत्तमिष्टमधीतंचप्रजाश्चपरिपालिताः ॥४४॥ स्वपक्षेष्वनुगोप्तारःप्रहंतारःपरेष्वपि ॥ सामरेष्वपिलोकेषुनैतेषांविद्यतेसमम् ॥ ४५ ॥ शूरास्त्वभिजनोपेताःसर्वशास्त्रार्थपारगाः ॥ सर्वविद्याप्रवेत्तारःसंग्रामेष्वनिवर्तकाः ॥ ४६ ॥ सर्वैस्त्रिदशराज्यानिकारितानिमहात्मभिः ॥ युद्धेसुरगणाःसर्वेनिर्जिताश्चसहस्रशः ॥ ४७ ॥ देवानामप्रियेसक्ताःस्वपक्षपरिपालकाः ॥प्रमत्ताश्चोपसक्ताश्चबालार्कसमतेजसः ॥ ४८ ॥ यस्तुदेवान्प्रधर्षेततदेषांविष्णुरीश्वरः ॥ उपायपूर्वकंनाशंसवेत्ताभगवान्हरिः ॥ ४९ ॥ प्रादुर्भावंविकुरुतेयेनैतन्निधनंनयेत् ॥ पुनरेवात्मनात्मानमधिष्ठायसतिष्ठति ॥ ५० ॥ एवमेतेनदेवेनदानवेंद्रामहात्मना ॥ तेहिलवेंक्षयंनीताबलितः कामरूपिणः ॥ ५१ ॥ समरेचदुराधर्षाःश्रूयंतेयेऽपराजिताः ॥ तेपिनीतामहद्भूताःकृतांतबलचोदिताः ॥५२॥ एवमुक्त्वाथप्रोवाचराक्षसंदानवेश्वरः ॥ यदेतद्दृश्यतेवीरचक्रंदीप्तानलोपमम् ॥ ५३ ॥ एतद्गृहीत्वागच्छत्वंममपार्श्वमहाबल ॥ ततोहंतवव्याख्यास्येमुक्तिकारणमव्ययम् ॥ ५४ ॥

सूर्यके समान तेजस्वी थे ॥ ४८ ॥ जो जो पुरुष देवतोंको सताता है, उसके ध्वंस करनेका पाप देवतोंके अधीश्वर भगवान् विष्णुजीही जानते हैं ॥ ४९ ॥ वही इन सबको उत्पन्न करते हैं, वही सबको संहार कर डालते हैं, और फिर संहार करनेके कालमें आत्मामें आत्मासे अधिष्ठित होकर विराजमान् रहते हैं॥५०॥ वह कामरूपी महाबलवान् महात्मा दानव श्रेष्ठ लोग सबही उन महात्मा देवता करके क्षयको प्राप्त हुए हैं॥५१॥हमने सुना है कि, दानव समरमें किसीसे न जीते जाते थे और अति दुर्द्धर्ष वह समस्त अति प्रबल दानवगणभी इन कृतांतरूपी हरिसेही संहार किये गये हैं ॥५२॥दानवोंके राजा बलि इसप्रकारसे कहकर फिर रावणसे बोले--प्रदीप्त अग्निके समान जो चक्र तुम देखतेहो ॥५३॥ इसको ग्रहण करके तुम हमारे निकट आओ, हे बलवान् ! फिर हम तुमसे अव्ययमुक्तिके कारणकी

व्याख्या करेंगे॥५४॥ हे महावीर रावण ! हम जो कुछ कहें वह पूरा करो, विलम्ब न करो, यह सुन वह हँसकर महाबलवान् राक्षस गया ॥५५॥ हे रघुनन्दन ! जिस स्थानमें वह महादिव्य कुंडल था, वहां पहुँचकर बलदर्पित रावणने लीलापूर्वक उस कुंडलको उठाना चाहा ॥ ५६ ॥ परन्तु रावण किसी प्रकारसेभी उस कुंडलके चलानेको समर्थ न हुआ; अधिक करके लाजके मारे रावण फिर २ यत्न करने लगा ॥ ५७ ॥ और उस दिव्य कुडलको जैसेही उठाया कि वैसेही जड कटे हुए शाल वृक्षके समान रुधिरसे भीगकर रावण पृथ्वीपर गिर गया ॥५८॥ इसी अवसरमें पुष्पकसंभूत शब्द हुआ और राक्षसराजके मंत्री भी महा हाहाकार शब्द कर उठे ॥५९॥ इसके उपरान्त निशाचर रावण एक मुहूर्तमेंही चेतना प्राप्त करके उठा और लाजसे अपना मुख नीचा करलिया तब राजा

तत्कुरुष्वमहाबाहोमाविलंबस्वरावण ॥ एतच्छुत्वागतोरक्षःप्रहसंश्चमहाबलः ॥ ५५ ॥ यत्रस्थितंमहादिव्यंकुंडलंरघुनंदन ॥ लीलयोत्पाटनं चक्रेरावणोबलदर्पितः ॥५६॥ नचचालयितुंशक्तोरावणोभूत्कथंचन ॥ लज्जयासपुनर्भूयोयत्नंचक्रेमहाबलः ॥ ५७ ॥ उत्क्षिप्तमात्रेदिव्येचप पातभुविराक्षसः ॥ छिन्नमूलोयथाशालोरुधिरौघपरिप्लुतः ॥५८॥ एतस्मिन्नंतरेजज्ञेशब्दःपुष्पकसंभवः॥ राक्षसेंद्रस्यसचिवैर्मुक्तोहाहाकृतो महान् ॥ ५९ ॥ ततोरक्षोमुहूर्तेनचेतनांलभ्यचोत्थितम् ॥ लज्जयावनतीभूतंबलिर्वाक्यमुवाचह ॥ ६० ॥ आगच्छराक्षसश्रेष्ठवाक्यंश्रृणुमयो दितम् ॥ यत्त्वयाचोद्यतंवीरकुंडलंमणिभूषितम् ॥ ६१ ॥ एतद्धिपूर्वजस्यासीत्कर्णाभरणमीक्ष्यताम् ॥ एतत्पतितवच्चैवमत्रभूमौमहाबल ॥ ६२ ॥ अन्यत्पर्वतसानौहिपतितंकुंडलादनु ॥ मुकुटंवेदिसामीप्येपतितंयुध्यतोभुवि ॥ ६३ ॥ हिरण्यकशिपोःपूर्वममपूर्वपितामहात् ॥ नतस्यकालोमृत्युर्वानव्याधिर्नविहिंसकाः॥ ६४ ॥ नदिवामरणंतस्यनरात्रौसंध्ययोर्नहि ॥ नशुष्केणनचार्द्रेणनचशस्त्रेणकेनचित् ॥ ६५ ॥ विद्यतेराक्षसश्रेष्ठतस्यनास्त्रेणकेनचित् ॥ प्रह्लादेनसमंचक्रेवादंपरमदारुणम् ॥ ६६ ॥

बलिने उससे कहा ॥६०॥ हे राक्षस श्रेष्ठ ! यहां आयकर हमारे कहे हुए वचन सुनो मणिभूषित जिस कुंडलके उठानेको तुम तैयार हुए हो ॥६१॥ यह तो हमारे पहले पुरुष हिरण्यकशिपुके कानका गहनाथा, हे महाबलवान् ! देखो यह इस प्रकारसे इस स्थानमें गिराथा ॥ ६२ ॥ व और दूसरा कुंडल इस पर्वतके शिखरपर गिराथा इस कुंडलके सिवाय मुकुटभी उनका युद्धकालमें वेदीके समीप पृथ्वीपर गिराथा ॥ ६३ ॥ पूर्व कालमें हमारे पूर्व पितामह जो हिरण्यकशिपु थे, उनको काल मृत्यु रोग या किसीसे भी भय नहीं था, न सूखी अथवा गीली वस्तुसे उनकी मृत्यु होती थी ॥ ६४ ॥ किसी शस्त्रसे उनकी मृत्यु नहीं थी और दिवसमें रात्रिकालमें या दोनों संध्याके समयभी उनका मरण नहीं हो सकता था ॥६५॥ हे राक्षस ! अधिक क्या कहें किसी शस्त्रसे भी उनकी

मृत्यु नियत नहीं कीगई केवल उन्होंने प्रह्लादके साथ दारुण झगड़ा ठाना था ॥६६॥ हे राक्षसश्रेष्ठ ! उन सर्व श्रेष्ठ महात्मा वीरका जब प्रह्लादसे झगड़ा हुआ तब नृसिंहके आकारके समान रूपधारी, सब लोगोंको भय देनेवाले भयंकर वीर पुरुष उत्पन्न हुए ॥६७॥ वह गंभीर मूर्ति दारुण नृसिंहजी उत्पन्न होकर चारों ओरको निहारने लगे कि, जिससे सब जगत् चलायमान हुआ ॥६८॥ इसके उपरान्त नृसिंहजीसे हिरण्यकशिपुको दोनों बाहोंसे उठायकर नखोंके प्रहारसे पेट फाड उसके जीवनका नाश किया, जो पुरुष द्वारपर विराजमान है यह वही निरंतर वासुदेव हैं ॥ ६९ ॥ हम उन्हीं देवादिदेवके वचन कहते हैं, यदि तुम्हारे हृदयमें परमभावका उदय हुआ हो तो भक्तिसहित सुनो ॥७०॥ वह सहस्र वत्सरमें सहस्र इन्द्र, लक्ष देवता और शत २ महर्षियोंको ॥७१॥ अपने वशमें

तस्यवादेसमुत्पन्नेर्धीरोलोकभयंकरः ॥ सर्ववर्यस्यवीरस्यप्रह्लादस्यमहात्मनः ॥६७॥ उत्पन्नोराक्षसश्रेष्ठनृसिंहाकृतिरूपधृक् ॥ दृष्टंचतेनरौद्रेणक्षुब्धंसर्वमशेषतः ॥६८॥ ततउद्धृत्यबाहुभ्यांनखैर्निन्येयमक्षयम् ॥ एषतिष्ठतिद्वारस्थोवासुदेवोनिरंजनः ॥ ६९॥ तस्यदेवाधिदेवस्यगदतोमेशृणुष्वह ॥ वाक्यंपरमभावेनयदितेवर्ततेहृदि ॥७०॥ इंद्राणांचसहस्राणिसुराणामयुतानिच ॥ ऋषीणांचैवमुख्यानांशतान्यब्दसहस्रशः ॥७१॥ वशंनीतानिसर्वाणियएषद्वारितिष्ठति॥तस्यतद्वचनंश्रुत्वारावणोवाक्यमब्रवीत्॥७२॥ मयाप्रेतेश्वरोदृष्टःकृतांतःसहमृत्युना॥पाशहस्तोमहाज्वालऊर्ध्वरोमाभयानकः ॥ ७३ ॥ दंष्ट्रालोविद्युज्जिह्वश्वसर्पश्चिकरोमवान्॥ रक्ताक्षोभीमवेगश्वसर्वसत्त्वभयंकरः ॥ ७४ ॥ आदित्यइवदुष्प्रेक्ष्यःसमरेष्वनिवर्तकः ॥ पापानांशासिताचैवसमयायुधिनिर्जितः ॥ ७५ ॥ नचमेतत्रभीःकाचिद्व्यथावादानवेश्वर ॥ एनंतुनाभिजानामितद्भवान्वक्तुमर्हति ॥ ७६ ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वाबलिर्वैरोचनोऽब्रवीत् ॥ एषत्रैलोक्यधाताचहरिर्नारायणःप्रभुः ॥ ७७ ॥

कर रखते हैं कि, जो द्वारपर विराजमान हैं। राजा बलिके यह वचन सुन रावणने कहा अतिशय ज्वालायुक्त पाश हाथमें लिये, रोम फुलाये भयानकप्रेताधिपति यमराजको हमने मृत्युके सहित देखा है ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ जिनकी डाढैं बडी हैं सर्प बिच्छुही जिनके रुयें हैं जिनकी आंखैं लाल हैं, विजलीके समान जिह्वा अतिभयानक है जो सर्व प्राणियोंको भयके देनेवाले हैं॥७४॥जो सूर्यके समान अति कठिनतासे देखे जानेके योग्य हैं, जो संग्रामसे कभी विमुख नहीं होते, पापके नाशक हैं, प्राणियोंके शासन करनेवाले हैं उन्हीं यमराजको हमने युद्धमें जीता है॥७५॥हे दानवराज ! उस काल हमको भय या व्यथा कुछ भी नहीं हुई आप जिस पुरुषका वृत्तान्त कहते हैं हम उसको नहीं जानते इस कारण आप इसका वृत्तान्त विस्तारसे कहिये॥७६॥रावणके बचन सुनकर

वैरोचनके पुत्र राजा बलिने कहा, यही पुरुष त्रिलोकीके विधान कर्त्ता नारायण हरि हैं ॥७७॥ यह अनन्त, कपिल, विष्णु और महाद्युति नृसिंहजी हैं, यही यज्ञके आश्रय, यही पाशहस्त, भयानक और उत्तम आश्रय हैं ॥ ७८ ॥ और यही द्वादश आदित्यकी समान पुराण और पुरुषोत्तम हैं; यह सुरनाथ हैं और देवताओंमें श्रेष्ठ हैं, इनकी द्युति नीले बादरके समान है ॥७९॥ हे महावीर ! यह भक्तजनोंके प्यारे हैं योगी और ज्वालाकी किरणोंसे युक्त हैं इन्हीं प्रभुने सब लोकोंको सर्जन किया है और यही फिर पालन करते हैं ॥८०॥ यही महाबलवान् काल होकर सबका संहार करते हैं, यही यज्ञ हैं और यही चक्रायुधधारी हरि हैं॥८१॥ यही हरि सर्वदेवतामय हैं सर्वभूतमय हैं समस्त लोकमय और ज्ञान मय हैं॥८२॥ हे वीर ! महारूप सर्वरूपमय हरिही वीरघाती

अनंतःकपिलोजिष्णुर्नरसिंहोमहाद्युतिः ॥ क्रतुधामासुधामाचपाशहस्तोभयानकः ॥ ७८ ॥ द्वादशादित्यसदृशःपुराणपुरुषोत्तमः ॥ नीलजीमूतसंकाशःसुरनाथसुरोत्तमः ॥ ७९ ॥ ज्वालामालीमहाबाहोयोगीभक्तजनप्रियः ॥ एषधारयतेलोकानेषवैसृजतेप्रभुः ॥ ८० ॥ एषसंहरतेचैवकालोभूत्वामहाबलः ॥ एषयज्ञश्चयाज्यश्चचक्रायुधधरोहरिः ॥ ८१ ॥ सर्वदेवमयश्चैवसर्वभूतमयस्तथा ॥ सर्वलोकमयश्चैवसर्वज्ञानमयस्तथा ॥८२॥ सर्वरूपीमहारूपीबलदेवोमहाभुजः ॥ वीरहावीरचक्षुष्मांस्त्रैलोक्यगुरुरव्ययः॥ ॥ ८३ ॥ एनंमुनिगणाःसर्वेचिंतयंतीह मोक्षिणः ॥ यएनंवेत्तिपुरुषंनचपापैर्विलिप्यते ॥ ८४ ॥ स्मृत्वास्तुत्वातथेष्ट्वाचसर्वमस्मादवाप्यते ॥ एतच्छ्रुत्वातुवचनंरावणोनिर्ययौतदा ॥ ८५ ॥ क्रोधसंरक्तनयनउद्यतास्त्रोमहाबलः ॥ तथाभूतंचतंदृष्ट्वाहरिर्मुसलधृक्प्रभुः ॥ ८६ ॥ नैनंहन्म्यधुनापापंचिंतयित्वेतिरूपधृक् ॥ अंतर्धानंगतोरामब्रह्मणःप्रियकाम्यया ॥ ८७ ॥ नचतंपुरुषंतत्रपश्यतेरजनीचरः ॥ हर्षान्नादंविमुचन्वैनिष्क्रामन्वरुणालयात् ॥ ८८ ॥

महाभुजबलदेव हैं, यही चक्षुष्मान् हरि हैं त्रिलोकीके गुरु और अव्यय हैं ॥८३॥ समस्त मोक्षाभि लाषी मुनिगण इस लोकमें इनका ध्यान धरते हैं अधिक करके जो पुरुष इन पुरुषको जान जाता है वह पापमें नहीं लिप्त होता है ॥८४॥ इनका स्मरण, इनका श्रवण और इनकी आराधना करनेपर इन्हींसे सब कुछ प्राप्त हो जाता है । राजा बलिके ऐसे वचन सुनकर रावण वहांसे निकला ॥८५॥ उसके नेत्र क्रोधके मारे लाल हो गये और उस महाबलवान्ने अस्त्र उठाया, मूशलधारी नारायण प्रभु उसकी ऐसी अवस्था देखकर ॥८६॥ मनही मन विचार करते हुए कि, ब्रह्माजीकी प्रिय कामनासे इस पापात्माका नाश नहीं करेंगे, वह रूपधारी इस प्रकार चिन्ता करके अन्तर्धान हुए ॥८७॥ रजनीचर रावणने वहां उस पुरुषको नहीं देख पाया; तब वह अतिहर्षसे सिंहनाद करता हुआ

वरुणजीके स्थानसे निकला ॥ ८८ ॥ रावण जिस मार्गसे पैठा था वह उसी मार्गसे निकला ॥ ८९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥ इसके उपरान्त लंकेश्वर रावण कुछ कालतक चिन्ता करके सुमेरु पर्वतके प्रधान रमणीक शिखरपर जाय रात्रि व्यतीत करता हुआ ॥ १ ॥ फिर सूर्यके घोडोंके समान शीघ्र चलनेवाले पुष्पक विमानपर सवार हो अनेक भाँतिके गतिके सूर्यके सम्मुख चला ॥ २ ॥ रावणने देखा कि, वहां पर दिव्य कांचनके केयूरधारी, रत्नांबराविभूषित सबको पावन करनेवाले; सर्व तेजोंसे युक्त सूर्य भगवान् विराजमान हैं ॥ ३ ॥ दिव्य कुंडलयुगल उनके मुख मंडलपर विराजमान हैं; उनका शरीर केयूर और लाल वस्त्रोंसे विभूषित है और कमलके फूलोंकी मालासे सजा हुआ है ॥ ४ ॥ उनके सब अंगोंमें लाल

येनैवसंप्रविष्टःसपथातेनैवनिर्ययो ॥८९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे प्रक्षिप्तः प्रथमः सर्गः ॥१॥ अथसंचिन्त्य लंकेशःसूर्यलोकंजगामह ॥ मेरुशृंगेवरेरम्येऽषित्वातत्रशर्वरीम् ॥ १ ॥ पुष्पकंतत्समारुह्यरवेस्तुरगसन्निभम् ॥ नानापातगतिर्दिव्यंविहारवियतिस्थितम् ॥२॥ यत्रापश्यद्रविंदेवंसर्वतेजोमयंसुभम् ॥ वरकांचनकेयूररत्नांबरविभूषितम् ॥३॥ कुंडलाभ्यांशुभाभ्यांतुभ्राजन्मुखविकासितम् ॥ केयूरनिष्काभरणंरक्तमालावलंबिनम् ॥४॥ रक्तचंदनदिग्धांगंसहस्रकिरणोज्ज्वलम् ॥ तमादिदेवयादित्यमुच्चैःश्रवसवाहनम् ॥५॥ अनाद्यंतममध्यंचलोकसाक्षिणमीश्वरम् ॥ तंदृष्ट्वाप्रवरंदेवंरावणोरक्षसांवरः ॥६॥ सप्रहस्तमुवाचाथरवितेजोबलार्दितः ॥ गच्छामात्यवदस्वैनंनिदेशान्ममशासनम् ॥७॥ युद्धार्थंरावणःप्राप्तोयुद्धंतस्यप्रदीयताम् ॥ निर्जितोस्मीतिवाब्रूहिपक्षमेकतरंकुरु ॥ ८ ॥ तस्यतद्वचनाद्रक्षःसूर्यस्यांतिकमागमत् ॥ पिंगलंदंडिनंचैवसोऽपश्यद्द्वारपालकौ ॥९॥ ताभ्यामाख्यायतत्सर्वंरावणस्यविनिश्चयम् ॥ तूष्णीमास्तेप्रहस्तस्तुतत्रतेजोंशदीपितः ॥१०॥

चन्दन लगा हुआ है और हजारों किरणोंकी मालासे वर अंग उज्ज्वल है वह आदिदेव सूर्य नारायण उच्चैःश्रवा वाहनपर चढे हुए हैं ॥ ५ ॥ आदि अन्त मध्य रहित लोकसाक्षी जगतपति देवश्रेष्ठको राक्षसोंमें श्रेष्ठ रावणने देखा ॥ ६ ॥ सूर्यनारायणके तेजबलसे पीडित होकर रावणने प्रहस्तसे कहा, हे मंत्री ! तुम हमारी आज्ञासे जायकर सूर्यसे हमारी यह आज्ञा कहो ॥ ७ ॥ कि रावण युद्धके अभिलाषसे यहांपर आया है; या तो युद्ध करो, और या यह कहो कि हम हार गये दोनोंमेंसे एक पक्षका आश्रय लो ॥ ८ ॥ रावणकी आज्ञानुसार राक्षस प्रहस्तने सूर्यके निकट जायकर देखा कि वहां पिंगल और दंडीनामक दो द्वारपाल खडे हैं ॥ ९ ॥ फिर प्रहस्त उन दोनोंसे रावणकी बल प्रतिज्ञा बतलायकर अपने तेजके प्रभावसे प्रदीप्त हो चुपचाप द्वारपरखडा रहा ॥ १० ॥

दंडी सूर्यभगवान्‌के निकट जाय प्रणाम करके उनसे सब समाचार कहता हुआ, धीमान् सूर्यनारायण दंडीके मुखसे यह समस्त वृत्तान्त सुन॥ ११ ॥ यह विचार पूर्वक बोले, सूर्य बोले हे दंडी ! तुम जाओ उसको पराजय करो अथवा कह दो कि, "हम हार गये" ॥ १२॥ यह जो तुम्हारी अभिलाषा हो उससे कह दो, सूर्यकी आज्ञा पाय दंडीने कुछ देरके पीछे निशाचरके निकट जाय उस महात्मा राक्षससे ॥ १३॥ सूर्य नारायणके कहे हुए समस्त वचन कहे राक्षसराजरावण दंडीके समस्त वचन सुनकर अपनी विजय पुकार वहांसे चलागया ॥ १४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥ इसके उपरान्त लंकापति रावण रमणीक मेरुपर्वतके शिखरपर रात्रि बिताय चन्द्रलोकमें गया ॥१॥ उसने जानेके समय देखा कि, एक दिव्यमाला, दिव्या नुलेपन भूषित दिव्य पुरुष मुख्य २ अप्सराओंसेसेवित हो रथपर चढकर जायरहा है ॥ २ ॥ वह पुरुष रतिसे थककर अप्सराओंके अंगमें सोय रहकर उनके

दंडीगतोरवेः पार्श्वंप्रणम्याख्यातवान्रवेः ॥ श्रुत्वातुसूर्यस्तद्वृत्तंदंडिनोरावणस्यह ॥११॥ उवाचवचनंधीमान्बुद्धिपूर्वंक्षपापहः ॥ गच्छदंडिञ्जय स्वैनंनिर्जितोस्मीतिवावद॥१२॥ यत्तेऽभिकांक्षितंकार्षीःकंचित्कालंक्षपाचरम् ॥ सगत्वावचनात्तस्यराक्षसस्यमहात्मनः ॥१३॥ कथयामासतत्स र्वंसूर्योक्तवचनंतदा॥ सश्रुत्वावचनंतस्यदंडिनोराक्षसेश्वरः॥ घोषयित्वाजगामाथस्वजयंराक्षसाधिपः ॥१४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे प्रक्षिप्तोद्वितीयःसर्गः॥२॥ अथसंचिंत्यलंकेशःसोमलोकंजगामह॥ मेरुशृंगवरेरम्येरजनीमुष्यवीर्यवान् ॥१॥ अथस्यंदन मारूढोदिव्यस्रगनुलेपनः॥अप्सरोगणमुख्येनसेव्यमानस्तुगच्छति॥२॥रतिश्रांतोप्सरोंकेषुचुंबितःसविबुध्यते॥दृष्टस्तुपुरुषस्तेनदृष्ट्वाकौतूहला न्वितः३॥अथापश्यदृषितत्रदृष्ट्वाचैवमुवाचतम्॥स्वागतंतवदेवर्षेकालेनैवागतोह्यसि४॥कोयंस्यंदनमारूढोह्यप्सरोगणसेवितः॥निर्लज्जइवसंया तिभयस्थानंनविंदति ॥५॥ रावणेनैवमुक्तस्तुपर्वतोवाक्यमब्रवीत्॥ शृणुवत्सयथातत्त्वंवक्ष्येचाहंमहामते ॥६॥ अनेननिर्जितालोकाब्रह्माचैवाभि तोषितः॥ एषगच्छतिमोक्षायसुसुखंस्थानमुत्तमम् ॥७॥ तपसानिर्जितायद्वद्भवताराक्षसाधिप ॥ प्रयातिपुण्यकृत्तद्वत्सोमंपीत्वानसंशयः ॥८॥

चूमा लेनेसेजागते हैं, यह देखकर रावण कौतूहल वश हुआ ॥३॥ इसी अवसरमें पर्वत नामकएक ऋषिको वहां देखकर रावणने कहा, हे देवर्षे ! आपका मंगल हो आप यथासमयमें यहांपर आये हैं ॥४॥ अप्सराओंसे सेवित होकर रथपर सवार हो निर्लज्जके समान जाता है, यह पुरुष कौन है? भयके स्थानको यह नहीं जानता ? ॥ ५ ॥ पर्वतऋषि रावणके ऐसे वचन सुनकर बोले, हे वत्स महामते ! ठीक२ विवरण वर्णन करता हूं सुनो ॥६॥ इसने तपोबलसे सब लोकोंको जीत लिया है और ब्रह्माको इसने सन्तुष्ट किया है; इसलिये मोक्षकी अभिलाषासे अत्यन्त सुख संपदाके उत्तम स्थानमें गमन करता है ॥७॥ हेराक्षसाधिप ! जैसे तमने तप करके सब लोकोंको जीता है, वैसेही यह पुण्यवान् पुरुष सब लोकोंको उपार्जन करके सोमपान करता हुआ जाताहै इसमें कुछ संशय नहीं है ॥ ८ ॥

हेराक्षसशार्दूल ! तुम शूर हो और सत्यपराक्रम हो इसलिये बलवान् पुरुष ऐसे धर्मचारी जनके ऊपर क्रोध नहीं करते हैं ॥ ९ ॥ इसी अवसरमें रावणने एक बडाभारी उत्तम रथ देखा यह रथ अपनीही प्रभासे चमक रहा था और गीत व बाजेके शब्दसे परिपूर्ण था ॥ १० ॥ तब रावणने कहा, हे देवर्षे ! यह महा द्युतिमान् पुरुष किन्नरोंसे शोभायमान होकर उनका मनोहर नाच देखता हुआ और गीत सुनता हुआ कहांको चला जाताहै ॥ ११ ॥ इसके उपरान्त मुनि श्रेष्ठ पर्वत यह सुनकर रावणसे बोले, यह शूर योद्धा है, और संग्राममें कभी विमुख नहीं हुआ ॥ १२ ॥ इस कारण विजयी कार्य करनेमें चतुर श्रेष्ठवीर पुरुषने स्वामीके लिये युद्ध कर विविध प्रकारके प्रहारोंसे जर्ज्जरित हो शत्रुओंका प्राणसंहार किया है ॥१३॥ फिर बहुत शत्रुओंको मारकर और पीछेसे आप

त्वंतुराक्षसशार्दूलशूरःसत्यपराक्रमः ॥ नैवेदृशेषुकुध्यंतिबलिनोधर्मचारिषु ॥ ९ ॥ अथापश्यद्रथवरंमहाकायंमहौजसम् ॥ जाज्वल्यमानंवपु षागीतवादित्रनिःस्वनैः ॥ १० ॥ क्वैषगच्छतिदेवर्षेभ्राजमानोमहाद्युतिः ॥ किन्नरैश्चप्रगायद्भिर्नृत्यद्भिश्चमनोरमम् ॥ ११ ॥ श्रुत्वाचैनमुवाचा थपर्वतोमुनिसत्तमः ॥ एषशूरोरणेयोद्धासंग्रामेष्वनिवर्तकः ॥ १२ ॥ युद्ध्यमानस्तथैवैषप्रहारैर्जर्जरीकृतः ॥ कृतीशूरोरणेजेतास्वाम्यर्थेत्यक्त जीवितः ॥ १३ ॥ संग्रामेनिहतोऽमित्रैर्हत्वाचसमरेबहून् ॥ इंद्रस्यातिथिरेवैषअथवायत्रगच्छति ॥ १४ ॥ नृत्यगीतपरैर्लोकैःसेव्यतेनरस त्तमः ॥ पप्रच्छरावणोभूयःकोयंयात्यर्कसन्निभः ॥ १५ ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वापर्वतोवाक्यमब्रवीत् ॥ यएषदृश्यतेराजन्विमानेसर्वकांचने ॥ १६ ॥ अप्सरोगणसंयुक्तेपूर्णचंद्रनिभाननः ॥ सुवर्णदोमहाराजविचित्राभरणांबरः ॥ १७ ॥ एषगच्छतिशीघ्रेणयानेनतुमहाद्युतिः ॥ पर्व तस्यवचःश्रुत्वारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥ १८ ॥ एतेवैयांतिराजानोब्रूहित्वमृषिसत्तम ॥ कोह्यत्रयाचितोदद्याद्युद्धातिथ्यंममाद्यवै ॥ १९ ॥

शत्रुके हाथसे मरकर इन्द्रलोकमें या और किसी पुण्यलोकमें जाता है ॥१४॥ किन्नर लोग नाच गायकर इन नरश्रेष्ठकी सेवा करते हैं तब रावणने फिर पूछा कि, सूर्यके समान द्युतिमान यह कौन पुरुष जाता है ? ॥१५॥ रावणके ऐसे वचन सुनकर पर्वतमुनि बोले कि, हे राजन् ! जिनके सब अंग सुवर्णके बने हैं; ऐसे विमानपर जो दिखाई देते हैं ॥१६॥ चन्द्रमुखी अप्सराओंके जो संग हैं; जो विचित्र वस्त्र आभूषण धारण किये हैं इन महाराजने सुवर्ण दान किया है ॥ १७ ॥ यह इस समय महाद्युति धारण करके वेगगामी विमानपर चढकर जाय रहे हैं; पर्वतमुनिके वचन सुनकर रावणने कहा ॥१८॥ हे ऋषिश्रेष्ठ ! यह सब राजा जो जाय रहे हैं, इनमेंसे कौन राजा प्रार्थना करनेपर हमको युद्धकी पहुनाई दे सकेगा ? ॥ १९ ॥

हे धर्मज्ञ ! आप धर्मके अनुसार हमारे पिता हैं, इसलिये आप हमें ऐसे पुरुषको बताइये; रावणके यह वचन सुनकर पर्वत मुनिने उत्तर दिया ॥ २० ॥ हे महाराज ! यह सब राजा स्वर्गकी अभिलाष किये हुए हैं युद्धके अभिलाषी नहीं, जो पुरुष तुमसे युद्ध करेगा उसको बताते हैं सुनो ॥ २१ ॥ सात द्वीपके अधीश्वर अतितेजस्वी मान्धाता नाम विख्यात एक महाराज हैं यही तुमसे युद्ध करेंगे ॥ २२ ॥ पर्वत मुनिके वचन सुनकर रावणने कहा यह राजा कहां रहता है ? आप विस्तारसहित हमसे यह सब कहिये ॥ २३ ॥ सो हम वहीं जायँगे कि जहां वह नरश्रेष्ठ रहता है पर्वतमुनि रावणके वचन सुनकर बोले ॥ २४ ॥ यौवनाश्वका पुत्र नृपश्रेष्ठ मान्धाता समुद्रांतके सब द्वीपोंके सहित पृथ्वीको जीत इसी स्थानमें आवेंगे ॥ २५ ॥ इसी अवसरमें त्रिलोकीमें विख्यात वरगर्वित महावीर रावणने देखा कि, अयोध्याके महाराज वीर नृपश्रेष्ठ मान्धाता ॥ २६ ॥ सात द्वीपोंके अधीश्वर दिव्या गन्धवाली माला पहरे चन्दन लगाये

तंममाख्याहिधर्मज्ञपितामेत्वंहिधर्मतः ॥ एवमुक्तःप्रत्युवाचरावणंपर्वतस्तदा ॥२०॥ स्वर्गार्थिनोमहाराजनैतेयुद्धार्थिनोनृपाः ॥ वक्ष्यामितेमहाभागयस्तेयुद्धंप्रदास्यति ॥२१॥ सतुराजामहातेजाःसप्तद्वीपेश्वरोमहान् ॥ मांधातेत्यभिविख्यातःसतेयुद्धंप्रदास्यति ॥२२॥ पर्वतस्यवचःश्रुत्वारावणोवाक्यमब्रवीत् ॥ कुतोऽसौतिष्ठतेराजातत्समाचक्ष्वसुव्रत ॥२३॥ सोऽहंयास्यामितत्रैवयत्रासौनरपुंगवः ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वामुनिर्वचनमब्रवीत् ॥२४॥ युवनाश्वसुतोराजामांधाताराजसत्तमः ॥ सप्तद्वीपसमुद्रांतांजित्वेहाभ्यागमिष्यति ॥२५॥ अथापश्यन्महाबाहुस्त्रैलोक्येवरदर्पितः॥ अयोध्यायाःपतिंवीरंमांधातारंनृपोत्तमम् ॥२६॥ सप्तद्वीपाधिपंयांतंस्यन्दनेनविराजता ॥ कांचनेनविचित्रेणमाहेंद्राभेणभास्वता ॥२७॥जाज्वल्यमानंरूपेणदिव्यगंधानुलेपनम्॥ तमुवाचदशग्रीवोयुद्धंमेदीयतामिति॥२८॥एवमुक्तोदशग्रीवंप्रहस्येदमुवाचह॥यदितेजीवितंनेष्टंततोयुध्यस्वराक्षस॥२९॥मांधातुर्वचनंश्रुत्वारावणोवाक्यमब्रवीत्॥वरुणस्यकुबेरस्ययमस्यापिनविव्यथे॥३०॥किंपुनर्मानुषात्त्वत्तोरावणोभयमाविशेत्॥एवमुक्त्वाराक्षसेंद्रःक्रोधात्संप्रज्वलन्निव॥३१॥आज्ञापयामासतदाराक्षसान्युद्धदुर्मदान्॥अथक्रुद्धास्तुसचिवारावणस्यदुरात्मनः॥३२॥

दीप्तिमान् इन्द्रके रथके समान चित्रित काञ्चनमय रथपर बैठे हुए आय रहे हैं ॥२७॥ प्रकाशमान रूप किये दिव्य सुगन्धियुक्त अनुलेपन लगाये वह आये तब रावणने उनसे कहा कि, हमसे युद्ध करो ॥ २८ ॥ यह सुनकर राजा मान्धाताने हँसकर रावणसे कहा हे राक्षस ! जो तुमको अपना जीना न भाता हो तो युद्ध करो ॥ २९ ॥ मान्धाताके वचन सुनकर रावणने यह कहा कि; यह रावणरुण; कुबेर और यमराजके साथ संग्राम करनेमें व्यथित नहीं हुआ ॥ ३० ॥ वह किस कारण मनुष्यदेहधारी तुमसे भय करेगा ? यह कहकर राक्षसराज रावणने क्रोधसे प्रज्वलित होकर ॥ ३१ ॥ राक्षसोंको युद्ध करनेकी आज्ञा दी, जो कि रणमें उन्मत्त थे । तब दुरात्मा रावणके मंत्री क्रोधित होकर ॥ ३२ ॥

वह सब युद्धविशारद बाणोंकी वर्षा करने लगे तब महाबलवान् राजा मान्धाता कंकपत्र लगे हुए तीखे बाणोंसे ॥ ३३ ॥ प्रहस्त, शुक, सारण, महोदर, विरूपाक्ष और अकंपन इत्यादि अगुए राक्षसोंको पीडित करने लगे ॥ ३४ ॥ प्रहस्त बाण वर्षायकर राजाको छाय दिया, परन्तु उन सब बाणोंको उत्तम राजाने अपने निकट पहुँचनेसे पहले ही काट डाला ॥ ३५ ॥ अग्नि जिस प्रकार तिनकोंको जलाती है नरराज मान्धाता वैसेही राक्षसोंकी सेनाको सैकडों भुशुण्डी, भाले, भिन्दिपाल और तोमरसे दग्ध करने लगे ॥ ३६ ॥ अग्निके पुत्र स्वामिकार्तिकने जिस प्रकार बाणोंसे क्रौञ्च पर्वतको भेद डाला था वैसेही मान्धाताने कुपित होकर पांच अति वेगवाले तोमरोंसे विदारण किया ॥ ३७ ॥ फिर यमराजके समान मुद्गर वारंवार घुमाकर अति वेगसे रावणके रथके

ववर्षुः शरजालानि क्रुद्धा युद्धविशारदाः ॥ अथ राज्ञा बलवता कंकपत्रैः शिलाशितैः ॥ ३३ ॥ इषुभिस्ताडिताः सर्वे प्रहस्तशुकसारणाः ॥ महोदरविरूपाक्षाद्यकंपनपुरोगमाः ॥ ३४ ॥ अथ प्रहस्तस्तु नृपमिषुवर्षैरवाकिरत् ॥ अप्राप्तानेव तान्सर्वान्प्रचिच्छेद नृपोत्तमः ॥ ३५ ॥ भुशुंडीभिश्च भल्लैश्च भिंदिपालैश्च तोमरैः ॥ नरराजेन दह्यंते तृणभारा इवाग्निना ॥ ३६ ॥ ततो नृपवरः क्रुद्धः पंचभिः प्रबिभेद तम् ॥ तोमरैश्च महावेगैः पुनः क्रौंचमिवाग्निजः ॥ ३७ ॥ ततो मुहुर्भ्रामयित्वा मुद्गरं यमसन्निभम् ॥ प्राहरत्सोऽतिवेगेन राक्षसस्य रथं प्रति ॥ ३८ ॥ स पपात महावेगो मुद्गरो वज्रसन्निभः ॥ स तूर्णं पातितस्तेन रावणः शक्रकेतुवत् ॥ ३९ ॥ तदा स नृपतिः प्रीत्या हर्षोद्धतबलो बभौ ॥ सकलेंदुकलाः स्पृष्ट्वा यथांबुलवणांभसः ॥ ४० ॥ ततो रक्षोबलं सर्वं हाहाभूतमचेतनम् ॥ परिवार्याथ तं तस्थौ राक्षसेंद्रं समंततः ॥ ४१ ॥ ततश्चिरात्समाश्वस्य रावणो लोकरावणः ॥ मांधातुः पीडयामास देहं लंकेश्वरो भृशम् ॥ ४२ ॥ मूर्च्छितं तं नृपं दृष्ट्वा प्रहृष्टास्ते निशाचराः ॥ चक्रुशुः सिंहनादांश्च प्रक्ष्वेलं तो महाबलाः ॥ ४३ ॥

ऊपर प्रहार किया ॥ ३८ ॥ वह वज्रके समान मुद्गर महावेगसे रावणके रथपर गिरकर अतिशीघ्र रावणको गिराता हुआ, जैसे इन्द्रकी ध्वजा गिरे ॥ ३९ ॥ क्षारसमुद्रका जल जिस प्रकार सम्पूर्ण चन्द्रमाके छूनेको उछलता है वैसेही उस कालमें वह राजा मान्धाता. प्रसन्नताके मारे हर्षसे फूलगये और शोभायमान हुए ॥ ४० ॥ तब समस्त राक्षसोंकी सेना हाहाकार करके मूर्छित हुए राक्षसराजको चारों ओरसे घेरकर खडी हो गई ॥ ४१ ॥ बहुत देरके पीछे चेतना पायकर लंकापति लोकोंको रुलानेवाला रावण राजा मान्धाताकी देहको पीडित करने लगा ॥ ४२ ॥ तब पीडाके मारे राजा भी मूर्छित हो गया, उसको मूर्छित देखकर महाबलवान् निशाचर रावण हर्षित मनसे आस्फालन करते हुए सिंहनाद करने लगा ॥ ४३ ॥

अयोध्याके राजा मान्धाताने एक क्षणमें मूर्छासे जागकर देखा कि, मंत्री निशाचर शत्रुकी पूजा करते हैं ॥ ४४ ॥ यह देखकर वह अतिक्रोधित हुए और सूर्य चन्द्रमाके समान कांति धारण करके बाणोंकी अत्यन्त वर्षा कर राक्षसोंकी सेनाका प्राणसंहार करने लगे ॥ ४५ ॥ फिर समस्त राक्षसोंकी सेना उछलते हुए समुद्रके समान राजाके धनुष्यके शब्द और बाणके शब्दसे सर्वप्रकार चलायमान हो गई ॥ ४६ ॥ इस प्रकारसे नर और राक्षसका घोर संग्राम होने लगा इसके उपरान्त महात्मा नरराज मान्धाता और राक्षसश्रेष्ठ रावण ॥ ४७ ॥ चाप और खड्ग धारण करके संग्राम करने लगे, और वीरासनपर विराजमान हुए मान्धाताजीने रावणको और रावणने इन नरपतिको विद्ध किया ॥ ४८ ॥ दोनों ही महाक्रोधसे परस्पर एक दूसरेके ऊपर बाण वर्षाने लगे।

लब्धसंज्ञोमुहूर्तेनअयोध्याधिपतिस्तदा ॥ दृष्ट्वातंमंत्रिभिःशत्रुंपूज्यमानंनिशाचरैः ॥ ४४ ॥ जातकोपोदुराधर्षश्चंद्रार्कसदृशद्युतिः ॥ महताशरवर्षेणपातयद्राक्षससंबलम् ॥४५॥ चापस्यैवनिनादेनतस्यबाणरवेणच ॥ संचचालततःसैन्यमुद्धूतइवसागरः ॥ ४६ ॥ तद्युद्धमभवद्धोरंनरराक्षससंकुलम् ॥ अथाविष्टौमहात्मानौनरराक्षससत्तमौ ॥ ४७ ॥ कार्मुकासिधरौवीरौवीरासनगतौतदा ॥ मांधातारावणंचैवरावणश्चैवतंनृपम् ॥ ४८ ॥ क्रोधेनमहताविष्टौशरवर्षंमुमोचतुः ॥ तौपरस्परसंक्षोभात्प्रहारैःक्षतविक्षतौ ॥ ४९ ॥कार्मुकेऽस्त्रंसमाधायरौद्रमस्त्रममुंचत ॥ आग्नेयेनतुमांधातातदस्त्रंपर्यवारयत् ॥ ५० ॥ गांधर्वेणदशग्रीवोवारुणेनचराजराट् ॥ गृहीत्वासतुब्रह्मास्त्रंसर्वभूतभयावहम् ॥५१॥ वेदयामासमांधातादिव्यंपाशुपतंमहत् ॥ तदस्त्रंघोररूपंतुत्रैलोक्यभयवर्धनम् ॥ ५२ ॥ दृष्ट्वात्रस्तानिभूतानिस्थावराणिचराणिच ॥ वरदानात्तुरुद्रस्यतपसाराधितंमहत् ॥ ५३ ॥ ततःसंकंपतेसर्वंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥ देवाःसंकंपिताःसर्वेलयंनागाश्चसंगताः ॥ ५४ ॥

परस्पर क्षोभके मारे दोनोंहीके शरीर घायल हो गये ॥ ४९ ॥ रावणने धनुषपर रौद्र अस्त्र चढायकर छोडा, राजा मान्धाताने अग्नेयास्त्रसे उसको निवारण किया ॥ ५० ॥ रावणने गन्धर्वास्त्र लिया तब राजाने उसको वरुणास्त्रसे निवारण किया। परन्तु रावणने सर्वप्राणियोंको भय उपजानेवाला ब्रह्मास्त्र लिया ॥ ५१ ॥ तब मान्धाताजीने दिव्य पाशुपत महास्त्रको प्रेरण किया, वह त्रिलोकीका भय बढानेवाला घोररूप अस्त्र ॥ ५२ ॥ देखकर सब चराचर प्राणी त्रासित हुए। यह महास्त्र तप करके आराधना कर रुद्रदेवके वरदानसे प्राप्त हुआ था ॥ ५३ ॥ उस समय चराचरसहित समस्त त्रिभुवन कंपायमान होने लगा, अधिक क्या कहैं देवता भी कंपायमान हुए और नागगण भी लय हुए ॥ ५४ ॥

इसी अवसरमें मुनिशार्दूल पुलस्त्यजी और गालवजीने ध्यानके बलसे वह सब देखा और राजा मान्धाताको निवारण किया॥५५॥ उन्होंने वहां आय विविध तिरस्कारके वचनोंसे रावणको भी रोका तब मान्धाता और रावणने परस्पर प्रीति स्थापन करके हर्षित चित्तसे जो जिस मार्गसे आये थे वह उसी मार्गसे चले गये ॥५६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तराकांडे भाषायां तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ दोनों ब्राह्मणोंके चले जाने पर राक्षसोंका राजा रावण दशहजार योजन प्रमाणवाले पवनके मार्गमें चला गया ॥ १ ॥ इस स्थानमें सर्व गुणोंसे विभूषित हंस सदा उठा करते हैं इससे भी ऊँचे दूसरे पवनके मार्गमें रावण चढ गया ॥ २ ॥ इस मार्गका परिमाण भी दशहजार योजनका गिना जाता है; इस स्थानमें तीन प्रकारके मेघ नित्य एकत्र रहा करते हैं ॥ ३ ॥ यह अग्निज,

अथतौमुनिशार्दूलौध्यानयोगादपश्यताम् ॥ पुलस्त्योगालवश्चैववारयामासतंनृपम् ॥ ५५ ॥ सोपालंभैश्चविविधैर्वाक्यैराक्षससत्तमम् ॥ तौतु कृत्वातदाप्रीतिंनरराक्षसयोस्तदा ॥ संप्रस्थितौसुसंहृष्टौपथायेनैवचागतौ ॥५६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे प्रक्षिप्तस्तृतीयःसर्गः ॥ ३ ॥ गताभ्यामथविप्राभ्यांरावणोराक्षसाधिपः ॥ दशयोजनसाहस्रंप्रथमंतुमरुत्पथम् ॥ १ ॥ यत्रतिष्ठंतिनित्यंहिहंसाः सर्वगुणान्विताः ॥ अथऊर्ध्वंतुगत्वावैमरुत्पथमनुत्तमम् ॥ २ ॥ दशयोजनसाहस्रंतदेवपरिगण्यते ॥ तत्रसन्निहितामेघास्त्रिविधानित्सशःस्थिताः॥ ३ ॥ आग्नेयाःपक्षिणोब्राह्मास्त्रिविधास्तत्रतेस्थिताः ॥ अथगत्वातृतीयंतुवायोपंथानमुत्तमम् ॥ ४ ॥ नित्यंयत्रस्थिताःसिद्धाश्चारणाश्चमनस्विनः ॥ दशैवतुसहस्राणियोजनानांतथैवच ॥ ५ ॥ चतुर्थंवायुमार्गंतुशीघ्रंगत्वापरंतप ॥ वसंतियत्रनित्यस्थाःभूताश्चसविनायकाः ॥ ६ ॥ अथगत्वासवैशीघ्रंपंचमंवायुगोचरम् ॥ दशैवचसहस्राणियोजनानांतथैवचः ॥ ७ ॥ गंगायत्रसरिच्छ्रेष्ठानागावैकुमुदादयः ॥ कुंजरास्तत्रतिष्ठंतियेतुमुंचंतिसीकरम् ॥ ८ ॥ गंगातोयेषुक्रीडंतिपुण्यंवर्षंतिसर्वशः॥ततोरविकरभ्रष्टंवायुनापेशलीकृतम् ॥ ९ ॥

पक्षज और ब्राह्मज * यहांपर सदा विराजते हैं; इसके उपरांत रावण दूसरे तीसरे पवन मार्गमें चढ गया जो कि अति उत्तम था ॥ ४ ॥ जहांपर नित्य मनस्वी सिद्ध, चारणगण वास करते हैं इसका परिमाण भी दश सहस्र योजन है ॥५॥ शत्रुविनाशी राक्षसराज रावण चौथे वायुके मार्गमें शीघ्रही चढ गया, भूत और विनायकगण इस मार्गमें नित्य वसते हैं ॥ ६ ॥ इसके उपरान्त रावण शीघ्रही पवनके पांचवें मार्गमें चढ गया, इसका परिमाण भी दश सहस्र योजन था ॥ ७ ॥ इस मार्गमें नदियोंमें श्रेष्ठ गंगाजी और कुमुदादि कुंजरगण विराजमान हैं ॥ ८ ॥ यह कुंजरगण ही गंगाजीमें विहार करके पुण्यजल वर्षाया करते

* अग्नीकी उत्पन्न हुई जो मेघ बनतेहैं वह अग्निज, इन्द्रजीने जब पर्वतोंके पंख काटे उन पंखोंसे जो मेघ उत्पन्न हुए वह पक्षज और जो ब्रह्माजीके श्वास लेनेसे जन्मे वह ब्राह्मज मेघ हैं ।

हैं। वहां सूर्यकी किरणसे छूटा हुआ और पवन करके निर्मल हुआ॥९॥जल पुण्यरूप हो गिरता है हे राम! वहां हिमको भी वर्षा होती है, हे महाद्युति! फिर रावण छठे वायुके मार्गमें गया ॥१०॥ इस मार्गका परिमाण दश हजार योजनका है, इसमें भी वह राक्षस गया जिस मार्गमें नित्य गरुडजी जातिवाले बन्धु बान्धवोंसे सत्कार किये जाकर टिके हैं ॥११॥ इन दश हजार योजनके पीछे इसके भी ऊपर सातवें वायुमार्गमें जहां सप्तर्षिगण वास करते हैं ॥१२॥ उसके पीछे दश हजार योजन ऊंचेपर रावण अग्निमार्गको प्राप्त हुआ कि जहांपर गंगाजी विराजमान हैं ॥ १३ ॥ उन महावेगवाली महाशब्द करनेवाली विख्यात आकाशगंगाको पवन सूर्यमार्गमें धारण किये हुए हैं ॥१४॥ आठवें मार्गके ऊपर चन्द्रमाजी विराजमान हैं; इसका अस्सी हजार योजनका परिमाण

जलंपुण्यंप्रपततिहिमंवर्षतिराघव ॥ ततोजगामषष्ठंसवायुमार्गमहाद्युते ॥ १० ॥ योजनानांसहस्राणिदशैवतुसराक्षसः ॥ यत्रास्तेगरुडोनित्यंज्ञातिबांधवसत्कृतः ॥ ११ ॥ दशैवतुसहस्राणियोजनानांतथोपरि ॥ सप्तमेवायुमार्गेचयत्रैतेऋषयःस्मृताः ॥ १२ ॥ अतऊर्ध्वंतुगत्वावैसहस्राणिदशैवतु ॥अष्टमंवायुमार्गंतुयत्रगंगाप्रतिष्ठिता ॥ १३ ॥ आकाशगंगाविख्याताआदित्यपथसंस्थिता ॥ वायुनाधार्यमाणासामहावेगामहास्वना ॥ १४ ॥ अतऊर्ध्वंप्रवक्ष्यामिचंद्रमायत्रतिष्ठति ॥ अशीतितुसहस्राणियोजनानांप्रमाणतः ॥ १५ ॥ चंद्रमास्तिष्ठतेयत्रनक्षत्रग्रहसंयुतः ॥ शतंशतसहस्राणिरश्मयश्चंद्रमंडलात् ॥ १६ ॥ प्रकाशयंतिलोकांस्तुसर्वसत्त्वसुखावहाः ॥ ततोदृष्ट्वादशग्रीवंचंद्रमानिर्दहन्निव ॥ १७ ॥ सतुशीताग्निनाशीघ्रंप्रादहद्रावणंतदा ॥ नासहंस्तस्यसचिवाःशीताग्निभयपीडिताः ॥ १८ ॥ रावणंजयशब्देनप्रहस्तोऽथेनमब्रवीत ॥राजञ्शीतेनवध्यामोनिवर्तामइतोवयम् ॥ १९ ॥चंद्ररश्मिप्रतापेनरक्षसांभयमाविशत् ॥ स्वभावएषराजेंद्रशीतांशोर्दहनात्मकः ॥ २० ॥ एतच्छ्रुत्वाप्रहस्तस्यरावणःक्रोधमूर्च्छितः ॥ विस्फार्यधनुरुद्यम्यनाराचैस्तमपीडयत् ॥ २१ ॥

है ॥ १५ ॥ भगवान् चन्द्रमाजी ग्रह व नक्षत्रोंके समूहोंसे युक्त होकर यहांपर स्थित हैं, सैकडों हजारों किरण चन्द्रमाके मंडलसे निकलकर ॥ १६ ॥ सर्व लोकोंको सुखकी देनेवाली वह त्रिभुवनको प्रकाशमान करती हैं फिर चन्द्रमाजीने देखतेही मानो रावणको जलाया ॥१७॥ तब वह शीतकी आगसे रावणको अति शीघ्र सर्व प्रकारसे जलते हुए रावणके मंत्री उसको न सहकर शीतकी अग्निके भयसे पीडित हो वहां न टिक सके ॥ १८ ॥ तब जयशब्द उच्चारण करके प्रहस्तने रावणसे कहा, हम शीतसे मरे जाते हैं इसलिये हम लोगोंको इस स्थानसे लौटना पडेगा ॥१९॥ हे राजन्! चन्द्रमाकी किरणोंके प्रभावसे राक्षस भीत हो गये हैं, चन्द्रमाका स्वभावही दहनात्मक है ॥ २० ॥ प्रहस्तके यह वचन सुनकर रावणने क्रोधसे मूर्च्छित हो धनुष, उठाय और खेंचकर

बाणसमूहोंसे चन्द्रमाको पीडित किया ॥२१॥ उस कालमें ब्रह्माजी अतिशीघ्रतासे चन्द्रलोकमें आकर रावणसे बोले, साक्षात् विश्रवाके पुत्र महावीर दशग्रीव ! ॥ २२ ॥ तुम अतिशीघ्र इस स्थानसे चले जाओ, हे सौम्य ! चन्द्रमाको पीडित न करो, कारण कि; यह महाद्युतिमान् द्विजराज सदा सब लोगोंका हित चाहनेवाले हैं ॥ २३ ॥ हम तुमको एक मंत्र देते हैं, प्राण त्याग होनेके समय जो पुरुष इस मंत्रको सदा स्मरण करेगा उसकी मृत्यु नहीं होगी ॥२४॥ यह वचन सुन रावणने हाथ जोडकर देव कमलयोनि ब्रह्माजीसे कहा हे लोकनाथ ! हे महाव्रत देव ! जो आप मुझपर प्रसन्न हैं ॥२५॥ और जो आप हमको मंत्र देना चाहते हैं तो वह मुझको दे दीजिये । हे महाभाग ! धार्मिक ! जिस मंत्रको जपकर सर्व देवताओंसे निर्भय हो जावें ॥ २६ ॥ हे देवेश ! हम

अथब्रह्मातदागच्छत्सोमलोकंत्वरान्वितः ॥ दशग्रीवमहाबाहोसाक्षाद्विश्रवसःसुत ॥ २२ ॥ गच्छशीघ्रमितःसौम्यमाचंद्रंपीडयस्ववै ॥ लोकस्यहितकामोवैद्विजराजोमहाद्युतिः ॥ २३ ॥ मंत्रंचसंप्रदास्यामिप्राणात्ययगतिर्यदा ॥ यस्त्वेतंसंस्मरेन्मंत्रंनासौमृत्युमवाप्नुयात् ॥ २४ ॥ एवमुक्तोदशग्रीवःप्रांजलिर्देवमब्रवीत् ॥ यदितुष्टोसिमेदेवलोकनाथमहाव्रत ॥२५॥ यदिमंत्रश्चमेदेयोदीयतांममधार्मिक ॥ यंजप्त्वाहंमहाभागसर्वदेवेषुनिर्भयः ॥ २६ ॥ असुरेषुचसर्वेषुदानवेषुपतत्रिषु ॥ त्वत्प्रसादात्तुदेवेशस्यामजेयोनसंशयः ॥ २७ ॥ एवमुक्तोदशग्रीवंब्रह्मावचनमब्रवीत् ॥ प्राणात्ययेषुजप्तव्योननित्यंराक्षसाधिप ॥ २८ ॥ अक्षसूत्रंगृहीत्वातुजपेन्मंत्रमिमंशुभम् ॥ जप्त्वातुराक्षसपतेत्वमजेयोभविष्यसि ॥ २९ ॥ अजप्त्वाराक्षसपतेनतेसिद्धिर्भविष्यति ॥ शृणुमंत्रंप्रवक्ष्यामियेनराक्षसपुंगव ॥ ३० ॥ मंत्रस्यकीर्तनादेवप्राप्स्यसेसमरेजयम् ॥ नमस्तेदेवदेवेशसुरासुरनमस्कृत ॥ ३१ ॥ भूतभव्यमहादेवहरिपिंगललोचन ॥ बालस्त्वंवृद्धरूपीचवैयाघ्रवसनच्छद ॥ ३२ ॥ अर्चनीयोसिदेवत्वंत्रैलोक्यप्रभुरीश्वरः ॥ हरोहरितनेमीचयुगांतदहनोबलः ॥ ३३ ॥

आपके प्रसादसे समस्त असुर और पतंगोंसे भी निःसंदेह अजेय होवेंगे ॥ २७ ॥ यह वचन सुनकर ब्रह्माजीने रावणसे कहा—हे राक्षसनाथ ! प्राणोंका नाश होनेहीके समय इस मंत्रका जपना उचित है, नित्य जप करना ठीक नहीं ॥२८॥ हे राक्षसराज ! रुद्राक्षकी माला ग्रहण करके इस शुभ मंत्रका जप करना पडता है इसका जप करनेसे तुम निश्चय अजीत होओगे ॥ २९ ॥ हे राक्षसराज ! बिना इस मंत्रका जप किये तुम्हें सिद्धि प्राप्त नहीं होगी इसलिये हे राक्षसश्रेष्ठ ! हम उस मंत्रको कहते हैं तुम सुनो ॥ ३० ॥ इस मंत्रका संकीर्त्तन करतेही तुम संग्राममें विजयको प्राप्त करोगे । देवदेवेश ! हे सुरासुरनमस्कृत ! तुमको नमस्कार है ॥३१॥ हे भूत भविष्यत् ! हे महादेव ! हे हरिपिङ्गलनेत्र ! तुम बालक हो और वृद्धरूपी हो तुम व्याघ्रचर्मधारी हो ॥३२॥ हे देव ! तुम

त्रिभुवनके ईश्वर और प्रभु हो इससे तुम पूजा करनेके योग्य हो, तुम हरितनेमी, युगान्तदहन और बलदेव हो ॥ ३३ ॥ तुम गणेश, तुम लोक शम्भु तुम लोकपाल तुम महाभुज हो, तुम महाभाग; महाशूली, महादन्ष्ट्र और महेश्वर हो ॥ ३४ ॥ तुम काल बलरूपी; नीलग्रीव और महोदर हो । तुम देवान्तक तपस्यामें पारगामी, अव्यय, पशुपति हो सो आपको नमस्कार है ॥ ३५ ॥ तुम शूलपाणि वृक्षकेतु नेता गोप्ता, हर, हरि, जटी, मुंडी, शिखंडी, महायशा और मुकुटी हो तुम्हें नमस्कार है ॥३६॥ तुम भूतेश्वर, गणाध्यक्ष, सर्वात्मा; सर्वभावन, सर्वज्ञ, सर्वहारि स्रष्टा, अव्य गुरु हो; तुमको नमस्कार है ॥ ३७ ॥ तुम कमंडलुधर देवता हो, पिनाकी, धूर्ज्जटी, माननीय, ओंकार, वरिष्ठ; ज्येष्ठ, सामग, मृत्यु मृत्युभूत, पारियात्र और सुवृत हो तुम्हें नमस्कार है ॥३८॥ तुम

गणेशोलोकशंभुश्चलोकपालोमहाभुजः ॥ महाभागोमहाशालीमहादंष्ट्रीमहेश्वरः ॥ ३४ ॥ कालश्चबलरूपीचनीलग्रीवोमहोदरः ॥ देवान्तगस्तपोंतश्चपशूनांपतिरव्ययः ॥ ३५ ॥ शूलपाणिर्वृषःकेतुर्नेतागोप्ताहरोहरिः ॥ जटीमुंडीशिखंडीचलकुटीचमहायशाः ॥ ३६ ॥ भूतेश्वरो गणाध्यक्षःसर्वात्मासर्वभावनः ॥ सर्वगःसर्वहारीसस्रष्टाचगुरुरव्ययः ॥ ३७ ॥ कमंडलुधरोदेवःपिनाकीधूर्जटिस्तथा ॥ माननीयश्चओंकारो वरिष्ठोज्येष्ठसामगः ॥ मृत्युश्चमृत्युभूतश्चपारियात्रश्चसुव्रतः ॥ ३८ ॥ ब्रह्मचारीगुहावासीवीणापणवतूणवान् ॥ अमरोदर्शनीयश्चबालसूर्यनिभस्तथा ॥ ३९ ॥ श्मशानवासीभगवानुमापतिरनिंदितः ॥ भगस्याक्षिनिपातीचपूष्णोदशननाशनः ॥ ४० ॥ ज्वरहर्तापाशहस्तःप्रलयःकालएवच ॥ उल्कामुखोग्निकेतुश्चमुनिर्दीप्तोविशांपतिः ॥ ४१ ॥ उन्मादोवेपनकरश्चतुर्थोलोकसत्तमः ॥ वामनोवामदेवश्चप्राक्प्रदक्षिणवामनः ॥ ४२ ॥ भिक्षुश्चभिक्षुरूपीचत्रिजटीकुटिलःस्वयम् ॥ शक्रहस्तप्रतिष्टंभीवसूनांस्तंभनस्तंभनस्तथा ॥ ४३ ॥ ऋतुर्ऋतुकरःकालोमधुर्मधुकलोचनः ॥ वानस्पत्योवाजसनोनित्यमाश्रमपूजितः ॥ ४४ ॥

ब्रह्मचारी, गुहावासी, वीणापणवतूणवान्, बाल सूर्यके समान दर्शन करनेके योग्य और अमर हो सो तुमको नमस्कार है ॥३९। तुम श्मशानवासी, भगवान्, अनिन्दित, उमापति, भगनयन निपाती और पूषाकेदांत तोडनेवाले ही, तुम्हें नमस्कार है ॥४०॥ तुम ज्वरहारी; पाश हाथमें लिये प्रलयरूप काल, उल्का मुख, अग्निकेतु, प्रदीप्त विशाम्पति मुनि हो, तुमको नमस्कार है ॥४१॥ तुम चतुर्थ लोकश्रेष्ठ हो वेपनकर उन्मादी, वामन वामदेव प्राक्प्रदक्षिण वामन हो सो तुमको नमस्कार है ॥ ४२ ॥ तुम भिक्षु भिक्षुरूपी, त्रिजटी, कुटिल और इन्द्रके हाथको स्तम्भन करनेवाले हो और वसुलोगोंका स्तम्भन करने वाले हो, तुमको नमस्कार है ॥ ४३ ॥ तुम ऋतु, ऋतुक, काल, मधु, मधुलोचन वानस्पत्य, वाजसन और नित्याश्रम पूजित हो, तुम्हें नमस्कार है ॥ ४४ ॥

तुम जगत्के धाता और कर्ता हो, तुम पुरुष, शाश्वत और ध्रुव हो, तुम धर्माध्यक्ष विरूपाक्ष, विधर्म और भूतभावन हो इससे आपको नमस्कार है ॥ ४५ ॥ तुमत्रिनेत्र, बहुरूप, दशहजार सूर्यके समान तुम्हारी प्रभा है; देवदेव, अतिदेव हो और चन्द्रांकित जटाधारी हो तुमको नमस्कार है ॥ ४६ ॥ नर्तक, लासक, पूर्णमासी चन्द्रमाके समानमुखवाले, ब्रह्मण्य, शरण्य और सर्वजीवमयहो इससे तुमको नमस्कार है ॥ ४७ ॥ तुम सर्वतूर्यनिनादी, सब बन्धनोंसे छुटानेवाले, मोहन, बन्धन और सदा निधनोत्तम हो सो तुमको नमस्कार है ॥ ४८ ॥ तुम पुष्पदन्त, विभाग, मुख्य, सर्वहर, हरितश्मश्रु, धनुर्धारी, भीम, भीमपराक्रम हो, तुमको नमस्कार है ॥ ४९ ॥ हमारे कहे हुए पुण्यमय यह १०८ नाम समस्त पापके हरनेवाले हैं; शरण चाहनेवालोंको शरण देनेवाले और पुण्यजनक

जगद्धाताचकर्ताचपुरुषःशाश्वतोध्रुवः ॥ धर्माध्यक्षोविरूपाक्षस्त्रिधर्माभूतभावनः ॥ ४५ ॥ त्रिनेत्रोबहुरूपश्चसूर्यायुतसमप्रभः ॥ देवदेवोतिदेवश्चचंद्रांकितजटस्तथा ॥ ४६ ॥ नर्तकोलासकश्चैवपूर्णेंदुसदृशाननः ॥ ब्रह्मण्यश्चशरण्यश्चसर्वजीवमयस्तथा ॥ ४७ ॥ सर्वतूर्यनिनादीचसर्वबंधविमोक्षकः ॥ मोहनोबंधनश्चैवसर्वदानिधनोत्तमः ॥ ४८ ॥ पुष्पदंतोविभागश्चमुख्यःसर्वहरस्तथा ॥ हरिश्मश्रुर्धनुर्धारीभीमोभीमपराक्रमः ॥ ४९ ॥ मयाप्रोक्तमिदंपुण्यंनाम्नामष्टोत्तरंशतम् ॥ सर्वपापहरंपुण्यंशरण्यंशरणार्थिनाम् ॥ ५० ॥ जप्तमेतद्दशग्रीवकुर्याच्छत्रुविनाशनम् ॥ ५१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे प्रक्षिप्तश्चतुर्थःसर्गः ॥ ४ ॥ दत्वातुरावणस्यैवंवरंसकमलोद्भवः ॥ पुनरेवागमत्क्षिप्रंब्रह्मलोकंपितामहः ॥ १ ॥ रावणोपिवरंलब्ध्वापुनरेवागमत्तथा ॥ केनचित्त्वथकालेनरावणोलोकरावणः ॥ २ ॥ पश्चिमार्णवमागच्छत्सचिवैःसहराक्षसैः ॥ द्वीपस्थोदृश्यतेतत्रपुरुषःपावकप्रभः ॥ ३ ॥ महाजांबूनदप्रख्यएकएवव्यवस्थितः ॥ दृश्यतेभीषणाकारोयुगांतानलसन्निभः ॥ ४ ॥ देवानामिवदेवेशोग्रहाणमिवभास्करः ॥ शरभाणांयथासिंहोहस्तिष्वैरावतोयथा ॥ ५ ॥

हैं ॥५०॥ हे रावण ! यह नाम जपनेसे सब शत्रुओंका नाश होता है ॥५१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥ लोकपितामह कमलसे उत्पन्न ब्रह्माजी रावणको इस प्रकारका वरदान देकर अतिशीघ्र ब्रह्मलोकको चलेगये ॥ १ ॥ रावणभी वर पाय वहांसे लौटा, कुछ कालके पीछे लोकोंका रुवानेवाला रावण ॥२॥ अपने मंत्रिगणोंके साथ पश्चिमके समुद्रपर आया । इस समय दशानन रावण वहां एक द्वीपमें अग्निके समान पुरुषको देखता हुआ ॥३॥ वह विमल सुवर्णकी कान्तिके समान कान्तिवाला पुरुष वहां इकला विराजमान था । उस पुरुषका आकार देखनेमें कालकी अग्निके समान भयंकर था ॥४॥ देवताओंमें जिस प्रकार महादेवजी हैं, ग्रहोंमें जिस प्रकार भास्कर हैं, शरभ समूहमें जिस प्रकार सिंह है, हाथियोंमें जिस प्रकार

ऐरावत है ॥ ५ ॥ समस्त पर्वतोंमें जिस प्रकार सुमेरु है और वनमें जिस प्रकार कल्पवृक्ष समस्त पुरुषोंमें वैसेही इस महाबलवान् पुरुषको देखकर ॥ ६ ॥ रावणने उससे कहा कि, मुझसे युद्ध कर, तब उसके सब नेत्र ग्रहमालाके समान चलायमान होगये ॥ ७ ॥ और दांतोंके किटकिटानेका शब्द वज्रके शब्दके समान हुआ उस समय महाबलवान् रावण अपने सब मंत्रियोंके सहित गर्जने लगा ॥ ८ ॥ वह अनेक प्रकार शब्द करगर्जने लगा, गर्जते २ यह लम्बहस्त; भयंकराकार दाढयुक्त, विकटाकार, कम्बुग्रीव, चौडी छातीवाला ॥ ९ ॥ मेंडकके समान उदरवाला; सिंहवदन, कैलास शिखरके समान चरणवाला, लाल तालूवाला, लाल हाथवाला, भयंकर ॥ १० ॥ महाकायवाला, महानाद करनेवाला, मन और वायुके समान वेगवाला, भीमबद्धतूणीर, घंटा चामर समन्वित

पर्वतानांयथामेरुःपरिजातश्चशाखिनाम् ॥ तथातंपुरुषंदृष्ट्वास्थितंमध्येमहाबलम् ॥ ६ ॥ अब्रवीच्चदशग्रीवोयुद्धंमेदीयतामिति ॥ अभवत्तस्य साढृष्टिर्ग्रहमालाइवाकुला ॥ ७ ॥ दंतान्संदशतःशब्दोयंत्रस्येवाभिभिद्यतः ॥ जगर्जोच्चैःसबलवान्सहामात्योदशाननः ॥८॥ सगर्जन्विविधैर्नादैर्लंबहस्तंभयानकम् ॥ दंष्ट्रालंविकटंचैवकंबुग्रीवंमहोरसम् ॥ ९ ॥ मंडूककुक्षिंसिंहास्यंकैलासशिखरोपमम् ॥ पद्मपादतलंभीमंरक्ततालुकरांबुजम् ॥ १० ॥ महानादंमहाकायंमनोनिलसमंजवे ॥ भीममाबद्धतूणीरंसघंटंबद्धचामरम् ॥ ११ ॥ ज्वालामालापरिक्षिप्तंकिंकिणीजालनिःस्वनम् ॥ मालयास्वर्णपद्मानांकंठदेशेऽवलंबया ॥ १२ ॥ ऋग्वेदमिवशोभंतंपद्ममालाविभूषितम् ॥ सोंजनाचलसंकाशंकांचनाचलसन्निभम् ॥ १३ ॥ प्राहरद्राक्षसपतिःशूलशक्त्यृष्टिपट्टिशैः ॥ द्वीपिनासःसिंहइवऋषभेणेवकुंजरः ॥ १४ ॥ सुमेरुरिवनागेंद्रैर्नदीवेगैरिवार्णवः ॥ अकंपमानःपुरुषोराक्षसंवाक्यमब्रवीत् ॥ १५ ॥ युद्धश्रद्धांहितेरक्षोनाशयिष्यामिदुर्मते ॥ रावणस्यचयोवेगःसर्वलोकभयंकरः ॥ १६ ॥ तथा वेगसहस्राणिसंश्रितानितमेवहि ॥ धर्मस्तस्यतपश्चैवजगतःसिद्धिहेतुकौ ॥ १७ ॥

॥ ११ ॥ ज्वालाकी मालासे शोभायमान किंकिणीजालके समान मधुर शब्द करनेवाला. जिसके गलेमें सुवर्णके कमलफूलोंकी माला पडी थी ॥ १२ ऋग्वेदके समान शोभायमान, कमलके समान द्युतिसम्पन्न ॥ १३ ॥ महापुरुषके ऊपर राक्षसपति शूल, शक्ति, ऋष्टि और पटेकी वर्षा करने लगा। चीतेके आक्रमणसे सिंह, बैलके आक्रमणसेहाथी ॥ १४ ॥ हस्तिराजके आक्रमणसे सुमेरु और नदीके वेगसे महासागर जिस प्रकार चलायमान नहीं होता वैसेही उस महापुरुषने प्रहारसे कंपायमान न होकर रावणसे कहा ॥ १५ ॥ रे दुर्मति निशाचर! यह तेरी युद्धलालसा दूर करेंगे हे राम ! रावणका सब लोकोंका भय देनेवाला जो वेग था ॥ १६ ॥ उससे हजारगुना अधिकवेग उस महापुरुषमें था जगत्की सर्व सिद्धि करनेके कारण तप और धर्म ॥ १७ ॥

इस पुरुषकी जांघोंका अवलंबन करके टिके हुए थे; कामदेव उनके शिश्नमें, रहता था विश्वेदेव कमरमें मरुद्गण उनकी बस्तिकी दो पार्श्वोंमें ॥ १८ ॥ अष्टवसु उनके मध्यभागमें सब समुद्र उनकी कोखमें सब दिशायें उनके पार्श्वादि स्थानमें थीं । मारुतसमुदाय उनके सन्धिस्थानमें विराजमान थीं ॥ १९ ॥ पितृगण उनके पीठमें और ब्रह्माजी उनके हृदयमें विराजमान हो रहे थे ॥ २० ॥ विमल भूमिदान, गोदान और सुवर्णदान इत्यादि सब पुण्यकर्म उनकी कोखके रोम थे ॥२१॥ और हिमालय, हेमकूट, मन्दर और मेरुपर्वत यह सब उनके अस्थिस्वरूप थे ॥ २२ ॥ वज्र उनकी हथेली और स्वर्ग उनका शरीर था, सन्ध्या और जल वर्षाने वाले मेघसमूह उनकी ग्रीवामें थे ॥ २३ ॥ धाता, विधाता और विद्याधर इत्यादि उनकी दोनों बाँहोंमें विराजमान थे अनन्त वासु

ऊरुद्वयाश्रित्यतस्थातेमन्मथःशिश्नमाश्रितः ॥ विश्वेदेवाःकटीभागेमारुतोबस्तिपार्श्वयोः ॥ १८ ॥ मध्येऽष्टौवसवस्तस्यसमुद्राःकुक्षितःस्थिताः ॥ पार्श्वादिषुदिशःसर्वासर्वसंधिषुमारुतः ॥१९॥ पृष्ठंचभगवान्रुद्रोहृदयंचपितामहः ॥ पितरश्चाश्रिताःपृष्ठंहृदयंचपितामहाः ॥२०॥ गोदानानिपवित्राणिभूमिदानानियानिच ॥ सुवर्णवरदानानिकक्षलोमानुगानिच ॥२१॥ हिमवान्हेमकूटश्चमंदरोमेरुरेवच ॥ नरंतुतंसमाश्रित्यअस्थिभूतान्यवस्थिताः ॥२२॥ पाणिर्वज्रोभवत्तस्यशरीरेद्यौरवस्थिता ॥ कृकाटिकायांसंध्याचजलवाहाश्चयेघनाः ॥२३॥ बाहूधाताविधाताचतथाविद्याधरादयः ॥ शेषश्चवासुकिश्चैवविशालाक्षइरावतः ॥२४॥ कंबलाश्वतरौचोभौकर्कोटकधनंजयौ ॥ सचघोरविषोनागस्तक्षकःसोपतक्षकः ॥२५॥ करजानाश्रिताश्चैवविषवीर्यमुमुक्षवः ॥ अग्निरास्यमभूत्तस्यस्कंधौरुद्रैरधिष्ठितौ ॥२६॥ पक्षमासर्तवश्चैवदंष्ट्रयोरुभयोःस्थिताः ॥ नासेकुहूरमावास्याछिद्रेषुवायवःस्थिताः ॥ २७ ॥ ग्रीवातस्याभवद्देवीवाणीचापिसरस्वती ॥ नासत्यौश्रवणेचोभौनेत्रेचशशिभास्करौ ॥ २८ ॥ वेदांगानिचयज्ञाश्चतारारूपाणियानिच ॥ सुवृत्तानिचवाक्यानितेजांसिचतपांसिच ॥ २९ ॥ एतानिनररूपस्यतस्यदेहाश्रितानिवै ॥ तेनवज्रप्रहारेणलब्धयात्रेणलीलया ॥ ३० ॥ पाणिनापीडितंरक्षोनिपपातमहीतले ॥ पतितंराक्षसंज्ञात्वाविद्राव्यसनिशाचरान् ॥ ३१ ॥

कि, विशालाक्ष, ऐरावत ॥ २४ ॥ कम्बल, अश्वतर, कर्कोट धनञ्जय घोरविष तक्षक और उपतक्षक ॥ २५ ॥ वह सब विषवीर्य उगलनेके लिये उनके हाथोंमें नखोंमें वसते हैं; अग्निउनके मुखमें, रुद्र उनके कन्धोंमें ॥ २६ ॥ और पक्ष, मांस, संवत्सर, व षड्ऋतु उनकी दांतोंकी पंक्तिमें, पूर्णमासी और अमावस उनके नाकके छेदोंमें और समस्त वायु उनके शरीरके छेदोंमें वर्तमान हैं ॥ २७ ॥ देवी वाणी सरस्वती उनकी गर्दन, दोनों अश्विनीकुमार उनके कान सूर्य चन्द्रमा उनके दोनों नयन ॥ २८ ॥ हे राम ! समस्त वेदाङ्ग, यज्ञ तारागण सुवृत्तवचन, तेज और तप यह समस्त ही उन नररूपीकी देहका आश्रय किये हुए हैं ॥ २९ ॥ इसके उपरान्त उस पुरुषने लीलापूर्वक रावणके एक वज्रके समान तमाचा मारा ॥ ३० ॥ उस तमाचेके लगनेसे रावण पृथ्वीपर गिर पडा राक्षस

को गिरा हुआ देख उसके मंत्री सब राक्षस भाग गये ॥ ३१ ॥ ऋग्वेदके समान पर्वतके समान कमल फूलोंकी मालासे भूषित यह महापुरुष इन राक्षसोंको भगाय स्वयं पातालमें प्रवेश कर गये ॥ ३२॥ इसके उपरान्त रावणने अतिशीघ्र उठकर मंत्रियोंको बुलाकर कहा हे प्रहस्त हे शुक सारण इत्यादि मंत्रीगण ! वह पुरुष सहसा कहां चला गया सो बतावो! ॥ ३३ ॥ रावणके यह वचन सुनकर राक्षसोंने कहा देव दानवोंका दर्प हरनेवाला वह इसी स्थानमें प्रवेश कर गया ॥ ३४ ॥ गरुड जिस प्रकार सांपको पकडकर वेगसे गमन करता है वैसेही दुर्गति रावण पराक्रम प्रकाश करके अतिवेगसे बिलके द्वारपर पहुँचा और निर्भय हो उसमें घुस गया ॥ ३५ ॥ जब रावण निर्भय होकर उस बिलके द्वारमें घुसा तब प्रवेश करते हुए वह नीले अंजनके ढेरके समान देखा गया ॥ ३६ ॥ बाजू पहरे लाल मालासे विभूषित लालही अनुलेपनसे रँगे हुए विविध सुवर्ण और रत्नभूषित अलकृत ॥ ३७ ॥ बहुत पुरुषोंको रावणने वहांपर

ऋग्वेदप्रतिमःसोथपद्ममालाविभूषितः ॥ प्रविवेशचपातालंनिजंपर्वतसन्निभः ॥ ३२ ॥ उत्थायचदशग्रीवआहूयसचिवान्स्वयम् ॥ क्वगतः सहसाब्रूतप्रहस्तशुकसारणाः ॥ ३३ ॥ एवमुक्तारावणेनराक्षसास्तेतदाब्रुवन् ॥ प्रविष्टःसनरोऽत्रैवदेवदानवदर्पहा ॥ ३४ ॥ अथसंगृह्यवेगेनग रुत्मानिवपन्नगम् ॥ सतुशीघ्रंबिलद्वारंसंप्रविश्यचदुर्मतिः ॥ ३५ ॥ प्रविवेशचतद्वाररावणोनिर्भयस्तदा ॥ सप्रविश्यचपश्यद्वैनीलांजनचयो पमाम् ॥ ३६ ॥ केयूरधारिणंशूरान्रक्तमाल्यानुलेपनान् ॥ वरहाटकरत्नाद्यैर्विविधैश्चविभूषितान् ॥ ३७ ॥ ददृश्यंतेतत्रनृत्यंत्यस्तिस्रःकोटयो महात्मनाम् ॥ नृत्योत्सवावीतभयाविमलाःपावकप्रभा ॥ ३८ ॥ नृत्यंत्यःपश्यतेतांस्तुरावणोभीमविक्रमः ॥ द्वारस्थोरावणस्तत्रतासुकोटि षुनिर्भयः ॥ ३९ ॥ यथादृष्टःसतुनरस्तुल्यांस्तानपिसर्वशः ॥ एकवर्णानेकवेषानेकरूपान्महोजसः ॥४०॥ चतुर्भुजान्महोत्साहांस्तत्रापश्य त्सराक्षसः ॥ तांस्तुदृष्ट्वादशग्रीवऊर्ध्वरोमाबभूवह ॥ ४१ ॥ स्वयंभुवादत्तवरस्ततःशीघ्रंविनिर्ययौ ॥ अथापश्यत्परंतत्रपुरुषंशयनेस्थितम् ॥ ४२ ॥ पांडुरेणमहार्हेणशयनासनवेश्मना ॥ शेतेसपुरुषस्तत्रपावकेनावगुंठितः ॥ ४३ ॥

देखा कि इस प्रकार तीन करोड भयरहित विमल पावकके समान महात्मा पुरुष बराबर उत्सवमें मन लगाये नाच रहे हैं ॥ ३८ ॥ भयंकर विक्रमकारी रावणने उनको देखकर कुछ भय नहीं किया न डरा परन्तु द्वारपर खडा होकर उनका नाच देखने लगा ॥ ३९॥ रावणने इससे पहले जिस पुरुषको देखा था यह सर्व पुरुषभी सम्पूर्णतः वैसेही थे, एक रंगवाले एक वेषवाले एक रूपवाले महासुन्दर अतितेजस्वी ॥ ४० ॥ चार भुजावाले महा उत्साहसे युक्त ऐसे पुरुषोंको राक्षसने देखा उन पुरुषोंको देखकर रावणके रोम खडे होगये ॥ ४१ ॥ ब्रह्माजीके वरदानके प्रभावसे रावण शीघ्र इस स्थानसे निकल आया । इस के उपरान्त रावणने देखा कि एक और स्थानमें एक और पुरुष सेजपर सोय रहा है ॥ ४२ ॥ उसका गृह सेज और आसन श्वेतवर्ण थे और महा मोलके

थे यह पुरुष अग्निसे मुख ढककर सोरहा था ॥ ४३ ॥ दिव्य माला धारण किये हुए दिव्य गहने पहने हुए दिव्य वसन धारे त्रिलोकीमें एकही सुन्दर बरन् त्रिलोकीका गहना ॥४४॥ कमलपत्र हाथमें लिये त्रिलोक सुन्दरी लक्ष्मीजी देवीके समान बालोंका चँवर करके उसकीएक बगलमें बैठकर दीप्तिमान् हो रही थीं ॥४५॥ परन्तु पातालमें गिरा हुआ राक्षसपति रावण उस श्रेष्ठ हँसने वालीको देखकर सिंहासन पर बैठी हुई साध्वीजीको ग्रहण करनेका अभिलाष करता हुआ ॥ ४६ ॥ मंत्रियोंमेंसे कोई भी रावणके साथ न था तथापि दुर्मति रावण उस समय कामदेवके वशहो हाथसे उनके ग्रहण करनेकी इच्छा करता हुआ ॥४७॥ कोई पुरुष जैसे कालका भेजा हुआ होकर सोते हुए भयंकर विषधर सर्पको जगावे इसके उपारान्त अग्निसे ढके हुए उस सोते हुए महावीर पुरुषने

दिव्यस्रगनुलेपाचदिव्याभरणभूषिता ॥ दिव्यांबरधरासाध्वीत्रैलोक्यस्यैकभूषणम् ॥४४॥ बालव्यजनहस्ताचदेवीतत्रव्यवस्थिता ॥ लक्ष्मी देवीसपद्मावैभ्राजतेलोकसुन्दरी ॥ ४५ ॥ प्रविष्टःसतुलंकेशोदृष्ट्वातांचारुहासिनीम् ॥ जिघृक्षुःसहसासाध्वींसिंहासनसमास्थिताम् ॥ ४६ ॥ विनापिसचिवैस्तत्ररावणोदुर्मतिस्तदा॥ हस्तेग्रहीतुमन्विच्छन्मन्मथेनवशीकृतः ॥ ४७ ॥ सुप्तमाशीविषंयद्वद्रावणःकालनोदितः॥ अथसुप्तो महाबाहुःपावकेनावगुंठितः ॥ ग्रहीतुकामंतंज्ञात्वाव्यपविद्धपटंतदा ॥ ४८ ॥ जहासोच्चैभृशंदेवस्तंदृष्ट्वाराक्षसाधिपम् ॥ ४९ ॥ तेजसासहसा दीप्तोरावणोलोकरावणः ॥ कृत्तमूलोयथाशाखीनिपपातमहीतले ॥ ५० ॥ पतितंराक्षसंज्ञात्वावचनंचेदमब्रवीत् ॥ उत्तिष्ठराक्षसश्रेष्ठमृत्युस्तेनाद्य विद्यते ॥५१॥ प्रजापतिवरोरक्ष्यस्तेनजीवसिराक्षस ॥ गच्छरावणविस्रब्धोनाधुनामरणंतव ॥५२॥ लब्धसंज्ञोमुहूर्तेनरावणोभयमाविशत् ॥ एवमुक्तस्तदोत्थायरावणोदेवकंटकः ॥ ५३ ॥ लोमहर्षणमापन्नोह्यब्रवीत्तंमहाद्युतिम् ॥ कोभवान्वीर्यसंपन्नोयुगांतानलसन्निभः ॥ ५४ ॥

॥ ४८ ॥ रावणके मनकी अभिलाषा जान गले हुए वस्त्र धारण किये राक्षसोंके पति रावणकी ओर देख उठायकर हँस पडे ॥४९॥ वह देख सब लोगोंका रुलाने वाला रावण तेजसे प्रदीप्त हो जड कटे हुए वृक्षके समान एकाएकी पृथ्वीपर गिर पडा॥५०॥ रावणको गिरा हुआ जानकर परमपुरुषने कहा हे राक्षस श्रेष्ठ ! उठो अभी तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी ॥ ५१ ॥ हे राक्षस ! ब्रह्माजीका दिया हुआ वरदान ही तुम्हारा रक्षक है इसी कारण तुम जीवित रहे हो हे रावण ! इस समय तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी सो तुम विश्वास करके चले जाओ ॥५२॥ रावण एक क्षण भरमें चेतना प्राप्त करके भयभीत हुआ इतना कहे जानेपर देवकण्टक रावण उठा ॥ ५३ ॥ रावणके शरीरमें रोमाञ्च हो आया और वह उस महाद्युतिमान् पुरुषसे बोला हे वीर्यवान् ! आप कौन हैं ? हम

देखते हैं कि, आप युगान्तकालके अग्निके समान हैं ॥५४॥ हे देव ! कहिये आप कौन हैं ? आप कहांसे आयकर इस स्थानपर विराजमान् हो ? दुरात्मा रावण करके इस प्रकार कहे जाकर ॥ ५५ ॥ वह देवता हँसकर मेघके समान गंभीर स्वरसे उत्तर देते हुए कि, हे दशग्रीव ! तुम हमें जानकर क्या करोगे ? ॥ ५६ ॥ यह वचन सुन फिर रावण हाथ जोडकर बोला कि ब्रह्माजीसे वरदान पानेके कारण हम नहीं मरे ॥ ५७ ॥ और की तो बातही क्या है देवताओंके बीचमें भी ऐसा कोई नहीं उत्पन्न हुआ और होगा भी नहीं कि, जो अपने वीर्यके बलसे ब्रह्माजीके वरको उलांघ सके ॥ ५८ ॥ ब्रह्माजीका वचन झूठानहीं हो सकता इस विषयमें हमारा आदर भी नहीं है और यत्न भी साधारण है जो हमारे वरको झूठा कर सके ऐसा कोई त्रिलोकीमें नहीं है ॥५९॥ हे सुरश्रेष्ठ ! हम अमर हैं इससे हमें आपका कुछ भय नहीं है; जो कुछ भी हो प्रभो ! जो हमारी मृत्युही हो जाय तो आपके सिवाय किसी दूसरेके हाथसे न हो

ब्रूहित्वंकोभवान्देवकुतोभूत्वाग्यवस्थितः॥एवमुक्तस्ततोदेवोरावणेनदुरात्मा ॥५५॥ प्रत्युवाचहसन्देवोमेघगंभीरयागिरा॥ किंतेमयादशग्रीव वध्योसिनचिरान्मम॥५६॥एवमुक्तोदशग्रीवः प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत्॥प्रजापतेस्तुवचनान्नाहंमृत्युपथंगतः॥५७॥नसजातोजनिष्योवाममतुल्यः सुरेष्वपि॥प्रजापतिवरंयोहिलंघयेद्वीर्यमाश्रितः॥५८॥नतत्रपरिहारोस्तिप्रयत्नश्चापिदुर्बलः॥त्रैलोक्येतंनपश्यामियोमेकुर्याद्वरंवृथा॥५९अमरोऽहंसुरश्रेष्ठतेनमांनाविशद्भयम्॥अथापिचभवेन्मृत्युस्त्वद्धस्तान्नान्यतःप्रभो॥६०यशस्यंश्लाघनीयंचत्वद्धस्तान्मरणंमम॥अथास्यगात्रेसंपश्य द्रावणोभीमविक्रमः॥६१॥तस्यदेवस्यसकलंत्रैलोक्यंसचराचरम्॥आदित्यामरुतःसाध्यावसवोथाश्विनावपि॥६२॥रुद्राश्चपितरश्चैवयमोवैश्रवणस्तथा॥समुद्रागिरयोनद्योवेदाविद्यास्त्रयोग्नयः ॥६३॥ ग्रहास्तारागणाव्योमसिद्धागंधर्वचारणाः॥ महर्षयोवेदविदोगरुडोथभुजंगमाः ॥६४॥ येचान्येदेवतासंघाःसस्थितादैत्यराक्षसाः॥गात्रेषुशयनस्थस्यदृश्यंतेसूक्ष्ममूर्तयः॥६५॥ आहरामोथधर्मात्माह्यगस्त्यंमुनिसत्तमम्॥ द्वीपस्थः पुरुषःकोसौतिस्रःकोटचस्तुकाश्चताः ॥ ६६ ॥ शयानःपुरुषःकोसौदैत्यदानवदर्पहा ॥ रामस्यवचनंश्रुत्वाह्यगस्त्योवाक्यमब्रवीत् ॥ ६७ ॥

॥६०॥ आपके हाथसे मरनाही मेरे लिये यशका देनेवाला और बडाईका करनेवाला है, फिर भयंकर विक्रमकारी रावणने उन महापुरुषके शरीरको देखा ॥६१॥ इन देवतोंके शरीरमें रावणने सब त्रिलोकीको देखा—आदित्यगण, मरुद्गण, साध्यगण, दोनों अश्विनीकुमार ॥६२॥ रुद्रगण, पितृगण, यम, कुबेर, सब समुद्र, सब पर्वत, सब नदी, समस्त वेद, समस्त विद्या, तीनों अग्नि॥६३॥ ग्रहगण, तारागण, आकाश, सिद्धगण, गन्धर्वगण, वेद जाननेवाले महर्षि, गरुड, सर्पगण॥६४॥ व और दूसरे देवता यक्ष दैत्य और राक्षसगण समस्तही उस शयन करते हुए परम पुरुषके शरीरमें सूक्ष्ममूर्तिसे विराजमान थे॥६५॥ यह कथा सुनकर धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजीने अगस्त्यजीसे पूँछा कि आपने जो द्वीपमें विराजमान हुए उस महापुरुषकी कथा कही वह कौन थे? और वह तीन करोड पुरुष भी कौन थे ?॥६६॥ देवतादानवोंका

दर्प हरनेवाले शयन किये हुए वह कौन पुरुष थे? श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर अगस्त्यजी बोले ॥ ६७ ॥ हे सनातन देव! कहता हूँ श्रवण करो, इस द्वीपमें विराजमान महापुरुष कपिलदेवजी थे ॥ ६८ ॥ परन्तु जो समस्त देवता वहांपर नृत्य करते हैं वह सबही उन बुद्धिमान् नरदेव कपिलजीके समान तेज और प्रभावसे युक्त हैं ॥६९॥ हे राम! उन परमपुरुषने पापनिश्चय रावणको क्रोधकी दृष्टिसे नहीं निहारा इसलिये उस कालमें रावण भस्म नहीं हुआ ॥ ७० ॥ पर्वतके समान रावण खिन्न शरीर हो पृथ्वीपर गिर पडा था पिशुन पुरुष जैसे शीघ्रही किसीके भेदको जान जाता है परम पुरुषने भी वैसेही रावणको केवल वचन बाणोंसे भेद डाला ॥७१॥ जो भी हो महातेजस्वी निशाचर रावण बहुत देरके पीछे चेतना पाय अपने मंत्रियोंके साथ जहां विराजमानथा उसी स्थानमें आया ॥ ७२ ॥ (यहां क्षेपकके सर्ग समाप्त हुए) इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥

श्रूयताममभिधास्यामिदेवदेवसनातन ॥ भागवान्कपिलोनामद्वीपस्थोनरउच्यते ॥६८॥ येतुनृत्यंतिवैतत्रस्वरास्तेतस्यधीमतः ॥ तुल्यतेजःप्रभावास्तेकपिलस्यनरस्यवै ॥६९॥ नासौक्रुद्धेनदृष्टस्तुराक्षसःपापनिश्चयः ॥ नबभूवतदातेनभस्मसाद्रामरावणः ॥७०॥ खिन्नगात्रोनरप्रख्योरावणःपतितोभुवि ॥ वाक्छरैस्तंबिभेदाशुरहस्यंपिशुनोयथा ॥ ७१ ॥ अथदीर्घेणकालेनलब्धसंज्ञःसराक्षसः ॥ आजगाममहातेजायत्रतेसचिवाःस्थिताः ॥ ७२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥निवर्तमानःसंहृष्टोरावणःसदुरात्मवान् ॥ जहेपथिनरेंद्रर्षिदेवदानवकन्यकाः ॥ १ ॥ दर्शनीयांहियांरक्षःकन्यांस्त्रींवाथपश्यति ॥हत्वाबंधुजनतस्याविमानेतांरुरोधसः ॥ २ ॥ एवंपन्नगकन्याश्चराक्षसासुरमानुषीः ॥ यक्षदानवकन्याश्चविमानेसोध्यरोपयत ॥ ३ ॥ ताहिसर्वाःसमंदुःखान्मुमुचुर्बाष्पजंजलम् ॥ तुल्यमग्न्यर्चिषांतत्रशोकाग्निभयसंभवम् ॥४॥ ताभिःसर्वाननद्याभिर्नदीभिरिवसागरः ॥ आपूरितंविमानंतद्भयशोकाशिवाश्रुभिः ॥ ५ ॥

इसके उपरान्त जब दुरात्मा रावण लंकाको लौटा तब उस काल मार्गमें हर्षित चित्तसे राजर्षि और देवदानवोंकी कन्याओंको हरण करने लगा ॥ १ ॥ विवाहिता या अविवाहिता जिस किसीकी कन्या व स्त्रीको रावणने रूपवती देखा उसीके बन्धु बान्धवोंका नाश कर रावणने उसको पुष्पक विमानमें रोक रक्खा ॥ २ ॥ इस प्रकारसे राक्षसकन्या, असुरकन्या, मनुष्यकन्या, यक्षकन्या और दानवोंकी पुत्रियोंको रावण विमानपर चढाने लगा ॥ ३ ॥ वह सब कन्यागण शोकसे आर्त होकर महा शोकाग्नि और भयसे उत्पन्न हुए अग्निकी लपट समान गरमआंसुओंका जल त्यागन करने लगी ॥ ४ ॥ जिस प्रकार नदियोंसे समुद्र भरजाता है वैसेही भय और शोकके वश अमंगलसूचक आंसू छोडती हुई सर्वांगसुन्दरी कन्यागणोंसे वह विमान पूर्ण हो गया ॥ ५ ॥

विमानमें सैकडों नागकन्या, गन्धर्वकन्या महर्षिकन्या, दैत्यकन्या और दानवोंकी पुत्रियें रोने लगीं ॥ ६ ॥ यह सब बडे २ केशवाली, सुन्दर देहवाली, पूर्ण मासीके चन्द्रमाके समान मुखवाली, कठोर स्तनवाली, भ्रमरके समान क्षीण कमरवाली ॥ ७ ॥ दोनों नितम्ब रथके दो गुम्मजके समान मनोहर देवकन्याओंके समान तपाये हुए सुवर्णके समान रंगवाली ॥ ८ ॥ शोक दुःख और भयसे त्रासित, विह्वल, श्रेष्ठ कमरवाली कामिनियोंकी श्वासवायुसे पुष्पक विमान मानो सब जगह् प्रदीप्त होगया ॥ ९ ॥ वह पुष्पकविमान अग्निसे विराजमान अग्निहोत्रके समान प्रकाशित होने लगा । रावणको प्राप्त होकर वह शोकाकुल स्त्रियें ॥ १० ॥ दीनमुख होगईं उन श्यामा स्त्रियोंके नेत्रभी सिंहसे सताई मृगीके समान होगये । उनमेंसे कोई २ तो चिन्ता करने लगीं कि, राक्षस हमको

नागगंधर्वकन्याश्चमहर्षितनयाश्चयाः ॥ दैत्यदानवकन्याश्चविमानेशतशोऽरुदन् ॥ ६ ॥ दीर्घकेश्यःसुचार्वंग्यःपूर्णचंद्रनिभाननाः ॥ पीनस्तनटामध्येवज्रवेदिसमप्रभाः ॥ ७ ॥ रथकूबरसंकाशैःश्रोणीदेशैर्मनोहराः ॥ स्त्रियःसुरांगनाप्रख्यानिष्टप्तकनकप्रभाः ॥ ८ ॥ शोकदुःखभयत्रस्ताविह्वलाश्चसुमध्यमाः ॥ तासांनिःश्वासवातेनसर्वतःसंप्रदीपितम् ॥ ९ ॥ अग्निहोत्रमिवाभातिसन्निरुद्धाग्निपुष्पकम् ॥ दशग्रीववशंप्राप्तास्तास्तुशोकाकुलाःस्त्रियः ॥१०॥ दीनवक्त्रेक्षणाःश्यामामृग्यःसिंहवशाइव ॥ काचिच्चिंतयतीतत्रकिंनुमांभक्षयिष्यति ॥ ११ ॥ काचिद्दध्यौसुदुःखार्ताअपिमांमारयेदयम् ॥ इतिमातॄःपितॄन्स्मृत्वाभर्तॄन्भ्रातॄंस्तथैवच ॥१२ ॥ दुःखशोकसमाविष्टाविलेपुःसहिताःस्त्रियः ॥ कथंनुखलुमेपुत्रोभविष्यतिमयाविना ॥ १३ ॥ कथंमाताकथंभ्रातानिमग्नाःशोकसागरे ॥ हाकथंनुकरिष्यामिभर्तुस्तस्मादहंविना ॥ १४ ॥ मृत्योप्रसादयामित्वांनयमांदुःखभागिनीम् ॥ किंनुतद्दुष्कृतंकर्मपुरादेहांतरेकृतम् ॥ १५ ॥ एवंस्मदुःखिताःसर्वाःपतिताःशोकसागरे ॥ नखल्विदानींपश्यामोदुःखस्यास्यांतमात्मनः ॥ १६ ॥

भक्षण कर लेगा ॥ ११ ॥ और कोई २ दुःखसे आर्त होकर विचारने लगीं कि; रावण हमारा नाश कर डालेगा इस प्रकार माता, पिता, भ्राता और स्वामीका स्मरण करके ॥ १२ ॥ समस्त कामिनियें दुःख और शोकसे सताई जाकर विलाप करने लगीं कोई २ कहने लगीं कि हाय ! हमारे विना हमारे पुत्रकी क्या दशा होगी ? ॥ १३ ॥ कोई २ कहने लगीं हाय ! हमारे भइया और अम्मा न जानें हमारे विना कैसे शोकसमुद्रमें डुबे होंगे ? कोई २ कहने लगीं कि स्वामीका वियोग है ॥ १४ ॥ इसलिये हे मौत ! हम तुमको प्रसन्न करती हैं तुम हम दुःखभागिनियोंको ग्रहण करो । पहले जन्ममें दूसरे शरीरसे हमने कोई दुष्कर कार्य किया था ॥१५॥ इसीलिये हम सब दुःखित होकर इस प्रकारके शोकसमुद्रमें डूबीं इस समय हम अपने २ दुःखका अन्त नहीं देखतीं ॥१६॥

अरे ! मनुष्यजातिको धिक्कार है ! मनुष्यके समान और दुर्बल कोईभी नहीं है क्योंकि अतिदुर्बल हमारे स्वामियोंको रावणने मारडाला ॥ १७ ॥ जैसे यथा समयमें सूर्यके निकलनेसे नक्षत्रोंके समूह छिपजाते हैं । हाय ! इस राक्षसका बल अनंत है इसीकारण यह इच्छानुसार शस्त्रघात करता हुआ घूमता है ॥ १८ ॥ कैसी भयंकर बात है, ऐसे दुष्कर्ममें रत होकरभी यह निशाचर अपनेको निन्दित नहीं समझता, जैसा यह दुरात्मा है, इसका विक्रमभी वैसाही है ॥ १९ ॥ परस्त्री गमन करना यह इसकेलिये बडा अयोग्य कर्म है, क्योंकि यह राक्षस परस्त्रियोंके साथ रमण करता है ॥ २० ॥ इस कारण इस दुर्मति राक्षसका स्त्रीके कार्यसेही वध होगा । जैसेही उन पतिव्रता स्त्रियोंने यह वचन उच्चारण किया कि ॥ २१ ॥ स्वर्गमें देवताओंके नगाडे बजने लगे, और

अहोधिङ्मानुषंलोकंनास्तिखल्वधमःपरः ॥ यद्दुर्बलाबलवताभर्तारोरावणेननः ॥१७॥ सूर्येणोदयताकालेनक्षत्राणविनाशिताः ॥ अहोसुबल वद्रक्षोवधोपायेषुरज्यते ॥१८॥ अहोदुर्वृत्तमास्थायनात्मानंवैजुगुप्सते ॥ सर्वथासदृशस्तावद्विक्रमोस्यदुरात्मनः ॥१९॥ इदंत्वसदृशंकर्मपर दाराभिमर्शनम् ॥ यस्मादेषपरक्यासुरमतेराक्षसाधमः ॥२०॥ तस्माद्वैस्त्रीकृतेनैववधंप्राप्स्यतिदुर्मतिः ॥ सतीभिर्वरनारीभिरेवंवाक्येभ्युदी रिते ॥२१॥ नेदुर्दुंदुभयःखस्थाःपुष्पवृष्टिःपपातच ॥ शप्तःस्त्रीभिःसतुसमंहतौजाइवनिष्प्रभः ॥२२॥ पतिव्रताभिःसाध्वीभिर्बभूवविमनाइव ॥ एवंविलपितंतासांश्रृण्वन्राक्षसपुंगवः ॥२३॥ प्रविवेशपुरींलंकांपूज्यमानोनिशाचरैः ॥ एतस्मिन्नंतरेघोराराक्षसीकामरूपिणी ॥२४॥ सहसा पतिताभूमौभगिनीरावणस्यसा ॥ तांस्वसारंसमुत्थाप्यरावणःपरिसांत्वयन् ॥२५॥ अब्रवीत्किमिदंभद्रेवक्तुकामासिमांद्रुतम् ॥ साबाष्प परिरुद्धाक्षीरक्ताक्षीवाक्यमब्रवीत् ॥२६॥ कृतास्मिविधवाराजंस्त्वयाबलवताबलात् ॥ एतेराजंस्त्वयावीर्याद्दैत्याविनिहतारणे ॥२७॥

फूलोंकी वर्षा होने लगी । पतिव्रता स्त्रियोंके शाप देनेसे रावणका पराक्रम हतसा होगया ॥ २२ ॥ और वह उदासभी होगया क्योंकि रावणने समझ लिया कि इन पतिव्रता स्त्रियोंका शाप मिथ्या न होगा । इसप्रकार उनका विलपना कल्पना सुन राक्षसश्रेष्ठ ॥ २३ ॥ निशाचरोंसे पूजित हो लंका नगरीमें प्रवेश करता हुआ इसी अवसरमें घोर राक्षसरूपिणी ॥२४॥ रावणकी बहन उसके सन्मुखही एकाएकी पृथ्वीपर गिर पडी । रावणने उसको समझाय बुझाय कर कहा ॥२५॥ हे भद्रे ! तुम्हारे मनका क्या अभिप्राय है ! अतिशीघ्र हमसे कहो ! फिर वह लाल २ नेत्रवाली निशाचरी आंखोंमें आंसू भरकर उत्तर देती हुई ॥२६॥ हे राजन् ! आप बलवान् हैं; इसलिये बलपूर्वक आपने हमको विधवा किया है हे राजन् ! अपने वीर्यके प्रभावसे संग्राममें दैत्योंका संहार किया ॥ २७ ॥

आपने उन चौदह हजार दैत्योंको मारा जोकि कालकेयके नामसे विख्यात थे। उनमें हमारे प्राणोंसेभी अधिक प्यारे महाबलवान् स्वामी थे ॥ २८ ॥ हे भइया ! आपने शत्रु होकर उनकाभी संहार किया है, इसलिये आप हमारे नाममात्रके भाई हैं, हे भइया ! आपने भइया होकर आपही हमको मारडाला ॥ २९ ॥ सो आपके कारण अब हमको सदा विधवापनकी पीडा भोगनी पडेगी हे राजन् ! बहनोईकी अर्थात् हमारे स्वामीकी संग्राममें रक्षाकरना आपको उचित था ॥ ३० ॥ परन्तु आप स्वयं उसका नाश करके भी नहीं लजाते हैं, जब बहनने विलाप करते २ यह वचन कहे ॥ ३१ ॥ तब रावणने चिकने चुपडे वचनोंसे उसे समझायकर कहा, वत्से ! तुम्हारे रोनेका कुछ काम नहीं तुम बन्धु बान्धव इत्यादि किसीका भय न करो ॥ ३२ ॥ हम दान मान और प्रसन्नतासे यत्नसहित सदा तुम्हें संतोषित किया करेंगे। हे भद्रे ! हमने महवालेपनसे और विक्षिप्त चित्तसे विजयकी अभिलाषा कर बाणोंके जाल छोडे थे

कालकेयाइतिख्याताःसहस्राणिचतुर्दश ॥ प्राणेभ्योपिगरीयान्मेतत्रभर्तामहाबलः ॥२८॥ सोपित्वयाहतस्तातरिपुणाभ्रातृगंधिना ॥ त्वयास्मिनिहताराजन्स्वयमेवहिबंधुना ॥ २९ ॥ राजन्वैधव्यशब्दंचभोक्ष्यामित्वत्कृतेह्यहम् ॥ ननुनामत्वयारक्ष्योजामातासमरेष्वपि ॥ ३० ॥ सत्वयानिहतोयुद्धेस्वयमेवनलज्जसे ॥ एवमुक्तोदशग्रीवोभगिन्याक्रोशमानया ॥३१॥ अब्रवीत्सांत्वयित्वातांसामपूर्वमिदंवचः ॥ अलंवत्सेरुदित्वातेनभेतव्यंचसर्वशः ॥३२॥ दानमानप्रसादैस्त्वांतोषयिष्यामियत्नतः ॥ युद्धप्रमत्तोव्याक्षिप्तोजयकांक्षीक्षिपञ्शरान् ॥३३॥ नाहमज्ञासिषंयुध्यन्स्वान्परान्वापिसंयुगे ॥ जामातरंनजानेस्मप्रहरन्युद्धदुर्मदः ॥३४॥ तेनासौनिहतःसंख्येमयाभर्तातवस्वसः ॥ अस्मिन्कालेतुयत्प्राप्तंतत्करिष्यामितेहितम् ॥३५॥ भ्रातुरैश्वर्ययुक्तस्यखरस्यवसपार्श्वतः ॥ चतुर्दशानांभ्रातातेसहस्राणांभविष्यति ॥३६॥ प्रभुःप्रयाणेदानेचराक्षसानांमहाबलः ॥ तत्रमातृष्वसेयस्तेभ्रातायंवैखरःप्रभुः ॥३७॥ भविष्यतितवादेशंसदाकुर्वन्निशाचरः ॥ शीघ्रंगच्छत्वयंवीरोदंडकान्परिरक्षितुम् ॥३८॥

॥ ३३ ॥ इसलिये उस समय युद्ध करते २ हमने संग्राममें अपना पराया कुछभी नहीं जाना। हे बहन ! हमारा ज्ञान इतना जाता रहाथा कि, हमको कुछ भी ज्ञान नहीं था कि, यह बहनोई है क्योंकि हम युद्धमें उन्मत्त थे ॥३४॥ इसी कारणसे तुम्हारा स्वामी हमसे मारा गया। जो हो इस समय जो तुम्हारा अभिमत है इसकारण हम वही सिद्ध करेंगे ॥ ३५ ॥ इस कारण तुम ऐश्वर्यवान् भ्राता खरके निकट सदा वास करो। तुम्हारा महाबलवान् भ्राता खर चौदह हजार राक्षसोंका स्वामी होगा ॥३६॥ उसका स्वामीपन यात्रासमय व दानके समयमेंभी बना रहेगा, तुम्हारा मौसेरा भाई यह खर ॥ ३७ ॥ निशाचर खर सदाही तुम्हारी आज्ञामें रहेगा, इस कारण यह वीर खर अतिशीघ्र दंडक वासियोंकी रक्षा करनेके लिये जाय ॥ ३८ ॥

दूषण नामक महाबली इसका सेनापति होगा, वहांपर परम शूर खर सदा तुम्हारी बात माना करेगा ॥ ३९ ॥ और यही कामरूपी राक्षसोंका अधीश्वर होगा, इतना कह रावणने सेनाको खरके संग रहनेके अर्थ आज्ञा दी ॥ ४० ॥ चौदह हजार बलवीर्ययुक्त घोर सब राक्षसोंके संग करके जानेको आज्ञा हुई ॥ ४१ ॥ खर शीघ्रही भय विहीन होकर दंडकारण्यमें आगया, और वहांपर निष्कंटक राज्य स्थापित करता हुआ और शूर्पणखा भी दंडकारण्यमें वास करने लगी ॥४२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० उत्तरकांडे भाषायां चतुर्विंशः सर्गः ॥२४॥ खरको वह भयंकर सेना देकर और बहनको समझाय बुझाय रावण हर्षितचित्त अत्यन्त सावधान हुआ ॥१॥ फिर वह बलवान् राक्षस रावण अपने मंत्रियोंके साथ निकुम्भिला नामक लंकाके उत्तम उपवनमें गया ॥२॥

दूषणोस्यबलाध्यक्षोभविष्यतिमहाबलः ॥ तत्रतेवचनंशूरःकरिष्यतितदाखरः ॥३९॥ रक्षसांकामरूपाणांप्रभुरेषभविष्यति॥एवमुक्त्वादशग्रीवः सैन्यमस्यादिदेशह ॥४०॥ चतुर्दशसहस्राणिरक्षसांवीर्यशालिनाम् ॥ स तैःपरिवृतांसर्वैराक्षसैर्घोरदर्शनैः ॥४१॥ आगच्छतखरःशीघ्रंदंडकानकुतोभयः॥सतत्रकारयामासराज्यंनिहतकंटकम्॥साचशूर्पणखातत्रन्यवसद्दंडकेवने॥४२॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येच० सा०उत्तरकांडे चतुर्विंशः सर्गः॥२४॥सतुदत्त्वादशग्रीवोबलंघोरंखरस्यतत्॥भगिनींचसमाश्वास्यहृष्टःस्वस्थतरोभवत् ॥१॥ ततोनिकुंभिलानामलंकोपवनमुत्तमम्॥तद्राक्षसेंद्रोबलवान्प्रविवेशसहानुगः॥२ततोयूपशताकीर्णसौम्यचैत्योपशोभितम्॥ददर्शविष्ठितंयज्ञंश्रियासंप्रज्वलन्निव ॥ ३ ॥ ततःकृष्णाजिनधरंकमंडलुशिखाध्वजम्॥ददर्शस्वसुतंतत्रमेघनादंभयावहम्॥४॥ तंसमासाद्यलंकेशःपरिष्वज्याथबाहुभिः ॥ अब्रवीत्किमिदंवत्सवर्तसेब्रूहितत्त्वतः ॥५॥ उशनात्वब्रवीत्तत्रयज्ञसंपत्समृद्धये ॥ रावणंराक्षसश्रेष्ठंद्विजश्रेष्ठोमहातपाः॥६॥ अहमाख्यामितेराजञ्श्रूयतांसर्वमेवतत॥यज्ञास्तेसप्तपुत्रेणप्राप्तास्तेबहुविस्तराः॥७॥अग्निष्टोमोश्वमेधश्चयज्ञोबहुसुवर्णकः॥ राजसूयस्तथायज्ञोगोमेधोवैष्णवस्तथा॥८॥

रावणने शोभासे शोभितहो वहां जाकर देखा कि, सुन्दर देवग्रहसे शोभायमान शतखंभोंसे युक्त मंडपमें अति प्रकाशित यज्ञ हो रहा था ॥ ३॥ फिर मृगचर्म धारण किये दंडकमंडलु लिये भयंकर अपने पुत्र मेघनादको भी रावणने वहां देखा ॥४॥ लंकापति रावणने बीसों भुजा फैलाय मेघनादको हृदयसे लगाकर कहा; हे वत्स ! तुमने यह कौन कार्य आरंभ किया है ? सो हमसे कहो॥५॥ तब महातपस्वी द्विजश्रेष्ठ शुक्राचार्यजी यज्ञकी सम्पत्ति बढानेके लिये राक्षसराज रावणसे बोले ॥ ६॥ हे राजन् ! हम समस्त वृत्तान्त वर्णन करते हैं आप श्रवण करें; आपका पुत्र बहुत विस्तारित प्रसिद्ध सात यज्ञोंके फलको प्राप्त हुआ है ॥ ७ ॥ उसमें अग्निष्टोम, अश्वमेध, बहुसुवर्णक, राजसूय, गोमेध और वैष्णव यज्ञ समाप्त हो गया है॥ ८ ॥

और समस्त पुरुषोंको अतिदुर्लभ महेश्वर यज्ञका अनुष्ठान इस समय हो रहा है इसके पूरा होनेसे आपके पुत्रने इसी स्थानमें साक्षात् पशुपति महादेवजीसे बहुत वर प्राप्त किये हैं ॥९॥ हे रावण ! आकाशमें चलने वाला अविनाशी कामगामी दिव्य रथ और तामसी नाम माया इसने पाई है जिस मायासे अन्धकार हो आता है ॥१०॥ हे राक्षसेश्वर ! यह माया संग्राममें छोड देनेसे सुर या असुर कोई भी इसकी गतिको जाननेमें समर्थ न होंगे ॥११॥ हे राजन् ! इसके सिवाय मेघनादने बाणोंसे भरा हुआ अक्षय तरकश, अजीत धनुष और संग्राममें शत्रुओंका नाश करने वाला बलवान् अस्त्र भी पाया है ॥ १२ ॥ हे दशानन ! तुम्हारे इस पुत्रने आज यज्ञकी समाप्तिके समय यह समस्त वरदान पाये हैं उसके पीछे हम और यह दोनों ही आपका दर्शन करनेके लिये यहां ठहरे हुए हैं ॥१३॥ यह वचन सुन रावणने कहा पुत्र ! इस प्रकारका कार्य करना तुमको शोभा नहीं देता कारण कि तुमने विविध उपकार द्वारा हमारे शत्रु

माहेश्वरेप्रवृत्तेतुयज्ञेपुंभिःसुदुर्लभे ॥ वरांस्तेलब्धवान्पुत्रःसाक्षात्पशुपतेरिह ॥९॥ कामगंस्यंदनंदिव्यमंतरिक्षचरंध्रुवम् ॥ मायांचतामसींनामयया संपद्यतेतमः ॥ १० ॥ एतयाकिलसंग्रामेमाययाराक्षसेश्वर ॥ प्रयुक्तयागतिःशक्यानहिज्ञातुंसुरासुरैः ॥११॥ अक्षयाविषुधीबाणैश्चापंचापिसुदुर्जयम् ॥ अस्त्रंचबलवद्राजञ्छत्रुविध्वंसनंरणे ॥ १२ ॥ एतान्सर्वान्वराँल्लब्ध्वापुत्रस्तेऽयंदशानन ॥ अद्ययज्ञसमाप्तौचत्वांदिदृक्षन्स्थितोह्यहम् ॥१३॥ ततोऽब्रवीद्दशग्रीवोनशोभनमिदंकृतम् ॥ पूजिताःशत्रवोयस्माद्द्रव्यैरिंद्रपुरोगमाः ॥ १४ ॥ एहीदानींकृतंयद्धिसुकृतंतन्नसंशयः ॥ आगच्छसौम्यगच्छामःस्वमेवभवनंप्रति ॥१५॥ ततोगत्वादशग्रीवःसपुत्रःसविभीषणः ॥ स्त्रियोवतारयामाससर्वास्ताबाष्पगद्गदाः ॥ १६ ॥ लक्षिण्योरत्नभूताश्चदेवदानवरक्षसाम्॥तस्यतासुमतिंज्ञात्वाधर्मात्मावाक्यमब्रवीत्॥१७॥ ईदृशैस्त्वंसमाचारैर्यशोऽर्थकुलनाशनैः ॥ धर्षणंप्राणिनांज्ञात्वास्वमतेनविचेष्टसे॥१८॥ ज्ञातींस्तान्धर्षयित्वेमास्त्वयानीतावरांगनाः ॥ त्वामतिक्रम्यमधुनाराजन्कुंभीनसीहृता॥ १९ ॥

इन्द्रादि देवताओंकी भी पूजा की है ॥१४॥ अच्छा जो किया सो अच्छा किया इसमें कुछ संदेह नहीं कि इस कार्यके करनेसे पुण्यही होगा. हे सौम्य ! आओ इस समय हम अपने गृहमें चलें ॥१५॥ फिर रावण विभीषण और अपने पुत्रके सहित अपने स्थानमें जाय उन रोदन करती हुई स्त्रियोंको पुष्पक विमानपरसे उतारता हुआ ॥१६॥ वह सुलक्षणवाली स्त्रियें देव दानव और राक्षसोंकी रत्नस्वरूप थीं उन सब स्त्रियोंपर रावणका बुरा अभिप्राय जान धार्मात्मा विभीषणजीने कहा ॥१७॥ इस कार्यके करनेसे पाप होता है यह सब आप जानकर भी इच्छानुसार क्यों ऐसे आचरणसे यश-अर्थ-कुल नाशकर कार्य करके प्राणियोंको सताते फिरते हो ॥ १८ ॥ आप इन सब जातियोंको पीडा दे इन श्रेष्ठ स्त्रियोंको हरण कर लाये हो परन्तु हे राजन् ! आपको कुछ न समझकर

मधुनामक राक्षस कुम्भीनसीको हरण कर ले गया है ॥१९॥ रावणने कहा कि हम नहीं कह सकते कि तुम क्या कहते हो विशेष करके जिसको तुम मधु नामसे पुकारते हो वह कौन है ? ॥२०॥ तब विभीषणने क्रोध करके अपने भ्रातासे कहा कि सुनो ! पर स्त्रीहरणरूप आपके इस पाप कार्यका फल आय पहुँचा है ॥२१॥ यम लोगोंके नाना सुमालीके बडे भ्राता माल्यवान् नाम विख्यात पंडित एक वृद्ध निशाचर है ॥२२॥ वह हमारी माताके बडे तात और हमारे नाना हैं उनकी बेटीका नाम अनला, और उन अनलाकी बेटीका नाम कुम्भीनसी हुआ ॥२३॥ वह कुम्भीनसी हमारी मौसीकी बेटी है यह अनलाकी पुत्री धर्मानुसार हम सब भ्राताओंकी बहन हैं ॥२४॥ इससे हे राजन् आपका पुत्र मेघनाद तो यज्ञ कर रहा था और हम तप करनेके लिये जलमें स्थित थे, उस समय वह बलवान् राक्षस उस कुम्भीनसीको हरण करके ले गया ॥ २५ ॥ हे महाराज ! विशेष करके कुम्भकर्णभी उस समय सोय रहा था, सो प्रसिद्ध

रावणस्त्वब्रवीद्वाक्यंनावगच्छामिकिंत्विदम् ॥ कोयंयस्तुत्वयाख्यातोमधुरित्येवनामतः ॥२०॥ विभीषणस्तुसंक्रुद्धोभ्रातरंवाक्यमब्रवीत् ॥ श्रूयतामस्यपापस्यकर्मणःफलमागतम् ॥२१॥मातामहस्ययोस्माकंज्येष्ठोभ्रातासुमालिनः॥माल्यवानितिविख्यातोवृद्धःप्राज्ञोनिशाचरः॥२२॥ पिताज्येष्ठोजनन्यानोह्यस्माकंचार्यकोभवत् ॥ तस्यकुंभीनसीनामदुहितुर्दुहिताऽभवत् ॥२३॥ मातृष्वसुरथास्माकंसाचकन्यानलोद्भवा ॥ भवत्यस्माकमेवैषाभ्रातृणांधर्मतःस्वसा ॥२४॥ साहृतामधुनाराजन्राक्षसेनवलीयसा ॥ यज्ञप्रवृत्तेपुत्रेतुमयिचांतर्जलोपिते ॥२५॥ कुंभकर्णे महाराजनिद्रामनुभवत्यथ॥ निहत्यराक्षसश्रेष्ठानमात्यानिहसंमतान् ॥ २६ ॥ धर्षयित्वाहृताराजन्गुप्ताप्यंतःपुरेतव ॥ श्रुत्वापितन्महाराज क्षांतमेवहतोनसः ॥२७॥ यस्मादवश्यंदातव्याकन्याभर्त्रेहिभ्रातृभिः ॥ तदेतत्कर्मणोह्यस्यफलंपापस्यदुर्मते ॥२८॥ अस्मिन्नेवाभिसंप्राप्तंलोकेविदितमस्तुते ॥ विभीषणवचःश्रुत्वाराक्षसेंद्रःसरावणः ॥२९॥ दौरात्म्येनात्मनोद्धूतस्तप्ताम्भाइवसागरः ॥ ततोऽब्रवीद्दशग्रीवःक्रुद्धःसंरक्तलोचनः ॥ ३० ॥ कल्प्यतांमेरथःशीघ्रंशूराःसज्जीभवंतुनः ॥ भ्रातामेकुंभकर्णश्चयेचमुख्यानिशाचराः ॥ ३१ ॥

राक्षसश्रेष्ठ मंत्रियोंको मारकर ॥२६॥ आपके अंतःपुरमें रक्षित हुई कुम्भीनसीको बलपूर्वक हरण करके लेगया। हे महाराज ! यह समाचार सुनकर भी उसको न मारकर हमने उसे क्षमाही किया ॥२७॥ क्योंकि कुमारी बहनको अवश्य व्याह देना भ्राताओंका कर्तव्य है सो नहीं हुआ। हे दुर्मते यह बात इन तुम्हारे ही दुष्कर्मोंसे हुई ॥ २८ ॥ सो तुमको इसी लोकमें इस कन्याहरणरूप पापका फल मिल गया सो इसको आप जानें. वह राक्षसोंका राजा रावण विभीषण जीके ऐसे वचन सुन ॥२९॥ गरम जलसे पूर्ण समुद्रके खलबलानेके समान अपने किये दौरात्म्यसे पीडितहो अत्यन्त संतापित हुआ, फिर रावणने क्रोधके मारे लाल नेत्र कर कहा॥३०॥हमारा रथ शीघ्र तैयार करो और हमारी सेनाके शूर भी सजाये जायँ, हमारा भ्राता कुंभकर्ण व मुख्य २ निशाचरगण॥३१॥

अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र लेकर सवारियोंपर चढ, आप हम संग्राममें रावणसे निर्भय उस मधुको मार डालेंगे ॥३२॥ और फिर बन्धु बान्धवोंके साथ जयकी अभिलाषासे देवलोकको जायँगे; प्रधान २ चार हजार अक्षौहिणी राक्षस आगे २ ॥३३॥ अनेक प्रकारके हथियार लिये युद्ध करनेकी कांक्षासे चले, मेघनाद सब सेनापतियोंको संग ले आगे चला ॥ ३४ ॥ रावण बीचमें और कुंभकर्ण पीछे २ हुआ जो उस दिन जाग उठा था, केवल वह धर्मात्मा विभीषणजीही लंकामें रहकर धर्माचरण करने लगे ॥ ३५ ॥ और बाकी बचे बचाये सब महाभाग राक्षस, नाग, गधे, शिशुमार, ऊँट और द्युतिमान् घोडोंपर सवार मधुपुरकी ओर चले ॥ ३६ ॥ अधिक क्या कहें वह समस्त राक्षस आकाशको संपूर्णतः ढककरही जाने लगे, उनमें सैकडों राक्षस देवताओंसे वैर किये हुए

वाहनान्यधिरोहंतुनानाप्रहरणायुधाः ॥ अद्यतंसमरेहत्वामधुंरावणनिर्भयम् ॥३२॥ सुरलोकंगमिष्यामियुद्धाकांक्षीसुहृद्वृतः ॥ अक्षौहिणीसहस्राणिचत्वार्यग्र्याणिरक्षसाम् ॥३३॥ नानाप्रहरणान्याशुनिर्ययुर्युद्धकांक्षिणाम् ॥ इंद्रजित्त्वग्रतःसैन्यात्सैनिकान्परिगृह्यच ॥३४॥ जगामरावणोमध्येकुंभकर्णश्चपृष्ठतः ॥ विभीषणश्चधर्मात्मालंकायांधर्ममाचरन् ॥ ३५ ॥ शेषाःसर्वेमहाभागाययुर्मधुपुरंप्रति ॥ खरैरुष्ट्रैर्हयैर्दीप्तैः शिशुमारैर्महोरगैः ॥३६॥ राक्षसाःप्रययुःसर्वेकृत्वाकाशंनिरंतरम् ॥ दैत्याश्चशतशस्तत्रकृतवैराश्चदैवतैः ॥ ३७ ॥ रावणंप्रेक्ष्यगच्छंतमन्वगच्छन्हिपृष्ठतः ॥ सतुगत्वामधुपुरंप्रविश्यचदशाननः ॥ ३८ ॥ नददर्शमधुंतत्रभगिनींतत्रदृष्टवान् ॥ साचप्रह्वांजलिर्भूत्वाशिरसाचरणौगता ॥ ३९ ॥ तस्यराक्षसराजस्यत्रस्ताकुंभीनसीतदा ॥ तांसमुत्थापयामासनभेतव्यमितिब्रुवन् ॥४०॥ रावणोराक्षसश्रेष्ठःकिंचापिकरवाणिते ॥ साब्रवीद्यदिमेराजन्प्रसन्नस्त्वंमहाभुजः ॥ ४१ ॥ भर्तारंनममेहाद्यहंतुमर्हसिमानद ॥ नहीदृशंभयंकिंचित्कुलस्त्रीणामिहोच्यते ॥ ४२ ॥ भयानामपिसर्वेषांवैधव्यंव्यसनंमहत् ॥ सत्यवाग्भवराजेंद्रमामवेक्षस्वयाचतीम् ॥ ४३ ॥

॥३७॥ रावणको युद्धमें जाता हुआ देखकर उनके पीछे २ गमन करने लगे, तब रावण जायकर मधुपुरमें पहुँचा ॥३८॥ परन्तु उसने वहां मधुको न देखकर अपनी बहनको देखा, वह हाथ जोड कांपती हुई शीश नवाय चरणपर गिरी ॥३९॥ वह कुम्भीनसी जब इस प्रकार राक्षसराजके चरणोंपर गिरी, तब रावणने उसे उठाकर कहा कि, तुमको कुछ भय नहीं है ॥४०॥ हम राक्षसश्रेष्ठ रावण हैं, अधिक करके बताओ कि हम तुम्हारा क्या करें ! वह बोली हे महाभुज राजन् ! जो आप हमारे ऊपर प्रसन्न हुए हो ॥४१॥ तो अब हमारे स्वामीका आप संहार न करें कहा है कि, संसारमें कुलवान् स्त्रियोंके लिये ऐसा कुछभी भय नहीं है ॥ ४२ ॥ सब विपद्से अधिक बडी यह विधवापनकीही विपद् बडी है । हे राजेंद्र ! आपने जो कहा है उसको सत्य कीजिये ॥ ४३ ॥

कारण कि हे महाराज ! आपने स्वयंही मुझसे कहा है कि, तुमको कुछ भय नहीं है, तब रावण हर्षित होकर सामने खडी हुई अपनी मौसेरी बहनसे बोला ॥४४॥ तुम्हारा स्वामी कहां है इनको शीघ्र बताओ। हम जयकी कामनासे उसके साथ सुरलोकको जायँगे ॥ ४५ ॥ तुम्हारे प्रति करुणाके मारे और तुम्हारी सुहृद्‌ताके वश हो हमने मधुके मारनेकी इच्छाको छोड दिया, यह वचन सुनकर कुंभीनसीने अपन सोते हुए स्वामीको जगाय ॥४६॥ हर्षितहो उससे कहा, हमारे भइया महाबलवान रावण यहां पर आये हैं ॥ ४७ ॥ वह सुरलोकके जीतनेकी अभिलाषा करके अपनी सहायता करनेके निमित्त वरण करते हैं, सो हे स्वामी ! तुम बन्धु बान्धवोंके साथ उनकी सहायता करनेको जाओ ॥४८॥ हमको देखतेहो स्नेहके वशहो उन्होंने तुमको अपना बहनोई मान लिया

त्वयाप्युक्तंमहाराजनभेतव्यमितिस्वयम् ॥ रावणस्त्वब्रवीद्‌धृष्टः स्वसारंतत्रसंस्थिताम् ॥४४॥ क्वचासौतवभर्तावैममशीघ्रनिवेद्यताम् ॥ सहतेन गमिष्यामिसुरलोकंजयायहि ॥४५॥ तवकारुण्यसौहार्दान्निवृत्तोस्मिमधोर्वधात ॥ इत्युक्तसासमुत्थाप्यप्रसुप्तंतंनिशाचरम् ॥४६॥ अब्रवी त्संप्रहृष्टेवराक्षसीसापतिंवचः ॥ एषप्राप्तोदशग्रीवोममभ्रातामहाबलः ॥ ४७ ॥ सुरलोकजयाकांक्षीसाहाय्येत्वांवृणोतिच ॥ तदस्यत्वंसहा यार्थंसबंधुर्गच्छराक्षस॥ ४८ ॥ स्निग्धस्यभजमानस्ययुक्तमर्थायकल्पितुम् ॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाथेत्याहमधर्वचः ॥ ४९ ॥ ददर्शराक्षस श्रेष्ठंयथान्यायमुपेत्यसः ॥ पूजयामासधर्मेणरावणंराक्षसाधिपम् ॥ ५० ॥ प्राप्यपूजांदशग्रीवोमधुवेश्मनिवीर्यवान् ॥ तत्रचैकांनिशामुष्य गमनायोपचक्रमे ॥ ५१ ॥ ततःकैलासमासाद्यशैलंवैश्रवणालयम् ॥ राक्षसेंद्रोमहेंद्राभःसेनामुपनिवेशयत् ॥ ५२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा० उत्तरकांडे पंचविंशःसर्गः ॥ २५ ॥ सतुतत्रदशग्रीवःसहसैन्येनवीर्यवान् ॥ अस्तंप्राप्तेदिनकरेनिवासंसम रोचयत्॥ १ ॥ उदितेविमलेचंद्रेतुल्यपर्वतवर्चसि ॥ प्रसुप्तंसुमहत्सैन्यंनानाप्रहरणायुधम् ॥ २ ॥

है इसलिये उनका कार्य सिद्ध करनेके लिये सहायता करना उचित है; उसके यह वचन सुन निशाचर मधुने कहा कि हम अवश्यही उनकी सहायता करेंगे ॥ ४९ ॥ उसके पीछे मधुने राक्षसश्रेष्ठ रावणके दर्शन कर उपचारके सहित निकट जाय धर्मानुसार राक्षसोंके स्वामी रावणकी पूजा की ॥ ५० ॥ वीर्यवान् रावण मधुके स्थानमें सम्मान पाय वहां एक रात्रि रहनेकी इच्छा करता हुआ ॥५१॥ फिर इन्द्रके समान राक्षसोंका राजा रावण कुबेरके वासस्थान कैलास पर्वतके शिखरपर जाय वहां सेनाकी छावनी डालता हुआ ॥ ५२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां पंचविंशः सर्गः ॥ २५ ॥ जब सूर्यभगवान् छिपगये तब वीर्यवान् रावण सेनाके सहित वहांपर बसता हुआ ॥१॥ इसके पीछे जब इसी कैलासपर्वतके समान श्वेतवर्णके विमल निशानाथ

[चंद्रमा] उदय हुए, तब अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र धारण किये हुए यह बडी भारी सेना सोयगई ॥ २ ॥ उस समय महावीर्यवान् रावण पर्वतके शिखरपर शयन करके चन्द्रमाके किरणोंके जालसे शोभायमान कामिनियोंकी भोगने योग्य पहाडी शोभा देखने लगा ॥ ३ ॥ दीप्तिमान् कर्णिकारके वन; कदंब और बकुलके वृक्षोंकी कतार खिले हुए कमल फूलोंका वन और मंदाकिनीका जल ॥ ४ ॥ चंपा, अशोक, पुन्नाग, आम, पाटल, लोध, प्रियंगु, अर्ज्जुन, केतकी ॥५॥ तगर, नारियल, चिरौंजी, पनस इत्यादिकोंसे वह वन शोभायमान हो रहाथा ॥ ६ ॥ ऐसे शोभायमान वनमें मधुर शब्द करनेवाले किन्नर कामदेवकी व्यथासे व्यथितहो अनुरागके वशहो अपने २ जोडेके साथ अपनी प्रसन्नताको बढानेवाला गाना कर रहे हैं ॥७॥ और मदके वश होनेके कारण जिनके

रावणस्तुमहावीर्योनिषण्णःशैलमूर्धनि ॥ सददर्शगुणांस्तत्रचंद्रपादपशोभितान् ॥ ३ ॥ कर्णिकारवनैर्दीप्तैःकदंबबकुलैस्तथा ॥ पद्मिनीभिश्च फुल्लाभिर्मंदाकिन्याजलैरपि ॥४॥ चंपकाशोकपुन्नागमंदारतरुभिस्तथा ॥ चूतपाटललोध्रैश्चप्रियंग्वर्जुनकेतकैः ॥ ५ ॥ तगरैर्नारिकेरैश्चप्रिया लपनसैस्तथा ॥ एतैरन्यैश्चतरुभिरुद्भासितवनांतरे ॥ ६ ॥ किन्नरामदनेनार्तारक्तामधुरकंठिनः ॥ समंसंप्रजगुर्यत्रमनस्तुष्टिविवर्धनम् ॥७॥ विद्याधरामदक्षीबामदरक्तांतलोचनाः ॥ योषिद्भिःसहसंक्रांताश्चिक्रीडुर्जहृषुश्चवै ॥८॥ घंटानामिवसन्नादःशुश्रुवेमधुरस्वनः ॥ अप्सरोगण संघानांगायतांधनदालये ॥ ९ ॥ पुष्पवर्षाणिमुंचंतोनगाःपवनताडिताः ॥ शैलंतंवासयंतीवमधुमाधवगंधिनः ॥ १० ॥ मधुपुष्परजःपृक्तंगंध मादायपुष्कलम् ॥ प्रववौवर्धयन्कामंरावणस्यसुखोऽनिलः ॥ ११ ॥ गेयात्पुष्पसमृद्ध्याचशैत्याद्वायोर्गिरेर्गुणात् ॥ प्रवृत्तायांरजन्यांच चंद्रस्योदयनेनच ॥ १२ ॥ रावणःसमहावीर्यःकामस्यवशमागतः ॥ विनिःश्वस्यविनिःश्वस्यशशिनंसमवैक्षत ॥ १३ ॥

नेत्रोंसे कोये लाल हो गये हैं ऐसे मदोन्मत्त विद्याधरलोग भी अपनी २ स्त्रियोंके साथ मिलकर हर्षित हो क्रीडा कर रहे हैं ॥ ८ ॥ कुबेरके मंदिरमें जाती हुई अप्सराओंके झुण्डका मधुर स्वर घंटेके नादके समान सुनाई आने लगा ॥ ९ ॥ वृक्ष पवनके झोकोंसे चलायमान हो पुष्पवर्षण करते हुए वसन्त समयके सब जातिवाले पुष्पोंकी सुगन्धिसे उस पर्वतको सुगन्धित करने लगे ॥ १० ॥ सुख देनेवाला समीर; मधु और परागसे मिली हुई सुगन्धिको ग्रहणकर रावणके कामको बढाय सुन्दररूपसे बहने लगा ॥ ११ ॥ रात्रिके होनेपर चन्द्रमा उदित हुआ, तब गाने और पुष्पोंकी बढती होनेसे पवनकी शीतलता व पर्वतके गुणसे ॥ १२ ॥ महावीर्यवान् राक्षसराज रावण कामदेवके वशही वारंवार लम्बे लम्बे श्वास ले चन्द्रमाको देखने लगा ॥ १३ ॥

इसी अवसरमें दिव्य वस्त्र और भूषणोंसे भूषित सर्व अप्सराओंमें श्रेष्ठ पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान रंभा ॥ १४ ॥ जाय रही थी, इसके सब अंगोंमें चन्दन लग रहा था, उसके बालोंमें कल्पवृक्षके फूल गुँध रहे थे, दिव्य उत्सवके लिये शीघ्रतासे जाय रही थी ॥ १५ ॥ मनोहर नेत्र, कठोर कुच; पायजेब पहरे, सुन्दर जाँघोंके ऊपरका अंग व मनोहर जांघें धारण किये ॥ १६ ॥ और छहों ऋतुके उत्पन्न हुए फूलोंसे बने हुए अनेक गहने पहने रंभा कान्ति, श्री और कीर्तिमें दूसरी लक्ष्मीके समान प्रकाशमान थी ॥ १७ ॥ और सजल जलधरकी नाईं नील वस्त्र धारण किये थी; उसका वदन चन्द्रमाके समान, दोनों भौंहैं सुन्दर धनुषके समान थीं ॥ १८ ॥ जांघैं हाथीकी शुण्डके समान और दोनों हाथ पत्तोंसे भी अधिक कोमल थे, ऐसी रम्भा सेनाके बीचमें होकर जा

एतस्मिन्नंतरेतत्रदिव्याभरणभूषिता ॥ सर्वाप्सरोवरारंभापूर्णचंद्रनिभानना ॥१४॥ दिव्यचंदनलिप्तांगीमंदारकृतमूर्धजा ॥ दिव्योत्सवकृतारंभादिव्यपुष्पविभूषिता ॥१५॥ चक्षुर्मनोहरंपीनंमेखलादामभूषितम् ॥ समुद्वहंतीजघनंरतिप्राभृतमुत्तमम् ॥ १६ ॥ कृतैर्विशेषकैरार्द्रैःषडर्तुकुसुमोद्भवैः ॥ बभावन्यतमेवश्रीःकांतिश्रीद्युतिकीर्तिभिः ॥ १७ ॥ नीलंसतोयमेघाभंवस्त्रंसमवगुंठिता ॥ यस्याबक्रंशशिनिभंभ्रुवौचापनिभेशुभे ॥ १८ ॥ ऊरूकरिकराकारौकरौपल्लवकोमलौ ॥ सैन्यमध्येनगच्छंतीरावणेनोपलक्षिता ॥ १९ ॥ तांसमुत्थायगच्छंतींकामबाणवशंगतः॥ करेगृहीत्वालज्जंतींस्मयमानोभ्यभाषत ॥ २० ॥ क्वगच्छसिवरारोहेकांसिद्धिंभजसेस्वयम् ॥ कस्याभ्युदयकालोऽयंयस्त्वांसमुपभोक्ष्यते ॥ २१ ॥ त्वदाननरसस्याद्यपद्मोत्पलसुगंधिनः ॥ सुधामृतरसस्येवकोऽद्यतृप्तिंगमिष्यति ॥ २२ ॥ स्वर्णकुंभनिभौपीनौशुभौभीरुनिरंतरौ ॥ कस्योरःस्थलसंस्पर्शंदास्यतस्तेकुचाविमौ ॥ २३ ॥सुवर्णचक्रप्रतिमंस्वर्णदामचितंपृथु ॥ अध्यारोक्ष्यतिकस्तेऽद्यजघनंस्वर्गरूपिणम् ॥ २४॥

रही थी कि, उसको रावणने देखा, ॥ १९ ॥ तब रावण कामके वश हो उठ शरमाई हुई रंभाका हाथ पकड कुछ एक हँसकर बोला ॥२०॥ हे सुन्दरि ! तुम कहां जाती हो ? तुम किसकी भोगवासना सिद्ध करोगी, किस पुरुषका अभ्युदय समय आय पहुँचा है, कि जो तुम्हारे साथ भोग करेगा ? ॥ २१ ॥ कमलके समान सुगन्धियुक्त, अमृत और मधुके समान तुम्हारे अधरामृतसे आज कौन तृप्त होगा ? ॥ २२ ॥ हे भीरु ! तुम्हारे सुन्दर बडे २ दोनों कुच सुवर्णके कलशोंके समान मोटे होकर परस्पर ऐसे सट गये हैं कि, उनमें कुछ भी अन्तर नहीं है सो वह दोनों कुच आज किसके हृदयसे लगेंगे ? ॥ २३ ॥ तुम्हारे जघन सुवर्णके चक्रके समान गोल और बडे हैं विशेष करके इनमें सुवर्णकी तगडी पडी है, इस कारण स्वर्गके समान अत्यन्त सुखके हेतु इस तुम्हारे

श्रोणीतट (पेडू) पर आज कौन चढेगा ? ॥ २४ ॥ हे भीरु ! इन्द्र, विष्णु या अश्विनीकुमार कोई भी हो आजकल कोई पुरुष भी हमसे श्रेष्ठ नहीं है तो भी तुम हमको छोडे जाती हो यह अच्छा नहीं करती ॥ २५ ॥ हे बडे नितम्बवाली ! आओ शोभायमान शिलापर विश्राम करो; हमारे सिवाय त्रिलोकीमें और कोई स्वामी विद्यमान नहीं है ॥ २६ ॥ जो त्रिलोकीका स्वामी है मैं रावण उसकाही स्वामी और विधाता हूं तो भी हम विनतीकर हाथ जोड तुमसे यह प्रार्थना करते हैं सो तुम हमसे मिलो ॥ २७ ॥ यह वचन सुन रंभा कम्पायमान हो हाथ जोडकर बोली हे राक्षसराज ! आप हमारे बडे हैं इस कारण ऐसा कहना आपको उचित नहीं है ॥२८॥ बरन् और कोई भी जो हमारा अपमान करे तो आपको उससे भी हमारी रक्षा करनी उचित है धर्मके अनुसार हम आपकी पुत्रवधू हैं हम आपसे सत्यही कहती हैं ॥२९॥ यह कह रंभा नीचेको मुख कर अपने चरणोंको देखती हुई खडी रही, रावणको देखती उसका

मद्विशिष्टः पुमान्कोऽद्यशक्रोविष्णुरथाश्विनौ ॥ मामतीत्यहियच्चत्वंयासिभीरुनशोभनम् ॥२५॥ विश्रमत्वंपृथुश्रोणिशिलातलमिदंशुभम् ॥ त्रैलोक्येयःप्रभुश्चैवमदन्योनैवविद्यते ॥ २६ ॥ तदेवंप्रांजलिःप्रह्वोयाचतेत्वांदशाननः ॥ भर्तुर्भर्ताविधाताचत्रैलोक्यस्यभजस्वमाम् ॥ २७ ॥ एवमुक्ताऽब्रवीद्रंभावेपमानाकृतांजलिः ॥प्रसीदनार्हसेवक्तुमीदृशंत्वंहिमेगुरुः ॥२८॥ अन्येभ्योपित्वयारक्ष्याप्राप्नुयांधर्षणंयदि ॥ तद्धर्मतःस्नुषातेऽहंतत्त्वमेतद्ब्रवीमिते ॥२९॥ अथाब्रवीद्दशग्रीवश्चरणाधोमुखींस्थिताम् ॥ रोमहर्षमनुप्राप्तांदृष्टमात्रेणतांतदा ॥ ३० ॥ सुतस्ययदिमेभार्याततस्त्वंहिस्नुषाभवेः ॥ बाढमित्येवसारंभाप्राहरावणमुत्तरम् ॥ ३१ ॥ धर्मतस्तेसुतस्याहंभार्याराक्षसपुंगव ॥ पुत्रःप्रियतरःप्राणैर्भ्रातुर्वैश्रवणस्यते ॥३२॥ विख्यातस्त्रिषुलोकेषुनलकूबरइत्ययम् ॥ धर्मतोयोभवेद्विप्रःक्षत्रियोवीर्यतोभवेत् ॥३३॥ क्रोधाद्यश्चभवेदग्निःक्षांत्याचवसुधासमः ॥ तस्यास्मिकृतसंकेतालोकपालसुतस्यवै ॥३४॥ तमुद्दिश्यतुसर्वंविभूषणमिदंकृतम् ॥ यथातस्यहिनान्यस्यभावोमांप्रतितिष्ठति ॥३५॥

सब शरीर कांप गया ॥३०॥ इसके उपरान्त रावणने रंभासे कहा कि; जो तुम हमारे पुत्रकी भार्या हो तो हमारी पुत्रवधू हो, रंभाने कहा ऐसाही है॥ ३१ ॥ हे राक्षसश्रेष्ठ ! संकेतधर्मके अनुसार हम आपके पुत्रकी भार्या हैं आपके भ्राता कुबेरजीके प्राणोंसे भी अधिक प्यारे ॥३२॥ नलकूबर नाम त्रिलोकविख्यात एक पुत्र हैं, वह धर्मका पालन करनेमें ब्राह्मणके समान, पराक्रममें क्षत्रियके समान ॥ ३३ ॥ क्रोधमें अग्निकी नाईं, क्षमामें पृथ्वीकी तुल्य हैं उन लोकपाल कुमारके किये संकेतके अनुसार ॥३४॥ आज हम उनके पासको जाती हैं. उनके पास जानेको हमने यह समस्त भूषण धारण किये हैं विशेष करके हमारे ऊपर उनकी जैसी प्रीति है वैसेही हमारी प्रीति भी उनसे है औरसे हम प्रीति नहीं कर सकती ॥ ३५ ॥

हे राजन् ! आप उसी सत्यके अनुसार हमको छोड दीजिये हे अरिदमन ! विशेष करके वह महात्मा हमारी बाट देखते उत्सुक हुए बैठे होंगे ॥ ३६ ॥ सो अब आपको विघ्न करना कर्त्तव्य नहीं है। हे राक्षसश्रेष्ठ ! साधुजनोंके आचरण किये हुए मार्गके अनुसार आप भी उसी मार्गपर चलकर हमको छोडदीजिये ॥ ३७ ॥ जिस प्रकार आप हमारे मान देने योग्य हैं वैसेही आपको हमारा पालन करना उचित है इस प्रकारसे कहे जाकर विनीत भावसे रावणने कहा ॥ ३८ ॥ "हम तुम्हारी स्नुषा हैं" यह जो वचन तुमने कहा यह निर्णय उन स्त्रियोंके लिये है जिनका एक पति होता है, यह बात यहांपर नहीं लग सकती क्योंकि बहुत दिनोंसे देवलोककी यह व्यवस्था चली आती है कि, उनके कोई नियत एक स्त्री नहीं होती ॥ ३९ ॥ न तो अप्सराओंको कोई एक पति ही होता, और न देवताओंके कोई एक स्त्री ही होती । यह कह उस राक्षसने रंभाको शिलापर लिटाय ॥ ४० ॥ कामभोगमें आसक्त हो उसके साथ

तेनसत्येनमांराजन्मोक्तुमर्हस्यरिंदम ॥ सहितिष्ठतिधर्मात्मामांप्रतीक्ष्यसमुत्सुकः ॥३६॥ तत्रविघ्नंतुतस्येहकर्तुंनार्हसिमुंचमाम् ॥सद्भिराचरितंमार्गंगच्छराक्षसपुंगव ॥३७॥ माननीयोममत्वंहिपालनीयातथास्मिते ॥ एवमुक्तोदशग्रीवःप्रत्युवाचविनीतवत् ॥ ३८ ॥ स्नुषास्मियदवोचस्त्वमेकपत्नीष्वयंक्रमः॥ देवलोकस्थितिरियंसुराणांशाश्वतीमता ॥ ३९ ॥ पतिरप्सरसांनास्तिनचैकस्त्रीपरिग्रहः ॥ एवमुक्त्वासतांरक्षोनिवेश्यचशिलातले ॥ ४० ॥ कामभोगाभिसंरक्तोमैथुनायोपचक्रमे ॥ साविमुक्तातत्तोरंभाभ्रष्टमाल्यविभूषणा ॥४१॥ गजेंद्राक्रीडमथितानदीवाकुलतांगता॥ लुलिताकुलकेशांताकरवेपितपल्लवा ॥ ४२ ॥ पवनेनावधूतेवलताकुसुमशालिनी ॥ सावेपमानालज्जंतीभीताकरकृतांजलिः ॥ ४३ ॥ नलकूबरमासाद्यपादयोर्निपपातह॥ तदवस्थांचतांदृष्ट्वामहात्मानलकूबरः ॥ ४४ ॥ अब्रवीत्किमिदंभद्रेपादयोःपतितासिमे ॥ सावैनिःश्वसमानातुवेपमानाकृतांजलिः ॥ ४५ ॥

विहार करना आरंभ किया । भोगी जानेके उपरान्त छूटकर रंभा जो माला पहरे थी वह मलगिजी हो गई और गहने भी नष्ट भ्रष्ट हो गये ॥ ४१ ॥ और वह रंभा गजराजकी क्रीडा करनेसे मथी हुई नदीके समान व्याकुल हो गई, उसके बाल खुलगये; अलकें चलायमान हुईं; हाथ कंपायमान हुए ॥ ४२ ॥ उस समय ऐसा जान पडा मानों फूलयुक्त वेलि पवनके बलसे चलायमान हुई है, इसके उपरान्त रंभा लाज और भयसे कंपित हो हाथ जोडे हुए ॥ ४३ ॥ नलकूबरके निकट पहुँच उनके चरणोंपर गिरपडी उसकी यह अवस्था देखकर महात्मा नलकूबरजी ॥ ४४ ॥ बोले हे भद्रे ! यह क्या ? तुम हमारे चरणों पर क्यों गिरी? तब रंभा कांपकर लम्बे २ श्वास ले हाथ जोड ॥ ४५ ॥

यथातथ्य समस्त वृत्तान्त कहने लगी, हे देव ! रावण स्वर्गलोकमें जानेके लिये बाहर हो कैलास पर आया है ॥४६॥ वह सब सेनाके साथ आज यह रात्रि उसी स्थानमें बिताय रहा था; हे शत्रुनाशी ! उस रावणने हमको आपके पास आती हुई देख ॥ ४७ ॥ उस राक्षसने हमको पकडकर पूछा कि, तुम किसके निकट जाती हो ? सो हमने समस्त वृत्तान्त उनसे सत्य २ कह दिया ॥ ४८ ॥ और हे देव ! हम आपकी पुत्रवधू होती हैं यह कहकर हमने वारंवार उसके निकट प्रार्थना की परन्तु उसने काममोहसे ज्ञान खो ॥ ४९ ॥ बात न सुनी हमारी विनय न मानकर उसने बलात्कार हमारे साथ विहार किया । इस लिये सुव्रत ! आप हमारा यह अपराध क्षमा कीजिये ॥ ५० ॥ स्त्रीका बल कभी भी पुरुषके बलके समान नहीं है यह वृत्तान्त सुनकर कुबेरके पुत्रको क्रोध आग या ॥ ५१ ॥ और सत्य मिथ्या जाननेके लिये ध्यान धरकर देखा तो ध्यानसे रावणका यह कर्म जान ॥५२॥ क्रोधसे नेत्र लाल २ कर उन्होंने उसी सम

तस्मैसर्वंयथातत्त्वमाख्यातुमुपचक्रमे॥एषदेवदशग्रीवःप्राप्तोगंतुंत्रिविष्टपम् ॥४६॥ तेनसैन्यसहायेननिशेयंपरिणामिता ॥ आयांतीतेनदृष्टास्मि त्वत्सकाशमरिंदम॥४७॥गृहीतातेनपृष्टास्मिकस्यत्वमितिरक्षसा॥मयातुसर्वंयत्सत्यंतस्मैसर्वंनिवेदितम्॥४८॥काममोहाभिभूतात्मानाश्रौषीत्त द्वचोमम॥याच्यमानोमयादेवस्नुषातेऽहमितिप्रभो॥४९॥तत्सर्वंपृष्ठतःकृत्वाबलात्तेनास्मिधर्षिता ॥एवंत्वमपराधंमेक्षंतुमर्हसिसुव्रत॥५०॥नहि तुल्यंबलंसौम्यस्त्रियाश्चपुरुषस्यहि॥एतच्छ्रुत्वातुसंक्रुद्धस्तदावैश्रवणात्मजः॥५१॥ धर्षणांतांपरांश्रुत्वाध्यानंसंप्रविवेशह॥ तस्यतत्कर्मविज्ञाय तदावैश्रवणात्मजः ॥५२॥ मुहूर्तात्क्रोधताम्राक्षस्तोयंजग्राहपाणिना॥ गृहीत्वासलिलंसर्वमुपस्पृश्ययथाविधि ॥५३॥ उत्ससर्जतदाशापंराक्षसें द्रायदारुणम् ॥ अकामातेनयस्मात्त्वंबलाद्भद्रेप्रधर्षिता॥५४॥तस्मात्सयुवतीमन्यांनाकामामुपयास्यति ॥ यदाह्यकामांकामार्तोधर्षयिष्यतियो षितम् ॥ ५५ ॥ मूर्धातुसप्तधातस्यशकलीभवितातदा॥तस्मिन्नुदाहृतेशापेज्वलिताग्निसमप्रभे॥५६॥ देवदुंदुभयोनेदुःपुष्पवृष्टिश्चखाच्च्युता॥ पितामहमुखाश्चैवसर्वेदेवाःप्रहर्षिताः॥५७॥ज्ञात्वालोकगतिंसर्वांतस्यमृत्युंचरक्षसः ॥ श्रुत्वातुसदशग्रीवस्तंशापंरोमहर्षणम् ॥५८॥

य हाथमें जल ग्रहण किया और सब इन्द्रियोंको छू विधिपूर्वक आचमनकर ॥ ५३ ॥ राक्षस पति रावणको अति दारुण शाप दिया कि, हे भद्रे ! तुम्हारी इच्छा न होनेपर भी जब कि उसने बलपूर्वक तुमसे मैथुन किया ॥५४॥ सो इस कारण अब वह किसी स्त्रीको विना उसकी इच्छाके न भोग सकेगा, और जो वह कामके वश हो किसी स्त्रीकी इच्छाके विरुद्ध बलपूर्वक उसको पकडेगा ॥ ५५ ॥ तो उसके शिरके शत टुकडे हो जायँगे प्रकाशमान अग्निकी प्रभाके समान जब यह शाप उच्चारण किया ॥५६॥ तब उस समय फूलोंकी वर्षा हुई, आकाशसे देवताओंके नगाडे बजने लगे ब्रह्माजी इत्यादि सबही देवता हर्षित हुए ॥ ५७ ॥ क्योंकि इन सब देवताओंने लोककी दुर्गति करने लेवा रावणकी मृत्यु इस प्रकारसे जानी । रावणने उस रोमहर्षण शापको सुना ॥५८॥

तबसे विना इच्छाकी स्त्रीके संग भोग न किया विशेष करके रावण जिन पतिव्रता स्त्रियोंको पहले अपने रनववासमें ले आया था वह सब नलकूबरका दिया हुआ मनः प्रसन्नकारी शाप सुनकर परम प्रसन्न हुई ॥५९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां षड्विंशः सर्गः ॥२६॥ महातेजस्वी रावण सेना, सेनापति और सवारियोंके साथ कैलाशपर्वतके शिखरसे चलकर इन्द्रलोकमें पहुँचा ॥ १ ॥ देवलोकमें जाती हुई उस राक्षसोंकी सेनाका शब्द उछलते हुए समुद्रके समान चारों ओर टकराने लगा ॥ २ ॥ रावणके आनेका वृत्तान्त सुन इन्द्र अपने आसनसे चलायमान हुआ और उसने सब इकठे बैठे देवतों ॥ ३ ॥ बारह आदित्य, आठ वसु, ग्यारह रुद्र, साध्यगुण व उनचास मरुद्गणोंसे कहा. आप दुरात्मा रावणके साथ युद्ध करनेके लिये तैयार हो ॥ ४ ॥ संग्राममें इन्द्रहीके समान प्रभाववाले महाबलवान् समस्त देवतागण इन्द्रके ऐसे वचन सुन युद्धकी अभिलाषासे बख्तर पहरने लगे ॥५॥ वह इन्द्रजी रावणके

नारीषुमैथुनीभावंनाकामास्वभ्यरोचयत् ॥ तेननीताःस्त्रियःप्रीतिमापुःसर्वाःपतिव्रताः ॥ नलकूबरनिर्मुक्तंशापंश्रुत्वामनःप्रियम् ॥५९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदि०च०सा०उ०कांडे षट्विंशःसर्गः२६कैलासंलंघयित्वातुससैन्यबलवाहनः॥आससादमहातेजाइन्द्रसोकंदशाननः॥ १ ॥तस्यराक्षससैन्यस्यसमंतादुपयास्यतः॥देवलोकेबभौशब्दोभिद्यमानार्णवोपमः॥२॥श्रुत्वातुरावणंप्राप्तमिंद्रश्चलितआसनात् ॥देवानथाब्रवीत्तत्रसर्वांनेवसमागतान्॥३॥आदित्यांश्चवसून्रुद्रान्साध्यांश्चसमरुद्गणान्॥सज्जाभवतयुद्धार्थंरावणस्यदुरात्मनः॥४॥एवमुक्तास्तुशक्रेणदेवाःशक्रसमायुधि॥सन्नह्यसुमहासत्त्वायुद्धश्रद्धासमन्विताः॥५सतुदीनःपरित्रस्तोमहेंद्रोरावणंप्रति॥विष्णोःसमीपमागत्यवाक्यमेतदुवाचह॥६॥विष्णोकथंकरिष्यामिरावणंराक्षसंप्रति॥अहोतिबलवद्रक्षोयुद्धार्थमभिवर्तते॥७॥ वरप्रदानाद्बलवान्नखल्वन्येनहेतुना॥तत्तुसत्यंवचःकार्यंयदुक्तंपद्मयोनिना॥८॥तद्यथानमुचिर्वृत्रोबलिर्नरकशंबरौ ॥ त्वद्बलंसमवष्टभ्यमयादग्धास्तथाकुरु ॥९॥ नह्यन्योदेवदेवेशत्वदृतेमधुसूदन ॥ गतिःपरायणंचापित्रैलोक्येसचराचरे ॥ १० ॥ त्वंहिनारायणःश्रीमान्पद्मनाभःसनातनः ॥ त्वयेमेस्थापितालोकाःशक्रश्चाहंसुरेश्वरः ॥ ११ ॥

भयसे सब प्रकार त्रासितहो विष्णु जीके समीप आय उनसे यह बोले ॥६॥ हे भगवन् ! हम किस प्रकारसे राक्षस रावणको रोकें ? हा ! अत्यन्त बलवान् राक्षस युद्ध करनेके निमित्त चला आता है ॥७॥ और कोई कारण नहीं है केवल वरदान पानेके प्रभावसेही वह बलवान् है सो कमलसे उत्पन्न ब्रह्माजीने जो कुछ कहा है वह आपको सत्य करना उचित है ॥८॥ सो आपके अनंत बलका आश्रय करके जैसे हमने बलि, नमुचि, नरककुमार व शंबर असुरको दग्ध किया है सो वैसेही आप कोई रावणके वधका उपाय भी खोजदें ॥ ९ ॥ हे देवदेवेश मधुसूदन ! चराचर त्रिलोकीके बीचमें आपके सिवाय और कोई आश्रय देनेवाला या रक्षक नहीं है ॥ १० ॥ आपही सनातन पद्मनाभ श्रीमन्नारायण हैं; आपही करके यह समस्त लोक स्थापित हुए हैं, और आपनेही

हमको सुरपति किया है ॥ ११ ॥ हे भगवन् ! यह चराचर समस्त जगत् आपनेही बनाया है; युगक्षय होनेके समय फिर यह समस्त आपहीमें लीन होजा यगा ॥ १२ ॥ इस कारण हे विभो ! हे देवदेव ! जिस प्रकारसे हमारी जय हो, आप हमें वही उपाय बता दीजिये या खड्ग व चक्र धारण करके आप स्वहंही युद्ध कीजिये ॥ १३ ॥ वह देव प्रभु नारायणजी इन्द्रके ऐसे वचन सुनकर बोले अत्यन्त भय करना उचित नहीं, जो कुछ हम कहते हैं वह सुनो ॥ १४ ॥ यह दुष्ट स्वभाववाला रावण वरदानके प्रभावसे अजीत होगया है इस कारण सुर या असुरगण संग्राममें इसकी कोईभी नहीं जीतसकेगा ॥१५॥ परन्तु हम यह देखते हैं कि, यह रावण अतिबलवान होनेके कारण अपने पुत्रके सहित बडा कर्म करेगा ॥ १६ ॥ हे सुरेश्वर ! तुमने यह जो कहा कि "आप युद्ध कीजिये परन्तु इस समय हम रावणके साथ संग्राम न करेंगे ॥१७॥ कारण कि संग्राममें विना शत्रुका वध किये हम नहीं लौटते; परन्तु रावण

त्वयासृष्टमिदंसर्वंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥त्वामेवभगवन्सर्वंप्रविशंतियुगक्षये ॥१२॥ तदाचक्ष्वयथातत्त्वंदेवदेवममस्वयम् ॥ असिचक्रसहाय स्त्वंयोत्स्यसेरावणंप्रति ॥ १३ ॥ एवमुक्तःसशक्रेणदेवोनारायणःप्रभुः ॥ अब्रवीन्नपरित्रासःकर्तव्यःश्रूयतांचमे ॥१४॥ नतावदेषदुष्टात्माश क्योजेतुंसुरासुरैः ॥ हंतुचापिसमासाद्यवरदानेनदुर्जयः ॥१५॥ सर्वथातुमहत्कर्मकरिष्यतिबलोत्कटः ॥ राक्षसःपुत्रसहितोदृष्टमेतन्निसर्गतः ॥ १६ ॥ यत्तुमांत्वमभाषिष्ठायुध्यस्वेतिसुरेश्वर ॥ नाहंतंप्रतियोत्स्यामिरावणंराक्षसंयुधि ॥ १७ ॥ नाहत्वासमरेशत्रुंविष्णुःप्रतिनिवर्तते ॥ दुर्लभश्चैवकामोऽद्यवरगुप्ताद्धिरावणात् ॥ १८ ॥ प्रतिजानेचदेवेंद्रत्वत्समीपेशतक्रतो ॥ भवितास्मियथास्याहंरक्षसोमृत्युकारणम् ॥ १९ ॥ अहमेवनिहंतास्मिरावणंसपुरःसरम् ॥ देवतानंदयिष्यामिज्ञात्वाकालमुपागतम् ॥ २० ॥ एतत्तकथितंतत्त्वंदेवराजशचीपते ॥ युद्धचस्वविग तत्रासःसुरैःसार्धमहाबल ॥ २१ ॥ ततोरुद्राःसहादित्यावसवोमरुतोऽश्विनौ ॥ सन्नद्धानिर्ययुस्तूर्णंराक्षसानभितःपुरात् ॥ २२ ॥

वरदानके प्रभावसे रक्षित है सो आज उसके निकटसे कामना पूर्ण करना कठिन है ॥१८॥ हे शतयज्ञकारी सुरपति ! हम जिस प्रकारसे इस राक्षसकी मृत्युके कारण होंगे, हम तुम्हारे निकट यह प्रतिज्ञा करते हैं ॥१९॥ आगे २ चलनेवाले, मुख्य २ राक्षसोंके साथ रावणका हमही संहार करेंगे; जब जानेंगे कि समय अगया तबही देवताओंको आनंदित करेंगे ॥२०॥ हे देवराज ! यह समस्त वृत्तान्त तुमसे कहा, हे महाबलवान् शचीनाथ ! तुम त्रासरहित हो देवता ओंको साथ ले युद्ध करो ॥२१॥ इसके उपरान्त ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, आठ वसु, उन चास मरुद्गण और दो अश्विनीकुमार बख्तर पहर पुरीसे निकल राक्षसोंके ऊपर दौडे ॥ २२ ॥

इसी अवसरमें रावणकी सेनाके राक्षस प्रभातकालमें घोर संग्राम करने लगे सो चारों ओरसे सेनाके बीरोंका चिल्लाना सुनाई आने लगा ॥२३॥ यह महावीर्य वान् राक्षस बढती पाय परस्पर एक दूसरे को देख हर्षित हो संग्राममें विराजमान होने लगे ॥२४॥ उसके पीछे संग्रामके संमुख उस अक्षय महासेनाको देख कर देवताओंकी सेनामें खलबलाहट हुई॥२५॥इसके उपरान्त विविध शस्त्रधारी देव राक्षस और दानवोंके शब्दसे युक्त भयानक संग्राम होना आरंभ हुआ॥२६॥ उसी अवसरमें घोरदर्शन वीर रावणके मंत्रीगण युद्ध करनेके लिये आये ॥२७॥ मारीच प्रहस्त, महापार्श्व महोदर अकंपन, निकुंभ, शुक, सारण ॥ २८ ॥ संह्राद; धूमकेतु, महोदर, जंबुमाली महाह्राद, विरूपाक्ष राक्षस ॥२९॥ सुप्तघ्न, यज्ञकोप दुर्मुख, खर, त्रिशिरा, करवीराक्ष, सूर्यशत्रु राक्षस ॥३०॥ महाकाय,

एतस्मिन्नंतरेनादःशुश्रावरजनीक्षये ॥ तस्यरावणसैन्यस्यप्रबुद्धस्यसमंततः ॥ २३ ॥ तेप्रबुद्धामहावीर्याअन्योन्यमभिवीक्ष्यवै॥ संग्राममेवा भिमुखाअभ्यवर्ततहृष्टवत् ॥ २४ ॥ ततोदैवतसैन्यानांसंक्षोभःसमजायत॥ तदक्षयंमहासैन्यंदृष्ट्वासमरमूर्धनि ॥ २५ ॥ ततोयुद्धंसमभव द्देवदानवरक्षसाम् ॥ घोरंतुमुलनिर्ह्रादंनानाप्रहरणोद्यतम् ॥ २६ ॥ एतस्मिन्नंतरेशूराराक्षसाघोरदर्शनाः ॥ युद्धार्थंसमवर्ततसचिवारावणस्य ते ॥ २७ ॥ मारीचश्चप्रहस्तश्चमहापाश्वमहोदरौ ॥ अकंपनोनिकुंभश्चशुकःसारणएवच ॥ २८ ॥ संह्रादोधूमकेतुश्चमहादंष्ट्रोघटोदरः ॥ जंबुमलीमहाह्रादोविरूपाक्षश्चराक्षसः ॥ २९ ॥ सुप्तघ्नोयज्ञकोपश्चदुर्मुखोदूषणःखरः ॥ त्रिशिराःकरवीराक्षःसूर्यशत्रुश्चराक्षसः ॥ ३० ॥ महा कायोऽतिकायश्चदेवांतकनरांतकौ ॥ एतैःसर्वैःपरिवृतोमहावीर्यैर्महाबलः ॥ ३१ ॥ रावणस्यार्यकःसैन्यंसुमालीप्रविवेशह ॥ सदैवतगणान्स र्वान्नानाप्रहरणैःशितैः ॥ ३२ ॥ व्यध्वंसयत्ससंक्रुद्धोवायुर्जलधरानिव ॥ तद्दैवतबलंरामहन्यमानंनिशाचरैः ॥ ३३ ॥ प्रणुन्नंसर्वतोदिग्भ्यः सिंहनुन्नामृगाइव ॥ एतस्मिन्नंतरेशूरोवसूनामष्टमोवसुः ॥ सावित्रइतिविख्यातःप्रविवेशरणाजिरम् ॥ ३४ ॥ सैन्यैःपरिवृतोहृष्टैर्नानाप्रहरणो द्यतैः ॥ त्रासयञ्छत्रुसैन्यानिप्रविवेशरणाजिरम् ॥ ३५ ॥

देवान्तक, नरांतक, इन सब महावीर्ययुक्त राक्षसोंको संग लेकर महाबलवान् ॥३१॥ सुमाली, जो कि, रावणका नाना था, सेनामें प्रवेश करता हुआ और सर्व देवताओंको अनेक प्रकारके तीखे अस्त्र शस्त्रोंसे ॥३२॥ क्रुद्ध होकर विध्वंस करने लगा, जैसे पवन बादलोंको छिन्न करता है हे राम। वह देवसेना निशाचर करके हनी जाकर॥३३॥सिंहसे त्रासित मृगोंकी श्रेणीके समान दशों दिशाओंको भागी। इसी समय शूर महा वीर सावित्रनामक विख्यात अष्टम वसु संग्राममें आया ॥ ३४ ॥ वह हर्षितहो बहुतसी सेनाको, संग लिये अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र चलाय शत्रुओंकी सेनाको त्रासित करता हुआ संग्राममें आया ३५ ॥

और त्वष्टा व पूषा नामक महावीर्यवान् दो आदित्य निर्भय हो सेनाके सहित रणभूमिमें आये ॥ ३६ ॥ इसके उपरान्त देवता राक्षसोंकी कीर्तिको न सहन करके रणसे विमुख न हो फिर उठकर संग्राम करने लगे ॥ ३७ ॥ तब राक्षसभी अनेक घोर अस्त्र शस्त्र चलाय २ संग्राममें स्थित हुए सैकडों हजारों देवताओंका संहार करने लगे ॥ ३८ ॥ देवतालोग भी संग्राममें महा बलवान पराक्रमी राक्षसोंको विमल अस्त्रोंके घातसे यमराजके भवनको भेजने लगे ॥३९॥ हे राम! इस अवसरमें राक्षस सुमाली कोपकर अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र ले सन्मुख धाया ॥४०॥ पवन जिस प्रकार बादलोंके समूहको दूर कर देता है वैसेही सुमाली भी सर्व प्रकारसे क्रोधके वश हो अनेक प्रकारके तीखे आयुधोंसे उस समस्त देव सेनाका विध्वंस करने लगा ॥४१॥ सब देव मिलकर भी महाबाण

तथादित्यौमहावीर्यौत्वष्टापूषाचतौसमम् ॥निर्भयौसहसैन्येनतदाप्रविशतांरणे ॥ ३६ ॥ ततोयुद्धंसमभवत्सुराणांसहराक्षसैः ॥क्रुद्धानांरक्षसांकीर्तिंसमरेष्वनिवर्तिनाम् ॥३७॥ ततस्तेराक्षसाःसर्वेविबुधान्समरेस्थितान् ॥ नानाप्रहरणैर्घोरैर्जघ्नुःशतसहस्रशः ॥ ३८ ॥ देवाश्चराक्षसान्घोरान्महाबलपराक्रमान् ॥ समरेविमलैःशस्त्रैरुपनिन्युर्यमक्षयम् ॥ ३९ ॥ एतस्मिन्नंतरेरामसुमालीनामराक्षसः ॥ नानाप्रहरणैःक्रुद्धस्तत्सैन्यंसोभ्यवर्तत ॥४०॥सदैवतबलंसर्वंनानाप्रहरणैशितैः ॥ व्यध्वंसयतसंक्रुद्धोवायुर्जलधरंयथा ॥४१॥ तेमहाबाणवर्षैश्चशूलप्रासैःसुदारुणैः ॥ हन्यमानाःसुराःसर्वेनव्यतिष्ठंतसंहताः ॥४२॥ ततोविद्राव्यमाणेषुदैवतेषुसुमालिना ॥ वसूनामष्टमःक्रुद्धःसावित्रोवैव्यवस्थितः ॥ ४३ ॥ संवृतःस्वैरथानीकैःप्रहरंतंनिशाचरम् ॥ विक्रमेणमहातेजावारयामाससंयुगे ॥ ४४ ॥ ततस्तयोर्महद्युद्धमभवल्लोमहर्षणम् ॥ सुमालिनोवसोश्चैवसमरेष्वनिवर्तिनोः ॥ ४५ ॥ ततस्तस्यमहाबाणैर्वसुनासुमहात्मना ॥ निहतःपन्नगरथःक्षणेनविनिपातितः ॥ ४६ ॥ हत्वातुसंयुगेतस्यरथबाणशतैश्चितम् ॥ गदांतस्यवधार्थायवसुर्जग्राहपाणिना॥४७॥ ततःप्रगृह्यदीप्ताग्रांकालदंडोपमांगदाम् ॥ तांमूर्ध्निपातयामाससावित्रोवैसुमालिनः ॥४८॥

वर्षाय शूल, प्रास इत्यादि दारुण आयुधोंसे मार खाय संग्राममें ठहर न सके ॥ ४२ ॥ तब सुमालीने देवता ओंकी सेनाको भगा दिया; तब महातेजस्वी अष्टमवसु सावित्र कुपित हुए ॥ ४३ ॥ वह सावित्र सावधान और अपनी रथी सेनाको साथ ले पराक्रम प्रकाश कर राक्षस सुमालीके ऊपर प्रहार करते २ संग्राममें रोक देते हुए ॥४४॥ तब संग्राममें न लौटनेवाले सुमाली और वसुका रोमहर्षण बडाभारी संग्राम होने लगा ॥४५॥ महात्मा वसुने बाणसमूहको चलाकर उसका सर्व रथ नाश कर क्षणमात्रमें तोड़ ताड़ डाला ॥ ४६ ॥ सैकडों बाणोंसे उसको ढक रथका नाश कर उस राक्षसको रथसे गिरानेके लिये सावित्र वसुने हाथमें गदा ग्रहण की ॥४७॥ उस सावित्रने कालदंडके समान दीप्तिमान होती हुई वह गदा ग्रहण करके सुमालीके मस्तकपर मारी ॥४८॥

महावज्र जिस प्रकार इन्द्रकरके छोडा हुआ गर्जकर पर्वत पर गिरता है वैसेही वह उल्काके समान प्रभायुक्त गदा राक्षसके मस्तकपर गिरकर दीप्तिमान होने लगी ॥ ४९ ॥ गदाके लगनेसे उसका शरीर भस्म हो गया; उस काल संग्रामके बीच उसकी अस्थि, मांस या मस्तक कुछ भी दृष्टि नहीं आया ॥ ५० ॥ वे राक्षस उसको संग्राममें निहत देखकर सब ही परस्पर रोते २ चारों ओरको भाग गये, अधिक क्या कहें वह वसुके प्रतापसे इधर उधर भाग गये और फिर वहाँपर नहीं ठहर सके ॥ ५१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां सप्तविंशः सर्गः ॥ २७ ॥ सावित्र वसुके अस्त्रबलसे सुमालीको नष्ट और भस्म देखकर राक्षसोंकी सब सेना देवताओंसे पीडित होकर भाग गई ॥ १ ॥ रावणका पुत्र बलवान् मेघनाद यह देखकर कुपित हो समस्त राक्षसोंको

सातस्योपरिचोल्काभापतंतीविबभौगदा ॥ इंद्रप्रमुक्तागर्जंतीगिराविवमहाशनिः ॥ ४९ ॥ तस्यनैवास्थिमशिरोनमांसंददृशेतदा ॥ गदयाभस्मतांनीतंनिहतस्यरणाजिरे ॥ ५० ॥ तंदृष्ट्वानिहतंसंख्येराक्षसास्तेसमंततः ॥ व्यद्रवन्सहिताःसर्वेक्रोशमानाःपरस्परम् ॥ विद्राव्यमाणावसुनाराक्षसानावतस्थिरे ॥ ५१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे सप्तविंशःसर्गः ॥ २७ ॥ सुमालिनंहतंदृष्ट्वावसुनाभस्मसात्कृतम् ॥ स्वसैन्यंविद्रुतंचापिलक्षयित्वाऽर्दितंसुरैः ॥ १ ॥ ततःसबलवान्क्रुद्धोरावणस्यसुतस्तदा ॥ निवर्त्यराक्षसान्सर्वान्मेघनादोव्यवस्थितः ॥ २ ॥ सरथेनमहार्हेणकामगेनमहारथः ॥ अभिदुद्रावसेनांतांवनान्यग्निरिवज्वलन् ॥ ३ ॥ ततःप्रविशतस्तस्यविविधायुधधारिणः ॥ विदुद्रुवुर्दिशःसर्वादर्शनादेवदेवताः ॥ ४ ॥ नबभूवतदाकश्चिद्युयुत्सोरस्यसंमुखे ॥ सर्वानाविद्ध्यवित्रस्तांस्ततःशक्रोब्रवीत्सुरान् ॥ ५ ॥ नभेतव्यंनगंतव्यंनिवर्तध्वंरणेसुराः ॥ एषगच्छतिपुत्रोमेयुद्धार्थमपराजितः ॥ ६ ॥ ततःशक्रसुतोदेवोजयंतइतिविश्रुतः ॥ रथेनाद्भुतकल्पेनसंग्राममेसोभ्यवर्तत ॥ ७ ॥

लौटाय आप युद्ध करनेको उद्यत हुआ ॥ २ ॥ अग्नि प्रज्वलित होकर जिस प्रकार वनकी ओर चलती है वैसेही वह महारथी मेघनाद कामगामी बडेभारी रथपर सवार होकर उस सेनाके सन्मुख दौडा ॥ ३ ॥ विविध प्रकारके अस्त्र धारण किये राक्षसोंको प्रवेशित होते देखकर सब देवता चारोंओरको भागने लगे ॥ ४ ॥ अधिक कहांतक कहें उस समय संग्राम करते हुए उस मेघनादके सामने कोई भी नहीं टिक सका; जब सब देवता विद्ध होकर त्रासित हो गये तब इन्द्रजीने उनसे कहा ॥ ५ ॥ हे सब देवगण ! कुछ भय नहीं. तुम लोग लौटो भागो मत, कभी न हारनेवाला हमारा पुत्र संग्राम करनेके लिये जाता है ॥ ६ ॥ फिर वह इन्द्रकुमार देव जयन्त अद्भुत रथपर सवार होकर संग्रामके सन्मुख चला ॥ ७ ॥

तब वह समस्त देवता इन्द्रके पुत्रको साथ लेकर रावणकुमार मेघनादके निकट जाय उसपर प्रहार करने लगे ॥ ८ ॥ इन्द्रकुमार जतन्त और राक्षसकुमार मेघनादका, देवता व राक्षसोंका बल वीर्य अनुरूप संग्राम होने लगा ॥ ९ ॥ फिर रावणका पुत्र मेघनाद जयन्तके सारथी मातलिपुत्र गोमखके ऊपर सुवर्ण भूषित बाण छोडने लगा ॥ १० ॥ शचीका पुत्र जयन्त भी क्रोध करके रावणपुत्रके सारथीको बाणोंसे विद्ध करने लगा ॥ ११ ॥ रावण भी क्रोधसे परिपूर्ण हो आंखें निकाल बाणोंकी वर्षा कर इन्द्रके पुत्रको पीडित करने लगा ॥ १२ ॥ फिर मेघनाद अत्यन्त कोपकर अनेक प्रकारके तीखे हजारों अस्त्र शस्त्र देवताओंकी सेनाके ऊपर चलाने लगा ॥ १३ ॥ शतघ्नी, मूशल, प्रास, गदा, खड्ग, फरशा और बडे२पर्वतोंके शिखर भी उस सेनाके ऊपर छोडे ॥ १४ ॥

तपतस्तेत्रिदशाःसर्वैरिवार्यंशचीसुतम् ॥ रावणस्यसुतंयुद्धेसमासाद्यप्रजघ्निरे ॥ ८ ॥ तेषांयुद्धंसमभवत्सदृशंदेवरक्षसाम् ॥ महेंद्रस्यचपुत्रस्य राक्षसेंद्रसुतस्यच ॥ ९ ॥ ततोमातलिपुत्रस्यगोमुखस्यसरावणिः ॥ सारथेःपातयामासशरान्कनकभूषणान् ॥ १० ॥ शचीसुतश्चापितथाजयंत स्तस्यसारथिम् ॥ तंचापिरावणिःक्रुद्धःसमंतात्प्रत्यविध्यत ॥ ११ ॥ सहिक्रोधसमाविष्टोबलीविस्फारितेक्षणः ॥ रावणिःशक्रतनयंशरवर्षै रवाकिरत् ॥ १२ ॥ ततोनानाप्रहरणाञ्छितधारान्सहस्रशः ॥ पातयामाससंक्रुद्धःसुरसैन्येषुरावणिः ॥ १३ ॥ शतघ्नीमुसलप्रासगदाखड्गपर श्वधान् ॥ महांतिगिरिशृंगाणिपातयामासरावणिः ॥ १४ ॥ ततःप्रव्यथितालोकाःसंजज्ञेचतमस्ततः ॥ तस्यरावणपुत्रस्यशत्रुसैन्यानिनिघ्नतः ॥ १५ ॥ ततस्तद्दैवतबलंसमंतात्तंशचीसुतम् ॥ बहुप्रकारमस्वस्थमभवच्छरपीडितम् ॥ १६ ॥ नाभ्यजानंतचान्योन्यंरक्षोवादेवताथवा ॥ तत्रतत्रविपर्यस्तंसमंतात्परिधावत ॥ १७ ॥ देवादेवान्निजघ्नुस्तेराक्षसान्राक्षसास्तथा ॥ संमूढास्तमसाच्छन्नाव्यद्रवन्नपरेतथा ॥ १८ ॥ एतस्मिन्नंतरेवीरःपुलोमानामवीर्यवान् ॥ दैत्येंद्रस्तेनसंगृह्यशचीपुत्रोपवाहितः ॥ १९ ॥

वह रावणका पुत्र मेघनाद इस प्रकारसे शत्रुओंकी सेनाके ऊपर प्रहार कर रहा था उसी अवसरमें उसकी मायासे अंधकार हो आया कि जिससे त्रिलोकवा सी समस्त प्रजा अति घबडाई ॥ १५ ॥ तब देवताओंकी सेना चारों ओरसे पीडित हो इन्द्रके पुत्र जयन्तको छोड व्याकुल हो गई ॥ १६ ॥ राक्षस या देवता परस्पर कोई भी किसीको उस समय नहीं जान सके, वह घबडाते हुए चारों ओर घूमने लगे ॥ १७ ॥ बरन् देवता देवताओंको राक्षस राक्षसोंको मारने लगे व और वीरलोग अन्धकारसे घबडाय अत्यन्त मूढ हो भाग गये ॥ १८ ॥ इसी अवसरमें वीर्यवान् वीर पुलोमा नामक दैत्यपति शचीके पुत्र जयन्तको ग्रहण कर भाग गया ॥ १९ ॥

यह पुलोमा दैत्य शचीका पिता था सो यह जयन्तका नाना अपने धेवतेकोले पातालपुरीको चला गया ॥ २० ॥ तब देवता जयन्तको न देखकर अत्यन्त असन्तुष्ट हुए और फिर व्यथा पाय सबही भाग खडे हुए ॥ २१ ॥ फिर रावणका पुत्र मेघनाद अपनी सेनाको साथ ले क्रोधके वश हो घोर शब्द करता हुआ देवताओंके पीछे दौडा ॥ २२ ॥ पुत्रके न देखनेसे और देवताओंको भागता हुआ देखकर देवराज इंद्रने मात लिसे कहा, कि हमारा रथ लाओ ॥२३॥ यह दिव्य महारथ सजाया जा रहा था इस समय देवराज इन्द्रजीकी आज्ञासे मातलि वह महा भयंकर रथ शीघ्र ले आया ॥२४॥ जब महाबलवान् इन्द्र रथपर चढा तब बिजलीसे शोभायमान महाबलवान् मेघगण पवनके आश्रयसे आगे २ चलकर घोर शोरसे उस रथ पर शब्द करने लगे ॥ २५ ॥ जब इन्द्रजी पुरीसे बाहर निकले तब गन्धर्वगण अनेक प्रकारके बाजे बजाने लगे और अप्सरायें नाचने लगीं ॥ २६ ॥ तब

संगृह्यतंतुदौहित्रंप्रविष्टःसागरंतदा॥आर्यकःसहितस्यासीत्पुलोमायेनसाशची ॥२०॥ज्ञात्वाप्रणाशंतुतदाजयंतस्याथदेवताः ॥अप्रहृष्टास्ततः सर्वाव्यथिताःसंप्रदुद्रुवुः ॥२१॥ रावणिस्त्वथसंक्रुद्धोबलैःपरिवृतःस्वकैः ॥ अभ्यधावतदेवांस्तान्मुमोचचमहास्वनम् ॥२२॥ दृष्ट्वाप्रणाशंपुत्रस्यदैवतेषुचविद्रुतम्॥मातलिंचाहदेवेशोरथःसमुपनीयताम् ॥२३॥ सतुदिव्योमहाभीमःसज्जएवमहारथः॥उपस्थितोमातलिनावाह्यमानोमहाजवः॥२४॥ ततोमेघारथेतस्मिंस्तडित्वंतोमहाबलाः ॥अग्रतोवायुचपलानेदुःपरमनिःस्वनाः॥२५॥नानावाद्यानिवाद्यंतगंधर्वाश्चसमाहिताः ॥ ननृतुश्चाप्सरःसंघानिर्यातेत्रिदशेश्वरे॥२६॥रुद्रैर्वसुभिरादित्यैरश्विभ्यांसमरुद्गणैः ॥ वृतोनानाप्रहरणैर्निर्ययौत्रिदशाधिपः॥२७॥निर्गच्छतस्तु शक्रस्यपरुषःपवनोववौ॥भास्करोनिष्प्रभश्चैवमहोल्काश्चप्रपेदिरे ॥२८॥ एतस्मिन्नंतरेशूरोदशग्रीवःप्रतापवान् ॥ आरुरोहरथंदिव्यंनिर्मितंविश्वकर्मणा ॥२९॥ पन्नगैःसुमहाकायैर्वेष्टितंलोमहर्षणैः॥ येषांनिःश्वासवातेनप्रदीप्तमिवसंयुगे ॥ ३० ॥ दैत्यैर्निशाचरैश्चैवसरथःपरिवारितः ॥ समराभिमुखोदिव्योमहेंद्रंसोऽभ्यवर्तत ॥३१॥ पुत्रंतंवारयित्वातुस्वयमेवव्यवस्थितः ॥ सोऽपियुद्धाद्विनिष्क्रम्यरावणिःसमुपाविशत् ॥३२॥

स्वर्गके पति इन्द्रजीरुद्रगण, वसुगण, आदित्यगण, मरुद्गण और दोनों अश्विनीकुमारोंके साथ विविध प्रकारके अस्त्र शस्त्र ग्रहण कर युद्ध करनेके लिये निकले ॥२७॥ जब रावणसे इन्द्रजी युद्ध करनेके लिये निकले तब पवन कठोरतासे चलने लगा, सूर्यकी प्रभा जाती रही और बडी २ उल्का गिरने लगीं ॥२८॥ इसी अवसरमें प्रतापवान शूर रावण विश्वकर्माके बनाये दिव्य रथपर सवार हुआ ॥ २९ ॥ उस रथके चारों ओर रोमहर्षण बडे २ सर्प लिपटे थे इसीलिये वह रथ युद्धके समय उनके श्वासकी पवनसे प्रदीप्त हो गया ॥३०॥ दैत्य और राक्षसोंकी सेनाके साथ दिव्य रथपर सवार हो इन्द्रजीके सन्मुख धाया ॥ ३१॥ और अपने पुत्र मेघनादको रोककर आपही संग्राम करने लगा; रावणका पुत्र भी युद्धसे निकल कर चुप हो अलग बैठ गया ॥ ३२ ॥

इसके उपरान्त मेघ जिस प्रकार जल वर्षाया करते हैं वैसेही अस्त्र शस्त्र वर्षायकर राक्षस और देवता युद्ध करने लगे ॥३३॥ हे राजन् ! दुरात्मा कुम्भकर्ण भी बहुत कालतक निद्रित रह संग्रामभूमिमें आया, उसको उस समय यह नहीं ज्ञात होता था कि, किसके साथ युद्ध हो रहा था वह जिसको निकट पाने लगा विविध भांतिके आयुध उठाय उसीसे युद्ध करने लगा ॥ ३४ ॥ कुम्भकर्ण अत्यन्त क्रोध कर दांत, चरण, भुजा, हस्त, शक्ति, तोमर, मुद्गर और जिस आयुधको पाया उसीसे देवताओंको भगाने लगा ॥ ३५ ॥ परन्तु वह निशाचर कुम्भकर्ण महाघोर ग्यारह रुद्रोंके निकट जाय उनके साथ घोर संग्राम करने लगा परन्तु रुद्रोंने निरन्तर बाणोंकी वर्षा करके कुम्भकर्णके सर्वांगमें घाव कर डाले ॥ ३६ ॥ फिर मरुद्गणोंके साथ उस राक्षसी सेनाका घोर संग्राम आरंभ हुआ उन मरुद्गणोंने अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्रोंसे समस्त राक्षसोंकी सेनाको भगा, दिया ॥ ३७ ॥ कोई २ राक्षस मरगये कोई २ अंग कटाय २ पृथ्वीपर

ततोयुद्धंप्रवृत्तंतुसुराणांराक्षसैःसह॥शस्त्राणिवर्षतांतेषांमेघानामिवसंयुगे॥३३॥कुंभकर्णस्तुदुष्टात्मानानाप्रहरणोद्यतः॥नाज्ञायततदाराजन्युद्धंके नाभ्यपद्यत॥३४॥दंतैःपादैर्भुजैर्हस्तैःशक्तितोमरमुद्गरैः॥येनतेनैवसंक्रुद्धस्ताडयामासदेवताः॥३५॥सतुरुद्रैर्महाघोरैःसंगम्याथनिशाचरः॥प्रयुद्ध स्तैश्चसंग्रामेक्षतःशस्त्रैर्निरंतरम्॥३६॥ततस्तद्राक्षसंसैन्यंप्रयुद्धंसमरुद्गणैः॥रणेविद्रावितंसर्वंनानाप्रहरणैस्तदा॥३७॥केचिद्विनिहताःकृत्ताश्चेष्टंति स्ममहीतले॥वाहनेष्ववसक्ताश्चस्थिताएवापरेरणे॥३८रथान्नागान्खरानुष्ट्रान्पन्नगांस्तुरगांस्तथा॥शिशुमारान्वराहांश्चपिशाचवदनानपि॥३९॥ तान्समालिंग्यबाहुभ्यांविष्टब्धाःकेचिदुत्थिताः॥देवैस्तुशस्त्रसंभिन्नाम्रिरेचनिशाचराः॥४०॥ चित्रकर्मइवाभातिसर्वेषांरणसंप्लवः॥ निहतानां प्रसुप्तानांराक्षसानांमहीतले॥४१॥शोणितोदकनिष्पंदाकाकगृध्रसमाकुला॥प्रवृत्तासंयुगमुखेशस्त्रग्राहवतीनदी॥४२॥एतस्मिन्नंतरेक्रुद्धोदशग्रीवः प्रतापवान्॥निरीक्ष्यतुबलंसर्वंदैवतैर्विनिपातितम्॥४३॥सूतंप्रतिविगाह्याशुप्रवृद्धंसैन्यसागरम्॥ त्रिदशान्समरेनिघ्नञ्शक्रमेवाभ्यवर्तत॥४४॥

पडे तडफडाने लगे और कोई २ मूर्च्छाके वश हो सवारियोंसेगिरकर भी उन्हींमें लिपटे रहे ॥३८॥ कोई रथ, कोई हाथी, कोई गधे, कोईऊंट, कोईसर्प, कोई घोडे, कोई शिशुमार, कोई वराह, कोई पिशाच बदनोंको ॥ ३९ ॥ बांहोंसे पकड २ लिपटाय २ पडे रहे और कोई २ अर्द्धमूर्छित होकर पडे रहे व और निशाचर देवताओंसे देह कटाय २ प्राण त्याग करते हुए ॥४०॥ वह राक्षसगण जब मरकर पृथ्वीपर गिरपडे तब संग्राममें उनका यह मारा जाना चित्रकार्यके समान प्रकाशित होने लगा ॥ ४१ ॥ उस काल संग्राममें काग और गिद्धोंसे शोभायमान नदी बहने लगी, सब शस्त्रही तो उसमें ग्राह थे और रुधिर ही उसका जल था; उसही जलकी तरंगमें सब उछलने डूबने लगे ॥ ४२ ॥ अत्यन्त प्रतापशाली रावण देवताओंसे अपनी सेनाका नाश देख ॥४३॥ अति शीघ्रतासे उस बढते हुए देव सेनाके समुद्रमें घुसा और देवताओंको मार देता हुआ इन्द्रके सन्मुख दौडा ॥ ४४ ॥

फिर इन्द्रजीने भी बडा भारी शब्दकारी धनुष खैंचा, इस धनुषके खैंचे जाने पर उसका महाशब्द दशों दिशाओंमें गुंजार करने लगा ॥ ४५ ॥ तब इन्द्रजी इस बडे धनुषको खैंच अग्नि और सूर्यके समान प्रभायुक्त बाण रावणके मस्तकपर मारने लगे ॥ ४६ ॥ महावीर दशग्रीव निशाचर भी इसी भाँतिसे अपने धनुषपर बाण चढाय छोडकर इन्द्रको ढकेलता हुआ ॥ ४७ ॥ घोर बाण वर्षाय जब दोनों इस प्रकारसे निरंतर युद्ध करते रहे तब चारों ओर अन्धकार छाय गया इस कारण उस समय कुछ भी दृष्टि न आया ॥ ४८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामष्टाविंशः सर्गः ॥ २८ ॥ जब अन्धकार छाया तो वह समस्त देवता और राक्षस बलसे मतवाले हो परस्पर एक दूसरेको पीडित करते हुए कठोर संग्राम करने लगे ॥ १ ॥ उस महा

ततःशक्रोमहच्चापंविस्फार्यसुमहास्वनम् ॥ यस्यविस्फारनिर्घोषैःस्तनंतिस्मदिशोदश ॥ ४५ ॥ तद्विकृष्यमहच्चापमिंद्रोरावणमूर्धनि ॥ पातयामाससशरान्पावकादित्यवर्चसः ॥ ४६ ॥ तथैवचमहाबाहुर्दशग्रीवोनिशाचरः ॥ शक्रंकार्मुकविभ्रष्टैःशरवर्षैरवाकिरत् ॥ ४७ ॥ प्रयुध्यतोरथतयोर्बाणवर्षैःसमंततः ॥ नाज्ञायततदाकिंचित्सर्वंहितमसावृतम् ॥ ४८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे अष्टाविंशः सर्गः ॥ २८ ॥ ततस्तमसिसंजातेसर्वेतेदेवराक्षसाः ॥ अयुद्ध्यंतबलोन्मत्ताःसूदयंतःपरस्परम् ॥ १ ॥ इंद्रश्चरावणश्चैवरावणिश्चमहाबलः ॥ तस्मिंस्तमोजालवृतेमोहमीयुर्नतेत्रयः ॥ २ ॥ सतुदृष्ट्वाबलंसर्वंरावणोनिहतंक्षणात् ॥ क्रोधमभ्यागमत्तीव्रंमहानादंचमुक्तवान् ॥ ३ ॥ क्रोधात्सूतंचदुर्धर्षःस्यंदनस्थमुवाचह ॥ परसैन्यसमध्येनयावदंतोनयस्वमाम् ॥ ४ ॥ अद्यैवत्रिदशान्सर्वान्विक्रमैःसमरेस्वयम् ॥ नानाशस्त्रैर्महासारैर्नयामियमसादनम् ॥ ५ ॥ अहमिंद्रंवधिष्यामिधनदंवरुणंयमम् ॥ त्रिदशान्विनिहत्याशुस्वयंस्थास्याम्यथोपरि ॥ ६ ॥ विषादोनैवकर्तव्यःशीघ्रंवाहयमेरथम् ॥ द्विःखलुत्वांब्रवीम्यद्ययावदंतंनयस्वमाम् ॥ ७ ॥

घोर अन्धकारसे केवल इन्द्र, रावण और मेघनाद यह तीनों जनेही मोहको प्राप्त नहीं हुए ॥ २ ॥ एक क्षणभरमेंही अपनी समस्त सेनाका नाश देखकर रावण अत्यन्त क्रोधित हुआ और अति ऊंचे शब्दसे सिंहनाद करने लगा ॥३॥ तब रावण अधिक क्रोधके मारे रथ हांकते हुए सूतसे बोला कि, जबतक शत्रुकी सेनाका अंत न आवै तबतक इस सेनाके बीचके मार्गसे तू हमको ले चल ॥४॥ हम इसी समय अनेक प्रकारके सब अस्त्र शस्त्र वर्षायकर सब देवताओंको यमराजके यहां भेजेंगे ॥ ५ ॥ हम इन्द्र, कुबेर, वरुण और यमको मार डालेंगे अधिक क्या कहें हम अतिशीघ्र देवताओंका विनाश करके स्वयं सबके ऊपर स्वामी हो विराजेंगे ॥६॥ विषाद न करके शीघ्र हमारा रथ चलाओ, हमने तुमसे दो बार कहा कि तुम हमको शत्रुकी सेनाके सबसे पीछे ले

चलो ॥७॥ इस समय हम जिस स्थानमें टिके हुए हैं यह नन्दनका एक देश है जिस स्थानमें उदय पर्वत है हमको तुम वहीं ले चलो ॥८॥ निशाचरराज रावणके यह वचन सुनकर सारथिने शत्रुओंके बीचमेंको मनके वेगके समान चलनेवाले घोडोंको हांका ॥ ९ ॥ तब समरभूमिमें विराजमान हुए देवराज इन्द्रजीने रावणके इस अभिप्रायको जान रथमें बैठे हुए ही देवताओंसे कहा ॥ १० ॥ हे देवताओ ! तुम हमारे वचन सुनो कि तुम सब मिलकर राक्षस रावणको जीता हुआ ही पकड लो हमें यही बात रुचती है ॥ ११ ॥ कारण कि अधिक सेनाके रहनेसे यह राक्षस अति बलवान् है सो पर्वके समय जिस प्रकार समुद्र उछलता है वैसेही पवनके समान चलनेवाले रथपर सवार होकर यह आय रहा है ॥१२॥ विशेष करके यह राक्षस वरदान पानेसे निर्भय हो गया है सो इसका मार डालना सामर्थ्यसे बाहर है इस निमित्त तुम संग्राममें यत्न परायण हो ऐसा करनेसे हम इस राक्षसको बंदी कर देंगे ॥ १३ ॥ बलि

अयंसनंदनोदेशोयत्रवर्तामहेवयम्॥नयमामद्यतत्रत्वमुदयोयत्रपर्वतः॥८तस्यतद्वचनंश्रुत्वातुरगान्समनोजवान्॥आदिदेशाथशत्रूणांमध्येनैवच सारथिः॥९तस्यतंनिश्चयंज्ञात्वाशक्रोदेवेश्वरस्तदा॥रथस्थःसमरस्थांस्तान्देवान्वाक्यमथाब्रवीत्॥१०॥सुराःशृणुतमद्वाक्यंयत्तावन्ममरोचते॥ जीवन्नेवदशग्रीवःसाधुरक्षोनिगृह्यताम्॥११॥एषह्यतिबलःसैन्यैरथेनपवनौजसा॥गमिष्यतिप्रवृद्धोर्मिःसमुद्रइवपर्वणि॥१२॥नह्येषहंतुंशक्योऽद्य वरदानात्सुनिर्भयः ॥ तद्ग्रहीष्यामहेरक्षोयत्ताभवतसंयुगे॥१३॥ यथाबलौनिरुद्धेचत्रैलोक्यंभुज्यतेमया ॥ एवमेतस्यपापस्यनिरोधोममरोचते ॥१४॥ ततोऽन्यंदेशमास्थायशक्रःसंत्यज्यरावणम्॥आयुध्यतमहाराजराक्षसांस्त्रासयन्रणे ॥१५॥ उत्तरेणदशग्रीवःप्रविवेशानिवर्तकः॥दक्षिणे नतुपार्श्वेणप्रविवेशशतक्रतुः॥१६ततःसयोजनशतंप्रविष्टोराक्षसाधिपः॥देवतानांजलंसर्वंशरवर्षैरवाकिरत्॥१७ततःशक्रोनिरीक्ष्याथप्रनष्टंतुस्व कंबलम् ॥ न्यवर्तयदसंभ्रांतःसमावृत्यदशाननम् ॥१८॥ एतस्मिन्नंतरेनादोमुक्तोदानवराक्षसैः॥हाहताःस्मइतिग्रस्तंदृष्ट्वाशक्रेणरावणम् ॥१९॥

बँध जानेपर जिस प्रकार हमने त्रिभुवनका भोग किया है, वैसेंही त्रिभुवनकी रक्षाके लिये इस पापमति रावणका बंदी करना हमको रुचता है ॥ १४ ॥ हे महाराज ! यह कह देवराज इन्द्र रावणको छोडकर और स्थानमें जाय राक्षसोंको त्रासित करते हुए युद्ध करने लगे ॥ १५ ॥ न लौटनेवाला रावण देवताओंकी सेनाको उत्तर बगलमें रखकर चला और इन्द्रजी भी उसकी दाईं ओरका आश्रय लेकर सेनामें प्रवेश करते हुए ॥ १६ ॥ उसके उपरान्त निशाचरनाथ रावण उस सेनामें सौ योजनतक पैठ गया और वहां उसने बाण वर्षायकर समस्त देवताओंकी सेनाको छाय दिया ॥१७॥ तब इन्द्रजीने अपनी सेनाका विनाश देख तुरन्त लौटकर सावधान चित्तसे रावणको रोका ॥ १८ ॥ एक क्षणभरमें ही इन्द्रजीने रावणको पकड लिया यह देखकर दानव और राक्षस

लोग हा ! "हम मारे गये" यह कह महाचिल्लाहट करने लगे॥१९॥ इसके उपरान्त रावणका पुत्र मेघनाद क्रोधसे पूर्ण हो रथपर चढ उस दारुण देवताओंकी
सेनामें पैठा॥२०॥ पूर्वकालमें महादेवजीसे जो माया मेघनादने पाई थी यह उसी मायाको प्रगट कर देवताओंकी अनीमें पैठ उसको पीड़ित करनेलगा॥२१॥
अधिक क्या कहें वह समस्त देवताओंको छोडकर एक इन्द्रजीके ही पीछेदौडा; परंतु महातेजस्वी इन्द्रजीने उस शत्रुके पुत्रको देखा भी नहीं॥२२॥ मेघनाद उस समय कवच
नहीं पहरेथा, देवता उसके ऊपर अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र चलानेलगे, परंतु किसी प्रकारसे मेघनादको भय नहीं हुआ॥२३॥ प्रथमतो उस मेघनादने उत्तम बाणोंसे रथहाँकते
हुए मातलिको मारा और फिर बाण वर्षायकर इन्द्रको पीडित किया॥२४॥ इसके पीछे इन्द्र रथ और सारथिको छोडकर ऐरावतपर सवार हो रावणके पुत्रको
ढूँढने लगा॥२५॥ उस समयमें वह महाबलवान् मेघनाद आकाशमें अदृश्य हो मायासे ढके हुए इंद्रको बाणोंसे व्याकुल करने लगा॥२६॥जब रावणके पुत्रने इन्द्रको थका हुआ

ततोरथंसमास्थायरावणिःक्रोधमूर्च्छितः॥तत्सैन्यमतिसंक्रुद्धःप्रविवेशसुदारुणम्॥२०॥तांप्रविश्यमहामायांप्राप्तांपशुपतेःपुरा॥प्रविवेशसुसंर
ब्धस्तत्सैन्यंसमभिद्रवत्॥२१॥ससर्वादेवतास्त्यक्त्वाशक्रमेवाभ्यधावत॥महेंद्रश्चमहातेजानापश्यच्चसुतंरिपोः॥२२विमुक्तकवचस्तत्रविध्यमानो
॥ २४ ॥ ततस्त्यक्त्वारथंशक्रोविससर्जचसारथिम् ॥ ऐरावतंसमारुह्यमृगयामासरावणिम् ॥२५॥ सतत्रमायाबलवानदृश्योऽथांतरिक्षगः॥ इंद्रं
पिरावणिः ॥ त्रिदशैःसुमहावीर्यैर्नचकारचकिंचन ॥ २३ ॥ समातलिसमायांतंताडयित्वाशरोत्तमैः ॥ महेंद्रंबाणवर्षेणभूयएवाभ्यवाकिरात्
मायापरिक्षिप्तंकृत्वासप्राद्रवच्छरैः॥२६॥सतंयदापरिश्रांतमिंद्रंजज्ञेथरावणिः॥ तदैनंमाययाबद्ध्वास्वसैन्यमभितोनयत् ॥२७॥ तंतुदृष्ट्वाबलात्ते
ननीयमानंमहारणात्॥ महेंद्रममराःसर्वेकिंनुस्यादित्यचिंतयन्॥२८॥दृश्यतेनसमायावीशक्रजित्समितिंजयः ॥ विद्यावानपियेनेंद्रोमायया
ऽपहृतोबलात् ॥२९॥ एतस्मिन्नंतरेक्रुद्धाःसर्वेसुरगणास्तदा ॥रावणंविमुखीकृत्यशरवर्षैरवाकिरन् ॥३०॥ रावणस्तुसमासाद्यआदित्यांश्चवसू
स्तदा॥नशशाकससंग्राममेयोद्धुंशत्रुभिरर्दितः॥३१॥ सतंदृष्ट्वापरिम्लानंप्रहारैर्जर्जरीकृतम् ॥ रावणिःपितरंयुद्धेऽदर्शनस्थोऽब्रवीदिदम् ॥३२॥

जाना तब उनको अपनी मायाके प्रभावसे बांधकर अपनी सेनाके निकट ले आया॥२७॥ जब बलपूर्वक महासंग्रामसे मेघनाद इन्द्रको बांधकर लेचला तब यह
देखकर देवता "यह क्या हुआ" यह कहकर चिन्ता करने लगे ॥२८॥ रणविजयी मायाका जाननेवाला मेघनाद किसीकी दृष्टि न आया. यद्यपि इन्द्रजी
अनेक प्रकारकी माया जानते थे तथापि इन्द्रजीत उनको बलपूर्वक हरण करके ले गया ॥२९॥ इसी अवसरमें समस्त देवताओंनेकुपित हो बाणोंको वर्षाय
रावणको व्याकुल कर उसको रणसे विमुख कर दिया॥३०॥ उस कालमें शत्रुओं करके संग्राममें पीडित होकर रावण वसुगण और आदित्योंके साथ युद्धकर
नेको समर्थ नहीं हुआ॥३१॥ रावण मारे प्रहारोंके जर्जर तनु हो संग्राममें अत्यन्त थक गया; तब रावणका पुत्र मेघनाद पिताकी यह दशा देख अन्तर्धानही

रहकर बोला कि ॥ ३२ ॥ हे तात ! हम लोगोंकी जयहुई है आप यह जान करके क्लेशको छोड सावधान हूजिये, अब रण समाप्त हुआ चलो गृहको चलें ॥३३॥ विशेष करके जो देवताओंकी सेनाके बरन्, त्रिलोकीके स्वामी हैं उनको हमने देवताओंकी सेनाके पकड़ रक्खाहै; सो अब देवताओंका गर्वसर्व होगया ॥३४॥तेजके बलसे शत्रुको जीतकर आप अभिलाषानुसार त्रिभुवनके सुखोंको भोगिये अब युद्ध करना निष्फल है सो अब आपको वृथा परिश्रम करनेका क्या प्रयोजन है? ॥३५॥ तब गणदेवता और देवता रावणके पुत्रके यह वचन सुन इन्द्रसे रहित हो चले गये॥३६॥ अत्यन्त बलवान् इन्द्रशत्रु विख्यात निशाचर पति रावण अपने पुत्रके ऐसे प्रिय वचन सुन रणसे लौट आदरसहित पुत्रसे बोला ॥३७॥ हे बेटा ! अतिबली पुरुषके समान पराक्रम प्रगट करकेइस अतुल

आगच्छताततगच्छामोरणकर्मनिवर्तताम् ॥ जितंनोविदितंतेऽस्तुस्वस्थोभवगतज्वरः ॥३३॥ अहंहिसुरसैन्यस्यत्रैलोक्यस्यचयःप्रभुः ॥ सगृहीतोदेवबलाद्भग्नदर्पाःसुराकृताः॥३४॥यथेष्टंभुंक्ष्वलोकांस्त्रीन्निगृह्यारातिमोजसा ॥ वृथाकिंतेश्रमेणेहयुद्धमद्यतुनिष्फलम् ॥३५॥ ततस्तेदैवतगणानिवृत्तारणकर्मणः ॥ तच्छ्रुत्वारावणेर्वाक्यंशक्रहीनाःसुरागताः ॥ ३६ ॥ अथसरणविगतमुत्तमौजास्त्रिदशरिपुःप्रथितोनिशाचरेंद्रः ॥ स्वसुतवचनमादृतःप्रियंतत्समनुनिशम्यजगादचैवसूनुम् ॥ ३७ ॥ अतिबलसदृशैःपराक्रमैस्त्वंममकुलवंशविवर्धनःप्रभो॥ यदयमतुलबलस्त्वयाद्यवैत्रिदशपतिस्त्रिदशाश्चनिर्जिताः ॥ ३८ ॥ नयरथमधिरोप्यवासवंनगरमितोव्रजसेनयावृतस्त्वम् ॥ अहमपितवपृष्ठतोद्रुतंसहसचिवैरनुयामिहृष्टवत् ॥३९॥ अथसबलवृतःसवाहनस्त्रिदशपतिंपरिगृह्यरावणिः ॥ स्वभवनमधिगम्यवीर्यवान्कृतसमरान्विससर्जराक्षसान् ॥४०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे एकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥ जितेमहेंद्रेऽति बलेरावणस्यसुतेनवै ॥ प्रजापतिंपुरस्कृत्यययुर्लंकांसुरास्तदा॥ १ ॥ तत्ररावणमासाद्यपुत्रभ्रातृभिरावृतम् ॥ अब्रवीद्गगनेतिष्ठन्सामपूर्वं प्रजापतिः ॥ २ ॥

बलशाली स्वर्गपति इन्द्रको और देवताओंको तुमने आज पराजित किया है, इस कारण तुम ही हमारे वंशके बढानेवाले और कुलके बढानेवाले हो ॥३८॥ तुम सेनाके साथ इस स्थानसे अपने नगरको चले जाओ और इन्द्रको रथपर चढाय ले जाओ हम भी हर्षित हो मंत्रियोंके साथ अति शीघ्र तुम्हारे पीछे २ आते हैं॥३९॥ इसके उपरान्त वीर्यवान् रावणका पुत्र मेघनाद स्वर्गपति इन्द्रको ग्रहणकर सेना और वाहनोंकेसहित अपने गृहमें जाय संग्राम करनेवाले राक्षसोंको अपने गृहमें जानेके लिये बिदा देता हुआ ॥ ४० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आ० उत्तरकांडे भाषायामेकोनत्रिंशः सर्गः ॥ २९ ॥ जब रावणके पुत्र मेघनादसे अति बलवान् इन्द्रजी पराजित हुए तब देवता ब्रह्माजीको आगे करके लंकाको गये ॥ १ ॥ उस कालमें ब्रह्माजी पुत्र और भाइयोंके साथ बैठे

हुए रावणके निकट जाय आकाशमें टिके हुए उस रावणको समझाने बुझाने लगे ॥ २ ॥ हे वत्स रावण ! हम तुम्हारे पुत्रके संग्राम करनेसे परम प्रसन्न हुए हैं ! अहो ! इसने कैसे आश्चर्यका विक्रम किया है ! इसको कैसा बल है इसका बल तुम्हारी समान पर तुमसे भी अधिक होगा ! ! ॥ ३ ॥ तुमने भी तेजके प्रभावसे समस्त त्रिभुवनको जीत लिया है तुम्हारी प्रतिज्ञा भी सफल हुई है इस लिये हम तुम दोनों पिता पुत्रके ऊपर प्रसन्न हुए हैं ॥ ४ ॥ हे रावण ! यह तुम्हारा पुत्र अतिबलवान् है इस लिये संसारमें एक इसका इन्द्रजीत नाम होगा ॥ ५ ॥ हे राजन् ! तुमने जिसका आश्रय लेकर देवतोंको अपने वश कर लिया है सो तुम्हारा यह राक्षस पुत्र बलवान् और अजीत होगा इसमें कुछ संदेह नहीं ॥ ६ ॥ इस लिये हे महावीर ! तुम पाकशासन इन्द्रको छोड

वत्सरावणतुष्टोऽस्मिंपुत्रस्यतवसंयुगे॥अहोऽस्यविक्रमौदार्यंतवतुल्योऽधिकोऽपिवा॥३॥ जितंहिभवतासर्वंत्रैलोक्यंस्वेनतेजसा॥कृताप्रतिज्ञा सफलाप्रीतोस्मिससुतस्यते ॥ ४ ॥ अयंचपुत्रोतिबलस्तवरावणवीर्यवान् ॥ जगतींद्रजिदित्येवपरिख्यातोभविष्यति ॥ ५ ॥ बलवान्दुर्जयश्चैवभविष्यत्येवराक्षसः॥यंसमाश्रित्यतेराजन्स्थापितास्त्रिदशावशे ॥ ६॥ तन्मुच्यतांमहाबाहोमहेंद्रःपाकशासनः ॥किंचास्यमोक्षणार्थाय प्रायच्छंतुदिवौकसः ॥ ७ ॥ अथाब्रवीन्महातेजाइन्द्रजित्समितिंजयः॥ अमरत्वमहंदेववृणेयद्येषमुच्यते ॥ ८ ॥ ततोब्रवीन्महातेजामेघनादं प्रजापतिः ॥ नास्तिसर्वामरत्वंहिकस्यचित्प्राणिनोभुवि ॥ ९ ॥ पक्षिणश्चतुष्पदोवाभूतानांमहौजसान् ॥ श्रुत्वापितामहेनोक्तमिंद्रजित्प्रभुणाव्ययम् ॥ १० ॥ अथाब्रवीत्सतत्रस्थंमेघनादोमहाबलः ॥ श्रूयतांवाभवेत्सिद्धिःशतक्रतुविमोक्षणे ॥ ११ ॥ ममेष्टंनित्यशोहव्यैर्मंत्रैःसंपूज्यपावकम् ॥ संग्राममवतर्तुंचशत्रुनिर्जयकांक्षिणः॥ १२ ॥

और इनके छोडनेमें देवता तुमको क्या दें सो भी तुम कहो ॥ ७ ॥ इसके उपरान्त समरविजयी महाबलवान् इन्द्रजीत बोला जो आप इन इन्द्रको छुटाना चाहते हैं तो हमको अमर वर दीजिये ॥ ८ ॥ तब महातेजस्वी ब्रह्माजी इन्द्रजीतसे बोले कि मेरे उत्पन्न किये कोई भी प्राणी किसी भी कालमें सर्व निमित्तसे अमर नहीं हो सकते ॥ ९ ॥ जैसे पक्षी अथवा चौपाया पशु या महातेजस्वी भूत अर्थात् मनुष्य अमर नहीं हैं. ब्रह्माजीके वचन सुन इन्द्रजीत ॥ १० ॥ जो कि महाबलवान् था ब्रह्माजीसे बोला कि, इन्द्रके छोडनेसे हमको जो सिद्धियें प्राप्त हों वह तुम सुनो॥ ११॥ विजयके लिये युद्ध करनेकी इच्छाकरके जब

हम विधिपूर्वक अग्निमें होम करें। १२॥ तब ही हमारे लिये घोडे जुता हुआ रथ अग्निसे निकले, सो जबतक उस रथपर हम चढे रहें तब तक अमर रहें बस यही हमारा निश्चित वर है ॥१३॥ हे देव ! जो वह संग्रामका यज्ञ विनाही समाप्त किये हम युद्ध करें तब उसी समय संग्राममें हमारा नाश हो ॥१४॥ हे देव ! सबही पुरुष तप करके अमरताको प्राप्तकरते हैं परन्तु हमने विक्रम प्रकाशकरके अमरताको पाया॥१५॥ तब देव पितामह ब्रह्माजी मेघनादसे बोले कि "ऐसाही होगा" तब इन्द्रजीतने इन्द्रको छोड दिया, और देवता भी स्वर्गको चले गये ॥१६॥ हे राम ! इसके उपरान्त इन्द्र अत्यन्त व्याकुल हुए उनकी देहका लावण्य नष्ट हो गया यह चिन्तायुक्त होकर विचारने लगे ॥१७॥ तब इन्द्रको चिन्ता करता हुआ देख ब्रह्माजीबोले कि हे इन्द्र ! अब चिन्ता तो

अश्वयुक्तोरथोमह्यमुत्तिष्ठेत्तुविभावसोः॥ तस्त्थस्यामरतास्यान्मेएषमेनिश्चितोवरः ॥१३॥तस्मिन्यद्यसमाप्तेचजप्यहोमेविभावसौ ॥ युध्येयं देवसंग्रामेतदामेस्याद्विनाशनम् ॥ १४ ॥ सर्वोहितपसादेववृणोत्यमरतांपुमान् ॥ विक्रमेणमयात्वेतदमरत्वंप्रवर्तितम् ॥ १५ ॥ एवमस्त्विवति तंचाहवायंदेवःपितामहः ॥ मुक्तश्चेंद्रजिताशक्रोगताश्चत्रिदिवंसुराः ॥ १६ ॥ एतस्मिन्नंतरेरामदीनोभ्रष्टामरद्युतिः ॥ इंद्रश्चिंतापरीतात्माध्यान तत्परतांगतः ॥ १७॥ तंतुदृष्ट्वातथाभूतंप्राहदेवःपितामहः ॥ शतक्रतोकिमुपुराकरोतिस्मसुदुष्कृतम् ॥ १८ ॥ अमरेंद्रमयाबुद्ध्याप्रजाःसृष्टा स्तथाप्रभो ॥ एकवर्णाःसमाभाषाएकरूपाश्चसर्वशः ॥ १९ ॥ तासांनास्तिविशेषोहिदर्शनेलक्षणेपिवा॥ ततोहमेकाग्रमनास्ताःप्रजाःसमचिंत यम् ॥ २० ॥ सोहंतासांविशेषार्थंस्त्रियमेकांविनिर्ममे ॥ यद्यत्प्रजानांप्रत्यंगंविशिष्टंतत्तदुद्धृतम् ॥ २१ ॥ ततोमयारूपगुणैरहल्यास्त्रीविनि र्मिता ॥ हलंनामेहवैरूप्यंहल्यंतत्प्रभवंभवेत् ॥ २२ ॥ यस्यानविद्यतेहल्यंतेनहाल्येतिविश्रुता ॥ अहल्येत्येवचमयातस्यानामप्रकीर्तितम् ॥ २३ ॥ निर्मितायांचदेवेंद्रतस्यांनार्यांसुरर्षभ ॥ भविष्यतीतिकस्यैषाममचिंताततोऽभवत् ॥ २४ ॥

करते हो परन्तु ऐसा कुकार्य क्यों किया ॥१८॥ हे देवराज ! संकल्पसे कुछ एक प्रजाओंको उत्पन्न किया था उनका वर्णवाक्य रूप सब एक प्रकारका था ॥ १९ ॥ उनके आकारमें या लक्षणमें कोई भेद नहीं था फिर हम एक मनसे उन सब प्रजाके विषयमें चिन्ता करने लगे ॥२०॥ फिर सोच विचार हमने उनमें विशेष होनेके लिये एक स्त्री बनाई, उसस्त्रीके बनानेमें यह युक्ति कीकि, सब प्रजाके उत्तम२ अंगोंसे सारभाग निकाल २ ॥२१॥ अतिरूपवती महागुण वती अहल्या नाम स्त्रीबनाई ! "हल शब्दका अर्थ विरूपता, उस विरूपतासे जो निंदा जन्मती; है उसका नाम हल्य" है ॥ २२ ॥ जिसमें हल्य अर्थात विरूपता विद्यमान नहीं है; वह अहल्या कहलाई जाती है, इस कारण हमने उसका अहल्या नाम प्रकाशित किया॥२३॥ देवश्रेष्ठ! हे इन्द्र उस नारीके उत्पन्न

होने पर हमारे मनमें यह चिंता हुई कि यह किसकी स्त्री होगी ? ॥ २४ ॥ हे इन्द्र ! तुम देवनाथ होनेके कारण अपने मनमें ऐसा जानते हुए कि " यह हमारी ही स्त्री होगी " ॥ २५ ॥ तब हमने उसको महात्मा गौतमजीके पास धरोहरकी भांति रख दिया, गौतमजीने बहुत दिनों पीछे उसको हमारे हाथ में सौंप दिया ॥ २६ ॥ इसके पीछे उन महामुनि गौतमजीकी इंद्रियोंको जीतना और तपकी सिद्धिको विचार अहल्याको उनकी भार्या बनानेको दे दिया ॥ २७ ॥ इसके उपरान्त अहल्याके सहित महर्षि गौतमजी सुखसे काल बिताने लगे इस प्रकारसे जब हमने अहल्याको गौतमजी की स्त्री बनाया तब सब देवता निराश हो गये ॥ २८ ॥ परंतु कामके वश होकर और क्रोधित होकर तुमने मुनि गौतमजीके आश्रममें जाकर देखा कि, अहल्या अग्निकी

त्वंतुशक्रतदानारींजानीषेमनसाप्रभो॥स्थानाधिकतयापत्नीममैषेतिपुरंदर ॥ २५॥सामयान्यासभूतातुगौतमस्यमहात्मना॥न्यस्ताबहूनिवर्षाणितेननिर्यातिताचह ॥ २६ ॥ ततस्तस्यपरिज्ञायमहास्थैर्यंमहामुनेः ॥ ज्ञात्वातपसिसिद्धिंचपत्न्यर्थंस्पर्शितातदा ॥ २७ ॥ सतयासहधर्मात्मारमतेस्ममहामुनिः॥आसन्निराशादेवास्तुगौतमेदत्तयातया ॥२८॥ त्वंक्रुद्धस्त्विहकामात्मागत्वातस्याश्रमंमुने ॥ दृष्टवांश्चतदातांस्त्रींदीप्तामग्निशिखामिव॥२९॥सात्वयाधर्षिताशक्रकामार्तेनसमन्युना ॥ दृष्टस्त्वंसतदातेनआश्रमेपरमर्षिणा ॥ ३० ॥ ततःक्रुद्धेनतेनासिशप्तःपरमतेजसा ॥ गतोसियेनदेवेंद्रदशाभागविपर्ययम् ॥ ३१ ॥ यस्मान्मेधर्षितापत्नीत्वयावासवनिर्भयात् ॥ तस्मात्त्वंसमरेशक्रशत्रुहस्तंगमिष्यसि ॥ ३२ ॥ अयंतुभावोदुर्बुद्धेयस्त्वयेहप्रवर्तितः ॥ मानुषेष्वपिलोकेषुभविष्यतिनसंशयः ॥३३॥ तत्रार्धंतस्ययःकर्तात्वय्यर्धंनिपतिष्यति ॥ नचतेस्थावरंस्थानंभविष्यतिनसंशयः ॥ ३४ ॥ यश्चयश्चसुरेंद्रःस्याद्ध्रुवःसनभविष्यति ॥एषशापोमयामुक्तइत्यसौत्वांतदाब्रवीत् ॥ ३५ ॥

चिताके समान दीप्ति पारही है ॥ २९ ॥ तब तुमने कामदेवसे उन्मत्त हो और क्रोधसे उसके सतीधर्मको हरण किया, जिसकाल गौतमजीने आश्रममें तुमको देख पाया ॥ ३० ॥ तुमको देखकर महामुनि गौतमजीने क्रोधित हो तुमको यह शाप दिया कि, तुम्हारी विपरीत दशा हो जायगी ॥३१॥ तुमने भयरहित होकर हमारी स्त्रीका सतीधर्म हरण किया है इसलिये तुम युद्धमें शत्रुकरके बांधे जाओगे॥ ३२ ॥ हे दुर्बुद्धे ! तुमने इस लोकमें जो यह दुर्नीति चलाई तो तुम्हारे दोषसे मनुष्य लोकमें भी यह जारपन चलेगा; इसमें कुछ संशय नहीं है ॥ ३३ ॥ जो पुरुषजारकर्म करेगा, सो उस पापका आधा अंश तो उस पुरुष को होगा; और आधा अंश तुम्हारे ऊपर पडेगा, और तुम्हारा स्थान स्थिर नहीं रहेगा ॥ ३४ ॥ और कोई भी जो इन्द्र होगा वह स्थिर नहीं रहेगा ।

और हमने भी तुमको यही शाप दिया है जब प्रजापति ब्रह्माजीने इन्द्रजीसे ऐसा कहा ॥३५॥ उसके पीछे वह महातपस्वी गौतमजी अपनी स्त्रीकी अत्यन्त निंदा करते हुए बोले कि, हे दुर्विनीते! हमारे आश्रमके समीपही तुम स्वरूप हीनहोकर रहोगी ॥३६॥ तुम रूप यौवन सम्पन्न होनेके कारण भी स्थिर नहीं रही असन्मार्गको अवलंबन किया, अधिककरके तुम इस लोकमें केवल अकेलीही रूपवती थी परन्तु अब ऐसा नहीं होगा ॥ ३७॥ इस एक जगह टिके हुए रूपको आश्रय करकेही इन्द्रको यह शरीर विकार उत्पन्न हुआहै इस कारण रूप सब प्रजाओंको प्राप्त होगा इसमें कुछ संदेह नहीं ॥३८॥ तबसेही प्रजा अधिकरूपवती होती है, तब अहल्या महर्षि गौतमजी मुनिको प्रसन्न करने लगी ॥३९॥ हे विप्रश्रेष्ठ! स्वर्गवासी इन्द्रने तुम्हारा रूपधारण करके अज्ञानके वशहो हमसे बलात्कार

तांतुभार्यांसुनिर्भत्स्र्यसोब्रवीत्सुमहातपाः ॥ दुर्विनीतेविनिध्वंसममाश्रमसमीपतः॥३६॥ रूपयौवनसंपन्नयस्मात्त्वमनवस्थिता ॥ तस्माद्रूपवतीलोकेनत्वमेकाभविष्यति ॥३७॥ रूपंचतेप्रजाःसर्वांगमिष्यतिनसंशयः ॥ यत्तदेकंसमाश्रित्यविभ्रमोयमुपस्थितः ॥ ३८ ॥ तदाप्रभृतिभूयिष्ठंप्रजारूपसमन्विता ॥ सातंप्रसादयामासमहर्षिंगौतमंतदा ॥३९॥ अज्ञानाद्धर्षिताविप्रत्वद्रूपेणदिवौकसा ॥ नकामकाराद्विप्रर्षेप्रसादंकर्तुमर्हसि ॥ ४० ॥ अहल्ययात्वेवमुक्तःप्रत्युवाचसगौतमः ॥ उत्पत्स्यतिमहातेजाइक्ष्वाकूणांमहारथः ॥ ४१ ॥ रामोनामश्रुतोलोकेवनंचाप्युपयास्यति॥ब्राह्मणार्थेमहाबाहुर्विष्णुर्मानुषविग्रहः ॥४२॥ तंद्रक्ष्यसितदाभद्रेततः पूजा भविष्यसि॥ सहिपावयितुंशक्तस्त्वयायद्दुष्कृतंकृतम्॥४३॥तस्यातिथ्यंचकृत्वावैमत्समीपंगमिष्यसि ॥ वत्स्य सित्वंमयासार्धंतदाहिवरवर्णिनि ॥४४॥ एवमुक्त्वासविप्रर्षिराजगामस्वमाश्रमम्॥तपश्चचारसुमहत्सापत्नीब्रह्मवादिनः ॥४५॥पापोत्सर्गाद्धितस्येदंमुनेःसर्वमुपस्थितम् ॥तत्स्मरत्वंमहाबाहोदुष्कृतंयत्त्वयाकृतम् ॥४६॥

किया है. कुछ हमारी कामेच्छासे ऐसा नहीं हुआ है सो हे विप्रश्रेष्ठ ! आप प्रसन्न होवें ॥४०॥ वह गौतमजी अहल्याके ऐसे वचन सुन्कर बोले कि, महावीर विष्णुजी मनुष्यदेह धारण करके इक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न होंगे वह महातेजस्वी महारथी लोकमें रामनामसे विख्यात होंगे और विश्वामित्रजीका कार्य सिद्ध करनेको वह वनमें आवेंगे ॥४१॥४२॥ हे भद्रे ! उनका दर्शन पानेसे तुम्हारे पाप दूर होंगे, वह श्रीरामचन्द्रजीही तुम्हाराकिया हुआ पाप दूर कर सकेंगे ॥४३ ॥ हे श्रेष्ठवर्णवाली ! उनकी पहुनई करके तुम जब हमारे निकट आओगी तब फिर तुम हमारे संग रह सकोगी ॥४४॥ यह कहकर फिर वह ब्रह्मर्षि अपने आश्रमको चले गये । तबसे इन ब्रह्मवादीकी स्त्री अहल्याने भी बडा तप करना आरंभ किया ॥ ४५ ॥ हे इन्द्र ! उन मुनिके शाप देनेसेही तुम्हारी यह दशा हुई

है । इस निमित्त हे महावीर ! पहले किये कुकार्यको अब तुम याद करो ॥४६॥ हे इन्द्र ! उसी शापके कारण शत्रुने तुमको बांधा और कोई कारण नहीं है, इस समय तुम शीघ्र नियमके सहित वैष्णवयज्ञका आरंभ करो ॥४७॥ उस यज्ञके करनेपर शुद्ध होकर तुम फिर देवलोकमें जा सकोके हे देवराज ! युद्धमें तुम्हारा पुत्र जयन्त मारा नहीं गया है ॥ ४८ ॥ बरन् पुलोमा उसका नाना उसको लेकर महासमुद्रमें चला गया है यह सुन इन्द्र यथाविधिसे वैष्णवयज्ञ कर ॥ ४९ ॥ फिर स्वर्गको चले गये और फिर देवराज होकर राज्य करने लगे, इन्द्रजितके बलकी कथा हमने तुमसे कही ॥५० ॥ और प्राणीकी तो बातही क्या है उसने तो देवराज इन्द्रको भी जीत लिया था तब राम लक्ष्मणजीने कहा कि यह तो बडे आश्चर्यकी बात है ॥ ५१ ॥ अगस्त्यजीके वचन सुनकर वानरराक्षसगण व विभीषणजी भी श्रीरामचन्द्रजीके निकट आय यह बोले कि॥५२॥आश्चर्य है, फिर विभीषणजी बोलेकि बहुत कालके पीछे आज हमको

तेनत्वंग्रहणंशत्रोर्यातोनान्येनवासव॥ शीघ्रंवैयजयज्ञंत्वंवैष्णवंसुसमाहितः॥ ४७ ॥पावितस्तेनयज्ञेनयास्यसेत्रिदिवंततः ॥ पुत्रश्चतवदेवेंद्रन विनष्टोमहारणे ॥ ४८ ॥ नीतःसन्निहितश्चैवआर्यकेणमहोदधौ ॥ एतच्छ्रुत्वामहेंद्रस्तुयज्ञमिष्ट्वाच्चवैष्णवम् ॥ ४९ ॥ पुनस्त्रिदिवमाक्रामद न्वशासच्चदेवराट् ॥ एतदिंद्रजितोनामबलंयत्कीर्तितंमया ॥ ५० ॥ निर्जितस्तेनदेवेंद्रःप्राणिनोऽन्येतुकिंपुनः ॥ आश्चर्यमितिरामश्चलक्ष्मण श्चाब्रवीत्तदा ॥ ५१ ॥ अगस्त्यवचनंश्रुत्वावानरराक्षसास्तदा ॥ विभीषणस्तुरामस्यपार्श्वस्थोवाक्यमब्रवीत् ॥ ५२ ॥ आश्चर्यस्मारितो स्म्यद्ययत्तद्दृष्टंपुरातनम् ॥ अगस्त्यंत्वब्रवीद्रामःसत्यमेतच्छ्रुतंचमे ॥ ५३ ॥ एवंरामसमुद्भूतोरावणोलोककंटकः ॥ सपुत्रोयेनसंग्रामेजितः शक्रःसुरेश्वरः ॥ ५४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे त्रिंशःसर्गः ॥ ३० ॥ ततोरामोमहातेजाविस्मया त्पुनरेवहि ॥ उवाचप्रणतोवाक्यमगस्त्यमृषिसत्तमम् ॥ १ ॥ भगवन्राक्षसःक्रूरोयदाप्रभृतिमेदिनीम् ॥ पर्यटत्किंतदालोकाःशून्याआसन्द्वि जोत्तम ॥ २ ॥ राजावाराजमात्रोवाकिंतदानात्रकश्चन ॥ धर्षणंयत्रनप्राप्तोरावणोराक्षसेश्वरः ॥ ३ ॥

फिर पुरानी बातें याद आगई तब श्रीरामचन्द्रजीने अगस्त्यजीसे कहा कि आपने जो कहा वह सत्य है विभीषणजीके निकट हमने यह सब वृत्तान्त सुना था ॥५३॥ अगस्त्यजीने कहा हे राम ! जिस रावणने सुरपति इन्द्रजीको उनके पुत्र जयन्तके साथ संग्राममें हरा दिया वह लोककण्टक रावण इसप्रकारसे उत्पन्न हुआ था ॥ ५४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आ० उत्तरकांडे भाषायां त्रिंशः सर्गः ॥ ३० ॥ इसके उपरांत महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजी प्रणाम कर विस्मययुक्त हो फिर ऋषिश्रेष्ठ अगस्त्यजीसे बोले ॥ १ ॥ हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! हे भगवन् ! क्रूर स्वभाववाला राक्षस रावण जिस कालमें पृथ्वीपर घूमता था तब क्या पृथ्वीपर कोई वीर नहीं था ? ॥२॥ राक्षसराज रावणको दंड देनेके लायक क्या कोई राजा या राजपुत्र उस समय पृथ्वीपर नहीं था ? ॥ ३ ॥

क्या उस समय सब महीपालोंका तेजबल जाता रहाथा? हमने सुनाहै कि, श्रेष्ठ अस्त्रोंके प्रभावसे रावणने सबही राजाओंको निकाल दियाथा॥ ४ ॥ भगवान् अगस्त्यजी श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुन रामचन्द्रजीसे बोले कि जैसे ब्रह्माजी हँसकर ईश्वरसे बोलते हैं ॥ ५ ॥ हे पृथ्वीनाथ ! राजश्रेष्ठ राम ! इस प्रकार राजाओंको पीडित करता हुआ रावण पृथ्वीपर घूमने लगा ॥ ६ ॥ स्वर्गपुरीके समान प्रभावाली एक माहिष्मती नामक पुरीहै, इस पुरीमें सदा अग्निदेवतावास करते हैं॥ ७॥ इस पुरीके राजाका नाम अर्जुन थां, यह अर्जुन अग्निके समान तेजस्वीथा, स्थापित अग्नि सदा इस नगरीमें बलता रहताथा॥८॥ हैहयाधिपति बलवान् राजा अर्ज्जुन स्त्रियोंके सहित जिसदिन नर्मदा नदीमें जलविहार करनेको गया था॥९॥ उसीदिन राक्षसोंका राजा रावण वहांपर जाय उन महाराक्ष

उताहोहतवीर्यास्तेबभूवुःपृथिवीक्षितः॥बहिष्कृतावरास्त्रैश्चबहवोनिर्जितानृपाः॥४॥ राघवस्यवचःश्रुत्वाअगस्त्योभगवानृषिः ॥ उवाचरामंप्रह सन्पितामहइवेश्वरम्॥५॥इत्येवंबाधमानस्तुपार्थिवान्पार्थिवर्षभ ॥ चचाररावणोरामपृथिवींपृथिवीपते ॥६॥ ततोमाहिष्मतींनामपुरींस्वर्गपुरी प्रभाम्॥संप्राप्तोयत्रसान्निध्यंसदासीद्वसुरेतसः॥७॥ तुल्यआसीन्नृपस्तस्यप्रभावाद्वसुरेतसः ॥ अर्जुनोनामयत्राग्निःशरकुंडेशयःसदा ॥८॥तमेव दिवसंसोथहैहयाधिपतिर्बली॥अर्जुनोनर्मदांरंतुंगतःस्त्रीभिःसहेश्वरः॥९॥ तमेवदिवसंसोथरावणस्तत्रआगतः॥ रावणोराक्षसेंद्रस्तुतस्यामात्या नपृच्छत ॥१०॥क्वार्जुनोनृपतिःशीघ्रंसम्यगाख्यातुमर्हथ॥रावणोहमनुप्राप्तोयुद्धेप्सुर्नृवरेणह॥११॥ ममागमनमप्यग्रेयुष्माभिःसन्निवेद्यताम् ॥ इत्येवंरावणेनोक्तास्तेमात्याःसुविपश्चितः॥१२॥ अब्रुवन्राक्षसपतिमसान्निध्यंमहीपतेः॥ श्रुत्वाविश्रवसःपुत्रःपौराणामर्जुनंगतम् ॥ १३ ॥ अप सृत्यागतोविंध्यंहिमवत्सन्निभंगिरिम् ॥ सतमभ्रमिवाविष्टमुद्भ्रांतमिवमेदिनीम् ॥ १४ ॥ अपश्यद्रावणोविंध्यमालिखंतमिवांबरम् ॥ सह स्रशिखरोपेतंसिंहाध्युषितकंदरम् ॥ १५ ॥प्रपातपतितैःशीतैःसाट्टहासमिवांबुभिः॥देवदानवगंधर्वैःसाप्सरोभिःसकिन्नरैः ॥ १६ ॥

के मंत्रियोंसे पूछता हुआ कि ॥१०॥ "नरनाथ अर्ज्जुन कहां है ?" तुम अतिशीघ्र उससे जाकर कहो कि मैं रावण राजाके साथ संग्राम करनेकी वासनासे आया हूं॥११॥ तुम सबसे पहले हमारे आनेका समाचार उससे कहो; राजाके मंत्रियोंने रावणके यह वचन सुन॥१२॥ रावणसे कहा कि इस समय महाराज पुरीमें नहीं हैं। विश्रवाका पुत्र रावण पुरवासियोंसे अर्जुनका जाना सुन॥१३॥ पुरीसे बाहर निकल हिमालयके समान विन्ध्याचलपर आया उस पर्वतको मेघके समान पृथ्वीपर टिका रक्खा रावण देखता हुआ॥१४॥ वह हजार श्रृंगवाला विन्ध्याचल मानों आकाशको स्पर्शही करना चाहता था, उसकी कंदरामें सिंह वास करते थे ॥१५॥ सैकडों श्वेतवर्णके झरने उस पर्वतसे गिर रहे थे मानो पर्वत शीतल जलके शब्दसे ठठायकर हँस रहाहै। देव, दानव' गन्धर्व, अप्सरा,

किन्नर ॥१६॥ अपनी स्त्रियोंके संग क्रीडा कर रहेथे, कि जिससे वह स्थान भी स्वर्गके समान शोभायमान हो रहा था, स्फटिकके समान निर्मल जलवाली नदियें वहां बह रही थीं ॥ १७ ॥ तिनके बहनेसे वह पर्वत चंचल जीभवाले हजार सर्पराजोंके समान शोभायमान हो रहा था, हिमालय पर्वतके समान ऊंचा गुफायुक्त पर्वत ॥ १८ ॥ विंध्याचलको देखते २ राक्षसराज रावण नर्मदाको चला गया इस पुण्यजलवाली पश्चिम सागरमें गिरती हुई नर्मदाका जल पत्थरके टुकडोंपर अतितेजसे बह रहा था॥ १९ ॥ ग्रीष्मके सताये महिष मृग, सिंह, व्याघ्र,रीछ और गजराज सबही घुसकर उस नर्मदाके जलको मथ रहे थे ॥ २० ॥ चकवे,कारण्डव, हंस, जलमुरगा और सारस सब इस नदीको ढके हुए सदा मतवालेपनसे शब्द कर रहे थे ॥२१॥ मनमोहिनी नर्मदा नदी मानो

स्वस्त्रीभिःक्रीडमानैश्चस्वर्गभूतंमहोच्छ्रयम्॥ नदीभिःस्यंदमानाभिःस्फटिकप्रतिमंजलम् ॥ १७ ॥ फणाभिश्चलजिह्वाभिरनंतमिवविष्ठितम् ॥ उत्क्रामंतंदरीवंतंहिमवत्सन्निभंगिरिम्॥१८॥पश्यमानस्ततोविंध्यंरावणोनर्मदांययौ ॥ चलोपलजलांपुण्यांपश्चिमोदधिगामिनीम्॥१९॥महिषैःसृमरैःसिंहैःशार्दूलर्क्षगजोत्तमैः ॥ उष्णाभितप्तैस्तृषितैःसंक्षोभितजलाशयाम्॥ २० ॥चक्रवाकैःसकारंडःसहंसजलकुक्कुटैः ॥ सारसैश्चसदामत्तैःकूजद्भिःसुसमावृताम् ॥२१॥ फुल्लद्रुमकृतोत्तंसांचक्रवाकयुगस्तनीम् ॥ विस्तीर्णपुलिनश्रोणींहंसावलिसुमेखलाम् ॥२२॥ पुष्परेण्वनुलिप्तांगींजलफेनामलांशुकाम् ॥ जलावगाहसुस्पर्शांफुल्लोत्पलशुभेक्षणाम् ॥२३॥ पुष्पकादवरुह्याशुनर्मदांसरितांवराम्॥ इष्टामिववरांनारींमवगाह्यदशाननः॥ २४ ॥ सतस्याःपुलिनेरम्यनानामुनिनिषेविते ॥ उपोपविष्टःसचिवैःसार्धराक्षसपुंगवः ॥२५॥प्रख्यायनर्मदांसोथगंगेयमिति रावणः ॥ नर्मदादर्शनेहर्षमाप्तवान्सदशाननः ॥२६॥ उवाचसचिवांस्तत्रसलीलंशुकसारणौ ॥ एषरश्मिसहस्रेणजगत्कृत्वेवकांचनम् ॥२७॥

वरवर्णिनी कामिनीकी समान कान्ति धारण किये हुए थी, खिलेहुए वृक्षही उसके गहने, चक्रवाकोंके जोडेही उसकेस्तन, विस्तरित मैदानही उसके नितम्ब, और हंसोंकी कतारही उस नदीकी मेखला थी॥२२॥ फूलोंका पराग उसके शरीरका अंगरागथा; जलोंमेंके झागही उसके श्वेत वस्त्र थे; स्नानका सुख इसके लिये स्पर्शसुख था; फूलेहुए कमल इसके शोभायमान नेत्र थे॥२३॥ रावण पुष्पकविमानसे उतरकर उत्तमा प्रियतमा स्त्रीकी समानसरितश्रेष्ठ नर्मदानदीमें अति शीघ्रस्नान करताहुआ॥२४॥इसके उपरान्त राक्षसश्रेष्ठ रावण अपनेमंत्रियोंके साथ अनेक मुनिजनोंसे सेवित; उस नदीकी रमणीक रेतीमें बैठा॥२५॥दशानन रावण गंगाके समान वह नदीकी प्रशंसा करके व उसकेदर्शनसे हर्ष प्राप्त करता हुआ ॥ २६ ॥ उस कालमें लीलापूर्वक हँसकर मारीच,शुक, सारण मंत्रियोंसे

रावणबोला कि देखोअपनी सहस्रों किरणोंसे जगत्को सुवर्णके वर्णका कर॥२७॥तीक्ष्ण ताप देनेवाले सूर्य आकाशमें विराजमान होरहेहैं परन्तु देखो हमको यहां बैठा हुआ जान मानो चन्द्रमाके समान शीतल किरणवाले हो गये॥२८॥ यह पवन नर्मदाका जल छूकर शीतल और सुगन्धित होनेके कारण सबका श्रम हरण करता है परन्तु हमारे भयके मारे इस समय यह भी सावधान होकर चलरहा है॥२९॥नाके मछलियें और तरंगोंसे व्याप्त यह श्रेष्ठनर्मदा नदी हमारे सुखकी बढोतरी करती हुईडरीहुई स्त्रीके समान जानपडती है ॥३०॥ इन्द्रके समान पराक्रमी राजाओंके प्रहारसे तुम लोग घायल हुए हो; इससे चन्दनके रसके समान रुधिरकी धारा तुम्हारे सब अंगोंमें लगीहुईहै॥३१॥ अतएव सार्वभौम इत्यादि मतवाले महागज जैसे गंगाजीमें स्नान करते हैं वैसेही तुम सुखको देनेवाली कल्याण कारिणी नर्मदा नदीमें स्नान करो॥३२॥ और इस महानदीमें नहायकर पापोंको दूर करो और हम भी अब शरदृतुके चन्द्रमाके समान प्रभायुक्त रेतीमें॥३३॥

तीक्ष्णतापकरःसूर्योनभसोमध्यमास्थितः॥ मामासीनंविदित्वैवचंद्रायतिदिवाकरः॥२८॥ नर्मदाजलशीतश्चसुगंधिःश्रमनाशनः॥ मद्भयादनिलोह्येषवात्यसौसुसमाहितः॥२९॥ इयंवापिसरिच्छ्रेष्ठानर्मदाशर्मवर्धिनी ॥ नक्रमीनविहंगोर्मिःसभयेवांगनास्थिता॥३०॥ तद्भवंतःक्षताःशस्त्रैर्नृपैरिंद्रसमैर्युधि॥चंदनस्यरसेनेवरुधिरेणसमुक्षिताः॥३१॥तेयूयमवगाहध्वंनर्मदांशर्मदांशुभाम्॥सार्वभौमसुखामत्तागंगामिवमहागजाः॥३२॥ अस्यांस्नात्वामहानद्यपाप्मानंविप्रमोक्ष्यथ ॥ अहमप्यद्यपुलिनेशरदिंदुसमप्रभे ॥३३॥ पुष्पोपहारंशनकैःकरिष्यामिकपर्दिनः ॥ रावणेनैवमुक्तास्तुप्रहस्तशुकसारणाः ॥३४॥ समहोदरधूम्राक्षानर्मदांविजगाहिरे ॥ राक्षसेंद्रगजैस्तैस्तुक्षोभितानर्मदानदी ॥३५॥ वामनांजनपद्माद्यैर्गंगाइवमहागजैः ॥ ततस्तेराक्षसाःस्नात्वानर्मदायांमहाबलाः॥३६॥ उत्तीर्यपुष्पाण्याजह्रुर्बल्यर्थंरावणस्यतु॥ नर्मदापुलिनेहृद्येशुभ्राभ्रसदृशप्रभे ॥३७॥ राक्षसैस्तुमुहूर्तेनकृतःपुष्पमयोगिरिः ॥ पुष्पेषूपहृतेष्वेवरावणोराक्षसेश्वरः॥३८॥ अवतीर्णोनदींस्नातुंगंगामिवमहागजः ॥ तत्रस्नात्वाचविधिवज्जप्त्वाजप्यमनुत्तमम् ॥ ३९ ॥

कपर्दी महादेवजीकी पूजा करनेके अर्थ फूलोंकी भेंटको सजाते हैं रावणके यह वचन सुनकर, प्रहस्त, शुक, सारण ॥ ३४ ॥ महोदर, धूम्राक्ष इत्यादि मंत्रिगण नर्मदाके जलमें स्नान करते हुए राक्षसपतिरूप हाथियोंने नर्मदा नदीको खलबलाय डाला ॥३५॥ जैसे वामन, अंजन और पद्म नामक महादिग्गज गंगाजीको चलायमान करतेहैं, फिर वह महाबलवान राक्षसगण नर्मदा नदीमें स्नान करके॥३६॥ किनारेपर आय रावणकी पूजा करनेके अर्थ फूल बीननेलगे श्वेत बादलके समान श्वेतवर्णवाली नर्मदा नदीकी रेतीमें ॥३७॥ राक्षसोंने एक मुहूर्त भरके बीचमें फूलोंका ढेर पर्वतके समान कर दिया जब फूल आगये तब राक्षसपति रावण ॥ ३८ ॥ स्नान करनेके लिये नर्मदा नदीमें उतरा जैसे गंगाजीके जलमें महागज स्नान करता है तब वह रावण स्नान करके अतिश्रेष्ठ जपने

योग्य मंत्रका जप करके जलसे निकला ॥ ३९ ॥ रावण नर्मदा नदीके जलसे निकल भीगे वस्त्रोंको त्याग श्वेत वस्त्र धारण करता हुआ ॥ ४० ॥ तबरावण पूजाका स्थान निश्चय करनेके निमित्त हाथ जोडे हुए नर्मदा नदीकी रेतीमें गमन करने लगा, और भी समस्त राक्षस मूर्तिमान चलतेहुए पर्वतके समान उस रावणके पीछे२ चलने लगे ॥ ४१ ॥ राक्षसोंका राजा रावण जहां २ जाता था, राक्षस लोग उसी२ स्थानमें सुवर्णका शिवलिंगलिये जाते थे ॥ ४२ ॥ इसके उपरान्त रावण रेतीकी वेदीपर इस शिवलिंगको स्थापन कर अमृतके समान सुगन्धियुक्त गन्ध और फूलोंसे महादेवजीकी पूजाकरने लगा ❀ ॥४३॥ साधु लोगोंके क्लेशका नाशक करनेवाले वरदाई चन्द्रभूषण प्रभु महादेवजीकी सर्वप्रकारसे पूजाकर वह निशाचर रावण सब हाथ फैलाये नृत्य और गान करने

नर्मदासलिलात्तस्मादुत्ततारसरावणः॥ततःक्लिन्नांबरंत्यक्त्वाशुक्लवस्त्रसमावृतम्॥४०॥रावणंप्रांजलियांतमन्वयुःसर्वराक्षसाः॥तद्गतीवशमापन्ना मूर्तिमंतइवाचलाः॥४१॥यत्रयत्रचयातिस्मांरावणोराक्षसेश्वरः ॥ जांबूनदमयंलिंगंतत्रतत्रस्मनीयते॥४२॥ वालुकावेदिमध्येतुल्लिंगंस्थाप्यरावणः ॥ अर्चयामासगंधैश्चपुष्पैश्चामृतगंधिभिः ॥४३॥ ततःसतामार्तिहरंपरंवरप्रदंचंद्रमयूखभूषणम् ॥ समर्चयित्वासनिशाचरोजगौप्रसार्यहस्तान्प्रणनर्तचाग्रतः ॥४४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे एकत्रिंशः सर्गः ॥ ॥ ३१ ॥नर्मदापुलिनेयत्रराक्षसेंद्रःसदारुणः ॥ पुष्पोपहारंकुरुतेतस्माद्देशाददूरतः ॥१॥ अर्जुनोजयतांश्रेष्ठोमाहिष्मत्याःपतिःप्रभुः ॥ क्रीडतेसहनारीभिर्नर्मदातोयमाश्रितः ॥२॥ तासांमध्यगतोराजारराजचतदार्जुनः ॥करेणूनांसहस्रस्यमध्यस्थइवकुंजरः ॥ ३ ॥ जिज्ञासुःसतुबाहूनांसहस्रस्योत्तमबलम् ॥ रुरोधनर्मदावेगंबाहुभिर्बहुभिर्वृतः॥४॥कार्तवीर्यभुजासक्तंतज्जलंप्राप्यनिर्मलम्॥ कूलोपहारंकुर्वाणंप्रतिस्रोतःप्रधावति ॥ ५ ॥

लगा॥४४॥इत्यार्षेश्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषायामेकत्रिंशः सर्गः॥३१॥ राक्षसश्रेष्ठरावणने पुण्यजलवाली नर्मदा नदीके तीर जिस स्थानमें भेंट देनेके लिये फूलोंका ढेर इकट्ठा किया था॥१॥ उसकेही निकट में माहिष्मतीका राजा विजयिश्रेष्ठ प्रतापवान् नरश्रेष्ठ अर्जुनबहुतसारी स्त्रियोंके साथ नर्मदाके जलमें विहार करता था॥ २ ॥ उसकालमें राजा अर्जुन उन स्त्रियोंके मध्यमें कैसा शोभायमान होरहा, कि मानों हजार हथिनियोंमें एक गजराज शोभित हो॥३॥ वह राजा अपनी हजार भुजाओंका उत्तमबल जाननेका आभिलाषी हो बहुत बांहोंसे रूंधकर नर्मदाके वेगको रोकने लगा ॥४॥ कार्तवीर्य अर्जुनने जब बाहोंवे

❀ भैरवी । भज रे मन भूतनाथ भव भवभय वारण । आदि देव शूलपाणि त्रिपुरासुर मारण ॥ १ ॥ पहरे दृढ वाघ छाल लटपट जाल काल काल, भवतन जन तारण ॥ २ ॥ भजरे० ॥ गङ्गाधर चन्द्रभाल लोकनाथ लोकपाल, दीन शर शिव दयाल, व्याल माल धारण ॥ ३ ॥ भजरे० डिमडिम डिम डमरु बोल, श्रवण कुंडल अमोल राजत छबि अति अतोल "मिश्र" काज सारण ॥ ४ ॥ भजरे मन भूतनाथ भव भव भय कारण ॥

समूहसे नर्मदाके जलको रोका तबवह जल किनारेपर उफनताहुआ उलटा बहने लगा॥५॥मच्छ, नाके, फूल व कुशोंसे शोभित नर्मदाके जलका वेग वर्षाकाल के समान प्रकाशित होने लगा॥६॥ उस जलके वेगने कार्तवीर्य करके मानों भेजाही जायकर रावणके उन सब फूलोंको बहायदिया जिनको उसने शिवजीकी पूजाके लिये इकट्ठा किया था ॥७॥ उस कालमें रावणकी पूजा समाप्त नहीं हुई थी तब रावणने अधबिचसेही पूजाको छोडदिया, और वह प्रतिकूल कामिनी के समान नर्मदा नदीको देखने लगा ॥८॥ उसने देखा कि नर्मदा नदी पश्चिमकी ओरको ज्वारके समान बढकर पूर्वकी ओरको बही आतीहै ॥९॥ विकार रहित कामिनीके समान नर्मदानदी अत्यन्त स्थिरभावसे विराजमान थी इसकारण पक्षीगण वहां विना उद्वेगके शोभायमान थे॥१०॥ वह रावण मुखसे शब्द

समीननक्रमकरःसपुष्पकुशसंस्तरः ॥ सनर्मदांभसोवेगःप्रावृट्कालइवाबभौ ॥ ६ ॥ सवेगःकार्तवीर्येणसंप्रेषितइवांभसः॥ पुष्पोपहारंसकलं रावणस्यजहारह ॥ ७ ॥ रावणोऽर्धसमाप्तंतमुत्सृज्यनियमंतदा ॥ नर्मदांपश्यतेकांतांप्रतिकूलांयथाप्रियाम् ॥८॥ पश्चिमेनतुतंदृष्ट्वासागरोद्गारसन्निभम् ॥ वर्धंतमंभसोवेगंपूर्वामाशांप्रविश्यतु॥९॥ ततोनुद्भ्रांतशकुनांस्वभावेपरमेस्थिताम् ॥ निर्विकारांगनाभासामपश्यद्रावणेनदीम् ॥ १० ॥ सव्येतरकरांगुल्याह्यदब्दास्योदशाननः ॥ वेगप्रभवमन्वेष्टुंसोदिशच्छुकसारणौ ॥११॥ तौतुरावणसंदिष्टौभ्रातरौशुकसारणौ ॥ व्योमांतरगतौवीरौप्रस्थितौपश्चिमामुखौ ॥ १२ ॥ अर्धयोजनमात्रंतुगत्वातौरजनीचरौ ॥ पश्येतांपुरुषंतोयेक्रीडंतंसहयोषितम् ॥ १३ ॥ बृहत्सालप्रतीकाशंतोयव्याकुलमूर्धजम् ॥ मदरक्तांतनयनंमदव्याकुलचेतसम् ॥ १४ ॥ नदींबाहुसहस्रेणरुंधंतमरिमर्दनम् गिरिंपादसहस्रेणरुंधंतमिव मेदिनीम् ॥ १५ ॥ बालानांवरनारीणांसहस्रेणसमावृतम् ॥ समदानांकरेणूनांसहस्रेणेवकुंजरम् ॥१६॥ तमद्भुततरंदृष्ट्वाराक्षसौशुकसारणौ ॥ सन्निवृत्तावुपागम्यरावणंतमथोचतुः ॥ १७ ॥

न करके नर्मदा नदीके वेगका कारण जाननेके लिये दाहिने हाथकी उंगलीसे शुकसारणको संकेत करताहुआ॥११॥ वीरश्रेष्ठ दोनोंभ्राता वह शुक औरसारण रावणकी आज्ञाके अनुसार पश्चिमकी ओरको चले गये॥१२॥ इन दुष्ट दोनों निशाचरोंने दो कोश मार्ग चलकर देखा कि, एक पुरुष कुछ एक स्त्रियोंको लेकर जलविहार कर रहा है ॥१३॥ वह पुरुष बडेभारी शालवृक्षके समान ऊंचा व मोटा था, मदिराके पीनेसे मतवाला हो रहा था, उसके केश जलमें भीग रहे थे, उसके दोनों नेत्र कुछ लाल होरहे थे॥१४॥ सुमेरु पर्वत जिस प्रकार सहस्र चरणोंसे पृथ्वीको धारण किये हुएहैं वैसेही यह पुरुष अपनी सहस्र बाहोंसे नदीके वेगको रोक रहा था ॥१५॥ सहस्र २ शोभायमान युवतियें उसको घेर रही हैं मनो हजारों मदमाती हथिनियें गजराजको पकडे हुए हैं ॥१६॥ राक्षस शुक

और सारण उस अद्भुतपुरुषको देख लौटकर रावणके पास आय उसका वृत्तान्तसुनाने लगे ॥ १७ ॥ कि राक्षसेश्वर ! बडेभारी शालवृक्षके समान विशाल कोई पुरुष पुलके समान नर्मदाका जल रोक स्त्रियोंके साथ विहार कररहा है ॥ १८ ॥ उसकी बाँहोंके द्वारा नर्मदाका जल रुक जानेसे यह नदी बारंबार बढती है, जैसे पूर्वकालमें समुद्र बढा था॥ १९ ॥ शुक सारणके मुखसे यह वचन सुनकर रावण यह कह संग्राम करनेकी लालसासे गया कि, बस यही अर्जुन है ॥२०॥ राक्षसराज रावणने जब कार्त्तवीर्य अर्जुनके विरुद्ध युद्धयात्रा की, तब धूरिसे मिला हुआ पवन अतिप्रचंड करके बडे वेगसे चलने लगा ॥ २१ ॥ मेघ समस्त वर्षा करके एकाएकी गर्ज उठे, राक्षसराज रावण महोदर महापार्श्व धूम्राक्ष और शुक सारणके सहित अर्जुनकी ओरको गया ॥ २२ ॥ वह इन

बृहत्सालप्रतीकाशःकोऽप्ययसौराक्षसेश्वर ॥ नर्मदांरोधवद्बुद्ध्वाक्रीडापयतियोषितः ॥ १८ ॥ तेनबाहुसहस्रेणसन्निरुद्धजलानदी ॥ सगरोद्गार संकाशानुद्गारान्सृजतेमुहुः ॥ १९ ॥ इत्येवंभाषमाणौतौनिशम्यशुकसारणौ ॥ रावणोऽर्जुनइत्युक्त्वासययौयुद्धलालसः ॥ २० ॥ अर्जुनाभिमुखेतस्मिन्रावणेराक्षसाधिपे ॥ चंडःप्रवातिपवनःसनादःसरजस्तथा ॥ २१ ॥ सकृदेवकृतोरावःसरक्तपृषतोघनैः ॥ महोदरमहा पार्श्वधूम्राक्षशुकसारणैः ॥ २२ ॥ संवृतोराक्षसेंद्रस्तुतत्रागाद्यत्रचार्जुनः ॥ अदीर्घेणैवकालेनसतदाराक्षसोबली ॥ २३ ॥ तंनर्मदाह्रदंभीम माजगामांजनप्रभः ॥ सतत्रस्त्रीपरिवृतंवासिताभिरिवद्विपम् ॥ २४ ॥ नरेंद्रंपश्यतेराजाराक्षसानांतदार्जुनम् ॥ सरोषाद्रक्तनयनोराक्षसेंद्रोब लोद्धतः ॥ २५ ॥ इत्येवमर्जुनामात्यानाहगंभीरयागिरा ॥ अमात्याःक्षिप्रमाख्यात हैहयस्यनृपस्यवै ॥ २६ ॥ युद्धार्थंसमनुप्राप्तोरावणो नामनामतः ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वामंत्रिणोऽथार्जुनस्यते ॥ २७ ॥ उत्तस्थुःसायुधास्तंचरावणंवाक्यमब्रुवन् ॥ युद्धस्यकालोविज्ञातःसाधुभोः साधुरावण ॥ २८ ॥ यःक्षीबंस्त्रीगतंचैवयोद्धुमुत्सहसेनृपम् ॥ स्त्रीसमक्षगतंयत्त्वंयोद्धुमुत्सहसेनृपम् ॥ २९ ॥

सबोंके सहित बलवान् राक्षस अतिशीघ्र वहां आय पहुँचा जहां अर्जुन विहार कर रहा था ॥ २३ ॥ अंजनके समान काली प्रभावाला रावण जब उस कुंडके पास पहुँचा तो सुगन्धित स्त्रियोंके संग क्रीडा करते हुए हाथीके समान॥ २४ ॥ राजा अर्जुनको उस राक्षसपतिने देखा और देखतेही मारे क्रोधके लाल नेत्र कर ॥२५॥ अर्जुनके मंत्रियोंसे गंभीर शब्दकर यह बोला हे मंत्रियो ! तुम लोग हैहय नृपति अर्जुनसे अति शीघ्र कहोकि ॥ २६ ॥ रावण नाम राक्षस पति आपके साथ युद्ध करनेको आया है; रावणके यह वचन सुन अर्जुनके मंत्री ॥ २७ ॥ सब शस्त्र उठाकर रावणसे यह वचन बोले हे साधु रावण ! तुमने युद्धके लिये अच्छा समय छांटा है ॥ २८ ॥ इस समय मद पीकर मतवाला हो हमारा राजा स्त्रियोंके साथ जलविहार कर रहा है; और तुम इस समय

उनके साथ युद्ध करनेकी इच्छा करते हो॥२९॥ इसलिये हे रावण! तुम इससमय क्षमा करके आज रात्रिको इसी स्थानमें वासकरो; अथवा जोतुमको राजा अर्जुनके साथ युद्ध करनेकी अधिक इच्छा हो॥३०॥ और युद्धकी अभिलाषासे तुम्हें अतितलावेली पडीहो तो पहले तुम युद्धकरके हमारा विनाश करो फिर राजा अर्जुनके साथ युद्धकरना ॥३१॥ उसके उपरान्त रावणके क्षुधित मंत्रियोंने राजाके कुछ मंत्रियोंको मारडाला, और कुछको भक्षणकरना आरंभ किया ॥ ३२ ॥ इसके पीछे अर्जुनके सेवकोंका और रावणके मंत्रियोंका "हलहला" शब्द नर्मदाके किनारे गुंजारने लगा॥३३॥ अर्जुनके मंत्रिगण, बाण, तोमर, प्रास, त्रिशूल और वज्रादि आयुधोंको मार मंत्रियोंके सहित रावणको पीडित करते हुए चारों ओरसे धाये ॥ ३४ ॥ नाके, मीन और मच्छसहित सागरमें

क्षमस्वाद्यदशग्रीवउष्यतांरजनीत्वया ॥ युद्धःश्रद्धातुयद्यस्तिततातसमरेऽर्जुनम् ॥ ३० ॥ यदिवापित्वरातुभ्यंयुद्धतृष्णासमावृता ॥ निपात्यास्मान्रणेयुद्धमर्जुनेनोपयास्यसि ॥ ३१ ॥ ततस्तैरावणामात्यैरमात्यास्तेनृपस्यतु ॥ सूदिताश्चापितेयुद्धेभक्षिताश्चबुभुक्षितैः ॥३२॥ ततोहलहलाशब्दोनर्मदातीरगोबभौ ॥ अर्जुनस्यानुयात्राणांरावणस्यचमंत्रिणाम् ॥ ३३ ॥ इषुभिस्तोमरैःप्रासैस्त्रिशूलैर्वज्रकर्षणैः ॥ सरावणानर्दयंतः समंतात्समभिद्रुतः ॥३४॥ हैहयाधिपयोधानांवेगआसीत्सुदारुणः ॥ सनक्रमीनमकरसमुद्रस्येवनिःस्वनः ॥३५॥ रावणस्यतुतेऽमात्याःप्रहस्तशुकसारणाः ॥कार्तवीर्यबलंक्रुद्धानिहंतिस्मस्वतेजसा ॥३६॥ अर्जुनायतुतत्कर्मरावणस्यसमंत्रिणः ॥ क्रीडमानायकथितंपुरुषैर्भयविह्वलैः ॥ ३७ ॥ श्रुत्वानभेतव्यमितिस्त्रीजनंसतदार्जुनः ॥ उत्ततारजलात्तस्माद्गंगातोयादिवांजनः ॥ ३८ ॥ क्रोधदूषितनेत्रस्तुसतदार्जुनपावकः ॥ प्रजज्वालमहाघोरोयुगांतइवपावकः ॥ ३९ ॥ सतूर्णतरमादायवरहेमांगदोगदाम् ॥ अभिदुद्रावरक्षांसितमांसीवदिवाकरः ॥ ४० ॥

जिसप्रकार शब्द हुआ करता है वैसेही हैहयाधिपति अर्जुनके वीर लोगोंका दारुण वेग हुआ ॥३५॥ इसके उपरान्त प्रहस्त और शुक सारण इत्यादि रावणके मंत्रियोंने अति क्रोधित हो अपना विक्रम प्रकाश करते हुए अर्जुनकी सेनाका विनाश करना आरंभ किया ॥३६॥ तब दूतोंने भयके मारे चकित हो विहार करते हुए राजा अर्जुनके निकट जायकर उससे रावणका और रावणके मंत्रियोंका यह कार्य सुनाया ॥३७॥ तब वह राजा अर्जुन स्त्रियोंको "कुछ भय नहीं है" कहकर गंगाजीके जलसे निकलते हुए अंजननामक दिग्गजके समान नर्मदाके जलसे निकला ॥३८ ॥ युगान्त कालकी अग्निके समान अर्जुनरूप पावक क्रोधसे नेत्र लाल कर प्रज्वलित हुआ ॥३९॥ उत्तम हेम अंगदधारी अर्जुन अतिशीघ्र गदाग्रहण करके राक्षसोंके सन्मुख दौडा जैसे सूर्य भगवान् अन्धकारपर

झपटतेहैं ॥ ४० ॥ राजा अर्जुन दोनों हाथसे गदा उठाय गरुडजीके समान अति वेगसे आय पहुँचा॥४१॥ कि विंध्याचल पर्वत जिस प्रकार सूर्यभगवान्के मार्गको रोके हुए था वैसेही प्रहस्त मूशल हाथमेंलेकर राजा अर्जुनका मार्ग रोक विंध्यपर्वतकेसमान अटलभावसे विराजमान होगया॥४२॥ फिर मदसे उद्धत हुए प्रहस्तने क्रोधकर लोहेके चंदोंसे बँधा हुआ घोर मूसल राजाके मारनेको छोड यमराजके समान शब्द किया ॥४३॥ मानो सब दिशाओंको भस्म करनेहीके लिये अशोकके फूलकी चेटिके समान अग्नि प्रहस्तके हाथते छूटे मूसलसे राजाके सन्मुख उत्पन्न हुई ॥४४॥ तब कार्त्तवीर्य अर्जुनने विकलताविहीन हो उस अपनेऊपर आतेहुए मूसलको अपनी गदासे अतिसावधानतापूर्वक रोका॥४५॥ इसके पीछे गदाधारी हैहय पति अर्जुन अपनी पांचसौ बांहोंसे उस भारी गदाको

बाहुविक्षेपकरणांसमुद्यम्यमहागदाम् ॥ गारुडंवेगमास्थायआपपातैवसोऽर्जुनः ॥ ४१ ॥ तस्यमार्गंसमारुध्यविंध्योऽर्कस्येवपर्वतः॥ स्थितो विंध्यइवाकंप्यःप्रहस्तोमुसलायुधः ॥ ४२ ॥ ततोऽस्यमुसलंघोरंलोहबद्धंमदोद्धतः॥प्रहस्तःप्रेषयन्क्रुद्धोररासचयथांतकः ॥ ४३ ॥ तस्याग्रेमुसलस्याग्निरशोकापीडसन्निभः ॥ प्रहस्तकरमुक्तस्यबभूवप्रदहन्निव ॥४४॥ आधावमानंमुसलंकार्तवीर्यस्तदार्जुनः॥ निपुणंवंचयामासगदया गतविक्लवः ॥ ४५ ॥ ततस्तमभिदुद्रावसगदोहैहयाधिपः ॥भ्रामयाणोगदांगुर्वींपंचबाहुशतोच्छ्रयाम्॥ ४६॥ ततोहतोऽतिवेगेनप्रहस्तोगदया तदा॥ निपपातस्थितःशैलोवज्रिवज्रहतोयथा॥४७॥ प्रहस्तंपतितंदृष्ट्वामारीचशुकसारणाः ॥ समहोदरधूम्राक्षाअपसृष्टारणाजिरात् ॥ ४८ ॥ अपक्रांतेष्वमात्येषुप्रहस्तेचनिपातिते ॥ रावणोऽभ्यद्रवत्तूर्णमर्जुनंनृपसत्तमम्॥ ४९ ॥ सहस्रबाहोस्तद्युद्धंविंशद्बाहोश्चदारुणम् ॥नृपराक्षसयोस्तत्रआरब्धंरोमहर्षणम्॥५०॥ सागराविवसंक्षुब्धौचलमूलाविवाचलौ ॥ तेजोयुक्ताविवादित्यौप्रदहंताविवानलौ॥ ५१ ॥ बलोद्धतौयथानागौवासितार्थेयथावृषौ॥ मेघाविवविनर्दंतौसिंहाविवबलोत्कटौ ॥ ५२ ॥

उठाय घुमाते २ प्रहस्तके सम्मुख धाया ॥ ४६ ॥ उस काल अतिवेगवान् उस गदासे घायल हो प्रहस्त कुछ काल खडा रहकर फिर गिर पडा जैसे इन्द्रजीका वज्र लगनेसे पर्वतका शिखर गिरे ॥ ४७ ॥ प्रहस्तको गिरा हुआ देख मारीच, शुक, सारण, महोदर, और धूम्राक्ष रणभूमिसे भाग गये ॥४८॥ प्रहस्तके गिरजाने और और मंत्रियोंके भागजानेपर रावण अति शीघ्र नृप अर्जुनके ऊपर धावमान हुआ ॥४९॥ सहस्रबाहु नरपति अर्जुन और बीस बांहोंवाले राक्षस रावणका घोर रोमहर्षण दारुण संग्राम होने लगा ॥५०॥ खलबलाते हुए दो समुद्र, गमन करनेवाले दो पर्वत; तेजयुक्त दो दिवाकर, दहन करनेवाले दो अग्नि ॥५१॥ हथिनीके लिये युद्ध करते हुए दो बलवान् हस्तियोंके समान, गर्जते हुए दो मेघोंके समान और बलगर्वित दो सिंहके समान ॥ ५२ ॥

रुद्र व कालकी नाईं वह राक्षस रावण और अर्जुन दोनों गदा ग्रहण करके एक दूसरेको अत्यन्त ताडन करने लगे ॥ ५३ ॥ जिस प्रकार पर्वत घोर प्रहारको भी सहन कर लेते हैं; वैसेही वह नर और राक्षस गदा घातको सहन करने लगे ॥ ५४ ॥ जैसे वज्रके गिरनेका शब्द सुनाई आता है; वैसेही उनके गदा प्रहार का शब्द दशों दिशामें गूँजने लगा ॥ ५५ ॥ अर्जुनकी उस गदाने शत्रुकी छातीमें गिरकर बिजलीके समान आकाशमंडलको सुवर्णके रंगका कर दिया ॥ ५६ ॥ वैसेही रावणकी गदा भी वारंवार अर्जुनकी छातीपर गिरकर महापर्वतके ऊपर गिरी हुई उल्काके समान प्रकाशित होने लगी ॥ ५७ ॥ अर्जुन या राक्षसपति किसीको भी कुछ क्लेश नहीं हुआ, बरन् बलि और इन्द्रकी नाईं उन दोनोंका समान संग्राम होने लगा ॥ ५८ ॥ जैसे दो बैल सींगोंसे लडते

रुद्रकालाविवक्रुद्धौतौतदाराक्षसार्जुनौ ॥ परस्परंगदांगृह्यताडयामासतुर्भृशम् ॥५३॥ वज्रप्रहारानचलायथाघोरान्विषेहिरे ॥ गदाप्रहारांस्तौत त्रसेहातेनरराक्षसौ ॥५४॥ यथाशनिरवेभ्यस्तुजायतेऽथप्रतिश्रुतिः ॥ तथातयोर्गदापोथैर्दिशःसर्वाःप्रतिश्रुताः ॥५५॥ अर्जुनस्यगदासातुपात्य मानाऽहितोरसि ॥ कांचनाभंनभश्चक्रेविद्युत्सौदामनीयथा॥५६॥ तथैवरावणेनापिपात्यमानामुहुर्मुहुः॥अर्जुनोरसिनिर्भातिगदोल्केवमहागिरौ ॥ ५७ ॥ नार्जुनःखेदमायातिनराक्षगणेश्वरः ॥ सममासीत्तयोर्युद्धंयथापूर्वंबलींद्रयोः ॥५८॥ शृंगैरिववृषायुध्यन्दंताग्रैरिवकुंजरौ ॥ परस्परंवि निघ्नंतौनरराक्षससत्तमौ ॥५९॥ ततोऽर्जुनेनक्रुद्धेनसर्वप्राणेनसागदा ॥ स्तनयोरंतरेमुक्तारावणस्यमहोरसि ॥ ६० ॥ वरदानकृतत्राणेसाग दारावणोरसि ॥ दुर्बलेवयथावेगंद्विधाभूतापतत्क्षितौ ॥६१॥ सत्वर्जुनप्रयुक्तेनगदाघातेनरावणः॥अपासर्पद्धनुर्मात्रंनिषसादचनिष्टनन् ॥६२॥ सविह्वलंतदालक्ष्यदशग्रीवंततोऽर्जुनः ॥ सहसोत्पत्यजग्राहगरुत्मानिवपन्नगम् ॥ ६३ ॥

हों और जैसे दो कुंजर परस्पर संग्राम करते हों वैसेही नरश्रेष्ठ अर्जुन और राक्षसश्रेष्ठ रावण परस्पर चोट चलाने लगे ॥ ५९ ॥ इसके पीछे अर्जुनने कोप कर अतिबलके साथ वह गदा रावणकी विशाल छातीमें मारी ॥ ६० ॥ रावणकी छाती वरदानके प्रभावसे रक्षित थी इस कारण वह गदा बलहीनके समान अपने वेग अनुसार प्रहार करनेको असमर्थ हो और स्वयं दो टुकडे हो पृथ्वीपर गिर पडी ॥ ६१ ॥ तथापि रावण अर्जुनकी चलाई हुई गदासे घायल हो आंसू छोडता हुआ चार हाथ दूर पीछेको हटकर पृथ्वीपर बैठ गया ॥६२॥ तब अर्जुनने रावणको विह्वल देखकर कूद रावणको ऐसा पकड लिया जैसा गरुड

जी सर्पको पकडें ॥६३॥ श्रीवामनजी नारायणने जिस प्रकार राजा बलिको बांधा था वैसेही बलवान् राजा अर्जुन अपनी हजार बाहोंसे बलपूर्वक रावणको पकडकर बांध लिया ॥ ६४ ॥ जब रावण बँध गया तब सिद्ध चारण और देवता " बहुत अच्छा ! बहुत अच्छा !! " कह राजा अर्जुनके ऊपर फूलोंकी वर्षा करने लगे ॥ ६५ ॥ व्याघ्र जिस प्रकार मृगको, सिंह जिस प्रकार हाथीको ग्रहण करे वैसेही हैहयराज अर्जुन रावणको पकड करके हर्षके मारे मेघके समान गम्भीर शब्दसे गर्जने लगे ॥ ६६ ॥ इस ओर राक्षस प्रहस्त सावधान हो रावणको बँधा हुआ देख एकाएकी हैहयपति अर्जुनके सन्मुख धावमान हुआ ॥ ६७ ॥ तब उस राक्षसोंकी सेनाका आगमन वेग वर्षा कालके समय समुद्रमें जाती हुई नदियोंके समान जान पडने लगा ॥ ६८ ॥ जब राक्षस खडे रहो २ छोड दो छोड दो यह वचन कहते हुए शूल इत्यादि शस्त्र वारंवार संग्राममें चलाने लगे ॥ ६९ ॥ तब शत्रुसंहारी राजा अर्जुन शत्रु राक्षसोंके

सतुबाहुसहस्रेणबलाद्गृह्यदशाननम् ॥ बबंधलवान्राजाबलिंनारायणोयथा ॥६४॥ वध्यमानेदशग्रीवेसिद्धचारणदेवताः ॥ साध्वीतिवादिनः पुष्पैःकिरंत्यर्जुनमूर्धनि॥६५॥ व्याघ्रोमृगमिवादायमृगराडिवकुंजरम् ॥ ररासहैहयोराजाहर्षादंबुदवन्मुहुः॥६६॥ प्रहस्ततुसमाश्वस्तोदृष्ट्वाबद्धं दशाननम् ॥ सहसाराक्षसःक्रुद्धअभिदुद्रावहैहयम्॥६७॥ नक्तंचराणांवेगस्तुतेषामापततांबभौ॥ उद्धूतआतपापायेपयोदानामिवांबुधौ ॥६८॥ मुंचमुंचेतिभाषंतस्तिष्ठतिष्ठेतिचासकृत्॥मुसलानिचशूलानिसोत्ससर्जतदारणे॥६९॥अप्राप्तान्येवतान्याशुअसंभ्रांतस्तदार्जुनः॥ आयुधान्यमरारीणांजग्राहारिनिषूदनः ॥७०॥ ततस्यान्येवरक्षांसिदुर्धरैःप्रवरायुधैः ॥ भित्त्वाविद्रावयामासवायुरंबुधरानिव ॥७१॥ राक्षसांत्रासयामास कार्तवीर्योऽर्जुनस्तदा ॥ रावणंगृह्यनगरंप्रविवेशसुहृद्वृतः ॥७२॥ सकीर्यमाणःकुसुमाक्षतोत्करैर्द्विजैःसपौरैःपुरुहूतसन्निभः ॥ ततोऽर्जुनःस्वांप्रविवेशतांपुरींबलिंनिगृह्येवसहस्रलोचनः ॥७३॥ इत्यार्षेश्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे द्वात्रिंशः सर्गः ॥३२॥

उन आयुधोंको अपने शरीरमें लगनेसे पहले शीघ्रतापूर्वक ग्रहण कर लेते हुए ॥७०॥ वायु जिस प्रकार मेघसमूहका नाश करता है वैसेही अर्जुनने दुर्द्धर्ष व उत्तम आयुधोंसे उन राक्षसोंको बींधकर ताडित किया ॥७१॥ तब कार्तवीर्य अर्जुन राक्षसोंको त्रासित करता हुआ सुहृद्गणोंके साथ रावणको पकड नगरमें पैठा ॥७२॥ तब पुरवासी और ब्राह्मण इस इन्द्रके समान पराक्रमी राजा अर्जुनके मस्तकपर अक्षत और फूलोंकी वर्षा करने लगे । सहस्रलोचन इन्द्र जिस प्रकार बलिपर विजय पाय अपनी नगरी अमरावतीमें आये थे वैसेही अर्जुन रावणको लेकर अपनी उस पुरीमें पैठे ॥ ७३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां द्वात्रिंशः सर्गः ॥ ३२ ॥

तब पुत्रके स्नेहके मारे महाधीरजवान् महाऋषि पुलस्त्य माहिष्मती नगरीके पति राजा अर्जुनके पास गये ॥१॥ सुरलोकमें देवतोंके निकट, पवनके पकडे जानेके समान असम्भव रावणके पकडनेकी वृत्तांत ऋषि पुलस्त्यजीने सुना ॥२॥ तब पवनके समान गतिवाले ब्राह्मणश्रेष्ठ पुलस्त्यजी पवनके मार्गका आश्रय ले मनके समान वेगसे माहिष्मती पुरीमें आये ॥३॥ ब्रह्माजी जिस प्रकार इन्द्रजीकी अमरावती पुरीमें प्रवेश करते हैं वैसेही हृष्ट पुष्ट जनोंसे भरी अमरावतीके समान माहिष्मती नगरीमें पुलस्त्यजी प्रवेश करते हुए ॥४॥ आकाशसे आये हुए सूर्यके समान अति कठिनतासे देखने योग्य पैदल आते हुए मुनिको देख जाकर द्वारपालोंने राजा अर्जुनसे उनके आनेका समाचार निवेदन किया ॥५॥ राजा अर्जुन दूतोंके कहनेसे पुलस्त्यजी ऋषिको आया जान शिरसे हाथ

रावणग्रहणंतत्तुवायुग्रहणसन्निभम् ॥ ततःपुलस्त्यःशुश्रावकथितंदिविदैवतैः ॥१॥ ततःपुत्रकृतस्नेहात्कंप्यमानोमहाधृतिः ॥ माहीष्मतीपतिं द्रष्टुमाजगाममहानृषिः ॥२॥ सवायुमार्गमास्थायवायुतुल्यगतिर्द्विजः ॥ पुरींमाहिष्मतींप्राप्तोमनःसंपातविक्रमः ॥३॥ सोऽमरावतिसंकाशां हृष्टपुष्टजनावृताम् ॥ प्रविवेशपुरींब्रह्माइंद्रस्येवामरावतीम् ॥४॥ पादाचारमिवादित्यंनिष्पतंतंसुदुर्दृशम् ॥ ततस्तेप्रत्यभिज्ञायअर्जुनायन्यवेदयन् ॥५॥ पुलस्त्यइतिविज्ञायवचनाद्धैहयाधिपः॥शिरस्यंजलिमाधायप्रत्युद्गच्छत्तपस्विनम्॥६॥पुरोहितोऽस्यगृह्यार्घ्यंमधुपर्कंतथैवच ॥ पुरस्तात्प्रययौराज्ञःशक्रस्येवबृहस्पतिः ॥७॥ ततस्तमृषिमायांतमुद्यंतमिवभास्करम् ॥ अर्जुनोदृश्यसंभ्रांतोववंदेंद्रइवेश्वरम् ॥८॥ सतस्यमधुपर्कंगांपाद्यमर्घ्यंनिवेद्यच ॥ पुलस्त्यमाहराजेंद्रोहर्षगद्गदयागिरा ॥९॥ अद्यैवममरावत्यातुल्यामाहिष्मतीकृता ॥ अद्याहंतुद्विजेंद्रत्वांयस्मात्पश्यामिदुर्दृशम् ॥१०॥ अद्यमेकुशलंदेवअद्यमेकुशलंव्रतम् ॥ अद्यमेसफलंजन्मअद्यमेसफलंतपः ॥ ११ ॥ यत्तेदेवगणैर्वंद्योवंदेऽहंचरणौतव ॥ इदंराज्यमिमेपुत्राइमेदाराइमेवयम् ॥ ब्रह्मन्किंकुर्मिकिंकार्यमाज्ञापयतुनोभवान् ॥ १२ ॥

जोड उन तपस्वीके अगवानी करनेको चला ॥६॥ इन्द्रजीके आगे २ साक्षात् बृहस्पतिजीके समान राजा अर्जुनके आगे २ अर्घ्य और मधुपर्क लेकर राज पुरोहित चला ॥७॥ फिर उदय हुए सूर्यभगवान्के समान उन ऋषिको आया हुआ देखकर सहस्रबाहुने प्रणाम किया जैसे ब्रह्माजीको देखकर इन्द्रजी प्रणाम करते हैं ॥८॥ तब राजाने उनके लिये अर्घ्य मधुपर्क गो पाद्य समर्पण करके हर्षके मारे गद्गद वचनोंसे मुनि पुलस्त्यजीसे कहा ॥९॥ हे महाराज ! आपका दर्शन अत्यन्त दुर्लभ है तो भी आपके दर्शन किये, आपने माहिष्मती नगरीको अमरावतीके समान किया ॥१०॥ आज हमारी तपस्या सिद्ध हुई, यज्ञ सुफल और व्रत पूरा हुआ अधिक क्या कहें आज हमारी सबही प्रकारसे कुशल है ॥११॥ हे देव ! देवताओंके वंदन करने योग्य आपके चरण हमने वंदन

किये ! हे ब्रह्मन् ! इस राज्यकी समस्त प्रजा स्त्री पुत्र इत्यादि हम सबही उपस्थित हैं; सो आज्ञा दीजिये कि; आपका कौन कार्य साधन किया जावे ? ॥१२॥ तब पुलस्त्य ऋषि पृथ्वीनाथ हैहयनाद अर्जुनसे बोले कि; हे नरेन्द्र ! तुम्हारे पुत्र, धर्म और अग्नि कुशल सहित हैं ? ॥१३॥ हे कमलपलाश नयन ! हे पूर्णचन्द्रानन ! तुमने रावणको जीत लिया है इस कारण तुम्हारे बलकी तुलना नहीं है ॥१४॥ जिसके भयसे सागर और पवन स्पन्दनारहित हो विराजमान हैं उस रणमें अजीत हमारे पोतेको तुमने संग्राममें हराया है ॥ १५ ॥ हे वत्स ! तुमने हमारे पोतेका यश छीन लिया है और तुमने अपना नाम "रावण विजयी" विख्यात किया है, इस लिये हमारे वचनोंके अनुसार प्रार्थना करने पर तुम रावणको छोडदो ॥ १६ ॥ राजाओंमें श्रेष्ठ अर्जुनने पुलस्त्य

तंधर्मेग्निषुपुत्रेषुशिवंपृष्ट्वाचपार्थिवम् ॥ पुलस्त्योवाचराजानंहैहयानांतथार्जुनम् ॥१३॥ नरेंद्रांबुजपत्राक्षपूर्णचंद्रनिभानन ॥ अतुलंतेबलंयेन दशग्रीवस्त्वयाजितः ॥१४॥ भयाद्यस्योपतिष्ठेतांनिष्पंदौसागरानिलौ ॥ सोऽयंमृधेत्वयाबद्धः पौत्रोमेरणदुर्जयः ॥१५॥ पुत्रकस्ययशःपीतंनामविश्रावितंत्वया ॥ मद्वाक्याद्याच्यमानोद्यमुंचवत्सदशाननम् ॥१६॥ पुलस्त्याज्ञांप्रगृह्याथनकिंचनवचोऽर्जुनः ॥ मुमोचैवपार्थिवेंद्रोराक्षसेंद्रंप्रहृष्टवत् ॥ १७ ॥ सतंप्रमुच्यत्रिदशारिमर्जुनःप्रपूज्यदिव्याभरणस्रगंबरैः ॥ अहिंसकंसख्यमुपेत्यसाग्निकंप्रणम्यतंब्रह्मसुतंगृहंययौ ॥ १८ ॥ पुलस्त्येनापिसंत्यक्तोराक्षसेंद्रःप्रतापवान् ॥ परिष्वक्तःकृतातिथ्योलज्जमानोविनिर्जितः ॥ १९ ॥ पितामहसुतश्चापिपुलस्त्योमुनिपुंगवः ॥ मोचयित्वादशग्रीवंब्रह्मलोकंजगामह ॥ २० ॥ एवंसरावणःप्राप्तःकार्तवीर्यात्प्रधर्षणम् ॥ पुलस्त्यवचनाच्चापिपुनर्मुक्तोमहाबलः ॥ २१ ॥ एवंबलिभ्योबलिनःसंतिराघवनंदन ॥ नावज्ञाहिपरेकार्यायइच्छेच्छ्रेयआत्मनः ॥ २२ ॥

ऋषिकी आज्ञा सुनकर कुछभी उत्तर न दिया बरन् हर्षितहो राक्षसपति रावणको छोड दिया ॥१७॥ अधिक करके अर्जुनने देवताओंके शत्रु रावणको छोड दिव्य आभूषण, माला और वस्त्र देकर उसको सम्मानित किया और अग्निके सामने हिंसाहीन मित्रता स्थापनकी तब अर्जुन ब्रह्माजीके पुत्र पुलस्त्यजीको प्रणाम करके अपने गृहको चला गया ॥१८॥ पुलस्त्यजीके प्रभावसे छूट कर प्रतापशाली राक्षसराज रावणने राजा अर्जुनकी पहुनाई ग्रहणकी और उस करके भेटा जायकर चित्तमें लाज किये वहांसे चला गया ॥१९॥ ब्रह्माजीके पुत्र मुनियोंमें श्रेष्ठ पुलस्त्य मुनि रावणको छुडाय ब्रह्मलोकको चले गये ॥२०॥ महाबलवान् रावण कार्तवीर्यके निकट इस प्रकारसे हारकर बँधा था और फिर पुलस्त्यजीके वचनोंसे छूटा था ॥२१॥ हे रघुनंदनजी ! बलवान्से भी इस प्रकार

और अनेक बलवान् हैं इससे जो कोई अपना भला होनेकी इच्छा करे तो उसको दूसरेका अपमान करना उचित नहीं है ॥ २२ ॥ इसके पीछे वह निशा चरराज रावण सहस्रबाहु अर्जुनसे मित्रता स्थापित कर गर्वके मारे नृपाळोंका विनाश करते २ पृथ्वीपर घूमने लगा ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामाणे वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३३ ॥ राक्षसपति रावण जब अर्जुनसे छूटगया और उनके साथ उसकी मित्रता भी हो गई, तब यह वेद नारहित हो समस्त पृथ्वीपर घूमने लगा ॥१॥ अधिक क्या कहें मनुष्य या राक्षस जिसको रावण अधिक बलवान् सुनता गर्वके मारे वहीं पर जाय उसको युद्ध करनेके लिये पुकारता ॥ २ ॥ किसी समय रावणने वालिपालित किष्किन्धामें जाय वहां हेममाली वालिको युद्ध करनेके लिये पुकारा ॥ ३ ॥ तव

ततःसराजापिशिताशनानांसहस्रबाहोरुपलभ्यमैत्रीम् ॥ पुनर्नृपाणांकदनंचकारचचारसर्वांपृथिवींचदर्पात् ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे त्रयस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३३ ॥ अर्जुनेनविमुक्तस्तुरावणोराक्षसाधिपः ॥ चचारपृथिवींसर्वाम निर्विण्णस्तथाकृतः ॥ १ ॥ राक्षसंवामनुष्यंवाशृणुतेयंबलाधिकम् ॥ रावणस्तंसमासाद्ययुद्धेह्वयतिदर्पितः ॥ २ ॥ ततःकदाचित्किष्किंधां नगरींवालिपालिताम् ॥ गत्वाह्वयतियुद्धायवालिनंहेममालिनम् ॥ ३ ॥ ततस्तुवानरामात्यास्तारस्तारापिताप्रभुः ॥ उवाचवानरोवाक्यंयुद्ध प्रेप्सुमुपागतम् ॥ ४ ॥ राक्षसेंद्रगतोवालीयस्तेप्रतिबलोभवेत् ॥ कोऽन्यःप्रमुखतःस्थातुंतवशक्तःप्लवंगमः ॥ ॥ ५ ॥ चतुर्भ्योऽपिसमुद्रेभ्यः संध्यामन्वास्यरावण ॥ इमंमुहूर्तमायातिवालीतिष्ठमुहूर्तकम् ॥ ६ ॥ एतानस्थिचयान्पश्ययएतेशंखपांडुराः ॥ युद्धार्थिनामिमेराजन्वानरा धिपतेजसा ॥७॥ यद्वामृतरसःपीतस्त्वयारावणराक्षस ॥ तदावालिनमासाद्यतदंतंतवजीवितम् ॥८॥ पश्येदानींजगच्चित्रमिमंविश्रवसःसुत ॥ इदंमुहूर्तंतिष्ठस्वदुर्लभंतेभविष्यति ॥ ९ ॥

युवराज सुग्रीव ताराका पिता सुषेण और तार इत्यादि वानरमंत्रियोंने युद्धकी अभिलाषा करके आये हुए रावणसे कहा ॥ ४ ॥ हे राक्षसेन्द्र ! जो तुमसे युद्ध करेंगे वह वालि सन्ध्या करनेको गये हैं इसके अतिरिक्त और कोई वानर तुम्हारे सामने युद्धमें ठहर नहीं सकता है ॥ ५ ॥ इस कारण हे रावण ! एक मुहूर्तभर तक ठहरो, वाली चारों समुद्रोंपर सन्ध्या कर अब आयाही चाहता है ॥ ६ ॥ हे राजन् ! शंखके समान श्वेत हड्डियोंका ढेर जो आप देखते हैं, यह वानराधिपति वालीके तेज प्रभावसे पराजित युद्धशाली वीरोंके कंकाल हैं ॥७॥ हे राक्षस रावण ! जो तुमने अमृतरस भी पिया होगा तो भी वालीके निकट जानेसे तुम्हारे जीवनका अन्त हो जायगा ॥ ८ ॥ हे वैश्रवण ! एक मुहूर्तभर तक ठहरते ही तुम्हारा जीना दुर्लभ हो जायगा; इससे इस जगत्‌को

भली भांति एकबार देखलो ॥९॥ अथवा जो तुमको बहुतही शीघ्र मरनेकी अभिलाषा हो तो दक्षिण समुद्रके किनारे पर चले जाओ, वहां पृथ्वीपर विराजमान अग्निके समान तुम वालीको देखोगे ॥१०॥ यह सुनकर त्रिलोकीमें उपद्रव करनेवाला रावण तारका निरादर करके पुष्पक विमानपर सवार हो दक्षिण समुद्रके किनारेपर गया ॥११॥ तरुण अरुणके समान मुखवाले सुवर्णके पर्वतकी नाई वाली वहांपर संध्या कर रहा था ॥ १२ ॥ वह अंजनके रंगके समान काला रावण यह देख वालीको पकडनेके लिये विमानसे शीघ्र उतर दबे पैरोंसे चला ॥ १३ ॥ तब वालिने भी इच्छानुसार नेत्र फिराय रावणको देखलिया परन्तु उसका बुरा अभिप्राय जानकर भी वाली चलायमान नहीं हुआ ॥ १४ ॥ सिंह जिसप्रकार खरहेको गरुड़ जिसप्रकार सर्पको देखकर नहीं घबडाते हैं

अथवात्वरसेमर्तुंगच्छदक्षिणसागरम् ॥ वालिनंद्रक्ष्यसेतत्रभूमिष्ठमिवपावकम् ॥१०॥ सतुतारंविनिर्भत्स्यरावणोलोकरावणः ॥ पुष्पकंतत्समारुह्यप्रययौदक्षिणार्णवम् ॥११॥ तत्रहेमगिरिप्रख्यंतरुणार्कनिभाननम् ॥ रावणोवालिनंदृष्ट्वासंध्योपासनतत्परम् ॥१२॥ पुष्पकादवरुह्याथरावणोऽजनसन्निभः ॥ ग्रहीतुंवालिनंतूर्णंनिःशब्दपदमव्रजत् ॥१३॥ यदृच्छयातदादृष्टोवालिनापिसरावणः ॥ पापाभिप्रायकंदृष्ट्वाचकारनतुसंभ्रमम् ॥१४॥ शशमालक्ष्यसिंहोवापन्नगंगरुडोयथा ॥ नचिंतयतितंवालीरावणंपापनिश्चयम् ॥१५॥ जिघृक्षमाणमायांतंरावणंपापचेतसम् ॥ कक्षावलंबिनंकृत्वागमिष्येत्रीन्महार्णवान् ॥ १६ ॥ द्रक्ष्यंत्यरिममांकस्थंस्रंसदूरुकरांबरम् ॥ लंबमानंदशग्रीवंगरुडस्येवपन्नगम् ॥ ॥१७॥ इत्येवंमतिमास्थायवालीमौनमुपास्थितः ॥ जपन्वैनैगमान्मंत्रांस्तस्थौपर्वतराडिव ॥१८॥ तावन्योन्यंजिघृक्षंतौहरिराक्षसपार्थिवौ ॥ प्रयत्नवंतौतत्कर्मईहतुर्बलदर्पितौ ॥ १९ ॥ हस्तग्राहंतुतंमत्वापादशब्देनरावणम् ॥ पराङ्मुखोऽपिजग्राहवालीसर्पमिवांडजः ॥ २० ॥

वैसेही मनमें पापका संकल्प किये हुए रावणको देखकर वालिने कुछ भी नहीं समझा ॥ १५ ॥ वालीने मनहीमन विचार किया कि पापी हमारे पकडनेको आता है, इस कारण इसको काँखमें दबायकर हम तीन महासमुद्रोंपर घूमेंगे ॥१६॥ सबही देखेंगे कि; शत्रु रावण हमारी कांखमें गरुडजीसे पकडे हुए सर्पके समान लटकता हुआ जाता है और इसकी जांघें, हाथभी आकाशसे लटकती हुई दीखेंगी ॥ १७ ॥ वाली मनहीमन ऐसा विचारकर चुप होरहा और वेदके मंत्रोंका पाठ करता हुआ पर्वतराजके समान विराजमान होने लगा ॥ १८ ॥ बलसे गर्वित वानरराज और राक्षसराज पकडनेके अभिलाषी हो दोनों एक दूसरेको अति यत्नसे पकडनेकी चेष्टा करने लगे ॥ १९ ॥ परन्तु वालीने साधारण पगाहटसे जान लिया, कि रावण अब ऐसे स्थानमें आगया कि अब हम

उसको हाथसे पकडलेंगे, बस उसने चटसे वैसेही रावणको पकड लिया कि, जैसे गरुडजी सर्पको पकडते हैं ॥२०॥ ग्रहण करनेकी अभिलाषा किया राक्षसनाथ रावणको वानरश्रेष्ठ वालीने पकड लिया और उसको कांखमें लगाय दृढतासे पकड अति वेगसे आकाश मार्गको वाली कूद गया ॥ २१ ॥ उससे पीछे वाली रावणको वारंवार पीडित करता और नोंचता हुआ इस प्रकारसे रावणको ले गया जैसे पवन मेघोंको भगादेती है ॥ २२ ॥ जब रावण पकडा गया तब रावणके मंत्री उसके छुडानेकी अभिलाषा किये चिंघाड करतेहुए आकाशमार्गमें अतिवेगसे जातेहुए वालीके पीछे धाये ॥२३॥ साथ चलते हुए मेघोंसे आकाशमें विराजमान सूर्यभगवान् जिसप्रकार शोभायमान होते हैं, आकाशके बीचमें स्थित हुआ वालीभी पीछे दौडते हुए राक्षसोंसे वैसेही दीप्तिमान होने लगा ॥२४॥ तब राक्षसगण वालीके पकडनेको समर्थ न होसके बरन् वालीकी जांघें और बांहोंके वेगके मारे थककर एक जगह स्थित होगये ॥ २५ ॥ पर्वतश्रेष्ठ गणभी

ग्रहीतुकामंतंगृह्यरक्षसामीश्वरंहरिः ॥ खमुत्पपातवेगेनकृत्वाकक्षावलंबिनम् ॥२१॥ तंचपीडयमानंतुवितुदंतंनखैर्मुहुः ॥ जहाररावणंवालीपवनस्तोयदंयथा ॥२२॥ अथतेराक्षसामात्याह्रियमाणेदशानने ॥ मुमोक्षयिषवोवालिंरवमाणाअभि द्रुताः ॥२३॥ अन्वीयमानस्तैर्वालीभ्राजतेऽबरमध्यगः ॥ अन्वीयमानोमेघौघैरंबरस्थइवांशुमान् ॥२४॥ तेऽशक्नुवंतःसंप्राप्तुंवालिनंराक्षसोत्तमाः ॥ तस्यबाहूरुवेगेनपरिश्रांताव्यवस्थिताः ॥ २५ ॥ वालिमार्गादपाक्रामन्पर्वतेंद्राहिगच्छतः ॥ किंपुनर्जीवनप्रेप्सुर्बिभ्रद्वैमांसशोणितम् ॥ २६ ॥ अपक्षिगणसंपातान्वानरेन्द्रोमहाजवः ॥ क्रमशःसागरान्सर्वान्संध्याकालमवंदत ॥२७॥ संपूज्यमानोयातस्तुखेचरैःखेचरोत्तमः ॥ पश्चिमंसागरंवालिआजगामसरावणः ॥ २८ ॥ तस्मिन्संध्यामुपासित्वास्नात्वाजप्त्वाचवानरः ॥ उत्तरंसागरंप्रायाद्वहमानोदशाननम् ॥ २९ ॥ बहुयोजनसाहस्रंवहमानोमहाहरिः ॥ वायुवच्चमनोवच्चजगामसहशत्रुणा ॥ ३० ॥ उत्तरेसागरेसंध्यामुपासित्वादशाननम् ॥ वहमानोगमद्वालीपूर्ववैसमहोदधिम् ॥ ३१ ॥

गमन करते हुए वालीके मार्गसे हट जाते थे फिर मांस और शोणितधारी प्राणियोंकी बातही क्या है ॥ २६ ॥ अति शीघ्रतासे गमन करनेवाला वाली इतने ऊंचेसे उडकर जाता था कि जहांपर पक्षियोंके उडनेकीभी गति नहीं थी; इसप्रकार क्रम २ से वाली सब समुद्रोंपर जाय प्रातःकालीन सन्ध्याके वन्दन करने योग्य ध्यान करने लगा ॥२७॥ आकाशचारियोंमें श्रेष्ठ वाली रावणको साथ लिये आकाशचारियोंसे पूजित हो पश्चिमके समुद्रपर गमन करने लगा ॥२८॥ वहां स्नान व सन्ध्या कर और जप करताहुआ वाली रावणको लेकर उत्तरके समुद्रपर गया ॥२९॥ वह महावानर वाली अपने शत्रुके साथ उस बहुत योजनके विस्तारवाले मार्गमें वायु और मनके समान शीघ्रतासे चला॥३०॥ उत्तरके समुद्रपर सन्ध्या करके वाली रावणको लिये हुए पूर्वके महासमुद्रपर जाय पहुँचा॥३१॥

इन्द्रका पुत्र वानरोंका राजा वाली वहां भी संध्या वंदन कर रावणको पकडे हुए फिर किष्किन्धापुरीकी ओर चला ॥३२॥ चारों समुद्रोंपर सन्ध्या वन्दन करनेसे और रावणका बोझा उठानेसे वाली थककर किष्किन्धापुरीके उपवनमें कूदा ॥ ३३ ॥ फिर कपिश्रेष्ठ वालीने अपनी कांखसे रावणको छोड दिया, और बारम्बार हँसकर रावणसे कहा कि, "तुम कहांसे चले आते हो" ॥ ३४ ॥ तब परम विस्मित हो राक्षस रावण श्रमके मारे चंचलनेत्र हो उस वानरों के राजासे यह बोला ॥ ३५ ॥ कि, हे महेंद्रके समान वानरेंद्र ! हम राक्षसपति रावण युद्धकी अभिलाषासे निकट आये थे परंतु आज हम तुमसे हार गये क्योंकि तुमने हमको कांखमें रख लिया ॥ ३६ ॥ हे वीर ! आपने हमको पशुके समान पकडकर चारों समुद्रोंपर घुमाया है इस कारण आपका गंभीरपन,

तत्रापिसंध्यामन्वास्यवासविःसहरीश्वः ॥ किष्किंधामभितोगृह्यरावणंपुनरागमत् ॥३२॥ चतुर्ष्वपिसमुद्रेषुसंध्यामन्वास्यवानरः ॥ रावणोद्वहनश्रांतःकिष्किंधोपवनेऽपतत् ॥ ३३ ॥ रावणंतुमुमोचाथस्वकक्षात्कपिसत्तमः ॥ कुतस्त्वमितिचोवाचप्रहसन्रावणंमुहुः ॥३४॥ विस्मयंतुमहद्गत्वाश्रमलोलनिरीक्षणः ॥ राक्षसेंद्रोहरींद्रंतमिदंवचनमब्रवीत् ॥३५॥ वानरेंद्रमहेंद्राभराक्षसेंद्रोऽस्मिरावणः ॥ युद्धेप्सुरिहसंप्राप्तःसचाद्यासादितस्त्वया ॥ ३६ ॥ अहोबलमहोवीर्यमहोगांभीर्यमेवच ॥ येनाहंपशुवद्गृह्यभ्रमितश्चतुरोऽर्णवान् ॥ ३७ ॥ एवमश्रांतवद्वीरशीघ्रमेवचवानर ॥ मांचैवोद्वहमानस्तुकोऽन्योवीरभविष्यति ॥ ३८ ॥ त्रयाणामेवभूतानांगतिरेषाप्लवंगम ॥ मनोनिलसुपर्णानांतवःचात्रनसंशयः ॥३९॥ सोऽहंदृष्टबलस्तुभ्यमिच्छामिहरिपुंगव ॥ त्वयासहचिरंसख्यंसुस्निग्धंपावकाग्रतः ॥ ४० ॥ दाराःपुत्राःपुरंराष्ट्रंभोगाच्छादनभोजनम् ॥ सर्वमेवाविभक्तंनौभविष्यतिहरीश्वर ॥ ४१ ॥ ततःप्रज्वालयित्वाग्नितावुभौहरिराक्षसौ ॥ भ्रातृत्वमुपसंपन्नौपरिष्वज्यपरस्परम् ॥ ४२ ॥

वीर्य और बल सबही विचित्र है ॥३७॥ हे वीर वानर ! आप हमको इस प्रकार शीघ्रतापूर्वक ले चलते हुए भी नहीं थके हैं, परंतु इस प्रकार हमें ले चलनेको और कौन समर्थ होगा ? ॥ ३८ ॥ हे वानर ! मन पवन और गरुड इन तीन प्राणियोंमें ही ऐसी गति है सो आपमें भी वैसेही गमन शक्ति है इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥३९॥ हे वानरश्रेष्ठ ! हमने आपका बल प्रत्यक्ष देखा, इस कारण अग्निके सम्मुख हम आपके साथ निष्कपट चिरस्थायिनी मित्रता करना चाहते हैं ॥ ४० ॥ हे वानरेश्वर ! आजसे स्त्री, पुत्र, पुर, राज्य, भोग आच्छादन और भोजन समस्तही हम तुम दोनोंका एक रहेगा इसमें कुछ अन्तर न होगा ॥ ४१ ॥ इसके उपरांत वानरराज और राक्षस दोनों अग्नि जलाय परस्पर भेंटकर भ्रातृपन लाभ करते हुए ॥ ४२ ॥

फिर वह वानर और राक्षस हर्षित हो एक दूसरेका हाथ पकडे हुए पर्वतकी गुहामें दो सिंहोंके समान किष्किन्धामें प्रवेश करते हुए ॥ ४३ ॥ इसके पीछे त्रिभुवनके नाशकरनेकी अभिलाषा किये वहांपर आये हुए मंत्रियोंके साथ मिलकर रावणने सुग्रीवके समान किष्किन्धापुरीमें एकमास बिताया [सुग्रीवके समान कहनेका यह तात्पर्य है कि, वालिने रावणको अपने लघुभ्राता सुग्रीवके समान रक्खा] ॥ ४४ ॥ हे प्रभो ! वालिने रावणको इस प्रकारसे पीडित करके फिर अग्निको स्थापन करके इस प्रकारसे मित्रता की थी, सो हमने आपसे यह समस्त वृत्तान्त कहा ॥४५॥ हे राम ! वालिमें अनुपम उत्तम बल था परन्तु अग्नि जिस प्रकार पतंगेको जला देती है वैसेही आपने उस वालीको दग्ध किया ॥ ४६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां चतुस्त्रिंश सर्गः ॥ ३४ ॥ तब जिज्ञासु श्रीरामचन्द्रजी विनीत हो हाथ जोड दक्षिण दिशामें वास करनेवाले अगस्त्य मुनिसे अर्थयुक्त वचन बोले ॥१॥ श्रीरामचन्द्रजी

अन्योन्यंलंबितकरौततस्तौहरिराक्षसौ ॥ किंष्किधांविशतुर्हृष्टौसिंहौगिरिगुहामिव ॥ ४३ ॥ सतत्रमासमुषितःसुग्रीवइवरावणः ॥ अमात्यैरागतैर्नीतस्त्रैलोक्योत्सादनार्थिभिः ॥ ४४ ॥ एवमेतत्पुरावृत्तंवालिनारावणःप्रभो ॥ धर्षितश्चकृतश्चापिभ्रातापावकसन्निधौ ॥ ४५ ॥ बलमप्रतिमंरामवालिनोऽभवदुत्तमम् ॥ सोऽपित्वयाविनिर्दग्धःशलभोवह्निनायथा ॥ ४६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिका० च० सा० उत्तरकांडे चतुस्त्रिंशः सर्गः ॥ ३४ ॥ अपृच्छततदारामोदाक्षिणाशाश्रयंमुनिम् ॥ प्रांजलिर्विनयोपेतइदमाहवचोऽर्थवत् ॥ १ ॥ अतुलंबलमेतद्वैवालिनोरावणस्यच ॥ नत्वेताभ्यांहनुमतासमंत्वितिमतिर्मम ॥ २ ॥ शौर्यंदाक्ष्यंबलंधैर्यंप्राज्ञतानयसाधनम् ॥ विक्रमश्चप्रभावश्चहनूमतिकृतालयाः ॥ ३ ॥ दृष्ट्वैवसागरंवीक्ष्यसीदंतींकपिवाहिनीम् ॥ समाश्वास्यमहाबाहुर्योजनानांशतंप्लुतः ॥ ४ ॥ धर्षयित्वापुरींलंकांरावणांतःपुरंतदा ॥ दृष्टासंभाषिताचापिसीताह्याश्वासितातथा ॥ ५ ॥ सेनाग्रगामंत्रिसुताःकिंकरारावणात्मजः ॥ एतेहनुमतातत्रएकेनविनिपातिताः ॥ ६ ॥ भूयोबंधाद्विमुक्तेनभाषयित्वादशाननम् ॥ लंकाभस्मीकृतायेनपावकेनेवमेदिनी ॥ ७ ॥

बोले कि वाली और, रावणके इस बलकी उपमा नहीं परन्तु हम जानते हैं कि, उनका बल हनुमान्‌के समान नहीं था ॥ २ ॥ विशेष करके शूरता, धीरता, बल, शीघ्र करना; प्राज्ञता, नीति, उपाय, विक्रम और प्रभाव यह सबही गुण हनुमान्‌में प्रतिष्ठित हैं ॥ ३ ॥ जब समुद्रको देखकर वानरोंकी सेना घबडा गई तब महावीरजी हनुमान् यह देखकर उस सेनाको ढाढस बँधाय समझाय बुझाय शत योजनके फांटवाले समुद्रको कूद गये ॥४॥ तब लंकापुरीकी अधिष्ठिता देवताको प्रहार करके रावणके अंतःपुरमें सीताका दर्शन पाय उनसे वार्ता कर उनको अनेक भाँतिसे समझाया ॥ ५ ॥ अधिक क्या कहें अकेले हनुमान्‌नेही रावणके सेना पतियोंको, मंत्रीके पुत्रोंको, किंकरोंको और एक रावणके पुत्रकोभी मारडाला था ॥ ६ ॥ फिर हनुमान्‌ने ब्रह्मास्त्रके बंधनसे छूट संभाषणमें

रावणका निरादर कर अग्निसे लंकानगरीको भस्म कर दिया, जैसे पावक पृथ्वीको भस्म करता है ॥ ७ ॥ हनुमान्‌के संग्राम करनेमें हमने जो कार्य देखे हैं, उन कार्योंको स्वयं काल या विष्णु या इन्द्र अथवा कुबेर कोईभी करनेको समर्थ नहीं हैं ॥८॥ हमने पवनकुमारके भुजवीर्यद्वारा राज्य, जय, मित्र, बान्धव, लक्ष्मण और सीताको प्राप्त किया है व लंकाभी हमारे वशमें हुई ॥९॥ अधिक क्या कहें वानरनाथके सखा हनुमान् जो हमारे सहायक न होते तो जानकीके खोजनेको कौन समर्थ होता ? ॥ १० ॥ जब वालीके साथ सुग्रीवका वैर हुआ था तब इन हनुमान्‌ने ऐसे बलवान् होकर भी सुग्रीवकी प्रिय कामनासे लता समूहके समान वालीको भस्म क्यों नहीं किया ॥११॥ सो हम जानते हैं कि उस काल हनुमान् अपने बलको नहीं जानते थे, इस कारण जीवसेभी अधिक प्रियतम वानरराज सुग्रीवका क्लेश देखा था ॥१२॥ हे अमरपूजित भगवन् महामुने ! हमने हनुमान्‌जीका जो कुछ वृत्तान्त पूछा -आप उस समस्त वृत्तान्तको

नकालस्यनशक्रस्यनविष्णोर्वित्तपस्यच ॥ कर्माणितानिश्रूयंतेयानियुद्धेहनूमतः ॥ ८ ॥ एतस्यबाहुवीर्येणलंकासीताचलक्ष्मणः ॥ प्राप्तामयाजयश्चैवराज्यंमित्राणिबांधवाः ॥ ९ ॥ हनुमान्यदिमेनस्याद्वानराधिपतेःसखा ॥ प्रवृत्तिमपिकोवेत्तुंजानक्याःशक्तिमान्भवेत् ॥ १० ॥ किमर्थंवाल्यनेनैवसुग्रीवप्रियकाम्यया ॥ तदावैरेसमुत्पन्नेनदग्धोवीरुधोयथा ॥ ११ ॥ नहिवेदितवान्मन्येहनूमानात्मनोबलम् ॥ यद्दृष्टवाञ्जीवितेष्टंक्लिश्यंतंवानराधिपम् ॥ १२ ॥ एतन्मेभगवन्सर्वंहनूमतिमहामुने ॥ विस्तरेणयथातत्त्वंकथयामरपूजित ॥ १३ ॥ राघवस्यवचःश्रुत्वाहेतुयुक्तमृषिस्ततः ॥ हनूमतःसमक्षंतमिदंवचनमब्रवीत् ॥१४॥ सत्यमेतद्रघुश्रेष्ठयद्ब्रवीषिहनूमति ॥ नबलेविद्यतेतुल्योनगतौनमतौपरः ॥ १५ ॥ अमोघशापैःशापस्तुदत्तोऽस्यमुनिभिःपुरा ॥ नवेत्ताहिबलंसर्वंबलीसन्नरिमर्दन ॥ १६॥ बाल्येऽप्यतेनयत्कर्मकृतंरामममहाबल ॥ तन्नवर्णयितुंशक्यमितिबाल्यतयास्यते ॥ १७ ॥ यदिवास्तितत्वभिप्रायःसंश्रोतुंतवराघव ॥ समाधायमतिंरामनिशामयवदाम्यहम् ॥ १८ ॥

विस्तारपूर्वक यथार्थही कहिये ॥ १३ ॥ अगस्त्य मुनि श्रीरामचन्द्रजीके यह हेतुयुक्त वचन सुनकर हनुमान्‌जीके सामनेही उनसे यह बचन बोले ॥ १४ ॥ हे रघुवर ! आपने हनुमान्‌के संबंधमें जो कुछ कहा वह सब सत्य है, बल, गति याबुद्धिमें हनुमान्‌के समान कोई विद्यमान नहीं है ॥ १५ ॥ हे शत्रुनाशन ! अमोघवाक्य मुनि लोगोंने पूर्वकालमें इनको शाप दिया है, इसी निमित्त यह हनुमान् बलवान् होकरभी अपने समस्त बलको नहीं जानते ॥ १६ ॥ बाल्य कालमें हनुमान्‌ने बालक पनकी चंचलताके वश हो जो दुष्कर कार्य किया है सो हम आपके निकट इनके कार्यका वर्णनकरनेकी सामर्थ्य नहीं रखते हैं ॥१७॥ अथवा हे राघव ! जो आपको श्रवण करनेकी अभिलाषा हुई हो तो आप बुद्धि स्थिरकरके श्रवण कीजिये हम कहते हैं ॥ १८ ॥

सूर्यके वरदान प्रभावसे सुवर्णरूपी सुमेरु नाम एक पर्वत है; इन हनुमान्‌के पिता केसरी वहांका राज्य करते हैं ॥१९॥ अंजनी नामक विख्यात उनकी प्यारी एक भार्या थी पवनने उसके गर्भसे एक औरस उत्तम पुत्र उत्पन्न किया ॥ २० ॥ उस कालमें रूपवती वह अजनी शाल वृक्षके फुलचीके समान कांतिवाले इन पुत्रको उत्पन्न कर फल लेनेकी इच्छासे वनमें गई ॥ २१ ॥ यह बालक भूंखके मारे और माताका दर्शन न पानेसे अति पीडित हो अत्यन्त रोदन करने लगे जैसे शरके वनमें देवसेनापति रोते थे ॥ २२ ॥ उस कालमें जब सूर्य भगवान् कुसुमके समान उदय होरहे थे; यह बालक उनको देखकर फलकीलालसासे सूर्यके सन्मुख कूदते हुए ॥२३॥ तब मूर्तिमान् दिवाकरके समान यह बालक बालसूर्यके ग्रहण करनेकी इच्छा करके बाल प्रभाकरके सम्मुख आकाशमंडलके मध्य मार्गका

सूर्यदत्तवरःस्वर्णःसुमेरुर्नामपर्वतः ॥ यत्रराज्यंप्रशास्त्यस्यकेसरीनामवैपिता ॥ १९ ॥ तस्यभार्याबभूवेष्टाह्यंजनेतिपरिश्रुता ॥ जनयामासतस्यांवैवायुरात्मजमुत्तमम् ॥ २० ॥ शालिशूकनिभाभासंप्रासूतेमंतदांजना ॥ फलान्याहर्तुंकामावैनिष्क्रान्तागहनेवरा ॥ २१ ॥ एषमातुर्वियोगाच्चक्षुधयाचभृशार्दितः ॥ रुरोदशिशुरत्यर्थंशिशुःशरवणेयथा ॥ २२ ॥ तदोद्यंतंविवस्वन्तंजपापुष्पोत्करोपमम् ॥ ददर्शफललोभाच्चह्युत्पपातरविंप्रति ॥ २३ ॥ बालार्काभिमुखोबालोबालर्कइवमूर्तिमान् ॥ ग्रहीतुकामोबालार्कंप्लवतेंऽबरमध्यगः ॥ २४ ॥ एतस्मिन्प्लवमानेतुशिशुभावेहनूमति ॥ देवदानवयक्षाणांविस्मयःसुमहानभूत् ॥ २५ ॥ नाप्येवंवेगवान्वायुर्गरुडोनमनस्तथा ॥ यथायंवायुपुत्रस्तुक्रमतेंऽबरमुत्तमम् ॥ २६ ॥ यदितावच्छिशोरस्यईदृशोरस्यगतिविक्रमः ॥ यौवनंबलमासाद्यकथंवेगोभविष्यति ॥ २७ ॥ तमनुप्लवतेवायुःप्लवंतंपुत्रमात्मनः ॥ सूर्यदाहभयाद्रक्षंस्तुषारचयशीतलः ॥ २८ ॥ बहुयोजनसाहस्रंक्रामन्नेवगतोंऽबरम् ॥ पितुर्बलाच्चबाल्याच्चभास्कराभ्याशमागतः ॥ २९ ॥ शिशुरेषत्वदोषज्ञइतिमत्वादिवाकरः ॥ कार्यंचास्मिन्समायत्तमित्येवंनददाहसः ॥ ३० ॥

आश्रय करके कूदे ॥२४॥ जब यह हनुमान् बालकपनकी अवस्थामें कूदे तब क्या देवता क्या दानव क्या यक्ष सबही अत्यन्त विस्मित होकर कहने लगे ॥२५॥ यह पवनपुत्र उत्तम आकाशमार्गको जिस प्रकारसे अतिक्रम कर रहे हैं, वायु, गरुड या मनका भी ऐसा वेग नहीं है ॥ २६ ॥ जब कि बालकपनमें इस बालककी ऐसी गति और वेग है तब युवा अवस्थामें बलवान् होकर यह कैसा होगा ? ॥२७॥ अपने पुत्रके कूदनेपर पवन तुषारराशिसंयोगसे शीतल हो सूर्यका तेज कहीं पुत्रको दग्ध न करदे इसी निमित्त आकाशगामी पुत्रके पीछे चलने लगे ॥ २८ ॥ हनुमान् बालकपनकी चंचलताके वश हो आकाशमें उठकर पिताकी सहायतासे हजारों योजन आकाशमें चढकर सूर्यके निकट पहुँचे ॥ २९ ॥ परन्तु यह बालक है दोषको नहीं जानता विशेष करके आगेको इससे देवताओंका

बडा भारी कार्य सिद्ध होगा, सूर्य भगवानूने भी यह विचार कर इनको भस्म नहीं किया ॥ ३० ॥ यह वानर जिस दिन सूर्यको ग्रहण करनेके लिये कूदे थे उसी दिन राहु भी सूर्य नारायणके ग्रास करनेको चला ॥ ३१ ॥ परन्तु इन हनुमानूने सूर्य भगवानूके रथके ऊपर राहुको स्पर्श किया, इससे चंद्रमा सूर्यका मर्दन करने वाला राहु त्रासित होकर सूर्यमंडलसे भाग गया ॥३२॥ सिंहिका पुत्र राहु क्रोधके मारे इन्द्रके भवनमें जाय भौंहैं टेढी कर देवताओंके साथ बैठे हुए इन्द्रजीसे बोला ॥ ३३ ॥ हे वासव ! हमारी क्षुधा निवृत्त करनेके निमित्त आपने हमें चन्द्र सूर्यको दिया था. हे बलवृत्रहन् ! आपने उन्हें दूसरेको क्यों देदिया ? ॥ ३४ ॥ पर्वका समय आयजानेसे आज ग्रहण करनेकी अभिलाषा कर हम सूर्यके निकट गये थे, परन्तु अचानक एक दूसरे राहुने

यमेवदिवसंह्येषग्रहीतुंभास्करंप्लुतः ॥ तमेवदिवसंराहुर्जिघृक्षतिदिवाकरम् ॥३१॥ अनेनचपरामृष्टेराहुःसूर्यरथोपरि ॥ अपक्रांतस्ततस्त्रस्तो राहुश्चंद्रार्कमर्दनः ॥३२॥ इंद्रस्यभवनंगत्वासरोषःसिंहिकासुतः ॥ अब्रवीद्भ्रुकुटिंकृत्वादेवंदेवगणैर्वृतम् ॥३३॥ बुभुक्षापनयंदत्त्वाचंद्रार्कौमस वासव ॥ किमिदंतत्त्वयादत्तमन्यस्यबलवृत्रहन् ॥ ३४ ॥ अद्याहंपर्वकालेतुजिघृक्षुःसूर्यमागतः ॥ अथान्योराहुरासाद्यजग्राहसहसारविम् ॥ ३५ ॥ सराहोर्वचनंश्रुत्वावासवःसंभ्रमान्वितः ॥ उत्पपातासनंहित्वाउद्वहन्कांचनींस्रजम् ॥ ३६ ॥ ततःकैलासकूटाभंचतुर्दंतंमदस्रवम् ॥ श्रृंगारधारिणंप्रांशुंस्वर्णघंटाट्टहासिनम् ॥ ३७ ॥ इंद्रःकरींद्रमारुह्यराहुंकृत्वापुरःसरम् ॥ प्रायाद्यत्राभवत्सूर्यःसहानेनहनूमता ॥ ३८ ॥ अथातिरभसेनागाद्राहुरुत्सृज्यवासवम् ॥ अनेनचसवैदृष्टःप्रधावञ्शैलकूटवत् ॥ ३९ ॥ ततःसूर्यंसमुत्सृज्यराहुंफलमवेक्ष्यच ॥ उत्पपातपुनर्व्योमग्रहीतुंसिंहिकासुतः ॥ ४० ॥ उत्सृज्यार्कमिमंरामप्रधावंतंप्लवंगमम् ॥ अवेक्ष्यैवंपरावृत्तोमुखशेषःपराङ्मुखः ॥ ४१ ॥

आकर सूर्यको ग्रासकर लिया ॥ ३५ ॥ राहुके वचन सुनकर वह कांचनमालाधारी इन्द्र घबडाय आसन छोडकर उठे ॥ ३६ ॥ फिर कैलाश पर्वतके शिखरके समान ऊंचे चार दांतवाले मदस्रावी श्रृङ्गारवेषधारी सुवर्ण घण्टा स्वरूप अट्टहास समन्वित ॥३७॥ हस्तियोंमें श्रेष्ठ ऐरावत हाथी पर सवार हो राहुको आगे कर इन्द्रजी वहांसे चले जहां सूर्यके साथ हनुमान् विराजमान थे ॥ ३८ ॥ इन्द्रको पीछे छोड राहु उनसे पहले ही जाय अतिवेगसे वहां पहुंचा परन्तु विशालशरीर श्रृङ्गाकार हनुमानूको देखते ही भाग गया ॥ ३९ ॥ फिर राहुको भी फल समझ सूर्यको छोड सिंहिकाके पुत्र राहुके पकडनेकी अभिलाषासे हनुमानूजी फिर आकाशको उछले ॥ ४० ॥ हे राम ! जब वानर श्रेष्ठ हनुमानूजी सूयको छोडकर धाये तब केवल मुखमात्रके आकार वाला राहु इनका

बडाभारी शरीर देख विमुख हो भागा ॥ ४१ ॥ परन्तु सिंहिका पुत्र राहु परित्राण करने वाले इन्द्रसे यह वृत्तान्त कहनेको अभिलाष किये डरके मारे बार बार "इन्द्र इन्द्र" कहने लगा ॥ ४२ ॥ राहुकी आर्तवाणी सुनकर और उसका बोल पहँचानकर इन्द्रजीने कहा "कुछ भय नहीं है" हम इसको संहार करते हैं ॥ ४३ ॥ फिर पवनकुमार हनुमान्जी ऐरावत हाथीको देख "यह बडाभारी फल है" ऐसा विचारकर उस गजराजके सन्मुख धाये ॥ ४४ ॥ हे राघव ! जब हनुमान्जी ऐरावत हाथीको ग्रहण करनेके लिये धाये, तो एक मुहूर्त्तमें इनका रूप कालानलके समान घोर होगया ॥ ४५॥ परन्तु शचीनाथ इन्द्रने अत्यन्त क्रोध करके हनुमान्जीके ऊपर अपने हाथसे वज्र मारा ॥ ४६ ॥ इन्द्रका वज्र लगनेसे ताडित हो यह हनुमान् पर्वतपर गिरे और गिरनेसे इनकी

इंद्रमाशंसमानस्तुत्रातारंसिंहिकासुतः ॥ इंद्रइंद्रेतिसंत्रासान्मुहुर्मुहुरभाषत ॥ ४२ ॥ राहोर्विक्रोशमानस्यप्रागेवालक्षितंस्वरम् ॥ श्रुत्वेंद्रोवाचमाभैषीरहमेनंनिषूदये ॥ ४३ ॥ ऐरावतंततोदृष्ट्वामहत्तदिदमित्यपि ॥ फलंतंहस्तिराजानमभिदुद्रावमारुतिः ॥ ४४ ॥ तथास्यधावतोरूपमैरावतजिघृक्षया ॥ मुहूर्तमभवद्घोरमिंद्राग्निपरिभास्वरम् ॥ ४५ ॥ एवमाधावमानंतुनातिक्रुद्धःशचीपतिः ॥ हस्तांतादतिमुक्तेनकुलिशेनाभ्यताडयत् ॥ ४६॥ ततोगिरौपपातैषइंद्रवज्राभिताडितः ॥ पतमानस्यचैतस्यवामाहनुरभज्यत ॥४७॥ तस्मिंस्तुपतितेबालेवज्रताडनविह्वले॥ चुक्रोधेंद्रायपवनःप्रजानामहितायसः ॥ ४८ ॥ प्रचारंसतुसंगृह्यप्रजास्वंतर्गतःप्रभुः ॥ गुहांप्रविष्टःस्वसुतंशिशुमादायमारुतः ॥४९॥ विण्मूत्राशयमावृत्यप्रजानांपरमार्तिकृत् ॥ रुरोधसर्वभूतानियथावर्षाणिवासवः ॥ ५० ॥ वायुप्रकोपाद्भूतानिनिरुच्छ्वासनिसर्वतः ॥ संधिभिर्भिद्यमानैश्चकाष्ठभूतानिजज्ञिरे ॥ ५१ ॥ निस्वाध्यायवषट्कारंनिष्क्रियंधर्मवर्जितम् ॥ वायुप्रकोपात्त्रैलोक्यंनिरयस्थमिवाभवत् ॥ ५२ ॥ ततःप्रजाःसगंधर्वाःसदेवासुरमानुषाः ॥ प्रजापतिंसमाधावन्दुःखिताश्चसुखेच्छया ॥ ५३ ॥

बाई हनु (ठोडी) टूटगई ॥४७॥ जब यह हनुमान्जी विह्वल हो वज्रके प्रहारसे गिरपडे तब पवनदेवता प्रजा गणोंका अहित करनेकी वासनासे इन्द्रके ऊपर कुपित हुए ॥ ४८ ॥ तब सबके शरीरमें रहने वाले वायु अपना संचार बन्द करके अपने पुत्रको ले गुफामें पैठगये ॥४९॥ अधिकक्या कहें वर्षाको रोककर इन्द्रजी जिस प्रकार सर्व प्राणियोंको पीडा देनेलगे ॥ ५० ॥ पवनके कोप करनेसे सब प्राणियोंका श्वास सब भांतिसे बंद हो ग या और देहके सब जोड काष्ठके समान अकड गये ॥ ५१॥ बरन् वायुके कोपसे समस्त त्रिलो कीमें स्वाध्याय, वषट्कार क्रियाकलाप और समस्त धर्म लोपहो गये इस कारण समस्त त्रिभुवन दुःखित जान पडने लगा ॥ ५२ ॥ इसके पीछे देवता, गन्धर्व, असुर और मनुष्य इत्यादि सब प्रजा दुःखित होकर सुखकी कामनासे ब्रह्माजीके

निकट गई ॥ ५३ ॥ वायुके रुकजानेसे उदररोगीके समान बढगयेहैं उदर जिनके, ऐसे सब देवता हाथ जोडकर बोले हे भगवन् ! हे प्रजानाथ ! आपने चार प्रकारके प्राणी उत्पन्न किये हैं ॥ ५४ ॥ हे सत्तम ! आपने पवनको हमारी आयुका अधिपति कर दिया है, परन्तु वही वायु प्राणेश्वर होकर आज सहसा ॥ ५५ ॥ क्लेश देते हुए हमको रूंधरहे हैं जैसे कोई अन्तः पुरमें स्त्रियोंको रोककर रक्खे इस कारण वायुकरके हम उपहत हो आपकी शरणमें आये ॥ ५६ ॥ हे दुःखहारी ! आप हमारा पवनके रुकजानेका यह दुःख दूर कीजिये, प्रजाके ऐसे वचन सुनकर प्रजानाथ प्रजापति ॥ ५७ ॥ इसमें कोई कारण यह कहकर फिर कहने लगे, जिस कारण वायुने क्रोधकर पवनको रोका है ॥५८॥ हे सर्व प्रजागण! वह हमको कहना उचित और तुमको श्रवण करना उचित है सो तुम

ऊचुःप्रांजलयोदेवामहोदरनिभोदराः॥त्वयातुभगवन्सृष्टाःप्रजानाथचतुर्विधाः॥५४॥त्वयादत्तोऽयमस्माकमायुषःपवनःपतिः॥सोऽस्मान्प्राणेश्वरोभूत्वाकस्मादेषोऽद्यसत्तम ॥ ५५ ॥ रुरोधदुःखंजनयन्नंतःपुरइवस्त्रियः ॥ तस्मात्त्वांशरणंप्राप्तावायुनोपहतावयम् ॥ ५६ ॥ वायुसंरोधजंदुःखमिदंनोनुददुःखहन् ॥ एतत्प्रजानांश्रुत्वातुप्रजानाथःप्रजापतिः ॥ ५७ ॥ कारणादितिचोक्त्वासौप्रजाःपुनरभाषत ॥ यस्मिंश्चकारणेवायुश्चुक्रोधचरुरोधच ॥ ५८ ॥ प्रजाःशृणुध्वंतत्सर्वंश्रोतव्यंचात्मनःक्षमम् ॥पुत्रस्तस्यामरेशेनइंद्रेणाद्यनिपातितः॥ ॥ ५९ ॥ राहोर्वचनमास्थायततःसकुपितोऽनिलः ॥ अशरीरःशरीरेषुवायुश्चरतिपालयन् ॥६०॥ शरीरंहिविनावायुंसमतांयातिदारुभिः ॥ वायुःप्राणःसुखंवायुर्वायुःसर्वमिदंजगत् ॥ ६१ ॥ वायुनासंपरित्यक्तंनसुखंविंदतेजगत् ॥ अद्यैवचपरित्यक्तंवायुनाजगदायुषा ॥ ६२ ॥ अद्यैवतेनिरुच्छ्वासाःकाष्ठकुड्योपमाःस्थिताः ॥ तद्यामस्तत्रयत्रास्तेमारुतोरुक्प्रदोहिनः ॥ माविनाशंगमिष्यामअप्रसाद्यादितेःसुतम् ॥ ६३ ॥

उसको श्रवण करो। आज सुरपति इन्द्रने पवनके पुत्रको मारा है ॥ ५९ ॥ और उन्होंने राहुके वचनोंका विश्वास ऐसा किया उसीसे पवनने कोप किया है, अशरीरी पवन देहधारियोंका पालन करते हुए उनके अन्तरमें विचरण करते हैं ॥ ६० ॥ विशेष करके वायुके विना शरीर काठके तुल्य है इस लिये पवन ही प्राण पवन ही सुख और पवन ही सब जगत् है ॥ ६१ ॥ आयुरूप वायुने अभी जगत्को छोड दिया है, इस कारण वायु करके त्यागे जाकर जगत्के सब जीव सुख प्राप्त करनेको समर्थ नहीं हैं ॥ ६२ ॥ वायुसे जो तुम्हारा श्वास रुकगया है सो आजही तुम काष्ठऔर भी(दीवार)के समान होगये हो इस निमित्त हमलोगोंको पीडादेनेवाले मरुत जिस स्थानमें विराजमान हैं हमको वहीं चलना चाहिये ॥ ६३ ॥

इसके उपरान्त ब्रह्माजी देवता, गन्धर्व, भुजंग, गुह्यक इत्यादि प्रजाओंके साथ जिस स्थानमें इन्द्रसे मारे हुए पुत्रको लिये पवन बैठे थे वहां गये ॥ ६४ ॥ तब आदित्य, अनल और सुवर्णके समान द्युतिमान् पुत्र हनुमानको सदागति पवनजीकी उछंगमें देखकर ब्रह्माजी देवता; गन्धर्व, ऋषि, यक्ष और राक्षसोंके सहित उनपर कृपा करते हुए ॥ ६५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां पंचत्रिंशः सर्गः ॥ ३५ ॥ पुत्रका वध होजानेसे शोकसे संतापित हुए पवन देवता ब्रह्माजीको देख उस बालकको ले शीघ्रतासे खडे होगये ॥ १ ॥ सुवर्णमय भूषणोंके पहरनेसे शोभायमान पवन देवता तीन बार साष्टांग प्रणाम करके ब्रह्माजीके चरणोंपर गिरे तब उनके कुण्डल, माला और शिरके भूषण हिलने लगे ॥२॥ तब अनादि सब वेदार्थ जाननेवाले ब्रह्माजीने अलंकारोंसे

ततःप्रजाभिःसहितःप्रजापतिःसदेवगंधर्वभुजंगगुह्यकैः ॥ जगामयत्रास्यतितत्रमारुतःसुतंसुरेंद्राभिहतंप्रगृह्यसः ॥६४॥ ततोऽर्कवैश्वानरकांचनप्रभंसुतंतदोत्संगगतंसदागतेः ॥ चतुर्मुखोवीक्ष्यकृपामथाकरोत्सदेवगंधर्वऋषियक्षराक्षसैः ॥ ६५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे पंचत्रिंशः सर्गः॥३५॥ ततःपितामहंदृष्ट्वावायुःपुत्रवधार्दितः ॥ शिशुकंतंसमादायउत्तस्थौधातुरग्रतः ॥१॥ चलत्कुंडलमौलिस्रक्तपनीयविभूषणः ॥ पादयोर्न्यपतद्वायुस्त्रिरुपस्थायवेधसे ॥२॥ तंतुवेदविदातेनलंबाभरणशोभिना ॥ वायुमुत्थप्यहस्तेन शिशुंतंपरिमृष्टवान् ॥ ३ ॥ स्पृष्टमात्रस्ततःसोऽथसलीलंपद्मजन्मना ॥ जलसिक्तंयथासस्यंपुनर्जीवितमाप्तवान् ॥ ४ ॥ प्राणवंतमिमंदृष्ट्वा प्राणोगंधवहोमुदा ॥ चचारसर्वभूतेषुसन्निरुद्धंयथापुरा ॥ ५ ॥ मरुद्रोधाद्विनिर्मुक्तास्ताःप्रजामुदिताभवन् ॥ शीतवातविनिर्मुक्ताःपद्मिन्य इवसांबुजाः ॥ ६ ॥ ततस्त्रियुग्मस्त्रिककुत्त्रिधामात्रिदशार्चितः ॥ उवाचदेवताब्रह्मामारुतप्रियकाम्यया ॥ ७ ॥ भोमहेंद्राग्निवरुणामहेश्वर धनेश्वराः ॥ जानतमपिवःसर्ववक्ष्यामिश्रूयतांहितम् ॥ ८ ॥

शोभित अपने हाथ वायुदेवको उठाय उस बालक हनुमान्जीको स्पर्श किया ॥ ३ ॥ उसकाल यह बालक कमलयोनि ब्रह्माजीसे लीलापूर्वक छुआ जाता ही जलसे सींचे हुए धानके समान फिर जीवित होगया ॥ ४ ॥ गन्ध बहनेवाले प्राणभूत वायु अपने पुत्रको जीवित देखकर हर्षके मारे अपनी रोक छोड पहलेके समान सब प्राणियोंमें विचरण करने लगे ॥५॥ कमलके साथ कमलिनी जिसप्रकार शीत वातसे छुटकारा पाय प्रफुल्ल होजाती है वैसेही समस्त प्रजा पवनके रूँधनेसे छूट प्रफुल्ल हुई ॥ ६ ॥ यश, वीर्य, ऐश्वर्य; श्री; ज्ञान और वैराग्यसमन्वित त्रिमूर्ति देवताओंसे पूजित त्रिलोकधाम ब्रह्माजी पवनजीका हित करनेकी कामनासे बोले ॥ ७ ॥ महेन्द्र, अग्नि, वरुण, महेश्वर, धनेश्वर इत्यादि देवगण ! तुमलोग जानते हो इस कारण समस्त हितकी कथा कहताहूं श्रवण करो ॥८॥

इस बालकसे तुम्हारे कर्तव्य कार्य सिद्ध होंगे इस निमित्त इन पवनदेवताकी प्रसन्नताके लिये तुम इनको (हनुमान्को) वरदान दो ॥ ९ ॥ तब प्रसन्नवदन सहस्र नयन इन्द्रजीने प्रसन्न हो सुवर्णके कमल फूलोंकी माला देकर यह कहा ॥ १० ॥ हमारे हाथसे छूटे वज्र करके इनकी हनु टूट गई है इस कारण यह कपिशार्दूल "हनुमान्" नामसे विख्यात होंगे ॥ ११ ॥ इनको हम एक औरभी अद्भुत वरदान देते हैं, कि; अबसे यह हनुमान् हमारे वज्रसेभी अवध्य होंगे ॥ १२ ॥ तब तिमिरनाशक ज्योतिः प्रकाशक भगवान् सूर्य बोले हमने अपने तेजसे सौवाँ अंश इनको दिया ॥ १३ ॥ जिस समय यह शास्त्र पढनेमें समर्थ होंगे उस समयमें हम इनको शास्त्र पढावेंगे इससे यह हनुमान् वाग्मी होंगे ॥ १४ ॥ वरुणजीने यह वर दिया कि, हमारी फांसीसे या जलसे दश लाख

अनेनशिशुनाकार्यंकर्तव्यंवोभविष्यति ॥ तद्ददध्वंवरान्सर्वेमारुतस्यास्यतुष्टये ॥ ९ ॥ ततःसहस्रनयनःप्रीतियुक्तःशुभाननः ॥ कुशेशयमयीं मालामुत्क्षिप्येदंवचोऽब्रवीत् ॥ १० ॥ मत्करोत्सृष्टवज्रेणहनुरस्ययथाहतः ॥ नाम्नावैकपिशार्दूलोभविताहनुमानितिः ॥११॥ अहमस्यप्रदा स्यापिपरमंवरमद्भुतम् ॥ इतःप्रभृतिवज्रस्यममावध्योभविष्यति ॥१२॥ मार्तंडस्त्वब्रवीत्तत्रभगवांस्तिमिरापहः ॥ तेजसोऽस्यमदीयस्यददा मिशतिकांकलाम् ॥१३॥ यदाचशास्त्राण्यध्येतुंशक्तिरस्यभविष्यति ॥ तदास्यशास्त्रंदास्यामियेनवाग्मीभविष्यति ॥ १४ ॥ वरुणश्चवरंप्रा दान्नास्यमृत्युर्भविष्यति ॥ वर्षायुतशतेनापिमत्पाशादुदकादपि ॥ १५॥ यमोदंडादवध्यत्वमरोगित्वंचदत्तवान् ॥ वरंददामिसंतुष्टाअविषादं चसंयुगे ॥१६॥ गदेयंमामिकानैनंसंयुगेषुवधिष्यति॥इत्येवंधनदःप्राहतदाह्येकाक्षिपिंगलः॥१७॥मत्तोमदायुधानांचअवध्योऽयंभविष्यति ॥ इत्येवंशंकरेणापिदत्तोऽस्यपरमोवरः॥१८॥विश्वकर्माचदृष्ट्वेमंबालंप्रतिमहारथः ॥ मत्कृतानिचशस्त्राणियानिदिव्यानितानिच ॥ तैरवध्यत्व मापन्नश्चिरजीवीभविष्यति॥ १९ ॥दीर्घायुश्चमहात्माचब्रह्मातंप्राब्रवीद्वचः॥ सर्वेषांब्रह्मदंडानामवध्यत्वंभविष्यति ॥ २० ॥

वर्षतक भी इनकी मृत्यु नहीं होगी ॥ १५ ॥ यमने सन्तुष्ट होकर इनको वरदान दिया कि, यह हमारे दंडसे न मारे जायँगे, सदा निरोगी रहेंगे, इनको युद्धमें कभी विषाद न होगा ॥ १६ ॥ एकाक्षिपिंगल धनद कुबेरजीने उस कालमें यह वरदान दिया कि, यह हनुमान् हमसे व हमारी गदासे न मारे जायँगे ॥ १७ ॥ यह हनुमान् हमारे भी सब अस्त्र शस्त्रोंसे अवध्य होंगे, शिवजीने भी इनको इस प्रकारका परम वर दिया ॥ १८ ॥ महारथी विश्वकर्माजीने ऐसा देखकर बाल कसे कहा कि हमारे बनाये हुए जो दिव्य अस्त्रशस्त्र हैं यह बालक उन सबसे अवध्य होकर सदा जीवित रहेगा ॥ १९ ॥ ब्रह्माजीने उनसे कहा तुम ब्रह्मके जाननेवाले और दीर्घायु होगे, ब्रह्मास्त्रसे व ब्रह्मशापसे भी तुम अवध्य होगे ॥२०॥

इसके पीछे जगद्गुरु चतुरानन ब्रह्माजी देवताओंके वरसे इनको अलंकृत देख सन्तुष्टचित्त हो पवनदेवतासे बोले ॥ २१ ॥ हे मरुत ! तुम्हारा पुत्र मारुति शत्रुओंको भय देनेवाला, मित्रोंको अभय देनेवाला और अजीत होगा ॥ २२ ॥ अधिक करके यह कपिवर इच्छानुसार रूप धारण कर गमन और भक्षण करसकेगा अधिक क्या कहें, यह बालक कीर्तिवान् होगा और इसकी गति किसीसे नहीं रुकेगी ॥ २३ ॥ और रावणको नाश करनेवाले श्रीराम चन्द्रजीको प्रसन्नता उपजानेवाले रोमहर्षण कार्य संग्राममें सिद्ध करेगा ॥ २४ ॥ ब्रह्मादि सब देवता ऐसा कहकर पवनदेवताको प्रसन्न कर अपने २ परिवारोंके साथ जैसे आयेथे वैसेही चले गये ॥ २५ ॥ गन्धवह पवन भी पुत्रको लेकर घरआये और अंजनीके निकट वरदानका वृत्तान्त वर्णन करके वहांसे

ततःसुराणांतुवरैर्दृष्ट्वाह्येनमलंकृतम् ॥ चतुर्मुखस्तुष्टमनावायुमाहजगद्गुरुः ॥२१॥ अमित्राणांभयकरोमित्राणामभयंकरः ॥ अजेयोभवितापुत्र स्तवमारुतमारुतिः ॥२२॥ कामरूपःकामचारीकामगःप्लवतांवरः ॥ भवत्यव्याहतगतिःकीर्तिमांश्चभविष्यति ॥ २३ ॥ रावणोत्सादनार्थानि रामप्रीतिकराणिच ॥ रोमहर्षकराण्येवकर्ताकर्माणिसंयुगे ॥२४॥ एवमुक्त्वातमामंत्र्यमारुतंत्वमरैःसह ॥ यथागतं ययुःसर्वेपितामहपुरोगमाः ॥२५॥ सोऽपिगंधवहःपुत्रंप्रगृह्यगृहमानयत् ॥ अंजनायास्तमाख्यायवरदत्तंविनिर्गतः ॥२६॥ प्राप्यरामवरानेषवरदानबलान्वितः ॥ जवेनात्मनिसंस्थेन सोऽसौपूर्णइवार्णवः ॥ २७ ॥ तरसापूर्यमाणोऽपितदावानरपुंगवः ॥ आश्रमेषुमहर्षीणामपराध्यतिनिर्भयः ॥ २८ ॥ स्रुग्भांडान्यग्निहोत्रा णिवल्कलानांचसंचयान् ॥ भग्नविच्छिन्नविध्वस्तान्संशांतानांकरोत्ययम् ॥२९॥ एवंविधानिकर्माणिप्रावर्तत महाबलः ॥ सर्वेषांब्रह्मदंडाना मवध्यःशंभुनाकृतः ॥ ३० ॥ जानंतऋषयःसर्वेसहंतेतस्यशक्तितः ॥ तथाकेसरिणात्वेषवायुनासोऽजनीसुतः ॥ ३१ ॥

ले गये ॥ २६ ॥ हे राम ! वरदानके वश यह बलवान् हनुमान् समस्त वर पाय समुद्रकी समान दैहिक बलसे परिपूर्ण हुए ॥ २७ ॥ यह वानरश्रेष्ठ उसकाल वेगसे परिपूर्ण हो निर्भय चित्तसे ऋषिगणोंके आश्रमोंमें उपद्रव मचाने लगे ॥२८॥ यह हनुमान् शान्त गुणशाली मुनिजनोंके स्रुक् भाण्ड इत्यादि यज्ञके उपकरण तोडने लगे, अग्निहोत्रकी अग्निको वितथराय देने और वल्कलोंको विध्वंस करने लगे ॥ २९ ॥ इस प्रकारसे यह महाबली हनुमान्जी ब्रह्माजीके वरसे और ब्रह्मदण्डसे अवध्य हो ऐसे कर्मोंको करने लगे ॥ ३० ॥ ऋषि यह वृत्तान्त न जाने थे इस कारण दंड करनेकी शक्ति रहने पर भी उनका अपराध सह लेते थे। केसरी और पवन, इन अंजनीकुमार हनुमान्को ॥ ३१ ॥

निषेध भी करते थे तथापि यह वानर मर्यादाको लांघते थे, हे रघुवीर! उसके पीछे अंगिरा और भृगुके वंशमें उत्पन्न हुए क्रोधित मुनिजनोंने ॥ ३२ ॥ न बहुत क्रोधपरायण हो और न बहुत अनर्थ ही करके इनको यह शाप दिया कि, हे वानर! तुम जिस बलका आश्रय करके हमको पीडित करते हो ॥ ३३ ॥ सो तुम हमारे शापसे मोहित हो बहुत कालतक इस बलको नहीं जान सकोगे परंतु जब कोई तुम्हारी कीर्तिको याद दिला दिया करेगा, तब तुम्हारा बल बढ़ेगा ॥ ३४ ॥ उसके पीछे यह हनुमान् ऋषियोंके वचन प्रभावसे बलवीर्यविहीन हो मृदुभावसे आश्रमोंमें घूमने लगे ॥ ३५ ॥ सूर्यके समान तेजस्वी ऋक्षराज वानरोंके राजा थे; वह वालि और सुग्रीवके पिता थे ॥ ३६ ॥ वह वानराधिपति ऋक्षराज बहुत दिन तक राज्य करके फिर कालके वश हुए ॥ ३७ ॥

प्रतिषिद्धोऽपिमर्यादांलंघयत्येववानरः ॥ ततोमहर्षयःक्रुद्धाभृग्वंगिरसवंशजाः ॥ ३२ ॥ शेपुरेनंरघुश्रेष्ठनातिक्रुद्धातिमन्यवः ॥ बाधसेयत्समाश्रित्यबलमस्मान्प्लवंगम ॥ ३३ ॥ तद्दीर्घकालंवेत्तासिनास्माकंशापमोहितः ॥ यदातेस्मार्यतेकीर्तिस्तदातेवर्धतेबलम् ॥ ३४ ॥ ततस्तुहृततेजौजामहर्षिवचनौजसा ॥ एषोश्रमाणितान्येवमृदुभावंगतोऽचरत् ॥ ३५ ॥ अथर्क्षरजसोनामवालिसुग्रीवयोःपिता ॥ सर्ववानरराजासीत्तेजसाइवभास्करः ॥ ३६ ॥ सतुराज्यंचिरंकृत्वावानराणांमहेश्वरः ॥ ततस्त्वर्क्षरजानामकालधर्मेणयोजितः ॥ ३७ ॥ तस्मिन्नस्तमितेचाथमंत्रिभिर्मन्त्रकोविदैः ॥ पित्र्येपदेकृतोवालीसुग्रीवोवालिनःपदे ॥ ३८ ॥ सुग्रीवेणसमंत्वस्यअद्वैधंछिद्रवर्जितम् ॥ आबाल्यंसख्यमभवदनिलस्याग्निना यथा ॥ ३९ ॥ एषशापवशादेवनवेदबलमात्मनः ॥ वालिसुग्रीवयोर्वैरंयदारामसमुत्थितम् ॥ ४० ॥ नह्येषरामसुग्रीवोभ्राम्यमाणोऽपिवालिना ॥ देवजानातिनह्येषबलमात्मनिमारुतिः ॥ ४१ ॥ ऋषिशापाहृतबलस्तदैवकपिसत्तमः ॥ सिंहःकुंजररुद्धोवाआस्थितःसहितोरणे ॥ ४२ ॥ पराक्रमोत्साहमतिप्रतापसौशील्यमाधुर्यनयानयैश्च ॥ गांभीर्यचातुर्यसुवीर्यधैर्यैर्हनूमतःकोऽप्यधिकोऽस्तिलोके ॥ ४३ ॥

जब वह ऋक्षराज मृत्युको प्राप्त हुए तब मंत्र जाननेवाले मन्त्रियोंने वालीको पिताके पदपर और वालीके पदपर सुग्रीवको अभिषेकित किया ॥ ३८ ॥ अग्निके साथ पवनकी नाई वालीका बालकपनसेही सुग्रीवके साथ दोषरहित अद्वितीय मित्रभाव हो गया ॥ ३९ ॥ परंतु हे राम! जिस समय वाली और सुग्रीवमें, विरोध उत्पन्न हुआ उस कालमें यह हनुमानूजी शाप लग जानेसे अपने बलको नहीं जानते थे ॥ ४० ॥ हे देव राम! सुग्रीवजी भी इस समाचारको नहीं जानते थे कि; पवनकुमार हनुमानूजी अपनी सामर्थ्यको नहीं जानते ॥ ४१ ॥ जो कुछ भी हो ऋषियोंके शापसे बल गमाये वह कपिश्रेष्ठ हनुमान् सुग्रीवजीकी विपद्के समयमें हाथीसे घिरे हुए सिंहके समान सुग्रीवजीकेसाथ रहते थे ॥ ४२ ॥ पराक्रम, उत्साह, बुद्धि, प्रताप, सुशीलता, मधुरता, नीति, ज्ञान, गंभीरता

चतुरता, वीर्य और धीरता इत्यादि गुणोंमें हनुमानूजीसे अधिक इस लोकमें कोई भी नहीं था ॥ ४३ ॥ और यह वानरश्रेष्ठ व्याकरण सीखनेके लिये सूर्यके सन्मुख हो पूँछते २ उदयगिरिसे अस्ताचलतक चले जाते थे ॥ ४४ ॥ अधिक क्या कहें इन अप्रमेय वानरेंद्रसे सूत्र, वृत्ति, महाभाष्य और संग्रहके सहित महाअर्थयुक्त महत्ग्रंथ अर्थके सहित ग्रहण करके उनमें सिद्धि प्राप्त की थी॥४५॥ वरन् इनके समान शास्त्रविशारद और कोई भी नहीं है, यह समस्त विद्या, क्या छन्द, क्या तप विधान, सब बातोंमें ही बृहस्पतिके समान हैं, प्रलयकालके समय उफनते हुए समुद्र दहनाभिलाषी पावक और यमराजके सन्मुख कोई जैसे खडा नहीं हो सकता है वैसेही इन हनुमानूके सन्मुख कोई भी खडे होनेकी सामर्थ्य नहीं रखता ॥ ४६ ॥ हे राम! इनकेही समान तुम्हारी सहायताके

असौपुनर्व्याकरणंग्रहीष्यन्सूर्योन्मुखःप्रष्टुमनाःकपींद्रः ॥ उद्यद्गिरेरस्तगिरिंजगामग्रंथंमहद्धारयनप्रमेयः॥ ४४॥ ससूत्रवृत्त्यर्थपदंमहार्थंससंग्रहंसिध्यतिवैकपींद्रः ॥ नह्यस्यकश्चित्सदृशोऽस्तिशास्त्रेवैशारदेछंदगतौतथैव ॥४५॥सर्वासुविद्यासुतपोविधानेप्रस्पर्धतेऽयंहिगुरुंसुराणाम् ॥प्रविविक्षोरिवसागरस्यलोकान्दिधक्षोरिवपावकस्य ॥ लोकक्षयेष्वेवयथांतकस्यहनूमतःस्थास्यतिकःपुरस्तात् ॥ ४६ ॥ एषेवचान्येचमहाकपींद्राःसुग्रीवमैंदद्विविदाःसनीलाः ॥ सतारतारेयनलाःसरंभास्त्वत्कारणाद्रामसुरैर्हिसृष्टाः ॥४७॥ गजोगवाक्षोगवयःसदंष्ट्रोमैंदःप्रभोज्योतिमुखोनलश्च ॥ एतेचऋक्षाःसहवानरेंद्रैस्त्वत्कारणाद्रामसुरैर्हिसृष्टाः ॥४८॥ तदेतत्कथितंसर्वंयन्मांत्वंपरिपृच्छसि ॥हनूमतोबालभावेकर्मैतत्कथितंमया॥ ४९ ॥ श्रुत्वागस्त्यस्यकथितंरामःसौमित्रिरेवच ॥ विस्मयंपरमंजग्मुर्वानराराक्षसैःसह ॥ ५० ॥अगस्त्यस्त्वब्रवीद्रामंसर्वमेतच्छ्रुतंत्वया॥दृष्टःसंभाषितश्चासिरामगच्छामहेवयम्॥५१॥श्रुत्वैतद्राघवोवाक्यमगस्त्यस्योग्रतेजसः॥ प्रांजलिःप्रणतश्चापिमहर्षिमिदमब्रवीत् ॥५२॥

अर्थ देवगणोंने सुग्रीव, अंगद, मैन्द, द्विविद, नल नील, तार और रंभादि महा २ वानरोंको उत्पन्न किया है ॥ ४७ ॥ हे प्रभो! गज, गवाक्ष, गवय, सुदष्ट, ज्योतिर्मुख; इन वानरश्रेष्ठ और ऋक्षोंको भी तुम्हारी सहायताके अर्थ उत्पन्न किया है ॥४८॥ हे राम ! हनुमानूजीने बालकपनमें जो जो कर्म किये थे वह सब हमने आपसे कहे अधिक कहनेसे क्या आपने जो कुछ भी हमसे पूछा वही हमने निवेदन किया ॥४९॥ श्रीरामचन्द्रजी व लक्ष्मणजी अगस्त्यजीके वचन सुनकर राक्षस और वानरोंके सहित अत्यन्त विस्मित हुए ॥ ५० ॥ परन्तु अगस्त्यजी श्रीरामचन्द्रजीसे बोले कि, आपने सब कुछ सुना और हमने भी दर्शन पाय आपसे संभाषण किया अब हम जाते हैं ॥ ५१ ॥ तब श्रीरामचन्द्रजी उग्र तेजस्वी अगस्त्यजी ऋषिके यह वचन सुन हाथ जोड शिर नवाय

महर्षिसे बोले ॥ ५२ ॥ आपके दर्शनसे पितृगण और प्रपितामहगण और बान्धवगण निश्चयही आज हमारे ऊपर प्रसन्न हुए हैं, अधिक क्या कहें देवता भी प्रसन्न हुए ॥५३॥ परन्तु आपकी सेवामें हमारा यह निवेदन है; कि हम वांछारहित होकर जो कुछ कहें आप हमारे पर दया करके उसको सिद्ध करें ॥ ५४॥ इस समय हम वनवाससे लौट आये हैं फिर पुरवासी और जनपदवासियोंको अपने २ कार्यमें प्रतिष्ठित करके आपके प्रतापसे हम समस्त यज्ञोंका अनुष्ठान करेंगे ॥ ५५ ॥ आप हमपर अनुग्रहकी इच्छा करते हैं विशेष करके महत् तप वीर्य समन्वित साधु शीलवान् आप हैं इस कारण आप हमारे यज्ञमें सदाही सदस्य (विधि बतानेवाले) का कार्य करें ॥५६॥ आप तप करके पापविहीन हुए हैं, इस निमित्त आपको सदा आश्रय करनेसे पितृगण हमपर सदा अनुग्रह करेंगे और परम सन्तुष्ट होंगे ॥ ५७ ॥ उस कालमें सब लोगोंके साथ मिलकर आप लोगोंको इस स्थानमें आना पडेगा; व्रत धारण किये हुए अगस्त्यादि

अद्यमेदेवतास्तुष्टाःपितरःप्रपितामहाः ॥ युष्माकंदर्शनादेवनित्यंतुष्टाःसबांधवाः ॥५३॥ विज्ञाप्यंतुममैतद्धियद्वदाम्यागतस्पृहः ॥ तद्भवद्भिर्ममकृतेकर्तव्यमनुकंपया ॥ ५४ ॥ पौरजानपदान्स्थाप्यस्वकार्येष्वहमागतः ॥ क्रतूनहंकरिष्यामिप्रभावाद्भवतांसताम् ॥५५॥ सदस्याममयज्ञेषुभवंतोनित्यमेवतु ॥ भविष्यथमहावीर्याममानुग्रहकांक्षिणः ॥ ५६ ॥ अहंयुष्मान्समाश्रित्यतपोनिर्धूतकल्मषान् ॥ अनुगृहीतःपितृभिर्भविष्यामिसुनिर्वृतः ॥५७॥ तदागंतव्यमनिशंभवद्भिरिहसंगतैः ॥ अगस्त्याद्यास्तुतच्छ्रुत्वाऋषयःसंशितव्रताः ॥ ५८ ॥ एवमस्त्विततिंप्रोच्यप्रयातुमुपचक्रमुः ॥ एवमुक्त्वागताःसर्वेऋषयस्तेयथागतम् ॥५९॥ राघवश्चतमेवार्थंचिंतयामासविस्मितः ॥ ततोऽस्तंभास्करेयातेविसृज्यनृपवानरान् ॥ ६० ॥ संध्यामुपास्यविधिवत्तदानरवरोत्तमः॥ प्रवृत्तायांरजन्यांतुसोंऽतःपुरचरोऽभवत् ॥ ६१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे षट्त्रिंशः सर्गः ॥ ३६ ॥ अभिषिक्तेतुकाकुत्स्थेधर्मेणविदितात्मनि ॥ व्यतीतायानिशापूर्वा पौराणांहर्षवर्धिनी ॥ १ ॥ तस्यांरजन्यांव्युष्टायांप्रातर्नृपतिबोधकाः ॥ वंदिनःसमुपातिष्ठन्सौम्यानृपतिवेश्मनि ॥ २ ॥

ऋषि यह सुनकर ॥ ५८ ॥ ऐसाही होगा रामचन्द्रजीसे यह कह जानेके लिये तैयार हुए ॥ ५९ ॥ श्रीरामचन्द्रजी भी विस्मित हो यज्ञके लिये चिन्ता करने लगे ॥ । इसके पीछे सूर्यके छिपजानेसे रामचन्द्रजीने नृप और वानरोंको बिदा किया ॥ ६० ॥ तदनन्तर नरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीने विधिविधानसे सन्ध्या की और रात्रिका सुख प्राप्त करनेके लिये अन्तःपुरमें गये ॥ ६१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां षट्त्रिंशः सर्गः ॥ ३६ ॥ ब्रह्मज्ञानसम्पन्न काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजीका जब अभिषेक धर्मानुसार हो गया तो उस अभिषेक होनेकी रात्रिमेंही प्रथम पुरवासियोंको हर्ष दिया था परन्तु वह रात्रिभी बीत गई ॥ १ ॥ रात्रिके बीतजानेपर राजाके जगानेवाले बंदीगण जो कि अति सौम्यमूर्ति थे आकर उपस्थित हुए ॥ २ ॥

किन्नरोंके समान शिक्षित और मधुर कण्ठवाले वह गायक वीरश्रेष्ठ राजाका हर्ष बढायकर स्तुति करने लगे ॥ ३ ॥ हे सौम्यस्वभाव नरनाथ ! आपके निद्रित रहनेसे सब जगत् निद्रामें मग्न रहता है, इस लिये हे कौशल्यानन्दवर्द्धन वीर! आप निद्राका परित्याग कीजिये ॥ ४ ॥ आप विष्णुजीके समान विक्रमकारी, अश्विनीकुमारके समान रूपवान्, बृहस्पतिजीकी नांईं बुद्धिमान् और प्रजापालनमें ब्रह्माजीके समान हैं ॥ ५ ॥ आप समुद्रके समान गभीर स्वभाववाले हैं पृथ्वीके समान क्षमागुणशाली हैं, सूर्यकी नांईं तेजस्वी और पवनसम वेगवान् हैं ॥ ६ ॥ शिवजीके समान आपका सौम्य गुण कभी कंपायमान होनेवाला नहीं ऐसा सौम्यगुण चन्द्रमामेंही विराजमान है और कहीं नहीं, आपके समान न कोई राजा हुआ न आगेके होगा ॥ ७ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! आप जैसे दुर्द्धर्ष हैं वैसेही

तेरक्तकंठिनःसर्वेकिन्नराइवशिक्षिताः ॥ तुष्टुवुर्नृपतिंवीरंयथावत्संप्रहर्षिणः ॥३॥ वीरसौम्यप्रबुध्यस्वकौसल्याप्रीतिवर्धन ॥ जगद्धिसर्वंस्वपितित्वयिसुप्तेनराधिप ॥ ४ ॥ विक्रमस्तेयथाविष्णोरूपंचैवाश्विनोरिव ॥बुद्ध्याबृहस्पतेस्तुल्यःप्रजापतिसमोह्यसि ॥५॥ क्षमातेपृथिवीतुल्यातेजसाभास्करोपमः ॥ वेगस्तेवायुनातुल्योगांभीर्यमुदधेरिव ॥ ६ ॥ अप्रकंप्योयथास्थाणुश्चंदेसौम्यत्वमीदृशम् ॥ नेदृशाःपार्थिवाःपूर्वंभवितारोनराधिप ॥७॥ यथात्वमसिदुर्धर्षोधर्मनित्यःप्रजाहितः ॥ नत्वांजहातिकीर्तिश्चलक्ष्मीश्चपुरुषर्षभ ॥८॥ श्रीश्चधर्मश्चकाकुत्स्थत्वयिनित्यंप्रतिष्ठितौ॥ एताश्चान्याश्चमधुराबंदिभिःपरिकीर्तिताः ॥९॥ सूताश्चसंस्तवैर्दिव्यैर्बोधयंतिस्मराघवम् ॥ स्तुतिभिःस्तूयमानाभिःप्रत्युबुध्यतराघवः ॥ १० ॥ सतद्विहायशयनंपांडुराच्छादनास्तृतम् ॥ उत्तस्थौनागशयनाद्धरिर्नारायणोयथा ॥११॥ समुत्थितंमहात्मानंप्रह्वाःप्रांजलयोनराः॥सलिलंभाजनैःशुभ्रैरुपतस्थुःसहस्रशः॥१२॥कृतोदकःशुचिर्भूत्वाकालेहुतहुताशनः ॥ देवागारंजगामाशुपुण्यमिक्ष्वाकुसेवितम्॥१३॥

सदा धर्मपरायण होकर आप प्रजाके कार्यभी किया करते हैं इससे कीर्ति और लक्ष्मी आपका त्याग नहीं करेगी ॥८॥ हे काकुत्स्थ ! धर्म और लक्ष्मी सदा आपमेंही स्थितहैं, बंदी लोगोंने इस प्रकार व और भी बहुत स्तुति मधुर वचनोंसे की ॥ ९ ॥ सूतगण दिव्य स्तुति कर करके रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीको जगाने लगे। रामचन्द्रजी इसप्रकार सब भांति स्तुति कियेजानेपर जागे ॥१०॥ नारायणजी जिसप्रकारशेषनागकी शय्यापरसे उठसे हैं वैसेही श्रीरामचन्द्रजी श्वेत चादर बिछी हुई शय्यापरसे उठे ॥११॥ सहस्र २ विनीत सेवक श्वेतवर्णके पात्रमें जल लिये हाथ जोड उन श्रीरामचन्द्रजीके समीप आये ॥१२॥ श्रीरामचन्द्रजी यथा अवसरमें जलके

कार्यसे पवित्र हो अग्निमें होम करते २ देवालयमें प्रवेश करते हुए. जो कि पुण्यमयथा, औरजिसकी इक्ष्वाकुवंशी सेवा करते थे ॥ १३ ॥ वहांपर देवगण पितृगण और ब्राह्मणोंकी विधिपूर्वक पूजा करके सौम्यजनोंके साथ बाहरकी कक्षामें श्रीरामचन्द्रजी आये ॥ १४ ॥ वसिष्ठादि पुरोहित और महात्मा मंत्रिजनभी आये, वह सबही तीन अग्नियोंके समान मूर्तिमान ॥ १५ ॥ उस कालमें अनेक जनपदोंके अधीश्वर महात्मा क्षत्रिय इन्द्रके पार्श्वमें देवताओंके समान श्रीरामचन्द्रजीकी बगलमें खडे होगये ॥ १६ ॥ तीन वेद जिस प्रकार अग्निकी उपासना करें वैसेही महायशस्वी भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्नजी श्रीरामचन्द्रजीकी सेवा करने लगे ॥ १७ ॥ मुदित हुए सेवकगण प्रसन्नमुख हो हाथ जोड श्रीरामचन्द्रजीके पार्श्वमें खडे हो गये ॥ १८ ॥ महातेजस्वी कामरूपी सुग्रीव इत्यादि असंख्य वानर श्रीरामचन्द्रजीकी उपासना करने लगे ॥ १९ ॥ धननाथ कुबेरजीकी उपासना जिस प्रकार गुह्यक करते हैं वैसेही विभीषणजी अपने चार राक्षसोंके साथ

तत्रदेवान्पितॄन्विप्रानर्चयित्वायथाविधि ॥ बाह्यकक्षांतरंरामोनिर्जगामजनैर्वृतः ॥ १४ ॥ उपतस्थुर्महात्मानोमंत्रिणःसपुरोहिताः ॥ वसिष्ठप्रमुखाःसर्वेदीप्यमानाइवाग्नयः ॥ १५ ॥ क्षत्रियाश्चमहात्मानोनानाजनपदेश्वराः ॥ रामस्योपाविशन्पार्श्वेशक्रस्येवयथामराः ॥ १६ ॥ भरतो लक्ष्मणश्चात्रशत्रुघ्नश्चमहायशाः ॥ उपासांचक्रिरेहृष्टावेदास्त्रयइवाध्वरम् ॥ १७ ॥ याताःप्रांजलयोभूत्वाकिंकरामुदिताननाः ॥ मुदिताना मपार्श्वस्थाबहवःसमुपाविशन् ॥ १८ ॥ वानराश्चमहावीर्याविंशतिःकामरूपिणः ॥ सुग्रीवप्रमुखारामसुपासंतेमहौजसः ॥ १९ ॥ विभीषणश्चरक्षोभिश्चतुर्भिःपरिवारितः ॥ उपासतेमहात्मानंधनेशमिवगुह्यकाः ॥ २० ॥ तथानिगमवृद्धाश्चकुलीनायेचमानवाः ॥ शिरसावंद्यराजानमुपासंतेविचक्षणाः ॥ २१ ॥ तथापरिवृतोराजश्रीमद्भिर्ऋषिभिर्वरैः ॥ राजभिश्चमहावीर्यैर्वानरैश्चसराक्षसैः ॥ २२ ॥ यथादेवेश्वरोनित्यमृषिभिःसमुपास्यते ॥ अधिकस्तेनरूपेणसहस्राक्षाद्विरोचते ॥ २३ ॥ तेषांसमुपविष्टानांतास्ताःसुमधुराःकथाः ॥ कथ्यंतेधर्मसंयुक्ताःपुराणज्ञैर्महात्मभिः ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७ ॥

महात्मा श्रीरामचन्द्रजीकी उपासना करने लगे ॥ २० ॥ जो कि दैवज्ञ और जो कुलीन थे वह विचक्षण मनुष्य मस्तक झुकाय श्रीरामचन्द्रजीको प्रणाम कर उनकी उपासना करने लगे ॥ २१ ॥ देवराज इन्द्रजी जिस प्रकार ऋषियोंके साथ रहकर उनसे पूजित होते हैं वैसेही रामचन्द्र श्रीमान् ऋषिगण, महावीर राजागण, वानरगण और राक्षसोंसे वैसेही पूजित होने लगे अधिक क्या कहें श्रीरामचन्द्रजी उस सुन्दरताईके द्वारा हजार नेत्रवाले इन्द्रसे भी अधिक शोभायमान होने लगे ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ पुराण जानने वाले महात्मा उन बैठे हुए सभासदोंके सम्मुख धर्मयुक्त मधुर कथा कहने लगे ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां सप्तत्रिंशः सर्गः ॥ ३७ ॥

(आगे पांच सर्ग क्षेपक हैं) रघुनंदन श्रीरामचन्द्र यह सब वृत्तांत सुनकर फिर भी अगस्त्यजीसे बोले कि हे भगवन् ! आपने वाली सुग्रीवके पिताका नाम ऋक्षराज बताया ॥ १ ॥ परंतु आपने इनकी माताका नाम नहीं बताया सो इनकी माता कहां? घर कहां ? और इनके नाम ऐसे क्यों हुए ॥२॥ यह समस्त वृत्तांत जाननेके लिये हमको बडाकौतूहल हुआ है सो हे ब्रह्मन् ! आप अनुग्रहपूर्वक बताइये । श्रीरामचन्द्रजीके इस प्रकार कहनेपर अगस्त्यजी बोले ॥३॥ हे राम ! पहले नारदजीने हमारे आश्रममें आकर जैसा कहा था वैसेही संक्षेपसे यहवृत्तांत श्रवण कीजिये ॥४॥ वह अति धर्मपरायण देवर्षि नारदजी किसीसमय घूमते २ हमारे आश्रममें आये हमने भी विधि विधानसे न्यायानुसार उनकी पूजा की ॥ ५ ॥ इसके उपरांत हमने कौतूहलके वश हो पूछा तब उन्होंने सुखसे

एतच्छ्रुत्वातुनिखिलंराघवोऽगस्त्यमब्रवीत् ॥ यएषर्क्षरजानामवालिसुग्रीवयोःपिता ॥१॥ जननीकाचभगवन्नत्वयापरिकीर्तिता ॥ वालिसुग्रीवयोश्चापिनामनीकेनहेतुना ॥ २ ॥ एतद्ब्रह्मन्समाचक्ष्वकौतूहलमिदंहिनः ॥ सम्प्रोक्तोराघवेणैवमगस्त्योवाक्यमब्रवीत् ॥ ३ ॥ श्रृणुरामकथामेतांयथापूर्वंसमासतः ॥ नारदःकथयामासममाश्रममुपागतः ॥ ४ ॥ कदाचिदटमानोऽसावतिथित्वमुपागतः ॥ अर्चितस्तुयथान्यायंविधिदृष्टेनकर्मणा ॥५॥ सुखासीनःकथामेनांमयापृष्टःसकौतुकात् ॥ कथयामासधर्मात्मामहर्षेश्रूयतामिति ॥ ६ ॥ मेरुर्नगवरःश्रीमाञ्जांबूनदमयःशुभः ॥ तस्ययन्मध्यमंश्रृंगंसर्वदैवतपूजितम् ॥७॥ तस्मिन्दिव्यासभारम्याब्रह्मणःशतयोजना ॥ तस्यामास्तेसदादेवःपद्मयोनिश्चतुर्मुखः ॥८॥ योगमभ्यसतस्तस्यनेत्राभ्यांयद्रसोऽस्रवत् ॥तद्गृहीतंभगवतापाणिनाचर्चितंतुतत् ॥ ९ ॥ निक्षिप्तमात्रंतद्भूमौब्रह्मणालोककर्तृणा ॥ तस्मिन्नश्रुकणेरामवानरःसंबभूवहः ॥ १० ॥ उत्पन्नमात्रस्तुतदावानरश्चनरोत्तम ॥ समाश्वास्यप्रियैर्वाक्यैरुक्तःकिलमहात्मना ॥ ११ ॥

बैठकर कहा हे धार्मिकश्रेष्ठ महर्षे ! श्रवण करो॥६॥ मेरुनाम एकपर्वत है यहपर्वतश्रेष्ठ परम सुन्दर सुवर्णमय और अत्यंत सुन्दरताकी खानि है इसका मध्यम श्रृङ्ग सब देवताओंसे पूजित है ॥७॥ उस शिखरपर ब्रह्माजीकी शतयोजन विस्तारवाली रमणीय दिव्य सभा स्थापित है, चतुर्मुख ब्रह्माजी इस रमणीक दिव्य सभामें सदा विराजमान रहते हैं ॥ ८ ॥ एक समय योगाभ्यास करते २ इनके दोनों नेत्रोंसे आंसुओंकी बूँदें गिरीं, भगवानने करकमलसे उनको ग्रहण कर अपने शरीरमें लगाली ॥ ९ ॥ और फिर जो शरीरमें लगाय ब्रह्माजीने हाथ झटका तो उन लोककर्ताके हाथसे आँसुओंकी बूँदके गिरतेही उससे एक वानर उत्पन्न हुआ ॥ १० ॥ हे नरश्रेष्ठ ! उस वानरके उत्पन्न होतेही महात्मा पितामह ब्रह्माजीने प्रियवचनोंसे उसको समझा बुझाकर कहा ॥ ११ ॥

रे वानरश्रेष्ठ ! देखो इस बडे विस्तारवाले पर्वतपर देवतावास करते हैं तुम इस रमणीक पर्वतश्रेष्ठपर बहुतसारे फल मूल भक्षण कर ॥१२॥सदा हमारे निकट वास करो, इस स्थानमें कुछ कालतक वास करनेपर फिर तुम्हारा कल्याण होगा ॥ १३ ॥ हे राघव ! जब ब्रह्माजीने इस प्रकारसे कहा तब उस वानरश्रेष्ठने मस्तक झुकाय उन देवदेवके चरणोंकी वंदना करके॥१४॥ आदिदेव जगत्पतिलोककर्ता ब्रह्माजीसे कहा हे देव ! हम अपनेको आपकी आज्ञाके अधीनकरते हैं; जैसा आपने कहा वैसाही करेंगे ॥ १५ ॥ वह वानर हृष्टचित्त हो उस काल देव ब्रह्माजीसे ऐसा कह फलपुष्पयुक्त द्रुमखंडमें चला गया ॥१६॥ वह वानर उस वनमें फूलोंको खाया करता, श्रेष्ठ मधु और अनेक प्रकारके फूलोंको इकठ्ठा किया करता॥१७॥ वह वानर प्रतिदिन संध्याके समय आया करता. हे राम ! इस

पश्यशैलंसुविस्तीर्णसुरैरध्युषितंसदा ॥ तस्मिन्रम्येगिरिवरेबहुमूलफलाशनः ॥१२॥ ममांतिकचरोनित्यंभववानरपुंगव॥ कंचित्कालमिहास्स्व त्वंततःश्रेयोभविष्यति ॥ १३ ॥ एवमुक्तःसचैतेनब्रह्मणावानरोत्तमः ॥ प्रणम्यशिरसापादौदेवदेवस्यराघव ॥१४॥ उक्तवाँल्लोककर्तारमादिदेवं जगत्पतिम् ॥ यथाज्ञापयसेदेवस्थितोऽहंतवशासने ॥ १५ ॥ एवमुक्त्वाहरिर्देवंययौहृष्टमनास्तदा ॥ सतदाद्रुमखंडेषुफलपुष्पघनेषुच ॥१६॥ ब्रह्मन्प्रतिबलःशीघ्रंवनेफलकृताशनः॥चिन्वन्मधूनिमुख्यानिचिन्वन्पुष्पाण्यनेकशः ॥१७॥ दिनेदिनेचसायाह्नेब्रह्मणोंऽतिकमागमत् ॥ गृही त्वाराममुख्यानिपुष्पाणिचफलानिच ॥ १८ ॥ ब्रह्मणोदेवदेवस्यपादमूलेन्यवेदयत् ॥ एवंतस्यगतःकालोबहुपर्यटतोगिरिम्॥ १९ ॥ कस्य चित्त्वथकालस्यसमतीतस्यराघव॥ ऋक्षराड्वानरश्रेष्ठस्तृषयापरिपीडितः ॥२०॥ उत्तरंमेरुशिखरंगतस्तत्रचदृष्टवान् ॥ नानाविहगसंघुष्टंप्रस न्नसलिलंसरः ॥२१॥ चलत्केसरमात्मानंकृत्वातस्यतटेस्थितः॥ ददर्शतस्मिन्सरसिवक्त्रच्छायामथात्मनः॥२२॥कोऽयमस्मिन्ममरिपुर्वसत्यं तर्जलेमहान् ॥ रूपंचांतर्गतंतत्रवीक्ष्यतत्पश्यतोहरिः॥२३॥क्रोधाविष्टमनाह्येषनियतंमावमन्यते ॥तदस्यदुष्टभावस्यपुष्कलंकुमतेर्गृहम्॥२४॥

प्रकार वह श्रेष्ठ फल पुष्प ग्रहण करके॥१८॥ देवदेव ब्रह्माजीके चरणकमलमें आकर निवेदन करता हुआ, इस प्रकारसे पर्वतपर घुमते२ उसको बहुत काल बीत गया ॥ १९ ॥ हे राघव ! इसके उपरांत कुछ काल बीतनेपर वानरश्रेष्ठ ऋक्षराजप्यासके मारे अतिव्याकुल होकर ॥२०॥ उत्तम मेरुके शिखरपर चला गया वहांपर अनेक प्रकारके शब्दोंसे शब्दायमान निर्मल जलयुक्त सरोवर विराजमान है॥२१॥ ऋक्षराजने हर्षित चित्त हो अपने केशको चलायमान कर उस सरो वरमेंअपने मुखकी परछाईको देखा ॥ २२ ॥ यह जलमें जो बसता है यह हमारा महाशत्रु कौन है इस प्रकार वानरश्रेष्ठने जलमें वह रूप देखकर॥ २३ ॥ मनमें कहा कियह चित्तमें कोप किये सदा हमारा अपमान करता है इसलिये इस दुरात्मा दुर्मतिका हम सुन्दर गृह विनाश करेंगे ॥ २४ ॥

मनही मन इस प्रकारकी चिंता करके वह वानर चंचलताकेवश छलांगमार उस कुंडमें कूद पडा ॥२५॥ और फिर एक छलांग मारकर उस ह्रदसे बाहर निकल आया। हे राम! निकलनेके समय वह वानरश्रेष्ठ स्त्रीके रूपको प्राप्तहुआ॥२६॥उस ऋक्षराज वानरकी यह स्त्री परमसुन्दर मनोहर और लावण्यललित बनी, उसकी जांघें बडी२, भौहें सुन्दर, शिखाकेकेश नीले॥२७॥वदनमंडल सुन्दर, भाव और हास्य चिह्नयुक्त दोनों स्तन मोटेकडे और अनुपम शोभायमानथे, उस कुण्डके तीरपर वह स्त्री लताके समान प्रकाशमान होती थी ॥२८॥ त्रिलोकसुन्दरी यह रमणी सबके चित्तको मथित करनेवाली कमलरहित लक्ष्मीके समान निर्मल चौटलीके समान ॥२९॥ अथवा लक्ष्मीसे भी अधिक असीम सौंदर्य विभूषिता देवी पार्वतीजीके समान सब दिशाओंमें उजाला करती हुई यह शोभायमान होने

एवंसंचिंत्यमनसासवैवानरचापलात्॥आप्लुत्यचापतत्तस्मिन्ह्रदेवानरसत्तमः॥२५॥ उत्प्लुत्यतस्मात्सह्रदादुत्थितःप्लवगःपुनः ॥ तस्मिन्नेव क्षणेरामस्त्रीत्वंप्रापसवानरः ॥२६॥ मनोज्ञरूपासानारीलावण्यललिताशुभा ॥ विस्तीर्णजघनासुभ्रूर्नीलकुंतलमूर्धजा ॥२७॥ मुग्धसस्मितवक्त्राचपीनस्तनतटाशुभा॥ह्रदतीरेचसाभातिऋजुयष्टिर्लतायथा॥२८॥ त्रैलोक्यसुंदरीकांतासर्वचित्तप्रमाथिनी॥लक्ष्मीवपद्मरहिताचंद्रज्योत्स्नेव निर्मला ॥ २९ ॥ रूपेणाभ्यभवत्सातुश्रियंदेवीमुमायथा ॥ द्योतयंतीदिशःसर्वास्तत्राभूत्सावरांगना ॥३०॥ एतस्मिन्नंतरेदेवोनिवृत्तःसुरनायकः ॥ पादावुपास्यदेवस्यब्रह्मणस्तेनवैपथा ॥ ३१ ॥ तस्यामेवचवेलायामादित्योऽपिपरिभ्रमन् ॥ तस्मिन्नेवपदेसोऽभूद्यस्मिन्सातनुमध्यमा॥ ३२ ॥ युगपत्सातदादृष्टादेवाभ्यांसुरसुंदरी॥ कंदर्पवशगौतौतुदृष्ट्वातांसंबभूवतुः ॥३३॥ ततःक्षुभितसर्वांगौसुरेंद्रौपन्नगाविव ॥ तद्रूपमद्भुतंदृष्ट्वात्याजितौधैर्यमात्मनः ॥ ३४॥ ततस्तस्यांसुरेंद्रेणस्कन्नंशिरसिपातितम् अनासाद्यैवतांनारींसन्निवृत्तमथाभवत् ॥ ३५ ॥

लगी ॥३०॥ इसी समयमें सुरनायक देव इन्द्रजी बृहस्पतिजीके चरणोंकी वंदना करके इसी मार्गसे लौट रहे थे ॥ ३१ ॥ इसी समयमें सूर्य नारायणजी भी घूमते २ जिस स्थानमें तनुमध्यमा वह वामा खडी थी वहींपर आये ॥३२॥ उस कालमें वह सुरसुंदरी दो देवताओंकी दृष्टिमें पडी परंतु इंद्रजी व सूर्य उसको देखतेही दोनों कामदेवके वश हुए ॥ ३३ ॥ इसके पीछे दोनों देवताश्रेष्ठ इस सुन्दरीका अद्भुत रूप निहारकर अपना धीरज त्याग देते हुए, इनके सब अंग क्षुभित होगये और सर्पके समान श्वास इन दोनोंने लिये ॥ ३४ ॥ इसके पीछे उस स्त्रीको न पाकर उसके मस्तकपरही अपना स्खलित वीर्य गिरानेके लिये

इन्द्र तैयार हुए, परन्तु यह वीर्य इस नारीको प्राप्त न होकर नीचे गिरा॥३५॥ फिर उसस्त्रीने महात्मा इन्द्रजीके अमोघ वीर्यसे वानरपतिश्रेष्ठ वानरको उत्पन्न किया ॥ ३६ ॥ वालूमें जो इन्द्रजीका वीर्य गिरा था इस निमित्त उस वीर्यसे उत्पन्न हुए पुत्रका नाम वाली हुआ। इसी समय सूर्यने कामके वश हो ॥३७॥ इस स्त्रीकी गर्दनपर अपना वीर्य गिराया परन्तु उस श्रेष्ठ शरीरवाली स्त्रीने ऐसा होनेसेभी कुछ शुभ वचन नहीं कहे ॥ ३८॥ सूर्य भगवानने भी कामदेवकी व्यथासे छुटकारा पाया और उस गर्दनपर गिरे हुए वीर्यसे सुग्रीवजीकी उत्पत्ति हुई ॥ ३९ ॥ इस प्रकारसे महाबलवान् वीर वानरश्रेष्ठ वालीको उत्पन्न करके और उसको कांचनकी माला दे ॥ ४० ॥ इन्द्रजी तो स्वर्गको चले गये। यह माला सब गुणोंसे पूर्ण और अक्षय थी और सूर्यनारायणभी इसप्रकारमहाबल

ततःसावानरपतिंजज्ञेवानरमीश्वरम् ॥ अमोघरेतसस्तस्यवासवस्यमहात्मनः ॥ ३६ ॥ वालेषुपतितंबीजंवालीनामबभूवसः ॥ भास्करेणापि तस्यांवैकंदर्पवशवर्तिना ॥ ३७ ॥ बीजंनिषिक्तंग्रीवायांविधानमनुवर्तत ॥ तेनापिसावरतनुर्नोक्ताकिंचिद्वचःशुभम् ॥ ३८ ॥ निवृत्तमदनश्चाथसूर्योऽपिसमपद्यत ॥ ग्रीवायांपतितंबीजंसुग्रीवःसमजायत ॥ ३९ ॥ एवमुत्पाद्यतौवीरौवानरेंद्रौमहाबलौ ॥ दत्त्वातुकांचनींमालांवानरेंद्रस्यवालिनः ॥ ४० ॥ अक्षय्यांगुणसंपूर्णांशक्रस्तुत्रिदिवंययौ ॥ सूर्योऽपिस्वसुतस्यैवनिरूप्यपवनात्मजम् ॥ ४१ ॥ कृत्येषुव्यवसायेषुजगामसविताऽबरम् ॥ तस्यांनिशायांव्युष्टायामुदितेचदिवाकरे ॥ ४२ ॥ सतद्वानररूपंतुप्रतिपेदेपुनर्नृप ॥ सएववानरोभूत्वापुत्रौस्वस्यप्लवंगमौ ॥ ४३ ॥ पिंगेक्षणौहरिवरौबलिनौकामरूपिणौ ॥ मधून्यमृतकल्पानिपाययितौतेनतौतदा ॥४४॥ गृह्यऋक्षरजास्तौतुब्रह्मणोऽतिकमागमत ॥ दृष्ट्वार्क्षरजसंपुत्रंब्रह्मालोकपितामहः ॥ ४५ ॥ बहुशःसांत्वयामासपुत्राभ्यांसहितंहरिम् ॥ सांत्वयित्वाततःपश्चाद्देवदूतमथादिशत् ॥ ४६ ॥ गच्छमद्वचनाद्दूतकिष्किंधांनामवैशुभाम्साह्यस्यगुणसंपन्नामहतीचपुरीशुभा ॥ ४७ ॥

वान् वीर सुग्रीवको उत्पन्न करके और पवनकुमार हनुमान्जीको ॥ ४१ ॥ अपने पुत्रके कार्य और व्यवसायमें नियुक्त कर आकाशमार्गमें होकर सूर्यलोकको चलेगये हे राजन् ! उस रात्रिके वीत जाने और सूर्य भगवानके उदय होनेपर ॥ ४२ ॥ हे नृप। ऋक्षराज फिर वानररूपको प्राप्त हुए, इसप्रकारसे यह वानर होकर अपने दो वानर पुत्रोंको ॥ ४३ ॥ जो कि पीले नेत्रवाले महाबली कामरूपी थे, वानरश्रेष्ठ वाली और सुग्रीवको अमृतके समान मधु पिलाते हुए ॥ ४४ ॥ वह ऋक्षराज वानरपनको प्राप्त हो अपने पुत्र उन दो वानरोंको ले ब्रह्माजीके निकट गये। लोकपितामह ब्रह्माजीने भी अपने पुत्र ऋक्षराजको देख ॥ ४५ ॥ दोनों पुत्रोंके साथ उस वानरको अनेक प्रकारसे समझाया, समझाने बुझानेके पीछे फिर देवदूतको यह आज्ञा दी ॥ ४६ ॥ कि हे दूत !

हमारी आज्ञासे तुम शुभ किष्किन्धापुरीमें जाओ, यह सुवर्णसम्पन्न अतिरमणीय पुरी इन ऋक्षराजके योग्य है ॥४७॥ वहांपर वानरोंके अनेक यूथ वास करते हैं, व इनके सिवाय औरभी कामरूपी वानरगण इसमें निवास करते हैं ॥ ४८ ॥ यह नगरी अनेक रत्नोंसे परिपूर्ण और दुर्गम है चारों वर्ण इसमें रहते हैं, यह परम पवित्र और वाणिज्यकी खानि है। हमारी आज्ञासे विश्वकर्माने यह दिव्य सुन्दर पुरी बनाई है॥४९॥ तुम उस पुरीमें इन ऋक्षराजको पुत्रोंके सहित स्थापित करो यूथपाल वानरोंको पुकार और साधारण वानरोंकोभी बुलाय ॥५०॥ उन सबके साथ अति आदर मान करके इनको तुम सिंहासनपर बैठाय राज्याभिषेक करो॥ ५१ ॥ इन बुद्धिमान वानरश्रेष्ठको देखतेही वह सब वानर सदाके निमित्त हमारे वश होजायँगे ॥ ५२ ॥ जब ब्रह्माजीने इस प्रकार वचन कहे तब दूत ऋक्षराजको आगे कर परमरमणीयंकिष्किन्धा पुरीको गया ॥ ५३ ॥ वह दूत पवनके समान वेगगतिसे गुहामें बसी हुई किष्किन्धा

तत्रवानरयूथानिसुबहूनिवसंतिच॥बहुरत्नसमाकीर्णांवानरैःकामरूपिभिः४८॥पुण्यापण्यवतीदुर्गांचातुर्वर्ण्यपुरस्कृता॥विश्वकर्मकृतादिव्यामन्नियोगाच्चशाभना॥४९॥ तत्रर्क्षरजसंदृष्ट्वासपुत्रंवानरर्षभम्॥यूथपालान्समाह्वाययांश्चान्यान्प्राकृतान्हरीन्॥५०॥तेषांसंभाव्यसर्वेषांमदीयंजनसंसदि॥अभिषेचयराजानमारोप्यमहदासने ॥५१॥ दृष्टमात्राश्चतेसर्वेवानरेणचधीमता॥अस्यर्क्षरजसोनित्यंभविष्यंतिवशानुगाः॥५२॥ इत्येवमुक्तेवचनेब्रह्मणातंहरीश्वरम्॥पुरतःकृत्यदूतोऽसौप्रययौतांपुरींशुभाम्५३॥सप्रविश्यानिलगतिस्तांगुहांवानरोत्तमम्॥स्थापयामासराजानंपितामहनियोगतः॥५४॥ राज्याभिषेकविधिनास्नातोऽथाभ्यर्चितस्तथा॥सबद्धमुकुटःश्रीमानभिषिक्तःस्वलंकृतः॥५५॥ आज्ञापयामासहरीन्सर्वान्मुदितमानसः॥ सप्तद्वीपसमुद्रायांपृथिव्यांमेप्लवंगमाः॥५६॥वालीसुग्रीवयोरेषएषचर्क्षरजाःपिता॥जननीचैषतुहरिरित्येतद्भद्रमस्तुते॥५७॥ यश्चैतच्छ्रावयेद्विद्वान्यश्चैतच्छृणुयान्नरः॥सिध्यंतितस्यकार्यार्थामनसोहर्षवर्धनाः॥५८॥एतच्चसर्वंकथितंमयाविभोप्रविस्तरेणेहयथार्थतस्तव॥ उत्पत्तिरेषारजनीचराणामुक्तातथैवेहहरीश्वराणाम् ॥ ५९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये उत्तरकांडे प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

नगरीमें पहुँचकर वानरश्रेष्ठको ब्रह्माजीकी आज्ञाके अनुसार राज्यपर स्थापित करता हुआ ॥ ५४ ॥ श्रीमान् ऋक्षराज मुकुट धारणकर और उत्तम गहनोंसे भूषित हो राज्याभिषेककी विधिके अनुसार स्नान करके अभिषिक्त हुए ॥५५॥ अधिक क्या कहें ऋक्षराज सब प्रकारसे अर्चित होकर सन्तुष्टमनसे समुद्रके सहित सात द्वीपोंकी पृथ्वीपर जितने वानर थे वह सब वानर इनकी आज्ञाके वश हुए ॥ ५६ ॥ यह ऋक्षराजही वाली सुग्रीवके पिता और यही इनकी माता हुए, बस यही इनका वृत्तान्त है तुम्हारा मंगल हो ॥ ५७ ॥ जो विद्वान् पुरुष इसको श्रवण करावे या श्रवण करे उसके मनका हर्ष बढे और उसके कार्य सिद्ध हों ॥ ५८ ॥ हे प्रभो ! राक्षस और वानरोंकी उत्पत्तिका वृत्तान्त हमने आपसे विस्तारके सहित यथार्थ २ वर्णन किया ॥ ५९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०

वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां प्रक्षिप्तः प्रथमः सर्गः ॥१॥ तब रघुनंदन वीर यह दिव्य पौराणिककथा श्रवण करके भ्राताओंके सहित परमविस्मयको प्राप्त हुए ॥१॥ श्रीरामचन्द्रजी ऋषिके वचन सुनकर बोले कि,आपके प्रसादसे हमने यह पवित्र कथा सुनी ॥२॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! यह विस्तारित कौतूहलवाली और सुग्रीवकी उत्पत्तिका वृत्तान्त जैसे दिव्य है वैसाही सम्मत है ॥३॥ हे ब्रह्मर्षे ! वानरशार्दूल वाली देवनाथ इन्द्रका पुत्र और कपिश्रेष्ठ सुग्रीव सूर्यके पुत्र हुए, फिर दोनों ही समस्त बलवानोंमें श्रेष्ठ हों इसमें आश्चर्यही क्या है ? ॥ ४ ॥ जब श्रीरामचन्द्रजीने यह कहा तब कुम्भसंभव (घडेसे उत्पन्न हुए) अगस्त्यजी बोले, ह महावीर ! प्राचीन कालमें ऐसीही घटना हुई थी ॥ ५ ॥ हे राजन् ! और एक पुरातन इतिहास सुनो । हे राम ! रावणने जिस निमित्त पूर्वकालमें वैदेहीको हरण किया था ॥ ६ ॥ हम वही वृत्तान्त आपसे कहते हैं आप मन लगायकर सुनें । हे राम ! पूर्व सत्ययुगमें प्रजापतिके पुत्र ॥ ७ ॥ सूर्यके समान शरीर धारण किये

एतांश्रुत्वाकथांदिव्यांपौराणींराघवस्तदा॥भ्रातृभिःसहितोवीरोविस्मयंपरमंययौ ॥१॥ राघवोऽथऋषेर्वाक्यंश्रुत्वावचनमब्रवीत्॥कथेयंमहती पुण्यात्वत्प्रसादाच्छ्रुतामया ॥२॥ बृहत्कौतूहलेचास्मिन्संवृत्तोमुनिपुंगव ॥ उत्पत्तिर्यादृशीदिव्यावालिसुग्रीवयोर्द्विज ॥३॥ किंचित्रंममब्रह्मर्षेसुरेंद्रतपनावुभौ॥जातौवानरशार्दूलौबलेनबलिनांवरौ ॥४॥ एवमुक्तेतुरामेणकुंभयोनिरभाषत॥ एवमेतन्महाबाहोवृत्तमासीत्पुराकिल ॥५॥ अथापरांकथांदिव्यांशृणुराजन्सनातनीम् ॥ यदर्थंरामवैदेहीरावणेनपुराहृता ॥६॥ तत्तेऽहंकीर्तयिष्यामिसमाधिंश्रवणेकुरु ॥ पुराकृतयुगेराम प्रजापतिसुतंप्रभुम् ॥७॥ सनत्कुमारमासीनंरावणोराक्षसाधिपः ॥वपुषासूर्यसंकाशंज्वलंतमिवतेजसा ॥८॥ विनयावनतोभूत्वाह्यभिवाद्यकृतांजलिः॥ उक्तवान्रावणोरामतमृषिंसत्यवादिनम् ॥९॥ कोह्यस्मिन्प्रवरोलोकेदेवानांबलवत्तरः ॥ यंसमाश्रित्यविबुधाजयंतिसमरेरिपून् ॥१०॥ कंयजंतिद्विजानित्यंकंध्यायंतिचयोगिनः ॥ एतन्मेशंसभगवन्विस्तरेणतपोधन ॥ ११ ॥ विदित्वाहृद्गतंतस्यध्यानदृष्टिर्महायशाः ॥ उवाचरावणंप्रेम्णाश्रूयतामितिपुत्रक ॥ १२ ॥ योवैभर्ताजगत्कृत्स्नंयस्योत्पत्तिनविद्महे ॥ सुरासुरैर्नतोनित्यंहरिर्नारायणःप्रभुः ॥ १३ ॥

अपने तेजसे जाज्वल्यमान बैठे हुए सनत्कुमारजीसे राक्षसपति रावण ॥ ८ ॥ विनय सहित हाथ जोडकर (वह रावण उन सत्यवादीऋषिसे) बोला॥ ९ ॥ इस लोकके मध्य देवतोंके बीच कौन पुरुष ऐसा प्रबल और बलशाली है जिसको आश्रय करके देवता युद्धमें शत्रुओंको पराजित करते हैं ॥१०॥ और ब्राह्मण जिसकी सदा पूजा करते, योगी सदा ध्यान करते हैं। हे भगवन् ! हे तपोधन ! यह वृत्तान्त विस्तारपूर्वक हमसे कहिये ॥ ११ ॥ महायशस्वी ऋषि सनत्कुमारजी ध्यानके नेत्रोंसे रावणके हृदयका अभिप्राय जान उससे प्रीति सहित बोले हे पुत्र ! सुनो ॥ १२ ॥ जो समस्त जगत्का भरण पोषण करते हैं और जिसकी उत्पत्ति हम भी नहीं जानते हैं, सुर और असुरगण उस नारायण प्रभु हरिकोही सदा नमस्कार किया करतेहैं ॥ १३ ॥

विश्वजगत्पति ब्रह्माजी जिसकी नाभि कमलसे उत्पन्न हुए हैं और जिन्होंने यह समस्त चराचर विश्व स्थावरजंगममय निर्माण किया है ॥ १४ ॥ देवता उसी हरिका सर्व प्रकारसे आश्रय ग्रहण करके विधिपूर्वक अमृत पिया करते और सन्मान सहित उसकीही पूजा किया करते हैं ॥ १५ ॥ अधिक क्या कहें, वेद पुराण, पंचरात्र इत्यादि ग्रंथोंसे योगी लोग नित्य उसका ही ध्यान धरते और यज्ञ कर २ के उसकीही पूजा किया करते हैं ॥ १६ ॥ और दैत्य; दानव, राक्षस और दूसरे देवताओंके द्वेषी हैं, तिन सबको जीता है, और सबसे संग्राममें पूजा जाता है ॥ १७ ॥ राक्षसनाथ रावण महामुनि सनत्कुमारजीके यह वचन सुनकर प्रणाम कर फिर उनमहामुनिसे बोला ॥ १८ ॥ दैत्य, दानव और राक्षसादि जो कि अपने शत्रु देवतोंसे मारे गये हैं इनकी क्या गति होगी

यस्यनाभ्युद्भवोब्रह्माविश्वस्यजगतःपतिः ॥ येनसर्वमिदंसृष्टंविश्वंस्थावरजंगमम् ॥ १४ ॥ तंसमाश्रित्यविबुधाविधिनाहरिमध्वरे ॥ पिबंति ह्यमृतंचैवमानिताश्चयजंतितम् ॥ १५ ॥ पुराणैश्चैववेदैश्चपंचरात्रैस्तथैवच ॥ ध्यायंतियोगिनोनित्यंक्रतुभिश्चयजंतितम् ॥ १६ ॥ दैत्यदानवरक्षांसियेचान्येचामरद्विषः ॥ सर्वाञ्जयतिसंग्रामेसदासर्वैःसपूज्यते ॥ १७ ॥ श्रुत्वामहर्षेस्तद्वाक्यंरावणोराक्षसाधिपः ॥ उवाचप्रणतोभूत्वापुनरेवमहामुनिम् ॥ १८ ॥ दैत्यदानवरक्षांसियेहताःसमरेऽरयः ॥ कांगतिंप्रतिपद्यंतेकिंचतेहरिणाहताः ॥ १९ ॥ रावणस्यवचःश्रुत्वाप्रत्युवाचमहामुनिः ॥ दैवतैर्निहतानित्यंप्राप्नुवंतिदिवःस्थलम् ॥ २० ॥ पुनस्तस्मात्परिभ्रष्टाजायंतेवसुधातले ॥ पूर्वार्जितैःसुखैर्दुःखैर्जायंतेच म्रियंतिच ॥ २१ ॥ येयेहताश्चक्रधरेणराजंस्त्रैलोक्यनाथेनजनार्दनेन ॥ तेतेगतास्तन्निलयंनरेंद्राःक्रोधोऽपिदेवस्यवरेणतुल्यः ॥ २२ ॥ श्रुत्वाततस्तद्वचनंनिशाचरःसनत्कुमारस्यमुखाद्विनिर्गतम् ॥ तथाप्रहृष्टः सबभूवविस्मितः कथंनुयास्यामिहरिंमहाहवे ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे द्वितीयःसर्गः ॥ २ ॥

और जो हरिसे मारे गये वह किस गतिको पहुँचेंगे ? ॥ १९ ॥ महामुनि सन्त्कुमारजी रावणके वचन सुनकर बोले कि; जिनको देवता मारते हैं, वह लोग नित्य स्वर्गको प्राप्त होते हैं ॥ २० ॥ और फिर स्वर्गसे भ्रष्ट होकर पृथ्वीपर जन्म ग्रहण करते हैं, इस प्रकार पूर्वजन्मोपार्जित सुख दुःखसे उन लोगोंकी जन्मभ्रष्टता हुआ करती है ॥ २१ ॥ हे राजन् ! जो कि त्रिलोकनाथ चक्रधारी जनार्दन करके मरे हैं वह श्रेष्ठ उनमेंही लयको प्राप्त हो गये हैं इस निमित्त उन नारायणका क्रोध भी वरके समान है ॥२२॥ निशाचर दशानन सनत्कुमार मुनिके मुखसे निकले हुए यह वचन सुनकर सन्तुष्ट हुआ और विस्मित होकर विचार करने लगा कि, किस प्रकार हम हरिको समरमें प्राप्त होंगे ॥२३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषायां प्रक्षिप्तः द्वितीयः सर्गः ॥२॥

दुष्टस्वभाववाला रावण जब इस प्रकारसे चिन्ता करने लगा तब महामुनि सनत्कुमारजीने फिर कहना आरंभ किया ॥ १ ॥ हे महावीर ! तुम सुखी होवो, कुछ कालतक ठहरो, तुम्हारे मनमें जो अभिलाष है महासंग्राममें तुम वही प्राप्त करोगे ॥ २ ॥ महावीर रावण यह वचन सुनकर उन मुनिसे बोला, उनके लक्षण कैसे हैं ? सो आप विस्तार सहित समस्त हमसे वर्णन कीजिये ॥ ३ ॥ महामुनि सनत्कुमारजी राक्षसपतिके वचन सुनकर बोले हे राक्षसनाथ ! सुनो हम तुमसे समस्तही कहते हैं ॥ ४ ॥ यह सनातन देव अव्यक्त हैं, सूक्ष्म और स्वर्गगामी हैं वह इस चराचर समस्त त्रिलोकीमें व्याप्त हो रहे हैं ॥ ५ ॥ वह भूमिमें स्वर्गमें, पातालमें; वनोंमें, पर्वतोंमें, समस्त स्थावरोंमें नदियोंमें वर्तमान हैं ॥ ६ ॥ वह ॐकारस्वरूप, सत्यस्वरूप, सावित्रीस्वरूप और पृथ्वीस्वरूप हैं

एवंचिंतयतस्तस्यरावणस्यदुरात्मनः ॥ पुनरेवापरंवाक्यंव्याजहारमहामुनिः ॥१॥ मनसश्चेप्सितंयत्तद्भविष्यतिमहाहवे ॥ सुखीभवमहाबाहोकंचित्कालमुदीक्षय ॥ २ ॥ एवं श्रुत्वामहाबाहुस्तमृषिंप्रत्युवाचसः ॥ कीदृशंलक्षणंतस्यब्रूहिसर्वमशेषतः ॥ ३ ॥ राक्षसस्यवचःश्रुत्वास मुनिःप्रत्यभाषत ॥ श्रूयतांसर्वमाख्यास्येतवराक्षसपुंगव ॥४॥ सहिसर्वगतोदेवःसूक्ष्मोऽव्यक्तःसनातनः ॥ तेनसर्वमिदंव्याप्तंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥५॥सभूमौदिविपातालेपर्वतेषुवनेषुच ॥ स्थावरेषुचसर्वेषुनदीषुनगरीषुच ॥६॥ओंकारश्चैवसत्यश्चसावित्रीपृथिवीचसः ॥ धराधरधरोदेवोह्यनंतइतिविश्रुतः ॥ ७ ॥ अहश्चरात्रिश्चउभेचसंध्येदिवाकरश्चैवयमश्चसोमः ॥ सएवकालोह्यनिलोनलश्चसब्रह्मरुद्रेंद्रसएवचापः ॥ ८ ॥ विद्योततिज्वलतिभातिचकास्तिलोकान्सृजत्ययंसंहरतिप्रशास्ति ॥ क्रीडांकरोत्यव्ययलोकनाथोविष्णुःपुराणोभवनाशकैकः ॥९॥ अथवाबहुनाऽनेनकिमुक्तेनदशानन ॥ तेनसर्वमिदंव्याप्तंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥ १० ॥ नीलोत्पलदलश्यामःकिंजल्कारुणवाससा ॥ प्रावृट्कालेयथाव्योम्निसतडित्तोयदोयथा ॥ ११ ॥ श्रीमान्मेघवपुःश्यामःशुभःपंकजलोचनः ॥ श्रीवत्सेनोरसायुक्तःशशांककृतलक्षणः ॥ १२ ॥

अधिक क्या कहें वह धराधरशायी अनन्तके नामसे विख्यात हैं॥७॥वही दिन रात दोनों सन्ध्या, सूर्य, चन्द्रमा, यम, काल, पवन, अनल, ब्रह्म, रुद्र, इन्द्रऔर जल हैं ॥८॥ वह अनलरूप धारण कर सब लोकोंको प्रज्वलित करते हैं चन्द्रमारूपसे सब जगत्‌में प्रकाश करते हैं और सूर्यरूपसे सब लोकोंमें तापदेते हैं बरन् वही उत्पत्ति, पालन और संहार किया करते हैं; एकमात्र संसारनाशक अव्यय लोकनाथ पुराण विष्णुजी ही यह क्रीडा किया करते हैं ॥ ९ ॥ हे दशानन ! अब अधिक कहनेका क्या प्रयोजन है ? वह चराचरमय इस समय त्रिलोकीमें व्याप रहे हैं ॥ १० ॥ नील कमलके समान श्याम वर्ण देह, केशर तुल्य अरुण द्युतिवाले वस्त्र धारण कर वर्षा कालमें सौदामिनी शोभित आकाशमें टिके हुए मेघके समान शोभायमान होते हैं ॥ ११ ॥ उनके हृदयमें श्रीवत्सका चिह्न है,

लोचनयुगल श्रीमान् कमलके समान हैं और शरीर उनका मेघके समान श्याम वर्ण है ॥ १२ ॥ उनकी शोभाका पारावार नहीं, संग्रामरूपिणी लक्ष्मी उनकी देह ढककर मेघमें विराजमान दामिनीके समान उनके शरीरमें स्थान किये हुए हैं ॥ १३ ॥ सुरगण या असुरगण नागगण कोई भी उनके देखनेकी सामर्थ्य नहीं रखता, परंतु जिसपर वह अनुग्रह करते हैं वही उनके देखनेको समर्थ होता है ॥ १४ ॥ हे वत्स ! क्या यज्ञफल, क्या संयम, क्या दान, क्या यज्ञ इन किसीके भी करनेसे उन भगवानके दर्शन नहीं पाये जाते ॥१५॥ जो लोग उनके भक्त हैं और उनको मन प्राण समर्पण करके केवल उनकाही आश्रय लिये हुए हैं और ज्ञानके बलसे जिनके समस्त पाप एकबारही दग्ध हो गये हैं वह लोग उनको देख सकते हैं ॥ १६ ॥ उनके देखनेकी इच्छा जो तुमको हुई

तस्यनित्यंशरीरस्थामेघस्येवशतह्रदाः ॥ संग्रामरूपिणीलक्ष्मीर्देहमावृत्यतिष्ठति ॥ १३ ॥ नशक्यःससुरैर्द्रष्टुंनासुरैर्नचपन्नगैः ॥ यस्यप्रसादं कुरुतेसवैतंद्रष्टुमर्हति ॥१४॥ नहियज्ञफलैस्तातनतपोभिस्तुसंचितैः ॥ शक्यतेभगवान्द्रष्टुंनदानेननचेज्यया ॥१५॥ तद्भक्तैस्तद्गतप्राणैस्तच्चि त्तैस्तत्परायणैः ॥ शक्यतेभगवान्द्रष्टुंज्ञाननिर्दग्धकिल्बिषैः॥१६॥ अथवापृच्छचरक्षेंद्रयदितंद्रष्टुमिच्छसि॥ कथयिष्यामितेसर्वंश्रूयतांयदिरो चते ॥१७॥ कृतेयुगेव्यतीतेवैमुखेत्रेतायुगस्यतु ॥ हितार्थंदेवमर्त्यानांभवितानृपविग्रहः ॥ १८॥ इक्ष्वाकूणांचयोराजाभाव्योदशरथोभुवि ॥ तस्यसूनुर्महातेजारामोनामभविष्यति ॥१९॥ महातेजामहाबुद्धिर्महाबलपराक्रमः ॥ महाबाहुर्महासत्त्वःक्षमयापृथिवीसमः ॥ २० ॥आदि त्यइवदुष्प्रेक्ष्यःसमरेशत्रुभिस्सदा ॥ भविताहितदारामोनरोनारायणःप्रभुः ॥२१॥ पितुर्नियोगात्सविभुर्दंडकेविविधेवने॥ विचरिष्यतिधर्मा त्माभ्रात्रासहमहामनाः ॥ २२ ॥ तस्यपत्नीमहाभागालक्ष्मीःसीतेतिविश्रुता ॥ दुहिताजनकस्यैषाउत्थितावसुधातलात् ॥ २३ ॥

हो तो हम विस्तारसहित सब कहते हैं जो रुचि हो तो श्रवण करो ॥ १७ ॥ सतयुगके अंतमें, त्रेतायुगके प्रारंभमें देवता और मनुष्योंके हितार्थ वह देव नारायण मनुष्यराज शरीर धारण करेंगे ॥ १८ ॥ पृथ्वीके बीच इक्ष्वाकुवंशमें एक दशरथ नामके राजा होंगे उनके रामनाम एक महातेजस्वी पुत्र जन्म ग्रहण करेंगे ॥१९॥ वह महाबलवान् पराक्रमी श्रीरामचन्द्रजी क्षमागुणमें पृथ्वीके समान अत्यन्त तेजस्वी, अतिबुद्धिमान्, विशालबाहु और महात्मा होंगे ॥ २० ॥ वह संग्राममें सूर्यके समान शत्रुगणों करके देखनेके अयोग्य होंगे, अधिक क्या कहें वह प्रभु नारायण ही रामनामक मनुष्य होंगे ॥२१॥ महामनस्वी विभु धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी अपने पिताजीकी आज्ञासे भ्राताके सहित दंडकादि अनेक वनोंमें विचरण करेंगे ॥२२॥ उनकी स्त्री महाभागा लक्ष्मी सीता नामसे

विख्यात होंगी, वह जनककुमारी सीताजी पृथ्वीसे निकलेगी ॥२३॥ वह इस प्रकार पृथ्वीमें अद्वितीया सर्वसुलक्षण समानहोंगी, जैसे चांदनी चन्द्रमाके साथ रहती है वह भी वैसेही श्रीरामचन्द्रजीकी अनुगामिनी होंगी ॥ २४ ॥ वह शीलाचारसम्पन्न साध्वी धर्मयुक्त और सूर्य नारायणकी किरणोंके समान सीता, राम मानों एक मूर्तिमान विराजमान होंगे ॥ २५ ॥ हे रावण ! देवदेव शाश्वत अव्यय, महान् नारायण का यह समस्त वृत्तान्त विस्तारपूर्वक हमने तुमसे कहा ॥२६॥ हे रामचन्द्रजी ! महावीर प्रतापवान् राक्षसपति रावण यह सुनकर उनके साथ विरोध करनेकी इच्छासे चिन्ता करने लगा ॥ २७ ॥ श्रीमान् रावण सनत्कुमारजीके उन वचनोंको वारंवार स्मरण करता हुआ हर्षसे युक्त हो संग्राम करनेके लिये भ्रमण करने लगा ॥ २८ ॥ श्रीरामचन्द्रजी यह कथा

रूपेणाप्रतिमालोकेसर्वलक्षणलक्षिता ॥ छायेवानुगतारामंनिशाकरमिवप्रभा ॥ २४ ॥शीलाचारगुणोपेतासाध्वीधैर्यसमन्विता ॥ सहस्रांशो रश्मिरिवह्येकामूर्तिरिवस्थिता ॥२५॥ एवंतेसर्वमाख्यातंमयारावणविस्तरात् ॥ महतोदेवदेवस्यशाश्वतस्याव्ययस्यच ॥२६॥ एवं श्रुत्वाम हाबाहूराक्षसेंद्रःप्रतापवान्॥ त्वयासहविरोधेच्छुश्चिंतयामासराघव ॥२७॥ सनत्कुमारात्तद्वाक्यंचिंतयानोमुहुर्मुहुः॥ रावणोमुमुदेश्रीमान्युद्धा र्थविचचारहः ॥ २८ ॥ श्रुत्वाचतांकथांरामोविस्मयोत्फुल्ललोचनः ॥ शिरसश्चालनंकृत्वाविस्मयंपरमंगतः ॥ २९ ॥ श्रुत्वातुवाक्यंसनरे श्वरस्तदामुदायुतोविस्मयमानचक्षुः ॥ पुनश्चतंज्ञानवतांप्रधानमुवाचवाक्यंवदमेपुरातनम् ॥३०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तर कांडे तृतीयः सर्गः ॥३॥ ततःपुनर्महातेजाःकुंभयोनिर्महायशाः॥ उवाचरामंप्रणतंपितामहइवेश्वरम्॥१॥ ९ यतामितिचोवाचरामंसत्यपरा क्रमम्॥ कथाशेषंमहातेजाःकथयामाससप्रभुः॥२॥ यथाख्यानंश्रुतंचैवयथावृत्तंयथातथा ॥ प्रीतात्माकथय मासराघवायमहामतिः ॥३॥

सुनकर विस्मयोत्फुल्ल नेत्रोंसे शिर हिलाय अत्यन्त विस्मय को प्राप्त हुए ॥ २९ ॥ अधिक क्या कहैं वह नरश्रेष्ठ राम उस समय यह वचन सुन विस्मययुक्त नेत्रोंसे हर्षके वश ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ उन मुनिसे फिर बोले कि, आप हमसे पुरातन कथा कहिये ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० उत्तरकांडे भाषायां प्रक्षिप्तः तृतीयः सर्गः ॥ ३ ॥ इसके उपरान्त महायशस्वी कुम्भसम्भव महातेजस्वी अगस्त्यजी प्रणाम करते हुए श्रीरामचन्द्रजीसे फिर बोले, जिस प्रकार ब्रह्माजी ईश्वरसे बोलते हैं ॥ १ ॥ वह सत्यपराक्रम श्रीरामचन्द्रजीसे बोले कि, श्रवण करो यह कहकर महातेजस्वी प्रभु अगस्त्यजी कथाका शेष भाग कहने लगे ॥ २ ॥ वह महामति अगस्त्यजी प्रीतियुक्त चित्तसे यथाख्यान यथाश्रुत और यथावृत्त श्रीरामचन्द्रजीसे कहने लगे ॥ ३ ॥

वा.रा.भा.

॥९३॥

हे महावीर ! महामति श्रीरामचन्द्रजी ! दुष्टात्मा रावणने इसीलिये जनकनंदिनी जानकीको हरण किया था ॥ ४ ॥ हे महावीर ! हे महाकीर्ते ! हे अजीत ! नारदजीने गिरिराज मेरुके शिखरपर हमसे यह वृत्तान्त कथन किया था ॥ ५ ॥ हे राघव ! देव, गंधर्व; सिद्ध, ऋषि, व और दूसरे महानुभाव जनोंके सामने हँसते हुए फिर इस कथाके शेष भागको वर्णन किया था ॥ ६ ॥ हे मानद ! हे राजेंद्र ! महातेजस्वी नारदजीने हँसते २ यह वर्णन किया था सो तुम इस महापातकहारिणी कथाको श्रवण करो ॥ ७ ॥ हे महावीर श्रीरामचन्द्रजी ! यह कथा सुनकर देवता और ऋषियोंने हर्षयुक्तनेत्र हो नारदजीसे कहा ॥८॥ कि, जो भक्तिपूर्वक यह कथा सुने या सुनावेगा, वह पुत्रपौत्रयुक्त होकर स्वर्ग लोकमें सन्मानित होगा ॥ ९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा०आ० उत्तरकांडे भाषायां प्रक्षिप्तश्चतुर्थः सर्गः ॥४॥ इसके उपरान्त वह राक्षसराज रावण महाशूर वीरराक्षसोंको साथ लेकर विजयकी अभिलाषासे पृथ्वीपर घूमने लगा ॥ १ ॥ दैत्य

एतदर्थंमहाबाहोरावणेनदुरात्मना ॥ सुताजनकराजस्यहृतारामममहामतेः ॥४॥ एतांकथांमहाबाहोनारदःसुमहायशाः ॥ कथयामासदुर्धर्षमेरौगिरिवरोत्तमे ॥ ५ ॥ देवगंधर्वसिद्धानामृषीणांचमहात्मनाम् ॥ कथाशेषंपुनःसोऽथकथयामासराघव ॥६॥ नारदःसुमहातेजाःप्रहसन्निवमानद ॥ तांकथांशृणुराजेंद्रमहापापप्रणाशनीम् ॥ ७ ॥ यांतुश्रुत्वामहाबाहोऋषयोदैवतैःसह ॥ ऊचुस्तंनारदंसर्वेहर्षपर्याकुलेक्षणम् ॥८॥ यश्चेमांश्रावयेन्नित्यंशृणुयाद्वापिभक्तितः ॥ सपुत्रपौत्रवान्रामस्वर्गलोकेमहीयते ॥९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे चतुर्थः सर्गः ॥ ४ ॥ ततःसराक्षसोरामपर्यटन्पृथिवीतले ॥ विजयार्थीमहाशूरैराक्षसैःपरिवारितः ॥ ॥ १ ॥ दैत्यदानवरक्षस्सुयंशृणोतिबलाधिकम् ॥ तमाह्वयतियुद्धार्थीरावणोबलदर्पितः ॥२॥ एवंसपर्यटन्सर्वांपृथिवींपृथिवीपते ॥ब्रह्मलोकान्निवर्ततंसमासाद्याथरावणः ॥३॥ व्रजंतंमेघपृष्ठस्थमंशुमंतमिवापरम् ॥ तमभिसृत्यप्रीतात्माह्यभिवाद्यकृतांजलिः ॥४॥ उवाचहृष्टमनसानारदंरावणस्तदा ॥ आब्रह्मभवनंलोकास्त्वयादृष्टाह्यनेकशः ॥ ५ ॥ कस्मिँल्लोकेमहाभागमानवाबलवत्तराः ॥ यांद्‌धुमिच्छामितैःसार्धंयथाकामंयदृच्छया ॥ ६ ॥

उ० कां०

प्र०स० ५

दानव या राक्षसोंमेंसे जिस किसीको भी अधिक बलवान् सुना बलदर्पित रावण उसको ही युद्ध करनेके लिये जाकर पुकारता ॥ २ ॥ हे महीपाल ! रावण इस प्रकार सब पृथ्वीपर विचरण कर ब्रह्मलोकसे लौटनेके समय नारदजीका दर्शन पाता हुआ ॥३॥ नारदजी दूसरे सूर्यहीके समान मेघके ऊपर होकर गमन कर रहे थे, रावणने प्रसन्नतासे पहुँच हाथ जोडकर उनको प्रणाम किया ॥४॥ तब रावण हर्षित हो श्रीनारदजीसे बोला कि, हे भगवन् ! आपने ब्रह्माजीसे लेकर कीडे मकोडे तक समस्त लोक अनेक प्रकारसे दर्शन किये हैं ॥ ५ ॥ हे महाभाग ! उनमें किस लोकके मनुष्य अधिक बलवान् हैं, हम उनके साथ अपनी इच्छासे युद्ध करना चाहते हैं ॥ ६ ॥

देवर्षि नारदजी एक मुहूर्तभरतक चिन्ता करके रावणसे बोले कि, हे राजन् ! क्षीर सागरके निकट एक महाद्वीप है ॥ ७ ॥ वहांपर जो मनुष्य वास करते हैं वह सबही अति बलवान्, चन्द्रमाके समान दीर्घकार्य महावीर्य युक्त और मेघके समान गंभीर शब्दवाले हैं ॥ ८ ॥ वह सबही महाश्रीमान् धैर्यशाली हैं उनकी बांहें बडे २ परिघके समान हैं । हे राक्षसराज ! इस लोकमें तुम बलवीर्यसम्पन्न जैसे पुरुषोंकी इच्छा करते हो, वैसे मनुष्य हमने श्वेतद्वीपमें देखे हैं, नारदजीके वचन सुनकर रावणने कहा ॥ ९ ॥ १० ॥ कि, हे महाराज ! श्वेतद्वीपके मनुष्य किस कारणसे बलवान् हैं और वह समस्त महात्मा वहां किस प्रकारसे जाकर बसे ॥ ११ ॥ हे प्रभो ! नारदजी ! आप हस्तामलकके समान समस्त जगत् सदा देखते हैं, इस कारण यह समस्त वृत्तान्त यथार्थ २ वर्णन कीजिये

चिंतयित्वामुहूर्तंतुनारदःप्रत्युवाचतम् ॥ अस्तिराजन्महाद्वीपंक्षीरोदस्यसमीपतः ॥७॥ तत्रतेचंद्रसंकाशामानवाःसुमहाबलाः ॥ महाकाया महावीर्यामेघस्तनितनिःस्वनाः ॥८॥ महामात्राधैर्यवंतोमहापरिघबाहवः ॥ श्वेतद्वीपेमयादृष्टामानवाराक्षसाधिप ॥९॥ बलवीर्यसमोपेता न्यादृशांस्त्वमीहेच्छसि ॥ नारदस्यवचःश्रुत्वारावणःप्रत्युवाचह ॥ १० ॥ कथंनारदजायंतेतस्मिन्द्वीपेमहाबलाः ॥ श्वेतद्वीपकथंवासः प्राप्तस्तैस्तुमहात्मभिः ॥११॥ एतन्मेसर्वमाख्याहिप्रभोनारदतत्त्वतः ॥ त्वयादृष्टंजगत्सर्वंहस्तामलकवत्सदा ॥१२॥ रावणस्यवचःश्रुत्वा नारदःप्रत्युवाचह ॥ अनन्यमनसोनित्यंनारायणपरायणाः ॥१३॥ तदाराधनसक्ताश्चतच्चित्तास्तत्परायणाः ॥ एकांतभावानुगतास्तेनराराक्ष साधिप ॥१४॥ तच्चित्तास्तद्गतप्राणानरानारायणंसदा ॥ श्वेतद्वीपेतुतेवासअर्जितःसुमहात्मभिः ॥१५॥ येहतालोकनाथेनशार्ङ्गमानम्यसंयुगे ॥ चक्रायुधेनदेवेनतेषांवासस्त्रिविष्टपे ॥ १६ ॥ नहियज्ञफलैस्तातनतपोभिर्नसंयमैः ॥ नचदानफलैर्मुख्यैःसलोकःप्राप्यतेसुखम् ॥ १७ ॥ नारद स्यवचःश्रुत्वादशग्रीवःसुविस्मितः ॥ ध्यात्वातुसुचिरंकालंतेनयोत्स्यामिसंयुगे ॥ १८ ॥

॥१२॥ रावणके वचन सुनकर देवर्षि नारदजी बोले कि, वह श्वेतद्वीपवासी समस्त मनुष्य नित्य अनन्यचित्तसे नारायणपरायण हैं ॥ १३ ॥ और उनमेंही चित्त लगाय तत्पर हो एकांतभावसे नारायणजीकी आराधना करते हैं, हे राक्षसनाथ ! वह सदाही नारायणको चित्त समर्पण किये हैं ॥ १४ ॥ उनमेंही प्राण लगाये हैं वह सब अतिमहात्मानारायणजीमें लीन हैं इसी कारणसे वह सब महात्मा श्वेतद्वीपमें वसे हैं ॥१५॥ चक्रधारी लोकनाथ,देव नारायण शार्ङ्ग धनुष झुकाय जिनका संग्राममें संहार करते हैं उनका स्वर्गमें और वहां वास होता है ॥१६॥ हे तात ! क्या यज्ञफल,क्या तपस्या, क्या समस्त प्रधान २ दानफल किसीसेभी सालोक्यफलकी प्राप्ति नहीं होती ॥१७॥ नारदजीके वचन सुन रावण विस्मित हो कुछ विलंबतक चिंता कर बोला कि,हम उनकेही साथ संग्राम

करेंगे ॥ १८ ॥ इसके उपरांत रावण नारदजीसे कह कर श्वेतद्वीपको चला गया, नारदजीभी अनेकक्षण चिन्ता कर कौतूहलान्वित हो ॥ १९ ॥ परमाश्चर्य युक्त संग्राम देखनेकी वासनासे शीघ्रही श्वेतद्वीपको गये क्योंकि वह सदा संग्राम चाहनेवाले और तमाशा देखनेवाले हैं ॥ २० ॥ हे राघव ! रावणभी घोर सिंहनाद कर २ के दशों दिशाओंको विदारण करता हुआ राक्षसोंके साथ वहां गया ॥२१॥ जब नारदजी वहां पहुँचे तब महायशस्वी रावण देवतोंको भी दुर्लभश्वेत नामक एक महाद्वीपमें पहुँचा ॥ २२ ॥ परन्तु उस द्वीपके तेजप्रभावसे बलवान् रावणका पुष्पकविमान वायुके वेगसे टकराकर ॥२३॥ पवनसे टकराये हुए बादलके समान टिके रहनेको समर्थ न हुआ । राक्षसपति रावणके मंत्रीभी कठिनतासे देखनेके योग्य द्वीपमें पहुँचकर ॥ २४ ॥ भयसहित

आपृच्छ्यनारदंप्रायाच्छ्वेतद्वीपायरावणः ॥ नारदोऽपिचिरंध्यात्वाकौतूहलसमन्वितः ॥१९ ॥ दिदृक्षुःपरमाश्चर्यंतत्रैवत्वरितंययौ ॥ सहि केलिकरोविप्रोनित्यंचसमरप्रियः ॥ २० ॥ रावणोऽपिययौतत्रराक्षसैःसहराघव ॥ महतासिंहनादेनदारयन्सदिशोदश ॥ २१ ॥ गतेतुनारदेतत्ररावणोऽपिमहायशाः ॥ प्राप्यश्वेतंमहाद्वीपंदुर्लभंयत्सुरैरपि ॥२२॥ तेजसातस्यद्वीपस्यरावणस्यबलीयसः ॥ तत्तस्यपुष्पकंयानंवातवेगसमाहतम् ॥ २३ ॥ अवस्थातुंनशक्नोतिवाताहतइवांबुदः ॥ सचिवाराक्षसेंद्रस्यद्वीपमासाद्यदुर्दृशम् ॥ २४ ॥ अब्रुवन्रावणंभीताराक्षसाजातसाध्वसाः ॥ राक्षसेंद्रवयंमूढाभ्रष्टसंज्ञाविचेतसः ॥ २५ ॥ अवस्थातुंनशक्ष्यामोयुद्धंकर्तुंकथंचन ॥ एवमुक्त्वादुद्रुवुस्तेसर्वएवनिशाचराः ॥ २६ ॥ रावणोऽपिहितद्यानंपुष्पकंहेमभूषितम् ॥ विसर्जयामासतदासहतैःक्षणदाचरैः ॥ २७ ॥ गतंतुपुष्पकंरामरावणोराक्षसाधिपः ॥ कृत्वारूपंमहाभीमंसर्वराक्षसवर्जितः ॥२८॥ प्रविवेशतदातस्मिञ्श्वेतद्वीपेसरावणः ॥ प्रविशन्नेवतत्राशुनारीभिरुपलक्षितः ॥२९॥ एकयासस्मितंकृत्वाहस्तेगृह्यदशाननम् ॥ पृष्टश्चागमनंब्रूहिकिमर्थमिहचागतः ॥ ३० ॥

रावणसे कहने लगे कि, हे निशाचरनाथ ! हम सब त्रासके मारे जडके समान संज्ञाहीन होगये हैं ॥२५॥ इस कारण हम यहां किसी प्रकारसेभी नहीं ठहर सकते; यह कहकर समस्त राक्षसगण दशों दिशाओंको भागने लगे ॥ २६ ॥ तब रावणने इन सब राक्षसोंके साथ सुवर्णभूषित पुष्पकविमानको बिदा कर दिया ॥ २७ ॥ इसके उपरान्त जब पुष्पकविमान बिदा होगया तब राक्षसराज रावण महाभयंकरमूर्ति धारण कर सब राक्षसोंको छोड ॥ २८ ॥ अकेलाही श्वेतद्वीपमें प्रवेश करता हुआ । जब रावणने श्वेतद्वीपमें प्रवेश किया तब वहांकी स्त्रियोंने इसे देखा ॥ २९ ॥ उन स्त्रियोंमेंसे किसी एक स्त्रीने रावणका हाथ पकड मुसकुरायकर पूछा कि; यहां किस कारणसे आये हो सो कहो ॥ ३० ॥

तुम कौन हो ? किसके पुत्रहो ? और किस कारणसे तुम्हारा यहांपर आगमन हुआ है ? सो बताओ। हे राजन् ! राजा रावणने यह वचन सुन क्रोधित होकर कहा ॥ ३१॥ हम विश्रवामुनिके पुत्र हैं, हमारा रावण नाम है, हम संग्रामके अभिलाषी होकर यहांपर आये हैं, परंतु यहां तो हमको कोई दीखताही नहीं ॥ ३२॥ जब दुरात्मा रावणने इस प्रकारसे कहा तब सब स्त्रियें मधुर स्वरसे हँसने लगीं ॥ ३३॥ इसके उपरान्त उनमेंसे एक स्त्रीने कोपकर एक खेलहीमें रावणको बालकके समान पकड लिया और उसकी कमर पकड उसको सब सखियोंके बीचमें घुमाने लगी ॥ ३४॥ और एक सखीको पुकारकर कहा कि, देखो आली ! हमने एक छोटे कीडेके समान यह अञ्जनवर्ण दशमुख और बीस बाहुका एक जीव पकडा है ॥ ३५ ॥ तब घुमाये जानेसे थका हुआ रावण एक हाथसे दूसरे हाथमें पकडा

कोवात्वंकस्यवापुत्रःकेनवाप्रहितोवद ॥ इत्युक्तोरावणोराजन्क्रुद्धोवचनमब्रवीत् ॥ ३१॥ अहंविश्रवसःपुत्रोरावणोनामराक्षसः ॥ युद्धार्थमिहसंप्राप्तोनचपश्यामिकंचन ॥ ३२ ॥ एवंकथयतस्तस्यरावणस्यदुरात्मनः ॥ प्राहसंस्तेततःसर्वेमुस्वनंयुवतीजनाः ॥ ३३ ॥ तासामेकाततःक्रुद्धा बालवद्गृह्यलीलया ॥ भ्रामितस्तुसखीमध्येमध्येगृह्यदशाननम् ॥ ३४॥ सखीमन्यांसमाहूयपश्यत्वंकीटकंधृतम् ॥ दशास्यंविंशतिभुजंकृष्णांजनसमप्रभम् ॥ ३५ ॥ हस्ताद्धस्तंसचक्षिप्तोभ्राम्यतेभ्रमलालसः ॥ भ्राम्यमाणेनबलिनाराक्षसेनविपश्चिता ॥ ३६ ॥ पाणावेकाथसंदष्टारोषेणवनिताशुभा ॥ मुक्तस्तयाशुभःकीटोधुन्वंत्याहस्तवेदनात् ॥ ३७ ॥ गृहीत्वान्यातुरक्षेंद्रमुत्पपातविहायसा ॥ ततस्तामपिसंक्रुद्धोविददारनखैर्भृशम् ॥ ३८ ॥ तयासहविनिर्धूतःसहसैवनिशाचरः ॥ पपातसोऽम्भसोमध्येसागरस्यभयातुरः ॥ ३९॥ पर्वतस्येवशिखरंयथावज्रविदारितम् ॥ प्रापतत्सागरजलेतथासौविनिपातितः ॥ ४०॥ एवंसरावणोरामश्वेतद्वीपनिवासिभिः ॥ युवतीभिर्विगृह्याशुभ्रामितश्चततस्ततः ॥ ४१॥

जाकर घूमने लगा इस प्रकारसे जब बलवान् विद्वान् रावण घुमाया जाने लगा॥ ३६॥ तब इसने बडा कोप कर उस सुन्दरी स्त्रीके हाथमें बडे जोरसे काट खाया, वैसेही उस स्त्रीने हाथकी पीडासे व्याकुल हो इस शुभ कीडेको छोड दिया ॥ ३७ ॥ यह देखकर एक और स्त्री राक्षस रावणको पकडकर आकाशमार्गमें उड गई, वैसेही रावणने अति कोप कर उसको भी नोंचकर विदारण किया ॥ ३८॥ भयातुर रावणको जब उस स्त्रीने छोडदिया तब रावण अतिजोरसे समुद्रके जलमें गिरा ॥ ३९॥ वज्रसे टूटा हुआ पर्वतका शिखर जिस प्रकार समुद्रमें गिर पडता है वैसेही रावण भी छुटकर समुद्रमें गिरा ॥ ४०॥ हे राम ! श्वेतद्वीपकी रहनेवाली स्त्रियें अति शीघ्र रावणको पकडकर इस प्रकारसे वारंवार घुमाय रही थीं ॥ ४१ ॥

महातेजस्वी नारदजी रावणको पीडित देखकर विस्मयसहित हँसे और नाचने लगे ॥ ४२ ॥ हे महावीर ! दुरात्मा रावणने यह वृत्तान्त जानकर ही तुम्हारे हाथसे मृत्युकी कामना करके सीताजीको हरण किया था ॥ ४३ ॥ तुम शंख चक्र गदधारी देव नारायण हो, तुम्हारे हाथमें शार्ङ्ग धनुष पद्म और वज्रादि आयुध विराजमान हैं, तुम्हें समस्त देवता नमस्कार करते हैं ॥४४॥ तुम सर्व देवताओंसे पूजे जाते हो, श्रीवत्सांकित हृषीकेश हो; तुम महायोगी पद्मनाभ और भक्त जनोंको अभय देनेवाले हो ॥४५॥ आपने रावणका वध करनेके लिये मनुष्य अवतार किया है; अधिक क्या कहें क्या आप अपनेको नारायण नहीं जानते हैं ॥ ४६ ॥ हे महाभाग ! मोहको प्राप्त न हो आत्मज्ञानसे अपनेको स्मरण करो, तुम गुप्तसे भी अधिक गुप्त हो ऐसा पितामह ब्रह्माजीने कहा है ॥४७॥ हे राघव ! तुम सत्त्व, रज और तमोगुणस्वरूप हो । तुम ऋक्, यजु, साम यह तीन वेद हो, तुम स्वर्ग मृत्यु पाताल इन तीनों लोकोंके वासी हो,

नारदोऽपिमहातेजारावणंप्राप्यधर्षितम् ॥ विस्मयंसुचिरंकृत्वाप्रजहासननर्तच॥४२॥ एतदर्थंमहाबाहोरावणेनदुरात्मना ॥ विज्ञायापहृतासीता त्वत्तोमरणकांक्षया ॥४३॥ भवान्नारायणोदेवःशंखचक्रगदाधरः ॥ शार्ङ्गपद्मायुधोवज्रीसर्वदेवनमस्कृतः ॥४४॥ श्रीवत्सांकोहृषीकेशःसर्वदेवाभिपूजितः ॥ पद्मनाभोमहायोगीभक्तानामभयप्रदः ॥४५॥ वधार्थंरावणस्यत्वंप्रविष्टोमानुषींतनुम् ॥ किंनवेत्सित्वमात्मानंयथानारायणोह्यहम् ॥४६॥ मामुह्यस्वमहाभागस्मरचात्मानमात्मना॥ गुह्याद्गुह्यतरस्त्वंहिह्येवमाहपितामहः ॥४७॥ त्रिगुणश्चत्रिवेदीचत्रिधामात्रिपदात्मक॥ त्रिकालकर्मत्रैविद्यत्रिदशारिप्रमर्दन ॥४८॥ त्वयाक्रांतास्त्रयोलोकाःपुराणैर्विक्रमैस्त्रिभिः ॥ त्वंमहेंद्रानुजःश्रीमान्बलिबंधनकारणात् ॥४९॥ अदित्यागर्भसंभूतोविष्णुस्त्वंहिसनातनः ॥ लोकाननुग्रहीतुंवैप्रविष्टोमानुषींतनुम् ॥ ५० ॥ तदिदंसाधितंकार्यंसुराणांसुरसत्तम ॥ निहतोरावणःपापःसपुत्रगणबांधवः ॥ ५१ ॥ प्रहृष्टाश्चसुराःसर्वेऋषयश्चतपोधनाः ॥ प्रशांतंचजगत्सर्वंत्वत्प्रसादात्सुरेश्वर ॥ ५२ ॥

भूत, भविष्य, वर्त्तमान इन तीन कालोंमें तुम कार्य किया करते हो, तुम धनुर्वेद, गान्धर्व वेद, आयुर्वेद इन तीन वेदोंमें पारदर्शी हो, तुम देवताओंसे शत्रुओंका संहार करनेवाले हो ॥४८॥ तुम इन्द्रके छोटे भाई हो, तुमने वामन होकर बलिको बांधा और पुरातन त्रिविक्रम त्रिलोकीको नाप लिया था॥४९॥ तुम अदितिके गर्भसे उत्पन्न हो, तुम वही सनातन विष्णु हो, केवल सबपर अनुग्रह करनेके लियेही आपने मनुष्य अवतार धारण किया है ॥५०॥ हे सुर श्रेष्ठ ! आपने पुत्र बान्धव और सेनाके सहित पापी रावणको संग्राममें मारकर देवतोंका कार्य पूरा किया है ॥५१॥ सुरेश्वर ! आपके प्रसादसे समस्त देवता और तपोधन ऋषिगण सन्तुष्ट हुए हैं और सब जगत् भी शान्तिको प्राप्त हुआ है ॥ ५२ ॥

हे प्रभो ! महाभाग लक्ष्मीजी सीताजी हुईं, यह पृथ्वीपर प्राप्त हो आपके निमित्तही राजा जनकजीके गृहमें उत्पन्न हुईं ॥ ५३ ॥ रावणने लंकामें ले जाय अति यत्नसहित माताके समान सदा उनकी रक्षा की थी, हे महायशस्वी राम ! यह समस्त वृत्तान्त हमने आपके निकट वर्णन किया ॥ ५४ ॥ दीर्घजीवी नारदजीने ऋषिसनत्कुमारजीके मुखसे श्रवण करके हमारे निकट इस प्रकार वर्णन किया, था । सनत्कुमारजीने रावणसे जिस प्रकार कहा था ॥ ५५ ॥ रावणने सर्व भाँतिसे वैसाही किया जो विद्वान श्राद्धके समय ब्राह्मणके निकट यह उपाख्यान श्रवण करे ॥५६॥ उसका दिया हुआ अन्न पितृलोगके निकट पहुँचता है, यह दिव्य कथा सुनकर राजीवलोचन श्रीरामचन्द्रजी ॥ ५७ ॥ अपने भ्राताओंके सहित परम विस्मयको प्राप्त हुए, वानरोंके सहित सुग्रीवजी

सीतालक्ष्मीर्महाभागासंभूतावसुधातलात् ॥ त्वदर्थमिहचोत्पन्नाजनकस्यगृहेप्रभो ॥५३॥ लंकामानीययत्नेनमातेवपरिरक्षिता ॥ एवमेतत्समाख्यातंतवराममहायशः ॥ ५४ ॥ ममापिनारदेनोक्तमृषिणादीर्घजीविना ॥ यथासनत्कुमारेणव्याख्यातंतस्यरक्षसः ॥ ५५ ॥ तेनापिचतदेवाशुकृतंसर्वमशेषतः ॥ यश्चैतच्छ्रावयेच्छ्राद्धेविद्वान्ब्राह्मणसन्निधौ ॥५६॥ अनन्तमक्षयंदत्तंपितृणामुपतिष्ठति ॥ एतांश्रुत्वाकथांदिव्यांरामोराजीवलोचनः ॥५७॥ परंविस्मयमापन्नोभ्रातृभिःसहराघवः ॥ वानराःसहसुग्रीवाराक्षसाःसविभीषणाः ॥५८॥ राजानश्चसहामात्यायेचान्येऽपिसमागताः ॥ ब्राह्मणाःक्षत्रियावैश्याःशूद्राधर्मसमन्विताः ॥५९॥ सर्वेचोत्फुल्लनयनाःसर्वेहर्षसमन्विताः ॥ राममेवानुपश्यंतिभृशमत्यंतहर्षिताः ॥६०॥ ततोऽगस्त्योमहातेजाराघवंचेदमब्रवीत् ॥ दृष्टाःसभाजिताश्चापिरामयास्यामहेवयम् ॥ एवमुक्त्वागताःसर्वेपूजितास्तेयथागतम् ॥६१॥ इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्ये उत्तरकांडेअगस्त्यवाक्यं नाम पञ्चमःसर्गः ॥५॥ क्षेपकाःसमाप्ताः ॥ एवमास्तेमहाबाहुरहन्यहनिराघवः ॥ अशासत्सर्वकार्याणिपौरजानपदेषुच ॥ १ ॥ ततःकतिपयाहस्सुवैदेहंमिथिलाधिपम् ॥ राघवःप्रांजलिर्भूत्वावाक्यमेतदुवाचह ॥२॥

राक्षसोंके सहित विभीषणजी ॥५८॥ मंत्रियोंके सहित राजा व और भी आये हुए धार्मिक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ॥५९॥ सबही हर्षित हो नेत्र फैलाय २ अति प्रसन्नतासे श्रीरामचन्द्रजीको वारंवार निहार बलिहार होने लगे ॥६०॥ इसके उपरांत महातेजस्वी अगस्त्यजी श्रीरामचन्द्रजीसे बोले कि हे रामचन्द्रजी ! हमने आपके दर्शन भी किये और हम संमानित भी हुए इस कारण अब हम जायँगे । वह इस ऋषि प्रकारसे पूजित हो जो जिस ओरसे आये थे वह उसी ओरको चले गये ॥६१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकांडे भाषायामगस्त्यवाक्यं नाम प्रक्षिप्तः पंचमः सर्गः ॥ ५ ॥ क्षेपक समाप्त ॥ रघुनन्दन महावीर श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकार सर्व पूजित हो पौर और जनपद सम्बन्धी कार्य शासन करते हुए समय बिताने लगे ॥१॥ कुछ दिन

बीत जानेपर श्रीरामचन्द्रजी हाथ जोडकर वैदेही मिथिलापति जनकजीसे बोले ॥२॥ कि, आपही केवल हमारे गति हैं, हम आप करकेही पालित हैं और हमने आपकेही उग्र तपवीर्यके सहायतासे रावणको मारा है ॥३॥ हे राजन् ! समस्त इक्ष्वाकुगणोंके और समस्त मैथिल लोगोंकी प्रीतिकी उपमा नहीं और सम्बन्ध भी अनुपम है ॥ ४ ॥ हे महीपाल ! आप अपने गृहको गमन कीजिये भरतजी भी हमारे दिये रत्न ले सहायताके निमित्त आपके पीछे २ गमन करेंगे ॥५॥ जनकराज श्रीरामचन्द्रजीके वचन स्वीकार कर उनसे बोले कि; हे राजन् ! आपकी नीति और आपका दर्शन कर हम प्रसन्न हुए हैं ॥ ६ ॥ परन्तु आपने हमारे लिये जो रत्नसंचय किये हैं हमने वह समस्त रत्न दोनों बेटियोंको दे दिये ॥ ७ ॥ जब राजाजनकजी चले गये, तब श्रीरामचन्द्रजीने

भवान्हिगतिरव्यग्राभवतापालितावयम् ॥ भवतस्तेजसोग्रेणरावणोनिहतोमया ॥३॥ इक्ष्वाकूणांचसर्वेषांमैथिलानांचसर्वशः ॥ अतुलाःप्रीतयोराजन्संबंधकपुरोगमाः ॥ ४ ॥ तद्भवान्स्वपुरंयातुरत्नान्यादायपार्थिव ॥ भरतश्चसहायार्थंपृष्ठतश्चानुयास्यति ॥ ५ ॥ सतथेतिततःकृत्वा राघवंवाक्यमब्रवीत् ॥ प्रीतोऽस्मिभवतोराजन्दर्शनेननयेनच॥६॥ यान्येतानितुरत्नानिमदर्थंसंचितानिवै ॥ दुहितृभ्यांतान्यहंराजन्सर्वाण्येवददामिवै ॥ ७॥ ततःप्रयातेजनकेकेकयंमातुलंप्रभुम् ॥ राघवःप्रांजलिर्भूत्वाविनयाद्वाक्यमब्रवीत् ॥ ८ ॥ इदंराज्यमहंचैवभरतश्चसलक्ष्मणः ॥ आयत्तास्त्वंहिनोराजन्गतिश्चपुरुषर्षभ ॥ ९ ॥ राजाहिवृद्धःसंतापंत्वदर्थमुपयास्यति ॥ तस्माद्गमनमद्यैवरोचतेतवपार्थिव ॥ १० ॥ लक्ष्मणेनानुयात्रेणपृष्ठतोऽनुगमिष्यते ॥ धनमादायबहुलंरत्नानिविविधानिच ॥११॥ युधाजित्तुतथेत्याहगमनंप्रतिराघव ॥ रत्नानिचधनंचैवत्वय्येवाक्षय्यमस्त्विति ॥ १२ ॥ प्रदक्षिणंचराजानंकृत्वाकेकयवर्धनः ॥ रामेणचकृतःपूर्वमभिवाद्यप्रदक्षिणम् ॥ १३ ॥ लक्ष्मणेनसहायेनप्रयातःकेकयेश्वरः ॥ हतेऽसुरेयथावृत्रेविष्णुनासहवासवः ॥ १४ ॥

हाथ जोड विनीत हो केकयराजपुत्र अपने मामा युधाजितसे कहा कि ॥८॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! केकयराजपुत्र ! हम, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न और यह अयोध्याका राज्य सबही आपका है अधिक क्या कहें, आपही निरापद कालमें हमारे एक मात्र गति हैं ॥९॥ केकयराज वृद्ध हैं; इस कारण आपके लिये संतापित होते होंगे हे नृपति ! इस कारण हम आजही आपका जाना अच्छा समझते हैं ॥ १० ॥ बहुतसारा धन और विविधभांतिके रत्न ले लक्ष्मणजी अनुयायी हो आपके पीछे पीछे जायँगे ॥११॥ तब युधाजितने जाना स्वीकार करके कहा कि, हे रामचन्द्र! तुम्हारा धन और रत्न अक्षय होवे ॥१२॥ प्रथम रामचन्द्रजीने प्रदक्षिणा करके उनको प्रणाम किया फिर केकयराजकुमार युधाजित श्रीरामचन्द्रजीकी प्रदक्षिणा कर और प्रणाम जताय ॥१३॥ लक्ष्मणजीको सहा

यक बनाय अपने राज्यको ऐसे चले जैसे वृत्रासुरके मारे जानेपर इन्द्रजी विष्णुजीके साथ गये थे ॥१४॥ श्रीरामचन्द्रजी उनको बिदाकर मित्र काशीनाथ प्रतर्दनको भेंट कर बोले ॥ १५॥ हे राजन्! आपने संग्राममें सहायता करनेके लिये भरतजीके साथ उद्योग किया था, इस कारण आपने हमारे प्रति परम सुहृदता और प्रीति दिखाई ॥१६॥ अब इस समय आप रमणीक काशीपुरीको जायँ विशेष करके सुन्दर धवरहरोंसे युक्त तोरण समन्वित यह वाराणसी नगरी आपसेही रक्षित होती है ॥१७॥ धर्मात्मा काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजीने यह कह उत्तम आसनपरसे जब इन धर्मात्मा राजाको अतिप्यारपूर्वक हृदयसे लगाया ॥१८॥ फिर कौशल्याकी प्रीतिके बढ़ाने वाले श्रीरामचन्द्रजीने उसको बिदा किया, वह निडर काशिराजभी रामचन्द्रजीकी आज्ञा पाय ॥ १९ ॥

तंविसृज्यततोरामोवयस्यमकुतोभयम्॥ प्रतर्दनंकाशिपतिंपरिष्वज्येदमब्रवीत्॥१५॥ दर्शिताभवताप्रीतिर्दर्शितंसौहृदंपरम्॥उद्योगश्चत्वयाराजन्भरतेनकृतःसह ॥ १६ ॥ तद्भवानद्यकाशेयपुरीं वाराणसींव्रज ॥ रमणीयांत्वयागुप्तांसुप्राकारांसुतोरणाम् ॥ १७ ॥ एतावदुक्त्वाचोत्थायकाकुत्स्थःपरमासनात् ॥ पर्यष्वजतधर्मात्मानिरंतरमुरोगतम्॥ १८ ॥ विसर्जयामासतदाकौसल्याप्रीतिवर्धनः॥ राघवेणकृतानुज्ञःकाशेयोह्यकुतोभयः॥ १९ ॥ वाराणसींययौतूर्णंराघवेणविसर्जितः ॥ विसृज्यतंकाशिपतिंत्रिशतंपृथिवीपतीन्॥२०॥ प्रहसन्राघवोवाक्यमुवाचमधुराक्षरम्॥ भवतांप्रीतिरव्यग्रातेजसापरिरक्षिता॥२१॥ धर्मश्चनियतोनित्यंसत्यंचभवतांसदा॥ युष्माकंचानुभावेनतेजसाचमहात्मनाम्॥२२॥ हतोदुरात्मादुर्बुद्धीरावणोराक्षसाधमः॥ हेतुमात्रमहंतत्रभवतांतेजसाहतः ॥२३॥ रावणःसगणोयुद्धेसपुत्रामात्यबांधवः ॥ भवंतश्चसमानीताभरतेनमहात्मना ॥२४॥ श्रुत्वाजनकराजस्यकाननात्तनयांहृताम् ॥ उद्युक्तानांचसर्वेषांपार्थिवानांमहात्मनाम् ॥ २५ ॥

श्रीराम चन्द्रजीको छोड अतिशीघ्र वाराणसी (आजकालकी बनारस) को चले गये काशी नाथको बिदा कर तीनशत (३००) राजाओंसे ॥ २० ॥ हँसकर मधुर वचनोंसे श्रीरामचन्द्रजी बोले कि, आपलोगोंने योग्यताके अनुसार ही अचंचल हो प्रीतिकी रक्षा की है ॥ २१ ॥ आप लोगोंकी सदा धर्ममें निश्चयता, सर्वदा सत्यव्यवहार अनुभव और तेजके प्रभावसेही दुष्टस्वभाववाला मन्दबुद्धि राक्षसोंमें नीच रावण मारा गया है हम तो उसका वध करनेमें केवल हेतुमात्र हैं, मारा तो वह आपहीके तेज प्रभावसे गया है ॥२२॥२३॥ यह रावण सेना, मंत्री व अपने बंधु बान्धवों सहित मारागया। महात्मा भरतजीने आप लोगोंको यहां बुलाया ॥२४॥ सो उन्होंने इस कारण बुलाया कि, इन्होंने जनकराजकुमारी सीताजीका वनमें हरण होना सुना, सो सहायता करनेके

लिये इन्होंने आपको परिश्रम दिया परन्तु बडे भाग्यकी बात है कि, आप लोगोंको क्लेश नहीं जान पडा, महानुभाव आप सब राजोंने इस कारण उद्योग किया था ॥ २५ ॥ आपको यहांपर आये हुए बहुत दिन हो गये हैं, सो इस समय हमारी यही रुचि होती है कि, आप अपने २ स्थानको जायँ, तब राजाओंने परम प्रसन्न होकर कहा ॥ २६ ॥ हे श्रीरामचन्द्रजी ! बडे भाग्यबलसे आपने राज्य पाया है और भाग्यसेही सीताजी फिर मिली हैं और यह भी बडे भाग्यकी बात है कि शत्रु रावण पराजित हुआ है ॥ २७ ॥ हे महाराज रामचन्द्रजी ! हमने देखा कि, आपने शत्रुकुलका संहार करके जय पाई है इससे ही हमारी वासना अति सिद्ध हुई और हम परम प्रसन्न हुए है ॥२८॥ आप जो हमारी प्रशंशा करते हैं यह तो आपका स्वभावही है, आप लोका भिराम राम हैं आपकी प्रशंसा हमको करनी चाहिये परन्तु हम ऐसे वाक्य नहीं जानते कि जिनसे आपकी प्रशंसा की जाय ॥ २९ ॥ हे महावीर ! आप

कालोऽप्यतीतःसुमहान्गमनंरोचयाभ्यतः ॥ प्रत्यूचुस्तंचराजानोहर्षेणमहतावृताः ॥ २६ ॥ दिष्ट्यात्वंविजयीरामराज्यंचापिप्रतिष्ठिम् ॥ दिष्ट्याप्रत्याहृतासीतादिष्ट्याशत्रुःपराजितः ॥ २७ ॥ एषनःपरमःकामएषानःप्रीतिरुत्तमा ॥ यत्त्वांविजयिनंरामपश्यामोहतशात्रवम् ॥२८॥ एतत्त्वय्युदुपन्नंचयदस्मांस्त्वंप्रशंससे ॥ प्रशंसार्हनजानीमःप्रशंसांवक्तुमीदृशीम् ॥ २९ ॥ आपृच्छामोगमिष्यामोहृदिस्थोनःसदाभवान् ॥ वर्तामहेमहाबाहोप्रीत्यात्रमहतावृताः ॥ ३० ॥ भवेच्चतेमहाराजप्रीतिरस्मासुनित्यदा ॥ बाढमित्येवराजानोहर्षेणपरमान्विताः ॥३१॥ ऊचुः प्रांजलयःसर्वेराघवंगमनोत्सुकाः ॥ पूजितास्तेचरामेणजग्मुर्देशान्स्वकान्स्वकान् ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे अष्टत्रिंशः सर्गः ॥ ३८ ॥ तेप्रयातामहात्मानःपार्थिवास्तेप्रहृष्टवत् ॥ गजवाजिसहस्रौघैःकंपयंतोवसुंधराम् ॥ १ ॥ अक्षौहिण्योहितत्रासन्राघवार्थेसमुद्यताः ॥ भरतस्याज्ञयानेकाःप्रहृष्टबलवाहनाः ॥ २ ॥

हमारे हृदयमें सदा विराजमान रहते हैं, इस कारण उस विषयकी बडी प्रीतिके वश होकर हम अपने हृदयमें जैसा व्यवहार करेंगे ॥ ३० ॥ सो हे महाराज ! हम चाहते हैं कि, हमारे सबके ऊपर भी आपकी वैसेही प्रीति रहे, फिर राजा अत्यन्त प्रफुल्ल हो ॥ ३१ ॥ हाथ जोड रघुनंदन श्रीरामचन्द्रजीसे बोले कि हम अपने २ राज्योंमें गमन करेंगे; सो यह आपसे निवेदन करते हैं; तब श्रीरामचन्द्रजीने उन राजाओंको आज्ञा दी और वह सब राजा सम्मानित होकर अपने २ देशोंको चले गये ॥ ३२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामष्टात्रिंशः सर्गः ॥ ३८ ॥ महात्मा राजागण हजारों हाथी घोडोंके समूहसे पृथ्वीको कंपायमान करते हुए दशों दिशाओंको चले गये ॥ १ ॥ बाहनोंसे युक्त अनेक अक्षौहिणी सेना

हर्षित होकर श्रीरामचन्द्रजीको सहायता करनेके लिये भली भांतिसे तैयार हो भरतजीकी आज्ञानुसार अयोध्याजीमें टिकी हुई थी ॥२॥ वह सब महीपाल सेनाके साथ रहने और गर्वके वश होनेसे कहने लगे कि, हम रामके शत्रु रावणको संग्राममें नहीं देखपाये ॥३॥ इसलिये रावणका वध होजानेपर भरतजीने वृथा हमको बुलाया, यदि पहले हमको बुलाते तो हम अतिशीघ्र रावणको निःसन्देह संहारही करडालते ॥४॥ हमलोग राम और लक्ष्मणके बाहुवीर्यसे रक्षित और क्लेशविहीन हो समुद्रके पार सुखसे संग्राम करते ॥ ५ ॥ राजा उस कालमें हर्षयुक्त हो इस प्रकारसे हजारों वचन कहते २ अपने २ राज्योंमें चलेगये ॥ ६ ॥ वह प्रसिद्ध समस्त साम्राज्य, महा रत्न, धन और धान्यसे समृद्धिसम्पन्न और हर्षितजनोंसे परिपूर्ण थे ॥ ७ ॥ राजाअपने २ स्थानोंमें अक्षतशरीरसे गमन

ऊचुस्तेचमहीपालाबलदर्पसमन्विताः ॥ नरामरावणेयुद्धेपश्यामःपुरतःस्थितम् ॥३॥ भरतेनवयंपश्चात्समानीतानिरर्थकम् ॥ हताहिराक्षसाः क्षिप्रंपार्थिवैःस्युर्नसंशयः ॥ ४ ॥ रामस्यबाहुवीर्येणरक्षितालक्ष्मणस्यच ॥ सुखंपारेसमुद्रस्ययुध्येमविगतज्वराः ॥ ५ ॥ एताश्चान्याश्चरा जानःकथास्तत्रसहस्रशः ॥ कथयंतःस्वराज्यानिजग्मुर्हर्षसमन्विताः ॥ ६ ॥ स्वानिराज्यानिमुख्यानिऋद्धानिमुदितानिच ॥ समृद्धधनधा न्यानिपूर्णानिवसुमंतिच ॥ ७ ॥ यथापुराणितेगत्वारत्नानिविविधान्यथ ॥ रामस्यप्रियकामार्थमुपहारंनृपाददुः ॥८॥ अश्वान्यानानिरत्ना निहस्तिनश्चमदोत्कटान् ॥ चंदनानिचमुख्यानिदिव्यान्याभरणानिच ॥ ९ ॥ मणिमुक्ताप्रवालांस्तुदास्योरूपसमन्विताः ॥ अजाविकंचवि विधंरथांस्तुविविधान्बहून् ॥१०॥ भरतोलक्ष्मणश्चैवशत्रुघ्नश्चमहाबलः ॥ आदायतानिरत्नानिस्वांपुरींपुनरागताः ॥११॥ आगम्यचपुरीं रम्यामयोध्यांपुरुषर्षभाः ॥ तानिरत्नानिचित्राणिरामायसमुपानयन् ॥१२॥ प्रतिगृह्यचतत्सर्वंरामःप्रीतिसमन्वितः ॥ सुग्रीवायददौराज्ञेमहा त्माकृतकर्मणे ॥ १३ ॥ विभीषणायचददौतथान्येभ्योऽपिराघवः ॥ राक्षसेभ्यःकपिभ्यश्चयैर्वृतोजयमाप्तवान् ॥ १४ ॥

करके श्रीरामचन्द्रजीकी प्रियकामनासे विविध भांतिके रत्नोंको उपहार देनेलगे ॥ ८ ॥ इसके सिवाय अश्व, यान, मदमत्त हस्ती, चन्दन, दिव्य आभरण ॥ ९ ॥ मणि, मुक्ता, प्रवाल, रूपवती दासी, विविध भांतिके श्रेष्ठ चमडे और अनेक रथ ॥ १० ॥ इन सब अनुयायियोंने भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्नजीको उपहार दिये, महाबलवान् लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्नजी वह सब रतन लेकर अपनी पुरीको लौट आये ॥ ११ ॥ उन पुरुषश्रेष्ठोंने रमणीक अयोध्यापुरीमें आय कर वह सब विचित्र रत्न श्रीरामचन्द्रजीको भेंटदिये ॥१२॥ महात्मा श्रीरामचन्द्रजीने अत्यन्त प्रीतिसहित उन सब रत्नोंको लेकर कार्यसिद्ध करके आये हुए राजा सुग्रीवको देदिये॥१३॥ और राक्षसराज विभीषणजीकोभी दिये जिन वानरगण व निशाचरगणोंकेसाथ लंकामें श्रीरामचन्द्रजीने जय पाई थी ॥ १४ ॥

इन सबबलवान् राक्षसगणोंने श्रीरामचन्द्रजीके दिये हुए रत्न शिरपर और हाथोंपर धारण किये ॥१५॥ इक्ष्वाकु नरपति महारथी वीर्यवान् श्रीरामचन्द्रजीने महावीर अंगदजी व हनुमान्‌जीको बालकके समान अपनी गोदीमें लेलिया॥१६॥ फिर कमलदलके समान विशालनेत्रवाले श्रीरामचन्द्रजी सुग्रीवजीसे बोले यह अंगदजी तुम्हारे सुपुत्र और यह पवनकुमार हनुमान् तुम्हारे सुमंत्री हैं॥१७॥ हे सुग्रीव ! यह दोनोंही तुम्हारी मन्त्रणामें नियुक्त और विशेष करके हमारे हितकारी कार्यमें निरत हैं इस कारणसे हे हरीश्वर! इनका आदर सन्मान अनेक प्रकारसे करना चाहिये ॥१८॥ महायशस्वी श्रीरामचन्द्रजीने यह वचन कहकर महामोलके गहने अपने शरीरसे निकालकर अंगद व हनुमान्‌जीको पहरादिये ॥१९॥ तब श्रीरामचन्द्रजीने महावीर्यवान् वानरयूथपोंसे संभाषण किया नील, नल, केशरी;

तेसर्वेरामदत्तानिरत्नानिकपिराक्षसाः ॥ शिरोभिर्धारयामासुर्भुजेषुचमहाबलाः ॥१५॥ हनूमंतंचनृपतिरिक्ष्वाकूणांमहारथः ॥ अंगदंचमहाबाहुमंकमारोप्यवीर्यवान् ॥ १६ ॥ रामःकमलपत्राक्षःसुग्रीवमिदमब्रवीत् ॥ अंगदस्तेसुपुत्रोऽयंमंत्रीचाप्यनिलात्मजः ॥ १७ ॥ सुग्रीवमंत्रितेयुक्तौममचापिहितेरतौ॥ अर्हतोविविधांपूजांत्वत्कृतेवैहरीश्वर ॥१८॥ इत्युक्त्वाव्यपमुच्यांगाद्भूषणानिमहायशाः ॥ सबबंधमहार्हाणितदांगदहनूमतोः ॥१९॥ आभाष्यच महावीर्यान्राघवोयूथपर्षभान् ॥ नीलंनलंकेसरिणंकुमुदंगंधमादनम् ॥२०॥ सुषेणंपनसंवीरंमैंदंद्विविदमेवच ॥ जांबवंतंगवाक्षंचविनतंधूम्रमेवच ॥ २१ ॥ वलीमुखंप्रजंघंचसन्नादंचमहाबलम् ॥ दरीमुखंदधिमुखमिंद्रजानुंचयूथपम् ॥२२ ॥ मधुरंश्लक्ष्णयावाचानेत्राभ्यामापिबन्निव ॥ सुहृदोमेभवंतश्चशरीरंभ्रातरस्तथा ॥ २३ ॥ युष्माभिरुद्धृतश्चाहंव्यसनात्काननौकसः ॥ धन्योराजाचसुग्रीवोभवद्भिःसुहृदांवरैः ॥ २४ ॥ एवमुक्त्वाददौतेभ्योभूषणानियथार्हतः ॥ वज्राणिचमहार्हाणिसस्वजेचनरर्षभः ॥ २५ ॥ तेपिबंतःसुगंधीनिमधूनिमधुपिंगलाः ॥ मांसानिचसुमृष्टानिमूलानिचफलानिच ॥ २६ ॥

कुमुद; गन्धमादन ॥२०॥ सुषेण, पनस, वीर मैन्दव द्विविद, जाम्बवन्त, गवाक्ष, विनत, धूम्र ॥२१॥ बलीमुख, प्रजंघ, महाबलवान् सन्नाद, दरीमुख, दधिमुख व इन्द्रजानु इत्यादि यूथपोंसे ॥ २२ ॥ मधुर वचन श्रीरामचन्द्रजीने कहे । श्रीरामचन्द्रजी दोनों नेत्रोंसे पानही करते हुए उनसे मनोहर वचन कहने लगे कि, तुम सबही हमारे सुहृद् हो, देह और भ्राताओंके समान हो ॥ २३ ॥ हे बनवासीगण ! तुमलोगोंने हमको विपदके समुद्रसे उद्धार किया है । राजा सुग्रीवही धन्य हैं और तुम्हारे समान श्रेष्ठ बन्धुही धन्य हैं ॥ २४ ॥ नरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीने यह कहकर उन लोगोंको यथायोग्य बडे २ मोलके वस्त्र व हीराजटित भूषण दिये और उनसे मिले ॥२५॥ वह मधुपिंगल समस्त वानरगण सुगंधियुक्त मधु पीने लगे और मीठे फल व मूल भक्षण करने लगे ॥२६॥

इस प्रकारसे रहते २ उनको एक महीनेसे अधिक बीतगया परन्तु श्रीरामचन्द्रजीके प्रति भक्ति होनेसे उनको यह महीना मुहूर्तके समान जानपडा ॥ २७ ॥ श्रीरामचन्द्रजीभी उन कामरूपी वानर वीर्यवान् राक्षस और महाबलवान् रीछोंके संग क्रीडा करने लगे ॥२८॥ सन्तुष्टचित्त वानर और राक्षसोंको इस प्रकारसे दूसरा शिशिर मासभी बीत गया ॥ २९ ॥ श्रीरामचन्द्रजीसे परम सन्मान पाय प्रसन्नताको प्राप्त करते २ रमणीक इक्ष्वाकु नगरीमें उन वानरोंका सुखसे समय व्यतीत होने लगा ॥३०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामेकोनचत्वारिंशः सर्गः ॥३९॥ इस प्रकारसे रीछ वानर और राक्षसगण अयोध्याजीमें समय बिताने लगे इसके उपरान्त महातेजस्वी श्रीरामचन्द्रजीने सुग्रीवजीसे कहा ॥ १ ॥ हे सौम्य ! सुर असुरोंसे दुर्द्धर्ष किष्किंधानगरीमें जा

एवंतेषांनिवसतांमासःसाग्रोययौतदा॥ मुहूर्तमिवतेसर्वेरामभक्त्याचमेनिरे॥२७॥ रामोऽपिरेमेतैःसार्धवानरैःकामरूपिभिः॥ राक्षसैश्चमहावीर्यैऋक्षैश्चैवमहाबलैः॥ २८ ॥ एवंतेषांययौमासोद्वितीयःशिशिरःसुखम् ॥ वानराणांप्रहृष्टानांराक्षसानांचसर्वशः ॥ २९ ॥ इक्ष्वाकुनगरेरम्येपरांप्रीतिमुपासताम् ॥ रामस्यप्रीतिकरणैःकालस्तेषांसुखंययौ ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे एकोनचत्वारिंशःसर्गः ॥ ३९ ॥ तथास्मतेषांवसतामृक्षवानररक्षसाम् ॥ राघवस्तुमहातेजाःसुग्रीवमिदमब्रवीत्॥१॥ गम्यतांसौम्यकिष्किंधांदुराधर्षांसुरासुरैः ॥ पालयस्वसहामात्यैराज्यंनिहतकंटकम् ॥ २॥ अंगदंचमहाबाहोप्रीत्यापरमयायुतः॥ पश्यत्वंहनुमंतंचनलंचसुमहाबलम् ॥ ३ ॥ सुषेणंश्वशुरंवीरंतारंचबलिनांवरम् ॥ कुमुदंचैवदुर्धर्षंजांबवंतंमहाबलम् ॥ ४ ॥ वीरंशतबलिंचैवमैंदंद्विविदमेवच ॥ गजंगवाक्षंगवयंशरभंचमहाबलम् ॥५॥ ऋक्षराजंचदुर्धर्षंजांबवंतंमहाबलम्॥ पश्यप्रीतिसमायुक्तोगंधमादनमेवच॥६॥ ऋषभंचसुविक्रांतंप्लवंगंचसुपाटलम् ॥ केसरिंशरभंशुंभंशंखचूडंमहाबलम् ॥ ७ ॥ येयेमेसुमहात्मानोमदर्थेत्यक्तजीविताः ॥ पश्यत्वंप्रीतिसंयुक्तोमाचैषांविप्रियंकृथाः ॥८॥

कर वहां अपने मंत्रियोंके साथ निष्कंटक राज्य भोगो ॥ २ ॥ हे महावीर ! तुम परमप्रीति युक्त होकर बलवान् अंगदजी हनुमान् और नलको देखा करना ॥ ३ ॥ श्वशुर सुषेण महाबलवानोंमें श्रेष्ठ वीर तार, दुर्द्धर्ष कुमुद, महाबलवान् नील ॥ ४ ॥ वीर शतबलि, मैन्द, द्विविद, गज, गवाक्ष, गवय, महाबलवान् शरभ ॥५॥ महाबलवान् दुर्द्धर्ष, ऋक्षराज जाम्बवान इन सबको आप प्रीतियुक्त चित्तसे देखिये इनके अतिरिक्त गन्धमादन॥६॥ विक्रमकारी ऋषभ, सुपाटल, केशरी, शरभ, शुम्भ, महाबलवान् शंखचूड ॥ ७ ॥ व और जिन वानर वीरोंने हमारे लिये अपना जीवन वार दिया है, हे सुग्रीव ! तुम इन सबको प्रेम सहित पालन करना, देखो इनके साथ ऐसा न करना जो इनको बुरा लगे ॥ ८ ॥

मधुर वचन श्रीरामचन्द्रजीने भेटकर सुग्रीवसे वारंवार विभीषणसेकहे ॥ ९ ॥ हम जानते हैं कि आप धर्मज्ञ हैं, पुरवासी जन, मंत्री राक्ष सगण और तुम्हारे भ्राता कुबेरजी तुमसे स्नेह करते हैं, इस निमित्त जाओ अब धर्म सहित लंकाका राज्य करो ॥ १० ॥ हे राजन् ! बुद्धिमान् राजा सदा पृथ्वीमंडलको भोग किया करते हैं; इस कारण तुम कभी अपनी मति अधर्ममें मत करना ॥ ११ ॥ हे राजन् ! तुम हमारी और सुग्रीवजीकी सदा याद करते रहना; अब क्लेश रहित हो परम प्रसन्नतापूर्वक तुम यहांसे जाओ ॥ १२ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर रीछ, वानर और राक्षसगण धन्य २ कह वारंवार श्रीरामचन्द्रजीकी बड़ाई करने लगे ॥ १३ ॥ वह कहने लगे हे श्रीरामचन्द्रजी ! आपकी बुद्धि स्वयं ब्रह्माजीके समान है वैसेही, सर्व श्रेष्ठ माधुर्य आपमें है ॥ १४ ॥ जब वानर

एवमुक्त्वाचसुग्रीवमाश्लिष्यचपुनःपुनः॥ विभीषणमुवाचाथरामोमधुरयागिरा॥९॥ लंकांप्रशाधिधर्मेणधर्मज्ञस्त्वंमतोमम॥ पुरस्यराक्षसानांच भ्रातुर्वैश्रवणस्यच॥१०॥ माचबुद्धिमधर्मेत्वंकुर्याराजन्कथंचन॥ बुद्धिमंतोहिराजानोध्रुवमश्नंतिमेदिनीम् ॥११॥ अहंचनित्यशोराजन्सुग्रीव सहितस्त्वया ॥ स्मर्तव्यःपरयाप्रीत्यागच्छत्वंविगतज्वरः ॥१२॥ रामस्यभाषितंश्रुत्वाऋक्षवानरराक्षसाः ॥ साधुसाध्वितिकाकुत्स्थंप्रशशंसुः पुनःपुनः ॥१३॥ तवबुद्धिर्महाबाहोवीर्यमद्भुतमेवच ॥ माधुर्यपरमंरामस्वयंभोरिवनित्यदा ॥१४॥ तेषामेवंब्रुवाणानांवानराणांचरक्षसाम् ॥ हनूमान्प्रणतोभूत्वाराघवंवाक्यमब्रवीत् ॥ १५ ॥ स्नेहोमेपरमोराजंस्त्वयितिष्ठतुनित्यदा ॥ भक्तिश्चनियतावीरभावोनान्यत्रगच्छतु ॥ १६ ॥ यावद्रामकथावीरचरिष्यतिमहीतले ॥ तावच्छरीरेवत्स्यंतुप्राणाममनसंशयः ॥१७॥ यच्चैतच्चरितंदिव्यंकथातेरघुनंदन ॥ तन्ममाप्सरसोराम श्रावयेयुर्नरर्षभ ॥१८॥ तच्छ्रुत्वाहंततोवीरतवचर्यामृतंप्रभो॥ उत्कंठांतांहरिष्यामिमेघलेखामिवानिलः॥ १९ ॥

और निशाचर ऐसा कहने लगे तब हनुमानूजी प्रणाम कर श्रीरामचन्द्रजीसे बोले ॥ १५ ॥ हे वीर राजन् ! आपमें हमारी परमभक्ति रहे और स्नेहभी लगा रहे, व हमारा मन आपको छोडकर और किसीमें अनुरागी न हो ॥ १६ ॥ हे वीर ! जब तक राम कथा पृथ्वीपर गाई जावे तब तक हमारे प्राण हमारी देहको न छोडें इसमें संदेह न हो ॥ १७ ॥ हे रघुनंदन ! आपका कथारूप जो यह दिव्य चरित्र है हे पुरुषश्रेष्ठ राम ! यह चरित्र सदाहीहमको अप्सरायें सुनाया करें ॥ १८ ॥ हे प्रभो वीर ! आपका चरितामृत श्रवण करके हम आपके दर्शन मिलनेसे उत्पन्न हुई उत्कंठाको दूर करेंगे, जैसे पवन मेघोंको भगायदेता है ॥ १९ ॥

जब हनुमान्‌जीने यह वचन कहे तब श्रीरामचन्द्रजीने श्रेष्ठ आसनपरसे उठ स्नेहके मारे उन्हें भेटकर कहा ॥२०॥ हे कपिश्रेष्ठ ! जो कुछ तुमने प्रार्थनाकी वही होगा इसमें संशय नहीं; जबतक हमारी कथा इसलोकमें होती रहेगी ॥२१॥ तबतक तुम्हारी कीर्तिभी यहां विद्यमान रहेगी, और तबही तक तुम भी शरीर धारण करके वास करोगे, अधिक क्या कहें जब तक यह सब लोक रहेंगे तबहीतक हमारी कथा रहेगी ॥२२॥ हे वानर ! जो उपकार तुमने हमारे किये हैं उन उपकारोंमेंसे एक उपकारके लिये प्राणदान करके भी हम ऋणसे नहीं छूट सकते हैं, परन्तु तुम्हारे उपकार और जो बाकी बचे हैं उनके हम सदाही ऋणी रहेंगे ॥ २३ ॥ हे वानर ! तुमने जो उपकार किये हैं वह हमारे अंगमें जीर्ण हो जायँ कारण कि; आपदकाल आपडनेपर मनुष्य प्रत्युपकारके

एवंब्रुवाणरामस्तुहनूमन्तंवरासनात् ॥ उत्थायसस्वजेस्नेहाद्वाक्यमेतदुवाचह ॥२०॥ एवमेतत्कपिश्रेष्ठभवितानात्रसंशयः ॥ चरिष्यतिकथा यावदेषालोकेचमामिका ॥२१॥ तावत्तेभविताकीर्तिःशरीरेऽप्यसवस्तथा ॥ लोकाहियावत्स्थास्यंतितावत्स्थास्यंतिमेकथाः ॥ २२ ॥ एकै कस्योपकारस्यप्राणान्दास्यामितेकपे ॥ शेषस्येहोपकाराणांभवामऋणिनोवयम् ॥ २३ ॥ मदंगेजीर्णतांयातुयत्त्वयोपकृतंकपे ॥ नरःप्रत्युप काराणामापत्स्वायातिपात्रताम् ॥ २४ ॥ ततोऽस्यहारंचंद्राभंमुच्यकण्ठात्सराघवः ॥ वैदूर्यतरलंकंठेबबंधचहनूमतः ॥२५॥ तेनोरसिनिबद्धेन हारेणमहताकपिः ॥ रराजहेमशैलेंद्रश्चंद्रेणाक्रांतमस्तकः ॥२६॥ श्रुत्वातुराघवस्यैतदुत्थायोत्थायवानराः ॥ प्रणम्यशिरसापादौनिर्जग्मुस्ते महाबलाः ॥ २७ ॥ सुग्रीवःसचरामेणनिरंतरमुरोगतः ॥ विभीषणश्चधर्मात्मासर्वेतबाष्पविक्लवाः ॥ २८ ॥ सर्वेचतेबाष्पकलाःसाश्रुनेत्रा विचेतसः ॥ संमूढाइवदुःखेनत्यजंतोराघवंतदा ॥ २९ ॥

पात्र हुआ करते हैं ॥ २४ ॥ यह कहकर श्रीरामचन्द्रजीने बीच २ में वैदूर्य मणियोंसे शोभित चन्द्रमाकी प्रभातुल्य दमकता हुआ हार कंठसे निकाल हनुमान्‌जीके गलेमें पहनाय दिया ॥२५॥ सुवर्ण शैलराज सुमेरु अपने ऊपर पडी हुई चन्द्रमाकी किरणोंसे जिस प्रकार शोभित होता है, वैसेही हनुमान्‌जी की छातीमें पडा हुआ वह हार शोभा विस्तार करने लगा॥२६॥ श्रीरामचन्द्रजीके पहले कहे हुए यह वचन सुनकर महाबलवान् वानर एक २ करके उठे, और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मस्तक रख प्रणाम करके चले ॥ २७ ॥ सुग्रीव, धर्मात्मा विभीषणजी श्रीरामचन्द्रजीसे भलीभांति भेंट करते हुए, और राम, सुग्रीव, विभीषण इन तीनोंके नेत्रोंसे आंसुओंकी धारा चलने लगी और यह विह्वल हो गये ॥ २८॥ वानर जब श्रीरामचन्द्रजीको छोडकर चले तब दुःखके मारे उनके नेत्रोंसे आंसू निकलने लगे बरन् वाफसे उनका कंठ रुकगया, इससे बातचीत न कर सके और चेतनारहितहोकर वह सबके सब मूर्च्छित हो गये ॥२९॥

इस प्रकारसे महात्मा श्रीरामचन्द्रजीका प्रसाद पाय समस्त वानरादि देहत्यागी जीवके समान अपने २ घरोंको चले ॥ ३० ॥ इसके उपरान्त राक्षस रीछ और वानरगण, रामवियोगसे उत्पन्न आंसुओंसे नेत्र गीले कर रघुवंशके बढाने वाले श्रीरामचन्द्रजीको प्रणाम जताय जो जिस देशसे आये थे वह उसी देशको गये ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां चत्वारिंशः सर्गः ॥४१॥ वानर; राक्षस और रीछोंको बिदा देकर महावीर श्रीरामचन्द्रजी अपने भ्राताओंके सहित सुखी हो हर्ष प्राप्त करने लगे ॥ १ ॥ कुछ काल बीते महाविभुश्रीरामचन्द्रजीने अपने भ्राताओंके सहित अपराह्णकेसमय आकाशसे निकले हुए यह वचन सुने ॥ २ ॥ "हे सौम्य राम ! आप हमको प्रसन्नवदनसे निहारिये, हे प्रभो ! हम पुष्पक कुबेरजीके भवनसे आये हैं ॥ ३ ॥ हे नरश्रेष्ठ ! आपकी आज्ञा पाकर धनद कुबेरजीके निकट हम उनकी उपासना करने गये थे परन्तु उन्होंने हमसे यह कहा ॥ ४ ॥ महात्मा रघुनंदन नृपति

कृतप्रसादास्तेनैवराघवेणमहात्मना ॥ जग्मुःस्वंस्वंगृहंसर्वेदेहीदेहमिवत्यजन् ॥३०॥ ततस्तुतेराक्षसऋक्षवानराःप्रणम्यरामंरघुवंशवर्धनम् ॥ वियोगजाश्रुप्रतिपूर्णलोचनाःप्रतिप्रयातास्तुयथानिवासिनः ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे चत्वारिंशः सर्गः ॥४०॥ विसृज्यचमहाबाहुर्ऋक्षवानरराक्षसान् ॥ भ्रातृभिःसहितोरामःप्रमुमोदसुखंसुखी ॥ १ ॥ अथापराह्णसमयेभ्रातृभिःसह राघव ॥ शुश्रावमधुरांवाणीमंतरिक्षान्महाप्रभुः ॥ २ ॥ सौम्यरामनिरीक्षस्वसौम्येनवदनेनमाम् ॥ कुबेरभवनात्प्राप्तंविद्धिमांपुष्पकंप्रभो ॥३॥ तवशासनमाज्ञायगतोऽस्मिभवनंप्रति ॥ उपस्थातुंनरश्रेष्ठसचमांप्रत्यभाषतः ॥४॥ निर्जितस्त्वंनरेंद्रेणराघवेणमहात्मना ॥ निहत्ययुधिदुर्धर्षंरावणंराक्षसेश्वरम् ॥५॥ ममापिपरमाप्रीतिर्हतेतस्मिन्दुरात्मनि ॥ रावणेसगणेचैवसपुत्रेसहबांधवे ॥ ६ ॥ सत्वंरामेणलंकायांनिर्जितः परमात्मना ॥ वहसौम्यतमेवत्वमहमाज्ञापयामिते ॥७॥ परमोह्येषमेकामोयत्त्वंराघवनंदनम् ॥ वहेर्लोकस्यसंयानंगच्छस्वविगतज्वरः॥८॥ सोऽहंशासनमाज्ञायधनदस्यमहात्मनः ॥ त्वत्सकाशमनुप्राप्तोनिर्विशंकःप्रतीच्छमाम् ॥ ९ ॥

श्रीरामचन्द्रजीने राक्षसपति दुर्द्धर्ष रावणको समरमें संहार कर तुमको जीत लिया है ॥ ५ ॥ वह दुरात्मा रावण पुत्र; बान्धव और अपने इष्ट मित्रोंके सहित मारा गया इसीसे हम अत्यन्त प्रसन्न हुए हैं ॥ ६ ॥ हे सौम्य ! परमात्मा श्रीरामचन्द्रजी लंकासे तुमको जीतकर लाये हैं इसलिये हम तुमको आज्ञा देते हैं कि, तुम उन्हीं श्रीरामचन्द्रजीको अपने ऊपर चढाओ ॥ ७ ॥ तुम भूरादि समस्त लोकोमें ले जानेको समर्थ हो इसकारण तुम श्रीरामचन्द्रजीको अपने ऊपर चढाये फिरो यही हमारी अभिलाषा है इसे तुम किसी प्रकारका दुःख न मान कर उनके निकट चले जाओ ॥ ८ ॥ सो महात्मा कुबेरजीकी आज्ञाके अनुसार हम आपके निकट आये हैं अतएव आप शंका रहित होकर ग्रहण करें॥ ९ ॥

धनद कुबेरजीकी आज्ञासे हमको कोई प्राणी धर्षण नहीं कर सकता इसकारण हम आपकी आज्ञाका पालन करते हुए प्रभावानुसार विचरण करेंगे" ॥१०॥ महाबलवान् श्रीरामचन्द्रजी पुष्पकके ऐसे वचन सुनकर फिर आये और आकाशमें टिके हुए पुष्पकको देखकर बोले ॥ ११ ॥ हे वाहनश्रेष्ठ पुष्पक ! यदि ऐसाही हुआ हो तो तुम्हारा आना सुखकारी हो, अब कुबेरजीकी अनुकूलतासे हमको सद्व्यवहारके उल्लंघन करनेका दोष नहीं होगा ॥ १२ ॥ तब महावीर श्रीरामचन्द्रजीने पुष्प, खीलैं और सुगंध व धूपसे पुष्पक विमानकी पूजा कर उससे कहा ॥ १३ ॥ अब तुम गमन करो, हे विभु सौम्य ! जब हम तुमको याद करें, तब तुम सिद्धलोगोंके दिखाये हुए शून्य मार्गमें आना, हमारे वियोगका तुम कुछ दुःख न करना ॥ १४ ॥ तुम चाहे जिस दिशाको जाओ तुमको

अधृष्यःसर्वभूतानांसर्वेषांधनदाज्ञया ॥ चराम्यहंप्रभावेणतवाज्ञांपरिपालयन् ॥ १० ॥ एवमुक्तस्तदारामःपुष्पकेणमहाबलः ॥ उवाचपुष्पकं दृष्ट्वाविमानंपुनरागतम् ॥ ११ ॥ यद्येवंस्वागतंतेऽस्तुविमानवरपुष्पक ॥ आनुकूल्याद्धनेशस्यवृत्तदोषोननोभवेत् ॥१२॥ लाजैश्चैवतथापुष्पै धूपैश्चैवसुगंधिभिः ॥ पूजयित्वामहाबाहूराघवःपुष्पकंतदा ॥ १३ ॥ गम्यतामितिचोवाचआगच्छत्वंस्मरेयदा ॥ सिद्धानांचगतौसौम्यमा विषादेनयोजय ॥ १४ ॥ प्रतिघातश्चतेमाभूद्यथेष्टंगच्छतोदिशः ॥ एवमस्त्विवतिरामेणपूजयित्वाविसर्जितम्॥ १५ ॥ अभिप्रेतांदिशंतस्मा त्प्रायात्तत्पुष्पकंतदा ॥एवमंतर्हितेतस्मिन्पुष्पकेसुकृतात्मनि ॥ १६ ॥ भरतःप्रांजलिर्वाक्यमुवाचरघुनंदनम् ॥ विबुधात्मनिदृश्यंतेत्वयिवीर प्रशासति ॥ १७ ॥ अमानुषाणिसत्त्वानिव्याहृतानिमुहुर्मुहुः ॥ अनामयाश्चमर्त्यानःसाग्रोमासोगतोह्ययम् ॥ १८ ॥ जीर्णानामपिसत्त्वानां मृत्युर्नायातिराघव ॥ अरोगंप्रसवानार्योवपुष्मंतोहिमानवाः ॥ १९ ॥

कोई भी नहीं रोक सकेगा, इस कारण तुम अभिलाषानुरूप गमन करो, यह कह पूजा करके श्रीरामचन्द्रजीने उसको बिदा किया ॥१५॥ तब पुष्पक विमान "ऐसाही होगा" यह कह जिस ओरकी उसने इच्छा की उस ओरको चला गया जब पुष्पक विमान कृतार्थ होकर इस प्रकारसे अंतर्धान हो गया ॥१६॥ तब भरतजीने हाथ जोडकर श्रीरामचन्द्रजीसे कहा, हे वीर ! आपदेवतास्वरूप हैं, सो आपके राज्य समयमें ॥१७॥ हम लोगोंने कितनी ही वार अमनुष्य प्राणी और पदार्थोंको मनुष्योंके समान आपसमें बात चीत करते देखा, आपको राजा हुए कई महीने बीते परंतु इस समयमें प्रजालोगोंको कोई भी रोग नहीं हुआ ॥१८॥ हे राघव ! जो जीवगण अतिजीर्ण हो गये हैं परंतु तथापि वह नहीं मरते, नारियें रोगरहित सन्तान उत्पन्न करती हैं मनुष्यगण हृष्टपुष्ट हुए हैं ॥ १९ ॥

हे राजन् ! पुरवासी व जनपदवासियोंको अति हर्ष उत्पन्न हुआ है, बादलभी यथा अवसरमें अमृतके समान जल वर्षाते हैं ॥ २० ॥ मंगलमय वायु भी सदा सुखस्पर्श होकर सब प्रकारसे प्रवाहित हो रही है । हे नरेश्वर ! हमारे ऐसे राजाके समान राजा बहुत दिनोंसे नहीं हुआ ॥ २१ ॥ हे राजन् ! ऐसे वचन पुरवासी और जनपदवासी नगरीमें कहते हैं ! नृपश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी भरतजीके कहे हुए ऐसे मधुर वचन सुन हर्षित हुए ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामेकचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४१ ॥ तब महावीर श्रीरामचन्द्रजी भरतके कहे हुए ऐसे मधुर वचन सुनकर पुष्पकको बिदा दे अशोक वनमें प्रवेश करते हुए ॥ १ ॥ वह वन चन्दन, आम, अगर, तुंग, लालचंदन और देवदारुके वृक्षोंसे सम्पूर्ण शोभायमान था ॥ २ ॥ चम्पा, काला

हर्षश्चभ्यधिकोराजञ्जनस्यपुरवासिनः ॥ कालेवर्षतिपर्जन्यःपातयन्नमृतंपयः ॥२०॥ वाताश्चापिप्रवांत्येतेस्पर्शयुक्ताःसुखाःशिवाः ॥ ईदृशोन चिरंराजाभवेदितिनरेश्वरः ॥२१॥ कथयंतिपुरेराजन्पौरजानपदास्तथा ॥ एतावाचःसुमधुराभरतेनसमीरिताः ॥ श्रुत्वारामोमुदायुक्तोबभूवनृप सत्तमः ॥२२॥ इत्यार्षेश्रीमद्रामायणे वा० आदि० च०सा० उत्तरकांडेएकचत्वारिंशःसर्गः ॥४१॥ सविसृज्यततोरामःपुष्पकंहेमभूषितम् ॥ प्रविवेशमहाबाहुरशोकवनिकांतदा ॥१॥ चंदनागुरुचूतैश्चतुंगकालेयकैरपि ॥ देवदारुवनैश्चापिसमंतादुपशोभिताम्॥ २ ॥ चंपकागुरुपुन्नागम धूकपनसासनैः॥ शोभितांपारिजातैश्चतविधूमज्वलनप्रभैः ॥ ३ ॥ लोध्रनीपार्जुनैर्नागैःसप्तपर्णातिमुक्तकैः ॥ मंदारकदलीगुल्मलताजालसमा वृताम् ॥ ४ ॥ प्रियंगुभिःकदंबैश्चतथाचबकुलैरपि ॥ जंबूभिर्दाडिमैश्चैवकोविदारैश्चशोभिताम् ॥ ५॥ सर्वदाकुसुमैरम्यैःफलवद्भिर्मनोरमैः ॥ दिव्यगंधरसोपेतैस्तरुणांकुरपल्लवैः॥ ६ ॥ तथैवतरुभिर्दिव्यैःशिल्पिभिःपरिकल्पितैः॥ चारुपल्लवपुष्पाढ्यैर्मत्तभ्रमरसंकुलैः ॥ ७ ॥

अगर, पुन्नाग, मधूक, पनस, शाल; धुवाँरहित अग्निके समान शोभायमान पारिजात ॥ ३ ॥ लोध, नीप, अर्जुन, नागकेशर, शतावरी, तिनिश, मन्दार, केला, विविध भाँतिकी लता व झाडियोंसे युक्त था ॥ ४ ॥ और प्रियंगु, कदम्ब, बकुल, जामन, दारमी, कोविदारसे शोभित ॥ ५ ॥ सब कालमें फूलनेवाले फूलोंसे युक्त मनोहर कान्ति, फलवान्, रमणीक, दिव्य रस गंधयुक्त नये पत्ते व कोंपलके सहित वृक्षोंसे शोभित था ॥६॥ वृक्ष लगानेमें चतुर शिल्पियोंने इन दिव्य वृक्षोंको अतिसुन्दर भाँतिसे लंगार बांधकर लगा दिया है, विशेष करके यह वृक्षोंके समूह सुन्दर २ पत्ते और पुष्पोंसे परिपूर्ण थे । उनके ऊपर मतवाले भौंरे गुंजार रहे थे ॥ ७ ॥

कोकिलकुल, भ्रमरकुल, और अनेक प्रकारके पक्षियोंने आमके मौरके परागसे भूषित हो सैकडों रंगोंसे चित्रित वन उस बागकी सुन्दरताको बढा रहे थे ॥८॥ अधिक क्या कहें, वहांका कोई वृक्ष श्वेतवर्ण था, कोई तरु अग्निकी शिखाके समान लाल था, कोई पेड नीले अंजनके समान रंगवाला था, ऐसे पादप व और भी अनेक प्रकारके तरुवर वहां थे ॥९॥ जो कि सुगंधि विस्तार कर रहे थे, अनेक प्रकारके फल हार गुहे हुए थे, और भांति२की तलैयें वहां थीं जिनमें सुन्दर निर्मल जल भर रहाथा ॥ १० ॥ इन सब तलैयोंमें उतरनेके लिये मूंगेकी सीढियें बनी हुई थीं और इन तलैयोंके भीतरकी पृथ्वी स्फटिकसे बनी हुई थी सब तलैयोंमें कमल व उत्पलकेवन शोभायमान होरहे थे ॥११॥ चक्रवाक, दात्यूह, तोते, हंस व सारसगण वहां शब्द कर रहे थे, इन सबके किनारोंपर फूले हुए वृक्षोंकी

कोकिलैर्भृंगराजैश्चनानावर्णैश्चपक्षिभिः ॥ शोभितांशतशश्चित्रांचूतवृक्षावतंसकैः ॥८॥ शातकुंभनिभाःकेचित्केचिदग्निशिखोपमाः ॥ नीलांजननिभाश्चान्येभांतितत्रस्मपादपाः ॥ ९ ॥ सुरभीणिचपुष्पाणिमाल्यानिविविधानिच ॥ दीर्घिकाविविधाकाराःपूर्णाःपरमवारिणा ॥ १० ॥ माणिक्यकृतिसोपानाःस्फाटिकांतरकुट्टिमाः॥ फुल्लपद्मोत्पलवनाश्चक्रवाकोपशोभिताः॥११॥ दात्यूहशुकसंघुष्टाहंससारसनादिताः॥ तरुभिः पुष्पशबलैस्तीरजैरुपशोभिताः ॥१२॥ प्राकारैर्विविधाकारैः शोभिताश्चशिलातलैः ॥ तत्रैवचवनोद्देशेवैदूर्यमणिसन्निभैः ॥१३॥ शाद्वलैःपरमोपेतांपुष्पितद्रुमकाननाम् ॥ तत्रसंघर्षजातानांवृक्षाणांपुष्पशालिनाम् ॥ १४ ॥ प्रस्तराःपुष्पशबलानभस्तारागणैरिव ॥ नंदनंहियथेंद्रस्यब्राह्मंचैत्ररथंयथा॥ १५ ॥ तथाभूतंहिरामस्यकाननंसन्निवेशनम् ॥ बह्वासनगृहोपेतांलतासनसमावृताम् ॥ १६ ॥ अशोकवनिकांस्फीतां प्रविश्यरघुनंदनः ॥ आसनेचशुभाकारेपुष्पप्रकरभूषिते ॥ १७ ॥ कुशास्तरणसंस्तीर्णेरामःसन्निषसादह ॥ सीतामादायहस्तेनमधुमैरेयकं शुचि ॥ १८ ॥ पाययामासकाकुत्स्थःशचीमिवपुरंदरः ॥ मांसानिचसुमृष्टानिफलानिविविधानिच ॥ १९ ॥

लँगारे शोभायमान होती थीं॥१२॥विविध भांतिके धवरहरे और शिलाओंसे तलैयोंकी सुन्दरताई बहुत बढी हुई है उसकेही वनोंमें वैदूर्यमणिके समान॥१३॥ असंख्य शार्दूलपक्षी इस वनमें वास करते थे जिसमें कि फले हुए वृक्ष लग रहे थे, एक दूसरेकी रगडस फूले हुए वृक्ष ॥ १४ ॥ अनेक प्रकारके फूलबिछौने वहां परकी शिलाओंपर बिठा देते थे इन्द्रके नदनवनकेसमान कुबेरजीके बह्मरचित चैत्ररथ वनके समान ॥१५॥ श्रीरामचन्द्रजीका यह अशोकवन बना हुआ था। बहुतसे आसन, गृह व लताओंके आसनसे युक्त ॥१६॥ ऐसे बडेभारी अशोकवनमें श्रीरामचन्द्रजीने प्रवेश किया,शुभ आकारसे जटित आसनपर जो कि फलोंसे भूषित था ॥१७॥ और कुशोंका बना हुआ था, श्रीरामचन्द्रजी बैठे सीताजीको वांये हाथसे ग्रहणकर पवित्र व मैरेयमधु॥१८॥काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजीने पिलाया

जैसे शचीको इन्द्रजी पिलाते हैं, भाँति २ के, मांस व विविधभाँतिके मीठे २ फल ॥ १९ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके व्यवहारार्थ सेवक लोग अति शीघ्र लाये । श्रीरामचन्द्रजीके सामने नाच होनेलगा, यह नाच नृत्यनीत विशारद ॥ २० ॥ अप्सराओने किन्नरियोंके साथ मिलकर किया था । इसके उपरान्त उदार स्वभाववाली रूपवती स्त्रियोंने मद्य पानकर ॥ २१ ॥ जो कि, नाचने गानेमें अति चतुर थीं श्रीरामचन्द्रजीके सन्मुख नाचने लगीं; मनको आराम देनेवाली स्त्रियोंको श्रीरामचन्द्रजीने जो कि रमण करनेवालोंमें श्रेष्ठ ॥ २२ ॥ और धर्मात्मा थे सुन्दर गहने पहने इन स्त्रियोंको संतुष्ट किया । फिर धर्मात्मा श्रीरामचंद्रजी सीताजीके साथ विराजमान हो ॥२३॥ ऐसे बैठे जैसे तेजस्वी वसिष्ठजी अरुन्धतीके साथ बैठते हैं इस प्रकारसे श्रीरामचन्द्रजी देवकन्याके समान सीताजीको ॥ २४ ॥ जो कि विदेहराजकुमारी थीं प्रतिदिन देवताके समान उनको सन्तुष्ट करने लगे इस प्रकारसे बहुत दिन विहार करते २ रामचंद्र व सीताजीको

रामस्याभ्यवहारार्थंकिंकरास्तूर्णमाहरन् ॥ उपानृत्यंश्चराजानंनृत्यगीतविशारदाः ॥ २० ॥ अप्सरोरगसंघाश्चकिन्नरीपरिवारिताः ॥ दक्षिणारूपवत्यश्चस्त्रियःपानवशंगताः ॥ २१ ॥ उपानृत्यंतकाकुत्स्थंनृत्यगीतविशारदाः ॥ मनोभिरामारामास्तारामोरमयतांवरः ॥ २२ ॥ रमयामासधर्मात्मानित्यंपरमभूषिताः॥ सतयासीतयासार्धमासीनोविरराजह ॥२३॥ अरुंधत्यासहासीनोवसिष्ठइवतेजसा ॥ एवंरामोमुदायुक्तःसीतांसुरसुतोपमाम् ॥२४॥ रमयामासवैदेहीमहन्यहनिदेववत् ॥ तथातयोर्विहरतोःसीताराघवयोश्चिरम्॥ २५ ॥ अत्यक्रामच्छुभःकालः शैशिरोभोगदःसदा॥ दशवर्षसहस्राणिगतानिसुमहात्मनोः॥ प्राप्तयोर्विविधान्भोगानतीतःशिशिरागमः॥२६॥ पूर्वाह्णेधर्मकार्याणिकृत्वाधर्मेणधर्मवित् ॥ शेषंदिवसभागार्धमंतःपुरगतोऽभवत् ॥ २७ ॥ सीतापिदेवकार्याणिकृत्वापौर्वाह्णिकानिवै ॥ श्वश्रूणामकरोत्पूजांसर्वासामविशेषतः ॥२८॥ अभ्यगच्छत्ततोरामंविचित्राभरणांबरा॥ त्रिविष्टपेसहस्राक्षमुपविष्टंयथाशची ॥२९॥

॥ २५ ॥ सदाही भोगका देनेवाला शिशिरकाल व्यतीत होगया (विविध भांतिके भोग भोगते हुए महात्मा रामचन्द्रजी व जानकीजीने दशहजार वर्षतक विहार किया) विविध भोगोंका प्राप्त करते हुए शिशिरका आगमन बीत गया ॥ २६ ॥ एक दिन धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी सबेरेके समय धर्मानुसार धर्मकार्य समाप्त करके दिनके बचे हुए भागको अंतः पुरमें बिताते हुए ॥ २७ ॥ देवी सीताजी भी प्रभातके समय करनेके योग्य कार्य करके विशेष श्रद्धाभक्तियुक्त हो सब सासुओंकी सेवा करती ॥ २८ ॥ फिर एक समय दिव्य द्युतिवाले विचित्र वस्त्र पहर करके भाँति २ के गहने पहन श्रीरामचन्द्रजीके निकटऐसे बैठतीं जैसे स्वर्गमें इन्द्रजीके निकट इन्द्राणी शची बैठती हैं ॥ २९ ॥

रामचन्द्रजी सीताजीको गर्भलक्षणयुक्त देखकर अत्यन्त आनंद प्राप्त करते हुए और अत्यंत प्रशंसा करने लगे इसके उपरान्त श्रीरामचंद्रजी देवबालासमान वरवर्णिनी सीताजीसे बोले हे वैदेही ! तुम्हारे गर्भलक्षण स्पष्टही देखे जाते हैं ॥३०॥ ३१॥ हे नितंबिनी ! तुम्हारी क्या इच्छा है, सो कहो हम तुम्हारी कौन इच्छा पूर्ण करें ? तब जानकी मुस्करायकर श्रीरामचंद्रजीसे बोलीं ॥ ३२ ॥ अब पवित्र तपोवनके देखनेकी हमारी इच्छा हुई है, गंगाजीके किनारेपर विराजमान उग्रतेजस्वी ऋषियोंको ॥ ३३ ॥ जो कि, फलमूलाहारी हैं उनके चरणोंकी बंदना हमकरना चाहती हैं, हे देव ! यह हमारी परम कामना है कि फल मूल भोजन करनेवाले ॥ ३४ ॥ मुनियोंके निकट तपोवनमें हम एक रात वसें काकुत्स्थ, अक्लेशकर्मकारी श्रीरामचन्द्रजी "ऐसाही होगा" यह

दृष्ट्वातुराघवःपत्नींकल्याणेनसमन्विताम् ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेसाधुसाध्वितिचाब्रवीत् ॥३०॥ अब्रवीच्चवरारोहांसीतांसुरसुतोपमाम् ॥ अपत्यलाभोवैदेहित्वय्ययंसमुपस्थितः ॥३१॥ किमिच्छसिवरारोहेकामःकिंक्रियतांतव ॥ स्मितंकृत्वातुवैदेहीरामंवाक्यमथाब्रवीत् ॥ ३२ ॥ तपोवनानिपुण्यानिद्रष्टुमिच्छामिराघव ॥ गंगातीरोपविष्टानामृषीणामुग्रतेजसाम् ॥ ३३ ॥ फलमूलाशिनांदेवपादमूलेषुवर्तितुम् ॥ एषमेपरमःकामोयन्मूलफलभोजिनाम् ॥ ३४ ॥ अप्येकरात्रिंकाकुत्स्थनिवसेयतपोवने ॥ तथेतिचप्रतिज्ञातंरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ विस्रब्धाभववैदेहिश्वोगमिष्यस्यसंशयम् ॥ ३५ ॥ एवमुक्त्वातुकाकुत्स्थोमैथिलींजनकात्मजाम् ॥ मध्यकक्षांतरंरामोनिर्जगामसुहृद्वृतः ॥३६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥४२॥ तत्रोपविष्टंराजानमुपासंतेविचक्षणाः ॥ कथानांबहुरूपाणांहास्यकाराःसमंततः ॥ १ ॥ विजयोमधुमत्तश्चकाश्यपोमंगलःकुलः ॥ सुराजिःकालियोभद्रोदंतवक्रःसुमागधः ॥ २ ॥ एतेकथाबहुविधाःपरिहाससमन्विताः ॥ कथयंतिस्मसंहृष्टाराघवस्यमहात्मनः ॥ ३ ॥

प्रतिज्ञा करके जानकीजीसे बोले हे वैदेही ! तुम तैयारहो रहो कल निश्चय गमन करेंगे, इसमें संशय नहीं ॥ ३५ ॥ काकुत्स्थनंदन श्रीरामचन्द्रजी जनककुमारी सीताजीसे ऐसा कहकर, अपने अन्तःपुरमें गमन करके अपने सुहृदोंके साथ बीचके गृहमें आये ॥ ३६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४२ ॥ जब श्रीरामचन्द्रजी इस स्थानपर आकर बैठे तो चतुर सभ्य उनके चारों ओर बैठकर अनेक प्रकारके हास्य प्रसंग (हँसी दिल्लगी) कहने व करने लगे ॥ १ ॥ विजय, मधुमत्त, कश्यप, मंगल, कुल, सुराजी, कालिय, भद्र दंतवक्र और सुमागध ॥ २ ॥ यह तब हर्षित चित्तसे महात्मा श्रीरामचन्द्रजीके निकट हास्ययुक्त विविधभांतिकी कथायें कहने लगे ॥ ३ ॥

किसी कथाके प्रसंगमें रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजी बोले हे भद्र ! इस विषयमें नगरके लोग क्या कहते हैं ? ॥४॥ हमारे आश्रित पुरजनलोग क्या कहते हैं ? सीताके विषयमें, लक्ष्मणजीके संबंधमें ॥५॥ शत्रुघ्नजीके वर्तावमें व माता कैकेयीके विषयमें वह सब कौन२ सी कथा करते हैं, क्योंकि तपस्वियोंके आश्रममें या राज्यमें राजाको विचारहीन होनेपर सर्वजनोंके सन्मुख निन्दाका पात्र होना पडता है॥६॥ जब श्रीरामचन्द्रजीने यह कहा तब भद्र हाथ जोडकर बोला हे राजन् ! पुरवासी अनेक शुभ कथाही कहा करते हैं ॥ ७ ॥ हे पुरुश्रेष्ठ ! रावणके वधद्वारा प्राप्त हुई इस विजयको लक्ष्य करके पुरवासी लोग अपने २ घरोंमें अनेकबातें किया करते हैं ॥ ८ ॥ भद्रके इस प्रकार कहने पर श्रीरामचन्द्रजीने कहा उसका आदिसे अन्ततक यथार्थ २ समस्त वृत्तान्त कहो ॥९॥ कि पुरवासी लोग क्या २ शुभ अशुभ वाक्य किया करते हैं, पुरवासियोंके भले बुरे वचन सुनकर हम अशुभ कार्य न करके शुभ कार्यही करेंगे ॥ १० ॥

ततःकथायांकस्यांचिद्राघवःसमभाषत ॥ काःकथानगरेभद्रवर्ततेविषयेषुच ॥ ४ ॥ मामाश्रितानिकान्याहुःपौरजानपदाजनाः ॥ किंचसीतां समाश्रित्यभरतंकिंचलक्ष्मणम् ॥ ५ ॥ किंनुशत्रुघ्नमुद्दिश्यकैकेयींकिंनुमातरम् ॥ वक्तव्यतांचराजानोवनेराज्यव्रजंतिच ॥ ६ ॥ एवमुक्तेतु रामेणभद्रःप्रांजलिरब्रवीत् ॥ स्थिताःशुभाःकथाराजन्वर्ततेपुरवासिनाम् ॥ ७ ॥ अमुंतुविजयंसौम्यदशग्रीववधार्जितम् ॥ भूयिष्ठंस्वपुरेपौरैः कथ्यंतेपुरुषर्षभ ॥ ८॥ एवमुक्तस्तुभद्रेणराघवोवाक्यमब्रवीत् ॥ कथयस्वयथातत्त्वंसर्वंनिरवशेषतः ॥ ९ ॥ शुभाशुभानिवाक्यानिकान्याहुः पुरवासिनः ॥ श्रुत्वेदानींशुभंकुर्यानकुर्यामशुभानिच ॥ १० ॥ कथयस्वचविस्रब्धोनिर्भयंविगतज्वरः ॥ कथयतियथापौराःपापाजनपदेषुच ॥ ११ ॥ राघवेणैवमुक्तस्तुभद्रःसुरुचिरंवचः ॥ प्रत्युवाचमहाबाहुंप्रांजलिःसुसमाहितः ॥ १२ ॥ श्रृणुराजन्यथाःपौराःकथयतिशुभाशुभम् ॥ चत्वरापणरथ्यासुवनेषूपवनेषुच ॥ १३ ॥ दुष्करंकृतवान्रामःसमुद्रेसेतुबंधनम् ॥ अश्रुतंपूर्वकैःकैश्चिद्देवैरपिसदानवैः ॥ १४ ॥ रावणश्चदुराधर्षोहतःसबलवाहनः ॥ वानराश्चवशंनीताऋक्षाश्चसहराक्षसैः ॥१५॥

तुम सन्तापशून्य और विश्वासित हो निर्भयचित्तसे सब कहो कि पुरवासी और जनपदवासी लोग किस प्रकारकी पापकथा कहा करते हैं ॥ ११ ॥ श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर भद्र सावधान चित्त हो हाथ जोडकर बोला ॥ १२ ॥ "हे राजन् ! वन, उपवन, दुकान, चौराहे और मार्गोंमें पुरवासी लोग जो शुभ अशुभ वचन कहा करते हैं सो मैं आपसे कहता हूं श्रवण कीजिये ॥ १३ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने अतिदुष्कर कार्य किया है, समुद्रमें पुलका बांधना, हमारे पूर्वपुरुषोंमें तो क्या देवता दानवोंनेभी कभी नहीं श्रवण किया ॥ १४ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने दुर्द्धर्ष रावणका सेना और वाहनोंके साथ विनाश किया है और वानर; रीछ, राक्षसोंकोभी अपने वशमें किया है ॥ १५ ॥

श्रीरामचन्द्रजीने समरमें रावणका संहार करके सीताका उद्धार किया है, परन्तु रावणने जो सीताजीका स्पर्श किया था, इसके लिये उन्होंने कुछ कोप न करके वह स्वच्छ जानकीजीको अपनी पुरीमें ले आये ॥१६॥ जो रावण सीताजीको बलपूर्वक ग्रहण कर अपनी गोदीमें लिये हुए गया था फिर किस कारण उन रामका हृदय सीतासम्भोगजनित सुख प्राप्त करता है ॥ १७ ॥ रावणने सीताजीको लंकापुरीमें लेजाय वहांपर अशोकवाटिकामें रक्खा था, और सीताजी वहांपर राक्षसके वशमें थीं, तथापि सीता जीके प्रति रामचन्द्रको घृणा क्यों नहीं हुई ? ॥१८॥ अबसे लेकर हमको भी स्त्रीका अपराध सहन करना पडेगा क्योंकि जिस प्रकार राजा करते हैं; प्रजाभी उसकी देखा देखी वैसाही किया करती ॥ १९ ॥ हे राजन् ! समस्त नगरों व जनपदोंमें पुरवासी लोग यही अनेक कथावार्ता कहा करते हैं ॥२०॥" इस प्रकार भद्रके वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजी परमव्याकुल हो समस्त सुहृदोंसे पूछते हुए, क्या प्रजालोग हमारे

हत्वाचरावणंसंख्येसीतामाहृत्यराघवः ॥ अमर्षंपृष्ठतःकृत्वास्ववेश्मपुनरानयत्॥१६॥ कीदृशंहृदयेतस्यसीतासंभोगजंसुखम् ॥ अंकमारोप्य तुपुरारावणेनबलाद्धृताम्॥१७॥ लंकामपिपुरानीतामशोकवाटिकांगताम् ॥ रक्षसांवशमापन्नांकथंरामोनकुत्स्यति॥१८॥ अस्माकमपिदारेषु सहनीयंभविष्यति॥यथाहिकुरुतेराजाप्रजास्तमनुवर्तते॥१९॥एवंबहुविधावाचोवदंतिपुरवासिनः॥ नगरेषुचसर्वेषुराजञ्जनपदेषुच॥२०॥तस्यै वंभाषितंश्रुत्वाराघवःपरमार्तवत्॥उवाचसुहृदःसर्वान्कथमेतद्वदंतिमाम्॥२१॥सर्वेतुशिरसाभूमावभिवाद्यप्रणम्यच॥प्रत्यूचूराघवंदीनमेवमेतन्न संशयः॥२२॥श्रुत्वातुवाक्यंकाकुत्स्थःसर्वेषांसमुदीरितम्॥विसर्जयामासतदावयस्याञ्छत्रुसूदनः॥२३॥इ०श्रीमद्वा०वा०आ०च०सा०उत्तरकां डेत्रिचत्वारिंशःसर्गः॥४३॥विसृज्यतुसुहृद्वर्गंबुद्ध्यानिश्चित्यराघवः॥समीपेद्वाःस्थमासीनमिदंवचनमब्रवीत्॥१॥शीघ्रमानयसौमित्रिंलक्ष्मणं शुभलक्षणम्॥भरतंचमहाभागंशत्रुघ्नमपराजितम्॥२॥रामस्यवचनंश्रुत्वाद्वाःस्थोमूर्ध्निकृतांजलिः॥लक्ष्मणस्यगृहंगत्वाप्रविवेशानिवारितः॥३॥

सम्बन्धमें ऐसीही वार्ता कहा करते हैं ॥ २१ ॥ तब सुहृज्जनोंने मस्तक झुकाय प्रणाम व अभिवादन कर दीन चित्त हुए श्रीरामचन्द्रजीसे कहा, "भद्रने जो कुछ कहा वह सब सत्य है" ॥२२॥ तब शत्रुसंहारी काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजी सबहीके मुखसे यह वचन श्रवण करके अपने सखाओंको बिदा देते हुए॥२३॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां त्रिचत्वारिंशः सर्गः ॥४३॥ रघुनन्दन श्रीरामचन्द्रजी सुहृदोंको बिदादे कर्तव्य निश्चय कर समीपही बैठे हुए द्वारपालसे बोले ॥ १ ॥ तुम सुमित्रानन्दन शुभलक्षणसम्पन्न, लक्ष्मण, महाभाग भरत और अपराजित शत्रुघ्नको भी शीघ्र लिवा लाओ ॥ २ ॥ द्वारपाल श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर शिरसे हाथ जोड अति शीघ्रकी चालसे लक्ष्मणजीके गृहमें प्रवेश करता हुआ ॥ ३ ॥

फिर हाथ जोडे हुए आदर पूर्वक महात्मा लक्ष्मणजीसे बोला कि, महाराजने आपके देखनेकी इच्छा की है, इस कारण आप अतिशीघ्र वहांपर चले ॥ ४ ॥ तब लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा सुन "बहुत अच्छा" कह रथपर सवारहो अतिशीघ्रतासे श्रीरामचन्द्रजीके गृहकी ओर चले ॥ ५ ॥ लक्ष्मणजीको जाते हुए देख द्वारपालने विनीतभावसे भरतजीके निकट जाय हाथ जोड आशीर्वादके वचनोंसे भरतजीका आदर कर उनसे कहा ॥ ६ ॥ उनसे विनय युक्त हो कहा कि "महाराज आपको देखा चाहते हैं" भरतजी द्वारपालसे श्रीरामचन्द्रजीकी यह आज्ञा सुन ॥ ७ ॥ वह महाबलवान् उसी समय आसनपरसे उठ शीघ्रताके मारे पैदल ही चल दिये । भरतजीको जाते हुए देखकर द्वारपालने अति शीघ्रतासे हाथ जोड ॥ ८ ॥ शत्रुघ्नजीके स्थानमें

उवाचसुमहात्मानंवर्धयित्वाकृतांजलिः ॥ द्रष्टुमिच्छतिराजात्वांगम्यतांतत्रमाचिरम् ॥४॥ बाढमित्येवसौमित्रिःश्रुत्वाराघवशासनम् ॥ प्राद्र वद्रथमारुह्यराघवस्यनिवेशनम् ॥५॥ प्रयांतंलक्ष्मणंदृष्ट्वाद्वाःस्थोभरतमंतिकात् ॥ उवाचभरतंतत्रवर्धयित्वाकृतांजलिः ॥ ६ ॥ विनयावनतो भूत्वाराजात्वांद्रष्टुमिच्छति ॥ भरतस्तुवचःश्रुत्वाद्वाःस्थाद्रामसमीरितम् ॥ ७ ॥ उत्पपातासनात्तूर्णंपद्भ्यामेवमहाबलः ॥ दृष्ट्वाप्रयांतंभरतंत्व रमाणःकृतांजलिः ॥ ८ ॥ शत्रुघ्नभवनंगत्वाततोवाक्यमुवाचह ॥ एह्यागच्छरघुश्रेष्ठराजात्वांद्रष्टुमिच्छति ॥९॥ गतोहिलक्ष्मणःपूर्वंभरतश्च महायशाः ॥ श्रुत्वातुवचनंतस्यशत्रुघ्नःपरमासनात् ॥१०॥ शिरसावंद्यधरणींप्रययौयत्रराघवः॥ द्वाःस्थस्त्वागम्यरामायसर्वानेवकृतांजलिः ॥११॥निवेदयामासतथाभ्रातॄन्स्वान्समुपस्थितान्॥ कुमारानागतांञ्छ्रुत्वाचिंताव्याकुलितेंद्रियः॥१२॥ अवाङ्मुखोदीनमनाद्वाःस्थंवचनमब्र वीत् ॥ प्रवेशयकुमारांस्त्वंमत्समीपंत्वरान्वितः॥१३॥ एतेषुजीवितंमह्यमेतेप्राणाःप्रियामम॥ आज्ञप्तास्तुनरेंद्रेणकुमाराःशुक्लवाससः॥१४॥

जाय उनसे कहा हे रघुश्रेष्ठ ! चलिये, महाराज आपके देखनेकी इच्छा करते हैं ॥ ९ ॥ महायशस्वी भरत और लक्ष्मणजी पहले ही जाय चुके हैं तब शत्रुघ्नजी द्वारपालके वचन सुन उत्तम आसनसे उठ पृथ्वीपर मस्तक झुकाय श्रीरामचंद्रजीकी वंदना करते हुए जिस स्थानमें रघुवीर विराजमान थे वहांको चले । द्वारपालने लौटकर व हाथ जोड श्रीरामचन्द्रजीके पास आय सब ॥ १० ॥ ११ ॥ भ्राताओंके आनेका वृत्तान्त उनसे निवेदन किया । कुमारोंका आना सुन चिन्तासे युक्त व्याकुलेन्द्रिय ॥ १२ ॥ नीचेको मुख किये दीनमन हुए श्रीरामचन्द्रजी द्वारपालसे बोले तुम शीघ्रही कुमारोंको हमारे निकट ले आओ ॥ १३ ॥ क्योंकि यह कुमार लोग हमको प्राणोंसे भी अधिक प्यारे हैं अधिक क्या कहें ? हमारा जीवन इनसे ही है । श्रीरामचन्द्रजी

की आज्ञा पाय श्वेत वस्त्र पहरे हुए कुमारगण ॥ १४ ॥ हाथ जोडे हुए सावधान चित्त हो विनीत भावसे वहां प्रवेश करते हुए उन्होंने वहां आकर देखा कि श्रीरामचन्द्रजीका मुख राहुसे ग्रसे हुए चन्द्रमाके समान ॥ १५ ॥ सन्ध्याके समय अस्त होते हुए प्रभाहीन सूर्य भगवान्के समान नेत्रोंमें आंसू भरे हुए उन बुद्धिमानोंने श्रीरामचन्द्रजीको देखा, उस समय श्रीरामचन्द्रजीका मुख ऐसा दृष्टि आया मानो शोभाहीन कमलका फूल है ॥ १६ ॥ यह देखकर वह कुमार अतिशीघ्रतासे शिर झुकाय श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रणाम कर सावधान चित्तसे वहां बैठे, परंतु श्रीरामचन्द्रजी केवल आंसू बहाने लगे ॥ १७ ॥ फिर महावीर श्रीरामचन्द्रजी उन कुमारोंको भेंटकर व उठाय "आसनपर बैठो" यह वचन कह फिर बोले ॥१८॥ हे नरश्रेष्ठगण ! तुमही हमारे सर्वस्व हो,

प्रह्वाःप्रांजलयोभूत्वाविविशुस्तेसमाहिताः ॥ तेतुदृष्ट्वामुखंतस्यसग्रहंशशिनंयथा॥१५॥ संध्यागतमिवादित्यंप्रभयापरिवर्जितम् ॥ बाष्पपूर्णे चनयनेदृष्ट्वारामस्यधीमतः ॥ हतशोभयथापद्मंमुखंवीक्ष्यचतस्यते॥१६॥ ततोऽभिवाद्यत्वरिताःपादौरामस्यमूर्धभिः॥ तस्थुःसमाहिताःसर्वे रामस्त्वश्रूण्यवर्तयत्॥ १७ ॥ तान्परिष्वज्यबाहुभ्यामुत्थाप्यचमहाबलः ॥ आसनेष्वासतेत्युक्त्वाततोवाक्यंजगादह ॥१८॥ भवंतोममसर्वं स्वंभवंतोजीवितंमम ॥ भवद्भिश्चकृतंराज्यंपालयामिनरेश्वराः ॥ १९ ॥ भवंतःकृतशास्त्रार्थाबुद्ध्याचपरिनिष्ठिताः ॥ संभूयचमदर्थोऽयमन्वेष्टव्योनरेश्वराः ॥ २० ॥ तथावदतिकाकुत्स्थेअवधानापरायणाः ॥ उद्विग्नमनसःसर्वेकिंनुराजाभिधास्यति ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे चतुश्चत्वारिंशःसर्गः ॥ ४४ ॥ तेषांसमुपविष्टानांसर्वेषांदीनचेतसाम् ॥ उवाचवाक्यंकाकुत्स्थोमुखेनपरिशुष्यता ॥ १ ॥ सर्वेशृणुतभद्रंवोमाकुरुध्वंमनोऽन्यथा ॥ पौराणांममसीतायांयादृशीवर्ततेकथा ॥ २ ॥

तुम लोग ही हमारे जीवन हो, तुम लोगोंकाही सम्पादित किया हुआ राज्य हम पालन करते हैं ॥१९॥ हे नरेश्वरवृन्द ! तुम सबही शास्त्रोंके अर्थ जाननेमें पारदर्शी हो, इस कारण बुद्धिसे स्थिर निश्चय करके जो कुछ हम कह तुम उसकोही करो ॥ २० ॥ जब रघुवीर श्रीरामचंद्रजीने ऐसा कहा तब मन लगाकर तीनों भाई "राजा क्या कहेंगे ?" ऐसी आशंकासे उद्विग्न चित्त हुए ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां चतुश्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४४ ॥ जब दीन चित्त हो कुमार सब बैठ गये तब काकुत्स्थ श्रीरामचन्द्रजीने शोकाकुल वदन होकर उनसे कहा ॥ १ ॥ तुम्हारा मंगल हो, तुम हमारे अभिप्रायके विरुद्ध आचरण मत करना पुरवासी लोग सीताके सम्बन्धमें जो कुछ कहते हैं वह सुनो ॥ २ ॥

पुरवासियोंमें हमारा बड़ा अपवाद हुआ करता है, और जनपदवासी भी हमारी अत्यंत निंदा किया करते हैं, इस अपवाद और निंदाके मारे हमारे मर्मस्थान टुकड़े २ हुए जाते हैं ॥३॥ हमने महात्मा इक्ष्वाकुके विख्यात कुलमें और विख्यात वंशमें जन्म ग्रहण किया है । और सीता भी महामति जनकजीके पवित्र वंशमें उत्पन्न हुई हैं ॥ ४ ॥ हे सौम्य ! जनरहित दंडकवनमें रावणने जिस प्रकार सीताको हरण किया था, और फिर जिस प्रकार हमने उसका संहार किया वह तो तुम जानतेही हो ॥५॥ उसी समय सीताके संबन्धमें हमने विचारा था कि यह राक्षसके गृहमें रही हैं सो हम किस प्रकार इनको अपने गृहमें ले जायँगे ॥ ६ ॥ हे लक्ष्मण ! उस कालमें सीताजी पतिव्रत धर्मका विश्वास दिलानेके लिये तुम्हारे सन्मुखही अग्निमें प्रवेश कर गई थीं, तब हव्यवाहन अग्निने प्रगट होकर ॥ ७ ॥ व आकाशमें टिके हुए वायुने कहा था, कि यह सीताजी पाप रहित हैं अधिक क्या कहें चंद्र सूर्यने भी पहले सब देवताओंके

पौरापवादःसुमहांस्तथाजनपदस्यच ॥ वर्ततेमयिबीभत्सासामेमर्माणिकृंतति ॥३॥ अहंकिलकुलेजातइक्ष्वाकूणांमहात्मनाम् ॥ सीतापिसत्कुलेजाताजनकानांमहात्मनाम् ॥ ४ ॥ जानासित्वंयथासौम्यदंडकेविजनेवने ॥ रावणेनहृतासीतासचविध्वंसितोमया ॥५॥ तत्रमेबुद्धिरुत्पन्नाजनकस्यसुतांप्रति ॥ अत्रोषितामिमांसीतामानयेयंकथंपुरीम् ॥ ६॥ प्रत्ययार्थंततःसीताविवेशज्वलनंतदा ॥ प्रत्यक्षंतवसौमित्रदेवानांहव्यवाहनः ॥ ७ ॥ अपापांमैथिलीमाहवायुश्चाकाशगोचरः ॥ चंद्रादित्यौचशंसेतेसुराणांसन्निधौपुरा ॥ ८ ॥ ऋषीणांचैवसर्वेषामपापांजनकात्मजाम् ॥ एवंशुद्धसमाचारादेवगंधर्वसन्निधौ ॥९॥ लंकाद्वीपेमहेंद्रेणममहस्तेनिवेदिता ॥ अंतरात्माचमेवेत्तिसीतांशुद्धांयशस्विनीम्॥१०॥ ततोगृहीत्वावैदेहीमयोध्यामहमागतः ॥ अयंतुमेमहान्वादःशोकश्चहृदिवर्तते ॥११॥ पौरापवादःसुमहांस्तथाजनपदस्यच ॥ अकीर्त्तिर्यस्य गीयेतलोकेभूतस्यकस्यचित् ॥ १२ ॥ पतत्येवाधमाँल्लोकान्यावच्छब्दःप्रकीर्यते ॥ अकीर्तिर्निन्द्यतेदेवैःकीर्तिर्लोकेषुपूज्यते ॥ १३ ॥

साथ ॥८॥ और सब ऋषियोंने भी सीताजीको पाप रहित कहा था इस प्रकारसे पवित्र चरित्र सीताजीको देवता गन्धर्वोंके निकट॥ ९ ॥ सुरपति इंद्रजीने लंकाद्वीपके मध्य हमारे हाथमें समर्पण किया और हमारी अंतरात्मा भी यही कहती है कि यशस्विनी सीताजी शुद्ध हैं ॥१०॥ इसी कारणसे हम वैदेहीजीको ग्रहण करके अयोध्याजीमें आये । परंतु अब इस महाअपवादसे हमारे हृदयमें शोक वर्तता है ॥ ११ ॥ वह यही महाअपवाद है कि जो पुरवासी और जनपदवासी हमारी निंदा करते हैं जिस संसारमें जिस प्राणीकी अकीर्ति फैल जाती है ॥ १२ ॥ जबतक वह अकीर्तिकी फैली रहती है तबतक वह पुरुष अधम लोकमें पडा रहता है, देवता अकीर्तिकी निंदा किया करते हैं और कीर्ति सबलोकमें पूजित होती है ॥ १३ ॥

इस कारणसे महात्मा लोग कीर्तिके लिये सर्व प्रकारसे यत्न किया करते हैं. हे पुरुषश्रेष्ठ गण ! अपने जीवनको व तुम लोगोंको भी ॥ १४ ॥ हम अपवादके भयसे भीत होकर परित्याग कर सकते हैं, फिर जानकीजीकी तो बातही क्या है इससे तुमही देखो कि, हम अकीर्तिके कैसे शोकसागरमें पडे हैं ॥१५॥ विशेष करके इससे अधिक कुछ और दुःख किसी जीवमें भी हम अवलोकन नहीं करते, हे लक्ष्मण ! प्रभातको कल तुम सारथिसुमंत्रसे रथ जुडवाय ॥१६॥ उसपर जानकीजीको चढाय और देशमें जायकर सीताजीको छोड आओ, गंगाजीकी दूसरी पार महात्मा वाल्मीकिजीका ॥१७॥ तमसानदीके किनारे दिव्य आश्रम है। हे रघुनंदन ! तुम उसी जनरहित वनमें सीताको छोडकर ॥१८॥ शीघ्र चले आओ । हे लक्ष्मण ! तुम हमारे यह वचन पूरे करो । सीताके परित्यागके विषयमें तुम

कीर्त्यर्थंतुसमारंभः सर्वेषांसुमहात्मनाम् ॥ अप्यहंजीवितंजह्यांयुष्मान्वापुरुषर्षभाः ॥१४॥ अपवादभयाद्भीतः किंपुनर्जनकात्मजाम् ॥ तस्माद्भवंतः पश्यंतुपतितुंशोकसागरे ॥ १५ ॥ नहिपश्याम्यहंभूतंकिंचिद्दुःखमतोऽधिकम् ॥ श्वस्त्वंप्रातेसौमित्रेसुमंत्राधिष्ठितंरथम् ॥ १६ ॥ आरुह्यसीतामारोप्यविषयांतेसमुत्सृज ॥ गंगायास्तुपरेपारेवाल्मीकेस्तुमहात्मनः ॥ १७ ॥ आश्रमोदिव्यसंकाशस्तमसातीरमाश्रितः ॥ तत्रैनांविजनेदेशेविसृज्यरघुनंदन ॥ १८ ॥ शीघ्रमागच्छसौमित्रेकुरुष्ववचनंमम ॥ नचास्मिप्रतिवक्तव्यः सीतांप्रतिकथंचन ॥१९॥ तस्मात्त्वंगच्छसौमित्रेनात्रकार्याविचारणा ॥ अप्रीतिर्हिपरामह्यंत्वयैतत्प्रतिवारिते ॥ २० ॥ शापिताहिमयायूयंपादाभ्यांजीवितेनच ॥ येमांवाक्यांतरेब्रूयुरनुनेतुंकथंचन ॥ अहितानांमतेनित्यंमदभीष्टविघातनात् ॥२१॥ मानयंतुभवंतोमांयदिमच्छासनेस्थिताः ॥ इतोऽद्यनीयतांसीताकुरुष्ववचनंमम ॥ ॥ २२ ॥ पूर्वमुक्तोऽहमनयागंगातीरेऽहमाश्रमान् ॥ पश्येयमितितस्याश्चकामः संवर्त्यतामयम् ॥ २३ ॥

हमसे कभी कोई बात न कहना ॥ १९ ॥ हे लक्ष्मण ! इस सम्बन्धमें कार्य अकार्यका विचार न करके तुम चले जाओ । कारण कि इसको निवारण करनेसे मानो तुम हमारे प्रति अप्रीति दिखाओगे ॥ २० ॥ हम तुम्हें अपनी दोनों पावोंकी और जीवनकी शपथ दिलाते हैं कि तुम इस सम्बन्धमें हमसे कुछभी अनुनय मत करना । यदि करोगे तो हमारे इष्ट कार्यमें विघ्न करोगे उससे हम तुमको सदा अपना अहितकारी समझेंगे ॥ २१ ॥ जो तुम हमारी आज्ञापर चलते हो; तो तुम हमारे वचनोंमें सन्मान दिखाओ कि सीताजीको इस स्थानसे दूर करो ॥ २२ ॥ सीताने हमसे पहले कह रक्खा है कि "हम गंगातीरपर मुनियोंके आश्रम देखेंगी" सो इस समय उनका यह अभिलाष पूरा करो ॥ २३ ॥

वह धर्मात्मा श्रीरामचन्द्रजी यह वचन कह सब भ्राताओंके साथ अपने २ गृह आये, श्रीरामचन्द्रजीके दोनों नेत्र वाफसे रुकगये, आगेको दृष्टि नहीं चली, उनका हृदय शोकसे संतापित होगया और वह हाथीके समान श्वास लेने लगे ॥२४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां पञ्चचत्वारिंशः सर्गः ॥४५॥ जब रात बीतकर प्रभात हुआ तब लक्ष्मणजीने दुःखित हो विवर्ण वदनसे सुमंत्रसे कहा ॥ १ ॥ हे सारथे ! श्रीमहाराजकी आज्ञासे शीघ्रता पूर्वक श्रेष्ठ रथमें तुम घोडे जोतो और सीताजीके बैठने योग्य शुभ आसन रथपर बिछाओ ॥ २ ॥ हम महाराजकी आज्ञानुसार सीताजीको पुण्य कर्मकारी महर्षियोंके आश्रममें ले जायँगे, इस कारण तुम अति शीघ्र रथ लेआओ ॥ ३ ॥ सुमंत्र "जो आज्ञा" कह सुखकारी शय्या बिछा हुआ उत्तम घोडोंसे जुता हुआ सुन्दर पवित्र रथ लायकर ॥ ४ ॥ मित्रगणोंका मन बढानेवाले लक्ष्मणजीसे बोले "प्रभो यह रथ आगया" अब जो उचित हो सो कीजिये ॥५॥

एवमुक्त्वातुकाकुत्स्थोबाष्पेणपिहितेक्षणः ॥ संविवेशसधर्मात्माभ्रातृभिःपरिवारितः ॥ शोकसंविग्नहृदयोनिशश्वासयथाद्विपः ॥२४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे पंचचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४५ ॥ ततोरजन्यांव्युष्टायां लक्ष्मणोदीनचेतनः ॥ सुमंत्रमब्रवीद्वाक्यंमुखेनपरिशुष्यता ॥१॥ सारथेतुरगाञ्शीघ्रान्योजयस्वरथोत्तमे ॥ स्वास्तीर्णंराजवचनात्सीतायाश्चासनंशुभम् ॥ २ ॥ सीताहिराजवचनादाश्रमंपुण्यकर्मणाम् ॥ मयानेयामहर्षीणांशीघ्रमानीयतांरथः ॥ ३ ॥ सुमंत्रस्तुतथेत्युक्त्वायुक्तंपरमवाजिभिः ॥ रथंसुरुचिरप्रख्यंस्वास्तीर्णंसुखशय्यया ॥ ४ ॥ आनीयोवाचसौमित्रिंमित्राणांमानवर्धनम् ॥ रथोऽयंसमनुप्राप्तोयत्कार्यंक्रियतांप्रभो ॥५॥ एवमुक्तःसुमंत्रेणराजवेश्मनिलक्ष्मणः ॥ प्रविश्यसीतामासाद्यव्याजहारनरर्षभः ॥६॥ त्वयाकिलैषनृपतिर्वरंवैयाचितःप्रभुः ॥ नृपेणचप्रतिज्ञातमाज्ञप्तश्चाश्रमंप्रति ॥ ७ ॥ गंगातीरेमयादेविऋषीणामाश्रमाञ्छुभान् ॥ शीघ्रंगत्वातुवैदेहिशासनात्पार्थिवस्यनः ॥८॥ अरण्येमुनिभिर्जुष्टेअवनेयाभविष्यसि ॥ एवमुक्तातुवैदेहीलक्ष्मणेनमहात्मना ॥ ९ ॥

नरश्रेष्ठ लक्ष्मणजी सुमंत्रजीके यह वचन सुनकर राजभवनमें प्रवेशकर सीताजीके निकट जाय उनसे बोले ॥ ६ ॥ आपने महाराजके निकट आश्रम देखनेकी प्रार्थना की थी, और उन्होंनेभी आपको आश्रममें लेजाना स्वीकार किया था सो उन्होंने इस समय आपको ले जानेके लिये हमको आज्ञा दी है ॥७॥ इसलिये हे देवि ! आप गंगाजीके तीरपर ऋषियोंके पवित्र आश्रममें गमन कीजिये। हम महाराजकी आज्ञानुसार शीघ्र आपको ॥ ८ ॥ मुनिसेवित वनमें लेजायगे महात्मा लक्ष्मणजीके ऐसा कहनेपर जानकीजी ॥ ९ ॥

अतुल हर्षको प्राप्तकर जानेका अभिलाष करती हुई, वह विविधप्रकारके बडे २ मोलके वस्त्र रत्नोंकी राशिको ग्रहण कर ॥ १० ॥ जानेके लिये तैयार हो लक्ष्मणजीसे बोलीं कि हम मुनिलोगोंकी स्त्रियोंको यह बडे २ मोलके आभरण दान करेंगी ॥ ११ ॥ इसके अतिरिक्त महामूल्यवान वस्त्र और विविधि भाँतिके धनभी हम उनको देंगी लक्ष्मणजीने "यही होगा" यह कह सीताजीको रथपर सवार कराय ॥ १२ ॥ श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञाका स्मरण करते हुए शीघ्र चलनेवाले घोडोंके रथपर चढकर यात्रा करते हुए, तब सीताजी लक्ष्मीके बढानेवाले लक्ष्मणजीसे बोलीं ॥ १३॥ हे रघुनंदन ! हम इससमय अनेक अशकुन देखती हैं हमारा दहिना नेत्र फडकता और शरीर कम्पायमान होता है ॥ १४ ॥ हे लक्ष्मण ! हमारा हृदयभी व्याकुल हुआ जाता है मनके बीचसे

प्रहर्षमतुलंलेभेगमनंचाप्यरोचयत् ॥ वासांसिचमहार्हाणिरत्नानिविविधानिच ॥ १० ॥ गृहीत्वातानिवेदेहीगमनायोपचक्रमे ॥ इमानिमुनिपत्नीनांदास्याम्याभरणान्यहम्॥ ११ ॥ वस्त्राणिचमहार्हाणिधनानिविविधानिच ॥ सौमित्रिस्तुतथेत्युक्त्वारथमारोप्यमैथिलीम्॥१२॥ प्रययौशीघ्रतुरगंरामस्याज्ञामनुस्मरन् ॥ अब्रवीच्चतदासीतालक्ष्मणंलक्ष्मिवर्धनम्॥१३॥ अशुभानिबहून्येवपश्यामिरघुनंदन॥ नयनंमेस्फुरत्यद्यगात्रोत्कंपश्चजायते॥१४॥ हृदयंचैवसौमित्रेअस्वस्थमिवलक्षये॥ औत्सुक्यंपरमंचापिअधृतिश्चपरामम॥१५॥ शून्यामेवचपश्यामिपृथिवींपृथुलोचन ॥ अपिस्वस्तिभवेत्तस्यभ्रातुस्तेभ्रातृवत्सल ॥ १६ ॥ श्वश्रूणांचैवमेवीरसर्वासामविशेषतः ॥ पुरेजनपदेचैवकुशलंप्राणिनामपि ॥१७॥ इत्यंजलिकृतासीतादेवताअभ्ययाचत ॥ लक्ष्मणोऽर्थंततःश्रुत्वाशिरसावंद्यमैथिलीम्॥१८॥ शिवमित्यब्रवीद्धृष्टोहृदयेनविशुष्यता ॥ ततोवासमुपागम्यगोमतीतीरआश्रमे ॥ १९ ॥ प्रभातेपुनरुत्थायसौमित्रिःसूतमब्रवीत् ॥ योजयस्वरथंशीघ्रमद्यभागीरथीजलम् ॥ २० ॥ शिरसाधारयिष्यामित्रियंबकइवौजसा॥ सोऽश्वान्विचारयित्वातुरथेयुक्तान्मनोजवान् ॥२१॥

विषय उत्कंठासे हम अत्यन्तही अस्थिर हुई हैं ॥ १५ ॥ हे विशाललोचन ! हम पृथ्वीको सुखसे सूनी देखती, हैं हे भ्रातृवत्सल ! तुम्हारे भाइयोंका तो कोई अमंगल नहीं हुआ ? ॥ १६ ॥ हे वीर ! हमारी सासुयें तो सब प्रकारसे अच्छी हैं नगरके और जनपदोंके प्राणीगण तो कुशल हैं ॥ १७ ॥ यह कह सीताजी हाथ जोड देवताओंके निकट प्रार्थना करने लगीं, लक्ष्मणजीने यह वृत्तान्त श्रवणकर शिर झुकाय जानकीजीको प्रणाम कर ॥ १८ ॥ हृदयके शुष्क होनेपरभी सन्तुष्टहीके समान कहा कि सब कुशल हैं । इसके उपरांत गोमतीके तीर आश्रमोंमें पहुँच लक्ष्मणजी वहांरात्रिको वसे ॥ १९ ॥ उसके पीछे सवेरे उठकर लक्ष्मणजीने सारथिसे कहा कि रथ शीघ्र जोतो। आज हम भागीरथीका जल ॥ २० ॥ महादेवजीकी नाई अपने मस्तक पर धारण करेंगे; सारथि

रथमें जुतेहुए मनके समान वेगवान घोडोंको टहलाय ॥ २१ ॥ हाथ जोडकर जनककुमारी सीताजीसे बोला की आप रथपर सवार हों, सूतके कहनेसे उत्तम रथपरचढीं ॥ २२ ॥ सीताजी लक्ष्मणजी बुद्धिमान् सुमंत्रके सहित चली और वह विशालाक्षी जानकीजी पापनाशिनी गंगाजीके तीरपर पहुँची ॥२३॥ इसके उपरांत लक्ष्मणजी आधे दिनतक चलकर भागीरथी गंगाजीकी धार देख दीनभाव और ऊँचे शब्दसे रोदन करने लगे ॥ २४ ॥ तब धर्मज्ञ सीताजी अतिदुःखितहो खेदको प्राप्त हुए लक्ष्मणजीसे बोलीं कि, हे लक्ष्मण ! तुम किस कारणसे रोते हो ? ॥२५॥ हे लक्ष्मण ! हमको बहुत दिनोंसे अभिलाषा थी, कि हम गंगाजीके तीर चलें सो यहांपर हम आंई भला इससे तुमको हर्ष प्राप्त करना उचित था सो तुम इस समय हमको विषादित क्यों करते हो ? ॥ २६ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! तुम दिन रात रामचन्द्रके साथ समय बिताते हो सो आज उनको छोडे दो दिन हुए हैं क्या इसी कारणसे तुमको यह दुःख हुआ है ?

आरोहस्वतिवैदेहींसूतःप्रांजलिरब्रवीत् ॥ सातुसूतस्यवचनादारुरोहरथोत्तमम्॥२२॥ सीतासौमित्रिणासार्धंसुमंत्रेणचधीमता॥ आससादविशालाक्षीगंगांपापविनाशिनीम् ॥ २३ ॥ अथार्धदिवसंगत्वाभागीरथ्याजलाशयम् ॥ निरीक्ष्यलक्ष्मणोदीनःप्ररुरोदमहास्वनः ॥२४॥ सीतातुपरमायत्तादृष्ट्वालक्ष्मणमातुरम् ॥ उवाचवाक्यंधर्मज्ञाकिमिदंरुद्यतेत्वया ॥ २५ ॥ जाह्नवीतीरमासाद्यचिराभिलषितंमम ॥ हर्षकालेकिमर्थंमांविषादयसिलक्ष्मण ॥ २६ ॥ नित्यंत्वंरामपार्श्वेषुवर्तसेपुरुषर्षभ ॥ कच्चिद्विनाकृतस्तेनद्विरात्रंशोकमागतः॥ २७ ॥ ममापिदयितोरामोजीवितादपिलक्ष्मण॥ नचाहमेवंशोचामिमैवंत्वंबालिशोभव॥२८॥ तारयस्वचमांगंगांदर्शयस्वचतापसान् ॥ ततोमुनिभ्योवासांसिदास्याम्याभरणानिच ॥ २९ ॥ ततःकृत्वामहर्षीणांयथार्हमभिवादनम् ॥ तत्रचैकांनिशामुष्ययास्यामस्तांपुरींपुनः ॥ ३० ॥ ममापिपद्मपत्राक्षंसिंहोरस्कंकृशोदरम् ॥ त्वरतेहिमनोद्रष्टुंरामंरमयतांवरम् ॥ ३१ ॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाप्रमृज्यनयनेशुभे ॥ नाविकानाह्वयामासलक्ष्मणःपरवीरहा ॥ इयंचसज्जानौश्चेतिदाशाःप्रांजलयोऽब्रुवन् ॥ ३२ ॥

॥ २७ ॥ हे लक्ष्मण ! राम हमको प्राणोंसे भी अधिक प्यारे हैं, तथापि हम ऐसा शोक नहीं करतीं सो तुम विह्वल न होवो ॥२८॥ हमको गंगाजीके दूसरी पार लेचलो और तपस्वीलोगोंके दर्शन कराओ उसके पीछे हम मुनियोंको वस्त्राभरण दान करेंगी ॥ २९ ॥ फिर हम उन महर्षियोंको यथायोग्य प्रणाम करके वहां एकरात वासकर फिर अयोध्यापुरीको लौटेंगी ॥३०॥ विशेष करके कमलदलके समान विशाललोचन; सिंहके समान छातीवाले कृशोदर, पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजीका शीघ्र दर्शन करनेके लिये हमारा जी उकसाता है ॥ ३१ ॥ सीताजीके यह वचन सुन सुन्दर दोनों नेत्र पोंछ रिपुनाशकारी लक्ष्मणजीने नाविकोंको पुकारा, पुकारते ही नाविकोंने हाथ जोडकर निवेदन किया कि नाव तैयार है॥ ३२ ॥

पुण्यजलवाली गंगाजीके पार होनेकी इच्छासे इस प्रकार नौका मँगाय लक्ष्मणजीने सावधान हो सीताजीको गंगापार करवाया ॥ ३३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां षट्चत्वारिंशः सर्गः ॥ ४६ ॥ इसके उपरान्त निषादसे लाई हुई सजी सजाई बडी नावपर पहले जानकीजीको सवार कराय फिर लक्ष्मणजी उसपर सावधान होकर चढे ॥ १ ॥ और सुमंत्रसे कहा कि तुम रथ लेकर इसी स्थानमें टिके रहो, और फिर शोकाकुल होकर नाववालोंसे कहा कि चलो ॥ २ ॥ गंगाजीके दूसरी पार पहुँच कर वाफके भर आनेसे लक्ष्मणजीका गला रुकगया और वह हाथ जोडकर श्रीजानकीजीसे बोले ॥ ३ ॥ हे विदेहकुमारी ! बुद्धिमान् आर्य रामचन्द्रजीने हमको लोकमें निन्दा होनेके कारण इस क्रूरकार्यमें नियुक्त करके लोकसमाजमें निन्दाका पात्र

तितीर्षुर्लक्ष्मणोगंगांशुभांनावमुपारुहत् ॥ गंगांसंतारयामासलक्ष्मणस्तांसमाहितः ॥३३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये ॥ आदिकाव्ये च०सा० उत्तरकांडेषट्चत्वारिंशःसर्गः ॥४६॥ अथनावंसुविस्तीर्णांनैषादींराघवानुजः ॥ आरुरोहसमायुक्तांपूर्वमारोप्यमैथिलीम्॥१॥ सुमंत्रं चैवसरथंस्थीयतामितिलक्ष्मणः ॥ उवाचशोकसंतप्तःप्रयाहीतिचनाविकम् ॥ २ ॥ ततस्तीरमुपागम्यभागीरथ्याःसलक्ष्मणः ॥ उवाचमैथिलींवाक्यंप्रांजलिर्बाष्पसंवृतः ॥ ३ ॥ हृद्गतंमेमहच्छल्यंयस्मादार्येणधीमता ॥ अस्मिन्निमित्तेवैदेहिलोकस्यवचनीकृतः ॥ ४ ॥ श्रेयोहिमरणंमेऽद्यमृत्युर्वायत्परंभवेत् ॥ नचास्मिन्नीदृशेकार्येनियोज्योलोकनिंदिते ॥ ५ ॥ प्रसीदचनमेपापंकर्तुमर्हसिशोभने ॥ इत्यंजलिकृतोभूमौ निपपातसलक्ष्मणः ॥ ६ ॥ रुदंतंप्रांजलिंदृष्ट्वाकांक्षंतंमृत्युमात्मनः ॥ मैथिलीभृशसंविग्नालक्ष्मणंवाक्यमब्रवीत ॥ ७ ॥ किमिदंनावगच्छामिब्रूहितत्त्वेनलक्ष्मण ॥ पश्यामित्वांनचस्वस्थमपिक्षेमंमहीपतेः ॥ ८ ॥ शापितोऽसिनरेंद्रेणयत्त्वंसंतापमागतः ॥ तद्ब्रूयाःसन्निधौमह्यमहमाज्ञापयामिते ॥ ९ ॥

किया है सो हमारे हृदयमें यही बडा घाव लगा है ॥ ४ ॥ सो अब ऐसी अवस्थामें आज हमको मृत्यु आजाना या मूर्च्छाका होना ही श्रेष्ठ है परन्तु इस प्रकारके लोकनिन्दित कार्यमें नियुक्त होना अच्छा नहीं ॥ ५ ॥ हे शोभने ! इस कारण तुम हमारा दोष ग्रहण न करना आप प्रसन्न होवें यह कहकर लक्ष्मणजी हाथ जोडकर पृथ्वीपर गिर पडे ॥६॥ जब लक्ष्मणजी हाथ जोड पृथ्वीमें गिर अपनी मृत्युकी कामना करने लगे तब देवी सीताजीने लक्ष्मणजीकी ऐसी दशा देख अत्यन्त घबडाकर कहा ॥ ७ ॥ हे लक्ष्मण ! हम तो कुछभी नहीं समझ सकतीं कि क्या हुआ, तुम हमसे स्पष्ट २ कहो हम देखती हैं कि तुम अति व्याकुल हो महाराज तो कुशल हैं ? ॥ ८ ॥ हे वत्स ! हम तुमको महाराजजीकी शपथ कराती हैं कि तुम जिस निमित्त कातर हुए सो हमसे

प्रकाश करके कहो यह हम तुम्हें आज्ञा देती हैं ॥ ९ ॥ जब सीताजीने इस प्रकार कहा तब दीनचित्त हुए लक्ष्मणजीने नीचेको मुख झुकाय और आंसू लाकर गद्गदवाणीसे उत्तर दिया ॥ १० ॥ हे जनककुमारी ! नगरी और जनपदमें दारुण अपवादकी कथा सभाके बीचमें सुनकर ॥ ११ ॥ श्रीरामचन्द्रजीने सर्व प्रकारसे हृदयमें सन्तापित हो हमसे यह सब वृत्तान्त कहा और गृहमें चले गये सो वह हम आपसे नहीं कह सकेंगे इसी कारणसे वह वचन हम नहीं कह सकते ॥ १२ ॥ जो कि हे देवि ! राजाने क्रोधके वश हो हृदयसे निकाले थे । राजाने आपकी निर्दोषता हमारे सामने कही है ॥ १३ ॥ उन्होंने केवल पुरवासी लोगोंके अपवादके भयसे भीत हो आपको परित्याग किया है परन्तु इससे आप अपनेको वास्तविक दोषी न समझ लीजिये इस लिये हम

वैदेह्याचोद्यमानस्तुलक्ष्मणोदीनचेतनः ॥ अवाङ्मुखोबाष्पगलोवाक्यमेतदुवाचह ॥ १० ॥ श्रुत्वापरिषदोमध्येह्यपवादंसुदारुणम् ॥ पुरेजनपदेचैवत्वत्कृतेजनकात्मजे ॥ ११ ॥ रामःसंतप्तहृदयोमांनिवेद्यगृहंगतः ॥ नतानिवचनीयानिमयादेवितवाग्रतः ॥ १२ ॥ यानिराज्ञाहृदिन्यस्तान्यमर्षात्पृष्ठतःकृतः ॥ सात्वंत्यक्तानृपतिनानिर्दोषाममसन्निधौ ॥ १३ ॥ पौरापवादभीतेनग्राह्यंदेविनतेऽन्यथा ॥ आश्रमांतेषुचमयात्यक्तव्यात्वंभविष्यसि ॥ १४ ॥ राज्ञःशासनमदायतथैवकिलदौर्हृदम् ॥ तदेतज्जाह्नवीतीरेब्रह्मर्षीणांतपोवनम् ॥१५॥ पुण्यंचरमणीयंचमाविषादंकृथाःशुभे ॥ राज्ञोदशरथस्यैवपितुर्मेमुनिपुंगवः ॥ १६ ॥ सखापरमकोविप्रोवाल्मीकिःसुमहायशाः ॥ पादच्छायामुपागम्यसुखमस्यमहात्मनः ॥ उपवासपरैकाग्रावसत्वंजनकात्मजे ॥ १७ ॥ पतिव्रतात्वमास्थायरामंकृत्वासदाहृदि ॥ श्रेयस्तेपरमंदेवितथाकृत्वाभविष्यति ॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे सप्तचत्वारिंशःसर्गः ॥ ४७ ॥

आपको मैदानमें छोडे जाते हैं ॥ १४ ॥ क्योंकि गार्भिणीकी अभिलाषा और राजाकी आज्ञा अवश्यही पूरी करनी चाहिये इसी कारण गंगाजीके तीर ब्रह्मर्षियोंके तपोवनमें ॥ १५ ॥ जो कि अति रमणीक और पवित्र है हम त्यागेंगे सो आप यहीं पर रहें और शोक न करें । हे शुभे ! हमारे पिता राजा दशरथजीके मुनिश्रेष्ठ ॥ १६ ॥ महायशस्वी विप्र वाल्मीकिजी परम सखा हैं हे जानकि ! इससे आप उन्हीं महात्माके चरणमूलमें पहुँच एकाग्रचित्तसे उनकी पूजाकर उपवासादि कर सुखसे वास करें ॥ १७ ॥ हे देवि ! हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीको धारण करके आप पतिव्रतधर्म पालन करें बस इससे ही आपका परम कल्याण होगा ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां सप्तचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४७ ॥

जनककुमारी महारानी जानकीजी लक्ष्मणजीके ऐसे दारुण वचन सुनकर महा दुःखको प्राप्त हो पृथ्वीमें गिर पडीं ॥ १ ॥ जनककुमारी सीताजी एक मुहूर्त तक तो अचेतन पड रहीं फिर नेत्रोंमें जल भरे दीन हो लक्ष्मणजीसे कहने लगीं ॥ २ ॥ हे लक्ष्मण ! ऐसा विदित होता है कि, विधाताने मेरा शरीर दुःखही भोगनेके निमित्त बनाया है; इसी कारण दुःखसमूह मूर्ति धारण करके मुझे दिखाई देता है ॥ ३ ॥ न जानूं मैंने पूर्वजन्ममें क्या पाप किया है, किसका स्त्रीसे वियोग करा दिया है जो सती और शुद्धाचरणवाली मुझे राजाने त्याग कर दिया ॥ ४ ॥ पूर्व कालमें रामचन्द्रके साथ वनमें वास करके रामचंद्रके चरणोंकी सेवा की है । हे लक्ष्मण ! आश्रममें वास करते समय दुःख सहकर भी मैंने स्वामीके संग सुखही माना ॥ ५ ॥ हे सौम्य ! अब मैं मनुष्य रहित इस आश्रममें किस प्रकार रह सकूंगी ? महादुखिया मैं किसके आगे अपना दुःख कहूंगी ॥ ६ ॥ हे लक्ष्मण ! मैं ऋषियोंके पूछनेपर उनको क्या

लक्ष्मणस्यवचःश्रुत्वादारुणंजनकात्मजा ॥ परंविषादमागम्यवैदेहीनिपपातह ॥ १ ॥ सामुहूर्तमिवासंज्ञाबाष्पपर्याकुलेक्षणा ॥ लक्ष्मणंदीनयावाचाउवाचजनकात्मजा ॥२॥ मामिकेयंतनुर्नूनंसृष्टादुःखायलक्ष्मण ॥ धात्रायस्यास्तथामेऽद्यदुःखमूर्तिःप्रदृश्यते ॥ ३ ॥ किंनुपापंकृतंपूर्वंकोवादारैर्वियोजितः ॥ याहंशुद्धसमाचारात्यक्तानृपतिनासती ॥ ४ ॥ पुराहमाश्रमेवासंरामपादानुवर्तिनी ॥ अनुरुध्यापिसौमित्रेदुःखेचपरिवर्तिनी ॥ ५ ॥ साकथंह्याश्रमेसौम्यवत्स्यामिविजनीकृता ॥ आख्यास्यामिचकस्याहंदुःखंदुःखपरायणा ॥ ६ ॥ किंनुवक्ष्यामिमुनिषुकर्मचासत्कृतंप्रभो ॥ कस्मिन्वाकारणेत्यक्काराघवेणमहात्मना ॥ ७ ॥ नखल्वद्यैवसौमित्रेजीवितंजाह्नवीजले ॥ त्यजेयंराजवंशस्तुभर्तुर्मेपरिहास्यते ॥ ८ ॥ यथाज्ञंकुरुसौमित्रेत्यजमांदुःखभागिनीम् ॥ निदेशेस्थीयतांराज्ञःश्रृणुचेदंवचोमम॥ ९ ॥ श्वश्रूणामविशेषेणप्रांजलिप्रग्रहेणच॥ शिरसावंद्यचरणौकुशलंब्रूहिपार्थिवम् ॥ १० ॥ शिरसाभिनतोब्रूयाःसर्वासामेवलक्ष्मण ॥ वक्तव्यश्चापिनृपतिर्धर्मेषुसुसमाहितः ॥ ११ ॥

उत्तर दूंगी ? क्योंकि मैंने कोई दुष्कर्म नहीं किया है, फिर क्या बता सकूंगी कि; महात्मा रामचन्द्रने किस कारणसे त्याग दिया है ॥ ७ ॥ हे लक्ष्मण ! मैं गंगामें गिरकर अपना शरीर त्यागन कर देती, परन्तु ऐसा नहीं करूंगी क्योंकि ऐसा करनेसे राजवंशका विच्छेद हो जायगा कारण कि; मैं गर्भवती हूं ॥ ८ ॥ हे सुमित्रानंदन ! आप हमारे स्वामीका वचन पालिये मुझ दुःखभागिनीको त्यागनकर जाइये परंतु मेरे यह वचन सुनो ॥ ९ ॥ प्रथम तो हाथ जोडकर मेरी ओरसे सब सासुओंके चरण वंदन करना और फिर महाराजसे प्रणामपूर्वक कुशल पूछना ॥ १० ॥ हे लक्ष्मण ! सब किसीको शिर झुकाकर मेरा प्रणाम कहना और अपने धर्ममें सदा सावधान रहनेवाले महाराजसे भी निवेदन करना ॥ ११ ॥

हे रघुनंदन ! आप यथार्थमें जानते हैं कि; तुम्हारी जानकी शुद्ध हैं और परमभक्तिसे नित्यही तुम्हारा हित चाहती रहती हैं ॥ १२ ॥ हे वीर ! जो कि तुमने मनुष्योंके अपवाद लगानेके भयसे मुझे त्यागन किया है और जोकि यह अपवाद निन्दासहित उपस्थित हुआ है ॥ १३ ॥ इसी कारण तुमने मुझे त्यागन कर दिया है; परंतु मेरी तो तुम ही परमगति हो, यही वार्त्ता धर्ममें सावधान हमारे महाराजसे कह देना॥ १४ ॥ कि जिस प्रकार आप भाइयोंसे वर्तते हो इसी प्रकारसे सदा नगरवासियोंके साथ वर्तना चाहिये, यही तुम्हारा परम धर्म है, इसके करनेसे महाराजकी बडी कीर्ति होगी ॥१५॥ जिस प्रकारसे कि, प्रजापालनेसे पुण्य उत्पन्न होता है, वही परम धर्म है, हे श्रेष्ठ ! कुछ मैं आने शरीरको नहीं सोचती हूं ॥ १६ ॥ आपने हमे पुरवासियोंके अपवादसे

जानासिचयथाशुद्धासीतातत्त्वेनराघव ॥ भक्त्याचपरयायुक्ताहिताचतवनित्यशः ॥ १२ ॥ अहंत्यक्ताचतेवीरअयशोभीरुणाजने ॥ यच्चते वचनीयंस्यादपवादःसमुत्थितः ॥ १३ ॥ मयाचपरिहर्तव्यंत्वंहिमेपरमागतिः ॥ वक्तव्यश्चैवनृपतिर्धर्मेणसुसमाहितः ॥ १४ ॥ यथाभ्रातृषु वर्तेथास्तथापौरेषुनित्यदा ॥ परमोह्येषधर्मस्तेतस्मात्कीर्तिरनुत्तमा ॥१५॥ यत्तुपौरजनेराजन्धर्मेणसमवाप्नुयात् ॥ अहंतुनानुशोचामिस्व शरीरंनरर्षभ ॥ १६ ॥ यथापवादःपौराणां तथैवरघुनंदन ॥ पतिर्हिदेवतानार्याःपतिर्बंधुःपतिर्गुरुः ॥ १७ ॥ प्राणैरपिप्रियंतस्माद्भर्तुःकार्यं विशेषतः ॥ इतिमद्वचनाद्रामोवक्तव्योममसंग्रहः ॥१८॥ निरीक्ष्यमाद्यगच्छत्वंमृतुकालातिवर्तिनीम् ॥ एवंब्रुवंत्यांसीतायांलक्ष्मणोदीनचे तनः ॥१९॥ शिरसावंद्यधरणींव्याहर्तुंनशशाकह ॥ प्रदक्षिणंचतांकृत्वारुदन्नेवमहास्वनः ॥२०॥ ध्यात्वामुहूर्तंतामाहकिंमांवक्ष्यसिशोभने ॥ दृष्टपूर्वंनतेरूपंपादौदृष्टौतवानघे ॥ २१ ॥ कथमत्रहिपश्यामिरामेणरहितांवने ॥ इत्युक्त्वातांनमस्कृत्यपुनर्नावमुपारुहत ॥ २२ ॥

छोडा परंतु स्त्रियोंके पति ही बन्धु और पति ही गुरु हैं ॥१७॥ फिर प्राणोंके समान प्यारे जाकर तुम राजासे कह देना ॥ १८ ॥ अब तुम मुझको देखते जाओ कि, मैं गर्भवती हूं, ऐसा न हो कि कहीं फिर कोई अपवाद स्वामीको लगे, जब जानकीजीने ऐसा कहा तो लक्ष्मणजीका चित्त दीन हो गया ॥१९॥ प्रणाम करके अपना शिर पृथ्वीमें धर दिया और फिर कुछ कहनेको समर्थ न हुए और महारानीजीकी प्रदक्षिणा करके ऊँचे स्वरसे रोदन करने लगे॥२०॥ और कुछ देर ध्यान करके बोले हे शोभने ! यह तुम क्या कहती हो कि, मुझे देखकर जाओ मैंने कभी भी आपका रूप नहीं देखा; सदा चरणोंमेंही दृष्टि रक्खी है॥२१॥ फिर रघुनाथजीके विना इस निर्जन वनमें किस प्रकार तुमको अवलोकन कर सक्ता हूँ, यह कह जानकीजीको नमस्कार करके फिर नावपर चढे॥२२॥

और नावपर चढनेके उपरान्तफिर मल्लाहसे कहा नाव चलाओ इस प्रकारसे महाशोकसे व्याकुल हुए लक्ष्मणजी गंगाजीके उत्तर तटपर आये ॥ २३ ॥ महादुःखी चित्तसे लक्ष्मणजी फिर रथमें चढे और अनाथकी नाईं व्याकुल जानकीको फिर फिरकर देखने लगे ॥ २४ ॥ कि, जानकी पल्लीपार रुदन कर रही हैं फिर लक्ष्मणजी चले गये, जानकी लक्ष्मणको और दूर गये हुए रथको वारंवार देखने लगीं जब कि, यह दृष्टिपथसे दूर निकल गये उस समय जानकी अत्यन्त शोकाकुल हुईं ॥ २५ ॥ फिर वह दुःखभारसे लदी हुई यशस्विनी पतिव्रता सीताजी अपने स्वामी श्रीरामचन्द्रजीको नहीं देखकर मयूरोंसे शब्दायमान उस अरण्यमें बडे शब्दसे रुदन करने लगीं ॥२६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामष्टचत्वारिंशः सर्गः ॥४८॥

आरुरोहपुनर्नावंनाविकंचाभ्यचोदयत् ॥ सगत्वाचोत्तरंतीरंशोकभारसमन्वितः ॥ २३ ॥ संमूढइवदुःखेनरथमध्यारुहद्द्रुतम् ॥ मुहुर्मुहुःपरावृत्यदृष्ट्वासीतामनाथवत् ॥२४॥ चेष्टंतींपरतीरस्थांलक्ष्मणःप्रययावथ ॥ दूरस्थंरथमालोक्यलक्ष्मणंचमुहुर्मुहुः ॥ निरीक्षमाणांतूद्विग्नांसीतांशोकःसमाविशत् ॥ २५ ॥ सादुःखभारावनतायशस्विनीयशोधरानाथमपश्यतीसती ॥ रुरोदसाबर्हिणनादितेवनेमहास्वनंदुःखपरायणासती ॥२६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०च०सा० उत्तरकांडेअष्टचत्वारिंशःसर्गः ॥४८॥ सीतांतुरुदतींदृष्ट्वातेतत्रमुनिदारकाः ॥ प्राद्रवन्यत्रभगवानास्तेवाल्मीकिरुग्रधीः ॥१॥ अभिवाद्यमुनेःपादौमुनिपुत्रामहर्षये ॥ सर्वेनिवेदयामासुस्तस्यास्तुरुदितस्वनम् ॥२॥ अदृष्टपूर्वाभगवन्कस्याप्येषामहात्मनः ॥ पत्नीश्रीरिवसंमोहाद्विरौतिविकृतानना ॥३॥ भगवन्साधुपश्येस्त्वंदेवतामिवखाच्च्युताम् ॥ नद्यास्तुतीरेभगवन्वरस्त्री कापिदुःखिता ॥४॥ दृष्ट्वाऽस्माभिःप्ररुदितादृढंशोकपरायणा ॥ अनर्हादुःखशोकाभ्यामेकादीनाअनाथवत् ॥ ५ ॥

उस स्थानमें खेलते हुए मुनिकुमार जानकीजीको रोती हुई देखकर बडे बुद्धिमान् वाल्मीकिजी जहां थे तहां शीघ्रतासे आये ॥ १ ॥ वे मुनिकुमार महर्षि वाल्मीकिजीके चरणोंमें नमस्कार करके जानकीजीका रोना निवेदन करने लगे ॥ २ ॥ कि, हे भगवन् ! किसी महात्माकी लक्ष्मीके समान स्त्री जिसे हमने पहले कभी नहीं देखा हैं वह किस कारणसे मुख फैलाये वनमें रोदन कर रही है ॥ ३ ॥ हे भगवन् ! आप चलकर देखिये कि, वह श्रेष्ठ स्त्री आकाशसे गिरे हुए देवताके समान नदीके किनारे महादुःखी है ॥ ४ ॥ हमने उसको बडे शोकसे रुदन करती हुई देखा है, यद्यपि वह शोकके अयोग्य है, तथापि दुःखशोकसे अनाथकी नांई वह दीन होरही है ॥ ५ ॥

"हम जानते हैं कि, वह मानुषी नहीं है, आपको उसका सत्कार करना उचित है, वह आश्रमके धोरेही आपकी शरण कर और बुद्धिसे आकर प्राप्त हुई है ॥ १ ॥ धर्मात्मा वाल्मीकिजी उन बालकोंके वचन श्रवण निश्चयकर तपद्वारा सब कुछ जानकर शीघ्रतासे जानकीके पासको चले ॥ २ ॥ महागतिमान् वाल्मीकिजीको जाते देखकर शिष्यभी उनके पीछे चले सो बुद्धिमान् महर्षि शीघ्रतासे कुछदूर चले ॥ ३ ॥ और अर्घ्य लियेहुए गंगाजीके किनारेको आये, वहां रामकी प्यारी महारानी जानकीको अनाथोंके समान देखा ॥ ४ ॥" मुनिश्रेष्ठ वाल्मीकिजी शोकभारसे व्याकुल हुई जानकीको अपने तेजसे आनंद देते हुए मधुरवाणीसे बोले ॥ ६॥ तुम दशरथ महाराजकी पुत्रवधू रामचन्द्रकी प्यारी भार्या जनकराजकी पुत्री हो, हे पतिव्रते ! तुम्हारा शुभागमन हो ॥ ७ ॥ मैंने धर्मसमाधिसे आतेही तुमको जानलिया है और जिस कारण तुमको त्याग दिया है वह भी मैंने ध्यानसे सब जान लिया है ॥ ८ ॥ हे

"नह्येनांमानुषींविद्मःसत्क्रियास्याःप्रयुज्यताम् ॥ आश्रमस्याविदूरेचत्वामियंशरणंगता ॥ त्रातारमिच्छतेसाध्वीभगवंस्त्रातुमर्हसि ॥१॥ तेषांतुवचनंश्रुत्वाबुद्ध्यानिश्चित्यधर्मवित् ॥ तपसालब्धचक्षुष्मान्प्राद्रवद्यत्रमैथिली ॥ २ ॥ तंप्रयांतमभिप्रेत्यशिष्याह्येनंमहामतिम् ॥ तंतुदेशमभिद्रुत्यकिंचित्पद्भ्यांमहामतिः ॥ ३ ॥ अर्घ्यमादायरुचिरंजाह्नवीतीरमागमत् ॥ ददर्शराघवस्येष्टांसीतांपत्नीमनाथवत् ॥ ४ ॥" तांसीतांशोकभारातांवाल्मीकिर्मुनिपुंगवः॥ उवाचमधुरांवाणींह्लादयन्निवतेजसा॥६॥ स्नुषादशरथस्यत्वंरामस्यमहिषीप्रिया॥ जनकस्यसुताराज्ञःस्वागतंतेपतिव्रते ॥ ७ ॥ आयांतीचासिविज्ञातामयाधर्मसमाधिना ॥ कारणंचैवसर्वंमेहृदयेनोपलक्षितम् ॥ ८ ॥ तवचैवमहाभागेविदितंममतत्त्वतः ॥ सर्वंचविदितंमह्यंत्रैलोक्येयद्धिवर्तते ॥९॥ अपापांवेद्मिसीतेत्वांतपोलब्धेनचक्षुषा ॥ विस्रब्धाभववैदेहिसांप्रतंमयिवर्तसे॥ १०॥ आश्रमस्याविदूरेमेतापस्यस्तपसिस्थिताः ॥ तास्त्वांवत्सेयथावत्संपालयिष्यंतिनित्यशः॥११॥ इदमर्घ्यंप्रतीच्छत्वंविस्रब्धाविगतज्वरा ॥ यथास्वगृहमभ्येत्यविषादंचैवमाकृथाः ॥१२॥ श्रुत्वातुभाषितंसीतामुनेःपरममद्भुतम् ॥ शिरसावंद्यचरणौतथेत्याहकृतांजलिः ॥१३॥

महाभाग्यवाली ! मैं यथार्थ तुम्हारे शुद्धाचरणकोभी जानता हूं, यह तो क्या जो कुछ त्रिलोकीमें हैं वह सब कुछ मैं योगसमाधिद्वारा जानता हूं ॥ ९ ॥ हे जानकि ! मैं तपके द्वारा प्राप्त हुए ज्ञाननेत्रसे तुमको पापरहित जानताहूं, हे जानकी ! तुम निश्चिन्त होकर हमारे निकट वास करो॥१०॥ हमारे आश्रमके निकटही तपस्विनी तप करती हैं, पुत्री ! वह सदा पुत्रके समान पालन करेंगी ॥ ११ ॥ अब तुम सावधान और शोकरहित होकर हमारे दिये इस अर्घ्यको ग्रहण करो और इस स्थानको अपने घरके समान जानो किसी प्रकारका विषाद मत करो और॥ १२ ॥ जानकी मुनिराजके यह परम अद्भुत वचन श्रवण करके शिरसे चरणोंमें बन्दन कर हाथ जोड उनकी बात स्वीकार करती हुई ॥ १३ ॥

जिस समय मुनि उन तपस्वियोंको लौटे तो जानकीजी हाथ जोडे२चलीं, उन मुनिराजको जानकी सहित आया हुआ देखकर मुनिपत्नियें बडी प्रसन्नतासे आकर यह वचन कहने लगीं ॥ १४ ॥ हे मुनिराज ! आपका शुभागमन हो, बहुत दिनोंमें पधारे. हम सब आपको अभिवादन करती हैं, कहिये इस समय हम आपका कौन कार्य करें ॥१५॥ उन सबके यह वचन सुनकर मुनि वाल्मीकिजी इस प्रकारसे बोले,यह बुद्धिमान् महाराज रामचन्द्रजीकी भार्या जानकीजी यहां आई हैं ॥१६॥ यह दशरथकी पुत्रवधू महाराज जनकजीकी सुशीला कन्या हैं, इन्हें निष्कारण इनके पतिने त्यागन करदिया है इस कारण मैं इनका सदा पालन करूंगा ॥१७॥ और तुम सब भी इनको सदा स्नेहकी दृष्टिसे अवलोकन करना और मेरे वाक्यके गौरवसे यह विशेष करके तुमसे सन्मान पानेके योग्य

तंप्रयांतंमुनिंसीताप्रांजलिःपृष्ठतोऽन्वगात् ॥ तंदृष्ट्वामुनिमायांतंवैदेह्यामुनिपत्नयः ॥ उपाजग्मुर्मुदायुक्तावचनंचेदमब्रुवन् ॥ १४ ॥ स्वागतंतेमुनिश्रेष्ठचिरस्यागमनंचते ॥ अभिवादयामस्त्वांसर्वाउच्यतांकिंचकुर्महे ॥ १५ ॥ तासांतद्वचनंश्रुत्वावाल्मीकिरिदमब्रवीत् ॥ सीतेयंसमनुप्राप्तापत्नीरामस्यधीमतः ॥ १६ ॥ स्नुषादशरथस्यैषाजनकस्यसुतासती ॥ अपापापतिनात्यक्तापरिपाल्यामयासदा ॥ १७ ॥ इमांभवत्यःपश्यंतुस्नेहेनपरमेणहि ॥ गौरवान्ममवाक्याच्चपूज्यावोऽस्तुविशेषतः ॥ १८ ॥ मुहुर्मुहुश्चवैदेहींपरिदायमहायशाः ॥ स्वमाश्रमंशिश्यवृतःपुनरायान्महातपाः ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे एकोनपंचाशः सर्गः ॥४९॥ दृष्ट्वातु मैथिलींसीतामाश्रमेसंप्रवेशिताम् ॥ संतापमगमद्घोरंलक्ष्मणोदीनचेतनः ॥१॥ अब्रवीच्चमहातेजाःसुमंत्रंमंत्रसारथिम् ॥ सीतासंतापजंदुःखं ॥ पश्यरामस्यसारथे ॥ २॥ ततोदुःखतरंकिंनुराघवस्यभविष्यति ॥ पत्नींशुद्धसमाचारांविसृज्यजनकात्मजाम् ॥ ३ ॥ व्यक्तंदैवादहंमन्येराघवस्यविनाभवम् ॥ वैदेह्याःसारथेनित्यंदैवंहिदुरतिक्रमम् ॥ ४ ॥

हैं॥१८॥इस प्रकार महायशस्वी वाल्मीकिजी वारंवार उनके हाथमें जानकीका हाथ समर्पण कर फिर वह महातपस्वी शिष्योंके सहित अपने आश्रममें आये ॥१९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदिका० उत्तरकांडे भाषायामेकोनपंचाशः सर्गः ॥ ४९ ॥ इसके उपरान्त जानकीजीको वाल्मीकिके आश्रममें प्रवेश करते देखकर लक्ष्मणजी दीन चित्त हो महाघोर दुःखको प्राप्त हुए ॥ १ ॥ वह महातेजस्वी मन्त्रसहायकारी सारथी सुमंत्रसे कहने लगे कि, हे रघुनाथजीके सारथी ! आप सीताके संतापसे उत्पन्न हुए दुःखको देखिये ॥२॥ भला इससे अधिक और दुःख रघुनाथजीको क्या होगा जो उन्होंने शुद्ध सदाचार युक्त जनकदुलारी जानकीको त्यागन करदिया ॥ ३ ॥ हे सारथी ! यह जानकीका त्यागन और रामका वियोग सहना मैं प्रारब्धसेही मानता हूं इस कारणसे दैवका उल्लंघन करनेमें कोई

वह रघुनाथजी दैवके वशीभूत देखे जाते हैं ॥५॥देखो प्रथम तो
समर्थ नहीं ॥४॥ जो रघुनाथजी देवदानव असुर और राक्षसोंको क्रोध करके संहार कर सकते हैं
रामचंद्रने पिताके वचनसे चौदह वर्ष जनरहित दण्डकवनमें वास किया ही था वह पिताके वचनके गौरवसे हुआ और नियमित था परंतु ॥६॥ अब यह जान
कीका त्यागना जो नगरवासियोंके वचन सुनकर हुआ है जिसका कोई नियमही नहीं है, यह उससे बढकर कहीं दुःखदाई है, यह बडाही कुत्सित कार्य हुआ
है ॥७॥ हे सूत ! नहीं जानते कि, न्यायहीन वचन बोलनेवाले पुरवासियोंके वचनसे इस यशको दूर करनेवाले जानकीके त्यागकर्म करके रघुनाथजीने क्या
धर्म प्राप्त किया है क्योंकि स्त्री सब धर्मोंकी मूल है उसके त्यागनेसे धर्म भी नष्ट होता है ॥ ८ ॥ इस प्रकार लक्ष्मणजीकी कही हुई बहुतसी बातें सुनकर

योहिदेवान्सगंधर्वानसुरान्सहराक्षसैः ॥ निहन्याद्राघवःक्रुद्धःसदैवंपर्युपासते ॥ ५ ॥ पुरारामःपितुर्वाक्याद्दंडकेविजनेवने ॥ उषित्वानववर्षा
णिपंचचैवमहावने ॥ ६ ॥ ततोदुःखतरंभूयःसीतायाविप्रवासनम् ॥ पौराणांवचनंश्रुत्वानृशंसंप्रतिभातिमे ॥ ७ ॥ कोनुधर्माश्रयःसूतकर्म
ण्यस्मिन्यशोहरे ॥ मैथिलींसमनुप्राप्तःपौरैर्हीनार्थवादिभिः ॥ ८ ॥ एतावाचोबहुविधाःश्रुत्वालक्ष्मणभाषिताः ॥ सुमंत्रःश्रद्धयाप्राज्ञोवाक्य
मेतदुवाचह ॥ ९ ॥ नसंतापस्त्वयाकार्यःसौमित्रेमैथिलींप्रति ॥ दृष्टमेतत्पुराविप्रैःपितुस्तेलक्ष्मणाग्रतः ॥ १० ॥ भविष्यतिदृढंरामोदुःख
प्रायोविसौख्यभाक् ॥ प्राप्स्यतेचमहाबाहुर्विप्रयोगंप्रियैर्द्रुतम् ॥ ११ ॥ त्वांचैवमैथिलींचैवशत्रुघ्नभरतौतथा ॥ संत्यजिष्यतिधर्मात्माका
लेनमहतामहान् ॥ १२ ॥ इदंत्वयिनवक्तव्यंसौमित्रेभरतेऽपिवा ॥ राज्ञोवाव्याहृतंवाक्यंदुर्वासायदुवाचह ॥ १३ ॥ महाजनसमीपेचममचै
वनरर्षभ ॥ ऋषिणाव्याहृतंवाक्यंवसिष्ठस्यचसन्निधौ ॥ १४ ॥

बुद्धिमान् सुमंत्र इच्छासे लक्ष्मणजीके प्रति कहने लगे ॥९॥ हे लक्ष्मण ! तुम्हें जानकीके निमित्त संताप करना उचित नहीं है, तुम्हारे पिताजीके सामने ऋषियोंने
पहले ही कह दिया था कि, जानकी वनमें वास करेंगी ॥१०॥ जिस कारण कि, रामचन्द्रजी वियोगका अधिकतर दुःख सहेंगे प्रायः यह सुखसे नहीं रहेंगे यह महा
बाहु अपने प्रियजनोंके वियोगको शीघ्रही प्राप्त होंगे ॥ ११ ॥ जानकीको क्या तुम्हें शत्रुघ्न भरतजीको भी यह धर्मात्मा कुछ अधिक समयपर त्यागन कर देंगे
(शत्रुघ्न भरतको मथुराराज्य और गन्धर्वराज्यमें रहनेको कहना त्याग है) ॥१२॥ हे लक्ष्मण ! यह बात तुम भरत या शत्रुघ्नसे मत कहना। जिस समय राजाने दुर्वासासे
तुम्हारे विषयमें प्रश्न किया था तब उन्होंने राजासे ऐसा कहा था॥१३॥ उस समय राजाके निकट बडे पुरुष वसिष्ठजी बैठे थे और मैं भी बैठा था उस समय ऋषिने यह

वचन कहे थे ॥१४॥ ऋषिराजके वचन सुनकर महाराज दशरथजीने मुझसे कहा था कि, हे सूत! यह बात तुम कहीं बहुत मनुष्योंके सन्मुखमें मत कहना ॥१५॥ तबसे मैं उन लोकपाल महाराज दशरथजीके वाक्यकी सावधानतासे रक्षा करता हूं, उन्हें असत्य नहीं करता हूं, हे सौम्य! यह मेरा संकल्प है ॥१६॥ हे सौम्य! सर्वथा मुझको तुमसे कहना उचित नहीं है परन्तु हे रघुनन्दन! जो आपको सुननेकी इच्छा हो तो श्रद्धासे सुनिये ॥१७॥ पूर्वकालमें यह वार्ता एकान्तमें राजाने मुझे सुनाई थी सो मैं तुमसे कहता हूं, क्या किया जाय दैव बडा प्रबल है जो इस समय गुप्त बात भी कहनी पडती है परंतु आपकी दुःखनिवृत्तिके निमित्त ऐसा कहता हूं क्योंकि; राजाकी आज्ञा तत्त्व जाननेवालोंसे गुप्त रखनेकी नहीं थी ॥१८॥ दैवके कारणसे इस प्रकारका दुःख शोक प्राप्त हुआ है सो यह गूढ बात तुम भरत

ऋषेस्तुवचनंश्रुत्वामामाहपुरुषर्षभः ॥ सूतनक्वचिदेवंतेवक्तव्यंजनसन्निधौ ॥ १५ ॥ तस्याहंलोकपालस्यवाक्यंतत्सुसमाहितः ॥ नैवजात्वनृतंकुर्यामितिमेसौम्यदर्शनम् ॥ १६ ॥ सर्वथैवनवक्तव्यंमयासौम्यतवाग्रतः ॥ यदितेश्रवणेश्रद्धाश्रूयतांरघुनंदन ॥ १७ ॥ यद्यप्यहंनरेंद्रेणरहस्यंश्रावितंपुरा ॥ तथाप्युदाहरिष्यामिदैवंहिदुरतिक्रमम् ॥ १८ ॥ येनेदमीदृशंप्राप्तंदुःखंशोकसमन्वितम् ॥ नत्वयाभरतस्याग्रेशत्रुघ्नस्यापिसन्निधौ ॥ १९ ॥ तच्छ्रुत्वाभाषितंतस्यगंभीरार्थपदंमहत् ॥ तथ्यंब्रूहीतिसौमित्रिःसूतंतंवाक्यमब्रवीत् ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे पंचाशः सर्गः ॥ ५० ॥ तथासंचोदितःसूतोलक्ष्मणेनमहात्मना ॥ तद्वाक्यमृषिणाप्रोक्तंव्याहर्तुमुपचक्रमे ॥ १ ॥ पुरानाम्नाहिदुर्वासाअत्रेःपुत्रोमहामुनिः ॥ वसिष्ठस्याश्रमेपुण्येवार्षिक्यंसमुवासह ॥ २ ॥ तमाश्रममहातेजाःपितातेसुमहायशाः ॥ पुरोहितंमहात्मानंदिदृक्षुरगमत्स्वयम् ॥ ३ ॥ सदृष्ट्वासूर्यसंकाशंज्वलंतमिवतेजसा ॥ उपविष्टंवसिष्ठस्यसव्यपार्श्वेमहामुनिम् ॥ ४ ॥ तौमुनीतापसश्रेष्ठौविनीतावभ्यवादयत् ॥ सताभ्यांपूजितोराजास्वागतेनासनेनच ॥ ५ ॥

शत्रुघ्नके निकट मत कहना॥१९॥ इस प्रकार गंभीर अर्थपद सहित सत्य २ सूतके वचन श्रवण करके लक्ष्मणजी बोले हे सूत! तुम विस्तारसे कहो हम किसीसे नहीं कहेंगे॥२०॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषायां पंचाश सर्गः॥५०॥ जब महात्मा लक्ष्मणजीने सूतसे इस प्रकारके वचन कहे तब वह ऋषिराजके कहे वचन इस प्रकारसे सुनाने लगे ॥१॥ हे लक्ष्मण! एक समय महामुनि अत्रिके पुत्र दुर्वासाजी वसिष्ठजीके पास आकर वर्षाकालमें वास करते हुए ॥२॥ उस स्थानपर तुम्हारे तेजस्वी महायशस्वी पिता दशरथजी अपनी इच्छासे वसिष्ठजीके देखनेको आये ॥३॥ सो उन्होंने सूर्यके समान अपने तेजसे प्रकाशमान महामुनि दुर्वासाजीको वसिष्ठजीके निकट बैठे देखा ॥४॥ राजा दशरथजीने नम्र होकर तपस्यामें श्रेष्ठ उन दोनों मुनियोंको प्रणाम किया, उन दोनों महात्माओंने भी स्वागत

कुशल पूँछकर राजाको सत्कारसे आसनपर बैठाया ॥ ५ ॥ और पाद्य अर्घ्य फल मूल द्वारा सत्कृत हो राजा उन मुनियोंके सहित बैठे ॥ ६ ॥ उस समय उन सबके विराजनेपर अनेक २ परम ऋषियोंकी मधुर कथा होने लगी उस समय मध्याह्नका समय था ॥७॥ किसी कथाप्रसंगमें राजा दशरथजी हाथ जोड तपोधन महात्मा अत्रिके पुत्र दुर्वासाजीसे कहने लगे हे भगवन् ! यह तो कहिये मेरा वंश कहांतक चलेगा; रामचन्द्रकी कितनी आयु है तथा और पुत्रोंको कितनी आयु है ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ और जो रामचन्द्रके पुत्र होंगे उनकी कितनी अवस्था होगी हे भगवन् ! मुझे बडी इच्छा है आप हमारे वंशका वृत्तान्त वर्णन कीजिये ॥ १० ॥ इस प्रकार महाराज दशरथके कहे हुए वचन सुनकर महातेजस्वी दुर्वासाजी कहने लगे ॥ ११ ॥ हे राजन् ! श्रवण कीजिये प्रथम

पाद्येनफलमूलैश्चउवासमुनिभिःसह ॥ ६ ॥ तेषांतत्रोपविष्टानांतास्ताःसुमधुराःकथाः ॥ बभूवुःपरमर्षीणांमध्यादित्यगतेऽहनि ॥ ७ ॥ ततः कथायांकस्यांचित्प्रांजलिःप्रग्रहोनृपः ॥ उवाचतंमहात्मानमत्रेःपुत्रंतपोधनम् ॥ ८ ॥ भगवन्किंप्रमाणेनममवंशोभविष्यति ॥ किमायुश्चहिमे रामःपुत्राश्चान्येकिमायुषः ॥ ९ ॥ रामस्यचसुतायेस्युस्तेषामायुःकियद्भवेत् ॥ काम्ययाभगवन्ब्रूहिवंशस्यास्यगतिंमम ॥ १० ॥ तच्छ्रुत्वा व्याहृतंवाक्यंराज्ञोदशरथस्यतु ॥ दुर्वासाःसुमहातेजाव्याहर्तुमुपचक्रमे ॥ ११ ॥ शृणुराजन्पुरावृत्तंतदादेवासुरेयुधि ॥ दैत्याःसुरैर्भर्त्स्यमाना भृगुपत्नींसमाश्रिताः ॥ तयादत्ताभयास्तत्रन्यवसन्नभयास्तदा ॥ १२ ॥ तयापरिगृहीतांस्तान्दृष्ट्वाक्रुद्धःसुरेश्वरः ॥ चक्रेणशितधारेणभृगुपत्न्याःशिरोऽहरत् ॥ १३ ॥ ततस्तांनिहतांदृष्ट्वापत्नींभृगुकुलोद्वहः ॥ शशापसहसाक्रुद्धोविष्णुंरिपुकुलार्दनम् ॥ १४ ॥ यस्मादवध्यांमेपत्नीमवधीःक्रोधमूर्च्छितः ॥ तस्मात्त्वंमानुषेलोकेजनिष्यसिजनार्दन ॥ १५ ॥ तत्रपत्नीवियोगंत्वंप्राप्स्यसेबहुवार्षिकम् ॥ शापाभिहतचेतास्तु स्वात्मनाभावितोऽभवत् ॥ १६ ॥

देवताओंके संग दैत्योंका बडा भारी संग्राम हुआ उस समय दैत्य देवताओंसे मार खाकर भृगुजीकी पत्नीकी शरणमें गये तब उसने उनको अभय दिया और दैत्य वहां निर्भय वास करने लगे ॥१२॥ विष्णुने देखा कि, भृगुपत्नीने दैत्योंकी रक्षा की है तब तीक्ष्ण धारवाले चक्रसे भृगुपत्नीका मस्तक छेदन कर दिया ॥ १३ ॥ जब भृगुजीने अपनी पत्नीको मरी हुई देखा तो उन वंशउजागरने शत्रुकुलके मारनेहारे जनार्दन भगवानको शाप दिया ॥ १४ ॥ जिस कारण कि; क्रोधवश होकर वध करनेके अयोग्य तपस्विनी मेरी पत्नीको मार डाला है इस कारण हे जनार्दन ! तुम मनुष्यलोकमें अवतार लोगे ॥१५॥ उस शरीरमें तुमको बहुत वर्षोंतक स्त्रीका वियोग रहेगा इस प्रकारसे शाप देकर तप क्षीण होनेसे फिर भृगुजी पश्चाताप करने लगे कि, मैंने क्या किया जो स्त्रीके

निमित्त शाप दिया ॥१६॥ फिर शाप प्रदानके भयसे पीडित होकर शापसफल होनेके निमित्त भृगुजी भगवान् जनार्दनके आराधन करने लगे, उस समय जब अनेक प्रकारसे तपस्या द्वारा आराधन किया तब भक्तवत्सल बोले ॥१७॥ कि, तुम चिंता मत करो तुम्हारा शाप मिथ्या नहीं होगा, मैंने लोकके कल्याणके निमित्त तुम्हारे शापको ग्रहण किया है, इस प्रकारसे महातेजस्वी भृगुने शाप दिया है ॥ १८ ॥ हे राजोंमें श्रेष्ठ मान देनेहारे ! वही जनार्दन भगवान् यहां आय तुम्हारे यहां पुत्र भावको प्राप्त हो रामनामसे त्रिलोकीमें विख्यात हुए हैं ॥ १९ ॥ सो भृगुके शापका वह बडा फल अवश्य करेंगे, रामचन्द्रजी अयोध्याके महाराज बहुत कालतक रहेंगे ॥ २० ॥ और इनके छोटे भाई सुखी और अर्थोंसे परिपूर्ण होंगे यह रामचन्द्र ग्यारहसहस्र वर्ष तक ॥ २१ ॥

अर्चयामासतंदेवंभृगुःशापेनपीडितः ॥ तपसाराधितोदेवोह्यब्रवीद्भक्तवत्सलः ॥ १७ ॥ लोकानांसंप्रियार्थंतुतंशापंगृह्यमुक्तवान् ॥ इतिशप्तो महातेजाभृगुणापूर्वजन्मनि ॥१८॥ इहागतोहिपुत्रत्वंतवपार्थिवसत्तम ॥ रामइत्यभिविख्यातस्त्रिषुलोकेषुमानद ॥ १९ ॥तत्फलंप्राप्स्यतेचापिभृगुःशापकृतंमहत् ॥ अयोध्यायाःपतीरामोदीर्घकालंभविष्यति ॥ २० ॥ सुखिनश्चसमृद्धाश्चभविष्यंत्यस्ययेऽनुगाः ॥ दशवर्षसहस्राणिदशवर्षशतानिच ॥ २१ ॥ रामोराज्यमुपासित्वाब्रह्मलोकंगमिष्यति ॥ समृद्धैश्चाश्वमेधैश्चइष्ट्वापरमदुर्जयः ॥ २२ ॥ राजवंशांश्चबहुशो बहून्संस्थापयिष्यति ॥ द्वौपुत्रौतुभविष्येतेसीतायांराघवस्यतु ॥ २३ ॥ अन्यत्रनत्वयोध्यायांसत्यमेतन्नसंशयः ॥ सीतायाश्चततःपुत्रावभिषेक्ष्यतिराघवः ॥२४॥ ससर्वमखिलंराज्ञोवंशस्याहगतागतम् ॥ आख्यायसुमहातेजास्तूष्णीमासीन्महामुनिः ॥ २५ ॥ तूष्णींभूतेतदातस्मिन्राजादशरथोमुनौ ॥ अभिवाद्यमहात्मानौपुनरायात्पुरोत्तमम् ॥ २६ ॥ एतद्वचोमयातत्रमुनिनाव्याहृतंपुरा ॥ श्रुतंहृदिचनिक्षिप्तंनान्यथातद्भविष्यति ॥२७॥ एवंगतेनसंतापंकर्तुमर्हसिराघव॥ सीतार्थेराघवार्थेवादृढोभवनरोत्तम ॥ २८ ॥

अनेक प्रकारसे अश्वमेध यज्ञ विधि पूर्वक करके तथा और भी यज्ञ कर राज्य पालन करेंगे और जानकीमें रघुनाथजीसे दो पुत्र होंगे॥२२॥२३॥इस प्रकार तुम्हारे वंशकी होनहार गतिका वर्णन करके वही महातेजस्वी मुनि मौन हुए । जब वे मुनि मौन हुए ॥ २४ ॥तब राजा दशरथजी दोनों ऋषिश्रेष्ठोंको अभिवादन करके उत्तम नगरमें आये ॥ २५ ॥ उस समय मुनिराजके मुखसे यह सब बातें वहीं श्रवण की थीं और अपनेही हृदयमें धारण करली थीं सो इनका कहना अन्यथा नहीं होगा ॥ २६ ॥ रामचन्द्र सीताके पुत्रोंको कहीं और स्थानमें नहीं अभिषेक करेंगे, अयोध्यामेंही करेंगे कारण कि मुनिके वचन ऐसे ही हैं ॥२७॥ हे सुमित्रानन्दन ! इस प्रकारसे आपके शोक करनेकी कोई बात नहीं है सो आप जानकी और रघुनाथजीकी ओरसे निश्चिन्त रहिये ॥ २८ ॥

इस प्रकार सूतजीके परमाश्चर्य युक्त वाक्य श्रवण करके लक्ष्मणजी अधिक आनंदको प्राप्त हो सुमंत्रको धन्यवाद देने लगे ॥ २९ ॥ इस प्रकार लक्ष्मण और सारथि सुमंत्र मार्गमें बातें करते २ सन्ध्या समय केशिनी नगरीके निकट वास करते हुए ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायांमे कपंचाशः सर्गः ॥ ५१ ॥ रघुनंदन लक्ष्मणजी केशिनी नगरीमें एक रात्रि वास करके प्रातःकाल उठके वहांसे गमन करते हुए ॥ १ ॥ फिर मध्याह्नके समय महारथी लक्ष्मणजी रत्नोंसे भरीपुरी हृष्टपुष्टमनुष्योंसे व्याप्त अयोध्यापुरीमें प्रवेश करते हुए ॥२॥ अब उस समय मतिमान् लक्ष्मणजीको बडा दुःख हुआ कि, रघुनाथजीके चरणोंको प्राप्त होकर क्या कहूंगा ॥ ३ ॥ वह इस प्रकार चिंता करही रहे थे कि, उन्होंने आगे जाकर चन्द्रमाके समान परम उदार

श्रुत्वातुव्याहृतंवाक्यंसूतस्यपरमाद्भुतम् ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेसाधुसाध्वितिचाब्रवीत् ॥ २९ ॥ ततःसंवदतोरेवंसूतलक्ष्मणयोःपथि ॥ अस्तमर्कैगतेवासंकेशिन्यांतावथोषतुः ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदिकाव्येच० सा० उत्तरकांडे एकपंचाशः सर्गः ॥ ५१ ॥ तत्रतांरजनीमुष्यकेशिन्यांरघुनंदनः ॥ प्रभातेपुनरुत्थायलक्ष्मणःप्रययौतदा ॥ १ ॥ ततोऽर्धदिवसेप्राप्तेप्रविवेशमहारथः ॥ अयोध्यांरत्नसंपूर्णांहृष्टपुष्टजनावृताम् ॥ २ ॥ सौमित्रिस्तुपरंदैन्यंजगामसुमहामतिः ॥ रामपादौसमासाद्यवक्ष्यामिकिमहंगतः ॥ ३ ॥ तस्यैवंचिंतयानस्यभवनंशशिसन्निभम् ॥ रामस्यपरमोदारंपुरस्तात्समदृश्यत ॥ ४ ॥ राज्ञस्तुभवनद्वारिसोऽवतीर्यनरोत्तमः ॥ अवाङ्मुखोदीनमनाःप्रविवेशानिवारितः ॥ ५ ॥ सदृष्ट्वाराघवंदीनमासीनंपरमासने ॥ नेत्राभ्यामश्रुपूर्णाभ्यांददर्शाग्रजमग्रतः ॥ ६ ॥ जग्राहचरणौतस्यलक्ष्मणोदीनचेतनः ॥ उवाचदीनयावाचाप्रांजलिःसुसमाहितः ॥ ॥ ७ ॥ आर्यस्याज्ञांपुरस्कृत्यविसृज्यजनकात्मजाम् ॥ गंगातीरेयथोद्दिष्टेवाल्मीकेराश्रमेशुभे ॥८॥ तत्रतांचशुभाचारामाश्रमांतेयशस्विनीम् ॥ पुनरप्यागतोवीरपादमूलमुपासितुम् ॥ ९ ॥

रघुनाथजीका मन्दिर देखा ॥ ४ ॥ वह नरोत्तम राजाके भवनके द्वारपर रथसे उतरकर नीचेको मुख किये दीनमनसे बिना रोक टोक मंदिरमें प्रवेश करने लगे ॥ ५ ॥ जाकर देखते क्या हैं कि, रघुनाथजी दीन हुए नेत्रोंमें जलभरे एक आसनपर बैठे हैं ! इस प्रकार रघुनाथजीको आगे बैठे देखा ॥ ६ ॥ लक्ष्मणजीने दीन चित्तसे उनके चरण युगल ग्रहण किये और फिर सावधान हो हाथ जोडकर रघुनाथजीसे दीन वचन कहने लगे ॥ ७ ॥ कि, मैं आपकी आज्ञासे जानकीजीको गंगाजीके किनारे वाल्मीकिजीके शुभ आश्रमके निकट छोड आया ॥८॥ उन शुद्धाचारिणी यशस्विनीको आश्रमके निकट ही त्याग दिया है अब फिर हे वीर ! आपके चरण उपासन करनेके निमित्त आया हूं ॥ ९ ॥

हे पुरुषसिंह ! आप शोक न कीजिये कारण कि, कालकी गति ऐसी है आप सरीखे बुद्धिमान् पुरुष शोक नहीं करते हैं ॥ १० ॥ सम्पूर्ण ऐश्वर्य नाशोन्मुख है, जो ऊंचे उठते हैं वे नीचे गिरते हैं संयोगसे वियोग होता है और जीवनके अन्त मरण होताही है ॥ ११ ॥ इस कारणसे स्त्री पुत्र मित्र धनमें अत्यन्त मन लगाना उचित नहीं है कारण कि, उनका अवश्य वियोग होता है ॥१२॥ आप तो अपने आत्मासे आत्माको मनसे मनको शिक्षा करनेको समर्थ हैं, बहुत क्या कहें हे रघुनाथजी ? आप सम्पूर्ण लोकोंके शिक्षा करनेको समर्थ हैं फिर अपना शोक निवारणकरना क्या बडी बात है ॥ १३ ॥ आप सरीखे महात्मा पुरुष मोहको नहीं प्राप्त होते हैं, हे रघुनन्दन शोच करनेसे फिर वही अपवाद आकर प्राप्त हो जायगा ॥ १४ ॥ जिस अपवादके भयसे आपने जीवनका

माशुचःपुरुषव्याघ्रकालस्यगतिरीदृशी॥त्वद्विधानहिशोचंतिबुद्धिमंतोमनस्विनः ॥१०॥ सर्वेक्षयांतानिचयाःपतनांताःसमुच्छ्रयाः ॥ संयोगा विप्रयोगांतामरणांतंचजीवितम् ॥ ११ ॥ तस्मात्पुत्रेषुदारेषुमित्रेषुचधनेषुच ॥ नातिप्रसंगःकर्तव्योविप्रयोगोहितैर्ध्रुवम् ॥ १२ ॥ शक्तस्त्व मात्मनात्मानंविनेतुंमनसामनः ॥ लोकान्सर्वांश्चकाकुत्स्थकिंपुनःशोकमात्मनः ॥ १३ ॥ नेदृशेषुविमुह्यन्तित्वद्विधाःपुरुषर्षभाः ॥ अप वादःसकिलतेपुनरेष्यतिराघव ॥ १४ ॥ यदर्थंमैथिलीत्यक्ताअपवादभयान्नृप ॥ सोऽपवादःपुरेराजन्भविष्यतिनसंशयः ॥ १५ ॥ सत्वं पुरुषशार्दूलधैर्येणसुसमाहितः ॥ त्यजेमांदुर्बलांबुद्धिंसंतापंमाकुरुष्वह ॥१६॥ एवमुक्तःसकाकुत्स्थोलक्ष्मणेनमहात्मना॥उवाचपरयाप्रीत्या सौमित्रिंमित्रवत्सलः ॥ १७ ॥ एवमेतन्नरश्रेष्ठयथावदसिलक्ष्मण ॥ परितोषश्चमेवीरममकार्यानुशासने ॥ १८ ॥ निवृत्तिश्चागतासौम्यसंता पश्चनिराकृतः ॥ भवद्वाक्यैःसुरुचिरैरनुनीतोऽस्मिलक्ष्मण ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे द्विपंचाशःसर्गः ॥ ५२ ॥ लक्ष्मणस्यतुतद्वाक्यंनिशम्यपरमाद्भुतम् ॥ सुप्रीतश्चाभवद्रामोवाक्यमेतदुवाचह ॥ १ ॥

त्याग किया है, यदि शोच करोगे तो हे श्रीरामचन्द्रजी फिर वही अपवाद आपको प्राप्त होगा इसमें संदेह नहीं है ॥ १५ ॥ हे पुरुष सिंह ! इस कारण आप धैर्य धारण कर इस दुर्बल बुद्धिको त्यागन कीजिये सन्ताप न कीजिये ॥ १६ ॥ जब महात्मा लक्ष्मणजीने इसप्रकार कहा तब मित्रवत्सल रघुनाथजी मनोहरवाणीसे लक्ष्मणजीसे बोले ॥१७॥ हे नरश्रेष्ठ लक्ष्मण ! तुमजो कहते हो सो यथार्थ है, हे वीर ! प्रजापालन करनेमें मैं सन्तुष्ट हूं ॥ १८ ॥हे सौम्य ! तुम्हारे वाक्यसे मेरा दुःख छूट गया, और मेरा सन्ताप भी मिटगया हे लक्ष्मण ! तुम्हारे सुन्दर वाक्योंसे अनुगृहीत हूं ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां द्विपंचाशः सर्गः ॥५२॥ लक्ष्मणजीके यह परम अद्भुत वाक्य श्रवण करके रामचन्द्रजीबडे प्रसन्न हो इस प्रकारसे वचन कहने लगे॥१॥

हे सौम्य ! जैसे तुम महाबुद्धिमान् मेरे वचन माननेवाले हो इस कालमें तुम सरीखा बन्धु मिलना विशेष करके कठिन है ॥ २ ॥ हे शुभलक्षण ! कुछ मेरे हृदयमें वर्त्तमान है उसको सुनकर तुम मेरे वचन मानो ॥३॥ आज चार दिन हुए कि मैंने राजकाज कुछ भी नहीं देखाभाला है न कुछ किया है इस कारण हे लक्ष्मण ! हमारे मर्मस्थानोंमें पीडा होती है ॥ ४ ॥ इससे पुरोहित मंत्री और सब प्रजाको बुलाओ और स्त्री पुरुष जो किसी कार्यकी रक्षा करते हैं हे पुरुषश्रेष्ठ ! उन सबको बुलाओ ॥ ५ ॥ जो राजा प्रतिदिन पुरवासियोंके कार्यको नहीं करता है वह वायुस्पर्शहीन घोर नरकमें पडता है, इसमें कोई संदेह नहीं ॥ ६ ॥ सुनो भाई ! पूर्वकालमें एक नृगनाम महायशस्वी राजाथे वह ब्राह्मणोंके माननेवाले, सत्यवादी, पवित्र प्रजापालक थे ॥ ७ ॥ उन्होंने एक

दुर्लभस्त्वीदृशोबंधुरस्मिन्कालेविशेषतः ॥ यादृशस्त्वंमहाबुद्धिर्ममसौम्यमनोऽनुगः ॥ २ ॥ यच्चमेहृदयेकिंचिद्वर्ततेशुभलक्षण ॥ तन्निशाम यचश्रुत्वाकुरुष्ववचनंमम ॥ ३ ॥ चत्वारोदिवसाःसौम्यकार्य्यंपौरजनस्यच ॥ अकुर्वाणस्यसौमित्रेतन्मेमर्माणिकृंतति ॥ ४ ॥ आहूयंतांप्र कृतयःपुरोधामंत्रिणस्तथा ॥ कार्यार्थिनश्चपुरुषाःस्त्रियोवापुरुषर्षभ ॥ ५ ॥ पौरकार्याणियोराजानकरोतिदिनेदिने ॥ संवृतेनरकेघोरेपतितो नात्रसंशयः ॥६॥ श्रूयतेहिपुराराजानृगोनाममहायशाः ॥ बभूवपृथिवीपालोब्रह्मण्यःसत्यवाक्छुचिः ॥७॥ सकदाचिद्गवांकोटीःसवत्साःस्वर्ण भूषिताः ॥ नृदेवोभूमिदेवेभ्यःपुष्करेषुददौनृपः ॥ ८ ॥ ततःसगाद्गताधेनुःसवत्सास्पर्शिताऽनघ ॥ ब्राह्मणस्याहिताग्नेस्तुदरिद्रस्योंछवर्तिनः ॥ ९ ॥ सनष्टांगांक्षुधार्तोवैअन्विषंस्तत्रतत्रह ॥ नापश्यत्सर्वराष्ट्रेषुसंवत्सरगणान्बहून् ॥ १० ॥ ततःकनखलंगत्वाजीर्णवत्सांनिरामयाम् ॥ ददृशेतांस्वकांधेनुर्बाह्मणस्यनिवेशने ॥ ११ ॥ अथतांनामधेयेनस्वकेनोवाचब्राह्मणः ॥ आगच्छशबलेत्येवंसातुशुश्रावगौःस्वरम् ॥ १२ ॥

समय बछडे सहित करोड गाय सुवर्णके भूषणोंसे सजाय पुष्करक्षेत्रमें ब्राह्मणोंको दान करदीं ॥८॥ हे पापरहित लक्ष्मणजी ! उनकी गायोंमें जो राजाने दान करनेके निमित्त मँगाई थीं भूलसे किसी एक दरिद्री अग्निहोत्री उञ्छवृत्तिसे जीनेवाले ब्राह्मणकी गऊ आमिली ॥ ९ ॥ वहां ब्राह्मण भूखा प्यासा खोई हुई गौको इधर उधर ढूंढने लगा और कई वर्ष तक राज्यभरमें कहीं उसकी गाय नहीं मिली ॥ १० ॥ चलते २ जब वह हरिद्वारके निकट कनखलमें आया तब उसने एक ब्राह्मणके यहां रोगरहित दुबले बछडेवाली अपनी गौ देखी ॥ ११ ॥ तब वह ब्राह्मण उस गायको अपने धरे हुए नामसे पुकारने लगा " हे शबले ! यहां आओ " सो ज्योंही गौने उस ब्राह्मणका यह शब्द सुना ॥ १२ ॥

त्योंही उस क्षुधासे व्याकुल अग्निके समान प्रकाशमान ब्राह्मणका स्वर पहचान कर वह गौ आकर उसके पीछे २ चलने लगी ॥ १३ ॥ जिस ब्राह्मणके घरमें वह गौथी जो पालन करता था वह भी उसके पीछे दौडा और शीघ्रतासे जाकर उस ऋषिसे बोला " कि यह गौ तो मेरी है ॥ १४ ॥ यह तो मुझे राज श्रेष्ठ नृग राजाने दानमें दी है " इस प्रकारसे उन पंडित ब्राह्मणोंका परस्पर विवाद होने लगा ॥ १५ ॥ और यह झगडा करते २ राजा नृगके पास गये परन्तु वह राजाकी आज्ञाके न मिलनेसे मंदिरमें प्रवेश न कर सके ॥१६॥ जब पडे २ कई २ दिन रात बीतगये तब वे दोनों ब्राह्मण क्रोधमें भर गये, तब वे महात्मा दोनों ब्राह्मणश्रेष्ठ क्रोधमें भरे घोर शापयुक्त वचन बोलने लगे ॥ १७ ॥ जब कि, अर्थियोंके कार्य सिद्ध करनेके निमित्त राजाने दर्शन नहीं दिया है

तस्यतंस्वरमाज्ञायक्षुधार्तस्यद्विजस्यवै ॥ अन्वगात्पृष्ठतःसागौर्गच्छंतंपावकोपमम् ॥ १३ ॥ योऽपिपालयतेविप्रःसोऽपिगामन्वगाद्द्रुतम् ॥ गत्वाचतमृषिंचष्टेममगौरितिसत्वरन् ॥ १४ ॥ स्पर्शिताराजसिंहेनममदत्तानृगेणह ॥ तयोर्ब्राह्मणयोर्वादोमहानासीद्विपश्चितोः ॥१५॥ विव दंतौततोऽन्योन्यंदातारमभिजग्मतुः ॥ तौराजभवनद्वारिनप्राप्तौनृगशासनम् ॥ १६ ॥ अहोरात्राण्यनेकानिवसंतौक्रोधमीयतुः ॥ ऊचतुश्चम हात्मानौतावुभौद्विजसत्तमौ ॥ क्रुद्धोपरमसंप्राप्तौवाक्यंघोराभिसंहतम् ॥ १७ ॥ अर्थिनांकार्यसिद्ध्यर्थंयस्मात्त्वंनैषिदर्शनम् ॥ अदृश्यःसर्व भूतानांकृकलासोभविष्यसि ॥ १८ ॥ बहुवर्षसहस्राणिबहुवर्षशतानिच ॥ श्वभ्रेत्वंकृकलीभूतोदीर्घकालंनिवत्स्यसि ॥१९॥ उत्पत्स्यतेहिलो केऽस्मिन्यदूनांकीर्तिवर्धनः ॥ वासुदेवइतिख्यातोविष्णुःपुरुषविग्रहः ॥ २० ॥ सतेमोक्षयिताशापाद्राजंस्तस्माद्भविष्यसि ॥ कृताचतेनकाले ननिष्कृतिस्तेभविष्यति ॥२१ ॥ भारावतारणार्थंहिनरनारायणावुभौ ॥ उत्पत्स्येतेमहावीर्यौकलौयुगउपस्थिते ॥ २२ ॥ एवंतौशापमुत्सृज्य ब्राह्मणौविगतज्वरौ ॥ तांगांहिदुर्बलांवृद्धांददतुर्ब्राह्मणायवै ॥ २३ ॥

तो यह राजा सब प्राणियोंको अदृश्य गिरगिट होजायगा ॥ १८ ॥ सैकडों हजारों वर्ष एक सूखे कुएमें रहकर बहुत काल व्यतीत करेगा ॥ १९ ॥ जिस समय इस संसारमें यदुवंशकी कीर्ति बढानेवाले साक्षात् विष्णुजी वासुदेव नामसे शरीर धारण करेंगे ॥ २० ॥ हे राजा नृग ! वह तुझको इस योनिसे मोक्ष करेंगे अब तू गिरगिट होगा परंतु उस समय इस शापसे तेरी मुक्ति होजायगी ॥ २१ ॥ नर और नारायण जिस समय द्वापरका अन्त और कलियुगका आरंभ होगा, उस समय पृथ्वीका भार दूर करनेके निमित्त अवतार धारण करेंगे ॥ २२ ॥ जब इस प्रकार उन दोनों ब्राह्मणोंका शाप देकर क्रोध शांत हुआ तब उन्होंने उस वृद्ध और दुर्वल गायको किसी और ब्राह्मणको देकर अपना झगडा मिटाया ॥ २३ ॥

इस प्रकारसे वह राजा इस समय दारुण शापका फल भोग रहा है, कार्यार्थियोंका झगडा न मिटानेसे राजाको बडा दोष होता है ॥ २४ ॥ इस कारण कार्या र्थियोंको शीघ्रतासे मेरे सामने लाओ, अच्छे कर्त्तव्य कार्यका फल राजा पाता ही है ॥ २५ ॥ इस कारण हे लक्ष्मण ! तुम द्वारे जाकर देखते रहो कि; कौन कार्यार्थी (अर्जी देनेवाले) आते हैं ॥ २६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां त्रिपंचाशः सर्गः ॥ ५३ ॥ परम अर्थके जाननेवाले लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर तेजसे देदीप्यमान श्रीरामचन्द्रजीसे हाथ जोडकर कहने लगे ॥१॥ हे महाराज ! थोडेसे अपराधपरही उन ब्राह्मणोंने महान् राजर्षि नृगराजाको दूसरे यमदंडके समान महा घोर शाप दिया ॥ २ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! उस समय राजा नृगने अपनेको महा पापयुक्त शापी सुनकर

एवंसराजातंशापमुपभुंक्तेसुदारुणम् ॥ कार्यार्थिनांविमर्दोहिराज्ञांदोषायकल्पते॥२४॥ तच्छीघ्रंदर्शनंमह्यमभिवर्ततुकार्यिणः ॥ सुकृतस्यहिकार्यस्यफलंनावैतिपार्थिवः ॥२५॥ तस्माद्गच्छप्रतीक्षस्वसौमित्रेकार्यवाञ्जनः ॥२६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये अदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे त्रिपंचाशः सर्गः ॥ ५३ ॥ रामस्यभाषितंश्रुत्वालक्ष्मणःपरमार्थवित् ॥ उवाचप्रांजलिर्वाक्यंराघवंदीप्ततेजसम् ॥ १ ॥ अल्पापराधेकाकुत्स्थद्विजाभ्यांशापईदृशः ॥ महान्नृगस्यराजर्षेर्यमदण्डइवापरः ॥२॥ श्रुत्वातुपापसंयुक्तमात्मानंपुरुषर्षभः ॥ किमुवाचनृगोराजाद्विजौक्रोधसमन्वितौ ॥ ३ ॥ लक्ष्मणेनैवमुक्तस्तुराघवःपुनरब्रवीत् ॥ शृणुसौम्ययथापूर्वंसराजाशापविक्षतः ॥४॥ अथाध्वनिगतौविप्रौविज्ञायसनृपस्तदा॥ आहूयमंत्रिणःसर्वान्नैगमान्सपुरोधसः ॥ ५ ॥ तानुवाचनृगोराजासर्वांश्चप्रकृतीस्तथा ॥ दुःखेनसुसमाविष्टःश्रूयतांमेसमाहिताः ॥ ६ ॥ नारदःपर्वतश्चैवममदत्त्वामहद्भयम् ॥ गतौत्रिभुवनंभद्रौवायुभूतावनिंदितौ ॥ ७ ॥ कुमारोऽयवसुर्नामसचेहाद्याभिषिच्यताम् ॥ श्वभ्रंचयत्सुखस्पर्शंक्रियतांशिल्पिभिर्मम ॥ ८ ॥

उन क्रोधी ब्राह्मणोंसे क्या कहा सो कहिये ॥ ३ ॥ जब लक्ष्मणजीने यह पूछा तब रामचन्द्रजी फिर कहने लगे कि, हे सौम्य ! क्रमसे सुनिये जो कुछ राजाने शाप सुनकर उन ब्राह्मणोंसे कहा ॥ ४ ॥ जब वे ब्राह्मण वहांसे आकशमार्ग होकर चले गये; तो राजाने यह समाचार जाकर पुरवासी पुरोहित और सब मंत्रियोंको बुलाय ॥ ५ ॥ उस समय राजा बडे दुःखमें प्राप्त होकर उन सब प्रजाके लोगोंसे कहने लगा, हे महात्माओ ! सब सावधान होकर मेरे वचनको सुनो ॥ ६ ॥ नारद और पर्वत ऋषि आकर मुझे शापकी कथा सुनकर बडा भय दे वायुवेगसे ब्रह्मलोकको चले गये ॥ ७ ॥ यह हमारा वसुनामक पुत्र है, इसे यौवराज्यमें आज ही अभिषेक करना चाहता हूं, और शिल्पियोंके द्वारा एक श्रेष्ठ गर्त (गढा) बनवाया जाय जो अच्छा हो ॥ ८ ॥

जिस स्थानमें निवास करके मैं ब्राह्मणोंका शाप बिताऊँगा, एक गर्त तो ऐसा बनाओ जहां वर्षाकी बाधा न हो, एक ऐसा जिसमें शीतकी बाधा न हो ॥ ९ ॥ एक ऐसा जिसमें ग्रीष्मकी बाधा न हो, ऐसा सुखस्पर्शवाला कारीगरोंके द्वारा गर्त बनाया जावे, जो फलवाले वृक्ष और फूलोंवाली लता ॥ १० ॥ व और छायावाले अनेक प्रकारके गुल्म वहां लगाये जावें, यह गर्त चारों ओरसे शोभायमान बनाये जावें ॥ ११ ॥ जहां मैं शापके अन्ततक सुखपूर्वक वास करूँगा, और वहां ऐसे सुगन्धिके वृक्ष लगाओ जिनमें सदा फूल खिलते रहें ॥ १२ ॥ और ऐसा करो कि, वह फूलवाडियें दो कोश पर्यंत लगाई जायँ यह सब विधान कर और उसमें अनेक ऐश्वर्यका स्थापन करके ॥ १३ ॥ पुत्रसे कहा हे पुत्र ! पुत्रकी नांई तुमको नित्यप्रति प्रजापालन करना उचित है,

यत्राहंसंक्षयिष्यामिशापंब्राह्मणनिःसृतम् ॥ वर्षघ्नमेकंश्वभ्रंतुहिमघ्नमपरंतथा ॥९॥ ग्रीष्मघ्नंतुसुखस्पर्शमेकंकुर्वंतुशिल्पिनः ॥ फलवंतश्चयेवृक्षाः पुष्पवत्यश्चयालताः ॥ १० ॥ विरोप्यंतांबहुविधाश्छायावंतश्चगुल्मिनः ॥ क्रीयतांरमणीयंचश्वभ्राणांसर्वतोदिशम् ॥ ११ ॥ सुखमत्रवसिष्यामियावत्कालस्यपर्ययः ॥ पुष्पाणिचसुगंधीनिक्रियंतांतेषुनित्यशः ॥ १२ ॥ परिवार्ययथामेस्युरध्यर्धयोजनंतथा ॥ एवंकृत्वाविधानंससन्निवेश्यवसुंतदा ॥ १३ ॥ धर्मनित्यःप्रजाःपुत्रक्षत्रधर्मेणपालय ॥ प्रत्यक्षंतेयथाशापोद्विजाभ्यांमयिपातितः ॥ १४ ॥ नरश्रेष्ठसरोषाभ्यामपराधेऽपितादृशे ॥ माकृथास्त्वनुसंतापंमत्कृतेहिनरर्षभ ॥ १५ ॥ कृतांतःकुशलःपुत्रयेनास्मिव्यसनीकृतः ॥ प्राप्तव्यान्येवप्राप्नोतिगंतव्यान्येव गच्छति ॥१६॥ लब्धव्यान्येवलभतेदुःखानिचसुखानिच ॥ पूर्वेजात्यंतरेवत्समाविषादंकुरुष्वह ॥१७॥ एवमुक्त्वानृपस्तत्रसुतंराजामहायशाः ॥ श्वभ्रंजगामसुकृतंवासायपुरुषर्षभ ॥ १८ ॥

असावधानीका फल यह प्रत्यक्ष ही है कि, ब्राह्मणोंने यह मुझे शाप दिया ॥ १४ ॥ हे नरश्रेष्ठ पुत्र ! ऐसे क्रोधसे दिये हुए शापमें मेरे प्रति तुमको संताप करना उचित नहीं है ॥ १५ ॥ हे पुत्र ! पूर्वकर्म ही प्रधान है, जिसने मुझे व्यसनमें डाल दिया है, जो वस्तु प्राप्त होनेके योग्य है वह प्राप्त होती है, और जो जाने हार हैं वह जाती ही है ॥१६॥ जो सुख दुःख होनहार हैं वह आकर प्राप्त होते ही हैं। जो कुछ प्रथम जन्ममें दूसरी जातिमें कर आये है वह भोगना पडेगा, इस कारण हे पुत्र ! विषाद मत करो ॥ १७ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ इस प्रकारसे वह यशस्वी राजा अपने पुत्रसे कहकर उस अच्छे बनाये हुए गर्तमें वास करनेको चला गया ॥ १८ ॥

इस प्रकारसे उस समय उस राजाने अनेक रत्नोंसे परिपूर्ण महागर्तमें प्रवेश किया, और वहां रहकर वह महात्मा क्रोधित ब्राह्मणोंके शापको अनुभव करता हुआ ॥१९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकां० भाषायां चतुःपंचाशः सर्गः ॥ ५४ ॥ इसके उपरान्त रामचन्द्रजी बोले हे लक्ष्मण ! तुमको नृगके शापकी विचार पूर्वक कथा सुना दी और कुछ सुननेकी इच्छा हो तो एक और कथा सुनाऊँ ॥ १ ॥ रामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर लक्ष्मणजी कहने लगे, हे महाराज ! इन आश्चर्यकी कथाओंके श्रवण करनेसे मेरी तृप्ति नहीं होती ॥ २ ॥ जिस समय लक्ष्मणजीने यह वार्ता कही, तब इक्ष्वाकुनंदन श्रीरामचन्द्रजी परम धर्मयुक्त कथा कहने लगे ॥ ३ ॥ कि एक इक्ष्वाकुओंमें निमिनामक राजा थे, यह इक्ष्वाकुके बारहवें पुत्र थे, वीर्य और धर्ममें निष्ठावाले थे ॥ ४ ॥ यह बडे बली

एवंप्रविश्येवनृपस्तदानींश्वभ्रंमहद्रत्नविभूषितंतम् ॥ संपादयामासतदामहात्माशापंद्विजाभ्यांहिरुषाविमुक्तम् ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे चतुष्पंचाशः सर्गः ॥ ५४ ॥ एषतेनृगशापस्यविस्तरोऽभिहितोमया ॥ यद्यस्तिश्रवणेश्रद्धा शृणुष्वेहापरांकथाम् ॥ १ ॥ एवमुक्तस्तुरामेणसौमित्रिःपुनरब्रवीत् ॥ तृप्तिराश्चर्यभूतानांकथानांनास्तिमेनृप ॥ २ ॥ लक्ष्मणेनैवमुक्तस्तुराम-इक्ष्वाकुनदनः ॥ कथांपरमधर्मिष्ठांव्याहर्तुमुपचक्रमे ॥ ३ ॥ आसीद्राजानिमिर्नामइक्ष्वाकूणांमहात्मनाम् ॥ पुत्रोद्वादशमोवीर्येधर्मेचपरिनि-ष्ठितः ॥ ४ ॥ सराजावीर्यसंपन्नःपुरंदेवपुरोपमम् ॥ निवेशयामासतदाअभ्याशेगौतमस्यतु ॥ ५ ॥ पुरस्यसुकृतंनामवैजयंतमितिश्रुतम् ॥ निवेशंयत्रराजर्षिर्निमिश्चक्रमहायशाः ॥ ६ ॥ तस्यबुद्धिःसमुत्पन्नानिवेश्यसुमहापुरम् ॥ यजेयंदीर्घसत्रेणपितुःप्रह्लादयन्मनः ॥ ७ ॥ ततः पितरमामंत्र्यइक्ष्वाकुंहिमनोःसुतम् ॥ वसिष्ठंवरयामासपूर्वंब्रह्मर्षिसत्तमम् ॥ ८ ॥ अनंतरंसराजर्षिर्निमिरिक्ष्वाकुनंदनः ॥ अत्रिमंगिरसंचैवभृ-गुंचैवतपोनिधिम् ॥ ९ ॥ तमुवाचवसिष्ठस्तुनिमिंराजर्षिसत्तमम् ॥ वृतोऽहंपूर्वमिंद्रेणअंतरंप्रतिपालय ॥ १० ॥

राजा गौतमजीके आश्रमके निकट देवताओंकी नगरीके समान एक नगरमें वास करते थे ॥ ५ ॥ उस श्रेष्ठ पुरका वैजयन्त नाम था जिसमें महायशस्वी राजा निमि वास करते थे ॥ ६ ॥ उस पुरमें वास करते २ उनकी बुद्धिमें यह बात समाई कि, हम अपने पिताको प्रसन्न करते हुए एक बडे यज्ञका विधान करें जो बहुत दिनोंमें समाप्त हो ॥ ७ ॥ यह मनमें विचार मनुके पुत्र इक्ष्वाकुने अपने पितासे मंत्रणा करके ब्रह्मर्षियोंमें श्रेष्ठ वसिष्ठजीको यज्ञमें वरण किया ॥ ८ ॥ हे लक्ष्मण ! उसके उपरान्त इक्ष्वाकु पुत्र राजर्षि निमिने अत्रि, अंगिरस और तपोधन भृगुको वरण किया ॥ ९ ॥ उस समय वसिष्ठजी राजर्षि श्रेष्ठ निमिसे कहने लगे हमें तुमसे पहले इन्द्रके यहांका वरण आचुका है इस कारणसे तुम कुछ काल पर्यंत ठहरो ॥ १० ॥

यह कह महातेजस्वी वसिष्ठजी इन्द्रके यहां यज्ञ कराने लगे इधर गौतमजी महाराज वसिष्ठजीके स्थानमें स्थित हो निमिका यज्ञ करानेको स्थित हुए ॥ ११॥ इस प्रकार निमिराज उन ब्राह्मणोंको संग लेकर हिमालयके पार्श्वमें अपने पुरके निकट यह करते हुए ॥ १२ ॥ पाँच हजार वर्षतक राजा यज्ञकी दीक्षामें रहे इधर इन्द्रके यज्ञ पूर्ण होनेपर भगवान् वसिष्ठजी ॥ १३ ॥ जो निंदारहित हैं यज्ञ करानेके निमित्त राजाके निकट आये, देखें तो गौतमजीने उस यज्ञको पूरा करही दिया है ॥ १४ ॥ देखतेही ब्रह्माजीके पुत्र वसिष्ठजी क्रोधमें भर गये और उस समय राजासे मिलनेके कारण शीघ्रतासे उनके द्वारपर एक मुहूर्त भरतक स्थित रहे, उस दिन राजा अधिक निद्राके कारण सोगये थे ॥ १५ ॥ यह देख कर वसिष्ठजीका क्रोध और भी बढ गया, राजाके दर्शन न पानेसे

अनंतरंमहाविप्रोगौतमःप्रत्यपूरयत् ॥ वसिष्ठोऽपिमहातेजाइंद्रयज्ञमथाकरोत् ॥११॥ निमिस्तुराजाविप्रांस्तान्समानीयनराधिपः ॥ अयजद्धि-मवत्पार्श्वेस्वपुरस्यसमीपतः ॥ १२ ॥ पंचवर्षसहस्राणिराजादीक्षामथाकरोत् ॥ इंद्रयज्ञावसानेतुवसिष्ठोभगवानृषिः ॥ १३ ॥ सकाशमाग-तोराज्ञोहौत्रंकर्तुमनिंदितः ॥ तदंतरमथापश्यद्गौतमेनाभिपूरितम् ॥ १४ ॥ कोपेनमहताविष्टोवसिष्ठोब्रह्मणःसुतः ॥ सराज्ञोदर्शनाकांक्षीमुहूर्तं समुपाविशत् ॥ तस्मिन्नहनिराजर्षिर्निद्रयापहृतोभृशम् ॥ १५ ॥ ततोमन्युर्वसिष्ठस्यप्रादुरासीन्महात्मनः ॥ अदर्शनेनराजर्षेर्व्याहर्तुमुपचक्रमे ॥ १६ ॥ यस्मात्त्वमन्यंवृतवान्मामवज्ञायपार्थिव ॥ चेतनेनविनाभूतोदेहस्तेपार्थिवैष्यति ॥ १७॥ ततःप्रबुद्धोराजातुश्रुत्वाशापमुदाहृतम् ॥ ब्रह्मयोनिमथोवाचसराजाक्रोधमूर्च्छितः ॥ १८॥ अजानतःशयानस्यक्रोधेनकलुषीकृतः ॥ उक्तवान्ममशापाग्निंयमदंडमिवापरम् ॥ १९ ॥ तस्मात्तवापिब्रह्मर्षेचेतनेनविनाकृतः॥देहःससुचिरप्रख्योभविष्यतिनसंशयः ॥२०॥ इतिरोषवशादुभौतदानीमन्योन्यंशपितौनृपद्विजेंद्रौ॥ सह सैवबभूवतुर्विदेहौतत्तुल्याधिगतप्रभाववंतौ ॥२१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वा० आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे पंचपंचाशः सर्गः ॥५५॥

इस प्रकारसे कहने लगे ॥ १६ ॥ हे राजन्! जो कि तुमने मेरा निरादर करके औरका वरण किया है इस कारण तेरा देह जीव रहित हो जायगा ॥१७॥ जब राजाने जागकर यह शापकी व्यवस्था सुनी तो वह राजा भी महाक्रोधित हो वसिष्ठजीको शाप देने लगे ॥ १८ ॥ आपने मुझे सोते हुए पर बिना जाने क्रोधके वशमें दूसरे यमदंडकी नाई जो शापाग्नि गिराई है ॥ १९ ॥ इस कारणसे हे महर्षे! तुम्हारी सुन्दर देह भी बिना जीवके बहुत कालतक रहेगी ॥ २० ॥ इस प्रकारसे वह राजेन्द्र और द्विजेन्द्र क्रोधके वशीभूत हो एक दूसरेको उस समय शाप देकर दोनों ही बराबर प्रभावाले होनेके कारण तत्काल देह रहित हो गये ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां पञ्चपञ्चाशः सर्गः ॥ ५५ ॥

शत्रुघाती लक्ष्मणजी रघुनाथजीके वचन सुनकर हाथ जोड महातेजस्वी रघुनाथजीसे बोले ॥१॥ हे रघुनाथजी ! देवताओंसे पूजित वह राजा और वसिष्ठ देहरहित होकर फिर किस प्रकारसे देहसंयोग प्राप्त हुए ॥२॥ लक्ष्मणजीके यह वचन सुनकर इक्ष्वाकुकुलनंदन पुरुषश्रेष्ठ दीप्तिमान् रघुनाथजी बोले ॥३॥ कि वह दोनों धर्मात्मा परस्पर शापके कारण देह त्याग करके तपस्वी विप्रर्षि और राजा वायुरूप हो गये ॥ ४ ॥ अब महामुनि महातेजस्वी वसिष्ठजी शरीररहित हो दूसरे स्थूल शरीरसे प्राप्त होनेके निमित्त अपने पिता ब्रह्माजीके पास गये ॥५॥ वही जायकर वह धर्म जाननेवाले वायुभूत शरीर वसिष्ठ देवदेवके चरणोंको अभिवादन करके ब्रह्माजीसे इस प्रकार कहने लगे ॥ ६ ॥ हे भगवन् ! मैं निमिके शापसे विदेहपनको प्राप्त हो गया हूं, हे अंडसे उत्पन्न ! हे देवदेव ! हे महादेव ! मैं वायुभूत

रामस्यभाषितंश्रुत्वालक्ष्मणःपरवीरहा ॥ उवाचप्रांजलिर्भूत्वाराघवंदीप्ततेजसम् ॥१॥ निक्षिप्यदेहौकाकुत्स्थकथंतौद्विजपार्थिवौ ॥ पुनर्देहेनसंयोगंजग्मतुर्देवसंमतौ ॥२॥ लक्ष्मणेनैवमुक्तस्तुरामश्चेक्ष्वाकुनंदनः ॥ प्रत्युवाचमहातेजालक्ष्मणंपुरुषर्षभः ॥ ३ ॥ तौपरस्परशापेनदेहमुत्सृज्य धार्मिकौ ॥ अभूतांनृपविप्रर्षीवायुभूतौतपोधनौ ॥४॥ अशरीरःशरीरस्यकृतेन्यस्यमहामुनिः ॥ वसिष्ठस्तुमहातेजाजगामापितुरंतिकम् ॥५॥ सोऽभिवाद्यततःपादौदेवदेवस्यधर्मवित् ॥ पितामहमथोवाचवायुभूतइदंवचः ॥६॥ भगवन्निमिशापेनविदेहत्वमुपागमम् ॥ देवदेवमहादेववायुभूतोऽहमंडज ॥ ७ ॥ सर्वेषांदेहहीनानांमहद्दुःखंभविष्यति ॥ लुप्यंतेसर्वकार्याणिहीनदेहस्यवैप्रभो ॥ ८ ॥ देहस्यान्यस्यसद्भावेप्रसादकर्तुमर्हसि ॥ तमुवाचततोब्रह्मास्वयंभूरमितप्रभः ॥ ९ ॥ मित्रावरुणजंतेजआविशत्वंमहायशः ॥ अयोनिजस्त्वंभवितातत्रापिद्विजसत्तम ॥ धर्मेणमहतायुक्तःपुनरेष्यसिमेवशम् ॥ १० ॥ एवमुक्तस्तुदेवेनअभिवाद्यप्रदक्षिणम् ॥ कृत्वापितामहंपूर्णंप्रययौवरुणालयम् ॥११॥ तमेवकालं मित्रोऽपिवरुणत्वमकारयत् ॥ क्षीरोदेनसहोपेनःपूज्यमानःसुरेश्वरैः ॥ १२ ॥

हो रहा हूं ॥ ७ ॥ प्रभो ! शरीररहित सबहीको बडा दुःख होता है, और हीनदेहकी इस लोक तथा परलोककी सब क्रिया नष्ट हो जाती है ॥ ८ ॥ जिस प्रकारसे मुझे और देह प्राप्त हो जाय ऐसी कृपा आप कीजिये, यह वचन सुन बडे प्रभावाले स्वयंभू ब्रह्माजी उनसे बोले ॥९॥ हे महाशय ! तुम मित्र और वरुणके तेज वीर्यमें प्रवेश कर जाओ, हे द्विजश्रेष्ठ ! वहां भी तुम अयोनिज रहोगे और धर्मसे युक्त होकर तुम मेरे पुत्रत्वको प्राप्त हो ज्ञानी और प्रजापति रहोगे ॥ १० ॥ जब पितामह ब्रह्माजीने ऐसा कहा तो उनको अभिवादन कर प्रदक्षिणा करके वरुणलोकको गये ॥ ११ ॥ उसी समयमें मित्र (सूर्य) भी सम्पूर्ण देवताओंके द्वारा जो बडे २ थे पूजित होकर वहां आये और वरुणका कार्य करने लगे और क्षीरसागरको प्राप्त हुए साथही वसिष्ठजी भी गये ॥ १२ ॥

उसी समयमें परम अप्सरा उर्वशी अपनी इच्छासे सखियोंको साथ लिये विचरती हुई उस देशमें आकर प्राप्त हुई ॥ १३ ॥ वरुणालयमें उस रूपयौवन-सम्पन्न उर्वशी अप्सराको क्रीडा करती हुई देखकर उसकी प्रीतिके निमित्त वरुणजीको बडी प्रसन्नता हुई ॥ १४ ॥ उस कमलनेत्री पूर्णचन्द्रमुखी श्रेष्ठ अप्सराको वरुणजी मैथुनके निमित्त वरण करते हुए ॥ १५ ॥ तब वह अप्सरा हाथ जोडकर वरुणजीसे बोली हे सुरेश्वर ! इस समय साक्षात् मित्रजीने हमें वरण किया है ॥ १६ ॥ तब वरुणजी कामसे पीडित होकर कहने लगे जो ऐसा है तो तेरे दर्शनसे क्षुभित हुए अपने इस वीर्यको हम पुत्रोत्पत्तिकी सामर्थ्यवाले देवताओंके बनाये इस घडेमें स्थापन करते हैं ॥ १७ ॥ हे सुन्दर नितम्बोंवाली ! जो तू मेरे संगकी इच्छा नहीं करती है तो तेरे निमित्त इस

एतस्मिन्नेवकालेतुउर्वशीपरमाप्सराः ॥ यदृच्छयातमुद्देशमागतासखिभिर्वृता ॥ १३ ॥ तांदृष्ट्वारूपसंपन्नांक्रीडंतींवरुणालये ॥ तदाविशत्परो हर्षोवरुणंचोर्वशींकृते ॥ १४ ॥ सतांपद्मपलाशाक्षींपूर्णचंद्रनिभाननाम् ॥ वरुणोवरयामासमैथुनायाप्सरोवराम् ॥ १५ ॥ प्रत्युवाचततःसा तुवरुणंप्रांजलिःस्थिता ॥ मित्रेणाहंवृतासाक्षात्पूर्वमेवसुरेश्वर ॥ १६ ॥ वरुणस्त्वब्रवीद्वाक्यंकंदर्पशरपीडितः ॥ इदंतेजःसमुत्स्रक्ष्येकुंभेऽस्मि-न्देवनिर्मिते ॥ १७ ॥ एवमुत्सृज्यसुश्रोणित्वय्यहंवरवर्णिनि ॥ कृतकामोभविष्यामियदिनेच्छसिसंगमम् ॥ १८ ॥ तस्यतल्लोकनाथस्यवरु-णस्यसुभाषितम् ॥ उर्वशीपरमप्रीताश्रुत्वावाक्यमुवाचह ॥ १९ ॥ काममेतद्भवत्वेवंहृदयंमेत्वयिस्थितम् ॥ भावश्चाप्यधिकंतुभ्यंदेहोमित्रस्य तुप्रभो ॥२०॥ उर्वश्याएवमुक्तस्तुरेतस्तन्महदद्भुतम् ॥ ज्वलदग्निसमप्रख्यंतस्मिन्कुंभेन्यवासृजत् ॥२१॥ उर्वशीत्वगमत्तत्रमित्रोवैयत्रदेवता ॥ तांतुमित्रःसुसंक्रुद्धउर्वशीमिदमब्रवीत् ॥ २२ ॥ मयाऽभिमंत्रितापूर्वंकस्मात्त्वमवसार्जिता ॥ पतिमन्यंवृतवतीकिमर्थंदुष्टचारिणि ॥ २३ ॥

घटमें वीर्य स्थापन कर कामभोगके समान कृतकाम हूंगा ॥ १८ ॥ उन लोकनाथ वरुणके यह वचन सुनकर उर्वशी परम प्रसन्न होकर यह वचन कहने लगी ॥ १९ ॥ यह बात ऐसेही हो क्योंकि तुम भी मेरे हृदयमें अधिक वस रहे हो और भावद्वारा ही हमारा तुम्हारा भोग हो कारण कि, इस समय यह देह तो मित्रके निमित्त दे चुकी हूं ॥ २० ॥ जब उर्वशीने ऐसा कहा तो वह परम अद्भुत वीर्य जो जलती हुई अग्निके समान था उस घडेमें छोड दिया ॥ २१ ॥ और उर्वशी वहां गई जहां मित्र देवता थे तब मित्रजी उर्वशीको देखकर क्रोधसे कहने लगे ॥ २२ ॥ हे दुष्टचारिणी ! जब कि तुझे मैंने बुलाया था तो कैसे तुमने मुझसे मिले बिना दूसरे पतिका वरण किया ॥ २३ ॥

इस पापसे तू मेरे क्रोधसे कलुषित होकर कुछ काल पर्यन्त मृत्युलोकमें वास करेगी ॥ २४ ॥ हे कुबुद्धिनी ! काशीराज बुधके पुत्र राजर्षि पुरूरवाके निकट जाकर प्राप्त हो वह तेरा भर्ता होगा ॥ २५ ॥ तब वह अप्सरा शापदोषसे पुरूरवाके पास आई यह पुरूरवा बुधके औरस पुत्र प्रतिष्ठानपुरमें वास करते थे ॥ २६ ॥ उससे उन राजाके श्रीमान् आयुनाम पुत्र बडे बली उत्पन्न हुए जिनके पुत्र इन्द्रके समान कांतिवाले नहुषजी हुए ॥ २७ ॥ जिन राजा नहुषने "वृत्रासुरके ऊपर वज्र चलानेसे ब्रह्महत्याको प्राप्त हुए इन्द्रके छिपने पर बहुत हजार वर्षतक इन्द्रलोकका राज्य किया" ॥२८॥ वह सुन्दर दंत और सुन्दर नेत्रवाली उर्वशी मित्रके शापवश भूलोकमें प्राप्त हुई, और बहुत वर्षतक मनुष्यलोकमें वास किया, शापक्षय होनेपर फिर इन्द्रलोकको गई ॥ २९ ॥ इत्यार्षे

अनेनदुष्कृतेनत्वंमत्क्रोधकलुषीकृता ॥ मनुष्यलोकमास्थायकंचित्कालंनिवत्स्यसि ॥२४॥ बुधस्यपुत्रोराजर्षिःकाशिराजःपुरूरवाः ॥ तमभ्यागच्छदुर्बुद्धेसतेभर्ताभविष्यति ॥ २५ ॥ ततःसाशापदोषेणपुरूरवसमभ्यगात् ॥ प्रतिष्ठानेपुरूरवंबुधस्यात्मजमौरसम् ॥ २६ ॥ तस्य जज्ञे तःश्रीमानायुःपुत्रोमहाबलः ॥ नहुषोयस्यपुत्रस्तुबभूवेंद्रसमद्युतिः ॥ २७ ॥ वज्रमुत्सृज्यवृत्रायश्रांतेऽयत्रिदिवेश्वरे ॥ शतंवर्षसहस्राणियेनेंद्रत्वप्रशासितम् ॥ २८ ॥ सातेनशापेनजगामभूमितदोर्वशीचारुदतीसुनेत्रा ॥ बहूनिवर्षाण्यवसच्चसुभ्रूःशापक्षयादिंद्रसदोययौच ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे षट्पंचाशः सर्गः ॥ ५६ ॥ तांश्रुत्वादिव्यसंकाशःकथामद्भुतदर्शनाम् ॥ लक्ष्मणःपरमप्रीतोराघववाक्यमब्रवीत् ॥ १ ॥ निक्षिप्तदेहौकाकुत्स्थंकथंतौद्विजपार्थिवौ ॥ पुनर्देहेनसंयोगंजग्मतुर्देवसंमतौ ॥ २ ॥ तस्य तद्भाषितंश्रुत्वारामःसत्यपराक्रमः ॥ तांकथांकथयामासवसिष्ठस्यमहात्मनः ॥ ३ ॥ यःसकुंभोरघुश्रेष्ठतेजःपूर्णोमहात्मनोः ॥ तस्मिंस्तेजोमयौविप्रौसंभूतावृषिसत्तमौ ॥ ४ ॥ पूर्वंसमभवत्तत्रअगस्त्योभगवानृषिः ॥ नाहंसुतस्तवेत्युक्त्वामित्रंतस्मादपाक्रमत् ॥ ५ ॥

श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां षट्पंचाशः सर्गः ॥ ५६ ॥ इस प्रकारसे परम दिव्य अद्भुत दर्शनयुक्त कथाको रघुनाथजीके मुखसे श्रवण कर लक्ष्मणजी परमप्रसन्न हो रघुनाथजीसे बोले ॥ १ ॥ हे रामचन्द्रजी ! जब उन देवपूजित ब्राह्मण और राजाने अपना शरीर त्यागन किया तो फिर किस प्रकारसे वे देहयोगको प्राप्त हुए ॥ २ ॥ सत्यपराक्रमकारी श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकार लक्ष्मणजीके वचन सुनकर उन महात्मा वसिष्ठजीकी उस कथाको कहने लगे ॥ ३ ॥ हे भ्राता लक्ष्मण! जो वह घड़ा उन महात्माके वीर्यसे पूर्ण हुआ था उसमेंसे तेजस्वी दो ऋषिश्रेष्ठ उत्पन्न हुए ॥ ४ ॥ पहले तो उनमें भगवान् अगस्त्यजी उत्पन्न हुए और " मैं तुम्हारा ही पुत्र नहीं हूं वरुणका भी हूं" यह मित्रजीसे कहकर वहांसे चले गये ॥ ५ ॥

कारण कि उर्वशीमें मित्रका तेज पूर्वसे विराचित था उस कुंभमें वरुणजीने अपना तेज स्थापित किया उसमें प्रथम मित्रका तेज आगया था ॥ ६ ॥ (इसी कारण अगस्त्यजीने कहा कि मैं केवल तुम्हारा पुत्र नहीं हूं इसी कारण अगस्त्यजीको मैत्रावरुणी कहते हैं) कुछ दिनों उपरान्त मित्रावरुणके तेजसे अपने तेजसे देदीप्यमान इक्ष्वाकुकुलके पूज्य वसिष्ठजी उत्पन्न हुए ॥ ७ ॥ उन निन्दारहितके उत्पन्न होते ही इक्ष्वाकुमहाराजने कहा; आप हमारे वंशके कल्याणके निमित्त पुरोहित हूजिये ॥ ८ ॥ हे लक्ष्मण ! इस प्रकारसे तो महात्मा वसिष्ठजीको नूतन देहकी प्राप्ति हुई; हे सौम्य ! अब निमिजीका वृत्तांत सुनिये ॥ ९ ॥ निमिराजाको विदेह देखकर वह सब ऋषि जो बडे बुद्धिमान् थे उनको निमि दीक्षाकर्ममें नियुक्त करते हुए ॥ १० ॥ वह ब्राह्मणश्रेष्ठ

तद्धितेजस्तुमित्रस्यउर्वश्यापूर्वमाहितम् ॥ तस्मिन्समभवत्कुंभेतत्तेजोयत्रवारुणम् ॥ ६ ॥ कस्यचित्त्वथकालस्यमित्रावरुणसंभवः ॥ वसिष्ठ-स्तेजसायुक्तोजज्ञेइक्ष्वाकुदैवतम् ॥ ७ ॥ तमिक्ष्वाकुर्महातेजाजातमात्रमनिंदितम् ॥ वव्रेपुरोधसंसौम्यवंशस्याऽस्यहितायनः ॥ ८ ॥ एवंत्वपू-र्वदेहस्यवसिष्ठस्यमहात्मनः ॥ कथितोनिर्गमःसौम्यनिमेःश्रृणुयथाभवत् ॥ ९ ॥ दृष्ट्वाविदेहंराजानमृषयःसर्वएवते ॥ तंचतेयोजयामासुर्यज्ञ-दीक्षांमनीषिणः ॥ १० ॥ तंचदेहंनरेंद्रस्यरक्षंतिस्मद्विजोत्तमाः : गंधैर्माल्यैश्चवस्त्रैश्चपौरभृत्यसमन्विताः ॥ ११ ॥ ततोयज्ञेसमाप्तेतुभृगुस्त-त्रेदमब्रवीत् ॥ आनयिष्यामितेचेतस्तुष्टोऽस्मितवपार्थिव ॥ १२ ॥ सुप्रीताश्चसुराःसर्वेनिमेश्चेतस्तदाब्रुवन् ॥ वरंवरयराजर्षेक्कतेचेतोनिरूप्य-ताम् ॥ १३ ॥ एवमुक्तःसुरैःसर्वैर्निमेश्चेतस्तदाब्रवीत् ॥ नेत्रेषुसर्वभूतानांवसेयंसुरसत्तमाः ॥ १४ ॥ बाढमित्येवविबुधानिमेश्चेतस्तदाब्रूवन् ॥ नेत्रेषुसर्वभूतानांवायुभूतश्चरिष्यसि ॥ १५ ॥ त्वत्कृतेचनिमिष्यंतिचक्षूंषिपृथिवीपते ॥ वायुभूतेनचरताविश्रामार्थंमुहुर्मुहुः ॥ १६ ॥

उस राजाकी देहकी तेलकटाहमें रक्षा करने लगे, और गन्धमाला वस्त्रादिसे रक्षित किया, और पुरवासी भृत्यादि सब सावधान होरहे जिससे देह न बिगडे ॥ ११ जब यज्ञ समाप्त हुआ उस समय भृगुजी यह वचन बोले हे राजन् ! मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हूं; इस कारण तुम्हारी देहमें तुम्हारी आत्माको लाता हूँ ॥ १२ ॥ इस ओर सब देवता भी आकर निमिसे कहने लगे हे राजर्षि ! वर मांगिये कि हम आपका जीव कहां स्थापन करें ॥ १३ ॥ जब सम्पूर्ण देवताओंने ऐसा कहा तब निमिका आत्मा कहने लगा हे देवताओ ! हम सब प्राणियोंके नेत्रोंमें वसनेकी इच्छा करते हैं ॥ १४ ॥ बहुत अच्छा कह यह संपूर्ण देवताओंने कहा कि, आप वायुरूपसे सब प्राणियोंकी देहोंमें निवास करोगे ॥ १५ ॥ हे राजन् ! जब वायुरूप होकर आप सब प्राणियोंके नेत्रोंमें वास

करोगे तो विश्रामके निमित्त संपूर्ण प्राणियोंके नेत्र पलक लगा करेंगे ॥१६॥ यह कहकर सब देवता अपने २ स्थानको चले गये और तब महात्मा ऋषि भी निमिके देहको लेकर ॥१७॥ उसमें अरणि डालकर पराक्रमसे हवनके मंत्रसे पढकर वे सब महात्मा निमिके पुत्र होनेके निमित्त हवनके मंत्रोंसे मथन करने लगे ॥ १८ ॥ जब इस प्रकार अरणीद्वारा मथन किया तब उससे महातेजस्वी पुरुषका जन्म हुआ, मथनसे उत्पन्न होनेके कारण मिथिनाम हुआ, जनन अर्थात् प्रादुर्भूत होनेसे जनक कहलाये ॥१९॥ और चेतन रहित देहसे उत्पन्न होनेके कारण एक नाम विदेह भी हुआ, इस प्रकार जनक विदेह पूर्वकालमें राजा हुए वह मिथि बडे तेजस्वी हुए जिनके वंशमेंके राजा मैथिल कहाये ॥२०॥ हे लक्ष्मण ! मैंने ऋषिके शापसे राजाका और राजाके शापसे ऋषिश्रेष्ठका चेतना रहित होना

एवमुक्त्वातुविबुधाःसर्वेजग्मुर्यथागतम् ॥ ऋषयोऽपिमहात्मानोनिमेर्देहंसमाहरन् ॥१७॥ अरणिंतत्रनिक्षिप्यमथनंचक्रुरोजसा ॥ मंत्रहोमैर्महात्मानःपुत्रहेतोर्निमेस्तदा ॥१८॥ अरण्यांमथ्यमानायांप्रादुर्भूतोमहातपाः ॥ मथनान्मिथिरित्याहुर्जननाज्जनकोऽभवत् ॥ १९ ॥ यस्माद्विदेहात्संभूतोवैदेहस्तुततःस्मृतः ॥ एवंविदेहराजश्चजनकःपूर्वकोऽभवत् ॥ मिथिर्नाममहातेजास्तेनायंमैथिलोऽभवत् ॥ २० ॥ इतिसर्वमशेषतो मयाकथितंसंभवकारणंतुसौम्य ॥ नृपपुंगवशापजंद्विजस्यद्विजशापाच्चयदद्भुतंनृपस्य ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि च० सा० उत्तरकांडे सप्तपंचाशः सर्गः ॥ ५७ ॥ एवंब्रुवतिरामेतुलक्ष्मणःपरवीरहा ॥ प्रत्युवाचमहात्मानंज्वलंतमिवतेजसा ॥ १ ॥ महदद्भुतमाश्चर्यंविदेहस्यपुरातनम् ॥ निवृत्तंराजशार्दूलवसिष्ठस्यमुनेश्चह ॥२॥ निमिस्तुक्षत्रियःशूरोविशेषेणचदीक्षितः ॥ नक्षमंकृतवान्राजावसिष्ठस्यमहात्मनः ॥ ३ ॥ एवमुक्तस्तुतेनायंरामःक्षत्रियपुंगवः ॥ उवाचलक्ष्मणंवाक्यंसर्वशास्त्रविशारदम् ॥ ४ ॥ रामोरमयतांश्रेष्ठोभ्रातरंदीप्ततेजसम् ॥ नसर्वत्रक्षमावीरपुरुषेषुप्रदृश्यते ॥ ५ ॥ सौमित्रदुःसहोरोषोयथाक्षांतोययातिना ॥ सत्त्वानुगंपुरस्कृत्यतन्निबोधसमाहितः ॥ ६ ॥

और फिर अद्भुत शरीरकी प्राप्ति होना यह तुमको संपूर्ण सुनाया ॥२१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां सप्तपंचाशः सर्गः ॥ ५७ ॥ शत्रुओंको मारनेवाले लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर तेजसे प्रकाशित महात्मा श्रीरामचंद्रजीसे फिर बोले ॥१॥ हे पुरुषराजशार्दूल ! यह विदेहराजकी पुरातन कथा जिसमें वसिष्ठ मुनिजीके साथ प्रसंग है बहुतही आश्चर्ययुक्त है ॥ २॥ परन्तु राजा निमि तो बडे शूर क्षत्रिय और विशेष करके यज्ञमें दीक्षित थे सो उन राजाने वसिष्ठजीपर क्षमा क्यों नहीं की? ॥३॥ क्षत्रियोंमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकार पूछे जानेपर सम्पूर्ण शास्त्रके जाननेवाले लक्ष्मणजीसे कहने लगे ॥४॥ आनंदकरानेवालोंमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्र तेजयुक्त लक्ष्मण भ्रातासे कहने लगे । हे वीर ! सर्वत्र सब पुरुषोंमें क्षमा नहीं देखी जाती है ॥५॥ हे लक्ष्मण ! यह दुस्सह

क्रोध जिस प्रकार ययाति राजाने सत्त्वगुणमें स्थित होकर सहन किया था, वह तुम सावधान होकर सुनो ॥६॥ नहुषके पुत्र राजा ययाति बडे प्रजापालक थे, हे लक्ष्मण ! पृथ्वीमें सबसे अधिक रूपवान उनकी दो भार्या थीं ॥७॥ एक तो उन राजर्षि नहुषके पुत्र ययातिराजाकी शर्मिष्ठा भार्या थी जो दितिकी पोती वृषपर्वा दैत्यकी कन्या थी, यह राजाको प्यारी थी ॥८॥ दूसरे शुक्रकी कन्या उनकी भार्या थी उसका नाम देवयानी था, यह सुमध्यमा राजाको बहुत प्यारी नहीं थी ॥ ९ ॥ उन दोनोंके, रूपवान श्रेष्ठ दो पुत्र हुए शर्मिष्ठासे पुरु और देवयानीसे यदुका जन्म हुआ ॥ १० ॥ माताके समान गुणयुक्त होनेसे पुरु पुत्र राजाको बहुत प्यारा हुआ यह देख महत् दुःखी हो यदुने अपनी मातासे जाकर कहा ॥ ११ ॥ हे माता ! अलौकिक कर्म देव भार्गवके कुलमें

नाहुषस्यसुतोराजाययातिःपौरवर्धनः ॥ तस्यभार्याद्वयंसौम्यरूपेणाप्रतिमंभुवि ॥७॥ एकातुतस्यराजर्षेर्नाहुषस्यपुरस्कृता ॥ शर्मिष्ठानामदैतेयीदुहितावृषपर्वणः ॥८॥ अन्यातूशनसःपत्नीययातेःपुरुषर्षभ ॥ नतुसादयिताराज्ञोदेवयानीसुमध्यमा ॥ ९ ॥ तयोःपुत्रौतुसंभूतौरूपवंतौसमाहितौ ॥ शर्मिष्ठाऽजनयत्पूरुंदेवयानीयदुंतदा ॥१०॥ पूरुस्तुदयितोराज्ञोगुणैर्मातृकृतेनच ॥ ततोदुःखसमाविष्टोयदुर्मातरमब्रवीत् ॥ ११॥ भार्गवस्यकुलेजातादेवस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ सहसेहृद्गतंदुःखमवमानंचदुःसहम् ॥ १२॥ आवांचसहितौदेविप्रविशावहुताशनम् ॥ राजातुरमतांसार्धंदैत्यपुत्र्याबहुक्षपाः ॥ १३ ॥ यदिवासहनीयंतेमामनुज्ञातुमर्हसि ॥ क्षमत्वंनक्षमिष्येऽहंमरिष्यामिनसंशयः ॥ १४ ॥ पुत्रस्यभाषितंश्रुत्वापरमार्तस्यरोदतः ॥ देवयानीतुसंक्रुद्धासस्मारपितरंतदा ॥ १५ ॥ इंगितंतदभिज्ञायदुहितुर्भार्गवस्तदा ॥ आगतस्त्वरितंतत्रदेवयानीस्मयत्रसा ॥ १६ ॥ दृष्ट्वाचाप्रकृतिस्थांतामप्रहृष्टामचेतनाम् ॥ पितादुहितरंवाक्यंकिमेतदितिचाब्रवीत् ॥ १७ ॥ पृच्छंतमसकृत्तंवैभार्गवंदीप्तचेतसम् ॥ देवयानीतुसंक्रुद्धापितरंवाक्यमब्रवीत् ॥ १८ ॥

जन्म लेकर ऐसे हृदयभेदी दुःख और अपमान कैसे सहन करती हो ? ॥ १२ ॥ हे माता ! हमारे सहित आप अग्निमें प्रवेश कर जाइये, राजा तो बहुत कालसे दैत्यपुत्रीके संग रमण करते हैं ॥ १३ ॥ और जो माता तुम इसे सहन करती हो तो मुझे आज्ञा दो तुम चाहे कुछ मत करो परन्तु मैं तो निःसंदेह प्राण त्याग करूंगा ॥१४॥ परम दुःखी रोते हुए पुत्रके यह वचन सुनकर क्रोधित हो पिताको स्मरण करती हुई ॥१५॥ शुक्रजी अपनी पुत्रीकी यह अवस्था जानकर शीघ्रतासे जहां देवयानी थी, वहां आये ॥१६॥ देवयानीको अस्वस्थ दुःखी क्षुभितचित्त देख कर शुक्रजी कन्यासे बोले कि, यह क्या बात है ? ॥ १७ ॥ जब उन महादीप्तिमान् भार्गवजीने बारंबार पूछा तब देवयानी क्रोधकर पितासे कहने लगी ॥ १८ ॥

हे मुनिसत्तम ! या तो मैं अवश्य अग्निमें प्रवेश कर जाऊंगी या विष भक्षण करलूँगी परन्तु किसी प्रकार भी प्राण धारण नहीं करूँगी ॥१९॥ तुम नहीं जानते कि, मैं कितनी दुःखी हूं और मेरा कैसा निरादर होता है, हे ब्रह्मन् ! जैसे वृक्षके कटनेपर वृक्षजीवी भी मर जाते हैं यही दशा मेरे पुत्रोंकी होगी ॥२०॥ हे भार्गव राजर्षि ! वह अवज्ञा और निरादर यह है कि, वह राजर्षि मुझे बहुत नहीं मानते और मेरा तिरस्कार भी करते हैं ॥ २१ ॥ शुक्रजी अपनी कन्याके यह वचन सुन महाक्रोधित हो नहुषपुत्र ययातिके निमित्त ऐसे वचन बोले ॥२२॥ हे दुरात्मा नहुषपुत्र ! जिस कारणसे कि, तुमने हमारा निरादर किया है इसीसे तुमको अभी जराअवस्था प्राप्त होगी और तुम्हारे सब अंग शिथिल हो जायँगे ॥ २३ ॥ ऐसा कह शुक्रजी अपनी कन्याको समझाय वह

अहमग्निंविषंतीक्ष्णमपोवामुनिसत्तम ॥ भक्षयिष्येप्रवेक्ष्येवानतुशक्ष्यामिजीवितुम् ॥१९॥ नमांत्वमवजानीषेदुःखितामवमानिताम् ॥ वृक्षस्यावज्ञयाब्रह्मंश्छिद्यंतेवृक्षजीविनः ॥ २० ॥ अवज्ञयाचराजर्षिःपरिभूयचभार्गव ॥ मय्यवज्ञांप्रयुंक्तेहिनचमांबहुमन्यते ॥ २१ ॥ तस्यास्तद्वचनंश्रुत्वाकोपेनाभिपरीवृतः ॥ व्याहर्तुमुपचक्रामभार्गवोनहुषात्मजम् ॥ २२ ॥ यस्मान्मामवजानीषेनाहुसत्वदुरात्मवान् ॥ वयसाजरयाजीर्णःशैथिल्यमुपयास्यसि ॥२३॥ एवमुक्त्वादुहितरंसमाश्वास्यसभार्गवः ॥ पुनर्जगामब्रह्मर्षिर्भवनंस्वंमहायशाः ॥२४॥ सएवमुक्त्वाद्विजपुंगवाग्र्यःसुतांसमाश्वास्यचदेवयानीम् ॥ पुनर्ययौसूर्यसमानतेजादत्त्वाचशापंनहुषात्मजाय ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च० सा० उत्तरकांडे अष्टपचाशः सर्गः ॥ ५८ ॥ श्रुत्वातूशनसंक्रुद्धंतदार्तोनहुषात्मजः ॥ जरांपरमिकांप्राप्ययदुंवचनमब्रवीत् ॥ १ ॥ यदोत्वमसिधर्मज्ञोमदर्थंप्रतिगृह्यताम् ॥ जरांपरमिकांपुत्रभोगैरंस्येमहायशः ॥ २ ॥ नतावत्कृतकृत्योऽस्मिविषयेषुनरर्षभ ॥ अनुभूयतदाकामंततःप्राप्स्याम्यहंजराम् ॥ ३ ॥ यदुस्तद्वचनंश्रुत्वाप्रत्युवाचनरर्षभम् ॥ पुत्रस्तेदयितःपूरुःप्रतिगृह्णातुवैजराम् ॥ ४ ॥

महायशस्वी ब्रह्मर्षि फिर अपने स्थानको आये ॥ २४ ॥ वह ब्राह्मणोंमें अग्रणी इस प्रकारसे कहकर अपनी पुत्री देवयानीको समझाय बुझाय नहुषपुत्रको शाप देकर वह तेजस्वी फिर अपने घर आये ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामष्टपंचाशः सर्गः ॥५८॥ नहुषपुत्र ययाति शुक्रजीको क्रोधित सुनकर महादुःखी हो अत्यन्त वृद्धताको पाय यदुसे कहने लगे ॥ १ ॥ हे पुत्र यदु ! तू बडा धर्मात्मा है सो यह मेरी जरा अवस्था ग्रहण कर, हे महायशस्वी ! अभी मैं तृप्त नहीं हूं अभी भोग भोगूंगा ॥२॥ हे नरश्रेष्ठ ! जब तक मैं विषय भोगसे सन्तुष्ट न हो जाऊँ तब तक मैं कामक्रीडा करूँगा, पश्चात् तुमसे जरा अवस्था ग्रहण कर लूँगा ॥३॥ यह वचन सुनकर यदुने राजश्रेष्ठ ययातिसे कहा तुम्हारा प्यारा बेटा पुरु तुम्हारे बुढापेको तुमसे ग्रहण करलेगा॥४॥

हे राजन् ! आपने तो मुझे अपने निकटसे और सब अर्थोंसे अलग कर दिया है, आप जिनके संग खाते पीते हो वही तुम्हारे बुढापेको ग्रहण करेंगे ॥५॥ उसके यह वचन सुनकर राजा पुरुसे कहने लगा कि हे महाभुज ! मेरे प्रिय करनेके निमित्त तुम यह मेरी अवस्था ग्रहण करो ॥६॥ जब ययातिने ऐसा कहा तो पुरु हाथ जोडकर बोला आज मैं आपकी आज्ञा माननेसे धन्य और अनुगृहीत हुआ हूँ ॥७॥ यह पुरुके वचन सुनकर ययाति परम प्रसन्न हो अत्यन्त सुखको प्राप्त हुए और योगबलसे उसके शरीरमें जरा प्रवेश कर देते हुए ॥८॥ तब वह राजा तरुण हो हजारों यज्ञ करके बहुत सहस्रों वर्षतक पृथ्वीको पालन करते हुए ॥ ९ ॥ फिर बहुत काल बीतने पर राजाने पुरुसे कहा हे पुत्र ! हमारी धरोहरके समान रक्खी हुई जरावस्था आप हमको दीजिये ॥ १० ॥ हे पुत्र !

बहिष्कृतोऽहमर्थेषुसन्निकर्षाच्चपार्थिव ॥ प्रतिगृह्णातुवैराजन्यैःसहाश्नासिभोजनम् ॥ ५ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराजापूरुमथाब्रवीत् ॥ इयंजरा-महाबाहोमदर्थंप्रतिगृह्यताम् ॥ ६ ॥ नाहुषेणैवमुक्तस्तुपूरुःप्रांजलिरब्रवीत् ॥ धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मिशासनेऽस्मितवास्थितः ॥ ७ ॥ पूरोर्व-चनमाज्ञायनाहुषःपरयामुदा ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेजरांसंक्रामयच्चताम् ॥ ८ ॥ ततःसराजातरुणःप्राप्ययज्ञान्सहस्रशः ॥ बहुवर्षसहस्राणिपालया-मासमेदिनीम् ॥ ९ ॥ अथदीर्घस्यकालस्यराजापूरुमथाब्रवीत् ॥ आनयस्वजरांपुत्रन्यासंनिर्यातयस्वमे ॥ १० ॥ न्यासभूतामयापुत्रत्वयिसं-क्रामिताजरा ॥ तस्मात्प्रतिग्रहीष्यामितांजरांमाव्यथांकृथाः ॥ ११ ॥ प्रीतश्चास्मिमहाबाहोशासनस्यप्रतिग्रहात् ॥ त्वांचाहमभिषेक्ष्यामिप्री-तियुक्तोनराधिपम् ॥ १२ ॥ एवमुक्त्वासुतंपूरुंययातिर्नहुषात्मजः ॥ देवयानीसुतंक्रुद्धोराजावाक्यमुवाचह ॥ १३ ॥ राक्षसस्त्वंमयाजातःपुत्ररू-पोदुरासदः ॥ प्रतिहंसिममाज्ञांत्वंप्रजार्थेविफलोभव ॥ १४ ॥ पितरंगुरुभूतंमांयस्मात्त्वमवमन्यसे ॥ राक्षसान्यातुधानांस्त्वंजनयिष्यसिदारु-णान् ॥ १५ ॥ नतुसोमकुलोत्पन्नेवंशेस्थास्यसिदुर्मते ॥ वंशोऽपिभवतस्तुल्योदुर्विनीतोभविष्यति ॥ १६ ॥

तुझे जरा अवस्था धरोहरकी भांति दी थी इस कारण इसमें व्यथा करनेकी कोई बात नहीं है ॥११॥ हे महाभुज ! तुमने जो मेरी आज्ञा मानी इस कारण मैं तुझसे अधिक प्रसन्न हूँ और मैं प्रसन्न होकर तुमको राज्यसिंहासनमें अभिषेक करूँगा ॥१२॥ नहुषपुत्र ययाति अपने पुरु पुत्रसे इस प्रकार कहकर देवयानीके पुत्रसे क्रोधसहित बोले ॥१३॥ हे नीच ! तू मुझसे क्षत्रियरूपमें कोई राक्षस उत्पन्न हुआ है, जिससे तैंने मेरी आज्ञा नहीं मानी इसकारण तू राज्यका अधिकारी नहीं होगा ॥१४॥ गुरुरूप मुझे अपने पिताका जो तैंने निरादर किया है इस कारण तुझसे राक्षस यातुधान क्रूरकर्मा सन्तान होगी ॥ १५॥ तेरी सन्तान जो कि, राक्षस स्वभाववाली नहीं होगी वह क्षत्रियमात्र नाम वाली होगी किन्तु राज्याभिषिक्त न होगी क्योंकि तेरा वंश बहुधा तेरी समान दुर्विनीत होगा ॥१६॥

उसे राजर्षि ययाति इस प्रकार कह, राज्य बढाने वाले पुरुको राज्यसिंहासनमें बैठाय वानप्रस्थाश्रममें प्रवेश कर गये ॥ १७ ॥ फिर बहुत समय उपरांत प्रारब्धके अन्तको प्राप्त हो नहुषपुत्र ययाति स्वर्गको सिधारे ॥१८॥ और पुरु धर्मपूर्वक उनके राज्यका पालन करने लगे, काशीराज्यमें श्रेष्ठ प्रतिष्ठानपुर (प्रयाग) के निकट वह महायशस्वी राज्य करते थे ॥ १९ ॥ शापसे यदुके सहस्रों यातुधान उत्पन्न हुए जो राजवंशते बाहर क्रौंच वनके महादुर्गस्थानमें वह तब वास करने लगे ॥ २० ॥ इस प्रकारसे शुक्राचार्यके दिये हुए शापको ययातिने क्षात्र धर्मसे स्वीकार कर लिया जिसको राजा निमि न सह सके ॥ २१ ॥ यह आपके प्रति प्रजापालनके वृत्तान्त सब वर्णन किये । हे सौम्य ! हमको इस प्रकारसे वर्तना चाहिये जिसमें कोई दोष उपस्थित न हो,

तमेवमुक्त्वाराजर्षिःपूरुंराज्यविवर्धनम् ॥ अभिषेकेणसंपूज्यआश्रमंप्रविवेशह ॥ १७ ॥ ततःकालेनमहतादिष्टांतमुपजग्मिवान् ॥ त्रिदिवंसगतोराजाययातिर्नहुषात्मजः ॥१८॥ पूरुश्चकारतद्राज्यंधर्मेणमहतावृतः ॥ प्रतिष्ठानेपुरवरेकाशिराज्येमहायशाः ॥१९॥ यदुस्तुजनयामासयातुधानान्सहस्रशः ॥ पुरेक्रौंचवनेदुर्गेराजवंशबहिष्कृते ॥ २० ॥ एषतूशनसामुक्तःशापोत्सर्गोययातिना ॥ धारितःक्षत्रधर्मेणयंनिमिश्चक्षमेनच ॥२१॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंदर्शनंसर्वकारिणाम् ॥ अनुवर्तामहेसौम्यदोषोनस्याद्यथानृगे ॥ २२ ॥ इतिकथयतिरामेचंद्रतुल्याननेनप्रविरलतरतारंव्योमजज्ञेतदानीम् ॥ अरुणकिरणरक्तादिग्बभौचैवपूर्वाकुसुमरसविमुक्तंवस्त्रमागुंठितेव ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मी० आदि० च० सा० उत्तरकांडे एकोनषष्टितमः सर्गः ॥५९॥ एतदग्रेप्रक्षिप्ताःसर्गाः ॥ ३ ॥ ततःप्रभातेविमलेकृत्वापौर्वाह्णिकींक्रियाम् ॥ धर्मासनगतोराजारामोराजीवलोचनः ॥ १ ॥ राजधर्मानवेक्षन्वैब्राह्मणैर्नैगमैःसह ॥ पुरोधसावसिष्ठेनऋषिणाकश्यपेनच ॥ २ ॥ मंत्रिभिर्व्यवहारज्ञैस्तथान्यैर्धर्मपाठकैः ॥ नीतिज्ञैरथसभ्यैश्चराजभिःसासमावृता ॥३॥ सभायथामहेंद्रस्ययमस्यवरुणस्यच ॥ शुशुभेराजसिंहस्यरामस्याक्लिष्टकर्मणः ॥४॥

जैसा नृगको हुआ ॥ २२ ॥ चन्द्रमुख रामचन्द्रके ऐसा कहते आकाश थोडे तारोंसे युक्त हो गया, और पूर्व दिशा अरुणकी किरणोंसे लाल हो गई मानो उसने कुसुमरंगका वस्त्र ओढ लिया है ॥२३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामेकोनषष्टितमः सर्गः ॥५९॥ प्रातःकाल होते ही प्रभातकी सब क्रियाओंसे निश्चिन्त हो राजीवलोचन राम धर्मासनपर जा विराजे ॥ १ ॥ वेद शास्त्रोंके जाननेवाले पुरोहित वसिष्ठ और कश्यपऋषिके सहित राजकार्योंको देखते हुए ॥ २ ॥ व्यवहारके जानने वाले मंत्री तथा धर्मके जाननेवाले, नीतिके जाननेवाले सभासदों और राजाओंसे वह सभा परिपूर्ण थी ॥३॥ जैसी सभा महेन्द्र यम वरुणकी है, इसी प्रकार अक्लिष्टकर्मा राजसिंह रामचन्द्रकी वह सभा शोभित हुई ॥ ४ ॥

उस समय रामचन्द्रजी शुभलक्षण युक्त लक्ष्मणजीसे बोले, हे महाभुज ! सुमित्राके आनन्द बढानेवाले ! तुम बाहर जाओ ॥ ५ ॥ और हे लक्ष्मण ! जो कार्यार्थी बाहरहों उन्हें लिवा लाओ, शुभ लक्षण युक्त लक्ष्मणजी रामचन्द्रके वचन सुनकर ॥ ६ ॥ द्वारपर जाय स्वयं कार्यार्थियोंको बुलाने लगे सो वहां कोई भी नहीं बोला कि, हमारा यह कार्य है ॥७॥ कारण कि, रामके राज्यमें आधिव्याधि नहीं थी, पके खेतोंसे और सब औषधियोंसे भरीपुरी पृथ्वी रहती थी ॥ ८ ॥ बालक, युवा कोई रामके राज्यमें नहीं मरता था, सब कोई धर्ममें शिक्षित थे इस कारण कोई व्याधि नहीं थी ॥ ९ ॥ रामके राज्य करते समयमें कोई कार्यार्थी नहीं था सो लक्ष्मणने हाथ जोडकर रामचन्द्रसे यह बात निवेदन की ॥ १० ॥ फिर रामचन्द्रजी प्रसन्न होकर लक्ष्मणजीसे

अथरामोऽब्रवीत्तत्रलक्ष्मणंशुभलक्षणम् ॥ निर्गच्छत्वंमहाबाहोसुमित्रानंदवर्धन ॥ ५ ॥ कार्यार्थिनश्चसौमित्रेव्याहर्तुंत्वमुपाक्रय ॥ रामस्यभाषितंश्रुत्वालक्ष्मणःशुभलक्षणः ॥ ६ ॥ द्वारदेशमुपागम्यकार्यिणश्चाह्वयत्स्वयम् ॥ नकश्चिदब्रवीत्तत्रममकार्यमिहाद्यवै ॥ ७ ॥ नाधयोव्याधयश्चैवरामेराज्यंप्रशासति ॥ पक्कसस्यावसुमतीसर्वौषधिसमन्विता ॥ ८ ॥ नबालोम्रियतेतत्रनयुवानचमध्यमः ॥ धर्मेणशासितंसर्वनचबाधाविधीयते ॥ ९ ॥ दृश्यतेनचकार्यार्थीरामेराज्यंप्रशासति ॥ लक्ष्मणःप्रांजलिर्भूत्वारामायैवंन्यवेदयत् ॥ १० ॥ अथरामःप्रसन्नात्मासौमित्रिमिदमब्रवीत् ॥ भूयएवतुगच्छत्वंकार्यिणःप्रविचारय ॥ ११ ॥ सम्यक्प्रणीतयानीत्यानाधर्मोविद्यतेक्कचित् ॥ तस्माद्राजभयात्सर्वेरक्षंतीहपरस्परम् ॥ १२ ॥ बाणाइवमयामुक्ताइहरक्षंतिमेप्रजाः ॥ तथापित्वंमहाबाहोप्रजारक्षस्वतत्परः ॥ १३ ॥ एवमुक्तस्तुसौमित्रिर्निर्जगामनृपालयात् ॥ अपश्यद्द्वारदेशेवैश्वानंतावदवस्थितम् ॥ १४ ॥ तमेवंवीक्षमाणोवैविक्रोशन्तंमुहुर्मुहुः ॥ दृष्ट्वाथलक्ष्मणस्तंवैसपप्रच्छाथवीर्यवान् ॥ १५ ॥ किंतेकार्यंमहाभागब्रूहिविस्रब्धमानसः ॥ लक्ष्मणस्यवचःश्रुत्वासारमेयोऽभ्यभाषत ॥ १६ ॥

कहने लगे, तुम फिर जाकर कार्य करनेवालोंके विचारसे देखो ॥ ११ ॥ सम्यक् प्रकार प्रणय और नीतिके कारण कहीं कुछ अधर्म नहीं था, इस कारण राज्यभयसे सब कोई परस्पर एक दूसरेकी रक्षा करते हैं ॥ १२ ॥ बाणकी नाईं यह मुझसे छोडे हुए प्रजाकी रक्षा करते हैं तो भी हे महाबाहो ! तुम प्रजा रक्षण करनेमें तत्पर हो ॥ १३ ॥ यह सुनकर लक्ष्मणजी राजमंदिरसे बाहर आये और वहांपर आकर द्वारपर बैठे हुए एक श्वानको देखा ॥ १४ ॥ इस प्रकार उसको वारंवार रुदन करता हुआ देखकर महावीर्यवान् लक्ष्मणजी उससे पूछने लगे ॥ १५ ॥ हे महाभाग ! तुम्हारा क्या कार्य है तुम निडर होकर हमसे वर्णन करो, लक्ष्मणके वचन सुनकर वह कुत्ता कहने लगा ॥ १६ ॥

सब प्राणियोंके शरण देनेवाले अक्लिष्ट कर्मकारी भयभीतोंको अभय देनेवाले रामचन्द्रसे मैं कुछ कहनेकी इच्छा करता हूं ॥ १७ ॥ कुत्तेके यह वचन सुनकर लक्ष्मणजी रामचन्द्रसे निवेदन करनेको फिर राजमंदिरमें गये ॥ १८ ॥ रामचंद्रसे निवेदन कर फिर राजमंदिरसे बाहर आय कहने लगे यदि तुमको कुछ कहना हो तो सत्य २ महाराजसे कहो ॥ १९ ॥ लक्ष्मणके वचन सुनकर कुत्ता बोला देवताके स्थानमें राजाके और ब्राह्मणके स्थानमें ॥२०॥ अग्नि, इंद्र और सूर्य, वायु रहते हैं सो हे लक्ष्मण ! ऐसोंके स्थानमें हम अधमयोनिके जीव नहीं जासकते हैं ॥ २१ ॥ मैं वहां प्रवेश नहीं कर सकता कारण कि धर्मही राजाका शरीर धारण किये है जो कि सत्य बोलनेवाले रणमें चतुर सब प्राणियोंके हित करनेवाले हैं ॥ २२ ॥ वह रामचन्द्र छे गुणोंके पदको जाननेवाले नीतिके

सर्वभूतशरण्यायरामायाक्लिष्टकर्मणे॥भयेष्वभयदात्रेचतस्मैवक्तुंसमुत्सहे१७॥एतच्छ्रुत्वाचवचनंसारमेयस्यलक्ष्मणः॥राघवायतदाख्यातुंप्रविवेशालयंशुभम्१८॥निवेद्यरामस्यपुनर्निर्जगामनृपालयात्॥वक्तव्यंयदितेकिंचित्तत्त्वंब्रूहिनृपायवै॥१९॥लक्ष्मणस्यवचःश्रुत्वासारमेयोऽभ्यभापत॥ देवागारेनृपागारेद्विजवेश्मसुवैतथा॥२०॥ वह्निःशतक्रतुश्चैवसूर्योवायुश्चतिष्ठति॥ नात्रयोग्यास्तुसौमित्रेयोनीनामधमावयम्॥२१॥ प्रवेष्टुंनात्रशक्ष्यामिधर्मोविग्रहवान्नृपः॥ सत्यवादीरणपटुःसर्वसत्त्वहितेरतः॥२२॥षाड्गुण्यस्यपदंवेत्तिनीतिकर्तासराघवः॥सर्वज्ञःसर्वदर्शीचरामोरमयतांवरः॥२३॥ ससोमःसचमृत्युश्चसयमोधनदस्तथा॥ वह्निःशतक्रतुश्चैवसूर्योवैवरुणस्तथा॥२४॥ तस्यत्वंब्रूहिसौमित्रेप्रजापालःसराघवः॥ अनाज्ञप्तस्तुसौमित्रेप्रवेष्टुंनेच्छयाम्यहम् ॥२५॥ आनृशंस्यान्महाभागप्रविवेशमहाद्युतिः ॥ नृपालयंप्रविश्याथलक्ष्मणोवाक्यमब्रवीत्॥२६॥ श्रूयतांममविज्ञाप्यंकौसल्यानंदवर्धन॥यन्मयोक्तंमहाबाहोतवशासनजंविभो२७॥श्वावैतेतिष्ठतेद्वारिकार्यार्थीसमुपागतः॥लक्ष्मणस्यवचःश्रुत्वारामोवचनमब्रवीत्॥२८॥संप्रवेशयवैक्षिप्रंकार्यार्थीयोऽत्रतिष्ठति॥२९॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येउत्तरकांडेप्रथम सर्गः॥१॥

कर्ता हैं वह सर्वज्ञ सर्वदर्शी और जगत्के रमानेवाले हैं ॥ २३ ॥ वही चन्द्रमा, मृत्यु, यम, कुबेर, वरुण, सूर्य इन्द्ररूप हैं ॥ २४ ॥ हे लक्ष्मण ! उन प्रजाके पालन करनेवाले रघुनाथजीसे तुम जाकर कहो । हे सुमित्रानन्दन ! विना उनकी आज्ञा पाये मैं राजमंदिरमें प्रवेश नहीं कर सकता ॥२५ वह महाद्युतिमान् लक्ष्मणजी उसका यह सूधापन देखकर राजमंदिरमें गये और वहां जाकर कहने लगे ॥२६॥ हे कौशल्यानन्दवर्धन ! हमारे वचनको आप श्रवण कीजिये, हे महाबाहु ! हे सर्वज्ञ ! जो कुछ आपकी आज्ञा थी सो मैंनेकही ॥२७॥ एक कार्यके निमित्त आया हुआ कुत्ता आपके द्वारपर है । लक्ष्मणजीके यह वचन सुन रघुनाथजी बोले ॥२८॥ जो कोई कार्यार्थी हैं उसे शीघ्र लाओ ॥२९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां प्र० प्रथमः सर्गः ॥ १ ॥

रामचन्द्रके वचन सुनकर शीघ्रतासे लक्ष्मणजीने श्वानको बुलाकर रामचन्द्रके आगे निवेदन किया ॥ १ ॥ कुत्तेको आया हुआ देखकर रामचन्द्रजी बोले हे सारमेय ! तुम भय छोड अपना मनोरथ कहो ॥२॥ रामचन्द्रको बैठा देखकर श्वान अपना मस्तक झुकाय रघुनाथजीकेप्रति वचन कहने लगा ॥३॥ राजाही प्राणियोंका कर्ता है राजाही विनायक है; सबके सोनेपर राजाही जागता है ॥४॥ सुन्दर नीतिसे राजा धर्मकी रक्षा करता है, कारण कि वह रक्षा करनेवाला है जो राजा प्रजा पालन न करे तो प्रजा शीघ्र नष्ट होजाय ॥५॥ राजाही कर्ता रक्षक सम्पूर्ण जगत्का पिता है, राजाही कलियुग है, बहुत क्या यह राजाही सब जगत्‌रूप है ॥६॥ धारण किया जाता है इसी कारण धर्म कहलाता है, धर्मसे प्रजा स्थित होती है इस कारणसे धर्मका धारण करनेवाला त्रिलोकी और

श्रुत्वारामस्यवचनंलक्ष्मणस्त्वरितस्तदा॥श्वानमाहूयमतिमान्राघवायन्यवेदयत्॥१॥ दृष्ट्वासमागतंश्वानंरामोवचनमब्रवीत्॥विवक्षितार्थंमेब्रूहिसारमेयनतेभयम् ॥२॥ अथापश्यततत्रस्थंरामंश्वाभिन्नमस्तकः॥ ततोदृष्ट्वासराजानंसारमेयोब्रवीद्वचः ॥३॥ राजैवकर्ताभूतानांराजाचैवविनायकः॥ राजासुप्तेषुजागर्तिराजापालयतिप्रजाः ॥४॥ नीत्यासुनीतयाराजाधर्मंरक्षतिरक्षिता॥ यदानपालयेद्राजाक्षिप्रंनश्यंतिवैप्रजाः ॥५॥ राजाकर्ताचगोप्ताचसर्वस्यजगतःपिता॥ राजाकालोयुगंचैवराजासर्वमिदंजगत् ॥ ६ ॥ धारणाद्धर्ममित्याहुर्धर्मेणविधृताःप्रजाः॥ यस्माद्धारयतेसर्वंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥ ७ ॥ धारणाद्विद्विषांचैवधर्मेणारंजयन्प्रजाः॥ तस्माद्धारणमित्युक्तंसधर्मइतिनिश्चयः ॥८॥ एषराजन्परोधर्मःफलवान्प्रेत्यराघव॥ नहिधर्माद्भवेत्किंचिद्दुष्प्रापमितिमेमतिः ॥ ९ ॥ दानंदयासतांपूजाव्यवहारेषुचार्जवम्॥ एषरामपरोधर्मोरक्षणात्प्रेत्यचेहच ॥ १० ॥ त्वंप्रमाणंप्रमाणानामसिराघवसुव्रत॥ विदितश्चैवतेधर्मःसद्भिराचरितस्तुवै ॥११॥ धर्माणांत्वंपरंधामगुणानांसागरोपमः॥ अज्ञानाच्चमयाराजन्नुक्तस्त्वंराजसत्तम ॥ १२ ॥ प्रसादयामिशिरसानत्वंक्रोद्धुमिहार्हसि॥ ततःसवचनंश्रुत्वाराघवोवाक्यमब्रवीत् ॥ १३ ॥

चराचरको धारण कर सकता है ॥ ७ ॥ शत्रुओंको धारण करनेसे और प्रजाको धर्मसे प्रसन्न करनेसे धारणहीका नाम धर्म कहा है यह निश्चय है ॥ ८ ॥ हे रामचन्द्र ! यही परम धर्म है और परलोकमें फल देनेवाला है यह मुझे निश्चय है कि धर्म करनेवालेको कुछभी दुष्प्राप्य नहीं है ॥ ९ ॥ दान दया सत्पुरुषोंका सत्कार व्यवहारमें सीधापन हे राम ! यही परम धर्म है रक्षा करनेसे दोनों लोक फलीभूत होते हैं ॥ १० ॥ हे राघव सुव्रत! तुमही प्रमाणोंके प्रमाण हो सत्पुरुषोंसे आचरण किया हुआ तुम्हारा धर्म सबको विदित है ॥११॥ धर्मोंके तुम परमधर्म हो गुणोंमें सागरके समान हो हे राजश्रेष्ठ ! जो कुछ आपसे मैंने अज्ञानताके वश कहा हो ॥ १२ ॥ सो मैं शिर झुका कर आपको प्रसन्न करता हूँ आप क्रोध न कीजिये, श्वानके वचन सुनकर रामचन्द्र बोले ॥ १३ ॥

हे श्वान ! मैं तुम्हारा क्या कार्य करूं निडर हो शीघ्र कहो, रामचन्द्रके वचन सुनकर सारमेय यह वचन बोला ॥१४॥ धर्मसेही राज्य बढता है धर्मसेही प्रजा पालन उचित है, धर्महीके कारण प्राणी शरण आते हैं कारण कि, राजा सब भयका हरनेहारा है ॥ १५ ॥ यह जानकर जो कुछ मेरा कार्य है हे राघव ! आप वह सुनिये एक सर्वार्थ सिद्ध ब्राह्मण भिक्षुक है मैं उसके स्थानपर था कि ॥ १६॥ उसने विना प्रयोजनहीके बिना अपराध किये मुझे मारा यह वचन सुनतेही रामचन्द्रके द्वारपालको बुलाने भेजा ॥ १७ ॥ वह जाकर सर्वार्थसिद्ध पंडित ब्राह्मणको बुलालाया जब उस ब्रह्मणने महाद्युतिमान् रामचन्द्रको देखा तो बोला ॥१८॥ हे पापरहित रघुनन्दन! आपका क्या कार्य है सो आप वर्णन कीजिये, जब ब्राह्मणने ऐसा कहा तो रामचन्द्रजी कहने लगे ॥ १९ ॥ हे ब्राह्मण !

किंतेकार्यंकरोम्यद्यब्रूहिविस्रब्धमाचिरम् ॥ रामस्यवचनंश्रुत्वासारमेयोब्रवीदिदम् ॥ १४ ॥ धर्मेणराष्ट्रंविंदेतधर्मेणैवानुपालयेत् ॥ धर्माच्छरण्यतांयातिराजासर्वभयापहः ॥ १५ ॥ इदंविज्ञाययत्कृत्यंश्रूयतांममराघव ॥ भिक्षुःसर्वार्थसिद्धश्चब्राह्मणावसथेऽवसन् ॥ १६ ॥ तेनदत्तःप्रहारोमेनिष्कारणमनागसः ॥ एतच्छ्रुत्वातुरामेणद्वास्थःसंप्रेषितस्तदा ॥ १७ ॥ आनीतश्चद्विजस्तेनसर्वसिद्धार्थकोविदः ॥ अथद्विजवरस्तत्ररामंदृष्ट्वामहाद्युतिः ॥ १८ ॥ किंतेकार्यंमयारामतद्ब्रूहित्वंममानघ ॥ एवमुक्तस्तुविप्रेणरामोवचनमब्रवीत् ॥ १९ ॥ त्वयादत्तःप्रहारोऽयंसारमेयस्यवैद्विज ॥ किंतवापकृतंविप्रदंडेनाभिहतोयतः ॥ २० ॥ क्रोधःप्राणहरःशत्रुःक्रोधोमित्रमुखोरिपुः ॥ क्रोधोह्यसिर्महातीक्ष्णःसर्वंक्रोधोऽपकर्षति ॥ २१ ॥ तपतेयजतेचैवयत्रदानंप्रयच्छति ॥ क्रोधेनसर्वंहरतितस्मात्क्रोधंविसर्जयेत् ॥ २२ ॥ इंद्रियाणांप्रदुष्टानांहयानामिवधावताम् ॥ कुर्वीतधृत्यासारथ्यंसंहृत्येंद्रियगोचरम् ॥ २३ ॥ मनसाकर्मणावाचाचक्षुषाचसमाचरेत् ॥ श्रेयोलोकस्यचरतोनद्वेष्टिनचलिप्यते ॥ २४ ॥ नतत्कुर्यादसिस्तीक्ष्णःसर्पोवाव्याहतःपदा ॥ अरिर्वानित्यसंक्रुद्धोयथात्मादुरनुष्ठितः ॥ २५ ॥

तुमने इस कुत्तेको क्यों मारा तुम्हारा इसने क्या अपकार किया जो तुमने इसके ऊपर दंडका प्रहार किया ॥ २० ॥ क्रोध ही प्राणका हरनेहारा शत्रु है क्रोधही मित्रके समान प्रियभाषी शत्रु है क्रोधहीतीक्ष्ण तलवार और क्रोधही सब सद्गुणको खैंच लेता है ॥ २१ ॥ जो तप यजन और दान किया जाता है वह क्रोधसे सब नष्ट हो जाता है इस कारण क्रोधको त्यागना चाहिये ॥ २२ ॥ इन्द्रियें जो दुष्ट घोडोंकी नाईं विषयोंमें दौडती हैं सो बुद्धिसे उन इन्द्रियोंको रोककर सारथीके समान श्रेष्ठ मार्गमें चलावे ॥ २३ ॥ मन वचन कर्म और चक्षुसे संसारका भला करे और किसीका बुरा न चाहे तो वह कर्ममें लिप्त नहीं होता है ॥ २४ ॥ आत्मा वशमें न होनेपर जो अनिष्ट करता है वह तेज अनिष्टधारकी तलवार ठुकराया हुआ सर्प व अतिक्रोधी शत्रुभी नहीं कर सक्ता ॥ २५ ॥

जिस पुरुषने विनय न सीखी है उसके स्वभावका विश्वास नहीं किया जाता, जो पुरुष स्वभावको छिपाता है वह स्वभावही उसके यथार्थ स्वभावको प्रकाश कर देता है ॥ २६ ॥ जब अक्लिष्टकर्मा रघुनाथजीने उस ब्राह्मणसे ऐसा कहा तो सर्वार्थसिद्ध ब्राह्मण रामचन्द्रसे बोला ॥२७॥ महाराज ! मैंने क्रोधके कारण इस श्वानको मारा कारण कि, मैं उस समयमें भिक्षा मांगता फिरता था परन्तु उस समय भिक्षा नहीं मिली थी ॥ २८ ॥ यह श्वान अस्थि लिये गलीमें फिरता था, मैंने इससे जा; जा कहा फिर यह मार्गके अन्तमें जाकर खडा हुआ और बडे जोरसे चिल्लाया ॥ २९ ॥ एक तो भूखा दूसरे मुझे क्रोध आगया तो हे रघुनाथजी ! मैंने इसे मारा; मैं अपराधी तो हूं जो आपकी इच्छा हो सो मुझे दंड दीजिये ॥ ३० ॥ हे राजेन्द्र ! जो आप मुझे दंड देंगे तो पवित्र हो जाऊंगा फिर मुझे

विनीतविनयस्यापिप्रकृतिर्नविधीयते ॥ प्रकृतिंगूहमानस्यनिश्चयेनकृतिर्ध्रुवा ॥ २६ ॥ एवमुक्तःसविप्रोवैरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ द्विजःसर्वार्थसिद्धस्तुअब्रवीद्रामसंनिधौ ॥२७॥ मयादत्तप्रहारोऽयंक्रोधेनाविष्टचेतसा ॥ भिक्षार्थमटमानेनकालेविगतभैक्षके ॥२८॥ रथ्यास्थितस्त्वयंश्वा वैगच्छगच्छेतिभाषितः ॥ अथस्वैरेणगच्छंस्तुरथ्यांतेविषमःस्थितः ॥२९॥ क्रोधेनक्षुधयाविष्टस्ततोदत्तोऽस्यराघव ॥ प्रहारोराजराजेंद्रशाधि मामपराधिनम् ॥३०॥ त्वयाशस्तस्यराजेंद्रनास्तिमेनरकाद्भयम् ॥ अथरामेणसंपृष्टाःसर्वएवसभासदः ॥३१॥ किंकार्यमस्यवैब्रूतदंडोवैकोऽस्यपात्यताम् ॥ सम्यक्प्रणिहितेदंडेप्रजाभवतिरक्षिता ॥३२॥ भृग्वांगिरसकुत्साद्यावसिष्ठश्चसकाश्यपः ॥ धर्मपाठकमुख्याश्चसचिवानैगमास्तथाः ॥३३॥ एतेचान्येचबहवःपंडितास्तत्रसंगताः ॥ अवध्योब्राह्मणोदंडैरितिशास्त्रविदोविदुः ॥३४॥ ब्रुवतोराघवंधर्मेराजधर्मेषुनिष्ठिताः॥ अथतेमुनयःसर्वेरामभेवाब्रुवंस्तदा ॥ ३५ ॥ राजाशास्ताहिसर्वस्यत्वंविशेषेणराघव ॥ त्रैलोक्यस्यभवान्शास्तादेवोविष्णुःसनातनः ॥ ३६ ॥

नरकसे भय नहीं होगा यह सुनकर रघुनाथजीने सब सभासदोंसे पूछा ॥ ३१ ॥ कहो भाई ! इसका क्या किया जाय कौनसा दंड इसको दिया जाय ? कारण कि; सम्यक् प्रकार दंड देनेसे प्रजा रक्षित रहती है ॥ ३२ ॥ उस समय भृगु, आंगिरस, कुत्सादिक, वसिष्ठ, और काश्यप तथा मुख्य धर्मपाठक मंत्री और शास्त्रके जाननेवाले ॥३३॥ इनके सिवाय वहां और भी पंडित थे उन सब शास्त्रके जाननेवालोंने कहा ब्राह्मण अध्यक्ष है ॥ ३४ ॥ वे राजधर्मकेजाननेवाले यह वचन कहने लगे फिर वे सब मुनि रामचन्द्रसे बोले ॥३५॥ राजा सबको शिक्षा करनेवाला होता है और विशेष करके आप तो सबसे अधिक हैं आप साक्षात् सनातन विष्णु भगवान् त्रिलोकीका शासन करनेवाले हैं ॥ ३६ ॥

जब उन सब लोगोंने ऐसा कहा तो वह कुत्ता इस प्रकारसे बोला हे राम ! जो आप मुझसे प्रसन्न हो और मुझे वरदान देते हो तो वर दीजिये ॥ ३७ ॥ और आप प्रतिज्ञा भी कर चुके हो कि, मैं तेरा क्या कार्य करूं सो हे नराधिप ! इस ब्राह्मणको आप मठपति (कौलपत्य) कर दीजिये ॥ ३८ ॥ हे महाराज ! इस ब्राह्मणको कालिंजर देशका कौलाधिपत्य दीजिये यह वचन सुनकर रामचन्द्रने उसे कालिंजर देशके कौलाधिपत्यपर अभिषेक किया ॥ ३९ ॥ वह ब्राह्मण अभिषेकसे प्रसन्न हो हाथीपर चढकर गया और रघुनाथजीके मन्त्री बडे आश्चर्यको प्राप्त हो बोले ॥ ४० ॥ हे दीप्तिमान् ! यह तो ब्राह्मणको वर मिला दंड नहीं हुआ, जब मंत्रियोंने ऐसा कहा तब रामचन्द्रजी बोले ॥ ४१ ॥ तुम इस बातके तत्त्वको नहीं जानते, श्वान इसका । कारण जानता होगा, फिर रघुनाथजीके पूछनेपर सारमेय इस प्रकारसे कहने लगा ॥४२॥ हे रघुनाथजी ! मैं इस स्थानका कुलपति था, श्रेष्ठ फल भोजन करता था, देव ब्राह्म

एवमुक्तेतुतैःसर्वैःश्वावैवचनमब्रवीत् ॥ यदितुष्टोऽसिमेरामयदिदेयोवरोमम ॥ ३७ ॥ प्रतिज्ञातंत्वयावीरकिंकरोमीतिविश्रुतम् ॥ प्रयच्छब्राह्मणस्यास्यकौलपत्यंनराधिप ॥ ३८ ॥ कालंजरेमहाराजकौलपत्येऽभिषेचितः ॥ ३९ ॥ प्रययौब्राह्मणोहृष्टोगजस्कंधेनसोऽर्चितः ॥ अथतेरामसचिवाःस्मयमानावचोऽब्रुवन् ॥ ४० ॥ वरोऽयंदत्तएतस्यनायंशापोमहाद्युते ॥ एवमुक्तस्तुसचिवैरामोवचनमब्रवीत् ॥ ४१ ॥ नयूयंगतितत्त्वज्ञाःश्वावैजानातिकारणम् ॥ अथपृष्टस्तुरामेणसारमेयोऽब्रवीदिदम् ॥ ४२ ॥ अहंकुलपतिस्तत्रआसंशिष्टान्नभोजनः ॥ देवद्विजातिपूजायांदासीदासेषुराघव ॥ ४३ ॥ संविभागीशुभरतिर्देवद्रव्यस्यरक्षिता ॥ विनीतःशीलसंपन्नःसर्वसत्त्वहितेरतः ॥ ४४ ॥ सोऽहंप्राप्तइमांघोरामवस्थामधमांगतिम् ॥ एवंक्रोधान्वितोविप्रस्त्यक्तधर्माहितेरतः ॥४५॥ क्रुद्धोनृशंसःपरुषअविद्वांश्चाप्यधार्मिकः ॥ कुलानिपातयत्येवसप्तसप्तचराघव ॥ ४६ ॥ तस्मात्सर्वास्ववस्थासुकौलपत्यंनकारयेत् ॥ यमिच्छेन्नरकंनेतुंसपुत्रपशुबांधवम् ॥ ४७ ॥ देवेष्वधिष्ठितंकुर्याद्गोषुतंब्राह्मणेषुच ॥ ब्रह्मस्वंदेवताद्रव्यंस्त्रीणांबालधनंचयत् ॥ ४८ ॥ दत्तंहरतियोभूयइष्टैःसहविनश्यति ॥ ब्राह्मणद्रव्यमादत्तेदेवानांचैवराघव ॥ ४९ ॥

णोंको पूजता दासी दासोंको ॥४३॥ उनके अनुसार विभाग करके धन देता देवताके द्रव्यकी रक्षा करता नीतिमान् सत्ययुक्त और सर्व प्राणियोंका हितकारी था ॥ ४४ ॥ सो मैं इस घोर अवस्था और अधम गतिको प्राप्त हुआ हूं, इसी प्रकारसे यह क्रोधी ब्राह्मण धर्मत्यागी अहितकारी ॥ ४५ ॥ क्रुद्ध, नृशंस, अविद्वान् अधर्मी होनेसे हे राघव ! यह अपनी सात २ पीढियोंको नीचे गिरा देगा ॥४६॥ इस कारण किसी अवस्थामें कौलाधिपत्य करना उचित नहीं है, जो अपने पुत्रबंधु बांधवको नरकमें लेजाना चाहे ॥ ४७ ॥ वह देवताके मंदिरमें, गौमें ब्राह्मणोंमें अधिष्ठित हो ब्राह्मणोंका द्रव्य देवताओंका द्रव्य स्त्री और बालकोंका द्रव्य ॥ ४८ ॥ जो देकर फिर हरण करता है, वह इष्टोंके संग नष्ट हो जाता है, हे राघव ! जो ब्राह्मणोंका और देवताओंका द्रव्य ग्रहण करता है

वह शीघ्रही वीर्यसंज्ञक नरकमें गिरता है अथवा जो देवताका द्रव्य वा ब्राह्मणका द्रव्य मनसे भी हरण करता है ॥ ४९ ॥ ५० ॥ वह नराधम नरकमें जाता है यह वचन सुनतेही विस्मयके कारण रघुनाथजीके नेत्र प्रफुल्लित हो गये और महातेजस्वी कुत्ता जहांसे आया था वहां चला गया वह पूर्व जातियोंमें भी बुद्धिमान् था जातिमात्रसे दूषित था ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ वह महाभाग वाराणसीमें चला गया ॥ ५३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० उत्त० भाषायां प्र० द्वितीयः सर्गः ॥ २ ॥ इसके उपरांत एक समय वनोद्देश जहां कि सुन्दर वृक्ष लग रहे थे और नदीयुक्त पर्वतके स्थानोंमें जहां वृक्षोंमें कोकिला कूक रही थीं ॥१॥ जो वन सिंह और व्याघ्रोंसे युक्त था जहां अनेक पक्षी शब्द कर रहे थे वहां सैकडों वर्षोंसे एक गृध्र और उल्लूक वास करते थे ॥ २ ॥ वह पापात्मा गृध्र

सद्यःपततिघोरंवैनरकेवीचिसंज्ञके ॥ मनसापिहिदेवस्वंब्रह्मस्वंचहरेत्तुयः ॥ ५० ॥ निरयान्निरयंचैवपतत्येवनराधमः ॥ तच्छ्रुत्वावचनंरामो विस्मयोत्फुल्ललोचनः ॥ ५१ ॥ श्वाप्यगच्छन्महातेजायतएवागतस्ततः ॥ मनस्वीपूर्वजात्यासजातिमात्रोपदूषितः ॥ ५२ ॥ वाराणस्यांमहाभागःप्रायंचोपविवेशह ॥ ५३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि० उत्तरकांडे द्वि० सर्गः ॥ २ ॥ अथतस्मिन्वनोद्देशेरम्येपादपशोभिते ॥ नदीकीर्णेगिरिवरेकोकिलानेककूजिते ॥ १ ॥ सिंहव्याघ्रसमाकीर्णेनानाद्विजगणावृते ॥ गृध्रोलूकौप्रवसतौबहुवर्षगणानपि ॥ २ ॥ अथोलूकस्यभवनंगृध्रःपापविनिश्चयः ॥ ममेदमितिकृत्वासाकलहंतेनचाकरोत् ॥ ३ ॥ राजासर्वस्यलोकस्यरामोराजीवलोचनः ॥ तंप्रपद्यावहेशीघ्रंयस्यैतद्भवनंभवेत् ॥ ४ ॥ इतिकृत्वामतिंतांतुनिश्चयार्थसनिश्चिताम् ॥ गृध्रोलूकौप्रपद्येतांकोपाविष्टौह्यमर्षितौ ॥ ५ ॥ रामंप्रपद्यतौशीघ्रंकलिव्याकुलचेतसौ ॥ तौपरस्परविद्वेषात्स्पृशतश्चरणौतदा ॥ ६ ॥ अथदृष्ट्वानरेंद्रंतंगृध्रोवचनमब्रवीत ॥ सुराणामसुराणांचप्रधानस्त्वंमतोमम ॥ ७ ॥ बृहस्पतेश्चशुक्राच्चविशिष्टोऽसिमहाद्युते ॥ परावरज्ञोभूतानांकांत्याचंद्रइवापरः ॥ ८ ॥

उल्लूकके घरको "यह मेरा है" ऐसा कहकर प्रतिदिन उसके साथ कलह करता था ॥३॥ जो राजीवलोचन राम सब जगत्के राजा हैं हम उनके पास जाते हैं वह जिसका घर बता दें उसीका वह घर होगा ॥ ४ ॥ इसप्रकारसे वह दोनों निश्चित मति करके महाक्रोधको प्राप्त हो वह गृध्र और उल्लूक वहांसे चले ॥ ५ ॥ क्लेशसे व्याकुल हुए वे दोनों रामचन्द्रके निकट प्राप्त हो आपसमें द्वेषके कारण दोनों एक साथही चरण छूते हुए ॥ ६ ॥ इस प्रकार रामचन्द्रको देख कर गृध्र वचन बोला, हे भगवन् ! मैं ऐसा जानता हूं कि, आप सुर और असुर दोनोंके विषे प्रधान हैं ॥ ७ ॥ हे महाद्युतिमान् ! आप बुद्धिमें बृहस्पति और शुक्रसेभी अधिक हैं; आप प्राणियोंके पर अपरके जाननेहारे हो और कांतिमें दूसरे चन्द्रमाही हो ॥ ८ ॥

जैसे सूर्यको कोई देख नहीं सकते ऐसे आप दुर्निरीक्ष्य हो, गौरवमें हिमालयके समान हो लोक पालन करनेमें यमके समान हो ॥ ९ ॥ सहनशीलतामें पृथ्वीके समान वेगमें वायुके समान आप सबके गुरु सबसे युक्त हो और हे राम! आपकी बडी कीर्ति है ॥१०॥ आप क्रोधरहित हो दुर्जय हो सबके जीतने वाले और सब शास्त्रोंके पारगामी हो हे नरश्रेष्ठ रामचन्द्रजी! मेरी विपत्ति आप सुनिये ॥ ११ ॥ हे राघव! जो मेरा बहुत दिनोंका स्थान है सो यह बाहों के बलके कारण उल्लूक छीनता है सो इससे आप रक्षा कीजिये ॥ १२ ॥ जब गृध्रने ऐसा कहा तो उल्लूक कहने लगा, चन्द्रमासे, इन्द्रसे, सूर्यसे कुबेरसे, यमसे राजाका शरीर कल्पित होता है ॥ १३ ॥ उसमें मनुष्यता तो थोडीसी है, सम्पूर्ण देवता है और तुम तो सब देवमय साक्षात् नारायणरूपी हो ॥१४॥ हे प्रभो ! जो आपके प्रति प्रणाम करके सम्यक् प्रकारसे याचना करते हैं आप सब बातोंको खोजते सबमें समान दृष्टि रखते हो इस कारण आप सोमके अंश

दुर्निरीक्ष्योयथासूर्योहिमवांश्चैवगौरवे ॥ सागरश्चैवगांभीर्येलोकपालोयमोह्यसि ॥ ९ ॥ क्षांत्याधरण्यातुल्योऽसिशीघ्रत्वेह्यनिलोपमः ॥ गुरुस्त्वंसर्वसंपन्नःकीर्तियुक्तश्चराघव ॥ १० ॥ अमर्षीदुर्जयोजेतासर्वास्त्रविधिपारगः ॥ शृणुष्वममवैरामविज्ञाप्यंनरपुंगव ॥ ११ ॥ ममालयंपूर्वकृतंबाहुवीर्येणराघव ॥ उलूकोहरतेराजंस्तत्रत्वंत्रातुमर्हसि ॥ १२ ॥ एवमुक्तेतुगृध्रेणउलूकोवाक्यमब्रवीत् ॥ सोमाच्छतक्रतोःसूर्याद्धनदाद्यमात्तथा ॥ १३ ॥ जायतेवैनृपोरामकिंचिद्भवतिमानुषः ॥ त्वंतुसर्वमयोदेवोनारायणइवापरः ॥ १४ ॥ याचतेसौम्यताराजन्सम्यक्प्रणिहिताविभौ ॥ समंचरसिचान्विष्यतेनसोमांशकोभवान् ॥ १५ ॥ क्रोधेदंडेप्रजानाथदानेपापभयापहः ॥ दाताहर्तासिगोप्तासितेनेंद्रइवनोभवान् ॥ १६ ॥ अधृष्यःसर्वभूतेषुतेजसाचानलोपमः ॥ अभीक्ष्णंतपसेलोकांस्तेनभास्करसन्निभः ॥ १७ ॥ साक्षाद्वित्तेशतुल्योऽसिअथवाधनदाधिकः ॥ वित्तेशस्येवपद्माश्रीर्नित्यंतेराजसत्तम ॥ १८ ॥ धनदस्यतुकार्येणधनदस्तेननोभवान् ॥ समःसर्वेषुभूतेषुस्थावरेषुचरेषुच ॥ १९ ॥ शत्रौमित्रेचतेदृष्टिःसमतांयातिराघव ॥ धर्मेणशासनंनित्यंव्यवहारेविधिक्रमात् ॥ २० ॥

हो ॥ १५ ॥ हे प्रजानाथ ! क्रोध और दंड देनेमें और दानमें पाप और भयके हरनेहारे दाता हर्ता और रक्षा करने वाले होनेसे आप इन्द्रके अंश हो ॥ १६ ॥ सम्पूर्ण प्राणियोंसे अधृष्य होनेके कारण तेजमें आप अग्निके समान हो और सूर्यके समान निरन्तर लोकोंको तपाते हो ॥ १७ ॥ आप साक्षात् कुबेरकी तुल्य वा इनसे अधिक हो कारण कि कुबेरके समान राज्यलक्ष्मी नित्य तुम्हारे यहां वास करती है ॥ १८ ॥ कुबेरका कार्य करनेसे अर्थात् हमको धन देनेसे आप हमारे कुबेर हैं आप सब प्राणिमात्र स्थावर जंगममें समान दृष्टि रहते हो ॥ १९ ॥ हे राघव ! आपकी दृष्टि शत्रु मित्रमें समान रहती है आप धर्मसे प्रजापालन करतेहो विधिसे व्यवहार करते हो ॥ २० ॥

हे राम ! तुम जिसके ऊपर क्रोध करो उसकी मृत्यु होनेमें क्या सन्देह है इसी कारणसे आपमें यमराजके समान विक्रम पाया जाता है ॥ २१ ॥ हे नृप श्रेष्ठ ! यही आपमें मनुष्यभाव दीखता है कि अनृशंसता और प्राणियोंके ऊपर दया करनी ॥ २२ ॥ दुर्बल और अनाथका राजाही बल होता है नेत्रहीनके आपही नेत्र हो अगतिके आपही गति हो ॥ २३ ॥ हे धार्मिक ! सुनिये हमारे भी तुमही नाथ हो हे नृप ! मेरे घरमें घुसकर यह गृध्र मुझे बडी पीडा देता है ॥ २४ ॥ हे नरश्रेष्ठ ! देवता और मनुष्योंमें आपही शासन करने वाले हैं, यह श्रवण करते ही रघुनाथजीने मंत्रियोंको बुलाया ॥ २५ ॥ धृष्टि, जयन्त, विजय सिद्धार्थ, राष्ट्रवर्धन, अशोक, धर्ममाल और महावीर सुमन्त्र ॥ २६ ॥ यह राजा दशरथकेही मन्त्री श्रीरामचन्द्रजीके मंत्री थे, वह सब महात्मा नीति

यस्यरुष्यसिवैरामतस्यमृत्युर्विधावति ॥ गीयसेतेनवैरामयमइत्यभिविक्रमः ॥ २१ ॥ यश्चैषमानुषोभावोभवतोनृपसत्तम ॥ आनृशंस्यपरो राजासत्त्वेषुक्षमयान्वितः ॥ २२ ॥ दुर्बलस्यत्वनाथस्यराजाभवतिवैबलम् ॥ अचक्षुषोत्तमंचक्षुरगतेःसगतिर्भवान् ॥ २३ ॥ अस्माकमपिना थस्त्वंश्रूयतांममधार्मिक ॥ ममालयंप्रविष्टस्तुगृध्रोमांबाधतेनृप ॥ २४ ॥ त्वंहिदेवमनुष्येषुशास्तावैनरपुंगव ॥ एतच्छ्रुत्वातुवैरामःसचिवा नाह्वयत्स्वयम् ॥ २५ ॥ धृष्टिर्जयंतोविजयःसिद्धार्थोराष्ट्रवर्धनः ॥ अशोकोधर्मपालश्चसुमंत्रश्चमहाबलः ॥ २६ ॥ एतेरामस्यसचिवाराज्ञोद शरथस्यच ॥ नीतियुक्तामहात्मानःसर्वशास्त्रविशारदाः ॥ २७ ॥ श्रीमंतश्चकुलीनाश्चनयेमंत्रेचकोविदाः ॥ तानाहूयचधर्मात्मापुष्पकादवती र्यच ॥ २८ ॥ गृध्रोलूकविवादंतंपृच्छतिस्मरघूत्तमः ॥ कतिवर्षाणिवैगृध्रतवेदंनिलयंकृतम् ॥ २९ ॥ एतन्मेकारणंब्रूहियदिजानासितत्त्वतः ॥ एतच्छ्रुत्वातुवैगृध्रोभाषतेराघवंसतम् ॥ ३० ॥ इयंवसुमतीराममनुष्यैःपरितोयदा ॥ उत्थितैरावृतासर्वातदाप्रभृतिमेगृहम् ॥ ३१ ॥ उलूक श्चाब्रवीद्रामपादपैरुपशोभिता ॥ यदेयंपृथिवीराजंस्तदाप्रभृतिमेगृहम् ॥ एतच्छ्रुत्वातुवैरामःसभासदमुवाचह ॥ ३२ ॥ नसासभायत्रनसंति वृद्धावृद्धानतेयेनवदंतिधर्मम् ॥ नासौधर्मोयत्रनसत्यमस्तिनतत्सत्यंयच्छलेनानुविद्धम् ॥ ३३ ॥

युक्त और सब शास्त्रोंके जानने वाले थे ॥ २७ ॥ यह सब श्रीमान् कुलीन; नीतिज्ञ और पंडित थे धर्मात्मा रामचंद्रजी इन्हें बुलाकर और सिंहासनसे उतर ॥ २८ ॥ रामचंद्र गृध्र और उल्लूकके विवादको पूछने लगे हे गृध्र ! तुमने यह स्थान कितने वर्षोंसे प्राप्त किया है ॥२९॥ जो तुमही ठीक जानते हो तो मुझसे यह वर्णन करो यह वार्तासुना गृध्र रामसे कहने लगा ॥ ३० ॥ हे राम ! जिस समय यह पृथ्वी मनुष्योंसे युक्त हुई थी तब सबयह मनुष्य इस पर वास करने लगे तभीसे मेरा घर है ॥ ३१ ॥ यह सुनकर उल्लूक बोला हे राजन् ! जबसे यह पृथ्वी वृक्षोंसे शोभित हुई है तभीसे यह स्थान मेरा घर है यह वचनसुनकर रामचन्द्र सभासदोंसे बोले ॥ ३२ ॥ वह सभा नहीं जहां वृद्ध नहीं और वह वृद्ध नहीं जो धर्मको न जाने, वह धर्म नहीं सत्यसे रहित हो वह

सत्य नहीं जिसमें छल मिलता हो ॥ ३३ ॥ जो सभासद सत्य वार्ताको जान कर भी मौन हो जाते हैं और समय पर नहीं बोलते वह सब असत्यवादी हैं ॥ ३४ ॥ जानकर काम या क्रोधसे अथवा भयसे प्रश्नोंको नहीं कहता है वह अपनेको वरुणकी हजार पाशोंसे बँधवाता है ॥ ३५ ॥ एक वर्ष पूर्ण होनेपर उनकी एकपाश टूटती हैं इस प्रकार लक्ष्यके जानने वालोंमें नित्य सत्यहो बोलना चाहिये ॥ ३६ ॥ यह वचन सुनकर मंत्री रामचन्द्रसे बोले महाराज ! उल्लूक सत्य कहता है और गृध्र झूठा है ॥३७॥ हे महाराज ! इसमें आपही प्रमाण हैं क्योंकी राजाही परमगति होता है सब प्रजाओंका राजा ही मूल है, राजधर्म ही सनातन है ॥३८॥ जिनका शासन राजा करते हैं उनकी दुर्गति नहीं होती वह पुरुषोत्तम रामराजके फंदेसे मुक्त हो जाते हैं ॥३९॥ मंत्रियोंके

येतुसभ्याःसदाज्ञात्वातूष्णींध्यायंतआसते ॥ यथाप्राप्तंनब्रुवतेतेसर्वेऽनृतवादिनः ॥ ३४ ॥ जानन्नवाब्रवीत्प्रश्नान्कामात्क्रोधाद्भयात्तथा ॥ सहस्रंवारुणान्पाशानात्मनिप्रतिमुंचति ॥ ३५ ॥ तेषांसंवत्सरेपूर्णेपाशएकःप्रमुच्यते ॥ तस्मात्सत्येनवक्तव्यंजानतासत्यमंजसा ॥ ३६ ॥ एतच्छ्रुत्वातुसचिवारामभेवाब्रुवंस्तदा ॥ उलूकःशोभतेराजन्नतुगृध्रोमहामते ॥ ३७ ॥ त्वंप्रमाणंमहाराजराजाहिपरमागतिः ॥ राजमूलाःप्रजाः सर्वाराजाधर्मःसनातनः ॥ ३८ ॥ शास्तानृणांनृपोयेषांनगच्छंतिदुर्गतिम् ॥ वैवस्वतेनमुक्तास्तुभवंतिपुरुषोत्तम ॥ ३९ ॥ सचिवानांवचःश्रुत्वारामोवचनमब्रवीत् ॥ श्रूयतामभिधास्यामिपुराणेयदुदाहृतम् ॥ ४० ॥ द्यौःसचंद्रार्कनक्षत्रासपर्वतमहावना ॥ सलिलार्णवसंपूर्णात्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ ४१ ॥ एकएवतदाह्यासीद्युक्तोमेरुरिवापरः ॥ पुराभूःसहलक्ष्म्याचविष्णोर्जठरमाविशत् ॥ ४२ ॥ तांनिगृह्यमहातेजाःप्रविश्य सलिलार्णवम् ॥ सुष्वापदेवोभूतात्माबहून्वर्षगणानपि ॥ ४३ ॥ विष्णौसुप्तेतदाब्रह्माविवेशजठरंततः ॥ रुद्धस्रोतंतुतंज्ञात्वामहायोगीसमाविशत् ॥ ४४ ॥ नाभ्यांविष्णोःसमुत्पन्नेपद्मेहेमविभूषिते ॥ सतुनिर्गम्यवैब्रह्मायोगीभूत्वामहाप्रभुः ॥ ४५ ॥

वचन सुनकर रामचन्द्रजी कहने लगे जो कुछ पुराणोंमें लिखा है सुनो मैं कहता हूं ॥४०॥ आकाश, चन्द्रमा, सूर्यनारायण, पर्वत, वन यह सब कुछ चराचर सागरसे पूर्ण था ॥४१॥ उस समय सुमेरुके समान अचल परमात्मा थे और पृथ्वी तो लक्ष्मी सहित भगवान्के उदरमें प्रवेश कर गई ॥४२॥ वह महातेजस्वी ईश्वर इससे सबको ग्रहण कर जलमें प्रवेश कर गये और वह सबके आत्मदेव नारायण उसमें सैकडों वर्ष तक शयन करते रहे ॥४३॥ विष्णु भगवानके सोनेपर ब्रह्माजी उनके उदरमें प्रवेश करगये कारण कि, इन महायोगीने रुद्धस्रोत जानकर उनमें प्रवेश किया ॥ ४४ ॥ फिर सुवर्णका कमल भगवान्की नाभिसे उत्पन्न हुआ (और स्रोत तो बन्द थे) उसमेंसे योग धारण किये हुए महाप्रभु ब्रह्माजी उत्पन्न हुए ॥ ४५ ॥

उन्होंने पृथ्वी, वायु, पर्वत, वृक्ष बनानेकी इच्छा की इसी बीचमें सब प्रजा मनुष्य और रिंगनेवाले जीव ॥४६॥ जरायुज अण्डज इत्यादि सबही प्राणियोंको महातपसे युक्त उन ब्रह्माजीने उत्पन्न किया उसी समय उनके कानके मलसे मधु और कैटभ उत्पन्न हुए ॥ ४७ ॥ यह दोनों दानव बडे बली वीर्यवान् और दुरासद थे और ब्रह्माजीको बैठा देखकर बडे क्रोधित हुए ॥ ४८ ॥ और बडे वेगसे ब्रह्माजीपर दौडे उनको देखतेही ब्रह्माजीने बडे शब्दसे चीत्कार करी और मुखका भय विकारको प्राप्त हुआ ॥ ४९ ॥ उस शब्दसे तुरंत भगवान् आकर प्राप्त हुए और भगवान्के संग उनका संग्राम हुआ तब भगवान्ने चक्रके प्रहारसे दोनोंको मारडाला ॥५०॥ उनकी चर्बीसे सब पृथ्वी गीली होगई तब संसारके धारण करनेवाले भगवान्ने उस पृथ्वीका फिर शोधन किया ॥५१॥

सिसृक्षुःपृथिवींवायुंपर्वतान्समहीरुहान् ॥ तदंतरेप्रजाःसर्वाःसमनुष्यसरीसृपाः ॥४६॥ जरायुजांडजाःसर्वाःसससर्जमहातपाः ॥ तत्रश्रोत्रमलोत्पन्नःकैटभोमधुनासह ॥४७॥ दानवौतौमहावीर्यौघोररूपौदुरासदौ ॥ दृष्ट्वाप्रजापतिंतत्रक्रोधाविष्टौबभूवतुः ॥४८॥ वेगेनमहतातत्रस्वयंभुवमधावताम् ॥ दृष्ट्वास्वयंभुवामुक्तोरावोवैविकृतस्तदा ॥४९॥ तेनशब्देनसंप्राप्तोदानवौहरिणासह ॥ अथचक्रप्रहारेणसूदितौमधुकैटभौ ॥५०॥ मेदसाप्लावितासर्वापृथिवीचसमंततः ॥ भूयोविशोधितातेनहरिणालोकधारिणा ॥५१॥ शुद्धांवैमेदिनींतांतुवृक्षैःसर्वामपूरयत् ॥ ओषध्यःसर्वसस्यानिनिष्पद्यंतपृथग्विधाः ॥५२॥ मेदोगंधातुधरणीमेदिनीत्यभिसंज्ञिता ॥ तस्मान्नगृध्रस्यगृहमुलूकस्येतिमेमतिः ॥५३॥ तस्माद्गृध्रस्तुदंडचोवैपापोहर्तापरालयम् ॥ पीडांकरोतिपापात्मादुर्विनीतोमहानयम् ॥५४॥ अथाशरीरिणीवाणीअंतरिक्षात्प्रबोधिनी ॥ मावधीरामगृध्रंत्वंपूर्वदग्धंतपोबलात् ॥५५॥ कालगौतमदग्धोऽयंप्रजानाथोनरेश्वर ॥ ब्रह्मदत्तेतिनाम्नैषशूरःसत्यव्रतःशुचिः ॥५६॥

और जब पृथ्वी शुद्ध हो चुकी तब उसे सब स्थानोंमें वृक्षोंसे पूर्ण करदिया और उसमें औषधी और अन्न उत्पन्न होने लगे ॥५२॥ मेदकी गंधवाली होनेसे इस पृथ्वीका नाम मेदिनी हुआ इस कारणसे उल्लूकका पता देना ठीकही है, इससे इसीका घर है गृध्रका नहीं यह हमें निश्चय है ॥ ५३ ॥ इस कारण अब यह दूसरेके घरका हरण करनेहारा पापात्मा गृध्र दंड देनेयोग्य है यह दुर्विनीत पापात्मा उल्लूकको बहुत दुःख देता है ॥ ५४ ॥ उसी समय आकाशसे अशरीरिणी वाणी हुई हे रामचन्द्र ! तुम गृध्रको मत मारो यह तपोबलसे पहलेही दग्ध होचुका है ॥ ५५ ॥ हे प्रजानाथ नरेश्वर ! इसे काल गौतमने दग्ध कर दिया है इसका नाम पूर्व जन्ममें ब्रह्मदत्त था यह शूर सत्यव्रत औरपवित्र था ॥ ५६ ॥

एक समय इसके यहां मार्गसे चला हुआ एक ब्राह्मण भोजनके निमित्त आया ॥ ५७ ॥ राजा ब्रह्मदत्तने उसे पाद्य और अर्घ्य प्रदान किया और उस महाद्युति मानूका भोजनके निमित्त बडा सत्कार किया ॥ ५८ ॥ भोजन करनेको उन महात्माको इसने मांस दिया तब तो मुनिने क्रोध करके इसे दारुण शाप दिया ॥ ५९ ॥ हे राजन् ! तुम गृध्र हो जाओ राजाने कहा महाराज कृपा कीजिये हे धर्मज्ञ ! मैंने अनजाने यह कार्य किया इससे कृपा करो हे महाव्रत ! प्रसन्न हो ॥ ६० ॥ हे महा भाग पापरहित ! शापका अन्त तो कीजिये तब मुनिने अज्ञानसे राजासे अपराध हुआ जानकर कहा ॥ ६१ ॥ कि राजवंशमें महायशस्वी रामचन्द्र उत्पन्न होंगे वह महाभाग कमललोचन राम इक्ष्वाकुके कुलमें अवतार लेंगे ॥ ६२ ॥ हे नरश्रेष्ठ ! उनके स्पर्श करनेसे तुम पापरहित होजाओगे

गृहंत्वस्यागतोविप्रोभोजनंप्रत्यमार्गत ॥ साग्रंवर्षशतंचैवभोक्तव्यनृपसत्तम ॥५७॥ ब्रह्मदत्तःसवैतस्यपाद्यमर्घ्यंस्वयंनृपः॥ हार्दंचैवाकरोत्तस्य भोजनार्थंमहाद्युतेः ॥५८॥ मांसमस्याभवत्तत्रआहारेतुमहात्मनः ॥ अथक्रुद्धेनमुनिनाशापोदत्तोऽस्यदारुणः ॥५९॥ गृध्रस्त्वंभववैराजन्ममैनं ह्यथसोऽब्रवीत् ॥ प्रसादंकुरुधर्मज्ञअज्ञानान्मेमहाव्रत ॥ ६० ॥ शापस्यांतंमहाभागक्रियतांवैममानघ ॥ तदज्ञानकृतंमत्वाराजानंमुनिरब्रवीत् ॥ ६१ ॥ उत्पत्स्यतिकुलेराज्ञांरामोनाममहायशाः ॥ इक्ष्वाकूणांमहाभागोराजाराजीवलोचनः ॥६२॥ तेनस्पृष्टोविपापस्त्वंभवितानरपुंगव ॥ स्पृष्टोरामेणतच्छ्रुत्वानरेंद्रःपृथिवीपतिः ॥ ६३ ॥ गृध्रत्वंत्यक्तवान्राजादिव्यगंधानुलेपनः ॥ पुरुषोदिव्यरूपोऽभूदुवाचेदंचराघवम् ॥ ६४ ॥ साधुराघवधर्मज्ञत्वत्प्रसादादहंविभो ॥ विमुक्तोनरकाद्घोराच्छापस्यांतःकृतस्त्वया ॥ ६५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकाण्डे एतदंतंप्रक्षिप्ताः सर्गाः ॥ ३ ॥ तयोःसंवदतोरेवंरामलक्ष्मणयोस्तदा ॥ वासंतिकीनिशाप्राप्तानशीतानचघर्मदा ॥ १ ॥ ततःप्रभातेविमलेकृतपूर्वाह्णिकक्रियः ॥ अभिचक्रामकाकुत्स्थोदर्शनंपौरकार्यवित् ॥ २ ॥

यह वचन सुनकर रामचन्द्रने उस नरेन्द्र पृथ्वीपतिका स्पर्श किया ॥ ६३ ॥ उसी समय गृध्रपन त्यागकर वह राजा शरीरमें दिव्य गन्ध लगाये दिव्यपुरुष होकर रामचन्द्रसे बोला ॥ ६४ ॥ धन्य हो धर्मात्मा रघुनन्दनजी हे प्रभो ! तुम्हारे प्रसादसे आज मैं घोर शापरूपी नरकसे उत्तीर्ण हुआ आपने आज शापका अन्त किया ॥ ६५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां प्र० तृतीयः सर्गः ॥३॥ राम और लक्ष्मणको इस प्रकार वार्ता करते २ वसन्त ऋतुकी रात्रि प्राप्त हुई जिसमें न बहुत गरमी न बहुत सरदी होती है ॥ १ ॥ फिर उज्ज्वल प्रातःकाल होनेपर प्रातः कालीन सब क्रियासे निश्चिन्त हो रामचन्द्र नगरवासियोंके कार्य देखनेको सभामें आये ॥ २ ॥

उसी समय सुमंत्रने आकर रघुनाथजीसे कहा हे भगवन् ! यह तपस्वी द्वारपर आपकी आज्ञा पानेके निमित्त खडे हैं ॥३॥ भृगुवंशमें हुए च्यवनको आगे करके महर्षि आपके दर्शन पानेके निमित्त बडी शीघ्रता कर रहे हैं हमें अपना आगमन सुनानेको भेजा है ॥ ४ ॥ हे नरश्रेष्ठ ! यह यमुनातीरके रहनेहारे मुनि आपकी प्रसन्नता चाहते हैं सुमंत्रके यह वचन सुन रामचन्द्रजी बोले ॥ ५ ॥ उन च्यवनादि महाभाग्यवान् ऋषियोंको शीघ्र बुलाओ रामचन्द्रकी आज्ञा पाय द्वारपाल शिर झुकाय हाथ जोड ॥ ६ ॥ उन बडे तपस्वियोंको प्रवेशित करते हुए वह सौसे कुछ अधिक तपस्वी अपने तेजसे दीप्तिमान् हो रहे थे ॥ ७ ॥ जिस समय महात्मा तपस्वियोंने राजभवनमें प्रवेश किया उस समय वह महात्मा सब तीर्थोंके जलसे पूर्ण कलश लिये हुए थे ॥८॥ और फल मूलभी रघुनाथ

ततःसुमंत्रस्त्वागम्यराघववंवाक्यमब्रवीत् ॥ एतेप्रतिहताराजन्द्वारितिष्ठंतितापसाः ॥ ३ ॥ भार्गवंच्यवनंचैवपुरस्कृत्यमहर्षयः ॥ दर्शनंतेमहाराजचोदयंतिकृतत्वराः ॥ ४ ॥ प्रीयमाणानरव्याघ्रयमुनातीरवासिनः ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वारामःप्रोवाचधर्मवित् ॥ ५ ॥ प्रवेश्यंतांमहाभागाभार्गवप्रमुखा द्विजाः ॥ राज्ञस्त्वाज्ञांपुरस्कृत्यद्वाःस्थोमूर्ध्नाकृतांजलिः ॥ ६ ॥ प्रवेशयामासतदातापसान्सुदुरासदान् ॥ शतंसमधिकंतत्रदीप्यमानंस्वतेजसा ॥ ७ ॥ प्रविष्टंराजभवनंतापसानांमहात्मनाम् ॥ तेद्विजाःपूर्णकलशैःसर्वतीर्थांबुसत्कृतैः ॥ ८ ॥ गृहीत्वाफलमूलंचरामस्याभ्याहरन्बहु ॥ प्रतिगृह्यतुतत्सर्वंरामःप्रीतिपुरस्कृतः ॥ ९ ॥ तीर्थोदकानिसर्वाणिफलानिविविधानिच ॥ उवाचचमहाबाहुःसर्वानेवमहामुनीन् ॥ १० ॥ इमान्यासनमुख्यानियथार्हमुपविश्यताम् ॥ रामस्यभाषितंश्रुत्वासर्वएवमहर्षयः ॥ ११ ॥ बृसीषुरुचिराख्यासुनिषेदुःकांचनीषुते ॥ उपविष्टानृषींस्तत्रदृष्ट्वापरपुरंजयः ॥ प्रयतःप्रांजलिर्भूत्वाराघवोवाक्यमब्रवीत् ॥ १२ ॥ किमागमनकार्यंवःकिंकरोमिसमाहितः ॥ आज्ञाप्योऽहंमहर्षीणांसर्वकामकरःसुखम् ॥ १३ ॥

जीके निमित्त बहुत लाये थे श्रीरामचन्द्रजीने प्रसन्न हो वह सब भेंट ग्रहण की ॥ ९ ॥ सम्पूर्ण तीर्थोंका जल और अनेक प्रकारके कंद मूल फल लेकर महाबाहु रामचन्द्र सब मुनियोंसे बोले ॥१०॥ यह मुख्य आसन बिछे हैं, आप इनपर यथायोग्य बैठिये रामचन्द्रके वचन सुन करके सब महर्षि ॥ ११ ॥ सुन्दर शोभायुक्त सोनेकी चौकियोंके ऊपर बैठे शत्रुघाती रामचन्द्र उन सब ऋषियोंको स्थित देख शिर झुकाय हाथ जोडकर नीतियुक्त वचन बोले ॥१२॥ आप लोगोंके आनेका कारण क्या है मैं आपकी कौनसी आज्ञाका पालन करूं आप आज्ञा कीजिये आपके सब अभीष्ट पूरे होंगे ॥ १३ ॥

यह राज्य जीवन और जो कुछ हृदयमें स्थित प्राण वह सब ब्राह्मणोंहीके निमित्त हैं यह मैं सत्य कहता हूं ॥ १४ ॥ रघुनाथजीके यह वचन सुन ऋषिगण धन्य धन्य कहने लगे और बडे तपस्वी यमुनातीरके ऋषि ॥ १५ ॥ बडे महात्मा महाहर्षित हो कहने लगे कि; हे भगवन् ! इस संसारमें तुम्हारे सिवाय ऐसा वचन कोई नहीं कह सकता यह वचन आपहीके योग्य हैं ॥ १६ ॥ हे राजन् ! हमने बडे २ बली राजाओंके निकट अपना कार्य सुनाया परन्तु इस कार्यका गौरव जान किसीने भी कार्य करनेकी प्रतिज्ञा न की ॥ १७ ॥ आपने ब्राह्मणोंके गौरवसे यह प्रतिज्ञा बिनाही कारण जाने की है इससे हमारा कार्य आप करेंगे इसमें संदेह नहीं आप ऋषियोंको महाभयसे छुडानेके योग्य हो ॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां षष्टितमः सर्गः ॥६०॥

इदंराज्यंचसकलंजीवितंचहृदिस्थितम् ॥ सर्वमेतद्द्विजार्थमेसत्यमेतद्ब्रवीमिवः ॥ १४ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वासाधुकारोमहानभूत ॥ ऋषीणामुग्रतपसांयमुनातीरवासिनाम् ॥ १५ ॥ ऊचुश्चैवमहात्मानोहर्षेणमहतावृताः ॥ उपपन्नंनरश्रेष्ठतवैवभुविनान्यतः ॥ १६ ॥ बहवःपार्थिवाराजन्नतिक्रांतामहाबलाः ॥ कार्यस्यगौरवंमत्वाप्रतिज्ञांनाभ्यरोचयन् ॥ १७ ॥ त्वयापुनर्ब्राह्मणगौरवादियंकृताप्रतिज्ञाह्यनवेक्ष्यकारणम् ॥ ततश्चकर्ताह्यसिनात्रसंशयोमहाभयात्त्रातुमृषींस्त्वमर्हसि ॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये उत्तरकाण्डेषष्टितमः सर्गः ॥ ६० ॥

ब्रुवद्भिरेवमृषिभिःकाकुत्स्थोवाक्यमब्रवीत् ॥ किंकार्यब्रूतमुनयोभयंतावदपैतुवः ॥ १ ॥ तथाब्रुवतिकाकुत्स्थेभार्गवोवाक्यमब्रवीत् ॥ भयानांशृणुयन्मूलंदेशस्यचनरेश्वर ॥ २ ॥ पूर्वंकृतयुगेराजन्दैतेयःसुमहामतिः ॥ लोलापुत्रोभवज्ज्येष्ठोमधुर्नाममहासुरः ॥ ३ ॥ ब्रह्मण्यश्चशरण्यश्चबुद्ध्याचपरिनिष्ठितः ॥ सुरैश्चपरमोदारैःप्रीतिस्तस्यातुलाभवत् ॥ ४ ॥ समधुर्वीर्यसंपन्नोधर्मेचसुसमाहितः ॥ बहुमानाच्चरुद्रेणदत्तस्तस्याद्भुतोवरः ॥ ५ ॥ शूलंशूलाद्विनिष्कृष्यमहावीर्यंमहाप्रभम् ॥ ददौमहात्मासुप्रीतोवाक्यंचैतदुवाचह ॥ ६ ॥

ऋषियोंके ऐसा कहनेपर रघुनाथजी बोले हे मुनियो ! बताओ तुम्हारा क्या कार्य है वह भय तुम्हारा दूर किया जायगा ॥ १ ॥ रामचन्द्रके ऐसा कहनेपर च्यवनजी बोले हे नरेश्वर ! हमारे देशमें जो भयका कारण है सो सुनिये ॥ २ ॥ प्रथम सतयुगमें एक महाबुद्धिमान् दैत्य मधुनामक महाराक्षस लोलाका बडा पुत्र था ॥ ३ ॥ वह ब्राह्मणोंका माननेहारा शरणागतवत्सल बडा बुद्धिमान् था और परम उदार देवताओंके संग भी इसकी बडी प्रीति हुई ॥ ४ ॥ वह महाबली मधु धर्ममें सावधान होकर बडे मानसे शिवको प्रसन्न करने लगा तब शिवजीने उसे अद्भुत वर दिया ॥ ५ ॥ महावीर्ययुक्त अपने शूलोंसे एक अग्निके समान आयुध निकालकर प्रसन्न होकर महात्मा शिवजीने उसे दिया और प्रसन्न होकर इस प्रकारसे कहने लगे ॥ ६ ॥

जो कि, तुमको अपनी प्रसन्नतासे तुम्हारी धर्मनिष्ठा देखकर परमप्रीतिसे तुमको यह उत्तम आयुध देता हूं ॥ ७ ॥ सो हे महासुर ! जबतक तुम देवता और ब्राह्मणोंसे विरोध न करोगे तबतक यह शूल तुम्हारे पास रहेगा इससे अन्यथा करनेमें लोप हो जायगा ॥ ८ ॥ और जो तुमसे युद्ध करनेको आवे उसके ऊपर निर्भय हो शूलका प्रहार करना यह शूल उसको भस्मकर फिर तेरे हाथमें आजायगा ॥ ९ ॥ इसप्रकार शिवजीसे वर पाय वह महाराक्षस फिर भी महादेवजीको दंडवत कर इसप्रकार बोला ॥ १० ॥ हे भगवन् ! यह शूल मेरे वंशवालोंके पास भी मेरे पीछे रहे, ऐसी आप कृपा कीजिये कारण कि, आप देवताओंके ईश्वर समर्थ हैं ॥११॥ मधुके ऐसा कहनेपर सब प्राणियोंके अधिपति शिवजी (महादेवजी) कहने लगे ऐसा तो नहीं हो सकता ॥ १२ ॥ परंतु

त्वयायमतुलोधर्मोमत्प्रसादकरःशुभः ॥ प्रीत्यापरमयायुक्तोददाम्यायुधमुत्तमम् ॥७॥ यावत्सुरैश्चविप्रैश्चनविरुध्येर्महासुर ॥ तावच्छूलंतवेदंस्या दन्यथानाशमेष्यति ॥८॥ यश्चत्वामभियुंजीतयुद्धायविगतज्वरः ॥ तंशूलोभस्मसात्कृत्वापुनरेष्यतितेकरम् ॥९॥ एवंरुद्राद्वरंलब्ध्वाभूयएवमहा सुरः॥ प्रणिपत्यमहादेवंवाक्यमेतदुवाचह ॥१०॥ भगवन्ममवंशस्यशूलमेतदनुत्तमम् ॥ भवेत्तुसततंदेवसुराणामीश्वरोह्यसि ॥११॥ तंब्रुवाणं मधुंदेवःसर्वभूतपतिःशिवः॥ प्रत्युवाचमहादेवोनैतदेवंभविष्यति ॥१२॥ माभूत्तेविफलावाणीमत्प्रसादात्कृताशुभा ॥ भवतःपुत्रमेकंतुशूलमेत द्भविष्यति ॥१३॥ यावत्करस्थःशूलोऽयंभविष्यतिसुतस्यते ॥ अवध्यःसर्वभूतानांशूलहस्तोभविष्यति ॥१४॥ एवंमधुर्वरंलब्ध्वादेवात्सुमहद द्भुतम् ॥ भवनंसोऽसुरश्रेष्ठःकारयामाससुप्रभम् ॥ १५ ॥ तस्यपत्नीमहाभागाप्रियाकुंभीनसीतिया ॥ विश्वावसोरपत्यंसाप्यनलायांमहा प्रभा ॥१६॥ तस्याःपुत्रोमहावीर्योलवणोनामदारुणः ॥ बाल्यात्प्रभृतिदुष्टात्मापापान्येवसमाचरत् ॥ १७ ॥ तंपुत्रंदुर्विनीतंतुदृष्ट्वाक्रोधसम न्वितः ॥ मधुःसशोकमापेदेनचैनंकिंचिदब्रवीत् ॥ १८ ॥

तेरी याचना भी मिथ्या होनी उचित नहीं कारण तैने मेरी प्रसन्नता प्राप्त की है इस कारण तुम्हारे एक पुत्रके हाथमें शूल रहेगा ॥ १३ ॥ जबतक तुम्हारे पुत्रके हाथमें शूल रहेगा तो शूल हाथमें रहनेके कारण यह सब प्राणियोंसे अवध्य होगा ॥ १४ ॥ इस प्रकारसे वह असुरश्रेष्ठ मधु महादेवजीसे अद्भुत वर पाय एक बडा श्रेष्ठ कांतियुक्त मंदिर निर्माण करता हुआ ॥१५॥ उसकी महाभाग्यवती कुम्भीनसी नाम पत्नी थी वह महाकांतिमान् अनलोंमें विश्वावसुसे उत्पन्न हुई थी ॥१६॥ [यह अनला माल्यवानकी सुता रावणकी स्वसा थी] उसका पुत्र महावीर्यवान् दारुण लवणासुर है जो बालपनसेही दुष्ट पापमति पापही करता है ॥ १७ ॥ उस अपने पुत्रको ऐसा दुर्विनीत देखकर क्रोधित हो मधुने बडा शोक किया और उससे कुछ भी न बोला ॥ १८ ॥

और वह इस लोकको छोड वरुण लोकको चला गया और वह त्रिशूल उसे देकर सब वरका समाचार कह गया जबतक तेरे हाथमें शूल रहेगा तबतक तू अवध्य रहेगा ॥ १९ ॥ वह शूलके प्रभाव और अपनी कुटिलतासे त्रिलोकीको दुःखी करता है और तपस्वियोंको बहुतही सताता है ॥ २० ॥ इस प्रभाववाला वह लवणासुर है और ऐसा उसके पास शूल है अब आप इसमें जो चाहो सो करो क्योंकि हमारे परमगति आपही हो ॥ २१ ॥ हे राजन् ! भयसे व्याकुल हो ऋषियोंने बहुतसे राजाओंसे अपने अभयकी याचना की परंतु किसीने रक्षा न की ॥ २२ ॥ सो जब हमने सुना कि, आपने सकुटुम्ब रावणका संहार किया तो हमनेआपकोही अपना रक्षक जाना । पृथ्वीमें और कोई राजा हमारा रक्षक नहीं सो लवणासुरके भयसे पीडित हुए हम आपसे अपनी रक्षाकी इच्छा करते

सविहायइमंलोकंप्रविष्टोवरुणालयम् ॥ शूलनिवेश्यलवणेवरंतस्मैन्यवेदयत् ॥ १९ ॥ सप्रभावेणशूलस्यदौरात्म्येनात्मनस्तथा ॥ संतापयतिलोकांस्त्रीन्विशेषेणचतापसान् ॥ २० ॥ एवंप्रभावोलवणःशूलंचैवतथाविधम् ॥ श्रुत्वाप्रमाणंकाकुत्स्थत्वंहिनःपरमागतिः ॥ २१ ॥ बहवःपार्थिवारामभयार्तैर्ऋषिभिःपुरा ॥ अभयंयाचितावीरत्रातारंनचविद्महे ॥ २२ ॥ तेवयंरावणंश्रुत्वाहतंसबलवाहनम् ॥ त्रातारंविद्महेतातनान्यंभुविनराधिपम् ॥ तत्परित्रातुमिच्छामोलवणाद्भयपीडितान् ॥ २३ ॥ इतिरामनिवेदितंतुतेभयजंकारणमुत्थितंचयत् ॥ विनिवारयितुंभवान्क्षमःकुरुतंकाममहीनविक्रम ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकाण्डे एकषष्टितमः सर्गः ॥६१॥ तथोक्तेतानृषीन्रामःप्रत्युवाचकृतांजलिः ॥ किमाहारःकिमाचारोलवणःक्वचवर्तते ॥ १ ॥ राघवस्यवचःश्रुत्वाऋषयःसर्वएवते ॥ ततोनिवेदयामासुर्लवणोववृधेयथा ॥ २ ॥ आहारःसर्वसत्त्वानिविशेषेणचतापसाः ॥ आचारोरौद्रतानित्यंवासोमधुवनेतथा ॥ ३ ॥ हत्वाबहुसहस्राणिसिंहव्याघ्रमृगांडजान् ॥ मानुषांश्चैवकुरुतेनित्यमाहारमाह्निकम् ॥ ४ ॥

हैं ॥२३॥ इस प्रकारसे अपने भयका कारण उन्होंने रघुनाथजीसे निवेदन किया और बोले हे भगवन् ! आप बडे बली हो इस भयके निवारण करनेमें आपही समर्थ हो ॥२४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामेकषष्टितमः सर्गः ॥६१॥ उन ऋषियोंके ऐसा कहने पर रघुनाथजी हाथ जोड बोले लवणासुरका क्या आहार क्या आचार है और कहां रहता है ॥१॥ रामचन्द्रके यह वचन श्रवण कर वे सब ऋषि जिस प्रकार लवणासुरकी वृद्धि हुई थी सब निवेदन करने लगे ॥ २ ॥ हे महाराज ! वह सभी जीवोंका भक्षण करता है परन्तु विशेषकर तपस्वियोंको खाता है सदा क्रूरता उसका आचार है और मधुवनमें रहता है॥ ३ ॥ हजारों सिंह व्याघ्र मृग पक्षियोंको मारकर और जो मनुष्य मिलते हैं उनका भी दिनमें आहार कर जाताहै ॥ ४ ॥

इसके बीचमें वह महाबली और जीवोंको भी खा जाता है वह संहार करनेके समय मुख फैलायकर कालके समान दृष्टि आता है ॥ ५ ॥ यह वचन सुन रामचन्द्रजी महामुनियोंसे बोले मैं उस राक्षसका वध करवा दूँगा आप उसका भय त्यागन कीजिये ॥ ६ ॥ इस प्रकार उन बडे तेजस्वी ऋषियोंसे प्रतिज्ञा करके सब भाइयोंसे रघुनाथजी बोले ॥ ७ ॥ हे वीर ! तुममेंसे लवणासुरको कौन मारेगा और वह किसका अंश है सो बताओ महाबाहु भरतका है या बुद्धिमान शत्रुघ्नका ॥ ८ ॥ रामचन्द्रके ऐसा कहने पर भरतजी बोले मैं उसे मारडालूंगा उसे मेरा भाग विधान कीजिये ॥ ९ ॥ यह भरतजीके वचन सुन कर धीरता और शूरता सहित लक्ष्मणके छोटे भ्राता सोनेका सिंहासन छोडकर खड़े हुए ॥ १० ॥ रामचन्द्रको प्रणाम करके शत्रुघ्नजी बोले कि महाबाहु

ततोऽन्तराणिसत्त्वानिखादतेसमहाबलः ॥ संहारेसमनुप्राप्तेव्यादितस्यइवांतकः ॥ ५ ॥ तच्छ्रुत्वाराघवोवाक्यमुवाचसमहामुनीन् ॥ घातयिष्यामितद्रक्षोव्यपगच्छतुवोभयम् ॥ ६ ॥ प्रतिज्ञायतदातेषांमुनीनामुग्रतेजसाम् ॥ सभ्रातॄन्सहितान्सर्वानुवाचरघुनंदनः ॥ ७ ॥ कोहंतालवणंवीरःकस्यांशःसविधीयताम् ॥ भरतस्यमहाबाहोःशत्रुघ्नस्यचधीमतः ॥ ८ ॥ राघवेणैवमुक्तस्तुभरतोवाक्यमब्रवीत् ॥ अहमेनंवधिष्यामिममांशःसविधीयताम् ॥ ९ ॥ भरतस्यवचःश्रुत्वाधैर्यशौर्यसमन्वितम् ॥ लक्ष्मणावरजस्तस्थौहित्वासौवर्णमासनम् ॥ १० ॥ शत्रुघ्नस्त्वब्रवीद्वाक्यंप्रणिपत्यनराधिपम् ॥ कृतकर्मामहाबाहुर्मध्यमोरघुनंदन ॥ ११ ॥ आर्येणहिपुराशून्यात्वयोध्यापरिपालिता ॥ संतापंहृदयेकृत्वाआर्यस्यागमनंप्रति ॥ १२ ॥ दुःखानिचबहूनीहअनुभूतानिपार्थिव ॥ शयानोदुःखशय्यासुनंदिग्रामेमहायशाः ॥ १३ ॥ फलमूलाशनोभूत्वाजटोचीरधरस्तथा ॥ अनुभूयेदृशंदुःखमेषराघवनंदनः ॥ १४ ॥ प्रेष्येमयिस्थितेराजन्नभूयःक्लेशमाप्नुयात् ॥ तथाब्रुवतिशत्रुघ्नेराघवःपुनरब्रवीत् ॥ १५ ॥ एवंभवतुकाकुत्स्थक्रियतांममशासनम् ॥ राज्येत्वामभिषेक्ष्यामिमधोस्तुनगरेशुभे ॥ १६ ॥ निवेशयमहाबाहोभरतंयद्यवेक्षसे ॥ शूरस्त्वंकृतविद्यश्चसमर्थश्चनिवेशने ॥ १७ ॥

भरतजी तो कृतकार्य हो चुके हैं ॥ ११ ॥ कारण कि, जिस समय आप अयोध्यासे वनको चले गये उस समय हृदयमें सन्ताप धारण कर आपके आगमन पर्यन्त अयोध्याकी पालनाकी ॥ १२ ॥ हे रामचन्द्रजी ! इन्होंने बहुत से दुःख उठाये हैं यह महायशस्वी दुःख भोगते नन्दिग्राममें कुशासनपर सो चुके हैं ॥ १३ ॥ फल मूल भक्षण कर जटा धारण किये चीर वस्त्र पहरे इस प्रकारके हे रघुनंदन ! इन्होंने बहुत दुःख उठाये हैं ॥ १४ ॥ मेरे जानेसे यह यहां रहेंगे तो फिर इनको क्लेश न होगा जब ऐसा शत्रुघ्नने कहा तो रामचन्द्र बोले ॥१५॥ हे काकुत्स्थ ! ऐसाही हो मेरी आज्ञा मानिये मैं तुमको उस शुभ मधुनगरके राज्यमें अभिषेक करता हूं ॥ १६ ॥ हे महाबाहो ! और भरतजीको जो आप यहां रहनेको कहते हो यहां ही सुख पूर्वक रहने दो ! तुम नगरके बसानेमें

समर्थ हो कारण कि, तुम शूर और विद्यावान् हो ॥ १७ ॥ यमुनाके किनारे नगर बसाओ और वहां और भी सुन्दर नगर बसाओ कारण कि जो कोई पुरुष किसी राज्य वंशका छेदन कर फिर उसके नगरमें और किसी राजाको वहां नहीं स्थापन करता है वह देश उजाडने हारा नरकको जाता है सो तुम उस दुरात्मा पापी मधुके पुत्र लवणासुरको मारकर ॥ १८ ॥१९॥ उस राज्यको धर्मपूर्वक पालते रहना इस मेरे वाक्यमें क्लेश न मानना हे शूर ? और मेरे उस वाक्यमें कोई उत्तर देनेकी आवश्यकता नहीं अर्थात् उसे मारकर यहां आनेकी आवश्यकता नहीं ॥२०॥ छोटोंको बडोंकी आज्ञा असंशय करनी चाहिये और हे काकुत्स्थ ! इस मेरे दिये हुए अभिषेकको ग्रहण करो ॥ २१ ॥ जो कि वसिष्ठ आदि ऋषि मंत्रपूर्वक विधानसे करेंगे ॥२२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी०

नगरंयमुनाजुष्टंतथाजनपदाञ्शुभान् ॥ योहिवंशंसमुत्पाद्यपार्थिवस्यनिवेशने ॥ १८ ॥ नविधत्तेनृपंतत्रनरकंसहिगच्छति ॥ सत्वंहत्वामधुसुतंलवणंपापनिश्चयम् ॥ १९ ॥ राज्यंप्रशाधिधर्मेणवाक्यंमेयद्यवेक्षसे ॥ उत्तरंचनवक्तव्यंशूरवाक्यांतरेमम ॥ २० ॥ बालेनपूर्वजस्याज्ञाकर्तव्यानात्रसंशयः ॥ अभिषेकंचकाकुत्स्थप्रतीच्छस्वममोद्यतम् ॥ २१ ॥ वसिष्ठप्रमुखैर्विप्रैर्विधिमंत्रपुरस्कृतम् ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे द्विषष्टितमः सर्गः ॥ ६२ ॥ एवमुक्तस्तुरामेणपरांव्रीडामुपागमत ॥ शत्रुघ्नोवीर्यसंपन्नोमंदंमंदमुवाचह ॥ १ ॥ अधर्मंविद्मकाकुत्स्थअस्मिन्नर्थेनरेश्वर ॥ कथंतिष्ठत्सुज्येष्ठेषुकनीयानभिषिच्यते ॥२॥ अवश्यंकरणीयंचशासनंपुरुषर्षभः ॥ तवचैवमहाभागशासनंदुरतिक्रमम् ॥ ३ ॥ त्वत्तोमयाश्रुतंवीरश्रुतिभ्यश्चमयाश्रुतम् ॥ नोत्तरंहिमयावाच्यमध्यमंप्रतिजानति ॥ ४ ॥ व्याहृतंदुर्वचोघोरंहंतास्मिलवणंमृधे ॥ तस्यैवंमेदुरुक्तस्यदुर्गतिःपुरुषर्षभ ॥ ५ ॥

आदि० उत्तरकांडे याषायां द्विषष्टितमः सर्गः ॥६२॥ रामचन्द्रके ऐसा कहने पर वीर्यवान् शत्रुघ्नजी अत्यन्त लज्जित होकर शनैः२रघुनाथजीसे बोले ॥१॥ हे नरेश्वर रघुनाथजी ! मैं तो इसमें अधर्म मानता हूँ कारण कि, ज्येष्ठके विद्यमान रहते छोटा कैसे अभिषेकको प्राप्त हो सकता है॥२॥ हे पुरुषश्रेष्ठ महाभाग ! आपकी आज्ञाभी अवश्य करनी है कारण कि, आपकी आज्ञा अनुल्लंघनीय है ॥ ३ ॥ यह आपसे भी और शास्त्रोंसे भी मैंने श्रवण किया है कि, बडोंकी आज्ञा शिरसे माननी चाहिये और जब कि ज्येष्ठ भरतजी बैठे हैं जो कि सब धर्म जानते तो जिस समय यह कह रहे थे उस समय मुझे उत्तर देना उचित नहीं था ॥ ४ ॥ सो मैंने जो ज्येष्ठके वचन उल्लंघन करके यह घोर दुर्वचन कहे कि, युद्धमें लवणासुरको मैं मारूँगा हे पुरुषश्रेष्ठ ! उसी दुर्वचनका फल यह

दुर्गति प्राप्त हुई कि, ज्येष्ठोंके विद्यमानमें हमारा अभिषेक होगा जिससे नरककी प्राप्ति होगी ॥५॥ और ज्येष्ठके वचनमें उत्तर भी देना नहीं चाहिये कारण कि, वह उत्तर अधर्मयुक्त है और इसीसे परलोकरहितभी है ॥६॥ हे काकुत्स्थ ! एक तो हम भरतजीके कथनमें बोल उठे कि वे लवणासुरको मारने जाते थे हमने कहा हम मारेंगे, दूसरे आपके वचनोंका उत्तर दिया सो हे मानदेनेहारे ! इन दोनों अधर्मोंका फल यह राज्यरूपी दंड मत प्रदान कीजिये । ७ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! हम आपकी इच्छानुसार कार्य करने हारे हैं इस कारण जो हमने अयोग्य राज्याभिषेककी प्राप्ति की है हे रघुनंदन ! इस अधर्मको आप दूर कीजिये ॥ ८ ॥ जब महात्मा बलवान् शत्रुघ्नजीने ऐसा कहा तो रामचन्द्रने प्रसन्न हो भरत और लक्ष्मणसे कहा कि ॥९॥ शीघ्रतासे अभिषेककी सब सामग्री तैयार करो इसी समय हम इन पुरुषसिंह रघुनंदनका अभिषेक करेंगे ॥ १० ॥ हे काकुत्स्थ ! पुरोहित और शास्त्रके जाननेवाले ऋत्विक् तथा सम्पूर्ण मंत्रियोंको तुम

उत्तरंनहिवक्तव्यंज्येष्ठेनाभिहितेपुनः ॥ अधर्मसहितंचैवपरलोकविवर्जितम् ॥ ६ ॥ सोऽहंद्वितीयंकाकुत्स्थनवक्ष्यामीतिचोत्तरम् ॥ माद्वितीयेन दंडोवैनिपतेन्मयिमानद ॥ ७ ॥ कामकारोह्यहंराजंस्तवास्यपुरुषर्षभ ॥ अधर्मंजहिकाकुत्स्थमत्कृतेरघुनंदन ॥ ८ ॥ एवमुक्तेतुशूरेणशत्रुघ्ने नमहात्मना ॥ उवाचरामःसंहृष्टोभरतंलक्ष्मणंतथा ॥ ९ ॥ संभारानभिषेकस्यआनयध्वंसमाहिताः ॥ अद्यैवपुरुषव्याघ्रमभिषेक्ष्यामिराघव म् ॥ १० ॥ पुरोधसंचकाकुत्स्थनैगमानृत्विजस्तथा ॥ मंत्रिणश्चैवतान्सर्वानानयध्वंममाज्ञया ॥ ११ ॥ राज्ञःशासनमाज्ञायतथाऽकुर्वन्महा रथाः ॥ अभिषेकसमारंभंपुरस्कृत्यपुरोधसम् ॥१२॥ प्रविष्टाराजभवनंराजानोब्राह्मणास्तथा ॥ततोऽभिषेकोववृधेशत्रुघ्नस्यमहात्मनः ॥१३॥ संप्रहर्षकरःश्रीमान्राघवस्यपुरस्यच ॥ अभिषिक्तस्तुकाकुत्स्थोबभौचादित्यसन्निभः ॥ १४ ॥ अभिषिक्तःपुरास्कंदःसेंद्रैरिवदिवौकसैः ॥ अ भिषिक्तेतुशत्रुघ्नेरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ १५ ॥ पौराःप्रमुदिताश्चासन्ब्राह्मणाश्चबहुश्रुताः ॥कौसल्याचसुमित्राचमंगलंकेकयीतथा ॥ १६ ॥ चक्रुस्ताराजभवनेयाश्चान्याराजयोषितः ॥ ऋषयश्चमहात्मानोयमुनातीरवासिनः ॥ १७ ॥

हमारी आज्ञासे बुलालाओ ॥ ११ ॥ वे महारथ राजाकी आज्ञा पायकर उसी प्रकारके करते हुए अभिषेककी सामग्री ले और पुरोहितको आगे कर ॥ १२ ॥ इस प्रकारसे सब राजा और ब्राह्मण राजभवनमें एकत्र हुए । तब महात्मा शत्रुघ्नजीका अभिषेक होनेलगा ॥ १३ ॥ अभिषेक होजाने पर शत्रुघ्नजी सूर्यके समान प्रकाशित हुए और रघुनाथजी तथा पुरवासियोंको आनंद बढाने लगे ॥ १४ ॥ जिसप्रकार इन्द्रादिक देवतोंसे अभिषेकित हो स्कंद शोभित हुए थे ऐसे शत्रुघ्नजी शोभित हुए जब सरलकर्मकारी रघुनाथजीने शत्रुघ्नका अभिषेक किया तो ॥ १५ ॥ पुरवासी और वेदपाठी ब्राह्मण बडे सन्तुष्ट हुए तथा कौशल्या; सुमित्रा और कैकेयी परम प्रसन्न हुई ॥१६॥ और वेभी उस भवनकी स्त्रियोंके संग मिलकर मंगल करनेलगीं और यमुनातीरवासी महात्मा ऋषिगण ॥१७॥

शत्रुघ्नके अभिषेकसे लवणासुरको मरा समझने लगे, तब अभिषेकको प्राप्त हुए शत्रुघ्नको रामचन्द्र गोदीमें बैठाकर उनके तेजको बढाते हुए मधुरवाणी बोले ॥१८॥ हे सौम्य ! रघुनंदन ! मैं यह शत्रुको मारनेवाला दिव्य बाण तुमको देता हूं इसीसे तुम लवणासुरको मारना ॥१९॥ हे काकुत्स्थ ! सागरमें शयन करते हुए स्वयंभूने इस दिव्य बाणको निर्माण किया था उस समय इसे देवता और दैत्य किसीने नहीं देखा था ॥२०॥ यह सब प्राणियोंको अदृश्य है, इसी कारण सब बाणोंमें श्रेष्ठ है, यह क्रोध करके उन दोनों दुरात्माओंके मारनेको बनायाथा ॥ २१ ॥ जिस समय ब्रह्माजी त्रीलोकीको निर्माण करते थे उस समय मधु और कैटभ तथा और भी राक्षस उसमें विघ्न करते थे सो इसी बाणसे संग्राममें उन दोनोंको मारडाला ॥ २२ ॥ उन मधु और कैटभको मारकर स्वयंभूने

हतंलवणमाशंसुःशत्रुघ्नस्याभिषेचनात् ॥ ततोऽभिषिक्तंशत्रुघ्नमंकमारोप्यराघवः ॥ उवाचमधुरांवाणींतेजस्तस्याभिपूरयन् ॥ १८ ॥ अयंशरस्त्वमोघस्तेदिव्यःपरपुरञ्जयः ॥ अनेनलवणंसौम्यहंतासिरघुनंदन ॥ १९ ॥ सृष्टःशरोऽयंकाकुत्स्थयदाशेतेमहार्णवे ॥ स्वयंभूरजितोदिव्योयंनापश्यन्सुरासुराः ॥ २० ॥ अदृश्यःसर्वभूतानांतेनायंहिशरोत्तमः ॥ सृष्टःक्रोधाभिभूतेनविनाशार्थंदुरात्मनोः ॥ ॥ २१ ॥ मधुकैटभयोर्वीरविघातेसर्वरक्षसाम् ॥ स्रष्टुंकामेनलोकांस्त्रींस्तौचानेनहतौयुधि ॥ २२ ॥ तौहत्वाजनभोगार्थंकैटभंतुमधुंतथा ॥ अनेनशरमुख्येनततोलोकांश्चकारसः ॥ २३ ॥ नायंमयाशरःपूर्वंरावणस्यवधार्थिना ॥ मुक्तःशत्रुघ्नभूतानांमहान्त्रासोभवेदिति ॥ २४ ॥ यच्चतस्यमहच्छूलंत्र्यंबकेणमहात्मना ॥ दत्तंशत्रुविनाशायमघोरायुधमुत्तमम् ॥ २५ ॥ तत्सन्निक्षिप्यभवनेपूज्यमानंपुनःपुनः ॥ दिशिःसर्वाःसमासाद्यप्राप्नोत्याहारमुत्तमम् ॥ २६ ॥ यदातुयुद्धमाकांक्षन्यदिकश्चित्समाह्वयेत् ॥ तदाशूलंगृहीत्वातुभस्मरक्षःकरोतिहि ॥ २७ ॥ सत्वंपुरुषशार्दूलतमायुधविनाकृतम् ॥ अप्रविष्टंपुरंपूर्वंद्वारितिष्ठधृतायुधः ॥ २८ ॥

मनुष्योंके भोगके अर्थ त्रिलोकी निर्माण करी सो यह सब इसी बाणसे सिद्ध हुए ॥२३॥ हे शत्रुघ्न ! रावणके मारनेके निमित्तभी यह बाण मैंने नहीं छोडा कारण कि इसके छोडनेसे बहुतही प्राणियोंका संहार होता है ॥ २४ ॥ और जो कि उसे शिवजीसे महाघोर उत्तम आयुध शत्रुका नाश करनेहारा शूल प्राप्त हुआ है ॥ २५ ॥ वह उसे अपने घरही रखता है और उसका वारंवार पूजन करता है और उसे छोडकर सब दिशाओंमें आहारके निमित्त जाता है ॥ २६ ॥ उस समय जो कोई युद्धकी इच्छासे उसे बुलाता है तो वह राक्षस घरसे शूल लाकर उसे भस्म कर देता है ॥ २७ ॥ हे पुरुषसिंह ! जिस समय वह आयुधरहित हो उस समय उसके नगरमें आनेसे पहलेही तुम आयुध धारण कर नगरके बाहर स्थित रहना ॥ २८ ॥

और उसको वनमें प्रवेश करनेके पहलेही उस राक्षसको युद्धके निमित्त बुलाना तो तुम अवश्य मार सकोगे ॥२९॥ इससे अन्यथा करनेमें वह किसी प्रकार नहीं मारा जायगा और जो हमारे कहे वचनके अनुसार करोगे तो अवश्य उसका नाश होजायगा ॥ ३० ॥ यह सब शूलकापरिहार (निवारण) तुमसे वर्णन किया अन्यथा श्रीमान् शिवजी महाराजका वह शूल किसीके वशका नहीं ॥३१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां त्रिषष्टितमः सर्गः ॥६३॥ इस प्रकार शत्रुघ्नजीसे कह और वारंवार प्रशंसा कर फिर रघुनाथजी उनसे बोले॥१॥हे पुरुषश्रेष्ठ! यह चार सहस्र घोडे, दो सहस्र रथ और सौ हाथी ॥२॥ और सामग्री बेचनेवाले व्यापारी जिनके पास अनेक प्रकारके द्रव्य हैं वह तथा नट नर्तक भी तुम्हारे साथ जायँ॥३॥हे पुरुषसिंह शत्रुघ्न! सेनादिकके व्ययके निमित्त

अप्रविष्टंचभवनंयुद्धायपुरुषर्षभ ॥ आह्वयेथामहाबाहोततोहंतासिराक्षसम् ॥ २९ ॥ अन्यथाक्रियमाणेतुअवध्यःसभविष्यति ॥ यदित्वेवं कृतंवीरविनाशमुपयास्यति ॥३०॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंशूलस्यचविपर्ययः ॥ श्रीमतःशितिकंठस्यकृत्यंहिदुरतिक्रमम् ॥३१॥ इत्यार्षेश्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे त्रिषष्टितमः सर्गः ॥६३॥ एवमुक्त्वाचकाकुत्स्थंप्रशस्यचपुनः पुनः ॥ पुनरेवापरंवाक्यमुवाचरघुनंदनः ॥१॥ इमान्यश्वसहस्राणिचत्वारिपुरुषर्षभ ॥ रथानांद्वेसहस्रेचराजानांशतमुत्तमम् ॥२॥ अंतरापणवीथ्यश्चनानापण्योपशोभिताः ॥ अनुगच्छंतुकाकुत्स्थंतथैवनटनर्तकाः ॥३॥ हिरण्यस्यसुवर्णस्यनियुतंपुरुषर्षभ ॥ आदायगच्छशत्रुघ्नपर्याप्तधनवाहनः ॥४॥ बलंच सुभृतंवीरहृष्टतुष्टमनुद्धतम् ॥ संभाषासंप्रदानेनरंजयस्वनरोत्तम ॥५॥ नह्यर्थस्तत्रतिष्ठंतिनदारानचबांधवाः ॥ सुप्रीतोभृत्यवर्गस्तुयत्रतिष्ठति राघव ॥६॥ अतोहृष्टजनाकीर्णांप्रस्थाप्यमहतींचमूम् ॥ एकएवधनुष्पाणिर्गच्छत्वंमधुनोवनम् ॥७॥ यथात्वांनप्रजानातिगच्छंतंयुद्धकांक्षिणम् ॥ लवणस्तुमधोःपुत्रस्तथागच्छेरशंकितम् ॥८॥ नतस्यमृत्युरन्योऽस्तिकश्चिद्धिपुरुषर्षभ ॥ दर्शनंयोऽभिगच्छेतसवध्योलवणेनहि ॥९॥

सोनेकी एक लक्ष मुहरभी तुम लेते जाओ ॥४॥ और हे वीर नरोत्तम! सेनाको अच्छे वचन बोलने हृष्टपुष्ट अपने विषय संतुष्ट करनेके निमित्त मासिक वेतन देकर संतुष्ट करते रहना ॥५॥ हे राघव! जिस शत्रु स्थानमें प्रसन्न हुये भृत्य स्थित होनेको समर्थ होते हैं वहां अर्थ स्त्री बंधु भी नहीं स्थित हो सके ॥ ६ ॥ इस कारण प्रसन्न वीरोंवाली बडी सेनाको संग ले जाय और सेनाको गंगाके किनारे स्थापन कर वहांसे तुम अकेलेही धनुष धारण करके मधुवनको जाओ ॥७॥ वह मधुका पुत्र लवणासुर जिस प्रकारसे तुमको अपनेसे युद्धकर्त्ता न जाने इस प्रकारसे तुम निःशंक हो जाओ ॥ ८ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ! और किसीके हाथसे उसकी मृत्यु नहीं है, परंतु जिसे वह पहलेसे जान लेता है कि; यह मुझसे युद्धको आता है उसे देखतेही शूलसे मार डालता है ॥ ९ ॥

हे सौम्य ! सो आप ग्रीष्म ऋतुके बीतनेपर वर्षाकाल प्राप्त होनेपर तुम दुष्टको मारना, कारण कि वह उसकी मृत्युका समय होगा उस समय वह जानेगा कि, इस समय कोई मुझसे युद्ध करने नहीं आवेगा; इस कारण वह शूल विनाही विचरेगा ॥ १० ॥ तुम्हारी सेनाके लोग महर्षियोंको आगे करके जायँ जिस कारणसे कि, ग्रीष्मके समाप्त होते २ गंगाके पार हो जायँ ॥ ११ ॥ हे अमितविक्रम ! वहां नदीके तीरमें सब सेनाको स्थापन करके फिर तुम धनुष धारण करके आगे चले जाना ॥१२॥ जब रघुनाथजीने ऐसा कहा तब शत्रुघ्नजीने महाबली सेनामुखियोंको बुलाकर ऐसाकहा ॥ १३ ॥ यह तुम्हारे ठहरनेके निमित्त दिन नियत कर दिये हैं वहां तुम बाधा रहित हो स्थिति करना इसमें तुमको कुछ बाधा नहीं होगी ॥१४॥ इस प्रकारसे उन्हें आज्ञादे और

सग्रीष्मअपयातेतुवर्षारात्रउपागते ॥ हन्यास्त्वंलवणंसौम्यसहिकालोऽस्यदुर्मतेः ॥ १० ॥ महर्षींस्तुपुरस्कृत्यप्रयांतुतवसैनिकाः ॥ यथाग्रीष्मावशेषेणतरेयुर्जाह्नवीजलम् ॥ ११ ॥ तत्रस्थाप्यबलंसर्वंनदीतीरेसमाहितः ॥ अग्रतोधनुषासार्धंगच्छत्वंलघुविक्रम ॥ १२ ॥ एवमुक्तस्तु रामेणशत्रुघ्नस्तान्महाबलान् ॥ सेनामुख्यान्समानीयततोवाक्यमुवाचह ॥ १३ ॥ एतेवोगणितावासायत्रतत्रनिवत्स्यथ ॥ स्थातव्यंचाविरोधेनयथाबाधानकस्यचित् ॥ १४ ॥ तथातांस्तुसमाज्ञाप्यप्रस्थाप्यचमहद्बलम् ॥ कौसल्यांचसुमित्रांचकैकेयींचाभ्यवादयत् ॥ १५ ॥ रामं प्रदक्षिणीकृत्यशिरसाभिप्रणम्यच ॥ लक्ष्मणंभरतंचैवप्रणिपत्यकृतांजलिः ॥ १६ ॥ पुरोहितंवसिष्ठंचशत्रुघ्नःप्रयतात्मवान् ॥ रामेणचाभ्यनुज्ञातःशत्रुघ्नःशत्रुतापनः ॥ प्रदक्षिणमथोकृत्वानिर्जगाममहाबलः ॥ १७ ॥ निर्याप्यसेनामथसोऽग्रतस्तदागजेंद्रवाजिप्रवरौघसंकुलाम् ॥ उपास्यमानःसनरेंद्रपार्श्वतःप्रतिप्रयातोरघुवंशवर्धनः ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे चतुःषष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥ प्रस्थाप्यचबलंसर्वंमासमात्रोषितःपथि ॥ एकएवाशुशत्रुघ्नोजगामत्वरितंतदा ॥ १ ॥

उस महासेनाको भेजकर उन्होंने जाय कौशल्या, सुमित्रा औरकैकेयीको प्रणाम किया ॥ १५ ॥ रामचन्द्रकी प्रदक्षिणा और प्रणामकर लक्ष्मण और भरत जीको हाथ जोड प्रणामकर ॥ १६ ॥ और पुरोहित वशिष्ठजीको दंडवत करके नियमसे रहनेहारे शत्रुओंके ताप देनेहारे महाबली शत्रुघ्नजी रघुनाथजीकी आज्ञा ले और उनकी प्रदक्षिणा कर चले ॥ १७ ॥ गजेन्द्र अश्व आदिकोंसे युक्त उस महासेनाको तो उन्होंने आगे भेजा और पीछेसे वह रघुवंशके बढानेहारे नरेन्द्र रामचन्द्रसे बिदा हो आप भी गये ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां चतुःषष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥ सेनाको स्थापन कर और एक मास अयोध्यामें बिताय शत्रुघ्नजी शीघ्रतासे अकेलेही चले ॥ १ ॥

वह रघुनन्दन वीर दो रात्रि मार्गमें बितायकर वाल्मीकिजीकेपवित्र वासस्थानमें जायकर प्राप्त हुए ॥२॥ सो शत्रुघ्नजी महामुनि वाल्मीकिजीको अभिवादन करके हाथ जोड उनसे यह वचन बोले ॥ ३ ॥ हे भगवन् ! मैं एक बडे कार्यके निमित्त आया हूं सो एक रात्रि यहां रहा चाहता हूं प्रातःकालही दारुण पश्चिम दिशाको जाऊंगा ॥ ४ ॥ शत्रुघ्नजीके वचन सुन मुनिश्रेष्ठ वाल्मीकिजी उन महायशस्वीसे बोले कि, तुम भले आये ॥५॥ हे सौम्य! यह हमारा आश्रम रघुवंशियोंके कुलके निमित्तही है यह आसन, पाद्य अर्घ्य आप निःशंक हमसे ग्रहण कीजिये॥ ६॥ इस प्रकार महायशस्वी शत्रुघ्नजी फलमूल और भोजनको ग्रहण कर उन्हें भक्षण कर परम तृप्तिको प्राप्त हुए ॥७॥ यह फलमूलको भोजन कर महर्षि वाल्मीकिजीसे बोले यह आपके आश्रममें पूर्व ओर किसके यज्ञकी विभूति दीखती है ॥८॥ यह सुनकर

द्विरात्रमंतरेशूरउष्यराघवनंदनः ॥ वाल्मीकेराश्रमंपुण्यमगच्छभद्वासमुत्तमम् ॥२॥ सोऽभिवाद्यमहात्मानंवाल्मीकिंमुनिसत्तमम् ॥ कृतांजलिरथोभूत्वावाक्यमेतदुवाचह ॥ ३॥ भगवन्वस्तुमिच्छामिगुरोःकृत्यादिहागतः ॥ श्वःप्रभातेगमिष्यामिप्रतीचींदारुणांदिशम् ॥४॥ शत्रुघ्नस्यवचःश्रुत्वाप्रहस्यमुनिपुंगवः ॥प्रत्युवाचमहात्मानंस्वागतंतेमहायशः ॥५॥ स्वमाश्रममिदंसौम्यराघवाणांकुलस्यवै ॥ आसनंपाद्यमर्घ्यंचनिर्विशंकःप्रतीच्छमे ॥ ६ ॥ प्रतिगृह्यतथापूजांफलमूलंचभोजनम् ॥ भक्षयामासकाकुत्स्थस्तृप्तिंचपरमांगतः ॥ ७ ॥ सभुक्त्वाफलमूलंचमहर्षिंतमुवाचह ॥ पूर्वायज्ञविभूतीयंकस्याश्रमसमीपतः ॥ ८ ॥ तत्तस्यभाषितंश्रुत्वावाल्मीकिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ शत्रुघ्नशृणुयस्येदंबभूवायतनंपुरा ॥९॥ युष्माकंपूर्वकोराजासौदासस्तस्यभूपतेः ॥ पुत्रोवीर्यसहोनामवीर्यवानतिधार्मिकः ॥१०॥ सबालएवसौदासोमृगयामुपचक्रमे ॥ चंचूर्यमाणंददृशेसशूरोराक्षसद्वयम् ॥११॥ शार्दूलरूपिणौघोरौमृगान्बहुसहस्रशः ॥ भक्षमाणावसंतुष्टौपर्याप्तिंनैवजग्मतुः ॥१२॥ सतुतौराक्षसौदृष्ट्वानिर्मृगंचवनंकृतम् ॥ क्रोधेनमहताविष्टोजघानैकंमहेषुणा ॥ १३ ॥ विनिपात्यतमेकंतुसौदासःपुरुषर्षभः ॥ विज्वरोविगतामर्षोहतंरक्षोह्युदैक्षत ॥१४॥

वाल्मीकि बोले सुनो शत्रुघ्नजी जिनका स्थान यह पूर्वकालमें था सो कहता हूं ॥९॥ तुम्हारे वंशमें एक पूर्वकालमें सौदास राजा था उस राजाके एक वीर्यसह नाममहाबली अतिधर्मवान् पुत्र हुआ ॥ १० ॥ बालकअवस्थामेंही वह सौदास मृगयाके निमित्त गया, तहां उन महावीरने दो राक्षसोंको फिरते हुए देखा ॥११॥ वे दोनों कामरूपी सिंह बने सहस्रों मृगोंको भक्षण करते हुए भी सन्तुष्ट नहीं होते थे ॥१२॥ जब सौदासने देखा कि, इन दोनोंने तो बनको निर्जीवही कर दिया है तब महाक्रोधित हो बाणके प्रहारसे एकको मार डाला ॥ १३ ॥ सौदासपुरुषश्रेष्ठने एक राक्षसका संहार करके सन्ताप क्रोधरहित हो दूसरे राक्षसको

भी मृतकही समझा ॥१४॥ उसके सहायक दूसरे राक्षसने राजाको देखा कि, यह हमारी ओर भी देखते हैं तब वह दूसरा राक्षस घोर सन्ताप करके राजासे कहने लगा ॥१५॥ हे पापी ! जिस कारण कि, तुमने बिना अपराध मेरे सहायकको मारा है इस कारण इसका फल तुम्हें अवश्य दूंगा ॥१६॥ यह कह वह राक्षस वहीं अन्तर्धान होगया कुछ दिनोंके उपरांत राजा सौदास तो मृतक हुए और उनके पुत्र मित्रसह राजा हुए ॥ १७ ॥ सो राजा इस आश्रमके निकट अश्वमेध महायज्ञका अनुष्ठान करने लगे और वसिष्ठजी उसकी पालना करने लगे ॥ १८ ॥ वह यज्ञ बहुतही वर्षोंतक रहा और महालक्ष्मी धन धान्यसे युक्त होनेके कारण देवयज्ञके समान हुआ ॥१९॥ यज्ञान्तमें वह राक्षस अपना वैर लेनेके लिये राजासे वसिष्ठका रूप बनकर कहने लगा ॥२०॥ आज तुम्हारा यज्ञ पूर्ण होगया

निरीक्षमाणंतंदृष्ट्वासहायंतस्यरक्षसः॥ संतापमकरोद्घोरंसौदासंचेदमब्रवीत्॥१५। यस्मादनपराधंतंसहायंममजघ्निवान्॥ तस्मात्तवापिपापिष्ठप्रदास्यामिप्रतिक्रियाम् ॥१६॥ एवमुक्त्वातुतद्रक्षस्तत्रैवांतरधीयत॥कालपर्याययोगेनराजामित्रसहोऽभवत् ॥१७॥ राजापियजतेयज्ञमस्याश्रमसमीपतः॥ अश्वमेधंमहायज्ञंतंवसिष्ठोऽप्यपालयत् ॥१८॥ तत्रयज्ञोमहानासीद्बहुवर्षगणायुतः॥ समृद्धःपरयालक्ष्म्यादेवयज्ञसमोऽभवत् ॥ १९ ॥ अथावसानेयज्ञस्यपूर्ववैरमनुस्मरन्॥ वसिष्ठरूपीराजानमितिहोवाचराक्षसः ॥२०॥ अद्ययज्ञावसानांतेसामिषंभोजनंमम ॥ दीयतामितिशीघ्रंवैनात्रकार्यविचारणा॥२१॥ तच्छ्रुत्वाव्याहृतंवाक्यंरक्षसाब्रह्मरूपिणा ॥ सूदान्संस्कारकुशलानुवाचपृथिवीपतिः ॥२२॥ हविष्यंसामिषंस्वादुयथाभवतिभोजनम् ॥ तथाकुरुतशीघ्रंवैपरितुष्येद्यथागुरुः ॥ २३ ॥ शासनात्पार्थिवेंद्रस्यसूदःसंभ्रांतमानसः॥ तच्चरक्षःपुनस्तत्रसूदवेषमथाकरोत् ॥ २४ ॥ समानुषमथोमांसंपार्थिवायन्यवेदयत् ॥ इदंस्वादुहविष्यंचसामिषंचान्नमाहृतम् ॥ २५ ॥ सभोजनंवसिष्ठायपत्न्यासार्धमुपाहरत् ॥मदयंत्यानरश्रेष्ठसामिषंरक्षसाहृतम् ॥ २६ ॥

इस कारण शीघ्रही हमको समांस भोजन दो इसमें विचार करनेकी कोई आवश्यकता नहीं ॥ २१ ॥ ब्राह्मणरूपी राक्षसके यह वचन सुनकर राजाने भोजन बनानेमें चतुर रसोइयोंसे कहा॥२२॥ हविष्य पवित्र मांस लाकर जिस प्रकार भोजन बहुत ही स्वादिष्ठ हो और जिसे भोजन कर गुरुजी परमप्रसन्न हों सो तुम शीघ्र विधान करो ॥२३॥ राजाके वचन सुनकर रसोइये चकित हो गये कि, राजा क्या कहते हैं; इसी अवसरमें वह राक्षस रसोइयेका वेष धार राजाके भोजनागारमें गया वहां कौशलसे मनुष्यका मांस मिलाय तैयार कर वह॥२४॥ मनुष्यका मांस लाकर राजाको दिया और कहा यह परम स्वादिष्ठ हविष्य आमिष अन्न उपस्थित है ॥२५॥ हे नरश्रेष्ठ ! राजाने अपनी मदयन्ती पत्नीसहित वसिष्ठजीको भोजनके निमित्त वह राक्षसके द्वारा लाया हुआ मांस दिया ॥२६॥

वसिष्ठजीने देखा कि, राजाने हमें मनुष्यका मांस भोजनको दिया है; तब महा क्रोधकर इस प्रकारसे कहनेलगे॥ २७॥ हे राजन् ! जैसा वह भोजन तू हमारे भोजनके निमित्त लाया है ऐसा भोजन तेरेही खानेके निमित्त होगा इसमें कुछ संदेह नहीं अर्थात् तू राक्षस होगा ॥२८॥ यह सुन सौदाससे कहा कि, इन्होंने मुझे वृथा शाप दिया इस कारण क्रोध कर हाथमें जल ले वसिष्ठजीको शाप देने लगा तब उनकी भार्याने आकर निवारण किया कि ॥ २९ ॥ हे राजन् ! भगवान् ऋषि वसिष्ठजी हमारे प्रभु हैं यह देवतुल्य पुरोहित हैं उनको शाप देनेको आप समर्थ नहीं हैं ॥ ३० ॥ यह वचन सुनकर उन महात्माने तेजबलयुक्त जल जो क्रोधसे ग्रहण किया था अपने चरणोंपर डाल लिया ॥ ३१॥ इससे इन राजाके दोनों चरण काले हो गये और उसी दिनसे यह महायशस्वी सौदास

ज्ञात्वातदामिषंविप्रोमानुषंभोजनागतम् ॥ क्रोधेनमहताविष्टोव्याहर्तुमुपचक्रमे ॥ २७ ॥ यस्मात्त्वंभोजनंराजन्ममैतद्दातुमिच्छसि ॥ तस्माद्भोजनमेतत्तेभविष्यतिनसंशयः ॥ २८ ॥ ततःक्रुद्धस्तुसौदासस्तोयंजग्राहपाणिना ॥ वसिष्ठंशप्तुमारेभेभार्याचैनमवारयत् ॥ २९ ॥ राजन्प्रभुर्यतोऽस्माकंवसिष्ठोभगवानृषिः ॥ प्रतिशप्तुंनशक्तस्त्वंदेवतुल्यंपुरोधसम् ॥३०॥ ततःक्रोधमयंतोयंतेजोबलसमन्वितम्॥ व्यसर्जयतधर्मात्मा ततःपादौसिषेचच ॥ ३१ ॥ तेनास्यराज्ञस्तौपादौतदाकल्माषतांगतौ ॥ तदाप्रभृतिराजासौसौदासःसुमहायशाः ॥३२॥ कल्माषपादःसंवृत्तःख्यातश्चैवमथानृपः॥सराजासहपत्न्यावैप्रणिपत्यमुहुर्मुहुः ॥ पुनर्वसिष्ठंप्रोवाचयदुक्तंब्रह्मरूपिणा ॥३३॥ तच्छ्रुत्वापार्थिवेंद्रस्यरक्षसाविकृतंचतत् ॥ पुनःप्रोवाचराजानंवसिष्ठःपुरुषर्षभम् ॥३४॥ मयारोषपरीतेनयदिदंव्याहृतंवचः ॥ नैतच्छक्यंवृथाकर्तुंप्रदास्यामिचतेवरम् ॥ ३५ ॥ कालोद्वादशवर्षाणिशापस्यांतोभविष्यति ॥ मत्प्रसादाच्चराजेंद्र अतीतंनस्मरिष्यसि ॥३६॥ एवंसराजातंशापमुपभुज्यारिसूदन॥ प्रतिलेभेपुनाराज्यंप्रजाश्चैवान्वपालयत् ॥ ३७ ॥ तस्यकल्माषपादस्ययज्ञस्यायतनंशुभम् ॥ आश्रमस्यसमीपेऽस्मिन्यन्मांपृच्छसिराघव ॥ ३८ ॥

राजा ॥ ३२ ॥ कल्माषपाद राजा इस नामसे विख्यात हुए फिर राजाने स्त्री सहित वारंवार मुनिके चरणोंमें प्रणाम करके जो कुछ ब्राह्मणरूपधारी वसिष्ठने कहा था यह सब निवेदन किया ॥ ३३ ॥ राजाके वचन सुन और राजाकीकरी हुई इस चेष्टाको विचार फिर वसिष्ठजीने उस पुरुषश्रेष्ठ राजा सौदाससे कहा ॥ ३४ ॥ जो कुछ कि, हमने क्रोधसे यह वचन कहे हैं इसे हम मिथ्या तो नहीं करसके पर तुमको वर देते हैं कि॥ ३५॥ बारहवर्षके उपरान्त शापका अन्त हो जायगा और हे राजेन्द्र ! हमारे प्रसादसे राक्षसपनकी करी हुई घटनाओंका तुम्हें स्मरण न होगा ॥ ३६॥ फिर हे शत्रुघ्नजी ! इस प्रकारसे यह राजा शापको भोग अंतमें फिर राज्यको प्राप्त हो प्रजाको धर्मसे पालन करने लगे॥ ३७॥ यह उन्हीं कल्माषपाद राजाके यज्ञका सुन्दर स्थान है जो हमारे आश्रमके समीप है

और जिसकी कथा तुमने हमसे पूछी है ॥३८॥ शत्रुघ्नजी इस प्रकारसे उन महात्मा राजाकी दारुण कथा श्रवण कर महर्षिको प्रणाम कर पर्णशालामें गये ॥ ३९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आ० उत्तरकांडे भाषायां पंचषष्टितमः सर्गः॥६५॥ जिसरात्रिमें शत्रुघ्नजी पर्णशालामें ठहरे थे उसी रात्रिमें जानकीके दो बालक उत्पन्न हुए थे॥१॥ सो उस समय आधीरातके समय मुनिकुमारोंने आकर वाल्मीकिजीसे जानकीके सन्तान होनेके शुभ समाचार कहे ॥२॥ कि, हे भगवन्! उन रामकी भार्याने दो पुत्र उत्पन्न किये हैं सो आप बालग्रहके नाश करनेहारी उनकीरक्षा कीजिये ॥३॥ उनके वचन सुनते ही वाल्मीकिजी चले और बालचन्द्रमाके समान कांतिमान पराक्रमी ॥४॥ उन दोनों कुमारोंको प्रसन्नतासे जाकर देखा भूत और राक्षसोंका भय दूर करनेहारी रक्षा की ॥५॥ एक मुष्टि कुश लेकर और उसमेंका आधा भाग

तस्यतांपार्थिवेंद्रस्यकथांश्रुत्वासुदारुणाम् ॥ विवेशपर्णशालायांमहर्षिमभिवाद्यच ॥ ३९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदिकाव्ये च० सा० उ० पंचषष्टितमः सर्गः ॥ ६५ ॥ यामेवरात्रिंशत्रुघ्नःपर्णशालांसमाविशत् ॥ तामेवरात्रिंसीतापिप्रसूतादारकद्वयम् ॥ १ ॥ ततोऽर्धरात्रसमयेबालकामुनिदारकाः ॥ वाल्मीकेःप्रियमाचख्युःसीतायाःप्रसवंशुभम् ॥ २ ॥ भगवन्रामपत्नीसाप्रसूतादारकद्वयम् ॥ ततोरक्षांमहातेजःकुरुभूतविनाशिनीम् ॥ ३ ॥ तेषांतद्वचनंश्रुत्वामहर्षिःसमुपागमत् ॥ बालचन्द्रप्रतीकाशौदेवपुत्रौमहौजसौ ॥ ४ ॥ जगामतत्रहृष्टात्माददर्शचकुमारकौ ॥ भूतघ्नींचाकरोत्ताभ्यांरक्षांरक्षोविनाशिनीम् ॥ ५ ॥ कुशमुष्टिमुपादायलवंचैवतुसद्विजः ॥ वाल्मीकिःप्रददौताभ्यांरक्षांभूतविनाशिनीम् ॥ ६ ॥ यस्तयोःपूर्वजोजातःसकुशैर्मंत्रसत्कृतैः ॥ निर्मार्जनीयस्तुतदाकुशइत्यस्यनामतत् ॥ ७ ॥ यश्चावरोभवेत्ताभ्यांलवेनसुसमाहितः ॥ निर्मार्जनीयोवृद्धाभिर्लवेतिचसनामतः ॥ ८ ॥ एवंकुशलवौनाम्नातावुभौयमजातकौ ॥ मत्कृताभ्यांचनामभ्यांख्यातियुक्तौभविष्यतः ॥ ९ ॥ तांरक्षांजगृहुस्ताश्चमुनिहस्तात्समाहिताः ॥ अकुर्वंश्चततोरक्षांतयोर्विगतकल्मषाः ॥ १० ॥

लव (जड) लेकर बीचमेंसे उसे चीरकर क्रमसे दोनोंकी रक्षा करी जिससे कोई बालग्रह आदिक वहाँ प्रवेश न कर सके ॥६॥ जो उन दोनों बालकोंमें पूर्व उत्पन्न हुआ और मंत्र पढे हुए कुशसे मार्जन किया इस कारण उसका नाम कुश हुआ॥७॥ और जो उनमें छोटा हुआ उसकी लवद्वारा रक्षा करी इस कारण उसका नाम लव हुआ ॥ ८ ॥ इस कारण वह दोनों यमज कुश लव नामवाले होकर इन्ही मेरे रक्खे हुए नामसे विख्यात होंगे ॥९॥ इस प्रकारसे मुनि रक्षा कर पर्णशालाको गये और उस रक्षाको ग्रहण करके वे पापरहित वृद्धस्त्री जो जो जानकीजीके निकट थीं सो बडी सावधानीसे रक्षा करने लगीं ॥ १० ॥

जिस समय वह वृद्धा उनकी रक्षा करने लगीं तो उन्होने उनका गोत्र उच्चारण कर रामचन्द्र और सीताजी पुत्र कहकर रक्षा की ॥ ११ ॥ सो शत्रुघ्नजीने इस महा आनंदकी वार्ताको आधीरातके समय सुना और अपनी पर्णशालामें जाकर कहा कि, माता! भाग्यकी बात है जो तुम्हारे पुत्र हुए ॥ १२ ॥ उस समय प्रसन्नताके मारे महात्मा शत्रुघ्नजीको वह वर्षाकालके श्रावण महीनेकी रात्रि बडी शीघ्रतासे व्यतीत हो गई ॥ १३ ॥ फिर प्रातःकालके समय वह महावीर प्रातःकृत्य करके हाथ जोड मुनिसे आज्ञा ले पश्चिमकी ओरको चले ॥ १४ ॥ वह सात रात्रि मार्गमें बिताकर यमुनाके तीर जाय बैठे पुण्यकर्म ऋषियोंके आश्रममें प्राप्त हुए ॥ १५ ॥ शत्रुघ्नजी भार्गव आदि ऋषियोंके संग अनेक सुन्दर कथा श्रवण करते वहां रहे ॥ १६ ॥ वह नरेन्द्रपुत्र महात्मा शत्रुघ्नजी च्यवनादि ऋषियोंके सहित

तथातांक्रियमाणांचवृद्धाभिर्गोत्रनामच ॥ संकीर्तनंचरामस्यसीतायाःप्रसवौशुभौ ॥ ११ ॥ अर्धरात्रेतुशत्रुघ्नःशुश्रावसुमहत्प्रियम् ॥ पर्णशालांततोगत्वामातर्दिष्ट्येतिचाब्रवीत् ॥ १२ ॥ तदातस्यप्रहृष्टस्यशत्रुघ्नस्यमहात्मनः ॥ व्यतीतावार्षिकीरात्रिःश्रावणीलघुविक्रमा ॥ १३ ॥ प्रभातेसुमहावीर्यःकृत्वापौर्वाह्णिकींक्रियाम् ॥ मुनिंप्रांजलिरामंत्र्यययौपश्चान्मुखःपुनः ॥ १४ ॥ सगत्वायमुनातीरंसप्तरात्रोषितःपथि ॥ ऋषीणांपुण्यकीर्तीनामाश्रमेवासमभ्ययात् ॥ १५ ॥ सतत्रमुनिभिःसार्धंभार्गवप्रमुखैर्नृपः ॥ कथाभिरभिरूपाभिर्वासंचक्रेमहायशाः ॥ १६ ॥ सकांचनाद्यैर्मुनिभिःसमेतैरघुप्रवीरोरजनींतदानीम् ॥ कथाप्रकारैर्बहुभिर्महात्माविरामयामासनरेंद्रसूनुः ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे षट्षष्टितमः सर्गः ॥ ६६ ॥ अथरात्र्यांप्रवृत्तायांशत्रुघ्नोभृगुनंदनम् ॥ पप्रच्छच्यवनंविप्रंलवणस्ययथाबलम् ॥ १ ॥ शूलस्यचबलंब्रह्मन्केचपूर्वंविनाशिताः ॥ अनेनशूलमुख्येनद्वंद्वयुद्धमुपागताः ॥ २ ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाशत्रुघ्नस्यमहात्मनः ॥ प्रत्युवाचमहातेजाश्च्यवनोरघुनंदनम् ॥ ३ ॥ असंख्येयानिकर्माणियान्यस्यरघुनंदन ॥ इक्ष्वाकुवंशप्रभवेयद्वृत्तंतच्छृणुष्वमे ॥ ४ ॥ अयोध्यायांपुराराजायुवनाश्वसुतोबली ॥ मांधाताइतिविख्यातस्त्रिषुलोकेषुवीर्यवान् ॥ ५ ॥

उस समय रात्रिमें अनेक प्रकारकी कथायें श्रवण कर वह रात्रि बिताते हुए ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां षट्षष्टितमः सर्गः ॥ ६६ ॥ उस रात्रिमें शत्रुघ्नजी भृगुनन्दन च्यवन ब्राह्मणसे लवणासुरके बलकी जिज्ञासा करने लगे ॥ १ ॥ हे ब्रह्मन्! उसके शूलका बल कैसा है और उसने कितनोंका नाश कर दिया है? कौन २ उस शूलसे द्वंद्व युद्ध करनेको आये थे ॥ २ ॥ उन महात्मा शत्रुघ्नजीके यह वचन सुनकर महातेजस्वी च्यवनजी रघुनंदनसे बोले ॥ ३ ॥ हे रघुनंदन! इसके शूलके कर्म तो अनगिन्त हैं, परन्तु जो कथा इक्ष्वाकुवंशोत्पन्न मांधाताजीके विषयमें हुई है वह आप मुझसे श्रवण कीजिये ॥ ४ ॥ हे राजन् पूर्वकालमें युवनाश्वके पुत्र महाबली मांधाताजी जो त्रिलोकीमें विख्यात थे, वे अयोध्याजीमें वास करते थे ॥ ५ ॥

वह राजा सम्पूर्ण पृथ्वीको अपने अधिकारमें करके पुनः स्वर्गलोक जीतनेका उद्योग करते हुए ॥६॥ जिस समय मांधाताने इन्द्रलोकको जीतनेका उद्योग किया उस समय इन्द्र और महात्मा देवताओंको बडा भय हुआ ॥७॥ वह राजा इन्द्रको अधीनमें बैठानेकी और देवताओंसे स्तुति करानेकी प्रतिज्ञा करके स्वर्गको चलने लगे ॥ ८ ॥ इन्द्रजी उनका यह पाप अभिप्राय जानकर सत्यतापूर्वक वाक्य मांधातासे बोले ॥९॥ हे राजन् ! पुरुषश्रेष्ठ ! तुम प्रथम मनुष्यलोककी सब पृथ्वी जब तक अपने वशमें नहीं करलोगे तबतक देवराज्य प्राप्त नहीं कर सकते सो सब पृथ्वी वशमें किये विना किस प्रकार देवलोकके राज्यकी इच्छा करते हो ॥१०॥ हे वीर! यदि सम्पूर्ण पृथ्वी तुम्हारे वशमें है तो अपने भृत्य बल वाहन सहित देवलोकका राज्य कीजिये ॥११॥ इन्द्रके ऐसा कहनेपर मांधाताजी

सकृत्वापृथिवींकृत्स्नांशासनेपृथिवीपतिः ॥ सुरलोकमितोजेतुमुद्योगमकरोन्नृपः ॥६॥ इंद्रस्यचभयंतीव्रंसुराणांचमहात्मनाम् ॥ मांधातरिकृतोद्योगेदेवलोकजिगीषया ॥७॥ अर्धासनेनशक्रस्यराज्यार्धेनचपार्थिवः ॥ वंद्यमानःसुरगणैःप्रतिज्ञामध्यरोहत ॥ ८ ॥ तस्यपापमभिप्रायंविदित्वापाकशासनः ॥ सांत्वपूर्वमिदंवाक्यमुवाचयुवनाश्वजम् ॥ ९ ॥ राजात्वंमानुषेलोकेनतावत्पुरुषर्षभः ॥ अकृत्वापृथिवींवश्यांदेवराज्यमिहेच्छसि ॥१०॥ यदिवीरसमग्रातेमेदिनीनिखिलावशे ॥ देवराज्यंकुरुष्वेहसभृत्यबलवाहनः ॥ ११ ॥ इन्द्रमेवंब्रुवाणंतंमांधातावाक्यमब्रवीत् ॥ क्वमेशक्रप्रतिहतंशासनंपृथिवीतले॥१२॥ तमुवाचसहस्राक्षोलवणोनामराक्षसः ॥ मधुपुत्रोमधुवनेनतेज्ञांकुरुतेऽनघ ॥१३॥ तच्छ्रुत्वाविप्रियंघोरंसहस्राक्षेणभाषितम्॥व्रीडितोऽवाङ्मुखोराजाव्याहर्तुंनशशाकह॥१४॥आमंत्र्यचसहस्राक्षंप्रायात्किंचिदवाङ्मुखः ॥ पुनरेवागमच्छ्रीमानिमंलोकंनरेश्वरः ॥१५॥ सकृत्वाहृदयेऽमर्षंसभृत्यबलवाहनः ॥ आजगाममधोःपुत्रंवशेकर्तुमरिंदमः ॥१६॥ सकांक्षमाणोलवणंयुद्धायपुरुषर्षभः ॥ दूतंसंप्रेषयामाससकाशंलवणस्यसः ॥ १७ ॥ सगत्वाविप्रियाण्याहबहूनिमधुनःसुतम् ॥ वदंतमेवंतंदूतंभक्षयामासराक्षसः ॥१८॥

बोले हे इन्द्र ! बताओ पृथ्वीतलमें मेरी आज्ञा कहां नहीं है ॥ १२ ॥ तब सहस्राक्ष इन्द्रजी कहने लगे, मधुवनमें मधुका पुत्र लवणासुर तुम्हारी आज्ञा नही मानता है ॥१३॥ यह इन्द्रसे कहा हुआ घोर अप्रिय वचन सुनकर लज्जित और नीचेको मुख करके राजा मांधाता कुछ भी कहनेको समर्थ न हुए ॥१४॥ और इन्द्रको आमंत्रण करके नीचेको मुख किये वहांसे चले और वे श्रीमान् फिर नरलोकको चले आये ॥१५॥ और वह शत्रुतापन हृदयमें क्रोध कर भृत्य और वाहनोंके सहित मधुके पुत्रको वशमें करनेकी इच्छासे आये ॥ १६ ॥ और उन पुरुषश्रेष्ठने लवणासुरसे युद्ध करनेकी इच्छासे इसके पास दूत भेजा ॥ १७ ॥ उस दूतने जाकर मधुके पुत्र लवणासुरसे बहुतसे दुर्वचन कहे तब वह क्रोधकर कटुप्रलापी दूतको भक्षण कर गया ॥ १८ ॥

दूतके आनेमें देर होनेसे राजा महाक्रोधित होकर चारोंओरसे बाणवृष्टि कर उस राक्षसको मर्दन करने लगे ॥१९॥ तब उस राक्षसने हँसकर और त्रिशूल
हाथमें लेकर उनको सेना सहित मारनेके निमित्त शूल छोडा ॥ २० ॥ वह दीप्यमान त्रिशूल भृत्य बल वाहन सहित राजाको पृथ्वीमें भस्मकरके फिर
लवणासुरके हाथमें आनकर प्राप्त हुआ ॥२१॥ इस प्रकारसे वह बडे राजा भृत्यबलवाहनसहित नष्ट होगये । हे शत्रुघ्नजी ! शूलका बल अप्रमेय और बडा
श्रेष्ठ है ॥ २२ ॥परन्तु आप कल प्रातःकालही लवणासुरको मारडालेंगे इसमें कुछभी सन्देह नहीं जिस समय उसके हाथमें आयुध न होगा उस समय तुम
अवश्य उसे जीतसकोगे ॥ २३ ॥ तुम्हारे इस कर्म करनेपर संसारका कल्याण हो । यह दुरात्मा लवणासुरका सब चरित्र तुमसे वर्णन किया ॥२४॥ हे नर

चिरायमाणेदूतेतुराजाक्रोधसमन्वितः ॥ अर्दयामासतद्रक्षःशरवृष्ट्यासमंततः ॥१९॥ ततःप्रहस्यतद्रक्षःशूलंजग्राहपाणिना ॥ वधायसानुबंध
स्यमुमोचायुधमुत्तमम् ॥२०॥ तच्छूलंदीप्यमानंतुसभृत्यबलवाहनम् ॥भस्मीकृत्वानृपंभूमौलवणस्यागमत्करम् ॥२१॥ एवंसराजासुमहान्हतः
सबलवाहनः॥शूलस्यतुबलंसौम्यअप्रमेयमनुत्तमम् ॥२२॥श्वःप्रभातेतुलवणंवधिष्यसिनसंशयः॥अगृहीतायुधंक्षिप्रध्रुवोहिविजयस्तव ॥२३॥
लोकानांस्वस्तिचैवंस्यात्कृतेकर्मणिचत्वया॥एतत्तेसर्वमाख्यातंलवणस्यदुरात्मनः ॥२४॥ शूलस्यचबलंघोरमप्रमेयंनरर्षभ॥विनाशश्चैवमांधा
तुर्यत्नेनाभूच्चपार्थिव॥२५॥त्वंश्वःप्रभातेलवणंमहात्मन्वधिष्यसेनात्रतुसंशयोमे॥शूलंविनानिर्गतमामिषार्थंध्रुवोजयस्तेभवितानरेंद्र ॥ २६ ॥
इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०उत्तरकांडे सप्तषष्टितमःसर्गः॥६७॥कथांकथयतस्तेषांजयंचाकांक्षतांशुभम् ॥व्यतीता
रजनीशीघ्रंशत्रुघ्नस्यमहात्मनः॥१॥ततःप्रभातेविमलेतस्मिन्कालेसराक्षसः॥निर्गतस्तुपुराद्वीरोभक्ष्याहारप्रचोदितः॥२॥ एतस्मिन्नंतरेवीरउत्ती
र्यंयमुनांनदीम् ॥ तीर्त्वामधुपुरद्वारिधनुष्पाणिरतिष्ठत ॥३॥ ततोर्धदिवसेप्राप्तेक्रूरकर्मासराक्षसः॥ अगच्छद्बहुसाहस्रप्राणिनांभारमुद्वहन् ॥४॥

श्रेष्ठ ! त्रिशूलका बल घोर और प्रमाणरहित है और हे नृप ! मांधाता राजाका नाश तो अति साहससे धोखेमेंहोगया ॥२५॥ हे नरेन्द्र ! निःसन्देह आप
कल प्रातःकाल उस राक्षसको संग्राममें मारडालेंगे इसमें संदेह नहीं, जिस समय वह शूलके बिना आमिष लेनेको घरसे जायगा उस समय आप उसे अवश्य जीतलेंगे ॥ २६ ॥
इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० उत्तरकांडे भाषायां सप्तषष्टितमः सर्गः ॥६७॥ उन महात्मा शत्रुघ्नजीसे इस प्रकारसे कथा कहते और जयकी इच्छा करते हुए वार्तामेंही शीघ्र
तासे रात्रि बीतगई ॥१॥ उज्ज्वल प्रातःकाल होतेही वह राक्षस वीर अपने पुरसे आहार करनेके निमित्त निकला ॥२॥ उसी समय वीर शत्रुघ्नजी यमुना नदीको तरकर
मधुपुरीके द्वारे धनुषधारण करके स्थित हुए ॥ ३ ॥ तब मध्याह्नके समय वह क्रूरकर्मा राक्षस सहस्रों प्राणियोंको अपने ऊपर लादकर प्राप्तहुआ ॥ ४ ॥

उसने अपने नगरके द्वारपर आयुध किये शत्रुघ्नजीको देखा तब राक्षस बोला तुम इस धनुष बाणसे क्या करोगे ॥ ५॥ हे नराधम ! इस प्रकारके तो आयुध लिये सहस्रों वीरोंको मैं रोषसे भक्षण कर गया सो आज तुम भी कालकी प्रेरणासे प्राप्त हुए हो ॥ ६ ॥ हे पुरुषाधम आज मेरा आहार भी थोडा ही है सो हे दुर्मति ! आज तू स्वयं ही मेरे मुखमें किस प्रकारसे आकर प्रविष्ट हुआ है ॥ ७॥ उसके इस प्रकारके कहनेसे और वारंवार हँसने से वीर्यसम्पन्न शत्रुघ्नजी क्रोधके मारे आंसू त्यागने लगे ॥ ८ ॥ उन महात्मा शत्रुघ्नजीके महाक्रोध होनेसे उनके शरीरसे तेजमयी किरणें निकलने लगीं ॥९॥ और महाक्रोध कर शत्रुघ्नजी निशाचरसे बोले हे दुर्बुद्धे ! मैं तेरे सग द्वंद्वयुद्ध करनेकी इच्छा करता हूं ॥१०॥ मैं बुद्धिमान् रामचन्द्रका भ्राता और महाराज दशरथजीका पुत्र हूं

ततोददर्शशत्रुघ्नंस्थितंद्वारिधृतायुधम् ॥ तमुवाचततोऽरक्षःकिमनेनकरिष्यसि ॥ ५ ॥ ईदृशानांसहस्राणिसायुधानांनराधम ॥ भक्षितानिम यारोषात्कालेनानुगतोह्यसि ॥ ६ ॥ आहारश्चाप्यसंपूर्णोममायंपुरुषाधम ॥ स्वयंप्रविष्टोऽद्यमुखंकथमासाद्यदुर्मते ॥ ७ ॥ तस्यैवंभाषमाण स्यहसतश्चमुहुर्मुहुः ॥ शत्रुघ्नोवीर्यसंपन्नोरोषादश्रूण्यवासृजत् ॥ ८ ॥ तस्यरोषाभिभूतस्यशत्रुघ्नस्यमहात्मनः ॥ तेजोमयामरीच्यस्तुसर्वगात्रै र्विनिष्पतन् ॥ ९ ॥ उवाचचसुसंक्रुद्धःशत्रुघ्नःसनिशाचरम् ॥ योद्धुमिच्छामिदुर्बुद्धेद्वंद्वयुद्धंत्वयासह ॥ १० ॥ पुत्रोदशरथस्याहंभ्राताराम‌स्य धीमतः ॥ शत्रुघ्नोनामशत्रुघ्नोवधाकांक्षीतवागतः ॥ ११ ॥ तस्यमेयुद्धकामस्यद्वंद्वयुद्धंप्रदीयताम् ॥ शत्रुस्त्वंसर्वभूतानांनमेजीवन्गमिष्यसि ॥ १२ ॥ तस्मिंस्तथाब्रुवाणेतुराक्षसःप्रहसन्निव ॥ प्रत्युवाचनरश्रेष्ठंदिष्ट्याप्राप्तोऽसिदुर्मते ॥ १३ ॥ ममभ्रातृष्वसुर्भ्रातारावणोनामराक्षसः ॥ हतोरामेणदुर्बुद्धेस्त्रीहेतोःपुरुषाधम ॥ १४ ॥ तच्चसर्वंमयाक्षांतंरावणस्यकुलक्षयम् ॥ अवज्ञांपुरतःकृत्वामयायूयंविशेषतः ॥ १५ ॥ निहता श्चहितेसर्वेपरिभूतस्तृणंयथा ॥ भूताश्चैवभविष्याश्चयूयंचपुरुषाधमाः ॥ १६ ॥

और शत्रुओंका मारनेवाला शत्रुघ्न मेरा नाम है सो तेरे मारनेके निमित्त मैं आया हूं ॥ ११ ॥ तू मुझ युद्धकी इच्छा करनेवालेको द्वंद्वयुद्ध दे, तू सारे प्राणियोंका शत्रु है इस कारण आज मेरे हाथसे जीता न बचेगा॥१२॥ शत्रुघ्नके ऐसे कहनेपर वह राक्षस हँसता हुआ नरश्रेष्ठसे बोला हे दुर्मते! तू आज भाग्यसेही प्राप्त हुआ है॥१३॥हे दुर्बुद्धि नराधम ! मेरी मौसीके भाई रावण राक्षसको स्त्रीके निमित्त रामचन्द्रने मार डाला है॥१४॥ सो उस रावणके कुलक्षयको और उसके मरणको हमने किसी कारणसे सहन कर लिया, अब तुमने विशेष करके मेरी अवज्ञाही की है क्योंकि मेरे सन्मुखही कहते हो ॥१५॥ जो कहो तुममें बल नहीं है तो सुनो तुम्हारे कुलके प्रथम उत्पन्न हुए मांधाताको हमने मार डाला तथा उन सरीखे और भी बहुत मार डाले इसी कारण उनकी अपेक्षा भविष्य समय

वाले तुम हमारे सन्मुख तृणके समान हो इससे आजतक नहीं मारा था ॥ १६ ॥ हे दुर्मति ! युद्धकी इच्छा करते हो तो मैं तुमको द्वंद्वयुद्ध दूंगा एक मुहूर्तमात्र तुम स्थिर रहो जबतक मैं अपना आयुध ले आऊं ॥ १७ ॥ तेरे मारनेको जैसे आयुधकी आवश्यकता है वैसाही आयुध धारण करूंगा वह वचन सुन शीघ्रतासे शत्रुघ्नजी बोले अरे तू मुझसे बचके अब कहां जा सकता है ॥ १८ ॥ बुद्धिमानोंको उचित है जब शत्रु स्वयं ही आकर स्थित हो जाय तब उसे त्यागना उचित नहीं और जो अपनी हीन बुद्धिसे शत्रुको अवसर देता है वह मंदबुद्धि पुरुष कायरोंकी नाईं मारा जाता है ॥ १९ ॥ इस कारण अब तू जीवलोकको देखले मैं तीक्ष्ण बाणोंसे अब तुझको यमराजके घरका पाहुना करता हूं कारण कि, तू बडा पापी त्रिलोकी और रघुनाथजीका शत्रु है

तस्यतेयुद्धकामस्ययुद्धंदास्यामिदुर्मते ॥ तिष्ठत्वंचमुहूर्ततुयावदायुधमानये ॥ १७ ॥ ईप्सितंयादृशंतुभ्यंसज्जयेयावदायुधम् ॥ तमुवाचाशुशत्रुघ्नःक्वमेजीवन्गमिष्यसि ॥ १८ ॥ स्वयमेवागतःशत्रुर्नमोक्तव्यःकृतात्मना ॥ योहिविक्लवयाबुद्ध्याप्रसरंशत्रवेदिशेत् ॥ सहतोमंदबुद्धिःस्याद्यथाकापुरुषस्तथा ॥ १९ ॥ तस्मात्सुदृष्टंकुरुजीवलोकंशरैःशितैस्त्वांविविधैर्नयामि ॥ यमस्यगेहाभिमुखंहिपापंरिपुंत्रिलोकस्यचराघवस्य ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे अष्टषष्टितमःसर्गः ॥ ६८ ॥ तच्छ्रुत्वाभाषितंतस्यशत्रुघ्नस्यमहात्मनः ॥ क्रोधमाहारयत्तीव्रंतिष्ठतिष्ठेतिचाब्रवीत् ॥ १ ॥ पाणौ पाणिं सनिष्पिष्यदंतान्कटकटाय्यच ॥ लवणोरघुशार्दूलमाह्वायामासचासकृत् ॥२॥ तंब्रुवाणंतथावाक्यंलवणंघोरदर्शनम् ॥ शत्रुघ्नोदेवशत्रुघ्नइदंवचनमब्रवीत् ॥३॥ शत्रुघ्नोनतदाजातोयदान्येनिर्जितास्त्वया ॥ तदद्यबाणाभिहतोव्रजत्वंयमसादनम् ॥४॥ ऋषयोऽप्यद्यपापात्वन्मयात्वांनिहतंरणे ॥ पश्यंतुविप्राविद्वांसस्त्रिदशाइवरावणम् ॥ ५ ॥

॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामष्टषष्टितमः सर्गः ॥ ६८ ॥ यह महात्मा शत्रुघ्नजीके वचन सुन बडे क्रोधसे राक्षस कहने लगा खडे रहो खडे रहो ॥ १ ॥ हाथसे हाथ मलकर और दांतोंको कटकटाकर लवणासुर रघुसिंहको एकवारही युद्धके निमित्त बुलाता हुआ ॥ २ ॥ इस प्रकारसे घोरदर्शन लवणासुरको घोर वाक्य कहते हुए सुनकर देवताओंके शत्रुओंको मारनेवाले शत्रुघ्नजी बोले ॥ ३ ॥ जिस समय तुमने और वीरोंको जीता था उस समय शत्रुघ्न नहीं उत्पन्न हुआ था सो आज मेरे बाणसे मृतक होकर तू यमलोकको जायगा ॥ ४ ॥ हे पापी ! जिसप्रकार रामचन्द्रसे मरे हुए रावणको देवताओंने देखा था इसीप्रकार आज मुझसे निहत हुए तुझको संग्राममें ऋषि ब्राह्मण और विद्वान् देखेंगे ॥ ५ ॥

आज मेरे बाणसे विदीर्ण होकर तेरे गिरजानेपर इस पुर और देशमें कुशल हो जायगा ॥ ६ ॥ आज वज्रके समान बाण मेरे हाथोंसे छूटकर तेरे हृदयमें ऐसे प्रवेश करेंगे जैसे कमलमें सूर्यकी किरण प्रवेश कर जाती हैं ॥ ७ ॥ यह सुनतेही महाक्रोध कर लवणासुरने एक महावृक्षको उखाडकर शत्रुघ्नजीकी छातीमें मारा उन्होंने बाणसे उसके सौ खण्ड कर दिये ॥ ८ ॥ बली राक्षसने अपने वृक्ष प्रहारको व्यर्थ देखकर और बहुतसे वृक्ष उखाडकर शत्रुघ्नजीके मारे ॥९॥ तेजस्वी शत्रुघ्नजीने भी बहुतसे वृक्षोंको आते देखकर नतपर्व बाण चलाय किसीको तीन किसीको चार बाणोंसे छेदन कर डाला वीर्यवान् शत्रुघ्नजीने ॥ १० ॥ फिर राक्षसके ऊपर बाणोंकी वर्षा कर दी परंतु वह राक्षस कुछ भी व्यथित नहीं हुआ ॥ ११ ॥ तब वीर्यवान् लवणासुरने एक वृक्ष उठाय हास्य

त्वयिमद्बाणनिर्दग्धेपतितेऽद्यनिशाचरे ॥ पुरेजनपदेचापिक्षेममेवभविष्यति ॥ ६ ॥ अद्यमद्बाहुनिष्क्रांतःशरोवज्रनिभाननः ॥ प्रवेक्ष्यतेतेहृदयंपद्ममंशुरिवार्कजः ॥ ७ ॥ एवमुक्तोमहावृक्षंलवणःक्रोधमूर्च्छितः ॥ शत्रुघ्नोरसिचिक्षेपसचतंशतधाच्छिनत् ॥८॥ तद्दृष्ट्वाविफलंकर्मराक्षसःपुनरेवतु ॥ पादपान्सुबहून्गृह्यशत्रुघ्नायासृजद्बली ॥ ९ ॥ शत्रुघ्नश्चापितेजस्वीवृक्षानापततोबहून् ॥ त्रिभिश्चतुर्भिरेकैकंचिच्छेदनतपर्वभिः ॥१०॥ ततोबाणमयंवर्षंव्यसृजद्राक्षसोपरि ॥ शत्रुघ्नोवीर्यसंपन्नोविव्यथेनसराक्षसः ॥ ११ ॥ ततःप्रहस्यलवणोवृक्षमुद्यम्यवीर्यवान् ॥ शिरस्यभ्यहनच्छूरंस्रस्तांगःसमुमोहवै ॥ १२ ॥ तस्मिन्निपतितेवीरेहाहाकारोमहानभूत ॥ ऋषीणांदेवसंघानांगंधर्वाप्सरसांतथा ॥ १३ ॥ तमवज्ञायतुहतंशत्रुघ्नंभुविपातितम् ॥ रक्षोलब्धांतरमपिनविवेशस्वमालयम् ॥ १४ ॥ नापिशूलंप्रजग्राहतंदृष्ट्वाभुविपातितम् ॥ ततोहतइतिज्ञात्वातान्भक्षान्समुदावहत् ॥१५॥ मुहूर्ताल्लब्धसंज्ञस्तुपुनस्तस्थौधृतायुधः ॥ शत्रुघ्नोवैपुरद्वारिऋषिभिःसंप्रपूजितः ॥ १६ ॥ ततोदिव्यममोघंतंजग्राहशरमुत्तमम् ॥ ज्वलंतंतेजसाघोरंपूरयंतंदिशोदश ॥ १७ ॥

करके वीर शत्रुघ्नजीके शिरमें मारा जिससे वह शिथिल होकर मोहको प्राप्त हुए ॥ १२ ॥ उस वीरके गिरनेपर देवता, ऋषि, गन्धर्व और अप्सराओंमें महा हाहाकार मच गया ॥ १३ ॥ पृथ्वीमें शत्रुघ्नजीको मृतकके समान पडा देखकर यद्यपि राक्षसको शूल लानेका अवसर मिल गया परन्तु वह उन्हें तुच्छ समझकर मन्दिरमें शूल लेने न गया ॥ १४ ॥ उन्हें पृथ्वीमें पडा देख शूल लेनेको न गया और फिर मृतक समझ अपने भक्ष्य जीवोंको उठाने लगा ॥१५॥ शत्रुघ्नजी एक मुहूर्तमात्रमें संज्ञाको प्राप्त हो फिर धनुष धारणकर उठे, तब उस पुरके द्वारपरही ऋषियोंने उनकी बडाई की ॥ १६ ॥ तब शत्रुघ्नजीने उस दिव्य श्रेष्ठ अमोघ बाणको धारण कियाजो तेजसे प्रज्वलित और दशों दिशाओंको पूर्ण कर रहा था ॥ १७ ॥

वह वज्रके समान मुखवाला, वज्रके समान वेगवाला मेघ और मन्दरके समान गौरवता युक्त सम्पूर्ण ग्रन्थियोंसे झुकाहुआ कहीं भी संग्राममें न हारनेवाला ॥ १८॥ लाल चन्दनसे लिप्त पक्षियोंके समान पंखयुक्त वह बाण दानवेन्द्र पर्वत और असुरोंको दारुण था ॥ १९॥ ऐसे कालाग्निके समान प्रलय करनेको उद्यत हुए उस बाणको देखकर सब प्राणी भयभीत हो गये ॥ २०॥ देवता, गंधर्व, मुनि; अप्सरादिक सारा जगत् अस्वस्थ हो गया और देवतादि ब्रह्माजीके निकट गये ॥२१॥ देवदेव वरदायक पितामहसे देवता कहने लगे कि, हमको बडा भय है, क्या आज ही लोकोंका संहार हो जायगा ? ॥२२॥ लोकपितामह ब्रह्मा उनके यह वचन सुन देवताओंके अभय कहनेहारे वचन बोले॥२३॥ मधुर वाणीसे कहने लगे हे सम्पूर्ण देवताओ ! सुनो संग्राममें लवणासुरके मार

वज्राननंवज्रवेगंमेरुमंदरसन्निभम् ॥ नतंपर्वसुसर्वेषुसंयुगेष्वपराजितम् ॥ १८ ॥ असृक्चंदनदिग्धांगंचारुपत्रंतपत्रिणम् ॥ दानवेंद्राचलेंद्राणासुराणांचदारुणम्॥ १९ ॥तंदीप्तमिवकालाग्निंयुगांतेसमुपस्थितम् ॥ दृष्ट्वासर्वाणिभूतानिपरित्राससुपागमन् ॥ २० ॥सदेवासुरगंधर्वंमुनिभिःसाप्सरोगणम्॥जगाद्धिसर्वमस्वस्थंपितामहमुपस्थितम् ॥२१॥ ऊचुश्चदेवदेवेशंवरदंप्रपितामहम् ॥ देवानांभयसंमोहोलोकानांसंक्षयंप्रति ॥ ॥ २२ ॥ तेषांतद्वचनंश्रुत्वाब्रह्मालोकपितामहः ॥ भयकारणमाचष्टदेवानामभयंकरः ॥२३॥ उवाचमधुरांवाणींशृणुध्वंसर्वदेवताः ॥ वधायलवणस्याजौशरःशत्रुघ्नधारितः ॥२४॥ तेजसातस्यसंमूढाःसर्वेस्मःसुरसत्तमाः ॥ एषोपूर्वस्यदेवस्यलोककर्तुःसनातनः ॥ २५ ॥ शरस्तेजोमयोवत्सायेनवैभयमागतम् ॥ एषवैकैटभस्यार्थेमधुनश्चमहाशरः ॥२६॥ सृष्टोमहात्मनानेनवधार्थेदैत्ययोस्तयोः ॥ एकएवप्रजानातिविष्णुस्तेजोमयंशरम् ॥ २७ ॥ एषाएवतनुःपूर्वाविष्णोस्तस्यमहात्मनः ॥ इतोगच्छतपश्यध्वंवध्यमानंमहात्मना ॥२८॥ रामानुजेनवीरेणलवणंराक्षसोत्तमम्॥ तस्यतेदेवदेवस्यनिशम्यवचनंसुराः॥ २९ ॥

नेके निमित्त शत्रुघ्नने बाण धारण किया है॥२४॥ हे देवताओ ! तुम सब उसके तेजसे संमूढ हो गये हो यह लोककर्त्ता सबसे प्रथम उत्पन्न हुए देव सनातन भगवान्ने ॥ २५ ॥ कैटभके मारनेके निमित्त यह महातेजयुक्त बाण धनुष निर्माण किया था जिसके कारण तुम भयभीत हुए हो॥२६॥उन महात्मा देवनेउन दोनों दैत्योंके मारनेके निमित्त इस बाणको निर्माण कियाथा एक विष्णुभगवान्ही इस महा तेजयुक्त बाणको जानते हैं ॥ २७ ॥ वह बाण साक्षात् विष्णुकी मूर्तिही है जाओ उन महात्मासे उस राक्षसका मरण देखो ॥ २८ ॥ रामानुज महावीर शत्रुघ्नजी उसको मारडालेंगे इस प्रकार देवता उन देवदेव ब्रह्माजीके वचन श्रवणकर ॥ २९ ॥

जहां शत्रुघ्न और लवणासुरका संग्राम हो रहा था वहां आये उस दिव्य बाणको शत्रुघ्नके हाथमें ॥३०॥ सब प्राणी उस बाणको प्रलयकालके अग्निके समान देखते हुए, रघुनंदनने देवताओंको आकाशयुक्त देखकर ॥ ३१ ॥ बडाभारी सिंहनाद कर लवणा सुरकी ओर देखा, और उन महात्मा शत्रुघ्नने उसको बुलाया ॥ ३२ ॥ लवणासुरभी महाक्रोधकर फिर युद्ध करनेको उपस्थित हुआ तब धनुष धारण करनेवालोंमें श्रेष्ठ शत्रुघ्नजीने कर्णपर्यन्त धनुष खेंच ॥ ३३ ॥ उस महाबाणको लवणासुरके हृदयमें मारा वह उसके उरस्थलको भेदकर शीघ्र पातालमें प्रवेश कर गया वह देवपूजित बाण शीघ्र रसातलमें प्रवेश करके फिर इक्ष्वाकुकुलनन्दन शत्रुघ्नजीके पास चला आया ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥ शत्रुघ्नके बाणसे भिन्नहृदय हो वह राक्षस लवणासुर वज्रसे हत हुए पर्वतके समान पृथ्वीमें

आजग्मुर्यत्रयुध्येतेशत्रुघ्नलवणावुभौ ॥तंशरंदिव्यसंकाशंशत्रुघ्नकरधारितम् ॥३०॥ ददृशुःसर्वभूतानियुगांताग्निमिवोत्थितम् ॥ आकाशमावृतंदृष्ट्वादेवैर्हिरघुनंदनः ॥३१॥ सिंहनादंभृशंकृत्वाददर्शलवणंपुनः ॥ आहूतश्चपुनस्तेनशत्रुघ्नेनमहात्मना॥ ३२ ॥ लवणःक्रोधसंयुक्तोयुद्धायसमुपस्थितः ॥ आकर्णात्सविकृष्याथतद्धनुर्धन्विनांवरः ॥३३॥ ससुमोचमहाबाणंलवणस्यमहोरसि ॥ उरस्तस्यविदार्याशुप्रविवेशरसातलम् ॥ ॥३४॥ गत्वारसातलंदिव्यःशरोविबुधपूजितः॥ पुनरेवागमत्तूर्णमिक्ष्वाकुकुलनंदनम् ॥ ३५ ॥ शत्रुघ्नशरनिर्भिन्नोलवणःसनिशाचरः॥ पपात सहसाभूमौवज्राहतइवाचलः ॥ ३६ ॥ तच्चशूलंमहद्दिव्यंहतेलवणराक्षसे ॥ पश्यतांसर्वदेवानांरुद्रस्यवशमन्वगात्॥ ३७ ॥ एकेषुपातेनभयंनिपात्यलोकत्रयस्यास्यरघुप्रवीरः ॥ विनिर्बभावुत्तमचापबाणस्तमःप्रणुद्येवसहस्ररश्मिः ॥ ३८ ॥ ततोहिदेवाऋषिपन्नगाश्चप्रपूजिरेह्यप्सरसश्च सर्वाः ॥ दिष्ट्याजयोदाशरथेरवाप्तस्त्यक्त्वाभयंसर्पइवप्रशांतः ॥ ३९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे एकोनसप्ततितमः सर्गः ॥ ६९ ॥

गिरा ॥ ३६ ॥ लवण राक्षसके मरजानेपर वह दिव्य त्रिशूल सम्पूर्ण देवताओंके देखते २ शिवजीके पास चला गया ॥ ३७ ॥ रघुवीरने एक ही बाणको छोडकर त्रिलोकीका भय दूर कर दिया और उत्तम चाप बाण धारण कर ऐसे सुशोभित हुए जैसे अन्धकार दूर कर सुर्य शोभित होता है ॥ ३८ ॥ उस समय सब देवता ऋषि, सर्प, पन्नग, अप्सरा सब कोई शत्रुघ्नजीकी बडाई करने लगे । हे काकुत्स्थ ! आपने भाग्यसेही भय त्याग इस राक्षसको मारकर जय पाई और सर्प समान लवणासुर हत हुआ ॥ ३९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामेकोनसप्ततितमः सर्गः ॥ ६९ ॥

लवणासुरके मरनेपर अग्नि सहित सब देवता शत्रुओंके तपानेवाले शत्रुघ्नजीसे मधुर वाणी बोले ॥ १ ॥ हे वत्स । भाग्यसेही आपकी जय हुई और भाग्यसेही लवणासुर राक्षस मारा गया, हे पुरुषसिंह ! अब तुम वर मांगो ॥ २ ॥ हे महाभुज हमारे दर्शन निष्फल नहीं जाते हम सब वर देनेवाले विजयकी इच्छासे तुम्हारे निकट आये थे ॥३॥ नियमित महाबाहु शत्रुघ्नजी देवताओंके यह वचन सुन शिर झुकाय हाथ जोड बोले ॥ ४ ॥ यह देवताओंकी बनाई मनोहर मधुपुरी शीघ्रही धन जनसे पूर्ण होजाय इसी वरकी इच्छा करते हैं ॥ ५ ॥ यह वचन सुन देवताओंने प्रसन्न हो शत्रुघ्नजीसे यथास्तु कहा और निश्चयही यह शोभायमान पुरी शूरसेनदेशसे संयुक्त हो ॥ ६ ॥ यह कहकर महात्मा देवता स्वर्गको चले गये और महातेजस्वी शत्रुघ्नजीने गंगाके किनारेसे अपनी सेनाको

हतेतुलवणेदेवाःसेंद्राःसाग्निपुरोगमाः ॥ ऊचुःसुमधुरांवाणींशत्रुघ्नंशत्रुतापनम् ॥ १ ॥ दिष्ट्यातेविजयोवत्सदिष्ट्यालवणराक्षसः ॥ हतःपुरुष शार्दूलवरंवरयसुव्रत ॥२॥ वरदास्तुमहाबाहासर्वएवसमागताः ॥ विजयाकांक्षिणस्तुभ्यममोघंदर्शनंहिनः ॥३॥ देवानांभाषितंश्रुत्वाशूरोमूर्ध्नि कृतांजलिः ॥ प्रत्युवाचमहाबाहुःशत्रुघ्नःप्रयतात्मवान् ॥ ४ ॥ इयंमधुपुरीरम्यामथुरादेवनिर्मिता ॥ निवेशंप्राप्नुयाच्छीघ्रमेषमेऽस्तुवरःपरः ॥५॥ तंदेवाःप्रीतमनसोबाढमित्येवराघवम् ॥ भविष्यतिपुरीरम्याशूरसेनानसंशयः ॥ ६ ॥ तेतथोक्त्वामहात्मानोदिवमारुरुहुस्तदा ॥ शत्रुघ्नोऽ पिमहातेजास्तांसेनांसमुपानयत ॥ ७ ॥ सासेनाशीघ्रमागच्छच्छ्रुत्वाशत्रुघ्नशासनम् ॥ निवेशनंचशत्रुघ्नःश्रावणेनसमारभत् ॥ ८ ॥ सपुरा दिव्यसंकाशोवर्षेद्वादशमेशुभे ॥ निविष्टःशूरसेनानांविषयश्चाकुतोभयः ॥ ९ ॥ क्षेत्राणिसस्ययुक्तानिकालेवर्षतिवासवः ॥ अरोगवीरपुरुषा शत्रुघ्नभुजपालिता ॥ १० ॥ अर्धचंद्रप्रतीकाशायमुनातीरशोभिता ॥ शोभितागृहमुख्यैश्चचत्वरापणवीथिकैः ॥ चातुर्वर्ण्यसमायुक्तानाना वाणिज्यशोभिता ॥ ११ ॥ यच्चतेनपुराशुभ्रंलवणेनकृतंमहत् ॥ तच्छोभयतिशत्रुघ्नोनानावर्णोपशोभितत् ॥ १२ ॥

बुलाया ॥ ७ ॥ वह सेना शत्रुघ्नकी आज्ञा श्रवण कर बहुत शीघ्रतासे आई और शत्रुघ्नजीने श्रावणमाससे उसका बसाना प्रारम्भ किया ॥ ८ ॥ द्वादशवर्षसे प्रथमही संपूर्ण देश भयरहित हो शूरसेनवंशी राजाओंके रहनेके निमित्त होगया ॥ ९ ॥ सब क्षेत्र धान्ययुक्त हुये, इन्द्र समयपर वर्षा करते इसप्रकार शत्रुघ्न के पालन करनेसे मधुपुरी अरोगी और वीरपुरुषोंसे परिपूर्ण होगई ॥ १० ॥ वह अर्धचंद्राकार पुरी यमुनाके किनारे शोभित हुई, उसमें अनेकों सुन्दर घर गली बाजार चौराहे दूकाने बनीं जिसमें चारों वर्ण और अनेक व्यापारी आनन्दसे वास करने लगे ॥ ११ ॥ जैसा कुछ प्रथम लवणासुरने उसमें मंदिर शोभित किया था उससे कहीं अधिक अनेक प्रकारकी वस्तुओंसे शत्रुघ्नजीने उसे शोभित किया ॥ १२ ॥

जिसके चारोंओर उपवन विहारस्थान शोभित थे औरभी अनेक शोभाके योग्य देवता ब्राह्मणोंसे वह पुरी शोभायमान थी ॥ १३ ॥ अनेक प्रकारकी व्यापारकी वस्तुओंसे शोभित वह पुरी देशदेशान्तरसे आये वणिकोंसे परम मनोहर होरही थी ॥ १४ ॥ भरतके छोटे भाई समृद्धार्थ शत्रुघ्नजी उस पुरीको सब प्रकारसे अन्न जनसे पूर्ण देखकर परम प्रसन्न हुए इस प्रकार मधुपुरीको बसाकर उनके चित्तमें यह वार्त्ता आई कि, अब चलकर रघुनाथजीके चरणोंका दर्शन करूं कारण कि, बिना मिले बारह वर्ष बीतगये ॥ १५ ॥ १६ ॥ तब वह नरश्रेष्ठ रघुकुलके बढानेवाले नरराज देवताओंकी पुरीके समान अनेक जनोंसे अपनी पुरीको पूर्ण देख रघुनाथजीके चरणकमल देखनेकी इच्छा करने लगे ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां सप्ततितमः सर्गः ॥ ७० ॥

आरामैश्चविहारैश्चशोभमानांसमंततः ॥ शोभितांशोभनीयैश्चतथान्यैर्देवमानुषैः ॥ १३ ॥ तांपुरींदिव्यसंकाशांनानापण्योपशोभिताम् ॥ नानादेवगतैश्चापिवणिग्भिरुपशोभिताम् ॥ १४ ॥ तांसमृद्धांसमृद्धार्थःशत्रुघ्नोभरतानुजः ॥ निरीक्ष्यपरमप्रीतःपरंहर्षमुपागमत् ॥ १५ ॥ तस्यबुद्धिःसमुत्पन्नानिवेश्यमधुरांपुरीम् ॥ रामपादौनिरीक्षेऽहंवर्षेद्वादशआगते ॥ १६ ॥ ततःसतामपुरोपमांपुरींनिवेश्यवैविविधजनाभिसंवृताम् ॥ नराधिपोरघुपतिपाददर्शनेदधेमतिंरघुकुलवंशवर्धनः ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे सप्ततितमः सर्गः ॥ ७० ॥ ततोद्वादशमेवर्षेशत्रुघ्नोरामपालिताम् ॥ अयोध्यांचकमेगंतुमल्पभृत्यबलानुगः ॥ १ ॥ ततोमंत्रिपुरोगांश्चबलमुख्यान्निवर्त्यच ॥ जगामहयमुख्येनरथानांचशतेनसः ॥ २ ॥ सगत्वागणितान्वासान्सप्ताष्टौरघुनंदनः ॥ वाल्मीकाश्रममागत्यवासंचक्रेमहायशाः ॥ ३ ॥ सोऽभिवाद्यततःपादौवाल्मीकेःपुरुषर्षभः ॥ पाद्यमर्घ्यंतथातिथ्यंजग्राहमुनिहस्ततः ॥४॥ बहुरूपासुमधुराःकथास्तत्रसहस्रशः ॥ कथयामाससमुनिःशत्रुघ्नायमहात्मने ॥ ५ ॥ उवाचचमुनिर्वाक्यंलवणस्यवधाश्रितम् ॥ सुदुष्करंकृतंकर्मलवणंनिघ्नतात्वया ॥ ६ ॥ बहवःपार्थिवाःसौम्यहताःसबसवाहनाः ॥ लवणेनमहाबाहोयुध्यमानामहाबलाः ॥ ७ ॥

तब बारहवें वर्षमें शत्रुघ्नजी थोडीसी सेना को साथ ले रामपालित अयोध्यामें जानेकी इच्छा कर चले ॥१॥ तब वह मन्त्री आदि मुख्य २ सेनाके लोगोंको लौटाकर एक अच्छे घोडे जुते रथपर चढ और सौ रथ संग लेकर अयोध्याको चले ॥ २ ॥ महायशस्वी रघुनंदन सात आठ दिनमें वाल्मीकिजीके आश्रममें आकर ठहरे ॥ ३ ॥ उन पुरुषश्रेष्ठने वाल्मीकिजीके चरणस्पर्श कर पीछे मुनिसे पाद्य अर्घ्य और आतिथ्य ग्रहण किया ॥ ४ ॥ उस समय मुनि वाल्मीकिजीने महात्मा शत्रुघ्नजीसे मनोहर सहस्रों कथा वर्णन कीं ॥ ५ ॥ और यह भी कहा हे शत्रुघ्न ! तुमने जो लवणासुरको मारा यह बडा दुष्कर कर्म किया है ॥ ६ ॥ हे महाबाहो ! इस बलिष्ठ लवणासुरने युद्ध करते समय बडे २ राजाओंको बल और वाहन सहित संहार कर दिया था ॥ ७ ॥

हे पुरुषश्रेष्ठ ! तुमने उस महापापीको लीलासे ही मार डाला तुम्हारे प्रतापसे जगत् शान्त और निर्भय हो गया ॥ ८ ॥ रामचन्द्रने बडे यत्नसे रावणका विनाश किया था परन्तु तुमने भी यह महत्कर्म बिना प्रयत्नके सिद्ध किया ॥ ९ ॥ इस लवणके मारनेसे तुमपर देवता बडे प्रसन्न हुए कारण, यह तुमने सब जगत् और प्राणियोंका प्रिय कार्य सिद्ध किया है ॥ १० ॥ हे राघव ! उस समय इन्द्रकी सभामें बैठे २ मैंने वह सब युद्ध यथावत् देखा था ॥ ११ ॥ हे शत्रुघ्नजी ! मुझेभी तुम्हारे ऊपर बडी प्रसन्नता हुई है इस कारण मैं तुम्हारे शिरको सूँघता हूँ कारण कि, स्नेहकी पराकाष्ठा यही है ॥ १२ ॥ यह कहकर महामुनि वाल्मीकिजीने शत्रुघ्नजीका शिर सूँघ लिया और शत्रुघ्न तथा उनके सब सेवकोंका अतिथि सत्कार किया ॥ १३ ॥ जब वह नरश्रेष्ठ भोजन कर

सत्वयानिहतःपापोलीलयापुरुषर्षभ ॥ जगतश्चभयंतत्रप्रशांतंतवतेजसा ॥ ८ ॥ रावणस्यवधोघोरोयत्नेनमहताकृतः ॥ इदंचसुमहत्कर्मत्वया कृतमयत्नतः ॥ ९ ॥ प्रीतिश्चास्मिन्पराजातादेवानांलवणेहते ॥ भूतानांचैवसर्वेषांजगतश्चप्रियंकृतम् ॥ १० ॥ तच्चयुद्धंमयादृष्टंयथावत्पुरुष र्षभ ॥ सभायांवासवस्याथउपविष्टेनराघव ॥ ११ ॥ ममापिपरमाप्रीतिर्हृदिशत्रुघ्नवर्तते ॥ उपाघ्रास्यामितेमूर्ध्निस्नेहस्यैषापरागतिः ॥ १२ ॥ इत्युक्त्वामूर्ध्निशत्रुघ्नमुपघ्रायमहामतिः ॥ आतिथ्यमकरोत्तस्ययेचतस्यपदानुगाः ॥ १३ ॥ सभुक्तवान्नरश्रेष्ठोगीतामाधुर्यमुत्तमम् ॥ शुश्रावराम चरितंतस्मिन्कालेयथाकृतम् ॥ १४ ॥ तंत्रीलयसमायुक्तंत्रिस्थानकरणान्वितम् ॥ संस्कृतंलक्षणोपेतंसमतालसमन्वितम् ॥ १५ ॥ शुश्रावराम चरितंतस्मिन्कालेपुराकृतम् ॥ तान्यक्षराणिसत्यानियथावृत्तानिपूर्वशः ॥ १६ ॥ श्रुत्वापुरुषशार्दूलोविसंज्ञोबाष्पलोचनः ॥ समुहूर्तमिवा संज्ञोविनिःश्वस्यमुहुर्मुहुः ॥ १७ ॥ तस्मिन्गीतेयथावृत्तंवर्तमानमिवाशृणोत् ॥ पदानुगाश्चयेराज्ञस्तांश्रुत्वागीतिसंपदम् ॥ १८ ॥

चुके उस समय किसी स्थानमें गातेहुओंसे रामचन्द्रका चरित्र परम मधुर छंदोंमें प्रत्यक्ष अनुभवके समान श्रवण करने लगे ॥ १४ ॥ उर कंठ शिरमें मंद्र मध्य तार स्वरसे उच्चारण हुए वीणाकी लयसहित समताल गानसे युक्त व्याकरण वृत्त छन्द काव्य संगीत शास्त्रके लक्षणोंसे परिपूर्ण संस्कृतकिया ॥ १५ ॥ पूर्व कालके किये हुए रामचरितको अक्षरोंसे पूर्ण वाक्य और अर्थयुक्त क्रमानुसार शत्रुघ्नजी श्रवण करने लगे ॥ १६ ॥ वह पुरुषसिंह उस गीतको श्रवण करते ही जल पूरित नेत्र और विचेतन हुए मुहूर्ततक निश्चेष्ट और वारंवार श्वास लेते रहे ॥ १७ ॥ उस रीतकी पूर्व काल कथाको वर्तमानके समान श्रवण करने लगे और जो शत्रुघ्नजीके साथी थे उन्होंने भी वह मनोहर गीत श्रवण कर ॥ १८ ॥

ऐसा हमने रामचरित गानेहारा न देखा ऐसा विचार नीचेको मुख करलिये और गानेवाले गीतकी कुशलतासे दीन होगये सेनाके लोग क्या आश्चर्य है, ऐसा परस्पर कहने लगे ॥ १९ ॥ कि, यह क्या है हम कहां हैं कुछ स्वप्न देखते हैं, जो हमने पूर्वकालमें देखा था उसे हम फिर इस आश्रममें ॥ २० ॥ श्रवण करते हैं क्या हम इस चरित्रको स्वप्नमें देखते हैं ? इस प्रकार परमाश्चर्यको प्राप्त हो शत्रुघ्नजीसे बोले ॥ २१ ॥ हे नरश्रेष्ठ ! आप वाल्मीकिजीसे यह अच्छी तरह पूछिये कि, यह कर्तृक गान है वा और कुछ, तब शत्रुघ्नजी उन सब आश्चर्यको प्राप्त हुए पुरुषोंसे कहने लगे ॥ २२ ॥ हे सैनिको !हम ऐसी बातको मुनिसे नहीं पूछ सकते कारण कि इन मुनिके आश्रममें बहुत आश्चर्य हुआ करते हैं ॥ २३ ॥ कौतूहल होनेसे यह बात मुनिराजसे पूछनी उचित

अवाङ्मुखाश्चदीनाश्चह्याश्चर्यमितिचाब्रुवन् ॥ परस्परंचयेतत्रसैनिकाःसंबभाषिरे ॥ १९ ॥ किमिदंक्कचवर्तामःकिमेतत्स्वप्नदर्शनम् ॥ अर्थो योनःपुरादृष्टस्तमाश्रमपदेपुनः ॥ २० ॥ शृणुमःकिमिदंस्वप्नेगीतबंधनमुत्तमम् ॥ विस्मयंतेपरंगत्वाशत्रुघ्नमिदमब्रुवन् ॥२१॥ साधुपृच्छनर श्रेष्ठवाल्मीकिंमुनिपुंगवम् ॥ शत्रुघ्नस्त्वब्रवीत्सर्वान्कौतूहलसमन्वितान् ॥ २२ ॥ सैनिकानक्षमोऽस्माकंपरिप्रष्टुमिहेदृशः ॥ आश्चर्याणिबहू नीहभवंत्वस्यांश्रमेमुनेः ॥ २३ ॥ नतुकौतूहलाद्युक्तमन्वेष्टुंतंमहामुनिम् ॥ एवंतद्वाक्यमुक्त्वातुसैनिकान्रघुनंदनः ॥ अभिवाद्यमहर्षिंतंस्वंनिवे शंययौतदा ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे एकसप्ततितमः सर्गः ॥ ७१ ॥ तंशयानंनरव्याघ्रं निद्रानाभ्यागमत्तदा ॥ चिंतयानमनेकार्थंरामगीतमनुत्तमम् ॥ १ ॥ तस्यशब्दंसुमधुरंतंत्रीलयसमन्वितम् ॥ श्रुत्वारात्रिर्जगामाशुशत्रुघ्नस्य महात्मनः ॥ २ ॥ तस्यांरजन्यांव्युष्टायांकृत्वापौर्वाह्णिकक्रमम् ॥ उवाचप्रांजलिर्वाक्यंशत्रुघ्नोमुनिपुंगवम् ॥ ३ ॥ भगवन्द्रष्टुमिच्छामिराघ वंरघुनंदनम् ॥ त्वयानुज्ञातुमिच्छामिसहैभिःसंशितव्रतैः ॥ ४ ॥

नहीं इसप्रकार रघुनन्दन सेनाके पुरुषोंसे कहकर महर्षिको अभिवादन कर अपने निवासस्थानपर आये ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० उत्तरकांडे भाषायामेकसप्ततितमः सर्गः ॥ ७१ ॥ उन नरव्याघ्रको शयन करते उस समय निद्रा नहीं आई कारण कि, अनेकार्थ युक्त रामचरित उत्तम गीतमें वह अनेक प्रकारकी चिन्ता करते रहे ॥ १ ॥ महात्मा शत्रुघ्नको वह मधुर वाणीके शब्दोंसे युक्त गीत श्रवण करते हुए शीघ्रही रात्रि व्यतीत हो गई ॥ २ ॥ उस रात्रिके बीत जानेपर प्रातःकृत्य कर शत्रुघ्नजी मुनिश्रेष्ठ वाल्मीकिजीसे हाथ जोड बोले ॥ ३ ॥ हे भगवन् ! अब मेरी इच्छा रघुनन्दन रामचन्द्रके देखनेकी है इन मुनिके सहित आपकी आज्ञा लेकर जानेकी इच्छा करता हूँ ॥ ४ ॥

शत्रुसूदन शत्रुघ्नजीके ऐसा कहनेपर वाल्मीकिजीने हृदयसे लगाय उन्हें बिदा कर दिया ॥ ५ ॥ शत्रुघ्नजी भी मुनिश्रेष्ठको अभिवादन कर और श्रेष्ठरथपर चढ रामचन्द्रके दर्शनकी इच्छा किये शीघ्रतासे अयोध्याको चले ॥ ६ ॥ वह श्रीमान् इक्ष्वाकुनन्दन महाबाहु कान्तिमान् रघुनाथजीकी मनोहर पुरीमें पहुँचे ॥ ७ ॥ तब वह पूर्णचन्द्रमाके समान मंत्रियोंके बीचमें बैठे हुए रामचन्द्रको देखने लगे जैसे कि, देवताओंके बीचमें इन्द्र बैठे होते हैं ॥ ८ ॥ वह सत्यपराक्रम तेजसे दीप्तिमान् महात्म रामचन्द्रको अभिवादन कर हाथ जोडकर कहने लगे ॥ ९ ॥ हे महाराज ! जो कुछ आपने आज्ञा दी थी वह मैंने सम्पूर्ण प्रतिपालन की है वह पापी लवण मारा गया और वहां मैंने पुरी भी बसाई है ॥ १० ॥ हे नृप रघुनन्दन ! अब वहां रहते द्वादशवर्ष आपके विना दर्शन

इत्येवंवादिनंतंतुशत्रुघ्नंशत्रुसूदनम् ॥ वाल्मीकिःसंपरिष्वज्यविससर्जसराघवम् ॥५॥ सोऽभिवाद्यमुनिश्रेष्ठंरथमारुह्यसुप्रभम् ॥ अयोध्यामगमत्तूर्णंराघवोत्सुकदर्शनः ॥६॥ सप्रविष्टःपुरींरम्यांश्रीमानिक्ष्वाकुनंदनः ॥ पविवेशमहाबाहुर्यत्ररामोमहाद्युतिः ॥७॥ सरामंमंत्रिमध्यस्थंपूर्णचन्द्रनिभाननम् ॥ पश्यन्नमरमध्यस्थंसहस्रनयनंयथा ॥ ८ ॥ सोऽभिवाद्यमहात्मानंज्वलंतमिवतेजसा ॥ उवाचप्रांजलिर्भूत्वारामंसत्यपराक्रमम् ॥ ॥ ९ ॥ यदाज्ञप्तंमहाराजसर्वंतत्कृतवानहम् ॥ हतःसलवणःपापःपुरीचास्यनिवेशिता ॥ १० ॥ द्वादशैतानिवर्षाणित्वांविनारघुनंदन ॥ नोत्सहेयमहंवस्तुंत्वयाविरहितोनृप ॥ ११ ॥ समेप्रसादंकाकुत्स्थकुरुष्वामितविक्रम ॥ मातृहीनोयथावत्सोनचिरंप्रवसाम्यहम् ॥ १२ ॥ एवंब्रुवाणंकाकुत्स्थःपरिष्वज्येदमब्रवीत् ॥ माविषादंकृथाःशूरनैतत्क्षत्रियचेष्टितम् ॥ १३ ॥ नावसीदंतिराजानोविप्रवासेषुराघव ॥ प्रजाहिपरिपाल्याहिक्षत्रधर्मेणराघव ॥ १४ ॥ कालेकालेतुमांवीरअयोध्यामवलोकितुम् ॥ आगच्छत्वंनरश्रेष्ठगंतासिचपुरंतव ॥ १५ ॥ ममापित्वंसुदयितःप्राणैरपिनसंशयः ॥ अवश्यंकरणीयंचराज्यस्यपरिपालनम् ॥ १६ ॥

किये बीत गये अब आपके वियोगमें मुझसे रहा नहीं जाता ॥ ११ ॥ हे काकुत्स्थ ! आप मेरे ऊपर प्रसन्न हूजिये, माताहीन बछडेके समान अब मैं वहां बहुत समय तक नहीं रहसकता ॥ १२ ॥ शत्रुघ्नके यह वचन सुना रघुनाथजी उन्हें हृदयसे लगाकर बोले हे वीर ! तुम विषाद मत करो क्षत्रियोंको यह वचन कहने उचित नहीं ॥ १३ ॥ हे राघव ! राजा परदेशमें रहनेसे दुःखी नहीं होते हैं, राजाको तो क्षात्रधर्मसे प्रजा पालनीही उचित है ॥ १४ ॥ हे नरश्रेष्ठ ! जिस समय तुम्हारी इच्छा हो तभी २ हमको देखनेको चले आया करो और फिर अपने पुरको चले जाया करो ॥ १५ ॥ तुम मुझे प्राणोंके समान प्यारे हो इसमें कुछ भी सन्देह नहीं परंतु राज्य पालन भी तो अवश्य करना उचित है ॥ १६ ॥

इसकारण भाई आप सात दिनतक यहां रहिये और इसके उपरान्त सेना वाहनसहित फिर मधुपुरीको चले जाना ॥ १७ ॥ रघुनाथजीके यह धर्मयुक्त मनोगत वचन श्रवण करके शत्रुघ्नजी दीन हो जो आज्ञा ऐसे कहते हुए ॥ १८ ॥ इस प्रकार रामचन्द्रकी आज्ञासे सात रात रहकर फिर महावीर शत्रुघ्नजीने जानेका विचार किया ॥ १९ ॥ सत्यपराक्रम रघुनाथजी और भरत लक्ष्मणको आमन्त्रण करके रथपर चढे ॥ २० ॥ महात्मा भरतजी शत्रुघ्नजीके साथ कुछ दूरतक पैरोंपैरों चले और फिर पुरीको शीघ्र लौटि आये ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां द्विसप्ततितमः सर्गः ॥७२॥ भाइयोंके सहित रघुनाथजी शत्रुघ्नजीको विदा करके धर्मपूर्वक राज्य करते सुखसे रहने लगे ॥ १ ॥ फिर कुछ दिन बीतनेपर एक उस देशका बूढा ब्राह्मण

तस्मात्त्वंवसकाकुत्स्थसप्तरात्रंमयासह ॥ ऊर्ध्वंगंतासिमथुरांसभृत्यबलवाहनः ॥१७॥ रामस्यैतद्वचःश्रुत्वाधर्मयुक्तमनोनुगम् ॥ शत्रुघ्नोदीनयावाचाबाढमित्येवचाब्रवीत् ॥१८॥ सप्तरात्रंचकाकुत्स्थोराघवस्ययथाज्ञया ॥ उष्यतत्रमहेष्वासोगमनायोपचक्रमे ॥१९॥ आमंत्र्यतुमहात्मानंरामंसत्यपराक्रमम् ॥ भरतंलक्ष्मणंचैवमहारथमुपारुहत ॥ २० ॥ दूरंपद्भ्यामनुगतोलक्ष्मणेनमहात्मना ॥ भरतेनचशत्रुघ्नोजगामाशुपुरींतदा॥२१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे द्विसप्ततितमः सर्गः ॥७२॥ प्रस्थाप्यतुसशत्रुघ्नंभ्रातृभ्यांसहराघवः ॥ प्रमुमोदसुखीराज्यंधर्मेणपरिपालयन् ॥ १ ॥ ततःकतिपयाहस्सुवृद्धोजानपदोद्विजः ॥ मृतंबालमुपादायराजद्वारमुपागमत् ॥२॥ रुदन्बहुविधावाचःस्नेहदुःखसमन्वितः ॥ असकृत्पुत्रपुत्रेतिवाक्यमेतदुवाचह ॥ ३ ॥ किंनुमेदुष्कृतंकर्मपुरादेहांतरेकृतम् ॥ यदहंपुत्रमेकंतुपश्यामिनिधनंगतम् ॥ ४ ॥ अप्राप्तयौवनंबालंपंचवर्षसहस्रकम् ॥ अकालेकालमापन्नंममदुःखायपुत्रक ॥ ५ ॥ अल्पैरहोभिर्निधनंगमिष्यामिनसंशयः ॥ अहंचजननीचैवतवशोकेनपुत्रक ॥ ६ ॥

मृतक बालक लेकर राजद्वारपर आया ॥ २ ॥ मैंने पूर्वजन्ममें न जानें क्या पाप किया है इस प्रकार स्नेह दुःख भरी बहुतसीबातें कहकर वह रोने लगा और वारंवार हे पुत्र ! हे पुत्र ! ऐसा कहने लगा ॥ ३ ॥ हाय मैंने क्या पाप पूर्वजन्ममें किया था जो मेरा इकलौता पुत्र मरगया ॥ ४ ॥ मेरा बालक तो अभी तरुणभी नहीं हुआ था अभी पांच* हजार दिनकी अवस्था थी हाय पुत्र ! अकालमेंही तुम मुझे दुःख देनेंके निमित्त कालको प्राप्त हुए ॥ ५ ॥ हे पुत्र ! मैं और तुम्हारी माता तुम्हारे शोकसे थोडेही दिनोंमें मरजायँगे इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥ ६ ॥

---

* पञ्चवर्षसहस्रकम् वर्षशब्द दिनके अर्थमें है इससे १५ वर्षसे कुछ न्यून अवस्था जाननी

न तो मैंने किसीसे झूंठही बोला न मैंने किसीकी हिंसाही करी, न मैंने मन वचन कर्मसे किसी प्राणियोंका कभी कुछ पापस्मरण किया ॥ ७ ॥ फिर किस पापसे यह मेरा पुत्र बाल्य अवस्थामेंही यमलोकको गया और अपने पितरोंके श्राद्धादिकर्मनकर सका ॥ ८ ॥ रामचंद्रके देशोंमें इस प्रकार घोरदर्शन वार्ता हमने नहीं सुनी जो कि आकालमें प्राणी मरते हों ॥ ९ ॥ निःसन्देह इसमें कोई रामचन्द्रका ही बडा पाप है, जिससे उनके कि देशमें बालकोंकी मृत्यु होने लगी ॥ १० ॥ और देशके रहनेवाले बालकोंको मृत्युसे भय नहीं है सो हे राजन् ! आप इस मेरे मरे हुए बालकको जिवाओ ॥ ११ ॥ नहीं तो मैं अनाथोंके समान स्त्री सहित राजद्वारपर प्राण देदूंगा उस समय तुम ब्रह्महत्याको प्राप्त होकर सुखी होना ॥ १२ ॥ हे राजन् ! भाइयोंसहित आपकी बडी

नस्मराम्यनृतंवक्तुंनचहिंसांस्मराम्यहम् ॥ सर्वेषांप्राणिनांपापंनस्मरामिकदाचन ॥ ७ ॥ केनाद्यदुष्कृतेनायंबालएवममात्मजः ॥ अकृत्वा पितृकार्याणिगतोवैवस्वतक्षयम् ॥ ८ ॥ नेदृशंदृष्टपूर्वंमेश्रुतंवाघोरदर्शनम् ॥ मृत्युरप्राप्तकालानांरामस्यविषयेह्ययम् ॥ ९ ॥ रामस्यदुष्कृतंकिंचिन्महदस्तिनसंशयः ॥ यथाहिविषयस्थानांबालानांमृत्युरागतः ॥ १० ॥ नह्यन्यविषयस्थानांबालानांमृत्युतोभयम् ॥ सराजञ्जीवयस्वैनंबालंमृत्युवशंगतम् ॥ ११ ॥ राजद्वारिमरिष्यामिपत्न्यासार्धमनाथवत् ॥ ब्रह्महत्यांततोरामसमुपेत्यसुखीभव ॥१२॥ भ्रातृभिःसहितोराजन्दीर्घमायुरवाप्स्यसि ॥ उषिताःस्मसुखंराज्येतवास्मिन्सुमहाबल ॥ १३ ॥ इदंतुपतितंतस्मात्तवरामवशेस्थितान् ॥ कालस्यवशमापन्नाः स्वल्पंहिनहिनःसुखम् ॥ १४ ॥ संप्रत्यनाथोविषयइक्ष्वाकूणांमहात्मनाम् ॥ रामंनाथमिहासाद्यबालांतकरणंध्रुवम् ॥ १५ ॥ राजदोषैर्विपद्यंते प्रजाह्यविधिपालिताः ॥ असद्वृत्तेहिनृपतावकालेम्रियतेजनः ॥ १६ ॥ यद्वापुरेष्वयुक्तानिजनाजनपदेषुच ॥ कुर्वंतेनचरक्षास्तितदाकालकृतं भयम् ॥ १७ ॥ सुव्यक्तंराजदोषोहिभविष्यतिनसंशयः ॥ पुरेजनपदेचापितथाबालवधोह्ययम् ॥ १८ ॥

उमर होगी, हे महाबली ! हम आपके राज्यमें बहुत सुखसे रहे ॥ १३ ॥ आपके राज्यमें स्थित रहनेसे हमें यह सुख मिला कि, जो हम कालके वशमें पडे, आपके राज्यमें कुछ भी सुख नहीं ॥ १४ ॥ इस समय यह महात्मा इक्ष्वाकुओंसे सनाथ हुआ देश रामचन्द्रके हस्तगत हो बालकोंकी मृत्यु होनेसे अनाथोंके समान हो गया है ॥ १५ ॥ जब प्रजा विधिपूर्वक पालित नहीं होती तो खोटे आचरण करने वाले राजाके दोषसे अकालमेंही प्राणी मरते हैं ॥ १६ ॥ अथवा आपकी असावधानीसे और रक्षा न करनेसे जनपद और नगरमें मनुष्य सद्व्यवहार करते हैं इस कारणसे अकालमें कालका भय होता है ॥ १७ ॥ अवश्य राजदोष पुर वा जनपदमेंही है इसमें संदेह नहीं जिससे यह बालक मरगया ॥ १८ ॥

इसप्रकारसे महादुःखी हो विविध वाक्योंको कहता हुआ बालकको ढकता रामचन्द्रके द्वारपर खडा रहा ॥१९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां त्रिसप्ततितमः सर्गः ॥७३॥ इस प्रकार शोक और दुःखसहित करुणाभरे उस ब्राह्मणके सब वचन रामचन्द्रने सुने ॥१॥ तब बडे दुःखी हो रामचन्द्रने वसिष्ठ वामदेव भाई और शास्त्रके जान नेवाले महात्माओंको बुलाया ॥२॥ इसके उपरान्त वसिष्ठके सहित वह मन्त्री ब्राह्मण आये और देवतुल्य महाराज रामचन्द्रसे (वर्धस्व) आपकी वृद्धि हो यह वचन बोले ॥३॥ मार्कण्डेय, मौद्गल्य, वामदेव, काश्यप, कात्यायन, जाबालि, गौतम; नारदजी ॥४॥ यह सब ब्राह्मणश्रेष्ठ आसनोंपर बैठे आये हुए उन सब महर्षियोंको रामचन्द्रने हाथ जोड प्रणाम किया ॥५॥ मन्त्री और शास्त्र जानने वाले महात्मा जब सत्कार पाचुके तब उन

एवंबहुविधैर्वाक्यैरुपरुध्यमुहुर्मुहुः ॥ राजानंदुःखसंतप्तःसुतंतमुपगूहति॥१९॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०उत्तरकांडे त्रिसप्ततितमः सर्गः॥७३॥ तथातुकरुणंतस्यद्विजस्यपरिदेवनम्॥ शुश्रावराघवःसर्वंदुःखशोकसमन्वितम्॥१॥ सदुःखेनचसंतप्तोमंत्रिणस्तानुपाह्वयत् ॥ वसिष्ठंवामदेवंचभ्रातॄंश्चसहनैगमान् ॥ २ ॥ ततोद्विजावसिष्ठेनसार्धमष्टौप्रवेशिताः॥ राजानंदेवसंकाशंवर्धस्वेतिततोऽब्रुवन् ॥३॥ मार्कंडेयोथमौद्गल्योवामदेवश्चकाश्यपः॥ कात्ययानोथजाबालिर्गौतमोनारदस्तथा ॥४॥ एतेद्विजर्षभाःसर्वेआसनेषूपवेशिताः॥ महर्षीन्समनुप्राप्तानभिवाद्यकृतांजलिः ॥ ५ ॥ मंत्रिणोनैगमाश्चैवयथार्हमनुकूलिताः ॥ तेषांसमुपविष्टानांसर्वेषांदीप्ततेजसाम् ॥ ६ ॥ राघवःसर्वमाचष्टेद्विजोऽयमुपरोधति ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराज्ञोदीनस्यनारदः ॥७॥ प्रत्युवाचशुभंवाक्यमृषीणांसन्निधौस्वयम् ॥ शृणुराजन्यथाऽकालेप्राप्तोबालस्यसंक्षयः॥ ८ ॥ श्रुत्वाकर्तव्यतांराजन्कुरुष्वरघुनंदन ॥ पुराकृतयुगेराजन्ब्राह्मणावैतपस्विनः ॥९॥ अब्राह्मणस्तदाराजन्नतपस्वीकथंचन॥ तस्मिन्युगेप्रज्वलितेब्रह्मभूतेत्त्वनावृते ॥ १० ॥ अमृत्यवस्तदासर्वेजज्ञिरेदीर्घदर्शिनः ॥ ततस्त्रेतायुगंनामममानवानांवपुष्मताम् ॥११॥

तेजस्वी महात्माओंके बैठनेपर ॥६॥ रामचन्द्रने उनसे सब वृत्तान्त कहा कि, यह ब्राह्मण इसप्रकारसे वचन कह हमको पाप लगाता है, इस प्रकार रामचन्द्रके दीन वचन सुनकर नारदजी ॥७॥ उन ऋषियोंके बीच स्वयं श्रेष्ठ वचन कहने लगे। हेराजन्! सुनिये जिसकारण कि,अकालमें इस बालककी मृत्युहुई ॥८॥ हे राम रघुनन्दन उसको सुनकर जो कर्तव्यहो सो करो। हेराजन्! पहले सतयुगमें सब ब्राह्मणही तपस्वी होतेथे।॥९॥ हे राजन्! ब्राह्मण को छोडकर और कोई तपस्वी नहीं होतेथे और वर्ण नित्यनैमित्तिक कर्म करतेथे, वह युग तपस्यासे दीप्तिमान्था ब्राह्मणवर्णही उसमें प्रधान थे और ज्ञान होनेसे वे प्राणी अज्ञानावरणसे रहित थे ॥१०॥ इस कारण वे सब प्राणी दीर्घदर्शी होते थे और सब अकालमें मरणधर्मसे रहित थे फिर जब त्रेतायुग आकर प्राप्त हुआ इसमें

प्राणियोंकी ब्रह्मात्म बुद्धि शिथिल होजातीहै॥ ११॥ जैसे सतयुगमें तप और वीर्यमें ब्राह्मण सबसे अधिकथे इस त्रेतायुगमें तपस्या और वीर्यमें क्षत्रिय सबसे अधिक होते हैं इस प्रकार जो त्रेतायुगके आनेसे महात्मा क्षत्रिय॥१२॥ जो सतयुगमें ब्राह्मणोंसे तपस्यामें हीन थे वे तपस्या करनेसे ब्राह्मणोंके समान हो गये इससे यह ब्राह्मण और क्षत्रिय तपस्या और वीर्यमें दोनों समान हुए ॥१३॥ अर्थात् सतयुगके ब्राह्मणोंसे त्रेतायुगके ब्राह्मण भी कुछ न्यून हुए। जब इस त्रेतायुगमें ब्राह्मण और क्षत्रियोंका न्यूनाधिक न रहा तो उससमय स्मृतिकार मनु आदिकोंने चारों वर्णोंके समस्त धर्म पृथक् २ स्थापनकर शास्त्र बनाये जिसमें उनके आचार विचार सब वर्णन किये सतयु गमें तो स्वतःही चारों वर्ण अपने२धर्मपर स्थितथे ॥१४॥ इसप्रकार यह त्रेतायुग धर्मनिरत यज्ञादि धर्मकी बहुताईके कारण पापपरंपरासे हीन था, परंतु मतभेदसे अधर्मसे कुछेक आक्रान्त होनेसे (हिंसा, झूंठ; असन्तोष विग्रह इन चार पदवाले) अधर्मका एक चरण पृथ्वीमें प्राप्त हुआ,अर्थात् त्रेतायुगके पुरुष सतयुगके पुरुषोंके समान निर्मल ज्ञानरहितहो ब्रह्मज्ञानके अधिकारसे शून्य हो अग्निहोमादि धर्ममेंही प्रवृत्त हुए उस ज्ञानके

क्षत्रियायत्रजायंतेपूर्वेणतपसान्विताः ॥ वीर्येणतपसाचैवतेऽधिकाःपूर्वजन्मनि ॥ मानवायेमहात्मानस्तत्रत्रेतायुगेयुगे ॥ १२ ॥ ब्रह्मक्षत्रंचतत्सर्वेयत्पूर्वमवरंचयत् ॥ युगयोरुभयोरासीत्समवीर्यसमन्वितम् ॥ १३ ॥ अपश्यंतस्तुतेसर्वेविशेषमधिकंततः ॥ स्थापनंचक्रिरेतत्रचातुर्वर्ण्यस्यसंमतम्॥१४॥ तस्मिन्युगेप्रज्वलितेधर्मभूतेह्यनावृते ॥ अधर्मःपादमेकंतुपातयत्पृथिवीतले॥१५॥ अधर्मेणहिसंयुक्तस्तेजोमंदंभविष्यति॥ ॥ १६ ॥ आमिषंयच्चपूर्वेषांराजसंचमलंभृशम् ॥ अनृतंनामतद्भूतंक्षिप्तेनपृथिवीतले ॥ १७ ॥ अनृतंपातयित्वातुपादमेकमधर्मतः ॥ ततःप्रादुष्कृतंपूर्वमायुषःपरिनिष्ठितम् ॥ १८ ॥ पातितेत्वनृतेतस्मिन्नधर्मेणमहीतले॥ शुभान्येवाचरँल्लोकःसत्यधर्मपरायणः॥ १९ ॥

अभावसे हिंसारूपी अधर्मका एक पाद भी जगत्में प्रचलित हुआ॥१५॥ जब इस युगका एक चरण अधर्मयुक्त होगा तभी तेज मन्द हो जायगा॥१६॥ पूर्व पुरुषोंके जो घर और खेतादि थे त्रेतायुगके बीच मनुष्योंमें इनके निमित्त परस्परजो मलके द्वेषका संचार हुआ। पृथ्वीमें त्रेतायुगके समय जो अधर्मका चरण उत्पन्न हुआ था उससे मल स्वरूप अनृत द्वेष उत्पन्न हुए अर्थात् सतयुगी पुरुषोंको जो रजोगुणमूलक कृष्यादि जीवनोपाय मलवत् त्याज्य थे इन्हींके निमित्त द्वेष होनेसे अधर्म एक प्राप्त हुआ कारण कि सतयुगमें तो विना जोतेही अन्न उत्पन्न होता था काम क्रोध रजोगुणसेही उत्पन्न होता है रजोगुण विवादका मूल है ॥ १७ ॥ अधर्मअनृत द्वेष इनका एक चरण आजानेसे और कुकर्मके वश पुरुषोंकी आयुका परिमाण कम होगया॥१८॥अधर्मसे पृथ्वीमें जब अनृत उत्पन्न हुआ तब पुरुषगण अनृतके द्वारा आयुक्षयको मिटानेके निमित्त सत्यधर्मपरायण होकर विविध शुभकार्योंका आचरण करने लगे अर्थात् त्रेतायुगमें

यज्ञादि अनुष्ठानद्वारा शीघ्र मन शुद्ध होकर अभिमानकी निवृत्ति होती थी ॥१९॥ त्रेतायुगमें ब्राह्मण क्षत्रिय तपस्यामें लगे रहते और वैश्य शूद्रगण उनकी सेवा करते हैं ॥ २० ॥ उस कालमें ब्राह्मण क्षत्रियोंकी सेवा करनाही वैश्य और शूद्रोंका परम धर्म था विशेष करके शूद्रोंको सब वर्णोंकी सेवा करनाही परमधर्म है ॥ २१ ॥ हे नृपश्रेष्ठ ! त्रेतायुगके अन्तमें वैश्य और शूद्रोंको अनृतरूप अधर्मके भलीभांति प्राप्त हो जानेसे ब्राह्मण और क्षत्रियगण उनके संगमें न्यूनताको प्राप्त हुए ॥ २२ ॥ तब अधर्मका दूसरा चरण पृथ्वीपर गिरा तब द्वापर युगका आरंभ हुआ ॥२३॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! द्वापर युगमें धर्मके दो चरण टूट गये और असत्यकी वृद्धि हुई ॥ २४ ॥ इस द्वापरयुगमें वैश्य भी तप करने लगे इस प्रकारसे तीन युगमें तीन वर्ण यथाक्रमसे तपस्या करते हुए॥ २५ ॥

त्रेतायुगेचवर्ततेब्राह्मणाःक्षत्त्रियाश्चये ॥ तपोऽतप्यंततेसर्वेशुश्रूषामपरेजनाः॥ २० ॥ स्वधर्मःपरमस्तेषांवैश्यशूद्रंतदागमत् ॥ पूजांचसर्ववर्णानांशूद्राश्चक्रुर्विशेषतः ॥२१॥ एतस्मिन्नंतरेतेषामधर्मेचानृतेचह ॥ ततः पूर्वेपुनर्ह्रासमगमन्नृपसत्तम ॥ २२॥ ततःपादमधर्मस्यद्वितीयमवतारयत् ॥ ततोद्वापरसंख्यासायुगस्यसमजायत ॥२३॥ तस्मिन्द्वापरसंख्येतुवर्तमानेयुगक्षये ॥ अधर्मश्चानृतंचैववववृधेपुरुषर्षभ ॥ २४ ॥ अस्मिन्द्वापरसंख्यानेतपोवैश्यान्समाविशत् ॥ त्रिभ्योयुगेभ्यस्त्रीन्वर्णान्क्रमाद्वैतपआविशत् ॥२५॥ त्रिभ्योयुगेभ्यस्त्रीन्वर्णान्धर्मश्चपरिनिष्ठितः ॥ नशूद्रोलभतेधर्मंयुगतस्तुनरर्षभ ॥ २६ ॥ हीनवर्णोनृपश्रेष्ठतप्यतेसुमहत्तपः ॥ भविष्यच्छूद्रयोन्यांहितपश्चर्याकलौयुगे ॥ २७ ॥ अधर्मः परमोराजन्द्वापरेशूद्रजन्मनः ॥ सवैविषयपर्यंतेतवराजन्महातपाः ॥२८॥ अद्यतप्यतिदुर्बुद्धिस्तेनबालवधोह्ययम् ॥ योह्यधर्ममकार्यंवाविषयेपार्थिवस्यतु ॥ २९ ॥ करोतिचाश्रीमूलंतत्पुरेवादुर्मतिर्नरः ॥ क्षिप्रंचनरकंयातिसचराजानसंशयः ॥ ३० ॥ अधीतस्यचतप्तस्यकर्मणःसुकृतस्यच ॥ षष्ठंभजतिभागंतुप्राधर्मेणपालयन् ॥३१॥

तपरूप धर्म युगयुगमें तीन वर्णोंमें प्रतिष्ठित हुआ है परन्तु हे नरश्रेष्ठ ! इन तीन युगमें शूद्र तप धर्मके अधिकारी नहीं थे ॥ २६ ॥ परन्तु हे नृपश्रेष्ठ ! हीनवर्ण शूद्र भी महातप करता है यहां शूद्रयोनिमें उत्पन्न हुए जीव तो कलियुगमें ही तपस्या करेंगे ॥२७॥ हे राजन् ! यदि द्वापरमें शूद्र तपस्या करे तो भी बडा अधर्म है आपके राज्यमें तो इसी समय महातपस्वी॥ २८ ॥ दुर्बुद्धि शूद्र तपस्या करता है इससेही यह ब्राह्मणका बालक मरगया कारण कि, जिन नृपतिके राज्यमें जो कोई अधर्म वा अकार्य करता है ॥२९॥ उन दुर्मति मनुष्योंका अकार्य दरिद्रताका कारण है उसको जो निवारण नहीं करता वह राजा निःसन्देह नरकको प्राप्त होता है ॥३०॥ धर्मपूर्वक प्रजापालन करनेवाले राजाको प्रजाके अध्ययन तपस्या सुकृतकर्मोंका छठा भाग प्राप्त होता है ॥ ३१ ॥

फिर छठे भागका भागी होकर राजा प्रजाका पालन क्यों न करे इस कारण हे पुरुषसिंह ! आप अपने राज्यमें खोज करिये ॥ ३२ ॥ जहां जहां आप देखो वहां वहां यत्नसे उसका विवारण करो इससे धर्मकी वृद्धि और मनुष्योंकी आयु भी बढ़ेगी और हे नरश्रेष्ठ ! यह बालक भी जीवित हो जायगा ॥३३॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां चतुःसप्ततितमः सर्गः ॥७४॥ नारदजीके अमृतके समान वचन श्रवण कर रामचन्द्रजी बहुत प्रसन्न हो लक्ष्मणजीसे बोले ॥१॥ हे सौम्य हे सुव्रत ! जाकर उस ब्राह्मणश्रेष्ठको समझाओ और इस बालकके शरीरको तेलकी नावमें धरा दो ॥२॥ बडे २ दिव्यगंध सुगंधित तेलमें उसके शरीरको रक्खो हे सौम्य ! जिस प्रकारसे उसका शरीर न बिगडे ऐसा करो ॥३॥ जिस प्रकारसे कि, इस शुभाचारयुक्त

षड्भागस्यचभोक्तासौरक्षतेनप्रजाःकथम् ॥ सत्वंपुरुषशार्दूलमार्गस्वविषयंस्वकम् ॥३२॥ दुष्कृतंयत्रपश्येथास्तत्रयत्नंसमाचर ॥ एवंचेद्धर्मवृद्धिश्चनृणांचायुर्विवर्धनम् ॥ भविष्यतिनरश्रेष्ठबालस्यास्यचजीवितम् ॥ ३३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा० उत्तरकांडे चतुःसप्ततितमः सर्गः ॥७४॥ नारदस्यतुतद्वाक्यंश्रुत्वाऽमृतमयंयथा ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेलक्ष्मणंचेदमब्रवीत् ॥१॥ गच्छसौम्यद्विजश्रेष्ठंसमाश्वासयसुव्रत ॥ बालस्यशरीरंतत्तैलद्रोण्यांनिधापय ॥ २ ॥ गंधैश्चपरमोदारैस्तैलैश्चसुसुगंधिभिः ॥ यथानक्षीयतेबालस्तथासौम्यविधीयताम् ॥ ३ ॥ यथाशरीरोबालस्यगुप्तःसन्क्लिष्टकर्मणः ॥ विपत्तिःपरिभेदोवानभवेच्चतथाकुरु ॥ ४ ॥ एवंसंदिश्यकाकुत्स्थोलक्ष्मणंशुभलक्षणम् ॥ मनसापुष्पकंदध्यावागच्छेतिमहायशाः ॥५॥ इंगितंसतुविज्ञायपुष्पकोहेमभूषितः ॥ आजगाममुहूर्तेनसमीपेराघवस्यवै ॥ ६ ॥ सोऽब्रवीत्प्रणतोभूत्वाअयमस्मिनराधिप ॥ वश्यस्तवमहाबाहोकिंकरःसमुपस्थितः ॥ ७ ॥ भाषितंरुचिरंश्रुत्वापुष्पकस्यनराधिपः ॥ अभिवाद्यमहर्षीन्सविमानंसोऽध्यरोहत ॥ ८ ॥ धनुर्गृहीत्वातूणीचखड्गंचरुचिरप्रभम् ॥ निक्षिप्यनगरेचैतौसौमित्रिभरतावुभौ ॥ ९ ॥

बालकका शरीर किसी प्रकारसे न बिगडे वही तुम करो ॥४॥ रामचन्द्रने इस प्रकार शुभलक्षणयुक्त लक्ष्मणजीसे कहकर मनसे पुष्पकविमानको स्मरण किया कि महायशस्वी पुष्पक ! आओ ॥५॥ रामचन्द्रकी इच्छा जानकर वह सुवर्णभूषित पुष्पकविमान एक मुहूर्तमात्रमें रघुनन्दनके समीप आगया ॥ ६ ॥ और दंडवत्कर बोला महाराज ! मैं यह उपस्थित हूं हे महाबाहो ! मैं आपके वशीभूत आपका दास उपस्थित हूं ॥ ७ ॥ मनुष्यकी बोलीसे पुष्पकका मनोहर भाषण श्रवणकर रघुनाथजी महर्षियोंको प्रणाम कर उसपर सवार हुए ॥८॥ सुन्दर कांतिवाला खड्ग धनुषबाण ग्रहणकर और भरत शत्रुघ्नको नगरकी रक्षामें

नियुक्त कर ॥९॥ रामचन्द्रजी इधर उधर ढूंढते हुए पूर्व दिशाको गये, फिर वहांसे हिमालयसे आवृत उत्तर दिशामें आये ॥ १० ॥ वहां भी रघुनाथजीने किंचित् मात्र पाप नहीं देखा फिर सब पूर्वदिशाको अच्छी प्रकार शोधकर रघुनाथजी देखने लगे ॥ ११ ॥ वहांके वासी सब शुद्धाचार होनेसे दर्पणके समान निर्मल थे महाबाहु रामचन्द्रने पुष्पक विमानपर स्थित हो यह सब देखा ॥१२॥ तब राजर्षिनन्दन रघुनाथजी दक्षिण दिशाको आये और उन्होंने विन्ध्याचलके उत्तर पार्श्वमें शैवल पर्वत और एक बडा सरोवर देखा ॥ १३ ॥ महातपस्वी श्रीमान् रघुनाथजीने उस सरोवरके निकट तपस्या करते नीचेको मुखकर लटकते हुए उस तपस्वीको देखा ॥१४॥ रघुनाथजीके पास आकर उस उत्तम प्रकारसे तप करते हुए तपस्वीसे बोले हे सुव्रत ! तुम धन्य हो॥१५॥

प्रायात्प्रतीचींहरितंविचिन्वंश्चततस्ततः ॥ उत्तरामगमच्छ्रीमान्दिशंहिमवतावृताम् ॥१०॥ अपश्यमानस्तत्रापिस्वल्पमप्यथदुष्कृतम् ॥पूर्वामपिदिशंसर्वामथोऽपश्यन्नराधिपः ॥ ११ ॥ प्रविशुद्धसमाचारामादर्शतलनिर्मलाम् ॥ पुष्पकस्थोमहाबाहुस्तदापश्यन्नराधिपः ॥ १२ ॥ दक्षिणांदिशमाक्रामत्ततोराजर्षिनंदनः ॥ शैवलस्योत्तरेपार्श्वेददर्शसुमहत्सरः ॥१३॥ तस्मिन्सरसितप्यंतंतापसंसुमहत्तपः ॥ ददर्शराघवःश्रीमाँलंबमानमधोमुखम् ॥ १४ ॥ राघवस्तमुपागम्यतप्यंतंतपउत्तमम् ॥ उवाचनृपोवाक्यंधन्यस्त्वमसिसुव्रतः ॥ १५ ॥ कस्ययोन्यांतपोवृद्धवर्तसेदृढविक्रम ॥ कौतूहलात्त्वांपृच्छामिरामोदाशरथिर्ह्यहम् ॥१६॥ कोऽर्थोमनीपितस्तुभ्यंस्वर्गलाभोपरोऽथवा॥ वराश्रयोयदर्थत्वंतपस्यन्यैःसुदुश्चरम्॥ १७॥ यमाश्रित्यतपस्तप्तंश्रोतुमिच्छामितापस ॥ ब्राह्मणोवासिभद्रंतेक्षत्त्रियोवासिदुर्जयः॥ वैश्यस्तृतीयोवर्णोवाशूद्रोवासत्यवाग्भव ॥१८॥ इत्येवमुक्तःसनराधिपेनअवाक्छिरादाशरथायतस्मै ॥ उवाचजातिंनृपपुंगवाययत्कारणंचैवतपःप्रयत्नः ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० च० सा० उत्तरकांडे पंचसप्ततितमः सर्गः ॥७५॥

हे दृढविक्रम तपस्याव्रती ! आप कौन वर्ण हैं जो ऐसा तप करते हैं मैं दशरथपुत्र रामचन्द्र कौतूहलसेही तुमसे पूछता हूं ॥१६॥ तुमने तपस्या किस निमित्त की है स्वर्गकी इच्छा है व और कुछ, वह क्या है जिस वर पानेके निमित्त तुम दुस्तर तपस्या करते हो ? ॥१७॥ आप जिस निमित्त तपस्या करते हैं वह मेरे सुननेकी इच्छा है हे महाशय ! आप ब्राह्मण वा दुर्जय क्षत्रिय तीसरे वर्ण वैश्य वा शूद्र हैं सो सत्य कहिये ॥१८॥ जब महाराजने ऐसा कहा तो वह नीचेको मुख किये तपस्या करनेहारा नृपश्रेष्ठ रामचन्द्रजीसे अपनी जाति और तपस्या करनेका कारण कहने लगा ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां पंचसप्ततितमः सर्गः ॥७५॥

अक्लिष्टकर्मा रघुनाथजीके यह वचन सुनकर वह तपस्वी इस प्रकारसे कहने लगा ॥ १ ॥ हे राम ! मैं शूद्रयोनिमें उत्पन्न हुआ हूं और इसी शरीरसे देवत्व प्राप्त करनेकी इच्छा करके महातपस्या करता हूं ॥२॥ हे राम ! काकुत्स्थ ! मैं सत्य कहता हूं, देवलोक जीतनेकी मेरी इच्छा है मेरी जाति शूद्र और शंबूक नाम है ॥३॥ शूद्रके यह वचन कहतेहो रघुनाथजीने बडी कांतिवाला विमल खड्ग कोषसे निकालकर उस शूद्रका शिर छेदन कर डाला॥४॥ उस शूद्रके मारनेपर इन्द्र और अग्नि सहित सब देवता धन्य २ कहकर रामचन्द्रकी बढाई करने लगे॥५॥ उसी समय दिव्य सुगंधित फूलोंकी वर्षा हुई, वायुसे छोडे हुए पुष्प चारों ओर गिरने लगे ॥६॥ सत्यपराक्रम रामचन्द्रसे प्रसन्न होकर सब देवता कहने लगे हे महामते ! आपने यह देवताओंका कार्य किया है ॥७॥ हे शत्रु

तस्यतद्वचनंश्रुत्वारामस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ अवाक्छिरास्तथाभूतोवाक्यमेतदुवाचह ॥१॥ शूद्रयोन्यांप्रजातोऽस्मितपउग्रंसमास्थितः ॥ देवत्वंप्रार्थयेरामसशरीरोमहायशः ॥२॥ नमिथ्याहंवदेरामदेवलोकजिगीषया ॥ शूद्रंमांविद्धिकाकुत्स्थशंबूकोनामनामतः ॥३॥ भाषतस्तस्यशूद्रस्यखड्गंसुरुचिरप्रभम् ॥ निष्कृष्यकोशाद्विमलंशिरश्चिच्छेदराघवः ॥ ४ ॥ तस्मिञ्छूद्रेहतेदेवासेंद्राःसाग्निपुरोगमाः ॥ साधुसाध्वितिकाकुत्स्थंतेशशंसुर्मुहुर्मुहुः ॥ ५ ॥ पुष्पवृष्टिर्महत्यासीद्दिव्यानांसुसुगंधिनाम् ॥ पुष्पाणांवायुमुक्तानिसर्वतःप्रपपातह ॥ ६ ॥ सुप्रीताश्चाब्रुवन्रामंदेवाःसत्यपराक्रमम् ॥ सुरकार्यमिदंदेवसुकृतंतेमहामते॥७॥ गृहाणचवरंसौम्ययंत्वमिच्छस्यरिंदम ॥ स्वर्गभाङ्नहिशूद्रोऽयंत्वत्कृतेरघुनंदन॥ ॥ ८ ॥ देवानांभाषितंश्रुत्वारामःसत्यपराक्रमः ॥ उवाचप्रांजलिर्वाक्यंसहस्राक्षंपुरंदरम् ॥ ९ ॥ यदिदेवाःप्रसन्नामेद्विजपुत्रःसजीवतु ॥ दिशंतुवरमेतंमेईप्सितंपरमंमम ॥ १० ॥ ममापचाराद्बालोऽसौब्राह्मणस्यैकपुत्रकः ॥ अप्राप्तकालःकालेननीतोवैवस्वतक्षयम् ॥ ११ ॥ तंजीवयतभद्रंवोनानृतंकर्तुमर्हथ ॥ द्विजस्यसंश्रुतोऽर्थोमेजीवयिष्यामितेसुतम् ॥ १२ ॥ राघवस्यतुतद्वाक्यंश्रुत्वाविबुधसत्तमाः ॥ प्रत्यूचुराघवंप्रीतादेवाःप्रीतिसमन्वितम् ॥ १३ ॥

तापन सौम्य रघुनंदन ! यह शूद्र स्वर्गका अनधिकारी आपके करनेसेही हुआ आप इस कारण हमसे वर माँगिये॥८॥ सत्यपराक्रमी रघुनाथजी देवताओंका वचन सुनकर हाथ जोडकर सहस्राक्ष इन्द्रजीसे बोले ॥ ९ ॥ यदि आप सब देवता मुझसे प्रसन्न हैं तो यही इच्छित वर दीजिये कि, यह ब्राह्मणका पुत्र जीजाय ॥१०॥ मेरेही अपचारसे यह ब्राह्मणका इकलौता पुत्र अप्राप्तकालमें मरकर यमलोकको गया ॥ ११ ॥ हे देवताओ ! आपका मंगल हो आप उस ब्राह्मणके पुत्रको जिवा दो क्योंकि, मैं उसके जिवानेकी प्रतिज्ञा करचुका हूं वह मेरा वचन झूठा न होना चाहिये॥१२॥ रामचन्द्रके यह वचन सुनकर वे देवता प्रीतिस

हित रघुनाथजीके प्रति कहने लगे ॥१३॥ हे रामचन्द्र! अब आप गृहको पधारिये वह बालक तो आज जी उठा और अपने पिता मातासे मिलगया ॥१४॥ हे रामचन्द्र जिस मुहूर्तमें आपने इस शूद्रको मारा, उसीसमय वह बालक जीगया ॥१५॥ हे नरश्रेष्ठ रामचन्द्र ! आपका कल्याण हो अब हम अगस्त्यजीका श्रेष्ठ आश्रम देखनेको जाते हैं ॥१६॥ उन महाद्युतिमान् ऋषिकी आज उस यज्ञकी दीक्षा समाप्त हुई जो वह बारह वर्षसे जलमेंही सोया करते थे ॥१७॥ हे रघुनाथजी! हम उन मुनिराजको प्रसन्न करने जाते हैं यदि आपकी इच्छा हो तो आप भी उन ऋषिश्रेष्ठका दर्शन कीजिये ॥१८॥ रघुनाथजी देवताओंके वचन सुनकर बोले 'ऐसाही करेंगे' यह कह स्वर्णभूषित विमानपर सवार हुए ॥१९॥ देवता अपने २ विमानोंपर बैठ अगस्त्यजीको देखने गये और रघुनाथजीभी शीघ्रतासे अगस्त्य

निर्वृतोभवकाकुत्स्थसोऽस्मिन्नहनिबालकः ॥ जीवितंप्राप्तवान्भूयःसमेतश्चापिबंधुभिः॥ १४ ॥ यस्मिन्मुहूर्तेकाकुत्स्थशूद्रोऽयंविनिपातितः ॥ तस्मिन्मुहूर्तेबालोऽसौजीवेनसमयुज्यत॥१५॥स्वस्तिप्राप्नुहिभद्रंतेसाधुयामनरर्षभ॥ अगस्त्यस्याश्रमपदंद्रष्टुमिच्छामराघव॥१६॥ तस्यदीक्षा समाप्ताहिब्रह्मर्षेःसुमहाद्युते॥ द्वादशंहिगतंवर्षंजलशय्यांसमासतः॥१७॥ काकुत्स्थतद्गमिष्यामोमुनिंसमभिनंदितुम् ॥ त्वंचापिगच्छभद्रंतेद्रष्टुंत मृषिसत्तमम्॥१८॥सतथेतिप्रतिज्ञायदेवानांरघुनंदनः॥आरुरोहविमानंतंपुष्पकंहेमभूषितम्॥१९॥ततोदेवाःप्रयातास्तेविमानैर्बहुविस्तरैः॥रामो ऽप्यनुजगामाशुकुंभयोनेस्तपोवनम्॥२०॥दृष्ट्वातुदेवान्संप्राप्तानगस्त्यस्तपसांनिधिः॥अर्चयामासधर्मात्मासर्वांस्तानविशेषतः॥२१॥प्रतिगृह्य ततःपूजांसंपूज्यचमहामुनिम्।जग्मुस्तेत्रिदशाहृष्टानाकपृष्ठंसहानुगाः२२॥गतेषुतेषुकाकुत्स्थःपुष्पकादवरुह्य च॥ततोऽभिवादयामासअगस्त्य मृषिसत्तमम्॥२३॥ सोऽभिवाद्यमहात्मानंज्वलंतमिवतेजसा ॥ आतिथ्यंपरमंप्राप्यनिषसादनराधिपः॥२४॥ तमुवाचमहातेजाःकुंभयोनिर्महा तपाः॥स्वागतंतेनरश्रेष्ठदिष्ट्याप्राप्तोऽसिराघव ॥२५॥ त्वंमेबहुमतोरामगुणैर्बहुभिरुत्तमैः ॥ अतिथिःपूजनीयश्चममराजन्हृदिस्थितः ॥२६॥

जीके तपोवन देखनेको गये॥२०॥तपोनिधि धर्मात्मा अगस्त्यजीने देवताओंको आया देखकर उन सबका सम्यक् प्रकारसे पूजन सत्कार किया॥२१॥ वह सम्पूर्ण देवता अगस्त्यजीकी पूजा ग्रहण कर पीछे स्वयंभी महामुनिको पूज प्रसन्न हो सारथियों सहित स्वर्गको चलेगये॥२२॥ देवताओंके जानेके उपरान्त रामचन्द्रजीने विमानसे उतर फिर ऋषिश्रेष्ठ अगस्त्यजीको प्रणाम किया॥२३॥ रघुनाथजी अग्निके समान दीप्तिमान् महात्मा अगस्त्यजीको अभिवादन कर और उनसे अतिथिसत्कार पाय आसनपर बैठे ॥ २४ ॥ महातेजस्वी महातपस्वी अगस्त्यजी रामचन्द्रजीसे बोले हे राघव ! तुम भले आये आप आनंदसे हैं ? ॥ २५ ॥ हे राम ! तुम अनेक गुणसम्पन्न होनेके कारण बहुमान्य हो और विशेष करके हमारे हृदयमें टिके रहनेके कारण तुम अधिकपूजाके योग्य हो ॥ २६ ॥

देवताओंने कहा था कि, रघुनाथजीने शूद्रको मारा है और ब्राह्मणके पुत्रको जिलाया अब आपके देखनेको आया चाहते हैं ॥२७॥ हे रामचन्द्र ! आजकी रात आप हमारे यहांही रहिये कारण कि, आपही श्रीमान् साक्षात् नारायण हैं सबके प्रभु हैं सारा संसार आपमें प्रतिष्ठित है ॥२८॥ हे प्रभु ! आप सब देवताओंके प्रभु हैं आपही सनातन पुरुष हैं आज रहिये प्रातःकालही पुष्पकपर बैठ आयोध्यापुरीको चलेजाना ॥२९॥ हे सौम्य ! यह दिव्य आभरण विश्वकर्माका बनाया हुआ हमारे पास है जो अपने तेजसे देदीप्यमान है ॥३०॥ हे काकुत्स्थ रामचन्द्र ! इसको ग्रहण कर आप हमारा प्रिय कीजिये कारण कि, मनसे किसीको कोई वस्तु देनेपर फिर उसे प्रदान करनेसे महाफल होता है ॥३१॥ आप इस आभरणके धारण करनेमें समर्थ हैं कारण कि बडे २ उत्कृष्ट फल दे

सुराहिकथयंति त्वामागतंशूद्रघातिनम् ॥ ब्राह्मणस्यतुधर्मेणत्वयाजीवापितःसुतः ॥२७॥ उष्यतांचेहरजनींसकाशेममराघव ॥ त्वंहिनारायणः श्रीमांस्त्वयिसर्वंप्रतिष्ठितम् ॥ २८ ॥ त्वंप्रभुःसर्वदेवानांपुरुषस्त्वंसनातनः ॥ प्रभातेपुष्पकेणत्वंगंतास्वपुरमेवहि ॥ २९ ॥ इदंचाभरणंसौम्य निर्मितंविश्वकर्मणा ॥ दिव्यंदिव्येनवपुषादीप्यमानंस्वतेजसा ॥ ३० ॥ प्रतिगृह्णीष्वकाकुत्स्थमत्प्रियंकुरुराघव॥ दत्तस्यहिपुनर्दानेसुमहत्फल मुच्यते ॥३१॥ भरणेहिभवाञ्छक्तःफलानांमहतामपि ॥ त्वंहिशक्तस्तारयितुंसेंद्रानपिदिवौकसः ॥ ३२ ॥ तस्मात्प्रदास्येविधिवत्तत्प्रतीच्छ नराधिप ॥ अथोवाचमहात्मानमिक्ष्वाकूणांमहारथः ॥ ३३ ॥ "रामोमतिमतांश्रेष्ठःक्षत्रधर्ममनुस्मरन् ॥ प्रतिग्रहोऽयंभगवन्ब्राह्मणस्यविगर्हितः ॥ १ ॥ क्षत्त्रियेणकथंविप्रप्रतिग्राह्यंभवेत्ततः ॥ प्रतिग्रहोहिविप्रेंद्रक्षत्त्रियाणांसुगर्हितः ॥ २ ॥ ब्राह्मणेनविशेषेणदत्तंतद्वक्तुमर्हसि ॥ एवमुक्तस्तुरामेणप्रत्युवाचमहानृषिः ॥३॥ आसन्कृतयुगेरामब्रह्मभूतेपुरायुगे ॥ अपार्थिवाःप्रजाःसर्वाःसुराणांतुशतक्रतुः ॥ ४ ॥

सकते हैं, आप तो इन्द्रादिक देवताओंको भी मारनेको समर्थ हैं, इस कारण हमारे दिये भूषणलेनेमें संकोच न कीजिये कि, हम क्षत्त्रिय ब्राह्मणोंसे कोई वस्तु कैसे ग्रहण करें ॥३२॥ इस प्रकार हमारे दिये भूषणको आप विधिपूर्वक ग्रहण कीजिये, यह वचन सुन महारथी इक्ष्वाकुनन्दन रामचन्द्र अगस्त्यजीसे बोले ॥३३॥ " बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठनाथजी क्षत्रियधर्म स्मरणकर बोले महाराज ! ब्राह्मणसे दान लेनेका बडा दोष है ॥ १ ॥ क्षत्त्रिय होकर ब्राह्मणसे किस प्रकार कोई वस्तु ली जाये ? हे विप्रेन्द्र ! विशेषकर क्षत्त्रियोंको प्रतिग्रह लेनेका बडा दोष है ॥२॥ और फिर ब्राह्मणसे प्रतिग्रह कैसे लिया जाय सो आप कहिये, रामचन्द्रके ऐसा कहनेपर अगस्त्यजी बोले ॥३॥ हे राजन् ! ब्रह्मज्ञानपूर्ण सतयुगमें प्रजाका कोई राजा नहीं था, देवताओंके राजाइंद्र ही थे ॥ ४ ॥

तब वह प्रजा ब्रह्माजीके पास जाय राजा बनानेके निमित्त प्रार्थना करने लगी, हे भगवन् ! आपने देवताओंका राजा इन्द्र तो बना दिया ॥५॥ हे लोकेश ! हमारे निमित्त भी कोई नरश्रेष्ठ राजा दीजिये जिसकी पूजाकर हम पापरहित हो स्वच्छन्द विचरें ॥ ६ ॥ हमारा यह निश्चय है कि हम विना राजाके नहीं रहेंगे । तब सुरश्रेष्ठ ब्रह्माजीने लोकपाल इन्द्रादि ॥७॥ बुलाकर कहा कि, तुम सब अपने २ तेजसे भाग दो तब सब लोकपालोंने अपने २ तेजोंमेंसे भाग दिया ॥८॥ तब ब्रह्माजीने क्षुप अर्थात् शब्द किया जिससे क्षुपनाम राजा उत्पन्न हुआ उसको ब्रह्माजीने लोकपालोंके अंशसे युक्त किया ॥ ९ ॥ तब उस क्षुपराजको ब्रह्माजीने प्रजाका आधिपत्य दिया इन्द्रके अंशसे राजा पृथ्वीके शासनमें समर्थ हुए ॥ १० ॥ वरुणके भागसे राजाका शरीर पुष्ट हुआ, कुबेरके

ताःप्रजादेवदेवेशंराजार्थसमुपाद्रवन् ॥ सुराणांस्थापितोराजात्वयादेवशतक्रतुः ॥५॥ प्रयच्छास्मासुलोकेशपार्थिवंनरपुंगवम् ॥ यस्मैपूजांप्रयुंजानाधूतपापाश्चरेमहि ॥ ६ ॥ नवसामोविनाराज्ञाएषनोनिश्चयःपरः ॥ ततोब्रह्मासुरश्रेष्ठोलोकपालान्सवासवान् ॥ ७ ॥ समाहूयाऽब्रवीत्सर्वांस्तेजोभागान्प्रयच्छत ॥ ततोददुर्लोकपालाःसर्वेभागान्स्वतेजसः॥८॥अक्षुपच्चततोब्रह्मायतोजातःक्षुपोनृपः॥तंब्रह्मलोकपालानांसमांशैःसमयोजयत् ॥९ ॥ ततोददौनृपंतासांप्रजानामीश्वरंक्षुपम् ॥ तत्रैंद्रेणचभागेनमहीमाज्ञापयन्नृपः ॥ १० ॥ वारुणेनतुभागेनवपुःपुष्यतिपार्थिवः ॥ कौबेरेणतुभागेनवित्तपाभांददौतदा ॥११॥ यस्तुयाम्योऽभवद्भागस्तेनशास्तिस्मसप्रजाः ॥ तत्रैंद्रेणनरश्रेष्ठभागेनरघुनंदन ॥१२॥ प्रतिगृह्णीष्वभद्रंतेतारणार्थममप्रभो॥ तद्रामःप्रतिजग्राहमुनेस्तस्यमहात्मनः ॥ १३ ॥ दिव्यमाभरणंचित्रंप्रदीप्तमिवभास्करम् ॥ प्रतिगृह्यततोरामस्तदाभरणमुत्तमम् ॥१४॥ '' आगमंतस्यदीप्तस्यप्रष्टुमेवोपचक्रमे ॥ अत्यद्भुतमिदंदिव्यंवपुषायुक्तमद्भुतम् ॥ ३४ ॥ कथंवाभवताप्राप्तंकुतोवाकेनवाहृतम् ॥ कौतुहलतयाब्रह्मन्पृच्छामित्वांमहायशः ॥ ३५ ॥

भागसे प्रजाओंको धनदान किया ॥११॥ यमके भागसे प्रजा शासित होती है इस कारण हे नरश्रेष्ठ रघुनन्दन ! इन्द्रके भागसे आप ॥१२॥ कृतार्थ करनेके निमित्त इस आभूषणको ग्रहण करो तुम्हारा मंगल हो तब रघुनाथजीने महात्मा मुनिका दिया वह कंकण ग्रहण किया ॥ १३ ॥ वह दिव्य आभरण सूर्यके समान प्रदीप्त था तब रघुनाथजी उस दिव्य आभरणको ग्रहण कर ॥१४॥ इति क्षेपकाः ॥ '' उसकी प्राप्ति रघुनाथजी पूछने लगे कि, हे भगवन् ! अतिदीप्तिमान् अद्भुत देहसे युक्त ॥ ३४ ॥ यह दिव्य आभरण आपने कब कहाँसे पाया और इसे कौन लाया था ? हे महायशस्वी भगवन् ! कौतूहलसे यह मैं

आपसे पूछता हूं सो सुनाइये ॥३५॥ कारण कि आप अनेक आश्चर्योंके सागर हैं रामचंद्रके ऐसा कहनेपर अगस्त्यजी कहने लगे कि, हे राजन् ! पहले त्रेतायुगमें जो वार्ता हुई थी वह आप सुनिये ॥३६॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० उत्तकांडे भाषायां षट्सप्ततितमः सर्गः ॥ ७६ ॥ हे रघुनाथजी ! प्रथम त्रेतायुगमें यहां एक बहुत बडा वन मृगपक्षीहीन सौयोजनके विस्तारवाला था ॥१॥ हे सौम्य ! उस निर्जनवनमें उत्तम तपस्या करनेके निमित्त मैं विचरता हुआ आया ॥२॥ उसके किसी २ स्थलमें बडे २ सुस्वादु फल मूल लगे थे और उसमें छोटे बडे वन इस प्रकार मिश्रित थे कि; उसे कोई यह नहीं जानसकता था कि इस वनका कितना विस्तार है ॥ ३ ॥ उस वनके बीचमें एक योजनका एक सरोवर था जो हंस कारंडव चकवा चकवियोंसे शोभित था

आश्चर्याणांबहूनांहिनिधिःपरमकोभवान् ॥ एवंब्रुवतिकाकुत्स्थेमुनिर्वाक्यमथाब्रवीत् ॥ शृणुरामयथावृत्तंपुरात्रेतायुगेयुगे ॥३६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे षट्सप्ततितमः सर्गः ॥ ७६ ॥ पुरात्रेतायुगेरामबभूवबहुविस्तरम् ॥ समंताद्योजनशतंविमृगंपक्षिवर्जितम् ॥ १ ॥ तस्मिन्निर्मानुषेऽरण्येकुर्वाणस्तपउत्तमम् ॥ अहमाक्रमितुंसौम्यतदारण्यमुपागमम् ॥२॥ तस्यरूपमरण्यस्यनिर्देष्टुंनशशाकह ॥ फलमूलैःसुखास्वादैर्बहुरूपैश्चकाननैः ॥ ३ ॥ तस्यारण्यस्यमध्येतुसरोयोजनमायतम् ॥ हंसकारंडवाकीर्णंचक्रवाकोपशोभितम् ॥ ४ ॥ पद्मोत्पलसमाकीर्णंसमतिक्रांतशैवलम् ॥ तदाश्चर्यमिवात्यर्थंसुखास्वादमनुत्तमम् ॥५॥ अरजस्कंतदाक्षोभ्यंश्रीमत्पक्षिगणायुतम् ॥ तस्मिन्सरःसमीपेतुमहदद्भुतमाश्रमम् ॥ ६ ॥ पुराणंपुण्यमत्यर्थंतपस्विजनवर्जितम् ॥ तत्राहमवसंरात्रिंनैदाघींपुरुषर्षभ ॥ ७ ॥ प्रभातेकल्यमुत्थायसरस्तदुपचक्रमे ॥ अथापश्यंशवंतत्रसुपुष्टमरजःक्वचित् ॥ ८ ॥ तिष्ठंतंपरयालक्ष्म्यातस्मिंस्तोयाशयेनृप ॥ तमर्थंचिंतयानोऽहंमुहूर्तंतत्रराघव ॥९॥ विष्ठितोऽस्मिसरस्तीरेकिंत्विदंस्यादितिप्रभो ॥ अथापश्यंमुहूर्तात्तुदिव्यमद्भुतदर्शनम् ॥ १० ॥

॥४॥ उसमें अनेक प्रकारके पद्म उत्पल कमल खिले थे जिससे सिवार दृष्टिगोचर नहीं होता था, एक अद्भुतता यह थी कि, उसका जल बहुत ही स्वादिष्ट था ॥५॥ धूरिरहित क्षोभ रहित पक्षियोंसे शोभायमान सरोवरके किनारे एक श्रेष्ठ अद्भुत आश्रम बना था ॥ ६ ॥ जो बडा पुराना पुण्यरूप तपस्वियोंसे हीन था, हे राम ! उस ग्रीष्मकालकी रात्रिमें मैं वहीं रहा ॥७॥ जब मैं प्रातःकाल उठकर उस सरोवरके निकट स्नानादि करनेको गया तो उसमें सर्वांगसे पुष्ट उज्ज्वल एक मृतक शरीर पडा था ॥८॥ हे रामचन्द्र ! वह शव उस सरोवरमें शोभायमान होरहा था उसकी स्वच्छता देखकर ॥ ९ ॥ मैं उस स्थानमें बैठा एक मुहूर्ततक विचार करता रहा कि, यह क्या है ? तदनन्तर उसी मुहूर्तमें एक और आश्चर्ययुक्त वार्ता देखी ॥ १० ॥

हे रघुनन्दन ! उस स्थानमें मनके वेगके समान हंसयुक्त विमान आया और उसमें अत्यन्त रूपवान् स्वर्गकी ॥११॥ एक सहस्र अप्सरायें दिव्यभूषण पहरे बैठी थीं उसमें कोई मनोहर गीत गाती और कोई बाजे बजाती थीं ॥१२॥ मृदंग, वीणा, नगारे, तबले आदि बजते थे कोई २ उनमें नृत्य करती थीं; दूसरी स्त्रियें सोनेकी डंडी लगे चन्द्रमाके समान निर्मल चामरोंसे ॥१३॥ उसमें चढे हुए कमलनेत्रवाले स्वर्गवासीके मुखपर बयार कर रही थीं फिर जिस प्रकार सूर्य भगवान् सुमेरु पर्वतसे उतरते हैं इस प्रकार वह उस विमानको त्यागन करके ॥१४॥ हे रघुनन्दनजी ! हमारे देखते २ उस विमान परसे उतरके वह स्वर्गवासी उस शवको भक्षण करने लगा ॥१५॥ तदनन्तर स्वर्गी इच्छानुसार पुष्टस्थानके मांसको भक्षण करके फिर जलपान करनेके निमित्त सरोवरमें आया ॥१६॥

विमानंपरमोदारंहंसयुक्तंमनोजवम् ॥ अत्यर्थंस्वर्गिणंतत्रविमानेरघुनंदन ॥ ११ ॥ उपास्तेऽप्सरसांवीरसहस्रंदिव्यभूषणम् ॥ गायंतिकाश्चिद्र म्याणिवादयंतितथापराः ॥ १२ ॥ मृदंगवीणापणवान्नृत्यंतिचतथापराः॥ अपराश्चंद्ररश्म्याभैर्हेमदंडैर्महाधनैः ॥ १३ ॥ दोधूयुर्वदनंतस्य पुंडरीकनिभेक्षणाः ॥ ततःसिंहासनंत्यक्त्वामेरुकूटमिवांशुमान् ॥ १४ ॥ पश्यतोमेतदारामविमानादवरुह्यच ॥ तंशवंभक्षयामाससस्वर्गीरघुनं दन ॥१५॥ ततोभुक्त्वायथाकामंमांसंबहुसुपीवरम् ॥ अवतीर्यसरःस्वर्गीसंस्प्रष्टुमुपचक्रमे ॥ १६ ॥ उपस्पृश्ययथान्यायंसस्वर्गीरघुनंदन ॥ आरोढुमुपचक्रामविमानवरमुत्तमम् ॥१७॥ तमहंदेवसंकाशमारोहंतमुदीक्ष्यवै ॥ अथाहमब्रुवंवाक्यंतमेवपुरुषर्षभ ॥ १८ ॥ कोभवान्देवसं काशआहारश्चविगर्हितः ॥ त्वयेदंभुज्यतेसौम्यकिमर्थंवक्तुमर्हसि ॥ १९ ॥ कस्यस्यादीदृशोभावआहारेदेवसंमतः ॥ आश्चर्यंवर्ततेसौम्यश्रोतु मिच्छामितत्त्वतः ॥ नाहमौपयिकंमन्येतवभक्ष्यमिमंशवम् ॥ २० ॥ इत्येवमुक्तःसनरेंद्रनाकीकौतूहलात्सूनृतयागिराच ॥ श्रुत्वाचवाक्यंमम सर्वमेतत्सर्वंतथाचाकथयन्ममेति ॥२१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे सप्तसप्ततितमःसर्गः ॥७७॥

वह स्वर्गी जलपान कर आचमन करके फिर उस श्रेष्ठ विमानमें चढने लगा ॥१७॥ हे राम ! तब उस देवताके समान पुरुषको विमानमें चढते देखकर उससे मैं इस प्रकारसे वचन कहने लगा ॥१८॥ आप देवताके समान कौन हो ? किस कारण ऐसा निन्दित भोजन करते हो ? यह आप किस निमित्त खाते हो सो हमसे बताइये ॥१९॥ हे सौम्य ! किसका ऐसा आहार और ऐसा भाव होगा कोई भी देवता ऐसा भोजन नहीं करते मुझे इससे बडा आश्चर्य है यह मैं सब श्रवण करना चाहता हूं ॥२०॥ हे रामचन्द्र ! जब मैंने ऐसा कहा तो वह स्वर्गवासी मेरे वचन सुन कौतूहलसे सत्य और नम्र वाणीसे अपना सब वृत्तान्त मुझसे कहने लगा ॥२१॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां सप्तसप्ततितमः सर्गः ॥ ७७ ॥

हे रघुनन्दन राम ! मेरे शुभाक्षर युक्त वचन सुनकर वह स्वर्गी हाथ जोडकर मुझसे कहने लगा ॥ १ ॥ हे भगवन् ! हमारे सुख दुःखका पूर्व वृत्तान्त श्रवण कीजिये । हे ब्राह्मण ! जिस प्रकार आप पूछते हैं तो सुनकर इसका निरादर न करना॥२॥ तीन लोकमें विख्यात मेरे पितामह सुदेवजी महायशस्वी विदर्भ देशके राजा थे ॥३॥ हे ब्रह्मन् ! उनकी रानियोंसे दो पुत्र उत्पन्न हुए, मेरा नाम श्वेत और मेरे छोटे भाईका नाम सुरत हुआ॥४॥ जिस समय पिताजी स्वर्गको गये तो पुरवासियोंने मुझे राजा बनाया तब मैं धर्मपूर्वक सावधानीसे राज्य करने लगा ॥५॥ हे ब्रह्मन्! हे सुव्रत! इस प्रकार धर्मसे प्रजा पालते और राज्य करते २ मुझे पांच हजार वर्ष बीत गये ॥६॥ हे ब्रह्मन्! सो किसी लक्षणसे मैं अपनी शीघ्रता प्राप्त होनेवाली मृत्युका निश्चय करके कालधर्म हृदयमें धारण कर वनको

श्रुत्वातुभाषितंवाक्यंममरामशुभाक्षरम् ॥ प्रांजलिःप्रत्युवाचेदंसस्वर्गीरघुनंदन ॥१॥ शृणुब्रह्मन्पुरावृत्तंममैतत्सुखदुःखयोः ॥ अनतिक्रमणीयं चयथापृच्छसिमांद्विज ॥ २ ॥ पुरावैदर्भकोराजापितामममहायशाः ॥ सुदेवइतिविख्यातस्त्रिषुलोकेषुवीर्यवान् ॥ ३ ॥ तस्यपुत्रद्वयंब्रह्मन्द्वा भ्यांस्त्रीभ्यामजायत ॥ अहंश्वेतइतिख्यातोयवीयान्सुरथोऽभवत् ॥ ४ ॥ ततःपितरिस्वर्यातेपौरामामभ्यषेचयन् ॥ तत्राहंकृतवान्राज्यंधर्म्यंचसु समाहितः ॥५॥ एवंवर्षसहस्राणिसमतीतानिसुव्रत ॥ राज्यंकारयतोब्रह्मन्प्रजाधर्मेणरक्षतः ॥६॥ सोऽहंनिमित्तेकस्मिंश्चिद्विज्ञातायुर्द्विजोत्तम॥ कालधर्मंहृदिन्यस्यततोवनमुपागमम् ॥७॥ सोऽहंवनमिदंदुर्गंमृगपक्षिविवर्जितम् ॥ तपश्चर्तुंप्रविष्टोऽस्मिसमीपेसरसःशुभे ॥८॥ भ्रातरंसुरथंरा ज्येअभिषिच्यमहीपतिम् ॥ इदंसरःसमासाद्यतपस्तप्तंमयाचिरम् ॥९॥ सोऽहंवर्षसहस्राणितपस्त्रीणिमहावने ॥ तप्त्वासुदुष्करंप्राप्तोब्रह्मलोक मनुत्तमम् ॥१०॥ तस्यमेस्वर्गभूतस्यक्षुत्पिपासेद्विजोत्तम ॥ बाधेतेपरमेवीरततोऽहंव्यथितेंद्रियः ॥११॥ गत्वात्रिभुवनश्रेष्ठंपितामहमुवाचह ॥ भगवन्ब्रह्मलोकोऽयंक्षुत्पिपासाविवर्जितः ॥ १२ ॥ कस्यायंकर्मणःपाकःक्षुत्पिपासानुगोह्यहम् ॥ आहारःकश्चमेदेवतन्मेब्रूहिपितामह॥ १३॥

चला गया ॥७॥ इस मृगपक्षी रहित वनमें प्रवेश करके मैं इस सरोवरके निकट तपस्या करने लगा॥८॥ भाई सुरथ राजाको राज्यमें अभिषेक करके इस सरोवरके निकट मैंने बहुत कालतक तपस्या की ॥९॥ तीन सहस्र वर्षतक दुष्कर तपस्या करके परमश्रेष्ठ ब्रह्मलोकको प्राप्त हुआ ॥१०॥ हे द्विजोत्तम! स्वर्गमें प्राप्त होकर भी मैं भूख प्याससे ऐसा कातर हुआ कि, भूखसे व्याकुलेन्द्रियहो गया ॥११॥ तब मैं त्रिभुवनमें श्रेष्ठ ब्रह्माजीसे जाकर कहने लगा कि, हे भगवन्! यह ब्रह्मलोक क्षुधा पिपासासे वर्जित है ॥१२॥ यह कौनसे कर्मोंकाफल है जो इसस्थानमें भी मुझे भूँख प्यास बाधा करती है? हे पितामह! मुझे कुछ भोजन करनेके निमित्त

बताइये ॥१३॥ यह बचन सुनकर ब्रह्माजी बोले हे सुदेवनन्दन! तुम्हारा भोजन तुम्हाराही स्वादिष्ट मांस हो उसकोही तुम सदा भक्षण करो॥१४॥ तुमने श्रेष्ठ तप करनेके समय अपने शरीरको पुष्ट किया है हे श्वेत! विना बोये कदापिबीज उत्पन्न नहीं होता आपने कुछ भी दान नहीं किया केवल तपही किया इस कारण स्वर्गमें प्राप्त होकर भी तुमको क्षुधा पीडित करती है ॥१५॥१६॥ इसीसे तुमने जो अपने शरीरको अनेक भोजन खवाकर पुष्ट किया है उसीको तुम अमृत के समान भोजन करो इसीसे तुम्हारी क्षुधा निवृत्त हो जायगी ॥१७॥ हे श्वेत! जिससमय उस वनमें दुर्द्धर्ष भगवान् अगस्त्यजी आवेंगे उससमय तुम इस दुःखसे छूट जाओगे॥१८॥ हे सौम्य! तुम्हें क्या वह तो देवताओंकोभी तारनेमें समर्थ हैं कारण कि, तुम तो केवल क्षुधा पिपासासेही पीडित हो॥१९॥ हे बुद्धिमन्!

पितामहस्तुमामाहतवाहारःसुदेवज ॥ स्वादूनिस्वानिमांसानितानिभक्षयनित्यशः ॥१४॥ स्वशरीरंत्वयापुष्टंकुर्वतातपउत्तमम् ॥ अनुप्तरोहते श्वेतनकदाचिन्महामते ॥१५॥ दत्तनतेऽस्तिसूक्ष्मोऽपितपएवनिषेवसे ॥ तेनस्वर्गगतोवत्सबाध्यसेक्षुत्पिपासया ॥ १६ ॥ सत्वंसुपुष्टमाहारैः स्वशरीरमनुत्तमम् ॥ भक्षयित्वामृतरसंतेनवृत्तिर्भविष्यति ॥ १७ ॥ यदातुतद्वनंश्वेतअगस्त्यःसमहानृषिः ॥ आगमिष्यतिदुर्धर्षस्तदाकृच्छ्रा द्विमोक्ष्यते॥१८॥ सहितारयितुंसौम्यशक्तःसुरगणानपि ॥ किंपुनस्त्वांमहाबाहोक्षुत्पिपासावशंगतम् ॥१९॥ सोऽहंभगवतःश्रुत्वादेवदेवस्य निश्चयम् ॥ आहारंगर्हितंकुर्मिस्वशरीरंद्विजोत्तम ॥२०॥ बहून्वर्षगणान्ब्रह्मन्भुज्यमानामिदंमया ॥ क्षयंनाभ्येतिब्रह्मर्षेतृप्तिश्चापिममोत्तमा ॥ ॥२१॥ तस्यमेकृच्छ्रभूतस्यकृच्छ्रादस्माद्विमोक्षय ॥ अन्येषांनगतिर्ह्यत्रकुंभयोनिमृतेद्विजम् ॥२२॥ इदमाभरणंसौम्यधारणार्थंद्विजोत्तम ॥ प्रतिगृह्णीष्वभद्रंतेप्रसादंकर्तुमर्हसि ॥२३॥ इदंतावत्सुवर्णंचधनंवस्त्राणिचद्विज ॥ भक्ष्यभोज्यंचब्रह्मर्षेददाम्याभरणानिच ॥२४॥ सर्वान्कामा न्प्रयच्छामिभोगांश्चमुनिपुंगव ॥ तारणेभगवान्मह्यंप्रसादंकर्तुमर्हसि ॥२५॥

मैं इस प्रकारसे देवदेव, ब्रह्माजीके, वचन श्रवणकर इस अपने शरीरका गर्हित भोजनकरता हूं ॥२०॥ हे ब्रह्मन्! यह भोजन करते२ मुझे बहुतही वर्ष बीतगये न तो मेरा शरीरक्षय होताहै न मेरी तृप्ति होती है॥२१॥ हे भगवन्! आप मुझ महादुःखीको संकटसे छुडाइये कारण की, अगस्त्यजीके विना हमारा कोई छुडाने वाला नहीं है॥२२॥ हे सौम्य द्विजोत्तम! यह सुवर्ण भूषण मैं आपके धारण करनेके निमित्त प्रदान करता हूं आपका मंगलहो आप इसे ग्रहण करके मेरे ऊपर कृपा कीजिये॥२३॥ हे ब्रह्मर्षि! यह सुवर्ण वस्त्र धन भक्ष्य भोजन आभरण आपके निमित्त देता हूं यद्यपि सब पदार्थ विद्यमान हैं परन्तु दान न करनेसे हम इनको भोग नहीं कर सकते ॥२४॥ हे मुनिश्रेष्ठ! यह सब काम और भोगके पदार्थ हम आपको प्रदान करते हैं। हे भगवन्! आप कृपा करके हमें तार

दीजिये ॥२५॥ हे राम ! तब दुःखभरे उस तपस्वीके वाक्य सुनकर उसके तारनेके निमित्त मैंने यह कंकण ग्रहण किया ॥२६॥ हे राजर्षि रामचन्द्र ! ज्योंही मैंने वह कंकण ग्रहण किया त्योंही वह उस सरोवरका मनुष्यशरीर नष्ट होगया ॥२७॥ उसशरीरके नष्ट होतेही यह राजर्षि प्रसन्नतासे हर्षित हो सुखपूर्वक स्वर्ग चला गया ॥२८॥ हे राम! इस चन्द्रके समान कांतिवाले स्वर्गीने यह अद्भुत कंकण मुझे अपने तारनेकेनिमित्त दियाथा ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामष्टसप्ततितमः सर्गः ॥ ७८॥ रामचन्द्र ऐसे अगस्त्यजीको अद्भुत वचन सुनकर गौरव और विस्मयसे फिर प्रश्न करने लगे॥ १ ॥ हे भगवन् ! जिस वनमें वह विदर्भदेशका राजा श्वेत तपस्या करता था वह घोर वन किसकारण मृगपक्षीहीन था ॥ २ ॥ उस मृगजन्तुरहित वनमें वह राजा

तस्याहंस्वर्गिणोवाक्यंश्रुत्वादुःखसमन्वितम् ॥ तारणायोपजग्राहतदाभरणमुत्तमम् ॥२६॥ मयाप्रतिगृहीतेतुतस्मिन्नाभरणेशुभे॥ मानुषःपूर्व कोदेहोराजर्षेर्विननाशह ॥ २७ ॥ प्रणष्टेतुशरीरेऽसौराजर्षिःपरयामुदा॥ तृप्तःप्रमुदितोराजाजगामत्रिदिवंसुखम् ॥ २८ ॥ तेनेदंशक्रतुल्येन दिव्यमाभरणंमम ॥ तस्मिन्निमित्तेकाकुत्स्थदत्तमद्भुतदर्शनम् ॥२९॥ इतिश्रीमद्रामायणेवाल्मी० आदिकाव्येच० सा०उत्तरकांडे अष्टसप्तति तमः सर्गः ॥ ७८ ॥ तदद्भुततमंवाक्यंश्रुत्वागस्त्यस्यराघवः ॥ गौरवाद्विस्मयाच्चैवभूयःप्रष्टुंप्रचक्रमे ॥ १ ॥ भगवंस्तद्वनघोरंतपस्तप्यतियत्र सः ॥ श्वेतोवैदर्भकोराजाकथंतदमृगद्विजम्॥ २ ॥ तद्वनंसकथंराजाशून्यंमनुजवर्जितम् ॥ तपश्चर्तुंप्रविष्टःसश्रोतुमिच्छामितत्त्वतः॥ ३ ॥ रामस्यवचनंश्रुत्वाकौतूहलसमन्वितम् ॥ वाक्यंपरमतेजस्वीवक्तुमेवोपचक्रमे ॥ ४ ॥ पुराकृतयुगेराममनुर्दंडधरःप्रभुः ॥ तस्यपुत्रोमहानासीदिक्ष्वाकुःकुलनंदनः ॥ ५ ॥ तंपुत्रंपूर्वकंराज्येनिक्षिप्यभुविदुर्जयम् ॥ पृथिव्यांराजवंशानांभवकर्तेत्युवाचतम् ॥ ६ ॥ तथैवचप्रतिज्ञातपितुःपुत्रेणराघव ॥ ततःपरमसंतुष्टोमनुःपुत्रमुवाचह ॥७॥ प्रीतोऽस्मिपरमोदारकर्ताचासिनसंशयः ॥ दंडेनचप्रजारक्षमाचदंडमकारणे ॥ ८ ॥

तपस्या करनेको क्यों आया था यह सुननेकी मेरी इच्छा है ॥३॥ तेजस्वी अगस्त्यजी रघुनाथजीके इस प्रकार कौतूहलयुक्त वचनश्रवणकर कहने लगे ॥४॥ हे रामचन्द्र ! आगे सतयुगमें जब मनुजी राजा थे जिनके पुत्र वंशके बढानेवाले बडे विख्यात इक्ष्वाकु हुए ॥५॥ राजा मनुजीनेअपने दुर्जय पुत्रको सिंहासन पर बैठायके कहा कि तुम पृथ्वीके विषे राजवंशोंका विस्तार करो ॥६॥ हेरामचन्द्र ! पुत्रने पिताकी यह आज्ञा अंगीकार की तब मनुजी परम सन्तुष्ट होकर पुत्रसे बोले ॥ ७ ॥ परमोदार पुत्र ! मैं आपके ऊपर प्रसन्न हूं तुम वंशकर्ता होगे प्रजाको दंडसे रक्षा करना परन्तु अकारण कभी दंड न देना ॥ ८ ॥

राजाने अपराधी पुरुषोंकोही जो दंड दिया है वह विधिपूर्वक दिया हुआ दंड राजाको स्वर्गमें ले जाता है ॥९॥ हे महाभुज पुत्र ! इस कारण दंड देनेसे बहुत सावधान रहना धर्मही संसारमें कुछ है ऐसा करनेसे धर्मकी प्राप्ति तुमको होगी ॥१०॥ इस प्रकार मनुजी अपने पुत्रको बहुत प्रकारसे समझायकर प्रसन्न हो समाधिद्वारा आप सनातन ब्रह्मलोकको गये ॥११॥ उनके स्वर्ग जानेपर महापराक्रमी इक्ष्वाकुजी, पुत्र किसप्रकार उत्पन्न किये जायँ यह चिंता करने लगे ॥१२॥ यज्ञ दान तप लक्षणवाले अनेक कर्म करके उन महात्माने देवपुत्रोंके समान सौ पुत्र उत्पन्न किये ॥१३॥ हे रघुनन्दन ! उनमें सबसे छोटा था वह मूढ विद्याहीन हुआ और अपने बडे भाइयोंकी शुश्रूषा उसने नहीं की ॥१४॥ उस अल्प तेजस्वी पुत्रका नाम पिताने दंड रक्खा कारण कि, उन्होंने सोच लिया कि,

अपराधिषुयोदंडःपात्यतेमानवेषुवै ॥ सदंडोविधिवन्मुक्तःस्वर्गंनयतिपार्थिवम् ॥९॥ तस्माद्दंडेमहाबाहोयत्नवान्भवपुत्रक ॥ धर्मोहिपरमोलोकेकुर्वतस्तेभविष्यति॥१०॥ इतितंबहुसंदिश्यमनुःपुत्रंसमाधिना॥ जगामत्रिदिवंहृष्टोब्रह्मलोकंसनातनम् ॥११॥ प्रयातेत्रिदिवेतस्मिन्निक्ष्वाकुरमितप्रभः॥ जनयिष्येकथंपुत्रानितिचिंतापरोऽभवत्॥१२॥कर्मभिर्बहुरूपैश्चतैस्तैर्मनुसुतस्तदा॥जनयामासधर्मात्माशतंदेवसुतोपमान्॥१३॥ तेषामवरजस्तातसर्वेषांरघुनंदन ॥ मूढश्चाकृतविद्यश्चनशुश्रूषतिपूर्वजान् ॥१४॥ नामतस्यचदंडेतिपिताचक्रेऽल्पतेजसः ॥ अवश्यंदंडपतनंशरीरेऽस्यभविष्यति ॥१५॥ अपश्यमानस्तंदेशंघोरंपुत्रस्यराघव ॥ विंध्यशैवलयोर्मध्येराज्यंप्रादादरिंदम ॥१६॥ सदंडस्तत्रराजाभूद्रम्येपर्वतरोधसि ॥ पुरंचाप्रतिमंरामन्यवेशयेदनुत्तमम्॥१७॥ पुरस्यचाकरोन्नाममधुमंतमितिप्रभो ॥ पुरोहितंतूशनसंवरयामाससुव्रतम्॥१८॥ एवंसराजातद्राज्यमकरोत्सपुरोहितः॥प्रहृष्टमनुजाकीर्णंदेवराजोयथादिवि॥१९॥ततःसराजामनुजेंद्रपुत्रःसार्धंचतेनोशनसीतदानीम् ॥ चकाररराज्यंसुमहान्महात्माशक्रोदिवीवोशनसासमेत॥२०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा०उत्तरकांडेएकोनाशीतितमःसर्गः॥७९॥

अवश्य इसके शरीरपर दंडपात होगा ॥१५॥ हेशत्रुसूदन राम ! जैसे यह पुत्रके इनके योग्य अतिघोर देश न देखकर राजाने विंध्याचल और शैवल पर्वतके बीचके देशका राज्य दंडको दिया ॥१६॥ उन रम्यपर्वतके बीच देशोंका वह दंडराजा हुआ, हे रामचन्द्रजी! वहां उसने एक बहुत उत्तम नगर भी वसाया ॥१७॥ हे राम ! उस पुरका नाम मधुमान रक्खा और उस सुव्रत शुक्राचार्यको अपना पुरोहित किया ॥१८॥ इस प्रकारसे वह राज पुरोहितके साथ हृष्टपुष्ट मनुष्योंसे युक्त उस देशका राज्य करने लगे जैसे इन्द्र देवलोकका राज्य करते हैं ॥१९॥ उस समय इक्ष्वाकुके पुत्र महात्मा दंडजी शुक्राचार्यके साथ अपने नगरका ऐसे राज्य करने लगे जिस प्रकारसे इन्द्र देवलोकका राज्य करते हैं ॥२०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आ० उत्तरकांडे भाषायामेकोनाशीतितमः सर्गः ॥ ७९ ॥

कुम्भयोनि महर्षि अगस्त्यजी रामचन्द्रसे इसप्रकार कहकर इसी कथाके संबन्धमें विशेष कहने लगे ॥ १ ॥ हे राम ! इसप्रकार वह चतुरतासे युक्त होकर राजा दण्ड बहुत वर्षोंतक निष्कंटक राज्य उस देशका करते रहे ॥ २ ॥ कुछ दिनोंके उपरान्त एक समय मनोहर चैत्रमासमें राजा दण्ड शुक्राचार्यके आश्रममें आया ॥३॥ वहां दंडने वनमें विहार करती परमसुन्दरी शुक्राचार्यकी कन्या देखी ॥ ४ ॥ वह दुर्मति उसे देखतेही कामबाणसे पीडित हो व्याकुलतासे उस कन्याके निकट जाकर कहने लगा ॥५॥ हे सुश्रोणि! तुम कौन हो ? कहांसे आई हो ? किसकी कन्या हो ? हे शुभानने ! यह सब कुछ कामसे पीडित होकर तुमसे पूँछता हूं ॥ ६ ॥ उस महामदनोन्मत्त कामीके ऐसा कहनेपर शुक्राचार्यकी कन्या नम्रतासे कहने लगी ॥ ७ ॥ हे राजेन्द्र ! हम अक्लिष्टकर्मा भार्गवकी ज्येष्ठ

एतदाख्यायरामायमहर्षिःकुंभसंभवः ॥ अस्यामेवापरंवाक्यंकथायामुपचक्रमे ॥१॥ ततःसदंडःकाकुत्स्थबहुवर्षगणायुतम् ॥ अकरोत्तत्रदांतात्माराज्यंनिहतकंटकम् ॥ २ ॥ अथकालेतुकस्मिंश्चिद्राजभार्गवमाश्रमम् ॥ रमणीयमुपाक्रामच्चैत्रेमासिमनोरमे ॥ ३ ॥ तत्रभार्गवकन्यांसरूपेणाप्रतिमांभुवि ॥ विचरंतींवनोद्देशेदंडोऽपश्यदनुत्तमाम् ॥ ४ ॥ सदृष्ट्वातांसदुर्मेधाअनंगशरपीडितः ॥ अभिगम्यसुसंविग्नःकन्यांवचनमब्रवीत् ॥५॥ कुतस्त्वमसिसुश्रोणिकस्यवासिसुताशुभे ॥ पीडितोऽहमनंगेनपृच्छामित्वांशुभानने ॥६॥ तस्यत्वेवंब्रुवाणस्यमोहोन्मत्तस्यकामिनः ॥ भार्गवीप्रत्युवाचेदंवचःसानुनयंत्विदम् ॥७॥ भार्गवस्यसुतांविद्धिदेवस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ अरजांनामराजेंद्रज्येष्ठामाश्रमवासिनीम् ॥८॥ मामांस्पृशबलाद्राजन्कन्यापितृवशाह्यहम् ॥ गुरुःपितामेराजेंद्रत्वंचशिष्योमहात्मनः ॥९॥ व्यसनंसुमहत्क्रुद्धःसतेदद्यान्महातपाः ॥ यदिवान्यन्मयाकार्यंधर्मदृष्टनसत्पथा ॥१०॥ वरयस्वनरश्रेष्ठपितरंमेमहाद्युतिम ॥ अन्यथातुफलंतुभ्यंभवेद्धोराभिसंहितम् ॥११॥ क्रोधेनहिपितामेऽसौत्रैलोक्यमपिनिर्दहेत् ॥ दास्यतेचानवद्यांगतवमायाचितःपिता ॥ १२ ॥

कन्या हैं, अरजा हमारा नाम है और हम इसी आश्रममें रहती हैं ॥८॥ हे राजन् ! आप मुझे कन्याको बलसे मत छूइये कारण कि मैं पिताके वशमें हूं हे राजेन्द्र ! मेरे पिता तुम्हारे गुरु भी हैं और तुम उन महात्माके शिष्य हो ॥ ९ ॥ यदि तुम बलसे हमको छुओगे तो हमारे पिता तुमपर महाक्रोध प्रकाश करेंगे यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो मुझे धर्ममार्गसे वरण करो ॥ १० ॥ हे नरश्रेष्ठ ! महाद्युतिमान् पिताजीके पास जाकर तुम मुझे मांगो अन्यथा करनेसे तुमको महाघोर फल प्राप्त होगा ॥ ११ ॥ क्योंकि क्रोध करके हमारे पिता त्रिलोकको भी नष्ट कर सकते हैं। हे निन्दारहित ! कदाचित् याचना करनेसे हमारे पिता हमें तुमको देदें ॥ १२ ॥

जब अरजाने ऐसा कहा तो वह दंड कामसे पीडित हो हाथ जोडकरकहने लगा॥ १३॥ हेसुश्रोणि! अब मेरे ऊपर प्रसन्न हो, वृथा कालक्षेप मत करो! हेवरानने। तुम्हारे निमित्त अब मेरे प्राण पयान करतेहैं॥ १४॥ तुमको प्राप्तहो फिर चाहे मरण हो जाय या कठिन पाप हो परन्तु हे भीरु! अब तो विह्वल मुझ अपने भक्तको तुमभजो॥ १५॥ ऐसा कहकर उस बली दंडने दोनों हाथोंसे कन्याको आलिंगन किया। यद्यपि उसने पलायनकी इच्छा करी परन्तु वह उसे गिराकर रमण करने लगा॥ १६॥ वह राजा इस महाघोर अनर्थको करके शीघ्रतासे अपने मधुमान नगरको चलाआया॥ १७॥ यहांअरजा भी रोती २ अपने आश्रमके निकट खडी हो व्याकुलतासे देवता के समान अपने पिताको देखने लगी॥ १८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामशीतितमः सर्गः॥८०॥ महाप्रतापी देवर्षि शुक्राचार्यजी किसी शिष्य

एवंब्रुवाणामरजांदंडःकामवशंगतः ॥ प्रत्युवाचमदोन्मत्तःशिरस्याधायचांजलिम्॥१३॥ प्रसादंकुरुसुश्रोणिनकालंक्षेप्तुमर्हसि ॥ त्वत्कृतेहिममप्राणाविदीर्यंतेवरानने ॥१४॥ त्वांप्राप्यतुवधोवापिपापंवापिसुदारुणम् ॥ भक्तंभजस्वमांभीरुभजमानंसुविह्वलम् ॥ १५ ॥ एवमुक्त्वातुतांकन्यांदोर्भ्यांप्राप्यबलाद्बली ॥ विस्फुरंतींयथाकाममैथुनायोपचक्रमे ॥१६॥ तमनर्थंमहाघोरंदंडःकृत्वासुदारुणम् ॥ नगरंप्रययावाशुमधुमंतमनुत्तमम् ॥१७॥ अरजापिरुदंतीसाआश्रमस्याविदूरतः ॥ प्रतीक्षतेसुसंत्रस्तापितरंदेवसन्निभम् ॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०उत्तरकांडे अशीतितमःसर्गः॥८०॥ समुहूर्तादुपश्रुत्यदेवर्षिरमितप्रभः ॥ स्वमाश्रमंशिष्यवृतःक्षुधार्तःसंन्यवर्तत ॥ १ ॥ सोऽपश्यदरजांदीनांरजसासमभिप्लुताम् ॥ ज्योत्स्नामिवग्रहग्रस्तांप्रत्यूषेनविराजतीम् ॥२॥ तस्यरोषःसमभवत्क्षुधार्तस्यविशेषतः ॥ निर्दहन्निवलोकांस्त्रीञ्छिष्यांश्चेतदुवाचह ॥३॥ पश्यध्वविपरीतस्यदंडस्याविदितात्मनः ॥ विपत्तिंघोरसंकाशांक्रुद्धादग्निशिखामिव॥४॥ क्षयोऽस्यदुर्मतेःप्राप्तःसानुगस्यमहात्मनः ॥ यःप्रदीप्तांहुताशस्यशिखांवैस्प्रष्टुमर्हति ॥ ५ ॥ यस्मात्सकृतवान्पापमीदृशंघोरसंहितम् ॥ तस्मात्प्राप्स्यतिदुर्मेधाःफलंपापस्यकर्मणः ॥ ६ ॥

से अरजाका वृत्तान्त श्रवणकर शिष्योंसहित भूखेही अपने आश्रममें प्राप्त हुए॥ १॥ उन्होंने महादीन धूरिधूसररंग, रुदन करते ग्रहण लगे हुए प्रातःकालके समान अशोभित अरजाको देखा॥ २॥ एक तो दारुण वृत्तान्त दूसरे क्षुधित होनेके कारण ऋषिको महाक्रोध हुआ त्रिलोकीको भस्म करते हुएसे अपने शिष्योंसे बोले॥ ३॥ तुम उस विपरीत करनेवाले दुरात्मादंडके ऊपर क्रोधितअग्निशिखाके समान आई घोरविपत्तिको देखो॥ ४॥ इस दुरात्माका अनुचरोंसहित नाश प्राप्त हुआ है कि, जलती हुई अग्नि की सिखाके छूनेका इसने साहस किया है ॥५॥ जिस कारण कि, इस पापीने ऐसा घोर कर्म किया हैउससे यह दुष्ट इस अपने कुत्सित कर्मका शीघ्र फल

पावेगा ॥ ६ ॥ यह दुर्मति राजा सात दिनमें पुत्र बल वाहन सहित इस पापके कारणसे नाश हो जायगा ॥ ७ ॥ इस दुष्ट राजाके सौ योजनतक चारों ओर राज्यको इन्द्रजी महाधूरि वर्षाकर भस्म कर डालेंगे ॥ ८ ॥ जितने यहांके स्थावर जंगम जीव हैं जो चर अचर हैं वे सब धूरिके वर्षनेसे नाश हो जायँगे ॥ ९ ॥ जितना यह दंडका राज्य है सात दिन तक निरंतर धूरि वर्षनेसे अलक्षित हो जायगा कहीं चिह्नभी न रहेगा ॥ १० ॥ इस प्रकार क्रोधसे लाल नेत्र कर शुक्रजीने उस आश्रमके वासियोंसे कहा कि, तुम इस देशको छोड शीघ्रतासे दूसरे स्थानोंमें चले जाओ ॥११॥ शुक्रजीके यह वचन सुन उस आश्रमके निवासी जन वहांसे उठकर दूसरे देशोंको शीघ्रतासे चले गये ॥ १२ ॥ इसप्रकार आश्रमवासियोंसे कहकर शुक्रजीने अरजासे कहा हे दुष्टबुद्धि! तू इसी स्थान

सप्तरात्रेणराजासौसपुत्रबलवाहनः॥पापकर्मसमाचारीवधंप्राप्स्यतिदुर्मतिः॥७॥समंताद्योजनशतंविषयंचास्यदुर्मतेः॥धक्ष्यतेपांसुवर्षेणमहता पाकशासनः॥८॥ सर्वसत्त्वानियानीहस्थावराणिचराणिच॥ महतापांसुवर्षेणविलयंसर्वतोऽगमन्॥९॥ दंडस्यविषयोयावत्तावत्सर्वसमुच्छ्रयम्॥ पांसुवर्षमिवालक्ष्यंसप्तरात्रंभविष्यति॥१०॥ इत्युक्त्वाक्रोधताम्राक्षस्तमाश्रमनिवासिनम्॥ जनंजनपदांतेषुस्थीयंतामितिचाब्रवीत् ॥११॥ श्रुत्वातूशनसोवाक्यंसोश्रमावसथोजनः॥ निष्क्रांतोविषयात्तस्मात्स्थानंचक्रेऽथबह्यतः ॥१२॥ सतथोक्त्वामुनिजनमरजामिदमब्रवीत्॥ इहैवव सदुर्मेधेआश्रमेसुसमाहिता॥१३॥ इदंयोजनपर्यंतंसरः सुरुचिरप्रभम्॥ अरजेविज्वराभुंक्ष्वकालश्चात्रप्रतीक्ष्यताम् ॥१४॥ त्वत्समीपेचयेसत्त्वा वासमेष्यंतितांनिशाम्॥ अवध्याःपांसुवर्षेणतेभविष्यंतिनित्यदा॥१५॥ श्रुत्वानियोगंब्रह्मर्षेःसाऽरजाभार्गवीतदा॥ तथेतिपितरंप्राहभार्गवंभृश दुःखिता ॥ १६॥ इत्युक्त्वाभार्गवोवासमन्यत्रसमकारयत् ॥ तच्चराज्यंनरेंद्रस्यसभृत्यबलवाहनम् ॥ १७ ॥ सप्ताहाद्भस्मसाद्भूतंयथोक्तंब्रह्मवा दिना ॥ तस्यासौदंडविषयोविंध्यशैवलयोर्नृप ॥१८॥ शप्तोब्रह्मर्षिणातेनवैधर्म्येसहितेकृते ॥ ततःप्रभृतिकाकुत्स्थदंडकारण्यमुच्यते ॥ १९॥

पर एकाग्रचित हो निवासकर ॥१३॥ हे अरजे ! यह जो एक योजनका कांतिमान् सरोवर इस स्थानमें हैं यहां स्थित हो अपने कर्मोंका फल भोगती कालकी प्रतीक्षा कर ॥१४॥ उस सात रात्रियोंमें जो पशुपक्षी तेरे समीप वास करेंगे उनका नाश नहीं होगा वे धूरि वर्षनेसे नहीं दबेंगे ॥ १५ ॥ पिताजीके कहे हुए वचन श्रवण कर अरजाने महादुःखी होकर उनकी आज्ञा तत्काल स्वीकार करी ॥ १६ ॥ यह कहकर शुक्रजी दूसरे स्थानमें वास करनेको चले गये और वह भृत्य वाहनसहित राजाका राज्य ॥ १७ ॥ जैसा ब्रह्मवादी ऋषिने कहा था उसीके अनुसार सात दिनमें सब भस्म हो गया । हे राम ! यह विन्ध्याचल और शैवल पर्वतके बीचमें उसीका राज्य था ॥ १८ ॥ ब्रह्मर्षिके शाप देनेसे उसे यह पापका फल मिला, हे रामचन्द्र ! उसी दिनसे इसदेशका नाम दण्ड

कारण्य विख्यात है ॥ १९ ॥ हे रामचन्द्र ! तपस्वियोंकेवास करनेसे यह जनस्थान कहलाया हे राघव ! जो कुछ आपने पूँछा वह सब वर्णन किया ॥२०॥
हे वीर ! अब संध्योपासनका समय आगया कारण कि यह सब ऋषि ! जलसे पूर्ण घडे लिये हुए सब ओरसे ॥२१॥ हे नरसिंह स्नानादि करके आदित्य
भगवान्‌की उपासना करते हैं इस कारण चलकर इन सत्यवादी ब्राह्मणोंके संग बैठ कर आचमन आदि करो कारण कि अब सूर्य भगवान् अस्त होगये ॥२२॥
इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामेकाशीतितमः सर्गः ॥८१॥ अगस्त्यजीके वचन सुनकर रघुनाथजी अप्सराओंसे सेवित उस निर्मल सरोवरके
निकट संध्यावंदन करने चले ॥ १ ॥ तहां जाय जलस्पर्शकर सायंसंध्यासे निश्चिन्तहोकर रघुनाथ महात्मा अगस्त्यजीके आश्रममें चले आये ॥२॥ अगस्त्य

तपस्विनः स्थिताह्यत्रजनस्थानमतोऽभवत् ॥ एतत्तेसर्वमाख्यातंयन्मांपृच्छसिराघव ॥ ॥२०॥ संध्यामुपासितुंवीरसमयोह्यतिवर्तते ॥ एतेम
हर्षयः सर्वेपूर्णकुम्भाः समंततः ॥ २१ ॥ कृतोदकानरव्याघ्र आदित्यंपर्युपासते ॥ सतैर्ब्राह्मणमभ्यस्तंसहितैर्ब्रह्मवित्तमैः ॥ रविरस्तंगतोरामग
च्छोदकमुपस्पृश ॥२२॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे एकाशीतितमः सर्गः ॥ ८१ ॥ ऋषेर्वचन
माज्ञायरामः संध्यामुपासितुम् ॥ अपाक्रामत्सरः पुण्यमप्सरोगणसेवितम् ॥ १ ॥ तत्रोदकमुपस्पृश्यसंध्यामन्वास्यपश्चिमाम् ॥ आश्रमंप्रा
विशद्रामः कुंभयोनेर्महात्मनः ॥ २ ॥ तस्यागस्त्योबहुगुणंकंदमूलंतथौषधम् ॥ शाल्यादीनिपवित्राणिभोजनार्थमकल्पयत् ॥ ३ ॥ सभुक्तवा
न्नरश्रेष्ठस्तदन्नममृतोपमम् ॥ प्रीतश्चपरितुष्टश्चतांरात्रिंसमुपाविशत् ॥ ४ ॥ प्रभातेकाल्यमुत्थायकृत्वाह्निकमरिंदमः ॥ ऋषिंसमुपचक्रामगम
नायरघूत्तमः ॥ ५ ॥ अभिवाद्याब्रवीद्रामोमहर्षिंकुंभसंभवम् ॥ आपृच्छेस्वाश्रमंगंतुमामनुज्ञातुमर्हसि ॥ ६ ॥ धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि
दर्शनेनमहात्मनः ॥ द्रष्टुंचैवागमिष्यामिपावनार्थमहात्मनः ॥ ७ ॥

जीने रामचन्द्रके भोजन करनेके निमित्त अनेक प्रकारके स्वादिष्ट कन्दमूल फल औषधी चावल आदि पवित्र सामग्री सहित दिये॥३॥ वह नरश्रेष्ठ रामचन्द्रने
अगस्त्यजीके दिये अमृतके समान पदार्थोंको भोजनकर प्रसन्नतासे वह रात्रि उसी आश्रममें बिताई ॥४॥ प्रातःकालही उठ और पूर्वकालके कृत्यसे निश्चिन्त हो
बिदा होनेके निमित्त रघुनाथजी अगस्त्यजीके पास आये ॥५॥ रामचन्द्र प्रणाम करके अगस्त्यजीसे कहने लगे हे भगवन् ! अब मुझे स्थानपर जानेकी आज्ञा
दीजिये ॥६॥ मैं धन्य हूं आपने मेरे ऊपर बडा अनुग्रह किया आप महात्माके दर्शनसे मैं कृतार्थ और पवित्रहोनेकेनिमित्त आपके निकट मैं कभी २ आया

करूंगा ॥७॥ रामचन्द्रके ऐसे अद्भुत वचन सुनकर धर्मके जानने वाले तपोधन अगस्त्यजी परमप्रसन्न होकर बोले ॥ ८ ॥ हे रघुनंदन! यह सुन्दर अक्षरोंसे युक्त तुम्हारे वचन बडे अद्भुत हैं आप संपूर्ण प्राणियोंके पवित्र करनेहारे हैं ॥९॥ हे रामचन्द्रजी ! जो कोई एक एक मुहूर्तको भी आपका दर्शन करते हैं वह सब लोकोंको पवित्र करते हुए स्वर्गमें गमनकर देवताओंसे पूजित होते हैं ॥ १० ॥ और जो प्राणी पृथ्वीमें आपको क्रूरदृष्टिसे देखते हैं वह यमदंडसे ताडित होकर नरकको जाते हैं ॥ ११ ॥ हे रघुनाथजी ! संपूर्ण प्राणियोंके पवित्र करनेहारे आप इस प्रकार हैं हे राघव ! पृथ्वीमें जो कोई आपके चरित्र वर्णन करेंगे वह सिद्ध हो जायँगे ॥ १२ ॥ आप अपने स्थानपर निर्भय पधारिये मार्ग आपको मंगलकारी हो धर्मपूर्वक राज्यपालन कीजिये कारणकी आपही

तथावदतिकाकुत्स्थवाक्यमद्भुतदर्शनम् ॥ उवाचपरमप्रीतोधर्मनेत्रतपोधनः ॥ ८ ॥ अत्यद्भुतमिदंवक्यंतवारामशुभाक्षरम् ॥ पावनःसर्वभूता नांत्वमेवरघुनंदन ॥ ९ ॥ मुहूर्तमपिरामत्वांयेनुपश्यंतिकेचन ॥ पाविताःस्वर्गभूताश्चपूज्यवस्तेत्रिदिवेश्वरैः ॥१०॥ येचत्वांघोरचक्षुर्भिःपश्य तिप्राणिनोभुवि ॥ हतास्तेयमदंडेनसद्योनिरयगामिनः ॥ ११ ॥ ईदृशस्त्वंरघुश्रेष्ठपावनःसर्वदेहिनाम् ॥ भुवित्वांकथयंतोहिसिद्धिमेष्यंति राघव ॥ १२ ॥ त्वंगच्छारिष्टमव्यग्रःपंथानमकुतोभयम् ॥ प्रशाधिराज्यंधर्मेणगतिहिजगतोभवान् ॥ १३ ॥ एवमुक्तस्तुमुनिनाप्रांजलिःप्रग्र होनृपः ॥ अभ्यवादयतप्राज्ञस्तमृषिंसत्यशीलिनम् ॥ १४ ॥ अभिवाद्यऋषिश्रेष्ठंतांश्चसर्वांस्तपोधनान् ॥ अध्यारोहत्तदव्यग्रःपुष्पकंहेमभूषि तम् ॥ १५ ॥ तंप्रयांतंमुनिगणाआशीर्वादैःसमंततः ॥ अपूजयन्महेंद्राभंसहस्राक्षमिवामराः ॥ १६ ॥ स्वस्थःसदृद्दशेरामःपुष्पकेहेमभूषिते ॥ शशीमेघसमीपस्थोयथाजलधरागमे ॥१७॥ ततोऽर्धदिवसेप्राप्तेपूज्यमानस्ततस्ततः ॥ अयोध्यांप्राप्यकाकुत्स्थोमध्यकक्षामवातरत् ॥१८॥ ततोविसृज्यरुचिरंपुष्पकंकामगामिनम् ॥ विसर्जयित्वागच्छेतिस्वस्तितेऽस्त्वितिचप्रभुः ॥ १९ ॥

जगत्की गति हो ॥ १३ ॥ जब मुनिराजने ऐसा कहा तो बुद्धिमान् रामचन्द्रने सत्यशीलवान् ऋषिको कर जोडकर प्रणाम किया ॥ १४ ॥ इस प्रकार ऋषिश्रेष्ठ अगस्त्य तथा और सब मुनियोंको अभिवादन कर रघुनाथजी स्वस्थचित्तसे सुवर्णभूषित विमानमें चढे ॥ १५॥ जिस प्रकार इन्द्रकी देवता पूजा करते हैं इसी प्रकारसे रघुनाथजीको जाते देख मुनिजन आशीर्वादोंसे रघुनाथजीकी पूजा करने लगे ॥ १६ ॥ सुवर्णभूषित पुष्पक विमानमें बैठे आकाशमार्गमें रघु नाथजी ऐसे शोभितहुए जैसे वर्षाकालीन मेघके निकट चन्द्रमा शोभित होता है ॥ १७ ॥ इस प्रकार रघुनाथजी मार्गमें अनेक स्थलोंमें पूजित हो मध्याह्न समय अयोध्यामें प्राप्त और बीचकी पौरीमें उतरे ॥ १८ ॥ तब प्रभुने श्रेष्ठ कामगामी विमानसे कहा कि तुम्हारा मंगल हो अब तुम कुबेरजीके स्थानमें

जाओ ॥ १९ ॥ तब रघुनाथजी पुष्पकको बिदा दे उस स्थानके द्वारपालसे बोले उन श्रेष्ठ विक्रमी भरत और लक्ष्मणजीके निकट जाकर हमारा आना निवेदन करो और सब नगरमें भी हमारे आनेका समाचार कह दो ॥२०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० उत्तरकांडे भाषायां द्व्यशीतितमः सर्गः॥ ८२ ॥ सरलकर्मकारी रघुनाथजीके वचन श्रवणकर द्वारपाल भरत और लक्ष्मणको बुलालाया और रघुनाथजीसे उनका आना निवेदन किया ॥ १ ॥ भरत लक्ष्मण जीने रघुनाथजीके दर्शन किये और रघुनाथजीने देखतेही उन दोनोंको हृदयसे लगा कर कहा॥२॥ मैंने ब्राह्मणका संपूर्ण कार्य किया परन्तु अब एक धर्मसेतु अर्थात् राजसुयादि यज्ञ करनेकी इच्छा है ॥ ३ ॥ मेरे मतमें धर्मसेतु अक्षय अव्ययधर्मका बढानेहाराऔर सब पापोंका नाश करने हारा है ॥ ४ ॥ अपने

कक्षांतरस्थितंक्षिप्रंद्वाःस्थंरामोऽब्रवीद्वचः ॥ लक्ष्मणंभरतंचैवगत्वातौलघुविक्रमौ॥ ममागमनमाख्यायशब्दापयतमाचिरम् ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च० सा० उत्तरकांडे द्व्यशी तितमःसर्गः ॥ ८२ ॥ तच्छ्रुत्वाभाषितंतस्यरामस्याक्लिष्टकर्मणः ॥ द्वाःस्थःकुमारावाहूयराघवायन्यवेदयत् ॥ १ ॥ दृष्ट्वातुराघवःप्राप्तावुभौभरतलक्ष्मणौ ॥ परिष्वज्यततोरामोवाक्यमेतदुवाचह ॥ २ ॥ कृतंमयायथातथ्यंद्विजकार्यमनुत्तमम् ॥ धर्मसेतुमथोभूयःकर्तुमिच्छामिराघवौ ॥ ३ ॥ अक्षयश्चाव्ययश्चैवधर्मसेतुमतोमम् ॥ धर्मप्रवचनंचैवसर्वपापप्रणाशनम् ॥ ४ ॥ युवाभ्यामात्मभूताभ्यांराजसूयमनुत्तमम् ॥ सहितोयष्टुमिच्छामितत्रधर्मस्तुशाश्वतः ॥ ५ ॥ इष्ट्वातुराजसूयेनमित्रःशत्रुनिबर्हणः ॥ सुहुतेनसुयज्ञेनवरुणत्वमुपागमत् ॥ ६ ॥ सोमश्चराजसूयेनइष्ट्वाधर्मेणधर्मवित् ॥ प्राप्तश्चसर्वलोकेषुकीर्तिस्थानंचशाश्वतम् ॥७॥ अस्मिन्नहनियच्छ्रेयश्चिंत्यतांतन्मयासह ॥ हितंचायतियुक्तंचप्रयतौवक्तुमर्हथः ॥ ८ ॥ श्रुत्वातुराघवस्यैतद्वाक्यंवाक्यविशारदः ॥ भरतःप्रांजलिर्भूत्वावाक्यमेतदुवाचह ॥ ९ ॥ त्वयिधर्मःपरःसाधोत्वयिसर्वावसुन्धरा ॥ प्रतिष्ठितामहाबाहोयशश्चामितविक्रम ॥ १० ॥

तुम दोनों भाइयोंकी सहायतासे मैं यज्ञश्रेष्ठ राजसूयका अनुष्ठान किया चाहता हूं इसके करनेसे अक्षयधर्म होता है ॥ ५ ॥ शत्रुतापन मित्रजी सम्यक् प्रकारसे राजसूय यज्ञका अनुष्ठान कर वरणकी पदवीको प्राप्त हुए हैं ॥ ६ ॥ धर्मात्मा सोमभी धर्मपूर्वक राजसूय यज्ञ करके अत्यन्त कीर्ति और अक्षय स्थानको प्राप्त हुए ॥ ७ ॥ सो आजहीके दिन तुम दोनों इस विषयमें सम्मति करके जो हितकारक और उत्तर कालमें भी सुखदायक वार्ता हो सो कहो ॥ ८ ॥ बोलनेमें चतुर भरतजी रघुनाथजीके यह वचन सुन हाथ जोडकर कहने लगे ॥ ९ ॥ हे अमित पराक्रमी महाभुज रामचन्द्रजी ! हे श्रेष्ठ ! ! आपहीमें संपूर्ण

धर्म यश और संपूर्ण पृथ्वी प्रतिष्ठित है ॥ १० ॥ जिस प्रकारसे अमरगण प्रजापतिको अवलोकन करते हैं इसी प्रकारसे हम दोनों प्रजालोक आप महात्मा को देखते हैं ॥ ११ ॥ सब पुत्रके सदृश आपको पिताके समान अवलोकन करते हैं हे महाबली रघुनाथजी ! आप संपूर्ण प्राणियोंकी गति होनेसे पृथ्वीके समान हैं ॥१२॥ जिसमें अनेक पृथ्वीके राजवंशोंके क्षय होनेकी संभावना है हे रघुनाथजी ! आप उस राजसूय यज्ञका करना क्यों चाहतेहैं॥१३॥ हे राजन् ! पृथ्वीमें जितने पराक्रमी पुरुष हैं उनका आपके क्रोधसे अवश्य नाश होजायगा ॥१४॥ इसकारण हे पुरुषसिंह ! हे अतुलपराक्रम ! आपके गुणोंसे सब वशमें हैं आप पृथ्वीके वीरोंका नाश न कीजिये ॥ १५ ॥ सत्यपराक्रमी रामचन्द्रजी भरतजीके यह अमृतमय वचन सुनकर बहुत प्रसन्न हुए ॥ १६ ॥ और कैकेयीके

महीपालाश्चसर्वेत्वांप्रजापतिमिवामराः ॥ निरीक्षतेमहात्मानंलोकनाथंयथावयम् ॥११॥ पुत्राश्चपितृवद्राजन्पश्यंतित्वांमहाबल ॥ पृथिव्या गतिभूतोसिप्राऽणिनामपिराघव॥ १२ ॥ सत्वमेवंविधंयज्ञमाहर्तासिकथंनृप ॥ पृथिव्यांराजवंशानांविनाशोयत्रदृश्यते ॥ १३ ॥ पृथिव्यांये चपुरुषाराजन्पौरुषमागताः ॥ सर्वेषांभवितातत्रसंक्षयःसर्वकोपजः ॥ १४ ॥सर्वपुरुषशार्दूलगुणैरतुलविक्रमः ॥ पृथिवींनार्हसेहंतुंवशेहितव वर्तते ॥ १५ ॥ भरतस्यतुतद्वाक्यंश्रुत्वाऽमृतमयंयथा॥प्रहर्षमतुलंलेभेरामःसत्यपराक्रमः ॥१६॥ उवाचचशुभंवाक्यंकैकेय्यानंदवर्धनम् ॥ प्रीतोऽस्मिपरितुष्टोऽस्मितवाद्यवचनेऽनघ॥ १७ ॥ इदंवचनमक्लीबंत्वयाधर्मसमागतम्॥व्याहृतंपुरुषव्याघ्रपृथिव्याःपरिपालनम् ॥ १८ ॥ एष्यदस्मदभिप्रायाद्राजसूयात्क्रतूत्तमात् ॥ निवर्तयामिधर्मज्ञतवसुव्याहृतेनच ॥ १९ ॥ लोकपीडाकरंकर्मनकर्तव्यंविचक्षणैः ॥ बालानांतु शुभंवाक्यंग्राह्यंलक्ष्मणपूर्वज ॥ तस्माच्छृणोमितेवाक्यंसाधुयुक्तंमहाबल ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे त्र्यशीतितमः सर्ग ॥ ८३ ॥

आनंद बढानेवाले भरतजीसे यह शुभ वचन बोले, हे पापरहित ! मैं आपके वचनसे प्रसन्न और सन्तुष्ट हूं ॥१७॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! यह तुम्हारे वचन वीरतायुक्त धर्मसम्मत और पृथ्वीके पालन करनेवाले हैं ॥ १८ ॥ हे धर्मज्ञ ! इस तुम्हारे वचनसे अब हम इस उत्तम राजसूय यज्ञसे अपनाचित्त हटाय लेते हैं ॥ १९ ॥ क्योंकि चतुरपुरुषोंको लोकोंका दुःख देनेवाला कर्म नहीं करना चाहिये हे भरतजी ! युक्तिसंगत वचन तो बालकोंके भी मानने चाहिये इस कारण हे महाबली ! हमने साधुतायुक्त तुम्हारे वचन ग्रहण किये ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां त्र्यशीतितमःसर्गः ॥८३॥

जब महात्मा भरतजीसे रघुनाथजीने ऐसा कहा तो लक्ष्मणजी रघुनाथजीसे मनोहर वचन बोले ॥ १ ॥ हे रघुनंदन ! सम्पूर्ण पापोंसे पवित्र करनेहारा अश्वमेध यज्ञ है हे दुर्धर्ष ! यदि आपकी इच्छाहो तो यही यज्ञ कीजिये ॥२॥ ऐसा सुना है कि, पूर्वकालमें महात्मा इन्द्रजीको ब्रह्महत्या लगी थी वह इसी अश्वमेध यज्ञ करनेसे पवित्र हुए थे ॥ ३ ॥ हे महाबाहो ! पूर्वकालमें देवासुर संग्राममें वृत्रनाम वाला लोकपूजित एक दैत्य था ॥४॥ यह सौ योजनका स्थूल और तीन सौ योजनका ऊंचा था यह अभिमानसे त्रिलोकीको अपने वशमें समझकर संतोषसे देखा करता था ॥ ५ ॥ यह धर्मज्ञ कृतकर्मा और बडा बुद्धिमान् था, धर्मयुक्त सम्पूर्ण देश और पृथ्वीका पालन करता था ॥६॥ उसके राज्यमें पृथ्वी काम धेनुके समान थी सब मूल फल स्वादिष्ठ उत्पन्न होते थे ॥७॥ विना हल चलाये

तथोक्तवतिरामेतुभरतेचमहात्मनि ॥ लक्ष्मणोऽथशुभंवाक्यमुवाचरघुनंदनम् ॥ १ ॥ अश्वमेधोमहायज्ञःपावनःसर्वपाप्मनाम् ॥ पावनस्तवदुधर्षोरोचतांरघुनंदन ॥ २ ॥ श्रूयतेहिपुरावृत्तंवासवेसुमहात्मनि ॥ ब्रह्महत्यावृतःशक्रोहयमेधेनपावितः ॥ ३ ॥ पुराकिलमहाबाहोदेवासुरसमागमे ॥ वृत्रोनाममहानासीद्दैतेयोलोकसंमतः ॥ ४ ॥ विस्तीर्णोयोजनशतमुच्छ्रितस्त्रिगुणंततः ॥ अनुरागेणलोकांस्त्रीन्स्नेहात्पश्यतिसर्वतः ॥५॥ धर्मज्ञश्चकृतज्ञश्चबुद्ध्याचपतिनिष्ठितः ॥ शशासपृथिवींस्फीतांधर्मेणसुसमाहितः ॥ ६ ॥ तस्मिन्प्रशासतितदासुर्वकामदुघामही रसवंतिप्रसूनानिमूलानिचफलानिच ॥ ७ ॥ अकृष्टपच्यापृथिवीसुसंपन्नामहात्मनः ॥ सराज्यंतादृशंभुंक्तेस्फीतमद्भुतदर्शनम् ॥८॥ तस्यबुद्धिःसमुत्पन्ना तपःकुर्यामनुत्तमम् ॥ तपोहिपरंश्रेयःसंमोहमितरत्सुखम् ॥ ९ ॥ सनिक्षिप्यसुतंज्येष्ठंपौरेषुमधुरेश्वरम् ॥ तपउग्रंसमातिष्ठत्तापयन्सर्वदेवताः ॥ १० ॥ तपस्तप्यतिवृत्रेतुवासवःपरमार्तवत् ॥ विष्णुंसमुपसंक्रम्यवाक्यमेतदुवाचह ॥ ११ ॥ तपस्यतामहाबाहोलोकाःसर्वेविनिर्जिताः ॥ बलवान्सहिधर्मात्मानैनंशक्ष्यामिशासितुम् ॥ १२ ॥ यद्यसौतपआतिष्ठेद्भूयएवसुरेश्वर ॥ यावल्लोकाधरिष्यंतितावदस्यवशानुगाः ॥ १३ ॥

पृथ्वीमें अन्न उत्पन्न होता था इसप्रकारसे बहुतकालतक वह उत्तम प्रकारसे राज्य करता रहा ॥ ८ ॥ राज्य करते २ उसकी बुद्धिमें यह बातसमाई कि, तपस्या करूं क्योंकि तपही कल्याणकारक है और सुख तो मोह देनेवाले हैं॥९॥ यह विचार कर मधुरेश्वर अपने बडे पुत्रको राज्य दे सम्पूर्ण देवताओंको भयदायक तपस्या करने लगा ॥ १० ॥ जब वृत्रासुर तप करनेलगा तब इन्द्र महादुःखी हो विष्णु भगवान्के पास जाकर कहनेलगे ॥ ११ ॥ हे भगवन् ! इसवृत्रासुरने तपसे त्रिलोकी जीत ली एक तो यह बली दूसरे धर्मात्मा इससे हम इसको परास्त नहीं करसकेंगे॥१२॥ अब यह जो और भी तपस्या करतारहेगा तो सम्पूर्ण

लोक इसके वशमें होजायँगे ॥ १३ ॥ हे देवताओंके ईश्वर ! ऐसे वृत्रासुरकी और अभीतक आपने दृष्टि नहीं की, जिससमय आप क्रोध करेंगे तो यह क्षणमात्रमें न रहेगा ॥ १४ ॥ हे विष्णु भगवन् ! जबसे इसने आपमें प्रीति की है तभीसे यह संसारका ईश्वर होगया है ॥ १५ ॥ हे भगवन् ! इन सबलोगोंके ऊपर आप प्रसन्न हूजिये आपके करनेसे सब जगत् शांत और रोगरहित हो जायगा ॥ १६ ॥ हे विष्णो ! यह सम्पूर्ण देवता आपहीको निरीक्षण करते हैं इस कारण वृत्रासुरके मारनेमें हमारी सहायता कीजिये कारण कि यह दैत्योंकी ओरसे युद्ध करेगा ॥ १७ ॥ और आपने इनमहात्माओंकी पूर्वकालमेंभी सहाय की है और आपके सिवाय और कोई इस कार्यको नहीं करसक्ता कारण कि, अनाथोंके आपही गति हो ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आ० उत्तरकांडे भाषायां

तंचैनंपरमोदारमुपेक्षसिमहाबल॥क्षणंहिनभवेद्वृत्रःक्रुद्धेत्वयिसुरेश्वर॥१४॥यदाहिप्रीतिसंयोगंत्वयाविष्णोसमागतः॥तदाप्रभृतिलोकानांनाथत्वमुपलब्धवान् ॥१५॥ सत्वंप्रसादंलोकानांकुरुष्वसुसमाहितः ॥ त्वत्कृतेनहिसर्वंस्यात्प्रशांतमरुजंजगत् ॥१६॥ इमेहिसर्वेविष्णोत्वांनिरीतेदिवौकसः ॥ वृत्रघातेनमहतातेषांसाह्यंकुरुष्वह ॥१७॥ त्वयाहिनित्यशःसाह्यंकृतमेषांमहात्मनाम् ॥ असह्यमिदमन्येषामगतीनांगतिर्भवान् ॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०उत्तरकांडे चतुरशीतितमः सर्गः ॥८४॥ लक्ष्मणस्यतुतद्वाक्यंश्रुत्वाशत्रुनिबर्हणः ॥ वृत्रघातमशेषेणकथयेत्याहसुव्रत ॥१॥ राघवेणैवमुक्तस्तुसुमित्रानंदवर्धनः ॥ भूयएवकथांदिव्यांकथयामाससुव्रतः ॥२॥ सहस्राक्षवचःश्रुत्वासर्वेषांचदिवौकसाम्॥विष्णुर्देवानुवाचेदंसर्वानिंद्रपुरोगमान् ॥३॥ पूर्वंसौहृदबद्धोऽस्मिवृत्रस्येहमहात्मनः॥तेनयुष्मत्प्रियार्थंहिनाहंहन्मिमहासुरम् ॥४॥ अवश्यंकरणीयंचभवतांसुखमुत्तमम् ॥ तस्मादुपायमाख्यास्येसहस्राक्षीवधिष्यति ॥५॥ त्रेधाभूतंऽकथिष्यामिआत्मानंसुरसत्तमाः ॥ तेनवृत्रंसहस्राक्षोवधिष्यतिनसंशयः ॥ ६ ॥ एकांशोवासवंयातुद्वितीयोवज्रमेवतु ॥ तृतीयोभूतालंयातुतदावृत्रंहनिष्यति ॥ ७ ॥

चतुरशीतितमः सर्गः ॥ ८४ ॥ लक्ष्मणके वचन सुनकर रघुनाथजी बोले हे लक्ष्मण ! वृत्रासुरके वधकी सम्पूर्ण कथा कहो ॥१॥ सुमित्रानंदन लक्ष्मणजी रघुनाथजीके यह वचन सुनकर उस दिव्य कथाको कहने लगे ॥ २ ॥ इस प्रकारसे इन्द्र और सम्पूर्ण देवताओंके वचन सुनकर विष्णु भगवान् इन्द्रादि देवताओंसे कहने लगे ॥ ३ ॥ कि, वृत्रासुर महात्माने बहुत कालसे मुझमें प्रेम लगाया है इस कारणसे तुम्हारी प्रसन्नताके निमित्त हम इस महात्माका वध नहीं करेंगे ॥ ४ ॥ और तुम्हारे सुखका उपायभी अवश्य करना चाहिये इस कारणसे वह उपाय करते हैं जिसप्रकार इन्द्रउसको मारडालेंगे ॥ ५ ॥ हे देवताओ ? हम अपनेके तीन भाग करके वृत्रासुरका वध इन्द्रके द्वारा करादेंगे इसमें संदेह नहीं ॥ ६ ॥ उनमें एक अंश वृत्रासुरमें, दूसरा वज्रमें और तीसरा पृथ्वीमें प्राप्त होगा वृत्रासुरका वध

होगा (पृथ्वीमें एक अंश इस कारण रक्खा कि वृत्रासुरके गिरनेके समय पृथ्वी उसके धारण करनेमें समर्थ होगी) ॥ ७ ॥ जिस समय भगवान्‌ने ऐसा कहा तो देवता कहने लगे हे दैत्योंके मारनेहारे ! जो कुछ आप कहते हैं वह निःसंदेह ऐसाही है ॥ ८ ॥ हे भगवन् ! आपका कल्याण हो वृत्रासुरके मरणकी इच्छावाले हम जाते हैं आप अपना परम उदार तेज इनमें स्थापित कीजिये ॥ ९ ॥ फिर इन्द्रादिक संपूर्ण देवता उस स्थानमें गये जिस वनमें महासुर वृत्रासुर विद्यमान था ॥ १० ॥ उन्होंने उस दैत्यको तपस्या करते तेजसे दीप्यमान् देखा कि, मानो त्रिलोकी पान कर जायगा और आकाशको जला देगा ॥ ११ ॥ इस प्रकार उस दैत्यको देखकर देवता भयभीत हुए कि, किस प्रकारसे हम इसको मार सकें और हमारी हार न हो ॥ १२ ॥ उनके ऐसा कहनेपर सहस्राक्ष इन्द्रने हाथमें वज्र ग्रहण करके वृत्रासुरके शिरमें मारा ॥ १३ ॥ कालाग्निके समान महाघोर और महाकांतियुक्त वह वृत्रासुरका शिर कटकर

तथाब्रुवतिदेवेशेदेवावाक्यमथाब्रुवन् ॥एवमेतन्नसंदेहोयथावदसिदैत्यहन् ॥ ८ ॥ भद्रंतेऽस्तुगमिष्यामोवृत्रासुरवधैषिणः ॥ भजस्वपरमोदार वासवंस्तेनतेजसा ॥ ९ ॥ ततःसर्वेमहात्मानःसहस्राक्षपुरोगमाः ॥ तदरण्यमुपाक्रामन्यत्रवृत्रोमहासुरः ॥ १० ॥ तेपश्यंस्तेजसाभूतंतपंतमसुरोत्तमम् ॥ पिबंतमिवलोकांस्त्रीन्निर्दहंतमिवांबरम् ॥ ११ ॥ दृष्ट्वैवचासुरश्रेष्ठंदेवास्त्रासमुपागमन् ॥ कथमेनंवधिष्यामःकथंनस्यात्पराजयः ॥ १२ ॥ तेषांचिंतयतांतत्रसहस्राक्षःपुरंदरः ॥ वज्रंप्रगृह्यपाणिभ्यांप्राहिणोद्वृत्रमूर्धनि ॥ १३ ॥ कालाग्निनेवघोरेणदीप्तेनेवमहार्चिषा ॥ पतितावृत्रशिरसाजगत्त्रासमुपागमत् ॥ १४ ॥ असंभाव्यंवधंतस्यवृत्रस्यविबुधाधिपः ॥ चिंतयानोजगामाशुलोकस्यांतंमहायशाः ॥ १५ ॥ तमिंद्रंब्रह्महत्याशुगच्छंतमनुगच्छति ॥ अपतच्चास्यगात्रेषुतमिंद्रंदुःखमाविशत् ॥ १६ ॥ हतारयःप्रनष्टेंद्रादेवाःसाग्निपुरोगमाः ॥ विष्णुंत्रिभुवनेशानंमुहुर्मुहुरपूजयन् ॥ १७ ॥ त्वंगतिःपरमेशानपूर्वतोजगतःपिता ॥ रक्षार्थंसर्वभूतानांविष्णुत्वमुपजग्निवान् ॥ १८ ॥

पृथ्वीपर गिर पडा जिससे सम्पूर्ण जगत् भयभीत हो गया ॥ १४ ॥ महायशस्वी इन्द्र उसका असंभाव्य वध विचार कर कि, एक तो इसका कुछ अपराध नहीं दूसरे यह मौन धारे तप करता था इसे वृथा मारा इस शोकसे व्याकुल हो लोकको अन्तस्थानमें जहां अन्धकार था ब्रह्महत्याके डरसे चले गये ॥१५॥ परन्तु ब्रह्महत्या भी उनके पीछेही चली गई और उनके शरीरमें प्रवेश कर गई जिससे इन्द्र महादुःखी हुए ॥ १६ ॥ इसप्रकार वृत्रासुरके मरने और इन्द्रके गुप्त हो जानेसे अग्नि सहित सब देवता त्रिलोकेश्वर भगवान्‌के निकट जा उनकी पूजा करने लगे ॥ १७ ॥ हे भगवन् ! तुमही जगत्‌की गति हो सबसे बडे हो, हे विष्णु ! तुमही जगत्‌के पिता और संसारकी रक्षा करनेको विष्णु हुए हो ॥ १८ ॥

हे देवताओंमें श्रेष्ठ ! वृत्रासुर मारा गया परन्तु अब इन्द्रको ब्रह्महत्या बाधा करती है उसके छुटकारेका कोई उपाय कहिये ॥ १९ ॥ इन देवताओंके वचन सुनकर भगवान् विष्णुजी बोले हे देवताओ ! इन्द्र हमारा यज्ञ करें, हम उन्हें पवित्र करदेंगे ॥ २० ॥ इन्द्र पवित्र अश्वमेध यज्ञसे मेरा यजन करके निःसंदेह फिर देवपतिकी पदवीको प्राप्त होंगे ॥ २१ ॥ इस प्रकार देवताओंको अमृतमयी वाणीसे उपदेश करके देवताओंसे पूजित हो भगवान् वैकुंठको चले गये ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां पंचाशीतितमः सर्गः ॥ ८५ ॥ इसप्रकार लक्ष्मणजी वृत्रासुरका सम्पूर्ण वध कहकर फिर शेष कथा कहने लगे ॥ १ ॥ जिस समय देवताओंका भयदायी महाबली वृत्रासुर मारा गया तो ब्रह्महत्याके लगनेसे इन्द्र चेतनारहित हो गये ॥ २ ॥ वह निश्चेष्ट

हतश्चायंत्वयावृत्रोब्रह्महत्याचवासवम् ॥ बाधतेसुरशार्दूलमोक्षंतस्यविनिर्दिश ॥१९॥ तेषांतद्वचनंश्रुत्वादेवानांविष्णुरब्रवीत् ॥ मामेवयजतांशक्रःपावयिष्यामिवज्रिणम् ॥ २० ॥ पुण्येनहयमेधेनमामिष्ट्वापाकशासनः ॥ पुनरेष्यतिदेवानामिंद्रत्वमकुतोभयः ॥२१॥ एवंसंदिश्यतांवाणीं देवानांचामृतोपमाम् ॥जगामविष्णुर्देवेशःस्तूयमानस्त्रिविष्टपम् ॥ २२ ॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०उत्तरकांडे पंचाशीतितमः सर्गः ॥ ८५ ॥ तदावृत्रवधंसर्वमखिलेनसलक्ष्मणः ॥ कथयित्वानरश्रेष्ठःकथाशेषंप्रचक्रमे ॥ १ ॥ ततोहतेमहावीर्येवृत्रेदेवभयंकरे ॥ ब्रह्महत्यावृतःशक्रःसंज्ञांलेभेनवृत्रहा ॥ २ ॥ सोन्तमाश्रित्यलोकानांनष्टसंज्ञोविचेतनः ॥ कालंतत्रावसत्कंचिद्वेष्टमानइवोरगः ॥ ३ ॥ अथनष्टेसहस्राक्षेउद्विग्नमभवज्जगत् ॥ भूमिश्चध्वस्तसंकाशानिःस्नेहाशुष्ककानना ॥ ४ ॥ निःस्रोतसस्तेसर्वेतुह्रदाश्चसरितस्तथा ॥ संक्षोभश्चैवसत्त्वानामनावृष्टिकृतोभवत् ॥ ५ ॥ क्षीयमाणेतुलोकेस्मिन्संभ्रांतमनसःसुराः ॥ यदुक्तंविष्णुनापूर्वंतंयज्ञंसमुपानयन् ॥ ६ ॥ ततःसर्वेसुरगणाःसोपाध्यायाः सहर्षिभिः ॥ तंदेशंसमुपाजग्मुर्यत्रेंद्रोभयमोहितः ॥ ७ ॥ तेतुदृष्ट्वासहस्राक्षमावृतंब्रह्महत्यया ॥ तंपुरस्कृत्यदेवेशमश्वमेधंप्रचक्रिरे ॥ ८ ॥

होकर लोकोंके अन्तमें जाकर लोटने लगे और अजगर सर्पके समान पडे हुए कुछ काल बिताया ॥ ३ ॥ इन्द्रके नष्ट होनेसे सब जगत् उद्विग्न हो गया; पृथ्वी प्रकाशरहित हुई, रस सूख गया, वन भी शुष्क होगये ॥ ४ ॥ सम्पूर्ण ह्रद और सरोवर जलहीन होगये, नदी सूखगई विना वर्षाके सब प्रजा क्षुभित होगई ॥ ५ ॥ लोकके यक्ष होनेसे संभ्रान्त मनसे देवता विष्णुके कहे यज्ञका अनुष्ठान करने लगे ॥ ६ ॥ तब सम्पूर्ण देवता उपाध्याय और महर्षियोंके साथ उस स्थानमें आये जहां इन्द्र भयसे व्याकुल हुए पडे थे ॥७॥ इन इन्द्रको देवताओंने ब्रह्महत्यासे युक्त देख इन्हें दीक्षामें बैठाय यज्ञ करना प्रारंभ किया ॥८॥

हे राजन् ! तब महात्मा इन्द्रकी महाब्रह्महत्या मिटानेके निमित्त अश्वमेध यज्ञ होने लगा ॥९॥ जब यज्ञ समाप्त हुआ तब वह ब्रह्महत्या इन्द्रके शरीरसे निकल स्त्रीरूप बनाय कहने लगी कि, मेरे रहनेका कोई स्थान बताओ ॥१०॥ यहवचन सुन संतुष्ट हो प्रीतिसहित सम्पूर्ण देवता कहने लगे, हे ब्रह्महत्या ! तू अपनेको चारभागमें विभक्त कर ॥११॥ ब्रह्महत्या उन महात्मा देवताओंके वचन सुनकर इंद्रको त्याग उन देवताओंसे निवास करनेको स्थान मांगनेलगी ॥१२॥ और बोली कि, क अंएशसे मैं तो वर्षाकालमें नदियोंमें वास करूंगी इस कारणसे नदी ऊंचे नीचे सब स्थानोंमें यथेच्छ बहेगी, और फेन ब्रह्महत्याका अंश होगा ॥१३॥ और एक अंशसे मैं सब काल पृथ्वीमें वास करूंगी, मेरे इस सत्यवचनमें कोई संदेह नहीं उसमें ऊषर स्थान ब्रह्महत्याका अंश होगा ॥१४॥ और एक

ततोऽश्वमेधः सुमहान्महेंद्रस्यमहात्मनः ॥ ववृधेब्रह्महत्यायाःपावनार्थनरेश्वर ॥ ९ ॥ ततोयज्ञेसमाप्तेतुब्रह्महत्यामहात्मनः ॥ अभिगम्याब्रवीद्वाक्यंक्वमेस्थानंविधास्यथ ॥१०॥ ततोमूचुस्ततोदेवास्तुष्टाःप्रीतिसमन्विताः ॥ चतुर्धाविभजात्मानमात्मनैवदुरासदे ॥११॥ देवानांभाषितंश्रुत्वाब्रह्महत्यामहात्मनाम् ॥ संदधौस्थानमन्यत्रवरयामासदुर्वसा ॥ १२ ॥ एकेनांशेनवत्स्यामिपूर्णोदासुनदीषुवै ॥ चतुरोवार्षिकान्मासान्दर्पघ्नीकामचारिणी ॥ १३ ॥ भूम्यामहंसर्वकालमेकेनांशेनसर्वदा ॥ वसिष्यामिनसंदेहःसत्येनैतद्ब्रवीमिवः ॥ १४ ॥ योऽयमंशस्तृतीयोमेस्त्रीषुयौवनशालिषु ॥ त्रिरात्रंदर्पपूर्णासुवसिष्येदर्पघातिनी ॥ १५ ॥ हंतारोब्राह्मणान्येतुमृषापूर्वमदूषकान् ॥ तांश्चतुर्थेनभागेनसंश्रयिष्येसुरर्षभाः ॥ १६ ॥ प्रत्यूचुस्तांततोदेवायथावदसिदुर्वसे ॥ तथाभवतुतत्सर्वसाधयस्वयदीप्सितम् ॥ १७॥ ततःप्रीत्यान्वितादेवाःसहस्राक्षंववंदिरे ॥ विज्वरःपूतपाप्माचवासवःसमपद्यत ॥१८॥ प्रशांतंचजगत्सर्वंसहस्राक्षेप्रतिष्ठिते ॥ यज्ञंचाद्भुतसंकाशंतदाशक्रोऽभ्यपूजयत् ॥ १९ ॥ ईदृशोह्यश्वमेधस्यप्रसादोरघुनंदन ॥ यजस्वसुमहाभागहयमेधेनपार्थिव ॥ २० ॥

अंशसे युवा स्त्रियोंकी योनिमें उनका दर्प चूर्ण करनेके निमित्त एक मासमें तीन दिनतक वासकरूंगी, वह रुधिर ब्रह्महत्याका अंश होगा ॥१५॥ हे देवताओ ! हम अपने चौथे अंशसे उन लोगोंमें वास करेंगी जो झूंठे दोष लगाय ब्राह्मणोंको ताडन करेंगे ॥१६॥ यह उसके वचन सुनकर सब देवता कहने लगे कि जैसी तेरी इच्छा है; तू अपने उन अभीष्ट स्थानोंमें जाकरवास कर ॥१७॥ यह कहकर सम्पूर्ण देवताओंने इन्द्रको प्रणाम किया और इन्द्र भी पवित्र होनेके कारण बडे आनंदको प्राप्त हुए ॥१८॥ जब इन्द्र अपने स्थानपर आकर विराजे, तब सब जगत् शान्त हो गया और फिर इन्द्रने बडे अद्भुत यज्ञका यजन पूजन किया ॥ १९ ॥ हे रघुनाथजी ! अश्वमेध यज्ञकी ऐसी महिमा है, हे महाभाग भगवन् ! इस कारण आप भी अश्वमेध यज्ञ कीजिये ॥ २० ॥

इन्द्रके समान पराक्रमी रघुनाथजी लक्ष्मणके कहे उत्तम और मनोहर वचन सुनकर परम संतुष्ट और प्रसन्न हुए ॥ २१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां षडशीतितमः सर्गः ॥ ८६ ॥ बोलने वालोंमें चतुर महातेजस्वी रघुनाथजी लक्ष्मणके यह वचन सुन हँसकर कहने लगे ॥ १ ॥ हे लक्ष्मणजी ! तुमने जो कहा यह ऐसे ही है, वृत्रासुरका वध और अश्वमेधका फल इसी प्रकार है ॥ २ ॥ हे सौम्य ! हमने सुना है कि, पूर्वकालमें कर्दम प्रजापतिके बडे पुत्र जिनका नाम इल था और जो बडे धर्मात्मा थे वह बाह्लीक देशके राजा हुए ॥ ३ ॥ हे नरशार्दूल ! वह महायशस्वी राजा सम्पूर्ण पृथ्वी अपने वशमें करके राज्यको पुत्रके समान पालन करने लगे ॥ ४ ॥ इस राज्यकी उत्तमतासे देवता दैत्य नाग राक्षस यक्ष गंधर्व और भी उदार चरित्रवाले

इतिलक्ष्मणवाक्यमुत्तमंनृपतिरतीवमनोहरंमहात्मा ॥ परितोषमवापहृष्टचेताःसनिशम्येंद्रसमानविक्रमौजाः॥ २१ ॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च०सा०उत्तरकांडे षडशीतितमःसर्गः ॥८६॥ तच्छ्रुत्वालक्ष्मणेनोक्तंवाक्यंवाक्यविशारदः ॥ प्रत्युवाचमहातेजाःप्रहसन्राघवोवचः ॥ १ ॥ एवमेवनरश्रेष्ठयथावदसिलक्ष्मण ॥ वृत्रघातमशेषेणवाजिमेधफलंचयत् ॥ २ ॥ श्रूयतेहिपुरासौम्यकर्दमस्यप्रजापतेः ॥ पुत्रोबाह्लीश्वरःश्रीमानिलोनामसुधार्मिकः॥ ३ ॥सराजापृथिवींसर्वांवशेकृत्वामहायशाः ॥ राज्यंचैवनरव्याघ्रपुत्रवत्पर्यपालयत् ॥ ४ ॥सुरैश्च परमोदारैर्दैतेयैश्चमहाधनैः॥ नागराक्षसगंधर्वैर्यक्षैश्चसुमहात्मभिः॥ ५ ॥पूज्यतेनित्यशःसौम्यभयार्तैर्रघुनंदन ॥ अबिभ्यश्चत्रयोलोकाःसरोषस्यमहात्मनः॥६॥ सराजाताहृशोऽप्यासीद्धर्मेवीर्येचनिष्ठितः ॥ बुद्ध्याचपरमोदारोबाह्लीकेशोमहायशाः ॥७॥ सप्रचक्रेमहाबाहुर्मृगयांरुचिरे वने॥ चैत्रेमनोरमेमासेसभृत्यबलवाहनः॥८॥ प्रजघ्नेसनृपोऽरण्येमृगाञ्छतसहस्रशः॥ हत्वैवतृप्तिर्नाभूच्चराज्ञस्तस्यमहात्मनः॥९॥ नानामृगाणामयुतंवध्यमानंमहात्मना॥यत्रजातोमहासेनस्तंदेशमुपचक्रमे॥१०॥ तस्मिन्प्रदेशेदेवेशशैलराजसुतांहरः॥रमयामासदुर्धर्षःसर्वैरनुचरैःसह॥११॥

महात्मा ॥ ५ ॥ हे रघुनंदन ! वह नित्यप्रति आकर राजाकी पूजा करते थे और इन महात्माके क्रोध करनेसे त्रिलोकी भयभीत हो जाती थी ॥ ६ ॥ इस प्रकारसे महायशस्वी सत्यधर्ममें निष्ठावाले वह राजा उदारता और बुद्धिमानीसे बाह्लीकदेशका राज्य करते थे ॥७॥ एक समय चैत्रमासमें वह राजा अपनी सेना आदि लेकर वनमें मृगयाके निमित्त गया ॥ ८ ॥ राजाने वनमें जाकर सहस्रों मृगोंका संहार किया तथापि उन महात्माकी तृप्ति न हुई ॥ ९ ॥ जब अनेक प्रकारके लक्षों मृग वध करनेसे तृप्ति न हुई तब वह उस वनमें गये जहाँ स्वामिकार्तिकका जन्म हुआ था ॥ १० ॥ उस वनमें दुर्द्धर्ष देवादिदेव महादेवजी पार्वतीको संग लिये और अपने सब अनुचरों सहित विहार करते थे ॥ ११ ॥

वृषध्वज शिवजी भी अपना स्त्रीका रूप बनाये पार्वतीका प्रिय करनेके निमित्त पर्वतके निर्झरोंमें विचरते थे ॥ १२ ॥ उस वनमें उस समय जितने पुरुष नाम वाले वृक्ष मृगादिक थे वे सब स्त्रीलिंग होगये ॥ १३ ॥ बहुत क्या जो कुछभी उस स्थानमें था वह सब स्त्रीरूप होगया उसी समय कर्दमके पुत्र इल राजा भी ॥१४॥ सहस्रों मृगोंका संहार करते उस देशमें आये, उन्होंने देखा कि उस वनमें सर्प मृग पक्षी सब स्त्रीरूप हैं ॥१५॥ और अपनेको भी सेना और बल वाहनसहित स्त्रीरूप देखकर बहुत दुःखी हुआ ॥१६॥ यह शिवजी महाराजके कारणसे स्त्रीत्व प्राप्त हुआ है यह जानकर राजा महाभयभीत हुए तब शितिकंठ कपर्दी महात्मा देवदेव शंकरजीके ॥१७॥ शरणमें राजा अपने सेना वाहन सहित प्राप्त हुआ तब वर देनेहारे शंकर पार्वतीसहित हँसते हुए आये ॥१८॥ और

कृत्वास्त्रीरूपमात्मानमुमेशोगोपतिध्वजः ॥ देव्याःप्रियचिकीर्षुःसंस्तस्मिन्पर्वतनिर्झरे ॥१२॥ यत्रयत्रवनोद्देशेसत्त्वापुरुषवादिनः ॥ वृक्षाः पुरुषनामानस्तेसर्वेस्त्रीजनाभवन् ॥ १३ ॥ यच्चकिंचनतत्सर्वंनारीसंज्ञंबभूवह ॥ एतस्मिन्नंतरेराजासइलःकर्दमात्मजः ॥ १४ ॥ निघ्नन्मृगस हस्राणितंदेशमुपचक्रमे ॥ सदृष्ट्वास्त्रीकृतंसर्वंसव्यालमृगपक्षिणम् ॥ १५ ॥ आत्मानंस्त्रीकृतंचैवसानुगंरघुनंदन ॥ तस्यदुःखंमहच्चासीद्दृष्ट्वात्मा नंतथागतम् ॥१६॥ उमापतेश्चतत्कर्मज्ञात्वात्रासमुपागमत् ॥ ततोदेवंमहात्मानंशितिकंठंकपर्दिनम् ॥ १७ ॥ जगामशरणंराजासभृत्यबलवा हनः ॥ ततःप्रहस्यवरदःसहदेव्यामहेश्वरः ॥ १८ ॥ प्रजापतिसुतंवाक्यमुवाचवरदःस्वयम् ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठराजर्षेकार्दमेयमहाबल ॥ १९ ॥ पुरुषत्वमृतेसौम्यवरंवरयसुव्रत ॥ ततःसराजाशोकार्तःप्रत्याख्यातोमहात्मना ॥ २० ॥ स्त्रीभूतोऽसौनजग्राहवरमन्यंसुरोत्तमात् ॥ ततःशोके नमहताशैलराजसुतांनृपः ॥ २१ ॥ प्रणिपत्यउमांदेवींसर्वेणैवांतरात्मना ॥ ईशेवराणांवरदेलोकानामसिभामिनी ॥ २२ ॥ अमोघदर्शनेदेवी भजसौम्येनचक्षुषा ॥ हृद्गतंतस्यराजर्षेर्विज्ञायहरसन्निधौ ॥ ॥ २३ ॥

प्रजापति कर्दमके पुत्रसे स्वयं शंकर यह वचन कहने लगे कि, हे कर्दमके पुत्र महाबली राजर्षि ! उठो ॥ १९ ॥ हे सुव्रत ! पुरुषप्राप्तिके सिवाय जो चाहो सो वरदान मांगो जब महात्मा शिवजीने ऐसा कहा तो वह राजा महादुःखी हुआ ॥ २० ॥ और उसने कोई और वर सुरश्रेष्ठ शिवजीसे नहीं मांगा और महाशोकसे राजा शैलराजकन्या पार्वती ॥ २१ ॥ उमादेवीको प्रणाम करके चित्तकी वृत्ति एकाग्र कर बोला हे वरदायिनी ! तुमलोक और ईश्वरोंको भी वर देती हो ॥२२॥ हे देवी ! तुम्हारा दर्शन सफल होता है हमारे ऊपर कृपादृष्टि करो, पार्वती उस राजाका मनोरथ जान शिवजीके निकट बैठी हुई ॥२३॥

देवी भगवती शिवजीकी सम्मतिसे राजासे सुन्दर वचन कहने लगीं हे राजन् ! आधे वरदानकी देनेहारी मैं हूं और आधे वरदाता शिवजी हैं ॥ २४ ॥ इस कारण स्त्री पुरुषमें आधा वर जो चाहो ग्रहण करो इस प्रकार पार्वती देवीके अद्भुत वाक्यको सुनकर ॥ २५ ॥ बहुतही प्रसन्न होकर राजा कहने लगे हे अलौकिक गुणरूपयुक्त भगवती ! जो मेरे ऊपर प्रसन्न हो तो यह वर दीजिये कि ॥ २६ ॥ मैं एक मासतक स्त्री और एक मासतक पुरुष रहा करूं सुमुखी पार्वती देवी राजाके मनोरथको विचार ॥ २७ ॥ सुन्दर वचनसे कहने लगीं कि, ऐसा ही होगा हे राजन् ! जब तुम पुरुष हो जाओगे तो स्त्रीभावका तुम्हें स्मरण नहीं रहेगा ॥ २८ ॥ और जब स्त्री हो जाओगे तो पुरुषभावका स्मरण नहीं रहेगा इस प्रकारसे कर्दमके पुत्र एक मासतक स्त्री और एम मासतक

प्रत्युवाचशुभंवाक्यंदेवीरुद्रस्यसंमता ॥ अर्धस्यदेवोवरदोवरार्धस्यतवाह्यहम् ॥२४॥ तस्मादर्धंगृहाणत्वंस्त्रीपुंसोर्यावदिच्छसि ॥ तदद्भुततरंश्रुत्वादेव्यावरमनुत्तमम् ॥ २५ ॥ सम्प्रहृष्टमनाभूत्वाराजावाक्यमथाब्रवीत् ॥ यदिदेविप्रसन्नामेरूपेणाप्रतिमाभुवि ॥ २६ ॥ मासंस्त्रीत्वमुपासित्वा मासंस्यांपुरुषःपुनः ॥ ईप्सितंतस्यविज्ञायदेवीसुरुचिरानना ॥ २७ ॥ प्रत्युवाचशुभंवाक्यमेवमेवभविष्यति ॥ राजन्पुरुषभूतस्त्वंस्त्रीभावंन स्मरिष्यसि ॥ २८ ॥ स्त्रीभूतश्चपरंमासंनस्मरिष्यसिपौरुषम् ॥ एवंसराजापुरुषोमासंभूत्वाऽथकार्दमिः ॥ २९ ॥ त्रैलोक्यसुंदरीनारीमासमेकमिलाभवत् ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदि० च० सा० उत्तरकांडे सप्ताशीतितमः सर्गः ॥ ८७ ॥ तांकथामैलसंबद्धांरामेण समुदीरिताम् ॥ लक्ष्मणोभरतश्चैवश्रुत्वापरमविस्मितौ ॥ १ ॥ तौरामंप्रांजलीभूत्वातस्यराज्ञोमहात्मनः ॥ विस्तरंतस्यभावस्यतदापप्रच्छतुः पुनः ॥ २ ॥ कथंसराजास्त्रीभूतोवर्तयामासदुर्गतिः ॥ पुरुषःसयदाभूतःकांवृत्तिंवर्तयत्यसौ ॥ ३ ॥ तयोस्तद्भाषितंश्रुत्वाकौतूहलसमन्वितम् ॥ कथयामासकाकुत्स्थस्तस्यराज्ञोयथागमम् ॥ ४ ॥ तमेवप्रथमंमासंस्त्रीभूत्वालोकसुन्दरी ॥ ताभिःपरिवृतास्त्रीभिर्येऽस्यपूर्वंपदानुगाः ॥ ५ ॥

पुरुष रहते थे ॥ २९ ॥ स्त्रीभावमें इला नाम रहता था जो त्रिलोकमें महासुन्दरी विख्यात हुई और पुरुषभावमें इल नाम रहा ॥ ३० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आ० उत्तरकांडे भाषायां सप्ताशीतितमः सर्गः ॥ ८७ ॥ रामचन्द्रके मुखसे इल सम्बंधी कथा सुनकर भरत और लक्ष्मण अत्यन्त आश्चर्यको प्राप्त हुए ॥ १ ॥ वे दोनों हाथ जोडकर रघुनाथजीसे उस महात्मा राजाकी कथा विस्तारपूर्वक सुननेकी इच्छा कर कहने लगे ॥२॥ जिससमय वह राजा दुर्गतिसे स्त्री होता था तो क्या करता था और पुरुष होकर क्या करता था वह सब सुनाइये ॥ ३ ॥ भरत और लक्ष्मणके इसप्रकार कौतूहलके वचन सुनकर रामचन्द्र उस राजाका चरित्र वर्णन करने लगे ॥ ४ ॥ पहले मासमें वह लोकसुन्दरी स्त्री होकर उन अपने सेनाके लोगोंने संग जो कि, वहभी सब स्त्री थीं ॥ ५ ॥

उस बनमें वह लोकसुन्दरी विचरने लगी, वह कमलके समान नेत्रवाली पैरों पैरों वृक्ष और गुल्मलताओंसे परिपूर्ण उस बनमें ॥ ६ ॥ सम्पूर्ण वाहनोंको त्याग कर उस पर्वतकी गुफाओंमें इला इच्छासे विचरण करने लगी ॥७॥ पर्वतके निकटही उस बनमें अनेक प्रकारके मृग पक्षियोंसे युक्त एक सरोवर था ॥ ८ ॥ उस ❀ सरोवरके निकट पूर्णिमाके चन्द्रमाके समान प्रकाशमान चन्द्रपुत्र बुधको इलाने देखा ॥ ९ ॥ वह जलमें खडे हुए कठिन तपस्या करते थे, जो यश और कामनाओंके दाता कृपासागर आदि गुणोंसे युक्त थे ॥ १० ॥ हे लक्ष्मण ! उस इलाने अपने स्त्रीरूप साथियोंके साथ जाकर विस्मित हो उस सरोवरको क्षुभित किया ॥ ११ ॥ उस इलाको देख बुध कामबाणसे पीडित हुए और अपनेको न संभालके जलमें चलायमान होगये ॥ १२ ॥ त्रिलोकीमें

तत्काननंविगाह्याशुविजह्रेलोकसुन्दरी॥ द्रुमगुल्मलताकीर्णपद्भ्यांपद्मदलेक्षणा ॥ ६ ॥ वाहनानिचसर्वाणिसंत्यक्त्वावैसमंततः ॥ पर्वताभोगविवरेतस्मिन्रेमेइलातदा ॥ ७ ॥ अथतस्मिन्वनोद्देशेपर्वतस्याविदूरतः ॥ सरःसुरुचिरप्रख्यंनानापक्षिगणायुतम् ॥८॥ ददर्शसाइलातस्मिन्बुधंसोमसुतंतदा ॥ ज्वलंतंस्वेनवपुषापूर्णसोममिवोदितम् ॥ ९ ॥ तपंतंचतपस्तीव्रमंभोमध्येदुरासदम् ॥ यशस्करंकामकरंतारुण्येपर्यवस्थितम् ॥ १० ॥ सांतंजलाशयंसर्वंक्षोभयामासविस्मिता ॥ सहतैःपूर्वपुरुषैःस्त्रीभूतैरघुनंदनः ॥ ११ ॥ बुधस्तुतांसमीक्ष्यैवकामबाणवशंगतः ॥ नोपलेभेतदात्मानंसचचालतदांभसि ॥ १२ ॥ इलांनिरीक्षमाणस्तुत्रैलोक्यादधिकांशुभाम् ॥ चित्तंसमभ्यतिक्रामत्कान्वियंदेवताधिका ॥१३॥ नदेवीषुननागीषुनासुरीष्वप्सरस्सुच ॥ दृष्टपूर्वामयाकाचिद्रूपेणानेनशोभिता ॥ १४ ॥ सदृशीयंममभवेद्यदिनान्यपरिग्रहः ॥ इतिबुद्धिंसमास्थायजलात्कूलमुपागमत् ॥ १५ ॥ आश्रमंसमुपागम्यततस्ताःप्रमदोत्तमाः ॥ शब्दापयतधर्मात्माताश्चैनंचववंदिरे ॥ १६ ॥ सताःपप्रच्छधर्मात्माकस्यैषालोकसुन्दरी ॥ किमर्थमागताचैवसर्वमाख्यातमाचिरम् ॥ १७ ॥

अधिक सुन्दर उसका रूप देखकर बुधजी विचार करने लगे कि, यह देवताओंसेभी अधिक रूपवान् कौन स्त्री है ॥ १३ ॥ ऐसा रूप तो देवी नागोंकी स्त्री असुरी अप्सराओंमें भी हमने कभी नहीं देखा ॥ १४ ॥ यदि इसका विवाह नहीं हुआ हो तो यह मेरे योग्य है यह विचार कर बुधजी जलसे किनारेपर आये ॥ १५ ॥ और अपने आश्रमपर आकर उन्होंने उन श्रेष्ठ स्त्रियोंको पुकारा और उनसबने आकर इन्हें प्रणाम किया ॥ १६ ॥ उनसे धर्मात्मा बुध प्रश्न करने लगे कि, लोकसुन्दरी किमकी स्त्री है और यहां यह किस निमित्त आई हमसे यह सब शीघ्रतासे कहो ॥ १७ ॥

❀ जिस बनमें बुध तपस्या करते थे यह उस स्थानसे थोड़ी दूर था इससे यह स्त्री न हुए थे ।

उनके यह मधुर सुन्दर वचन सुनकर वे सब स्त्री मधुरवाणीसे उनसे कहने लगीं ॥ १८ ॥ यह हमारी स्वामिनी है, इसका कोई पति नहीं है हमारे साथ वनमें विचरती रहती है ॥ १९ ॥ उन स्त्रियोंके ऐसे स्वच्छ वचन सुनकर बुधजीने अपनी आवार्तनी (आकर्षण) विद्याका स्मरण किया ॥ २० ॥ तपके द्वारा राजाका सम्पूर्ण वृत्तान्त जानकर बुधजी उन सब स्त्रीजनोंसे कहने लगे ॥ २१ ॥ तुम सब किम्पुरुषी होकर इस पर्वतके स्थानमें वास करो, और यहां ही अपने रहनेके स्थान निर्माण करलो ॥ २२ ॥ मूल पत्र फल भोजन करके अपने स्थानोंमें रहो तुम सब अपने किम्पुरुषनामक पतियोंको प्राप्त हो जावोगी ॥२३॥ वह सब स्त्रियें यह सुनकर कि, बुधने हमको किम्पुरुषी (देवयोनि विशेष) बना दिया, तब वे पर्वतमें वास करने लगीं ॥ २४ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०

शुभंतुतस्यतद्वाक्यंमधुरंमधुराक्षरम् ॥ श्रुत्वास्त्रियश्चताःसर्वाऊचुर्मधुरयागिरा ॥ १८ ॥ अस्माकमेषासुश्रोणीप्रभुत्वेवर्ततेसदा ॥ अपतिःकाननांतेषुसहास्माभिश्चरत्यसौ ॥१९॥ तद्वाक्यमव्यक्तपदंतासांस्त्रीणांनिशम्यच ॥ विद्यामावर्तनींपुण्यामावर्तयतिसद्विजः ॥ २० ॥ सोऽर्थंविदित्वासकलंतस्यराज्ञोयथातथा ॥ सर्वाएवस्त्रियस्ताश्चबभाषेमुनिपुंगवः ॥ २१ ॥ अत्रकिंपुरुषीभूत्वाशैलरोधसिवत्स्यथ ॥ आवासस्तुगिरावस्मिन्छीघ्रमेवविधीयताम् ॥ २२ ॥ मूलपत्रफलैःसर्वावर्तयिष्यथनित्यदो ॥ स्त्रियःकिंपुरुषान्नामभर्तॄन्समुपलप्स्यथ ॥ २३ ॥ ताःश्रुत्वासोमपुत्रस्यस्त्रियःकिंपुरुषीकृताः॥उपासांचक्रिरेशैलंवध्वस्ताबहुलास्तदा॥२४॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्येच०सा०उत्तरकांडे अष्टाशीतितमः सर्गः ॥ ८८ ॥ श्रुत्वाकिंपुरुषोत्पत्तिंलक्ष्मणाभरतस्तथा ॥ आश्चर्यमितिचाब्रूतामुभौरामंजनेश्वरम् ॥ १ ॥ अथरामःकथामेतांभूयएवमहायशाः ॥ कथयामासधर्मात्माप्रजापतिसुतस्यवै ॥२॥ सर्वास्ताविद्रुताद्दृष्ट्वाकिन्नरीऋषिसत्तमः ॥ उवाचरूपसंपन्नांतांस्त्रियंप्रहसन्निव ॥ ३ ॥ सोमस्याहंसुदयितःसुतःसुरुचिरानने॥भजस्वमांवरारोहेभक्त्यास्निग्धेनचक्षुषा॥ ४ ॥तस्यतद्वचनंश्रुत्वाशून्येस्वजनवर्जिते॥ इलासुरुचिरप्रख्यंप्रत्युवाचमहाप्रभम् ॥ ५ ॥ अहंकामचरीसौम्यतवास्मिवशवर्तिनी ॥ प्रशाधिमांसोमसुतयथेच्छसितथाकुरु ॥ ६ ॥

वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामष्टाशीतितमः सर्गः ॥ ८८ ॥ इस प्रकार किम्पुरुषीकी उत्पत्ति श्रवणकर भरत और लक्ष्मण रामचन्द्रसे कहने लगे कि, यह बडे आश्चर्यकी कथा है ॥ १ ॥ उनके अभिप्रायको जान महायशस्वी रघुनाथजी फिर धर्मात्मा प्रजापतिके पुत्रकी कथा कहने लगे ॥ २ ॥ उन सब किन्नर हुई स्त्रियोंको विचरण करती देख ऋषिरूप यौवनसम्पन्न उस स्त्रीसे हँसते हुए बोले ॥ ३ ॥ हे सुंदरमुखवाली ! हे वरानने ! मैं चन्द्रमाका पुत्र हूं, तुम हमारी ओर कृपादृष्टिसे निहारो और हमें भजो ॥ ४ ॥ उस जनशून्य देशमें इलाउनके ऐसे मनोहर वचन श्रवण कर उन महाकान्तिमान् बुधसे कहने लगी ॥ ५ ॥ सौम्य ! मैं स्वतंत्र तुम्हारी दासी तुम्हारे वश हूं हे चन्द्रपुत्र ! हमें शिक्षा कीजिये, जो आपकी इच्छा हो सो करो ॥ ६ ॥

उसके यह अद्भुत वचन सुन बुध बहुत प्रसन्न हुए, और वह चन्द्रमाके पुत्र उसके संग विहार करने लगे ॥ ७ ॥ कामासक्त बुधको बिहार करते २ चैत्रका महीना क्षणमात्रमें बीत गया ॥ ८ ॥ एक मास पूर्ण होनेपर चन्द्रमाके समान मुखवाले श्रीमान् प्रजापतिके पुत्र इल शयनसे उठकर ॥ ९ ॥ देखने लगे कि, चन्द्रमाके पुत्र सरोवरमें ऊपरको बाहें उठाये निरालम्ब तपस्या कर रहे हैं, राजा उनसे कहने लगे ॥ १० ॥ हे भगवन्! मैं इस पर्वतदुर्गमें अपनी सेनासहित आया था परन्तु यहां उनमेंसे किसीको नहीं देखता वह हमारे साथी कहां गये ॥ ११ ॥ उन राजर्षिके कि, जिनको अपने स्त्रीभावका स्मरण नहीं है वचन सुनकर बुध समझाते हुए सुन्दर वाणीसे बोले ॥ १२ ॥ बडी पत्थरोंकी वर्षासे आपके भृत्य मृतक हो गये, परंतु तुम महापवनसे व्याकुल हो हमारे आश्रममें

तस्यास्तदद्भुतप्रख्यंश्रुत्वाहर्षमुपागतः॥सवैकामीसहतयारेमेचंद्रमसःसुतः॥७॥बुधस्यमाधवोमासस्तामिलांरुचिराननाम्॥ गतोरमयतोऽत्यर्थं क्षणवत्तस्यकामिनः॥८॥ अथमासेतुसंपूर्णेपूर्णेन्दुसदृशाननः ॥ प्रजापतिसुतःश्रीमाञ्छयनेप्रत्यबुध्यत॥९॥ सोऽपश्यत्सोमजंतत्रतपंतंसलिलाशये ॥ ऊर्ध्वबाहुंनिरालंबंतंराजाप्रत्यभाषत ॥ १० ॥ भगवन्पर्वतंदुर्गंप्रविष्टोऽस्मिसहानुगः॥ नचपश्यामितत्सैन्यंक्वनुतेमामकागताः॥ ११ ॥ तच्छ्रुत्वातस्यराजर्षेर्नष्टसंज्ञस्यभाषितम् ॥ प्रत्युवाचशुभंवाक्यंसांत्वयन्परयागिरा॥१२॥अश्मवर्षेणमहताभृत्यास्तेविनिपातिताः॥त्वंचाश्रमपदेसुप्तोवातवर्षभयार्दितः ॥१३॥ समाश्वसिहिभद्रंतेनिर्भयोविगतज्वरः ॥ फलमूलाशनोवीरनिवसेहयथासुखम् ॥ १४ ॥ सराजातेनवाक्येनप्रत्याश्वस्तोमहामतिः॥प्रत्युवाचशुभंवाक्यंदीनोभृत्यजनक्षयात्॥१५॥त्यक्ष्याम्यहंस्वकंराज्यंनाहंभृत्यैर्विनाकृतः॥वर्तयेयंक्षणंब्रह्मन्समनुज्ञातुमर्हसि॥१६॥सुतोधर्मपरोब्रह्मञ्ज्येष्ठोममहायशाः॥शशबिंदुरितीख्यातःसमेराज्यंप्रपत्स्यते ॥१७॥ नहिशक्ष्याम्यहंहित्वाभृत्यदारान्सुखान्वितान्॥प्रतिवक्तुंमहातेजाःकिंचिदप्यशुभंवचः ॥१८॥तथाब्रुवतिराजेंद्रेबुधःपरममद्भुतम् ॥ सांत्वपूर्वमथोवाचवासस्तइहरोचताम् ॥१९॥

सोनेसे बचे ॥ १३ ॥ हे वीर ! आप सावधान हूजिये और सुखपूर्वक कंदमूल भोजन करते हमारे आश्रममें वास करो ॥ १४ ॥ राजा अपने भृत्योंका नाश सुनकर महादुःखी हुए परंतु बुधके वाक्योंसे सावधान होकर कहने लगे ॥ १५ ॥ हे ब्रह्मन् ! मैं भृत्योंके नाश होनेसे राज्य छोड दूँगा कारण कि, उनके विना मैं क्षणमात्र नहीं रह सक्का, आप मुझे जाने की आज्ञा दीजिये ॥१६॥ हे ब्रह्मन् ! मेरा महायशस्वी धर्मात्मा शशबिंदु नामक ज्येष्ठ पुत्र राज्य करेगा ॥ १७ ॥ परंतु मैं अपने भृत्य स्त्री जो कि सुखसे देशमें वसते हैं; उन्हें छोडकर यहां नहीं रहसक्का । हे तेजस्वी ! आप हमसे यहां रहनेके निमित्त अशुभ वचन न कहिये ॥१८॥ राजाके यह वचन श्रवण कर बुधजी समझाते हुए बोले, कि तुम कुछ काल पर्यन्त यहां रहो हम तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध करेंगे ॥१९॥

हे महाबली ! कर्दमपुत्र ! आप सन्ताप मत करो, एक वर्ष यहां रहोगे तो हम तुम्हारे मनोरथ पूर्ण करेंगे ॥ २० ॥ उन सरलकर्मा बुधके यह वचन श्रवण कर ब्रह्मवादी ऋषिके कहनेके उपरान्त राजा रहनेको सम्मत हुए ॥ २१ ॥ वह एक मास स्त्री होकर बुधके साथ बिहार करते और पुरुष होकर एक मासतक धर्मशास्त्र की आलोचना करते ॥ २२ ॥ इस प्रकार रहते २ जब नौ मास बीत गये बुधसे सुश्रोणि इलाने पुरुरवानाम ❀ पुत्रको उत्पन्न किया ॥ २३ ॥ उस शोभन नितम्बवालीने पुत्र उत्पन्न होते ही उसे वृद्धिको प्राप्त हुआ देखकर उपनयनादि कर्मके निमित्त उसके पिताको सौंप दिया, इलाके पुत्रका बुधके समान वर्ण और पराक्रम था ॥ २४ ॥ एक वर्षतक बुधजी जब २ वह राजा पुरुष होता तब तब उसके साथ अनेक कथा वार्ता कह उसका चित्त

नसंतापस्त्वयाकार्यःकार्दमेयमहाबल॥संवत्सरोषितस्याद्यकारयिष्यामितेहितम् ॥ २० ॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाबुधस्याक्लिष्टकर्मणः॥वासाय विदधेबुद्धिंयदुक्तंब्रह्मवादिना ॥ २१ ॥ मासंसस्त्रीतदाभूत्वारमयत्यनिशंसदा ॥ मासंपुरुषभावेनधर्मबुद्धिंचकारसः ॥ २२ ॥ ततःसानवमे मासिइलासोमसुतात्सुतम्॥जनयामाससुश्रोणीपुरूरवसमूर्जितम् ॥ २३ ॥जातमात्रेतुसुश्रोणीपितुर्हस्तेन्यवेशयत् ॥ बुधस्यसमवर्णंचइला पुत्रंमहाबलम् ॥२४॥ बुधस्तुपुरुषीभूतंसवैंवत्सरांतरम् ॥ कथाभीरमयामासधर्मयुक्ताभिरात्मवान्॥ २५ ॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे एकोननवतितमः सर्गः ॥८९॥ तथोक्तवतिरामेतुतस्यजन्मतदद्भुतम् ॥ उवाचलक्ष्मणोभूयोभरतश्चमहायशाः॥ १ ॥ इलासासोमपुत्रस्यसंवत्सरमथोषिता ॥ अकरोत्किंनरश्रेष्ठतत्त्वंशंसितुमर्हसि ॥ २ ॥ तयोस्तद्वाक्यमाधुर्यंनिशम्यपरिपृच्छतोः ॥ रामःपुनरुवाचेदंप्रजापतिसुतेकथाम् ॥ ३॥ पुरुषत्वंगतेशूरेबुधःपरमबुद्धिमान् ॥ संवर्तंपरमोदारमाजुहावमहायशाः ॥ ४ ॥

प्रसन्न करते रहे ॥ २५ ॥ इत्यार्षेश्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामेकोननवतितमः सर्गः ॥ ८९ ॥ रामचन्द्रके ऐसा कहनेपर और पुरूरवाका अद्भुत जन्मचरित्र श्रवणकर लक्ष्मण और भरतजी महायशस्वी रामचन्द्रसे फिर कहने लगे॥ १ ॥ हे भगवन् ! इलाने चन्द्रपुत्र बुधके स्थानपर एक वर्ष रहकर और क्या क्या किया सो आप श्रवण कराइये ॥ २ ॥ भरत लक्ष्मणके मधुर वचन सुनकर रामचन्द्र फिर प्रजापतिके पुत्रकी कथा कहने लगे ॥ ३ ॥ जब बारहवें मासमें महाबली राजा फिर पुरुष हुए तब बुधने महायशस्वी संवर्त ॥ ४ ॥

❀ यदि नवमास गर्भ रहकर पुरुरवाकी उत्पत्ति हुई तो भी दोष नहीं कारण कि पार्वती के वरसे गर्भादिक चिह्नको राजा भलजाताथा अथवा नव मासमें गर्भ रहा और तत्काल पुत्रकी उत्पत्ति हुई यहभी संभव है क्योंकि वह पुत्र उत्पन्न होतेही वृद्धिको प्राप्त होगया ॥

भृगुपुत्र च्यवन अरिष्टनेमि प्रमोदन मोदकर दुर्वासा इन सब मुनियोंको बुलाया॥५॥तब वाक्यजाननेवाले तत्त्वदर्शी बुधने इनसब मुनियोंको बुलाकर उन अपने मित्रोंसे धीरतासहित वचन कहे ॥ ६ ॥ यह महाबाहु इल पुत्र हैं आप जानते ही हैं कि,शिवजीके वनमें प्रवेश करनेके कारण एक महीने स्त्री एकमास पुरुष हो जाते हैं;सो वह आप कीजिये जिसमें इनका कल्याण होय॥७॥इसप्रकार यह वार्ता करते ही थे कि,महातेजस्वी महत्मा कर्दमजी बहुतसे मुनियोंको साथ लिये वहां आये ॥ ८ ॥ पुलस्त्य,क्रतु, वषट्कार ॐकार यह भी सब महातेजस्वी उस आश्रममें आये ॥ ९ ॥ वह सब एक दूसरेको देख प्रसन्न हो मिलकर बाह्लेश्वर राजाके उद्धारके निमित्त पृथक् २ वचन कहने लगे ॥ १० ॥ तब कर्दमजी अपनेपु त्रके हितकारक वचन कहने लगे हे ब्राह्मण ! हमारे वाक्य सुनो

च्यवनंभृगुपुत्रंचमुनिंचारिष्टनेमिनम् ॥ प्रमोदनंमोदकरंततोदुर्वाससंमुनिम् ॥ ५ ॥एतान्सर्वान्समानीयवाक्यज्ञस्तत्त्वदर्शनः॥ उवाचसर्वान्सुहृदोधैर्येणसुसमाहितान् ॥६॥ अयंराजामहाबाहुःकर्दमस्यइलःसुतः ॥ जानीतैनंयथाभूतंश्रेयोह्यत्रविधीयताम्॥७॥ तेषांसंवदतामेवंद्विजैःसहमहात्मभिः ॥ कर्दमस्तुमहातेजास्तदाश्रममुपागमत् ॥ ८ ॥ पुलस्त्यश्चक्रतुश्चैववषट्कारस्तथैवच॥ ओंकारश्चमहातेजास्तमाश्रममुपागमन् ॥ ९ ॥ तेसर्वेहृष्टमनसःपरस्परसमागमे ॥ हितैषिणोबाह्लिपतेःपृथग्वाक्यान्यथाब्रुवन् ॥ १० ॥ कर्दमस्त्वब्रवीद्वाक्यंसुतार्थंपरमंहितम् ॥ द्विजाःशृणुतमद्वाक्यंयच्छ्रेयःपार्थिवस्यहि॥ ११ ॥नान्यंपश्यामिभैषज्यमंतरावृषभध्वजम्॥नाश्वमेधात्परोयज्ञःप्रियश्चैवमहात्मनः॥ १२ ॥ तस्माद्यजामहेसर्वेपार्थिवार्थंदुरासदम्॥ कर्दमेनैवमुक्तास्तुसर्वएवद्विजर्षभाः॥१३॥ रोचयतिस्मतंयज्ञंरुद्रस्याराधनंप्रति ॥ संवर्तस्यतुराजर्षिःशिष्यःपरपुरञ्जयः ॥ १४ ॥ मरुत्तइतिविख्यातस्तंयज्ञंसमुपाहरत् ॥ ततोयज्ञोमहानासीद्बुधाश्रमसमीपतः ॥ १५ ॥

जिससे इस राजाका हित होगा ॥ ११ ॥ शिवजीको छोड़कर हम देखते हैं कि, इसकी और औषधि नहीं है और शिवजीको अश्वमेध यज्ञसे प्यारा और कोई यज्ञ नहीं है ॥ १२॥ इस कारण इस राजाके हित और शिवजीके प्रसन्न करनेके निमित्त हमको अश्वमेध करना उचित है कर्दमके यह वचन सुन वे सब ब्राह्मणश्रेष्ठ॥१३॥ शिवजीकी प्रसन्नताके अर्थ उस यज्ञको ही अच्छा मानते हुए; और विचार कर बोले कि, संवर्त ऋषिके शिष्य शत्रुतापन मरुत्तने ॥ १४ ॥ जो यज्ञ किया था उस अश्वमेध यज्ञकी सामग्री उस स्थानपर बहुत विद्यमान् है वह लाई जाय, तैसा अनुष्ठानकर ऋषियोंने बुधके आश्रमके निकट ही महान् अश्वमेध यज्ञका प्रारम्भ किया ॥ १५॥

इस यज्ञसे महायशस्वी शंकर बहुतही प्रसन्न हुए, और यज्ञ के समाप्त होने पर बड़ी प्रसन्नतासे ॥ १६ ॥ इलके निकटही शिवजी सब ब्राह्मणोंसे बोले हे ब्राह्मणो ! तुम्हारी भक्ति और इस अश्वमेध यज्ञसे मैं प्रसन्न हुआ हूँ ॥ १७ ॥ इस बाह्लदेशके राजाका कौनसा प्रिय कार्य करें, जब शंकरने ऐसा कहा तो वे ब्राह्मण सावधानतासे ॥ १८ ॥ शिवजीको प्रसन्न कर यही वर मांगने लगे कि इलको सदैव कालका पुरुषत्व प्रदान कीजिये तब शिवजीने प्रसन्न हो इलको सब कालका पुरुषत्व प्रदान किया ॥ १९ ॥ इलको यह वर दे शिवजी अन्तर्धान हुए जब शिव अन्तर्हित हुए और अश्वमेध समाप्त हुआ ॥ २० ॥ तब वह ज्ञानी मुनि अपने आश्रमोंको चले गये राजा भी उस बाह्लिदेशको छोडकर सुंदर मध्यदेशमें ॥ २१ ॥ प्रतिष्ठानपुर बसाता हुआ जो बडा विख्यात हुआ

रुद्रश्चपरमंतोषमाजगाममहायशाः ॥ अथयज्ञेसमाप्तेतुप्रीतःपरमयामुदा ॥ १६ ॥ उमापतिर्द्विजान्सर्वानुवाचइलसन्निधौ ॥ प्रीतोऽस्मिहयमेधेनभक्त्याचद्विजसत्तमाः ॥ १७ ॥ अस्याबाह्लिपतेश्चैवकिंकरोमिप्रियंशुभम् ॥ तथावदतिदेवेशेद्विजास्तेसुसमाहिताः ॥१८॥ प्रसादयंतिदेवेशंयथास्यात्पुरुषस्त्विला ॥ ततःप्रीतोमहादेवःपुरुषत्वंददौपुनः ॥१९॥ इलायैसुमहातेजादत्त्वाचांतरधीयत ॥ निवृत्तेहयमेधेचगतेचादर्शनंहरे ॥ २० ॥ यथागतंद्विजाःसर्वेतेऽगच्छन्दीर्घदर्शिनः ॥ राजातुबाह्लिमुत्सृज्यमध्यदेशेह्यनुत्तमम् ॥ २१ ॥ निवेशयामासपुरंप्रतिष्ठानंयशस्करम् ॥ शशबिंदुश्चराजर्षिर्बाह्लिपरपुरंजयः ॥ २२ ॥ प्रतिष्ठानेइलोराजाप्रजापतिसुतोबली ॥ सकालेप्राप्तवाँल्लोकमिलोब्रह्ममनुत्तमम् ॥ २३ ॥ ऐलःपुरूरवाराजाप्रतिष्ठानमवाप्तवान् ॥ ईदृशोह्यश्वमेधस्यप्रभावःपुरुषर्षभ ॥ २४ ॥ स्त्रीपूर्वःपौरुषंलेभेयच्चान्यदपिदुर्लभम् ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच०सा० उत्तरकांडेनवतितमःसर्गः ॥९०॥ एतदाख्यायकाकुत्स्थोभ्रातृभ्याममितप्रभः ॥ लक्ष्मणंपुनरेवाहधर्मयुक्तमिदंवचः ॥ १ ॥ वसिष्ठंवामदेवंचजाबालिमथकश्यपम् ॥ द्विजांश्चसर्वप्रवरानश्वमेधपुरस्कृतात् ॥ २ ॥

और बाह्लदेशका राज्य शशिबिंदु उसका ज्येष्ठपुत्र करने लगा जो बडा प्रतापी शत्रुको मारने वाला था ॥ २२ ॥ प्रजापतिके पुत्र महाबलवान् इल राजा ❀ प्रतिष्ठानपुरमें बहुत कालतक राज्य कर अन्तमें ब्रह्मलोकको गये ॥ २३ ॥ इलसे उत्पन्न हुए पुरूरवाजी प्रतिष्ठानपुरके राजा हुए, हे पुरुषश्रेष्ठ ! अश्वमेध यज्ञका ऐसा प्रभाव है ॥ २४ ॥ जो स्त्रीपन त्यागकर राजाने इसीके अनुष्ठानसे सदाके लिये पुरुषत्व पाया ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां नवतितमः सर्गः ॥ ९० ॥ अमितपराक्रमी रामचन्द्र भ्राताओंसे ऐसा कहकर फिर लक्ष्मणजीसे धर्मपूर्वक यह वचन बोले ॥ १ ॥ कि अश्वमेध यज्ञ करानेवाले वसिष्ठ वामदेव जाबालि कश्यप इन श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको बुलाओ ॥ २ ॥

❀ प्रतिष्ठानपुरको इस समय झूंसी कहतेहैं जो गंगापार प्रयागराजके सन्मुख विद्यमान है

इन सबके साथ सम्मत करके सावधानचित्त हो संपूर्ण लक्षणसम्पन्न घोडा छोडेंगे ॥ ३ ॥ यह वचन सुनकर शीघ्रतासे लक्ष्मणजी उन सब ब्राह्मणोंको बुलाकर लाये और रघुनाथजीसे निवेदन किया ॥ ४ ॥ वे सब ब्राह्मण देवताके समान रघुनाथजीको प्रणाम करते देखकर आशीर्वाद देने लगे ॥ ५ ॥ तब रघुनाथजी उन श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको प्रणाम कर अश्वमेध यज्ञके सम्बन्धमें धर्मसंयुक्त वचन कहने लगे ॥ ६ ॥ वे ऋषि रघुनाथजीके वचन सुन शिवजीको नमस्कार कर सब ब्रह्मवादी ऋषि अश्वमेध यज्ञकी बडाई करने लगे ॥ ७ ॥ रघुनाथजी उन श्रेष्ठ ब्राह्मणोंके वचन अश्वमेधकी प्रशंसामें सुन बहुत प्रसन्न हुए ॥ ८ ॥ ब्राह्मणोंको अश्वमेध यज्ञ करनेमें प्रवृत्ति देखकर रामचन्द्रजी लक्ष्मणजीसे बोले हे महाबाहो ! सुग्रीवजीके बुलानेको दूत भेजो ॥ ९ ॥ जो वह सम्पूर्ण वानर और वन

एतान्सर्वान्समानीयमंत्रयित्वाचलक्ष्मणः ॥ हयलक्षणसंपन्नंविमोक्ष्यामिसमाधिना ॥ ३ ॥ तद्वाक्यंराघवेणोक्तंश्रुत्वात्वरितविक्रमः ॥ द्विजान्सर्वान्समाहूयदर्शयामासराघवम् ॥४॥ तेदृष्ट्वादेवसंकाशंकृतपादाभिवंदनम् ॥ राघवंसुदुराधर्षमाशीर्भिःसमपूजयन् ॥५॥ प्रांजलिःसतदाभूत्वाराघवोद्विजसत्तमान् ॥ उवाचधर्मसंयुक्तमश्वमेधाश्रितंवचः ॥ ६ ॥ तेऽपिरामस्यतच्छ्रुत्वानमस्कृत्वावृषध्वजम् ॥ अश्वमेधंद्विजाःसर्वेपूजयंतिस्मसर्वशः ॥७॥ सतेषांद्विजमुख्यानांवाक्यमद्भुतदर्शनम् ॥ अश्वमेधाश्रितंश्रुत्वाभृशंप्रीतोऽभवत्तदा ॥८॥ विज्ञायकर्मतत्तेषांरामोलक्ष्मणमब्रवीत् ॥ प्रेषयस्वमहाबाहोसुग्रीवायमहात्मने ॥ ९ ॥ यथामहद्भिर्हरिभिर्बहुभिश्चवनौकसाम् ॥ सार्धमागच्छभद्रंतेअनुभोक्तुंमहोत्सवम् ॥१०॥ विभीषणश्चरक्षोभिःकामगैर्बहुभिर्वृतः ॥ अश्वमेधंमहायज्ञमायात्वतुलविक्रमः ॥११॥ राजानश्चमहाभागयेमेप्रियचिकीर्षवः ॥ सानुगाःक्षिप्रमायांतुयज्ञभूमिनिरीक्षकाः ॥ १२ ॥ देशांतरगतायेचद्विजाधर्मसमाहिताः ॥ आमंत्रयस्वतान्सर्वानश्वमेधायलक्ष्मण ॥ १३ ॥ ऋषयश्चमहाबाहोआहूयंतांतपोधनाः ॥ देशांतरगताःसर्वेसदाराश्चद्विजातयः ॥ १४ ॥ तथैवतालावचरास्तथैवनटनर्तकाः ॥ यज्ञवाटश्चसुमहान्गोमत्यानैमिषेवने ॥ १५ ॥ आज्ञाप्यतांमहाबाहोतद्धिपुण्यमनुत्तमम् ॥ शांतयश्चमहाबाहोप्रवर्तंतांसमंततः ॥ १६ ॥

वासियोंके साथ इस महोत्सव देखनेके निमित्त आवें ॥ १० ॥ और अतुलविक्रम विभीषणको लिख भेजो कि, इच्छाचारी राक्षसोंके साथ अश्वमेध महायज्ञ देखनेको आवें ॥ ११ ॥ और जो महाभाग हमारे हितकारी राजा हैं वे अपने साथियों सहित यज्ञभूमि देखनेको आवें ॥ १२ ॥ जो ब्राह्मण देशांतरोंमें अपने धर्ममें सावधान रहते हैं, उन सबको बुलावा भेज दो ॥ १३ ॥ हे लक्ष्मण ! ऋषि ! और तपस्वियोंको बुलाओ और देशांतरोंसे स्त्रीसहित ब्राह्मणोंको बुलाओ ॥ १४ ॥ इसीप्रकार अनेक गाने बजाने वाले नर्तकोंको बुलाओ और गोमतीनदीके किनारे नैमिषारण्यमें यज्ञ भूमिनिर्माण कीजाय ॥ १५ ॥ वह बडा पुण्यस्थान है वहांके ऋषियोंको निमंत्रण करो कि, वे सब प्रकारसे शान्तिपाठ करें ॥ १६ ॥

उन महात्माओंने नैमिषारण्यमें सहस्रों यज्ञ कियेहैं,हे लक्ष्मण!इसकारण वे इसयज्ञकीविधिको सम्यक्प्रकारसे जानतेहैं ॥१७॥ और ऐसा कोई दूत भेजाजाय जो दानमानसे संतुष्टहो,धर्मपूर्वक सबको निमंत्रण दे शीघ्र आवे॥१८॥हे महाबली ! बडे हृष्ट पुष्ट लक्ष बैलोंकी गाडीमें चावल भरकर वहां भेजे जायँ,और दश सहस्र बैलोंकी गाडियोंमें भर तिल मूंग अभी भेज दिये जायँ॥१९॥और इसीके अनुसार चना कुलथी उरद और लोन भेजा जाय,और इसीके अनुसार यथानुरूप घृत तैल और सुगंधित द्रव्य भेजे जायँ॥२०॥और भरतजी सबसे आगेसावधानतासे चांदी सोनेकी करोडों मुद्रा लेकर जायँ॥२१॥ सब बाजार और व्यापारी नट नर्तक रसोइयें और रसोई बनाने वाली स्त्री तथा और भी मंगलकारिणी युवा स्त्रियें जायँ ॥ २२ ॥ शास्त्र जानने वाले तथा बालक, बूढे और ब्राह्मण और

शतशश्चापिधर्मज्ञाःक्रतुमुख्यमनुत्तमम् ॥ अनुभूयमहायज्ञंनैमिषेरघुनंदन ॥ १७ ॥ तुष्टःपुष्टश्चसर्वोऽसौमानितश्चयथाविधि ॥ प्रतियास्यति धर्मज्ञशीघ्रमामंत्र्यतांजनः ॥१८॥ शतंबाहसहस्राणांतंडुलानांवपुष्मताम् ॥ अयुतंतिलमुद्गस्यप्रयात्वग्रेमहाबल ॥१९॥ चणकानांकुलित्थानांमाषाणांलवणस्यच ॥ अतोनुरूपंस्नेहंचगंधंसंक्षिप्तमेवच ॥ २० ॥ सुवर्णकोटचोबहुलाहिरण्यस्यशतोत्तराः ॥ अग्रतोभरतःकृत्वागच्छत्वग्रेसमाधिना ॥ २१ ॥ अंतरापणवीथ्यश्चसर्वेचनटनर्तकाः ॥ सूदानार्यश्चबहवोनित्ययौवनशालिनः ॥२२॥ भरतेनतुसार्धंतेयांतुसैन्यानिचाग्रतः ॥ नैगमान्बालवृद्धांश्चद्विजांश्चसुसमाहितान् ॥ २३ ॥ कर्मांतिकान्वर्धकिनःकोशाध्यक्षांश्चनैगमान् ॥ ममामातृस्तथासर्वाःकुमारांतःपुराणिच ॥ २४ ॥ कांचनींममपत्नींचदीक्षायज्ञांश्चकर्मणि ॥ अग्रतोभरतःकृत्वागच्छत्वग्रेमहायशाः ॥ २५ ॥ उपकार्यामहार्हाश्चपार्थिवानांमहौजसाम् ॥ सानुगानांनरश्रेष्ठव्यादिदेशमहाबलः ॥ २६ ॥ अन्नपानानिवस्त्राणिअनुगानांमहात्मनाम् ॥ भरतःसतदायातःशत्रुघ्नसहितस्तदा ॥२७॥ वानराश्चमहात्मानःसुग्रीवसहितास्तदा ॥ विप्राणांप्रवराःसर्वेचक्रुश्चपरिवेषणम् ॥ २८ ॥

सेना यह सब भरतजीके संग आगे २ जायँ ॥ २३ ॥ कार्याध्यक्ष,शास्त्र जाननेवाले, कोषाध्यक्ष, सेवक, कौशल्यादि सब हमारी माता और भरतादिकोंकी स्त्रियें ॥ २४ ॥ और दीक्षाकर्मके निमित्त सुवर्णकी हमारी पत्नीको भी लेकर महायशस्वी भरतजी आगे २ जायँ॥२५॥ बडे२ राजाओंके ठहरनेके निमित्त अनेक प्रकारके डेरे तम्बू भेजे जायँ,और सेवकोंके रहनेके निमित्त भी रावटी आदि जायँ,इसप्रकार महाबली रघुनाथजीने आज्ञा दी ॥ २६ ॥ इस प्रकार भरतजी शत्रुघ्नजीके सहित अन्न पान वस्त्र और नौकरोंको लेकर चले ॥२७॥ उस समय सुग्रीवके सहित महात्मा वानरगण समाचार सुनते ही आये और बडे २

ब्राह्मणोंकी सेवामें रहे॥२८॥विभीषणजी भी निमंत्रण पातेही राक्षस और राक्षसियोंको साथ लेकर आये और बडे तपस्वीमहात्मा ऋषियोंकी पूजा करने लगे॥ २९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामेकनवतितमः सर्गः ॥ ९१ ॥ इसप्रकार रघुनाथजीने सब सामग्री भिजवाकर सम्पूर्ण लक्षण सम्पन्न घोडा छोडा ॥ १ ॥ घोडेके संगमें ऋत्विजोंको भेजकर पीछेसे सेनासहित रघुनाथजीने नैमिषारण्यको गमन किया ॥ २ ॥ महाबाहु रघुनाथजीने परम अद्भुत यज्ञका स्थान देखा तो बडे प्रसन्न हुए और कहने लगे ॥ ३ ॥ यह देश बहुत उत्तम है ऐसा कह वहां निवास करने लगे व रघुनाथजीके रहनेपर बहुतसे राजा भेंट लाये रघुनाथजीने स्वीकार कर उन सबराजाओंकी प्रशंसा की ॥४॥ अन्नपान वस्त्र स्थानादिसे राजाओंका सत्कार करनेको भरत और शत्रुघ्न नियुक्त थे ॥५॥

विभीषणश्चरक्षोभिःस्त्रीभिश्चबहुभिर्वृतः ॥ ऋषीणामुग्रतपसांपूजांचक्रेमहात्मनाम् ॥ २९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे एकनवतितमः सर्गः ॥ ९१ ॥ तत्सर्वमखिलेनाशुप्रस्थाप्यभरताग्रजः॥ हयंलक्षणसंपन्नंकृष्णसारंमुमोचह ॥१॥ ऋत्विग्भिर्लक्ष्मणंसार्धमश्वेचविनियुज्यच ॥ ततोऽभ्यगच्छत्काकुत्स्थःसहसैन्येननैमिषम् ॥ २ ॥ यज्ञवाटंमहाबाहुर्दृष्ट्वापरममद्भुतम् ॥ प्रहर्षमतुलंलेभेश्रीमानितिचसोऽब्रवीत ॥ ३ ॥ नैमिषेवसतस्तस्यसर्वएवनराधिपाः ॥ आनिन्युरुपहारांश्चतान्रामःप्रत्यपूजयत् ॥ ४ ॥ अन्नपानादिवस्त्राणिसर्वोपकरणानिच ॥ भरतःसहशत्रुघ्नोनियुक्तोराजपूजने॥ ५ ॥ वानराश्चमहात्मानःसुग्रीवसहितास्तदा॥ परिवेषणंचविप्राणांप्रयताःसंप्रचक्रिरे ॥ ६ ॥ विभीषणश्चरक्षोभिर्बहुभिःसुसमाहितः॥ ऋषीणामुग्रतपसांकिंकरः समपद्यत ॥७॥ उपकार्यामहार्हाश्चपार्थिवानांमहात्मनाम् ॥ सानुगानांनरश्रेष्ठोव्यादिदेशमहाबलः ॥ ८ ॥ एवंसुविहितोयज्ञोह्यश्वमेधोह्यवर्तत ॥ लक्ष्मणेनसुगुप्तासाहयचर्याप्रवर्तत॥ ९ ॥ ईदृशंराजसिंहस्ययज्ञप्रवरमुत्तमम् ॥ नान्यश्शब्दोऽभवत्तत्रहयमेधेमहात्मनः ॥ १० ॥ छदतोदेहिविस्रब्धोयावत्तुष्यंतियाचकाः ॥ तावत्सर्वाणिदत्तानिक्रतुमुख्येमहात्मनः ॥ ११ ॥

और महात्मा वानर भी सुग्रीव सहित निमंत्रित ब्राह्मणोंकी सावधानतासे सेवा करने लगे॥६॥ और विभीषण भी अनेक राक्षसोंकेसहित सावधानीसे निमंत्रित तपस्वी ऋषियोंकी सेवा करने लगे ॥ ७ ॥ महात्मा राजाओंके रहनेके स्थान तथा उनका सन्मान और उनका सब प्रकार सत्कार महाबली रघुनाथजी स्वयं भी करते थे ॥ ८ ॥ इस प्रकारसे विधिपूर्वक यज्ञ आरंभ होने लगा, लक्ष्मणजी परिचर्या और रक्षामें नियुक्त हुए ॥ ९ ॥ इसप्रकार राजसिंह महाराज रामचन्द्रके उस श्रेष्ठ यज्ञमें जबतक यज्ञ होता रहा तबतक और कोई शब्द श्रवणगोचर नहीं हुआ ॥ १० ॥ एक यही शब्द सुननेमें आता था कि जबतक याचक सन्तुष्ट न हों बराबर उन्हें देते रहो, इस प्रकारसे उन महात्माके यज्ञमें निरन्तर दान हो रहा था ॥ ११ ॥

अनेक प्रकारके सुवर्ण शर्करा अन्नादिके ढेर प्रातःकाल लगाये जाते और संध्यासमयतक दे दिये जाते याचकोंकेमुखसे माँगने का शब्द जबतक निकला चाहे कि ॥१२॥ तबतक उनसे पहलेही वानर और राक्षस उसे वहप दार्थ दे देते उस यज्ञमें कोई मलीन क्लेश अथवा दीन नहीं था ॥१३॥ उस यज्ञमें सबही मनुष्य हृष्टपुष्ट थे और जो उस यज्ञमें महात्मा मार्कण्डेयादि चिरंजीवी मुनि थे ॥१४॥ वह कहने लगे हमने किसी यज्ञमें ऐसा दान नहीं देखा, जिसे सोनेकी इच्छा होती उसे सोना मिलता ॥१५॥ धनके इच्छावालेको धन, रत्नकी इच्छावालेको रत्न मिलता था, हिरण्य सुवर्ण वस्त्रादिकोंके ॥१६॥ दान करनेहीके निमित्त ढेरके ढेर लग रहे थे, न इन्द्र न चन्द्र न यम न वरुण ॥१७॥ देवताओंके यहां भी ऐसा यज्ञ हमने नहीं देखा, इस प्रकार वे सब तपस्वी कहने लगे सबही स्थानोंमें वानर और

विविधानिचगौडानिखांडवानितथैवच ॥ ननिसृतंभवत्योष्ठाद्वचनंयावदर्थिनाम् ॥ १२ ॥ तावद्वानररक्षोभिर्दत्तमेवाभ्यदृश्यत ॥ नकश्चिन्मलिनोवापिदीनोवाप्यथवाकृशः ॥ १३ ॥ तस्मिन्यज्ञवरेराज्ञोहृष्टपुष्टजनावृते ॥ येचतत्रमहात्मानोमुनयश्चिरजीविनः ॥ १४ ॥ नास्मरंस्तादृशंयज्ञंदानौघसमलंकृतम् ॥ यःकृत्यवान्सुवर्णेनसुवर्णलभतेस्मसः॥ १५ ॥ वित्तार्थीलभतेवित्तंरत्नार्थीरत्नमेवच ॥ हिरण्यानांसुवर्णानां रत्नानामथवासाम् ॥१६॥ अनिशंदीयमानानांराशिःसमुपदृश्यते ॥ नशक्रस्यनसोमस्ययमस्यवरुणस्यच ॥ १७ ॥ इदृशोदृष्टपूर्वोनएवमूचुस्तपोधनाः ॥ सर्वत्रवानरास्तस्थुःसर्वत्रवचराक्षसाः ॥ १८ ॥ वासोधनान्नकामेभ्यःपूर्णहस्तादद्दुर्भृशम् ॥ ईदृशोराजसिंहस्ययज्ञसर्वःगुणान्वितः ॥ संवत्सरमथोसाग्रंवर्ततेनचहीयते ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीम० वा० आदि० च० सा० उत्तरकांडे द्विनवतितमः सर्गः ॥९२॥ वर्तमाने तथाभूतेयज्ञेचपरमाद्भुते ॥ सशिष्यआजगामाशुवाल्मीकिर्भगवानृषिः ॥ १ ॥ सदृष्ट्वादिव्यसंकाशंयज्ञमद्भुतदर्शनम् ॥ एकांतऋषिसंघातश्चकारउटजान्छुभान् ॥ २ ॥ शकटांश्चबहून्पूर्णान्फलमूलांश्चशोभनान् ॥ वाल्मीकिवाटेरुचिरेस्थापयन्नविदूरतः ॥ ३ ॥

राक्षस ॥ १८ ॥ वस्त्र धन अन्नसे पूर्णदान करनेके निमित्त खडे दीखते थे इसप्रकार सर्वगुणसम्पन्न राजसिंह रघुनाथजीका यज्ञ वर्ष दिनसे कुछ अधिक पर्यन्त होता रहा परन्तु किसी बातमें कोई त्रुटि नहीं हुई ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां द्विनवतितमः सर्गः ॥ ९२ ॥ इसप्रकार वह परम अद्भुत यज्ञ हो रहा था उसी समय शिष्यों सहित भगवान् वाल्मीकि ऋषि आये ॥१॥ उन्होंने इसप्रकार परम अद्भुत यज्ञको देखकर ऋषियोंके स्थानोंके निकट एकान्तमें अपना डेरा किया और अपने बहुतसे शिष्योंके निमित्त पर्णशालायें बनाईं ॥२॥ फल मूलोंसे भरे बहुतसे छकडे भी अपनी पर्णशालाके निकट ही स्थापन करे, कारण कि, जनकजीसे अधिक स्नेह होनेके कारण उन्हें भ्राता मानते थे इसीसे रघुनाथजीके यहांका भोजन नहीं करते थे ॥३॥

इसप्रकारका निवास कर वाल्मीकिजीने अपने शिष्य लव और कुशसे एकान्तमें कहा तुम दोनों प्रसन्नतापूर्वक सम्पूर्ण रामायणकाव्यका गान करो ॥ ४ ॥ ऋषियोंके पवित्र स्थानमें ब्राह्मणोंके निवास स्थानोंमें गली [राजमार्ग तथा राजाओंके डेरोंमें ॥५॥ रामचन्द्रके भवनके द्वारपर, जहां ब्राह्मण यज्ञकर्म करते हैं और जहां ऋत्विक ब्राह्मण हों विशेष रीतिसे गान करो ॥६॥ यह जो अमृतके समान स्वादवाले पर्वतके समीप उत्पन्न हुए फल हैं इनको भोजन करके तुम इस काव्यका गान करो ॥ ७ ॥ हे सौम्य ! जो तुम इन फलोंको भक्षण कर गान करोगे तो श्रम नहीं होगा मीठे फलफूलोंके भक्षण करने उपरान्त गानेसे स्वर भी भङ्ग नहीं होगा ॥८॥ जो इस चरित्र श्रवण करनेके निमित्त महाराज रामचन्द्र तुमको बुलावें तो उनके और ऋषियोंके सन्मुख अवश्य प्रणामादि करके

सशिष्यावब्रवीद्धृष्टौयुवांगत्वासमाहितौ ॥ कृत्स्नंरामायणं काव्यं गायतांपरयामुदा ॥४॥ ऋषिवाटेषुपुण्येषुब्राह्मणावसथेषुच ॥ रथ्यासु राजमार्गेषुपार्थिवानांगृहेषुच ॥ ५ ॥ रामस्यभवनद्वारियत्रकर्मचकुर्वते ॥ ऋत्विजामग्रतश्चैवतत्रगेयंविशेषतः ॥६॥ इमानिचफलान्यत्रस्वादूनिविविधानिच ॥ जातानिपर्वताग्रेषुआस्वाद्यास्वाद्यगायताम् ॥ ७ ॥ नयास्यथःश्रमंवत्सौभक्षयित्वाफलान्यथ ॥ मूलानिचसुमृष्टानिनरागात्परिहास्यथः ॥ ८ ॥ यदिशब्दापयेद्रामःश्रवणायमहीपतिः ॥ ऋषीणामुपविष्टानांयथायोगंप्रवर्तताम् ॥ ९ ॥ दिवसेविंशतिःसर्वागेयामधुरयागिरा ॥ प्रमाणैर्बहुभिस्तत्रयथोद्दिष्टंमयापुरा ॥ १० ॥ लोभश्चापिनकर्तव्यःस्वल्पोऽपिधनवांछया ॥ किंधनेनाश्रमस्थानांफलमूलाशिनां सदा॥ ११ ॥ यदिपृच्छेत्सकाकुत्स्थोयुवांकस्येतिदारकौ ॥ वाल्मीकेरथशिष्यौद्वौब्रूतमेवंनराधिपम् ॥ १२ ॥ इमास्तंत्रीःसुमधुराःस्थानंवाऽपूर्वंदर्शनम् ॥ मूर्च्छयित्वासुमधुरंगायतांविगतज्वरौ ॥ १३ ॥ आदिप्रभृतिगेयंस्यान्नचावज्ञायपार्थिवम् ॥ पिताहिसर्वभूतानांराजाभवतिधर्मतः ॥ १४ ॥ तद्युवांहृष्टमनसौश्वःप्रभातेसमाहितौ ॥ गायेथांमधुरंगेयंतंत्रीलयसमन्वितम् ॥ १५ ॥

गाना ॥ ९ ॥ मैंने जो प्रमाणादि सहित सर्ग निर्माण किये हैं वह कोमल बाणीसे वीस सर्ग प्रतिदिन गाना क्योंकि इतनेही गाने चाहिये ॥ १० ॥ यदि कोई श्रवण कर कुछ धन देने लगे तो थोडेसे धनकाभी लोभ मत करना और कह देना हम फल मूलाहारी आश्रममें रहनेवालोंको धन लेकर क्या करना है ॥ ११ ॥ यदि रघुनाथजी पूछें कि तुम कौन और किसके पुत्र हो; तो महाराजसे इतनाही कहना कि, हम वाल्मीकिके शिष्य हैं ॥१२॥ मधुर वीणातंत्र लेकर उनके स्थान और यथोचित ताल लय स्वरसे अपूर्व मूर्च्छनाके संगीतसे सुखपूर्वक मधुर वाणीसे गाना ॥१३॥ प्रथम सर्गसेही गाना प्रारम्भ करना राजा बुलावें तो उनकी अवज्ञा न करना कारण कि धर्मसे राजा सब प्राणियोंका पिता है, उनके सन्मुख हास्यादि न करना ॥१४॥ सो तुम प्रसन्नमन हो कल

प्रातःकालसे वीणाकी लयसे संयुक्त इस काव्यको गाना ॥ १५ ॥ प्राचेतस मुनि वाल्मीकिजी इसप्रकार उन्हें अनेक विधिसे समझाकर मौन हुए ॥ १६ ॥ वे दोनों जानकीके पुत्र इस प्रकारसे मुनिसे शिक्षित हो ऐसाही करेंगे यह कह वहांसे चले आये ॥१७॥ वे दोनों कुमार ऋषिकी कही अद्भुत वाणी हृदयमे धारण करके सुखपूर्वक उस स्थानमें ऐसे वास करते हुए जिसप्रकार च्यवनजीके स्थान पर उनके वचन सुन अश्विनीकुमार रहे थे ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां त्रिनवतितमः सर्गः ॥ ९३ ॥ जब वह रात्रि बीती और प्रातःकाल हुआ तब लव कुश उठे और स्नानसे निश्चिन्त हो अग्निहोत्रकर ऋषिके कहे अनुसार रामायण गाने लगे ॥ १ ॥ वह पूर्व आचार्यकी निर्माण करी पहले कभी न सुनी पाठ्यके और गाने षड्जादि स्वरोंसे भूषित ॥ २ ॥

इतिसंदिश्यबहुशोमुनिःप्राचेतसस्तदा ॥ वाल्मीकिःपरमोदारस्तूष्णीमासीन्महामुनिः ॥ १६ ॥ संदिष्टौमुनिनातेनताबुभौमैथिलीसुतौ ॥ तथैवकरवावेतिनिर्जग्मतुररिंदमौ ॥१७॥ तामद्भुतांतौहृदयेकुमारौनिवेश्यवाणीमृषिभाषितांतदा ॥ समुत्सुकौतौसुखमूषतुर्निशांयथाश्विनौभार्गवनीतिसंहिताम् ॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वाल्मी०आदि०च०सा०उत्तरकांडे त्रिनवतितमः सर्गः ॥ ९३ ॥ तौरजन्यांप्रभातायांस्नातौहुतहुताशनौ ॥ यथोक्तमृषिणापूर्वंसर्वंतत्रोपगायताम् ॥१॥ तांसशुश्रावकाकुत्स्थःपूर्वाचार्यविनिर्मिताम् ॥ अपूर्वांपाठ्यजातिंचगेयेनसमलंकृताम् ॥२॥ प्रमाणैर्बहुभिर्बद्धांतंत्रीलयसमन्विताम् ॥ बालाभ्यांराघवःश्रुत्वाकौतूहलपरोऽभवत् ॥ ३ ॥ अथकर्मांतरेराजासमाहूयमहामुनीन् ॥ पार्थिवांश्चनरव्याघ्रःपंडितान्नैगमांस्तथा ॥ ४ ॥ पौराणिकाञ्शब्दविदोयेवृद्धाश्चद्विजातयः ॥ स्वराणांलक्षणज्ञांश्चउत्सुकान्द्विजसत्तमान् ॥५॥ लक्षणज्ञांश्चगांधर्वान्नैगमांश्चविशेषतः ॥ पादाक्षरसमासज्ञाञ्छंदःसुपरिनिष्ठितान् ॥ ६ ॥ कलामात्राविशेषज्ञाञ्ज्योतिषेचपरंगतान् ॥ क्रियाकल्पविदश्चैवतथाकार्यविशारदान् ॥ ७ ॥ हेतूपचारकुशलान्हैतुकांश्चबहुश्रुतान् ॥ छंदोविदःपुराणज्ञान्वैदिकान्द्विजसत्तमान् ॥ ८ ॥

ध्वनि परिच्छेदादि प्रमाणोंसे भूषित वीणाकी लयसे संयुक्त मनोहर काव्य बालकोंके मुखसे श्रवणकर रघुनाथजी बडे विस्मित हुए ॥ ३ ॥ यज्ञके अवसानमें जब अवकाशका समय हुआ तब नरसिंह रघुनाथजीने महा मुनि राजा और शास्त्रके जाननेवालोंको और पंडितोंको बुलाया ॥४॥ पौराणिकाचार्य, व्याकरणाचार्य और वृद्ध ब्राह्मण, षड्जादि स्वरोंके जाननेवाले संगीताचार्य तथा और भी सुननेके उत्कंठित ब्राह्मणश्रेष्ठ बुलाये गये ॥५॥ सामुद्रिकाचार्य संगीतविद्याके जाननेवाले पुरवासी साहित्याचार्य, पाद अक्षर समास गुरुलघुप्रयोगोंके जाननेहारे छंदविद्यामें निपुण पिंगलाचार्य ॥६॥ कला मात्रा प्रस्तार मेरु मर्कटी आदिके ज्ञाता तथा ज्योतिषाचार्य तथा व्यवहारके जाननेहारे क्रियाकल्पसूत्रके जाननेवाले तथा औरभी कार्यकुशल ॥ ७ ॥ केवल व्यवहारके जाननेवाले, तर्क जानने

वाले बहुश्रुत तथा छंद वेद और पुराणोंके जाननेवाले ब्राह्मणोंको बुलाया ॥ ८ ॥ चित्र काव्यके जाननेवाले सूत्रोंके ज्ञाता गीत और नृत्यावद्याम चतुर इन सब पुरुषोंको ❋ बुलाकर लवकुशकोभी सभामें बुलाया ॥ ९ ॥ उस समय रघुनाथजीकी आज्ञा पाय वे दोनों मुनिकुमार श्रोताओंका हर्ष वर्द्धन करते रामायण गाने लगे ॥ १० ॥ जिस समय उन्होंने तालस्वरयुक्त मनुष्योंमें अपूर्व यह काव्य गाया तो इसे श्रवणकर कोई भी तृप्तिको प्राप्त न हुए किन्तु अधिक २ सुननेकी इच्छा करनेलगे ॥ ११ ॥ सम्पूर्ण मुनिगण और राजा महाआनंदित हुए और नेत्रोंसे पीते हुएसे वारंवार लवकुशको देखने लगे ॥ १२ ॥ और वे सब एकसाथ परस्पर कहनेलगे कि यह ऐसे विदित होते हैं मानो रामचन्द्रके बिम्बसे ही दो प्रतिबिम्ब निकालदिये हैं ॥१३॥ यदि इनके जटा न होती और यह वल्कलवस्त्र न पहरे होते तो इनमें और महाराजमें कोई भेद न होता ॥ १४ ॥ इस प्रकारसे परदेशवासी कह रहे थे कि, नारदजीका कहा बालकाण्डका

चित्रज्ञान्वृत्तसूत्रज्ञान्गीतनृत्यविशारदान्॥एतान्सर्वान्समानीयगातारौसमवेशयत्।९॥तेषांसवदतांतत्रश्रोतृणांहर्षवर्धनम्॥गेयंप्रचक्रतुस्तत्रता वुभौमुनिदारकौ॥१०॥ततःप्रवृत्तंमधुरंगांधर्वमतिमानुषम्॥नचतृप्तिंययुःसर्वेश्रोतारोगेयसंपदः॥११॥हृष्टामुनिगणाःसर्वेपार्थिवाश्चमहौजसः॥ पिबंतइवचक्षुर्भिःपश्यंतिस्ममुहुर्मुहुः॥१२॥ ऊचुःपरस्परंचेदंसर्वएवसमाहिताः ॥ उभौरामस्यसदृशौबिंबाद्बिंबमिवोद्धृतौ॥ १३ ॥ जटिलौ यदिनस्यातांनवल्कलधरौयदि॥ विशेषंनाधिगच्छामोगायतोराघवस्यच ॥ १४ ॥ एवंप्रभाषमाणेषुपौरजानपदेषुचः ॥ प्रवृत्तमादितःपूर्वसर्गं नारददर्शितम् ॥१५॥ ततःप्रभृतिसर्गांश्चयावद्विंशत्यगायताम् ॥ ततोऽपराह्णसमयेराघवःसमभाषत॥१६॥ श्रुत्वाविंशतिसर्गांस्तान्भ्रातरंभ्रातृ वत्सलः ॥ अष्टादशसहस्राणिसुवर्णस्यमहात्मनोः ॥ १७ ॥ प्रयच्छशीघ्रंकाकुत्स्थयदन्यदभिकांक्षितम् ॥ ददौसशीघ्रंकाकुत्स्थोबालयोर्वैपृथ क्पृथक्॥१८॥ दीयमानंसुवर्णंतुनागृह्णीतांकुशीलवौ ॥ ऊचतुश्चमहात्मानौकिमनेनेतिविस्मितौ॥१९॥ वन्येनफलमूलेननिरतौवनवासिनौ ॥ सुवर्णेनहिरण्येनकिंकरिष्यावहेवने ॥ २० ॥ तथातयोःप्रब्रुवतोःकौतूहलसमन्विताः ॥ श्रोतारश्चैवरामश्चसर्वएवसुविस्मिताः ॥२१॥

प्रथम सर्ग प्रारम्भ किया ॥ १५ ॥ और वहांसे उन्होंने गाया तब वीस सर्ग श्रवणकरके मध्याह्नके समय रामचन्द्रजी बोले ॥ १६ ॥ भ्रातृवत्सल रघुनाथजी उन वीस सर्गोंको श्रवण कर भ्रातासे कहने लगे कि आजके दिन इस काव्यके गानेमें इन दोनों कुमारोंको अठारह अठारह सहस्र सुवर्णमुद्रा ॥१७॥ शीघ्रही दे दो, और जो कुछ इनकी इच्छा हो सो देदो, यह सुनकर उन दोनों कुमारोंको पृथक् २ सुवर्ण मुद्रा दीगई ॥ १८ ॥ परन्तु उस सुवर्णको उन दोनों कुमारोंने नहीं लिया और विस्मित होकर कहने लगे हम इन्हें लेकर क्या करेंगे ॥ १९ ॥ हम वनवासी वनमें रहकर कंद मूल फलसे अपना निर्वाह करते हैं हम वनमें इस सुवर्णको लेकर क्या करेंगे ॥ २० ॥ इन दोनोंके वचन सुनकर संपूर्ण श्रोता और रामचन्द्र बडे विस्मित हुए ॥ २१ ॥

❋ इससे सम्पूर्ण गुणसम्पन्न रामायण है यह स्फुट अभिप्राय है ॥

तब महातेजस्वी रघुनाथजीने उस काव्यकी प्राप्ति सुननेमें उत्सुक होकर उन दोनों कुमारोंसे पूँछा ॥ २२ ॥ यह काव्य कितना बडा है महात्मा कविका, क्या विषय है कितने कालतक इस काव्यकी स्थिति रहेगी और इस बडे काव्यके निर्माण करनेहारे मुनिश्रेष्ठ कहां हैं ॥ २३ ॥ रामचन्द्रके यह वचन सुन वे दोनों ऋषिकुमार कहने लगे कि, इस काव्यके कर्त्ता भगवान् वाल्मीकिजी हैं जो आपके यज्ञमें आये हैं जिन्होंने यह संपूर्ण चरित्र तुम्हें सुनानेको कहा है ॥ २४ ॥ इस काव्यमें चौबीस सहस्र श्लोक हैं सौ उपाख्यान हैं भृगुवंशावतंस महर्षि वाल्मीकिजीने बनाया है ॥ २५ ॥ प्रथमकांडसे प्रारंभ कर महात्मा ऋषिने इसमें ५०० पांचशत सर्ग छः कांडोंमें कहे हैं और सातवां उत्तरकांड है ॥२६॥ महर्षि वाल्मीकिजीने इस महत् काव्यको आपहीकी कीर्तिसे परिपूर्ण

तस्यचैवागमंरामःकाव्यस्यश्रोतुमुत्सुकः ॥ पप्रच्छतौमहातेजास्तावुभौमुनिदारकौ ॥२२॥ किंप्रमाणामिदंकाव्यंकाप्रतिष्ठामहात्मनः ॥ कर्ता काव्यस्यमहतःक्वचासौमुनिपुंगवः ॥ २३ ॥ पृच्छंतंराघवंवाक्यमूचतुर्मुनिदारकौ ॥ वाल्मीकिर्भगवान्कर्तासंप्राप्तोयज्ञसंविधम् ॥ येनेदंचरितंतुभ्यमशेषंसंप्रदर्शितम् ॥ २४ ॥ सन्निबद्धंहिश्लोकानांचतुर्विंशत्सहस्रकम् ॥ उपाख्यानशतंचैवभार्गवेणतपस्विना ॥ २५ ॥ आदिप्रभृतिवैराजन्पंचसर्गशतानिच ॥ कांडानिषट्कृतानीहसोत्तराणिमहात्मना ॥ २६ ॥ कृतानिगुरुणास्माकमृषिणाचरितंतव ॥ प्रतिष्ठाजीवितंयावत्तावत्सर्वस्यवर्तते ॥२७॥ यदिबुद्धिःकृताराजञ्छ्रवणायमहारथ ॥ कर्मान्तरेक्षणीभूतस्तच्छृणुष्वसहानुजः ॥२८॥ बाढमित्यब्रवीद्रामस्तौचानुज्ञाप्यराघवौ ॥ प्रहृष्टौजग्मतुःस्थानेयत्रास्तेमुनिपुंगवः ॥२९॥ रामोऽपिमुनिभिःसार्धपार्थिवैश्चमहात्मभिः ॥ कृत्वातद्गीतिमाधुर्यंकर्मशालामुपागमत् ॥३०॥ शुश्रावतत्तालयोपपन्नंसर्गान्वितंसस्वरशब्दयुक्तम् ॥ तंत्रीलयव्यंजनयोगयुक्तंकुशीलवाभ्यांपरिगीयमानम् ॥३१॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० च० सा० उत्तरकांडे चतुर्नवतितमः सर्गः ॥९४॥

किया है और जब तक सृष्टि रहेगी तब तक इस काव्यकी प्रतिष्ठा होगी ॥ २७ ॥ हे महाराज ! यदि संपूर्ण सुननेकी इच्छा हो तो आप यज्ञक्रियाके अवकाशमें प्रतिदिन भ्राताओं सहित श्रवण कीजिये ॥ २८ ॥ यह वचन श्रवणकर रघुनाथजी बोले हम सब सुनेंगे, तब वे रघुनाथजीकी आज्ञासे प्रसन्न हो वाल्मीकि मुनिके निकट गये ॥ २९ ॥ रघुनाथजी भी मुनि और महात्मा राजाओंके संग इस काव्यकी मधुरता श्रवण कर यज्ञ शालामें आये ॥ ३० ॥ इस प्रकारसे सर्गबंध महाकाव्यको ताल गीति लय स्वर शब्द बीणाकी मूर्छना व्यंजना सहित कुश लवके मुखसे रघुनाथाजीने श्रवण किया ॥ ३१ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्वा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां चतुर्णवतितमः सर्गः ॥ ९४ ॥

इस प्रकारसे उस महाकाव्यको रघुनाथजीने मुनि राजा वानरोंके सहित बहुत दिन तक सुना (६११ सर्ग उत्तरकांड सहित साढेतीस दिनमें श्रवण किया)॥१॥ जब उत्तरकांडकी कथा श्रवण करनेसे यह ज्ञात हुआ कि, यह दोनों सीताके पुत्र हैं, तब सभामें रामचन्द्र कहने लगे ॥ २ ॥ शुद्ध आचरण वाले शीघ्रगामी दूतोंसे रघुनाथजीने कहा कि, भगवान् वाल्मीकिजीके आश्रममें जाकर हमारी ओरसे कहो ॥३॥ कि, यदि जानकी शुद्धाचार पापरहित हैं तो आपकी अनुमतिसे सभामें आकर अपनी शुद्धता प्रगट करें ॥४॥ यह उनसे कहकर मुनिकी सम्मति और सीताकी इच्छाको जानकर (कि वे अपनी शुद्धता प्रगट किया चाहती हैं) तुम बहुत शीघ्र हमारे पास आओ ॥५॥ जनककुमारी कल प्रातःकालही सभाके बीचमें हमें ❀ और अपने शुद्ध करनेके निमित्त शपथ करें ॥६॥ रघु

रामोबहून्यहान्येवतद्गीतपरमंशुभम् ॥ शुश्रावमुनिभिःसार्धंपार्थिवैःसहवानरैः ॥ १ ॥ तस्मिन्गीतेतुविज्ञायसीतापुत्रौकुशीलवौ ॥ तस्याःपरिषदोमध्येरामोवचनमब्रवीत् ॥ २ ॥ दूताञ्शुद्धसमाचारानाहूयात्ममनीषया ॥ मद्वचोब्रूतगच्छध्वमितोभगवतोऽन्तिके ॥ ३ ॥ यदिशुद्धसमाचारायदिवावीतकल्मषा ॥ करोत्विहात्मनःशुद्धिमनुमान्यमहामुनिम् ॥ ४ ॥ छंदंमुनेश्चविज्ञायसीतायाश्चमनोगतम् ॥ प्रत्ययंदातुकामायास्ततःशंसतमेलघु ॥५॥ श्वःप्रभातेतुशपथंमैथिलीजनकात्मजा ॥ करोतुपरिषन्मध्येशोधनार्थममैवच ॥ ६ ॥ श्रुत्वातुराघवस्यैतद्वचःपरममद्भुतम् ॥ दूताःसंप्रययुर्बाढंयत्रवैमुनिपुंगवः ॥ ७ ॥ तेप्रणम्यमहात्मानंज्वलंतममितप्रभम् ॥ ऊचुस्तेरामवाक्यानिमृदूनिमधुराणिच ॥८॥ तेषांतद्भाषितंश्रुत्वारामस्यचमनोगतम् ॥ विज्ञायसुमहातेजामुनिर्वाक्यमथाब्रवीत् ॥ ९ ॥ एवंभवतुभद्रंवोयथावदतिराघवः ॥ तथाकरिष्यतेसीतादैवतंहिपतिःस्त्रियः ॥ १० ॥ तथोक्तामुनिनासर्वेराजदूतामहौजसः ॥ प्रत्येत्यराघवंसर्वंमुनिवाक्यंबभाषिरे ॥ ११ ॥ ततःप्रहृष्टःकाकुत्स्थःश्रुत्वावाक्यंमहात्मनः ॥ऋषींस्तत्रसमेतांश्चराज्ञश्चैवाभ्यभाषत॥ १२ ॥

नाथजीके यह वचन सुन 'जो आज्ञा' ऐसा कहकर शीघ्रतासे दूत वाल्मीकिजीके निकट गये ॥७॥ वे अग्निके समान दीप्तिवाले वाल्मीकिजीको प्रणाम करके रघुनाथजीके कोमल और मधुर वाक्य उनको सुनाने लगे ॥ ८ ॥ महातेजस्वी वाल्मीकिजीने उनके वचन और रघुनाथजीके मनकी बात जानकर दूतोंसे कहा ॥९॥ तुम्हारा कल्याण हो जो रामचन्द्र कहते हैं ऐसा ही होगा और जानकीजी भी शपथ करेंगी कारण कि, स्त्रियोंका पतिही देवता है ॥१०॥ मुनिसे यह वचन सुनकर वह मुनिके वचन शीघ्रतासे आकर दूतोंने रघुनाथजीसे कहे ॥ ११ ॥ यह वचन सुनकर महात्मा रामचन्द्रजी प्रसन्न हुए; और उन राजा तथा

❀ रामचन्द्र जानकी की सुन्दरतासे लुब्ध हैं इसकारण उन्हें घरमें रखलिया यह अपयश रघुनाथजीने अपनेमें माना ।

ऋषियोंसे कहने लगे ॥१२॥ आप सब अपने शिष्य और सेवकों सहित सब राजा; सीताकी शपथ देखिये, तथा और जिनकी इच्छा होवे वेभी देखें ॥१३॥ यह महात्मा रामचन्द्रके वचन सुनकर सब ऋषिमंडलीमें धन्य धन्यकी ध्वनि होने लगी ॥ १४ ॥ और महात्मा राजाभी रघुनाथजीकी प्रशंसा करने लगे कि, आपके सिवाय और कोई इस जगत्में ऐसे वचन नहीं कह सकता ॥ १५ ॥ इस प्रकार शत्रु तापन रघुनाथजीने प्रातःकालको सीताकी शपथका निश्चय कर उन सबको बिदा किया ॥१६॥ महाप्रतापी महात्मा राजसिंह रघुनाथजीने इस प्रकार॥ दूसरे दिन प्रातःकाल जानकीके शपथका निश्चय करके सम्पूर्ण मुनि और राजा ओंको बिदा किया ॥ १७ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां पंचनवतितमः सर्गः ॥ ९५ ॥ वह रात्रि बीतनेपर

भगवंतःसशिष्यावैसानुगाश्चनराधिपाः ॥ पश्यंतुसीताशपथंयश्चैवान्योऽपिकांक्षते ॥१३॥ तस्यतद्वचनंश्रुत्वाराघवस्यमहात्मनः ॥ सर्वेषा मृषिख्यानांसाधुवादोमहानभूत् ॥ १४ ॥ राजानश्चमहात्मानःप्रशंसंतिस्मराघवम् ॥ उपपन्नंनरश्रेष्ठत्वय्येवभुविनान्यतः ॥ १५ ॥ एवंवि निश्चयंकृत्वाश्वोभूतइतिराघवः ॥ विसर्जयामासतदासर्वांस्ताञ्छत्रुसूदनः ॥ १६ ॥ इतिसंप्रविचार्यराजसिंहःश्वोभूतेशपथस्यनिश्चयम् ॥ विससर्जमुनीन्नृपांश्चसर्वान्समहात्मामहतोमहानुभावः ॥ १७॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीयेआदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे पंचनवति तमः सर्गः ॥ ९५ ॥ तस्यांरजन्यांव्युष्टायांयज्ञवाटंगतोनृपः ॥ ऋषीन्सर्वान्महातेजाःशब्दापयतिराघवः ॥ १ ॥ वसिष्ठोवामदेवश्चजाबालि रथकाश्यपः ॥ विश्वामित्रोदीर्घतमादुर्वासाश्चमहातपाः ॥ २ ॥ पुलस्त्योऽपितथाशक्तिर्भार्गवश्चैववामनः ॥ मार्कंडेयश्चदीर्घायुर्मौद्गल्यश्चम हायशाः ॥ ३ ॥ गर्गश्चच्यवनश्चैवशतानंदश्चधर्मवित् ॥ भरद्वाजश्चतेजस्वीअग्निपुत्रश्चसुप्रभः ॥ ४ ॥ नारदःपर्वतश्चैवगौतमश्चमहायशाः ॥ एतेचान्येचबहवोमुनयःसंशितव्रताः ॥ ५ ॥ कौतूहलसमाविष्टाःसर्वएवसमागताः ॥ राक्षसाश्चमहावीर्यावानराश्चमहाबलाः ॥ ६ ॥ सर्वएव समाजग्मुर्महात्मानःकुतूहलात् ॥ क्षत्त्रियायेचशूद्राश्चवैश्याश्चैवसहस्रशः ॥ ७ ॥

महातेजस्वी रामचन्द्रने यज्ञशालामें गमन कर, सम्पूर्ण ऋषियोंको बुलाय ॥ १ ॥ वसिष्ठ, वामदेव, जाबालि, काश्यप, विश्वामित्र, दीर्घतमा, महातेजस्वी दुर्वासा ॥ २ ॥ पुलस्त्य, शक्ति, भार्गव, वामन, दीर्घायुमार्कण्डय, महातेजस्वी मौद्गल्य ॥ ३ ॥ गर्ग, च्यवन, धर्मात्मा शतानन्द, तेजस्वी भरद्वाज अग्निपुत्र सुप्रभ ॥ ४ ॥ नारद, पर्वत, महायशस्वी गौतमजी इनको आदिले बहुतसे महाव्रतधारी मुनि ॥ ५ ॥ कौतूहलसे सब आये, और महावीर्यवान् राक्षस तथा महाबली वानर ॥ ६ ॥ और भी महात्मा, बडी उत्कंठासे यज्ञशालामें आये और सहस्रों क्षत्त्रिय वैश्य शूद्र ॥ ७ ॥

और अनेक देशोंसे आये हुए महाव्रतधारी ब्राह्मणभी जानकीकी शपथ देखनेको सभामें आये ॥८॥ इस प्रकारसे सब आयकर प्रस्तरकी मूर्तिके समान सभामें मौन होकर बैठ गये, सबका आना सुनकर मुनिश्रेष्ठ वाल्मीकिजी जानकीके सहित सभामें आये ॥९॥ रामचन्द्रको मनमें धारण किये आंखोंमें आंसू भरे मुख नीचा किये हाथ जोडे श्रीमती महारानी जानकी वाल्मीकिजीके पीछे २ आईं ॥१०॥ वाल्मीकिजीके पीछे ब्रह्माजीके पश्चात् श्रुतिके समान जानकीको आती देखकर सभामें * धन्य २ की ध्वनि होने लगी ॥ ११ ॥ उस समय सीताके दर्शनसे उत्पन्न हुए अत्यन्त दुःखसे सभाके लोग व्याकुल होगये और उनका बडा कोलाहल होने लगा ॥ १२ ॥ कोई २ धन्य राम ! कोई २ धन्य सीता !! कोई २ धन्य राम सीता !!! इस प्रकारसे कहकर कोलाहल करने लगे

नानादेशगताश्चैवब्राह्मणाःसंशितव्रताः ॥ सीताशपथवीक्षार्थंसर्वएवसमागताः ॥ ८ ॥ तदासमागतंसर्वमश्मभूतमिवाचलम् ॥ श्रुत्वामुनिवरस्तूर्णंससीतःसमुपागमत् ॥९॥ तमृषिंपृष्ठतःसीताअन्वगच्छदवाङ्मुखी ॥ कृतांजलिर्बाष्पकलाकृत्वाराममंमनोगतम् ॥१०॥ तांदृष्ट्वाश्रुतिमायांतींब्रह्माणमनुगामिनीम् ॥ वाल्मीकेःपृष्ठतःसीतांसाधुवादोमहानभूत् ॥ ११ ॥ ततोहलहलाशब्दःसर्वेषामेवमाबभौ ॥ दुःखजन्मविशालेनशोकेनाकुलितात्मनाम् ॥ १२ ॥ साधुरामेतिकेचित्तुसाधुसीतेतिचापरे ॥ अभावेवचतत्रान्येप्रेक्षकाःसंप्रचुक्रुशुः ॥ ॥१३॥ ततोमध्येजनोघस्यप्रविश्यमुनिपुंगवः ॥ सीतासहायोवाल्मीकिरितिहोवाचराघवम् ॥ १४ ॥ इयंदाशरथेःसीतासुव्रताधर्मचारिणी ॥ अपवादात्परित्यक्ताममाश्रमसमीपतः ॥ १५ ॥ लोकापवादभीतस्यतवराममहाव्रत ॥ प्रत्ययंदास्यतेसीतातामनुज्ञातुमर्हसि ॥१६॥ इमौतुजानकीपुत्रावुभौचयमजातकौ ॥ सुतौतवैवदुर्धर्षौसत्यमेतद्ब्रवीमिते ॥ १७ ॥ प्रचेतसोऽहंदशमःपुत्रोराघवनंदन ॥ नस्मराम्यनृतंवाक्यमिमौतुतवपुत्रकौ ॥ १८ ॥

॥ १३ ॥ तब मुनिश्रेष्ठ वाल्मीकिजी जानकीको संग लिये सभाके बीचमें प्रवेश कररामचन्द्रसे बोले ॥ १४ ॥ यह जानकी रामचन्द्रकी भार्या सुव्रता और धर्मचारिणी हैं इनको अपवादसे रघुनाथजी मेरे आश्रमके निकट त्याग दिया ॥ १५ ॥ हे महाव्रत रघुनाथजी ! आपने लोकापवादके भयसे जानकीको त्याग दिया, इस विषयमें जानकी अपनी शुद्धिका परिचय देंगी. आप आज्ञा दीजिये ॥ १६ ॥ हे रघुनाथजी ! यह दोनों महाबली दुर्द्धर्ष तुम्हारे पुत्र हैं जो जानकीके उदरसे एक साथही उत्पन्न हुए हैं, यह हमारे वचन आप सत्य जानें ॥ १७ ॥ हे रामचन्द्रजी ! मैं वरुणजीका दशवां पुत्र हूं मैंने आजतक कभी असत्यका स्मरण भी नहीं किया, यह दोनों तुम्हारे पुत्र हैं इसमें सन्देह नहीं ॥ १८ ॥

* सभासद मनमें–ध्यायेंहीसिया जनकदुलारी । तपसे कृशित अंग सब दुर्बल रघुपतिकेप्राणोंकी प्यारी १ वल्कल वस्त्र किये तनु धारण दृष्टि चरणकी ओर पसारी २ जिनके संग सहस्रों दासी सो इकली ऋषि संग पधारी ३ मन नाँहि धीरधरतइस अवसर आती है मूर्च्छा अति भारी ४ पतिके हेततपोवन तपकर सहे दुःखऔर कष्ट अवारी ५ आज न सकल करें अनुमोदन तजहों देह तुरत अविचारी ५

मैंने सहस्रवर्षतक तपस्या की है यदि जानकीका चरित्र अशुद्ध हो तो मुझे तपस्याका फल कुछभी न प्राप्त हो ॥ १९ ॥ मन वचन कर्मसे जो पाप हमने कभी नहीं किया है, यदि जानकी पापरहित हैं, तो इस अनुष्ठानका फल हमें प्राप्त हो ॥ २० ॥ हे रघुनन्दन ! हम पंच भूतोंसे निर्मित श्रोत्रादि पंच इंद्रिय और छठे मनसे जानकीको शुद्ध जानकर वनसे अपने आश्रमको लेगये थे ॥ २१ ॥ यह पतिव्रता शुद्धाचार और पापरहित हैं, लोकापवादसे भीत हुए आपको अपना परिचय देंगी ॥ २२ ॥ हे रघुनन्दन ! मैंने दिव्यदृष्टिसे देखलिया है कि, जानकी शुद्ध हैं ! आपभी जानते हैं कि, हमारी प्रियाजानकी शुद्ध हैं, परन्तु आपने इन्हें लोकापवादसे त्यागन करदिया है ❀ ॥ २३ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां षण्णवतितमः सर्गः ॥ ९६ ॥ वाल्मीकिजीके

बहुवर्षसहस्राणितपश्चर्यामयाकृता ॥ नोपाश्नीयांफलंतस्यादुष्टेयंयदिमैथिली ॥१९॥ मनसाकर्मणावाचाभूतपूर्वंनकिल्बिषम् ॥ तस्याहंफलमश्नामिअपापामैथिलीयदि ॥ २० ॥ अहंपंचसुभूतेषुमनःषष्ठेषुराघव ॥ विचिंत्यसीताशुद्धेतिजग्राहवननिर्झरे ॥ २१ ॥ इयंशुद्धसमाचाराअपापपतिदेवता ॥ लोकापवादभीतस्यप्रत्ययंतवदास्यति ॥ २२ ॥ तस्मादियंनरवरात्मजशुद्धभावादिव्येनदृष्टिविषयेणमयाप्रदिष्टा ॥ लोकापवादकलुषीकृतचेतसायात्यक्तात्वयाप्रियतमाविदितापिशुद्धा॥२३॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणेवाल्मीकीये आदिकाव्येच०सा०उत्तरकाण्डे षण्णवतितमः सर्गः ॥९६॥ वाल्मीकिनैवमुक्तस्तुराघवःप्रत्यभाषत ॥ प्रांजलिर्जगतोमध्येदृष्ट्वातांवरवर्णिनीम् ॥१॥ एवमेतन्महाभागयथावदसिधर्मवित् ॥ प्रत्ययस्तुममब्रह्मंस्तववाक्यैरकल्मषैः ॥ २ ॥ प्रत्ययश्चपुरावृत्तोवैदेह्याःसुरसन्निधौ ॥ शपथश्चकृतस्तत्रतेनवेश्मप्रवेशिता ॥ ३ ॥ लोकापवादोबलवान्येनत्यक्ताहिमैथिली ॥ सेयंलोकभयाद्ब्रह्मन्नपापेत्यभिजानता ॥ परित्यक्तामयासीतातद्भवान्क्षंतुमर्हति ॥ ४ ॥

यह वचन सुन और सभाके बीचमें जानकीको खडी देख रघुनाथजी कर जोड कहने लगे ॥ १ ॥ हे महाभाग धर्मज्ञ ! जो आप कहते हैं वह ठीक ऐसेही है, आपके पापरहित वाक्योंका मुझे विश्वास है ॥ २ ॥ कारण कि, लंका जीतनेके उपरान्त देवताओंके समीपमें जानकीने शपथ की थी इसी कारण हम इनको शुद्ध जानकर घर लाये थे ॥ ३ ॥ परन्तु फिर लोकापवादको बलवान् जानकर हमने जानकीको त्यागा हे भगवन् ! मैं जानता हूं कि, जानकीमें कुछ पाप नहीं, परन्तु लोकापवादके भयसे ही मैंने जानकीको त्यागा था, यह अपराध आप क्षमा कीजिये ॥ ४ ॥

❀ क०आज श्रीरामके दर्वारमें यह दृश्य भारी है। सभासद जितनेहें सबसे ये एक विनतीहमारी है।।१।।जो में कहताहूं उसको ध्यान देकर सब कोई सुना। मेरी वाणी नहीं झूठी यह सब जगने विचारी है ।। २ ।। सो में श्रीसूर्य धर्म औ चन्द्रको कर साक्षी इसमें तनकभी झूठ बोलूं तपस्याझूठ सारी है ।। ३ ।। महारानी ये सीता है बनाये तपसिनका। नहीं कुछ पापहे इनमें गिरा यह सत उचारी है ।। ४ ।। जो तुम मानो मेरी वानी तो जानो शुद्धसीताको। नहीं कुछमिथ है संदेह शपथक्या तपसे भारी है ।। ५ ।।

जगतमें अति शुद्ध जानकीके इन यमज पुत्रोंको भी म जानता हूँ कि, यह हमारेही पुत्र हैं इसी कारण इनमें हमारी बडी प्रीति है ॥५॥ रामचन्द्रका सीताकी शुद्धिका अन्य अभिप्राय जानकर (कि अब यह साकेत लोकको जायँगी) उस समय उस शपथ देखनेको सब देवता आये ॥ ६ ॥ ब्रह्माजीको आगे करके १२ आदित्य, ८ वसु, ११ रुद्र, १३ विश्वदेव, ४९ पवन ॥७॥ साध्यगण, सम्पूर्ण परमर्षि, नाग, गरुड, सिद्ध वह सब प्रसन्न होकर आये ॥ ८ ॥ देवता और ऋषियोंको देखकर रघुनाथजी फिर बोले कि; मुझे ऋषिके पापरहित वचनोंका पूर्ण विश्वास है ॥९॥ जगतमें अत्यन्त शुद्ध जानकीमें मेरी पूर्ण प्रीति है रघुनाथजी ऐसा कह रहे हैं कि, महारानी शपथ करेंगी, इस बातको सुनकर व्याकुल हो बहुत मनुष्य आये ॥ १० ॥ उस समय पुण्यरूप पवित्र मनोरम

जानामिचेमौपुत्रौमेयमजातौकुशीलवौ ॥ शुद्धायांजगतीमध्येमैथिल्यांप्रीतिरस्तुमे ॥ ५ ॥ अभिप्रायंतुविज्ञायरामस्यसुरसत्तमाः ॥ सीतायाःशपथेतस्मिन्सर्वएवसमागताः ॥ ६ ॥ पितामहंपुरस्कृत्यसर्वएवसमागताः ॥ आदित्यावसवोरुद्राविश्वेदेवामरुद्गणाः ॥ ७ ॥ साध्याश्चदेवाःसर्वेतेसर्वेचपरमर्षयः ॥ नागाःसुपर्णाःसिद्धाश्चतेसर्वेहृष्टमानसाः ॥ ८ ॥ दृष्ट्वादेवानृषींश्चैवराघवःपुनरब्रवीत् ॥ प्रत्ययोमेनरश्रेष्ठऋषिवाक्यैरकल्मषैः ॥ ९ ॥ शुद्धायांजगतोमध्येवैदेह्यांप्रीतिरस्तुमे ॥ सीताशपथसंभ्रांताःसर्वएवसमागताः ॥ १० ॥ ततोवायुःशुभःपुण्योदिव्यगंधोमनोरमः ॥ तंजनौघंसुरश्रेष्ठोह्लादयामाससर्वतः ॥ ११ ॥ तदद्भुतमिवाचिंत्यंनिरैक्षंतसमाहिताः ॥ मानवाःसर्वराष्ट्रेभ्यःपूर्वंकृतयुगेयथा ॥ ॥ १२ ॥ सर्वान्समागतान्दृष्ट्वासीताकाषायवासिनी ॥ अब्रवीत्प्रांजलिर्वाक्यमधोदृष्टिरवाङ्मुखी ॥ १३ ॥ यथाहंराघवादन्यंमनसापिनचिंतये ॥ तथामेमाधवीदेवीविवरंदातुमर्हति ॥१४॥

वायु सुगंधिसहित चलने लगा जिसके स्पर्शसे वह सब मनुष्य और सब देवता अत्यन्त प्रसन्न हुए ॥ ११ ॥ सब लोग उसे अद्भुत और अचिंत्यके समान देखने लगे और सबके मन ऐसे हो गये मानो सतयुग हो गया ॥ १२ ॥ सब मनुष्यों और देवताओं तथा चौदह भुवनके प्राणियोंको एकत्र देखकर तपस्विनियोंके वस्त्र धारण करे नीचेको मुख किये हाथ जोड जनककुमारी जानकी बोलीं *॥ १३ ॥ जिसप्रकार मनसे भी कभी मैंने रघुनाथजीके सिवाय अन्यका स्मरण नहीं किया तो माधवी पृथ्वी फटजाय कि, मैं उसमें समाजाऊँ ॥ १४ ॥

---

* विहाग–धरणी सुनिये विनय हमारी । माता तुम घटकी सब जानत सकल विश्वकी धारनहारी ॥१॥ अपनी पुत्रीकी यह विपता कैसे तोपै जात निहारी ॥ २ ॥ आज लाजमैया रखलीजे मोको हाथ पसारी ॥३॥ जो मन कर्म वच रघुपति विन नहीं औरकी ओर निहारी ॥४॥ तो तुम फटो बीच दो मोहिको सहि न जात विपता अब भारी ॥५॥ राम विना पतिदेव न दूजा तो फटज सत वचन विचारी ॥६॥ मैया गोद पसार उठाले करदीजे इस जगसे न्यारी ॥७॥

मन वचन कर्मसे जो मैं रघुनाथजीका स्मरण पूजन करती रही हूं तो पृथ्वी देवी फटजाय कि मैं उसमें समाजाऊँ ॥ १५ ॥ जो मैं रामचन्द्रसे अन्य किसीको नहीं जानती हूँ और मेरा यह वचन सत्य है तो पृथ्वी विदीर्ण हो जाय, कि मैं उसमें समाजाऊँ ॥ १६ ॥ जानकीके ऐसा कहनेपर बडा अद्भुत हुआ, कि तत्काल पृथ्वीको भेदकर उत्तम दिव्य सिंहासन निकला ॥ १७ ॥ उस सिंहासनको अमित विक्रमी नाग अपने शिरोंपर उठा रहे थे, उन नागोंका दिव्य शरीर रूई था, और दिव्य रत्न धारण किये थे ॥ १८ ॥ उसके ऊपर साक्षात् धरणीदेवी बैठी हुई थी उसने जानकीको दोनों भुजाओंसे आलिंगन कर पुत्री ! अच्छी तरहसे हो, ❋ ऐसा कहकर सिंहासनपर बैठा लिया ॥१९॥ ज्योंही जानकी सिंहासनपर बैठी कि, वह पातालको

मनसाकर्मणावाचायथारामंसमर्चये ॥ तथामेमाधवीदेवीविवरंदातुमर्हति ॥१५॥ यथैतत्सत्यमुक्तंमेवेद्मिरामात्परंनच ॥ तथामेमाधवीदेवी विवरंदातुमर्हति ॥ १६ ॥ तथाशपंत्यांवैदेह्यांप्रादुरासीत्तदद्भुतम् ॥ भूतलादुत्थितंदिव्यंसिंहासनमनुत्तमम् ॥ १७ ॥ ध्रियमाणंशिरोभिस्तु नागैरमितविक्रमैः ॥ दिव्यंदिव्येनवपुषादिव्यंरत्नविभूषितैः॥ १८ ॥ तस्मिंस्तुधरणीदेवीवाहुभ्यांगृह्यमैथिलीम् ॥ स्वागतेनाभिनंद्यैनामास नेचोपवेशयत् ॥ १९ ॥ तामासनगतांदृष्ट्वाप्रविशंतींरसातलम् ॥ पुष्पवृष्टिरविच्छिन्नादिव्यासीतामवाकिरत् ॥ २० ॥ साधुकारश्चसुमहा न्देवानांसहसोत्थितः॥ साधुसाध्विति वैसीतेयस्यास्तेशीलमीदृशम् ॥२१॥ एवंबहुविधावाचोह्यंतरिक्षगताःसुराः ॥ व्याजह्रुर्हृष्टमनसोदृष्ट्वा सीताप्रवेशनम् ॥२२॥ यज्ञवाटगताश्चापिमुनयःसर्वएवते॥ राजानश्चनरव्याघ्राविस्मयान्नोपरेमिरे॥२३॥अंतरिक्षेचभूमौचसर्वेस्थावरजंगमाः॥ दानवाश्चमहाकायाःपातालेपन्नगाधिपाः ॥२४॥ केचिद्विनेदुःसंहृष्टाःकेचिद्ध्यानपरायणाः ॥ केचिद्रामंनिरीक्षंतेकेचित्सीतामचेतसः ॥२५॥

जाने लगा, उसी समय दिव्य पुष्पवर्षा जानकीके ऊपर होने लगी ॥२०॥ और उस समय देवताओंके बीचमें साधुवाद होने लगा, हे सीता ! तुम धन्य हो जो तुम्हारा शील ऐसा है ॥२१॥ इसप्रकारसे वचन देवता आकाशसे कहने लगे, और जानकीका पातालमें प्रवेश देख प्रसन्न हुए ॥२२॥ और यज्ञस्थानमें आये हुए सम्पूर्ण मुनि और रामचन्द्र महाविस्मयको प्राप्त हुए ॥ २३ ॥ अन्तरिक्ष और पृथ्वीमें सम्पूर्ण स्थावर जंगम महाकाय दानव और पातालमें सर्प ॥२४॥ कोई प्रसन्न हो शब्द करने लगे, और कोई ध्यान करने लगे कोई रामचन्द्रको देखने लगे, कोई सीतामें मन लगाये ॥ २५ ॥

❋ पुत्री जीमें दुःख नलाओ ।। हो तुम शपथ करी सब सांची, अब मत मृत्युलोक दुख पावो ।। १ ।। तुमसी सती रामसे भर्ता सुने नहीं मनसोच न लाओ ।। २ ।। चलो नित्य आनन्द लोकमें अब मत बेटी देर लगावो ।। ३ ।। दर्शन कर लो अन्तिम पतिके पुनि साकेत लोकको आओ ।। ४ ।।

उन सम्पूर्ण ऋषियोंका समागम और सीताजीका प्रवेश देखकर मुहूर्त मात्रतक संपूर्ण जगत् मोहित हो गया ॥ २६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां सप्तनवतितमः सर्ग ॥९७॥ जानकीको रसातलमें प्रवेशित हुई देखकर रघुनाथजीके निकटमें संपूर्ण वानर रोदन करने और मुनि धन्यधन्य कहने लगे ॥ १ ॥ काष्ठदंडमें आश्रित हो आंसुसे नेत्र पूरितकिये नीचेको शिर दीनमन हो रघुनाथजी अत्यन्तही व्याकुल हुए ॥ २ ॥ और बहुत काल तक रोदन करते नेत्रोंसे अविरल अश्रु त्यागन करते करते महाक्रोधित होकर रघुनाथजी बोले ॥ ३ ॥ जो कि, लक्ष्मीके समान रूपवाली जानकीजी हमारे देखतेही देखते पातालमें प्रवेश कर गई इस कारण हमें वह शोक प्राप्त हुआ है जैसा कभी नहीं हुआ था ॥ ४ ॥ जब कि, जनकसुताको मैं समुद्रके पारसे

सीताप्रवेशनंदृष्ट्वातेषामासीत्समागमः ॥ तन्मुहूर्तमिवात्यर्थंसमंसंमोहितंजगत् ॥२६॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे सप्तनवतितमः सर्गः ॥९७॥ रसातलंप्रविष्टायांवैदेह्यांसर्ववानराः ॥ चुक्रुशुःसाधुसाध्वीतिमुनयोरामसन्निधौ ॥ १ ॥ दंडकाष्ठम वष्टभ्यबाष्पव्याकुलितेक्षणः ॥ अवाक्शिरादीनमनारामोह्यासीत्सुदुःखितः ॥ २ ॥ सरुदित्वाचिरंकालंबहुशोबाष्पमुत्सृजन् ॥ क्रोधशोकस माविष्टोरामोवचनमब्रवीत् ॥३॥ अभूतपूर्वंशोकंमेमनःस्प्रष्टुमिवेच्छति ॥ पश्यतोमेयथानष्टासीताश्रीरिवरूपिणी ॥४॥ साऽदर्शनपरासीताल्कांपारेमहोदधेः ॥ ततश्चापिमयानीताकिंपुनर्वसुधातलात् ॥ ५ ॥ वसुधेदेविभवतिसीतानिर्यात्यतांमम ॥ दर्शयिष्यामिवारोषंयथामामवग च्छसि ॥६॥ कामंश्वश्रूर्ममैवत्वंत्वत्सकाशात्तुमैथिली ॥ कर्षताफालहस्तेनजनकेनोद्धृतापुरा ॥७॥ तस्मान्निर्यात्यतांसीताविवरंवाप्रयच्छमे ॥ पातालेनाकपृष्ठेवावसेयंसहितस्तया ॥८॥ आनयत्वंहितांसीतांमत्तोऽहंमैथिलीकृते ॥ नमेदास्यसिचेत्सीतांयथारूपांमहीतले ॥९॥ सपर्वतवनां कृत्स्नांव्यथयिष्यामितेस्थितिम् ॥ नाशयिष्याम्यहंभूमिंसर्वमापोभवंत्विह ॥१०॥

भी ले आया कि; जहां उनके रहनेको नहीं कोई जानता था फिर पृथ्वीके नीचेसे लाना क्या बडी बात है ॥५॥ हे पृथ्वी देवी भगवति ! तुम हमारी जानकीको लादो यदि तुम हमारा अनादर करोगी तो हम भी तुमपर अपना क्रोध प्रकाश करेंगे ॥६॥ और तुम हमारी सासुतुल्य भी हो कारण कि, जनकने हलकर्षण करते समय तुमसे जानकीको पाया था ॥७॥ इसकारण या तो जानकीको लाओ या मुझे भी प्रवेश करनेको स्थान दो पाताल या स्वर्गमें जहां भी मैं जानकीके निकटही बसनेकी इच्छा करता हूं ॥८॥ हे वसुधे ! जानकीको लाओ मैं उनके निमित्त अत्यन्त व्याकुल हूं और जो तुम जानकीको नहीं दोगी तो मैं भी पृथ्वीमें प्रवेश करूंगा ॥ ९ ॥ और इतने परभी नहीं मानोगी तो पर्वत वन सहित तुझको व्याकुल करके इस सब पृथ्वीको जलमें मग्न कर दूंगा इसमें सब

जल हो जायगा ॥१०॥ जब क्रोध और शोकसे रघुनाथजीने ऐसा कहा तो ब्रह्माजी देवताओंके सहित रघुनाथजीसे आकर बोले ॥११॥ हे राम ! हे सुव्रत ! आप किसी प्रकार सन्ताप न कीजिये हे शत्रुतापन ! आपने जो पूर्वकालमें देवताओंसे कहा था कि, हम इतने कार्यके निमित्त पृथ्वीमें अवतार लेंगे उसे स्मरण कीजिये ॥१२॥ हम आपको स्मरण नहीं कराते हे महाभुज ! हम प्रार्थना करते हैं कि आप अपने दुर्द्धर्ष वैष्णवरूपका इस समय ध्यान कीजिये अब मनुष्यनाट्यका समय ॥ १३ ॥ हो चुका जानकीजी सब प्रकारसे पवित्र और सदा तुम्हारी अनुगामिनी हैं तुम्हारे आश्रित तपोबलसे नागलोकको गई ॥१४॥ अब वैकुंठमें इनका और तुम्हारा फिर संगम होगा इस सभाके मध्यमें जो कुछ मैं आपसे कहता हूं वह मेरे वचन सुनो ॥ १५ ॥ और यह काव्य जो सब काव्योंमें उत्तम काव्य है उसका आगे बडा विस्तार होगा (अर्थात् इसकी कीर्ति होगी) जो इसमें लिखा है उसीके अनुसार करो ॥१६॥ हे राम ! जन्मसे

एवंब्रुवाणेकाकुत्स्थेक्रोधशोकसमन्विते ॥ ब्रह्मासुरगणैःसार्धमुवाचरघुनंदनम् ॥११॥ रामरामनसंतापंकर्तुमर्हसिसुव्रत ॥ स्मरत्वंपूर्वकंभावंमंत्रचामित्रकर्शन ॥ १२ ॥ नखलुत्वांमहाबाहोस्मारयेयमनुत्तमम् ॥ इमंमुहूर्तंदुर्धर्षस्मरत्वंजन्मवैष्णवम् ॥ १३ ॥ सीताहिविमलासाध्वीतव पूर्वपरायणा ॥ नागलोकं सुखंप्रायात्त्वदाश्रयतपोबलात् ॥ १४ ॥ स्वर्गेतेसंगमोभूयोभविष्यतिनसंशयः ॥ अस्यास्तुपरिषन्मध्येयद्ब्रवीमि निबोधतत् ॥१५॥ एतदेवहिकाव्यंतेकाव्यानामुत्तमंश्रुतम् ॥ सर्वंविस्तरतोरामव्याख्यास्यतिनसंशयः ॥ १६ ॥ जन्मप्रभृतितेवीरसुखदुःखोपसेवनम् ॥ भविष्यदुत्तरंचेहसर्वंवाल्मीकिनाकृतम् ॥ १७ ॥ आदिकाव्यमिदंरामत्वयिसर्वंप्रतिष्ठितम् ॥ नह्यन्योऽर्हतिकाव्यानांयशोभाग्राघवादृते ॥ १८ ॥ श्रुतंतेपूर्वमेतद्धिमयासर्वंसुरैः सह ॥ दिव्यमद्भुतरूपंचसत्यवाक्यमनावृतम् ॥१९॥ सत्वंपुरुषशार्दूलधर्मेणसुसमाहितः ॥ शेषंभविष्यंकाकुत्स्थकाव्यंरामायणंशृणु ॥ २० ॥ उत्तरंनामकाव्यस्यशेषमत्रमहायशः ॥ तच्छृणुष्वमहातेजऋषिभिःसार्धमुत्तमम्॥ २१ ॥ नखल्वन्येनकाकुत्स्थश्रोतव्यमिदमुत्तमम् ॥ परमऋषिणावीरत्वयैवरघुनंदन ॥ २२ ॥

लेकर जो आपको सुख दुःखकी प्राप्ति हुई है वह सब वाल्मीकिजीने इसमें वर्णन किया है और शेष भविष्य उत्तर भी कहा है जिसमें होनहार वर्णन है॥ १७ ॥ हे रघुनाथ ! इस आदिकाव्यकी सब कथा आपमें प्रतिष्ठा वाली हैं, आपको छोडकर इस काव्यके यशको कोई नहीं पासकता ॥ १८ ॥ यदि कहो तुम किस प्रकारसे जानते हो तो हमने दिव्य अद्भुत रूप सत्य वचन संयुक्त और अज्ञानविनाशक यह काव्य देवताओंके साथही तुम्हारे यज्ञमें सब सुना है ॥ १९ ॥ हे पुरुषसिंह रघुनाथजी ! आप अब सावधान होकर शेष रामायणको भी श्रवण कीजिये ॥२०॥ हे महातेजस्वी महायशस्वी ! आप उत्तरकांडको जो शेष रहा है इन ऋषियोंके साथही श्रवण कीजिये॥२१॥इस शेष काण्डके श्रवण करनेमें अन्य भरतादिके श्रवण करनेका प्रयोजन नहीं है हे वीर रघुनंदन !

ब्रह्मलोकनिवासी ऋषियोंके साथ इसे केवल आपही सुनिये ॥२२॥ तीनों भुवनके ईश्वर ब्रह्माजी रामचन्द्रसे यह कह (बांधव) देवताओंके सहित ब्रह्मलोकको गये ॥ २३ ॥ उनके संगमें जो ब्रह्मलोकनिवासी महात्मा ऋषि थे फिर रघुनाथजीकी यज्ञशालामें ब्रह्माजीकी आज्ञासे चले आये ॥२४॥ कारण कि, उन्हेंभी रघुनाथजीके भविष्य चरित्र सुननेकी इच्छा थी इस प्रकार रघुनाथजीने देवदेव ब्रह्माजीकी सुन्दर वाणी सुनकर ॥२५॥ परमतेजस्वी वाल्मीकिजीसे कहा, हे भगवन् ! यह ब्रह्मलोकनिवासी ऋषि भविष्य श्रवणकी इच्छा करते हैं ॥ २६ ॥ जो कुछ हमारे विषयमें भविष्य है वह प्रातःकाल सुनाया जाय, ऐसा निश्चय कर और कुश लवको साथ ले ॥ २७ ॥ उन सब मनुष्योंको बिदाकर श्रीरामचन्द्रजी वाल्मीकिजीकी पर्णशालामें आये ॥ २८ ॥इत्यार्षे श्रीमद्रा०

एतावदुक्त्वावचनंब्रह्मात्रिभुवनेश्वरः ॥ जगामत्रिदिवंदेवोदेवैःसहसबांधवैः ॥ २३ ॥ येचतत्रमहात्मानऋषयोब्रह्मलौकिकाः ॥ ब्रह्मणासमनुज्ञातान्यवर्ततमहौजसः ॥२४॥ उत्तरंश्रोतुमनसोभविष्यंयच्चराघवे ॥ ततोरामःशुभांवाणींदेवदेवस्यभाषिताम् ॥२५॥ श्रुत्वापरमतेजस्वीवाल्मीकिमिदमब्रवीत् ॥ भगवञ्श्रोतुमनसाऋषयोब्राह्मलौकिकाः ॥ २६ ॥ भविष्यदुत्तरंयन्मेश्वोभूतेसंप्रवर्तताम् ॥ एवंविनिश्चयंकृत्वासंप्रगृह्यकुशीलवौ ॥ २७ ॥ तंजनौघंविसृज्याथपर्णशालामुपागमत् ॥ तामेवशोचतःसीतांसाव्यतीताचशर्वरी॥ २८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे अष्टनवतितमः सर्गः ॥९८॥ रजन्यांतुप्रभातायांसमानीयमहामुनीन् ॥ गीयतामविशंकाभ्यांरामःपुत्रावुवाचह ॥ १ ॥ ततःसमुपविष्टेषुमहर्षिषुमहात्मसु ॥ भविष्यदुत्तरंकाव्यंजगतुस्तौकुशीलवौ ॥ २ ॥ प्रविष्टायांतुसीतायांभूतलंसत्यसंपदा ॥ तस्यावसानेयज्ञस्यरामःपरमदुर्मनाः ॥ ३ ॥ अपश्यमानोवैदेहींमेनेशून्यमिदंजगत् ॥ शोकेनपरमायस्तोनशांतिमनसागमत् ॥ ४ ॥ विसृज्य पार्थिवान्सर्वान्नृक्षवानरराक्षसान् ॥ जनौघंविप्रमुख्यानांवित्तपूर्वंविसृज्यच ॥ ५ ॥

वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामष्टनवतितमः सर्गः ॥९८॥ रघुनाथजी प्रातःकाल होते ही नित्यकर्मसे निश्चिन्त हो सम्पूर्ण महामुनियोंको बुलाकर कुश लवसे बोले कि, अब तुम निःशंक होकर गाओ (माताके वियोगका दुःख और हम तुम्हारे पिता हैं यह शंका मत करो) ॥ १ ॥ इसके उपरान्त जब महात्मा ऋषि बैठ गये तब भविष्य उत्तरकाण्ड कुश लवने गाना प्रारंभ किया ॥२॥ जब अपने सत्य और पातिव्रत्यकी सम्पत्तिके कारण जानकी रसातलमें प्रवेश कर गई तब उस यज्ञके अवसानमें रघुनाथजी बहुत दुःखी हुए ॥ ३ ॥ जानकीके बिना देखे रघुनाथजी जगत्को शून्य मानने लगे और ऐसे शोकित हुए कि, किसी प्रकार शान्तिको न प्राप्त हुए ॥४॥ तब रघुनाथजीने संपूर्ण राजा, रीछ, वानर, राक्षस, ब्राह्मण और जनसमूहको अनेक प्रकारके दान मान

धनसे संतुष्ट किया ॥ ५॥ राजीवलोचन रामचन्द्र उन सबको बिदाकर जानकीको हृदयमें धारण किये अयोध्यामें आये ॥६॥ जानकीके बिना रघुनाथजीने और कोई भार्या नहीं की किन्तु जब जब यज्ञकरते सोनेकी सीतासे यज्ञ पूर्ण किया जाता ॥७॥ इस प्रकारसे प्रतिवर्ष अश्वमेधयज्ञ दशसहस्र वर्षतक किये और सहस्र वर्षके पीछे उससे दशगुणाफल दायक वाजपेय जिसमें बहुत सुवर्ण दान किया जाता है किये ॥ ८ ॥ अग्निष्टोम, अतिरात्र, गोमेधादियज्ञ तथा और भी अनेक यज्ञ महादक्षिणा और दान देकर किये ॥९॥ इस प्रकार उनमहात्मा रामचन्द्रको धर्म पूर्वक राज्य करते हुए बहुत समय बीतगया ॥१०॥ रीछ वानर और राक्षस भी सदा रामचन्द्रजीकी आज्ञा मानते रहे और प्रतिदिन देशान्तरोंके राजा आकर रघुनाथजीको प्रसन्न करते रहे॥ ११ ॥ कालमें

ततोविसृज्यतान्सर्वान्रामोराजीवलोचनः ॥ हृदिकृत्वासदासीतामयोध्यांप्रविवेशह॥ ६ ॥ नसीतायाःपरांभार्यांवव्रेसरघुनंदनः ॥ यज्ञेयज्ञेच पत्न्यर्थंजानकीकांचनीभवत् ॥ ७ ॥ दशवर्षसहस्राणिवाजिमेधानथाकरोत् ॥ वाजपेयान्दशगुणांस्तथाबहुसुवर्णकान् ॥ ८ ॥ अग्निष्टोमा तिरात्राभ्यांगोसवैश्चमहाधनैः ॥ ईजेक्रतुभिरन्यैश्चसश्रीमानाप्तदक्षिणैः ॥ ९ ॥ एवंसकालःसुमहान्राज्यस्थस्यमहात्मनः ॥ धर्मेप्रयतमानस्य व्यतीयाद्राघवस्यच ॥ १० ॥ ऋक्षवानररक्षांसिस्थितारामस्यशासने ॥ अनुरंजंतिराजानोह्यहन्यहनिराघवम् ॥ ११ ॥ कालेवर्षतिपर्जन्यः सुभिक्षंविमलादिशः ॥ हृष्टपुष्टजनाकीर्णंपुरंजनपदास्तथा ॥ १२ ॥ नाकालेम्रियतेकश्चिन्नव्याधिःप्राणिनांतथा ॥ नानर्थोविद्यतेकश्चिद्रामे राज्यंप्रशासति ॥ १३ ॥ अथदीर्घस्यकालस्यराममातायशस्विनी ॥ पुत्रपौत्रैःपरिवृताकालधर्ममुपागमत् ॥ १४ ॥ अन्वियायसुमित्राच कैकेयीचयशस्विनी ॥ धर्मंकृत्वाबहुविधंत्रिदिवेपर्यवस्थिता ॥ १५ ॥ सर्वाःप्रमुदिताःस्वर्गेराज्ञादशरथेनच ॥ समागतामहाभागाःसर्वधर्मं चलेभिरे ॥१६॥ तासांरामोमहादानंकालेकालेप्रयच्छति ॥ मातॄणामविशेषेणब्राह्मणेषुतपस्विषु ॥ १७ ॥ पित्र्याणिब्रह्मरत्नानियज्ञान्परम दुस्तरान् ॥ चकाररामोधर्मात्मापितॄन्देवान्विवर्धयन् ॥ १८ ॥

सदा मेघ वर्षता, दुर्भिक्ष कभी नहीं होता, दिशा निर्मल रहती, नगर देश सब हृष्टपुष्ट मनुष्योंसे भरेपुरे रहते ॥१२॥ न कोई अकालमें मरता, न प्राणियोंको कुछ बाधा होती, बहुत क्या रामचन्द्रके राज्यशासनमें कहीं भी कुछ अनर्थ नहीं था ॥१३॥ तब बहुत काल बीतनेपर रामकी यशस्विनी माता कौशल्याजी पुत्र पौत्रोंसे संयुक्त हो मरणको प्राप्त हुईं ॥१४॥ इसीप्रकार अनेक धर्म करके उनके कुछ दिनही उपरान्त सुमित्रा और कैकेयीभी मृत्युवश हुईं ॥१५॥ वे सब महाभाग्यवती स्वर्गमें प्राप्त होकर अपने पति राजादशरथसे मिलकर धर्मफल भोगने लगीं ॥ १६ ॥ रामचन्द्रजीउन सब माताओंके कल्याणनिमित्त तपस्वी और ब्राह्मणोंको अनेक प्रकारके दान करते रहे ॥ १७ ॥ धर्मात्मा रामचंद्रजी पितर और देवताओंकी वृद्धिके निमित्त और अपने पिताकी वृद्धिके निमित्त

अनेक प्रकारके रत्नोंके दान और यज्ञके अनुष्ठान करते रहे ॥ १८ ॥ इस प्रकार यज्ञानुष्ठानसे सदा धर्मकी वृद्धि करते कई सहस्र वर्षतक रघुनाथजी सुखसे राज्य करते रहे ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आदि० उत्त० भाषायां यज्ञावसानं नामैकोन शततमःसर्गः ॥९९॥ कुछ समयके उपरान्त केकय देशके राजा युधाजितने रघुनाथजीके निकट अपने गुरुको भेजा ॥१॥ उनका नाम गार्ग्य था ये गार्ग्यजी अंगिराके पुत्रमहाज्ञानी ब्रह्मर्षि थे, उसके साथ दश सहस्र उत्तम काबुल देशके घोडे ॥ २ ॥ नाना प्रकारके विचित्र ऊनी वस्त्र शाल दुशाले उनमें एक वस्त्र तो बहुत मोलका था इसी प्रकार रत्न और भूषण बडे प्रसन्न हो राजाने रघुनाथजीके निमित्त दिवाकर भेजे ॥ ३ ॥ रघुनाथजीने जब यह सुना कि, महात्मा गार्ग्यजी आते हैं और अश्वपति मामाने इनके साथ बहुत

एवंवर्षसहस्राणिबहून्यथययुः सुखम् ॥ यज्ञंबहुविधंधर्मंवर्धयानस्यसर्वदा ॥१९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीं० आदिकाव्ये च० सा० उत्तर कांडे यज्ञावसानंनामैकोनशततमः सर्गः ॥ ९९ ॥ कस्यचित्त्वथकालस्ययुधाजित्केकयोनृपः ॥ स्वगुरुंप्रेषयामासराघवायमहात्मने॥ १ ॥ गार्ग्यमंगिरसःपुत्रंब्रह्मर्षिममितप्रभम् ॥ दशचाश्वसहस्राणिप्रीतिदानमनुत्तमम् ॥ २ ॥ कंबलानिचरत्नानिचित्रवस्त्रमथोत्तमम् ॥ रामायप्रददौ राजाशुभान्याभरणानिच ॥ ३ ॥ श्रुत्वातुराघवोधीमान्महर्षिंगार्ग्यमागतम् ॥ मातुलस्याश्वपतिनःप्रहितंतन्महाधनम् ॥ ४ ॥ प्रत्युद्गम्यचकाकुत्स्थःक्रोशमात्रंसहानुजः ॥६॥ गार्ग्यंसंपूजयामासयथाशक्रोबृहस्पतिम् ॥ ५ ॥ तथासंपूज्यतमृषिंतद्धनंप्रतिगृह्यच ॥ पृष्ट्वाप्रतिपदंसर्वंकुशलं मातुलस्यच ॥ ६ ॥ उपविष्टंमहाभागंरामःप्रष्टुंप्रचक्रमे ॥ किमाहमातुलोवाक्यंयदर्थंभगवानिह ॥ ७ ॥ प्राप्तोवाक्यविदांश्रेष्ठःसाक्षादिवबृहस्पतिः ॥ रामस्यभाषितंश्रुत्वामहर्षिःकार्यविस्तरम् ॥८॥ वक्तुमद्भुतसंकाशंराघवायोपचक्रमे ॥ मातुलस्तेमहाबाहोवाक्यमाहनरर्षभः ॥९॥ युधाजित्प्रीतिसंयुक्तंश्रूयतांयदिरोचते ॥ अयंगंधर्वविषयःफलमूलोपशोभितः ॥ १० ॥

धनभी भेजा है ॥४॥ एक कोशतक रामचन्द्र भाइयों सहित उनकी अगौनीको गये; और जैसे इन्द्र बृहस्पतिजीकी पूजा करते हैं, इस प्रकार उनकी पूजा की ॥५॥ सम्यक् प्रकारसे ऋषिका पूजन कर और मामाका भेजा वह धन ले मामाके घरकी कुशल वार्ता बहुत प्रकारसे पूँछी ॥६॥ फिर रघुनाथजी ऋषिको घर लाय अच्छी प्रकार बैठाय पूँछने लगे कि हमारे मातुलने क्या संदेशा भेजा है, जिसकारण आप ॥७॥ यहां पधारे हो, आप बोलनेवालोंमें साक्षात् बृहस्पतिके समान हो, रामचन्द्रके वचन सुनकर महर्षि कार्यको विस्तारपूर्वक ॥ ८ ॥ रामचन्द्रसे कहने लगे, हे नरश्रेष्ठ महाभुज ! आपके मामाने यह संदेशा दिया है ॥ ९ ॥ जो युधाजितने कहा है वह आप प्रीतिसे सुनिये, यदि अच्छा लगे तो करिये, यह गंधर्व देश बहुतसे फल और मूलोंसे शोभित है॥ १० ॥

जो सिंधुनदके दोनों किनारेपर सुशोभित है उसकी युद्धमें चतुर शस्त्रधारी गंधर्व रक्षा करते हैं ॥११॥ वे महाबली तीन करोड गंधर्व शैलूष गन्धर्वके पुत्र हैं काकुत्स्थ ! उनको युद्धमें जीत वह सुन्दर गंधर्वनगर ॥१२॥ अपने राज्यमें मिलाइये हे महाबाहो ! उस परमसुन्दर देशमें दूसरेकी गति नहीं है, यदि आपको रुचे तो कीजिये कुछ हम आपका अनभल नहीं चाहते ॥१३॥ मामाके वह वचन सुनकर रामचन्द्र बहुत प्रसन्न हुए और 'बहुत अच्छा' कहकर भरतकी ओर निहारा ॥१४॥ रामचन्द्रजी कर जोड प्रसन्नतासे बोले हे महर्षि ! आपका मंगल हो यह दोनों कुमार उस देशको जायँगे ॥ १५ ॥ भरतजीके दौनों कुमार महाबली तक्ष और पुष्कल अपने धर्ममें सावधान हो वहाँ जायँगे, और मामासे रक्षित हो वहांका राज्य करेंगे ॥ १६ ॥ भरतजी इन कुमारोंके संगमें बहुतसी

सिंधोरुभयतःपार्श्वेदेशःपरमशोभनः॥तंचरक्षंतिगंधर्वाःसायुधायुद्धकोविदाः॥११॥शैलूषस्यसुतावीरतिस्रःकोट्योमहाबलाः॥तान्विनिर्जित्य काकुत्स्थगंधर्वनगरंशुभम्॥१२॥निवेशयमहाबाहोस्वपुरेसुसमाहिते ॥ अन्यस्यनगतिस्तत्रदेशःपरमशोभनः ॥ रोचतांतेमहाबाहोनाहंत्वामहि तंवदे॥१३॥तच्छ्रुत्वाराघवःप्रीतोमहर्षेर्मातुलस्यच॥उवाचबाढमित्येवभरतंचान्ववैक्षत॥१४सोऽब्रवीद्राघवःप्रीतःसांजलिप्रग्रहोद्विजम्॥इमौकु मारौतंदेशंब्रह्मर्षेविचरिष्यतः॥१५॥भरतस्यात्मजौवीरौतक्षःपुष्कलएवच॥मातुलेनसुगुप्तौतुधर्मेणसुसमाहितौ ॥१६॥भरतंचाग्रतःकृत्वाकुमा रौसबलानुगौ॥निहत्यगंधर्वसुतान्द्वेपुरेविभजिष्यतः॥१७निवेश्यतेपुरवरेआत्मजौसन्निवेश्यच॥आगमिष्यतिमेभूयःसकाशमतिधार्मिकः॥१८॥ ब्रह्मर्षिमेवमुक्त्वातुभरतंसबलानुगम्॥आज्ञापयामासतदाकुमारौचाभ्यषेचयत्॥१९॥ नक्षत्रेणचसौम्येनपुरस्कृत्यांगिरःसुतम् ॥भरतःसहसैन्ये नकुमाराभ्यांविनिर्ययौ॥२०॥सासेनाशक्रयुक्तेवनगरान्निर्ययावथ ॥राघवानुगतादूरंदुराधर्षासुरैरपि ॥२१॥मांसाशिनश्चयेसत्त्वारक्षांसिसुमहां तिच ॥ अनुजग्मुर्हिभरतंरुधिरस्यपिपासया ॥२२॥भूतग्रामाश्चबहवोमांसभक्षाःसुदारुणाः ॥गंधर्वपुत्रमांसानिभोक्तुकामाःसहस्रशः ॥२३॥

सेना लेकर जायँगे, और उन गंधर्वकुमारोंको मारकर वहां दो नगर बसावेंगे ॥१७॥ उन पुरोंको बसाय और अपने पुत्रोंको वहांका राज्य दे, हमारे पास शीघ्र यह धर्मात्मा चले आवेंगे ॥ १८ ॥ इस प्रकार ब्रह्मर्षिसे कह रघुनाथजीने सेनासहित भरतजीको वहां जानेकी आज्ञा दी और दोनों कुमारोंका अभिषेक किया ॥१९॥ अच्छे नक्षत्रमें अंगिराके पुत्र गार्ग्य ऋषिको आगे कर दोनों कुमारोंको साथ ले सेनासहित भरतजीने प्रस्थान किया ॥२०॥ वह सेना इन्द्रके समान भरतजीसे पालित हो नगरसे निकल उनके पीछे २ चली और देवताओंसे दुर्धर्ष उस सेनाकी दोनों कुमार रक्षा करते थे जब कुछ दूर गये ॥२१॥ मांसभक्षी जीव और बडे २ राक्षसभी गन्धर्व पुत्रोंके रुधिरके प्यासेहो भरतके पीछे चले ॥ २२ ॥ और भी अनेक प्राणी जो बडे दारुण और मांसभक्षी थे वे सहस्रोंही

गन्धर्व पुत्रोंके मांस भक्षण करनेको चले ॥२३॥ सिंह, व्याघ्र, वराह तथा आकाशचारी सहस्रों पक्षी सेनाके आगे २ चले ॥ २४ ॥ वह सेना नीरोगतासे ठहरती हुई सम्पूर्ण हृष्टपुष्ट मनुष्योंसे युक्त हुई डेढमासमें केकयदेशमें पहुँच गई ॥ २५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां शततमः सर्गः ॥ १०० ॥ जब केकयदेशके राजाने सुना कि, भरतजी सेनापति होकर आये हैं तब युधाजित् गर्गके सहित बहुतही प्रसन्न हुए ॥ १ ॥ केकयाधिपति बहुत मनुष्योंकी सेना साथ ले गन्धर्वोंके जीतनेके निमित्त बडी शीघ्रतासे चले ॥ २ ॥ महापराक्रमी भरत और युधाजित् दोनों मिलकर सेना वाहन प्यादों सहित गन्धर्व नगरमें पहुँचे ॥३॥ भरतको युद्ध करनेके निमित्तआये सुनकर महाबली वे गन्धर्व इकठे हो युद्ध करनेकी इच्छासे गर्जने लगे ॥ ४ ॥ तब उन

सिंहव्याघ्रवराहाणांखेचराणांचपक्षिणाम्॥ बहूनिवैसहस्राणिसेनायाययुरग्रतः ॥ २४ ॥ अध्यर्धमासमुषितापथिसेनानिरामया ॥ हृष्टपुष्टजनाकीर्णाकेकयंसमुपागमत् ॥२५॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे शततमः सर्गः॥१००॥ श्रुत्वासेनापतिंप्राप्तंभरतंकेकयाधिपः ॥ युधाजिद्गर्गसहितंपरांप्रीतिमुपागमत् ॥१॥ सनिर्ययौजनौघेनमहताकेकयाधिपः ॥ त्वरमाणोऽभिचक्रामगंधर्वान्केकयाधिपः ॥ २ ॥ भरतश्चयुधाजिच्चसमेतौलघुविक्रमैः॥ गंधर्वनगरंप्राप्तौसबलौसपदानुगौ ॥३॥ श्रुत्वातुभरतंप्राप्तंगंधर्वास्तेसमागताः ॥ योद्धुकामामहावीर्याव्यनदंस्तेसमंततः ॥४॥ ततःसमभवद्युद्धंतुमुलंलोमहर्षणम्॥ सप्तरात्रंमहाभीमंनचान्यतरयोर्जयः॥५॥ खड्गशक्तिधनुर्ग्राहानद्यःशोणितसंस्रवाः॥ नृकलेवरवाहिन्यःप्रवृत्ताःसर्वतोदिशम्॥ ६ ॥ ततोरामानुजःक्रुद्धःकालस्यास्त्रंसुदारुणम् ॥ संवर्तंनामभरतोगंधर्वेष्वभ्यचोदयत् ॥७॥ तेबद्धाःकालपाशेनसंवर्तेनविदारिताः॥ क्षणेनाभिहतास्तेनतिस्रःकोटयोमहात्मना॥ ८ ॥ तद्युद्धंतादृशंघोरंनस्मरंतिदिवौकसः॥ निमेषांतरमात्रेणतादृशानांमहात्मनाम् ॥९॥ हतेषुतेषुसर्वेषुभरतःकेकयीःसुतः॥ निवेशयामासतदासमृद्धेद्वेपुरोत्तमे ॥ १० ॥

गन्धर्वोंके साथ बराबर सात दिनराततक बडा भयंकर और रोमहर्षण युद्ध होता रहा, परन्तु किसीकी जय वा पराजय न हुई॥५॥ उस युद्धमें रुधिरकी नदी प्रवाहित होने लगी जिसमें खड्ग शक्ति और धनुष ग्राहरूप और मनुष्योंके शरीर कच्छपाकार दृष्टि आते थे ॥ ६ ॥ तब महा क्रोधकर रामानुज भरतने दारुण संवर्त नाम कालास्त्र जो प्रलय करनेवाला है लेकर गन्धर्वोंके ऊपर चलाया ॥ ७ ॥ वे सब गन्धर्व सवर्त अस्त्रसे विदारित होकर कालपाशमें बंध गये, इसप्रकारसे महात्मा भरतने क्षण मात्रमें वे तीन करोड गन्धर्व मार डाले ॥ ८ ॥ वह ऐसा युद्ध हुआ कि, देवताओंने कभी ऐसा युद्ध नहीं देखा था, कि एक निमिषमें उन गन्धर्वोंका संहार हो गया ॥ ९ ॥ गन्धर्वोंके नष्ट होनेपर कैकयीपुत्र भरतजीने वहांपर दो समृद्धिमान् नगर बसाये॥ १० ॥

तक्षको तक्षशिलावती पुरी गन्धर्व देशमें बसाकर दी और गान्धार देशमें पुष्कलावर्त नगर वसाकर वहांका राज्य पुष्कलको दिया ॥११॥ वे दोनों नगर धन रत्नादिकोंसे पूर्ण, वन उपवनोंसे शोभायमान मानो अपने बडे बडे गुणोंसे एक दूसरेकी स्पर्धाही करते थे॥१२॥ उन दोनों सुन्दर नगरोंमें निर्मलव्यवहारोंसे प्रकाश हो रहा था बगीचे और चौराहे तथा चौक बडे रमणीक थे ॥ १३ ॥ वह दोनों नगर अनेक प्रकारके बडे श्रेष्ठ घरोंसे शोभायमान और बडे विस्तार युक्त विमानोंसे परिपूर्ण थे ॥१४॥ बडे बडे देवमन्दिरों से उनकी शोभा दुगुनी हो रही थी, ताल तमाल तिलक बकुल इन वृक्षोंसे शोभायमान ॥१५॥ इन नगरोंमें पुत्रोंको अभिषेकित कर भरतजी पांच वर्षतक वहां रहे, जब राज्य दृढ हो गया, तब महाबाहु कैकयीके पुत्र भरतजी फिर अयोध्याको चले आये ॥१६॥

तक्षंतक्षशिलायांतुपुष्कलंपुष्कलावते॥गंधर्वदेशेरुचिरेगांधारविषयेचसः ॥ ११ ॥ धनरत्नौघसंकीर्णेकाननैरुपशोभिते ॥ अन्योन्यसंघर्षकृते स्पर्धयागुणविस्तरैः ॥ १२॥ उभेसुरुचिरप्रख्येव्यवहारैरकिल्बिषैः ॥ उद्यानयानसंपूर्णेसुविभक्तांतरापणे ॥ १३ ॥ उभेपुरवरेरम्येविस्तरैरुप शोभिते ॥ गृहमुख्यैःसुरुचिरैर्विमानैर्बहुभिर्वृते॥१४॥ शोभितेशोभनीयैश्चदेवायतनविस्तरैः ॥ तालैस्तमालैस्तिलकैर्बकुलैरुपशोभिते ॥१५॥ निवेश्यपंचभिर्वर्षैर्भरतोराघवानुजः॥पुनरायान्महाबाहुरयोध्यांकेकयीसुतः॥१६॥ सोऽभिवाद्यमहात्मानंसाक्षाद्धर्ममिवापरम् ॥ राघवंभरतः श्रीमान्ब्रह्माणमिववासवः ॥ १७ ॥ शशंसचयथावृत्तंगंधर्ववधमुत्तमम् ॥ निवेशनंचदेशस्यश्रुत्वाप्रीतोऽस्यराघवः ॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा मायणेवाल्मीकीयेआदिकाव्येच० सा० उत्तरकांडे एकोत्तर शततमःसर्गः ॥ १०१ ॥ तच्छ्रुत्वाहर्षमापेदेराघवोभ्रातृभिःसह ॥ वाक्यंचाद्भु तसंकाशंभ्रातॄन्प्रोवाचराघवः॥ १ ॥ इमौकुमारौसौमित्रेतवधर्मविशारदौ ॥ अंगदश्चंद्रकेतुश्चराज्यार्थेदृढविक्रमौ ॥ २ ॥ इमौराज्येऽभिषेक्ष्या मिदेशःसाधुविधीयताम् ॥ रमणीयोह्यसंबाधोरमेतांयत्रधन्विनौ॥ ३ ॥

जिसप्रकार ब्रह्माजीको इन्द्र प्रणाम करते हैं, इसी प्रकारसे साक्षात् धर्मके समान विराजमान श्रीमान् महात्मा रामचन्द्रजीको भरतजीने प्रणाम कर ॥१७॥ जिस प्रकारसे गन्धर्वोंका वध किया वह और दोनों देशोंका बसाना यह सब रघुनाथजीसे निवेदन किया, जिसे सुनकर रामचन्द्रजी प्रसन्न हुये ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा०वा०आदि०उत्तरकांडे भाषायामेकोत्तरशततमः सर्गः ॥१०१॥ भरतजीके यह वचन सुन रामचन्द्र भाइयों सहित बडे प्रसन्न हुए और फिरभाइयोंसे कहने लगे ॥१॥ हे लक्ष्मण ! यह जो तुम्हारे दोनों कुमार अंगद और चन्द्रकेतु हैं, अब यह अपने पराक्रमसे राज्य करने योग्य हो गये हैं ॥ २ ॥ मेरी इच्छा है कि, किसी देशका राज्य इनको दिया जाय; सो ऐसा देश विचारो जो रमणीय और बाधा रहित हो जहां यह दोनों धनुषधारी आनंदसे रहें ॥३॥

न तो वहां किसी राजाकी पीडा हो न किसी आश्रमीको पीडा हो, हे सौम्य ! ऐसा देश विचारो जहां किसीका अपराध न करना पडे ॥४॥ रामचन्द्रके ऐसा कहनेपर भरतजी बोले, यह कारूपथ देश बडा रमणीय और सब प्रकारकी बाधा रहित है ॥ ५ ॥ वहांका राज्य तो महात्मा अंगदको दीजिये और सब चन्द्रकान्त नगरका राज्य चन्द्रकेतुको दो ॥ ६ ॥ भरतके यह वचन रघुनाथजीने ग्रहण किये, उस देशको अपने वशमें कर वहां अंगदको अभिषेकित किया ॥७॥ इस प्रकारसे कामरूपदेशमें रमणीय अंगदीया नाम पुरी, अनेक प्रकारसे रक्षित करके सरलकर्मा श्रीरामचन्द्रने अंगदको वहांका राज्य दिया ॥८॥ और मल्लभूमिमें स्वर्गपरीके समान चन्द्रकान्त पुरी बसाकर वहांका राज्य महाविक्रमी चन्द्रकेतुको दिया ॥९॥ युद्धमें दुराधर्ष रामचन्द्र भरत और लक्ष्मणने

नराज्ञांयत्रपीडास्यान्नाश्रमाणांविनाशनम् ॥ सदेशोदृश्यतांसौम्यनापराध्यामहेयथा ॥ ४॥ तथोक्तवतिरामेतुभरतःप्रत्युवाचह ॥ अयंकारूपथोदेशोरमणीयोनिरामयः ॥ ५ ॥ निवेश्यतांतत्रपुरमंगदस्यमहात्मनः ॥ चन्द्रकेतोःसुरुचिरंचन्द्रकांतंनिरामयम् ॥ ६ ॥ तद्वाक्यंभरतेनोक्तंप्रतिजग्राहराघवः ॥ तंचकृत्वावशेदेशमंगदस्यन्यवेशयत् ॥७॥ अंगदीयापुरीरम्याप्यंगदस्यनिवेशिता ॥ रमणीयासुगुप्ताचरामेणाक्लिष्टकर्मणा ॥ ८ ॥ चंद्रकेतोश्चमल्लस्यमल्लभूम्यांनिवेशिता ॥ चंद्रकांतेतिविख्यातादिव्यास्वर्गपुरीयथा ॥ ९ ॥ ततोरामःपरांप्रीतिंलक्ष्मणोभरतस्तथा ॥ ययुर्युद्धेदुराधर्षाअभिषेकंचचक्रिरे ॥ १० ॥ अभिषिच्यकुमारौद्वौप्रस्थाप्यसुसमाहितौ ॥ अंगदंपश्चिमांभूमिंचंद्रकेतुमुदङ्मुखम् ॥ ११ ॥ अंगदंचापिसौमित्रिर्लक्ष्मणोऽनुजगामह ॥ चंद्रकेतोस्तुभरतःपार्ष्णिग्राहोबभूवह ॥ १२ ॥ लक्ष्मणस्त्वंगदीयायांसंवत्सरमथोषितः ॥ पुत्रेस्थितेदुराधर्षेअयोध्यांपुनरागमत् ॥ १३ ॥ भरतोऽपितथैवोष्यसंवत्सरमतोऽधिकम् ॥ अयोध्यांपुनरागम्यरामपादावुपास्त सः ॥ १४ ॥ उभौसौमित्रिभरतौरामपादावनुव्रतौ ॥ कालंगतमपिस्नेहान्नजज्ञातेऽतिधार्मिकौ ॥ १५ ॥

प्रसन्न होकर कुमारोंका अभिषेक कर दिया ॥ १० ॥ उन दोनों कुमारोंका अभिषेक करके सावधानतासे अंगदको तो पश्चिम देशकी पुरीमें और चन्द्रकेतुको उत्तर ओरकी पुरीमें भेज दिया ॥ ११ ॥ अंगदके साथ तो लक्ष्मण और चन्द्रकेतुके साथ भरतजी सहायताके निमित्त गये ॥ १२ ॥ लक्ष्मण अंगदीया पुरीमें एक वर्षतक रहे जब देखा कि, अब पुत्रका राज्य दृढ हो गया, तब फिर अयोध्याको चले आये ॥ १३ ॥ इस प्रकार भरतजी भी वर्षदिनसे कुछ अधिक चन्द्रकेतुकी पुरीमें रहकर फिर रघुनाथजीकी सेवा करनेको अयोध्यामें चले आये ॥ १४ ॥ यह दोनों महात्मा धर्मज्ञ भरत और लक्ष्मणजी रामचन्द्रजीकी सेवा करते रहे जिनसे उन्हें बहुत समय बीत गया, परन्तु उन्होंने कुछ न जाना ॥ १५ ॥

इस प्रकारसे धर्मपूर्वक प्रजा पालन करते हुए रामचन्द्रको दश सहस्त्रवर्ष बीत गये ॥ १६ ॥ इस प्रकारसे धर्मपुरीमें लक्ष्मीसे युक्त हो संतुष्ट चित्तसे विहार करते बहुत समय बीत गया, औ वे तीनों भाई अपने प्रज्वलित अग्निके समान प्रकाशसे यज्ञकी प्रज्वलित तीन अग्नियोंके समान शोभित हुए ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वा० आ० उत्तरकांडे भाषायां द्व्युत्तरशततमः सर्गः ॥ १०२ ॥ इस प्रकार रामचन्द्रजीको धर्मपूर्वक राज्य करते २ कुछ दिन बीतनेपर तपस्वीका रूप बनाकर काल राजद्वारपर आया ॥ १ ॥ उसने लक्ष्मणसे कहा हम अतिपराक्रमी बली एक महर्षि किसी कार्यके निमित्त रामचन्द्रके पास आये हैं ॥ २ ॥ उसके यह वचन सुनकर लक्ष्मणजीने बडी शीघ्रतासे जाकर रामचंद्रसे तपस्वीका आना निवेदन किया ॥ ३ ॥ हे महाराज ! आपकी दोनों लोकमें जय हो

एवंवर्षसहस्राणिदशतेषांययुस्तदा॥धर्मेप्रयतमानानांपौरकार्येषुनित्यदा ॥१६॥ विहृत्यकालंपरिपूर्णमानसाःश्रियावृताधर्मपरेचसंस्थिताः ॥ त्रयःसमिद्धाहुतिदीप्ततेजसोहुताग्नयःसाधुमहाध्वरेत्रयः ॥१७॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च०सा०उत्तरकांडे द्व्युत्तरशततमःसर्गः॥१०२॥कस्यचित्त्वथकालस्यरामेधर्मपरेस्थिते॥कालस्तापसरूपेणराजद्वारमुपागमत्॥१॥ दूतोह्यतिबलस्याहंमहर्षेरमितौजसः॥ रामंदिदृक्षुरायातःकार्येणहिमहाबलः॥२॥तस्यतद्वचनंश्रुत्वासौमित्रिस्त्वरयान्वितः॥न्यवेदयतरामातापसंतंसमागतम्॥३जयस्वराजधर्मेणउभौलोकौमहाद्युते॥दूतस्त्वांद्रष्टुमायातस्तपसाभास्करप्रभः॥४तद्वाक्यंलक्ष्मणोक्तंवैश्रुत्वारामउवाचह॥प्रवेश्यतांमुनिस्तातमहौजास्तस्यवाक्यधृक्॥५॥सौमित्रिस्तुतथेत्युक्त्वाप्रावेशयततंमुनिम्॥ज्वलंतमिवतेजोभिःप्रदहंतमिवांशुभिः॥६॥सोऽभिगम्यरघुश्रेष्ठंदीप्यमानंस्वतेजसा॥ ऋषिर्मधुरयावाचावर्धस्वेत्याहराघवम्॥७॥तस्मैरामोमहातेजाःपूजामर्घ्यपुरोगमाम्॥ददौकुशलमव्यग्रंप्रष्टुंचैवोपचक्रमे॥८॥पृष्टश्चकुशलंतेनरामेण वदतांवरः॥आसनेकांचनेदिव्येनिषसादमहायशाः॥९॥तमुवाचततोरामःस्वागतंतेमहामते॥प्रापयास्यचवाक्यानियतोदूतस्त्वमागतः॥ १०॥

हे महाद्युतिमान् ! एक सूर्यके समान कांतिवाले महर्षि आपके देखनेको आये हैं ॥ ४ ॥ लक्ष्मणके यह वचन सुनतेही रामचन्द्र बोले हे तात ! उस सन्देशे लाये हुये महातेजस्वी मुनिको शीघ्र लाओ ॥ ५ ॥ रामचन्द्रके यह वचन श्रवण करतेही तेजसे प्रकाशमान और अपने किरणोंसे भस्मसा करते हुये उन मुनिको रामचन्द्रके पास लाये ॥ ६ ॥ अपने तेजसे प्रकाशमान रामचन्द्रके उन ऋषिने जाकर कोमल वाणीसे आपकी जय और वृद्धिहो ऐसा कहा ॥ ७ ॥ महातेजस्वी रामचन्द्रजीने उन ऋषिको अर्घ्य पाद्य देकर आसनपर बैठाया और कुशल पूँछने लगे ॥ ८ ॥ वह महायशस्वी सोनेके सिंहासनपर बैठे और बोलने वालोंमें चतुर रामचन्द्रजी उनसे कुशल पूँछने लगे ॥ ९ ॥ रामचन्द्र बोले हे मतिमान् ! आप अच्छीप्रकारसे आये, अब उनका संदेशा कहिये जिन्होंने आपको

दूत बनाकर यहां भेजा है ॥ १० ॥ जब राजसिंह रघुनाथजीने यह कहा तो मुनिने कहा कि यह बात मैं तबही कहूंगा जब हम तुम दोहीजने होंगे, कारण कि, देवताओंका हित देवताओंकी रहस्य बातके छिपानेसेही होता है ॥ ११ ॥ और यह भी बात है कि, हम तुमको वार्त्ता करते समय जो देखले, या जो उन बातोंको सुने वह मारडाला जाय; क्योंकि उन ऋषिने ऐसाही कहा है ॥१२॥ यह रामचन्द्रने स्वीकार करके लक्ष्मणसे कहा हे महाभुज ! तुम द्वारपर स्थित रहो और वहांसे द्वारपालोंको बिदा करो ॥ १३ ॥ हे लक्ष्मण ! इसका कारण यह है कि कोई पुरुष इन ऋषिके साथ हमको वर्ता करते देखेगा, व वार्ता सुनेगा वह निश्चय मारडाला जायगा ॥ १४ ॥ इस प्रकार रामचन्द्रने लक्ष्मणको द्वारपर बैठाकर मुनिसे कहा अब आप संदेशा कहिये ॥ १५ ॥ जो कुछ आपका अभीष्ट हो वा जिन्होंने तुमको भेजा है उनका मनोरथ आप निःसन्देह कहिये कारण कि, वह सुननेकी हमें अधिक इच्छा है (अथवा जो तुम

चोदितोराजसिंहेनमुनिर्वाक्यमभाषत ॥ द्वंद्वंह्येतत्प्रवक्तव्यंहितंवैयद्यवेक्षसे ॥११॥ यःशृणोतिनिरीक्षेद्वासवध्योभवितातव ॥ भवेद्वैमुनिमुख्यस्यवचनंयद्यवेक्षसे ॥१२॥ तथेतिचप्रतिज्ञायरामोलक्ष्मणमब्रवीत् ॥ द्वारितिष्ठमहाबाहोप्रतिहारंविसर्जय ॥ १३ ॥ सममेवध्यःखलुभवेद्वाचंद्वंद्वंसमीरितम् ॥ ऋषेर्ममचसौमित्रेपश्येद्वाशृणुयाच्चयः ॥ १४ ॥ ततोनिक्षिप्यकाकुत्स्थोलक्ष्मणंद्वारिसंग्रहम् ॥ तमुवाचमुनेर्वाक्यंकथयस्वेतिराघवः ॥ १५ ॥ तत्तेमनीषितंवाक्यंयेनवासिसमाहितः ॥ कथयस्वाविशंकस्त्वंममापिहृदिवर्तते ॥ १६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे कालागमनंनामत्र्युत्तरशततमः सर्गः ॥ १०३ ॥ शृणुराजन्महासत्त्वयदर्थमहमागतः ॥ पितामहेनदेवेनप्रेषितोऽस्मिमहाबल ॥ १ ॥ तवाहंपूर्वकेभावेपुत्रःपरपुरंजय ॥ मायासंभावितोवीरकालःसर्वसमाहरः ॥ २ ॥ पितामहश्चभगवानाहलोकपतिःप्रभुः ॥ समयस्तेकृतःसौम्यलोकान्संपरिरक्षितुम् ॥ ३ ॥

कहोगे वह हमारे हृदयमें भी वर्तता है) ॥ १६ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां कालागमनं नाम त्र्युत्तरशततमः सर्गः ॥ १०३ ॥ यह वचन सुनकर ऋषि कहने लगे कि, हे वीर्यवान् ! जिन्होंने हमको भेजा और जिसकारण हम यहां आये हैं हे महाबली ! हमको पितामह ब्रह्माजीने आपके पास भेजा है ॥ १ ॥ हे शत्रुघातिन् ! जिस समय पूर्वकालमें सृष्टि हुई थी उस समय हम आपकी मायासे उत्पन्न होनेके कारण आपके पुत्र हैं; हे वीर ! हमारा नाम काल है और हम सबके संहार करनेवाले हैं ॥ २ ॥ लोकस्वामी भगवान् पितामह ब्रह्माजीने आपसे कहा है हे सौम्य ! आपने जो रावणादिके वधके निमित्त अवतार लेकर ग्यारह सहस्र वर्षतक मनुष्यलोकमें बसनेकी और प्रजारक्षण करनेकी प्रतिज्ञा करीथी; वह समय अब पूरा हो गया

(यथा—दश वर्षसहस्राणि दशवर्ष शतानि च । वत्स्यामि मानुषे लोके पालयन् पृथिवीमिमामिति) ॥३॥ आप प्रलयकालमें अपनी शक्तिसे सब लोकोंका संहार कर अपने उदरमें धार महासागरमें शयन कर गये थे बहुत कालके पीछे आपकी नाभिसे कमल हुआ जिससे मेरी उत्पत्ति हुई (यथा—यो ब्रह्माणं विद धाति पूर्वमिति श्रुतेः) ॥४॥ जलमें आए शेषनागके ऊपर शयन करते थे, जिनको आपने अपनी मायासे उत्पन्न किया था, पुनःपृथ्वीके बनानेकी इच्छासे आपनेही महाबली जीव ॥५॥ मधु और कैटभ उत्पन्न किये उन्हें वध करनेसे मधुमें वसा थी जलमें मिल कर्दमरूप होसूखकर पृथ्वी हुई और कैटभमें अस्थि थी जिसके शरीरसे यह पर्वत हुए इसप्रकार यह पर्वतोंसहित पृथ्वी उत्पन्न हुई ॥६॥ फिर आप ने अपनी नाभिसे सूर्यसमान कमल उत्पन्न कर उससे मुझे उत्पन्न किया और प्रजा उत्पन्न करनेका कार्य सब मुझे सौंप दिया ॥ ७ ॥ इसप्रकार आपसे प्राजापत्य अधिकार पाकर हमने आप जगदीश्वरकी उपासना

संक्षिप्यहिपुरालोकान्माययास्वयमेवहि ॥ महार्णवेशयानोऽप्सुमांत्वंपूर्वमजीजनः ॥ ४ ॥ भोगवंतंततोनागमनंतमुदकेशयम् ॥ माययाजनयित्वात्वंद्वौचसत्त्वौमहाबलौ ॥ ५ ॥ मधुंचकैटभंचैवययोरस्थिचयैर्वृता ॥ इयंपर्वतसंबाधमेदिनीचाभवत्तदा ॥ ६ ॥ पद्मेदिव्येऽर्कसंकाशे नाभ्यामुत्पाद्यमामपि॥प्राजापत्यंत्वयाकर्ममयिसर्वंनिवेशितम् ॥ ७ ॥ सोऽहंसंन्यस्तभारोहित्वामुपास्यजगत्पतिम् ॥ रक्षांविधत्स्वभूतेषुममतेजस्करोभवान् ॥ ८ ॥ ततस्त्वमसिदुर्धर्षात्तस्माद्भावात्सनातनात ॥ रक्षांविधास्यन्भूतानांविष्णुत्वमुपजग्मिवान् ॥ ९ ॥ आदित्यांवीर्यवान्पुत्रोभ्रातृणांवीर्यवर्धनः ॥ समुत्पन्नेषुकृत्येषुतेषांसाह्यायकल्पसे ॥ १० ॥ सत्वमुज्जास्यमानासुप्रजासुजगतोवर ॥ रावणस्यवधाकांक्षीमानुषेषुमनोदधाः ॥ ११ ॥ दशवर्षसहस्राणिदशवर्षशतानिच ॥ कृत्वावासस्यनियमंस्वयमेवात्मनापुरा ॥ १२ ॥ सत्वंमनोमयःपुत्रःपूर्णायुर्मानुषेष्विह ॥ कालोनरवरश्रेष्ठसमीपमुपवर्तितुम् ॥ १३ ॥

करके यह प्रार्थना की, हे भगवन् ! जब आपने हमें सृष्टि उत्पन्न करनेकी सामर्थ्य दी है तो इसका पालन आप कीजिये ॥ ८ ॥ यह वचन सुनकर तुम्हीं उस दुर्द्धर्ष समस्त संसारके मूलकारण होनेसे कालपरिच्छेद्य त्रिगुण महत्तत्त्व नामक हिरण्यगर्भके सत्त्वप्रधानसे प्रजाकी रक्षा करनेको विष्णुरूप हुए ॥ ९ ॥ एक समय आपने इन्द्रादि देवताओंकी सहायताके निमित्त अदितिमें कश्यपसे जन्म लेकर दिव्य ज्ञानक्रियासे युक्त हो उपेन्द्र (वामन) नाम पाया था और देवताओंके कार्यमें सहायताकी ॥ १० ॥ हे जगत्में श्रेष्ठ ! इसी प्रकार आपने इस समय भी प्रजाको महादुःखी देख रावणकेवध करनेके निमित्त और प्रजाओंको सुख देनेको मनुष्यलोकमें अवतारले रहनेकी इच्छा की ॥ ११ ॥ उस समय आपने ग्यारह सहस्र वर्षतक मनुष्यलोकमें रहनेका नियम किया था ॥ १२ ॥ सो आप राजा दशरथके यहां मनोरथ अर्थात् अपने संकल्पसेही उत्पन्न हुए हैं, हे नरश्रेष्ठ ! अब वह आपकी पूर्णायु हो चुकी है एकादश

सहस्रवर्ष बीतनेमें बहुतही थोडेदिन शेष हैं ॥ १३ ॥ हे वीर ! आपका मंगल हो यदि अभी और प्रजापालनकी इच्छा हो तो आप यहीं वास कीजिये आपसे वह ब्रह्माजीने कहला भेजा है ॥१४॥ हे राघव ! यदि देवलोकमें आनेकी इच्छा हो तो चलकर अपने विष्णुरूपसे देवताओंको सनाथ और भयरहित कीजिये ॥ १५ ॥ ब्रह्माजीके कहलाये कालके यह वचन श्रवण कर श्रीरामचन्द्रजी हँसकर सबके संहार करनेवाले कालसे कहने लगे ॥ १६ ॥ देवदेव ब्रह्मा जीके यह वचन श्रवण करने और तुम्हारे आनेसे हम बहुत प्रसन्न हुए हैं ॥ १७ ॥ मेरा जन्म तीनों लोकोंके कार्य सिद्ध करनेके निमित्त होता है तुम्हारा मंगल हो, हम जहांसे आये हैं, उसी लोकको चले जायँगे ॥ १८ ॥ हे काल ! प्रथमही हमने मनमें प्रस्थानका विचार करलिया था, हमारे जानेमें कुछभी

यदिभूयोमहाराजप्रजाइच्छस्युपासितुम् ॥ वसवावीरभद्रंतेएवमाहपितामहः ॥ १४ ॥ अथवाविजिगीषातेसुरलोकायराघव ॥ सनाथाविष्णुनादेवाभवंतुविगतज्वराः ॥ १५ ॥ श्रुत्वापितामहेनोक्तंवाक्यंकालसमीरितम् ॥ राघवःप्रहसन्वाक्यंसर्वसंहारमब्रवीत् ॥ १६ ॥ श्रुत्वामेदेवदेवस्यवाक्यंपरममद्भुतम् ॥ प्रीतिर्हिमहतीजातातवागमनसंभवा ॥ १७ ॥ त्रयाणामपिलोकानांकार्यार्थंममसंभवः ॥ भद्रंतेऽस्तुगमिष्यामियतएवाहमागतः ॥ १८॥ हृद्गतोह्यसिसंप्राप्तोनमेतत्रविचारणा ॥ मयाहिसर्वकृत्येषुदेवानांवशवर्तिनाम् ॥ स्थातव्यंसर्वसंहारयथाह्याहपितामह ॥ १९ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मीकीये आदि० च० सा० उत्तरकांडे कालवाक्यंनामचतुरधिकशततमःसर्गः ॥ १०४ ॥ तथातयोःसंवदतोर्दुर्वासाभगवानृषिः॥ रामस्यदर्शनाकांक्षीराजद्वारमुपागमत् ॥ १ ॥ सोऽभिगम्यतुसौमित्रिमुवाचऋषिसत्तमः ॥ रामंदर्शयमेशीघ्रंपुरामेऽर्थोतिवर्तते ॥ २ ॥ मुनेस्तुभाषितंश्रुत्वालक्ष्मणःपरवीरहा ॥ अभिवाद्यमहात्मानंवाक्यमेतदुवाचह ॥ ३ ॥ किंकार्यंहिभगवन्कोह्यर्थःकिंकरोम्यहम् ॥ व्यग्रोहिराघवोब्रह्मन्मुहूर्तंपरिपाल्यताम् ॥ ४ ॥

संदेह नहीं मुझे अपने अनुकूल देवताओंके सब कार्योंमें स्थित होना चाहिये, इसकारण जो कुछ ब्रह्माजीने कहा है वह शीघ्र होगा ॥१९॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी०आदि०उत्तरकांडे भाषायां कालवाक्यं नामचतुरधिकशततमःसर्गः॥१०४॥जिस समय रामचन्द्र और कालमें यह वार्ता होती थी,उसी समय रामचन्द्रके दर्शन की इच्छा करके महर्षि दुर्वासा राजद्वारपर आये॥१॥ वह ऋषिश्रेष्ठ लक्ष्मणके पास आकर कहने लगे, हे लक्ष्मण! हमारा एक महत्कार्य है, इसकारण शीघ्र रामचन्द्रके दर्शन कराओ॥२॥ शत्रुघाती लक्ष्मणजी मुनिके यह वचन सुनकर उन महात्माको प्रणामकर इसप्रकारसे कहने लगे॥३॥ कहिये महाराज!

आपका क्या कार्य है? जो आज्ञा हो सो हम करें, हे ब्रह्मन्! रामचन्द्र एक कार्यमें हैं, इस कारण आप एक मुहूर्तभरतक ठहरिये॥४॥ यह वचन सुनतेही ऋषिसिंह दुर्वासा महाक्रोध कर नेत्रोंसे भस्म करते हुएसे लक्ष्मणसे बोले॥५॥ हे लक्ष्मण! अभी जाकर हमारा आना रामचन्द्रसे निवेदन करो, नहीं तो हम तुम्हारे राज्यपर, तुम्हें, और रामचंद्रको शाप देंगे॥६॥ हे लक्ष्मण! भरत और तुम्हारी संतानको भी शाप देंगे, कारणकि, अब हम क्रोधको हृदयमें धारण नहीं कर सकते॥७॥ यह उन महात्मा ऋषिके घोर वचन सुनकर लक्ष्मणजी इस वचनके परिणामको मनमें विचारने लगे ॥ ८ ॥ जो मैं रामचन्द्रसे कहता हूं तो मेरा मरण होगा, नहीं कहनेमें सब शापित होंगे, इसकारण मेरा विनाश अच्छा, सबका निधन उचित नहीं यह विचार लक्ष्मणजीने रामचन्द्रके पास जाय दुर्वासाजीका आना निवेदन

तच्छ्रुत्वाऋषिशार्दूलःक्रोधेनकलुषीकृतः ॥ उवाचलक्ष्मणंवाक्यंनिर्दहन्निवचक्षुषा॥५॥ अस्मिन्क्षणेमांसौमित्रेरामायप्रतिवेदय ॥ विषयंत्वां पुरंचैवशापिष्येराघवंतथा ॥६॥ भरतंचैवसौमित्रेयुष्माकंयाचसंतति ॥ नहिशक्ष्याम्यहंभूयोमन्युधारयितुंहृदि ॥७॥ तच्छ्रुत्वाघोरसंकाशं वाक्यंतस्यमहात्मनः ॥ चिंतयामासमनसातस्यवाक्यस्यनिश्चयम् ॥ ८ ॥ एकस्यमरणंमेऽस्तुमाभूत्सर्वविनाशनम् ॥ इतिबुद्ध्याविनिश्चित्यराघवायन्यवेदयत् ॥ ९ ॥ लक्ष्मणस्यवचःश्रुत्वारामःकालंविसृज्यच ॥ निःसृत्यत्वरितोराजाअत्रेःपुत्रंददर्शह ॥१०॥ सोऽभिवाद्यमहात्मानंज्वलंतमिवतेजसा॥ किंकार्यमितिकाकुत्स्थःकृतांजलिरभाषत ॥ ११ ॥ तद्वाक्यंराघवेणोक्तंश्रुत्वामुनिवरःप्रभुः ॥ प्रत्याहरामदुर्वासाः श्रूयतांधर्मवत्सल॥१२॥ अद्यवर्षसहस्रस्यसमाप्तिर्ममराघव ॥ सोऽहंभोजनमिच्छामियथासिद्धंतवानघ ॥ १३॥ तच्छ्रुत्वावचनंराजाराघवः प्रीतमानसः ॥ भोजनंमुनिमुख्यायययथासिद्धमुपाहरत् ॥ १४ ॥ सतुभुक्त्वामुनिश्रेष्ठस्तदन्नममृतोपमम् ॥ साधुरामेतिसंभाष्यस्वमाश्रममुपागमत् ॥ १५ ॥ संस्मृत्यकालवाक्यानिततोदुःखमुपागमत् ॥ दुःखेनचसुसंतप्तःस्मृत्वातद्घोरदर्शनम् ॥ १६ ॥

किया ॥ ९ ॥ लक्ष्मणके वचन सुनतेही रघुनाथजीने कालको बिदा करके शीघ्रतासे द्वारे आकर अत्रिपुत्र दुर्वासाको देखा॥१०॥ रघुनाथजीने हाथ जोड तेजसे दीप्तिमान् महात्मा दुर्वासाजीको प्रणाम कर बोले क्या आज्ञा है॥११॥ मुनिश्रेष्ठ रामचन्द्रजीके यह वचन सुनकर दुर्वासाजी बोले हे धर्मज्ञ! सुनिये॥१२॥ हे पापरहित! हमने सहस्र वर्षतक भोजन न करनेका (अनशन) व्रत किया था वोह आज पूरा हुआ है इस कारण आपके यहां जो कुछ विद्यमान होहमें भोजन करनेको दीजिये॥१३॥ यह वचन सुनतेही रघुनाथजीने अत्यंत प्रसन्न हो अमृतके समान स्वादिष्ठ पदार्थ मुनिराजको जिमाये॥१४॥ मुनिश्रेष्ठ दुर्वासाजी अमृत सदृश भोजन करके रघुनाथजीकी बडाई कर अपने आश्रमको गये ॥१५॥ जब ऋषि चले गये तो रघुनाथजी कालके यह घोरदर्शन वचन स्मरण कर "कि जो

हमें तुम्हें देखे या हमारी तुम्हारी बात सुनेवह वधके योग्य है" बडे दुःखीहुए ॥ १६ ॥ नीचेको मुख कर दीनमनसे उस समय कुछ भी न कह सके; फिर रघुनाथजी कालके वाक्योंको बुद्धिसे विचारकर कि, अब भाईभृत्य सबकाही समय प्राप्त हुआ है ॥१७॥ इस कारण अब यह समाज कुछभी स्थित न रहेगा, यह विचार यशस्वी श्रीरामचन्द्रजी मौन हुए॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदिका० उत्तरकांडे कालप्रस्थानं नामपंचोत्तरशततमः सर्गः ॥१०५॥ इसप्रकार राहुग्रस्त चन्द्रमाके समान नीचेको मुख किये दीन मलीन रामचन्द्रकोदेखकर लक्ष्मणजी प्रसन्नतापूर्वक उनसे कहने लगे ॥ १ ॥ हे महाभुज ! आपको मेरे निमित्त संताप करना उचित नहीं है पूर्वकालसे विधान की हुई कालकी गतिही इस प्रकार है ॥२॥ हे राम ! आप शंका त्यागन कर मुझको मार अपनी प्रतिज्ञा पूरी कीजिये । हे काकुत्स्थ ! प्रतिज्ञा त्यागनेवाले पुरुष नरकमें जाते हैं ॥ ३ ॥ हे महाराज ! यदि आपकी मुझमेंप्रीति है, यदि आप

अवाङ्मुखोदीनमनाव्याहर्तुंनशशाकह ॥ ततोबुद्ध्याविनिश्चित्यकालवाक्यानिराघव ॥ १७ ॥ नैतदस्तीतिनिश्चित्यतूष्णीमासीन्महायशाः ॥१८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे पंचोत्तरशततमःसर्गः॥१०५॥ अवाङ्मुखमथोदीनंदृष्ट्वा सोम मिवाप्लुतम् ॥ राघवंलक्ष्मणोवाक्यंहृष्टोमधुरमब्रवीत् ॥१॥ नसंतापंमहाबाहोमदर्थंकर्तुमर्हसि ॥ पूर्वंनिर्माणबद्धाहिकालस्यगतिरीदृशी॥२॥ जहिमांसौम्यविस्रब्धंप्रतिज्ञांपरिपालय ॥ हीनप्रतिज्ञाःकाकुत्स्थप्रयांतिनरकंनराः ॥ ३ ॥ यदिप्रीतिर्महाराजयद्यनुग्राह्यतामयि ॥ जहिमांनि र्विशंकस्त्वंधर्मंवर्धयराघव ॥ ४ ॥ लक्ष्मणेनतथोक्तस्तुरामःप्रचलितेंद्रियः ॥ मंत्रिणःसमुपानीयतथैवचपुरोधसः ॥ ५ ॥ अब्रवीच्चतदावृत्तं तेषांमध्येसराघवः ॥ दुर्वासोऽभिगमंचैवप्रतिज्ञांतापसस्यच॥६॥ तच्छ्रुत्वामंत्रिणःसर्वेसोपाध्यायाःसमासत ॥ वसिष्ठस्तुमहातेजावाक्यमेतदु वाचह ॥ ७ ॥ दृष्टमेतन्महाबाहोक्षयंतेरोमहर्षणम् ॥ लक्ष्मणेनवियोगश्चतवराममहायशः ॥८॥ त्यजैनंबलवान्कालोमाप्रतिज्ञांवृथाकृथाः ॥ प्रतिज्ञायांहिनष्टायांधर्मोहिविलयंव्रजेत् ॥ ९ ॥ ततोधर्मेविनष्टेतुत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥ सदेवर्षिगणंसर्वंविनश्येत्तुनसंशयः ॥ १० ॥

मेरे ऊपर कृपा करते हैं तो आप मुझे निःसन्देह मारकर धर्मवृद्धि कीजिये॥४॥यह लक्ष्मणके वचन सुन रघुनाथजीने व्याकुल हो अपने पुरोहित और मन्त्रि योंको बुलाया ॥५॥ उन सबसे रघुनाथजीने तपस्वीकी प्रतिज्ञा और लक्ष्मणजीका दुर्वासाके वचनसे मंदिरमें जाना ॥ ६ ॥ रघुनाथजीके यह वचन सुनकर सब मन्त्री मौन होगये; तब महातपस्वी वसिष्ठजी इस प्रकार कहने लगे॥७॥ हे रघुनाथजी ! हमने योगबलसे यह रोमहर्षण विनाश देखलिया है (दुर्वासासे भी सुना है) लक्ष्मणसे अब आपका वियोग होगा ॥ ८ ॥ हे राजन् ! काल बलवान् है आप प्रतिज्ञा वृथा मत कीजिये लक्ष्मणजीका त्याग कीजिये क्योंकि प्रतिज्ञाके त्यागनेसे धर्मका नाश होता है ॥९॥ धर्मके नष्ट होनेमें त्रिलोकी और चर अचरसहित सब देवता ऋषि नष्ट होजाते हैं इसमें सन्देह नहीं ॥१०॥

हे रामचन्द्र ! त्रिलोकीको पालन करनेके निमित्त आज आप लक्ष्मणके विना जगत्को स्वस्थ कीजिये ॥ ११ ॥ उन मन्त्री आदिकोंके कहे हुए धर्मसहित वचन श्रवण करके रामचन्द्र सभाके बीचमें लक्ष्मणसे कहने लगे ॥ १२ ॥ हे लक्ष्मण ! धर्मके विपरीत न होनेके निमित्त हम तुमको विसर्जन करते हैं, साधु ओंका त्याग या वध यह दोनों समानही हैं ॥ १३ ॥ रघुनाथजीके यह वचन सुन व्याकुल चित्त हो नेत्रोंमें आंसू भरे लक्ष्मणजी वहांसे तुरंत चले गये और अपने घरभी न गये (लक्ष्मणको शरीरहानिका शोच नहीं किन्तु रघुनाथके वियोगकाही दुःख हुआ) ॥१४॥ तुरंत सरयूके किनारे जाय जलसे आचमन कर हाथ जोड योगमार्गसे संपूर्ण इन्द्रियोंके मार्गोंको रोक प्राणोंकी गति रोक दी ॥१५॥ इसप्रकार श्वासरहित योगारूढ लक्ष्मणको देखकर इन्द्र, अप्सरा, देवता

सत्वंपुरुषशार्दूलत्रैलोक्यस्याभिपालनात् ॥ लक्ष्मणेनविनाचाद्यजगत्स्वस्थंकुरुष्वह ॥११॥ तेषांतत्समवेतानांवाक्यंधर्मार्थसंहितम् ॥ श्रुत्वा परिषदोमध्येरामोलक्ष्मणमब्रवीत् ॥१२॥ विसर्जयेत्वांसौमित्रेमाभूद्धर्मविपर्ययः ॥ त्यागोवधोवाविहितः साधूनां ह्युभयंसमम् ॥१३॥ रामे णभाषितेवाक्येबाष्पव्याकुलितेंद्रियः ॥ लक्ष्मणस्त्वरितःप्रायात्स्वगृहंनविवेशह ॥१४॥ सगत्वासरयूतीरमुपस्पृश्यकृतांजलिः ॥ निगृह्य सर्वस्रो तांसिनिःश्वासंनमुमोचह॥१५॥अनिःश्वसंतंयुक्तंतंसशक्राःसाप्सरोगणाः ॥ देवाःसर्षिगणाःसर्वेपुष्पैरभ्यकिरंस्तदा ॥१६॥ अदृश्यंसर्वमनुजैः सशरीरंमहाबलम् ॥ प्रगृह्यलक्ष्मणंशक्रस्त्रिदिवंसंविवेशह ॥१७॥ ततोविष्णोश्चतुर्भागमागतं सुरसत्तमाः ॥ हृष्टाःप्रमुदिताःसर्वेपूजयंतिस्मराघ वम् ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे लक्ष्मणवियोगोनामषडुत्तरशततमः सर्गः ॥१०६॥ विसृ ज्यलक्ष्मणंरामोदुःखशोकसमन्वितः॥पुरोधसोमंत्रिणश्चनैगमाश्चेदमब्रवीत्॥१॥अद्यराज्येऽभिषेक्ष्यामिभरतंधर्मवत्सलम्॥अयोध्यायाःपतिं वीरततोयास्याम्यहंवनम् ॥ २ ॥ प्रवेशयतसंभारान्माभूत्कालात्ययोयथा ॥ अद्यैवाहंगमिष्यामिलक्ष्मणेनगतांगतिम् ॥ ३ ॥

और ब्रह्मर्षि सब वैकुण्ठवासी इनके ऊपर फूलोंकी वर्षा करने लगे ॥ १६ ॥ और मनुष्योंको अदृश्य होकर इन्द्रजी वहां आये और महाबलवान् लक्ष्मणजीको शरीरसहित लेकर स्वर्गको चले गये ॥ १७ ॥ संपूर्ण देवता विष्णुके चतुर्थ भागको आया हुआ देखकर प्रसन्नतासे उनकी पूजा करने लगे ॥ १८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां लक्ष्मणवियोगो नाम षडुत्तरशततमः सर्गः ॥ १०६ ॥ लक्ष्मणको त्यागन कर दुःख और शोकसे संतप्त हो रामचन्द्र पुरोहित, मंत्री और पुरवासियोंको बुलायकर कहने लगे ॥ १ ॥ आज मैं धर्मात्मा भरतको राज्यमें अभिषेक करूंगा, इन्हें अयोध्याका स्वामी कर मैं वनको चला जाऊंगा ॥२॥ इसका सब सामान अभी करो,वृथा काल खोना भला नहीं है मैं अभी लक्ष्मणकीगतिको जाऊंगा ॥ ३ ॥

यह रघुनाथजीके वचन सुनतेही सम्पूर्ण प्रजा मुख नीचे किये पृथ्वीको प्रणाम करते हुए से प्राणरहितोंके समान होगये ॥ ४ ॥ रामचन्द्रके यह वचन सुन भरतजीभी मूर्च्छित हुए और राज्यकी निन्दा करते हुए रामचन्द्रसे बोले ॥ ५ ॥ हे रामचन्द्र ! मैं सत्यकी सौगंध करके कहता हूँ कि, आपके विना मैं स्वर्ग वा पृथ्वी कहींका भी राज्य नहीं चाहता ॥ ६ ॥ हे वीर ! आप इन दोनों वीर कुश और लवको अभिषेक कर दीजिये; कौशलदेशमें कुशको और उत्तर कौशलमें लवको राज्य दीजिये ॥ ७ ॥ और शत्रुघ्नके पासभी दूत बडी शीघ्रतासे जाय कि, हमारी महायात्राके समाचार सुनाकर उसको शीघ्र लावे ॥ ८ ॥ यह भरतजीके वचन सुन और महादुःखी नीचेको मुख करके बैठे हुए पुरवासियोंको देखकर वसिष्ठजी कहने लगे ॥ ९ । हे वत्स राम ! इधर तो देखो

तच्छ्रुत्वाराघवेणोक्तंसर्वाःप्रकृतयोभृशम् ॥ मूर्धभिःप्रणताभूमौगतसत्त्वाइवाभवन् ॥४॥ भरतश्चविसंज्ञोऽभूच्छ्रुत्वाराघवभाषितम् ॥ राज्यंविगर्हयामासवचनंचेदमब्रवीत् ॥५॥ सत्येनाहंशपेराजन्स्वर्गभोगेनचैवहि ॥ नकामयेयथाराज्यंत्वांविनारघुनंदन ॥ ६ ॥ इमौकुशीलवौराजन्नभिषिच्यनराधिप ॥ कोशलेषुकुशंवीरमुत्तरेषुयथालवम् ॥ ॥७॥ शत्रुघ्नस्यचगच्छंतुदूतास्त्वरितविक्रमाः ॥ इदंगमनमस्माकंशीघ्रमाख्यातुमाचिरम् ॥ ८ ॥ तच्छ्रुत्वाभरतेनोक्तंदृष्ट्वाचापिह्यधोमुखान् ॥ पौरान्दुःखेनसंतप्तान्वसिष्ठोवाक्यमब्रवीत् ॥ ९ ॥ वत्सरामइमाःपश्यधरणींप्रकृतीगंताः ॥ज्ञात्वैषामीप्सितंकार्यमाचैषांविप्रियंकृथाः ॥१०॥ वसिष्ठस्यतुवाक्येनउत्थाप्यप्रकृतीजनम् ॥ किंकरोमीतिकाकुत्स्थःसर्वान्वचनमब्रवीत् ॥ ११॥ ततःसर्वाः प्रकृतयोरामंवचनमब्रुवन् ॥ गच्छंतमनुगच्छामोयत्ररामगमिष्यसि ॥ १२॥ पौरेषुयदितेप्रीतिर्यदिस्नेहोह्यनुत्तमः ॥ सपुत्रदाराःकाकुत्स्थसमंगच्छामसत्पथम् ॥ १३ ॥ तपोवनंवादुर्गंवानदीमंभोनिधिंतथा ॥ वयंतेयदिनत्याज्याःसर्वान्नोनयईश्वर ॥ १४ ॥

कि, आपकी प्रजा शोकके मारे पृथ्वीपर व्याकुल पडी है इनका मनोरथ जानकर कार्य करना उचित है, किसी प्रकार इनके विपरीत कार्य करनाभला नहीं है ॥ १० ॥ वसिष्ठजीके वचन सुनकर प्रजाओंको उठाकर उन सबसे रघुनाथजी बोले हम आपका क्या कार्य करें ॥ ११ ॥ रामचन्द्रके यह वचन सुन वह प्रजालोग कहने लगे हे राम ! आप जहांको जायँगे वहां हम भी आपके पीछे जांयगे ॥ १२ ॥ हे राम ! यदि पुरवासियोंमें आपकी प्रीति और स्नेह है तो पुत्र स्त्री सहित हम सब लोग आपके पीछे चलेंगे ॥ १३ ॥ हे ईश्वर ! तपोवन दुर्गम स्थान नदी सागर इन सब स्थानोंमें जहां कहीं भी आप जायँ आप हमें नहीं त्यागन करोगे तो हम आपके पीछे जायँगे ॥ १४ ॥

बस इसीमें हमारी परम प्रीति होगी यही हमको परम वर है आपके पीछे २ चलनेमें ही हमारी परम प्रीति है ॥ १५ ॥ पुरवासियोंकी दृढ भक्ति देखकर रामचन्द्रने कहा यही होगा, और अपने कर्तव्य कर्मको विचारकर उसी दिन रामचन्द्रने ॥ १६ ॥ कौशल देशमें कुशको और उत्तर कौशलके सिंहासनमें महात्मा लवको अभिषेक कर दिया ॥१७॥ इस प्रकार दोनों पुत्रोंको अभिषेक करके उन्हें गोदीमें बैठाया, सहस्र रथ, दशसहस्र हाथी, दशसहस्र घोडे और अनेक धन रत्न पृथक्पृथक् एक एक पुत्रको दिये॥१८॥ बहुत धन और बहुतरत्न देकर हृष्टपुष्ट मनुष्योंसे युक्त उन दोनों देशोंमें दोनों भ्राताओंको भेजदिया ॥१९॥ इस प्रकार उन दोनों वीरोंको राज्यमें अभिषेक कर और उनको उन पुरोंमें भेजकर महाबली रामचन्द्रने महात्मा शत्रुघ्नके बुलानेके निमित्त दूतोंको

एषानःपरमाप्रीतिरेषनःपरमोवरः ॥ हृद्गतानःसदाप्रीतिस्तवानुगमनेनृप ॥ १५ ॥ पौराणांदृढभक्तिंचबाढमित्येवसोऽब्रवीत् ॥ स्वकृतांतंचान्ववेक्ष्यतस्मिन्नहनिराघवः ॥ १६ ॥ कोशलेषुकुशंवीरमुत्तरेषुतथालवम् ॥ अभिषिच्यमहात्मानावुभौरामःकुशीलवौ ॥ १७ ॥ अभिषिक्तौसुतावंकेप्रतिष्ठाप्यपुरेततः ॥ रथानांतुसहस्राणिनागानामयुतानिच ॥ दशचाश्वसहस्राणिएकैककस्यधनंददौ ॥१८॥ बहुरत्नौबहुधनौहृष्टपुष्टजनाश्रयौ ॥ स्वेपुरेप्रेषयामासभ्रातरौतौकुशीलवौ ॥१९॥ अभिषिच्यततोवीरौप्रस्थाप्यस्वपुरेतदा ॥ दूतान्संप्रेषयामासशत्रुघ्नायमहात्मने ॥२०॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० च०सा० उत्तरकांडे सप्तोत्तरशततमःसर्गः ॥ १०७ ॥ तेदूतारामवाक्येनचोदितालघुविक्रमाः ॥ प्रजग्मुर्मधुराशीघ्रंचक्रुर्वासंनचाध्वनि ॥१॥ ततस्त्रिभिरहोरात्रैःसंप्राप्यमधुरामथ ॥ शत्रुघ्नाययथातत्त्वमाचख्युःसर्वएवतत् ॥२॥ लक्ष्मणस्यपरित्यागंप्रतिज्ञांराघवस्यच ॥ पुत्रयोरभिषेकंचपौरानुगमनंतथा ॥३॥ कुशस्यनगरीरम्याविंध्यपर्वतरोधसि ॥ कुशावतीतिनाम्नासाकृतारामेणधीमता ॥४॥ श्रावस्तीतिपुरीरम्याश्राविताचलवस्यह ॥ अयोध्यांविजनांकृत्वाराघवोभरतस्तथा ॥५॥

भेजा ॥ २० ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आ० उत्तरकांडे भाषायां सप्तोत्तरशततमः सर्गः ॥ १०७ ॥ वे शीघ्रगामी दूतरामचन्द्रकी आज्ञासे बहुत शीघ्रतासे मथुराको चले और उन्होंने मार्गमें विश्रामभी नहीं किया ॥ १ ॥ इस प्रकारसे तीन दिन रातमें वे दूत मथुरामें पहुँचे और शत्रुघ्नजीको आद्योपान्त समस्त वृत्तान्त सुनाया ॥ २॥ रामचन्द्रकी प्रतिज्ञा और लक्ष्मणका त्याग, कुश और लवका राज्यतिलक, पुरवासियोंका संगजाना ॥३॥ और विन्ध्याचल पर्वतके निकट दक्षिण कुशावती नगरी वसाकर उसमें कुशका स्थापन करना ॥ ४ ॥ और लवके निमित्त श्रावस्ती नाम मनोहर पुरीको देना और जिस प्रकार अयोध्याको शून्यकर महारथी भरत और रामचन्द्र ॥ ५ ॥

स्वर्गमें जानेको उद्यत हुए हैं यह सब समाचार दूतोंने महात्मा शत्रुघ्नजीसे निवेदन किये ॥ ६ ॥ औ 'आप शीघ्र चलिये' यह कहकर दूत मौन हुए । शत्रुघ्न
जीने इस प्रकार कुलक्षयका एक घोर वृत्तान्त सुनकर ॥ ७ ॥ अपने सब मंत्री पुरजन और कांचननामक पुरोहितको बुलाकर शत्रुघ्नजीने उनसे सब समाचार
सुनाये ॥ ८ ॥ और यह भी कहा कि, अब हम अपने भ्राताओंके साथ स्वर्ग जायँगे, पश्चात् अपने दोनों पराक्रमी पुत्रोंको उस देशके राज्यमें अभिषेकित
किया ॥ ९ ॥ सुबाहु पुत्रको मथुरा नगरीका और शत्रुघातीको वैदिश देशका राज्य दिया, मथुराकी सब सेनाके और धनके दोभागकर अपने पुत्रोंको दिये
पश्चात् शत्रुघ्नजी ॥ १० ॥ सुबाहुको मथुरामें और शत्रुघातीको वैदिश देशमें प्रतिष्ठित करके एक रथपर चढ आप अकेलेही अयोध्याको चले ॥ ११ ॥

स्वर्गस्यगमनोद्योगंकृतवंतौमहारथौ ॥ एवंसर्वंनिवेद्याशुशत्रुघ्नायमहात्मने ॥६॥ विरेमुस्तेततोदूतास्त्वरराजेतिचाब्रुवन् ॥ तच्छ्रुत्वाघोरसंकाशं
कुलक्षयमुपस्थितम् ॥ ७ ॥ प्रकृतीस्तुसमानीयकांचनंचपुरोधसम् ॥ तेषांसर्वंयथावृत्तमब्रवीद्रघुनंदनः ॥८॥ आत्मनश्चविपर्यासंभविष्यंभ्रातृ
भिःसह ॥ ततःपुत्रद्वयंवीरःसोभ्यषिंचन्नराधिपः ॥ ९ ॥ सुबाहुर्मधुरांलेभेशत्रुघातीचवैदिशम् ॥ द्विधाकृत्वातुतांसेनांमाधुरींपुत्रयोर्द्वयोः ॥
धनंचयुक्तंकृत्वावैस्थापयामासपार्थिवः ॥ १० ॥ सुबाहुंमधुरायांचवैदिशेशत्रुघातिनम् ॥ ययौस्थाप्यतदायोध्यांरथेनैकेनराघवः ॥ ११ ॥
सददर्शमहात्मानंज्वलंतमिवपावकम् ॥ सूक्ष्मक्षौमांबरधरंमुनिभिःसार्धमक्षयैः ॥ १२ ॥ सोऽभिवाद्यततोरामंप्रांजलिःप्रयतेंद्रियः ॥ उवाच
वाक्यंधर्मज्ञंधर्ममेवनुचिंतयन् ॥१३॥ कृत्वाभिषेकंसुतयोर्द्वयोराघवनंदनः ॥ तवानुगमनेराजन्विद्धिमांकृतनिश्चयम् ॥ १४ ॥ नचान्यदद्यवक्त
व्यमतोवीरनशासनम् ॥ विहन्यमानमिच्छामिमद्विधेनविशेषतः ॥ १५ ॥ तस्यतांबुद्धिमक्लीबांविज्ञायरघुनंदनः ॥ बाढमित्येवशत्रुघ्नंरामो
वाक्यमुवाचह ॥ १६ ॥ तस्यवाक्यस्यवाक्यांतेवानराःकामरूपिणः ॥ ऋक्षराक्षससंघाश्चसमापेतुरनेकशः ॥ १७ ॥

उन्होंने अयोध्यामें पहुँचकर अग्निके समान प्रकाशमान रेशमीन वस्त्र पहरे मुनियोंके साथमें बैठे महात्मा रामचन्द्रको देखकर ॥ १२ ॥ सावधानता सहित शत्रु
घ्नजीने प्रणाम किया और धर्मको विचार कर धर्मज्ञ रामचन्द्रसे इस प्रकार कहने लगे ॥ १३ ॥ हे रामचन्द्र ! अपने दोनों पुत्रोंको अभिषेक कर आपके साथ
चलनेमें दृढ निश्चय करके मैं आपके सन्मुख उपस्थित हुआ हूं ॥१४॥ हे वीर ! इस कारण अब इसके विपरीत हमको कुछ आज्ञा आप न दीजिये क्योंकि
हम आपकी आज्ञाका भंग करना नहीं चाहते और आपके संग जाना चाहते हैं ॥ १५ ॥ रघुनाथजीने शत्रुघ्नजीकी इस प्रकार दृढ बुद्धि देखकर कहा कि,
जो तुम कहते हो ऐसाही किया जायगा ॥ १६ ॥ रामचन्द्र यह कहते ही थे कि; उसी समय अनगिनित कामरूपी वानर रीछ और राक्षस आकर प्राप्त

हुए ॥ १७ ॥ सुग्रीवजीको आगे करके सम्पूर्ण वानरादिक स्वर्ग जानेकी इच्छा करने वाले रघुनाथजीको देखनेके निमित्त आये ॥ १८॥ देवता, ऋषि और गन्धर्वोंके पुत्र यह सब वानर रघुनाथजीका साकेतलोकमें गमन विचार कर सब कोई आये ॥१९॥ औ कहने लगे हे भगवन् ! हम सब कोई आपके संग चलनेको आये हैं, हे पुरुषोत्तम ! जो आप विनाही हम लोगोंको साथ लिये चले जायँगे तो ॥२०॥ मानो यमदंडही उठायकर आपने हम लोगोंको निपातित कर दिया इसी अवसरमें महाबली सुग्रीवजी ॥ २१ ॥ वीर्यवान् रघुनाथजीको प्रणाम कर विनय करने लगे ॥ २२ ॥ हे नरेश्वर ! हम अंगदको राज्य देकर आपके साथ चलनेका दृढ निश्चय कर आपके पास आये हैं ॥ २३ ॥ उनके यह वचन रामचन्द्रने मुस्कुराकर स्वीकार किये और महायशस्वी रामचन्द्र विभीषणसे बोले ॥ २४ ॥ हे विभीषण ! हे महाबली ! जबतक प्रजा विद्यमान है तबतक लंकापुरीमें राज्य करते रहो ॥ २५ ॥ जबतक चन्द्रमा और सूर्य

सुग्रीवंतेपुरस्कृत्यसर्वएवसमागताः ॥ तंरामंद्रष्टुमनसःस्वर्गायाभिमुखस्थितम् ॥१८॥ देवपुत्राऋषिसुतागंधर्वाणांसुतास्तथा ॥ रामक्षयंविदित्वातेसर्वएवसमागताः ॥१९॥ तवानुगमनेराजन्संप्राप्ताःस्मसमागताः ॥ यदिरामविनास्माभिर्गच्छेस्त्वंपुरुषोत्तम ॥२०॥ यमदंडमिवोद्यम्यत्वयास्मविनिपातिताः ॥ एतस्मिन्नंतरेरामंसुग्रीवोऽपिमहाबलः ॥२१॥ प्रणम्यविधिवद्वीरंविज्ञापयितुमुद्यतः ॥२२॥ अभिषिच्यांगदंवीरमागतोऽस्मिनरेश्वर ॥ तवानुगमनेराजन्विद्धिमांकृतनिश्चयम् ॥२३॥ तैरेवमुक्तःकाकुत्स्थोबाढमित्यब्रवीत्स्मयन् विभीषणमथोवाचराक्षसेंद्रंमहायशाः ॥२४॥ यावत्प्रजाधरिष्यंतितावत्त्वंवैविभीषण ॥ राक्षसेंद्रमहावीर्यलंकास्थःस्वंधरिष्यसि ॥२५॥ यावच्चंद्रश्चसूर्यश्चयावत्तिष्ठतिमेदिनी ॥ यावन्मत्कथालोकेतावद्राज्यंतवास्त्विह ॥२६॥ शासितश्चसखित्वेनकार्यंतेममशासनम् ॥ प्रजाःसंरक्षधर्मेणनोत्तरंवक्तुमर्हसि ॥२७॥ किंचान्यद्वक्तुमिच्छामिराक्षसेंद्रमहाबल ॥ आराधयजगन्नाथमिक्ष्वाकुकुलदैवतम् ॥२८॥ आराधनीयमनिशंदेवैरपिसवासवैः ॥ तथेतिप्रतिजग्राहरामवाक्यंविभीषणः ॥ राजाराक्षसमुख्यानांराघवाज्ञामनुस्मरन् ॥२९॥ तमेवमुक्त्वाकाकुत्स्थोहनूमंतमथाब्रवीत् ॥ जीवितेकृतबुद्धिस्त्वंमाप्रतिज्ञां वृथाकृथाः ॥३०॥

विद्यमान हैं और जबतक यह पृथ्वी विद्यमान है, जबतक मेरी कथा संसारमें विद्यमान है तबतक तुम राज्य करो ॥२६॥ हे सखे ! तुम्हें हमारी आज्ञा माननी उचित है; क्योंकि हम मित्रभावसे तुमको समझाते हैं तुम धर्मपूर्वक प्रजाका पालन करो और हमारे वचनमें प्रत्युत्तर न करो ॥ २७ ॥ महाबली राक्षसेन्द्र ! हम तुमसे कुछ औरभी कहते हैं; तुम इक्ष्वाकुकुलके देवता जगन्नाथकी अराधना करते रहना ॥२८॥ देवता सहित इन्द्रभी (हमारीही) अराधना करते हैं, यही तुम प्रतिदिन करना, यह सुनकर विभीषणने रामचन्द्रके वचन ग्रहण किये प्रधान राक्षसोंके राजा विभीषणने रघुनाथजीके वचन स्मरण रक्खे ॥२९॥ (ब्रह्माजीने इन्हें अमरत्व दिया था, इस कारण रामचन्द्रने इन्हें साथ न लिया) विभीषणसे यह कहकर महावीरजीको अमर जानकर रामचन्द्र कहने लगे कि,

तुम बहुत कालतक जीनेकी इच्छा करते रहो, यह हमारी प्रतिज्ञा वृथा न करना॥३०॥ हे वानरराज ! जबतक संसारमें हमारी कथा प्रचलित रहेगी; तबतक तुम प्रसन्नता पूर्वक मनुष्य लोकमें रहो ॥ ३१ ॥ जब रघुनाथजीने ऐसा कहा तो महावीरजीने प्रसन्न हो रामचन्द्रसे कहने लगे ॥३२॥ हे भगवन् ! जबतक आपकी पवित्र कथा संसारमें विद्यमान रहेगी तबतक मैं आपकी आज्ञाका पालन करता हुआ संसारमें वास करूंगा ॥ ३३ ॥ इसीप्रकार ब्रह्माके पुत्र वृद्ध जाम्बवन्त, मैन्द, द्विविद इनसेभी रामचन्द्रजी बोले कि, तुम जबतक कलियुग आवे तबतक प्राण धारण करो, इस प्रकार महावीर, हनुमान्, विभीषणजी, जाम्बवन्त, मैंद द्विविद इन पाँचोंको रघुनाथजीने आज्ञा दी ॥ ३४ ॥ इन पाँचोंको इस प्रकारसे आज्ञा दे रघुनाथजी शेष ऋक्षवानरोंसे बोले कि, तुम सब

मत्कथाःप्रचरिष्यंतियावल्लोकेहरीश्वर ॥ तावद्रमस्वसुप्रीतोमद्वाक्यमनुपालयन्॥३१॥एवमुक्तस्तुहनुमान्राघवेणमहात्मना॥ वाक्यंविज्ञापयामासपरंहर्षमवापच॥३२॥यावत्तवकथालोकेविचरिष्यतिपावनी ॥ तावत्स्थास्यामिमेदिन्यांतवाज्ञामनुपालयन् ॥ जांबवंतंतथोक्त्वातुवृद्धंब्रह्मसुतंतदा ॥३३॥ मैंदंचद्विविदंचैवपंचजांबवतासह॥ यावत्कलिश्चसंप्राप्तस्तावज्जीवतसर्वदा॥३४॥तदेवमुक्त्वाकाकुत्स्थःसर्वांस्तानृक्षवानरान् ॥ उवाचबाढंगच्छध्वंमयासार्धंयथोदितम्॥३५॥इत्यार्षेश्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये च० सा० उत्तरकांडे अष्टोत्तरशततमःसर्गः॥१०८॥ प्रभातायांतुशर्वर्यांपृथुवक्षामहायशाः॥रामःकमलपत्राक्षःपुरोधसमथाब्रवीत्॥१॥अग्निहोत्रंव्रजत्वग्रेदीप्यमानंसहद्विजैः॥वाजपेयातपत्रंचशोभमानंमहापथे॥२॥ ततोवसिष्ठस्तेजस्वीसर्वंनिरवशेषतः॥चकारविधिवद्धर्मंमहाप्रस्थानिकंविधिम् ॥३॥ ततःसूक्ष्मांबरधरोब्रह्मआवर्तयन्परम् ॥ कुशान्गृहीत्वापाणिभ्यांसरयूंप्रययावथ ॥४॥अव्याहरन्क्वचित्किंचिन्निश्चेष्टोनिःसुखःपथि॥ निर्जगामगृहात्तस्माद्दीप्यमानोयथांशुमान् ॥५॥

हमारे साथ चलो ॥ ३५ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायामष्टोत्तरशततमः सर्गः ॥ १०८ ॥ जब रात्रि बीती और प्रातःकाल हुआ, तब चौडी छातीवाले यशस्वी कमल लोचन रामचन्द्रजी अपने पुरोहित वसिष्ठजीसे बोले ॥ १ ॥ दीप्तिमान् अग्निहोत्र और वाजपेयछत्र ब्राह्मणोंके साथ आगे २ शोभायमान महापथमें चले ॥ २ ॥ रघुनाथजीके यह वचन सुन तेजस्वी वसिष्ठजीने महाप्रस्थान विधिके उचित सब धर्मकार्य किया ॥ ३ ॥ तदनन्तर रेशमीन वस्त्र धारण करे वेदका उच्चारण करते कुश हाथमें लिये रघुनाथजी सरयूकी ओर चले । (परलोक गमन यात्राकी यही विधि है) ॥ ४ ॥ वेद उच्चारणके विना और कुछभी न कहते हुए, चलनेके सिवाय औ चेष्टासे रहित, मार्गमें कांटे आदि लगनेके दुःखमें अपेक्षा रहित, रामचन्द्र अपने उस मंदिरसे महाका

न्तिमान् सूर्यकेसमान निकले ॥५॥ चलनेके समय महाराजके दक्षिण ओर लक्ष्मी, बांई ओर पृथ्वी देवी; और आगे संहारशक्ति चली ॥६॥अनेक प्रकारके बाण और उत्तम धनुष और सम्पूर्ण आयुध पुरुषोंका रूप बनाये रघुनाथजीके संग चले ॥ ७ ॥ यह रौद्रशक्ति गमन कहा, ब्राह्मणका वेष धारण कर चारों वेद, सबको रक्षा करनेवाली गायत्री, ॐकार (ज्ञानयोग) वषट्कार (कर्मयोग) यह सब रामचन्द्रके संग चले ॥ ८ ॥ महात्मा ऋषि और सब ब्राह्मण लोग स्वर्गद्वार खुला देखकर रामचन्द्रके संग चले ॥ ९ ॥ रामचन्द्रके प्रस्थान करनेपर रनवासकी सब स्त्री वृद्ध, बालक, दासी, कंचुकी तथा सेवकों सहित चलीं ॥१०॥ रनवासके सहित भरत और शत्रुघ्न भी अग्निहोत्रको आगे कर रघुनाथजीको पीछे २ चले ॥ ११ ॥ इस प्रकार यह सब महात्मा अग्निहोत्रको

रामस्यदक्षिणेपार्श्वेंपद्माश्रीःसमुपाश्रिता ॥ सव्येऽपिचमहीदेवीव्यवसायस्तथाग्रतः ॥६॥ शरानानाविधाश्चापिधनुरायत्तमुत्तमम् ॥ तथायुधाश्चतेसर्वेंययुःपुरुषविग्रहाः॥७॥वेदाब्राह्मणरूपेणगायत्रीसर्वरक्षिणी ॥ ओंकारोऽथवषट्कारःसर्वेंराममनुव्रताः ॥८॥ ऋषयश्चमहात्मानःसर्वएव महीसुराः ॥ अन्वगच्छन्महात्मानंस्वर्गद्वारमपावृतम् ॥ ९ ॥ तंयांतमनुगच्छंतिह्यंतःपुरचराःस्त्रियः ॥ सवृद्धबालदासीकाःसवर्षवरकिंकराः ॥१०॥ सांतःपुरश्चभरतःशत्रुघ्नसहितोययौ ॥ रामंगतिमुपागम्यसाग्निहोत्रमनुव्रतः ॥११॥ तेचसर्वेंमहात्मानःसाग्निहोत्राःसमागताः ॥ सपुत्रदाराःकाकुत्स्थमनुजग्मुर्महागतिम्॥ १२ ॥ मंत्रिणोभृत्यवर्गाश्चसपुत्रपशुबांधवा ॥ सर्वेंसहानुगाराममन्वगच्छन्प्रहृष्टवत् ॥१३॥ ततःसर्वाः प्रकृतयोहृष्टपुष्टजनावृताः ॥ गच्छंतमनुगच्छंतिराघवंगुणरंजिताः ॥ १४ ॥ ततःस्त्रीपुमांसस्तेसपक्षिपशुबांधवाः ॥ राघवस्यानुगाःसर्वेंहृष्टाविगतकल्मषाः ॥ १५ ॥ स्नाताःप्रमुदिताःसर्वेंहृष्टपुष्टाश्चवानराः ॥ दृढंकिलकिलाशब्दैःसर्वराममनुव्रतम् ॥१६॥

आगे कर पुत्र स्त्री सहित महामति रामचन्द्रके पीछे २ चले ॥ १२ ॥ मन्त्री तथा दासजन अपने कुटुम्बी बांधव और पशुओंको भी लेकर परम प्रसन्नतासे रघुनाथजीके पीछे हुए ॥ १३ ॥ इसके उपरान्त रामचन्द्रके गुणोंसे मोहित होकर सम्पूर्ण प्रजा हृष्टपुष्ट हो प्रसन्नतासे रामचन्द्रके पीछे पीछे चली ॥ १४ ॥ इसके उपरान्त वे स्त्री पुरुष अपने बांधव सहित और पशुपक्षी सब कोई प्रसन्नमनसे पाप रहित हो रामचन्द्रके पीछे २ चले ॥ १५ ॥ सम्पूर्ण वानर सरयूमें स्नानकर हृष्टपुत्र प्रसन्न चित्तसे रामचन्द्रके साथ जानेको किलकिला शब्द करने लगे ॥ १६ ॥

उस स्थानमें कोई दीन दुःखित वा लज्जित नहीं था; सबही प्रसन्न थे यह बडी अद्भुतबात हुई ॥ १७ ॥ उस समय जो कोई देशान्तरोंसे रामचन्द्रको देखने आये थे वह मनुष्य भी दर्शन करतेही रामचन्द्रके पीछेपीछे जाने लगे॥१८॥ऋक्ष वानर राक्षस और पुरवासी मनुष्य यह सावधान हुए भक्तिपूर्वक रघुनाथजीके पीछे २ जाते थे ॥ १९ ॥ और जितने जीव अयोध्यामें अन्तर्धान रहते थे वह भी सब स्वर्गके जानेके निमित्त रामचन्द्रके पीछे २ चले ॥२०॥ अधिक क्या उस समय जितने स्थावर जंगम प्राणियोंने रामचन्द्रको देखा वह सबही उनके पीछे २ चलने लगे॥ २१ ॥ जितने श्वास लेनेवाले जीव कीट पतंग अयोध्यामें थे वह सबही रामचन्द्रके साथ २ चले ॥ २२ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि० उत्तरकांडे भाषायां नवाधिकशततमः सर्गः ॥ १०९ ॥ इस

नतत्रकश्चिद्दीनोवाव्रीडितोवापिदुःखितः॥ हृष्टंसमुदितंसर्वंबभूवपरमाद्भुतम्॥१७॥द्रष्टुकामोऽथनिर्यांतंरामंजानपदोजनः॥यःप्राप्तःसोऽपिदृष्ट्वैव स्वर्गायानुगतोजनः ॥१८॥ ऋक्षवानररक्षांसिजनाश्चपुरवासिनः ॥ आगच्छन्परयाभक्त्यापृष्ठतःसुसमाहिताः॥१९॥यानिभूतानिनगरेऽप्यंत र्धानगतानिच॥राघवंतान्यनुययुःस्वर्गायसमुपस्थितम्॥२०॥यानिपश्यंतिकाकुत्स्थंस्थावराणिचराणिच ॥ सर्वाणिरामगमनेअनुजग्मुर्हिता न्यपि॥२१॥नोच्छ्वसत्तदयोध्यायांसुसूक्ष्ममपिदृश्यते॥ तिर्यग्योनिगताश्चैवसर्वेराममनुव्रताः॥२२॥इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदि काव्ये च० सा० ऊत्तरकांडे नवाधिकशततमःसर्गः॥१०९॥अध्यर्धयोजनंगत्वानदींपश्चान्मुखाश्रिताम्॥सरयूंपुण्यसलिलांददर्शरघुनंदनः॥१॥ तांनदीमाकुलावर्तांसर्वत्रानुसरन्नृपः ॥ आगतःसप्रजोरामस्तंदेशंरघुनंदनः॥२॥अथतस्मिन्मुहूर्तेतुब्रह्मालोकपितामहः॥ सर्वैःपरिवृतोदेवैर्भूषि तैश्चमहात्मभिः॥३॥आययौयत्रकाकुत्स्थःस्वर्गायसमुपस्थितः॥विमानशतकोटीभिर्दिव्याभिरभिसंवृतः॥४॥ दिव्यतेजोवृतंव्योमज्योतिर्भूत मनुत्तमम् ॥ स्वयंप्रभैःस्वतेजोभिःस्वर्गिभिःपुण्यकर्मभिः॥५॥पुण्यावातावबुश्चैवगंधवंतःसुखप्रदाः॥पपातपुष्पवृष्टिश्चदेवैर्मुक्तामहौघवत्॥६॥

प्रकार अयोध्यापुरीसे पश्चिमको मुख किये,तीन कोश दूरीपर जाय पवित्र जलसे भरी सरयूनदी रघुनन्दनने देखी ॥ १ ॥ रामचन्द्रजी अपनी सम्पूर्ण प्रजाको साथ लिये भँवर और बडी तरंगोंसे युक्त सरयूके गोप्रतारक घाटके तटपर आये ॥ २ ॥ इसी अवसरमें लोकपितामह ब्रह्माजी सम्पूर्ण,देवताओंको साथ लिये तथाऔर महात्मा ऋषियोंको साथ लिये ॥३॥ सौ करोडों विमानोंके सहित स्वर्गजानेको निश्चय किये रघुनाथजीके निकट उपस्थित हुए ॥ ४ ॥ आकाश जो कि नक्षत्रोंके और अपने तेजके प्रकाशसे प्रकाशित था उस समय पुण्यकर्मा और स्वयं प्रकाशित स्वर्गवासियोंके तेजसे दिव्य तेजयुक्त हो गया ॥ ५ ॥ उस समय सुगंध लिये चारों ओरसे दिव्य पवन चलने लगा और देवताओंने बहुत पुष्पोंकी वर्षाकी ॥ ६ ॥

उस समय गंधर्व गाने अप्सरा नृत्य करने लगीं, आकाशमें बाजे बजने लगे तब पूर्णब्रह्म रघुनाथजी पैरोंहीसे सरयूके जलमें प्रवेश करने लगे ॥ ७ ॥ उससमय अन्त रिक्षसे ब्रह्माजी कहने लगे हे राघव ! हे सर्वव्यापक विष्णु भगवन् ! आइये आपका मंगल हो आज हमारे भाग्यसे ही आप अपने लोकमें आते हैं ॥ ८ ॥ देवताओंके समान कान्तिवाले भाइयों सहित आप अपने प्रियलोकमें आइये । हे महाबाहो ! जिस शरीरमें प्रवेश करनेकी इच्छा हो उसमें प्रवेश करिये ॥ ९ ॥ यदि वैष्णव तेजमें प्राप्त होनेकी इच्छा हो अथवा सनातन ब्रह्म शुद्धरूपकी इच्छा हो तो उसमें प्रवेश कीजिये हे देव ! आपही सब लोकोंकी गति है और आपको कोई नहीं जानता ॥ १० ॥ हे भगवन् ! वह विशालनेत्रा ज्ञानशक्ति आपकी माया जानकीही आपको जानती हैं इसकारण आप

तस्मिंस्तूर्यशतैःकीर्णेगंधर्वाप्सरसंकुले ॥ सरयूसलिलंरामःपद्भ्यांसमुपचक्रमे ॥७॥ ततःपितामहोवाणींत्वंतरिक्षादभाषत ॥ आगच्छविष्णो भद्रंतेदिष्ट्याप्राप्तोऽसिराघव ॥ ८ ॥ भ्रातृभिःसहदेवाभैःप्रविशस्वस्विकांतनुम् ॥ यामिच्छसिमहाबाहोतांतनुंप्रविशस्विकाम् ॥९॥ वैष्णवीं तांमहातेजोयद्वाकाशंसनातनम् ॥ त्वंहिलोकगतिर्देवनत्वांकेचित्प्रजानते ॥१०॥ ऋतेमायांविशालाक्षींतवपूर्वपरिग्रहाम् ॥ त्वामचिंत्यंमहद्भू तमक्षयंचाजरंतथा ॥ यामिच्छसिमहातेजस्तांतनुंप्रविशस्वयम् ॥११॥ पितामहवचःश्रुत्वाविनिश्चित्यमहामतिः॥विवेशवैष्णवंतेजःसशरीरः सहानुजः ॥ १२ ॥ ततोविष्णुमयंदेवंपूजयंतिस्मदेवताः ॥ साध्यामरुद्गणाश्चैवसेंद्राःसाग्निपुरोगमाः ॥१३॥ येचदिव्याऋषिगणागंधर्वाप्सर सश्चयाः ॥ सुपर्णनागयक्षाश्चदैत्यदानवराक्षसाः ॥ ॥ १४ ॥ सर्वंपुष्टंप्रमुदितंसुसंपूर्ण मनोरथम् ॥ साधुसाध्वितितैर्देवैस्त्रिदिवंगतकल्मषम् ॥ १५ ॥ अथविष्णुर्महातेजाःपितामहमुवाचह ॥ एषांलोकंजनौघानांदातुमर्हसिसुव्रत ॥ १६ ॥

अचिन्त्यदेशपरिच्छेदशून्यमहद्भूत, अक्षय-नाशरहित और अजर हो हे महातेजस्वी ! जिस शरीरमें आपको प्रवेश करनेकी इच्छा हो, आप उस शरीरमें प्रवेश कीजिये ॥ ११ ॥ महामतिमान् रघुनन्दन ब्रह्माजीके यह वचनश्रवण कर विचार कर भाइयोंके साथ शरीरसहित वैष्णवी तेजमें प्रवेश कर गये ॥ १२ ॥ उस समय विष्णुमय भगवान् रामचन्द्रका सब देवता, साध्य, मरुद्गण, इन्द्र, अग्नि सब पूजन करने लगे ॥ १३ ॥ और जो दिव्य ऋषिगण अप्सरा, सुपर्ण, नाग, यक्ष, दैत्य, दानव, राक्षस थे ॥ १४ ॥ सब बडे हर्षित हुए और सबके मनोरथ पूर्ण हुए, पापरहित होगये और आकाशमें देवता उनको साधुवाददेने लगे ॥ १५ ॥ तब महातेजस्वी विष्णुजी ब्रह्माजीसे कहने लगे हे सुव्रत ! यह जितने पुरुष हमारे संग आये हैं इन सबको उत्तम लोक दीजिये ॥ १६ ॥

यह सम्पूर्ण स्नेहके कारण हमारे साथ चले आये हैं, यह यशस्वी मेरे भक्त हैं, इन्होंने हमारे निमित्त अपने शरीर त्यागन कर दिये हैं इस कारण मुझे इनके ऊपर कृपा करनी अवश्य है ॥ १७ ॥ विष्णुभगवान्‌के यह वचन सुन लोकपितामह ब्रह्माजी कहने लगे कि, यह सब आपके भक्त संतानक लोकोंमें जायँगे ॥ १८ ॥ ये तो आपके साथही आये हैं परन्तु जो कोई कीट पतंग भी आपका नाम लेकर शरीर त्याग करेंगे वे सब संतानक लोकमें वसेंगे ॥ १९ ॥ यह संतानक लोक ब्रह्मगुणसे युक्त ब्रह्मलोकसे मिले हुए हैं (साकेतलोकके बीचमें हैं) यह सब हमारे साथ मुक्त होंगे यह तात्पर्य है। वानर और रीछ जिन जिन देवताओंसे उत्पन्न हुए हैं उन्हींमें मिलेंगे ॥ २० ॥ जो जिस देवसे प्रादुर्भूत हुए हैं वे उसीमें प्रवेश करेंगे, ब्रह्माजीके यह वचन सुनतेही सुग्रीव सूर्यमंडलमें प्रवेश कर गये ॥ २१ ॥ और भी सब रीछ वानर ब्रह्माजीके यह वचन सुन गोप्रतार घाटमें स्नान कर अपना २ शरीर छोड अपने २ पिताओंमें मिल गये

इमेहिसर्वेस्नेहान्मामनुयातायशस्विनः॥ भक्ताहिभजितव्याश्चत्यक्तामानश्चमत्कृते ॥ १७ ॥ तच्छ्रुत्वाविष्णुवचनंब्रह्मालोकगुरुःप्रभुः॥ लोकान्संतानकान्नाप्यास्यंतीमेसमागताः॥१८॥ यच्चतिर्यग्गतंकिंचित्त्वामेवमनुचिंतयत् ॥ प्राणांस्त्यक्ष्यतिभक्त्यातत्संतानेषुनिवत्स्यति ॥१९॥ सैर्वब्रह्मगुणैर्युक्तेब्रह्मलोकादनंतरे॥ वानराश्चस्विकांयोनिमृक्षाश्चैवतथाययुः॥२०॥ येभ्योविनिःसृताःसर्वे सुरेभ्यःसुरसंभवाः ॥ तेषुप्रविविशेचैवसुग्रीवःसूर्यमंडलम् ॥२१॥ पश्यतःसर्वदेवानांस्वान्पितृन्प्रतिपेदिरे ॥ तथाब्रुवतिदेवेशेगोप्रतारमुपागताः ॥२२॥ भेजिरेसरयूंसर्वेहर्षपूर्णाश्रुविक्लवाः॥अवगाह्याप्सुयोयोवैप्राणांस्त्यक्काप्रहृष्टवत ॥२३॥ मानुषंदेहमुत्सृज्यविमानंसोऽध्यरोहत ॥ तिर्यग्योनिगतानांचशतानिसरयूजलम् ॥२४॥ संप्राप्यत्रिदिवंजग्मुःप्रभासुरवपूंषितु ॥ दिव्यादिव्येनवपुषादेवादीप्ताइवाभवन् ॥२५॥ गत्वातुसरयूतोयंस्थावराणिचराणिच ॥ प्राप्यतत्तोयविक्लेदंदेवलोकमुपागमन् ॥ २६ ॥ तस्मिन्येऽपिसमापन्नाऋक्षवानरराक्षसाः ॥ तेऽपिस्वर्गंप्रविविशुर्देहान्निक्षिप्यचांभसि ॥ २७ ॥

॥२२॥ और यह वचन सुन और भी जो लोग थे वे प्रसन्नतासे नेत्रोंमें आंसू भरे सबही सरयूमें प्रवेश कर गये, जिन २ पुरुषोंने प्रसन्न हो उस समय सरयूमें स्नानकर अपने प्राण त्यागे ॥ २३ ॥ वह सब अपने मनुष्य शरीरको त्यागकर विमानोंमें स्थित हुए इसी प्रकार सहस्रों पशु पक्षी तिर्यक्‌योनिके जीवभी सरयूजलमें स्नान कर अपना शरीर त्याग ॥ २४ ॥ विमानपर चढ दिव्य कान्तियुक्त शरीर धारे स्वर्गको प्राप्त हुए और दिव्य शरीर होनेसे देवतोंके समान प्रकाशित हो गये ॥२५॥ स्थावर जंगम सरयूके जलमें स्नान कर शरीर त्याग सबही देवलोकको गये ॥ २६ ॥ जो कोई ऋक्ष वानर राक्षस सरयूके जलमें स्नान करने लगे, वे जलमेंही अपने देहोंको त्यागकर स्वर्गको सिधारे ॥ २७ ॥

इस प्रकारसे लोकपति भगवान् सब मंत्री पुरवासी ऋक्ष वानर जीव जन्तुओंको सन्तानके लोकोंमें स्थापित कर, पीछेसे प्रसन्नता पूर्वक प्रमुदित देवताओं सहित सबसे उत्तम साकेतलोकमें भ्राताओं सहित पधारे ॥ २८ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रा० वाल्मी० आदि उत्तरकांडे दशाधिकशततमः सर्गः ॥ ११० ॥ इतनीही यह महर्षि वाल्मीकिजीकी बनाई हुई ब्रह्मासे पूजित उत्तरकाण्डयुक्त रामायण है जो "रामायण नामसे विख्यात है ॥ १ ॥ इसके अनंतर जिनमें चराचर जगत् व्याप्त हो रहा है वह विष्णु भगवान् स्वर्गलोकमें पूर्वकालकी नांई देवताओंके साथ स्थित हुए ॥२॥ तबसे देवता गंधर्व सिद्ध परमर्षि स्वर्गमें प्रसन्नतापूर्वक नित्य इस रामायण काव्यको श्रवण करते हैं ॥ ३ ॥ यह आख्यान आयुका बढानेहारा, सौभाग्यदायक और पापनाशक है, इस वेदसमान रामायणको पंडितोंको

ततःसमागतान्सर्वान्स्थाप्यलोकगुरुर्दिवि ॥ हृष्टैःप्रमुदितैर्देवैर्जगामत्रिदिवंमहत् ॥२८॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मी० आदिकाव्येचतुर्विंशतिसाहस्र्यांसंहितायामुत्तरकांडे दशाधिकशततमः सर्गः ॥११०॥ एतावदेतदाख्यानंसोत्तरंब्रह्मपूजितम् ॥ रामायणमितिख्यातंमुख्यंवाल्मीकिनाकृतम् ॥१॥ ततःप्रतिष्ठितोविष्णुःस्वर्गलोकेयथापुरा ॥ येनव्याप्तमिदंसर्वंत्रैलोक्यंसचराचरम् ॥ २ ॥ ततोदेवाःसगंधर्वाःसिद्धाश्चपरमर्षयः ॥ नित्यंशृण्वंतिसंहृष्टाःकाव्यंरामायणंदिवि ॥३॥ इदमाख्यानमायुष्यंसौभाग्यंपापनाशनम् ॥ रामायणंवेदसमंश्राद्धेषुश्रावयेद्बुधः ॥४॥ अपुत्रोलभतेपुत्रमधनोलभतेधनम् ॥ सर्वपापैःप्रमुच्येतपादमप्यस्ययःपठेत् ॥५॥ पापान्यपिचयःकुर्यादहन्यहनिमानवः ॥ पठत्येकमपिश्लोकंपापात्सपरिमुच्यते ॥६॥ वाचकायचदातव्यंवस्त्रंधेनुंहिरण्यकम् ॥ वाचकेपरितुष्टेतुतुष्टाःस्युःसर्वदेवताः ॥७॥ एतदाख्यानमायुष्यंपठन्रामायणंनरः ॥ सपुत्रपौत्रोलोकेऽस्मिन्प्रेत्यचेहमहीयते ॥८॥ रामायणंगोविसर्गेमध्याह्नेवासमाहितः ॥ सायाह्नेवापराह्णेचवाचयन्नावसीदति ॥९॥

श्राद्धमें अवश्य सुनाना उचित है ॥ ४ ॥ विश्वास पूर्वक श्रद्धासे सुने तो अपुत्रको पुत्र, निर्धनीको धन मिलता है इसका चौथाई श्लोक पढनेसे भी सब पाप दूर होते हैं ॥ ५ ॥ जो मनुष्य प्रतिदिन अनेक प्रकारके पाप करते हैं, वे इसका एकही श्लोक पढनेसे सब पापरहित हो जाते हैं ॥ ६ ॥ इस पुस्तकके बांचने वालेको वस्त्र धेनु और सुवर्ण दना चाहिये, बांचनेहारेके प्रसन्न और तुष्ट होनेसे संपूर्ण देवता संतुष्ट होवे हैं ॥ ७ ॥ इस आयुके बढानेवाले रामायण नामक आख्यानके पढनेसे मनुष्य इस लोकमें पुत्र पौत्रोंको प्राप्त होकर अन्तमें स्वर्गलोकमें पूजित होते हैं ॥८॥ रामायणको प्रातःकाल मध्याह्न समय तीसरे पहर संध्यासमय सावधान होकर पाठ करनेसे किसी प्रकारका दुःख नहीं होता ॥ ९ ॥

वह रम्य अयोध्यापुरी बहुत वर्षोंतक शून्य पडी रही, बहुत काल पीछे जब ऋषभ राजा इसमें राज्य करेंगे तब मनुष्योंका निवास इस पुरीमें होगा ॥ १० ॥ भविष्य उत्तर सहित यहआख्यान आयुका देनेहारा प्रचेतसके पुत्र वाल्मीकिजीका बनाया हुआ है और सर्वथा वेदार्थ प्रतिपादक होनेसे ब्रह्माजीने भी इसे स्वीकार किया है ॥ ११ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये चतुर्विंशतिसहस्रसंहितायामुत्तर कांडे मुरादाबादनगरस्थपंडितकुलतिलकमिश्र

अयोध्यापिपुरीरम्याशून्यावर्षगणान्बहून् ॥ ऋषभंप्राप्यराजानंनिवासमुपयास्यति ॥ १० ॥ एतदाख्यानमायुष्यंसभविष्यंसहोत्तरम् ॥ कृतवान्प्रचेतसःपुत्रस्तद्ब्रह्माप्यन्वमन्यत ॥ ११ ॥ इत्यार्षे श्रीमद्रामायणे वाल्मीकीये आदिकाव्ये चतुर्विंशतिसाहस्र्यां संहितायामुत्तरकांडे स्वर्गारोहणं नामैकादशोत्तरशततमः सर्गः ॥ १११ ॥ समाप्तं श्रीवाल्मीकीयं रामायणम् ॥

सुखानन्दात्मजकामेश्वरनाथसंस्कृत पाठशाला प्रधानाध्यापक पंडितज्वालाप्रसाद मिश्रकृतभाषायामेकादशाधिकशततमः सर्गः ॥ १११ ॥

समाप्तं भाषाटीकासमेतं श्रीवाल्मीकीयं रामायणम्

इदं श्रीमद्रामायणं वाल्मीकीयमुत्तरकाण्डावधि भाषाटीकासमेतं मुम्बय्यां क्षेमराज-श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना स्वकीये "श्रीवेंकटेश्वर"-(स्टीम्) मुद्रणालये मुद्रयित्वा प्रकाशितम्।

दोहा—रामायणको श्रवणकर, हेम रत्न रथ वाजि ॥ क्षौम पताकायुक्त कर, दीजे बहु विध साजि ॥१॥ रत्न किंकिणी सहित रथ, और दुधारी गाय ॥
दान करै अति प्रेमसों, बहुत भाँति सुख पाय॥२॥अष्टोत्तरशतद्विजनको,बहुविध सहित जिमाय॥एहि प्रकार फल चारि लह,रहै सुयश जग छाय॥३॥
रामायणको श्रवणकर, वाचकको दे दान ॥ धेनु हेम सुन्दर वसन, सुवरण कुंडल कान ॥ ४ ॥ मुद्री शय्या छत्र दे, पादत्राण ललाम ॥
भूमिदान शुभ अन्न पुनि, ताम्बूल सुखधाम ॥५॥ भक्ष्य भोज्य पुनिलेह्य अरु, चोष्यपदार्थ अनेक॥ दान करै अति भक्तिसे, हियमें परम विवेक॥६॥
अश्वमेधके सहस अरु, वाजपेय शत याग ॥ एक सर्गके सुनेते, इनको फल बडभाग ॥ ७ ॥ तीर्थ प्रयागादिक सकल, गंगादिक सरि जौन ॥
नैमिषादि वन क्षेत्र कुरु, तीरथ कीने तौन ॥८॥ जिन यह रामायण सुनी, तिन सब कर फललीन्ह ॥ हेमभार कुरुक्षेत्रमें, भानुग्रस्त जिन दीन्ह ॥९॥
अरु जेहि रामायण सुनी, दोनों पुण्य समान ॥ श्रद्धा भक्ति समेत जो, सुने रामगुण गान ॥ १० ॥ सर्वपापसे छूटकर, विष्णुलोक सो जाय ॥
आदिकाव्य यह ऋषीने, भाष्यो जग सुखदाय॥११॥भक्तिपूर्वक जो सुने, सो पावत हरिधाम॥ पुत्र दार धन, अति बढै, सिद्ध होत मनकाम॥१२॥

इति श्रवणविधि समाप्त

दोहा—राम भरत लक्ष्मण सिया, रिपुहन पवनकुमार ॥ चरणकमल सुग्रीवके, बन्दों वारम्वार ॥ १ ॥ जहँ जहँ प्रभुको कीर्तन, तहँ निज शीश झुकाय ॥
खलवन पावक पवनसुत, प्रणवों सरल सुहाय ॥ २ ॥ रामचन्द्र श्रीराम प्रभु, रामचन्द्र भगवान् ॥ सीतापति रघुनाथजी; करिये जग कल्यान ॥३॥
मंगल लेखकके भवन, मंगल पाठक गेह ॥ मंगल राजा प्रजाको, मंगल भूमिसनेह ॥ ४ ॥ कतक रामको सार ले, नहिं लघु नहिं विस्तार ॥
प्रतिपदकी टीका करी, निजमतिके अनुसार ॥५॥ कृपा करहिं अस पवनसुत, याको होय प्रचार ॥ घर घरमें पुस्तक पढें, बाल वृद्ध नर नार ॥६॥
नेक कृपाकी दृष्टिसौं, रचना जगत दिखात ॥ तिन प्रभु करुणासिंधुको, बडी नहीं यह बात ॥७॥ प्रभु अपनो कर जानिय, तुमही होत सहाय ॥
लाज तुम्हारे हाथ है, याको देहु बनाय ॥ ८ ॥ खेमराज श्रीसेठजी, वेङ्कटेशकी छाप ॥ ताको फैलो जगतमें, देश विदेश प्रताप ॥ ९ ॥
तिनपर कृपा राखिये, दीनबन्धु सुखधाम ॥ तिमि ज्वालाप्रसादके, रक्षक रहिये राम ॥ १० ॥ उन्निससे पंचाश शुभ, श्रावण सित भृगुवार ॥
सर्व सिद्ध त्रयोदशी, पूर्ण कियो सुखसार ॥ ११ ॥ ॥ इत्युत्तरकाण्डभाषाटीका समाप्ता ॥

नूतन संस्करण

कूजन्तं राम रामेति मधुरं मधुराक्षरम् । आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकि-कोकिलम् ॥

रामनाम अमृतके पियासु प्रिय पाठकगण !

वाल्मीकि ऋषिकी रचनामें गाया हुआ रामचरित संसारमें वाल्मीकि रामायणके नामसे प्रसिद्ध हुआ। इस रामायणके आधारपर संस्कृत और प्राकृत भाषाओंमें बादको अनेक रामायणें बनीं, किन्तु रामायण नाम धन्य हुआ वाल्मीकि रामायण संस्कृतमें लिखी जानेके कारण वाल्मीकि रामायण, संस्कृत-अनभिज्ञ जनताके लिये एक दुर्बोध्य पुस्तक थी, संस्कृत पठन पाठनका क्रम कम होजानेके कारण हिन्दी भाषाभाषी वाल्मीकि रामायणको पढना अवश्य चाहते थे, किन्तु संस्कृतमें होनेके कारण वाल्मीकि रामायणका स्वाद आस्वादन करनेमें वे असमर्थ थे, इसी कठिनताको दूर करनेके लिये बडे परिश्रमसे लेखकके पूज्यपिता विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्रने लगभग ६० वर्षपूर्व सुबोध हिन्दीमें सरल सिद्धि प्रदायक 'पीयूषधारा' टीकाकर हिन्दीभाषा भाषियोंके लिये वाल्मीकि-रामायणको सुलभ करदिया। तबसे इसबृहद् पावन ग्रन्थके अनेक संस्करण हुए और इसको आदर्शमानकर जनताने यथेष्टरूपसे अपनाकर अपनी गुण ग्राहकताका परिचय दिया।

मुझे आशा है कि पूर्व संस्करणकी भांति गुणग्राही पाठकगण इस सुन्दर सुहावने मनभावने पुण्यदायक इस नूतन संस्करणका भी अधिक आदर करेंगे।

अन्तमें हम प्रेसके वर्तमान उदार संचालक साहित्य सुधारस प्रेमी अपने परम प्रिय चि० मुरलीधरजी बजाजको हार्दिक धन्यवाद देते हैं कि जो राम भक्तोंके हितार्थ अपनी वंश परम्पराका अनुकरण करते हुए ऐसे कठिन समयमें इस आदि महाकाव्य जैसे ग्रन्थरत्नोंका बड़ी सजधजके साथ शुद्धता पूर्वक चित्ताकर्षक संस्करण प्रकाशित करते हुए साहित्य सेवामें सोत्साह संलग्न हैं।

आशा है विद्वद्जन इस ग्रन्थका पाठकर हंसके समान गुणग्राही हो लेखक और प्रकाशकके परिश्रमको सफल करेंगे।

बम्बई-प्रवास
आषाढ शु० व्यास-पूर्णिमा
७ जुलाई चन्द्रवार (१९५२)

रामचरणानुरागी—
विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसाद मिश्र—आत्मज
जगदीशप्रसाद मिश्र
मुरादाबाद,

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई - ४.